भूदान-यज्ञ

वर्ष : १६, अंक : १

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सीमांत गांधी : बापू की वापसी

अभ्युदकीय

हमारी शर्म, सीमांत गांधी का दर्द

'शायद ईश्वर को यही मंजूर था कि हम सचमुच जैसे है तुम हमें वैसा ही देखो।'

दिल्ली के हवाई अड्डे पर बादशाह खान का स्वागत करते हुए जयप्रकाशजी ने गुजरात के दंगों का उल्लेख किया और दर्द और शर्म से भरे ये शब्द कहे। शर्म तो हमारी थी लेकिन दर्द बादशाह खान को हुआ।

हम जैसे हैं बादशाह खान ने हमें वैसा ही देखा, और बादशाह खान जैसे हैं वैसा ही हमने उन्हें पाया—त्याग और तपस्या की वही पुरानी, परिचित मूर्ति ! यातना और आयु ने उनके शरीर को घिस डाला है, किन्तु आत्मा दिनोदिन निखरती जा रही है; उसकी प्रखरता में कोई कमी नहीं आयी है।

जब २ अक्तूबर को भारत की सरकारें और उसके माने-जाने लोग गुजरात की बर्बरता के बाद भी दीवाली मना रहे थे, तथा गांधी का नाम थोथे भाषणों और हल्के तमाशों का विषय बनाया जा रहा था उस दिन दिल्ली की प्रार्थनासभा में बादशाह खान ने भारत में फैली घृणा और हिंसा के प्रतिकार के लिए तीन दिन के उपवास की घोषणा की—३ को प्रातः ७ बजे से ६ को प्रातः ७ बजे तक। कौन जाने गांधी की अहिंसा की जो वाणी २२ वर्षों तक दबी हुई थी वह सीमांत गांधी द्वारा फिर बोल उठे; इस देश के इतिहास में त्याग और बलिदान का जो अध्याय बन्द-सा हो गया था, वह फिर खुल जाय ?

शायद ईश्वर को यही मंजूर था कि हमारा प्यारा अतिथि हमारे घर आकर हमारे पापों का प्रायश्चित करे और आज हमारे सामने भूखा रहे ताकि कल हम प्यार की जिन्दगी जी सकें और परिश्रम की रोटी खा सकें। •

भ्रम, अब भी भ्रम !

'अगर आप लोग इस गांधी-जन्म-शताब्दी वर्ष में अपने ग्रामदानी गांवों में से कुछ को भी आदर्श बना सकते तो कितना अच्छा होता !'

यह बात कहनेवाले अपने एक मित्र और शुभचिन्तक हैं। ग्रामदान का विचार समझते हैं, ग्रामदान का काम करते हैं, और दूसरों के सामने ग्रामदान की वकालत करते हैं। बरसों से आन्दोलन के करीब हैं, फिर भी यह अफसोस मन में छिपाये हुए हैं कि आज तक कोई आदर्श ग्रामदानी गांव नहीं बन सका। इस गांधी-वर्ष में भी नहीं बन रहा है !

ग्रामदान आन्दोलन को सरकार की 'सामुदायिक विकास-योजना' (कम्युनिटी डैवलपमेंट) का विकल्प मान लेने का भ्रम आलोचकों में तो है ही, शुभचिन्तकों और साथियों में भी है। तो क्या आश्चर्य है कि ग्रामदान के बाद कुछ गांववाले यह अपेक्षा करने लगते हैं कि उनके गांव में हमारी ओर से विकास के कुछ काम होंगे, और जब वे देखते हैं कि नहीं हो रहे हैं तो उन्हें निराशा होती है ?

कुछ दिनों तक ग्रामदान का 'दान' भ्रम का कारण था। 'दान दे देंगे तो रहेंगे कहाँ, खायेंगे क्या ?'... इस तरह के प्रश्न गांव के लोगों द्वारा पूछे जाते थे। अब ये प्रश्न कम हुए तो 'ग्राम' शब्द से नये भ्रम शुरू हुए हैं, जिनमें ग्रामीणों के साथ-साथ शहर के समझदार लोग भी शामिल हैं। 'ग्राम' का नाम आते ही 'आदर्श ग्राम' की तसवीर सामने आ जाती है। इस शब्द के कारण लोग यह भी सोच लेते हैं कि ग्रामदान गांवों का काम है, शहर से उसका क्या सम्बन्ध है ?

इन भ्रमों का एक बड़ा कारण यह भी है कि हमने अपनी ओर से ग्रामस्वराज्य की बात अभी तक उतनी नहीं कही है जितनी हमें कहनी चाहिए थी। जिस समाज-परिवर्तन की बात हम आजतक कहते आये हैं उसका चित्र ग्रामस्वराज्य में है, ग्रामदान सिर्फ उसकी बुनियाद है; यह बात हमें अब सफाई के साथ कहनी चाहिए। सरकार में दलमुक्त ग्रामप्रतिनिधित्व और भूमि पर ग्रामस्वामित्व, ये दो मुख्य आधार हैं जिनपर ग्रामस्वराज्य का भवन खड़ा होगा। अगर ग्रामस्वराज्य की ये मूल बातें लोगों के सामने आ जायँ तो वे इसे सामाजिक क्रान्ति के रूप में देखने लगेंगे और आदर्श गांव की माँग पीछे पड़ जायगी। क्रान्ति का अर्थ है एक नयी सामाजिक शक्ति, और नीचे से ऊपर तक एक नया सामाजिक ढांचा, न कि सर्वनाश के रेगिस्तान में सर्वोदय के कुछ इने-गिने नखलिस्तान !

गांधी का जो रूप इस गांधी वर्ष में जनता के सामने प्रस्तुत किया जा रहा है, वह अगर क्रान्तिकारी गांधी का होता तो लोगों को गांधी से समाज-निर्माण की एक नयी प्रेरणा मिलती। दुख है कि ऐसा नहीं हो रहा है। हमारे नेताओं ने 'प्रोटेस्टर गांधी' (विरोधी गांधी) से भिन्न गांधी का दूसरा कोई रूप ही अपने और देश के सामने नहीं रखा। राजनीति के बाहर जो सेवा-भावी लोग थे उन्होंने गांधी को हमेशा दुखियों की मरहमपट्टी ही करते हुए देखा। लेकिन गांधी का जो क्रान्तिकारी समाज-निर्माता का रूप था वह बराबर आड़ में रहा, और आज तो समारोहों के कोलाहल में वह और भी पीछे पड़ गया है। अगर विनोबाजी का ग्राम-स्वराज्य आन्दोलन न होता तो गांधी की क्रान्ति-वाणी शायद किताबों में ही पड़ी रह गयी होती और यह युग भी 'निर्माता गांधी' (बिल्डर गांधी) की कल्पना में भी न देख पाता। यह ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य में लगे हुए साथियों का काम है कि वे गांधी का यह रूप समाज के सामने पेश करें, तथा लोगों को बतायें कि ग्रामस्वराज्य हिन्द-स्वराज्य का उत्तरार्द्ध है। •

...मैं तो खिदमतगार हूँ ...मुझे जनता के बीच रहना है

—सीमांत गांधी से एक मुलाकात—

चारों ओर वीरान पहाड़। दूर-दूर हिन्दुकुश के शिखरों पर इस गर्मी में भी बर्फ चमक रही है। हवाई जहाज पर से घाटियों के बीच में कुछ हरे धब्बे नजर आ रहे हैं। ऐसी ही एक घाटी में काबुल का हवाई अड्डा स्थित है। हवाई अड्डे पर भारतीय दूतावास के एक प्रतिनिधि ने आकर समाचार दिया—"बादशाह खान काबुल में ही हैं।" बादशाह खान अर्थात् खान अब्दुल गफ्फार खाँ। उनको आदर-स्वरूप यहाँ लोग 'फख्रे अफगान' (अफगानों का गौरव) भी कहते हैं। और कुछ करने से पूर्व मैंने उनके दर्शन-लाभ का निश्चय किया। मुझे उनके अतिथि-स्वरूप रखा गया।

'अमान' के वासी 'फख्रे अफगान'

जहाँ बादशाह खान ठहरते हैं, उस जगह का नाम दारुल अमान है, जो अमानुद्दीन शाह के नाम से पड़ा था। परन्तु 'अमान' की जगह अगर 'अमन' उच्चारित किया जाय तो उसका अर्थ होगा—शान्तिनिकेतन। शान्ति के इस दूत के लिए इससे बेहतर जगह और कौन-सी हो सकती है, ऐसा सोचता हुआ मैं दारुल अमान पहुँचा।

मेरी बात छोड़िये, लेकिन

लगभग तीस वर्षों के पश्चात् मैं बादशाह खान से मिल रहा था। सन् १९३९ में एबटाबाद में गांधीजी के साथ मैं भी उनका मेहमान था। आज गांधी-शताब्दी-वर्ष में पुनः उनके दर्शन हुए। प्रथम मुलाकात में तो मेरी वाचा बन्द। आँख का पानी भी बाहर निकल न सका। वृद्धावस्था के स्पष्ट चिह्न उनके मुख पर दीख रहे थे। उन पर इन वर्षों में क्या नहीं बीती। स्वराज्य के जंग में इस खुदाई खिदमतगार ने 'खूनी' पठानों से अहिंसा के अद्भुत पराक्रम करवाये। उनके सख्त विरोध के बावजूद, बिना उनकी सलाह लिए, उनके आजीवन साथी-जैसे राष्ट्रनेता पाकिस्तान कबूल कर आये। पाकिस्तान से रहकर पख्तूनिस्तान का आन्दोलन चलाने का आशीर्वाद देनेवाले गुरु गांधी भी देखते-देखते विदा हो गये। 'और हमें तो भेड़िया के हवाले कर दिया गया।' इस एक ही वाक्य में पाकिस्तान के निर्माण की करुणा का सम्पूर्ण समावेश हो जाता है। परन्तु इन शब्दों में भी व्यक्तिगत फरियाद नहीं थी, वरन् यह फरियाद थी उत्तर-पश्चिम प्रान्त के लाखों पठानों की—जिस प्रान्त में पाकिस्तान बनने से पूर्व बंगाल, पंजाब, सिन्ध से भी ज्यादा प्रमाण में मुसलमान थे, जहाँ कांग्रेस का स्पष्ट बहुमत था, और जहाँ के मुसलमानों ने स्पष्ट रूप से मत कहा था कि हमें मुसलिम-लीग नहीं चाहिए, और चुनाव का ढोंग तो उस समय भी हुआ, परन्तु खुदाई खिदमतगारों ने उसका बहिष्कार किया। "हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के विषय पर चुनाव कैसा? उस विषय पर तो हमने पहले ही अपना इरादा बता दिया था।

नारायण देसाई

परन्तु हमारे निर्णय को दुर्लक्ष्य कर पाकिस्तान तो हमारे सम्मुख एक हकीकत बनकर खड़ा था। पख्तूनिस्तान की माँग पर अगर चुनाव होता तो हम दिखा देते।" स्वराज्य के बाद के अठारह वर्षों में से पन्द्रह वर्ष तो उन्होंने पाकिस्तान की जेल में काटे। "मेरी बात को छोड़िये, मेरी कोई शिकायत नहीं, मगर हमारी लाखों जनता को तो मानो कुचल दिया गया।"

छः फीट और तीन इंच की विशाल काया अब कुछ झुक गयी है। चलने में पैर काँपने लगते हैं। मस्तिष्क की रेखाएं ऊंची और प्रतिष्ठित हो गयी हैं। अभी सिर के बाल कुछ काले हैं, फिर भी देखने से वृद्धावस्था की ही छाप पड़ती है।

"बाबा की तबियत कैसी है?"—यह प्रश्न तीन दिनों की मुलाकात के दरमियान जितनी बार पूछा गया, उतनी बार उत्तर नहीं मिला। प्रथम बार तो मेरा प्रश्न पूरा होने से पहले ही वे पूछ बैठे—'विनोबा साहब की सेहत कैसी है?"

उत्तर देते वक्त मुझे अपना गला साफ करना पड़ा, और फिर उस दिन की बैठक चली पूरे छः घंटे। बैठक के दौरान आपबीती घटनाओं का एक बार भी जिक्र नहीं। दर्द व्यक्त हो रहा था, परन्तु वह विशेष रूप से भारत की स्थिति पर, धर्म के नाम पर चल रहे ढोंग पर, और राजनीतिक अधःपतन पर।

जहाँ द्वेष, वहाँ धर्म कहाँ?

मेरे आने से पूर्व एक युवक उनके पास बैठा था। वह उठा तो उसकी ओर इशारा कर बोले—"यह हमारा पड़ोसी है। मुझे कह रहा था कि अरबिस्तान जाना है। मैंने उससे कहा कि असली धर्म हज करने में नहीं, परन्तु खुदा की खल्क की खिदमत करने में है। धर्म ने तो आज लोगों को अंधकार में डाल रखा है। धर्म रहा कहाँ? अमरीका ईसाई देश है। ईसा ने तो कहा था कि एक गाल पर कोई मारे तो दूसरा गाल भी सामने करना। परन्तु अमरिका वियतनाम-युद्ध कर रहा है। क्या हिन्दुस्तान, क्या पाकिस्तान, क्या अमरिका कहीं प्रेम नजर नहीं आता। सर्वत्र हिंसा है द्वेष है। और जहाँ द्वेष है वहाँ धर्म टिक नहीं सकता।'

'धर्म तो सेवा करने में है। सेवा के लिए बेगरज (निःस्वार्थ) इन्सान पैदा होने चाहिए। हिन्दुस्तान में आजादी आयी, परन्तु हुकूमत करनेवालों ने खुदगर्जी दिखायी। परिणाम यह हुआ कि आज देश बरबाद होने जा रहा है। मैं तो आजादी के बाद वहाँ गया नहीं, पर मैंने सुना है कि वहाँ गरीब और गरीब तथा अमीर और अमीर होता जा रहा है।"

गांधी को नहीं स्वीकारा तो मेरी क्या बिसात?

खुद के भारत-आगमन के बारे में बोले "मैं तो गांधी-शताब्दी है, इसलिए वहाँ आनेवाला हूँ। मुझे वहाँ कोई राज-

नीति करनी नहीं है। मुझे वहाँ कोई उपदेश देना नहीं है, कुछ सिखाना नहीं है। लोग लिखते हैं कि आप आयें और हमको नेतृत्व दें, हमें बोध दें। परन्तु जब तुमने गांधीजी का नेतृत्व स्वीकार नहीं किया और उनका बोध नहीं माना, तो मेरी क्या बिसात ? मैं तो खिदमतगार हूँ।"

गांधी-शताब्दी में यह हो क्या रहा है?

"देश-देश के बीच की हिंसा की बात छोड़ दें तो भी देश के अन्दर क्या हो रहा है ? तेलंगाना में कैसी हिंसा हुई ? एक ही देश के लोग, देश से अलग होने की माँग तो नहीं करते, उन्हें तो केवल अपना राज चाहिए। परन्तु इसके पीछे कितनी सारी हिंसा हो गयी ? एक ओर गांधी-शताब्दी मनायी जा रही है और दूसरी ओर देश में ऐसी हिंसा हो रही है।"

"अरे, शराब की ही बात लें। तुम्हें तो शायद मालूम नहीं होगा कि सरहद प्रान्त में शराबबन्दी करने के लिए लोगों ने कितनी कुर्बानियाँ की थीं। बारमडा में पिकेटिंग चल रही थी। अंग्रेज-सरकार ने युवक खिदमतगारों को पकड़ा। उनको नश्तर उनके मर्म-स्थलों पर रस्से बाँधकर उन्हें सताया। कितने तो उसमें अपना पुरुषत्व खो बैठे। आजादी के पहले कितने ही कष्ट लोगों ने शराब को निकालने के लिए झेले थे ! और अब आजाद हुकूमतें शराब को छूट दे रही हैं, और वह भी गांधी शताब्दी वर्ष में !"

एक लाख के 'एवार्ड' और अरसी लाख की थैली के विषय में कहा—"उसकी मुझे परवाह नहीं है। मैं तो फकीर हूँ। मुझे पैसों से क्या काम ? मुझे तो करोड़ों मिल रहे थे, वे मैंने छोड़ दिये। मुझे तो गांधी-शताब्दी के निमित्त देश में आना है। मेरे लिए वहाँ आलीशान मकान में ठहरने की व्यवस्था मत करना। मुझे 'राष्ट्रपति भवन' में ठहरना नहीं है। मुझे तो जनता के बीच रहना है।"

सच्चे लोग गाँवों में से निकलेंगे

सरकार में अच्छे लोगों को आना चाहिए, ऐसा वे बारम्बार जोरपूर्वक कह रहे थे। मैंने पूछा—"ऐसे लोग कैसे तैयार हो सकते हैं ?" उन्होंने कहा—"उसके लिए गाँव-गाँव जाकर लोगों को उन्हीं की भाषा में समझाना चाहिए। उनके सामने अपनी विद्वत्ता दिखाने की जरूरत नहीं है। मौलवी लोग जनसाधारण के समक्ष अपनी विद्वत्ता दिखाने की कोशिश करते रहते हैं। किन्तु इससे लोगों की सेवा नहीं होती। लोगों की सेवा तो गाँव गाँव, घर-घर जाकर समझाने से होती है और उन्हीं में से आखिर में सच्चे लोग बाहर निकलेंगे, और ऐसे सच्चे लोगों के हाथों में हुकूमत आने में ही प्रश्न का हल होगा।"

इस समय अफगानिस्तान में भी बादशाह खान यही काम कर रहे हैं। गाँव-गाँव जाकर लोगों को कैसे जीना चाहिए इस विषय को सरल भाषा में समझाते हैं। खास तौर पर जुम्मे की नमाज के समय वे मस्जिदों में जाते हैं। "नमाज तो एक प्रकार की पार्लियामेंट ही है। पहले लोग यहाँ कुछ भी बात करने में डरते थे, अब धीरे-धीरे निडरता आती जा रही है। यहाँ भी कुछ ऐसे तत्त्व हैं, जिन्हें देश में राजनीतिक जागृति आये, यह पसन्द नहीं है। परन्तु मेरे काम को सरकार का पूर्ण समर्थन है।"

वाद विवाद से जनता की खिदमत नहीं होती

काबुल की एक छोटी-सी सभा में मैं भी गया था। एक नया अखबार 'अफगान वुलस' (अफगान जनता) आरम्भ हो रहा था। उसमें आशीर्वाद देने के लिए बादशाह खान को निमन्त्रित किया गया था। चाय के बाद बादशाह खान अपनी कुर्सी पर बैठे-बैठे ही बातचीत करने के ढंग से बोलने लगे। उस बात-चीत के बीच में एक बार एक शब्द आया था 'अदम तशद्दुद', अर्थात् अहिंसा। इसलिए दूसरे दिन मैंने उनसे पूछा, "आपने अहिंसा के बारे में क्या कहा ?" तब बोले, "नहीं, वह तो कुछ नहीं, एक मिसाल दे रहा था। मैंने उनसे कहा कि आजादी की लड़ाई के दौरान कुछ लोग मेरे पास आते और कहते कि हमें अदम तशद्दुद में विश्वास नहीं है, परन्तु हमें आजादी की लड़ाई लड़नी है। मैं उनको कहता, आप अपने ढंग से लड़ें, हमें आपसे कोई तकरार नहीं है। यह तो मैंने एक मिसाल के तौर पर कहा था। मैं उनसे कह यह रहा था कि अखबार का उपयोग एक-दूसरे के साथ वाद-विवाद और तकरार करने में नहीं करना। वाद-विवाद करने से जनता की खिदमत नहीं होती। आप जिसमें मानते हों, वह ईमानदारी से लिखते रहो। दूसरे अलग विचार के हों तो वे अपने ढंग से लिखेंगे। परन्तु आप उनके साथ जीभ लड़ाने में न पड़ें।"

अखबारवाले उल्लू हैं

अखबार की बात निकली इसलिए बोले—"तुम्हारे अखबारवाले उल्लू हैं। मेरे आने के बारे में तरह-तरह की अटकलें करके कुछ-का-कुछ लिखते हैं। इसका उल्टा प्रचार पाकिस्तान में होता है। परन्तु इतनी सरल बात उनको क्यों नहीं समझ में आती कि मैं वहाँ कोई राजनीति की खटपट करने नहीं आ रहा हूँ। मैं तो गांधी-शताब्दी के लिए आ रहा हूँ। मेरा पुत्र वली जब यहाँ आया तब तुम्हारे अखबारवालों ने कहा कि उसे पाकिस्तानवालों ने भेजा है। पाकिस्तानवालों ने कहा कि वह तो इन्दिरा से मिलने यहाँ आया था। उस बेचारे की आँखें खराब रहती हैं, इसलिए दिखाने के वास्ते उसे यूरोप जाना था। छह साल से उसे पाकिस्तान से निकलने की इजाजत नहीं मिली थी। अभी मिली, इसलिए यूरोप जाते वक्त रास्ते में अपने बाप से मिलने आया। इसमें इतनी पटकनबाजी।"

मैंने कहा—"सब अपने-अपने आइने में दुनिया को देखते हैं।"

उनके पास से विदा होने वक्त मैंने भी वहाँ के उनके अनुयायियों की तरह उनकी ओर झुककर हाथ मिलाकर उस पर चुम्बन दिया। उन्होंने मुझे गले लगा लिया और मेरे गाल पर चुम्मी ली। मैंने कहा—"अब तो हिन्दुस्तान में मिलेंगे।" उन्होंने कहा—"अगर जिन्दगी !"•

अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध-विरोधक संघ का तेरहवाँ त्रैवार्षिक अधिवेशन

— अहिंसक क्रान्ति का जागतिक चिन्तन —

ठाकुरदास बंग

'वार रेजिस्टर्स इन्टरनेशनल' का तेरहवाँ त्रैवार्षिक अधिवेशन संयुक्तराष्ट्र में न्यूयार्क से ७० मील दूर हैवरफोर्ड नाम के उपनगर में ता० २५ से ३१ अगस्त '६९ तक हुआ। दुनिया में युद्ध न हो, युद्ध के तात्कालिक कारण दूर किये जायें और युद्ध का विरोध किया जाय, युद्ध का विरोध करनेवाले 'कान्शेन्शियस आब्जेक्टर्स' की सहायता की जाय, यह इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का कार्य है। "युद्ध मानवता के खिलाफ है और इसलिए मैं किसी भी युद्ध का समर्थन नहीं करूँगा और युद्ध के सब कारणों को दूर करने का प्रयत्न करूँगा" यह विचार जिसे स्वीकार्य हो, वह इसका सदस्य बन सकता है। तीन साल में एक बार किसी एक स्थान पर इस संस्था का त्रैवार्षिक अधिवेशन होता है। ४० साल पूर्व इस संस्था की स्थापना हुई थी। संस्था का यह अधिवेशन प्रथम बार ही अमरीका में हो रहा था। देश-विदेश से करीब २४० प्रतिनिधि आये थे। ज्यादातर प्रतिनिधि संयुक्तराष्ट्र के ही थे। यह स्वाभाविक ही था क्योंकि वायुयान से इतनी दूर का प्रवास अनिवार्य खर्चीला होता है। भारत से श्री नारायण देसाई एवं मैं, ये दो प्रतिनिधि थे। हमारा मार्ग-व्यय भी अमरीका में चन्दा इकट्ठा कर जुटाया गया था। दिल्ली-मास्को शान्ति यात्रा में भाग लेनेवाले मार्ज विल्लोबी, एरहार्ड हारनेल एवं जानकी हारनेल भी इस अधिवेशन में शामिल थे। देवी प्रसाद एवं आशा तो थे ही। भारत के अलावा एशिया में—इसरायल, जापान एवं दक्षिण वियतनाम के कुल ७ प्रतिनिधि थे। पूरे अफ्रीका एवं दक्षिण अमरीका से केवल एक-एक एवं आस्ट्रेलिया से दो प्रतिनिधि थे। पश्चिमी यूरोप एवं ग्रेट ब्रिटेन से करीब २६ थे। कम्युनिस्ट राष्ट्रों से कोई नहीं आया था। ज्यादातर प्रतिनिधि ३० साल के नीचे की उम्र के ही थे। यह विश्व-शान्ति की दृष्टि से उज्ज्वल भविष्य का परिचायक है। तारीख २५ से २८ तक खुला अधिवेशन एवं २९ से ३१ तक 'बिजनेस सेशन' हुआ।

चर्चा के विषय

इस अधिवेशन के मुख्य विषय थे स्वतन्त्रता एवं शान्ति, गांधी का आह्वान, अमरीका की लश्करशाही का विरोध, क्रान्ति साध्य एवं साधन, स्वतन्त्रता-प्राप्त राष्ट्रों की राष्ट्रीयता, गांधी की विरासत, अहिंसा एवं सामाजिक आर्थिक क्रान्ति इत्यादि। इन विषयों के अलावा निम्न ९ विषयों पर आयोग नियुक्त किये गये। १ वियतनाम, २ जापान-संयुक्तराष्ट्र सम्बन्ध, ३. मध्य-पूर्व की स्फोटक परिस्थिति, ४. नाटो एवं वारसा करार ५ अफ्रीका की परिस्थिति ६. लैटिन अमरीका की परिस्थिति, ७. विद्यार्थी-युवक-आन्दोलन, ८. अहिंसक लड़ाई के विभिन्न प्रकार, ९ अल्प-संख्यकों का प्रश्न। कोई भी प्रतिनिधि अपनी रुचि के आयोग में जाकर चर्चा में भाग ले सकता था। इन आयोगों ने अपनी रिपोर्ट दी एवं कई उपयोगी सुझाव दिये।

कुछ तात्कालिक समस्याएँ और समाधान की योजनाएँ

इस सप्ताह भर चलनेवाले ज्ञान-यज्ञ में से कई मुद्दे निकले एवं कई कृत्य-योजनाएँ-एक्शन प्रोजक्ट्स-बनीं। जैसे सन् १९७० में दक्षिण वियतनाम में औषधियों से भरा हुआ एक जहाज स्वयंसेवकों के साथ जाय और २००००० राजबन्दियों को जेल में बन्द रखे गये जेल पर जाकर स्वयंसेवक सत्याग्रह करें, जिससे कि वियतनाम में चलनेवाली लड़ाई का विरोध करनेवाले दो लाख जेल में डाले हुए बन्दियों का प्रश्न दुनिया के सामने आये। इसी प्रकार जापान-संयुक्तराष्ट्र संधि को इस वर्ष २५ साल होंगे। २५ साल तक के लिए यह संधि थी। इसका नवीनीकरण करने के लिए जापान के प्रधानमंत्री सातो इस वर्ष नवम्बर में अमरीका जा रहे हैं। इस अवसर पर विशाल जुलूस अमरीका भर में आयोजित किये जायँ, और यह सुलहनामा रद्द कर जापान का ओकीनावा द्वीप—जिस पर अमरीका ने पिछले २४ साल से कब्जा कर रखा है—उसे वापस लौटाया जाय। आज ओकीनावा द्वीपवासियों को किसी देश की राष्ट्रीयता उपलब्ध नहीं है, न वे जापान के हैं न अमरीका के। जापान जाने के लिए उन्हें 'परमिट' लेना पड़ता है और कई प्रकार के भेदभाव ओकीनावा के जापानियों के साथ बरते जाते हैं। यहाँ का अमरीका का अणु-अड्डा फौरन बन्द होना चाहिए और इसे जापान को वापस लौटाना चाहिए। हर साल वहाँ की विधानसभा में ऐसा प्रस्ताव स्वीकृत होता है लेकिन अमरीका के कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती। अतः इस अवसर पर विशाल जुलूस संगठित कर दुनिया का ध्यान इस अन्याय की ओर खींचा जाय। नाटो-वारसा सन्धि रद्द होनी चाहिए। इसलिए सत्याग्रह करने की जगह इसी समय यूरोप में होनेवाले युवकों के त्योहार को परिवर्तित कर, इसे युद्धों को जन्म देनेवाले और तरुणों की बलि माँगनेवाले नाटो-वारसा सन्धि को रद्द करने की माँग करनेवाले आयोजन का रूप दिया जाय। अफ्रीका में नाइजेरिया-बियाफ्रा लड़ाई बन्द करने के लिए इन दोनों पक्षों को अन्य राष्ट्र शस्त्र न दें और इनका बहिष्कार किया जाय। लड़ाई में जो मत-भिन्नता के कारण हिस्सा नहीं लेना चाहता, उस पर फौज में भर्ती होने की, और लड़ाई का प्रशिक्षण लेने की अनिवार्यता सरकारें न लादें, इसलिए ऐसा वातावरण बनाया जाय, जिससे कानूनों में सुधार हो सके।

अहिंसक क्रान्ति का घोषणा-पत्र

आज की समाज-रचना ही गलत बुनियादों पर खड़ी है, जिसके कारण युद्ध होते हैं। अतः ये बुनियादें ही बदलनी चाहिए, इस पर भी थोड़ा विचार-विनिमय हुआ। नया मानव-समाज कैसा बने ? ऐसे समाज की राजनीति, शिक्षा-नीति, अर्थ-नीति, सांस्कृतिक मूल्य और तकनीकी विकास की दिशा क्या हो; जीवन-मूल्यों की सुरक्षा कैसे हो, इत्यादि पर विचार कर एक घोषणापत्र तैयार करने की बात सोची गयी। आज के समाज को कैसे समाज में परिवर्तित करने के लिए अहिंसक क्रान्ति की आवश्यकता है ? क्रान्ति क्यों, क्रान्ति अहिंसक ही क्यों, इसकी व्यूह-रचना कैसे हो, आदि मुद्दों को भी इस अहिंसक क्रान्ति के घोषणा-पत्र में दाखिल किया जाय। यह काम एक साल के भीतर पूर्ण किया जाय। सन् १८४८ के कम्यूनिस्ट घोषणापत्र से जैसी उथल-पुथल दुनिया में मच गयी थी, उससे भी अधिक व्यापक एवं गहरा परिणाम इस घोषणापत्र का हो सकता है। अतः यह काम महत्त्वपूर्ण माना गया।

विकास की बुनियादें

मानव समाज-रचना कैसी हो, इसका ख्याल करते ही विकसित और अविकसित देशों का ख्याल आ जाता है। आज हर अविकसित देश विकसित राष्ट्र की नकल करने में मशगूल है। इन राष्ट्रों के बहुत कम लोग जानते हैं कि समृद्धि के चरम शिखर पर पहुँचे हुए राष्ट्रों में कितनी व्यापक इतोन्माद की भावना है। यंत्री-करण, अमानवीकरण एवं शून्यता जैसे विकट प्रश्न पैदा हो गये हैं और इनका हल जीवन-पद्धति बदले बिना सम्भव नहीं दिखायी देता है। इसलिए विकासशील देश यदि अपने देश की संस्कृति और परिस्थिति की बुनियाद पर विकास की नयी पद्धति विकसित करें तो गरीबी-अमीरी के प्रश्न भी हल होंगे और पश्चिम की यातनाओं में से गुजरने की नौबत भी नहीं आयेगी। इसलिए इन देशों में इनकी अपनी सांस्कृतिक बुनियादों पर चलनेवाले आन्दोलनों : जैसे—भारत में सर्वोदय-आन्दोलन, तांगानिका में ग्राम-सुधार, इसरायल में किबुत्ज एवं मोशाव, मध्यम तकनालोजी, इत्यादि का समर्थन किया गया। ऐसे अहिंसक आन्दोलनों का स्वरूप हर देश में अलग-अलग रहने पर भी इनसे गुणात्मक सामाजिक परिवर्तन होगा। ऐसा परिवर्तन श्रम-प्रतिष्ठा, स्वावलम्बन, व्यक्ति का गौरव, सेवा-भावना, समाज के घटकों में आपस में बँटवारा, सहभागी लोकशाही, निकट-वर्ती समाज, इत्यादि तत्त्वों पर आधारित रहेगा। आगे आनेवाली पीढ़ियों की परवाह किये बगैर जिस अन्धाधुन्ध पैमाने पर खनिज सम्पत्ति एवं जंगलों की बरबादी आज का सभ्य समाज कर रहा है, और धुएँ से वातावरण दूषित कर रहा है, इस पर विचार करना होगा और भविष्य के लिए वातावरण एवं खनिज सम्पत्ति सुरक्षित रखने पर ऐसा समाज पर्याप्त ध्यान देगा। इस प्रश्न का अधिक अध्ययन करने के लिए एक "इकॉलाजी (जीव सन्तुलन शास्त्र) अध्ययन मंडल" बनाया जाय, ऐसा प्रस्ताव सामने आया।

संगठन का फैलाव

इन सारे विचारों को फैलाने के लिए और कार्य-योजनाओं को अमल में लाने के लिए उपयुक्त माध्यम चाहिए। आज इस संस्था—युद्ध विरोधक संघ—का कार्य केवल २२ देशों में चल रहा है। और दुनिया के देशों की संख्या तीन सौ के करीब होगी। एशिया, अफ्रीका एवं दक्षिण अमरीका में यह संगठन शून्य बना है। जहाँ है भी उनमें से कई देशों में संगठन केवल कागज पर ही है। इसलिए जहाँ नहीं है वहाँ संगठन खड़ा करने, और जहाँ है उसे सक्षम बनाने का निश्चय हुआ। इस संस्था की आर्थिक दशा कमजोर है। अतः दस वर्ष आमदनी दूनी की जाय, यह प्रस्ताव आया। श्री नारायण देसाई ने यह सुझाव रखा कि साल में किसी एक नियत दिन की आमदनी संघ को दी जाय। तय रहा कि गांधी की बलिदान-तिथि यानी ३० जनवरी को सारी दुनिया में इस काम के लिए नियत किया जाय।

अमरीका : युद्ध-विरोधी ज्वार

जहाँ यह अधिवेशन हुआ उस संयुक्त-राष्ट्र अमरीका में वातावरण कैसा है ? वियतनाम की लड़ाई के कारण लोग तंग आ गये हैं और वहाँ युद्ध-विरोध का वातावरण बढ़ रहा है। हजारों कालेज के विद्यार्थी एवं नौजवान अनिवार्य फौजी भर्ती का विरोध कर रहे हैं, और फौजी तालीम लेने से इन्कार कर रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप जो सजा मिलती है उसके लिए वे सहर्ष तैयार हैं। आज भी ऐसे ४०० नौजवान इस कारण से जेलों में बन्द हैं, और ४००० युवकों पर मुकदमे चल रहे हैं। अधिवेशन के दिनों में ही ऐसा एक मुकदमा देखने का हमें सुअवसर मिला।

ता० २७ को सबेरे अधिवेशन स्थगित कर हम राबर्ट ईटन नाम के २५ साल के युवक का मुकदमा देखने के लिए फिलाडेल्फिया गये। हम २५० प्रतिनिधि थे। उनमें से करीब सौ कोर्ट में रहे, और बचे हुए १५० लोगों ने कोर्ट के चारों ओर मौनपूर्वक खड़े रहकर 'विजिल' की। ईटन ने न्यायाधीश से कहा कि '**अमरीका की बुनियाद स्वतंत्रता है और फौज में अनिवार्य भरती का कानून स्वतंत्रता का विरोधी होने से गैर-कानूनी है। अतः आपको हिम्मत दिखाकर इस कानून को ही खतम करने की माँग अपने जज मेंट' में करनी चाहिए, अन्यथा अधिक-से अधिक सजा मुझे देनी चाहिए। मैं दया नहीं चाहता।**' इस प्रकार ओजस्वी वक्तव्य देकर ईटन ने बहादुरी दिखाई। इसके समर्थन के तौर पर जर्मनी के नाजी जेलों में सड़ोवाले जर्मन पादरी निमोलर—जो वार रेजिस्टर्स इन्टरनेशनल के उपाध्यक्ष है—एवं श्री देवीप्रसाद (जो सेवाग्राम के हैं और गत सात वर्षों से संघ के सहा-मंत्री हैं) आदि की गवाहियाँ भी पेश की गयीं। जज ने कहा कि "मैं आप लोगों के ऊँचे चरित्र को जानता हूँ और इस मुकदमे का स्वरूप साम न्य अपराध जैसा न होकर राजनीतिक है, यह भी मैं जानता हूँ। लेकिन मेरा काम तो कानून बना

है उसका अमल करता है।' ऐसा कह कर उसने कानून की धारा में जो अधिक-से-अधिक सजा निहित थी, उतनी—तीन साल की—सजा सुना दी। सजा की घोषणा के समय ईडन ने जज से पूछा कि आपत्ति न हो तो ये मेरे समानधर्मी १०० मित्र मेरे मतों के समर्थनार्थ खड़े रहना चाहते हैं। जज ने कहा कि इसमें कोई आपत्ति नहीं है। इसलिए सजा सुनाने के समय हम सब समर्थनार्थ खड़े रहे। कड़ी-से-कड़ी सजा दी गयी, इसलिए उसी समय एक अमरीकन नवयुवक बहुत जोर से चिल्लाया, 'हम इस सजा से डर कर अपना काम छोड़नेवाले नहीं हैं, हम घबरानेवाले नहीं हैं।' जज ने शांति से कहा 'नवयुवक, इधर आओ, मेरे पास आकर जो भी तुम्हें कहना है शांति से कहो। और विश्वास रखो कि तुम यहाँ जो चिल्लाये या आगे जो कुछ भी मेरे सामने कहोगे इस बारे में तुम पर कोर्ट के मानहानि का मुकदमा नहीं चलाऊँगा।' वह अमरीकन युवक एक मिनट से ज्यादा न्यायाधीश के सम्मुख नहीं बोल सका। इससे हम सबने यह सबक सीखा कि शान्ति-सैनिकों को वाणी पर कितना संयम और कैसी शान्ति रखनी चाहिए। सचमुच, जज ने शान्त रहकर एक अर्थ में उस दिन शान्ति-सैनिक का काम किया और हमारे सामने पदार्थ-पाठ ही प्रस्तुत किया।

गत वर्ष युद्ध-विरोध का प्रदर्शन करने के लिए संयुक्त राष्ट्र में बड़े-बड़े जुलूस निकाले गये। वियतनाम की लड़ाई में अमरीका के ४० हजार जवान मारे गये हैं। उन सबके नाम कोर्ट में एवं सरकारी कचहरियों में पढ़ने का लगातार ३०-४० घंटे चलनेवाला कार्यक्रम कितने ही स्थानों पर किया गया। इस कारण शाम को पाँच बजे के बाद भी सरकारी कचहरी खुली रखनी थी और रात को भी यह नाम-पठन का कार्यक्रम चलता था। इस सबका परिणाम जन-मानस पर हुआ और जॉनसन को वियतनाम की लड़ाई बन्द करने की घोषणा आखिरकार करनी ही पड़ी।

समृद्धि के शिखर पर द्वेष की ज्वाला

यद्यपि अमरीकी सभ्यता आज समृद्धि के चरम शिखर पर पहुँची है, तब भी वहाँ करीब २० प्रतिशत लोगों के नसीब में गरीबी एवं बेकारी है। ये लोग ज्यादातर नीग्रो हैं। नीग्रो खुद को नीग्रो न कहकर 'काला' कहते हैं। 'काला याने सुन्दर' (ब्लैक इज ब्यूटीफुल) नाम का नया विचार वहाँ नीग्रो लोगों में जोरों से फैलाया जा रहा है, और काले लोगों का हीनभाव दूर किया जा रहा है। बस, ट्रेन, होटल आदि में गोरे और कालों के बीच कोई भेद-भाव नहीं बरता जाता, ऐसा मैंने न्यूयार्क एवं फिलाडेल्फिया में पाया। शायद दक्षिणी राज्यों में भेदभाव व्यवहार में होता होगा। मुख्यतः मार्टिन लूथर किंग के सत्याग्रहों का और आन्दोलनों का यह परिणाम है। एबरनाथी-सरीखे नेता और किंग के साथी वहाँ अहिंसात्मक आन्दोलनों का काम कर रहे हैं। लेकिन साथ ही वहाँ माल्कम एक्स और अन्य नेताओं के मार्गदर्शन में हिंसक तत्त्व भी जोरों से बढ़ रहे हैं। उधर गोरों में 'कू क्लक्स क्लान' संस्था की गतिविधियाँ बढ़ रही हैं और आतंक फैलाकर काले लोगों को अपने कब्जे में रखने का विचार भी कइयों को अपील करता है।

पूर्वाग्रह एवं द्वेष के घने बादल इधर-उधर दोनों ओर बढ़ रहे हैं। इसका मैंने प्रत्यक्ष अनुभव किया। जिम पेक नाम के न्यूयार्क के गोरे शान्ति-प्रेमी के साथ मैं नीग्रो की हारलेम बस्ती में न्यूयार्क में गया था। वहाँ एक स्थान पर एक जीर्ण मकान गिराकर एक कम्पनी का कार्यालय बननेवाला था। काले लोगों ने मकान गिरते ही उस जगह पर कब्जा कर लिया। उनका कहना था कि हमें रहने के लिए मकान नहीं है, इसलिए ऐसी परिस्थिति में कम्पनी मुनाफे के लिए आलीशान इमारत खड़ी नहीं कर सकती। बाहरी गेट पर कुछ स्वयंसेवकों को तैनात कर और अन्दर तम्बू गाड़कर वैसा रहने लग गये हैं। छह आठ माह से यह सब चल रहा है। जब फाटक पर के स्वयंसेवक से मैंने कहा कि 'मैं आपकी अनुमति से अन्दर जाकर देखना चाहूँगा और काले लोगों से बातचीत करना चाहूँगा' तो 'आप तो काले होने के कारण हमारे भाई हैं', ऐसा कहते हुए उसने मुझे इजाजत दे दी। जब मैं जिम के साथ अन्दर जाने लगा तो जिम को स्वयंसेवकों ने रोक लिया। मैंने कहा कि 'तुम जानते नहीं हो, जिम ने ग्यारह बार नीग्रो-हकों के लिए जेल भुगती है, इसे अन्दर जाने दो।' इस पर भी उन्होंने कहा कि, 'गोरा तो आखिर गोरा ही है, वह अन्दर नहीं जा सकता।' मैंने कहा कि, 'मैं गोरे और काले में भेद नहीं कर सकता, इसलिए जहाँ गोरा भाई नहीं जा सकेगा वहाँ मैं भी नहीं जाऊँगा।' लिखने की आवश्यकता नहीं, मेरे इस कथन का उन पर कोई परिणाम नहीं हुआ। क्रिया प्रतिक्रिया स्वरूप यह आग चल रहा है। द्वेष एवं पूर्वाग्रह का घड़ा काफी भर गया है। शान्ति प्रेमियों के लिए यह एक चुनौती है।

नयी पीढ़ी का उभरता असन्तोष

इंग्लैण्ड और अमरीका के नौजवानों में व्यापक असन्तोष है। पुरानी सभ्यता ने हरएक को मोटर और टेलीविजन तो दिये, लेकिन साथ-साथ जीवन का रस भी सुखा दिया। आवश्यकताएँ ही क्या विलास की बहुविध सामग्री खरीद सकने लायक आमदनी आसानी से ज्यादातर लोगों को उपलब्ध हो जाने के कारण जीवन का साहस समाप्त हो गया है। कुछ चन्द्रमा पर जाकर साहस कर रहे हैं, और कुछ चोरियाँ, कत्ल इत्यादि करके साहस के आनन्द का अनुभव कर रहे हैं। न्यूयार्क में या अमरीका के शहरों में अकेले घूमना खतरे से खाली नहीं है, ऐसी सूचना मुझे कइयों ने दी। अतिसमृद्धि के कारण सारे समाज का स्वरूप बदल गया है। मशीनों के कारण 'बोअरडम' पैदा हो रहा है। क्या गांधी-विचार इससे मुक्ति दिला सकेगा, इसकी गंभीर खोज वहाँ हो रही है। अणु-बम के कारण गांधी अब स्वप्नदर्शी नहीं रहा, वह तत्काल के लिए प्रासंगिक हो गया है। अहिंसा का अध्ययन करनेवाली कई संस्थाएँ यूरोप और

अमरीका में स्थापित हुई हैं। सामाजिक परिवर्तन अहिंसा से कैसे होगा, इसकी भी खोज हो रही है। इस वर्ष गांधी जन्म-शताब्दी होने के कारण इन अध्ययन-कार्यों को स्वाभाविक ही बढ़ावा मिला है।

भारत के शांति-प्रेमियों को और सर्वोदय आन्दोलन को इस अधिवेशन से क्या सीखना चाहिए? युद्ध-विरोध का विचार भारत में जोरों से फैलना चाहिए। पाकिस्तान या चीन से लड़ाई शुरू होने पर देश में जो युद्ध-ज्वर पैदा हुआ था, उसे शांति एवं अहिंसा का परिचायक तो हरगिज नहीं कह सकते। अखिल भारत शान्तिसेना मण्डल ने कई वर्षों पूर्व तय किया था कि अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध-विरोधक संघ की भारतीय शाखा के रूप में भारतीय शान्तिसेना को मान लिया जाय। इस अधिवेशन में वैधानिक रूप से इस अन्तर्राष्ट्रीय संगठन ने उसे स्वीकृति दी। इसलिए युद्ध-मात्र के विरोध का प्रचार कार्यकर्ताओं में और जनता में शान्ति-सेना को करना चाहिए। हमारे सब संगठनों में नवजवानों को अधिक मौका मिलना चाहिए। पश्चिम में शान्ति का काम ३० साल के नवजवान ही ज्यादातर कर रहे हैं, प्रमुख जिम्मेदारी के पदों को वे ही सँभाल रहे हैं। साथ-साथ हमको यह भी प्रयत्न करना है कि दुनिया के कई हिस्सों में नागरिकों के अभिक्रम द्वारा आन्तरिक शान्ति बनाये रखने का शान्तिसेना का कार्यक्रम और ग्रामदान-सरीखा बँटवारे का, विषमता मिटाने का एवं समुदाय बनाने का कार्यक्रम अपनाया जाय। विधायक एवं निरोधक दोनों तत्त्वों के मिलन से ही शान्ति-आन्दोलन समग्र बनेगा।●

विनोबाजी की तृतीय उड़ीसा-यात्रा

ग्रामदान-प्राप्ति के काम में तीव्रता लाने तथा अन्य कुछ मसलों पर चर्चा करने के लिए सर्वोदय आन्दोलन में लगे उड़ीसा के प्रमुख ९ कार्यकर्ता विनोबाजी से अगस्त के प्रथम सप्ताह में रांची में मिले। चर्चा के दौरान उड़ीसा के साथियों ने विनोबाजी से उड़ीसा आने का आग्रह किया और उन्होंने उस आग्रह को स्वीकार कर लिया। चूंकि ९ प्रतिनिधि मिलने गये थे इसलिए ९ दिन का समय बाबा ने उड़ीसा के लिए दिया। इस तरह विनोबाजी की उड़ीसा की तृतीय-यात्रा का कार्यक्रम २८ अगस्त से ६ सितम्बर १९६९ तक निश्चित किया गया।

२८ अगस्त को बिहार और उड़ीसा की सीमा पर तिरिंग में प्रवेश के कोने-कोने से आये रचनात्मक कार्यकर्ता तथा हजारों का जन-समूह विनोबाजी के आगमन की प्रतीक्षा उत्सुकता से कर रहा था। बारिश के बावजूद लोग विनोबाजी का स्वागत करने के लिए उतावले हो रहे थे। विनोबाजी के स्वागत-स्थान पर पहुँचते ही जन-समूह उमड़ पड़ा। प्रदेश की रचनात्मक संस्थाओं की ओर से उड़ीसा भूदान यज्ञ समिति के अध्यक्ष श्री नन्दकिशोर दास ने सूत की माला पहनाकर विनोबाजी का स्वागत किया। उड़ीसा सरकार की ओर से उपमंत्री श्री कार्तिकचन्द्र मांझी भी स्वागत के लिए उपस्थित थे। स्वागत के पश्चात विनोबाजी ने कहा कि यह मेरी उड़ीसा की तृतीय यात्रा है। उड़ीसा के लोग पराक्रमी हैं। यहाँ के लोग चाहेंगे तो उड़ीसादान जल्द-से-जल्द पूरा हो जायगा।

रायरंगपुर की आमसभा में करीब दस हजार लोग विनोबाजी को सुनने के लिए शान्ति से बैठे थे। विनोबाजी ने कहा—'ग्रामदान की प्रेरणा यहाँ के पराक्रमी लोगों को मिलेगी। मैंने भिन्न-भिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न गुण देखे, उन गुणों को ध्यान में लेकर उन प्रान्तों का गुण-वर्णन करता हूँ। उड़ीसा का वर्णन करता हूँ कि उड़ीसा यानी पराक्रमी लोग। पराक्रमी लोगों का यह प्रदेश है। सब लोग काम में लग जायें तो महीने दो महीने में सारा उड़ीसा ग्रामदान में ला सकते हैं।

करंजिया में कुछ शिक्षक और विद्यार्थी विनोबाजी से मिलने के लिए आये थे। उन लोगों के बीच विनोबाजी ने कहा—'हिन्दुस्तान की हालत देख लीजिए। अगर मैं पाकिस्तान चला जाऊं पंजाब, सिंध, फ्रन्टियर में, तो मेरे भाषण का अनुवाद नहीं करना पड़ेगा, और यह है हिन्दुस्तान, यहाँ अनुवाद करना पड़ता है। इतनी भयानक अवस्था है, २१ साल के स्वराज्य में भी हिन्दी नहीं सीखी गयी।"

बारीपदा में महिलाओं के बीच बोलते हुए उन्होंने कहा—"एक बात मैं महिलाओं के सामने रखना चाहता हूँ। महात्मा गांधी ने आखिर में कहा था कि लोक सेवक संघ बनाओ। उनकी इच्छा थी कि कांग्रेस लोक सेवक संघ में परिवर्तित हो। पार्टियों में न पड़कर पार्टियों से मुक्त लोक सेवक संघ बने। यह उनकी इच्छा थी जिसे उन्होंने मरने के एक दिन पहले लिखी थी, लेकिन उनके साथियों ने माना नहीं, और आज देश में अनेक पार्टियाँ हैं, जिसमें कांग्रेस भी एक पार्टी है। सारे देश को जोड़नेवाली जो लोक-सेवक-संघ की कल्पना उनकी थी, वह ऐसी ही रह गयी। मेरे मन में आता है कि अगर महिलाएँ यह काम उठा लें—लोक सेवक संघ का—तो बहुत बड़ी बात होगी। राजनीति से मुक्त रहकर अगर जगह जगह महिलाएँ लोक सेवक संघ बनायें और लाखों महिलाएँ उसमें शामिल हों तो महिलाओं की तारिणी शक्ति प्रकट हो सकती है।"

बारीपदा में विनोबाजी का व्यस्त कार्यक्रम रखा गया था। कभी शिक्षकों के बीच, कभी राजनीतिज्ञों के बीच, तो कभी महिलाओं के बीच। उड़ीसा प्रदेश-दान का आवाहन उन्होंने किया। शिक्षा-वर्ग के बीच आचार्य-कुल का विचार पेश किया। उन्होंने कहा—"श्रमिकों की श्रम-शक्ति बढ़ाने के लिए यह ग्रामदान का जोरदार आन्दोलन चल रहा है। पर आप लोगों की दूसरी शक्ति है ज्ञान-शक्ति, श्रमिकों की श्रम-शक्ति तथा शिक्षकों की ज्ञान शक्ति इकट्ठा हो जाय तो भारत की ताकत बढ़ेगी। शिक्षकों की ज्ञान-शक्ति इकट्ठा करने की कोशिश बाबा दो साल से कर रहा है।"

विनोबाजी की इस उड़ीसा-यात्रा के दौरान बारीपदा (मयूरभंज) में प्रान्तीय गांधी जन्म शताब्दी समिति तथा उत्कल सर्वोदय मंडल की बैठकों का आयोजन किया गया था। विनोबाजी के सान्निध्य में आन्दोलन के भावी कार्यक्रम पर गहराई से चर्चा हुई। प्रदेश के क्षेत्रीय संगठकों का एक सेमिनार भी उत्कल खादी-मंडल ने आयोजित किया था। सेमिनार में खादी कमीशन के आई० डी० पी० के इन्चार्ज मेम्बर श्री मनमोहन चौधरी तथा स्टेट कमीशन आफिस के डाइरेक्टर श्री मूर्तिजी भी उपस्थित थे। बारीपदा में ही ५-६ सितम्बर, १९६९ को प्रान्तीय सर्वोदय-सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसमें लगभग ३०० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसके अलावा प्रदेश के विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं के प्रमुख कार्यकर्ता भी उपस्थित थे।

प्रान्तीय सर्वोदय सम्मेलन में आये हुए प्रतिनिधियों को सम्बोधित करते हुए विनोबाजी ने कहा—"हमारी ९ दिन की इस यात्रा का उत्तम आयोजन आप लोगों ने किया। मयूरभंज जिले में ग्रामदान-प्राप्ति का जोरदार अभियान चलाया तथा प्रान्तीय सर्वोदय सम्मेलन भी बुलाया। इस प्रदेश में शक्ति है। यह पराक्रमी प्रदेश है। मैं तो यहाँ सिर्फ मित्र मिलन के लिए आया था।" श्री मनमोहन भाई के सुझावानुसार खादी के बारे में भी विनोबाजी कुछ बोले। उन्होंने कहा—"एक जगह सूत कते दूसरी जगह वह बुना जाय, और तीसरी जगह वह बेचा जाय यह जो तरीका है वह तरीका पुराना हो गया। यह भाग चलना नहीं।"

भूदान-यज्ञ सोमवार, ६ अक्तूबर, '६९

विनोबाजी ने कहा—"यहाँ ग्रामदान-ग्रान्दोलन के स्फूर्ति-स्थान बापा (गोप बाबू) थे। बापा गये तो बापी (नव-बाबू) रहे। बापा और बापी के बीच कोई फरक नहीं है। आपका मार्गदर्शन करने के लिए वे सिद्ध हैं। उन्होंने सुनाया कि उनको जगह-जगह बुलाया जाता है तो ना नहीं कहते। आप भी बुलायेंगे तो ना नहीं कहेंगे।

सर्वोदय सम्मेलन में राज्यदान का संकल्प पुनः दोहराया गया। राज्यदान-प्रस्ताव में कहा गया कि—"२ अक्तूबर, १९६९ तक प्रदेशदान पूरा करने का संकल्प मई, १९६८ के सर्वोदय सम्मेलन में लिया गया था पर कार्य-संयोजन का मूल्यांकन करते हुए साथियों को महसूस हो रहा है कि २ अक्तूबर, १९६९ तक राज्यदान को सफल करना सम्भव नहीं होगा। अतः यह सभा उड़ीसा के सर्वोदय कार्यकर्ताओं तथा इस आन्दोलन के प्रति सहानुभूति रखनेवाली जनता से निवेदन करती है कि वे उड़ीसा राज्यदान आन्दोलन को भू-क्रान्ति-दिवस १८ अप्रैल १९७० तक सफल बनाने के लिए प्रयत्नशील हों।"

मयूरभंज जिलादान की मंजिल के करीब पहुँच चुका था इसलिए विनोबाजी के समय का ज्यादा-से-ज्यादा उपयोग इस जिले में किया गया। प्रदेश के विभिन्न जिलों से लगभग १५० कार्यकर्ता अपनी पूरी शक्ति और श्रद्धा के साथ ग्रामदान-प्राप्ति के काम में जुट गये।

मयूरभंज जिले की जनसंख्या १२ लाख, क्षेत्रफल ४०२१ वर्गमील, गाँवों की संख्या ३९२३ और प्रखंडों की संख्या २६ है। जिले में चार सबडिवीजन—कप्तीपदा, बामनघाटी, पंचपिडी, तथा सदर बारीपदा हैं। जिले के कुल २६ प्रखंडों में से १९ प्रखंडदान में आ चुके हैं। यानी जिले के कुल ३६२५ आबाद गाँवों में से २९१५ गाँव ग्रामदान में आ चुके हैं। २०९ गाँवों की जमीन का वितरण हो चुका है। २२ गाँवों को कनफरमेशन मिल चुका है और इन गाँवों की खेती के विकास के लिए उत्कल भूदान-यज्ञ समिति के मार्फत उड़ीसा सरकार की ओर से ५२९५० रुपये मिल चुके हैं। मयूरभंज जिलादान ५ सितम्बर, १९६९ को विनोबाजी को अर्पण करने की योजना बनायी गयी थी पर ५ प्रतिशत की कमी रह जाने की वजह से जिलादान की विधिवत घोषणा नहीं की गयी।

मयूरभंज जिले में सर्वोदय में पूरा समय देनेवाले कार्यकर्ता चार-पाँच से ज्यादा नहीं हैं। पर वहाँ के एक नवयुवक कार्यकर्ता श्री प्रशान्त कुमार महान्ति एकाग्र रूप से इस काम में लगे हैं। इस वजह से वहाँ समाज के हरेक स्तर से सैकड़ों लोग इस आन्दोलन को आगे बढ़ाने में जुट गये हैं। उपरोक्त चार-पाँच पूरा समय देनेवालों के अलावा जिलादान की मंजिल तय करने में कस्तूरबा स्मारक ट्रस्ट की बहनों, नव-जीवन मंडल, उत्कल सर्वोदय मंडल, उत्कल गांधी स्मारक निधि, उत्कल भूदान यज्ञ समिति, नारायणपटना क्षेत्र समिति, व्योपारीगुडा क्षेत्र समिति, शिक्षक-वर्ग तथा सरकारी अधिकारियों आदि का सहयोग सराहनीय रहा। यह उन सबके लिए गौरव की बात तो है ही, लेकिन उससे भी अधिक गौरव की बात आन्दोलन के लिए है कि यह स्थानिक जन-शक्ति से सम्भव हुआ है।

आगे की व्यूह-रचना

प्रदेश में आन्दोलन को गति देने तथा प्रेरणा प्रदान करने की दृष्टि से श्री जयप्रकाश नारायण ने १७ से २३ नवम्बर तक का समय उड़ीसा को दिया है। नवम्बर तक एक-एक जिला के बदले कई जिलों में एक साथ सघन अभियान शुरू करने की योजना बनायी गयी है। प्रदेश को तीन क्षेत्र में बाँटकर काम शुरू किया जायगा। पश्चिमी क्षेत्र के भुवनेश्वर और ढेंकानाल तथा पूर्वी क्षेत्र के फुलबाणी, गंजाम जिलों में ग्रामदान प्राप्ति का अभियान चलाया जायगा। उत्तर पश्चिम क्षेत्र—सम्बलपुर, सुन्दरगढ़, बलांगीर आदि का काम उसके बाद हाथ में लिया जायगा। ग्रामदान क्षेत्र के स्थानिक कार्यकर्ताओं को ग्रामदान प्राप्ति के काम में लगाने का सौंपा गया है। श्री जयप्रकाश नारायण की उड़ीसा-यात्रा के पहले उपरोक्त जिलों को पूरा करने का प्रयत्न होगा। स्थानिक-कार्यकर्ता निकालने के लिए गोष्ठी तथा शिविर आदि का आयोजन किया जायगा। २ अक्तूबर के लिए ग्रामदानी गाँवों के लिए एक संकल्प-पत्र तैयार किया गया है। वह एक प्रतिज्ञा के रूप में है। कोरापुट जिले में पुष्टि का काम पूरा करने की योजना बनायी गयी है। उपरोक्त सारी योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए पैसे की दिक्कत का अनुभव यहाँ के साथी कर रहे हैं।

उपरोक्त व्यूह-रचना को विनोबाजी ने भी पसन्द किया और कहा—"पूरा प्रान्त बहुत फैला हुआ है, प्रान्त छोटा है पर फैला हुआ है। इसलिए क्षेत्र बनाकर काम करने की स्ट्रेटजी अच्छी है। ग्राम जनता इस काम को उठा ले उससे पहले शिक्षक-वर्ग इस काम को उठा लें।"

६ सितम्बर को ढाई बजे दिन में विनोबाजी बारीपदा से बिहार के लिए रवाना हुए। उड़ीसा के कार्यकर्ता भाव-भीनी विदाई देने के लिए खड़े थे। कइयों की आँखें गीली हो रही थीं। उनकी श्रद्धा और आशा का केन्द्र आज उनको छोड़कर बिहार जा रहा था इसलिए आँखें गीली होना स्वाभाविक ही था।

शाम को ५ बजे विनोबाजी के चाकुलिया (बिहार) पहुँचते ही प्रकृति ने भी ठंडी तेज हवा और वर्षा के साथ उनका स्वागत किया। उड़ीसा के ३२ कार्यकर्ता चाकुलिया तक बाबा के साथ आये थे। श्री मनमोहन भाई ने बाबा से कहा—"हम सब ३२ लोग आये हैं, अब आयन्दा आपको ३२ दिन का समय उड़ीसा को देना होगा।" यह सुनकर बाबा हँसने लगे।

और अब 'तूफान' के प्रारम्भक की ९ दिन की उड़ीसा-यात्रा से प्रेरणा लेकर कार्यकर्ता श्रद्धा और विश्वास के साथ बिना थके राज्यदान का संकल्प पूरा करने में हौसले के साथ जुट गये हैं।

कटक — गायत्रीप्रसाद शर्मा

१८-९-'६९

कि हम लोग भूदान-ग्रामदान नहीं चाहते। वर्षा के कारण यहाँ की ग्रामसभा छोटी के कन्या विद्यालय में रखी गयी थी और वे सारे आदिवासी लोग वहाँ नहीं पहुँच पाये थे। इसलिए उनके नेता श्री सायमन पाहन और बलदेव सिंह मुंडा आदि आये और उन्होंने विनोबाजी से प्रार्थना की कि वे बिरसा कालेज चलें और आये हुए आदिवासियों को दर्शन दें। शाम के ६ बजे थे, विनोबाजी सोनेवाले थे, परन्तु उनकी बातों को स्वीकार करके कालेज पहुँचे और उन्हें अपना प्रेम और करुणा का सन्देश सुनाया। श्री सैमुवल पाहन ने उसका अनुवाद किया। सभी आदिवासी शान्ति से सुनते रहे। विनोबाजी के जाने के बाद उनके नेता ने कहा 'जय जगत की जय!' सब लोगों ने उसको दुहराया। फिर पूछा कि 'ग्रामदान करेंगे?' सबने हाथ उठाकर अपनी भाषा में कहा, 'नहीं!' दूसरे दिन उनके नेताओं ने कई प्रश्न विनोबाजी से पूछे जिनका संक्षेप में विनोबाजी ने इस प्रकार उत्तर दिया :

प्रश्न : पहली बात है कि बीसवें हिस्से की जो जमीन मिलेगी वह गैर आदिवासियों में बँट जायेगी, क्योंकि हमारे यहाँ आदिवासियों में भूमिहीन करीब-करीब नहीं के बराबर हैं, और दूसरी बात है कि अभी हमारे यहाँ भूमिकर मुंडा (हेड मैन) इकट्ठा करता है और यह उसका वंशानुगत अधिकार है, इस पर ग्रामसभा बन जाने के बाद धक्का लगेगा।

विनोबा : दोनों में स्वार्थ है, एक में व्यक्ति का और दूसरे में कौम का। दोनों में परमार्थ नहीं है। अब जहाँ तक कौम का सवाल है, वह सुरक्षित है। क्योंकि हमने कह दिया है कि जो आदिवासियों की जमीन होगी वह आदिवासी में ही बाँटी जायेगी। और दूसरा रेंट वसूल करने का है। आज वह सरकार का एजेण्ट है, आगे वह ग्रामसभा का एजेण्ट हो जाय। अगर गाँव की सभा में इकट्ठा हो जाय तो ग्रामसभा के नाम से उसका रेंट इकट्ठा होकर जायेगा। ग्रामसभा यह कर सकती है कि उसमें जो आपका मुखिया होगा उसको इकट्ठा करने का भाग सौंप सकती है और उसमें आज जो मुखिया को मिलता है वह मुखिया को मिले। उसका एक हिस्सा वह उस आमदनी में से ग्रामसभा को देना स्वीकार कर सकता है।

प्रश्न : छोटानागपुर टेनेंसी एक्ट में जो अधिकार आज सुरक्षित हैं उसमें ग्रामदान के द्वारा कोई खतरा प्राप्त होगा?

विनोबा : उस एक्ट के अनुसार जो भी अधिकार आपको प्राप्त हैं वे ग्रामदान के बाद भी आपको सुरक्षित रहेंगे। उसमें कोई दखल ग्रामदान के द्वारा होगा, ऐसी शंका नहीं करनी चाहिए।

प्रश्न : हमारे आदिवासी भाई चाहते हैं कि जो गैर-आदिवासी हैं वे हमारे यहाँ से चले जायँ।

विनोबा : मुंडा लोग अलग रहना चाहते हैं, और जो बाहरी लोग हैं उनको हटा देना चाहते हैं, यह ख्याल गलत है। इससे आप अपने क्षेत्र से बाहर एक कदम भी नहीं जा सकते हैं। इसमें आप सोचेंगे कि पायेंगे? वह जो दूसरे लोग होंगे, वे ग्रामसभा के मातहत होंगे। उन्होंने लिख दिया होगा कि हम ग्रामसभा के मातहत होंगे। हम अपनी जमीन का २०वाँ हिस्सा देंगे, मिलकियत ग्रामसभा में समर्पित कर देंगे। जब ऐसे लोगों पर भी आप विश्वास न रखें और उनको जाने के लिए कहें तो आप किसी दूसरे स्थान में नहीं जा सकते। इसमें आपको क्या फायदा होगा? इससे भारत के टुकड़े होंगे। मान लीजिए इस तरह से हुआ, आप कहें कि हमारी कौम के अलावा और कोई नहीं यहाँ रहेगा तो आपकी कौम का कोई बड़ा आफिसर या मंत्री वगैरह नहीं बन सकता। आपकी कौम का कोई आदमी प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति नहीं बन सकता। क्योंकि आपको वोट नहीं मिलेगा। ऊपर के चुनाव में वह नहीं आ सकेगा। इसलिए आपका आदमी आगे नहीं बढ़ सकेगा। फिर क्रिश्चन लोग भी तो बाहर से आये हैं। क्या उनको भी हटायेंगे? समझना चाहिए कि आज तो चन्द्र के साथ हमारा सम्बन्ध बन रहा है। जो आपका भाई बनना चाहते हैं, आपके साथ रहना चाहते हैं—ऐसा अगर होता कि वे लोग ग्रामदान में शामिल ही न हों तो दूसरी बात है—ग्रामसभा में शामिल होने को राजी हैं, आपके साथ प्रेम से रहने को राजी हैं, सब मिलकर एक परिवार के समान रहने को राजी हैं, तो भी उनको आप कहें कि आप यहाँ से चले जायँ तो आप उनको कानूनन हटा नहीं→

सकते। अगर जबर्दस्ती करेंगे तो मिलीटरी आपके खिलाफ आयेगी। आपका अनुपात और उनके सामने नहीं चलेगा और फिर आप लोग दबाये जायेंगे। आप अगर गैर आदिवासियों को—जो कि प्रेम के साथ रहने को राजी हैं, दान देने को राजी हैं, उनको भी नहीं चाहते—तो मैं अपना आन्दोलन यहां से हटा लूंगा और जाहिर करूंगा कि इनको गांव से बाहर कोई हक नहीं मिलना चाहिए। इसमें आपकी ही हानि है।

प्रश्न—हमारे यहां गांव का मुखिया 'हेड मैन' माना जाता है जिसका चुनाव नहीं करना पड़ता। इसमें चुनाव का तत्व गांव में दाखिल नहीं होता। लेकिन ग्रामदान के बाद ग्रामसभा के अध्यक्ष के चुनाव में वह पद्धति खत्म हो जायेगी।

विनोबा—वंशानुगत जो मुखिया होता है वह भला होगा तो चुनकर आयेगा। सबकी राय जिसके साथ होगी, वह चुना जायगा। अगर मान लीजिए आपके अनुसार में एक बहुत सज्जन आदमी है और वह गैर मुखिया है तो वह चुना जायेगा। उसके हाथ में अधिकार तो है नहीं। क्योंकि जिस किसी बात का फैसला होगा वह सब मिलकर जो तय करेंगे वही होगा। गांव में ज्यादातर लोग खुश हैं उस हालत में भी मुखिया आयेगा। मान लीजिए दूसरा है, जो बहुत ही सज्जन है, और लोग उसको चाहते हैं तो वही चुनकर जायेगा। वह अगर आयेगा तो आपका क्या बिगड़ेगा?

प्रश्न—हम देखते हैं कि हमारे आदिवासी भाइयों को यहां नौकरी नहीं मिलती है और मिलती भी है तो बहुत ही कम। बहुत से शिक्षित नवयुवक बेकार हैं। इसका क्या हल है?

विनोबा—बेकारी की समस्या के लिए एक उपाय तो यह है कि सबके काम पैदा किए जायें। दूसरा यह है कि इनको बाहर भी काम मिलना चाहिए। दूसरों को यहां आने का मौका देते हैं तो आपको बाहर जाने का मौका मिल सकता है। जो लोग मैट्रिक पढ़ लेते हैं, वह पढ़ाई के साथ कुछ काम सीखें तो अच्छा होगा। सरकार में कुल ६० लाख लोग नौकर हैं। और यहां पढ़े-लिखे जो मैट्रिक से ऊपर हैं, वे ३ करोड़ लोग हैं। ३० साल में २ लाख लोग रिटायर होते हैं, तो हर साल २ लाख लोगों को नयी नौकरियां मिलेंगी। मान लीजिए कुछ कोशिश करके १ लाख जगह और निकाली गयीं, तो कुल ३ लाख लोगों को नौकरियां मिलेंगी और नौकरी चाहनेवाले लोग ३ करोड़ हैं। तो १०० के पीछे केवल एक को ही नौकरी मिलेगी। इसलिए केवल पढ़ना नहीं, बल्कि उसके साथ-साथ कुछ काम भी सीखें। इसके बिना इसका हल नहीं होगा। और यह केवल आपकी समस्या नहीं है बल्कि सारे भारत की समस्या है।

प्रश्न—आदिवासियों को जो सुरक्षित स्थान की सुविधाएं उपलब्ध हैं वे कब तक मिलती रहेंगी?

विनोबा—'सुरक्षित स्थान' के बारे में ऐसा है कि आप लोग जब तक चाहेंगे तब तक वह रहेगा।

अन्त में नेताओं ने कहा हमारा समाधान हो गया। दूसरे दिन अपने लोगों में बात करके लौटे और विनोबाजी से और झारखंड के नेता ने कहा कि जनता जनार्दन का फैसला है—'असहयोग'। पूछने पर इसका कोई कारण नहीं बता सके।

समर्थन और सक्रियता

यहां पर उस क्षेत्र के बिरसासेवा दल के प्रमुख संगठक श्री थियोफिल कन्डूलना विनोबाजी से मिले और उन्होंने भी करीब-करीब वैसे ही प्रश्न पूछे, जिनका जवाब बाबा ने दिया। उन्हें भी समाधान हुआ। उनके दिमाग में एक बात साफ थी कि राजनैतिक पक्षों में फंसे हुए नहीं होंगे। हमें पक्षों से अलग रहकर सामाजिक काम करते रहना चाहिए। उनका कहना था कि बिरसासेवा दल सामाजिक संस्था है। आदिवासियों की जो छिनी हुई जमीनें हैं, उनका जो शोषण होता है, उन पर अत्याचार होते हैं, उनसे उनको बचाने का और गलत ढंग से आदिवासियों की दखल की गयी जमीनें उन्हें वापस दिलाने का काम यह संस्था करती है। ग्रामदान आन्दोलन में हम जो चाहते हैं वह काम सुगमता से और संगठित ढंग से हो सकेगा ऐसा विश्वास होता है। वे पूर्ण सन्तुष्ट होकर गये। और दूसरे दिन अपने १०-१५ साथियों को ले आये। उन्होंने अलग ढंग से बहुत प्रश्न पूछे और समाधान प्राप्त किया। अन्त में खूंटी अनुमंडल ग्रामदान प्राप्ति समिति बनी। सुखिया पाहन, अध्यक्ष, वीर बिरसा दल और थियोफिल कन्डूलना, संगठक बिरसासेवा दल, दोनों क्रमशः समिति के अध्यक्ष और महामंत्री बने।

आदिवासी क्षेत्र में ग्रामदान अधिनियम में दो संशोधन करने आवश्यक समझा गया—(१) आदिवासियों की जमीन में से बीसवां हिस्सा जो ग्रामसभा को मिलेगी, वह आदिवासी भूमिहीन या अल्प भूमिवान में बंटेगी, जिससे उनकी भूमि गैर आदिवासियों में न जाय। (२) खुन्टकट्टी और भुइंहरी जमीनें जो बेची नहीं जाती हैं, वे ग्रामसभा की अनुमति से भी दी नहीं जायेंगी। इन दो संशोधनों से आदिवासियों के दिमाग में जो डर था उसका निराकरण हो जाता है। (छोटानागपुर टेनेंसी एक्ट बना हुआ है जिसके द्वारा आदिवासियों की भूमि का संरक्षण किया गया है। उसकी मुख्य बात है कि आदिवासियों की जमीन बेची नहीं जायेगी। यदि किन्हीं अनिवार्य कारणों से बेचना हो तो वह डिप्टी कमिश्नर की इजाजत से ही बेची जा सकती है।) ग्रामदान अधिनियम में उपर्युक्त संशोधनों से उनके छोटानागपुर टेनेंसी एक्ट से संरक्षण में फर्क नहीं पड़ता और गांव-गांव संगठित और एक बन जाते हैं। छोटानागपुर टेनेंसी एक्ट के बावजूद आदिवासियों की जो जमीनें गैर कानूनी ढंग से दूसरों के पास गयी हैं उन्हें प्राप्त करने में भी उन्हें सुविधा हो जाती है क्योंकि ग्रामदान में गांव एक बन जाता है।●

बा-बापू जन्म-शताब्दी-समारोह

(२ अक्तूबर सन् १९६९ से २२ फरवरी सन् १९७०)

इस पर्व में गांधीजी का सन्देश घर-घर पहुँचाइए

ग्राम-स्वराज्य कायम करने की प्रेरणा जगाइए

* फिल्म—"गांधीजी के पथ पर", * प्रदर्शिनी सेट—"वेदों से गांधी-विनोबा युग"
* फोटोग्राफिक पोस्टर-प्रदर्शिनी सेट—"ग्राम-स्वराज्य", * स्लाइड्स,
* पुस्तकें एवं पोस्टर-फोल्डर, आदि प्रेरक सामग्री हेतु सम्पर्क-स्थान :

१. अपने प्रदेश का सर्वोदय संगठन
२. अपने प्रदेश की गांधी जन्म-शताब्दी समिति
३. गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति
टुंकलिया भवन, कुंदीगरों का भैरु, जयपुर-३ (राजस्थान)

राष्ट्रीय गांधी जन्म शताब्दी की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
टुंकलिया भवन, कुंदीगरों का भैरु, जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

आन्दोलन के समाचार

जयन्ती-समारोह

गत १० सितम्बर को श्री धीरेन्द्र भाई की ६१वीं जयन्ती श्रम-जयन्ती के रूप में और ११ सितम्बर को विनोबाजी की ७५वीं जयन्ती भू जयन्ती के रूप में देशभर में बड़े उत्साह एवं उल्लास के साथ मनायी गयी। समारोहों के समाचार बराबर आ रहे हैं। उद्योग आश्रम गांधी रोड, कुटियाणा में ११ सितम्बर को श्री दुलायलजी एवं श्री बबल भाई मेहता पधारे। वहाँ 'भाव साहित्य भण्डार' का उद्घाटन हुआ है, जिसमें गांधी एवं सर्वोदय-साहित्य के इच्छुक सज्जनों को साहित्य उपलब्ध हो सकेगा। बिहार के एक ग्रामदानी ग्राम धमना, मुंगेर जिला में झाझा प्रखण्ड के ग्रामदानी गाँवों की ओर से विनोबा-जयन्ती मनायी गयी। उसी समय यह तय किया गया कि २ अक्तूबर तक १०० ग्रामसभाओं का गठन और पुष्टि की जायगी। मथुरा (उ० प्र०) शहर के चम्पा अग्रवाल इण्टर कालेज में नागरिकों की ओर से आयोजित विनोबा-जयन्ती-समारोह को श्री श्यामाचरण शास्त्री ने सम्बोधित किया। गांधी-निकेतन आश्रम और सर्वोदय आश्रम-सादाबाद में भी समारोह हुए। ग्वालियर जिले के उवरा में ११ सितम्बर को तहसील स्तरीय गांधी-शताब्दी-सम्मेलन हुआ, जिसका उद्घाटन राज्यपाल श्री के० सी० रेड्डी ने किया। उन्होंने ग्रामस्वराज्य की पृष्ठभूमि और संभावनाओं पर प्रकाश डाला। भूदानपुरी, खादीग्राम (मुंगेर जिला) में भू-जयन्ती मनायी गयी जिसमें पारस्परिक एकता और शराबबन्दी का संकल्प किया गया। हरियाणा के जिवाना नामक गाँव में भी भू-जयन्ती मनायी गयी, इस अवसर पर लोक-सेवा-आश्रम के अध्यक्ष प० उत्तमचन्दजी ने ग्राम के आधुनिक सन्दर्भ में विनोबा की देन की चर्चा की। कार्यकर्ताओं ने आगे के काम की योजना बनायी।

श्री धीरेन्द्र मजूमदार की जयन्ती 'श्रमजयन्ती' के रूप में खादीग्राम में मनायी गयी। दस गाँव में ४४२ लोगों ने २ से ९ सितम्बर तक श्रम प्रतियोगिता में भाग लिया। इस अवधि में काटी गयी मिट्टी की आमदनी श्री धीरेन्द्र भाई को समर्पित की गयी। सिमुलतला (बिहार) क्षेत्र में श्रम-जयन्ती मनायी गयी। कई गाँवों में श्रमदान हुए। सायंकाल स्थानीय ग्रामभारती में श्री धीरेन्द्र भाई के दीर्घायु होने की कामना की गयी। सभा में क्षेत्र के काफी लोग इकट्ठा हुए। अन्त में ग्राम-स्वराज्य की स्थापना में तन-मन-धन से सहयोग करने का संकल्प लिया गया।

श्री विनय अवस्थी ने कानपुर से समाचार भेजा है कि श्री धीरेन्द्र भाई कानपुर के लाला लाजपत राय अस्पताल में कमर का दर्द बढ़ जाने से दाखिल हुए थे। कानपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति तथा स्थानीय प्रबुद्ध नागरिकों ने उनके जन्म दिवस पर अस्पताल में ही उनका अभिनन्दन किया।

श्री धीरेन्द्र भाई ने इस अवसर पर सन्देश देते हुए कहा कि लोकमानस को इस प्रकार शिक्षित होने की आवश्यकता है कि लोग तमाम ठेकेदार सेवकों से मुक्त हो सकें और साम्य तथा मैत्री ग्रामस्वराज्य की भूमिका में अधिष्ठित हो सकें। आपने कहा कि मुक्ति की इस क्रान्ति को वाहक गाँव की जनता को स्वयं बनना है। यदि कोई नेता या जमात गाँव को नमूना बनाने का प्रयास करेगी तो यह स्पष्ट समझना होगा कि वह विश्वमित्र की सृष्टि कर रही है।●

श्री धीरेन्द्र भाई का स्वास्थ्य

श्री धीरेन्द्र भाई की कमर का दर्द तेज हो गया था इसलिए उनका इलाज कानपुर के अस्पताल में हो रहा था। अस्पताल से निकलने के बाद वे ग्रामभारती, मधुबनी चले गये हैं। वहाँ वे पूर्ण विश्राम करेंगे। इस वक्त बैठने और चलने में उनको ज्यादा तकलीफ है, लेटे रहने में आराम रहता है। ३ अक्तूबर को कानपुर से वापस जाते समय उन्होंने बताया कि अगर दर्द कम रहा तो वे सर्वोदय सम्मेलन में आयेंगे।●

मध्यप्रदेश का चौथा जिलादान : भिण्ड

८८८ गाँवों में से ७६० गाँव ग्रामदान में शामिल

इन्दौर, २७ सितम्बर। प्राप्त जानकारी के अनुसार मध्यप्रदेश के राज्यदान-अभियान के अन्तर्गत भिण्ड का जिलादान सम्पन्न हो गया। जिले के कुल ८८८ राजस्व गाँवों में से ७६० ग्रामदान में सम्मिलित हो गये हैं। जिलादान के नियमानुसार जिले के ८५ प्रतिशत गाँव ग्रामदान में शामिल होना आवश्यक है। जिलादान घोषणा के क्रम में भिण्ड का जिलादान मध्यप्रदेश का चौथा जिलादान है। इसके पूर्व क्रमशः टीकमगढ़, पश्चिम निमाड़ तथा दतिया जिलादान घोषित हो चुके हैं।

भिण्ड जिले में चार तहसीलें हैं—भिण्ड, लहार, मेहगाँव तथा गोहद, जिसके अन्तर्गत ६ विकासखण्ड हैं। ये सभी अलग-अलग तहसीलदान और प्रखण्डदान हुए हैं।

चम्बल घाटी शान्ति समिति और भिण्ड जिला गांधी शताब्दी-समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं तथा ग्रामस्वराज्य-पदयात्री सेवकों के सक्रिय सहयोग से भिण्ड जिलादान की उपलब्धि हुई है, जो उल्लेखनीय है।

यह स्मरणीय है कि गत ६ अप्रैल, १९६९ से भिण्ड जिलादान के लिए ग्रामदान अभियान का श्रीगणेश हुआ था। गांधी-शताब्दी-वर्ष में भिण्ड जिलादान की घोषणा गांधीजी के सपनों के भारत के लिए ग्रामस्वराज्य की दिशा में ग्रामीणों द्वारा उठाये गये कदम के रूप में राष्ट्रपिता को एक उत्तम श्रद्धांजलि समझी जायगी। (सप्रेस)

उत्तरप्रदेश में दो जिलादान

२ अक्तूबर को तार से प्राप्त सूचना के अनुसार उत्तरप्रदेश के दो जिलों—आगरा और फर्रुखाबाद—का जिलादान सम्पन्न हुआ। इस प्रकार उत्तरप्रदेश में अब ५ जिलादान हो गये। आगामी सर्वोदय सम्मेलन तक और चार जिलों के जिलादान की सम्भावना है।

राँची से प्राप्त तार-सूचनानुसार बिहार का पन्द्रहवाँ जिला—सिंहभूम का भी जिलादान सम्पन्न हो गया है।

ग्रामदान-आन्दोलन

गाजीपुर (उत्तरप्रदेश) में जिलादान-प्राप्ति अभियान चल रहा है। अबतक की प्राप्त सूचनाओं के अनुसार १५ अक्तूबर तक जिलादान पूरा हो जायेगा। २२ सितम्बर तक इस जिले में ११४८ ग्रामदान, १२ प्रखण्डदान और तीन तहसीलदान हो चुके हैं। चौथी तहसील में अभियान चल रहा है। रायबरेली जिले के हरचन्दपुर ब्लाक में १० से १८ सितम्बर तक शिविर-अभियान हुआ। इस अभियान में जिला परिषद के शिक्षकों का मुख्य सहयोग मिला। फलस्वरूप १३५ ग्रामदान प्राप्त हुए। बलिया जिले में जिलादानोत्तर कार्य की दृष्टि से सघन रूप में प्रयास हो रहा है। अगस्त और सितम्बर में ४६२ रुपये की साहित्य-बिक्री हुई और 'भूदान यज्ञ' के १५, 'गाँव की आवाज' के ५ ग्राहक बनाये गये। ३ ग्रामसभाओं का निर्माण हुआ। श्री पचदेव तिवारी की सूचनानुसार ३ कालेजों में तरुण शान्तिसेना शिविर आयोजित हुए। आचार्यकुल का संगठन सुरिष्टपुरी इण्टर कालेज के श्री शिवकुमार राय कर रहे हैं।

सम्मेलन-समाचार बुलेटिन का एजेंसी नियम

• सारा व्यवहार नगद किया जायगा।

• बची प्रतियाँ वापस नहीं होंगी, इसलिए जितनी बेच सकें, उतनी ही प्रतियाँ खरीदें।

• बुलेटिन की कीमत एक प्रति की १० पैसे होगी, जिसमें २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायगा।

• १० रुपया पेशगी जमा करने पर १२५ प्रतियाँ बिक्रयार्थ दी जा सकेंगी। प्रतियों की संख्या के अनुसार ही पेशगी की रकम घटेगी-बढ़ेगी।

• पिछला हिसाब साफ होने पर ही अगले अंक की प्रतियाँ दी जायेंगी।

• एक दिन पूर्व ही जितनी प्रतियों की आवश्यकता हो, उसकी सूचना कार्यालय में देना प्रकाशक और प्रसारक दोनों के लिए सुविधाजनक रहेगा।

इस अंक में

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ४१८५

वार्षिक शुल्क १० रु०, (सफेद कागज १२ रु०, एक प्रति १५ पैं०), विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १६ अंक : २

सोमवार १३ अक्तूबर, '६६

अन्य पृष्ठों पर

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ४१८५

ईश्वर

सब जीव एक वर्तुल की परिधि पर खडे हैं। ईश्वर बीच के मध्य-बिन्दु पर है। मान लीजिए कि परिधि पर क, ख, ग, इस प्रकार तीन व्यक्ति खडे हैं। उन तीनों का परस्पर-अन्तर ज्यादा-कम हो सकता है, लेकिन ईश्वर से इन तीनों का अन्तर एक समान ही है। ये व्यक्ति परिधि के ऊपर चाहे जिस बिन्दु पर हों, पर परिधि और मध्य-बिन्दु के बीच का अन्तर तो सबका समान ही होगा।

ईश्वर अनन्त गुणों का भंडार है। एक-एक जीवात्मा को एक-एक गुणांश प्राप्त है। किसीको धैर्य का गुण, किसीको करुणा का, तो किसीको सत्य-निष्ठा का गुण मिला हुआ है। जिसमें प्रेम का अंश है, वह अपने इस गुण का विकास करे, उसे बढाता जाय, प्रेम-गुण की पुष्टि करता जाय। इस प्रकार करते-करते वह ईश्वर में लीन हो जायगा, क्योंकि उसके लिए ईश्वर प्रेममय है।

एक बहुत बड़े हौज में दूध है और एक लोटे में भी दूध है। दोनों के रंग, रूप, स्वाद समान हैं। लेकिन दोनों की शक्ति में फर्क है। इसी प्रकार ईश्वर में सब गुण हैं और हर एक गुण पूर्ण है, जब कि जीवात्मा में एक गुण है और वह आंशिक है। तो प्रेम गुण का विकास करते-करते जहाँ उसे प्रेम की परिपूर्ण झाँकी मिलेगी वहाँ वह ईश्वर में लीन हो जायगा, और वहीं उसे सत्यनिष्ठा, करुणा, और दूसरे सब गुण भी मिल जायेंगे, क्योंकि ईश्वर के पास सब गुण हैं।

अतः अपने में कौनसे गुण हैं और कौनसे दोष हैं, उसका निरीक्षण करो। दोष असंख्य होंगे, गुण दो-चार होंगे। उनमें से कौनसा गुण सबसे अधिक है, यह समझकर उस गुण की उपासना करो। उस गुण में परमेश्वर को निरखो, उस गुण के द्वारा साधना करो। दोषों की उपेक्षा करो, उसके कारण ग्लानि नहीं होने दो, उनका चित्त पर असर मत होने दो। वरना अपनी सारी शक्ति जो हम अपने मुख्य गुण की परिपुष्टि के लिए लगा सकते थे, वह दोष की तरफ ध्यान देने में खर्च हो जायेगी। यह घाटे का सौदा हो जायेगा। यह साधना का मार्ग है। इसे योगशास्त्र में उपेक्षा कहते हैं।

ईश्वर के पास पहुँचने का मार्ग है अपने निज के गुण की वृद्धि। दूसरे के गुण देखकर वह मार्ग पकडने की कोशिश की तो रास्ता लम्बा हो जायेगा। भूमिति में कहते हैं न कि त्रिकोण की किन्हीं भी दो भुजाओं का जोड़ तीसरी भुजा से अधिक होता है। इसलिए दूसरे के गुण के लिए हम आदर रखें, दोषों की उपेक्षा करें, अपने में जो गुण नहीं है उन मामलों में दूसरों की मदद लें, और अपने गुण की वृद्धि करते जायें। संक्षेप में यह साधना है।

रांची (बिहार), ३०-९-'६९

विनोबा

सम्पादकीय

साथ रहने की बात

भारत के ५५ करोड वासी एक अखंड भारत में साथ रह सकेंगे या नहीं, रहना चाहते भी हैं या नहीं?

सारा सवाल साथ रहने का है, पडोसी और मित्र बनकर रहने का है। विभिन्न सामर्थ्य, विभिन्न निष्ठा, विभिन्न वर्ण, विभिन्न विचार के लोग एकसाथ कैसे रह सकेंगे, और सबको समाज का समान संरक्षण कैसे प्राप्त होगा, यह प्रश्न भारत में है, और तमाम दुनिया में है। अगर मनुष्य अपनी विभिन्नताओं, विशिष्टताओं को मानकर साथ रहने की कला नहीं विकसित करता तो क्या करेगा विज्ञान, और कैसे चलेगा लोकतंत्र? कैसे टिकेगी सभ्यता, और क्या होगा हमारा भविष्य?

अभी अहमदाबाद में साम्प्रदायिक दंगे हुए तो साम्प्रदायिक एकता का सवाल एक बार फिर नये सिरे से सामने आ गया है। जब कभी इस तरह के दंगे होते हैं तो दिमाग दौडता है कि दंगे क्यों होते हैं, और किस तरह उन्हें रोका जा सकता है। जाँचें पहले भी हुई हैं, और एक जाँच इस बार फिर होगी। लेकिन क्या होगा? अगर इतना ही होता कि ये उपद्रव गुण्डों के कारण होते हैं तो समस्या कुछ बहुत मुश्किल नहीं थी, और सरकार अपनी सैनिक शक्ति से उसे हल कर सकती थी, लेकिन बात गुण्डों का नाम ले लेने से नहीं खत्म हो सकती। सच बात तो यह है कि बात बहुत गहरी है। हमारे जीवन में हिंसा बर्फ की तरह जमी पडी है, जरा गर्मी मिली कि वह पिघल पडती है। बादशाह खाँ अपनी तपस्या से हमें कुछ बातों की याद दिला सकते हैं, किन्तु वे हमें बराबर याद रहेंगी इसकी वह क्या गारण्टी ले सकते हैं?

अब सवाल केवल हिन्दू-मुसलमान का नहीं रह गया है। वह तो है ही, और बहुत दिनों से है, लेकिन उसके अलावा उसी तरह के दूसरे सवाल भी पैदा हो गये हैं। सवर्ण-हरिजन, आदिवासी, गैर-आदिवासी, मालिक-मजदूर, पंजाबी-मद्रासी, और यहाँ तक कि शिक्षक और विद्यार्थी भी गुजराती-बंगाली साथ रह सकेंगे या नहीं? जातियों, भाषाओं, दलों और क्षेत्रों में जो अलगाव है वे भी उतने ही कठिन होते जा रहे हैं जितने हिन्दू-मुसलमान के। ये सब अलग-अलग अपनी अपनी विशिष्टताएँ लेकर एक भारतमाता की गोद में रह सकेंगे या नहीं? इनके भेद इस तरह विरोध का रूप लेते जा रहे हैं कि प्रश्न उठता है कि उनके मन में साथ रहने की बात भी है या नहीं। अगर नीयत हो तो रास्ता निकल ही सकता है।

पाकिस्तान बन जाने के बाद से अबतक का जो अनुभव हुआ है उससे यह आशा नहीं होती कि अलग हो जाने से कोई सवाल हल होता है। हिन्दुस्तान-पाकिस्तान बनने से दोनों, हिन्दू और मुसलमान, जनता को जो यातना सहनी पडी है वह अपनी जगह है। बात यहाँ तक पहुँची है कि दोनों देश पडोसी की तरह भी नहीं रह पा रहे हैं। तनाव के कारण दोनों का भयंकर आर्थिक अहित हो रहा है। इतना ही नहीं, जो कभी हिन्दू-मुस्लिम समस्या थी, और भारत की घरेलू समस्या थी, वह आज अंतरराष्ट्रीय समस्या बन गयी है, और कोई कह नहीं सकता कि यह समस्या किस वक्त क्या मोड लेगी।

जब अलग होने से सवाल नहीं हल होता, और यह तय है कि साथ रहना है, तो साथ रहने की बात सोचनी चाहिए, और साथ रहने का उपाय सोचना चाहिए। साथ रहने का सही उपाय अभी तक नहीं निकल सका है, यही जड है जहाँ से हिंसा फूटकर देश के सारे जीवन को दूषित कर रही है। हिंसा तब दबेगी जब साथ रहने का कोई उपाय निकलेगा। अगर हम चाहते हैं कि हिंसा खत्म हो तो जल्द-से-जल्द उपाय निकलना चाहिए।

अगर सभी समुदायों और व्यक्तियों को इज्जत और बराबरी की जिन्दगी देनी है—और उसको दिये बिना साथ रहना सम्भव नहीं है—तो आज के समाज को बदलना ही पडेगा। उसे कायम रखते हुए एकता और समरसता की बात कैसे सोची जाय? अंग्रेजों ने हिन्दू-मुसलमान को बाँटा लेकिन आज की राजनीति क्या कर रही है? जिस समाज में राजनीति उन्मादों पर चल रही हो, अर्थनीति होड और मुनाफाखोरी के सिवाय दूसरा कुछ जानती न हो, और शिक्षानीति जीवन के मूल्यों का नाम भूलकर भी न लेती हो, उस समाज में एकता और समरसता का क्या आधार होगा? नित्य के जीवन में एक-दूसरे के साथ रहने, खाने-पीने, मिलकर काम करने, हँसने और रोने, तथा एक-दूसरे को समझने और समझाने के अवसर न हों तो एकता कैसे आयेगी? आज की समाज-रचना में ये अवसर कहाँ हैं? देश के जीवन की मुख्य धारा में करोडों लोगों के लिए स्थल कहाँ है? जाहिर है कि बहिष्कृत लोग अपना सिर धुन रहे हैं और दूसरों का सिर तोड रहे हैं। जब गांधीजी ने हिन्दू-मुस्लिम एकता की बात कही थी तो एकता और समरसता की समाज-रचना की भी कल्पना की थी। कल्पना ही नहीं, उसकी पूरी योजना दी थी। जो समाज मनुष्य को मनुष्य न मानकर उसे छूत-अछूत, काफिर-म्लेच्छ, मालिक-मजदूर, आदि श्रेणियों में बाँटता है वह एकता की बात नहीं सोच सकता।

रोज के जीवन में एकता और सहकार की नींव ग्रामदान डाल रहा है। एकता और सहकार की व्यवस्था का नाम है ग्रामस्वराज्य। यह ठीक है कि शांति के लिए जो तात्कालिक उपाय सम्भव हैं वे किये जायँ—पर यह भी याद रखा जाय कि स्थायी शांति विधायक क्रान्ति से ही आयेगी। गांधी की क्रान्ति की कोशिश न हो, और गांधी का नाम लेकर शांति स्थापित कर ली जाय, यह सम्भव नहीं है। अब क्रान्ति बिना शांति नहीं।●

अशान्ति-शमन के लिए स्त्री-शक्ति का आह्वान

आप लोगों के दर्शनों से बहुत आनन्द होता है। हमारी बहनजी—देवकी बहन—ने हमें आग्रह किया कि हम यहाँ महिला कालेज में आ जायें तो हमने सहज ही मान लिया। गांधीजी के बारे में खास कुछ कहने के लिए मैं यहाँ नहीं आया हूँ। अब सोचता हूँ कि किस कारण मैंने यहाँ आने के लिए अनुमति दी। इसका मुख्य कारण यह दिखता है कि बोधगया में एक सम्मेलन हुआ था, जिसमें हिन्दुस्तान के अनेक चिन्तनशील सत्पुरुषों को बुलाया गया था। उसमें स्वामी शरणानन्दजी भी थे। और हमारी बहनजी, जिन्होंने हमें यहाँ निमंत्रित किया, वे भी स्वामी शरणानन्दजी के साथ उनकी सेवा में वहाँ उपस्थित थीं। तो मुझे सहज ही लगा कि स्वामी शरणानन्दजी जैसे महान पुरुष के साथ जिनका हार्दिक सम्बन्ध है, वह बुला रही हैं तो हाँ कहना चाहिए।

आप लोगों को स्वामी शरणानन्दजी का परिचय होगा। वे बीमारी में यहाँ राँची आकर रहे थे। वे प्रज्ञाचक्षु हैं याने शारीरिक दृष्टि उनको नहीं है, अन्धे हैं। लेकिन उनके अन्तःचक्षु खुले हुए हैं। मैंने ऐसे बहुत थोड़े लोग देखे हैं जिनका हृदय और दिमाग अत्यन्त साफ हो, जैसा स्वामी शरणानन्दजी का है। क्योंकि उनको शारीरिक दृष्टि नहीं है, अन्धे हैं, इसलिए वह क्रान्तदर्शी हैं। क्रान्तदर्शी याने यह जो हमारी आँखों के सामने भौतिक पर्दा है, माया का पटल है, उस मायापटल को छेदकर, भौतिक पर्दे को हटाकर उस पार का दर्शन, 'क्रान्त दर्शन' उनको है। उनकी संगति में जो-जो आयेंगे उन सबको उनकी आध्यात्मिक निष्ठा की छूत लगे बिना नहीं रहेगी। तो वह जो उनका स्मरण बहनजी के कारण मुझे हुआ उस वजह से मैंने यहाँ आना सहज स्वीकार किया।

गांधीजी के बारे में क्या कहा जाय? कहना कुछ भी जरूरी नहीं है और अत्यन्त जरूरी भी है। हम अपनी हृदय-शुद्धि करें। अन्तर्मुख होकर हम सोचें कि उन्होंने हमें क्या सिखावन दी थी और आज हम कहाँ हैं?

२१ साल हुए वह विदा हो गये। इन २१ सालों में हमने क्या-क्या किया और क्या-क्या नहीं किया? उनकी शिक्षा हमने कहाँ तक स्वीकार की, यह अन्तर्-परीक्षण करने की आज जरूरत है। व्याख्यानों की अब जरूरत नहीं है। आज की स्थिति में हमारी जो भूलें ध्यान में आयें उन्हें स्वीकार कर, उनकी सिखावन पर तुरन्त अमल करना चाहिए।

गांधी शताब्दी मनायी जा रही है। अनेक जगह गांधीजी के फोटो और मूर्तियाँ रखी जायेंगी, व्याख्यानबाजी की जायेगी। दिल्ली में बहुत बड़ी प्रदर्शनी की जा रही है, जिसमें करोड़ रुपये से कम खर्च नहीं हुआ होगा। और गांधीजी तो एक कौड़ी भी ऐसे ही खर्च नहीं करना चाहते थे, जो सीधे गरीबों को मदद न करें। लेकिन उनके नाम से प्रदर्शनी हो रही है और दुनिया भर के लोग उस प्रदर्शनी को देखेंगे! यह बड़ी लम्बी-चौड़ी है।

अजीब ढंग की गांधी-शताब्दी

लेकिन अजीब बात है कि गांधीजी की शताब्दी हमने दो महीने पहले एक अजीब ढंग से इन्दौर में मनायी और अभी अहमदाबाद में मना रहे हैं। इन्दौर कस्तूरबा-ट्रस्ट का मुख्य स्थान माना जाता है और यह कस्तूरबा का भी शताब्दी वर्ष है। दोनों का एक वर्ष में जन्म हुआ था। इस साल ठक्करबापा की भी शताब्दी है, जिन्होंने जगह-जगह हरिजनों और आदिवासियों की सेवा की। और श्रीनिवास शास्त्री, जो कि एक महान विद्वान थे और जिन्होंने हिन्दुस्तान की जिन्दगी भर वकालत की, उनकी भी शताब्दी इसी साल है। अगर हम केवल भारत के ही लोगों को गिनें तो ये नाम आते हैं। और यदि दुनिया के लोगों को गिनें तो लेनिन की भी शताब्दी इसी साल है।

दो महीने पहले जो दंगा इन्दौर में हुआ उसमें कई लोग मारे गये। यह इसी शताब्दी महोत्सव में हुआ और अभी अहमदाबाद में, जो महात्मा गांधी का मुख्य निवास-स्थान है, जहाँ उनका आश्रम है, जहाँ उनकी स्थापित की हुई विद्यापीठ है जहाँ आज भी उनके साथी रह रहे हैं, और जहाँ सरदार वल्लभभाई पटेल जैसे महान नेता काम करते थे, उस स्थान में आज जातीय दंगा हो रहा है, जहाँ ३००-४०० लोग मारे गये हैं, और हजारों लोग जख्मी हुए हैं। कई दिनों से आग लगाना आदि कार्य सतत चल रहा है, आज भी जारी है।

अब दिल्ली की प्रदर्शनी में जो भी परदेश के लोग गांधीजी के चित्र और उनके कार्य आदि का प्रदर्शन देखने आयेंगे वे सहज ही पूछेंगे कि यह प्रदर्शनी तो ठीक है, लेकिन अहमदाबाद में कौनसी प्रदर्शनी हो रही है?

यह अत्यन्त दुःखदायक घटना है। अपने देश के इतिहास में इतनी भयंकर घटना ऐसे मौके पर हुई, जिससे बहुत ही शर्मिंदा होना पड़ता है और जी चाहता है कि मुँह छिपायें और अगर कुछ कर नहीं सकते तो परमात्मा के पास जायें।

ऐसी हालत में हमको खुद अन्तर्-निरीक्षण करना चाहिए। राँची शान्ति के लिए बड़ा मशहूर था। लेकिन दो साल पहले यहाँ भी अजीब ढंग से दंगा हुआ। यह ठीक है कि शताब्दी-वर्ष में नहीं हुआ, लेकिन गांधीजी के भारत में तो हुआ। अब यह सारा क्या चल रहा है? अहमदाबाद भारत का एक सिरा। पश्चिम में गुजरात और पूर्व में असम, नागालैण्ड, मणिपुर। यहाँ भी दंगे हो रहे हैं? विद्यार्थियों के द्वारा अत्याचार हो रहे हैं। अभी इन्दिरा गांधी वहाँ गयी थीं, तो उनकी सभा में भी हुल्लड़बाजी की गयी। कई लोग वहाँ भी मारे गये। यह भारत की पूर्व दिशा का हाल है। पश्चिम में अहमदाबाद से लेकर पूर्व में मणिपुर तक

विनोबा

सारे देश में अन्दर-अन्दर अत्यन्त अशान्ति है। ऐसी हालत में गांधीजी के फोटो जगह-जगह लगाना हँसी-मजाक जैसा हो जाता है। गांधीजी यह जरा भी पसन्द नहीं करते कि सब ओर उनके फोटो टांगे जायें और लोगों को उनके चित्रों और मूर्तियों की अवमानना करने की आदत पड़े।

पैगम्बर की अद्वितीय मिसाल

मैं सोचता हूँ अनेक महापुरुषों के बारे में, तो जहां तक चित्र वगैरह का ताल्लुक है, मुहम्मद पैगम्बर की मिसाल अद्वितीय है। आप जानते हैं कि दुनिया के करीब *५० करोड़ मुसलमानों के वे आराध्य देव* हैं। वे बहुत बड़े नबी और बादशाह भी थे। दोनों हैसियत से अगर जरा भी इशारा करते या अनुकूल होते तो उनके हजारों चित्र, उनके जीवन को दिखानेवाले आज मिलते। जीसस क्राइस्ट के चित्र आप जगह-जगह देखते हैं। उनके फोटो तो नहीं लिये गये होंगे, लेकिन चित्रकारों द्वारा खींची हुई अनेक काल्पनिक फोटो लाखों की तादाद में मिलते हैं। जीसस क्राइस्ट के बहुत ही सुन्दर-सुन्दर चित्र बने हैं, तो कोई कारण नहीं था कि मुहम्मद पैगम्बर के चित्र न बनते। लेकिन उन्होंने अपने साथियों से कहा कि हम तो परमेश्वर के दास हैं, सेवक हैं, गुलाम हैं। हम तो मानव हैं। *मानव के चित्र और* मानव की मूर्तियां हरगिज नहीं होनी चाहिए। यह उन्होंने अपने साथियों को समझाया और परिणाम यह है कि मुहम्मद पैगम्बर का कोई चित्र आज नहीं मिलता।

यह बात मैंने आपसे इसलिए कही कि चित्र बनाना, स्मारक बनाना स्मारक का बहुत ही सस्ता तरीका है। इन दिनों तो स्मारक के लिए एक कौड़ी का भी खर्चा नहीं करना पड़ता। नाम रख दिये जाते हैं—*गांधी मार्ग, गांधी पार्क,* गांधी मैदान आदि-आदि। फिर अखबारों में खबरें आती हैं—"गांधी मार्ग में डाका पड़ा, पटना के गांधी मैदान में कत्ल हुआ।" अब मेरी समझ में नहीं आता कि किसी महापुरुष का नाम रास्ते को देने में क्या स्मारक होता होगा और लोक-जीवन पर क्या असर होता होगा और हृदय-शुद्धि में क्या मदद मिलती होगी। यह बिलकुल वाहियात बात है।

इस वास्ते मेरे प्यारे भाइयो और बहनो, हमें कुछ करना चाहिए। खास करके बहनों को अशान्ति-शमन का काम उठाना चाहिए। जहां अशान्ति होती है वहां अशान्ति को 'फेस' करें तो उनके दर्शन से ही अशान्ति हटेगी। अगर उनको मार भी खानी पड़ी तो उसके परिणामस्वरूप शान्ति होगी। इसीलिए जब मैं आज से ९ साल पहले इंदौर में कस्तूरबा ट्रस्ट के स्थान पर गया था तो अपने व्याख्यान में मैंने यह बात बहनों को समझायी थी कि आप आज जो लोक-सेवा का काम करती हैं—स्कूल चलाना, कहीं प्रसूति वगैरह में मदद करना आदि, वह तो मामूली काम है। उसे तो सरकार भी कर सकती है। कस्तूरबा ट्रस्ट की बहनों को दो काम करने चाहिए (१) अशान्ति-शमन और (२) अश्लीलता निवारण। समाज में अश्लीलता फैल रही है। विषय-वासना का सब दूर जोर चला है। उसके विरोध में बहनों को उठना चाहिए। ऐसी एक अपील अपन मातृ-स्थान में बाबा ने की। और खुशी की बात है कि उन लोगों ने उसे स्वीकार किया। *अब से कस्तूरबा-ट्रस्ट की बहनें* जगह-जगह शान्ति का काम करती हैं। उनको वैसी शिक्षा दी जाती है। यह एक बहुत बड़ा कार्य उनके द्वारा हिन्दुस्तान में हो रहा है। लेकिन वह बहुत छोटी-सी जमात है और इधर जगह-जगह साम्प्रदायिकता फैली है। उसके लिए कोई-न-कोई निमित्त होता है। सब बहनों को इस काम को उठा लेना चाहिए। कालेज की तालीम उनको मिलती है। तालीम पाकर बहनों की बुद्धि का विकास होगा, लेकिन उसके साथ-साथ बहनों को प्रत्यक्ष सेवा-कार्य करना चाहिए, मामूली सेवा नहीं।

सेवा दासी नहीं, रानी बने

मामूली सेवा तो दुनिया भर में चली है। मामूली सेवा में हिंसा बन्द करने की शक्ति नहीं है, लड़ाई और दंगे बन्द करने की *शक्ति नहीं है। लड़ाई होती है तो* उसमें घायलों की सेवा रेड-क्रास द्वारा होती है। लेकिन उस सेवा में लड़ाई बन्द करने की ताकत नहीं है। वह सेवा "रानी" नहीं, "दासी" है। दासी के नाते सेवा की चाह दुनिया भर में है—चाहे कोई भी देश हो। कम्युनिस्ट, फासिस्ट, कल्याणवादी, समाजवादी कोई भी सरकार हो, वह दासी के तौर पर सेवा को मंजूर करती है। उस सेवा के द्वारा लड़ाइयाँ बन्द नहीं होतीं, लड़ाइयाँ खतम नहीं *होतीं। वह सेवा रानी के तौर पर नहीं* है। उसकी कोई हुकूमत नहीं मानी जाती। हुकूमत डंडे की होगी, लेकिन इन लोगों की सेवा मंजूर है। ऐसी सेवा लड़ाइयों में रुचि पैदा करनेवाली होती है, जैसे सरकारों में नमक हलालियों हैं। उससे लड़ाई का जस्टिफिकेशन होता है। लड़ाई खतम करने की शक्ति उसमें नहीं है।

इसलिए मैं मामूली सेवा की बात नहीं कर रहा हूँ। माताएँ करुणामय होती हैं। उनकी दृष्टि में करुणा होनी है। उनका जीवन त्याग पर खड़ा है। इस वास्ते उनसे यह अपेक्षा गांधीजी भी करते थे। और इस वक्त सारे भारत में स्त्रियों की शक्ति प्रकट हो, इसकी अत्यन्त आव*श्यकता है। इसको मैंने "स्त्री-शक्ति" नाम* दिया है। महिला का अर्थ है—महान। जितनी भी शक्तियां भारत में मानी गयी हैं वे स्त्री रूप हैं—शान्ति, भक्ति, लक्ष्मी, सरस्वती, मुक्ति और युक्ति आदि। इस प्रकार से हिन्दुस्तान में ये सारी देवियां स्त्रियों में मानी गयी हैं। उसका दर्शन भारत में इस वक्त हो, यह अत्यन्त जरूरी हो गया है। **रांची**

२६-९-'६९

'गाँव की आवाज'

पाक्षिक

पढ़िए-पढ़ाइए

वार्षिक शुल्क—४ रुपये

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी

बैंकों का राष्ट्रीयकरण

[जब से देश के १४ प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण हुआ है, तब से ही देश भर के वातावरण में समाजवादी समाज-रचना की बात एक बार फिर गूँज उठी है। बहुत से पहले के समाजवादी लोगों ने इस कृत्य को मात्र सरकारवादी घोषित किया है' तो बहुत से पहले के गैर-समाजवादी लोगों ने इसे प्रगतिशील कदम भी कहा है। लीजिए, प्रस्तुत है इस पर सर्वोदय-आन्दोलन में लगे इन विचारकों के मन्तव्य।-सं०]

समाजवाद बनाम सरकारवाद

किसी विदेशी पत्रकार ने कहा था कि भारत एक नहीं, छः क्रान्तियों के लिए पककर तैयार है, किन्तु आश्चर्य है कि एक भी नहीं हो रही है। उतना ही बड़ा आश्चर्य यह भी है कि आज बरसों से इस देश में समाजवाद का नाम लिया जाता रहा है लेकिन समाजवाद आज तक कहीं दिखाई नहीं देता। अचानक एक दिन बड़े बैंक सरकार के हाथ में चले गये, यानी पूँजीपतियों के हाथ से निकलकर धनपतियों और दफ्तरपतियों (सरकार इन्हीं को तो कहते हैं?) के हाथ में चले गये, तो कहा गया कि भारत में समाजवाद का युग शुरू हो गया। जगह-जगह जय-जयकार हुई, प्रदर्शन हुए, खुशी के जुलूस निकले। वही जनता ने, जो सरकार से इतनी नाराज रहती है, इस काम से बेहद खुश हुई। अब खुद कुछ सरकारी लोगों ने कहना शुरू कर दिया है कि बैंकों का राष्ट्रीयकरण सिर्फ पहला कदम है, अभी आगे बहुत कुछ करना बाकी है। इसके विपरीत कुछ दूसरे यह कहने लगे हैं कि यह समाजवाद नहीं, समाजवाद का धोखा है। शायद वे समझते हैं कि पहले कदम के बाद दूसरा कदम उठाने की तैयारी सरकार की नहीं है। एक दिन एक बड़े बैंकर और उद्योगपति कह रहे थे : 'बैंक हमारे रहें या न रहें, जबतक नेता और अफसर हमारे हाथ में हैं हमें कोई चिन्ता नहीं है।' जबतक राष्ट्रीयकरण का अर्थ सरकारीकरण रहेगा, तबतक इस तरह की बातें कही जायेंगी, और वे शायद गलत नहीं होंगी। नेता + अफसर = सरकार = जनता ; यह तर्क पुराना है और निकम्मा साबित हो चुका है। राष्ट्रीयकरण जरूर हो जहाँ वह जरूरी है, लेकिन बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद भारत की सरकार को अपनी योजना और व्यवस्था से यह सिद्ध करना है कि देश की पूंजी देश की *जनता के हित में लगेगी, सिर्फ सरकार* की शक्ति बढ़ाने में नहीं। हम उस प्रमाण की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

जो लोग आज भारत को चला रहे हैं, जब वे सभी नेता समाजवाद का नाम लेते हैं तो वे बताते क्यों नहीं कि समाजवाद क्या है? बारीकियों पर मतभेद और विवाद भले ही हो, लेकिन क्या बुनियादी मुद्दों पर भी एक राय होना कठिन है? *हमारी राजनीति में 'राइट' और 'लेफ्ट'* का नाम लिया जाता है लेकिन क्या यह बँटवारा समाजवाद को लेकर हो रहा है? जो लोग राष्ट्रीयकरण के विरोधी हैं वे सब समाजवाद के विरोधी नहीं हैं या कम-से-कम समाज के हित के विरोधी नहीं हैं। यह दूसरी बात है कि हर दल और हर नेता समाज-हित, और समाजवाद का अपने-अपने ढंग से अर्थ लगाता है। कुछ भी हो, समाज के हित का जप हर जगह हो रहा है। ज्यादा मतभेद इस बात को लेकर है कि समाज के जीवन में सरकार का हस्तक्षेप कितना हो, जीविका के साधनों पर सरकार का स्वामित्व कितना हो। फिर भी इतना तय है कि अगर समाज-हित को सामने रखकर चर्चा की जाय तो समाजवाद का विवाद काफी घट सकता है, और कई बुनियादी बातों पर एक राय हो सकती है। पिछले बीस-बाईस वर्षों में हमारी समस्याएँ उभरकर इतनी साफ हो गयी हैं कि सहमत होना कठिन नहीं रह गया है। जो कठिनाई है वह सचमुच यह है कि राजनीति पहला स्थान किसे देती है—अपनी सत्ता को, या समाज-हित को? मन में एक बार यह निर्णय हो जाय तो मुद्दों का निर्णय कठिन नहीं रह जायगा। समाज को अनावश्यक वाद-विवाद; और उससे पैदा होनेवाले तनाव और टकराव से बचाना, उसकी संगठित, रचनात्मक शक्ति को प्रकट करने की पहली शर्त है। यह अबतक हमारी राजनीति ने नहीं किया है। दूसरी बात जो राजनीति को अब इतने वर्षों के अनुभव के बाद समझ लेना चाहिए, वह यह है कि समाज को निष्क्रिय छोड़कर सिर्फ कानून बनाते जाने से 'वादों' का विवाद चाहे जितना बढ़े, उससे न पूरे समाज का हित होता है और न नया समाज बनता है। लेकिन आज तक हमारे दलों ने दो ही कामों पर जोर दिया है—सरकार के बाहर प्रदर्शन, और सरकार के भीतर कानून। प्रदर्शन और कानून, दोनों निष्फल सिद्ध हो चुके हैं।

अगर विभिन्न दलों के चुनाव-घोषणा-पत्रों की छानबीन की जाय तो आश्चर्य होगा कि उनके बीच महत्त्व के मतभेद कितने कम हैं। हर दल समाज के एक भाग को सामने रखकर सोचता है, अपनी ही सत्ता को समाज की सत्ता मानता है; समाज से अधिक सरकार की शक्ति में भरोसा रखता है, गाँव को इकाई नहीं मानता; भूमि के स्वामित्व के बारे में बात नहीं करता; पंचवर्षीय योजना के ढाँचे और दिशा को सामान्यतः स्वीकार करता है। इन बातों में प्रायः सब एक राय हैं। कम्युनिस्ट मित्र भी सरकार का अधिकार-क्षेत्र तो बढ़ाना चाहते हैं, लेकिन उद्योगवाद की प्रचलित पद्धति को सही मानते हैं, और उग्र होते हुए भी भूमि-व्यवस्था में 'सीलिंग' से आगे नहीं जा पाते। जब से भारत स्वतंत्र हुआ तमाम दुनिया में समाजवाद के विचार में बुनियादी

संशोधन हुए हैं। और अब प्रगतिशील विचार तो किसी भी तरह सरकार के अधिकारों को बढ़ाने के पक्ष में नहीं है। स्वयं कम्यूनिस्ट देशों में सरकार के रोल के बारे में मंथन हुआ है। रूस से आगे जाकर चीन ने खेतिहर साम्यवाद का एक ढाँचा निकाला। लेकिन भारत के समाजवादी मित्रों को खेतिहर देश के लिए समाजवाद की नयी पद्धति की जरूरत नहीं महसूस हुई। वे आज भी सरकारवाद का ही नारा लगाते चले जा रहे हैं। गांधीजी भी अपने को समाजवादी कहते थे, लेकिन उनका सारा समाज-दर्शन इस आधार पर खड़ा है कि राज्य की सत्ता निरन्तर घटे, और नागरिक की स्वायत्तता बराबर बढ़े। यह मूलतत्त्व उनकी सारी राजनीति (लोकनीति), अर्थनीति और शिक्षानीति में है। इसी आधार पर उन्होंने अपना 'समाजवाद' विकसित किया था। लेकिन किसे फुर्सत है उस समाजवाद की ओर देखने की? इस वक्त धूम है सत्तावाद और सरकारवाद की। ग्रामदान की उपेक्षा का यह एक बहुत बड़ा कारण है कि हमारे समाजवादी-दल समाज को सरकार में जाने की सीढ़ी मानते हैं। उनके लिए शक्ति का स्रोत समाज में नहीं है, सरकार में है। इसलिए सरकारवादी समाजवाद अन्त में एकाधिकारवाद (अथारिटेरियनिज्म) होकर रह जाता है। ग्रामदान को समाज की शक्ति में भरोसा है। सरकार को वह पूरक शक्ति के रूप में ही मानता है।

समाजवाद में इतना ही प्रश्न नहीं है कि सरकार कुछ कदम उठाये और उनका लाभ जनता को मिले। इतना तो किसी भी सरकार का कर्तव्य है। इससे भी बड़ा प्रश्न यह है कि स्वयं जनता, भारत के लाखों गाँवों और शहरों में रहनेवाली जनता, समाजवाद के निर्माण में प्रत्यक्ष भाग ले। सरकार उसके साथ सहकार करे। समाजवाद का निर्माण नीचे से हो, यानी जनता से शुरू हो। जब समाजवाद नीचे से शुरू होगा तो जनता समाजवाद को अपने साँचे में ढालेगी। अगर ऐसा नहीं होगा तो समाजवाद के नाम में जनता सरकार के साँचे में ढाली जायगी। वह दिन लोकतन्त्र और समाजवाद के लिए काला दिन होगा।

—राममूर्ति

दिल्ली का दंगल

पिछली ८ जुलाई को जिस दिन बेंगलोर में मिल रही कांग्रेस कार्य-समिति के विचारार्थ श्रीमती इंदिरा गांधी का आर्थिक नीति-सम्बन्धी नोट अखबारों में प्रकाशित हुआ, उस दिन से लगाकर तारीख २५ अगस्त तक के पचास दिन भारतीय राजनीति में अभूतपूर्व थे। भारत के राजनीतिक आकाश में अचानक एक ऐसा अन्धड़ आया जिसकी कल्पना बहुत कम लोगों को थी। सामाजिक घटनाओं का बारीकी से अध्ययन करनेवाले या उनसे सम्बन्धित जो लोग भीतर-ही-भीतर पक रही परिस्थिति से परिचित थे उनके लिए भी इस तूफान का अचानक विस्फोट, उसकी गति, उसका स्वरूप और झंझावात की तरह कभी इधर और कभी उधर डोलती हुई उसकी दिशा—ये सब अकल्पित थे। भारतीय जनता अवाक् होकर यह सारा दृश्य देख रही थी।

दिल्ली का यह दंगल अगर दो अखाड़ों की एक सामान्य होड़ होती जो इसमें होनेवाली उठा-पटक या हार-जीत केवल मनोरंजन का विषय होती। पर यह सत्ता का एक पूर्व-नियोजित संघर्ष था। इस संघर्ष का स्वरूप भी अगर केवल नीति-सम्बन्धी मान्यताओं, राजनीतिक निकायों के बहस-मुबाहसे, सिरों की गिनती या चुनाव में होनेवाले मतदान के फैसले तक सीमित होता और उसमें हार-जीत का निर्णय इन चीजों के आधार पर ही हुआ होता, जैसा कि जाहिरा में वह हुआ, तो भी कोई बात नहीं थी। पर यथार्थतः जनतन्त्रीय तरीके के इस ऊपरी आवरण के पीछे जिस प्रकार की चालें चली गयी और बल-प्रयोग के दबाव डाले गये उनको देखते हुए जनतंत्र का भविष्य अब खतरे से खाली नजर नहीं आता। यों तो व्यक्तिगत दबाव और धमकियों (ब्लैक-मेल) का उपयोग राजनीति में किया जाता है। और सुना है कि इस बार भी कुछ मुख्य मंत्रियों को फाइलों में उनके खिलाफ पड़ी हुई शिकायतों की जाँच कराने की धमकियाँ देकर राष्ट्रपति के चुनाव में उनके प्रदेश के विधायकों के वोट प्राप्त करने की कोशिश की गयी, पर इस तरह की कार्यवाहियों से भी आगे बढ़कर सीधा हिंसात्मक दबाव डालने का प्रयत्न भी किया गया। इस बात की आम चर्चा है कि ता० २० अगस्त को जिस दिन राष्ट्रपति के चुनाव का परिणाम घोषित होनेवाला था और खासकर ता० २५ अगस्त को जिस दिन कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक में प्रधानमंत्री पर अनुशासन की कार्रवाई के बारे में विचार होनेवाला था, दोनों दिन साम्यवादी पार्टी तथा कुछ अन्य तत्त्वों द्वारा इस बात की पूरी तैयारी थी कि अगर इन बातों के फैसले प्रधानमंत्री के खिलाफ जायें तो राजधानी में हिंसात्मक उपद्रवों के जरिये "दिल्ली पर तूफान बरपा कर दिया जाय।" ता० २५ अगस्त को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के दफ्तर पर जहाँ कांग्रेस-कार्यकारिणी की बैठक होनेवाली थी, और प्रमुख कांग्रेसी नेताओं के घरों पर, मिलीटरी पुलिस का जो कड़ा बन्दोबस्त किया गया था वह केवल कांग्रेस के दोनों दलों के आपसी संघर्ष से संभावित अशांति की रोकथाम के लिए तो नहीं हो सकता था?

कांग्रेस के दो गुटों के इस आपसी संघर्ष में किसीके पक्ष या किसीके विपक्ष में हमें कुछ नहीं कहना है। उनकी हार-जीत में हमें कोई दिलचस्पी नहीं है क्योंकि सिद्धान्त की या गरीबों के हित की कितनी भी दुहाई दी जा रही हो, अब तो सामान्य बुद्धिवाले मनुष्य के लिए भी यह स्पष्ट है कि इस लड़ाई का न सिद्धान्त से कोई सम्बन्ध है, न देश या जनता के हित से। यह सीधी-सादी व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा और स्वार्थ की लड़ाई है। इस संघर्ष में बैंकों के "राष्ट्रीयकरण" को प्रगतिशील

कदम बताकर उसका बहुत ढोल पीटा जा रहा है। ऐसा वातावरण बनाया गया है कि इसकी गहराई में जाने की कोई नहीं सोचता। पढ़े लिखे कहे जाने-वाले लोग भी यह समझते नजर आते हैं कि राष्ट्रीयकरण हो जाने मात्र से सब कुछ हो गया। रेलों का राष्ट्रीयकरण कितने वर्षों से हो चुका है, बस-मार्गों में से अधिकांश का राष्ट्रीयकरण हो चुका है, पर इतने मात्र से क्या गरीबों को उसका फायदा मिलने लगा या समाजवाद थोड़ा सा भी नजदीक आया ? इतना जरूर हुआ है कि पहले रेलों और बसों का मुनाफा धनवानों की जेब में जाता था, अब अगर कुछ मुनाफा होता है तो राज्य के खजाने में जाता है। पर इससे तो केवल नौकरशाही की शक्ति, राज्य की फजूलखर्ची और जनता की लाचारी ही बढ़ी है, लोगों की तकलीफें या इन कामों में होनेवाली धांधलियों में विशेष अन्तर नहीं पड़ा है। व्यक्तिगत संचालन की जगह सरकार द्वारा संचालन अपने आप में श्रेयस्कर हो। यह जरूरी नहीं है। बल्कि इस देश में अबतक का अनुभव तो उल्टा ही है। सरकार की ओर से संचालित बड़े कारखानों की बात तो छोड़ दीजिए, हमारे देश में टेलीफोन, बिजली, सड़क और कहीं-कहीं पानी की व्यवस्था भी राज्य के संचालन में है। पर इन सुविधाओं के बारे में भी (जिनका लाभ हर नागरिक को समान रूप से मिलना चाहिए) सामान्य उपभोक्ताओं को आये दिन कितनी लापरवाही, गैर-जिम्मेदारी, धांधली और परेशानी का सामना करना पड़ता है और उनकी सुनवाई भी नहीं होती, यह सब जानते हैं। बढ़-चढ़कर समाजवाद के नारे लगाने-वाले इस देश में आज चन्द विशेषाधिकार-वाले (प्रिविलेज्ड) व्यक्ति और सामान्य नागरिक को मिलनेवाली सार्वजनिक सुविधाओं में जो अन्तर है, और बढ़ता जा रहा है, वह बहुत से "पूंजीवादी" मुल्कों में भी नहीं है।

हम पूंजीवाद के समर्थक नहीं हैं, पर हम इस बात को भी नहीं मानते कि पूंजीवाद का इलाज "राज्यवाद" है। आज के समाजवाद या साम्यवाद, राज्य-वाद (स्टेटिज्म) के ही रूप हैं। जहाँ तक समाज-रचना का सवाल है इनमें और पूंजीवाद में कोई विशेष अन्तर नहीं है। दोनों में सत्ता और व्यवस्था का केन्द्रीकरण होता है, और केन्द्रीकरण का स्वधर्म है शोषण, उत्पीड़न, भ्रष्टाचार और सत्ताधारी वर्ग का विशेषाधिकार। दोनों व्यवस्थाओं में अन्तर है तो इतना ही कि एक में उस विशेषाधिकार का और समाज के साधनों का उपयोग सम्पत्ति के आधार पर एक वर्ग करता है तो दूसरे में दूसरा वर्ग सत्ता के आधार पर वह करता है। आज की तथाकथित जन-तंत्रीय व्यवस्था या कल्याणकारी राज्य की रचना में अक्सर दोनों वर्ग मिलकर एक हो जाते हैं। जहाँ तक आम जनता के हितों का प्रश्न है उनकी सुरक्षा न पूंजी-वाद में है, न समाजवाद या साम्यवाद में, न कल्याणकारी राज्य में। उनकी सुरक्षा का एकमात्र हल यह है कि समाज का नियन्त्रण सीधे (प्रतिनिधियों के जरिए नहीं) जनता के हाथ में हो।

एक ओर पूंजीपति वर्ग जनता का संरक्षक बनकर उसे साम्यवाद के खतरों से आगाह करता रहता है तो दूसरी ओर साम्यवादी तानाशाही के समर्थक पूंजी-वादियों को प्रतिक्रियावादी और जनहित-विरोधी बताकर अपने को जनता का हितेच्छु घोषित करते हैं। बैंकों के राष्ट्रीय-करण के बाद दिल्ली से निकलनेवाले "सोशलिस्ट कांग्रेसमैन" नाम की पत्रिका को भेजे हुए एक सन्देश में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा था "मेरी यह राय है कि कोई भी व्यक्ति जो समाजवादी कांग्रेस-जन नहीं है वह कांग्रेसी हो ही नहीं सकता।" जब कांग्रेस ने समाजवाद को अपना ध्येय घोषित कर दिया है तो शायद ऊपर-ऊपर से देखने पर इन्दिराजी के इस कथन में कोई दोष न माना जाय, पर ऐसे कथन का आसानी से क्या अर्थ लगाया जा सकता है यह जाने या अनजाने उस पत्रिका के सम्पादक श्री हर्षदेव मालवीय के, जो कांग्रेस के "समाजवादी मंच" के संयोजक भी हैं, देशभर के मंच के सदस्यों को किये हुए आह्वान से स्पष्ट है। श्री मालवीय ने एक परिपत्र में कहा है- "हमें यह मांग भी करनी चाहिए कि संगठन (कांग्रेस) में, खासकर ऊँचे स्तरों पर, जिन व्यक्तियों ने बैंकों के राष्ट्रीयकरण का विरोध किया है उन्हें संगठन से निकाल दिया जाय।"

इस आह्वान में दो बातें ध्यान देने लायक हैं। पहली बात तो यह कि श्री मालवीय के अनुसार मतभेद रखने-वालों का कांग्रेस में कोई स्थान नहीं है। जनतंत्र या लोकशाही का यह बुनियादी तत्त्व है कि उसमें मत जाहिर करने की, इतना ही नहीं, मतभेद होते हुए भी संगठन में बने रहने की गुंजाइश और हक है, बशर्ते कि जिन्होंने निर्णय के पहले भिन्न मत जाहिर किया हो वे उस निर्णय को मानने में इन्कार न करते हों। अन्यथा, हर निर्णय के बाद, या महत्वपूर्ण निर्णयों के बाद भी, अगर उन लोगों का संगठन में कोई स्थान न माना जाय जिन्होंने भिन्न राय जाहिर की थी तो यह एक तरह से राय के इजहार या अभिव्यक्ति पर ही रोक मानी जायगी। भिन्न मत रखनेवालों का संगठन में स्थान न होना तानाशाही का लक्षण है, लोकशाही का तो हरगिज नहीं। दूसरी बात जो श्री मालवीय के परिपत्र में ध्यान देने की है वह यह कि वे भिन्न मत रखनेवालों को इतनी छूट भी देने के पक्ष में नहीं हैं कि अगर वे संगठन के निर्णय से समाधान न मानते हों तो स्वयं संगठन से अलग हो जायें। श्री माल-वीय चाहते हैं कि वे संगठन से "निकाल दिये जायें।"

हमने इस परिपत्र की इतनी चर्चा की वह इस भ्रम में नहीं कि कांग्रेस-संगठन में उसका या उसके लेखक का कोई विशेष महत्त्व है, (हालां कि वह नगण्य भी नहीं होगा, क्योंकि स्वयं प्रधानमंत्री का आशीर्वाद उन्हें प्राप्त है) पर इस बात को स्पष्ट करने के लिए कि जो लोग गरीबों के या आम जनता के हित के नाम पर

दूसरों को प्रतिक्रियावादी घोषित करते हैं तथा अपने आपको "प्रगतिशील" और समाजवादी, उनका खुद का असली स्वरूप क्या है। वास्तव में यह तानाशाही चाहनेवालों की पुरानी चाल रही है कि जनता का हित खतरे में है यह नारा लगाकर खुद जनता के संरक्षक के रूप में अधिक-से-अधिक सत्ता हथिया लें और अपने प्रतिद्वंद्वियों को दबाकर फिर बेखटके जनता का निर्दलन और शोषण करें। यह अब इतिहास का तथ्य माना जाता है कि फरवरी १९३३ में जर्मनी के पार्लियामेंट-भवन में जो आग लगी थी और जिसका दोष साम्यवादियों पर मढ़कर हिटलर ने अपने हाथ में और अधिक सत्ता ले ली थी, वह आग स्वयं हिटलर के आदमियों ने उसीके कहने पर लगायी थी। और तानाशाह, चाहे वे दाहिनी ओर के हों या बाईं ओर के, सब एक-से ही होते हैं।

यह भी एक दिलचस्प बात है कि इन दिनों श्रीमती इन्दिरा गांधी बैंकों के राष्ट्रीयकरण के मामले में जनमत को अपनी ओर करने के लिए नेहरूजी के नाम के साथ-साथ गांधीजी का नाम भी लेने लगी हैं। उन्होंने इधर हाल के अपने भाषणों में एक से अधिक बार कहा है कि वे "गांधीजी और नेहरूजी के" सपनों को पूरा कर रही हैं। गांधीजी के "सपनों" के बारे में किसीको गलतफहमी न रहे इस दृष्टि से "राज्यीकरण" के बारे में उन्हींके शब्दों को उद्धृत करना ठीक होगा। सन् १९३५ के अंग्रेजी मासिक "माडर्न रिव्यू" के अनुसार गांधीजी ने कहा था "मैं राज्य की सत्ता की वृद्धि को बड़े-से-बड़े भय की दृष्टि से देखता हूँ। क्योंकि जाहिरा तौर पर तो वह शोषण को कम-से-कम करके लाभ पहुँचाती है, परन्तु व्यक्तित्व को, जो सब प्रकार की उन्नति की बुनियाद है, नष्ट करके वह मानव-जाति को बड़ी-से-बड़ी हानि पहुँचाती है... मैं स्वयं तो यह अधिक पसन्द करूँगा कि राज्य के हाथों में सत्ता केन्द्रित न करके ट्रस्टीशिप की भावना का विस्तार किया जाय, किन्तु अगर वह अनिवार्य ही हो तो मैं कम-से-कम राजकीय स्वामित्व का समर्थन करूँगा।"

वास्तव में राज्य-सत्ता की वृद्धि व्यक्तिगत स्वामित्व से ज्यादा खतरनाक इस माने में है कि व्यक्तिगत स्वामित्व पर तो सामाजिक नियंत्रण सम्भव है, पर राज्य, चूँकि स्वयं सत्ता और अधिकार का अधिष्ठान है इसलिए उसकी शक्ति जितनी बढ़ती है उतना उस पर सामाजिक अंकुश कठिन होता जाता है और अन्त में वह असम्भव ही हो जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि जनता जागृत हो और उसकी शक्ति सक्रिय हो तो व्यक्तिगत स्वामित्व की बुराइयाँ आसानी से सामाजिक नियंत्रण के द्वारा (राजसत्ता के जरिये और उसके अलावा भी) काबू में लायी जा सकती हैं। और बैंकों के राष्ट्रीयकरण का लाभ भी गरीबों को तभी मिल सकेगा जब वे जागृत और संगठित होंगे, वरना छोटे उद्योगों के या खेती के नाम पर भी सारा पैसा फिर उन्हीं लोगों के हाथ में जायगा जिन्होंने आज तक गाँव-गाँव में विकास के लिए बहाये गये करोड़ों रुपयों का लाभ उठाया है। आज भी करोड़ों-अरबों रुपया खेती के लिए सहकारी समितियों आदि के जरिये "किसानों" को दिया गया है, लेकिन सब जानते हैं कि वह पैसा अधिकतर गाँव के उन चन्द ताकतवर और चालाक लोगों के ही हाथ में गया है जिनका या तो पार्टियों के नेताओं के साथ या अफसरों से गठबन्धन है। अब बैंकों के संचालक-मंडल में किसानों और छोटे उपभोक्ताओं के प्रतिनिधियों के नाम पर भी वही लोग नहीं जायेंगे, इसकी क्या गारण्टी है?

इसलिए बैंकों का राष्ट्रीयकरण या इसी प्रकार के और आगे के कदम अपने आप में कोई महत्त्व नहीं रखते हैं। यह मान लेना कि किसी भी चीज का राष्ट्रीयकरण स्वयं कोई प्रगतिशील चीज है या उससे गरीबों का हित होगा, या तो आत्मवंचना है या निरी अज्ञानता। असली चीज जनता की शक्ति है। जनता को जागृत और संगठित करना ही मुख्य काम है, वरना अच्छी-से-अच्छी योजना, व्यवस्था या कानून का फायदा गरीबों के नाम पर आज की तरह दूसरे लोग ही उठाते रहेंगे और गरीब और ज्यादा गरीब तथा असहाय बनेंगे।

५-८-'६९ —सिद्धराज ढड्ढा

जागो हे लोक!

अपने निजी स्वार्थ को किसी-न-किसी सिद्धान्त का आवरण पहनाने की राजनीतिक रस्म इन्दिराजी ने अपनाकर मोरारजी भाई को मुक्त किया। दृढ़ता या कृतनिश्चयता के लिए सौजन्यविहीनता आवश्यक नहीं है... लेकिन युद्ध में या प्रेमावेश में सभी चीजें उचित मानी जाती हैं। इसलिए तो समाजवादी, और खासकर साम्यवादी मित्रों के अभिनन्दन इन्दिराजी को खूब प्राप्त हुए हैं, और इन्दिराजी एक ही सपाटे में समाजवादी नेता बन गयी हैं।

ऐसे समय हम लोग अपना कर्तव्य चूक न जायँ, यह महत्त्व की चीज है। कोई भी व्यक्ति देश के नाम पर या प्रजाहित के किसी कार्यक्रम के नाम पर व्यक्तिगत स्वार्थ-साधन के लिए अधिकारों का दुरुपयोग करे तो हमें उसका स्पष्ट विरोध करना चाहिए। इन्दिरा बहिन को या मोरारजी भाई को, या कि चव्हाण को, किसीको भी तानाशाह होने का या प्राप्त सत्ता का मनमाना उपयोग करने का अधिकार नहीं है। प्रजा के हित का नाम लेकर ही तानाशाह पैदा होते हैं और प्रजा का प्राण हरण करते हैं।

यह केवल सत्ता की होड़ है। प्रजाहित के साथ इन सारी चीजों का कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। अब राष्ट्र के प्रश्नों का हल हो जायगा या तो, दूसरी ओर राष्ट्र में अन्धाधुन्धी फैल जायगी (अगर अभी कुछ बाकी है तो) ऐसे किसी भ्रम में रहने की आवश्यकता नहीं है। इन्दिराजी अधिकाधिक सत्ता प्राप्त करके तानाशाह बनें, इस सम्भावना में खतरा है। यह हम लोगों को बिलकुल नहीं भूला समझना। इसी प्रकार सिंडिकेट सत्ता

हासिल कर ले, उसमे निजी या पक्षगत स्वार्थ मिट जायेगा ऐसे भ्रम में नहीं रहना चाहिए। जयप्रकाशजी ने तो इस घटना के पहले ही कहा था कि ऐसी निर्वीर्य राजनीति में हमें दिलचस्पी नहीं है। दिल्ली में परिवर्तन होने से सामान्य जनता के प्रश्नों का हल हो जायगा ऐसी कोई सम्भावना नहीं है। ऐसी बातों पर से हमारा विश्वास उठ चुका है। अत हमारी अपनी समस्याओं का हल हम ही करेंगे, परस्पर का कुसमन्वय दूर करेंगे, बाहर के मतभेदों को अपने यहाँ दाखिल नहीं होने देंगे और ग्रामस्वराज्य की स्थापना करेंगे। ऐसा निर्णय करने का सुअवसर आया है।

राष्ट्र के हित में मोरारजी भाई उदारतापूर्वक अपमान की घूंट पीकर चुप रहे, या इन्दिराजी अपनी भूल सुधारकर मोरारजीभाई को यथास्थान प्रतिष्ठित करें ऐसी सलाह कोई परिस्थिति को सुधारने की सलाह है यह नहीं माना जा सकता। हाँ, इसमें से इतना सध सकता है कि पक्ष की सत्ता बनी रहे, उसके टुकड़े न हों। पर जब इस प्रकार का मतभेद ऊपर नहीं दिखता था तब भी प्रजा में विरोधभाव बढ़ाने में, जातिवाद फैलाने में, और सकुचितता पर या साम्प्रदायिकता पर जोर देने में कुछ बाकी रहा था ऐसा मानना भ्रम ही होगा। अपनी प्रामाणिक मान्यता के अनुसार समाजवाद या मध्यम मार्ग अपनानेवाले लोगों के दो दल बन जायँ यह स्वागत योग्य होगा। पर इसमें से नया मार्ग नहीं निकलेगा। प्रजा को अपनी एकता का और श्रेय का मार्ग प्रजा को ही प्राप्त कर लेना होगा, और यह होगा तभी जब आज की परिस्थिति में मूलभूत परिवर्तन होगा। ग्रामदान का आन्दोलन इस प्रकार के बुनियादी परिवर्तन के लिए ही खड़ा हुआ है। आज इस आन्दोलन को समझ-बूझपूर्वक अपनाने का और जन-शक्ति जगाने का सुन्दर अवसर प्राप्त हुआ है।

पिछले दिनों सत्ता की होड का जो नाटक खेला गया उसमें कहीं भी सामान्य जनता के हित का विचार नहीं था, यह स्पष्ट है। स्वराज्य के इतने बरस के→

→अनुभव के बाद, भिन्न-भिन्न पक्षों के शासन के बाद, और साइनबोर्ड बदलनेवालों के अनेक रंग देखने के बाद, फिर से आम चुनाव हो तो भी परम्परागत राजनीति के मार्ग से प्रजा के कल्याण की अपेक्षा विफल होगी, यह स्पष्ट नजर आये ऐसा है, इसलिए अब अपनी ही ताकत प्रकट करने का और उस पर निर्भर रहने का समय आया है। आज ऐसी परिस्थिति प्रकट हुई है कि जनशक्ति को जागृत करने की आवश्यकता सभी स्वीकार करेंगे। "जागो हे लोक!"

—ज्योतिभाई देसाई

('भूमिपुत्र' से साभार)

राजगीर-सम्मेलन के लिए विचारार्थ कुछ मुद्दे

प्रचलित कार्य-पद्धति के नव-मूल्यांकन की आवश्यकता

१९६९ का साल, भारत में ही नहीं, दुनिया में भी कई जगह गांधी-जन्म-शताब्दी के नाते मनाया जा रहा है। उसके कारण गांधी-गौरव के हेतु से तरह-तरह के कार्यक्रम हो रहे हैं और होंगे। गांधीजी के नाम पर जो कुछ हो रहा है, वह एक दृष्टि से ठीक है। लेकिन इसमें शायद ही किसीको सन्देह होगा कि गांधी-विचार जिन्दा और जीवनाभिमुख रखने का और उसके अनुसार राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में समग्र परिवर्तन लाने का अत्यन्त कठिन कार्य विनोबा-प्रणीत भूदान-ग्रामदान आन्दोलन के द्वारा ही हो रहा है, और भविष्य में होनेवाला है।

बिहार का राज्यदान अब निकट ही है। राजगीर के सर्वोदय-सम्मेलन में अपने देश के और बाहर के भी अनेक सर्वोदय-प्रेमी इकट्ठा होंगे। उसके पहले सर्व सेवा संघ का अधिवेशन होगा। देश के कई क्रियाशील और तत्पर लोकसेवक उसमें उपस्थित होंगे। सन् १९७२ तक पूरे भारत के सोलह-सत्रह राज्यों का राज्यदान कैसे होगा, इस पर उस अधिवेशन में विचार-विमर्श होगा और विनोबाजी के प्रेरणादायी मार्गदर्शन में आगे का कार्यक्रम निश्चित किया जायेगा।

भूदान-ग्रामदान आन्दोलन का जब हम सिंहावलोकन करते हैं तो देखने में आता है कि सन् १९५१ से १९५७ तक भूदान आन्दोलन विलक्षण गति से आगे बढ़ा। सन् १९५८ से लेकर १९६५ तक उसकी गति रुकी तो नहीं, किन्तु मन्द हो गयी। सन् १९६५ के आखिर में जब विनोबाजी ने बिहार में 'तूफान' का प्रारम्भ किया तब से आन्दोलन में फिर से थोड़ा-सा वेग आया। अब ग्रामदान आन्दोलन क्रमशः प्रखण्डदान, जिलादान और आखिर राज्यदान तक आ पहुँचा है। ऐसा भास होता है कि कार्यकर्ताओं का आत्मविश्वास बढ़ गया है और अब राज्यदान का सकल्प करने में उन्हें कोई हिचकिचाहट नहीं मालूम होती। इस दिशा में तमिलनाडु, उत्तरप्रदेश, उड़ीसा और मध्यप्रदेश आदि राज्यों के कार्यकर्ताओं ने पहल की है।

यह सही है कि आज की परिस्थिति में देश के, सर्वांगीण उत्थान की दृष्टि से ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के अलावा दूसरा कोई यथार्थ कार्यक्रम और सर्वोदय के अलावा दूसरा कोई समुचित जीवन विषयक तत्वज्ञान है नहीं। वैसे ही इस आन्दोलन को, विनोबाजी जैसे विरक्त किन्तु लोकाभिमुख, प्रतिभावान् और विनम्र, नेतृत्व के कुछ विलक्षण गुण होते हुए भी नेतृत्व की इच्छा न रखनेवाले तथा 'गणसेवकत्व' के नये विचार को सहेतुक बढ़ावा देनेवाले नेता प्राप्त हैं। एक बात बार-बार खटकती है कि अबतक ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन की जनमानस पर गहरी पकड़ नहीं हुई है और न देश की सामाजिक, आर्थिक अथवा राजनैतिक परिस्थिति पर इस आन्दोलन का उल्लेखनीय प्रभाव पड़ा है। भूदान-ग्रामदान को ही समर्पित और प्रादेशिक भाषा में ले जानेवाला हमारे पत्र जो पढ़ते होंगे, उनको शायद लगता होगा कि भारत में भूदान-ग्रामदान द्वारा एक

अहिंसक क्रान्ति हो रही है। परन्तु दूसरी सर्वसामान्य पत्रिकाओं, अखबारों और मासिकों में इस क्रान्ति की गतिविधि की खबर तक नहीं दी जाती। वैसे ही, अन्य राज्यों की बात छोड़ दें तो बिहार में भी ऐसा नहीं दिखाई देता कि जनक्रान्ति हो रही है और ग्रामदान के कार्यक्रम और सर्वोदय के जीवनस्पर्शी तत्त्वज्ञान के प्रति लोगों की आस्था सार्वत्रिक हो गयी है।

सभी सारे सर्वोदय-प्रेमियों से मेरी नम्र प्रार्थना है कि ऐसी सुप्त शक्तियों से भरे एक महान् आन्दोलन के बारे में ऐसी परिस्थिति क्यों पैदा हुई इसका विचार वे आत्मपरीक्षण की दृष्टि से अपने मन में और प्रकट रूप में करें।

ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन प्रभावकारी नहीं हुआ, इसके मेरी दृष्टि में नीचे लिखे हुए कारण हैं :

(१) लोगों की तात्कालिक समस्याओं के साथ ग्रामदान का कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। तात्त्विक स्तर पर जो कुछ है, वह अप्रत्यक्ष होने के कारण सामान्य व्यक्ति की समझ में आसानी से नहीं आता। इसलिए सामान्य लोग ग्रामदान के कार्यक्रम के प्रति अपने-आप आकर्षित नहीं होते।

(२) सामाजिक अथवा आर्थिक अन्यायों के खिलाफ खड़े होकर जनता को अहिंसक प्रतिकार की क्रिया द्वारा शिक्षण (education through action) देना यह अहिंसक समाजरचना का एक अंग है। लेकिन 'छोटे-मोटे अन्यायों का निवारण करते रहना हमारा काम नहीं, क्रान्ति-विचार फैलाना हमारा काम है,' इस भूमिका में हम काम करते रहे। पिछले अनेक सालों से अन्याय-निवारण के काम की हमने उपेक्षा की।

(३) समाज-परिवर्तन के एक प्रभावी साधन के नाते पिछले सत्रह-अठारह सालों में सर्वोदय-निष्ठों ने गांधी-प्रणीत सत्याग्रह का उपयोग नहीं किया। जिनकी अहिंसा पर ही नहीं, लोकतन्त्र पर भी श्रद्धा नहीं थी, ऐसों ने इस अस्त्र का दुरुपयोग करके सत्याग्रह का मर्म ही विकृत कर दिया।

(४) इतने बड़े पैमाने पर क्रान्ति हो रही है, फिर भी देश के, अंग्रेजी नहीं तो, प्रादेशिक भाषा के समाचार-पत्रों के सम्पादकों को अथवा संवाददाताओं को उसमें स्वयस्फूर्त दिलचस्पी क्यों नहीं होती? क्या ये सारे लोग सर्वोदय और ग्रामदान के इतने प्रतिकूल हैं कि क्रान्ति उनको दिखाई नहीं देती और उसके समाचार भी वे अपने अखबारों में नहीं छापते?

(५) आन्दोलन को सामान्य जनता का, और विशेषतः विद्यार्थियों और तरुणों का योगदान नहीं प्राप्त हुआ। आन्दोलन का काम बहुतों ने किया, लेकिन भूदान और कुछ हद तक खादी आदि विधायक क्षेत्रों में काम करनेवाले कार्यकर्ताओं को छोड़कर ग्रामदान के कार्यक्रम के लिए अन्य किन्हीं के मन में भावना बन्ध (emotional involvement अथवा commitment) नहीं निर्माण हुआ।

(६) शान्ति-सेना की भी यही हालत है। उसने तो करीब-करीब पूरी तरह अपेक्षा भंग ही की है। सन् १९५८ से लेकर आज तक सामान्य शान्ति-सैनिकों की तरफ से अशान्ति-शमन का ऐसा एक भी ठोस प्रयत्न नहीं हुआ कि जिसकी ओर सारे भारत का ध्यान सहज आकर्षित हुआ हो। परन्तु पिछले दस सालों में अपने देश में जगह-जगह भिन्न-भिन्न कारणों से अनेक दंगे फसाद और हिंसक आन्दोलन हुए। कई पुलिस पत्थरों या ढेलों से घायल हुए, अनेक सामान्य लोग पुलिस और सैनिकों की गोलियों के शिकार हुए, लेकिन एक भी शान्ति-सैनिक के अशान्ति-शमन के प्रयत्न में घायल अथवा दिवंगत होने की खबर कभी किसीको पढ़ने को नहीं मिली।

(७) सर्व सेवा संघ के अधिवेशनों में, सर्वोदय-सम्मेलनों में अथवा कुछ हद तक भूदान-सम्बन्धी पत्रिकाओं में आन्दोलन के गुण-दोषों की मुक्त चर्चा का अभाव होता है। वैसे ही आन्दोलन के प्रारम्भ में राजनैतिक समस्याओं की चर्चा वर्ज्य थी। परन्तु आन्दोलन में श्रद्धेय जय-प्रकाशजी के आने के कुछ वर्ष बाद राज-नैतिक विषयों पर भाषण होने लगे और कभी-कभी प्रस्ताव भी पास होने लगे। फिर भी किसी एक विषय को लेकर उस पर उत्तर-प्रत्युत्तरात्मक अथवा पक्ष-विपक्षात्मक चर्चा कराने की परिपाटी नहीं डाली गयी।

आन्दोलन के गुण-दोषों की अथवा राजनैतिक समस्याओं की उत्तर-प्रत्युत्त-रात्मक मुक्त चर्चा टालने की प्रथा के पीछे शायद यह डर होगा कि इससे सर्वसम्मति का जो नया प्रयोग हम अपने संगठनों में कर रहे हैं, उसमें बाधा पहुँचेगी। परन्तु किसी भी लोकतन्त्रात्मक कार्यपद्धति में उत्तर-प्रत्युत्तरात्मक चर्चा को स्थान होना ही चाहिए, क्योंकि ऐसी चर्चा से संगठन के सदस्यों अथवा प्रतिनिधियों का मतपरि-वर्तन कराने की गुंजाइश रहती है। अगर सर्वसम्मति के नाम पर भिन्न विचार, भिन्न कार्यक्रम अथवा भिन्न दृष्टिकोण की चर्चा को अवसर नहीं दिया गया तो लोकनीति द्वारा लोकतन्त्र का नया आदर्श प्रस्तुत करने का हमारा जो दावा है वह अयथार्थ साबित होगा।

सर्व सेवा संघ के राजगीर-अधिवेशन और सम्मेलन में जाहिरा तौर पर ग्रामदान आन्दोलन की आज तक की कार्य-पद्धति पर चर्चा होनी चाहिए और जरूरत महसूस हुई तो प्रचलित कार्यपद्धति में समुचित बदल किया जाना चाहिए।

मेरी राय है कि सन् १९७२ तक देश में बिहार जैसे ही और एक-दो राज्यदान भले ही हो जायें, किन्तु उनका देश की आर्थिक और राजनैतिक परिस्थिति पर कुछ उल्लेखनीय प्रभाव नहीं पड़ेगा। इसके विपरीत, ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के कार्य-क्रम को प्राधान्य देते हुए, अगर हम केवल छुटपुट अन्याय-निवारण के लिए ही नहीं, बल्कि व्यक्तिगत भूमि-स्वामित्व और उद्योग-स्वामित्व मिटाने की, वर्ग-निरा-करण की और व्यापक पैमाने पर एक अहिंसात्मक सामाजिक परिवर्तन लाने की दृष्टि से गांधीप्रणीत सत्याग्रह को अप-नायेंगे, तो अगले एक-दो सालों में आन्दोलन निश्चित ही प्रभावशाली होगा।

— वसन्त नारगोलकर

तीन मोर्चे पर एकसाथ काम हो

थोड़े दिनो बाद सर्वोदय समाज के मित्र तथा कार्यकर्ता राजगीर मे इकट्ठा होने जा रहे हैं। उन्हें आगे की व्यूह-रचना के लिए निश्चित सुझाव लेकर वहाँ पहुँचना चाहिए। मेरे ख्याल से आगे की व्यूह-रचना के लिए आन्दोलन को तीन मोर्चे पर एकसाथ काम करना होगा

पहला मोर्चा—इस मोर्चे पर विचार-निष्ठ *साथी विनोबाजी के सुझाव के* अनुसार लोकयात्री के रूप मे निरन्तर यात्रा करते रहेंगे। दूसरा मोर्चा—इस मोर्चे के लिए क्षेत्रीय स्तर पर जिलो और प्रदेश में विचार-शिक्षण और विचार-गोष्ठी, कानूनी-पुष्टि तथा सगठन, और सयोजन के *काम में कुछ साथियो को लगना होगा।* तीसरा मोर्चा—कुछ ऐसे लोग होगे जो अपने को नागरिक की भूमिका मे रखकर जगह-जगह छोटे-छोटे केन्द्रो की स्थापना करेंगे। ये साथी ग्राम-सभाओ की आवश्यकताओ की दृष्टि से प्रयोग करेंगे और प्रत्यक्ष मार्गदर्शन करेंगे। मूल रूप से इन केन्द्रो पर कृषिमूलक उद्योगप्रधान आर्थिक जिन्दगी के प्रयोग, प्रशिक्षण और मार्गदर्शन का काम होगा तथा अपने स्वावलम्बन के माध्यम से ग्राम-स्वावलम्बन का सगठन होगा। गाधीजी ने तो सात लाख गाँवो मे सात लाख जवानों को बैठने की बात कही थी, लेकिन विनोबाजी के नेतृत्व मे १८ सालो तक लगातार सारे देश मे विचार-प्रचार के कारण जो चेतना आयी है उसके फलस्वरूप हर एक गाँव आलोक-स्तम्भ बने, यह आवश्यक है।

तीसरे मोर्चे की शकायें

ग्रामदान-आन्दोलन के नेता शुरू से ही यह महसूस करते आये हैं कि पहले दोनों मोर्चों के साथ-साथ स्थान-स्थान पर कुछ स्थायी छोटे आश्रमों की आवश्यकता होगी। लेकिन कुछ शकाओ के कारण उस दिशा मे अधिक चिन्तन नहीं चल सका। आम तौर से तीन सवाल उठते हैं :

(१) आश्रम के लिए भूमि तथा अन्य साधन चाहिए। वह कहाँ से आयेंगे ?

(२) आश्रम मे कार्यकर्ता स्वावलम्बी कैसे हो सकेंगे ?

(३) अगर साधन मिल जाय और कार्यकर्ता स्वावलम्बी भी हो जाय, तो उसे स्वावलम्बन सिद्ध करने मे इतना फँसे रहना होगा कि उसे लोक-सम्पर्क द्वारा विचार-शिक्षण के लिए समय ही नही मिलेगा।

इन तीनो पहलुओं पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए।

वास्तव मे यह शका, कि कार्यकर्ता *स्वावलम्बन के प्रयास मे फँसकर* विचार-प्रसार के लिए समय नही दे सकेगा, एक भ्रमपूर्ण चिन्तन का फल है। केवल प्रचार-पद्धति की अपेक्षा स्वावलम्बन के समवाय मे हुआ लोक-शिक्षण ज्यादा असरकारक होगा, ऐसा अनुभव आया है। सच बात तो यह है कि आम तौर पर हम समवाय शिक्षण-पद्धति का छोर खोजने के झमेले मे पड़ना नही चाहते। इसीलिए बुनियादी शिक्षा के स्वावलम्बी बनाने के प्रयास को यह कहकर छोड़ते रहे कि स्वावलम्बन के प्रयास मे शिक्षा के लिए समय नहीं बचेगा, और स्वावलम्बन के माध्यम से लोक-शिक्षण को यह कहकर नहीं अपनाते कि कार्यकर्ता स्वावलम्बन मे फँस जायेगा, तो उसे लोक-शिक्षण का समय नही मिलेगा।

दूसरी शका स्वावलम्बी लोकसेवक के लिए साधन उपलब्ध होने के सम्बन्ध मे है। यह कोई सवाल नहीं है, क्योंकि यदि इस देश की जनता और आन्दोलन का नेतृत्व गम्भीरता से चाहेंगे तो कुछ हजार स्वावलम्बी कार्यकर्ताओ के केन्द्र के लिए साधन अवश्य जुटा सकेंगे।

तीसरी शका कार्यकर्ता के स्वावलम्बी होने की है। श्री धीरेन्द्र भाई के साथ दरभंगा जाने के पहले तक सात साल बरतपुर मे मैंने कार्य किया। इस पूरे समय हम लोगों का रहन-सहन किसी भी सस्था के कार्यकर्ताओ से खराब नहीं रहा। अन्त मे बरतपुर की बचत की रकम से ही मधुबनी, दरभगा जिले मे 'श्रमभारती' की स्थापना भी हो सकी।

परिस्थिति की अनिवार्यता

अब सब लोग प्रदेशदान के बाद के कार्यक्रम के बारे मे सोच रहे हैं। हमको समझना होगा कि रचनात्मक सस्थाओं के कार्यकर्ताओ की एक मर्यादा है। हल्ला-गुल्ला करके विचार की गूँज सब जगह पहुँचाने मे इन्होंने तथा शिक्षक, और अन्य लोगो ने काफी सहयोग दिया है। लेकिन अब जब कि ग्रामदान की गूँज केवल अपने देश मे ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया मे हो गयी है, योजनापूर्वक तीनो मोर्चों पर काम करना होगा। लोक-यात्राओं द्वारा विचार की गूंज, क्षेत्रीय स्तर पर ग्रामसभाओ का सगठन, तथा नागरिक की भूमिका मे बैठकर स्वावलम्बी लोकसेवक के रूप मे प्रकाश-स्तम्भ का काम, ये तीनो प्रयत्न होने से ही लोक-शिक्षण मे समग्रता आयेगी।

अबतक इस आखिरी प्रकार के केन्द्र की आवश्यकता समझते हुए भी हमारे नेता इसके प्रति उदासीन रहे हैं। लेकिन अब समय आ गया है कि आन्दोलन ठोस बुनियाद पर खड़ा हो, और समुचित मार्ग-दर्शन के लिए स्थायी केन्द्रो का गठन *किया जाय।*

—नरेन्द्र

विनोबाजी का कार्यक्रम

अक्तूबर

२० तक . राँची

" राँची से शाम को ६ बजे प्रस्थान—ट्रेन द्वारा

२१ गया पहुँच—सुबह ५ बजे

" गया से राजगीर के लिए २॥ बजे प्रस्थान

२१ राजगीर पहुँच—साय ४ बजे

२८ तक · पता अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन, विनोबा-निवास राजगीर, *जिला—पटना*, बिहार

राँची का पता : विनोबा-निवास, नार्थ ऑफिस रोड, राँची, फोन—१६३७
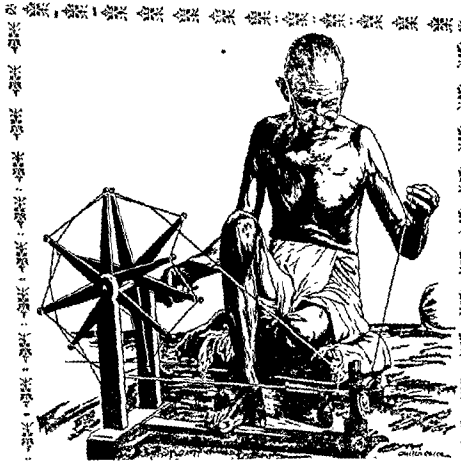
बा-बापू जन्म-शताब्दी-समारोह
(२ अक्तूबर सन् १९६९ से २२ फरवरी सन् १९७०)
इस पर्व में गांधीजी का सन्देश घर-घर पहुँचाइए
ग्राम-स्वराज्य कायम करने की प्रेरणा जगाइए
* फिल्म—"गांधीजी के पथ पर", * प्रदर्शिनी सेट—"वेदों से गांधी-विनोबा युग"
* फोटोग्राफिक पोस्टर-प्रदर्शिनी सेट—"ग्राम-स्वराज्य", * स्लाइड्स,
* पुस्तकें एवं पोस्टर-फोल्डर, आदि प्रेरक सामग्री हेतु सम्पर्क-स्थान.
१. अपने प्रदेश का सर्वोदय-संगठन
२. अपने प्रदेश की गांधी जन्म-शताब्दी समिति
३. गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति
टूंकलिया भवन, कुंदीगरों का भैरू, जयपुर-३ (राजस्थान)
राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
टूंकलिया भवन, कुंदीगरों का भैरू, जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

अहमदाबाद की अशान्ति में शान्ति-सेना के कार्य

साम्प्रदायिक दंगों के कारण अहमदाबाद शहर में १०-१२ दिन के लिए उथल-पुथल मच गयी थी। गांधी शताब्दी-वर्ष में इस प्रकार की घटना होने से रचनात्मक कार्यकर्ताओं को अत्यन्त दुःख का अनुभव हुआ।

अठारह सितम्बर गुरुवार को शाम का समय था। जगदीश मन्दिर के पास उर्स का मेला लगा हुआ था। इस मेले में भाग लेने के लिए हजारों मुस्लिम स्त्री-पुरुष एकत्रित हुए थे। जगदीश मन्दिर की गायें चरकर वापिस आ रही थीं। इस विशाल समूह में किसीको गाय का धक्का लगा। किसीने गुस्से में आकर गाय को मारा और भगभग किया। गायों के सरंक्षक साधुओं और मुसलमानों के बीच लड़ाई लग गयी। साधु दौड़कर मन्दिर में घुस गये। उनके पीछे दौड़ते हुए मुसलमानों ने मन्दिर में घुसकर साधुओं को मारा और मन्दिर को नुकसान पहुँचाया। इस घटना ने साम्प्रदायिक मानस में पलीते का काम किया और भयंकर दंगा मच गया। आग, खून, पत्थरबाजी छुरेबाजी वगैरह, जो सभी जगह होता रहा है वही यहाँ भी हुआ।

बनासकाठा में घूमते हुए गुजरात के प्रसिद्ध सर्वोदय-नेता पूज्य रविशंकर महाराज इन समाचार को सुनकर तुरन्त आ पहुँचे। उन्होंने शहर में घूम घूमकर शान्ति स्थापित करने का प्रयत्न शुरू कर दिया। उनसे प्रेरणा प्राप्त करके शान्ति-सैनिकों का छोटा-सा मण्डल काम में लग गया। विशेषत प्रा० हरीश व्यास, प्रा० प्रताप टोलिया, श्री सुमन्त व्यास, श्री भगुभाई पटेल, श्री कृष्णवदन शाह, श्री किसन त्रिवेदी, श्री चिनुभाई अमीन आदि कार्यकर्ताओं ने रात-दिन अत्यन्त परिश्रम उठाकर शान्ति-स्थापना के लिए काम किया। पूज्य रविशंकर महाराज की शान्ति-अपील को प्रकाशित करके शहर में बाँटना, झूठी अफवाहें न फैलने के लिए समझाना, आक्रामक तत्वों का सामना करने के लिए लोगों को संगठित करना, सड़कों पर भीड़ इकट्ठी न होने देना, साइकिल पर मौन शान्ति-कूच करना, मुहल्लों में प्रार्थना, शान्ति-संगीत द्वारा प्रेम और एकता के लिए वातावरण बनाना, करफ्यू के समय लोगों को आवश्यक चीजें प्राप्त करने में सहायक होना, संघर्षमय स्थिति में पहुँचकर शान्ति-स्थापना के लिए कोशिश करना आदि प्रवृत्तियाँ शान्ति-सेना द्वारा की गयीं।

साबरमती आश्रम के मुस्लिम कुटुम्बों पर बड़े समूह ने आक्रमण किया। इस समय श्री मामासाहब फड़के, श्री किसन त्रिवेदी, श्री डाह्याभाई नायक आदि कार्यकर्ताओं ने प्राणों की परवाह न करके उस समूह को पीछे हटाया।

शाहपुर में श्री भगुभाई पटेल ने अन्य शान्ति-सैनिकों की मदद से एक मस्जिद को तोड़ने से एक समूह को रोका।

एलिसब्रिज में श्री हरीशभाई व्यास ने मुस्लिमों की दुकानों को जलाते हुए समूह को समझा-बुझाकर बिखेरा।

आवावाड़ी में श्री चिनुभाई अमीन ने एक मुस्लिम कुटुम्ब में माँ-बेटी को परेशानी में से बचाया।

शहर में अमानुषिकता के अन्धकार के बीच भी मानवता के अनेक दीपक जगमगा रहे थे। अनेक हिन्दुओं ने मुसलमानों को और मुसलमानों ने हिन्दुओं को बचाया। नवरंगपुरा में मुस्लिम सोसाइटी के मुसलमानों का रक्षण आजू-बाजू के हिन्दुओं ने किया। पठानचाल, जमालपुर, पाल्डी आदि बस्तियों में हिन्दू-मुसलमानों ने परस्पर की रक्षा जी-जान से की।

इस स्थिति में शान्ति-स्थापना के लिए कुछ बहनों ने भी काम किया। विशेषत श्री चन्द्रलेखा पटेल, श्री सावित्री व्यास, श्री कान्ता शाह, श्री कुसुम नारगोलकर आदि बहनों ने बहुत दिलचस्पी से काम किया। श्री जुगतराम दवे सूरत से कुछ शान्ति-सैनिक लेकर मदद में आ पहुँचे। बम्बई के कुछ शान्ति-सैनिक भी सहायता के लिए आ गये। जनता परिषद् के नेता श्री इन्दुलाल याज्ञिक और कांग्रेस के नेता श्री मोरारजी भाई देसाई ने कौमी एकता, प्रेम और शान्ति की स्थापना के लिए उपवास किये। हजारों लोगों के धन-जन की हानि हुई है। अब परिस्थिति धीरे-धीरे शान्त हो रही है। दिल से इतनी प्रार्थना है— 'सबको सन्मति दे भगवान्!' —सावित्री व्यास

सीमान्त गांधी का उपवास

—देशभर में नैतिक जागरण का वातावरण—

प्राप्त सूचना के अनुसार ३ अक्तूबर '६९ को सुबह ७ बजे से दैनिक नमाज के साथ ही सीमान्त गांधी खान अब्दुल गफ्फार खाँ का उपवास शुरू हो गया। वे केवल पानी लेते रहे। उपवास के सम्बन्ध में स्पष्टीकरण करते हुए सीमान्त गांधी ने कहा कि यह उपवास किसी खास घटना आदि के कारण नहीं है। देशभर में फैली हिंसा, नफरत और साम्प्रदायिकता के विरोधस्वरूप उनका यह उपवास शुरू हुआ है। श्री जयप्रकाश नारायण ने आपके उपवास के आखिरी दिन ५ अक्तूबर को देशव्यापी उपवास और आत्मचिन्तन-दिवस के रूप में मनाने की अपील की। तदनुसार सारे देश में सीमान्त गांधी के व्रत में भागीदार होने के लिए देशभर में उपवासों और प्रार्थनाओं का क्रम चला। ६ अक्तूबर की सुबह उपवास टूटा। सीमान्त गांधी अब पूर्ण स्वस्थ हैं।•

आचार्यकुल

गड़हा क्षेत्र (बलिया) के सेवा सघ इन्टर कालेज में आचार्यकुल की स्थापना श्री वंशीधरजी की उपस्थिति में क्षेत्रीय शिक्षकों द्वारा हुई। इस क्षेत्र के संगठन की जिम्मेदारी श्री शिवकुमार राय को दी गयी है। श्री ब्रह्मेश्वर राय ने चितबड़ा गाँव की स्थानीय इकाई का अध्यक्ष होना स्वीकार किया।•

<u>विनोबा निवास से :</u>

सम्मेलन से पूर्व बिहारदान प्रायः निश्चित

कल २ अक्तूबर को गांधी-जन्म-शताब्दी समारोह पू० बाबा की उपस्थिति में यहाँ मनाया गया। रांची नगर के प्रबुद्ध जिम्मेवार लोगों ने यह आयोजन किया था। गांधी शांति प्रतिष्ठान द्वारा आमसभा का भी आयोजन किया गया था। उसमें आगरा जिलादान की घोषणा के साथ-साथ बिहार का सिंहभूम जिला-दान बाबा को समर्पित किया गया और साथ में रांची के चार प्रखंड, क्रमशः कांके, ओरमांझी, कुडू और रनियां प्रखंडदान घोषित हुए। उ० प्र० से फर्रुखाबाद जिलादान तथा संताल्परगना के जामा और हिरनपुर प्रखंडदान-प्राप्ति की सूचना मिली।

छोटानागपुर के महाराजा श्री चिन्ता-मणि नाथ शाहदेव और आदिवासी नेता श्री जयपाल सिंह, एम० पी० ने ग्रामदान समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिया है। श्री जयपाल सिंह ने ग्रामदान के लिए अपील भी निकाली है। उन्होंने रांची और संतालपरगना के लिए लगभग एक सप्ताह का समय दिया है। संताल्परगना के लिए श्री बागुन सुम्बरुई, अध्यक्ष अ० भा० झारखंड पार्टी ने तीन दिन का समय दिया है। ७, ८ और ९ तारीखों में कृष्णराजजी भी उनके साथ रहनेवाले हैं। चूंकि संतालपरगना में अब केवल १२ प्रखंड बचे हैं और इन नेताओं की अनुकूलता हो गयी है, इसलिए उम्मीद है कि सम्मेलन के पहले यह भी जिलादान हो जायेगा। रांची में अब २५ प्रखंड बचे हैं। वे भी सम्मेलन के पहले तक ग्रामदान में आ जायं, ऐसी कोशिश जारी है। जिला शिक्षा-पदाधिकारी ने जिले के सभी शिक्षकों को निर्देश दिया है कि वे इनमें सक्रिय रूप से मदद करें। उनका स्वयं का भी दौरे का कार्यक्रम बन गया है। अन्य सरकारी सेवकों का भी योग इस निमित्त जिले में हो, ऐसा प्रयास कर रहे हैं। प्रारम्भ में ये लोग सक्रिय हुए थे, लेकिन प्रबल विरोध होने के कारण वे शिथिल हो गये थे। अब चूंकि वातावरण अनुकूल बना है, इसलिए उनकी सक्रियता से काम में तेजी आयेगी।

सिंहभूम जिलादान २ अक्तूबर को सम्पन्न हुआ। वहाँ भी चाईबासा अनु-मण्डल के आदिवासियों के विरोध के कारण

आज (अधिक) सन्तान उत्पन्न करना उचित नहीं है। इस देश के ऊपर बोझ न बढ़ायें। जब तक गरीबी और रोग की जड़ इस देश से खतम नहीं होती, हमें (अधिक) बच्चे पैदा करने का अधिकार नहीं है।

—मो० क० गांधी

अगला बच्चा अभी नहीं

तीन के बाद कभी नहीं

'ब्रह्मचर्य' आज की सामाजिक आवश्यकता है। —विनोबा

रखा हुआ था, बानो के दो अनुमण्डल पहले ही ग्रामदान में आ गये थे। लेकिन श्री बागुलजी के सक्रिय सहयोग से यह अनुमण्डल-दान हो जाने के बाद जिलादान पूरा हुआ। यद्यपि उनका घोर विरोध उनके ही कुछ साथी तथा कुछ पार्टी के लोग कर रहे हैं, फिर भी वे निडर होकर उनका मुकाबला कर रहे हैं। उस अनुमण्डल में २३ सितम्बर को अपने सर्वोदय के चार-पाँच कार्यकर्ताओं पर काफी मार भी पड़ी, यद्यपि कई लोगों ने पुलिस-केस चलाने की सलाह दी, लेकिन इन लोगों ने वैसा करने से इनकार किया। उन कार्यकर्ताओं की चिकित्सा भी सदर हास्पिटल में न कराकर प्राइवेट रूप से करायी गयी। श्री बागुलजी स्वयं वहाँ गये और अपने दूसरे सर्वोदय साथी लोग आ गये। वहाँ के लोगों ने अपनी गलती कबूल की और वह पूरा-का-पूरा गाँव ग्रामदान में शामिल हो गया।

राँची जिले का सदर अनुमण्डल और गुमला अनुमण्डल जल्दी पूरा होगा, ऐसी उम्मीद है। खूँटी और सिमडेगा अनुमण्डल में कठिनाई है। सिमडेगा में निर्मला बहन काफी दिनों से लगी हुई हैं। हरिवल्लभ भाई पारीख भी अपने कुछ कार्यकर्ताओं के साथ वहाँ पर लगे रहे। देवनारायण मिश्र और लक्ष्मणचन्द्र त्यागी, जिनको प्रेमभाई ने भेजा है, उनको भी सिमडेगा भेजा गया है। सिंहभूम के बचे हुए कार्यकर्ता जो स्थानीय आदिवासी हैं और दूसरे जिलों के भी हैं, उनको सिमडेगा और खूँटी में लगाया गया है। रातू के महाराज का हस्ताक्षर मिल जाने से भी कुछ अनुकूलता हुई है। श्री जयपाल सिंह के दौरे से अधिक अनुकूलता पैदा होगी और काम में तेजी आयेगी, ऐसा अनुमान है। —अखिलेश्वर पाठक

भूवितरण

मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ बोर्ड से सूचना मिली है कि प्रारम्भ से ३१ अगस्त १९६९ तक प्रदेश के ४३ जिलों में कुल ४,०९,९२६ एकड़ ६२ डिस्मल भूमि भूदान में प्राप्त हुई। १,७६,६८८ एकड़ ७३ डिस्मल भूमि भूमिहीनों को दी जा चुकी है। •

आन्दोलन के समाचार

उत्तरप्रदेश का चौथा जिलादान फर्रुखाबाद २ अक्तूबर को सम्पन्न हो गया। इस जिले में ६ अप्रैल १९६८ को ग्रामदान का पहला अभियान शुरू हुआ था। २५ सितम्बर १९६९ तक ६ अभियान चलाये गये। सम्भवतः भारत का यह पहला जिलादान है, जो मुख्यतः शिक्षकों के अथक प्रयास से पूरा हुआ है। इस जिले में कुल २९६३ गाँव हैं, जिनमें १४९ नाबिरागी गाँव हैं। इस प्रकार २८१४ ग्रामदान के लायक गाँवों में से २४२८ गाँवों का ग्रामदान ८६ प्रतिशत होने से जिलादान की घोषणा हुई।

स्वराज्य आश्रम कानपुर से श्री रामजीवन भाई ने सूचना दी है कि घाटमपुर विकासखण्ड में २१ से २६ सितम्बर तक ग्रामदान-अभियान चला, जिसमें १५० शिक्षक और कार्यकर्ता शामिल हुए। इस अभियान में ७४ ग्रामदान प्राप्त हुए। इन गाँवों में पाँच हजार की आबादी तक के गाँव भी हैं। गोण्डा जिले में भी ग्रामदान-अभियान चलाने के लिए २३,२४ सितम्बर को बलरामपुर में शिविर हुआ, जिसमें सर्वश्री कपिल भाई, वंशीधरजी, रामवचन सिंह ने मार्गदर्शन किया। इस शिविर में ग्रामसेवक, पंचायत मंत्री आदि शामिल थे। •

श्री फुलिया भगत ने लिखा है कि सितम्बर में १५६ मील की यात्रा की और २८९ रुपये २५ पैसे की साहित्य-बिक्री हुई। ३० गाँवों और १२ स्कूलों में विचार-प्रचार किया है। •

जयन्ती-समारोह

विश्ववंद्य महात्मा गांधी की २ अक्तूबर को सौवीं जन्मतिथि देश और विदेश में सोल्लास, समारोह 'गांधी-जन्म शताब्दी' के रूप में मनायी गयी। प्रभात-फेरियाँ, सामूहिक सफाई, एक सौ घण्टे का अखण्ड सूत्रयज्ञ और सार्वजनिक सभाओं द्वारा राष्ट्रपिता के प्रति भावभीनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित की गयीं। देश के कई शहरों में दुकानों, और बाजारों को खूब सजाया गया था। प्राप्त समाचारों के अनुसार गया (बिहार) नगर में महिला बाल-कल्याण उपसमिति की ओर से गांधी-मण्डप में कार्यक्रम हुए। श्रमभारती, खादीग्राम (मुंगेर) में गांधीजी की जन्म-शताब्दी धूमधाम से मनायी गयी।

सर्वोदय आश्रम सोखोदेवरा में तालाब-निर्माण और गांधी-प्रतिमा का अनावरण इस अवसर पर किया गया। महिलाओं और श्रमिकों की सभाओं में गांधीजी के बारे में बताया गया। दरभंगा से समाचार मिला है कि कल्याणपुर में ग्रामवासियों ने दरिद्रनारायण के रूप में गांधी-जन्म-शताब्दी मनायी गयी। खादी-सदन नरसिंहपुर में गांधी-जयन्ती मनायी गयी।

देवरिया जिले के लमकुही रोड के लोकमान्य कालेज में श्री गांधी आश्रम, गन्ना विकास परिषद, चीनी मिल सहरही द्वारा समारोह के साथ जयन्ती मनायी गयी। रायबरेली में जिला गांधी शताब्दी समिति द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में उत्तरप्रदेश के उप मुख्य मंत्री श्री श्री कमलापति त्रिपाठी ने शामिल होकर जनता को गांधीजी की कल्पना के ग्राम-स्वराज्य की भूमिका बतायी। श्री गांधी आश्रम रायबरेली में चल रहे सूत्रयज्ञ का समापन भी उन्होंने किया। कानपुर में श्री धीरेन्द्रभाई ने एक जनसभा को सम्बोधित किया और गांधीजी के सिद्धान्तों पर अमल करने की अपील की।

बलिया के द्वाबा क्षेत्र में २ अक्तूबर को रानीगंज बाजार में मुरलीधर पुरी इण्टर कालेज के छात्रों एवं शिक्षकों ने आचार्य श्री जगन्नारायण सिंह के संचालन में आकर्षक ढंग से गांधी-जयन्ती मनायी। चौक में शाम को द्वाबा सर्वोदय मण्डल द्वारा आयोजित सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें रचनात्मक कार्यकर्ताओं, शिक्षकों एवं राजनीतिक नेताओं ने गांधीजी को भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

सर्वोदय-सम्मेलन के उद्घाटन-कर्ता : श्री चारुचन्द्र भण्डारी

चारुदा

हमारे चारुदा अब ७४ साल के हो गये हैं। पश्चिमी बंगाल के २४ परगना र के श्यामनगर चक्र गाँव में एक यम वर्ग के परिवार में उनका जन्म हुआ। गाँव के ही हाईस्कूल में उनको प्राथ-क शिक्षा हुई। बाद में कलकत्ता से शास्त्र में एम० ए० और बी० एल० की ग्री प्राप्त की। अपनी प्रखर बुद्धिमत्ता कारण बचपन में ही वे शिक्षकों के य पात्र रहे। बचपन से ही उनमें गरीबों प्रति आत्मीयता विद्यमान थी। वे उनके ों से दुखी होते, एवं अपनी सामर्थ्य अनुसार उनके दुःख का निवारण करने : हर सम्भव प्रयत्न करते। हर प्रकार के वा-कार्य में उनकी दिलचस्पी थी।

शिक्षणोपरान्त डायमण्ड हारबार की चहरी में वकालत शुरू की और साथ-ाथ राजनीति के क्षेत्र में भी प्रवेश कया। गांधीजी के आदर्शों से वे इतने भावित हो गये थे कि अदालत में सवाल रने समय भी वे तकली पर सूत कातते हते थे। स्थानीय लोकल बोर्ड के अध्यक्ष के रूप में भी दीर्घकाल तक सेवा-कार्य कर चुके हैं।

सन् १९३० में नमक-सत्याग्रह के सिलसिले में वे पहली बार जेल गये। कारावास से मुक्त होते ही आपने डायमंड हारबार में 'खादी-मन्दिर' के नाम से एक रचनात्मक संस्था की स्थापना की। इस संस्था द्वारा संचालित ९ केन्द्रों पर खादी-ग्रामोद्योग का काम आज तक चल रहा है।

गांधी सेवा संघ के वे बंगाल के सदस्य रह चुके हैं। स्वतंत्रता-आन्दोलन में भाग लेने के कारण उन्हें कई बार जेल की भी यात्रा करनी पड़ी। सन् १९४६ में बंगाल प्रान्त में जो साम्प्रदायिक दंगा हुआ, उसमें अपने जीवन को संकट में डालकर आपने जो सेवा की, उसकी मिसाल बहुत कम मिलती।

सन् १९४६ के चुनाव में अविभाजित बंगाल की विधान-सभा में वे सदस्य चुने गये। सन् १९४७ में स्वतंत्रता के पश्चात् पश्चिम बंगाल की पहली जो सरकार बनी उसमें वे खाद्यमंत्री बनाये गये और जन हृदय में विशिष्ट स्थान प्राप्त किया।

विनोबाजी की भूदान की पुकार सुनकर उन्होंने विधान-सभा की सदस्यता-पद से त्याग-पत्र दिया दे और राजनीति से भी अपने को मुक्त कर लिया और अन्त-करण के साथ सर्वोदय आन्दोलन में अपना जीवन न्यौछावर कर दिया। भूदान और ग्रामदान के आन्दोलन के सिलसिले में बंगाल के गाँव-गाँव में उन्होंने पदयात्रा की और अबतक पदयात्रा द्वारा करीब २५,००० मील तक का परिभ्रमण किया है। सन् १९६२ में जलपाईगुड़ी जिले में एक जीप-दुर्घटना के शिकार भी हुए, किन्तु ईश्वर की कृपा से उनका जीवन महत्तर कार्यों के लिए बच गया। किन्तु दुर्घटना के बाद से लम्बी पदयात्रा करना उनके लिए सम्भव नहीं रह गया। फिर भी नक्सालबाड़ी को केन्द्र मानकर उत्तरी बंगाल के क्षेत्रों में ग्रामदान-आन्दोलन के लिए उनकी परिक्रमा होती रहती है।

सर्वोदय-दर्शन के वे एक ही साथ पंडित, प्रवक्ता और भाष्यकार हैं। बंगला "भूदान-यज्ञ" पत्रिका के वे प्रतिष्ठापक संपादक हैं। उनकी लिखी हुई 'भूदान यज्ञ क्यों और कैसे ?' 'हमारा राष्ट्रीय शिक्षण' जैसी पुस्तकें भारत में सर्वत्र समादृत और विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में अनूदित हुई हैं।

उनकी कठोर परिश्रमी, अतिशय अध्ययनशील, सादी तथा निर्मल जीवन-यात्रा हम सबके लिए एक आदर्श प्रस्तुत करती है। —अनंगविजय मुखर्जी

सर्वोदय-सम्मेलन की अध्यक्षा : सुश्री निर्मला देशपांडे

'कान्स्टिट्यूएंट एसेम्बली' की दर्शक-गैलरी में हमारी प्रथम मुलाकात हुई—परस्पर-दर्शन के रूप में। दर्शक-गैलरी में तालियाँ बजाने की भी मनाही, वहाँ बातें कैसे हो सकती थीं ? और परिचय भी कहाँ था ? "ओ ! शायद मराठी हैं !" दोनों ने एक-दूसरे की संस्कृति पहचान ली, लेकिन चुप्पी के साथ। यही बात दुहरायी गयी दूसरे दिन, तीसरे दिन, चौथे दिन। और फिर एक दिन 'इंडिया गेट' पर, अपने-अपने पिताजी के साथ घूमते हुए एक-दूसरे का परिचय हुआ। पता चला कि विदर्भ (महाराष्ट्र) के विद्वान चिन्तक श्री पी० वाई० देशपांडे की वे सुपुत्री हैं, राजनीति में एम० ए० की उपाधि पायी है। और फिर शुरू हुआ इकट्ठा घूमना, पुस्तकों का आदान-प्रदान, चर्चा और फोन

निर्मला बहन

पर लम्बी बातें।

उस समय उसके सामने अपने भविष्य का चित्र स्पष्ट था और मैं अपने में ही मस्त थी। उस समय मुझ पर उसके व्यक्तित्व की एक विदुषी के रूप में छाप पड़ी।

दिल्ली-निवास खतम हुआ, दो पक्षी बिछुड़ गये। दुबारा उनकी मुलाकात हुई 'विनोबा के साथ' वाली उनकी किताब में। इस मुलाकात में परिचय हुआ उसके व्यक्तित्व के दूसरे पहलुओं का। उसके त्यागी, सेवामय जीवन का, विनोबा-गांधी के प्रति उसकी भक्ति का। कालेज की अपनी नौकरी छोड़कर, उज्ज्वल भविष्य का मोह छोड़कर, एक संत के द्वारा प्रारम्भ हुए महान यज्ञ में शरीक होने वह निकल पड़ी थी। सुखासीन जीवन छोड़कर धूप-बारिश में गाँव-गाँव में घूम रही थी। दिल में क्रान्ति की आग और दिमाग में वैराग्य की शीतलता लेकर।

पृथ्वी गोल है। घूमते-घामते फिर से हमारी मुलाकात हुई साक्षात् विनोबा के पास ही। अब उस 'कच्चा नाता' का वलय, जो दिल्ली के जीवन में ही प्रारम्भ हुआ था, पक्का बनने लगा था। और परिचय होने लगा उस 'डायनेमिक' (गतिशील) व्यक्तित्व का। भूदान, शान्ति-सेना, ग्रामदान, सर्वोदय के हर क्षेत्र में उस गतिशील व्यक्तित्व की उपस्थिति आवश्यक मानी जाने लगी। कन्याकुमारी से कश्मीर तक का विशाल क्षेत्र उस शक्तिशाली व्यक्तित्व को मिल गया। लोक-संपर्क, संगठन, कार्यकर्ता-प्रशिक्षण, अनेक कामों की बागडोर उसके हाथों में सौंपी जाने लगी। और इन सबका तटस्थता से निरीक्षण करनेवाले विनोबाजी की कूर्म-दृष्टि की वत्सलता में यह पौधा बहारदार पनपने लगा।

इसका सबूत है राजगिर में होनेवाला सर्वोदय-सम्मेलन। इस सम्मेलन की अनेक विशेषताएँ हैं। जिस स्थान से भगवान बुद्ध ने प्रथम बार आम जनता को सम्बोधित किया, भिक्षुओं को प्रेरणा देकर व्यापक प्रचार के लिए भेजा, उस निसर्ग-रम्य पावन राजगिर में; जिस स्थान पर भगवान महावीर ने अपने जीवन का अधिकाधिक समय बिताया उस पावन राजगिर में यह सम्मेलन हो रहा है। जापान बुद्ध संघ द्वारा खड़े किये स्तूप का उद्घाटन इस सम्मेलन में होनेवाला है। बिहार-दान की अहिंसक क्रान्ति का एक चरण यहाँ पूरा होनेवाला है। सरहदी गांधी बादशाह खान बीस साल के लम्बे अर्से के बाद सर्वोदय समाज से इस सम्मेलन में मिलनेवाले हैं। और हिंसक समाज को अहिंसा की राह पर लगाने के इस महान प्रयास के प्रेरणा-स्रोत विनोबाजी, अपनी रीति छोड़कर इस सम्मेलन में उपस्थित रहनेवाले हैं। और इस सम्मेलन की अध्यक्षता प्रज्ञावादिनी निर्मला बहन को सौंपी गयी है। आनेवाले नये युग का यह दर्शन है, साथ-साथ ही वैराग्य और क्रान्ति के योग के पैगाम की आशा।

—कालिन्दी

एक ऐतिहासिक पत्र

मेरे प्यारे बादशाह खान,

शब्दातीत व्यथा के साथ मैं कबूल करता हूँ कि हमारे स्वातंत्र्य-संग्राम में आपके प्रति बहुत अन्याय हुआ है और हमारे मित्रों द्वारा आप करीब-करीब छोड़े गये ही हैं। किन्तु आपने अत्यन्त धैर्य और क्षमाशीलता से सारा सहन कर लिया है। आपका उदाहरण हम सबके लिए एक प्रेरणास्रोत रहा है।

सारे भारत की और पूर्व पाकिस्तान के कुछ हिस्से की मेरी पदयात्रा के दरम्यान आप सदा ही मेरे दिल में रहे हैं। मैं आशा करता था कि परिस्थिति आपको ऐसा आन्दोलन पाकिस्तान में चलाने देगी। लेकिन यह नहीं होने को था। यही दीखता है कि ईश्वर की योजना अलग थी।

इन दिनों मेरी एक मान्यता दृढ़ होती जा रही है कि इस अणुयुग में तथाकथित राजनीति के दिन बीत चुके हैं और राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का हल अध्यात्म—जिसे हम उर्दू में 'रूहानियत' कहते हैं—के आधार से ही हो सकता है। और मैं जानता हूँ कि आप राजनीति के मनुष्य नहीं, बल्कि गहरी आध्यात्मिक निष्ठावाले ईश्वर-भक्त हैं। आप सदा ही अहिंसा और सहनशीलता के पक्षपाती रहे हैं। संभव है कि आपकी इतनी कसौटी करने के बाद ईश्वर आपको विश्व-समस्या-परिहार का औजार बनाना चाहता हो।

स्नेहादर के साथ,
आपका छोटा भाई,
विनोबा

ब्रह्मविद्या-मन्दिर, पवनार (वर्धा)
५ अप्रैल, सन् १९६५

बिहार में भूमि-वितरण

वाराणसी, १५ अक्तूबर। बिहार भूदान-यज्ञ कमेटी से समाचार प्राप्त हुआ है कि अबतक बिहार प्रदेश में २१,१७,४६७ एकड़ भूमि २,९०,२०० दानदाताओं द्वारा प्राप्त हुई है, जिसमें से ३,७७,५९२ एकड़ भूमि २१,६६१ गाँवों के २,२१,४९७ आदाताओं को वितरित की जा चुकी है। आदाताओं में ६८,५५० हरिजन एवं ३५,७०० आदिवासी परिवार हैं। ३,५५,९५५ एकड़ भूमि तालाब, चारागाह तथा अन्य प्रकार से अब गाँव के सार्वजनिक उपयोग में है। इसके पूर्व यह जमीन भू-स्वामियों के उपयोग या नियंत्रण में थी। ६,२७,३३० एकड़ भूमि कृषि के अयोग्य है, ६,२४,०९७ एकड़ भूमि के मार्च सन् १९७० तक वितरित हो जाने की संभावना है। शेष भूमि कई कारणों से वितरण या कृषि-योग्य नहीं है।

बिहारदान

विनोबा-निवास से १४-१०-'६९ को प्राप्त सूचनानुसार अब राँची में सिर्फ २३ और संताल परगना में १० प्रखण्ड प्रखण्डदान में आने को शेष रह गये हैं। सम्मेलन तक पूरा करने का तूफानी प्रयास जारी है।

राजगिर की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि : जहाँ अठारहवाँ सर्वोदय-सम्मेलन हो रहा है

आज अगर बिहार राज्य की राजधानी पटना से आप पचास मील पूरब जायें तो आपको राजगिर के भग्नावशेष मिलेंगे जो अपने भीतर एक लम्बी गौरव-गाथा छिपाये हुए हैं। प्रकृति आज भी वहाँ नयनाभिराम व आकर्षक है, जलवायु सुखद, लेकिन बीते युगों में सम्राटों या राजपुरुषों के विजयोल्लास और दर्पपूर्ण अभियान, बुद्ध-महावीर की शान्त एवं कल्याणकारी वाणी, धनिकों के आमोद-प्रमोद और साधारण जन के हर्ष विषाद वहाँ की फिज़ा में फैले हुए हैं, जिन्हें बोधगम्य करने के लिए कुछ इतिहास की दृष्टि चाहिए, कुछ कल्पना का पुट चाहिए।

पूर्व रेल्वे की बख्तियारपुर-बिहार शाखा पर बख्तियारपुर से ५४ किलोमीटर और मोटर-मार्ग द्वारा पटना से ६४ मील और गया से ४२ मील दूर स्थित राजगिर आज सारी दुनिया से आये यात्रियों के लिए पर्यटन का स्थान है, जहाँ गरम पानी के कई सोते, सप्तपर्णी गुफा, सोनभंडार गुफा, गृद्धकूट पहाड़ी, राजा अजातशत्रु का किला, पिप्पल गुफा, मनयार मठ आदि आज भी आकर्षण के अनेक केन्द्र हैं। यहाँ पी० डब्ल्यू० डी० रेस्ट हाउस, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड इन्सपेक्शन बंगलो, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड रेस्ट हाउस, फारेस्ट रेस्ट हाउस, यूथ हास्टेल, राजगिर रेस्ट हाउस व धर्मशालाएँ पर्यटकों व यात्रियों की सुविधा के लिए बनी हुई हैं जहाँ रहकर राजगिर पर शताब्दियों द्वारा चढ़ाई परत को एक-एक उठाकर उसके वास्तविक रूप के सम्बन्ध में जानकारी पायी जा सकती है।

इतिहास के बिखरे पृष्ठ

मगध (दक्षिण बिहार) पर शिशुनाग वंश का राज्य ई० पू० सातवीं सदी के लगभग स्थापित हुआ। पुराणों के अनुसार मगध के शिशुनाग वंश का संस्थापक शिशुनाग था, जो काशी का राजा था। उसने मगध पर अधिकार कर नालन्दा के निकट राजगिर को अपनी राजधानी बनाया था। इस वंश का पाँचवाँ राजा बिम्बिसार श्रेणिक था। उसने आधुनिक मुँगेर और भागलपुर को जीतकर मगध राज्य में मिला लिया था। मगध का अभ्युदय और विकास उसीके समय में शुरू हुआ। उसने अपनी पहली राजधानी गिरिव्रज बनायी, जिसकी पत्थर की दीवारें आज तक मौजूद हैं। ये भग्नावशेष भारत के अतीव प्राचीन खंडहरों में गिने जाते हैं।

बिम्बिसार (६०३-५५१ ई० पू०) ने राजनीतिक महत्त्व के वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये। उसने कोशल राजकुमारी लिच्छिविमुख्य की पुत्री और वैदेही राजकुमारी वासवी से विवाह किया। उसके अनेक पुत्र थे, जिनमें कुणीक (अजातशत्रु) प्रसिद्ध हुआ। उसकी राजधानी गिरिव्रज थी जो पाँच दीवारों में सुरक्षित थी। ये बड़ी-बड़ी दीवारें अपने भग्नरूप में आज भी देखी जा सकती हैं, जो प्राचीन भारतीय पाषाण स्थापत्य का नमूना पेश करती हैं। गिरिव्रज को बार्हद्रथों ने बसाया था। अपनी शक्ति के प्रसार-काल में बिम्बिसार ने गिरिव्रज के पार्श्व में ही दूसरी राजधानी राजगिर निर्मित की, जो बहुत दिनों तक मगध साम्राज्य की राजधानी बना रहा। राजगिर की योजना महागोविन्द नामक स्थपति ने बनायी थी।

बिम्बिसार आरम्भ में जैन था। जैन तीर्थंकर महावीर भी उसके समकालीन थे। उसने महावीर से प्रार्थना की थी कि वह उसके देश को सर्दी के संकट से बचने का आशीर्वाद दें। उसने अपनी पुरानी राजधानी गिरिव्रज में गौतम के दर्शन किये थे और वह जब बुद्ध होकर अपने शिष्य कश्यप बन्धुओं और उनके साथ रहनेवाले एक हजार जटिलों के समूह के साथ राजगिर पहुँचे तो उसने फिर उनका साक्षात्कार किया। श्रेणिक बिम्बिसार तुरन्त उनका शिष्य बन गया और महल में उन्हें अपने समस्त संघ के साथ आमन्त्रित करके अपने हाथों भोजन परोसा। उसने बुद्ध को वेलुवन नामक अपना उद्यान दान कर दिया, जिससे तथागत वहाँ ध्यान-मनन कर सकें। अपने राजवैद्य जीवक को उसने तथागत और संघ की परिचर्या और चिकित्सा के लिए नियुक्त किया।

तीन वर्षों तक अपने धर्म का प्रचार करने के बाद बहत्तर वर्ष की उम्र में वर्धमान महावीर ने ४८६ ई० पू० में राजगिर के निकट पावा में शरीर-त्याग किया। गौतम बुद्ध की भाँति महावीर भी धर्म-प्रचार के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान में सचरण करते रहे। कल्पसूत्र से प्राप्त जानकारी के आधार पर वह वर्षाकाल चम्पा, मिथिला, श्रावस्ती, वैशाली और राजगृह में बिताते। महाराज बिम्बिसार और अजातशत्रु से उनकी अक्सर भेंट हुआ करती। वे इन दोनों के सम्बन्धी ठहरते थे। यह भी कहा जाता है कि बुद्ध का एक निकट शिष्य उपालि पहले जैन था और वह राजगिर का रहनेवाला था।

राजा बिम्बिसार बुद्ध को अपना राज्य देना चाहता था, किन्तु बुद्ध ने उसे अस्वीकार कर दिया। जब ज्ञान-प्राप्ति के बाद बुद्ध राजगिर गये तब बिम्बिसार १२ नहुत यानी ३३६ गृहस्थों के साथ उनके अभिनन्दन के लिए गया। बिम्बिसार ने इस काल से लेकर जीवन पर्यन्त बौद्ध-धर्म के लिए तन-मन-धन से सेवा की। वह प्रतिमास ४-६ दिन विषय-भोग से मुक्त रहकर अपनी प्रजा को भी ऐसा ही करने का उपदेश देता था। बुद्ध के प्रति उसकी अटूट श्रद्धा थी। जब बुद्ध वैशाली जाने लगे तब राजा ने राजगृह से गंगातट तक सड़कों की अच्छी तरह मरम्मत करवायी। प्रतियोजन पर उसने आरामगृह बनवाया। सारे मार्ग में घुटने

तक रंग-बिरंगे फूल बिछवा दिये गये। राजा स्वयं बुद्ध के साथ चले, जिससे मार्ग में बुद्ध को कोई कष्ट न हो और गंगा-जल तक जाकर बुद्ध को नाव पर बिठा विदा किया। बुद्ध के चले जाने पर राजा ने उनके प्रत्यागमन की प्रतीक्षा में गंगातट पर खेमा डाल दिया। फिर उसी ठाट-बाट से वह बुद्ध के साथ राजगृह लौट गये।

राजगृह में पहली बौद्ध सभा

भारत के सांस्कृतिक इतिहास में राजगृह का नाम इसलिए भी प्रसिद्ध है, क्योंकि बुद्ध के जीवन-अवसान के कुछ ही सप्ताह बाद उनके विचारों और उपदेशों को व्यवस्थित रूप प्रदान करने के लिए यहाँ पहली बौद्ध सभा का आयोजन किया गया। यह सभा राजगृह के ही निकट सतपानी गुफा में की गयी थी। बौद्धधर्म संघ की ऐसी कुल चार सभाएँ हुई थीं। राजगृह में हुई इस पहली सभा में विभिन्न मठों के ५०० भिक्षुओं ने बुद्ध के उपदेशों का विधिवत् सम्पादन और वर्गीकरण करके उन्हें आधिकारिक मान्यता प्रदान की। इसी बैठक में बुद्ध के उपदेशों को पिटक, विनय और धम्म विभागों में बाँटा गया। इस बैठक के अध्यक्ष थे महाश्रमण महाकस्सप। बुद्ध के निकट शिष्य उपालि और आनन्द क्रम से विनय और धम्म के आधिकारिक प्रणेता थे।

राजगृह : प्रमुख नगर के रूप में

प्राचीन भारत में देश के भीतर और बाहर प्रचुर व्यापार चलता था। निर्यात की मुख्य वस्तुएँ थीं - रेशम, मलमल, अच्छे प्रकार के कपड़े, अस्त्र शस्त्र, कढ़ाई की हुई वस्तुएँ, इत्र व सुगंध, औषधियाँ, हाथीदाँत और उससे बनी वस्तुएँ तथा सोने-चाँदी के आभूषण। जानकों में प्राप्त उद्धरणों के अनुसार राजगृह अन्तर्देशीय प्रसिद्ध व्यापारिक मार्गों पर अवस्थित था। यह पूर्व में श्रावस्ती, पश्चिम में मथुरा तथा उत्तर-पश्चिम में तक्षशिला और गांधार देश से सम्बन्धित था। श्रावस्ती का प्रसिद्ध सेठ अनाथ पिंडीक राजगृह होकर देश के दूर-दूर भागों से व्यापार करता था। इसी अनाथ पिंडीक ने बुद्ध को दान करने के लिए एक पूरे उपवन की भूमि को स्वर्ण-मुद्राओं से ढँककर फिर उन्हें मूल्य रूप में चुकता करके उसे खरीद लिया था। बनारस से महाजनपथ सोनपुर (बिहार) पहुँचता था और वहाँ से वैशाली, जहाँ श्रावस्ती से राजगृह के रास्ते के साथ मिल जाता था। वैशाली से दक्षिण जानेवाले महापथ की शाखा पर अनेक पड़ाव थे, जिन पर बुद्ध राजगृह से कुसीनारा की अपनी अन्तिम यात्रा में ठहरे थे। वह राजगृह से अम्बलट्ठिका और नालन्दा होते हुए पाटलिग्राम में गंगा पार कर कोटिग्राम और नादिका होते हुए वैशाली पहुँचे थे।

राजगृह की अपने समय के प्रसिद्ध नगरों में भी गणना थी। दीर्घनिकाय से पता चलता है कि उस समय के सर्वोत्कृष्ट छः बड़े शहरों यानी चम्पा, राजगृह, श्रावस्ती, साकेत, कौशाम्बी और वाराणसी में राजगृह का भी स्थान था। उस समय के प्रसिद्ध नगरों में तक्षशिला का भी *स्थान है जिसकी कीर्ति प्रमुख विद्या-केन्द्र* के रूप में थी; जहाँ से पाणिनि, जीवक और कौटिल्य जैसे विश्व-प्रसिद्ध विद्वान निकले।

राजगिरि से स्थानान्तरण

बिम्बिसार द्वारा अंग विजय (करीब ५०० ई० पू०) से मगध साम्राज्य के विस्तार का प्रारम्भ होता है। अजातशत्रु ने उसके बाद काशी, कोशल और विदेह पर अपना अधिकार जमाया। मगध साम्राज्य इतना बढ़ चुका था कि उसकी राजधानी राजगृह से हटाकर गंगा और सोन के संगम पर स्थित सामरिक महत्व-वाले स्थान पाटलिपुत्र में लानी पड़ी। पाटलिपुत्र की स्थापना भगवान बुद्ध के अन्तिम दिनों में हुई थी। उन दिनों वह पाटलिग्राम मात्र था।

यह वह युग था जब राजाओं-महाराजाओं में निरन्तर संघर्ष हुआ करते थे। अवन्ति राज प्रद्योत कौशाम्बी के राजा उदयन का घोर शत्रु था। वह महत्वाकांक्षी प्रबल शासक था। उसके आतंक से उसके समकालीन राजा थर-थर काँपते थे। उसकी शक्ति से स्वयं मगधराज-*अजातशत्रु डर गया था और कहा जाता* है कि इसीलिए उसने राजगृह की दीवारें सुदृढ़ करायी थीं।

जैन परिशिष्ट पर्वन के अनुसार पद्मावती, कुणीक (अजातशत्रु) की पत्नी और उदायिन उसका पुत्र तथा अजातशत्रु के बाद राज्य का उत्तराधिकारी ठहरता है। उदायिन अपने पिता का चम्पा में वाइसराय था। उसने पिता द्वारा पाटलिपुत्र में निर्मित किले को और सुदृढ़ किया और अजातशत्रु की मृत्यु (४७५ ई० पू०) के बाद राजगृह से अपनी राजधानी वहाँ ले गया।

—रामभूषण

सर्वोदय-प्रेस-सर्विस

सर्व सेवा संघ द्वारा संचालित 'सर्वोदय प्रेस सर्विस' के वाराणसी केन्द्र से हिन्दी बुलेटिनों का उत्तर भारत के समस्त समाचार-पत्रों के लिए प्रसारण पुनः प्रारम्भ हो चुका है। देशभर में चलनेवाले सर्वोदय आन्दोलन के कार्यकर्ताओं को अपने यहाँ के समाचार संपादक, सर्वोदय-प्रेस सर्विस, राजघाट, वाराणसी-१ के पते पर शीघ्रातिशीघ्र भेजते रहना चाहिए।

'सर्व सेवा संघ न्यूज लेटर—पीपुल्स एक्शन' का पता परिवर्तित

सर्व सेवा संघ द्वारा अंग्रेजी में प्रकाशित 'न्यूज लेटर', अब 'पीपुल्स एक्शन' के नाम से सितम्बर '६९ से दिल्ली से प्रकाशित हो रहा है। उसका सम्पादकीय और व्यवस्थापकीय कार्यालय का पता है : गांधी शांति प्रतिष्ठान, २२१ राउज एवेन्यू, नयी दिल्ली-१

भविष्य में इस नये पते पर ही 'सर्व सेवा संघ न्यूज लेटर—पीपुल्स एक्शन' से सम्बन्धित पत्रव्यवहार करना अधिक सुविधाजनक होगा।●

गांधी का सत्य

सत्य किसी एक व्यक्ति का हो सकता है, यह मेरा विश्वास नहीं है, बौद्धिक विश्वास नहीं है। किसी एक व्यक्ति के सत्य को मैं समझ नहीं सकता हूं, समझना चाहता भी नहीं हूं। गांधीजी का एक सत्य हो, रवि बाबू का दूसरा सत्य हो, शंकराचार्य का तीसरा सत्य हो, बुद्ध का चौथा सत्य हो, तो मेरा पांचवां होगा। फिर इन चार सत्यों में मेरा कोई मतलब नहीं रह जाता। मैं क्यों नाहक एक झंझट में पड़ूं, किसका सत्य क्या था! अपने सत्य को छोड़कर दूसरों के सत्यों की खोज मैं करता फिरूं, तो मेरे अपने सत्य की कोई खोज ही नहीं होगी। इसलिए गांधीजी के सत्य में मुझे कोई दिलचस्पी नहीं है। गांधीजी की अहिंसा में भी नहीं, गांधीजी के सत्य में भी नहीं। समस्या मेरी अपनी है। इन समस्याओं के साथ या तो मुझे जीना है या उनका मुकाबिला करना है। उनको हल करना है या उनको सुलझाना है। इसमें गांधीजी की सहायता हो, गांधीजी ही क्यों, जिनकी भी सहायता हो सके उनकी सहायता लेने को मैं तैयार हूं। लेकिन समस्याएं गांधीजी के रास्ते से सुलझेंगी, तभी समस्याएं सुलझाने में मुझे दिलचस्पी है, अन्यथा नहीं है, यह मेरी स्थिति नहीं है। और, मैं यह मानता हूं कि गांधी की यही स्थिति थी। गांधी किसीका अनुयायी रहा हो, कम-से-कम मैं तो यह नहीं जानता हूं। जिस गोखले को उसने गुरु कहा, कभी उसका वह अनुयायी नहीं रहा, और जिस तिलक का वह उत्तराधिकारी था, उसका भी वह अनुयायी नहीं रहा।

सत्य की खोज

गांधी के जीवन का प्रधान उद्देश्य सत्य की खोज थी, इतना तो मैं मानता हूं। लेकिन गांधी किसी विशिष्ट सत्य की खोज करता था, यह अगर कोई सिद्ध कर दे तो मैं गांधी को सत्यशोधक नहीं मानता। जिसे आप विशिष्ट सत्य कहते हैं, वह असत्य है। जैसे विशिष्ट भगवान शैतान हो जाता है, उस तरह से विशिष्ट सत्य असत्य हो जाता है। वेद में 'मम सत्यं' शब्द असत्य के लिए है। मेरा और तेरा सत्य में सत्य 'कामन फैक्टर' है, 'मैं' 'तू' रह जाते हैं। मर्यादित सत्य, विशिष्ट सत्य, जिस सत्य के पीछे कोई विशेषण हो, वह सत्य है ही नहीं, वह असत्य है। और ऐसे किसी सत्य के पीछे गांधी रहा हो तो मैं आपसे निवेदन करूंगा कि उसको सत्यनिष्ठ मनुष्य मानना गलत होगा।

एक दूसरी चीज भी इसके साथ-साथ कह दूं कि सत्य अलग चीज है, दर्शन अलग चीज। सत्य के विषय में प्राचीन ऋषि-मुनियों के आधार पर जो कुछ मेरे चित्त की प्रतिक्रियाएं होती हैं, उन प्रतिक्रियाओं को जब मैं शब्दबद्ध कर देता हूं, शब्दों में रख देता हूं, तो उसे 'दर्शन' नाम दिया

दादा धर्माधिकारी

जाता है। वह मेरे सत्य की व्याख्या (इण्टरप्रेटेशन) है। मेरी 'डिफिनेशन' (उपपत्ति) है। तो मेरा 'इण्टरप्रेटेशन,' सत्य का जो मैं नाम देता हूं, वह तो सत्य नहीं है। वस्तु और शब्द एक तो है नहीं। वस्तु की व्याख्या तो वस्तु है नहीं। तो, ये व्याख्याएं अलग-अलग हो सकती हैं। मेरी व्याख्या का सत्य, आपकी व्याख्या का सत्य, दो सत्य हो सकते हैं, यह अगर गांधी मानता हो तो मैं समझता हूं कि हम उसके विषय में बहुत बड़ा भ्रम फैला रहे हैं। उसने यह दावा नहीं किया कि सत्य तक मैं पहुंच गया हूं। सत्य की खोज कर रहा हूं, इतना ही कहा। मैं सिद्ध पुरुष हूं, सत्य का मुझे दर्शन हो गया है, सत्य के मुझे साक्षात्कार हो गये हैं, यह दावा उसने किया नहीं। इसलिए सत्य के विषय में कुछ कल्पनाएं, सत्य के विषय में कुछ आकांक्षाएं जगह-जगह व्यक्त हुई हैं। इनमें थोड़ी-बहुत वैज्ञानिकता है। एक अंश तक वैज्ञानिकता है। पूर्ण वैज्ञानिकता सत्य की व्याख्या में हो नहीं सकती, क्योंकि वह अव्याख्येय है।

सम्बन्धों में सत्य का साक्षात्कार

गांधी जीवन में सत्य के आविष्कार के विषय में अधिक चिन्ता रखता था; और जीवन का अर्थ है, मनुष्यों का पारस्परिक सम्बन्ध। मनुष्यों का, एक दूसरे का पारस्परिक सम्बन्ध, और मनुष्य तथा दूसरे जीवों का सम्बन्ध। यह सम्बन्ध ही अगर जीवन है तो इस सम्बन्ध में सत्यनिष्ठा कैसे चरितार्थ हो? इसलिए गांधी के विषय में हम इतना सोचने लगे हैं। केवल सत्य की खोज करने के लिए जिस तरह से ऋषि-मुनि अरण्य में, गुफा में जाकर बैठते हैं, और अपनी मुक्ति के लिए सत्य की खोज करते हैं और कहते हैं कि यह सत्य हमको मिला है, उनके विषय में आप यहां चिन्तन करने नहीं बैठे हैं। गांधी के विषय में चिन्तन करने इसलिए बैठे हैं कि मनुष्य और मनुष्य के जो सम्बन्ध हैं, इन सम्बन्धों में सत्य का कैसे साक्षात्कार हो सकता है, कैसे सत्य की तरफ मनुष्य की प्रगति हो सकती है। इसमें से एक प्रश्न आता है कि मनुष्य और मनुष्य के सम्बन्ध ही अगर जीवन है तो क्या जीवन और सत्य दो अलग चीजें हैं? और अलग चीजें हैं तो सत्य काल्पनिक चीज है। मनुष्य की कल्पना में से एक चीज पैदा हुई है, वह हमेशा रहस्यमय रहेगी, वहां तक कोई पहुंच नहीं सकेगा। गांधी की ऐसी कोई कल्पना सत्य के विषय में है? मुझे ऐसा लगता है कि गांधी का मुख्य प्रयास यह था कि मनुष्य और मनुष्य के सम्बन्ध में सत्य का विकास हो। और, यह सत्य जीवन से अलग नहीं हो सकता। जिसे आप जीवन कहते हैं वही सत्य है, दूसरा कोई हो नहीं सकता है। संस्कृत भाषा में इसके लिए, जीवन के लिए, शब्द है 'चैतन्य'। यह जो चैतन्य है, इसका विकास मनुष्यों के सम्बन्धों में क्या हो सकता है? यह प्रश्न अगर गांधी के सामने नहीं होता तो वह कभी यह नहीं कहता कि मैं सत्य की खोज में निकला और मुझे अहिंसा मिली। यह उसने क्यों कहा? खोज तो उसने सत्य की की। मनुष्य वह अहिंसानिष्ठ

नहीं था, सत्यनिष्ठ था। अहिंसा की खोज से नहीं निकला था वह। गांधी शान्तिवादी नहीं था, अहिंसावादी भी नहीं था। मनुष्य और मनुष्यों के सम्बन्धों में अहिंसा की स्थापना करनी है, इसका संकल्प नहीं था उसका। उसका संकल्प यह था कि मनुष्य और मनुष्यों के सम्बन्धों में से, जीवन में से, सत्य की खोज करनी है। उसने यह कहा कि मैं अपने संकल्प के अनुसार सत्य करने लगा तो अहिंसा मुझे मिली, जिस तरह से रास्ते चलते चिन्तामणि मिल जाय। और मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि जो अहिंसा मुझे मिली उसमें और सत्य में भेद नहीं है। उसने तो यह कहा कि ये एक सिक्के के दो पहलू हैं, लेकिन अन्त में जाकर कहा कि ये अभिन्न हैं, ये दोनों एक ही हैं। तो जहाँ तक मैं समझ सका हूँ, इसका मतलब यह है कि सत्य जीवन की एकता का नाम है। जीवों की अखण्डता, इसका नाम सत्य है।

शोध की पद्धति

गांधी ने अलग-अलग अवसरों पर, अलग-अलग तरह से सत्य की व्याख्याएँ की हैं। अब इसमें दो बातें हैं—एक तो यह समझना होगा कि वह पागल आदमी था, परस्पर-विरोधी बातें कहा करता था—एक दफा यह कह देता था, एक दफा वह कह देता था। तो, उसका विचार करने की जरूरत नहीं। लेकिन अलग-अलग मौकों पर जो कहा, उनमें सामंजस्य खोजने के दो तरीके हो सकते हैं : एक तरीके का नाम है ऐतिहासिक और दूसरे तरीके का नाम है मीमांसा (लाइटिफिक)। मनुष्य के दो वाक्य अगर परस्पर-विरोधी हैं, तो उसमें से मुख्य वाक्य देख लिया जाता है, जो मुख्य हो उसके अनुकूल अगर दूसरे वाक्य हैं तो माने जायेंगे, और मुख्य वाक्य से प्रतिकूल हैं तो वे छोड़ दिये जायेंगे, चाहे उसीके वाक्य क्यों न हों। गांधी की खोज मनुष्य के सम्बन्धों में सत्य के आविष्कार का प्रयास है। यह उसके जीवन की मुख्य खोज थी, जीवन की मुख्य प्रेरणा थी। इसके अनुकूल जितने वाक्य हैं उतना तो हम समझेंगे कि गांधी के सही वाक्य हैं, इन वाक्यों का संग्रह किया जा सकता है, उतने को स्वीकार किया जा सकता है। जो वाक्य इसके विरुद्ध होंगे उसके विषय में यह मानना पड़ेगा कि किसी विशेष प्रसंग में कह दिया होगा, या तो कोई निमित्त होगा। इसलिए वह वाक्य लिया नहीं जा सकता। दूसरी पद्धति है ऐतिहासिक पद्धति। पहला वाक्य कब कहा है, दूसरा वाक्य कब कहा है? इस विषय में गांधी ने यह कहा है कि बाद में मैंने जो कहा हो उसे सच मानो, पहले जो कहा हो उससे विरुद्ध हो तो जो पहले कहा है उसे छोड़ दीजिए, बाद में जो कहा है उसे मानिए। यह ऐतिहासिक पद्धति कहलाती है। लेकिन ऐतिहासिक पद्धति सत्यान्वेषण की पद्धति नहीं है। सत्यान्वेषण की पद्धति दूसरी हो सकती है, जिसे आप 'समन्वय की पद्धति' कहते हैं।

सत्य ही ईश्वर है

आपने विषय लिया है—'गांधी का सत्य'। निवेदन यह है कि इसमें से 'गांधी का' तो हटा दीजिए। गांधी की 'सत्य की खोज' या गांधी का 'सत्य का दर्शन,' यहाँ आप अवश्य कह सकते हैं। लेकिन गांधी का सत्य कहने में अपप्रयोग है, भाषा का यह एक गलत प्रयोग है। इस दृष्टि से थोड़ा-सा विचार इस विषय का हम कर लें। 'सत्य' शब्द का प्रयोग गांधी ने दो-तीन संदर्भों में किया है। एक तो ईश्वर के संदर्भ में किया है। पहले कहा कि ईश्वर ही सत्य है, बाद में कहा कि सत्य ही ईश्वर है। अगर सत्य ही ईश्वर है तो फिर यह सत्य है क्या? उसका स्वरूप क्या है? तो उसमें एक चीज उसने कही है। उसको मैं बहुत महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। मनुष्य अपने शुद्ध-हृदय और शुद्ध बुद्धि से जो स्वरूप जीवन का देखता है वह सत्य है उसके लिए। इसलिए जब ईश्वर पर निबंध लिखा, लेख लिखा तो उसने यहाँ तक लिख दिया, कि नास्तिक की नास्तिकता भी ईश्वर ही है। ईश्वर सबके लिए सब कुछ है। सबके लिए सब कुछ है, इसका मतलब? शुद्ध हृदय से, शुद्ध बुद्धि से जीवन के जो दर्शन जिसे होते हों वह उसके लिए सत्य है, नाम चाहे जो हो। इस तरह से सत्य और ईश्वर को गांधी ने मिला दिया।

शुद्ध बुद्धि का एक लक्षण है। शुद्ध बुद्धि का मतलब है—भले-बुरे संस्कारों से मुक्त बुद्धि। जीवन के अनुभव और जीवनगत प्रभावों से जो बुद्धि मुक्त है, उसे तटस्थ बुद्धि कहते हैं। वह शुद्ध बुद्धि है। तटस्थ बुद्धि कोई संस्था नहीं मानेगी—किसी ग्रन्थ का नहीं, किसी गुरु का नहीं, किसी विभूति का नहीं, किसी संस्था का नहीं, किसी सम्प्रदाय का नहीं। साम्प्रदायिक सत्य असत्य है। गुरु का सत्य, ग्रन्थ का सत्य असत्य है, क्योंकि यह सत्य एक-दूसरे के मुकाबिले में खड़े हो जाते हैं। तो शुद्ध बुद्धि संस्कार मुक्त होगी। उस बुद्धि में जीवन का दर्शन है, दर्शन से मतलब साक्षात्कार, बुद्धि से जिसका ग्रहण नहीं। बुद्धि से जो ग्रहण होता है, उससे दर्शन कुछ अलग चीज है न! साक्षात्कार कुछ अलग चीज है। शक्कर की मिठास की बुद्धि में जो कल्पना होगी, उसमें प्रत्यक्ष शक्कर की मिठास और खजूर की मिठास, इन दोनों में जो अन्तर है उस अन्तर का जो साक्षात्कार है, उसे दर्शन नाम दिया। इसलिए 'दर्शन' शब्द पुराना भी बहुत महत्त्व का था। 'आत्मा वा अरे द्रष्टव्य'—आत्मा को देखो। और देखने में बाकी की सब चीज अलग कर दो—'श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्य'। इसके विषय में सुनना, इसके विषय में चिन्तन करना बुद्धि से, और इसके विषय में लगातार उसका ध्यान करना, ये सब चीजें बिलकुल अलग हैं। उनका निषेध है। ज्ञान के लिए ध्यान और चिन्तन नहीं करना पड़ता। ध्यान और चिन्तन है तो ज्ञान है नहीं। मैंने गुलाब का फूल देखा, बस इतना काफी है, इसे रटना तो नहीं

पड़ता—गुलाब है, गुलाब है, गुलाब है। रटना पड़ता है नाम याद रहे इसलिए। फूल का जो दर्शन है वह पूरा हो गया। नाम तो रटना एक अलग चीज है। सत्य का अभ्यास नहीं होता है। सत्य की आवृत्ति नहीं होती है। यह साक्षात्कार कहलाता है। शुद्ध बुद्धि से सत्य के जो दर्शन गांधी को हुए थे उनमें वह सत्य सामने रखता था। लेकिन उसने कहा था कि मैं नहीं जानता हूँ कि मेरी बुद्धि कहाँ तक स्वच्छ है, कहाँ तक शुद्ध है। मैं अवतक अपने लिए दावा नहीं कर सकता हूँ कि मेरी बुद्धि शुद्ध है। भगवद्-गीता पर जब पुस्तक लिखी तो उसकी प्रस्तावना में यह कहा कि जैसा मनुष्य का संस्कार होता है, जैसी उसकी परम्परा होती है, जैसा उसका शिक्षण होता है, और जीवन में जो उसकी अनुभूतियाँ होती हैं, उसके कुछ-न-कुछ परिणाम उसकी बुद्धि पर रह जाते हैं। यह परिणाम मेरी बुद्धि पर भी रहे होंगे। इसलिए यह दावा नहीं कर सकता कि मैं जो देखता हूँ वही सत्य है और दूसरा जो देखता है वह सत्य नहीं है। यह सन्देहवाद नहीं है, लेकिन जिज्ञासा है, जिसे आप 'आनेस्ट कोएश्चन' कहते हैं। टेनिसन का एक वाक्य है कि दुनिया के जितने धर्म हैं, उनमें जितना सत्य है उससे प्रामाणिक जिज्ञासा में अधिक सत्य है। तो सत्य-निष्ठ मनुष्य जिज्ञासु भी होगा। नित्य जानने की आकांक्षा उसकी रहेगी। यह सत्य का एक दूसरा पहलू है, जो गांधी ने हमारे सामने रखा है। इसका बहुत बड़ा उपयोग हमारे सामाजिक जीवन में है।

आग्रहहीन सत्यनिष्ठा

गांधीजी के जीवन में मानवीय सम्बन्ध (ह्यूमन रिलेशनशिप) प्रधान चीज थी। इसलिए इसका विनियोग तो करना ही था। और मैं मानता हूँ कि आज इसका बहुत बड़ा महत्त्व है। मैं जो देखता हूँ वही सत्य है, दूसरा मनुष्य जो देखता है वह सत्य नहीं है, इसमें से आज सारे सम्प्रदाय प्रवृत्त हुए हैं। इसीमें से 'मास इन डाक्ट्रिनेशन' आया है। जहाँ-जहाँ पर सत्य संगठित हुआ है, वहाँ-वहाँ उसने भिन्न विचार सहन नहीं किया है। दूसरे की भूमिका को वह सह ही नहीं सकता है। साम्प्रदायिक सत्य का एक स्वभाव होता है। इसलिए गांधी ने अपने सत्य के अवलोकन में, सत्य के साक्षात्कार में एक मर्यादा और मान ली कि निष्ठा आग्रह-रहित होनी चाहिए। ('सत्याग्रह' शब्द गांधी का है, फिर भी आपसे मैं यह कह रहा हूँ।) जहाँ सत्यनिष्ठा होगी वहाँ आग्रह नहीं होगा। शंकराचार्य का वाक्य है—'बुद्धेः फलम् अनाग्रहः'। यह मनुष्य बुद्धिमान है, इसकी कसौटी क्या है, परीक्षा क्या है? आग्रह जिसके चित्त में नहीं है, वह सत्य-निष्ठ है। तो यह 'सत्याग्रह' शब्द कैसे?—विनोबा से मैंने पूछा। तो उन्होंने कहा कि आग्रह सत्य का रखो, अपना मत रखो। तो संगठन का मतलब ही दण्डशक्ति है। संख्या की शक्ति, संगठन की शक्ति, यह सत्य की शक्ति नहीं है, दण्ड की शक्ति है। इस तरह से इस पहलू में गांधी अहिंसा पर आया। जिससे आप बात कर रहे हैं उसकी भूमिका में अपने आपको देखें। यह एक दूसरा पहलू रखा है, जिसमें से सामाजिक जीवन में सत्य की तरफ कदम बढ़ेगा, संगठित विचार की तरफ नहीं।

विचार और सत्य, दो अलग-अलग चीजें हैं। विचार की तरफ से सत्य की तरफ मनुष्य को अगर जाना है तो संगठित सत्य को छोड़ना होगा। सत्यनिष्ठा में अगर अनाग्रह है तो दूसरे की बुद्धि के लिए आदर होगा। दूसरे की जिज्ञासा के लिए जहाँ आदर है वहाँ सत्यनिष्ठा है। एक पहलू यह गांधी ने हमारे सामने रखा। इसको फिर मैं कह दूँ कि जीवन की एकता 'थीयरी' नहीं है। आत्मा की एकता वगैरह मैं जानता नहीं हूँ। उसका मुझे पता नहीं है। अबतक मुझे अपने बारे में भी पता नहीं है कि मेरी आत्मा है कि नहीं है। लेकिन जीवन की एकता अनुभवसिद्ध है। इसका प्रत्यय है, उपलब्धि नहीं हुई। अनुभव हर मनुष्य को है।

मनुष्य की सहानुभूति अपने आप प्रवाहित होती है। उसके लिए कारण की आवश्यकता नहीं। इसलिए वह स्वभाव है। जीवन की एकता की अनुभूति है, जीवन की एकता का प्रत्यय है, लेकिन मनुष्यों के परस्पर, पारस्परिक सम्बन्धों में जीवन की एकता की उपलब्धि नहीं हुई है। इसलिए इसके प्रयोग हों। यह जीवन की एकता मनुष्यों के सम्बन्धों में चरितार्थ करने का जो प्रयास है, उसे गांधी ने 'सत्य के प्रयोग' कहा। यह पहली चीज। इस जीवन की एकता को चरितार्थ करने के प्रयासों में अलग-अलग मनुष्यों के प्रामाणिक दर्शन अलग-अलग हो सकते हैं, इसलिए अनाग्रह, सत्य का आग्रह, अपना अनाग्रह। मैं जो सत्य देख रहा हूँ वही सत्य, यह उसने नहीं माना, यह दूसरी चीज।

एक तीसरी चीज गांधीजी के सत्य की व्याख्याओं में आयी है। ये सब ऐसे अलग-अलग मालूम होते हैं, विरोधी भी मालूम होते हैं। एक दफा कहा कि भूखे के सामने तो भगवान को रोटी ही बनकर आना पड़ेगा। इसका मतलब यह हुआ न कि भूखे का सत्य रोटी ही है, इसके आगे और कोई सत्य नहीं है उसका। दुनिया में सामाजिक सम्बन्धों में क्रान्ति करने के जितने प्रयास हुए, सामाजिक सम्बन्धों में क्रान्ति करने के प्रयास जिन विभूतियों ने किये, उन सारी विभूतियों में इस विषय में एकवाक्यता रही है। अब आज भी किसी दार्शनिक से—मैं उनकी बात कर रहा हूँ, जो दर्शन पर, आत्मा पर, और अध्यात्म पर प्रवचन करते हैं उनसे—आप पूछिए कि यह सारा अध्यात्म किन लोगों के लिए है? जो आदमी यहाँ भूखा पटरी पर पड़ा हुआ है, रोटी के लाले जिसे पड़े हुए हैं, वह रोटी के सिवाय और कोई सपना नहीं देख सक रहा है, क्या उसके लिए है? तो आपसे कहेंगे कि उसकी तो अभी समझने की भूमिका नहीं है। इसलिए आज इस देश के आध्यात्मिक पुरुषों में भी, आज इस देश में कुछ ऐसे पुरुष हैं जो ऐसा कहने लगे हैं कि सामाजिक परिवर्तन की

प्रक्रिया में पहले मार्क्स आयेगा, बाद में गांधी आयेगा, अकेला मार्क्स नहीं, अकेला गांधी नहीं। लेकिन पहले गांधी नहीं, बाद में मार्क्स नहीं। इसका मतलब है—पहले रोटी आयेगी और बाद में भगवान आयेगा। मराठी में एक कहावत है कि 'पोटोबा के बाद विठोबा', पहले 'अन्नम् ब्रह्मेति व्यजानात्' आयेगा, और बाद में 'आनन्दम् ब्रह्मेति व्यजानात्' आयेगा। गांधी ने इसको देखा। क्यों देखा? जीवन की एकता का विनियोग मनुष्यों के सम्बन्धों में करना है। मनुष्यों का सम्बन्ध ही जीवन है। मनुष्यों के सम्बन्धों का शुद्धिकरण ही क्रान्ति है, और यह क्रान्ति सत्य की तरफ मनुष्य की प्रगति की दृष्टि है। सत्य जीवन की एकता, जीवन की एकता की दिशा में प्रगति, यह एक वैज्ञानिक सत्य है। मनुष्यों का एक-दूसरे के निकट आना ही प्रगति है, दूसरी कोई प्रगति नहीं। दुनिया भर के सारे वैभव, जिसे आप ऐश्वर्य कहते हैं, उन सबको पा लेने के बाद भी प्रगति नहीं है, जबतक मनुष्य मनुष्य के निकट नहीं आया। मनुष्य जब मनुष्य के निकट आता है तब मनुष्यों के सम्बन्ध पवित्र होते हैं, शुद्ध होते हैं।

निकटता का आधार : प्रेम

निकटता का आधार कौनसा हो, यह अन्तिम प्रश्न है। मनुष्य और मनुष्य एक-दूसरे के निकट आयें। अगर किसी आधार से निकट आते हैं तो निकट नहीं आते हैं। आधार निकल गया, निकटता निकल गयी। यह सभा में होता है। आधार है, संविधान है, कार्यक्रम है, कुछ सिद्धान्त हैं। आ गये सब साथ। सदस्य बन गये। वह आधार टूट गया, सदस्यता गयी। सदस्यता के साथ-साथ सम्बन्ध भी मिट गया। मनुष्य और मनुष्य का सम्बन्ध निरपेक्ष है। मनुष्य और मनुष्य के निरपेक्ष सम्बन्ध का आधार क्या होगा? नाम दे दिया है—प्रेम। यह केवल नाम ही है। मनुष्य और मनुष्य को एक-दूसरे के निकट आने के लिए किसी आधार की आवश्यकता नहीं है। मनुष्य और मनुष्य को निकट आना स्वभाव है, इसमें रुकावट के लिए कारण हो सकते हैं, लेकिन इसके लिए किसी कारण की आवश्यकता नहीं है। मनुष्यों में एक-दूसरे के निकट आने के लिए किसी निमित्त की, किसी प्रयोजन की, किसी कारण की आवश्यकता नहीं है; क्योंकि यही स्वभाव है, यही जीवन है। तब, प्रेम की कोई अलग व्याख्या नहीं होती है, सिर्फ जीवन के सिवाय। इसे गांधी ने नाम अहिंसा दिया। मनुष्य और मनुष्य के बीच जितने अन्तराल हैं, जितने व्यवधान हैं, जितने प्रत्यवाद हैं, उन सबका निराकरण करने की प्रक्रिया का नाम सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया है। जीवन की एकता अगर सत्य है तो जीवन की एकता के विरुद्ध जितने प्रयास होंगे वे जीवन-विरोधी प्रयास हैं। इसके अनुरूप जितने प्रयास होंगे वे जीवन के विकास में सहायक प्रयास होंगे। उन प्रयासों को उसने अहिंसा नाम दिया। आप प्रेम नाम दे सकते हैं। वह प्रेम जो मनुष्य को मनुष्य के नजदीक लाता है निरपेक्ष भाव से, जिसमें कोई स्वार्थ नहीं, कोई निमित्त नहीं, कोई प्रयोजन नहीं।

सत्य और अहिंसा : सामाजिक मूल्य

अब यह प्रेम और जीवन दो चीजें नहीं हो सकतीं हैं, यह प्रेम और सत्य दो चीजें नहीं हो सकती हैं। इसलिए गांधी ने कहा कि मेरे लिए सत्य और अहिंसा दो चीजें नहीं हैं। अब मैं गांधी का सत्य और गांधी की अहिंसा शब्द का प्रयोग करता हूँ, इतना सब कहने के बाद, स्पष्टीकरण के बाद, जिसमें अब कोई भ्रम नहीं होगा। गांधी की अहिंसा बुद्ध, महावीर या ईसा की अहिंसा नहीं है। यह एक नया क्रान्तिकारी सामाजिक मूल्य है, जिसमें वह यह कहता है कि मनुष्यों के सम्बन्धों के शुद्धिकरण की कोई दिशा होनी चाहिए। वह दिशा कौनसी होगी? जीवन की एकता की उपलब्धि, जीवन की एकता को चरितार्थ करने की दिशा में हमारे सारे प्रयोग होंगे। इस दिशा में हमारे जितने प्रयोग हैं, उनको हम उन्नति और प्रगति कहते हैं। इस दिशा के विरुद्ध जितने प्रयोग होंगे, वह प्रगति नहीं, प्रतिगति है। इस दृष्टि से अगर आप विचार करेंगे तो मैं समझता हूँ कि गांधी के वाङ्मय में से उसने सत्य के जितने वाक्य कहे हैं, उन वाक्यों में से, आप कुछ चुन सकेंगे, जो वाक्य हमारे-आपके काम के होंगे।

गांधी जब जीवित था, तो किसीने 'गांधी सेवा संघ' स्थापित किया। तो गांधी ने कहा कि 'सेवा' का विशेषण 'गांधी' है, अगर ऐसा है तो इसको हटा देना होगा, 'गांधी की सेवा' अगर इसका मतलब है तो इसे शुरू करने के पहले समाप्त कर देना चाहिए। लेकिन गांधी का सम्बन्ध अगर सेवा में इस तरह है, ऐसी सेवा जिसमें गांधी भी शामिल है, तब तो उसका कुछ मतलब होता है। कुछ आप कर सकते हैं। लेकिन उसका उद्देश्य क्या था? गांधीजी के सिखाये हुए सत्य और अहिंसा का सामाजिक जीवन में विनियोग। बुद्ध का सिखाया हुआ सत्य और गांधीजी की सिखायी हुई अहिंसा अगर है, तो वह कहां तक पहुँचायेगी? ये सिखाये हुए पौने कहाँ जायेंगे? उसमें प्रज्ञा और स्व-प्रेरणा की आवश्यकता है। स्व प्रज्ञा से मेरा मतलब 'ओरिजनलिटी' नहीं। हर व्यक्ति अपने में अद्वितीय है। इस प्रेरणा में गांधी ने कोशिश की। मैंने निवेदन कर दिया है कि पुराने संस्कारों को आप छोड़िए। पुनर्जन्म में वह मानता था। कर्म के सिद्धान्त को वह मानता था। कोई कारण नहीं है कि हम कर्म के सिद्धान्त को भी मानें और पुनर्जन्म को भी मानें। कई चीजें ऐसी थीं जिसे गांधी मानता था, और हमें मानने की आवश्यकता नहीं। क्योंकि वह 'थियरी' है, वे उपपत्तियाँ हैं। उनका अनुभूति के साथ बहुत सम्बन्ध नहीं है। पुनर्जन्म की किसीको अनुभूति नहीं है। चाहे कितने ही लोग अपने पुनर्जन्म की बातें और स्मृतियाँ कहते हैं। तो गांधी की 'थियरी' से हमको कोई मतलब नहीं है।

गांधी के सत्य के तीन पहलू

मैं आपके सामने, गांधी ने जो

सत्य के विषय में कहा है, उसके तीन पहलू रखे हैं। एक, जिसे पुराने लोग निरपेक्ष सत्य (ऐब्सोल्यूट ट्रुथ) कहते थे। मैंने कहा था कि सत्य विशिष्ट नहीं हो सकता, विशेषण उसको नहीं लगाना चाहिए। एक ही खोज मनुष्य की रही है, वह जीवन की खोज है, और कोई खोज मनुष्य की रही नहीं है। चाहे जितने नाम उसने दिये हों। मनुष्य की एकमात्र खोज जीवन की खोज है और इस जीवन की जो एकता है, वह स्वयंसिद्ध सत्य है। इसके लिए किसी 'थियरी' की आवश्यकता नहीं। मनुष्य को इसका प्रत्यय है, इसकी अनुभूति है। गांधी ने इसे परम सत्य माना, परमात्मा, आत्मा के बाद जो है वह परमात्मा। यह पहली चीज मैंने आपके सामने रखी। इसको उसने ईश्वर माना। सवाल किया कि क्या तुम सगुण ईश्वर को मानते हो? क्या तुम सगुण ईश्वर में विश्वास करते हो? उसने जवाब दिया है—अगर-मगर, बहुत साफ जवाब नहीं दिया है। और यह उसने कहा है कि 'फेस-टु-फेस' (आमने-सामने) भगवान को अबतक मैंने देखा नहीं। इसलिए 'फेस-टु-फेस' भगवान को देखने की खोज ही असल में जीवन की खोज है। ये सारे हिप्पीज और बिट्निक्स इस बात की खोज में हैं, वे यह कह रहे हैं कि हम भाग नहीं रहे हैं, पलायन नहीं कर रहे हैं। यह हमारी खोज है। अरे भाई, खोज है तो किस चीज की खोज है? हम भगवान को देखना चाहते हैं अपने सामने। गांधी होता तो कहता कि आईना देखो, अपनी सूरत देखो। भगवान के विषय में गांधी के जीवन में और उनके शब्दों में कुछ ऐसे शब्द आते हैं, जो संस्कारजन्य हैं। लेकिन जब वह अनुभव की और वैज्ञानिक खोज की बात करता है तो कहता है 'सत्य ईश्वर है।' 'ईश्वर सत्य है' से 'सत्य ईश्वर है', इस पर पहुँचा है। जीवन की एकता ही ईश्वर है। इसका मतलब जीवन ही ईश्वर है। परमात्मा और दूसरा है नहीं।

दूसरा पहलू, अगर मेरा जीवन का दर्शन रूप है, प्रामाणिक दर्शन है जितनी मेरी बुद्धि शुद्ध हो सकती है, जितना मैं उसे कर सका उसमें, जीवन का जो साक्षात्कार हुआ, उससे दूसरे का साक्षात्कार अगर भिन्न है तो? तो मेरा जो दर्शन है सत्य का, उसमें मेरी निष्ठा है, आग्रह नहीं। यहाँ सहिष्णुता नहीं। दूसरे के विषय में उदारता भी नहीं है। उदारता की आवश्यकता नहीं है। 'यूनिटी' उस अर्थ में जिसे आप 'विनय' कहते हैं, 'नम्रता' कहते हैं वह भी नहीं है। गांधी के विषय में एक बड़ी मजे की चीज है—ग्यारह व्रतों में 'नम्रता' कहीं नहीं है। पूछा कि 'नम्रता' क्यों नहीं है तुम्हारे ग्यारह व्रतों में? उसने कहा कि 'नम्रता' जिस दिन व्रत बन जाती है, वह समाप्त हो जाती है। वह रह ही नहीं सकती। तो तटस्थ बुद्धि, संस्कारमुक्त बुद्धि। दूसरे की बुद्धि संस्कारमुक्त नहीं है, उसका 'जजमेण्ट' (निर्णय) नहीं। मैं यह नहीं कहूँगा। इसलिए आग्रह नहीं। इसका बहुत अच्छा परिणाम यह है कि गांधी के सत्य के साथ 'आइडियालॉजी' नहीं है, 'फिलासाफी' नहीं है, कोई संगठित विचार नहीं है।

तीसरा पहलू, इस जीवन की एकता को अगर मनुष्यों के सम्बन्धों में विनियोग करना है, तो सारे मनुष्यों के जीवन की एकता की उपलब्धि उस मनुष्य को भी मिलनी चाहिए—जो भूखा है, नंगा है, मुंहताज है। क्या उसके लिए जीवन की एकता नहीं है? अगर जीवन एक है तो गांधी ने तो यहाँ तक कहा था कि खटमल और मच्छर भी एक हैं। अगर खटमल और मच्छर इन सबके जीवन के लिए हमारे मन में एक चिन्ता है तो इसका मतलब है जीवन की प्रतिष्ठा। सारे जीवन की प्रतिष्ठा अगर हमारे चित्त में है तो अहिंसा अपने आप निष्पन्न होती है। अहिंसा कोई सिद्धान्त नहीं है। जहाँ प्रेम है वहाँ अहिंसा के लिए कुछ करना नहीं पड़ता है। जहाँ कुछ करना पड़ता है, प्रयास है, वहाँ अहिंसा नहीं है। और प्रेम भी नहीं है। इसलिए गांधी ने उन दो चीजों को मिला दिया है कि जो नंगा है, भूखा है, मुंहताज है, बेकार है, उसके जीवन में इस एकता की उपलब्धि कैसे हो? जीवन की एकता का प्रत्यय उसको कैसे हो? यह प्रत्यय आना चाहिए इसके लिए उसने कहा कि उसके लिए भगवान का सगुण रूप रोटी है। उसके लिए भूख, मुंहताजी समाप्त होनी चाहिए। यह भी सत्य की खोज में एक चरण है, एक कदम है। लेकिन यह कैसे हो? प्रेम में से हो। योजना में से नहीं। प्रेम में से योजना चाहे जैसे बने। बेटा भूखा है, प्रेरणा यह है। बेटे की भूख के निवारण के लिए फिर लकड़ी चाहिए, चूल्हा चाहिए, यह सब योजना हो सकती है। लेकिन प्रेरणा प्रेम की। अब इसे आप वैज्ञानिक कहें या न कहें। बाकी सारी प्रेरणाएँ अगर वैज्ञानिक हैं तो आपको यह कहना होगा कि प्रेम अवैज्ञानिक है।

मनुष्य का जो जीवनस्वरूप है, उस प्रेम को आप नहीं सह सकेंगे। यह प्रेम, सत्य, जीवन—ये तीनों समानार्थी हो जाते हैं। इनको आप अलग-अलग रखिए या एक में रखिए। यह जैसा मैं समझ सका हूँ, आज हमारी जो समस्याएँ हैं, उन समस्याओं के सन्दर्भ में सत्य और अहिंसा के विषय में यह गांधी की भूमिका थी।

गांधी विद्या संस्थान, वाराणसी ६-१० '६९

बाबा और कांग्रेस

प्रश्न आज की परिस्थिति में आप कांग्रेस को क्या सलाह देते हैं?

विनोबा इस प्रश्न में आप मुझ पर तीन जिम्मेदारियाँ डालना चाहते हैं। एक तो यह, कि कांग्रेस की जो परिस्थिति है उसके बारे में बाबा को सोचना चाहिए। दूसरी यह, कि उस सम्बन्ध में सोचकर बाबा को अपना निर्णय करना चाहिए। और तीसरी यह कि कांग्रेसवाले न पूछें तो भी उनको सलाह देना चाहिए। ये तीनों जिम्मेदारियाँ बाबा नहीं उठा सकता।

भारत में ग्रामदान आन्दोलन

(१) आलूरेड सर्वोदय सम्मेलन (जून '६२) तक

(२) राजगिर सर्वोदय सम्मेलन (अक्तूबर '६९) तक

विहारदान का अर्थ है :

विहारदान का

(अ) विहार के ग्रामीण परिवारों में से करीब पौने सात लाख परिवारों की साढ़े तीन करोड़ जनसंख्या की ओर से ग्रामदान की घोषणा।

इसका अर्थ यह कि :

(१) इन्होंने अपनी भूमि की मालकियत का विसर्जन किया।

(२) अपनी गाँव की जमीन में बीघा में से एक कट्ठा भूमिहीनों के लिए देंगे।

(३) प्रत्येक व्यक्ति अपनी उपज का चालीसवाँ या महीने में एक दिन की मजदूरी ग्रामकोष में जमा करेगा, और
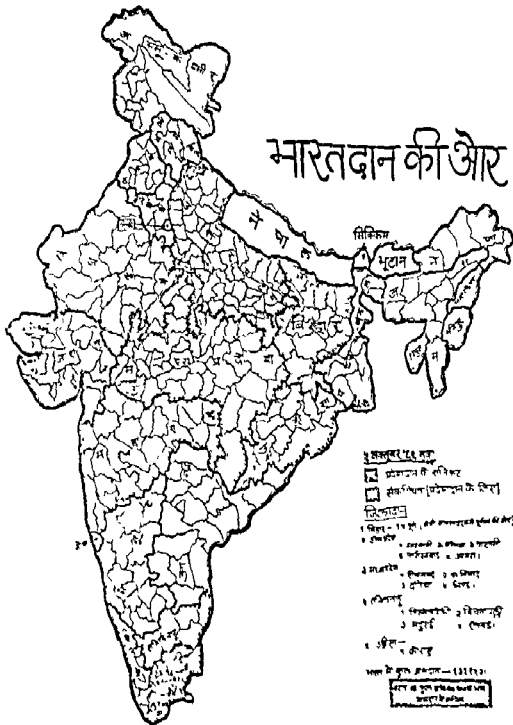
विहंगम चित्र

भारत खतरे में

टुकड़ीकरण की प्रक्रियाएँ तत्काल बन्द हों

— गांधी-शताब्दी-समारोह (२ अक्तूबर '६९) की सभा में विनोबा की मार्मिक अपील —

मेरे प्यारे भाइयो और बहनो,

महात्मा गांधी के जन्म-शताब्दी महोत्सव मनाने के कार्यक्रम में आप लोग उत्साहपूर्वक भाग ले रहे हैं, यह सब देखकर बड़ी खुशी होती है। अब गांधीजी का जो भी काम है, वह आप लोगों के जिम्मे है। उन्होंने एक सत्य आप लोगों के सामने रखा, जिससे राजनीतिक आजादी प्राप्त हुई। लेकिन उसके बाद आर्थिक और सामाजिक आजादी हासिल करने का काम वह हम लोगों के लिए छोड़ गये। लेकिन मैंने कहा कि यह काम आप लोगों का करना है। इसमें मैंने अपने को अलग कर लिया और आप लोगों को कह दिया। उसका क्या कारण है? कारण मैं आपके सामने अभी रखूंगा। मेरी उम्र अब ७५ साल की है। यहाँ इस जमात में, जो यहाँ अभी है, ७५ साल की उम्रवाले कितने है, हाथ उठायें। (दो लोगों ने हाथ ऊपर किया।) इसका मतलब हुआ कि बाबा अगर चुनाव में खड़ा होगा तो उसको दो वोट मिलेंगे। इस वास्ते कहा कि यह काम आप लोगों के जिम्मे है। बाबा को तो पासपोर्ट मिल गया है, वीसा आने में देरी है। बीच में बाबा यहीं है। पासपोर्ट और वीसा में जितना अंतर है उतना बाबा यहाँ जीयेगा। आप लोग यह जानते हैं कि हिन्दुस्तान में ७० साल से ज्यादा जिसकी उम्र हो गयी उसको यहाँ के लोगों से पासपोर्ट है कि आप अब जा सकते हैं। अब अगर मान लीजिए बाबा यहाँ से रवाना हो जाय और वहाँ जाने के लिए रास्ता खुला है, तो उसको मोटर रोड की जरूरत नहीं है, खास दूसरा रास्ता बनाने की जरूरत नहीं, वहाँ के लिए हर जगह से सीढ़ी तैयार है। मान लीजिए बाबा चला जाय अपने स्थान पर, तो दुःख करनेवाले दुःख करेंगे कि अपना एक सेवक चला गया। लेकिन कोई यह नहीं कहेगा कि कम उम्र में गया। उम्र हो गयी थी, जाने का हक ही था, ऐसा ही कहा जायेगा। इस वास्ते मैंने कहा कि आप लोगों को अब सावधान होना चाहिए और देश के काम की जिम्मेदारी आप लोगों को उठानी चाहिए।

शताब्दी और गोखले के तीन शिष्य

यह शतसांवत्सरी साल गोखलेजी के तीन शिष्यों की है। एक तो महात्मा गांधी, जिनका नाम सारे भारत में आज रोशन है। दूसरे श्रीनिवास शास्त्री थे, जो 'सर्वेंट्स ऑव इंडिया सोसायटी' के मुख्य थे, जिसे गोखलेजी ने बनाया और तीसरे ठक्करबापा थे, वह भी 'सर्वेण्ट्स ऑव इंडिया सोसायटी' के सदस्य थे और गोखलेजी शिष्य थे। तो गोखलेजी के तीन शिष्यों की शतसांवत्सरी इसी साल है और तीनों ने जो काम किया, वह परस्पर प्रेम रखकर, हृदय की एकता से काम किया। उनमें छोटे-मोटे मतभेद जरूर थे, लेकिन फिर भी तीनों का हृदय एक था और तीनों ने अपने-अपने ढंग से भारत की सेवा की और तीनों की शतसांवत्सरी इस साल है।

गांधी-शताब्दी का सांस्कृतिक स्वरूप

अब यह गांधी शताब्दी किस ढंग से मनायी जाय, यह सोचने की बात है। अभी देश में गांधी-शताब्दी मनाने के तीन ढंग चल रहे हैं। एक तो जिसे हम सांस्कृतिक ढंग कह सकते हैं, सब दूर उनके चित्र बाँटना, उनकी पुस्तकें हर जगह पहुँचाना, जगह-जगह प्रदर्शनियाँ करना। यहाँ दिल्ली में बहुत बड़ी प्रदर्शनी लगी हुई है। एकाध करोड़ रुपये उसमें खर्च हुए होंगे। गांधीजी का सारा जीवन उसमें दिखाने की योजना है। ऐसा एक सांस्कृतिक कार्यक्रम चला है। वह चार-छः महीने तक चलेगा, उसके बाद उसकी समाप्ति होगी। फिर दुबारा जब २०० साल पूरे होंगे तब यह होगा। इसमें गांधी की महिमा उतनी नहीं है, जितनी १०० के आँकड़े की है। यह महिमा ९९ में नहीं थी और यह महिमा १०१ में रहेगी नहीं। यह १०१ के गणित की महिमा है। यह जो सांस्कृतिक ढंग चला है उससे कुछ लाभ होगा, कुछ जानकारी लोगों को मिलेगी। उसका अपना लाभ है। लेकिन वह लाभ इतना अल्प है कि उस लाभ के लिए करोड़ों रुपये खर्च करना कहाँ तक इस गरीब देश के लिए उचित है, यह सवाल पैदा हो सकता है। खैर, यह कार्यक्रम चला है, जिसे हम सांस्कृतिक कार्यक्रम कह सकते हैं।

गांधी-शताब्दी का राजनीतिक स्वरूप

दूसरा कार्यक्रम राजनीति वाले लोगों ने बनाया। जितना दंगा मचा सकते हैं उतना वह मचाना चाहते हैं। इधर-उधर दंगे करके गांधी-शताब्दी का स्मारक कर रहे हैं। और अभी शतसंवत्सरी का सबसे बड़ा आयोजन अहमदाबाद में हुआ; जहाँ पर हजारों लोगों ने एक-दूसरे का कत्ल किया, मिलीटरी को लाना पड़ा, गोलियाँ चलीं, वगैरह वगैरह। वह बहुत बड़ा कार्यक्रम गांधीजी के अपने स्थान में हुआ, जहाँ गांधीजी का आश्रम था, जहाँ उनकी विद्यापीठ थी, जहाँ उनके सेवक और साथी थे, और आज भी हैं और जहाँ सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसे महान पुरुष हो गये वहाँ अहमदाबाद बड़ौदा आदि स्थानों में यह कार्यक्रम चला।

फिर उधर असम में जगह-जगह प्रदर्शन हो रहे हैं, आग लगायी जा रही है। इन्दिराजी कोहिमा और इम्फाल गयीं, वहाँ भी गोली और लाठी चली। उधर गुजरात से लेकर असम तक भारत के दो सिरों में यह कार्यक्रम चला है। फिर

रास्ता ले सकते हैं। ऐसी कोई युक्ति निकाली जाय जो अहिंसा के द्वारा हो सके, और जिसका उत्तर अंग्रेजों के पास न हो। यह उनकी अक्ल की तारीफ है। और गांधीजी के जमाने में जो भी खतरा रहा हो, भारत में आज उससे ज्यादा खतरा है, यह समझना चाहिए। क्योंकि आज कोई ऐसा नेतृत्व नहीं है जिसके पीछे सब लोग एक होकर जायें। उस हालत में सारी जमात को एक उत्तम अवस्था में रखकर, यह कार्यक्रम हमको करना है।

मैंने कहा कि गांधी-शताब्दी का एक सांस्कृतिक ढंग चला है जिसका अपना एक महत्त्व है, दूसरा दंगा वगैरह। यह दंगा गुनाह बेलज्जत है, यानी कोई स्वाद ही नहीं है। ऐसी रसहीन हिंसा चारों ओर भारत में चल रही है। उससे भारत को बड़ा खतरा है। और तीसरा यह बाबा का कछुवे का कार्यक्रम चला है, धीरे-धीरे। मैंने आपको तीन कार्यक्रम बताये। अब आप लोगों को तय करना चाहिए कि कौनसा कार्यक्रम आपको पसन्द है, यह चुन लें। मैंने सांस्कृतिक ढंग बताया, जो कि चार-छह महीने के बाद समाप्त होनेवाला है, दूसरा रास्ता दंगा का है, और तीसरा यह कार्यक्रम कि ग्रामदान करके गाँव-गाँव के लोगों की ताकत बनाना। यह बिल्कुल 'स्लो-प्रोसेस' (धीमी प्रक्रिया) है। आप जानते है कि कछुवे और खरगोश की दौड़ में कछुवा ही जीतता है। तो इसमें गाँव की ताकत बनाने की बात है, गाँव-गाँव में समझाने की बात है। तीन जमातें सबसे पिछड़ी हुई हैं—एक हैं हरिजन, दूसरे हैं गिरिजन, जो पहाड़ों में रहते हैं; और तीसरी जमात है परिजन—जो सबसे नीचे के दर्जे में हैं और दबाये गये हैं।

ग्रामदान का आन्दोलन किसके लिए?

बाबा का यह जो आन्दोलन चला है उसमें १४ साल पदयात्रा हुई और चार-पाँच साल दूसरी यात्रा हुई। १९-२० साल से यह चल रहा है। यह काम किसके लिए चल रहा है? इसका एक ही उत्तर है कि इन तीनों के लिए चल रहा है प्रधानतया। बाबा यह मानता है कि इन लोगों की स्थिति मजबूत बनानी है तो गाँव को एक परिवार के समान बनाना होगा। ये बहुत पिछड़े हुए हैं, सब प्रकार से सताये गये हैं। जो भी इनकी सेवा के लिए आया वह लूटने के लिए आया। बाबा को भी पहचानने-पहचानने तीन-चार महीने चले गये। सोचा कि शायद यह हम लोगों को ठगने के लिए आया होगा, क्योंकि जो भी सेवा के नाम में आया उसने मेवा ही खाया। उसी कोटि का यह भी हो सकता है, ऐसी शंका बाबा के लिए आयी हो तो कोई आश्चर्य नहीं। संस्कृत में कहा है—'दुग्धेन दग्धः तक्रेण शक्ते'। दूध से जला हुआ छाछ पर शक करता है। लेकिन बाबा तो बेचारा छाछ था। इस वास्ते बाबा को शंका की दृष्टि से देखा होगा तो इसमें बाबा को दुख नहीं है। अब चार महीने के बाद बादल खुल गया और सारी शंकाएँ दूर हो गयीं और ध्यान में आया कि दरअसल आदिवासियों का उत्तम लाभ इससे होगा, क्योंकि उनका गाँव मजबूत होगा। आज तो गाँव-गाँव में कई भेद हैं—आदिवासी, गैर-आदिवासी, आदिवासियों में भी अनेक प्रकार हैं—मुंडा, हो, उराँव, संताल आदि; सारे गाँववाले एक ओर व्यापारी, दूसरी तरफ, ईसाई-हिन्दू गैर ईसाई, फिर ईसाइयों में भी दो भेद—रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट।

यह राजनीति की एकता!

आप लोग जानते हैं कि इन भेदों के कारण सारे धर्म-सम्प्रदाय खतम होने जा रहे हैं। इन सबको एक होकर नास्तिकों के खिलाफ लड़ना चाहिए था, लेकिन वे सब आपस-आपस में ही लड़ रहे हैं। नास्तिकों की जमात बढ़ रही है। यहाँ तक कि लखनऊ में शिया और सुन्नी के बीच लड़ाई चली। उसमें पुलिस को गोलियाँ चलानी पड़ीं। यह मुसलमानों का हुआ। उधर मिस्तियों का आयरलैण्ड में क्या चल रहा है? केवल धर्म के कारण रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट आपस में लड़ रहे हैं। उसमें काफी लोग मारे गये। सेना पहुँची है। यह हुई ईसाइयों के अन्दर-अन्दर के झगड़े की बात। फिर हिन्दुओं के अन्दर के झगड़ों की तो बात ही मत करो। हिन्दुओं का मुसलमानों के साथ, ईसाइयों का मुसलमानों के साथ, हिन्दुओं का ईसाइयों के साथ, ये सारे अन्तर्गत-विरोध चलेंगे। इसका कोई अन्त नहीं है। ऐसी हालत यहाँ की है। उसमें और एक बात बढ़ गयी राजनीतिक दलों की। यहाँ जनसंघ के लोग हैं, कांग्रेस के लोग हैं और दूसरी पार्टियों के लोग हैं। यहाँ अपना-अपना झारखण्ड है। उनका भी क्या दिमाग है? एक है हुल झारखंड, दूसरा है फुल झारखंड और तीसरा है कुल झारखंड। उसमें भी भेद हैं और अभी राष्ट्रपति का चुनाव हुआ तो हुल झारखंड ने गिरि को वोट दिया और दूसरे ने रेड्डी को वोट दिया। इस तरह उनका आपस में मेल है!

भारत के दिल के पचासों टुकड़े

इस तरह भारत के दिल के पचासों टुकड़े हो गये। ऐसी हालत में भारत की एकता बनाना, एक-एक गाँव की एकता बनाना, आदिवासियों के अन्दर-अन्दर की एकता बनाना; यह सब अत्यन्त महत्त्व का काम है। यह कार्य ग्रामदान के द्वारा हो सकता है। किसी दूसरे ढंग से करने का मौका इन लोगों को २० साल के लिए दिया गया। होता क्या है कि पटने में थोड़ी हलचल हुई कि फौरन सारे पटना चले जायेंगे। जहाँ किसी पटती ही नहीं, ऐसी जगह वे जाकर इकट्ठा हो जायेंगे। मैंने उसे 'पट ना' नाम दिया है। पटना शब्द का अर्थ ही है कि जहाँ किसीकी पटती नहीं। फिर कहेगा कि हम आपके साथ आ सकते हैं, अगर हमारे इतने मिनिस्टर बनाओगे। ऐसा सारा लेन-देन चलेगा। इस प्रकार का तमाशा आप देख ही रहे हैं। वे समाज-सेवा का नाम लेते हैं, लेकिन समाज को बहका रहे हैं। मैं यह स्पष्ट बोल रहा हूँ। क्योंकि बाबा की कोई पार्टी नहीं है, न उसके कोई बाल-बच्चे हैं,

[इसका शेष पृष्ठ ५५ पर देखें]

शान्ति के लिए संघर्ष के पाँच दिन

• हरिवल्लभ परीख

विहारदान के कार्य से २१-९-'६९ की शाम को मैं बडौदा पहुँचा। स्नान किया और नीचे से आवाज आयी कौमी दंगे की। कपड़े पहनकर नीचे उतरा सो पाँच दिन तक एक ही जोडी कपडे मे घूमता रहा!

२१ की शाम का समय। बडौदा की बहुत सारी पुलिस अहमदाबाद के दंगे के लिए गयी हुई थी। बडौदा पुलिस-मुक्त था। हमने जल्दी मे ही निर्णय किया कि जितना व्यक्तिगत कार्य हो सके, करना चाहिए। मच्छीपीठ मे लेकर कोठी-कचहरी तक के तीन मुहल्ले सम्भाले। मच्छीपीठ मे मुसलमानो की आबादी है। बाकी तीनो मुहल्ले हिन्दुओ से भरे पडे हैं। अल्पसंख्यक को अपने रक्षण की ज्यादा चिन्ता होती है। अत वे हथियारो के साथ अपने मुहल्ले मे संगठित होकर छिपे थे। हम वहाँ गये। हमने उन्हें समझाया। हमारे साथ साम्यवादी मार्क्सवादी पक्ष के मंत्री श्री चन्दुभाई पटेल थे। वे मुझे मिलने आये हुए थे। दंगो की चर्चा करने प्रजा-समाजवादी पक्ष के दो कार्यकर्ताओ को भी मैंने फोन से बुला लिया। उन्हीके दफ्तर से फोन करके "भूमिपुत्र" के सम्पादक श्री कान्तिभाई शाह को भी बुलाया। इस प्रकार पाँच शान्ति-सैनिकों की टोली चली हजारो की भीड का मुकाबिला करने। अल्पसंख्यक कौम के मुहल्ले मे जाने से हमको आगाह किया गया; फिर भी हम गये। उन्हें समझाकर उनके हथियार रखवा दिये। मुहल्ले से बाहर नहीं निकलने को हमने उन्हें समझाया। उन्होंने माँग की कि आप जल्दी हमारे मुहल्ले के सामने पुलिस लाकर खडी करवा दें। हमने वादा किया। फिर हिन्दू मुहल्ले मे गये। यहाँ भीड बहुत बडी थी, और अफवाहो का बाजार गरम था। कुछ लोग मन्दिर पर हमला होने, पाँच हिन्दुओ को अभी फलानी जगह जिन्दा जला देने आदि बातें कहकर भीड को भडका रहे थे। किसी तरह उन्हें भी शान्त किया। उनकी भाषा भी यही थी कि पुलिस को हमारे मुहल्ले के रक्षण के लिए लगाइए। तीसरे मुहल्ले मे गये, वहाँ भी यही बात सुनी गयी। सबसे वचन लिया कि वे मुहल्ले से बाहर नहीं जायेंगे। फिर हम गये और कलक्टर, डी० सी० और डी० एस० पी० से मिले। हमारे कहने पर ५० पुलिस का इन्तजाम हुआ। जैसे ही पुलिस वहाँ पहुँची और हम भी पहुँचे तो देखा कि दोनो ओर की भीड एक-दूसरे पर आग के गोले बरसा रही थी, पत्थर फेंक रही थी। और उसी २५ मिनट मे दो व्यक्ति मारे गये। फिर तो पुलिस पर भी पत्थर फेंकना शुरू हुआ। यह पुलिस सिर्फ लकडीधारी थी। पत्थर और आग के गोले से पुलिस भी तितर-बितर हो गयी। हमने इस वक्त फिर से भीड के बीच जाना मुनासिब माना। हथियारो की ललकार और पत्थरो की वर्षा के बीच पहुँचे। मुहल्ले मे जाना कारगर साबित हुआ। कुछ ही मिनट मे जादू का-सा असर हुआ। झूठ अफवाहो का हमने जवाब दिया। १५ लोग मर गये, इस बात को झूठ बताया। दो घायल व्यक्तियो को अस्पताल भेजा गया है। अब पुलिस आपके तीनो मुहल्लों के आगे खडी रहेगी। हम भी आ गये है। कृपया बाहर की बातें न सुनें और अपने-अपने मुहल्लो में रहे। हम यहाँ रखवाली करते रहे, रात के ११ बजे तक। दूर-दूर से आग दिखाई दे रही थी। मस्जिदो को जलाया जा रहा था। आम रास्ते मे पीरों की कब्रें खोदी जा रही थी। आम रास्तो पर दुकानें लुटी जा रही थी। दुकानों को लुटने व जलाने का क्रम मानो तरतीब से चल रहा था। एक टोली औजारों के साथ निश्चित दीखती, वह दुकानो को ही तोड रही थी और आगे बढ़ रही थी। दूसरे लोग दुकानो का माल-सामान आराम से निकालकर ले जा रहे थे। इस ठाठ से सामान लेकर चल रहे थे, मानो बाजार से खरीद कर लाये हो। जिनसे जितना माल उठ सका, उठाया। और ये माल उडानेवाले चोर-डाकू थोडे ही थे। सब अच्छे दीखनेवाले शरीफ भाई-बहन, बूढे और बच्चे भी थे। यह लूट चल रही थी। एक पुराने परिचित पुलिस-अधिकारी मार्ग मे मिले। मैंने कहा "क्या आज राज्य नहीं है? आप क्या कर रहे हैं?" उन्होंने कहा—"इस भीड के आगे मरने की मेरी हिम्मत नहीं है, बल्कि आज तो ऐसा लगता है कि अगर यह वर्दी न पहनी होती तो अच्छा होता। मैं भी कुछ सामान उठा लेता।"

२१ की रात को ही कलक्टर से मिलने के बाद मैंने अखबारो मे अपील प्रकाशित करवायी—"शान्ति-सैनिको एवं शान्ति-सहायको को आवाहन करती हुई।" सर्वोदय-कार्यकर्ता जूनागढ की पदयात्राओ मे गये हुए थे, फिर भी कई लोगो ने सुबह फोन पर 'शान्ति'-कार्य मे शान्ति सैनिक के नाते मेरी अपील पर काम करने की तत्परता प्रकट की।

२२ की सुबह कलक्टर ने कचहरी पर बुलाया, परमिट लेने। कर्फ्यू का अमल हो चुका था। किसी तरह कलक्टर के पास पहुँचा। कल रात एक कार्पोरेटर (महा-नगरपालिका के सदस्य) कहते है कि गोली चला दी। उससे दो व्यक्ति मारे गये, अत महानगरपालिका के मेयर को भी परमिट नहीं दिया। और दूसरे सब समाजसेवको को भी पास देने से इन्कार किया। हमने समझाने की काफी कोशिश की। किन्तु ३६ इंच छातीवाले पुलिस-अधिकारी को शान्ति-सैनिको की खिदमत का क्या अंदाज था? किसी तरह नहीं माने। हमने अपनी जिम्मेदारी पर व्यक्तिगत जितना भी हो सके, करने का संकल्प किया।

२२ की दोपहर को पता चला कि एक समाजसेविका सज्जादा बहन के घर को जलाया गया है। यह बहन समाज-सेवा के कार्य मे सदा मदद करती रही। इनका परिवार-खानदान मुस्लिम परिवार है। हिन्दू मुहल्ले मे वह एक ही

गांधी-जयन्ती और अखबार

[भारत के प्रायः सभी समाचार-पत्रों ने अपनी-अपनी २ अक्तूबर की संपादकीय टिप्पणी में महात्मा गांधी का उल्लेख किया। नीचे हम भारत के कुछ प्रमुख अंग्रेजी समाचार-पत्रों की सम्पादकीय टिप्पणियों के मुख्य अंशों का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत कर रहे हैं।—सं०]

महात्मा

उनकी चाहे जो कुछ विफलताएं हों, वे महात्मा गांधी ही थे, जिन्होंने सदियों की गुलामी में कुचले-दबे भारतवासियों में आत्मगौरव और भरोसे की भावना लाने में किसी भी दूसरे आदमी से अधिक सफलता प्राप्त की। उन्होंने ही वह हथियार गढ़कर तैयार किया जिसके द्वारा भारतवासियों ने एक शक्तिशाली साम्राज्यवादी देश की शस्त्र-शक्ति का सामना किया था। उन्होंने (गांधीजी ने) जो आदर्श देश के सामने रखे थे उन तक देश भले ही न पहुँच सका हो, लेकिन अन्ततः वह नागरिक-स्वतंत्रता की रक्षा कर सका, धर्म निरपेक्षता में अपना विश्वास कायम रख सका, और लोकतांत्रिक व्यवस्था के अन्तर्गत चलता रहा। बहुत बड़े अंशों तक इसका श्रेय सहिष्णुता की उस भावना को है, जिसे महात्मा ने पनपाया था।

एक ऐसी दुनिया में, जहां बहुत थोड़े-से गरीब देश अपने यहां तानाशाही-हुकूमत से बचे रह गये हैं, यह कोई छोटी उपलब्धि की बात नहीं है। उन्होंने अन्याय और बुराई के खिलाफ अहिंसक प्रतिकार का जो आदर्श पेश किया उस पर अमल करना बहुत मुश्किल हो सकता है लेकिन उन अंधेरी घड़ियों में, जब देश में हिंसा भर जाती है, तो तब भी वह लाखों लोगों को नैतिक धरातल पर ऊँचा उठा देता है। ('दी टाइम्स आफ इंडिया', नयी दिल्ली)

रोशनी अभी भी चमक रही है!

गांधीजी का जीवन ही उनका सन्देश था। और, भारत की सरकार, और जनता ने बार-बार उनके सन्देश के अनुसार अपने को ढालने का संकल्प दुहराया है, लेकिन बहुत-से लोगों के लिए गांधीजी मृत-कर्म-काण्ड बन चुके हैं। गांधी का नाम आत्म-प्रशंसा के लिए उपयोग में लाया जा रहा है, जब कि उनकी वाणी और आदर्शों को भुला दिया गया है। उनका नाम लेते हुए भी उन्हें दगा दिया जाता रहा है। गांधीजी के अपने ही प्रदेश गुजरात में साम्प्रदायिक हत्याओं के जो धब्बे हाल में उभर आये हैं, उन्हें कौन भूल सकता है? हरिजनों और गिरिजनों के साथ आज भी पक्षपात भरा व्यवहार हो रहा है। गरीब लोग आज भी तकलीफ भुगत रहे हैं। लोभ और उद्दण्डता ने सेवा को पीछे ढकेल दिया है।

यह सब होते हुए भी परिस्थिति का एक अन्यतम पहलू भी है। अगर आज विषाद होने की प्रतीति है तो इसलिए है कि देश को यह मालूम है कि गांधीजी ने जो आदर्श और मापदण्ड देश के सामने रखे थे उससे देश नीचे गिरा है।

आचार्य विनोबा भावे के मार्गदर्शन में एक छोटा, लेकिन बढ़ता हुआ कार्यकर्ता-समूह 'सत्य के प्रयोग' को आगे बढ़ाने में लगा हुआ है।

भारत में एक ऐसी नयी पीढ़ी आगे आ चुकी है जो गांधीजी के बारे में औरों के जरिये सुन चुकी है, लेकिन प्रत्यक्षरूप में उन्हें देखा नहीं है। आज के बहुत-से नवयुवक और पक्की उम्र के लोग गांधी का मखौल उड़ाते हुए आज की दुनिया में उनकी उपयुक्तता (रिलेवेन्स) का सवाल खड़ा करते हैं। लेकिन सत्य और प्रेम शक्ति के लिए शाश्वत सिद्धान्त हैं, इसलिए वे निरन्तर सामयिक भी बने रहेंगे। गांधीजी आज के लिए तात्कालिक से भी कहीं अधिक उपादेय हैं। उनका सन्देश देश और दुनिया के लिए हमेशा प्रेरणादायी रहेगा। आज के दिन गांधीजी को श्रद्धांजलि देते हुए हरएक भारतवासी का कर्तव्य है कि वह उनके उन आदर्शों के प्रति अपने को फिर से समर्पित करे जिनके लिए वे जिये, और उनके अधूरे कामों को पूरा करने में अपने को नए सिरे से लगा दे। ("दी हिन्दुस्तान टाइम्स")

गांधी का स्थान

गांधी के जन्म लेने के सौ साल के दौरान दुनिया का रूप परिवर्तन हुआ है। दुनिया के इस रूप-परिवर्तन का कुछ काम गांधी ने किया। सौ साल के भीतर कम-से-कम सौ देश स्वतंत्र हुए होंगे, यद्यपि कुछ अहं केन्द्रित स्वतंत्रता के नेतागण महात्मा से प्राप्त प्रेरणा को स्वीकार करने में हिचकिचाहट का परिचय देंगे।

जब गांधी सन् १९१५ में अपने बोरिया-बिस्तर के साथ बम्बई बन्दरगाह पर उतरे थे तो उनके सामान में सत्याग्रह और एक प्रकार की निर्भयता के अलावा और कुछ नहीं के बराबर ही था। गांधी की निर्भयता और उनका सत्याग्रह मुख्यतः रौलट ऐक्ट (कानून) के प्रति था। वही रौलट ऐक्ट कुछ समय बाद इतिहास की हृदयहीन हत्याओं की शायद सबसे बुरी मिसाल का कारण बना। जालियांवाला बाग के शहीदों की राख में से कानून को चुनौती देने की जिस भावना का उदय हुआ वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी। उस घटना के बाद गांधी के राष्ट्र-नेतृत्व की जब-तब आलोचना तो हुई, लेकिन किसी ने उनके विरुद्ध आपत्ति नहीं की।

३० जनवरी १९४८ को नेहरू ने गांधी को राष्ट्रपिता कहा था। राष्ट्रपिता कोई मौलिक शब्द नहीं था, लेकिन इस शब्द ने बहुत वास्तविक ढंग से यह जाहिर किया कि भारत में आमजनों की निगाह में गांधी का क्या स्थान था। ("दी स्टेट्समैन", नयी दिल्ली)

गांधीजी : एक किशोर की दृष्टि में

मैंने गांधीजी के युग में जन्म नहीं लिया था। महात्मा गांधी के देहावसान के ५ साल बाद मैं पैदा हुआ। मुझे गांधीजी के बारे में जो कुछ ज्ञान है वह पुस्तकों, पत्रिकाओं और रेडियो की वार्ताओं से प्राप्त हुआ है।

जब मैं १० साल का बालक था, उस समय मुझे महात्मा के बारे में अधिक मालूम नहीं था। मैं पहले उन्हें हिंसा का आदमी समझता था। पत्रिकाओं में उनके जो चित्र छपे थे, उनमें प्रायः उन्हें बड़े जन-समूह का नेतृत्व करते हुए या पुलिस की हिरासत में दिखाया गया है। देश के एक भाग से दूसरे भाग में पैदल यात्रा करते हुए पहुँचना और वहाँ चुटकी भर नमक बनाने का काम मुझे बेढंगा प्रतीत होता था। लेकिन अब १६ साल की उम्र में मेरे दिमाग में गांधीजी की एक दूसरी ही तसवीर है। मैं जानता हूँ कि गांधीजी ने भारत की जनता की उन्नति और उसे अंग्रेजों की हुकूमत से आजाद कराने हेतु अपनी पूरी जिन्दगी समर्पित कर दी।

मेरे लिए और मेरे जैसे कितने ही बालकों के लिए गांधीजी इतिहास में मिट जानेवाले व्यक्ति नहीं हैं, गांधीजी एक ऐसे आदमी थे, जो अपने आदर्शों और अधिकारों के लिए दृढ़ रहे। वे भारत की समस्त जनता के उत्थान के लिए आगे बढ़े। गांधीजी ने जिन हथियारों का उपयोग किया वे देखने में भद्दे से लगते थे, लेकिन उनका लक्ष्य ऊँचा था।—सत्यन् नागेन्द्र

(सम्पादक के नाम पत्र : दि० २-१०-'६६ "दी हिन्दुस्तान टाइम्स")

असम : प्रदेशदान की सम्भावना ?

पिछले महीने के आखिरी सप्ताह में असम सर्वोदय मण्डल की कार्यकारिणी की बैठक थी। बैठक में कार्यकर्ताओं ने अपनी विविध अड़चनें रखीं—शहरों में आन्दोलन का प्रभाव न होना, कार्यकर्ताओं का अभाव, अर्थ का अभाव। असम में अभी एक ब्लाकदान हुआ है। घूमने से थोड़े गाँव ग्रामदान में मिलते हैं, लेकिन ब्लाकदान की या अनुमण्डल-दान की मंजिल तक नहीं पहुँच पाते हैं। जिला सर्वोदय मण्डलों का संगठन सन्तोषप्रद नहीं हो पाया है, फिर भी प्रदेश में ३५ कार्यकर्ता निष्ठा से काम कर रहे हैं। ब्लाकदान न होने से कुछ निराशा एवं मायूसी भी कभी-कभी आती है।

अमलप्रभा बाईदेव का मार्गदर्शन न केवल कार्यकर्ताओं को, बल्कि असम के नेताओं एवं जनता को भी मान्य है। ऐसा सर्वमान्य व्यक्तित्व बहुत कम प्रान्तों को नसीब हुआ है। यहाँ की सरकार के नेताओं में इस आन्दोलन के प्रति आस्था एवं श्रद्धा है। यह प्रान्त आठ जिलों का होने से अपेक्षाकृत छोटा है। अतः यदि अमलप्रभा बहन के मार्गदर्शन में प्रदेश के कार्यकर्ता एक दो साल का पूरा समय इस काम में हिम्मत के साथ जुट जायें तो साल-डेढ़-साल में प्रदेशदान की सिद्धि होना कठिन नहीं है। कार्यकर्ताओं ने इस पर विचार विनिमय किया और वे राज्यदान का संकल्प लेने को तैयार हो गये हैं। सबने मिलकर तय किया है कि जयप्रकाश बाबू के आगमन पर यह संकल्प लिया जाय।

एक ही अर्से में या साप्ताहिक अभियान में एवं उसके आठ दिन के 'कामों पर' की प्रक्रिया में प्रमण्डदान कैसे होगा, यह यहाँ का मुख्य प्रश्न है। इस बारे नवम्बर में कुमारी निर्मला बहन यहाँ महिलाओं का शिविर लेने के लिए आ रही हैं। उस समय वह पदयात्रा अभियान भी चलायेंगी। इससे असम के प्रथम अहम सवाल का उत्तर मिल जायगा। फरवरी में आठ दिन का एक अभियान लेकर चार-पाँच साथियों को यहाँ लाकर अनुमण्डलदान का प्रयत्न किया जायगा। इस बीच दिसम्बर में श्री राममूर्ति भाई के एक सप्ताह के व्याख्यान कालेजों में रखे जानेवाले हैं। श्री जयप्रकाशजी की यात्रा नवम्बर में हो ही रही है। असम अनुभव करता है कि वह उपेक्षित है। हर एक दो महीने बाद बाहर से किसी सक्षम व्यक्ति को भेजने से ही यह कल्पना निर्मूल हो सकेगी।

श्री जयप्रकाशजी की यात्रा के कारण अर्थ का अभाव मिट जाय, इस दिशा में श्री चुनीभाई वैद्य प्रयत्नशील हैं।

—विशेष संवाददाता से

पुस्तक परिचय

'लोकतंत्र : एक आध्यात्मिक संस्था'

लेखक : श्री ओमप्रकाश त्रिखा

प्रकाशक : ग्रामभावना प्रकाशन, आश्रम, पट्टीकल्याना, जिला करनाल

पृष्ठ : ४४, मूल्य रु० १–२५

सर्वोदय-जगत् के वयोवृद्ध नेता श्री ओमप्रकाशजी त्रिखा की यह नवीन पुस्तक है। लेखक ने इस पुस्तक में लोकतंत्र को एक जीवन-पद्धति के रूप में ही नहीं, उससे भी आगे जाकर, जैसा कि पुस्तक का नाम ही स्पष्ट कर रहा है, एक पवित्र 'आध्यात्मिक संस्था' के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

भारत ने २१ वर्ष पहले ही अपने यहाँ लोकतांत्रिक प्रशासन को अपनाकर एक उत्तम कार्य किया और साथ ही अपने ऊपर एक बड़ा दायित्व भी ओढ़ लिया, जो कि भारतीय संस्कृति के अनुरूप ही था। लेकिन लोगों ने व्यावहारिक रूप में लोकतंत्र का अर्थ 'प्रतिनिधियों का चुनाव और भिन्न-भिन्न राजनैतिक दलों के गठन की छूट' तक ही सीमित कर दिया और इसीलिए सच्चे लोकतंत्र का वास्तविक स्वरूप हमारे यहाँ निखर नहीं पा रहा है और देशव्यापी असन्तोष और अव्यवस्था के निराकरण में इस लोकतंत्र को असमर्थ पाकर जनमानस तानाशाही की ओर झुकने लगा है।

इस स्थिति में लोकतन्त्र के सही और व्यापक अर्थ का, जनसामान्य के दायित्व और कर्तव्य का भान कराना और उसकी सिद्धि के लिए जनता को प्रशिक्षित करके तैयार करना सभी लोकतन्त्र-प्रेमी नागरिकों का प्रथम कर्तव्य है। इस दृष्टि से प० ओमप्रकाशजी त्रिखा का यह प्रयास निःसन्देह स्तुत्य और स्वागत-योग्य है।

लेखक ने इस पुस्तक में लोकतन्त्र के तात्विक पहलू के अलावा पंचायतराज, ग्रामस्वराज, भावात्मक एकता, लोकशिक्षा आदि अनेक व्यावहारिक पहलुओं पर भी प्रकाश डाला है और लोकतन्त्र के सन्दर्भ में विज्ञानयुग की नयी आकांक्षाओं के साथ धर्ममय जीवन की निरन्तर प्रेरणा का सुन्दर समन्वय भी किया है।

पुस्तक छोटी है, परन्तु महत्वपूर्ण और सामयिक विषय को सुबोध भाषा में प्रस्तुत करनेवाली एक उत्तम पुस्तक है, जो सबके लिए उपादेय है।●

राजगिर का मौसम

वाराणसी, १५ अक्तूबर। सर्व सेवा संघ ने सर्वोदय-सम्मेलन में भाग लेनेवाले प्रतिनिधियों से निवेदन किया है कि राजगिर में सर्दी का मौसम शुरू हो गया है, इसलिए अपने साथ हलके गरम कपड़े तथा ओढ़ने के लिए कंबल अवश्य साथ लायें। दक्षिण भारत से आनेवाले भाई-बहनों को इसकी विशेष आवश्यकता रहेगी।

[पृष्ठ ४८ का शेष]

उसके पीछे कोई रोनेवाला नहीं है। बुलावा आयेगा तो बाबा बड़े आनन्द से चला जायेगा। उसको कोई चिन्ता नहीं है। बाबा साफ बोलता है। बाबा की वाणी में अत्यन्त सत्य भरा है, ऐसा उसको विश्वास है।

भारत में लोकशक्ति के अधिष्ठान का एक ही उपाय

ऐसी हालत में आदिवासियों को मजबूत बनाने के लिए दूसरा कोई बेहतर आन्दोलन है नहीं। मैंने तो यहाँ तक कहा कि मेरी बड़े-बड़े नेताओं से भेंट हुई, बड़े-बड़े अर्थशास्त्रियों से मिलना हुआ, उनसे मैंने कहा कि सबसे आसान और कारगर कोई तरीका हो तो आप बताये, बाबा उसको स्वीकार करने को तैयार है। बाबा का कोई आग्रह नहीं है। सब लोगों ने मिलकर कहा कि इससे बेहतर दूसरा तरीका नहीं है।" इससे ज्यादा समय आपका लेना नहीं है और मैं आशा करता हूँ कि आप यह काम प्रेम से उठायेंगे और भारत में लोकशक्ति का अधिष्ठान बनायेंगे।

रांची (बिहार)

२-१०-'६९

उत्तरप्रदेश में ग्रामदान आन्दोलन
(३०-९-१९६९ तक)

जिला	ग्रामदान	प्रखण्डदान
उत्तरकाशी*	५६६	४
बलिया *	१,४६६	१८
वाराणसी *	२,१०५	२२
फर्रुखाबाद *	२,४२८	१०
आगरा *	१,७२४	१७
आजमगढ़	२,६६८	१८
फैजाबाद	१,४३८	११
गाजीपुर *	१,३१६	१४
मैनपुरी	१,०११	५
चमोली	९३६	२
कानपुर	९४३	—
एटा	८४१	—
देवरिया	७६१	७
सहारनपुर	६७२	—
मीरजापुर	५९४	१
मुरादाबाद	५७६	—
मथुरा	५४०	१
गोरखपुर	४९१	—
इटावा	४७८	१
अलीगढ़	४२४	१
पीलीभीत	४०८	—
अल्मोड़ा	३५४	३
हरदोई	३०६	—
सुल्तानपुर	२८७	२
मेरठ	२८३	—
देहरादून	२५५	२
मुजफ्फरनगर	२४८	—
बुलन्दशहर	१९८	—
झांसी	१५३	—
बस्ती	१५२	—
रायबरेली	१३६	—
बदायूं	१३३	१
जौनपुर	१०८	१
टिहरी	१०४	—
पिथौरागढ़	९४	१
रामपुर	९०	—
गढ़वाल	६१	—
इलाहाबाद	७५	—
उन्नाव	३८	—
फतेहपुर	१	—
हमीरपुर	१	—
गोण्डा	१	—
शाहजहाँपुर	५	—
कुल योग	२५,७२१	१४७

* जिलादान पूर्ण

—कपिलभाई

बिहार की भौगोलिक-सामाजिक स्थिति

क्षेत्रफल— ६७,१९६ वर्गमील, जोत की भूमि— ३०,००० वर्गमील यानी १ करोड़ ९२ लाख एकड़।
जनसंख्या— ४,६४,५५,६१० (ग्रामीण आबादी ४,२५,४१,६९०), आदिवासी जनसंख्या— ४२,०४,७७०,
अनुसूचित जातियाँ— ६५,०४,९९६।
प्रमंडल (कमिश्नरी)— ४, जिले—१७, अवर प्रमंडल—(सबडिवीजन), ५८— प्रखंड—५८७।
मालगुजारी गाँव— ६७,६६५, साक्षरता—१८.४% नगरों की आबादी—८.४%।

नोट.- (१) ऊपर के आंकड़े १९६१ की जनगणना के हैं। अब हम करीब ५ करोड़ आबादी मानते हैं।
(२) बिहार में करीब आठ लाख परिवार हैं, इनमें से सवा सात लाख परिवार गाँवों में रहते हैं।
(३) ग्रामीण आबादी अब करीब साढ़े चार करोड़ होगी चूंकि गांवों से शहर की आबादी तेजी से बढ़ रही है एवं गांवों से शहर की ओर लोग जा भी रहे हैं।•

उत्तरप्रदेश में छः जिलादान सम्पन्न

वाराणसी, १५ अक्तूबर। उत्तर-प्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समिति से प्राप्त सूचनानुसार अब तक कुल ६ जिलादान घोषित हो चुके हैं। बलिया, उत्तरकाशी, वाराणसी, फर्रुखाबाद, आगरा और गाजीपुर जिलादान हो जाने के बाद सर्वोदय-सम्मेलन तक ३ जिले और होने की संभावना है। समिति के प्रवक्ता के अनुसार ३० सितम्बर तक प्रदेश के ४३ जिलों में २५,०२३ ग्रामदान एवं १४७ प्रखण्डदान हुए हैं।•

सम्मेलन में टेलीप्रिण्टर

वाराणसी, १५ अक्तूबर। अठारहवें सर्वोदय-सम्मेलन, राजगिर (पटना) में देश और विदेश के प्रमुख नेताओं के भाग लेने के कारण समाचार-पत्रों तक अविलम्ब समाचार पहुँचाने की दृष्टि से डाकतार विभाग ने एक विशेष टेलीप्रिण्टर की सुविधा सम्मेलन को प्रदान की है।

प्राप्त सूचना के अनुसार इस सर्वोदय-सम्मेलन में विदेश के समाचार-पत्रों के संवाददाता भी पहुँचेंगे।

ज्ञातव्य है कि भारत के राष्ट्रपति श्री वी०वी० गिरि २५ अक्तूबर को सर्वोदय-सम्मेलन में उपस्थित रहेंगे। सीमान्त गांधी खान अब्दुल गफ्फार खाँ और श्री दलाई लामा इस प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सर्वोदय-सम्मेलन में विशेष रूप से भाग ले रहे हैं।•

थाणा जिलादान की ओर

महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल से प्राप्त एक सूचना के अनुसार थाणा जिले में कार्यकर्ता-शक्ति लगा रहे हैं ताकि सम्मेलन तक जिलादान पूरा हो जाय।•

सीकर जिले में प्रखण्डदान

सीकर जिले में ग्रामदान के तीसरे अभियान में दांतारामगढ़ प्रखण्डदान हुआ। इस प्रखण्ड के ११५ गाँवों में से ९० गाँवों का ग्रामदान हुआ है। धोद प्रखण्ड में १०१ गाँवों में से ५३ गाँव ग्रामदान घोषित हुए।•

महाराष्ट्र में जयप्रकाशजी का दौरा

पता चला है कि १ दिसम्बर १९६९ को औरंगाबाद (महाराष्ट्र) में श्री जयप्रकाश नारायण का कार्यक्रम रखा गया है। इस अवसर पर उनके प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने के निमित्त एक थैली भेंट करने के लिए नागरिकों की स्वागत समिति बनायी गयी है।•

कानूनी मान्यता-प्राप्त ग्रामदान

ग्रामदानी गाँव दरखा की ग्रामसभा का निर्वाचन ९ अक्तूबर '६९ को सर्वसम्मति से श्री ध्वजाप्रसाद साहू की अध्यक्षता में हुआ। सर्वसम्मति से श्री महेन्द्र-नारायण सिंह अध्यक्ष चुने गये। उसी अवसर पर बिहार भूदान-यज्ञ कमेटी (पटना) के मंत्री श्री निर्मलचन्द्र भाई ने ग्रामसभा को कानूनी हक-प्राप्ति से लाभ मिलने की सम्भावनाएँ एवं उसके उद्देश्य पर प्रकाश डाला।

मुजफ्फरपुर जिले में सकरा थाने के मुरौल प्रखण्ड का ग्रामदान ऐक्ट के अनुसार कानूनी अधिकार प्राप्त यह पहला गाँव है।•

प्रधानमंत्री द्वारा ग्रामदान का समर्थन

अपने बिहार के दौरे में आचार्य विनोबा भावे से राँची में मिलने के बाद प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने राँची की सार्वजनिक सभा में यह घोषणा की कि भारत की भूमि-समस्या आचार्य विनोबा भावे के द्वारा चलाये जा रहे ग्रामदान आन्दोलन से ही हल हो सकती है। इसलिए आप सबको उसमें सक्रिय सहयोग देना चाहिए।

वार्षिक शुल्क १० रु०, (सफेद कागज। १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
प्रति का ३० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

अन्य पृष्ठों पर

वर्ष : १६ अंक : ५-६
सोमवार १० नवम्बर, '६९

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी–१
फोन : ६४१८९

नगरों में सर्वोदय-कार्य की दिशा

चाहे नगरदान का नाम दीजिए, चाहे सर्वोदय-नगर बनाने का नाम दीजिए, जो भी नाम दीजिए, यह काम हमको उठाना होगा। कम से-कम बिहार मे तो उठाना ही होगा। बहुत ज्यादा शहर यहाँ हैं नहीं, चार-पाँच बड़े शहर है, और चार-पाँच छोटे शहर हैं। ऐसे कुल पचास शहर हैं, और पचास शहरो मे तो मुश्किल से बीस लाख लोग होंगे। और सारे प्रदेश मे ७ करोड लोग है। ४ प्रतिशत लोग यहाँ हैं। तो, इन लोगो को अछूता रखना गलत है। इसके लिए हमे जो काम करना पडेगा उसमे दो-तीन बातें हमको करनी पड़ेंगी।

नम्बर एक, हरएक जगह की म्युनिसपैलिटी को पक्षमुक्त कराना होगा, सबको समझाना होगा कि पक्षो की जरूरत होती है 'डिमाक्रेसी' मे, लेकिन पक्षो का वहाँ काम होता है, जहाँ 'आइडियालॉजी' का सवाल होता है, लेकिन म्युनिसपैलिटी को तो केवल सेवा-कार्य करना होता है, ग्रामसभा की तरह शहर की सेवा, और उसमे कोई 'आइडियालाजी' का सवाल नही होता। इस वास्ते पक्षभेद का ख्याल करना, और पक्षभेद रखकर म्युनिसपैलिटी मे प्रवेश करना 'पालिटिशियन्स' के लिए भी अच्छा नही, और म्युनिसपैलिटी के लिए भी अच्छा नही। तो इसलिए सर्वत्र म्युनिसपैलिटियो को समझाकर पक्षमुक्त कराना होगा।

दूसरी बात, वहाँ जो भी मुहल्ले हैं, उनको शान्तिसेना का स्थान मानना होगा। यानी हरएक मुहल्ले की ओर से तीन-चार आदमी हमको मिले, और इस प्रकार से सारे शहर मे शान्तिसेना का सुव्यवस्थित आयोजन हमको करना होगा।

तीसरी बात, हमको यह करना होगा कि जितने कारखानेदार यहाँ होंगे, उन सबसे थोड़ा कुछ दान हमको मिले, इतना ही पर्याप्त नही, यह तो वे देते आये है, और आगे भी देते रहेंगे, लेकिन वह बात मुख्य नही, मुख्य तो यह कि साझे का विचार वे स्वीकार करें, इसकी कोशिश पहले होगी। सब लोग एकदम राजी होंगे नही, लेकिन जितने कारखानेदार राजी होंगे, उनको हम बढ़ावा दें, और उनके साथ हमारा सम्बन्ध बने, तो दूसरे भी उसमे शामिल होने मे लाभ मानेंगे।

तो, यह काम हमको शहरो मे करना होगा और शहरो के साथ गाँवो को, और गाँवो के साथ शहरो को जोडना होगा।

राजगिर : २७-१०-'६९

१८ वें सर्वोदय-सम्मेलन का निवेदन

देश के समस्त गाँवों का ग्रामदान और एक वर्ष में पुष्टि के लिए अति तूफान का आह्वान

[दिनांक २५ से २८ अक्तूबर '६९ तक राजगिर में विनोबाजी के सान्निध्य में अठारहवाँ अखिल भारतीय सर्वोदय-सम्मेलन सम्पन्न हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय-राष्ट्रीय परिस्थिति के सन्दर्भ में सविस्तार चर्चाओं और विचार-विमर्श के बाद सम्मेलन के अन्तिम दिन अधिवेशन में सर्वसम्मति से स्वीकृत निवेदन राष्ट्र के नाम सन्देश है। —सम्पादक]

महात्मा बुद्ध और महावीर की साधना-स्थली राजगिर में गांधी-शताब्दी वर्ष में 'बिहारदान' जैसी महान उपलब्धि के परिप्रेक्ष्य में आयोजित अठारहवें सर्वोदय-सम्मेलन का अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप तथा विश्व-शान्ति स्तूप का उद्घाटन एक अद्वितीय और प्रेरक घटना है।

बादशाह खान का स्वागत

गांधी-शताब्दी के सन्दर्भ में हम सबके आदरणीय सीमान्त गांधी खान अब्दुल गफ्फार खाँ का भारत में शुभागमन तो मानो महात्मा गांधी का ही पुनरागमन है। भारत-प्रवेश करते ही उन्होंने जिस उत्कटता से सारे देश का ध्यान गांधीजी के जीवनादर्शों की ओर आकृष्ट किया, उससे देश में सेवा, त्याग, सादगी और परस्पर-सद्भाव का वातावरण निर्माण करने में बहुत मदद मिली है। यह सम्मेलन अपने परिवार के श्रेष्ठ गुरुजन बादशाह खान का हृदय से स्वागत और अभिनन्दन करता है।

विश्व-परिस्थिति और लोकतंत्र

आज जब हम विश्व-परिस्थिति का आकलन करते हैं तो हमें प्रतीत होता है कि सम्प्रदाय और पंथ के संकुचित भेदों ने आइरलैंड (आयरलैण्ड) और अरब-इजराइल जैसी क्षोभजनक घटनाओं को जन्म दिया और रंगभेद ने अमेरिका के लोकतंत्र की बुनियाद पर ही प्रहार किया है। प्रतिगामी जीवन पद्धति और जाग्रत जनता की आकांक्षाओं के संघर्ष के परिणाम वियतनाम तथा अन्यत्र दिखाई देते हैं। इससे यह स्पष्ट हो गया है कि महान वैज्ञानिक उपलब्धियों, विशेषतः चन्द्रयात्रा के इस युग में जाति, सम्प्रदाय, पंथ, पक्ष तथा वर्ग के भेदों को मिटाये बिना मानवता के अस्तित्व की रक्षा करना असम्भव हो गया है। इस स्पष्ट अनुभूति ने विश्वात्मा को जाग्रत कर दिया है और युद्ध-मुक्त विश्व समाज की स्थापना की आकांक्षा बन गया है। इस आकांक्षा की पूर्ति आज की आवश्यकता है।

देश की परिस्थिति और राजनीति

भारत में अहमदाबाद और अन्य स्थानों पर साम्प्रदायिकता के विस्फोट, ग्रामीण क्षेत्रों में तनाव, श्रमिक क्षेत्रों में संघर्ष, विद्यार्थियों में असन्तोष और सार्वत्रिक अशान्ति ने राष्ट्रीय एकता, प्रतिष्ठा और लोकतंत्र के समक्ष गम्भीर संकट उपस्थित कर दिया है। सत्ता, पक्ष और अन्य गुट की राजनीति ने इस संकट को अधिक गहरा और गम्भीर बना दिया है। देश की अर्थरचना में बुनियादी परिवर्तन के अभाव और गलत आयोजन के कारण 'हरित क्रान्ति' जैसी उपलब्धियाँ भी आर्थिक विषमता में वृद्धि का कारण बन गयी हैं और इससे धनवान सम्पत्ति और भूमि का कुछ लोगों में केन्द्रीकरण होना शुरू हुआ है। इसी प्रकार सघन श्रम-केन्द्रित तकनीक और औद्योगिक नीति के अभाव में देश में बेरोजगारी और यहाँ तक कि शिक्षित, प्रशिक्षित और कुशल शिल्पियों की भी बेरोजगारी की समस्या विकट रूप ग्रहण कर रही है। विषमता, गरीबी और बेकारी के कारण देश की परिस्थिति असह्य और विस्फोटक बनती जा रही है, और हिंसक क्रान्ति के प्रयत्नों का जोर बढ़ रहा है। किन्तु इन दिनों सारी दुनिया और अपने देश के साम्यवादी आन्दोलन में जो पक्षभेद और मतभेद उत्पन्न हुए हैं वे इसके साक्षी हैं कि आज के सन्दर्भ में क्रान्ति की परम्परागत हिंसक पद्धति काल-बाह्य हो चुकी है। आज अहिंसक पद्धति से ही जनशक्ति का क्रान्तिकारी संगठन सम्भव है। इसी जाग्रत जनशक्ति के जरिये ही पक्षमुक्त प्रतिनिधित्व से निर्मित सरकार कायम हो सकेगी, क्योंकि गत वर्षों के अनुभव ने यह स्पष्ट कर दिया है कि आज की सत्ता और पक्ष की राजनीति में और इन पर आधारित सरकारों में देश की गम्भीर समस्याओं का निराकरण करने की शक्ति नहीं रही है।

यद्यपि बैंकों का राष्ट्रीयकरण एक प्रगतिशील कदम है, तथापि राष्ट्रीयकृत उद्योगों और निगमों का यह पूर्व-अनुभव है कि इससे न तो सामाजिक क्रान्ति न ही बुनियादी परिवर्तन हुआ है और न आम जनता के हित का ध्यान रखा जा रहा है। अतः सम्मेलन का यह आग्रह है कि राष्ट्रीयकृत प्रतिष्ठानों में आम जनता, विशेषतः समाज के पिछड़े वर्गों के हित, उत्पादन में बढ़ोतरी और काम के स्तर में वृद्धि पर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए।

भारतदान का संकल्प

देश की वर्तमान सामाजिक और राजनैतिक परिस्थिति की इस पृष्ठभूमि में करीब-करीब पूर्ण 'बिहारदान' की उपलब्धि राज्यवाद, पूंजीवाद और सैन्यवाद से मुक्त स्वतंत्र लोकशक्ति के अधिष्ठान का शुभारम्भ है। यह सम्मेलन इस अद्वितीय घटना के निर्माता—बिहार की आम जनता,

रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं, शिक्षकों, शासकीय सेवकों और समाज-सेवी कार्यकर्ताओं का हार्दिक अभिनन्दन करता है। इसके साथ ही सारे देश में कुल १ लाख ४० हजार ग्रामों के ग्रामदान की घोषणा ने सर्वोदय-आन्दोलन को अभूतपूर्व ऊँचाइयों पर पहुँचा दिया है। इसके लिए सभी प्रदेशों में आन्दोलन में रत कार्यकर्ता बधाई के पात्र हैं। दस के प्रदेशों ने प्रदेशदान का संकल्प लिया है। आशा है, इस शताब्दी-वर्ष में अधिकाधिक प्रदेश अपने संकल्प की पूर्ति के लिए पूरी शक्ति लगायेंगे और सन् '७२ के पूर्व सारा ग्रामीण भारत ग्रामदान द्वारा शोषण और उत्पीड़न से मुक्ति की घोषणा कर देगा।

अति-तूफान के लिए आवाहन

बिहार में पूज्य विनोबाजी ने एक वर्ष में पुष्टि के 'अति-तूफान' का आवाहन किया है। ग्रामदान की घोषणा के पश्चात् ग्रामसभाओं का संगठन, भूमि के बीसवें हिस्से का भूमिहीन श्रमिकों में वितरण और ग्रामसभाओं के नाम पर मालकियत का समर्पण जन-आन्दोलन द्वारा लोक-शक्ति का त्रिविध कार्यक्रम है। पुष्टि के अति-तूफान में न केवल भूमि समस्या के समाधान के, वरन् सामाजिक और राज-नैतिक नवरचना के बीज छिपे हैं। इसकी सिद्धि के लिए व्यापक परिश्रम और स्नेहल की आवश्यकता है। 'अति-तूफान' का यह आवाहन सारे देश को प्रेरणा देगा।

ग्रामदानी गाँवों में ग्राम-स्वावलम्बन खादी-ग्रामोद्योगों के संगठन से ही ग्राम जनता की सृजन शक्ति की अभिव्यक्ति सम्भव है। इसलिए शान्ति-सेना एवं ग्राम शान्ति-सेना के संगठन में नागरिकों की रक्षा, मानवीय मूल्यों के संरक्षण और विकास की सम्भावनाएँ छिपी हुई हैं। इन कार्यक्रमों पर भी पूरा जोर दिया जाना चाहिए।

लोक-सम्मति के लिए सर्वोदय-पात्र

ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य के साथ-साथ यह स्वाभाविक ही है कि सर्वोदय-आन्दोलन का सीधा स्पर्श नगरों को हो। सर्वोदय नगर की स्थापना हमारा लक्ष्य है और इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए उद्योगों में मालिक-मजदूर भागीदारी, स्वतन्त्र श्रमिक संगठन, नगरपालिकाओं में दलमुक्त प्रतिनिधित्व, मद्यनिषेध और भंगी-मुक्ति प्रारम्भिक शर्तें हैं। नगर जीवन में सर्वोदय-विचार की प्रतिष्ठापना के लिए लोक-हृदय में सर्वोदय-पात्र अथवा शान्ति-पात्र की स्थापना द्वारा व्यापक पैमाने पर लोकसम्मति प्राप्त करने का अभियान करने की जरूरत है।

आचार्यकुल की स्थापना

विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय के इस युग में सद्विचार की शक्ति से ही समाज परिवर्तन और सम्यक् विकास सम्भव है। इसलिए आज चिन्तकों, विचारक, शिक्षक और आचार्यों को राज-निरपेक्ष मुक्त ज्ञान-प्रसार का एक ऐसा मंच प्रदान करने की आवश्यकता है जो पक्षभेद की संकुचित राजनीति से ऊपर उठा हुआ है और जो देश की नीतियों को प्रभावित करने में सक्षम हो। 'आचार्यकुल' की स्थापना इसीलिए शुभ प्रयास है। देश के समस्त विद्वज्जन इस विचार को स्वीकार कर मानवता की नवरचना के इस महान् यज्ञ में अपनी आहुति प्रदान करें ऐसी अपेक्षा है।

देश के समस्त ग्रामों का ग्रामदान और एक वर्ष में पुष्टि का 'अति-तूफान' इस सम्मेलन का राष्ट्र के नाम सन्देश और आवाहन है।

हिंसा और शोषण से समस्त मानवता की मुक्ति की मंजिल इसी मार्ग पर है। आज हम सत्य और अहिंसा के इस रास्ते पर दृढ़ता से कदम बढ़ाते जायें तो आनेवाला कल हमारा है।•

सर्वोदय समाज सीमान्त गांधी के साथ

सर्व सेवा संघ-अधिवेशन में स्वीकृत स्वागत-प्रस्ताव

सर्व सेवा संघ के अधिवेशन में पारित सीमान्त गांधी खान अब्दुल गफ्फार खाँ के स्वागत प्रस्ताव पर बोलते हुए आचार्य भावे ने कहा कि सीमान्त गांधी का भारत आगमन, गांधीजी का ही आगमन है। आपने कहा कि प्रस्ताव में जो भावना व्यक्त हुई है, वह हमारी न्यूनतम जिम्मेदारी है। हमें इससे बहुत अधिक करना है। आपने कहा कि गांधीजी को जिन परिस्थितियों का मुकाबला करना पड़ा था, लगभग वही परिस्थितियाँ आज भारत में हैं। और ऐसे समय में सीमान्त गांधी के रूप में गांधीजी का ही अवतरण हुआ है, ऐसा महसूस होता है।

सर्व सेवा संघ के मूल प्रस्ताव में कहा गया है कि —

"सर्व सेवा संघ की यह सभा २२ वर्ष की जुदाई, कष्ट और कठिनाई की अवधि के बाद बादशाह खान के भारत-आगमन पर उनका हार्दिक स्वागत करती है, तथा उनके प्रति सम्मान व स्नेहभरी शुभाकांक्षा अर्पित करती है। इस अवसर पर आजादी, मानव-बन्धुत्व और परस्पर-प्रेम के लिए की गयी उनकी सेवाओं का सहज स्मरण हो आता है।

बादशाह खान ने हमें तथा देश के सम्पूर्ण जन समुदाय को हृदयस्पर्शी सन्देश दिया है, जैसा कि पिछले कई वर्षों में हमें नहीं मिला। उन जैसे साधुमना की उपस्थिति और सामान्य सच्चाई को सहज सरलता के साथ प्रकट करनेवाले उनके उद्गारों ने महात्मा गांधी की याद को पुनर्जीवित कर दिया है। इसके फलस्वरूप शताब्दी कार्यक्रम को एक गहराई और दिशा प्राप्त हुई है, जो कमी बराबर अनुभव की जा रही थी।

सर्व सेवा संघ और पूरा सर्वोदय आन्दोलन देशवासियों को घृणा, हिंसा और सर्वनाश के रास्ते से विरत करने के बादशाह खान के कठिन प्रयास-कार्य के पूर्ण समर्थन का अपना संकल्प प्रकट करता है।"•

राजगिर से वापस

जो हजारों लोग राजगिर आये थे वे अपने-अपने घर वापस पहुँच गये होंगे। राजगिर में क्या हुआ, क्या कहा गया और क्या सुना गया, इस सबकी याद मन में बनी होगी। जो अतिथि थे वे कुछ और सोचते होंगे, और जो कार्यकर्ता थे वे कुछ और। यह सम्मेलन ऐसा था जिसने हर एक को कुरेदा। संकल्प, सहानुभूति, शंका इनमें से किसी एक से भी अछूता रहनेवाला शायद ही कोई रहा हो।

राज्यदान के बाद क्या? इस प्रश्न का उत्तर देने की जिम्मेदारी बिहार ने स्वीकार कर ली है। उत्तर बिहार देगा, बिहार को ही देगा, किन्तु उसका उत्तर उसके ही लिए नहीं होगा। उसके उत्तर पर बिहार के बाहर का आन्दोलन निर्भर करेगा। देश अब बिहार में ग्रामदान-प्रखण्डदान, जिलादान के आंकड़े नहीं सुनेगा, वह आंखों से देखना चाहेगा कि राज्यदान के बाद क्या हुआ। वह जानना चाहेगा कि ठोस लोकशक्ति का उदय और विकास कितना हुआ। यह साफ-साफ दिखाई देना चाहिए कि ग्रामदानी गांव अपनी भीतरी व्यवस्था सहकार से चलाने, और अपनी सरकार को दलों से मुक्त करने के लिए तैयार हो रहे हैं। यह तैयारी ही लोकशक्ति का मापदंड होगी। इसी शक्ति से गांव अपनी दूसरी समस्याओं का समाधान ढूंढ सकेगा।

बिहार के लिए समय बहुत कम है। अगले ६ महीनों में गांव-गांव में संगठन की स्फूर्ति दिखाई देने लग जानी चाहिए। काम आसान नहीं है। आसान तो नहीं है, पर जो काम इसमें आसान है वह क्या करने लायक है? बिहार के साथियों को सम्पूर्ण संकल्प, ठोस संगठन, और भरपूर साधन से इस काम में जुटना पड़ेगा। विनोबाजी ने यह कहकर बिहार छोड़ा है कि पूरे देश का 'बिहारीकरण' करना है। इसका साफ अर्थ यह है कि बिहार आगे चलता रहे, और अन्य राज्य साथ चलते रहें। सब मिलकर नये भारत का निर्माण करें।

ग्रामदान की गंगा बहती रहनी चाहिए। उसका प्रवाह न रुकने पाये। लेकिन इतना ध्यान अब जरूर रखा जाये कि ग्रामदान की गंगा का पानी बेकार बहकर समुद्र में न गिरे। उसके पवित्र जल से धरती की प्यास बुझाने का काम शुरू करने में देर न हो। जिन जिलों का दान पूरा हो जाता है उनमें ग्रामसभाओं के संगठन और पुष्टि के काम फौरन शुरू हो जाने चाहिए। देर का कोई कारण नहीं है। विनोबा ने हर राज्य को अपनी शक्ति और परिस्थिति के अनुसार अपनी कार्य-योजना बनाने की छूट दे दी है।

हम आज तक शहरों को छोड़ते आये हैं—कुछ जान-बूझकर, कुछ मजबूरी के कारण। जहां तक बिहार का सम्बन्ध है, हमारा आन्दोलन अब एक दिन भी शहरों से अलग नहीं रह सकता। गांवों में शान्ति हो और शहरों में अशान्ति फैली रहे, यह कब तक चलेगा? अगर यह स्थिति चलने दी गयी तो क्रान्ति प्रतिक्रान्ति में उलझ जायगी, और हम उसे छुड़ा नहीं सकेंगे।

शहरों में क्या काम हो, इसकी दिशा विनोबा ने सुझा दी है। दलमुक्त नगर-व्यवस्था, मुहल्ले-मुहल्ले में शान्तिसेना, और कारखानों में मालिक-मजदूर की साझेदारी—यह त्रिविध कार्यक्रम है शहरों का। इस कार्यक्रम से हम नगर के नागरिकों की चेतना को छू और जगा सकते हैं, और उन्हें आन्दोलन का सूत्र देकर गांवों के साथ जोड़ सकते हैं। जनता जनता है। उसे शहर और गांव, शोषक और शोषित, क्रान्तिकारी और क्रान्ति-विरोधी का नाम देकर नागरिक-शक्ति को खण्डित करना क्रान्ति को तोड़ने के बराबर होगा। निश्चित ही हमें यह नहीं होने देना है।

हमने घोषणा की हो या नहीं, राजगिर में हमने बिहारदान से भारतदान की ओर कदम बढ़ा दिया। वास्तव में हमारी कोशिश है इतिहास को अपने हाथ में करने की। मार्क्सवाद ने इतिहास को हमारे हाथ से छीन लिया था। उसने हमें नियति की रस्सी में कसकर बांध दिया था। उसने मनुष्य के लिए कुछ छोड़ा ही नहीं था, सिवाय इसके कि वर्ग-संघर्ष के निर्मम नियम के पीछे वह चले, और चलता रहे। मनुष्य की गुलामी में आधुनिक यंत्रवाद साम्यवाद से भी आगे चला गया है। उसने मनुष्य को यंत्र का मात्र एक पुर्जा बना दिया। यह गांधी का काम था कि उसने मनुष्य को संघर्षवाद और यंत्रवाद की दोहरी गुलामी से मुक्ति का आश्वासन दिया। आज वही मनुष्य दान की प्रक्रिया द्वारा इतिहास को मोड़ने, नया समाज बनाने, और एक अभिनव क्रान्ति की सृष्टि करने के लिए आगे बढ़ रहा है।

जिस राजगिर में बुद्ध ने निरुपाधिक मानव को प्रतिष्ठा दी थी, उसी राजगिर में वह क्रान्तिकारी और निर्माता के पद से विभूषित हुआ है। मनुष्य अब तक दूसरे का था, अब अपना बन रहा है। अपना बनकर वह दूसरे से जुड़ना चाहता है।

हम राजगिर से नये भविष्य का आश्वासन लेकर वापस आये हैं।●

सारे भारत का बिहारीकरण करना है

वह दूर है, फिर भी निरन्तर पास है ...इसलिए हम बिहार छोड़कर जा रहे हैं, ऐसा महसूस नहीं होता। बल्कि हमको तो सारे भारत का बिहारीकरण करना है।

इस वक्त बिहार की तरफ सारे भारत की नजर तो है ही, सारी दुनिया के कई देशों का ध्यान भी बिहार की ओर है। दुनिया में जितने अहिंसा के विचार में माननेवाले हैं, उनका ध्यान बिहार की ओर लगा है। यह प्रयोग सफल होगा तो सबमें आशा का संचार होगा, विफल होगा तो निराशा होगी।

इसलिए १ साल के लिए मतभेद जेब में रखना, १ साल पुष्टि के काम में मतभेद भूलकर रखना, काम करते-करते बहुत सारे मतभेद क्षीण हो जायेंगे, कुछ बचे रहेंगे तो उसके बाद उस पर चर्चा कर लेना।

—विनोबा

बिहार के कार्यकर्ताओं से, राजगिर, २८-१०-'६९

सीधी कार्रवाई के लिए लोकशक्ति संगठित करें

काल के तकाजे और संघर्ष की चुनौती का सामना करना ही होगा

—सर्व सेवा संघ के अधिवेशन में अध्यक्ष श्री शं० जगन्नाथन् का समापतीय भाषण—

सारे देश में गांधी-जन्म-शताब्दी उत्सवों समारोहों की शक्ल में एक बड़ी चीज के बाद हम यहाँ इकट्ठा हुए हैं। जैसा आज रिवाज है, इस शताब्दी के सिलसिले में भी भाषण, परिसंवाद, प्रदर्शनियाँ वगैरह हुईं। जिन्दगी भर गांधीजी पहले कोई चीज स्वयं कर लेते, उस पर प्रयोग करते और तब उस पर लेख या प्रदर्शन करते थे। प्रदर्शन के पहले प्रयोग, यह उनका तरीका था। लेकिन हम बिना प्रयोग किये ही सिर्फ भाषणों व प्रदर्शनों के शौकीन हैं। सारे देश में इस शताब्दी वर्ष के दौरान हम क्या देखते हैं कि गांधीजी के नाम पर कोई भी प्रयोग या काम किया जा रहा है। सारी शताब्दी भाषणों और परिसंवादों में ही करीब-करीब खत्म कर दी गयी। सुप्रीम कोर्ट के एक जज श्री गोभर ने तो मजाक में यहाँ तक कह दिया है कि बातचीत पर टैक्स और भाषणों पर हर्जाना लगना चाहिए। लम्बी लम्बी तकरीरें देना हमारी राष्ट्रीय आदत बन गयी है। शायद वैसी ही गलती आज आपके सामने बोलने के लिए खड़े होकर मैं भी कर रहा हूँ। सरकारी मंत्री वगैरह मुल्क के एक कोने से दूसरे कोने तक दौड़ते रहते हैं और इस गांधी शताब्दी वर्ष में तो किसी-न-किसी शिलान्यास या मूर्ति-अनावरण के बहाने उन्होंने और भी ऐसा किया है। क्या पार्लियामेण्ट, क्या राज्यों की एसेम्बलियाँ, सब्र भाषणों की हर जगह भरमार है। किसी हिसाब किताब जाननेवाले को यह बताना चाहिए कि इस बातचीत में मुल्क का कितना वक्त बरबाद होता है। इसलिए, बातचीत पर हर्जाना लगाने से मुमकिन है हिन्दुस्तान 'बातूनी' लोगों के बजाय 'काम करनेवालों' का मुल्क कहा जाने लगे। गांधीजी तो इसी बातचीत के बजाय रत्तीभर काम को ज्यादा पसन्द करते थे। और दिल्ली में अपनी पहली पब्लिक मीटिंग में मारुदी गांधी ने इसी बात पर जोर भी दिया। थोड़ी देर के लिए यह मान भी लिया जाय कि काम के पहले बात और परिसंवाद वगैरह जरूरी है तो क्या अब हम सिर्फ उन्हीं तक सीमित न रहकर किसी गंभीर कार्यक्रम में भी लगेंगे? मुझे तो यह डर है कि महज बातें ही-बातें की गयी हैं।

कोरी तकरीरें और तंगदिल

आखिर हम बात भी क्या करते हैं? राजनीतिक लोग तो आजादी की लड़ाई

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष : शं० जगन्नाथन्

के दिनों की अपनी कीर्ति का बखान करते हैं। ऐसे लोगों के लिए उन दिनों की याद मीठी हो सकती है। लेकिन मौजूदा पीढ़ी को महज पुरानी बहादुरी की कहानियों से सन्तोष नहीं है। उसे तो ठोस काम चाहिए। बातें लिखे तो हमेशा जोड़ती नहीं, कभी-कभी वे उन्हें तोड़ती भी हैं। ज्यादा बात का मतलब है ज्यादा पार्टियाँ, बेशुमार पार्टियाँ, जिनके बीच में भी 'वाम' 'दक्षिण' और 'मध्य' जैसी चीजें रहती हैं। बिना काम के सिर्फ बातचीत आदमी को तंगदिल और छोटे दिमाग-वाला बना देती है। जब से गांधीजी गये हैं राष्ट्र कितना छोटा हो गया है। क्या गजब की नेतागिरी थी उनकी, कितनी सार्वभौम, सबके दिलों को एकसाथ! अब न मुल्क के स्तर पर ही कोई नेतृत्व है, न राज्य स्तर पर। हमारी तंगदिली ने हमें टुकड़े टुकड़े कर डाला है। गांधीजी की शहादत तक, यानी बीसवीं सदी की करीब-करीब आधी, हिन्दुस्तान के लिए गौरव का जमाना था। गांधीजी को मुल्क ने महात्मा करके जाना और वे सारी दुनिया के सरताज बने। सचाई और अहिंसा की बिलकुल नयी ताकतों के बल पर उन्होंने इस बड़े मुल्क को आजादी दिलायी। उनके सबसे बड़े सिपहसालार नेहरू सारी दुनिया में मशहूर हुए। गांधीजी की खासियत इसमें भी थी कि वे लोगों का चुनाव कर उन्हें ट्रेनिंग के जरिये तैयार भी करते रहते थे—सरदार पटेल, राजेन्द्र बाबू, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, मगहदी गांधी, जैसे लोग उनकी देखरेख में तैयार हुए। लेकिन बीसवीं सदी के दूसरे आधे में हम इतना गिर गये हैं कि अब न राष्ट्रीय स्तर के नेता हैं न राज्य-स्तर का नेतृत्व। जिधर देखिए, हम टूटे हुए-से दिखाई पड़ रहे हैं।

अब भी खुमारी में

लेकिन, गांधीजी के नजदीकी सम्पर्क में रहनेवाले, जिन्हें लोगों की 'आत्मा के रक्षक' भी कहा जाता है, उन रचनात्मक कार्यकर्ताओं का क्या हाल है? हम रचनात्मक कार्यकर्ता लोग भी आजादी की लड़ाई में रचनात्मक कार्यक्रम के 'रोल' पर गर्व करते हैं, लेकिन इस गांधी शताब्दी के दौरान हमने रचनात्मक कार्यक्रमों—बुनियादी तालीम, नशाबन्दी, कौमी एकता, अस्पृश्यता-निवारण आदि को जमीन में दफन कर दिया, कोई खास चीज तो किया

नहीं। गांधीजी ने एक तरफ ईंट-ईंट रखकर और बीच में सत्याग्रह का पुट देकर मुल्क का राजनीतिक ढाँचा तैयार किया था और दूसरी तरफ अखिल भारत चरखा संघ, अखिल भारत ग्रामोद्योग संघ, हरिजन सेवा संघ आदि रचनात्मक कार्यक्रमों को भी राष्ट्रीय स्तर पर संगठित किया था। हिन्दुस्तान के इतिहास में शायद अपने तरह की यह अकेली मिसाल है, जब सामाजिक, आर्थिक क्रान्ति के लिए सारे मुल्क के स्तर पर एकता कायम हुई हो। गांधीजी के पास सारी दुनिया को नजर में रखकर देखनेवाली विशाल बुद्धि और दृष्टि थी। और इसी वजह से वह सारे मुल्क में क्रान्ति ला सके। सारा मुल्क उनकी दिल की धड़कनों के साथ था। लेकिन उन्हींकी जन्म शताब्दी मनाते हुए हमने अपने बीच अलगाव के कारण अपने को नीचे गिरा दिया है। हमने कौमी, क्षेत्रीय तथा भाषायी भेदों और मारकाट से गांधीजी को बदनाम किया है। इसमें सिर्फ राजनीतिक लोगों को ही दोष नहीं दिया जा सकता। रचनात्मक कार्यकर्ता भी तो नेतृत्व देने में असफल रहे हैं। गांधीजी के नाम पर कोई आश्रम बनाकर या कोई संस्था खड़ी करके हम अपने-अपने घरौंदों में गुलाम-से हो गये हैं। सरकार से कुछ इमदाद लेकर, कुछ अनुदान पाकर हम खुश हो जाते हैं। हम रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने कोई कम दगा नहीं की है। लेकिन ईश्वर ने विनोबा जैसे मसीहा को भेजकर हमें बचा लिया। वही हम सबके उद्धारकर्ता हैं। उनके और उनके कार्य के बिना हम अब भी अन्धेरे और नींद में पड़े रहते। *लेकिन क्या हम अब पूरी तरह से जग गये हैं?* हम अब भी खुमारी में ही हैं। विनोबाजी के बार-बार कहने पर भी अभी चारों तरफ से संगठित कोशिश नहीं हो रही है। हम लोगों का यह भूदान-ग्रामदान आन्दोलन अभी गतिशील नहीं बना है। एक राष्ट्रीय आन्दोलन नहीं बना है, क्यों? इसलिए कि हम लगातार पूरी मेहनत नहीं कर रहे हैं। हम लोग स्वतन्त्र रूप से सोचकर काम भी नहीं करते। हम किसी-न-किसीके नेतृत्व पर बहुत ज्यादा निर्भर रहते हैं। विनोबाजी ने हमारी भलाई के ही लिए नेतृत्व करना छोड़ दिया है। वह एक क्रान्तिकारी हैं। वह व्यक्ति-पूजा नहीं चाहते। आप जानते ही हैं कि कम्युनिस्ट भी अपने ढंग से व्यक्ति-पूजा खत्म कर रहे हैं। विनोबाजी तो कहते हैं कि 'लीडरशीप' का जमाना गया और अब यह समूह-नेतृत्व का युग आया है। फिर भी, अपने देश के सभी रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने इस आन्दोलन को पूरी तरह से नहीं अपनाया है। हम लोग मिली-जुली कोशिश के लिए अभी एक नहीं हुए हैं। वैसे हम जानते हैं कि विनोबाजी ने वर्षों अपने को रचनात्मक कार्यक्रम में खपाया है, वह रचनात्मक लोगों के सरताज हैं फिर भी उनके बनाये रास्ते पर चलने में हम काफी समय तक हिचकते रहे हैं। वह कोई तानाशाह तो हैं नहीं। उनका व्यक्तित्व तो एकदम लोकतांत्रिक है। *व्यक्तिवादी तो हमीं हैं। सामूहिक निर्णय* और काम के लिए हम साथ नहीं बैठते। इसीलिए अहिंसक क्रान्ति का यह अनोखा मौका हम खो रहे हैं।

फँसी हुई नाव

विनोबाजी ने काफी पहले यह चाहा था कि इस देश में *जनता का एक आन्दोलन खड़ा हो, लेकिन इस आन्दोलन* में अभी जनता पूरी तौर से लगी नहीं है। भूदान का समाज पर एक खास असर हुआ। भूमिहीनों की भूमिहीनता मिटाने की दिशा में निश्चित कुछ सफलता मिली। हम यह दावा भी करते हैं कि *सरकारी कानून के मुकाबिले हमें ज्यादा* जमीन मिली है। इस तरह हमें ४२ लाख एकड़ जमीन मिली। इसमें शक नहीं कि यह एक बड़ी सफलता है। सरकार का हमसे कोई मुकाबिला ही नहीं है। क्योंकि भूदान इकट्ठा करते करते हमने लोगों को यह अच्छी तरह समझा दिया कि 'सबै भूमि गोपाल की' यानी समाज की है। सरकार से यह सब कभी हो नहीं सकता। लेकिन हम कभी अपनी असफलता का भी ध्यान करते हैं कि पाँच करोड़ भूमिहीनों के लिए विनोबाजी ने जो पाँच करोड़ एकड़ भूमि की माँग रखी थी वह हम पूरी नहीं कर सके, और जो भूमि मिली भी उसके बँटवारे में हम बेहद देर कर रहे हैं? अगर हम पाँच करोड़ इकट्ठा करने के लक्ष्य पर डटे रहते और उसे प्राप्त कर लेते और साथ ही जमीन बाँटने की रफ्तार भी तेज कर देते तो बेशक यह एक कौतुक होता और हम क्रान्ति के निकट होते। लेकिन यहाँ हम असफल रहे और आन्दोलन ने ग्रामदान की शक्ल पकड़ी। विनोबाजी की दैवी बुद्धि का यह एक कमाल है। ग्रामदान का विचार और उससे ही सधनेवाला ग्राम-स्वराज्य हमें बहुत प्रिय है। ग्रामदान ने भविष्य की, उसके राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक अर्थों के साथ एक स्पष्ट तस्वीर हमारे सामने रखी है। लेकिन ग्रामदान के विचार पर अभी अमल नहीं हो रहा है। और, बिना अमल या इस्तेमाल के बड़े विचार का मतलब ही क्या है? इसीलिए हम देखते हैं कि इस चीज का समाज पर कोई असर नहीं है, हालाँकि हमें प्रखंडदान, जिलादान मिलते ही जा रहे हैं और हम राज्यदान के करीब पहुँच गये हैं। आन्दोलन जैसे रुक सा गया है। असलियत तो यह है कि नाव ही फँस गयी है, वह इधर-उधर हिलने-डुलने लायक अब नहीं है। लोगों के काम में कोई जान ही नहीं लगती और इसीलिए हमारा आन्दोलन भी अब आगे बढ़ नहीं पा रहा है।

ग्रामसभा : विधायक क्रान्ति का माध्यम

लेकिन लोगों को अब आगे बढ़ना चाहिए। अब हम ग्रामदानी क्षेत्रों में लोगों के अभिक्रम पर आधार रखनी है। यही असली मौका है। अगर जिलादान के बाद लोग अपनी ताकत से अपनी समस्याएँ नहीं सुलझा सकते तो समझिए कि कहीं कोई बड़ी कमी है। प्रखंडदान, जिलादान आदि के ग्रामदानी क्षेत्रों को अब भूमि-वितरण, ग्रामकोष के संयोजन और ग्रामशक्ति की दृष्टि से निर्दोष

नैमाइल में लग जाना चाहिए। ग्रामसभा की मार्फत यही विधायक क्रान्ति है। इस काम में जो अड़चन सामने आये, लोग उसे दूर करें और अगर अड़चन वैधानिक तरीके से दूर न हो तो सत्याग्रह का इस्तेमाल किया जाय। लेकिन अगर ग्रामदानी लोग गांव, प्रखण्ड और जिले के स्तर पर काम आगे बढ़ाने में नहीं लगते तो राज्यदान के बाद फिर वही लाचारी और बेबसी नजर आने लगेगी। इसलिए राज्यदान के लिए की जा रही कोशिशों के साथ-साथ गांव और प्रखण्ड के स्तर पर ग्रामसभा को मजबूत बनाने पर हमारी ताकत लगनी चाहिए। यहां मैं किसी नमूने के गांव या आदर्श टुकड़े की बात नहीं कर रहा हूँ, जैसा कि हमारे आलोचक हमसे बार-बार मांग करते रहते हैं। वह सब नहीं, मैं केवल ग्रामसभा के जरिये ग्रामदानी लोगों के सक्रिय होने की बात कर रहा हूँ, ताकि वे अपनी रोजमर्रा की समस्याओं से जूझना शुरू कर दें। ग्रामसभाओं की मार्फत हम ऐसा कोई कार्यक्रम जरूर बनायें। ग्रामदानी समुदायों की प्रगति में खुद भूमि-समस्या से ही लगी हुई अनेक अड़चनें हैं। आखिर ग्रामदान आन्दोलन में भूमिहीन और थोड़ी जमीन के किसान ही तो शामिल हुए हैं। कुछ बड़े जमींदार भी आये हैं लेकिन बहुतेरे नहीं भी आये हैं। जो शामिल भी हुए हैं वे सिर्फ बीसवां हिस्सा ही तो देते हैं। तो, क्या समुदाय-हित की दृष्टि से ग्रामसभाएँ भूमिवानों की शेष भूमि की भी काश्त अपने हाथ में ले सकती हैं? इसके साथ ही अनुपस्थित जमींदारी 'एब्सेन्टी लैण्डलॉडिज्म' की लगातार बढ़ती जाने वाली समस्या भी है। अनुपस्थित जमींदारों की जमीन ग्रामसभाओं के प्रबन्ध में आनी ही चाहिए। इसके बाद मन्दिरों, मठों, ट्रस्टों और बेकार पड़ी सरकारी जमीनों का मसला है। इन सभी मुश्किलों का सामना करने के लिए ग्रामसभाओं को विकसित करना चाहिए। नहीं तो हमारा काम एकतरफा ही रहेगा। ग्रामदान-प्राप्ति लोगों के काम की शुरुआत भर है। ग्रामदान में हमें एक आदर्श संगठन मिल जाता है। इन ग्रामसभाओं की मार्फत हमको समस्याओं का सामना करना चाहिए। तब ये ग्रामसभाएँ क्रान्ति की सक्रिय शक्ति यानी 'सेल' बनेंगी। बस, अब हम हाथ पर हाथ धरकर बैठे न रहें। मुझे निश्चय है कि अगर इस गांधी-शताब्दी के बीच प्रखण्ड तथा जिले के स्तर पर भूमि-वितरण और पेचीदी भूमि-समस्याओं के हल के लिए ग्रामसभाएं सक्रिय होती हैं, तो अनिवार्यतः आनेवाली आर्थिक क्रान्ति के लिए देश गांधीजी के रास्ते चल निकलेगा।

इसे अब और न टालें

बाबा (विनोबा) ने बिहार को इस प्रयोग के लिए तैयार किया है। यहां राज्यस्तरीय इकाई एक ताकतवर राजनीतिक इकाई है। बाबा ने बिहार को ठीक ही चुना है। यह सिर्फ बुद्ध की ही नहीं, बल्कि जे० पी० (जयप्रकाश नारायण) जैसे देश के बड़े नेता और क्रान्तिकारी की भी भूमि है। जिन्होंने बुद्ध की ही तरह सत्ता का त्याग किया है। इसलिए सन् १९७० तक बिहार हमारे सामने क्रान्ति का नया चरण उद्घाटित करेगा और सन् १९७२ तक चुनाव में ग्रामदानी प्रतिनिधियों को खड़ा कर लोकनीति का अनोखा प्रयोग प्रकट करेगा।

अब हमें कार्य का विधायक अहिंसात्मक नतीजा लोगों के सामने रखना चाहिए। अपने देश में बढ़ते हुए हिंसात्मक वातावरण का सिर्फ यही एक जवाब है। अभी तो हम साम्प्रदायिक दंगों, क्षेत्रीय उपद्रवों, श्रमिकों के बढ़ते असन्तोष आदि को सिर्फ बेबसी से देखते भर रहते हैं। साम्प्रदायिक अशान्तियों—पहले इंदौर और अब अहमदाबाद—असम में दूसरे तेल-शोधक सम्बन्धी उपद्रवों, पंजाब और हरियाणा में चंडीगढ़ के लिए होनेवाले भारी उपद्रव की धमकियों, तेलंगाना के प्रश्न को लेकर आन्ध्र में चल रही कटुता, पश्चिमी बंगाल में बराबर होनेवाले घेरावों तथा देश के अन्य भागों में होनेवाले श्रमिक असन्तोष आदि में लोगों की ताकत बरबाद होती है, और उनका ध्यान असली चीज से हटता रहता है। यह सब नाटक तबतक चलेगा जबतक हम अपना बचाव ढूंढते रहेंगे। बस, हमें विधायक क्रान्ति में लग जाना है। गांधीजी के नेता-रूप में पदार्पण के पहले देश में सशस्त्र विद्रोह की भूमिका थी। यह उन्हीं की विलक्षण प्रतिभा थी कि उन्होंने एक अहिंसक विकल्प सामने रखा। नतीजा यह हुआ कि हिंसात्मक शक्तियां दबीं। हिंसात्मक क्रान्ति में विश्वास रखनेवालों का भी मत-परिवर्तन हुआ और वे भी अहिंसा के भक्त बने। स्थायी मूल्यों की क्रान्ति में समय लगता है। ग्रामदान के जरिये जन-आन्दोलन का एक मजबूत आधार विकसित करने में भूदान-आन्दोलन को करीब १८ साल लगे हैं। ग्रामदान का लक्ष्य और संगठित ग्रामसभा आदर्श हथियार है। मित्रो, मैं चाहता हूँ कि जहाँ ग्रामदान नहीं हुए हैं, देश के ऐसे हिस्सों में भी ग्रामदान-आन्दोलन आग की तरह फैले। देश के अनेक हिस्सों में अभी 'तूफान' को पहुँचना बाकी है। गांधी-शताब्दी वर्ष में देश में फैले सात लाख गांवों तक न सही लेकिन जहां तक मुमकिन हो, अधिकाधिक राज्यदान हों। हम यह सब करें, लेकिन इतना जरूर ध्यान में रखें कि ग्रामदान-भावना से प्रेरित लोगों का विधायक कार्य, भूमि-वितरण, सामूहिक ग्रामकोष द्वारा ग्राम-निर्माण की कोशिश और भूमि-समस्याओं के सुलझाव के लिए ग्रामसभा की गतिशीलता का सारे देश में आन्दोलन पर बड़ा अच्छा असर होगा। प्रखण्ड या जिला-स्तर पर हमें जहाँ कहीं भी ग्रामदान मिले हैं, वहाँ लोगों द्वारा कार्यान्वित किये जानेवाले कार्यक्रम का हमें महत्त्व समझ लेना चाहिए। हम इस काम को अब और न टालें, क्योंकि इससे स्वयं आन्दोलन की हानि होगी।

संघर्षों को चुनौती

आपको मुझसे और क्या आशा है? जागतिक स्थिति या अन्तर्राष्ट्रीय मामलों की समीक्षा की मुझमें योग्यता नहीं है। आगे दूर तक देख सकने के लिए जे० पी०

हम लोगो के दिमाग की खिड़कियाँ खोलते रहते है। अगर धर्मान्ध लोग साम्प्रदायिक घृणा को सामूहिक पागलपन और मार-काट के रूप मे भड़का सकते हैं, तो मेरा तो यही कहना है कि शांति-सेना कार्यक्रम मे हम बुरी तरह असफल रहे हैं। हमने कोई विधायक अहिंसक कार्यक्रम लोगो के सामने नही रखा है। क्या हम यह दावा कर सकते हैं कि शान्ति-सैनिक के रूप मे हमने कही भी किसी निश्चित विधायक कार्यक्रम के साथ काम किया है ? हाँ, हम किसी हिंसात्मक घटना का इन्तजार जरूर करते रहते है। और तब काफी देर मे और इतने ढीले ढग मे हम काम करते हैं, कि उसका कोई खास असर नही होता। शान्ति-सैनिक रूप मे हमारे पास लोगो की समस्याएँ सुलझानेवाला कोई कार्यक्रम नही है। आर्थिक और राजनीतिक सघर्ष के 'पाकेट' देश मे कई हे जहाँ जोरदार हिंसा फूट पड़ती है, और ऐसे पाकेट बढ ही रहे हैं। नक्सालवाडी, तजौर आदि क्षेत्रो मे प्रभावशाली अहिंसात्मक विकल्प का प्रदर्शन होना ही चाहिए। आज खुदाई खिदमतगार, परमात्मा के सेवक सरहदी गाधी हमारे बीच है। देश मे शांतिसेना के प्रभावशाली कार्यक्रम के लिए क्या हम उनका मार्गदर्शन प्राप्त करेंगे ? इतिहास-चक्र तेजी से चल रहा है। सरहदी गाधी अपना पख्तूनिस्तान का लक्ष्य किसी-न-किसी शक्ल मे प्राप्त करनेवाले है। ईश्वर की मर्जी हुई तो हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के बीच अच्छे सम्बन्धों की वह कड़ी बन सकते हैं, और उनके मार्फत कश्मीर समस्या भी शान्तिपूर्ण ढग से सुलझ सकती है। यह सब हो जाने पर हमारा ताकतवर पड़ोसी चीन आसानी से दबाया जा सकता है। आसार तो अच्छे नजर आने शुरू ही हो गये हैं। चीन, हिन्दुस्तान और रूस से सीधे बात भी करना चाहता है।

अफ्रीका की ओर

आपकी इजाजत हो तो मैं कुछ भरे हृदय से अपने पड़ोसी देशो, विशेषकर अफ्रीका महाद्वीप, से अपने सम्बन्धो की चर्चा करना चाहूँगा। पश्चिमी देशो से हमें काफी आर्थिक सहायता मिलती है। हमारे लिए यह शर्म की चीज है। हम विदेशी सहायता पर बहुत ज्यादा निर्भर हैं। हम उन्ही देशो से अपना व्यापार भी बढा रहे है। सफेद चमड़ी के लिए हमारा एक आकर्षण है। आम भारतीय गोरे लोगो और गोरी चीजो की ओर बड़ा आकर्षित होता है। आम हिन्दुस्तानी सफेद अंग्रेज या अमरीकी से देशाटन के दौरान काफी मिलता-जुलता है। जाति-पाँति मे विश्वास रखनेवाला हिन्दुस्तानी रंग का बड़ा कायल होता है। सवाल यह है कि अपने अफ्रीकी भाइयों की ओर हमारा क्या मानस है ? हम जरा अपने दिलो को टटोलें। असलियत यह है कि अफ्रीकी भाइयो के प्रति अपने को मित्र साबित कर सकने लायक हमने बहुत कम किया है। हिन्दुस्तान आनेवाले अफ्रीकी विद्यार्थियो की यह शिकायत रहती है कि हिन्दुस्तानी विद्यार्थी रंगभेद रखते है, और उनसे बहुत कम मिलते हैं। अपने साथ भारत से प्रवास-काल की सुखद स्मृतियाँ ले जाने के बजाय वे हिन्दुस्तान के प्रति एक पूर्वाग्रह (प्रेजुडिस) लेकर लौटते है। लानत है इस जातिग्रस्त हिन्दुस्तान को। मजा तो यह है कि ब्राह्मण जाति अस्पृश्यता की भावना आसानी से छोड सकती है, लेकिन गैर-ब्राह्मण उसे मजबूती से पकड़े रहेगा। सफेद लोगो मे ही अफ्रीका को आदिम कला सब एक फैशन बन गयी है, लेकिन हम अभी उस तरफ से उदासीन है। क्या हमें इस बात का एहसास है कि महत्तर और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर अपने मित्र बढाने की दृष्टि से भारतीय-अफ्रीकी मैत्री का कितना महत्त्व है ? अफ्रीकी राष्ट्रों के प्रति अपनी जानकारी और अच्छी बनाने के लिए हिन्दुस्तान को और ज्यादा कोशिश करने की जरूरत है।

कभी-कभी हिन्दुस्तानी सास्कृतिक टीमे अफ्रीका जाती भी हैं और हिन्दुस्तानी फिल्मे वहाँ लोकप्रिय भी हैं लेकिन अगर हिन्दुस्तान और अफ्रीका के लोगो को एक दूसरे के करीब लाना है तो इससे कहीं ज्यादा करने की जरूरत है। हिन्दुस्तान और अफ्रीकी देशो के बीच प्राध्यापकों, कलाकारों, लेखकों और गायकों का आदान-प्रदान और तेजी से किया जाय। अफ्रीकी लोगों के हर तबके को यहाँ की सरकार व सास्कृतिक सगठन आमन्त्रित करें। हिन्दुस्तानी विश्वविद्यालयों मे अफ्रीकी इतिहास व राजनीति पर पाठ्यक्रम रखे जायें। भारतीय विद्यार्थी पश्चिमी दुनिया के मामलों मे ज्यादा रुचि लेते हैं। समय आ गया है कि अफ्रीका महाद्वीप से निकलनेवाली नयी चीजों का भारतीय विद्यार्थी अध्ययन करें।

एक चमत्कार होगा

हिन्दुस्तान की तरह अन्य जगहो मे भी लोगों की धार्मिक भावना का निहित स्वार्थों द्वारा गलत इस्तेमाल किया जाता है। अल-अक्सा मस्जिद को ही लीजिए, जो एक बड़ा स्मारक है। सन् १९६१ मे मैंने जेरूसलम मे स्वय वह विशाल इमारत देखी थी। पूजा की इस सुन्दर जगह मे आग लगा देना पागलपन नही तो और क्या है ? वह आस्ट्रेलियन युवक निश्चित ही पागल रहा होगा, जिसने ऐसा किया। लेकिन क्या ईश्वर के नाम मे लड़ाई छेड़ने के लिए अनेक दलों को एकजुट होने का यह कोई बहाना बनना चाहिए ? पूजा की एक जगह मात्र के लिए क्या मुसलमानों और यहूदियो को एक-दूसरे के खिलाफ हमेशा लड़ते रहना चाहिए ? ईश्वर के नाम मे और धर्म की रक्षा के लिए कितना ही खून यह दुनिया बहा चुकी है। क्या ईश्वर का हमारे लिए यही आदेश है ? स्वर्ग में रहनेवाले परमात्मा के नाम मे लड़ना एक सामूहिक पागलपन ही होगा, क्योंकि वह यही चाहता है कि हम सब एक मानव-परिवार की तरह रहें। हिन्दुस्तान मे भी वही गदा खेल चल रहा है। हिन्दू-मुसलमान, दोनो के भोले-भाले लोगो की धार्मिक भावना का राजनीतिज्ञों और धनिकों-जैसे निहितस्वार्थों द्वारा गलत इस्तेमाल किया जा रहा है। जगन्नाथ मन्दिर की गायों को कुछ मुसलमानों द्वारा रोक दिया जाना इतनी बड़ी साम्प्रदायिक आग भड़काने व मार-काट शुरू करने का

[कृपया देखें पृष्ठ ८१ पर]

तूफान के बाद अति तूफान का आह्वान

—धीरे-धीरे करने से काम कुण्ठित होगा—

विनोबा

हमने इस काम (सर्वोदय-आन्दोलन) की यह विशेषता मानी है कि इसमें नेतृत्व का विसर्जन होगा। और यह प्रक्रिया वर्षों से चल रही है। इसलिए अभी हम आपको कोई खास मार्गदर्शन दें, ऐसी अपेक्षा नहीं हो सकती। फिर हम देखते हैं कि हम वर्षों के साथी यहाँ इकट्ठा हुए हैं। यहाँ शंकररावजी बैठे हैं। वे आज सुबह हमसे मिलने के लिए आये थे, तब हमें याद आया। १९१४-१५ में बड़ौदा कालेज में हम दोनों एक ही बेंच पर बैठते थे और हमारी दूसरी भाषा फ्रेंच थी। इस वक्त भी हम साथ बैठे हैं। यह १९१४-१५ की बात है, याने ४५ साल के हम साथी हैं। दादा भी यहीं बैठे हैं। हम १९२१ से साथ हैं। और बहुतों को मालूम नहीं होगा, लेकिन हमारे वैद्यनाथ बाबू १६ साल की उम्र में टीकापट्टी (पूर्णिया) से नागपुर झण्डा-सत्याग्रह के लिए गये थे। इधर सत्याग्रह नहीं था और उधर था। अखिल भारत को उसका आवाहन था। १६ साल की उम्र में ही वे सत्याग्रह में शामिल हुए और जेल गये। तो १९२३ से वे हमारे साथी हैं—जेल के साथी। सारांश यह है कि अनेक वर्षों से हमने इकट्ठा काम किया तो काम का मार्गदर्शन सबको अच्छी तरह से हुआ है। इसलिए जगह-जगह की परिस्थिति देखकर वहाँ किस प्रकार से कदम उठाये जायें उस सिलसिले में खास मुझसे मार्गदर्शन की अपेक्षा हो ही नहीं सकती। वह मार्गदर्शन हो चुका है। और सबसे बड़ी बात, इस काम के लिए भगवान का आशीर्वाद प्राप्त है। वह न होता तो बिहार में जिस तरह से काम हुआ इन तीन सालों में, वह न होता। हमें उसमें बहुत आश्चर्य मालूम होता है।

तूफान के बाद अति तूफान

चार साल पहले हम यहाँ तूफान शब्द लेकर आये। उस समय यहाँ (बिहार में) तीन सौ-साढ़े तीन सौ ग्रामदान हुए थे और आज यहाँ बिहार प्रान्तदान पूरा होने के लिए केवल १२ प्रखण्ड बाकी बचे हैं। वे भी हो जाते अगर ५-६ दिन और मिलते। लेकिन यहाँ आना था। सन्थाल परगना में ८ प्रखण्ड और राँची में ४ बाकी हैं। बिहार में ५८७ याने ६०० मान लें, प्रखण्ड हैं उनमें से १२ बचे, तो २ प्रतिशत बचे। वे भी होने के हैं। और उसकी जिम्मेवारी उठानेवालों ने उठा ली है, और हमको चिन्तामुक्त कर दिया है। इतना व्यापक कार्य किस प्रकार से हुआ, यह सोचते हैं तो ईश्वर की प्रेरणा और आशीर्वाद के बिना वह हुआ हो ऐसा भास नहीं होता। एक कहावत पड़ गयी है कि बिहारवाले ढीले-ढाले हैं। फिर भी एक आवेश का सचार हुआ। कार्यकर्ता छोटे-छोटे गाँव में गये और यह कोई छोटा काम नहीं है, ७५ प्रतिशत के हस्ताक्षर लेना। समर्पण-पत्र के कागजों का तो ढेर हुआ होगा, उसको सँभालने का भी एक स्वतंत्र कार्यक्रम हो गया होगा। अब इसके आगे के लिए अपने अपने प्रान्त की परिस्थिति देखकर तय करना चाहिए।

हम कुछ कह सकते हैं—जरूरत नहीं है कहने की, लेकिन कहते हैं—तो बिहार के बारे में ही। क्योंकि उसका हमको अनुभव है। बिहार में हमारी पदयात्रा २॥ साल चली और अब ४॥ साल हो गये, इस वास्ते यहाँ की परिस्थिति का काफी ज्ञान बाबा को है। जहाँ तक आगे के काम की कल्पना मैं करता हूँ, तो अति तूफान की करता हूँ। तूफान तो हो ही गया, अब अति तूफान होगा। और यहाँ धीरे-धीरे काम होगा नहीं, जो होगा वह तीव्र गति से होगा। अगर आपको उसको कुंठित करना हो तो धीरे-धीरे काम करें।

जनता की अपेक्षा

लोगों में जो एक आशा उत्पन्न हुई है वह आन्दोलन को आगे बढ़ाती है। एक तो मैंने कहा कि ईश्वर की प्रेरणा और दूसरा, जनता की अपेक्षा। तो जहाँ तक जनता की अपेक्षा बनी है, और उसमें हमारे जो कार्यकर्ता हजारों की तादाद में लग गये, उसमें उनका अपना जो असर है, सो तो है ही, लेकिन उसके (जनता के) मन में राजनैतिक नेताओं के बारे में निराशा पैदा हुई, यह भी एक फैक्टर अपेक्षा बनाने में है। जनता का 'डिस इल्यूजन' हुआ, उसको भरोसा नहीं रहा कि कोई खास राजनैतिक पक्ष के द्वारा हो सकता है, फिर चाहे वह राजनैतिक पक्ष विरोधी हो या सरकार के पक्ष में आया हो। उनसे किसी प्रकार की आशा नहीं रही, यह बहुत बड़ी चीज है। एक निराशा पैदा हुई है। हमको यह अनपेक्षित भी नहीं था। इतना खण्ड-प्राय देश हमारा, और इंग्लैण्ड-अमेरिका की राजनीति यहाँ लायी है तो उस प्रकार से संभव था नहीं, और जिसको आप व्यक्तिगत नेतृत्व कहते हैं, और जिसको मोहनी शक्ति कहते हैं—नेताओं की शक्ति, वह परमात्मा की कृपा से भारत में है नहीं, इसलिए वह असफल होना ही था। राजनैतिक शक्ति के द्वारा लोगों का उत्थान करना—'एक हाथ से ताली बजाना।' असफल होना था सो हुआ। उसके परिणामस्वरूप यहाँ जो अपेक्षा बनी है, वह ऐसी अपेक्षा है जो कार्य में

वेग ही लायेंगी तो सफल होगा, अगर मदवा दिखाई दी तो निराशा होगी।

पुष्टि के तीन काम

यह मैं बिहार के लिए बता रहा हूँ और किसी प्रान्त की बात नही कर रहा हूँ। आज मुझे कुछ प्रान्तों की जानकारी सुनायी गयी। राजस्थानवालों ने तय किया है कि ग्रामदान प्राप्त करते जायेंगे। और उधर एक-एक जिला पूरा होने पर पुष्टि का काम भी साथ साथ करते जायेंगे। वह परिस्थिति पर निर्भर है और कार्यकर्ताओं की शक्ति पर भी निर्भर है। उस सिलसिले में मैं दूसरे प्रान्तों के बारे में कह नहीं सकता, लेकिन बिहार के बारे मे कह सकता हूँ कि यहाँ अति तूफान से पुष्टि का काम होना चाहिए। असली पुष्टि मे तीन बातें आती हैं। सर्व-सम्मति से काम करना, जमीन का बीसवाँ हिस्सा दान देने का जो वादा किया है, तदनुसार बँटवारा करना, और जो निवास की जमीन है वह भी उनको दिलाना तथा मिलकियत का पट्टा ग्रामसभा के नाम पर करना, ये तीन बातें तुरन्त करनी चाहिए। ग्राम-कोष इकट्ठा करने में देर लगे तो मुझे कोई चिंता नहीं। वह तो अवसर फसल तैयार होने के बाद होगा। ये तीन बात अगर हो जाती हैं तो पुष्टि हुई, ऐसा कहा जायेगा। जिन गाँवों को सरकार ने 'रिकगनाइज' किया, उनमें ही पुष्टि का काम करना चाहिए ऐसा नहीं। ऐसे तो थोड़े गाँव होंगे। पुष्टि 'डी-फैक्टो' करना चाहिए, फिर उनको रिकगनाइज' करने में सरकार की ओर से देर लगती है तो लगे। उसमे इस आन्दोलन को नुकसान नहीं पहुँचता। तो इस काम के लिए ज्यादा-से-ज्यादा एक साल मिल सकता है उससे अधिक मुद्दत नहीं मिल सकती। यह जमाने का तकाजा है।

जयप्रकाशजी बिहार में समय दें

जो बिहार के नेता हैं वे इस काम में मार्गदर्शन करते हैं, उनको अपने प्रान्त मे ज्यादा से ज्यादा समय देना होगा और अखिल भारत के नेता हैं, जयप्रकाशजी, उनकी कार्यचर्या को हम सीमित नहीं कर सकते। लेकिन सुझायेंगे कि छठा हिस्सा छोड़कर बाकी समय वे बिहार में दें। क्योंकि यह काम ऐसा है, एक दफा मैंने कहा था, कि इसमें से शून्य निकलेगा या अनन्त। भूदान काम ऐसा था कि उसमें तुरन्त दान दिया जाता था और काम पूरा हो जाता था। वह 'डेफिनेट' काम था। यह तो ऐसा काम है जिसका परिणाम शून्य है या अनंत। दोनों के बीच में का परिणाम नहीं। इसका परिणाम निश्चित अल्प नहीं है। इसको अनन्त में हो ले जाना है। तो बिहार को अधिक से-अधिक समय बिहार के नेताओं को देना होगा। इतना ही नहीं, बिहार के बाहर के नेताओं को भी बीच-बीच में आकर काम को गति देनी चाहिए।

एकाग्रता अनिवार्य

आपने देखा होगा कि हिन्दुस्तान में बीच में कई मसले उपस्थित हुए और यह तो समस्या-संग्रहालय है, भारत: समस्याओं का संग्रहालय। बीच में कई समस्याएँ खड़ी हुईं, लेकिन बाबा ने ग्रामदान के अलावा इधर-उधर ध्यान नहीं दिया। बल्कि दंगों की बात जब बाबा को सुनायी गयी, तो बाबा ने कहा कि क्या सुनाते हो, वह कोई दंगा है कि छिटपुट आग लगा दी, मकान जला दिये और दस-बीस आदमी को मार दिया। भारत में ५० करोड़ लोग हैं, उनमें से २५ करोड़ मारे जाते, तो प्लैनिंग कमीशन को राहत मिलती, प्लैनिंग करने के लिए। चिन्ता यह करनी चाहिए कि मनुष्य तो मारे जायें, लेकिन प्रापर्टी को जरा भी नुकसान न हो। यह तो मैंने दंगे के सिलसिले में कहा और मैं वेदान्ती तो हूँ ही। कह दिया—'नाय हन्ति न हन्यते'। आत्मा मरती नहीं और मारी जाती नहीं, जो मरते है उनको मारनेवाले मिले, तो भी मरेंगे और न मिले तो भी मरेंगे। प्रारब्ध का क्षय हुआ तो मरेगा और प्रारब्ध का क्षय नहीं हुआ तो उसको मारने पर भी वह मरेगा नहीं, किसीने उसका सिर काट दिया तो उसका सिर और धड़ दोनों जीवित रहेगा। प्रारब्ध के क्षय हुए बिना कोई मर नहीं सकता। इसलिए यह मेरे सामने मत रखो, यहाँ तक मैंने कह दिया। उसका मतलब बाबा अत्यन्त एकाग्र था। वह नहीं होता और इधर-उधर ध्यान दिया होता तो हिन्दुस्तान में कई समस्याएँ खड़ी हुईं, उसके लिए बाबा को दसों जगह दौड़ना पड़ता। बिहार के नेताओं को ऐसी एकाग्रता करनी होगी तो यहाँ से भारत को मार्गदर्शन मिलेगा और हम जो आशा करते हैं जय जगत को, उसका भी दर्शन यहीं से होगा।

राजगिर ता० २२-१०-६६।

सम्मेलन का उद्घाटन भाषण

बिहार के उद्यमशील और निष्ठावान कार्यकर्ताओं से सभी प्रेरणा लें

अठारहवें सर्वोदय-सम्मेलन के लिए हम यहाँ एकत्रित हुए हैं। इस बार के सम्मेलन का महत्त्व अनुपम है। गांधी-शताब्दी की कार्यवाही चल रही है। इसलिए सबको यह महसूस होनेवाला है कि महात्मा गांधी की छत्रछाया में यह सम्मेलन चल रहा है। बुद्ध भगवान की पुण्य-स्मृति से जुड़ा हुआ यह धर्मक्षेत्र है और इसी समय यहाँ पवित्र स्तूप का उद्घाटन किया गया है। चंद वर्षों के बाद इस बार पूज्य बाबा की उपस्थिति का सौभाग्य सम्मेलन को मिला है। सबसे महत्त्व की बात यह है कि सम्मेलन इस बार ऐसे एक प्रान्त में हो रहा है, जिसने महात्मा गांधी के पथ पर चलकर बिहार-दान करके देश तथा दुनिया को अहिंसक समाज शान्ति की सुदृढ़ बुनियाद की एक मिसाल पेश की है, जिससे प्रेरणा प्राप्त करने के लिए कार्यकर्ता यहाँ जुटे हैं।

बुद्ध-स्तूप के उद्घाटन के उपलक्ष में जापान और दूसरे देशों से जो मुख्य बौद्ध भाई सज्जन आये हैं, इस सम्मेलन में उनकी उपस्थिति सर्वोदय-समाज के लिए बहुत आनन्द की बात है। आप शायद अनुभव करेंगे कि आज समाज में भगवान गौतम बुद्ध के चरण चिह्नों पर चलने के लिए इस देश में जिस तरीके का अनुष्ठान चल रहा है, वह इस युग के लिए—खासकर भारत की मौजूदा सामाजिक परिस्थिति के लिए—सही है। विदेशों से आये हुए कई सर्वोदय प्रेमी भाई-बहिन इस सम्मेलन में शामिल हुए हैं। उनमें कोई-कोई अपने-अपने देश में यथाशक्ति सर्वोदय का काम कर रहे हैं। आशा है, इस बार के सम्मेलन से सर्वोदय में उनकी निष्ठा बढ़ेगी और देश के कार्यकर्ताओं के साथ उनका स्नेह सम्पर्क और भी दृढ़ होगा। इन सब मनुष्यों के पुण्य-स्पर्श से पवित्र हुआ यह सम्मेलन है, इसलिए यह महासम्मेलन कहलाता है।

पूज्य बाबा ने सर्वोदय-सम्मेलन को नाम दिया है—'स्नेह-सम्मेलन'। पारस्परिक स्नेह के कारण सर्वोदय प्रेमी लोग मिलते हैं इसलिए सम्मेलन की खास कोई कार्यसूची नहीं रहती है। लेकिन स्नेह के कारण होते हुए भी जब समभावनावाले लोग किसी स्थान में कुछ समय के लिए एकसाथ मिलते हैं, तब अपने आप ऐसी बात निकल जाती है, जो उनके मन के ऊपर के स्तर पर हो। वह बात होते-होते अन्दरूनी बातें सहज ही निकल आती हैं।

आज हमारे मन की सबसे ऊपरी बात है पिछले महीने में अहमदाबाद आदि स्थानों में घटी दुखजनक घटनाएँ। जब साम्प्रदायिक आग में गांधीजी की आहुति हुई, तब सोचा गया था कि इस देश में कौमी अग्नि की भूख हमेशा के लिए मिट गयी, लेकिन वह नहीं हो सका। इसका कारण क्या है? गुजरात गांधीजी की जन्मभूमि है। इसके अलावा दूसरी

चारुचन्द्र भंडारी

दिशाओं में भी गुजरात के साथ उनका सबसे निकट सम्पर्क था। अहमदाबाद शहर के अन्दर उनके सर्वप्रथम आश्रम की स्थापना हुई। उनका साबरमती आश्रम अहमदाबाद में रहा। वहीं से उन्होंने वर्षों तक सत्य, अहिंसा, प्रेम और मैत्री की वाणी का प्रचार किया, उससे सारे देश को प्रकाश मिला। उन्होंने अहमदाबाद की मिलों के मजदूरों को सत्य व अहिंसा का सबक सिखाया, तो भी उसी अहमदाबाद से साम्प्रदायिक अग्नि प्रज्वलित हुई। इस दुरारोग्य व्याधि का स्थायी इलाज क्या हो सकता है? सोचना होगा।

स्कूल-कालेजों में अध्यात्म-शिक्षण

धर्म एक ही है। ईश्वर में विश्वास हो, श्रद्धा हो, ईश्वर की भक्ति करें, उसकी उपासना करें, सत्य, प्रेम, करुणा का पालन करें, यह धर्म है। लेकिन धर्म के लिए सम्प्रदाय बनाया गया है। कौम के साथ उसे जोड़ दिया है। इस कारण से धर्म के विषय में जटिलता पैदा हुई है, भ्रम पैदा हुआ है। इसलिए कौमीयत से धर्म को अलग मानना आम लोगों के लिए शक्य नहीं होता है। 'धर्म' शब्द ने भी इस भ्रम को बढ़ा दिया है। 'धर्म' शब्द द्वयर्थक, सिर्फ द्वयर्थक नहीं विविध अर्थ बोधक है। धर्म का अर्थ है अध्यात्म। फिर धर्म का अर्थ साम्प्रदायिक धर्म। अंग्रेजी में भी 'religion' शब्द का ऐसा हाल है। जब तक अध्यात्म ही धर्म, ऐसा नहीं माना जाय और सम्प्रदाय से उसका पृथक्करण नहीं किया जाय, तब तक धर्म के विषय में किसी को हानि हुई, तो कौम के दूसरे लोग उसे अपनी हानि समझेंगे और सामूहिक तौर पर उसका प्रतिकार करने के लिए लग जायेंगे, क्योंकि मनुष्य-सभ्यता के विकास में गिरोह की भूमिका काफी रही है, इसलिए मनुष्यों की मानसिकता में कुछ 'herd instinct'-सा दल-प्रेरणा-सा निहित है। उसके ऊपर उठना आम लोगों के लिए आसान नहीं है। अध्यात्म में निष्ठा पैदा करना और सम्प्रदाय से उसको अलग मानना, यह शिक्षण प्रक्रिया में ही हो सकता है लेकिन 'secular' शब्द के अर्थ में भ्रम पैदा होने के कारण यहाँ भी गड़बड़ हो गयी है। 'secular' शब्द का असली अर्थ है धर्म-सम्प्रदाय निरपेक्ष, अध्यात्म-निरपेक्ष नहीं। लेकिन अपनी सरकार शायद इस भ्रम के कारण अध्यात्म-निरपेक्ष भी बन गयी है, इसलिए हमारे देश की शिक्षण-योजना में आध्यात्मिक शिक्षण को कोई स्थान नहीं है। इस अवस्था में कम-से-कम अगली पीढ़ियों को कैसे साम्प्रदायिकता से व्याधि-मुक्त किया जाय? इसलिए यह भ्रम दूर होना चाहिए और स्कूल-कालेजों में अध्यात्म-शिक्षण अनिवार्य होना चाहिए। इस विषय पर और भी चिन्तन जरूरी है।

ग्रामदान द्वारा ही हिंसा मुक्ति होगी

देश में हिंसा का वातावरण फैला है। पूज्य बादशाह खान के अनशन ने इस तरफ

लोगों का ध्यान आकर्षित किया है और लोक-मानस पर उससे एक झटका लगा है। अच्छा हुआ, इसकी जरूरत थी। हिंसा को तुरन्त रोकना जरूरी है, लेकिन इसे सिर्फ रोकने से नहीं चलेगा। इसे मिटाना चाहिए। लेकिन किस उपाय से इसे रोका तथा मिटाया जाय ? समझना चाहिए कि केवल चाहने से या दबाने से यह जानेवाला नहीं है। जब तक देश में करोड़ों लोगों में ऐसी असहनीय गरीबी रहेगी, बेकारी रहेगी, तब तक इसका रुकना या दूर होना शक्य नहीं है। बेकारी व गरीबी मिटाने के लिए उपाय की तलाश कहाँ करें ? क्या इसके लिए देश के बाहर नजर डालें ? बाहर से एक चीज ली गयी। वहाँ उसका प्रयोग करके मालूम हुआ कि उसमें अमीरों की अमीरी तो बढ़ी, लेकिन गरीबों की गरीबी कम नहीं हुई। बाहर से आये हुए दूसरे एक विचार का हमला देश पर हो रहा है, लेकिन जिन देशों से वह आया है, उन देशों की तरफ देखने से मालूम होता है कि वहाँ दौलत बढ़ी, गरीबी कुछ दूर हुई, लेकिन उसके लिए साम्यवाद के मूल्य में लोगों को बलि देनी पड़ी। वहाँ हिंसा को धर्म के रूप में माना जाता है। अर्द्धशताब्दी पहले जनता के नाम से वहाँ सत्ता पर कब्जा किया गया, लेकिन अब तक जनता को स्वाधीनता नहीं मिली। वहाँ दूसरे मानवीय मूल्यों को लांछित और दलित किया जाता है, इसलिए उसमें दौलत और स्वाधीनता या दौलत और दूसरे मानवीय मूल्यों का, एकसाथ मिलना शक्य नहीं है। दोनों तो चाहिए और दोनों एकसाथ चाहिए। लेकिन साम्यवाद से यह नहीं होनेवाला है, इसलिए उससे शांति नहीं होनेवाली है। बाहर से आये हुए एक तीसरे विचार (गणतान्त्रिक समाजवाद) का प्रयोग इस देश में भी किया जा रहा है। उसमें सबको समान अधिकार मिल गया। सबको समान मताधिकार दिया गया। हर व्यक्ति के वोट का मूल्य समान है, लेकिन आखिर इक्यावन का मूल्य हो जाता है—एक सौ में, और उनचास का मूल्य हो जाता है शून्य, यानी ५१ = १०० और ४९ = ०। यह मानना चाहिए कि इससे अल्पसंख्यकों का कल्याण नहीं हो सकता है। उसमें दैहिक हिंसा का वर्जन हुआ, लेकिन संख्या की हिंसा को स्वीकार किया गया, यानी दुनिया में अब जो तीन मुख्य धाराएँ चल रही हैं, वे असफल हुई हैं ऐसा मानना चाहिए। इस अवस्था में अब देश तथा दुनिया को ऐसी एक समग्र विचारधारा की सख्त जरूरत है, जिसमें उन तीनों विचारों की खूबियाँ समाविष्ट हों, लेकिन जो उनकी कमियों से मुक्त रहे, ऐसी विचारधारा कहाँ मिलेगी ? उसके लिए देश के अन्दर देखना है। वह देश की पुरानी संस्कृति में निहित है। वह सर्वोदय-विचार के रूप में प्रकटित हुई है। ग्रामदान के द्वारा सर्वोदय-विचार को समाज में मूर्त करना शक्य है। बिहारदान लगभग हुआ ही है। २९ जिलादान हो गये और सवा लाख से ऊपर ग्रामदान हुए, तो भी बहुत-से लोग ग्रामदान में अपनी श्रद्धा रखते हुए भी समझते हैं कि देश की समस्या के समाधान के लिए ग्रामदान भी एक उपाय है, लेकिन सारे देश का ग्रामदान-आन्दोलन तुरन्त सफल बनाने के लिए 'ही' वादी चाहिए, 'भी' वादी नहीं।

ग्रामदान गांधीजी की राह पर

गांधीजी के अनुयायियों में किसी-किसी की ओर से कहा जाता है कि ग्रामदान-आन्दोलन गांधीजी की राह पर नहीं है, लेकिन ऐसा नहीं है। आप सबको मालूम होगा कि 'लुई फिशर' से हुई चर्चा में गांधीजी ने जमीन के बारे में अपनी राय बतायी। 'स्वराज्य के बाद जमीन का क्या होगा ?'—यह सवाल उनसे पूछने पर उन्होंने कहा—'जमीन बाँटी नहीं जायेगी तो लोग उस जमीन पर अपना कब्जा कर लेंगे।'' भूदान में उसका सौम्य उपयोग हो रहा है। अब ग्रामदान के दूसरे पहलुओं के बारे में सोचा जाय। गांधीजी का मुख्य सन्देश यह है कि सत्य व अहिंसा आदि जिन गुणों को व्यक्तिगत जीवन में सद्गुण माने जाते हैं, सामूहिक जीवन में उनका अभ्यास हो, यानी किसी भी साधन का सामूहिक रीति से अमल हो। व्यक्तिगत जीवन में यानी परिवार में पारस्परिक प्रेम, सहानुभूति और सहयोग होता है। इसलिए ग्रामदान के लोग भी आपस में प्यार, सहानुभूति और सहयोग करें। घर में बाँटकर खाया जाता है, ग्राम में भी बाँटकर खायें। परिवार में एक सम्पत्ति हो तो परिवार के सभी लोग कहते हैं- 'यह सम्पत्ति हमारी है,' 'हमारा घर व हमारी जमीन' इत्यादि, इसलिए गाँव के लोग मानें जमीन कि सारे गांव की है। इससे मालूम होगा कि ग्रामदान का विचार गांधी-विचार का अनुसिद्धान्त है।

पश्चिम बंगाल में ग्रामदान-कार्य

एक और सवाल के बारे में चिन्तन अवश्य होना चाहिए। पश्चिम बंगाल में ग्रामदान व विचार के आवाहन पर आम लोगों को नहीं जगाया जा सका। वहाँ अब कई स्थानों पर हिंसावादी विचार के आवाहन से आम लोगों में जागृति आयी है। उनको ग्रामदान की ओर मोड़ना शक्य है क्या ? कुछ लोग समझते हैं कि जैसे भी हो, जब एक बार आम लोगों में जागृति आ जायेगी, तब उनको ग्रामदान की ओर मोड़ना आसान होगा, लेकिन अनुभव ऐसा नहीं बताता है।

खैर, ऐसे एक स्थान में अभी-अभी मुश्किल से एक ग्रामदान मिला है। एक भाई ने कहा कि उसको ग्रामदान मानना ठीक नहीं होगा। क्योंकि डर से जमीन दी गयी। उनकी यह राय ठीक होती, अगर वह दान सिर्फ डर के मारे ही दिया जाता, लेकिन इसमें दूसरी एक बात हो सकती है। शायद वही हुई भी है। भय का असर दाताओं पर हुआ था और उससे उनके दिल पर जो पर्दा पड़ा हुआ था वह फट गया और उनको दान देने की प्रेरणा हुई, फिर उन्होंने श्रद्धा से दान दिया। एक शख्स का लड़का मर गया और उसको वैराग्य हुआ। वैराग्य उसमें सुप्त था। शोक के धक्के से वह जाग गया। इसी तरह उन ग्रामदान के दाताओं की दान-वृत्ति उनके अन्दर सुप्त थी। उन→

आबू से राजगिर तक

आबूरोड के सम्मेलन के सोलह माह बाद हम राजगिर के पवित्र स्थान पर मिल रहे हैं। इन दिनों राष्ट्र में एवं दुनिया में कई महत्वपूर्ण घटनाएं हुई हैं। अन्तर्राष्ट्रीय जनमत के कारण और अमेरिका में युद्ध-विरोध के बढ़ते हुए दबाव के कारण जॉनसन को राष्ट्रपतिपद के अपने आखरी कार्यकाल में वियतनाम-युद्ध की गतिविधियां शिथिल करनी पड़ीं एवं पेरिस में सन्धिवार्ता शुरू करनी पड़ी। रूस एवं चीन के बीच तनाव इन दिनों बढ़ा है। मध्य-पूर्व की स्थिति दिन प्रति दिन बिगड़ रही है। रूस के नेतृत्व में वार्सा-राष्ट्रों ने गत वर्ष चेकोस्लोवाकिया पर निर्दलीय हमला किया। उस समय बहादुर, स्वतन्त्रता-प्रेमी चेक जनता के शान्तिमय प्रतिकार ने आततायी प्रतिकार का एक नया रास्ता खोला है। आज यद्यपि इसे सफलता नहीं मिली है, फिर भी इस घटना का महत्व कम नहीं आंका जा सकता। दुनिया में जगह-जगह छोटी-छोटी लड़ाइयां चलती हैं, इससे फूट पड़ सकती है। अतएव तनाव का वातावरण बदलकर विश्व-शान्ति कैसे कायम हो और लड़ाई होने पर उसका मुकाबला कैसे किया जाय, इसका विचार करने के लिए 'वॉर रेजिस्टर्स इण्टरनेशनल' का त्रिवार्षिक सम्मेलन अगस्त में अमेरिका में हुआ। एक ओर चन्द्रमा पर पहुंचकर इन्सान अपनी बुद्धि से विज्ञान का परिचय दे रहा है, तो दूसरी ओर असफल 'मकुटाइ' सम्मेलन में संकुचितता का दर्शन हुआ। जनमत के दबाव के कारण अयूब खां सरीखे तानाशाह को हटना पड़ा। पाकिस्तान में तानाशाही की जगह पर जनतन्त्र अब कायम होगा और पख्तूनिस्तान सरीखी जनता की मांगों की अब जनतन्त्र कदर करेगा, यह अभी देखना है।

राष्ट्रीय परिस्थिति

सारी दुनिया इस समय गांधी-शताब्दी भक्ति भाव से मना रही है और इस महामानव के विचारों का संशोधन कई स्थानों पर गंभीरता से किया जा रहा है। जहां हमसे गंभीर भूलें हुई हों वहां हमें चेतावनी देने के लिए सीमान्त गांधी इस देश में पधारे हैं, यह ठीक ही हुआ, अन्यथा देश में ऐसा दृश्य उपस्थित हो रहा था कि गांधी-जन्मशताब्दी-कार्यक्रम समारोहों एवं उत्सवों तक सीमित हो जाता। इन दिनों देश में हिंसा एवं संकुचितता की ज्वालाएं बढ़ती ही नजर आ रही हैं। बम्बई में, नागपुर में, तेलंगाना में, गुजरात के कई नगरों में इस अवधि में भीषण दंगे हुए हैं। केरल एवं बंगाल में कई स्थानों पर अराजकता की स्थिति नजर आ रही है। तंजोर में कई हरिजनों को जिन्दा जलाया जाना, सामाजिक समता का हमारा दावा कितना खोखला है, यह बतलाती है।

आन्तरिक शान्ति एवं राष्ट्रीय एकता का प्रश्न देश के सामने आज शायद सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न बन गया है। राजकीय पक्षों एवं व्यक्तियों की अवसरवादिता के कारण राजकीय नेताओं की एवं कार्यकर्ताओं की इज्जत घटी है। राजकीय पक्षों के बन्धन शिथिल हो रहे थे और स्वतन्त्रता के बाद राष्ट्र-निष्ठा के बजाय पक्ष-निष्ठा को तरजीह दी जाने लगी थी। अब पक्ष-निष्ठा का भी बन्धन शिथिल होकर अवसरवादिता आदर्श के नाम पर स्थान ले रही है, ऐसा दृश्य दीखने लगा है।

बैंकों का राष्ट्रीयकरण स्वागतार्ह है, लेकिन इससे सचमुच जनहित होता है या यह केवल व्यक्तिगत पूंजीवाद के स्थान पर राष्ट्रीय पूंजीवाद लाकर नौकरशाही के हाथ मजबूत करने तक ही सीमित रहता है, यह देखना बाकी है।

नये बीजों के कारण हरित क्रांति हो रही है और कृषि-उत्पादन बढ़ रहा है, लेकिन इससे देहातों में आर्थिक विषमता भी बढ़ रही है। अतः इसमें से कहीं रक्त-क्रान्ति जन्म न ले, ऐसा भी डर पैदा हुआ है।

कई राज्यों ने इस वर्ष शराबबंदी को शिथिल किया है और 'लॉटरी' चलाकर सार्वजनिक नीतिमत्ता से सम्बन्ध तोड़कर येन-केन प्रकारेण धन कमाने की अपनी तृष्णा का परिचय दिया है। अब नैतिक बुनियाद पर देश में आर्थिक न्याय की स्थापना हो, देश में शान्ति कायम रहे और राष्ट्रीय ऐक्य बढ़े, इसकी पहले से कई गुना आवश्यकता बढ़ गयी है।

ग्रामदान की रफ्तार

ऐसे मौके पर इन आवश्यकताओं की पूर्ति करनेवाला ग्रामदान-आन्दोलन तेज गति से आगे बढ़ रहा है यह परम सन्तोष की बात है। गत वर्ष में ग्रामदानों की संख्या ६०,००० से १,२०,००० यानी दुगुनी से ज्यादा हुई है। प्रखण्डदानों की संख्या तिगुनी से ज्यादा एवं गत वर्ष के पांच जिलादान के स्थान पर तीस जिलादान, यानी जिलादान की संख्या ६ गुना बढ़ी है। करीब-करीब समूचे

—पर पहुंच गया था। भय के आघात से आवरण दूर गया और 'दान-वृत्ति' जागृत हुई। शास्त्र ने कहा—"भिया देयम्", भय से दिया हुआ दान गर्ह्य है, लेकिन साथ ही साथ शास्त्र ने बताया—"श्रद्धया देयम्, अश्रद्धया न देयम्", श्रद्धा से दें, अश्रद्धा से नहीं देना चाहिए, याने लज्जा या भय से दान देने के लिए लोग आयेंगे, लेकिन दान श्रद्धा से ही देना चाहिए। शास्त्र वाक्य का तात्पर्य यही है, ऐसा मुझे लगता है। आज पश्चिम बंगाल को इस शास्त्र-वाक्य की प्रयोगशाला बनाना चाहिए।

बुद्ध भगवान के आशीर्वाद इस सम्मेलन पर वर्षित हों! बिहार के निष्ठावान, उद्यमशील, निरलस कार्यकर्ताओं से सबको प्रेरणा मिले। देश के भिन्न-भिन्न स्थानों से ग्रामदानी गांवों के जो बहुत-से भाई-बहन सम्मेलन में शामिल हुए हैं उनसे सबको उत्साह और प्रेरणा प्राप्त हो!

राजगिर, २५ अक्तूबर, '६९

बिहार राज्य की ग्रामीण जनता ने और देश भर के पाँचवें हिस्से से भी अधिक गाँवों ने ग्रामदान के विचार को स्वीकृति दी है। उत्तरप्रदेश, उत्कल, तमिलनाडु एवं मध्यप्रदेश इस आन्दोलन के अग्रणी बनकर राज्यदान की ओर तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। आन्ध्र, केरल एवं कर्नाटक में इस वर्ष ग्रामदान के मोर्चे पर गतिशीलता आयी। पंजाब, महाराष्ट्र एवं राजस्थान ने इस वर्ष में राज्यदान का संकल्प किया है एवं असम के कार्यकर्ताओं ने राज्यदान के संकल्प की अपनी तैयारी बतलायी है। गुजरात, राजस्थान एवं महाराष्ट्र में शनै शनै ग्रामदान-आन्दोलन बढ़ रहा है। ऐसे चिह्न दीख रहे हैं कि अगले दो वर्षों में भारत के अधिकांश गाँव इस विचार को स्वीकृति दे देंगे और इस प्रकार गांधीजी के ग्रामराज्य का मार्ग प्रशस्त करेंगे।

ग्रामदानी गाँवों की जनता का ग्रामदान को सम्मति मिलने पर स्वामित्व-विसर्जन, भूमि-वितरण, ग्रामकोष एवं ग्रामसभाओं की स्थापना कर उन्हें सक्रिय करने का काम बिहार में प्रारम्भ होने जा रहा है। जैसे-जैसे अन्य राज्यों का राज्यदान होता जायेगा वैसे-वैसे ग्रामदान की शर्तों को अमल करके गाँव में ग्रामस्वराज्य की स्थापना का काम उन्हें करना होगा। सन् १९७२ के चुनावों में ग्रामदान की दौड़ में अगुआ राज्यों की ग्रामसभाओं को अपने प्रतिनिधि खड़े कर लोकनीति को चरितार्थ करने का सुअवसर नजदीक आ रहा है। ग्रामदान-विचार को गाँव-गाँव फैलाने में रचनात्मक कार्यकर्ताओं के अलावा शिक्षक, पंचायतों के प्रमुख, ग्रामदानी गाँवों के ग्रामस्थ एवं सरकारी कर्मचारियों ने विशेष योग दिया है। अन्य नागरिकों का योग प्राप्त हो और ग्रामदानी गाँव और उनके संगठन इस आन्दोलन को चला रहे हैं, यह स्थिति अभी आने की है। उत्कल ने एवं तमिलनाडु ने ग्रामदानी गाँवों का एवं नौजवान शिक्षितों का सहयोग लेकर प्रशंसनीय कदम उठाये हैं। कार्यकर्ता-प्रशिक्षण समिति का कार्यारम्भ हो रहा है।

शान्तिसेना का प्रयास

शान्तिसेना का काम धीरे-धीरे बढ़ रहा है। तरुण शान्तिसेना का प्रथम अखिल भारतीय सम्मेलन बम्बई में इस वर्ष गर्मी की छुट्टियों में हुआ। बिहार में तरुण शान्तिसेना का एवं उत्कल में ग्राम शांतिसेना का विशेष प्रयत्न हो रहा है। दक्षिण-पूर्व एशिया के छात्रों का शान्ति-शिविर अगम में हुआ। तंजौर और केरल में अशान्ति की परिस्थिति का अध्ययन कर श्रद्धेय शंकरराव देव इसके निराकरण का मार्ग ढूँढ़ रहे हैं, यह सन्तोष का विषय है। हाल के देश के दंगों ने यह फिर से एक बार बतलाया है कि हमें अभी शान्ति कायम रखने में बहुत बड़ी मंजिल तय करनी है।

खादी

खादी के औजारों में जहाँ एक तरफ तकनीकी प्रगति हुई है, वहाँ दूसरी ओर खादी काम में लगे हुए कार्यकर्ताओं में बेकारी बढ़ी है एवं खादी का स्टॉक इकट्ठे हुए हैं। अन्य कई धंधों के समान खादी के लिए सरकार के रिजर्वेशन स्कीम्स किये बिना इस समस्या का स्थायी हल निकालना सम्भव नहीं है।

शराबबन्दी

अन्य रचनात्मक कार्यों के बारे में श्री गोकुलभाई भट्ट के मार्गदर्शन में राजस्थान में हुई शराबबंदी सत्याग्रह की सफलता का विशेष उल्लेख करना होगा। उत्तराखण्ड एवं मध्यप्रदेश में भी जहाँ-जहाँ सत्याग्रह किया गया वहाँ सफलता ही मिली। पूजा प्रतिबंध के खिलाफ श्री केलप्पन्जी के नेतृत्व में केरल में जो सत्याग्रह चला, उसे भी सफलता मिली। कस्तूरबा स्मारक ट्रस्ट ने इस वर्ष राष्ट्रीय शिविर और सम्मेलन कस्तूरबाग्राम में किया और कई महत्त्वपूर्ण निश्चय किये।

मतदाता-शिक्षण

ग्रामदानी गाँवों में ग्रामस्वराज्य का एवं विकास का काम प्रगति कर रहा है। और, इस काम को सुचारु रूप से चलाने के लिए ग्रामदान-विकास समिति का गठन इस वर्ष किया गया है। मध्यावधि चुनावों के समय बिहार में और देश में अन्य कई स्थानों पर मतदाता-शिक्षण का प्रयास हुआ। दिल्ली में नेशनल कन्वेंशन बुलाया गया और राष्ट्रीय स्तर पर प्रजातंत्र के प्रश्न पर सब राजकीय पक्षों के साथ विचार-विनिमय प्रारम्भ हुआ है।

लोकयात्रा

विचार-परिवर्तन सर्वोदय-आन्दोलन का प्राण है। इस दृष्टि से बोधगया में आध्यात्मिक और गांधीवादी लोगों का सम्मेलन इस वर्ष हुआ। एक तरफ ऐसा गहरा चिन्तन चला, दूसरी ओर असम, पंजाब एवं कर्नाटक में तीन महिला-लोकयात्राएँ अध्यात्म-विचार को फैलाने के लिए निष्ठा से पैदल चल रही हैं।

अर्थसंग्रह

इन सब कामों को करने के लिए सुदृढ़ संगठन, व्यापक भाईचारा एवं पर्याप्त अर्थ चाहिए। अर्थ की कठिनाई दूर करने की कुंजी हाथ में आयी-सी लगती है। संगठन तथा गाँव-गाँव में कार्यकर्ताओं में भाईचारा कैसे बढ़े, इन सवालों का उत्तर प्रत्यक्ष कृति से आगे भी निकट भविष्य में ढूँढ़ना है।

गांधी-जन्म-शताब्दी के इस पावन वर्ष में सर्वोदय का संदेश सर्वत्र हर गाँव को आलोकित करे और देश में ग्राम राज्य की स्थापना की बुनियाद पड़े, इस दिशा में भारत को प्रयत्न करना है। सबके सामूहिक पुरुषार्थ द्वारा यह कार्य सम्पन्न होने का मार्ग प्रशस्त हो, यही भगवान से प्रार्थना है।

राजगिर,
२३ अक्तूबर, '६९

—ठाकुरदास बंग
मंत्री
सर्व सेवा संघ

सर्वोदय-सम्मेलन : मुक्त चर्चा और आपसी स्नेह के लिए एक निमित्त बने

—सर्व सेवा संघ-अधिवेशन में विनोबा की अपील—

मालूम नहीं, क्या बोला जाय। हम तो मुख्यतः दर्शनानंद पाते हैं। यह जो महासभा इकट्ठा हुई है उसमें सहस्त्रशीर्ष सहस्राक्ष सहस्रपात्, भगवान के हजार सिर हैं हजार आँखें हैं, हजार पाँव हैं। भगवान का दर्शन यहाँ होता है। भारत के लोगों की दर्शनानंद में बड़ी श्रद्धा है। बहुत लोग आते हैं, दर्शन करते हैं और परितृप्त होकर जाते हैं। यह तो यहाँ की जनता का स्वभाव है। वह बाबा को भी प्राप्त है। और बाबा को दर्शन में सबसे अधिक आनन्द होता है। बोलना तो गौण है। कहा गया है कि सबसे श्रेष्ठ है इति, उसके बाद दर्जे में कम वाणी उसके बाद, अन्तर की बात तो भगवान ही जानता है, मन। लेकिन बाबा उससे उल्टा मानता है। बाबा समझता है कि सबसे कम परिणाम इस दुनिया और अन्तरात्मा पर किसी चीज का होता है तो वह कर्म का। उससे बहुत ज्यादा परिणाम वाणी का होता है, शब्द का होता है।

बहुत दफा मैं यह वाक्य बोल चुका हूँ—"शब्द शक्ते अचिन्त्यत्वात्" शंकराचार्य का वाक्य है। शब्द में कितनी शक्ति है, कोई कह नहीं सकता। उन्होंने मिसाल दी—'सुषुप्त पुरुष', सोये हुए मनुष्य को शब्द से जगाया जाता है। शंकराचार्य को यह महान चमत्कार मालूम हुआ। हमको तो इसमें कोई चमत्कार मालूम नहीं होता। लेकिन शंकराचार्य कहते हैं कि यह बड़ा चमत्कार है कि शब्द से सोये हुए मनुष्य को जगाया जाय। आज विज्ञान के कारण ऐसी शक्ति प्रकट है कि एक जगह बैठकर कुल दुनिया में शब्द पहुँचता है। लेकिन वह चमत्कार बहुत छोटा है। यहाँ का शब्द अमेरिका में पहुँचे तो भी अमेरिका और यह देश, दोनों एक ही 'प्लेन' पर, एक ही भूमिका पर हैं। लेकिन सोया हुआ मनुष्य ब्रह्मलोक में है, इस लोक में नहीं। यहाँ पर उसका एहसास है नहीं कि वह इस दुनिया में है, तो वह है ब्रह्मलोक में, और हम हैं भू-लोक में। अमेरिका और हिन्दुस्तान, दोनों भू-लोक में हैं तो भू-लोक की खबर दो मिनट में पहुँचायी जाती है तो वह बड़ा चमत्कार नहीं। लेकिन भू-लोक में ब्रह्मलोक के मनुष्य को जगाया जाय यह बहुत बड़ा चमत्कार है, और वह शब्द से होता है। इसलिए शंकराचार्य को वह चमत्कार मालूम हुआ। शब्द-शक्ति अचिन्त्य है और जितनी शब्द में शक्ति है उससे बहुत अधिक शक्ति चिन्तन में पड़ी है, चिन्तन में पड़ी है, ध्यान में, समाधि में पड़ी है, शून्यावस्था में पड़ी है। इसलिए सब लोग यहाँ इकट्ठा हुए हैं तो प्रेम के लिए इकट्ठा हुए हैं। तो प्रेम के लिए थोड़ा बोलना भी पड़ेगा।

सर्वोदय सम्मेलन : स्नेह-सम्मेलन

ऐसे सम्मेलन को बाबा एक ही नजर से देखता है, स्नेह-सम्मेलन। स्नेह के लिए एकत्र होते हैं। यह ठीक है कि कोई कार्य का निमित्त होता है। बिना निमित्त स्नेह करना होता है तो यह अपेक्षा नहीं रहती कि इकट्ठा मिलें। स्नेह तो दूर रहकर भी कर सकते हैं। इकट्ठा मिलेंगे तभी स्नेह होगा, इतना स्नेह परावलम्बी नहीं है। स्नेह के लिए तो इकट्ठा मिलने की अपेक्षा नहीं, लेकिन स्नेह के प्रकटन के लिए निमित्त होता है तो सर्वोदय-सम्मेलन एक निमित्त है। इसमें हम बैठेंगे, देखेंगे, बोलेंगे, मजा करेंगे, सांस्कृतिक कार्यक्रम करेंगे। काम तो अपने अपने स्थान पर कर ही रहे हैं, तो यहाँ आकर थोड़ी बात भी काम की कर लेते हैं, लेकिन वह जरा गौण है। मुख्य तो स्नेह है। मुझे सहज याद आया भगवद्गीता का शब्द—'सर्वत्र अनभिस्नेह', जिसका कहीं भी स्नेह नहीं, बड़ा विचित्र शब्द है। स्थितप्रज्ञ का लक्षण वर्णन करते हुए इस शब्द का इस्तेमाल किया है। इतना स्नेहशून्य स्थितप्रज्ञ कैसे पसन्द किया होगा भगवान कृष्ण ने, जिनका जीवन अत्यन्त स्नेहमय था! आप सब जानते हैं कि राम यानी सत्य, कृष्ण यानी प्रेम और बुद्ध यानी करुणा, सत्य-प्रेम-करुणा। प्रेम के अवतार कृष्ण और वह स्थितप्रज्ञ का वर्णन करते हुए 'अनभिस्नेह' शब्द का प्रयोग करते हैं। तो ज्ञानेश्वर महाराज ने उसकी व्याख्या की है, ऐसी व्याख्या मैंने और किसी भाषा में नहीं देखी। उन्होंने स्नेह और अभिस्नेह में फर्क किया है। अभिस्नेह यानी कम-बेशी स्नेह नहीं। जिसका स्नेह किसी पर कम, किसी पर अधिक नहीं, और उसके लिए उपमा दी कि चन्द्रमा होता है वह सबके लिए समान आनन्ददायी होता है। खास व्यक्ति-विशेष पर उसका स्नेह नहीं, वह अभिस्नेह। यह ज्ञानेश्वर महाराज की विशेषता है। उन्होंने अभिस्नेह को शुष्कता से बचाया।

मेरे प्यारे भाइयो, हम सारे यहाँ स्नेह के लिए एकत्र हुए हैं। यहाँ पर खूब चर्चा करनी चाहिए और अपने अपने स्थान पर अर्चा करनी चाहिए। भगवान की सेवा, पूजा तो आप जहाँ जायेंगे, करेंगे ही। वह तो आपका काम ही है। लेकिन आप यहाँ अर्चा के लिए नहीं आये, बल्कि चर्चा के लिए आये हैं। यहाँ उस चर्चा में कोई मर्यादा नहीं है, सिवाय जो नैतिक मर्यादा मानी जाती है। सब प्रकार के सवाल उठने चाहिए—सीधे, टेढ़े-मेढ़े, तिरछे आदि, और चिन्ता नहीं करनी चाहिए कि यह सवाल कानून के अन्तर्गत है या नहीं। यहाँ स्नेह का ही कानून है, इसलिए कोई भी सवाल उठा सकते हैं। अब 'कामन सेंस' नाम का एक 'सेंस' है, उसके अन्दर-अन्दर सवाल उठा सकते हैं। लेकिन किसीके पास 'कामन सेंस' न हो, 'अनकामन सेंस' हो तो भी उठा सकते हैं। तब यह

नहीं कह सकते कि 'कामन सेंस' के अभाव में उठाया गया। यह कहेंगे तो वह कहेगा कि यह मेरा 'स्पेशल सेंस' है।

हमारे एक प्यारे भाई हैं वसन्तराव नारगोलकर, बिल्कुल वसन्त ऋतु के समान निरन्तर सेवारत हैं। ये आये थे और बहुत-से सवाल हमको पूछे। उन्होंने कई सवाल इकट्ठे किये हैं। उन्होंने कहा कि मैं ये सवाल सम्मेलन में रखनेवाला हूँ। मैंने कहा कि सब सवाल जरूर रखिए और भी जो समय पर सूझें वे भी रखिए। उनका नाम तो मैंने सहज ही लिया। लेकिन यहाँ अनेक यति, मुनि, ऋषि दिखते हैं। वे इसका जवाब देंगे। यह चलेगा पूर्ण स्वतंत्रता से। यह हुआ नम्बर एक।

नम्बर दो, हमने एक प्रस्ताव कर रखा था रायपुर-सम्मेलन में, जिसमें मैं इसके पहले गया था और उसके बाद यहाँ आया हूँ। उसमें हमने प्रस्ताव किया था—एक ग्रामदान का, दूसरा ग्रामाभिमुख खादी का, अर्थात् ग्रामाधार खादी का और ग्रामोद्योग का, और तीसरा शान्तिसेना का। लोगों ने और भी विषय सुझाये थे, लेकिन कहा गया था कि सब विषयों का समावेश इन तीनों में हो जाता है, इसलिए उनको अलग से लेने की जरूरत नहीं है। तो ये तीन प्रस्ताव वहाँ हुए थे। हमको इस वक्त सोचना चाहिए कि उनके अमल के बारे में हम क्या-क्या कर पाये हैं और क्या-क्या नहीं कर सके, क्या न्यूनता रही है, बजाय इसके कि कोई नया प्रस्ताव हम यहाँ करें। जरूरत पड़े तो वह भी करें आज की परिस्थिति के अनुसार, कोई कार्यक्रम सूझे तो वैसा प्रस्ताव कर सकते हैं। लेकिन जो प्रस्ताव किया हुआ है, उस पर अमल के बारे में यहाँ छानबीन होनी चाहिए।

एक बहुत बड़ा विचार हमने सुझाया कि जो भी प्रस्ताव किया जाय वह सर्व-सम्मति से किया जाय। लेकिन उसका मतलब क्या? व्यक्तिगत राय संकोचपूर्वक प्रकट की जाय? नहीं। बिल्कुल खुले तौर पर प्रकट करनी चाहिए। व्यक्तिगत राय प्रकट करने में कोई बाधा नहीं। फिर जो चर्चा होगी उसमें मतभेद का जो अंश है वह छोड़ दिया जाय और जो सर्व-सम्मत अंश है उस पर अमल किया जाय। सर्व-सम्मति या सर्वानुमति के नाम से व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को किसी प्रकार से हानि नहीं होनी चाहिए, बल्कि, सामान्य बात हो तो विचार-भेद प्रकट करने के बाद भी अनुमति जाहिर कर दें तो अलग बात है, लेकिन सिद्धान्त की बात जहाँ आयेगी वहाँ व्यक्ति को समाज से अलग होना पड़े तो भी अपनी स्वतंत्र राय रखनी चाहिए और वह गलत नहीं मानना चाहिए। यह मैं इसलिए कह रहा हूँ कि सर्व सम्मति ऐसा नाटक न बने, जिससे व्यक्तिगत 'कनसंस' और व्यक्तिगत चिन्तन सीमित हो। ऐसा नहीं होना चाहिए। इससे पहले कोई अधिवेशन या सम्मेलन हुआ था, उसकी जानकारी मुझे दी गयी थी। वहाँ पर जितनी खुली चर्चा होनी चाहिए उतनी हुई नहीं और सर्व-सम्मति के नाम पर व्यक्तिगत विचारों का प्रकटीकरण नहीं हो सका। वह ध्यान में लेकर मैं कह रहा हूँ। वह सर्व-सम्मति का गलत अर्थ माना जायगा।

सूक्ष्म से सूक्ष्मतर की ओर

ये दो-तीन बातें आरंभ में मैंने आपके सामने रखीं, जो मुख्य रूप से मुझे सूझीं। आखिर में मैं इतना कहूँ कि संभव है कि इस प्रकार 'साउंड स्पीकर' का उपयोग करने का मौका इस सम्मेलन के बाद मेरे लिए न हो। क्योंकि जो नाटक मैंने सूक्ष्म प्रवेश का शुरू किया है वह इससे आगे सूक्ष्मतर में जायगा। उसका क्या मतलब है अभी मेरे सामने स्पष्ट नहीं है, लेकिन इतना स्पष्ट है कि ३-३॥ साल पहले सूक्ष्म-प्रवेश का नाम लिया था, फिर भी बिहार में जो जोरदार आन्दोलन चला उसका निमित्त मैं बना, अगरचे मैंने व्याख्यान आदि ज्यादा नहीं दिये, फिर भी कुछ तो दिया ही, क्योंकि एक प्रवाह था और मैं 'तूफान' शब्द लेकर यहाँ आया था तो बावजूद इसके कि सूक्ष्म में प्रवेश किया था, फिर भी बाकी स्थूल का स्पर्श रहा। यह एक प्रकार की विसंगति मानी जायेगी। लेकिन यह विसंगति जान-बूझकर रखी, क्योंकि एक शब्द निकला, वह न टूटे, वह पूरा हो। वह हुआ, परमात्मा की कृपा से। लेकिन इससे आगे सूक्ष्मतर में जाना होगा, तब यह जो विचार है उस विचार को शक्ति प्राप्त होगी।

सूक्ष्म-सूक्ष्मतर कर्मयोग, यह जो नाम मैंने दिया, उसको शास्त्र के आधार से 'अभिन्यास' शब्द दिया है— अभिमुख रहना। उस प्रक्रिया में लोगों को अभिमुख रखकर अन्तरात्मा में लीन होना। उसके लिए अपेक्षित परिणाम यह होगा कि जो व्यक्ति यह प्रयोग करता है वह शून्य, शून्यतर में जायेगा। उसकी अपनी कसौटी होगी शून्य, शून्यतर में जाना। यह उसकी अपनी अनुभूति और अपने लिए परिणाम होगा और समाज के लिए अपेक्षित परिणाम शास्त्र के अनुसार होता है—जैसे आणविक शक्ति होती है वैसा यह सूक्ष्म होता है। और उसका परिणाम स्थूल परिणाम से ज्यादा होगा। इस विषय में स्थूल स्पष्टीकरण शब्दों में जितना हो सकता था उतना मैंने आपके सामने रख दिया।

निराशा का कोई कारण नहीं

आखिर में एक बात कहूँगा। इस साल गांधीजी की जन्म शताब्दी और तन्निमित्त बहुत भयानक काण्ड अहमदाबाद में हुआ। दूसरी जगहों में भी दंगे हुए। लेकिन अहमदाबाद में बहुत यह विशेष दुःख की बात है। बहुतों को इसमें निराशा जैसा मालूम होता है। और वे पूछते हैं कि गांधीजी का क्या परिणाम हुआ। अब ऐसा है कि गांधीजी-जैसे मनुष्य के बारे में सोचते समय दूरदृष्टि होनी चाहिए। उनके जैसी शक्ति के मनुष्य का परिणाम बिल्कुल नजदीक के क्षेत्र में और नजदीक के काल में कम अपेक्षित है और व्यापक काल और व्यापक क्षेत्र में अधिक अपेक्षित है। उसमें निराशा होने का कोई कारण नहीं। वे अपना काम कर रहे हैं। उनके जैसे व्यक्ति

का जो परिणाम है वह इतने छोटे-से नाप से नापा नहीं जा सकता।

बादशाह खाँ का निर्णय

खान अब्दुल गफ्फार खाँ हिंदुस्तान में आये हैं और हमारी ओर से उनको कहा गया था कि वे यहाँ आयें तो अच्छा रहेगा। लेकिन वे यहाँ आयेंगे, ऐसा दिखता नहीं है। वहाँ अहमदाबाद में विकट परिस्थिति पैदा हुई है। वे अपना समय वहाँ देना चाहते हैं। मुझे पूरी जानकारी हासिल नहीं है, लेकिन जितनी हासिल है उस आधार से मैं कह रहा हूँ। उन्होंने वैसा तय किया होगा तो उसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। उनके जैसा कर्मयोगी वैसा तय करें तो वह अनपेक्षित नहीं। वे यहाँ आयें और आने के बाद उपवास करेंगे इसकी किसीको कल्पना नहीं थी। लेकिन आये और उनकी अन्तरात्मा को वेदना हुई तो उन्होंने उपवास शुरू किये। अब वे अहमदाबाद गये और उन्होंने तय किया कि वहीं रहना अच्छा है तो मैं वह उचित ही मानूँगा। अगर वे ऐसा निर्णय करें कि यहाँ आयें, सबके साथ बैठकर चर्चा कर शान्ति-सेना लेकर वहाँ जायें तो वह भी ठीक होता। लेकिन न आने का तय करते हैं तो वह भी उचित है। जिस प्रकार से मनुष्य की अन्तरात्मा उसको कहती है तदनुसार बरतना ठीक ही होता है। आशादेवी मुझे मिली थीं, वे वहाँ उनसे मिली थीं। वे कह रही थीं कि वे अत्यन्त नम्र भाव में बोलते थे। अपने लिए एक सामान्य सेवक की उनकी कल्पना है और उसी कल्पना में वे बोलते थे। यहाँ आने के लिए उनका जी चाहता नहीं था। तो आशादेवी से इस सम्बन्ध में पूछा गया तब उन्होंने कहा कि आपकी अन्तरात्मा जो कहती वह करना ही ठीक होगा। जब उन्होंने मुझे यह सुनाया तब मैंने कहा कि आपने बिलकुल ठीक कहा। वह मनुष्य ऐसा है जिसका ईश्वर के साथ कुछ-न-कुछ सम्बन्ध है। तो, ईश्वर के साथ सम्बन्ध रखनेवाले मनुष्य को हम कौन होते हैं हिदायत देनेवाले? इस वास्ते वे वहाँ रह गये तो ठीक ही है।

शान्ति-सेना का 'रोल'

सारे भारत में हम शान्ति-सेना बनायें, और वह सारे भारत में शान्ति की स्थापना में योग दे, यह हमसे होनेवाला नहीं है। इसलिए नम्रतापूर्वक हमसे क्या हो सकता है इसका नाप लेकर तदनुसार काम करना उचित होता है। हिन्दुस्तान खण्डप्राय देश है। उसका इतिहास है। वह इतिहास बच्चों को पढ़ा-पढ़ाकर जाग्रत रखा है। मैं इतिहास की पढ़ाई के बिलकुल खिलाफ हूँ। और आम जनता परमात्मा की कृपा से उस इतिहास से अलिप्त है। लेकिन पढ़े लिखे लोगों के चित्त में यह इतिहास रहता है। ऐसी हालत में जगह-जगह दंगा का मुकाबला हम कर सकेंगे, इसकी सम्भावना लगती नहीं। जहाँ-जहाँ हमारे अड्डे हैं—कोई दस-बारह स्थान ऐसे होंगे, उन स्थानों में शांति की जिम्मेवारी हम पर आती है। मैंने कहा कि उन स्थानों में शांति की जिम्मेवारी हम पर 'भी' आती है। यह 'भी' शब्द मैंने इस्तेमाल किया है, उसके बारे में मैं बाद में कहूँगा। जैसे काशी शहर, वहाँ की शांति की जिम्मेवारी हम पर भी आती है। वहाँ सर्व सेवा संघ का दफ्तर है। इस वास्ते जितना परिश्रम वे वहाँ कर सकते हैं, उनको एक सीमित यश मिल सकता है। वैसे ही अहमदाबाद के लिए मेरी अपेक्षा थी कि हमारा वहाँ अड्डा है—हमारा केंद्र है, आश्रम है। वहाँ पर भी हम शहर के साथ अपना परिचय रखकर शांति-सेना का काम कर सकते थे और करना चाहिए था, लेकिन हम नहीं कर सके। मुझे इसका आश्चर्य हुआ। मैंने जो माना था उससे उल्टा हुआ।

रविशंकर महाराज ने वहाँ ४० हजार सर्वोदय-पात्र रखवाये थे और घर-घर से सम्पर्क रखा था। यह जो सर्वोदय-पात्र है, उसमें जो पैसा मिलता है उसकी कीमत कम है। सर्वोदय-पात्र तो लोक-सम्मति है जिसके आधार से शान्ति-सेना बनेगी। आज किस आधार पर शांतिसेना बनायेंगे? उसको लोक-सम्मति चाहिए। वह उस पात्र के द्वारा मिलती है। फिर सुझाया गया था कि उस पात्र को 'शांति-पात्र' नाम दिया जाय, तो वह भी हमने मान्य किया। लेकिन रविशंकर महाराज अहमदाबाद से चले गये और उसके बाद वहाँ पात्र चलने नहीं। कोई थोड़े से चल रहे हैं। अपेक्षा यह थी कि घर-घर में सर्वोदय-पात्र हो और उन घरों से हमारा स्नेह-सम्बन्ध बने और निरन्तर शांति की रखवाली वहाँ हो सकती थी। वह नहीं हुआ। ऐसे कोई १०-१५ खास अड्डे हमारे हैं। मैंने कुछ नाम भी सुनाये थे, जैसे—काशी है, अहमदाबाद है और छोटे प्रमाण में है लेकिन वर्धा भी है। अगर यह होता तो कुछ हद तक हम सफल हो सकते थे।

अब मैंने कहा कि ऐसे स्थानों में शांति की जिम्मेवारी हम पर 'भी' आती है। भारत की जिम्मेवारी तो छोड़ दी, पर जो अपने स्थान माने, वहाँ शांति की जिम्मेवारी संभालनी चाहिए, ऐसा मानने के बाद ही कहा कि वहाँ पर शांति की जिम्मेवारी हम पर 'भी' आती है। काशी शहर में शांति की जिम्मेवारी हम पर ? आती है। 'भी' यानी क्या? यह मानना कि जैसे मिलीटरी के आधार पर लोग सुरक्षित रहते हैं वैसे शांति-सेना के आधार पर लोग सुरक्षित रहेंगे, तो उसका अर्थ हुआ कि लोग सुरक्षित हैं, स्व-रक्षित नहीं। जब तक लोग स्व-रक्षित नहीं होते तब तक सुरक्षित नहीं होंगे। जब तक यह भावना रहेगी कि हमें बचानेवाले दूसरे कोई हैं, फिर चाहे वह मिलीटरी हो या शांति-सेना हो, तब तक शांति का अनुभव नहीं आयेगा। शांति तो अन्तरात्मा से मिलती है। काशी में शांति की जिम्मेवारी काशी-निवासियों की है और हम वहाँ रहते हैं, इसलिए हम पर भी आती है। इस अर्थ से मैंने 'भी' शब्द का इस्तेमाल किया।

राजगिर २३-१०-'६९
सुबह सर्व सेवा संघ अधिवेशन में।

भूदान यज्ञ, सोमवार, १० नवम्बर, '६९

"मेरा जीवन ही मेरा संदेश है।"—गांधी
गांधीजी का सारा जीवन एक खुली पुस्तक है। उसे समझना
और उसके अनुसार आचरण करना उनके प्रति
सबसे उत्तम श्रद्धांजलि है।
राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
टुंकलिया भवन, कुंदीगरों का भैंरु, जयपुर-२ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

कार्यकर्ताओं की समस्या

आज ग्रामदान-आन्दोलन देश में आगे बढ़ रहा है, कहीं तेज, कहीं धीमी गति से। आज नहीं तो कल भारतदान का स्वप्न पूरा होकर ही रहेगा। इतना व्यापक काम हो रहा है, पर कार्यकर्ताओं की हमारी मूलभूत समस्या ज्यों-की त्यों कायम है। हमारी क्रान्ति की पद्धति ऐसी सदोष है कि ग्रामदान, प्रखण्डदान, जिलादान होने पर भी कार्यकर्ता प्राप्त नहीं हो पाते। आज तक जो मिले हैं, वे नहीं-के बराबर हैं। वे ही पुराने चेहरे देखने में आते हैं, नये चेहरे बहुत कम दिखाई देते हैं. परिणाम-स्वरूप आन्दोलन को जन आन्दोलन का रूप प्राप्त नहीं हो रहा है। प्राप्ति के काम में बाहर से कार्यकर्ताओं को बुलाना पड़ता है। प्राप्ति का काम समाप्त होते ही वे कार्यकर्ता अपने अपने स्थान पर चले जाते हैं और शीघ्र वातावरण सुनसान हो जाता है। न लोकशक्ति, न जन-जागृति, न लोक-नेतृत्व का निर्माण होता है। कोई स्थायी संगठन भी खड़ा नहीं हो पाता है। अतः कार्यकर्ताओं की दृष्टि से प्राप्ति के बाद भी समस्या ज्यों-की-त्यों बनी रहती है। आंधी आयी और गयी, ऐसा होता है। वातावरण में कई बार निराशा भी छा जाती है।

आन्दोलन को जन-आन्दोलन का स्वरूप प्राप्त हो, जनशक्ति बढ़े, प्राप्ति का काम तेजी से हो, प्राप्ति के बाद के पक्के भाग का काम अच्छी तरह हो, इस दृष्टि से पूरा समय देनेवाले अनेक निष्ठावान और फुरसत का समय देनेवाले अगण्य स्थानीय कार्यकर्ता खड़े होने चाहिए।

गाँव-पीछे एक कार्यकर्ता

विचारनिष्ठ तथा विचार-प्रचार-प्रधान यह आन्दोलन है। अतः विचार फैलाने के लिए कार्यकर्ताओं की बहुत बड़ी सेना आवश्यक है। यह काम प्राप्ति के बराबरी के महत्त्व का है। इसलिए प्राप्ति के साथ-साथ हर गांव में विभीषण खड़े करने चाहिए। गांव छोड़ने के पहले ४-५ ग्राम-शान्तिसैनिक उस गांव में हमें प्राप्त करने चाहिए, जिससे प्राप्ति के बाद का काम वे लोग करेंगे। अगल-बगल के गांवों में भी यह विचार पहुँचाने का काम लोक पदयात्राओं के द्वारा लोग करेंगे।

सामूहिक प्रयत्न

इन लोगों के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था करनी होगी। स्थ सलाबद्द शिविर लेने होंगे, जिससे इनकी बौद्धिक योग्यता बढ़ती जाय और निष्ठाएँ मजबूत होती जायें। बार-बार पदयात्राओं में भाग लेने से विचार-सफाई होगी और प्राप्ति की पद्धति समझ में आयेगी। इस तरह खुद प्रशिक्षित होने पर ये अन्यों को भी प्रशि-क्षित कर सकते हैं। ये ही लोग फिर अपने क्षेत्र का नेतृत्व कर सकते हैं। फिर बाहर के कार्यकर्ताओं के बल पर नहीं, बल्कि इन्हीं लोगों के बल पर उस क्षेत्र में आन्दो-लन चल सकता है। कुछ समय बाद ऐसी स्थिति पैदा हो सकती है कि ये ही लोग आगे चलकर आन्दोलन चलायें।

सरकारी सेवक

देश भर का अनुभव बताता है कि सरकारी अधिकारियों तथा कर्मचारियों ने ग्रामदान-प्राप्ति के काम में अच्छा सहयोग दिया है। इस विचार का आकर्षण उसका प्रमुख कारण है। लेकिन आज की अस्थिर तथा सत्ता की राजनीति भी उसका एक कारण है। आज की राजनीति से वे तंग आ गये हैं निराश हो गये हैं। इस आन्दो-लन में उन्हें आशा की किरण दिखाई देती है। इसलिए वे मदद करते हैं, यह बड़ी खुशी की बात है। इन लोगों के पास इस विचार की किताबें तथा पत्रि-काएं पहुँचाकर, नित्य सम्पर्क रखकर उनके विचारों को दृढ़ करने का प्रयत्न होना चाहिए। आगे चलकर पुष्टि के काम में ये लोग बहुत मददगार सिद्ध हो सकते हैं। देश में आज ६०-७० लाख सरकारी सेवक हैं। विनोबाजी तो बी० डी० ओ० व एस० डी० ओ० को भूदान और सर्वोदय-अधिकारी ही कहते हैं। इनकी ओर पर्याप्त ध्यान देना जरूरी है।

शिक्षक

वही बात शिक्षकों की है। देश भर में इस आन्दोलन में शिक्षकों ने बहुत बड़ा और महत्त्वपूर्ण काम किया है। करीब हर गांव में शिक्षकों का प्रवेश है। गांव में शिक्षकों का प्रभाव भी होता है। भावी पीढ़ी इन्हीं लोगों के हाथ में है। शहर में भी शिक्षक वर्ग काफी प्रतिष्ठित माना जाता है। देहातों और शहरों में रहने-वाले इस वर्ग में यदि सर्वोदय-विचार के प्रति निष्ठा हम जगा सकें, तो वर्तमान तथा भविष्य हमारा हो सकता है। इस वर्ग ने बिहार में तो अद्भुत काम करके दिखाया है। शायद आचार्यकुल के विचार के जरिये इनमें प्रवेश पाना आसान हो सकता है। ये हमारे आन्दोलन के हनु-मान सिद्ध हो सकते हैं।

शहर के नागरिक

सर्वोदय-विचार पढ़ने पर और हमारे नेताओं के भाषण सुनने पर शहरों में रहनेवाले अनेक अच्छे-अच्छे प्रतिष्ठित नागरिक अपना फुरसत का समय देने की इच्छा व्यक्त करते हैं। ये लोग आगे चल कर हमारे आंशिक कार्यकर्ता बन सकते हैं। पर आज इनकी ओर हमारा ध्यान नहीं है, न हममें उनका उपयोग करने की पर्याप्त शक्ति है। हमारी यह शक्ति बढ़े, ऐसा प्रयत्न करना होगा।

तरुण शान्तिसेना

कार्यकर्ता प्राप्ति का तरुण शान्तिसेना बहुत अच्छा स्रोत बन सकती है। इस आन्दोलन में बुद्धिवान तथा निष्ठावान तरुणों के आये बिना प्राण नहीं आ सकता। अतः तरुण शान्तिसेना बहुत अच्छी तरह संगठित होनी चाहिए। उसमें से सैकड़ों नवयुवक और नवयुवतियाँ इस काम के लिए आ सकती हैं। स्वतन्त्रता के

(१) ग्रामसभा के गठन के साथ ग्राम-शांतिसेना की स्थापना का संकल्प हो।

(२) ग्रामदानी गांवों में पुलिस-अदालत-मुक्ति के लिए प्रयत्न किये जायें।

(३) कम-से-कम जहां 'जिलादान हो चुका हो वहां' ग्राम-शांतिसेना स्थापित करने का अभियान चलाया जाय।

(४) ग्रामदानी क्षेत्रों में ग्राम-शांतिसेना के शिविर आयोजित किये जायें।

तरुण शांतिसेना

आज युवकों का विद्रोह समाज के लिए सिरदर्द बनता जा रहा है। नयी पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी की मान्यताओं को लेकर दोनों के बीच भयंकर खाई बन रही है। आदर्शोन्मुख होते हुए भी आदर्शों के अभाव में युवक-वर्ग अनास्था की दिशा में तेजी से बढ़ रहा है। उसकी भावना व शक्ति का दुरुपयोग विभिन्न राजनीतिक दल अथवा संकीर्ण उद्देश्य रखनेवाले संगठनों की ओर से अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए किया जा रहा है। दूसरी ओर अपने-अपने आंदोलन को यह नयी पीढ़ी अच्छी तरह से समझें-बूझें और प्रत्यक्ष इसमें हाथ, बंटा सकें यह उसके पुरुषार्थ को रचनात्मक मोड़ देने का बहुत बड़ा सुअवसर है। मण्डल ने तरुण-शांतिसेना के माध्यम से युवकों के बीच पिछले सात-आठ वर्षों से इस सन्दर्भ में एक नम्र प्रयास शुरू किया है। इस अल्प-अवधि में किये गये प्रयास की तुलना में काफी-उत्साहवर्धक और प्रेरणादायी अनुभव आये हैं। इस सन्दर्भ में निम्न मुद्दों को दृष्टिगत रखते हुए विचार करना उपयोगी होगा

(१) तरुण शान्तिसेना के लक्ष्य, कार्यक्रम, संगठन आदि पर विचार किया जाय।

(२) कार्यकर्ताओं के लड़के-लड़कियाँ तरुण शान्तिसेना में शामिल हों।

(३) हर सर्वोदय मंडल अपने प्रदेश के प्रमुख नगरों में तरुण शान्तिसेना-केन्द्र गठित करें।

शान्तिसैनिक तथा शान्तिसेना

देश के शान्तिप्रेमी नागरिकों के लिए शान्ति-सैनिक, शान्ति सेवक के रूप में शान्ति-केन्द्रों के माध्यम से शान्ति का वायु-मण्डल तैयार करने तथा आपसी तनावों को प्रेमपूर्वक दूर करने की अनन्त सम्भावनाएँ हैं। किन्तु यह काम भी बहुत ही उपेक्षित है। एक समय जहाँ १५,००० शान्तिसैनिक और १,५०० शान्ति-केन्द्र संख्या में थे, छँटनी के बाद आज यह संख्या क्रमशः ७१४९ और ६४९ रह गयी है। ये भी बहुत सक्रियतापूर्वक काम में लगे हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता है। देश में शान्ति की हवा बन सके, शान्तिसेना का काम यशस्वी हो, ऐसी मंशा रखनेवालों के लिए यह स्थिति गहराई से विचार करने के लिए बाध्य करती है। विचार करने की दृष्टि से कुछ प्रमुख प्रश्न हमारे समक्ष हैं :

(१) शान्ति-सैनिकों तथा शान्ति-केन्द्रों को कैसे सक्रिय बनाया जाय?

(२) शान्ति-सैनिकों के प्रयोजन, प्रशिक्षण, कार्यक्रम आदि पर विचार।

(३) इनके माध्यम से देश में शान्तिमय वातावरण का निर्माण कैसे किया जाय?

नगरों में काम

देश के प्रमुख नगरों में काम की दृष्टि से १०० नगरों में सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास हुआ, जिसमें ६५ नगरों में सम्पर्क हो चुका है। कुछ औद्योगिक बस्तियों में तथा साम्प्रदायिक दृष्टि से सम्भावित स्थलों में ठोस कार्यक्रम की नितान्त आवश्यकता महसूस होती रही है। छिटफुट प्रयासों के अतिरिक्त कुछ व्यवस्थित प्रयत्न की आवश्यकता है। इस सन्दर्भ में गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, गांधी स्मारक निधि, खादी-ग्रामोद्योग आयोग तथा रचनात्मक संस्थाओं के समन्वित स्तर पर एक निश्चित कार्यक्रम बनाया जाना उपयोगी होगा।

सीमावर्ती क्षेत्रों में काम

सन् १९६२ के बाद सीमा-क्षेत्रों का काम भी शान्तिसेना मण्डल का एक महत्त्वपूर्ण एवं दीर्घकालीन कार्यक्रम बन गया है। देश की रचनात्मक संस्थाओं में से चुने हुए कार्यकर्ता इस काम के लिए आगे बढ़ें चाहिए।

साम्प्रदायिक समस्या

स्वराज्य के बाद कुल कितनी हिंसक घटनाएं देश में हुई होंगी, उसका यदि आंकड़ा निकाला जाय तो अधिक संख्या साम्प्रदायिक दंगों की ही होगी। हर दंगे के बाद जाँच पड़ताल होती है। कुछ रिपोर्ट पक्ष-विपक्ष में प्रकाशित हो जाती हैं, लेकिन इससे साम्प्रदायिक हिंसक उपद्रवों की पुनरावृत्ति होने में कोई फरक नहीं पड़ता। हाल की अहमदाबाद की घटनाओं ने तो पूरे देश को जैसे झकझोर-सा दिया। साम्प्रदायिकता का यह जहर जो पूरे देश के वातावरण को विषाक्त कर रहा है, क्या इससे मुक्ति का कोई उपाय निकल सकता है? सौभाग्यवश इस समय बादशाह खाँ का शुभागमन भी हुआ है। इस सुअवसर का उपयोग साम्प्रदायिक समस्या की चुनौती का सामना करने में किया जा सकता है।

इस सन्दर्भ में निम्न बातों पर विचार किया जाना चाहिए :

(१) दंगों के अवसर पर शान्तिसेना का 'रोल' क्या होगा तथा उसके कार्यान्वयन की व्यवस्था क्या होगी?

(२) बादशाह खाँ के साथ मुस्लिम नेताओं की अखिल भारतीय स्तर पर बैठक।

(३) कट्टरपंथी हिन्दू नेताओं के साथ भी मिलने का प्रयास।

(४) साम्प्रदायिक समस्या पर चर्चा-गोष्ठियों का आयोजन।

(५) खाँ साहब के प्रवास के दरमियान मुस्लिम मित्रों को शान्ति-सैनिक बनाने पर विशेष जोर।

(६) हिन्दू मुस्लिम युवकों का सम्मिलित शिविर किया जाय।●

वर्तमान परिस्थिति और सर्वोदय आन्दोलन

पिछले महीनों में भारत में कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटी हैं। उनके कारण देश के राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में कुछ नवीन सम्भावनाओं के लक्षण प्रकट हुए हैं। ये घटनाएं किस प्रकार के परिवर्तन की सूचक हैं, इस बारे में स्पष्टता होना बहुत जरूरी है। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को इस नये सन्दर्भ में गम्भीरता से विचार करना चाहिए।

दूसरी ओर सर्वोदय आन्दोलन भी एक निश्चित मंजिल पर पहुँच रहा है। बिहारदान के बाद ग्रामदान के आगे के काम का महत्त्व बढ़ जाता है। अब ग्राम-स्वराज्य की दिशा में निश्चित कदम बढ़ाने का अवसर आया है। देश की राजनीति और अर्थनीति में जो नये मोड़ आये हैं, उसका असर हमारे इन कामों पर भी पड़ने वाला है।

राजनैतिक संघर्ष : नये रूप में

राजनैतिक क्षेत्र में राष्ट्रपति के चुनाव को लेकर जो घटनाएँ घटीं, वे महत्त्वपूर्ण हैं। कांग्रेस दल में अन्दर ही-अन्दर सत्ता का जो संघर्ष चल रहा था, वह अब ऊपर आ गया है। कांग्रेस महासमिति के बंगलोर अधिवेशन के समय से अब तक जो घटनाएं घटी हैं, जिनकी सबसे ताजा कड़ी श्री सुब्रमण्यम् आदि के प्रश्न को लेकर खड़ा हुआ विवाद है, इस बात की पुष्टि करती हैं। हमारे लिए समझने की जो महत्त्व की बात है, वह यह है कि इस सत्ता-संघर्ष में जनतांत्रिक तरीकों की सुलेआम अवहेलना शुरू हुई है। सत्ता का यह संघर्ष एक तरह से कांग्रेस का आन्तरिक मामला है और सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को इधर या उधर किसीकी हार और किसीकी जीत में दिलचस्पी नहीं हो सकती। यह संघर्ष अगर नीति-सम्बन्धी विवादों, स्पर्धा के अन्तर्गत बहस मुबाहसों, मतों की गिनती या चुनाव में होनेवाले फैसलों तक सीमित होता और हार-जीत का निर्णय इन चीजों के आधार पर ही हुआ होता, जैसा कि वह जाहिरा में हुआ, तो कोई विशेष बात भी नहीं थी। पर समाचार-पत्रों में इस बात की खुलेआम चर्चा थी कि राष्ट्रपति के चुनाव में वोट प्राप्त करने के लिए व्यक्तिगत दबाव और धमकियों का उपयोग तो किया ही गया, इसके अलावा सम्बन्धित लोगों पर सीधे हिंसात्मक दबाव डालने का प्रयत्न भी किया गया। तारीख २० अगस्त को जिस दिन राष्ट्रपति के चुनाव का परिणाम घोषित होनेवाला था, और खासकर तारीख २५ अगस्त को जिस दिन कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक में प्रधान मंत्री पर अनुशासन की कार्रवाई के बारे में विचार होनेवाला था, दिनोंदिन राजधानी में अमुक तत्त्वों द्वारा इस बात की पूरी तैयारी थी कि अगर इन बातों का फैसला उनकी इच्छा के खिलाफ जाय तो हिंसात्मक उपद्रवों के जरिये 'दिल्ली पर तूफान बरपा कर दिया जाय'। तारीख २५ अगस्त को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के दफ्तर में जहां कांग्रेस नेताओं के घरों पर मिलीटरी पुलिस का कड़ा बन्दोबस्त करना पड़ा। उन दिनों कुछ प्रमुख व्यक्तियों की ओर से जो वक्तव्य निकले, उनमें भी तानाशाही मनोवृत्ति का संकेत मिलता है।

बैंकों का राष्ट्रीयकरण और समाजवाद

आर्थिक क्षेत्र में दो प्रमुख घटनाएं उल्लेखनीय हैं। बैंकों का राष्ट्रीयकरण प्रगतिशील कदम अवश्य है, लेकिन गरीबों के वास्तविक हित के लिए उतना पर्याप्त है या वह अपने आप में समाजवाद का कदम है, ऐसा मानना आत्मवंचना होगी।

हमारा मतलब इस बात से नहीं है कि सरकार द्वारा बैंकों के राष्ट्रीयकरण की पुष्टि में और दूसरे कदम उठाये बिना वह सफल नहीं होगा। यह तो वे भी कहते हैं जो केवल राजनैतिक कारणों से अर्थात् पार्टी के आन्तरिक विवाद में अमुक गुट का समर्थन करने की दृष्टि से राष्ट्रीयकरण का पक्ष लेते हैं। वे तो शायद इसलिए भी ऐसा करते हैं, ताकि जब बैंक-राष्ट्रीयकरण का जोश ठंडा पड़ जायगा व उसकी नवीनता समाप्त हो जायगी और गरीब देखेंगे कि इस राष्ट्रीयकरण से भी कुछ नहीं हुआ तब उस असफलता के लिए कारण आसानी से बताया जा सके। हमारा आशय राष्ट्रीयकरण की पुष्टि के ऐसे किसी बाहरी कदम से नहीं है, बल्कि इस बात से है कि बैंकों के राष्ट्रीयकरण का लाभ गरीबों को तभी मिल सकेगा जब वे जाग्रत और संगठित होंगे। इसके अभाव में छोटे उद्योगों के या खेती के नाम पर भी पैसा उन लोगों के हाथ में जायेगा, जिन्होंने आज तक गांवों व विकास के नाम पर बहाये गये करोड़ों रुपयों का लाभ उठाया है। बैंकों के संचालक-मंडलों में किसानों और छोटे उपभोक्ताओं के प्रतिनिधियों को लेने की बात है पर लोगों में जागृति और संगठन नहीं हुआ तो उनके नाम पर फिर वही लोग वहाँ जायेंगे जिनका या तो पार्टियों के नेताओं के साथ या अफसरों के साथ गठबन्धन है।

राष्ट्रीयकरण कोई नयी चीज तो है नहीं। रेलों का राष्ट्रीयकरण तो बरसों पहले ही हो चुका है। प्रमुख मार्गों पर चलनेवाली बसों का राष्ट्रीयकरण भी हुआ है। पानी, बिजली आदि नागरिक सेवाएँ भी बहुत जगह राज्य के संचालन में हैं, और उनकी मालिकी राष्ट्र की है, पर क्या इन बातों से समाजवाद एक इंच भी नजदीक आया या जनता को उनका उचित लाभ मिलने लगा? इन बातों के सम्बन्ध में जनता के दुखदर्द की सुनवायी तो आज भी मुश्किल से हो पाती है। चंद विशिष्ट (प्रिविलेज्ड) वर्ग ही उनका फायदा ठीक-

ठीक उठा पाते हैं। जनता का वास्तविक हित या उसकी हित-रक्षा बाहरी किसी व्यवस्था पर उतनी निर्भर नहीं है, जितनी उसकी अपनी शक्ति और संगठन पर!

अब बैंकों के राष्ट्रीयकरण के सन्दर्भ में भी लोकशक्ति को जाग्रत करना मुख्य काम है। इस काम का महत्त्व और उसकी त्वरा पहले से भी अधिक महसूस होनी चाहिए, अन्यथा समाजवाद और प्रगति के नाम पर गरीबों के गले का फंदा और भी मजबूत हो जायेगा। इस खतरे की ओर सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का ध्यान जाना चाहिए।

हरित-क्रान्ति या प्रतिक्रान्ति?

आर्थिक क्षेत्र में दूसरी महत्त्वपूर्ण बात जो इन दिनों हो रही है, वह खेती की हरित-क्रांति है। इस हरित-क्रांति के दो पहलू हैं, जिनकी ओर सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का ध्यान जाना चाहिए। पहली बात तो यह और जिसके बारे में पिछले दिनों देश के अन्य विचारकों ने भी आगाही की है कि खेती में नये बीज, रासायनिक खाद आदि के जरिये जो क्रांति हो रही है, उसका लाभ चंद सम्पन्न और बड़े किसानों को ही मिल रहा है। नतीजा यह हो रहा है कि बड़े किसानों की आर्थिक शक्ति उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है और छोटे उनके मुकाबले अधिक कमजोर होते जा रहे हैं। इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्र में भी अमीर और गरीब के बीच का अन्तर बढ़ता जा रहा है। अमीर ज्यादा अमीर हो रहे हैं, गरीब ज्यादा गरीब और कमजोर होते जा रहे हैं। बड़े किसानों की आमदनी बढ़ रही है, पर उत्पादन-वृद्धि का लाभ खेतिहर मजदूर को उचित अनुपात में नहीं मिल रहा है। इसके कारण मालिक-मजदूर का संघर्ष और तनाव बढ़ रहे हैं। तंजोर की परिस्थिति इसका स्पष्ट उदाहरण है। 'हरित-क्रान्ति' वास्तव में 'प्रति-क्रान्ति' साबित हो रही है।

हरित-क्रान्ति का दूसरा पहलू इस देश के भविष्य की दृष्टि से और भी खतरनाक है। नये बीज, रासायनिक खाद और कीटाणुनाशक दवाओं का उपयोग, जैसा समझा जाता है वैसा, लाभदायक नहीं है। इसके विपरीत, दूसरे देशों का प्रत्यक्ष अनुभव यह बताता है कि इन चीजों का उपयोग एक ऐसे दुष्चक्र को जन्म देता है जिसमें न केवल आगे जाकर जमीन की उर्वरा शक्ति नष्ट हो जाने का खतरा है, बल्कि प्रकृति के सारे चक्र के टूटने की सम्भावना और पशुओं तथा मनुष्यों की जान को भी सीधा खतरा है। अभी कुछ दिन पहले अमेरिका के कृषि विभाग के एक विशेषज्ञ ने इस बात की चेतावनी दी थी कि धान की तथा-कथित नये किस्मों से फसल में नयी और घातक बीमारियाँ पैदा होने की आशंका है।

रासायनिक खादों और दवाओं के उपयोग से अन्न, पानी तथा खाद्य पदार्थों में जहर की मात्रा बढ़ती जाने से मनुष्यों की जान को सीधा खतरा भी पैदा हो जाता है। अमेरिका का एक राज्य एरिजोना डी. डी. टी. का उपयोग वर्जित कर चुका है, मिशिगन राज्य वैसा करने जा रहा है और विस्कांसिन में भी इसकी चर्चा शुरू हुई है। अमेरिका के प्रसिद्ध दैनिक "न्यूयार्क टाइम्स" ने कुछ दिन पहले पूरे राष्ट्र में डी. डी. टी. के उपयोग पर प्रतिबंध लगाने का आह्वान किया था। कीटाणुनाशक दवाओं के उपयोग से दूषित अन्न के कारण लोगों में तरह-तरह की बीमारियाँ बढ़ी हैं। रासायनिक खाद के उपयोग से जमीन के "मित्र-जिवाणु" भी नष्ट हो जाते हैं और फलस्वरूप फसलों में तरह-तरह के रोग लग जाते हैं। फिर उन रोगों को दूर करने के लिए जहरीली दवाओं का उपयोग करना पड़ता है और इस प्रकार यह खतरनाक दुश्चक्र बढ़ता जाता है। खेती भी महँगी होती जाती है और फिर सम्पन्न किसान ही उसमें टिक सकता है।

रासायनिक खादों व दवाओं के खतरे

"हरित-क्रान्ति" के इस पहलू की तरफ सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को तुरन्त ध्यान देना आवश्यक है। विज्ञान और प्रगतिशीलता के नाम पर चूँकि इन चीजों का प्रचार किया जा रहा है इसलिए इनका विरोध और भी कठिन है। रासायनिक खाद और कीटाणुनाशक दवाओं का सम्बन्ध हथियारों के, खासकर अणुशस्त्रों के, निर्माण से जुड़ा हुआ है, पर इस पहलू के बारे में मैं इस समय ज्यादा कहने की स्थिति में नहीं हूँ। स्पष्ट है कि इस सम्बन्ध में जानकारी उपलब्ध होना बहुत कठिन है। पर इसके अलावा उपरोक्त दोनों पहलुओं के कारण भी हरित-क्रान्ति में न केवल शोषण और विषमता बढ़ेगी, बल्कि देश के आर्थिक जीवन में, खासकर खेती के क्षेत्र में कई जटिल समस्याएँ खड़ी हो जायेंगी।

देश की मौजूदा परिस्थिति में नक्सलवादियों का जो जोर बंगाल, बिहार, आन्ध्र आदि प्रान्तों में खास तौर से बढ़ता जा रहा है, वह भी एक ऐसा विषय है जिस पर सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का ध्यान जाना चाहिए। अगर हम लोकशक्ति को जाग्रत करने में और उसके द्वारा अहिंसात्मक ढंग से अन्याय का प्रतिकार करने तथा देश की समस्याओं को सुलझाने में सफल नहीं हुए तो जैसा विनोबा कहते हैं, सर्वोदय-आन्दोलन को जनता द्वारा 'गटर-धारा' कर दिये जाने का खतरा है।

देश के राजनैतिक और आर्थिक जीवन में प्रकट होनेवाली उपरोक्त सारी परिस्थितियाँ इस बात की ओर संकेत कर रही हैं कि सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को अपने काम की गति और भी तेज करनी चाहिए, उसकी त्वरा हमें महसूस होनी चाहिए, और अन्य सब कामों की अपेक्षा ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का काम हमारे लिए सर्वोपरि होना चाहिए। ग्रामदान प्राप्ति को तेजी के साथ बढ़ाने के साथ-साथ कुछ प्रखण्डों या क्षेत्रों में ग्रामस्वराज्य की झाँकी प्रकट करने की ओर भी अब ध्यान देना चाहिए।●

[पृष्ठ ६४ का शेष]

महज एक बहाना है। भोले भाले लोग निश्चित ही निहित राजनीतिक स्वार्थों द्वारा गुमराह किये जा रहे हैं। हिन्दू-मुसलमान, दोनों के गरीबों की तकलीफ देखकर मरहूम गांधी व्यथित हो गये थे। यह देखकर हमें बरबस नोआखाली में घूमते बापू की याद आ जाती है। भगवान के हम फिर हुतज्ञ हैं कि उसीका यह सेवक खुदाई खिदमतगार, बादशाह खान उत्तरी-पश्चिमी घाटियों से उतरनेवाला यह ऋषि आज हमारे बीच है। वही एक आदमी है जो दुई दिलों को मिला सकता है और उन्हें ईश्वर तथा सत्य के प्रति प्रेम के जरिये जोड़ सकते हैं। ईश्वर करे उन्हें इस काम में सफलता मिले। शान्ति सेना के लिए वह ईश्वर द्वारा भेजे हुए सेनापति हैं। अगर शान्ति-सेना उनके मार्गदर्शन में काम करे तो मुझे पूरा यकीन है कि हिन्दुस्तान में एक चमत्कार होगा और हिन्दू मुस्लिम-एकता एक वास्तविकता बनेगी। इसी काम के लिए शहीद होनेवाले राष्ट्रपिता को इससे अधिक खुशी और किसी चीज से नहीं होगी। सर्व सेवा संघ को चाहिए कि वह सरहदी गांधी से शीघ्रातिशीघ्र मिले और लाखों गरीबों की खिदमत के लिए उनका मार्ग-दर्शन ले। गरीबों की भलाई के लिए वह उन्नीसों एक ताकतवर आवाज है।

खण्डित नहीं, संयुक्त का समर्थन

उत्तरी वियतनाम से अमरीकी सेनाओं का जल्दी ही हटा लिया जाना आज के मौके की जरूरत है। हम खुश हैं कि अमेरिकी जनता शान्ति की अपीलों को बढ़ावा दे रही है और हाल में वहाँ वियतनाम-युद्ध खत्म करने के लिए आम लोगों का एक बड़ा प्रदर्शन भी हुआ था। मुझे निश्चय है कि यदि निक्सन को लोगों की आवाज की कद्र करनी होगी। थी चौर के नेतृत्व में भारतीय अहिंसा और अमेरिकी डेमोक्रेट्री के बीच उत्तरी और दक्षिणी वियतनाम, दोनों को संयुक्त राष्ट्रसंघ में जगह दिलाने के लिए हुई चर्चा हमारी नजर से होकर ही वियतनामी के सवाल में जल्दबाजी की व अशोभनीय चीज है, उसके पीछे चाहे जो नेक इरादे रहे हों। यह सोचना, कि लड़ाई के बाद आदे इस विभाजनी मुल्क का दुनिया के अन्य बड़े हिस्सों पर अच्छा असर होगा और दो कोरिया, दो जर्मनी या दक्षिण को चीन को दुनिया मान्यता दे देगी, बहुत ज्यादा उम्मीद रखना और गलत कहा जायगा। इस तरह संयुक्त राष्ट्रसंघ एसेम्बली फिर लड़ाकू राष्ट्रों का अड्डा बनेगी और बड़े राष्ट्रों के तिकड़म के कारण उनमें कभी मेल न होगा। सच कहिए तो संयुक्त कोरिया या संयुक्त जर्मनी ही संयुक्त राष्ट्रसंघ के लिए असली ताकत बन सकता है। इन देशों की परस्पर विरोधी इकाइयाँ तो राष्ट्रसंघ को ही कमजोर कर देंगी। अमेरिका तो यह चेतावनी भी दे रहा है कि अगर हिन्दुस्तान ने अपने उत्तरी वियतनामी दूतावास का दर्जा ऊँचा किया तो यह चीज अमेरिका के खिलाफ दुश्मनी समझी जायगी। इसलिए ये देश अगर संयुक्त राष्ट्रसंघ असेम्बली में एक बार दो इकाइयों की शक्ल में घुस गये तो उनके फिर मिलने की न कोई उम्मीद रखनी चाहिए और न उनका वहाँ रहना दुनिया के लिए कारगर ही हो सकेगा। संयुक्त राष्ट्र संघ में जाने के पहले वियतनाम हो या कोरिया, उन्हें एक होना ही चाहिए। हो सकता है मैं कुछ गलत कह रहा होऊँ। इन मामलों में जे० पी० हमारा मार्गदर्शन करेंगे।

समय का तकाजा सीधी कार्यवाही

भाइयो, आप सभी समझते हैं कि आज समय का जोर किस चीज पर है। हम लोगों ने काफी देरी यों ही कर दी है। हम लोग काम करने में, चुनौती देनेवाली स्थितियों का मुकाबिला करने में हिचकते हैं। चारों तरफ समस्याएँ-ही-समस्याएँ हैं। चाहे हम केरल के किसी क्षेत्र में हों या तमिलनाडु या पश्चिमी बंगाल के नक्सलवादी या कश्मीर में हों, हमें सत्याग्रही लोकसेवकों और सचाई की खोज करनेवालों की तरह मेहनत से काम करना चाहिए। हम सिर्फ लोकसेवक ही नहीं, सत्याग्रही लोकसेवक हैं, जैसा कि विनोबाजी ने हमारा नाम रखा है। लेकिन आज हम बिना सत्याग्रह, बिना सचाई की खोज के ही लोकसेवक हैं। इसलिए हम कमजोर भी हैं। हममें वह तत्पर क्रियाशीलता ही नहीं है, जिससे हम सत्याग्रही लोकसेवक कहे जा सकें। विनोबाजी तो आज की नेतागिरी के खिलाफ हैं। सूक्ष्म-प्रवेश के जरिये वह लोगों को यही ट्रेनिंग दे रहे हैं कि अपना नेतृत्व वे खुद करें। वह चाहते हैं कि हम सभी जिम्मेदारी से काम करें। वह सिर्फ हमारा इम्तहान भर ले रहे हैं। आप सभी जानते हैं कि जब भी किसी सही चीज के लिए लोग सीधी कार्यवाही करते हैं तो विनोबा और जे० पी०, दोनों आशीर्वाद देते हैं। तमिलनाडु का उदाहरण हमारे सामने है। हममें से हरएक काम कर सकता है। हम सभी यह जानते हैं कि पश्चिमी बंगाल के नक्सलवादी तमिलनाडु के तंजौर और केरल के कुछ नाद के इलाके के लोग हिंसात्मक उपायों से अब ऊब गये हैं, वे महज कोई विकल्प चाहते हैं। अगर सर्वोदयी कार्यकर्ता कोई अहिंसात्मक रास्ता दिखायें तो उन्हें बड़ी खुशी होगी। तंजौर जिले में इस चुनौती के मुकाबिले के लिए एक प्रयोग शुरू भी किया गया है। शंकररावजी वहाँ कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन कर रहे हैं। तंजौर जिले में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को एक रचनात्मक आन्दोलन की तलाश है। अब जरूरत है ग्रामसभाओं के जरिये जनशक्ति विकसित करने की। नक्सलवाडी जैसी चुनौतियों का हमें हिम्मत से सामना करना चाहिए।

विनोबाजी की अनुपम खोज ग्रामदान भेजकर भगवान ने हम पर कृपा की है। अब हम ग्रामसभाओं की मार्फत लोगों को काम में लगा देने की कोशिश में लगना है। ग्रामसभा क्रान्ति का घटक (सेल) है और ग्रामस्वराज्य की मार्फत वह ईश्वर-प्राप्ति का, दुनिया में ईश्वर का राज लाने का साधन भी। भगवान हमारा मार्गदर्शन करे।●

अहमदाबाद की आग

"मारो कुरेशी को खत्म कर दो!"—बदहवास भीड़ से आवाज आयी।

"नहीं-नहीं यह आप क्या करने जा रहे हैं! कुरेशी साहब हमारे साबरमती आश्रम के शुरू से सदस्य रहे हैं। और इनके ससुर बापू के साथ दक्षिण अफ्रीका में थे। इन पर हाथ उठाना अच्छा नहीं होगा।"—आश्रम के निवासियों ने बड़ी मिन्नत के साथ आरजू की।

"अच्छा आपके कहने पर आज तो छोड़ देते हैं", यह कहकर भीड़ तितर-बितर हो गयी।

गुजरात के राज्यपाल का सन्देशा आया—'कुरेशी साहब, आपकी जान को खतरा है, आश्रम में आप महफूज नहीं हैं। आप मेरे साथ राजभवन में आकर रहिए।"

'बहुत-बहुत शुक्रिया। मैं यह आश्रम छोड़कर नहीं जाऊँगा। अगर जिन्दगी भर इस मन्दिर में इबादत करने के बाद भी मैं महफूज नहीं हूँ, तब तो मेरे लिए मर जाना ही बेहतर होगा।"

जगह-जगह तरह-तरह की अफवाहें सुनायी देती थीं।

एक तरफ —

"हिन्दुओं की पहले से तैयारी थी उनके नेता गुजरात में घूम घूमकर दौरा कर रहे थे.. वे मुसलमानों को सबक सिखाना चाहते हैं कि हिन्दुस्तान में रहना है तो हमारे इशारे पर रहना होगा।"

"तरह-तरह के नये हथियार बनाये गये थे।"

"मतदाता-सूची और टेलीफोन डाइरेक्टरी से नाम छाँट-छाँटकर फेहरिस्त बनायी गयी थी और बीन-बीनकर मुसलमान मारे गये।"

दूसरी तरफ —

"मुसलमानों की पूरी साजिश थी और खासकर पाकिस्तान के गुर्गों की। रबात कान्फ्रेन्स और गांधी-शताब्दी पर वह हिन्दुस्तान को नीचा दिखाना चाहते थे...

"दंगों के डर से सन् १९४७ में पाकिस्तान मिला। मुसलमान चाहते हैं कि फिर से दंगे हों और भारत का दुबारा बँटवारा होकर नया पाकिस्तान बने।"

हमारी असफलता

सितम्बर के चौथे हफ्ते में गुजरात की राजधानी अहमदाबाद में भयानक आग लगी—जैसी आजाद हिन्दुस्तान में कभी नहीं, न देखी थी, न सुनी। अजीबोगरीब कारनामे हुए जिन पर किसीको विश्वास नहीं होता। रस्सी से बाँधकर औरतों, मर्दों और बच्चों को जला दिया गया।

इस काण्ड से विश्वभर का सारा मानव-समाज सिहर उठा है। इससे भारत की प्रतिष्ठा गिरी है और उसकी सरकार व निवासियों के ईमान और वचन पर शक पैदा हो गया है और सबसे, विशेषकर हिन्दुओं के और उनमें भी मुख्यतया गांधी-

सुरेश राम

विचार या सर्वोदय के माननेवालों के माथे पर ऐसा कलंक लगा है जो मिटाये नहीं मिट सकता। इस दुखद और लज्जाजनक प्रसंग पर टीका करते हुए लन्दन के शांतिवादी साप्ताहिक "पीस न्यूज' ने लिखा है—

> "गांधी के गृह-राज्य गुजरात में दंगों के होने की—ऐसे दंगे जिनमें शायद बारह सौ लोग मारे गये, तीन-चौथाई मुसलमान—एकमात्र अच्छी बात यह है कि गांधी-शताब्दी के अवसर पर हुए। एक ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में—जिसे उसकी शताब्दी के समय आकस्मिक और अस्थायी श्रद्धांजलि अर्पित कर दी जाये—अपने एक कोने में सुरक्षित रहने के बजाय वह ठीक वहाँ पहुँच गया जहाँ उसकी जगह है—खून-खराबी के बीचों बीच में।
>
> "इन दंगों ने गांधी के होनेवाले अनुयायियों को—वे भी जिनको वह खुद पहचान लेता और वे राजनीतिज्ञ भी जिन्हें उसके नाम से बड़ा फायदा होता रहता है—यों असफलता स्थापित कर दी है। वे उस साम्प्रदायिक एकता को नहीं स्थापित कर सके जो हिन्दुस्तान की राजनैतिक आजादी से भी उसे ज्यादा प्यारी थी।
>
> "और असफलता केवल अनुयायियों की नहीं है, खुद महात्मा की भी है—और जिसे सन् १९४७ व १९०८ की भीषण साम्प्रदायिक हत्याओं के समय उन्होंने सहज स्वीकार किया था।"

आगे चलकर "पीस न्यूज" का कहना है—

> "अगर सवा सौ साल तक गांधी के जीने की आकांक्षा को एक गोली ने खत्म न कर दिया होता तो उसे निश्चय ही अपनी असफलता के कारणों की खोज निकालने का अवसर मिलता और उस पर निर्माण करने का भी। यही वह समस्या है जिसका उनके शिष्यों को भी सामना करना है।"

दुख की चार बातें

गीता में बताया गया है कि कोई चीज जब होती हो, अकेले एक से नहीं, बल्कि पाँच कारणों से होती है। इसी प्रकार यहाँ भी पाँच बातें थीं—मन्दिर, मस्जिद, मुल्ला, साधु और गाय। हम इस चर्चा में नहीं पड़ेंगे कि यह दंगा क्यों शुरू हुआ, कैसे हुआ, उसमें पहला हाथ किसने उठाया? इसमें सरकार कहाँ तक दोषी है, इत्यादि। यह काम तो जाँच करनेवालों का है—चाहे वह कोई अदालत हो, कोई कमीशन हो, या कोई समिति हो। हमें चिन्ता उस तबाही की है, उस बर्बादी की है, उस रक्तपात की है जो वहाँ मचाया गया और जिसके कारण सैकड़ों बेगुनाहों की जानें गयीं, हजारों घर उजड़ गये, लाखों लोग निराधार रह गये, और उस गाँठ की है जो अहमदाबाद के निवासियों के दिल में पड़ गयी, और उस दरार की है जिससे कुल हिन्दुस्तान का मिला-जुला सामान्य जीवन कट गया है। हमें यकीन है कि लाचारों को

कुछ मदद, बेघर-बारवालों को कुछ घर और साधनहीनों को कुछ साधन थोड़े अरसे के अन्दर मिल जायेंगे। मगर दिल व दिमाग को जो घाव लगे हैं वे कहीं ज्यादा भयानक हैं और उनका भरना आसान नहीं है। अहमदाबाद में जो भी हुआ वह बहुत बुरा हुआ, लेकिन उससे भी ज्यादा बुरा यह हुआ —

(१) क्या हिन्दू क्या मुसलमान, किसीको अपनी करनी पर पछतावा या शर्म नहीं है।

(२) दंगे के दौरान में कोई भी सार्वजनिक कार्यकर्ता—चाहे वह किसी पार्टी संगठन, संस्था या सर्वोदय मंडल का ही क्यों न हो—मैदान में नहीं उतरे और अपनी जान को जोखिम में डालकर आग बुझाने की कोशिश नहीं की।

(३) दंगे के बाद देश के अनेक नेता वहाँ गये और एक-दो रोज रहकर तरह-तरह के वक्तव्य दे डाले जिनमें या तो सरकार पर दोष मढ़ दिया गया या एक समुदाय पर या दूसरे पर या बाहरी तत्वों पर। लेकिन रोग के इलाज का कोई रास्ता नहीं निकाला।

(४) सिवाय बादशाह खाँ साहब के, किसीने वहाँ जाकर लोगों के दुख दर्द से समरस होने की कोशिश नहीं की और न उनके बीच रहकर जहर का प्याला पीने की तैयारी दिखाई।

हाँ दो वयोवृद्ध सेवकों द्वारा उपवास जरूर किये गये—श्री इन्दुभाई याज्ञिक और श्री मोरारजीभाई देसाई द्वारा। दोनों में निजी वेदना की झलक तो मिलती थी, लेकिन दोनों का अभीष्ट प्रभाव नहीं पड़ा। एक का मतलब लोगों ने यह लगाया कि गुजरात-सरकार को दोषी ठहराया जा रहा है और दूसरे का यह कि गुजरात सरकार को निर्दोष साबित कर उसके पाँव मजबूत किये जा रहे हैं।

उपवास और उसका उपयोग

उपवास एक व्यक्तिगत कदम है और उसमें किसीके दखल देने की गुन्जाइश नहीं रहती। लेकिन इतना तो स्पष्ट है कि उपवास उसे ही शोभा देता है जो जनता की स्वतंत्र पक्ष-मुक्त और अहिंसक जन-शक्ति में विश्वास करता हो और उसे सबल बनाना जिसका जीवन-मिशन रहा हो। लेकिन जो दल विशेष से सम्बन्धित हो और हुकूमत की ताकत या दण्डशक्ति में जिसका केवल भरोसा ही न हो, बल्कि जो उसका ऊँचा अलमबरदार हो, उसके उपवास के सामाजिक महत्त्व या उपयोगिता पर शंका होना स्वाभाविक है। श्री मोरारजीभाई की देश भक्ति, सेवापरायणता और गांधी-विचार में निष्ठा के हम कायल हैं। लेकिन बड़े आदर के साथ यह निवेदन करेंगे कि अंग्रेजी राज-काल में स्वाधीनता के योद्धा के नाते वह जनशक्ति के सैनिक जरूर थे, लेकिन स्वराज्य-प्राप्ति के बाद वह एक दल-विशेष के सदस्य रहे हैं और शासन की बागडोर प्रायः सम्हाले रहने के नाते दण्डशक्ति के सेनानी के रूप में देश के सामने आये हैं। उनकी ख्याति, उनकी प्रतिष्ठा, उनकी कीर्ति, एक कुशल और नीतिवान् शासक की है और उनके हर काम से दण्डशक्ति ही मजबूत पड़ी है। इसलिए उनके द्वारा जन-शक्ति के क्षेत्र में पदार्पण कर किसी पराक्रम की आशा नहीं की जा सकती। इससे स्पष्ट है कि उनका उपवास दिल के जख्म भरने में सहायक नहीं हो सकता था।

सवाल है कि यह काम कैसे सम्पन्न हो। जाहिर है कि वह आसान नहीं है। आज तो दिल में तरह तरह के शक बैठ गये हैं और हर किसीकी नीयत पर भी शंका की जाने लगी है। हिन्दू और मुसलमान, दोनों ही अन्धे हो रहे हैं, अपने अलग-अलग घरौंदों में सोचते व रहते हैं। न चाहते हुए भी, वे दोनों ही कायदे आजम जिन्नाह के द्विराष्ट्रवाद सिद्धान्त के चेले बन गये हैं। इसलिए दोनों की पारस्परिक दूरी बढ़ती जा रही है और यही वजह है कि अफवाह की जरा-सी चिनगारी पर आग भड़क जाती है।

दुनिया में चार प्रवाह

लेकिन हम सबको एक चीज अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए। वह यह कि दुनिया में चार तरह के प्रवाह होते हैं— एक है निजी स्वार्थ का, दूसरा समाज का या सामुदायिक हित का, तीसरे युग या जमाने का, और चौथा ईश्वरीय या अल्लाह की मर्जी का। इनमें तीसरा और चौथा, दोनों ही एकता या सारी दुनिया की एकता की तरफ जा रहे हैं। दूसरा हमको छोटे-छोटे दायरों या टुकड़ियों में बाँट रहा है और पहलेवाला अपने घर के अन्दर सीमित कर दे रहा है। मगर कहने की जरूरत नहीं कि तीसरे और चौथे प्रवाह के आगे पहले व दूसरे टिक नहीं सकते और खतम हो जायेंगे। इसलिए वह दिन दूर नहीं, जब हिन्दू-मुस्लिम एकता या मानव एकता स्थापित होगी और विशेषकर विज्ञान की प्रगति उसे और भी जल्दी साकार रूप देगी। और हिकमत व हिम्मत दोनों का तकाजा है कि हम जमाने के और सिरजनहार के इशारा को समझकर जात-पाँत, धर्म-मजहब और अपने-पराये के भेद-भाव के ऊपर उठें और साथ मिल-कर रहें। जैसे अल्लाह या भगवान एक है उसी तरह सारा मानव परिवार भी एक है।

आज धर्म, राजनीति और सम्पन्न निहित स्वार्थ इसमें बाधा डाल रहे हैं। उनमें यद्यपि ज्यादा दम नहीं है, फिर भी वे जोर मारते रहते हैं और इलाहाबाद, इन्दौर या अहमदाबाद-काण्ड करा देते हैं। हम सब उनके खिलाफ सावधान ही नहीं संगठित भी होना होगा। सज्जन हिन्दू और सज्जन मुसलमान दोनों को एक होकर कंधे-से-कंधा मिलाकर काम करना होगा और दुर्जन शक्तियों का मुकाबला करना होगा। साथ ही हम पिछले जमाने के संस्कारों के बोझ से भी अपने को मुक्त करना होगा। न हम नवाबी या इस्लामी हुकूमत के स्वप्न देखें और न वैदिक संस्कृति या हिन्दू राष्ट्र की कल्पना करें। जो भी वैचारिक, साम्कृतिक और भौतिक विरासत है, वह हम सबकी है और कोई किसीको उससे वंचित नहीं रख सकता।

कुर्बानी की जरूरत

लेकिन आज की उखड़ी हुई हवा में→

मन्दिर-मस्जिद की जरूरत ही क्या है इस देश में ?

अशान्त अहमदाबाद की भयंकरता से दुखी एक छात्रा के पत्र का मार्मिक अंश

अहमदाबाद में जो कुछ हुआ, वह असहनीय था। एक छात्रा के नाते मुझे छात्रावास में नियमों का पालन करना था। हमारी गृहमाता (छात्रावास की) हमसे कहा करती थी कि मुझे तुम लोगों को बिलकुल छिपाकर रखना है, इस तरह कि किसीको पता भी न चले कि यहाँ लड़कियाँ रहती हैं। सुरक्षा की इतनी व्यवस्था आसान नहीं थी। हमारे करीब में ही सब कुछ हो रहा था। हम रात-रात भर बैठे रहे हैं। एक बार तो हमलावर आ भी गये थे, लेकिन मौके पर पुलिस पहुँच गयी, तो बच गये।

हम एक दो लड़कियाँ हिम्मत करके कुछ करना चाहकर भी नहीं कर सकीं। लेकिन इस बीच हमारे शिक्षित युवक-युवतियों के विचारों का परिचय मिला। वे लोग हमारी शान्ति की बात का मजाक उड़ाते थे।

जब भी मन्दिर या मस्जिद के तोड़े जाने की खबर मिलती तो मैं सोचती, कि इस देश में मन्दिर-मस्जिद की जरूरत ही क्या है ? इस देश के मन्दिर-मस्जिद सब गिरा देने चाहिए, किसीकी जरूरत नहीं। क्या ये धर्म की रक्षा करते हैं ? क्या मनुष्य को सच्ची मानवता की प्रेरणा देते हैं ? वास्तव में तो ये झगड़े के कारण बने हुए हैं।

मुझे अफसोस इस बात का है कि इस परिस्थिति में प्रत्यक्ष मैं कुछ नहीं कर पायी। दूर से आग की लपटें देखकर सोचती थी कि इनमें कितनों की आशाएं-आकांक्षाएं और जीवन के आधार भस्म हो रहे हैं। और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तो मनुष्य की मानवता जलकर खाक हो रही है। पशुता का नग्न दर्शन, मानव के अन्दर भरी हुई हिंसा, द्वेष और मनुष्यता का विस्फोट हुआ है यह। यह सब देखकर प्रेम, अहिंसा, समता—जिन्हें हम मनुष्य के मूलभूत गुण मानते हैं—के आधार पर समाज-रचना का विचार धूमिल होने लगता है। कोशिश करके गाँव के इन मूलभूत गुणों पर अपनी श्रद्धा कायम रखनी पड़ती है।

आज भी यहाँ की शान्ति ऊपर-ऊपर की ही दीख रही है। ऐसी घटनाएँ फिर नहीं होंगी, यह कहना कठिन है। सबके अन्दर भय, कँपकँपी, द्वेष और वैर की भावना भरी हुई है।

दूसरा विश्वयुद्ध देख लेने के बाद दुनिया जिस तरह तीसरे युद्ध के डर के मारे काँप रही है, वही हमारी स्थिति छोटे पैमाने पर है।

—एक छात्रा
हिन्दी शिक्षा-विशारद,
दिनांक ११-१०-६९ गुजरात विद्यापीठ

शांति-सैनिकों एवं शांति-केन्द्रों की संख्या

(३० सितम्बर, १९६)

प्रदेश	शांति-केन्द्र	शांति-सैनिक
असम	२८	३०७
आंध्र	१	११
बिहार	१०८	७६५
बंगाल	१९	१७१
दिल्ली	१	७
गुजरात	११	१११
हरियाणा	३	३२
हिमाचल प्रदेश	—	२
जम्मू-कश्मीर	२	१
केरल	३	२६
महाराष्ट्र	२८	२०७
मैसूर	३	२८
मध्यप्रदेश	३२	३६९
पंजाब	५	२८
राजस्थान	२०	३६७
तामिलनाडु	५	५
उत्कल	२७१	२,४५०
उत्तरप्रदेश	१०६	२,२२५
नेफा	७	—
नागालैण्ड	२	—
सिक्किम	२	३७
कुल	६४९	७,१४९

—यह तभी मुमकिन होगा जब हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरे की जान बचाने के लिए अपनी जान देने में संकोच नहीं करेंगे। हिन्दू को जो अविश्वास मुसलमान पर है वह तभी दूर होगा जब मुसलमान उसके लिए मर मिटेगा और मुसलमान का जो शक हिन्दू पर है वह तभी मिटेगा जब हिन्दू उसकी खातिर जान दे देगा। हमारा यह हिन्दुस्तान कुर्बानी चाहता है और हम दोनों के खून को खाद पाने पर ही एकता का पौधा फूले-फलेगा।

अहमदाबाद की आग से हम सब पर कालिख लग गयी है। लेकिन वह धुल सकती है और जरूर धुलेगी। इसके लिए यह जरूरी है कि राजनीति से अलग और सच्चे लोगों द्वारा इसकी जाँच करायी जाये। क्या ही अच्छा हो कि सर्व सेवा संघ एक कमेटी बिठाकर यह काम अंजाम दे और पता चलाये कि इस दंगे में किसका कितना हाथ था या नहीं था। फिर उसकी रोशनी में आगे का कार्यक्रम तैयार किया जाये। लेकिन वह कार्यक्रम तभी सफल होगा जब उसके लिए हिन्दू और मुसलमान, दोनों ही आत्म-बलिदान के लिए आयेंगे। और बड़ा भाई होने के नाते इसमें पहले हिन्दू को करनी है, विशेषकर गांधी-विचार के अनुयायियों को, सर्वोदय समाज को। सारा सर्वोदय-परिवार या गांधी बिरादरी आज कसौटी पर है।●

राजगिर में विश्वशान्ति स्तूप

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जापान पर बमों के विस्फोट से नागासाकी और हिरोशिमा के लाखों निरपराध, अबोध नर-नारियों का संहार जिसने देखा हो, भला उसका मन युद्ध की विभीषिका से क्यों न व्यथित होगा। दुनिया में आज फिर युद्ध के बादल मँडराने लगे हैं। अपनी शस्त्र-शक्ति और सैनिक शक्ति को सक्षम एवं अपराजेय बनाने की प्रतिस्पर्धा का अन्तिम परिणाम मानव-संहार ही तो होगा। विश्व में इस समय तीन ताकतें प्रमुख हैं लोकतन्त्र, पूँजीवाद और साम्यवाद। साम्यवाद और पूँजीवाद आमने-सामने खड़े हैं। जहाँ लोकतन्त्र है भी वह पूर्ण सुरक्षित नहीं है। लोकतन्त्र में आस्था रखनेवाले एवं मानवीय हित के चिन्तकों के लिए यह आवश्यक हो गया है कि वे मानव-जगत् को युद्ध-निरपेक्ष बनाने का प्रयास करें। सिर्फ युद्ध-निरपेक्ष ही नहीं बल्कि शान्तिमय भी बनाना आवश्यक है। इस दिशा में हर देश में कुछ-न-कुछ शान्तिवादी लगे हैं। भारत उन सबको मार्गदर्शन देता आया है। भगवान बुद्ध महात्मा गांधी और आचार्य विनोबा भावे का चिन्तन सर्वांगीण रूप से सारी मानवता के लिए है। भगवान बुद्ध की जन्मस्थली से प्रसारित शान्ति-संदेश को विदेशों में जीवन का सद्धर्म माना गया है। अब जरूरत तो इस बात की है कि शान्ति प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का क्रम बने। इस दिशा में अभी २५ अक्तूबर १९६९ को राजगिर में विश्वशान्ति स्तूप का उद्घाटन राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरि ने किया है। उद्घाटन के अवसर पर परम पावन दलाई लामा, फूजिई गुरुजी आदि उपस्थित थे। सारनाथ महाराष्ट्रीय सर्वोदय-सम्मेलन के मंच से भी विनोबाजी श्री वी० वी० गिरि, दलाई लामा आदि शान्तिदूतों ने विश्व में शान्ति-स्थापना की मार्मिक अपील की है। इस विश्व-शान्ति स्तूप के बारे में थोड़ी जानकारी कराना शायद अनुपयुक्त न होगा।

मगध देश की प्राचीन राजधानी राजगृह (अब राजगिर) में गृद्धकूट पर्वत पर महात्मा बुद्ध ने अपने जीवन के अन्तिम कुछ वर्ष बिताये थे। इसी पर्वत से उन्होंने अपने भक्तों और शिष्यों के लिए उपदेश दिये थे। आज यही गृद्धकूट पर्वत यात्रियों और पर्यटकों के लिए दर्शनीय स्थल है। इसी पर्वत के नीचे गरम पानी का कुण्ड है। कहा जाता है कि महात्मा बुद्ध इसमें स्नान किया करते थे।

राजा बिम्बसार के राज्यकाल में राजगिर धर्म, संस्कृति, शिक्षा, व्यापार एवं प्रशासन का प्रमुख केन्द्र रहा है। और फिर यह राजगिर 'विश्वशान्ति' के प्रसार प्रचार का मुख्य केन्द्र बनने जा रहा है। जैसा कि सर्वविदित ही है कि महायान बौद्ध धर्म का सूत्रपात इसी राजगिर में हुआ था। वह धीरे-धीरे तिब्बत, चीन, कोरिया और जापान तक जा पहुँचा। राजगिर महायानी बौद्धों के लिए एक पवित्र तीर्थस्थान है। लगभग छठवीं शताब्दी ईसापूर्व प्रख्यात चीनी बौद्ध यात्री ह्वेनसांग ने अपनी भारत-यात्रा के सिलसिले में राजगिर में अनेक स्तूपों का वर्णन किया है। इन स्तूपों का आकर्षण हर बौद्ध धर्मावलम्बी को होना स्वाभाविक ही था। अतः इसी आकर्षण से अपनी पुण्यमयी माता की पवित्र हड्डियाँ लेकर बुद्ध की इस पवित्र भूमि पर २५ अगस्त १९३० को भिक्षु निचिदात्सु फूजिई (जापान) भारत की यात्रा के दौरान राजगिर पहुँचे। काल के कर प्रहारों से ह्वेनसांग द्वारा वर्णित इमारतें, बस्तियाँ और पवित्र स्तूप विनष्ट हो चुके थे इसलिए भिक्षु फूजिई को असंतुष्ट निराश होना पड़ा। राजगिर में एक भी स्तूप न मिलने से उनके मन में यह संकल्प हुआ कि राजगिर में एक भव्य शान्ति स्तूप का निर्माण अवश्य होना चाहिए।

सन् १९५६ में महात्मा बुद्ध की २५०० वीं बरसी भारत में भी बड़े धूम-धाम से मनायी गयी। उस समय भारत सरकार ने भारत के सभी बौद्ध-स्थानों में बिजली, पानी, सड़कें, यातायात की सुविधा, धर्मशाला आदि सुविधाएँ सभी बौद्ध यात्रियों के लिए प्रदान कीं। भिक्षु फूजिई ने उसी समय तत्कालीन प्रधान मंत्री पं० नेहरू के सामने राजगिर को विकसित करने की योजना रखी और उन्होंने अपनी स्वीकृति दे दी।

इस विश्वशान्ति स्तूप के पीछे भिक्षु फूजिई (गुरुजी) की कल्पना और अथक सत्याग्रह का परिणाम है। उनके इस पुण्यमय कार्य में जापान बौद्ध संघ का योगदान और भारत सरकार का सहयोग तथा स्थानीय लोगों की लगन का सम्मिश्रण है।

राजगिर की १६० फीट ऊँची रत्नागिरि पहाड़ी पर निर्मित विश्वशान्ति स्तूप की ३८ मीटर ऊँचाई और ४५ मीटर व्यास है। इस स्तूप के निर्माण में लगभग दस वर्षों का समय और २५ लाख रुपये लगे हैं। सारा खर्च जापान बौद्ध संघ ने उठाया है तथा निर्माण की जिम्मेदारी राजगिर बुद्ध विहार सोसायटी की रही है। इस स्तूप के गर्भ में कलाकृतियों से विभूषित एक मंजूषा में सप्तरत्नों के साथ भगवान बुद्ध का अवशेष भी स्थापित है। बौद्ध धर्मानुयायियों की मान्यता है कि इस स्तूप में आत्मा की शान्ति, मैत्री और करुणा की त्रिवेणी अन्तर्निहित है। और इस स्तूप में सद्धर्म पुण्डरीक के चार लाख पचास हजार धार्मिक शब्द, चार लाख पचास हजार श्रद्धालु व्यक्तियों से अलग-अलग प्रस्तर-खण्डों पर लिखवाकर और प्रत्येक पर उनके हस्ताक्षर करा कर रखे गये हैं।

इस स्तूप के निर्माण का प्रारम्भिक दायित्व सन् १९५८ में भिक्षु सासमाया सान को दिया गया था। उन्होंने डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद और श्री जवाहरलाल नेहरू को भिक्षु फूजिई गुरुजी की योजना बतायी और इन नेताओं एवं राष्ट्रकर्णधारों का आशीर्वाद प्राप्त किया। इस विश्वशान्ति स्तूप का शिलान्यास ६ मार्च १९६५ को भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डाक्टर एस०

राधाकृष्णन् ने किया था जिसका पूरा निर्माण ४१ वर्षों में सम्भव हो सका है। सच पूछा जाय तो शान्ति के प्रथम सन्देशक और भारत के सम्राट् अशोक के पश्चात् इस देश में पुन: बौद्ध धर्म के द्वारा शान्ति, मैत्री और करुणा की पताका भारत में लहराई है जिसके नीचे दुनिया के सभी शान्ति-प्रेमी एक होकर विश्व में शान्ति-स्थापना में तत्पर हो सकेंगे।

जिस पर्वत-शिखर पर विश्वशान्ति स्तूप निर्मित हुआ है, वहाँ तक रत्नागिरी पहुँचने के लिए एक रज्जुमार्ग (रोप वे) भी लगाया गया है। इस रज्जुमार्ग में १२० कुर्सियाँ हैं, जिन पर एक साथ १२० शान्तिप्रेमी शान्तिस्तूप के शान्तिस्थ पवित्र में पहुँचते हैं। इस रज्जुमार्ग के निर्माण में लगभग २० लाख रुपये खर्च हुए हैं, जिसमें से १८ लाख रुपये बिहार सरकार ने दिये हैं। रज्जुमार्ग का मूल्य ६ लाख रुपये है, जिसे जापान बौद्ध संघ के अध्यक्ष भिक्षु फूजिई गुरुजी ने कृपापूर्वक भेंट में दिया है।

यह शान्ति स्तूप आधुनिक युग के लिए ही नहीं, आनेवाले युगों के लिए भी, मात्र आश्चर्यकारी वास्तुशिल्प ही प्रमाणित नहीं होगा, अपितु शान्ति, मैत्री और करुणा से सराबोर विश्वशान्ति का सन्देश भी देता रहेगा। इस शान्तिस्तूप से जापान-भारत की सांस्कृतिक एकता तथा मैत्री भी घनिष्ट हुई है। स्तूप के पवित्र तथा शीतल सान्निध्य में संसार के सभी शान्तिप्रेमी परम सन्तोष और सुख का अनुभव करेंगे, ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है। •

पुस्तक-विक्रेताओं से

गांधी-जन्म-शताब्दी सर्वोदय-साहित्य सेट में सर्व सेवा संघ-प्रकाशन की जो पुस्तकें अतिरिक्त रूप से दी जा रही हैं, उनकी प्रतियाँ विक्रेताओं से वापस नहीं ली जायेंगी।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

विनोबाजी का कार्यक्रम

सर्वोदय सम्मेलन में की गयी अपनी घोषणा के अनुसार आचार्य विनोबा अब एक सप्ताह से अधिक अवधि का अग्रिम कार्यक्रम नहीं स्वीकार करेंगे।

आचार्य विनोबा इस समय सेवाग्राम में हैं। सर्व सेवा संघ के सुझाव पर खान अब्दुल गफ्फार खाँ से मिलने का सर्वोत्तम स्थल सेवाग्राम को मानकर आचार्य विनोबा ३० अक्तूबर '६९ को पटना से प्रस्थान किये। पटना स्टेशन पर नागरिकों, कार्यकर्ताओं सहित राज्यपाल ने आपको भावपूर्वक विदाई दी। उसी दिन शाम को आप वाराणसी-स्थित सर्व सेवा संघ पहुँचे और रात भर वहाँ विश्राम कर दूसरे दिन वाराणसी-बम्बई एक्सप्रेस से सेवाग्राम के लिए प्रस्थान किये।

प्राप्त सूचना के अनुसार जबलपुर और इटारसी में यात्रा-विराम करते हुए आप २ नवम्बर को सेवाग्राम पहुँच गये। जहाँ आपसे सीमान्त गांधी ने २७ वर्षों बाद मुलाकात की। अगले सप्ताह का कार्यक्रम अनिश्चित है। •

विनोबा अब सार्वजनिक भाषण नहीं देंगे

आकाशवाणी से प्राप्त समाचार के अनुसार आचार्य विनोबा भावे ने दिनांक ५ नवम्बर '६९ को सेवाग्राम में अपना अन्तिम सार्वजनिक भाषण किया। आपने भाषण के अन्त में यह घोषणा की कि यह मेरा अन्तिम सार्वजनिक भाषण है, इसके बाद अब मैं कोई सार्वजनिक भाषण नहीं करूँगा। •

किसने खोया, किसने पाया ?

[इस लेख की लेखिका सुश्री सरला बहन (मिस कैथरीन मेरी हलीमन) अपने जन्म-देश इंग्लैंड से सन् १९३२ में सेवा के लिए भारत आयीं, और तब से वे यहाँ सतत सेवा-साधना में लीन हैं। उनकी पूरी जीवन यात्रा हमारे लिए प्रेरणा का स्रोत है। — स]

लगभग चालीस वर्ष पूर्व मुझे लन्दन के एक अतिथि-गृह में कुछ भारतीय विद्यार्थियों के साथ रहने का मौका मिला था। उन दिनों बार-बार भारतीय संस्कृति, बापू के विचार और असहयोग-आन्दोलन के बारे में चर्चा सुनने को मिलती थी। वे लोग सब बड़े देशभक्त और विद्रोही थे। मैं इनसे बड़ी प्रभावित हुई क्योंकि बचपन से व्यक्तिगत और सामाजिक मूल्यों के बीच में जो खाई रहती है उसे देखकर मैं परेशान रहती थी। अन्तर्राष्ट्रीय और राजनैतिक संघर्षों के कारण और बुनियाद बिल्कुल नहीं समझ पाती थी। केन्द्रित उद्योगों की व्यवस्था मुझे खटकती रहती थी। इसलिए गांधीजी के विचारों को सुनकर मुझे लगा कि दुनिया में एक और रास्ता है, और उस रास्ते के साथ काम करने की इच्छा भी स्वभावतः ही जाग्रत हुई।

आखिर मैं भारत आ ही गयी। शुरू में सत्याग्रह में रही। सन् १९४२ के आन्दोलन में "अतिथि-जन" बनकर जेल भी पहुँची थी। बीस वर्ष तक उत्तराखण्ड में नयी तालीम का काम करके अब फिर तीन साल से अनिकेतन रहने में एक बड़ा आनन्द आता है। जब निजी घर नहीं है, तो सारी दुनिया अपना घर है। जब हम "तेरा-मेरा" का निजी घेरा बनाते हैं, तो वह घेरा हमें इस अनुभव से वंचित रखता है।

लेकिन हमारे साथी, जिनसे मुझे पद-प्रेरणा मिली, उनकी क्या हालत है ?

• उनमें से एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री बने। उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण किताबें लिखीं, कई शोध के काम किये, कई महत्त्वपूर्ण सरकारी नौकरियाँ सुशोभित कीं। लेकिन कभी भी सरकार के विरुद्ध एक शब्द नहीं कहा। उपकुलपति बनने की उनकी ख्वाहिश पूरी नहीं हो सकी। उससे पूर्व हृदय-रोग उन्हें उठाकर ले गया। लेकिन आखिरी बीमारी में भी वे उसकी ही फिक्र में रहे।

• दूसरे मित्र डाक्टर बड़े कर्तव्य-परायण और शान्त स्वभाव के रहे। खुशामद और लालच करना उनके स्वभाव के विरुद्ध है। राष्ट्र-गुमनामी में प्रकाशन और मेडिकल प्रशिक्षण में उनकी दिलचस्पी

सरला देवी

रही, लाभ के दृष्टि से लाभ उठाना नहीं। लगभग ४० वर्ष से बम्बई में एक ही फ्लैट में रहते हैं। उनके समकालीनों ने अपने बंगले बनवाये और अब खूब शान से रहते हैं। लेकिन इन डाक्टर मित्र को सन्तोष है कि वे साधारण जीवन-स्तर बिताते हुए कुछ अपने नाती-पोतों की शिक्षा की व्यवस्था ठीक ढंग से करवा रहे हैं। हालाँकि उनके भविष्य की दशा क्या होगी, वे समझ नहीं पाते हैं। उनका स्वास्थ्य काफी कमजोर है और उसका ख्याल करके उन्हें काफी सावधान रहना पड़ता है।

• एक तीसरे मित्र आधुनिक शिक्षा-शास्त्री बनने के साथ-ही-साथ देशी रियासत में दिवान भी थे। आन्दोलन के दिनों में वे क्रान्तिकारी सत्याग्रहियों को जेल भेजते रहे, और अखबार में मेरे अनशन में दिये हुए बयान को पढ़कर उन्होंने पत्र लिखकर मुझे काफी डाँटा था। स्वतन्त्र भारत में वे हाई कमिश्नर और राजदूत बने, बाद में विश्व-विद्यालय के उपकुलपति भी रहे। आजकल दक्षिण 'कोरोनरी थ्रोम्बोसिस' के दौरे के बाद उन्होंने एक सामाजिक विचार को प्रचार करनेवाली संस्था स्थापित की है। उनके नाती-पोती तो हैं ही, लेकिन वे अपने बेटर अपनी साथ को भुला था, और के बच्चों को अपने हाथों में लिखाकर अपने जीवन में कुछ प्रेम भरने का प्रयास कर रहे हैं।

• और मैं ? मैं तो झोला लेकर घूमती हूँ। कई साल तक मारवाड़ी परिवार में रहने के बाद, अपने हाथों से अपने लिए कुछ सब करना भूलना नहीं है। नगरों में, गाँवों में, गरीबों के पास, अमीरों के पास, जो कुछ भी प्रेम से खिलाते-पिलाते हैं खुशी से खाती-पीती हूँ। खूब प्रेम और सेवा पाती हूँ और उनके आग्रह को लेकर कभी पैदल, कभी बस में और कभी रेल में घूमती हूँ, और लोगों को बापू और विनोबा के सन्देश सुनने-सुनाने में आनन्द पाती हूँ।

किसने पाया, किसने खोया ?

— सरला देवी

बादशाह खान

जितना ही अधिक मैंने उन्हें (बादशाह खान को) जाना उतना ही अधिक मैंने अपने को उनकी तरफ आकर्षित पाया। उनकी साफ सच्चाई, नम्रता, स्पष्ट-वादिता और अतिशय सादगी का मन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। मैंने यह भी पाया कि सत्य और अहिंसा को उन्होंने नीति के तौर पर नहीं, निष्ठा के तौर पर स्वीकार किया।

—मो० क० गांधी

सीमांत गांधी और विनोबा-मिलन

वर्धा स्थित 'बजाज अतिथि भवन' में २७ वर्षों के बाद बादशाह खान अब्दुल गफ्फार खाँ से मिलने के बाद आचार्य विनोबा भावे ने कहा कि आज देश के सामने अनेक समस्याएँ हैं, पाकिस्तान, पख्तूनिस्तान तथा तिब्बत की समस्याएँ भी एक तरह से हमारी समस्याएँ हैं।

देश की कुछेक घटनाओं का उल्लेख करते हुए आचार्य भावे ने कहा कि जनता को चिन्तित नहीं होना चाहिए। जब समाज का पतन होता है तो वह भलाई के लिए होता है, क्योंकि उसके बाद जागृति आती है।

उन्होंने कहा—आज देश बड़ी कठिन परिस्थितियों से गुजर रहा है। उसके सामने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याएँ हैं। लोगों को नयी दिशा व नया मार्ग-निर्देशन चाहिए। जनतंत्र की जड़ें हिल रही हैं, स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद अनेक विकास-कार्यक्रम हाथ में लिये गये, लेकिन गरीबी और बेरोजगारी की समस्याएँ अब भी कायम हैं।

आचार्य भावे की ४ नवम्बर को खान अब्दुल गफ्फार खाँ से अपराह्न 'बजाज अतिथि भवन' में भेंट हुई। बादशाह खान आजकल उसी भवन में ठहरे हुए हैं। बादशाह खान अहमदाबाद के दौरे के बाद यहाँ पहुँचे। वह थके-से लग रहे थे।

इससे पूर्व, बादशाह खान और आचार्य भावे की बैठक सेवाग्राम में कराने की योजना बनायी गयी थी। किन्तु अन्तिम क्षणों में यह कार्यक्रम बदल दिया गया और बैठक का आयोजन उक्त अतिथि-भवन में किया गया।

रेलवे स्टेशन पर राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण ने, जो बादशाह खान के साथ आये थे, कहा कि ५० हजार लोग बादशाह खान के स्वागत के लिए उपस्थित थे।

सरहदी गांधी सेवाग्राम स्थित गांधी-कुटी भी गये। वहाँ पहुँचने पर वे काफी भाव-विभोर हो गये। आश्रम की प्रार्थना-सभा में शामिल होने के बाद विनोबाजी को उनके आवास स्थान तक पहुँचाने भी गये।

इसके बाद आचार्य भावे, जो सेवाग्राम में ठहरे हुए हैं। बादशाह खान से मिलने आये, दोनों नेताओं ने आधे घण्टे तक बातचीत की, बैठक में श्री श्रीमन्नारायण के अलावा और भी कुछ लोग उपस्थित थे।

दोनों नेताओं ने एक दूसरे के स्वास्थ्य के विषय में पूछताछ की। श्री श्रीमन्नारायण ने आचार्य भावे को बताया कि बादशाह खान की गुजरात-यात्रा का क्या प्रभाव पड़ा।●

क्षमा-याचना

२० अक्तूबर '६९ के अंक में की गयी अपनी घोषणा के अनुसार ३ नवम्बर '६९ का अंक हम नहीं प्रकाशित कर सके। सम्मेलन के कारण हुई कार्यालय की अस्तव्यस्तता के चलते ऐसा नहीं हो सका। प्रस्तुत अंक में भी हम सर्वोदय-सम्मेलन सम्बन्धी पर्याप्त सामग्री नहीं दे पा रहे हैं। सर्व सेवा संघ के प्रधान कार्यालय का गोपुरी (वर्धा) स्थानान्तरण भी इसी बीच हुआ, इसलिए भी सम्मेलन के भाषण आदि 'टेप रेकार्डर' से उतारे नहीं जा सके हैं। अब हम धीरे-धीरे आगे अंकों में सम्मेलन-सम्बन्धी सामग्री उपलब्ध कर प्रकाशित करेंगे। पाठकगण और कार्यकर्ता साथी इसके लिए हमें कृपापूर्वक क्षमा करें। —सम्पादक

बिहार में ६०० ग्रामस्वराज्य-गोष्ठियाँ आयोजित होंगी

ज्ञात हुआ है कि बिहारदान के अगले कदम के रूप में ग्रामदान-पुष्टि के संदर्भ में इसी नवम्बर '६९ से अप्रैल '७० तक की अवधि में पूरे बिहार में प्रखण्ड-स्तरीय करीब ६०० गोष्ठियाँ आयोजित की जायेंगी। यह निर्णय अ० भा० ग्रामस्वराज्य समिति की एक बैठक में लिया गया, जिसकी अध्यक्षता श्री सिद्धराज ढड्ढा ने की। इस बैठक में सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, धीरेन्द्र मजूमदार, शंकरराव देव आदि बुजुर्ग नेता भी उपस्थित थे।

इन गोष्ठियों का उद्देश्य ग्राम-स्वराज्य में रुचि रखनेवाले, सहयोग देनेवाले तथा प्रत्यक्ष भागीदार बननेवाले गाँव के प्रमुख लोगों को, गाँव में ग्रामसभा के संगठन, बीघा-कट्ठा के वितरण, ग्रामकोष के संग्रह आदि कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए तैयार एवं प्रशिक्षित करना है, ताकि वे लोग पंचायत-स्तर पर और आवश्यकतानुसार ग्रामस्तर पर के शिविरों द्वारा ग्रामदान-पुष्टि कार्य को आगे बढ़ा सकें।

इस सिलसिले में पूरे बिहार में सर्वश्री जयप्रकाश नारायण और धीरेन्द्र भाई की लोक-शिक्षण-यात्राएँ भी आयोजित की जायगी।●

राजस्थान ग्रामदान विधेयक अध्यादेश द्वारा लागू

वाराणसी, १ नवम्बर। प्राप्त जानकारी के अनुसार राजस्थान-सरकार ने नवनिर्मित राजस्थान ग्रामदान विधेयक एक अध्यादेश द्वारा लागू कर दिया है।

इस अध्यादेश से पुराना ग्रामदान-एक्ट समाप्त होकर उसके स्थान पर अब यह लागू हो जाने से सुलभ ग्रामदान की शर्तों के अन्तर्गत राजस्थान में चल रहे ग्रामदान-प्राप्ति आन्दोलन को कानूनी मान्यता मिल गयी है। आशा की जाती है कि इससे राजस्थान में ग्रामदान-घोषणा का कार्य पुनः तेज गति से चल पड़ेगा।●

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २० रु०, या २५ शिलिंग या ३ डालर।
इस प्रति का ४० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

अन्य पृष्ठों पर

वर्ष : १६ अंक : ७
सोमवार १७ नवम्बर, '६९

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४१८५

देश की अन्तरचेतना का आवाहन

आज मुल्क में जो परिस्थिति पैदा हो गयी है वह सबके लिए गम्भीरता से सोचने का विषय है। आजादी का असली मकसद गरीबी, सामाजिक अन्याय और शोषण को खतम करने का था, पर ये बुनियादी मसले आज भी ज्यों के-त्यों कायम हैं। बल्कि आजादी के बाद इन २२ वर्षों में कई नये मसले खड़े हो गये हैं। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हिंसा और नफरत का जोर बढ़ा है। सारे देश के हित की दृष्टि से सोचने के बजाय भाषा, मजहब, सम्प्रदाय, जाति आदि के तंग नजरिये जगह-जगह उभड़ रहे हैं। यह दुर्भाग्य की बात है कि राजनैतिक दल अपने-अपने दलों के हित-साधन के लिए इस प्रकार के जज्बातों को बढ़ावा देते हैं और इसका फायदा उठाते हैं। पिछले दिनों खास तौर से साम्प्रदायिक द्वेष और उससे पैदा होनेवाले दंगों ने देश के जीवन को जहरीला बना दिया है। धर्म के नाम पर साम्प्रदायिक झगड़े करना अमानवीय कृत्य है। कोई धर्म द्वेष नहीं सिखाता। वास्तविकता यह है कि धर्म दिलों को जोड़ता है और समस्त मानवों का कल्याण चाहता है। इन झगड़ों से देश की बर्बादी होती है, समाज में विघटन होता है और देश में निर्माण के बजाय विनाश ही होता है। आन्तरिक और बाह्य, दोनों दृष्टि से ये झगड़े विनाशकारी हैं।

राजनैतिक क्षेत्र में सत्ता का जो संघर्ष चल रहा है उससे न सिर्फ राजनैतिक अस्थिरता पैदा हुई है बल्कि स्वयं लोकतंत्र को भी खतरा पैदा हो गया है। सबसे गंभीर बात यह है कि इस संघर्ष के कारण सार्वजनिक जीवन में से नैतिकता और चरित्र खतम होते जा रहे हैं तथा देश की नैतिक शक्ति टूट रही है। आज की सियासत में वह ताकत नहीं है जो इन समस्याओं का मुकाबला कर सके और देश को खतरे से बचा सके।

इस परिस्थिति का बुनियादी इलाज लोगों की अपनी ताकत से ही सम्भव है। इस ताकत को पैदा करने के लिए लोगों में एकता, भाईचारा और संगठन जरूरी है। लोग अपने पैरों पर खड़े हों, मिल-जुलकर स्वयं अपने मसले हल करने की तरफ बढ़ें और अपने संगठन के जरिये राजनीति को भी नियंत्रित कर सकें तभी आज की समस्याओं पर काबू पाया जा सकेगा। इस काम के लिए सत्ता-निरपेक्ष निःस्वार्थ और सेवाभावी कार्यकर्ताओं की जमात आवश्यक है। आज भी देश में ऐसे लोगों की कमी नहीं है, लेकिन वे तटस्थ रहते हैं। अब समय आ गया है कि ऐसे सब लोग आज की गम्भीर परिस्थिति के मुकाबले के लिए आगे आयें और जनता की ताकत बढ़ाने के काम में अपनी निःस्वार्थ सेवाएँ प्रदान करें।

(खान) अब्दुल गफ्फार (खाँ) विनोबा जयप्रकाश नारायण

सेवाग्राम : ७-११-'६९

सरकार और पुराने नेताओं की राह नौजवान न ताकें !

श्री संपादकजी,

ग्रामदान निःसन्देह एक बहुत बड़ी वस्तु है। मैं स्वयं तो मानता हूँ, समस्त संसार के इतिहास में इसकी तुलना की दूसरी हलचल नहीं है। उसके प्रणेता और प्रवर्तक भी ऐसे ही महापुरुष हैं। इससे ऐसी ही महान आशाएँ भी रखी जा रही हैं। इन दिनों लगातार बाहर रहने के कारण मैं इस हलचल से सम्बन्ध रखनेवाली घटनाओं से सम्पर्क में नहीं रह सका हूँ तथा इस हलचल का स्वयं बिहार के लोक-जीवन पर प्रत्यक्ष क्या असर हो रहा है तथा पुष्टि का कार्य किस प्रकार आगे बढ़ रहा है, इसकी ठीक-ठीक जानकारी मुझे नहीं है। पर यह देखने की बात है, क्योंकि एक तरफ समाज की तकलीफें तेजी से बढ़ती जा रही हैं और उसके कारण एक ओर असन्तोष और अशान्ति तथा दूसरी ओर हिंसा-पंथियों की हलचलें व्यापक होती जा रही हैं। यह समस्या देश-व्यापी है। बिहार की जनता को इस ग्रामदान की हलचल से त्राण मिलने लग गया हो तब तो उत्तम, अन्यथा इसी असन्तोष और अशान्ति के कारण हिंसक हलचलों का शिकार बिहार भी हो सकता है। अतः मेरी नम्र राय में यह जरूरी लगता है कि असन्तोष, अशान्ति और हिंसा का ज्वार किसी प्रकार रुक सके ऐसा कोई तात्कालिक उपाय भी तुरन्त सामने आये। दीर्घकालीन योजना के साथ-साथ तत्काल राहत देनेवाली और आगे की आशा देकर धीरज बँधानेवाली 'शार्ट टर्म' योजना भी हमारे पास होनी चाहिए। अन्यथा 'मुए करे का मुआ ताजागा' वाली बात हो जाने का भय है। इसलिए यह चर्चा दो बातों पर केन्द्रित होकर देश का मार्गदर्शन करे, ऐसी मेरी नम्र विनति है।

(१) वर्तमान बुराइयों में देशव्यापी ऐसी कौन-कौनसी बुराइयाँ हैं? और उनमें से सबसे पहले किस बुराई को हाथ में लिया जाय? इस प्रश्न पर देश के खास विचारक किसी मध्यवर्ती स्थान में एकत्र होकर विचार करें और उसका प्रतिकार किस प्रकार हो, इसका निर्णय करें।

(२) इसके साथ-साथ कुछ बुराइयाँ ऐसी हैं, जो प्रत्येक राज्य की अपनी हो सकती हैं, इनका प्रत्येक राज्य के लोग विचार और प्रतिकार करें।

परन्तु इसमें अब जितनी देर होगी, स्थिति अधिकाधिक बिगड़ती चली जायेगी।

एक बात और, सरकार और पुराने नेताओं की भी अब नौजवान राह न देखें। सरकारों की हालत हम प्रतिदिन देखते ही हैं। इसी प्रकार पुराने नेता भी अब थक गये हैं। उनके जीर्ण-शीर्ण शरीर से अधिक आशा न करें। कोई भी मनुष्य अपने जीवन में दो-दो क्रान्तियों में उसी उत्साह से भाग नहीं ले सकता।

अतः इस समय विचारशील युवकों को ही आगे आना है। युवक ही क्रान्ति के वाहक होते हैं। परन्तु क्रान्ति का मतलब विवेकहीन तोड़फोड़, आगजनी और खून खराबी न हो। समाज के कष्टों के प्रत्यक्ष निवारण के साथ-साथ सम्पूर्ण राष्ट्र के चरित्र का निर्माण हो। हमारी गत क्रान्ति के फलस्वरूप और गांधी का जैसा लोकोत्तर नेतृत्व मिल जाने पर भी यह चारित्रिक उच्चता हमारे अन्दर नहीं आ सकी, बल्कि स्वतंत्रता के बाद उसमें अत्यन्त दुःखजनक अवनति हुई है। उसका परिणाम भी देश भोग रहा है। अतः देश का नया युवक-समाज इन बातों को ध्यान में रखकर विचार करे और पुराने नेता—यदि कोई इस लायक बचे हों—तो वे इनका मार्गदर्शन करें।

—बैजनाथ महोदय

मन की वेदना

सर्वोदय-साहित्य को मैं वैचारिक क्रान्ति का सफल और सबल साधन मानता हूँ, और ग्रामदान-आन्दोलन को क्रान्ति की एक सामयिक अहिंसक प्रक्रिया। इसके बावजूद भी मन में एक टीस है, वेदना है, जो हृदय को व्यथित किये रहती है। ऐसी स्थिति में जब कि भारत में सवा लाख के लगभग ग्रामदान-संकल्प हो चुके हैं और बिहार प्रदेश समूचा ग्रामदान के लक्ष्य को पाने जा रहा है, ग्रामदान-आन्दोलन जनान्दोलन का स्वरूप नहीं ले पा रहा है, कहीं कोई कमी अवश्य है। बस, यह एक वेदना है, जिसमें वर्षों से साथियों, कार्यकर्ताओं और नेताओं के समक्ष भी यदाकदा ग्रामदान-प्रशि शिविरों में, सर्वोदय-सम्मेलनों में और विचार-गोष्ठियों में प्रकट करता रहा केवल समाधान हेतु, किन्तु कहीं भी किसीसे भी समाधानकारक उत्तर न पा सका। अतः 'भूदान-यज्ञ' पत्र की शरण ली। इसे प्रकाशित करके मेरी इस वेदना को मित्रों और विचारकों तक पहुँचायें। उनके द्वारा प्राप्त उत्तर सम्भवतः समाधानकारक होंगे।

व्यथित हृदय,

—हरदास शर्मा, लोकसेवक

ग्राम पो० पिपरई, जिला झाँसी (उ० प्र०)

अहमदाबाद में शांतिकार्य सप्तसूत्री योजना

१—पीड़ित क्षेत्रों में सेवार्थ शांति-सैनिकों के कैम्प लगाना।

२—शिक्षण संस्थाओं के लोगों को उसमें शामिल करना।

३—टूटे हुए मकानों की मरम्मत के लिए तरुण शान्ति-सेना खड़ी करना।

४—जन-संपर्क के लिए नगर-पदयात्रा आरम्भ करना।

५—अखबारों से संपर्क रखना, ताकि उनमें सही-सही खबरें छपें और झूठी अफवाहों को फैलाने का अवसर न मिले।

६—बादशाह खाँ के भाषणों को हिन्दी, उर्दू तथा अन्य भाषाओं में प्रकाशित करना।

७—सरकारी-गैरसरकारी संस्थाओं से सम्पर्क करके उनसे सहयोग लेना।●

अगर यह नहीं तो वह

अगर कांग्रेस अपने घर का झगड़ा नहीं तय कर सकती तो
उसे महात्मा गांधी की सलाह मानकर अपने को लोकसेवक संघ में
बदल देना चाहिए, और कांग्रेस के हर सदस्य को छूट दे देनी
चाहिए कि वह अपनी रुचि की राजनीति में शरीक हो जाय। यह
सलाह कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री ढेबर ने कांग्रेस को दी है।
महात्मा गांधी ने सन् १९४८ में ही कांग्रेस को तोड़ने की सलाह
दी थी। लेकिन कांग्रेस ने २१ कीमती वर्ष गंवाये यह देखने
में कि गांधीजी की सलाह न मानने के क्या परिणाम हो सकते हैं।
जो परिणाम हुए वे सब आंखों के सामने हैं। कांग्रेस उन्हें भोग
रही है, कांग्रेस के साथ देश भी भोग रहा है।

दलों की राजनीति संघर्ष की राजनीति है। स्वतंत्रता के बाद
हमारे देश ने बहुमत अल्पमत की जो दलीय राजनीति अपनायी
उसमें संघर्ष अनिवार्य था। विरोध, उपद्रव और संहार संघर्ष के
तीन अंग हैं। दलों का विरोधवाद किस तरह संहारवाद तक
पहुँच सकता है, इसका प्रमाण पश्चिमी बंगाल में देखने को मिल
रहा है। और, दलों का संघर्ष भी दोहरा है। एक दल और दूसरे
दल में तो संघर्ष है ही, एक ही दल के भीतर संघर्ष एक गुट
और दूसरे गुट के बीच कम तीव्र नहीं है। एक गुट दूसरे गुट को
समाप्त करना चाहता है, जैसे एक दल दूसरे दल को समाप्त
करना चाहता है,—और यह काम वह करना चाहता है संख्या
की शक्ति से, उपद्रव के आतंक से, संहार की प्रक्रिया से। अगर
सत्ता के लिए दौड़ राजनीति में उचित है, तो जीतने के लिए कोई
भी उपाय अनुचित क्यों होगा? राजनैतिक दलों में जो लोग
संगठन में हैं वे सत्ता पर हावी होना चाहते हैं और जो सत्ता में
हैं वे संगठन को अपने हाथ में रखना चाहते हैं, और सत्ता के
उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्हें जो भी साधन प्राप्त हैं उन सबका इस्तेमाल
करने में उन्हें जरा भी संकोच नहीं है।

कांग्रेस में संगठन बनाम सत्ता का प्रश्न पुराना है। सन्
१९४६ में जबसे सत्ता मिली तभी से है। कांग्रेस ही क्यों, अब तो
कोई भी दल ऐसा नहीं है जिसमें यह प्रश्न न हो, और दिनों दिन
बढ़ता न जाता हो। सत्ता के संघर्ष में विचार भी एक अस्त्र के
रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। अगर सचमुच संघर्ष दक्षिण-
पंथी और वामपंथी विचार का है, तो अच्छा होगा। दक्षिण और
वाम दोनों पक्ष अलग हो जायँ और कम-से-कम भीतरी टूट-फूट
तो समाप्त हो। अगर संघर्ष होना ही है तो खुलकर, लेकिन
राजनैतिक ढंग से दलों के बीच हो।

अब इतने दिन बाद कांग्रेस के लिए लोकसेवक संघ की बात
सोचना कुछ अटपटा सा लगता है। शायद बहुत ज्यादा देर हो
गयी है। कांग्रेस में ही नहीं, देश की पूरी राजनीति में सेवा के
ऊपर सत्ता हावी हो गयी है। लोकसेवक संघ के पीछे बापू की
भावना यह थी कि नागरिक शक्ति सैनिक-शक्ति पर हावी हो,
यानी सेवा सत्ता पर हावी हो। सत्ता को इस कल्पना को सामने
रखकर लोकसेवा करनेवाले कितने व्यक्ति कांग्रेस में या किसी दूसरे
दल में रह गये हैं? जो कभी थे वे चले गये, या निकाल गये, या
लुप्त होकर बैठ गये। जो बच गये हैं वे खालिस सत्ता के उपासक हैं।

भारत की परिस्थिति में लोकसेवक संघ का बनना अनिवार्य
है, किन्तु लोकसेवकों की नयी धारा नये सिरे से समाज में से
निकलेगी। कांग्रेस लोकसेवक संघ बन जायगी या कांग्रेस के कुछ
लोग अपनी ही राजनीति में रुककर लोकसेवक बना लेंगे, यह
आशा नहीं रखी जा सकती। अब लोकसेवक वे ही बनेंगे जो
सत्ता नहीं सेवा, नेता नहीं, नागरिक की बात सोचेंगे, जो राज-
नीति नहीं लोकनीति में अपनी निष्ठा घोषित करेंगे। लोकसेवक
संघ कांग्रेस को गृह-युद्ध से बचाने का उपाय नहीं है। वह लोक-
तंत्र के विकास का अगला कदम है। लोकसेवक संघ का अर्थ
होगा कि लोक-नेतृत्व और लोक-प्रतिनिधित्व की दो धाराएं
अलग होंगी। लोक-नेतृत्व सेवा के हाथ में रहेगा और लोक-
प्रतिनिधित्व सत्ता को अपने हाथ में रखेगा। मालूम नहीं कांग्रेस
के कितने लोग सेवा की नाव में बैठकर अपनी किस्मत को आज-
माइश करने को तैयार हैं।

जहां तक जनता का प्रश्न है उसे तो यही सोचना है कि स्वयं
राजनीति को रखना है कि नहीं। उसे यह नहीं सोचना है कि
कौनसा दल रहे। इस प्रश्न पर ग्रामदान-आन्दोलन ने अपनी बात
जनता के सामने रख दी है। वह मानता है कि पूरी राजनीति
लोक-विरोधी है। अगर राजनीति चलेगी तो नागरिक की
स्वतंत्रता खत्म होगी। 'लोक' का भविष्य लोकनीति में है। बापू
के मन में जो लोकसेवक संघ था उसका आधार लोकनीति थी,
इसलिए यह सोचने से काम नहीं चलेगा कि अगर कांग्रेस न सुधर
सके तो लोकसेवक संघ बन जाय। 'अगर यह नहीं तो वह' के
संकुचित तर्क से देश के राजनैतिक जीवन की वास्तविकता कहीं
आगे जा चुकी है।●

अब 'सर्व' की बात सोची जाय

यह देश किसका है? उन सबका है जो आज इसमें रहते
हैं, और जो कल इसमें जन्म लेंगे और रहेंगे। उसमें जाति, धर्म,
वर्ग या भाषा आदि के आधार पर कोई भेद-भाव नहीं किया जा
सकता है। देश इसके पचपन करोड़ नागरिकों का है। हर नागरिक
का देश के साधनों और सुविधाओं पर समान अधिकार है।

अब न वर्णवाद का जमाना है, और न वर्गवाद से
ही काम चलेगा। यह जमाना दमन या संहार का नहीं है।
जमाना विज्ञान और लोकतंत्र का है। विज्ञान और लोकतंत्र की
मांग है कि समाज की ऐसी व्यवस्था की जाय कि उसमें हर
एक के लिए समान सम्मान का स्थान हो।

क्या यह संभव नहीं है? हाँ, संभव है। ग्रामदान 'सर्व' की
आवाज है। ग्रामस्वराज्य 'सर्व' की व्यवस्था है। सर्वोदय 'सर्व'
का जीवन-दर्शन है।●

श्रद्धांजलि

दिवंगत श्रीमती जानकी देवी प्रसाद

गत ९ नवम्बर को सर्वोदय परिवार की सुपरिचित और श्री देवी भाई की सह-धर्मिणी श्रीमती जानकी देवी का लन्दन में अचानक मस्तिष्क में ट्यूमर होने के कारण देहावसान हो गया। शल्य-क्रिया के उपलब्ध सारे आधुनिक उपकरण उन्हें बचा नहीं सके।

श्रीमती जानकी बहन वार्धियर सन् १९५४ में हिन्दुस्तानी तालीम संघ में नयी तालीम-अध्यापिका का प्रशिक्षण लेने सेवाग्राम आयी थीं। तब से ही सर्वोदय-परिवार की सदस्या रहीं। केरल के एक सम्पन्न परिवार में वे जन्मी थीं। प्रच-लित स्कूल-कालेजों में शिक्षा न लेकर वे घर में ही मातृभाषा मलयालम के उपरान्त हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी भाषा में अभ्यास कर पारंगत हुई थीं। आरोग्य-शास्त्र का भी उन्हें अच्छा ज्ञान था। तालीमी संघ में प्रशिक्षण लेने के बाद कुछ दिनों के लिए गृहमाता की, और बाद में तालीमी संघ और सेवाग्राम आश्रम के सम्मिलित पुस्तकालय की पुस्तकालया-ध्यक्षा का काम उन्होंने, सन् १९६१ में जब सेवाग्राम छोड़ा, तब तक दक्षता के साथ किया। नयी तालीम पत्रिका के सम्पादन में उनका प्रमुख हाथ रहा।

सेवाग्राम में ही श्री देवी प्रसादजी को उन्होंने अपना जीवन-साथी चुन लिया था। सन् १९६१ में श्री देवी भाई और जानकी बहन सपरिवार लन्दन गये और तब से अभी तक देवी भाई अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध विरोधी सभा के महामंत्री का काम सम्भाल रहे हैं। सर्वोदय-परिवार को देश की सीमा के पार ले जाने में उनका काफी सहयोग रहा। लन्दन में देवी भाई को उनके काम में मदद करते हुए जानकी बहन अपने आर्थिक संकट दूर करने के लिए कई दूसरे काम भी करती रहीं। बूढ़े लोगों के एक अस्पताल में उन्होंने सेविका का काम किया। श्रीमती जानकी बहन लन्दन से 'भूदान-यज्ञ' के लिए अक्सर महत्वपूर्ण सामग्री भेजती थीं।

भारत के गांधी-परिवार से स्थूल रूप से वे दूर हो गयी थीं, पर ब्रिटेन में उनके आस-पास एक नया गांधी-परिवार उपस्थित था। उन्होंने अनेक तरुण अंग्रेजों को गांधी-विचार की गहराई में ले जाने का प्रयत्न किया। 'एकांगी विरोध' से पीड़ित ब्रिटिश शान्ति-आन्दोलन को रच-नात्मक दृष्टि अपनाने के लिए भी प्रेरित करती रहीं।

भारत से गांधी-परिवार का कोई भी सदस्य जब पश्चिम की ओर जाने का सोचता था, तो उसकी दृष्टि जानकी बहन की ओर अवश्य पड़ती थी और जानकी बहन के घर का द्वार ऐसे अतिथियों के लिए सस्नेह खुला मिलता था। कभी कम न होनेवाला अतिथियों का तांता उनकी व्यस्तता को कईगुना बढ़ा देता था पर उसी अनुपात में उनकी प्रसन्नता की मात्रा भी बढ़ती चली जाती थी।

वे शीघ्र ही वापस भारत लौटने तथा ग्रामदान क्रान्ति के आरोहण में शामिल होने का सपना देखने लगी थीं। 'ग्रीन शहरीकरण' का प्रत्यक्ष अनुभव लन्दन में प्राप्त कर लेने के बाद उन्हें लगने लगा था कि भारत को यदि इस रास्ते पर जाने से बचाना है, तो ग्रामदान के काम में उन्हें अपनी पूरी शक्ति लगानी चाहिए, पर उनका यह सपना साकार होना कि उसके पहले ही उनकी बीमारी ने उन्हें हमसे छीन लिया।

सारा सर्वोदय-परिवार शोक संतप्त श्री देवीभाई तथा चिरंजीव मुकुन्द, उत्पल तथा रमीता के साथ अपनी हार्दिक समवेदना प्रकट करता है।●

आकस्मिक निधन

विलम्ब से प्राप्त सूचना के अनुसार समस्तीपुर अनुमंडलीय खादी-ग्रामोद्योग समिति लक्ष्मीनारायणपुरी (पूसारोड) के पुराने एवं वरिष्ठ सदस्य श्री जगन्नारायण सिंहजी का अकस्मात हृदय-गति रुक जाने के कारण दिनांक २५-१०-६९ के १० बजे रात में देहान्त हो गया। श्री सिंह बहुत ही कर्मठ एवं लगनशील और निस्पृह सेवक थे। उनके चले जाने से उनके परिवार के साथ-साथ संस्था की भी अपूरणीय क्षति हुई है। श्री जगन्नारायण सिंहजी के पीछे उनकी विधवा धर्मपत्नी के अतिरिक्त एक विवा-हिता लड़की और एक पुत्र है। वे ५० वर्ष के थे।

सैनिक नहीं शान्ति सैनिक

आज दुनिया में आये दिन किसी-न-किसी देश में, किसी-न किसी प्रकार का उपद्रव होता ही रहता है। कई जगह संयुक्त राष्ट्र संघ फौज भेजता है और कोशिश करता है कि उपद्रव शान्त हो। किसी राजनैतिक या आर्थिक कारण से जो लोग उपद्रव करते हैं वे हिंसा के हथियारों का इस्तेमाल करते हैं, और संयुक्त राष्ट्र संघ जिन्हें शान्ति के लिए भेजता है वे भी उन्हें हथियारों से ही दबाने की कोशिश करते हैं। धीरे-धीरे दूसरे देश भी शामिल हो जाते हैं, और कभी प्रकट तो कभी गुप्त रूप में लड़ाई चलती रहती है और जो जनता शान्ति चाहती है वह शान्ति के नाम में अशान्ति की शिकार होती रहती है। यह क्रम बराबर चलता रहता है।

राजगिर के श्यामसुन्दरनगर में हुई अन्तरराष्ट्रीय शान्ति-गोष्ठी में, जिसमें जापान तथा दूसरे देशों से अनेक प्रतिनिधि शरीक थे श्री जयप्रकाशजी ने इस कठिन स्थिति की चर्चा की। उन्होंने कहा कि अगर संयुक्त राष्ट्र संघ सचमुच शान्ति चाहता है तो उसे सैनिक न भेजकर शांति सैनिक भेजना चाहिए। दुनिया के हर देश में शान्तिसेना बने और यह सेना दूसरों को मारकर नहीं, बल्कि अपनी आहुति देकर विश्वशान्ति की रक्षा करे।●

सर्वोदय सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण से

सर्वोदय-दर्शन : द्वैत और द्वन्द्व से ग्रस्त जगत् को मुक्ति का संदेश

अभी आपके सम्मुख गुरुदेव का जो गीत गाया गया, "महाभिक्षु दाव आभार अहंकार...' उस महाभिक्षु से, तथागत से प्रार्थना की है गुरुदेव ने, कि हम सबके अहंकार की भिक्षा लो। इसी प्रार्थना के साथ में आपके सामने खड़ी हूँ। इस पवित्र ऐतिहासिक स्थान से, जहाँ पर भगवान महावीर ने विश्वमैत्री का सन्देश दिया और कहा, 'विश्व के साथ मैत्री हो', और इस भूमि से, जहाँ से भगवान बुद्ध ने हम सबको, जिस भगवान बुद्धदेव के बारे में पंडितों ने कहा " या योगिनाम चक्रवर्ती" वे कभी चक्रवर्ती बननेवाले थे, उससे कहीं अधिक चक्रवर्ती बन गये—"योगिनाम चक्रवर्ती।" तत्कालीन विश्व के हृदय पर उन्होंने राज्य किया। उस योगिनाम चक्रवर्ती की वाणी 'चरत भिक्खव चारिकम्, बहुजन हिताय बहुजन सुखाय लोकानुकम्पाय...' वह वाणी जहाँ प्रकट हुई, और जिस भूमि से भिक्षुओं को उन्होंने समस्त विश्व में भेजा, उस भूमि पर आप सब साथियों के सम्मुख जब मैं खड़ी हूँ तो स्वाभाविक भगवान का स्मरण होता है, और लगता है कि फिर से वह जमाना आया है और भगवान हमसे कह रहे हैं 'चरत भिक्खवे चारिकम्'। सारे विश्व में फिर से जाने का, और हमारे पूज्य बापूजी गुरुजी यहाँ पर उपस्थित हैं, सो वह फिर से हमें याद दिला रहे हैं कि विश्व में एक विचार लेकर जाने का, समय आ गया है।

अब इस देश की एक विचार भित्ति [illegible], उस विचार के साथ हजारों का जीवन [illegible] और नया आचार प्रारम्भ हुआ। [illegible] विचार ने, उस आचार ने प्रेरणा दी [illegible]ओं को और संचार शुरू हुआ। समस्त विश्व में संचार प्रारम्भ हुआ, और अपने आप प्रचार होता गया। सारे विश्व में वाणी फैली, सारे विश्व में सन्देश फैला करुणा का। उसी करुणा घन से आज हम प्रार्थना कर रहे हैं कि सारी पृथ्वी हिंसा से उन्मत्त है तो करुणा-घन इस धरणी तल को कलंक-शून्य करो।

जीवन की बुनियाद

कल हमने आचार्य राममूर्तिजी का प्रेरणादायी प्रवचन सुना। मुझे याद आ रहा है कि कोई भी मकान बनाता हो, और उसकी बुनियाद कमजोर हो तो वह मकान कभी टिक नहीं सकता है। जीवन का जो एक मकान है उसकी बुनियाद है शुद्ध-दर्शन। हमारे समग्र सर्वोदय-कार्य,

सम्मेलन-अध्यक्षा निर्मला देशपाण्डे

अहिंसक क्रान्ति, ग्रामदान, त्रिविध कार्यक्रम, सबके मूल में एक शुद्ध दर्शन की बुनियाद है जिसकी ओर ध्यान देना होगा, जो बुनियाद वेदान्त की है, अद्वैत की है। शंकराचार्य के गुरु के गुरु ने कहा था कि 'आप भले ही आपस में लड़ा करिये, लेकिन मैं अद्वैती हूँ मेरा किसी से कोई विरोध नहीं हो सकता है।' आज सारी दुनिया द्वैतों से, द्वन्द्वों से, विभक्त हुई है। भेद है, भेदों में से संघर्ष पैदा होता है, संघर्ष में से युद्ध, युद्ध में से विश्वयुद्ध और संहार तथा सर्वनाश का भय। इस सर्वनाश के भय को टालना होगा। मुक्त, द्वन्द्वों से परे वेदान्त-दर्शन की बुनियाद पर आधारित नये समग्र जीवन के दर्शन की आज आवश्यकता है। वेदान्त के आचार्य जैसे एक जमाने में वेदान्त के आचार्य शंकराचार्य हुए जिन्होंने जीव और ब्रह्म तक का एकत्व प्रतिपादित किया, 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या जीवो ब्रह्म' वैसे ही आज के युग के वेदान्त के महान आचार्य महात्मा गांधी, जिन्होंने कहा कि जीवन में कोई अन्तर नहीं हो सकता है, जीवन के टुकड़े नहीं हो सकते हैं, जीवन अखण्ड है, समग्र है। साधना करनेवालों के लिए उन्होंने कहा कि साधना करनी हो तो हिमालय की गुफाओं में नहीं जा सकते। (खैर, आज हिमालय की गुफाओं में जाकर साधना करने का न अवसर रहा है, न युग रहा है। क्योंकि ठीक वहीं पर हमारी समस्त साधना को और अध्यात्म को चुनौती देनेवाली हमारे पड़ोसी की फौज खड़ी है।) जहाँ उन्होंने साधना करनेवाले साधक से कहा कि साधना करनी है तो जाओ उन गरीबों के झोंपड़ों में। उनके आँसू पोंछो, दे दो उनके हाथ में चरखा, जो उनके जीवन के लिए सहारा बन जायेगा। साधक को उन्होंने शान्ति की तरफ मोड़ा और शान्ति करनेवालों से कहा कि शान्ति करना चाहते हो तो कदापि हिंसा से नहीं हो सकती है, शान्ति करना चाहते हो तो गीता का पाठ करो, कुरान का अध्ययन करो बाइबिल का पठन करो। साधना और शान्ति का द्वैत मिटा दिया। जीवन के जो टुकड़े हो गये थे, जो प्रवाह हो गये थे, उन प्रवाहों को एक में मिला दिया। और एक नये वेदान्त का उनके द्वारा प्रस्फुटन हुआ। उसी आविष्कार पर आधारित हमारा समग्र कार्य चल रहा है।

आवश्यक है विश्व को जोड़नेवाला दर्शन

हम जानते हैं कि दर्शन की बुनियाद जबतक ठीक न हो तबतक कोई काम ठीक नहीं चल सकता है। यह जो 'अधिक-से-अधिक लोगों का अधिक-से-अधिक भला'

या 'दुनिया के तमाम मजदूरो एक हो जाओ' वाले दर्शन हैं, ये टुकड़े करते है, भेद का निर्माण करते हैं, द्वन्द्व का निर्माण करते हैं। इसलिए इनमें से युद्ध और संहार अपरिहार्य है। विश्वशान्ति के लिए आवश्यक है विश्व को जोड़नेवाला दर्शन, एक करनेवाला दर्शन। 'ईशावास्य इदं सर्वम् यत्किंच जगत्याम् जगत्' उस दर्शन पर आधारित हमारा कार्य चल रहा है, जो कहता है कि हम सबकी भलाई चाहते हैं, सर्वोदय चाहते हैं, सब जातियों की, सब धर्मों की, सब भाषावालों की, सब देशवालों की, यहाँ तक कि चराचर की, हम सबकी भलाई चाहते हैं। कैसे होगी सबकी भलाई ? सबकी भलाई तभी संभव हो सकती है, जब सबकी भलाई का जो मार्ग है, अहिंसा का मार्ग, उसे अपनाया जायेगा। सर्वोदय तभी हो सकता है।

एक अमेरिकन लेखक की किताब पढ़ी, जिसमें जानवरों पर किये गये प्रयोगों का वर्णन है। एक अजीब किताब है। जानवरों के प्रयोगों में मैंने अहिंसा का दर्शन पाया। यह बताया है उसमें कि साँप जैसा जानवर, जिसे बड़ा खतरनाक बताया जाता है, वह भी पहचानता है कि आपके दिल में क्या है। अगर आपके दिल में हो कि समग्र सृष्टि हमारा मित्र है तो वह साँप आपको कभी काटेगा नहीं। और अगर आपको साँप के बारे में भय हो तो उस भय के कारण आपके मन में प्रतिहिंसा पैदा होगी और उस प्रतिहिंसा में से आप सोचेंगे कि साँप मिले तो उसे मार दूँगा। आपकी प्रतिहिंसा की लहरें उस साँप तक पहुँचती हैं। वह सोचता है कि हमारा दुश्मन आ रहा है, वह हमको मारे उसके पहले उसे मैं ही काट दूँ। तो आपके दिल में क्या चल रहा है इसका भी असर समस्त सृष्टि पर हो रहा है। इसका वर्णन उस छोटी-सी किताब में है। तो मैं यह स्पष्ट कर रही थी कि विश्व का कल्याण तभी हो सकता है जब कि उसके लिए अहिंसा का पथ अपनाया जायगा। इसीलिए गांधीजी ने कहा था : कि साध्य-साधन-शुचिता, अहिंसा के द्वारा शान्ति। उन्होंने कहा कि अगर अहिंसा के द्वारा स्वराज्य हासिल नहीं हो सकता है तो मुझे स्वराज्य नहीं चाहिए। हमने इस चीज को उस वक्त नहीं समझा था, लेकिन आज हम समझ रहे हैं। जब हमारे परिवार के सबसे बड़े बुजुर्ग बादशाह खाँ यहाँ आकर अपने दिल का दर्द प्रकट कर रहे हैं, तब हमको याद आ रहा है कि गांधीजी ने जो बात हमसे कही थी उस पर अगर हम चलते तो आज शायद जो हुआ वह नौबत नहीं आती। अब भी मौका है, अब भी हम सुधार कर सकते हैं।

हित-विरोध नहीं; हितैक्य

मैं जो निवेदन कर रही थी कि इस वेदान्त-दर्शन पर आधारित अहिंसक क्रान्ति का जो मार्ग है वह समस्त हितविरोधों को समाप्त करता है। कल राममूर्तिजी ने बहुत ही सुन्दर शब्दों में कहा कि जहाँ हमने हित विरोध की कल्पना मान ली, मालिक के हित के खिलाफ मजदूर का हित और मजदूर के खिलाफ मालिक का हित, गरीब का हित अमीर के खिलाफ, अमीर का हित गरीब के खिलाफ, तो वह कहाँ तक कहा जायेगा ? अखिल भारतीय पत्नी संघ, अखिल भारतीय पति संघ, इनकी भी स्थापना करनी होगी। दोनों के हित एक-दूसरे के खिलाफ मानने तक हमको जाना पड़ेगा। इसलिए यह जो हितविरोध की कल्पना है वह संघर्ष और संहार तक ले जायेगी। तो जानना होगा, समझना होगा कि हितों में विरोध है नहीं। मुझे वह मैसूर का बाबा का वाक्य याद आता है, उन्होंने कहा था कि "यह जो दो भेद मान लिये हैं 'है वाले' और 'नहीं वाले', ये भेद वास्तव में है ही नहीं समाज में। भगवान ने सबको 'है वाला' बनाया है। किसी के पास जमीन है, किसी के पास सम्पत्ति है, किसी के पास बुद्धि है, किसी के पास श्रम की शक्ति है, विद्या है, प्रेम है। हर एक के पास कुछ-न-कुछ भगवान ने दिया है। इसलिए जो कुछ हमें मिला है उसके हम मालिक नहीं हैं, ट्रस्टी हैं—यह भावना जब दृढ़ होगी, यह विचार जब दृढ़ होगा, दर्शन दृढ़ होगा और इस दर्शन पर आधारित समाज-रचना बनेगी तब वह शान्तिमय, स्वस्थ समाज होगा। इसलिए यह जो मिथ्या भेद है 'है वाला' और 'नहीं वाला' का यह गलत है। हितों में विरोध है नहीं।"

लुत्फ-मय तुमसे क्या कहूं

यह हितविरोध कहाँ तक आता है ? कभी-कभी हमारे साथी भी कह देते हैं हम कार्यकर्ता तो मरते हैं, गाँव-गाँव में जाते हैं, और बोलने का अवसर नेताओं को मिलता है, मोटर में चलने का अवसर नेताओं को मिलता है। नेता और कार्यकर्ता का एक द्वैत खड़ा हो जाता है। यह भयंकर द्वैत है, जाने अनजाने खड़ा हो जाता है। क्या हम यह नहीं कह सकते कि गाँव-गाँव में जो घूमते हैं उसमें अद्भुत आनन्द आता है ? मुझे याद आ रहा है, हम उत्तराखण्ड में उस निबिड़ आरण्य में रात्रि की उस वेला में जा रहे थे, निगूढ़ निशा, शान्त निस्तब्ध सृष्टि, बहुत कठिन चढ़ाई थी लेकिन उसका जो आनन्द था वह किसको प्राप्त हो सकता है ? इस अहिंसक सिपाही को। उस पर चढ़ते-चढ़ते पैर थक जाते हैं, रात के अँधेरे को चीरकर जब पौ फटती है, और जब सूर्यनारायण का आगमन होता है तो रवीन्द्र के साथ नाचने का मन होता है। यह आनन्द किसको मिलेगा ? मोटर में बैठनेवालों को हवाई जहाज में घूमनेवाले को कभी नहीं मिल सकता है। हमको आपको मिलेगा, जो गाँव-गाँव में जनता के पास जा रहे हैं।

एक बार बिहार के एक बड़े साहित्यिक बेनीपुरीजी विनोबाजी के पास आये थे। तो बाबा ने उनसे क्या कहा ? यह नहीं कहा कि आप भूदान पर कुछ लिखिए। साहित्यिकों से बाबा ने कहा, "मैं जिस रस का पान कर रहा हूँ उसमें आप सहभोगी हो जाइए, आप भी शरीक हो जाइए। यह गाँव गाँव में घूमने का क्या लुत्फ है, क्या आनन्द है, जरा आप आइये हमारे साथ और अनुभव कीजिए।" और बेनीपुरीजी ने कहा, "बाबा कभी-कभी हमें आप

बुलाइए।" "तो बाबा ने कहा, भौंरों को बुलाना नहीं पड़ता है। फूल खिल जाता है और भौंरे आस-पास आ जाते हैं।" हम देख रहे हैं कि फूल वास्तव में खिला है इसलिए इतने सारे भौंरे यहाँ इकट्ठा हो गये हैं। तो यह जो सारा आनन्द हमको मिलता है, उसमें कहाँ का हितविरोध। यह हमको सारी दुनिया के सामने कहना चाहिए कि इसमें जो आनन्द आता है, "बुलबुल-मय तुमसे क्या कहूँ गालिब, हाय कमबख्त तूने पी ही नहीं" यह कहना होगा उनसे, जो इस क्रान्ति में शामिल नहीं है।

मूंगफली के दाने नहीं अमृत

हमारे मध्यप्रदेश के एक साथी पश्चिम निमाड़ के एक गाँव में गये। पहाड़ चढ़कर, भूखे, प्यासे, थके, डेढ़ दिन तक खाना नहीं मिला। ग्रामदान के कागज पर हस्ताक्षर कर दिया उन गरीब आदिवासियों ने, जब ग्रामदान का विचार सुना कि गाँव को एक बनाना है, गाँव को एक परिवार बनाना है, वे खुश हो गये। लेकिन दिनभर खाना नहीं मिला, क्योंकि वे स्वयं भूखे थे। आखिर वे साथी शाम को गाँव छोड़ने लगे तो एक बहन ने कहा, "बेटा तुमने क्या खाया है?" उन्होंने कहा, 'माईजी कुछ नहीं खाया, जाने दीजिये दूसरे गाँव में जाकर खा लूँगा।" "नहीं बेटा, तुम हमारे गाँव से भूखे नहीं जा सकते। मैं भी भूखी हूँ लेकिन मैंने बीज के लिए थोड़ी-सी मूंगफली रखी है उसमें से चार दाने ले आया।" हमारे साथी ने कहा, 'नहीं माताजी, बीज का दाना मैं कैसे खाऊँ।' उस बुढ़िया ने कहा, "नहीं बेटा, तुम भूखे जाओगे मेरे गाँव से, तो मुझे बहुत दुःख होगा। तुम थोड़ा खा लो। भले ही थोड़ा कम पैदा होगा। लेकिन तुमको भूखे नहीं जाने दूँगी।" उस साथी ने चार दाने उठाये मूंगफली के। वे दाने क्या थे? अमृत से भी बढ़कर अमृत। ऐसा अमृत पीने को हमें गाँव-गाँव में मिलता है। तो कहाँ से ये भेद आये? मैं अपने साथियों से कहना चाहती हूँ कि जो आनन्द हम लूट रहे हैं उसे सारे देश भर में फैलायें और लोगों से कहें कि हमारे इस आनन्द में आप भी शरीक हो जाइए।

व्यक्ति और समाज-हित का समन्वय

हमारे इस युग के तपस्वी महात्मा गांधी ने हम क्या सिखाया? उन्होंने कहा कि हितविरोध गलत है। सबका हित एक है। सबका हित एक ही हित में है। अहित किसी का नहीं है। शान्ति में अमीरों का हित है, गरीबों का हित है, मालिकों का हित है, गाँववालों का हित है, शिक्षितों का हित है, शहरवालों का हित है। सबका हित इसमें समाया हुआ है। तो फिर इसमें आर्थिक रचना किस प्रकार की होगी? मुझे याद आता है एक यूरोप के सज्जन आये थे, जिनको हमने ग्रामदान का विचार समझाया। हमलोग तो ऐसे मानते हैं कि कोई महान सज्जन, विद्वान है, उसको भी हम ग्रामदान की चार बात समझाते हैं और गाँववालों को भी समझाते हैं। जब उसने एक बात सुनी कि मिल्कियत ग्रामदान में समाज की, लेकिन कब्जा किसान का रहेगा, यानि व्यक्ति की स्वतंत्रता और समाज का स्वामित्व दोनों का इसमें संगम है, दो हितों में जो सारी दुनिया बँटी हुई है, एक तरफ उन देशों का कैम्प है जो व्यक्ति की स्वतंत्रता की दुहाई देते हैं, और हमारे पश्चिम के साथी कहते हैं कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा के लिए हम एटम बम का इस्तेमाल करके दुनिया को मिटा देंगे। दूसरी तरफ रूस-चीन आदि देशों के साथी कहते हैं कि समाज के हित के लिए हम सारे समूह का बलिदान कर सकते हैं। इन दो में सारी दुनिया विभक्त है। यह द्वन्द्व है। क्या इस द्वन्द्व को मिटानेवाला कोई अद्वैत का विचार नहीं है? आया था इस हिन्दुस्तान में गांधी, जिसने कहा कि व्यक्ति की स्वतंत्रता और समूह का हित, इन दोनों का समन्वय हो सकता है। कैसे? जमीन की मिल्कियत समाज की, लेकिन कब्जा व्यक्ति का। कब्जा व्यक्ति का होगा लेकिन स्वामित्व समाज का होगा। अद्वैत का सर्वोत्तम उपाय ग्रामदान में प्रकट हुआ।

उस यूरोप के भाई को जब यह बात सुनायी, तब उन्हें इतनी खुशी हुई कि—हमारे हिन्दुस्तान के घर तो छोटे-से होते हैं—वह खुशी से इतना उछला कि उसका सिर छत से टकरा गया। उसने कहा, "उत्तर मिल गया।" "किस चीज का?" "दुनिया की समस्या का उत्तर मिल गया। व्यक्तिगत स्वतंत्रता और समाज के हित का सुन्दर संगम ग्रामदान में है। दुनिया की समस्या का उत्तर मिल गया।"

क्या हिन्दुस्तान इसे अपनायेगा ?

वे भाई चीन से आये हुए थे। उन्होंने एक अजीब बात कह दी हमसे। उन्होंने कहा कि, "अगर यह विचार हिन्दुस्तान में सफल होता है, हिन्दुस्तान की जनता इस विचार को अपनाती है, तो सारी दुनिया इस विचार को अपनायेगी।" वह वर्षों तक चीन में रहे हुए थे, तो उन्होंने अपने अनुभव के आधार पर कहा कि "चीन इसे जरूर अपनायेगा, मालूम नहीं यह कहाँ तक सही है, सुनी हुई बात आपके सामने कह रही हूँ। उसने कहा, 'क्योंकि वहाँ पर एक तलाश है, खोज है। एक प्रयोग असफल होता-सा दिख रहा है। साम्यवाद असफल होता जा रहा है। ग्रामदान में उसका हल दिख रहा है। उत्तर है। हो सकता है हिन्दुस्तान ने इसे अपनाया तो चीन इस विचार को अपनायेगा। लेकिन क्या भारत इस विचार को अपनायेगा?" आप सबकी ओर से उस भाई को कह दिया कि भारत के सभी गाँवों का गांधी शताब्दी तक ग्रामदान हो जायेगा। उसने कहा, "इट इज टू गुड टु बी ट्रू।" मैंने कहा, "नहीं।" अगर वे भाई यहाँ उपस्थित होते तो देखते कि यहाँ बिहार के सब गाँवों का ग्रामदान घोषित हो रहा है, दूसरे राज्यों से आये हुए कार्यकर्ता राज्यदान का संकल्प करके जा रहे हैं। वे भाई होते तो उन्हें विश्वास होता कि दुनिया का भविष्य उज्ज्वल है। उन्होंने कहा था कि "हमारी ओर से सब साथियों से कह दीजिये कि इस देश ने ग्रामदान को सफल बनाया तो आप लोग

संसार की समस्याओं का उत्तर प्रस्तुत कर पायेंगे।"

तो, यह जो हितविरोध माना जाता है, वह है नहीं, हितैक्य है। दोनों का समन्वय साधा जा सकता है। गांधीजी ने ट्रस्टीशिप का विचार हमें दिया था। क्या कहा था? केवल सम्पत्ति में शोषण होता है? मैं आलोचना नहीं करना चाहती हूँ, लेकिन एक बड़ा है अपने देश में, जिसके तीन मिनट के गीत रेकार्ड कराने पर दस हजार रुपये मिलते हैं। बर्नार्ड शा के बारे में कहा जाता है कि उनके एक शब्द के लिए एक पाउण्ड या दस पाउण्ड, ठीक-ठीक मुझे पता नहीं, मिलता था। पूँजीवाद में हर चीज का मूल्य पैसों में होता है। जितना शोषण बुद्धि और विद्या के बल पर किया जाता है, शायद उतना जमीन और सम्पत्ति वाले नहीं कर पाते। तो मतलब क्या है? हर चीज जो हमारे पास है जमीन की सम्पत्ति हो, या बुद्धि-विद्या हो, हम उन सबके ट्रस्टी हैं। ट्रस्टीशिप का विचार, थातीदार का विचार समाज में जब तक रूढ़ नहीं होगा तबतक शोषण-मुक्ति असम्भव है। शोषण-मुक्ति के बहुत प्रयोग संसार में हुए हैं। लेकिन शोषण-मुक्ति हुई नहीं। 'कैपिटलिस्ट' चला गया, 'कोमिसार' आ गया। यह समाज में हो रहा है। इसलिए वास्तविक शोषण-मुक्ति चाहते हैं तो उसके लिए जरूरी है कि ट्रस्टीशिप के विचार को हम मानें।

ग्रामदान के बाद की दिशा

पूछा जाता है कि ग्रामदान के बाद क्या? तो, क्या केवल पैदावार बढ़ने से ग्रामदान सफल होगा? जरूर पैदावार बढ़ानी है, इसमें कोई शक नहीं। हम तो भूखे हैं। हम इतने भूखे हैं कि कोई विदेशी आता है तो पहला सवाल यही पूछता है कि आप खाना क्या खाते हैं? मक्खन, फल वगैरह? अमेरिका से एक बहन आयी थी। कहती थी कि मैं बहुत गरीब हूँ। मैंने सोचा कि वहाँ गरीबों का खाना क्या होता है, जरा जान लूँ तो उसने सारा मक्खन, दूध, फल का हिसाब बता दिया। मैंने कहा कि यह तो हमारे यहाँ अमीरों को भी नसीब नहीं होता है। मैं कहना आपसे यह चाहती थी कि केवल भौतिक विकास पर्याप्त नहीं, लेकिन वह भी जरूरी है। मैं कहती हूँ भूखों को खाना मिलना चाहिए। बुद्धदेव ने यहीं पर कहा है कि भूखे के लिए भगवान कौन है, उपनिषदों में भी आता है—अन्नब्रह्मेति व्यजानात्, अन्न को ब्रह्म समझो। अब इससे ज्यादा क्या कहा जा सकता है। तो पैदावार बढ़ानी है, समृद्धि बढ़ानी है, देश को समृद्ध करना है, लेकिन उस कीमत पर नहीं जो आज पश्चिम के देशों में चुकाई जा रही है, जान-बूझकर नहीं। वहाँ एक प्रयोग हुआ। वहाँ जो 'टेक्नाक्रेसी' चल रही है, वहाँ मनुष्य यंत्र का गुलाम बनता जा रहा है; उस कीमत पर नहीं। हम यंत्रों का इस्तेमाल करेंगे। विज्ञान की जितनी सुख-सुविधाएँ हैं मानव के लिए, उन सबका मनुष्य के लिए उपयोगी है। लेकिन उसके साथ-साथ नैतिक विकास हमारा होना चाहिए। क्या हमारे ग्रामदानी गाँवों में पैदावार बढ़ने के साथ-साथ गुणविकास हो रहा है? पैदावार बढ़ने के साथ ट्रस्टीशिप की भावना बढ़ रही है? इसका हमें चिन्तन करना होगा। नहीं तो विकास की दिशा गलत हो जायगी। आर्थिक विकास हमको करना है ट्रस्टीशिप की दिशा में, हितैक्य की दिशा में।

और एक चीज करनी है। श्रम को तुच्छ माना गया है, हेय दृष्टि से देखा गया है, जबकि उपनिषदों से लेकर आज-तक 'कुर्वन्नेव कर्माणि जिजीविषेत् शतम्' कहा गया है। मेहनत करने का आदेश है। लेकिन श्रम करनेवाले को नीच समझा जाता है। इसलिए आर्थिक क्षेत्र में जो नया मूल्य प्रस्थापित करना है, वह है श्रम की निष्ठा। हिन्दुस्तान का श्रमिक आज श्रम को छोड़ना चाहता है क्योंकि श्रम उस पर लादा गया है। वह मजबूरी का श्रम है। मजबूरी का श्रम खतम होना चाहिए। लेकिन जीवन के एक मूल्य, स्वस्थ जीवन के, आध्यात्मिक जीवन के मूल्य के नाते श्रम की प्रतिष्ठा जबतक स्थापित नहीं होगी तबतक शोषणमुक्ति असम्भव है। अमेरिका के बारे में पढ़ा था, हमारे बहुत से दोस्त हैं जो बाबा के पास आते हैं अमेरिकन, अपने देश की कहानियाँ भी सुनाते हैं कि अमेरिका में दस प्रतिशत व्यक्ति जीवन में एक बार पागलखाने की सैर कर आते हैं। अगर यह अमेरिका में भाई-बहनों का समुदाय होता तो दस हजार में से एक हजार पागलखाना रिटर्न होते, आँकड़ों के हिसाब से। क्यों? इसलिए कि मानव का धरती से सम्पर्क छूट गया है। मनुष्य का धरती से जब सम्पर्क टूटता है तब उसकी हालत उस पेड़ जैसी होती है, जो जमीन से उखड़ा हुआ है। मनुष्य का धरती से उसका सम्पर्क बना रहना चाहिए, धरती की सेवा उसे करनी ही चाहिए।

हमें ऐसा समाज बनाना है

बाबा की एक कहानी आपको मालूम होगी। एक बार जेल में जेल के सुपरि-ण्टेण्डेण्ट ने उनसे कहा कि "विनोबाजी, आप तो जेल में ऐसे मस्त रहते हैं जैसे दुनिया का कोई बादशाह! आपको कोई दुख नहीं है?" तो विनोबाजी ने कहा, "एक दुख है, तुम सोच लो कि यह क्या है?" सात दिन तक सुपरिण्टेण्डेण्ट सोचते रहे, सात दिन के बाद आये, कहने लगे, "मुझे तो कोई दुख नहीं दिख रहा है, आप तो बड़े मस्त रहते हैं।" विनोबा-जी ने कहा, "इस जेल में सिर्फ एक दुख है, इन ऊँची-ऊँची दीवारों के कारण मैं सूर्योदय और सूर्यास्त को देख नहीं सकता। यह एक ही दुख है।"

आज पश्चिम के देशों में, नगरों में रहनेवाले, सभ्य कहलानेवाले, और जाने क्या-क्या उपकरण इस्तेमाल करनेवाले हमारे भाई-बहनों को यह सुख हासिल नहीं है। इसलिए हम एक ऐसी समाज-व्यवस्था बनाना चाहते हैं जिसमें हरेक को यह सुख हासिल हो। सूर्योदय और सूर्यास्त का जो अनुपम समारोह है, उसको देखने का सौभाग्य हिन्दुस्तान के ही नहीं संसार के हर व्यक्ति को मिले, ऐसा समाज हमें बनाना है। ग्रामदान के बाद की नयी→

राजगिर-सम्मेलन : उमड़ती अपेक्षाओं और निखरती चुनौतियों का माहौल

राजगिर सर्वोदय-सम्मेलन के सम्पन्न हुए लगभग तीन सप्ताह हो चुके। भीड़ का उफनता हुआ उभाड़ अब प्रेरणा का अपेक्षाकृत गहरा और स्थायी भाव साथियों के अन्तर में बन चुका या बन रहा होगा, ऐसी आशा की जा सकती है। पानी का अभाव और उसके कारण पैदा हुई अन्य परेशानियों के ऊपर राजगिर की मनोरम पहाड़ियों में सुबह-शाम के सुहावने वातावरण की सुखद यादें हावी हो चुकी होंगी, और 'भरि तूफान' के शोर रह-रहकर हमें आन्दोलित करते होंगे।

मालूम नहीं इतिहास के सर्जक और पाठक की अनुभूतियों में क्या साम्य और क्या वैषम्य होता है, लेकिन इतना स्पष्ट है कि राजगिर के जिस माहौल से हम गुजरे, उसमें इतिहास रचने और पढ़ने का सम्मिलित अनुभव हुआ। और अब, जब कि वे सारे दृश्य अतीत की ओट में चले गये हैं, उनका स्मरण और अधिक आकर्षक हो उठा है।

अब इस मंजिल पर

याद आता है कि सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध-समिति की पहली बैठक में ही बाबा ने, जहाँ पहुँचे हैं उस मंजिल (राज्यदान) की महत्ता को किस प्रकार हमारी निगाहों के सामने उजागर किया था, और किस तरह अपनी चढ़ाई की प्रति गम्भीरता को स्पष्ट करने के लिए 'अतितूफान' का आह्वान किया था। शायद वह व्यूह-रचना थी भूकम्प के बीच ज्वालामुखी बनकर अब तक बिहार में रह रहे बाबा की, बिहार के साथियों को उद्घाटित ज्वालामुखी के शिखर पर खड़ा कर विस्फोट का सामूहिक शक्ति से सामना करने के लिए उन्हें छोड़ जाने की।

मंच पर काका और बाबा सर्वोदय परिवार के बुजुर्ग

जाते-जाते बाबा ने पूरे भारत के बिहारीकरण की बात कहकर यह स्थिति स्पष्ट कर दी कि अब बिहार के साथियों के लिए एक ही दिशा है आरोहण की, अगली मंजिल की ओर बढ़ने की। जहाँ हैं वहाँ से पीछे मुड़ने का तो सवाल ही नहीं रहा लेकिन उस जगह की स्थिरता भी अस्तित्वहीनता में बदलनेवाली है, शायद इसीलिए आचार्य राममूर्ति ने अपने भाषण में 'उठो और चल पड़ो' का उद्बोधन किया और सम्मेलन अध्यक्षा निर्मला बहन ने 'चरत भिक्खवे चारिकाम्' की प्रेरणा जगायी।

उमड़ता जनसमूह

सम्मेलन के पहले दिन उमड़ पड़े जनसमूह को लोगों ने ५० हजार से लेकर

→सर्व-रचना करनी है उसमें मानव का धरती से, प्रकृति से सम्पर्क बना रहे, ऐसा नया समाज हमें बनाना है।

एक और बात हम निवेदन करते हैं। कल राममूर्ति जी ने उस पर काफी विस्तार के साथ कहा था कि शोषण-मुक्ति के साथ शासन-मुक्त समाज बनाना है। एक बार हम उत्तरकाशी गये थे, हिमालय की भूमि में, वहाँ के लोगों ने सवाल किया कि, "आप कहते हैं ग्रामदान होगा तो गाँव के लोग अपना सब काम अपने ही चलायेंगे, तो आप नेताओं का क्या होगा?" तो हमने कहा, "पहली बात कि हम नेता नहीं हैं, लेकिन दूसरी बात, हम मानते हैं कि जिस समय हम मिट जायेंगे उस समय ग्रामदान आन्दोलन सफल हो जायगा। हम चाहते हैं कि हम मिटें, कार्यकर्ता नाम की कोई अलग जमात ही नहीं रहे। जनता इस आन्दोलन को उठा ले, हमारी जरूरत ही न पड़े।" तो यह एक ऐसा अजीब आन्दोलन है कि जब जिसमें आन्दोलन चलानेवाले मिट जायेंगे, तो आन्दोलन पूर्णता पर पहुँचेगा। तो ऐसा अजीब आन्दोलन है। इसलिए हमारे सारे काम में यह वृत्ति रहनी चाहिए कि हम मिटते जायें। हम मिटते जायेंगे और जनता स्वावलम्बी होती जायगी।•

राजगिर। २८-१०-'६१

द्वारा निर्मित बौद्ध स्तूप के उद्घाटन के निमित्त से दक्षिण पूर्व एशिया के देशों से बौद्ध भिक्षु तो काफी बड़ी तादाद में आये ही थे, पश्चिमी देशों—यूरोप, अमेरिका आदि—से भी ग्रामदान के इस अहिंसक क्रान्ति को समझने की जिज्ञासा लिये, अपनी यांत्रिक सभ्यता के तनाव और घुटन से मुक्ति की खोज में लगे १९ युवक-युवतियाँ आयी थीं। इन युवक-युवतियों तक ग्रामदान का सन्देश पहुँचाने वाले भारतीय तरुण सतीश कुमार ने पिछले दो वर्षों की अपनी यूरोप यात्रा का अनुभव सुनाते हुए बताया कि साम्यवादी क्रान्ति के बाद दलीय तंत्र के प्रतिक्रियावादी ढाँचे में यूरोप-अमेरिका की युवा पीढ़ी को अब कोई आकर्षण नहीं रह गया है, और वे ग्रामदान की क्रान्तिकारी प्रक्रिया को आशाभरी नजरों से ताक रहे हैं। श्री जयप्रकाश नारायण ने इस गोष्ठी में ग्रामदान के क्रान्तिकारी मूल्यों को जागतिक सन्दर्भ में प्रस्तुत करते हुए इस बात पर जोर दिया कि विश्वशान्ति के लिए अहिंसक बुनियाद पर नयी समाजार्थिक रचना अनिवार्य है।

अमेरिका में चर्खा

इस सिलसिले में हा० अ०भा० शान्ति सेना मण्डल के मंत्री श्री नारायण देसाई के अमेरिका आदि कुछ देशों के अनुभव बहुत ही महत्त्व के हैं। आपने सर्वोदय सम्मेलन के तीसरे दिन सुबह की सभा में अन्तरराष्ट्रीय शान्ति के प्रयासों की जानकारी देते हुए कहा कि अमेरिका और यूरोप के देशों का मुख्य रूप से प्रतिरोध और प्रदर्शन प्रधान शान्ति आन्दोलन अब रचनात्मक कार्यक्रमों की ओर तेजी से आकृष्ट हो रहा है। आपने अपना अनुभव सुनाते हुए कहा, "मुझे चरखे पर सूत कातते देखकर बहुत से लोगों ने सीखने की कोशिश की। कई लोगों ने भारत से चरखे मँगाये भी हैं। उनका कहना है कि चरखे के माध्यम से हम अपनी परिस्थिति में अहिंसक समाज की अर्थरचना के बारे में कुछ करने की प्रेरणा प्राप्त कर सकेंगे।" श्री देसाई ने इस बात पर जोर दिया कि पश्चिम के शान्ति आन्दोलन और भारत के ग्रामदान-आन्दोलन को एक-दूसरे की विशिष्टताएँ अपनाकर समग्रता की ओर बढ़ना चाहिए।

सम्मेलन का विशाल पण्डाल

एक और नया संदर्भ

ग्रामदानी गाँवों के प्रतिनिधियों की तरह ही सम्मेलन के मंच पर ग्रामदान के सहयोगी भी आन्दोलन में एक नया संदर्भ जोड़ते दिखाई पड़े। इस बार नगालैण्ड, मणिपुर आदि सुदूरपूर्व का प्रतिनिधित्व सम्मेलन की अखिल भारतीयता को परिपुष्ट कर रहा था। इस क्रम में सुप्रसिद्ध आदिवासी नेता जयपाल सिंह की उद्घोषणा अब भी कानों में गूँज उठती है। आपने कहा था, "छोटानागपुर डीविजन में ग्रामदान से ग्राम स्वराज्य की स्थापना के काम में लगने का मैंने बाबा को वचन दिया है, और मैं इस काम में लगनेवाला हूँ। देश की समस्याएँ तभी हल होंगी, और भारत टुकड़ीकरण के खतरे से तभी मुक्त हो सकेगा, जब देश के जागृत नेता अपने संकुचित भेदों को भुलाकर ग्राम-स्वराज्य की स्थापना में अपनी संगठित शक्ति लगायेंगे। देश में आज जो नगराभिमुख जीवन-प्रवाह है, उसे मोड़कर ग्रामाभिमुख करने के कार्य में अपनी पूरी शक्ति से आपलोग इसमें लगें।"

देश में चल रही अलगाव-वृत्ति को गलत बताते हुए आपने सुझाया कि नगालैण्ड को 'नगास्थान' कहना चाहिए।

श्री जयपाल सिंह पिछले कुछ समय से ग्रामदान के काम में तन्मय होकर लगे हैं और उनके प्रयास से आदिवासी क्षेत्रों में ग्रामदान का काम काफी गतिशील हुआ है।

सतर्कता बरतने की आवश्यकता

सर्व सेवा संघ अधिवेशन और सर्वोदय समाज सम्मेलन के इस प्रकार के बहुतेरे उत्प्रेरक प्रसंगों के साथ ही अपेक्षाकृत अधिक सतर्कता बरतनेवाली कुछ बातें भी ध्यान में आती हैं।

बाबा ने सूक्ष्म से सूक्ष्मतर की ओर जाने की घोषणा के साथ ही इस क्रान्ति के कुछ मुद्दों पर अतिशय जोर दिया। एक बैठक में बाबा ने कहा कि अबतक शहरों का आक्रमण गाँवों पर होता आ रहा है लेकिन अब यह स्थिति बदलनी चाहिए और ग्राम का शहर पर आक्रमण होना चाहिए। इस सूत्र में शहर के नियंत्रण से गाँव को मुक्त करने और गाँव का नियंत्रण शहर पर यानी बाजार पर लागू करने का संकेत है। इसी दिशा को अगर हम राजनीतिक संदर्भ में देखें तो अब तक हमारे अन्दर जो एक प्रकार का हीन भाव काम करता रहा है कि हमारे कार्यक्रम सामाजिक ढाँचे को छूते और छेड़ते नहीं, इसलिए हमारे काम का असर (impact) नहीं दिखाई देता, उससे मुक्त हो सकते हैं। अगर हम उस तरह का आन्दोलन देखना चाहते हैं तो इसके लिए पर्याप्त पूर्व तैयारी करनी पड़ेगी। और इस पूर्व तैयारी के लिए भी बाबा ने प्रत्येक प्रदेश को अपनी क्षमता और परिस्थिति के अनुसार ग्रामदान की प्राप्ति के साथ पुष्टि का संयोजन करने की

छूट दे दी। और बिहार के लिए तो अब यह चुनौती बनकर खड़ा हो ही गया है।

इस सन्दर्भ में ही बाबा की अधिवेशन में कही हुई मुक्त चर्चा और सर्व-सम्मति की बात की महत्ता निखर कर सामने आती है। बाबा हमें इतनी बड़ी जिम्मेदारी (Task) देकर सूक्ष्मतर में प्रविष्ट हुए। क्या इस जिम्मेदारी को पूरा कर सकने लायक आन्दोलन की समस्या-केन्द्रित आवश्यक मुक्त चर्चा हुई, और हमने सर्व सम्मति से इसके लिए कुछ मुद्दे प्रस्तुत करने में सफलता पायी? मुक्त चर्चा के नाम पर हुई सदाबहारी बहसों, सैद्धान्तिक विवादों और ममीहाई उपदेशों में से समाधान के कुछ सूत्र हाथ लगे? तजौर, प० बंगाल या बिहारदान के बाद की परिस्थितियों के सन्दर्भ में पर्याप्त स्पष्टता हुई? आन्दोलन के इन ज्वलन्त प्रश्नों पर जिस प्रकार का प्रखर-चिन्तन प्रकट होना चाहिए, उसका अभाव खटकता ही रहा।

नयी पीढ़ी के नये चेहरे

सम्मेलन के मंच पर सम्मेलन अध्यक्षा सुश्री निर्मला बहन जिस नयी पीढ़ी का नेतृत्व कर रही थीं उस पीढ़ी के कई नये चेहरे मंच पर दिखाई पड़े। यह भविष्य के लिए आशाप्रद दृश्य था। लेकिन एक तरुण होने के नाते मुझे सलकोच यह बात स्वीकारनी चाहिए कि उनकी अभिव्यक्तियों में आन्दोलन की तरुणाई की झलक पाने के लिए प्रकरण प्रयत्न करना पड़ा।

इसी तरह शायद यह संयोजन की शिथिलता ही कही जायगी कि सम्मेलन का निवेदन प्रायः अचर्चित ही स्वीकृत होने की परिस्थिति के साथ प्रस्तुत हुआ।

क्या मिला?

लेकिन कुल मिलाकर मुझसे यह पूछा जाय कि इस मेले में तुम्हें क्या मिला? तो जवाब में मैं कहना चाहूँगा कि जो मिला और जितना मिला उसका आकलन असम्भव है।

चप्पलों के गायब होने के बावजूद हजारों अखिल भारतीय चरणों की सम्मिलित चर्चा में उड़ती धूल में भारत की एकता की एक सोंधी सुवास थी। उस सोंधी सुवास को अपने नासापुटों में भरकर और भारत की लगभग सभी भाषाओं-बोलियों के मिले-जुले कोलाहल में अपनी आवाज मिलाकर हम अपने को उस अखिल भारतीय भाव का आदमी महसूस करते थे, जिस भाव के आदमियों का आज देश में सर्वत्र अभाव-सा हो गया है।...जे० पी०, दादा आदि विभूतियों को सामान्य कार्यकर्ताओं के समुदाय में विशिष्टता के आवरणों से मुक्त होकर बैठने और अधिवेशन या सम्मेलन में सामान्य प्रतिनिधि होकर भाग लेते जिन्होंने देखा होगा, उन्हें दिल्ली की ऊँचाई पर चल रही अत्यन्त बड़ों की अत्यन्त क्षुद्र कशमकश की ऊब में अवश्य ही गहरा मिलती होगी।

अध्यक्षा की घड़ी और घटी

सम्मेलन-अध्यक्षा की घड़ी और तदनुसार घटी बड़ी सोरगरी, जिसकी आवश्यकता बहुत समय से महसूस की जाती रही है। शायद अगले सम्मेलन में घड़ी और घटी से बल्ला आंशिक पूरक बन जायें।

अन्त में इतने बड़े समारोह के संयोजक बिहार के साथियों का अद्भुत पराक्रम यादों को आभार देता निगाहों के सामने छा जाता है। उधर बिहारदान की पूर्णता के लिए प्रयास, इधर पूर्णाहुति के लिए इस महायज्ञ का आयोजन। लेकिन दोनों पूर्ण हुए! बुजुर्ग वैद्यनाथ बाबू, तरुण बैंगला बाबू तथा दूसरे सभी साथियों ने रात-रात की नींद गँवाकर जिस तरह काम किया, उस तरह पिछले तूफान के वर्षों में अभ्यस्त हुए बिहार के लोग ही कर सकते थे। उस दिन रात में जे० पी० को प्रभावतीजी के साथ अंधेरे में प्रतिनिधियों के लिए बने स्नान-टट्टी घर का निरीक्षण करते और उस समय की अव्यवस्था से परेशान होते देखा, तो खुद की परेशानी बढ़ गयी। और २६ को जब भीड़ का ज्वार भाटे में बदल गया था, तो देर थके बैंगला बाबू ने नींद से बोझिल पलकों को बोझिल करके ऊपर उठाते हुए पूछा "क्या आप को लगता है कि इस तरह के मेले का सिलसिला आगे भी चलना चाहिए?" मैं सोचता हूँ अब उनकी परेशानी उतर गयी होगी, और वे खुद ही इस प्रश्न के जवाब में सोचते होंगे—यानी मेला हमेशा ही होना चाहिए। —[illegible]

भारत को राजनीतिक परिस्थिति

भारत की राजनीतिक परिस्थिति ऐसी है कि जिनको आप नेता मानते हैं वे जनता के नेता नहीं हैं, बल्कि विशिष्ट पक्षों के नेता हैं। और पक्षों के नेता अपने अनुयायियों के अनुयायी होते हैं उनको पीछे मुड़कर देखते रहना पड़ता है कि मेरे पीछे कितने लोग हैं। इन्हें डर है कि मेरे पीछे ज्यादा लोग नहीं हैं, तो [illegible] मुड़ना पड़ेगा।

इस प्रकार आज भारत में सत्ता में नेतृत्व है ही नहीं। और वह नेतृत्व तब तक खड़ा नहीं हो सकता जब तक नेतृत्व करने की इच्छा रखनेवाले लोग राजनीति [illegible] के बाहर नहीं खड़े रहें। राजनैतिक लोग अनुयायी होते हैं। [illegible] वे मार्गदर्शन [illegible] नेतृत्व नहीं कर सकते। जो सत्ता में नहीं हैं, वे जनता को मार्गदर्शन दे सकते हैं, बाकी के सब लोग तो सत्ता में और पक्ष में बंधे हुए रहेंगे। मेरी भावना है कि [illegible] विद्वज्जन सत्ता के बाहर रहकर समाज के नेतृत्व की आवश्यकता पूरी करें। तब होगा तभी भारत की राजनीतिक परिस्थिति सुधरेगी।

—विनोबा

रांची, ६-३-'६९

पूर्व तंजौर के अशान्त क्षेत्र में शान्ति-केन्द्र की स्थापना

— श्री शंकररावदेव द्वारा केन्द्र के उद्देश्यों का स्पष्टीकरण —

प्रश्न है कि यहां शान्ति-केन्द्र की क्या आवश्यकता है? उत्तर सहज है कि यहाँ की अशान्ति ही शान्ति-केन्द्र की आवश्यकता पैदा कर रही है।

विविध प्रकार के टकरावों के कारण यहाँ अशान्ति पैदा हो गयी है। उन टकरावों के समाधान हेतु उनका सामना करना और स्थायी शान्ति की स्थापना करना, ताकि वे टकराव दुबारा न उभड़े, यह शान्ति-केन्द्र का उद्देश्य है।

इसलिए शान्ति-केन्द्र को तात्कालिक समस्याओं की भूमिका में काम करना है। वस्तुस्थिति से असम्बद्ध सैद्धान्तिक विवाद में इसे नहीं उलझना चाहिए।

विशिष्ट उद्देश्य

पूर्व तंजौर के शान्ति-केन्द्र का एक खास मकसद है। इसे यहाँ के टकरावों के कारणों का तात्कालिक और बुनियादी समाधान करना है।

पुरानी परम्पराओं में अस्पृश्य माने जानेवाले दलित वर्गों का एक बड़ा जन समुदाय मानवीय जीवन के प्राथमिक न्याय और स्वाधीनता—जिसके आधार पर वह अपने अन्दर एक सुसम्य नागरिकता विकसित कर पाता—से भी वंचित रखा गया है। इसलिए विशेष तौर पर यत्न करके उनको स्वाधीन और समान नागरिकता के आधार पर पुनर्स्थापित करना पहली आवश्यकता है।

जीवन के अन्तर्निहित गुणों के आधार पर बिना किसी प्रकार के व्यवधान के इसे विकसित करने की स्वतंत्रता की बुनियादी स्वर जीव में होती है। परम्परा में स्वतंत्रता की इस स्वर को बाहरी सामाजिक परिस्थितियों द्वारा दबाया गया है। हरिजनों के अन्दर की इस स्वतंत्रता की स्वर को जाग्रत करना एक दीर्घ और रचनात्मक प्रक्रिया है, जिसे शान्ति-केन्द्र को चालू करना है।

पर तभी सम्भव है, जब जीवन-निर्वाह के लिए स्वस्थ रोजगार और कुशलतापूर्वक काम करने के लिए उचित मजदूरी के लिए लोग आश्वस्त हों। वर्तमान समय में इस क्षेत्र में मजदूरी का सवाल अहम् सवाल बना हुआ है। शान्ति-केन्द्र को अपनी पूरी नैतिक शक्ति, इस बहुचर्चित टकराव की समस्या के सद्भावपूर्ण हल के लिए, लगानी है।

हरिजन मजदूरों के प्रति नेकनीयती और न्यायपूर्ण कदम स्वेच्छया उठाने के लिए खुशहाल लोगों की चेतना को प्रेरित करना है। शान्ति-केन्द्र के प्रयासों से हृदय परिवर्तन हो सकेगा।

कार्यकर्ता की जिम्मेदारी

तब इस शान्ति-केन्द्र पर कार्यकर्ता की क्या जिम्मेदारी होगी? आमतौर पर उनके लिए पचसूत्री-कार्यक्रम बना हुआ है। (देखें—'भूदान यज्ञ', अंक, ४२ २१ जुलाई '६९ पृष्ठ ५२७) लेकिन विशेष कार्यक्रम के तौर पर इसे निम्न बातों पर ध्यान देना है

• इलाके की अशान्ति के कारणों में मुख्य रूप से दो समस्याएँ हैं— एक है अस्पृश्यता और दूसरी है मजदूरी का सवाल कार्य जिसके कारण दरिद्रता है।

अस्पृश्यता अवश्य ही समाप्त होनी चाहिए और दरिद्रता का निश्चय ही मूलोच्छेद करना चाहिए। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए यहाँ के जन-समुदाय की मदद करने हेतु यह शान्ति-केन्द्र है।

कार्यकर्ता इसे कैसे करेगा? अहिंसक और शान्तिपूर्ण तरीकों तथा माध्यमों से यानी शिक्षण और प्रतीतीकरण (Persuation) द्वारा, साथ ही अगर कहीं आवश्यकता पड़े तो सीधी अहिंसक कार्रवाई द्वारा।

हमें मजदूरों, भूमिवानों, हरिजनों, सवर्णों, सबका शिक्षण करना है। शान्तिपूर्ण सीधी कार्रवाई के लिए हमें कमजोर तबके के लोगों, मजदूरों और हरिजनों को संगठित करना है।

हरिजनों का विकास

हरिजनों या मजदूरों का अहिंसक सीधी कारवाई के लिए किस प्रकार संगठन खड़ा करेंगे? मात्र रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा, क्योंकि अहिंसक शक्ति का विकास रचनात्मक कार्यों और जनता की सेवा के द्वारा ही हो सकता है। इसलिए मूलतः यह शान्ति-केन्द्र रचनात्मक कार्य और जन-सेवा के लिए ही होगा। सघन विकास-योजना के कार्यकर्ताओं को अवश्य ही यह बात अपने दिमाग में जमा लेनी होगी।

दुर्भाग्यवश वर्तमान समय में रचनात्मक कार्यक्रम बिना किसी राजनीतिक, सामाजार्थिक उद्देश्य के चलाये जाते हैं। इसलिए ये कार्यक्रम मात्र राहत या सुधार के कार्य रह गये हैं।

राहत के कार्य से कोई भी शान्ति या सामाजिक परिवर्तन नहीं हो सकता। जहाँ न्याय, समानता और स्वाधीनता व्याप्त होती है, वहाँ राहत-कार्य की आवश्यकता नहीं रहती।

हमें खादी और अन्य रचनात्मक कार्यक्रमों को अवश्य ही सामाजार्थिक उद्देश्यों के साथ अनुबन्धित करना चाहिए। वास्तव में खादी स्थानच्युत नहीं हुई है, बल्कि खादी-कार्यकर्ता ही अपना तेज खो चुके हैं। खादी अनिवार्यतः ग्रामदान आन्दोलन का अंग बन जानी चाहिए।

शान्ति-केन्द्र के कार्यकर्ताओं को किसी का विरोधी नहीं बनना है, अन्यथा शान्ति-कार्यकर्ता स्वयं अशान्ति के कारण बन जायेंगे। स्वभावतः वे निर्बल के तरफदार होंगे, लेकिन उन्हें सवर्णों का शत्रु नहीं बनना होगा। उन्हें मनुष्य की बुराई से, बुराई करनेवाले के प्रति बिना किसी प्रकार का घृणाभाव रखते हुए, संघर्ष करना है। क्योंकि हम सद्विवेक को जाग्रत करके हृदय-परिवर्तन की प्रक्रिया में विश्वास करते हैं और हमें प्रतीतीकरण (Persuation) की पद्धति के असफल होने पर आत्म-त्याग और बलिदान की पद्धति पर भरोसा है।●

(मूल अंग्रेजी से)

"मेरा जीवन ही मेरा संदेश है।"—गांधी

गांधीजी का सारा जीवन एक खुली पुस्तक है। उसे समझना और उसके अनुसार आचरण करना उनके प्रति सबसे उत्तम श्रद्धांजलि है।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
टुंकलिया भवन, कुंदीगरों का भैरु, जयपुर-२ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

उड़ीसा की चिट्ठी

अप्रैल १९६९ में कोरापुट जिलादान सम्पन्न हुआ। यह भारत का ११वाँ जिलादान था। सन् १९५५ से १९६० तक कोरापुट ग्रामदान आन्दोलन में सबसे आगे था। परन्तु ग्रामदान के बाद जब प्रखण्डदान होने लगा तब देखा गया कि कोरापुट जितना आगे बढ़ना चाहिए था, उतना नहीं बढ़ रहा है। फिर सन् १९६३ में विनोबाजी की उड़ीसा में दूसरी यात्रा हुई और उस अवसर पर काफी प्रखण्डदान हुए। स्थानीय प्रमुख लोगों के प्रभाव का भरसक उपयोग किया गया, लेकिन लोगों की अपनी सामर्थ्य जितनी आगे आनी चाहिए थी, उतनी आगे लेने की कोशिश नहीं हुई। कालाहाण्डी, सम्बलपुर, और बलांगीर, उत्कल के इन पश्चिमी जिलों में, जहाँ पर ग्रामदान की प्रगति बिलकुल नहीं हुई थी, आन्दोलन खूब आगे बढ़ा।

विनोबाजी ने 'तूफान' की बात सामने रखी। सारे भारत में तूफान का संचार हुआ। बिहार में आन्दोलन का वेग बढ़ा। देश भर के कार्यकर्ताओं में नया उत्साह पैदा हुआ और एक ताकत बनी। गांधी शताब्दी में राज्यदान के लिए बिहार में जोश पैदा हुआ। इस जोश का असर उत्कल में भी हुआ। प्रखण्डदान कुछ हो चुके थे और ग्रामदान प्राप्ति का कुछ अनुभव तो कार्यकर्ताओं को था ही, लेकिन सवाल था कि अलग अलग संस्थाओं में बंटे हुए कार्यकर्ताओं को इकट्ठा करना और उन लोगों के प्रत्यक्ष प्रभाव का उपयोग करना कैसे सम्भव होगा?

हरिदासपुर गाँव की बात ले लीजिए। वहाँ पर श्रीमती रमादेवी द्वारा सेवा-समाज की ओर से कुछ सेवा-कार्य चल रहा है। पाँच-दस कार्यकर्ता बहन और भाई वहाँ हैं। गाँव में बालवाड़ी चलाना, कताई करना, मेहनत के लिए गयी हुई बहनों के बच्चों को शिशु मन्दिर में सम्भालना और उन्नत खेती की प्रेरणा देने का काम वे करते रहे। लेकिन वहाँ के कार्यकर्ताओं के मन में अभी तक ग्रामदान की बात नहीं आयी थी। जब ग्रामदान की बात मन में आयी, तब वहाँ के मुखिया श्री अधिकारीजी, जो सेवा-समाज के काम में भी बहुत रस ले रहे थे, आगे बढ़े और अन्य लोगों को विचार समझाने का काम भी उन्होंने किया। कार्यकर्ता विचार समझाते गये। परन्तु लोगों के मन में कार्यकर्ताओं की नहीं, अधिकारीजी की बात ही बैठी और वहाँ ग्रामदान हुआ। सिर्फ हरिदासपुर ही नहीं, उत्कल में आज तक जो १३,००० ग्रामदान हुए हैं उनमें से करीब-करीब सब गाँवों में ऐसी बातें देखने और सुनने को मिलेंगी। सेवा-समाज भी छोटी संस्था थी। प्रान्त की प्रमुख रचनात्मक संस्थाएँ—जैसे, उत्कल नवजीवन मण्डल, नारायण पाटना क्षेत्र समिति, कोरापुट क्षेत्र समिति, उत्कल खादी मण्डल, कस्तूरबा-स्मारक निधि और गांधी स्मारक निधि की प्रान्तीय शाखाओं का सहयोग भी ग्रामदान के काम में ज्यादा-से ज्यादा हासिल होने लगा।

उत्कल के कटक और पुरी जिलों में अभी तक ग्रामदान का रथ वेग के साथ आगे नहीं बढ़ा था। सन् १९६७ में प्रबल तूफान आया और उसकी वजह से हजारों लोग बेघरबार, लाचार और असहाय हो गये। सर्वोदय-कार्यकर्ता इस अवसर पर लोगों के पास पहुँचे और उनके बीच राहत का काम किया। लोगों से मिलजुल कर रहने की बात समझायी। उत्कल सर्वोदय मण्डल के कई प्रमुख सदस्य राहत के काम में महीनों तक लगे रहे। इसके दो परिणाम आये। कई प्रमुख कार्यकर्ता, जिनकी आवश्यकता महसूस हो रही थी ग्रामदान-संवर्द्धन के लिए, राहत के काम में लगे, और दूसरी ओर इसके साथ-साथ राहत के काम में लगे हुए कार्यकर्ताओं की निष्ठा और निर्दलीय वृत्ति से कई गाँवों में ग्रामदान के लिए प्रेरणा जागृत हुई और नये लोगों के साथ ग्रामदान विचार का रिश्ता जुड़ा। परिणामत कटक जिले में महाशान्त पड़ा और पुरी जिले में सुआगों प्रखण्ड प्रखण्डदान की मंजिल के पास पहुँच गये। कार्यकर्ताओं को उत्साह देने के लिए दादा और शंकरराव जी जैसे विशिष्ट पुरुषों का आगमन भी हुआ। प्रान्तीय सर्वोदय-सम्मेलन की अध्यक्षता करने के लिए जगन्नाथन्‌जी भी आये। तमिलनाडु का उनका अनुभव तरुण कार्यकर्ताओं के लिए उत्साह का स्रोत बन गया। पहले कोरापुट और बाद में मयूरभंज में ग्रामदानी गाँवों के लोगों की सहायता से आसपास के गाँवों में ग्रामदान कराने की कोशिश की गयी। इस काम में पूरी सफलता मिली। मयूरभंज जिले में तो स्कूल और कालेज के विद्यार्थी भी इस काम के लिए आगे आये। ग्रामदान के साथ साथ शान्ति-सैनिकों और शान्ति-सेवकों की संख्या भी बढ़ायी गयी। जगह-जगह पर कार्यकर्ताओं के शिविर भी होने लगे। ग्रामदान के बाद ग्राम-निर्माण की बात जब आयी तब मार्गदर्शन देने के लिए बंगाल के श्री क्षितीशराय चौधरी यहाँ पहुँचे। श्री चारुचन्द्र भण्डारी तो ग्रामदान-काम को वेग देने के लिए कई बार यहाँ आये।

आशा थी कि विनोबाजी के उत्कल-आगमन के अवसर पर मयूरभंज जिलादान सम्पन्न हो जायगा, परन्तु वह हो नहीं सका। इसके कई कारण थे, परन्तु उनमें से एक मुख्य यह था कि जिलादान के लिए जिस व्यवस्था, जिस लगन और योजनाबद्ध ढंग से किया जाना चाहिए वह हो नहीं सका। विभिन्न संस्थाओं के कार्यकर्ता जिस दिन वहाँ इकट्ठा हुए, उससे १५ दिन पहले अगर वहाँ इकट्ठा हुए होते तो मयूरभंज का जिलादान कभी अधूरा नहीं रह जाता। जिले के २६ प्रखण्डों में से १८ प्रखण्ड पूरे हो चुके हैं। बाकी ८ प्रखण्डों की पूर्ति जल्द-से-जल्द हो जायगी। उत्कल में ग्रामदान-आन्दोलन के प्रमुख नेता

श्री विश्वनाथ पटनायक ने, जो कि सबके लिए "बाबा" हैं, मयूरभंज जिलादान के लिए संगठन करने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली है। बालेश्वर और फुलबाणी जिलों में भी जिलादान के लिए प्रयत्न चल रहा है।

गांधी-जन्म-शताब्दी तो आ गयी, परन्तु उड़ीसादान से हम आज कई मील दूरी पर हैं। परन्तु कार्यकर्ताओं की सारी शक्ति अगर एकसाथ लगनपूर्वक एक-एक जिले में जुट जाय तो यह काम मुश्किल नहीं होगा। आन्दोलन को वेग देने के लिए विचार-प्रचार का महत्त्व काफी है। इसके लिए उत्कल की सर्वोदय-पत्रिका "ग्रामसेवक", जो "सर्वोदय" के नये रूप में परिवर्तित होनेवाली है, के ३०,००० ग्राहक बनाने का निर्णय लिया गया है।

—अनादि नायक

सर्वोदय-सम्मेलन में

राजगिर सर्वोदय-सम्मेलन में बिहार से ३६४७ महाराष्ट्र से २०१२ प्रतिनिधि, इनके अलावा उत्तरप्रदेश से ७६४, प० बंगाल से ६५२, म० प्र० में ८०२, गुजरात से ५६०, राजस्थान से २०५, दिल्ली से ५२, पंजाब से ३५, केरल से ३५, मैसूर से १८८, तमिलनाडु से १५१, आंध्र से १२९, नागालैण्ड से १०, त्रिपुरा से ८, हिमाचल से ८, हरियाना से ३२, जम्मू कश्मीर से ४, नेफा से २, असम से २४३, मणिपुर से २७, प्रतिनिधि आये थे। विदेशों में सर्वोदय-आन्दोलन को सघन रूप से लोकप्रिय बनानेवाले प्रतिनिधि भी आये थे।

ज्ञातव्य है कि प्रतिनिधियों के निवास के लिए १०९९ टेन्ट लगाये गये थे। सम्मेलन की आन्तरिक व्यवस्था में बिहार के विभिन्न विद्यालयों से आये ७५० स्वयं-सेवक बराबर लगनपूर्वक अपने अतिथियों का स्वागत-सत्कार करने में जुटे रहे।•

पटना में अति तूफान के लिए महत्त्वपूर्ण बैठक

पटना से प्राप्त सूचना के अनुसार बिहारदान के बाद की व्यूह-रचना और कार्यक्रम निश्चित करने के लिए बिहार के प्रमुख कार्यकर्ताओं की बैठक २१-२२ नवम्बर '६९ को ही आयोजित हो रही है।

इस अवसर पर बिहार सर्वोदय संघ की बैठक भी होगी जिसमें बिहार ग्रामदान प्राप्ति संयोजन समिति के विघटन तथा आगे के काम के संयोजनार्थ ग्रामस्वराज्य समिति के गठन पर भी विचार होगा।

आशा की जाती है कि इस बैठक के तुरन्त बाद पुष्टि का अति तूफान-अभियान पूरे प्रदेश में जोर शोर से शुरू होगा।•

खादी और ग्रामदान एक-दूसरे के पूरक

खादी-जगत् के वरिष्ठ नेता श्री विचित्र नारायण शर्मा ने सर्वोदय-सम्मेलन में बोलते हुए कहा कि जो लोग 'खादी और ग्रामदान' को एक-दूसरे से भिन्न कार्य मानते हैं, वे दोनों में से किसीके सही स्वरूप से परिचित नहीं हैं। आपने इस बात पर जोर दिया कि ग्रामदानी क्षेत्रों में, और मुख्य रूप से बिहार में, खादी की नयी अहिंसक अर्थ-रचना का आधार विकसित करना चाहिए।•

आन्ध्र प्रदेश का कड़प्पा जिलादान

सर्वोदय-सम्मेलन के मंच से आन्ध्र प्रदेश के कड़प्पा जिले के एक अग्रणी प्रतिनिधि ने घोषणा की कि प्रदेश का पहला जिला कड़प्पा जिलादान की मंजिल पूरी कर चुका है। इस उपलब्धि से उत्साहित होकर आन्ध्र के कार्यकर्ताओं में प्रदेशदान के संकल्प की मनोभूमिका तैयार हुई है।

सीमांत गांधी वाराणसी में

अब तक के निश्चित कार्यक्रम के अनुसार सीमान्त गांधी खान अब्दुल गफ्फार खां आगामी २७ नवम्बर '६९ को वाराणसी पधार रहे हैं। आप राजघाट स्थित सर्व सेवा संघ के केन्द्र पर ठहरेंगे। सीमान्त गांधी का वाराणसी का कार्यक्रम तैयार किया जा रहा है।•

लोकयात्रिक वाराणसी में

अखिल भारत लोकयात्रा टोली सर्वोदय-सम्मेलन के बाद उत्तरप्रदेश में भ्रमण कर रही है। इस सिलसिले में उक्त टोली ने दीवाली के अवसर पर चार दिन सर्व सेवा संघ में बिताये। १३ नवम्बर को उनकी पदयात्रा वाराणसी नगर में शुरू हुई। यात्रा के निश्चयानुसार चार माह उत्तरप्रदेश में बिताकर यात्री-दल जम्मू-कश्मीर की पदयात्रा के लिए अग्रसर हो जायगा।•

कृपया क्षमा करें

जैसा कि हमने पिछले १० नवम्बर के अंक में निवेदन किया था, सम्मेलन के कारण हुई कार्यालय की अस्तव्यस्तता के चलते हम ३ नवम्बर '६९ का अंक प्रकाशित नहीं कर सके। इसके कारण साथियों और पाठकों ने अपने पत्रों द्वारा परेशानी व्यक्त की है। हम पुनः इसके लिए सबसे क्षमा चाहते हैं। —सम्पादक

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

अन्य पृष्ठों पर

वर्ष : १६ अंक : ८
सोमवार २४ नवम्बर, '६६

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४१८५

शान्ति-सेना तथा शान्ति-पात्र

प्रश्न क्या शान्ति सैनिक का यह कर्तव्य हो कि दंगे-स्थल पर शान्ति सैनिक को लड़नेवालों के बीच जाकर आत्मबलिदान के लिए तत्पर होना चाहिए ?

उत्तर जरूर होना चाहिए। इसके लिए कोई सवाल नहीं। यह स्पष्ट ही है, दंगा करनेवालों के बीच जाना और दंगों के बीच आत्म बलिदान की तैयारी करना। इस वास्ते मैंने सूचना दी कि द्वेष का प्रभाव पर्याप्त नहीं, प्रेम का ही विचार होना चाहिए। दोनों पक्ष पर अगर हमारा सच्चा प्रेम है, और उसको हम गलत रास्ते मे रोकना चाहते हैं, वे नहीं रुकते हैं, तो प्रथम हमारा बलिदान देकर आगे परमात्मा जैसा सुझाये वैसा करना चाहिए। यह शान्ति सैनिकों का कर्तव्य है, इसमे तनिक भी सन्देह नहीं। लेकिन यह नहीं हो सकता कि एक जगह के शान्ति सैनिक दूसरी जगह भेजे जायें और वहाँ पर वे काम शुरू करें। इसमे कृत्रिमता आ जायेगी। इसे समझना चाहिए। पटना में अगर दंगा होता है तो पटना की जिम्मेदारी हमारी है, रांची मे होता है तो रांची की जिम्मेदारी हमारी है। हमारे काम के जो स्थान आते हैं उन-उन स्थानो की जिम्मेदारी हमको तुरन्त उठानी चाहिए। यह हमारे कार्य का सर्वोत्तम और स्वाभाविक आरम्भ होगा। वह होते-होते हमारे सत्याग्रह चले तो हम भारत के सब शहरों में पहुँच सकते हैं। यह आगे की बात है।

दूसरी बात यह कि प्रजा स्वरक्षित होनी चाहिए, सुरक्षित नहीं। इस वास्ते शान्ति सैनिक के काम करने मे हम ही काम कर रहे हैं और हममे से ही लोग है, ऐसा उनका हमारा सम्बन्ध, जहाँ-जहाँ हम काम करेंगे वहाँ-वहाँ, बनना चाहिए। इसका अर्थ हुआ कि जो आपको सर्वोदय-पात्र या जिसको शान्ति-पात्र नाम दिया जाय, वह शान्ति-पात्र सब दूर फैलने चाहिए। वह लोक-सम्मति है। यह कार्य आरम्भ हो चुका है। मैंने तो यह कहा था कि ग्रामदान का विचार मुझे सूझा, खास बात नहीं है, उसे गांधीजी की देन माननी चाहिए। लेकिन जब सर्वोदय-पात्र का विचार मुझे सूझा तब मुझे मालूम हुआ कि मैं ऋषि बना यानी मुझे नया दर्शन हुआ, ऐसा मुझे भास हुआ। मेरे प्यारे भाइयो मेरा विश्वास इस पर विशेष है, क्योंकि इससे हमारा जन-सम्बन्ध बन जाता है, लोक-सम्बन्ध बन जाता है। इसीलिए इसको बढ़ाना चाहिए। जैसा दक्षिण भारत मे लोगोंने शुरू किया, वैसा सारे भारत मे शुरू करना चाहिए। हरेक प्रान्त अगर उसका कोटा बनाये तो बहुत काम हो सकता है। इसके बिना गाँव-गाँव मे जो प्रवेश हो रहा है वह काम का नहीं रहेगा।

राजगिर, २७-१०-'६६

—विनोबा

मतदाताओं से अपील

सर्व-सेवा-संघ की प्रबन्ध समिति ने राष्ट्रीय परिस्थिति पर निम्नलिखित वक्तव्य दिया है :

'भारत के साथ-साथ उसी दशक में जिन देशों ने स्वतंत्रता प्राप्त की थी उनमें से कई देशों में लोकतंत्र समाप्त हो चुका है, किन्तु भारत में वह अब भी टिका हुआ है। पर समय के साथ-साथ हमारे राजनैतिक ढाँचे की कई कमियाँ प्रकट हुई हैं, और सामाजिक व्यवस्था के दोषों को उत्तेजना मिली है, जिनके कारण राष्ट्र की नैतिक शक्ति का ह्रास हुआ है, और लोकतंत्र की बुनियाद बहुत कमजोर हुई है।

देश में राजनीति का खेल ऐसे ढंग और स्तर पर खेला जा रहा है जिसका कोई सम्बन्ध सामान्य लोगों की तात्कालिक आवश्यकताओं से नहीं है। एक तो जनता में समुचित राजनैतिक चेतना का अभाव है, दूसरे राजनीति का तंत्र ऐसा है, कि जनता देश के राजनैतिक जीवन में ऐसे प्रभावकारी ढंग से भाग नहीं ले पाती कि राजनीति पर उसका स्वस्थ असर पड़ सके। इसके कारण राजनैतिक दल, समूह, और दूसरे लोग निरंकुश होकर सत्ता के संघर्ष में अशोभनीय ढंग से भाग लेते हैं। वे सोचते तक नहीं कि इसका राष्ट्र के व्यापक हित पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इस क्रम में राजनैतिक आचरण के अत्यन्त अवांछनीय स्वरूप सामने आये हैं। कई दल दो या ज्यादा टुकड़ों में बँट गये हैं। देश का जो सबसे बड़ा और पुराना दल था वह विघटित हो चुका है। देश के कई राज्यों में जो 'संयुक्त मोर्चे' बने थे वे भी अपने संकुचित स्वार्थ के ऊपर नहीं उठ सके, और उनका भी हाल बुरा है।

जनता अपनी तकलीफों से ऊब गयी है। अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था में, जिसकी बुनियाद में हिंसा है, रहते-रहते उसका कई बार धैर्य खो गया है, और वह स्वयं हिंसा पर उतारू हो गयी है। इतना ही नहीं, अनेक अवसरों पर स्वयं राजनैतिक दलों और नेताओं ने जनता के आग्रहों और भावनाओं को ऐसे गलत उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उभाड़ा है जिनका उसकी तकलीफों से कोई सम्बन्ध नहीं था।

इन कारणों से लोकतंत्र के मूल्यों के लिए खतरा पैदा हो गया है। देश समुन्नत जीवन की दिशा में सुव्यवस्थित कदम उठा सकेगा, उसकी सम्भावना भी सन्देह से परे नहीं रह गयी है। हमारा निश्चित मत है कि ऐसी बिगड़ी हुई स्थिति का उपाय जनता के सिवाय दूसरे किसी के हाथ में नहीं है। उसकी जागरूकता और संगठित शक्ति ही देश के राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन को सही रास्ते पर ला सकती है। ग्रामदान-आन्दोलन का अबतक जो विकास हुआ है उससे सिद्ध होता है कि भारत की जनता में किसी आदर्श के लिए ऊँचा उठने की शक्ति बनी हुई है। इसके कारण यह सम्भावना भी प्रकट हुई है कि जनता देश के राजनैतिक जीवन में अपना प्रभावकारी हक अदा कर सकती है। वह इतना तो तत्काल कर सकती है कि खुलकर राजनैतिक दलों और नेताओं के तिकड़म में फँसने से इनकार कर दे, और अपना काम अपने आपस के संगठन द्वारा चलाये।

ग्रामदान में जो सम्भावना प्रकट हुई है। वह व्यवहार में तो तभी उतरेगी जब जनता महसूस करेगी कि जाति, भाषा, धर्म आदि के भेद-भाव से ऊपर उठना कितना जरूरी है, और कितना जरूरी है राष्ट्रीय एकता कायम करना, लोकतांत्रिक मूल्यों को बनाये रखना, तथा हिंसा से बिलकुल अलग रहकर समाज का अहिंसक उपायों से आमूल परिवर्तन करना।

इस दृष्टि से ग्रामदान के सन्देश को देश के कोने-कोने में पहुँचाने तथा उसके बाद के काम को शुरू करने में एक क्षण की भी देर नहीं होनी चाहिए।

शान्ति-सेना ने राष्ट्रीय एकता और अहिंसक सामाजिक परिवर्तन के क्षेत्र में अबतक एक विनम्र प्रयास किया है। इन लक्ष्यों की सिद्धि के लिए शान्ति-सेना के कार्यों का विस्तार एक महत्वपूर्ण माध्यम बन सकता है। लेकिन यह तभी हो सकेगा जब निःस्वार्थ और समर्पित कार्यकर्ता बड़ी संख्या में सामने आयें। सर्व-सेवा-संघ की प्रबन्ध समिति ऐसे तमाम लोगों से, जिन्हें राष्ट्र के हित की चिन्ता है, निवेदन करती है कि वे सेवा के लिए तैयार हों।

हम राजनैतिक दलों और नेताओं से भी अपील करते हैं कि वे जरा देखें कि उनकी करनी देश को कहाँ ले जा रही है, और देश को अधिक क्षति पहुँचाने से अब भी अपने हाथों को रोक लें। वे सभी जनता की भलाई की दुहाई देते हैं, हमारा आग्रह है कि वे स्वयं जनता का शक्ति बढ़ाने का काम करें।

हम मतदाताओं को चेताना चाहते हैं कि वे ही इस देश के असली स्वामी हैं। उनका अपने प्रति और देश के प्रति यह कर्तव्य है कि वे अपने प्रतिनिधियों के आचरण पर ध्यान रखें, और अगर वे गलत काम करते हैं तो उन्हें सही रास्ते पर लायें। इस वक्त जो हालत है उसे देखते हुए इस बात की जरूरत है कि देश भर में फैले हुए मतदाता अपनी-अपनी जगह इकट्ठा हों, सभाएँ करें, पत्र और तार भेजकर बतायें कि देश के हित को भुलाकर इस वक्त चलनेवाली गुटों और व्यक्तियों द्वारा गद्दी की लड़ाई की निन्दा करते हैं। अगर बड़े पैमाने पर जनता इस तरह अपना मत प्रकट करे तो लोकशक्ति का प्रदर्शन होगा, और सम्भव है कि देश की अत्यन्त तेजी से होनेवाली राजनैतिक गिरावट पर रोक लग जाय।●

बापू की ये बातें

यह पुस्तक मनुबहन ने गुजराती में लिखी है। इसका हिन्दी अनुवाद श्री काशिनाथ त्रिवेदी ने किया है। यह पुस्तक बालकों और प्रौढ़ों के लिए उपयोगी है। ४८ पृष्ठ की इस पुस्तक की कीमत ८० पैसे है। हर जगह इस पुस्तक का खूब स्वागत हुआ है।

प्रकाशक : नवजीवन-प्रकाशन, नयी दिल्ली

राजनीति बनाम लोकतंत्र

इसी दिसम्बर महीने में कांग्रेस पूरे चौरासी साल की हो जाती, और अगर वह चाहती तो अपनी जयन्ती भी मना सकती थी, लेकिन उसने देश को विवश कर दिया कि जयन्ती न मनाकर वह कांग्रेस को अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करे।

कांग्रेस मर चुकी। जिस कांग्रेस ने १८८५ से लेकर अब तक एक-से-एक देशभक्त पैदा किये, जिसकी सूची में गांधी-जैसा व्यक्ति भी सदस्य रह चुका था, तथा जिस कांग्रेस ने राजनीति में पहली बार नैतिक मूल्यों का इतना व्यापक और सफल प्रयोग किया, वह मर चुकी। १९६९ के समाप्त होने के पहले दिल्ली और अहमदाबाद में कांग्रेस की महासमिति की दो अलग-अलग बैठकें हो चुकेंगी। कांग्रेस की मौत तो आज ही हो चुकी है, पर उन बैठकों के बाद उसकी मौत पर मुहर लग जायगी और तब वह जीवित संसार की वस्तु न रहकर बीते इतिहास की याद रह जायगी।

राजनीति के प्रांगण में कांग्रेस का सबसे बड़ा घर था। वह टूट गया। लेकिन ऐसा नहीं है कि बड़े घर के टूटने पर दूसरे घर अछूते रह जायेंगे। इस बड़े घर का धमाका कई दूसरे घरों को दहला देगा। अब समाजवाद और लोकतन्त्र की कुछ नयी व्याख्याएँ होंगी, कुछ नये कार्यक्रम बनेंगे तथा राजनैतिक शक्तियों का कुछ नया संघटन-विघटन दिखाई देगा। इस दृष्टि से आज जो केवल सत्ता का संघर्ष दिखाई दे रहा है, वह परिणामों में अधिक गहरा साबित होगा। इन्दिराजी या उनके साथियों की अपनी महत्त्वाकांक्षा चाहे जो हो—राजनीति में सत्ता के सिवाय दूसरा है क्या? – किन्तु इस लड़ाई को मात्र गुट या व्यक्ति की सत्ता-लिप्सा से जोड़ देना काफी नहीं है। यह एक मंथन है जो बरसों से अंदर-अंदर चल रहा था। देश में समस्याएँ घनीभूत होती चली जा रही थीं। यह सम्भव है कि राजनैतिक संस्थाओं का भीतरी जीवन बाहर की हलचलों से अछूता रह जाय। मानना होगा कि कल की राजनीति वही नहीं रहेगी जो बीते हुए कल थी, या आज है।

इस तरह के राजनैतिक मंथन से स्वयं राजनीति की लोक-हितकारी शक्ति बढ़े या न बढ़े, इतना निश्चित है कि भारत की राजनीति तेजी के साथ अपने पुराने परिचित रास्ते को छोड़ रही है। निष्ठाएँ बदल रही हैं, नारे बदल रहे हैं, संगठन और साथी बदल रहे हैं। कांग्रेस में जो कुछ हुआ है उससे राजनीति में एक तेजी आयी है जो उसे आज से कहीं दूर ले जाकर रखेगी। अब कोई नयी सरकार स्थायी बहुमत के बल पर निरंकुश शासन नहीं चला सकेगी। उसकी शक्ति होगी उसका काम; काम की कसौटी पर वह कसी जायगी, और उसी के भरोसे वह टिकेगी या टूटेगी।

'राजनीति अब पहले से अधिक लोकाभिमुख होगी। राजनीति में इतना मोड़ लाने का श्रेय इन्दिराजी को मिलेगा, जो स्वतन्त्रता के बाद किसी दूसरे को नहीं मिला था, और यह श्रेय उन्होंने मामूली जोखिम उठाकर नहीं प्राप्त किया है। हो सकता है कि आगे के दिनों में इस श्रेय से इन्दिराजी को आज से कहीं अधिक शक्ति मिले, यह भी हो सकता है कि नये मोड़ से पैदा हुई नयी शक्तियाँ उन्हें छोड़ दें और अपने लिए नये आधार ढूँढ़ें। दिल का दिल बदलते देर नहीं लगती।

भारत की राजनीति दलों की है सत्ता की है, संघर्ष की है वह जनता, सेवा और समन्वय की राजनीति नहीं है। इसीलिए जब हम जनता को सामने रखकर सोचते हैं तो प्रचलित राजनीति का निकम्मापन, खोखलापन, खुलकर सामने आ जाता है। राजनीति को जनता के कल्याण की चिन्ता भले ही हो किन्तु उसमें चेष्टा जनता की शक्ति बनाने की नहीं है। उसकी चेष्टा है सत्ता की और चिन्ता है जनता की। सत्ता और जनता का मेल सम्भव नहीं है, आज के जमाने में तो कतई असम्भव है। असम्भव केवल इसलिए नहीं है कि राजनीति के लोग स्वार्थी हैं, अदूरदर्शी है, बल्कि इसलिए है कि भारत की परम्परा, परिस्थिति, प्रतिभा सत्ता और जनता का मेल सम्भव नहीं होने दे रही है। असम्भव को सम्भव बनाने का विफल प्रयास राजनीति बाईस वर्षों से कर रही है। भारत ही नहीं, भारत की तरह के एशिया और अफ्रीका के दूसरे देशों में भी यह मेल अस्वाभाविक, अव्यावहारिक, सिद्ध हुआ है, और उसकी विफलता के कारण ही हर जगह राजनीति टूटी है, और लोकतन्त्र समाप्त हुआ है। उसी विफलता के कारण भारत में भी राजनीति टूट रही है। लेकिन राजनीति के साथ-साथ लोकतन्त्र भी टूट जाय, इसके पहले हमें लोकतन्त्र के बचाव के लिए कदम उठा लेना चाहिए। चिन्ता राजनीति की नहीं है, चिन्ता है लोकतन्त्र की। यह सिद्ध हो गया है कि दोनों एक नहीं हैं।

लोकतन्त्र के बचानेवाले कदम की कल्पना गांधीजी ने १९४८ में ही कर ली थी, और योजना के रूप में उन्होंने कांग्रेस के स्थान पर 'लोक-सेवक-संघ' का प्रस्ताव भी प्रस्तुत किया था। लेकिन उस वक्त सत्ता ने जनता को छोड़कर अलग रास्ता अपनाया, और पिछले इतने वर्षों तक सत्ता ने विकास के मोहक खिलौने दिखाकर जनता को भुलावे में रखा। जनता भ्रम में पड़ी रही कि सत्ता की राजनीति ही लोकतन्त्र है, तथा योजना के नाम में नौकरशाही जितना कर दे वही विकास है। हो सकता है कि इन्दिराजी का नया कदम इस भ्रम को कुछ दिन और कायम रखे पर जमाना जिस तेजी के साथ बदल रहा है और समस्याएँ जिस तेजी के साथ जनता को अधीर बनाती जा रही हैं उन्हें देखते हुए लगता नहीं कि यह भ्रम ज्यादा दिन टिकेगा। जनता शीघ्र समझ जायगी कि राजनीति के तरीकों से कोई समस्या हल होनेवाली नहीं है। निजलिंगप्पा हों, या इन्दिराजी, राजनीति के तरीकों में क्या अंतर होगा? वही अवसरवादी नेताशाही, वही निष्क्रिय, सहानुभूति-

खादी का नया तरीका ढूँढ़ा जाय

— ग्रामसभा का संरक्षण हो : आचार्य विनोबा की सलाह —

यह जो खादी कमीशन है वह खादी 'मिशन' है सिर्फ कमीशन नहीं। यानी खादी एक महामंत्र है और वह मंत्र हमको भारत भर में फैलाना है। यह अगर ध्यान में आ जाय तो जो टेकनिकल काम हम करते हैं वह तो करना ही होगा लेकिन उसके साथ-साथ खादी तत्त्व क्या है, खादी का मूलभूत विचार क्या है, इसका भी चिन्तन-मनन करना होगा। मैंने अक्सर यह देखा है कि बहुत जगहों में जहाँ खादी का काम चलता है, वहाँ विचार निष्ठा दिखाई नहीं दी। काम करते हैं, मेहनत करते हैं परन्तु मूल विचार क्या है उसका अध्ययन देखा नहीं। कई जगह मैं गया हूँ जहाँ खादी-कार्य चलता है। एक जगह मैं ४-६ महीने लगातार रहा था। उस आश्रम को मैंने 'ठोक-पीट आश्रम' नाम दे दिया। वहाँ खादी को धोना, ठोकना, पीटना, यही ८-१० घंटे चलता है।

आज हमको इन लोगों ने बताया कि किस प्रकार से बुनाई होती है और मजबूत कपड़ा बनता है। उसमें कपड़ा लगभग ३५ प्रतिशत ज्यादा टिकेगा लेकिन लगभग उतना ही महँगा भी होगा। लेकिन यह जो ठोक-पीट चलता है उसके कारण एक साल तक चलनेवाली खादी ८ महीने तक ही चल पाती है। यानी यह उल्टा मामला हुआ। लोग चाहते हैं कि खादी बिलकुल सफेद मिले, रुई से भी ज्यादा सफेद। उसके कारण इस बेचारी खादी का नुकसान हो जाता है। उसको बराबर ताने हैं। और यह देखा कि विचारों का अध्ययन नहीं होता।

खादी का विकेन्द्रीकरण हो

गांधीजी ने व्रत-निष्ठा की बात बतायी-अपरिग्रह स्वदेशी आदि। खादी का महीन कपड़ा पहनते हैं, तो देखनेवाले को भरोसा नहीं होता कि यह खादी है। ऐसी खादी बनाना और पहनाना, इसका मतलब हुआ कि हमने जो खादी का मूल मंत्र था गरीबी और अपरिग्रह, उसको भुला दिया। एक जगह हमने देखा कि जहाँ खादी का काम चलता है एक करोड़ रुपये की खादी इकट्ठा है। उसको सँभालना पड़ता है। उसकी चौकसी करनी पड़ती है। तो उसको मैंने नाम दिया करोड़पति। एक करोड़ रुपये की इकट्ठी हुई खादी देखा तो मेरे मन में विचार आया और वहीं मैंने प्रकट किया कि गांधीजी ने व्रत सिखाया—अपरिग्रह और स्वदेशी। खादी है स्वदेशी लेकिन खादी के नाम पर एक

शून्य नौकरशाही, नैतिक मूल्यों का वही ह्रास, शासकों द्वारा जनता का वही अविश्वास, इनमें से किसमें क्या फर्क पड़ेगा ?

प्रश्न है कि जब भ्रम दूर हो जायगा तो क्या होगा ? तब क्या हमारे नेता यह कहेंगे कि विफलता की जिम्मेदारी उनकी राजनीति पर नहीं लोकतंत्र पर है ? हो सकता है कि सारा दोष लोकतंत्र के माथे मढ़ा जाय, और कोई नयी शक्ति खड़ी हो जाय जो जनता से कहे; 'तुम्हारी मुक्ति इसीमें है कि लोकतंत्र से मुक्त हो जाओ'।

अब हमारे देश में असली प्रश्न है राजनीति बनाम लोकतंत्र। अगर लोकतंत्र की रक्षा करनी है तो राजनीति में गुणात्मक परिवर्तन होना चाहिए। किन्तु वह परिवर्तन कैसा हो, कैसे हो ? सत्ता की राजनीति की सारी आशा ध्रुवीकरण पर लगी हुई है। ध्रुवीकरण किसमें ? आजकल जोरों के साथ दक्षिणपंथी और वामपंथी राजनीति के ध्रुवीकरण की बात कही जा रही है। 'पीपुल्स डिमाक्रेसी' के कुछ क्रान्तिकारी हिमायती शोषकों और शोषितों के ध्रुवीकरण का नारा लगाते हैं, और कहते हैं कि असली ध्रुवीकरण आज जो हो रहा है वह नहीं है, बल्कि वह है जो कल होगा। गाली और निन्दा की भाषा में चाहे जो कहा जाय, लेकिन अगर जनता को सामने रखा जाय तो कोई पक्ष, दक्षिण या वाम, सत्ता अपने हाथों से निकालकर जनता के हाथों में सौंपना नहीं चाहता। वह इतना कहकर रह जाता है कि सत्ता उसके और उसके साथियों के हाथ में रहे तो लोकहित सधेगा। जो राजनीति जनता के सामने जाकर टिक जाय उसके साइनबोर्ड चाहे जो हों, उसकी प्रगतिशीलता अधूरी ही मानी जायगी।

वास्तविक गुणात्मक परिवर्तन की दिशा ध्रुवीकरण की नहीं, कुछ दूसरी ही है। लोकतंत्र में निर्णायक तत्त्व 'लोक' है, 'राज' नहीं। लोक को ध्रुवों में बाँटने से आज की विरोधवादी, महत्त्वाकांक्षी राजनीति के सिवाय दूसरा कुछ नहीं मिलेगा। अगर लोकतंत्र को मजबूत करना हो तो लोक-जीवन पर सरकार की सत्ता समाप्त होनी चाहिए, बाजार पर मुनाफाखोर की सत्ता समाप्त होनी चाहिए और स्वयं सरकार पर दल की सत्ता समाप्त होनी चाहिए। यह सम्भव होगा गाँव-गाँव शहर-शहर में, लोकशक्ति संगठन से। आज की राजनीति अपनी सत्ता के लिए जनता के क्षोभों को उभाड़ तो सकती है, लेकिन उसमें शक्ति अक्सर उसे समाज-परिवर्तन का साधन नहीं बना सकती। हमें सरकार से आगे जाकर समाज की, और तंत्र के आगे जाकर लोक की, बात सोचनी चाहिए। कौन-सी राजनीति आज सरकार से आगे जा रही है ? क्या लोकतंत्र का हित इसी के प्रदर्शन से सधनेवाला है ?

ऐसा नहीं है कि समाज की बात सोचनेवाले साफ मन से मुक्त दिमाग के लोग देश में मौजूद नहीं हैं। वे मौजूद हैं। बात इतनी है कि वे किसी कारण से पीछे पड़ गये हैं, या खुद पीछे हट गये हैं। अब समय आ गया है कि वे सामने आयें और नयी चेतना का जागरण करके लोकजीवन में गुणात्मक परिवर्तन करें। हमारे लिए गुणात्मक परिवर्तन का एक ही अर्थ है—लोकशक्ति का जागरण और संगठन। हम सत्ता चाहते हैं 'सर्व' की, दलों की नहीं; नीति चाहते हैं समाज की, सरकार की नहीं। आज जरूरत है ऐसे नर और नारियों की जो आमूल परिवर्तन के माध्यम बन सकें। हम मान लें कि हमें राजनीति की जगह दूसरी राजनीति चाहिए, या नया, अपना रास्ता, लोकतंत्र ? ●

करोड़ का संग्रह करें तो यह अपरिग्रह व्रत के खिलाफ जाता है। दोनों व्रतों में टक्कर होती है। इसलिए खादी इस प्रकार से पैदा होनी चाहिए कि वह जगह-जगह बँट जाय। जहाँ वह पैदा होती है वहीं उसका उपयोग हो। दूर दूर जाकर बेचना ठीक नहीं। काता गया बिहार में, बुना गया सेवाग्राम में और बेचा गया बम्बई में, ऐसा अगर होता है तो वह खादी का स्वरूप नहीं है। गाँव में खादी बनती है, गाँव के लोग उसे पहनते हैं, बाकी बची हुई खादी बचत के लिए ब्लाक में इन्तजाम होता है और वहाँ से भी बची हुई खादी जिले में जाती है और दूसरी जगहों में जाती है, ऐसा होना चाहिए। यानी उसका विकेन्द्रीकरण होना चाहिए। एक स्थान पर इकट्ठा नहीं होना चाहिए। इकट्ठा होना अपरिग्रह व्रत के खिलाफ है। लेकिन मेरी बातें माने कौन?

मेरी मानता कौन है?

वहाँ पर खूब खादी इकट्ठा हुई थी। उस समय अकाल था। हमसे पूछा गया कि क्या किया जाय। मैंने कहा कि यह सारी खादी मुफ्त में गरीबों में बाँट डालो। गरीब लोग ठंड से ठिठुर रहे हैं। हमारे यहाँ इसका स्टाक जमा है। उनके पास पैसे नहीं हैं कि वे खरीद सकें। उनमें इस बाँट डालो तो तुम मुक्त हो जाओगे स्टाक में से, और लोगों को ठंड में से मुक्ति के लिए मदद मिलेगी। फिर कारखानों से कहो कि करुणा से प्रेरित होकर हमने यह किया। यह कानून के खिलाफ जाता है तो आप हमें गिरफ्तार करें हम गुनहगार हैं। हमने जान-बूझकर उसे बाँट डाला है। लेकिन मेरी यह सलाह कौन माने? यह तो माना नहीं, लेकिन वहाँ कई खादी भंडार नष्ट डाले गये लोगों की तरफ से। उसमें करीब २० लाख रुपये की खादी जल गयी। मैंने कहा कि खादी जलाने के लिए लोग तैयार हो जाते हैं, इसका अर्थ है कि खादी के प्रति लोगों में प्रेम रहा नहीं, वह उल्टा हो गया। कांग्रेस सरकार की मदद उसको मिलती है और फिर वह बनी हुई खादी इकट्ठा हो जाय और उसका संरक्षण करना पड़े। उसमें कुछ नौकर होते हैं उनको पूरी तनख्वाह नहीं मिलती है और वे यूनियन बनाते हैं। मुजफ्फरपुर में तो झगड़ा हुआ और एक कार्यकर्ता का कत्ल हो गया। ऐसा काम चला है खादी के अन्दर। और उनका एक कायम का ही विभाग है—'मामला मुकदमा' यानी कोर्ट में 'केसेज' चलाना, उसके लिए खास वकील है। इतना सारा धन्धा वहाँ चलता है तो उसको मैंने नाम दिया—'गोरख धन्धा'।

खादी को ग्रामसभा का संरक्षण

गाँव-गाँव ग्रामदान हो रहे हैं। अब तक सवा लाख से अधिक गाँव ग्रामदान में आ गये हैं सारे भारत में। इसका मतलब है भारत के चौथाई गाँव का ग्रामदान हो गया है। ग्रामदानी गाँव की सभा बनायी जाय, जमीन की मिल्कियत उसके नाम कर दी जाय, २०वाँ हिस्सा जमीन भूमिहीनों में बाँटी जाय, ४०वाँ हिस्सा फसल की आमदनी को गाँव के काम के लिए पूँजी इकट्ठा करें। इस तरह से जो ग्रामसभा बनेगी उसको ही खादी का काम सौंप दिया जाय तो खादी ग्रामाभिमुख होगी। इससे खादी को गाँव का संरक्षण मिलेगा। आज सरकार की तरफ से उसको संरक्षण नहीं, मदद मिलती है। लेकिन गाँव का संरक्षण एक बात है और सरकार की मदद दूसरी बात। सरकार की मदद की बजाय गाँववालों का संरक्षण खादी को मिलेगा तो खादी टिकेगी। आज की खादी देश भर के कपड़े की आवश्यकता की केवल १ प्रतिशत ही बनती है। तो हमने उनको कहा कि यदि आज के ढंग से ही खूब जोर लगाओगे तो अगले ५ या १० साल के बाद खादी १ प्रतिशत की जगह ३-४ प्रतिशत होगी। यदि जोरदार प्रयत्न नहीं करोगे तो १ २ प्रतिशत हो जायेगी। क्योंकि जनसंख्या जिस हिसाब से बढ़ रही है उस हिसाब से तुम्हारी खादी तैयार नहीं होगी तो परसेंटेज और घटता जायगा। खादी की शुरुआत १९२० में हुई। उसकी आधी सदी '७० में होगी। इन ५० वर्षों में हम कहाँ तक पहुँचे हैं, तो पाते हैं कि केवल १ परसेंट तक। इस वास्ते हमको दूसरा तरीका ढूँढ़ना होगा। यह तरीका गाँव-गाँव की ग्रामसभा के द्वारा करना होगा। गाँव की आवश्यकता के लिए खादी बनानी होगी। इस तरह करेंगे तो खादी २५-३० प्रतिशत भी हो सकती है। कुल प्रतिशत का हिस्सा गिना जाय तो गाँव का प्रतिशत ५० और शहर का ५० प्रतिशत माना जायेगा। शहरों में जनसंख्या कम है लेकिन कपड़ों का इस्तेमाल अधिक होता है। तो इस ग्रामाभिमुख खादी की तरफ बढ़ेंगे तो २५ परसेंट तुरन्त हो जायगा।

खादी-तत्त्व का अध्ययन हो

अब यह समझना, उस दृष्टि से सोचना और खादी तत्त्व का अध्ययन करना, यह सारा होना चाहिए। केवल यंत्र चलाना ही पर्याप्त नहीं। वह भी करना होगा। उसके बिना भी प्रगति होती नहीं। लेकिन यांत्रिक ज्ञान के साथ मार्मिक ज्ञान भी चाहिए। तंत्र खादी का कर दिया है। कहते हैं कि हमारे ४० हजार सेवक हैं। करीब ६ हजार ब्लाक सारे भारत में हैं तो ६-७ कार्यकर्ता एक-एक ब्लाक में हो जाते हैं। सारे भारत में ऐसे तंत्र का फैलाव ग्रामसभा के साथ जोड़ा जाय ऐसा व्यापक तंत्र बनाना पड़ेगा। यंत्र के लिए हमको तीन बातें करनी हैं - (१) पुराने चर्खे को ही रहने देना है और कोई फर्क नहीं करना हो तो उस सूत को दुबटा किया जाय। (२) पुराने चर्खे पर डबल मोढ़िया बिठाया जाय। (३) एक तकुवेवाला अम्बर चर्खा, जो दोनों हाथों से चल सके वैसा हो। इन तीनों चीजों को लेकर हम गाँव-गाँव जा सकते हैं। तो तंत्र सारे गाँव में फैलाना, यह तांत्रिक काम हुआ। खादी का मुख्य आधार गाँव है। यंत्रों में सुधार करना होगा, उसकी जोरदार कोशिश करनी पड़ेगी और मंत्र का अध्ययन करना पड़ेगा तब खादी गाँव-गाँव में जायेगी।

सेवाग्राम, ६-११-'६९

लोकतंत्र में सत्याग्रह का औचित्य तथा आवश्यकता

—श्री धीरेन्द्र मजूमदार से एक साक्षात्कार—

प्रश्न : क्या विभिन्न प्रकार के संघर्षों का निराकरण करने के लिए सत्याग्रह एक शस्त्र है ?

उत्तर : विरोधों का निराकरण करने के लिए सत्याग्रह एक अस्त्र तो है ही, आज के मानस को यह अपील भी करता है। पर आज का जो सत्याग्रह चल रहा है वह सत्याग्रह की परिभाषा में ठीक नहीं बैठता। आज का सत्याग्रह तो एक प्रकार *शान्तिपूर्ण प्रतिकार* है। इसे करने का उद्देश्य है समाज के अन्याय, अत्याचार आदि का निराकरण करना।

गांधीजी ने आजादी की लड़ाई के दिनों में शान्तिमय प्रतिकार (सिविल डिसओबीडिएंस) का पाठ पढ़ाया। लोग इसे ही सत्याग्रह का नाम दे डालते हैं। जो आजकल हो रहा है वह तात्कालिक अन्याय का प्रतिकार है, सत्याग्रह नहीं है। विनोबाजी जो कर रहे हैं, वह सत्याग्रह है। समाज में जो संघर्ष है उनसे मुक्ति का प्रयास सत्याग्रह है।

अनुचित कार्य अथवा अन्याय के प्रतिकार के लिए भी सत्याग्रह कर सकते हैं। किसी भी अन्याय का प्रतिकार करने के तीन रास्ते है—(१) सशस्त्र विद्रोह, (२) शान्तिपूर्ण प्रतिकार, तथा (३) सत्याग्रह।

प्रश्न : वर्तमान संघर्षों को हल करने के लिए प्रचलित संवैधानिक तरीकों पर अपने विचार बतायें।

उत्तर आज सशस्त्र विद्रोह का कोई स्थान नहीं है। हाँ, शान्तिपूर्ण प्रतिकार चल सकता है। सत्याग्रह की मुख्य शर्त यह है कि जिनके प्रति सत्याग्रह कर रहे हैं, उनके प्रति प्रेम हो। दूसरे, सत्याग्रह में क्रिया की अपेक्षा प्रतिक्रिया का ज्यादा महत्त्व है। सत्याग्रह में प्रतिक्रिया (रिएक्शन) अनुकूल होगी। यदि प्रतिक्रिया अनुकूल नहीं है तो वह शान्तिपूर्ण प्रतिकार होगा, न कि सत्याग्रह। शान्तिपूर्ण प्रतिकार से विरोधी पर दबाव पड़ता है। सत्याग्रह में विरोधी नहीं होता है। अविरोध सत्याग्रह का मूल मंत्र है।

फिर 'शान्तिपूर्ण प्रतिकार' में तात्कालिक निष्पत्ति होती है, वह स्थायी नहीं होती। सत्याग्रह से स्थायी परिणाम निकलते हैं। 'शान्तिपूर्ण प्रतिकार' पूर्णतया अहिंसक नहीं है। यह किसी लाठी या अन्य शस्त्र से भी अधिक हिंसक बन सकता है। आज जिस प्रकार घेराव चल रहा है वह इसका एक उदाहरण है। लोग अक्सर सत्याग्रह व शान्तिपूर्ण प्रतिकार में गड़बड़ करते हैं। नशाबन्दी का सत्याग्रह, शान्तिपूर्ण प्रतिकार व सत्याग्रह का मिलाजुला रूप है। उसमें किसी को बाध्य नहीं किया जा रहा है। दूकानदार व पीनेवाला पर कोई दबाव नहीं डाला जाता है। उनसे अनुरोध किया जाता है। विरोधी दल पर शत्रुतापूर्ण प्रतिक्रिया नहीं पड़ती और न ही उनकी तरफ से प्रेम की प्रतिक्रिया होती है।

मुसुराई के सत्याग्रह में परिस्थिति यह थी कि गाँववाले कहते थे कि बाहर के लोगों को जमीन मत दो, हमें दो, हम जोतेंगे व आपका हिस्सा देंगे। उसमें थोड़ा दबाव था और कुछ प्रतिशत बाध्य करना भी था। इसलिए यह शान्तिपूर्ण प्रतिकार था, न कि सत्याग्रह।

दूसरी स्थिति बेदखली की होती है, उसमें जमीन पर अक्सर जोतनेवाले अपना अधिकार नहीं छोड़ते। अपनी जमीन जोतते रहना चाहते हैं, यह सत्य है, उस पर वे आग्रह करते हैं। यह स्थिति सत्याग्रह की ओर बढ़ने का कदम है। जहाँ स्पष्ट रूप में मजदूर (कोर्स) करते हैं, वह एक प्रकार से हिंसक प्रतिकार है—सौम्य हिंसा, शस्त्रविहीन हिंसा। हिंसा से भी आज यही व्यावहारिक है। हड़ताल, विद्रोह आदि मनःस्थिति में भी यह पद्धति अपनायी जा सकती है।

विनोबा जो कर रहे हैं, वह सत्याग्रह है, क्योंकि वह संघर्षों का सुलझाव है। ग्राम में जमींदार हैं, महाजन है और इनके कारण संघर्ष होते हैं। वह उनको शैक्षणिक प्रक्रिया द्वारा खत्म करने का प्रयास कर रहे हैं। सत्याग्रह की गतिशीलता (डाइनेमिक्स) शिक्षण व समझाना है न कि दबाव डालना।

वर्ग-संघर्षवाले भी मानते हैं कि शांतिपूर्ण दबाव, मनाव, शिक्षण, सब सत्याग्रह के स्टेज हैं। वे भी वर्गों का भौतिक रूप से खात्मा नहीं चाहते हैं, वरन् उनकी मनोवैज्ञानिक समाप्ति चाहते हैं, परन्तु वह रूस में भी नहीं हो पाया। फिर बन्दूक से जो परिवर्तन होता है, उस परिवर्तन को बनाये रखने के लिए भी शक्ति अर्थात् बन्दूक का इस्तेमाल करना पड़ता है। फिर शासनहीन यानी बन्दूक-मुक्त समाज कभी नहीं बन सकता है।

प्रश्न : लोकतंत्र में सत्याग्रह का स्थान है ?

उत्तर : (१) संवैधानिक तरीके यदि असफल हो जायँ तो फिर क्या किया जाय ? (२) 'बैलट बाक्स' से बदल देने की दलील गलत है। ज्यादा से-ज्यादा एक स्थानीय एम० एल० ए० को बदल सकते हैं पर उससे समस्या तो नहीं सुलझेगी। 'बैलट बाक्स' राष्ट्रीय समस्याओं को प्रभावित कर सकता है, न कि स्थानीय को। फिर विधानसभा तो एक प्रकार से प्रबन्ध करनेवाली संस्था है। यदि ग्रामीण उसमें सदस्य हैं तो वे कुछ क्षेत्रीय स्तर पर करेंगे पर जब फेल हो जायेंगे तो सत्याग्रह करेंगे। आज जनतान्त्रिक ढाँचा है क्या ? 'आटोक्रैटिक' ढाँचा है। आजकल का लोकतन्त्र समूह लोकतन्त्र (गैंग डेमोक्रेसी) के सिद्धान्त पर चल रहा है। दस आदमी बैठकर पार्टी बना लेते हैं। वही उम्मीदवार मनोनीत करते हैं। जनता से मतलब नहीं। इस तरह जनता-निरपेक्ष पार्टी का समूह (गैंग) ही सो कहा जायगा। लोकतन्त्र में समाज की समस्या का सिरदर्द जनता का है, 'आटोक्रेसी' में समाज की समस्या का सिरदर्द शासक के प्रमुख पर है। लोकतन्त्र अनुसार-

पद्धति में ही चल सकती है पर इसमें गलती यह हुई कि सिद्धान्त तो सहकार का स्वीकार किया, पर राज्यतंत्र में जैसी पद्धति थी, वैसे ही स्वीकार किया गया यानी 'ब्राटोक्रेसी' का तंत्र स्वीकार कर लिया। 'सिद्धान्त के अनुसार पद्धति चाहिए।' इस बात पर ध्यान नहीं दिया गया। 'ब्राटोक्रेसी' में नवाबों के रूप में मन्त्रिमण्डल चाहिए उनके लिए नौकरशाही फौज आदि आडम्बर तत्व जुटे। आज के लोकतंत्र में भी वह सब तत्व जुटा हुआ है।

प्रश्न यह है कि लोग किसको चुनेंगे? 'मॅग डिक्टेटरशिप' में 'मॅग' के ही किसी व्यक्ति को चुनना होगा। इस व्यवस्था में व्यक्ति के लिए कोई स्थान नहीं। यदि वास्तविक जनतंत्र हो तो सत्याग्रह की आवश्यकता नहीं होगी। 'ब्राटोक्रेसी' टार्च की रोशनी की तरह है। लोकतंत्र सामुद्रिक वर्तुल जैसा है। समुद्र में पहला बुलबुला सबसे अधिक शक्तिशाली होता है। समाज में जो मूल इकाई है वह सबसे अधिक शक्तिशाली होना चाहिए। प्रथम पुरुष व द्वितीय पुरुष में सम्बन्ध रहे। उसके होने पर ही समुदाय बनेगा। वही प्रारंभिक शक्ति है और पारस्परिक निर्णय-शक्ति उसके हाथ में होगी। वहीं से शक्ति विकसित (इवॉल्व्ड) होगी। वह प्रारम्भिक इकाई स्वयं ही शक्ति-उत्पादक (जेनरेटिंग पावर) होगी। इस प्रकार के वास्तविक जनतंत्र में सत्याग्रह का अवसर कम होगा। सम्भव है कभी परिवार में ही उसकी आवश्यकता पड़े। पर आज सत्याग्रह की आवश्यकता बहुत ज्यादा है, और स्वराज्य में भी शान्तिपूर्ण प्रतिकार का स्थान है।

राज्य की परिभाषा—कुछ लोगों द्वारा सत्ता प्राप्त कर लेना स्वराज्य नहीं है। लेकिन जनतंत्र में सभी लोगों द्वारा प्रतिकार करने की शक्ति ही स्वराज्य है। (कैपेसिटी टु रेजिस्ट अथारिटी व्हेन एब्यूज्ड बाई आल इज स्वराज्य—गांधीजी) इस परिभाषा में स्वराज्य में सत्याग्रह को मूल आधार माना गया है।

प्रश्न वर्तमान संघर्षों को हल करने के लिए प्रचलित संवैधानिक तरीकों पर अपने विचार बतायें।

उत्तर आज का ढाँचा न तो लोकतंत्र है और न तानाशाही। संवैधानिक तरीकों से कुछ काम होता नहीं। आज तो नौकरशाही है, जिसमें सत्याग्रह के बिना काम नहीं चलता। इस या लोकतन्त्र में सरकार की प्रतिक्रिया खिलाफ होती ही क्योंकि यह सत्याग्रह नहीं है शान्तिपूर्ण प्रतिकार है यद्यपि इसमें सत्याग्रह के तत्व भी हैं। इसमें हम आपको जबर्दस्ती बदलने को मजबूर नहीं कर रहे हैं पर यथास्थिति (स्टेटस को) रखने के लिए ही कह रहे हैं। लोग इस बात को सत्य मानते हैं—जैसे शराब के मामले में शराब नहीं पीनी चाहिए यह जनता की मान्यता है। फिर भी सरकार शराब की दुकान खोल देती है—तो आप जनतांत्रिक सरकार के अजनतांत्रिक कार्य का प्रतिकार करते हैं। जिन प्रश्नों पर मत वैभिन्य हो वह सत्याग्रह के विषय नहीं, वरन् निर्णय के विषय हैं।

प्रश्न नेतृत्व यदि ठीक प्रकार से तैयारी न कर सके तो शान्तिपूर्ण प्रतिकार का क्या रूप होगा?

उत्तर सत्याग्रह में नेतृत्व का ज्यादा स्थान नहीं है शान्तिपूर्ण प्रतिकार में है। इसका कारण है—शान्तिपूर्ण प्रतिकार में मुख्य समस्या तो पृष्ठभूमि में रहती है, और कुछ तात्कालिक समस्या को लेकर संगठन करते हैं—यह शान्ति नहीं विद्रोह है। यदि इस प्रकार के नेतृत्व और संगठन द्वारा क्रान्ति हो तो सफलता उस नेता व पार्टी-विशेष का निहित स्वार्थ बन जाती है। पश्चात् उस सफलता के आधार पर नेता आगे को जनता पर स्थापित करता है।

वास्तविक सत्याग्रह में इस प्रकार के नेतृत्व का कोई स्थान नहीं। वहाँ समुदाय ही मिलकर निर्णय करता है। हाँ, वहाँ प्रेरक व्यक्ति हो सकते हैं। सत्याग्रह का निर्णय सत्याग्रह करनेवाले लोग ही करते हैं।

प्रश्न यदि शान्तिपूर्ण प्रतिकार का अधिकार भी हो तो, क्या उससे सत्ता की अवहेलना नहीं होती?

उत्तर आज की परिस्थिति में कोई सत्ता रह नहीं सकती है। आज घर में बाप की सत्ता के विरुद्ध बच्चा भी आवाज उठाता है। आजकल 'अधिकारवाद' के खिलाफ आम आवाज है। इसके कारण हैं—(१) प्रारम्भ में अन्धविश्वास था। सत्ता मानकर समाज चलता था, अब विज्ञान ने अन्धविश्वास को निकाल दिया है, लोगों में दोष-गुण समझने की बुद्धि आ गयी है। (२) पिछले २०० वर्षों से लोकतन्त्र के नाम पर स्वतन्त्रता समानता व मित्रता की चेतना को बढ़ाया गया है और उसका प्रचार किया गया है। इसलिए आज लोग स्वतन्त्रता चाहते हैं तथा अधिकारवाद को मानने को तैयार नहीं हैं। अतः चारों-ओर सत्ता की कमी होनी ही चाहिए पर साथ-साथ सहकार भावना का भी विकास होना चाहिए। आज अधिकारवाद नहीं चलेगा स्वतन्त्रतावाद चलेगा। जमाने की परिस्थिति और मनुष्य की मनःस्थिति दोनों की माँग है—सत्ता का अन्त। अतः यह डर निकालना है कि सत्ता के बिना समाज कैसे चलेगा। इसीलिए विनोबा सर्वसम्मति की बात करते हैं। यदि यह बात विकसित नहीं होगा तो मानवता के लिए कोई भविष्य नहीं है, अवसर नहीं है, क्योंकि आज का तथ्य है कि स्वातन्त्र्य की चेतना व सत्ता दोनों साथ-साथ नहीं चल सकती।

प्रश्न सत्याग्रह की मानसिक तैयारी के आवश्यक तत्व क्या हैं?

(१) जिसे सत्य कहते हैं उसकी निष्ठा होनी चाहिए। 'माय ऐक्शन' के लिए यह देखना होगा कि यह सत्य 'मेरा सत्य है या साधारण सत्य'। सत्याग्रह के लिए साधारण सत्य होना चाहिए।

(२) सत्याग्रह करनेवालों के दिमाग में प्रतिरोध की भावना होनी चाहिए। प्रेम हो, यह आदर्श है। पर यदि न हो तो इतना तो हो कि विरोध भाव भी न हो।

सार्वजनिक जीवन का एक संकेत : सामुदायिक प्रार्थना

गांधीजी ने हमारे सार्वजनिक जीवन के तीन संकेत दिये—सामुदायिक प्रार्थना, सामुदायिक सफाई, और सामुदायिक कताई।

सामुदायिक प्रार्थना के पीछे दूरदृष्टि

धर्म के मामले में कुछ ऐसा हुआ है कि धर्म मनुष्य को जहाँ ले जाना चाहता था ठीक उसके विपरीत दिशा की ओर आज वह ले जा रहा है। एक दफा का एक किस्सा है कि एक घुड़सवार घोड़े से गिर पड़ा। घोड़ा बहुत होशियार था, सवार की पैन्ट से उसको पकड़ लिया और अपनी पीठ पर बैठा कर दवाखाने ले गया। सारे शहर में शोहरत हुई कि हमारे शहर में एक ऐसा भी घोड़ा है जो अपने सवार को घायल होने पर अपनी पीठ पर बैठाकर दवाखाने पहुँचा आया। बड़े-बड़े अखबारों में शीर्षक निकले। दूसरे दिन लोग उससे मिलने गये, उसको बधाइयां देने के लिए कि आपका ऐसा घोड़ा है मानो सर्कस में सीखा हो। घुड़सवार ने कहा कि मैं भी प्रसन्नता का अनुभव करता, पर आप जानते हैं कि वह गधा मुझे कहाँ ले गया? वह मुझे मवेशियों के अस्पताल में पहुँचा आया। शायद आप लोग यह नहीं जानते होंगे। धर्मों ने मनुष्य के साथ कुछ ऐसा ही किया है। धर्म जब तक एक था तब तक मनुष्य को मनुष्य के निकट लाया, मनुष्य को भगवान के निकट ले गया। लेकिन जब से धर्म अलग-अलग हो गये और बहुत हो गये तब से धर्म ने मनुष्यों को एक दूसरे से अलग कर दिया। सारे मनुष्यों को भगवान से भी अलग कर दिया। अब धर्म का सम्बन्ध मनुष्य की आत्मा से नहीं रह गया है, ईश्वर से बहुत थोड़ा रह गया है। धर्म का सम्बन्ध परलोक से रह गया है। मनुष्य की दो ही प्रेरणाएँ हैं एक लाभ का इच्छा और दूसरा परलोक का भय। स्वर्ग का लालच है और नरक का डर है। अब धर्म का अधिष्ठाता भगवान नहीं यमराज है। और ऐहिक क्षेत्र में 'हैंगमैन' (जल्लाद) है। लोभ और भय ये दोनों प्रेरणाएं मनुष्य का मनुष्यपना में पतन कराने में कारणीभूत हुई हैं।

हमारे देश में और अन्य देशों में धार्मिक आचरण की प्रेरणाएं भौतिक ही

दादा धर्माधिकारी

रही हैं आध्यात्मिक कभी नहीं रहीं, इसलिए धर्म हमको जहाँ पहुँचाना चाहता था वहाँ वह पहुँचा नहीं सका।

संगठित सत्य का नाम ही असत्य

शैतान एक दफा अपने दो शिष्यों के साथ सैर करने चला। आगे-आगे छोटा शिष्य जा रहा था, बड़ा शिष्य उसके पीछे था। शैतान सबके पीछे था। जो शिष्य आगे था वह एकाएक रास्ते पर रुका। कोई चमकीली-सी चीज उसे दिखाई दी। उसने उठाया उस चीज को उठा लिया और अपनी जेब में रख लिया। जो बड़ा शिष्य था, देख रहा था। दौड़ कर वहाँ पहुँचा और पूछा तूने क्या उठा लिया? जेब में क्या रख लिया? उसने कहा यह सत्य का टुकड़ा है मुझे दिखाई दिया, मैंने उसको जेब में रख लिया। यह तो अनर्थ हो गया। वह दौड़कर शैतान के पास पहुँचा। बोला आपको पता है। आपके शिष्य ने सत्य को उठाकर अपनी जेब में रख लिया है, अनर्थ हो गया। अब तो आपकी सत्ता नहीं रह सकेगी। शैतान ने कहा कि डरता क्यों है? उसने सत्य को जेब में रख लिया है, अब कोई डर नहीं है। वह अब सत्य को संगठित करनेवाला है। सत्य जिस क्षण संगठित हो जाता है, विशिष्ट सत्य हो जाता है, मर्यादित सत्य हो जाता है सीमित सत्य हो जाता है। सीमित सत्य का नाम ही असत्य है। जो सार्वत्रिक है वह सत्य है जो सीमित है वह मिथ्या है। सीमित सत्य का नाम ईश्वर-निष्ठा नहीं मन्दिर-निष्ठा है, सम्प्रदाय-निष्ठा है। एक कहावत है गिरजा घर के जितने नजदीक रहोगे ईश्वर से उतना ही दूर रहोगे। इसीलिए आपने देखा होगा, मन्दिर में जो पुजारी होता है उसके हृदय में कम से-कम भक्ति होती है, क्योंकि वह देवता तो उसकी जीविका का विषय है, उसके सहारे वह जीता है। इसलिए वह उतना ईश्वर-निष्ठ नहीं होता, जितना जीविका-निष्ठ होता है।

आज मन्दिर में बैठा हुआ ईश्वर और मस्जिद में बैठा हुआ ईश्वर अलग-अलग है। गिरजा घर में बैठा हुआ ईश्वर और गुरुद्वारे में बैठा हुआ ईश्वर, दोनों अलग-अलग हैं। केवल अलग-अलग ही नहीं, इनमें टकराव है। नतीजा यह है कि जो सबमें ईश्वर 'कामन फैक्टर' है जो 'कामन फैक्टर' होना है वह समाप्त हो जाता है, टूट जाता है, रह जाते हैं मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे, गिरजाघर। मेरा ईश्वर

---

(३) गांधीजी के विचारानुसार ईश्वर में विश्वास होना चाहिए।

प्रश्न : आन्दोलन का दृष्टिकोण-परिवर्तन में प्रभाव?

उत्तर : इसका आरम्भ सम्बन्ध बनाने से करना होगा, उसके बिना आगे नहीं बढ़ सकते। सामाजिक-राजनैतिक क्षेत्र में संघर्ष का हल तब तक नहीं हो सकता है जब तक विभिन्न वर्गों व विभिन्न हितों में सम्बन्ध न निर्माण किये जायें। अगला प्रश्न है कि सम्बन्ध व दृष्टिकोण साथ साथ कैसे बने? पर इसे अलग-अलग नहीं किया जा सकता। सम्बन्ध बनाना है, इसलिए प्रस्तुति पहले बनाना है—तब इसके ऊपर कार्य करना है। असफलता हो सकती है, यह मानकर चलना है। यह तैयारी का ही एक भाग होना चाहिए नहीं तो खूब निराशा होगी जिससे नैतिक ह्रास होगा। बड़े पैमाने पर मानसिक तैयारी तो वातावरण में ही होने लगती है, किसी को होती है, किसी को नहीं, किसी को कम होती है किसी को अधिक। सामाजिक क्रान्ति की तैयारी का कोई निश्चित पैमाना नहीं है। वातावरण में मन की तैयारी हो जाती है तथा उससे नैतिक स्तर भी बढ़ जाता है।•

तेरा ईश्वर, इसमें ईश्वर 'गायब' है, वह समाप्त हो गया मैं-तू शेष रह गया।

दिक्कत कहाँ है

आज हालत यह हो गयी है कि मैं चमार से जूता ले लेता हूँ दर्जी से कोट ले लेता हूँ इसी तरह पुरोहित से धर्म ले लेता हूँ। यह परिस्थिति होने के कारण ईश्वर का नाम जब लिया जाता है तब मेरे हृदय में जो भावनाएँ उठती हैं, वह अल्लाह का नाम लेनेवाले के हृदय में नहीं उठती। अल्ला का नाम जब लिया जाता है तब मुसलमान के हृदय में जो भावना उठती है वह मेरे हृदय में नहीं उठती। मेरी जीभ, मेरी जबान जरूर कहती है कि ईश्वर और अल्ला तेरे नाम हैं लेकिन ईश्वर कहते हुए भगवान के विषय में भक्ति मेरे हृदय में पैदा होती है, अल्लाह कहते हुए नहीं होती। इसलिए गांधी हमको एक दूसरे के नजदीक सार्वजनिक प्रार्थना में बैठा गया, लेकिन हमारी प्रार्थना समान नहीं हो सकी। सामुदायिक प्रार्थना का अर्थ है समान प्रार्थना। जो एक साथ बैठे हैं उनकी प्रार्थना अगर एक है तो वह सामुदायिक प्रार्थना है, अगर उनकी प्रार्थना एक नहीं है तो वह सामुदायिक प्रार्थना नहीं है।

ध्यान एक दूसरे के रेंकने की तरफ है

एक शहर में एक वकील साहब और एक धोबी अगल बगल में रहते थे। धोबी के यहाँ एक गधा था वह रात को रेंका करता था। वकील साहब की नींद हराम हो जाती थी। उन्होंने बार बार उस धोबी से कहा कि यह गधा रात को रेंकता है हमारी नींद मुहाल हो जाती है, किसी तरह से इसका रेंकना बन्द कर दें। हाथ जोड़कर धोबी ने कहा कि वकील बाबू आप तो पढ़े-लिखे हैं, समझदार हैं। आप जानते हैं, आखिर गधा है, समझाने से मानेगा नहीं, वह तो रेंकेगा ही। वकील साहब तंग आ गये। उन्होंने अदालत में नालिश कर दी कि इस धोबी का गधा रात में रेंकता है। हमारी नींद हराम हो जाती है। धोबी ने भी एक वकील कर लिया, बहुत होशियार वकील। अब यह वकील दूसरे वकील से जिरह करता है।

"वकील साहब यह गधा रात भर में कितनी दफा रेंकता होगा?" "दो चार दफा रेंकता होगा।" 'ठीक है, चार दफा समझ लीजिये। हर बार में लगातार कितने मिनटों तक रेंकता होगा?" "ज्यादा-ज्यादा तीन मिनट रेंकता होगा।" तो कुल मिलाकर यह गधा रात भर में बारह मिनट रेंकता है और आप कहते हैं कि रात भर नींद नहीं आती यह कैसे हो सकता है।" वह दूसरा वकील कहने लगा, भाई साहब यह गधा अब रेंका, अब रेंका, अब रेंका इस इन्तजार में जो समय बीत जाता है वह हिसाब तो आपने नहीं लगाया। यही परिस्थिति धार्मिक क्षेत्र में है। किसी का ध्यान आज भगवान में और भक्ति में नहीं है, एक दूसरे के रेंकने की तरफ है।

हमारी आस्तिकता का हाल

वकील साहब का मुकदमा अदालत ने खारिज कर दिया तो वकील साहब के पास कुछ नहीं रहा, फिर वे भगवान के मन्दिर में पहुँचे, जैसे लड़के परीक्षा के समय पहुँचते हैं। वकील साहब ने भगवान से कहा कि अगर तू धोबी के गधे को मार दे तो सत्यनारायण की कथा कराऊँगा। अब भगवान तो वकील साहब से ज्यादा ही अक्ल रखता होगा। कुछ दिनों के बाद वकील साहब के तांगे का घोड़ा मर गया। फिर मन्दिर में गये और कहने लगे कि इतने दिन भगवान तूने नाहक ठकुराई की है, तुझे तो घोड़े और गधे की तमीज नहीं, हमने तो कहा था कि गधा मार दे, तूने घोड़ा मार दिया, ऐसी ठकुराई करता है। यह हमारी आस्तिकता का हाल है। इससे गहरी हमारी आस्तिकता नहीं जा सकी।

धर्म के नाम पर हत्याएं और अत्याचार

मस्जिदों में प्रार्थना होती है पाकिस्तान के लिए कि पाकिस्तान जीते, भारत के मन्दिर में प्रार्थना होगी कि भारत की विजय हो, इंग्लैण्ड के गिरजाघरों में प्रार्थना होगी कि इंग्लैण्ड की फतह हो, जर्मनी के गिरजाघर में प्रार्थना होगी कि जर्मनी की विजय हो। मुझे बतलाइये अब भगवान क्या करे, वह क्या हमारा कमीशन एजेन्ट है? इसका विचार अब तक नहीं हुआ है। इसलिए धर्म मनुष्य को मनुष्य के निकट नहीं ला सका है।

मित्रो, धर्म के नाम पर जितनी हत्या और जितने अत्याचार संसार में हुए और आज हो रहे हैं, उतने न कभी जमीन के लिए हुए, न धन के लिए हुए और न स्त्री के लिए हुए हैं। जमीन, स्त्री और दौलत के लिए जो अत्याचार होते हैं उसके लिए आदमी को शर्म आती है। मनुष्य समझता है कि मैंने पाप किया, लेकिन धर्म के नाम पर अगर कोई श्रद्धानन्द की हत्या कर देता है या कोई गांधी की हत्या कर देता है तो दोनों शहादत के हकदार हो जाते हैं, दोनों हुतात्म हो जाते हैं।

विज्ञान और अध्यात्म के दिन

गांधी ने कहा कि सर्वधर्मसमन्वय होना चाहिए। विनोबा कहता है कि धर्म और राजनीति के दिन लद गये, अब तो विज्ञान और अध्यात्म के दिन आ गये हैं। मैं और आप किसी मुकद्दमे में अगर परस्पर विरोधी पक्ष में हैं और दोनों सामुदायिक प्रार्थना में बैठे हैं तो मैं भगवान से प्रार्थना करता हूं कि मैं जीत जाऊँ, आप प्रार्थना कर रहे हैं कि आप जीत जायें। इस तरह दोनों के स्वार्थ परस्पर विरोधी हैं तो भगवान क्या करे।

धार्मिक पुरुष की भूमिका क्या हो?

एक सन्यासी बहुत बड़ा धार्मिक पुरुष था। एक वेश्या के घर के सामने रहता था। एक तरफ वेश्या का घर और दूसरी तरफ सन्यासी की झोपड़ी। वह रात-दिन सब देखता था। सन्यासी देखता कि वेश्या के यहाँ भले भले आदमी, शहर के शरीफ आदमी आते हैं। उसे बड़ा दुःख होता था कि सारे के सारे कैसे पापी हैं, इस वेश्या के घर आते हैं, और इस वेश्या का पापमय जीवन है। क्या दुर्गति होगी इसकी। वह सन्यासी हमेशा उस वेश्या के पापमय जीवन का ध्यान करता था, उधर वह वेश्या इस सन्यासी को अकेला, शान्त बैठा हुआ देखती थी। वह कहती थी,

भगवान बना इसका जीवन है, वैसा शान्त है, कोई चिन्ता नहीं है कोई झंझट नहीं है! और, यह मेरा पापी जीवन है, मैं नरक में जानेवाली हूँ, क्या ही अच्छा होता, मुझे भी ऐसी बुद्धि होती, इस सन्यासी का जीवन मैं जी सकती। निरन्तर सन्यासी के जीवन का ध्यान वह किया करती। संयोग ऐसा हुआ कि वेश्या और सन्यासी दोनों का देहान्त एक ही दिन हुआ। सन्यासी को लेने के लिए यमदूत आये और वेश्या को लेने के लिए देवदूत आये। सन्यासी का शरीर शुद्ध था, पवित्र था। उसकी अर्थी का जुलूस निकल रहा था। लोग उसके शरीर पर फूल बरसा रहे थे, गुलाल उड़ा रहे थे। उसकी समाधि गंगाजी के किनारे बननेवाली थी। वेश्या के शरीर को उठाने के लिए चण्डाल भी तैयार नहीं हो रहा था। भंगी की गाड़ी में लाद कर उसके शरीर को मणिकर्णिका के घाट पर पहुँचाया जा रहा था। सन्यासी का शरीर पवित्र था, उसका गौरव हो रहा था। वेश्या का शरीर अपवित्र था, वह अपमानित हो रहा था। लेकिन सन्यासी का चित्त तो मलिन था, वह नित्य वेश्या के पापों का ध्यान किया करता था इसलिए उसे लेने यमदूत आये और वेश्या सन्यासी का ध्यान करती थी इसलिए उसको लेने के लिए देवदूत आये। यह धार्मिक पुण्य की भूमिका कहलाती है।

आज उल्टा है। कौन धर्म का आचरण नहीं कर रहा है इसकी चिन्ता स्वयं धर्माचरण करने से अधिक है। इसलिए चिन्तन एक दूसरे के दोषों का होता है। कंस ने श्रीकृष्ण का चिन्तन किया वह तदाकार हो गया। रावण ने राम का ध्यान किया चाहे विरोधी ही ध्यान क्यों न हो वह तद्रूप हो गया। जो जैसा ध्यान करता है वह वैसा तद्रूप हो जाता है। यह संकेत हम गांधीजी के जीवन में पाते हैं। उसने समूचे राष्ट्र का, राष्ट्र के सामान्य नागरिक का ध्यान किया तो बापू कहलाया, राष्ट्रपिता कहलाया।

गांधी की महिमा

ईश्वर-निष्ठा के सिक्के का दूसरा पहलू अदृश्य आस्तिकता है। गांधीजी की धार्मिकता में अन्य धार्मिक पुरुषों से अन्तर है। उसकी दृष्टि में सामुदायिक प्रार्थना का अर्थ है समान प्रार्थना; जितने साथ बैठते हैं उनकी एक ही प्रार्थना है और वह प्रार्थना उनके हृदय से निकलती है। ऐसा दृश्य गांधी हमारे देश में उपस्थित करना चाहता था। वह चाहता था कि हम दूसरे के दोषों का ध्यान नहीं करेंगे, अपने भी दोषों का ध्यान नहीं करेंगे। ध्यान दोष का नहीं होगा ध्यान तो गुण का ही होगा। यही प्रार्थना कहलाती है। उपासना गुणों का ध्यान है अपने गुणों का ध्यान एवं दूसरे के गुणों का ध्यान, इसमें से एक मांगल्य का वातावरण, शुभ वातावरण पैदा होता है।—प्रेषक : गुरुशरण

जनता को सत्ता सौंपने की क्रान्ति

"इस देश के अस्सी प्रतिशत लोग गरीब है और देश के अस्सी प्रतिशत वोट उनके पास है। लेकिन वे देश का शासन नहीं करते। क्यों नहीं करते? देश के राजनीति-शास्त्र के मर्मज्ञों को इसका उत्तर देना है।"—श्री जयप्रकाश नारायण

इस तरह के सवालों का जवाब देने की आदत हमारे राजनीति-शास्त्रियों में नहीं है। इसके दो कारण है: पहला यह कि जैसे विश्वविद्यालय की एक आश्रम या मध्ययुग के मठों के रूप में कल्पना की गयी थी वैसे ही शास्त्रीय विषयों को भी वास्तविक जीवन से दूर रखा गया। यदि राजनीति-शास्त्र की पढ़ाई, अध्यापन-शैली और शोध-कार्यों का सर्वेक्षण किया जाय तो यह पता चल जायेगा कि हमारे समाज के वास्तविक राजनीतिक अनुभवों और राजनीति-शास्त्र के शास्त्रज्ञों की चर्चाओं

मनोरंजन महंती

के बीच कितना अन्तर है। दूसरा कारण है, न केवल हमारे देश बल्कि सारे विश्व की राजनीति की तात्कालिक परिस्थिति। इस युग के राजनीति-शास्त्रज्ञों ने राजनीति का अर्थ 'सत्ता' का संचालन मान लिया है। राजनीति-शास्त्र के सभी प्रकार के ज्ञाता राजनीति के इस सत्ता-सम्बन्धी पहलू को राजनीति का अंग मानते हैं। सत्ता के अन्तरगत राजनीति और समुदाय-सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण प्रश्न दबे पड़े हैं। राजनीति-शास्त्र के अध्ययन के प्रसंग में श्री जयप्रकाश ने एक दिलचस्प देन दी है। "सिटीजेन" (अंग्रेजी पाक्षिक) के २३ अगस्त, ६९ के अंक में शान्ति पर लिखते हुए उन्होंने राजनीति के अध्ययन में लोक (पीपुल) का अर्थ स्पष्ट किया है।

श्री जयप्रकाश ने राजनीति में सत्ता के विपरीत 'लोक' के अधिष्ठान का सुझाव पेश किया है। राजनीति के मर्मज्ञों को श्री जयप्रकाश के इस ताजगी भरे सुझाव पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए क्योंकि यह सुझाव राजनीति के दशाब्दियों की गिरावट के बाद प्रस्तुत हुआ है।

राजनीति की सत्तामूलक अवधारणा के कारण राजनीति के अपने स्वरूप की ही अवहेलना हुई क्योंकि इसके चलते राजनीति-सम्बन्धी कुछ मूलभूत विचार पीछे छूट गये। ग्रीक भाषा में 'पोलिस' शब्द है। इस शब्द को दो अर्थों में ग्रहण किया जा सकता है—एक तो सदस्यों के अर्थ में, और दूसरा व्यवस्थापकों के अर्थ में। अनेक सामाजिक तथा आर्थिक कारणों से ग्रीक-समाज के व्यवस्थापक, जिनके हाथ में सत्ता थी वे राजनीति के सूत्रधार थे। इस प्रकार उस समय की राजनीतिक विचारधारा और कार्य मुख्यतः शासकों से सम्बन्धित थे। राजनीति उन्हीं के बारे में सबसे अधिक खयाल रखती थी। राजतंत्र (Polity) से समाज के जिन सदस्यों का सम्बन्ध था वे बुनियादी महत्व रखते हैं यह नहीं माना जाता था।

ग्रीक लोगों द्वारा जो धारणाएँ अपनायी गयी थीं उन्हें फ्रांसीसी क्रान्ति के जमाने में एक्वीनास और रूसो ने ठोस शक्ल दी। यद्यपि फ्रांसीसी क्रान्ति जन-आधारित नहीं थी फिर भी उसने मनुष्यों के समुदाय में लोक को एक संगठित-शक्ति

होने का महत्त्व प्रदान किया। रूस की क्रान्ति ने इस प्रक्रिया को और आगे बढ़ाया। चीन की क्रान्ति के दौरान इस दिशा में और प्रगति हुई जो कि 'जन-सेना' 'जन-युद्ध' और 'जन स्तर' जैसे शब्द-प्रयोगों में प्रकट हुई। लेकिन इसके साथ ही साथ चुने हुए सत्ता-धारियों का महत्त्व भी बढ़ता चला गया।

इस शताब्दी की औद्योगिक प्रगति के परिणामस्वरूप सत्ता सिमट कर एक जगह इकट्ठी हो गयी है। यांत्रिकी की सहायता से साधनों को आसानी से केन्द्रित करके उसे इस्तेमाल में लाया जा सकता है। लेकिन इसके साथ ही साथ, संचार के सुधरे हुए साधनों तथा जन-शिक्षण (mass education) के कारण जनता को वैज्ञानिक विकास का लाभ मिला है। वह एक ऐसी शक्ति के रूप में उभर कर सामने आयी है जैसी पहले कभी नहीं थी।

आज हम एक परस्पर विरोधी परिस्थिति में जी रहे हैं। चाहे देश समाजवादी हो या गैर समाजवादी, दोनों में राजनीतिक निर्णय ऊपर के गिने-चुने लोगों द्वारा होता है। राजनीति सम्बन्धी जितने प्रकार की भी रचनाएँ प्रकाश में आयी हैं वे सिर्फ यह समझाती हैं कि प्रचलित ढाँचे कैसे काम करते हैं या अधिक-से अधिक उनमें यह बताया गया है कि कैसे वे और अच्छी तरह काम कर सकते हैं। आम लोगों को कहा जाता है कि वे विशेषज्ञ नहीं हैं। प्रतिस्पर्द्धा से भरी इस दुनिया में जब किसी विशेष निर्णय पर पहुँचना हो तो उन्हें निर्णय लेने का काम अपने नेताओं पर छोड़ देना पड़ता है। जनमत के पीछे चलने के बजाय उसे अपने अनुकूल बनाया जाता है। इस तरह गिने चुने लोगों द्वारा निर्णय लेने के रिवाज को सहारा मिलता है। प्लेटो के जमाने में चुनिन्दा लोगों के जरिये व्यवस्था चलाने के तरीके को नातिक आधार पर स्वीकृति मिली थी। बाद में यह शक्ति-सामर्थ्य आधार पर स्वीकार की गयी। आज कुशल प्रशासन के नाम पर उसी को जारी रखा जा रहा है।

राजनीतिज्ञ और राजनीति शास्त्री, दोनों ही आज के प्रचलित ढाँचे को सुचारु रूप से चलाने-मात्र में दिलचस्पी रखते हैं। जो इस ढाँचे को कायम रखने के लिए कटिबद्ध हैं और जो इसमें परिवर्तन लाना चाहते हैं, दोनों के दिमाग में 'सत्ता का ढाँचा' घर किये हुए है। एक बार वे सत्ता का संगठन बना लेते हैं और फिर सत्ता को अपने हाथ में रखने का सब उपाय करते हैं। परस्पर विरोधी बात यह है कि पिछले कुछ दशकों में अभूतपूर्व पैमाने पर किसानों, मजदूरों और छात्रों के आन्दोलन और विरोध-प्रदर्शन हुए हैं। चुनिन्दा लोगों द्वारा चलायी जानेवाली सत्ता के ढाँचे और आम जनता की शक्ति का मुकाबला हर जगह होता दिखाई देता है। लेकिन राजनीति के विद्यार्थी आज भी राजनीति सत्ता-प्रधान व्याख्या को त्यागने के लिए तैयार नहीं हैं। राजनीति की सत्ता-प्रधान भूमिका वस्तुतः 'व्यक्ति' और राज्य के बीच के टकराव (conflict) को महत्त्व प्रदान करती है। इसे ही राजनीति-शास्त्र का प्रथम सोपान माना जाता है। आज की एक दूसरी बुनियादी अवधारणा (Proposition) यह है कि आदमियों से प्रचलित कानून का महत्त्व अधिक है। राजनीति शास्त्र की दुनिया में रमनेवाले लोग सर्वोदय आन्दोलन को स्वप्नदर्शी धारणा कहकर अलग हटा देते हैं क्योंकि यह आन्दोलन सत्ता से अलग है।

राजनीति की जन सापेक्ष परिकल्पना (Perspective) राजनीति को लोगों की ओर से अच्छी जिन्दगी बिताने की कोशिश के रूप में कबूल करती है। बोल्डन ने सन् १९६० में प्रकाशित पुस्तक 'पॉलिटिक्स एंड विज़न' में शेल्डन वोलिन ने कहा है कि राजनीति की दो मुख्य पहचान हैं सर्व सामान्य और परस्पर मिली-जुली राज-नीति (Polity) का प्रत्येक कार्य 'सर्व', जनता से प्रारम्भ होना चाहिए और इन अमल सब लोगों को निर्णय में भागीदार होना ही चाहिए। इन में शरीक करने-वाली लोकतांत्रिक प्रणाली में यह मान्यता हम बहुत आगे ले जाती है। इस नयी परिकल्पना को मूर्त रूप देने के लिए आवश्यक होगा कि जनता नीचे के स्तर पर अनेक ऐसे पचवर्षीय आयोजना में भाग लेगी जिसके द्वारा वह मतदाता की हैसियत से चुने हुए लोगों को शासन करने का अधिकार सौंपेगी। लेकिन यह जन-सापेक्ष राजनीति जनता में परिपूर्ण भरोसा रखकर शुरू होती है।

ऐसी पद्धतियाँ ढूँढनी होंगी जिसके द्वारा सब लोग अपने लक्ष्य का फैसला कर सकें। इस पद्धति में आम सदस्य ही मुख्य अभिनेता की भूमिका निभायेंगे। इस अर्थ में देखा जाय तो एक अर्थ में राजनीति का पतन होना स्पष्ट है। श्री जयप्रकाश की तात्कालिक रचनाओं में राजनीति का नवोन्मेष ऐसे रूप में होता दिखाई पड़ता है जिसके द्वारा राजनीतिक चिन्तन में एक नयी परम्परा का सूत्रपात होना सम्भावित है।

श्री जयप्रकाश ने क्रान्ति की जो व्याख्या की है उसमें राजनीति के जन-सापेक्ष पहलू की स्पष्ट झलक मिलती है। सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक क्रान्ति जनता द्वारा हस्तगत और मजबूत होती है। उनका यह कहना कि भारत के ८० प्रतिशत लोग हैं जिन्हें वे लोक के रूप में मानते हैं माओ के इस कथन से तुलनीय है कि किसी भी असमाजवादी समाज में ९० प्रतिशत लोग जन हैं और बाकी लोग उनके दुश्मन हैं। यहाँ पर जन या लोक की धारणा पर जो बल दिया गया है वह महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि सभी लेखक क्रान्ति को जन आन्दोलन के रूप में नहीं स्वीकार करते। बहुत से क्रान्ति को सामाजिक परिवर्तन के एक प्रकार के रूप में देखते हैं। 'क्रान्ति' का दो चीजों से सम्बन्ध है—(१) परिवर्तन का साधन, (२) परिवर्तन की सीमा। यदि हम क्रान्ति की अवधारणा की जन-सापेक्ष व्याख्या करें तो इसका अर्थ यह होता है कि क्रान्ति के लिए जो साधन उपयोग में लाये जायँगे उसमें विशाल जनता का शरीक होना आवश्यक होगा। इसके साथ-साथ यह भी आवश्यक होगा कि इस प्रक्रिया द्वारा जो

परिवर्तन हो वह जनता के पास शक्ति पहुँचाये। जयप्रकाशजी इस बात की ओर भी इशारा करते हैं कि यद्यपि जनता के नाम पर क्रान्तियाँ हुई हैं लेकिन परिणाम-स्वरूप अक्सर जनता के पास तक शक्ति नहीं पहुँच सकी।

जहाँ तक 'परिवर्तन के साधन' की बात है, जयप्रकाश फ्रेन ब्रिटन तथा चामर्स जानसन से सहमत होंगे और कहेंगे कि क्रान्ति के लिए असंवैधानिक तरीकों से बाहर के साधनों का उपयोग करना लाजिमी होता है। यह कथन भी राजनीति की जन-सापेक्ष अवधारणा पर आधारित है, क्योंकि दुनिया भर में संविधान शासकों के हाथ का एक शक्तिशाली औजार बना हुआ है। जनता सत्ता हासिल करने के लिए समर्थ हो सके इसके लिए उसे ऐसे साधन उपयोग में लाने पड़ते हैं जो संविधान द्वारा मान्य या सह्य नहीं होते।

क्रान्ति के लिए जयप्रकाशजी काम के हिंसात्मक तरीके को अस्वीकार करते हैं और करुणा या अहिंसात्मक तरीके का सुझाव पेश करते हैं। इस बात को भी वे जनसापेक्ष आधार पर ही उचित ठहराते हैं। हिंसात्मक क्रान्तियों ने, जिसमें चीन की लोकप्रिय क्रान्ति भी शामिल है, केन्द्रित सत्ता के ढाँचे खड़े किये जो कहीं नौकरशाहीमूलक थे और कहीं अधिकार-मूलक। श्री जयप्रकाश के अनुसार ऐसी क्रान्तियों में एक प्रकार के शासकों के बदले दूसरे प्रकार के शासक सत्ता में पहुँच जाते हैं। वे क्रान्ति के बाद जिस नव-समाज की स्थापना करना चाहते हैं वह एक ऐसा विकेन्द्रित ढाँचा होगा जिसमें गिने-चुने लोगों का बोलबाला समाप्त होगा और स्वतंत्रता तथा समानता के सामाजिक मूल्यों के आधार पर नये मानवीय सम्बन्ध प्रस्थापित होंगे।

इस प्रकार श्री जयप्रकाश जनसापेक्ष राजनीति के दो जीवित सूत्रधारों माग्रात्से तुंग और हर्बर्ट मारक्यूज को एक में जोड़ देते हैं। माओ की जन-स्तरीय कार्य-पद्धति इसकी ही पुष्टि करती है जिसके अनुसार क्रान्ति की प्रक्रिया भी दुनिया लोगों के जरिये नहीं, बल्कि 'जनता द्वारा जनता तक' पहुँचेगी। चीन की सांस्कृतिक क्रान्ति इसलिए हुई कि लोकाभिमुख राजनीति पेशेवर राजनीति, नौकरशाही और सत्ता संगठनों पर हावी हो सके। माओ ने जिस समस्या को हाथ में लिया है वह यह है कि 'जनता क्रान्ति कैसे कर सकती है?'

अमेरिकी दार्शनिक मार्क्यूज ने मनुष्य की मुक्ति के मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक आधार का उल्लेख किया है। अपने 'वन डाइमेन्शनल मैन' नामक ग्रन्थ में उन्होंने सत्तामूलक औद्योगिक समाज में निहित उस प्रक्रिया का विवेचन किया है जो मनुष्यत्व को अमनुष्यत्व में बदलती जा रही है। पेरिस, प्राग, और रोम जैसे नगरों और हार्वर्ड, कोलम्बिया तथा बर्कले जैसे विश्वविद्यालयों में युवकों ने अपने विद्रोह में 'जनता को शक्ति सौंपने' का ही गगनभेदी नारा लगाया। यदि हम माओ, मार्क्यूज और जयप्रकाश की विचारधाराओं को एक में पिरोयें तो हमें दुनिया भर में चलनेवाला वह विद्रोह अच्छी तरह समझ में आ जायेगा जो चुने हुए लोगों द्वारा सत्ता-संचालन का विरोध कर रहा है।

उपरोक्त तीनों व्यक्तियों में कुछ अन्तर भी है। माओ के अनुसार क्रान्ति को क्रान्तिकारी युद्ध का स्वरूप ग्रहण करना होगा। क्रान्ति की व्यूह रचना के प्रश्न पर ये एक दूसरे से बहुत अलग हैं। पिछले वर्षों में जो विरोध-प्रदर्शन और बगावतें हुई हैं उनका भी यही हाल है। लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं है कि माओ और जयप्रकाश दोनों अपना चिन्तन जन-सापेक्ष राजनीति से प्रारम्भ करते हैं। इस चिन्तन-धारा की आलोचना की जा सकती है। लेकिन उसके पहले यह जरूरी है कि उसे ठीक से समझा जाय। श्री जयप्रकाश को अपने क्रान्ति-सम्बन्धी विचारों का अभी विकास करना है और अपनी क्रान्तिकारी व्यूह-रचना की और व्यापक रूपरेखा पेश करनी है। क्रान्ति के बाद समाज के संगठन का स्वरूप कैसा होगा इसकी विस्तृत रूप-रेखा बनाने की जरूरत है। अभी तक जो कुछ हुआ है वह इतना ही है कि राजनीति के बारे में एक नया रुख अपनाया जा रहा है जिसमें जनता की प्रमुख भूमिका होगी। श्री जयप्रकाश की हाल की रचनाओं में सर्वोदय की व्यक्ति-केन्द्रित चिन्तनधारा की जगह जन-केन्द्रित चिन्तन पर जोर दिखाई देता है। जन सापेक्ष भूमिका में प्रस्तुत किया गया उनका विवेचन प्रचलित राज-नीति-शास्त्र के सामने एक चुनौती है। ज्यादा देर होने से पहले ही राजनीति के विद्यार्थियों को इसके विभिन्न पहलुओं की छान-बीन करके अपना मन्तव्य प्रकट करना चाहिए।

—अंग्रेजी पाक्षिक 'दि सिटिजन' के ८ नवम्बर के अंक में प्रकाशित अंग्रेजी लेख 'पुटिंग पीपुल बैक इन पावर' का हिन्दी रूपान्तर।

मृत्यु के बीच भी जीवन का दर्शन

सर्व सेवा संघ की सहमंत्री सुश्री कान्ता शाह ने अहमदाबाद के दंगे और शान्तिसेना द्वारा किये गये शान्ति के प्रयासों का विवरण प्रस्तुत करते हुए बताया कि एक ओर जहाँ अहमदाबाद में साम्प्रदायिक हिंसा और नफरत की अशोभ-नीय घटनाएँ घट रही थीं, वहीं दूसरी ओर हिन्दुओं की ओर से मुसलमान भाइयों और मुसलमानों की ओर से हिन्दू भाइयों को संरक्षण देने के बेमिसाल काम भी हुए। आपने कितने ही रोमांचित करने वाले संस्मरण सुनाये। एक परिवार की ओर से किये गये इस प्रकार के काम का अनुभव सुनाते हुए आपने बताया कि संरक्षण देनेवाले परिवार ने संरक्षित लोगों हेतु अपने कमरे में शौचालय तक की व्यवस्था की, और खुद ही उसकी सफाई की, क्योंकि शौच के लिए बाहर जाने में खतरे थे।

आपने कहा कि हिंसा की उग्रता के बीच भी अहिंसा की जबरदस्त शक्ति विकसित हो रही है और हमें मानवता के उज्ज्वल भविष्य के प्रति आश्वस्त होकर अहिंसा की शक्ति विकसित करनी है।●

"मेरा जीवन ही मेरा संदेश है।"—गांधी
गांधीजी का सारा जीवन एक खुली पुस्तक है। उसे समझना और उसके अनुसार आचरण करना उनके प्रति सबसे उत्तम श्रद्धांजलि है।
राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
टुंकलिया भवन, कुंदीगरों का भैंरु, जयपुर-२ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

खुदा के दो बन्दे

हमारी संस्कृति में—और शायद दुनिया की अन्य संस्कृतियों में भी—नदियों के संगम पवित्र और मंगल स्थान माने जाते हैं। मानवीय और सामाजिक दृष्टि से मेल या जोड़ की बात सदा शुभ ही मानी जानी चाहिए, संघर्ष या तोड़ने की बात अशुभ। और फिर यह मिलन अगर दो पवित्र तत्वों या व्यक्तियों का हो तो यह अत्यन्त मंगलकारी घटना ही मानी जायगी।

तारीख ४ नवम्बर को वर्धा में खान अब्दुल गफ्फार खाँ और विनोबा का मिलन कई दृष्टियों से एक अविस्मरणीय घटना थी। भारतीय स्वातंत्र्य-संग्राम में त्याग और तपस्या की आग में से गुजर कर और गांधीजी के संपर्क में आकर जो कई महान् व्यक्तित्व इस देश में निखरे उनमें अध्यात्म या रूहानियत की दृष्टि से विनोबा और खान साहब के नाम सर्वोपरि हैं। नेहरू, पटेल, राजेन्द्र बाबू आदि भी भारत को गांधी-युग और आजादी की लड़ाई की देन थे, पर उनके व्यक्तित्व मुख्यतः राजनैतिक थे। बादशाह खान का परिचय भी भारत की जनता को आजादी की लड़ाई के एक सेनानी के रूप में ही हुआ, पर स्वर्ग गांधी की तरह वे भी उन लोगों में से हैं जिनकी दृष्टि में आर्थिक और सामाजिक की अपेक्षा नैतिक और अध्यात्मिक मूल्यों का महत्व अधिक है। विनोबा के बारे में तो यह बात स्वयं सिद्ध-सी ही है। गांधीजी के अनुयायियों और सहकर्मियों में ये दोनों महापुरुष ऐसे हैं जो संत प्रकृति के, भक्त-हृदय और निष्काम-वृत्ति वाले हैं। दोनों सच्चे माने में 'खुदा के बन्दे', ईश्वर के सेवक हैं। बादशाह खान के तो अपने संगठन का नाम ही 'खुदाई खिदमतगार' है। खान साहब ही एक ऐसे अखिल भारतीय नेता थे जो गांधीजी की मौजूदगी में ही दूसरे 'गांधी' के नाम से प्रख्यात हुए।

सत्ताईस बरस के लम्बे अरसे के बाद इन दो साधु-पुरुषों का मिलन वर्धा में हुआ। जिस तरह गंगा और यमुना के संगम पर अव्यक्त रूप से सरस्वती भी आ मिलती है उसी तरह वर्धा में तारीख ४ नवम्बर को खान साहब और विनोबा के मिलन के साथ अनायास ही एक तीसरे साधु-पुरुष का मिलन भी अप्रत्यक्ष रूप में जुड़ गया। पहले विनोबा और खान साहब का मिलन सर्वोदय सम्मेलन के अवसर पर राजगिर, बिहार में होने का तय था। और खान साहब सम्मेलन से पहले ही वर्धा भी आनेवाले थे। लेकिन दंगा-पीड़ित अहमदाबाद और गुजरात में ज्यादा समय रुकना पड़ जाने से खान साहब सम्मेलन के समय राजगिर नहीं पहुँच सके। वर्धा भी उससे पहले नहीं जा सके। ४ नवम्बर को स्वर्गीय श्री जमुनालालजी बजाज का जन्मदिन पड़ता है। वर्धा में उनके समाधि-स्थल पर श्री कमलनयन बजाज के अभिक्रम से 'गीताई-मंदिर' का निर्माण हो रहा है। उसका शिलान्यास इस दिन के लिए तय था। जब अक्तूबर में खान साहब वर्धा नहीं आ सके तो ४ नवम्बर को उनसे यहाँ आने की प्रार्थना की गयी। उनका वर्धा आना तय होने की सूचना मिलने पर राजगिर से विनोबाजी भी उनसे मिलने वर्धा आये। तारीख २ की रात को विनोबा वर्धा पहुँचे और जमुनालालजी बजाज के जन्म-दिन तारीख ४ को सबेरे बादशाह खान। उस दिन शाम को स्वर्गीय जमुनालालजी के समाधि-स्थल पर आयोजित समारोह में हजारों स्त्री-पुरुष बादशाह खान और विनोबा के प्रत्यक्ष दर्शन तथा जमुनालालजी के स्मरण से कृतकृत्य हुये। इस प्रकार इस दिन वर्धा में गंगा-जमुना और सरस्वती के पावन त्रिवेणी संगम का प्रसंग उपस्थित हुआ।

समारोह में आने के कुछ ही मिनट पहले बजाजवाड़ी में जब विनोबा और बादशाह खान २७ वर्ष बाद पहली बार मिले तो शब्दों से ज्यादा आँखों और आँसुओं द्वारा ही दोनों हृदयों की बातचीत हुई। बादशाह खान ने विनोबाजी से उनके स्वास्थ्य का हाल पूछा तो एक क्षण विनोबा चुप रहे। फिर बोले—'आप की सेहत के बारे में मैं कैसे पूछूँ? आपने तो ३५ साल जेल में बिताये है।' उसके बाद तो कुछ देर दोनों ओर से आँसुओं ने ही बातचीत की। वे आँसू दोनों हृदय की भावना और परस्पर आदर को जितने स्पष्ट रूप से जाहिर कर रहे थे उतने कोई भी शब्द शायद ही कर सकते थे।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि हिन्दुस्तान की आजादी के लिए व्यक्तिगत रूप से किसी को ज्यादा से-ज्यादा कीमत चुकानी पड़ी है तो बादशाह खान को। आज से ६० बरस से भी पहले जब से उन्होंने होश सँभाला तब से १९४७ तक तो उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य के साथ लोहा लिया और बार-बार जेल भुगतने के अलावा अनेक तरह की शारीरिक यातनाएँ और आर्थिक कष्ट भी सहे। लेकिन आजादी के साथ देश का विभाजन हुआ तो जिस शख्स ने अपनी उम्र भर मुस्लिम सम्प्रदायवादियों का विरोध किया उसे पाकिस्तान में उन्हीं से वास्ता पड़ा। आजादी के बाद भी १५ बरस खान साहब ने पाकिस्तान की जेलों में बिताये। आजादी के समय के नेताओं में गांधीजी और खान अब्दुल गफ्फार खाँ ने तथा जयप्रकाशजी आदि नौजवानों ने, अन्त तक विभाजन का विरोध किया लेकिन कांग्रेस के अन्य सब नेताओं ने हथियार डाल दिये। सचमुच खान साहब के साथ यह बहुत बड़ा विश्वासघात था। इतना ही नहीं आजादी के बाद स्वतंत्र भारत की सरकार ने पाकिस्तान सरकार से खान साहब की वाजिब माँग का समर्थन भी नहीं किया। खान साहब आज भी जब विभाजन के प्रसंग का जिक्र करते हैं तब उनके हृदय की गहरी वेदना प्रकट हो जाती है। प्रबंध समिति की मीटिंग में खान साहब का स्वागत करते हुए सर्व सेवा संघ के

अध्यक्ष जगन्नाथनजी ने जब कहा कि 'आजादी के बाद गांधीजी चले गये और आप भी हमारे बीच नहीं रहे,' तब बादशाह खान ने तुरन्त कहा—'हम बाहर नहीं गये। आप लोगों ने ही हमें बाहर कर दिया।' एक बार तो सभा में हँसी हुई पर इस विनोद के पीछे जो वेदना थी वह तत्काल लोगों के ध्यान में आ गयी और सब खामोश हो गये। इसलिए यह उचित ही था कि विनोबा ने तारीख ५ नवम्बर को वर्धा की आम सभा में अपने दिल का दुःख प्रकट करते हुए भारत की जनता की ओर से सार्वजनिक रूप से विभाजन के प्रसंग के लिए अपनी शरमिन्दगी जाहिर की। गीता का हवाला देते हुए विनोबा ने कहा कि "मित्रद्रोह बहुत बड़ा पाप है और हम इस पाप के भागी हैं"। यह सार्वजनिक क्षमायाचना वास्तव में जरूरी थी।

तारीख ४, ५, ६ नवम्बर को वर्धा में सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति की बैठक भी रखी गयी थी। खान साहब प्रबंध समिति तथा शान्तिसेना मंडल दोनों की बैठकों में उपस्थित हुए। खान साहब २२ साल बाद हिन्दुस्तान में आये हैं, लेकिन सौभाग्य से भूदान-ग्रामदान आन्दोलन की गतिविधि और विचारों से वे बहुत कुछ परिचित रहे हैं। प्रबंध समिति की बैठक में उन्होंने कहा—"उर्दू का 'भूदान-तहरीक' मेरे पास बराबर पहुँचता था, अखबार और पर्चे तो मेरे पास बहुत आते हैं और पढ़ने का वक्त मुझे बहुत कम मिलता है, पर 'भूदान-तहरीक' को मैं जरूर पढ़ता था क्योंकि उसमें जो कुछ छपा रहता है वह मुझे अच्छा लगता था। उसमें जो विचार लिखे रहते थे उनसे मेरा इत्तफाक है। कौम (राष्ट्र) तो देहात में रहती है, शहरों में नहीं, और आप लोग जो कुछ कर रहे हैं वह ठीक है। पर एक बात मैं कहना चाहता हूँ। हुकूमत अगर अच्छे लोगों के हाथ में हो तो हमारे काम को बहुत फायदा पहुँच सकता है। हुकूमत गलत लोगों के हाथ में नहीं होनी चाहिए।"

अब तो खान साहब बारबार सार्वजनिक सभाओं में भी कहते हैं कि "खुदगर्ज लोग चाहते हैं कि गरीब हिन्दू-मुसलमान आपस में लड़ते रहें। उनका ध्यान बँटा रहे ताकि उनके अपने ऐश-इशरत में फर्क न आये।" आजादी के २२ बरस बाद भी हिन्दुस्तानी प्रजा की गरीबी और मुफलिसी तथा नेताओं की खुदगर्जी को देखकर उनके मन में गहरी वेदना होती है। आज की हालत पर दुःख प्रगट करते हुए बीच-बीच में वे कह उठते हैं—"मेरी तो समझ में नहीं आता यह क्या हो रहा है।"

पत्रकार सम्मेलन में विनोबा ने कहा था कि इस समय बादशाह खान का भारत में आगमन मानो गांधीजी का ही पुनरागमन है। विनोबा ने हम सबको याद दिलाया कि "गांधीजी जिस समस्या का मुकाबला करते हुए गये वही समस्या (अर्थात् हिन्दू-मुस्लिम विद्वेष) फिर से भारत में प्रकट हुई है। ऐसी हालत में उनका आगमन यानी गांधीजी का ही अवतरण, ऐसा भास होता है।" इन दिनों वर्धा में कई बार खान साहब की वाणी सुनने का अवसर मिला, और खान साहब की अत्यन्त सादगी, हृदय की स्वच्छता, और वाणी की सरलता सचमुच बापू की याद दिलाती थी। आश्चर्य की बात तो यह थी कि उनकी वाणी और शैली से भी कभी ऐसा लगता था मानो हम गांधीजी को ही सुन रहे हैं।

१२-११-'६९ —सिद्धराज ढड्ढा

भूदान-यज्ञ : ८-११-'६९ रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए ३४

आन्दोलन के समाचार

ग्वालियर जिलादान की ओर

यहाँ जिले में जिला गांधी शताब्दी समिति के तत्वावधान में ग्रामदान आन्दोलन के अन्तर्गत जिलादान-अभियान गत २५ सितम्बर से चलाया जा रहा है। परिणाम-स्वरूप अब तक जिले के ८८६ आबाद राजस्व गाँवों में से ४४३ ग्राम ग्रामदान में सम्मिलित हो चुके हैं। गांधी-निधि और भूदान-यज्ञ बोर्ड के कार्यकर्ता मुख्य रूप से अभियान में लगे हैं। शासकीय सेवकों, अधिकारियों और पंचायत प्रमुखों का पूरा-पूरा सहयोग मिल रहा है। शीघ्र ही ग्वालियर जिलादान पूरा होने की आशा है।•

मध्यप्रदेश में भंगी-मुक्ति-योजना

ज्ञात हुआ है कि गांधी-शताब्दी-वर्ष के दौरान राज्य में भंगी-मुक्ति-योजना के अन्तर्गत दस लाख रुपये व्यय करके पचास हजार सण्डासों को भंगी-मुक्त शौचालयों में परिवर्तित करने के कार्य को हाथ में लिया जा रहा है।

इस योजना के अन्तर्गत राज्य के प्रत्येक सम्भाग में एक नगरपालिका तथा प्रत्येक जिले में एक पंचायत में कार्य किया जायेगा। इस प्रकार ७ नगरपालिकाओं एवं ४३ पंचायतों में भी भंगियों को मैला ढोने से मुक्ति दिलाने की दिशा में कार्य किया जायेगा।

इस सिलसिले में राज्य शासन ने उठाऊ शौचालयों को बहाऊ शौचालयों में परिवर्तित करने हेतु नागरिकों को १५० रुपये कर्ज प्रदान करने का निर्णय लिया है।•

बादशाह खान मध्यप्रदेश का दौरा करेंगे

ज्ञात हुआ है कि सीमान्त गांधी बादशाह खान अब्दुल गफ्फार खाँ आगामी जनवरी माह के तीसरे हफ्ते में मध्यप्रदेश का दौरा करेंगे। उनके दौरे की सम्भावित तिथियाँ २० से २४ जनवरी हैं। इसके पूर्व वे महाराष्ट्र के दौरे पर रहेंगे।

एक अन्य जानकारी के अनुसार राज्य गांधी शताब्दी समिति ने अपनी एक बैठक में निर्णय लिया है कि सीमान्त गांधी की मध्यप्रदेश यात्रा के दौरान उन्हें कम-से कम ५ लाख रुपयों की थैली भेंट की जाय।

बादशाह खान के दौरा कार्यक्रम को अन्तिम रूप देने के लिए मुख्य-मंत्रीजी के परामर्श से एक स्वागत समिति गठित की जा रही है।•

मध्यप्रदेश शासन द्वारा शराब-बन्दी-नीति की घोषणा

उन स्थानों की शराब की दुकानें, जहाँ की ७० प्रतिशत जनता उन्हें बन्द करने की माँग करेगी वहाँ, बन्द कर दी जायेंगी। ये ७० प्रतिशत नागरिक उस क्षेत्र के हैं या नहीं, इसका प्रमाण पत्र उस क्षेत्र की ग्राम पंचायतों को देना पड़ेगा।

यह है उस चर्चा का सार जो राज्य के राजस्व मंत्री पं० श्री कुंजीलाल दुबे तथा मध्यप्रदेश नशाबन्दी समिति के अध्यक्ष श्री शम्भूनाथ शुक्ल के बीच हुई है। बताया गया है कि शासन ने जो चर्चा में निर्णय लिये है, उसका परिपत्र निकालने का भी आदेश दिया गया है।

चर्चा के अनुसार जिस ग्राम में शराब की दुकान है, उस गाँव की ७० प्रतिशत जनता के हस्ताक्षर या उस दुकान के क्षेत्र की जनता के हस्ताक्षर मान्य होंगे? इस प्रश्न पर तय हुआ है कि उस पूरे क्षेत्र की ७० प्रतिशत जनता के हस्ताक्षर होना चाहिए। लेकिन जो दुकान दी जाती है वह उस ग्राम या क्षेत्र की ही होती है, जहाँ वह दुकान है। इसमें जन-संख्या और मीलों की दूरी का कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु इसमें यह प्रतिबन्ध रहेगा कि प्रति वर्ष एक तहसील की तीन दुकानों से अधिक बन्द नहीं करायी जायेंगी। यदि कोई माँग-पत्र शासन को पूर्व में प्रस्तुत किया जा चुका होगा और उस पर ७० प्रतिशत से कम हस्ताक्षर होंगे उसे पुनः नशाबन्दी समिति को लौटा दिया जायेगा। फिर वह माँग-पत्र हस्ताक्षर करवाकर प्रस्तुत किया जा सकेगा।

इससे मध्यप्रदेश शासन द्वारा घोषित शराबबन्दी की नीति स्पष्ट हो गयी है।•

ग्राम-सभा का गठन (बिहार)

मुशहरी प्रखण्ड के अन्तर्गत गादापुर जमशानी गाँव के दिनांक ५-११-'६९ की आमसभा में श्री काली प्रसाद सिंह की उपस्थिति में सर्वसम्मति से गठित ग्राम-सभा की घोषणा दिनांक १२-११-६९ को श्री जगदीश ठाकुर, अध्यक्ष बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ द्वारा १ बजे अपराह्न में की गयी। उक्त सभा में सर्वोदय के नेता श्री ध्वजा प्रसाद साहू ने अपने उद्घाटन भाषण में देश की वर्तमान विषम परिस्थिति में ग्रामदान आन्दोलन की उपयोगिता पर प्रकाश डाला।

गाँव के छह दाताओं द्वारा ग्रामदान में दिये गये बिघा-कट्ठा का विभिन्न प्रमाणपत्र सात आदाताओं में श्री ध्वजा बाबू द्वारा एक एक मिठाई के साथ वितरित किया गया। आदाताओं ने दाताओं को माला पहनाकर बधाई दी। अन्य तीन दाताओं ने भी बिघा-कट्ठा दिया, लेकिन आदाताओं में यहाँ वितरित नहीं किया गया। गाँव के अन्य दाताओं से प्राप्त भूमि के साथ इसी भूमि का भी वितरण कार्य ग्रामसभा करेगी।•

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०) विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

अन्य पृष्ठों पर

वर्ष : १६ अंक : ९
सोमवार १ दिसम्बर, '६९

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : [illegible]

शिक्षण में परिवर्तन हो

प्रश्न राजनीति मे सुधार कैसे हो ?

उत्तर राजनीति मे सुधार लाने के लिए शिक्षक की जमात खड़ी करनी चाहिए। एक-एक प्रश्न पर वह अपनी आवाज प्रकट करें। अनेक प्रश्न होंगे, उन पर शिक्षक मिलकर चर्चा करें और फिर जो सर्व-सम्मत राय हो उसे प्रकट करें। ऐसा करेंगे तो असर पड़ेगा। राजनीति मे सुधार लाने के लिए शिक्षक को उसमे से अलग रहना चाहिए। वह अलग रहेगा तभी असर डाल सकता है। अगर उसमे दाखिल हो जायेगा तो सुधार नही ला सकता है, वह उसी चक्र मे फंस जायेगा। मशीन को यदि चलाना चाहते है तो उसके बाहर रहना पड़ेगा, वैसे ही शिक्षकों को उसको चालना देने के लिए उससे बाहर रहना चाहिए। यह सारा आचार्यकुल के द्वारा करना है।

आपका शिक्षक-संघ है। वह शिक्षकों की समस्याओं पर विचार करता है। यह ठीक है, लेकिन उसको मांग करनी चाहिए कि शिक्षा मे अमुक सुधार होना चाहिए। अगर सरकार न माने तो आप विद्यार्थियों को सलाह दे सकते हैं कि एक महीने के लिए कालेज छोड़ो और चलो, खेत मे जाकर काम करेंगे। पूरी-की-पूरी हड़ताल कर दी। तमाम कालेज बन्द हो जायेंगे तो फिर सरकार को उस पर सोचना पड़ेगा कि एक भी कालेज चलता नही, विद्यार्थी और शिक्षक काम करने के लिए गांव-गांव जा रहे है। एक महीने की हड़ताल की है। तो जो आपकी मांग होगी उस पर चर्चा करने के लिए वह तैयार होगी। कोई काम करना होता है तो उसके लिए ताकत हाथ मे होनी चाहिए। अभी विद्यार्थियों ने हड़ताल की थी। कुछ विद्यार्थी मुझसे मिलने आये थे। मैंने कहा कि तुमने कालेज ३६५ दिन के लिए क्यों नही छोड़ दिया, केवल ८-१० दिन के लिए ही क्यों? बाबा ने कालेज छोड़ दिया था। वह बी० ए०, एम० ए० वगैरह नही हुआ। कालेज की पढ़ाई से कोई फायदा नही। तो छात्र ने पूछा कि हम मूर्ख रह जायंगे। हमने कहा कि जगन्नाथदास यहाँ के बहुत बड़े साहित्यिक हो गये, लेकिन वे कालेज मे पढ़े हुए नही थे। कालेज मे न पढ़ने से भी जगन्नाथदास एक बड़े साहित्यिक हो सकते हैं तो फिर कालेज क्यों जाते हो? इस तालीम मे कुछ सार नही है। शिक्षा मे बदल होना जरूरी है।

मनुष्य विविध प्रकार के लालचों मे फंसता है, उससे मुक्ति पाने के लिए मेरा 'गीता प्रवचन' और जगन्नाथदासजी का 'भागवत' पढ़ना चाहिए। उसके पढ़ने से लालच से कैसे मुक्ति पाना, वासनाक्षय आदि का बोध पर्याप्तरूपेण मिलेगा।

बारीपदा (उड़ीसा) : ४-९-'६९

'नानकु नीचु कहै वीचारु'

"असंख मूरख अंध घोर।
असंख चोर हरामखोर।
असंख अमर करि जाहि जोर।
असंख गलवढ हतिया कमाहि।
असंख पापी पापु करि जाहि।
असंख कूड़िआर कूड़े फिराहि।
असंख मलेछ मलु भखि खाहि।
असंख निन्दक सिरि करहि भारु।
नानकु नीचु कहै वीचारु।
वारिआ न जावा एक वार।
जो तुधु भावै साई भली कार।
तू सदा सलामति निरंकार॥"

समाज के अन्दर जो अनेक प्रकार के दुराचरण के कार्य चलते हैं, उनका जिक्र यहाँ आया है। इसमें नीति का जिक्र है। एक ओर समाज में असंख्य मूर्ख गाढ अज्ञान में, घने अँधेरे में तमोगुण में पड़े हैं; और दूसरी ओर हराम का खानेवाले, लूटनेवाले, रजोगुणी शोषक वर्ग के लोग पड़े हैं। 'अमर' शब्द अरबी है, जिसके मानी हैं—राज्य सत्ता चलाना। उन दो वर्गों के परिणामस्वरूप, समाज में एक तीसरा सत्ताधारी वर्ग खड़ा होता है, जो जबरदस्ती से शासन करता है, उसके नाम पर सत्ता चलाता है। उसके अलावा असंख्य लोग गला काटनेवाले हैं, जो खूँखारी करके कमाई करते हैं। फिर असंख्य पापी हैं, जो पाप करते हैं। यहाँ पाप का अर्थ व्यभिचारादि पाप भी लिया जा सकता है, क्योंकि उसका उच्चारण नहीं किया है। इसका अर्थ सर्वसाधारण पाप भी हो सकता है। समाज में असंख्य झूठे (कूड़िआर) लोग हैं, जो झूठे काम करते चले जाते हैं। 'म्लेच्छ' संस्कृत शब्द है, जिसका अर्थ यहाँ पर लिया है—मल की इच्छा करनेवाले। मूल 'म्लेच्छ' शब्द से यह अर्थ नहीं निकलता। ('म्लेच्छ' शब्द का मूल अर्थ है, 'अनार्य', जो शब्द का ठीक उच्चारण नहीं करते। पाणिनि ने कहा है, ब्राह्मण को चाहिए कि वह गलत उच्चारण न करे। गलत उच्चारण करनेवाला म्लेच्छ ऐसा व्याकरण-महाभाष्य में कहा है।) यहाँ पर 'म्लेच्छ' शब्द के दो-तीन अर्थ हो सकते हैं १. पाप की कमाई करते हैं, मानो पाप खाते हैं, २ मलिन इच्छा रखते हैं, और ३. मांसादि निषिद्ध आहार करते हैं। अन्त में कहा है कि समाज में असंख्य निन्दक पड़े हैं, जो चोर, अंध घोर' (घोर अज्ञानी), आदि सबके ऊपर सिरजोर हैं, सबसे बढ़कर हैं। निन्दा करनेवाले सबके पापों का बोझ उठा लेते हैं। निन्दा करनेवाला जिस-जिसकी निन्दा करता है, उसके पाप का बोझ उठा लेता है। जैसे गाँव के घूरे में सारा कचरा इकट्ठा होता है, वैसे ही निन्दा करनेवाले के चित्त में सबका

गुरु नानक : ५०० वीं जयन्ती

पाप भरा रहता है। इन सब पापों का विचार करना पड़ा, और वर्णन से वाणी को गन्दा करना पड़ा, इसलिए नानक ने अपने को 'नीच' कहा है।

पाप का यह विभाग सोचने लायक है। यहाँ पर अज्ञान की गिनती पाप में की है। नीतिशास्त्र का यह एक सूक्ष्म विषय है। गीता में अज्ञान की गिनती आसुरी सम्पत्ति में की है, क्योंकि बहुत-से पाप अज्ञानमूलक होते हैं। इसलिए अज्ञान को निर्दोष (इनोसेंट) नहीं कहा जायगा। यहाँ पर अज्ञान, चोरी, सत्ता चलाना, हिंसा, अब्रह्मचर्य, असत्य, आहारादि में अशुद्धि, और उन सबकी निन्दा करनेवाला—उनमें बढ़कर पाप है, इस तरह बड़ा ही सुन्दर विवेचन किया है। जिसे हमारे शास्त्रों ने पंचयम कहा है—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह—इन पाँचों के विरोध में पाँच पाप होते हैं। अहिंसा के विरोध में हिंसा, सत्य के विरोध में असत्य, अस्तेय के विरोध में चोरी, ब्रह्मचर्य के विरोध में व्यभिचार, अपरिग्रह के विरोध में परिग्रह। बौद्धों ने जिसे पंचशील कहा है, और वैदिकों ने पंचयम कहा है, उनके विरोध में होनेवाले पापों का यहाँ जिक्र है। और आहार-शुद्धि की भी बात कही है, जो हिन्दुस्तान की साधना में एक बहुत बड़ी बात मानी गयी है। उपनिषदों में, गीता में, और कुल साधना-मार्ग में ही, आहार-शुद्धि पर जोर दिया है। केवल आहार-शुद्धि पर जोर देना और दूसरे पापों को चलाते रहना गलत है। आहार का असर जीवन पर होता है, इसलिए समाज-शास्त्रियों ने भी उस पर विचार किया है। लेकिन योगशास्त्र में, भक्तिमार्ग में, और जैन धर्म में आहार-शुद्धि पर जितना जोर दिया जाता है, उतना अन्यत्र नहीं दिया जाता।

इस तरह यहाँ पर यमादि के विरुद्ध पंचपाप, उन सबके मूल में अज्ञान, आहार-अशुद्धि और इन यमादि की निन्दा करनेवाले शिरोमणि पाप, जो बहुत भयानक पाप हैं, इन सबका वर्णन करके नानक ने अपना भी नाम, उस वर्ग में दर्ज किया है। तुलसीदास ने भी पापियों का वर्णन करके ऐसा ही कहा है। महापुरुष ऐसे ख्याल से नहीं सोचते हैं कि दुनिया में दूसरे पापी हैं, बल्कि वे पापों का वर्णन इसलिए करते हैं, कि मैं ही वह पापी हूँ। अन्यथा सत्यनिष्ठ पुरुष को पापों का वर्णन रोचक नहीं मालूम होता है। नानक ने कहा है, 'नानकु नीचु कहै वीचारु।' नीच नानक यह वर्णन कर रहा है। यानी नानक, उन पापियों का वर्णन करने के बाद, अपनी ही गिनती उन पापियों में करके उस वर्णन से मुक्ति पा रहे हैं।—विनोबा

—'जपुजी' से

ग्रामस्वराज्य की दूसरी बात

राजगिर के सर्व सेवा संघ अधिवेशन में विनोबाजी ने एक बात कही जिसकी ओर हमारा ध्यान शायद नहीं गया; कम-से-कम उतना नहीं गया जितना जाना चाहिए था। उन्होंने यह बात एक प्रश्न का उत्तर देते हुए कही थी। प्रश्न खादी-ग्रामोद्योग के सम्बन्ध में था।

जो बात विनोबाजी कह रहे थे वह यह थी कि खादी-ग्रामोद्योग की क्रान्तिकारिता क्या है? खादी-ग्रामोद्योग का एक आर्थिक पहलू है, सामाजिक और नैतिक पहलू भी है, जो अपने में महत्वपूर्ण है, किन्तु क्रान्तिकारी पहलू उतना ही नहीं है। वह क्या है? उसमें कौनसी चीज है जो ग्रामस्वराज्य का नया आधार बन सकती है? खादी-ग्रामोद्योग ग्राम विकास का आधार बनें यह एक चीज है, और ग्रामस्वराज्य दूसरी। ग्रामस्वराज्य के लिए ग्राम-विकास अनिवार्य है, लेकिन ग्राम विकास ही ग्राम-स्वराज्य नहीं है।

ग्रामस्वराज्य का सम्बन्ध गाँव की सत्ता से है। ग्रामस्वराज्य का अर्थ है गाँव की सत्ता की स्थापना। गाँव पर राष्ट्र की सत्ता का यह अर्थ है कि आज गाँव पर सरकार की सत्ता है, और बाजार की सत्ता है। एक राजनैतिक दूसरी आर्थिक।

ग्रामस्वराज्य में सत्ता का क्या स्वरूप होगा? अगर यही स्वरूप रह गया तो गाँव का 'स्व' क्या होगा, और उसकी सत्ता क्या रहेगी? गाँव देश के जीवन की बुनियादी इकाई है तो उसकी सत्ता स्थापित होनी चाहिए सरकार पर, बाजार पर—एक नहीं, दोनों पर। अगर सरकार पर सत्ता नहीं होगी तो बाजार पर नहीं हो सकती, और अगर बाजार पर नहीं हुई तो सरकार पर नहीं हो सकती। वस्तुतः गाँव की मुक्ति का प्रश्न गाँव की सत्ता का प्रश्न है। विनोबाजी अपने भाषण में यही समझा रहे थे कि खादी ग्रामोद्योग की क्रान्तिकारिता इसमें है कि बाजार पर गाँव की सत्ता कायम हो। अगर यह न हुआ तो खादी केवल खादी है, और उद्योग केवल उद्योग है जिनका अपना आर्थिक महत्व चाहे जो हो लेकिन उतने से ही उनमें ग्रामस्वराज्य की शक्ति नहीं आयेगी।

गाँव की भीतरी स्वायत्तता, और देश की सरकार पर गाँव की सत्ता, इन दो प्रश्नों पर कुछ चिंतन हुआ है कम-से-कम इतना हुआ है कि आगे की दिशा साफ दिखाई दे। ग्रामस्वराज्य के जो ६ सूत्र (सन्देश ग्राम ग्रामस्वराज्य) हैं उनमें पहला है स्वायत्त ग्रामसभा। ग्रामसभा की स्वायत्तता का दूसरा क्या अर्थ है सिवाय इसके कि गाँव के भीतरी जीवन में गाँव की अपनी सामूहिक सत्ता चले, न कि सरकार की। अपनी व्यवस्था और विकास के लिए गाँव एक स्वायत्त इकाई हो। ग्रामस्वराज्य के एक छोर पर यह हो, और दूसरे छोर पर यह कि राज्य और राष्ट्र की सरकार में संगठित ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि जायें, न कि आज की तरह राजनैतिक दलों के। सरकार पर राजनैतिक दलों की सत्ता समाप्त हो।

सरकार पर गाँव की सत्ता का इतना चित्र साफ है। इसीको सामने रखकर ग्रामसभाओं के व्यापक संगठन का काम हाथ में लेना है। राज्यदान के बाद यह पहला काम है। जिलादान के बाद भी शुरुआत की जा सकती है, लेकिन जब हम यह काम शुरू करने जा रहे हैं तो जरूरी है कि सरकार के साथ साथ हम बाजार की बात भी सोचें ताकि ग्राम-स्वराज्य का चित्र सम्पूर्ण हो, और हमारी एक समग्र क्रान्तिकारी विकास-नीति बन सके।

गाँव के विकास के कई मुद्दे हैं, लेकिन एक मुद्दा जिसकी ओर विनोबाजी ने कई बार हमारा ध्यान आकर्षित किया है, वह है गाँव के आयात-निर्यात पर ग्रामसभा का अधिकार। गाँव में क्या चीज बाहर से आयेगी, और क्या गाँव से बाहर जायेगी इसका नियमन गाँव के हित में ग्रामसभा के ही द्वारा होना चाहिए। ग्रामसभा गाँव के उत्पादन में से गाँव की आवश्यकता भर के लिए रखकर अतिरिक्त माल बाहर बेचेगी। वह अपने माल का मूल्य स्वयं तय करेगी, और हर संभव और उचित उपाय से अपने उद्योगों को संरक्षण देगी।

खादी और ग्रामोद्योग तभी चलेंगे जब उन पर एक ओर गाँव का संरक्षण (प्रोटेक्शन) प्राप्त हो, और दूसरी ओर सरकार सहायता (सब्सिडी)। आज तक हम सरकार की सहायता ह[illegible] प्राप्त होती रही है, किन्तु जिस गाँव के नाम से हम खादी और ग्रामोद्योग—सचमुच ग्राम्य-उद्योग—चलाते रहे हैं उसका संरक्षण नहीं मिला है। उस लोक-संरक्षण के अभाव में सरकारी सहायता बेकार ही सिद्ध नहीं हुई है, बल्कि खादी ग्रामोद्योग की दुर्गति की इस स्थिति में पहुँचाने में सहायक भी हुई है।

खादी दया की भिक्षा में प्राप्त दाता के टुकड़ों से नहीं चलेगी, और न चलेगी व्यापारिक विज्ञापनों और भंडार की बाजारू सजावट से। खादी को हमने शकुन्तला की तरह कण्व की कुटिया से निकालकर सजाया और सजाकर राजधानी के महलों में रहने वाले दुष्यन्त के हाथों में दीन भाव से सौंपने की कोशिश की, लेकिन वह दुष्यन्त इतना लम्पट निकला कि उसने शकुन्तला को पहचाना तक नहीं। इतना हो चुकने पर कम-से-कम अब तो हम अपनी शकुन्तला के लिए दूसरा दुष्यन्त न ढूँढ़ें। झोपड़ी की उस शकुन्तला को किसी झोपड़ी में ही रहने दें। शायद वही शकुन्तला का सम्मान सुरक्षित रखेगी, और शकुन्तला झोपड़ी की श्री बढ़ायेगी।

स्वतंत्रता के बाद सरकार ने कृपा बहुत बरसायी, और हमने टुकड़े बटोरने में कोई कसर भी नहीं रखी, किन्तु ग्राम-स्वराज्य की दिशा से हम भटक गये, इसलिए खादी और ग्रामोद्योग की जो क्रान्तिकारिता थी वह भी हमारे हाथ से निकल गयी।

खादी का 'स्व' गाँव के स्वत्व के साथ जुड़ा हुआ है। अगर गाँव का स्वत्व नहीं रहा, तो नहीं टिकेगा गाँव और नहीं चलेगी खादी और ग्रामोद्योग। गाँव का स्वत्व उसकी सत्ता का प्रश्न है।

भूदान-यज्ञ: सोमवार, १ दिसम्बर, '६९

'गांधी को भुला देने से किसका नुकसान हुआ ?'

[सीमान्त गांधी बादशाह खान अब्दुल गफ्फार खां ने पिछले दिनों अहमदाबाद और गुजरात के अन्य दंगा-पीड़ित क्षेत्रों का दौरा किया। इस अवसर पर व्यथित हृदय से उन्होंने जगह-जगह जो उद्गार प्रकट किये वे बड़े मर्मस्पर्शी हैं। उनके गुजरात-दौरे के व्याख्यानों का सार लेख रूप में यहां प्रस्तुत है। —सम्पादक]

मुझे ज्यादा बोलने की आदत नहीं। मैं तो इस अकीदे (विश्वास) का आदमी हूं कि जो कौम (राष्ट्र) और लोग बोलते ज्यादा हैं और अमल कम करते हैं, वे लोग और जमायतें (समूह) तरक्की नहीं कर सकतीं। तरक्की वही लोग और कौमें कर सकती हैं जो बातें कम करती हैं और अमल ज्यादा।

मैं जो यहां आया हूं तो इसलिए आया हूं कि आप लोगों के सामने कुछ बातें करूं। २२-२३ साल के बाद मैं इस देश में आया हूं। इस अर्से (अवधि) में हम पर जो मुसीबतें आयीं, वह आप लोगों को मालूम होंगी, फिर भी आप लोगों की मुहब्बत और गांधीजी की याद ने मजबूर कर दिया कि आपके मुल्क में आऊं।

मैं यहां किसलिए आया हूं? एक तो गांधीजी की जन्म-शती है, इसलिए आया हूं। दूसरे यहां की जनता के लिए आया हूं।

मैं यहां इस गर्ज से आया हूं कि आप लोगों के साथ बैठूं, आपसे सलाह-मशविरा करूं और आपको बताऊं कि देखो, हमारा मुल्क किस तरफ जा रहा है। लेकिन मैं यह भी कहूं कि जब आप लोगों ने गांधीजी की बात नहीं सुनी, तो मेरी क्या सुनोगे।

हिन्दुस्तान ने गांधी को भुला दिया

मुझे अफसोस है कि जब मैं गांधीजी के देश में आया हूं, तो हिन्दुस्तान के हर कोने में हिंसा-ही-हिंसा है। गांधीजी के देश में—आप खुद ही देख लें, अहिंसा कहीं नजर नहीं आती। इस हिंसा में नफरत-ही-नफरत है, दुश्मनी और कपट है। अहिंसा तो मुहब्बत है, हमदर्दी है, भाईचारा और मानव सेवा है। अहिंसा को हमारे दिलों ने कहां तक कबूल किया है, इस पर चिन्तन-मनन करें।

सारी दुनिया आज हिंसा की आग में झुलस रही है। लेकिन दूसरे मुल्कों में तो एक मुल्क दूसरे मुल्क के खिलाफ हिंसा करता है, पर यहां तो आपस में ही एक-दूसरे पर हिंसा होती है।

मेरी गर्ज यह है कि गांधीजी ने अपनी मौत तक जो तालीम आपको दी थी—

खुदाई खिदमतगार बादशाह खां

और जिसे आपने इतना जल्द भुला दिया है—उसे याद दिलाऊं। आप लोगों का ध्यान इस तरफ खींचूं कि दुनिया की कौमें तो तरक्की कर रही हैं—वे आसमानों तक जा पहुंची हैं—और हम दिनोंदिन गिर रहे हैं। आजाद हुए २२-२३ साल हो गये। इस अर्से में पेट के लिए गल्ला भी पैदा नहीं कर सके हैं, दूसरे मुल्कों से गल्ला मांगते हैं, गल्ला ही नहीं, पैसा भी मांगते हैं। मैं आप लोगों के साथ बैठकर इस बात पर गौर-फिक्र करना चाहता हूं कि हमको, हमारी कौम को क्या मर्ज लग गया है कि दुनिया तो आसमानों को छू रही है और हम जमीन पर भी नहीं रह सकते।

गांधी को भुला देने से किसका नुकसान हुआ? गांधी का? नहीं। आपका, आपके मुल्क का नुकसान हुआ।

दुनिया में दो ही चीजें हैं—एक धर्म, और दूसरी कौमियत, नेशनलिज्म (राष्ट्रीयता)। यूरोप में धर्म नहीं है, लेकिन राष्ट्रीयता है, इसलिए उन्होंने तरक्की की। मुझे अफसोस है कि यहां न तो धर्म है और न कौमियत ही। इसका क्या नतीजा हुआ है, वह आप देख रहे हैं।

आपको यह बात समझनी चाहिए कि हिन्दू और मुसलमानों में स्वार्थी लोग भी हैं। वह अपने मकसद के लिए दंगे कराते हैं। झगड़े तो आर्थिक, राजनैतिक होते हैं, लेकिन उसे मजहब का नाम दे दिया जाता है। मजहब और धर्म के नाम पर लोग भड़क उठते हैं। लोगों को वे धोखा देते हैं। इसका नतीजा क्या होता है, इस बात पर भी कभी गौर किया? जो झगड़े हिन्दुस्तान या पाकिस्तान में होते हैं, उनमें गरीब लोग ही तबाह होते हैं। गरीब मुसलमान और गरीब हिन्दू मारा जाता है।

पाकिस्तान बनने के परिणाम

पाकिस्तान बना, इस्लाम के नाम पर। लेकिन क्या हुआ? अंग्रेज जो कुछ हमें देकर गये थे, अयूब खां ने उसे भी हमसे छीन लिया। अंग्रेजों ने "डेमोक्रेसी" दी थी। अयूब खां ने क्या दिया? "बेसिक डेमोक्रेसी"। पाकिस्तान की आबादी ११ करोड़ है। उसमें कुल ८० हजार आदमियों को वोट देने का हक है। ४० हजार बंगाल में और ४० हजार पश्चिमी पाकिस्तान में। क्यों? इसलिए कि थोड़े-से लोग होंगे तो उनको खरीदा जा सकता है, रुपये से, दबाव से। पाकिस्तान में कौन हुकूमत कर रहा है? अंग्रेजों के जमाने के 'सर', नवाब और खान-बहादुर। आज पाकिस्तान की दौलत किसके हाथ में है? २०-२१ खानदानों (परिवारों) के

हाथ में। जो लोग यहाँ से पाकिस्तान गये है, वहाँ उन बेचारों की क्या हालत है, जरा जाकर तो देखो!

हिन्दुस्तान जैसी प्यारी जनता दुनिया में नहीं। उसे तो स्वार्थी लोगों ने गलत रास्ते पर डाल दिया है। याद रखें, जब तक आपके दिल नहीं बदलेंगे, यह मसला कभी हल नहीं होगा। पहले खुद बदलो, फिर दूसरे को बदलो।

कहते है पाकिस्तान बना। पाकिस्तान बनाने में उन बेचारे गरीब मुसलमानों और हिन्दुओं का क्या कसूर है? पाकिस्तान नेताओं ने बनाया, हिन्दू नेताओं, मुसलमान नेताओं ने। महात्मा गांधी और मैं तो बँटवारे के खिलाफ थे। लेकिन हमारी बात नहीं सुनी गयी।

मुझे इस बात का ज्यादा अफसोस है कि यहाँ इतने कार्यकर्ता पड़े हैं, फिर भी साम्प्रदायिक झगड़े हो रहे हैं।

आप यहाँ शहरों और देहातों में काम करते हैं। लेकिन किनमें काम करते हैं? हिन्दुओं में। मैं कहता हूँ कि मुसलमानों में भी काम करो। बल्कि मुसलमानों में ज्यादा काम करो। मुसलमान भावुक कौम है। उसमें राजनैतिक चेतना नहीं है।

हिन्दुओं में तो बड़े-बड़े नेता पैदा हुए, जिन्होंने कौम की सेवा की, कुरबानियाँ कीं। लेकिन अफसोस है कि मुसलमानों के अन्दर ऐसे लोग पैदा नहीं हुए। और कहीं दो एक पैदा भी हुए तो वह जनता के पास नहीं गये और उनके साथ सम्पर्क पैदा नहीं किया। मुसलमानों के 'लीडर' वही होते थे जो अंग्रेजों के 'सर', 'नवाब' और खान-बहादुर होते थे। वे लोग मुसलमानों के लाभ की बात नहीं सोचते थे। वह तो वही काम करते थे जो अंग्रेज उनसे कहता था, जिसमें अंग्रेज का फायदा होता था।

मुसलमानों में राजनैतिक चेतना नहीं थी। वे फरेब में आ गये। उन्होंने यह नहीं देखा कि उन 'लीडरों' ने, जो इस्लाम का नारा लगा रहे हैं, उन्होंने इस्लाम की और मुसलमानों की कभी कोई खिदमत भी की है? क्या उनके दिल में गरीबों की हमदर्दी भी है? इन बातों की उन्होंने तमीज (विवेक) नहीं की।

मुसलमान सोचें

मैं मुसलमानों को समझाया करता था, यू० पी० के, बिहार के मुसलमानों को—उन सूबों के मुसलमानों को जहाँ वह अल्पसंख्या में थे—समझाता था कि बाबा पाकिस्तान बनने से तुमको क्या फायदा होगा? तुम तो अल्पसंख्या में हो, पाकिस्तान बनने के बाद भी तुमको तो हिन्दुस्तान में ही रहना है। तो वे मुझे 'हिन्दू का बच्चा' कहते थे। कहाँ है अब मुस्लिम लीग, कहाँ गये उसके 'लीडर' और उनका इस्लाम, आज जब तुम पर मुसीबत आयी है, तो तुम्हारी मदद करने को दौड़कर कौन आया है? मैं, जिसे तुम हिन्दू का बच्चा कहते थे। मुसलमान, इस्लाम और मुस्लिम लीग का नारा लगानेवाले तो नहीं आये।

खुदा से मदद माँगते हैं, लेकिन खुदा का कानून यह है कि 'तुम काम करो, मैं तुम्हारी मदद करूँगा।" खुदा का कानून यह नहीं है कि तुम काम न करो, हाथ पर हाथ धर बैठे रहो, और वह तुम्हारी मदद करें। यह कैसे हो सकता है कि हम न तो हल चलायें, न दाना जमीन में डालें, न पानी दें और उम्मीद रखें कि गल्ला पैदा हो जायगा। ऐसा कभी नहीं होगा।

इस्लाम जो है दुनिया में 'वह अमन के लिए आया था। आप पढ़ें कहीं भी' जहाँ जहाँ कुरान में आया है, उसमें सत है, ईमान बगैर अमन के ईमान नहीं है। लेकिन बात यह है कि हमें तो किसीने कुछ सिखाया नहीं, बताया नहीं। अब देख लीजिए नमाज जो हम पढ़ते हैं पचवक्ता, खुदा के सामने वादे करते है, इतना भी किसीने नहीं बताया कि भाई, खुदा के सामने जो वादे करते हो उसके ये मानी हैं। हमको किसीने इस्लाम के अन्दर जो गमख्वारी है वह नहीं बतायी। यह नहीं बताया कि देखो खुदा के सामने यह हाथ उठाकर या जो मुनाजात करते हो उसका मतलब क्या है? जैसा मैंने आपको कहा खुद रसूल (पैगम्बर) कहते है 'हुब्बुल वतन मिनल ईमान' जिसमें ईमान है उसको अपने मुल्क से, अपने वतन से मोहब्बत होगी। उसको अपने मुल्क और अपने वतन की फिक्र होगी। इसलिए मैं कहता हूँ कि यह मुल्क तुम्हारा है, हिन्दू और मुसलमान, दोनों का मुल्क है। इसकी खिदमत करो, इसकी जिम्मेदारी दोनों पर है।

हम लोग जो है हमारे दिलों में पैसे की मोहब्बत और इक्तदार (सत्ता) का शौक, कुर्सी का शौक—यह पैदा हो गयी है। और जिन कौमों में, नेताओं के जिनके दिलों में यह मर्ज लगी है—दुनिया का इतिहास देखें—वे आबाद नहीं हुई।

सम्प्रदायवाद के झगड़े, जो ये देखते है, ये नफरत है, हिंसा है, इनको मिटाने के लिए आप लोग गांधीजी की उस तालीम की तरफ भी थोड़ा ध्यान दें। और अगर आप तवज्जो देंगे तो मैं यह आपको कहता हूँ कि जिस तरह से यहाँ की रोशनी तमाम दुनिया में फैली उसी तरीके से यह काम भी कामयाब होगा। इस काम में अगर आप (गुजरात में) कामयाब हो गये तो उसका असर तमाम हिन्दुस्तान पर पड़ेगा।

कुछ लेने नहीं आया

मैं यहाँ आपसे कुछ माँगने नहीं आया हूँ। कुछ लेने नहीं आया हूँ। मैं तो खुदाई खिदमतगार हूँ, खिदमत (सेवा) करने की गर्ज से आया हूँ। लेकिन मैं अकेला क्या कर सकता हूँ? दुनिया में बड़े-बड़े पैगम्बर और अवतार आये वे तभी सफल हुए जब कौम ने उनका साथ दिया। कौम ने साथ नहीं दिया तो वह असफल हो गये। इसलिए मैं तो सिर्फ रास्ता ही बतला सकता हूँ। करना तो आपको है। करोगे तो मसले हल होंगे। मुसीबत टलेगी।●

सबसे बड़ा खतरा

पुराना स्मरण

जब स्वराज्य नया-नया आ रहा था और हमारे लोग मिनिस्टर होकर राज्य चलाने का शौक रखते थे तब गांधीजी ने अपने लोगों में से चंद सेवकों को उस क्षेत्र में जाने की इजाजत दी। उसमें मेरा भी नाम था। मैंने पूज्य बापूजी के पास जाकर अपनी अरुचि बताते कहा, "राजनीतिक *क्षेत्र का महत्त्व मैं जानता हूं।* किसी समय उसमें मुझे दिलचस्पी भी थी। लेकिन अब 'सारी जिन्दगी राष्ट्र-निर्माण की रचनात्मक प्रवृत्ति में व्यतीत करने के बाद' राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश करना मुझे 'बुढ़ापे में शादी के लिए तैयार होने के जैसा' लगता है। उसमें मुझे तनिक भी अभिरुचि नहीं है। यही कहने आया हूं। इस पर आपकी जो आज्ञा होगी, शिरोधार्य है।" गांधीजी ने मेरी बात मान ली और मुझे मुक्त किया।

जहां तक मुझे स्मरण है, हमारे दादा धर्माधिकारीजी ने गांधीजी की आज्ञा मान ली। नागपुर की राजनीति में प्रवेश किया और थोड़े ही दिनों में वहां से ऊबकर लौट आये।

अपनी भूमिका

तब से देश की राजनैतिक हालत का निरीक्षण और चिन्तन करता आया हूं। लेकिन प्रचलित राजनीति के बारे में कभी कुछ लिखा ही नहीं। अपवाद के रूप कुछ लिखा हो तो उसका आज स्मरण भी नहीं है।

बाद में जवाहरलालजी ने मुझे राज्यसभा में दाखिल होने की सूचना दी। गांधी संग्रहालय का प्रारम्भ कराने के लिए मुझे दिल्ली में रहना था ही। इसलिए मैंने उनकी बात धन्यवाद के साथ मान ली और बारह वर्ष 'पार्लमेन्ट' का सदस्य रहा। मैं जानता था कि 'पार्लमेंट' शब्द का असली अर्थ ही 'बोलनेवालों की सभा' होता है, लेकिन मैं नहीं मानता कि राज्यसभा में बारह वर्ष में बारह दफे बोला हूंगा और उसमें भी कभी भी बारह मिनट से अधिक बोला हूंगा। दोनों सभा में पहला घंटा प्रश्नोत्तरी का होता है, जिसमें सदस्य देश की हालत के बारे में राज्य-कर्ता 'मिनिस्टर्स' से सवाल पूछ सकते हैं और 'मिनिस्टर्स' जवाब देते हैं, वस्तुस्थिति विस्तार के साथ समझा देते हैं। वह एक घंटा सब कुछ ध्यान से सुनना, यही मेरा बारह वर्ष का तप था।

बारह वर्ष के अनुभव के बाद मैं राज्यसभा से निवृत्त हुआ, तो भी गांधीजी का रचनात्मक काम करते दिल्ली में ही रहा हूं। और देश में सर्वत्र घूमते स्वराज्य सरकार का जहां तक हो सके समर्थन करता आया हूं। विदेश में भी अनेक बार गया हूं। गांधीजी की नीति, राष्ट्रनिर्माण का उनका कार्य और भारत

काका कालेलकर

सरकार का रुख विदेशियों को समझाने में दिलचस्पी ली है। लेकिन स्वदेश में तो केवल राष्ट्रीय संगठन और समन्वय का ही कार्य करता आया हूं।

परिस्थिति का निदान

लोगों से बातचीत करते, प्रश्नों के जवाब में राजनीति के बारे में जब कुछ कहना पड़ा तब सज्जनों की चिन्ता और उनके दुःख के जवाब में मैंने कहा है—

"भारत के दस हजार वर्ष के इतिहास में सच्चे प्रजातन्त्र का राष्ट्रव्यापी प्रयोग पहले ही दफे भारत में हो रहा है। हरएक व्यक्ति को मत देने का अधिकार, उनके द्वारा प्रतिनिधियों का चुनाव और पार्लमेन्ट के आदेशानुसार राज्य चलाने की प्रथा, ये तीनों बातें भारतीय प्रजा के लिए अपरिचित भले न हों किन्तु उनका आधुनिक पद्धति का प्रयोग हम पहले ही दफे आजमा रहे हैं।

"किसी विराट युद्ध के अन्त में तन्त्र-बद्ध सेना भी कुछ दिन के लिए ढीली हो जाती है। जनता के हाथ में चुनाव का एक खिलौना आया है। इसमें गलतियां होंगी, अनुभव बढ़ने पर सब कुछ ठीक हो जायेगा। आज की हालत देखकर चिन्तित तो हूं लेकिन निराश नहीं हूं।

"जवाहरलालजी के जाने के बाद जब अनेक राजनैतिक पक्षों की खींचातानी बढ़ गयी तब दिल्ली के किसी कालेज में व्याख्यान के लिए गया था। कालेज के प्रिन्सिपल ने चिन्तित होकर पूछा, 'कहिए काकासाहेब! देश का क्या हो रहा है?' तब भी मैंने उनसे कहा कि हमारे सार्वजनिक जीवन में ये जो विकृतियां पैदा हो रही हैं, यह जो सड़ान सर्वत्र दीख पड़ती है, इससे मैं भी दुःखित हूं। लेकिन बताइए इन दोषों में एक भी कोई नया दोष है? जितने भी दोष हैं, हजारों वर्ष से हमारे सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक जीवन में दृढमूल थे ही। गांधीजी के प्रयत्न से ये सारे दोष दब गये थे। उस परिस्थिति से पूरा लाभ उठाकर गांधीजी स्वराज्य प्राप्त कर सके। उसमें भी हमारे सनातन दोषों का परिचय होने से अंग्रेज यहां से जाते जाते देश का बंटवारा कर सके और हमारे हाथ में 'खंडित स्वराज्य' आ गया। स्वराज्य होने के बाद पुराने दोष दूर करने की बात नेता लोग भूल गये और *'सत्ता और सम्पत्ति' की व्यवस्था* में ही डूब गये। पुराने राष्ट्रीय दोषों ने फिर से सिर ऊंचा किया है। अब हम लोगों को कमर कसके राष्ट्रीय दोषों को दूर करने की पराकाष्ठा करनी चाहिए। राजनैतिक लोगों का यह काम नहीं है, लोक-शिक्षण का यह काम है।"

आजादी को खतरा

राजनैतिक लोग ही सबसे अधिक जानते हैं कि हमारी कमजोरी जानकर चीन या पाकिस्तान या दोनों किसी भी समय इस देश पर धावा बोल सकते हैं। देश के अन्दर जहां फूट है वहां चोरी से लोगों को बहकाने का प्रयत्न भी उनकी ओर से हो रहा है। देश में सबसे अधिक आवश्यकता है राष्ट्रीय एकता—भावनात्मक एकता दृढ करने की। यह सब जानते हुए भी अंध होकर आपस में मतभेद बढ़ाने का उनका धन्धा जोरों से चल रहा है। और अब तो कांग्रेस के अन्दर भी

वैमनस्य प्रकट हुआ है। जहाँ तीव्र मतभेद है उसे छिपाने में क्या लाभ ? जहाँ परस्पर-अविश्वास और ईर्ष्या है, वहाँ पर साथ चलना मुश्किल होता है। इतनी सीधी बात हर कोई सामानों में समझ सकता है। अलग होकर स्वच्छता से अपना-अपना काम करते रहना ईमानदारी का रास्ता है।

नाम का लोभ

लेकिन आज एकता की बात नहीं है किन्तु 'कांग्रेस का नाम' अपने पास रखने की होड़ चल रही है। कांग्रेस में जो राष्ट्रीय सद्गुण पनपे थे वे तो कहाँ तक कायम हैं, भगवान् जाने। किन्तु 'कांग्रेस' शब्द में जो मतलब है उसके कारण उस नाम का मालिक बनने का लोभ हर गुट को है। एकता की बात कुछ जिन पक्षों को भी इस नाम के लोभ के कारण हो।

गांधीजी की सलाह

अच्छा तो यह होता जो गांधीजी ने दीर्घ दृष्टि से सुझाया था कि कांग्रेस को राजनैतिक पक्ष न बनाकर उसे लोकसेवा करनेवाली संस्था बना देना और कांग्रेस-वाले अपने सिद्धान्त और अपनी-अपनी नीति के अनुसार स्वतंत्र राजनैतिक पक्ष बनाते। ऐसा करने से कांग्रेस नाम की पवित्रता कायम रहती और उस नाम का राजनैतिक लाभ उठाने का लोभ उत्पन्न ही नहीं होता। आज भी अगर सब कांग्रेस-वाले, कांग्रेस नाम छोड़ दें और अपने-अपने गुट के लिए कोई नया नाम धारण करें तो राजनैतिक क्षेत्र में स्वच्छता आ जायेगी।

लोग हर जगह मुझसे पूछते हैं कि कांग्रेस के जो दो दल टूट गये हैं उनमें आपकी सहानुभूति किस तरफ है ? सत्य निष्ठा के खातिर मुझे कहना पड़ता है कि मेरे मन में दोनों तरफ के व्यक्तियों के प्रति आदर था, सहानुभूति थी, आत्मीयता आज भी है। लेकिन मेरी सहानुभूति केवल भारत माता के प्रति ही आज है।

मुझे वह प्रसंग याद है जब हमारे श्री प्रफुल्ल बाबू अपने चारित्र्य के बल पर और सेवा के बल पर बंगाल के 'चीफ मिनिस्टर' बन गये थे। उनका काम ठीक चल रहा था। लेकिन जब विधानचन्द्र राय ने वही स्थान लेने का सोचा तब होड़ में उतरने का पूरा अधिकार दोनों का था। लेकिन महात्माजी ने प्रफुल्ल बाबू को सलाह दी कि तुम स्थान का इस्तीफा दे दो और अपना रचनात्मक काम करते जाओ।

ऐसी सलाह देनेवाला कोई राष्ट्रपिता अब नहीं है। आज गांधीजी होते और सलाह देते तो वह मानी जाती इसका भी विश्वास नहीं है।

कुदरत की सलाह

एक बात स्पष्ट है। बुढ़ापा और मृत्यु ऐसे दो नेता हैं जो अपनी ओर से समय पर सलाह देते हैं। और नहीं मानने पर अपनी आज्ञा अमल में लाते हैं। राजनैतिक दृष्टि से नहीं किन्तु प्राकृतिक और जीवन-दृष्टि से मैं लोगों को समझाता हूँ कि कुदरत ने ही ऐसी रचना की है कि जिनके पास अनुभव ज्यादा है, जिन्होंने अपनी उज्ज्वल सेवा के द्वारा प्रतिष्ठा भी प्राप्त की है, अलबत्ता जिनकी अधिक से अधिक कदर भी करती है ऐसे ही लोगों को मृत्यु अपने पास बुला लेती है। और कच्चे कम-अनुभवी लोगों के हाथ में दुनिया का नेतृत्व सौंप देती है। (दुनिया की सरकारें भी अपने कर्मचारियों की योग्यता जैसी बढ़ती जाती है उनकी तनख्वाह बढ़ाती है उनको विशेष अधिकार के उच्च और उच्चतर स्थानों पर नियुक्त करती है। लेकिन अमुक उम्र होते ही उनसे कहती है, "तुम्हारी योग्यता, तुम्हारा अनुभव और तुम्हारी कार्यशक्ति हम मान्य है। किन्तु केवल तुम्हारी अमुक उम्र हो गयी है इसी-लिए हम तुम्हें निवृत्ति देते हैं। अब घर जा आओ। पेन्शन लो। किन्तु अधिकार के स्थान छोड़ दो। तुमसे कम अनुभववाले, कम योग्यतावाले लोगों से काम लेंगे, लेकिन तुम्हारे लिए अब राज्य-शासन में सरकारी तंत्र में कोई स्थान नहीं रहेगा।") इस नीति के पीछे जो बुद्धिमानी है उसको स्वीकार करना चाहिए।

लोग 'उम्र हो गयी है' इसी एक कारण अधिकार पद छोड़ दें, मगरूरी से निवृत्त हो जायँ। उसके बाद अगर न रहा गया तो वे अपने व्यक्तिगत अभिप्राय जाहिर कर सकते हैं, सबको सलाह दे सकते हैं। उनकी सलाह मानना, नहीं मानना समाज की इच्छा पर निर्भर रहेगा।

एकता को खतरा

आज हमें सबसे बड़ा डर यह है कि अंग्रेजों के हाथों जो हमें 'खण्डित-स्वराज्य' मिला उसके भी शायद और टुकड़े बन जायें। स्वराज्य के अधिकार किस पक्ष के या किस गुट के हाथ में आते हैं यह बात गौण है। केवल समाज-सत्तावाद के नाम से राष्ट्र की जनता की काम-शक्ति नहीं बढ़ रही है। राज्यतंत्र (जिसे हम स्वराज्य सरकार कहते हैं) जिनके हाथ में है उन सरकारी कर्मचारियों के हाथ में सत्ता और सम्पत्ति अधिकाधिक जा रही है। लोगों की अपनी संस्थाएँ सरकार के अनुदान लोभ में सरकार की आश्रित बनती जा रही हैं। नाम कुछ भी दीजिए, नौकरशाही (ब्युरॉक्रसी) के अधिकार बढ़ रहे हैं। सारी कार्यशक्ति उन्हीं के हाथ जा रही है। राष्ट्र की कार्यशक्ति बढ़ने की जगह नौकर-शाही की सर्वोपरिता बढ़ रही है। और उसीको हम समाज-सत्तावाद मान रहे हैं। यह नौकरशाही पहले अंग्रेजों के प्रति निष्ठा रखती थी। अब प्रजाकीय पार्लमेंट के प्रति उसने अपनी निष्ठा अर्पण की है। उनका अपना कोई आग्रह नहीं होता। जो भी पक्ष अधिकार पर आ जायेगा उसका हुक्म निष्ठा और कौशल्य के साथ अमल में लाना यही है उनका व्रत। यह कर्मचारी-मण्डल और हमारी फौज राष्ट्र का अंतिम बल है। इन दोनों की यह खूबी जैसी की वैसी हम सुरक्षित रख सकेंगे ? यह है एक सवाल। दूसरा सवाल जो हमें चिन्तित कर रहा है वह खण्डित भारत की एकता के बारे में। स्वराज्य-स्थापना के साथ अगर हम हमारे राष्ट्रीय स्वभाव के अनुसार छोटे छोटे राज्य बना देते और राष्ट्र-सेवा-कार्य चलाने के लिए सत्कारीभरकम न →

संगम-तट से

भारत की दरिद्रता : लाचारी से घोर लाचारी तक

वह थी सन् १९३० की २६ जनवरी। उसके छब्बीस दिन पहले ३१ दिसम्बर १९२९ को रात के ठीक बारह बजे भारतवासियों ने अंग्रेजी सरकार के आगे पूर्ण स्वतन्त्रता (कम्पलीट इन्डिपेन्डेन्स) की मांग का प्रस्ताव किया। फिर छब्बीस जनवरी को प्रतिज्ञा ली कि बिना स्वराज्य लिये चैन नहीं लेंगे। देश भर में जगह-जगह सभाएँ हुईं और प्रतिज्ञा-पत्र दोहराया गया। लाखों-करोड़ों लोगों ने आजादी का संकल्प लिया।

स्वराज्य क्यों चाहिए? सैकड़ों-हजारों मीटिंगों में इसका जवाब दिया गया। स्वराज्य चाहिए क्योंकि बिना स्वराज्य के देश की गरीबी-बेरोजगारी नहीं मिट सकती, क्योंकि बिना स्वराज्य के गरीब-लाचार लोग अपने पाँव पर खड़े नहीं हो सकते, क्योंकि बिना स्वराज्य के यह देश उठ नहीं सकता।

लेकिन स्वराज्य के बाईस बरस बाद तक हम अपनी उस प्रतिज्ञा को पूरा नहीं कर सके हैं। स्वराज्य आया मगर उसका लाभ उनको नहीं मिल रहा है जिनके नाम पर हमने स्वराज्य का शानदार आन्दोलन लड़ा था। उनके लिए स्वराज्य अभी तक दूर की, शायद बहुत दूर की चीज है। वे यह तो देखते हैं कि तहसील की इमारत पर अब अंग्रेज के चारखाने-वाले झंडे की बजाय अपना तिरंगा लहराता है। उनको यह भी अनुभव है कि हर पाँचवें साल एक कागज पर अंगूठा लगाकर एक बक्से में डाल देना पड़ता है। लेकिन वे अच्छी तरह जानते हैं कि गाँव का महाजन हो, तहसील का पटवारी हो, थाने का सिपाही हो—किसी का भी उनके प्रति व्यवहार में कोई फर्क नहीं है और उनकी मुसीबत में कोई कमी नहीं आयी है।

कैसे दुःख की बात है कि आज भी देश में अस्सी प्रतिशत हमारे भाई-बहन ऐसे हैं जिनको पूरा एक रुपया भी नसीब नहीं होता है। वस्तुस्थिति इस प्रकार है —

कौन	प्रति व्यक्ति मासिक खर्च (रुपयों में)
नीचे के दस प्रतिशत	८ ००
उनसे ऊपर के दस "	११ ३०
" " " दस "	१३ ४८
" " " दस "	१५ ९५
" " " दस "	१८ ११
" " " दस "	२० ६६
" " " दस "	२३ ८०
" " " दस "	२८ ४६
" " " दस "	३५ ४५
शिखर के दस "	६७ १६
सारे देश का औसत	२४ २५

ये आंकड़े फरवरी १९६३ से जनवरी १९६४ तक के हैं। इनसे पता चलता है कि सत्तर प्रतिशत से ज्यादा लोग देश के औसत से कम स्थिति में रहते हैं। सत्तर प्रतिशत माने पैंतीस करोड़ आबादी। यानी रूस छोड़कर सारा यूरोप। और सबसे नीचे स्तरवाले दस प्रतिशत को आठ रुपये महीने से कम पर, यानी छब्बीस पैसे रोज पर गुजर करनी पड़ती है। भारत के दस प्रतिशत का अर्थ है फ्रांस जैसा पूरा देश। हमारे जैसी भयानक गरीबी शायद ही कहीं मिलेगी।

→बनाकर 'खादी-ग्रामोद्योग की संस्थाएँ, न्यायदान के न्यायालय' और सहयोग की कोऑपरेटिव सोसायटीज' की जैसी संस्थाओं के द्वारा काम लेते तो राष्ट्रीय एकता मजबूत होती, लोगों का मानस रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाने के लिए अनुकूल बनता, छोटे-मोटे नेताओं की कार्यशक्तियाँ बढ़ती और अनेकानेक छोटे राज्यों को संगठित रखनेवाली केन्द्रिय सत्ता भी आज है उससे अधिक मजबूत हुई होती। हमारा विश्वास है कि प्रथम से यदि छोटे-छोटे राज्य बनाये जाते तो आज के जितने राजनैतिक पक्ष भी नहीं बढ़ते, सार्वजनिक जीवन टीका-टिप्पणी-प्रधान न बनकर सामाजिक सामर्थ्य बढ़ाकर समर्थ और सुखी बनाने की ओर मुड़ता।

आज डर है कि अन्दर-अन्दर के झगड़े बढ़ने पर दक्षिण भारत, पश्चिम भारत और पूर्व भारत अपनी-अपनी नीति की बात सोचने लगेंगे। एकता और सुरक्षा दोनों खतरे में आयेंगे।

खतरे की पूर्व-तैयारी

आज यह खतरा नजर में नहीं आ रहा है। लेकिन परिस्थिति ऐसे खतरे की पूर्व-तैयारी कर रही है। यही हमारे लिए सबसे बड़ा चिन्ता का विषय है।

जो लोग राजनैतिक अधिकारों की खींचातानी में नहीं पड़े हैं ऐसों को अब एकत्र आकर सोचने का प्रसंग उपस्थित हुआ है। राष्ट्र-हृदय और राष्ट्रीय बुद्धि समय पर कुछ करे तो संकट दूर होगा।●

आमतौर से देश की समृद्धि का नाप प्रति व्यक्ति वार्षिक आमदनी से लिया जाता है। इस कसौटी पर भारत के दर्जे का अन्दाज इस पृष्ठ के पीछे की तालिका से मिलेगा :—

प्रदेश एवं जिला सर्वोदय मंडल से

आन्दोलन की तीव्रता तथा सर्व सेवा संघ का रोल

प्रिय बन्धु,

राजगिर का ऐतिहासिक सम्मेलन समाप्त हुआ। देश की हालत दिन-ब-दिन बिगड़ती जा रही है। नैतिकता गिर रही है एवं राजनीतिक स्थिरता को प्रतिदिन खतरा बढ़ रहा है। राजनीतिक पक्षों की ओर से जनता निराश हो रही है। हिंसक प्रवृत्तियाँ बढ़ रही हैं। ऐसे नाजुक समय में गांधी-शताब्दी वर्ष में सर्वोदय ही देश की एकमात्र आशा है एवं ग्रामदान का सर्वमंगलकारी कार्यक्रम एकमात्र सहारा है। ऐसी परिस्थिति में बिहार का राज्य-दान हुआ। आगामी वर्षों में सर्वोदय कार्य-कर्ताओं पर देश को बचाने की एवं उसे आगे ले जाने की बड़ी जिम्मेवारी आने-वाली है। उसके लिए सर्वोदय का विचार गाँव-गाँव, नगर-नगर एवं घर-घर पहुँचे, हजारों-लाखों कार्यकर्ताओं की प्रशिक्षित सेना तैयार हो एवं देश के सभी गाँवों की तरफ से सर्वोदय के कार्यक्रम को—ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य को—स्वीकृति मिले, यह महान प्रयत्न करना है। राजगिर के निवेदन में इस प्रयत्न को करने का बीड़ा उठाया गया। इस सन्दर्भ में सम्मेलन एवं संघ-अधिवेशन के अवसर पर जो अनेक गोष्ठियाँ हुईं, उनमें जो चर्चाएँ हुईं एवं जो निष्कर्ष निकले उन्हें ख्याल में रखकर निम्न मुद्दों की ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा।

१—भारत के सारे गाँवों का ग्राम-दान शीघ्र सम्पन्न होने के लिए प्रदेश के सारे गाँव जल्द-से-जल्द ग्रामदान में लाने की योजना बनायी जाय एवं उस पर दृढ़तापूर्वक वेग से अमल हो। ग्रामदानी गाँवों की संख्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती जानी चाहिए। साथ-साथ ग्रामदान का विचार अच्छी तरह समझाया जा रहा है या नहीं इस ओर भी ध्यान देना चाहिए। संख्या एवं गुणवत्ता, दोनों ओर हमें ध्यान देना है। वैसे ही इसे जन-आन्दोलन बनाने के लिए निम्न कदम उठाने चाहिए :—

(अ) ग्रामदान संकल्प-पत्र पर हस्ता-क्षर लेने का काम उसी गाँव के या पंच-कोशी के ग्रामीण कार्यकर्ताओं को करने दें।

(आ) ग्रामदान प्राप्त करने के साथ-साथ जिन ग्रामीणों ने इसमें योग दिया है उन्हें एवं दूसरों को ग्राम शान्तिसेना के सदस्य बनाया जाय। कोई गाँव ग्रामदान न हुआ हो तो भी वहाँ ग्राम शान्तिसेना बनायी जाय। इन सैनिकों के प्रखण्ड स्तर पर शिविर लेकर इन्हें अपने गाँव को ग्रामदान न हुआ हो तो ग्रामदान, पुष्टि एवं आगे का कार्यक्रम अमल में लाने का कार्यक्रम दिया जाय। इसमें से ज्यादा-से-ज्यादा सैनिकों को नजदीक के क्षेत्र के ग्रामदान प्राप्ति के अभियान में ले जाया जाय।

(इ) ग्रामदान प्राप्ति के अभियान के साथ-साथ हर गाँव में भूदान पत्रिका के ग्राहक बनाये जायँ एवं ग्राम शान्तिसैनिकों में से एक दो पर ग्रामीणों के सम्मुख उसके नियमित वाचन की जिम्मेवारी डाली जाय।

(ई) गाँव का ग्रामदान हो जाने पर गाँव छोड़ने के पूर्व ग्रामीणों की सभा बुलाकर आबू-सम्मेलन में तय हुई ग्रामदान-प्रतिज्ञा का सामुदायिक वाचन हो। उस दिन गाँव में अपना-अपना भोजन लाकर गाँव का सामुदायिक भोजन हो, ताकि गाँव में एक नया परिवर्तन आया है, इस पर आबाल-वृद्धों का ध्यान आकृष्ट हो।

(उ) ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर हो जाने पर जो ग्रामसभा होगी उसमें जितनी जमीन आसानी से उस गाँव में बाँटी जा सकती हो, उसका उसी दिन बँटवारा किया जाय।

२—बिहार में पुष्टि का काम एक साल के भीतर पूर्ण करने का वहाँ के साथियों ने निश्चय किया है। ग्रामदान-प्राप्ति के काम को बाधा पहुँचाये बिना स्थानीय शक्ति के आधार पर अन्य प्रदेशों में भी जगह-जगह पुष्टि-कार्य का प्रारंभ किया जाय। अक्सर देखा गया है कि स्थानीय कार्यकर्ताओं में से केवल ५-१० प्रतिशत कार्यकर्ता ग्रामदान-प्राप्ति के कार्य-क्रम के लिए अन्यत्र जाते हैं। बचे हुए ९० प्रतिशत कार्यकर्ताओं को देने के लिए कोई कार्यक्रम नहीं रहता है। इनके द्वारा पुष्टि का कार्यक्रम किया जा सकता है।

(३) ग्रामदान-प्राप्ति के कार्य में बाधा न पहुँचाते हुए शहर के कार्य का प्रारंभ किया जाय। तरुण शान्तिसेना, सर्वोदय-पात्र, सर्व-धर्म समन्वय, साहित्य-प्रचार, मजदूरों में काम इत्यादि का प्रारम्भ किया जा सकता है। जहाँ संभव हो वहाँ नगर सर्वोदय मंडल बनाकर इस काम को कर-वाया जाय।

(४) ग्रामीण एवं नगरी क्षेत्रों में आचार्यकुल के काम का प्रारम्भ किया जाय।

(५) शान्तिसेना के काम के लिए प्रदेश सर्वोदय मंडल एक समर्थ कार्यकर्ता निकाले। यह कार्यकर्ता शान्तिसैनिकों के ग्रामदान-प्राप्ति एवं शान्तिसेना का शिक्षण शिविरों में देने की योजना बनायेगा। शिविरों की एक बड़ी शृंखला चलनी चाहिए। अगले सर्वोदय-सम्मेलन तक यानी २ सालों में प्रदेश के प्रत्येक गाँव में से कम-से-कम एक व्यक्ति ने शिविर में हिस्सा लिया हो, ऐसी परिस्थिति पैदा होनी चाहिए। इस बारे में प्रशिक्षण समिति का परिपत्र आपके पास आयेगा।

(६) देश में कम-से-कम १०० जिले इस वर्ष ऐसे हों, जिनमें हर ब्लाक में लोक-सेवक बनाकर ब्लाक सर्वोदय मंडल बने हों एवं ब्लाक एवं जिला सर्वोदय मंडल सक्रिय हों। यानी उनकी नियमित बैठकें होती हों, मुक्त चर्चा होती हो, लोकसेवकों में आपस में अनुराग हो एवं विविध कार्यक्रमों को आगे बढ़ा रहे हों। आपके प्रदेश में ऐसे कितने एवं कौनसे जिले इस वर्ष हो सकेंगे?

(७) अर्थ का अभाव हमारे मार्ग में बड़ी कठिनाई है। इसके लिए आवश्यक है कि प्रदेश में से दो-चार कार्यकर्ता १५ दिन का समय देकर अर्थ-संग्रह की प्रक्रिया का प्रशिक्षण लेवें और फिर प्रदेश में दूसरों को प्रशिक्षित करें। इसके लिए कान्ता बहन एवं हरविलास बहन आपके प्रदेश में आकर ८-१५ दिन घूमकर आपको इस कार्य में एवं पत्रिकाओं के ग्राहक बड़ी संख्या में बनाने की विधि के प्रशिक्षण में सहायता करें, ऐसा उनका कार्यक्रम बनाया जा सकता है। आप किन कार्यकर्ताओं को उनके साथ रखेंगे एवं किन दो बड़े शहरों में उनसे अर्थ-संग्रह का काम करवाना चाहेंगे? कौनसा मास इस काम के लिए अनुकूल रहेगा?

(८) सरकारी अधिकारियों का अधिक सहयोग मिले इस हेतु प्रदेश के स्तर पर आप प्रमुख अधिकारियों की परिषद लेवें तो ग्रामदान का मर्म एवं सरकारी अधिकारियों का रोल इस विषय पर सरकारी अधिकारियों के सम्मुख बातचीत करने के लिए श्री रा० कृ० पाटील ही को भेजने की योजना की जा सकती है। इस विषय में आपको कौनसा मास अनुकूल रहेगा? श्री रा० कृ० पाटील दस-पन्द्रह साल आई० सी० एस० में थे एवं कलेक्टर रह चुके हैं यह लिखने की आवश्यकता नहीं है।

(९) ग्रामदान-प्राप्ति के काम में मदद पहुँचाने के लिए वातावरण अनुकूल बनाने के लिए जयप्रकाशजी, जगन्नाथन्‌जी, राममूर्तिजी, निर्मला बहन, डा० पटनायक, वैद्यनाथ बाबू, कैलाश बाबू आदि की यात्रा आपके प्रदेश में होनी चाहिए। इनकी यात्राएँ सफल होने के लिए ठीक से संयोजन होना चाहिए। आपको किस वरिष्ठ साथी की कब आवश्यकता है एवं आप उनका क्या उपयोग लेंगे सो लिखियेगा। तब आपकी एवं उनकी अनुकूलता देखकर कार्यक्रम बनाया जा सकेगा।

इन सब कार्यों को सम्पन्न करते हुए नये-नये कार्यकर्ता एवं ग्रामदानी गाँवों के लोग अधिकाधिक भाग ले सकें, यह सतत ध्यान में रखना जरूरी है। राजगिर में इन दोनों बातों की ओर ध्यान दिया गया, यह आपने देखा ही होगा। आप प्रदेश सर्वोदय-सम्मेलन के समय ग्रामदानी गाँवों के प्रतिनिधियों की कान्फ्रेन्स लेना न भूलें। सारा काम इन्हीं के कंधों पर डालना है और वही आन्दोलन को चला रहे हैं, ऐसी स्थिति पैदा करनी है।

आप काम की जानकारी प्रतिमास के प्रथम सप्ताह में सर्व सेवा संघ को एवं पू० बाबा को नियमितता से भेजते रहें।

ठाकुरदास बंग
मन्त्री
सर्व सेवा संघ

देवता : मेरे देश का—१, २, ३, ४

यह गांधी-दर्शन, नीति तथा विचारों पर आधारित एक औपन्यासिक कृति है। लेखक ने गांधीजी के आर्थिक, सामाजिक विचारों के प्रयोगों को तथा अहिंसा के प्रयोगों को अपने उपन्यास का विषय बनाया है। पुस्तक को प्रामाणिक बनाने के लिए लेखक ने गांधीजी की आत्मकथा तथा गांधी-साहित्य की अन्य पुस्तकों से कथानक लिये हैं। इस पुस्तक को चार खण्डों में प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक खण्ड का मूल्य २.५० रु० है। पुस्तक के लेखक हैं अमर बहादुर सिंह 'अमरेश'।

प्रकाशक—राष्ट्रीय प्रकाशन मन्दिर, अमीनाबाद लखनऊ।

ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य

'ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर-सहयोग से काम लेगा। क्योंकि हरएक देहाती के जीवन का सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और गाँव की इज्जत के लिए मर मिटे।'

—गांधीजी

अब समय आ गया है कि इस देश के बुद्धिवादी, किसान, मालिक, मजदूर, सभी इस बात पर विचार करें कि ग्रामदान हमें ग्रामस्वराज्य की ओर अग्रसर करता है या नहीं? यदि हमें जंच जाय कि हां, इससे हमें ग्रामस्वराज्य के दर्शन हो सकेंगे, तो यही अवसर है कि हम लोग इस पुण्य काम में तुरन्त लग जायं।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

कि वह प्रयोगशाला के निर्देशन के दायित्व का बखूबी निर्वाह कर रहे थे। सर्वसम्मति के निष्कर्ष पर कैसे पहुँचा जा सकता है और उसके लिए कितने धैर्य की आवश्यकता है उसका दर्शन इस जगह हो रहा था। सर्वसम्मति की भावना को कायम रखने के लिए अनिवार्य है, उसके लिए जितना समय लगे, लगाया जाय, न कि समयाभाव में जैसे-तैसे कोई निष्कर्ष पर पहुँचने की जल्दीबाजी करके कुछ लोगों के असमाधान को पोषण दिया जाय।

अन्त में मनाव और समझाव की प्रक्रिया में उपर्युक्त प्रस्ताव को सर्वसम्मति मिली, और जिन लोगों का विरोध था उन लोगों ने अपना विरोध वापस लिया। सभा को बड़ी प्रसन्नता हुई कि इतने लिक-लिक के बाद सर्वसम्मति हुई। अब अध्यक्ष को इस सर्वसम्मति पर अपनी मुहर लगानी थी। परन्तु अध्यक्ष महोदय ने कहा कि मैं कैसे मान लूँ कि सर्वसम्मति हुई जब कि जितने प्रस्ताव आये हैं वे सब-के-सब हमारे कागज पर मौजूद हैं, किसीने अपना प्रस्ताव वापस नहीं लिया है? अध्यक्ष महोदय एक-एक प्रस्ताव पढ़ते गये और उनके प्रस्तावक खड़े हो-होकर अपने प्रस्ताव वापस लेते गये।

इतना सब हो जाने के बाद अध्यक्ष महोदय ने अपनी निजी हैसियत में कहा कि मेरा अपना प्रस्ताव कायम है वह यह कि मैं अध्यक्ष बनने के लिए तैयार नहीं हूँ और जिन चार नामों का प्रस्ताव आपने किया है उनमें से मेरा नाम बाद करके तीन नामों को अध्यक्ष और मंत्री मान लें। परन्तु इनका यह संशोधन प्रस्तावक को नामंजूर हो गया। मनाव, आग्रह और आदेशों के बोझ के दबाव में दबकर भी रामपूर्तिजी ने अपने को अध्यक्षपद के लिए तैयार नहीं पाया तो उन्होंने सभा के अध्यक्ष की हैसियत से सभा का विसर्जन इस घोषणा के साथ किया कि सर्वसम्मति नहीं हुई, अब इस पर फिर से विचार होना चाहिए।

दो दिन की ही बैठक रखी गयी थी लेकिन किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकने की वजह से वैद्यनाथ बाबू ने यह घोषणा की कि यह बैठक कल सुबह ८ बजे होगी।

बहुत कहने-सुनने और आग्रहों के बाद आचार्य राममूर्ति ने अपना एक संशोधन सभा के विचारार्थ सुझाया—श्री गजानन दास अध्यक्ष हों और मैं उपाध्यक्ष।

रात में ही आचार्य राममूर्ति कानपुर चले गये, इसलिए २३ तारीख की सभा की अध्यक्षता रामनारायण बाबू ने की। उन्होंने आचार्यजी का संशोधन पेश किया। इस संशोधन के साथ प्रस्ताव पास हुआ। इसके अनुसार बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के निम्न चार नाम सर्वसम्मत स्वीकृत हुए—

श्री गजानन दास (अध्यक्ष)
आचार्य राममूर्ति (उपाध्यक्ष)
श्री विद्यासागरजी (मंत्री)
श्री कैलाशप्रसाद शर्मा (मंत्री)

इन चार सदस्यों को यह अधिकार दिया गया कि ग्रामस्वराज्य के अन्य सदस्यों का मनोनयन वे स्वयं करें।

यहाँ इन चीजों की चर्चा इतने विस्तार से इसलिए की गयी ताकि कार्यकर्ताओं का ध्यान इस तरफ जाय कि सर्वसम्मति की मंजिल तक पहुँचने के मार्ग में जितने अवरोध हों वे खुलकर सामने आयें और उनके निराकरण का सामूहिक प्रयत्न हो और मुक्तभाव से सर्वसम्मत निर्णय किया जाय।

अन्त में बिहार के पुष्टि-कार्य पर कुछ चर्चा की गयी। विद्यासागरजी ने कार्यकर्ताओं से अपील की कि सभी गांधी संकल्पपूर्वक अनिवार्य अभियान में जुट जाने का निश्चय करें और जयप्रकाश बाबू से यह प्रार्थना की कि वे जिस प्रकार अकाल के समय यहाँ एकाग्र होकर लगे थे वैसे ही लग जायँ और हमारा मार्गदर्शन करें। इसके लिए एक प्रस्ताव भी पास हुआ। सभी कार्यकर्ताओं ने अभियान में लगन का निश्चय हाथ उठाकर किया। जयप्रकाश बाबू ने कहा कि यह जिम्मेदारी मैंने ओढ़ी है। उन्होंने आगे के कार्य के लिए अपने कुछ सुझाव रखे। अन्य कई लोगों ने भी अपने सुझाव रखे। फिर रामनारायण बाबू ने ग्रामस्वराज्य के अध्यक्ष श्री गजानन दास से अनुरोध किया कि वे अब अपना आसन ग्रहण करें। तदनुसार थोड़ी देर श्री गजानन दास की अध्यक्षता में सभा का कार्य चला। उन्होंने सभा को धन्यवाद दिया तथा आभार प्रकट किया कि उनके जैसे कमजोर कंधे पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी का बोझ सौंपा गया।

झलकियाँ

•श्री जयप्रकाशजी ने कार्यकर्ताओं के नैतिक स्तर की चर्चा करते हुए कहा कि हमारे स्वभाव में राग-द्वेष हैं। सबमें गुण और दोष दोनों हैं। इसलिए हमारा प्रयत्न यह होना चाहिए कि एक-दूसरे के दोषों को दूर करने में मदद करें। इसके लिए मुझे आप लोगों से वचन चाहिए कि जिस व्यक्ति के बारे में शिकायत है उससे पहले बात करेंगे। सबने हाथ उठाकर वचन दिया।

•इसके तुरन्त बाद एक मित्र खड़े हुए और उन्होंने एक व्यक्ति की कमियों का उल्लेख करना चाहा तो जयप्रकाश बाबू ने तत्काल मुस्कराते हुए उनसे कहा कि आपने अभी वचन दिया कि सम्बन्धित व्यक्ति से पहले बात करेंगे। वह भाई बिना कुछ कहे अपनी गलती को महसूस करके बैठ गये। सभा में बैठे सब लोग हँस पड़े।

•सभा में एक भाई खड़ा हुआ बोलने के लिए तो किसी ने उसकी कमीज पकड़कर बैठाना चाहा। वह भाई बोल पड़ा कि मेरी कमीज खींची जा रही है। शीघ्र अध्यक्ष महोदय को कहना सुना गया कि आप सब के पास से बाहर बोलें, यहाँ आप सुरक्षित रहेंगे। सभा में जोर की हँसी हुई।

•सभा में बोलने के लिए एक भाई खड़ा हुआ तो कुछ लोगों ने उसे बैठ जाने के लिए कहा। इस पर अध्यक्ष महोदय ने सभा का शान्त रहने का निवेदन इस टिप्पणी के साथ किया कि आप इनकी बात सुन लें, शायद कोई कीमती सुझाव से आप वंचित रह जायँ। —पटना

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

अन्य पृष्ठों पर

वर्ष : १६ अंक : १०
सोमवार ८ दिसम्बर, '६९

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ५४२८५

सरकार जनता की, नेताओं की नहीं

प्रश्न : जब सरकार कोई गलत काम करती है तो आप प्रतिकार क्यों नहीं करते ?

विनोबा : यह नहीं है कि सरकार के गलत काम का मैं प्रतिकार नहीं करता, लेकिन जब वह कोई अच्छा काम करती है तो मैं आवाज उठाता हूं। गलत कामों के विरुद्ध आवाज उठाने की क्या जरूरत है, जरूरत है अच्छे कामों के विरुद्ध आवाज उठाने की। मुझे जनता से कहना है : 'तुम कितनी अच्छी भेड़ें हो ? क्या यह खुशी की बात है कि तुम बहुत अच्छी भेड़ें हो और तुम्हारे रखवाले तुम्हारा बड़ा ख्याल रखते हैं ?' मुझे लगता है, अच्छा हो कि रखवाले गाफिली न करें। तब भेड़ों को मालूम होगा कि वे भेड़ हैं। तब वे महसूस करेंगे कि वे भेड़ नहीं, आदमी हैं—ऐसे आदमी जिनमें अपनी व्यवस्था खुद कर लेने की शक्ति है। इसीलिए मैं अच्छी सरकार के खिलाफ आवाज उठा रहा हूं। बुरी सरकार की शिकायत बहुत लोगों ने पहले भी की है। सवाल यह नहीं है कि हम बुरी सरकार को बर्दाश्त करें, सवाल यह है कि हम सरकार को बर्दाश्त करें, चाहे वह कितनी अच्छी हो ? मेरी दृष्टि में शासन की राजनीति जनता की राजनीति नहीं है। हमें अपने अन्दर साहस लाने की जरूरत है कि हम अपना काम खुद चला सकते हैं और कोई बाहरी सत्ता हमें रोक नहीं सकती।

प्रश्न : क्या आप शासन चाहते ही नहीं ?

विनोबा : मैं स्व-शासन (स्वराज्य) चाहता हूं।

प्रश्न : उसकी पहचान क्या है ?

विनोबा : उसकी पहचान यह है कि हमारे ऊपर किसी बाहरी शक्ति की सत्ता न हो, दूसरा यह कि हमारी किसी दूसरे पर सत्ता न हो। इन दोनों चीजों को मिलाकर स्वशासन बनता है, और इन्हींसे 'जनता की राजनीति' बनती है। यह स्थिति जनता की अन्तर आत्मा और दिमाग में शान्ति से पैदा की जा सकती है। मेरे दान और साझेदारी का जो कार्यक्रम है वह इसी शान्ति के लिए है। मैं बराबर इस कोशिश में हूं कि अहिंसा में विश्वास करनेवाले अपनी शक्ति जनता की सरकार कायम करने में लगायें, और राजनीतिज्ञों की सरकार को समाप्त करें।

कार्यकर्ता साथियों के नाम

साथियो,

मुझे बहुत दुःख है कि राजगिर में उपस्थित रहते हुए भी अस्वस्थता के कारण सम्मेलन में आप लोगों की सेवा में हाजिर नहीं हो सका। राजगिर-सम्मेलन को सर्वोदय-क्रान्ति के लिए एक ऐतिहासिक घटना मानना चाहिए। बिहार-दान के करीब-करीब पूरा होना और अनेक राज्यों में राज्यदान की सम्भावना प्रकट होना क्रान्ति के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि है।

यह सही है कि क्रान्ति के लक्ष्य की दिशा में अभी कोई ठोस निष्पत्ति नहीं हुई है। यह भी सही है कि व्यापक रूप से बिना किसी विशिष्ट समुदाय के संगठन के, विविध व्यक्तियों तथा संस्थाओं के पुरुषार्थ से तथा आम जनता की सहानुभूति से, जो इतना बड़ा काम हुआ है उसमें अनेक गलतियाँ और त्रुटियाँ रह गयी हैं। अगर केवल उन्हीं का लेखा-जोखा किया जाय तो लगेगा कि शायद इस आन्दोलन में कोई सार नहीं है। लेकिन जितना हुआ है, अगर उतने का ही हिसाब किया जाय तो स्पष्ट मालूम होगा कि इतिहास की किसी भी क्रान्ति में इतने कम समय में तथा इतनी कम शक्ति से इतनी बड़ी निष्पत्ति नहीं हुई है। देश के आम लोग पाँच साल पहले मानते थे कि ग्रामदान का यह विचार गगन-विहार है, यह कभी पूरा नहीं होनेवाला है। लेकिन आज पाँच साल बाद देश के अनेक बुद्धिजीवी, आम जनता, तथा अखबारों के सम्पादक मान्य कर रहे हैं कि वर्तमान परिस्थिति में ग्रामदान की यह दिशा एक विकल्प प्रस्तुत कर सकती है। किसी क्रान्ति के लिए व्यापक मान्यता एक मुख्य बात होती है, यह आप लोग सब जानते हैं। इसलिए समझना होगा कि आपने क्रान्ति का मुख्य दरवाजा पार कर लिया है।

यह सब तो हुआ। इतना होने से आप सब भाई-बहनों पर एक बड़ी जिम्मेदारी आ गयी है। ग्रामदान आन्दोलन की इस प्राथमिक निष्पत्ति ने देश की संकट ग्रस्त जनता के मन में एक अपेक्षा का निर्माण किया है। लेकिन इस अपेक्षा की मुख्य दिशा यह है कि जनता मानती है कि राजनैतिक दलों के दलदल में से शायद गांधीवाले आकर उसे मुक्त करेंगे उसकी यह अपेक्षा नहीं दिखाई देती कि उसे खुद मुक्त होना है, विनोबा और उनके साथ लगे हुए छोटे-छोटे कार्यकर्ता केवल राह बतायेंगे।

अतएव आज आप सब कार्यकर्ताओं के सामने यह जिम्मेदारी है कि आप जनता को इस बात के लिए प्रेरित करें कि वह अपने ही संकल्प, सामूहिक नेतृत्व तथा पुरुषार्थ से आज के संकटपूर्ण दलदल से मुक्त होने की कोशिश करें।

राजगिर-सम्मेलन के अवसर पर तथा उसके बाद मेरे मित्र मुझसे अपेक्षा रखते हैं कि क्रान्ति के विचार की सफाई के लिए मैं व्यापक रूप से आप लोगों के पास पहुँचूँ, लेकिन दुर्भाग्य से इसके लिए मेरा स्वास्थ्य पूर्ण रूप से साथ नहीं देता है। पत्र मैं बहुत ज्यादा सफर नहीं कर सकूँगा।

इसलिए भाई राममूर्तिजी ने मुझे सुझाया है कि मैं समय समय पर कार्यकर्ताओं के नाम पत्र लिखकर अपना विचार प्रकट करता रहूँ कि उन्हें करना क्या है। तदनुसार मैं जरूर कोशिश करूँगा कि कम-से-कम महीने में एक बार पत्र द्वारा आपसे सम्पर्क करूँ।

इसलिए मैं चाहूँगा कि आपको काम के सिलसिले में कहीं शंका हो, या किसी सलाह की जरूरत हो, तो आप मुझे परिवार-विभाग, सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१ के पते पर पत्र लिखें। आपके पत्रों का उत्तर अलग-अलग तो नहीं भेज सकूँगा, लेकिन तमाम पत्रों के उत्तर मैं 'भूदान-यज्ञ' के जरिये आपके पास पहुँचाता रहूँगा।

सबसे पहले मेरी सलाह यह है कि आप अपने क्षेत्र में प्रखण्ड-स्तर पर तथा पंचायत-स्तर पर गोष्ठियों का संगठन करें। गोष्ठी में चर्चा करने के लिए आपको झोले में कम-से-कम नीचे लिखी किताबें मौजूद ही रहनी चाहिए। किताबें मौजूद ही न रहें, आपको उन किताबों को पढ़कर पचाना भी होगा। आपको स्वाध्याय द्वारा अच्छी तरह तैयार रहना पड़ेगा। मैं हमेशा कहता हूँ कि अबतक के तूफान में हमने 'ग्रामदान' का शब्द फैलाया है, अभी तक अर्थ का परिचय नहीं कराया है। विनोबाजी के निर्देशानुसार अति तूफान के काम के साथ अगर हम जनता के सामने विचार को स्पष्टता के साथ नहीं रख सके तो हम जीती हुई लड़ाई हार जायेंगे।

मुझे आशा है कि मेरी इतनी सेवा से आप सन्तोष मान लेंगे।

आपका सबका साथी

धीरेन भाई

पुस्तकों के नाम

(१) राज्यदान के बाद क्या ?
ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य —राममूर्ति

(२) कार्यकर्ता पाथेय —विनोबा

(३) ग्रामदान : शंका समाधान —धीरेन्द्र मजूमदार

(४) आचार्यकुल —विनोबा

(५) तरुण शान्ति सेना

श्री धीरेन्द्र मजूमदार का कार्यक्रम

दिसम्बर '६९

११ से १३—गांधी आश्रम, फर्रुखाबाद (उत्तर प्रदेश)

१४ से १५—स्वराज्य आश्रम, सर्वोदय-नगर, कानपुर (उत्तर प्रदेश)

१७ से— श्रमभारती, मधुबनी, जि० दरभंगा (बिहार)

मेहनत का मेहनताना—कितना ?

कोई नहीं चाहता कि जिनके ऊपर कोई सार्वजनिक जिम्मेदारी है, और जो सरकार के किसी विभाग या किसी दूसरी संस्था में काम करते हैं, वे तकलीफ में रहें, या जिम्मेदारी को निभाने के लिए जिन साधनों, सुविधाओं की जरूरत है वे उन्हें न मिलें। बल्कि दुख और आश्चर्य तो इस बात का है कि देश में अधिकांश सरकारी या अर्द्ध-सरकारी कर्मचारी, अथवा गैर-सरकारी कार्यकर्ता, ऐसी हालत में काम करते हैं जिनमें न उनकी न्यूनतम निजी आवश्यकताएँ पूरी हो पाती हैं, और न उन्हें आवश्यक वेतन ही मिल पाते हैं। फिर भी किसी तरह काम होता जाता है। हाँ, जैसा होना चाहिए वैसा नहीं हो पाता। इसके विपरीत जब पार्लियामेण्ट में मन्त्रियों या एम० पी० लोगों पर होनेवाले खर्च की बात होती है तो मन में यह प्रश्न उठता है कि क्या किसी भी व्यक्ति पर, चाहे जो उसका पद हो, प्रतिष्ठा हो, चाहे जैसी उसकी जिम्मेदारी हो, इतना खर्च होना चाहिए ? पन्द्रह हजार, बीस हजार, पचीस और तीस हजार रुपये सरकार की ओर से एक मन्त्री पर एक महीने में खर्च होने की बात किसी तरह गले के नीचे नहीं उतरती। नकद तनख्वाह भले ही कम हो, लेकिन कुल मिलाकर इतना अधिक खर्च किसी दृष्टि से उचित नहीं मालूम होता। उचित की बात तो दूर रही सर्वथा अन्यायपूर्ण है, असह्य है। समाजवाद जब होगा तब होगा, किन्तु क्या समाजवाद की दुहाई देनेवाले नेता और उनके साथ काम करनेवाले शासक इस अन्याय को समाप्त नहीं कर सकते ?

कहा जाता है कि अच्छे, योग्य लोगों से काम लेने के लिए ज्यादा पैसा देना जरूरी है। देश को अच्छे, योग्य, लोगों की जरूरत भी है। उनकी कमी तो है ही, इसलिए बाजार में उनका भाव ऊँचा है, और इसी कारण उनके लिए मौका भी है कि वे अपनी मेहनत का मनचाहा मेहनताना ऐंठ सकें। यह हमारा दुर्भाग्य है कि जो योग्य है वह स्वार्थी और इतना संवेदनशून्य है कि देश और समाज उसके लिए जैसे कोई अर्थ ही नहीं रखते। अगर कभी उससे इस बात की चर्चा की जाय तो वह जमाने को कोसेगा, समाज को दोषी बतायेगा, और कहेगा कि आधुनिकता के सामने नैतिकता कोई अर्थ नहीं रखती। यह युग भौतिकवादी है।

कहा जाता है कि देश भर में हजारों इन्जिनियर बेकार हैं। कितने नये डाक्टर हैं जिन्हें स्वतन्त्र प्रैक्टिस शुरू करने की हिम्मत नहीं हो रही है। कितने वकीलों को मामूली फीस नहीं मिल पा रही है। कितने शिक्षक मजदूरों की तरह काम करने को विवश हो रहे हैं—२ रुपये रोज पर ! जरूर ऐसा है, लेकिन सवाल यह है कि ऐसा क्यों है। क्या अब समाज को इन्जिनियरों, डाक्टरों, वकीलों और शिक्षकों की जरूरत नहीं रह गयी है ? जरूरत है, और बहुत है, गाँव-गाँव और मुहल्ले मुहल्ले में है, लेकिन इन 'अच्छे और योग्य' लोगों की जो फीस है उसे चुकाने की सामर्थ्य समाज में नहीं है। जिन थोड़े लोगों में सामर्थ्य है वे इन विशेषज्ञों की योग्यता खरीद रहे हैं और लाभ उठा रहे हैं। बात यह है कि अगर योग्यता इतनी महँगी होगी, और योग्य लोगों को यह ध्यान नहीं रहेगा कि वे देश के सामने की बदौलत योग्य हुए हैं, तो हमारे जैसे गरीब देश में योग्य लोगों का बेकार रहना अनिवार्य होगा, और देश को नये सिरे से सस्ते व्यक्ति तैयार करने की बात सोचनी होगी। यह भी सोचना होगा कि जो आज विशेषज्ञ कहे जाते हैं वे सचमुच हमारे काम के हैं, या सिर्फ डिग्री और साइनबोर्ड की कीमत माँगते हैं। कई बार ये विशेषज्ञ हमारे काम के लिए बिलकुल बेकार साबित होते हैं, भले ही दोष उनसे अधिक उस शिक्षा-दीक्षा का हो जो उन्हें मिली है।

हम सब एक देश के वासी हैं, लेकिन देशवासियों की दुनिया कभी एक नहीं रही। आज भी एक नहीं है और बावजूद समता के नारों के, एक बनाने की कोशिश भी नहीं है। बहुत कुछ हुआ पर नीचे का आदमी नीचे ही रह गया। हाँ पहले के राजाओं-महाराजाओं, सेठों और जमींदारों के बदले बड़े कार्मदार, मैनेजर, नेता और विशेषज्ञ आ गये। पहले जो ऊपर थे वे प्राचीनता के प्रतीक थे इसलिए बदनाम थे, और हर आदमी चाहता था कि वे जल्द-से जल्द खतम हों, लेकिन जो आज ऊपर हैं वे आधुनिकता के प्रतिनिधि हैं, लोकतन्त्र और विज्ञान की भाषा बोलते हैं, और समाज में प्रतिष्ठित हैं। उनके पास अधिकार और उपाधि है, जब कि सामान्य आदमी के पास बेबसी के सिवाय और कुछ नहीं है। वे दूसरों को खरीदना और अपने को बेचना जानते हैं। क्या शिक्षा और क्या कानून, क्या अधिकार और क्या व्यापार, हर चीज दूसरों के दमन और शोषण का साधन बन गयी है। देश में शासकों, सेवकों, विद्वानों और विशेषज्ञों का एक विशाल 'स्टेब्लिशमेंट' बन गया है जो समाज के सीने पर जमकर बैठ गया है, और अब उतरना नहीं चाहता।

एक दुनिया में है बुद्धि और पूँजी, दूसरी दुनिया में है श्रम और संख्या। इन दोनों के बीच की खाई रोज बढ़ती जा रही है। जनता इसे अपनी आँखों से देख रही है, और सब समझने भी लगी है। देश और समाज कर भी वह आज चुप है, लेकिन कब तक चुप रहेगी, यह कोई नहीं जानता। क्या देश और हम सबकी भलाई इसमें नहीं है कि हम चौड़ी खाई को हम और अधिक चौड़ी न होने दें ?

भूदान यज्ञ : सोमवार, ८ दिसम्बर, '६९

दिन दुनिया की सेवा में, रात परमात्म-सन्निधि में

वर्धा की रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने जो प्रस्ताव बाबा के सामने रखा, वह इस प्रकार का है—"वर्धा-पंचक्रोशी में जितनी रचनात्मक संस्थाएँ हैं, उन सबके प्रतिनिधि 'आदि निवास' में इकट्ठा हुए। हम सबको बहुत खुशी हुई कि पूज्य खान साहब के आगमन के निमित्त से आपका भी निजगृह में आगमन हुआ। हम सबकी यह राय है कि अब आपका स्थिर निवास आश्रम-सेवाग्राम ही रहे। यहाँ का आपका निवास सारे विश्व के लिए लाभदायक और प्रेरक होगा।"

चर्चा के दौरान भाई श्री बलवन्त सिंह ने बताया कि पू० बापूजी ने सेवाग्राम से लिखे ता० १७ मार्च, १९४५ के एक पत्र में यही संकेत किया है—

"मेरे जाने के बाद कौन कह सकता है कि विनोबाजी अपना स्थान यहीं नहीं करेंगे ?" इसके बाद पू० बाबा ने कहा—

सेवाग्राम की व्यापकता !

आप लोगों ने जो षड्यन्त्र रचा है, उस बारे में भारत के लोगों को पूछा जाय तो वे लोग भी इसे मान्य करेंगे। इसलिए इस विषय में आपको खास षड्यन्त्र की जरूरत थी नहीं। यह मानी हुई बात है और जहाँ तक मेरा ताल्लुक है भावना का, मेरी अपनी भावना यहाँ संतुष्ट होती है। जहाँ तक सहूलियत का सवाल है, यहाँ सब प्रकार की सहूलियतें हैं। इसलिए इस प्रस्ताव को मेरी भावना का भी बल है।

अब मैंने यह जाहिर किया था कि एक-एक हफ्ते का निर्णय करूँगा, तदनुसार इस हफ्ते का अपना निर्णय कर दूँगा। ऐसा क्यों न किया जाय कि जबतक वर्धा में रहना है तबतक एक स्थान तय किया जाय और वहीं रहें। ७ दिन के निर्णय का उद्देश्य क्या है ? इसका मुख्य उद्देश्य है, सदा ताजगी। भले ७-७ दिन का निर्णय करके एक स्थान में ७ साल भी रहा जाय, लेकिन निर्णय ७ दिन का करते हैं तो उसमें ताजगी रहती है। ताजगी के साथ-साथ सावधानता भी अधिक रहती है। मान लीजिए, यहाँ रहने का तय करूँ और 'रत्नम भवन' के बजाय 'आदि निवास' या 'शान्ति-भवन' में रहूँ तो आप उज्र नहीं मानेंगे, क्योंकि यह सेवाग्राम ही है। आप सेवाग्राम की मर्यादा मानते हैं तो उसमें दोष होता है। बल्कि होना तो यह चाहिए कि बाबा पवनार में है तो भी वह सेवाग्राम में ही है। सेवाग्राम की क्षेत्र-मर्यादा छोटी मानने से उसकी प्रेरणा-शक्ति को हम मर्यादित करते हैं।

आज एक भाई, मारीशस के सोमा-णीजी आये थे। उनकी संस्था का सुवर्ण महोत्सव है। बहुत त्यागपूर्वक राष्ट्रीय शाला उन्होंने बनायी है। मेरे कई पुराने मित्र उसमें हैं। उस सुवर्ण महोत्सव के लिए वे मुझे बुलाते हैं। मैंने कहा, आध्यात्मिक उपस्थिति में संतोष कीजिएगा, शारीरिक उपस्थिति का आग्रह मत रखिएगा।

विनोबा

इस प्रकार बाहर के लोग बुलाते हैं तो कहता हूँ कि मैं ना नहीं कहूँगा और हाँ भी नहीं कहूँगा। निर्णय मेरा ७ दिन का होगा। यहाँ से माँग आयी, तो मैं आपके यहाँ 'नहीं आऊँगा' ऐसा नहीं कहता और 'आऊँगा' ऐसा भी नहीं कहता। जैसे अभी प्रेमाबहन ने सासवड आने के लिए कहा। मैंने कहा, 'नहीं आऊँगा ऐसा भी नहीं कहता और आऊँगा ऐसा भी नहीं कहता।' यह जो मध्यस्थ वृत्ति मैं रखता हूँ, वह चित्त की शक्ति के प्रसार के लिए लाभदायी होती है। मैं दरवाजा बन्द करूँ कि अमुक जगह जाऊँगा या अमुक जगह बराबर रहूँगा, किसी एक स्थान में रहने का या किसी एक स्थान में न जाने का निश्चय करना भी दरवाजा बन्द करने जैसा ही है। इस तरह दरवाजा बन्द करूँ तो शक्ति व प्रेरणा क्षीण होगी, सीमित होगी।

यह सब सोचते हुए मैंने यह तय किया कि इसी क्षेत्र में मुझे रहना चाहिए, ऐसा आग्रह मेरे मन में नहीं होना चाहिए। सात-सात दिन का निर्णय करके मैं यहाँ कायम के लिए भी रह सकता हूँ। इस प्रकार सब तरह से पूर्ण मुक्तता रखना आध्यात्मिक दृष्टि से भी लाभदायी है। मैं कह नहीं सकता कि यह मैं ठीक समझा सका या नहीं।

असमर्यादित व्यापकता

अभी मैं बोल रहा था कि जब बापू जीवित थे तब उनके पास आने के लिए ५ मील चलना पड़ता था जब वे यहाँ थे, या ५०० मील दूर जाना पड़ता था जब वे साबरमती में थे। लेकिन आज बापू से बात करनी हो और उनकी मुलाकात करनी हो तो सिर्फ आँख बन्द करने की देरी है। आँख बन्द करूँ तो तुरन्त मुलाकात शुरू हो जाती है। यह जो अनुभूति है, यह क्यों होती है ? क्योंकि वे व्यापक हो गये हैं। पहले एक देह में जब सीमित थे, तब कितनी भी व्यापक होने की कोशिश करते, फिर भी उस व्यापकता की मर्यादा आती थी और आज यह व्यापकता असमर्यादित है। आज वह सीमित नहीं है।

आध्यात्मिक शक्ति के और वृत्ति के ये सारे पहलू हैं। यह ध्यान में आया हो तो इस प्रकार कोई सीमा का बन्धन आप अपने मन में नहीं रखेंगे।

अभी प्रभाकरजी ने मुझसे कहा कि ७ दिन यहाँ रहूँगा और ३ हफ्ते बाहर रहूँगा और तीसों रातें यहीं रहूँगा। महीने में ३० दिन होते हैं, उसमें से ७-८ दिन यहाँ, २२-२३ दिन बाहर और तीसों रात्रि यहाँ। यानी रात में सोने आऊँगा तो मैं सेवाग्राम जा रहा हूँ, ऐसी भावना से सोने के लिए आऊँगा। यह उन्होंने कहा। यह बात मुझे एकदम जँच गयी।

मेरा सुझाव है कि इसमें जो तत्त्व है, वह तत्त्व हम और आप ग्रहण करें और सब दिन दुनिया की सेवा में तथा सब रातें परमात्मा की सन्निधि में, ऐसा कर सकें तो बहुत लाभ होगा। रात में परमात्मा के पास जाना और दिन में उन्हींकी

लोकतंत्र बनाम लोककल्याण

[आज का शासन-तन्त्र नागरिक के स्वत्व और स्वतंत्रता के सत्व को समाप्त करता जा रहा है। जिस राज्य को हम लोक-कल्याणकारी मानते हैं वह सचमुच कितना अकल्याणकारी है यह इस लेख से मालूम होगा। इंग्लैण्ड के संदर्भ में लिखा गया यह लेख वहाँ से कहीं अधिक भारत पर लागू है।—सं०]

कम लोग साफ-साफ सोच पाते हैं कि हमारे लोकतन्त्र में क्या खराबी आ गयी है, लेकिन लगभग हर आदमी यह मानने लगा है कि खराबी बहुत गहरी है।

डेढ़ सौ साल पहिले पार्लियामेण्ट में 'रिफार्म-बिल' पास हुआ था। उस वक्त यह माना जाता था कि अगर स्वतन्त्रता का यह अर्थ है कि सामूहिक निर्णय में भाग लिया जाय, तो यह माना गया कि पार्लियामेण्ट की गठन में सबकी आवाज होनी चाहिए। उस जमाने में यह बहुत बड़ी बात थी। लेकिन तब से बातें इतनी बदल गयी हैं कि अब इस बात का महत्त्व बहुत कम रह गया है। सत्ता के कितने ही नये स्रोत और स्वरूप विकसित हो गये हैं जिन पर नागरिक का कोई वश नहीं है, और जिनके सम्बन्ध में उसकी राय को कोई पूछ भी नहीं है। आज हमारे जीवन पर अनेक चीजों का प्रभुत्व है—मोटर कम्पनी, कम्प्यूटर, टेलिविजन, विविध रासायनिक चीजें, तेल-व्यवसाय, निर्माण के संगठन, बैंक, बीमा, बड़े-बड़े स्टोर और सुपर-मार्केट, और विज्ञापन एजेंसियाँ। ये सारी चीजें निजी व्यापारियों के हाथों में हैं, यद्यपि वास्तव में वे सब 'पब्लिक कंपनियाँ' हैं। इनमें से एक-एक की कम्पनी उतना रुपया खर्च करती है जितना सन् १८३२ में पूरी ब्रिटिश सरकार नहीं खर्च करती थी। इतना होने पर भी आम इस बात की चर्चा नहीं होती कि इन कम्पनियों की सत्ता लोकतांत्रिक कैसे बनायी जायगी।

ये कारण काफी हैं जिन्हें लेकर यह चिन्तन होना चाहिए कि लोकतन्त्र इन परिवर्तनों के साथ साथ कैसे चल सकेगा। आर्नल्ड ट्वायनबी ने हाल में लिखा है कि जब पार्लियामेण्ट शुरू हुई तो उसके पास जितना काम था उससे अधिक काम आज की 'विलेज कौंसिल' के पास है। आज तो वेस्टमिन्स्टर के एक-एक विभाग इतने भीमकाय हो गये हैं कि उन पर किसी का कन्ट्रोल नहीं है।

यह सोचा जा सकता है कि लोकतन्त्र के लिए यह जरूरी है कि शिक्षण का एक विभाग हो जिसमें हर मंजिल पर नागरिकों द्वारा नीति तय हो और वेतन पानेवाले अधिकारी उस पर अमल करें, *ताकि नागरिक के निर्णय और नियंत्रण से* काम हो। इससे यह नतीजा निकलेगा कि 'राष्ट्रीय शिक्षण नीति' जैसी कोई चीज नहीं हो सकती, क्योंकि शिक्षण के विचार जिले-जिले में, बल्कि व्यक्ति-व्यक्ति में, बदलते रहते हैं। ज्यादा-से-ज्यादा क्षेत्रीय नीति हो सकती है। यह बात अनेक दूसरी चीजों पर भी लागू हो सकती है।

पार्लियामेंट की हैसियत घटी

कहा जाता है कि ऐसा करना अनावश्यक है क्योंकि पार्लियामेण्ट के मेम्बरों को हम खुद चुनते हैं, लेकिन सार्वजनिक जीवन की यह विचित्र बात है कि जैसे-जैसे सरकार का कार्य-क्षेत्र बढ़ा है, पार्लियामेण्ट के मेम्बरों की व्यक्तिगत हैसियत और शक्ति घटती गयी है। इसका कारण जाहिर है। जब स्वयं वोटर का प्रभाव घटता गया है तो उसके प्रतिनिधि का भी घटा है। सच बात यह है कि पार्लियामेण्ट की सत्ता बहुत असाधारण स्थितियों में ही प्रकट होती है, नहीं तो सामान्यतः नौकरशाही ही प्रशासन को चलाती है। पार्लियामेण्ट और मंत्री इस प्रक्रिया में बस शरीक रहते हैं। ऐसी हालत में नागरिक का मुख्य काम है कि वह चुपचाप चीजों को कर ले, एम० पी० का काम है कि वह लाइन में चलता रहे, इधर-उधर न जाय; मंत्री का काम है कि वह बड़े अधिकारियों का साथ दे, और ऐसे निर्णय न ले जिससे चुनाव में उसकी पार्टी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े।

ऐसी पार्लियामेण्ट की आवाज सार्वजनिक मामलों में निर्णायक कैसे होगी? उसके हाथ में घटनाओं का होना नहीं है। उसका इतना ही काम रह गया है कि घटनाओं के पीछे चलने की कोशिश करती रहे। मोटरकार का विकास एक उदाहरण है। पार्लियामेण्ट का कोई निर्णय नहीं था कि यातायात में कार का क्या स्थान होना चाहिए। लेकिन आज हालत यह है कि कार का उत्पादन औद्योगिक समृद्धि का एक बड़ा प्रमाण माना जाता है। *उसके लिए सड़क बनाना सार्वजनिक* खर्च का एक बड़ा अंग माना जाता है। यह कौन सोचता है कि कारों के कारण किस तरह शहरों में गन्दी बस्तियाँ (स्लम) बढ़ती जा रही हैं और कारों के कारण शहरी जीवन दूभर होता जा रहा है।

प्रशासन की विकेन्द्रित व्यवस्था हो

आज पार्लियामेण्ट इतनी कमजोर और प्रभावहीन हो गयी है कि उसे लोक-मानस का सही और पर्याप्त माध्यम नहीं माना जा सकता। ह्वाइटहाल से लेकर नीचे तक एक जबरदस्त नौकरशाही है जो देश के सारे जीवन को चला रही है।

कौन नहीं देख सकता कि यह स्थिति ऐसी है जिसमें जबरदस्त दुराशा (फ्रस्ट्रेशन) पैदा हो रही है? विद्यार्थियों के असंतोष को देखिए। यह असंतोष उस वक्त हो रहा है जब कि शरीर के अधिक सुख के सामान कभी पहिले थे नहीं। और जो असंतोष आज विद्यार्थियों में प्रकट हो रहा है वह कल औद्योगिक मजदूरों में प्रकट होगा।

अपने ही जीवन के नियमन और संचालन में नागरिक इतना असहाय हो गया है। उसकी यह असहायावस्था उसे सबसे अधिक दुख देती है, और यह शायद सबसे अधिक चिन्ता का कारण है। शायद यह एक बड़ा कारण है जिसमें लोग अपने

जो समाज के हित की चिन्ता से अलग करते जा रहे हैं। वे मानते ही नहीं कि समाज के प्रति उनकी कोई नैतिक जिम्मेदारी है। ऐसी सकुचित निष्ठा पर कौन सभ्यता टिकेगी? फिर भी हमारी सभ्यता अपने सदस्यों को जिस तरह अलग करती जा रही है उसका दूसरा परिणाम क्या होगा?

जब यह हाल है तो जल्द-से जल्द प्रशासन की ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि नीति-सम्बन्धी मुख्य निर्णय ही नहीं, बल्कि रोजमर्रा की व्यवस्था भी कस्बा, गाँव और वार्डों के हो द्वारा हो, न कि सरकार के किसी सुदूर, भारी-भरकम केन्द्र से। न्यूयार्क में चर्चा शुरू हो गयी है कि स्कूलों की व्यवस्था स्थानीय वार्ड-कमेटियों को सौंप दी जाय। इसका अर्थ यह है कि लोगों ने मान लिया है कि मौजूदा प्रशासन का तंत्र फेल हो चुका।

निर्णय का अधिकार नागरिक का

कुछ लोग कहेंगे कि ये वार्ड समितियाँ शिक्षकों की भर्ती, ट्रेनिंग, परीक्षा, पाठ्यक्रम, बिल्डिंग आदि का काम कैसे कर सकेंगी? इस काम का अनुभव और क्षमता तो नौकरशाही का ही है। उन्हें सोचना चाहिए कि लड़ाई के जमाने में जब सरकार की सारी मशीन टूट जाती है, यहाँ तक कि सरकार के मुख्य लोग कई बार देश छोड़कर भाग जाते हैं, तो साधारण लोग कैसे काम चलाते हैं? अनुभव यह बताता है कि आज केन्द्रित संचालन के नाम में जो कुछ चलता है उसमें से बहुत कुछ बिलकुल बेकार और प्रभावशून्य होता है। कोई कारण नहीं कि स्थानीय व्यवस्था पर केन्द्रित अंकुश रखा जाय। यह कहना कि स्थानीय लोग अपने सार्वजनिक कामों में रुचि नहीं लेते, कोई अर्थ नहीं रखता। रुचि न लेने का एक कारण यह है कि लोग जानते हैं कि सारा काम ऊपर के कायदे-कानून के अनुसार होता है। स्थानीय बैठकें तो केवल औपचारिक होती हैं। जो व्यक्ति आगे बढ़कर कुछ करना भी चाहते हैं वे जानते हैं कि सत्ता की जड़ें कहीं और हैं, और किसी काम का प्रयोजन उनकी राय से कहीं अधिक अधिकारियों की मर्जी से निर्धारित होता है।

यह समझना भूल है कि अगर बड़ी केन्द्रीय सरकार अपने अधिकार क्षेत्रीय इकाइयों में बाँट दे तो विकेन्द्रीकरण हो जायगा। राजनीति में सत्ता के दो ही स्वरूप होते हैं—एक, या तो नागरिक खुद-ब-खुद अधिकार का प्रयोग करें, या उनकी ओर से दूसरे प्रयोग करें। प्रथम प्रयोग का यह अर्थ नहीं है कि दूसरे प्रयोग न करें, लेकिन यह अर्थ जरूर है कि निर्णय का अधिकार हमेशा नागरिकों का ही होगा। दूसरों का नहीं। प्रश्न है ये दूसरे कौन हैं?

नौकरशाही की जगह नागरिक ले

सचमुच ये दूसरे उसके चुने हुए प्रतिनिधि नहीं हैं। स्थानीय और राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर वे उस प्रतिक्रिया के अंग हैं जो ह्वाइटहाल से संचालित होती है। सिद्धान्त यह है कि पार्लियामेण्ट के कुछ सदस्य मिलकर एक सरकार बनाते हैं, और कैबिनेट के भीतर रहकर, या बाहर रहकर, सरकार के विभाग चलाते हैं।

लेकिन क्या व्यवहार में ऐसा होता है? जिस मंत्री की 'विशेषज्ञों' से पटरी नहीं बैठती उसका क्या हाल होता है? अन्त में किसकी चलती है? कसौटी ऐसे मामलों में नहीं होती जो असाधारण महत्त्व के होते हैं। उनमें मंत्री कोई ऐसा काम कर सकता है जिसे उसके विशेषज्ञ न पसन्द करें। कसौटी होती है नित्य के काम में। समाज का काम तो दैनन्दिन निर्णय से ही होता है।

फरवरी, '६९ में 'दी स्पेक्टेटर' के लेखक जे ऐन्थनी ने लिखा था :

'क्षेत्रीयता, प्रशासनिक पुनर्संगठन संविधान का सुधार'—इस वक्त ये चीजें हवा में हैं। इसलिए हवा में कुछ ताजगी भर है। लेकिन खतरा यह है कि जब 'क्रांति' आयेगी तो वह नौकरशाही की क्रान्ति होगी। उनको हमें चलाने के अधिक अधिकार मिलेंगे। जब नौकरशाही आज की अपेक्षा अधिक सक्षम दिखाई देगी, उसी अनुपात में हमारी दुराशा और अधिक बढ़ जायेगी, हम और अधिक असहाय और परावलम्बी हो जायेंगे। ऐसी बात नहीं है कि नौकरशाही कोई काम मत्सर या अधिकार-लिप्सा के कारण करेगी। बल्कि जो कुछ करेगी वह सुविधा और संगठन की अनिवार्यता के कारण करेगी। प्रशासक का तर्क नागरिक के तर्क से भिन्न होता है। अब अवसर है कि सामान्य नागरिक को उसका प्रभाव, उसका स्थान, और उसका महत्त्व जो पिछले पचास वर्षों में उससे छीन लिया गया है उसे वापस दिया जाय।'

यह बहुत ठीक है। सिर्फ एक बात है जो समझ लेनी चाहिए। नागरिक को उसका महत्त्व 'दिया' नहीं जा सकता। उसे खड़ा हो जाना है, और खड़े होकर अपने स्वत्व को वापस लेना है। अगर वह ऐसा नहीं करता तो हमेशा के लिए अपने भविष्य को खोदेगा।

—जुलाई-अक्तूबर '६९ के 'रिसर्जेन्स' के एक लेख के आधार पर—समन्वयवाद।

वर्तमान समस्या सामाजिक अखण्डता

वर्तमान सभ्यता की सबसे बड़ी समस्या है, सामाजिक अखण्डता। आज का मनुष्य एकाकी है, उसकी नकेल दूसरों के हाथों में है। वह एक प्रकार का 'संख्या-मानव' है—ऐसा मानव है, जो अपनी बुद्धि, विवेक और नियंत्रण के परे दूसरी शक्तियों द्वारा चलाया जाता है। यही स्थिति सर्वत्र है—चाहे वह लोकतंत्र हो या अधिनायक-तंत्र। अब आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य को मनुष्य के सम्पर्क में रखा जाय, जिसमें सभी मनुष्य सार्थक, सहानुभूतिपूर्ण और सर्वांगीण जीवन व्यतीत कर सकें। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि हमारे सामने समस्या मानव समाज के पुनर्निर्माण की है, जिसमें वह सामुदायिक जीवन बिता सके।

—जयप्रकाश नारायण

तपोपूत ठक्कर बापा

[२९ नवम्बर, '६९ को सारे भारत में गांधीजी के अनन्य साथी श्री ठक्कर बापा (श्री अमृतलाल ठक्कर) की सौवीं जयन्ती मनायी गयी। इस अवसर पर प्रस्तुत है ठक्कर बापा के नजदीक सम्पर्क में आये एक सुप्रसिद्ध समाज सेवक श्री चन्दनसिंह भरकतिया का यह लेख । —सम्पादक]

मेरी बहुत इच्छा रही कि मैं समाज-सेवा को अपना मिशन बनाऊं, पर यह बात बनी नहीं । गांधीजी के विधायक कार्यक्रम की मुझ पर गहरी छाप थी, लेकिन निज के लिए मुझे व्यावहारिक जीवन ही चुनना पड़ा । उन दिनों मैं बड़ी ललक के साथ रचनात्मक संस्थाओं के काम को तथा उनमें लगे सेवकों को देखा करता था । अपनी मर्यादा पहचानता था कि मैं वैसा जीवन नहीं जी सकूंगा । पर मन ही मन यह लालसा मुझे थी कि मैं इसमें जितना सहायक बन सकूं बनूं और प्रवृत्तियों में जितना रस ले सकूं, लेने की कोशिश करूं । सन् १९४० में ऐसा अवसर मेरे हाथ आया। व्यावसायिक परम्परा में से एक हजार रुपया मासिक तक की जुगाड़ मैं रचनात्मक कार्य के लिए करने की सधि पा सका । मुझे लगा कि मैंने बड़ी बात बनायी और सीधा श्री हृदयनाथ कुंजरू के पास पहुंचा । व्यवस्था, पद्धति और अनुशासन के नाते मैं 'सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया सोसायटी' को बहुत ऊँची मानता था—वो मुझे कार्य की दिशा "गांधीजी का विधायक कार्यक्रम" लगती थी । एक विचार मन में आया कि राजस्थान के रचनात्मक सेवकों का एक संघ 'सर्वेन्टस आफ इण्डिया सोसायटी' की श्रेणी का बने और इसी कल्पना के साथ मैं श्री कुंजरू से मिलने गया था । उन्होंने सलाह दी कि मैं श्री ठक्कर बापा से परामर्श करूं । बापा में दोनों आदर्शों का सुन्दरतम समन्वय हुआ था । वे विचार में गांधीवादी परम्परा के थे, भावना से दीन-दुखियों के सेवक थे और अनुशासन में 'सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया सोसायटी' की उच्च परम्परा के पालनहार थे । कुंजरूजी का पत्र लेकर मैं बापा के पास पहुँचा ।

वृद्ध एवं स्नेही

इसके पहले मैं बापा से नहीं मिला था, उनके व्यापक और कर्मठ जीवन के बारे में मैं सुन चुका था । बापा से जब मिलने गया तब मैं अपने ही ख्याल में इतना डूबा था और मानता था कि एक ठोस योजना लेकर उनसे मिल रहा हूँ । उन्होंने बड़े गौर से मेरी बात सुनी-समझी । मुख्तसर में यह योजना थी कि

चन्दनसिंह भरकतिया

राजस्थान में विभिन्न रचनात्मक प्रवृत्तियों में लगे सेवकों का एक संघ बनाया जाय और वे उसके आजीवन सदस्य बनें। इस तरह आश्वस्त होकर मिलीजुली ताकत रचनात्मक कार्य में लगायें । इससे उनमें निश्चिन्तता, समूह शक्ति और अनुशासन पैदा होगा। ठक्कर बापा ने इसमें दिलचस्पी ली, योजना के सब पहलू समझे, उसकी गहराई में गये, परन्तु मुझे ऐसा नहीं लगा कि वे इसमें कूद पड़ने के लिए प्रस्तुत हैं । और तभी लगा कि दीन-दुखियों का यह अमर सेवक बहुत ही पुख्ता कदम उठाता है । वे और भी भीतर गये और एक हजार रुपया मासिक की अर्थ-व्यवस्था की बुनियाद समझी । यह जानकर कि मेरी व्यावसायिक शर्त के अनुसार यह राशि सेठ गोविन्दराम सेक्सरिया के द्वारा मिलेगी उन्होंने सीधे सेठ साहब से बात करने की इच्छा प्रकट की । सारी छानबीन, चर्चा-मशविरा, भेंट-मुलाकात आदि में धीरे-धीरे एक साल तक लग गया तब कहीं राजस्थान सेवक संघ की रचना हुई ।

मैं तो तुरत-फुरत की कल्पना लेकर उनके पास गया था । परन्तु उन्होंने अपने धैर्य में मुझे भी बांध लिया । थोड़ी खीज मुझे हुई, लेकिन आश्चर्य यह हुआ कि उनके प्रेमिल स्पर्श से उनकी कठोर छानबीन और पुख्ता कदम का मैं भक्त बन गया हूँ । वह भक्ति फिर क्रमशः बढ़ती गयी । बाद में कई प्रसंगों पर उनसे मिलने, चर्चा करने और सलाह लेने के अवसर मुझे मिले और लगातार ग्यारह वर्ष तक मैं उनका स्नेह-भाजन बना रहा । उनसे डाँट खाकर भी मन में भक्ति ही जगती । बिना किसी लग-लगाव के खरी बात कहने में बापा कभी नहीं चूकते । बात टूटती, मन खट्टा होता, आघात लगता, लेकिन फिर भी उनके प्रति श्रद्धा जगती ।

मितव्ययी

उनकी दृष्टि बड़ी तीक्ष्ण और निर्माणकारी थी । राजस्थान सेवक संघ में लिये जानेवाले कर्मियों के नाम सामने आये तो अच्छे-अच्छे मंजे हुए कर्मठ कार्यकर्ताओं के नाम बापा ने रद्द कर दिये । बने बनाये साधन-सम्पन्न कार्यकर्ताओं को लेने में क्या खास बात हुई ? वे लोग सह-चिन्तन में भाग लें, अपने अनुभवों का लाभ दें, लेकिन कार्यकर्ता तो नय ही लेने चाहिए । और, राजस्थान सेवक संघ एक साल तक केवल एक ही कार्यकर्ता जुटा सका, जब कि उसकी ताकत पन्द्रह कार्यकर्ताओं के योगक्षेम की थी । इसी तरह उनका आग्रह यह भी रहा कि संघ की कार्यकारिणी में केवल त्यागी, या केवल विचारक या केवल पूर्ण समय के कार्यकर्ता ही नहीं रहें, सब तरह के लोगों का मिलाजुला रूप हो उनका । केवल कार्यकर्ता रहेंगे तो उन्हें अपने-अपने अहंकार छोड़ने का मौका नहीं मिलेगा । शून्य में से काम खड़ा करने की अद्भुत शक्ति बापा में थी । पैसे की इफरात रहने पर भी खर्च करने में वे बहुत मितव्ययी और

प्रामाणिक थे। इसमें दूसरों की फिजूलखर्चों में भी वे भागीदार नहीं बनते थे।

एक बार तपोवन, कमंडल पूरी तरह भेजे हुए कार्यकर्ता की जटिल बीमारी में सहायता देने का प्रस्ताव मैं कर बैठा। सबकी मनोभावना हुई कि इलाज की जिम्मेवारी सघ को लेनी चाहिए। पर बाबा ने कहा कि सेवक संघ स्वस्थ लोगों की जमात है, बीमारों का प्रबन्ध करने की संस्था नहीं। श्री बीमार हैं तो उनके खर्च का और कहीं से प्रबन्ध होगा। सेवक संघ वह भार क्यों उठाये? यह प्रबन्ध उन्होंने स्वयं दूसरी जगह से किया।

कर्तव्यपरायण

उनमें कर्तव्य भावना कूट-कूटकर भरी हुई थी। काम ही उनका प्राण था। परन्तु काम का भार बढ़ते-बढ़ते इतना बढ़ा कि बाबा का शरीर उसे झेल नहीं पाया। बापू का आदेश हुआ कि बाबा को अपना काम कम करना चाहिए। कुछ संस्थाओं से वे मुक्ति लें। यह आदेश बापू ने दिया। आदेश के पालन स्वरूप बाबा ने राजस्थान सेवक संघ से मुक्ति चाही, श्री गोकुलभाई जी जाजू को अपना उत्तराधिकारी चुन लिया, परन्तु बात विचारणीय थी। उसी बीच बापू का निधन हुआ। अपने साथी कार्यकर्ताओं के कार्यभार को तौलनेवाला अंकुश जाता रहा। बाबा को अब भार कम करने का आदेश कौन दे? उन्होंने कह दिया—"मैं अपने कर्तव्य-पथ पर चलता रहूँगा। मैं सेवक संघ की जिम्मेदारी नहीं छोड़नेवाला हूँ।"

सार्वजनिक जीवन में हर मुद्दे के प्रसार को तौलनेवाले बाबा अपने प्रति निर्मम थे। सुविधाओं को पास फटकने भी नहीं देते थे। कम-से-कम वस्तुओं से अपना जीवन चलाते हुए वे अधिक-से-अधिक समय तक काम में जुटे रहते। "कार्यकर्ता को अपने दाम-दाम का हिसाब रखना चाहिए"—यह बाबा ने अपने जीवन को निरन्तर तपाकर प्रकट किया।

बाबा कर्तव्यनिष्ठ स्वयं प्रहरी थे। उन्हें अपनी ही दाम के हिसाब का ध्यान नहीं था, बल्कि उनकी चाह यह थी कि वे दूसरों के समय को खोने में निमित्त न बनें। सन् १९६१ में वे बीमार थे। मैं अपने व्यवसाय के कारण भावनगर गया हुआ था और सहज ही बाबा से मिलने उनके घर पहुँचा। गद्गद् होकर बाबा मिले और फौरन बोले—"जाओ, जिस काम से आए हो उसमें अपनी शक्ति लगाओ। मैं आराम से हूँ और मुझे सब सुविधाएँ प्राप्त हैं।" मैं कुछ देर बाबा के पास बैठना चाहता था, वह कसक मन में ही रह गयी। शिष्टाचार की झूठी परम्परा के वे घोर विरोधी थे। फिर सन् १९५० में मुझे यूरोप जाना था और बाबा बिस्तर पर ही थे। मेरी सहज इच्छा हुई कि मैं उनसे मिलकर उनका आशीर्वाद लेकर यूरोप जाऊँ। मैंने उन्हें पत्र लिखा कि जाने से पहले मैं मिलने आऊँगा। लेकिन बाबा ने फौरन तार भेजा। पोस्टकार्ड में अपना संदेश पहुँचानेवाले बाबा ने तार भेजने में संकोच नहीं किया और समाचार भेजे कि—"आने की जरूरत नहीं, पत्र लिख रहा हूँ।" पत्र में बाबा का यही मन्तव्य था कि यह शिष्टाचार क्यों? मुझे इस बात की टीस है कि मैं बाबा के दर्शन किये बिना ही यूरोप चला गया और जब हालैण्ड में 'पीस पैगम' दखने गया था तब उनके निधन का आघात मुझे वहीं सहना पड़ा।

सत्यनिष्ठ

बाबा अस्सी वर्ष के हुए तब उनका अभिनन्दन किया। वे लोग अभिनन्दन के लिए कहाँ तैयार थे? परन्तु अपने सारे साथियों का दिल तोड़ नहीं सके और उन्हें अभिनन्दन के लिए आयोजित समारोह में शरीक होना पड़ा। कितना प्यारा वह समारोह था। देश का नवनीत वहाँ एकत्र हुआ था। आमतौर से समारोह में, जलसों में गम्भीर अवसरों पर लोग चुप-चुप आते हैं और मौन होकर बैठते हैं। लेकिन कितना ही गम्भीर प्रसंग हो, समारोह-समाप्ति पर सब मुखरित हो ही जाते हैं। पर उस रोज कुछ दूसरी ही बात हुई। बाबा का अभिनन्दन हुआ, हमारे वरिष्ठ नेताओं ने भावभीने श्रद्धा सुमन चढ़ाये। अन्त में बाबा के बोलने का मौका आया, वे सारे शब्द याद या तो मैं यहाँ नहीं दे पाऊँगा पर भाव यह था—"मैं तो एक साधारण प्राणी हूँ। मैंने जीवन में बहुत छोटे काम भी किये हैं। एक बार रिश्वत भी ली है और एक बार परस्त्रीगमन भी किया है। ईश्वर मुझे क्षमा करें। मैं इस लायक नहीं कि आप मेरा अभिनन्दन करें।" सभा स्तब्ध थी। बाबा ने जिस गम्भीरता के साथ पवित्र मन से यह बात कही, उसका इतना अधिक प्रभाव छाया कि सबके मुँह अपने आप गिरेबान में चले गये। सारी सभा नतमुख हो गयी और सभा विसर्जन के समय कौन कब चुपचाप चला गया, पता ही नहीं चला। दीनबन्धु ने विनम्र होकर अपना ही मैल नहीं धोया सबके मन पवित्रता से भर दिये।●

अबतक और आगे

मातृ स्थान कस्तूरबाग्राम, इन्दौर से प्रेरणा लेकर कदम आगे-आगे बढते गये। ऋषि-वचन 'वसुधैव कुटुम्बकम्'—यह वसुधा एक छोटा परिवार है—की अनुभूति हम भी कर रहे हैं। हमने छोडे एक माता-पिता, चन्द भाई-बहन और मित्र तथा पाया हजारो माता-पिताओ का सान्निध्य, असख्य भाई-बहनें, जिन्होंने उतने ही प्रमाण मे भर-भरकर प्रेम दिया। उनकी प्रेरणा एव उत्साह से हमारी दृष्टि व्यापक बनी। दो वर्ष की यात्रा पूरी हुई, इसका भान भी न रहा।

कस्तूरबा-ट्रस्ट के केन्द्र तथा माता अहिल्यादेवी की नगरी मे तीन माह की यात्रा के पश्चात् हम लोग पूज्य बाबा के पास मार्गदर्शन के लिए गये। उन्होंने जाते समय आशीर्वाद देते हुए कहा "परमात्मा की कृपा का जल हमेशा बरसता है। आप लोग मेहनत करिए। यह यात्रा दो-तीन वर्ष की होती तो आपकी शक्ति से होती, पर यह बारह वर्ष की यात्रा परमात्मा के भरोसे चलेगी। आपके भरोसे चलनेवाली नहीं है।"

हम लोगो ने मध्यप्रदेश के सरगुजा जिले की यात्रा की। वहाँ रम्य भूमि मे आज भी भोलेभाले आदिवासी देखे, सर्वोदय-विचार की ग्रहणशीलता देखी। टीकमगढ जिले मे गरीबी-अमीरी का इतना भेद न देखा। उत्तरप्रदेश के कुछ जिलो की यात्रा की, और तत्पश्चात् हरियाना की यात्रा की। वहाँ का दूध और मक्खन आज भी प्राचीन भारत की याद दिलाता था। वहाँ के लोग अभी पैसे के इतने चक्कर में नहीं पडे हैं। शिक्षा का काफी विकास हुआ है। हिम के अचल मे कठोर जीवन तथा दरिद्रता का दर्शन हुआ। पजाब मे बढते हुए वैभव के साथ पश्चिम से कधा मिलानेवाला अंधानुकरण देखा। समग्र विकास के सिवाय मानव को समाधान नहीं होता, यह जानते हुए भी मनुष्य वर्तमान के प्रवाह मे बह रहा है। अब उत्तरप्रदेश की यात्रा चल रही है। कुल मिलाकर चार हजार मील से अधिक यात्रा हो चुकी है।

इस यात्रा मे स्त्री-सभा, पुरुष-सभा, विद्यालय, महाविद्यालय, प्रशिक्षण केन्द्र, सस्थाएँ, गोष्ठियाँ, शिक्षक-सभाएँ, कचहरी, अस्पताल, क्लब, फैक्टरियो के कार्यकर्ता तथा श्रमिक-वर्ग, व्यापारी—जहाँ-जहाँ प्रवेश मिला, कार्यक्रम हुए।

टोली के साथ साहित्य-प्रचार का कार्य भी चला। हजारो रुपयो का साहित्य बिका। 'मैत्री', 'भूदान-यज्ञ', 'शताब्दी-सदेश' आदि पत्रिकाओ के ग्राहक भी बनाये गये।

बाबा कहते हैं कि हमारा बैंक है यह मानव-समाज, जिसमे कभी खोट नही। इसका दर्शन हमे यात्रा मे हुआ। जनता मदद कर रही है और उन्हीके सहयोग से यात्रा चल रही है।

लोकयात्रा का उद्देश्य

मानव का जो बाह्य रूप आज दिख रहा है, क्या यही वास्तविक मानव है, या मानवता का सबूत चोटी पर पहुँचे चन्द लोग हैं? असल मे समाज-रचना के कुछ बुनियादी दोषों के कारण सही इसान का निर्माण नहीं हो पा रहा है। बीज कितना ही अच्छा क्यो न हो, उसके पनपने के लिए सही वातावरण चाहिए। लोक-यात्राओं के द्वारा सही लोकमत तैयार होने मे मदद मिलेगी। इस प्रकार लोक-यात्रा के तीन उद्देश्य हैं:

(१) **ब्रह्मविद्या का प्रचार** ब्रह्म की समता आज वैज्ञानिक युग की माँग है विषमताओ के कगार पर खडे मानव-समाज मे कभी भी ब्रह्मविद्या पनप नहीं सकती। ब्रह्मविद्या का अर्थ मानव से मानव के सम्बन्ध हैं। सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक विषमताओ को मिटाने के लिए कई विचार और वाद दुनिया मे चले और क्रान्तियाँ हुईं। वे क्रान्तियाँ मानव-समाज के मूल को पहचानकर नहीं हुईं, बल्कि परिस्थितियों के उभार-स्वरूप प्रतिक्रियाओ से हुईं। इसलिए उनमे प्रतिक्रान्ति के बीज प्रसुप्त रहे। मानवीय शान्ति का प्रेरक 'ईर्ष्या' नही, 'सहानुभूति' हो सकती है, जो मानव स्वभाव के अनुकूल वातावरण और जनमत तैयार कर जन-शक्ति खडी करे। गुलाम जनता का मानस सजग होकर अपने अभिक्रम पर खडा हो। हर इन्सान जब अपनी हस्ती को पहचानेगा और सामूहिक जीवन मे अपनी जिम्मेदारी निभायेगा तभी वह समता की सुवास का अनुभव करेगा। आज तक ब्रह्मविद्या के व्यक्तिगत प्रयोग चले। अब सामूहिक जीवन के लिए इसा बने इसके लिए हमारे देश मे एक आन्दोलन चल रहा है, लोक-यात्रा उसीका एक अग है।

(२) **स्त्री-शक्ति जागरण** शारीरिक शक्ति के आधार पर समाज ने स्त्री-पुरुष मे भेद खडा कर दिया। रक्षा के लिए हिंसक साधन पुरुष के अनुकूल थे। अब विज्ञान ने शारीरिक शक्ति की जगह मशीन तथा अस्त्र शस्त्र की जगह आणविक शक्ति का आविष्कार किया। अब विज्ञान के साथ अहिंसा को जोडना अनिवार्य हो गया है। हिंसक समाज मे स्त्री का स्थान पुरुष से गौण रहेगा, क्योंकि हिंसा स्त्री का क्षेत्र नहीं है, लेकिन अहिंसक समाज बनाने मे स्त्री, पुरुष से अधिक सक्षम है। स्त्रियों के द्वारा जब त्याग, वैराग्य, ब्रह्मचर्य, अहिंसा आदि गुणो का सामाजिक मूल्य और प्रतिष्ठा बनेगी तभी अहिंसक समाज बन सकेगा और स्त्रियो में सामर्थ्य आयेगी। आज स्त्रियों के लिए अपनी शक्ति पहचानने के लिए पराक्रम का नया क्षेत्र खुल गया है।

(३) **भावनात्मक एकता :** हमारे देश मे अनेक प्रान्त, अनेक भाषाएँ, अनेक धर्म, अनेक जातियाँ हैं। अनेक विभिन्नताओवाले इस देश मे सतो ने घूम-घूमकर सास्कृतिक एकता तथा अखडता को कायम रखा। आज विज्ञान के इस युग मे, जब दुनिया नजदीक आ गयी है, हमारे देश मे आपसी फूट बढती जा रही है। लोक-यात्रा मे अलग-अलग भाषाओ

छठा बिहार नशाबन्दी सम्मेलन

बिहार में नशाबन्दी-कार्य स्वतन्त्रता-आन्दोलन के समय से ही सतत चल रहा है। सन् १९३७ में जब बिहार में कांग्रेस के नेतृत्व में सरकार का गठन हुआ, तो गांधीजी के पार्थिव शरीर के असर एवं उनके द्वारा नशाबन्दी-कार्यक्रम में तीव्रता बरतने की सलाह के कारण सारन जिला एवं हाजीपुर अनुमंडल के कुछ स्थानों में कानून से नशाबन्दी की गयी, लेकिन जब सरकार ने इस्तीफा दिया, तो अंग्रेजी सरकार ने नशाबन्दी-कार्य को भी उठा दिया।

विनोबाजी के मार्गदर्शन में देश, और खासकर बिहार में सर्वोदय एवं भूदान-कार्यक्रम का प्रारम्भ हुआ तो अन्य कार्यक्रम के साथ ही नशाबन्दी कार्यक्रम को भी बिहार सर्वोदय मंडल ने अपने हाथ में लिया।

सर्वोदय मंडल के तत्वावधान में अन्य रचनात्मक कार्यक्रम के साथ ही नशाबन्दी-कार्यक्रम को भी कार्यान्वित करने का प्रयास किया गया। विचार-परिवर्तन से हृदय-परिवर्तन एवं हृदय-परिवर्तन से इच्छा परिवर्तन द्वारा जनशक्ति का संगठन कर नशाबन्दी-कानून को कार्यान्वित करने का प्रयास किया गया, लेकिन सरकार की बदलती हुई इच्छा के कारण कानून से नशाबन्दी नहीं हो सकी। बिहार में नशाबन्दी-कार्य में तीव्रता प्रदान करने के लिए एक स्वतंत्र एवं पवित्र संस्था बिहार नशाबन्दी-परिषद का गठन किया गया, जिसका आधार-सम्मेलन मुंगेर जिले के मलयपुर में किया गया। सम्मेलन ने बिहार में नशाबन्दी के पक्ष एवं नशापान के विरोध में व्यापक प्रचार करने का निश्चय किया। कुछ समय कार्य करने के बाद प्रथम बिहार नशाबन्दी कार्यकर्ता-सम्मेलन का आयोजन सन्तालपरगना जिले के देवघर में किया गया। सम्मेलन में बिहार के प्रमुख रचनात्मक कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त नशाबन्दी-कार्य में रुचि रखने-वाले व्यक्तियों ने भाग लिया। दूसरे बिहार नशाबन्दी सम्मेलन का आयोजन पटना नगर के सदाकत आश्रम में किया गया। तीसरा सम्मेलन सारन जिले के सीवान, चौथा अधिवेशन दरभंगा जिले के लहेरियासराय एवं पाँचवाँ सम्मेलन हजारीबाग जिले के गिरीडीह में आयोजित किया गया। छठा बिहार नशाबन्दी सम्मेलन का आयोजन १८ वाँ अखिल भारतीय सर्वोदय-सम्मेलन राजगिर के अवसर पर २१ अक्तूबर को राजस्थान के लब्धप्रतिष्ठित नशाबन्दी-नेता श्री गोकुलभाई भट्ट की अध्यक्षता में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन श्री जय-प्रकाश नारायण ने किया।

सम्मेलन का उद्घाटन कर श्री जय-प्रकाश नारायण ने नशाबन्दी-कार्यक्रम के महत्व को बढ़ा दिया। उन्होंने अपने उद्घाटन-भाषण में कहा कि नशाबन्दी-कार्यक्रम सर्वोदय आन्दोलन का एक प्रमुख कार्यक्रम है। बिहार में ग्रामदान आन्दोलन की व्यापकता के कारण नशाबन्दी-कार्यक्रम के लिए सुलभ भूमिका तैयार हो गयी है। उन्होंने सम्मेलन में उपस्थित लोगों को नशाबन्दी के लिए सत्याग्रह करने का सुझाव दिया। अपने संक्षिप्त भाषण में उन्होंने बताया कि ग्रामदानी गाँव की ग्रामसभा एवं जनता अपने क्षेत्र से शराब-पान बन्द करने एवं शराब की दूकान उठाने का प्रयास करेगी और यदि इस पद्धति में वह असफल होगी तो सत्याग्रह करेगी। श्री जयप्रकाश नारायण के आवाहन पर अनेक व्यक्तियों ने सत्याग्रही पत्र पर हस्ताक्षर किया।

बिहार नशाबन्दी परिषद के अध्यक्ष श्री मोतीलाल केजरीवाल बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री गोपालजी झा शास्त्री, बिहार नशाबन्दी परिषद के मंत्री श्री रामनन्दन सिंह एवं बिहार सरकार के भूतपूर्व उपमंत्री श्री हृदय नारायण चौधरी के अतिरिक्त आन्ध्र के श्री वी० वेंकटरमण पंजाब की श्रीमति सावित्री देवी, आन्ध्र के श्री केशव राव आदि ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

सम्मेलन ने एक प्रस्ताव द्वारा बिहार सरकार से अविलम्ब नशाबन्दी करने का निवेदन किया तथा आन्ध्र सरकार द्वारा १ नवम्बर '६१ से नशाबन्दी उठाने की घोषणा की तीव्र भर्त्सना की।

—रामनन्दन सिंह

का अध्यापन तथा भ्रमण-भ्रमण प्रान्त के सन्तों की वाणी का अध्ययन करेंगे। दूसरे प्रान्त में इसका परिचय देंगे। इससे एक-दूसरे के निकट आ सकेंगे। ऐसी अपेक्षा रखी गयी है।

आशा का मार्ग

आज जनता मार्ग खोज रही है, वह अनेक विचारों से परेशान है। सर्वोदय का विचार उसे अपनी समस्याएँ सुलझाने का रास्ता दिखाता है, परन्तु इसके लिए खुद ही कमर कसनी होगी। हर व्यक्ति एक-दूसरे की तरफ देख रहा है। लक्ष्यविहीन और गैर-जिम्मेदारी का गुलाम मानस भयानक है, फिर भी जनता जाग रही है। इस यात्रा में बापू और बाबा की राह खोजनेवाले जिज्ञासु भाई-बहनों से भेंट हुई। कालेजों के नवयुवान को आज भी श्रद्धावान और शान्त पाया। वर्तमान शानशौकत के आवरण के भीतर भारतीय स्त्रियों में आज भी वही भक्ति तथा भावना पायी। गलत सामाजिक व्यवस्था का शिकार मानव आज की विकृतियों से अतृप्ति महसूस करता है, यही आशा का मार्ग है।

—देवी गोभवानी

'विनोबा-चिन्तन' (मासिक)

'विनोबा चिंतन' प्रति मास प्रकाशित होता है। इसमें लगभग ५० पृष्ठों में किसी एक विषय पर समय-समय पर दिये गये विनोबाजी के प्रवचन क्रमात्मक ढंग से संजोये जाते हैं, जो अपने-अपने विषय में एक-एक पुस्तक बन जाती है। इसके स्थायी ग्राहक बनकर इस ज्ञान राशि का संग्रह करना प्रत्येक जिज्ञासु एवं अध्यात्मु के लिए लाभप्रद है।

वार्षिक मूल्य ६ रु०, एक प्रति ६० पैसे।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

अबतक और आगे

मातृ स्थान कस्तूरबाग्राम, इन्दौर से प्रेरणा लेकर कदम आगे-आगे बढ़ते गये। ऋषि-वचन 'वसुधैव कुटुम्बकम्'—यह वसुधा एक छोटा परिवार है—की अनुभूति हम भी कर रहे हैं। हमने छोड़े एक माता पिता, चन्द भाई-बहन और मित्र तथा पाया हजारों माता-पिताओं का सान्निध्य, असंख्य भाई-बहनें, जिन्होंने उतने ही प्रमाण में भर-भरकर प्रेम दिया। उनकी प्रेरणा एवं उत्साह से हमारी दृष्टि व्यापक बनी। दो वर्ष की यात्रा पूरी हुई, इसका भान भी न रहा।

कस्तूरबा-ट्रस्ट के केन्द्र तथा माता अहिल्यादेवी की नगरी में तीन माह की यात्रा के पश्चात् हम लोग पूज्य बाबा के पास मार्गदर्शन के लिए गये। उन्होंने जाते समय आशीर्वाद देते हुए कहा "परमात्मा की कृपा का जल हमेशा बरसता है। आप लोग मेहनत करिए। यह यात्रा दो-तीन वर्ष की होती तो आपकी शक्ति से होती, पर यह बारह वर्ष की यात्रा परमात्मा के भरोसे चलेगी। आपके भरोसे चलनेवाली नहीं है।"

हम लोगों ने मध्यप्रदेश के सरगुजा जिले की यात्रा की। वहाँ रम्य भूमि में आज भी भोले-भाले आदिवासी देखे, सर्वोदय विचार की ग्रहणशीलता देखी। टीकमगढ़ जिले में गरीबी-अमीरी का इतना भेद न देखा। उत्तरप्रदेश के कुछ जिलों की यात्रा की, और तत्पश्चात् हरियाना की यात्रा की। वहाँ का दूध और मक्खन आज भी प्राचीन भारत की याद दिलाता था। वहाँ के लोग अभी पैसे के इतने चक्कर में नहीं पड़े हैं। शिक्षा का काफी विकास हुआ है। हिम के अंचल में कठोर जीवन तथा दरिद्रता का दर्शन हुआ। पंजाब में बढ़ते हुए वैभव के साथ पश्चिम से कदम मिलानेवाला अंधानुकरण देखा। समग्र विकास के सिवाय मानव को समाधान नहीं होता, यह जानते हुए भी मनुष्य वर्तमान के प्रवाह में बह रहा है। अब उत्तरप्रदेश की यात्रा चल रही है। कुल मिलाकर चार हजार मील से अधिक यात्रा हो चुकी है।

इस यात्रा में स्त्री-सभा, पुरुष-सभा, विद्यालय, महाविद्यालय, प्रशिक्षण केन्द्र, संस्थाएँ, गोष्ठियाँ, शिक्षक-सभाएँ, कचहरी, अस्पताल, क्लब, फैक्टरियों के कार्यकर्ता तथा श्रमिक-वर्ग, व्यापारी—जहाँ-जहाँ प्रवेश मिला, कार्यक्रम हुए।

टोली के साथ साहित्य-प्रचार का कार्य भी चला। हजारों रुपयों का साहित्य बिका। 'मैत्री', 'भूदान-यज्ञ', 'शतान्दी-सन्देश' आदि पत्रिकाओं के ग्राहक भी बनाये गये।

बाबा कहते हैं कि हमारा बैंक है यह मानव-समाज, जिसमें कभी खोट नहीं। इसका दर्शन हमें यात्रा में हुआ। जनता मदद कर रही है और उन्हींके सहयोग से यात्रा चल रही है।

लोकयात्रा का उद्देश्य

मानव का जो बाह्य रूप आज दिख रहा है, क्या यही वास्तविक मानव है, या मानवता का सबूत चोटी पर पहुँचे चन्द लोग हैं? असल में समाज-रचना के कुछ बुनियादी दोषों के कारण सही इंसान का निर्माण नहीं हो पा रहा है। बीज कितना ही अच्छा क्यों न हो, उसके पनपने के लिए सही वातावरण चाहिए। लोक-यात्राओं के द्वारा सही लोकमत तैयार होने में मदद मिलेगी। इस प्रकार लोक-यात्रा के तीन उद्देश्य हैं.

(१) ब्रह्मविद्या का प्रचार : ब्रह्म की समता आज वैज्ञानिक युग की माँग है विषमताओं के कगार पर खड़े मानव-समाज में कभी भी ब्रह्मविद्या पनप नहीं सकती। ब्रह्मविद्या का अर्थ मानव से मानव के सम्बन्ध हैं। सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक विषमताओं को मिटाने के लिए कई विचार और वाद दुनिया में चले और क्रान्तियाँ हुई। वे क्रान्तियाँ मानव-समाज के मूल को पहचानकर नहीं हुईं, बल्कि परिस्थितियों के उभार-स्वरूप प्रतिक्रियाओं से हुई। इसलिए उनमें प्रतिक्रान्ति के बीज प्रसुप्त रहे। मानवीय क्रान्ति का प्रेरक 'ईर्ष्या' नहीं, 'सहानुभूति' हो सकती है, जो मानव स्वभाव के अनुकूल वातावरण और जनमत तैयार कर जन-शक्ति खड़ी करे। गुलाम जनता का मानस सजग होकर अपने अभिक्रम पर खड़ा हो। हर इन्सान जब अपनी हस्ती को पहचानेगा और सामूहिक जीवन में अपनी जिम्मेदारी निभायेगा तभी वह समता की सुवास का अनुभव करेगा। आज तक ब्रह्मविद्या के व्यक्तिगत प्रयोग चले। अब सामूहिक जीवन के लिए हवा बने इसके लिए हमारे देश में एक आन्दोलन चल रहा है, लोक-यात्रा उसीका एक अंग है।

(२) स्त्री-शक्ति जागरण : शारीरिक शक्ति के आधार पर समाज ने स्त्री-पुरुष में भेद खड़ा कर दिया। रक्षा के लिए हिंसक साधन पुरुष के अनुकूल थे। अब विज्ञान ने शारीरिक शक्ति की जगह मशीन तथा अस्त्र शस्त्र की जगह आणविक शक्ति का आविष्कार किया। अब विज्ञान के साथ अहिंसा को जोड़ना अनिवार्य हो गया है। हिंसक समाज में स्त्री का स्थान पुरुष से गौण रहेगा, क्योंकि हिंसा स्त्री का क्षेत्र नहीं है, लेकिन अहिंसक समाज बनाने में स्त्री, पुरुष से अधिक सक्षम है। स्त्रियों के द्वारा जब त्याग, वैराग्य, ब्रह्मचर्य, अहिंसा आदि गुणों का सामाजिक मूल्य और प्रतिष्ठा बनेगी तभी अहिंसक समाज बन सकेगा और स्त्रियों में सामर्थ्य आयेगी। आज स्त्रियों के लिए अपनी शक्ति पहचानने के लिए पराक्रम का नया क्षेत्र खुल गया है।

(३) भावनात्मक एकता : हमारे देश में अनेक प्रान्त, अनेक भाषाएँ, अनेक धर्म, अनेक जातियाँ हैं। अनेक विभिन्नताओंवाले इस देश में संतों ने घूम-घूमकर सांस्कृतिक एकता तथा अखंडता को कायम रखा। आज विज्ञान के इस युग में, जब दुनिया नजदीक आ गयी है, हमारे देश में आपसी फूट बढ़ती जा रही है। लोक यात्रा में अलग-अलग भाषाओं

छठा बिहार नशाबन्दी सम्मेलन

बिहार में नशाबन्दी-कार्य स्वतन्त्रता-आन्दोलन के समय से ही सतत चल रहा है। सन् १९३७ में जब बिहार में कांग्रेस के नेतृत्व में सरकार का गठन हुआ, तो गांधीजी के पार्थिव शरीर के असर एवं उनके द्वारा नशाबन्दी-कार्यक्रम में तीव्रता बरतने की सलाह के कारण सारन जिला एवं हजारीपुर अनुमंडल के कुछ स्थानों में कानून से नशाबन्दी की गयी, लेकिन जब सरकार ने इस्तीफा दिया, तो अंग्रेजी सरकार ने नशाबन्दी-कार्य को भी उठा लिया।

विनोबाजी के मार्गदर्शन में देश, और खासकर बिहार में सर्वोदय एवं भूदान-कार्यक्रम का प्रारम्भ हुआ तो अन्य कार्यक्रम के साथ ही नशाबन्दी-कार्यक्रम को भी बिहार सर्वोदय मंडल ने अपने हाथ में लिया।

सर्वोदय मंडल के तत्त्वावधान में अन्य रचनात्मक कार्यक्रम के साथ ही नशाबन्दी-कार्यक्रम को भी कार्यान्वित करने का प्रयास किया गया। विचार-परिवर्तन से हृदय-परिवर्तन एवं हृदय परिवर्तन से इच्छा-परिवर्तन द्वारा जनशक्ति का संगठन कर नशाबन्दी-कानून को कार्यान्वित करने का प्रयास किया गया, लेकिन सरकार की बदलती हुई इच्छा के कारण कानून से नशाबन्दी नहीं हो सकी। बिहार में नशाबन्दी-कार्य में तीव्रता प्रदान करने के लिए एक स्वतन्त्र एवं पंजित संस्था बिहार नशाबन्दी-परिषद का गठन किया गया, जिसका आधार-सम्मेलन मुंगेर जिले के मलयपुर में किया गया। सम्मेलन ने बिहार में नशाबन्दी के पक्ष एवं नशापान के विरोध में व्यापक प्रचार करने का निश्चय किया। कुछ समय कार्य करने के बाद प्रथम बिहार नशाबन्दी कार्यकर्ता-सम्मेलन का आयोजन सन्तालपरगना जिले के देवघर में किया गया। सम्मेलन में बिहार के प्रमुख रचनात्मक कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त नशाबन्दी-कार्य में रुचि रखने-वाले व्यक्तियों ने भाग लिया। दूसरे बिहार नशाबन्दी सम्मेलन का आयोजन पटना नगर के सदाकत आश्रम में किया गया। तीसरा सम्मेलन सारन जिले के सीवान, चौथा अधिवेशन दरभंगा जिले के लहेरियासराय एवं पाँचवाँ सम्मेलन हजारीबाग जिले के गिरीडीह में आयोजित किया गया। छठा बिहार नशाबन्दी सम्मेलन का आयोजन १८ वाँ अखिल भारतीय सर्वोदय-सम्मेलन राजगिर के अवसर पर २६ अक्तूबर को राजस्थान के लब्धप्रतिष्ठित नशाबन्दी-नेता श्री गोकुलभाई भट्ट की अध्यक्षता में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन श्री जयप्रकाश नारायण ने किया।

सम्मेलन का उद्घाटन कर श्री जयप्रकाश नारायण ने नशाबन्दी-कार्यक्रम के महत्त्व को बता दिया। उन्होंने अपने उद्घाटन-भाषण में कहा कि नशाबन्दी-कार्यक्रम सर्वोदय-आन्दोलन का एक प्रमुख कार्यक्रम है। बिहार में ग्रामदान आन्दोलन की व्यापकता के कारण नशाबन्दी-कार्यक्रम के लिए सुलभ भूमिका तैयार हो गयी है। उन्होंने सम्मेलन में उपस्थित लोगों को नशाबन्दी के लिए सत्याग्रह करने का सुझाव दिया। अपने संक्षिप्त भाषण में उन्होंने बताया कि ग्रामदानी गाँव की ग्रामसभा एवं जनता अपने क्षेत्र से शराब-पान बन्द करने एवं शराब की दूकान उठाने का प्रयास करेगी और यदि इस पद्धति में वह असफल होगी तो सत्याग्रह करेगी। श्री जयप्रकाश नारायण के आवाहन पर अनेक व्यक्तियों ने सत्याग्रही पत्र पर हस्ताक्षर किया।

बिहार नशाबन्दी परिषद के अध्यक्ष श्री मोतीलाल केजरीवाल, बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री गोपालजी झा शास्त्री, बिहार नशाबन्दी परिषद के मंत्री श्री रामनन्दन सिंह एवं बिहार सरकार के भूतपूर्व उपमंत्री श्री हृदय नारायण चौधरी के अतिरिक्त, आन्ध्र के श्री वी० वेंकटरमण, पंजाब की श्रीमति सावित्री देवी, आन्ध्र के श्री केशव राव आदि ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

सम्मेलन ने एक प्रस्ताव द्वारा बिहार सरकार से अविलम्ब नशाबन्दी करने का निवेदन किया तथा आन्ध्र सरकार द्वारा १ नवम्बर '६१ से नशाबन्दी उठाने की घोषणा की तीव्र भर्त्सना की।

—रामनन्दन सिंह

का अध्ययन तथा अन्य-अन्य प्रान्त के लोगों की वाणी का अध्ययन करेंगे। दूसरे प्रान्तों में इसका परिचय देंगे। इससे एक-दूसरे के निकट आ सकेंगे। ऐसी अपेक्षा रखी गयी है।

आशा का मार्ग

आज जनता मार्ग खोज रही है, वह अनेकानेक विचारों से परेशान है। सर्वोदय का विचार उन्हें अपनी समस्याएँ सुलझाने का रास्ता दिखाता है, परन्तु इसके लिए खुद ही कमर कसनी होगी। हर व्यक्ति एक-दूसरे को तरह देख रहा है। लक्ष्यविहीन और गैर-जिम्मेदारी का सुगम मानस प्रबल है, फिर भी जनता जाग रही है। इस यात्रा में बापू और बाबा की राह खोजनेवाले जिज्ञासु भाई-बहनों से भेंट हुई। कालेजों में नवजवान को आज भी श्रद्धावान और शान्त पाया। वर्तमान शानशौकत के आवरण के भीतर भारतीय स्त्रियों में आज भी वही भक्ति तथा भावना पायी। गलत सामाजिक व्यवस्था का शिकार मानव मात्र की विकृतियों में अनुभूति महसूस करता है, यही आशा का मार्ग है।

—देवी भेडवानी

'विनोबा-चिन्तन' (मासिक)

'विनोबा चिन्तन' प्रति मास प्रकाशित होता है। इसमें लगभग ५० पृष्ठों में किसी एक विषय पर समय-समय पर दिये गये विनोबाजी के प्रवचन कलात्मक ढंग से सजोये जाते हैं, जो अपने-अपने विषय में एक-एक पुस्तक बन जाती है। इसका स्थायी ग्राहक बनकर इस ज्ञान राशि का संग्रह करना प्रत्येक जिज्ञासु एवं श्रद्धालु के लिए लाभप्रद है।

वार्षिक मूल्य ६ रु०, एक प्रति ६० पैसे।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य

'ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि यह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर-सहयोग से काम लेगा। क्योंकि हरएक देहाती के जीवन का सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और गाँव की इज्जत के लिए मर मिटे।'

—गांधीजी

अब समय आ गया है कि इस देश के बुद्धिवादी, किसान, मालिक, मजदूर, सभी इस बात पर विचार करें कि ग्रामदान हमें ग्रामस्वराज्य की ओर अग्रसर करता है या नहीं? यदि हमें जंच जाय कि हां, इससे हमें ग्रामस्वराज्य के दर्शन हो सकेंगे, तो यही अवसर है कि हम लोग इस पुण्य काम में तुरन्त लग जायें।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,

जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

पश्चिम बंगाल के मुख्य मंत्री का अनशन

[दुनिया के राजनीतिक इतिहास में अपने तरह की अकेली घटना होने के कारण पश्चिम बंगाल के मुख्य मंत्री तथा बंगला कांग्रेस के अध्यक्ष श्री अजय कुमार मुखर्जी का त्रिदिवसीय अनशन इस सप्ताह की सर्वाधिक चर्चित घटनाओं में रहा है। यहाँ हम इस अनशन के बारे में देश के कुछ प्रमुख समाचार पत्रों की प्रतिक्रियाएँ दे रहे हैं। आशा है, पाठक विभिन्न मतों को सामने रखेंगे तो उन्हें सोचने-समझने में मदद मिलेगी।—सं०]

"पश्चिम बंगाल के मुख्य मंत्री श्री अजय मुखर्जी जनता के सर्वोच्च न्याया-लय के सामने अनशन करने बैठे हैं। बंगला कांग्रेस ने ५० हजार लोगों की जो शान्ति-फौज बनायी उनके सदस्य बारी-बारी से तीन-तीन दिन का अनशन तब तक जारी रखेंगे जब तक राज्य में शान्ति और व्यवस्था फिर से कायम नहीं हो जाती . . . . . . जहाँ अन-शन पर बैठे मुख्य मंत्री तथा दूसरे नेताओं के दर्शन करने गये, वहाँ ५० ऐसे लोग भी पहुँच जिन्होंने 'मार्क्सवाद जिन्दाबाद' और 'ज्योति बसु जिन्दाबाद' के नारे लगाते हुए तम्बू फाड़ डाला, मारपीट की, जूते-चप्पल फेंके और हाथ जोड़े विनीत भाव से खड़े श्री अजय मुखर्जी को पत्थर मारा। . . . . . . यह सवाल उठता है कि जनता यदि श्री अजय मुखर्जी के स्वर से अपना स्वर मिलाये भी तो उसकी शिका-यत का समाधान कौन करेगा? समस्या का समाधान सरकार कर सकती थी, किन्तु मुख्य मंत्री स्वयं अपनी फरियाद लेकर जनता की अदालत में हाजिर हुए हैं . . . मार्क्सवादियों से महत्त्वपूर्ण विभाग वापस लेना समस्या का एक हल है, किन्तु अभी तक यह स्पष्ट नहीं हो सका कि यदि बंगला कांग्रेस के आन्दोलन को जनता के बहुमत का समर्थन प्राप्त हो गया तो मुख्य मंत्री अपने सहयोगियों के विभागों में फेर-बदल कर सकेंगे? ऐसा करने का अर्थ संयुक्त मोर्चे को समाप्त करना होगा, जिसके लिए बंगला कांग्रेस स्वयं तैयार नहीं . . . श्री मुखर्जी स्वयं किसी तरह के पुलिस प्रयोग के विरुद्ध हैं, अब सिर्फ जनभावनाओं को तैयार करने का प्रश्न ही शेष होगा, जिसका लाभ किसी चुनाव के मौके पर उठाया जा सकता है, परन्तु चुनाव अभी बहुत दूर है।"—'नवभारत टाइम्स' ३ दिसम्बर।

"श्री अजय मुखर्जी के अनशन से राजनीति में नैतिक दबाव द्वारा एक नये प्रयोग की शुरुआत होती है। अपना देश सविनय अवज्ञा से जरूर परिचित है, लेकिन पश्चिम बंगाल के मुख्य मंत्री यह तक-नीक सत्ता के प्रति भक्ति पैदा करने के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं। . . . जिस राज्य में सत्तर हजार हेक्टेयर जमीन जबरदस्ती छीन ली गयी हो, सैकड़ों राज-नीतिक कार्यकर्ताओं की हत्या कर दी गयी हो और सोलह सौ फौजदारी के मुकदमे उठा लिये गये हों वहाँ की स्थिति तो इस तरह के कदम के बिना भी स्पष्ट थी। ये सारी चीजें उसी सरकार के एक हिस्से की करतूत हैं, जिसके श्री मुखर्जी स्वयं प्रधान हैं। . . . मुख्य मंत्री का यह अधिकार है कि वह सरकारी विभागों का बटवारा करके उन्हें ऐसे हाथों में सौंपें जो उत्तरदायित्व का पूरा वहन कर सकें। . . . मुश्किल यही है कि आज मुख्य मंत्री ऐसी स्थिति में नहीं हैं कि वह इच्छानुसार विभागों का बँटवारा करके संयुक्त मोर्चे को तोड़ने का माध्यम बनें। वह तो यह भी नहीं कह रहे हैं कि उनका कदम सरकार के खिलाफ है। फिर भी इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि यह कदम विरोध प्रकट करने के लिए ही उठाया गया है। ......लेकिन समझदारी अभी लौट आये तभी ठीक है। सम्भव है जहाँ अन्य उपाय कामयाब नहीं हुए हैं वहाँ श्री मुखर्जी का यह नया उपाय काम कर जाय। आसार भी कुछ ऐसे दिखे हैं कि श्री ज्योति बसु ने पुलिस के अधिकारियों को निष्पक्ष रूप से व्यवहार करने की आज्ञा देकर कुछ गम्भीरता और जिम्मेदारी दिखानी शुरू कर दी है। यदि अनशन और आत्मपीड़न राजनीतिक पैंतरेबाजों को कानून और व्यवस्था के रास्ते पर ला सका तो यह एक कौतुक ही होगा। जैसा कि श्री चेस्टरटन ने बहुत पहले ही कहा था 'किसी बाघ पर काबू पाने का तरीका यह नहीं है कि उसके गले में एक खूबसूरत रिबन बाँध दिया जाय और उसे पीने को दूध दिया जाय'।"

—'टाइम्स ऑफ इण्डिया' ३ दिसम्बर।

"बन्दूक को ही शक्ति का स्रोत बताने वाले, चीनी तानाशाह माओ-त्से-तुंग के चेलों की हलचलें भारत के देश में जिस प्रकार बढ़ने लगी हैं, वह अत्यन्त खेद तथा आश्चर्य की बात है। बंगाल तथा केरल में तो उनका आतंक छाया ही है, आन्ध्र, उड़ीसा, बिहार आदि में भी उनकी हिंसात्मक हल-चलें तथा तोड़-फोड़ बढ़ रही हैं। पश्चिम बंगाल में १४ दलों के संयुक्त मोर्चे की सरकार है, लेकिन ऐसा लगता है कि मार्क्सवादी तानाशाही के भयावह रूप को देखकर लोकतन्त्र दुबक गया है। पश्चिम बंगाल की इस अत्यन्त चिन्ताजनक तथा संकटपूर्ण स्थिति ने मुख्य मंत्री श्री अजय मुखर्जी तथा उनकी पार्टी बंगला कांग्रेस को सत्याग्रह के लिए विवश किया है। इतिहास की यह बेमिसाल घटना है जब कि सरकार के प्रमुख को राज्य में व्याप्त हिंसा तथा गुण्डागर्दी के विरुद्ध अनशन करना पड़ा हो। उधर केरल के कई नगरों में मार्क्सवादी कम्युनिस्टों ने हिंसात्मक प्रदर्शन किये हैं। पुलिस को गोली चलानी पड़ी। . . . जब मार्क्सवादी उपद्रवकारी हिंसात्मक कांडों पर उतर आये तब पुलिस चुप कैसे बैठी रह सकती है? अब मार्क्स-वादी कम्युनिस्ट सरकार में नहीं रहे तो उन्हें अपनी खीझ उपद्रवों से तो नहीं उतारनी चाहिए। . . . दिन-प्रति दिन स्पष्ट होता जा रहा है कि उनकी कमनीय लोकतन्त्र में कोई आस्था नहीं। शान्ति तथा व्यवस्था को वे जो चुनौती दे रहे हैं उसकी ओर केन्द्रीय सरकार कब ध्यान

देगी? क्या सारे देश में शान्ति तथा व्यवस्था की जिम्मेदारी उनकी नहीं है?"
—'हिन्दुस्तान' ३ दिसम्बर

"श्री अजय मुखर्जी ने पश्चिम बंगाल की कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के हृदय-परिवर्तन के लिए जो तीन दिन का अनशन किया है उससे उनकी असहाय अवस्था का अच्छा दिग्दर्शन होता है। जिस अनम्य सरकार के वे प्रधान हैं वह आपस में बुरी तरह से विभाजित है और जब तक श्री अजय मुखर्जी के इस प्रायश्चित से कोई कौतुक न हो जाय तब तक वर्तमान संयुक्त मोर्चे की सरकार से किसी व्यवस्थित सरकार की आशा नहीं करनी चाहिए। श्री ज्योति बसु तो बंगला कांग्रेस की आलोचना कर ही चुके हैं और अब पश्चिम बंगाल और केरल दोनों ही में कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) ने बड़ा ही उपद्रवकारी रुख अपना लिया है।

इस सबके बावजूद भी संभावना यह भी है कि श्री मुखर्जी के अनशन का कोई अच्छा असर पड़ जाय। कलकत्ता से मिली खबरों से यह पता चलता है कि जनता में इस उपवास के प्रति सद्भावना बढ़ी है। इसका लोगों पर एक नैतिक असर तो निश्चित रूप से पड़ा है। श्री मुखर्जी के कैम्प-कार्यालय के बाहर कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के अनुयाइयों द्वारा हो-हल्ला और हिंसात्मक प्रदर्शन यही दिखाता है कि उपवास के प्रति जनता में बढ़ी सद्भावना से मार्क्सवादियों को चिन्ता हुई है। संयुक्त मोर्चे के दूसरे दल चुपचाप मुख्य मंत्री के साथ लगे हुए हैं। उन्हें यह भय है कि इस उपवास से जनता के मन में 'ओकानेक धकाएं' पैदा हो सकती हैं। इतना तो निश्चित है कि एक सीमा के बाद इस सत्याग्रह से जनता ऊब जायगी और इसके प्रति उसकी सद्भावना खत्म हो जायगी।" —'दि हिन्दुस्तान टाइम्स'

"बंगला-कांग्रेस के सत्याग्रह की शुरुआत के कुछ घंटों के भीतर ही यह स्पष्ट हो गया कि उसका जितना सोचा गया था उससे कम ही असर होगा। इस सत्याग्रह का यह महसूस करने के अलावा और कुछ भी असर नहीं हुआ है कि राज-नीतिक प्रश्न के रूप में बल-प्रयोग पर आस्था और बिना शर्त उसे छोड़ देने के बीच एक ऐसी दूरी है जिसे कोई भी उपवास दूर नहीं कर सकता। और न यही कहा जा सकता है कि राज्यव्यापी हिंसा की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए यह सत्याग्रह ठीक ही किया गया है। कोई सत्याग्रह, यदि उसके पीछे कोई सुनिश्चित उद्देश्य नहीं है। और यदि वह केवल आत्मशुद्धि के लिए ही किया गया है तो वह आत्मघाती ही सिद्ध होता है। बड़ी खूबी के साथ यह कहना बचाया जा रहा है कि यह सत्याग्रह कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के विरुद्ध है। लेकिन इस चीज का कोई अच्छा असर नहीं हो रहा है।

"लूट-पाट, हत्या और हिंसा ऐसी चीजें नहीं हैं जिनकी ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया जाय। ये तो ऐसी चीजें हैं जिन्हें स्पष्ट कहने और जिन पर स्पष्ट कार्रवाई करने की जरूरत है। श्री अजय मुखर्जी को इस अनशन के समय जो फूल-मालाएं अर्पित की गयी हैं, वे उनके प्रति लोगों के सम्मान और उनकी श्रद्धा का परिचय देती हैं। लेकिन यह समझना एक तरह से दुर्भाग्य ही होगा कि लोग बंगला कांग्रेस के अनिश्चित उद्देश्यों से बहुत प्रभावित हो गये हैं। इस सत्याग्रह के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित जरूर हुआ है, लेकिन इसका एक असर यह भी हो सकता है कि यह लोगों का सही जोश भी अनावश्यक रूप से कम कर दे। अराजकता की स्थिति दूर करने के उद्देश्य से कुछ तो किया जा रहा है, यह भुलाकर सिर्फ उन लोगों को थोड़ी तसल्ली दे सकता है जिनका उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बल-प्रयोग में आस्था है। राज्य-सरकार के भूमि व लगान मंत्री का यह कहना कि कर्जन पार्क के प्रदर्शनकारी 'संयुक्त मोर्चे के दुश्मन हैं,' ठीक नहीं है। यह जरूर है कि ऐसे लोग सभ्य जीवन की सभी प्रकार की अच्छाइयों के दुश्मन हैं। फिर भी, अगर संयुक्त मोर्चे को तोड़ने की गरज से कोई हिंसात्मक कार्रवाई की जाती है तो उसकी निन्दा जरूर की जानी चाहिए।"
—'स्टेट्समैन' ३ दिसम्बर
प्रस्तुतकर्ता—राम मूरत

पुस्तक-परिचय

'समन्वय ही मानव-धर्म है'

लेखक : श्री ओमप्रकाशजी त्रिखा
प्रकाशक : ग्रामभावना प्रकाशन, आश्रम, पट्टीकल्याणा, जिला करनाल
पृष्ठ १६४, मूल्य रु० २.००

धार्मिक पृष्ठभूमि पर लिखित जीवनोपयोगी लेखों का यह एक लघु संकलन है। पुस्तक के लेखक श्री ओमप्रकाश त्रिखा की सामाजिक प्रवृत्तियाँ ही नहीं, उनका व्यक्तिगत जीवन भी समन्वय-दर्शन का सुन्दर नमूना है और यह जीवन-दृष्टि इस पुस्तक में स्पष्ट झलकती है।

प्रस्तुत पुस्तक में सरल अर्थ सहित सर्व धर्म-समन्वित प्रार्थना से आरम्भ करके संसार के प्रमुख धर्मों के सारभूत अंशों का, कहीं-कहीं मूल ग्रन्थ के उद्धरण के साथ, विवरण दिया गया है जो मानव मात्र के लिए ग्राह्य और सम्मत हो सकते हैं। गीता से लेकर गांधी तक लगभग संसार के १५ धर्म-पुरुषों और सन्तों के उपदेश इस पुस्तक में आकर्षक ढंग से प्रस्तुत हैं। पुस्तक को आमूलाग्र पढ़ने के बाद पाठक के सामने विविध समन्वय का, जो आज के इस विज्ञान-युग के लिए अत्यावश्यक है, सुन्दर चित्र स्पष्ट उभर आता है : १ विश्व के विभिन्न धर्मों और दर्शनों का समन्वय, जिसके बिना जीवन की बुनियाद नहीं बन पाती, २ व्यक्ति और समाज के जीवन का समन्वय, जिसके बिना न मनुष्य का विकास हो पाता है, न समाज की प्रगति होती है, ३ देह और आत्मा के हितों का समन्वय, जिसके बिना जीवन के द्वन्द्वों से, विच्छिन्न व्यक्तित्व से मुक्ति नहीं मिलती है।

भूमिका में लेखक ने सही कहा है कि 'समन्वय से राष्ट्र-एकता और राष्ट्र-एकता से विश्व-एकता की ओर जाने का यह निश्चित मार्ग है' और यही इस पुस्तक का हार्द है।

व्यक्तिगत जीवन में समाधान और विश्व में शान्ति की आवश्यकता तीव्रता से महसूस करनेवाले प्रत्येक प्रबुद्ध व्यक्ति के लिए यह निःसंशय एक उपयोगी पुस्तक है।

आन्दोलन के समाचार

दरभंगा जिला सर्वोदय संघ के कार्यकर्ताओं का निश्चय

राजगिर अखिल भारतीय सर्वोदय-सम्मेलन से वापस हुए सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने जहाँ परम पावन सलिला गंगा के तट पर बैठकर जिले के कार्य के लिए एक योजना बनायी और उसे पूरा करने का निश्चय किया।

निश्चय और संकल्प :

१ शताब्दी-वर्ष की सफलता—गृह एवं ग्रामोद्योग को अपनाने हेतु, ग्रामीणों को समझाना तथा इसकी ओर उन्हें आकृष्ट कर उनकी खादी उनके हाथों देने के लिए पदयात्रा द्वारा एक लाख रु० की खादी की बिक्री तथा प्रचार करना।

२ आगामी वर्ष सन् १९७० को 'सर्वोदय, प्रति तूफान वर्ष' के रूप में मनाया जाय।

३ 'प्रति तूफान वर्ष' में जिले में एक लाख सर्वोदय मित्र एवं लोक-सेवक खड़े करना।

४ 'प्रति तूफान वर्ष' में एक लाख सर्वोदय पात्रों की स्थापना करना।

५ ग्राम-स्वराज्य की स्थापना हेतु गाँव-गाँव में ग्रामसभा का गठन करना।

६ गाँव-गाँव में सर्वोदय-क्रान्ति के सन्देशवाहक 'ग्रामोदय' और 'भूदान यज्ञ' पत्रिकाओं के ग्राहक बनाना तथा साहित्य पहुँचाना।

७ 'प्रति तूफान वर्ष' के कार्यक्रम का संयोजन संचालन ग्रामदान-कोष, भूदान-किसानों तथा जिला सर्वोदय संघ के सहयोग द्वारा स्वयं प्राप्त कर किया जाय।

—मंत्री, दरभंगा जिला सर्वोदय संघ

संतालपरगना में ग्रामदान की हलचल

राजगिर सर्वोदय-सम्मेलन से लौटने पर संतालपरगना के कार्यकर्ताओं ने यह तय किया कि निम्नलिखित छः कामों को कार्यान्वित करना चाहिए :

(१) जहाँ २०-३० प्रतिशत लोगों को ग्रामदान में नहीं लाया जा सका है, उनको भी ग्रामदान में लाया जाय, अर्थात् हस्ताक्षर-अभियान जारी रहे।

(२) ग्राम-सभाएँ बनें।

(३) ग्रामकोष का निर्माण हो।

(४) बीघा-कट्ठा बँटे।

(५) शान्तिसेना का संगठन हो।

(६) ग्राम-निर्माण की योजना ग्रामदानी गाँवों के द्वारा बने।

इस तरह ६ नवम्बर को गोड्डा अनुमण्डल के कार्यकर्तागण पथरगामा में एकत्र हुए। देवघर अनुमण्डल के कार्यकर्तागण और शिक्षक-समुदाय ७ नवम्बर को सारठ में श्री वामदेव सिंह एम० एल० ए० की अध्यक्षता में इकट्ठे हुए। पाकुड़ अनुमण्डल के कार्यकर्तागण १३ नवम्बर को बड़कियारी में पं० पशुपतिनाथ मिश्र की अध्यक्षता में एकत्र हुए और राजमहल अनुमण्डल के कार्यकर्तागण पं० दीपनारायण चौधरी की अध्यक्षता में १६ नवम्बर को बरहरवा में एकत्र हुए।

उक्त चारों स्थानों में श्री मोतीलाल केजरीवाल ने उपस्थित होकर सभी लोगों को प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि उस समय तक चैन न लें, जबतक संताल परगना में शांति साकार न हो जाय।

आदिवासी नेता श्री पैका मुर्मू एम० एल० ए०, श्री चन्द्र सोरेन, श्री मोजल बेसरा श्री सोनालाल हेम्ब्रम् आदि भी कार्यक्षेत्र में उतर गये हैं। भूतपूर्व विधायक श्री दीपनारायण चौधरी ने भी वचन दिया है कि वे अपना अधिक समय इस काम में देंगे। जनसंघ के विधायक श्री ओमप्रकाश राय एडवोकेट भी पूर्ण सहानुभूति रखते हैं। इस जिले की महिला-शक्ति का प्रेरक श्यामादेवी और बहन सरोजनीदेवी भी इस क्षेत्र में काम करने को तैयार हो गयी हैं। भूतपूर्व विधायक और मंत्री श्री नथमलजी डोकानिया ने भी अपनी सहानुभूति दिखलायी है। विन्ध्यवासिनी पहाड़ पर रहनेवाले स्वामी हरिहरानन्दजी गिरि, जो एक शक्तिमान संन्यासी हैं, ने भी वचन दिया है कि वे ग्रामदान के काम में पूरी सहायता देंगे।

—अनुपलाल झा

सोमेश्वर में ग्रामदान-शिविर

सोमेश्वर, १८ नवम्बर। ताकुला विकास खण्ड में १७ व १८ नवम्बर को एक ग्रामदान शिविर सोमेश्वर में आयोजित किया गया। यह अल्मोड़ा जिले की ग्रामदान शिविर-शृंखला का पाँचवाँ प्रखण्डस्तरीय शिविर था। विकास खण्ड के सभी प्राइमरी पाठशालाओं तथा जूनियर हाईस्कूलों के ५४ शिक्षक शिक्षिकाएँ, १३ ग्रामसेवक, ए० डी० ओ० तथा विकास-अधिकारी एवं पंचायतराज मंत्री क्षेत्र के लोकनेता एवं ग्रामसभापति शामिल हुए।

श्री नन्दकिशोर नन्दन मोहनीजी शिविर को प्रारम्भ से अन्त तक अत्यन्त सफल बनाया। शिविर की अध्यक्षता क्षेत्रीय बुजुर्ग लोकनेता श्री हरिकृष्ण पाण्डे ने की। उन्होंने ग्रामीणों के समक्ष ग्रामदान के घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किया।

१९ नवम्बर से शिक्षक, विकास-कार्यकर्ता, तथा सर्वोदय-सेवकों की टोलियाँ ताकुला विकास खण्ड के गाँवों में ग्रामदान के लिए निकल पड़ी। उम्मीद है कि ताकुला विकास खण्ड के सभी गाँव ग्रामदान घोषित होकर प्रखण्डदान की श्रेणी में आ जायेंगे।

—बद्रीदत्त

गांधी जन्म शताब्दी सर्वोदय साहित्य सेट को विनोबाजी का आशीर्वाद

सर्व सेवा संघ ने एक सेट बनाया है, जिसमें १५०० पृष्ठ हैं और कीमत ७ रु० है। यह सेट गाँव-गाँव पहुँचाना चाहिए। उसकी लाखों प्रतियाँ बँटनी चाहिए तो लोगों को पूरी जानकारी होगी। उसमें गांधीजी के जन्म से लेकर मृत्यु तक का पूरा इतिहास यानी गांधी शताब्दी के १०० साल का इतिहास आयेगा, गांधीजी का जीवन-चरित्र भी आयगा और विचार का विकास भी पूरा आ जायेगा। वह हर घर में पहुँचना चाहिए।

इटारसी, २-११-'६९

—विनोबा

सर्व सेवा संघ के प्रधान केन्द्र से

प्रदेशों से प्राप्त रिपोर्ट

श्री पुनिया भगत से प्राप्त रिपोर्ट के अनुसार उन्होंने गत अक्तूबर में २० गांवों में घूमकर ७२ मील की पदयात्रा की और सर्वोदय-विचार का प्रचार किया।

जिला सर्वोदय भूदान मण्डल, हिसार की ओर से प्राप्त मासिक रिपोर्ट के अनुसार अक्तूबर माह में १६२५ रु० ५५ पैसे के सर्वोदय साहित्य की बिक्री हुई। सम्पत्ति दान की आय से "ग्रामभावना" मासिक पत्र के ८० विशेषांक दिये गये। सर्वोदय-पात्रों से ९ रु० ८४ पैसे की आय हुई और ७० सम्पत्ति-दाताओं से १७१ रु० ५० पैसे मिले। २ अक्तूबर को विभिन्न संस्थाओं में गांधी-जयन्ती-समारोह मनाया गया। प्रभात फेरी, साहित्य-प्रदर्शनी और सभाओं का आयोजन किया गया। इसी अवसर पर ४०० व्यक्तियों का सम्मिलित सहभोज हुआ, जिसमें सभी वर्गों और समुदायों के लोग थे। १८ मार्च '६१ से जो अखण्ड पदयात्रा श्री रामेश्वर दास और श्री हरदास साह ने शुरू की थी, ७०० मील की पदयात्रा के बाद भाटला ग्राम में ३ अक्तूबर को इस यात्री दल का स्वागत किया गया। भंगी मुक्ति-कार्य जिले के मुख्य स्थानों पर चल रहा है। भंगी-मुक्ति संडास बनाये गये।

सारण जिले (बिहार) के ग्रामदानी गांव दाउदपुर की ग्रामसभा के पदाधिकारियों के निर्वाचन हुए, जिसमें सर्वसम्मति से श्री कन्हाई साह प्रधान चुने गये।

बम्बई सर्वोदय मण्डल की रिपोर्ट के अनुसार अगस्त और सितम्बर में तरुण शान्ति-सेना की ओर से बम्बई के विभिन्न कालेजों में विचार-प्रचार के कार्यक्रम आयोजित किये गये। श्री हंस डी वोरा, श्री वसन्तराव नारगोल्कर और श्री प्रभाकर मेनन ने भाषण किये। विशेषतर ये कार्यक्रम कालेजों में हुए। ता० ३० और ३१ अगस्त को सोनी प्रधान हाईस्कूल में तरुण शान्ति-सेना का शिविर हुआ। करीब ८,५०० रु० के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई, भूदान पत्र पत्रिकाओं के ७०० ग्राहक बने। १० अगस्त को मुलुण्ड में सर्वोदय-साधना शिविर हुआ और चार टोलियों के द्वारा घर-घर प्रचार किया गया। १,७७८ सर्वोदय-पात्रों से ९५० रु० की आय हुई। २७ अगस्त को विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं की ओर से रावसाहब पटवर्धन को श्रद्धांजलि अर्पित की गयी। ११ सितम्बर को विनोबा-जयन्ती के निमित्त एक आम सभा आयोजित की गयी। संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग और बम्बई के प्रसिद्ध साहित्यिक श्री करुणा दास माणिक के भाषण हुए।

१८ सितम्बर को बम्बई मैनेजर ऐसोसिएशन द्वारा ट्रस्टीशिप पर एक विचार-गोष्ठी आयोजित की गयी। श्री जयप्रकाश नारायण ने भी इसमें भाग लिया।

... थाणा जिलादान की दृष्टि से ग्रामदान-प्राप्ति-अभियान चला। इसमें सर्वोदय मण्डल के कार्यकर्ताओं ने पूरा-पूरा सहयोग दिया। बम्बई नशाबन्दी मण्डल के कार्यकर्ता और कोरा ग्रामोद्योग विद्यालय के विद्यार्थी भी इस अभियान में शामिल थे। गणेश-उत्सव के दिनों में भिवंडी में १० दिन का शान्ति-सेना-शिविर चला। अनन्त चतुर्दशी के दिन गणपति-विसर्जन का बड़ा जुलूस निकला। उसमें शान्ति-सेना के प्रयत्न से मुस्लिम भाई भी शामिल हुए। अहमदाबाद की अशान्ति-क्षेत्रों में सर्वश्री डेनियल माजगांवकर, श्रीरंग देशपाण्डे, बद्रीनारायण गाडोदिया और कान्तिलाल शाह ने वहां के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के साथ रहकर शान्ति-कार्य में सहयोग दिया।

तार से प्राप्त सूचना के अनुसार २६ से ३० दिसम्बर तक इन्दौर में जो प्रादेशिक सर्वोदय-सम्मेलन होनेवाला था, वह स्थगित हुआ।•

डूंगरपुर में अखण्डदान

डूंगरपुर में राजस्थान सेवा संघ द्वारा दो दिवसीय राजस्थान ग्रामदान अभियान-शिविर तथा डूंगरपुर जिला नशाबन्दी प्रशिक्षण शिविर डा० दयानिधि पटनायक के कुलपतित्व में हुआ, जिसमें लगभग २५० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। जिले के कार्यकर्ताओं ने डूंगरपुर पंचायत समिति का अखण्डदान किया और दानपत्र डा० पटनायक को भेंट किये।•

राजनीति का तोड़-फोड़-जोड़

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज। १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

अन्य पृष्ठों पर

वर्ष : १६ अंक : ११
सोमवार १५ दिसम्बर, '६९

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ४१२८५

गुण-चुम्बक-वृत्ति का निर्माण हो

सर्वोदय को किसीसे झगड़ा नहीं है। वह कोई पक्ष नहीं। पार्टी तो वह है जो टुकड़े करती है। 'पार्ट' यानी टुकड़ा, उसी पर से यह शब्द पड़ा "पार्टी"। सर्वोदय तो समुद्र है। उसमें छोटी नदियाँ आयेंगी और बड़ी नदियाँ भी आयेंगी। स्वच्छ पानीवाली नदियाँ आयेंगी और गंदे पानीवाले नाले भी आयेंगे और समुद्र किसीको ना नहीं कहेगा जो भी उसमें दाखिल होगा उसको वह अपना रूप देगा। यह मिसाल गीता में भी दी गयी है—'आपूर्यमाण अचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्....' समुद्र में चारों ओर से पानी आता है।

हमारे कुछ भाई हैं स्वच्छतावादी, वे कहते हैं कि सर्वोदय में निर्मल पानी आना चाहिए। मैं कहता हूँ कि आपको समुद्र का रूप देखना चाहिए। गंगा का स्वच्छ, निर्मल रूप देखना हो तो गंगोत्री जाना होगा। उसका मिश्र रूप देखना हो तो प्रयाग जाना होगा और उसका पूर्ण रूप देखना हो तो गंगासागर जाना होगा। और हमारे शास्त्रकारों ने गंगोत्री को जितना पवित्र माना उससे अधिक पवित्र प्रयाग को माना और उससे भी अधिक गंगासागर को माना बाबा गंगासागर देख आया है, पदयात्रा के सिलसिले में। वहाँ उसने देखा कि सब प्रकार का स्वच्छ और गंदा पानी समुद्र में मिल रहा है। इसलिए बाबा स्वच्छतावादियों को कहता है कि तुम थोड़ा सर्वोदय को समझो। सर्वोदय गंदे पानी को स्वीकार करने से इन्कार नहीं करता, लेकिन वह इतना सामर्थ्य रखता है कि उसको अपना रूप देगा। यह खूबी अगर सध जाय कि नम्र भाव से सबको स्वीकार करना, विश्वास रखना कि दुनिया में कोई ऐसा प्राणी भगवान ने नहीं पैदा किया जिसमें कोई-न-कोई गुण न हो। कोई बड़ा मनुष्य होगा तो उसमें गुण अनेक होंगे। लेकिन कितना भी छोटा आदमी हो, कितना भी पतित आदमी हो, उसमें कुछ-न-कुछ गुण जरूर होंगे। दोष तो देह के साथ जुड़े ही होते हैं। देह तो जानेवाला है, उसके साथ वह भी चला जायेगा। आत्मा कायम रहनेवाला है और गुण आत्मा में रहते हैं, इस वास्ते गुण शाश्वत रहेंगे।

मान लीजिए, मिट्टी में अनेक कण पड़े हैं, उसमें कुछ लोहे के भी कण हैं। तो लोह-चुम्बक क्या करेगा? वह अगर उनके नजदीक जायेगा तो तुरन्त लोहे के कणों को खींचेगा और बाकी के कण ऐसे ही पड़े रहेंगे। जैसे लोह-चुम्बक लोहे को खींच लेता है वैसे ही हम लोगों की गुण-चुम्बक वृत्ति होनी चाहिए। गुण-चुम्बक-वृत्ति यह नया शब्द बनाया है। गुण-चुम्बक-वृत्ति से जिसमें छोटा भी गुण हो उसे खींच ले, ऐसी गुणग्राही गुण-चुम्बक-वृत्ति होनी चाहिए।

बारीपदा (उड़ीसा), ५-९-'६९ विनोबा

अभ्युदकीय

भूमि का सवाल, गाँव का सवाल

अगर हमारे देश में भूमि का सवाल शांतिपूर्वक हल हो जाय तो शायद ही कोई सवाल रह जाय जो हल न हो सके। लेकिन इतने वर्षों तक जिस तरह इस प्रश्न को हल करने की छिटपुट कानून बनाकर कोशिश की गयी है उससे यह भरोसा नहीं होता कि जवाब देनेवालों को मालूम भी है कि सचमुच सवाल क्या है। इन्दिराजी का यह सोचना सही है कि उनकी नयी कांग्रेस का भविष्य भूमि के साथ जुड़ा हुआ है, किन्तु कठिनाई यह है कि जिन राज्य-सरकारों पर वह भरोसा कर रही हैं उनके नेताओं के दिल में सिर्फ चुनाव है और दिमाग में सिर्फ फाइलें। ये दोनों ही ऐसी चीजें हैं जो समस्या के समाधान में बहुत बड़ी रुकावटें हैं। सरकारों के पास दूसरी दृष्टि नहीं है, शक्ति नहीं है। किस नयी दृष्टि और शक्ति से यह काम किया जानेवाला है?

भूमि का सवाल है क्या? सीलिंग का कानून हर राज्य में पास हो चुका है, यद्यपि कहीं-कहीं सीलिंग बहुत ऊँची है। लेकिन सीलिंग का कानून पास करके ही सरकारों ने क्या किया? सरकारों ने कानून पास किया, मालिकों ने चोर-दरवाजा ढूँढ़ लिया, नेताओं ने जान-बूझकर आँख चुरायी, और जनता कानून की भूल-भुलैयां में फँसकर रह गयी। मालिक जानते थे कि अगर सरकार के पास कानून है तो उनके पास वोट है। वोट और कानून की लड़ाई में जीत वोट की हुई।

सिर्फ कानून ग्रामीण जीवन के लिए कितना भयंकर हो सकता है यह पश्चिम बंगाल की हाल की घटनाओं से जाहिर हो गया है। बंगाल की सरकार ने खुद कह दिया कि उसका कानून कुछ नहीं है, जो कुछ है भूमिहीन और बँटाईदार की लाठी है। अगर कानून का मालिक खुद लाठी का समर्थक बन जाय तो कानून में रह क्या जायगा? कानून और कानून के मालिक किस बुरी तरह जन-जीवन को तोड़ सकते हैं, इसकी मिसालें इस देश के पिछले बाईस वर्षों के इतिहास में एक नहीं अनेक मिलेंगी। भूमि के मालिकों की रोज होनेवाली हिंसा को सरकार चलाने-वाले मालिक रोक नहीं सकते, उलटे वे जनता की हिंसा को बढ़ावा दे सकते हैं। क्या हिंसा का राज चलाने के लिए सरकार बनती है? क्या यही है सरकार का न्याय, और उसके द्वारा होनेवाला शांति और सुव्यवस्था का प्रबन्ध?

सीलिंग का कानून सख्ती से लागू हो, जोतनेवाला बेदखल न किया जाय, सीलिंग में निकली भूमि भूमिहीनों में बाँटी जाय, 'वास' की जमीन का बन्दोबस्त कर दिया जाय, लगान की उचित दरें लागू की जायँ, तथा गैरहाजिर मालिकों की जमीनें किसानों को जोतने को मिलें, आदि बातें भूमि-व्यवस्था के सुधार के सम्बन्ध में कही जाती रही हैं, लेकिन अमल में नहीं लायी गयीं। अब भरोसा किया जा रहा है कि दिल्ली से लौटकर मुख्यमंत्री अपने-अपने राज्य में यह सब जल्द कर डालेंगे। लेकिन क्या सच-मुच वे करेंगे? कर सकेंगे? कितनी सरकारें हैं जिनके पास भूमि के सही-सही कागज भी मौजूद हैं? इधर-उधर उपद्रव कराने की बात और है, किन्तु कौनसा दल है जो मालिकों के क्रोध की जोखिम उठाकर न्याय पर चलने का साहस रखता हो? जब सर-कारें खेती की आय पर टैक्स तक नहीं लगाना चाहतीं, और लगान-माफी के थोथे नारों द्वारा छोटे खेतिहरों को भुलावे में रखती हैं, तो किसी ठोस और स्थायी योजना की आशा कैसे की जाय? बिहार में संविद सरकार के समय बँटाईदारी के सवाल को हल करने की कोशिश की गयी लेकिन वह सफल नहीं हो सकी। और, वह विफल हुई सरकार की नीयत और हिम्मत की कमी के कारण।

भूमि गाँव के जीवन का आधार है। गाँव में शायद ही कोई ऐसा हो जो जमीन न चाहता हो। कम-से-कम हर खेतिहर मज-दूर और बँटाईदार तो भूमि चाहता ही है। जो भूमि पर रहता है और पसीना बहाता है, वह भूमि नहीं चाहेगा, तो और क्या चाहेगा? भूमि की भूख गाँव के जीवन की सबसे बड़ी वास्त-विकता है। गाँव का चित्त भूमि से बना है, और सदियों से ग्रामीणों के आपसी सम्बन्ध भूमि के ही इर्द-गिर्द विकसित हुए हैं। गाँव के जीवन का ताना-बाना ऐसा है कि वहाँ का कोई भी सवाल, बड़ा हो या छोटा, गाँव के पूरे जीवन को सामने रखकर ही हल किया जा सकता है। खेती मात्र पेशा नहीं है, जीवन-पद्धति है और, गाँव घरों का मात्र समूह नहीं, एक व्यवस्था है। उस जीवन-पद्धति और व्यवस्था का क्या चित्र हमारी सरकारों और उनके विशेषज्ञों के मन में है? जमीन जोतनेवालों के साथ तत्काल कुछ न्याय हो जाय यह एक बात है, और गाँव की सम्पूर्ण व्यवस्था को ध्यान में रखकर भूमि का प्रबन्ध किया जाय यह बिलकुल दूसरी बात है। सरकार के दफ्तरों में सरकारी अफसरों की बनायी हुई व्यवस्था गाँव पर नहीं लादी जा सकती। अगर गाँव के जीवन में सुधार करना है तो गाँव की व्यवस्था गाँववालों की सम्मति से बननी चाहिए और उनके निर्णय से चलनी चाहिए। क्या कारण है कि कोई भी दल, विद्वान या विशेषज्ञ, ऐसा नहीं है जो भूमि के स्वामित्व का प्रश्न उठा रहा हो? क्या स्वामित्व का प्रश्न हल किये बिना भी भूमि की कोई नयी व्यवस्था हो सकती है? आखिर भूमि का मालिक कौन है? जिसके पास कागज हो वह? क्या जोतनेवाला? क्या सरकार या और कोई? अगर आज कोई यह सोचता हो कि स्वामित्व जैसा है वैसा ही बना रहे, भूमि की खरीद-बिक्री पर कोई रोक न लगे, और कागज या कब्जे को ही कानून का आधार मान लिया जाय, तो निश्चित रूप से कहना पड़ेगा कि ऐसा माननेवाला ग्रामीण जीवन को नहीं जानता।

ग्रामदान आन्दोलन ने गाँव की समस्याओं को उनकी समग्रता में समझने की कोशिश की है। अनुभव ने सिद्ध कर दिया है कि—

कुमारी मनु गांधी का निधन

कुमारी मनुबहन गांधी का ८ दिसम्बर को आल इण्डिया मेडिकल इंस्टीट्यूट, दिल्ली में प्रातःकाल देहान्त हुआ। वे ३९ वर्ष की थीं। २ महीने से उनकी तबीयत खराब थी। उनका इलाज चल रहा था। कुमारी मनुबहन गांधी महात्मा गांधी के अन्तिम दिनों में बराबर उनके साथ रही थीं। उस समय की उनकी डायरी महात्मा गांधी के जीवन के अन्तिम चरण का सर्वाधिक प्रामाणिक वृत्तान्त है।

मनुबहन श्री जयसुखलाल गांधी की पुत्री थीं। बहुत ही छोटी उम्र में गांधीजी के पास आ गयी। उन्होंने स्वयं अपने बारे में लिखा है : "१९४६ में पूज्य कस्तूरबा जब जेल में थीं, तब मैं भी नागपुर जेल में थी। मेरी उम्र उस वक्त सिर्फ १४ वर्ष की ही थी। मेरी जन्म देनेवाली माँ तो मुझे १२ साल की छोड़कर ही दुनिया से चल बसी थीं। पर उनके मीठे आशीर्वाद से कुछ ही समय में मुझे कस्तूरबा की गोद मिल गयी। बा ने कभी मुझे माँ की कमी नहीं महसूस होने दी। . सख्त ठंड हो या दम चलने लगे, और नींद न आती हो तो, या तो बा मेरे बिछौने में आ जातीं या फिर मुझे अपने बिछौने पर ले जातीं और कहतीं—'बेटी, तुम सो जाओ दिनभर काम करते-करते थक जाती हो। मुझे नींद नहीं आ रही है। इसलिए मैं तुम्हें अपने पास सुला रही हूँ।' और, मुझे थपकियाँ दे-देकर इस तरह सुलाती जैसे माँ छोटे बच्चे को सुलाती हो।

बस, बा गयीं (परलोक) उस दिन से बापू ने एक माँ की तरह अपनी १४-१५ साल की बच्ची की देखभाल करना शुरू कर दी। इस उम्र में लड़की सहज ही माँ के पास रहना पसन्द करती है और यदि पहले से साथ ही रहती आयी हो, तो वह माँ के और भी ज्यादा नजदीक आ जाती है। इसलिए बापू ने मुझे अपने पास ही रखना शुरू किया। मेरे खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने, सोने जागने, बीमारी, अभ्यास, यहाँ तक कि मैं हर हफ्ते अपने बाल धोती हूँ या नहीं, इन सब बातों में उन्होंने सावधानी रखना शुरू किया। और यह सावधानी आखिर तक बनी रही।"

इस प्रकार कस्तूरबा और गांधीजी की देखरेख में पली-पुसी मनुबहन उनके अन्तिम दिनों की साक्षी-रूप थीं। गांधीजी के साथ रहकर उन्होंने जो भी पाया हो वह तो सब था ही, परन्तु उनके पास गांधी की धरोहर भी थी। बहुत ही थोड़ी उम्र में उनका उठ जाना अधिक संतापकर है। सारा सर्वोदय-परिवार उनकी आत्मा की शान्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है।●

→गांव को एक समुदाय मानकर ही उसकी समस्याओं को हल किया जा सकता है, खासकर ऐसी समस्या को जैसे भूमि, जिसका सम्बन्ध गांव में रहनेवाले हर आदमी से है। गांव का एक सामूहिक हित है—वर्ग और जाति के अपने संकुचित हित से अलग—जिसको जगाने की फौरन जरूरत है, क्योंकि एक बार वह ग्रामभावना जग जाय तो कठिन प्रश्न भी आसान हो जाते हैं। गांव में दमन है, शोषण है। दमन और शोषण वहाँ के जीवन का ताना-बाना है। लेकिन शोषक और शोषित की भूमिका लेकर आनेवाला सुधारक वर्ग संघर्ष तो करा सकता है, किन्तु सबको समाधान नहीं दिला सकता, और किसी एक समस्या को हल करने में वह इतना बड़ा पचड़ा पैदा कर देगा कि एक की जगह चार समस्याएँ खड़ी हो जायेंगी। इसलिए हम किसी हालत में गांव की एकता की जड़ें न खोदें। गांव की एकता ही गांव के स्थायी विकास और व्यवस्था का आधार है। अगर वह एकता हाथ से निकल गयी तो सरकार बाहर से आकर न्याय की स्थापना नहीं कर सकती। फिर तो कानून के साथ-साथ संहार की व्यापक योजना काम में लानी पड़ेगी। तब हमें लोकतंत्र की जगह गृहयुद्ध के लिए तैयार होना चाहिए।

ग्रामदानी गांवों में, जितने गांव के लोग अपनी भूमि का स्वामित्व ग्रामसभा को सौंप चुके हैं और बीघा-कट्ठा भूमि भूमिहीन को देने का संकल्प कर चुके हैं, सीलिंग, बेदखली और वास की भूमि के तीनों प्रश्न ग्रामसभा की बैठक बुलाकर उसके सामने प्रस्तुत किये जा सकते हैं, और उससे आग्रह किया जा सकता है कि सबको समाधान देनेवाले आपसी समझौते का कोई रास्ता निकालें। इस काम में सामाजिक कार्यकर्ता, राजनैतिक कार्यकर्ता और सरकार के अधिकारी गांव-गांव जाकर सम्मिलित रूप से सहायक हो सकते हैं। ऐसी सम्मिलित टोलियाँ बनायी जा सकती हैं। इस प्रकार गांव का सही शिक्षण हो, और उसकी सामूहिक सद्भावना जगायी जाय, और समस्या के समाधान के उचित उपाय सुझाये जायें। हर गांव को अपने ढंग का अलग हल ढूँढने की छूट रहनी चाहिए। जो गांव कोशिश करने पर भी इतना न कर सके उसे सरकार का कानून मान लेने में कोई आपत्ति क्यों होगी? कुछ भी हो, जोतनेवालों की मनमाना बेदखली तो फौरन रुकनी ही चाहिए।

गांव में हर परिवार को थोड़ी भूमि, चकबन्दी, खेती में साझेदारी, ग्रामसभा के माध्यम से उत्पादन-वृद्धि, बेकारी-निवारण, हर परिवार के लिए खेती के साथ कोई उद्योग, न्यूनतम भाव की व्यवस्था, आयात-निर्यात का गांव के हित में नियमन, आदि अनेक समस्याएँ हैं जिन्हें हाथ में तुरन्त लेना पड़ेगा। कौन लेगा? सरकार या खुद गांव के लोग? अगर गांव के लोगों को नव समाज की रचना की दिशा में आगे बढ़ना है—इसके सिवा दूसरा उपाय भी क्या है? तो अभी से भूमि के प्रश्न के माध्यम से योजनापूर्वक उन्हें आगे बढ़ाना चाहिए। समाज की चेतना समाज-परिवर्तन के लिए आज पहले से अधिक तैयार है। शर्त यही है कि 'सर्व' का हित सामने रखकर कायम किया जाय, और पूरी व्यवस्था बदली जाय; केवल पैबन्द लगाकर छोड़ देने की बात न की जाय, ग्रामदान ने ग्रामस्वराज्य का रास्ता दिखा दिया है। उसपर चलने की नीयत, हिकमत, और हिम्मत चाहिए।●

खाती की ढाणी : आर्थिक सर्वेक्षण

[गाँव में शोषण की क्या स्थिति और रूप है, गाँव के गरीब लोगों के गाढ़े पसीने की कमाई किन-किन रास्तों से उनके पास से निकल जाती है और बाहर चली जाती है, इसका अध्ययन करने के लिए सीकर जिले (राजस्थान) के नीम का थाना खंड के एक छोटे-से गाँव 'खाती की ढाणी' को चुना गया। यह एक पुराना तथा प्रसिद्ध ग्रामदानी गाँव है। प्रत्येक परिवार से आयात-निर्यात एवं कर्ज के बारे में जानकारी प्राप्त की गयी है। साथ ही साक्षात्कार के जरिये ग्रामवासियों की राय और मनोभावना को जानने का प्रयास किया गया है। अध्ययन में उपयोग किये गये आँकड़े सर्वेक्षण द्वारा सीधे प्राप्त किये गये हैं।

यह अध्ययन कुमारप्पा ग्रामस्वराज्य संस्थान, जयपुर के शोध-अधिकारी श्री अवधप्रसाद द्वारा किया गया है। 'भूदान-यज्ञ' के पाठकों के लिए यह पूरी सामग्री हम क्रमशः प्रकाशित करेंगे। यह उसकी पहली किस्त है।—सं०]

सामान्य परिचय

खाती की ढाणी देश के उन हजारों गाँवों का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें नीची कही जानेवाली जातियाँ बसती हैं और जिनका चतुर्मुख शोषण सदियों से होता आया है। आबादी, जाति-संरचना, आर्थिक स्थिति आदि को देखते हुए इसे सामान्य गाँव नहीं कहा जा सकता है, परन्तु इसे निम्न सामाजिक और आर्थिक स्तर के गाँव का नमूना माना जा सकता है। गाँव मध्यम वर्ग की स्थितिवाला है। खाती की ढाणी राजस्थान में सीकर जिले में नीम का थाना तहसील का एक गाँव है। सीकर से इसकी दूरी ६५ किलोमीटर है और नीम का थाना से २१ किलोमीटर। नीम का थाना से जयपुर जानेवाली सड़क से करीब डेढ़ किलोमीटर की दूरी पर स्थित इस गाँव का रहन-सहन पूर्णतया ग्रामीण है। निकटतम बाजार कांवट ३ किलोमीटर है। इस प्रकार यह गाँव सामान्य शहरी प्रभाव तथा रहन-सहन से अलग-सा है।

गाँव जिस स्थान पर बसा है तथा इसे आवागमन का जिस ढंग का साधन उपलब्ध है उसे देखते हुए इसे दूरस्थ गाँव नहीं कहना चाहिए; परन्तु इस गाँव के पेशे, रहन-सहन तथा बाहरी सम्बन्धों को देखने से साफ जाहिर होता है कि गाँव का बाहरी दुनिया से बहुत कम सम्बन्ध है। गाँव का निकटतम रेलवे स्टेशन कांवट है जो कि दिल्ली-अहमदाबाद से सम्बन्ध स्थापित करता है। कांवट निकटतम बाजार है जहाँ से इस गाँव के प्रत्येक परिवार का आर्थिक सम्बन्ध जुड़ा है। इनकी अधिकांश बाहरी आवश्यकता की चीजें इसी बाजार से प्राप्त होती हैं। गाँव का प्रत्येक परिवार कांवट के किसी-न-किसी महाजन से आर्थिक रूप से बँधा है। वैसे आवागमन की सुविधा की दृष्टि से निकटतम बड़ा बाजार नीम का थाना है। तहसील तथा प्रखण्ड कार्यालय नीम का थाना होने के कारण सरकारी कार्यों की दृष्टि से भी यहाँ से बराबर सम्बन्ध रहता है। गाँव के कुछ लोग जीविका के लिए भी नीम का थाना जाते हैं। इस प्रकार इस गाँव का मुख्य सम्बन्ध कांवट तथा कुछ हद तक नीम का थाना से है।

सामाजिक संरचना

इस गाँव में दो जातियाँ हैं १ खाती (बढ़ई), २ ब्राह्मण। जनसंख्या की दृष्टि से यह गाँव खाती-प्रधान है। कुल ३४ परिवारों में ३० परिवार खाती तथा ४ परिवार ब्राह्मणों के हैं। ब्राह्मणों को परम्परागत सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त होते हुए भी यहाँ की राजनीति उनके हाथ में नहीं है। सामान्यतया आज वोट के जमाने में जिस गाँव में जिस जाति की बहुलता होती है उसीके हाथ में गाँव की राजनीति रहती है।

खाती की ढाणी जैसे द्विजातीय गाँव में ब्राह्मण तथा खाती, दोनों की आर्थिक, वंशगत एवं व्यक्तिगत योग्यता समान ही है। ब्राह्मण को परम्परागत सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त होते हुए भी व्यक्तिगत योग्यता की कमी, वंशगत नेतागिरी तथा प्रतिष्ठा का अभाव और कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण इनका नेतृत्व नहीं चलता है। शिक्षा की दृष्टि से भी ब्राह्मण खाती के समान ही है। इस प्रकार इनके पास परम्परागत ब्राह्मणत्व के अतिरिक्त स्वयं का कुछ बहुत नहीं है। ये सामान्यतया खेतिहर किसान हैं और हमेशा आर्थिक स्थिति ठीक रखने में ही व्यस्त रहते हैं। दोनों जातियों में न दुराव है और न जातिगत संघर्ष है।

जातिगत रीति-रिवाज दोनों के अलग-अलग हैं। आपसी व्यवहार में साम्य है। ब्राह्मण को खाती के साथ उठने-बैठने में कोई एतराज नहीं है। शादी एवं अन्य कार्यों में ब्राह्मण खाती के घर खाना है तथा पक्का खाना साथ बैठ कर खाता है। छुआछूत का रिवाज नहीं है। हकीकत तो यह देखने में आयी कि पीढ़ियों से एक साथ रहने काम करने तथा दिन-रात एक साथ रहने से दोनों जातियों में ऊँच-नीच के भेद नहीं के बराबर रह गये हैं। जो कुछ भेद है वह हिन्दू समाज की परम्परागत संरचना के कारण है। आर्थिक दृष्टि से करीब-करीब समान होने के कारण सभी लोग समान रूप से महाजनों से जुड़े हैं। गाँव में एक भी परिवार ऐसा नहीं है जो कि स्वयं महाजन के रूप में काम कर सके। हाँ, दो परिवार के लोगों की छोटी-सी दूकान कांवट में है जो कि उनकी जीविका में सहायक है। जाति के अनुसार गाँव की परिवार तथा जनसंख्या इस प्रकार है :—

सारणी-संख्या-१

जाति	परिवार संख्या	स्त्री	पुरुष	बच्चे	कुल
खाती	३०	६४	७०	१०३	२३८
ब्राह्मण	४	५	१३	१०	२८
कुल	३४	७०	८३	११३	२६६

खाती-प्रधान यह गाँव सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से काफी पिछड़ा हुआ है। खाती प्रारम्भ से ही शिक्षा से विमुख रहे हैं। स्त्री, पुरुष, बच्चे, सभी जातिगत पेशे में लगे रहते हैं। जीविका का मुख्य स्रोत लकड़ी का काम तथा खेती है। यहाँ एक खास बात यह देखने को मिली कि खाती और ब्राह्मण दोनों ही परम्परागत ढंग से जातिगत पेशे बहुत कम करते हैं। यहाँ का खाती गाँवों में किसानों के यहाँ काम नहीं करता। इस सम्बन्ध में एक तथ्य सामने आया। पहले यहाँ के लोग भी अन्य गाँव के बढ़ई के समान किसानों के यहाँ लकड़ी का काम करते थे। इन्हें किसानों से निश्चित आय भी प्राप्त होती थी। एक बार किसी बड़े किसान ने जबरदस्ती काम करवाया और उस काम में उस बढ़ई की मृत्यु हो गयी। मृत्यु के बाद भी उसके परिवार के अन्य सदस्य से उस काम को पूरा करवाया गया। परिणामस्वरूप गाँव के सभी बढ़ई-परिवारों ने किसी भी किसान के यहाँ काम करने से इनकार कर दिया। तब से यह परम्परा बन गयी कि इस गाँव का बढ़ई किसीके यहाँ परम्परागत ढंग से बँधकर काम नहीं करेगा। हालाँ कि दैनिक मजदूरी पर यहाँ के लोग बाहर बढ़ईगिरी का काम करते हैं। परन्तु सामान्यतया ये लोग छोटे कस्बों तथा अन्यत्र जाकर काम करते हैं। पास-पड़ोस के गाँव में यहाँ के बढ़ई इस काम को नहीं करते हैं। इसका कारण शायद पर्याप्त मजदूरी न मिलना भी हो। जहाँ तक ब्राह्मणों के जातिगत पेशे का प्रश्न है एकाध को छोड़कर जजमानी का काम कोई नहीं करता है। सभी खेती-बारी में व्यस्त रहते हैं।

गाँव में शिक्षा का अभाव है। शिक्षा की वर्तमान स्थिति इस निम्न प्रकार है।

कुल आबादी—२६६

साक्षर—४०

माध्यमिक शिक्षा प्राप्त—७

गाँव में ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं है जो कि बाहर नौकरी करता हो। दो-तीन बच्चे आठवीं कक्षा में पढ़ रहे हैं। गाँव में एक प्राथमिक शाला आज से चार वर्ष पूर्व खुली। इस शाला के खुलने के बाद पढ़ाई की ओर थोड़ी रुचि जगी है। गाँव के प्रायः २०-२५ छोटे बच्चे इस शाला में नियमित आते हैं। यहाँ के वृद्ध जन स्वभाव से शिक्षा में रुचि नहीं लेते हैं। फिर भी हाल के वर्षों में शिक्षा से होनेवाले लाभ की ओर उनका ध्यान गया है। शिक्षा के बाद बाबू बनने की आकांक्षा जगी है। लेकिन बच्चों को पढ़ाने में बहुत रुचि हो ऐसी बात नहीं, क्योंकि, "पढ़-लिखकर भी यदि हल ही जोतना है, रंदा ही चलाना है तो पढ़ना क्यों ?"—इस अभिव्यक्ति से साफ जाहिर है कि शिक्षा का महत्त्व अभी तक मालूम नहीं। गाँव का सामान्य मानस (१) रूढ़िवादी, (२) कष्ट-सहन का अभ्यासी, (३) शोषित होते रहने पर भी प्रतिकार से विमुख, (४) महाजनों के प्रति विश्वास करनेवाला है। यही कारण है कि महाजनों द्वारा या अन्य प्रकार के शोषण की अनुभूति कराने के बाद भी वे कोई बड़ा कदम उठाने को तत्पर होने के इच्छुक नहीं दिखाई देते।

आज से पाँच-सात वर्ष पहले तक सभी घर झोपड़ियों में थे। पर आज गाँव के २५ प्रतिशत मकान पत्थर तथा ईंट के हैं। अधिकांश ईंट एवं पत्थर के मकान सन् १९६३-६५ के बीच बने। १९६५ के बाद लगातार सूखा पड़ने के कारण जो मकान जहाँ तक बना वहीं रुका है। फिर भी दो परिवारों ने इस बीच थोड़ा कर्ज लेकर मकान को पूरा कराया है। रहने तथा भोजन का स्तर बिलकुल सामान्य है। झोपड़ी में प्रायः जीर्ण अवस्था में ही वे रहते हैं। जो पक्के मकान हैं उनमें भी जीवन व्यवस्थित हो ऐसी बात नहीं। अच्छे मकान में भी रहने का ढंग पुराना ही है। प्रत्येक परिवार के पास प्रायः दो-तीन कमरे हैं, जिनमें पूरे परिवार की गृहस्थी चलती है। बूढ़े बच्चे, स्त्री पुरुष, सभी छोटी-सी कुटिया में पीढ़ियों से रहते आये हैं, रह रहे हैं। गाँव में दो खाती परिवारों के नये मकान करीब-करीब पूरे हो रहे हैं, जिन्हें सामान्य सुविधाप्राप्त मकान कह सकते हैं, परन्तु रहने के अव्यवस्थित ढंग के कारण इनमें भी पूरी सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं।

भोजन में सामान्यतया बाजरे की रोटी, दाल और कभी-कभी सब्जी रहती है। पिछले तीन वर्षों से सूखे के कारण सब्जी का उपयोग प्रायः बन्द है। दो-तीन परिवारों में चाय का खूब रिवाज है। घी-दूध का उपयोग नाम-मात्र का है। चारे की कमी के कारण दुधारू जानवर कम हो गये हैं। सामान्य जीवन में उपयोग की वस्तुओं में मुख्य हैं—बाजरा, दाल, गुड़, मिर्च मसाला, चाय। बाहर से खरीदी जानेवाली नित्य उपयोग की वस्तुएँ हैं—वस्त्र, गुड़, मसाला, तेल आदि। साबुन तथा अन्य प्रसाधन की चीजों का उपयोग भी नाम-मात्र का है। नयी पीढ़ी में इनका उपयोग बढ़ रहा है। खेती या बढ़ईगिरी से जो भी कमाई होती है उसका व्यय भोजन और वस्त्र पर मुख्य रूप से होता है। खेती के लिए बीज तथा पशु पर भी व्यय होता है। जब आर्थिक स्थिति संतोषजनक रहती है तब दो मदों में खर्च बढ़ता है (१) मकान बनाना, (२) उत्सव-शादी। शिक्षा तथा स्वास्थ्य पर बहुत व्यय नहीं है। बहुत आवश्यक होने पर ही उपचार पर व्यय करते हैं।

सन् १९६१ में ग्रामदान की घोषणा की गयी और कानूनी रूप से सन् १९६२ में ग्रामसभा का गठन किया गया। गाँव के मुख्य सक्रिय व्यक्ति श्री गंगाराम ग्रामदान के प्रथम समर्थक बने और लगातार दो वर्षों तक विचार-शिक्षण के बाद ग्रामदान को कानूनी रूप दिया गया। सामान्यतया पिछड़ा तथा अशिक्षित गाँव होने के कारण ग्रामदान की वैचारिक गहराई को समझना संभव नहीं था। अतः व्यावहारिक रूप से गाँव एक होगा, सामूहिक शक्ति बढ़ेगी, इसी भावना की सहमति से लोगों ने ग्रामदान के घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर किये। ग्रामदान की मुख्य चार बातें (क) ग्रामस्वामित्व, (ख) ग्रामसभा, (ग) ग्रामकोष, (घ) बीघा में एक बिस्वा दान को गाँव के लोगों ने स्वीकार किया।→

-नयी आर्थिक नीति •भूमि-सुधार की त्वरा और घिसी-पिटी पुरानी मजबूरियाँ •साम्यवादियों की नीति

इस देश के राजनीतिक नेताओं ने यह मान लिया मालूम होता है कि देश की बड़ी-से बड़ी या कठिन-से-कठिन समस्याओं के हल के लिए इतना करना काफी है कि समय-समय पर सभाओं, गोष्ठियों और परिषदों में उनकी चर्चा कर ली जाय, अबतक उनके हल न होने की जिम्मेदारी किसी-न-किसी दूसरे पर डाल दी जाय, उन समस्याओं के बने रहने के कारण देश के करोड़ों गरीबों पर होनेवाले अन्याय और उनके शोषण के लिए आँसू बहाये जायँ और उन्हें हल करने के पुराने वादों और संकल्पों को फिर से नये प्रस्तावों द्वारा दुहराया जाय ताकि भोली जनता फिर कुछ दिन अच्छे भविष्य की आशा के सहारे अपने दुःखों को बर्दाश्त करती रहे, और इस बीच समाजवाद लाने के घोषित इरादों को पूरा करने के लिए अपने द्वारा सत्ता का उपयोग जारी रहे। तारीख २२-२३ नवम्बर को दिल्ली में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्यों की जो बैठक बुलायी गयी थी उसके पहले दो-चार दिन तक अखबारों में और रेडियो आदि पर ऐसी हवा बनायी गयी मानो अब गरीबों के सारे दुःख दूर होने के लिए नये-नये संकल्पों और नयी-नयी योजनाओं का सूत्रपात होने ही वाला है। पर दूसरे ही दिन अचानक अखबारों में यह सफाई पढ़ने को मिली कि क्योंकि लोकसभा का अधिवेशन चालू है इसलिए किसी 'बाहरी' मंच से सरकारी योजनाओं की घोषणा करने से लोकसभा का अपमान होता, और नयी योजनाओं पर सोच-विचार भी अभी बाकी है इसलिए अब अगले महीने के अंत

सिद्धराज ढड्ढा

में जब बम्बई में 'नयी' कांग्रेस का खुला अधिवेशन होगा तब नयी आर्थिक नीति की घोषणा की जायगी। यही हाल तारीख २८-२९ को दिल्ली में भूमि सुधार सम्बन्धी मामलों पर विचार करने के लिए बुलाये गये देश के सभी राज्यों के मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन का हुआ। अपने उद्घाटन-भाषण में इन्दिरा गांधी ने भूमि-सुधारों को जल्दी लागू करने के बारे में बड़े कड़े शब्दों में चेतावनी दी थी कि "हमें तत्काल, जब कि कुछ आशा और समय अभी बाकी है, कदम उठाने चाहिए। अब चुपचाप बैठे रहने का खतरा हम नहीं उठा सकते, क्योंकि ऐसा करने का नतीजा हमारे काबू के बाहर होगा।" गृहमंत्री चह्वाण साहब का भी कहना था कि भूमि-सुधार उनका महकमा न होते हुए भी वे इसीलिए इस सम्मेलन में शरीक हुए हैं, क्योंकि भूमि सुधारों के अभाव में देहात में जो विस्फोटक परिस्थिति पैदा होती जा रही है वह एक राष्ट्रीय समस्या बन रही है। उन्होंने भी चेतावनी दी कि अगर खेती की उन्नति के साथ सामाजिक न्याय का ध्यान न रखा गया, यानी सिर्फ बड़े किसानों को उस उन्नति का फायदा मिलता रहा, तो 'हरी' क्रान्ति बहुत दिन तक हरी' नहीं रहेगी। उनका मतलब था कि वह 'लाल', यानी खूनी क्रान्ति में बदल जायगी।

पर ढाई बरस बाद खास तौर से इस विषय की चर्चा के लिये बुलाये गये इस सम्मेलन का नतीजा भी बावजूद इन सब लम्बी-चौड़ी बातों, चेतावनियों और भावनात्मक दलीलों के वही हुआ। विभिन्न प्रदेशों के मुख्य मंत्रियों ने गरीब भूमिहीनों और छोटे किसानों की हालत पर दुःख प्रगट किया, आँसू बहाये, अफसोस जाहिर किया, भूमि-सुधारों को तत्काल लागू करने के बारे में सिद्धान्त में सहमति जाहिर की, पर "पर" जहाँ तक व्यवहार का सवाल है, उसके रास्ते की रुकावटों में वही घिसी-पिटी पुरानी दलीलें और मजबूरियाँ! सच तो यह है कि वोटों के लिए तो इन दलों को बड़े और प्रभावशाली, किसानों और मुखियाओं पर ही निर्भर रहना पड़ता है, तब सीलिंग को कानून लागू करके या बेदखली रोककर या नयी जमीन भी गरीबों को देकर उन्हें नाखुश कैसे किया जा सकता है? जहाँ तक गरीबों का सवाल है, उनके वोट

→तदुपरांत कानूनी रूप से भूमि ग्रामसभा के नाम की गयी। अब प्रत्येक व्यक्ति (१) लगान ग्रामसभा को चुकाता है और (२) ग्रामसभा की इजाजत के बिना जमीन बेच नहीं सकता है। ग्रामदान के बाद ग्राम पंचायत के सभी अधिकार ग्रामसभा को प्राप्त हुए हैं। श्री गंगाराम ने कई ऐसी घटनाएँ बतायीं जिनसे साफ जाहिर हुआ कि भूमि पर ग्रामस्वामित्व प्रभावकारी हुआ है। ग्रामदान के बाद व्यक्तिगत रूप से कचहरी की दौड़ समाप्त हो गयी है। सभी सरकारी कार्य ग्रामसभा के माध्यम से किये जाते हैं। जहाँ तक ग्रामसभा की बैठक का सम्बन्ध है उसमें सातत्य नहीं है। बैठक में नियमितता भी नहीं है। प्रायः वर्ष में दो बार ग्रामसभा की बैठक होती है। सामान्य परम्परा यह है कि जब कभी आवश्यक हो ग्रामसभा की बैठक बुला ली जाती है। शिक्षा के अभाव के कारण ग्रामसभा की कार्यवाही लिखित रूप में नहीं रखी जाती है। ग्रामकोष में भी सातत्य नहीं रहा है।

सामान्य तौर पर ज्ञाती आदि के बुजुर्ग लोग कार्यों का संचालन करते हैं। श्री गंगारामजी गाँव के प्रमुख व्यक्ति हैं। ग्रामदान के बाद गाँव इन्हींके नेतृत्व में चल रहा है। गाँव के अधिकांश लोगों का विश्वास इन्हें प्राप्त है। अभी एक-दो युवक भी काम में रुचि लेने लगे हैं। ब्राह्मण वर्ग नेतृत्व के प्रति उदासीन है। ग्रामदान के बाद सामूहिक निर्णय की प्रवृत्ति बढ़ी है। (क्रमशः)

तो इन्हीं लोगों के मारफत डरा-धमकाकर या लालच से किसी भी तरह प्राप्त किये जा सकते हैं। गरीब और भोली जनता में न वह जागृति है, न वह ताकत कि वह अपने मत का भी सही उपयोग कर सके, बगावत की बात तो दूर है।

सम्मेलन में यह चर्चा भी उठायी गयी कि विभिन्न प्रान्तों में भूमि की सीलिंग की जो मर्यादा अभी है उसे और नीचा कर दिया जाय। राजनैतिक लोगों के लिए शायद बेहयाई और निर्लज्जता की कोई सीलिंग या अधिकतम सीमा नहीं है। जब सीलिंग के कानून बनाये जाने के बाद भी वर्षों तक वे अमल में नहीं लाये जा रहे हैं, जैसे राजस्थान में, जहाँ अमल हुआ है वहाँ भी उसका मजाक ही हुआ है, जैसे बिहार और तमिलनाडु में, क्योंकि कानून से बच निकलने के इतने रास्ते उसमें छोड़े गये और ऐसा करने के लिए इतनी मोहलत दी गयी कि सीलिंग से ऊपर की जमीन की भूमिवालों ने अच्छी तरह 'व्यवस्था' कर ली और आज भी एक या दूसरे बहाने से जमींदार सैकड़ों क्या हजारों एकड़ जमीन का उपयोग कर रहे हैं तब फिर सीलिंग की मर्यादा को नीचा करने की प्रगतिशीलता दिखाने का क्या अर्थ है? इसी प्रकार खातेदारों और बटाईदारों की सुरक्षा की बात है। आजादी के बाईस वर्षों में भूमि-सुधार की बातें तो इतनी बढ़-चढ़कर की गयीं, पर गरीब किसान आज भी पटवारी जैसे छोटे-से-छोटे कर्मचारी की कृपा पर जोतना-बोता है। किस जमीन का कौन खातेदार है, इसका कोई पक्का लेखा अभी तक नहीं बनाया जा सका, जिसके बिना बेदखली रोकने या छोटे किसान को कानूनी सुरक्षा देने का कोई अर्थ नहीं है।

× × ×

दिल्ली में जो दंगल चल रहा है उसमें विरोधी कांग्रेस यह इल्जाम लगाती है कि प्रधानमंत्री साम्यवादियों की मदद से अपनी सत्ता कायम रख रही हैं। इतना ही नहीं, इस मौके का फायदा उठाकर साम्यवादी कांग्रेस में घुस-पैठ कर रहे हैं जिसके सबूत में वे 'नयी' कांग्रेस के अध्यक्ष श्री सुब्रह्मण्यम् द्वारा कार्यकारिणी में तीन ऐसे सदस्यों को लिया जाना पेश करते हैं जो पहले साम्यवादी पार्टी के सदस्य थे। उधर इन्दिराजी इस आरोप का खंडन करती रहती हैं। पर हमारे ख्याल से यह विवाद बिलकुल अनावश्यक है। स्वयं साम्यवादी क्या कहते हैं इस पर से इसका फैसला करना आसान है। भारतीय साम्यवादी दल के अध्यक्ष श्री श्रीपाद डांगे ने अभी कुछ दिन पहले बम्बई की एक आम सभा में साफ शब्दों में कहा था—'जब कांग्रेस के दो गुट आपस में लड़ रहे हैं तब' हमें चाहिए कि पहले "प्रगतिशील" (उनके ख्याल से) गुट का साथ देकर प्रतिक्रियावादियों और पूँजीपतियों को समाप्त करें और फिर दूसरे गुट को खतम करने की ओर बढ़ें।" स्वयं श्री डांगे के इस कथन के बाद 'पुरानी' कांग्रेस के लिए कहाँ जरूरी है कि वह इन्दिरा गांधी को या देश की जनता को साम्यवादियों की ओर से आगाह करे! —भाट, २-१२-'६९

सर्व सेवा संघ लोकसेवक संघ का कार्य करने में समर्थ

[बालासाहब भारदे महाराष्ट्र विधान-सभा के अध्यक्ष हैं। उनकी विनोबाजी के साथ हुई चर्चा यहाँ दी जा रही है।—सं०]

बालासाहब भारदे : मैं राजगिर के सर्वोदय-सम्मेलन में उपस्थित न हो सका। पता चला है कि वहाँ निर्वाचन (चुनाव) के बारे में चर्चा हुई। मैं जानना चाहता हूँ कि ग्रामदान में सर्व-सम्मति रहती है, तो क्या चुनाव में ग्राम-सभा का व्यक्ति चुना जाता है? दलों के कारण गाँवों में चुनाव प्रवेश करता है। तब सर्वसम्मति से चुनाव कैसे होंगे?

विनोबा : ग्रामदान का आज का काम कागज पर है। पहले गाँव के कानून द्वारा उसकी पुष्टि करनी होगी। बिहार में यह काम एक वर्ष में पूरा करने की योजना है। इस पुष्टि-कार्य में जमीन की व्यक्तिगत मालकियत गाँव के नाम पर चढ़ाना, गाँव में ग्रामसभा स्थापन करना और पाँच प्रतिशत जमीन भूमिहीनों को बाँटना—ये तीन बातें आती हैं। इसके बाद अगले वर्ष ग्राम-योजना बनाकर गाँव के बेकारों को काम देना, गाँव की पैदा-इश बढ़ाना, व्यसन-निवारण और गाँव के झगड़े तय करना—ये बातें करनी होंगी। ग्रामसभा सर्वसम्मति से बनती है। उस-उस मतदाता-संघ की ग्रामसभाएँ एकमत से अपना उम्मीदवार खड़ा करना तय करें तभी उम्मीदवार खड़ा किया जाय, अन्यथा नहीं। मान लें, बिहार के ६० हजार गाँवों में ४० हजार गाँव ऐसे निकले, तो भी चल जायगा। इसके प्रभाव से बहुमत के आधार पर काम किया गया तो गाँव में टुकड़े ही होंगे।

भारदे : गाँववालों द्वारा ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद 'ग्रामदान हो गया' ऐसा माना जाय या कानून के अनुसार उसकी पुष्टि होने पर ही?

विनोबा : गाँववालों द्वारा ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर विवाह के 'वाङ्निश्चय' जैसा ही समझिए। सगाई हो जाने के बाद भी कभी-कभी विवाह टूट जाते हैं।

भारदे : दलीय राजनीति के कारण आपका भविष्य सही सिद्ध हो रहा है। दलीय नेताओं की सुन्द-उपसुन्द की तरह आपसी लड़ाई को देख लोगों का ध्यान राजनीति से उठ गया है। लेकिन इसलिए वे लोकनीति की ओर मुड़े, ऐसा मात्र मैं नहीं मानता। कुछ कार्यकर्ता समझते हैं कि दलों से ऊबे हुए लोग दल-निरपेक्ष शक्ति की ओर मुड़ेंगे। पर ऐसे विवेक-शील लोग कम हैं। ऐसी स्थिति में जनता अविवेकी लोगों की ओर भी मुड़ सकती है। आजकल गुण्डागिरी, लुच्चेगिरी सिर उठाने लगी है। पहले आपने और सर्व सेवा संघ ने जो यह अपना मत प्रकट किया है कि "नैतिक मूल्य-सम्पन्न और मांगल्यमय जीवन जीनेवालों को ही वोट दिये जायँ", आज उसके पुनरुच्चार की आवश्यकता है। दस प्रतिशत सज्जन लोग स्वयं चुनकर न आने पर भी वे व्यसनी, शोषक और बुरे लोगों को चुन आने से पहले ही रोक अवश्य सकते हैं। राजनीति पर अंकुश ला सकते हैं। आज राजनीति में विवेक की कमी होती जा रही है और दबाव काम कर रहा है। इसलिए राजकीय उद्देश्य से नहीं, तो भी राजनीति पर प्रभाव डालने के लिए ऐसे सज्जनों का संघटन आवश्यक है।

विनोबा : इस विषय में मेरी आपसे सहमति है। स्वराज्य-प्राप्ति के बाद ही गांधीजी ने कांग्रेस का विसर्जन कर 'लोक-सेवक संघ' बनाने के लिए कहा। इस लोकसेवक संघ ने समय-समय पर मत-दाताओं की सूची सुधारने, उन्हें अच्छे-बुरे उम्मीदवारों के बारे में मार्गदर्शन करने जैसे काम किये होते तो कांग्रेस या शासन पर प्रभावशाली अंकुश रहता। वह सबसे बड़ा सेवा-संस्था मानी जाती, और उसके सामने सत्ता गौण बन जाती। कारण, कांग्रेस-संघटन दूर गाँवों तक पहुँच गया था। लेकिन सबको जोड़ने-वाले 'सीमेंटिंग फैक्टर' की जगह कांग्रेस को दलीय रूप प्राप्त हो गया है। नेहरूजी ने अपनी लोकप्रियता के कारण कांग्रेस को सम्भाले रखा। बाद में वह छिन्न-भिन्न हो गयी।

गांधीजी के जाने के बाद रचनात्मक कार्यकर्ता भी निराश हो गये थे। भूदान से उनकी जान में जान आयी। 'सर्व सेवा संघ' बना। आरम्भ में उसमें कोई शक्ति न थी। लेकिन पिछले २०-२२ वर्षों में उसने तपस्या की। करीब डेढ़ लाख गाँव ग्रामदान में आये। इसके लिए उन्हें तीन-लाख गाँवों में घर-घर जाना पड़ा। बाकी गाँवों में भी शीघ्र पहुँचने की उनकी योजना है। यह नयी शक्ति खड़ी होने में २० वर्ष प्रतीक्षा करनी पड़ी। अब जैसा कि आप कह रहे हैं, बुरी प्रवृत्ति और शासन पर दबाव डालने की शक्ति उसमें आ गयी है। इससे पहले यह किया जाता, तो फजीहत होती। अब सर्व सेवा संघ 'लोकसेवक संघ' का काम कर सकेगा। यह 'निगेटीव' शक्ति सर्व सेवा संघ में आ गयी है।

भारदे : स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद गरीबों का जो उत्थान अपेक्षित था, वह नहीं हुआ। कुछ जगहों पर लोग कम्यू-निज्म की ओर मुड़े। स्वतंत्रता के बाद इस देश में जो कानून का राज्य आना चाहिए था, उसे भ्रष्टाचार, घूसखोरी, नफाखोरी, लाल फीताशाही से सुरंग लग रहा है। गुण्डागिरी बढ़ रही है। आपके कथनानुसार स्वतंत्र जनशक्ति प्रत्यक्ष रूप में गाँव में खड़ी होने के लिए अभी देर है। ऐसी स्थिति में समर्थ रामदास स्वामी ने जैसी संघटना की, उसकी आज आव-श्यकता प्रतीत हो रही है। मद्यनिषेध शिथिल हो जाने से इस स्थिति में वृद्धि ही हुई। शासन को यह अपेक्षित न था और वैसा नहीं होगा, होने पर कड़ा बन्दोबस्त किया जायगा, ऐसा आश्वासन उस समय शासन की ओर से दिया गया था। गाँववाले पुलिस पर भरोसा रखकर जी नहीं सकते, क्योंकि गाँव में वह रहती ही है, ऐसी बात नहीं। सरकार को भी स्वयं को लोकतांत्रिक दिखाने के लिए

कुछ बुरी बातों को सहन लेने का सत्प्रवृत्त मोह हुआ करता है। ऐसी स्थिति में न्याय-प्राप्ति और अपने रक्षण के लिए सज्जनों की संघटना द्वारा लोगों में प्रतिकार-शक्ति निर्माण करने की आवश्यकता प्रतीत हो रही है।

विनोबा प्रतिकार-शक्ति के बारे में आपने जो कहा, उस सम्बन्ध में मेरा अपना मत यह है कि जो बात कानून द्वारा मान्य है, पर वह अमल में नहीं लायी जाती, वहाँ सत्याग्रह अवश्य किया जाय। प्रतिकार को वहाँ अवकाश है।

किन्तु जो बात कानून द्वारा मान्य नहीं और जहाँ लोकतान्त्रिक राज्य-व्यवस्था चल रही है, वहाँ विचार प्रचार करके लोकमत अनुकूल बनाया जाय। लेकिन यह लोकमत बनाने के लिए जो प्रचार-कार्य चलेगा, उसमें यदि बाधा डाली जाती हो, तो वह प्रतिकार और सत्याग्रह का विषय हो सकता है।

मैं बहुत बार कह चुका हूँ कि कानून द्वारा मान्य बातें भी न हो रही हों, तो अवश्य सत्याग्रह किया जाय।

सारा गाँव एक हो गया—फिर वह ग्रामदानी हो या अन्य, तो स्वभावतः दुर्जन पर दबाव पड़ेगा। आप सज्जन-शक्ति के बल पर प्रतिकार करने की बात कहते हैं। लेकिन यह ध्यान में रखना होगा कि गाँव में जबतक सज्जन के अनुकूल ग्रामसभा नहीं बनती, तबतक प्रतिकार करना कठिन होगा। सर्वसम्मति से सज्जन ही गाँव में चुनकर आते हैं, ऐसा होना चाहिए। भले ही दुर्जन बहुमत से चुन आयें, पर सर्वसम्मति से चुनाव यह सज्जनों की कसौटी बननी चाहिए। सर्वसम्मति यानी बिलकुल सौ प्रतिशत मत, ऐसा मानने का कोई कारण नहीं, नब्बे प्रतिशत मत अपने पक्ष में होने पर भी वह सर्वसम्मति जैसा ही है। ऐसी सर्वसम्मति-प्राप्त लोग बहुधा सज्जन ही होंगे।

जिसे आप पाप ही कहते हैं, उसका प्रतिकार होना ही चाहिए। कानून केवल नैतिकता मान्य बनाता है। पहले साधु-संतों ने, भक्तों ने पापाचरण के विरुद्ध एक वातावरण निर्माण किया था। वह काम आज शिथिल पड़ गया है। उस प्राचीन पद्धति का आधार लेना ही पड़ेगा। भक्ति और नीति के आधार पर शक्ति खड़ी की जाय। ऐसा होने पर प्रत्यक्ष प्रतिकार करना पड़ेगा। वैसी आवश्यकता ही आ पड़े तो कीजिए।

मारदे ग्राम-शुद्धि के लिए स्वतन्त्र सज्जन-संघटना होनी चाहिए। वे लोग चुनाव में नहीं पड़ेंगे। गाँव के दुष्ट प्रवाह और शासन पर नियंत्रण रखेंगे।

विनोबा इसमें कोई हर्ज नहीं। केदारनाथजी की व्यवहार-शुद्धि जैसा ही यह ग्राम-शुद्धि का विचार है। पर सज्जन कौन? इसकी व्याख्या मैं आरम्भ में कर ही चुका हूँ।

मारदे जमीन उतनी ही है, पर जनसंख्या बढ़ रही है। बेकारी बढ़ रही है। इसलिए बेकारी-निवारण, भूमिहीन मजदूर और अल्प भूमिधरों को कर्ज देने की अलग व्यवस्था की जाय। उन्हें जो कर्ज दिया जायगा, उसे धन्धे के लिए न मानकर यानी आवर्तक (पुनः लौटा देने) रूप न देकर 'सोशल सिक्यूरिटीज के रूप में दिया जाय, जो उनका जीवन-स्तर ऊँचा उठाने और आर्थिक दृष्टि से उन्हें सक्षम बनाने के लिए काम आये। अपनी प्राथमिक आवश्यकताएँ पूरी करने के बाद कुछ शेष बचता हो तो वह पैसा वापस भी कर दिया जाय। इसके लिए योजना-आयोग की नीति बदलनी होगी। आज वैज्ञानिक नियोजन चलता है। उसे 'ह्यूमैनिज्म' या मानवता का पुट नहीं रहा। आगे की योजना पिछली योजना के कई गुना यानी गुणाकार, जोड़ बाकी की पद्धति से चलती है।

इससे समाज के समग्र स्थित मूलभूत प्रश्न हल नहीं होता और लोग नक्सलान-पन्थ का आश्रय लेते हैं। जयप्रकाशजी ने इसकी चेतावनी दे दी है। उन्होंने नक्सालपन्थियों की वकालत नहीं की। प्रत्युत लोगों को परिस्थिति से शिक्षा ग्रहण करने के लिए कहा है।

इसलिए सरकार और नियोजन पर दबाव डाला जाय कि वे सबको काम दें। आपकी ओर सरकार का ध्यान नहीं और न आप सरकार पर अपना प्रभाव ही डालते हैं ऐसी सारी गड़बड़ी हो गयी है। ग्रामदान ठीक है। लेकिन यह हो जाने पर भी लोकतन्त्र की कुछ मर्यादाएँ तो हैं ही। साधनों की भी मर्यादाएँ हैं। इसलिए आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग की मदद श्री पागे द्वारा बनायी योजना कर रही है, जिसे आपने 'सुलभ ग्रामदान' कहा है।

विनोबा . इस विषय में नियोजन करनेवालों के साथ और सरकारी प्रमुखों के साथ मेरी कई बार बातचीत हो चुकी है। श्री पागे के साथ मेरी बातचीत हुई है। मैंने उसे 'सुलभ ग्रामदान' भी कहा है। लेकिन ग्रामदान को 'बाइपास' करके (एक ओर पटककर) आप ये बातें करना चाहें, तो वह सध नहीं पायेगा। वह ग्रामदान की पूर्वतैयारी हो सकती है।

योजना-आयोग के सदस्य रहते हुए सन् १९६४ में श्री श्रीमन्नारायण और श्री अशोक मेहता मुझसे मिले थे। उस समय मैंने उनसे सवाल किया कि 'आप लोग सब लोगों की न्यूनतम आवश्यकताएँ कब पूरी कर सकेंगे?' इस पर अशोक मेहता ने कहा था 'सन् १९८० तक हमें उसकी शक्यता नहीं दीखती।' तब मैंने कहा 'आप और १६ वर्ष तक राज्य करते रहेंगे, इसका क्या भरोसा? कौन कह सकता है कि उस समय विश्व और भारत की स्थिति कैसी रहेगी? आज जो सुखी हैं, उन्हें अधिक सुखी बनाने में क्या तुक है? आज जो डूब रहा है, उसे तात्कालिक आधार जरूरी है। उसे कल का दिन भी बताकर काम नहीं चल सकता।' मैंने उन्हें तुकाराम का प्रसंग सुनाया

'उदाराशी काय उधारीचे काम।'

(उदार के लिए उधारी की आवश्यकता ही क्या है?)

आप सीलिंग लगाते हैं। उत्पादन वृद्धि की योजना बनाते हैं, यह बुरा थोड़े ही है? लेकिन सभी गरीबों के लिए→

बादशाह खाँ का जन्म-दिन 'इन्सानी बिरादरी दिवस' के रूप में मनायें

खाँ अब्दुल गफ्फार खाँ को हमारे बीच आये लगभग छः सप्ताह हो चुके हैं। हममें से जिन लोगों ने उनकी बातों को सुना है, उनके लिए ये सप्ताह आन्तरिक पुनर्जागरण के क्षण रहे हैं।

दिल्ली हवाई अड्डे पर उतरते ही उनके मुँह से जो चन्द शब्द निकले, उन्हें कहकर उन्होंने जनता के मन पर अधिकार कर लिया और उनके हृदय को हिला दिया। ऐसा गांधीजी के जाने के बाद पहले नहीं हुआ था। विनोबाजी ने ठीक ही कहा है कि बादशाह खाँ के आने से लगता है कि खुद गांधीजी लौट आये हैं। ऐसा कहकर उन्होंने भारतीय जनता की भावनाओं की सही अभिव्यक्ति की है।

दलीय संघर्षों और जोरदार नारों के शोर से अप्रभावित रहकर उन्होंने हमें उन सरल सत्यों का स्मरण कराया है, जिन्हें हम भूल गये हैं। उन्होंने हमें इस बात के लिए फटकारा भी है कि हम गांधीजी द्वारा दिखाये गये सेवा और आत्मबलिदान के रास्ते से भटक गये हैं। जहाँ भी वे गये हैं, उन्होंने वहाँ प्रेम, भ्रातृत्व एवं शान्ति का संदेश प्रचारित किया है। शान्ति के एकाकी मिशन बनकर वे गुजरात उसी तरह गये, जिस तरह गांधीजी नोआखाली गये थे। उनकी पारदर्शी सच्चाई, उनकी अतिशय सरलता और उनकी गहरी करुणा की भावनाओं ने लाखों दिलों को हिलाया और उन्हें भी ऊँचा उठाया। जहाँ एक ओर सालगिरह-समिति को यह देखकर गहरी कृतज्ञता एवं संतोष की अनुभूति हुई है, वहाँ उसको इस बात की चिन्ता है कि यह देश बादशाह खाँ के शुभागमन से अधिक-से-अधिक लाभ कैसे उठाये।

इस उद्देश्य से समिति सभी प्रादेशिक समितियों, राजनीतिक दलों, सर्वोदय एवं सांस्कृतिक संस्थाओं, अन्य स्वयंसेवी संस्थाओं तथा सामान्य लोगों से निवेदन

जयप्रकाश नारायण

करती है कि बादशाह खाँ के स्वागत का जो कार्यक्रम निश्चित किया गया है, उसके अलावा बादशाह खाँ के जन्म-दिन *२४ दिसम्बर को सारे देश में इन्सानी* बिरादरी (मानव-बन्धुत्व) दिवस के रूप में मनाने का कार्यक्रम भी आयोजित करें। उस दिवस के लिए निम्नलिखित कार्यक्रम सुझाये जा रहे हैं, जो केवल नमूने के तौर पर है और इनमें अवसर के लायक समुचित संशोधन किया जा सकता है।

समिति इस मौके से लाभ उठाकर अपने देशवासियों को इस बात का भी स्मरण दिलाना चाहती है कि सर्वदलीय सालगिरह-समिति ने इस अवसर पर बादशाह खाँ को ८० लाख रुपये की थैली समर्पित करने की घोषणा की है। यह संकल्प हमने देश की जनता की ओर से किया है। बादशाह खाँ को यह थैली विभिन्न स्थानों पर जब वे राज्यों का दौरा करेंगे, वहाँ की स्वागत-समितियों के द्वारा भेंट की जायगी। अपने देशवासियों से हम पुनः अपील करते हैं कि वे इस महान कार्य के लिए उदारतापूर्वक दान देकर *निर्धारित लक्ष्यांक की पूर्ति में* सहायक हों।

२४ दिसम्बर का कार्यक्रम

१ सर्व-धर्म-समभाव के विकास के लिए सर्व-धर्म-प्रार्थना का आयोजन।

२ विभिन्न सम्प्रदाय और जाति के लोगों के बीच सहयोग का आयोजन।

३ साम्प्रदायिक एकता की भावना पर आधारित कवि-सम्मेलन, मुशायरा जैसे सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन।

४ साम्प्रदायिक दंगों में बर्बाद हुई मस्जिदों आदि का जीर्णोद्धार।

५ गरीब लड़के-लड़कियों (अल्पसंख्यक जमातों और पिछड़ी जातियों) के हेतु छात्रवृत्तियों की व्यवस्था।

६ बादशाह खाँ की आत्मकथा और उनकी तस्वीर के चित्रों की बिक्री।

७ विभिन्न समुदायों एवं जातियों के लोगों तथा विदेशी आगन्तुकों, विदेशी छात्रों, स्वयंसेवकों आदि के बीच व्यक्तिगत संपर्क साधने के लिए आवश्यक अन्य कोई कार्यक्रम।

८. इस समारोह के विशिष्ट कार्यक्रमों के आयोजन के लिए सार्वजनिक प्रचार साधनों का उपयोग करना।

९. इस समारोह के आयोजन में युवकों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं को प्रमुख भाग लेने के लिए आमंत्रित करना।

→आवश्यक जीवनस्तर आज बिना सुलभ कराये यह सारा बेकार है।

इसकी हामी ग्रामसभा और सरकार भरेगी। अकेली ग्रामसभा यह उत्तरदायित्व निभा नहीं सकती और न अकेली सरकार से ही वह निभ सकती है। मुख्य शक्ति नियोजन और ग्रामसभा की रहेगी और सरकार की उसे तत्पर मदद आवश्यक होगी। जगह-जगह ग्रामसभाएँ स्थापित की जायें और वे अपना कर्तव्य पूरा कर सरकार को भी बतायें। उस समय सरकार पर दबाव भी डाला जा सकेगा।

शारदे : ग्रामदानी गाँवों की ग्रामसभाएँ यह काम अपने सिर पर उठा लेंगी। लेकिन अन्य गाँवों में भी ग्रामदान के पूर्व ग्रामसभा स्थापित कर यह काम क्यों न चालू किया जाय?

विनोबा : ग्रामदान न होते हुए भी गाँव की ग्रामसभा स्थापित हो जाय, तो मुझे मान्य है। लेकिन उस ग्रामसभा को शीघ्र ही ध्यान में आ जायगा कि ग्रामदान अपरिहार्य है। मैंने देश के वैज्ञानिकों से प्रत्यक्ष भेंट में और आज घोषणा के रूप में बता दिया है कि ग्रामदान से भी सुलभ, अच्छी, शीघ्र फलदायिनी योजना आप लोग सुझाते हो, तो मैं उसे स्वीकार कर लूँगा। लेकिन मुझे अबतक ऐसा कोई नहीं मिला। एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री ने मुझे बताया कि इससे भिन्न हमें कुछ नहीं सूझता। —मूल मराठी से अनुदित।

अ०—वैजापुरकर शास्त्री

१० खास तौर से साम्प्रदायिक मेल के लिए स्वयंसेवकों और खुदाई खिदमतगारों को भर्ती करना।

११ पड़ोसीपन की भावना एवं मैत्री का प्रसार—गांधीजी का 'पड़ोसी धर्म', इस्लाम के 'हक-हमसायगी' और ईसाई के 'अपने पड़ोसी को अपने जैसा प्यार करो' आदि।

दस प्रतिज्ञाएँ

[हर खुदाई खिदमतगार संस्था में भरती होने से पहले इस प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर करता है।—सम्पादक]

खुदा की हाजिरी में मैं पवित्र भाव से निम्न प्रतिज्ञा करता हूँ

१ मैं ईमानदारी और दिल की सच्चाई से खुदाई खिदमतगार के नाते अपना नाम दर्ज कराने को तैयार हूँ।

२ मुल्क की सेवा के लिए और मेरे मुल्क की आजादी हासिल करने के लिए मैं हमेशा अपना आराम, अपनी जायदाद और अपना जीवन भी कुरबान करने को तैयार रहूँगा।

३ मैं दंगा फसाद और लड़ाई-झगड़ों में भाग नहीं लूँगा, न किसीके साथ झगड़ा मोल लूँगा या किसीके साथ दुश्मनी रखूँगा। मैं हमेशा जालिम के जुल्म से दुखियों की रक्षा करूँगा।

४. मैं किसी दूसरी संस्था का सदस्य नहीं बनूँगा और अहिंसक लड़ाई के दौरान कभी जमानत नहीं दूँगा, न माफी माँगूँगा।

५ मैं हमेशा अपने बड़े अफसरों के हर जायज हुक्म को मानूँगा।

६ मैं हमेशा अहिंसा के उसूल के मुताबिक जीवन बिताऊँगा।

७ मैं सारी मनुष्य-जाति की एक-सी सेवा-खिदमत करूँगा। मेरी जिन्दगी के सबसे बड़े मकसद होंगे—मुल्क की मुकम्मल आजादी और मजहबी आजादी।

८ मैं अपने सारे कामों में सचाई और पवित्रता का पालन करूँगा।

९ मैं अपनी सेवाओं के लिए किसी मेहनताने की उम्मीद नहीं रखूँगा।

१० मेरी सारी खिदमतें खुदा के कदमों में निसार होगी, दिखावे के लिए या ओहदा पाने के लिए नहीं होंगी।●

सम्पादक के नाम पत्र

महोदय,

बिहार राज्यदान पूरा हुआ, यह बड़े हर्ष की बात है। लेकिन ग्रामदान की प्रगति के साथ-साथ सामाजिक प्रगति तेजी से नहीं हो पा रही है। सामाजिक प्रगति की कसौटी है, स्त्री-जागृति तथा स्त्रियों की मुक्ति। दुर्भाग्य से अभी भी बिहार में स्त्री-कर्तृत्व प्रकट नहीं हो सका है। मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि भूदान ग्रामदान के प्रचार-कार्य में स्त्री-शक्ति के प्रकटीकरण का तो अभाव था ही, स्त्रियों की उपस्थिति की भी आवश्यकता नहीं मानी गयी थी। इसलिए पुष्टि-कार्य के लिए मैं विनम्रता से एक सुझाव पेश करना चाहता हूँ।

ग्रामसभा-गठन के बाद, ग्रामसभा में स्त्रियों की उपस्थिति तथा सम्मति अनिवार्य मानी जायें। जिस ग्रामसभा में स्त्रियाँ उपस्थित नहीं रहेंगी, उसके कार्य को स्थगित माना जाय, और वैसा घोषित किया जाय।

आशा है कि इस सुझाव पर गंभीरता से सोचा जायेगा।

—भाऊ रानडे
राष्ट्र सेवा दल, पूना (महाराष्ट्र)

ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य

'ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर-सहयोग से काम लेगा। क्योंकि हरएक देहाती के जीवन का सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और गाँव की इज्जत के लिए मर मिटे।'

—गांधीजी

अब समय आ गया है कि इस देश के बुद्धिवादी, किसान, मालिक, मजदूर, सभी इस बात पर विचार करें कि ग्रामदान हमें ग्रामस्वराज्य की ओर अग्रसर करता है या नहीं? यदि हमें जंच जाय कि हाँ, इससे हमें ग्रामस्वराज्य के दर्शन हो सकेंगे, तो यही अवसर है कि हम लोग इस पुण्य काम में तुरन्त लग जायें।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
जयपुर–३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

इंसान की चेतना और सत्ता की यातना

जैसलमेर के राजासाहब का निमन्त्रण था, और हम उनसे मिलने के लिए उनके महल में जा रहे थे। इससे पहले भी कई राजाओं के राजमहल—नये-पुराने—में जा चुके थे, लेकिन तब उन प्रदर्शन-गृह या अजायबघर में दर्शक की हैसियत से गये थे, किसी राजा (भूतपूर्व ही सही) से मिलने जाना, वह भी उसके आमन्त्रण पर, सर्वथा नयी घटना थी जीवन में, और इसीलिए जिज्ञासापूर्ण स्फूर्ति थी अन्तर में।

राजासाहब को ज्ञात हुआ था कि काशी से एक युवक आया है। समाज-सेवक है, साहित्यिक रुचि का है। बात शायद सन् १९६१ की है। अब तो सुना है कि जैसलमेर का सामरिक महत्त्व पाकिस्तान के साथ हुए युद्ध के बाद से अत्यधिक बढ़ जाने से उसका काफी विस्तार हो गया है, लगभग सालभर सूनी रहनेवाली सड़कों जैसी ही सीधे-सीधे पत्थरोंवाली विशाल इमारतें अब गुलजार हो गयी हैं। लेकिन तब जैसलमेर की जिन्दगी में उतनी उतावली और भागदौड़ नहीं थी, जैसी कि आमतौर पर नगरों-महानगरों में हुआ करती है। इसलिए मेरे जैसे अत्यन्त सामान्य युवक के जाने की बात भी राजमहल में पहुँच चुकी थी।

हमारे आतिथेय वहाँ के प्रमुख खादी-कार्यकर्ता थे। वे राजासाहब के पास आया-जाया करते थे। उन्होंने ही मेरे आने की बात वहाँ तक पहुँचायी थी, इसमें कोई सन्देह की गुंजाइश नहीं।

हमारे इन आतिथेय महोदय ने ही मुझे यह बताया था कि राजासाहब बहुत ही प्रगतिशील विचारोंवाले होनहार युवक हैं। नये विचारों को समझने के लिए हर-दम प्रस्तुत और उत्सुक रहते हैं।

पूर्वधारणाओं से ग्रस्त मेरे मन को 'राजा' और 'प्रगतिशील' के परस्पर-विरोधी शब्दों का मेल बहुत आकर्षक लगा था।

जैसलमेर के उस राजमहल की ऊँचाई में एक ऊँची पहाड़ी की बुनियाद विशालता को विराटता प्रदान करती है। दूर से ही वह विराटता दर्शक पर हावी हो जाती है 'इस विराटता का स्वामी कितना विराट होगा ?'

लेकिन हम तो मिलने जा रहे थे इस राजमहल में रहनेवाले एक प्रगतिशील युवक से। हमें उसकी विराटता से क्या लेना-देना था ? पहाड़ी पर चढ़ते-चढ़ते जब हम महल के मुख्य द्वार पर पहुँचे, तो सन्तरी सावधान हुए। द्वार इतना बड़ा था कि हाथी पर सवार होकर छत्रधारी महाराजा आराम से आ-जा सकें। एक के बाद एक बहुत-से दरवाजे पार करते हुए हम राजासाहब के मिलनेवाले कमरे में पहुँचे। बाहर की विराटता से अन्दर की भव्यता तक, एक अभिनव यात्रा थी वह मेरे लिए। सोचने लगा कि राजासाहब 'भूतपूर्व' नहीं हो चुके होते तो इस भव्यता के साथ ही भयंकर दहशत पैदा करनेवाले द्वारपालों के कितने चक्रव्यूह-भेदन करने पड़े होते।

लेकिन इस विराटता और भव्यता में रहनेवाले राजासाहब से मुलाकात हुई तो ऐसा लगा कि हम भारत के किसी सभ्य और सुशिक्षित नागरिक से मिल रहे हैं। राजा होने के नाते उस कमरे में सम्पन्नता के अलावा और कोई खास चीज नजर नहीं आयी, हमारी बातचीत दोस्ताना अन्दाज में हुई और राजासाहब हमें उस कमरे के दरवाजे तक छोड़ने आये।

यह घटना यद्यपि अभिनव थी, लेकिन ऐसी नहीं थी, जिसे स्मृतियों में संजोया जाय। लेकिन जब मैं एक बार एक प्रदेश के किसी एक ऊँचे अधिकारी से पूर्व-निश्चित समय पर मिलने पहुँचा, और अनेक चपरासियों के निर्देशों से गुजरते हुए सुबह का गया शाम को वापस लौट रहा था तो मुझे जैसलमेरवाली यह घटना याद हो आयी।

ऐसा तो नहीं हुआ कि इस घटना से मैं लोकतन्त्र को गाली देते हुए राजा और उसके साम्राज्य को वापस भेजने की भगवान से प्रार्थना करने लगूँ, लेकिन सुन्न राजशाही और युवक नौकरशाही का अन्तर स्पष्ट हो आया।

सिर्फ भारत के अतीत को भी सामने रखकर सोचें तो भी मनु से लेकर इति-श्री तक, समाज में न्याय और शान्ति-स्थापना के लिए विभिन्न प्रकार की सत्ताओं के उद्भव होते रहे हैं। एक लम्बे विकास की यात्रा-कथा है उस राजसत्ता से इस लोकसत्ता के विकास की। लेकिन न्याय और शान्ति की समाधानकारी स्थिति कहाँ है ? तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि पूर्णता की मंजिल तो ज्यामितीय बिन्दु-जैसी है, वहाँ कब कौन कैसे पहुँच सकता है ? इनकार करना कठिन है इस तर्क से। लेकिन उसके साथ ही वर्तमान जागतिक परिस्थिति को देखने पर यह शंका भी सहज ही पैदा होती है कि इस विकास-यात्रा में कहीं कोई बुनियादी चूक तो नहीं रही है ? राजतन्त्र से लोकतन्त्र तक की इस महायात्रा के बावजूद मानव समाज का बहुसंख्यक समुदाय क्यों आज भी दमित, पीड़ित और नारकीय स्थिति में जीने को बेबस है ? क्यों आज भी विज्ञान के चरमोत्कर्ष पर पहुँचकर दुनिया संहार की आशंका से त्रस्त है ? क्यों इन्सानों की लाशों से पटी धरती पर सत्ता के आसन में थिरकने इन्सान के पाँव शर्म से गड़ नहीं जाते, झूमते रहते हैं ? क्यों जब लोकतन्त्र के साथ मानवीय मूल्य की बात आती है तो इस तरह के प्रश्नों के कुहरे में डूबने लगता हूँ। एक असह्य पीड़ा चेतना में समा जाती है। (क्रमशः)

—रामचन्द्र राही

'भूदान-तहरीक'

उर्दू पाक्षिक

वार्षिक मूल्य : चार रुपये

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

मौत, जो अपनी कहानी स्वयं कह रही है

[अमेरिका आज वर्षों से वियतनाम में लड़ाई लड़ रहा है और लड़ाई के नाम पर अरबों रुपया खर्च कर रहा है। दोनों तरफ से हताहतों की सही संख्या का सिर्फ अंदाज मात्र लगाया जा सकता है। यह लड़ाई लोकतन्त्र की साम्यवाद से रक्षा के लिए लड़ी जा रही है, ऐसा कहा जा रहा है। परिणामस्वरूप रक्तपात व हत्याओं की बाढ़-सी आ गयी है। आजकल पेरिस में दोनों तरफ के प्रतिनिधियों के बीच शान्ति-वार्ता चल रही है।—सं०]

अमेरिका द्वारा वियतनाम पर भयंकर व विनाशकारी बमवर्षा, लूट-पाट, कत्ल, नृशंस हत्या, निर्मम व जघन्य कृत्यों की कहानी वर्षों से चल रही है। लेकिन दुनिया के सामने अभी हाल में आयी दक्षिणी वियतनाम के 'सांगमाई' नामक गाँव की नृशंस व जघन्य हत्याओं ने सभ्य जगत् की आत्मा 'कान्शियेन्स' को हिला दिया है। यहाँ उस हत्या का प्राप्त सूचनाओं के आधार पर एक चित्र प्रस्तुत है।

सन् १९६८ का मध्य मार्च महीना। सांगमाई के निवासियों के लिए सामूहिक मौत का यही भयंकर दिन था। वियतकांग हनोई रेडियो ने इस घटना का ब्राडकास्ट सारी दुनिया के लिए किया। लेकिन उस समय इसे शत्रु का प्रचार कहकर टाल दिया गया। इस जघन्य कृत्य और घटना से जो भी सैनिक सम्बन्धित थे उन सभी को खामोश रहने का आदेश दे दिया गया। लेकिन खून छिपता कहाँ है? यह तो अपराधी के सर पर चढ़कर बोलता है। इस रक्तपात को भी एक-न-एक दिन दुनिया के सामने आना ही था। तेईस वर्षीय रोनाल्डली रिडेन्ह नामक युवक, जो अब कैलिफोर्निया के पोमोना नामक स्थान में क्लेयरमांट कालेज में विद्यार्थी है, अपने वियतनाम निवास-काल में सुनी दर्दनाक कहानियों को पचा न सका। वह दिन-रात बेचैन रहने लगा। कई रातें उसकी नींद हराम हो गयी। वह स्वयं सांगमाई गाँव की घटना के समय मौजूद न था। लेकिन अमेरिकी सेना के पड़ावों के आस-पास जो चर्चा होती उसकी सचाई की वह बराबर जाँच करता रहा था। उसी समय उसने यह निश्चय कर लिया था कि वह सांगमाई की इस घटना को लोगों के सामने जरूर रखेगा।

रिडेन्ह ने प्रेसिडेण्ट निक्सन को एक लम्बा पत्र लिखा और उसकी प्रतियाँ प्रतिरक्षा तथा राज्य-विभाग के सेक्रेटरियों, सेना के प्रधानों तथा अमेरिका के कई सिनेटरों के पास भेजीं। जो स्वाभाविक था वही हुआ भी। पहले तो लोगों ने यही जानना चाहा कि यह रिडेन्ह आखिर है कौन! रिडेन्ह शान्ति-प्रदर्शनकारियों से सम्बन्धित न था, अत कोई भी चीज उसे उनके संगठन से सम्बन्धित सिद्ध न कर सकी। राष्ट्रपति-निवास के एक प्रवक्ता ने इस नृशंस हत्याकांड की भर्त्सना की और इसे 'अमेरिकी जनता की आत्मा को घृणित लगनेवाला कार्य' बताया।

रामभूषण

लेकिन लोगों की भर्त्सना और क्रोध के बढ़ते ज्वार को शान्त करने की दृष्टि से प्रवक्ता ने यह भी कहा कि राष्ट्रपति निक्सन को इस घटना की सूचना प्रतिरक्षा सेक्रेटरी मेलविन लेयर्ड ने महीनों पहले दी थी। मेलविन लेयर्ड महोदय ने स्वयं अपनी सफाई दी है। उनका कहना है कि राष्ट्रपति जानसन के समय में ही यह घटना हुई थी। लेयर्ड के पूर्ववर्ती क्लार्क क्लिफोर्ड ने यह कहा है कि स्वयं उन्हें इसकी जानकारी समाचार-पत्रों से मिली। अमेरिकी सेना-अधिकारियों ने भी जोरदार ढंग से कहा है कि वे भी इस घटना से अनभिज्ञ रहे हैं। लेकिन सिनेट की सैनिक-सेनाओं सम्बन्धी कमेटी की छानबीन के परिणामों से दो सिनेटरों की यह राय पक्की हो चुकी है कि इस हत्याकांड को 'पूर्वयोजना' के अनुसार छिपाया गया है। सिनेटर रिचर्ड श्वीकर और सिनेटर स्टीफेन यंग ने यह कहा है कि अमेरिकी सेना के अफसर जानबूझकर पर्दा कर रहे हैं। लेकिन उन्होंने यह भी कहा है कि ३०० से लेकर ७०० तक नागरिकों की इतने लम्बे-चौड़े पैमाने पर योजनापूर्वक की गयी नृशंस हत्याओं पर पर्दा डालना सम्भव नहीं है।

दर्दनाक कहानी

यह घटना इतनी हृदयविदारक है कि इसके सम्बन्ध में जब बन्द कमरे में स्लाइडें (फिल्माये चित्र) दिखाई जाने लगीं तो अमेरिकी सिनेट और हाउस आर्म्ड सर्विस कमेटी के कुछ सदस्य जघन्य दृश्यों को देखकर कै करने लगे। अमेरिकी कांग्रेस के रिपब्लिकन सदस्य श्री लेसली आरेंड्स तो दरवाजा खोलकर बाहर भागे। दिखाये जानेवाले चित्रों की भयंकरता उनके बर्दाश्त के बाहर हो गयी। सांगमाई गाँव की निरपराध माँ-बहनों, बच्चों-बूढ़ों तथा पशुओं तक की ये राक्षसी हत्याएँ इतनी अमानुषिक रही हैं कि इनका रहस्य सामने आने के लिए अमेरिकी कांग्रेस के कुछ सदस्यों को अत्यधिक जोर डालना पड़ा। विवश होकर अमेरिकी सेना को चीजें सामने लानी पड़ीं। ये स्लाइडें तो गुप्त रहस्यों की महज एक हिस्सा हैं। अमेरिकी सेना इस क्षेत्र में बदला चुकाना चाहती थी। उसका यह शुबहा था कि उसके सैनिकों के निरन्तर मारे जाने के पीछे गाँववालों का हाथ है।

मौत का दिन

सन् १९६८ के मार्च महीने की एक सुबह तड़के ही गाँववाले शरण लेने के लिए इधर-उधर छुपने लगे, क्योंकि घंटे भर तक तोपें उनके ऊपर आग उगलती रहीं। जब गोलाबारी रुकी तो हेलीकाप्टरों ने झपट्टा मारा और उसमें अमेरिकी सेना के ग्यारहवीं ब्रिगेड के तीन प्लैटून उतरे। एक प्लैटून झोंपड़ों में घुसा और बाकी दोनों ने गाँवों को घेर रखा। जो प्लैटून

गाँव में घुसा उसका नेतृत्व लेफ्टिनेंट कैली कर रहे थे। यह सज्जन अपने शिक्षालय में नितान्त असफल विद्यार्थियों में थे। कुछ सैनिक तो एक मकान से दूसरे मकान तक दौड़-दौड़कर उनमें आग लगाते और उन्हें डाइनामाइट से उड़ाते रहे। दूसरों ने गाँववालों को खदेड़-खदेड़कर उन्हें छोटे-छोटे झुण्डों में खड़ा कर दिया। और तभी उन पर जैसे मौत कहर उठी। छोटे बच्चों और बूढ़ों तक को बुरी तरह हलाल किया गया। इन जल्लाद सैनिकों ने जब गाँव छोड़ा तो वह मरे और अधमरे हुए लोगों का एक ढूहमात्र रह गया था।

अपने तरह की यह अकेली घटना नहीं है। सागमाई गाँव ऐसी चीजों के हद तक पहुँच जाने का एक नमूना है। लेकिन सागमाई में हुई नृशंसता की मिसाल मुश्किल है। दुनिया के सामने इस चीज के एक बार आ जाने के बाद अब और भी अवकाशप्राप्त सैनिक अपने-अपने कड़वे अनुभव बता रहे हैं। पिछले ही हफ्ते शिकागो के एक पत्र ने एक चित्र प्रकाशित किया है। इस चित्र में एक वियतनामी कैदी को हेलीकाप्टर द्वारा पाँच हजार फीट की ऊँचाई से गिराये जाते हुए दिखाया गया है। ऐसे काम अन्य वियतनामी छापामारों के बारे में जानकारी पाने के लिए किये जा रहे हैं। यह चित्र साथ उड़ रहे दूसरे हेलीकाप्टर के चालक द्वारा लिया गया था, जिसने उसे शिकागो के पत्र के पास भेजा। सागमाई के रहस्य-उद्घाटन को लेकर इतना हो-हल्ला मचा कि स्वयं राष्ट्रपति-निवास 'व्हाइट-हाउस' को भी इसके सम्बन्ध में स्पष्टीकरण करना पड़ा। पत्र की उपेक्षा संभव न थी, क्योंकि सेना को यह मालूम था कि उसके पत्र का एक एक शब्द सही है। इसलिए खोज-बीन करने का आर्डर देना ही पड़ा। सागमाई हत्या के लिए अमेरिकन कमांडरों में से एक, प्रथम लेफ्टिनेंट विलियम कलौंज कैली पर सागमाई गाँव के सौ नागरिकों की हत्या का अभियोग लगाया गया।

और भी चीजें सामने आयीं

लेकिन इस सनसनीखेज समाचार के बारे में अभी और भी चीजें सामने आनी थीं। रिडेन्हूर के पत्र ने शुरुआत जरूर कर दी। उसके पत्र के प्रकाश में आने के दो हफ्ते बाद ही अमेरिकी सेना और प्रशासन पर और एक गहरी चोट पड़ी। सेना के ही एक भूतपूर्व सैनिक ने टेलीविजन के सामने अपने द्वारा की गयी हत्याएँ इकरार कीं। बाईस वर्षीय पॉल-मीडलो नामक सैनिक ने, जो अब अपंग हो गया है, इन्टरव्यू में कहा "हमने उन्हें हाँककर एक जगह इकट्ठा कर दिया और फिर उन्हें बैठा दिया। तब लेफ्टिनेंट कैली आये और उन्होंने कहा, 'जानते हो इनके साथ क्या करना है?' मैंने कहा, 'हाँ जानता हूँ।' मैंने यह मान लिया कि हमें इन पर निगरानी भर करना है। लेकिन लेफ्टिनेंट कैली १०-१५ मिनटों में ही लौट कर बोले, 'तुमने अभी तक इन्हें मार नहीं डाला?' मैंने उनसे कहा, 'हमें क्या मालूम कि आप इन्हें मार डाले जाना चाहते थे। मैं तो समझता था कि आप इनकी सिर्फ निगरानी चाहते हैं।' उन्होंने कहा, 'नहीं, मैं इन्हें मरा देखना चाहता हूँ।' यही किया भी गया।"

पॉलमीडलो ने आगे स्वीकार किया "मैंने करीब ६७ फायर किये।" उसने यह भी कहा कि ७० से भी अधिक गाँव-वाले एक गड्ढे के किनारे तक ले जाकर उसमें ढकेल दिये गये, फिर उन पर गोलियों की वर्षा की गयी। फिर गोलियाँ एक-एक करके दागी गयीं, ताकि कुछ गोलियाँ बच भी रहें। पॉलमीडलो स्वयं दो बच्चों का बाप है। जब उससे पूछा गया कि खुद बाप होकर वह इतना निर्दयी कैसे हुआ, तो उसने कहा, "मुझे मालूम नहीं। यह तो ऐसी तमाम चीजों में एक है।" मीडलो की माँ ने अपने पुत्र की करामातों की पुष्टि करते हुए कहा, "जब से यह वियतनाम से लौटा है तभी से यह वहाँ की चीजों को भूल जाने की कोशिश में लगा है। यह स्नायुपीड़ित है और जैसे बौखला सा गया है। इसकी यह हालत बराबर बन रही है।" अमेरिकी पत्रों में इस हत्याकाण्ड को 'गम्भीर त्रुटि कुशल' कहा गया। दक्षिण वियतनाम के जिस क्षेत्र को वियतकांग ने अब स्वतंत्र कर लिया है, सागमाई उसके बीच में स्थित है। कांग्रेसी सदस्यों को जो चित्र दिखाये गये उनमें से एक में जान की भीख माँगती एक वियतनामी स्त्री को उसके शिशु के साथ गोली से भूने जाते हुए दिखाया गया है। दूसरे में ४-५ वर्ष के दो बच्चों की हत्या दिखाई गयी है। छोटे बच्चे को जब गोली लगी तो दूसरा बड़ा बच्चा, उसका भाई, उसे बचाने के लिए उस पर गिर पड़ा और उसने छोटे भाई को ढाँप लिया। फिर उस पर भी छः गोलियाँ बरसाकर दोनों को छेद दिया गया।

एक पखवारे से भी ऊपर समय से अमेरिकी जनता सागमाई के इस जघन्य कृत्य से स्तब्ध है। थोड़ा-थोड़ा करके इसका पर्दाफाश शुरू हुआ है। वैसे चीजें अभी पूरी शक्ल में सामने आयी नहीं हैं। साधारण अमरिकी जनता को अब तक यही बताया जाता रहा है कि वियतनाम में अमेरिका लोकतंत्र की साम्यवाद से रक्षा के लिए लड़ रहा है। आज वही जनता घबराकर यह पूछ रही है कि सागमाई की नृशंस हत्या और लिडीस तथा बाबीयार में नाजियों द्वारा की गयी हत्याओं में क्या फर्क है? वियतनाम के इस भयंकर रक्तपात से आज अमेरिका ही नहीं दुनिया की आत्मा व्यथित व त्रस्त है। •

आन्दोलन के समाचार

उत्तर प्रदेश में प्रखण्डदान-अभियान

राजगिर-सम्मेलन के पश्चात् आजमगढ़ जिले के कोयागंज ब्लाक से गांधी आश्रम के पूर्वी अंचल के स्थायी ग्रामदानी कार्यकर्ताओं द्वारा ग्रामदान-अभियान ११ नवम्बर से चलाया गया। २२ नवम्बर तक कोयागंज ब्लाक का ब्लाकदान ११९ ग्रामदान प्राप्त कर पूरा हुआ। २५ नवम्बर से पुनः सतरौलिया तथा कोलमा ब्लाक मे अभियान चल रहा है। ७ दिसम्बर तक ये दोनो ब्लाक भी पूरे हो जायेंगे। इस प्रकार आजमगढ़ मे २१ ब्लाकदान पूरे हो जायेंगे। जिलादान मे केवल ७ ब्लाक शेष रहेंगे, जिसे जनवरी तक पूरा करने का निश्चय वहाँ की ग्रामदान-प्राप्ति समिति ने किया है। उत्तराखड के कर्मठ कार्यकर्ताओं ने भी राजगिर से वापस जाते ही अल्मोड़ा जिले के लमगड़ा ब्लाक मे अभियान चलाया, जिसमे १८० कुल ग्रामो मे से १२९ ग्रामदान प्राप्त हुए हैं। दूसरा अभियान १८ नवम्बर से ताकुला ग्राम मे प्रारम्भ हुआ। दोनों ही ब्लाको के विकास-विभाग के कर्मचारी बहुत ही परिश्रम और कष्ट से गाँवो मे ग्रामदान प्राप्त करने मे जुटे रहे। उस ब्लाक के भी पूरा हो जाने की सूचना मिली है। प्रदेश के मध्यवर्ती रामपुर जिले मे १३ नवम्बर से शाहाबाद ब्लाक मे अभियान प्रारम्भ हुआ है। यहाँ पश्चिमी क्षेत्र के स्थायी कार्यकर्ता लगे हुए हैं। दक्षिणी क्षेत्र के जालौन जिले के कोंच तहसील के कोंच ब्लाक मे २६ से अभियान प्रारम्भ हुआ है। २५ को जिला-स्तर का शिविर और विचार-गोष्ठी हुई, जिसमे आचार्य राममूर्तिजी ने प्रभावशाली भाषण देकर शंकाओ का सही-सही समाधान किया। ७ टोलियाँ कोंच ब्लाक मे घूम रही हैं। पश्चिमी क्षेत्र के इटावा जिले के महेवा ब्लाक मे २६ नवम्बर से ही शिविर होकर अभियान प्रारम्भ है। उसके बाद अजीतमल ब्लाक मे अभियान प्रारम्भ होगा। इस प्रकार पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर-चारो क्षेत्रो मे एक-एक जिले के एक तथा दो ब्लाको मे अभियान जारी हुआ और आजमगढ़ मे ११२, अल्मोड़ा मे १३० ग्रामदान प्राप्त हुए, रामपुर-जालौन तथा इटावा की प्रगति अभी नहीं पहुँची है। —कपिलभाई

बुलडाणा जिले के नागरिकों का पराक्रम

महाराष्ट्र मे बुलडाणा जिले के संग्रामपुर प्रखण्ड के विकासखंड अधिकारी, कांग्रेस, किसान कामकरी पक्ष, रिपब्लिक आदि राजनैतिक पार्टियो के नेतागण, गुरुदेव सेवा मंडल के कार्यकर्ता, शिक्षक, सरपंच—सबने मिलजुलकर प्रचार-यात्रा करके ९० गाँवो मे ग्रामदान का संदेश पहुँचाया। ६६ गाँवो ने ग्रामदान-पत्रो पर हस्ताक्षर कर ग्रामदान का संकल्प किया। इस कार्य का संयोजन जलगाँव तहसील के कार्यकर्ता श्री वामनराव क्षीरसागर ने किया।

३ दिसम्बर को वरवट बकाल इस अर्थ-सम्पन्न बड़े ग्रामदानी गाँव मे ३० ग्रामदानी गाँवो के ५० प्रमुख नागरिको का सत्कार-समारोह हुआ।

प्रखण्डदान के कार्य को पूर्णत्व प्राप्त कराने की दृष्टि से पुष्टि और निर्माण-कार्य के लिए उपस्थित प्रमुख नागरिकों ने एक समिति गठित की। मराठवाड़ा मे श्री जयप्रकाशजी के आगामी कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए भी सबने मदद करने का तय किया। बी. डी. ओ. और उनके सहकारी साथी भी इस सत्कार-समारोह मे आये थे।•

मराठवाड़ा में जयप्रकाशजी

आगामी २७ से २८ दिसम्बर तक श्री जयप्रकाश नारायण महाराष्ट्र प्रदेश के मराठवाड़ा, ठाणा और पूना क्षेत्र में प्रचार-दौरा करेंगे। औरंगाबाद, बीड़, नांदेड़, परभणी और पूना, इन शहरों मे आपको स्वागत के समय थैली अर्पित की जायेगी। इस दौरे की पूर्वतैयारी की दृष्टि से महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष श्री गोविन्दराव शिंदे और श्री गंगाप्रसाद अग्रवाल ने ग्रामदान-कार्य को गति देने के लिए प्रचार-यात्रा की और स्वागत-समितियाँ बनायीं। परभणी जिले के कलमनुरी तहसील मे ग्रामदान-पदयात्रा चल रही है।

श्री जयप्रकाशजी ठाणा जिले मे भी जायेंगे। इस समय ठाणा का जिलादान उनको समर्पित किया जायेगा। इस जिले मे १५०० गाँव हैं, जिनमे से ११५० गाँवो का ग्रामदान हुआ। आचार्य भिसे के मार्गदर्शन मे ठाणा जिले मे ग्रामदान-पदयात्रा चल रही है।

श्री रा० कृ० पाटिल भी इन दिनों ठाणा जिले मे प्रचार-कार्य कर रहे है।•

विनोबाजी का पता

द्वारा—सर्व सेवा संघ
पो० गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र)

बापू की मीठी-मीठी बातें

मराठी वाङ्मय के शोभन-तारा कलाकार, आदर्श शिक्षक स्व० साने गुरुजी की लेखनी का यह प्रसाद हिन्दी पाठकों, खासकर किशोर वय के बालकों को खूब ही मीठा-मीठा लगेगा।

पुस्तक के पहले भाग के ५ खण्डों में गांधीजी की ५८ तथा दूसरे भाग के ५ खण्डों मे ६३ घटनाओं का रोचक वर्णन है।

मूल्य : पहला भाग : रु० १-५० और दूसरा भाग : रु० १-५०।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी—१

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज: ११ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २० रु०, या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

इंसानी बिरादरी (?)

मज़हब सियासत के साँचे में
ढले हुए जिस्म
रूहानी जज़बातों को
नज़र अन्दाज़ करते हैं,
हिलते हैं, डुलते हैं,
हरकतें करते हैं,
एक कड़ी जकड़न की और जोड़ देते हैं।
काल की
गर्द जमी परतों के धुंधलके का घनत्व
कुछ और बढ़ा लेते हैं।

× × × ×

खुद के ही भीतर के
खुदा के ही बन्दे 'इंसान' को
कब्र में मसमस दफनाते हैं,
चाँद पर
अपने पड़ोसी इंसान के
रक्त में सने हुए बेहद नापाक अपने कदम
धर आते हैं!

× × × ×

ईश्वर, धर्म और सियासत की
सम्मोहक किरणों के जाल में
फँसी हुई, अन्धी हुई,
आँखोंवाले
करोड़ों-करोड़ जिस्मों का गुमराह काफिला
लाशों से पटी हुई धरती को रौंदता
स्वर्ग का सफ़र तय कर रहा है,
सदियों से!

× × × ×

और तुम कहते हो—
'अपने जिस्म के भीतरी इंसान को बचाओ,
अपनी बिरादरी के दायरे बढ़ाओ,
पड़ोसी पर प्यार बरसाओ,
नज़रों के सम्मोहन,
पलकों की गर्द और
जिस्म की जकड़न मिटाओ।
कैसे हो अजीब इंसान तुम?'

—राही

खान अब्दुल गफ्फार खाँ : ८० वीं जयन्ती। (२४ दिसम्बर '६९)

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वर्ष : १६ अंक : १२
सोमवार २२ दिसम्बर, '६९

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट वाराणसी-१
फोन : ६४१८५

'हुकूमत सेवा के लिए,' 'पैसा इमदाद के लिए'

— सीमांत गांधी बादशाह खान की मार्मिक अपील —

मैं रात भर जागता रहा और सोचता रहा कि मुझे आपको क्या कहना है। हमारी पुश्तो में एक कहावत है

"दोस्त बदे उजड़े—दोस्त रुला देगा, दुश्मन बद उखद दुश्मन हमें हँसा देगा।"

मैं अपने को हिंदुस्तान का दोस्त और आपका खैरख्वाह समझता हूँ। २३ साल बाद मैं यहाँ आया हूँ। हिन्दुस्तान की आजादी की जंग में १५ साल मैंने गुजारे और मेरे साथ हजारों खुदाई खिदमतगारों ने भी गुजारे हैं। अफसोस की बात है कि सन् १९४७ के फैसले के वक्त हमसे किसीने पूछा तक नहीं। हमें भेड़ियों के हवाले कर दिया। पंजाब-बंगाल के बँटने पर वहाँ भी एसेम्बली में पूछा गया। जहाँ पर विभाजन भी नहीं था, एसेम्बली से नहीं पूछा गया। हमसे 'रेफरेण्डम' (जनमत) मुकर्रर किया गया। कई लोग कहते हैं, हमने 'रेफरेण्डम' में हिस्सा नहीं लिया। हम कैसे लेते? कांग्रेस ने हमें छोड़ दिया। मुस्लिम लीग का साथ हम कैसे देते? १५ साल उन्होंने मुझे जेल में रखा। पाकिस्तान तो हमारी कुरबानियों से आजाद हुआ। वे हमारे हमकौम हैं।

भारत आने में दो बातें मेरे सामने थीं—एक, गांधी-शताब्दी और दूसरी, इस देश की हालत। इस देश के लिए गांधीजी और हम लोगों ने कुरबानियाँ कीं। मैं अभी गुजरात से आया हूँ। गांधीजी के प्रदेश में इस बार गया। पहले जब मैं गांधीजी के साथ गया था तो मैंने वहाँ प्रेम देखा, सेवा, अहिंसा, खुदा के मख्लूक की खिदमत देखी। अब नफरत, खुदगर्जी, हिंसा, लूटमार देखी। मुझे बहुत अफसोस है कि आप लोग गांधीजी को इतनी जल्दी भूल गये। आपने नुकसान अपना किया। आप अपने देश को देखें कि क्या हालत है! आजादी को आज २२ साल हो गये, पर खाने को अनाज हमें बाहर से मँगाना पड़ता है। आजाद होने पर भी बाहर से पैसा मँगाना पड़ता है! जर्मनी और जापान आज कितने आगे हैं! हम उनसे भी पैसा माँगते हैं। ५० करोड़ का मुल्क पीछे क्यों?

मैं कहूँ तो हम लोगों ने पाप किया है। नाशुक्रगुजारी खुदा के यहाँ पाप है। गांधीजी की बदौलत ही हमें आजादी मिली है, हमने उन्हें फरामोश कर दिया है।

मेरा दूसरा काम था हिन्दुस्तान के हालात देखूँ। उसकी जनता देखूँ। जब हम अंग्रेजों से लड़ते थे तो कहा जाता था कि अंग्रेजों के चले जाने पर इस मुल्क की बेहतरी होगी। मैं देहात में जाता हूँ, कौम तो देहात में रहती है। वहाँ तो वही पुराना छप्पर, वही तकलीफ। वहाँ की जिन्दगी को मैं जिन्दगी नहीं समझता। मैं यहाँ आपसे सलाह-मशविरा के लिए आया हूँ। हमें बैठकर सोचना चाहिए कि यह क्यों हुआ? सिर्फ बात ही न करें, बल्कि काम करने में लगें।

अगर चेतेंगे नहीं तो और बुरे दिन आयेंगे। इस मुल्क में मन्दिर-मस्जिद, शिया-सुन्नी, ब्राह्मण-गैरब्राह्मण, सब किस्म के झगड़े हैं। मजहब का झगड़ा, हिन्दू-मुस्लिम का झगड़ा, मुझे बड़ा अफसोस है कि हम धर्म को नहीं समझे। धर्म के नाम पर जो झगड़े होते हैं, वे बेइल्म, मजहब से नावाकिफ लोग करवाते हैं। मजहब के नाम पर लोग धोखा देते हैं। धर्म तो प्रेम है, हमदर्दी है, अहिंसा, इमदाद है, खुदा के मख्लूक की खिदमत है। जो लोग धर्म को भूल जाते हैं और इन्सानियत से गिर जाते हैं वहाँ खुदा एक आदमी को भेजता है। क्या भारत के मुस्लिम अछूत की तरह इस देश में रहें? न वे पाकिस्तान जा सकते हैं और न उनको मार डाला जा सकता है। आपस का यह झगड़ा, गरीब को ही नुकसान पहुँचाता है। खुदगर्ज लोग इसे मजहबी जंग बनाना चाहते हैं। कौम

(शेष पृष्ठ १८२ पर)

कुष्ठ-निवारण के लिए ग्रामसभाओं का आधार

— विनोबा —

ऐसे माइक के सामने बोलने में भी कोई दोष नहीं था, लेकिन सूक्ष्म-प्रवेश के नाम से मैंने एक ढोंग शुरू किया है। ढोंग ही सही, और उसे शुरू किया है, तदनुसार यह करना पड़ता है। 'जस काछिय तस चाहिय नाचा'—यह तुलसीदासजी का आदेश है। तदनुसार मैं मौखिक रूप से अपना निवेदन पेश कर रहा हूँ। दुखितों की सेवा करनेवाला परमात्मा को जितना प्रिय हो सकता है उतना शायद ही और कोई प्रिय हो सकेगा। इसलिए परमात्म-सेवक, अत्यन्त आदरणीय लोग आप हैं, तो भक्तिभावपूर्वक प्रणाम से मैं आरम्भ करता हूँ।

हमारे-आपके सामने जो कुछ हिसाब पेश किया गया है, उसमें बताया गया है कि भारत में २५ लाख के लगभग कुष्ठी होंगे। मालूम नहीं, यह कितना ठीक होगा क्योंकि अपने रोग को छिपाने की प्रवृत्ति आज भी है, वह गयी नहीं, अगर्चे डाक्टर समझाते हैं और वह ठीक समझाते हैं कि इसको छिपाने की जरूरत नहीं है। प्रकट करने से वह जल्द-से-जल्द अच्छा हो सकता है और इसके उत्तम उपाय प्राप्त हो गये हैं। इस वास्ते निराश होने का कोई कारण नहीं, जिनको या है उनको और जिनको नहीं हुआ है उनको भी, इससे डरने का कोई कारण नहीं कि अपने इन भाइयों से नफरत करें। यद्यपि यह सब कहते हैं, फिर भी लोग छिपाते तो हैं। उसका मतलब यह हुआ कि वास्तविक संख्या २५ लाख से ज्यादा भी हो सकती है। हिन्दुस्तान में ५ लाख गाँव हैं और कुछ शहर हैं, सब मिलकर हम ६ लाख स्थान मानें तो औसत हर स्थान में आपके अन्दाज के मुताबिक चार रोगी होंगे, ज्यादा ही होंगे। कुछ प्रान्तों में कम होंगे और कुछ प्रान्तों में ज्यादा होंगे।

कुष्ठ-निवारण और ग्रामसभा

मैं सोचता था कि इसके साथ 'डील' करना ग्रामसभाओं के लिए सुलभ होगा। यानी ग्रामसभाओं के द्वारा यह सेवा करायें। इस प्रकार से सेवा करायें तो शायद सारे भारत में सब लोगों के पहुँचना हमारे लिए अधिक सुलभ होगा और शक्य होगा, ऐसा मेरे मन में आया। ग्राम-सभा की स्थापना करना-कराना बहुत बड़ा व्यापक काम है, तो वह काम अपने क्षेत्र का ही मानकर करना चाहिए। आपको यह अपेक्षा नहीं करनी चाहिए कि ग्रामसभा बनानेवाले दूसरे होंगे। दूसरे तो होंगे ही लेकिन केवल दूसरे ही होंगे और फिर हम काम करायें, यह अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। हमको यानी आपको, इन सेवकों को, कुष्ठ-रोगियों के सेवकों को भी, ग्रामसभा बनाने में 'इण्टरेस्ट' (रुचि) होना चाहिए और उधर ध्यान देना चाहिए।

पुराने रोग मौजूद, नये रोगों का जन्म

यह रोग बहुत ही पुरातन है, ऐसा दिखता है। इन दिनों नये-नये रोग भी पैदा हुए हैं। डाक्टरों की एक बहुत बड़ी 'कान्फ्रेन्स (सम्मेलन) यूरोप में हुई थी। उसमें डाक्टरों ने सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव किया कि अजीब बात है कि डाक्टरों की संख्या खूब बढ़ी है और उसके साथ-साथ रोगियों की संख्या भी बढ़ी है और नये नये रोग भी बढ़े हैं। तो क्या किया जाय? नये रोग उत्पन्न हो ही रहे हैं और कुछ पुराने हैं। लेकिन जो अभी तक निर्मूल हुए नहीं, उनमें जो पुराने रोग थे, उनमें से कुष्ठ का एक स्थान है। वेद में भी इसका वर्णन किया गया है घोष को भी यह रोग हुआ था। उसके लिए उसने भगवान अश्विनीकुमार की प्रार्थना की और उनकी कृपा से उसका रोग दुरुस्त हुआ था, इस आशय का कथन ऋग्वेद में आता है। तो अश्विनीकुमार की प्रार्थना का मतलब सरल है। वह पुराने वैद्य थे—देवों के वैद्य अश्विनीकुमार। कुछ औषधि दी गयी होगी तथा उसके साथ-साथ प्रार्थना जोड़ दी होगी। दोनों मिलकर रोग दुरुस्त हुआ होगा, ऐसा इसका अर्थ हो सकता है।

औषधि और प्रार्थना

जब मुझे प्रार्थना का स्मरण हुआ तो

लन ने 'स्वायत्त ग्रामसभा' को अपना पहला सत्व, तथा सरकार की शक्ति को लोकशक्ति की पूरक शक्ति माना है।

ग्राम-स्वराज्य की व्यवस्था में सरकार के हस्तक्षेप से मुक्त होकर नागरिक-शक्ति निरन्तर परस्पर सहकारी, रचनात्मक और नैतिक होती चली जायगी। नैतिकता के विकास की दिशा ग्राम-स्वराज्य से रामराज्य की दिशा होगी। रामराज्य पूर्ण तब होगा जब किसी सुदूर भविष्य में सरकार और व्यवस्था में से दण्डशक्ति का लोप हो जायगा। यही शान्ति का आरोहण (परमानेन्ट रेवोल्यूशन) है। इसमें केवल क्रान्ति नहीं, बल्कि स्थायी शान्ति की कल्पना है।

आज भी नागरिकों की नैतिक शक्ति काफी हद तक जगायी और संगठित की जा सकती है, अगर रास्ते में से राजनीति हट जाय। राजनीति नागरिक को नागरिक से मिलने नहीं देती, और तरह-तरह के स्वार्थ और भय दिखाकर उसे सत्ता के संघर्ष में साधन बनाती रहती है।

अजयबाबू ने नैतिक शक्ति की पुकार लगाकर एक बड़ा काम किया है, भले ही उनकी पुकार का तत्काल कोई बड़ा परिणाम न हो। जरूर उनका 'सत्याग्रह' अन्दर-अन्दर प्रभाव पैदा करेगा। उनके उपवास ने नागरिक को परिस्थिति की प्रतीति करायी है। उन्हें अब प्रतीति से आगे बढ़कर परिस्थिति से निकलने का उपाय भी बताना चाहिए। अगर तीन दिन का सत्याग्रही चौथे दिन से फिर उन्हीं मजबूरियों का शिकार हो जायगा जिनका शिकार वह तीन दिन पहले था तो शायद उसका सत्य अधूरा रह जायगा और आग्रह अपना प्रभाव खो देगा। जिस परिस्थिति की प्रतीति अजयबाबू ने कराने की कोशिश की है उस सम्पूर्ण परिस्थिति से विधायक विद्रोह करने की शक्ति नागरिक में आनी चाहिए।●

मुझे याद आया। हमारे एक डाक्टर आपके बीच बैठे हैं। उनकी उम्र ८० साल की होगी। लेकिन अभी भी सेवाकार्य में बराबर रत हैं। उनके तपोवन में जाने का मुझे मौका मिला था। उस स्थान का नाम इन्होंने 'तपोवन' दिया है, जो कुटियों के लिए सुन्दर स्थान बनाया है। वहाँ एक वाक्य लिख रखा है—"हम डाक्टर औषधि देते हैं, लेकिन रोग भगवान दुरुस्त करते हैं।" यह वाक्य जबसे मैंने पढ़ा तब से वह कभी भूला नहीं। यह ठीक बात है। रोग प्रधानतया प्रार्थना से दुरुस्त होता है, जो औषधोपचार हम करते हैं वह स्थूल है। हर एक बीमारी में आजकल यह बात मानी हुई है कि रोग दुरुस्ती में 'साइकोलॉजिकल फैक्टर', (मनोवैज्ञानिक तत्त्व) है। मानसशास्त्र का असर होता है। मानव के ५० प्रतिशत रोग उस प्रक्रिया से दुरुस्त हो जाते हैं। बचा हुआ जो भाग होता है उसके लिए जो औषधोपचार मालूम है वह देते हैं तो उसका उपयोग होता है।

ईसा अव्यक्त पुरुष

मुझे बहुत बड़ा आदर मालूम होता है जब हम ईसाई मिशनरियों की सस्थाओं को देखते हैं। वे केवल औषधोपचार पर विश्वास नहीं रखते, बल्कि प्रार्थना में रखते हैं। वे रोगी के पास बैठकर अत्यन्त एकाग्र चित्त से परमेश्वर की प्रार्थना करते हैं। यह अलग बात है कि उनके मन में यह गलत भाव बैठ गया है कि जो भगवान ईसामसीह की शरण में आयेगा उसका ही तारण है, अन्यथा तारण नहीं है। यह गलत विचार उनके मन में बैठा है। इसको मैं जगह-जगह समझाता हूँ। वे भी अब समझ रहे हैं कि अगर ईसा के नाम से ही मनुष्य तरेगा तो उसको हुए तो केवल दो हजार ही साल हुए और मानव तो १० लाख वर्ष से है। तो उनके पूर्व क्या सब 'वेस्ट' हो गए, 'कंडेम' हो गये। ऐसा तो हो नहीं सकता था। इस वास्ते ईसामसीह 'इम्मेंजेन्ट स्पिरिट' है, ऐसा मानना चाहिए और वह बयान किया भी है—'जीसस फार एवर, एस्टरडे, टुडे एण्ड फारएवर'। इसका मतलब वह एक सनातन पुरुष है।

उस दृष्टि से देखा जाय तो रामजी का नाम लेनेवाला, श्रद्धापूर्वक प्रार्थना करनेवाला जो होगा वह भी तरेगा। ईसा की प्रार्थना करनेवाला भी तरेगा। यह सारा मैं समझाने की कोशिश करता हूँ और मुझे कहने में खुशी है कि धीरे-धीरे वे इस विचार को ग्रहण कर रहे हैं। परन्तु उनकी अपनी निष्ठा क्राइस्ट के नाम पर जो है, उसका मैं दोष नहीं देता। उस नाम के आधार से वह प्रार्थना करते हैं, यह बहुत उत्तम कार्य वे करते हैं ऐसा मैं मानता हूँ।

मेरे प्यारे भाइयो, मैं एक 'ले मैन' के नाते आपसे कह रहा हूँ। नथिंग ले मैन' होते हुए भी मुझे १३-१४ साल की पदयात्रा के कारण हिन्दुस्तान के अनेक गाँवों का प्रत्यक्ष परिचय है। उतना परिचय आज शायद बहुतों को नहीं होगा। इस वास्ते इस रोग के सिलसिले में कुछ सुनने का, देखने का मुझे मौका मिला है, उस पर से मेरे मन में कुछ विचार आ जाते हैं वह मैंने आपके सामने रखे। आप जो काम कर रहे हैं, उसके लिए फिर से आप लोगों का अभिनन्दन करके मैं समाप्त करता हूँ।

('लेप्रोसी फाउण्डेशन' के उद्घाटन के अवसर पर उपस्थित कार्यकर्ताओं के बीच सेवाग्राम १४-११-'६९)

भारत में कुल ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

(१ दिसम्बर '६९ तक)

प्रान्त	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान	नयी प्राप्ति : १ अक्तूबर से १ दिसम्बर तक ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान
बिहार	६०,०६४	५७३	१४		२३	
उत्तरप्रदेश	३५,७०९	९०७	६	१,३५७	२०	१
तमिलनाडु	१०,६०४	१८३	४	—	—	—
उत्कल	१२,६८८	७०	१	—	—	—
मध्यप्रदेश	७,९२४	३९	५	१,२९६	६	१
आन्ध्र	४,७३१	१४	१	—	—	१
महाराष्ट्र	६,०८०	२२	—	८०	५	—
पंजाब संयुक्त	३,०८८	७	—	—	—	—
राजस्थान	१,७३३	१	—	४१	—	—
असम	१,६८२	१	—	—	—	—
मैसूर	१,१७६	६	—	११६	१	—
गुजरात	१,०८०	३	—	—	—	—
प० बंगाल	७३८	—	—	—	—	—
केरल	४१८	—	—	—	—	—
दिल्ली	७८	—	—	—	—	—
जम्मू कश्मीर	१	—	—	—	—	—
कुल	१,४०,१३८	१,०७४	३२	४,९३०	५४	३

प्रदेशदान—१ बिहार

नये जिलादान—गाजीपुर (उ० प्र०), देवास (म० प्र०) और कडप्पा (आन्ध्र)।

सकल्पित प्रदेशदान—७ तमिलनाडु, उत्कल, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, पंजाब।

विनोबा निवास, गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र)

—हरगराव मेहता

खाती की ढाणी : आर्थिक सर्वेक्षण : २ :

[गत अंक मे आपने राजस्थान के एक गाँव 'खाती की ढाणी' का सामान्य परिचय प्राप्त किया। अब प्रस्तुत है उसकी आर्थिक स्थिति का सर्वेक्षण। सर्वेक्षण का यह क्रम आगे भी चलेगा और समाज का आखिरी तबका किस तरह रहता और किस तरह जीता है, इसका परिचय मिलेगा।—सं०]

भूमि और उसका वितरण

यहाँ की भूमि बलुई दोमट है। रेतीली भूमि होने के कारण मुख्य फसल खरीफ की होती है। गाँव के सभी लोग खेती करते हैं। एक भी भूमिहीन नहीं होने के कारण सबको खेती का काम रहता है। सामाजिक दृष्टि से सभी लोग श्रमिक वर्ग मे आते हैं। ब्राह्मण भी खेती का काम करते हैं। स्त्री-पुरुष सभी खेत में काम करते है। गाँव की भूमि को दो वर्गों मे विभाजित कर सकते हैं : (१) ऐसी भूमि जो ऊसर, चारागाह तथा रास्ता आदि है। (२) ऐसी जमीन जो खेती के काम मे आती है।

गाँव में कुल १५०० बीघा जमीन है। इसमे से ६०२ बीघे मे खेती होती है। शेष ८९८ बीघा जमीन ऊसर, चारगाह रास्ता, मकान तथा बाग है। वर्तमान समय मे भूमि-वितरण इस प्रकार है —

सारणी संख्या—२

भूमि-वितरण

श्रेणी (बीघा मे)	परिवार-संख्या
१ से ५ बीघा तक	०
६ से १० "	१२
११ से २० "	१४
२१ से ३० "	६
३१ से ४० "	२
कुल	३४

कम-से-कम भूमिवाले परिवार के पास ८ बीघा जमीन है। सबसे अधिक जमीन श्री रिछपाल के पास ५० बीघा है। प्रति व्यक्ति खेती योग्य भूमि २ बीघा ६ बिस्वा है। जिस भूमि पर खेती होती है वह उपजाऊ है। रेतीली जमीन होने के कारण पानी का अभाव अधिक रहता है। अच्छी वर्षा होने पर ही बरसाती खेती हो सकती है। गाँव मे कुल २० कुएँ हैं, जिनमे खेती की जाती है। इन कुओं से करीब ४० बीघा जमीन सींची जा सकती है। यहाँ सिंचाई का एकमात्र साधन कुआँ है। आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण पानी निकालने का साधन मोट है। रहट तथा अन्य विकसित साधनो का उपयोग पिछले तीन वर्षों से प्रारम्भ हुआ है। खेती के अब परम्परागत हैं। मुख्य फसल बाजरा, जौ, गेहूँ, मूंगफली है। बाजरे की खेती पूर्णतया वर्षा पर निर्भर है। गेहूँ तथा जौ कुओं के पास की जमीन मे बोये जाते हैं इस कारण करीब ४० बीघा मे इसकी खेती होती है। नकद आय के लिए प्रायः सभी मूंगफली की खेती करते हैं।

मुख्य पेशे खेती तथा बढ़ईगिरी है। हर परिवार खेती के साथ कुछ सहायक धन्धा भी करता है। पेशे की दृष्टि से परिवार-विभाजन इस प्रकार है—

सारणी संख्या—३

पारिवारिक पेशेवार विभाजन

परिवार-संख्या

	पेशा	खाती	ब्राह्मण
१	खेती	३०	४
२	बढ़ईगिरी	१३	
३	मजदूरी	७	
४	अन्य कार्य	४	२

गाँव मे १३ खाती परिवार बढ़ई का काम नियमित रूप से करते हैं। ४ खाती परिवारो का सहायक धन्धा दूकानदारी है। ये गाँव से बाहर दूकानदारी करते हैं। परन्तु गाँव मे महाजनी का काम नहीं करते हैं। कुछ लोग मजदूरी करते हैं, परन्तु नियमित नहीं। अधिकांश ब्राह्मण खेती से अपनी जीविका चलाते हैं। ब्राह्मण परिवारों की जीविका का आंशिक आधार जजमानी है। खाती परिवार, जो कि बाहर बढ़ई का काम करते हैं उनकी प्राय निश्चित आमदनी होती है। एक व्यक्ति प्रतिदिन प्राय ३ रु० कमा लेता है। पिछले दो वर्षों मे विभिन्न कार्यों से पूरे गाँव की आनुमानिक आमदनी इस प्रकार रही—

सारणी संख्या—४

ग्रामीण आय का कुल विभाजन

रुपयों मे

आय के स्रोत	१९६५–६६	१९६६–६७
खेती	३२९७०)	३२८२०)
बढ़ईगिरी	१८८००)	१७१००)
दूकानदारी	४५००)	४५००)
मजदूरी तथा अन्य	४८४०)	४७५०)
ब्याज	५००)	५००)
कुल योग	६१६१०)	५९६७०)

स्पष्ट है कि गाँव मे मुख्य आय का स्रोत खेती और बढ़ईगिरी है। उपरोक्त ५ स्रोतो के अलावा अन्य कोई स्थायी आय का जरिया नहीं है। यही कारण है कि सभी लोग दिन-रात खेती तथा अन्य घरेलू कार्यों मे लगे रहते हैं। गाँव की पूरी आमदनी का आधा भाग खेती से प्राप्त होता है। पिछले दो वर्षों मे ग्रामीण साधनो और प्रयत्नो से जितनी आमदनी हुई है वह प्रति व्यक्ति सन् १९६५-६६ मे २३१ ५० और १९६६-६७ मे २२४ ३६ रुपया वार्षिक है। प्रतिदिन प्रति व्यक्ति आय क्रमशः ६३ और ६१ पैसे रही। इसके अलावा खर्च की पूर्ति का एकमात्र स्रोत कर्ज है। यही कारण है कि प्रतिदिन के जीवन मे महाजन का प्रवेश है। प्राय हमेशा किसी-न-किसी प्रकार से उससे सम्बन्ध बना रहता है।

यहाँ के लोगों की आवश्यकताएँ सीमित हैं। भोजन के अतिरिक्त खर्च प्राय बहुत कम है। जो भी चीजें बाहर से वे मँगाते हैं वे पास के बाजार चौमूं से मँगाते हैं। पेशो के अनुसार ही इनका रहन-सहन है। जिस परिवार की मुख्य आय बढ़ईगिरी से होती है उसकी स्थिति अपेक्षाकृत अच्छी दिखाई देती है। बाहर काम करनेवाले बढ़ई परिवारों की आर्थिक स्थिति और रहन सहन का स्तर

भी ऊँचा है। इसका मुख्य कारण यह है कि उन्हें नकद आय होती है। इसके साथ उनका सम्पर्क बाहरी लोगों से भी होता है, जो स्वयं शहरी जीवन से प्रभावित होते हैं। बाहर काम करनेवाले परिवारों में यथाकथित आधुनिक व्यवहार की वस्तुएं अधिक उपयोग में आती हैं, जैसे—चाय, साबुन, बनावटी तेल आदि। जिन परिवारों में आय का स्रोत मात्र खेती है और जिनके यहाँ के लोग बाहर काम नहीं करते हैं, उनके यहाँ इन चीजों का उपयोग बहुत कम होता है।

जीविका के धन्धे सामान्यतया व्यक्तिगत स्तर से चलते हैं। सभी परिवार व्यक्तिगत आधार पर खेती तथा जीविका के अन्य उद्यम करते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि यहाँ उत्पादन की इकाई परिवार है। पारिवारिक आर्थिक इकाई के आधार पर ही उत्पादन तथा उपभोग होता है। परिवार के सब सदस्य सामूहिक रूप से खेती करते हैं, बढ़ईगिरी तथा अन्य कार्य व्यक्तिगत रूप से किया जाता है, लेकिन यह व्यक्तिगत आय परिवार की आय में जुड़ जाती है। उसका उपभोग परिवार के सभी सदस्य सामूहिक रूप से करते हैं। महाजन से परिवार-स्तर पर सम्बन्ध रहता है। महाजन के यहाँ परिवार के मुखिया का ही नाम रहता है, और उसीके माध्यम से परिवार में कर्ज या उधार आता है।

गाँव में स्वाभाविकतया प्रति व्यक्ति आय से अधिक महत्त्व परिवार की आय का है। क्योंकि उपभोग व्यक्तिगत आय पर आधारित नहीं है, बल्कि पारिवारिक आय पर है। आय चाहे जो भी हो, परिवार के सभी लोग मिलकर उसका उपभोग करते हैं। सालों की वार्षिक आय के अनुसार परिवारों को सारणी संख्या ५ के मुताबिक विभिन्न श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं।

इस सारणी से जाहिर है कि अधिकांश परिवारों की वार्षिक आय एक हजार रु० के आस-पास है। हमने देखा कि यहाँ प्रति व्यक्ति औसत वार्षिक आमदनी लगभग २२५ रु० है। स्पष्ट है कि

सारणी संख्या—५
वार्षिक आय के अनुसार परिवारों की श्रेणियाँ

श्रेणियाँ (रु० में)	सन् १९६४-६६	१९६६-६७
५०० या कम	२	२
५०१ से १००० तक	१२	१२
१००१ से २००० तक	९	१०
२००१ से ३००० तक	८	६
३००१ से ४००० तक	३	[illegible]
	३४	३४

इस निम्न स्तरीय आर्थिक स्थितिवाला गाँव स्वभावतः बहुत हद तक आर्थिक रूप से महाजनों पर निर्भर रहेगा। आगे हम महाजन के साथ के गहरे आर्थिक सम्बन्धों पर विचार करेंगे। यहाँ जाति की दृष्टि से आय में खास अन्तर देखने को नहीं मिलता, क्योंकि जातियाँ ही अधिक नहीं हैं। जिन परिवारों की आर्थिक स्थिति कुछ अच्छी है, उनके जीवन स्तर में भी बहुत परिवर्तन आया हो ऐसी बात नहीं। सामान्यतया अधिक आयवाले परिवारों की सदस्य-संख्या भी अधिक है, इस कारण प्रति व्यक्ति आय में कोई खास अन्तर नहीं पड़ता है। हाँ, जिन परिवारों का सम्बन्ध बाहरी नकद आमदनी से है, उनके मकान तथा रहन-सहन का ढंग अन्य से थोड़ा भिन्न हो जाता है।

आर्थिक स्थिति रुचि को प्रभावित करती है। इस गाँव में प्रायः सभी लोग किसी तरह अपनी प्राथमिक आवश्यकताएँ ही पूरी कर पाते हैं। इस कारण इनकी जिन्दगी में विलासिता कही जानेवाली वस्तुओं के प्रति कम रुचि है। धूम्रपान अवश्य इनके जीवन में प्रमुख स्थान रखता है। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में आधुनिक वस्तुओं के प्रति, युवा-वर्ग का ध्यान गया है। युवा-वर्ग की रुचियाँ बदल रही हैं। पर आर्थिक स्थिति रुचियों की सीमा को बाँधती है, क्योंकि वे अपनी सब इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर सकते हैं। रुचि की दृष्टि से यहाँ के लोगों को तीन श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं (१) वृद्ध समुदाय (२) स्त्री समुदाय और (३) युवा समुदाय।

यहाँ का वृद्ध समुदाय पुरानी परम्पराओं तथा मान्यताओं से बँधा हुआ है। वे शरीर से अपेक्षाकृत मजबूत हैं, साथ-ही-साथ कष्ट सहने के अभ्यासी होने के कारण शारीरिक कष्टों की अनुभूति भी इन्हें कम होती है। इस वर्ग को इसका भी भान नहीं के बराबर होता है कि महाजन या अन्य कोई इनका शोषण करता है। बल्कि परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि ये तो उनका एहसान ही मानते हैं। अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखना भी इनका स्वभाव-सा है। जब युवा-वर्ग अपनी आवश्यकताओं को बढ़ाने में सुख महसूस करता है तो इसमें इनका हल्का-सा विरोध होता है। स्त्री समुदाय भी वृद्ध समुदाय के समान ही कष्ट सहने का अभ्यासी है। बल्कि समाज में स्त्रियों के गौण स्थान के कारण इस वर्ग की आवश्यकताएँ वृद्ध लोगों से भी सीमित हैं। जेवर, जो कि इनका शृङ्गार है, इसके अतिरिक्त विलासिता के नाम पर स्त्रियाँ कुछ भी नहीं रखती हैं। फिर स्त्री-वर्ग अपने स्वभाव से भी सहनशील है। शारीरिक कष्ट सहना इनका स्वभाव बन गया है। बीमार पड़ने की स्थिति में दवा लेने के उदाहरण इने-गिने प्राप्त होंगे। पहले तो स्त्रियाँ बीमार पड़ती हैं तो उसकी जानकारी ही कम होती है और यदि हुई भी तो दवा कराने का कष्ट शायद ही कोई करता है। इसके विपरीत युवा-वर्ग शारीरिक एवं मानसिक, दोनों दृष्टि से कम सहनशील देखने को मिला। उसकी आवश्यकताएँ तो बढ़ ही रही हैं, साथ-ही-साथ शारीरिक रोगों की संख्या भी बढ़ रही है। ऐसी स्थिति में वे लोग डाक्टर की सलाह तथा चालू दवाओं का उपयोग करते हैं।—अवध प्रसाद

दमित संवेदना और उमड़ी अशान्ति

टुन्नू शुरू में मेरे पास आने में झिझकता था। कुछ शर्मीला भी था। कई दिनों से हमारी उसकी दोस्ती के लिए आँखों में एकटक देखने का क्रम चलता रहा। धीरे-धीरे उसकी झिझक और शर्म की जगह मेरे करीब आने की उत्सुकता बढ़ी, और फिर तो वह ऐसा दोस्त बन गया कि अब अपनी हर जिद मुझसे पूरी कराने की कोशिश करता है।

यों तो उसके माँ-बाप उसे बहुत प्यार करते हैं, ढेर सारे खिलौने और रंग-बिरंगे कपड़े उसके लिए लाते ही रहते हैं। गर्मी के दिनों में भी उसका शरीर पूरी रंग-बिरंगी पोशाक में ढँका रहता है। लेकिन टुन्नू को जब भी मौका मिलता है मुझ पड़ोसी के घर का दरवाजा खुलते ही अन्दर घुस आता है, और बेझिझक, जिन-जिन चीजों तक उसकी पहुँच होती है उन्हें उलटता-पुलटता है, जो मन में आता है करता है। मैं अकेला आदमी हूँ। बच्चे की यह हरकत प्रिय लगती है, और वह जो कुछ करता है, उसे करने देता हूँ।

कल जब मैं दफ्तर से लौटा तो देखता हूँ कि टुन्नू मेरे दरवाजे के एक कोने में निढाल नंगे बदन मायूस बैठा है। उसके रुआँसे चहरे को देखकर दिल भर आया। उसकी आँसुओं से गीली आँखों में एक अजीब विवशता थी। देखकर पूछा 'तुम्हें क्या हुआ टुन्नू बेटे?' वह कुछ नहीं बोला। मजबूरी उसकी आँखें पूरी तरह मुँद गयीं और आँसुओं की कुछ बूँदें उसके गालों पर ढुलक पड़ीं। मैंने कमरे का दरवाजा खोलकर बिजली के हीटर पर चाय का पानी चढ़ा दिया, और कपड़े बदलकर इतमीनान से आरामकुर्सी में बैठकर पानी के खौलने का इन्तजार करने लगा। रेडियो चालू कर दिया था और ६-०५ बजे शाम की खबर अब सुनाई ही जानेवाली थी। इन सारे कामों की व्यस्तता के कारण कुछ देर टुन्नू ध्यान से उतरा रहा। सहज ही दिमाग में यह बात बैठ गयी थी, कि घर चला जायगा।

लेकिन कुर्सी पर मुझे इतमीनान से बैठे पाँच मिनट भी नहीं बीते होंगे कि टुन्नू चुपचाप आया, और मेरी गोदी में सिर छुपाकर सुबकने लगा। मैंने उसके गाले और पीठ पर हाथ फेरते हुए पूछा, 'क्या हुआ बेटे, क्यों रो रहे हो?' मेरा इतना कहना था कि उसकी रुलाई का बाँध जैसे फूट पड़ा। उसका सारा शरीर काँपने लगा। उसका माथा जलने लगा।

मैं उसके रोने के इस क्रम को देखकर इतना ही अन्दाज कर पाया कि बहुत देर से वह रुलाई को अपने अन्दर दबाये मेरा इन्तजार कर रहा था। उसकी वेदना कोई सहारा पाकर फूट पड़ना चाहती थी। लेकिन आज की खास बात क्या है, यह समझ नहीं पाया। यह तो प्रायः रोज ही होता है कि उसकी किसी ढिठाई पर माँ या बाप की मार पड़ती है, वह रोता-चीखता है और फिर थोड़ी देर बाद, सब कुछ पहले जैसा चलने लगता है।

टुन्नू मेरी गोद में पड़ा खूब रोया। रेडियो पर ६-०५ की खबर पूरी हो गयी, स्थानीय सूचनाएँ भी समाप्त हो गयीं, उधर चाय का पानी खौल-खौलकर भाप बन रहा था, लेकिन टुन्नू की रुलाई २० मिनट तक चलती रही और काफी प्रयत्नों के बाद वह चुप हुआ। मैंने अपने लिए चाय बनायी, उसके लिए एक कप में हारलिक्स। बहुत पुचकारने पर किसी तरह वह पीने लगा। भूख उसे लगी थी यह मैंने उसके पीने के ढंग से जान लिया। और तब यह भी निश्चय हो गया कि काफी देर से वह इसी तरह बैठा है।

हारलिक्स पी चुकने के बाद मैंने तौलिये से उसका हाथ-मुँह साफ किया और गोद में बैठाकर पूछताछ शुरू की, कि आखिर बात क्या हुई? टुन्नू इस तरह दुखी क्यों है? लेकिन टुन्नू कुछ नहीं बोला। चुपचाप मेरी गोद में चिपककर पाँच सात मिनटों में ही सो गया। मैंने उसे बिस्तरे में लिटा दिया और अन्य दूसरे कामों में लग गया।

साढ़े दस बजे रात को उसके माँ-बाप आये, अपने घर के दरवाजे से दाई-दाई पुकारा। कोई उत्तर न पाकर टुन्नू की खोज शुरू हुई। स्वाभाविक ही मेरा कमरा खुला देखकर टुन्नू के पिताजी मेरे कमरे में आये। टुन्नू को सोया देखकर कुछ चैन की साँस लेते हुए बोले, 'दाई नहीं आई थी क्या? टुन्नू आपके पास कब से है?' मेरी कुछ बोलने की इच्छा नहीं हो रही थी, फिर भी कहना पड़ा, 'दाई का तो मुझे पता नहीं, टुन्नू मेरे पास साढ़े पाँच बजे से है।' टुन्नू को गोद में उठाते हुए उसके पिताजी बुदबुदाये 'बड़ा पाजी हो गया है, अपने मन की करता है।' और उसे लेकर चले गये।

बाद में दूसरे या तीसरे दिन मुझे मालूम हुआ कि टुन्नू के माँ-बाप उस दिन किसी पार्टी में जाने की तैयारी में टुन्नू को नये-नये कपड़ों में सजाने के बाद खुद सज सँवर रहे थे कि तभी कहीं से टुन्नू को बिल्ली का एक बच्चा दिखाई पड़ गया। वह उसके पीछे भागा और कुछ ही दूर दौड़ने के बाद गन्दी नाली में गिर पड़ा। सारे कपड़े खराब हो गये। इस पर टुन्नू की माँ ने कसकर पिटाई की और बाप ने उसे नंगा करके वहीं दाई के भरोसे छोड़ दिया, और पार्टी में चले गये। साहब मेम के जाते ही दाई ने भी टुन्नू को भगवान के भरोसे छोड़कर घर की राह पकड़ी। बेचारा अपमानित टुन्नू शायद साढ़े चार बजे से ही अपने पड़ोसी मित्र का इन्तजार कर रहा था। तभी उसकी सारी दबी हुई व्यथा मेरा स्नेह-स्पर्श पाकर उस दिन रुलाई बनकर फूट पड़ी थी।

सारी घटना के बाद मन में प्रश्न उठा कि जो माँ-बाप अपने बच्चे के ऊपर इतना खर्च करते हैं, वे ऐसे हृदयहीन उस समय कैसे हो सके? अगर मैं भी उस दिन देर से आता तो बेचारा टुन्नू......!

टुन्नू की उस दिन की रुलाई में भूल→

तमिलनाडु : प्रदेशदान की तूफानी संयोजना

पिछले नवम्बर '६९ महीने की १५, १६ तारीखों में तमिलनाडु की प्रदेशीय खादी-संस्था तमिलनाडु सर्वोदय संघ तथा प्रदेशीय सर्वोदय-मंडल की सम्मिलित सभा तिरुवन्नमलय में आयोजित हुई थी, जिसमें प्रदेशदान की कार्ययोजना और राजगिर सर्वोदय-सम्मेलन के निवेदन के संदर्भ में आगे के कार्यक्रम तैयार किये गये।

तिरुवन्नमलय रमण महर्षि का निवास-स्थान रह चुका है। सन् १९३५ से ४५ तक के बीच में यहाँ रमण महर्षि के दर्शनार्थ आया करता था। इस पवित्र स्थान में आयोजित सभा में भाग लेनेवाले सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को रमण महर्षि की आध्यात्मिक प्रेरणा मिली और प्रदेशदान की मंजिल तक पहुँचने की शक्ति और स्फूर्ति भी उन्हें मिली। हर कार्यकर्ता के अन्दर फरवरी '७० के अन्त तक प्रदेशदान पूरा कर लेने का आत्मविश्वास पैदा हुआ। सभा में प्रारम्भ में ही गम्भीर चर्चा हुई और प्रदेशदान के लिए जिलावार विस्तृत कार्यक्रम तैयार किये गये जो निम्न प्रकार है :

१ चिंगलपुट ३ प्रखण्डदान पहले ही हो चुके है। शेष २४ प्रखण्डों का प्रखण्डदान जनवरी '७० तक पूरा करना है। ३० कार्यकर्ता काम में लगे हैं। जिले के शेष भाग के ३ क्षेत्र बनाये गये। तीनों क्षेत्रों के केन्द्रीय स्थानों में एक-एक सौ शिक्षित जवानों का चुनाव करके उन्हें १५ दिसम्बर '६९ तक प्रशिक्षित कर लेने और उसके बाद ग्रामदान-अभियान में उन्हें लगाने की योजना बनी ताकि जिलादान का लक्ष्य जनवरी '७० तक पूरा किया जा सके। सर्वश्री राजाराम, चिदाम्बरम् और कनगसभापति इन तीनों क्षेत्रों के काम का संचालन करेंगे और श्री वेंकट पदमल तीनों क्षेत्रों में आपसी सम्पर्क सूत्र और सहकार बनाये रखेंगे। प्रदेशी स्तर पर सर्वश्री वी० रामचन्द्रन् और के० एम० नटराजन् इनका निर्देशन और मार्गदर्शन करेंगे।

(२) तंजौर ३६ प्रखण्डों में से १३ प्रखण्डों का प्रखण्डदान हो चुका है। शेष २३ प्रखण्डों को दो क्षेत्रों में बाँटकर हर क्षेत्रों में १००-१०० कार्यकर्ता तैयार कर लगाने और जनवरी '७० तक जिलादान पूरा करने की योजना बनायी गयी है।

(३) कन्याकुमारी ९ प्रखण्डों में से एक प्रखण्ड का दान हो चुका है। २५ कार्यकर्ता प्राप्ति-अभियान में लगे हैं, ५० और कार्यकर्ता तैयार करने और लगाने की योजना बनी है, ताकि जनवरी '७० में इस जिले का भी जिलादान सम्पन्न हो सके। चानी निकेतन के श्री आर० गुरुस्वामी इस जिले के काम का निर्देशन और मार्गदर्शन करेंगे।

(४) कोयम्बटूर जिले के तीन क्षेत्रों-कोयम्बटूर उत्तर, कोयम्बटूर मध्य और कोयम्बटूर दक्षिण—में चलाये जानेवाले काम का, क्रमशः सर्वश्री बोम, ए० चिदाम्बरम् और सी० आर० सुब्रमण्यम् संयोजन और संचालन करेंगे। श्री ए० जी० मुत्तुवेलप्पन् के निदेशन में उत्तर अम्मापट और पल्लडागी क्षेत्रों में १००-१०० कार्यकर्ता तैयार करके, काम में लगाये जायेंगे। मध्य कोयम्बटूर में दो प्रशिक्षण केन्द्र चलाये जायेंगे। कोयम्बटूर दक्षिण, पोल्लाची और वेल्लकोयल क्षेत्रीय प्रशिक्षण के केन्द्र होंगे, और श्री राजाराम का सहकार मिलेगा।

इस प्रकार जनवरी '७० के अंत तक चिंगलपुट, तंजौर, कन्याकुमारी और कोयम्बटूर जिलों का जिलादान सम्भव हो जायगा।

इसी प्रकार दक्षिण अर्काट, उत्तर अर्काट, सेलम, धरमपुरी और तिरुचिरापल्ली के नये जिलों में जहाँ ग्रामदान का संदेश अभी तक नहीं पहुँचा है—काम करने की विस्तृत योजना और कार्यक्रम बनाये गये। इन जिलों में काम करने के लिए कार्यकर्ता तैयार करने का कार्यक्रम १५ दिसम्बर '६९ तक पूरा कर लिया जायगा, ताकि फरवरी '७० के अंत तक इन जिलों का भी जिलादान सम्पन्न हो सके।

यह भी निश्चय किया गया कि जिलादान घोषित जिलों में जनवरी '७०

→नहीं पाता। उसकी व्यक्त से अधिक अव्यक्त वेदना प्रश्न बनकर मेरे सामने बराबर आ खड़ी होती है, और मैं सोचने को विवश हो जाता हूँ कि टुन्नू के माँ-बाप टुन्नू को अपनी इच्छाओं की पूर्ति का माध्यम मानते हैं, उसकी अपनी इच्छा की परवाह करना अपनी पितृ या मातृ सत्ता के खिलाफ पाते हैं, इसीलिए शायद यही स्वाभाविक होती है कि बाजार के प्रसाधनों से टुन्नू को सजाकर अपनी इच्छाओं की पूर्ति कर लें, और टुन्नू चुपचाप अपने को इनका खिलौना बनने दे! जहाँ कहीं टुन्नू अपनी इच्छा से कुछ कर बैठता है, उसे मार खानी पड़ती है, और अपने कोमल मन को दबाना पड़ता है। तभी मेरे कमरे में आकर वह मुक्ति का अनुभव करता है, और वह प्रायः हर शाम मेरे आने की प्रतीक्षा करता रहता है।

टुन्नू मेरी इस मान्यता को रोज-रोज पुष्ट करता जा रहा है कि माँ-बाप की इच्छा-पूर्ति के आवेग में से अनचाहे पैदा हुए टुन्नुओं की संवेदनशीलता माँ-बाप की, उसके बाद गुरुजन की और उसके बाद समाज, सरकार की सत्ताओं के द्वारा निरन्तर न जाने कितने समय से बराबर नष्ट की जा रही है, तो संवेदनशून्य समाज के जड़ ढाँचे के लिए तैयार किये गये, युवा, तरुण, प्रौढ़ और वृद्ध दमित टुन्नुओं की दुनिया में नफरत और अशान्ति नहीं होगी तो क्या प्रेम और शांति होगी?

—रामचन्द्र राही

(क्रमशः)

के अंत तक हर जिले में कम से कम १०० ग्रामसभाओं का गठन कर लिया जाय।

खादी के लिए प्रखण्डस्तरीय संगठन

तमिलनाडु सर्वोदय संघ जिलास्तरीय संगठनों के माफत पहले से ही काम कर रहा है और प्रदेश-स्तर पर उनका आपसी सहकार भी है। हर जिले के उत्पादन और बिक्री के कार्यक्रम के लिए अलग बजट है। तमिलनाडु सर्वोदय संघ अब प्रखण्ड स्तर पर खादी-संगठनों को विकेन्द्रित करने का क्रांतिकारी कदम उठाने जा रहा है। इस विषय पर डेढ़ दिन चर्चा चली और अंत में गांधी-शताब्दी में फरवरी '७० के अंत तक जिलास्तरीय संगठनों को प्रखण्ड-स्तर पर विकेन्द्रित करने का सर्व सम्मति से निर्णय लिया गया। सभी जिलों में इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए निश्चित कदम उठाने का निश्चय हुआ और उसकी योजना निम्न प्रकार बनी।

(१) कोयम्बटूर तीनों जिला—कोयम्बटूर उत्तर, मध्य और दक्षिण—में प्रखण्डस्तरीय संगठन के लिए कदम उठाये जायेंगे।

(२) पडीयूर पहले से ही एक प्रखण्डस्तरीय संगठन है, जिसे ५ छोटी-छोटी इकाइयों में संगठित किया जायगा। एक इकाई ३० गाँवों की होगी। पाँचों इकाइयों के कुल १५० गाँवों में ग्रामसभाओं का संगठन किया जायगा और ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि क्षेत्र के खादी-कार्यक्रम की जिम्मेदारी लेंगे।

(३) तिरुचि : दो प्रखण्डों में तत्काल प्रखण्डस्तरीय संगठन किये जायेंगे।

(४) रामनाथपुरम् पूर्व पूर्व रामनाथपुरम् जिला सर्वोदय संघ ३ मण्डल-स्तरीय (डिवीजनल) संगठनों के रूप में अपने आपको विभक्त करेगा। हर मण्डल में १० रुपये का शेयर लेनेवाले १००० खादी-प्रेमी तैयार किये जायेंगे। मण्डलस्तरीय खादी-कार्य के लिए यह एक सूक्ष्म केन्द्र बन सकेगा।

(५) रामनाथपुरम् पश्चिम पश्चिम रामनाथपुरम् में प्रखण्डस्तरीय संगठन का निर्माण शुरू होगा।

(६) तिरुनेलवेली दक्षिण और उत्तर : ५ प्रखण्डस्तरीय संगठन पहले से ही काम कर रहे हैं, उन्हें ठोस बनाया जायगा और पंजीकृत किया जायगा।

(७) कन्याकुमारी : अपने वर्तमान कार्यक्षेत्र के ५ प्रखण्डों में तत्काल संगठन किये जायेंगे।

(८) मदुरै : तत्काल ५ प्रखण्डस्तरीय संगठन किये जायेंगे।

(९) तंजौर वर्तमान जिलास्तरीय संगठन को तालुका-स्तर पर विकेन्द्रित किया जायगा। लेकिन पूर्व तंजौर में जैसे ही खादी-कार्य की शुरुआत होगी, प्रखण्डस्तरीय संगठन किये जायेंगे।

(१०) मन्नारगुडी (?) : यह एक प्रखण्डस्तरीय संगठन है। इसमें शेयर लेनेवाले स्थानीय लोग तैयार करेंगे और एक अलग संगठन का पंजीकरण करायेंगे।

(११) उत्तर आर्काट : एक प्रखण्ड में पहले प्रयोग के तौर पर ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों को मिलाकर प्रखण्डस्तरीय संगठन खड़ा किया जायगा।

(१२) दक्षिण आर्काट इस जिले के सर्वोदय संघ ने चिदाम्बरम्, पांडिचेरी और तिरुपापुलियूर, इन तीन क्षेत्रों के स्तर पर विकेन्द्रित करने के लिए प्रस्ताव कर लिया है। इसलिए दक्षिण आर्काट जिले को ३ क्षेत्रीय स्तर पर विकेन्द्रित किया जायगा।

(१३) सलेम अत्तूर और अरलूर प्रखण्डों में तत्काल प्रखण्डस्तरीय संगठन बनाकर उनका पंजीकरण कराया जायगा।

इन प्रखण्ड और क्षेत्र-स्तरीय संस्थाओं को विकेन्द्रित करने की पूर्वतैयारी ३० जनवरी '७० तक पूरी कर ली जायगी। इन विकेन्द्रित संगठनों के उद्घाटन के विशेष लोक-समारोह आयोजित किये जायेंगे।

इस प्रकार तमिलनाडु में विविध कार्यक्रमों में से ग्रामदान और खादी-कार्य एक क्रान्तिकारी मंजिल पर पहुँच गये हैं। इस विचारमंथन की सभा से कार्यकर्ता श्री शंकरराव देव की आध्यात्मिक प्रेरणा और आशीर्वाद लेकर अपने-अपने क्षेत्रों में वापस लौटे हैं।

शान्ति सेना और सर्वोदय-पात्र के कार्यक्रम को नगरों में शुरू करने तथा उन प्रखण्डों में शान्ति-सेना संगठित करने की योजना बनाने के लिए तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल शीघ्र ही एक दूसरी बैठक आयोजित करने जा रहा है, जिनमें ग्रामदान और खादी का काम हो रहा है। (मूल अंग्रेजी से)

—डा० जगन्नाथन्

लोकयात्रियों का कार्यक्रम उत्तरप्रदेश में

दिनांक	स्थान पड़ाव	जिला
२२-१२-'६०	फतेहपुर नगर	फतेहपुर
२३-१२-'६०	अल्लीपुर	”
२४-१२-'६०	मउवा	”
२५-१२-'६०	नरायनगंज	”
२६-१२-'६०	मोहार	”
२७-१२-'६०	ओम	”
२८-१२-'६०	गिरदयापुरवा	”

खोये हुए की खोज

श्री दामा कोपे कोरापुट जिले सर्वोदय-सम्मेलन राजगिर गये थे, आज तक वह वापस अपने घर नहीं पहुँचे। क्यूल (पूर्व रेलवे) स्टेशन पर उनका सम्पर्क उनके साथियों से छूट गया।

वह आदिवासी हैं। उनकी उम्र ६० वर्ष है, और अच्छा स्वास्थ्य है। वह साँवले रंग के हैं। उनकी ऊँचाई ५ फीट ६ इंच है। उनके ऊपर के कई दाँत टूट चुके हैं। वह सिर्फ उड़िया भाषा जानते हैं और अपना हस्ताक्षर कर सकते हैं।

नौरंगपुर के भूदान निवेदक ने यह निवेदन किया है कि उनके बारे में जिन्हें भी जानकारी हो वे निम्नलिखित पते पर सूचित करने की कृपा करें।

भूदान निवेदक,
पो० नौरंगपुर,
जिला-कोरापुट
(उड़ीसा)

ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य

'ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि यह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर सहयोग से काम लेगा। क्योंकि हरएक देहाती के जीवन का सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और गाँव की इज्जत के लिए मर मिटे।'

—गांधीजी

अब समय आ गया है कि इस देश के बुद्धिवादी, किसान, मालिक, मजदूर, सभी इस बात पर विचार करें कि ग्रामदान हमें ग्रामस्वराज्य की ओर अग्रसर करता है या नहीं? यदि हमें जंच जाय कि हाँ, इससे हमें ग्रामस्वराज्य के दर्शन हो सकेंगे, तो यही अवसर है कि हम लोग इस पुण्य काम में तुरन्त लग जायें।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

केन्द्र की स्थिति

बम्बई व अहमदाबाद अधिवेशन

आजकल राजधानी में जोर-शोर से अहमदाबाद व बम्बई चलने और वहाँ के अधिवेशनों को सफल करने की तैयारियाँ की जा रही हैं। ताजी खबरों के अनुसार बम्बई में अधिवेशन को आकर्षक बनाने के लिए कुछ विशेष तैयारियाँ की गयी हैं। कांग्रेस कार्यसमिति की बम्बई में २६ दिसम्बर से शुरू होनेवाली चार दिवसीय बैठक के पहले दिन ही वहाँ एक जुलूस निकलेगा, जिसमें हजारों मोटर-साइकिल व बाइसिकिल सवार शामिल रहेंगे। जुलूस बम्बई के मुख्य रास्तों से निकलेगा। इस जुलूस में सितारक व तारिकाएँ, स्त्रियाँ व बच्चे शामिल रहेंगे। मराठा लड़ाकू वेश में कांग्रेस के ७३ वें अधिवेशन के प्रतीक-स्वरूप ७३ घुड़सवार निकलेंगे और उनके पीछे उतनी ही बैलगाड़ियाँ रहेंगी। कांग्रेस-अध्यक्ष श्री जगजीवनराम के आगे-आगे पाँच सौ सैनिक और उतनी ही संख्या में कांग्रेस सेवादल के कार्यकर्ता रहेंगे। प्राप्त समाचारों के अनुसार शहर के साधारण तबकों के लोगों ने भी कांग्रेस अधिवेशन में पूरा सहयोग देने का वादा किया है। नगर-परिवहनसेवा के सौ ड्राइवरों ने अधिवेशन के लिए अपनी सेवाएँ मुफ्त देने का वादा किया है। देश के विभिन्न राज्यों के सैकड़ों-हजारों कांग्रेसी सदस्य व समर्थक अधिवेशन में शामिल होंगे। देश के बौद्धिक वर्ग के प्रतिनिधिस्वरूप सौ बुद्धिजीवियों को भी अधिवेशन में शामिल होने का निमंत्रण दिया गया है। असम और तमिलनाडु से क्रमशः ३५० व १००० कार्यकर्ता अधिवेशन में शामिल होंगे। लखनऊ से प्राप्त समाचारों के अनुसार प्रदेश कांग्रेस कमेटी के ७५६ सदस्यों में से लगभग ५०० सदस्य अधिवेशन में शामिल होंगे।

इसी तरह अहमदाबाद में होनेवाले संगठन-कांग्रेस अधिवेशन के लिए भी जोरदार तैयारियाँ हो रही हैं। अहमदाबाद में राजधानी में प्राप्त सूचनाओं से जानकारी मिली है कि प्रदेश कांग्रेस समितियाँ अपने आने की सूचना तार व पत्रों द्वारा भेज रही हैं। राज्यों के प्रतिनिधि व दर्शक विशेष ट्रेनों व मोटरों में बैठकर अहमदाबाद पहुँचेंगे। नेतृत्ववर्ग हवाई जहाज द्वारा पहुँच रहा है। मैसूर के ४५० प्रतिनिधियों व कार्यकर्ताओं की एक बड़ी संख्या १९ दिसम्बर को विशेष ट्रेन से अहमदाबाद पहुँच जायगी। वहीं से २५० अन्य प्रतिनिधि व कार्यकर्ता विशेष बसों द्वारा पधार रहे हैं। पांडिचेरी कांग्रेस के १० प्रतिनिधि आ रहे हैं, तमिलनाडु अपने ४२३ प्रतिनिधियों और अन्य कई कार्यकर्ताओं को भेज रहा है। आसाम का कांग्रेस-संगठन अपने सभी कार्यकर्ताओं को अधिवेशन भेजेगा। पश्चिमी बंगाल से आनेवाली एक विशेष ट्रेन वहाँ के ३०० प्रतिनिधियों व ३०० कार्यकर्ताओं को ले आयेगी। पंजाब, केरल और गोवा के क्रमशः ४५, १४३ व १५ प्रतिनिधि अधिवेशन में शामिल हो रहे हैं। कांग्रेस

रामभूषण

का यह अहमदाबाद अधिवेशन गुजरात की नयी राजधानी गांधीनगर में २० से २२ दिसम्बर तक होगा जहाँ ऐसी जोरदार तैयारियाँ चल रही हैं वहीं दोनों तरफ की तैयारियों पर एक-दूसरे की तरफ से छींटा-कशी भी हो रही है। दोनों तरफ के प्रवक्ताओं का अलग-अलग कहना है कि दूसरी तरफ के लोग झूठी सदस्यतावाले प्रतिनिधियों से अपनी तरफ की संख्या अधिक दिखाने व अपना समर्थन अधिक बताने की कोशिश कर रहे हैं।

असली मापदण्ड

यह सही है कि अहमदाबाद और बम्बई दोनों अधिवेशनों में उपस्थित सदस्यों की संख्या को दोनों तरफ के लोग अपनी सफलता का मापदण्ड बताने की कोशिश करेंगे। लेकिन राजधानी के ही नहीं, देश के आम लोगों के दिमाग में आज जो सवाल है वह यह नहीं कि किस कांग्रेस में कितने प्रतिनिधि शामिल हुए, बल्कि यह कि जनता की कम-से-कम आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कौनसा अधिवेशन किस तरह का ठोस कदम उठाता है और किस समय तक अपना वादा पूरा कर देता है। साथ ही, आम जनता यह भी देखना चाहती है कि किस दल के लोग अपने वादों को पूरा करने के लिए कितनी लगन और तत्परता के साथ लग जाते हैं।

सरकार और अड़चनें

देश को स्वाधीनता मिलने के समय से अब तक कांग्रेस ही केन्द्र में शासन करती रही है। यह कांग्रेस भी अब दो दलों में बँट गयी है। पिछले आम चुनाव में कांग्रेस को देश के राज्यों में विरोध जरूर बर्दाश्त करना पड़ा है लेकिन केन्द्र में बिना किसी बड़ी अड़चन के उसकी गाड़ी आगे बढ़ती रही है। अब उसी कांग्रेस का एक हिस्सा विरोधी दल के रूप में काम करने लगा है। स्पष्ट बहुमत न रह जाने के कारण ही प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को अब तनावपूर्ण वातावरण में सरकार चलाना पड़ रहा है। केन्द्र में इस समय स्थिति यह है कि कोई भी दल कुछ अन्य दलों के साथ मिलकर सरकार बनाने की स्थिति में आ गया है। इसलिए अभी कोई भी दल इन्दिरा-सरकार को गिराने की जल्दी में दिखाई नहीं पड़ रहा है। साथ ही, चुनाव-पद्धति अत्यन्त खर्चीली होने की वजह से कोई भी दल मध्यावधि चुनाव की माँग नहीं कर रहा है। सरकार चलानेवाला दल भी मध्यावधि चुनाव के पक्ष में नहीं है।

इसी प्रकार की राजनीतिक अनिश्चितता की हालत में संसद का आगामी बजट-अधिवेशन होनेवाला है। ऐसा अनुमान किया जा रहा है कि बजट-अधिवेशन को भी वर्तमान सरकार अच्छी तरह निभा ले जायगी। विरोध तभी खड़ा हो सकता है जब बजट में लगाये गये कर-प्रस्ताव जनता के अनुकूल न पड़ें। चूंकि प्रधान मंत्री ही स्वयं वित्तमंत्री भी हैं, अतः उम्मीद यही की जा रही है कि वे बजट ऐसा ही बनायेंगी जिसमें आम जनता पर कर-वृद्धि नहीं होगी। बजट में वह अपनी समाजवाद की कल्पना भी साकार करने

की कोशिश करेगी। फलस्वरूप बड़े धनी-मानी लोगों व बड़ी कम्पनियों और कारखानों पर ही कर बढ़ाये जायेंगे। बजट का थाम व लाग, सभी स्वागत करें इसलिए उसमें साधारण जनता की कुछ कम से-कम आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कुछ ठोस कदम की व्यवस्था रहेगी। लेकिन सबसे बड़ी बात यह होगी कि यदि वर्तमान सरकार देश के महत्त्वपूर्ण पदों पर अच्छे, कुशल व देशभक्त लोगों को नियुक्त कर देती है और देश में सुरक्षा व नैतिकता का वातावरण पैदा कर देती है तो जनता की दृष्टि में उसका बहुत ऊँचा स्थान हो जायगा और वह आगे कदम बढ़ाती जा सकेगी। देखना है, इस चुनौती का सरकार किस तरह सामना करती है।

कांग्रेस-बँटवारे का नतीजा

कांग्रेस-बँटवारे से विरोधी दलों को एक तरह की राहत जरूर मिली है, क्योंकि जो काम वे मुद्द वर्षों में नहीं कर सके उसे कांग्रेस ने स्वयं ही करके उनका काम आसान कर दिया। अब वे केन्द्र में सम्मिलित सरकार की सम्भावना की ओर देखने लगे हैं। राजनीतिक पर्यवेक्षकों के अनुसार साम्यवादी दलों को इस फूट से विशेष राहत मिली है। अब दोनों दल जनता को सन्तुष्ट रखने के लिए नयी-नयी नीतियों को अपनाने और एक-दूसरे को पछाड़ने की अधिकाधिक कोशिश करेंगे। देश का बुद्धिवादी वर्ग इस फूट को ध्रुवीकरण की संज्ञा दे रहा है। उसका कहना है कि अच्छा हुआ कांग्रेस में अलग-अलग मत रखनेवाले लोग अब अलग-अलग हो गये! अब राजनीति अपनी सही शकल में लोगों के सामने आयेगी।

ध्रुवीकरण यानी अलग-अलग मत रखनेवाले लोगों के अलग-अलग छोरों पर हो जाने की बात पर थोड़ा गौर करने की जरूरत है। देखना होगा कि क्या प्रधानमंत्री के समर्थक दूसरे दल के समर्थकों से अधिक प्रगतिशील हैं? यहाँ दोनों दलों के खास-खास लोगों का नाम गिनाने की जरूरत नहीं है; क्योंकि लोग धीरे-धीरे इन नामों से अब परिचित हो गये हैं। अगर एक दल के कुछ लोगों को मिलाकर 'सिण्डिकेट' की संज्ञा दी जाती है तो इसी सिण्डिकेट ने स्वयं वर्तमान प्रधानमंत्री को दो बार सत्ता में बिठाया और उसके पहिले इसीने स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री को भी प्रधानमंत्री बनाया। रोचक चीज यह है कि एक को छोड़कर पार्लियामेंट में जितने भी पहिले के राजे-महाराजे हैं वे सभी प्रधानमंत्री के साथ हैं और इसी तरह एक को छोड़कर पूँजीपति सदस्य भी उन्हीके साथ हैं। इस तरह विचार और आदर्श के आधार पर कोई ध्रुवीकरण हुआ है ऐसा पर्यवेक्षकों को लग नहीं रहा है।

यह भी देखने में नहीं आ रहा है कि प्रधानमंत्री के दल में अब बुजुर्ग लोगों की अपेक्षा युवा लोगों का ज्यादा प्राधान्य हो गया है। श्री सुब्रमण्यम् की कार्य-समिति के चुने सभी सदस्य बुजुर्ग लोग ही है। कम अवस्था के लोग नियुक्त किये हुए हैं। युवा वर्ग तो कहने भी लगा है कि दोनों दलों में मौलिक कोई अन्तर नहीं हैं। ये लोग इस बात से भी नाराज हैं कि उन्हें भूतपूर्व राजे-महाराजों और तीन भूतपूर्व कम्यूनिस्ट सदस्यों के साथ बैठना और काम करना पड़ रहा है।

कांग्रेस बँटवारे से देश का नुकसान

कांग्रेस की इस फूट से दो चीजें तो साफ मालूम हो पड़ रही हैं। एक तो यह कि सत्ता की इस लड़ाई में नियमों, उपनियमों, परम्पराओं, को ताक पर रख ही दिया गया, आपस के सद्भाव व सौजन्य का भी ख्याल न रखा गया। लोकतंत्र के हित की दृष्टि से ये चीजें अच्छी नहीं कही जा सकतीं, क्योंकि लोकतंत्र कानून व नियमों की रक्षा तथा स्थापित परम्पराओं के आधार पर चलता है। दूसरी चीज यह कि जिस कांग्रेस संगठन और आन्दोलन को खड़ा करने में देश की बड़ी-से बड़ी हस्तियाँ लगी थीं और जिसके लिए स्वयं राष्ट्रपिता गांधी ने इतना अथक परिश्रम किया था उस कांग्रेस को इस बुरी तरह और गांधी-शताब्दी वर्ष में ही छिन्न-भिन्न कर दिया गया। अब कांग्रेस का स्पष्ट बहुमत नहीं रहेगा। परिणामस्वरूप केन्द्र में मिली-जुली सरकार बनने की सम्भावना अब और निकट आ गयी। देश के कुछ राज्यों में मिली-जुली सरकारों का अनुभव जनता को है जो अच्छा नहीं है। पार्लियामेंट में कांग्रेस के स्पष्ट बहुमत से देश को स्थिरता व सुरक्षा की कुछ गारन्टी थी। वह भी अब नहीं रही। इस छीना-झपटी में कांग्रेस के लोगों ने न केवल अपना बल्कि साथ ही देश का भी नुकसान किया है।●

(पृष्ठ १७० का शेषांश)

की तरक्की खुदगर्जी के सामने समाप्त हो जाती है। सच्चाई और मुहब्बत ही धर्म है।

जो सियासी झगड़े हैं, वे वोट के झगड़े हैं। हिन्दू-मुस्लिम झगड़े को बढ़ाते हैं, जो हिन्दू सिख भारत के बाहर हैं उनका भी ख्याल कीजिए। अफगानिस्तान में हिन्दू-सिख अच्छी हालत में हैं। जो भारतीय मुस्लिम बहुमत देशों में हैं, उनको बड़ा नुकसान होगा। व्यापार में भी आपका बड़ा नुकसान होगा, अगर भारत मुस्लिम राष्ट्रों से दोस्ती का ताल्लुक नहीं रख पाता।

इन्सान बड़ी अजीब चीज है। एक दुनिया की मुहब्बत और दूसरा कुर्सी का शौक। जब यह होता है तो वह राष्ट्र नीचे की ओर जाता है। हुकूमत और पैसा, दोनों गिरानेवाले साबित होते हैं। यदि हुकूमत सेवा के लिए हो और पैसा स्वार्थ के लिए न होकर इमदाद के लिए हो, तभी ये दोनों तारक सिद्ध होते हैं।

['नेहरू अवार्ड' दिये जाने के अवसर पर दिया गया भाषण १५-११-'६९]

आन्दोलन के समाचार

उत्तरप्रदेश : जिलादान के बाद

उत्तरप्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समिति के तत्त्वावधान में १२ दिसम्बर, १९६१ को सर्व सेवा संघ, राजघाट (वाराणसी) में उत्तरप्रदेश के मैदानी ग्रामदानी जिलों के मुख्य कार्यकर्ताओं की बैठक श्री कपिल भाई की अध्यक्षता में हुई, जिसमें जिला-दान के बाद पुष्टि-कार्यक्रम की योजना पर विचार किया गया। फर्रुखाबाद जिले में श्री धीरेन्द्रभाई का कार्यक्रम चल रहा है, इसलिए वहाँ के कार्यकर्ता नहीं आ सके।

इस बैठक में आचार्य राममूर्ति ने विशेष रूप से भाग लिया और राजगिर-सम्मेलन के बाद बिहार में हुए कार्यक्रमों पर प्रकाश डाला। बिहार में प्रदेशीय ग्रामस्वराज्य समिति का गठन हुआ है, अगले महीने तक जिला ग्रामस्वराज्य-समितियों का गठन कर लिया जायगा।

इस बैठक में शामिल हुए प्रतिनिधियों ने सर्वसम्मति से निम्नांकित कार्यक्रम तय किये हैं—

(१) ग्रामदान आन्दोलन का मूलतत्त्व स्वामित्व-विसर्जन है। बीघा-कट्ठा निकालना, सर्वसम्मति और सबके सहयोग से सबकी भलाई के लिए जागृत ग्रामस्वराज्य सभा का संगठन तथा संचालन करना है। गाँव के यदि पूरे लोग तुरन्त बीघा-कट्ठा के लिए न तैयार हों, तो जो भी एक दो व्यक्ति तैयार हों, उनकी दी हुई भूमि का समारोह वितरण किया जाय।

(२) जिला-स्तर पर ग्रामस्वराज्य-समितियाँ बनायी जायँ, जिनमें कार्यक्रम में विश्वास रखनेवाले तथा समय देनेवाले व्यक्ति हों। ब्लाक-स्तर की बैठकों में सहयोगी समर्थक नागरिक तथा शिक्षकों को भी बुलाया जाय।

(३) ग्रामस्वराज्य-सभाओं तथा पुरानी ग्रामपंचायतों में किसी प्रकार के संघर्ष की स्थिति नहीं आनी चाहिए। ग्रामस्वराज्य-सभाएँ ग्रामदान के संकल्प को पूरा करेंगी, तथा पुरानी ग्रामपंचायतें फिल-हाल अपना काम करती रहेंगी।

(४) भूमि-वितरण के साथ ग्राम-कोष बनाने पर जोर देना तय किया गया।

(५) १२ फरवरी के अवसर पर श्री जयप्रकाश नारायण से उनके गाँव पर बलिया, गाजीपुर और वाराणसी के प्रतिनिधि मिलेंगे।

(६) ग्रामदानी क्षेत्रों में ग्राम शान्ति-सेना का संगठन हो तथा कम-से-कम ५ व्यक्तियों का संगठन हर गाँव में बनाया जायगा।

(७) सर्वोदय की पत्रिकाएँ हर ग्रामदानी गाँवों में पहुँचायी जाय।

(८) जनवरी तक बलिया के ग्रामदानी क्षेत्र में तीव्रता से संपर्क किया जाय, पत्र पत्रिकाओं के ग्राहक बनाये जायँ और प्रधानों, सरपंचों तथा प्रमुख सहयोगियों की बैठक सर्वोदय-मेले में श्री जयप्रकाशजी की उपस्थिति में की जाय। गाजीपुर के सैदपुर ब्लाक में सघन रूप से काम करने का निश्चय हुआ। वाराणसी में श्री रामसूरत मिश्र सभी सहयोगी संस्थाओं के प्रतिनिधियों से आगे की योजना पर विचार विमर्श करके काम शुरू करें। आचार्यकुल का संगठन हो तथा वह काम श्री वंशीधरजी के मार्गदर्शन में करने का निश्चय हुआ।

जिलादान-अभियान के सिलसिले में दौरा

ग्रामदान आन्दोलन के अन्तर्गत प्रान्त-दान की संकल्प-सिद्धि की दिशा में जिला-दान-अभियान के सिलसिले में मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री वि० स० खोड़े ने इन्दौर और उज्जैन, श्री दादाभाई नाईक ने बिलासपुर संभाग तथा म० प्र० गांधी-स्मारक निधि के मंत्री श्री काशिनाथ त्रिवेदी ने रायपुर संभाग के जिलों का दौरा किया तथा स्थानीय कार्यकर्ताओं और शासकीय अधिकारियों से बातचीत की।

यह स्मरणीय है कि मध्यप्रदेश में अब तक सात हजार से अधिक ग्रामदान तथा पाँच जिलादान हो चुके हैं।

म० प्र० प्रान्तीय सर्वोदय-सम्मेलन और गांधी-शताब्दी शिविर

प्राप्त जानकारी के अनुसार आगामी १९ से २३ जनवरी तक इन्दौर में पश्चिम क्षेत्रीय गांधी-शताब्दी शिविर और प्रान्तीय सर्वोदय सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। शिविर में मध्यप्रदेश के अलावा राजस्थान, गुजरात तथा महाराष्ट्र के चुने हुए आमंत्रित कार्यकर्ता भाग लेंगे। इस शिविर का आयोजन राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी की गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति के अन्तर्गत होगा।

सम्मेलन की अध्यक्षता के लिए आचार्य राममूर्ति से अनुरोध किया गया है। सम्मेलन का उद्घाटन सर्व सेवा संघ के मंत्री प्रो० ठाकुरदास बंग करेंगे।

उक्त अवधि में मध्यप्रदेश-दौरे के समय शिविर अथवा सम्मेलन में सीमान्त गांधी बादशाह खान के भी भाग लेने की सम्भावना है।

अन्तर्राष्ट्रीय मद्य निषेध सम्मेलन

ज्ञात हुआ है कि आगामी २५, २६, २७ और २८ जनवरी को नयी दिल्ली में एक अन्तर्राष्ट्रीय मद्य निषेध सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है, जिसमें अमेरिका, फ्रान्स, ब्रिटेन, कनाडा, जापान के अतिरिक्त अन्य देशों को भी आमंत्रित किया गया है। सम्मेलन का आयोजन अखिल भारतीय नशाबन्दी परिषद्, अखिल भारतीय एलकोहल-विरोध वैज्ञानिक अध्ययन संस्थान और राष्ट्रीय गांधी-शताब्दी समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में होगा। विदेशों से लगभग १०० प्रतिनिधियों के भाग लेने की आशा है।

बादशाह खान हाथकते सूत से तौले जायेंगे

इन्दौर, १३ दिसम्बर। आगामी २४ दिसम्बर को बादशाह खान की ८० वीं सालगिरह हैदराबाद में व्यापक पैमाने पर मनायी जा रही है, जिसमें बादशाह खान स्वयं भी उपस्थित रहेंगे। आन्ध्र प्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री प्रभाकरजी के अनुसार उन्हें इस अवसर पर हाथकते सूत से तौला जायगा। (सप्रेस)

भूदान-यज्ञ, १२-'६१ रजिस्टर्ड नं० एल. ३२४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए ३४

प्रधान कार्यालय की डाक से,

प्रदेशों से प्राप्त समाचार

गत दिनांक १५ से २५ नवम्बर तक राजस्थान के उदयपुर जिले के राजसमन्द प्रखण्ड मे ग्रामदान-अभियान आयोजित हुआ। शिविर मे प्रान्त से ५० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। पंजाब तथा राजस्थान के दो साथी इस अभियान मे शामिल हुए। प्रान्त के सर्वोदय-आन्दोलन मे लगे प्रायः सभी प्रमुख साथी तथा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास जी बंग तथा उनकी पत्नी श्रीमती सुमन बंग विशेष रूप से उपस्थित थे। २० पंचायतों के ७० गाँवों मे यह अभियान चला, जिसमें ४१ गाँवों का ग्रामदान हुआ।

महाराष्ट्र के बुलडाणा जिले मे ६० गाँवों मे कार्यक्रम चला, जिसमें ६६ गाँवों का ग्रामदान हुआ।

मध्यप्रदेश के मंदसौर जिले मे १७ लोकसेवक बने हैं। उन्होंने जिला सर्वोदय मण्डल का गठन किया है। सर्वश्री राम-विलास पोरवाल संयोजक, रामगोपाल शर्मा मंत्री, मगनलाल बघेरवाल जिला-प्रतिनिधि चुने गये। जिला सर्वोदय मण्डल, हिसार से प्राप्त रिपोर्ट के अनुसार नवम्बर महीने मे ३०३९ रु० की सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई। हिसार, टोहाना आदि क्षेत्रों मे नशाबन्दी का प्रचार किया गया और मुख्य-मुख्य स्थानों पर नशाबन्दी के पोस्टर चिपकाये गये। भंगी-मुक्ति का कार्य नियमित रूप से चल रहा है। ३० नवम्बर को मण्डल की ओर से स्वर्गीय लाला अचितराम की पुण्यतिथि मनायी गयी। —रामसहाय पुरोहित

अहमदाबाद में शान्ति-कार्य

यहाँ पर (अहमदाबाद मे) शान्ति-कार्य ठीक नींव पकड रहा है। राहत, पुनर्वास और विचार-परिवर्तन, ये तीन मुख्य काम हैं। अभी अहमदाबाद मे ८,००० से १०,००० लोग बेघर पड़े हैं। उनके लिए कम्बल जमा करके बाँटने का काम हाथ मे लिया है। वैसे लोग कुछ विरोध भी करते हैं, फिर भी प्राय १,००० कम्बल जितनी राशि हो चुकी है। अभी कैम्प मे पड़े लोगों को दवाई देने का भी काम हुआ।

मकान-दुरुस्ती और मकान बनाने के सरकारी कार्यक्रम मे सहायता एवं सम्बन्ध स्थापित करने का कार्यक्रम भी है। इसके अलावा लोगों को समझा-बुझाकर अपने स्थान पर वापस लाने का कार्यक्रम मुख्य है।

विचार-परिवर्तन का काम भी महत्त्व-पूर्ण है। टोलियों मे चर्चाएँ, व्याख्यान, शिविर आदि अनेक कार्यक्रमों का आयोजन हुआ है।

यहाँ एक पत्रिका भी शुरू की है। सप्ताह मे दो दिन निकलेगी। मुफ्त मे बाँटेंगे। उसके अलावा भित्ति-पत्र लगाने की भी योजना बनी है। कुछ छोटी-छोटी किताबें भी तैयार हो रही हैं।

इन सभी कामों मे मेरी काफी शक्ति लगेगी। —नारायण भाई के पत्र से

आगरा शहर में शान्ति-कार्य

अभी हाल ही मे जिस रोज सीमान्त गांधी 'खान अब्दुल गफ्फार खाँ' आगरा आये थे, उसी दिन आगरा शहर के मोहल्ला वजीरपुरे मे हिन्दू-मुसलमानों मे तनाव बढ़ गया था। लेकिन पता लगते ही पुलिस-अधिकारी एवं सर्वोदय-कार्यकर्ता मौके पर पहुँच गये और स्थिति को सँभाल लिया। उसी दिन से रोज शान्ति-सभाएँ हो रही हैं। वजीरपुरे मे पहले हिन्दू और मुसलमानों की अलग-अलग मीटिंग की गयी और फिर सम्मिलित मीटिंग हुई। झगड़े की शुरुआत को सब लोगों ने बुरा बताया। एक मुसलमान गुण्डे ने हिन्दू लड़की को छेड़ा था, उस हिन्दू लड़की के भाई ने उस गुण्डे को मारा। बस, इसी पर से बात बढ़ी और झगड़ा बढ़ गया। किन्तु सब लोगों ने मिलकर दोनों तरफ के बदमाशों की निन्दा की। पुलिस ने उन दोनों को पकड़ा और जमानत करवानी पड़ी।

उसी समय से शान्ति-सेना का काम शुरू हो गया। जहाँ-जहाँ मिली-जुली आबादी है, वहाँ प्रतिदिन ७ बजे शाम को एक मीटिंग होती है। वहाँ पर हिन्दू-मुसलमान सबको बुलाया जाता है। स्थानीय कार्यकर्ता एकत्र होते हैं। वहाँ पता लगाया जाता है कि कोई अवांछनीय तत्त्व तो नहीं है। अब तक ऐसी करीब बीस मीटिंग हो चुकी हैं। मुसलमानों की बस्ती मे जो हिन्दू रहते हैं उन्होंने खुद कहा कि हम भाईचारे मे रह रहे हैं। हिन्दू बस्ती मे जहाँ मुसलमान रह रहे हैं उन लोगों ने कहा कि हम यही कहेंगे कि हम बड़े आराम से रह रहे हैं।

इस मीटिंग मे सैकड़ों ऐसे कार्यकर्ता मिले, जिन्होंने श्रद्धापूर्वक इस काम को करने का वादा किया। इसलिए निश्चय किया गया है कि शीघ्र ही इन सब कार्यकर्ताओं की एक मीटिंग बुलायी जाय और उन सबको शान्ति-सैनिक बनाया जाय। शहर मे इस प्रकार की फिजा बनायी जाय कि यहाँ हिन्दू-मुस्लिम-तनाव न हो या मालिक-मजदूर के झगड़े न हों।

इस सब काम को सर्वश्री जगन्नाथ कोडवानी, महबूब हसन, महमूद उल्लाह खाँ और हीरालाल सँभाल रहे हैं। —रो० न० शिरोमणि

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज। १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : १३

सोमवार २९ दिसम्बर, '६९

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४१८५

सेवा और संवत्सरी

प्रश्न बापू ने कहा था कि मेरा कुष्ठ निरोधक कार्य अपूर्ण रहा है। तो इस बापू-संवत्सरी में वह कार्य कैसे किया जाय, जिसमें सरकारी सबको और विभिन्न संस्थाओं का सहयोग प्राप्त हो?

विनोबा यह बहुत ही दुःखदायी घटना होगी यदि इस महान पवित्र कार्य को केवल सरकार के भिन्न-भिन्न संगठनों के भरोसे पर छोड़ देंगे। यदि भिन्न-भिन्न संगठनों में मनमुटाव या मानसिक दूरी-भाव रहा तो वह बहुत ही बड़ी दुर्घटना होगी। मैं आशा करता हूँ कि जितने संगठन बनेंगे वे सारे एक-दूसरे का स्वागत करेंगे, और एक-दूसरे का सहयोग करेंगे और एक-दूसरे के काम की पूर्ति करेंगे। यही होना चाहिए, न कि जैसा हमें बताया गया कि यह संस्था बनाने से कुछ थोड़ा दूरी-भाव पैदा हुआ है। यह व्यर्थ है। क्योंकि हम सबके सामने करने के लिए महान कार्य उपस्थित हैं। उसके लिए दो-चार संस्थाएँ बनायें तो भी हर्ज नहीं, ऐसी हालत आज है। इस वास्ते परस्पर-सहयोग तो बढ़ना ही चाहिए।

जहाँ तक गांधीजी के काम का ताल्लुक है, बचे हुए कामों का, तो उनके अनेक काम बचे हैं और बचे हुए काम को करने के लिए बच्चे पैदा होते हैं। बच्चे वे होते हैं जिनको बचा हुआ काम करना होता है, यह मेरा 'बच्चा' शब्द का अर्थ है। तो उनको हमने 'राष्ट्र-पिता' कहा तो उनके हम बच्चे हो गये। उनके कई काम बाकी हैं, जिन्हें हमें पूरा करना है, उनमें से कुष्ठ का एक काम है। लेकिन यह बहुत खतरनाक बात होगी, अगर गांधी-शताब्दी पर ही हम भरोसा रखेंगे। क्योंकि यहाँ गांधी का उतना जोर नहीं है, जितना शब्द का जोर है। याने यह जोर १०१ में खतम हो जायेगा, और ६९ में था नहीं। इसमें गणित का जोर ज्यादा है। इस वास्ते इस गांधी-शताब्दी में चाहे जितना ऊधम मचायें और अगली संवत्सरी में हमारा जोर ढीला पड़े, यह उचित नहीं। यह अलग बात है कि इस शताब्दी के नाम से लोगों को थोड़ी प्रेरणा मिलती है, तो उससे अनेकों का सहकार मिले, जितना मामूली तौर पर सहकार प्राप्त करना मुश्किल होता है। इस निमित्त से उनके सहकार से हम यह काम करें, यह दूसरी बात है। लेकिन शताब्दी के नाम से जितना काम किया जा रहा है वह बहुत खतरे में है। उस सिलसिले में मैंने आपको आगाह कर दिया।

सेवाग्राम : १४-११-'६९

सर्वोदय और शैतान

प्रजासमाजवादी अंग्रेजी साप्ताहिक 'जनता' ने अपने ३० नवम्बर '६९ के अंक में 'सर्वोदयीज़ ऐन्ड प्रूट' के शीर्षक से अपना सम्पादकीय लेख लिखा है। लेख का सम्बन्ध बादशाह खाँ–विनोबाजी–जयप्रकाशजी के उस संयुक्त वक्तव्य से है जिसे उन लोगों ने नवम्बर में सेवाग्राम से प्रसारित किया था। 'जनता' ने लिखा : 'दुख है कि तीन सर्वश्रेष्ठ नेताओं ने एक वक्तव्य निकाला, और उसकी ओर जैसे किसीका ध्यान ही नहीं गया। अखबारों ने पूरा वक्तव्य प्रकाशित तक नहीं किया। यह वक्तव्य उस समय निकला जब इन्दिरा-निजलिंगप्पा का गृहयुद्ध चरम सीमा पर था, और हमारे अखबार और आल इन्डिया रेडियो सब उस युद्ध की छोटी-से छोटी खबरें निकालने में जुटे हुए थे। ऐसी हवा में सेवाग्राम की चर्चाओं का करीब-करीब ब्लैक-आउट किया गया। इन्दिरा-निजलिंगप्पा की लड़ाई की छोटी-से-छोटी बातों का प्रकाशन हो और ऐसे नेताओं के वक्तव्य का ब्लैक आउट हो, इसका अर्थ सर्वोदय के मित्रों को समझना चाहिए। अगर वे नहीं समझेंगे तो उन्हें आज प्रेस की ओर से जो तिरस्कार मिल रहा है, वही कल स्वयं जनता से मिलेगा।'

'जहाँ तक तीनों नेताओं के वक्तव्य में कही गयी इस बात का सम्बन्ध है कि बावजूद लम्बी-चौड़ी घोषणाओं के देश के बुनियादी सवाल, जैसे गरीबी, अन्याय, शोषण, ज्यों-के-त्यों बने हुए हैं, कोई मतभेद नहीं हो सकता। इन सवालों के साथ नये सवाल जुड़ गये हैं, भाषा के नाम से, धर्म और जाति के नाम से। साथ ही इसमें भी कोई मतभेद नहीं है कि हर सवाल का अन्तिम हल यही है कि जनता की शक्ति संगठित की जाय, क्योंकि लोकतंत्र में लोकशक्ति ही अन्तिम आधार है।'

'इन बड़े नेताओं से हमारा जो मतभेद है वह दूसरा है। अपने वक्तव्य में उन्होंने जो तर्क दिये हैं, उनमें यह नहीं बताया गया है कि जनता के दुखों में, देश के सज्जनों में, आज की सरकार में, जिसके द्वारा सारी नीतियाँ निर्धारित होती हैं, तथा प्रशासन में जिसके ऊपर उन नीतियों के अनुसार काम करने की जिम्मेदारी होती है, इन चार में आपस में क्या सम्बन्ध है। हाँ, ये नेता कहेंगे कि वे चाहते हैं कि देश के अच्छे लोग सामने आयें और अपने निस्वार्थ कार्य से बिगड़ती हुई स्थिति को सम्भालें, और जनता की शक्ति को संगठित करें। लेकिन प्रश्न यह है कि अच्छे लोग, और जगी हुई जनता, अपनी शक्ति को प्रकट कैसे करे? जाहिर है कि ज्यों ही जनता संगठित होती है और एक कार्यक्रम बनाती है, वह एक संगठित राजनैतिक दल बन जाती है। सर्वोदय के लोगों को 'राजनीति' शब्द से इतनी चिढ़ है कि वे सचाई को स्वीकार नहीं करना चाहते। इसीलिए वक्तव्य में जो तर्क दिया गया है उसमें बहुत बड़ी कमी रह गयी है।'

'कोई भी समस्या हो, बेकारी, विषमता, औद्योगिक नीति, राज्यों का नया संगठन, प्रतिरक्षा, साम्प्रदायिक संघर्ष, इनमें से किसी पर आज के पूरे सामाजिक संदर्भ से अलग करके नहीं सोचा जा सकता। किसी भी देश में, विशेषतः भारत-जैसे विकासोन्मुख देश में, शासन करनेवाले दल के हाथ में इतनी शक्ति और इतने अधिकार होते हैं कि उसे अलग रखकर किसी समस्या पर विचार किया ही नहीं जा सकता। इसलिए जाहिर है कि सत्ताधारी राजनैतिक दल को चुनौती दिये बिना किसी समस्या का समाधान नहीं ढूंढा जा सकता।'

'हम दो ठोस उदाहरण लें—प० बंगाल और बिहार। बंगाल में संयुक्त मोर्चे की सरकार है, और बिहार में शांतिपूर्ण मध्यावधि चुनाव के बाद भी सरकार नहीं बन सकी। प० बंगाल की स्थिति ऐसी अराजकतापूर्ण है कि वहाँ के मुख्यमंत्री को अपनी ही सरकार के विरुद्ध सत्याग्रह करना पड़ा है। सोचने की बात है कि अगर बिहार के लोकतांत्रिक समाजवादी और सर्वोदयी राजनैतिक स्तर पर मिलते और बिहार में एक अच्छी, सच्ची, प्रगतिशील सरकार बनने-बनवाने में सफलता प्राप्त करते, तो क्या बिहार की पूरी दशा न बदल जाती और उसका पड़ोसी बंगाल पर जबरदस्त असर न पड़ता? बंगाल ही नहीं, पूरे देश को एक राजनैतिक विकल्प मिलता, और हताश जनता में एक नयी आशा का संचार होता?'

'मान लीजिए कि कल बादशाह खाँ पख्तूनों का स्वायत्त राज्य बनाने में सफल हो जाते हैं। अगर वह और उनके पक्के साथी सरकार में न जायें तो उन्हें किसी दूसरी सरकार को भला-बुरा कहने का क्या अधिकार रह जायगा?' 'स्पष्ट है कि बादशाह खाँ, विनोबा और जयप्रकाश चाहते हैं कि दिल्ली में, और राज्यों में भी, ऐसे लोगों की सरकारें बनें जो सेवा को स्वार्थ से ऊपर रखें, जो क्षेत्र या धर्म की संकुचित निष्ठाओं से ऊपर उठ सकें, जो सादी जिन्दगी जी सकें, और जो यह न भूलें कि उनके ऊपर राममोहन राय, रानडे, तिलक, गांधी, नेहरू और नेताजी जैसे नेताओं द्वारा बनायी गयी परम्परा को कायम रखने की जिम्मेदारी है। यह ठीक है, लेकिन क्या आज की सत्ता को राजनैतिक स्तर पर चुनौती दिये बिना भी यह स्थिति पैदा की जा सकती है? 'यथा राजा तथा प्रजा' की कहावत आज भी उतनी ही सही है जितनी पहले कभी थी। गांधी ने बाहर रहकर राजनीति पर आध्यात्मिक रंग चढ़ाने की बात कभी नहीं सोची थी। आज जो अच्छे लोग सत्ता पर काबू रखने की बात सोचते हैं उन्हें समझना चाहिए कि वे तभी सफल हो सकेंगे जब वे शैतान को, उसकी माँद में पकड़ने को तैयार हों।' •

टिप्पणी—'जनता' के इन विचारों के सम्बन्ध में 'भूदान यज्ञ' अपना मत आगे के अंकों में प्रकट करेगा।—सं०

भूमि की राजनीति

पिछले पचास साठ बरसों में हमने किस चीज की राजनीति नहीं बनायी? स्वतंत्रता की लड़ाई के समय धर्म की अपनी अलग राजनीति थी। राष्ट्रीयता ने देश को आज़ादी दिलायी, और साम्प्रदायिकता ने देश का बँटवारा कराया। कुछ मिलाकर धर्म की राजनीति विजयी हुई। स्वतंत्रता तो मिली किन्तु राष्ट्रीयता हारी। एक देश के दो देश हो गये। हिन्दू और मुसलमान एक घर में साथ न रहकर दो घरों में बँट गये, फिर भी पड़ोसी की तरह न रह सके, दुश्मन-के-दुश्मन ही बने रहे।

स्वतंत्रता के बाद हमने और कई चीजों को राजनीति के साथ जोड़ा। भाषा की राजनीति बनी, वर्ण की राजनीति बनी, धर्म की बनी, प्रदेश की राजनीति बनी, जाति की बनी, दल की तो बनी ही हुई है। ये सारी राजनीतियाँ अपनी जगह काम कर रही हैं। अब सबसे बड़ी राजनीति भूमि की बन रही है, यह राजनीति इतनी जबरदस्त है कि लगता है कि देश का भविष्य इस भूमि की ही राजनीति से बनेगा, या बिगड़ेगा। इस राजनीति के साथ पूरा देश जुड़ा हुआ है।

भूमि की राजनीति क्या है? अभी तो इतनी ही है कि हरिजन, आदिवासी, बँटाईदार, खेतिहर, मजदूर, ये सब अपने लिए भूमि का एक टुकड़ा चाहते हैं। नक्सलवादियों के जो आदिवासी हाथ में तीर-धनुष लेकर मरने-मारने पर उतारू हो गये, उनकी माँग क्या थी? ज्यादा कुछ नहीं, बस भूमि का एक टुकड़ा। अर्थशास्त्री, योजनाकार, सरकारी अधिकारी, विद्वान और विशेषज्ञ भले ही कहें कि भूमि का टुकड़ीकरण न किया जाए, क्योंकि वैज्ञानिक खेती नहीं हो सकती, लेकिन इन लोगों के मन में भूमि बसी हुई है, और उसके एक टुकड़े के लिए कुछ भी करने को तैयार हैं।

जब विनोबा ने भूदान का आन्दोलन शुरू किया तो बताया और विशेषज्ञों ने कहा कि ज़मीन के टुकड़े करना अवैज्ञानिक है। विनोबा बराबर उत्तर देते थे कि जो भूमि का भूखा है उसे एक 'टुकड़ा' दल से फिर जुड़ेंगे। अगर गाँव के लोगों के एक ग्रामदान में दिल जुड़ जायें तो किसान के लिए एक बार सहकार के साथ पारिवारिक खेती में से रास्ता निकाल लेंगे, सामूहिक करेंगे—कुछ-न-कुछ उपाय विज्ञान का लाभ लेने का अवश्य निकालेंगे। विनोबा की बात सोची थी, दूर की सोची थी, इतना सोचो थी कि देश के बड़ों की समझ में नहीं आयी। अभी भी नहीं आ रही है। लेकिन छोटों को भूख लग गयी है, और वे भूमि के लिए विह्वल हैं।

सरकार ने इतना ही समझा कि कुछ कानून बना दिये जायें। जमींदारी टूटने के बाद सीलिंग का कानून बना, बेदखली रोकने का बना, छोटी जोतों पर लगान-माफी का बना, कहीं-कहीं लेवी का भी बना। एक नहीं अनेक कानून बने, लेकिन भूमि के भूखों को भूमि का एक टुकड़ा न मिला, बेदखली न रुकी। असंतोष बढ़ता ही गया। विकास से जो वंचित रह गये उनका रोष बढ़ता ही गया।

यह देखकर वोट के भूखे नेताओं ने भूमि की राजनीति बनायी। उन्होंने क्षोभ को हिंसा का अस्त्र दिया। खुद कानून बनानेवालों ने कानून तोड़ने का रास्ता बताया। सरकार ने जिनको शांति-रक्षा की जिम्मेदारी दी उन्होंने आगे बढ़कर शांति भंग करने का अभियान शुरू किया। सरकार ने कबूल कर लिया कि उसका कानून असहाय है। मंत्री ने कहा, 'अगर भूमि चाहते हो तो कब्जा कर लो। सरकार कब्जा नहीं दिला सकती, लेकिन कब्जा कर लेने के बाद कानून की मुहर लगा सकती है। आप कुछ भी हों, कानून कब्जे का समर्थक बन गया। भूमि किसकी है, इसका निर्णय लाठी को सौंपा गया।'

यह सब पहले बंगाल में हुआ और अब बिहार, उत्तरप्रदेश आदि कई जगहों में हो रहा है। जो रास्ता साम्यवादियों ने दिखाया उस पर चलने की जगह-जगह होड़-सी लग गयी है कि कौन दल दूसरे से कितना आगे बढ़ सकता है। माओवादी, मार्क्सवादी, समाजवादी सब एक ही रास्ते पर चलना चाहते हैं। बात यह है कि अगर भूमि के भूखों को भूमि चाहिए, तो वोट के भूखों को वोट चाहिए। भूमि और वोट के संयोग से भूमि की नयी राजनीति का जन्म हो रहा है। राजनीति ही नहीं, अब इस देश में भूमि की ही क्रान्ति-नीति चलेगी, और भूमि की ही जीवन-नीति चलेगी।

अगर माओवादियों, साम्यवादियों और समाजवादियों का रास्ता सही हो, और अगर उस रास्ते के सिवाय दूसरा कोई रास्ता समाज और सरकार के पास न हो तो मान लेना पड़ेगा कि इस देश में सभ्यता के नाम से जो सारा ढाँचा चल रहा है वह निकम्मा है। मान लेना चाहिए कि वह टूट चुका। प्रशासन, राजनीति, व्यवसाय, शिक्षा, समाज की सारी संस्थाएँ और मान्यताएँ बेकार साबित हो चुकीं। जो समाज और देश अपने करोड़ों लोगों को मामूली तौर पर भी ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी नहीं दे सकता, वह दूसरा क्या कर सकेगा?

एक ओर भूमि पर भारत के भविष्य का निर्णय हो रहा है, और दूसरी ओर विधान-सभाओं और संसद में एक-दूसरे को गाली देकर सवाल हल किये जा रहे हैं। कई क्षेत्रों में जहाँ भूमि के प्रश्न को लेकर हवा बहुत गरम होती जा रही है, गालों की जगह गोली चलने लगी है। राजनीति दोनों चाहती है—कहीं गाली की, कहीं गोली की। क्या यह मान लेना चाहिए कि गाली और गोली के सिवाय दूसरा कोई उपाय हमारे पास नहीं रह गया है? उपाय तो है, लेकिन वह उपाय काम तब आयेगा जब हम गाली और गोली का भरोसा छोड़कर मनुष्य का भरोसा करें। जिसका सवाल है वही उसका जवाब दे। गाँव-गाँव के लोग—मालिक, बँटाईदार—

भूदान-यज्ञ, सोमवार, १९

—दार, भूमिहीन आपस में बैठें, चर्चा करें, बेदखली और भूमिहीनता के सवाल का हल निकालें। सवाल क्या है इसे वे अच्छी तरह समझ चुके हैं, अब उन्हें साथ बिठानेवाले और सही हल सुझाने वाले लोग चाहिए। यह काम एक-दो गांवों का नहीं है, हजारों गांवों का है, इसलिए भूमि को लेकर एक व्यापक, शान्तिपूर्ण आन्दोलन चलाना पड़ेगा। जनता की चेतना जगानी पड़ेगी। उनका दबा हुआ पड़ोसीपन प्रकट करना पड़ेगा। कुछ लोगों को पहल करने का साहस दिखाना पड़ेगा।

साथ बिठानेवाले और हल सुझानेवाले लोग कौन होंगे? सिवाय सर्वोदय और ग्रामदान के लोगों के दूसरे कौन? वे ही हैं जो दल, वर्ग, वर्ण, जाति आदि के ऊपर उठकर 'सर्व' की बात कह सकें, और सबके हित की बात सबसे मनवा सकें।

हम बरसों से कहते आये हैं, और उसी आधार पर ग्रामदान का आन्दोलन चलाते आये हैं, कि गाली और गोली से भिन्न एक तीसरा रास्ता भी है गोष्ठी का, आपस की सम्मति से आपस की समस्याएं सुलझाने का। यह शान्ति और सद्भावना का रास्ता है जिसका प्रयोग अभी कहीं बड़े पैमाने पर भूमि-सम्बन्धी संघर्षों और तनावों को हल करने के लिए नहीं हुआ है। अहिंसा के प्रयोग के लिए यह बिलकुल नया क्षेत्र है। अब समय आ गया है कि बिहार में ग्रामदान-पद्धति का प्रयोग हो। राज्यदान के बाद हम प्रयोग के लिए मालिक-बँटाईदार-मजदूर सब बड़ी संख्या में तैयार मिलेंगे। भूमि की समस्या आतंक बनकर उनके सामने आ चुकी है। वे चाहते हैं कि कोई उन्हें रास्ता दिखाये। पूर्णिया से लेकर चम्पारण तक का सीमा-क्षेत्र हमें आमंत्रित कर रहा है। उस गर्म क्षेत्र को तुरन्त शीतल स्पर्श की जरूरत है। यह अवसर है जब कि हम अपने को और अपने आन्दोलन को जन-जीवन की कसौटी पर कस सकते हैं। ग्रामदान को समाज की मान्यता मिल चुकी है, लेकिन वह इस विचार को तब अपनायेगा जब उसे व्यवहार में देख लेगा। सामाजिक शक्ति बनने पर ही कोई विचार वास्तव में क्रान्तिकारी बनता है।●

दान : आत्म रक्षा के लिए

प्रश्न : समाज के सामूहिक प्रगति के लिए आर्थिक विकास के साथ साथ और कौन-सा विकास जरूरी है?

विनोबा : आर्थिक विकास अमेरिका में बहुत हो गया, लेकिन वहाँ पर जितने खून होते हैं उतने और कहीं नहीं। और जितना पागलपन अमेरिका में है, उतना और शायद ही और किसी देश में होगा। उसको मैंने 'मेनिया' नाम दिया है। तरह-तरह के मेनिया हैं। उनका एक शास्त्र ही बनाया है। अमेरिका में हरेक के पास पिस्तौल है। बेटे को गुस्सा आ गया कि बाप को शूट कर दिया। वहाँ छोटी-छोटी बातों पर गुस्सा आ गया और हाथ में पिस्तौल रहती ही है बस शूट कर दिया। जहाँ पर गुस्सा है वहाँ पर शस्त्र नहीं होना चाहिए। गुस्सा करने वाले को शस्त्र रखने का अधिकार नहीं।

आर्थिक विकास तो वहाँ पर काफी हो गया है। केवल आर्थिक विकास से मानव का समाधान नहीं रहेगा। आर्थिक विकास परमार्थ के अंकुश में होना चाहिए। ऐसा आर्थिक विकास न हो कि बहुत ज्यादा पैसा आये। जैसे तरकारी में नमक थोड़ा डालते हैं तो रुचिकर होती है, बिलकुल नहीं डाला तो फीकी और ज्यादा डाला तो खराब, यानी नमक प्रमाण में ही चाहिए; न ज्यादा, न कम। वैसे ही जीवन में रुचि तभी आती है जब धन न ज्यादा हो, न कम। एक बाजू ज्यादा पैसा हुआ, दूसरी बाजू ज्यादा तकलीफ होती है। कबीर ने एक दोहा ही बनाया है—'पानी बाढ़ो नाव में, घर में बाढ़ो दाम, दोनों हाथ उलीचिए, यही सयानो काम।'—नाव में पानी बढ़ने पर एक हाथ से नहीं दोनों हाथ से निकालना पड़ता है, नहीं तो खतरा है। वैसे ही घर में दाम (पैसा) बढ़ गया तो दोनों हाथों से दान देना चाहिए। घर में दाम बढ़ना नाव में पानी बढ़ने के समान है और वह खतरा है। उसको बाहर निकालना दया धर्म नहीं, बल्कि आत्मरक्षा के लिए आवश्यक है।

कबीर की यह उपमा बहुत उत्तम और सांगोपांग है। नाव बिना पानी के चलेगी नहीं। वैसे ही समाज में वित्त चाहिए। बिना वित्त के समाज चलेगा नहीं। लेकिन नौका के समान वह बाहर रहना चाहिए, घर के अंदर नहीं। समाज में पैसा हो, पर घर में नहीं यह सोचने की बात है।

इस प्रकार की योजना जब हो जायेगी तब सुख रहेगा समाज में। आज तो बिलकुल खाने को मिलता नहीं, वहाँ अनेक प्रकार के पाप आते हैं।

गोपुरी : ७-१२-'६९

संवाद

व्यवसाय और राजनीति में बुनियादी परिवर्तन हो

ढेबरभाई : कल आपसे जो बातें हुई हैं, उनको विस्तार से सोचकर ऐसा तय किया है कि मैं दिसम्बर के १५-२० तक हरियाणा और जनवरी में कलकत्ता जाऊँगा। इस बीच दिल्ली में भी एक दो दिन रुकूँगा और जो यहाँ चर्चा हुई है उस पर विस्तार से सोचकर फिर आगे बढ़ूँगा। आज की परिस्थिति में आपका जो मार्गदर्शन मिल सकेगा उसे हृदयंगम करते हुए कल दो बातें हुई हैं—१ शासन का ढाँचा और २ व्यापारियों का ढाँचा। इन बातों पर हम लोग विस्तार से चर्चा करेंगे।

कमलनयन : सार तो आपने कह दिया है। कलकत्ते के बारे में हमारे मन में दुविधा है। जहाँ तक सरकार का ताल्लुक है, यह करने की बात है। जब तक शान्ति नहीं रहती तब तक वहाँ कुछ करना सम्भव नहीं दीखता। लोगों के अपने जीवन में हिंसा भरी पड़ी है। मनुष्य की शान्ति के लिए काम किये बिना यह काम नहीं हो सकता। व्यापारियों को कहें कि संगठन बनाओ, व्यवस्था निर्माण करो, जिससे गायों का दूध हो सके, तो वे कहेंगे कि यहाँ शान्ति नहीं है। हम इसमें पैसा लगाने को तैयार नहीं हैं। जिस तरह से आप तेलंगाना में गये या गांधीजी नोआखाली में गये वैसे हिंसा तो नहीं है, लेकिन दूसरे तरीके से स्थिति में हिंसा उससे कम नहीं है। नोआखाली में तो समाज के अंदर से जो पक्ष थे उन्होंने वैसा वातावरण निर्माण किया था। लेकिन यहाँ तो सरकार ही वह वातावरण बना रही है। यहाँ तो संगठित हिंसा हो रही है, जिसको सरकार का सहयोग (बैकिंग) प्राप्त है। आपके जाने से इसका दर्शन होगा। इस बारे में आप सोचें और आपको कुछ कहना हो तो वह कहें और हमारा मार्गदर्शन करें। सुरक्षित कौन है?

विनोबा : यह कहते हैं कि पहले आप हरियाणा जायेंगे, फिर कलकत्ता जायेंगे। इसको इंग्लिश में कहते हैं—'बैंकिंग द आडनेंस'—इस वक्त सुरक्षा किसको मालूम होती है? भारत में किसान सुरक्षित नहीं है, क्योंकि उसको किसी प्रकार का कोई संरक्षण नहीं मिला। अभी बैंक-राष्ट्रीयकरण किया। उसके बाद मदद पहुँचायेंगे ऐसा कहते हैं। यह तो आगे की बात है। लेकिन अब तक किस प्रकार की कोई मदद किसानों को मिली हो, ऐसा मुझे मालूम नहीं। खेती में काम करनेवाला मजदूर तो अत्यन्त असुरक्षित है। विद्यार्थी भी अपने को असहाय पाते हैं, क्योंकि उनको नौकरी नहीं मिलती और किसी काम के लायक वे होते नहीं, क्योंकि उनको वैसी शिक्षा नहीं मिलती। इसलिए उनका भी जीवन असुरक्षित है। व्यापारी-वर्ग भी अपने को असुरक्षित समझता है। गायें तो असुरक्षित हैं ही, तो सुरक्षित कौन है?

कमलनयन : विनोबा तो हैं ही।

विनोबा : आप लोगों की यह बड़ी कृपा है। मार्कण्डेय मुनि तैर रहे हैं। चारों ओर प्रलय है। इसलिए विनोबा डूब नहीं जाय तो बहुत बड़ी कृपा आप लोगों की मानी जायगी। वह भी यदि डूब जाय तो समझना चाहिए कि प्रलय आया। शिक्षक अपने को असुरक्षित मानते हैं, खास करके प्राइमरी शिक्षक। उनकी कोई भी परवाह नहीं है। मेहतर वगैरह को किसी प्रकार की प्रतिष्ठा नहीं है तो अपने इस समाज में कौन सुरक्षित है?

कमलनयन : आपने जो मार्कण्डेय का उदाहरण दिया वह समझा नहीं।

विनोबा : प्रलय के समय सब डूब रहे थे, केवल मार्कण्डेय ही तैर रहे थे, ऐसा शास्त्रों में वर्णन है। बाद में मार्कण्डेय को पूछकर फिर से नयी रचना की गयी।

कमलनयन : तो क्या आप उनकी राह देख रहे हैं? पूछनेवालों में ढेबरभाई और मुझे भी रखिएगा।

विनोबा : ठीक है कि पहले आप हरियाणा जायें, फिर कलकत्ता के लोगों से बात करें, शायद तब तक वहाँ पर शान्ति भी हो जाय। अभी तो वहाँ सत्या-ग्रह वगैरह चल रहा है।

व्यापारी भयभीत क्यों हैं?

कमलनयन : आपने जो उदाहरण दिया वह मुझे ठीक नहीं लगा। मजदूरों में, किसानों में, शिक्षकों में और विद्यार्थियों में जो असुरक्षा की भावना है वह आर्थिक और सामाजिक जीवन के बाबत है, लेकिन व्यापारियों में जो अशान्ति है वह राजनैतिक दृष्टि से पैदा की गयी है। उसमें हिंसा आ रही है। यदि यही राजनैतिक वातावरण सारे देश में होता तो लोग यह मान भी लेते कि सब जग गया ही है। लेकिन यह केवल कलकत्ते में ही हो रहा है। दूसरे क्षेत्रों की अशान्ति एकांगी है।

विनोबा : राजनीतिक कारण ही क्यों? अगर बंगाल में देखा जाय तो पता चलेगा कि वहाँ भुखमरी है। 'ओपेनली' कम्युनिस्ट जीत कर आते हैं। वे कहते हैं कि हमारे हाथ में राज आयेगा तो हम इसको मिटा देंगे। हमको वोट दें। जनता उन्हें वोट देती है। वे वोट से आते हैं इसका कारण क्या है? वहाँ अत्यन्त दारिद्र्य है। हम बचपन से पढ़ते आये हैं—सन् १९०८ ई० की बात है। उस समय वहाँ अकाल था तो अभी कौन-सा सुकाल है? महाराष्ट्र में एक कहावत ही हो गयी—'भूका बंगाली', तब से वह भूखे ही हैं। इस वास्ते बंगाल में जहाँ तक हो सकता है बाहर नौकरी के लिए जाते हैं लेकिन अब वह मर्यादित हो गयी है। बंगाल के दो टुकड़े होने से इसका परिणाम हुआ कि कलकत्ते में जूट की मिलें जो थीं वे हिन्दुस्तान में आयीं और जूट पैदा करनेवाले इलाके पूर्व पाकिस्तान में गये तो यहाँ की जूट-मिलों को जूट देने के लिए जमीन फँसानी पड़ी, जिसमें चावल पैदा किया जा सकता था, और

उधर पाकिस्तानवालों को चूँकि जूट का मार्केट बन्द हो गया, इसलिए उन्हें मिलें खड़ी करनी पड़ीं। और अब ऐसे साधन की खोज हो गयी है कि जूट के बिना भी काम चल जाय। इस तरह से जूट डबल हो गया, जिसके कारण जूट का भाव गिर गया। मैंने कहा कि जूट के साथ झूठ आता है। इस तरह हमने उस पर टीका की। मतलब कि वहाँ के लोग बिलकुल भूखे हैं इस वास्ते कम्यूनिज्म के नाम पर वोट देते हैं। फिर भी कांग्रेस को पिछले चुनाव में ३८ प्रतिशत वोट मिले। यह बहुत बड़ी बात मानी जायेगी और अब तो कांग्रेस के दो टुकड़े ही कर दिये तो २० और १८ प्रतिशत में वह दल बँट जायेगा। इसमें कौनसी प्रश्न है? बंगाल में जो अशान्ति है उसका कारण राजनीति है।

कमलनयन : मैं दोष नहीं दे रहा हूँ, बल्कि व्यापारियों में कैसे काम हो, इस विषय में मार्गदर्शन चाहता हूँ।

गाँव, व्यापार, व्यापारी

विनोबा : मैं कलकत्ता के शेयर-मार्केट में गया था तो वहाँ पर देखा कि लोग चिल्ला-चिल्लाकर बोलते हैं। दिल्ली में थोड़ी भी कुछ गड़बड़ी हुई कि शेयर बाजार पर उसका असर होता है। मैंने कई दफा कहा है कि जो किसान देहात में पैदा करता है उसका भाव उसके हाथ में होना चाहिए। आज उसका उल्टा होता है। अनाज गाँव में पैदा होता है, लेकिन भाव बम्बई या कलकत्ता में तय होता है। उसी तरह कपास का भी है। इसलिए मैंने कहा कि जो पैदा करते हो उसे खाना शुरू कर दो और बचा हुआ बेचो तो भाव तुम्हारे हाथ में आयेगा। बात है—कपड़ा खरीदो, मक्खन बेचो। मैं कहता हूँ—मक्खन खाओ, कपड़ा बनाओ। अब यह करना होगा। ग्रामदान हो गया कि ग्राम-सभा बनेगी; फिर बाजार-भाव उसके हाथ में आयेगा। भारत सरकार कहेगी कि बाजार में मक्खन का भाव इतना अधिक नहीं हो सकता। सरकार के निश्चित किये हुए भाव पर गाँववालों को मक्खन देना पड़ेगा। उस हालत में गाँववालों को सुन्दर सत्याग्रह करने का मौका मिलेगा। अगर सरकार 'चेक' करेगी तो भारत के सभी गाँवों में एकसाथ सत्याग्रह हो सकता है। इस तरह से एक बाजू किसान, दूसरी बाजू मजदूर, तीसरी बाजू सरकार और चौथी बाजू व्यापारी होंगे।

मुख्य स्थान तो गाँव है। शहरवालों के पास कुछ है ही नहीं। जीवन की आवश्यक वस्तुएँ गाँववालों के पास हैं। आपकी यह बात ठीक है कि वहाँ के व्यापारी अशांति के कारण अपने को असुरक्षित समझते हैं। लेकिन कहाँ के व्यापारी समझते हैं कि हम सुरक्षित हैं? राउरकेला में सरकारी कारखाना है। वहाँ भी आये दिन दंगे होते हैं और अभी मैंने राँची के सिमडेगा सब डिवीजन में देखा कि वहाँ गाँव गाँव में व्यापारी हैं और वे लूटने के सिवाय कुछ करते नहीं। लोग उनके बिलकुल खिलाफ हैं। ईसाई लोग वहाँ के आदिवासियों को पैसा देते हैं और दूसरी मदद करते हैं। बीमारी में सेवा करते हैं। इतना सारा करके वे उनका प्रेम हासिल करते हैं। उनके साथ-साथ सत्ता भी अपनी कर लेते हैं। इस प्रकार जितने भी आदिवासी क्षेत्र देखे, वहाँ उनकी सत्ता है। ईसाई लोग उनको 'डि-नेशनलाइज' करते हैं। उनको बताते हैं कि यह मदद जर्मनी से आती है, इंग्लैण्ड से आती है, या और किसी देश से, तो उन लोगों के मन में उन देशों के प्रति आदर का भाव और अपने देश के प्रति अनादर का भाव पैदा करते हैं। लेकिन वहाँ के जो व्यापारी हैं वे केवल लूटने का ही काम करते हैं। अधिक-से-अधिक ब्याज लेते हैं; क्योंकि वे लिखना-पढ़ना जानते नहीं। इसका वे नाजायज फायदा उठाते हैं। इसलिए हमने उन लोगों में व्यापारियों के प्रति भयंकर नफरत देखी। गाँव-गाँव के छोटे-छोटे व्यापारियों की यह दशा है।

बापू ने कहा था ट्रस्टीशिप। उसका फारमूला बनाने के लिए किशोरलाल भाई और महादेव भाई को उन्होंने सौंपा। उन दोनों ने ड्राफ्ट बनाकर बापू को दिखाया। बापू ने उसमें थोड़ा परिवर्तन कर बिड़ला-जी को दिया कि वे इसमें कुछ व्यावहारिक सुझाव देंगे। लेकिन अब प्यारेलाल 'लास्ट फेज' में लिख रहे हैं कि उसका क्या हुआ पता नहीं, जब कि दोनों ही दिल्ली में रहते हैं। उसको बिड़लाजी ने जरूर पढ़ा होगा। लेकिन उनकी तरफ से अभी तक प्यारे-लालजी को उत्तर नहीं मिला। उनकी जो 'थ्योरी' (सिद्धान्त) थी वह तो व्यापारियों ने माना नहीं।

हमने उसमें एक आसान 'थ्योरी' बतायी। जब हम कलकत्ता के 'चेम्बर आफ कामर्स' में बोलने के लिए कहा गया तो मैंने कहा—मैं आपको दो बातें सुझाता हूँ। पहली बात तो यह कि जो तरह तरह की मदद अनेक कामों में करते हैं। आपको सरकार की उस काम में मदद करनी चाहिए जिस काम को आप पसन्द करते हैं या जनता के जो काम चलते हैं और जिसे आप पसन्द करते हैं उसमें मदद करनी चाहिए। लेकिन राजनीतिक पार्टियों की मदद नहीं करनी चाहिए। यह मैंने सन् १९६३ में कहा। तो उनकी तरफ से मुझे उत्तर मिला कि यदि उनको पैसा नहीं देंगे तो वे पचासों प्रकार से हमारे पीछे लगकर मुसीबत पहुँचायेंगे। आपका सुझाव तो हम पसन्द है, पर हमारे लिए सम्भव नहीं दीखता, ऐसा उनका उत्तर मिला। अब वहीं प्रस्ताव कांग्रेसवाले लाये हैं कि राजनीतिक पक्षों को मदद नहीं देनी चाहिए। उसका कारण क्या है? परिस्थिति बदली है। उन्होंने देखा कि दूसरी पार्टियों को भी मदद मिलने लगी। पहले तो यह केवल कांग्रेस को मिलती थी। अभी मुझे जानकारी मिली कि टाटा ने कांग्रेस और स्वतंत्र पक्ष को दी और एक के अनुपात में मदद दी। उनसे पूछा गया तो उन्होंने उत्तर दिया कि लोकतंत्र के लिए दूसरी पार्टी का होना जरूरी है। ऐसा उनका लोकतांत्रिक उत्तर मिला।

ब्रह्मा चारों बाजू देखता रहता है—जैसे चतुर्मुख कहा। वह पद्मासन पर बैठकर ध्यान करता है। चारों बाजू मुख

रखना है और सोचना रहता है—एक है सर्वोदय का, एक है व्यापार का, एक है राजनीति का...।

आज की राजनीति बदलें

ढेबरभाई अब 'पालिटिक्स' की बात करें।

कमलनयन आपके सामने ढेबर भाई ने बात रखी थी कि इन्दिराजी को और निजलिंगप्पा को आप कुछ लिखें। आपने मुझसे पूछा था तो मैंने कहा था कि मुझे कुछ जँचा नहीं। लेकिन देश में आज की परिस्थिति में जो हो रहा है उस पर आपको कुछ कहना चाहिए। हमको ऐसा लगता है कि आपको कोई पक्ष की दृष्टि से नहीं, बल्कि राष्ट्र की दृष्टि से कहना चाहिए। 'पार्लियामेंटरी डेमोक्रेसी', जो पाश्चात्य देश से लेकर यहाँ जमाने की कोशिश की गयी है वह भारत की संस्कृति के खिलाफ पड़ती है। वह यहाँ पर हजम क्यों नहीं हो सकती है, उसमें क्या परिवर्तन करना चाहिए यह आप बतायें, ताकि कम-से-कम परिवर्तन में अधिक-से-अधिक लाभ मिल सके। आपने बताया कि कांग्रेस के दो पक्ष हुए हैं, उनमें आपस में प्रेम नहीं है। इतना ही नहीं, बल्कि हर एक पक्ष में विश्वास की कमी है। उसका क्या परिणाम हो रहा है, सब पक्षों को मिल करके किस तरह का ढाँचा बनाना चाहिए, कोई न्यूनतम कार्यक्रम बतायें। आप अपनी दृष्टि से सोच करके एक परिपत्र तैयार करें। उस पर विचार करने के लिए सब राजनैतिक पक्षों को, निष्पक्ष व्यक्तियों को और जिनका प्रभाव है ऐसे सब लोगों को वह परिपत्र भेजा जाय। उन लोगों को बुलायें। आपके मन में जो बैठा है वह लोगों के सामने प्रकट करें।

विनोबा पंडितजी एक बार हमसे मिले थे तो हमने उनसे कहा था कि 'हाईकोर्ट' के न्यायाधीश को ६२ साल की उम्र में 'रिटायर' होना पड़ता है, जब कि उसका दिमाग उस समय भी समतायुक्त रहता है। तो क्या वजह है कि 'पालिटिक्स' में रहा हुआ आदमी ६२ साल के बाद 'रिटायर' न हो? क्या वह न्यायाधीश से अधिक उस समय समत्वयुक्त रहता है? इसलिए मेरी राय है कि राजनीतिज्ञों को ६५ साल की उम्र के बाद 'रिटायर' होना चाहिए। जिनकी उम्र ६० साल की हो उनको ही टिकट मिलने का अधिकार होना चाहिए, ताकि वह ६५ साल के बाद 'रिटायर' हो जायें। और एक सुझाव मैंने यह दिया था कि आज मत देने का अधिकार २१ साल का है और चुनाव में खड़े होने का अधिकार २५ से लेकर जीवन पर्यन्त तक है। उसमें मेरा कहना है कि मत देने का अधिकार १८ साल कर दिया जाय और खड़े होने का अधिकार २५ से ६० साल तक दिया जाय। अगर वह प्रस्ताव मान्य हो जाता तो मेरा ख्याल है, आज के ६०-७० फीसदी झगड़े खतम हो गये होते।

कमलनयन यह बात सबको बुलाकर आपको कहनी चाहिए।

विनोबाजी आप लोगों का यह काम था कि मेरी इस बात को आप 'पार्लियामेंट' में पेश करते। उसे कौन रोक रहा था?

'डेमोक्रेसी' को मैंने नाम दिया है—डेयरी का दूध। वहाँ का जो दूध होता है वह न तो रही गाय के जैसा होता है और न सर्वोत्तम वह औसत होता है। वैसी ही 'डेमोक्रेसी' भी औसत होती है। राजाओं का राज सर्वोत्तम भी हो सकता है और अत्यन्त अधम भी। लेकिन 'डेमोक्रेसी' सर्वोत्तम या अत्यन्त अधम नहीं हो सकती। यह डेमोक्रेसी' की मर्यादा है और उसकी खूबी है। उसकी मर्यादा को ध्यान में रखकर हमने सुझाया कि गाँववालों को अपना निर्णय सर्व-सम्मति से करना चाहिए, 'मेजारिटी' के आधार पर नहीं। इस प्रकार की व्यवस्था अगर गाँव-गाँव में करेंगे तो 'डेमोक्रेसी' की जो न्यूनता है वह दुरुस्त होगी। अन्यथा यदि बहुमत मानकर फैसला करोगे तो हर जगह 'पालिटिक्स' दाखिल होगी, झगड़े बढ़ेंगे। इस प्रकार से हमको 'डेमोक्रेसी' को सुधारना चाहिए। सरकारों में बहुमत का मत नहीं दाखिल करना, यह बहुत जरूरी है। ऐसे हम अनेक विचार देते आते हैं। हमारा विश्वास 'डीप कास्ट' पर है, 'ब्राडकास्ट' पर नहीं।

पहले बिहारदान पर अमल हो

ढेबरभाई . कमलनयनजी का सुझाव था कि कांग्रेस वगैरह की जो हालत है वह तो है, लेकिन राष्ट्र के ऊपर जो असर होनेवाला है, इसके बारे में आपको विवेचन करना चाहिए। सावधान करने की दृष्टि से २०-२५ लोगों को बुलाकर इस विषय पर विचार विमर्श करें। जितना 'डीप कास्ट' होगा, उतना वह अपनी अपनी जगह पर असर डालेंगे।

विनोबा एलवाल-कानफ्रेन्स जो हुआ था, वह ग्रामदान के विचार को लेकर हुआ। हमने पंडितजी से कहा कि अब तक लगभग ३-४ हजार ग्रामदान हुए हैं, लेकिन बाबा यह जानना चाहता है कि क्या उसकी यह सनक है या यह एक 'साउण्ड' विचार है? इस पर सब पक्षों के लोग मिलकर विचार करें। यदि इसमें कुछ सुधार करना हो तो वह भी सुझायें। इसमें कुछ हानि हो तो वह भी बतायें, ऐसा बाबा चाहता है। नेहरूजी ने हमारी बात मानकर सब पक्षों के लोगों को और अर्थशास्त्रियों को बुलाया। मैं एक घंटा बोला, आठ-दस घंटा चर्चा चली, अन्त में तय हुआ कि ग्रामदान देश के लिए हितकर है।

अब बिहार का ग्रामदान कागज पर है। वह यदि आठ-दस महीने में प्रत्यक्ष में अमल में आ जाय यानी गाँव-गाँव में ग्रामसभा बन जाय, और जमीन का बीसवाँ हिस्सा बेजमीनों में बँट जाय तो हम लोगों को कुछ कहने का हक होगा कि ऐसी चीज हो गयी है जिससे भारत के गाँवों का शासन बन सकता है। उसके लिए आज की 'डेमोक्रेसी' 'ग्राम कट' सरीखी बन सकती है। उस पर चर्चा करने के लिए लोग आयें और साथ-साथ हिन्दुस्तान के जो दूसरे मसले हैं उन पर भी चर्चा करें। ऐसा आमंत्रण देने का अधिकार उस समय आ सकता है। अभी वह समय नहीं आया है।

—गोपुरी, वर्धा · ४ दिसम्बर '६९

* सोमवार २९ दिसम्बर, '६९

आयात-निर्यात

[पिछले अंक में भूमि और उद्योग से हुई कमाई तथा कमाई के अनुपात में लोगों की बदलती आवश्यकताओं और रुचियों के सम्बन्ध में आपने पढ़ा। अब इस अंक में आयात-निर्यात का लेखा-जोखा पढ़ें।—सं०]

ग्रामीण आर्थिक स्थिति को देखते हुए आयात-निर्यात पर विस्तार से विचार करना समीचीन होगा। गाँव में पैदा होनेवाली चीजें तथा उनका परिमाण इतना कम है कि उनसे बहुत सीमित आवश्यकताएँ ही पूरी हो पाती हैं। यही कारण है कि प्रत्येक परिवार को अपनी जरूरी आवश्यकताओं की पूर्ति बाहरी आयात से करनी पड़ती है। यह आयात पिछले तीन वर्षों से क्रमशः बढ़ता रहा है। इसके मुख्य कारण हैं: (१) तीन वर्षों में कम वर्षा होने से अन्न का उत्पादन घट गया है।

(२) जनसंख्या वृद्धि। इस कारण अन्न की खपत बढ़ रही है।

(३) अकाल में चारे आदि की कमी के कारण पशुओं को बेचना पड़ता है। फिर खेती के काम के लिए आवश्यक होने पर खरीद करनी पड़ती है। इस प्रकार पशु तथा अन्य फुटकर चीजों की खरीद करनी पड़ती है।

खाती की ढाणी में जिन चीजों का आयात किया जाता है उनसे साफ जाहिर है कि यहाँ उपभोग के प्रकार काफी सीमित हैं। आयात मुख्यतः आवश्यक उपभोग की चीजों का ही होता है। अनाज के अतिरिक्त जिन चीजों का आयात किया जाता है उनमें मुख्य हैं—वस्त्र, नमक, मीठा, घास, मसाला-तेल आदि। सामान्यतया वर्षा होने पर चारे की खरीद नहीं की जाती है। पशु भी आयात-निर्यात की वस्तु है। सामान्यतः यहाँ के लोग पशु स्थायी रूप से खरीद लेते हैं। परन्तु पिछले दो वर्षों में यह प्रवृत्ति बढ़ी है कि खेती के अवसर पर पशु खरीद लें और खेती के बाद बेच दें। पर इस प्रक्रिया में किसान घाटा महसूस करता है, क्योंकि खेती में साल भर कुछ-न-कुछ काम रहता है। फिर भी खिलाने की समस्या ने इस प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया है। कभी-कभी इसमें उन्हें कुछ लाभ भी होता है। आयात की मात्रा तथा प्रकार परिवार की आर्थिक स्थिति, सदस्य-संख्या, रहन-सहन के स्तर आदि पर निर्भर रहता है। पिछले दो वर्षों में पारिवारिक आयात की स्थिति देखने से गाँव में विभिन्न प्रकार की वस्तुओं की खपत तथा बाहरी वस्तुओं की माँग का अन्दाज लगा सकते हैं। सारणी संख्या ६ में पारिवारिक आयात की प्रवृत्ति देख सकते हैं—

सारणी संख्या—६

आयात की स्थिति : सन् १९६५-६६ और १९६६-६७

क्रम	परिवार के मुखिया का नाम और सदस्य-संख्या	परिवार की वार्षिक आय	*१ २	अनाज	कपड़ा	मीठा	पशु	चारा	तेल मसाला आदि	विविध	योग
१	श्री गंगाराम (९)	२७००	१	४५०	६००	३६०	५००	२००	१६०	—	२०३०
			२	३००	५५०	३६०	४००	५००	१६०	—	२४३०
२	श्री गोविन्दराम (३)	४२०	१	७००	५५०	५०	—	—	१००	१००	१५००
			२	२००	५७०	५०	१५०		१००	१००	११५०
३.	श्री मदन (३)	७२५	१	—	२००	—	—	—	१००		३००
			२	—	२००	५०	—		२०	—	२७०
४.	श्री साधुराम (६)	१२३०	१	३००	७००	५०	४००	५०	१५०		१६५०
			२	४००	६००	५०	—	१५०	१००	—	१३००
५	श्री मनोहरलाल (७)	३००	१	१३५	१०००	१००	—	१५०	३००		१६८५
			२	३७०	९००	७५	१४५०	१००	२५०	—	३१४५
६	श्री नारायण (१२)	२३५०	१	२००	८००	२००	—	—	४००		१६००
			२	४००	१०००	३००	८५०	२५०	६००	—	३४००
७	श्री गणपत (९)	१६५०	१	२४०	६००	३००	—	२००	५००		१८४०
			२	२५०	५००	२००	१०००	२००	४००	—	२५५०
८	श्री रामनिवास (३)	७५०	१	—	२५०	—	—	६०	१६०		४७०
			२	—	३००	४०	—	५०	१३०	—	५२०
९.	श्री श्योराम (३)	७५०	१	६०	३००	—	—	१००	११५		५७५
			२	१००	४००	३०	—	१००	१००	—	७३०
१०.	श्री जवाहर (७)	१५००	१	२००	६००	१५०	—	१५०	६०		११६०
			२	२००	६००	१६०	—	३००	६०	—	१३२०

* खाने में १=सन् १९६५-६६
२=सन् १९६६-६७

गाँव के प्रायः सभी परिवार कमोबेश आयात करते है। जैसा कि सारिणी से विदित है, कुछ खास वस्तुएँ ही इस गाँव मे आयात की जाती हैं। पिछले दो-तीन वर्षों मे अकाल की खास परिस्थिति के कारण अनाज तथा पशु की खरीद-बिक्री मे अधिक रकम व्यय हुई है। फिर भी पूरे गाँव की सबसे अधिक राशि वस्त्र पर व्यय की जाती है। विभिन्न वस्तुओं पर व्यय की गयी राशि इस सारणी मे देखी जा सकती है :—

सारणी संख्या–७

विभिन्न वस्तुओं के आयात पर व्यय

(दोनो वर्षों में)

क्रम	वस्तु का नाम	रुपये
१.	अनाज	१७५४०.००
२	कपडा	३३२००.००
३.	मीठा	९८२५.००
४.	पशु	१२१०५.००
५	चारा	८२७०.००
६.	तेल, मसाला आदि	१३७८०.००
७.	विशेष	६००.००
	योग	९३६२०.००

सबसे अधिक व्यय राशि की वस्तुओं का क्रम इस प्रकार बनता है—कपडा, अनाज, तेल, मसाला, फुटकर चीजें, और पशु।

पारिवारिक आयात सारणी को आयात श्रेणी के रूप मे इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है —

सारणी संख्या–८

आयात श्रेणी

(दोनो वर्षों मे)

क्रम	श्रेणी	परिवार-संख्या
१.	१००० रु से कम	५
२.	१००१ रु से २००० रु. तक	९
३	२००१ रु से ३००० रु तक	७
४	३००१ रु. से ४००० रु तक	५
५	५००० रु से अधिक	८
	कुल .	३४

आयात की इन तालिकाओं के बाद पारिवारिक दृष्टि से आयात पर विचार कर सकते हैं। गाँव के प्रायः सभी परिवार एक निश्चित वस्तुओं का आयात करते हैं। परन्तु आधुनिक वस्तुओं के उपभोग में अन्तर अवश्य है। बीडी, सिगरेट, अच्छे कपडे आदि के उपभोग मे परिवारों मे अन्तर है। सबसे कम आयात श्री मदन के परिवार में किया गया है। दोनो वर्षों में कुल ७५० रु० की वस्तुएँ आयात की हैं और इनकी वार्षिक आय ७२५ रुपये है। इनका परिवार भी छोटा है। इसके विपरीत सबसे अधिक आयात श्री सूर्याराम ने किया। उन्होंने दो वर्षों में कुल ६२०० रु. की चीजें बाहर से खरीदीं। इनके परिवार मे कुल २० सदस्य हैं। श्री रुइमल ने भी अधिक आयात किया, परन्तु उसने इन दो वर्षों मे १६ सौ रुपये में एक बैलगाडी खरीदी। इससे उसकी राशि श्री सूर्याराम से भी कुछ अधिक हो गयी है।

उपरोक्त अध्ययन से आयात के बारे मे नीचे लिखे निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं :—

(क) सामान्यतया गरीब परिवारो ने पिछले दो वर्षों मे अपेक्षाकृत अधिक आयात किया है। क्योंकि इनके पास जमीन भी कम है और इस प्रकार पैदावार भी। यही कारण है कि इन्होंने खाद्य पदार्थ अधिक मात्रा मे खरीदा।

(ख) आयात की मात्रा की सीढ़ी आर्थिक स्थिति और परिवार मे सदस्य-संख्या के अनुसार बढ़ती गयी है।

(ग) इसके अपवाद भी हैं। कुछ परिवारों ने इन वर्षों में भी अधिक मेहनत करके अपनी आर्थिक स्थिति ठीक रखी है। कम अन्न खरीदा। इन्हें परिवार की कम सदस्य-संख्या ने भी साथ दिया है।

(घ) गाँव में सामान्यतया कपडा, मीठा तेल, मसाला तथा अन्य फुटकर चीजें बाहर से आयात की जाती हैं। परन्तु पिछले दो-तीन वर्षों मे अनाज तथा चारे के आयात मे अप्रत्याशित रूप से वृद्धि हुई है। सामान्यतया सभी ने अन्न तथा चारे की खरीद की है।

निर्यात

गाँव मे निर्यात की वस्तु मुख्य रूप से मूँगफली है। यही नकदी की फसल है। प्रायः सभी लोग कुछ-न-कुछ मूँगफली बोते है। जमीन मूँगफली के लायक है, इस कारण मौसम के साथ देने पर अच्छी फसल हो जाती। पिछले तीन वर्षों मे यह फसल काफी कम हुई। फिर भी अधिकांश परिवारों ने कुछ-न-कुछ मूँगफली पैदा कर ही ली। गाँव में सबसे अधिक मूँगफली श्री बद्रीनारायण ने सन् १९६५-६६ में ३४ मन बेची। अन्य लोग सामान्यतया २ से १० मन के बीच में रहे। परन्तु १९६६-६७ मे सबने कम मूँगफली बेची। किसीने दस मन से अधिक मूँगफली नहीं बेची। चार परिवारों ने तो बिल्कुल ही नहीं बेची। मूँगफली दोनो वर्ष सामान्य तौर पर ३५ रुपये प्रति मन के हिसाब से बिकी। १९६५-६६ में गाँव भर में कुल १५१.५ मन मूँगफली ५५०७ रुपये में बेची गयी। परन्तु अगले वर्ष १९६६-६७ मे मात्रा घट गयी और १२० मन मूँगफली ४१४७ रुपये मे बेची गयी। १९६५-६६ मे कुछ लोगों ने मिर्च एवं अन्य फुटकर चीजों की बिक्री से भी ८० रु० प्राप्त किये।

गाँव मे पशु बिक्री भी हुई। वैसे पशु की खरीद अधिक होती है। फिर भी मुख्यतः अकाल के कारण दो वर्षों मे पशु-बिक्री की प्रवृत्ति में कुछ वृद्धि हुई है। ये पशु सामान्यतया गाँव से बाहर बिके हैं। पशुओं की खरीद भी गाँव के बाहर से ही हुई है। इन दो वर्षों में लोगों ने खेती के लिए बैल खरीदे तथा खेती के बाद चारे के अभाव के कारण उन्हें बेच दिया। फिर भी निर्यात की अपेक्षा आयात। इन दो वर्षों मे भी अधिक ही हुआ है। दोनों वर्षों मे गाँव से कुल २६०० रुपये के पशु बाहर बेचे गये। इनमे मुख्यतया बैल थे। इस प्रकार गाँव मे निर्यात मुख्यतः मूँगफली और पशु, दो ही चीजों का होता है। निर्यात की कुल राशि १३,३३४ रु० रही।

गाँव के कुल आयात निर्यात की मोटी-मोटी जानकारी प्राप्त करने तथा हिसाब जानने के लिए इस सारणी को देखें—

सारणी संख्या—६
आयात निर्यात
(सन् १९६५-६६ और ६६-६७)

वर्ष	आयात	निर्यात
१९६५-६६	४४५७५ रु०	५५९७ रु
१९६६-६७	४८९४५ रु०	७७४७ रु
कुल	९३५२० रु०	१३३४४ रु

आयात-निर्यात में काफी अन्तर है। स्वभावतः अतिरिक्त आयात के लिए धन अन्य कार्यों से प्राप्त होता है। आयात के लिए धन के मुख्य स्रोत हैं—

१—निर्यात से प्राप्त रकम
२—बढ़ईगिरी से प्राप्त मजदूरी
३—कर्ज।

आय के स्रोतों में बढ़ईगिरी का प्रमुख स्थान है। सारणी से स्पष्ट होता है कि पिछले दो वर्षों में आयात तथा निर्यात, दोनों की मात्रा बढ़ी है। निर्यात की मात्रा बढ़ने का कारण यह है कि सन् १९६६-६७ में पशु की बिक्री अधिक हुई है। मूँगफली का निर्यात इस वर्ष पिछले वर्ष से कम हुआ है। आयात का बढ़ना स्वाभाविक था, क्योंकि मौसम ने साथ नहीं दिया। फिर क्रमशः उपयोग भी कतिपय कारणों से बढ़ रहा है।

आयात निर्यात पर सामान्य तौर पर जाति का असर पड़ता है। परन्तु इस गाँव में जातियाँ भी दो ही हैं और व्यापार पर जाति की भिन्नता का कोई खास प्रभाव नहीं है। मुख्यतः दोनों जातियों की समान प्रवृत्ति हो गयी है। ब्राह्मण परिवार मुख्यतः खेती पर निर्भर हैं, इस कारण आय का क्षेत्र सीमित है। इन्हें थोड़ी मात्रा में जजमानी से भी 'प्राप्ति' हो जाती है। पर जो चीजें बाहर से खरीदी जाती हैं उनमें दोनों की समान स्थिति है। गाँव में व्यापार की वृत्ति प्रायः किसीमें नहीं है। सभी अपनी अपनी जरूरत के लिए ही आयात निर्यात करते हैं।

गाँव में रहन-सहन के ढंग के कारण कुछ बातें सामने आती हैं। बूढ़े लोगों की आवश्यकताएँ काफी सीमित हैं। परन्तु नवयुवक वर्ग, खासकर जो बाहर बढ़ईगिरी का काम करते हैं, उनमें अन्य आवश्यकता की चीजों का आकर्षण बढ़ा है। ये लोग तेल, साबुन तथा नयी किस्मों के कपड़े का उपयोग अधिक करते हैं। यही कारण है कि इन चीजों का आयात क्रमशः बढ़ रहा है। इधर चाय पीने की आदत भी बढ़ी है। कुछ बच्चे स्कूल जाते हैं उनमें अनावश्यक उपयोग की चीजों के प्रति आकर्षण बढ़ रहा है। गाँव के तीन-चार युवक टेरिलीन तथा अन्य किस्म के वस्त्रों के उपयोग में भद्रता महसूस करते हैं। इसी प्रकार हुक्का के स्थान पर सिगरेट पीने की प्रवृत्ति बढ़ी है। यह कहा जा सकता है कि फुटकर आवश्यकता की किस्में क्रमशः बढ़ रही हैं। तथाकथित विलासिता के नाम से जानी जानेवाली वस्तुओं के उपयोग की वृत्ति नयी पीढ़ी में बढ़ रही है। जहाँ तक महिलाओं की स्थिति का प्रश्न है, उन्हें 'जहाँ का तहाँ' माना जा सकता है। अभी तक उनके रहन-सहन तथा आवश्यकताओं में वृद्धि नहीं हुई है। सभी स्त्रियाँ गाँव में रहती हैं, उनका शहरी जीवन से सम्बन्ध नहीं के बराबर है। अतः उनके मतलब की चीजों का आयात परम्परागत है। भोजन के अलावा जो बाहर से मँगाया जाता है वह वस्त्र के अतिरिक्त दूसरी कोई चीज शायद ही हो। हाँ, परम्परागत ढंग के आभूषण का सीमित शौक अवश्य देखने को मिला।

आयात निर्यात की प्रवृत्तियों को देखने पर साफ जाहिर होता है कि प्राथमिक समझी जानेवाली आवश्यकता की चीजों का आयात ही अधिक है। प्राथमिकता को देखते हुए आयात को इन श्रेणियों में व्यक्त कर सकते हैं —

(अ) भोजन से सम्बन्धित चीजें— अन्न, गुड़, तेल-मसाला।

(ब) वस्त्र,

(स) खेती के साधन तथा पशु और चारा,

(द) फुटकर आवश्यकता की चीजें— चाय, साबुन, खेती के औजार, बच्चों की पुस्तकें, दवा तथा अन्य तात्कालिक चीजें।

जैसा ऊपर हमने देखा है, निर्यात की चीजों की बहुत अधिक किस्में नहीं हैं।

आयात की पिछले दो वर्षों की प्रवृत्ति को देखते हुए ऐसा लगता है कि अकाल के कारण आयात क्रमशः बढ़ रहा है। १९६५–६६ में प्रति व्यक्ति वार्षिक आयात १६७ रु० के आसपास रहा, जब कि १९६६–६७ में यह बढ़कर १८४ रु० प्रति व्यक्ति हो गया। ध्यान में रहे कि दोनों वर्षों में कोई भी सामाजिक कार्य गाँव में नहीं हुआ। हाँ, परिवार वृद्धि अवश्य हुई। इससे साफ जाहिर है कि उत्पादन में ह्रास ही हुआ, वृद्धि नहीं। कर्ज में वृद्धि हुई।

उपभोग की आधुनिक प्रवृत्तियों को देखते हुए आयात का क्षेत्र क्रमशः बढ़नेवाला है। शिक्षा के प्रसार तथा बाहरी सम्पर्क के कारण विलासिता की चीजों का तथा अनावश्यक उपभोग की चीजों का तथा आवश्यक उपयोग की चीजों का आयात भी बढ़नेवाला है। अभी आयात में विभिन्नता की कमी का एक कारण पूँजी की कमी भी है। ज्यों ज्यों आय—खासकर नकद आय—बढ़ेगी त्यों त्यों आयात भी बढ़ेगा। खेती की वर्तमान स्थिति में उसकी उत्पादकता में उल्लेखनीय प्रगति की कम सम्भावना है। इसका प्रभाव यह होगा कि निर्यात नहीं बढ़ेगा। इस गाँव में निर्यात की वस्तु मुख्यतः मूँगफली है। निर्यात के अन्य प्रकार न होने के कारण किसान की नकद आय में वृद्धि की बहुत गुंजाइश नहीं है। यही कारण है कि आयात-निर्यात में सन्तुलन के लिए कुछ खास प्रयास करने होंगे। अभी तो गाँव आयात के लिए काफी हद तक महाजन पर निर्भर करता है। गाँव आयात की शक्ति प्राप्त करे इसके लिए या तो उत्पादन बढ़ाया जाय, या अन्य प्रकार से नकद आमदनी प्राप्त की जाय। इस सम्बन्ध में समस्या को गहराई से विचार करके नीति का निर्णय करना होगा।

आयात-निर्यात की रकमों को देखने पर स्पष्ट होता है कि दोनों में काफी अन्तर है। पिछले दो वर्षों में कुल आयात ९३,५२० रुपये का तथा निर्यात मात्र→

संस्मरण :

गंगानगर जिले का पहला ग्रामदान

गंगानगर जिला राजस्थान में अपना एक विशेष स्थान रखता है। राजस्थान के बिल्कुल उत्तर-पश्चिम छोर का यह क्षेत्र पंजाब-हरियाणा से लगा हुआ है और पश्चिम में पाकिस्तान से। एक तो सीमा का इलाका होने के कारण परिस्थिति की कुछ विशेषता है, दूसरे, जिले में नहरों का जाल बिछा होने से यह राजस्थान का अन्न-भण्डार है। इसकी भूमि पंजाब और उत्तरी बिहार की तरह मुलायम और उपजाऊ है। बीच बीच में रेत (बालू) के छोटे-छोटे टीले जरूर इस बात की याद दिलाते हैं कि "थार" का रेगिस्तान नजदीक है, लेकिन नहरों ने उस पर विजय पा ली है और सारा क्षेत्र हरा-भरा है।

संयोग की बात है कि अभी तक मैं कभी गंगानगर जिले में नहीं गया। तारीख ५ से ७ दिसम्बर तक, तीन दिन की यह पहली यात्रा इस क्षेत्र की थी। ग्रामदान की दृष्टि से यह क्षेत्र अभी तक अछूता रहा है। सन् १९५९ में पूज्य विनोबाजी राजस्थान से पंजाब जाते हुए इस जिले से गुजरे थे। पर उसके बाद इन वर्षों में सर्वोदय-विचार की दृष्टि से कोई विशेष काम या सम्पर्क यहाँ नहीं हो पाया था। सामाजिक दृष्टि से इस जिले की ख्याति भी बहुत अच्छी नहीं रही है। विनोबाजी कहा करते हैं कि जिस क्षेत्र में सिंचाई का इन्तजाम होता है वहाँ पानी के कारण जमीन तो गीली और मुलायम हो जाती है, लेकिन लोगों के दिल अक्सर कठोर हो जाते हैं। भौतिक उन्नति के साथ-साथ जहाँ नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से लोक-शिक्षण नहीं होता वहाँ यह स्वाभाविक ही है।

गंगानगर के लिए कहा जाता है कि जिस साल यहाँ उपज अच्छी होती है उस साल हत्याओं की संख्या भी बढ़ जाती है। खून करने के बाद दस-पाँच हजार रुपया खर्च करके डाक्टरों से अपने अनुकूल रिपोर्ट लिखवा लेना तथा पुलिस को अपनी तरफ कर लेना ज्यादा मुश्किल नहीं है। इसलिए 'जिस बरस पैदावार और आमदनी अच्छी होती है उस साल खून आसानी से किये जा सकते हैं'। शराब की खपत में भी गंगानगर जिले का स्थान राजस्थान में ऊँचा है। कहते हैं कि शासन में राजनैतिक नेताओं की दस्तन्दाजी भी इस जिले में बहुत ज्यादा है। छोटे-छोटे कर्मचारियों की भी पोस्टिंग, तबादले आदि में वे दखल देते हैं। जो उनके प्रतिकूल होते हैं वे अक्सर यहाँ ठीक से काम नहीं कर सकते और जो अनुकूल होते हैं उनकी मनमानी और 'कमाई' पर कोई अंकुश नहीं है। इसलिए कहा जाता है कि ईमानदार अफसर इस जिले में जाना नहीं चाहते और बेईमान लोग हजारों रुपया खर्च करके अपनी पोस्टिंग यहाँ करवाते हैं। हमने सुना है कि नहरों से पानी देने या बिना नाप ज्यादा देने के लिए ओवरसियर आदि कर्मचारी खुलेआम हजारों रुपया वसूल करते हैं, परिणामस्वरूप बेचारे छोटे और गरीब किसानों के खेत सूखे पड़े रहते हैं और वे और भी ज्यादा गरीब होते जाते हैं।

ये सब बातें सही होते हुए और ऊपर के तबकों में भ्रष्टाचार और अनीति व्यापक होते हुए भी गंगानगर जिले की इस यात्रा का अनुभव बहुत उत्साहप्रद रहा। अन्धकार तो गंगानगर में क्या, सारे देश में ही व्याप्त है। यह कहना भी गलत नहीं होगा कि अन्यत्र दुनिया में भी मूल में वही समस्याएँ मौजूद हैं, पर अन्धकार में भी जगह-जगह दीपक प्रज्ज्वलित हैं, ऐसा स्पष्ट अनुभव इस यात्रा में आया। स्वार्थ, लोभ-लालच और भ्रष्टाचार का जो जहर फैला है, उसने ऊँचे तबके और पढ़े-लिखे लोगों के मानस जरूर दूषित कर दिये हैं, पर देहात में सामान्य लोगों की वृत्ति में अभी भी सरलता, सौजन्य और भलाई के तत्त्व कायम हैं। ये लोग भी भ्रष्टाचार और स्वार्थ से बचे तो नहीं हैं, पर ये अगर उसमें शामिल हैं तो अधिकतर मजबूर होकर, क्योंकि प्रचलित प्रवाह के असर से बचना सम्भव नहीं है। इसके अलावा नीचे का यह गरीब वर्ग सामान्य तौर पर भ्रष्टाचार और अन्याय करनेवाला नहीं, बल्कि उसका शिकार है। सामान्य जनता आज सामाजिक अन्याय और आर्थिक शोषण से बुरी तरह पीड़ित और त्रस्त है, इसलिए ग्रामदान-आन्दोलन में यह आम अनुभव आता है कि इस परिस्थिति से मुक्ति के उपाय के रूप में ग्रामस्वराज्य के विचार का लोग स्वागत करते हैं। आज चारों तरफ स्वार्थ और आपाधापी का जो वातावरण है तथा नैतिकता का पलड़ा नीचा है उसके कारण उनके मन में यह शंका जरूर उठती है कि क्या वाकई जनता में एकता और संगठन हो सकता है? पर यह प्रतीति उनके मन में जरूर हो गयी है कि सिवाय इसके अन्याय-मुक्ति का और कोई रास्ता नहीं है।

यही मनोदशा गंगानगर जिले के गाँवों में देखने को मिली। "सांगोवाली ढाणी" नाम से ढाणी है, लेकिन है बड़ा गाँव ही—करीब दो सौ घरों की बस्ती और चार हजार एकड़ अच्छी, उपजाऊ और नहरी जमीन। गाँव सम्पन्न है। बसावट भी गाँव की बहुत सघन है। बीच में खूब

→१३,३३४ रुपये का किया गया। गाँव पर कुल कर्ज ४५,४२० रुपये का है, इन दो वर्षों के पहले का कर्ज भी इसमें शामिल है। स्पष्ट है कि आयात के साधनों की पूर्ति कृषि, बढ़ईगिरी आदि की आय से की जाती है। आयात में बढ़ईगिरी का काम काफी मदद पहुँचाता है। दोनों वर्षों में इसकी आमदनी ३५,९०० रुपये रही और इसकी अधिकांश रकम आयात में लाभ की गयी। बढ़ईगिरी इस गाँव में नकद आय का मुख्य सहारा है। खासकर अनाज की स्थिति सन्तुलित रहती है। गाँव में आमदनी के कुछ फुटकर कार्य भी होते हैं, जैसे—दुकान, मजदूरी, ब्याज आदि, जिनसे कुछ आय होती है।

(क्रमश) —अवधप्रसाद

लम्बा चौड़ा मैदान और घरों के अहाते भी बड़े-बड़े। गंगानगर शहर जितना गन्दा है (वहीं के लोगों ने हमसे कहा कि लोग गंगानगर को 'गन्दानगर' भी कहते हैं।) उतना ही यह गांव साफ-सुथरा नजर आता था। इस गांव की पंचायत के सेक्रेटरी लक्ष्मणराम मक्कासर के मास्टर रामचन्द्र के, जिन्होंने पिछले महीनों में कई ग्रामदान-शिविरों में भाग लिया है और अब करीब-करीब पूरा समय उसी काम में दे रहे हैं, साथी हैं। इन्हें ग्रामदान के विचार ने आकर्षित किया और लक्ष्मण भाई ने एक दिन गांव की सभा में यह विचार लोगों के सामने रखा। गांव के लोगों में ग्रामदान की योजना के प्रति उत्सुकता जाग्रत हुई और उन्होंने लक्ष्मणराम से कहा कि अगर ऐसा है तो हम ग्रामदान करना चाहते हैं। लक्ष्मणराम को लगा कि ग्रामदान जैसा बड़ा कदम गांव के लोग उठाने को राजी हैं तो विचार ठीक तरह से उनके सामने आना चाहिए। २ अक्टूबर गांधी-जयन्ती का दिन नजदीक था। उस दिन वे श्री रामचन्द्र को और हनुमानगढ़ से श्री कैलाशचन्द्र अग्रवाल तथा श्री मुरलीधर गोयल आदि सर्वोदय-प्रेमियों को भाभोवाली ले आये। इन मित्रों ने सभा में ग्रामदान के विचार को समझाया और तत्काल गांव में हस्ताक्षर शुरू हो गये। सबसे पहले हस्ताक्षर करनेवालों में गांव के भूतपूर्व सरपंच मनीराम और मौजूदा सरपंच श्री हरिसिंह थे। गांव की मिडिल स्कूल के अध्यापकों ने भी इस काम में अच्छा सहयोग दिया। तारीख ५ दिसम्बर को हम लोग इस गांव में पहुँचे, रात को ग्राम-सभा जुड़ी, फिर से विचार की पुष्टि हुई और सबेरे जब हम भाभोवाली से रवाना होने लगे तब सरपंच हरिसिंहजी ने गांव के ग्रामदान के घोषणा-पत्र हमारे हाथ में रख दिये। २ अक्टूबर को जो थोड़े-से लोगों के हस्ताक्षर बाकी रह गये थे, वह इस दिन सबेरे ही पूरे कर लिये गये थे। इस प्रकार गंगानगर जिले का पहला ग्रामदान हुआ। हमें बताया गया कि भाभोवाली के पास लगा हुआ एक दूसरा गांव है उसमें भी हस्ताक्षर करीब-करीब हो चुके हैं।

श्री लक्ष्मणराम तीन ग्रामपंचायतों के मंत्री हैं। उन्होंने बताया कि उनके हल्के के दूसरे गांव भी ग्रामदान के घोषणा-पत्र की मांग कर रहे हैं। लक्ष्मणराम स्वयं ग्रामदान के प्रचारक बन गये हैं। उनके मन में यह बात जम गयी है कि गांव का कल्याण ग्रामदान की योजना से ही सम्भव है। इस प्रकार गंगानगर जिले में मास्टर रामचन्द्र और लक्ष्मण—"राम-लक्ष्मण" की इस जोड़ी की उपस्थिति से ग्रामदान की हवा आसानी से फैलने की सम्भावना बनी है।

—सिद्धराज ढड्ढा

अहमदाबाद कांग्रेस-अधिवेशन : अखबारों की नजर में

आरोपों का अम्बार

"अहमदाबाद के कांग्रेस अधिवेशन में न श्री निजलिंगप्पा ने सुनियन्त्रित कारगर आक्रोश का परिचय दिया और न अधिकांश वक्ताओं ने ही ऐसी आवश्यकता अनुभव करने की सजगता दिखाई। इसके विपरीत, बुद्धि और सूझ-बूझ का काम आक्रोश और आवेश से लिया गया। यही कारण है कि अहमदाबाद-अधिवेशन में जितने शब्द बोले गये, नतीजे में पतन दशाश की ही उग पायी है। वास्तव में यह कोई सुखद प्रसंग नहीं है कि इतने बरसों के अनुभव के बाद भी कांग्रेस के अधिवेशन निरर्थक वाचालता एवं गैर-जिम्मेदाराना गरमागरमी से मुक्त नहीं हो सके हैं।

अधिवेशन में पारित सारे प्रस्ताव अच्छे हैं और बरसों से इस किस्म के प्रस्ताव कांग्रेस-अधिवेशन में पारित होते आ रहे हैं, किन्तु प्रस्तावों के पारित हो जाने के बाद उनके अमल की याद कांग्रेस के कर्णधारों को नहीं रहती है, इसलिए जनता की नजरों में कांग्रेसाधिवेशनों में पारित प्रस्तावों की कोई कीमत नहीं रह गयी है। खेद का प्रसंग है कि कांग्रेस का नेतृवर्ग इस तथ्य से आज भी आँखें मूँदे हुए है और परिणामतः अपने दल को जन-विश्वास एवं जन-सहयोग से निरन्तर विरत करता जा रहा है।

अहमदाबाद-अधिवेशन में बड़े और छोटे सभी वक्ताओं ने केन्द्रीय सरकार और प्रधानमंत्री की जी भर आलोचना की है, किन्तु आलोचना में अधिकांशतः आरोपों का ही अम्बार था, प्रमाणों की जरूरत मुश्किल से महसूस की गयी।"

—हिन्दुस्तान दैनिक

मन की भड़ास

'एक सरिफल पार्टी के इन महयों ने, जो अपने को विरोधी कांग्रेस का नाम देते हैं, अपने को खुद ही बेईमान और सत्ता का भूखा दिखाया है। अहमदाबाद में अपनी बौखलाहट में उन्होंने यही दिखाया है। गांधीनगर में वैसे इन लोगों ने लोगों की एक बड़ी संख्या बटोर ली थी, फिर भी कुल मिलाकर वह उनकी पार्टी की गुजरात शाखा का एक तमाशा ही रहा। इनका कुल काम बस प्रधानमंत्री पर जी भर के कीचड़ उछालना था। ऐसा करने में इन्होंने शर्म और हया ताक पर रख दी। जो राजनीतिक व आर्थिक समस्याएँ देश के लिए इतनी महत्वपूर्ण हैं उन्हें इतने हलके तरीके से और कुछ लोगों की व्यक्तिगत स्वार्थपरता का खिलौना बनाकर मोरारजी देसाई व निजलिंगप्पा ने देश की थू-थू ही पायी है, तारीफ नहीं।

श्री निजलिंगप्पा के अध्यक्षीय भाषण ने उनकी पोल खोल दी है। वह जनसंघ और स्वतंत्र पार्टी से मिलकर प्रधानमंत्री का अपदस्थ करने का कुचक्र लगातार अधिवेशन के काफी पहले से कर रहे थे। कुल मिलाकर अहमदाबाद हताश और कड़वे लोगों के मन की भड़ास भर था।"

—पेट्रियट

जिम्मेदार कौन ?

"पुरानी कांग्रेस के अहमदाबाद-अधिवेशन में कांग्रेस-अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा ने अपने भाषण में जनतंत्र और स्वतंत्रता की रक्षा के नाम पर मतभेदों को भुला देने की अपील जरूर की, किन्तु उनके भाषण का आधा भाग जिस बुरी तरह से प्रधानमंत्री और उनके साथियों पर लगाये गये आरोपों एवं आलोचनाओं से भरा था, वह उचित नहीं कहा जा सकता। मतभेदों की समाप्ति और शक्ति के लिए विध्वंसात्मक की अपेक्षा रचनात्मक बात की आवश्यकता है, और यह कहा जा सकता है कि उसमें उसका अभाव था।

अध्यक्षीय भाषण में प्रधानमंत्री और उनके साथियों पर जो आरोप लगाये गये वे कुछ नये नहीं हैं। पिछले चार महीनों में वे तरह-तरह से अनेक बार दुहराये जा चुके हैं। ऐसी सूरत में उन्हीं पर अधिक जोर देने से क्या फायदा होगा यह कांग्रेस-अध्यक्ष ही अधिक जानते होंगे। फिर जो आरोप लगाये गये हैं वे सच ही हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। यदि निष्पक्ष एवं तटस्थ दृष्टि से देखा जाय तो इस परिणाम पर पहुँचना मुश्किल है कि कांग्रेस संगठन को भंग करने और देश की राजनीतिक स्थिरता को खतरे में डालने के लिए अकेले नयी कांग्रेस के नेता ही जिम्मेदार हैं।" —नवभारत टाइम्स

गलतियाँ कहाँ ?

"सिण्डिकेट कांग्रेस द्वारा अहमदाबाद में अपनायी गयी राजनीतिक व आर्थिक नीतियाँ ऊपरी दिखावे और बदनीयती की मिली-जुली शक्ल तो हैं ही, लेकिन वहाँ अपनायी गयी विदेश-नीति तो और भी गयी-गुजरी है। उसे सिर्फ सनपट दिमागों और एकतरफा नजर से निकला हुआ कहा जा सकता है। कोशिश तो यही की गयी कि निष्पक्षता के सिद्धान्त को ही अपनाया जाय। क्योंकि आज किसी भी हिन्दुस्तानी के लिए इससे दूसरी बात कहना कठिन है, लेकिन इस निष्पक्षता को भी इस ढंग से रखा गया कि उसका अर्थ सांठ-गांठ भी है। सरकार की सोवियत और साम्यवादपरस्ती दिखाने का और कोई अर्थ नहीं है। लेकिन गलतियाँ कहाँ हुई हैं उसे न रखा ही गया, न साबित ही किया गया।

हिन्दुस्तान एक लम्बे अर्से से साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ाई लड़ता आ रहा है, इसीलिए कई चीजों में वह सोवियत रूस के नजदीक रहा है। हिन्दुस्तान की तरक्की में, खासकर भारी उद्योग खड़े करने के लिए, और समाजवादी मुल्कों के मुकाबिले रूस ने बड़ा पार्ट अदा किया है। दूसरे और बड़े देशों ने नयी साम्राज्यवादिता की नीति अपनाकर दूसरों पर निर्भरता बढ़ाने की ही कोशिश की है। दूसरी बड़ी लड़ाई के बाद रूस एक बड़ी ताकत की शक्ल में निकला, यह चीज भी हिन्दुस्तान की आजादी में बहुत मददगार बनी।" —नैशनल हेरल्ड

काम पर जोर देना चाहिए

"अफसोस की बात है कि अहमदाबाद में श्री निजलिंगप्पा का अध्यक्षीय भाषण श्रीमती गांधी के प्रति व्यक्तिगत छीछालेदर से अधिक कुछ और नहीं रहा। अगर अहमदाबाद में विचार करने की सिर्फ यही बात थी कि आया श्रीमती गांधी कांग्रेस टूटने की जिम्मेदार हैं तो अधिवेशन के लम्बे-चौड़े खर्चे और तकलीफ की जरूरत नहीं थी। अहमदाबाद में अधिक हुआ भी क्या! सिर्फ यही कि जिन-जिन राज्यों में सिंडीकेट दल के समर्थक हैं वहाँ-वहाँ वह काफी धूम-धड़क्का कर सकता है। लेकिन असली चीज तो यह है कि क्या वह ऐसी नीतियाँ तय कर व अपना सकता है जिन्हें और दूसरे राज्यों में भी समर्थन मिले और लोग अपनायें? सत्तारूढ़ दल पर यह इल्जाम लगाना आसान है कि वह हर तरह के फैसले करता है और उसकी कोई साफ नीति नहीं है, लेकिन श्री निजलिंगप्पा की कांग्रेस को यह दिखाना है कि क्या वह बेहतर है?

जैसा कि श्री निजलिंगप्पा ने कहा है यह बहुत जरूरी है कि देहाती क्षेत्रों में कृषि-आधारित उद्योगों के सहारे विकास की एक हवा बन जाय और साथ ही पिछड़े क्षेत्रों और पिछड़े वर्गों की जरूरतों के लिए राष्ट्रीय बैंकों से पूरी मदद मिले। लेकिन ये चीजें अगर नहीं होती हैं तो जिम्मेदारी दोनों कांग्रेसों की है। यह नहीं हो सकता कि एक तरफ तो विरोध में रहकर विरोधी कांग्रेस जिम्मेदारी से बचती फिरे और दूसरी तरफ सत्ता में रहकर वहाँ की सहूलियतें भी लेती रहे। तीन खास राज्यों में तो यही सत्ता में है और चौथे में आने की जी-जान से कोशिश में लगी है। विरोधी कांग्रेस को चाहिए कि जिन नीतियों को वह जोर-शोर से कह रही है उन्हें लागू करके अनुकूल हवा बनाए। सिर्फ प्रधानमंत्री पर कीचड़ उछालने से कुछ नहीं होने जाने का, उन्हें काम पर जोर देना चाहिए।"

—टाइम्स ऑव इण्डिया

—प्रस्तुत कर्ता रामभूषण

उत्तरप्रदेश : राज्यदान की ओर

श्री कपिल भाई की सूचना के अनुसार नवम्बर महीने में आजमगढ़ में ११६ ग्रामदान, १ प्रखण्डदान इटावा में ११७ ग्रामदान और अल्मोड़ा में २४६ ग्रामदान प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार उत्तरप्रदेश में ३० नवम्बर तक कुल २६,८३८ ग्रामदान और १५२ प्रखण्डदान हुए हैं। जैसा कि पहले ही प्रकाशित किया जा चुका है कि उत्तरकाशी, बलिया, वाराणसी, गाजीपुर, फर्रुखाबाद और आगरा का जिलादान घोषित हो चुका है। अब ५ जिलों में जिलादान के करीब रुख्या पहुँच रहे हैं। आशा की जाती है कि २२ फरवरी सन् १९७० तक इन जिलादानों की भी घोषणा हो जायगी। —कपिल अवस्थी

समझौते के लिए उपवास

टाटानगर से प्राप्त सूचनानुसार जमशेदपुर शान्ति-समिति के संयोजक श्री श्यामबहादुर सिंह ने स्थानीय उद्योगों से सम्बद्ध मालिक-मजदूरों के विवादों का शान्तिपूर्ण हल निकालने के लिए उपवास शुरू कर दिया है।●

ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य

'ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर सहयोग से काम लेगा। क्योंकि हरएक देहाती के जीवन का सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और गाँव की इज्जत के लिए मर मिटे।'

—गांधीजी

अब समय आ गया है कि इस देश के बुद्धिवादी, किसान, मालिक, मजदूर, सभी इस बात पर विचार करें कि ग्रामदान हमें ग्रामस्वराज्य की ओर अग्रसर करता है या नहीं? यदि हमें जँच जाय कि हाँ, इससे हमें ग्रामस्वराज्य के दर्शन हो सकेंगे, तो यही अवसर है कि हम लोग इस पुण्य काम में तुरन्त लग जायें।

राष्ट्रीय गांधी जन्म शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
जयपुर-२ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

आन्दोलन के समाचार

सर्व सेवा संघ की डाक से

प्रदेशों से प्राप्त समाचार

थाना (महाराष्ट्र) जिले में ग्रामदान का काम प्रगति पर है। कार्यकर्ता उत्साह से लगे हैं। थाना जिले की तीन तहसीलों में प्रखण्डदान की दृष्टि से अभियान चल रहा है। धाडा, पालघर, भिवंडी और वसई में प्रखण्डदान का काम पूरा करने का प्रयत्न जारी है। जयप्रकाश बाबू के कार्यक्रम के लिए निधि-संग्रह का काम चालू है। मराठवाडा के कमलनुरी प्रखंड में ग्रामदान अभियान चल रहा है। परभणी, नांदेड और औरंगाबाद तथा बीड जिलों में जे० पी० की आगामी यात्रा के निमित्त निधि संग्रह का काम चल रहा है।

बीजापुर (मैसूर) जिले में मुधोल तहसील में ग्रामदान-अभियान जारी है। ९ दिसम्बर से वहाँ ६ टोलियाँ क्षेत्र में निकली हैं। २२ फरवरी तक जिलादान होने की सम्भावना है।

राजस्थान के बाडी-बसेरी प्रखंडों में ग्रामदान अभियान फिर से शुरू हुआ है। इससे पूर्व भी गत फरवरी महीने में ग्रामदान-अभियान हुए थे। और उसरो भार प्रखंड का दान हो चुका था। प्रखंडदान के लिए अनुकूल भूमिका बनी है। डुंगरपुर जिले में एक प्रखंडदान हुआ है।

—रामसहाय पुरोहित

रायपुर में नये ४५ ग्रामदान प्राप्त

रायपुर (मध्यप्रदेश) जिला गांधी-शताब्दी ग्रामदान उपसमिति के तत्त्वावधान में रायपुर जिले के तिल्दा तथा खरोरा विकासखण्ड के नेवरा और बगोली ग्राम में ग्रामदान-शिविरों का आयोजन किया गया। समिति के कार्यकर्ताओं ने अनेक ग्रामों की पदयात्रा की और सघन ग्रामदान और प्रखण्डदान-अभियान का शुभारम्भ किया। परिणामस्वरूप तिल्दा विकासखण्ड में ४५ नये ग्रामदान प्राप्त हुए।

रायगढ़ में ग्रामदान-अभियान

इन्दौर, १६ दिसम्बर। रायगढ़ जिले की जाजगीर तहसील में ८ दिसम्बर को समूची तहसील के पाँचो प्रखण्डों का एक दिवसीय शिविर सम्पन्न हुआ, जिसमें ग्रामस्तर के प्रत्येक विभाग के शासकीय सेवक, सरपंच, प्रखण्ड विकास अधिकारी, समस्त रेवेन्यू इंसपेक्टर, समस्त जिला शिक्षा-निरीक्षक, तहसीलदार एवं अनुविभागीय अधिकारियों ने शिविर में भाग लिया। कुल उपस्थिति करीब ४५० थी। ग्रामदान-विचार और अभियान के विभिन्न पहलुओं पर सविस्तार चर्चाएँ हुई। तत्पश्चात ग्रामस्तर के सभी सेवकों को पंचायतवार ग्रामदान काम की जिम्मेवारी सौंपी गयी।

इसी प्रकार उक्त तहसील के बलोदा ब्लाक का दूसरा शिविर ५ दिसम्बर को प्रदेश के वयोवृद्ध सर्वोदय सेवक श्री दादाभाई नाईक के सान्निध्य एवं मार्गदर्शन में सम्पन्न हुआ। इस प्रखण्ड में सरगुजा तथा रायपुर के कुल ५ सर्वोदय-कार्यकर्ता साथी भी यात्रा कर रहे हैं। २० दिसम्बर तक पूरी तहसील की ग्रामदान-यात्रा सम्पन्न हो जायेगी।•

भावनगर में सर्वोदय-पात्र

इस समय भावनगर शहर में २१५ सर्वोदय-पात्र चल रहे हैं। पिछले एक वर्ष में सर्वोदय-पात्र का कार्य व्यवस्थित चलने लगा है। नवम्बर '६८ से अक्तूबर '६९ तक की एक वर्ष की अवधि में सर्वोदय-पात्रों से ५६४ रुपये की वसूली हुई है। शहर के प्रत्येक मुहल्ले में सम्पर्क का कार्य चालू है। साहित्य प्रचार और 'भूमिपुत्र' के ग्राहक बनाने का प्रयास हो रहा है।

—काकुभाई दोशी

फरवरी के प्रथम सप्ताह तक—
लोकयात्री दल का पता
द्वारा—श्री विनय भाई अवस्थी,
गांधी-विचार केन्द्र,
सिविल लाइन, कानपुर—(उ० प्र०)

बीकानेर जिले का प्रथम ग्रामदान-अभियान

बीकानेर जिले का प्रथम ग्रामदान ग्रामस्वराज्य-अभियान कोलायत विकासखण्ड के दियातरा ग्राम में डा० दयानिधि पटनायक के मार्गदर्शन में दिनांक २ से ८ जनवरी '७० तक आयोजित हो रहा है। इससे पूर्व भी इस क्षेत्र में डा० पटनायक, राजस्थान खादी-ग्रामोद्योग संस्था संघ के अध्यक्ष श्री रामेश्वर अग्रवाल, श्री सिद्धराज ढड्ढा, श्री प्रेमनारायण माथुर आदि सर्वोदय विचारक आ चुके हैं, जिनके प्रेरक भाषणों से इस क्षेत्र की रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं को इस अभियान के लिए प्रेरणा हुई है और उसी के फलस्वरूप इस अभियान का आयोजन किया गया है। अभियान के पूर्व दिन २ व ३ जनवरी को दियातरा ग्राम के स्कूल-भवन में एक शिविर आयोजित किया गया है, और ४ से ८ जनवरी तक पदयात्रा चलेगी। इस अभियान का संयोजन खादी-मन्दिर, बीकानेर के मंत्री श्री मोहनलाल मोदी कर रहे हैं।•

हरियाणा में ग्रामदान-अभियान और प्रान्तीय नशाबन्दी-सम्मेलन

हरियाणा सर्वोदय मण्डल की ओर से १० जनवरी से १५ जनवरी तक डा० दयानिधि पटनायक के मार्गदर्शन में रोहतक जिले के खरखोदा प्रखण्ड में ग्रामदान-अभियान चलेगा।

हरियाणा नशाबन्दी समिति द्वारा १७-१८ जनवरी को पानीपत में प्रान्तीय नशाबन्दी-सम्मेलन होगा, जिसमें पूर्ण नशाबन्दी लागू करने की माँग सरकार से की जायेगी।

—दादा गणेशीलाल

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज। १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख्य पत्र

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वर्ष : १६ अंक : १४

सोमवार ५ जनवरी, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६२२८५

खादी और कांग्रेस

खादी को शुरू हुए ५० साल हो गये। कांग्रेस ने खादी का बैज लगाया है। आफिसियल मीटिंग में जाते हैं तो खादी पहनते हैं। खादी कांग्रेस में जुड़ी है। गांधीजी ने कांग्रेस को ही खतम होने को कहा था। खतम हुआ बेचारे का आयुष्य!

खादी को 'प्रोटेक्शन' चाहिए। सरकार केवल मदद देती है। ये लोग (खादीवाले) अपने प्रस्ताव करते हैं। कौन पूछता है इनके प्रस्ताव को? लेकिन ये लोग दिल्ली के चक्कर किया करते हैं। तुकाराम कहता है—'पंढरीची वारी आहे माझी घरी'। उस तरह इनको—'दिल्लीची वारी आहे माझी घरी'। उठे, दौड़े दिल्ली! उठे, दौड़े दिल्ली! अब ढेबर भाई बेचारे थक गये हैं। ढेबर भाई जैसा धीरज भाई शायद ही मिलेगा! बोलते हैं तो भी रुकते-रुकते बोलते हैं। एक वाक्य भी पूरा एकदम बोलते नहीं। हाथ वगैरह भी हिलाते नहीं बोलते समय, मानो बुद्ध का पुतला ही हो। एक शब्द भी ऐसा नहीं बोलेंगे जो किसीके हृदय को चुभे। वे भी थक गये। और ये—'आजे, काके, नसे मामे, सासरे, सोयरे, सखे' (दादा, चाचे, वैसे ही मामा, ससुर आदि सम्बन्धी और मित्र लोग) बँट गये हैं। इन्होंने दोनों को लोकसेवक संघ सुझाया। दोनों पक्षों ने उसको अव्यवहार्य कहा है। संन्यास की इतनी महिमा है कि वह उन्होंने मरनेवाले को बताया। वह मरनेवाला कहता है कि बच्चे हैं, पत्नी है तो यह संन्यास 'प्रैक्टिकल' नहीं है। जो संन्यास जवानी में 'प्रैक्टिकल' नहीं था, वह बुढ़ापे में भी 'प्रैक्टिकल' नहीं है। राममूर्ति ने इस पर एक 'आर्टिकल' लिखा है।

इन कांग्रेसवालों की दो आत्मा है। जो मूल आत्मा है वह बाबा से बातें करते समय प्रकट होता है, और दूसरा 'आरूढ आत्मा' दिल्ली जाते हैं तो बोलने लगता है। लेकिन "त्याचें काही न चालता, दिनाती मरतो सारी" (उनका कुछ नहीं चलता, दिन के अन्त में सब मरते हैं)। (गौतम की तरफ देखकर, "क्या लिख रहे हो? लिख रखो मैं बताता हूँ—'मी मारिते हे सगळे चि आधी, निमित्त हो केवल सव्य-साची' ।)●

मुझे सन् १९५१ में 'प्लानिंग कमीशन' से बात करने के लिए पंडितजी ने दिल्ली बुलाया। एक दिन प्रेसवालों से बात हुई। उन्होंने पूछा, 'आप कांग्रेस में रहकर परिवर्तन का प्रयत्न क्यों नहीं करते?' मैंने कहा—"यह प्रयत्न गंगा-यमुना ने कर लिया। सारा समुद्र मधुर करने के लिए साल में ३६५ दिन, २४ घंटे लगातार प्रयत्न हो रहा है। फिर भी समुद्र मीठा नहीं हुआ। उस पर से बाबा ने सीख ली है।"

—विनोबा

शान्तिकुटी, गोपुरी, वर्धा : २-१२-'६९

● इन सबको मैंने पहले ही मारा है, हे सव्य-साची (अर्जुन), तू केवल निमित्तमात्र हो!

शैतान और उसकी शैतानी—१

मित्रों की चिन्ता

२९ दिसम्बर '६९ के अंक में हमने अंग्रेजी साप्ताहिक 'जनता' के ३० नवम्बर के सम्पादकीय लेख के मुख्य अंशों को 'सर्वोदय और शैतान' के शीर्षक से छापा था। उस लेख में 'जनता' ने मित्रता भरे शब्दों में हमें कुछ नेक सलाह दी है। 'जनता' की यह सलाह बादशाह खाँ-विनोबा-जयप्रकाश के उस सम्मिलित वक्तव्य के उत्तर में थी जिसमें उन्होंने देश के सज्जनों से अपील की थी कि वे सामने आयें और देश की बिगड़ती हुई स्थिति को सम्भालें। देश की स्थिति काफी बिगड़ चुकी है, और दिनोदिन बिगड़ती जा रही है, इसमें दो रायें नहीं हैं। इसमें भी मतभेद नहीं है कि अगर देश की राजनैतिक सत्ता अनुकूल न हो तो कोई रचनात्मक कार्य बहुत आगे नहीं बढ़ सकता। बादशाह खाँ ने अपने भाषणों में कई जगह इस बात पर जोर दिया है कि अकेला भूदान ग्रामदान काफी नहीं है, इसलिए देश के नवनिर्माण में रचनात्मक कार्यकर्ताओं द्वारा राजनीति की उपेक्षा नहीं होनी चाहिए। सर्वोदय राजनीति की उपेक्षा नहीं करता, यह बात सर्वोदय की ओर से कई बार साफ की जा चुकी है। जयप्रकाशजी से जब जब पूछा जाता है, 'आप राजनीति में क्यों नहीं आते ?' तो हर बार वह यही कहते हैं 'मैं राजनीति से अलग नहीं हूँ। सिर्फ दलगत राजनीति में नहीं हूँ।'

लेकिन इतना कहने पर भी मित्रों और शुभचिंतकों को समाधान नहीं होता, और वे कहते ही रहते हैं कि सर्वोदय के लोगों को राजनीति में आना चाहिए। वे मानते हैं कि सर्वोदय के अच्छे लोगों के राजनीति—प्रचलित राजनीति—में आने से राजनीति कुछ अच्छी हो सकेगी, और शैतान को काबू में लाया जा सकेगा। सर्वोदय के कुछ मित्र जो आज की राजनीति में हैं वे ही ऐसा नहीं सोचते, स्वयं सर्वोदय के बड़े मिले-जुले परिवार में भी ऐसे दूसरे अनेक लोग हैं जिन्हें सर्वोदय का प्रचलित राजनीति से अलग रहना अच्छा नहीं लगता। उनमें से बहुत-से लोग विभिन्न रचनात्मक कार्य करते हुए भी विभिन्न राजनैतिक दलों से अपना कई तरह का सम्बन्ध रखते हैं। यह सही है कि ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की मुख्य धारा, जिसका नेतृत्व विनोबा और जयप्रकाश द्वारा हो रहा है, प्रचलित राजनीति से अलग है, लेकिन इस धारा में रचनात्मक कार्यकर्ताओं की छोटी, बहुत छोटी, संख्या है। हाँ, उनकी संख्या चाहे जो हो, जनता में प्रभाव उन्हीं का है, और उस प्रभाव के कारण जनता के मन पर छाप भी यही है कि नया क्रान्तिकारी 'सर्वोदय' राजनीति से अलग है।

शैतान कौन है ?

यह सर्वोदय प्रचलित राजनीति से अलग क्यों है ? उसकी सत्ता तथा राजनैतिक संगठन की क्या कल्पना है ? जब वह देश के सज्जनों का आवाहन करता है तो उनसे उसकी क्या अपेक्षा होती है ? आज की राजनैतिक परिस्थिति में वह किसे शैतान मानता है, और उस पर काबू पाने की उसकी क्या योजना है ?

ये प्रश्न सहज ही उठते हैं, लेकिन पहला प्रश्न है : शैतान कौन है ? उसकी माँद कहाँ है, और उसमें घुसने का उपाय क्या है ? अगर 'जनता' की राय मानकर सर्वोदय को 'शैतान को माँद में पकड़ने' की तैयारी हो तो उसे पहिले इन प्रश्नों के उत्तर के बारे में साफ हो जाना चाहिए।

'जनता' की राय है कि 'सत्ताधारी राजनैतिक दल को चुनौती दिये बिना किसी समस्या का समाधान नहीं ढूँढा जा सकता।' और, 'किसी समस्या पर उसे पूरे सामाजिक संदर्भ से अलग करके नहीं सोचा जा सकता।' 'जनता' की इस राय में यह संकेत स्पष्ट है कि शैतान की माँदें दो हैं : एक, 'सत्ताधारी राजनैतिक दल', और दो, 'सामाजिक संदर्भ'। इसलिए 'जनता' का मत है कि किसी समस्या के समाधान के लिए सत्ताधारी दल को चुनौती देनी चाहिए, और पूरे सामाजिक संदर्भ को बदलना चाहिए। इन दो कामों को किये बिना स्थिति नहीं सुधरेगी।

यह सही है कि हमारे सामाजिक संदर्भ में, यानी समाज की पूरी रचना और व्यवस्था में, एक नहीं, अनेक शैतान हैं जिन्हें खतम करना सामाजिक क्रान्ति का एक मुख्य काम है। साथ ही यह भी सही है कि हमारी परंपरा में, जिसके आधार पर भारत की राष्ट्रीय प्रतिभा विकसित हुई है, कुछ ऐसे स्थायी शुभ तत्त्व भी हैं जिनकी रक्षा करना उसी सामाजिक क्रान्ति का काम है। तात्कालिक उन्मादों के प्रभाव से बचनेवाली सामाजिक क्रान्ति के दो काम हैं—नये मूल्यों की स्थापना, और सही पुराने मूल्यों की रक्षा।

सामाजिक संदर्भ से अलग जो शैतान राजनीति में है वह कहाँ है ? क्या यह मान लिया जाय कि वह 'सत्ताधारी राजनैतिक दल' में ही है, और विरोधी राजनैतिक दल उस शैतान के प्रभाव से मुक्त है ? अगर ऐसी बात हो तो क्या यह मानना पड़ेगा कि सत्ता में जाने के कारण राजनैतिक दल में शैतानियत आ जाती है, और शैतानियत से बचने के लिए हमेशा विरोधी ही बना रहना चाहिए ? लेकिन ऐसा मानना दलीय राजनीति के अनुकूल नहीं होगा। दलीय राजनीति का आधार ही यह है कि आज का विरोधी दल कल सरकारी दल होगा। विरोध किया ही उसी दृष्टि से जाता है। दलीय व्यवस्था में सरकार और विरोध एक सिक्के के दो बाजू हैं। यह सही है कि कितना भी अच्छा दल हो सत्ता में आने के कारण उसमें शैतानियत आ ही जाती है, इसलिए उस पर अंकुश रखने के लिए सबल, सक्षम विरोधी दल हमेशा आवश्यक है। विरोध आवश्यक भले ही हो, फिर भी यह बात सोचने की है कि विरोध कैसा हो, और कहाँ हो ? क्या विरोध सिर्फ विधान-मंडल के अन्दर हो, या बाहर भी प्रत्यक्ष विरोधी कार्रवाई की जाय तथा 'प्रोटेस्ट' और अनशन के कार्यक्रम अपनाये जायें ?

आज देश में कोई एक 'सत्ताधारी

[शेष पृष्ठ २१२ पर]

१९६९-७०

एक वर्ष और बीता। इस तरह मनुष्य के न जाने कितने वर्ष बीत चुके हैं, और आगे भी बीतेंगे। मनुष्य की यात्रा में एक वर्ष क्या है? लेकिन इतिहास इन्हीं बीतनेवाले, आनेवाले वर्षों को अपनी झोली में समेटकर बढ़ता चला जा रहा है। मनुष्य और इतिहास दोनों ही चल रहे हैं—कभी साथ, और कभी देखने में अलग। कभी ऐसा लगता है कि इतिहास मनुष्य को घसीटे लिये जा रहा है, और कभी दिखाई देता है कि मनुष्य सारथी बनकर इतिहास के रथ को जिधर चाहता है मोड़ रहा है। और कभी ऐसा होता है कि दोनों एक-दूसरे के पूरक बनकर साथ-साथ चलते दिखाई देते हैं। अभी अभी जो साल बीता है उसमें क्या हुआ? इतिहास ने हमें घसीटा, या हमने उसे चलाया, या दोनों सुखद साझेदारी में साथ चले?

जीवन जैसा है उसे उसी रूप में स्वीकार कर लेना, किसी तरह अपने लिए जगह बनाकर जी लेना अधिकांश लोगों के लिए सबसे आसान होता है। अपने ही देश में नहीं, सारी दुनिया में यही दिखाई देता है कि सामान्य मनुष्य जीवन की विकृतियों को जीवन का अभिन्न अंग मानकर स्वीकार करता चला जा रहा है। जैसे कोई नियति रस्सों में कसकर उसे खींचती चली जा रही है। वह अपनी इस स्थिति पर चिंतित होता है, ऊबता है, छटपटाता है, लेकिन जानता नहीं कि छुटकारा कैसे होगा। ऐसे सामान्य लोगों से भिन्न वे लोग हैं—अधिकांश युवक और युवती—जो प्रचलित से अलग किसी वास्तविक जीवन की तलाश में हैं। मनुष्यता को गिरानेवाले बंधनों से मुक्त होकर वे सच्चे इंसान की जिन्दगी जीना चाहते हैं। पश्चिमी दुनिया के इन युवक विद्रोहियों ने अपने को प्रचलित समाज से अलग कर लिया है, और अपने ढंग का जीवन जीने की कोशिश कर रहे हैं। वे समाज से तो अलग हैं ही समाज बनाने की चिंता से भी अलग हैं। ये मात्र विद्रोही हैं, क्रान्तिकारी नहीं हैं। क्रान्तिकारी समाज को बदलना और बनाना चाहता है। वह अपने पुरुषार्थ से इतिहास को नया मोड़ देने के लिए समर्पित होता है। इसके बिना विद्रोह विधायक नहीं होता। पश्चिम के युवकों के विद्रोह में अस्वीकार भरपूर है, किन्तु रचना नहीं है। शायद इसीलिए उनके विद्रोह में क्रान्ति की दिशा और शक्ति नहीं आ पा रही है।

१९६९ के बीते वर्ष में दुनिया ने जिस व्यक्ति की शताब्दी मनायी वह विद्रोह और क्रान्ति का विलक्षण समन्वय था। पूरे तीस वर्षों तक उसने भारत के इतिहास को अपनी मुट्ठी में रखा और जब १९४८ में वह गया तो भारत के ही नहीं, तमाम दुनिया के विद्रोहियों और त्रस्त मानवों के लिए शान्ति का सम्पूर्ण नया चित्र छोड़कर गया। आर्थर कोस्लर जैसे हताश बुद्धिजीवी कितना भी कहें कि भारत का भविष्य गांधी को जल्द-से-जल्द भूल जाने में है, पर दुनिया जानती है कि कल के समाज का 'ब्लू प्रिंट' गांधी के सिवाय किसी दूसरे के पास है ही नहीं। भोग और भूख से थकी हुई, दमन और शोषण की मारी हुई, शस्त्र और यंत्र से हारी हुई मानवता गांधी के सिवाय दूसरे किसके पास जायगी? क्रान्तिकारी अनेक हैं, किन्तु जिस उपेक्षित, तिरस्कृत मानव के नाम से क्रान्तिकारी चुनता है, और उसे क्रान्ति का साधन बनाता है, उस निरर्थक मानव को शान्ति का साक्षात साध्य मानने का साहस कितने क्रान्तिकारियों ने दिखाया है?

१९५१ से १९६९ तक के अठारह वर्षों में हमने ग्रामदान आन्दोलन द्वारा क्रान्ति के इस नये साध्य की ही बात कही है। हमने ग्रामदान द्वारा शान्ति के एक नये मंत्र का जप किया है। इस मंत्र में ध्वनि है विद्रोह की और दिशा है रचना की। विद्रोह और विधायक क्रान्ति का जो समन्वय गांधी के व्यक्तित्व में था, वही समन्वय 'ग्रामस्वराज्य' में है। ग्रामस्वराज्य का मंत्र हमें गांधी ने दिया था, उसका उच्चारण हमें विनोबा ने सिखाया। इस मंत्र की गूंज पिछले वर्षों में देश के करोड़ों नर-नारियों के कानों तक पहुँच चुकी है। लेकिन लोग हमसे पूछते हैं 'विद्रोही, तुम्हारा विद्रोह कहाँ है? शान्तिकारी, तुम्हारी क्रान्ति कहाँ है?' इस प्रश्न का उत्तर क्या १९७० में हम दे सकेंगे? १९६९ गांधी जैसे क्रान्तिकारी की जन्म-शताब्दी का वर्ष था। क्या १९७० में उसकी क्रान्ति का सुदर्शन दर्शन भी हो सकेगा?

हम जानते हैं हम गगनविहारी नहीं हैं। लेकिन हम जानते हैं कि हमारी क्रान्ति अभी वनवास में है। क्या १९७० में वह अपने वैभव के साथ अयोध्या लौटती दिखाई देगी? आज का सामान्य मनुष्य भले ही क्रान्तिकारी न हो, और भले ही उसके 'विद्रोह' में पलायन अधिक हो, फिर भी यह सच है कि वह नये जीवन का भूखा है। दिनोंदिन लोकतंत्र का दबाव बढ़ रहा है। 'लोक' की मांग बढ़ रही है। अपनी मांगों को लेकर 'लोक' अधीर भी होता जा रहा है। और कई बार अपनी अधीरता में ऐसे काम भी कर बैठता है जो दिखाई देते हैं हत्या के, किन्तु हैं सचमुच आत्महत्या के। राजनीति के किन्हीं नये नारों के प्रभाव में वह हत्या और आत्महत्या के झूले में झूल रहा है, और अभी तक उस नयी क्रान्ति को नहीं पहचान रहा है जिसका नायक वह चाहे तो स्वयं बन सकता है।

लोकतंत्र की मांग है कि एक-एक व्यक्ति को विकास के साधन मिलें। विज्ञान का वादा भी यही रहा है कि सारे पुराने भेदभावों को भुलाकर वह हरएक के पास पहुँचेगा। जब भोजन मौजूद है, तो भूखों के पास क्यों नहीं पहुँच रहा है? इस प्रश्न का उत्तर क्रान्तिकारी के सिवाय दूसरा कोई नहीं दे सकता।

आज के मनुष्य की आकांक्षा है क्रान्ति। आज के इतिहास की मांग है शान्ति। अगर सचमुच ऐसी बात हो तो १९७० में इतिहास और मनुष्य के कदम साथ बढ़ते दिखाई देने चाहिए। हर जगह नहीं तो कहीं तो दिखाई दें।

भूदान-यज्ञ : सोमवार, ५ जनवरी, '७०

विनोबा-संवाद

अनभिज्ञ शिक्षक, अशान्त विद्यार्थी और अनुपयुक्त शिक्षण

प्रश्न : शिक्षक विद्यार्थियों से प्रेम करनेवाला एव विद्वान होना चाहिए और उसे राजनीति मे सक्रिय भाग नहीं लेना चाहिए। आज के शिक्षक मे इन गुणो का अभाव किन कारणो से है, और इन कारणो को किस प्रकार दूर किया जा सकता है ?

विनोबा : प्रथम तो यह है कि आज के शिक्षको मे ऊपर के जो गुण बताये हैं उनका अभाव ही है, ऐसा मैं मानता नही हूँ। यह असम्भव बात है कि आज के शिक्षको का विद्यार्थियों के लिए प्रेम न हो। दूसरा, यह सम्भव है कि वह विद्वान् न हो, लेकिन साधारण लोग जितने विद्वान् हो सकते हैं उससे तो शिक्षक अधिक ही विद्वान् होते हैं। राजनीति मे भाग नही लेना चाहिए यही मुख्य आपत्ति है। उसका कारण यह है कि राजनीति ने इन दिनों सबके चित्त को घेर दिया है और शिक्षकों को उसमे से मुक्ति का भान नही है। मैंने कई बार कहा है कि राजनीतिज्ञ केवल ५ साल के लिए होते हैं, उसके बाद बदलते हैं। उनकी जगह पर दूसरे आयेंगे। लेकिन शिक्षक कम-से-कम ३० साल तक रहते हैं। वे अपना काम पूरा करके निवृत्त होंगे, उसके बाद उन्हीके सिखाये हुए विद्यार्थी शिक्षक होंगे। इसका अर्थ यह है कि शिक्षकों की परम्परा चलेगी और राजनीतिवालो की परम्परा का कोई सवाल ही नही है। कल एक पार्टी सत्ता मे रहेगी और आज दूसरी पार्टी। अभी आप देख ही रहे हैं पार्टी का नसीब किस प्रकार का है। तो शिक्षकों को भान होगा कि उनकी अपनी एक स्वतन्त्र शक्ति खडी की जा सकती है भारत में; जो विद्वानो की शक्ति होगी, और तटस्थ विद्वानों की होगी। इस वास्ते देश के मसले पर जब कभी कठिन प्रश्न उपस्थित हो तो उस पर विचार करने के लिए इन विद्वानों की एक परिचर्चा आयोजित की जाय और उन सबकी सम्मिलित राय जाहिर करेंगे तो शिक्षकों की आवाज बुलन्द होगी तथा इससे लोगो को मार्गदर्शन भी मिलेगा। राजनीति से मुक्त होकर यदि शिक्षक गांव गांव के साथ अपना सम्बन्ध जोडें, एक-एक गांव को मार्गदर्शन देने का काम करें, ग्राम-सभा को मार्गदर्शन दें, तो उसका असर सारे भारत पर पडेगा। इधर ग्रामीण जनता उनके साथ और उधर विद्यार्थी इनके साथ होंगे। इस प्रकार से बहुत बडी ताकत शिक्षको के हाथ मे आयेगी तब उसका भान उन्हें होगा। यह भान होने की जरूरत है।

जैसा कि मैंने कहा है कि वे विद्यार्थियों से प्रेम करते ही नही, ऐसी बात नहीं है। फिर भी यह सही है कि जितना ख्याल अपने घरवालो पर होता है उतना इन बच्चो पर नहीं होता। उसका मुख्य कारण यह है कि हम लोगो में वानप्रस्थ वृत्ति आयी नही। एक-दो बच्चे हो गये उसके बाद ब्रह्मचर्य की साधना शिक्षकों को करनी चाहिए। इससे उनके घर में जीवन पवित्र बनेगा। उसके बाद वे प्रेम वगैरह को विद्यार्थियो तक व्यापक कर सकेंगे। आखिर तक चित्त बेचारा घर के मामले मे उलझा रहता है, वैसी हालत मे प्रेम का झरना बहता नही, कोई खास विद्यार्थी होते हैं जो अपनी बुद्धिमत्ता से शिक्षको को आकर्षित करते हैं, उन पर शिक्षको का प्यार होता है, लेकिन उसको ज्यादातर विद्यार्थियो की भलाई समझनी चाहिए। इसलिए जब यह होगा कि अपने परिवार की मर्यादा बनायें, वह आधुनिक तरीके से नही बल्कि सयम से करेंगे, तो आनन्द होगा।

प्राचीन काल मे शास्त्रकारों ने कहा था कि शिक्षक उसे होना चाहिए जिसको जीवन का अनुभव हो, जो वानप्रस्थी हो। आज तो जो विद्यार्थी यूनिवर्सिटी से निकला तो वह शिक्षक हो गया। जैसे, अब राजनीति का शिक्षक है लेकिन राजनीति जानता नही। राजनीति का शिक्षक तो पडित नेहरू को होना चाहिए था। उनको अन्त मे राजनीति छोडकर वानप्रस्थी बनकर शिक्षक बनना चाहिए था। वैसे ही वाणिज्य कालेज के शिक्षक होते हैं जिनको वाणिज्य का अनुभव नही। वाणिज्य का तो उत्तम शिक्षक घनश्यामदास बिडला हो सकते हैं। क्योंकि उनको उसका काफी अनुभव है। यदि वाणिज्य के शिक्षक को व्यापार के लिए पांच हजार रुपया दिया जाय तो कुछ समय मे वह पांच के छ नही बनायेंगे, बल्कि दो हजार पर ला देंगे। यह इसलिए कि उनको व्यापार करना आता नही। इस प्रकार अनुभव सम्पन्न हुए बिना ही आजकल राजनीति और वाणिज्य सिखाते हैं।

अनुभव के बाद शिक्षक बनता है तो वह अनुभवयुक्त ज्ञान विद्यार्थियो को देगा। उसकी वासना भी उस समय तक क्षीण हो जाती है। इस वास्ते वह आदर्श शिक्षक बन सकता है। लेकिन आज यह हालत नही है। आज तो २०-२२ साल का ही शिक्षक होता है जिसको उद्योग का अनुभव लेना बाकी है, फिर भी वह शिक्षक है। मेरे ख्याल से शिक्षक की उम्र ४० साल से लेकर ६० साल तक होनी चाहिए। क्योंकि वह शिक्षक ४० साल के बाद वानप्रस्थी होगा और उस समय तक उसने घर के लिए कुछ पैसा जमा लिया होगा। उसके बाद यदि प्रोफेसर बन गया तो १०० रुपये में ही वह काम कर सकेगा, तो इस तरह से प्रोफेसर सस्ता होगा तो शिक्षा भी सस्ती हो जायेगी। अनुभव के बाद शिक्षक बनेगा तो अनुभवयुक्त ज्ञान देगा। तीसरी बात, वह वासना भी उसकी कम हो जायेगी तो उसका प्रेम का प्रवाह विद्यार्थियो पर बहेगा। ऐसा होगा, अगर मेरी चले।

'मूरख-मूरख राजा कीने, पण्डित फिरे भिखारी'-यह कबीर का वचन चरितार्थ होता है। मूरख-मूरख चुन करके राजा बना दिया और पण्डित भिखारी होकर १४ साल से घूमता रहा, भीख मांगता रहा।

राजसत्ता उनके हाथ में आ गयी, इस वास्ते आप लोगों को समझना चाहिए कि नायक लोगों के हाथ में सत्ता है और हम उनके पीछे-पीछे जायें यह उचित नहीं। यदि यह ध्यान में आ जायेगा और वानप्रस्थी शिक्षक बनेगा तो शिक्षक का पावित्र्य बढ़ेगा और विद्यार्थियों के लिए प्रेम का प्रवाह बहना शुरू होगा। इसे हम वानप्रस्थ की महिमा कहेंगे।

शिक्षक विद्वान् तो होते ही हैं, लेकिन वह पर्याप्त नहीं। आजकल होता यह है कि लोग बी० ए०, एम० ए० कर लेते हैं और फिर अध्ययन छोड़ देते हैं। पुराने अध्ययन के आधार पर शिक्षण देते हैं, यह ठीक नहीं। जैसे रोज देह को खिलाना जरूरी है वैसे ही चित्त के लिए रोज अध्ययन जरूरी है। और बाबा सतत अध्ययन करता है। एक दिन भी उसका बिना अध्ययन किये जाता नहीं। ७४ साल की उम्र में भी नित्य नया-नया अध्ययन करता ही रहता है और वह शायद मरने के दिन भी अध्ययन करके ही मरेगा। यह अध्ययन सम्पन्नता अगर शिक्षकों में आ गयी तो जो कुछ समाज की तुलना में वे विद्वान् हैं, कल वे सचमुच विद्वान् होंगे। नित्य नया ज्ञान प्राप्त करते रहेंगे, यह शिक्षकों के ध्यान में आ जायेगा तो उन्हें अध्ययन का चस्का लगेगा।

प्रश्न : असन्तुष्ट व त्रस्त युवकों की एक नयी समस्या भारत में निर्माण हुई है। इस समस्या का प्रमुख कारण केवल देश की बिगड़ी हुई आर्थिक परिस्थिति व बढ़ती हुई बेकारी ही हो सकती है क्या? त्रस्त युवकों के प्रश्न का हल कैसे होगा?

विनोबा : आज के युवक का उसका अपना कोई दोष नहीं है। जो दोष है वह केवल तालीम का है। तालीम उसे ऐसी दी जा रही है, जिसके परिणामस्वरूप वह स्वतन्त्र ढंग से काम करने में असमर्थ होता है। कृषि-शास्त्र पढ़ करके वह अपने खेत में जाये और सामान्य किसानों में अधिक अन्न उत्पन्न करे, यह होता नहीं, वह तो नौकरी माँगता है। बहुत थोड़े लोगों को आप पायेंगे जो कृषि-शास्त्र पढ़कर आगे उत्तम किसान बने हों। परिणाम यह है कि कृषि कालेज में केवल शास्त्र सिखाया जाता है। और वे कालेज भी होते हैं शहरों में। शहरों में कौनसी खेती करेंगे? इस वास्ते हर विद्यार्थी के लिए कुछ प्लाट रख देते हैं जिसमें वह हफ्ते में ३-४ घंटे समय देता है, बाकी सारी पढ़ाई सैद्धान्तिक होती है। ऐसा नहीं होता है कि आपको १ एकड़ जमीन दे देते हैं, उसमें से जो कमाई होगी उस पर आपको जीवन जीना है। उसको जो छात्रवृत्ति मिलेगी या तो माता-पिता खर्चा देंगे। ऐसी पराधीन शिक्षा कृषि कालेज में भी होती है। फिर मुझे तो आश्चर्य होता है कि कृषि कालेज में भी अंग्रेजी सीखकर आना जरूरी है, ऐसा नियम है। १८ साल तक उसने शिक्षा पायी और तब खेती नहीं किया। कृषि कालेज में लिया गया और वहाँ खास खेती करने का रहता नहीं, तो परिणाम यह होता है कि वह अपनी खेती पर काम करने के लिए जाता है, तो काम करने की आदत न होने के कारण धूप बारिश आदि सहन करनी पड़ी कि बीमार पड़ जाता है। फिर वह खेती क्या करेगा और खेती सीखने के लिए अंग्रेजी सीखने की कैद क्यों होनी चाहिए? क्या मातृभाषा में खेती भी नहीं हो सकती है? दूसरे विज्ञान वगैरह के विषय हों तो दूसरी बात है, लेकिन खेती जैसी मामूली वस्तु के लिए तो जो थोड़ा पढ़ा-लिखा हो, और प्रत्यक्ष खेती करनेवाला हो, तो उसको कृषि कालेज में लिया जाय। उसको सिखाने के लिए ३-४ सौ शब्द जो जरूरी हैं, वह सिखा सकते हैं।

इस वास्ते जो तालीम आजकल दी जाती है वह बेकार है। जो युवक त्रस्त-ग्रस्त हैं उसका कारण आज की तालीम ही है। तालीम के सुधार के लिए दो-दो कमीशन नियुक्त किये गये। पहला कमीशन राधाकृष्णन् की अध्यक्षता में बना। वे इतने विद्वान् आदमी हैं। उन्होंने जो रिपोर्ट पेश की, उस पर अमल नहीं हुआ। कुछ साल निकल जाने के बाद फिर एक कोठारीजी की अध्यक्षता में कमीशन बना। उन्होंने भी हजार-बारह सौ पन्नों की रिपोर्ट दी। लेकिन दो दो रिपोर्टों के बाद भी अमल नहीं हो रहा है। इसलिए तालीम बदले बिना विद्यार्थियों का असन्तोष कम होना मैं सम्भव नहीं मानता।

[वाणिज्य महाविद्यालय वर्धा के प्राध्यापकों तथा छात्र-संघ के पदाधिकारियों के साथ, गोपुरी, वर्धा, ता० ७ दिसम्बर, '६९।]

विधायक धर्म निरपेक्षता

प्रश्न : क्या 'सेक्युलरिज्म' (धर्म-निरपेक्षता) का कोई विशेष अर्थ है ?

विनोबा : 'सेक्युलरिज्म' (धर्म-निरपेक्षता) का अर्थ अगर यह होता हो कि सब धर्मों से अलगाव तो मैं उसको उपयुक्त नहीं मानता। लेकिन 'सेक्युलरिज्म' का अगर अर्थ यह हो कि सब धर्मों के लिए समान आदर, तब वह बहुत लाभदायी होगा। इसलिए मैंने अभी कहा कि मैं इन मिशनरियों का अभिनन्दन करता हूँ, इसीलिए कि सब धर्मों के लिए हमारे मन में आदर-भाव है। यह 'पाजिटिव' विधायक अर्थ है, अन्यथा 'सेक्युलरिज्म' (धर्म निरपेक्षता) का 'निगेटिव' (नकारात्मक) अर्थ हो जायेगा। मैं आशा करता हूँ, भारत लोग इस 'पाजिटिव' (विधायक) अर्थ में 'सेक्युलरिज्म' (धर्म-निरपेक्षता) को मानते होंगे।

(सेवाग्राम १४-११-'६९)

संस्मरण :

• ग्रामकोष का भव्य चित्र

• सज्जन का अभिनन्दन

• व्यापारियों के प्रेरक प्रयास

सिद्धराज ढड्ढा

गंगानगर जिले के पहले ग्रामदान भांभोवाली ढाणी में रात को ग्रामसभा के बाद वहाँ के सरपंच, कुछ प्रमुख लोग तथा स्कूल के अध्यापक आदि चर्चा के लिए बैठे। अब ग्रामदान हुआ तो क्या करना चाहिए, यह सवाल पेश हुआ। बीघा-बीसवां जमीन निकालने का काम तो इस क्षेत्र के लिए उतना महत्वपूर्ण नहीं लगा, क्योंकि हमें बताया गया कि हरएक के पास जमीन है और लगभग सभी काश्त करते हैं। मैंने सुझाया कि पहला काम तो यह हाथ में लिया जाय कि गाँव के झगड़े गाँव से बाहर अदालत में न जायें। उनका निबटारा और समाधान गाँव में ही हो जाय। यह बात इन लोगों को पसन्द आयी। मुझे लगा कि इसके साथ-साथ गाँवों में सामूहिक अभिक्रम को जगानेवाले प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ का भी कोई काम शुरू हो तो अच्छा होगा। मैंने ग्रामकोष की बात सुझायी। २-३ महीने बाद रबी की फसल पककर तैयार होगी। नहरी इलाका होने से यह फसल यहाँ की मुख्य फसल होती है।

ग्रामकोष का हिसाब लगना शुरू हुआ। लोगों ने बताया कि कम-से-कम ४० हजार मन अनाज इस फसल में पकेगा। अब इन लोगों में आपस में ही चर्चा होने लगी। एक ने कहा, "फसल के समय मन में सेर निकालना कौन बड़ी बात है!" दूसरे ने हिसाब लगाया—"सेर का एक रुपया गिनो तो ग्रामकोष में ४० हजार रुपया हो जायगा।" तीसरे ने कहा, "इतना अनाज गाँव में इकट्ठा होगा तो फिर बीज के लिए हमें बाहर नहीं जाना पड़ेगा। गरीबों की सेवा भी हम लोग कर सकेंगे।" एक भाई ने कहा कि "दोनों फसलों को मिलाकर गाँव में करीब १ लाख मन अनाज पैदा होता है तो इससे सालभर में १ लाख रुपया ग्रामकोष में इकट्ठा हो सकता है।"

मेरे खुद के सामने ग्रामकोष का ऐसा भव्य चित्र पहले खड़ा नहीं हुआ था। गाँव के लोग छोटे-छोटे कामों के लिए हाथ पसारते रहते हैं, सरकारी विभागों का चक्कर लगाते हैं, मन्त्रियों को अर्जियाँ देते हैं, महाजन को अनर्गल सूद देते हैं, सस्ते दामों में अपनी फसल बेच देते हैं—ये सारी बातें ग्रामकोष के माध्यम से बन्द हो सकती हैं। आगे चलकर उद्योग-धन्धे खड़े हो सकते हैं, बेकारों को काम मिल सकता है। देश के सारे क्षेत्र इतने उपजाऊ नहीं होंगे, और सब गाँव इतने बड़े भी नहीं होंगे, लेकिन मोटा हिसाब यह है कि ग्रामकोष में अगर मन पीछे सेर इकट्ठा किया जाय तो प्रति एकड़ औसत १० रुपया इकट्ठा हो सकता है, और वह भी हर साल। इस प्रकार छोटे-छोटे गाँवों में भी १०-५ हजार रुपया हर साल ग्रामकोष में इकट्ठा हो सकता है।

हम देश की गरीबी का रोना रोते हैं, "कैपीटल फारमेशन" की चिन्ता योजनाकारों को लगी रहती है, विदेशों से अरबों रुपया लेकर हमने देश को कर्जदार बना दिया। पर गाँव-गाँव में इस तरह से ग्रामकोष की प्रेरणा जगे तो कितना बड़ा काम हो सकता है, इसका कभी हमने अन्दाज नहीं लगाया। देश में कुल मिलाकर अगर ३०-३५ करोड़ एकड़ जमीन खेती के नीचे है, तो ३०० से ४०० करोड़ रुपया हर साल ग्रामकोष के जरिए इकट्ठा हो सकता है।

भांभोवाली ढाणी के ग्रामकोष में एक लाख रुपया वार्षिक इकट्ठा होने की कल्पना से मैं खुद थोड़ा सहम गया। मैंने उन लोगों से कहा, "आगे की बात तो आगे देखी जायेगी, अभी रबी की फसल आने पर अगर आप मन पीछे सेर नहीं, आधा सेर भी इकट्ठा करेंगे तो २० हजार रुपया या ५०० मन अनाज सहज गाँव में इकट्ठा हो जायगा। यह आपकी पूँजी होगी। इससे आप ऐसा चक्र शुरू कर सकते हैं, जिससे फिर गाँव का शोषण उत्तरोत्तर रुकता जाय, और समृद्धि बढ़ती जाय।" उस रात को बड़ी देर तक मैं ग्रामकोष की इस भव्यता का चिन्तन करता रहा। काश, गाँव के लोग अपनी शक्ति को पहचान पाते!

× × ×

जो चीज गंगानगर जिले की इस यात्रा की निमित्त बनी उसकी भी अपनी एक विशेषता थी। एक छोटे-से गाँव के प्राइमरी स्कूल के एक अध्यापक अपना सेवा-काल पूरा करके 'रिटायर' होनेवाले हैं। उनके ५६ वें जन्म-दिन के अवसर पर उनके प्रशंसकों ने उनके अभिनन्दन का कार्यक्रम रखा था। मुझे इसके लिए आमन्त्रित किया गया। मैं उन अध्यापक महोदय से परिचित नहीं था, लेकिन मुझे लगा कि आजकल अभिनन्दन बड़े लोगों का ही किया जाता है। और वह भी खासकर ऐसे लोगों का, जिनसे कुछ काम निकलने की आशा अभिनन्दन के आयोजकों को होती है। गाँव के एक छोटे-से प्राइमरी स्कूल के शिक्षक के अभिनन्दन जैसी निस्पृह योजना शायद ही कोई करता हो। अतः मैंने इस कार्यक्रम के लिए जाना स्वीकार किया। यह तो सोचा ही था कि इस निमित्त से उस जिले में कुछ ग्रामदान का काम भी होगा। तारीख ६ दिसम्बर को यह छोटा सा समारोह हनुमानगढ़ से करीब बारह मील दूर एक छोटे-से गाँव चक हरिरामवाला में हुआ। उस गाँव के लोग, अध्यापक महोदय के प्रशंसक मित्र और शिष्य, आस-पास के स्कूलों के अध्यापक आदि मिलाकर करीब सौ लोग होंगे। इन अध्यापक का नाम श्री योगेन्द्रपाल जोशी है, पर

लोग इन्हें "सज्जनजी" के नाम से ही पुकारते हैं। अत्यन्त निस्पृह, मितभाषी, भक्तिपूर्ण और सेवापरायण व्यक्तित्ववाले ये अध्यापक सचमुच सज्जनता की मूर्ति हैं। सरल इतने कि अपने ही अभिनन्दन के लिए आयोजित समारोह की तैयारी में औरों के साथ इस प्रकार लगे हुए थे, जैसे अभिनन्दन उनका नहीं, किसी और का हो। इन 'सज्जन' ने प्राइमरी अध्यापक के अपने अल्प वेतन में से जो २-३ हजार की रकम अब तक बचायी वह भी गाँव के उस स्कूल के निर्माण में ही लगा दी। लोगों में भी इनके प्रति आदरभाव था। गुण और गुण-ग्राहकता, दोनों का ऐसा दर्शन आजकल कदाचित् ही होता है।

× × ×

गंगानगर जिले में एक और अनपेक्षित क्षेत्र में प्रकाश का दर्शन हुआ। प्रवास के पहले दिन मैं हनुमानगढ़ था। यह एक अच्छा बड़ा कस्बा और मंडी है। व्यापार के क्षेत्र में आज कितनी धाँधली मची हुई है यह सब जानते हैं। न चीजें शुद्ध मिलने का भरोसा, न सही नाप-तौल का, न उचित दाम का। सरकार ने इन चीजों की रोकथाम के लिए तरह-तरह के कानून बना रखे हैं विभाग खोल रखे हैं और कर्मचारी तैनात कर रखे हैं। कोई नाप-तौल का इन्सपेक्टर है, तो कोई मिलावट रोकनेवाला इन्सपेक्टर। पर अनुभव यह है कि जितने कानून और जितने इन्सपेक्टर उतना ही भ्रष्टाचार अधिक। व्यापारी-समाज दोषी नहीं है ऐसी बात नहीं लेकिन सारी बदनामी उसके सिर मढ़ी जाती है वह गलत है। व्यापारी न चाहें तो भी इन इन्सपेक्टरों की बदौलत उन्हें गलत काम करने को मजबूर होना पड़ता है।

हनुमानगढ़ कस्बा के किराना-व्यापारी-संघ ने करीब १० महीने पहले यह निर्णय लिया था कि किराना के व्यापारी भविष्य में मिर्च, मसाला, घाटा आदि सामान मिलावट का नहीं बेचेंगे, शुद्धता की दृष्टि से उन्होंने बल्कुल साफ ही तैयार करवा-कर बेचना शुरू किया है। आरम्भ में यह निर्णय तो व्यापारियों ने फूड, इन्सपेक्टर' की धाँधली से तंग आकर ही लिया था। उसने हर किराना व्यापारी को तंग करके अपनी माहवारी भेट पूजा तय करना चाहा। इसके उपरान्त भी वह हमेशा व्यापारियों पर अपनी तलवार लटकाये रखता। कुछ व्यापारियों के ध्यान में यह बात आयी कि 'हमें मिलावट का सामान बेचने से क्या लाभ है? मिलावटी चीजें बाहर से आती हैं और हम लोग केवल बीच के दलाल की हैसियत से उनको सीमित मुनाफे से बेचते हैं और फूड इन्सपेक्टर का जुल्म भी सहते हैं।' फलस्वरूप व्यापारियों ने आपस में चर्चा की और ११ फरवरी १९६९ को संघ की मिटिंग में सब व्यापारियों ने सर्वसम्मति से मिलावटी चीजें न बेचने का निर्णय लिया।

हनुमानगढ़ के किराना-व्यापारियों के संघ का यह निर्णय अपनी किस्म का अनोखा है। १० महीने से इस निर्णय का आमतौर पर सचाई के साथ पालन हो रहा है। फिर भी सावधानी के तौर पर देखभाल के लिए हनुमानगढ़ के सभी व्यापारी-मण्डलों के असोसिएशन ने एक समिति नियुक्त की है ताकि समय-समय पर वह दुकानों पर बिकनेवाले खाद्य पदार्थों की जाँच करे, और दोषी दुकानदारों के विरुद्ध कार्यवाही की जा सके। फूड इन्सपेक्टर के डर से भी उन्हें मुक्ति मिली है, क्योंकि डरने लायक कोई काम वे नहीं करते हैं। मुझे जब व्यापारियों के इस कदम की बात मालूम हुई तो मैंने हनुमानगढ़ के व्यापारियों से मिलने की इच्छा प्रकट की और रात को उनकी एक अच्छी सभा हुई। व्यापारियों ने बताया कि मिलावट का सामान न बेचने के उनके निर्णय को तोड़ने की तरह-तरह से कोशिश हो रही है। फूड इन्सपेक्टर ने इन लोगों से कहा बताया कि "मैंने आपका सत्कार करना चाहता है, इस-लिए मुझसे बातचीत करें।" पर किराना व्यापारी संघ द्वारा इन्कार कर देने पर इन्सपेक्टर महोदय बौखला गये और धम-कियाँ दे रहे हैं कि मैं सबको समझूँगा। बाहर के कुछ व्यापारी भी, जो मिलावट का माल तैयार करते हैं, यहाँ की कुछ दुकानों पर जबरदस्ती अपना माल बिकने के लिए डाल गये। संघ को मालूम होने पर उन्होंने तुरन्त वह माल जब्त कर लिया। कुछ दिन पहले नाप-तौल इन्स-पेक्टर' ने भी दुकानदारों से महीना बाँधने के लिए कहा था। व्यापारिक मण्डल ने इसके खिलाफ कदम उठाया और सम्ब-न्धित अधिकारियों के पास इसकी शिका-यत की। इस बात से नाराज होकर इन्स-पेक्टर ने रात को ८ बजे के बाद दुकान खुली रखने का इल्जाम लगाकर दुकानदारों का चालान करना शुरू कर दिया। व्यापा-रियों के साथ की बातचीत से लगा कि वे इन सब हमलों का मुकाबला करने के लिए कटिबद्ध हैं। उन्होंने राजस्थान सर-कार तथा ऊँचे अधिकारियों को भी इन सब बातों से अवगत किया है।

हनुमानगढ़ के किराना व्यापारियों के उपरोक्त निर्णय से जहाँ एक ओर उप-भोक्ताओं को खाने की शुद्ध चीजें मिलने लगी हैं वहाँ दूसरी ओर इन वस्तुओं को स्थानीय रूप से तैयार करने के लिए कई लोगों को काम भी मिला है। व्यापारियों का यह अभियान सचमुच सराहनीय है, पर दुर्भाग्य से आज देश की स्थिति ऐसी है कि इस प्रकार के सत्कार्य प्रयत्नों को प्रोत्साहन मिलने के बजाय चारों ओर से विरोध का सामना करना पड़ रहा है। कानून के दाँव-पेंच ऐसे हैं कि सरकारी अधिकारी तरह-तरह की धाँधलियाँ करके लोगों को उनकी (अफसरों की) मर्जी के अनुसार चलने के लिए मजबूर कर देते हैं। हनुमानगढ़ के व्यापारी इस बात को समझ रहे हैं कि सारे विरुद्ध प्रवाह में अकेले उनका टिकना मुश्किल है। वे चाहते हैं कि जिले की दूसरी मंडियों में, और प्रान्त में भी जगह-जगह व्यापारी लोग इस प्रकार मूल चीजों की शुद्धता को सुधार लें तो सरकारी लोगों का प्रभाव कम होने में बहुत मदद मिल सकती है। ग्रामदान के सन्दर्भ में आगार→

बिहारदान के बाद

पुष्टि का प्रारम्भ

सब सवालों का एक ही जवाब—बिहार के ग्रामदान की पुष्टि। सेवाग्राम में बापू-कुटी के पास बाबा बैठे हैं और विभिन्न क्षेत्रों के परिचित-अपरिचित व्यक्ति सवाल करते जाते हैं—देश की चिंताजनक राजनैतिक परिस्थिति को कैसे सुधारा जाय? कौमी एकता कैसे होगी? आपका 'ए-बी-सी' वाला विचार कब और कैसे अमल में आयेगा?'' बाबा जवाब देते हैं, 'बिहार में पुष्टि होने दीजिए।''

गत सप्ताह बिहार के दरभंगा और मुजफ्फरपुर जिलों की यात्रा करते समय यही दृश्य स्मृति पटल पर अंकित था। कच्ची सड़कों पर दौड़नेवाली जीप में सर्वश्री ध्वजा बाबू, पूरन बाबू तथा जयलोक भाई के साथ चलनेवाली 'काव्य-शास्त्र-विनोद' की चर्चा में पता ही नहीं चलता था कि धूलि-स्नान हो रहा है और मिट्टी के बने हुए शरीर पर मिट्टी की परतें जमती जा रही हैं।

× × ×

दरभंगा का लदनियाँ प्रखण्ड नेपाल की सीमा पर है। खादी-कार्यकर्ताओं ने वहाँ पर अच्छा काम किया है। हर गाँव में ग्रामसभा बनी है, सर्वसम्मति से अध्यक्ष, मंत्री चुने गये हैं। अभी पुराने कानून के अनुसार पंचायत के मुखिया के चुनाव चल रहे थे। लदनियाँ की सात पंचायतों में मुखिया भी सर्वसम्मति से चुने गये। कई गाँवों में ग्रामकोष एकत्रित हुआ है। पाजेडीह की ग्रामसभा के बाद हम मधुबनी लौट रहे थे, तो ग्रामसभा के कोषाध्यक्ष पीछे से दौड़े आये और उन्होंने हमारी जीप को रोका, 'ग्रामकोष देखने जाइए।' उन्होंने गर्व के साथ धान के भंडार की ओर इशारा किया। मधेपुर प्रखण्ड में ग्रामसभा के अध्यक्ष, मंत्री तथा अन्य कार्यकर्ताओं का दो दिन का शिविर हुआ। तीन चार सौ बीघेवाले बड़े किसान भी ग्रामसभा में शामिल थे। एक गाँव के अध्यक्ष ने दो दिन में कानूनी पुष्टि का काम किया, सारे कागजात तैयार कर दिये। ग्रामसभा के अध्यक्ष, मंत्री जब अपना परिचय दे रहे थे, तब उनमें कुछ मुसलमान थे, कुछ हरिजन, तो कुछ पिछड़ी जातियों के भी थे। वोटवाले चुनाव में जो कभी अध्यक्ष न बन पाते, वे सर्वसम्मति से अध्यक्ष बने थे।

मुजफ्फरपुर जिले के गोविंदपुर-छपरा की ग्रामसभा अविस्मरणीय रही। सैकड़ों की भीड़ इकट्ठा हुई थी, भूमि-वितरण का भी समारोह था। साल भर पहले उसी गाँव में साम्यवादी मित्रों ने वास की भूमि के लिए आंदोलन चलाया था। भूमिहीन परिवारों की ओर से माँग पेश की गयी थी कि जिस जमीन पर उनकी झोपड़ियाँ बनी थीं, वे उन्हें मिलें, वहाँ से उन्हें बेदखल न किया जाय। माँग बिलकुल जायज थी। टाल्स्टॉय की कहानीवाली साढ़े तीन हाथवाली जमीन पर भी उन गरीबों का अधिकार न था। बिहार के कानून ने उन्हें अधिकार दिया था, लेकिन वास्तविकता यह थी कि जमीन-मालिक चाहे जब उन्हें बेदखल कर देते थे। सारा सवाल केवल डेढ़ बीघा जमीन का था, जिस पर पचास परिवार बसे थे। लेकिन उतनी भी जमीन न मिलने के कारण भूमिहीन लाल झंडे के नीचे इकट्ठा हुए। दोनों तरफ से लाठियाँ चलाने की तैयारी हुई। अदालत में मुकदमा दायर हुआ। अशान्ति बढ़ती गयी। उसी समय ग्रामदान हुआ और उस क्षेत्र के मान्य सर्वोदय-सेवक श्री गोपाल मिश्र ने उस सवाल को हाथ में लिया। लाठियाँ रुक गयीं, मुकदमा वापिस लिया गया, समझौता हो गया, डेढ़ बीघे के स्थान पर दस बीघा जमीन भूमिहीनों को मिली, तनाव घट गया।

उसी स्थान पर भूमि-वितरण का कार्यक्रम था। उन्हीं भूमि-मालिकों ने बीसवाँ हिस्सा जमीन भूमिहीनों में बाँटने के लिए निकाली थी। और उनका आग्रह था कि हम अपने हाथ से भूमिहीनों को जमीन के प्रमाण-पत्र देंगे। देनेवालों ने प्रेम से दिया, लेनेवालों ने दाताओं को माला पहनाकर प्रेम से लिया। लेनेवालों में हरिजन, पिछड़ी जातियों तथा मुसलमानों की संख्या अधिक थी। वितरण चल रहा था, तब किसी युवक ने बेसुरी आवाज उठायी—"इतनी-सी जमीन से क्या होगा? इन लोगों के पास तो पचासों एकड़ है।" भूमि पानेवाले भूमिपुत्रों ने उठकर उस युवक को खामोश किया—"यह जमीन तो हमें मिल रही है। तुमने हमें क्या दिलाया?"

सिवान के मरजुपुर गाँव की ग्रामसभा के अध्यक्ष ने सरकारी जमीन का वितरण किया, जो कानूनन ग्रामसभा की बन जाती है। कानून तो पुराना था, लेकिन आज तक अनुभव यही रहा कि सरकारी जमीन भूमिहीनों के नाम से बँटती थी, भूमिवानों के पास पहुँचती थी, अब ग्रामदान हुआ, गाँव एक बना, ग्रामसभा बनी तो वह जमीन ठीक उसी के पास पहुँची, जिसका उस पर हक था। गाँव के भूमिहीनों को→

→लोग यह सवाल करते हैं कि कुछ गाँवों को आदर्श बनाकर हम क्यों नहीं दिखा देते। हनुमानगढ़ के व्यापारी अपने खुद के अनुभव से इस शंका का समाधान प्रस्तुत कर रहे हैं कि आज चारों ओर के दूषित वातावरण में अकेले-अकेले प्रयत्न नहीं टिक सकते। अच्छा प्रयत्न टिक सके और सफल हो इसके लिए जरूरी है कि ऐसे प्रयत्नों को व्यापक रूप से फैलाया जाय, जिससे हवा उत्तरोत्तर शुद्ध होती जाय और ये छोटे-छोटे पौधे पनप सकें। आशा है, राजस्थान की दूसरी मंडियों के व्यापारी भी हनुमानगढ़ के व्यापारियों की तरह अपने-अपने यहाँ इस प्रकार के कामों की पहल करेंगे।

इस प्रकार गंगानगर जिले का तीन दिन का प्रवास कई दृष्टि से बहुत उपयोगी और प्रेरणादायी रहा। (१०-१२-'६९)

महाराष्ट्र प्रदेश का पहला जिलादान : ठाना

श्री ठाकुरदास बंग की पत्र-सूचना के अनुसार महाराष्ट्र का प्रथम जिलादान जयप्रकाश नारायण को समर्पित किया गया। महाराष्ट्र प्रदेश का यह पहला जिलादान है। और इस सफलता से प्रदेशदान की दिशा मे तीव्र गति से आगे बढने की प्रेरणा का संचार कार्यकर्ताओ मे होगा और वातावरण अनुकूल बनेगा, ऐसी आशा की जाती है।

ठाना जिले की कुछ महत्वपूर्ण जानकारी निम्न प्रकार है जिले के उत्तर मे गुजरात का सूरत जिला, दादरा और नगरहवेली का केन्द्र-शासित प्रदेश, सह्याद्री और उसके बाद नासिक, अहमदनगर तथा पूना जिला है। दक्षिण मे कुलाबा जिला, दक्षिण-पश्चिम मे बृहत्तर बम्बई तथा पश्चिम मे अरबी समुद्र है। जिले का क्षेत्रफल ३५,४२१ वर्गमील और सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार जनसख्या १६,५२,६७८ है।

जिले के सामान्यत पश्चिम, मध्य और पूर्व, ऐसे तीन विभाग हैं। पश्चिम विभाग मे समुद्र के किनारे पर तलासरी, महाल, ठाना, बसई, पालघर और डहाणु, ये तालुके हैं। इस विभाग का क्षेत्रफल जिले के ⅓ क्षेत्रफल के बराबर है। यहाँ मछली पकडने का उद्योग बडे पैमाने पर चलता है। केला और आम भी होता है। इस विभाग मे और दूसरे भी अनेक उद्योग चलते हैं। दूसरे विभाग की तुलना मे यह विभाग समुन्नत तथा घनी आबादी-वाला है।

मध्य विभाग मे जव्हार, वाडा, भिवडी और कल्याण, ये तालुके हैं। इस विभाग का क्षेत्रफल जिले के ⅓ क्षेत्रफल से थोडा कम है। इस विभाग मे मुख्य उत्पादन चावल का है।

पूर्व विभाग मे मोखाडा, शहापुर और मुरबाड, ये तालुके हैं। इस विभाग मे घने जगल है, और मुख्यत आदिवासी लोग रहते हैं।

जिले के १९,५९१०६४ वर्गमील मे जगल है। जिले के ४२ २७ फीसदी भाग मे जगल है। ये सब जगल सरकार के कब्जे मे हैं।

मछलीमारी की दृष्टि से महाराष्ट्र मे यह जिला महत्व का है। जिले का समुद्र-किनारा ११० किलोमीटर (७० मील) लम्बा है। इसके अलावा नदी और तालाब मे भी मछली-पालन का काम चलता है।

जिले मे १,९९९ गाँव हैं। इनमे से कल्याण और ठाना के पास जो औद्योगिक क्षेत्र हैं (जहाँ पर बडे बडे कारखाने हैं), उस क्षेत्र के ३०० गाँव छोडकर जिले मे बाकी के जो गाँव हैं उनमे से ८५ प्रतिशत से ज्यादा गाँवो का ग्रामदान हो गया है। कुल मिलाकर १,१५० से ज्यादा गाँवो का ग्रामदान हुआ है। जो गाँव बचे हैं वे मुख्यत बम्बई के आसपास के हैं। यहाँ के लोग सवेरे बम्बई जाते हैं, और रात को ९-१० बजे गाँव मे आते हैं। ये सब गाँव औद्योगिक क्षेत्र के हैं इसलिए ये गाँव रह गये हैं।

जिलादान के लिए जिला परिषद के अध्यक्ष, पचायत समिति के सभापति, बी० डी० ओ०, ग्रामसेवक, शिक्षक आदि लोगो ने पूरा सहयोग दिया। जिले के नेताओ के मन मे शका है कि ग्रामदान से क्या होगा। क्या यह व्यवहार मे आयेगा? आयेगा तो अपना स्थान क्या रहेगा?

जिलादान हो गया। आगे के काम के बारे मे सोचा गया है कि पहला काम पुष्टि का होगा। निर्माण काम के लिए हर ब्लाक मे दस गाँव चुनकर, जिला परिषद अपनी और सरकार की पूरी शक्ति उनके पीछे लगा देगी, तो काम हो सकता है ऐसी कल्पना है।

जिलादान मे आचार्य भिसे और आदिवासी सेवा-मडल की पूरी शक्ति लगी। महाराष्ट्र के कार्यकर्ता भी आये। आचार्य भिसेजी का गत पचास साल से ठाना जिला सेवाक्षेत्र रहा है। आदिवासियो की सब प्रकार की सेवा आपने की है। आप जनता मे आपके लिए नितान्त आदर है। अभी जिला परिषद मे और सत्ता मे जो लोग हैं, वे अधिकांश उनके विद्यार्थी हैं।

भूदान-यज्ञ : सोमवार, ५ जनवरी, '७०

→जमीन मिल रही थी। अन्त मे अध्यक्ष भी उठ खडे हुए। वे भी स्वय भूमिहीन थे, पिछडी जाति के थे। ग्रामदान न होता तो क्या कभी गरीब, पीडित भूमिहीन अध्यक्ष बन सकता था?

मुजफ्फरपुर जिले के 'मादापुर चौबे' गाँव की कहानी बडी दिलचस्प है। गाँव का ग्रामदान तो हो गया था, लेकिन शामिल न होनेवाले पचीस प्रतिशत लोगो मे कई बडे जमीनवाले थे। वे सर्वोदय-सम्मेलन के लिए राजगिर गये थे। वहाँ पर ग्रामदान का विराट् दर्शन पाकर घर लौटे तो उन्होने पहला काम किया, ग्रामदान के कार्यकर्ताओ को निमत्रण भेजकर बुलाया। गाँव मे ग्रामसभा गठित की और ग्रामदान-घोषणापत्र पर हस्ताक्षर कर तुरन्त अपनी बीसवें हिस्से की जमीन भूमिहीनो मे वितरित कर दी। जमीन थी गगा किनारे की, पन्द्रह-बीस हजार रुपये बीघेवाली। किसीने विनोद मे कहा, "हम एक बीघा दान देते हैं मानो एक 'अम्बेसडर' कार देते हैं।"

दरभगा की सभाओ मे बहनों को न पाकर मैं कहती थी - "यह मिथिला सीताजी की भूमि है। लेकिन सीताजी के तो दर्शन ही नहीं हो रहे हैं।" वैशाली के निकट पनेहावाद की ग्रामसभा मे विशाल जनसागर के बीच, बहनो की अच्छी खासी भीड को देखकर कंप्तान भाई ने कहा, "इधर देखिए, सीताजी के दर्शन कर लीजिए।"

गणराज्य की प्राचीन प्रयोगभूमि, वैशाली अब गणराज्य के अद्यतन प्रयोग की भूमि बनने जा रही है। और वैशाली के साथ जुडी हुई है नर्तकी आम्रपाली की स्मृति, जिसके गुरु ने विराम पाया था, निर्वाण के नर्तन मे, गतिमान चरणों के अनुसरण मे।

—निर्मला देशपांडे

कर्ज और कर्जदार

[ग्रामतौर पर गांव के छोटे किसान और मजदूर कर्ज मे जीते हैं, कर्ज मे ही मरते हैं। आकस्मिक, तात्कालिक और पारम्परिक ग्रादि ग्रनेक कारणों से वे कर्ज लेने और बदले में अपना शोषण कराने के लिए मजबूर होते हैं। प्रस्तुत है इस गांव का जीता-जागता उदाहरण।—सं०]

कर्ज लेकर जीविका चलाने की परम्परा सामान्यत सभी गांवो मे है। यह उनकी कमजोर ग्रार्थिक स्थिति का प्रमाण है। खाती की ढाणी इससे अलग नही है। प्राय सभी परिवारो पर कुछ-न-कुछ कर्ज नकद या उधार के रूप मे है। यहा के लोग पूरा-का-पूरा कर्ज नजदीक के महाजनो से लेते हैं। गांव मे एक भी परिवार ऐसा नही है, जो स्वय कर्ज देने का कारोबार करता हो। कर्ज मुख्यत दो रूपो मे लेते हैं —

१ नकद के रूप मे।

२ वस्तु के रूप मे उधार।

जहाँ तक वस्तु उधार लाने का प्रश्न है, प्राय लोग प्रतिवर्ष उधार लाते हैं और फसल पर चुका देते हैं। वस्तु और नगद, दोनो के लेने की शर्तों मे भिन्नता है।

सन् १९६६-६७ मे पूरे गांव पर ४५,४२० रु० का कर्ज था, जो कि महाजनो से लिया गया था। गांव के ३४ परिवारो मे से वे ९ परिवार नकद कर्ज से मुक्त हैं। शेष २५ परिवारो को निम्नलिखित कर्ज की श्रेणियो म विभक्त किया जा सकता है :—

सारणी-संख्या–१०

पारिवारिक कर्जों की श्रेणियां

श्रेणी (रु०)	परिवार-संख्या
कर्ज-मुक्त	९
५०० तक	८
५०१ से १,००० तक	५
१,००१ से २,००० तक	७
२,००१ से ३,००० तक	३
३,००१ से ४,००० तक	२
	३४

इस प्रकार कर्जदार परिवारो मे से १६ परिवारो पर तीन हजार से कम का कर्ज था। चार हजार से अधिक कर्जवाला एक भी परिवार नही था। अधिक कर्ज लेनेवालो की सख्या भी कम थी।

जिन ९ परिवारो पर कुछ भी नगद कर्ज नही है उनकी ग्रार्थिक स्थिति काफी सन्तुलित है। इनमे से ५ ने अध्ययन वर्ष मे अनाज बिलकुल नही खरीदा। शेष चार ने कुछ-न-कुछ अनाज अवश्य खरीदा, पर अन्यों की अपेक्षाकृत काफी कम। इनमे से तीन परिवारो मे सदस्य-सख्या मात्र तीन-तीन है। इन तीनो परिवारो की प्रति परिवार वार्षिक ग्राय ७५० रु० है। चार ऐसे कर्जमुक्त परिवार, जिन्होने कुछ-न कुछ अनाज खरीदा है, उनका परिवार भी सामान्यतया बडा है। तीन हजार से अधिक कर्जवाला परिवार श्री भूराराम और रुडमल का है। इन दोनो के ऊपर मकान बनाने तथा अन्य कार्यों के कारण अधिक कर्ज है।

कर्ज लेने की प्रवृत्तियो पर उसके उपयोग की दृष्टि से विचार किया जा सकता है। उपयोग को निम्नलिखित श्रेणियो मे विभक्त कर सकते है —

(१) शादी, मकान बनाने तथा कृषि के औजार आदि के लिए लिया गया स्थायी कर्ज।

(२) अस्थायी कर्ज, जो कि मुख्यतया इन कार्यों के लिए लिया है—

(क) पिछले दो वर्षों से कम उत्पादन के कारण लिया गया कर्ज। यह कर्ज मुख्यत भोजन तथा वस्त्र के लिए हुआ।

(ख) पशु तथा बीज के लिए लिया गया कर्ज। यह कर्ज भी अस्थायी रहा, क्योकि मौसम की खराबी के कारण पिछले वर्षों मे बार-बार पशु बेचना तथा खरीदना पडा। उसके साथ बीज पर भी अनियमित ढग से व्यय हुआ।

(ग) कुछ फुटकर कार्यों के लिए भी कर्ज लिया गया।

उपरोक्त श्रेणियो मे कर्ज के बारे मे जानकारी करने पर पता चला कि कुल २० हजार रुपये का कर्ज 'स्थायी' कामों के लिए लिया हुआ है। शेष २५,४२० रु० का कर्ज अस्थायी कार्यों के लिए, खासकर पिछले तीन वर्षों मे लिया गया है। कर्ज पर प्रतिवर्ष १२ प्रतिशत ब्याज चुकाना पडता है।

जहां तक कर्ज की वापसी का प्रश्न है वह प्रत्येक परिवार के महाजन से व्यक्तिगत समझौते पर निर्भर करता है। सर्वेक्षण से पता चला कि किसान प्राय दो-तीन वर्षों मे कर्ज-वापसी का वादा करते हैं। यह वादा मुख्य रूप से स्थायी कर्ज के लिए किया जाता है। अस्थायी कर्ज तो फसल होने के बाद वापस किया जायगा, ऐसा समझौता रहता है। अत किसान प्रतिवर्ष, फसल होने के बाद, कुछ-न-कुछ कर्ज अवश्य चुकाता है। इन बातो पर आगे थोडा विस्तार मे विचार करेंगे। यहाँ हम पारिवारिक दृष्टि से कर्ज लेने की प्रवृत्ति पर विचार करना चाहेंगे।

जिन नौ परिवारो ने कर्ज नही लिया है, उनकी ग्रार्थिक स्थिति सन्तुलित मानी जा सकती है। सामान्यत इन परिवारो ने खाने के लिए अनाज नहीं खरीदा है। अन्य अस्थायी कार्यों के लिए इन्होने कर्ज नही लिया। इसके अलावा इन परिवारो की सदस्य-सख्या भी कम थी, इसका प्रभाव भी कर्ज न लेने पर पडा। इन परिवारो पर पुराना किसी प्रकार का कर्ज नहीं था। जिन कर्जमुक्त परिवारों ने पिछले दो वर्षों मे अन्न का आयात करने के बावजूद कर्ज नहीं लिया, उनकी आय का एक हिस्सा बढईगिरी से प्राप्त होता था। यह भी स्पष्ट है कि इन परिवारों को खास परिश्रमी कहा जा सकता है।

सबसे अधिक कर्ज लेनेवाला परिवार श्री चादमल का है। इन्होंने ३,५०० रु० नगद कर्ज लिया है। इसमे से करीब

२ हजार का स्थायी कर्ज है तथा शेष कर्ज तात्कालिक है, जो कि मुख्य रूप से खाने के लिए लिया गया। कुल आठ परिवारों पर तीन से साढ़े तीन हजार रुपये तक कर्ज है। इन अधिकतम कर्जदार परिवारों का कर्ज लेने का कुछ खास कारण भी है। इनमें से तीन परिवारों ने खास काम के लिए कर्ज लिया। इन कार्यों में मुख्य है—पशु-खरीद, ऊँटगाड़ी-खरीद। एक व्यक्ति ने मकान-निर्माण के लिए भी कर्ज लिया। फिर खाने तथा वस्त्र आदि के लिए तो अन्य लोगों की भाँति इन्होंने भी कर्ज लिया। कुल कर्जदार परिवारों में से नौ परिवारों के स्थायी कर्ज का कारण शादी है। शादी पर लिया जानेवाला कर्ज दो वर्ष से पुराना है, क्योंकि पिछले दो वर्षों में गाँव में एक भी शादी नहीं हुई है।

जिन परिवारों ने अधिक कर्ज लिया उनकी आर्थिक स्थिति सामान्यतः खराब है। अधिक कर्ज लेनेवाले परिवारों को दो वर्गों में बाँट सकते हैं (क) ऐसे परिवार जिनकी आर्थिक स्थिति खराब है या सदस्य-संख्या अधिक है, (ख) ऐसे परिवार जिनकी आर्थिक स्थिति सामान्य है, पर किसी खास कारण से कर्ज लिया है। अच्छी आर्थिक स्थितिवाले परिवारों में से दो पर नाम-मात्र का कर्ज है। अन्य दो ने कतिपय कारणों से कर्ज लिया है। उनका यह कहना है कि, "हमारी आय अवश्य अधिक है, पर उसके अनुसार खानेवाले तथा अन्य खर्च भी अधिक हैं।" उन पर निमी-न-किसी कारण से कर्ज हो ही जाता है।

दूसरे लोग कम कर्जवाले हैं। कम कर्ज लेनेवाले परिवारों की संख्या ४ है। उनकी आर्थिक स्थिति मध्यम स्तर की मानी जानी चाहिए। उनमें से दो परिवारों की अपेक्षाकृत अच्छी आर्थिक स्थिति है। इस कारण इन्होंने कम कर्ज लिया। शेष दो परिवारों की आर्थिक स्थिति भी सन्तुलित है और इनका परिवार भी ज्यादा बड़ा नहीं है। इनकी सदस्य-संख्या मात्र एक-दो की है। एक परिवार ने अपनी आर्थिक स्थिति को सन्तुलित रखा। इस प्रकार कम कर्ज लेनेवाले परिवारों में सभी आर्थिक स्थिति के परिवार आते हैं।

गाँव में बारह परिवार ऐसे हैं, जिन्होंने एक से दो हजार तक कर्ज लिया है। इस श्रेणी में सभी आर्थिक स्थिति के लोग आते हैं। सामान्यतः ब्राह्मण उसी श्रेणी में आते हैं। इस श्रेणी के कर्जदार परिवारों का अध्ययन करने पर साफ जाहिर हुआ कि इनकी कर्जदारी का मुख्य कारण उत्पादन में कमी है। ये परिवार कर्ज से मुक्ति में खास प्रयत्नशील दिखे। यही कारण है कि इन्होंने स्थायी कार्यों के लिए कम-से-कम कर्ज लिया है। इनके मकान इनकी आर्थिक स्थिति को देखते हुए घटिया किस्म के हैं। इनमें से अधिकांश ने कर्ज लेकर मकान बनाने के बारे में असहमति व्यक्त की। सबकी यही स्थिति है ऐसी बात नहीं है। इनमें से दो परिवारों ने मकान बनाने के लिए कर्ज लिया है। यह कर्ज आज से तीन वर्ष पूर्व लिया था, जब कि उपज की अच्छी आशा थी। और कर्ज लेने के पीछे यही मंशा थी कि अगले दो वर्षों में चुकता कर दिया जायगा।

जहाँ तक कर्ज प्राप्त होने में सुविधा-असुविधा का प्रश्न है उसमें सबको समान कठिनाई का सामना करना पड़ता है। कर्ज मुख्य रूप से महाजन से प्राप्त होता है। कर्ज लेनेवाले तथा कर्ज देनेवाले, दोनों की बातों से साफ जाहिर होता है कि महाजन खुशी से कर्ज देता है। हालाँ कि लेनेवाला खुशी से नहीं लेता है। पर लेनेवाला इतना तो अवश्य महसूस करता है कि महाजन ने समय पर सहायता करके उस पर एहसान किया है। महाजन इस बात का पूरा ख्याल रखता है कि उसका पैसा डूबे नहीं। उसका गाँव के प्रत्येक व्यक्ति से सम्पर्क होता है और रोजमर्रा का सम्बन्ध रखता है। इसलिए पैसा डूबने का अंदेशा नहीं के बराबर रहता है। फिर वह बिना कागजी कार्यवाही के एक पैसा भी नहीं देता। सभी आर्थिक स्तर-वालों से मिलने पर यह पता चला कि नीची आर्थिक स्थितिवाले परिवार को भी कर्ज मिलने में खास परेशानी नहीं होती है। पर प्रत्येक परिवार को उसकी आर्थिक स्थिति के अनुसार ही कर्ज मिलता है। महाजन कर्ज देते समय इन बातों को ध्यान में रखता है—

(१) परिवार की आर्थिक स्थिति।
(२) परिवार की सामाजिक प्रतिष्ठा।
(३) कर्ज लेने तथा चुकाने का पिछला रेकार्ड।
(४) लाभ की मात्रा।

महाजन इस बात पर पूरा विचार कर लेता है कि उसे किस किसान से कितना मिलनेवाला है। यह लाभ किसान के भोलेपन पर भी निर्भर करता है। कोई किसान गरीब है, पर यदि महाजन को उससे भी कुछ मिलने की आशा हो तो उसे कर्ज देने में नहीं चूकता है। महाजन के सामने मोटा हिसाब यह होता है कि उतने से अधिक कर्ज नहीं दिया जाय जितनी कि किसान की सम्पत्ति हो। उसे इस बात की बहुत चिन्ता नहीं रहती कि कर्ज निश्चित समय पर वापस हो जाय बल्कि देर होने पर ब्याज मिलेगा, कागज में भी गड़बड़ी करने की गुंजाइश रहेगी। पर 'कर्जदार से तकाजा तो हमेशा करना हमारा धर्म है।'

सर्वेक्षण से यह पता चला कि अब तक इस गाँव में किसी भी महाजन का पैसा नहीं डूबा है। देर से ही सही, पर वापस अवश्य किया गया है।

गाँव में प्रायः सभी सामान्य तथा निम्न स्तर के किसान हैं। आर्थिक स्थिति को देखते हुए इनके कर्ज का भार अधिक है। पर यह अधिक भार, जैसा कि हमने देखा, तात्कालिक परिस्थितियों के कारण खास तौर पर है। स्थायी कर्ज की मात्रा प्रायः अधिक नहीं है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि भरसक प्रयास रहता है कि कर्ज नहीं लिया जाय। पर चीजें उधार लेने की प्रवृत्ति सामान्य मानी जा सकती है। प्रायः हर वर्ष यहाँ के लोग खाने के लिए उधार लाते हैं तथा फसल होने पर वापस कर देते हैं। यह कहा जा सकता है कि (१) यहाँ के लोग नकद कर्ज भरसक नहीं लेते हैं।→

तीन रुपये पैदा किये जा सकते हैं
अपनी मिट्टी की जांच कराइये और उसे उपजाऊ बनाने के लिये उसमें नाइट्रोजन, फास्फेट और पोटाशियम मिलाये।
खाद का पूरा पूरा फायदा उठाने के लिये फसल की रक्षा कीजिये।
खेत में खाद कब, क्यों और कैसे दी जाय, इसके लिए अपने ग्राम सेवक या विस्तार अधिकारी से सम्पर्क कीजिये।
एक रुपये से कैसे?
बड़ा आसान है
रासायनिक खाद इस्तेमाल कीजिये!

→(२) परन्तु तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उधार पैसा या वस्तु प्रायः हर वर्ष लाते हैं। इसके अभ्यस्त-से हो गये हैं। इनका महाजन से नित्य प्रति का सम्बन्ध हो गया है। महाजन भी इनकी घरेलू परिस्थितियों से पूरा परिचित हैं तथा ये भी महाजन के व्यवहार के अभ्यस्त हो गये हैं। इन बातों पर आगे और विचार करेंगे। इस गाँव में नक़द कर्ज की मात्रा अन्य गाँवों की अपेक्षा कम है, क्योंकि बढ़ईगिरी एक ऐसा धन्धा है, जिससे प्रति-दिन नक़द आय प्राप्त हो जाती है और उससे आयात में काफी मदद मिलती है।

नक़द कर्ज की राशि को देखने से जाहिर है कि अध्ययन-वर्ष में प्रति परिवार कर्ज की मात्रा १,३३३ रु० थी। अन्य गाँव जहाँ कि नक़द आयवाले सहायक उद्योग नहीं हैं, वहाँ कर्ज तथा शोषण की मात्रा अधिक होना स्वाभाविक है।

(क्रमशः)

—प्रबंधप्रसाद

[पृष्ठ २०१ का शेषांश]

राजनैतिक दल' नहीं है। लगभग सभी दल बारी-बारी सत्ता में रह चुके हैं, या आज स्वयं सत्ता में हैं, या जो सत्ता है उसके समर्थन में हैं। अलग अलग राज्यों में अलग अलग स्थिति है। एक ही दल एक राज्य में सत्ताधारी है, तो दूसरे में विरोधी है। और उससे भी बढ़कर विचित्र बात यह है कि स्वयं सत्ता में रहते हुए कोई विशेष दल जो काम नहीं कर पाता, या करने की तैयारी तक नहीं दिखाता उसीके लिए सत्ता से निकलने के बाद हड़ताल, घेराव, प्रदर्शन आदि कराता है।

स्पष्ट है कि हमारी सारी राजनीति 'विरोधवादी' रास्ते पर चल रही है जिसका स्वधर्म हो गया है विरोध करना। हर दल दूसरे दल का विरोध कर रहा है—हर संभव उपाय से, हर संभव अवसर पर। जो दल सत्ता में पहुँच जाते हैं वे हर संभव उपाय से सत्ता में बने रहने और विरोधी दलों को तोड़ने की कोशिश करते हैं, और ये ही काम विरोधी दल सत्ताधारी दल के सम्बन्ध में करते हैं। इसका यह परिणाम हुआ है कि हमारी राजनीति के सामने एक ही मूल्य रह गया है—सत्ता किसी तरह, किसी कीमत पर। राजनीति में सत्ता के सिवाय जैसे दूसरा कुछ रह ही नहीं गया है। उसके सामने न कोई नैतिक मूल्य है, न जनता की सेवा है, न क्रान्ति का कोई लक्ष्य है। बिना अपवाद हर दल सत्ता के इस नंगे नाच में शामिल है। दिल्ली से लेकर गाँव तक एक ही हवा है। हर दल के काम करने, संगठन बनाने, चुनाव जीतने के एक ही तरीके हैं। कोई आश्चर्य नहीं कि विरोधवादी राजनीति 'स्टेटमकावादी' बन गयी है। यही कारण है कि बावजूद इसके कि सब दल अपनी जगह 'समाजवादी' हैं, संसद समाजवादी है, नेता समाजवादी हैं, फिर भी न सरकार समाजवादी हो पा रही है, और न जनता।

अगर राजनीति सचमुच ऐसी हो गयी हो तो शैतान किसे माना जाय? स्वयं प्रच-लित राजनीति को या आज जो राजनीति में हैं उन्हें? क्या राजनीति के प्रचलित स्वरूप को कायम रखते हुए उसमें क्रान्तिकारी सुधार लाया जा सकता है? —रामभूर्ति

पत्रिका-परिचय

"सम्पदा"
(सर्वोदय अर्थशास्त्र अंक)

सम्पादक : कृष्णचन्द्र विद्यालंकार, प्रकाशक : अशोक प्रकाशन मंदिर, रूपनगर, दिल्ली-७
मूल्य २ रुपये ५० पैसे। पृष्ठ १०४

'सर्वोदय' शब्द भारतीयों के लिए सुपरिचित और आज संस्कार में है। आज की आपाधापी से मानव पूरा-पूरा त्रस्त है, उसे मुक्ति की आकांक्षा है, किन्तु कोई वह रास्ता नहीं बताता, जिसपर चलकर मानव मुक्त हो सके—सभी उसे मुक्त कराने का सिर्फ वादा करते हैं। वादों पर से भरोसा खतम हो गया है, वह तो मुक्ति चाहता है अभाव से, अज्ञान से और अन्याय से। और सर्वोदय ही है, जो बताता है वह मार्ग, जिस पर चलकर मुक्त हुआ जा सकता है। सर्वोदय नये समाज की जीवन-पद्धति तो है ही, साथ ही आर्थिक समस्याओं का, पश्चिम के भौतिकतावादी अर्थशास्त्र से भिन्न, समा-धान भी प्रस्तुत करता है। गांधीजी ने स्पष्ट शब्दों में कहा है "जो अर्थशास्त्र धन की पूजा करना सिखाता है और कमजोरों को हानि पहुँचाकर सबलों को दौलत जमा करने देता है, वह झूठा और भयानक अर्थशास्त्र है। जिस दिन समाज का हर सदस्य अपने को संपत्ति का मालिक नहीं ट्रस्टी समझेगा उसी दिन समाज सर्वकल्याणकारी नयी जीवन-पद्धति के मार्ग पर चल पड़ेगा।"

'सम्पदा' के इस अंक को हाथ में लेने के बाद कोई भी प्रबुद्ध पाठक आद्यो-पान्त पारायण किये बिना दम नहीं लेगा। सम्पादक महोदय ने अत्यन्त परिश्रम के साथ कुशलतापूर्वक लेखों का चयन एवं प्रकाशन किया है। मुखपृष्ठ पर जो प्रतीक चित्र है, वह अत्यन्त प्रासंगिक है। एक वाक्य में सिर्फ इतना ही कहूँगा कि अर्थशास्त्र के भारतीय विद्यार्थियों के लिए 'सम्पदा' निश्चित ही सम्पदा सिद्ध होगी।

सर्वोदय-जगत् के कई मान्य लेखक और हैं। उनके भी लेख प्राप्त कर प्रका-शित किये जाने चाहिए।

"जीवन साहित्य"
(गांधी-चिंतन अंक)

प्रकाशक सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली
मूल्य : २ रु० ५० पैसे।

'जीवन साहित्य' का गांधी-चिंतन अंक पढ़कर खुशी इस बात की हुई कि कुछ ऐसी पत्रिकाएँ अभी हैं, जिनके लेखकों में गांधीजी के प्रति असीम श्रद्धा और उनके अधूरे प्रयत्नों के प्रति तड़प है। इस विशेषांक में गांधीजी के व्यक्तित्व और कृतित्व तथा उनके सहज आदर्शों पर अधिकाधिक उपयोगी सामग्री देने का प्रयास स्तुत्य है।

इस विशेषांक में उत्तम लेखों का प्रका-शन है, जिसे हरेक को पढ़ना चाहिए, जो गांधीजी को सही रूप में समझना चाहता हो। —कपिल अवस्थी

ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य

'ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर-सहयोग से काम लेगा। क्योंकि हरएक देहाती के जीवन का सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और गाँव की इज्जत के लिए मर मिटे।' —गांधीजी

अब समय आ गया है कि इस देश के बुद्धिवादी, किसान, मालिक-मजदूर, सभी इस बात पर विचार करें कि ग्रामदान हमें ग्रामस्वराज्य की ओर अग्रसर करता है या नहीं? यदि हमें जँच जाय कि हाँ, इससे हमें ग्रामस्वराज्य के दर्शन हो सकेंगे, तो यही अवसर है कि हम लोग इस पुण्य काम में तुरन्त लग जायँ।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
जयपुर-२ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

आन्ध्र प्रदेश में अभियान की योजना

१६ दिसम्बर '६९ को आन्ध्र प्रदेश सर्वोदय मंडल के कार्यकारी समिति की बैठक थी। सर्वश्री प्रभाकरजी, सी० वी० चारी, श्री कोदंडराम रेड्डी, सुरभि शर्मा, माणिकराव, नीरज्जम्, डॉ० सूर्यनारायण आदि प्रमुख कार्यकर्ता बैठक में उपस्थित थे।

आन्ध्र में २० जिले हैं। प्रदेश के तीन विभाग हैं। रायलसीमा में चार जिले, सरकार या तटवर्ती प्रदेश में सात जिले एवं तेलंगाना में नौ जिले हैं। रायलसीमा के चार जिलों में से कडप्पा जिले का जिलादान हो गया है। प्रदेश के २० जिलों में से ९ जिलों में जिला सर्वोदय-मंडल संगठित है। लेकिन वे उत्तेजनक रूप में सक्रिय नहीं हैं। पूरा समय देनेवाले कार्यकर्ता नहीं के बराबर हैं। प्रदेश सर्वोदय मंडल साल में १० से १२ हजार रुपये कार्यालय एवं शिविर-समारोह इत्यादि पर खर्च करता है। यह रकम सम्पत्तिदान, मित्रों से सहायता एवं कार्यक्रम के समय उसके खर्च के लिए किये गये तात्कालिक चन्दे से इकट्ठी की जाती है। आज पूरे प्रदेश में अबतक ४२२१ गाँवों का ग्रामदान हुआ है। इनमें से अधिकतर कडप्पा जिले से हैं।

बैठक में से यह निष्कर्ष निकला कि 'भूमिक्रान्ति-दिवस' यानी १८ अप्रैल १९७० तक रायलसीमा के बचे हुए तीन जिलों—कर्नूल, अनन्तपुर एवं चित्तूर—का जिलादान हो जाय। उसके लिए जनवरी १ से १० तक तीनों जिलों में शिविर हो जायें। हर जिले से सौ-सौ कार्यकर्ता इस काम के लिए भरती किये जायें। इनके अलावा हर जिले के काम के लिए ४०-५० कार्यकर्ता कडप्पा से श्री कोदंडराम् देंगे। शिविर के बाद फौरन पदयात्राएँ शुरू हों। यह काम तीन मास में पूर्ण करवाने की जिम्मेवार निम्नेवारी बाँटी गयी। श्री माणिकराव एवं श्री कोदंडराम रेड्डी ने अनन्तपुर की जिम्मेवारी ली। श्री प्रभाकरजी अनन्तपुर के होने से वे भी इस प्रयत्न में विशेष सहायता करेंगे। कर्नूल जिले की जिम्मेवारी श्री सुरभि शर्मा एवं श्री नारायणराव ने ली। चित्तूर जिले की जिम्मेवारी श्री चारी ने ली। इन्हें विश्वास है कि चित्तूर जिलादान सबसे पहले होगा। भविष्य में ग्रामदान के साथ साथ ग्राम शान्तिसेना संगठित करने का निश्चय हुआ। कार्यकर्ताओं की संख्या काफी हो जायगी, इसलिए तीन-तीन दलों में एकसाथ पदयात्राएँ चलेंगी।

इस कार्य के लिए करीब ५०,००० रुपए का खर्च होगा। वातावरण में अनुकूलता बढ़ाने के लिए एवं रकम के लिए श्री जयप्रकाश नारायण की यात्रा इस अवधि में करायी जायगी और उन्हें थैलियाँ भेंट की जायेंगी। थैली का छठा हिस्सा सर्व सेवा संघ को देने के बाद ⅚ हिस्सा जिला एवं प्रदेश सर्वोदय-मंडल में उचित रीति से बाँटा जायेगा। यह रकम जिलादान के काम के लिए रहेगी। महाराष्ट्र में जो पद्धति इसके लिए अपनायी गयी उसका विवरण मैंने पेश किया। एक सप्ताह के लिए कोई आकर 'जिला जयप्रकाश नारायण स्वागत-समिति' के गठन में मदद कर सकेगा यह भी मैंने कहा। सुश्री हरविलास बहन एवं कान्तावहन भी आकर मदद कर सकेंगी, यह आश्वासन मैंने दिया। तुरन्त काम चालू करने के लिए दस हजार रुपये चाहिए। यह सर्व सेवा संघ पेशगी के रूप में देगा।

फरवरी ७ एवं ८ को प्रदेश सर्वोदय-सम्मेलन होगा। उसके लिए सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष जायेंगे। तब तक काम जोरों से शुरू हो गया होगा। उस समय तक चार जिलों में ब्लाक स्तर तक प्राथमिक सर्वोदय-मंडलों की स्थापना हो जायगी।

—ठाकुरदास बंग

आन्दोलन के समाचार

विनोबा निवास से

२३ दिसम्बर '६९ को ही वर्धा के प्रमुख कांग्रेसी लोगों की बैठक रखी गयी थी प्राप्ते वर्धा जिलादान को गति देने के बारे में। बाबा ने सर्वोदय कार्यकर्ताओं को वर्धा जिलादान की जिम्मेवारी का बोध कराया। उन्होंने कहा कि यहाँ के लोग उसकी जिम्मेवारी उठायें और आप लोग केवल मदद करें। मुख्यमंत्री नाईक १७ ता० को बाबा से मिले थे। उन्होंने कहा कि यहाँ की प्रदेशीय कांग्रेस कमेटी ने ग्रामदान में मदद करने का प्रस्ताव किया है। कांग्रेसी पहले भी कुछ मदद करते थे, अब इससे और करेंगे। लेकिन मुझे कोई बहुत ज्यादा उत्सुकता इसके प्रति हमें उनमें नहीं दिखी। फिर भी प्रस्ताव हो जाने से थोड़ी अनुकूलता जरूर हुई है।

श्री चारु बाबू ने बाबा को पत्र लिखा और साथ में 'पेपर' की कतरन भेजी कि बाबा पश्चिमी बंगाल कब आ रहे हैं। उसमें ऐसा निकला था कि बाबा वहाँ पर शान्ति-स्थापन और ग्रामदान के काम से जनवरी में आ रहे हैं। बाबा ने उनका पत्र पढ़कर कहा कि अभी बाबा ७-७ दिन का ही कार्यक्रम बनाता है, परन्तु पूरे देश की परिस्थिति के बारे में सोचता है, तो जो चिन्तन उसके मन में उठता है, उसमें बंगाल का भी एक है। अबतक हमने काम की 'स्ट्रेटजी' यह रखी थी कि जहाँ काम को सफलता हो वहाँ काम किया जाय—'सक्सेस टु सक्सेस'। जैसे, बिहार में प्राप्ति का एक व्यापक प्रयोग किया। काम की दूसरी 'स्ट्रेटजी' यह भी हो सकती है कि जहाँ परिस्थिति 'चैलेंजिंग' हो और काम कठिन माना जाता हो वहाँ बाबा जाय और प्रयोग करे। बाबा का मानना है कि बंगाल में निश्चय ही ग्रामदान हो सकते हैं।" इस कथन से लगता है कि उनका झुकाव उस तरफ भी है।

पू० बाबा का स्वास्थ्य ठीक है। बाबा आजकल "प्रभात-प्रर्ते" ("मंगल प्रभात" का मराठी पद्यानुवाद) पर चिन्तन कर रहे हैं। उस पर एक चिन्तनिका लिखने का विचार है। और अंग्रेजी शब्द-कोष का अध्ययन चल रहा है। उसमें से बेसिक शब्दों का चयन का विचार है, जिन शब्दों की जानकारी से सामान्य अंग्रेजी का ज्ञान आसानी से हो सके। —बालिताम

गोपुरी, वर्धा, २२-१२-'६९

इन्सानी बिरादरी दिवस-समारोह

'भारत प्रदेश श्री गफ्फार खान सरहद गांधी मानववाद सीमांत इस्लामाबाद के तत्वावधान में २४ दिसम्बर को प्रातः ८॥ बजे 'राजभवन' में बादशाह खान का ८० वाँ जन्म-दिवस मनाया गया। सर्वधर्म-प्रार्थना से जन्म दिवस का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ, जिसमें सभी धर्म, सम्प्रदाय, जाति, पार्टी, मंत्री, नेताओं तथा प्रतिष्ठित नागरिकों ने भाग लिया। मुसलमान मौलवी, पठान, सिक्ख, पारसी, ईसाई, वैष्णव सम्प्रदाय के धर्मगुरुओं ने प्रभु से प्रार्थना कर शुभ-कामनाएँ प्रकट कीं।

श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि हम बहुत ही किस्मतवाले हैं कि प्रेम, मोहब्बत, सेवा, खिदमत व वन्दना करने के लिए हम सब यहाँ आये। बादशाह खान सारे हिन्दुस्तान में इसलिए घूम रहे हैं कि जो दिलों के टुकड़े हुए हैं वे जुड़ें। हम खुदा व परमात्मा से दुआ करें। जब से आप यहाँ तशरीफ लाये हैं तब से इस देश की जनता कान लगाकर आपकी हर बात सुन रही है। परमात्मा से यह दरखास्त करें कि जो रास्ता प्रेम व मोहब्बत का वे दिखा रहे हैं उस पर हम चलें। खुदा उन्हें १२५ वर्ष जिन्दा रखे, ताकि वह सही रास्ता मुल्क को बतायें।

बादशाह खाँ ने अपने भाषण में कहा कि आप लोगों का व आपकी मोहब्बत व प्रेम का दिल से शुक्रिया करता हूँ। मुझे पूरी उम्मीद है कि उस रास्ते को, जो कि खुदा का रास्ता है, अगर हम समझने की कोशिश करें, तो हम सब इकट्ठे हो सकते हैं। जो दुनिया में आता है वह खुदा के लिए आता है। खुदा का मजहब यह समझाना चाहता है कि जो इन्सान इन्सानियत से गिर गये हैं, उन्हें दिल से समझाओ कि तुम इन्सान हो। सब इन्सान हैं, प्रेम व मोहब्बत के लिए आते हैं। *आज हम देखते हैं कि धर्म के नाम* पर, मजहब के नाम पर क्या हो रहा है। इन्सान को मारना, आग लगाना, कौन कहेगा वह मजहबी आदमी है। हमने मजहब, धर्म को समझा नहीं। जिसके दिल में मजहब नहीं, धर्म नहीं, वह इन्सान नहीं।

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथनजी ने हाथकते सूत की ८० गुण्डियों की माला से हार्दिक अभिनन्दन किया। मध्यप्रदेश के मानव मुनि ने सुत-माला समर्पित की। नगर के सभी धर्म-गुरु, नेताओं ने पुष्प-माला द्वारा अभिनन्दन किया। समारोह में राज्यपाल, मुख्यमंत्री, मंत्री, नेता, अधिकारी, श्री स्वामी रामानन्द तीर्थ, श्री कमलनयनजी बजाज, श्री प्रभावती बहन, श्री बिरदीचन्दजी चौधरी आदि अधिक संख्या में प्रतिष्ठित नागरिक उपस्थित थे। अंत में 'सबसे ऊँची प्रेम सगाई' धुन से समारोह के कार्यक्रम की समाप्ति हुई।

—मानव मुनि

देश के विभिन्न स्थानों में 'इन्सानी बिरादरी-दिवस'

देश के कोने-कोने में २४ दिसम्बर को 'इन्सानी बिरादरी दिवस' का आयोजन किया गया और ईश्वर से प्रार्थना की गयी कि खान अब्दुल गफ्फार खाँ को लम्बी उम्र मिले। निम्न स्थानों से सूचनाएँ आयी हैं कि उन स्थानों में 'इन्सानी बिरादरी दिवस' का आयोजन किया गया। खादी ग्राम (मुंगेर), रायपुर, भोपाल, छतरपुर (मध्यप्रदेश), माकगाँव (उत्तर लखीमपुर, असम), शाहाबाद (मथुरा), मेरठ, बरेली रानीगंज (बलिया), अनासक्ति आश्रम, कौसानी (उत्तरप्रदेश)।

आजमगढ़ में ४ प्रखण्डदान

श्री कपिल भाई के पत्र के अनुसार कोपागंज, अतरौलिया, कोयलसा और सठियाँव प्रखण्डों का दान १ दिसम्बर से २२ दिसम्बर तक के अभियान में सम्पन्न हुआ। इन प्रखण्डों के ५३० गाँवों में से ४५६ गाँवों का ग्रामदान हुआ। जनवरी के अन्त तक जिलादान होने की पूर्ण आशा है।

मुरैना में ७४ नये ग्रामदान प्राप्त

प्राप्त जानकारी के अनुसार मुरैना जिला गांधी-शताब्दी समिति के तत्वावधान में जिला ग्रामदान-अभियान चल रहा है। गत २१ नवम्बर से प्रारम्भ पदयात्राओं के तीन दौर में ७४ ग्रामदान मिले हैं। इससे पूर्व मुरैना जिले में २०९ ग्रामदान घोषित हो चुके हैं।

शोक-समाचार

दिनांक २७ दिसम्बर '६९ को २ बजे दिन संताल परगना ग्रामोद्योग समिति के प्रधान कार्यालय देवघर में समिति के मंत्री श्री यदुवंशी झा की अकस्मात मृत्यु हो जाने के कारण एक शोक-सभा हुई। श्री लक्ष्मीनारायण राय, मंत्री ने उनके कर्मठ जीवन पर प्रकाश डाला तथा सभी खादी-कार्यकर्ताओं ने दो मिनट तक खड़े होकर ईश्वर से प्रार्थना की कि वह उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे और शोकाकुल परिवार को दुःख सहने की शक्ति दे।

—कैलाश प्रसाद

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज। १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

JAN

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : १५

सोमवार १२ जनवरी, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

ये झगड़े मूलतः गरीब-अमीर के

दुनिया में दो ही चीजें मुख्य हैं—एक धर्म और दूसरी कौमियत (राष्ट्रीयता)। यूरोप में धर्म नहीं है, लेकिन कौमियत है। इसी कौमियत के कारण उन्होंने तरक्की भी की है। लेकिन यहाँ तो धर्म और कौमियत, दोनों ही नहीं हैं। इन दोनों के महत्व को खोने का नतीजा आप देख ही रहे हैं।

फिरकावाराना और 'कम्युनल' झगड़े जो आप देखते हैं, इन्हें मिटाने के लिए आप लोगों को गांधीजी की तालीम की तरफ भी थोड़ी तवज्जो देना चाहिए। अगर आप उस तालीम की ओर तवज्जो देंगे तो मैं यह आपसे कहता हूँ कि जिस तरह से यहाँ की रोशनी तमाम दुनिया में फैली है, उसी तरीके से यह काम भी अवश्य कामयाब होगा।

हिन्दू और मुसलमानों में कुछ खुदगर्ज लोग भी हैं। वे अपने मकसद के लिए फसादात कराते हैं। झगड़े तो आर्थिक और राजनैतिक होते हैं, लेकिन उन्हें मजहब का नाम दे दिया जाता है। मजहब और धर्म के नाम पर लोग भड़क उठते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि ऐसे झगड़े चाहे हिन्दुस्तान में हों या पाकिस्तान में हों, उनमें गरीब हिन्दू-मुसलमान ही तबाह होते हैं।

भारतीय मुसलमानों को साम्प्रदायिक सौहार्द के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। भारत हिन्दू और मुसलमान, दोनों का देश है। कुछ लोग अपने उद्देश्यों की सिद्धि के लिए धर्म के नाम पर गरीब और सीधे-सादे लोगों का शोषण कर रहे हैं। उनका एकमात्र उद्देश्य गरीब जनता का ध्यान उनकी समस्याओं से हटाना है। साम्प्रदायिक दंगों के समय सबसे अधिक हानि गरीब हिन्दुओं और मुसलमानों को पहुँची है। सच पूछिए तो ये झगड़े हिन्दू-मुसलमानों के नहीं, अमीर और गरीब के झगड़े हैं।

खुदा का कानून यह है कि 'तुम काम करो, मैं तुम्हारी मदद करूँगा।' खुदा का कानून यह नहीं है कि तुम काम न करो, हाथ पर हाथ धरे बैठे रहो, और वह तुम्हारी मदद करे। यह कैसे हो सकता है कि हम न तो हल चलायें, न दाना जमीन में डालें, न पानी दें और उम्मीद रखें कि गल्ला पैदा हो जायेगा?

—खान अब्दुल गफ्फार खाँ

आखिर यह सिलसिला कब तक चलेगा ?

लड़के एक के बाद एक आते गये, और कदम्ब के पेड़ के नीचे 'मुर्गा' बनते गये। किसीके चेहरे पर शिकायत या रंज का कोई भाव नहीं। सहजता से गले में लिपटा गमछा और तन ढकनेवाली चादर या दुहरी हुई मटमैली धोती उतारकर एक ओर रख देते थे, और 'मुर्गा' बने लड़कों की कतार में खुद भी 'मुर्गा' बनकर जुड़ जाते थे।

गुरुजी सामने की टेबुल पर टाँग पसारे कुर्सी में आराम से अधलेटे हो रहे थे। कड़ाके की सर्दी की सुबहवाली धूप की प्यारी लग रही गरमाई उनमें अलस-तन्द्रा पैदा कर रही थी, और उनकी पलकें कभी खुलतीं, कभी बन्द होती थीं।

कुल ९ लड़के 'मुर्गा' बन चुके थे। सबसे पहले नम्बर का लड़का कुछ अधिक उम्र का था और उसका शरीर भी पुष्ट था। बीचवाला लड़का बहुत ही दुबला पतला, कमजोर दीखता था। आमतौर पर सभी लड़को का शरीर देखकर यही कहा जा सकता था कि उनको शारीरिक पोषण जितना मिलना चाहिए, उसमें बहुत ही कम मिलता है।

'मुर्गा' बने लड़कों की टाँगें अकसर काँपती थीं, और वे लुढ़क जाते थे। मुर्गा बने अन्य लड़के मुर्गा बने-ही बने हँस पड़ते थे और तब उस कोलाहल में तन्द्रा भंग होने पर गुरुजी चीख उठते थे, "कमबख्तो, ऊपर से प्रसाव चखाऊँ क्या ?" और कोई कथा-वार्ता का प्रसंग होता तो लड़के मचल उठते, एक उत्साहमय शोरगुल मच जाता, लेकिन इस समय तो पंडितजी के प्रसाद की बात सुनकर कुछ क्षणों के लिए सन्नाटा छा जाता था। पंडितजी की प्रसाद बाँटनेवाली उदारघोषणा का स्वागत करने के लिए कोई भी उत्सुक नजर नहीं आता था।

गुरुजी की यह शिक्षण-प्रक्रिया (?) करीब ४५ मिनट तक चलती रही, और मैं एक प्रशिक्षार्थी की तरह उस नमूने के पाठ का अवलोकन करता रहा। करीब आधा घन्टा बाद जो सबसे कमजोर लड़का था, वह काँपने और रोने लगा। उसके तन पर एक फटी कमीज और जाँघिया भर थी। पंद्रह मिनट तक 'और देर से आओ पढ़ने.. और मजा चखो'... आदि वाक्य बड़बड़ाने के बाद गुरुजी ने डपटकर (ड्रील-मास्टर की तरह) आदेश दिया, "जाओ, अपनी-अपनी जगह बैठो ! कल अगर कोई देर से आया तो ...!"

मैं खड़े खड़े सोचने लगा था कि लड़के जब दण्डमुक्त होंगे, तो कुछ उदासी और रंजिश, उनकी कम-से-कम आँखों में तो होगी ही ! लेकिन मेरा अन्दाज बिलकुल गलत निकला। जैसेकि जो कुछ हुआ, उसमें उनके लिए कुछ भी खास बात नहीं। सबके चेहरे सामान्य थे, उन पर कोई तनाव नहीं था।

इस मुर्गा बनने की शिक्षण-प्रक्रिया ने जितना मुझे सोचने को विवश किया, उससे अधिक उनकी इस सहजता ने मुझे कोंचा। एक अजीब-सी अनुभूति से मैं भर गया। सचमुच उनकी यह सहजता मेरी असहजता का कारण बन गयी थी। मैंने सहमते-सहमते गुरुजी से किसी प्रकार यह अनुमति प्राप्त की, कि इन लड़कों से मैं 'देर' से आने का कारण पूछ सकूँ। कुछ उत्तर इस प्रकार थे :

"ठंडक बहुत थी, ओढ़ने के लिए नहीं था, आग, तापते-तापते देर हो गयी।"

"कलेवा बनने में देर हो गयी। माँ जो मजदूरी का धान लायी थी, सुबह उसका चावल कूटा गया, फिर कलेवा बना तो खाकर आने में देर हो गयी।"

"बाबू कह रहे थे, 'तुम पढ़कर क्या कर लोगे ? बड़े-बड़ों के लड़के तो पढ़-लिखकर मारे-मारे फिर रहे हैं, तुम्हें कौन पूछेगा ? जाओ, भैंस चराओ।' बाबू हल जोतने गये तो मैं भागकर पढ़ने चला आया। बाबू के जाने में देर हुई, इसलिए मुझे भी देर हुई।" लगभग सभी के उत्तर मिलते-जुलते थे। मेरे सामने यह बात अब स्पष्ट हो गयी थी कि वे समाज के निम्नतम-स्तर पर जीनेवालों के लड़के हैं, और उनके देर से पढ़ने आने की समस्या का हल 'मुर्गा' बनाना नहीं, कुछ और ही करना है। ..लेकिन गुरुजी वह कर नहीं सकते, करने की बात दूर, शायद सोच-समझ भी नहीं सकते।

लड़के निर्दोष थे। देर से आने के कारणों को तो जन्म के पहले से ही उनके भावी जीवन पर इस समाज की रचना ने लाद दिया है। और यही क्रम न जाने कितने वर्षों से चल रहा है, चलता जा रहा है। और वे उसे सहजता से स्वीकारते जा रहे हैं।

इस सिलसिले को टिकाये रखने में अकेले गुरुजी ही नहीं उनका ग्रन्थ, नेता और उसका मंत्र, व्यवसायी और उसका तंत्र भी सक्रिय हैं। इतना ही नहीं, इन सबके मिले-जुले सदियों पुराने प्रयत्नों के बाद जिस सत्ता (न केवल शासन का ढाँचा ही, बल्कि जीवन के हर क्षेत्र में, हर सम्बन्ध में व्याप्त) का उद्भव समाज में हुआ है, उसने तो उक्त सिलसिले को जैसे अमरत्व ही प्रदान करना चाहा हो।

गुरु और ग्रंथ जीवन को सार्थक और सफल बनाने के लिए आदर्श उपदेश-निर्देश देते हैं। नेता और शासक उसके अनुकूल व्यवस्था करने का दावा करते हैं, और व्यवसायी उस व्यवस्था को टिकाये रखने का उपक्रम करता है। तीनों मिलकर सामान्य मनुष्य की मुक्ति के लिए प्रयत्नशील हैं, जिसका परिणाम है कि सामान्य मनुष्य इनके इन 'महान् प्रयत्नों' का गुलाम होकर सहजता से एहसानमन्द होकर नारकीयता को भी स्वीकार करता चला आ रहा है। गुरु के लिए शिष्य, माँ-बाप के लिए बच्चे, पतियों के लिए पत्नियाँ, नेताओं के लिए मतदाता, शासकों के करदाता, व्यवसायियों के उपभोक्ता और उत्पादक सब-के-सब इन बाजीगरों के इशारे पर नाचनेवाली कठपुतलियाँ बनी रहें,

रंगमंच पर उनका रंगारंग कार्यक्रम चलता रहे, तो माना जाता है कि समाज में शान्ति और सुव्यवस्था कायम है, समाज सन्तुलित और सुखी है।

और जब कभी सामान्य मनुष्य की चेतना प्रबल हो उठती है, बगावत कर बैठती है, तो शान्ति-सुव्यवस्था के नाम पर पुनः इन्हीं समाज-संचालकों में से कुछ लोग संगठित होकर नये मुखौटे पहन लेते हैं। जागृत चेतना भ्रमित हो जाती है या दबा दी जाती है। कठपुतली का नाच फिर शुरू हो जाता है। आज दुनिया के रंगमंच पर इससे भिन्न क्या हो रहा है? गुदड़ी की क्लास के बच्चों से लेकर अमेरिका के प्रति सम्पन्न नागरिकों और इस चीन-चेकोस्लोवाकिया-युगोस्लाविया आदि के क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों तक का, क्या एक ही कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न नामपुरी पर नृत्य नहीं चल रहा है? तब, क्या यह सिलसिला कभी खत्म ही नहीं होगा? खत्म होगा और अवश्य खत्म होगा, लेकिन तब, जब सामान्य मनुष्य यह तय कर लेंगे कि हम अपनी सामान्य बुद्धि की सम्मिलित ताकत से अपनी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करेंगे, 'महान लोगों की महानता' के हम गुलाम नहीं बनेंगे।

दुनिया में सामान्य मनुष्यों की सम्मिलित ताकत से मुक्ति का मार्ग ढूँढ़ने की क्रान्तिकारी घोषणा और प्रयत्न ग्रामदान ग्रामस्वराज्य के रूप में शायद इतिहास में पहली बार शुरू हुआ है। पहली बार यह बात मानी, कही और फैलायी जा रही है कि सामान्य मनुष्यों के जीवन के बारे में निर्णय का अधिकार उन सामान्य मनुष्यों के समुदाय में ही होना चाहिए।

हममें से जितने सच्ची इस तथ्य की ओर सजग हैं कि हम इतिहास की वर्तमान धारा के रुख को ही बदलने के काम में लगे हैं, और इस काम के लिए हमें पूँजी, सत्ता, अधिकार, और आदर्श का आधार लेकर गुदड़ी की तरह समस्या से अछूती रहनेवाली भ्रामक समाधान की प्रक्रिया नहीं चलानी है, बल्कि सामान्य निरुपाधित मानव बने रहकर समाज के सामान्य मनुष्यों की दबी चेतना को मुखर बनाने में ही अपनी पूरी ताकत लगानी है?●

भारत में कुल ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

(२४ दिसम्बर '६६ तक)

प्रान्त	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान	नयी प्राप्ति ग्रामदान	नयी प्राप्ति प्रखंडदान	नयी प्राप्ति जिलादान
बिहार	६००,६५	५७३	१५			
उत्तरप्रदेश	२६,८७८	१५२	६		–	–
तमिलनाडु	१४,६०४	१४३	४	१,१४१	५	–
उत्कल	१२,८५६	७०	१	–	–	–
मध्यप्रदेश	७,९२५	३९	५	२३४	–	–
आंध्र	४,२३१	१५	१	–	–	–
महाराष्ट्र	४,११०	२३	१	–	–	–
पंजाब संयुक्त	३,९८६	७	–	३०	१	१
राजस्थान	१,७७७	२	–	–	–	–
असम	१,६८२	१	–	–	१	–
मैसूर	१,१५६	४	–	–	–	–
गुजरात	१,०४७	३	–	–	–	–
प० बंगाल	७४८	–	–	७	–	–
केरल	४१८	–	–	–	–	–
दिल्ली	७४	–	–	–	–	–
जम्मू-कश्मीर	१	–	–	–	–	–
कुल	१,४१,५५८	१,०३२	३३	१,४२०	७	१

प्रदेशदान—१ : बिहार

संकल्पित प्रदेशदान—७ : तमिलनाडु, उत्कल, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और पंजाब।

नया जिलादान—ठाणा (महाराष्ट्र)

विनोबा-निवास, पौनुरी, वर्धा

—कृष्णराज मेहता

सीमान्त गांधी के लिए थैली-संग्रह

३१ जनवरी '७० तक जारी रखने के लिए अपील

'अखिल भारतीय गफ्फार खाँ साल-गिरह समिति' के अध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि सीमान्त गांधी को उनकी ८०वीं जन्म जयन्ती के अवसर पर ८० लाख रुपये की थैली भेंट करने का संकल्प किया गया था। लेकिन अभी तक केवल २० लाख रुपये इकट्ठे हो सके हैं। श्री जयप्रकाशजी ने कहा कि निर्धारित लक्ष्यांक में इतनी जो कमी रही है, उसको पूरा करने के लिए थैली-संग्रह का काम ३१ जनवरी, १९७० तक जारी रहना चाहिए, क्योंकि यह हमारे राष्ट्र की प्रतिष्ठा का प्रश्न है। आपने सभी राज्यों से खासकर, जहाँ सीमान्त गांधी की यात्रा हो चुकी है, अपील की कि वे जनवरी के अन्त तक थैली-संग्रह का अभियान चलाते रहें।

श्री जयप्रकाशजी ने बताया कि अब सीमान्त गांधी को दिल्ली में काबुल के लिए विदा होने के पूर्व यह थैली समर्पित की जायगी।●

भूतकाल की याद और भविष्य की चिन्ता से मुक्त होकर वर्तमान काल में जीने का अभ्यास करें

— भारत में व्याप्त नैराश्य को दूर करने के लिए विनोबा की सलाह —

प्रश्न : आज के नवयुवकों में जिम्मेदारी की भावना का निर्माण कैसे हो ?

विनोबा : बिलकुल सरल युक्ति ईश्वर ने बनायी है। बाप मरता है तो बेटे में अपने आप जिम्मेदारी की भावना आ जाती है। जैसे, बापूजी से कुछ लोग पेट दुखे तो भी पूछते थे कि कैसे ठीक हो। दूसरी बात तो पूछते ही थे लेकिन ये छोटी-छोटी बातें भी उनसे पूछते रहते थे। इतने लोग बापू के अधीन हो गये थे। ईश्वर ने यह देखा तो सोचा कि इन लोगों को जिम्मेदारी का ध्यान लाने के लिए उन्हें उठा लेना चाहिए। यह परमात्मा की बहुत बड़ी कृपा है कि वह अनुभवी लोगों को उठा लेता है और कच्चे लोगों के हाथों में छोड़ देता है, ताकि उनको जिम्मेदारी महसूस हो। लेकिन ऐसा है कि ये बूढ़े जल्दी मरते नहीं और सतत बने रहते हैं। मैंने सुझाव पेश किया था कि ६० साल की उम्र के बाद राजनीति में नहीं पड़ना चाहिए। यह नियम होना चाहिए कि ६५ साल के बाद उसको टिकट न दिया जाय। जिस प्रकार से ६५ साल की उम्र में 'फेडरल कोर्ट' के न्यायाधीश को 'रिटायर' होना पड़ता है, उसी प्रकार से राजनीतिज्ञों को भी ६५ साल के बाद 'रिटायर' हो जाना चाहिए। ऐसा करने से राजनीति में 'डेविल' करनेवाले जो बूढ़े लोग हैं, बाहर आ जायेंगे और आजकल जो झगड़े चल रहे हैं, उनमें ५०-६० प्रतिशत झगड़े खतम हो जायेंगे, अगर केवल इसी नियम का पालन करें।

यह तो मैंने उपाय बताया कि बूढ़ों को प्रत्यक्ष कार्यक्षेत्र से हटना चाहिए। उसके लिए एक उपाय तो भगवान करता ही है, लेकिन जहाँ भगवान नहीं करता वहाँ यह नियम होना चाहिए कि वे ६५ साल के बाद हटें।

विद्यार्थियों को स्कूल में जो किताबें पढ़ायी जाती हैं केवल उसीसे संतोष, समाधान नहीं मानना चाहिए, बल्कि उसके साथ-साथ आसपास के समाज का निरीक्षण करना चाहिए। वहाँ की हालत क्या है, इसका पता चलेगा कि कितने लोग बेकार हैं, कितने लोगों को पूरा खाना नहीं मिलता है, कितने लोग बीमार हैं, जिनके लिए इलाज का कोई इन्तजाम नहीं। ऐसा सारा सर्वेक्षण करेंगे तो उन्हें देश की हालत का पता चलेगा और उससे उनको दुनिया का भान होगा और जिम्मेदारी की भावना आयेगी।

प्रश्न : भारत में आज जो नैराश्य का वातावरण बना है उसको उत्साहवर्द्धक बनाने में शिक्षक क्या करें ?

विनोबा : अपने वैद्यक शास्त्र में यह लिखा है कि वैद्य को कैसा होना चाहिए। वह जब रोगी की कोठरी में जाय तो उसका प्रसन्न चेहरा देखकर रोगी का आधा दुख खतम हो जाय। इस प्रकार शिक्षकों को अपना चेहरा प्रसन्नमय रखना चाहिए। गुस्से के समय का फोटो यदि लिया जाय तो उससे पता चलेगा कि कितना रद्दी चेहरा हो जाता है, तो फिर वह गुस्सा नहीं करेगा। आज तो जब चेहरा प्रसन्न होता है तभी फोटो निकालते हैं। प्रसन्नता के सम्बन्ध में गीता में कहा है—'जिसका प्रसन्न चित्त है उसकी बुद्धि एकदम स्थिर और शान्त हो जाती है।'

निराशा जो है वह 'निगेटिव' है, उसका अस्तित्व है नहीं। कोई पूछेगा कि अन्धेरे को दूर करने के लिए क्या करना चाहिए ? तो टार्च आया कि वह भाग गया, क्योंकि उसका अस्तित्व है नहीं। टार्च के अभाव में वह है। वैसे ही नैराश्य तो तब होता है जब सामने 'पोजिटिव' (विधायक) वस्तु नहीं होती है। जैसे पौधे में रोज ताजा फूल होता है, वैसे ही नित नयी प्रसन्नता होनी चाहिए, नित नया मानव होना चाहिए, यानी भूतकाल को भूल जाना, भविष्य की चिन्ता नहीं करना और वर्तमान काल में ही काम करना। अगर भविष्य की चिन्ता करेगा और भूतकाल की याद करेगा, यदि ये दोनों आयें तो वर्तमान काल चला जायेगा। भविष्य हाथ में है नहीं, अभी आपके हाथ में वर्तमान काल है। भूत और भविष्य के लिए वर्तमानकाल खोना यह बिलकुल मूर्खता है। इसलिए भूत, भविष्य छोड़कर वर्तमान में हमेशा प्रसन्न रहना। इस क्षण में आपको कोई दुख है तो उसको दूर करना होगा। जो कल था वह आज भूल जाना चाहिए। मान लीजिए, आपको बिच्छु ने इसी वक्त काटा तो उसका इलाज होना चाहिए। बाकी भूत और भविष्य की चिन्ता छोड़ सकते हैं, और छोड़ना चाहिए। तो निराशा का क्षेत्र बहुत कम हो जायेगा।

प्रश्न : भारत में अभी जातीय दंगे क्यों होते हैं ? सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से सब धर्म और जातियाँ कैसे एकत्र आ सकती हैं ?

विनोबा : ये जो जातियाँ उत्पन्न हुई है, और धर्म उत्पन्न हुए वे जिस जमाने में हुए उस समय उनकी आवश्यकता थी। उसने उस जमाने में लोगों को जोड़ने का काम किया। मैं भारत की मिसाल दूँ, यहाँ पर कुछ लोग अफ्रीका से आये तो यहाँ के लोगों को उनके स्वागत करने की प्रेरणा हुई। लोगों ने कहा कि हम अपने रीति-रिवाजों का पालन करेंगे, आप अपने रीति रिवाजों का पालन करें। इसमें सह-अस्तित्व का ख्याल आ जाता है। मगर यह नहीं बनता तो उनको 'शूट' ही कर देते। आस्ट्रेलिया में जो भी बाहर की जातियाँ आयीं और वहाँ की जो आदिवासी जातियाँ थीं उनको 'शूट' कर दिया। इस प्रकार से मानव-समाज के

: सोमवार, १२ जनवरी, '७०

आचरण का इतिहास हमारे सामने है। या तो उन्हें 'थ्रूट' करना या उनको जबर्दस्ती अपने में शामिल करना या उनके साथ सह-अस्तित्व के विचार से व्यवहार करना। ऐसे जो जातियाँ निर्माण हुईं वे 'को-एग्जिसटेंस' (सह अस्तित्व) ख्याल से। लेकिन अब वे 'आउटडेटेड' हो गयी हैं। जैसे पौधे के बचाव के लिए बाड़ लगाना जरूरी है, और पौधे के बढ़ जाने के बाद उसे निकाल देना पड़ता है, फिर भी अगर उसको रखेंगे तो बाड़ पौधे को खा जाती है। ऐसी हालत आज जातियों की हुई है। आज तो वह द्वेषमय है, लेकिन पुराने जमाने में उसके कारण समाज में प्रेम रहा। ऐसे ही धर्म की बात है। जैसे कुल दुनिया के साथ आज सम्बन्ध है वैसा पहले था नहीं। पहले धर्म एक स्थान में लोगों को प्रेम से जोड़ने का काम करता था, लेकिन आज विज्ञान के कारण अनेक देश और जातियाँ नजदीक आ गयी। उस हालत में वे पुराने धर्म तोड़ने का काम कर रहे हैं। हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, पारसी आदि जो धर्म हैं, उनमें भी आपस में आज जो चल रहा है, वह आज के जमाने के लिए बिल्कुल निरुपयोगी साबित हो रहा है। प्राचीन काल में तो ठीक था। इस वास्ते आज सब धर्मों का सम्मान होना चाहिए। एक-दूसरे की अच्छी चीजों को ग्रहण करना चाहिए। सब धर्मों का सार अध्यात्म-निष्ठा और नैतिक सदाचार है। इसमें सब धर्म समान हैं। झूठ, मार-काट आदि कोई धर्म कबूल नहीं करता। इस वास्ते धर्म का सार लेकर बाहर छोड़ना चाहिए। धर्मों के ऊपर का छिलका हटाना, यही उसका उपाय है। इसलिए हमने सब धर्मों का सार निकालकर लोगों के सामने रख दिया है। उसको लोग पढ़ेंगे तो एक-दूसरे के धर्मों का परिचय होगा।

प्रश्न : अनुशासनहीनता नष्ट करने के लिए विद्यार्थियों को क्या धार्मिक शिक्षण दिया जाय ? यदि ऐसा आवश्यक हो तो उसका स्वरूप क्या हो ?

विनोबा : अनुशासनहीनता या धार्मिक असहिष्णुता जो भी नाम दीजिए, लेकिन जो आज खराब शिक्षा दी जा रही है उसके बावजूद हमारे विद्यार्थी आज जितने अनुशासन का पालन कर रहे हैं, इसका हमें आश्चर्य होता है। बहुत कम अनुशासनहीनता है। १०० में से ४-५ विद्यार्थी ही ऐसे होंगे। आज की परिस्थिति में यदि बाबा विद्यार्थी होता तो निश्चय ही ज्यादा अनुशासनहीन होता, इसमें कोई शक नहीं। आज के विद्यार्थी काफी अनुशासन पालन कर रहे हैं जिसको भासा करना आज की परिस्थिति में उचित नहीं। क्योंकि उनमें जो अपने गुरु के आदर करने का भाव है वह अपनी सभ्यता में पड़ी है, इस वास्ते वह वैसा कर रहे हैं। कहा ही है—'विद्या विनय सम्पन्ने', विद्या से विनय आता है। नहीं तो वे जोरदार बगावत करते।

आध्यात्मिक शिक्षा बच्चों को मिलनी चाहिए। सब धर्मों के सार की जानकारी उनको मिलनी चाहिए। इससे उनका चरित्र बनेगा, लेकिन उसके लिए शिक्षकों का चरित्र भी ऊँचा होना चाहिए। केवल अच्छी-अच्छी किताबें सिखा दिया, इतने से बस नहीं; कहनेवाले के आचरण में भी वह चीज होनी चाहिए। हमारी माँ ने कहा तो असर पड़ता है, क्योंकि माता सत्यनिष्ठ थीं। स्कूलों और कालेजों में धार्मिक शिक्षा देने में आपत्ति नहीं, लेकिन मुख्य वस्तु यह ध्यान में रखनी चाहिए कि वे सदाचारी हों, वैसे होंगे तब ही उनके वचनों का उपयोग होगा।

[वाणिज्य महाविद्यालय, वर्धा के अध्यापकों तथा छात्र-संघ के पदाधिकारियों के साथ; गोपुरी, वर्धा; दिनांक ७-१२-'६९]

विनोबा से अपील

कलकत्ता में उपयोगी गायों की कत्ल रोकने के लिए हम लोगों की बुद्धि, शक्ति और साधन पर्याप्त नहीं हैं। इस काम की महत्ता को देखते हुए और आजकल के वातावरण को समझते हुए हम लोगों को लगता है कि इस आन्दोलन के लिए पूरा जिम्मा विनोबाजी को लेना चाहिए। उन्हींके नेतृत्व में आवश्यक प्रचार, उसके अनुकूल विचार और इस सम्बन्धित गैर-समझ जितनी फैली हुई है, उसको वैज्ञानिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोण में भारतीय परम्परा, संस्कृति और भावना को ख्याल में रखते हुए सर्वसाधारण को प्रेरित और उत्साहित किया जा सकता है। सरकार के साथ हमदर्दी रखते हुए नम्रता और दृढ़ता के साथ वे नेतृत्व कर सकते हैं।

हमारा नम्र, यह कत्ल बन्द होना चाहिए, यह रहे। यह किस तरह बन्द हो और यह बन्द करने में सरकार को क्या-क्या करना पड़ेगा, उसकी जिम्मेवारी से हम बचें। वह सारा जिम्मा सरकार पर छोड़ा जाय। लेकिन सद्भावना के साथ जितना वे अपेक्षा करें अथवा माँगें उतना पूरा सहयोग, बिना किसी संकोच के दिया जाय। इस पहलू को राजनैतिक दृष्टि से पक्षातीत बनाकर उसे राष्ट्रीय स्तर पर रखते हुए अन्तर्राष्ट्रीय जगत् में भी गाय को माता क्यों माना और भारतीय परम्परा में समाजशास्त्र में आर्थिक दृष्टि और धार्मिक उसूलों को लेकर इसको इतना ऊँचा स्थान क्यों दिया गया, इसका भी प्रतिपादन करना आज के हालातों में सभी दृष्टि से आवश्यक मानते हैं और यह कार्य भी आज विनोबाजी के अलावा दूसरा कोई नहीं कर सकता।

यद्यपि हमको यह लगता है कि इसको सुझाते हुए इस जिम्मेवारी को हम समझते हैं और सहर्ष स्वीकार करते हैं कि आपके नेतृत्व में जो मार्गदर्शन मिलेगा और जो कार्य का जिम्मा आप हम पर डालेंगे, उसके लायक हम हैं या नहीं, इसका निर्णय आप करें, उस कार्य को करने में हमारी तरफ से कमी नहीं रहेगी।

३ दिसम्बर '६९
शान्ति कुटी,
गोपुरी, वर्धा

—ईश्वर भाई,
कमलनयन बजाज,
जयदयाल डालमिया,
तुलसी भाई

हिंसा या शान्ति और समता ?

दिल्ली मे मेरे साथ रोहतक के एक भाई पढ़ा करते थे। वे अक्सर कहा करते थे कि "बिना ठोके-पीटे समाज सुधर नहीं सकता है। मैं लाठी के स्वागत के लिए हमेशा तैयार रहता हूँ।" गणतन्त्र-दिवस की झाँकियाँ देखने एक बार हम दोनो 'इण्डिया गेट' पहुँचे। पुलिस विभाग ने व्यवस्था बनाये रखने के लिए दस-दस फीट पर बासों से लाइनें बना रखी थीं, किन्तु अपार जन-समुद्र के थपेडो के सामने बाँसो की लाइनें टिकी नहीं, फलत पुलिस को लाठीचार्ज करनी पडी। लाठियो के चलते ही मेरे उक्त साथी ने मेरा हाथ पकडा और मुझे पीछे को खीचने लगा। मैंने उससे कहा, "भाई, तुम तो कहते थे कि लाठी का मैं सदैव स्वागत करता हूँ, फिर भागते क्यो हो ?" वे बोले, "बहस मत करो, खोपडी साबूत रखनी है तो चलो मेरे साथ।"

× × ×

नौलखा (इन्दौर) की किसी कोठरी मे एक भाई रहते हैं। उम्र लगभग ५० वर्ष की होगी। जब भी मुझे मिलते थे तो कहते थे, "क्या शान्ति-शान्ति कहा करते हो जी ! अरे शान्ति से दुनिया कभी माननेवाली नहीं है। कुछ करना ही है तो वातावरण गरम करो। भई, मैं तो गरम वातावरण ही पसन्द करता हूँ।" एक दिन श्री मानव मुनिजी और मैं राजवाडे से नौलखा आ रहे थे, उसी बस मे उक्त सज्जन भी बैठे थे और वे ही बातें वे दुहराने लगे। छावनी की पुलिस के पास होल्कर कालेज से आती छात्रो की कुछ भीड ने बस को घेर लिया। मानव मुनि बाहर आकर छात्रो को समझाने लगे, किन्तु उन भाईसाहब के मुँह पर हवाइयाँ उड रही थी ! "अब जान बचनी मुश्किल है।"—घबराकर वे बोले। मैंने चुटकी लेते हुए कहा—"आप तो गरम वातावरण पसन्द करते हैं, जरा बाहर निकलिए। आपके अनुकूल ही वातावरण है। इतने मे मुनिजी ने विद्यार्थियों को मना लिया और उन्होंने बस छोड दी।

× × ×

गाधी-शताब्दी शिविर के सदर्भ मे रायपुर से बालौदा बाजार जा रहा था। राज्यपरिवहन की मोटर मे जगह न मिलने के कारण एक छोटी प्राइवेट मोटर मे बैठा था। उसमे भी बहुत भीड थी। मेरे ठीक सामनेवाली सीट पर एक नवजवान भाई बैठे हुए थे। परिचय होने के बाद उन्होने तीखे प्रश्नों की बौछार करते हुए कहा, "आप लोग क्रान्ति को रोकना चाहते हैं, समाज के दुश्मन हैं। आखिर आपका सर्वोदय चाहता क्या है ?" मैंने कहा, "मित्र, सर्वोदय एक विचार है, जो सबका कल्याण, सबकी प्रतिष्ठा, सबकी सुरक्षा और सबमे परस्पर-भाईचारा चाहता है।" इसी बीच दो सिक्ख नवजवान बस मे चढे। एक भाई को मैंने थोडा खिसककर अपने पास बिठा लिया और दूसरे सरदारजी ने उक्त भाई (जो अपने को कम्युनिस्ट बता रहे थे) से निवेदन किया कि थोडी जगह दे दें, किन्तु उन्होंने साफ इनकार कर दिया। थोडी देर तू-तू-मैं-मैं भी हुई। कुछ शान्ति होने पर भाई साहब ने सिगरेट जलायी तो सरदारजी उन पर झपट पडे और सिगरेट मसलकर, दो-तीन झापड रसीद कर, उन्हें सीट से पटककर स्वय सीट पर जा बैठे। हो गयी शान्ति !

× × ×

छतरपुर मे प्रख्यात क्रान्तिकारी पण्डित परमानन्दजी आये हुए थे। श्री बालकृष्णजी जोशी ने शिविर के समापन के लिए उन्हे राजी कर लिया था। अपने व्याख्यान के बीच उन्होंने एक किस्सा सुनाया। वे बोले—"एक बार मैं गाधीजी के साथ जेल मे था। मैंने बापू से पूछा कि 'बापू, आप कितने दिनो मे वाइसराय का हृदय-परिवर्तन कर देंगे ?' बापू बोले, 'समय तो नहीं बता सकता हूँ, परन्तु मुझे यकीन है कि एक न-एक दिन अवश्य उसे गलती महसूस होगी और उस दिन उसका हृदय-परिवर्तन होगा। तुम्हारे पास कोई अच्छा रास्ता है तो बताओ ?' पण्डितजी बोले—'मैंने जेब से रिवालवर निकालकर कहा कि मैं तो अभी, दिल-दिमाग-हृदय और शरीर सब परिवर्तन कर सकता हूँ।' और गाधीजी बोले, 'तेरे जैसे परमानन्द मुझे कितने मिलेंगे ?' पण्डितजी ने आगे बताया कि आज मुझे लगता है कि मेरे उस रास्ते पर पूरा समाज नहीं चल सकता है। हिंसा जनता के आन्दोलन की शक्ति नहीं बन सकती है। पूरे समाज को शान्तिकारी बनाना है तो अहिंसक विचार को फैलाना होगा। विचार भी ऐसा होना चाहिए, जिसे अपनाने मे समाज को अपने स्वभाव से सघर्ष न करना पडे, अपितु सहज भाव से मन उसे स्वीकार कर सके।"

और अब जब भी कहीं पर हिंसा-अहिंसा के सम्बन्ध मे चर्चा छिडती है तो मेरी आँखो के आगे मेरे सहपाठी इन्दौर के भाई तथा रायपुर के कम्युनिस्ट नवयुवक खड़े हो जाते हैं, उनके साथ ही उक्त तीनो घटनाओं के दृश्य छायाचित्र बनकर घूमने लगते हैं। अनेक बार सोचता हूँ कि क्या हिंसा के रास्ते समाज मे समता कायम हो सकती है ? या स्थायी समाज-व्यवस्था कायम हो सकती है ? सबको सुख और सबको सुविधा मिल सकती है ? या जो लोग हिंसा के पक्ष में अपनी दलीलें पेश करते हैं, क्या वे स्वय हिंसा के सामने खड़े हो सकते हैं ? मुझे लगता है, केवल ऊपरी मन से लोग कहते हैं, इसकी पुष्टि उपर्युक्त तीनों घटनाओ से हो जाती है। तर्क से मनुष्य कुछ भी कहे, अन्तत वह हिंसा के लिए कभी भी तैयार नहीं रहता है। जो हिंसा की बात करते हैं उन्होंने बाहर से उसे ओढ़ लिया है। अन्तु, बाहरी लदी हुई भावना और स्वभाव के विपरीत उठाये हुए कदम कभी भी कल्याणकारी नहीं हो सकते हैं। बिना अन्तर को बदले बाहरी ढाँचे के परिवर्तन से स्थायी समाधान तो क्या तात्कालीन समाधान भी—

• विद्यालय और चुनाव
• इन्सान और नकाब

काशी विद्यापीठ, वाराणसी में आयोजित सभा की अध्यक्षता वहाँ के उप-कुलपतिजी ने की। विद्यार्थियों की अपेक्षा आचार्यों की उपस्थिति ज्यादा थी। कारण था छात्र संघ का चुनाव। कई दिनों से चुनाव के जोश-खरोश में विद्यार्थी वर्गों में भी नहीं जा रहे थे। सुबह विद्यापीठ में पाँव रखते ही लोकयात्रियों को परिस्थिति का अन्दाज तो लग ही गया था, जब उन्होंने उम्मीदवारों की 'कन्वेसिंग' के लिए कालेज की दिवारों का बेदर्दी से उपयोग किया हुआ देखा। 'चुनावों का विकल्प क्या', इसी विषय से भाषण की शुरुआत हुई। श्रोतागण सोच में पड़ गये। भाषण के बाद प्रश्न पूछे जाने लगे, "राजनीति के बिना देश कैसे चल सकता है? लोकनीति का क्या स्वरूप है? पूरे देश में सर्वसम्मति या सर्वानुमति कैसे सम्भव है?" आदि। सभा का समारोप करते-हुए उप-कुलपतिजी ने कहा, "आज तक परिव्राजक तथा उपदेशक पुरुष ही घूमे हैं। इसलिए उनको इसका अभिमान है। अब ये बहिनें यात्रा पर निकली हैं तो उनको (पुरुषों को) महसूस होगा कि बहिनें भी यह काम कर सकती हैं।"

चर्चा के बाद विश्वविद्यालयों में प्रचलित चुनाव-पद्धति से असंतुष्ट विद्यार्थी सर्वोदय में आशा की किरण खोजने लगे। विद्यार्थियों के एक नेता, दिमाग में अनेक प्रश्न लिये हुए, दूसरे पड़ाव पर अगले दिन आ पहुँचे, और बोले, 'कल रात को आपके विचारों ने सोने नहीं दिया।" उनसे खूब चर्चा हुई।

× × ×

एक सभा में एक भाई ने कहा, "हमें लगता है कि विनोबाजी ने भारतीय संस्कृति के अनुसार आध्यात्मिक साम्यवाद का विचार दिया है।" शिक्षक-सभा में एक शिक्षक ने कहा, "शिक्षकों को प्रतिष्ठा की अपेक्षा क्यों रखनी चाहिए, हमें इसकी क्या जरूरत है?' दूसरे शिक्षक ने कहा, "आज तो हम 'राजनीतिक वातावरण' में इतने आच्छादित हो गये हैं कि हमें कदम-कदम पर उसकी रहनुमाई में जीना पड़ता है।" अन्त में शिक्षकों ने यह महसूस किया कि राजनीति में पड़कर उनका विकास सम्भव नहीं है।

× × ×

इस तरफ दो गाँवों में हमें मुसलमान भाइयों की बस्ती मिली। हमारा पड़ाव उनके यहाँ रखा गया। हमें विशेष प्रसन्नता हो रही थी, क्योंकि अक्सर हमारा आने इन भाई बहनों से मिलना होता नहीं। भाषण के बाद एक भाई ने खड़े होकर कहा, 'विनोबाजी इशारा कर रहे हैं कि मुसलमानों को इस्लाम ने ताकीद की है कि वे जकात दें। इस्लाम में अपनी आमदनी का ढाई प्रतिशत जकात गरीबों-अपाहिजों के लिए देने की ताकीद की गयी है। विनोबा कोई नयी बात नहीं कह रहे हैं। हमें तो लग रहा है कि कुरान की इस हिदायत को हम भूल गये हैं, सो विनोबाजी हमें उसके लिए आगाह कर रहे हैं।"

हम उनके यहाँ भोजन कर सकते हैं यह जानकर वे बड़े अफसोस के साथ कहने लगे, "हमने तो समझा था कि आप हमारे यहाँ भोजन नहीं करेंगी। यह मकान सबके लिए है और लोग आकर इसी तरह रहते तो हैं, पर खाते नहीं, कुछ लेकर खा लेते हैं। हमसे गलती हुई। हम आपकी सेवा नहीं कर सके। अब आप कल रह जाइए, हमें मौका दीजिए।' आखिर हमने उनका पकाया हुआ कुछ खाया। इसी प्रकार एक ईसाई मिशन स्कूल में हम ठहरे। वहाँ की आचार्या का दिल भर आया, और रुँधे गले से उन्होंने आशीर्वाद की मेह बरसाते हुए कहा, "यह ईसा का सन्देश है। इन्सान का दिल एक है भले ही वे नकाब ओढ़ हैं—मुसलमान का, ईसाई का, हिन्दू का।'

× × ×

उत्तरप्रदेश के लोगों में बहुत जड़ता नहीं है। यहाँ के लोग चिन्तन करते हैं। उनके प्राण में सर्वस्व नहीं हो पाता, इससे काम करने में असुविधा तो होती है, पर हमें लगता है कि जो विचार करता है वह सान्तन भी करेगा। व्यक्तिगत आग्रह से आरम्भ भले हो हो, पर उसका निरूपण 'स्व' में न होकर वैज्ञानिक दृष्टिकोण में होगा। यह सक्रमण-काल है। समाज की जड़ता मिटेगी और धीरे-धीरे मानव तटस्थ व निरवैर बनेगा। आज लोगों में विकास व असन्तोष तो है, पर इस यह गुन लक्षण दिखता है, मनन-पूर्ण बुद्धि तक पहुँचने के लिए।

—देवी रोमकाली

—नहीं हो सकता है। मानव स्वभावतः अहिंसक है। इसलिए वह हिंसा को टालना चाहता है। उससे दूर रहना चाहता है।

हिंसा समाज को तोड़ सकती है, समाज में जहर फैला सकती है, किन्तु समाज को जोड़ने और उसमें अमृत को विकास करने का काम तो केवल अहिंसा ही कर सकती है। कुछ समय तक हिंसा समाज में सरसरी आभास पैदा कर सकती है, किन्तु जीवन को शुभ प्रेम के सुमधुर गुम्फन से भर देने की एवं सुमन के स्वरों से समाज को गीतों से भर देने की ताकत केवल अहिंसा में है। हिंसा मानव के अन्दर में भय पैदा करती है, किन्तु मानव को निर्भय तथा निर्वैर केवल अहिंसा ही बना सकती है। और अहिंसक क्रान्ति से ही समाज में समता, शान्ति और स्थायी व्यवस्था आ सकती है। उसका शानदार कार्यक्रम है—ग्रामदान का विचार। ग्रामदान से शोषणमुक्त समाज बनेगा, उसमें सम्बन्ध बदलकर मीठे बनेंगे, मानवीय मूल्यों की स्थापना होगी। गाँव में और देश में सर्वानुमति से सर्वजनहिताय की योजना बनेगी; शान्तिपूर्ण समाज बनेगा और विश्व को नया रास्ता और नयी रोशनी मिलेगी।

—गोपालदत्त भट्ट

नया पत्र

सभी प्रादेशिक सर्वोदय-मंडलों तथा जिला सर्वोदय-मंडलों की सेवा में

प्रिय बन्धु,

संघ की प्रबन्ध-समिति ने सेवाग्राम में दिनांक ६ नवम्बर '६९ की अपनी बैठक में राष्ट्रीय परिस्थिति के सन्दर्भ में एक निवेदन स्वीकृत किया था और मतदाताओं से आवाहन किया था कि वे अपने लिए और देश के लिए अपने प्रतिनिधियों के आचरण पर निगरानी रखें, और जहाँ वे गलती करते हों वहाँ उन्हें सुधारें तथा सारे देश में जगह-जगह इकट्ठे हों और संयुक्त पत्र, तार और सार्वजनिक सभाओं में पारित प्रस्तावों द्वारा अपनी अस्वीकृति और निन्दा उस वर्तमान अशोभजनक सत्ता-स्पर्धा के लिए व्यक्त करें, जो राष्ट्रीय हित की पूर्णतः उपेक्षा कर केवल व्यक्तिगत और गुट की तरक्की के लिए देश में जारी है। निवेदन आपको सेवा में भेजा गया था और यह अपेक्षा की गयी थी कि यदि इस प्रकार मतदाताओं की वृहद सभाएँ होती हैं तो जनता की शक्ति का दर्शन होगा और प्रति दिन द्रुतगति से बिगड़नेवाले राजनीय पतन को रोकने में समर्थ कार्यक्रम सिद्ध होगा।

इस निवेदन के सन्दर्भ में बहुत ही कम जगहों से इस प्रकार की सभाएँ आयोजित करने की सूचनाएँ मुझे मिली हैं। मैं आपकी बहुत-बहुत कृपा मानूँगा यदि आप कष्ट करके मुझे सूचित करेंगे कि इस निवेदन के सन्दर्भ में कितने गाँवों में मतदाताओं की सभाएँ की गयी। यह सभाएँ नहीं की हों, तो कृपया अब करें।

दिनांक ५ नवम्बर के परिपत्र द्वारा मैंने आपसे यह प्रार्थना की थी कि आपके काम की जानकारी प्रति मास प्रथम सप्ताह में संघ को एवं पूज्य बाबा को आप नियमित रूप से भेजते रहें। यह सोचा है कि इस प्रकार से प्राप्त रिपोर्ट के आधार पर समाचारों को संकलित कर मासिक चिट्ठी के रूप में संघ की ओर से परिपत्रित किया जाय। इसके दो हेतु सामने रखे हैं। इससे एक ओर जहाँ एक-दूसरे के काम की जानकारी, समस्याओं की जानकारी परस्पर एक-दूसरे को मिलेगी, वहीं दूसरी ओर हमारे सारे कामों में समन्वय भी स्थापित होगा। आपसे पुनः प्रार्थना है कि आप मासिक चिट्ठी के रूप में समाचार यहाँ भेजने की कृपा करें।

सर्वोदय समाज का पुनरुज्जीवन

सर्वोदय समाज के निम्न दो काम करने की जिम्मेवारी सर्व सेवा संघ ने अपने ऊपर १५ वर्ष पहले ली थी

(१) सर्वोदय समाज का उद्देश्य और बुनियादी सिद्धान्त जिनको मंजूर है, उन सेवकों का रजिस्टर रखना। और, (२) हर साल सर्वोदय सम्मेलन हो ऐसा इन्तजाम करना।

संघ पिछले कई वर्षों से ये दोनों काम ठीक से नहीं कर पा रहा था। सेवकों का रजिस्टर रखने का काम तो वर्षों से बन्द हो गया था। कई सेवक चाहते थे कि यह फिर से शुरू हो। इसलिए संघ की प्रबन्ध समिति ने अपने राजगिर-अधिवेशन में संघ अध्यक्ष को अधिकार दिया कि वे इन कामों को ठीक से निबाहने के लिए एक मंत्री नियुक्त करें। वैसे तो मंत्री की नियुक्ति का यह कार्य सर्वोदय-सम्मेलन में ही होना चाहिए था, मगर समयाभाव के कारण न हो सका। ऐसी हालत में संघ के अध्यक्ष ने अगले सर्वोदय-सम्मेलन तक श्री द्वारकोजी सुन्दरानी को मंत्री के तौर पर नामजद किया है।

अब सब सर्वोदय-प्रेमी सज्जनों से सर्व सेवा संघ की प्रार्थना है कि वे श्री द्वारकाजी को समन्वय आश्रम, पो० बोधगया, जिला—गया (बिहार), इस पते से पत्र लिखकर सेवक के तौर पर अपना नाम शीघ्र दर्ज कराने की कृपा करें। और सालाना सम्मेलन के बारे में कुछ सुझाव आदि देना हो तो अवश्य दें। ऐसे सज्जनों की जानकारी के लिए सर्वोदय समाज का उद्देश्य और बुनियादी सिद्धान्त नीचे दिये हैं।

उद्देश्य : सत्य और अहिंसा पर एक ऐसा समाज बनाने की कोशिश करना, जिसमें जात-पाँत न हो, जिसमें किसीको शोषण करने का मौका न मिले और जिसमें समूह और व्यक्ति, दोनों को सर्वांगीण विकास करने का पूरा अवसर मिले।

बुनियादी सिद्धान्त साध्य की तरह ही साधन की शुद्धि का आग्रह।

मंत्री, सर्व सेवा संघ

पो० गोपुरी, वर्धा
ता० २०-१२-'६९

पंजाब में तूफान

श्री सुशीलकुमारजी, मंत्री, कस्तूरबा सेवा मन्दिर, राजपुरा ने तहसील राजपुरा के तीनों ब्लाकों में १८ जनवरी से २१ जनवरी तक ग्रामदान-अभियान चलाने की योजना बनायी है। १८ और १९ जनवरी को राजपुरा कस्तूरबा सेवा मन्दिर में डा० दयानिधि पटनायक के मार्गदर्शन में कार्यकर्ताओं का शिविर होगा और २० जनवरी से २१ जनवरी तक कार्यकर्ताओं की टोलियाँ तीनों ब्लाकों के गाँवों में ग्रामस्वराज्य के विचार का प्रचार करेंगी। इस अभियान में कस्तूरबा सेवा मन्दिर के २०० विद्यार्थियों के अतिरिक्त पंजाब और हरियाणा के सर्वोदय-कार्यकर्ता तथा खादी और रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता भाग लेंगे। इस अभियान की पूर्वतैयारी के लिए पंजाब सर्वोदय-मण्डल ने अपना कैम्प कार्यालय राजपुरा में खोल दिया है। श्री उजागर सिंह्जी बिलगा, अध्यक्ष तथा श्री बनारसीदास गोयल, मंत्री इस अभियान की पूर्वतैयारी के लिए काम कर रहे हैं।

स्मरण-पत्र

दिनांक ७ नवम्बर १९६९ को सेवाग्राम से बादशाह खान, विनोबाजी व जयप्रकाश नारायण द्वारा प्रसारित तथा 'भूदान-यज्ञ' के १७-११-'६९ के अंक में प्रकाशित संयुक्त-वक्तव्य के सम्बन्ध में—

"सेवाग्राम से बादशाह खान, विनोबा व मेरी ओर से जो संयुक्त वक्तव्य प्रकाशित किया गया, उसके प्रति जनता में काफी औत्सुक्य नजर आ रहा है। इस वक्तव्य के अनुसार क्या प्रत्यक्ष कुछ कार्यवाही हो सकेगी या नहीं, इस बारे में काफी चर्चाएँ हो रही हैं। वक्तव्य के प्रकाशित होने पर कुछ दिनों के बाद बादशाह खान व विनोबाजी जैसे महान् नेताओं से सलाह-मशविरे के बाद अगला कदम उठाना सम्भव हो सका है। इसके अनुभव पर ही भविष्य का कार्यक्रम निर्भर रहेगा।

"देश में नैतिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों का संदर्भ देकर 'वक्तव्य' में निम्न बातों का विशेष उल्लेख किया गया था, यह आपको स्मरण होगा ही। "जनता की संगठित शक्ति और तज्जन्य आत्मिक बल ही विविध दुष्प्रवृत्तियों का उन्मादन और राजनैतिक प्रवाहों का नियन्त्रण कर सकता है।" वक्तव्य में आगे ऐसा भी कहा गया है कि उपरोक्त कार्य की सिद्धि के लिए ध्येयनिष्ठ और निःस्वार्थ कार्यकर्ताओं की तालिका निर्माण की जानी चाहिए। वक्तव्य के अन्त में हमने कहा है कि अपने देश में अच्छे लोगों की कमी नहीं है। पर किसी कारण ऐसे लोग अपने आपको जन-प्रवाह से दूर रखे हुए हैं।

"कार्यकर्ताओं में संगठन और परस्पर-संपर्क बना रहे, इसके लिए ऐसे व्यक्तियों को पत्र भेजकर तथा निवेदन प्रकाशित कर, उनसे अपील की जायगी कि वे अपने नाम श्री विनोबाजी को या सर्व सेवा संघ, गोपुरी को या बिहार में मेरे पटना* के पते पर भेजें। चूँकि बादशाह खान फरवरी तक भारत में रहेंगे और इस दरमियान व दौरे पर ही रहेंगे, इसलिए उनके नाम इस सम्बन्ध में कोई पत्र भेजा न जाय। वैसे इस सम्बन्ध में उन्हें, वे जहाँ भी हों, जानकारी दी जायगी।

"इस अवसर पर मैं ऐसे सभी व्यक्तियों से, जो उक्त वक्तव्य से सहमत हैं और अपनी सेवाएँ उक्त कार्य के लिए देना चाहते हैं, विनती करूँगा कि वे अपने नाम और पते हमें भेजते हुए सूचित करें कि वे किस प्रकार का कार्य करना चाहेंगे, जिससे कि हमारे उद्देश्यों की पूर्ति हो।"

—जयप्रकाश नारायण

* महिला चरखा समिति, कदमकुआँ, पटना-३

जयप्रकाशजी की महाराष्ट्र-यात्रा

ता० २२ दिसम्बर '६९ को महाराष्ट्र का पहला जिलादान ठाणा श्री जयप्रकाश बाबू को भिवंडी में अर्पित किया गया। बम्बई जैसे औद्योगिक क्षेत्र से सटा हुआ यह एक महत्त्वपूर्ण जिलादान हुआ है। इसी अवसर पर श्री जयप्रकाश बाबू को ३३,३०३ रु० की थैली भी अर्पित की गयी। यह क्षेत्र आचार्य भिसे का कर्मक्षेत्र है, जिनकी पूरी शक्ति इस काम को पूर्ण कराने में लगी।

श्री जयप्रकाश नारायण की यात्रा महाराष्ट्र में मराठवाड़ा के चार जिलों—नांदेड़, परभणी, बीड और औरंगाबाद—में ता० २५ से २७ दिसम्बर तक हुई। चारों स्थानों पर शाम के समय विशाल जनसभाएँ हुईं, जिनमें १५ से २५ हजार तक जनता की उपस्थिति रहती थी और दो-ढाई घंटे तक जयप्रकाशजी का प्रवचन शांति से सुनती थी। बीड में कार्यकर्ताओं की सभा में जयप्रकाशजी ने गांधी विचार विस्तृत रूप से समझाया। औरंगाबाद में छात्रों की एक बड़ी सभा में, और मराठवाड़ा विश्वविद्यालय में इसी विचार के भिन्न-भिन्न पहलुओं को रखा। आम सभाओं में जयप्रकाशजी ने हिंसक क्रांति की व्यर्थता, कानून की मर्यादितता का विश्लेषण किया। उद्योगों के राष्ट्रीयकरण में समाजवाद के बजाय शासकीय पूँजीवाद पैदा होने का, और अफसरशाही के बढ़ने का खतरा बताया। इस संदर्भ में गांधीजी के सत्याग्रह की चर्चा करते हुए ग्रामदान-कार्यक्रम को देश की समस्याओं के समाधान की दिशा में एक कारगर कदम बताया। सर्वोदय की राजनीति यानी लोकनीति के आगामी कार्यक्रमों को भी उन्होंने लोगों के सामने प्रस्तुत किया। बसमतनगर में २ अक्तूबर से ३२ फरवरी तक राष्ट्रीय एकता और कौमी शांति के लिए चलनेवाले अनशन-सत्र के केन्द्र को भी उन्होंने देखा, और अनशन करनेवाले भाई बहनों को बधाई दी। सारे देश में इस कार्य की खबर फैलनी चाहिए, ऐसी इच्छा उन्होंने व्यक्त की। इन तीन दिनों के दौरे में जयप्रकाशजी को १० ग्रामदान और ५५ हजार रुपये की थैलियाँ भेंट की गयी।

—रामसहाय पुरोहित

लोकयात्री दल का कार्यक्रम

दिनांक	पड़ाव स्थान
१२-१-७०	मानीकऊ
१३-१-७०	मानीकऊ
१४-१-७०	कन्नौज
१५-१-७०	मकरंदपुर
१६-१-७०	फतेहपुर
१७-१-७०	गुरसहायगंज
१८-१-७०	तेरह जाकट
१९-१-७०	सिकन्दरपुर
२०-१-७०	छिबरामऊ
२१-१-७०	सहानगज
२२-१-७०	गोदतामऊ
२३,२४-१-७० (दो दिन)	फतेहगढ़
२५-१-७०	फर्रुखाबाद
२६-१-७०	पिपरगाँव (जयसिंहपुर)
२७-१-७०	मोहम्मदाबाद
२८-१-७०	गनेशपुर
	नवीगंज

२९-१-७० को मैनपुरी जिले में प्रवेश

पता—मा० कालीचरण टंडन
अध्यक्ष,
जिला परिषद्, फर्रुखाबाद

महाजन : शोषण और सम्बन्ध

[पिछले अंक में आपने सातौ की ढाणी मे कर्ज की स्थिति का परिचय प्राप्त किया था। इस अंक में प्रस्तुत है कर्ज देनेवाले और लेनेवाले यानी महाजन और कर्जदार के बीच के सम्बन्धों का अध्ययन और उसमें व्याप्त शोषण की प्रक्रिया।—सं०]

महाजन ही गांव के सारे विनिमय का माध्यम है। जो भी चीजें गांव मे खरीदी तथा बेची जाती हैं महाजन के माध्यम से। नित्य की आवश्यकता की चीजें भी खरीदी जाती हैं। ग्रामीण विनिमय का थोडा भी अध्ययन करने से साफ जाहिर होता है कि महाजन ग्रामीण जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित करता है। नित्य उपयोग की चीजों से लेकर स्थायी जीवन के कार्य—जैसे शादी, त्यौहार मकान आदि—सबमें महाजन के रंग का प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक परिवार का और अन्ततः प्रत्येक व्यक्ति का जीवन महाजन के कार्यों से प्रभावित होता है। महाजन से प्रत्येक परिवार का खास सम्बन्ध रहता है। गांव के किसान का महाजन से सम्बन्ध व्यक्तिगत रहता है तथा कभी-कभी पारिवारिक कार्यों मे हस्तक्षेप तक भी पहुँच जाता है। इनका सम्बन्ध माल की खरीद-बिक्री तक ही सीमित नहीं है। ग्रामीण जीवन का, खासकर यहाँ के लोगो का महाजन से निम्नलिखित बातो मे सम्बन्ध रहता है :

१—वस्तुओं की खरीद तथा बिक्री।
२—वस्तुओं की उधारी।
३—कर्ज।
४—सलाह-मशविरा और मार्गदर्शन।

इनके अतिरिक्त महाजन कुछ खास सुविधाएँ गांव के लोगों को पहुँचाता है। इन सुविधाओं मे मुख्य हैं—वह खरीददारी स्वयं गांव में आकर करता है, कभी-कभी सामान घर पर पहुँचा भी देता है। महाजन हमेशा किसान से व्यक्तिगत सम्बन्ध रखता है, इसी प्रकार किसान भी। महाजन और किसान दोनों परस्पर-लाभ के लिए सम्बन्धों में घनिष्ठता बनाये रखते हैं। हालांकि इन सम्बन्धों में स्वाभाविक ही महाजन को आर्थिक लाभ अधिक होता है। किसान सामान्यतया शोषित तथा महाजन शोषक होता है। शोषण तथा आपसी सम्बन्धों की दृष्टि से इस गांव के लोगो का महाजन से सम्बन्ध के बारे मे थोडा विस्तार से अध्ययन करेंगे।

जैसा कि बताया जा चुका है, सातौ की ढाणी के किसानो का कोटड के महाजनों से सम्बन्ध है। गांव के विनिमय की अधिकांश क्रियाएँ यहाँ के महाजनो के द्वारा ही पूरी होती हैं। गांव के लोगो की आवश्यकताएँ सीमित हैं तथा जैसा कि हमने देखा, यहाँ के अधिकांश लोग स्थानीय क्षेत्रों मे ही काम करते हैं। अतः जो भी विनिमय का काम किया जाता है वह कोटड के महाजन पूरा करते हैं। गांव के प्रत्येक परिवार का एक या एक से अधिक महाजन से व्यापारिक सम्बन्ध है। प्रत्येक परिवार निश्चित महाजन से सम्बद्ध है और जो भी लेने-देने का कार्य होता है वह इन्ही महाजनों से किया जाता है। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक महाजन का एक परिवार से या एक परिवार का किसी एक महाजन से ही सम्बन्ध हो। एक परिवार का ३-४ महाजनों से भी सम्बन्ध रहता है, इसके कई लाभ गांववालो ने गिनाये, जैसे—(क) उधार लेने की सुविधा, (ख) कर्ज एक के यहाँ से न मिलने पर दूसरे के यहाँ से ले सकते हैं। (ग) इसी प्रकार खरीद-बिक्री के अन्य कार्य भी कई महाजनो से करने में सुविधा होती है। महाजन का तो अपने पेशे के कारण कई परिवारों से सम्बन्ध होना स्वाभाविक ही है।

गांव मे केवल एक परिवार ऐसा मिला जिसका कोई निश्चित महाजन नहीं है। यह परिवार कर्ज-मुक्त भी है। यह परिवार सामान्यतः उधार भी कम लाता है। लेकिन अन्य परिवारों के निश्चित महाजन हैं। कुल आठ महाजन हैं जिनका गांव मे विभिन्न परिवारो से सम्बन्ध है। किस महाजन का कितने परिवारो से सम्बन्ध है, इसे इस तालिका से समझा जा सकता है :—

सारणी-संख्या—११
महाजन और किसान

महाजन का नाम	परिवार-संख्या (जिनसे इनका सम्बन्ध है)
१ श्री रुडमल	२५
२ श्री सूंता	५
३ श्री रामावतार	१३
४ श्री प्रभुदयाल	२
५ श्री श्रीराम	१
६ श्री सूँडा	१
७ श्री कन्हैयालाल	७
८ श्री कानू	१

सबसे अधिक परिवारो से सम्बन्ध रखनेवाला महाजन श्री रुडमल है। इस महाजन का गांव के २५ परिवारो से सम्बन्ध है। यह महाजन गांव का सबसे पुराना व्यापारी है। दूसरा स्थान श्री रामावतार का है जिसका सम्बन्ध १३ परिवारो से है। अन्य सभी महाजन नये हैं, उनका सम्बन्ध भी स्थायी नहीं है। अध्ययन तथा विभिन्न साक्षात्कारो से पता चला कि प्रत्येक महाजन अधिक-से-अधिक किसानों से सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। पर वह सम्बन्ध स्थापित करने के प्रयास मे अपने लाभ की बलि नहीं चढ़ाता है। कौन महाजन कितने किसानों से अधिक गहरा सम्बन्ध स्थापित कर पाता है यह उसके व्यक्तिगत गुणो पर भी निर्भर करता है। गांव के लोग उस महाजन से अधिक गहरा सम्पर्क रखते हैं, जो—

(क) उधार देने मे समर्थ है।
(ख) समय पर कर्ज दे सकता हो।
(ग) विश्वासपात्र हो।
(घ) पुराना महाजन हो।
(ङ) कर्ज या उधार की वापसी के लिए कड़ा रुख नहीं रखता।

किसान समय पर उधार या कर्ज

चुकाने में अपने को प्रायः असमर्थ जरूर पाता है, पर वह कभी कर्ज चुकाने से इनकार नहीं करता। अब तक एक भी उदाहरण इस गाँव में नहीं मिला, जिसमें किसान कर्ज चुकाने से मुकर गया हो।

खाती की ढाणी सामान्य निम्नस्तरीय किसानों का गाँव है। इसका महाजन से गहरा सम्बन्ध है। इस दशा में स्वाभाविक है कि महाजन को किसान के परिवार की आंतरिक परिस्थितियों का ज्ञान हो। फिर कर्जदार की जो मनोवृत्ति होती है उसके कारण किसान घर की आंतरिक स्थिति का पूरा खुलासा महाजन को कह सुनाता है। तभी उसे समय पर कर्ज तथा उधार मिलता है। अतः हम कह सकते हैं कि गाँव की आर्थिक स्थिति का पूरा अंदाज महाजन को रहता है और महाजन उनकी आर्थिक स्थिति तथा मनोवृत्ति को ध्यान में रखकर अपना व्यापार चलाता है।

महाजन और किसान के बीच सम्बन्धों की चर्चा के दौरान यह स्पष्ट हुआ कि किसान को महाजन से कई सुविधाएँ प्राप्त होती हैं। किसान ऐसा महसूस करता है कि, महाजन 'हमें लाभ पहुँचा रहा है।' वैसे गाँववालों ने अनेक कठिनाइयाँ भी गिनायीं। खाती की ढाणी जैसे गाँव के लोग महाजन से प्राप्त होनेवाली सुविधाओं को इस रूप में समझते हैं —

१—समय पर चीजें उधार मिल जाती हैं।

२—समय पर कर्ज प्राप्त होता है।

३—कर्ज चुकता नहीं करने पर भी पुनः कर्ज मिलता है।

४—कर्ज देर से चुकाने की सुविधा भी प्राप्त हो जाती है।

५—महाजन गाँव में आकर चीजें खरीदता है।

उपरोक्त लाभों को व्यक्त करते समय किसान यह महसूस करता है कि महाजन संकट में सहायक होता है। इस एहसानमंदी की भावना के कारण ही किसान को अपना शोषण नहीं खटकता है। पर यह बात नहीं है कि उसे महाजन के वर्तमान सम्बन्धों में कोई परेशानी नहीं है। उपरोक्त सुविधाओं को व्यक्त करने के साथ-साथ उन्होंने कुछ कठिनाइयाँ भी गिनायीं :—

१—उधार लेने पर—

(क) माल महँगा मिलता है।

(ख) तौल में कम मिलता है।

(ग) अधिक वापस करना पड़ता है।

२—वापसी के लिए महाजन परेशान करता है।

३—ब्याज अधिक लेता है, खासकर उधार लेने पर।

४—महाजन किसान से वस्तुएँ सस्ते में खरीदता है।

५—कर्जदार होने के कारण वस्तुएँ निश्चित महाजन को ही बेचनी पड़ती हैं।

६—सामाजिक तथा नैतिक दबाव रहता है।

७—हिसाब में गड़बड़ी रहती है।

उपरोक्त कठिनाइयों में महाजन द्वारा शोषण के सभी तत्त्व शामिल हैं।

खरीद की वस्तुएँ बाजार भाव से अधिक महँगी किसान को प्राप्त होती हैं और बिकनेवाली चीजों का भाव अपेक्षाकृत कम मिलता है। शोषण के गणित को समझने के लिए यह जरूरी है कि महाजन द्वारा अपनायी जानेवाली वापसी की शर्तों तथा अन्य तरीकों को भी समझा जाय। किसान वे चीजें खरीदता है, जो कि सामान्यतः सभी लोग खरीदते हैं, जैसे—कपड़ा, तेल आदि। पर ये चीजें उन्हें महँगी मिलती हैं। इसका मुख्य कारण है महाजन से कर्ज का सम्बन्ध होना। सर्वेक्षण से पता चला कि उधार, कर्ज, तथा अन्य लेन-देन में एक निश्चित नीति के अनुसार किसान का शोषण किया जाता है। इसे भुगतान की विभिन्न शर्तों से समझा जा सकता है, जो इस प्रकार हैं —

१—नकद कर्ज लेने पर १२ प्रतिशत वार्षिक ब्याज देना पड़ता है।

२—वस्तुएँ उधार लेने पर सामान्यतः निम्नलिखित प्रथाओं के अनुसार वापस की जाती हैं —

(क) जितना लिया है उसका सवा गुणा अधिक वापस करना पड़ता है।

(ख) १०० किलो लिखवाकर ५ किलो कम देता है।

(ग) १०० किलो के स्थान पर १०२ ५० किलो अधिक लेता है।

(घ) लेने तथा देने के बाद तथा भाव में अन्तर के कारण करीब-करीब ६ प्रतिशत का लाभ महाजन लेता है।

(ङ) महाजन डंडी मारता है, जिससे करीब-करीब १ ५० प्रतिशत का लाभ कमाता है।

इन कारणों से यदि कोई किसान १०० किलो अन्न महाजन से लेता है तो साल भर बाद जब वह अन्न वापस करने जाता है तो कुल मिलाकर लगभग ४० प्रतिशत अधिक देना पड़ता है।

यह गणित चौंकानेवाला हो सकता है। पर थोड़ी गहराई में विचार करने पर यह साफ हो जाता है। महाजन अनेक तरीकों से किसान से लाभ कमाता है। किसान को इस बात का पता भी नहीं चलता कि उसका शोषण हो रहा है। किसान कभी थोक वस्तुएँ नहीं लाता। अक्सर उधार के रूप में फुटकर चीजें ही लाता है। कभी १ किलो, कभी १० किलो, इसी मात्रा में सामान लाता है। इस थोड़ी-थोड़ी मात्रा के कारण लाभ कमाने की गुञ्जाइश बढ़ जाती है। यहाँ का किसान कई अवसरों पर उधार लाता है, जैसे बोने के समय बीज, खाने के लिए समय-समय पर फुटकर चीजें, आदि। उधार देते समय महाजन की मुख्य शर्तें रहती हैं कि पैदावार होने पर दी गयी शर्तों के अनुसार वापस करना होगा। ऊपर बतायी गयी शर्तों के अनुसार पैदावार होने के बाद वापसी का भरसक प्रयास किसान करता है, ताकि पुनः समय पर कर्ज मिल सके और ब्याज आदि से छूट मिले।

(अगले अंक में समापन किस्त)

ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य

'ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि यह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर-सहयोग से काम लेगा। क्योंकि हरएक देहाती के जीवन का सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और गाँव की इज्जत के लिए मर मिटे।' —गांधीजी

अब समय आ गया है कि इस देश के बुद्धिवादी, किसान, मालिक-मजदूर, सभी इस बात पर विचार करें कि ग्रामदान हमें ग्रामस्वराज्य की ओर अग्रसर करता है या नहीं? यदि हमें जँच जाय कि हाँ, इससे हमें ग्रामस्वराज्य के दर्शन हो सकेंगे, तो यही अवसर है कि हम लोग इस पुण्य काम में तुरन्त लग जायँ।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

कांग्रेस का बम्बई-अधिवेशन

आर्थिक, विज्ञान व तकनीकी नीति तथा उत्तर प्रदेश की चीनी मिलों के राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित करने के बाद सत्तारूढ़ कांग्रेस का शिष्ट और संयत ढंग से सम्पन्न पाँच दिवसीय अधिवेशन २९ दिसम्बर को पौने दो बजे समाप्त हुआ। प्रधान मंत्री श्रीमती गांधी ने कांग्रेस के समाजवादी प्रस्ताव के सम्बन्ध में यह आश्वासन दिया कि प्रस्ताव वैसे देश के ज्यादा कमजोर वर्गों के कल्याण के लिए है, लेकिन उसका अर्थ यह नहीं है कि वह किसी वर्ग के विरुद्ध है या अन्य किसी वर्ग का ख्याल नहीं किया गया है। "वास्तव में जैसे माँ-बाप के अपने सभी बच्चे प्यारे होते हैं, लेकिन कमजोर बच्चों का वे कुछ अधिक ख्याल रखते हैं, उसी तरह समाजवादी प्रस्ताव में समाज के गरीब व गिरे हुए लोगों का ज्यादा ख्याल किया गया है।" इन शब्दों के साथ प्रधान मंत्री ने प्रस्ताव को ठीक और समयानुकूल बताया। अधिवेशन खत्म करते हुए अध्यक्ष श्री जगजीवनराम ने कांग्रेस-सदस्यों, प्रतिनिधियों तथा कार्यकर्ताओं का आह्वान किया कि वे देश के कोने कोने में समाजवादी बात पहुँचायें और पूरी लगन के साथ नये कार्यक्रम को सफल बनायें। उन्होंने यह भी कहा कि, "सरकार अपनी जिम्मेदारी जरूर निभायेगी, और हम सभी एक होकर उसमें तेजी लाने में उसका हाथ बँटायेंगे।"

बम्बई-कांग्रेस का समाजवाद

सवाल उठता है कि वह कौनसा समाजवाद है, जिस पर बम्बई-कांग्रेस ने अपने अधिवेशन में राय-मशविरा किया है, जिस पर उसने प्रस्ताव पास किये हैं और जिसमें सहयोग देने के लिए उसने जनता से अपील की है? कांग्रेस के इस समाजवाद का चित्र उसके द्वारा स्वीकृत प्रस्तावों व अधिवेशन के बीच अलग अलग बैठकों के भाषणों व चर्चाओं में बिखरा मिलेगा। अपने आर्थिक प्रस्ताव में बम्बई-कांग्रेस ने यह घोषणा की है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा अवसर की समानता एवं कार्य करने की स्वतंत्रता के आधार पर जाति और वर्गहीन समाज की स्थापना के लिए कृतसंकल्प है और यह तभी संभव है जब राजनीतिक क्षेत्र में प्राप्त आजादी सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में भी लायी जाय। इस बात का भी निर्देश किया गया है कि कांग्रेस ने अपने पहले के अधिवेशनों, जैसे—सन् १९३१ में कराची, सन् १९५३ में नागपुर, सन् १९५५ में आवडी और सन् १९६४ में भुवनेश्वर, में समाजवाद सम्बन्धी अपनी इस दृष्टि को स्पष्ट किया है। इन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कांग्रेस ने जून १९६७ में तुरन्त अमल की दृष्टि से १० मुद्दों का एक कार्यक्रम देश के सामने रखा और जुलाई १९६९ में बंगलोर में हुई बैठक में श्रीमती गांधी द्वारा दी गयी टिप्पणी से राष्ट्र की आर्थिक नीतियों की रूपरेखा सामने आयी।

रामभूषण

आर्थिक प्रस्ताव में यह कहा गया है कि अनेक कठिनाइयों के बावजूद भी स्वतंत्रता के बाद के पिछले बीस वर्षों में देश ने आर्थिक क्षेत्र में अच्छी प्रगति की है। यह भी कहा गया है कि आजादी के बाद देश का आर्थिक ढाँचा बदला जरूर है, लेकिन देश के कुछ लोगों ने बहुत ज्यादा धन बटोर लिया है, जब कि लाखों-करोड़ों अब भी गरीबी और मुफलिसी की जिन्दगी बिता रहे हैं। जिन लोगों के पास खूब धन आया है वे उसके बल पर ताकतवर हो गये हैं और उस ताकत का गलत इस्तेमाल कर रहे हैं जिससे सामाजिक तरक्की में बाधा पहुँची है। इस असंतुलित और बेढंगे विकास से क्षेत्रीय भेद और फिरकापरस्ती बढ़ी है। दूसरी ओर, शिक्षा का प्रसार तेजी से जरूर हुआ लेकिन उसी रफ्तार में रोजगारी के मौके नहीं बढ़ सके। इसलिए गरीबी और बेकारी अब भी मुल्क के अधिक लोगों को परास्त किये हुए हैं। ऐसी असंतुलित हालत में सामाजिक व आर्थिक ढाँचे में बड़ा परिवर्तन लाने से ही हालत ठीक हो सकती है। इस परिप्रेक्ष्य में कांग्रेस ने अपनी समाजवादी नीति में जिन मुद्दों पर जोर दिया है उनकी खास चीजें नीचे दी जा रही हैं।

समाजवादी उद्देश्य

कांग्रेस ने अपनी समाजवादी नीति के पाँच सूत्री उद्देश्यों को इस प्रकार रखा है: (१) गरीब तबके का ध्यान में रखते हुए आर्थिक विकास की रफ्तार को तेज करना, (२) शोषण को समाप्त करने के लिए वर्तमान आर्थिक सम्बन्धों में मूल परिवर्तन करना, (३) आर्थिक ढाँचे का ऐसा निर्माण जिसमें आर्थिक सत्ता एवं पूँजी के केन्द्रीकरण के बिना अधिकतम उत्पादन की गुंजाइश हो, (४) हमारे प्रजातंत्र और समाजवाद को शक्ति देनेवाली आर्थिक तथा सामाजिक संस्थाओं की स्थापना, (५) समाज के सबसे महत्त्वपूर्ण स्रोत, जनशक्ति के अधिकतम उपयोग की दृष्टि से रोजगार को बढ़ावा देना।

१४ खास बैंकों के राष्ट्रीयकरण और एकाधिकार के विरुद्ध कानूनवाले दस सूत्री कार्यक्रम को पूरा करने की दिशा में उठाये गये कदमों की चर्चा करते हुए सामान्य बीमे के राष्ट्रीयकरण, भूतपूर्व राजाओं-महाराजाओं के प्रिवीपर्स और उनकी विशेष सुविधाओं की समाप्ति, नगरीय सम्पत्ति का सीमा-निर्धारण, बिचौलियों को समाप्त कर मुख्य-मुख्य पैदावार के व्यापार को सार्वजनिक क्षेत्रों में लेने तथा निर्यात-आयात को सार्वजनिक क्षेत्र में लेने के कार्यक्रम को जल्दी-से-जल्दी अमल में लाने की भी बात कही गयी है।

कृषि-विकास व भूमि-सुधार

बाहर से मँगाये जानेवाले कच्चे माल को राज्य की जिम्मेदारी मानी गयी है, ताकि निर्यात, कृषि-विकास और देहाती समृद्धि में राज्य अपना ज्यादा फर्ज अदा कर सके। बड़ी, मझली और छोटी सिंचाई-'स्कीमों' को राज्य और केन्द्रीय योजनाओं में पहले की ही तरह प्राथमिकता मिलेगी।

सूखी खेती को विशेष प्रोत्साहन दिया जायगा। सूखी खेती से किसानों के लाभ के साथ युवक टेक्नीशियनों और प्राविधिक जानकारी रखनेवालों को अधिक संख्या में रोजगारी देने की दृष्टि रखी गयी है। पूँजीवादी व्यवस्था से समाजवादी व्यवस्था की ओर आने की दृष्टि से कर्ज व सहायता पाने के लिए आदमी की माली हैसियत के अब तक के आधार को बदलकर ऋण लेने के उद्देश्य को महत्त्व देने की बात कही गयी है। इस परिप्रेक्ष्य में अब कृषि-विकास के अनेक कार्यक्रमों पर नये सिरे से ध्यान दिया जायेगा। छोटे और मध्यम श्रेणी के किसानों को राष्ट्रीय बैंकों से राज्य-सरकार की निगरानी में कर्ज पाने में प्राथमिकता मिलेगी। खेती के विकास और साथ ही खेतिहर समाज के हर प्रकार के शोषण से बचने में सहायक बना सकने की दृष्टि से सहकारी तथा कर्ज देनेवाली सोसाइटियों तथा छोटे और मध्यम श्रेणी के किसानों के ग्रामीण संगठनों को प्रोत्साहन दिया जायगा। भूमिहीनों को भी कर्ज की सुविधाएँ मिलेंगी। छोटे व्यवसायों, जैसे—सूअर-पालन और मछली पकड़ने आदि के लिए भी राष्ट्रीय बैंकों से ऋण की व्यवस्था की गयी है। इन सभी चीजों को ध्यान में रखते हुए कांग्रेस ने केन्द्र व राज्य-सरकारों से यह अपील की है कि वे अपनी शक्ति सूखी खेती के कार्यक्रम-संगठन, सूखी भूमि के उपयुक्त फसलों की खोज, छोटे किसानों व भूमिधरों के लिए कर्ज व अन्य सुविधाओं तथा सहायक सेवाओं, विशेषकर सहकारी समितियों एवं कृषि-उद्योगों की व्यवस्था में, लगायें। सामाजिक न्याय और कृषि-विकास, दोनों दृष्टियों से कांग्रेस ने भूमि-सुधार-कार्यक्रमों के महत्त्व को स्वीकार किया है। इस दृष्टि से उसने १९७० तक बचे-खुचे बिचौलियों की समाप्ति, भूमि पर कब्जा सम्बन्धी नियमों का पुनरावलोकन, भूमि पर वास्तविक रूप से काम करनेवालों की सुरक्षा, भूमिहीनों के लिए भूमि-व्यवस्था, चकबन्दी, भूमि-सम्बन्धी मुकदमों की समाप्ति के लिए नयी अदालतों के संगठन, रैयत व साझादारों के लिए मुफ्त कानूनी मदद तथा दो वर्ष के भीतर ही सरकारी बेकार जमीन का खेती के लिए भूमिहीन, विशेषकर परिगणित जातियों के बीच वितरण पर विशेष जोर दिया है।

उद्योग व कर-नीति

इस क्षेत्र में यह माना गया है कि जनता की आर्थिक संस्थाओं में सुधार अच्छी और सही औद्योगिक नीति का अंग है। अतः छोटे उद्योगों का संरक्षण और उनका क्षेत्र-विस्तार, छोटे और बड़े उद्योगों के बीच सही प्रकार के सम्बन्ध तथा राष्ट्रीय बैंकों की कर्ज-नीति को छोटे उद्योगों की ओर उन्मुख करने का समावेश किया गया है। लाइसेंस तथा नियंत्रण के अन्य नियमों-उपनियमों को उत्पादन बढ़ाने में सहायक, लेकिन एकाधिकार और आर्थिक केन्द्रीकरण की बुराइयों के खिलाफ बचाव के रूप में रखा गया है। साथ ही, इन चीजों को हिन्दुस्तान के पढ़े-लिखे युवकों की विकास-भावना तथा उद्योग-धन्धा शुरू करने में सहायक के रूप में रखा गया है। श्रमिकों और प्रबन्धकों के बीच नये, विकसित सम्बन्ध बनाने पर जोर दिया गया है। कामगार अपनापन महसूस कर सकें, इसलिए औद्योगिक संस्थाओं की व्यवस्था में उन्हें अधिकाधिक स्थान देने की बात कही गयी है। काले-धन की खोज और उसके और अधिक बढ़ने पर रोक तथा बकाया टैक्स-भुगतान के लिए जोरदार प्रयास बराबर करते रहने की सिफारिश की गयी है।

शहरी व ग्रामीण कार्यक्रम

शहरीकरण और बड़े शहरों से उत्पन्न समस्याओं की ओर भी ध्यान दिया गया है। इस सन्दर्भ में आवास-व्यवस्था, सफाई, हवा पानी को दूषित होने से बचाने, लोगों, विशेषकर विद्यार्थियों एवं श्रमिकों के लिए सस्ते यातायात, भंगी-कष्ट-मुक्ति, गंदी बस्तियों के निराकरण और खास-खास दवाओं के सस्ते मूल्य पर मिलने पर जोर दिया गया है। स्कूली बच्चों, गर्भवती तथा छोटे बच्चों को पाल रही माताओं को प्राथमिकता देने की बात कही गयी है। पाँच वर्ष तक के बच्चों को संतुलित आहार दिये जाने की स्कीम में हरिजन बस्तियों, आदिवासी क्षेत्रों व गन्दी बस्तियों के बच्चों से शुरुआत करने की बात कही गयी है। राष्ट्रीय स्तर पर एक बालकोष स्थापित करने का भी सुझाव दिया गया है। देश में फैली बेरोजगारी की समस्या को सर्वाधिक महत्त्व देते हुए रोजगार वृद्धि को आर्थिक आयोजन का एक प्रमुख उद्देश्य बताया गया है। इस सन्दर्भ में कृषि-उद्योगों, भूमि-प्राप्ति, भू-संरक्षण, वृक्षारोपण, सड़क-निर्माण, पशु-पालन तथा क्षेत्र-विकास के अन्य कार्यक्रमों पर जोर दिया गया है। चौथी योजना के अन्तर्गत राज्य-योजनाओं को रोजगारी की दृष्टि से कुछ और बड़ा बनाने, ग्रामीण वर्कशापों का विकास, कुशल तथा अकुशल बेरोजगारों का ग्रामीण कार्यक्रमों में उपयोग, आवश्यक संस्थाओं का निर्माण, मकान, गन्दी बस्ती तथा शहरी सुधार की अन्य स्कीमों को बढ़ाकर गाँवों के बेकार लोगों को रोजगार देने की सिफारिश की गयी है। चौथी योजना के अन्त तक हिन्दुस्तान के हर गाँव में पीने के पानी की व्यवस्था के लिए सरकार को प्रेरित किया गया है।

जहाँ तक बरबादी रोकने का सम्बन्ध है, हिन्दुस्तान के सभी नागरिकों, विशेषकर समृद्ध वर्ग से एक आवश्यक स्तर तक आर्थिक विकास होने तक अधिक संयम बरतने की अपील की गयी है। सरकारी और गैरसरकारी सभी स्तरों पर फजूल-खर्ची छोड़ने की सिफारिश के साथ स्वदेशी आन्दोलन को देश में फिर से चलाये जाने का सुझाव दिया गया है।

बम्बई-अधिवेशन : एक नजर में

प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी ने २३ दिसम्बर को कानपुर में ही आगामी बम्बई-अधिवेशन को ऐतिहासिक बताया था और अधिवेशन शुरू होते-होते सम्वाददाताओं से बातचीत के दौरान भी उन्होंने

के लिए मन्दा में दी गयी है। हर साल की तरह शान्ति-जुलूस तो इस बार भी बड़े प्रमाण में निकले ही। जुलूस के अन्त में सर्वधर्म-प्रार्थना तथा प्रार्थना-सभा आयोजित की जाय।

तरुण-शान्ति-सैनिक अपने अपने स्थानों पर ३० जनवरी को और भी ऐसे कार्यक्रम आयोजित कर सकते हैं, जिनसे शान्तिमय क्रान्ति को प्रोत्साहन मिले।

—अ० भा० शान्ति-सेना मण्डल, सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१

सर्वोदय-ग्रामदान पखवारा

महाराष्ट्र-सरकार के सचिव श्री अ० ह० आडिपरेकर ने महाराष्ट्र के मण्डलाधिकारियों, जिलाधीशों को एक परिपत्र द्वारा यह निर्देश दिया है कि इस गांधी-शताब्दी-वर्ष में २९ जनवरी '७० से १२ फरवरी '७० तक ग्रामस्वराज्य के विचार का व्यापक प्रचार-प्रसार करने के लिए 'सर्वोदय-ग्रामदान पखवारा' मनायें। इस अवधि में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं द्वारा आयोजित शिविरों को सफल बनाने में सक्रिय सहयोग करें।

सर्व सेवा संघ की डाक से

कर्नाटक के बीजापुर जिले में मुधोल प्रखण्ड में जो अभियान चला, उसके परिणामस्वरूप मुधोल प्रखण्डदान हुआ। बीजापुर में इस तालुके सहित ५ तालुकों का दान हो चुका है।

राजस्थान के डूंगर जिले में बीछीवाड़ा प्रखण्ड में २२ से २५ नवम्बर तक अभियान चला, जिसमें १४ ग्रामदान हुए।

अमृतसर जिले में एक प्रखण्ड को लेकर सघन रूप से ग्रामदान-अभियान चलाने का तय किया गया है। सन्त अमर सिंह ने ग्रामदान के काम में सहयोग देने का आश्वासन दिया है।

बम्बई सर्वोदय मंडल की ओर से बम्बई के कालेज-युवकों का एक श्रम-स्वाध्याय शिविर ठाणा जिले के एक ग्रामदानी गाँव जुनादुर्की में किया गया, जिसमें ३० विद्यार्थियों ने भाग लिया। सर्वोदय के प्रयत्न से करीब १५०० रु० की साहित्य-बिक्री हुई, पत्र-पत्रिकाओं के २४० ग्राहक बनाये गये। ३२८ सर्वोदय-पात्रों से ८१८ रु० का संग्रह हुआ।

—रामसहाय पुरोहित

मध्यप्रदेश के विभिन्न जिलों में ग्रामदान-शिविर-शृंखला

इन्दौर, ३१ दिसम्बर। जानकारी मिली है कि सम्बन्धित जिला गांधी-शताब्दी समितियों के अन्तर्गत बिलासपुर, रायगढ़, सिहोर, विदिशा, उज्जैन जिलों में जिलादान-प्राप्ति के उद्देश्य से ग्रामदान शिविर-शृंखला का आयोजन जारी है, जिसके अनुसार बिलासपुर जिले के बलौदा, रायगढ़ जिले के पुसौर, सारंगगढ़ और बरमकेला, सिहोर जिले के सिहोर, इच्छावर, आष्टा, बुधनी, नसरुल्लागंज, हुजूर खजूरी सड़क और बेरसिया, विदिशा जिले के विदिशा, बासौदा, कुरवई, सिरोंज, और लटेरी तथा उज्जैन जिले के उज्जैन और घटिया प्रखण्डों में शिविर आयोजित किये जा रहे हैं। इनमें से लगभग आधे स्थानों के शिविर सम्पन्न हो चुके हैं।

बिलासपुर सम्भाग के गांधी शताब्दी के क्षेत्रीय संगठक श्री शिवनाथ शर्मा से प्राप्त जानकारी के अनुसार बिलासपुर जिले की जाजगीर तहसील के बलौदा प्रखण्ड में आयोजित इन पदयात्राओं के फलस्वरूप ५ ग्रामदान मिले हैं।

कस्तूरबा ट्रस्ट प्रान्तीय प्रतिनिधियों का सम्मेलन

इन्दौर, ३१ दिसम्बर। आगामी १९ से २२ जनवरी, '७० तक कस्तूरबा-ग्राम (इन्दौर) में कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट के प्रान्तीय प्रतिनिधियों का सम्मेलन एवं कार्यकारिणी की बैठक होने जा रही है। इसमें ट्रस्ट के भावी कार्यक्रम और योजनाओं पर विचार-विनिमय होगा। कार्यकारिणी के सदस्य के रूप में सर्वश्री मोरारजी देसाई, शान्तिकुमार जहाँगीर पटेल, निर्मला रामदास गांधी, लक्ष्मी मेनन, मणिबेन पटेल, डा० सुशीला नय्यर तथा श्रीमती पवडम् नायर के भाग लेने की आशा है।

गांधी-जन्म-शताब्दी पदयात्रा

२ अक्तूबर '६९ से २२ फरवरी '७०

गांधी-जन्म-शताब्दी-समारोह के निमित्त से पूर्णिया जिले में २ अक्तूबर '६९ से एक अखंड पदयात्री-टोली चल रही है। निर्धारित कार्यक्रमानुसार २२ फरवरी '७० तक यह पदयात्रा चलेगी।

गत २९ नवम्बर '६९ तक पदयात्रा की उपलब्धियाँ निम्न प्रकार हैं :

खादी-बिक्री रु० ५,०६८.१२, सर्वोदय-साहित्य बिक्री रु० ८९५१.७५, तरुण-शान्ति-सैनिक १०, ग्राम-शान्ति-सैनिक १२, सर्वोदय-पत्रिकाओं के ग्राहक ४, ग्राम-सभा का गठन १, पदयात्रा २५१ मील, भ्रमण के कुल गाँव ५९, भ्रमण के कुल प्रखंड १६, ग्राम सभा ५६, गांधी-थैली की बिक्री ६२०३०, उपस्थिति लगभग २६६००, बनाये गये सर्वोदय-मित्रों की संख्या २५। —बालेश्वरप्रसाद 'काम'

सर्व सेवा संघ का प्रधान कार्यालय

सर्व सेवा संघ का प्रधान कार्यालय दिनांक १ नवम्बर '६९ से गोपुरी, वर्धा में स्थानान्तरित हुआ है। कृपया आगे से संघ से सम्बन्धित सारे पत्र व्यवहार निम्न पते से करने का कष्ट करें :—

सर्व सेवा संघ	Sarva Seva Sangh
पो० गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र)	P. O Gopuri, Wardha (Maharashtra)
दूरभाष—३६५	Phone—365
तार—"सर्वसेवा"	Telegram—"Sarvaseva"

विनोबाजी पिछले एक-डेढ़ माह से यहाँ गोपुरी में ही ठहरे हुए हैं। उनका स्थायी पता भी आगे की सूचना मिलने तक यही रहेगा। —मंत्री

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २० ०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

22 JAN 1970

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख्य पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : १६
सोमवार १९ जनवरी, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी—१
फोन : ६४३८५

करुणामूलक साम्ययोग हो ग्राह्य

साम्य करुणामूलक हो, तभी उसका 'साम्ययोग' बनता है। वरना वह यांत्रिक पद्धति में लाया हुआ स्थूल साम्य हो जाता है, जो वास्तव में साम्य है ही नहीं। साम्य करुणामूलक नहीं हुआ तो वैषम्य और झगड़े पैदा होते हैं।

साम्ययोग लाने की एक व्यावहारिक प्रक्रिया बुद्ध और महावीर ने उपस्थित की है। कुएँ से घड़ा भर पानी निकला तो पानी में घड़े के आकार का गड्ढा नहीं पड़ता, बल्कि कुछ पानी की सतह नीचे जाती है, क्योंकि पानी के बिन्दु चारों ओर से गड्ढा भरने के लिए दौड़ते हैं। किन्तु चावल के ढेर से एक सेर चावल निकाल लें तो गड्ढा पड़ जाता है। सिर्फ तीन चार महात्मा चावल ही यह गड्ढा भरने के लिए दौड़ते हैं, बाकी सब अपनी ही जगह बैठे रहते हैं। स्पष्ट है कि स्नेह और अनुराग के कारण ही पानी में साम्य स्थापना का यह गुण आता है। इस प्रकार कारुण्य वृत्ति हो, तभी साम्ययोग सिद्ध होगा।

इन दिनों अर्थशास्त्रज्ञ, साम्यवादी आदि कृत्रिम और यांत्रिक प्रक्रिया से साम्य स्थापित करने की कोशिश करते हैं। लेकिन वे साम्य के बजाय वैषम्य ही पैदा करते हैं। उससे मानसिक वैषम्य तो होता ही है, बाह्य वैषम्य भी आता है। रूस में साम्य की स्थापना की कोशिश की गयी, फिर भी वहाँ वेतनों में ७० ८० गुना भेद है, ऐसा कहा जाता है। वहाँ साम्य की स्थापना इसीलिए न हो सका कि उनकी प्रक्रिया कारुण्यमूलक नहीं थी। कारुण्यमूलक प्रक्रिया से ही साम्ययोग की स्थापना हो सकती है, यह भगवान बुद्ध की सिखावन है।

वैसे पारमार्थिक साम्य ही हमारा मूल सिद्धान्त है। उसीकी बुनियाद पर आर्थिक साम्य लाने की प्रक्रिया उठाना ही हमारी प्रक्रिया होनी चाहिए। जातिभेद आदि छोटे-मोटे भेद आर्थिक समता से ही मिटेंगे। अक्सर गाँव के मन्दिरों के प्रति गाँववालों की निष्ठा होती है। लेकिन अब उनसे कहना होगा कि ग्राम को ही देवता मानें और अपना सर्वस्व उसे समर्पण करें। भगवान कृष्ण ने यही किया। आर्थिक समता की दृष्टि रखकर काम करने से धर्म को भी विशुद्ध रूप प्राप्त होगा। यह एक रचनात्मक मार्ग है। इस पद्धति से काम किया जाय तो रुकावटें दूर होंगी, झगड़े पैदा नहीं होंगे और विचार को नया रूप प्राप्त होगा।

कोंडा, रत्नागिरी
...-'६९

—विनोबा

सर्वोदय और शैतान–३

हमारे मित्र-शुभचिंतक हमसे यह चाहते हैं....वह चाहते हैं !—लेकिन हम क्या चाहते हैं ?

राजनीति को लेकर हमारे मित्र और शुभचिंतक हमसे क्या चाहते हैं ? अभी तक जो नेक सलाहें मिली हैं वे इस प्रकार हैं :

(१) इस वक्त जो राजनैतिक दल मौजूद हैं उनमें से किसी एक को, जो विचार और कार्य पद्धति की दृष्टि से सर्वोदय के सबसे ज्यादा करीब हो उसे हम मान लें। वह असेम्बली और संसद में हमारी बात कहेगा। चुनाव जीतने में और बाद को सरकार बनाने में हम उसकी भरपूर मदद करें।

(२) हम खुद अपनी अलग पार्टी बनायें, चुनाव लड़ें, सरकार बनायें, और गांधीजी के सिद्धान्तों के अनुसार शुद्ध और सेवा-भाव से शासन चलाकर जनता को सुख पहुँचायें, और देश के सामने सुशासन का नमूना पेश करें।

(३) सर्वोदय के लोग खुद सरकार में न जायें, लेकिन अच्छे लोगों को भेजने में जनता की मदद करें। मदद के लिए क्या करें ? वोटरों का शिक्षण करें, ताकि वे जाति, धर्म आदि के संकीर्ण नारों से प्रभावित न हों, बल्कि उम्मीदवार के चरित्र और गुण, उसकी सेवा और ईमानदारी का ख्याल करके वोट दें। इतना ही नहीं, सर्वोदय की ओर से यह भी बताया जाय कि किस निर्वाचन-क्षेत्र में किस उम्मीदवार को वह 'अच्छा' समझता है। ऐसा करने से वोटरों को सही आदमी को पसन्द करने में मदद मिलेगी।

(४) सर्वोदय वह काम करे जो काम गांधीजी 'लोकसेवक-संघ' से लेना चाहते थे। सलाह देनेवाले ऐसा मानते हैं कि गांधीजी की इस इच्छा के अनुसार हमें रचनात्मक कार्य करना चाहिए, और इस बात की चिन्ता छोड़ देनी चाहिए कि किसकी सरकार बनती है, कैसे बनती है, आदि।

(५) हमें सामान्य सेवा से ज्यादा दूसरी कोई बात सोचनी ही नहीं चाहिए, क्योंकि गांधी-विचार में ऐसी कोई चीज ही नहीं है जो पूरे समाज के जीवन और संगठन को नया मोड़ दे सके। समाज का विकास आर्थिक और मनोवैज्ञानिक शक्तियों और प्रेरणाओं से चलता है। वे शक्तियाँ हैं 'टेक्नालॉजी' और 'सुख के साधन बटोरने की लिप्सा' (ऐक्विजिटिवनेस)। गांधी-विचार इन्हें नहीं बदल सकता। ये जीती नहीं जा सकती, बदली नहीं जा सकती। समाज चलेगा इनसे, और समाज की चोटों से घायल मनुष्य की मरहमपट्टी करेंगे गांधी के त्यागी, निरीह, निर्विकार, चेले।

(६) गांधीजी दोनों मोर्चों पर–रचनात्मक और राजनैतिक–साथ-साथ काम करते थे। गांधीजी चर्खे आदि का संगठन करते थे, प्राकृतिक चिकित्सालय भी खोलते थे, और अंग्रेजी राज्य के खिलाफ सत्याग्रह भी करते थे। हमारे मित्रों को हमसे यह शिकायत है कि हमने गांधीजी का प्रेम तो याद रखा, लेकिन उनका सत्य छोड़ दिया। हम बुजदिल हैं, सत्य को पहचानने और उसपर चलने से कतराते हैं।

(७) हम और कुछ न करें, किसी दल से सम्बन्ध न रखें, पर समाज में 'शिव' बनकर रहें। शासन पर कोई भी हो, इन्द्र की ओर से होनेवाले अन्याय और अनीति का प्रतिकार करना शिव का काम है। यह काम हमारा होना चाहिए।

(८) शोषकों और शोषितों के बीच होनेवाले वर्ग-संघर्ष में हम शोषितों का साथ दें। हाँ, वर्ग-संघर्ष में हिंसा न हो, सारा काम गांधीजी के बताये हुए असहयोग और अवज्ञा आदि के उपायों से हो, यह देखना हम अपना काम मानें।

(९) हमें खुलकर कांग्रेस का साथ देना चाहिए, क्योंकि कुछ भी हो कांग्रेस और सर्वोदय, दोनों एक गुरु की देनें हैं। कांग्रेस गांधीजी को सब दलों से ज्यादा मानती है। आज कांग्रेस देश से जायगी तो गांधीजी को जाना पड़ेगा। तब कौन पूछेगा खादी को, संस्थाओं को, और रचनात्मक कार्यों को ?

(१०) हम दलमुक्त और निष्पक्ष हैं इसलिए हम सर्वदलीय सरकार बनवाने में आगे बढ़ना चाहिए।

(११) हम लोकतंत्र को मानते हैं इसलिए हमें लोकतांत्रिक दलों की संयुक्त सरकार बनाने में पूरी मदद करनी चाहिए।

(१२) सर्वोदय निरर्थक विचार है। जनता को भ्रम में रखने का षड्यंत्र है। इसे जल्द से-जल्द अपनी दूकान समेट लेनी चाहिए।

(१३) सर्वोदय राजनीति, अर्थनीति, शिक्षानीति आदि की बात करना छोड़कर समाज का नैतिक स्तर उठाने की कोशिश करे। गीता, रामायण आदि का प्रचार करे, क्योंकि जबतक नैतिकता नहीं बढ़ेगी, देश का विकास नहीं होगा।

(१४) सर्वोदय के लोग राजनीति से अलग हैं, यह अच्छी बात है, लेकिन उन्हें शिक्षा का काम करना चाहिए। बच्चों से देश का भविष्य बनता है। शिक्षा अच्छी नहीं होगी तो दूसरी कोई चीज होकर क्या करेगी ?

ये चौदह सलाहें हैं जो अबतक मित्रों और आलोचकों ने—वे भी मित्र ही हैं—हमें दी हैं। इनमें से कोई सलाह ऐसी नहीं है जिसमें नेकनीयती की कमी हो, और ये सब काम ऐसे हैं जो किसी-न-किसी दृष्टि से, किसी-न-किसी परिस्थिति में अच्छे भी माने जा सकते हैं। लेकिन मुश्किल तो हमारी है कि हम मानना भी चाहें तो किसे मानें ? हमारा हाल तो उस बूढ़े का हो गया जो अपने बेटे और गधे के साथ जा रहा था। बूढ़ा खुद गधे की पीठ पर बैठे तो लोग कहते थे, 'कितना खुदगर्ज है यह बुड्ढा कि खुद पीठ पर बैठा हुआ है और बेटे को पैदल घसीट रहा है।' बेटे को गधे पर बिठाये और खुद पैदल चले तो लोग कहते थे : 'कैसा बिगड़ा हुआ बेटा है कि खुद गधे

[शेष पृष्ठ २४८ पर]

सर्वोदय और मजदूर

मजदूर के शोषण पर हमारे उद्योग खड़े हैं। मजदूर के शोषण पर हमारी खेती चल रही है। मजदूर की मुक्ति से राजनीति को नारे मिलते हैं। मजदूर आज के आन्दोलनों की मुख्य प्रेरणा है। मजदूर इस जमाने का केन्द्र बिन्दु है। मजदूर विकास का लक्ष्य है। मजदूर ही क्रान्ति का वाहक है। समाज मजदूर की मेहनत पर टिका हुआ है। मजदूर की ही मेहनत से सुख के सामान बनते हैं। मजदूर का यह महत्त्व हमेशा था, लेकिन मजदूर को क्रान्ति के साथ जोड़ने का श्रेय साम्यवाद को है। आज मजदूर को छोड़कर न समाज चल सकता है, न सरकार। वस्तुतः मजदूर के विकास पर सभ्यता का विकास निर्भर है।

सर्वोदय आन्दोलन भी 'भूमिहीन मजदूर' का ही नाम लेकर शुरू हुआ था। 'खेतिहर मजदूर के लिए भूमि का एक टुकड़ा' भूदान यज्ञ आन्दोलन का पहला घोष था। वहाँ से चलकर इतने वर्षों में हम पूरे गाँव की मुक्ति तक पहुँचे हैं। मजदूर ग्रामीण जीवन का आधार तो है ही, वही ग्राम-स्वराज्य की आधार-शिला भी है। मजदूर उत्पादक श्रम का प्रतीक है। सर्वोदय जीवन पद्धति उत्पादक श्रम के ही चारों ओर गूँथी गयी है।

साम्यवाद ने श्रमिक को सर्वहारा माना। उसने श्रमिक का अलग वर्ग बनाया, और पूँजीपति के अन्त में श्रमिक का उदय देखा। पूँजी और श्रम की शत्रुता की इस मान्यता ने श्रमिक की मुक्ति को एक लम्बे, हिंसक, संघर्ष और संहार की प्रक्रिया बना दिया। इसके विपरीत सर्वोदय ने मजदूर को सर्वहारा नहीं माना। उसने उसे भी मालिक ही माना—'श्रम का मालिक'। इतना मान लेने पर वह 'श्रमिक' रहा ही नहीं, पूँजीपति के साथ बराबरी का साझेदार बन गया। फिर एक साझेदार दूसरे साझेदार का संहार क्यों? उसका काम बस इतना रह गया कि वह अपने श्रम का शोषण पूँजी के लिए—वह चाहे पूँजीपति की हो या सरकार की—न होने दे। शोषण के विरुद्ध उसका प्रतिकार 'न' कहने में है। उसका असहयोग बराबरी के दर्जे पर सहयोग की एक सीढ़ी है। सन् १९५१ से अब तक हमने सामाजिक क्रान्ति के नये मूल्यों और प्रक्रियाओं से व्यापक समाज की चेतना को जगाने की कोशिश तो की है लेकिन मिल-मजदूरों के किसी क्षेत्र में हमारा काम नहीं हुआ है। हमारी सारी शक्ति ग्रामदान पर केन्द्रित रही है। अब हमने कारखाने के मजदूर के पास जाने का निर्णय लिया है।

उसके पास जाकर हम कहेंगे क्या? कारखाने के क्षेत्रों में बरसों से मजदूर-आन्दोलन चल रहा है। लेकिन इतने बरसों में मजदूर सिवाय एक शब्द 'मजदूरी' के दूसरा शब्द नहीं सीख सका। 'मजदूरी, हाय मजदूरी' के सिवाय न वह कुछ जानता है, न जानना चाहता है। उसके मन में क्षोभ है अधिक मजदूरी का, इस बात का क्षोभ नहीं है कि वह दूसरे की मर्जी का गुलाम क्यों है, खुद कारखाने के बारे में तो वह सोचता ही नहीं। देश का हित-अहित उसके साथ कितना जुड़ा हुआ है, यह वह नहीं जानता। पैसा बढ़े तो नैतिक और सांस्कृतिक स्तर भी उठना चाहिए, इसका उसे ध्यान भी नहीं है। कोई ऐसी व्यवस्था भी हो सकती है जिसमें मजदूर कारखाना चलायेगा, और उसे उचित और सम्मानपूर्ण जीविका के लिए बार-बार हड़ताल नहीं करनी पड़ेगी, आदि बातें तो उसकी कल्पना के बाहर हैं। ये बातें उसे सुनाता भी कौन है? कोई आश्चर्य नहीं कि आज का मजदूर आज के सामाजिक ढाँचे में ही अपने लिए अधिक-से-अधिक सुख और सुविधा चाहता है, उसे बदलने की चिन्ता उसे नहीं है।

हमारा मजदूर आन्दोलन सचमुच मजदूरी-आन्दोलन हो गया है। मजदूरी मजदूर-आन्दोलन का सिर्फ एक काम है, किन्तु वही काम आज सब-कुछ हो गया है। मजदूरों के जितने संगठन हैं, सब राजनैतिक दलबन्दी के अखाड़े बन गये हैं। राजनीति की नजर में मजदूर सिर्फ मजदूर नहीं रह गया है। वह कांग्रेसी मजदूर, कम्युनिस्ट मजदूर, समाजवादी मजदूर, जनसंघी मजदूर आदि हो गया है। जाति, धर्म आदि से एक मजदूर दूसरे मजदूर से पहले से अलग था, लेकिन अब राजनैतिक दलों ने गरीबी की एकता को भी खत्म कर दिया। 'दुनिया के मजदूरो, एक हो जाओ' के नारे से मजदूर-आन्दोलन शुरू हुआ था, लेकिन आज किसी एक कारखाने के मजदूर भी एक नहीं रह गये। जब मजदूरों की एकता ही नहीं रह गयी, तो मजदूर-आन्दोलन क्या चलेगा? जो दल मजदूरी बढ़ाने की बात करे, मजदूर उसीके पीछे दौड़ता है। सचमुच वह अपना व्यक्तित्व खोकर दोहरी गुलामी का शिकार हो चुका है—एक ओर पूँजीपति की, दूसरे ओर दलपति की। पूँजीपति उसे अपने मुनाफे का साधन बनाता है और दलपति अपनी नेतागिरी का। कई बार ऐसा होता है कि हड़ताल में अगर मजदूर काम पर जाना चाहता है, तो नेता के लट्ठधारी सिपाही उसे जबरदस्ती रोकते हैं, क्योंकि हड़ताल मजदूर के लिए जरूरी हो या न हो, पार्टी की राजनीति के लिए जरूरी है। मजदूर नेता खुद मजदूर नहीं होता, अकसर वह कारखाने में काम भी नहीं करता। वह सिर्फ नेता होता है, और हर सही-गलत तरीके से अपनी नेतागिरी कायम रखता है। उसकी नेतागिरी मजदूरों के विश्वास से कहीं अधिक इस बात पर निर्भर होती है कि उसकी पहुँच कितनी है, और उसके पास कितनी लाठियाँ हैं। क्या विद्यालय, और क्या कारखाना, हर जगह लाठी का राज चल रहा है। गुण्डागिरी राजनीति का मान्य सिद्धान्त बन गयी है।

ऐसी परिस्थिति है, सर्वोदय को जूझना है। हड़ताल, भूख-हड़ताल, जुलूस, जिन्दाबाद-मुर्दाबाद के परिचित नारे, आदि के पिटे पिटाये तरीके अब बहुत काम नहीं आयेंगे। हमारा मुख्य→

सर्वोदय और शैतान-३

हमारे मित्र-शुभचिंतक हमसे यह चाहते हैं....वह चाहते हैं !—लेकिन हम क्या चाहते हैं ?

राजनीति को लेकर हमारे मित्र और शुभ चिंतक हमसे क्या चाहते हैं ? अभी तक जो नेक सलाहें मिली हैं वे इस प्रकार हैं :

(१) इस वक्त जो राजनैतिक दल मौजूद हैं उनमें से किसी एक को, जो विचार और कार्य-पद्धति की दृष्टि से सर्वोदय के सबसे ज्यादा करीब हो उसे हम मान लें। वह असेम्बली और संसद में हमारी बात कहेगा। चुनाव जीतने में और बाद को सरकार बनाने में हम उसकी भरपूर मदद करें।

(२) हम खुद अपनी अलग पार्टी बनायें, चुनाव लड़ें, सरकार बनायें, और गांधीजी के सिद्धान्तों के अनुसार शुद्ध और सेवा भाव से शासन चलाकर जनता को सुख पहुँचायें, और देश के सामने सुशासन का नमूना पेश करें।

(३) सर्वोदय के लोग खुद सरकार में न जायें, लेकिन अच्छे लोगों को भेजने में जनता की मदद करें। मदद के लिए क्या करें ? वोटरों का शिक्षण करें, ताकि वे जाति, धर्म आदि के संकीर्ण नारों से प्रभावित न हों, बल्कि उम्मीदवार के चरित्र और गुण, उसकी सेवा और ईमानदारी का ख्याल करके वोट दें। इतना ही नहीं, सर्वोदय की ओर से यह भी बताया जाय कि किस निर्वाचन-क्षेत्र में किस उम्मीदवार को वह 'अच्छा' समझता है। ऐसा करने से वोटरों को सही आदमी को पसन्द करने में मदद मिलेगी।

(४) सर्वोदय वह काम करे जो काम गांधीजी 'लोकसेवक-संघ' से लेना चाहते थे। सलाह देनेवाले ऐसा मानते हैं कि गांधीजी की इस इच्छा के अनुसार हमें रचनात्मक कार्य करना चाहिए और इस बात की चिन्ता छोड़ देनी चाहिए कि किसकी सरकार बनती है, कैसे बनती है, आदि।

(५) हमें सामान्य सेवा से ज्यादा दूसरी कोई बात सोचनी ही नहीं चाहिए, क्योंकि गांधी-विचार में ऐसी कोई चीज ही नहीं है जो पूरे समाज के जीवन और संगठन को नया मोड़ दे सके। समाज का विकास आर्थिक और मनोवैज्ञानिक शक्तियों और प्रेरणाओं से चलता है। वे शक्तियाँ हैं 'टेक्नालॉजी' और 'सुख के साधन बटोरने की लिप्सा' (ऐक्विजिटिवनेस)। गांधी-विचार इन्हें नहीं बदल सकता। ये जीती नहीं जा सकतीं, बदली नहीं जा सकतीं। समाज चलेगा इनसे, और समाज की चोटों से घायल मनुष्य की मरहमपट्टी करेंगे गांधी के त्यागी, निरीह, निर्विकार, चेले !

(६) गांधीजी दोनों मोर्चों पर—रचनात्मक और राजनैतिक-साथ-साथ काम करते थे। गांधीजी चर्खे आदि का संगठन करते थे, प्राकृतिक चिकित्सालय भी खोलते थे, और अंग्रेजी राज्य के खिलाफ सत्याग्रह भी करते थे। हमारे मित्रों को हमसे यह शिकायत है कि हमने गांधीजी का प्रेम तो याद रखा, लेकिन उनका सत्य छोड़ दिया। हम बुजदिल हैं, सत्य को पहचानने और उसपर चलने से कतराते हैं।

(७) हम और कुछ न करें, किसी दल से सम्बन्ध न रखें, बस समाज में 'मित्र' बनकर रहें। इन्द्रासन पर कोई भी हो, इन्द्र की ओर से होनेवाले अन्याय और अनीति का प्रतिकार करना मित्र का काम है। वह काम हमारा होना चाहिए।

(८) शोषकों और शोषितों के बीच होनेवाले वर्ग-संघर्ष में हम शोषितों का साथ दें। हाँ, वर्ग-संघर्ष में हिंसा न हो, सारा काम गांधीजी के बताये हुए असहयोग और अवज्ञा आदि के उपायों से हो, यह देखना हम अपना काम मानें।

(९) हमें खुल्लमखुल्ला कांग्रेस का साथ देना चाहिए, क्योंकि कुछ भी हो कांग्रेस और सर्वोदय, दोनों एक गुरु की देन हैं। कांग्रेस गांधीजी को सब दलों से ज्यादा मानती है। आज कांग्रेस देश से जायगी तो गांधीजी को जाना पड़ेगा। तब कौन पूछेगा खादी को, संस्थाओं को, और रचनात्मक कार्यों को ?

(१०) हम दलमुक्त और निष्पक्ष हैं इसलिए हमें सर्वदलीय सरकार बनवाने में आगे बढ़ना चाहिए।

(११) हम लोकतन्त्र को मानते हैं इसलिए हम 'लोकतान्त्रिक' दलों की संयुक्त सरकार बनाने में पूरी मदद करनी चाहिए।

(१२) सर्वोदय निरर्थक विचार है। जनता को भ्रम में रखने का षड्यन्त्र है। इसे जल्द-से जल्द अपनी दूकान समेट लेनी चाहिए।

(१३) सर्वोदय राजनीति, अर्थनीति, शिक्षानीति आदि की बात करना छोड़कर समाज का नैतिक स्तर उठाने की कोशिश करे। गीता, रामायण आदि का प्रचार करे, क्योंकि जबतक नैतिकता नहीं बढ़ेगी, देश का विकास नहीं होगा।

(१४) सर्वोदय के लोग राजनीति से अलग हैं, यह अच्छी बात है, लेकिन उन्हें शिक्षा का काम करना चाहिए। बच्चों से देश का भविष्य बनता है। शिक्षा अच्छी नहीं होगी तो दूसरी कोई चीज होकर क्या करेगी ?

ये चौदह सलाहें हैं जो अबतक मित्रों और आलोचकों ने—वे भी मित्र ही हैं—हमें दी हैं। इनमें से कोई सलाह ऐसी नहीं है जिसमें नेकनीयती की कमी हो, और ये सब काम ऐसे हैं जो किसी-न किसी दृष्टि से, किसी-न किसी परिस्थिति में अच्छे भी माने जा सकते हैं। लेकिन मुसीबत तो हमारी है कि हम मानना भी चाहें तो किसे मानें ? हमारा हाल तो उस बूढ़े का हो गया जो अपने बेटे और गधे के साथ जा रहा था। बूढ़ा खुद गधे की पीठ पर बैठे तो लोग कहते थे : 'कितना खुदगर्ज है यह बुड्ढा कि खुद पीठ पर बैठा हुआ है और बेटे को पैदल घसीट रहा है।' बेटे को गधे पर बिठाये और खुद पैदल चले तो लोग कहते थे : 'कैसा बिगड़ा हुआ बेटा है कि खुद गधे

[शेष पृष्ठ २४८ पर]

सर्वोदय और मजदूर

मजदूर के शोषण पर हमारे उद्योग खड़े हैं। मजदूर के शोषण पर हमारी खेती चल रही है। मजदूर के राजनीति को नारे मिलते हैं। मजदूर की मुक्ति में मुख्य प्रेरणा है। मजदूर आज के आन्दोलनों की विकास का लक्ष्य है। मजदूर इस जमाने का केन्द्र बिन्दु है। मजदूर मजदूर की मेहनत पर टिका हुआ है। मजदूर ही क्रान्ति की वाहक है। समाज सुख के सामान बनते हैं। मजदूर का यह महत्त्व हमेशा था, लेकिन मजदूर को क्रान्ति के साथ जोड़ने का श्रेय साम्यवाद को है। आज मजदूर को छोड़कर न समाज चल सकता है, न सरकार। वस्तुतः मजदूर के विकास पर सभ्यता का विकास निर्भर है।

सर्वोदय आन्दोलन भी 'भूमिहीन मजदूर' का ही नाम लेकर शुरू हुआ था। 'खेतिहर मजदूर के लिए भूमि का एक टुकड़ा' भूदान यज्ञ आन्दोलन का पहला घोष था। वहाँ से चलकर इतने वर्षों में हम पूरे गाँव की मुक्ति तक पहुँचे हैं। मजदूर ग्रामीण जीवन का आधार तो है ही, वही ग्राम-स्वराज्य की आधार-निष्ठा भी है। मजदूर उत्पादक श्रम का प्रतीक है। सर्वोदय जीवन पद्धति उत्पादक श्रम के ही चारों ओर गुथी गयी है।

साम्यवाद ने श्रमिक को सर्वहारा माना। उसने श्रमिक का अलग वर्ग बनाया, और पूँजीपति के अंत में श्रमिक का उदय देखा। पूँजी और श्रम की शत्रुता की इस मान्यता ने श्रमिक की मुक्ति को एक लम्बे, हिंसक, संघर्ष और संहार की प्रक्रिया बना दिया। इसके विपरीत सर्वोदय ने मजदूर को सर्वहारा नहीं माना। उसने उसे भी मालिक ही माना—'श्रम का मालिक'। इतना मान लेने पर वह श्रमिक रहा ही नहीं, पूँजीपति के साथ बराबरी का साझेदार बन गया। फिर एक साझेदार दूसरे साझेदार का संहार क्यों? उसका काम बस इतना रह गया कि वह अपने श्रम का शोषण पूँजी के लिए—वह चाहे पूँजीपति की हो या सरकार की—न होने दे। शोषण के विरुद्ध उसका असली प्रतिकार 'न' कहने में है। उसका असहयोग बराबरी के दर्जे पर सहयोग की एक सीढ़ी है। सन् १९५१ से अब तक हमने सामाजिक क्रान्ति के नये मूल्यों और प्रक्रियाओं से व्यापक समाज की चेतना को जगाने की कोशिश तो की है, लेकिन मिल-मजदूरों के किसी क्षेत्र में हमारा काम नहीं हुआ है। हमारी सारी शक्ति ग्रामदान पर केन्द्रित रही है। अब हमने कारखाने के मजदूर के बीच जाने का निर्णय किया है।

उसके पास जाकर हम कहेंगे क्या? कारखाने के क्षेत्रों में बरसों से मजदूर-आन्दोलन चल रहा है। लेकिन इतने बरसों में मजदूर सिवाय एक शब्द 'मजदूरी' के दूसरा शब्द नहीं सीख सका। 'मजदूरी, हाय मजदूरी' के सिवाय न वह कुछ जानता है, न जानना चाहता है। उसके मन में लोभ है अधिक मजदूरी का, इस बात का क्षोभ नहीं है कि वह दूसरे की मर्जी का गुलाम बना है, खुद कारखाने के बारे में तो वह सोचता ही नहीं। देश का हित-अहित उसके साथ कितना जुड़ा हुआ है, यह वह नहीं जानता। पैसा बढ़े तो नैतिक और सांस्कृतिक स्तर भी उठना चाहिए, इसका उसे ध्यान भी नहीं है। कोई ऐसी व्यवस्था भी हो सकती है जिसमें मजदूर कारखाना चलायेगा, और उसे उचित और सम्मानपूर्ण जीविका के लिए बार-बार हड़ताल नहीं करनी पड़ेगी, आदि बातें तो उसकी कल्पना के बाहर हैं। ये बातें उसे सुनाता भी कौन है? कोई आश्चर्य नहीं कि आज का मजदूर आज के सामाजिक ढाँचे में ही अपने लिए अधिक-से-अधिक सुख और सुविधा चाहता है, उसे बदलने की चिन्ता उसे नहीं है।

हमारा मजदूर आन्दोलन सचमुच मजदूरी-आन्दोलन हो गया है। मजदूरी मजदूर-आन्दोलन का सिर्फ एक काम है, किन्तु यही काम आज सब-कुछ हो गया है। मजदूरों के जितने संगठन हैं, सब राजनैतिक दलबन्दी के अखाड़े बन गये हैं। राजनीति की नजर में मजदूर सिर्फ मजदूर नहीं रह गया है। वह कांग्रेसी मजदूर, कम्यूनिस्ट मजदूर, समाजवादी मजदूर, जनसंघी मजदूर आदि हो गया है। जाति, धर्म आदि से एक मजदूर दूसरे मजदूर से पहले से अलग था, लेकिन अब राजनैतिक दलों ने गरीबी की एकता को भी खत्म कर दिया। 'दुनिया के मजदूरो, एक हो जाओ' के नारे से मजदूर-आन्दोलन शुरू हुआ था, लेकिन आज किसी एक कारखाने के मजदूर भी एक नहीं रह गये। जब मजदूरों की एकता ही नहीं रह गयी, तो मजदूर-आन्दोलन क्या चलेगा? जो दल मजदूरी बढ़वाने की बात करे, मजदूर उसीके पीछे दौड़ता है। सचमुच वह अपना व्यक्तित्व खोकर दोहरी गुलामी का शिकार हो चुका है—एक ओर पूँजीपति की, दूसरी ओर दलपति की। पूँजीपति उसे अपने मुनाफे का साधन बनाता है और दलपति अपनी नेतागिरी का। कई बार ऐसा होता है कि हड़ताल में अगर मजदूर काम पर जाना चाहता है, तो नेता के लट्ठधारी सिपाही उसे जबरदस्ती रोकते हैं, क्योंकि हड़ताल मजदूर के लिए जरूरी हो या न हो पार्टी की राजनीति के लिए जरूरी है। मजदूर नेता खुद मजदूर नहीं होता, अक्सर वह कारखाने में काम भी नहीं करता। वह सिर्फ नेता होता है, और हर सही गलत तरीके से अपनी नेतागिरी कायम रखता है। उसकी नेतागिरी मजदूरों के विश्वास से कहीं अधिक इस बात पर निर्भर होती है कि उसकी पहुँच कितनी है, और उसके पास कितनी लाठियाँ हैं। क्या विद्यालय, और क्या कारखाना, हर जगह लाठी का राज बन रहा है। गुंडागिरी राजनीति का मान्य सिद्धान्त बन गयी है।

ऐसी परिस्थिति है, सर्वोदय को जूझना है। हड़ताल, भूख-हड़ताल, जुलूस, जिन्दाबाद-मुर्दाबाद के परिचित नारे, आदि के पिटे पिटाये तरीके अब बहुत काम नहीं आयेंगे। हमारा मुख्य→

भूदान-यज्ञ, सोमवार, १९ जनवरी, '७०

हम क्या करें ?

हमारा देश बहुत बड़ा है, एक 'कांटीनेंट'–जैसा ही है। और, समस्याएं भी बहुत बड़ी-बड़ी उपस्थित हुई है। हमारी जमात छोटी है, यह बात सही है, लेकिन सरकारी और व्यापारी क्षेत्र के बाहर सेवकों की इतनी बड़ी तादाद का उपलब्ध होना बहुत बड़ी बात है। शायद इस किस्म की सबसे बड़ी जमात दूसरे देशों में भी कम है। उस दृष्टि से यह जमात तो बहुत बड़ी जमात मानी जायेगी। परन्तु सामने जो कार्य उपस्थित है वह बहुत बड़ा है और क्षेत्र का विस्तार है, नक्शा हमारे सामने टँगा रहता है तो हमारी शक्ति के बाहर का ही कार्य है, ऐसा आभास होता है और इसकी वजह से मेरी आशा बढ़ती है कि उसमें हमारे बाहर की भी शक्ति, जो शक्ति हमारे बाहर है अन्दर नहीं, वह दाखिल होगी। जैसा कि बिहार में हमने देखा आखिर-आखिर में कई जिले शिक्षकों की जमात के द्वारा ग्रामदान के अन्तर्गत लाये गये। बहुत बड़ी तादाद में वे लोग काम में लगे। वह हृदय-परिवर्तन की प्रक्रिया का दृश्य था।

शान्ति-सेना और सर्वोदय-पात्र

राजगिर में काकासाहब ने माँग की कि ५० लाख शान्ति-सैनिक चाहिए। ५० लाख कोई बड़ा आंकड़ा है नहीं, क्योंकि गाँव हैं ५ लाख। यह जब हम ध्यान में लेते हैं तो हरएक गाँव के पीछे १० ही सेवक आते हैं।

मैंने एक बात कही थी जो अभी तक नहीं हो पायी। वह बहुत बुनियादी बात है–'सर्वोदय-पात्र', जिसका हमने शान्ति-पात्र नाम दिया। वह कम-से-कम १० लाख सारे भारत में हों, ऐसी आशा हमने की थी। मेरा ख्याल है कि आज जो सर्वोदय-पात्र चल रहे हैं मद्रास और आन्ध्र प्रदेश को छोड़कर बाकी सारे भारत में, मिलकर करीब १०-१५ हजार ही होंगे। वह चीज चली नहीं, अगर्चे वह व्यवहार्य, है। अगर हम शांति-सेना की व्यूह-रचना करना चाहते हैं तो हर गाँव में कोई-न-कोई शान्ति-सैनिक हो, दस न हों तो एक ही हो कम-से-कम हर गाँव में। और, ऐसे शहरों में जहाँ हमारे अड्डे हैं, केन्द्र हैं - जैसे काशी है, अहमदाबाद है, इन्दौर है, वहाँ हमारी मुख्य संस्थाओं में काम करनेवाले लोग इकट्ठा हैं वहाँ शांतिसेना की योजना हमको तुरन्त करनी चाहिए और उसके लिए उतने सर्वोदय-पात्र वगैरह शहरों और गाँवों में जो मैंने बताया वह करना चाहिए। और यह मेरी समझ में नहीं आता कि यदि यह चीज मदुराई में हो सकती है या मद्रास में हो सकती है,

विनोबा

या तेनाली में हो सकती है, तो इन्दौर में या अहमदाबाद में क्यों नहीं हो सकती? लोगों को ऐसा लगता है कि इसमें घर-घर जाना पड़ता है, इसमें बड़ी झंझट होती है लेकिन वह ख्याल गलत है। हर घर में हमको जाने का मौका मिलता है। तो हमारा परिचय बढ़ता है। इसलिए हमारे कार्यकर्ताओं को जाना होगा। यह आशा करना व्यर्थ है कि नहीं जायेंगे तो भी वे लाकर देते रहेंगे।

दूसरा आक्षेप इन लोगों का यह है कि जो कुछ मिलता है वह उसी काम में लग जाता है और बाकी कामों के लिए उससे मदद मिलती नहीं। लेकिन मैंने कई दफा कहा है कि प्राप्ति की दूसरी जो प्रक्रियाएं हैं वह जरूर करो, लेकिन यह तो हमारा सम्मति-पात्र है। इससे हमारे काम के लिए सम्मति मिलती है। इसका उत्तम कार्य तेनाली का है। उसकी जनसंख्या लगभग एक लाख की है और वहाँ लगभग १० हजार सर्वोदय-पात्र चल रहे हैं। उसके आधार से वहाँ कई प्रकार के स्थानिक काम खड़े करते हैं। तो कम-से-कम जहाँ हमारे अड्डे हैं उन शहरों में यह किया जाय, उस तरफ हमको ध्यान देना चाहिए।

हिन्दू-मुस्लिम समस्या के बारे में बात करते हुए मैंने कहा था कि हमारा हरेक काम लोक-सम्पर्क की दृष्टि से होना चाहिए।

साहित्य-प्रचार

किताबों की बिक्री के बारे में ऐसा है कि कुछ चुनी हुई किताबें लेकर घर-घर में जायें। जिन्होंने किताबें ली उनका नाम-पता अपने पास रखें, उनसे बाद में फिर से सम्पर्क करें। ऐसा भी हो सकता है कि किताब उनके यहाँ रख आयें, फिर बाद में उनके पास जायें। यदि वह पुस्तक उनको पसन्द आयेगी तो वह ले लेंगे, फिर दूसरी किताब उनके पास छोड़ आयें। उनकी जानकारी प्राप्त करें। इस तरह से लोगों से व्यक्तिगत सम्पर्क बढ़ायें। इस प्रकार हमें अपने स्रोत प्राप्त करने चाहिए। हमारे अखबारों के ग्राहक कितने हैं? उनमें से हिन्दू कितने हैं, मुस्लिम कितने हैं, इसका हिसाब होना चाहिए, खास करके इस वक्त यह बहुत जरूरी है।

४० हजार हमारे कार्यकर्ता हैं। उनके अलावा लाखों बुनकर हैं, उनमें से बहुत ज्यादा मुस्लिम होंगे। जिनसे हमने जमीन ली और जिनको जमीन दी गयी उनमें भी कितने मुस्लिम, हिन्दू और ईसाई हैं, इसका ब्योरा होना चाहिए। इस तरह से कुल जमात का हमको पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। उनके साथ और लोगों के पास जाना यह

→काम दूसरा है। वह है मजदूर का दिमाग आज जिस धरातल पर है उसे वहाँ से हटाकर दूसरे धरातल पर ले जाना। उसमें यह चेतना जगानी है कि उसका भविष्य मजदूर बने रहने में नहीं है, बल्कि 'मेहनत के मालिक' की हैसियत हासिल करने में है। हर मेहनत करनेवाले को सम्मानपूर्ण जीविका तो मिलनी ही चाहिए, किन्तु मेहनत करनेवाले मानव को सम्मान मानव के नाते मिलना चाहिए। आज ऐसा नहीं है। ऐसा हो, इसीलिए तो नया समाज बनाना है। इस दिशा में पहला काम है कि दल को दिल से निकालकर मजदूर-एकता कायम की जाय। अभी राजगृह में हमने 'दल-मुक्त मजदूर-संगठन' का निर्णय लिया है। निर्णय तो हो चुका, पर कदम कब उठेगा? पहला कदम शिक्षण का होगा, दूसरा संगठन का, और तीसरा संगठन से शक्ति प्रकट करने का होगा।●

काम हम कर सकते हैं। इस तरह होगा तो मान लीजिए दो-तीन हजार मुस्लिम जमात के साथ हमारा अच्छा परिचय हो जाय तो हमारे काम में कितनी सहूलियत होगी। फिर उन लोगों का महत्व बढ़ाना चाहिए, जिन लोगों ने उत्तम काम किया। उनकी जानकारी दूसरे अखबारों में तो आती नहीं, लेकिन अपने अखबारों में भी नहीं आती है। रांची में अमानत अली ने काफी काम किया। मेरा ख्याल है रांची में आखिर के महीने में जो काम इतना हुआ उसका मुख्य श्रेय अमानत अली को है। उनकी थोड़ी जानकारी अपने अखबारों में आनी चाहिए। उनका गौरव हम ही नहीं करते हैं, उसका मतलब कि हम अपने पाँव को कुण्ठित करते हैं। ऐसे लोगों को सामने लाना चाहिए। यह नहीं कि सामने लाने में हम कोई उनका अहंकार बढ़ाना चाहते हैं। परन्तु हम ही अपने साथियों का गौरव न करें, यह उचित बात नहीं। यह आजकल की हिन्दू-मुस्लिम समस्या के बारे में मेरा सुझाव था, वह मैंने आपके सामने रखा। उड़ीसा के मुहम्मद बाजी, १०-१२ साल से लगातार ग्रामदान के काम में लगे हुए हैं, ऐसे अनेक लोग होंगे।

फिर यह जो बात चल रही है कि हमारे साहित्य का प्रचार जोरदार होना चाहिए, उसकी तरफ हमको ध्यान देना चाहिए। वह बड़ी बात तो है नहीं, सारे भारत के हिसाब से वह एक प्रतिशत ही होगा, लेकिन हमको समझना चाहिए कि वह जो साहित्य जायेगा उसके अलावा भिन्न-भिन्न धर्मों के जो सार निकाले गये हैं वह भी जाने चाहिए। प्रकाशन के पूर्व 'कुरान' की बहुत टीका हुई। पाकिस्तान के अखबारों ने काफी टीका की। परन्तु उसके प्रकाशन के बाद उनकी तरफ से कुछ सूचनाएँ उस सम्बन्ध में आयीं। उनमें से कुछ को हमने स्वीकार कर लिया और द्वितीय संस्करण में उतना फर्क किया। फिर एक तरह से वह मुस्लिमों को मान्य हो गया। 'क्रिश्चियन टीचिंग' की एक प्रति हमने रोम के पोप के पास भेजी थी। तो उनका लिखित उत्तर आया कि जिस दृष्टि से यह पुस्तक लिखी गयी है उसको देखकर प्रसन्नता होती है। ऐसा उनका आशीर्वाद मिला है। अक्सर ऐसा होता है कि हमारे धर्म में सब कुछ है। सार निकालना नास्तिकता है, कुफ है, ऐसा माना जाता है, लेकिन वह मान्य किया गया ऐसा कैथालजी कहते हैं। तो ऐसी जो तीन-चार किताबें विभिन्न धर्मों के सार के रूप में निकाली गयी हैं, वे सबके पास पहुँचें। खास-करके 'क्रिश्चियन टीचिंग्स' हिंदुओं के पास, 'गीता प्रवचन' मुस्लिमों के पास, 'कुरान' हिन्दुओं के पास, गीता क्रिश्चियन्स के पास, ऐसे अलग-अलग धर्मों की किताबें एक दूसरे के पास पहुँचे इस प्रकार से सोचकर काम करना, यह भी हमारे काम का एक अंग होना चाहिए।

फिर ऐसा है कि हमारे सभी कामों के लिए जिनको सहानुभूति न भी हो, लेकिन हमारी कुछ किताबों के लिए सहानुभूति है, ऐसे मदद करनेवाले लोग हो सकते हैं कि अमुक किताब के लिए आपको मदद देंगे। उनकी मदद हासिल करके उस किताब की कीमत कम करना चाहिए। यह साहित्य का बहुत बड़ा काम है।

आशा का स्थान : बिहार

आज श्रीमन्नारायण ने एक बात बतायी कि मुझे दलगत राजनीति में जो चला है उसमें कोई आशा नहीं दिखती कि उसमें कुछ बनेगा। परन्तु बिहार में जो ग्रामदान हुए हैं उसके बाद की ऐसी रचना करेंगे कि वहाँ सर्वसम्मति से काम हो तो उससे सब लोगों को प्रेरणा मिलेगी। सभी दलों की सरकार बनायेंगे तो आगे जाकरके वहाँ काम हो सकता है। उन्होंने कहा कि हमको बहुत बड़ी आशा बिहार की है। यह बात सही है। जब मैं सोचता हूँ तो लगता है कि यह एक विराट् कार्य सामने खड़ा है। वह बुनियादी काम है। मकान बनाने के पहले बड़ा काम सामने है। इस वास्ते वहाँ पर अनेक चीजें, जो मैं बता रहा हूँ वे वहाँ प्रथम तुरन्त हो जायें, यह देखना होगा। अब भगवान की क्या योजना होती है? भगवान ही करता है लेकिन यह बात मेरे ध्यान में आयी कि रांची में जहाँ दंगे का वातावरण था वहाँ पर हिन्दू और मुस्लिम प्रेम से दशहरा में शामिल हुए, यह मैंने अपनी आँखों से देखा। तो हमको लगा कि कुछ असर उस शहर पर हमारे काम का पड़ा। उसके अलावा बिहार में हिन्दू मुस्लिम झगड़े दशहरा के निमित्त हर साल हुआ करते हैं। वह इस वर्ष हुआ नहीं, इसका श्रेय किसको दिया जाय, कहना मुश्किल है। परन्तु पहला श्रेय परमात्मा को देना होगा। लेकिन यह एक तथ्य है कि हमारे काम का यह एक परिणाम वहाँ हुआ। उसीके नजदीक बंगाल में दंगा हुआ। उस पर से आशा बनी कि ऐसा व्यापक कार्य चलेगा तो शांति हमारे हाथ में आ सकेगी।

— प्रबन्ध समिति के सदस्यों के बीच
सेवाग्राम, ६-११-'६९

प्रश्न 'कुष्ठ के' काम को सामाजिक और रचनात्मक कार्यों के साथ कैसे जोड़ा जा सकता है?

विनोबा ग्रामदान-आन्दोलन को आपकी तरफ से मदद मिले, इस विषय में मुझे कोई खास अपेक्षा नहीं है। यह तो हर कोई मनुष्य के सामने कर्तव्य उपस्थित है। लेकिन आप एक महान् कार्य कर रहे हैं, उसके साथ और किसी कार्य की अपेक्षा आपसे करना, यह मैं ज्यादती मानता हूँ। लेकिन जैसा कि मैंने सुझाया है, ग्रामसभा बनाने में अगर आप लोग योग दें, प्राप्त करने में नहीं, वह दूसरे लोग करेंगे। लेकिन ग्रामसभा बनाना आपके काम के लिए भी जरूरी है। इस वास्ते ग्रामसभा बनाने में आप लोग योग दें तो बहुत अच्छा होगा, यह मैं कहूँगा। इससे ज्यादा भार आपके काम के अलावा दूसरे काम का मैं आप पर नहीं डालूँगा।

सेवाग्राम, १४-११-६९

शोषण-मुक्ति की दिशा

[पिछले पांच अंकों में हमने इस खाती की ढाणी के आयात-निर्यात तथा महाजनी व्यवस्था का संक्षिप्त में अवलोकन प्रस्तुत किया। इस सर्वेक्षण से स्पष्ट है कि गांव में शोषण काफी मात्रा में होता है। परम्परा से चली आ रही महाजनी ग्रामीण जीवन का अंग बन गयी है। सामान्य किसान यह सोच भी नहीं सकता कि बिना महाजन की सहायता से उसका जीवन चल सकता है। सहकारी बैंक या अन्य व्यवस्था का विकल्प उसे बताया भी जाता है तो वह उसे अमल में लाने की असमर्थता बताता है। इस असमर्थता में काफी तथ्य है, क्योंकि ये विकल्प व्यक्ति-निरपेक्ष होने और केवल नियमों के आधार पर चलने के कारण अधिक असुविधाजनक होते हैं। वर्तमान परिस्थिति में कोई दूसरा विकल्प आसान नहीं है। खाती की ढाणी जैसे छोटे-से गांव में अन्य प्रकार की व्यापार-पद्धति अपनाने के बारे में गांव के लोगों की राय जानने का प्रयास किया गया है। इस पूरे अध्ययन के निष्कर्ष प्रस्तुत हैं अध्ययन-कर्ता के द्वारा ही, इस आखिरी किस्त में।—सं०]

हमने प्राय: सभी लोगों से सहकारी दुकान के बारे में प्रश्न पूछे। क्या ग्रामसभा द्वारा या अन्य प्रकार से व्यापार की सहयोगी व्यवस्था होने से शोषण समाप्त हो सकता है?—यह प्रश्न उनके सामने भी आया था। दूसरा प्रश्न था—"आप व्यापार की कौनसी व्यवस्था पसन्द करते हैं?" अधिकांश लोगों ने जो उत्तर दिये, वे इस प्रकार हैं :

(१) हम महाजन की वर्तमान व्यवस्था को पसन्द करते हैं।

(२) परन्तु यदि ठीक ढंग से चले तो ग्रामसभा द्वारा चलनेवाली सहकारी दुकान सर्वोत्तम होगी।

(३) तीन व्यक्तियों ने सहकारी व्यापार की पसन्दगी जाहिर की।

इस बीच देश में ग्राम-संगठन की एक महान योजना ग्रामदान के रूप में प्रकट हुई है। ग्रामदान के सन्दर्भ में क्या गांव के आर्थिक शोषण को रोकने और ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को सबल बनाने के प्रयास किये जा सकते हैं? गांव के लोग ग्राम-सभा के द्वारा सामूहिक व्यापार पसन्द करते हैं। पर वर्तमान परिस्थिति में वैसा करने में हिचकिचाते हैं। सरकार की ओर से जारी सहकारी बैंक को वे पसन्द नहीं करते हैं। इसके कारणों में सरकार की ओर से चलनेवाली सस्ते गल्ले की दुकान तथा पंचायत समिति की ओर से मिलनेवाली तकावी आदि मदद का उनका अनुभव है। उनका मानना है कि सरकारी व्यापार में भी ऐसी ही व्यवस्था होगी। वर्तमान महाजनी व्यापारिक प्रथा की कठिनाइयों का जिक्र पिछले लेखों में किया गया है। पर उन कठिनाइयों के बावजूद, अपेक्षाकृत उन्हें यही पद्धति पसन्द है।

सहयोगी व्यवस्था की कठिनाइयाँ

गांव की सहयोगी व्यवस्था के बारे में निम्न कठिनाइयों का जिक्र उन लोगों ने किया, जिनके कारण उनकी ग्रामसभा इस ओर कदम नहीं उठा सकी। ये कठिनाइयाँ मोटे तौर पर ये हैं :

१. व्यवस्था की कठिनाई।

२. हिसाब-किताब में नैतिकता कायम रखने की कठिनाई।

३. गोदाम तथा वस्तुओं की सुरक्षा की समस्या।

४. पूंजी की समस्या।

५. आज महाजन से सम्बन्ध है, तो उससे कर्ज व उधार ले लेते हैं। पूरे गांव के स्तर पर व्यवस्था में ये सुविधाएं नहीं मिल पायेंगी।

६. कर्ज-वापसी में महाजन की ओर जो लचीलापन बरता जाता है, वह इसमें नहीं हो सकेगा।

गांव के लोगों का कहना था कि गांव की ओर से व्यापार चलाने में सबसे बड़ी बाधा, व्यवस्था कौन करे, इसकी है। इस समस्या का सम्बन्ध शिक्षा से भी जुड़ जाता है। शिक्षा के अभाव में, खासकर इस गांव में, इस प्रकार का काम उठाना अभी सम्भव नहीं है। सहयोग करने की इच्छा होते हुए भी व्यवस्था की सुविधा के अभाव में यह सम्भव नहीं हो पाता है। सार्वजनिक कार्यों में आर्थिक शुद्धता के बारे में जो शंका उठती है वह यहां भी है। पर्याप्त कुशलता के अभाव में व्यापारिक कार्य चलाने में घाटे की भी पूरी सम्भावना है। गांववालों की इस कार्य के बारे में अनभिज्ञता भी इसे हाथ में लेने के उत्साह में बाधक है।

इस सम्बन्ध में एक और बात विचारणीय है। महाजनी-व्यवस्था में व्यक्ति का व्यक्ति से सम्बन्ध आता है। कर्ज देनेवाला और लेनेवाला, दोनों व्यक्ति होते हैं। इसलिए जहां एक ओर वसूली में लचीलापन रहता है वहां कर्ज लेनेवाले को सामनेवाले व्यक्ति का लिहाज भी रहता है। एक नैतिक बन्धन महसूस होता है। अन्ततोगत्वा वह छोड़ेगा नहीं, किसी भी प्रकार से देना ही पड़ेगा, यह भय तो लगा हुआ ही रहता है। ये सब परिस्थितियां कर्जदार की नैतिकता को कायम रखने में मदद करती हैं। कर्ज की व्यवस्था जब ग्रामसभा की ओर से या अन्य प्रकार से सामूहिक होती है तो व्यक्ति-व्यक्ति के बीच सम्बन्ध के कारण जो परस्पर-लिहाज या नैतिक भावना होती है उसका स्थान नहीं रहता। कर्जदार किसी व्यक्ति के प्रति जो लिहाज का अनुभव करता है उससे वह मुक्त हो जाता है और इस प्रकार नैतिकता ढीली पड़ने लगती है।

व्यावहारिक दृष्टि से सबसे बड़ी समस्या महाजन की ओर से मिलनेवाली सुविधाओं की समाप्ति की है। गांव के लोगों का, किसान का, महाजन से इस प्रकार का सम्बन्ध हो गया है कि वे समझते हैं कि महाजन के सहयोग के बिना, उससे जो सुविधाएं मिलती हैं उनके बिना काम चलना सम्भव नहीं है। यह उनकी व्यावहारिक कठिनाई है।

महाजन उन्हें पर्याप्त उधार देता है,

जिससे उनकी जीविका चलती है, संकट के समय काम आता है। कर्ज से उनकी खेती तथा अन्य कार्य होते हैं। गाँव की ग्रामसभा ये सारी सुविधाएँ समय-समय पर दे सकेगी, इसमें पूरी शंका है। पीढ़ियों से महाजन की गोद से मिलनेवाली आर्थिक सुरक्षा को छोड़ना एक दुरूह कार्य है। यह तभी छूट सकती है, जब कि उन्हें उससे अधिक सुरक्षित व्यवस्था पर पूर्ण भरोसा हो सके।

महाजन का सम्बन्ध किसान से केवल कर्ज या पूँजी मुहैया करनेवाले के रूप में ही नहीं आता, उसका एक दूसरा काम भी है। गाँव का व्यापार, किसान की उपज का निर्यात और आवश्यकता पूर्ति के सामान का। ग्रामदान में ग्रामसभा से यह अपेक्षा रखना स्वाभाविक है कि वह शोषण-मुक्ति के प्रयास में इस प्रकार की व्यवस्था उपलब्ध करे, पर आर्थिक क्षेत्र में इस ओर नगण्य प्रयास हुए हैं।

कुछ सुझाव

आज की व्यवस्था में व्यापार किसी व्यक्ति के हाथ में नहीं रहा है। व्यापार में विशेषज्ञों तथा व्यापारिक संगठनों का महत्व दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है। इसमें स्तरीय तकनीकी व्यवस्था तथा विशेषज्ञों की प्रभावपूर्ण भूमिका रहती है जो कि गाँव में उपलब्ध नहीं है। आज का गाँव न तो व्यापार की अद्यतन उलट-फेर से परिचित है, न विशेषज्ञों की सलाह से ही लाभान्वित है। उन्हें व्यापार की वे सुविधाएँ भी प्राप्त नहीं हैं, जो कि आज आवश्यक मानी जाती हैं। ऐसी स्थिति में ग्रामीण व्यापार को सामूहिक रूप देना, महाजन की बुराइयों से मुक्त करना, एक कठिन काम है। शास्त्री की टोली में जो कुछ भी हमने देखा, इस पर से हमारे कुछ सुझाव इस प्रकार हैं

(क) ग्रामीण व्यापार में शोषण से मुक्ति पाना, महाजन से वैर स्थापित करके सम्भव नहीं है। आज का गाँव इस स्तर की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक परिपक्वता में नहीं है कि उससे अलग, उसके विरोध में आर्थिक स्थिति मजबूत कर सके। महाजन-किसान का सामाजिक-आर्थिक सम्बन्ध इस प्रकार से जकड़ा हुआ है कि उन्हें तोड़ने से गाँव का आर्थिक जीवन छिन्न-भिन्न होगा, जुड़ेगा नहीं।

फिर "ग्रामदान सामाजिक सम्बन्धों में साम्य लाना चाहता है। महाजन को जब ग्रामदान-आन्दोलन में शामिल करेंगे, तो कर्ज के साथ साथ एक मनुष्य मिलेगा। महाजन की बुद्धि, सहानुभूति तथा कार्य-कुशलता ग्रामदान के विकास के लिए एक शक्तिशाली साधन बनेगा।"* स्पष्ट है कि "ग्रामदान और इस प्रकार ग्रामदानी गाँव को इस ओर प्रयत्नशील रहना चाहिए कि महाजन और किसान, दोनों का विरोध और शोषण समाप्त हो। जिस तरह गाँव ग्रामदान में शामिल होते हैं, उसी तरह महाजन भी शामिल होंगे। फिर जिस तरह ग्रामदान में गाँव के लोगों से बीसवाँ हिस्सा जमीन, चालीसवाँ हिस्सा अनाज, तीसवाँ हिस्सा मजदूरी या वेतन छोड़ने को कहा जाता है, उसी तरह महाजन को भी दसवाँ हिस्सा सूद छोड़ने के लिए कहा जा सकता है।"†

(ख) हमने देखा कि व्यावहारिक दृष्टि से सबसे बड़ी समस्या महाजन की मुक्ति से होनेवाले परिणामों का भय है। इस भय से मुक्ति के लिए आवश्यक है कि जिन शर्तों पर और जिन सुविधाओं के साथ महाजन कर्ज मुहैया करता है इन्हीं शर्तों और सुविधाओं के साथ ग्रामसभा भी कर्ज तथा अन्य सुविधाएँ दे। ग्रामसभा ये सुविधाएँ किस प्रकार दे सकती है, यह तो प्रयोग करने पर ही मालूम हो सकेगा, फिर भी प्रारम्भिक तौर पर ये प्रयास किये जा सकते हैं।

१ आज जिस प्रकार का आर्थिक सम्बन्ध किसान का महाजन से होता है, करीब-करीब इसी प्रकार का सम्बन्ध, ग्रामदान के बाद, प्रत्येक किसान का ग्रामसभा से हो। स्पष्ट है कि इस हालत में किसान का महाजन से सीधा सम्बन्ध नहीं हो। महाजन का भी सीधा सम्बन्ध किसान से न होकर ग्रामसभा से हो। व्यवहार में यह सम्बन्ध ग्रामसभा की कार्यकारिणी या उसी प्रकार की अन्य संस्था, जो कि कर्ज आदि का काम देखती हो, से हो।

२ ग्रामसभा कर्ज आदि की व्यवस्था करे और इसके लिए वह उचित शर्तों पर महाजन से पूँजी ले और अपनी जिम्मेवारी पर किसी व्यक्ति को कर्ज और सहायता दे।

३ इस दशा में महाजन को पूँजी वापस करने की और उसकी सुरक्षा की जिम्मेवारी ग्रामसभा की हो। महाजन सीधे किसी किसान से कर्ज की वापसी नहीं कराये।

४ इससे मिलता-जुलता एक दूसरा तरीका भी हो सकता है। किसान सीधे महाजन से पैसा ले। वापसी की जिम्मेदारी भी किसान की हो। परन्तु लेनदारी की शर्तों की पूरी जानकारी ग्रामसभा के पास हो। साथ-ही साथ यह भी तय रहे कि यदि पैसा डूबने की स्थिति आये तो ग्राम-सभा उसमें हस्तक्षेप करे, अर्थात ग्रामसभा के माध्यम से व्यक्ति कर्ज ले। उससे एक तो मनमाना ब्याज तथा अन्य प्रकार के शोषण की गुंजाइश नहीं रहेगी। दूसरे, ग्रामसभा को सीधे कर्ज देने में जो कठिनाइयाँ हिसाब, पूँजी आदि की हो सकती हैं वे नहीं होंगी। तीसरे, महाजन की पूँजी भी सुरक्षित रहेगी।

सम्भव है कि इस प्रकार के प्रयास से महाजन को अपने लाभ छूटने का भय तथा किसान को महाजन से मिलनेवाली सुविधाओं से वंचित होने का भय कम होने में मदद मिले और साथ-ही-साथ महाजन और किसान के सम्बन्ध भी अच्छे बने रह सकें।

(ग) ग्रामदान में गाँव को स्वायत्त इकाई के रूप में मान्य किया गया है। व्यापार की समस्याओं को देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि व्यापार की इकाई भी गाँव हो और व्यक्तिगत लेन-देन के स्थान पर, ग्राम-स्तर पर ग्रामसभा, सहकारी

---

* "ग्रामदान : शंका और समाधान," लेखक श्री धीरेन्द्र मजूमदार, प्रकाशक सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ : ८४, दूसरा संस्करण, १९६७।

† वही, पृष्ठ : ८१।

समितियों, किसी ऐसी ही सामूहिक एजेंसी के माध्यम से व्यापार हो। व्यापार का ग्रामीकरण हो। ग्राम-भण्डार के संगठन द्वारा गांव में जो उत्पादन होता है उसे उचित मूल्य मिले और प्राथमिक बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के सामान गांव में उचित दरों पर उपलब्ध हों, यह प्रयास किया जाय।*

परन्तु यह काम गांव के आपसी सहयोग से ही सम्भव है। जब गांव में आपसी संगठन और शिक्षण बढ़ेगा तो अशिक्षा के कारण बनी समस्याएं धीरे-धीरे सुलझती जायेंगी। व्यापार के लिए ग्रामसभा द्वारा संचालित सहकारी दुकान चलाने का प्रयास किया जा सकता है। इस सहकारी दुकान में गांव में उत्पन्न वह अन्न, जो कि गांव से बाहर किसी कारणवश बेचा जाता है, और वह अक्सर सस्ते भाव में बिकता है, रखा जा सकता है। साथ ही, गांव में उपयोग की चीजें भी उस दुकान में रखी जा सकती हैं, ताकि गांव के लोगों को वे उचित कीमत पर मिलें।

(घ) इन सब कार्यों में मुख्य आवश्यकता पूंजी की होती है। ग्रामदान के बाद ग्रामसभा के पास पूंजी के नई स्रोत निकलते हैं। साथ-ही-साथ व्यक्तिगत रूप से पूंजी-प्राप्ति के जो स्रोत हैं, वे तो इसमें कायम रहते ही हैं, क्योंकि ग्रामदान से व्यक्तिगत अभिक्रम को मुरझाने से रोकने का प्रयास है।

आज गांव में मुख्य रूप से दो प्रकार के कार्यों के लिए पूंजी की आवश्यकता होती है: एक, दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, दूसरा, विकास के लिए पूंजी।

अन्न और पूंजी-संग्रह

जहां तक पहली आवश्यकता का प्रश्न है, इसके लिए अन्न-संग्रह की योजना बनायी जानी चाहिए। यह प्रयास होना चाहिए कि कम-से-कम दो वर्षों के लिए अन्न गांव के भंडार में जमा रहे। यह भी गांव की एक प्रमुख पूंजी होगी। आवश्यकता पड़ने पर इसका उपयोग पूंजी के रूप में किया जा सकेगा। जहां तक अन्न-संग्रह करने की बात है, इस बारे में सवाल उठ सकता है कि आज गांव के पास इतना अन्न कहां है कि संग्रह किया जाय? इसमें काफी सत्यता है। खाती की हालत में तो आज की स्थिति में शायद यह बिलकुल सम्भव नहीं हो। लेकिन खाती की हालत में भी महाजनों से उधार लाने और फसल होने पर अधिक वापस देने की प्रक्रिया चलती है, जिससे काफी मात्रा में शोषण होता है। इसे तो रोका ही जा सकता है।

* "ग्रामदान: प्रचार, प्राप्ति और पुष्टि", सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ: ६५, दूसरा संस्करण १९६६।

अन्न-संग्रह के अतिरिक्त ग्रामसभा निम्नलिखित स्रोतों से पूंजी-संग्रह का काम कर सकती है

१. ग्रामकोष की शर्तों के अनुसार पूंजी का संग्रह। ग्रामदान की शर्तों के अनुसार खाती की हालत में ग्रामकोष जमा किया जाय, तो एकमुश्त रकम जमा हो सकती है। पिछले वर्षों में अकाल पड़ा, फिर भी यदि प्रयास किया गया होता तो आय के ३०वें हिस्से के हिसाब से सन् १९६५-६६ और ६६-६७ में क्रमशः २,०५४ और १,९८९ रु० जमा किया जा सकता था। इस प्रकार दो वर्षों में ४,०४३ रु० जमा किया जा सकता था।

२ ग्रामसभा महाजनों से भी उचित शर्तों पर धन इकट्ठा कर सकती है। आज व्यक्तिगत आधार पर महाजनों से पूंजी ली जाती है। यह काम ग्रामसभा अपनी जिम्मेदारी पर कर सकती है। क्षेत्र से कितनी पूंजी प्राप्त हो सकेगी, यह स्थानीय परिस्थिति पर निर्भर करेगा।

३. इसी प्रकार ग्रामसभा स्वयं किये गये कार्यों से भी पूंजी प्राप्त कर सकती है। जैसा कि हापल ग्रामदानी गांव में घास-बिक्री, जंगल, फल-बिक्री, हड्डी-बिक्री तथा सामूहिक खेती से पूंजी प्राप्त होती है। इस प्रकार की पूंजी भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार से प्राप्त हो सकती है।†

† "हापल: ग्रामदानी गांव: ग्रामसभा की कार्य-पद्धति और सम्बन्धों का अध्ययन"

४ "सबसे पहले विकास के लिए मनःस्थिति तैयार करने और उत्साह पैदा करने की जरूरत है, ताकि पूरा गांव समर्थ लोगों को अपील कर सके कि वे अपनी आमदनी में से ग्रामकोष के लिए सम्पत्ति-दान करें। जन्म, शादी आदि खुशी के अनुष्ठानों पर भी ग्रामकोष के लिए दान देने की परिपाटी कायम करनी चाहिए।"*

५ इसके अतिरिक्त बाहरी साधनों का सहयोग लेना लाजमी है। सरकार द्वारा पूंजी प्रदान करने की कई प्रकार की व्यवस्था है। बैंकों का सहयोग इसमें हो सकता है। अतः ग्रामसभा गांव की तरफ से सरकारी तथा गैर-सरकारी ऋण और सहायता प्राप्त कर सकती।

आर्थिक संगठन

(ङ) मूलतः ग्राम स्तर पर व्यापार, कर्ज एवं पूंजी की इकाई ग्रामसभा है। परन्तु समग्र विकास के लिए यह जरूरी है कि संगठन का वर्तुल धीरे-धीरे आगे बढ़ता जाय। गांव की सारी आवश्यकताएं गांव में ही नहीं पूरी हो सकतीं। इसके लिए आस-पड़ोस के, राज्य और इसी प्रकार देश तथा विश्व-स्तर तक संगठन एवं व्यवस्था-सूत्र को आगे बढ़ाना होगा। चूंकि ग्रामदान ग्रामकेन्द्रित व्यवस्था प्रस्तुत करता है, इस कारण मूल केन्द्र गांव है। गांव के बाद क्षेत्र-स्तर का संगठन होगा। हम कह सकते हैं कि क्षेत्रीय स्तर पर व्यक्ति का आमने-सामने (फेस टू फेस) का सम्बन्ध रहता है। इस ख्याल से भी हमारा क्षेत्रीय संगठन काफी मजबूत होना चाहिए।

आर्थिक दृष्टि से क्षेत्रीय स्तर पर पूंजी, व्यापार, ऋण और आर्थिक विकास की योजना बनायी जा सकती है। यह काम क्षेत्रीय समिति द्वारा किया जा सकेगा। क्षेत्रीय स्तर पर लोगों की आवश्यकताएं तथा क्षेत्र में उत्पादित वस्तुओं के आधार पर आयात-निर्यात की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके लिए क्षेत्रीय स्तर पर आर्थिक क्षेत्र में काम करनेवाला मजबूत संगठन होना आवश्यक है। लेकिन यहां

* श्री धीरेन्द्र मजूमदार, वही, पृष्ठ: ८१।

एक बात याद रखने की है कि मूल घटक ग्रामसभा है और उसके ऊपर की इकाइयाँ गांधीजी के शब्दों में—"समुद्र की लहरों के समान सूक्ष्म होती जायेंगी", और अतत पूरी व्यवस्था में विलीन हो जायेगी।

(च) इस अध्ययन में हमने मुख्य रूप से आयात-निर्यात और कर्ज के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया है। इस बारे में, खाती की ढाणी गाँव का एक आँकड़ा ध्यान में रखा जा सकता है। ऊपर हमने गाँव की कुल आय, आयात निर्यात और कर्ज के माध्यम से गाँव से बाहर जानेवाले धन का उल्लेख किया है। सन् १९६५-६६ और सन् १९६६ ६७ में गाँव की कुल आय क्रमश: ६१,६१० और ५९,६७० रुपये रही। उस गाँव में शोषण का मोटा-मोटा हिसाब इस प्रकार लगता है। उक्त समय में कुल नकद कर्ज ४,५४० रु० रहा, जिस पर १२% ब्याज देना पड़ता। इस रूप में ५,४५० रु० ब्याज के रूप में महाजनो के पास गये। इसके अतिरिक्त उधार लाने-वाली चीजों पर आमतौर पर ४० प्रतिशत ब्याज देना पड़ता है। प्रति वर्ष कुल आयात का करीब आधा भाग उधार आता है। इस प्रकार ४६,८६२ रुपये का आयात, पिछले दो वर्षों में, उधार के रूप में किया गया। अत: उधार लायी चीजों पर विभिन्न प्रकार से १८,७४५ रुपये महाजन को देना पड़ा है। इस हिसाब से पिछले दो वर्षों में गाँव से कुल २४,१९५ रु० महाजनों के पास गये। इस प्रकार इन इन दो वर्षों में कुल आय का १० ९५ प्रतिशत भाग महा-जनों के पास चला गया। यदि ग्रामसभा स्वयं की जिम्मेदारी पर इस काम को करे तो इस छोटे-से गाँव में इतनी बड़ी रकम की बचत हो सकती है।

(छ) गाँव की दुकान चलाने में आने-वाली व्यावहारिक समस्याओं पर विचार करते समय एक मुख्य समस्या सामाजिक नैतिकता की आयी। ग्रामसभा द्वारा आर्थिक कार्य अपने हाथ में लेने, खासकर ऋण प्रदान करने पर, सामाजिक नैतिकता टूटने का भय रहता है। महाजन के साथ के सम्बन्ध में कर्ज-वसूली के लिए उठाये जा सकनेवाले कदमों के डर से, कुछ नया कर्ज न मिलने के डर से और कुछ एहसान की भावना से किसान अपनी नैतिकता कायम रखता है।

महाजन का स्थान ग्रामसभा के ले लेने से वसूली का डर भी उतना नहीं रहेगा। अत ग्रामसभा से प्राप्त कर्ज को वापस करने में आलस्य तथा न वापस करने की भावना पनपने का अधिक अवसर रहेगा।

यह एक व्यावहारिक समस्या है, जिसका हल ग्रामसभा को ढूँढना है। खाती की ढाणी के लोगों को भी इस प्रकार का भय है। इस समस्या से मुक्ति पाने का कोई बना-बनाया फार्मूला प्रस्तुत करना संभव नहीं है। ग्राम-नेतृत्व और लोक-शिक्षण, दोनों मिलकर उपस्थित परि-स्थितियों में इसका निराकरण ढूँढेंगे।

(समाप्त)

यह अध्ययन 'कुमारप्पा ग्राम-स्वराज्य संस्थान' गोकुल, दुर्गापुरा, जयपुर द्वारा कराया गया था। यह पुस्तिका रूप में भी उक्त संस्थान के पते से प्राप्त की जा सकती है। मूल्य : १.५० मात्र।

हरिजनों की शोचनीय स्थिति

मध्यप्रदेश के बस्तर जिले के जगदलपुर क्षेत्र के ३५ गाँवों में २२ दिवसीय अस्पृश्यता-निवारण पदयात्रा करके लौटे हरिजन सेवक संघ के ३ कार्य-कर्ता सर्वश्री हरिप्रसाद अहिरवार, गेंदा-लाल चौहान तथा धर्मप्रकाश शर्मा ने बताया कि वहाँ के हरिजनों में छुआछूत के अपमानजनक व्यवहार के कारण धर्म-परिवर्तन के प्रति रुचि बढ़ती जा रही है, और आदिवासी बड़ी संख्या में ईसाई बनने लगे हैं। जगदलपुर तथा उसके आसपास के ३५ ग्रामों में कुल ११०५ हरिजन परिवार रहते हैं। १५९ हरिजन परिवार ईसाई तथा ८० बौद्ध धर्म स्वीकार कर चुके हैं। ज्ञातव्य है कि स्वराज्य-प्राप्ति के पूर्व धर्म-परिवर्तन का बस्तर क्षेत्र में नामोनिशान तक न था।

पदयात्रियों ने बताया कि ग्रामीण क्षेत्र के बजाय जगदलपुर जैसे बड़े नगरों में धर्म-परिवर्तन का जोर अधिक है और यदि शीघ्र ही इसकी रोकथाम के लिए समुचित उपाय नहीं किये गये तो बस्तर में बड़ी संख्या में हरिजन परिवार ईसाई हो जायेंगे। जगदलपुर में ही १५० परिवार ईसाई तथा ६० परिवार बौद्ध हो चुके हैं।

बस्तर जिले में पदयात्रा-क्षेत्र के ३५ में से १३ ग्रामों में कुएँ हैं और शेष २२ ग्रामों में नदी-नालों से पानी लेते हैं, जिनमें १३ स्थानों पर हरिजनों के लिए पानी लेने पर रोक है। ८ ग्रामों में हरिजनों के लिए मन्दिर खुले हैं और १० में रोक है। ६ ग्रामों के होटलों में हरिजन समा-नतापूर्वक चाय पी सकते हैं, ३ में नहीं। जगदलपुर की होटलों में मेहतर के प्रवेश पर रोक है। १७ ग्रामों के नाई हरिजनों के बाल बनाते हैं, ४ के नहीं। इसी प्रकार १८ ग्रामों के धोबी हरिजनों के कपड़े धो देते हैं, २ ग्रामों के नहीं धोते। १३ ग्राम-पचायतों में हरिजन पंच समानतापूर्वक दरी पर बैठ सकते हैं, किन्तु १५ ग्रामों में नहीं बैठ सकते। ये आँकड़े बताते हैं कि बस्तर का पिछड़ा हुआ आदिवासी समुदाय प्रगतिशील कहे जानेवाले सवर्णों के मुका-बले हरिजनों के प्रति अधिक उदार है। १० ग्रामों के सभी आदिवासियों का हरि-जनों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण रुख है, किन्तु २५ ग्रामों में कुछ परम्परागत भावनाएँ मौजूद हैं।

पदयात्रियों ने बताया कि ३५ ग्रामों के ११०५ में से ५२१ हरिजन परिवार भूमिवान हैं और ६२४ भूमिहीन। भूमि-हीनों की आर्थिक स्थिति विषम है। शैक्षणिक दृष्टि से बस्तर के हरिजन बहुत पिछड़े हुए हैं। ३५ ग्रामों में कुल २७७ हरिजन बालक पढ़ने जाते हैं और ६६५ नहीं पढ़ते। (सप्रेस)

औद्योगीकरण का अभिशाप

आज औद्योगिक युग का एक प्रमुख लक्षण यह है कि इस जमाने की केन्द्रित आर्थिक पद्धति के कारण हजारों लोग जो पहले स्वाश्रित, यानी अपने रोजगार के खुद मालिक थे, वे मजदूर बन गये हैं—चाहे निजी क्षेत्र के कारखानों के चाहे राज्य द्वारा संचालित कारखानों और सेवाओं के। नतीजा यह हुआ है कि काम में रुचि, काम करने की वृत्ति और काम के प्रति निष्ठा—ये सब चीजें समाज में उत्तरोत्तर कम हो रही हैं।

एक ताजा उदाहरण चेकोस्लोवाकिया का है। अभी हाल में वहाँ की सरकार ने सन् १९७० के लिए जो आर्थिक योजना प्रकाशित की है, उसमें इस बात पर चिन्ता प्रकट की गयी है कि काम करने में अरुचि एक राष्ट्रव्यापी समस्या बन गयी है। वहाँ के प्रधानमंत्री श्री स्ट्रूगल ने सारे राष्ट्र को एक तरह से यह उलाहना दिया है कि लोग "हफ्ते में केवल साढ़े तीन दिन काम करते हैं" जब कि कानून के मुताबिक काम के दिन हफ्ते में पूरे पाँच हैं। अगर पूरे पाँच दिन काम हो तो और ज्यादा समय काम किये बिना या और ज्यादा पूँजी लगाये बिना मौजूदा उत्पादन २०% बढ़ सकता है। प्राहा रेडियो के अनुसार काम से गैरहाजिरी राष्ट्र का एक प्रत्यक्ष दुश्मन हो गया है, "हालाँकि सिनेमाघरों में, चाय की दूकानों पर या शराबखानों में गैरहाजिरी नजर नहीं आती।" सन् १९६९ में गैरहाजिरी और मटरगश्ती के कारण ८ करोड़ काम-दिनों का नुकसान चेकोस्लोवाकिया राष्ट्र का हुआ है।

आज चारों तरफ उत्पादन घटने का रोना रोया जाता है, लेकिन इसका जो मुख्य कारण है कि लोग खुद अपने रोजगार के मालिक नहीं रहे हैं, इस बात की तरफ किसी का ध्यान नहीं जाता। खुद अपने रोजगार का मालिक किसान, बढ़ई, मोची या लुहार महीने में एक या दो दिन काम बन्द रखने के सिवा न कभी छुट्टी मनाता है, न कभी काम से गैरहाजिर होता है, न मटरगश्ती करता है, न काम से जी चुराता है। पर कारखाने के मजदूर और दफ्तरों के बाबू लोग आये दिन हड़ताल करते रहते हैं। काम पर आते हैं तब भी काम के ७-८ घंटों में मुश्किल से २-३ घंटे काम करते हैं। उत्पादन घटने से चीजों का जो अभाव होता है और महँगाई बढ़ती है उसकी तकलीफ भी बेचारे गरीब को ही बर्दाश्त करनी पड़ती है, क्योंकि दूसरे लोग तो ज्यादा पैसे देकर अपनी जरूरतें पूरी कर लेते हैं।

औद्योगिक युग ने एक तरफ तो करोड़ों लोगों को "मालिक" से मजदूर बना दिया है और दूसरी ओर फिर इन लोगों से गुलामों की तरह काम लेने के

—सिद्धराज ढड्ढा

लिए तरह-तरह की कानूनी पाबन्दियाँ लगायी जाती हैं। चेकोस्लोवाकिया की योजना में इस बात का संकेत है कि उत्पादन की परिस्थिति में सुधार नहीं हुआ तो फिर से "छः दिन का हफ्ता" लागू कर दिया जायेगा। वहाँ की सरकार ने कुछ दिन पहले ही ऐसे नियम बनाये हैं जिनके अनुसार मटरगश्ती और कामचोरी दण्डनीय अपराध माने गये हैं। इन्हें "समाजवादी अर्थ-व्यवस्था और कार्यानुशासन के प्रति अपराध, तथा समाज के प्रति द्रोह" बताया गया है। इन "अपराधियों" के लिए एक साल तक की जेल और बड़े-बड़े जुर्माने की सजा भी रखी गयी है। जाहिर है कि प्रत्यक्ष गुलामी की प्रथा चाहे दुनिया से उठ गयी हो, लेकिन आज के युग में जिस तरह करोड़ों मनुष्य वास्तव में गुलाम बन गये हैं या बना दिये गये हैं उस तरह से शायद दुनिया के इतिहास में वे कभी नहीं थे। बदकिस्मती से हिन्दुस्तान तथा दुनिया के दूसरे अन्य नये आजाद मुल्क भी उन्नति की भ्रामक होड़ में पश्चिमी मुल्कों के केन्द्रित उद्योगवाद की अन्धी नकल कर रहे हैं और उसी गड्ढे की ओर तेजी से साथ जा रहे हैं जिस ओर वे गये हैं। सच तो यह है कि यह नकल भी अन्धे होकर नहीं बल्कि जानबूझकर की जा रही है, क्योंकि लाखों लोगों को गुलाम बनाकर सत्ता और सम्पत्ति का उपभोग करना इस पद्धति के बिना सम्भव नहीं है। इसीलिए आज का बुद्धिवादी वर्ग और शासकगण औद्योगीकरण की इस पद्धति को देवता मानकर पूज रहे हैं।

पाप की कमाई

राजस्थान के बहुत-से हिस्सों में, खास करके पश्चिमोत्तर इलाके में इस साल भी अकाल की गहरी छाया पड़ी है। जैसलमेर जैसे कुछ पश्चिमी जिलों में तो लगातार अकाल का यह चौथा-पाँचवाँ या सातवाँ-आठवाँ बरस है। दूसरे लोग तो ऐसी आलोचना करते ही हैं, लेकिन सर्वोदय-कार्यकर्ता भी अक्सर यह कहते सुने जाते हैं कि जहाँ अकाल से लोग पीड़ित हैं वहाँ भी हम ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की बात करते हैं, उसका मेल नहीं बैठता। जहाँ आदमी भूख से मर रहा है वहाँ उसे राहत न देकर यह बात कैसे कही जाय ?

अभी बीकानेर के कोलायत प्रखण्ड में जो ग्रामदान-अभियान चला उसमें बहुत-से गाँवों के लोग भी आये थे। वहाँ के शिविर में भी चर्चा का यह मुख्य विषय रहा। 'दूरदृष्टि से शायद ग्रामदान की व्यवस्था अकाल को टालने में सहयोगी हो लेकिन तात्कालिक राहत से उसका क्या सम्बन्ध है ?'—इस प्रश्न की चर्चा शिविर में खुलकर हुई, और चर्चा के बाद जो भाषण हुए तथा वातावरण बना उस पर से लगा कि अकाल जैसे संकट के लिए भी ग्रामदान की योजना बहुत उपयोगी है।

सत्ता मे बैठे हुए लोगो का या सत्ताकांक्षियो का स्वार्थ तो इसीमे है कि लोग मोहताज बने रहें, और राहत की भीख मांगते रहे, ताकि कुछ टुकड़े फेंककर उनकी वाहवाही लूटी जा सके और जगह-जगह बिचौलियों को "कमाई" का मौका दिया जा सके, जिससे वे एहसान से दबे रहे और चुनावो मे लोगो को भेड़-बकरियो की तरह हांककर उनके वोट दिलाने मे कामयाब हो। अकाल के नाम पर जो लाखो-करोड़ो रुपये खर्च हो रहे है उनमे लोगो को तो जो राहत मिली होगी सो मिली होगी लेकिन यह आम चर्चा और अनुभव है कि गाँव-गाँव के तिकड़मबाज कई पच-सरपच, जिनके पास पहले कौड़ी भी नही थी आज उनके एक-एक, दो दो मरसीडीज ट्रक दौड़ते है। सिर्फ २-३ बरस से नौकरी पर लगे हुए "ओवरसीयर" लड़कों के घरो मे भी दो-दो स्कूटर है। सड़क पर वास्तव मे काम किया १०० आदमियो ने और मजदूरी चुकायी गयी २०० की। बीच मे पच-सरपच, पार्टियों के कार्यकर्ता, छोटे-मोटे ओवरसीयर और इन्जीनियर तथा ठेकेदार मालामाल हो गये। एक तरफ तो मनुष्यता कराह रही है, लोग अपने पशुओ, बाल-बच्चों आदि के साथ भूखे रहकर चुपचाप दिन गुजार रहे हैं, और दूसरी तरफ उनको राहत पहुँचाने के नाम पर लाखो-करोड़ों पर हाथ साफ करके बिचौलिये और उनके आधार पर चुने जानेवाले राजनीतिक नेता विलास कर रहे है। इसी लिए इन लोगों की आवाज उठती है, मोर्चे निकाले जाते है, अनशन के ढोंग किये जाते है कि "हमारे यहाँ भयकर अकाल है, क्षेत्र को अकाल-पीड़ित घोषित किया जाय और वहाँ राहत के काम खोले जायें।" फिर वे ही राजनैतिक नेता सरकार मे बैठकर अपने-अपने इलाको के लिए लाखों करोड़ो रुपया मजूर कराते है, इतना ही नहीं, राहत के काम मे भी पक्षपात किया जाता है। हमने सुना, एक जगह ग्रामसभा मे मत्री महोदय ने खुलेआम कहा कि चुनाव मे तो आप लोगो ने हमारी पार्टी को वोट दिया नहीं, अब हम क्यों आपकी मदद करें?

राजस्थान के इस पश्चिम के इलाके मे पिछले बरसो मे जो परिस्थिति बनी है वह बिहार की अपेक्षा भी ज्यादा भयकर है लेकिन दुर्भाग्य से राजस्थान में कोई "जयप्रकाश" नहीं है। इस क्षेत्र मे हजारो-लाखों परिवारो का मुख्य धन्धा पशुपालन रहा है। घी, दूध, ऊन और पशु बेचकर ये लोग अपनी आजीविका चलाते रहे हैं। यहाँ के लिए यह बात मशहूर है कि गांवो मे पानी मिलना कठिन होता था, लेकिन दूध और घी नही। आज यह परिस्थिति तेजी के साथ बदल रही है। क्षेत्र की करीब तीन-चौथाई गायें, और कहीं-कहीं तो ९०% तक मर चुकी हैं। आदमियो की हानि नहीं हुई हो सो बात नहीं है, लेकिन न मालूम क्यो, सरकार और सरकारी अधिकारी कभी यह बात स्वीकार नही करते। मरनेवाले जब दम तोड़ते हैं तब वे स्वस्थ थे यह तो नही कहा जा सकता। किसी-न-किसी प्रकार की बीमारी तो उन्हें होती ही है। सामान्य लोग देखते और जानते है कि ये आदमी भूख से मरे हैं, लेकिन सरकार की तरफ से हमेशा इसका प्रतिवाद किया जाता है कि ये भूख से नहीं, बीमारी से मरे हैं। एक क्षेत्र मे एक सरपच ने सरकार को तार दिया कि यहाँ अमुक-अमुक व्यक्ति भूख से मर गये हैं, तो बाद मे पचायत समिति की मीटिंग मे उनसे जवाब तलब किया गया कि उसने ऐसा तार क्यो दिया इस साल कई जगह फ्लू की बीमारी आयी है लेकिन जैसलमेर, बाड़मेर मे वह ज्यादा जोर पर है। वहाँ के लोगो को पूरी खुराक नहीं मिलने के कारण उनके शरीर मे रोग के प्रतिकार की शक्ति समाप्त हो गयी है, और वे जल्दी मरते हैं। अकाल नहीं होता तो वे हरगिज इस तरह नहीं मरते। पर सरकार कहती रहती है कि भूख से कोई नहीं मरा। गनीमत है कि इतनी शर्म अभी बाकी है कि भूख से कोई मरता है तो सरकार उसे अपने लिए लाछन की बात मानती है।

हमने लोगो को समझाया कि गाँव-गाँव मे सगठन हो, लोग जाग जायें और मिलजुलकर अकाल की परिस्थिति का सामना करें, तो हर हालत मे परिस्थिति आज से बेहतर होगी। सड़क, तलाई (तालाब) आदि के जो सरकारी काम खुले उनकी जिम्मेदारी ग्रामसभा ले, ईमानदारी के साथ काम करे, बाहर से मिलनेवाली सहायता का वितरण भी गाँववाले मिलजुलकर करें तो काम अच्छा और ठोस तथा कम खर्च मे ज्यादा होगा, आगे के लिए सुख सुविधा के और उत्पादन के साधन खड़े हो जायेंगे और राहत भी गांवो मे सचमुच जो गरीब और भूखा है उस तक पहुंचेगी, बीच मे ही नही रह जायगी—इन सब बातो से कौन इन्कार कर सकता है? हमने गांववालों को यह भी समझाया कि सकट के समय बाहर से तो मदद आती ही है और आनी चाहिए, लेकिन गाववालो को स्वय भी एक-दूसरे की मदद करनी चाहिए तो समाज के सामने और ईश्वर के सामने भी, वे दया और मदद के ज्यादा हकदार होगे।

इस तरह गाँव-गाँव मे लोक-जागृति, एकता, सगठन, ईमानदारी और परस्पर सुख दुख का बँटवारा अगर होता है तो आज की अपेक्षा कितनी बेहतर स्थिति होगी? और ग्रामदान की योजना इन सब के अलावा और है भी क्या? एकता, सगठन, परस्पर-सहयोग, यही तो ग्रामदान है। भाटी, १०-१-'७०

सेवाग्राम-शिविरों के लिए रेलवे-रियायत

इन्दौर, ७ जनवरी। प्राप्त जानकारी के अनुसार सेवाग्राम मे आयोजित किये जानेवाले गांधी-शताब्दी-शिविरो मे जो लोग भाग लेना चाहते है, उनके लिए रेल किराये मे छूट की अवधि रेलवे-बोर्ड ने जनवरी, १९७० के अन्त तक बढ़ा दी है। इस सुविधा के इच्छुक व्यक्ति "निदेशक, गांधी-जन्म शताब्दी-शिविर, ६, राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली-१" से सम्पर्क स्थापित करें। (सप्रेस)

ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य

'ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर-सहयोग से काम लेगा। क्योंकि हरएक देहाती के जीवन का सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और गाँव की इज्जत के लिए मर मिटे।' —गांधीजी

अब समय आ गया है कि इस देश के बुद्धिवादी, किसान, मालिक-मजदूर, सभी इस बात पर विचार करें कि ग्रामदान हमें ग्रामस्वराज्य की ओर अग्रसर करता है या नहीं? यदि हमें जँच जाय कि हाँ, इससे हमें ग्रामस्वराज्य के दर्शन हो सकेंगे, तो यही अवसर है कि हम लोग इस पुण्य काम में तुरन्त लग जायँ।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति, जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

राष्ट्रीय एकात्म-भाव के लिए अनशन-सत्र

— १ अक्तूबर '६९ से २२ फरवरी '७० तक —

देश के हिंसाकांडों से व्यथित महाराष्ट्र के परभणी जिले के बसमतनगर के युवकों ने २४ सितम्बर '६९ को हुतात्मा बहिर्जी स्मारक विद्यालय के प्रांगण में महाराष्ट्र शांति-सेना के संगठक श्री गंगाप्रसाद अग्रवाल के साथ साम्प्रदायिक दंगों तथा देश में होनेवाले हिंसा कांडों पर चर्चा की, और तय किया कि हम युवकों को जागृत रहते हुए कुछ ऐसा प्रयास करना चाहिए, जिससे राष्ट्रीय एकात्म भाव दृढ़ हो तथा अपने शहर की साम्प्रदायिक एकता कायम रहे। इसके लिए १ अक्तूबर '६९, से कस्तूरबा-पुण्यतिथि २२ फरवरी '७० तक के लिए एक अनशन सत्र प्रारम्भ करने का निश्चय किया गया। अनशन-सत्र के २८ दिसम्बर '६९ तक के ८५ दिनों का कार्य-विवरण यहां दिया जा रहा है।

एक आमसभा का आयोजन कर बसमतनगर के नगराध्यक्ष, प्रतिष्ठित नागरिक तथा अधिकारियों के सम्मुख यह विचार रखा गया। सबने सहानुभूति पूर्वक इसके लिए सम्मति प्रकट की। इस पर प्रत्यक्ष अमल करने की दृष्टि से एक समिति बनायी। उसका संयोजकत्व श्री रमेश अवेकर एडवोकेट ने स्वीकार किया। समिति ने जनता के सामने निम्नलिखित त्रिसूत्री कार्यक्रम रखकर अमल करने के लिए नामों की मांग की।

१ दिनांक १ अक्तूबर '६९ से साम्रु दिन अनशन सत्र के लिए बैठें।

२ दिनांक २ अक्तूबर '६९ से २२ फरवरी '७० तक अखंड अनशन-सत्र चलाने के लिए, प्रतिदिन एक एक नागरिक स्वयं प्रेरणा से योगदान दें।

३ बसमतनगर शहर को वार्डों के अनुसार विभाजित कर हरेक वार्ड में सभा आयोजित करके अधिक-से अधिक नागरिकों तक यह विचार पहुंचाकर अनशन-सत्र की कल्पना को स्पष्ट किया जाय।

इस प्रकार २८ सितम्बर की रात को ९ बजे पहली सभा मुस्लिम-वार्ड में आयोजित की गयी। सभा में संयोजक श्री अवेकर एडवोकेट, जिला शांति-सेना-प्रमुख श्री रमेश कोठीवाल एडवोकेट और श्री गंगाप्रसाद अग्रवाल के भाषण हुए तथा पत्रकार श्री उत्तम दगडू का भी सहयोग मिला। ३० सितम्बर को दूसरी सभा बौद्ध बस्ती में आयोजित की गयी। साथ साथ अनशन-सत्र के लिए नाम लिखवाने का कार्य भी आरंभ किया गया। रिपब्लिकन पार्टी के कार्यकर्ता श्री मधनाथ दूधमल का हमें सक्रिय सहयोग मिला।

दिनांक १ अक्तूबर को अनशन-सत्र के प्रारंभ के समय पहले दिन ४ व्यक्ति अनशन के लिए बैठे, जिनमें एक मुस्लिम भाई थे। अनशन के लिए बैठनेवालों के नामों की जानकारी आम जनता को हो, इस दृष्टि से मुख्य बाजार में बोर्ड पर नाम लिखने की प्रथा जारी की। फलस्वरूप कई लोग सहानुभूति के साथ अनशन-कर्ता से मिलने के लिए आने लगे। इनमें से कई लोग तो अनशन के लिए अपने नाम भी दर्ज करने लगे। अनशन करनेवालों में मिलनेवालों में शिक्षक, विद्यार्थी, प्रतिष्ठित नागरिक, राजनैतिक और सामाजिक कार्यकर्ता आदि विभिन्न क्षेत्रों के लोग हैं। महाराष्ट्र राज्य के उपमंत्री श्री वामनराव नायक भी अनशन करनेवालों में मिले।

शुरू में हर रोज एक व्यक्ति अनशन करेगा, यह आशा रखी गयी थी, परन्तु तीन चार दिन बाद लोगों का उत्साह बढ़ता गया, और अधिक संख्या में लोग अनशन के लिए बैठे। दुर्गासिंह की भजनी-मंडली ने एक दिन अनशन-स्थान पर रात को भजन भी गाये। रिपब्लिकन पार्टी के श्री दूधमलजी ने अपने सहकारियों के साथ अनशन किया। उसी दिन उनके सहयोगियों ने रातभर भजन गाये।

परिषद प्रशाला बसमतनगर के विद्यार्थियों का उत्साह विशेष था। उनकी ५ से ७ विद्यार्थियों की अनेक टुकड़ियां क्रमशः अनशन के लिए बैठीं। स्थानीय हुतात्मा बहिर्जी स्मारक विद्यालय के विद्यार्थियों की भी अनेक टुकड़ियां अनशन सत्र में भाग ले चुकी हैं। यहां के शासकीय अध्यापक विद्यालय में शिक्षा पानेवाले छात्राध्यापक हर छुट्टी के दिन अनशन-सत्र में अपना सहयोग दे रहे हैं। इसी प्रकार यहां के गर्ल्स-स्कूल के छात्र भी इस कार्य में अपना हाथ बंटा रहे हैं। अब तो इस अनशन-सत्र की खबर पड़ोसी गांवों में भी फैल गयी है। फलस्वरूप दूसरे गांवों के लोग भी सत्र में योगदान देने लगे हैं। कुरुंदी गांव के दो मजदूरों ने इस कार्य के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के लिए एक दिन अनशन किया। इसी तरह आठ गांवों के लोगों ने भी अनशन-सत्र में भाग लिया।

अनशन सात बजे प्रातःकाल की प्रार्थना से आरम्भ होता है और दूसरे दिन सात बजे प्रातःकाल को अनशनकर्ता अनशन समाप्त करता है।

दिवाली के प्रथम दिन मुसलिम के पुत्र नहाने की प्रथा है। इसलिए उस दिन अनशन कलेक्टर के सामने समस्या खड़ी हुई, तब उनकी ६५ वर्षीया वृद्धा माता सलाबाई यहाणे ने युवक अपने पुत्र के बदले खुद उपोषण के लिए बैठीं।

इस समय अनशन के लिए बैठने के इच्छा रखनेवालों की नामावली में कई स्त्रियां भी हैं।

अनशन-सत्र के साथ ही शहर की हर गली में रात को वार्ड की सभा हम लोग आयोजित करते हैं। इसके 'राष्ट्रीय एकात्मता समिति' के सदस्य प्रचार-कार्य कर रहे हैं। ऐसी दो सभाओं में महाराष्ट्र राज्य के उपमंत्री श्री वामनरावजी नायक भी उपस्थित हुए थे।

अनशन-सत्र के बीते ८५ दिनों में ३८ स्त्रियों, और ३२५ पुरुष, कुल ३६३ लोगों ने अनशन में भाग लिया। इसके अलावा २२१ छात्र-छात्राओं ने भी भाग लिया।

अनशन के ५० वें दिन, दिनांक २१

नवम्बर '६९ को स्थानीय शिक्षण-संस्थाओं ने अनशन-सत्र का विवरण प्रसारित किया।

११ दिसम्बर को अनशन स्थान पर ईद के त्योहार के अवसर पर हिंदू-मुस्लिमों का सम्मिलित-कार्यक्रम हुआ। जाहिर सभा में सबने एकात्म-भाव प्रकट किया।

दिनांक १९ दिसम्बर को महाराष्ट्र शांति-सेना मंडल के संगठक श्री गंगाप्रसाद अग्रवाल के वार्ड में महिलाओं की सभा आयोजित की गयी। इसमें बुल्ढाणा और उस्मानाबाद जिले के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का सहयोग मिला। उसी दिन से उस वार्ड में २५ शांति-पात्र रखे गये और २४ पात्र २६ फरवरी तक रखवाने का निश्चय किया। इस शहर में कुल १०० शांति-पात्र जारी रखने का हमारी समिति ने निर्णय लिया है।

अनशन-सत्र में अब तक भाग ले चुकनेवाले लोगों का एक सम्मेलन दिनांक २१ दिसम्बर को आयोजित किया गया। इसमें २५ स्त्रियों ने भी भाग लिया।

२४ दिसम्बर को पूरे देश में बादशाह खाँ का ८० वाँ जन्म-दिवस मनाया गया। इस सत्र में हमारे यहाँ दो घंटों तक मुस्लिम वार्ड में, जहाँ ३५ मुस्लिम महिलाओं द्वारा अंबर चरखा केन्द्र चलता है, वहाँ उस दिन सफाई कार्य हुआ। दिन भर शहर में बादशाह खान के आत्मचरित्र की साहित्य बिक्री की गयी।

'साम्ययोग' साप्ताहिक में प्रकाशित हमारे यहाँ के अनशन-सत्र का विवरण पढ़कर दिल्ली के तीन कालेज-युवकों ने भी अनशन किया और हमें पत्र लिखकर सक्रिय समर्थन किया। अनशन-सत्र के ८६ वें दिन श्री जयप्रकाश नारायण बसमतनगर पधारे। उन्होंने इस कार्यक्रम की बहुत सराहना की और कहा कि यह खबर सारे देश में फैलनी चाहिए और जगह-जगह ऐसे सक्रिय कार्य होने चाहिए।

—वसंत कुलकर्णी,
मंत्री, राष्ट्रीय एकात्मता समिति
वसमतनगर,

"सर्वोदय आपके लाने से ही आयेगा"

"अधिकतम लोगों की अधिकतम भलाई के सिद्धान्त में मेरा विश्वास नहीं है। यह हृदयहीन सिद्धान्त है और इसने मानवता को हानि पहुँचायी है। एकमात्र सच्चा, सम्मान्य मानवीय सिद्धान्त है सभी लोगों की अधिकतम भलाई; और इसकी प्राप्ति उच्चतम आत्मबलिदान से ही हो सकती है।"

—महात्मा गांधी

इस दिशा में आपका एक पग पर्याप्त है, अभी उठाइए।

जन-सम्पर्क समिति द्वारा प्रसारित,
राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी समिति,
६-राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली-१

राष्ट्र के नागरिकों से अपील

• महात्मा गांधी का जीवन सत्य की खोज का अनुपम उदाहरण है। उनकी दिव्य वाणी और विचार मानव-जीवन को प्रेरित एवं प्रभावित करते रहे हैं और आगे आनेवाली पीढ़ियों को अंधकार में प्रकाश देते रहेंगे।

• गांधीजी के इन विचारों को घर घर पहुँचाने के उद्देश्य से सर्व सेवा संघ प्रकाशन ने गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के सहयोग से सर्वोदय साहित्य माला प्रकाशित की है, जिसे राष्ट्रीय गांधी-जन्म शताब्दी समिति ने मान्य किया है। परिवार में ऐसे साहित्य के पठन मनन और चिन्तन से वातावरण में नयी सुगन्धि, शान्ति और भाईचारे का निर्माण होगा।

• इसमें गांधीजी के विविध रूप से चुने हुए साहित्य की १००० पृष्ठों की ५ किताबें केवल पांच रुपये में दी जाती हैं। १२०० पृष्ठों के साहित्य की ७ किताबें केवल ७ रुपये में दी जायेंगी।

• यह चयन सर्वजन, विशेषकर युवा जिज्ञासु एवं नवयुवकों को गांधी-विचार का बोध कराने के लिए सर्वोत्तम है। देश के समस्त नागरिकों, विशेषकर विद्यार्थियों शिक्षक, व्यापारी, राजकर्मचारी, एवं समाजसेवी कार्यकर्ताओं आदि से अनुरोध है कि वे अपने घरों में या संस्थाओं में यह सेट अवश्य रखें एवं इसे घर-घर पहुँचाने में पूरा सहयोग दें और इस तरह इस सेट का अधिकाधिक प्रचार हो। इस प्रयत्न में केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों का सहयोग भी वांछित है।

वि. वि. गिरि
(व. वे. गिरि, राष्ट्रपति)

गोपालस्वरूप पाठक
(गोपालस्वरूप पाठक, उपराष्ट्रपति)

इन्दिरा गांधी
(इन्दिरा गांधी, प्रधान मंत्री)

जयप्रकाश नारायण
(जयप्रकाश नारायण, शान्तिसेना मण्डल)

रंगनाथ दिवाकर
(रंगनाथ दिवाकर, मंत्री, राष्ट्रीय गांधी शताब्दी समिति)

मोरारजी देसाई
(मोरारजी देसाई, कांग्रेस)

य. ब. चव्हाण
(य. ब. चव्हाण)

(उ. न. ढेबर, खादी ग्रामोद्योग कमीशन)

(जगजीवनराम, कांग्रेस)

C Rajagopalachari
(सी. राजगोपालाचारी, स्वतंत्र पक्ष)

AKGopalan
(अ. क. गोपालन, मार्क्सवादी पक्ष)

प्रकाशवीर शास्त्री
(प्रकाशवीर शास्त्री, भा. क्रान्तिदल)

वि के आर वि राव
(वि. के. आर. वि. राव, शिक्षामंत्री)

(दौलतसिंह कोठारी, अध्यक्ष यू. जी. सी.)

(एस. निजलिंगप्पा, कांग्रेस)

(एस. एम. जोशी, संसपा)

अटल बिहारी वाजपेयी
(अटलबिहारी वाजपेयी, जनसंघ)

(एन. जी. रंगा, स्वतंत्र पक्ष)

S. Jagannathan
(एस. जगन्नाथन, अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ)

Surendranath Dwivedy
(सुरेन्द्रनाथ द्विवेदी, प्रजा)

राधाकृष्ण बजाज
(राधाकृष्ण बजाज, मंत्री, सर्व सेवा संघ)

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी १

(पृष्ठ २३४ का शेषांश)

की पीठ पर सवार है, और बेचारे बूढ़े बाप को पीछे-पीछे दौड़ा रहा है।' जब दोनों साथ गधे की पीठ पर बैठ गये तो लोगों ने कहा : 'इन कम्बख्तों को देखो। जरा भी ख्याल नहीं कि गधे पर क्या बीतती होगी!' दोनों पैदल चलने लगे तो लोग बोले : 'ऐसे बेवकूफ कहाँ मिलेंगे कि गधा रखते हुए भी पैदल घसीट रहे हैं।'

हम अपने मित्रों और शुभचिन्तकों को कैसे बतायें कि हम न बेटे का बूढ़ा बाप बनना चाहते हैं, न गधे का बेवकूफ मालिक, और न स्वयं साक्षात गधा। लेकिन ही यह हैसियत हासिल करने के लिए हममें से इतने लोग अपनी जिन्दगी घिस घिसकर खत्म नहीं कर रहे हैं। हमें आश्चर्य होता है कि लोग हमें भला या बुरा कहने के पहले हमारी बात सुनते और समझते क्यों नहीं? क्या इतने धीरज की भी आशा नहीं की जा सकती?

आखिर, हम क्या चाहते हैं? हमारी दृष्टि क्या है? हम किसे क्रान्ति समझते हैं? समाज-परिवर्तन की हमारी पद्धति क्या है?

इतना तो हम फौरन कह दें कि हम राजनीति से अलग नहीं हैं। जरूर प्रचलित दलगत राजनीति में भी नहीं हैं। हाँ, सिर्फ सरकार बदलने से संतोष नहीं है। हम आज की उस पूरी राजनीति को ही बदलना चाहते हैं जिसमें सरकारें इस तरह बनती और बिगड़ती हैं। हम मानते हैं कि सरकार अच्छी हो, फिर भी लोकतंत्र के लिए बुरी है। क्यों?

हम ऐसी समाज-व्यवस्था चाहते हैं जिसमें सत्ता भी जनता के हाथ में हो और सम्पत्ति भी जनता के हाथ में हो। तभी लोकतंत्र होगा, और तभी समाजवाद होगा।

जनता के हाथ में सत्ता होगी तो राजनीति कैसी होगी? सरकार कैसे बनेगी, चलेगी? विरोधी दल होगा या नहीं? चुनाव की क्या पद्धति होगी? और जबतक ऐसी स्थिति नहीं आती तबतक प्रचलित राजनैतिक दलों और मौजूदा सरकारों के प्रति हमारा क्या रुख होगा?

—राममूर्ति

आन्दोलन के समाचार

रायपुर प्रखण्ड में ९६ ग्रामदान

इन्दौर, ७ जनवरी। प्राप्त जानकारी के अनुसार सीधी जिले में जिला गांधी शताब्दी-समिति द्वारा चलाये जा रहे ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-अभियान के प्रथम और दूसरे दौर में क्रमशः ३६ व २६ ग्रामदान घोषित हुए। ३४ गाँव इसके पूर्व के ग्रामदान हैं। इस प्रकार रायपुर प्रखण्ड में अब तक कुल ९६ ग्रामदान संकलित हो चुके हैं।•

इच्छावर तहसील में ६० ग्रामदान

भोपाल, ७ जनवरी। प्राप्त जानकारी के अनुसार सीहोर जिला गांधी-शताब्दी के अन्तर्गत जिले में ग्रामदान-अभियान चलाया जा रहा है। सीहोर जिले की ७ तहसीलों में १९ दिसम्बर से १८ जनवरी तक ७ शिविर और बीच-बीच में पदयात्राओं का कार्यक्रम चला।

इच्छावर तहसील में शिविर-काल में ही ६० ग्रामों के जन-प्रतिनिधियों ने ग्रामदान का सामूहिक घोषणा-पत्र भरकर ६० गाँवों के ग्रामदान की घोषणा की। इस प्रकार इच्छावर तहसील पैंतालीस प्रतिशत ग्रामदान में शरीक हुई।

स्मरण रहे, इन तहसील शिविरों में तहसील-स्तर के समस्त अधिकारी कर्मचारी, राजनैतिक संस्थाओं के कार्यकर्ता और समाजसेवी-संस्थाओं ने भाग लिया। गांधी-शताब्दी के क्षेत्रीय संगठक एवं गांधी स्मारक निधि के वरिष्ठ सेवक श्री यशवन्त कुमार सिन्धु ग्रामदान-अभियान का संचालन कर रहे हैं। (सप्रेस)

छतरपुर में शान्तिसेना

शांति-सेना मण्डल के क्षेत्रीय कार्यालय एवं जिला गांधी जन्म-शताब्दी समिति के सम्मिलित प्रयास से १८ दिसम्बर '६९ को गांधी स्वाध्याय मण्डल छतरपुर में नगर के प्रमुख नागरिकों की एक बैठक श्री रामसहायजी तिवारी की अध्यक्षता में हुई, जिसमें नगर शांति सेना के संगठन पर विचार किया गया। निश्चित हुआ कि नगर के प्रत्येक वार्ड में कम से-कम १० शांति-सैनिकों का एक दस्ता अपना शांति-केन्द्र बनाकर शांति-स्थापनार्थ सतत जागरूक और क्रियाशील रहे। नगर शांति-सेना के संगठन में प्रत्येक शांति-केन्द्र का संयोजक प्रतिनिधि के रूप में रहेगा।

दिनांक १ दिसम्बर '६९ को बलदाऊजी के मन्दिर में पन्ना नगर के नागरिकों की एक बैठक हुई, जिसमें नगर शांति-सेना के संगठन पर विचार किया गया।

अ० भा० शांति-सेना मण्डल, राजघाट वाराणसी-१ का क्षेत्रीय कार्यालय, गांधी-स्मारक भवन, छतरपुर (म० प्र०) में खुल गया है। श्री रामगोपाल दीक्षित से पत्र व्यवहार इसी क्षेत्रीय कार्यालय से किया जा सकता है।•

लोकयात्री दल का पता

—फरवरी के प्रथम सप्ताह तक—

द्वारा—श्री विनय भाई अवस्थी,
गांधी-विचार केन्द्र,
सिविल लाइन, कानपुर—(उ० प्र०)

उत्तरप्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समिति का कार्यालय लखनऊ स्थानान्तरित

उत्तरप्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समिति का कार्यालय, अब प्रदेश के केन्द्र एवं मध्य स्थान लखनऊ स्थानान्तरित किया गया है।

पता है :

उत्तरप्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समिति,
रोशनदौला-कचहरी,
कैसरबाग, लखनऊ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज। १२ रु०, एक प्रति १५ पै०), विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

कहाँ गण, कहाँ तंत्र ?

एक सुप्रसिद्ध हिन्दी साप्ताहिक के गणतंत्र विशेषांक के कवर-पेज पर पूरे बारह रंगीन चित्र छपे हुए हैं। ये चित्र हैं चुनी हुई बारह झाँकियों के, जो २६ जनवरी के अवसर पर विभिन्न राज्यों द्वारा दिल्ली में प्रस्तुत हुई हैं। सभी झाँकियों में लोकगीत, लोकसंगीत और लोकनृत्य के दृश्य हैं। सभी दृश्य सुन्दर हैं; इसलिए भी सुन्दर हैं कि अधिकांश में सुन्दरियाँ हैं। और, जितने सुन्दर दृश्य स्वयं हैं, उससे अधिक सुन्दर उनकी फोटोग्रैफी है।

इन चित्रों को देखकर ऐसा लगता है जैसे भारत के गणतंत्र का इतना ही अर्थ रह गया है कि दिल्ली की तथाकथित जनता के मनबहलाव के लिए साल में एक बार देश भर से 'तमाशे' इकट्ठा किये जायँ ताकि लोग देखें कि भारत कितना विविध है, कितना रोचक और आकर्षक है, और भारत के लोक-जीवन में राजधानी-निवासियों के रंजन के लिए कितना मजेदार सामान भरा पड़ा है। शहरों में रहनेवाले पैसेवालों को इस तरह के मनबहलाव की आदत होती जा रही है। और इस देश में पैसेवालों को स्त्री की इज्जत से लेकर संत की श्रद्धा तक कौनसी ऐसी चीज है जो नहीं मिल सकती ? गणतंत्र-समारोह भी शायद कुछ इसी तरह की रंजन सामग्री बन गया है।

क्या इन झाँकियों को देखनेवाले दिल्लीवासियों को भारत की असली झाँकी का पता है ? असली झाँकी न वे देखना चाहते हैं, और न गणतंत्र-दिवस के सरकारी आयोजक उन्हें दिखाना ही चाहते हैं। दोनों ने मिली-भगत कर रखी है कि असलियत आँखों के सामने न आने पाये। यह मान लिया गया है कि कान सुनें तो सुरीला संगीत सुनें, और आँखें खुलें तो सुघड़ शक्लें देखें। कुछ लोग ऐसे हैं जिनके लिए हर अवसर मौज का है।

राजधानियों से निकलकर जरा गाँवों को देखिए। गाँव क्या शहरों में ही बस्तियों को देखिए तो देश की दूसरी ही झाँकी देखने को मिलेगी।

उस दिन दोपहर को रामेश्वर आया। मैंने पूछा : 'कैसे चले ?' चुप खड़ा रहा। मैंने फिर पूछा : 'बोलो, कैसे आये ? चुप क्यों हो ?' इतना कहते ही जमीन पर पानी के दो बूंद गिर गये। कहाँ से गिरे ? वे पानी के बूंद नहीं थे, आँसू के बूंद थे। मैंने पूछा : 'रो क्यों रहे हो ?' वह बोला : 'मालिक, कल तो काम मिला था, लेकिन आज नहीं मिला। बच्चे सुबह से . . !' दो बूंद और गिर गये।

एक झाँकी यह भी है, और इसी देश की है। यह ऐसी झाँकी है जो गाँव-गाँव में देखी जा सकती है, लेकिन यह झाँकी दिल्ली कैसे पहुँचे ? कौन ले जाय ? भारत का तंत्र अपने गण को नहीं देखना चाहता। तंत्र को गण का भय भी है, और गण से डर भी।

गांधी को यही झाँकी पसन्द थी। उसने कहा था कि भारत देश में ही नहीं, उसके एक-एक गाँव में गणतंत्र होगा। हर गाँव अपने में एक 'राज्य' होगा, जिसकी अपनी व्यवस्था होगी; जो अपनी विशिष्टता कायम रखते हुए आगे बढ़ेगा। किन्तु इतने वर्षों में यह सब कुछ नहीं हुआ। हुआ यह कि तंत्र ने गण को पनपने ही नहीं दिया। तंत्र ने गण की आँखों के सामने भ्रम और भुलावे का ऐसा रंगीन पर्दा डाल दिया कि असली झाँकी को वह देख ही न सके, और अगर भूल से देख भी ले तो पहचान न सके।

बिहार के कुछ क्षेत्र के गाँवों में कुल इकहत्तर आदमियों की सूची बनी है। घोषणा की गयी है कि यह सूची उन लोगों की है जो हत्या के पात्र हैं। २६ जनवरी तक ६ की हत्या हो चुकी है। बाकी ६५ के लिए अभी नये साल के ग्यारह महीने पड़े हुए हैं।

उस क्षेत्र के गाँवों में पुलिस का जाल बिछा दिया गया है। चारों ओर जीपें दौड़ रही हैं। पहले गाँव के कई धनी व्यक्ति 'नक्सलवादियों' के भय से शहर भाग गये, अब धनी-गरीब सभी पुलिस के आतंक से त्रस्त हैं। पड़ोसी की हिंसा से बचने के लिए पुलिस की हिंसा का सहारा लेने का प्रसाद ऐसा ही होता है। जिस जनता ने गणतंत्र के तेईस वर्ष पुलिस के भय और नेता की खुशामद में बिताये हैं, उसके लिए नये वर्ष की भेंट इससे अच्छी दूसरी क्या हो सकती थी ? हमें गणराज्य मिला था अहिंसा से, हमारा गणतंत्र चल रहा है हिंसा से ! हर तरफ देश में हिंसा का राज है—चाहे वह हिंसा सरकार की हो, राजनैतिक दलों की हो, या सिरे गुण्डों की हो।

गणराज्य के इतने वर्षों में हम कहाँ पहुँचे हैं ? हमने प्रकृति पर कितनी विजय पायी है ? हमारे पेट में कितना पोषण गया है ? और पड़ोसी के साथ हमारे सम्बन्धों में कितनी मिठास आयी है ? प्रकृति साथ दे फिर भी साल भर पेट कितनों का भरता है ? और, जिनका भरता भी है उनमें से कितने हैं जो दूसरे पड़ोसियों की चिंता करते हैं ? और, जिनका पेट नहीं भरता उनमें से कितने हैं जो प्रारब्ध से ऊपर उठकर पुरुषार्थ की बात सोचते हैं ? देश के जिन भागों में नये साधन पहुँचे भी हैं, वहाँ सम्बन्धों में कितना सुधार हुआ है ? कहीं समृद्धि थोड़ी आयी भी है तो गुस्सा घट जाती है, और ममता तो पहले से भी दूर चली जाती है। समृद्धि (प्रास्पेरिटी), सुरक्षा (सेक्योरिटी) और समता (इक्वालिटी) का त्रिभुज, जिस पर सभ्य लोक-जीवन पनपता है, कहीं दिखाई नहीं देता। एक ओर गाँवों में भय और निराशा का राज फैला हुआ है, तो दूसरी ओर राजधानियों में वैभव और सत्ता का नग्न नाच हो रहा है। मालूम नहीं दिल्ली और दूसरी राजधानियाँ किस देश का गणतंत्र-दिवस मनाती हैं और उनके सामने गणतंत्र का क्या चित्र है।

देखनेवाले देख रहे हैं, समझनेवाले समझ रहे हैं, कि हमारे गणतंत्र में गण और तंत्र एक नहीं दो दिशाओं में जा रहे हैं। कहाँ जा रहा है गण और कहाँ जा रहा है तंत्र ? गण उत्तेजित हो उठा है। वह जो चाहता है इस तंत्र में नहीं मिल सकता। क्या सरकार और क्या समाज, यह विरोध हर जगह प्रकट हो

'सर्वसम्मति' का अभ्यास हो

प्रिय मित्र।

इस माह में कार्यकर्ताओं की तरफ से कुछ पत्र मेरे पास आये हैं। प्रश्न अधिकतर वही हैं, जो हमेशा किये जाते हैं। एक तिरुनेलवेली जिला में वहाँ के कार्यकर्ताओं ने गाँववालों से अपील की है कि जो गाँव सर्वसम्मति से कोई योजना बनाकर उनके पास भेजेगा उस गाँव की सक्रिय सहायता की जायेगी। इस प्रकार की अपील एक अच्छी चीज है। हर गाँव के लोगों को एहसास होते रहना चाहिए कि अगर सामाजिक शक्ति के रूप में शस्त्र-शक्ति के बदले सम्मति-शक्ति का अधिष्ठान करना है तो उन्हें सर्वसम्मति का अभ्यास करना ही होगा। हमारे कार्यकर्ताओं के दिमाग में भी रह रहकर यह शंका पैदा हो जाती है कि सर्वसम्मति सम्भव है क्या? और, अक्सर यह ख्याल भी आता है कि सर्वसम्मति के बदले ७०-८० प्रतिशत बहुमत को मान्य किया जाय। लेकिन इस आन्दोलन की सफलता के लिए बहुत ज्यादा धैर्य और निष्ठापूर्वक सर्वसम्मति का अभ्यास करते रहने की आवश्यकता है। बार बार सर्वसम्मति नहीं हो सकने के कारण बहुत से काम रुकते रहेंगे, फिर भी आग्रह पूर्वक उसी पर डटे रहना होगा।

हमें स्पष्ट रूप से समझना होगा कि हम जो शान्ति की बात कर रहे हैं, वह किस चीज के लिए है। हम सब लोग मानते हैं कि अति प्राचीन काल से मानव-समाज ने जो शस्त्र-शक्ति को एकमात्र सामाजिक शक्ति के रूप में माना है उसके बदले में सामाजिक शक्ति के रूप में सम्मति-शक्ति का अधिष्ठान करना है। हमने अपनी शान्ति के मूल तत्त्व के रूप में यह मान्य किया है कि समाज के कार्य दबाव से न चलकर प्रभाव से चलना आवश्यक है। हमारी यह मान्यता केवल समाज में नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना के लिए ही नहीं है, बल्कि हम जमाने की भौतिक और मानसिक परिस्थिति के कारण भी इस तत्त्व की अनिवार्य आवश्यकता मानते हैं। हम देख रहे हैं कि समस्त विश्व के मनुष्य अणुशक्ति के आविष्कार के बाद से शस्त्र को पूरे मानव-समाज के विनाश का साधन मानकर उससे त्रस्त हैं। इतना ही नहीं, बल्कि विज्ञान और लोकतंत्र के विकास ने जनजन में बौद्धिक चेतना और स्वाभिमान को इतना अधिक बढ़ा दिया है कि जनता आज दबाव-शक्ति से कुछ भी करने को तैयार नहीं है। फलस्वरूप विश्व के किसी भी कोने में सरकार की अति सङ्गठित शस्त्र-शक्ति भी आज की तरुण पीढ़ी को दबा सकने में असमर्थ है। परिणामस्वरूप दुनिया में अराजकता तीव्र गति से फैलती जा रही है। यही कारण है कि आज दुनिया में चारों तरफ से निःशस्त्रीकरण की माँग हो रही है तथा मनुष्य विकल्प की तलाश में है। स्पष्ट है कि शस्त्र-शक्ति का एकमात्र विकल्प सम्मति-शक्ति ही है।

अतएव, हजारों बार विफल होते रहने पर भी सर्वानुमति के विचार को ही पकड़े रहना होगा। अगर अस्सी प्रतिशत को मान्य किया जाय और किसी भी मामले में बीस प्रतिशत की उपेक्षा की जाय तो बीस प्रतिशत की सम्मति के विरुद्ध उसके पालन के लिए दबाव ही डालना पड़ेगा। तो हम लोग, जो दबाव-शक्ति के विसर्जन का आन्दोलन कर रहे हैं उनका भविष्य क्या होगा? अतः कार्यकर्ताओं से मेरा निवेदन है कि वे अनेक प्रकार से सोचें। हर परिस्थिति के सन्दर्भ में वे विचार करें और सर्वसम्मति के अभ्यास के लिए जो भी उपाय सूझे, प्रयोग करते रहें।

लेकिन केवल इस प्रकार की अपील से ही काम नहीं चलेगा। कार्यकर्ताओं को गाँव गाँव घूमते रहना होगा, विचार समझाना होगा तथा सर्वसम्मति से ग्राम-सभाओं को संगठित करना होगा।

इस दिशा में और क्या करना चाहिए? अगले पत्र में लिखूँगा।

सब मित्रों को प्रणाम।

आपका स्नेही
धीरेन्द्र भाई

रहा है, और दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। कुछ लोग पूछने लगे हैं कि अगर यही हाल रहा तो क्या राष्ट्रपति सेना की सहायता से शासन चलायेंगे? तो दूसरे लोग कह रहे हैं कि अब देश के कुछ सज्जनों को सामने आना चाहिए और पार्टियों को अलग छोड़कर मिली-जुली सरकार द्वारा सुशासन कायम करना चाहिए। कौन जाने अब देश सैनिकों की शरण में जायगा या सज्जनों के मार्ग-दर्शन में चलेगा?

सैनिक की शरण का अर्थ है तंत्र की विजय, सज्जन के मार्ग-दर्शन का अर्थ है गण की विजय। विजय किसी एक की ही हो सकती है। भारत का जीवन सरकारों से नहीं, संस्कारों से बना है। वह कभी सरकारी तंत्र से संचालित नहीं हुआ है। उसकी लंबी परंपरा गाँव की स्वायत्तता पर विकसित हुई है। उसकी प्रतिभा ने सत्य की सत्ता को स्वीकार किया है, सरकार की नहीं। समाज ने कभी अपने क्षेत्र में सरकार को नहीं आने दिया है। आज देश की परिस्थिति की भी यही माँग है कि गण की शक्ति बने, और तंत्र उस शक्ति के पीछे चले। भारत का गण हिमालय के अमरनाथ से लेकर सुदूर दक्षिण के रामेश्वरम् तक फैली हुई सांस्कृतिक एकता और राष्ट्रीयता को पहचानता है, वह डेढ़ दर्जन राज्यों में बँटी हुई सरकारों और राजनैतिक अराजकता को नहीं समझ पा रहा है। इसलिए आज करोड़ों ग्रामवासियों के जीवन में इस सरकारी तंत्र का 'भारत' वास्तविकता नहीं रह गया है। इस भारत में भारतीय अपनी आत्मा नहीं देखता। यह तंत्र ऐसा है जिसमें गण खो गया है, और उसके खोने से स्वयं टूट रहा है।

इस रास्ते पर हमारा भविष्य नहीं है। हमारा भविष्य हमारी, हमारे गण की, शक्ति में है, तंत्र की शक्ति में नहीं।•

शिक्षा में धर्मों का प्रवेश हो
इतिहास नयी पद्धति से लिखा जाय
ग्रामीण अपनी पाठशालाएँ चलायें

[गत ३ दिसम्बर, १९६९ को वर्धा में महाराष्ट्र-शासन के शिक्षामंत्री श्री मधुकरराव चौधरी ने श्री विनोबाजी से शिक्षा-संस्थाओं में नीति और धर्म की शिक्षा के स्वरूप के सम्बन्ध में जो चर्चा की, उसका सार नीचे दिया जा रहा है।—सं०]

मधुकरराव : पिछली बार जब हम मिले थे, मैंने आपसे विनती की थी कि आप ऐसा कुछ लिखें, जो विद्यार्थियों को संस्कारशील बना सके। उस समय आपने कहा था : 'यह मेरा क्षेत्र नहीं।' आपका संकेत था कि मुझे जो करना हो, मैं करूँ। तदनुसार आगे हमने इस सम्बन्ध में चर्चाएँ कीं। नीति-शिक्षा तो दी जाय, पर उसे उपदेश का स्वरूप प्राप्त न हो, इस दृष्टि से एक क्रमिक पाठ्यक्रम तैयार किया गया है।

विनोबा : केन्द्र-सरकार ने एक समिति नियुक्त की थी। उसने सिफारिश की है कि शिक्षा-संस्थाओं में विद्यार्थियों को सब धर्मों का सार सिखाया जाय। 'सेक्युलरिज्म' का अर्थ धर्म-निरपेक्षता किया जाता है, जो गलत है। असल में, सब धर्मों के लिए समान भाव, ऐसा उसका भावात्मक अर्थ किया जाना चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में से सब धर्मों को हटा देने के बाद लोग संस्कारी कैसे बन सकेंगे? इसी विचार से मैंने 'गीता' पर प्रवचन किये। 'कुरान' और 'बाइबल' के सार प्रकाशित किये। 'जपुजी' और 'धम्मपद' का भी सम्पादन किया। शिक्षा-विभाग इन सबका उपयोग कर सकता है।

अहमदाबाद में दंगे हुए। हम जो पिछला इतिहास सिखाते हैं, उसमें राजाओं के राग-द्वेष पर आधारित लड़ाइयों की बातें होती हैं। उन्हें हमें छोड़ना होगा। यह समझना एक भूल है कि इतिहास अर्थात् राजा महाराजाओं के जीवन की सन्-संवत्‌वार घटनाएँ। जिन राजाओं ने पंजाब में राज्य किया, आज कोई पंजाबी उन्हें जानता नहीं, लेकिन गुरु नानक को सब जानते हैं। बंगाल के पुराने सेन और पाल राजाओं को भी कोई नहीं जानता, लेकिन वहाँ के चैतन्य महाप्रभु का नाम सब लोगों को मालूम है। देश में इतने राजा-महाराजा आये और गये, लेकिन लोग तो आज तुलसीदास को और उनकी रामायण को ही जानते हैं। महाराष्ट्र से ज्ञानदेव और तुकाराम के नाम को कौन हटा सकता है? इसलिए इतिहास में इन महापुरुषों को महत्त्व का स्थान दीजिए और राजाओं को थोड़े में निपटाइए। लेकिन ऐसा तो कोई करता नहीं।

शिवाजी महाराज के पिता का नाम शाहू था। शाहू महाराज पर एक फकीर की कृपा हुई, इसलिए वे 'शाहजी' के नाम से पुकारे जाने लगे। वह फकीर कौन था? उस जमाने का एक सूफी सन्त। इन सन्तों ने उन दिनों लोगों को मुसलमान-धर्म सिखाया। मार-काट का काम राजाओं ने किया। यह मालूम होने पर कि सोमनाथ के मन्दिर की मूर्ति में सोना है, उस मूर्ति को तोड़ने और मन्दिर को लूटने का काम राजाओं ने किया। उसका धर्म से कोई सम्बन्ध न था। इस्लाम कभी जबरदस्ती करने को कहता नहीं। कुरान में जगह-जगह लिखा है कि जबरदस्ती से धर्म का प्रचार नहीं किया जा सकता। लेकिन आज यह बात कोई सिखाता नहीं। समर्थ स्वामी रामदास ने देखा कि ये सूफी सन्त शेखसादी का 'करीमा' लोगों को सुनाते हैं और उससे लोग उनकी ओर आकर्षित होते हैं। इससे रामदास स्वामी को लगा कि उन्हें भी वैसे ही वृत्त अथवा छन्द में अपने विचार प्रकट करने चाहिए। फलस्वरूप उन्होंने उसी ढंग पर अपने 'मनाचे श्लोक' लिखे। उदाहरण के लिए 'मना सज्जना भक्ती पन्थेंची जावें'। रामदास ने इसमें एक शब्द अधिक जोड़ा। उनकी रचना ग्यारह शब्दों की रही। अन्तिम शब्द पर सूफियों का जोर रहा। रामदास ने अपनी रचना भुजंगप्रयात छन्द में की। उन दिनों महाराष्ट्र पर इन सूफी सन्तों और फकीरों की आवाज का इतना प्रभाव पड़ा था। हममें से कितने लोगों को यह जानकारी है कि मराठी के मनाचे श्लोकों की रचना 'करीमा' पर आधारित है? इसलिए मैं कहता हूँ कि इतिहास को या तो नयी पद्धति से लिखा जाय, या फिर उसे छोड़ दिया जाय।

मधुकरराव : जब हम धर्मों का सार सिखाने की बात करते हैं, तो वह सार सब धर्मों के लोगों को मान्य होना चाहिए। हमारे सामने यह एक कठिनाई है। यदि आपके समान अधिकारी पुरुष ने यह काम किया, तो सबकी मान्यता मिलना सरल होगा। उसे कक्षाओं के क्रम से तैयार करना होगा। पुराने धर्म-ग्रन्थों को अपनाकर चलते हैं, तो उनके साथ पुरानी रूढ़ियाँ, परम्पराएँ और चमत्कार आदि सब आते हैं। आज के विज्ञान-युग में ये बातें किसी को पसन्द नहीं पड़तीं और अवांछनीय भी सिद्ध होती हैं।

विनोबा : मेरे लिखे 'कुरान सार' को मुसलमानों ने माना है। प्रकाशन से पहले, बिना पुस्तक देखे ही, पाकिस्तान के कुछ समाचार-पत्रों ने उसकी टीका की थी। लेकिन पुस्तक के प्रकाशित होने पर वे उसमें एक-दो वचन अधिक जोड़ने की बात ही सुझा सके थे। मुझे वे वचन विशेष महत्त्व के लगे नहीं, इसलिए मैंने उन्हें छोड़ दिया था। हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध मुसलमान मसूदी ने 'कुरान-सार' को देखने के बाद कहा था कि २५ मौलवी दस साल तक बैठकर और दस लाख रुपये खर्च करके जो काम न कर पाते, उसे अकेले विनोबा ने कर दिखाया है। एक प्रसिद्ध मुसलमान सज्जन को 'कुरान-सार' इतना पसन्द आया कि उन्होंने खुद-ब-खुद उसके शब्दों की सूची तैयार करने का काम उठा लिया। 'कुरान-सार' की अगली आवृत्ति में यह सूची छपेगी।

तीन वर्षों तक अध्ययन करके मैंने 'बाइबल' का सार तैयार किया है। वह भी सर्वमान्य हुआ है। मैंने उसे ईसाइयों के धर्मगुरु पोप की सेवा में उनकी सम्मति के लिए भेजा और उनकी उत्तम सम्मति के साथ मुझे उनका आशीर्वाद भी मिला।

सिखों का धर्म-ग्रन्थ 'जपुजी', जिसका मैंने सम्पादन किया है, पंजाब के लोगों को अच्छा लगा है। और पंजाब विश्व-विद्यालय ने उसे पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया है। उनकी राय है कि इससे अधिक अच्छा चुनाव हो नहीं सकता। यही बात 'धम्मपद' और 'गीता-प्रवचन' के बारे में भी कही जा सकती है।

हमने जो लिखा सो पच्चीस वर्षों तक अध्ययन करने के बाद लिखा, अपने को उस-उस समाज का सदस्य मानकर लिखा, अधिकारी पुरुषों की टीकाएँ प्राप्त करके हमने उनका अध्ययन किया और उनमें आवश्यक सुधार करके उन्हें प्रकाशित किया।

इसलिए आप लोग देखिए और इनमें से काम की चीज पसन्द कर लीजिए। अब आपको मूल धर्मग्रन्थों को उलटने पलटने की जरूरत रही नहीं। मैंने अपने 'खिस्तधर्म-सार' में समूची बाइबल का दसवाँ हिस्सा ही लिया है।

मधुकरराव इसके लिए कक्षावार क्रमिक योजना कैसे बनायी जाय?

विनोबा आप अपने विशेषज्ञों से कहिए कि वे इसका एक प्रारूप तैयार करें। प्रारूप के साथ उन्हें मेरे पास भेजिए। मुझे अच्छा लगा, तो मैं फेरफार सुझाऊँगा।

मधुकरराव मैं अपनी पाठ्यक्रम-समिति को इसके लिए कहूँगा। आचार्य जोशी (मेहकर) ने इस दिशा में कुछ काम किया है।

जोशी (विनोबा को अपनी पुस्तक भेंट करते हुए बोले) मैंने इसमें धर्मों का सार संकलित किया है। इस काम में मुझे रामकृष्ण मिशन के प्रकाशनों से भी मदद मिली है। सबसे पहले शिक्षा-संस्थाओं के संचालकों के मन में इस प्रकार की शिक्षा के विषय में प्रेम-भावना का निर्माण आवश्यक होगा। सन्तुलित विचार के साथ सिखानेवाले अध्यापकों को प्रशिक्षण देकर तैयार करना होगा।

विनोबा मैंने जिस समिति (श्रीप्रकाश) की बात कही थी, उसने इस सम्बन्ध में कुछ सुझाव दिये थे।

मधुकरराव श्री जगन्नाथराव भोसले ने उन सुझावों के अनुसार कक्षावार क्रमिक पाठ्यक्रम तैयार करने का प्रयत्न किया था। अपने मूल रूप में सब धर्मों का सार समान ही होता है। इसलिए प्रत्येक धर्म की विशेषता प्रकट करने का काम महत्त्वपूर्ण बन जाता है। यह काम और किसीके बस का नहीं। इसे तो आप ही कीजिए।

विनोबा मेरी पुस्तकें उन्हें दीजिए और उनसे कहिए कि वे क्रमिक पाठ्यक्रम तैयार करें। मैं उसे देख लूँगा और फिर जो निश्चित करूँगा, उसे आप मान्य कीजिए।

मधुकरराव मैं यही चाहता था। मुझे मनचाहा मिला। हमने इतिहास-सम्बन्धी दृष्टिकोण बदला है। राजाओं की कहानी कहने के बदले तीसरी कक्षा में श्रेष्ठ महापुरुषों और राजाओं का इतिहास सिखाने की व्यवस्था की है। अब हम इतिहास कहने के बदले सामाजिक जीवन का अध्ययन कहते हैं।

ऊपर कहे गये तरीके से इतिहास लिखने पर उसमें अभिरुचि नहीं आती और आलोचना होने लगती है। इसके सम्बन्ध में आपकी सलाह चाहिए। इस

विनोबा ठीक है।

आपको एक मनोरंजक बात कहता हूँ। आपके ज्ञान-जगत् में कुछ जोड़ने की दृष्टि से मैं इसकी चर्चा कर रहा हूँ। मराठों ने भारत में साम्राज्य की स्थापना की थी क्या किया? उन्होंने झण्डा रोपा, पैसा बटोरा, लेकिन वे राज्य की व्यवस्था जमा नहीं सके। उड़ीसा में मैंने उड़िया भाषा का व्याकरण सीखा। उसमें 'मराठा-सरदारों द्वारा उड़िया भाषा में प्रचलित की गयी कहावतें' शीर्षक से एक स्वतंत्र परिच्छेद ही दिया गया है। उसमें एक कहावत है :

"रस मिले आदा ...प्रजा पेचले।"

जिस तरह अदरक को कुचलने से रस मिलता है, उसी तरह प्रजा को कुचलने से रस प्राप्त होता है। उड़ीसा के व्याकरण में आपके नाम पर यह बात सिखायी जाती है। आपकी कीर्ति इस तरह फैली है। वहाँवालों को ज्ञानदेव और तुकाराम का पता नहीं है। लेकिन बंगाल और उड़ीसा में ताराबाई के पाठ पढ़ाये जाते हैं। मैंने उनसे कहा कि ताराबाई तारक नहीं थी, फिर भी इतिहास के नाम पर उसके लिए दस-बारह पृष्ठ दिये गये हैं और ज्ञानदेव-तुकाराम को परिशिष्ट में डाला है। हमारे इतिहास-लेखन की ऐसी यह कहानी है।

मधुकरराव दूसरा एक और प्रश्न शिक्षा के क्षेत्र में खड़ा होता है। जिन्हें हम भारतीय मूल्य कहते हैं, उनमें कुछ विकृति उत्पन्न हुई है। आजकल विज्ञान बढ़ा है। ऐसी स्थिति में विज्ञाननिष्ठ नैतिक मूल्यों का चिन्तन आवश्यक है। अनन्त काल तक चलनेवाले समाज की संस्कृति क्या हो सकती है?

विनोबा प्रत्येक समाज में तीन बातें होती हैं—प्रकृति, विकृति और संस्कृति। भूख लगने पर भोजन करना प्रकृति है। भूख न होने पर खाना विकृति है। आज एकादशी है अथवा अतिथि को भरपेट भोजन कराना है, इसलिए स्वयं उपवास करना संस्कृति है।

वर्ण-व्यवस्था को प्रकृति कहा जा सकता है। सब भूतों में परमेश्वर को देखना संस्कृति है। अस्पृश्यता विकृति है।

यदि इस प्रकार का भेद न किया जाय, तो अच्छे के साथ बुरे का भी अभिमान होने लगता है। जबलपुर में किसी एक लड़के ने एक लड़की के साथ बलात्कार किया। संयोगवश, लड़का मुसलमान था, लड़की हिन्दू थी। बलात्कार एक निषिद्ध कार्य ही है। करनेवाला हिन्दू हो, चाहे मुसलमान। इस कारण मरा-

त्कार सबके लिए समान रूप से निषिद्ध है। लेकिन माना यह गया कि हिन्दू लड़की पर मुसलमान लड़के ने बलात्कार किया। नतीजा यह हुआ कि हिन्दू एक तरफ हो गये और मुसलमान दूसरी तरफ। असल में होना यह चाहिए था कि सब मिलकर बलात्कार का निषेध करते और धर्म के साथ उसका सम्बन्ध न जोड़ते। उसे एक व्यक्तिगत अपराध माना जाना चाहिए था और यह घोषणा करनी चाहिए थी कि बलात्कार करनेवाला न हिन्दू होता है और न मुसलमान।

लेकिन लोग ऐसा मानते नहीं। इसलिए दुर्घटनाएँ घटती हैं। अहमदाबाद के शाकाहारी लोग खून की बूंद देखकर कांप उठते हैं, लेकिन वहाँ उन्होंने हत्याएँ कीं। पुराना इतिहास जो दिमाग में भरा था!

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भारतीय संस्कृति का विवेचन करते हुए कहा कि भारत महामानवता का सागर है। आप उसके तीर पर आइए, आप भी आइए। भारत-समुद्र, बाकी सब नदियाँ। आस्ट्रिया, रूस, सीलोन आदि देशों से लोग यहाँ आए; क्योंकि उधर जंगल और पहाड़ थे, जब कि भारत में भरपूर जमीन थी और जनसंख्या भी कम थी। लेकिन रीति-रिवाज सबके अलग-अलग थे। अतएव व्यवस्था यह की गयी कि अलग अलग रीति रिवाजवाले लोग एक गाँव में रह तो सकते हैं, किन्तु उन्हें अलग-अलग मुहल्ले बनाकर रहना होगा। इसीमें से जाति-व्यवस्था का जन्म हुआ। यदि यह जाति-व्यवस्था खड़ी न होती, तो लोग एक-दूसरे का विरोध करके आपस में कट मरते। जाति-व्यवस्था के कारण वे एक ही गाँव में अपने-अपने विचार के अनुसार जीवन जीने की सुविधा पा सके।

पारसी लोग भारत में बसने के लिए आये। वे अपने मुर्दों को जलाते नहीं, कुएँ में टांगते हैं। हिन्दू जलाते हैं। हिन्दू देवों की स्तुति और असुरों की निन्दा करते हैं जब कि पारसी देवों की निन्दा और असुरों की स्तुति करते हैं। उनका देव महादेव नहीं। वे 'अहूरमज्द' को अपना देव मानते हैं जिसका अर्थ होता है महा असुर। हमने उनसे कहा, आपको जो करना हो, अपनी बस्ती में कीजिए। इस तरह जातियों का निर्माण करने से लोग सुरक्षित रह सके। यह न होता, तो कत्लेआम होकर रहता।

लेकिन अब जाति-व्यवस्था काल-बाह्य हो चुकी है। शुरू में छोटे पौधों की रक्षा के लिए बाड़ लगानी होती है, लेकिन बाद में उन्हींके विकास के लिए उसे हटाना पड़ता है। इतिहास लिखते समय इसका ध्यान रखना होता है। तात्पर्य यह है कि भारत की संस्कृति में दूसरों को आत्मसात् करने का गुण है।

जोशी : क्या पाठशालाओं और विद्यालयों में प्रार्थना शुरू करना उचित न होगा? सर्वधर्म-प्रार्थना हो या मौन प्रार्थना?

विनोबा : अनुभव यह है कि ऐसी प्रार्थनाएँ यांत्रिक रीति से चलती हैं। इनसे संस्कार का निर्माण नहीं होता। यदि प्रार्थना का सम्बन्ध हाजिरी से जोड़ दिया जाय, तो बात और कठिन हो जाती है। प्रार्थना घर-घर में होनी चाहिए।

जोशी : अगर कुछ चीजें कण्ठाग्र करवायी जायें तो? जैसे—'गीताई', मनाचे श्लोक आदि। चित्त पर इनका संस्कार पड़ेगा।

विनोबा : आप जो कण्ठाग्र कराना चाहते हैं, सो मेरे पास भेजिए।

सरकार के हाथ में शिक्षा की व्यवस्था का रहना बहुत खतरनाक बात है। सरकार जिस ढांचे की होती है, वह उसी ढांचे का निर्माण करने की कोशिश करती है, और इसके पर भी इसे डिमाक्रेसी' (लोकतन्त्र) कहा जाता है और विद्यार्थियों के मन को एक सांचे या ढांचे में ढालने का प्रयत्न किया जाता है। इसकी टीका करते हुए मैंने लिखा और कहा है कि हमने जो अधिकार ज्ञानदेव और तुलसीदास को नहीं दिया, वह आज के शिक्षा-अधिकारियों को दे दिया है। और ऐसा करते हुए आपने उनमें कौनसी योग्यता और बुद्धि के दर्शन किये हैं?

मधुकरराव : आपकी बात सच है। जैसा कि आप कहते हैं, सरकार की भी यही इच्छा है कि गाँव की जनता अपनी पाठशालाएँ चलायें और शिक्षण-संस्थाएँ स्वयं अपना शिक्षा-क्रम तैयार करें। लेकिन प्रत्यक्ष व्यवहार में आज यह हो नहीं रहा है।

विनोबा : लन्दन के एक ही व्यक्ति ने मुझे लिखा है कि आप गाँव को स्वतन्त्र रूप से अपने पैरों खड़ा होने की जो बात कह रहे हैं, वह मुझे पूरी तरह मंजूर है। लन्दन, न्यूयार्क को भी आपके इन विचारों की आवश्यकता है। यहाँ 'दे इज्म' चल रहा है। 'दे विल डू फॉर अस' अर्थात् विल्सन और जॉन्सन हमारे लिए कुछ करेंगे, ऐसी एक लोक-भावना बनी है। चाहे 'कम्युनिज्म' (साम्यवाद) हो, 'सोशलिज्म' (समाजवाद) हो या 'वेलफेयरिज्म' (कल्याणवाद) हो, इन सब राज्यपद्धतियों में 'दे-इज्म' चलता है। लोग यह मानते हैं कि सरकार हमारा भला करेगी, लेकिन कोई यह नहीं मानता कि हमीं सरकार हैं। एक 'दे-इज्म' है यानी 'वे' करेंगे, का वाद है और दूसरा 'मिलिटरिज्म' यानी 'सेनावाद' है। इन सबको सेना का, मिलिटरी का, 'सैंक्शन' यानी आधार आवश्यक होता है। सेना इनका सबसे बड़ा आधार है। भारत में हम लोगों को कहना यह चाहिए कि भारत का भाग्य आप ही के हाथ में है। लेकिन स्वराज्य में लोग इतने पराधीन हो गये हैं कि जब उनसे ऐसी कोई बात कही जाती है, तो वे घबरा उठते हैं। मन्दिर-प्रवेश, समाज-सुधार सभी काम अगर सरकार को ही करने हैं, तो फिर लोगों के लिए कौनसा काम बच जाता है? बाल-बच्चे पैदा करते रहने का ही न? ●

'नेफा'-क्षेत्र में सर्वोदय-कार्य

क्षेत्रीय परिचय

प्राकृतिक सम्पदा से भरपूर और विकास की सम्भावनाओं के बावजूद भी 'नेफा' भारत का सबसे अधिक पिछड़ा क्षेत्र है। यह उत्तर में तिब्बत, पूर्व में बर्मा, दक्षिण में असम व पश्चिम में भूटान से घिरा हुआ है। सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार इसकी आबादी ३,३६,५५८ व क्षेत्रफल लगभग ८३,००० वर्ग कि० मी० है।

जटिल सामाजिक-सामरिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए ५ जनवरी १९५४ को असम के उत्तरी सीमान्त पर्वतीय क्षेत्र को शेष भाग से अलग कर नेफा का गठन किया गया। तब से यह क्षेत्र असम के राज्यपाल के माध्यम से भारत सरकार के सीधे नियंत्रण में है। यह पूर्व से पश्चिम क्रमशः तिरप, लोहित, सियांग, सुबनसिरि और कामेंग जिलों में विभक्त है। यह प्राकृतिक परिस्थितियों, पहाड़ी धरातल, विविध वन-वृक्षों व वन्य जन्तुओं से युक्त है। मानसरोवर से निकलकर और तिब्बत से होकर बहनेवाली सियांग नदी, जो असम में आकर ब्रह्मपुत्र कहलाती है, इसे पूर्व व पश्चिम, दो बृहत् खण्डों में विभक्त करती है।

सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि

नेफा की सम्पूर्ण स्थानीय आबादी पहाड़ी ढलानों व घाटियों में रहनेवाली लगभग ८२ इण्डोमंगोलाइड वन्य जातियों व उपजातियों को मिलाकर बनी है। इनमें से १४ जनजातियाँ, जिनमें डाफला, वांचो, तागिन, वांचो, मोनपा, मिशमी, मिसमी, नोक्टे, आपातानी, मिरि, अका, शेर दुकपेन, सिंहफो और तांगसा सम्मिलित हैं, संख्या की दृष्टि से प्रमुख हैं। ये जातियाँ अलग-अलग किस्म की ५० बोलियाँ बोलती हैं, जो कि मुख्य रूप से तिब्बती-बर्मी भाषाओं से मेल खाती हैं। अन्तर-जातीय उपयोग के लिए अधिकतर असमी का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि यह असम से लगे हुए सारे क्षेत्र में रहने वाली सभी जातियों द्वारा प्रायः समझी जाती है।

आने-जाने के साधनों के अभाव में एक घाटी में बसे गाँवों का परस्पर-सम्बन्ध अपनी घाटी तक ही सीमित रहता है। फलस्वरूप न केवल सम्पूर्ण नेफा क्षेत्र शेष देश से अलग-अलग रहा है, अपितु स्थानीय निवासियों को भी अपने प्रदेश व लोगों के बारे में बहुत कम ज्ञात है। यह आपसी अनभिज्ञता नेफा के पूर्व-पश्चिम विस्तार में सर्वाधिक मिलती है।

सामाजिक दृष्टि से नेफा के सभी आदि-वासियों में प्रायः समान रीति रिवाज व प्रथाएँ प्रचलित हैं। युवकों के लिए पृथक् शयनागार की प्रथा प्रायः सभी वर्गों में मिलती है, जहाँ पर युवक सामुदायिक जीवन की दीक्षा प्राप्त करते हैं। पहले ये शयनागार पड़ोसी दुश्मन जातियों से गाँव की रक्षा के उपयोग में भी लाये जाते थे।

दूसरी जाति के लोगों को जीतकर गुलाम रखने की प्रथा जो सारे नेफा में पहले प्रचलित थी, अब प्रायः समाप्त हो गयी है। आदिवासियों का राजनैतिक संगठन मुख्यतः ग्राम-परिषद पर आधारित है। प्रत्येक गाँव का अपना एक संगठन होता है, जिसका कि एक प्रमुख (गाँव का बूढ़ा) होता है। इस प्रकार विभिन्न गाँवों को मिलाकर जातीय स्तर पर एक 'नेता' होता है। ये संगठन परम्परागत ही जनतांत्रिक हैं। आजादी के बाद जो नयी पंचायती प्रथा सारे देश में लागू हुई वह नेफा में अभी २ अक्तूबर १९६९ से प्रारम्भ की गयी है।

नेफा की ९० प्रतिशत से अधिक जन-संख्या खेती पर गुजर करती है। खेती में कुछ थोड़े भागों को छोड़कर सभी जगह 'झूम' प्रथा विद्यमान है। सुबनसिरि, तजु, पासीघाट, एलोंग, तिरप और कामेंग में धान (वेट राइस) की खेती भी होती है। लेकिन कामेंग के मोनपा और लोहित की खाम्पटी जाति के अलावा और कहीं भी हल का प्रयोग खेती के लिए नहीं किया जाता है। झूम किस्म से खेती में जंगलों को काटकर, गिरे हुए वृक्षों व झाड़ियों को जलाकर राख-रंजित जमीन पर या तो खुरपियों से बीज मिट्टी में गाड़ दिये जाते हैं या ऐसे ही ऊपर से छिड़क दिये जाते हैं। उसके बाद जमीन को प्रकृति की दया पर छोड़ दिया जाता है। एक छोटे-से प्लाट को झूम के लिए तैयार करने में आदिवासियों को अथक परिश्रम और बहुत अधिक समय खर्च करना पड़ता है। इस काम में एक कुनबे अथवा पूरे गाँव के सब लोग अपना सह-योग देते हैं।

कानूनी दृष्टि से नेफा की सारी कृषि-हृत भूमि सरकार के सीधे नियंत्रण में है। लेकिन वास्तव में जिस भूमि पर आदिवासी पहले से खेती करते आये हैं वह ग्रामीण समुदाय के संयुक्त अधिकार में है। सरकार द्वारा उस जमीन पर किसी भी तरह का लगान वसूल नहीं किया जाता है।

खेती के अलावा पशुपालन, आखेट व व्यापार आदि दूसरे व्यवसाय भी हैं। व्यापार में दोनों, अन्तर-ग्रामीण अथवा अन्तरजातीय व अन्तरक्षेत्रीय, व्यापार होता है। विनिमय व विनियोग अधिकतर वस्तुओं में ही होता है। हालाँकि अब धीरे-धीरे सिक्के का प्रचलन बढ़ रहा है। अन्तरक्षेत्रीय व्यापार में ऊनी वस्त्र, तलवार व अन्य तिब्बती सामान को नेफावासी असम में बेचने के लिए ले जाते हैं, जिनके बदले में नमक व अन्य उपकरण, मुख्य रूप से खेती के औजार प्राप्त करते हैं।

आदिवासियों में बहुत-सी महिलाएँ कुशल बुनकर भी हैं। बुनाई स्थानीय तौर तरीकों व करघों पर की जाती है। पहले नेफा के लोग धातु-कला में भी प्रवीण थे। कच्ची धातु को निकालने व बर्तन बनाने के भी उनके अपने तौर-तरीके थे। स्थानीय जंगल में बाँस बहुतायत में मिलने से बाँस की टोकरियाँ व अन्य सामान बनाना उनका काफी पुराना व प्रचलित

धन्धा है। इससे उनको काफी आय होती है।

रचनात्मक कार्य का प्रारम्भ

निषिद्ध क्षेत्र होने के कारण नेफा हाल के वर्षों तक देश की सामान्य गतिविधियों से अप्रभावित व अछूता रहा। अंग्रेज शासकों ने असम के चाय-बागानों व उनके मालिकों को आदिवासियों के समय-असमय अचानक आक्रमण से बचाने की दृष्टि से नेफा-निवासियों को मैदान में व मैदानी लोगों को पर्वतीय क्षेत्रों में प्रवेश रोकने के लिए इनरलाइन कानून लागू किया। आजादी के बाद अपनी सरकार ने भी नेफा को निषिद्ध क्षेत्र बनाये रखा, लेकिन इसका उद्देश्य अब स्थानीय आदिवासियों को मैदान व शेष देश के दूसरे हिस्सों से जानेवाले व्यापारियों व मुनाफाखोरों के शोषण से बचाये रखना था। लेकिन १९६२ के चीनी आक्रमण ने सारी परिस्थिति को एक बड़ा धक्का लगा और तब से इस क्षेत्र को राष्ट्रीय एकता व चेतना की मुख्य धारा के अन्तर्गत लाने व शेष देश से सुसम्बद्ध करने की माँग व विचार दिनोंदिन जोर पकड़ता जा रहा है। इसी पृष्ठभूमि में नेफा में सरकारी व गैरसरकारी संस्थाओं द्वारा अधिकाधिक रचनात्मक व सामाजिक कार्य की आवश्यकता प्रकट हुई है।

सन् १९६२ में देश की गांधी-विचार की संस्थाओं के प्रतिनिधियों द्वारा सीमा-क्षेत्र में गांधी जी के सिद्धान्तों पर आधारित रचनात्मक व समाज सेवा का काम लागू करने के निमित्त एक सीमाक्षेत्र समन्वय समिति के बनने पर इसके चार प्रतिनिधियों सर्वश्री राधाकृष्ण, रा० कृ० पाटिल, मारजरी साइक्स व नारायण देसाई ने चीनी आक्रमण के बाद की परिस्थितियों का अध्ययन करने की दृष्टि से असम के उत्तरी क्षेत्रों का विस्तृत दौरा किया और अपने अनुभवों के आधार पर गैरसरकारी स्वयंसेवी संस्थाओं के लिए तत्कालीन परिस्थितियों में जनता का मनोबल ऊँचा उठाने व उनको राहत पहुँचाने के उद्देश्य से एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया।

इसके कुछ ही समय बाद समन्वय समिति के अध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण ने नेफा के दौरे से वापस आने के बाद तत्कालीन प्रधान मंत्री स्व० पं० नेहरू से मिलकर वहाँ पर रचनात्मक कार्य की आवश्यकता के बारे में चर्चा की और इसके साथ ही साथ समिति के कार्यकर्ताओं के लिए नेफा में जाने की अनुमति प्राप्त की। इस प्रकार नेफा में समाज-सेवा के निमित्त जानेवालों में गांधी-विचार के कार्यकर्ता सबसे पहले बाहरी लोग थे, जिनसे नेफावासियों का सम्पर्क हुआ। इसके पहले कुछ सरकारी अधिकारियों व सेना के लोगों के अलावा और किसी समाज-सेवी संस्था ने नेफा में प्रवेश नहीं किया था। सर्वप्रथम बीबी अमतुस्सलाम ने लड़ाई के बाद सेना में जवानों की सेवा व मदद के लिए कुछ केन्द्र प्रारम्भ किये, जिनमें स्थानीय लोगों को भी बड़ी राहत मिली। इसके बाद अखिल भारत शान्ति सेना मंडल व भारतीय आदिम जाति सेवक संघ के अन्तर्गत नये कार्यकर्ताओं ने वहाँ प्रवेश किया। कस्तूरबा ट्रस्ट की असम शाखा ने भी बीबी अमतुस्सलाम द्वारा जिरो के नजदीक हॉग गाँव में स्थापित केन्द्र में अपनी दो सेविकाओं को भेजा। उक्त गांधी-विचार की संस्थाओं के अतिरिक्त नेफा में भारत सेवा मिशन, रामकृष्ण मिशन, शंकर मिशन, गुवनगिरि सेवा समिति और समाज कल्याण विभाग—ये संस्थाएँ भी सामाजिक व रचनात्मक कार्य के क्षेत्र में कार्यरत हैं। स्वयं नेफा प्रशासन का एक समाज-कल्याण-संस्था की तरह विभिन्न संस्थाओं को आर्थिक सहायता देकर इस तरह के कामों को बढ़ावा देने में सक्रिय सहयोग रहा है।

कार्यक्रम और प्रवृत्तियाँ

सीमा-क्षेत्रों और विशेषकर नेफा की विशिष्ट परिस्थितियों को ध्यान में रखकर गांधी-विचार की संस्थाओं द्वारा संचालित रचनात्मक कार्य को तीन स्वरूपों में चलाना निर्धारित किया गया। शुरू-शुरू में कार्यकर्ताओं को स्थानीय परिस्थितियों में तालमेल बिठाने, स्थानीय भाषा व बोली सीखने, लोगों के रीति-रिवाज व उनके सोचने-समझने की कला को जानने तक सीमित रहा। इसके पश्चात् कार्य का दूसरा दौर शुरू होता है, जो कि लम्बा व रचनात्मक कार्य का मुख्य स्वरूप है। इसमें स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल व स्थानीय हित व आवश्यकताओं के आधार पर सामाजिक आर्थिक विकास की प्रवृत्तियाँ शुरू करना है। इन प्रवृत्तियों में उन्नत खेती, स्थानीय कच्चे माल, तकनीकी पर आधारित लघु उद्योग, वस्त्र-स्वावलम्बन के लिए खादी आदि आर्थिक कार्यक्रम व बच्चों की शिक्षा के लिए बालवाड़ी, प्रौढ़ शिक्षा-रात्रि पाठशाला, स्वास्थ्य-सुधार सफाई आदि सामाजिक, सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ चलायी जाती हैं।

रचनात्मक कार्य का तीसरा दौर जो अभी नेफा में प्रारम्भ नहीं हो पाया है लोगों को गांधीजी द्वारा प्रशस्त अहिंसा के सिद्धान्तों से अवगत कराना व हर प्रकार के अन्याय व आक्रमण के विरुद्ध जनता में संगठित होकर अहिंसक प्रतिकार की शक्ति की चेतना व जागृति लाना है।

सन् १९६३ में जब समन्वय समिति के अन्तर्गत कार्य शुरू हुआ तो काम का मुख्य उद्देश्य तत्कालीन आपत्कालीन स्थिति में सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रम को हाथ में लेना रखा गया। उस समय हमारे कार्यकर्ताओं के सामने चीनी आक्रमण के फलस्वरूप भयभीत व शंकित नेफा-निवासियों की सेवा व राहत-कार्य के द्वारा उज्ज्वल भविष्य के प्रति आश्वस्त करना व निर्भय व संगठित होकर संकट की स्थिति में जूझने के लिए तैयार करना था। इसके अतिरिक्त विभिन्न अल्पकालीन रचनात्मक व सामाजिक कार्य-प्रवृत्तियाँ लागू कर आदिवासियों में राष्ट्रीय चेतना, देशप्रेम व शेष के साथ उनके सम्बन्ध के बारे में लोगों में जागरूकता लाना मुख्य उद्देश्य रहा। इसका दूसरा उद्देश्य स्थानीय सामाजिक आर्थिक व विकास के लिए दीर्घकालीन योजनाओं व उनके कार्या-

न्वयन हेतु उपयुक्त वातावरण तैयार करना भी था।

शान्तिसेना मण्डल के कार्य

अखिल भारत शांतिसेना मण्डल द्वारा नेफा में ५ केन्द्रों से कार्य प्रारम्भ किया गया और इस समय इसके सियांग, सुवनसिरि और तिरप जिलों में कुल ७ केन्द्र और १९ कार्यकर्ता हैं। एक केन्द्र में २ से ४ तक कार्यकर्ता हैं।

रचनात्मक प्रवृत्तियों में बालवाड़ी और प्रौढ़ शिक्षा सभी केन्द्रों में प्रारम्भ की गयी है, जिसको कि स्थानीय लोगों ने सहर्ष और सर्वाधिक अपनाया है। प्राय सभी केन्द्रों में लोगों ने शान्ति-केन्द्रों और उनके द्वारा चलनेवाले स्कूलों के लिए स्वयं बिना मजदूरी के मकान व झोंपड़ियाँ बनायी। शिक्षा के अलावा सभी केन्द्रों पर कुछ स्वास्थ्य-सुधार व प्राथमिक उपचार की सुविधा प्रदान की गयी है। इसमें स्थानीय आदिवासियों को काफी राहत मिलती है। कताई, बुनाई, और सिलाई आदि शिल्पों को सीखने व सिखाने की भी व्यवस्था होने से शान्ति-केन्द्र वास्तव में इस सुदूर और बीहड़ प्रदेश में सेवा के माध्यम से नयी चेतना और नवजागृति के संचार के केन्द्र बन गये हैं। केन्द्रों में उक्त प्रवृत्तियों के अतिरिक्त शान्ति-सैनिक आसपास के गाँवों में जाकर और लोगों के दैनिक जीवन के कार्यों में शरीक होकर आदिवासियों की श्रद्धा और सद्भाव प्राप्त करने में काफी सफल हुए हैं।

केन्द्र से बाहर के कार्यों में नये और उन्नत तरीकों से खेती कराना, गाँवों की सफाई आदि प्रमुख हैं। शान्तिसेना मण्डल ने नेफा में काम करनेवाले कार्यकर्ताओं के लिए विशेष प्रशिक्षण और मान्यताएँ निर्धारित की हैं। किसी भी शान्ति-सैनिक को कृषि का ज्ञान, ग्रामोद्योग शिक्षण और स्वास्थ्य-ज्ञान होना अनिवार्य है। स्थायी खेती के विकास और प्रसार की नेफा में सबसे अधिक सम्भावनाएँ और आवश्यकता है। इससे न केवल स्थानीय आदिवासियों का आर्थिक स्तर ही ऊँचा होगा, अपितु उनके अस्थायी जीवन में स्थायित्व भी आयेगा। इसलिए शान्ति-सेना मण्डल ने अपने कार्यों में कृषि को एक विशिष्ट स्थान दिया है। इसमें कम्पोस्ट खाद, सीढ़ीनुमा खेती, सिंचाई, शाक-सब्जियाँ व फल-उत्पादन का प्रचलन व प्रोत्साहन देना है। अधिकतर केन्द्रों में इन सब प्रवृत्तियों को प्रदर्शित करने के निमित्त केन्द्रों के अपने प्रदर्शन-फार्म हैं। इनसे न केवल आसपास के गाँवों पर अच्छा असर ही पड़ा है, इसके अलावा वे भविष्य में केन्द्रों को स्वावलम्बी होने में भी सहायक होंगे।

शांतिसेना मण्डल की प्रवृत्तियों में एक आकर्षक व उपयोगी कार्यक्रम इसका वार्षिक शिविर भी है। यह शिविर नेफा में कार्यरत संस्थाओं व केन्द्रों के कार्य को समीक्षित व आगे के कार्य का दिशा-दर्शन करने के उद्देश्य से किया जाता है। अब तक शांतिसेना मण्डल ने इस प्रकार के ६ वार्षिक शिविरों का आयोजन किया, जो कि कार्यकर्ताओं के लिए बहुत ही लाभप्रद सिद्ध हुए। इस तरह का छठवाँ शिविर १२ से २१ जून १९६९ को तिरप जिले के चांगलांग नामक स्थान पर सम्पन्न हुआ, जिसमें कुल ११७ व्यक्तियों ने भाग लिया।

आदिम जाति सेवक संघ के कार्य

भारतीय आदिम जाति सेवक संघ ने दिसम्बर १९६३ में कामेंग जिले के रूपा गाँव में गजेन्द्र आश्रम की स्थापना कर शेरडुकपेन आदिवासियों के बीच काम प्रारम्भ किया। आश्रम के अलावा सीमावर्ती गाँव में भी इसकी एक शाखा (बालवाड़ी) चलायी जाती है। इस आश्रम की एक प्रमुख उपलब्धि उस क्षेत्र में स्थानीय लोगों में अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति आकर्षण पैदा करना है। आदिम जाति सेवक संघ के आश्रम स्कूल में ५३ लड़के और १२ लड़कियाँ पढ़ती हैं। अब तक कुल २० विद्यार्थी आश्रम की बालवाड़ी से नेफा की प्राथमिक परीक्षा में शामिल हुए, जिनमें से १९ प्रथम श्रेणी में व एक द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। इसके बाद वे बोमदिला हायर सेकेण्डरी स्कूल में आगे की पढ़ाई के लिए दाखिल किये गये।

शिक्षा के अलावा स्वास्थ्य व सफाई, मुर्गी पालन, कताई-बुनाई आदि शिल्पों का प्रशिक्षण आदि प्रवृत्तियाँ भी साथ साथ चलायी जाती हैं। कार्यकर्ता आसपास के गाँवों में जाकर गलियों की सफाई, गाँव के बच्चों की सफाई व खेती आदि कामों में भी शरीक होते हैं। दोनों केन्द्रों पर खादी ग्रामोद्योग आयोग की ओर से खादी भण्डार भी खोले गये हैं।

भारतीय आदिम जाति सेवक संघ ने नेफा में अपनी प्रवृत्तियों को बड़े पैमाने पर प्रारम्भ करने के लक्ष्य से एक विस्तृत कार्यक्रम के अन्तर्गत १९६९ में ५ नये केन्द्रों की स्थापना की है। ये केन्द्र तिरप, लोहित व सियांग जिलों में खोले गये हैं। प्रत्येक केन्द्र पर एक केन्द्र प्रभारी व उसके साथ कम-से-कम दो सहायक नियुक्त किये गये हैं। इन केन्द्रों की प्रवृत्तियों में बालवाड़ी, प्रौढ़-शिक्षा, शिल्प प्रशिक्षण, फलोद्यान व शाक-भाजियों के उत्पादन का प्रसार, मधुमक्खी-पालन, बच्चों के लिए खेल-कूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम, स्वास्थ्य लाभ व जन-सम्पर्क आदि सभी कार्य सम्मिलित हैं। पूरे नेफा के कार्य के संचालन के लिए तिनसुकिया, असम में एक पुराने और अनुभवी कार्यकर्ता के अधीन एक क्षेत्रीय कार्यालय की स्थापना की गयी है, जिससे कि नेफा में भविष्य के नियोजन, सचालन व प्रसार में सहायता मिलेगी।

कस्तूरबा ट्रस्ट के कार्य

कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट की असम शाखा की ओर से भी सुवनसिरि जिले के मुख्यालय जिरो के पास होंग गाँव में एक केन्द्र चलता है। यह केन्द्र बीबी अमतुस्सलाम ने प्रारम्भ किया था। कस्तूरबा ट्रस्ट द्वारा कार्य शुरू करने पर उसको स्थायी बनाने की आवश्यकता हुई जिसके लिए शुरू-शुरू में स्थानीय लोगों ने ही अपने परिश्रम से कुछ झोपड़ियाँ और मकान बनाये।

अब केन्द्र के पक्के मकान बनकर तैयार हो गये हैं। केन्द्र की सेविकाओं द्वारा शुरू की गयी रात्रि पाठशाला में अब तक ४५ प्रौढ़ों ने असमी, ३५ ने हिन्दी व ५ ने अंग्रेजी बोलना व लिखना सीख लिया है। इसके अतिरिक्त बालवाड़ी में बच्चों की संख्या इस समय ४० तक पहुँच गयी है। केन्द्र की सेविकाओं ने हाग व आसपास के गाँवों में स्वास्थ्य-सेवा व प्रसूति-सेवा का कार्य भी प्रारम्भ किया है, जिसकी दिनोंदिन माँग बढ़ती जा रही है। केन्द्र के द्वारा संचालित शिल्प कार्यों (कताई, बुनाई, सिलाई, कढ़ाई आदि) से केन्द्र को प्रति वर्ष लगभग १००० रु० की आय होती है। इसी तरह बागवानी के काम में भी यह केन्द्र नेफा में एक आदर्श केन्द्र घोषित किया गया है। इसमें भी वर्ष में १००० रु० से अधिक की शाक-सब्जी पैदा होती है।

भावी कार्यक्रम

नेफा के लोगों में गैरसरकारी तौर पर सेवा के माध्यम से मिलने के इस नये प्रयोग में यद्यपि कितनी ही अड़चनें व खामियाँ हैं, फिर भी इस कार्य में सफलता की भी काफी सम्भावनाएँ प्रकट हुई हैं। अल्पसंख्या और सीमित साधनों के बावजूद भी सर्वोदय-कार्यकर्ता स्थानीय वातावरण में समरस होकर लोगों को अपने सेवाभाव से प्रभावित करने में काफी सफल हुए हैं। आज वे लोगों में सबसे अधिक विश्वासपात्र और सम्मानित व्यक्तियों में से हैं। स्थानीय लोग बिना किसी हिचकिचाहट के शांति-सैनिकों के पास समय-बेसमय पर हर तरह की सहायता के लिए आते-जाते हैं। काम को आगे बढ़ाने के लिए अनुकूल वातावरण बना है और विस्तार की अत्यधिक संभावनाएँ हैं।

शान्तिसेना मण्डल और आदिम जाति सेवक संघ, दोनों संस्थाओं का अपने कार्यक्षेत्र और कार्यक्रम को बढ़ाने की योजनाएँ है। लेकिन उपयुक्त कार्यकर्ता और आर्थिक साधनों की कमी उनके मार्ग में प्रमुख कठिनाई है। अब तक के काम में नेफा-प्रशासन का हर तरह से सहयोग रहा है। शांतिसेना मण्डल, नेफा-प्रशासन की मदद से नेफा में एक मुख्य केन्द्र स्थापित करने की चेष्टा में है। भविष्य के लिए शांतिसेना मण्डल का प्रमुख उद्देश्य वहाँ के आर्थिक जीवन में प्रगति लाना उचित और अपेक्षित ही नहीं, बल्कि अनिवार्य भी है। इसके लिए मंडल कृषि के विकास और लघु उद्योगों की स्थापना के साथ-साथ लोगों के तकनीकी ज्ञान की वृद्धि को सर्वाधिक महत्त्व देगा। आ० जा० से० संघ अपने आश्रम-स्कूलों के माध्यम और देश के दूसरे भागों में आदिवासियों के बीच किये गये कार्यों के अनुभवों के आधार पर नेफा में शिक्षा के प्रसार का प्राथमिकता देकर सामाजिक उत्कर्ष के लिए भूमिका बनाने में सहायक हो सकता है। आ० जा० से० संघ का नेफा में कार्य करनेवाले कार्यकर्ताओं के लिए पासीघाट में एक प्रथम प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना का निर्णय वहाँ पर रचनात्मक कार्य के विस्तार व उसकी सफलता की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है।

—सीमाक्षेत्र समन्वय समिति से प्राप्त

पुस्तक परिचय

बापू और उनकी दिनचर्या

लेखक-सं०—गौरीशंकर गुप्त, राष्ट्रपिता प्रकाशन, ए २/१ गायघाट, वाराणसी–१
पृष्ठ-संख्या : १५०   मूल्य ४.००

गांधी-जन्मशती वर्ष में विभिन्न व्यक्तियों और संस्थाओं ने अनेक आकर्षक, महँगे तथा सस्ते ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं।

"बापू और उनकी दिनचर्या" के पृष्ठों को पढ़ते समय यह स्पष्ट हो जाता है कि सत्य के उपासक महात्मा गांधी की दिनचर्या प्रस्तुत करने में लेखक ने सही-सही जानकारी प्राप्त करके उसे प्रस्तुत करने की भरपूर कोशिश की है।

श्री गौरीशंकर गुप्त ने गांधीजी की दिनचर्या देने के प्रसंग में गांधीजी के जीवन के ऐसे अनेक प्रसंगों पर प्रकाश डाला है, जिसकी जानकारी से बापू की दिनचर्या में कस्तूरी की सुगंध का समावेश हो गया है। लेखक ने निश्चय ही बड़ी मेहनत से दिनचर्या सम्बन्धी सारी जानकारी इकट्ठी करके उसे रोचक शैली में व्यक्त किया है।

"बापू और उनकी दिनचर्या" एक प्रेरणादायी प्रकाशन है। इसकी तैयारी में लेखक ने अपने जीवन के २० बहुमूल्य वर्षों का सार्थक उपयोग किया है। लेखक की इस भेंट में परिश्रम, प्रेम और प्रामाणिकता का जैसा सामंजस्यपूर्ण निर्वाह हुआ है, वह गांधी-जन्मशती-पर्व में प्रकाशित होनेवाले सैकड़ों ग्रन्थों से इसे अलग प्रकार की गरिमा प्रदान करता है। जो लोग बापू के जीवन के समग्र चित्र की झलक पाना चाहते हैं उनके लिए यह पुस्तक पठनीय है और जो लोग कम पढ़कर अधिक जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं, उनके लिए तो यह उपयोगी है ही।

पुस्तक की साज-सज्जा और छपाई विषय के अनुरूप है, किन्तु पृष्ठ-संख्या के अनुपात से जो मूल्य रखा गया है, वह आम जनता की क्रय-शक्ति की दृष्टि से महँगा है। ऐसी स्थिति में जब कि लेखक महोदय को पुस्तक-प्रकाशन के निमित्त किन्हीं स्रोतों से आर्थिक सहायता भी मिली है, लेखक महोदय को उन स्रोतों से प्राप्त आर्थिक सहायता का भी यथोचित उल्लेख करना समीचीन था। —रुद्रभान

स्मृति-सुगन्ध (भाई धोत्रे)

भाई श्री धोत्रेजी के देहावसान के बाद उनकी स्मृति में एक स्मारिका के प्रकाशन की बात तय हुई। देश भर में फैले हुए भाई श्री धोत्रेजी के मित्र-सुहृदों द्वारा भेजे गये संस्मरणों और श्रद्धांजलियों को इस पुस्तक में संग्रहित किया गया है। इसमें हिन्दी, मराठी, गुजराती और अंग्रेजी के संस्मरण है। जिस भाषा में संस्मरण प्राप्त हुए हैं उसी भाषा में पुस्तक में दिये गये हैं। इस पुस्तक के माध्यम से भाई श्री धोत्रेजी की 'स्मृति सुगन्ध' लोगों तक पहुँचेगी ऐसी आशा है।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी–१

उड़ीसा प्रदेशदान की ओर : कुछ कठिनाइयाँ

पिछले सितम्बर महीने में उड़ीसा प्रदेश का वार्षिक सर्वोदय सम्मेलन हुआ था। सम्मेलन में शरीक होनेवाले कार्यकर्ताओं ने उड़ीसा का राज्यदान प्राप्त करने का अपना संकल्प दुहराया था, लेकिन राज्यदान प्राप्त करने की आखिरी तारीख को २ अक्तूबर, १९६९ से आगे खिसकाकर उसे १८ अप्रैल १९७० तक बढ़ा दिया गया। राज्यदान की संकल्प-पूर्ति के लिए तीन खण्डों की कार्य-योजना बनायी गयी। प्रथम चरण में बालासोर ढेंकानल, और फूलबनी, द्वितीय चरण में केन्दुझर, गंजाम और पुरी तथा तृतीय चरण में संबलपुर, सुन्दरगढ़, बलांगीर, कालाहांडी और कटक जिलों का जिलादान-प्राप्त करने का कार्यक्रम तय हुआ। उस समय यह भी माना गया था कि प्रथम चरण के जिलादान जनवरी '७० के तीसरे सप्ताह तक प्राप्त करके उसे श्री जयप्रकाशजी को उनकी ८ दिन की उड़ीसा-यात्रा के दौरान भेंट किया जायगा। सम्मेलन में यह भी तय किया गया कि उस अवसर पर जयप्रकाशजी को राज्य की ओर से आन्दोलन के काम के लिए एक थैली भेंट की जाय। सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग अक्तूबर में उड़ीसा गये थे। उस समय उनसे परामर्श लेकर यह तय हुआ कि थैली की रकम डेढ़ लाख रुपये रहेगी।

सर्वश्री विश्वनाथ पटनायक, सुधांशु शेखर दास एवं वैष्णव पटनायक ने क्रमशः फुलबनी बालासोर और ढेंकानल जिलों का जिलादान प्राप्त करने का दायित्व स्वीकार किया। बालासोर जिले के जिलादान प्राप्ति का अभियान तेजी से चल रहा है जिसमें ग्रामदानी गाँवों की ग्राम जनता, शिक्षकों और पंचायत अधिकारियों का सहयोग प्राप्त है। ढेंकानल जिले का अभियान जनवरी के दूसरे सप्ताह में शुरू होगा, जब कि क्षेत्र के लोग फसल-कटाई के काम से फुरसत पा चुके होंगे।

इसी बीच प्रदेश के प्रभावशाली कार्यकर्ता थैली भेंट करने के लिए धन इकट्ठा करने के काम में जुट जायेंगे। इसके लिए ग्रामदानी गाँवों में अनाज-संग्रह करने का विशेष प्रयास किया जायेगा। नगरों में धन संग्रहकार्य को गति देने में सुश्री हरिविलास बहन और कान्ता बहन ने अपना ८ दिन का समय देना स्वीकार कर लिया है।

कोरापुट के कार्यकर्ताओं ने फुलबनी का जिलादान प्राप्त करने में अपना सहयोग देने का वादा किया था। लेकिन अपने जिले की समस्याओं में उलझे रहने के कारण वे कोई खास मदद नहीं दे पाये। श्री विश्वनाथ पटनायक स्थानीय कार्यकर्ताओं की सहायता से फुलबनी, जिलादान प्राप्त करने के काम में पूरी तरह जुटे हुए हैं।

उड़ीसा की मौजूदा सरकार ने ग्रामदान-आन्दोलन के प्रति विपरीत रुख ग्रहण कर लिया है, इस कारण उड़ीसा की परिस्थिति कुछ पेंचीदा हो गयी है। उड़ीसा सरकार की ओर से अचानक एक प्रेस-विज्ञप्ति जारी कर दी गयी जिसमें यह घोषणा की गयी कि राज्य भूदान बोर्ड को जो सरकारी अनुदान मिलता है वह रोका जा रहा है, क्योंकि सरकार के पिछले वर्ष के अनुदान के उपयोग का प्रमाणपत्र देर से पेश किया गया और उसमें हिसाब सम्बन्धी कुछ अनियमितताएँ भी रही हैं। इसके साथ-साथ सरकारी सूत्रों ने भूदान-ग्रामदान-आन्दोलन के खिलाफ प्रेस विज्ञप्ति प्रसारित करके तीखे आरोप लगाये। राज्य भूदान बोर्ड में कैबिनेट स्तर के दो मंत्री सदस्य हैं। प्रेस-विज्ञप्ति जारी करने के पहले भूदान बोर्ड की किसी बैठक में प्रेस विज्ञप्ति के आरोपों की चर्चा नहीं की गयी। भूदान समिति (बोर्ड) तथा राज्य सर्वोदय मण्डल ने राज्य सरकार की इस शरारत भरी कार्रवाई पर गहरी नाराजगी प्रकट करते हुए सरकार से स्पष्टीकरण की माँग की। अभी तक सरकार ने उसका कोई उत्तर नहीं दिया है।

उड़ीसा सरकार ने भूदान ग्रामदान आन्दोलन के प्रति जो रुख अपनाया है उसका मूल कारण शायद यह है कि कोरापुट और गंजाम जिले में उड़ीसा पुलिस की ओर से जो ज्यादतियाँ की गयी थीं उसकी प्रदेश के कार्यकर्ताओं ने आलोचना की थी। इन दोनों जिलों में तथाकथित नक्सालवादियों का मुकाबला करने के लिए भारी संख्या में पुलिस तैनात की गयी है। इस इलाके में नक्सालवादियों की कारगुजारियाँ दो-तीन हत्याओं और लूट-पाट की घटनाओं तक सीमित रही हैं, लेकिन इसकी आड़ में पुलिस ने जो ज्यादती की वह पहले की तुलना में कहीं अधिक है। पुलिस गाँवों में जाकर अंधाधुन्ध गिरफ्तारियाँ करती है, लोगों को पीटती है और कई तरह के उपायों से उनसे रुपये ऐंठती है। नक्सालवादियों की हिंसा को दबाने के बहाने पुलिस वास्तव में स्थानीय कर्जदाताओं और जमीन के मालिकों के अमानवीय और अकल्पनीय शोषण के तरीकों को जारी रखने में मदद पहुँचा रही है। जो भी पुलिस की इन ज्यादतियों के खिलाफ आवाज उठाता है उसे पुलिस नक्सालवादी घोषित कर देती है और फिर वह या तो गिरफ्तार कर लिया जाता है या पीटा जाता है। इस प्रसंग में कुछ सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को रोककर पुलिस के लोग पूछताछ कर रहे हैं। उत्कल नवजीवन मंडल के एक कार्यकर्ता को पुलिस की मार भी पड़ी है।

सुश्री मालती देवी गरडा ग्राम में पहुँच गयी हैं। उसी गाँव में श्री गोविन्द रेड्डी का केन्द्र है। मालती देवी गाँव के लोगों की हिम्मत बढ़ाने की कोशिश कर रही हैं। नवजीवन मंडल के कुछ कार्यकर्ता

तथा नवजीवन मंडल और कस्तूरबा-ट्रस्ट की कुछ महिला कार्यकर्ता उस क्षेत्र के गाँवों में घूमकर लोगों का नैतिक बल बढ़ाने का प्रयास कर रही हैं।

उड़ीसा के कोरापुट और मयूरभंज जिलों का जिलादान हो चुका है। अब यह तय किया गया है कि ग्रामदान में प्राप्त भूमि के वितरण और ग्रामसभाओं के गठन का काम बड़े पैमाने पर शुरू किया जाय। वास्तव में अबतक उड़ीसा के लगभग ३ हजार गाँवों में भूमि का वितरण हो चुका है। इस वितरण से २६ हजार से अधिक भूमिहीन परिवारों को भूमि प्राप्त हुई है। यह काम धीरे-धीरे १० वर्षों की अवधि में पूरा हुआ है। अब इरादा यह है कि गाँव के लोग स्वयं ही तेज रफ्तार से जोर लगाकर अपने क्षेत्र की जमीन भूमिहीन परिवारों में बाँट दें। आशा है कि इस कार्यक्रम द्वारा भूमिहीन और गरीब किसानों में एक नयी चेतना पैदा होगी और वह चेतना शान्तिपूर्ण रास्तों से आगे बढ़कर ग्रामदान आन्दोलन में एक नयी गतिशीलता का प्रादुर्भाव करेगी। (मूल अंग्रेजी से)

—मनमोहन चौधरी

जनता और सरकार के बीच दलों की जरूरत क्यों?

हमारे देश में राजनीति ने अब तक तीन काम किये हैं। एक, उसने एक दल के शासन के स्थान पर कई दलों की मिली-जुली सरकारें कायम कीं। दो, उसने अनेक दलों के रहते हुए भी (बिहार में) सरकार का बनना, असम्भव-सा कर दिया है। तीन, उसने यह सम्भावना दिखायी है कि अगर राजनैतिक दल चाहें तो सबको मिलाकर 'सर्वदलीय' सरकार कायम की जा सकती है। लेकिन इन तीनों से भी अधिक महत्व का काम यह माना जा सकता है कि राजनैतिक जोड़-तोड़ चाहे जितनी हो, दलबन्दी के नाम में विरोधवादी कारस्तानियाँ चाहे जो हों, कानूनी विधि-विधान जितने भी बनाये जायँ, समाज का बुनियादी ढाँचा तथा उसके द्वारा होनेवाला दमन और शोषण, ज्यों का त्यों कायम रह सकता है। 'स्टेटस को' को बदलने की शक्ति प्रचलित राजनीति में नहीं है। न होने का एक कारण यह है कि अगर एक राजनीति 'स्टेटस को' पर प्रहार करती है, तो दूसरी उसकी रक्षा करती है। इस तरह दोनों एक-दूसरे को काटती हैं। इस तरह समाज की विध्वंसक शक्तियाँ भेष तो बदल देती हैं, लेकिन नष्ट होने से बच जाती हैं। अकसर वे किसी-न-किसी दल को ही अपनी आड़ बना लेती हैं।

राजनीति के द्वारा समाज-परिवर्तन न होने का एक दूसरा कारण भी है। हमारे देश में दलों की राजनीति में जो कुछ होता है उसका असर फौरन जातियों पर पड़ता है, क्योंकि समाज की रचना जातियों से ही हुई है। जातियों का हमारा समाज दलों की राजनीति की हर कारर-वाई को हजम कर लेता है। राजनीति के वर्ग-संघर्ष को सामाजिक रचना जाति-संघर्ष और वर्ण-संघर्ष का रूप दे देती है। राजनीति और सामाजिक रचना की इस मिली भगत ने सरकार द्वारा सामाजिक परिवर्तन की आशा को बेकार सिद्ध कर दिया है।

अगर सरकार की शक्ति क्रान्तिकारी हाथों में हो तो समाज की पूरी व्यवस्था में गहरे परिवर्तन हो सकते हैं, यह प्रयोग साम्यवादी देशों में हुआ है। लेकिन इन गहरे परिवर्तनों को लाने और कायम रखने के लिए भयंकर और लम्बी हिंसा की जरूरत पड़ती है। भारत में उतनी हिंसा कोई दल, बिना बड़े विदेशी हस्तक्षेप के नहीं संगठित कर सकता। विदेशी हस्त-क्षेप का अर्थ होगा वियतनाम के नमूने का गृहयुद्ध। इसके अलावा विज्ञान और लोक-तंत्र के इस जमाने में लोक-क्रान्ति की कसौटी सरकार की शक्ति नहीं रह गयी है। क्रान्ति स्वयं जनता की शक्ति से आँकी जाने लगी है। मार्क्स के जमाने में राजशक्ति का लोप होना मात्र आकांक्षा और कल्पना थी, लेकिन आज के जमाने में राज्य-शक्ति का लोप आवश्यकता और अभ्यास है। भारत जैसे देश में जहाँ गरीबी, बेकारी, अशिक्षा और प्रबल लोकमत का इतना अभाव है, राज्य-शक्ति का ह्रास तत्काल जरूरी है, नहीं तो राज्य स्वयं अनीति और अन्याय का साधन बन जायगा, जैसा कि वस्तुतः वह बन गया है।

मार्क्स ने राज्य की शक्ति से वर्ग की हिंसा (क्लास वायलेंस) समाप्त करने की बात कही थी। गांधी के सामने प्रश्न था कि राज्य की हिंसा (स्टेट वायलेंस) कैसे समाप्त की जाय? राज्य की हिंसा उसी क्रम और मात्रा में समाप्त हो सकती है जिस क्रम और मात्रा में राज्य-शक्ति का स्थान लोक-शक्ति लेगी। दूसरा कोई उपाय नहीं है।

आज की राजनीति लोककल्याण के नाम में राज्य की ही शक्ति बढ़ाती है। इसमें जनता को अपने सामूहिक, स्वायत्त निर्णय से, अपने जीवन का नियमन-संचालन करने का अवसर नहीं रहता। सब कुछ सरकार करती है। इसलिए सामाजिक क्रान्ति का अर्थ इतना ही नहीं है कि व्यवस्था बदले, बल्कि यह भी है कि व्यवस्था सरकार के हाथ से निकलकर जनता के हाथ में आ जाय, तथा उसके अभिक्रम और निर्णय से चले। ऐसी व्यवस्था में सरकार प्रमुख शक्ति न रहकर पूरक शक्ति हो जाती है।

अपने देश के संदर्भ में इस तरह की सामाजिक क्रान्ति का अर्थ यह होगा कि हर गाँव अपनी व्यवस्था में स्वायत्त हो, और सरकार में ऐसी स्वायत्त ग्राम इकाइयों का प्रतिनिधित्व हो। साधनों का स्वामित्व भी गाँव का हो, सरकार या निजी मालिकों का नहीं।

अगर गाँव—स्वायत्त, चेतन और उन्नत गाँव—नयी समाज रचना की इकाई बन जाता है तो क्रान्ति का वाहन भी गाँव ही होगा, न कि कोई वर्ग। ऐसी क्रान्ति में वर्ग संघर्ष का स्थान मत-परिवर्तन और सामूहिक निर्णय लेगा। यह काम हिंसा से नहीं होगा। इसके लिए अहिंसा अनिवार्य है। सर्वोदय की क्रान्ति में इसे हम 'ग्राम-स्वराज्य' कहते हैं।

आज की राजनीति में संघर्ष—वर्ग या वर्ण का संघर्ष—अनिवार्य है। यही राजनीति वर्गों का ध्रुवीकरण है, जो राजनीति के लिए आवश्यक बताया जा रहा है।

ऐसी हालत में अगर सामाजिक क्रान्ति जरूरी हो, और दलगत राजनीति से सामाजिक क्रान्ति न होनेवाली हो, तो सर्वोदय उस राजनीति में आकर क्या करेगा? अलग दल बनायेगा? चुनाव जीतने के लिए भ्रष्ट उपाय अपनायेगा? सरकार के गलत कामों का मात्र विरोध करेगा? दूसरे दलों के साथ मिलकर सरकार बनाने बिगाड़ने के खेल में शरीक होगा? आखिर, इन कामों से अलग वह कौनसा ऐसा काम करेगा जिसे आज के राजनैतिक दल नहीं कर सकते?

कहा जाता है कि सरकार में 'अच्छे' लोगों को जाना चाहिए। बादशाह खाँ ने भी बार-बार यह कहा है। अच्छे लोग कौन हैं? लोकतंत्र में अच्छे लोग वे ही→

ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य

'ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर-सहयोग से काम लेगा। क्योंकि हरएक देहाती के जीवन का सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और गाँव की इज्जत के लिए मर मिटे।' —गांधीजी

अब समय आ गया है कि इस देश के बुद्धिवादी, किसान, मालिक-मजदूर, सभी इस बात पर विचार करें कि ग्रामदान हमें ग्रामस्वराज्य की ओर अग्रसर करता है या नहीं? यदि हमें जँच जाय कि हाँ, इससे हमें ग्रामस्वराज्य के दर्शन हो सकेंगे, तो यही अवसर है कि हम लोग इस पुण्य काम में तुरन्त लग जायँ।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति,
जयपुर–३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित

→माने जाते हैं, और माने जायेंगे, जिन्हें जनता का विश्वास प्राप्त हो। निजी जीवन में अच्छाई की चाहे दूसरी जो कसौटी हो, लोकतंत्र में इसके सिवाय दूसरी कोई कसौटी नहीं है।

प्रचलित राजनैतिक पद्धति में अच्छे लोग वे हैं जिन्हें विश्वास दल का प्राप्त होता है और वोट जनता का। इसके स्थान पर सर्वोदय एक ऐसी पद्धति विकसित करना चाहता है जिसमें विश्वास और वोट एक ही जगह हों—जनता के पास। जनता और उसकी सरकार के बीच दलों की जरूरत क्यों हो? जनता के जो अपने आदमी होंगे, और जिन पर उसका विश्वास और अंकुश होगा, वे अच्छे माने जायेंगे। अगर अच्छे आदमी का यह अर्थ ठीक हो, तो आज की पद्धति में ऐसे आदमी का चुना जाना संभव नहीं है। उसके लिए उम्मीदवारों के चयन की पूरी पद्धति ही बदलनी पड़ेगी।

क्रान्ति की प्रक्रिया रचना, जनता की प्रत्यक्ष शक्ति बढ़ाना, सरकार का दायरा घटाना, उम्मीदवारों के चयन की नयी पद्धति कायम करना, आदि काम राजनीति के ही अन्तर्गत माने जाते हैं। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि सर्वोदय आन्दोलन 'राजनीति' में रुचि नहीं रखता। जब साम्राज्यवादी व्यवस्था थी तो उसका अन्त करना क्रान्ति का राजनैतिक काम था। आज जब कि राष्ट्रीय व्यवस्था है तो दलवादी व्यवस्था के स्थान पर जनतावादी व्यवस्था कायम करना क्रान्ति का काम है। यह नयी राजनीति है। यही लोकनीति है।

—राममूर्ति

आवश्यक सूचना

विभिन्न जगहों से सर्व सेवा संघ द्वारा प्रकाशित साहित्य तथा 'भूदान-यज्ञ' और 'भूदान तहरीक' मिलवाने की माँग संघ के प्रधान कार्यालय, गोपुरी वर्धा आती रहती है। ये साहित्य और पत्रिकाएँ क्रमशः सर्व सेवा संघ-प्रकाशन तथा संपादक, 'भूदान-यज्ञ' साप्ताहिक, राजघाट, वाराणसी (उ० प्र०) से उपलब्ध करें।

—मंत्री, सर्व सेवा संघ

★

राष्ट्रपिता के योग्य बनिए

★

अगर आप हिन्दू हैं तो अपने मुसलमान भाई को और मुसलमान हैं तो अपने हिन्दू भाई को गले लगाइए। उनकी शताब्दी के इस काल में उन्हें श्रद्धांजलि देने का यही सर्वश्रेष्ठ तरीका है।

जन-सम्पर्क समिति द्वारा प्रसारित,
राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी समिति,
६-राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली—१

आन्दोलन के समाचार

गया जिला ग्रामस्वराज्य-समिति का गठन

दिनांक ५,६,७ जनवरी १९७० को गया जिले के रचनात्मक कार्यकर्ताओं और लोक-सेवकों की बैठक में गया जिला में ग्रामदान-पुष्टि-अभियान को अतितूफान की गति से चलाने के लिए जिला ग्रामस्वराज्य समिति का गठन किया गया, जिसके अध्यक्ष श्री त्रिपुरारि शरण, मंत्री श्री दिवाकरजी, सहमंत्री श्री केदार मिश्र और कोषाध्यक्ष श्री वीरेन्द्र दास निर्वाचित हुए हैं। १५ सदस्यों की कार्य-समिति और ७५ सदस्यों की एक साधारण सभा का गठन किया गया।

निर्णय हुआ कि गया जिला के ४६ प्रखण्डों में से सबका ग्रामदान सम्पन्न हो चुका है, अतएव सभी प्रखण्डों में एकमात्र एक दिवसीय कार्यकर्ता-शिविर करके प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन किया जाय, जिसके जिम्मेवार एक प्रभारी संयोजक होंगे। प्रखण्ड-समिति गाँव-गाँव में ग्रामसभाओं का गठन करेगी और अधिकाधिक संख्या में सर्वोदय मित्र और लोकसेवकों की भर्ती करने के साथ-साथ ग्रामस्वराज्य कोष-संग्रह का काम करेगी। मार्च मास तक प्रथम चरण में प्रत्येक प्रखण्ड के २० प्रतिशत गाँवों में ग्रामसभा बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।

बैठक में यह विचार भी व्यक्त किया गया कि आगामी वर्ष में ग्राम-पंचायतों के होनेवाले व्यापक चुनाव के समय तक ग्रामसभाओं का सर्वसम्मत गठन अधिकांश गाँवों में हो जाय, जिससे ग्रामपंचायतों के शान्तिमय और सर्वसम्मत चुनाव कराने की व्यापक पृष्ठभूमि तैयार हो सके।

उपरोक्त बैठक में श्री जयप्रकाश नारायणजी भी उपस्थित थे। बैठक की अध्यक्षता बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के मंत्री श्री विद्यासागरजी ने की।

पुनः गठित जिला सर्वोदय मंडल के संयोजक श्री इन्द्रदेव सिंह और सर्व सेवा संघ के लिए प्रतिनिधि श्री त्रिपुरारि शरण निर्वाचित किये गये।•

सहरसा में ग्रामस्वराज्य-समिति का गठन

दिनांक ३० दिसम्बर '६९ को बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ सहरसा के प्रांगण में सहरसा जिला (बिहार) के सर्वोदय कार्यकर्ताओं, ग्रामदानी कार्यकर्ताओं एवं ग्रामदानी ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों की बैठक श्री कैलाश प्रसाद शर्मा, मंत्री, बिहार ग्रामस्वराज्य समिति की अध्यक्षता में हुई, जिसमें जिला ग्रामस्वराज्य समिति का गठन किया गया। सर्वसम्मति से श्री वीरेन्द्रनारायण सिंह, अध्यक्ष एवं विष्णुदेव नारायण सिंह तथा लक्ष्मीनारायण, मंत्री ग्राम चुनाव के आधार पर चुने गये। वीरेन्द्रनारायण सिंह, सहरसा जिला के एक प्रगतिशील किसान हैं तथा जीवविज्ञान में एम० एस-सी० की डिग्री प्राप्त किये हुए उत्साही जवान हैं। श्री विष्णुदेव नारायण सिंह भी एक पढ़े-लिखे जवान हैं, जिनकी सार्वजनिक जीवन में अच्छी प्रतिष्ठा है। लक्ष्मीनारायण भाई एक पुराने नौजवान सर्वोदय-कार्यकर्ता हैं।

बैठक में निर्णय किया गया कि एक महीना के अन्दर ही सभी प्रखण्डों में प्रखण्ड सभाओं का गठन करके गाँवों में ग्रामसभा का गठन एवं बीघा-कट्ठा जमीन निकालने की तैयारी की जाय।•

सारण जिला ग्रामस्वराज्य समिति

सारण जिला ग्रामस्वराज्य समिति की एक बैठक ११ जनवरी को श्री जलेश्वर दुबे की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इस बैठक में निम्न प्रकार से पदाधिकारियों का निर्वाचन हुआ।

अध्यक्ष	: श्री भृगुराय
कार्यकारी अध्यक्ष	: " जलेश्वर दुबे
मंत्री	: " विश्वनाथ शर्मा
सहमंत्री	: " विजयकुमार सिंह
"	: " सदीक अंसारी
"	: " दीनानाथ तिवारी

सिंगरोली और सीहोर तहसील-दान घोषित

सम्बन्धित सूत्रों के अनुसार जिला गांधी-शताब्दी समिति, सीधी (म० प्र०) द्वारा चलाये जा रहे जिला ग्रामदान-अभियान के अन्तर्गत जिले की सिंगरोली तहसील-दान घोषित हुई है। तहसील के २७८ आबाद गाँवों में से २६१ गाँव ग्रामदान में शामिल हुए हैं। यह उल्लेखनीय है कि समूची तहसील के दान में कुल १३ दिन ही लगे।

सीधी जिले में कुल ३ तहसीलें हैं। शेष दो तहसीलों में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-अभियान जारी है।

इसी प्रकार सीहोर जिले की सिहोर तहसील ग्रामदान के अन्तर्गत आ जाने की जानकारी मिली है। तहसील के ३०८ गाँवों में से २८३ गाँव ग्रामदानी बन गये हैं। इच्छावर तहसील के १५० गाँवों में से ८२ गाँव अब तक ग्रामदानी बने हैं। इस प्रकार जिले के कुल १४५३ गाँवों में से ३६५ गाँव ग्रामदान अर्थात् जिले का चौथा भाग ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार को अपनी स्वीकृति दे चुका है। (सप्रेस)

उत्तरप्रदेश की सर्वोदय परिषद्

२९-३० जनवरी को प्रदेश स्तरीय ग्रामदान प्राप्ति समिति की एक बड़ी सभा हरदोई में रखी गयी है। इसमें प्रदेश के ग्रामदान में लगे वरिष्ठ कार्यकर्ता तथा सहयोगी शामिल होंगे, यह प्रदेश का एक छोटा-सा सम्मेलन ही है। इसमें सर्वश्री ठाकुरदास बंग, आचार्य राममूर्ति, धीरेन्द्र भाई, विचित्र भाई, खरे साहब आदि सर्वोदय विचारक पहुँच रहे हैं।

—कपिल भाई

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : १८
सोमवार २ फरवरी, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३८९

गांधी : अवतार नहीं, इंसान

गांधीजी के बारे में हम सोचते हैं। उन्होंने अनेक प्रयत्न किये। धीरे-धीरे उनकी ताकत बढ़ती गयी। कोई ऐसा चमत्कार नहीं देख पाते, जैसे मान लीजिए, कपिल महामुनि। बचपन में ही एकदम ज्ञान बोलने लगे। माँ के पास आये और माता को ही ज्ञान देने लगे। एक अलौकिक सिद्धि थी। या शंकराचार्य को ले लें। लगभग आठ साल की उम्र में वेदाभ्यास पूरा करके निकल पड़े।

ऐसी श्रेणी में भगवान की कृपा से महात्मा गांधी नहीं थे। अगर ऐसी श्रेणी में होते तो हमारे लिए काम के नहीं होते। फिर तो हम उनके सामने दोनों हाथ जोड़ते और कहते, 'आप अपने स्थान में हैं और हम अपने स्थान में हैं। आपका अनुकरण हम नहीं कर सकते हैं। आप महान् हैं, सूर्यनारायण हैं। लेकिन हमको तो पृथ्वी पर ही चलना है। आप हमारे नमस्कार के पात्र हैं। लेकिन आपके पीछे हम नहीं जा सकते हैं। आपकी तो बिलकुल अलग है। यक्ष, किन्नर, गंधर्व में आपकी गिनती है, हम तो सामान्य मानव हैं।' यह बात हम गांधीजी के सामने नहीं कर सकते। हमको, हर एक को मानना होगा कि गांधीजी जन्मत एक सामान्य मनुष्य थे। इसलिए वह मेहनत करके विशाल हो गये। उनका सारा पराक्रम इस जन्म का है।

आज उनका स्मरण हम करते हैं तो उनका चरित्र अनुकरणीय है, यह हमको समझना चाहिए। नहीं तो अगर हमने उनको अवतार वगैरह बना दिया तो मामला खतम हो गया। अवतार रूप की जरूरत होती है, मानव रूप में परमात्मा आ गये, ऐसा मान करके उपासना-भक्ति करना मनुष्य के लिए लाभदायी होता है। इसलिए अवतार की भी मानव को जरूरत होती है। तो राम अवतार हैं, कृष्ण अवतार हैं, बस हो गये। इससे ज्यादा अवतारों की जरूरत नहीं है। अब मानवों की जरूरत है। अगर हमने कभी महात्माओं को अवतार बना रखा तो उनका हमको कुछ भी उपयोग नहीं होगा, सिवाय इसके कि नाम वगैरह हम उनका लें। नाम लेने के लिए आधार चाहिए, वह राम-कृष्ण हमारे लिए बस है। इससे ज्यादा तीसरे की जरूरत हमारी नहीं है।

इसलिए गांधीजी का जो मानव-रूप है वह हम कायम रखें, उनका कोई सम्प्रदाय न बनायें। एक शब्द उन्होंने निकाला तो वही प्रमाण, ऐसा न मानें। हम सोचें। वे हमेशा सोचते रहते थे, बदलते रहते थे, कहते भी थे कि मेरे पुराने किसी भी वाक्य के साथ नया वाक्य अगर विरोधी जाता हो, तो नया वाक्य प्रमाण समझो, पुराना गलत समझो। क्योंकि आगे-आगे मैं बढ़ता गया हूँ, तो पुराना वाक्य पुरानी अवस्था का है।

लक्ष्मीनारायणपुरी, मुजफ्फरपुर, बिहार : २-१०-'६६

—विनोबा

अहिंसा की धरती

मेरे प्यारे वतन, प्यारे हिन्दोस्ताँ,
—तू है अहिंसियों की धरती, 'तू जन्नत-निशाँ'।[1]

'दश्तो सहरा'[2] तेरे 'रश्के-सद-गुलसिताँ'[3]
'संग-रेजे'[4] तेरे प्यार की 'कहकशाँ'[5]।
फूल ही फूल है, इसका कहना ही क्या?
तेरे काँटों में भी है, 'गुरूरे-वफा'[6]।

जब कभी दाग का दामन पे छींटा पड़ा,
'खूने-कल्बो-जिगर'[7] से उसे धो दिया।
'इस्मते-गुल'[8] बचायी है हर मोड़ पर,
हर 'रविश'[9] पे बचायी कली की 'हया'[10]।
'अर्जे-कश्मीर'[11] हो या कि पंजाब हो,
हर जगह जल रहा है वफा का दिया।

हाय! नफरत की कैसी हवा यह चली,
लौ चिरागे-मुहब्बत की थर्रा गयी।
'शाखे-गुल'[12] में धुआँ और शोला उठा,
जल गया 'आशियाँ'[13],'तीरगी'[14] छा गयी।
मह जबाँ कट गयी, 'बाली-पर'[15] जल गये,
लुट गयी 'नगमगी'[16] मिट गयी जिन्दगी।
हाय...

वो अहिंसा की धरती, वो साबरमती,
छिन गयी जिसकी छाँ भर में
'पाकीजगी'।[17]

खूने-मासूम से रंग खेला गया,
जिस्मे-इन्साँ की होली जलायी गयी।
आह! भाई का भाई ने काटा गला।
आदमीयत यहाँ 'शरमगीं'[18] हो गयी।
यादे-बापू मनायी तो इस धूम से,
कल सुहागन जो थी, आज विधवा हुई।
हाय...

देखकर यह अहिंसा की धरती का रंग,
रूहे बापू तड़पकर ये चिल्ला उठी—
हाय मेरे वतन! तुझको क्या हो गया?
'अहरमन'[19] उठ गया, देवता सो गया।

गम के डूबी हुई दर्द में यह 'सदा'[20]
'शायरे-गमजदा'[21] का जिगर फट गया।
फिर 'ब-सद-इहतरामो-ब सद आरजू'[22]
रूहे बापू से 'कामिल' ने की 'इल्तिजा'[23]—
गम न कर रूहे-बापू, तू अब गम न कर,
आ गया देश में अम्न का देवता।

जो कि रिश्ता है, 'तस्बीहो जुन्नार'[24] का,
यानी तेरा ही प्रेमी वह गफ्फार खाँ।
जिसका पैगाम इन्सानियत-एकता,
हौसला जिसका टीपू का है हौसला।
जिसकी 'अज्रमत'[25] पै 'नाजाँ'[26] है
'पाके-वतन',[27]
जिसकी हर बात है, वतन का पैगाम।

'अमृत'[28] है जिसके अर्जुन सा है 'बाँकपन'[29]
'इसका कामिल'[30] है 'पैकार'[31] होने को है,
नाव मझधार से पार होने को है।
फिर मेरा हिन्द 'बेदार'[32] होने को है,
भाई-भाई में फिर प्यार होने को है।
गम न कर रूहे-बापू तू अब गम न कर,
आ गया देश में अम्न का देवता।●

—कामिल अनसारी
टांडा (फैजाबाद)

●['इन्सानी बिरादरी दिवस' के अवसर पर रानीगंज बाजार (बलिया) में पढ़ी गयी कविता]

---

१. स्वर्ग स्वरूप, २. जंगल और रेगिस्तान, ३. सौ उपवन के लिए ईर्ष्या, ४. कंकरियाँ, ५. आकाश-गंगा ६. स्वाभिमान-युक्त गर्व, ७. दिल और जिगर का रक्त, ८ फूल की पवित्रता, ९ क्यारी, १० लज्जा; ११. कश्मीर की भूमि, १२ फूल की डाली, १३ घोंसला, १४ अँधेरा; १५. बाल और पंख; १६ संगीत, १७ पवित्रता; १८ लज्जित, १९ ईरान के आग्निपरस्तों के विश्वास के अनुसार पाप का देवता—दानव, २० आवाज, २१ गमगीन कवि, २२ सौ श्रद्धा और सौ आशा, २३ प्रार्थना; २४. तसबीह (माला) और जनेऊ; २५. बड़प्पन, २६. गर्वित, २७. देश की धूल, २८. सत्य, २९ मनोरमता, ३०. सत्य और असत्य, ३१. संघर्ष, ३२ सचेत।

सेवकों का फर्ज

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् और मंत्री श्री ठाकुरदास बंग बादशाह खाँ साहब से मिले। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को अच्छी सरकार बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। ऐसा आह्वान बादशाह खाँ ने समय-समय पर किया था, और उसके बिना भूदान-ग्रामदान का कार्य प्रभावहीन रहेगा ऐसा कहा था।

इसके बारे में सर्व सेवा संघ की भूमिका खाँ साहब को समझाते हुए जगन्नाथन्जी ने कहा कि "ग्रामदान आन्दोलन का आवश्यक प्रभाव भारत में फैले बिना यह कार्य संभव नहीं था। डेढ़ लाख गाँवों का ग्रामदान होने पर सर्व सेवा संघ गाँव की ग्रामसभाओं को अपने प्रतिनिधि सरकार में भेजने के लिए कहनेवाला है।"

'क्या सर्व सेवा संघ के कार्यकर्ताओं को स्वयं चुनाव में हिस्सा लेना चाहिए?'—यह प्रश्न जगन्नाथन्जी के पूछने पर बादशाह खाँ ने कहा कि "मैं ऐसा नहीं कहूँगा। आप लोग निःस्वार्थ सेवा करना चाहते हैं यह सबसे बड़ा गुण है। उसे आपको खोना नहीं चाहिए। मेरा इतना ही कहना था कि सरकार भी एक शक्ति है। उसकी उपेक्षा आप न करें। सरकार में अच्छे लोग चुनकर जायँ, इसकी फिकर आपको करनी चाहिए।"

अपना अनुभव बताते हुए उन्होंने कहा कि मैं अपने को सेवक मानता हूँ। अंग्रेजों से मैंने समझौता किया होता तो बहुत बड़े सत्ता-स्थान पर मैं जा सकता था। पाकिस्तान की जेल में था, तब भी मुझे सरकार में आने का निमंत्रण आता था। लेकिन सत्ताधीश और सेवक में सहकार्य नहीं हो सकता। अब सत्ता सेवा के लिए ही है और हमें सत्ता चलानी नहीं है, ये दोनों बातें मेरे मन में स्पष्ट हैं। लेकिन सत्ता समाज में रहेगी तब वह अच्छे लोगों के हाथों में रहे, ऐसा मेरा आग्रह है। और वह अच्छे लोगों के ही हाथों में रहे, इसकी फिकर करना सेवकों का फर्ज है।●

गांधी : जनता क्या कहेगी ?

गांधीजी जब जीवित थे, और देश की स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे थे, उस वक्त भी देश ने उन्हें इसलिए नहीं माना था कि वह मानना चाहता था, बल्कि इसलिए माना था कि उसे मानना पड़ा था। गुलामी से मुक्त होना था, और मुक्ति का कोई दूसरा रास्ता नहीं था, सिवाय उसके जो गांधीजी ने बताया था। नेहरू के मन में भी बहुत-कुछ यही मजबूरी थी जिसने उन्हें स्वतंत्रता की लड़ाई में गांधीजी के साथ रखा था। दूसरे चोटी के नेताओं का भी यही हाल था। इसलिए ज्यों ही अंग्रेजी राज ने जाने की घोषणा की ये सब नेता गांधीजी से अलग हो गये। राजनीति में ही नहीं, देश के विकास और रचना में भी अलग हो गये। अकेले राजनैतिक नेता ही नहीं, बहुत-से दूसरे भी, जो गांधीजी के करीब माने जाते थे, उनसे दूर चले गये। स्वतंत्रता पाकर भारत की जनता भी स्वतंत्रता लानेवाले—भले ही 'टकारे' के साथ—नेताओं के ही साथ गयी। उन्हींके साथ जाने में उसने सुख, सम्मान, समृद्धि और सुरक्षा की आशा का अनुभव किया। सरकार नेताओं के हाथ में थी। सरकार को छोड़कर जनता जाती भी कहाँ और क्यों जाती ?

सन् १९४७ में स्वतंत्रता की प्राप्ति के साथ भारत में साम्राज्यवादी राजनीति का अन्त और राष्ट्रवादी राजनीति का युग आरम्भ हुआ। गांधीजी ने साम्राज्यवादी राजनीति के स्थान पर राष्ट्रवादी नहीं, लोकवादी राजनीति की स्थापना की कल्पना की थी। लेकिन कांग्रेस और देश का नेतृत्व राष्ट्रवाद और राज्यवाद की सीमाओं के बाहर जाने को कभी तैयार नहीं हुआ। हर बालिग को वोट, दलीय सरकार, और राज्य की शक्ति से जनता का कल्याण बस यह त्रिविध कार्यक्रम था जो नेताओं के मन में था। सरकार में आने के बाद उन्होंने अपनी पूरी शक्ति इसी कार्यक्रम को पूरा करने में लगायी। स्वतंत्रता से लेकर आजतक हमने गांधी से अलग रहकर जीने की कोशिश की है, और हमारे नेताओं ने—सभी दलों के नेताओं ने—भी हमें इसी तरह भटकाये रखने की कोशिश की है।

इस कोशिश का क्या परिणाम हुआ है ? परिणाम यही हुआ है कि हमने देख लिया कि 'राष्ट्र' और 'जनता' अनिवार्य रूप से एक नहीं है। राष्ट्र के नाम से ऐसी रीति-नीति बरती जा सकती है, ऐसी व्यवस्था और योजना बनायी जा सकती है जिसमें जनता का स्थान न हो, और यहाँ तक कि वे लोक-विरोधी भी हों। हिटलर के जमाने से 'राष्ट्रीय समाजवाद' क्या था ? नया फासिस्टवाद, और क्या ? साम्यवादी राजनीति में 'जनता का लोकतंत्र' (पीपुल्स डिमोक्रेसी) क्या है ? पुलिस-पार्टी-राज के सिवाय दूसरा क्या ?

इतने वर्षों में हमने राष्ट्र के नाम से बहुत देखा, बहुत सुना, बहुत भोगा। आँकड़े ढेर के-ढेर मिले, लेकिन जीवन की वास्तविकता ने आँखें खोल दीं। करोड़ों ऐसे हैं जिनके लिए राष्ट्र और देश का जैसे कोई अर्थ ही नहीं रह गया है। वे राष्ट्र में अपना स्थान नहीं देखते। वे अपने को वंचित, उपेक्षित, तिरस्कृत, महसूस करते हैं। वे पूछते हैं, यह कैसी बात है कि स्वतंत्र राष्ट्र में हम आज तक गुलाम हैं ?

राष्ट्रवादी राजनीति वास्तव में सत्ता की राजनीति सिद्ध हुई है। अब किसके मन में संदेह है कि यह राजनीति मुट्ठी भर लोगों की चीज है। उन्होंने पहले जनता को सुनहले वादों का उपहार दिया। उसके बाद विरोध और प्रतिकार का पाठ पढ़ाया। अब संघर्ष और प्रहार करके बदले का संतोष करने को कह रहे हैं। इन्होंने फैलाकर पड़ोसी ने पड़ोसी को दुश्मन माना और जनता उस बुनियादी क्रान्ति को नहीं समझ सकी जिसकी उसे और देश को जरूरत थी, और जिसकी गांधी ने कल्पना की थी।

कल्पना ही नहीं की थी, स्पष्ट योजना दी थी। उनके रचनात्मक कार्यक्रम और 'लोकसेवक संघ' में वही योजना थी। लेकिन राष्ट्र के नाम से नेताओं ने जनता की योजना पूरी नहीं होने दी।

एक समय था जब राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए साम्राज्यवादी राजनीति का अन्त आवश्यक था। अब समय आ गया है कि जनता की मुक्ति के लिए राष्ट्रवादी राजनीति का अन्त हो। केवल राजनीति नहीं, पूरी व्यवस्था का अन्त आवश्यक है, क्योंकि अगर व्यवस्था बनी रहती है तो पुराना जहर नये रूपों में उभरता है। सिर्फ बोतल बदल जाती है, शराब पुरानी ही रह जाती है। यह राज्यवाद, दलवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद, धर्मवाद, वर्णवाद, आदि राष्ट्रवादी राजनीति की देन हैं। यह राजनीति हमें नहीं चाहिए।

लोकतंत्र के युग में हमें लोकवादी राजनीति और लोकवादी अर्थनीति चाहिए। इसका सीधा अर्थ यह है कि जनता को अपने निर्णय से अपना जीवन जीने का अधिकार मिलना चाहिए। गाँव और नगर का जीवन खुद गाँववालों और नगरवालों के स्वतंत्र निर्णय से चलना चाहिए, और स्वयं सरकार संगठित, स्वायत्त गाँवों के प्रतिनिधियों के निर्णय से चलनी चाहिए। अगर इतना बुनियादी परिवर्तन नहीं होता तो जनता को सोचना पड़ेगा कि वह अपनी मुक्ति किस प्रकार प्राप्त करेगी। गांधी के बताये रास्ते उसके सामने हैं। वह जैसे-जैसे इस परिवर्तन की आवश्यकता महसूस कर रही है, तथा राष्ट्रवादी राजनीति और अर्थनीति को टूटते देख रही है, उसे गांधी की याद सता रही है। वह समझती जा रही है कि नेताओं के भुलावे में आकर उसने गांधी को छोड़ा, और छोड़कर उसने कितनी बड़ी भूल की। यह अब समझने लगी है कि गांधी दूर का आदर्श नहीं था जैसा कि विद्वानों और→

विनोबा-संवाद

शान्तिसैनिक का प्रभाव कैसे बढ़े ?

प्रश्न : "यद्यदाचरति श्रेष्ठः", "मम-वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः"—जब कि देश के करीब प्रतिष्ठित अधिकारी और राज-सत्ता के लोग सबके सब आसुरी सभ्यता में बह रहे हैं तब एक साधारण व्यक्ति के शान्तिसैनिक के अनुनय-विनय का दूषित भ्रष्ट समाज पर कैसे प्रभाव पड़ सकेगा? परिवर्तन दुःसाध्य-सा अनुभव होता है।

विनोबा 'यद्-यद् आचरति श्रेष्ठ' श्रेष्ठ लोग जैसा आचरण करते हैं वैसे दूसरे करते हैं। लेकिन समझना चाहिए कि वे श्रेष्ठ पुरुष नहीं हैं जो राजसत्ता में हैं या अधिकारी पुरुष हैं। वे तो सामान्य सेवक हैं। श्रेष्ठ वे होते हैं जो लोगों को नैतिक मार्ग पर ले जाते हैं, जैसे गुरु नानक हो गये। आप पंजाब में रहते हैं इसलिए नानक की मिसाल दी। लेकिन जैसे तुलसीदास और कबीर हो गये। वे सब श्रेष्ठ पुरुष थे। बाकी, जो राजसत्ता में आये वे सामान्य पुरुष हैं। वे आयेंगे और जायेंगे। जनता में उनका कोई असर रहेगा नहीं। आज के अखबारों में उनकी चर्चा होगी। जन-मानस पर उनका कोई असर पड़ना संभव नहीं है। जनता जानती है कि ऐसे अनेक आयेंगे और जायेंगे—"मैन में कम एण्ड मैन मे गो, बट आई गो आन फारएवर।" जनता अखंड बह रही है। उस पर अगर असर है तो महाराष्ट्र में देखिए संत ज्ञानेश्वर और तुकाराम का। वैसा किसी राजनेता का नहीं है। कर्नाटक में माधवाचार्य और पुरन्दरदास का है। ऐसा आप हर जगह देखेंगे। उत्तर हिन्दुस्तान के गाँव-गाँव में तुलसीदास का असर है। इस वास्ते इनकी कोई चिन्ता नहीं।

प्रश्न : सुधार का प्रमुख साधन शिक्षा ही है, बल्कि सेवा के साधन गौण है। आज जीवन के हर एक पहलू में सरकार ने पूरा-पूरा कल्याणकारी राज्य का प्रसार कर लिया है। निराधार होकर अर्थात बिना सरकारी सहायता के शान्तिसैनिक इनके मुकाबले में सेवा का संयोजन सफलता से कैसे कर सकेगा ?

विनोबा : शिक्षा आज सरकार के हाथ में है। लोगों ने अपना सब कुछ सरकार के हाथों में सौंप दिया है। सरकार भी कहती है कि आपने हमको वोट दिया है इस वास्ते हम सब कुछ करने के अधिकारी हैं। अतः लोगों को चाहिए कि गलत आदमियों को वोट न दें, इतनी शिक्षा लोगों को मिलनी चाहिए। वे ५ साल के नौकर हैं। सेवा अच्छी करेंगे तो आगे नौकरी में रखे जायेंगे, अन्यथा निकाले जायेंगे। इस वास्ते चाहिए कि सोच-समझकर ठीक मनुष्य को चुनें, गलत मनुष्य को नहीं चुनें, यह शिक्षा लोगों को मिलनी चाहिए। और फिर शिक्षा लोगों के अपने हाथ में हो। यह तब बनेगा जब गाँव-गाँव में ग्रामसभा बने और वह ग्रामसभा अपने यहाँ शिक्षा का काम उठाये और सरकार को कहे कि जो मदद आप दे सकते हो, वह दें, लेकिन तालीम कैसे देना और किस चीज की तालीम देना, यह हम तय करेंगे। यह जब होगा तो असर पड़ेगा।

प्रश्न : नैष्ठिक सर्वोदयी की नीति कैसी हो ?

१. उदासीन आसक्त हो तब फल संदिग्ध है, और

२. सक्रिय आसक्त हो तो प्रतिकूलता-सम्पन्न वर्ग का संगठित विरोध होगा। पहले पक्ष में परिणाम निराशा और हताशा का आयेगा और दूसरे पक्ष में सर्वोदयी को जैसे आजादी की लड़ाई में बलिदान हुए वैसे तैयार रहना होगा।

विनोबा : उदासीन हुआ तो अनासक्त हुआ और सक्रिय हुआ तो आसक्त हुआ, ऐसा नहीं है। एक रास्ता है, उदासीन हो और अनासक्त हो और सक्रिय भी हो—जैसे शंकराचार्य थे। उन्होंने अनासक्ति, अद्वैत वगैरह सिखाया। लेकिन उसके लिए सारे भारत में घूमे। मतलब वे सक्रियता के विरोधी नहीं थे। वैसे ही गांधीजी ने भी अनासक्ति के साथ-साथ सक्रियता दिखायी।

—श्री सुन्दरलाल पटियाला से हुई चर्चा से। गोपुरी (वर्धा) ८-११-१९६९

ग्रामदान और साम्यवादी

प्रश्न : आपके आन्दोलन को 'कम्यूनिस्टों' का समर्थन है क्या ?

विनोबा : 'कम्यूनिस्ट' कहते हैं कि बाबा का आन्दोलन अच्छा है लेकिन लोग बाबा को ठग रहे हैं, और जैसा बाबा चाहता है वैसा काम होगा नहीं। ठीक है। काम वैसा नहीं हुआ तो नहीं, लेकिन कम-से-कम लोगों की भावना तो तैयार होगी ही परन्तु यह बात तो वे बारह साल पहले करते थे। आज जब सारे बिहार का दान हो गया है, तब उनको मानना होगा कि यह व्यावहारिक है, आदर्शवादी नहीं। लेकिन आज भी बिहार का मामला थोड़ा रुका हुआ है। आज वे कह सकते हैं कि बिहार के ग्रामदान तो केवल कागज पर हैं। अगर वहाँ पुष्टि का कुछ काम हो जाता तो यह कहने का मौका नहीं रहता और वे भी अनुकूल हो जाते। जब बिहार में पुष्टि का काम शुरू होगा तो 'कम्यूनिस्ट' पूरी तरह से इसके लिये अनुकूल होंगे, इसमें कोई शंका नहीं। अब वहाँ के 'कम्यूनिस्टों' के ध्यान में बात आयी है कि यहाँ बाहर से 'कम्यूनिज्म' नहीं आ सकता। भारत का 'कम्यूनिज्म' 'स्वेदशी कम्यूनिज्म' है।

→नेताओं द्वारा उसे अबतक बताया गया है। गांधी उसके नित्य के जीवन की आवश्यकता है। जिस शान्ति, सुख, सम्मान और सन्तोष की उसे चाह है उसे पाने का उपाय गांधी के सिवाय दूसरे किसीने आज तक बताया नहीं। भले ही नेता कहे : 'गांधी का विचार मर चुका, गांधी अमर हो'।● लेकिन जनता क्या कहेगी ? इतिहास तो जनता के उत्तर से बनेगा।●

● एक प्रमुख नेता ने अभी अपने एक लेख में यह बात लिखी है।

विफलता किसकी ?

विफलता किसकी हुई है ? राजनैतिक नेताओं की जिनके हाथ में हम शासन की बागडोर सौंपते आये हैं, या उस पूरी पद्धति की जिसे हमने स्वतन्त्रता मिलने पर अपने देश में लागू किया ? राजाजी, नेहरू, पटेल, आजाद, राजेन्द्रप्रसाद आदि पहले लोग थे जो सरकार में गये। वे आजादी के सेनानी थे, उन्होंने संविधान बनाया था, वे ही समय आने पर हमारे शासक और मार्गदर्शक बने। सरकार को कांग्रेस के ही लोगों ने अपने हाथ में नहीं रखा, बल्कि उसमें बाहर के लोगों को भी शरीक किया। इन सब लोगों के हाथ में देश ने श्रद्धापूर्वक अपनी किस्मत सौंपी। इनसे अच्छे लोग देश में दूसरे कौन थे ?

पिछले वर्षों में कांग्रेस सरकारों के अलावा अनेक संयुक्त सरकारें कायम हुई हैं। उनसे और हमें क्या मिला है ? क्या फर्क पड़ा है राजनैतिक तौर-तरीकों में, आचरण में, जनता को ऊपर उठाने के कामों में ? समाज-परिवर्तन की बात तो अलग है, हर व्यक्ति को मामूली खाना-कपड़ा मिल जाय, शिक्षा और स्वास्थ्य मयस्सर हो जाय, इसकी भी किसी दल के पास क्या नयी योजना है ? हर दल ने अपने को समाज के किसी विशिष्ट वर्ग, हित या समुदाय के साथ जोड़ लिया है। वह नाम लेता है देश का, लेकिन पंडों की तरह भला चाहता है अपने जजमान का, जिसके दान (वोट) पर उसका अस्तित्व कायम है। वर्ग हो, वर्ण हो, जाति या सम्प्रदाय हो, कोई भी दल अपनी संकीर्ण भूमिका से ऊपर उठकर 'सर्व' के हित के साथ नहीं जुड़ पा रहा है। शायद जुड़ सकता भी नहीं, क्योंकि सत्ता की राजनीति में इतना व्यापक और उदार होने की गुंजाइश नहीं है। सब-के-सब नेता दिल के बुरे हैं, ऐसा कौन कहेगा ? लेकिन वे क्या करें, दलगत राजनीति का एक स्वधर्म बन गया है जिसे छोड़ना संभव नहीं है। अच्छे-से-अच्छा, बड़े-से-बड़ा, आदमी भी दल-धर्म से ऊपर नहीं उठ पाता। दिल्ली तथा दूसरी राजधानियों में इस वक्त जो हो रहा है, और पहले भी होता आया है, उससे तो यही लगता है कि राजनीति है ही ऐसी चीज जो बड़ों से छोटा काम कराती है। राजनीति सत्ता के लिए है, और सत्ता का स्वधर्म ही अवसरवादियों का है। वह कोई दूसरा धर्म ही नहीं जानती। मजे की बात तो यह है कि यह सारा दल-विरोधी, लोक-विरोधी, व्यापार एक बड़े सिद्धान्त के नाम में चल रहा है। वह सिद्धान्त है 'ध्रुवीकरण' (पोलराइजेशन)। दक्षिण और वामपंथी राजनीति का अलगाव और टकराव। हर दल बारी-बारी दूसरे को प्रतिक्रियावादी और देश-द्रोही कहता है और इन्हीं बातों से, कामों से नहीं, अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने की कोशिश करता है। कोई यह नहीं देखता कि यह ध्रुवीकरण धार्मिक और सामाजिक ध्रुवीकरण के साथ मिलकर भयंकर स्थिति पैदा कर रहा है। समाज में तरह-तरह के अलगाव-टकराव का रूप देने का काम यह राजनीति कर रही है। इस टकराव से म गृहयुद्ध, तानाशाही, अराजकता और देश के बिखराव के सिवाय दूसरा कुछ नहीं निकलेगा ? कैसे माना जाय कि हमारी राजनीति और संगठित हिंसा में अब कोई अन्तर रह गया है ? जब नेता इस बात की घोषणा करने लगें कि भारत का भविष्य खेत, कारखाने और सड़कों पर तय होगा तो उनके मन में सिवाय व्यापक हिंसा के दूसरा क्या है ? एक ओर ध्रुवीकरण दूसरी ओर दरिद्रीकरण—इन दोनों के बीच भारत का क्या होगा, इसकी कल्पना करना कठिन नहीं है।

लोकतन्त्र सभाज की पद्धति है। राजनीति में टकराव की प्रक्रिया चल रही है। हमारी राजनीति लोकतन्त्र विरोधी हो गयी है। अगर राजनीति का लोकतन्त्र से विरोध हो, अगर राजनैतिक दलों के कारण सरकार भी न बन सके, और अगर किसी तरह बन भी जाय तो चल न सके, तो यह राजनीति है किसलिए ?

कहा जाता है कि लोकतन्त्र में दलों का होना आवश्यक है। क्यों आवश्यक है ? आज तक लोकतन्त्र में दलों ने तीन काम किये हैं एक, जनता को वाणी प्रदान करना, विशेष रूप से उन समुदायों को जो समाज में दबे, पिछड़े हुए हैं दो, सरकार पर निगरानी रखना, और उसके कामों को लोकहित की कसौटी पर कसते रहना तीन चुनाव लड़ना, सरकार बनाना। यह मानते हुए भी कि दलों ने अब तक ये तीनों काम किये हैं अब यह मानना पड़ रहा है कि ये सब काम दलों के बिना ज्यादा अच्छी तरह हो सकते हैं। दलों के कारण ये काम बिगड़ रहे हैं, बुरी तरह बिगड़ रहे हैं। और कामों को छोड़ दें, उनके कारण सरकार भी नहीं बन पा रही है, और यदि किसी तरह बन भी जाती है तो चल नहीं पा रही है। लोक-शक्ति बने नहीं, और सरकार-शक्ति टूट जाय, तो समाज का क्या होगा ?

हमारे सब मसले केवल विधान-सभा और संसद में नहीं हल होंगे, यह बात राजनीति में मान ली गयी है। तो, कहाँ हल होंगे, किस तरह होंगे ? विरोध, प्रदर्शन, अतिकार, प्रहार और संघर्ष के कार्यक्रमों से मौजूदा व्यवस्था भले ही टूट जाय, लेकिन नयी, लोकतान्त्रिक, सर्व-हितकारी व्यवस्था कैसे कायम होगी ? एक ओर राजनीति समाज में ऊँचे मूल्यों और ऊँची प्रेरणाओं को निकालती जा रही है, और दूसरी ओर सामाजिक क्रान्ति की भी बात कही जा रही है। क्या क्रान्ति तब होगी जब लोक-जीवन से मूल्य निकल जायेंगे, प्रेरणाएँ समाप्त हो जायेंगी और बच जायेंगे केवल तर्क शून्य खोपड़े और क्रोध से तमतमाते चेहरे ?

आज के सामन्तवादी-पूँजीवादी ढाँचे को क्रोध का डर नहीं रह गया है। घेराव और टकराव पर तो वह पलता है, पथराव को आसानी से पचा लेता है। उसे डर

है तो केवल एक चीज से--विचार से। नया विचार ही नयी क्रान्ति का पिता है, न कि तीखे नारे या नोकीले पत्थर।

बादशाह खाँ की गरीबों को सलाह है कि वे सरकार में अच्छे लोगों को भेजें। दादा कृपालानी की शिकायत है कि सर्वोदयवालों ने राजनीति छोड़ दी। शायद बादशाह खाँ को किसीने बताया नहीं कि भारत के गरीब अब गरीब नहीं रहे। वे *कांग्रेसी गरीब, सोशलिस्ट गरीब*, जनसंघी गरीब, कम्युनिस्ट गरीब, हिन्दू-मुसलमान गरीब हो गये। गरीब की गरीबी बढ़ गयी, लेकिन शक्ति उनकी घट गयी। यही हाल युवकों और वयस्कों का भी हो गया। इन थोथे और निरर्थक नारों और साइन-बोर्डों को छोड़कर जनता जब तक जनता न बन जाय, तब तक वह सरकार में दलों के आदमियों को भेजेगी, 'अच्छे' आदमियों को कैसे भेजेगी? आखिर, लोकतंत्र में अच्छा आदमी वही माना जायगा जिसे जनता का विश्वास प्राप्त हो। अच्छे दूसरों का भरोसा करके जनता ने देख लिया, अब उससे कहना चाहिए 'अच्छे नहीं, अपने आदमी भेजो।'

दादा कृपालानी क्रान्तिकारी हैं। वह चाहते हैं कि आज का समाज जड़ से बदले। क्या यह संभव है कि समाज तो नया हो जाय, लेकिन आज की राजनीति, जो समाज के जीवन के हर पहलू पर हावी है, जैसी-की-तैसी बनी रह जाय? सम्पूर्ण शान्ति के लिए सम्पूर्ण विद्रोह आवश्यक होता है। क्या उनकी सलाह है कि विद्रोह से दलगत राजनीति को अलग कर दिया जाय?

सर्वोदय ने मान लिया है कि अब प्रश्न अच्छे लोगों और अच्छे दलों का नहीं रह गया है। दल सब अच्छे हो जायँ और उनके लोग सब अच्छे हो जायँ, फिर भी समस्या हल नहीं होगी। समस्या तब हल होगी जब जनता जनता बनकर गाँव-गाँव, नगर-नगर में संगठित होगी, तथा अच्छे नहीं, अपने लोगों को सरकार में भेजेगी।

यह काम सर्वोदय कैसे करना चाहता है? —राममूर्ति

परिचय :

एक जाग्रत जनसेवक की जीवन-यात्रा

उत्तर प्रदेश में रचनात्मक कार्यों का कोई भावी इतिहास-लेखक जब इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध पर विहगम दृष्टि डालेगा तो उसे श्री कपिल भाई का उल्लेख खास तौर पर करना पड़ेगा। विपत्तियों के समय असीम धैर्य, सफलता मिलने पर विनय, औदार्य, संघर्ष में *विश्रम और तेज, कार्य-सिद्धि के निमित्त* तत्परता, विचार-विनिमय में सहिष्णुता, परिस्थिति के अनुकूल वाक्पटुता आदि गुणों की समाहार शक्तिवाले श्री कपिल भाई का यह विशेष गुण है कि वह गुनगुनाकर चलते हैं, तिलमिलाकर देखते हैं, छटपटाकर सोचते हैं, और झनझनाकर काम करते हैं। 'एकहि साधे सब सधे' उनके जीवन का मूलमंत्र रहा है और अपनी अदम्य साधना से इस ६८ वर्ष की आयु में भी 'चरैवेति' को साकार कर रहे हैं।

श्री कपिल भाई का जन्म गोरखपुर जिले के खुरहुटी गाँव में मध्यमवर्गीय सरयूपारीण ब्राह्मण परिवार में १२ फरवरी सन् १९०१ को हुआ था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के पड़ोस के एक विद्यालय में हुई। यह उस समय की बात है जब शिक्षा केवल उच्च वर्गीय परिवारों का शौक थी। इनके परिवार में भी किसी प्रकार का प्रभाव तो था नहीं, अतः घर पर ही अंग्रेजी का अध्ययन करके स्थानीय सहयोग से संचालित गोरखपुर के हाईस्कूल में भर्ती हो गये।

सन् १९११ में महामना प० मदनमोहनजी मालवीय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के लिए धन-संग्रहार्थ गोरखपुर गये तो वहाँ कपिल भाई ने उनके दर्शन किये। उनकी ओजस्विता ने इस तरुण के मन में मैट्रिक के बाद मालवीयजी के विश्वविद्यालय में ही अध्ययन की आकांक्षा भर दी। और, जुलाई १९१९ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश पाकर उनकी साध पूरी हुई।

राष्ट्रीय साहित्य के प्रति चाव

जब गोरखपुर में इनका अध्ययन चल रहा था तभी सन् १९१६ में श्रीमती डा० एनीबेसेण्ट ने होमरूल आन्दोलन की शुरुआत की। चूँकि गोरखपुर थियोसोफिस्टों का मुख्य गढ़ था और उस विचार-धारा के सभी प्रमुख नेता आन्दोलन में *सक्रिय भाग ले रहे थे* इसलिए उस शहर का वातावरण क्रान्तिकारी था। और जिस विद्यालय में श्री कपिल भाई पढ़ रहे थे उसके प्रमुख पंडित मुंशी ईश्वरशरणजी थे, उनका प्रभाव भी इनके ऊपर पड़ा और राष्ट्रीय साहित्य पढ़ने लगे तथा आन्दोलन की गतिविधियों का सूक्ष्मता के साथ अध्ययन करने लगे।

रुचि

प्रसंगवश एक दिन अपने अतीत के पृष्ठ पलटते हुए उन्होंने बताया, "बचपन की बात है मैं प्राइमरी में पढ़ रहा था। पौराणिक कथा सुनने एवं धार्मिक पुस्तकों के पढ़ने की वृत्ति जगी। सबसे पहला ग्रन्थ 'विश्राम सागर' मैंने आद्योपान्त पढ़ा और मैट्रिक में संस्कृत पढ़ने के बाद 'गीता'। इसके बाद तो धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन का सिलसिला चल पड़ा और व्रतों में आस्था और ईश्वर में निष्ठा भी बढ़ती गयी।

"मैट्रिक की परीक्षा देने के बाद, अवकाश के दिनों में, प्रवास पर जाने का विचार हुआ। पैसे पास में बहुत कम थे, लेकिन पटियाला तक चला गया। जिस दिन मैं पटियाला पहुँचा उस दिन मेरे पास कुल चार आने पैसे थे। उनमें से दो आने का फल (लोकाट) खरीद लिया और खड़े-खड़े ही खाने लगा। खाते-खाते यह भी सोचता जाता था कि अब सिर्फ दो आने शेष हैं, आगे जाना सम्भव नहीं, पीछे घर भी लौट नहीं सकता। क्या करूँ? निष्ठापूर्वक भगवान् का स्मरण किया और तत्काल पटियाला शहर की पुलिस-विभाग के सुपरिण्टेण्डेण्ट ने, जो अपने कार्यालय से मुझे देख रहे थे, चप-

गाडी भेजकर मुझे बुलवाया। वे मेरा परिचय पूछने के बाद अपने घर लिवा ले गये। स्थानीय खालसा कालेज के वाइस-प्रिंसिपल श्री सम्पूर्ण सिंह को मेरा परिचय दिया और उनके यहाँ ठहरने का प्रबन्ध कर दिया। संस्कारों की पावन परम्परा अक्षुण्ण रखने के लिए जब तक वहाँ रहा फल और फलाहारी मिठाई ही खाता रहा। आठ-दस दिन के बाद अचानक घर की याद आयी और यही इच्छा हुई कि यदि मेरे पंख लग जायँ तो उड़कर फौरन परिवार में जा मिलूँ। एक क्षण भी अब बाहर रहना गवारा नहीं था। श्री सम्पूर्ण सिंह ने कुछ पूछा नहीं। गोरखपुर का टिकट कटा दिया और १० रुपये नकद भी दे दिये। उस एक घटना से ईश्वरीय शक्ति में विश्वास और दृढ़ हो गया। आज भी किसी प्रकार का संकट या दुख आने पर भगवान का स्मरण करने मात्र से बोझ हल्का हो जाता है और चित्त को अपार शान्ति का अनुभव होता है।"

जीवन में कुछ ऐसे भी क्षण आते हैं जो अपनी अमिट छाप मन और विचार पर छोड़ जाते हैं फिर उनकी प्रतिक्रिया स्वभाव बनकर आचरण में प्रकट होती है, इसे ही जीवन का मोड़ कहा जाता है। ऐसा ही मोड़ श्री कपिल भाई के जीवन में आया और वे मुड़े तो फिर ऐसा मुड़े कि आज तक वापस नहीं लौटे।

सन् १९२० के आखिरी महीनों की बात है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों का आह्वान असहयोग आन्दोलन के लिए गांधीजी ने किया। उस आन्दोलन में शामिल होने की घटना के बारे में कपिल भाई ने बताया कि, "खूब सोच-विचारकर मैंने पिताजी से कालेज छोड़ने की स्वीकृति माँगी। मैं अपने को बहुत भाग्यवान मानता हूँ कि मेरे पूज्य पिताजी ने मुझसे अध्ययन की बहुत बड़ी आशा रखने के बावजूद गांधीजी के काम के लिए अपनी स्वीकृति सहर्ष दे दी।'

प्रकृति

३० नवम्बर १९२० को आचार्य जे० बी० कृपालानी के संरक्षण में विद्यालय से निकलनेवाले २५ युवकों में से एक श्री कपिल भाई भी थे। इन सभी नवयुवक साथियों को महामना मालवीय-जी एवं बनारस के प्रोफेसरों ने आशीर्वाद दिया कि देश की आजादी और सेवा के लिए जान की बाजी भी अगर लगानी पड़े तो लगा देना, वही हम अपनी गुरु-दक्षिणा समझ लेंगे। और, बाहर निकल-कर श्री गांधी आश्रम की स्थापना की। संकल्प यह किया कि जीवन-काल में यदि देश आजाद हो गया तो उसके निर्माण में जीवन लगा देंगे।

स्वाध्याय और ज्ञान की पिपासा शान्त हुई नहीं थी, इसलिए गांधी आश्रम का काम करते हुए भी समय निकालकर वे अध्ययन करते रहे। गांधी नेशनल हाईस्कूल की स्थापना होने पर शिक्षक का काम करने के लिए ट्रेनिंग ली। जो ट्रेनिंग श्रद्धेय सतीशचन्द्र मुकर्जी ने दी उसीके आधार पर श्री कपिल भाई ने आश्रम के हजारों कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण दिया है।

श्री कपिल भाई : संकल्पों के धनी

आचार्य कृपालानी ने सितम्बर १९२१ में बिहार के मुंगेर जिले में असहयोग आन्दोलन के लिए इन्हें भेजा। ४ महीने तक आन्दोलन का विस्तार करते रहे और अचानक एक दिन गिरफ्तार कर लिये गये। गिरफ्तारी और जेल का यह पहला अवसर था। ४ महीने की सादी सजा भागलपुर जेल में बितायी। उन्होंने बताया कि "चूँकि हममें स्वतन्त्रता प्राप्ति की तीव्र भावना और अपने कार्यों के प्रति दृढ़ निश्चय था, इसलिए तरह-तरह की यातनाएँ, हथकड़ी, खड़ी पड़ी बेड़ियाँ और एक माह की काल-कोठरी की सजा मिली। उस समय इतना उत्साह था कि मन में कमजोरी आयी ही नहीं।" इनके आत्मबल का, उत्साह का और राष्ट्रभक्ति का नमूना उस समय अधिक सशक्त रूप में प्रकट हुआ जब ५ वर्ष बाद इनके ५-६ साथी पुनः शिक्षा प्राप्त करने के लिए विश्वविद्यालय वापस गये। विश्वविद्यालय के बन्द कमरों की पढ़ाई से अधिक महत्त्व उन्होंने देश की खुली किताब को दी।

भागलपुर जेल से छूटे। काशी आये। गांधी आश्रम के बिक्री भण्डार पर खादी बेचना शुरू किया। चरखे चलते थे, सूत कतता था। चौबेपुर (वाराणसी) में खादी-बुनाई का काम शुरू हुआ और कपिल भाई को इस काम के लिए भेज दिया गया। अपनी सूझ-बूझ से उन्होंने बुनाई का संचालन किया। सन् १९२४ तक अकबरपुर (फैजाबाद) के सूतकेन्द्रों में रहे। गणित का इनको अच्छा ज्ञान था, उसमें रुचि भी थी; फलस्वरूप हिसाब-किताब रखने की जिम्मेवारी इनको दी गयी। और १९६० तक, श्री गांधी आश्रम से मुक्ति लेने तक, आश्रम व्यवस्था के महत्त्वपूर्ण विभाग हिसाब एवं आडिट का संचालन करते रहे।

श्री कपिलभाई अपने जीवन में सदैव सक्रिय रहे। उनकी सक्रियता और निरन्तर गतिशीलता का उदाहरण सन् '२४ में बुन्देलखण्ड के हमीरपुर जिले के राठ और कुलपहाड़ में देखने को मिला। वे वहाँ खादी उत्पत्ति के व्यवस्थापक थे। दिसम्बर १९२६ में वे मुजफ्फरनगर भेज दिये गये, वे वहाँ सूत-खरीद और खादी बुनाई कराते रहे। सन् १९२८ में अकबरपुर से श्री गांधी आश्रम का प्रधान कार्यालय जब मेरठ ले आये। इन सारे कामों में कभी उनको ऐसा नहीं लगा जिसे करने में उन्हें संकोच, झिझक या साहस की कमी मालूम हुई हो।

उन्होंने बताया, 'सन् २९ में लाहौर-कांग्रेस हुई। उसके बाद मैं फिर बुन्देल-

खण्ड भेजा गया। वहाँ बड़ी तीव्रता से काम कर ही रहा था कि मई सन् १९३० में कुरापहाड़ में गिरफ्तार कर लिया गया। हमीरपुर और उसके बाद फैजाबाद जेलों में रखा गया। जब दिसम्बर में जेल से छूटा तो मेरठ गया। वहाँ पहुँचते ही आडिट का काम फिर मुझे ही लेना पड़ा। प्रभावित संस्थाओं को भी देखना पड़ा।

"घरवालों ने जब बहुत जिद की तो पत्नी को पहली बार घर से लेकर मेरठ पहुँचा। सन् ३२ में फिर जेल जाने की नौबत आयी तो पत्नी को घर वापस किया। घर में पत्नी बीमार हुई। लेकिन जेल से छूटते ही मद्रास में प्रदर्शनी की ड्यूटी में मुझे भेज दिया गया और वहीं यह दुखद समाचार सुनने को मिला कि पत्नी का देहावसान हो गया। बाद में पिताजी ने दूसरा विवाह कर लेने का बहुत आग्रह किया, लेकिन मेरे मन ने फिर बंधन में बँधना स्वीकार नहीं किया। मेरी उस अवज्ञा से उनको गहरा धक्का लगा। वे चुपचाप रहने लगे। ३ वर्ष के बाद उन्हें 'उन्माद' हो गया और सन् १९४१ में वे स्वर्गवासी हो गये।"

सन् १९४२ में "भारत छोड़ो" आन्दोलन शुरू हुआ। श्री कपिल भाई उसमें कूदना चाहते थे, किन्तु वे आचार्य कृपालानी को वचन दे चुके थे कि 'हो सकता है कि आजादी के आन्दोलन में गांधी आश्रम का सब कुछ स्वाहा हो जाय, इसलिए आप द्वारा लिए हुए समस्त कर्ज, जो आश्रम पर हैं, उन्हें वापस करके ही जेल जाऊँगा।' इसको बम्बई में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक के बाद पूरा कर दिया। १७ जनवरी १९४३ को वे वाराणसी में गिरफ्तार कर लिये गये। जेल से जब छूटे तो कांग्रेस के प्रचार-प्रसार में दो वर्ष तक सारे प्रदेश का उन्होंने दौरा किया। सन् १९४४ से वे पुनः आश्रम के काम में सक्रिय हुए। सन् '४६ से कश्मीर में चरखा संघ की ओर से मधुमक्खी-पालन और मधु-संग्रह-कार्यक्रम को संचालित किया। मधु-विभाग के साथ ऊनी केन्द्र भी कश्मीर में चालू हुआ।

गुण

मेरठ कांग्रेस अधिवेशन के बाद आश्रम का एक पूर्वी जोन बना और उसके संचालन की जिम्मेवारी इनको देकर काशी भेज दिया गया। गांधीजी के निधन के बाद "गांधी निधि" के संग्रह में योगदान देने हेतु २ वर्ष तक आश्रम के कार्य के साथ ही लखनऊ में रहे। सन् ५१ में आश्रम की सारी प्रवृत्तियों में भाग लेते हुए, व्यवस्था की जिम्मेदारी सँभालते हुए आचार्य विनोबा भावे के भूदान-यज्ञ आन्दोलन में उन्होंने समय देना शुरू किया। झाँसी में सक्रिय रूप से भूदान-आन्दोलन में आये और उसके बाद भूदान के विकसित रूप ग्रामदान-आन्दोलन की तो सारी जिम्मेवारी ही इनको स्वीकार करनी पड़ी।

ग्रामदान-आन्दोलन प्रारम्भ होने के पश्चात् श्री कपिल भाई को ऐसी प्रतीति होने लगी कि स्वराज्य के बाद देश में ग्राम-स्वराज्य की रचना का जो आन्दोलन विनोबाजी चला रहे हैं उसमें आंशिक समय के बजाय पूरा समय देना चाहिए। परिणामस्वरूप ३० नवम्बर १९६० को पूरे ४० वर्ष तक आश्रम की सेवा और व्यवस्था में सक्रिय रूप से काम करने के बाद सभी प्रकार की जिम्मेदारी व पदों से उन्होंने मुक्ति ले ली।

सन् १९६२ में चीन का आक्रमण इस देश पर हुआ तभी वेड़छी में अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन में खादी-कमीशन ने सीमावर्ती अंचलों में खादी ग्रामोद्योगों की शुरुआत करने की योजना की। स्वर्गीय श्री वैकुण्ठ भाई के विशेष आग्रह पर श्री कपिल भाई ने उसका अवैतनिक सलाहकार होना स्वीकार किया और, ३ वर्षों तक उन्होंने उत्तरप्रदेश हिमाचल और पंजाब के सीमांचलों की सेवा की।

सन् १९६६ में बलिया के अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन के बाद श्री कपिल भाई ने पूज्य विनोबाजी के आदेश पर पूरा समय ग्रामदान-आन्दोलन के लिए समर्पित कर दिया है। इन दिनों उत्तरप्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समिति के संयोजक हैं और सारे प्रदेश में अभियान-संचालन की प्रमुख भूमिका के रूप में संलग्न हैं।

अब वे भगवान् से यही प्रार्थना करते हैं कि शेष जीवन इसी प्रकार के कार्यों में बीत जाये। —कपिल अवस्थी

प्रश्न : केरल में और पश्चिमी बंगाल में आपके आन्दोलन की क्या प्रगति है ?

विनोबा : केरल में ४०० ग्रामदान हुए हैं। वहाँ की कम्युनिस्ट पार्टी ग्रामदान के अनुकूल है। वहाँ के मुख्यमंत्री (अब भू० पू०) नम्बूदरीपाद ने हमसे कहा है कि इस आन्दोलन को हमारी पूरी सहानुभूति है। तो यह आन्दोलन वहाँ बढ़ेगा, बशर्ते कि उनके आपस आपस के झगड़ों से इधर ध्यान देने के लिए उनको अवकाश मिले। शंकरराव‌जी देव भी उधर पदयात्रा कर आये हैं। यह आन्दोलन वहाँ निश्चित आगे बढ़ेगा।

पश्चिमी बंगाल का ऐसा है कि उसका विभाजन हुआ है। मैं पश्चिमी बंगाल और पूर्वी बंगाल की बात नहीं कर रहा हूँ। लेकिन पश्चिम बंगाल के ही दो विभाग हो गये हैं—एक, शक्तिवादी और एक, भक्तिवादी। भक्तिवादी प्रेम को मानते हैं, लेकिन निष्क्रिय होते हैं। शक्तिवाले क्रियाशील हैं, लेकिन हिंसा-अहिंसा का भेद मानते नहीं। अगर ये शक्तिवाले और भक्तिवाले इकट्ठा हो जायँ तो पश्चिम बंगाल में बहुत काम होगा। नक्सलबाड़ी में १८ ग्रामदान हुए हैं और मैंने हमारे साथियों से कहा है कि वहाँ ताकत लगाओ। तो वहाँ का वातावरण ग्रामदान के लिए अनुकूल है और आज की परिस्थिति भी उसके लिए अनुकूल है। हिंसावालों के साथ मेरी बातें हुई हैं। वे कहते हैं कि हमको हिंसा का आग्रह नहीं है। अहिंसा से अगर काम होता है तो अच्छा ही है। इसलिए मुझे उम्मीद है कि सरकारी तौर पर भी इस काम को सहयोग मिलेगा।

—जमशेदपुर

२७-८-'६९

मध्यप्रदेश के २२ वें सर्वोदय-सम्मेलन का निवेदन

सन १९७० में मध्यप्रदेशदान की मंजिल तक पहुँचने का संकल्प

अबतक की उत्साहवर्धक उपलब्धियों से आगे बढ़ने की प्रेरणा का संचार

कारणों से बहुत उलझती जा रही है और वहाँ नयी-नयी समस्याएँ खड़ी हो रही हैं। गरीबी, बेकारी, भुखमरी, कर्जदारी, शोषण आदि के प्रश्न इन क्षेत्रों में पहले से ही मुँह बाये खड़े हैं, इनके अलावा जो अन्य तत्त्व पिछले कुछ समय से आदिवासी क्षेत्रों में सक्रिय हो रहे हैं उनके कारण स्थिति और भी गम्भीर होती जा रही है और वह हम सबके लिए चुनौती का रूप ले रही है। अतएव सम्मेलन चाहता है कि प्रान्त का जागृत वर्ग आदिवासी जिलों में ग्रामस्वराज्य की अहिंसक क्रान्ति के सन्देश को पहुँचाने का काम प्राथमिकतापूर्वक उठा ले, जिससे वहाँ हिंसक तत्वों को पनपने और जड़ जमाने का अवसर न मिल सके तथा समूचा आदिवासी समाज ग्रामस्वराज्य की अहिंसक क्रान्ति से अनुप्राणित होकर उससे अपनी स्थिति को सँभाल सके।

सम्मेलन का विश्वास है कि जिलादानी जिलों में और ग्रामदान से प्रभावित अन्य क्षेत्रों में जहाँ-जहाँ भी पुष्टि का काम गाँववालों की ओर कार्यकर्ताओं की पहल से शुरू हो, वहाँ ग्राम-सभा आदि के निर्माण के साथ गाँवों में खादी-ग्रामोद्योग, शान्ति-सेना, नयी तालीम, मद्यनिषेध, भंगी-मुक्ति, अस्पृश्यता-निवारण और कौमी एकता जैसे रचनात्मक कार्यों को प्राथमिकता दी जा सकेगी और इन सबके सहारे गाँवों में ग्राम-स्वराज्य के लिए पोषक वातावरण खड़ा हो सकेगा।

सम्मेलन मध्यप्रदेश के समस्त नागरिकों से अनुरोध करता है कि आज की गम्भीर और संकटपूर्ण राष्ट्रीय स्थिति में, जब कि लोकतन्त्र का सारा आधार गड़बड़ाने लगा है, राजनीति टूट रही है, और देश की सामाजिक एवं आर्थिक रचना पर निरन्तर प्रहार होने लगे हैं तथा हिंसा विस्फोटक रूप धारण करने लगी है, ग्रामस्वराज्य की अहिंसक शान्ति के महत्त्व को हृदयंगम करने का प्रयत्न करें और उसकी सिद्धि में जुटें।

इन्दौर, २५ जनवरी, '७०

श्री दिवाकर का दक्षिणी-पूर्वी एशिया का दौरा

गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष, देश के जाने-माने पत्रकार और समाजसेवी श्री रामचन्द्र रघुनाथ दिवाकर ने १९६९ वर्ष में ३० नवम्बर से २८ दिसम्बर तक दक्षिणी-पूर्वी एशिया का दौरा किया। इसके पूर्व जुलाई १९६९ में आपने यूरोप के दस देशों का दौरा किया और गांधी-सवत्सरी वर्ष के अन्तर्गत वहाँ के शान्ति-आन्दोलन, शान्ति-सस्थानों और इस क्षेत्र के कुछ प्रमुख शान्तिवादियों से सम्पर्क स्थापित किया। यूरोप के दौरे के समय ही आपने यह प्रेरणा पायी थी कि दक्षिणी-पूर्वी एशिया के दौरे से पारस्परिक सम्बन्धों और आदान-प्रदान में वृद्धि होगी, क्योंकि इन देशों से भारत का प्राचीन काल से सास्कृतिक, धार्मिक व भौतिक सम्बन्ध चला आ रहा है जो आज नयी परिस्थितियों और नये सन्दर्भ में और भी विकसित व प्रगाढ किया जा सकता है।

दिल्ली से ३० नवम्बर १९६९ को निकलकर श्री दिवाकर ओसाका होते हुए कियोटो (जापान) गये, जहाँ अक्तूबर १९७० में होनेवाली विश्वधर्म व शान्ति परिषद् की कार्यकारिणी की बैठक में भाग लेकर वह जापान के अन्य स्थानों, दक्षिणी कोरिया, ताइवान, हांगकांग, बैंकाक और सिंगापुर गये। इन सभी स्थानों में श्री दिवाकर को पारस्परिक सद्भावना व सहयोग के दर्शन हुए। महात्मा बुद्ध व महात्मा गांधी की विरासत को लोगों के सामने प्रस्तुत करने के कारण लोगों ने चर्चाओं में और भी अधिक रुचि ली। दक्षिणी-पूर्वी एशिया के इन सभी देशों में श्री दिवाकर ने भौतिक समृद्धि व आर्थिक जीवन के एक अच्छे स्तर का अनुभव किया। ये सभी देश महायुद्ध की विभीषिका से ग्रस्त हो चुके हैं और आज भी भय और आतंक का वातावरण दूर हो गया हो ऐसी बात नहीं है। फिर भी जीवन के प्रति लोगों में उत्साह है और वे उसे भरसक अच्छी तरह जीना चाहते हैं। भारत को इन देशों से कई चीजें सीखनी हैं।

कुछ खास मुद्दे

भाषणों, रेडियो-प्रसारण तथा टेलीविजन-वार्ता के अतिरिक्त श्री दिवाकर राजमंत्रियों व अन्य खास लोगों से भी मिले। इनके अतिरिक्त भोजनों, जलपान-आयोजनों एवं अन्य कार्यक्रमों के बीच भी पर्याप्त लोगों से भेंट-वार्ता हुई। समाचार-पत्रों के दफ्तरों में जाने व उनके सम्पादकों से भेंट करने का विशेष ध्यान रखा गया। अजायबघरों व पुस्तकालयों में सहायकों व गाइडों की जानकारी प्रभाव डालनेवाली रही। कहीं-कहीं लोकनृत्यों व संगीत का आयोजन अच्छा रहा। ऐसे अवसरों पर लोगों की अनौपचारिकता व आनन्द में निमग्न हो जाने की उनकी क्षमता की अपनी विशिष्टता रही। कहीं-कहीं नाटक व सिनेमा का भी आयोजन रहा। चीनी जीवन व साहारण पर आधारित 'द पेल मून' शीर्षक अंग्रेजी में बनी एक फिल्म में मराठी व बंगला सामाजिक अच्छी फिल्मों के नमूने मिले।

सुझाव :

गांधी-सवत्सरी वर्ष के अन्तर्गत यूरोप के दस व दक्षिणी-पूर्वी एशिया के छः देशों का दौरा करके श्री दिवाकर ने जो सुझाव दिये हैं, वे इस प्रकार हैं

१ गांधीजी की शिक्षाओं को केन्द्र बनाकर विदेशों में गांधी-सवत्सरी वर्ष के आयोजन पर एक पुस्तक प्रस्तुत हो।

२ सभी प्रकार के गांधी-साहित्य, चित्र, घटनाओं के फोटो, टिकट आदि एकत्रित हों। उन्हें गांधी-दर्शन प्रदर्शनी में रखा जाय।

३ दुनिया के विचार व कार्य पर गांधीजी के प्रभाव का सांगोपांग अध्ययन हो।

४ गांधी-विचारवाले कुछ अध्ययनशील व्यक्ति आधुनिक समस्याओं व चुनौतियों का गांधीजी द्वारा सुझाये समाधान के प्रकाश में अध्ययन करें। →

बापू की गोद में

(सचित्र)

लेखक . नारायण देसाई, पृष्ठ-संख्या १७२, मूल्य रु० २-५०, प्रकाशक मंत्री, सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१

'साबरमती नदी और वर्धा की हनुमान टेकडी को' समर्पित इस कृति में लेखक की वे मधुर स्मृतियाँ संकलित हैं, जब वे महामानव बापू की गोद मे खेले, पले और पनपे। गांधी जन्म-शती पर, गांधीजी के ढाई दशक तक निजी सचिव के सुपुत्र की सहज लेखनी से निसृत २२ लेखों का यह पुस्तकाकार हिन्दी-प्रकाशन सचमुच अभिनन्दनीय है।

यह अनूठी कलाकृति यद्यपि गुजराती से अनूदित है, किन्तु इसमें वर्णित घटनाओं और परिस्थितियों के साथ लेखक का घनिष्ठ एवं प्रत्यक्ष सम्बन्ध होने के कारण पुस्तक में आत्मकथा की सजीवता और प्रतीति है। महादेव देसाई को 'गांधीजी का बास्वेल' कहा जाता है, और चूंकि महादेव भाई के पुत्र नारायण देसाई को तो जन्म से ही गांधीजी की गोद मे खेलने का मौका मिला है, इसलिए गांधीजी के अनेक अनजाने अलौकिक गुणों को प्रकाश में लाने, तथा 'मोहन और महादेव' की विभूतिमय झाँकियाँ प्रस्तुत करने का उन्हे श्रेय है।

महादेव ने मोहन के पास आने के बाद इक्कीस वर्षों में केवल दो बार छुट्टी ली—एक बार टाइफाइड हो जाने पर और दूसरी बार (सन् १९३८ मे) रक्तचाप बढ़ जाने पर। बापू की गोद मे ही, १५ अगस्त १९४२ को, आगाखाँ महल की जेल मे उन्होंने आँखें मूँदी। वे पहले-पहले बापू से सन् १९१५ म मिले थे। नारायण भाई ने बापू का सन् १९२७-३० का स्मरण करते हुए लिखा है - "बापू सारे आश्रम के बापू (पिताजी) थे। देश के वे नेता थे, जनता के 'महात्मा' थे। लेकिन इससे बढ़कर हमारे तो वे 'दोस्त' ही थे। हमें कभी भी दोस्त के अतिरिक्त और कुछ वे लगे ही नहीं।"

नारायणभाई ने केवल एक तटस्थ प्रेक्षक की भाँति नहीं, अपितु 'साबरमती' और 'सेवाग्राम' के आन्तरिक जीवन म घुले-मिले साधक की तरह गांधीजी की विभिन्न प्रवृत्तियों एवं विचारधारा का परिचय देते हुए, उन तीर्थों का हृदयस्पर्शी वर्णन किया है, जहाँ भणसाली काका ने आष्टी-चिमूर काण्ड पर उपवास करके ब्रिटिश सरकार को हिलाया था, जहाँ श्रद्धामयी कस्तूरबा ने लेखक से रामायण पढ़ने का प्रस्ताव रखा था, जहाँ सर्वप्रथम व्यक्तिगत सत्याग्रह का प्रयोग हुआ था, नयी तालीम का सूत्रपात हुआ था।

लेखक ने रुचिकर शैली में स्थान-स्थान पर अपनी सहृदयता का भी परिचय दिया है, जैसे "किसी कुशल गायक के कण्ठ से निकले स्वरों के साथ पास में पड़े हुए तम्बूरों के तार झनझनाते हैं, वैसे बापू के हृदय-वीणा के तार देश के दरिद्रनारायण की वेदना के स्वर से झनझनाते थे।" (पृष्ठ ६२) बापू के प्रति जनता की भक्ति भी उस समय उतनी ही उत्कट थी। लेखक ने बापू की चंपारन-यात्रा का जिक्र करते हुए लिखा है कि मुजफ्फरपुर के पास बापू के दर्शनों को आये एक युवक के पैर रेल से कट गये। महादेव भाई उससे मिलकर आये और बोले—"दोनों पाँवों पर से गाड़ी का पहिया जाने के कारण घुटने तक के पाँव करीब-करीब कट गये हैं। उसके बचने की उम्मीद नहीं है। खून बहुत गया है। फिर भी लड़का होश में था। मैंने उसके सामने उस दुर्घटना के लिए अफसोस प्रकट किया तो लड़का कहने लगा, 'उसमें अफसोस करने की क्या बात है? गांधीजी की गाड़ी के नीचे कुचला गया, यह तो मेरा अहोभाग्य ही कहना चाहिए।'" आज हम आत्म-निरीक्षण करें कि हममें उतनी भक्ति है?

पुस्तक के प्राक्कथन दादा धर्माधिकारी ने ठीक ही लिखा है—"पुस्तक में करुण, उदात्त आदि रसों के साथ साथ ऋजु और सौजन्ययुक्त विनोद की छटाएँ भी हैं, जो उसे अधिक चित्ताकर्षक बनाती हैं।" विनोबाजी के दीर्घ सहवासी श्री दत्तोबा दास्ताने ने पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद किया है। भाषान्तरकार के समानशील होने से पुस्तक की उपादेयता बढ़ गयी है, जो सुन्दर चित्रों के दे देने से स्पृहणीय है।

—अखिल विनय, एम०ए०

बापू के चरणों में

लेखक विनोबा

पृष्ठ १०४

मूल्य १-२५

गांधीजी के जाने के बाद उनकी जयन्ती और पुण्य-दिवस के प्रसंगों पर विनोबाजी ने अपनी पदयात्रा के दौरान गांधीजी के बारे में अनेक प्रवचन किये हैं।

इस संकलन म विनोबाजी ने तीन विशेषताओं पर विशद प्रकाश डाला है, १—साधन-साध्य की एकता, २—अहिंसा के सार्वजनिक प्रयोग, और ३—सामूहिक साधना। इस युग को गांधीजी की ये देनें विनोबाजी की दृष्टि में अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण हैं।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

→ ५ मनु, प्लेटो से लेकर आधुनिकतम सामाजिक दार्शनिकों के साथ गांधीजी का एक सामाजिक दार्शनिक के रूप में वैज्ञानिक अध्ययन हो।

६ दुनिया के सभी प्रकार के शान्ति-वादियों व शान्ति-संगठनों, संस्थानों से जीवित सम्पर्क रखा जाय।

यदि ये और इसी प्रकार के अन्य उपायों का उपयोग हम नहीं करते हैं तो गांधी-शताब्दी वर्ष में अनेक देशों में शान्ति, सद्भावना व सौहार्द के लिए जो अनुकूल मनोवैज्ञानिक भूमिका तैयार हुई है वह निरर्थक जायगी।

—गांधी-सम्पर्क समिति के सौजन्य से

महान् बा को नमन

'बा का जबर्दस्त गुण सहज अपनी इच्छा से मुझमें समा जाने का था। मैं नहीं जानता था कि यह गुण उनमें छिपा है।...लेकिन जैसे-जैसे मेरा सार्वजनिक जीवन उज्ज्वल बनता गया, वैसे-वैसे बा खिलती गयी और पुख्ता विचारों के साथ मुझमें यानी मेरे काम में समाती गयी।...'

—गांधीजी

'...मुझे अगर अब किसीसे ज्यादा उम्मीद है—सेवा करने की, कौम की खिदमत करने की—तो बहनों से, औरतों से है, क्योंकि उन लोगों में अभी तक खुद-गरजी नहीं आयी है...। परमात्मा के लोग बेगरजी होते हैं और परमात्मा का आशीर्वाद वे ही हासिल करते हैं।...'

—सीमांत गांधी (बादशाह खाँ)

सेवा, त्याग एवं करुणा की मूर्ति महान् कस्तूरबा की उनकी सौवीं जन्म-शती के अवसर पर शतशः नमन, जिनके कारण यह सत्य उद्घाटित हुआ और युग-पुरुषों को अनुभूति हुई कि स्त्री की अहिंसक-शक्ति के माध्यम से वर्तमान की सभी समस्याओं को सरलता से हल किया जा सकता है।

गांधी-जन्म-शताब्दी की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति, जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित।

मध्यप्रदेश का सर्वोदय-सम्मेलन :

साथीपन की शक्ति और तरुणों के नेतृत्व की प्रेरक मिसाल

बुजुर्गों के आशीर्वाद और जवानों के पुरुषार्थ का समन्वय कोई देखना चाहे तो मध्यप्रदेश में देखे। अक्सर होता यह है कि बुजुर्गों के अनुभवी आग्रह जवानों में चिढ़ पैदा करते हैं, और जवानों के बेहिसाब जोश बुजुर्गों में कुढ़न। लेकिन मध्यप्रदेश इसका अपवाद है। ७४-७५ साल के खोड़े साहब और ३२-३५ साल के नरेन्द्र भाई की दोस्ती देखते बनती है। और यही दृश्य प्रदेश के सम्मान्य सर्वश्री काशिनाथजी त्रिवेदी, दादाभाई नाइक आदि बड़े बुजुर्गों और प्रदेश के गिने-चुने लेकिन सक्षम तरुण कार्यकर्ताओं के सम्बन्धों में, व्यवहारों में दिखाई देता है।

मध्यप्रदेश के ग्यारहवें सर्वोदय-सम्मेलन, इन्दौर में यह दृश्य मुझे सबसे अधिक आकर्षक लगा। यद्यपि आकार की दृष्टि से तुलना की जाय तो बिहार के किसी प्रदेशीय संगठन की कार्यकारिणी-सभा से थोड़ा ही बड़ा यह सम्मेलन दिखाई देगा, लेकिन यह सबकी मिलीजुली ताकत का ही परिणाम है कि साल में ४-५ हजार रुपयों के बजट पर चलनेवाला सर्वोदय-मण्डल इस बड़े प्रदेश को प्रदेशदान की मंजिल पर पहुँचाने के लिए संकल्पित है, और अबतक ६ जिलों का दान पूरा हो चुका है। कार्यकर्ताओं की और कोष की विपुलता के बावजूद अगर शक्ति आपस के द्वन्द्वों में ही खर्च हो जाय, तो उससे क्या फायदा? मध्यप्रदेश तो यह सिखाता है कि शक्ति कार्यकर्ताओं की विचार-निष्ठा और आपसी समझदारी के आधार पर विकसित साथीपन की भावना में से प्रकट होती है। हम सबसे पहले अपने साथियों से जुड़ें और समाज की समस्याओं को सामने रखकर उनके समाधान की चार-शक्ति पैदा करें, शायद यह हमारे आन्दोलन की सबसे बड़ी आध्यात्मिक साधना है। खादी और समस्या निरपेक्ष विचार एवं अध्यात्म की निष्ठा तो कभी-कभी हमारे अन्दर ऐसी कुण्ठा पैदा कर देते हैं कि हम अपने सम्बन्धों में तनाव-ही-तनाव पैदा करते चले जाते हैं।

मध्यप्रदेश सर्वोदय-सम्मेलन में इस बार सर्वोदय मण्डल का चुनाव होनेवाला था। इसके पूर्व ही मैं अगस्त '६९ में महाराष्ट्र के सर्वोदय-सम्मेलन में वहाँ की चुनाव-चर्चा सुन और देख चुका था, नवम्बर '६९ में ही बिहार के प्रदेशीय संगठन के समय प्रकट हुए भाव भी अब तक मन में बसे हुए थे, इसलिए मैंने अलग अलग साथियों से जानने की कोशिश की, कि यहाँ भी कुछ तनाव है या नहीं। पत्रकारिता का स्वभाव यों भी कुछ असामान्य की तलाश करता है। और तलाश में मुझे सचमुच असामान्यता का दर्शन हुआ, लेकिन उसकी परिभाषा बदलनी पड़ी। लगभग एक-सा भाव सबने प्रकट किया—'संगठन में पद के स्थानों के परिवर्तन को इतना महत्त्व क्यों दिया जाय? मुख्य बात है आन्दोलन को वेग देने की। किसीको अध्यक्ष या मंत्रीपद दे देने भर से वह इस काम को करने की क्षमतावाला थोड़े ही हो जायेगा? यह तो जो कर रहे हैं, करेंगे, संयोजन के लिए सबको जोड़नेवाला और खुद आगे बढ़कर प्रेरणा का संचार करनेवाला जो व्यक्ति है, उसे यह जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए।' ऐसा व्यक्ति कौन है? २५ जनवरी को जब चुनाव-कार्यक्रम शुरू हुआ तो यह प्रकट हुआ। सर्वोदय-मण्डल के तत्कालीन अध्यक्ष श्री खोड़े साहब ने उम्र और स्वास्थ्य की वजह से आग्रहपूर्वक छुट्टी ली, मंत्री नरेन्द्र दुबे ने पहले ही मंत्रीपद से 'अलविदा' कह दिया था। लेकिन चुनाव के समय एक ही नाम आया अध्यक्ष के लिए नरेन्द्र दुबे का। सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने नरेन्द्र दुबे की शक्ति को अखिल भारतीय काम के लिए मध्य-प्रदेश की ओर से समर्पित करने का आग्रह निवेदन किया, लेकिन दादाभाई नाइक से लेकर छन्नू भाई तथा अन्य सभी कार्यकर्ताओं ने मध्यप्रदेश के काम को, खासकर प्रदेशदान के संकल्प को सामने रखकर बंग साहब से क्षमा माँगते हुए नरेन्द्र भाई से सामूहिक आग्रहपूर्वक अध्यक्षता स्वीकार करायी। मंत्री के लिए महेन्द्र ने बहुत ना नूं की। लेकिन कार्यकर्ताओं ने उनकी एक नहीं सुनी और नरेन्द्र-महेन्द्र को आन्दोलन के संयोजन की जिम्मेदारी स्वीकार करनी पड़ी। इन्कार और मनाव का दृश्य देखते ही बनता था। दादाभाई नाइक ने चुनाव के बाद आशीर्वाद देते हुए कहा, 'नरेन्द्र से मैंने यह जिम्मेदारी स्वीकारने के लिए अलग से बहुत आग्रह किया था। लेकिन उसने हमारी एक नहीं सुनी थी, अब स्पष्ट हुआ कि सामूहिक मनाव में कितनी शक्ति है।''

सम्मेलन का उद्घाटन २४ जनवरी को ही श्री ठाकुरदास बंग ने किया था। अपने भाषण में बंग साहब ने यह स्पष्ट किया था कि शासन सत्ता की सलाह और हमारी राह में कोई फासला नहीं है, लेकिन हम सुशासन से आगे बढ़कर स्वशासन की मंजिल पर पहुँचना चाहते हैं।

शान्ति की आगे की योजना पर हुई चर्चा का समावर्तन करते हुए ग्रामदान के डाक्टर और दया के निधि पटनायकजी ने कहा कि गाँव के स्वनिर्णयवाली बात को हमें स्वशासन का आधार बनाना होगा। आपने जागतिक परिस्थिति के संदर्भ में ग्रामदान की विचार-शक्ति को प्रस्तुत करते हुए अमरीकी, रूसी और चीनी विचारधाराओं के विकल्प में ग्राम-स्वराज्य को प्रस्तुत किया।

सम्मेलन के अध्यक्ष आचार्य राममूर्ति ने अपने पहले भाषण में विचारोत्तेजक एक के बाद एक उठाये जानेवाले कार्यक्रम पेश किये, जिसे फोल्डर के रूप में शीघ्र छपवाने का निश्चय सर्व सेवा संघ के मंत्री ने जाहिर किया। अपने आखिरी समारोप→

मध्यप्रदेशदान के सन्दर्भ में प्रस्तावित कार्यक्रम की रूपरेखा

—ग्यारहवें प्रदेशीय सम्मेलन में स्वीकृत—

(१) सन् १९७० में मध्यप्रदेशदान का काम पूरा हो। अब तक छः जिलादान सम्पन्न हो चुके हैं, ग्वालियर जिलादान के निकट है। तीन जिले छोड़कर हरएक जिले में कुछ-न-कुछ ग्रामदान हुए हैं।

(२) प्रत्येक जिले में जिला सर्वोदय मंडलों का गठन हो जाय, इसका प्रयास हो।

(३) प्रत्येक जिले में कम-से-कम दो हजार सर्वोदय-मित्र बनाये जायें। इसके लिए १५ दिन का सघन अभियान पूरे प्रान्त में चलाया जाय।

(४) गांधी-शताब्दी की पूर्णाहुति के अवसर पर मार्च '७० तक प्रत्येक सम्भाग में कम-से-कम एक जिलादान प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाय।

(५) मंडल के लिए धन-संग्रह हेतु अभियान चलाकर १ लाख रुपये संग्रह किया जाय। इसके लिए श्री जयप्रकाश नारायण से समय माँगकर उनका एक हफ्ते का दौरा आयोजित किया जाय।

(६) जिन जिलों में लोकसेवकों की पर्याप्त संख्या के अभाव में जिला सर्वोदय मंडल का गठन संभव न हो, वहाँ सर्वोदय-मित्र मंडल बनाया जाय।

(७) सघन ग्रामदानवाले जिलों में ग्रामस्वराज्य समितियों का गठन करके पुष्टि का कार्य प्रारम्भ किया जाय।

(८) पूरे प्रदेश में व्यापक साहित्य-प्रचार किया जाय और खास करके ग्रामदानी गाँवों में पत्र-पत्रिकाएँ पहुँचें, ऐसा कार्यक्रम जिला सर्वोदय-मंडल, सर्वोदय-मित्र मंडल अथवा ग्रामस्वराज्य समितियाँ आयोजित करें।

(९) शहरों में तरुण शान्तिसेना तथा गाँवों में ग्राम शान्तिसेना के गठन की पहल हो। इसके लिए व्यापक पैमाने पर प्रशिक्षण-शिविर भी लगाये जायें।

(१०) शराबबन्दी की दिशा में शासन को ७० प्रतिशत हस्ताक्षरवाली घोषणा के सन्दर्भ में विशेष तौर पर ग्रामदानी गाँवों से शराब की दुकानें हटाने के लिए प्रयत्न किया जाय।

(११) खादी, अस्पृश्यता-निवारण, भंगी-मुक्ति, पेयजल समस्या तथा ग्रामोद्योगों पर ग्रामदानी गाँवों में अनुकूलता पैदा करके कार्यान्वयन किया जाय।

(१२) नगरों में सर्वोदय मित्र-मंडल पक्षमुक्त नगरनिगम, श्रमिक संगठन, सर्वोदय-पात्र, मालिकों तथा श्रमिकों में साझेदारी का काम होना चाहिए। शान्ति-सेना, आचार्यकुल के काम को भी अधिक सक्रियता से किया जाय।•

—भाषण में आचार्यजी ने सर्वोदय की राजनीति यानी लोकनीति को बहुत ही स्पष्टता से पेश किया। उन्होंने घोषणा की, कि सर्वोदय को राजनीति से कुछ लेना-देना नहीं है, यह धारणा बदलनी चाहिए, और यह जाहिर होना चाहिए कि हम आज की अक्षम राजनीति को बदलकर सक्षम लोकनीति विकसित करना चाहते हैं।

सम्मेलन की चर्चाओं के निष्कर्ष-स्वरूप स्वीकृत निवेदन में सन् १९७० के वर्ष में प्रदेशदान की मंजिल तक पहुँचने तथा जिलादानी क्षेत्रों में ग्रामस्वराज्य की पुष्टि का अभियान चलाने का संकल्प दुहराया गया और इस प्रकार दो दिनों का ग्यारहवाँ मध्यप्रदेशीय सर्वोदय-सम्मेलन इन्दौर में नयी आशाओं के क्षितिज की झलक दिखाते हुए सम्पन्न हुआ।

—रामचन्द्र राही

मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल की कार्यकारिणी

१ श्री अब्दुल हमीद खादिम
२ श्री रामविलास पोरवाल
३. श्री महर्षि सच्चिदानन्द
४ श्री हेमदेव शर्मा
५ श्री चतुर्भुज पाठक
६ श्री ठाकुर राम प्रसाद
७ श्री हरिप्रेम बघेल
८ श्री छन्नूराम गौड
९ श्री रामचन्द्र भार्गव
१० श्री शिवनाथ शर्मा
११. श्री इन्द्रलाल मिश्र
१२. श्री जसवंत राम भाईजी
१३ श्री ज्ञानचमुनि
१४. श्री महेन्द्रकुमार, मंत्री
१५ श्री सत्यनारायण शर्मा, सहमंत्री
१६. श्री नरेन्द्र दुबे, अध्यक्ष

स्थायी निमंत्रित

१ श्री वि० स० खोड़े
२ श्री दादाभाई नाईक
३ श्री गंगाधर पाटणकर
४ श्री बनवारीलाल चौधरी
५ श्री काशिनाथ त्रिवेदी
६. श्री रामानन्द दुबे

इनके अतिरिक्त प्रदेश की निम्न संस्थाओं के प्रतिनिधि भी रहेंगे :

म० प्र० गांधी स्मारक निधि
म० प्र० हरिजन सेवक संघ
अ० भा० कस्तूरबा ट्रस्ट
वनवासी सेवा मण्डल
म० प्र० भूदान यज्ञ बोर्ड
म० प्र० खादी सम्था संघ

जिलादान के बाद के कार्य के लिए एक प्रदेशीय ग्रामस्वराज्य समिति का भी गठन किया गया, जिसके संयोजक श्री हेमदेव शर्मा बनाये गये। शान्ति-सेना के काम को आगे बढ़ाने के लिए श्री चतुर्भुज पाठक के संयोजन में भी एक समिति बनायी गयी।

इन्दौर में अन्तर्राष्ट्रीय महिला-विचार-गोष्ठी

ज्ञात हुआ है कि आगामी ८ से १५ फरवरी तक कस्तूरबाग्राम (इन्दौर) में एक अन्तर्राष्ट्रीय महिला विचार-गोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है, जिसमें इस बात पर विचार किया जायेगा कि महिलाएँ विश्व-शांति के लिए क्या योग-दान देसकती हैं ?•

पुनः बादशाह खाँ और विनोबा-मिलन

महिलाश्रम, वर्धा में जहाँ विनोबाजी ने 'गीताई' लिखी और वर्धा की जिस इमारत में गांधीजी रहते थे, उसी स्थान में गत १७ जनवरी को बादशाह खाँ का पड़ाव था। वहाँ १७ ता० को एक घंटा और १८ ता० को पौन घंटा विनोबाजी और बादशाह खाँ की दो बार मुलाकातें हुई। विनोबाजी बादशाह खाँ के चरण स्पर्श के लिए झुके तो खाँ साहब ने प्रेमपूर्वक उनके हाथ हाथों में ले लिये। 'आप आज्ञा करें और हम उस पर अमल करें ऐसा हमारा रिश्ता है', ऐसी विनोबा ने गुफ्तगू की। मतदाताओं का शिक्षण और इन्सानी बिरादरी, इन दो कार्यक्रमों पर जोर देने का आश्वासन विनोबाजी ने उनको दिया। बादशाह खाँ की विदाई के समय जानकीदेवी बजाज ने उनसे कहा कि "आप फिर से जल्दी ही भारत आइएगा", तो खाँ साहब ने कहा, "आप लोगों ने ही हमें भारत के बाहर किया है।"●

मथुरा में ग्रामदान अभियान

मथुरा जनपद की मथुरा सदर तहसील के फरह एवं मथुरा विकास-खण्डों में ११ जनवरी '७० से १८ जनवरी '७० तक ग्रामदान ग्राम-स्वराज्य-अभियान गांधी-जन्म शताब्दी समिति मथुरा के तत्त्वावधान में चलाया गया। प्रारम्भ के दो दिवसीय कार्यकर्ता-प्रशिक्षण शिविर चला, जिसका उद्घाटन श्री विचित्र नारायण शर्मा ने किया। शिविर में खादी एवं रचनात्मक कार्यकर्ताओं के अलावा, जिला परिषद के शिक्षक एवं विद्यार्थियों ने भाग लिया। क्षेत्र के स्थानीय कार्यकर्ताओं ने भी शिविर में सम्मिलित होकर ग्रामदान ग्रामस्वराज्य विचार का शिक्षण प्राप्त किया। शिविर में आये हुए कार्यकर्ताओं के शिक्षण का कार्य श्री रामजी भाई ने किया।

११ से १८ जनवरी '७० तक ८४ कार्यकर्ताओं की ३७ टोलियों, जिनमें जिला परिषद् के २३ अध्यापक भी शामिल थे, फरह एवं मथुरा विकास-खण्ड के १७२ ग्रामों में से १४७ ग्रामों में पदयात्रा करके राष्ट्रपिता बापू एवं सन्त विनोबाजी के ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का संदेश जन-जन तक पहुँचाया। फलस्वरूप ९७ ग्रामों के लोगों ने ग्रामदान घोषणापत्र पर अपनी सहमति दी।

सीतापुर में जिलादान-अभियान

सीतापुर (उ० प्र०) जिले में ग्रामदान अभियान चलाने के लिए खैराबाद ब्लाक के शिक्षकों की एक सभा जिला परिषद के अध्यक्ष श्री सुरेशप्रकाश के सभापतित्व में हुई, जिसको श्री रामजी भाई और श्री विचित्र नारायण शर्मा ने संबोधित किया। ब्लाक के ७५ शिक्षक-शिक्षिकाओं ने स्वेच्छा से अभियान में शामिल होने के लिए अपने नाम दिये हैं। शीघ्र ही वहाँ पर अभियान की तारीखें निश्चित करके श्री गांधी आश्रम के तत्त्वावधान में अभियान शुरू किया जायगा। इस अवसर पर ब्लाक-प्रमुख श्री रामबालकजी, डी० पी० ओ० एवं जिला परिषद तथा ब्लाक के अन्य अधिकारी और कर्मचारी भी उपस्थित थे।

नैनीताल में सर्वोदय-कार्य

प्रेमनगर (नैनीताल) से प्राप्त जानकारी के अनुसार सर्वसम्मति से आश्रमिक सर्वोदय मंडल का गठन हुआ। इस अवसर पर २० रु० का सर्वोदय-साहित्य बिका तथा पत्रिकाओं के ग्राहक बनाये गये। यहाँ पर सर्वोदय-विचार में दिलचस्पी बढ़ रही है।

ग्रामसभा का संगठन

कोढ़ा बाजार (मांझी सारण) ग्राम में सर्वसम्मति से ग्रामसभा का निर्माण हुआ। गाँव में पुष्टि का काम शुरू हुआ है। श्री महात्मा और श्री धीनाथ ने यह निश्चय किया है कि वे रविवार का अपना भोजन नहीं करेंगे और उतना अन्न ग्राम कोष के लिए देंगे।

महाराष्ट्र का कानून द्वारा घोषित दूसरा ग्रामदान नवेझरी

भंडारा जिले की गोंदिया तहसील में पंचायत समिति तिरोड़ा के अंतर्गत नवेझरी गाँव का रजिस्ट्रेशन-समारोह 'महाराष्ट्र ग्रामदान-कानून १९६५' के अनुसार ३० दिसम्बर '६९ को कलेक्टर, एस० डी० ओ०, नायब तहसीलदार, सभापति, पंचायत समिति और सम्बन्धित सरकारी अधिकारी तथा महाराष्ट्र ग्रामदान मंडल के अध्यक्ष श्री रा० कृ० पाटिल, विदर्भ भूदान यज्ञ मंडल के मंत्री श्री शेंडुर्णीकर, जिला सर्वोदय मंडल के संयोजक डा० प्रभाकर बागड़ और अन्य सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की उपस्थिति में हुआ। नवेझरी गाँव की जनसंख्या ७४० है। समारोह में गाँव के सौ प्रतिशत स्त्री-पुरुष हाजिर थे। सन् १९६४ में जब विनोबाजी का पड़ाव यहाँ था, तब इसका ग्रामदान घोषणा पत्र उन्हें समर्पित किया गया था। भूमि वितरण के बाद अब गाँव में भूमिहीन कोई भी नहीं है। हाल ही में सहकारी धान मिल यहाँ स्थापित हुई। सहकारी दुकान भी है।

भंडारा जिले का पहला प्रखंडदान-मोहाड़ी

६ जनवरी को मोहाड़ी पंचायत समिति ने श्री रा० कृ० पाटिल को मोहाड़ी विकास खंड के ९७ गाँवों में से ८२ गाँवों के ग्रामदान पत्र समर्पित किये। इसमें ९ हजार जनसंख्यावाला मोहाड़ी और ५ हजारवाले आंधलगांव और करडी, ४ हजारवाले मुढरी जैसे बड़े बड़े गाँव भी हैं। जिले के १० कार्यकर्ता सतत इस कार्य में लगे थे।

लोकयात्री दल का पता

फरवरी से स्थायी पता

मार्फत—ग्रामदान आश्रम,
पठानकोट (पंजाब)

फिलहाल पता

मार्फत—श्री रामशरण शर्मा,
व्यवस्थापक श्री गांधी आश्रम,
मैनपुरी (उ० प्र०)

भूदान-यज्ञ २-'७० रजिस्टर्ड नं० एस. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए ३४

अठारह दिन में जिलादान प्राप्त करने का पराक्रम

उत्तरप्रदेश के हरदोई जिले में एकसाथ पन्द्रह सौ कार्यकर्ताओं द्वारा अभियान

उत्तरप्रदेश के हरदोई जिले की चार तहसीलों—बिलग्राम सडीला, शाहाबाद और हरदोई मे ग्रामदान का महातूफान प्रारम्भ करने के लिए स्वराज्य आश्रम कानपुर ने २४ जनवरी से १० फरवरी सन् १९७० तक की योजना बनायी है। अभियान-सचालक श्री रामजीवन शुक्ल ने हमारे प्रतिनिधि को बताया कि १० फरवरी तक हरदोई का जिलादान पूरा कर लिया जायगा। क्योकि इस जिलादान-अभियान के लिए जिला परिषद हरदोई के अध्यक्ष महोदय ने करीब १५०० शिक्षकों की सहायता हमे दी है। इस जिले मे १९ प्रखण्ड मल्लावाँ, बिलग्राम, साँडी, हरपालपुर माधोगंज, सडीला, कोटवा. भडौना बेहदर खुर्द, भरवाँ, शाहाबाद, टोडरपुर, पिहानी, भारावनी, सुरसा, बावन, हरियावाँ, अहिरोरी, टडियावाँ हैं, जिनमे राजस्व गाँव १८९९ और आबादी १३,६७,८०६ है। श्री रामजीवन भाई ने यह भी बताया कि इस जिले मे सितम्बर १९६८ मे पहला अभियान बिलग्राम और मल्लावाँ प्रखण्डों मे चला था जिसमे ३०६ ग्रामदान प्राप्त हुए थे। उसके बाद अब जिलादान अभियान चालू हुआ है।

पूरे जिले मे अभियान प्रारम्भ करने के लिए चार शिविर आयोजित किये गये—२४-२५ जनवरी को सडीला में, २७-२८ जनवरी को हरदोई मे, ३१ जनवरी और १ फरवरी को शाहाबाद मे। ४, ५ फरवरी को साँडी (बिलग्राम तहसील) मे शिविर होगा। इस शिविर-शृंखला मे करीब १५०० शिक्षक जिला परिषद हरदोई ने दिये हैं। स्वराज्य आश्रम कानपुर के मंत्री श्री ब्रजमोहन तिवारी ने २० तथा श्री गांधी आश्रम ने १० उत्तम कार्यकर्ता इस जिलादान-अभियान को सम्पन्न करने के लिए दिये हैं।

२४,२५ जनवरी को संडीला मे हुए शिविर मे सर्वश्री कामतानाथ गुप्त (रिटायर्ड जज), रामजी भाई, रामजीवन शुक्ल, शंकरनाथ गुप्त लक्ष्मीन्द्र प्रसाद, जिला परिषद हरदोई के सेक्रेटरी धीरेन्द्र स्वरूप मिश्र, ओम्प्रकाश एम० डी० आई०, रज्जन दुबे, राजवीर, प्यारेसिंह, कुँवर प्रकाश, शिवप्रकाश गुप्त, राममोहन तथा शिवनाथ भाई ने दो दिन तक शिविरार्थियों को भलीभाँति प्रशिक्षण दिया। सारी सडीला तहसील मे ग्रामदान ग्रामस्वराज्य-अभियान से अभूत पूर्व दृश्य उपस्थित हो गया है। —कपिल अवस्थी

उत्तरप्रदेश में ग्रामदान आन्दोलन की प्रगति

(३१ दिसम्बर १९६९ तक)

जिला	ग्रामदान	प्रखण्डदान
उत्तरकाशी *	५६६	४
बलिया *	१४६६	१८
वाराणसी *	२११७	२२
फर्रुखाबाद *	२४२८	१०
आगरा *	१७२४	१७
गाजीपुर *	१६५१	१६
आजमगढ़ *	३१२४	२२
फैजाबाद	१४३८	११
मैनपुरी	१०९१	५
कानपुर	९६३	—
चमोली	९३६	५
इटावा	८६९	३
एटा	८४२	—
अल्मोड़ा	७८०	३
देवरिया	७६१	७
सहारनपुर	६७२	—
मिर्जापुर	५९४	३
मुरादाबाद	५७६	—
मथुरा	५४०	१
गोरखपुर	४९१	—
अलीगढ़	४२८	१
पीलीभीत	४७६	—
हरदोई	३०६	—
सुल्तानपुर	२८७	२
मेरठ	२८३	—
देहरादून	२५५	२
मुजफ्फरनगर	२४८	—
बुलन्दशहर	१९८	—
झाँसी	१५६	—
बस्ती	१५२	—
रायबरेली	१३६	—
बदायूँ	१३३	१
जौनपुर	१०८	१
टिहरी	१०४	—
पिथौरागढ़	९४	१
रामपुर	१७९	—
गढ़वाल	६१	—
इलाहाबाद	७५	—
शाहजहाँपुर	५५	—
उन्नाव	३८	—
फतेहपुर	१	—
हमीरपुर	१	—
गोण्डा	९	—
जालौन	९	—
बिजनौर	९०	—
* जिलादान	२७४३९	१४५

जनवरी '७० में दो नये जिलादान

प्राप्त सूचना के अनुसार गत महीने मध्यप्रदेश का इंदौर और उत्तरप्रदेश का आजमगढ़ जिलादान सम्पन्न हुआ। —कपिल भाई

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज़ १२ रु०, एक प्रति २५ पैं०), विदेश में २२ रु०, या २५ शिलिंग या ३ डालर।

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वर्ष : १६ अंक : १९
सोमवार ९ फरवरी, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : [illegible]

अलविदा की वेला में...

मुझे अफसोस है कि गांधीजी के देश में हर कोने में हिंसा-ही-हिंसा देखकर जा रहा हूँ। आप खुद ही देख लें, अहिंसा कहीं नजर नहीं आ रही है।

वैसे तो आज सारी दुनिया ही हिंसा की आग में झुलस रही है। लेकिन दूसरे मुल्कों में हिंसा का जो स्वरूप है, उसमें तो एक मुल्क दूसरे मुल्क के खिलाफ हिंसा करता है। पर यहाँ तो हम आपस में ही एक-दूसरे की हिंसा पर उतारू हैं।

देश के नेता व राजनीतिक दल आम जनता की मुसीबतों व समस्याओं को सुलझाने में नाकामयाब रहे और निहित स्वार्थों की सिद्धि में लगे रहे तथा कुर्सी से चिपके रहे। यदि इस प्रकार की प्रवृत्ति से बाज नहीं आया गया तो देश कभी भी ऊँचा नहीं उठ सकेगा।

समाजवाद के लक्ष्य की प्राप्ति तब ही हो सकती है जब कि देश के प्रत्येक व्यक्ति को जीने का पूरा हक मिले। यानी उसकी तकलीफें दूर की जायँ, और समस्याओं को सुलझाया जाय, बराबर बढ़ने का समान मौका मिले। अगर ऐसा नहीं हुआ तो 'सोशलिज्म' एक ख्याली बात बन जायेगी।

भारतीय नेताओं ने आजादी के बाद गांधीजी के आदर्शों व सिद्धान्तों को भुला दिया है, सरकारी फिजूलखर्ची और शराबखोरी आज भी बेरोक-टोक जारी है, जिसको कि गांधीजी तहेदिल नफरत करते थे। बड़े-बड़े शहरों में ऊँचे-ऊँचे महल बनाये गये हैं, मगर किसी ने यह देखने की जरूरत नहीं समझी कि देहात में भी चिराग उपलब्ध किये जायँ।

हिन्दुस्तान जैसी प्यारी जनता दुनिया में नहीं। उसे तो स्वार्थी लोगों ने गलत रास्ते पर डाल दिया है। मजहब विध्वंस नहीं, निर्माण है। इस बात को आप खुद समझें और दूसरों को समझाएँ। याद रखें, जब तक आपके दिल नहीं बदलेंगे, यह मसला कभी हल नहीं होगा। पहले खुद बदलो, फिर दूसरे को बदलो।

दोस्त रुलाता है और दुश्मन हँसाता है। यहाँ के लोग मेरे हैं। जब मैं उन्हें देखता हूँ, मेरी आँखें नम हो जाती हैं। जब आपको मेरी जरूरत होगी, आप मुझे अपने साथ पायेंगे।

मैं अकेला क्या कर सकता हूँ? दुनिया में बड़े-बड़े पैगम्बर और अवतार आये। वे तभी कामयाब हुए जब कौम ने उनका साथ दिया। कौम ने साथ नहीं दिया तो वे नाकामयाब हो गये। इसलिए मैं तो सिर्फ रास्ता ही बता सकता हूँ, करना तो आपको है। करोगे तो मसले हल होंगे, मुसीबतें टलेंगी।

मैं आपकी मोहब्बत, प्रेम और प्यार के लिए शुक्रगुजार हूँ।

—खान अब्दुल गफ्फार खाँ

दिल्ली में गांधीवादी

पिछले हफ्ते हमने कहा था कि गांधी अब दूर का आदर्श नहीं रह गया है, सामान्य जन के जीवन की आवश्यकता बन गये हैं। वह करोड़ों के जीवन की आवश्यकता है, यही उसकी क्रान्तिकारिता है। गांधी का यह क्रान्तिकारी स्वरूप अब लोगों के सामने आ रहा है।

३० जनवरी को दिल्ली में जो अन्तरराष्ट्रीय गोष्ठी शुरू हुई उसमें देशी-विदेशी सभी विचारकों और वक्ताओं ने यही भाव प्रकट किया कि गांधी आज के मानव की अंतिम आशा है। सत्य और अहिंसा के बिना सभ्यता के विकास को कौन कहे, दुनिया का अस्तित्व भी कठिन है।

पर, एक प्रश्न है। आज की व्यवस्था में जिनका भयंकर दमन और शोषण हो रहा है वे अगर क्षोभ की असह्य स्थिति में पहुँचकर हिंसा पर उतारू हो जाते हैं तो हम उनसे क्या कहें? यह प्रश्न जे० पी० ने गोष्ठी के सदस्यों के सामने रखा। प्रश्न क्या था, चुनौती थी। लेकिन यह ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर उन्हींको नहीं देना है जिन्होंने जे० पी० को सुना, बल्कि हम सब लोगों को देना है जो गांधी का नाम लेते हैं, और मनुष्य के लिए अपने मन में थोड़ी भी सहानुभूति रखते हैं।

दमन और शोषण का शिकार मनुष्य कब तक हमारे उत्तर की प्रतीक्षा करेगा? हम कबतक उससे प्रतीक्षा कराना चाहते हैं? वह तो इतना अधीर हो गया है कि न्याय की आशा छोड़कर बदले पर उतारू हो गया है।

३० जनवरी से १२ फरवरी तक गांधीजी का श्राद्ध-पक्ष है। १२ को हम सूतांजलि समर्पित करेंगे। इस पखवारे में हमारे अनेक साथी गाँवों में जायेंगे। जगह-जगह तरह-तरह के कार्यक्रम चलाये जायेंगे। अपने इन सारे कार्यक्रमों से जनता को हम क्या संदेश देना चाहते हैं? क्या हम पूरे आत्म-विश्वास के साथ उसे विश्वास दिला सकते हैं कि वास्तविक क्रान्ति की शक्ति हिंसा में नहीं अहिंसा में ही है? हमारे लिए शांति का इतना ही अर्थ नहीं है कि अशांति न हो। हम मानते हैं कि शांति मात्र स्थिति नहीं एक शक्ति है, ठीक उसी तरह जैसे गुण्डी मात्र सूत नहीं, श्रम का प्रतीक है। शांति की शक्ति से हम क्रान्ति करना चाहते हैं। श्रम के प्रतीक से आगे बढ़कर हम श्रमिक की प्रतिष्ठा कायम करना चाहते हैं। ग्रामदान, खादी और शांतिसेना के विविध कार्यक्रम के द्वारा हमें अपना यह दावा सही सिद्ध करना है कि शान्ति की शक्ति क्रान्तिकारी हो सकती है, और हमारे ये प्रतीक ऊँचे जीवन की जीवन्त प्रेरणाओं के वाहक हो सकते हैं।

दिल्ली की गोष्ठी में यह प्रश्न उठाया गया कि आज के जीवन से निकलकर हम उस जीवन में पहुँचेंगे कैसे, जिसकी झलक गांधी ने दिखायी थी? आज ही नहीं, हमेशा क्रान्तिकारियों ने भूखे मानव से यही कहा है कि उनकी क्रान्ति निर्णायक होगी, मुक्तिदायिनी होगी, अंतिम होगी, लेकिन यह आश्वासन कभी पूरा नहीं हुआ, और मनुष्य एक हिंसा से निकलकर दूसरी उससे बड़ी—उसके बाद उससे भी बड़ी—हिंसा में फँसता चला गया है। गांधी ने कहा कि हिंसा से मुँह मोड़ना मुक्ति की पहली शर्त है, और राज्य हिंसा का सबसे बड़ा संगठन है। हिंसा के रास्ते चलकर मनुष्य गुलामी के स्वरूप बदल सकता है, मुक्ति नहीं पा सकता। मुक्ति का आश्वासन अहिंसा में ही है।

लेकिन स्थिति यह है कि अहिंसा अभी तक भक्तों और विचारकों की निष्ठा और चर्चा तक सीमित है। गांधी के बाद वह जन-जीवन से बिलकुल दूर चली गयी है। गांधी ने अहिंसा का प्रयोग प्रतिकार और रचना दोनों के लिए किया था, लेकिन उनके बाद अहिंसा प्रहार का साधन बनायी गयी, यहाँ तक कि अहिंसा अहिंसा रह ही नहीं गयी।

हम जहाँ पहुँचना चाहते हैं वहाँ कैसे पहुँचें, इस प्रश्न का उत्तर सिवाय ग्रामदान-आन्दोलन के दूसरे किसीके पास नहीं है। ग्रामदान ने अहिंसक जीवन-योजना और अहिंसक समाज-रचना की प्रक्रिया के क्रम स्थिर कर दिये हैं। ईंटें तैयार हैं, इमारत बनानी है। ईंटों को जोड़कर इमारत खड़ी करना हमारा काम है। जनता को ग्रामदान की संभावनाओं का भान भले ही न हो, किन्तु उसकी भावना बन चुकी है, उसके द्वारा रचना शुरू होना बाकी है। क्या जनता और क्या विद्वान, दोनों अहिंसा की रचनात्मक शक्ति का प्रत्यक्ष दर्शन चाहते हैं।

गांधी आज के जमाने में काम का रह गया है या नहीं, इस प्रश्न का उत्तर दिल्ली में इकट्ठा विद्वान भले देना चाहें दें, लेकिन उनका उत्तर इस जमाने का नहीं माना जायगा। उसमें विद्वता की गहराई होगी, बारीकी होगी, पर शक्ति नहीं होगी। शक्ति तो तब आयेगी जब उत्तर देने के लिए स्वयं जनता सामने आयेगी—वह जनता जो कल अहमदाबाद में, आज केरल में, बंगाल में, हरियाणा और पंजाब में हिंसा की होली खेलने पर उतारू दिखाई देती है। गलत नेतृत्व से जनता का दिमाग फिर गया है, और जब दिमाग फिर जाता है तो वह जानती भी नहीं कि क्या कर रही है। उसकी इस तोड़-फोड़ को हिंसा भी क्या कहें? चोर और क्रान्तिकारी की हिंसा के गुण दूसरे होते हैं। जो हो रहा है उसे गुण्डागिरी के सिवाय दूसरा कुछ कहना मुश्किल है।

उत्तेजना और गलत मूल्यों के प्रभाव से दिमाग चाहे जितना फिर जाय, किन्तु हृदय दुरुस्त है। जनता नयी बात सुनने, और नयी राह चलने को तैयार है। वह भटक गयी है, इसीलिए इतनी आसानी के साथ आत्मघात के लिए तैयार हो जाती है। इस वक्त जरूरत इस बात की है कि विचारक जनता की समस्या समझें, और जनता विचार की शक्ति पहचाने तब दोनों के मेल से एक नया प्रकाश प्रकट होगा जो जन-जन से एक बार फिर यह विश्वास जगायेगा कि हम जहाँ जाना चाहते हैं वहाँ पहुँचाने की शक्ति अहिंसा में ही है। हिंसा में भय है, भ्रम है, भुलावा है।●

सर्वोदय और शैतान–६

दूसरा शैतान, दूसरा तरीका

हमें यह मान लेना चाहिए कि अच्छे लोगों से जितना काम निकल सकता है उतना इस सरकार से निकल रहा है। भीष्म, द्रोण, विदुर सब अच्छे ही तो थे, फिर भी द्रौपदी का चीर-हरण हुआ। हमारे राजनैतिक दलों में अच्छे लोग अब भी काफी हैं, यद्यपि उनकी संख्या घटती जा रही है, फिर भी देश की दुर्दशा जो होनी है हो रही है।

सोचना यह है कि सरकार तो बदले ही, समाज कैसे बदले? जीवन के हर क्षेत्र में जनता की सत्ता कैसे स्थापित हो? हम देख रहे हैं कि आधुनिक तकनीक (टेक्नालोजी) और दलीय राजनैतिक व्यवस्था के कारण अधिकाधिक शक्ति राज्य के हाथों में केन्द्रित होती जा रही है। यह अत्यंत गंभीर स्थिति है। एक ओर विज्ञान बढ़े और दूसरी ओर शक्ति जनता के हाथ से निकलती जाय और राज्य के हाथ में केन्द्रित होती जाय, तो लोकतंत्र का ह्रास हो जायगा, और जनता एक गुलामी से निकलकर दूसरी गुलामी में पड़ती जायगी। मुख्य प्रश्न है जनता की मुक्ति का। दलों पर भरोसा करना खतरनाक है।

मुक्ति के प्रश्न का एक ही उत्तर है राज्य की शक्ति कम हो, सत्ता की नयी इकाइयाँ स्थापित हों, दलों की प्रभुता समाप्त हो। सत्ता की नयी, विकेन्द्रित, स्वायत्त इकाइयों की स्थापना राजनैतिक संगठन का लोकतंत्र के संदर्भ में सबसे बड़ा प्रश्न बन गया है।

सर्वोदय की माँग है कि हमारा हर गाँव एक स्वायत्त, स्वाश्रयी इकाई बन जाय। यह इकाई अपनी आंतरिक व्यवस्था और विकास की जिम्मेदारी ले। अगर ऐसा हो जाय तो क्या हानि होगी? क्यों इस विचार का विरोध होता है? क्या अब भी विज्ञान इतना लँगड़ा है कि बड़े शहरों से चलकर गाँव-गाँव में नहीं पहुँच सकता? क्या लोकतंत्र इतना कमजोर है कि उसे दल के ही लोग चला सकते हैं? जनता, जो वोटर है, छोटे-से छोटे दायरे में भी अपना काम नहीं चला सकती? इस विकेन्द्रित व्यवस्था के अंतर्गत ग्राम इकाइयाँ जैसे-जैसे शक्ति और सत्ता की नयी सक्रिय इकाइयाँ बनती जायँगी वैसे-वैसे राज्य की सत्ता घटेगी, और दलों का प्रभुत्व समाप्त होगा।

ग्रामदान ने ग्रामसभा की बात कही है। उसने ग्रामसभा को ग्रामस्वराज्य का बुनियादी आधार माना है। ग्रामस्वराज्य का अर्थ है कि दिल्ली की (यानी राजधानियों की) सत्ता घटे और पाँच लाख गाँवों में बँटे। इस प्रक्रिया के तीन तत्त्व हैं.

(१) सरकार-मुक्त ग्राम व्यवस्था
(२) दल-मुक्त राज्य-व्यवस्था
(३) सत्याग्रही लोक सेवक

इस प्रकार का राजनैतिक संगठन कई लोगों को बहुत कठिन मालूम होता है। कठिन ही नहीं, काल्पनिक लगता है। सचमुच यह संगठन न कठिन है न काल्पनिक, सिर्फ नया है। एक बार ग्रामदान जड़ पकड़ ले, और ग्रामसभाएँ बन जायँ, तो सारी कठिनाई देखते-देखते दूर हो जायगी। चूँकि इस 'क्रान्ति' में अभिक्रम जनता का है, नेता का नहीं इसलिए लोगों को विश्वास नहीं होता। यद्यपि

—'दी सण्डे स्टैंडर्ड' से साभार

जनता का विश्वास नेताओं पर से उठ गया है, फिर भी लोक-मानस नेता-निष्ठ बना हुआ है। परिस्थिति और जमानेकी नयी चेतना इस निष्ठा को समाप्त कर रही है।

ग्रामसभाओं के सगठन के बाद उनके लिए आसान होगा कि वे प्रतिनिधि मडल (इलेक्टोरल कालेज) बनाकर राज्य-विधान-मडल और संसद मे 'अपने' प्रतिनिधि भेजें। जब 'अपने' प्रतिनिधि सरकार में जायेंगे तो गाँव से लेकर राजधानी तक एक लाइन होगी। तब 'अच्छे' और 'अपने' का भेद मिट जायगा। इस तरह ग्रामव्यवस्था सरकार-मुक्त होगी, और राज्य-व्यवस्था दल-मुक्त।

ग्रामदान जड पकड़ेगा या नहीं, ग्राम-सभा बन सकेगी या नहीं, अथवा बन भी जायगी तो चलेगी या नहीं—ये प्रश्न दूसरे हैं। अगर आज की व्यवस्था बदलनी है तो नयी व्यवस्था की कोई नयी बुनियाद डालनी ही होगी। पुरानी बुनियाद पर नये ढांचे की कल्पना करना निरर्थक है।

लोग पूछते हैं कि क्या इस व्यवस्था में अनीति, अन्याय नहीं रहेगा? रह सकता है। लोकतत्र को, सत्ता की लडाई में दिन-रात फँसे हुए राजनैतिक दलों के हाथ में छोड़कर हम निश्चिन्त नहीं हो सकते। जैसे-जैसे 'लोक' की चेतना और सगठन शक्ति बढ़ रही है, यह स्पष्ट होता जा रहा है कि समाज को सतत सही शिक्षण की जरूरत है, और शिक्षण-शक्ति द्वारा उसके उचित नेतृत्व की जरूरत है। जिसे लोकमत (पब्लिक ओपीनियन) कहते हैं, वह काफी नहीं है, क्योंकि आज की दलगत राजनीति मे विभिन्न दल परस्पर-विरोधी लोकमत बना लेते हैं। नतीजा यह होता है कि मतवादों में बंटकर न 'लोक' रह जाता है, और न 'लोकमत'।

लोकतत्र का काम अब केवल विधान-मडल के सरकारी-विरोध से नहीं चलेगा। उसे ऐसे लोकसेवकों की जरूरत है जो सत्ता के भय और सम्पत्ति के लोभ से मुक्त रहकर समाज और सरकार दोनों को सत्य की राह सुझा सकें, और आवश्यकता पड़ने पर दोनों की अनीति के विरुद्ध सत्याग्रही प्रतिकार कर सकें। सत्याग्रह के लिए सत्य चाहिए, दल-सत्य नहीं। हर दल का सत्य अलग हो तो सत्य समाप्त हो जाता है, रह जाता है केवल आग्रह। लोकतत्र की सफलता के लिए यह जरूरी है कि समाज सरकार से आगे चले। अगर सरकार आगे चलती है तो सरकार-तत्र होगा लोकतत्र नहीं।

यह है सर्वोदय की कल्पना और योजना। यह कैसे पूरी होगी 'अच्छे' लोगों से? कैसे पूरी होगी सर्वोदय द्वारा किसी एक या कुछ दलों के समर्थन से? या, कैसे पूरी होगी जबतक आज की सम्पूर्ण व्यवस्था नहीं बदल जायगी? इसलिए हम किसी दल या प्रचलित सरकार का उस तरह का विरोध नहीं करते जैसा दूसरे दल करते हैं। हमारा अन्रोच अविरोधी है। विरोध हम किसका करें? हमें जनता की शक्ति चाहिए। हमें नयी व्यवस्था चाहिए। हमारा विद्रोह है आज की व्यवस्था के विरुद्ध। विद्रोह भी विध्वंस का नहीं, रचना का। नयी रचना स्वयं पुरानी रचना को तोडती चलेगी, उसे तोड़ने के लिए अलग योजना बनाने की जरूरत नहीं।

हमारा शैतान वह नहीं है जो दूसरों का है, इसलिए हमारा तरीका भी वह नहीं है जो दूसरों का है। लेकिन देश हम सबका एक है, हम उसे ही सामने रखकर सोचें। —राममूर्ति

बर्टेन्ड रसेल . दिवंगत आत्मा

यह चिराग भी...

धुप-अंधेरे में डूबी इस धरती को
रोशन करनेवाला
यह चिराग भी चुक गया!
सूने आकाश में
चमकता सितारा
एक और उग गया!
रात की स्याही से
संघर्ष का यह सिलसिला,
नक्षत्र ही जानते हैं—
कितना पुराना है,
कब तक चलेगा!
हमारी निगाहें तो
रात और दिन की सीमाओं में सिमटी,
लौटकर आयेगा नहीं जो उसे
वापस बुलाती है,
चुपचाप आँसू बहाती है। —राही

श्रद्धांजलि

आणविक युद्ध की विभीषिका से भय-ग्रस्त जगत को युद्ध-मुक्त कराने के लिए अनवरत संघर्ष करनेवाले विश्व-मानव लार्ड बर्टेंड रसेल के निधन (दिनांक ३ फरवरी '७० की सुबह) पर सर्व सेवा संघ के वाराणसी स्थित कार्यालय मे आयोजित कार्यकर्ताओं की सभा द्वारा हार्दिक श्रद्धांजलि दिवंगत आत्मा को अर्पित की गयी।

सभा मे सर्वोदय परिवार के बुजुर्ग आचार्य दादा धर्माधिकारी ने लार्ड रसेल की महानता को प्रस्तुत करते हुए कहा कि ९७ साल की उम्र मे भी उनकी प्रतिभा ताजी बनी रही। विविध प्रकार के शासनों-अनुशासनों के साँचो और ढाँचो में ढली-जकडी विचार-पद्धति और परतत्र बुद्धि-वादिता के इस युग मे उनकी अकुण्ठित बुद्धि निरन्तर विचार-स्वातन्त्र्य के लिए प्रयत्नशील रही। दादा ने कहा कि रसेल को जाना तो था ही, उसका दुख नहीं, दुख इस बात का है कि विचार की समानुरूपता और शासकीय नियन्त्रणवाली दुनिया मे प्रखर चिन्तन की प्रतिभा-सम्पन्न एक जागतिक विभूति अब नहीं रही।

इस मानवनिष्ठ विश्व मानव को हमारी हार्दिक श्रद्धांजलि।●

दुनिया में शांति कब होगी?

विनोबा के साथ उपराष्ट्रपति की दिलचस्प चर्चा

गीताई और विष्णुसहस्र नाम का पाठ चल रहा था। बाबा उसमें तन्मय थे। तभी उपराष्ट्रपति श्री जी० एस० पाठक पधारे। पाठ बिना रुके उसी तन्मयता से चलता रहा।

पाठ पूरा होने पर बाबा ने नेत्र खोले तो बीच में उपराष्ट्रपति को पाया। दोनों ने परस्पर-अभिवादन किया। उपराष्ट्रपति के साथ डा० सुशीला नैयर और महाराष्ट्र राज्य के प्रतिनिधि-भण्डार मंत्री श्री शिवाजीराव पाटिल भी थे। बाबा ने वार्ता की शुरुआत करते हुए पूछा—"आप कैसे हैं?"

पाठकजी—"आप कैसे हैं? आज प्रथम बार ही आपका दर्शन कर रहा हूं। अखबारों में तस्वीरें देखता था। किताबों में विचार पढ़ता था, परन्तु भेंट का प्रथम ही अवसर है।"

अपनी दाढ़ी की तरफ इशारा करते हुए बाबा ने कहा—"अब तस्वीर बदली है।" (दाढ़ी साफ करा ली थी।) तब सब हंसने लगे। बाबा ने फिर पूछा, "आपकी उम्र क्या है?"

पाठकजी—"मेरा जन्म सन् १८९६ का है।"

विनोबा—"महीना?"

पाठकजी—"होली का महीना—मार्च-अप्रैल होगा।"

विनोबा—"मेरा जन्म १८९५ का है। मुझे एक साल का 'एडवान्टेज' है या 'डिसएडवान्टेज' कहिए।"

पाठकजी—"नहीं, 'एडवान्टेज' ही है।"

पाठकजी गांधी शताब्दी के सेवाग्राम-शिविर का उद्घाटन करने आये थे। उस निमित्त से मिलन की तरफ इंगित करते हुए बाबा बोले, "शताब्दी की यह महिमा है। ९९ वें साल में यह थी नहीं, और १०१ में रहेगी नहीं। यह सौ के अंक की महिमा है।"

सुशीला नैयर—"आपने गांधी-प्रदर्शनी देखी?"

विनोबा—"कल गांधी-प्रदर्शनी रेलगाड़ी देखने गया था। मुझे ट्रेन पर जाने का प्रयोजन नहीं था। लेकिन वहां आभा आयी थी। २८ साल से मिली नहीं। उससे मिलने गया था। वह बीमार थी।"

सुशीला नैयर—"एक जगह आभा को रखा था, और दूसरी जगह मनु को। मनु चल बसी। आभा भी बीमार रहती है। बहुत परिश्रम उठाना पड़ता है।"

विनोबा—"एक बहन का सुझाव है कि सारी शताब्दी भर में सौ गांधीवादियों को मरना चाहिए। हिसाब लगा रहा था—जाकिर हुसैन साहब, रावसाहेब पटवर्धन गये, मनु गयी..."

सुशीला नैयर—"गांधी शताब्दी में यदि गांधी के रास्ते पर चलनेवाले सौ लोग भी निकलें तो काफी है।"

पाठकजी—"हम भी निकलें तो सूर।"

विनोबा—"ठीक कहा।"

पाठकजी—"दुनिया में शांति कब तक होगी?"

विनोबा—"मेरी मान्यता है कि दुनिया जोरों से शांति की तरफ बढ़ रही है। आज जो अशांति दिखती है वह आखिरी है, दीपक बुझने से पहले जैसे बड़ा दिखता है। आणविक अस्त्रों ने मानव-जाति के सामने चुनौती रखा है कि या तो अहिंसा स्वीकार करो या मानव-जाति खतम हो। तीसरा पर्याय है नहीं। पारम्परिक शस्त्रों के जमाने में हिंसा चलती रही, अब वह संभव नहीं। मैं हमेशा उदाहरण देता हूं कि वृत्त में दो आखिरी छोर सबसे निकट होते हैं। वैसी ही बात अहिंसा और अणुशस्त्र की है।

"सिर्फ हमको दिमाग समत्वयुक्त रखना चाहिए। धर्म, पंथ और राजनीति की जगह अध्यात्म और विज्ञान को जगह दें। पार्टी पालिटिक्स, कैरेक्टर पालिटिक्स, पावर पालिटिक्स की जगह जनता की पालिटिक्स यानी लोकनीति आनी चाहिए। वह जल्द आ रही है।

"आपको दुनियाभर का दर्शन होता होगा?"

पाठकजी—"देखता रहता हूं, कह नहीं सकता। बंगाल से लेकर केरल तक का देखता रहता हूं।"

विनोबा—"देश के साथ-साथ दुनिया के देशों का भी सम्बन्ध आता होगा?"

पाठकजी—"जी हां, पुरानी संस्कृति बची रहे, यह बड़ी फिक्र है।"

विनोबा—"वह मरनेवाली नहीं है। उसकी जड़ें गहरी और मजबूत हैं। सौ साल में भारत में छपाई की कला आयी। कई किताबें, ग्रन्थ छपकर निकलते हैं, फिर भी तुलसी-रामायण, ज्ञानेश्वरी का मुकाबला नहीं। जनता का हृदय स्वस्थ है, इसका यह प्रमाण है।"

पाठकजी—"जनता का हृदय फेल करता है।"

विनोबा—"जनता की ताकत पैदा करनी होगी।"

सुशीला नैयर—"समुद्र-मंथन हो रहा है। उसमें से जहर निकल रहा है।"

विनोबा—"मंथन अमृत के लिए है। कुल दुनिया में शांति की भूख है।"

पाठकजी—"विज्ञान और अध्यात्म का मेल हो, ऐसा आपने कहा। लेकिन जिन स्केंडिनेवियन देशों में—नार्वे, स्वीडन और अमरिका में जहां विज्ञान बढ़ा है वहां—सुखी नहीं है।"

विनोबा—"सायन्स (विज्ञान) मारल (नैतिक) या इम्मारल (अनैतिक) नहीं, वह न्यूट्रल (तटस्थ) है। उसे आध्यात्मिकता का गायडेंस (मार्गदर्शन) दें।"

शिवाजीराव पाटील—"राजनी विज्ञानवालों को नचा रहे हैं।"

विनोबा—"वे न नाचें। जिसने अणुबम बनाया वह बाद में पछताया। राजनीतिज्ञों के हाथ में विज्ञान रहे, यह गलत बात है।"

सुशीला नैयर—"राजनीति खराब है ऐसा कहना ठीक नहीं। वह हर जगह है। उसे अलग नहीं कर सकते। वह जीवन का अंग है।"

विनोबा—"आप लोगों को यह

प्रयोग करने के लिए दिया है। सोचने की बात है कि जब स्वराज्य-प्राप्ति की राजनीति थी तो वह सत्ता की राजनीति नहीं थी, सेवा की राजनीति थी। राजनीति को आध्यात्मिक बनाने की बात गांधीजी ने नहीं, गोखलेजी ने कही। लेकिन अब जो राजनीति इस देश में होगी वह भिन्न होगी, क्योंकि तीन नयी बातें उसके साथ जुड़ गयी हैं—

१ स्वराज्य आया, २. यहाँ लोकतन्त्र है, और ३. आणविक युग आया है।

"अब पैरोकियल या राष्ट्रीय राजनीति नहीं चलेगी, जागतिक राजनीति चलेगी। मैं पाकिस्तान गया था। वहाँ से बड़ी-बड़ी सभाएँ वहाँ होती थीं। सभा के आखिर में बोलता था 'जय जगत्'। तब वहाँ के लोग कहते थे 'पाकिस्तान पैंदाबाद'। पाकिस्तान जिंदाबाद तो हो गया, अब पाकिस्तान पैंदाबाद, यानी पाकिस्तान परिपूर्ण हो। चार-पाँच दिन यह चला। मैं हर सभा में जय-जगत् का मतलब लोगों को समझाता था। जय-जगत् में पाकिस्तान भी आता है यह वे समझ गये और फिर वे भी जय-जगत् कहने लगे। मैं वहाँ जय-भारत या जय-हिंद कहता तो काम नहीं चलता।

"तो राजनीति जय जगत् वाली हो। आज राजनीति संकुचित होती जा रही है। पार्टी यानी पार्ट, टुकड़ा। वह चूर-चूर हो जायेगी। जनता समझेगी कि इससे कुछ होनेवाला नहीं है। बिहार का दान हुआ। वहाँ अच्छा काम चला। गाँव-गाँव का काम लोग एक राय से करें। आज प्रातिनिधिक लोकतन्त्र है, हम प्रत्यक्ष लोकतन्त्र, पार्टीसिपेटेड डेमोक्रेसी चाहते हैं।

"आज लोगों का सरकार पर विश्वास है। अपने पर नहीं है। अब सरकार पर भी नहीं रहा और अपने पर भी नहीं रहा तो यह अराजकता की तरफ ले जानेवाली बात है। लोगों को अपने पर विश्वास करना होगा। यह केवल भारत के लिए नहीं, बल्कि कुल दुनिया के लिए मैं कह रहा हूँ। मेरे पास इंग्लैंड के एक भाई का पत्र आया है। उसमें वह भाई लिखते हैं, 'आपका कार्य भारत इतना ही हमारे इंग्लैंड और यूरोप के देशों के लिए भी जरूरी है। आज सब दूर 'दे-इज्म' चल रहा है। यानी 'दे विल डू फार अस।' और अंतिम मैंशन माना है मिलीटरी का। मिलीटरी का सागर और 'दे-इज्म' का रूप यानी जनता का अत्यन्त परावलंबन कुल दुनिया में दीख रहा है। अमेरिका के प्रेसीडेंट पर लोगों का विश्वास दिखता नहीं। फिर भी वह प्रेसीडेंट की जगह है।'''' आप पहली बार आये हैं। सारे भारत में आपको घूमना होता है।"

पाठकजी—"जी हाँ।"

शिवाजीराव पाटील—"आप, बादशाह खान और जयप्रकाशजी सज्जन लोगों की तलाश में हैं, ऐसा सुना है।"

विनोबा—"ऐसे कोई सज्जन राजनीति में मिलते हैं या नहीं? पहले तो यह सवाल अपने आपको ही पूछो। अभी कुछ पत्र आये हैं। उनमें सरकारी सेवकों के भी हैं। उन्होंने लिखा है, हमारी आपके काम पर श्रद्धा है। हम इसे कर सकते हैं या नहीं?"

सुशीला नैयर—"सज्जन राजनीति में आते हैं तो उन्हें भगाया जाता है। जैसे पाठकजी को उपराष्ट्रपति बना दिया, यानी राजनीति में दखल मत दो।"

विनोबा—"भगाने की युक्ति है यह।"•

सज्जनता की संगठित सामाजिक शक्ति द्वारा शांति और सुव्यवस्था

— सर्वोदय-विचार में अहिंसक स्वराज्य की कल्पना —

गांधीजी की साधना 'अहिंसक संस्कृति' की थी। जिस तरह आजकल की नगरपालिकाएँ लोकसमुदाय की इच्छा के अनुसार अपना काम करती हैं, लोग स्वेच्छा से उसके कानून बनाकर उसके हिसाब से नगरपालिका को अपना कर देते हैं और पक्ष या राज्य के बिना सबके हित के लिए काम किया जाता है उसी तरह हर-एक प्रदेश का राज्य भी चले।

आजकल की नगरपालिकाओं का संगठन सरकार की ओर से होता है। जरूरत पड़ने पर पुलिस की मदद मिलती है और सरकार भी उनको जरूरी मदद और संरक्षण देती है सही, किन्तु इस तरह की मदद के बिना भी नगरपालिकाएँ चलाना अशक्य नहीं है। गांव के नागरिक एक-दूसरे पर अपना प्रभाव डालें और सज्जनता से काम चलता रहे। मतभेद तीव्र होने पर पंचायत के निर्णय मान्य किये जायें तो सरकार की मदद के बिना नगरपालिका चलाना अशक्य नहीं, आसान भी हो सकता है।

काका कालेलकर

देश में दान इकट्ठा करके उसके द्वारा अनेक धार्मिक काम करने की अखिल भारतीय संस्थाएँ भी हैं। प्रादेशिक और स्थानिक संस्थाएँ तो अनेक हैं। उनका काम सरकार की मदद या दखल के बिना चलता आया है।

ईसाई लोगों की कई जागतिक संस्थाएं हैं। उनकी अर्थव्यवस्था, कार्यकर्ताओं की नियुक्ति और सेवा का सब काम कानून, कोर्ट, पुलिस और फौज की सहायता के बिना ही चलता रहता है।

पुरानी संस्कृति का आधार

हमारे देश में जब जाति-व्यवस्था का प्राधान्य था तब सब जातियाँ अपने-अपने लोगों का बहुत-सा सामाजिक काम जाति-संस्था के द्वारा ही चला लेती थीं। सरकारी कानून, सरकारी कोर्ट, दंड, जेल, पुलिस और फौज की मदद के बिना जब समाज अपना सारा काम करता है तभी उसे सुशिक्षित, संस्कारी और स्वायत्त कहना चाहिए।

यह सारा काम करने के लिए जनता में सामान्य सज्जनता, सामाजिकता और सहयोग की वृत्ति हो तो पर्याप्त है।

भारतीय संस्कृति में ये गुण अच्छी मात्रा में पाये जाते थे। इसलिए हमारे लोगों को सरकार का महत्त्व विशेष नहीं था। लोग सरकार को मानते थे। सरकार को सम्मानते भी थे। सरकार की कमोबेश जबरदस्ती भी सहन करते थे। क्योंकि उन्होंने देखा कि जो थोड़ा काम सरकार से हम लेते हैं उसके लिए सरकार का होना आवश्यक है। और जब सरकार जरूरी है तब उसकी प्रतिष्ठा भी मान्य करनी ही चाहिए।

हमारी इसी पुरानी संस्कृति के बल पर गांधीजी 'अहिंसक स्वराज्य सरकार' चलाना चाहते थे। और लोकसेवा के महान् राष्ट्रीय कार्य 'बिन सरकारी राष्ट्रीय संगठन' के द्वारा चलाने का ही उनका इरादा था।

भारतीय संस्कृति और लोकसमुदाय का स्वभाव और उसकी परम्परा का ख्याल करते यह बात असंभव नहीं थी। स्थान-स्थान पर नगरपालिका के जैसे राज्य अगर लोग चलायें और लोकसेवा के विशाल कार्य के लिए विशाल संगठन स्थापित करें तो यह कार्य असंभव नहीं था।

सद्गुणों की शक्ति

जो लोग असामाजिक वृत्ति के हैं, ढोरों के जैसे हैं, उनकी संख्या सत्कारी समाज में बहुत थोड़ी होती है। ऐसे लोगों को काबू में रखने का काम आज जिस संस्था के द्वारा होता है उसीको कहते हैं। 'सरकार' इस संस्था को लोगों से कानूनन् पैसा इकट्ठा करने का अधिकार है। और अपनी आज्ञा का पालन कराने के लिए व्यक्ति पर कानून की जबरदस्ती करने के लिए सरकार के पास पुलिस का दल भी है।

अहिंसक संस्कृति कहती है कि यह काम सरकार के बिना करना-करवाना असंभव नहीं है। लोगों को उपदेश के द्वारा समझाना, न मानें तो पंचों के द्वारा सामाजिक अभिप्राय का दबाव डालना, उद्दंड आदमी को उसके सज्जन मित्रों के द्वारा और साथियों के द्वारा समझाकर 'सामाजिक सद्गुणों के राज्य के अन्दर उसको लाना' असंभव नहीं है। प्रयोग करने पर वह आसान भी मालूम होगा। और आज सरकार के जरिये काम करवाने में जितना खर्चा होता है उतना खर्चा भी नहीं होगा। जनता में जो सामाजिकता है, शान्ति और व्यवस्था की चाह है, नैसर्गिक ईमानदारी है, उसीको संगठित करके समाज-व्यवस्था चलाना शक्य है और मानवता के लिए वही शोभादायक है। यही था गांधीजी का अन्तिम सर्वोदयी आदर्श।

कोई ऐसा न कहे कि ऐसी व्यवस्था केवल प्राथमिक अवस्था के समाज में ही चल सकती है। आज भी दुनिया में ऐसी अनेक जागतिक संस्थाएँ हैं, जिनको सैकड़ों वर्ष हुए कभी भी पुलिस की मदद नहीं लेनी पड़ी, कोर्ट में नहीं जाना पड़ा, जेल का डर किसीको दिखाना नहीं पड़ा और तो भी उनका काम सरकार की मदद के बिना अच्छी तरह चल रहा है।

असामाजिक लोगों पर नियंत्रण

(हाँ, इन लोगों ने पुलिस, सरकार, जेल और कानून की मदद न लेने का प्रण कभी जाहिर नहीं किया है। लोग जानते हैं कि ये संस्थाएँ सरकारी, कानूनी, पुलिस की मदद ले सकती हैं किन्तु ऐसा पसन्द नहीं करतीं। और इसलिए अपने व्यवहार में गुंडों को और असामाजिक लोगों को टालना ही पसन्द करती हैं।) अगर सारे समाज को साथ रखना ही है तो असामाजिक लोगों पर समाज का नैतिक प्रभाव डालने के लिए सज्जनों के द्वारा उनको जरा धमकाना पड़ेगा और उससे भी अधिक शरमाना पड़ेगा।

सरकार की आवश्यकता पर हमारा आज जो इतना बड़ा विश्वास है उसकी बुनियाद में सज्जनों की सामाजिकता पर अविश्वास ही भरा हुआ है और इसलिए सामाजिकता के अभाव में हम सत्ता और शारीरिक शक्ति के अन्तिम आधार पर ही विश्वास रखते हैं।

समाज की अहिंसक वृत्ति और 'अपना शासन स्वयं चलाने की उसकी शासन-विहीन शक्ति' पर गांधीजी का विश्वास था। (वही विश्वास हमारे प्राचीन समाज-नेताओं के अन्दर भी था।) आज भी संस्कृति की बुनियाद में समाज की सामाजिकता पर ही अधिक विश्वास रखा जाता है।

आज का सामाजिक संगठन विश्वास और अविश्वास, दोनों के मिश्रण पर चलता है। सज्जनता, सामाजिकता, वासना संयम, सहयोग और संगठन पर विश्वास रखते हुए समाज के नाम से मनुष्य को पकड़ने की, उसे परहेज में रखने की, उसके पास से जबरदस्ती दंड लेने की और अन्त में उसे मार डालने की शक्ति समाज सरकार के हाथ में सौंप देता है, और उसका दुरुपयोग न हो इसलिए कानून, कोर्ट और उनके रस्म रिवाज कायम करता है।

समाज का विकास, गांधी का विश्वास

गांधीजी का विश्वास एक बाजू पर था। आजकल के समाज का विश्वास दूसरी बाजू पर है। इतना बड़ा फर्क होते हुए भी आजकल के समाज-नेता और राज-नैतिक प्रमुख गांधीजी का नाम लेते हैं, उनकी दुहाई देते हैं, अपने को गांधीवादी कहते हैं और कहते हैं कि हम अहिंसा के उपासक हैं। उनका कहना है (और आज की सुधरी हुई सारी दुनिया भी कहती है) कि हिंसा करने की शक्ति समाज के हाथ में होनी चाहिए किन्तु वह जनता के हाथ में नहीं। वह केवल सरकार नाम के एक सामाजिक, राजनैतिक संग-ठन के हाथ में ही हो।

इस फर्क को समझने के बाद ध्यान न आयेगा कि गांधीजी सस्ते से सस्ते सर्वोदय की दुहाई क्या देते थे और उन्होंने कांग्रेसी अनुयायी क्योंकि समाजवाद की दुहाई क्यों देते हैं।

सच्चे गांधीवादी चाहते हैं कि सबके-सब राष्ट्रीय सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक कार्य सरकार की दरमियानगीरी के बिना चलाये जायें। इतना ही नहीं, न्यायदान का काम भी लोकनियुक्त पंचायतों के द्वारा किया जाय। और साथ ही दंगा फसाद मिटाने—

कालपुरुष की माँग को सुनें, समझें

सुरेश राम

सवाल हम सबके सामने यह है कि जिस क्रान्ति के लिए दुनिया तरस रही है, और हम जिसे लाने का दावा सन् १९५२ से कर रहे हैं, वह कैसे कामयाब हो? दिल्ली में इन दिनों जैसा दुःखद नाटक चल रहा है, जिसके परिणामस्वरूप हमारा जनतंत्र नेस्तनाबूद हो सकता है, और तानाशाही या अराजकता भी आ सकती है, अगर हम उसका विकल्प पेश नहीं करते हैं, तो उसकी आँधी में हमारे भी गायब हो जाने का अन्देशा है। इसलिए यह जरूरी है कि हमारा हरेक काम व्यवस्थित हो, हमारे आन्दोलन का संचालन सुनियोजित हो, और अहिंसा का ठोस व शानदार संगठन खड़ा हो, ताकि हर चुनौती का हम सामना कर सकें, और जनता का भी उसमें विश्वास पैदा हो सके।

आगामी सम्मेलनों के लिए चेतावनी

हमें कबूल करना चाहिए कि व्यवस्था की इस दृष्टि से राजगिर सम्मेलन बहुत निराशाप्रद रहा। वैसे देखने में तो अच्छी तरह चला, लेकिन उसमें कुछ बातें ऐसी हुईं जिनसे आगे के सम्मेलनों में हमें सदैव बचना चाहिए। पहली बात तो यह सीखने को मिली कि सम्मेलन के समय कोई दूसरा कार्यक्रम नहीं रखना चाहिए। उससे स्वागत-समिति पर तो अनावश्यक बोझ आता है, स्थानीय जनता को भी भ्रम हो जाता है कि यह सर्वोदयवाले हैं या कोई दूसरे, और प्रदेशों से आनेवाले कार्यकर्ता-बन्धु भी खो जाते हैं। गम्भीरता भी नहीं आ पाती, और दर्शन-मेला होकर रह जाता है।

दूसरी चिन्ताजनक चीज यह है कि सम्मेलन की जो स्थायी निष्पत्ति होती है, और इतिहासकार या आनेवाली पीढ़ियों के पल्ले पड़नेवाली सम्मेलन की जो मुख्य देन रहती है सर्वोदय सम्मेलन का निवेदन, उस पर इस बार विचार तक नहीं किया गया। २२ तारीख से सर्व सेवा संघ की बैठकें शुरू तो हो गयी थीं, लेकिन निवेदन की शक्ल सम्मेलन के आखिरी दिन, २८ तारीख को देखने को नसीब नहीं हुई, सम्मेलन खत्म होने में जब डेढ़ घंटा रह गया था। ऐसी हालत में कौन उस पर राय या सुझाव या संशोधन दे सकता है? निवेदन को कलम-बद्ध करते समय पिछले सम्मेलनों के निवेदनों को सामने नहीं रखा गया दीखता है। हमें डर है कि उसे सुनाने के पहले मनोयोगपूर्वक उसे देखा भी नहीं गया। उसमें काफी पुनरावृत्ति-दोष भी है।

तीसरे, इस बार के सर्वोदय सम्मेलन में आम जनता व कार्यकर्ताओं के साथ बड़ा अन्याय किया गया। कौन नहीं जानता कि श्री शंकरराव्जी देव दक्षिण भारत में ग्रामदान का अलख जगाने में इस बुढ़ापे में भी अपने को खपा रहे हैं, और तंजावूर जिले में तो उन्होंने अद्भुत कदम उठाया है, लेकिन उनके विचारों से हम सब वंचित रहे। इसी तरह से दादा धर्माधिकारी का भी कोई लाभ हमको नहीं मिला। फिर २८ तारीख के कार्यक्रम में छपा था कि बाबा का प्रवचन पौने बारह बजे से शुरू होगा, लेकिन भाषणों के नशे में हम ऐसे डूब गये कि बाबा के समय का कोई ध्यान ही न रहा और पौने एक बजे उनसे बोलने को कहा गया। नतीजा यह हुआ कि बाबा ने 'सबको प्रणाम' कहकर सन्तोष कर लिया और हम सब तरसते रह गये। बाबा ने सुबह उत्तरप्रदेश के मित्रों के बीच बोलते समय कहा था कि आज अपने भाषण में संक्षेप में गम्भीर बातें रखूँगा और बड़ी उम्मीदों के साथ बाबा के अन्तिम भाषण को सुनने के लिए सारा पंडाल भर गया था। लेकिन निर्धारित समय पर बाबा को निमंत्रण न दिया जाना ऐसा दुःखद हुआ कि जिसका पछतावा हमेशा रहेगा।

इससे स्पष्ट है कि सम्मेलन का संयोजन बहुत चिन्ताजनक ढंग से किया गया और आगे के लिए एक सबक है कि उसकी पुनरावृत्ति न हो।

आन्दोलन का संचालन

अगला बहुत महत्त्व का सवाल है आन्दोलन का संचालन। 'क्या ग्रामदान का काम भी उसी बेढंगी रीति से चलाया जायेगा, जिससे भूदान का चलाया गया?'

ग्रामदान की पुष्टि में भी बहुत-सी समस्याएँ खड़ी हो सकती हैं। शायद भूदान से भी ज्यादा। तब क्या कीजिएगा? इस नये मोर्चे की लगाम किसके हाथ में रहेगी? अगर इस सिलसिले में शिकायतें आयीं, तो उनकी सुनवाई कहाँ होगी? प्रखण्ड, जिला, प्रदेश और केन्द्रीय स्तर पर तंत्र खड़ा करना है या नहीं ताकि पुष्टि के काम की पूरी-पूरी निगरानी हो और भू-क्रान्ति का सच्चा दर्शन समाज को मिले?

शान्तिसेना किधर?

छह बरस पहले, रायपुर-सम्मेलन में देश के सामने त्रिविध कार्यक्रम रखा गया। बाबा ने स्पष्ट बताया कि यह एक तिपाई के तीन डंडों की तरह अलग-अलग चीजें नहीं, वरन् एक ही चीज के तीन पहलू हैं। ग्रामदान, ग्रामाभिमुख

→ना, टालने का और लें करने का सामान्य काम भी पुलिस और फौज की मदद के बिना शान्तिसेना के द्वारा ही व्यापक कौटुम्बिक ढंग से किया जाय।

इन मौलिक विचारों में और व्यवस्था के चिंतन के बिना हमारा सार्वजनिक जीवन खतरे में आ जायेगा। सरकार नाम की संस्था भले ही प्रजातंत्रीय हो, हिंसा पर आधार रखती है और उसका संगठन आन्तरिक दोषों के कारण कमजोर हो रहा है। अगर हम सांस्कृतिक प्रतिमा खो बैठे और प्रजातंत्रीय सरकार कमजोर और असंगठित हो जाय तो देश में अराजकता फैल जायेगी और स्थान-स्थान पर गुण्डाराज्य सहन करना पड़ेगा। सत्ता और सम्पत्ति के मोह में फँसे हुए देश के नेता इन सारी बातों पर शान्ति से सोच सकें तो देश का भला है।•

को बर्दाश्त नहीं कर सकती, और जिनके सामने झुक जाने में उनका हित व सुरक्षा दोनों हैं।

(५) भारत में सत्य और अहिंसा का वातावरण पैदा हो, उसकी सुगंधि फैले और यहाँ का नागरिक जीवन और सार्वजनिक गतिविधि इन्हींसे प्रेरित और अनुप्राणित हो।

जमाने का संकेत

लेकिन बीते समय पर दुःख करने की आवश्यकता नहीं है। पिछले अठारह-उन्नीस बरस में सर्वोदय आन्दोलन ने जो प्रगति की है वह सराहनीय है, विशेषकर यह देखते हुए कि सब तरफ स्वार्थ-सिद्धि, सत्ता-हरण और निज-हित का बोलबाला है। मगर उस पर हमें सन्तोष नहीं कर लेना है और न जैसे अबतक चलते रहे हैं वैसे चलते रहना है। जमाने की चुनौतियों का हमें सामना करना चाहिए और अहिंसा की सार्थकता सिद्ध करनी है। हमारी सबसे बड़ी परीक्षा बिहार में है। विनोबाजी ने जैसा राजगिर में कहा, एक साथ पूरे बिहार में ग्रामदान-पुष्टि का काम पूरा हो जाना चाहिए। और पुष्टि सही ढंग से होनी चाहिए। उसीके साथ-साथ अन्य प्रान्तों में जो काम हो वह भी कायदे के साथ होना चाहिए।

आजादी के आन्दोलन में जरा-सी चूक हो गयी, जिसका नतीजा यह हुआ कि देश का बँटवारा हो गया। इसलिए हमारा हर काम ठोस और सच्चा होना चाहिए। सब पहलुओं पर हमारी नजर रहनी जरूरी है। यह जमाना 'यथास्थिति' के अन्तर्गत अहिंसा के प्रचार मात्र की माँग नहीं कर रहा है, बल्कि नये शोषण-रहित और शासन-मुक्त समाज की खातिर अहिंसा के शानदार संगठन की माँग कर रहा है। केवल संगठन की ही नहीं, बलिदान की इन्तजारी कर रहा है।●

लोकयात्रा से :

व्यक्ति नहीं, विचारनिष्ठा

गाँव में पहुँचते ही लोग दौड़-दौड़कर हमारी मदद करते हैं। उत्तरप्रदेश में मिठाइयाँ व पकवान खिलाने का रिवाज है। लोग आग्रह करते हैं—'आज तो बहनजी आपको पक्का भोजन करना पड़ेगा, हम अतिथियों को रूखा सूखा कैसे खिलायें? हमें तो शरम आती है।' अपने देश की संस्कृति के बारे में जो कुछ सुनी व किताबों में पढ़ी थी, उसका प्रत्यक्ष दर्शन कर हृदय गद्‌गद् हो जाता है। ध्यान जाता है कि जन-जन में व्याप्त अध्यात्म व सद्भावनाओं को फैलाने में हमारे ऋषि-मुनियों ने कितना घोर श्रम किया होगा? लगता है कि शायद आज कानून का भरोसा लोग दीर्घ साधना के प्रभाव के कारण ही करते हैं। दफ्तर से लेकर हवेली तक, मजदूर से लेकर बड़े-बड़े पदाधिकारियों तक, गाँव से लेकर शहर तक वही श्रद्धा और आतिथ्य। आखिर हम किसी पर क्या एहसान करते हैं? हम इनके लिए क्या लेकर आये हैं? ग्राम लोग कहते हैं आज इज्जत है पद की, धन की, डिग्रियों की, हम क्या कर सकते हैं? हमारी कौन सुनेगा? लोकयात्रा इसका उत्तर है। लोकयात्रा मानवता का आधार लेकर निकली है। इसमें बाह्य (भौतिक) उपाधियों के समक्ष निरुपाधिक, लेकिन अपनी आध्यात्मिक शक्ति का भान जन-जीवन को होता है। यह ऊँची-से ऊँची नियामत तो सबके पास है।

प्रामाणिक व्यक्ति या प्रामाणिक विचार?

बुद्धिजीवियों की गोष्ठी चल रही थी। जहाँ मुक्त अभिव्यक्ति का वातावरण मिलता है वहाँ सजीव चर्चा चलती है। एक भाई ने प्रश्न किया, "आप बताइए कि इस विचार का आम जनता तथा बुद्धिजीवियों पर क्या प्रभाव पड़ता है?" हमारी बहन ने उनसे ही प्रश्न किया, "आप ही बताइए कि आज तक आप पर क्या प्रभाव पड़ा?" उस भाई ने जवाब दिया, "मुझे तो लगता है उसका कोई प्रभाव नहीं है। हम तो जिन-जिन लोगों के सम्पर्क में आये, वे तो कुछ इस तरह के लगे नहीं। तब जनता कैसे अनुसरण करेगी?" हमने कहा, "जनता को प्रामाणिक व्यक्ति चाहिए या प्रामाणिक विचार? व्यक्ति का आकर्षण यदि प्रेरणा-स्रोत रहा, तो उस व्यक्ति तक ही कार्य चलेगा, और बाद में ठप हो जायगा। आज विज्ञान के जमाने में व्यक्ति पर विश्वास व श्रद्धा से आगे बढ़कर तटस्थ वृत्ति से विचार को अपनाना होगा। सही दिशा यही है कि व्यक्ति का आकर्षण छूटे और समाज तत्त्व-निष्ठ बने।"

गाँव के लोगों को व्यावहारिक ज्ञान बहुत है। यह आन्दोलन, जो आज बीज रूप में अनन्त सद्भावनाओं से भरा हुआ है, इसका एहसास उन्हें भी होता है। एक मुसल्मान भाई सभा के पश्चात जनता को सम्बोधित करते हुए कहने लगे, 'अरे भाई, ईश्वर की बातों का कहीं अन्त होता है? इस तरह यह ईश्वरीय विचार है, इसको कोई पूरी तरह से कैसे बता सकता है?" एक भाई ने सभा में उत्पादन का चालीसवाँ भाग ग्रामकोष के लिए तथा भूमि का बीसवाँ भाग गाँव को देने का ऐलान किया। तालियों की गड़गड़ाहट के साथ जन-जीवन में हलचल मच गयी।

सर्वोदय-विचार के फोल्डर

इधर कुछ दिनों से ग्रामदान के विभिन्न पहलुओं पर छपे ५ पैसे के फोल्डर्स हमने अपने साथ रखे हैं। बच्चों, स्त्रियों व पुरुषों की भीड़ उन्हें लेने के लिए उमड़ पड़ती है। सुगमता से यह विचार घर-घर पहुँचता है। जन-जीवन के लिए किताबों की अपेक्षा यह साधन अधिक सस्ता व सरल है। हमारे कार्यकर्ता यह प्रयोग करेंगे, तो उनका उत्साह काफी बढ़ेगा।

फर्रुखाबाद, २५-१-'७० —देवी रोशनाणी,

सुबह से शाम तक विविध चर्चाओं का दौर

सात दिन का ही सोचना, आगे का सोचना नहीं—कहाँ रहना, कहाँ जाना भी सात दिन के आगे का सोचना नहीं। बाबा के इस विचार पर प्रश्न पूछा जाता है—"सात दिन के निर्णय का उद्देश्य क्या ?"

"उसमें सदा ताजगी रहेगी। भले ही सात-सात दिन का निर्णय करके एक ही स्थान पर सात साल क्यों न रहा जाय। सात दिन का ही निर्णय करते हैं, तो ताजगी के साथ-साथ सावधानता भी रहेगी।'

१६ नवम्बर से बाबा शान्तिकुटी, गोपुरी (वर्धा) में ही हैं।

दिसम्बर के पहले सप्ताह में सर्वश्री देवरभाई, कमलनयनजी, डालमियाजी बाबा से मिलने आये थे। कलकत्ता में कत्ल होनेवाली गायों को कैसे बचाया जाय, इस सम्बन्ध में चर्चा हो रही थी। उसी चर्चा के दरमियान देश की आज की स्थिति पर बातें चलीं। बाबा ने कहा—" हमारा विश्वास 'डिपकास्ट' (गहरा प्रचार) में है, आपका विश्वास 'ब्रॉडकास्ट' (व्यापक प्रचार) में है। इन दिनों मैं नागपुर के अखबार देखता हूँ। उसका सार हमने निकाला है—'कबड्डी क्रिकेट, इन्दिरा-सिंडिकेट'। कॉलम के कॉलम भरते हैं। जो आनन्द लोगों को कबड्डी क्रिकेट में आता है, वही इन्दिरा-सिंडिकेट में आता है।" बाबा ने बालभाई से अखबार मँगवाया। 'नागपुर टाईम्स' के प्रथम पृष्ठ पर बड़े अक्षरों में खबर थी—'इण्डिया बीट्स आस्ट्रेलिया बाय सेवन विकेट्स' (भारत ने आस्ट्रेलिया को सात विकेट से जीता)। बाबा ने कहा—"सौ ग्रामदान होने की खबर भी ये लोग इतने बड़े अक्षरों में छापेंगे नहीं। इसलिए मैं सर्व सेवा संघ को कहता हूँ कि देशभर में ग्रामदान आन्दोलन करना है, तो तुम्हारी पत्रिका गाँव-गाँव में जानी चाहिए।"

रमजान के दिन थे। ईदुल फित्र के दिन विधानसभा की छुट्टी थी। तीन-चार विधेयक बाबा से मिलने आये थे। बाबा ने उनसे कहा—"इस्लाम में चन्द्र के भ्रमण के अनुसार महीना गिनते हैं। चन्द्रमान पद्धति है। इसलिए रमजान माह कभी ग्रीष्मकाल में, तो कभी वर्षा-काल में आता है। ग्रीष्मकाल में आया, तो भी मुसलमान लोग दिनभर पानी नहीं पीते हैं। 'ईद' शब्द अरबी है। लेकिन वह आया है 'बीज' से। बीज यानी द्वितीया का चाँद देखकर उपवास छोड़ते हैं। हिंदू लोग मुसलमानों के लिए कल्पना करते हैं कि मुसलमान यानी कत्ल करने-वाले। परन्तु चन्द्र उनका देवता है, जो सौम्य देवता है। उनकी दूसरी बड़ी बात यह है कि वे सामूहिक प्रार्थना करते हैं। आज के दिन आप दिल्ली जायेंगे, तो हजारों मुसलमान एकसाथ, अनुशासन में प्रार्थना करते हुए दीखेंगे।

'हिन्दुस्तान के दो टुकड़े हुए। अब बचे हुए हिन्दुस्तान के टुकड़े न हों। इस-लिए एक-दूसरे से सम्पर्क रखना चाहिए। ऐसे त्यौहारों में उनके साथ शामिल होना चाहिए। वे एक महीना उपवास करते हैं, तो हम भी एकाध दिन का उपवास रखें। कुरान-सार पढ़ें। मुसलमानों के लिए गलतफहमी है, वह बादशाहों के कारण हुई है। बादशाहों ने धर्म में जबरदस्ती की। असल में कुरान शरीफ में तो स्पष्ट लिखा है कि धर्म में जबरदस्ती नहीं होनी चाहिए। इसलिए एक-दूसरे के त्यौहार में शरीक हों। हिन्दू कुरान पढ़ें, मुसलमान गीता पढ़ें। व्यक्तिगत मित्र बनायें, उसमें मुसलमान, ईसाई, हिन्दू, पारसी, सिक्ख हिन्दी, गुजराती, मराठी, तमिल—सब धर्मों के और सब भाषाओं के मित्र हों। एक-दूसरे के बारे में गलतफहमियाँ दूर हों।"

महाराष्ट्र के अहमदनगर जिले में साकुरी नाम का स्थान है। वहाँ वैदिक संस्कृति का एक आश्रम है। उस आश्रम की कन्याएँ खुद यज्ञ-पुरोहित बन कर वेद की ऋचाएँ गाती हैं। आश्रम के संस्थापक श्री उपासनी महाराज ने परम्परा की शृंखला तोड़कर कन्याओं को वेदमंत्र का उच्चारण सिखाया। उपासनी महाराज ने कन्या की व्याख्या की है—'क नीयते या' ब्रह्म की ओर ले जाती है, वह कन्या। इस आश्रम की कुछ कन्याएँ एक दिन बाबा से मिलने आयी थीं। उन्होंने एक सुर में, उच्च स्वर में वेदमंत्रों का अस्खलित घोष किया। ऋग्वेद का देवीसूक्त, जिसकी द्रष्टा वेदकालीन स्त्री-ऋषि ही है, यजुर्वेद का सूक्त और सामवेद का सूक्त गाया। घोष समाप्त होने के बाद बाबा ने कहा—"बहुत आनन्द हुआ। माना गया है कि स्त्रियों को वेद पठन का अधिकार नहीं। लेकिन आपने प्रथम जो सूक्त गाया, वह स्त्री का ही लिखा हुआ है। तो स्त्री को अधिकार है ही ।"

वर्धा का सूतिकागृह वर्षों से वर्धा नगर की सेवा कर रहा है। वहाँ की बहनों ने बाबा को निमंत्रण दिया। बाबा ने उसका स्वीकार किया। २६ तारीख की दोपहर को मालूताई बाबा को ले जाने के लिए आयी थीं। सूतिकागृह के जनरल वार्ड में, इस दुनिया में आगमन हुए दो ही दिन हुए हैं, ऐसी एक 'नारायण मूर्ति' थी। बाबा उस मूर्ति को निहार रहे थे, धीरे से उसका छोटा सा हाथ अपने हाथ में लिया और बन्द मुट्ठी खोलकर हस्तरेखा देखी।

सूतिकागृह देखने के बाद, बहनों और संस्थावालों से बाबा ने कहा—"यहाँ आ-कर मैंने एक ऐसी वस्तु देखी, जो आज तक मेरे देखने में नहीं आयी थी। दो दिन का बालक। उसके दर्शन से अनेक भाव-नाएँ उठीं। माता पर कितनी ब[illegible] जिम्मेदारी। एक बच्चे को बड़ा कर[illegible] का काम भूदान-ग्रामदान के काम की अपेक्षा अधिक कठिन है। एक बार जमना-लालजी कृष्णजन्म देखने के लिए मुझे लक्ष्मीनारायण मंदिर में ले गये थे। वहाँ कृष्णजन्म का नाटक ही खेला जा रहा था। देवकी माता की वेदनाएँ देख-

महान् बा को नमन

'बा का जबर्दस्त गुण सहज अपनी इच्छा से मुझमें समा जाने का था। मैं नहीं जानता था कि यह गुण उनमें छिपा है।...लेकिन जैसे-जैसे मेरा सार्वजनिक जीवन उज्ज्वल बनता गया, वैसे-वैसे बा खिलती गयी और पुख्ता विचारों के साथ मुझमें यानी मेरे काम में समाती गयी।...'

—गांधीजी

'...मुझे अगर अब किसीसे ज्यादा उम्मीद है – सेवा करने की, कौम की खिदमत करने की—तो बहनों से, औरतों से है, क्योंकि उन लोगों में अभी तक खुद-गरजी नहीं आयी है. . । परमात्मा के लोग बेगरजी होते हैं और परमात्मा का आशीर्वाद वे ही हासिल करते है।...'

—सीमांत गांधी (बादशाह खाँ)

सेवा, त्याग एवं करुणा की मूर्ति महान् कस्तूरबा की उनकी सौवीं जन्म-शती के अवसर पर शतशः नमन, जिनके कारण यह सत्य उद्घाटित हुआ और युग-पुरुषों को अनुभूति हुई कि स्त्री की अहिंसक शक्ति के माध्यम से वर्तमान की सभी समस्याओं को सरलता से हल किया जा सकता है।

गांधी-जन्म-शताब्दी की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति, जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित।

कर मैं बहुत घबड़ा गया। इतनी तकलीफ मैंने माँ को दी। हे परमेश्वर! पुन ऐसी तकलीफ मेरी ओर से किसी माँ को न दी जाये। उस दिन मेरे ध्यान मे आया। परमेश्वर कहता है—'मैं जन्म लेता हूँ, पर वह सच्चा नहीं, मायिक है।' उस दिन मुझे पक्का विश्वास हो गया कि परमेश्वर कभी जन्म नहीं लेता। एक माँ को इतनी तकलीफ परमेश्वर किसलिए देगा?, आपकी सेवा से परमेश्वर आपकी चित्तशुद्धि करें। आपको आत्मदर्शन हो। पुन इस संसार मे आने की झंझट हमारे इन सेवकों को न उठानी पड़े।"

रोज सुबह आठ-सवा आठ बजे बाबा घूमने जाते हैं। उस दिन १२ तारीख को ऐसे ही घूमकर आये, और बालभाई से कहा, 'हमारी चारपाई बाहर ले आओ।' उस दिन से बाबा चौबीसों घंटे बरामदे मे ही रहते हैं। ठंढ बढ़ रही है, हवा भी चलती है। चिंता करनेवालों की चिंता बढ़ती है, लेकिन उनको जवाब मिलता है हँसी से।

आजकल अतिथियों में हैं श्री गद्रेजी, सुरेन्द्रजी, बाबाजी मोघे। फिर चर्चा और बातचीत मे कोई कमी नहीं है। बीच बीच में ब्रह्मविद्या-मंदिर की बहनें भी आती रहती हैं। वीणा और रमा आयी थीं। उनको और देखकर बाबा गाने लगे—'हँसता खेलता सत्य ध्यावे' (हँसते खेलते सत्य का ध्यान करें)। जानकी माताजी के सामने समस्या खड़ी हुई। 'हँसना खेलना तो समझ मे आता है, लेकिन सत्य का ध्यान कैसे करना?' बाबा ने समस्या हल कर दी, "देखिए। आम क्या करती है? रसमे फल खुद के लिए रख देती है और तेल जैसा कीमती रस बाबा को देती है। वैसा ही बँटवारा हम भी करेंगे। हँसना-खेलना खुद के लिए रख लीजिए, ध्यान करना बाबा के लिए छोड़ दीजिए।' माताजी के साथ मजलिस भी जोर से हँस पड़ी।

ऐसे ही हँसते-खेलते सुबह से शाम हो जाती है और बाबा मसहरी मे प्रवेश करते हैं।

—कुसुम

आदिवासी लोगों की सुरक्षा और ग्रामदान

बिहार के एक सम्मान्य आदिवासी नेता की शंकाओं के समाधानार्थ

— एक स्पष्टीकरण —

[बिहार की राजधानी पटना से प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक समाचार-पत्र 'सर्चलाइट' के १५ अक्तूबर '६९ के अंक मे श्री कार्तिक उरावँ, संसद सदस्य और आदिवासी नेता का एक लेख छपा था। लेख मे उन्होंने ग्रामदान-आन्दोलन की आलोचना की थी। उनकी मुख्य बातें थी

(१) यद्यपि यह आन्दोलन गत १९ वर्षों से आदर्श समाज की स्थापना के लिए क्रान्ति करने के उद्देश्य से चलाया जा रहा है, लेकिन जन-समर्थन की दृष्टि से यह असफल ही रहा है।

(२) ग्रामदान के सिद्धान्त अच्छे हैं, लेकिन उन सिद्धान्तो को नहीं, उनके अमलीरूप को ही कसौटी पर कसकर उनकी उपादेयता पर विचार हो सकता है।

(३) भारत मे बिहार का दर्जा ग्रामदान-आन्दोलन मे प्रथम है। लेकिन बिहार मे ग्रामदान के लिए सही-सही हस्ताक्षर या अँगूठा निशानी २० प्रतिशत से अधिक नहीं होगा। छोटानागपुर और संताल परगना के क्षेत्र म तो यह १०-१५ प्रतिशत से अधिक नहीं होगा।

(४) शेष हस्ताक्षर जाली है। ग्रामदान हुए, लेकिन गाँववालो को मालूम नहीं, जिलादान हुए, लेकिन जिलावालो तो मालूम नहीं। यह मानवता के विवेक और लोकतांत्रिक शक्तियों का अपमान है। अपेक्षा तो इस आन्दोलन से यह थी कि लोगो के जीवन और चिंतन पर इसका अधिक गहरा प्रभाव पड़ता।

(५) विनोबाजी ने जब जनता की समस्याओं को हल करने का शान्ति मिशन शुरू किया, तो मैंने सोचा कि अगर वे छोटानागपुर और संताल परगना क्षेत्रों के भूमिहीन आदिवासियों की समस्याओं का हल करने मे लगते तो अच्छा होता। लेकिन विनोबा ने आदिवासियों की समस्याओं को हल करने मे रुचि नहीं दिखायी।

(६) संताल परगना और छोटानागपुर टीनेंसी एक्ट के बावजूद-जिसके अनुसार किसी आदिवासी की जमीन को खरीद गैर आदिवासी के द्वारा नहीं हो सकती—आदिवासियों की जमीनें लूटी गयी, और बिहार सरकार के स्थानीय अधिकारी घड़ियाली आँसू बहाते रहे। आदिवासियो की दुर्दशा की कोई सीमा नहीं रही। आज भी वही स्थिति चल रही है।

(७) झूठे और जाली ग्रामदान के हस्ताक्षर कराने से अच्छा रहता कि विनोबा आदिवासियों को चूसनेवालों के दिल म कुछ परिवर्तन लाने का प्रयत्न करते। ये हस्ताक्षर तो उनके शोषण के लिए एक बड़े दरवाजे का काम करेंगे और उनके भविष्य को और भी अंधकारमय बनायेंगे। आदिवासियों की छीनी गयी जमीनों को वापस दिलाने का क्या उपाय है? क्या दुबारा पुराना इतिहास दुहराया जायगा?

(८) जिलाधिकारियों से लेकर प्रखण्ड अधिकारियो तक, सबने अपने प्रभाव से, दबाव से झूठे हस्ताक्षर कराये हैं।

(९) आदिवासियों की समस्याओं को हल करना राष्ट्र की सार्वभौमिकता और एकता के लिए अनिवार्य है।

(१०) आज सबसे बड़ी आवश्यकता है राष्ट्रीय-चरित्र के निर्माण की। जो सही शिक्षण से ही सम्भव है। भारत मे एक नये अध्याय का सूत्रपात हो जाय, अगर भूदान-ग्रामदान मे खर्च हो रहे पैसे को इस दिशा मे खर्च किया जाय।

(११) स्थानीय भारी उद्योगों में स्थानीय लोगों को काम नहीं दिया जाता। इस अन्यायपूर्ण व्यवहार के कारण निराशा और असंतोष का ज्वालामुखी कभी भी फूट सकता है। इस क्षेत्र की समस्याएँ विकट हैं, और ग्रामदान से अधिक ध्यान संत विनोबाजी का इधर जाना चाहिए।

(१२) अन्त में मैं संताल परगना और छोटानागपुर के लोगों से यह अपील करना चाहूँगा कि आदिवासी गैरआदिवासी लोगों के सम्बन्धों को और अधिक बिगाड़नेवाला वे कोई भी काम न करें। यह मेरी भविष्यवाणी है कि ग्रामदान आज के सन्दर्भ में आदिवासियों के लिए आत्मघातक सिद्ध होगा।]

प्रिय श्री कार्तिक उरांवजी,

१५ अक्तूबर, '६९ के 'सर्चलाइट' में प्रकाशित ग्रामदान-सम्बन्धी अपने विचार में आपने विनोबाजी के प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए उनके आदर्श को ऊँचा बताया है लेकिन इसके साथ ही आज के समाज के नैतिक ह्रास एवं लोलुपता के कारण, इस विचार की व्यावहारिकता के प्रति शंका व्यक्त की है। सन्त एवं द्रष्टा समाज को आदर्श की ओर इंगित करता है। उस आदर्श की ओर समाज को ले जाने का दायित्व समाज के नेताओं का होता है। इस लोक-कल्याणकारी राज्य में यह दायित्व सरकार पर भी आता है।

राष्ट्रीय नेताओं द्वारा समर्थित

विनोबाजी के ग्रामदान-कार्यक्रम को २१-२२ सितम्बर, १९५७ के मैसूर राज्य के सर्वपक्षीय सम्मेलन ने व्यावहारिक एवं लोक-हितकारी बताया था। इस सम्मेलन की अध्यक्षता स्वयं स्वर्गीय नेहरूजी ने की थी। बैठक में सर्वश्री कृपालानीजी, नम्बूदीपाद प्रमुख लोगों ने भाग लिया था एवं इस सम्मेलन को राष्ट्रपति का आशीर्वाद प्राप्त हुआ था। बिहार में १९६५ में सदाकत आश्रम में तथा १९६८ में राजगिर में राज्य-स्तर के नेताओं ने अपना समर्थन प्रदान किया एवं सभी पक्षों के गणमान्य नेताओं ने इस आन्दोलन को सक्रिय सहयोग भी दिया। जिन लोगों ने ग्रामदान में सक्रिय सहयोग दिया एवं अपनी ओर से विनोबाजी को ग्रामदान, प्रखण्डदान एवं जिलादान समर्पित किया, उनमें से कुछ प्रमुख लोगों में से सर्वश्री कृष्णवल्लभ बाबू, महेश बाबू, राजेन्द्र मिश्र जी, मथुरा बाबू, रामलखनसिंह यादव, कर्पूरी ठाकुर, रमानन्दसिंह बसन्तनारायण सिंह, जयपाल सिंह, बेगुम कुमरान, गौरी शंकर डालमियाँ, पृथ्वीचन्द किसकू, भोगेन्द्र झा, हरिवंश नारायण सिंह (जनसंघ), भोला शास्त्री, महामाया प्रसाद सिंह, पं० विनोदानन्द झा, आदि बिहार के प्रमुख नेताओं के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इन राजनैतिक नेताओं के अतिरिक्त पंचायत परिषद्, शिक्षक संघ, आदि जैसी संस्थाओं ने भी अपना सहयोग प्रदान किया। यह निःसंकोच स्वीकार करना पड़ता है कि यदि ये सब लोग आपसी मतभेदों को भुलाकर एक वर्ष के लिए ग्रामदान कार्य को साकार करने में पूरी तरह लगे होते तो आपके जैसे विनोबा के प्रति श्रद्धावान व्यक्ति को विनोबाजी के इस कार्यक्रम को अव्यावहारिक घोषित करने का अवसर नहीं आता। लेकिन मैं विनम्रतापूर्वक निवेदन करना चाहूँगा कि ऐसे सर्वसम्मत कार्यक्रम में जहाँ त्रुटि हो, वहाँ ध्यान तो अवश्य दिलाया जाय, साथ ही प्रत्येक जननायक से यह सहज ही अपेक्षा भी की जाती है कि इस आदर्श को साकार करने में उनका हर सम्भव योगदान मिलना चाहिए।

अधिनियम-सम्बन्धी शंका और समाधान

ग्रामदान अधिनियम की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए सर्वप्रथम मैं आपको जानकारी देना चाहूँगा कि बिहार के दोनों सदनों में से किसी सदन के किसी दल के नेता ने यह टीका नहीं की थी कि ग्रामदान-बिल के प्रावधान आदिवासियों के हित-विरोध में है। इसके बावजूद हम यह स्वीकार करते हैं कि किसी भी अधिनियम के बारे में उसके व्यवहार को देखकर संशोधन की आवश्यकता महसूस होती है। राँची के ग्रामदान-अभियान के सिलसिले में छोटानागपुर और संताल परगना रैयती कानून को सामने रखकर वरिष्ठ सरकारी और गैरसरकारी लोगों की उपस्थिति में विचार-विमर्श हुआ था। उस चर्चा में यह महसूस किया गया था कि अधिनियम की धारा १७ में जहाँ यह पाबन्दी बाँधी गयी है कि ग्रामदानी गाँव की जमीन ग्रामसभा की अनुमति से ग्रामदानी गाँव के ग्रामदान में शरीक लोगों के हाथ बेची जा सकती है, वहाँ एक प्रतिबन्ध और जोड़ दिया जाय कि आदिवासी अपनी जमीन आदिवासी के हाथ ही बेच सकते हैं। यह संशोधन प्रस्तावित है।

आपने अपने लेख में संताल परगना और छोटानागपुर रैयती कानून में इन क्षेत्रों के आदिवासियों की भूमि के लिए किये गये सुरक्षा के प्रावधानों को ग्रामदान-अधिनियम के द्वारा खण्डित होने की आशंका प्रकट की है। इस बिन्दु पर मैं आपका ध्यान ग्रामदान-अधिनियम की धारा १७ के निम्नलिखित पंक्तियों की ओर आकृष्ट करना चाहूँगा, जिसमें स्पष्ट शब्दों में यह उल्लेख किया गया है कि ग्रामदान-विधान होने के बाद किसी को कोई ऐसा नया अधिकार प्राप्त नहीं हो जायेगा, जो ग्रामदान की घोषणा के पूर्व उसको था।

'ग्रामदान-अधिनियम धारा १७, उप-धारा २, उपधारा (१) में अन्तर्निविष्ट किसी बात से यह न समझा जायगा कि जिससे ग्रामदान-विधान को कोई ऐसा अधिकार प्राप्त हो गया है जो उसे अपनी भूमि दान देने के अव्यवहृत पूर्व (Immediately before) प्राप्त न था।'

ग्रामदान-अधिनियम की विशेषता का उल्लेख करते हुए पूर्ण दावे के साथ यह कहा जा सकता है कि ग्रामदान-अधिनियम में ग्रामसभा, ग्रामकोष, सर्वसम्मत निर्णय आदि की व्यवस्था छोटानागपुर और संताल परगना-क्षेत्र के प्राचीन ग्राम-व्यवस्था एवं सामाजिक न्याय को पुनः एक बार संगठित होने का अवसर प्रदान करता है। इतना ही नहीं, इस अधिनियम के द्वारा गाँवों के शोषण का हर दरवाजा बन्द होता है। यही कारण है कि आदिवासी नेताओं

की ओर से भी इस कार्यक्रम को समर्थन और सहयोग मिला। विनोबाजी ने बार-बार दुहराया है कि जब तक ग्राम-व्यवस्था सुदृढ़ नहीं होती, गाँव अधिकार-सम्पन्न नहीं होते, तथा गाँव के व्यापार पर गाँव का नियंत्रण नहीं होता, तब तक मात्र पैबन्द लगाने से गाँव का शोषण बन्द नहीं हो सकता है। ग्रामदान गाँव की रीढ़ मजबूत करता है। जो क्षेत्र जितना ही शोषित और उपेक्षित है, उस क्षेत्र के लिए उतनी ही जल्दी ग्रामदान को सक्रिय बनाना आवश्यक है। ग्रामदान अधिनियम की दूसरी व्यवस्था यह है कि इसकी कोई भी व्यवस्था किसी चरण में किसी पर लादी नहीं जा सकती। ऐसे कुछ आवेदनपत्र मिले हैं जिनमें आवेदकों ने यह व्यक्त किया है कि उनको गलत आश्वासन देकर उनसे ग्रामदान के कागज पर हस्ताक्षर लिया गया है। इसकी चर्चा मैंने आन्दोलन के लोगों से की। उन लोगों ने यह बताया कि जहाँ-तहाँ यह भ्रम फैलाया जाता है कि ग्रामदान के बाद तुम्हारी सब जमीन सरकार ले लेगी। इसी बहकावे में आकर लोग अपने वायदे से मुकर कर आपत्ति प्रकट करते हैं।

उन लोगों का कहना है कि ऐसा भ्रम वे ही फैलाते हैं जिन्हें इस बात का डर है कि ग्रामदान के बाद हमारे शोषण का दरवाजा बन्द हो जायेगा तथा गलत नेतृत्व का स्थान नहीं रहेगा। लेकिन मैं अपनी ओर से ऐसी शंका में श्रद्धा नहीं रखता। मैं तो ऐसे आवेदकों को यह विश्वास दिलाना चाहूँगा कि यदि किसी ने गलत आश्वासन देकर आपसे ग्रामदान के घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करवा लिया है, तो वह कोई अर्थ नहीं रखता है। उनको आपत्ति का मौका दिया जायेगा और अगर वे सहमत नहीं होंगे तो यह व्यवस्था उनके ऊपर किसी भी विधान के द्वारा लादी नहीं जा सकती है। इतना ही नहीं यदि थोड़ी देर के लिए यह मान लिया जाय कि ऐसे लोग आपत्ति के समय भी शामिल रह जायें, तो भी उस गाँव की ग्रामसभा का वैधानिक गठन तभी होगा जब सर्वसम्मत अध्यक्ष का चुनाव होगा और ग्रामसभा का निर्णय तभी लागू होगा जब कोई सर्वसम्मत निर्णय होगा। आत्म-निर्णय के लिए इतना अधिक मौका प्रदान करनेवाले अधिनियम के प्रति यदि कोई शंका है तो वह मात्र भ्रमवश ही मानी जायगी।

प्रखण्डदान या जिलादान यानी क्या?

जिलादान एवं प्रखण्डदान शब्द के कारण भी कुछ भ्रम उत्पन्न होता है। कानूनी व्यवस्था ग्रामदान की है। किसी प्रखण्ड के ग्रामदान में शरीक ग्रामदानी गाँव के लोगों की संख्या प्रखण्ड की ग्रामीण जनसंख्या का ७५ प्रतिशत होता है तो उसे 'प्रखण्डदान' कहा जाता है। इसी प्रकार जिले के सभी प्रखण्डों के प्रखण्डदान के बाद जिलादान घोषित होता है। यहाँ यह स्पष्ट समझने की आवश्यकता है कि वैसे व्यक्ति, जिन्होंने अपने गाँव के ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर नहीं किया है, उनकी मालिकी पर उस गाँव की घोषणा से कोई असर नहीं होता है। उसी प्रकार प्रखण्ड या जिले के वे व्यक्ति या गाँव, जिन्होंने ग्रामदान की घोषणा पर हस्ताक्षर नहीं किया है, उनकी मालिकी पर ग्रामदान का कोई प्रभाव नहीं होगा। जब प्रखण्डदान या जिलादान की घोषणा होती है तो वैसे लोगों को स्वभावतः यह धक्का लगता है, जिन्होंने ग्रामदान की घोषणा पर हस्ताक्षर नहीं किया। लेकिन जैसा कि ऊपर बताया गया है कि इस घोषणा का कोई प्रभाव उन पर नहीं होता है तो उनको अपने स्वाभिमान पर आघात आदि मानने का क्या कारण होता है?

किसी जिले का जिलादान होता है, तो अभी इसका अर्थ इतना ही है कि उस जिले की ग्रामीण-आबादी में से ७५ प्रतिशत लोगों ने इस विचार का संकल्प लिया है। इस संकल्प के बाद प्रत्येक गाँव अपने यहाँ अनौपचारिक संगठन बनायेगा, ग्रामकोष संग्रह करने लगेगा तथा भूमिहीन के लिए जमीन देगा। (आदिवासी अपने गाँव के आदिवासी भूमिहीन को ही जमीन देगा।) तब वह गाँव कानूनी मान्यता के लिए अपना घोषणा पत्र सामूहिक रूप से दाखिल करेगा। इसके बाद ग्रामसभा के नाम मालकियत विसर्जन का काम होगा। ग्रामसभा के नाम मालकियत विसर्जन का अर्थ मात्र इतना ही है कि वह बिना ग्रामसभा की अनुमति से अपनी जमीन बेच नहीं सकेगा। यदि ग्रामसभा अनुमति भी देगी, तो भी गाँव से बाहर नहीं बेची जा सकती, पर बैंक, सरकार, सहयोग समिति आदि से ऋण ले सकेगा। इस प्रकार यह विसर्जन उनकी जमीन को और सुरक्षित करता है।

मैं यह विश्वास करता हूँ कि मेरे इस पत्र के बाद आपकी शंकाएँ निर्मूल हुई होंगी। फिर भी यदि कोई आपत्ति रही हो, जिसका स्पष्टीकरण इस पत्र में नहीं प्राप्त हो सका हो, तो उसकी ओर ध्यान दिलाकर पुनः अपना विचार आपकी सेवा में रखने का मौका देंगे।

२३-१-'७०

आपका,
निर्मलचन्द्र
मंत्री,
बिहार भूदान यज्ञ कमेटी,
कदमकुआँ, पटना-३

आगरा में सर्वोदय-पात्र

आगरा शहर में सैकड़ों सर्वोदय पात्र रखे गये हैं और उनकी आय से एक सर्वोदय-केन्द्र चलता है। वहाँ एक कार्यकर्ता श्री गुरुदयाल भाई काम करते हैं। 'भूदान यज्ञ' अखबार की बिक्री और बच्चों के लिए एक वाचनालय चलाने का काम होता है। इस वाचनालय के लिए पुस्तकें और फर्नीचर आगरे की सुशिक्षित और सम्पन्न परिवारों की स्त्रियों ने दिये हैं।

एक सर्वोदय पात्र पीपल मण्डी रोड पर श्री सूरज भान, साइकिलवाले के यहाँ भी रखा है। उन्होंने एक बड़ा सर्वोदय पात्र टिन के डिब्बे का, ताला लगाकर अपनी दुकान पर रख दिया है। 'मेरी साइकिल की मरम्मत की दुकान है। वहाँ रिक्शेवाले, साइकिलवाले हवा भरते हैं और ५ पैसे दे जाते हैं। मेरी उसमें कुछ मेहनत नहीं होती। 'भाई सूरज भान ने कहा' 'अब मेरे पम्प से जो भी हवा भरेगा उसके पैसे मैं नहीं लूँगा और इस सर्वोदय-पात्र में डाल दिया करूँगा।'

आन्दोलन के समाचार

पूर्णिया में ग्रामदान-पुष्टि कार्यक्रम की प्रगति

जिला ग्रामस्वराज्य समिति की सूचनानुसार जिले के ६१० ग्रामदानी गाँवों की पुष्टि सम्बन्धी कार्यवाही की जा चुकी है। ५६५ गाँवों के कागज पुष्टि हेतु पदाधिकारी कार्यालय में प्रेषित हैं। ग्रामदान-अधिनियम के अनुसार महुआ, प्रेमगंज, राकरैली, गौलाघाट, कोहजरा तथा किशनपुर में भूमि का बीसवाँ हिस्सा भूमिहीनों में वितरित किया जा चुका है। ४३ गाँव १० सितम्बर '६९ के बिहार-गजट में अधिनियमानुसार पुष्ट ग्रामदान घोषित हैं।

अनौपचारिक पुष्टि का अभियान चलाने के लिए तथा ग्रामस्वराज्य के आगे के कामों के चलाने के लिए जिले में ६ लाख रुपये का कोष संग्रह-अभियान भी चलाया जा रहा है।•

भूमि-वितरण समारोह

गणतंत्र दिवस के अवसर पर गत २६ जनवरी को बिहार के औरंगाबाद क्षेत्र के करीब ३,००० भूदान-किसानों की रैली का आयोजन सर्वोदय-कार्यकर्ताओं द्वारा हुआ। इस अवसर पर बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी के मंत्री श्री निर्मलचन्द्रजी के द्वारा ५१८ भूमिहीनों के बीच ७८८ एकड़ जमीन के वितरण के प्रमाणपत्र बाँटे गये। ग्राम सभा में स्थानीय अनुमंडलाधिकारी ने भूदान-किसानों का दृढ़ आश्वासन दिया कि शीघ्र ही सभी किसानों के नाम लगान निर्धारण होगा तथा बेदखली-निवारण के लिए कठोर कदम उठाया जायगा।

अब तक बिहार में कुल ढाई लाख भूमिहीन परिवारों में ३,८०,००० भूदान-भूमि का वितरण हुआ है। शताब्दी-वर्ष में राज्य के प्रत्येक जिले में भूदान कमिटी की ओर से भूवितरण-अभियान शुरू किया गया है। —महेश्वर प्रसाद सिंह

इन्दौर का जिलादान

सीमान्त गांधी बादशाह खान अब्दुल गफ्फार खाँ के इन्दौर-आगमन के समय उनके सम्मान में २१ जनवरी को आयोजित विशाल ग्रामसभा में ग्रामदान-आन्दोलन के अन्तर्गत इन्दौर जिलादान की घोषणा की गयी। जिला गांधी-शताब्दी के मंत्री श्री नरेन्द्रकुमार दुबे ने "जिलादान" की घोषणा करते हुए बताया कि इन्दौर जिले के ६२७ आबाद गाँवों में से ५३७ गाँव ग्रामदानी बने हैं। इस प्रकार ८५ प्रतिशत गाँवों के ग्रामदान में आजाने से जिलादान का लक्ष्य पूरा हुआ है।

इन्दौर जिले की इन्दौर तहसील के १४२ आबाद गाँवों में से १३८ गाँव ग्रामदानी बने। प्रतिशत ९० रहा। सावेर तहसील के १४७ गाँवों में से १३१ गाँव ग्रामदान में आये। प्रतिशत ९० रहा। महू तहसील के १६३ गाँवों में से १३८ गाँव और देपालपुर तहसील के १७५ गाँवों में से १३० गाँव ग्रामदानी बने। प्रतिशत क्रमशः ८५ और ७५ रहा। अब जिले की चारों तहसीलों में कुल ९० गाँव बचे हैं, जिन्हें ग्रामदान के लिए तैयार करना है।

इन्दौर जिले की कुल जनसंख्या ७,५३,५९४ है। चारों तहसीलों के ६२७ गाँवों की कुल जनसंख्या ३,१९,३८८ है इनमें से इन्दौर तहसील की जनसंख्या ८५,२२३, सावेर की ७९,१९७, महू की ७०,४१५ और देपालपुर की ८,४५३३ है। जिले की चार तहसीलों में चार विकास खण्ड और चार केन्द्र पंचायतें हैं।

१,४१,७२७ गांधी-शताब्दी साहित्य सेटों की बिक्री

इन्दौर, २८ जनवरी। प्राप्त जानकारी के अनुसार देश के १७ राज्यों में १५ जनवरी १९७० तक १,४१,७२७ गांधी-जन्म शताब्दी साहित्य सेटों की बिक्री हो चुकी है। सेट खरीदी में मध्यप्रदेश का प्रथम तथा राजस्थान का द्वितीय स्थान है, जहाँ क्रमशः १०,१६५ तथा ३८,८४८ सेट बिके हैं। इनमें पाँच रुपये वाले तथा सात रुपये वाले दोनों प्रकार के सेटों की बिक्री शामिल है।•

शान्ति दिवस सम्पन्न

प्राप्त सूचनाओं के अनुसार देशभर में ३० जनवरी (बापू-निर्वाण दिवस) को शान्ति-दिवस के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर शिविर पदयात्राएँ, शांति-जुलूस प्रार्थना-सभा आदि कार्यक्रम सम्पन्न हुए।•

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् का प्रवास-कार्यक्रम

फरवरी ७०

८ से १२ केरल प्रदेश में

१३–१४ प० जर्मनी के मेयर के साथ

१५ – तमिलनाडु सर्वोदय मंडल की बैठक में

१९–२१ ग्रामदान निर्माण-परिसंवाद तथा

ग्रामदानी गाँवों में निर्माण की समिति की बैठक में।

२३ से १ मार्च प० बंगाल में

३ से ५ मार्च कोरापुट (उड़ीसा) में

स्थायी पता :

सर्व सेवा संघ अध्यक्ष कार्यालय,

२२७–साउथ मासी स्ट्रीट,

मदुराई–१ (तमिलनाडु)

फोन नं० : २७४७१

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : २०
सोमवार १६ फरवरी, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३८७

एक ऐतिहासिक पत्र

मैं यह पत्र आपको विश्व के सर्वाधिक शक्ति-सम्पन्न दो राष्ट्रों के प्रधान होने के नाते लिख रहा हूँ। इन दो देशों—अमेरिका और सोवियत रूस—का नीति निर्देशन करनेवाले व्यक्तियों के हाथों में आज भला या बुरा करने की इतनी अधिक क्षमता है, जितनी पहले कभी भी किसी व्यक्ति या व्यक्तिसमूह को प्राप्त न थी। आपके राष्ट्रीय हितों के पारस्परिक गतिरोधवाले मुद्दों पर आपके देशों की जनता के विचारों से मैं परिचित हूँ। परन्तु मुझे विश्वास है कि, आप जैसे दूरदर्शी और बुद्धिमान व्यक्ति इस बात से अवश्य ही परिचित होंगे कि रूस और अमेरिका के स्वार्थों की टक्करवाले विषयों से अधिक महत्त्वपूर्ण वे विषय हैं, जिनमें दोनों का स्वार्थ सधता है। आज हर व्यक्ति के लिए, चाहे वह किसी भी विचारधारा का पोषक हो सबसे अधिक चिन्ता का विषय यही है कि किस तरह मानव-जाति के बीच की मनमुटाववाली स्थिति के कारण यह समस्या आज बड़े विकट रूप में उपस्थित है। यदि दूसरे छोटे-छोटे राष्ट्र भी आणविक अस्त्र प्राप्त कर लें, तो इसका स्वरूप और भी भयानक हो जायेगा। तब तो किसी भी विक्षिप्त मस्तिष्कवाले व्यक्ति की मात्र एक गैर-जिम्मेदार कार्रवाई समस्त मानवता को काल के गाल में ढकेल देगी।

आणविक अस्त्रों का अबाध प्रसार एक ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय अराजकता पैदा करेगा जो रूस या अमेरिका किसी के लिए भी हितकारी नहीं होगी। यदि प्रभुता सम्पन्न राष्ट्रों के शासकों में सूझबूझ और समझदारी का लेशमात्र भी हो, तो वे अपने नागरिकों की रक्षा की दृष्टि से ऐसा आचरण न करें। इन कारणों से आणविक अस्त्रों के प्रसार पर प्रतिबन्ध अनिवार्य है।

अतः महाशयो, (अमेरिका के राष्ट्रपति* आइजनहावर और रूस के प्रधान मंत्री* श्री ख्रुश्चेव) मेरा विनम्र सुझाव है कि, आप दोनों आपस में मिलें और अपने-अपने पक्ष के स्वार्थ-साधन के मुद्दों पर बातचीत न कर उन तरीकों पर खुले हृदय से विचार-विमर्श करें, जिनसे मानवता के सिर पर छाये काले बादल छँट जायें और सर्वत्र सुख-समृद्धि का प्रखर आलोक फैल जाय। मेरा दृढ़ विश्वास है कि इस महान् कार्य के लिए सम्पूर्ण विश्व अपने अन्तरतम से आपका आभार मानेगा।

—बर्ट्रेण्ड रसेल

*तत्कालीन।

गाँव वाले चेत नहीं रहे हैं...

तारीख २९-१२-'६९ के 'भूदान-यज्ञ' में श्री सिद्धराज ढड्ढा का लेख गंगानगर की यात्रा के बाबत पढ़ा। गंगानगर जैसी स्थिति हर क्षेत्र में खड़ी हो रही है। गाँव में सम्पत्ति बढ़े और संस्कार नहीं सुधरे तो नाश ही होता है। हमारे पास एक गाँव है, बहुत ही सम्पन्न है, पर गत तीन बरसों से वहाँ सट्टा चलता है। मुझे बताया गया कि रोज करीब १ हजार रुपया सट्टे में लगाया जाता है, यहाँ यदि अतिशयोक्ति हो तो भी ५०० से कम तो नहीं जाता। इसमें से रुपया १००, २०० वापस आ गया तब भी सालभर में अकेला यह गाँव लाख-सवा लाख रुपया खोता है।

थोड़ा बहुत जुआ सब गाँवों में चलता है। फिर अब तो सरेआम लाटरी चल रही है। गत बरस सबसे अधिक प्रचार परिवार-नियोजन और लाटरी का ही रहा। सट्टे और लाटरी के कारण गुंडागिरी भी बढ़ी है। शराब तो खुली है ही।

मेरे अपने गाँव में पिछले तीन बरस में, जब मैं यहाँ से बाहर था, गाँव में दो दल हो गये थे। इस झगड़े के कारण गाँव का लगभग १० हजार रुपया पुलिस और सरकारी कर्मचारियों को रिश्वत देने में खर्च हुआ।

आज हर तरह से शहरों द्वारा गाँवों की लूट और शोषण हो रहा है। पर दुर्भाग्य की बात है कि गाँववाले चेत नहीं रहे हैं। जुआ, शराब, लाटरी आदि के कारण गाँवों का धन सीधा बाहर जाता ही है, इसके अलावा शहरों और कारखानों में बना हुआ माल जो गाँवों में इस्तेमाल होता है, उसके कारण भी लाखों रुपया गाँवों से शहरों में जाता है। गाँववाले चाहें तो मिलजुलकर यह सब रोक सकते हैं। ग्रामसभा मजबूत हो तो पुलिस और कर्मचारियों को दी जानेवाली रिश्वत भी बच सकती है।

पो० रैसलपुर
होशंगाबाद

—बनवारीलाल चौधरी

२२ फरवरी कस्तूरबा-पुण्य-तिथि को मातृ-दिवस के रूप में मनाने की अपील

कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट के कस्तूरबा ग्राम (इन्दौर) स्थित प्रधान कार्यालय से प्रसारित एक विज्ञप्ति में सभी रचनात्मक संस्थाओं तथा सामाजिक संगठनों के साथ देशवासियों से अपील की है कि आगामी २२ फरवरी १९७० को कस्तूरबा-पुण्य-तिथि 'मातृ-दिवस' के रूप में मनायें। यह स्मरणीय है कि कस्तूरबा गांधी का देहान्त सन् '४४ में इसी दिन आगा खाँ महल के कारावास में हुआ था।

अपील में कहा गया है कि हम अपने राष्ट्र को भारत-माता कहते हैं। हमारे धर्म ग्रन्थों में, संस्कारों में और परम्पराओं में मातृ-वन्दना का महत्त्व रहा है। माता को हमने पिता, धर्म-गुरुओं तथा आचार्यों से भी अधिक गौरव दिया है, तथा हजारों वर्षों से भारतीय जीवन पर माँ की महिमा रही है। कस्तूरबा ने ऐसे विराट माँ रूप को अपने जीवन में साकार किया है।

मातृ-दिवस के निमित्त कार्यक्रमों के आयोजन के बारे में सुझाव देते हुए अपील में कहा गया है कि २२ फरवरी को महिला-सभाएँ रखी जायँ, स्त्री-शक्ति के विकास के लिए शान्ति रक्षा एवं शील-रक्षा से सम्बन्धित गोष्ठियाँ रखी जायँ, आदर्श माताओं को सम्मानित किया जाय, कस्तूरबा के आदर्श जीवन को समझाया जाय, तथा माँ की महिमा को दर्शानेवाले कार्यक्रमों का आयोजन किया जाय।

अपील के अन्त में कहा गया है कि २२ फरवरी १९७० बा-बापू जन्म शताब्दी का अन्तिम दिन है। उस रोज हमारी पूरी-पूरी कोशिश हो कि देश का ध्यान मातृ-वन्दना के लिए दृढ़ हो।•

प्रश्नांश...

हर मनुष्य को अपना जीवन-दर्शन निश्चित करना चाहिए और उसके अनुसार अपना 'मिशन' तथा 'रोल' समझ लेना चाहिए। इतना कर लेने के बाद उचित अवसर की प्रतीक्षा करना भटकना नहीं, अवधि-पूर्व की तैयारी होती है।

स्थिरता का भाव एक स्थान पर स्थाई रूप से बैठ जाना नहीं है बल्कि उसमें तो सड़न का खतरा ज्यादा रहता है। मैं स्थिरता का मतलब मानता हूँ मनुष्य के जीवन के दर्शन तथा उसकी दिशा का स्थिर हो जाना। अपने 'मिशन' की पूर्णता की ओर अग्रसर होते रहने में ही जिन्दगी की सार्थकता होती है। इस प्रक्रिया में किसी को एक स्थान पर स्थिर हो जाने की गुंजाइश नहीं रहती। लेकिन भटकना एक चीज है और प्रवाहित होना दूसरी चीज। हर चीज ईश्वराधीन है, यह मेरी बुनियादी निष्ठा है। लेकिन ईश्वर धक्केबाज है ऐसा मैं नहीं मानता। वह हर एक से किसी निश्चित योजना के अनुसार स्थिर दिशा में काम लेता है। उसी दिशा को पहचानना मनुष्य का अपना काम है।

इसे पहचान लेने पर जीवन में किसी प्रकार का संशय नहीं रह जाता है। फिर उसे स्पष्ट दिखाई देने लग जाता है कि स्थिति परिवर्तन पूर्व निश्चित योजना का परिणाम है। तब वह अपने को भटकता महसूस नहीं करता है।

हर व्यक्ति का कार्य और क्षेत्र 'सामुद्रिक तरंगों' की तरह निरन्तर व्यापकता की ओर फैलता रहना चाहिए, तभी कुछ सफलता हासिल होती है।

—धीरेन्द्र भाई

(एक कार्यकर्ता को कर्म, क्षेत्र और केन्द्र के सम्बन्ध में लिखे गये पत्रोत्तर से।)

'मैं जिन्दगी को प्यार करता हूँ'

वह जीया तो शौक से जीया, और मरा तो दुनिया में अपने नाम की शान छोड़ गया। उसने हमेशा दिल से जिन्दगी को प्यार किया, लेकिन कभी जिन्दगी की बंदिशों और मजबूरियों को कबूल नहीं किया। उसके सत्तानवे साल का एक एक क्षण मनुष्य द्वारा मनुष्य के साथ होनेवाली अमानुषिकता के विरुद्ध जेहाद करने में बीता। रसेल के जीवन में दार्शनिक, तत्वज्ञानी, योद्धा और सुधारक का विलक्षण समन्वय था।

रसेल के लिए जीवन में दो लक्ष्य थे एक, जानना, हर रोज जानना, जिन्दगी भर जानते ही जाना दूसरा, दुनिया जैसी है उससे ज्यादा शांत, सुखी दुनिया बनाना। इन दो लक्ष्यों के लिए रसेल का जीवन समर्पित था। वह विवेक (रीजन) को सभ्य मनुष्य की सबसे बड़ी पूंजी मानता था। सत्य से बढ़कर विवेक का दूसरा कोई आधार नहीं और विवेक के बिना सत्य प्राप्त करने का दूसरा कोई साधन नहीं, इसलिए रसेल ने विचार को, विवेक को, किसी बंधन में, मान्यता में, मजबूरी में, ग्रंथ के प्रमाण में, गुरु के वचन में, या सरकार के प्रचार में नहीं बँधने दिया। विचार को उसने हमेशा मुक्त और सबसे ऊपर रखा। मनुष्य की मुक्ति जिन क्रान्तिकारियों के जीवन का परम लक्ष्य रही है उनमें रसेल का नाम है, क्योंकि रसेल की दृष्टि में बुद्धि और विवेक की गुलामी सारी गुलामियों की जड़ है। उसने किसी 'सत्य' को कभी स्वीकार ही नहीं किया जब तक कि उसकी बुद्धि ने उसे अपनी कसौटी पर परख नहीं लिया। गांधी की तरह रसेल के लिए सत्य—तर्क की आग में तपाया हुआ सत्य—ही सर्वोपरि था। विज्ञान के इस सत्य कि सत्य तभी सत्य है जब वह सत्य सिद्ध हो जाय, उसने अपने जीवन में कभी उल्लंघन नहीं होने दिया, और, न तो अपनी ही इच्छाओं को अपने विवेक और विचार पर हावी होने दिया। उसने बुद्धि के सिवाय दूसरी कोई सत्ता कभी मानी ही नहीं। एक बार बचपन में उसका बड़ा भाई उसे ज्यामिति सिखा रहा था। बच्चे रसेल ने ज्यामिति के गृहीत सत्यों (ऐक्सियम) पर शंका प्रकट करना शुरू किया। उसके भाई ने कहा 'ज्यामिति में इन गृहीत सत्यों को स्वीकार किये बिना गुजर नहीं। इन्हें छोड़कर हम आगे नहीं बढ़ सकते।' रसेल चुप तो हो गया, किन्तु उसे समाधान नहीं हुआ। रसेल को धुन बढ़ने की नहीं, जानने की थी। वह सत्य की खोज और साधना करने के लिए पैदा हुआ था, उसका पक्ष और व्यापारी बनने के लिए नहीं।

सत्य के लिए वह समर्पित था, इसलिए कष्ट-सहन उसके लिए सत्य का ही अंग था। १९१४ के पहले महायुद्ध तथा अनिवार्य भर्ती का उसने विरोध किया; इस अपराध में ६ महीने जेल में रहा। दूसरे महायुद्ध का औचित्य उसने इस कारण माना कि हिटलर के जुल्म का मुकाबिला करने का दूसरा कोई उपाय नहीं था, लेकिन युद्ध के बाद वर्षों में जब उसने यह देखा कि अणु-बम मानव के अस्तित्व को ही समाप्त कर देगा तो वह जी जान से उसके बहिष्कार में लग गया। ७५ साल की आयु में उसने अणु-बम के खिलाफ लड़ाई छेड़ी। जब वह ९० साल का था तो उसे अपने देश इंग्लैण्ड के सरकारी दफ्तर के सामने बम-बहिष्कार के लिए प्रत्यक्ष कारवाई करने के जुर्म में सात दिन की सजा हुई। ८८ साल की उम्र में उसने सविनय-अवज्ञा आन्दोलन छेड़ा। अणु-बम के प्रति उसका विरोध अंतिम समय तक रहा। वह दुनिया को चेताता ही रहा, जगाता ही रहा। मानव-प्रेमी, मानव-सेवक रसेल मानव-मुक्ति की सतत चेष्टा में कभी बूढ़ा नहीं हुआ। न उसकी बौद्धिक जागरूकता कभी कम हुई, और न उसकी नैतिक हिम्मत ही कभी पीछे हटी।

रसेल जिन्दगी भर सक्रिय रहा, कोई न-कोई आन्दोलन हमेशा करता ही रहा, किन्तु कभी किसी संस्था या संगठन की चारदीवारी के अंदर बन्द नहीं हुआ। समाज के जीवन में कई तरह की कठोरताएँ होती हैं, कई बंधन होते हैं, जिन्हें स्वीकार करना पड़ता है, इस कारण उसका और भी ज्यादा आग्रह था कि विचार को मुक्त रहना चाहिए। न उसे यही पसंद था कि जीवन हर कील-कांटे से इतना दुरुस्त रहे, कि इंसान हिल डुल न सके, और न यही पसंद था कि तरह तरह के संकोचों और भयों में फंसकर रह जाय और आदमी कुछ कर न सके।

रसेल ने अपनी जिन्दगी को वहाँ जाने दिया जहाँ कठोर, निर्मम सत्य उसे ले गया। दार्शनिक बनकर उसने ज्ञान की उपासना की, और सुधारक बनकर दुनिया की सेवा।

जब वह था तो दुनिया उससे धनी थी, आज जब वह नहीं है तो दुनिया उसकी कृतज्ञ है। कितने हैं जो दुनिया को कुछ देकर, कुछ बताकर, एक नयी रोशनी दिखाकर जाते हैं?

अभिलाषा

अपनी मृत्यु के पहले मैं चाहता हूँ कि वह सब आवश्यक बातें किसी तरह से कह सकूँ, जो अभी तक नहीं कह सका हूँ—ऐसी कोई बात, जो प्रेम या घृणा या अहंकार नहीं है, अपितु जो मेरे इस जीवन की वस्तुत साँस है, जो दूर से आती हुई अपने साथ मानव-जीवन में एक ऐसी ऊँचाई और राग-हीनता लाती है, जो अलौकिक है। मानव जीवन से परे जो कुछ चीजें नहीं दिखायी देती हैं उनमें प्रवेश होकर मुझमें जो भावुकता उत्पन्न होती है, उसका औचित्य ढूंढने की मैंने निरन्तर इच्छा की है। नक्षत्रों से भरा आकाश—वैज्ञानिक ब्रह्माण्ड का विस्तार—अवैयक्तिक सत्य का धरातल—जो गणित की तरह इस पार्थिव लोक के अस्तित्व का वर्णन मात्र नहीं करता—ऐसी सृष्टि के प्रति भावविभोर होने की अनुभूति का मैं अधिकारी और पात्र होना चाहता हूँ।

—बर्ट्रेंड रसेल

वर्तमान विसंगतियों का निराकरण

[पल-पल परिवर्तनशील उत्तरप्रदेश की राजनीति के केन्द्र और प्रदेशीय राजधानी लखनऊ में पहली बार प्रदेशदान के संदर्भ में ग्रामदान-परिचर्चा आयोजित हुई। परिचर्चित विचारों का सार यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।—सं०]

"आज देश में तूफानी रफ्तार से ग्रामदान-आन्दोलन चल रहा है, क्योंकि जनता देख रही है कि पुराने सभी आधार खतम हो गये हैं और अहिंसक शक्ति की माँग जमाना कर रहा है। हिंसा के साम्राज्य में इन्सान घुटन, घृणा, क्रोध के कारण सृजन की परिकल्पना तक नहीं कर पा रहा है। परिस्थिति में जबरदस्त विक्षोभ व्याप्त है। इस विक्षोभपूर्ण परिस्थिति से मनुष्य निकलना चाहता है, पर निकल नहीं पा रहा है। ग्रामदान-आन्दोलन परस्पर सहकार-वृत्ति को जागृत करके मानव की सुरक्षा और विकास का मार्ग प्रशस्त कर रहा है।" लखनऊ जिला-परिषद-भवन में आयोजित इस ग्रामदान परिचर्चा का आरम्भ करते हुए श्री धीरेन्द्र भाई ने ये विचार व्यक्त किये। इस ग्रामदान-परिचर्चा का आयोजन जिला गांधी शताब्दी समिति के तत्वावधान में पहली बार किया गया था, जिसकी अध्यक्षता श्री उदितनारायण पाठक ने की।

श्री धीरेन्द्र भाई ने समाज की परिचालक शक्तियों का सन्दर्भ प्रस्तुत करते हुए कहा कि पहले समाज में शासन और व्यवस्था का आधार 'शस्त्र-शक्ति' थी। पुलिस के हाथ के शस्त्र, फौज के हाथ के शस्त्र, क्रान्तिकारी के हाथ के शस्त्र, अवतार के हाथ के शस्त्र समाज को संचालित रखने के माध्यम थे। यहाँ तक कि अहिंसक साधना के लिए भी, चूँकि साधना के लिए शान्ति आवश्यक होती है, शस्त्र के संरक्षण की आवश्यकता थी, और इसीलिए पुराने जमाने में कभी भी शस्त्रागार का निषेध नहीं किया गया। लेकिन आज दुनिया के सभी नेता निःशस्त्रीकरण की माँग कर रहे हैं।

आपने "दण्ड शक्ति" धारण करनेवालों की व्याख्या करते हुए कहा कि पहले दण्ड की व्यवस्था यति करता था। लेकिन ज्यों-ज्यों दण्ड-शक्ति का पतन होता गया त्यों-त्यों वह गृप के हाथ में, फिर राजा के हाथ में, और फिर नेता के हाथ में आती गयी। आज दण्ड-शक्ति नेता के हाथ से भी निकलकर "गुण्डों" के हाथ में पहुँच गयी है। कहने की जरूरत नहीं कि गुण्डों के हाथ में समाज सुरक्षित नहीं रह सकता, नहीं चल सकता। आपने कहा कि विज्ञान और लोकतंत्र के विकास के कारण मनुष्य का मानस बदल गया है। ज्ञान और चेतना के प्रादुर्भाव और प्रसार से मनुष्य स्वतंत्रतावादी हो गया है। आज की पीढ़ी शस्त्र से, दण्ड से, अधिकारवादियों से संचालित होने को तैयार नहीं।

श्री धीरेन्द्र भाई ने कहा कि गांधी ने इस परिस्थिति की परिकल्पना कर ली थी, और उन्होंने 'सम्मति तथा सत्याग्रह शक्ति' के विचार को समाज के संचालन का प्रमुख आधार बताया था। आज नित्य जीवन में सम्मति-शक्ति, और अन्तिम शक्ति के रूप में सत्याग्रह-शक्ति की आवश्यकता है। और इसीलिए अब जनता को एक दूसरे में आस्था रखकर समाज को संचालित करना है। इस तथ्य से प्रेरित होकर ही आज तेजी से आम आदमी ग्रामदान ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन के प्रति आकर्षित हो रहा है, क्योंकि ग्रामस्वराज्य की रचना में सहकारी समाज की पद्धति और सम्मति-शक्ति की बुनियाद है।

ग्रामदान-आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए उत्तरप्रदेश ग्रामदान प्राप्ति समिति के संयोजक श्री कपिल भाई ने कहा कि आजादी प्राप्त होते ही सत्ता-संघर्ष का ऐसा दौर चला कि देश की समस्याएँ सुलझने के बजाय और उलझती गयीं। इस अवधि में अमीरों और गरीबों के बीच की खाई और चौड़ी होती गयी। गांधीजी की मृत्यु के साथ ही उनकी स्वराज्य के बाद ग्रामस्वराज्य की कल्पना को भुला दिया गया।

रिटायर्ड जज श्री कामतानाथ गुप्त ने कहा कि जब कोई चीज अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाती है, तो वहाँ से उसका फिर पतन शुरू होता है। आज हिंसा अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी है, उसको अब उतरना ही होगा। जगह-जगह पर होनेवाले फोड़ों का बार-बार ऑपरेशन करने के बजाय शरीर में फैले जहर को निकालने की कोशिश होनी चाहिए।

परिचर्चा का समारोप करते हुए श्री विचित्र नारायण शर्मा ने कहा कि इतिहास साक्षी है कि किसी भी देश की समस्याओं का समाधान नेतृत्व-परिवर्तन से नहीं हुआ है। इसके लिए आवश्यक है कि शासन की डिजाइन बदले। अगर डिजाइन एक ही रहेगी, तो इमारत चाहे जितनी बार गिरायी और बनायी जाय, एक-सी ही बनेगी। आपने कहा कि देश को विकास के रास्ते पर ले जाने के लिए गांधी ने समत्व और सहकार की डिजाइन बनाने की बात कही थी, हम लोगों ने गांधी की उपेक्षा की और आज हम ऐसे मुकाम पर आ पहुँचे हैं, जहाँ हमें अपनी गलती का अहसास होने लगा है। अगर हमने अब भी गांधी के बताये हुए नक्शे के मुताबिक इस देश की इमारत को नहीं बनाया, तो गरीबों का असन्तोष एक दिन जरूर भड़केगा, क्योंकि उसे साम्यवाद की हवा के झोंके बराबर लग रहे हैं।

इस परिचर्चा में नगर के प्रायः सभी वर्गों के लोग शामिल हुए थे। जिला परिषद के अध्यक्ष श्री उदितनारायण पाठक ने लखनऊ जिले में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन को व्यापक बनाने में अपना पूर्ण सहयोग देने का आश्वासन देते हुए वक्ताओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त किया।

—कपिल अवस्थी

हमारा उद्देश्य : सत्ता का विलोपन

'सिर्फ अच्छे आदमी चुनकर जायँ' इतना ही पर्याप्त नहीं

— सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष और मंत्री के साथ हुई विनोबा की चर्चा में महत्त्वपूर्ण स्पष्टीकरण —

बेग साहब : आज जो मेरी खान साहब से चर्चा हुई उसमें एक मुद्दा यह था कि साम्प्रदायिक समस्या की तरफ केवल हिन्दू-मुस्लिम-समस्या के दृष्टिकोण से नहीं देखा जाय, क्योंकि हिन्दुओं और बौद्धों का दंगा भी नागपुर में हुआ था। सिया-सुन्नी का दंगा लखनऊ में हुआ था। सीमा-विवाद, मालिक मजदूर के सम्बन्धों को लेकर भी दंगे होते हैं। खान साहब का जो कहना है कि—'हुकूमत के जरिये ज्यादा असर पड़ता है, आपके काम से हिंसा रोकी नहीं जा सकेगी, मतदाता-शिक्षण आप नहीं कर पाये। जो बात बापू ने 'लास्ट विल एण्ड टेस्टामेंट' (आखिरी वसीयत) में लिखी है, इस बारे में कैसे काम किया जाय?

बाबा : गांधीजी का मतदाताओं के बारे में जो आदेश था वह बाबा के ध्यान में नहीं था, ऐसा नहीं। लेकिन उस वक्त वह असम्भव था। कांग्रेस यदि यह करती तो होता, क्योंकि उन दिनों कांग्रेस देश-व्यापी थी और आप देश-व्यापी नहीं थे। अब २० साल के बाद आप देश-व्यापी हुए हैं, ऐसा मान सकते हैं। दूसरी बात मतदाताओं को हिदायत देना, यह पुरानी बात हो गयी है, क्योंकि बापू को यह ख्याल नहीं था कि 'इलेक्शन कमीशन' होगा, और वह तटस्थ होगा। आज 'इलेक्शन-कमीशन' स्वतन्त्र है। उस पर किसी पार्टी का दावा नहीं है। उस पर किसी कोर्ट में केस नहीं हो सकता है। आप उसीको करना चाहते हैं यानी उसे दुहराना चाहते हैं। साधारण तौर पर उनका काम जो मतदाताओं का था वह हो गया। अभी कांग्रेसवालों में चुनाव चिह्न की बात चली है। बैलजोड़ी किसे दी जाय, इसका निर्णय 'इलेक्शन कमीशन' करेगा। मतलब, वह ऐसी रचना हुई है जिसका ख्याल बापू को नहीं था। इसलिए मतदाताओं को शिक्षित करने की बात पुरानी हो गयी।

वैसे तो आप कहते ही रहे हैं कि अच्छे लोगों को वोट दीजिए। अच्छे आदमी को वोट दीजिए, यह आप तभी कह सकते हैं जब ग्रामदान होगा। अन्यथा हर कोई कहेगा कि मैं निःस्वार्थी हूँ। और यह उनका दावा मुमकिन है उनके लिए ईमानदारी का भी हो। उनके बंगलों में रहने की बात से उन्हें स्वार्थी कहेंगे, लेकिन बंगलों में रहना भी तो आप लोगों ने संविधान में माना ही है। इसलिए निःस्वार्थी को वोट दो, इतना कहने से ही लोग इनको वोट नहीं देंगे, ऐसा नहीं हो सकता। यह तभी होगा जब ग्रामदान होगा और गांवों की तरफ से ही लोग खड़े होंगे। मैं भी मानता हूँ कि चुनकर आये हुए लोगों में कई ऐसे हैं जो निःस्वार्थी हैं। उदाहरण के तौर पर, बिहार के कर्पूरी ठाकुर। उनका मानना है कि सत्ता के जरिए हम सेवा कर सकते हैं, इसलिए वह सत्ता में गये हैं। सभी पार्टियों का यही दावा है। लेकिन आपका काम तभी होगा जब ग्रामदान होगा, यानी ग्रामसभा का अंकुश प्रतिनिधियों पर होगा। प्रतिनिधि ठीक काम नहीं करते तो ग्रामसभा उनको वापस भी बुला सकती है।

मतदाता-सूची देखकर मतदाताओं को शिक्षित करेंगे तो हमने कोई उत्तम काम किया ऐसा मैं नहीं मानूंगा। हमारे आन्दोलन का वह 'बाई प्रोडक्ट' (उप-उत्पत्ति) है। हमारा मुख्य उद्देश्य तो यह है कि ऊपर सत्ता हो न हो। हुकूमत के जरिए काम अच्छा होता है, इसके मानी कि ऊपर वालों की सत्ता मजबूत होनी चाहिए, ऐसा मानते हैं। हम तो इससे उल्टा करना चाहते हैं। ज्यादा-से-ज्यादा सत्ता गाँव में हो, उसके बाद जिले में, उससे भी कम प्रान्त में, और सबसे कम केन्द्र में हो। केन्द्र के हाथ में कम-से-कम सत्ता हो, और इस प्रकार क्रमशः सत्ता का विलोपन हो, यह हमारा उद्देश्य है।

सर्व सेवा संघ के साथ 'बिरादरी' का विभाग हो, वह बहुत जरूरी है। शान्ति-सेना तो है, लेकिन आज की जो हालत है उसमें मालिक-मजदूर, हिन्दू-मुस्लिम ऐसी कई समस्याएँ हैं, इसलिए मैत्री विभाग खोलना जरूरी है। वह काम ज्यादा सांस्कृतिक होगा। एक-दूसरे के त्योहारों में हिस्सा लेना, अपने मित्रों में अलग-अलग धर्म के लोग हों, इसका प्रयत्न करना, एक-दूसरे के धर्म के सर्वोत्तम साहित्य का अध्ययन आदि सिलसिला चले।

यहाँ (महाराष्ट्र) का प्रान्तदान जल्द-से जल्द होना चाहिए, और वह बिना कागजवाला होना चाहिए। कागजवाला तो हमने बिहार में कर लिया। अब वह सही है या नहीं, इसके फेर में पड़े हैं। मैंने तो कहा ही है कि इसमें या तो हमको शून्य यश मिलेगा अथवा 'इनफिनिट' (अमित)। एक प्रकार का प्रयोग हमने बिहार में कर लिया। दूसरी जगह ऐसा न हो। जैसे अभी ठाणा जिलादान हुआ है, तो वहाँ तुरन्त पुष्टि-कार्य आरम्भ हो। बिहार को भी थोड़ा-थोड़ा समय आपको देना चाहिए।

बेग साहब : जगदीश यवानी का कहना है कि बाबा को बिहार से छुड़ाया यह गलत हुआ। बिहार में बाबा के बिना काम नहीं होगा।

जगन्नाथन् : ऐसा नहीं है।

बाबा : पहले बाबा ने बिहार को छोड़ रखा था कि वहाँ लोग काम करेंगे, लेकिन काम नहीं किया तो बाबा दुबारा वहाँ गया। अब तीसरी दफा भी यही अनुभव आयेगा क्या ?.. लेकिन निर्मला वहाँ जाती है तो काम बनता है, कृष्णराज जाता है तो काम बनता है। मैंने जे० पी० से कहा है १० महीने बिहार के लिए और दो महीने बाहर, वैसे ही आप लोगों से कहूँगा कि हर साल में दो महीने बिहार को दीजिए। बाहर का आदमी जाता है तो परिणाम होता है। आप अध्यक्ष और मंत्री हैं जो आप पर जिम्मेदारी आती है, उस ख्याल से भी आपको वहाँ जाना चाहिए।

जगन्नाथन् . ग्रामसभा बनाओ, पुष्टि करो, ऐसा कहने से लोगों में उत्साह नहीं आता है, लेकिन लोकनीतिक बात चलायी जाती है तो लोगों को उत्साह आता है। जैसे—अच्छे आदमियों को सत्ता में भेजने की बात।

बाबा : इसी साल से अगर आप इस चीज को शुरू करते हैं तो सम्भव है कि दूसरी पार्टी वाले आपके खिलाफ जायें। बाद में भी इसकी सम्भावना है, लेकिन उस वक्त डरना नहीं चाहिए। इस साल उससे डरना चाहिए। इस साल उनका विरोध नहीं लेना चाहिए। और अगले साल डरना नहीं चाहिए। मैंने बिहार में ही कहा था कि आपका सहयोग मैं आपको काटने के लिए चाहता हूँ तो उन्होंने कहा कि काटना है तो काटो, आज तो नहीं काटते हैं।

वैंग साहब : छपरा में आपसे किसीने ऐसा भी कहा कि पार्टी से देश बड़ा है, यह हम मानते हैं।

बाबा . मतदाताओं में इसका प्रचार करना कि अच्छे आदमी भेजो, यह प्रचार मात्र 'इन्नोसेंट' (अजान) है।

वैंग साहब · मतदाताओं से अगर यह कहा जाय कि 'ए' 'बी' 'सी' अच्छे आदमी हैं, उनको आप वोट दीजिए तो कैसा रहेगा ?

बाबा : 'ए' 'बी' 'सी' का पूरा परिचय आपको होना चाहिए—अंदर-बाहर। लेकिन 'ए' 'बी' 'सी' को तय करने का काम ग्रामसभा ज्यादा अच्छी तरह से कर सकती है।

वैंग साहब : जहाँ ग्रामसभा नहीं बनी है वहाँ प्रचार करना ठीक होगा ?

बाबा · ऐसे क्षेत्र में शक्ति लगाना यानी शक्ति को व्यर्थ करना है। वैसे तो हम हर साल कहते ही आये हैं, कि अच्छे आदमी को वोट देना चाहिए।

इन्सानी-बिरादरी को मैंने 'मैत्री' नाम दिया है। वह सास्कृतिक कार्यक्रम है। एक-दूसरे के त्योहारों में भाग लेना, कभी मस्जिद में जाना, अन्योन्य प्रेम बढ़ाने के जितने तरीके हो सकते हैं, वह सब करने चाहिए। अब मतदाता-सूची या अखबारों के ग्राहकों की पूरी सूची आपके पास होनी चाहिए, जिसमें किस जमात के कितने लोग हैं, यह आपके पास लिखित होना चाहिए। उनके साथ आपका सम्पर्क होना चाहिए। मैत्री बढ़ाना, यह मीठा काम है।

वैंग साहब . इसका कोई विरोध भी नहीं करेगा।

बाबा : आपके पास आज जो मुस्लिम भाई हैं, उनके साथ परिचय नहीं है, वह परिचय कर लेना चाहिए। उनका परिचय आपकी पत्रिकाओं में आना चाहिए।

१८ जनवरी, '७०
गोपुरी, वर्धा

भारत में कुल ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

(२८ जनवरी '७० तक)

प्रान्त	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान
बिहार	६०,०६५	५७३	१५
उत्तरप्रदेश	२७,४७९	१५५	६
तमिलनाडु	१४,६०४	१८१	४
उत्कल	१२,८३६	७०	१
मध्यप्रदेश	९,०६१	४७	६
आंध्र	४,२३१	१५	१
महाराष्ट्र	४,२५०	२५	१
पंजाब-हरियाणा	३,९८६	७	–
राजस्थान	१,७७७	२	–
असम	१,६८२	१	–
मैसूर	१,१५६	४	–
गुजरात	१,१११	३	–
प० बंगाल	७४८	–	–
केरल	४१८	–	–
दिल्ली	७४	–	–
जम्मू-कश्मीर	१	–	–
कुल :	१,४३,२०७	१,०८३	३४

प्रदेशदान—१ : बिहार

संकल्पित प्रदेशदान—तमिलनाडु, उत्कल, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और पंजाब।

विनोबा-निवास, गोपुरी, वर्धा

—कृष्णराज मेहता

अण्णा : विकासशील रचनात्मक जीवन की प्रेरणा-स्रोत

[इस बार २६ जनवरी को भारत सरकार ने सर्वोदय परिवार के बुजुर्ग श्री अण्णा को पद्मभूषण की उपाधि से विभूषित किया। एक निष्पाधिक मानव के लिए इस उपाधि का क्या महत्त्व? लेकिन फिर भी अण्णा का समादर उनके जीवन की रचनात्मकता का समादर है। प्रस्तुत है इस निमित्त उनके जीवन और विचार की एक झलक।—सं०]

७ अक्तूबर, १८९७ अण्णा साहब का जन्म दिन है। उनकी जीवन-यात्रा के ये वर्ष जीवन-शिल्प के विविध प्रयोगों से भरे हुए हैं। विनोबाजी के शब्दों में वह गुप्त तत्त्वज्ञानी हैं। यानी वे तत्त्वज्ञानी हैं, यह लोगों को तो मालूम है ही नहीं, बल्कि उनको भी यह मालूम नहीं है। अण्णा साहब के जीवन की एक निष्ठा है और तत्त्वज्ञान के बिना निष्ठा नहीं बनती।'

जीवन निष्ठा

एक जगह आसक्तिपूर्वक चिपककर रहने का अण्णा का स्वभाव नहीं है। महाराष्ट्र चर्खा संघ के अध्यक्ष, खादी और ग्रामोद्योग कमीशन के उपाध्यक्ष, सर्व सेवा संघ के मंत्री, केन्द्रीय योजना-आयोग के सदस्य आदि विभिन्न पदों पर उनके रहने से उन पदों का गौरव भले बढ़ा हो पर अण्णा ने अपने में कोई सिद्धि-समृद्धि अनुभव नहीं की। वे किसी संस्था से बँधे नहीं। उनका जीवन एक उन्मुक्त चिन्तन-शील दूरदर्शी व्यक्ति का जीवन रहा है। उनके विचारों का कई बार लोगों ने विरोध किया लेकिन चार-पाँच साल बाद परिस्थितियों के दबाव से उसे स्वीकार भी किया; चाहे वह खादी में 'चावर से कातिन' का प्रश्न हो और चाहे ग्रामोद्योगों में 'इन्टरमीडिएट टेक्नालॉजी' का प्रश्न हो, वे हमेशा वर्तमान से आगे की बात करते रहे हैं। उनके हाथ से ही पराक्रम होना चाहिए ऐसा दुराग्रह उन्हें कभी नहीं रहा। वे एक निस्पृह निस्वार्थ साधक की तरह अपने काम में मग्न रहे और कार्य-कर्ताओं पर उतना ही विश्वास किया जितना कि खुद पर। विश्वास की इस प्रक्रिया से जहाँ कुछ नुकसान हुआ, वहाँ कुछ निष्ठावान कार्यकर्ता भी तैयार हुए। कार्यकर्ता तैयार करना ही वे अपनी कमाई और दौलत मानते हैं। उनका मानना है कि जब सार्वजनिक सेवा-कार्य आत्म विकास की साधना बनता है तो फिर दीप-से दीप जलना आसान होता है।

पलायन वादी (?)

अण्णा साहब का हाल रमते योगी और बहते पानी जैसा है। सेवाग्राम आश्रम के व्यवस्थापक श्री चिमन लाल भाई ने उनसे कहा कि "आपका स्वास्थ्य इन दिनों बारबार बिगड़ जाता है आप उरुलीकांचन कुछ समय के लिए हो आइये।"

> अण्णा साहब को जनता के विषय में प्रेम है, देश के विषय में अभिमान है और अपने विषय में ये दोनों ही नहीं है।
>
> —विनोबा

अण्णा ने उत्तर दिया, "ठीक है कुछ समय के लिए क्यों? फिर सेवाग्राम ही मोह ऐसा क्यों? वहीं रह सकता हूँ या और कहीं भी जा सकता हूँ।" उस समय उनका उरुलीकांचन जाना तो रुक गया पर कुछ समय बाद विश्वनीडम फार्म, बंगलौर की व्यवस्था के लिए गये तो उस समय वहीं के होकर रह गये।

अविरल गति

अण्णा की जीवन-धारा कभी भी अवरुद्ध नहीं होती, वे सदा विचार और आचार में अविरल गति से प्रवाहित होते रहते हैं। इसीलिए आज के अण्णा कल के अण्णा से भिन्न प्रतीत होते हैं। अब तो

अण्णा साहब सहस्रबुद्धे

अण्णा का कहना है कि समाज की बुनियादें नहीं बदलतीं, जब तक रच-नात्मक कार्यों का सही संदर्भ नहीं बनता, इसीलिए सब काम छोड़कर, ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के काम में लगो।

रचनात्मक कार्य : व्यापक संदर्भ और प्रगतिशील दृष्टिकोण की आवश्यकता

प्रश्न रचनात्मक कार्यक्रमों के बारे में आपकी आज क्या धारणा है? भविष्य में इनकी आप कैसी क्या सम्भा-वनाएँ देखते हैं?

उत्तर रचनात्मक कार्यक्रमों के माध्यम से गांधीजी अहिंसक समाज-रचना की कल्पना करते थे। उनका कहना था कि ये देश की जनता से निकट सम्पर्क के सशक्त साधन हैं। उन्होंने रच-नात्मक कार्यक्रमों को एक 'पुनर्निर्माण प्रोग्राम' के रूप में उठाया। वे कहते थे ग्राम-स्वावलम्बन और सम-विभाजन होगा तो समाज न्याय की तरफ जायेगा और अन्याय का परिमार्जन होगा। हम लोग उनके साथ इन कार्यक्रमों में किसी ध्येयवाद को लेकर नहीं पड़े। हमारे भी मन में जनता को राहत पहुँचाने और राजनैतिक परिवर्तन की आकांक्षा थी, जबकि गांधीजी की सारी प्रेरणा आध्या

लिए थी। क्या राजनीति, क्या समाज-परिवर्तन, सब का सब उसी प्रेरणा से था। साधन में ही साध्य पैदा होगा यह उनके सारे आन्दोलन का मध्य-बिन्दु था। आज रचनात्मक कार्यकर्ता हतारा, निराश एवं कुंठाग्रस्त हो उठे हैं, इसका कारण यह है कि हमने रचनात्मक संस्थाओं में दूसरे, तीसरे और चौथे क्रम की लीडरशिप खड़ी नहीं की। चर्खा-संघ बना तो कत्तिनों और बुनकरों के बजाय हम लोग ही उसके कर्ता-धर्ता बन गये। विचार करने का काम चन्द लोग करते रहे और दूसरे आज्ञापालक रहे। हमने कार्यकर्ताओं के परिवारों की ओर ध्यान नहीं दिया। कार्यकर्ताओं की पत्नियाँ और बच्चे घोर प्रतिक्रियावादी बनते गये और हमारी जमात दिनोंदिन कमजोर होती गयी।

रचनात्मक कार्यक्रमों की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पूर्व जितनी आवश्यकता थी आज उससे कहीं ज्यादा आवश्यकता और महत्त्व है, पर सबसे बड़ी बात निष्ठावान कार्यकर्ताओं के अभाव की है। रचनात्मक संस्थाओं का जनता से अधिक सम्बन्ध होने के बजाय सरकार से अधिक सम्बन्ध बढ़ा है। परोपजीवी होकर वे ज्यादा दिन नहीं टिक सकतीं। संस्था किसी उद्देश्य से बनती है, बड़ी होती है, कार्यकर्ता भी बढ़ते हैं, लेकिन कुछ समय बाद कार्यकर्ताओं के सवाल हल करना ही एकमात्र काम रह जाता है। रचनात्मक कार्यक्रम संस्था, सरकार और कार्यकर्ता-आधारित रहने के बजाय जिस दिन जन-आधारित होगी, उसीदिन उनमें टिकाऊपन आयेगा।

प्रश्न : ग्रामीण अर्थव्यवस्था के बारे में आपका क्या अभिमत है ?

उत्तर : सन् १९२५ में गांधीजी से इस बारे में चर्चा हुई थी। मैंने उनसे कहा था, 'पहिले खादी नहीं खेती हो।' वे बोले, 'नहीं, जब तक आजादी की लड़ाई करनी है तबतक सैनिक ऐसे हों जो कभी भी घर छोड़कर निकल सकें, पीठ पर अपना संसार लेकर निकल सकें।' उन्होंने कहा, "खादी का काम करो। वास्तविक चीज है जनता से सम्पर्क, और उसी का महत्त्व है। सभी विधायक कार्यक्रम जनता के पास पहुँचने के साधन हैं।" गांधीजी का यह कथन आजादी के पहिले एक विशेष परिस्थिति और संदर्भ में ठीक था लेकिन आज अगर ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था संतुलित रखनी है तो खेती को प्रमुखता देनी होगी। खेती में आजकल यांत्रिक विकास बहुत हुआ है। उसका लाभ गाँव-गाँव तक पहुँचना चाहिए। आज 'इन्टरमीडिएट टेक्नालॉजी' हमारे सामने है, जिसमें कुछ काम मशीन से और कुछ हाथ से होते हैं। पहिले हमारे पास पशु-शक्ति ज्यादा थी, आज वह उतनी नहीं है। आज तो हमारे सारे काम मनुष्य की शक्ति से चलनेवाले होने चाहिए। विज्ञान ने खेती के क्षेत्र में नयी नयी सम्भावनाओं को जन्म दिया है। ३-३ फसलें उगाना अब सामान्य बात हो गयी है। पानी की सुविधा का मुख्य सवाल है। जहाँ गहरे कुएँ हैं वहाँ बैलों से पानी निकालने के बजाय बिजली के इञ्जन से पानी निकालना चाहिए और जहाँ १०-१२ हाथ पर पानी है, वहाँ बैलों का उपयोग किया जा सकता है। इसी तरह एक बार गहराई से ट्रैक्टर चले और फिर बैल से अगले ३-४ साल तक काम लेते रहे, तो खेती के लिए लाभदायक है। जिस तरह रूस के उपयोग से भारत-सरकार बड़े-बड़े स्टील-प्रोजेक्ट चलाती है, उसी तरह से देश के बड़े पूँजीपतियों के धन और श्रम को खेती से जोड़ा जा सकता है। ठीक ढंग से खेती में पैसा लगाया गया तो आमदनी भी अच्छी होगी। इस तरह का विश्वास पैदा करने की जरूरत है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए गाँववालों को ही नहीं, बल्कि हमें अपने मास्टर को भी ट्रेण्ड (प्रशिक्षित) करना होगा।

प्रश्न : स्वराज्य के २१ साल बाद के निराशाजनक अनुभवों को देखते हुए क्या अब भी देश के कुछ सुधरने की आशा रखी जा सकती है ?

उत्तर : बिलकुल रखी जा सकती है। गलती साधन और साध्य में शुद्धता के अभाव की हुई और यह शुद्धता पूरी तरह बर्ती जाती तो आज का हमारा सार्वजनिक जीवन भी ज्यादा शुद्ध और ध्येयवादी रहता। गांधीजी स्वयं तो सत्ता में जाने के आकांक्षी थे नहीं और रचनात्मक काम में लगे लोगों को भी सेवा के द्वारा जनशक्ति के काम में ही लगाये रखना चाहते थे। कोई बहुत बड़ा द्रष्टा या समाज का मार्गदर्शक जीवित रहता है तो उसको उस समय उसके जीवनकाल में तात्कालिक समाज ग्रहण करता है, और जब वह ज्योति उसके बीच से चली जाती है तो समाज फिर रज और तम में डूबने लगता है। वैसा ही कुछ इस देश में हुआ है। जब तक अंतःप्रेरणा जाग्रत नहीं होती, तब तक ऊपरी सतह तक ही काम होता है। गांधीजी को इसकी अनुभूति थी। वे प्रायः कहा करते थे कि स्वधर्माचरण तथा त्याग-मूलक काम करते समय मन और बुद्धि का चित्त-शुद्धि के द्वारा सहकार मिलता रहना चाहिए, तब उसके आत्म-विकास की सुगन्ध उसके समीपवर्ती वातावरण में अनकहे ही स्वाभाविक रूप से फैलेगी, और व्यक्ति के साथ-साथ समाज और देश भी ऊपर उठेगा। आज इसकी प्रतीति समाज-सेवकों को होनी चाहिए और तदनुरूप उनका आचरण होना चाहिए।

—प्रस्तुतकर्ता : गुरुशरण

विनोबा-निवास में बापू निर्वाण-दिवस

३० जनवरी बापू-पुण्य-तिथि पर शान्ति-कुटी गोपुरी के प्रांगण में सायं ४-३० बजे सामूहिक प्रार्थना विनोबाजी के सान्निध्य में आयोजित की गयी, जिसमें ग्राम सेवा मंडल, सर्वोदय मंडल, महिला-आश्रम, खादी एवं अन्य रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। सर्वधर्म प्रार्थना, भजन, धुन के बाद सामूहिक-मौन द्वारा श्रद्धांजलि समर्पित की गयी।●

अहमदाबाद में शांति और सेवा-कार्य

अहमदाबाद में सितम्बर, १९६९ में जो साम्प्रदायिक दंगा हुआ था, उसके बाद से अब तक शांतिसेना वहाँ शांति, सेवा और संगठन का कार्य कर रही है। दंगे के शुरू होते ही गुजरात के कुछ शांति-सैनिक वहाँ पहुँच गये थे। कुछ दिनों में ही बम्बई और वाराणसी से कुछ और शांति-सैनिक पहुँचे थे, जिनकी संख्या कुल मिलाकर ३५ हो गयी थी। तब से आज तक शांतिसेना वहाँ कार्य कर रही है।

शांतिसेना ने पहले वहाँ कुछ स्थानों में दंगे को रोकने तथा शांति स्थापित करने का कार्य किया। लोगों को समझा बुझाकर तथा अफवाहों का खंडन कर लोगों को परिस्थिति की सच्ची जानकारी दी गयी। पीड़ित व भयग्रस्त लोगों को आश्वस्त करने की कोशिश हुई, कुछ सेवाकार्य भी हुए।

जब परिस्थिति साधारण हुई तब अलग-अलग शिविरों में पड़े लोगों तथा दंगे के दरम्यान हुई विधवाओं की सही स्थिति का अध्ययन किया गया। टूटे हुए मकानों की सफाई, मरम्मत आदि की गयी। घर छोड़कर जानेवाले लोगों को समझा-बुझाकर घर वापस लौटने का कार्य किया। सरकार की तरफ से बेघर हुए लोगों के लिए कच्चे झोपड़े बँधाने का निर्णय हुआ था, उसके स्थान पर सरकार से पक्के झोपड़े बनाने का निर्णय कराया। कई स्थानों पर ऐसे मकान बनाने के कार्य हो रहे हैं, जिनमें सरकारी अधिकारियों के साथ शांति-सैनिक भी मिलकर कार्य कर रहे हैं। दंगे से बेघर हुए लोगों में जितनों को ओढ़ने-बिछाने के कपड़ों की तकलीफ थी, उनमें से करीब २,३०० लोगों को कम्बल बाँटे गये। लगभग ६,००० बीमारों में १,२०० रुपये की दवाएँ बाँटी गयीं। कुछ लोगों को कुछ नकद पैसों की भी मदद की गयी। जरूरतमंद लोगों में १,००० रुपये के बर्तन भी बाँटनेवाले हैं। दंगे से पीड़ित लोगों में इससे अधिक भी कम्बल और बर्तन बाँटने की जरूरत पड़ सकती है, और उसकी तैयारी शांति सेना ने कर रखी है।

इस तूफान में जो बहनें विधवा हुई हैं, उनके लिए एक छावनी खोली गयी है, जिसमें अब तक १० बहनें तथा ८ बालक रहने के लिए आये हैं। इस कैम्प में और भी विधवा बहनों के आने की संभावना है। इन बहनों को सरकार की तरफ से मिलनेवाली मदद, प्राविडेण्ड फण्ड तथा कारखाने में बकाया वेतन आदि दिलाने का कार्य किया जा रहा है। इन बहनों में से जो बहनें अपने मूल प्रदेश में जाना चाहेंगी, उनको भेजने का प्रबन्ध किया जायेगा, जिनको वहाँ ही रहना है, उनको बसाने का कार्य तथा उद्योग आदि सिखा कर उन्हें स्वावलम्बी बनाने का प्रयास चल रहा है।

जिन लोगों के धन्धे-रोजगार टूट गये हैं, उनको मदद करने के लिए शांति-सेना के प्रयत्न से नगर के प्रतिष्ठित नागरिकों की एक समिति बनी है जिसने ऐसे लोगों को रोजगार शुरू करने में पैसे आदि की मदद देने की जिम्मेदारी स्वीकार की है।

एकता की भावना जगाने की दृष्टि से सप्ताह में दो बार 'इन्सान' नाम की एक पत्रिका गुजराती में निकाली जा रही है। जिसकी ३००० प्रतियाँ बाँटी जाती हैं। कई स्थानों पर भीत्ति-पत्र लिखकर लोगों में एकता की भावना जगाने का प्रयत्न किया जा रहा है। अलग-अलग स्थानों पर समय-समय पर विचार-गोष्ठियों का कार्यक्रम चल रहा है।

गांधी निर्वाण-दिन के निमित्त नगर में व्यापक प्रचार की दृष्टि से नगर शांति-यात्रा का आयोजन किया गया था। करीब ५०० भाई-बहनों ने नगर के विभिन्न क्षेत्रों में घर-घर जाकर शांति, भाईचारा तथा एकता के विचार समझाये। इस यात्रा में करीब २,५०० रुपये का साहित्य बिका, कई सभाएँ हुईं और लगभग ४०० शांति-सेवक बने, जो आगे जाकर नगर में शांति और भाईचारा बढ़ाने का कार्य करेंगे।

३० जनवरी के दिन नगर के विभिन्न स्थानों से छः जुलूस निकाले गये। बाद में सबको मिलाकर एक विशाल जुलूस बना, जो शाम को प्रार्थना-सभा के रूप में परिवर्तित हो गया। इस जुलूस में लगभग ५,००० मुसलमान तथा हिन्दू भाई-बहनों ने भाग लिया। जुलूस में जो नारे लगाये गये, उनमें कुछ नारे बहुत लोकप्रिय हो गये हैं, वे हैं

'एक बनो, नेक बनो'
'जनता जागे, गुण्डा भागे'
'हिन्दू हो या मुसलमान, सबसे पहले है इन्सान'
'भेदभाव छोड़ दो, दिल से दिल जोड़ दो'

ये विचार-प्रचार, राहत तथा शांति और संगठन के कार्यक्रम किसी प्रकार के भेदभाव के बिना चल रहे हैं, इसमें विभिन्न धर्मों के कार्यकर्ता भाग ले रहे हैं।

६ फरवरी, '७०

—भगवान बजाज

महाराष्ट्र में आन्दोलन की स्थिति और आगामी योजना

गोपुरी, वर्धा में ता० ८, ९ और १० जनवरी '७० को महाराष्ट्र सर्वोदय-मण्डल के कार्यकारिणी के सदस्य, जिला संयोजक और रचनात्मक संस्थाओं के कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओं की बैठक श्री गोविन्दराव शिंदे की अध्यक्षता में हुई। साठ प्रमुख कार्यकर्ता उपस्थित रहे। पू० बाबा, श्री शंकररावजी देव, श्री कृष्णराज मेहता, श्री रा० कृ० पाटील, श्री वग साहब का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

महाराष्ट्र में सर्वोदय-आन्दोलन की आज की स्थिति पेश करते हुए सर्वोदय-मंडल के मंत्री श्री बोबडकर ने बताया कि महाराष्ट्र में अब तक ४,२५० ग्रामदान प्राप्त हुए हैं, जिसमें ठाणा जिलादान और महाराष्ट्र के २५ प्रखण्डदान शामिल हैं। २०० कार्यकर्ता पूरा समय काम करनेवाले हैं, जिनमें से १२० निर्माण-कार्य में, विशेषत अमरावती अक्कलकुँवा (धुलिया जिला) में हैं। ८० कार्यकर्ता ग्रामदान-तूफान में हैं। महाराष्ट्र के २२ जिलों में ग्रामदान प्राप्त हुए हैं। १८ जिलों में जिला सर्वोदय मंडल है जिनमें १३ सक्रिय हैं। 'बारह जिलों के पास कार्य सुचारु रूप से चलाने भर की निधि इस साल के लिए है। महाराष्ट्र प्रदेश कांग्रेस ने ग्रामदान का समर्थन करने का प्रस्ताव १५ दिसम्बर को पारित किया है। ठाणा जिलादान होने से महाराष्ट्र दान का प्रवेश-द्वार खुल गया है।

चर्चा के दौरान यह पाया गया कि महाराष्ट्रदान और आगे के ग्राम-स्वराज्य और लोकनीति के काम को चलाने के लिए जो बुनियादी और न्यूनतम शक्ति चाहिए, उसके लिए पर्याप्त कार्यकर्ता महाराष्ट्र में आज नहीं हैं। रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं की शक्ति लगने पर भी यह स्थिति बनी रहेगी। इसलिए तय किया गया है कि :

१—महाराष्ट्र में २५ हजार सर्वोदय-मित्र तीन रुपया पैंसठ पैसा देनेवाले व आंशिक समय देनेवाले कार्यकर्ता बनाये जायँ।

२—ग्रामदानी गांवों में ग्राम-शांति-सैनिक खड़े करके उनको तालीम दी जाय।

३—महाराष्ट्र में दो लाख सत्तर हजार शिक्षक हैं। यह हमारी दूसरी पंक्ति जनशक्ति की दृष्टि से मानी जाय। महाराष्ट्र में ३५,५०० गांव हैं और करीब २१ हजार गांवों में शालाएँ हैं।

४—ठाणा जिले में पुष्टि-काम पर बल दिया जाय।

५—१० अप्रैल तक महाराष्ट्र में तीन जगह—सांगली, अकोला और भंडारा—जिलादान का मोर्चा, खोला जाय। महाराष्ट्र के कार्यकर्ता इन तीनों जिलों में अपनी मुख्य शक्ति लगायें और १९ अप्रैल से ३० जून तक दूसरे छः जिले लिये जायें।

६—नगर और पूना जिले में श्रद्धेय जयप्रकाशजी का मार्च का कार्यक्रम सफल बनाने की योजना बनी।

७—बंबई और वर्धा से निकलनेवाली दो सर्वोदय-ग्रामदान पत्रिकाएँ एक ही जगह से यानी बंबई से निकलें, और उसके दस हजार गाँवों में ग्राहक बनाये जायें।

८—महाराष्ट्र में 'सीलिंग' का कानून बनाते समय 'फ्लोअरिंग' की तरफ ध्यान दिया जाय यानी एक परिवार को पाँच एकड़ जमीन दी जाय और पचीस एकड़ से अधिक जमीन किसी परिवार के पास न हो, ऐसा उसका प्रारूप हो।

९—वसमत में ता० २ अक्तूबर से १२ फरवरी तक सौ दिन का 'एकात्मता उपवास' चल रहा है उसका अभिनन्दन किया गया। और 'इन्सानी बिरादरी' का काम महाराष्ट्र में चलाने के लिए स्वतंत्र व्यक्ति की नियुक्ति की गयी। श्री श्यामसुन्दर शुक्ल, श्री गंगाप्रसाद अग्रवाल, श्री अच्युत भाई देशपांडे, इन तीन मित्रों ने उस बाबत मिलकर काम करने की बात सोची है। शांतिसेना का ही यह एक विभाग रहेगा।

१०—महाराष्ट्र में 'आचार्यकुल' का काम श्री मामा साहब क्षीरसागर गत साल से कर रहे हैं। सौ से अधिक आचार्य या प्राध्यापकों ने आचार्यकुल के सदस्यतापत्र भरे हैं। जल्द ही पांच सौ लोग भर देंगे, ऐसी उम्मीद है। इन पाँच सौ लोगों की परिषद बुलायी जायेगी। मतदाता-शिक्षण का काम इनके द्वारा हो, ऐसी कल्पना आज कर रहे हैं।

११—तरुण-शांतिसेना का महाराष्ट्र शिविर मई में होगा।

१२—सन् १९७० के दिसम्बर तक पूरा महाराष्ट्र प्रदेशदान हो, ऐसी कार्य-योजना करनी है। इस ढंग से कार्य का संयोजन करने का तय हुआ।

१३—आन्दोलन के सामने जो सैद्धांतिक, वैचारिक और कुछ व्यावहारिक सवाल हैं उन पर चर्चा करने के लिए मार्च महीने में पूना में प्रबन्ध समिति की बैठक में बाद तीन दिन बैठने का कार्यक्रम बना है।●

श्री जयप्रकाश नारायण की उड़ीसा-यात्रा
—६६४ ग्रामदान और पचास हजार रुपयों की थैली समर्पित—

श्री जयप्रकाश नारायण की यात्रा उड़ीसा के सबलपुर, सुन्दरगढ़, केमूंझर, ढेंकानाल, बालेश्वर, कटक, पुरी और गंजाम जिलों में ता० १९ से २६ जनवरी १९७० तक हुई। यह यात्रा खास तौर से अर्थ-संग्रह के लिए आयोजित की गयी थी, इसलिए मुख्य शहरों में ही उनके कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। जे०पी० की इस यात्रा के दौरान श्री मन-मोहन चौधरी बराबर उनके साथ रहे।

इस्पात नगरी राउरकेला में एक जनसभा का आयोजन किया गया था, जिसमें लगभग आठ दस हजार तक जनता उपस्थित थी। करीब ढाई घंटे तक जनता शांति से जे० पी० के विचारों को सुनती रही।

जे० पी० की उड़ीसा-यात्रा के दौरान अंगुल में ता० २३ जनवरी को उत्कल सर्वोदय मंडल की बैठक बुलायी गयी थी। बैठक में सदस्यों के अलावा सर्वश्री नवकृष्ण चौधरी, मालती देवी तथा बाबूलाल मित्तल आदि प्रमुख लोग उपस्थित थे। जे० पी० के सान्निध्य में ग्रामदान की व्यूह-रचना पर गहराई से चर्चा हुई।

श्री जयप्रकाश नारायण को १ लाख २० हजार की थैली भेंट करने का लक्ष्यांक रखा गया था, पर कई कारणों से वह पूरा नहीं हुआ। तय हुआ कि उसे पूरा करने का प्रयास जारी रखा जाय और कुछ अन्न-संग्रह करने की भी कोशिश की जाय।

बैठक में श्री नवबाबू ने दुःख प्रकट किया कि विनोबाजी के सामने राज्यदान का संकल्प लिया गया था, पर हम सब लोग उसे भूल जाते हैं और पूरी निष्ठा से प्रयास नहीं हो रहा है।

बालेश्वर का जिलादान लगभग पूरा होने जा रहा है। मयूरभंज और कटक जिले के कार्यकर्ता वहाँ सहायता में जायेंगे तो मार्च के अन्त तक बालेश्वर का जिला-दान हो जायगा।

फुलवाणी जिले में कुल ४,८५२ गाँव हैं जिनमें से ४५८ पहले ही ग्रामदान में आ चुके थे। ५२० ग्रामदान अभी जे० पी० को भेंट किये गये। इस तरह लगभग १,००० गाँव ग्रामदान में शामिल हो चुके हैं। कोरापुट के प्रमुख कार्य-कर्ताओं से अनुरोध किया गया कि वे फुलवाणी के जिलादान में अपनी पूरी शक्ति लगायें। ढेंकानाल जिले की प्रगति अच्छी नहीं है, फिर भी कार्यकर्ता काम में लगे हैं।

बैठक में तय किया गया कि बालेश्वर, फुलवाणी तथा ढेंकानाल का जिलादान पूरा करने के बाद अन्य जिलों में शक्ति लगायी जाय।

बैठक में कोरापुट में चल रही पुलिस-ज्यादती की चर्चा हुई। सर्वश्री नवकृष्ण चौधरी तथा मालती देवी ने वहाँ की परिस्थिति से जे० पी० को अवगत कराया। जे० पी० के दौरे के बाद नवबाबू तथा मालती देवी कोरापुट रवाना हो गये।

कटक में 'रेवेन्सा कालेज' तथा 'मेडिकल कालेज' में छात्र-छात्राओं के बीच तरुण-शांतिसेना तथा सर्वोदय-विचार के भिन्न-भिन्न पहलुओं को जे० पी० ने रखा। छात्रगण बड़ी गंभीरता से धैर्य के साथ उनके विचारों को सुनते रहे।

इस एक सप्ताह के इस दौरे में जे०पी० को फुलवाणी जिले से ५२०, ढेंकानाल से ७५ तथा बालेश्वर से ११ ग्रामदान तथा कुल रु० ५०,००० (रुपये पचास हजार मात्र) की थैली प्रदेश में सर्वोदय-काम के लिए भेंट की गयी।

—गायत्री प्रसाद

कर्नाटक का बिजापुर जिलादान के करीब

गांधी-शताब्दी वर्ष में कर्नाटक के कार्यकर्ताओं ने बिजापुर का जिलादान पूरा करने का संकल्प किया था, जो अब सफलता के करीब है। जिले के कुल ११ तालुकों में से ९ तालुकों का ग्रामदान पूरा हो चुका है। इस अभियान को २० कार्यकर्ताओं का पूरा और १० सहयोगियों का आंशिक समय मिल रहा है। श्री महादेवप्पा मुरगोड ने वातावरण को अनुकूल बनाने में बहुत सहयोग किया है, उन्होंने अपने मठ के शिष्यों द्वारा भी इस काम में सहायता की है। जिले में जन-आन्दोलन की हवा बन रही है।

पिछले एक वर्ष से कर्नाटक में महि-लाओं की लोकयात्रा भी चल रही है। आगामी २२ फरवरी को उसका समारोह कडोली ग्राम में होगा। इस अवसर पर प्रदेश के प्रमुख कार्यकर्ता एकत्रित होंगे। एक शिविर भी २४ से २६ फरवरी तक आयोजित किया जा रहा है जिसके बाद बेलगाँव जिले में ग्रामदान-अभियान शुरू करेंगे। शिविर का संचालन लोकयात्री बहन चन्नम्मा तथा लक्ष्मी करेंगी। सुश्री सरला बहन का भी मार्गदर्शन प्राप्त होगा। स्मरणीय है कि सरला बहन ने यहाँ की लोकयात्रा में काफी समय दिया है।

गांधी-शताब्दी वर्ष के निमित्त शुरू हुई श्री मल्लिकार्जुनप्पा की अखण्ड कर्नाटक-पदयात्रा भी १२ फरवरी को पूर्ण हुई।

—फकीर चन्द्र

मुंगेर जिला सर्वोदय मण्डल की बैठक

गत १८ जनवरी को जिला सर्वोदय-कार्यालय में हुई मण्डल की बैठक में जिले के काम को वेग देने के लिए विचार-विमर्श हुआ और तय हुआ कि जिले में आचार्यकुल के संगठन के लिए श्री महादेव झा 'सुदेव', शान्ति सेना के लिए प्रो० रामचरित सिंह तथा साहित्य-प्रचार के लिए श्री रामनारायण सिंह विशेष रूप से संयोजन का काम करें। जिले में लोकसेवकों के संगठन खड़े करने का भी निश्चय हुआ।

महान् बा को नमन

'बा का जबर्दस्त गुण सहज अपनी इच्छा से मुझमें समा जाने का था। मैं नहीं जानता था कि यह गुण उनमें छिपा है।...लेकिन जैसे-जैसे मेरा सार्वजनिक जीवन उज्ज्वल बनता गया, वैसे-वैसे बा खिलती गयी और पुख्ता विचारों के साथ मुझमें यानी मेरे काम में समाती गयी।...'

—गांधीजी

'...मुझे अगर अब किसीसे ज्यादा उम्मीद है—सेवा करने की, कौम की खिदमत करने की—तो बहनों से, औरतों से है, क्योंकि उन लोगों में अभी तक खुद-गरजी नहीं आयी है...। परमात्मा के लोग बेगरजी होते हैं और परमात्मा का आशीर्वाद वे ही हासिल करते हैं।...'

—सीमांत गांधी (बादशाह खाँ)

सेवा, त्याग एवं करुणा की मूर्ति महान् कस्तूरबा को उनकी सौवीं जन्म-शती के अवसर पर शतशः नमन, जिनके कारण यह सत्य उद्‌घाटित हुआ और युग-पुरुषों को अनुभूति हुई कि स्त्री की अहिंसक-शक्ति के माध्यम से वर्तमान की सभी समस्याओं को सरलता से हल किया जा सकता है।

गांधी-जन्म-शताब्दी की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति, जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित।

पुस्तक-परिचय

प्राकृतिक इलाज

लेखक : धर्मचन्द सरावगी
प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स (प्रा०) लि०,
जी० टी० रोड, शाहदरा,
दिल्ली - ३२
पृष्ठ : १६५ मूल्य २-००

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक श्री धर्मचन्द सरावगी प्राकृतिक चिकित्सा के अनन्य प्रेमी, प्रचारक और श्रद्धालु हैं। विगत पचीस-तीस वर्षों से प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार में सक्रिय रूप से लगे हुए हैं और इस सिलसिले में काफी कुछ लिखा भी है। उनकी कुछ पुस्तकें भी बड़ी लोकप्रिय हुई हैं। लेखक ने लिखा है कि 'नीरोग रहने के लिए औषधियों का लेना आवश्यक नहीं। यदि मनुष्य थोड़ी-सी सावधानी बरते और अपने खान-पान, रहन-सहन और विचारों पर अंकुश रखे तो नीरोग रहना उसके लिए बहुत आसान है।'

"प्राकृतिक इलाज" नामक यह पुस्तक घर-गृहस्थीवाले सामान्य लोगों का ध्यान में रखकर सरल सुगम भाषा में लिखी गयी है। इस पुस्तक में १२ अध्याय हैं, जिनमें प्राय रहन-सहन, खान पान पथ्य परहेज, चर्मरोग आरम्भिक तकलीफें, पेट के रोग, नाड़ी-मंडल के रोग, श्वास-यंत्र के रोग आदि का विवेचन है। प्रथम अध्याय में लेखक ने बड़ी ही सरलता से 'प्राकृतिक चिकित्सा क्या है ?" यह समझाने का प्रयास किया है।

एलोपैथी, होम्योपैथी अथवा आयुर्वेदिक आदि पद्धतियाँ खर्चीली तो हैं ही, लेकिन लोग भी सुविधा और शान (?) के मिथ्या आकर्षण में आकर आँखें बन्द करके शरीर में जहर ठूँसते रहते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ है—अपने शरीर को, शरीर की प्रकृति को पहचानना और उसे स्वस्थ रखना। कारखाने या 'लेबोरेटरी' में तैयार दवाइयों की बोतल पेट में उँडेले जाने से सिवा स्वास्थ्य-हानि और धन-हानि के कोई लाभ नहीं होता, यह सब जानते हैं, फिर भी परिस्थिति ऐसी बनती जा रही है कि दवा-दारू न करने को लोग अपनी हेठी समझते हैं।

लेखक ने इस पुस्तक में मिट्टी, जल, हवा, प्रकाश आदि प्राकृतिक साधनों तथा खान-पान के समुचित परिवर्तन सुझाकर यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि बड़े-से बड़ा और भयानक रोग भी बिना दवा के दूर हो सकता है।

यह पुस्तक संक्षेप में होने पर भी प्राकृतिक इलाज के सभी अंगों पर पर्याप्त प्रकाश डालती है और जो भी मनुष्य इसे एक बार पढ़ लेगा वह जरूर महसूस करेगा कि दवा के चक्कर से जितना बचा जा सके, बचना चाहिए। यह पुस्तक हर घर में रहनी चाहिए, ताकि परिवार के सब लोग इससे फायदा उठा सकें।

आस्था और व्यापक करुणा के बिना ऐसी पुस्तक लिखना भी कठिन है। इसके लिए लेखक साधुवाद के पात्र हैं।

—जमनालाल जैन

"गांधी परवर्ती सर्वोदय"

लेखक : डा० विश्वनाथ टण्डन
प्रकाशक : ग्रामभावना प्रकाशन, आश्रम, पट्टीकल्याणा जिला करनाल (हरियाणा), पृष्ठ २१२, मूल्य (सजिल्द) रु० ५-००

"सर्वोदय" कोई वाद नहीं है, न कोई कार्यक्रम। एक शास्त्र या दर्शन के रूप में भी इसका विकास अभी नहीं हो पाया है। सर्वोदय एक विचार है, जीवन और सृष्टि की ओर देखने की एक दृष्टि है।

आज के प्रचलित अर्थ में सर्वोदय-विचार के अग्रदूत महात्मा गांधी हैं और आचार्य विनोबा भावे ने उस विचार को भारतीय भूमिका में एक सात्विक और व्यावहारिक आधार और स्वरूप प्रदान करने का अनुपम पुरुषार्थ किया है। सवश्री कि० घ० मश्रूवाला, दादा धर्माधिकारी, जे० सी० कुमारप्पा, धीरेन्द्र मजूमदार, जयप्रकाश नारायण, काका कालेलकर आदि अन्य अनेक विचारकों ने सर्वोदय-विचार के विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया है। आज इन सबकी अनेक पुस्तकें उपलब्ध हैं, जिनमें इनका अपना अपना सर्वोदय-सम्बन्धी दृष्टिकोण प्रस्तुत हुआ है। लेकिन अभी तक कोई एक पुस्तक ऐसी उपलब्ध नहीं हो पायी है, जिसमें सर्वोदय का समग्र, सर्वसमाहारक और सर्वसम्मत स्वरूप प्रस्तुत हुआ हो। अब देश के विद्वान् और अध्ययनशील बुद्धिजीवियों का ध्यान इस दिशा में जाने लगा है और सर्वोदय के विभिन्न पहलुओं पर चिन्तन और अध्ययन होने लगा है।

डा० विश्वनाथ टण्डन की यह पुस्तक इन आधुनिक सर्वोदयी विद्वानों की गिनी-चुनी पुस्तकों की नवीनतम कड़ी है, जो सर्वोदय के दार्शनिक, राजनैतिक सामाजिक, आर्थिक तथा व्यावहारिक कार्यक्रम आदि लगभग सभी पहलुओं का एक समग्र और तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करती है। पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें ग्रन्थता की तटस्थता, शोधक की जिज्ञासा और पूर्वाग्रह मात्र का अभाव पग-पग में मिलता है।

इस शोधपूर्ण ग्रन्थ का अध्ययन करने पर पाठक देखेंगे कि आधुनिक संसार में आज सर्वत्र व्याप्त अवसाद के अतिरेक का, सत्ता संघर्ष के पागलपन का, हिंसा के नग्न ताण्डव का, मानव-व्यक्ति के महत्व को निर्मूल करने पर उतारू संगठनों की 'शक्ति' का और बृहदाकार रचना के अन्धे मोह से उत्पन्न महासंकट का वास्तविक समाधान सर्वोदय में है। सर्वोदय समाज हित के अविरोधी वैयक्तिक विकास का उत्तम साधन है।

आशा है, गांधी-जन्म-शताब्दी वर्ष में प्रकाशित हो रही यह सामयिक पुस्तक हमारे अध्ययनशील प्रौढ़ पाठकों के लिए परम उपयोगी सिद्ध होगी और सर्वोदय-समाज की स्थापना के लक्ष्य को लेकर रचनात्मक कामों में लगे हुए हमारे सभी साथियों के लिए करदर्पण का काम देगी।

— ओमप्रकाश त्रिखा

आन्दोलन के समाचार

उत्तर प्रदेश का सातवाँ जिलादान 'आजमगढ़'

३० जनवरी १९७० को आजमगढ़ का जिलादान घोषित हुआ। यह प्रदेश का सातवाँ और भारत का ३५वाँ जिलादान है।

गोरखपुर कमिश्नरी के आजमगढ़ जिले में सगड़ी तहसील के ९८७ गाँवों में से २३२ गांव नाचिरागी एवं छोटे गाँव थे, ७५५ ग्रामदान के लायक गाँवों में से ६५५ गाँव ग्रामदान में शामिल हुए। फूलपुर तहसील के १,००३ गाँवों में से १०१ गांव ग्रामदान के अयोग्य थे, अतः ९०२ गाँवों में से ७९० गांव ग्रामदान में शामिल हुए। लालगंज तहसील के ८६७ गाँवों में से २५६ गांव ग्रामदान के अयोग्य थे, अतः शेष बचे ६११ गाँवों में से ५०८ गाँव ग्रामदान में शामिल हुए। घोसी तहसील के ८१६ गाँवों में से १६४ गाँव ग्रामदान के अयोग्य थे, अतः ६५२ गाँवों में से ५७१ गाँव ग्रामदान में शामिल हुए। सदर तहसील के ९१० गाँवों में से १३९ गांव ग्रामदान के अयोग्य थे, अतः ७६१ गाँवों में से ६८२ गाँवों का ग्रामदान हुआ और मुहम्मदाबाद तहसील के ९५२ गाँवों में से १९३ गाँव ग्रामदान के अयोग्य थे अतएव ७५९ गाँवों में से ६८६ गाँवों ने ग्रामदान-कार्यक्रम स्वीकार करके ग्राम-स्वराज्य की स्थापना का संकल्प घोषित किया है।

इस प्रकार आजमगढ़ जिले के ५,६३५ राजस्व गाँवों में से ६१६ गाँव नाचिरागी और ४६९ छोटे-छोटे गाँव हैं। ग्रामदान के लायक ४,४५० गाँवों में से ३,८९२ गाँव ग्रामदान में शामिल हुए हैं। इस जिले में छह तहसील और २९ प्रखण्ड हैं। जिलेभर के २९ प्रखण्डों के समस्त गाँवों में से ग्रामदान का संकल्प करनेवाले गाँवों का प्रतिशत ८७ है। जिले भर में कुल कृषि-योग्य भूमि १०,२१,४७५ एकड़ है, जिसमें से ६,९०,९८७ एकड़ भूमि ग्रामदान में शामिल हुई है। शहर और टाउनएरिया को छोड़कर जिले के गाँवों की आबादी २०,३५,७८१ है, जिसमें से १६,८२,८२८ जनसंख्या ग्रामदान में शामिल हुई है।

गांधी जन्म-शताब्दी तक जिलादान पूरा कर लेने का संकल्प करनेवाले इस आजमगढ़ जिले का प्रदेश में अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। २९ ब्लाकोंवाला यह जिला प्रदेश के ७ घनी और बड़ी आबादीवाले जिलों में से एक है। इस जिले में मुसलमान और हरिजनों की प्रभावशाली जनसंख्या है। लोगों ने बात-चीत के दौरान बताया कि समाज के सभी वर्गों को समानरूप से एकता, प्रेम और भाईचारे के सूत्र में पिरोनेवाला कोई कार्यक्रम उनके सामने आया नहीं था। आतंक और दबाव से मुक्ति पाने की उम्मीद में ही इस सामाजिक क्रान्ति के लिए पहले कदम के रूप में ग्रामदान-कार्यक्रम स्वीकार किया है।

इस जिले में वस्त्रोद्योग के दो बहुत बड़े केन्द्र मऊनाथ भंजन और मुबारकपुर हैं। ये केन्द्र अपनी हस्तकला के लिए ही नहीं, अपितु देश के बाहर काफी मात्रा में निर्यात करने के कारण भी प्रसिद्ध हैं। चर्मोद्योग भी यहाँ का विकसित और विकासशील है। खादी का उत्पादन मुख्य रूप से श्रीगांधी आश्रम और हरिजन गुरुकुल द्वारा किया जाता है। लगभग दो लाख रुपये की खादी का उत्पादन प्रतिवर्ष होता है और करीब-करीब इतनी ही बिक्री भी खादी की हो जाती है। हरिजन गुरुकुल नामक रचनात्मक संस्था, जिसकी स्थापना स्वर्गीय स्वामी सत्यानन्दजी ने की थी, हरिजनोत्थान और कल्याणकार्य का व्यापक कार्यक्रम भी चलाती है। स्वामी सत्यानन्दजी पहले व्यक्ति इस प्रदेश में हुए, जिन्होंने गांधीजी द्वारा चलाये गये हरिजन-आन्दोलन के महत्त्वपूर्ण कार्य में कूदे थे। अपनी जाति, बिरादरी, परिवार और समाज का बहिष्कार स्वीकार करके उन्होंने हरिजनों की बस्ती में जाकर रहना शुरू किया था, और उसी कार्य को अनवरत रूप में करते हुए अपना शरीर छोड़ा। यही कारण है कि अन्य जिलों की अपेक्षा इस जिले के हरिजनों में जागरूकता अधिक और सामाजिक स्थिति अच्छी है।

राष्ट्रीय संग्राम के दिनों में बलिया की ही तरह मऊनाथ भंजन में कितने ही तपस्वी निष्ठावान कार्यकर्ता ब्रिटिश सत्ता को उखाड़ फेंकने के प्रयत्न में गोली के शिकार हुए थे। उन ज्ञात एवं अज्ञात शहीदों के नाम पर यहाँ प्रतिवर्ष एक बहुत बड़ा शहीद-मेला लगा करता है जिसमें सभी पक्ष, सम्प्रदाय, जाति और विचार के लोग अपनी श्रद्धांजलियाँ शहीदों के प्रति अर्पित करने के लिए हजारों की तादाद में इकट्ठे होते हैं।

उत्तरप्रदेश के मुख्य कम्यूनिस्ट पाकेट वाले जिलों में से यह मुख्य जिला है। प्रदेश के प्रमुख कम्यूनिस्ट नेताओं का यह कार्यक्षेत्र भी है। फिर भी बलिया, गाजीपुर की तरह ही इस जिले के कम्यू-निस्ट कार्यकर्ताओं और नेताओं ने ग्रामदान के कार्य में अपना सहयोग दिया। मुस्लिम-बहुल गाँव के लोगों ने उत्साह-पूर्वक ग्रामदान के घोषणा-पत्रों पर हस्ताक्षर किये। बुद्धिजीवी वर्ग ने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार को भलीभाँति समझकर स्वयं तो मान्य किया ही, जनता को इस दिशा में कदम उठाने के लिए प्रोत्साहित किया।

जिला गांधी जन्म-शताब्दी समिति तथा सरकारी अधिकारियों के अलावा रचनात्मक संस्थाओं और जिला परिषद का इस जिलादान-आन्दोलन में अपूर्व सहयोग रहा है। विश्वास है कि जिले के सभी नागरिकों का, सरकारी, गैर सरकारी संस्थाओं का परस्पर सहयोग ग्राम स्वराज्य की स्थापना के लिए किये गये संकल्प की पूर्ति की तरफ लगेगा। और, शीघ्र ही ग्रामस्वराज्य सभाओं की स्थापना करके नैतिक और भौतिक विकास की तरफ यह जिला अग्रसर होगा। —कपिल भाई

परिचय-पुस्तिका

राष्ट्रीय गांधी स्मारक निधि ने गांधी शताब्दी वर्ष में एक परिचय पुस्तिका प्रकाशित करने की योजना बनायी है। इस परिचय-पुस्तिका में उन मित्रों के नाम, पते, संक्षिप्त जीवन परिचय तथा कार्य का विवरण रहेगा जो देश के विभिन्न भागों में सर्वोदय विचार-धारा को क्रियात्मक रूप देने के लिए तन, मन से प्रयत्नशील हैं।

ऐसे व्यक्तियों तथा समुदायों का परस्पर सम्पर्क होने से विचार के शोध तथा उसके विकास में मदद मिलेगी।

दुनिया के कोने-कोने से अनेक व्यक्ति भारत में गांधीजी के व्यक्तित्व की झांकी प्राप्त करने आ रहे हैं। वे भारत में सत्य अहिंसा के आधार पर हो रहे प्रयोगों का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहते हैं। भारत में ऐसे बहुत से मित्र हैं, जो खेती में, उद्योग में, व्यापार में, या किसी सरकारी, गैर सरकारी अथवा सेवा संस्था में कार्य करते हुए सर्वोदय की दिशा में निरंतर शोध और प्रयोग कर रहे हैं।

इस पुस्तिका के सहारे देश-विदेश के जिज्ञासु विभिन्न स्थानों में जाकर सर्वोदय विचार का प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त कर सकेंगे और विचार तथा अनुभवों के आदान प्रदान के द्वारा आगे बढ़ सकेंगे।

आप इस कार्य में सहयोग करेंगे ऐसा विश्वास है। अत आपके परिचय में ऐसे जितने मित्र हों उनके नाम-पते तुरन्त हमारे पास भेजने का कष्ट करें।

यह आवश्यक नहीं है कि विख्यात और बड़े लोगों के ही परिचय भेजें। इस परिचय पुस्तिका द्वारा उन नींव के पत्थरों को प्रकाश में लाने का प्रयास है जो अपनी जगह मजबूती से कार्यरत हैं। कम शर्त इतनी-सी है कि इन मित्रों का कोई-न-कोई छोटा सा ही क्यों न हो, अपना अथवा संस्था द्वारा निश्चित किया गया कार्य क्षेत्र होना चाहिए, जिसमें वे अभ्यास कार्य करते हैं।

आप स्वयं भी परिचय पत्र को भर कर भेजने का कष्ट करें। परिचय-पत्र के साथ अपना एक फोटो अवश्य भेजें। अपनी संस्था के अन्य मित्रों के परिचय-पत्र तथा फोटो भी भेजेंगे तो अच्छा रहेगा। फोटो कार्य रत अवस्था के हो तो अधिक अच्छा होगा।

परिचय के मुद्दे निम्न प्रकार हैं

१. पूरा नाम

२ पूरा पता

३ मातृ-भाषा, अन्य भाषाएं

४ निजी व्यवस्था (किसी संस्था में कार्य करते हों तो उसका नाम) वार्षिक या मासिक आय

५ संक्षिप्त जीवन-परिचय

६ गांधी विचार तथा सर्वोदय विचार के प्रति आपकी रुचि क्यों बढ़ी तथा कितने दिनों से आप इस दिशा में प्रयत्नशील हैं,

७ सत्य और अहिंसा की दृष्टि से अपने जीवन में किये प्रयोगों या घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन

८ सामाजिक कार्य का अनुभव तथा वर्तमान कार्य की विशेषतायें

९ आपके कार्य-क्षेत्र में अनुभव प्राप्त करने अथवा आपके परिवार के साथ कुछ समय रहने के लिए देश-विदेश के कुछ व्यक्ति आयें तो

(क) कितने व्यक्ति कितने दिन के लिए एक बार में आ सकते हैं ?

(ख) आपके परिवार, कार्य-क्षेत्र अथवा संस्था में गांधी-विचार के किस पहलू के विशेष दर्शन हो सकेंगे ?

१० सामाजिक कार्य के अनुभव तथा सुझाव

पत्र व्यवहार का पता,

महेन्द्र भाई

गांधी आश्रम,

'ग्रामोदय'

गढ़ रोड, मेरठ

(उ० प्र०)

मानवा

मंत्री

गांधी स्मारक निधि

राजघाट, नयी दिल्ली

कानपुर विश्वविद्यालय में तरुण शांति-सेना शिविर

युवक छात्रों में रचनात्मक वृत्ति और अहिंसक पुरुषार्थ जगाने के उद्देश्य से गत २४ से २६ जनवरी '७० को गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र कानपुर द्वारा आयोजित प्रथम कानपुर विश्वविद्यालय तरुण शांति सेना शिविर अत्यन्त उत्साह-पूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ।

इस शिविर में १० जिलों के १६ डिग्री कालेजों से आये हुए ४६ तरुणों ने 'अहिंसक क्रांति और विश्व शांति' का विचार शिक्षण प्राप्त किया। सर्वधर्म-प्रार्थना, प्रभात फेरी, व्यायाम और सफाई शिविर की दिनचर्या के प्रात कालीन अंग रहे। शुभारम्भ के समय कानपुर तरुण शांति-सेना के संयोजक श्री शिवसहाय ने स्वागत किया गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र के मंत्री ने तरुण शांति सेना के आधार-भूत मूल्यों की विवेचना की तथा वयोवृद्ध गांधीवादी विचारक श्री नर्मदा प्रसाद अवस्थी ने अपने ओजस्वी प्रवचन से छात्रों को अनुप्राणित किया।

डा० एस० सी० त्रिवेदी ने 'शांति की खोज व्यक्ति से विश्व तक' विषय पर ज्ञानवर्धक व्याख्यान दिया। डा० रामनाथ शुक्ल की अध्यक्षता में क्रांति के स्वरूप विषय पर होनेवाले परिसंवाद में बोलते हुए अनेक तरुणों ने राजनीतिक दलों द्वारा छात्रों के शोषण की तीव्र निन्दा करते हुए रचनात्मक क्रांति के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की। शैक्षणिक समस्याएं और उनके समाधान पर विशेषज्ञ सुमन की वार्ता के बाद प्रश्नोत्तर हुए। 'युग की चुनौती और तरुणों का दायित्व और दिशा' विषय पर विश्वशान्ति पदयात्री श्री सतीश कुमार ने विश्वशांति और अहिंसक क्रांति की आवश्यकता का अनुभव कराया। सारा वातावरण अत्यन्त उत्साह-पूर्ण रहा और ४६ में से २२ छात्रों ने ग्राममूलक अहिंसक क्रांति के लिए छुट्टियों का एक-एक माह का समय देने का संकल्प किया।

—विनय अवस्थी

प्रिय मित्रो,

जापकी के चले जाने पर जो प्रेम और करुणा की वर्षा आप लोगों ने हमारे ऊपर की उसके कारण ही विश्वशान्ति के कार्य को दुगुनी श्रद्धा के साथ चालू रखने शक्ति मिली। इस प्रेम के लिए कैसे कृतज्ञता प्रकट करूँ पता नहीं। तो भी आप सब चि० रवीदा, उदयन, गुनन्द और मेरा प्रेमपूर्ण जय जगत स्वीकार करें, यह निवेदन करना चाहता हूँ।

आपका,
देवी भाई

(लन्दन से २८ जनवरी, १९७० को लिखे गये श्री देवीभाई के पत्र से)

भंडारा जिलादान का निश्चय

१८ अप्रैल १९७० 'भूमिक्रान्ति दिवस' तक भंडारा जिलादान करने के उद्देश्य से सामाजिक कार्यकर्ताओं, जिला परिषद, पंचायत-समितियों तथा सर्वोदय मंडल की ओर से प्रयास शुरू हुए हैं। जिले में अबतक एक प्रखण्डदान मिलाकर कुल २५० गांवों ने ग्रामदान का संकल्प किया है। भूदान-आन्दोलन में महाराष्ट्र में कुल एक लाख छह हजार एकड़ जमीन भूमिहीनों में वितरित की गयी है, जिसमें भंडारा जिले में भूदान से ३७५१ एकड़ जमीन भूमिहीनों में बाँटी गयी है।

१ जनवरी १९७० से ग्रामस्वराज्य-अभियान में महाराष्ट्र के मान्य सर्वोदय-नेताओं का मार्गदर्शन मिल रहा है। थाना जिलादान के पश्चात् महाराष्ट्र के कार्यकर्ताओं ने राज्य के समग्र महाराष्ट्र-दान के प्रथम चरण में १८ अप्रैल तक भंडारा, अकोला तथा सांगली, इन तीन जिलों के जिलादान कराने का संकल्प किया है। संकल्प पूर्ति के लिए सुनियोजित प्रयत्न जारी है। —प्रभाकर बापट

संयोजक जिला सर्वोदय मण्डल

रायबरेली में ग्रामदान-अभियान

रायबरेली जिले के जगतपुर विकास क्षेत्र में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-अभियान के लिए जनियर हाई स्कूल जगतपुर के प्रांगण में शिक्षकों का प्रशिक्षण शिविर श्री गांधी आश्रम और जिला सर्वोदय-मण्डल के संयुक्त तत्त्वावधान में सम्पन्न हो गया। इस शिविर में जिला परिषद के ७० शिक्षकों ने भाग लिया।●

आगरा में साहित्य-प्रचार

आजकल आगरा शहर में कार्यकर्ताओं की टोलियाँ ५-२० बजे शाम से मुहल्लों-बाजारों में घूमती हैं। जनता से सम्पर्क करती हैं और गांधीजी की 'आत्म-कथा' और फोटो एक रुपये में और पैम्फलेट आदि बेचती हैं। यह काम २२ फरवरी तक लगातार चलेगा। कोशिश की जा रही है कि हर घर में और दूकान में गांधीजी का चित्र पहुँच जाय और उनका साहित्य पढ़ने को मिल सके।●

लोकयात्रियों का आगमन

लोकयात्री बहिनों की टोली १४ फरवरी से फिर से [illegible] आ रही है। १४ से २० तक फिरोजाबाद तहसील में घूमेगी और २०,२१,२२ को फिरोजाबाद से 'कस्तूरबा दिवस' के सम्बन्ध में एक शिविर का उद्घाटन करेगी। यह शिविर ३ दिन चलेगा। सारे जिले की बहिनें इसमें भाग लेंगी। उनके ठहरने का वहीं प्रबन्ध किया गया है। श्रीमती शकुन्तला ओझा, कु० कृष्णा गुप्ता तथा श्रीमती चाव[illegible] बहिन शिविर का प्रबन्ध कर रही हैं। —पी० ना० शिरोमणि

सर्वोदय-साहित्य भण्डार, इन्दौर

गांधी शताब्दी वर्ष में मई से दिसम्बर १९६९ तक कुल साहित्य-बिक्री ९३,७८९ रुपये की हुई। गांधी-शताब्दी-सेट पूरे प्रान्त (मध्यप्रदेश) में लगभग बीस हजार सेट बिक चुके हैं।●

सर्वोदय-विचार प्रसार प्रचार सेवा

सन् १९६८ की दीवाली से सन् १९६९ की दीवाली तक

साहित्य-सेवक श्री दानाराम मक्कड़ द्वारा

'भूदान-यज्ञ' पत्रिका की बिक्री	७००-००
पुस्तक-बिक्री	१९,७९९-२०
'भूदान-यज्ञ' के स्थायी ग्राहक	६९
'गाँव की आवाज'	२
'मैत्री'	८००-८०
'भूमिपुत्र' के ग्राहक	१४
सर्वोदय-पात्र से, अपने पास से, बाहर से लेकर सर्वोदय मण्डल को दिया।	९४-९६
'शान्ति-सेना' ३० जनवरी '६९	६८७-००

यहाँ के छोटे-बड़े ११ स्कूलों की पाठ्य-पुस्तकों में निम्न पुस्तकें रखवायीं

१ बापू की मीठी-मीठी बातें,
२ बापू के चरणों में,
३ गांधी-विचार-प्रबोध।

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : २१

सोमवार २३ फरवरी, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी–१

बापू और बा

'बा अनमोल रत्न थीं'

यदि बा का मुझे साथ न मिलता तो मैं इतना हर्गिज नहीं कर सकता था।.. उसकी कमी तो कभी पूरी नहीं होगी। जाने अनजाने मेरे पीछे चलना ही उसने अपना धर्म माना था।[१]

बेशक मैंने माना था, उससे कस्तूरबा की कमी कुछ ज्यादा मुझे खटक रही है। हम कुछ दूसरी तरह के दम्पति थे। १९०६ में हमने एक-दूसरे की स्वीकृति से आत्मसंयम का नियम पालने का निश्चय किया। उससे हम एक-दूसरे के ज्यादा, और ज्यादा निकट आये।

यद्यपि वे अत्यन्त दृढ इच्छाशक्तिवाली थीं, फिर भी उन्होंने मुझमें ही समा जाना पसन्द किया। जब सन् १९०६ में मैंने पहली बार राजनीतिक प्रवृत्ति में उनका प्रवेश कराया, तब दक्षिण अफ्रीका में जेल जानेवाले भारतीयों की सूची में कस्तूरबा का नाम सबसे पहला था और शारीरिक कष्ट उन्होंने मुझसे अधिक भोगा। कई बार जेल हो आने पर भी इस महल जैसी जेल में, जहाँ सभी सुविधाएँ मौजूद हैं, उन्हें अच्छा नहीं लगता था। दूसरे नेताओं की, और उसके तुरन्त बाद मेरी और कस्तूरबा की गिरफ्तारी से उन्हें बहुत दुःख हुआ, क्योंकि मैंने बहुत बार उन्हें यह आश्वासन दिया था कि सरकार मुझे हरगिज नहीं पकड़ेगी। इसलिए इस बार की गिरफ्तारी का उनके मन पर भारी आघात पहुँचा। मानसिक वेदना से उनके मन पर जो आघात लगा था और दिल खट्टा हो गया था, वह मिटा ही नहीं। परिणामस्वरूप पीड़ा भोगते वे चल बसीं।

वे मेरा अनमोल रत्न थीं।[२]

—मो० क० गांधी

कारावास, आगाखाँ महल, पूना—१. दिनांक २४-२-'४४, २. दिनांक १०-३-'४४

नया खून, नया जोश

असम के कामरूप 'जिले के' रंगिया प्रखंड में ग्रामदान-अभियान चल रहा था। गोरेश्वर में दो दिन के प्रशिक्षण-शिविर के पश्चात् भाई बहनों की तीन टोलियाँ गाँवों के लिए प्रस्थान कर रही थीं। शिविर में उपस्थित कई गाँवों के प्रमुख व्यक्तियों से रंगिया कालेज के युवा प्रिंसिपल श्री वीरेन्द्र बर्दले बात कर रहे थे, "आज देश के सामने जो समस्याएँ पेश हैं, उनका मुकाबिला करने के लिए एक ही मार्ग है—ग्रामदान।"

और वहीं पर हस्ताक्षर प्रारंभ हो गये, जिसकी कोई कल्पना नहीं थी। वीरेन्द्रजी ने घड़ी देखी, ठीक साढ़े दस, क्रान्ति का आरम्भ! वही दिन था, उत्तरायण के आरम्भ का भी। पास खड़े हुए अपने कालेज के छात्रों को हस्ताक्षर वाले घोषणापत्र दिखाकर वीरेन्द्रजी ने कहा, "देखो, ये लोग अपनी मालकियत स्वेच्छा से छोड़ रहे हैं। ऐसी महान क्रान्ति न लेनिन कर सका था, न माओ कर सका था।"

आचार्य के इन शब्दों ने लड़कों में नया जोश भर दिया और वे गाँव-गाँव घूमने लगे। न उन्हें भूख प्यास की चिन्ता रही, न सर्दी का भय। निकटवर्ती भूटान के पहाड़ हिमालय की बर्फीली हवा के झोंके भेज रहे थे। छात्र देख रहे थे कि उनके आचार्य उस भयंकर सर्दी में रात बारह बजे तक गाँवों में पैदल घूम रहे हैं, आग तापते हुए गाँववालों के साथ बैठकर चर्चा कर रहे हैं, और उन्हें मिल रहा है गाँववालों का अपार स्नेह और आदर।

गाँववालों के मन में स्नेह क्यों न पैदा होगा? असम के कर्णधार प्रथम मुख्यमंत्री स्व० गोपीनाथ बर्दले के सुपुत्र, अपने महान् पिता की सेवा की पूँजी का चेक भुनाने न शिलांग पहुँचे थे, न दिल्ली, बल्कि गाँव की खाक छान रहे थे, ग्रामीण जनता को ग्रामस्वराज्य का सन्देश सुना रहे थे। उन्हें याद आ रहा था भारत के विभाजन का प्रसंग। अंग्रेजों की कूटनीति के एक पैंतरे में असम को पूर्व पाकिस्तान के साथ जोड़ने की बात थी जो स्वीकार होने जा रही थी। लेकिन स्व० गोपीनाथ बर्दले ने सिंह-गर्जना की, "असम को पाकिस्तान में नहीं जाने दूँगा!" और वे जूझने लगे। असम बच गया, स्वतंत्र भारत में उसने अपना स्वतंत्र स्थान पा लिया। और अब उसी असम की जनता सुन रही थी नेता के सुपुत्र की गर्जना "द्वितीय पथ नहीं है। एक तरफ पाकिस्तान है, और दूसरी तरफ चीन। असम की सुरक्षा का एकमात्र मार्ग है, गाँव-संगठन, ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य।"

युवा प्रिंसिपल के साथी युवा प्रोफेसर भी ग्रामीणों को विचार समझाते हुए खुशी से कष्टों को झेलते रहे। फिर स्कूलों के अध्यापकों को क्यों न प्रेरणा मिलती? अध्यापक दिन में बच्चों को पढ़ाते और सुबह-शाम गाँववालों को विचार समझाकर ग्रामदान पर हस्ताक्षर प्राप्त करते। एक गाँव में शिक्षकों ने अमलप्रभा बाईदेव पर प्रश्नों की बौछार करते हुए कहा, "हस्ताक्षर तो हमने करवाये, अब आगे क्या करना है बताइये?' जब किसी कार्यकर्ता ने कहा कि कानूनी पुष्टि आदि में विलम्ब होगा, तो एक शिक्षक बोले, "विलंब करने से क्रान्ति कैसे होगी? आज हस्ताक्षर हुए, कल से हम आगे का काम शुरू करेंगे।"

कहीं से खबर आयी कि कुछ गाँवों की मुस्लिम जनता, 'रंगिया हाई मदरसा' के आचार्य की बात सुनना चाहती है, तो कालेज के प्राध्यापक पहुँचे आचार्य के पास। उन्होंने नम्रता से कहा, "मैं विनोबाजी के प्रति श्रद्धा रखता हूँ लेकिन ग्रामदान क्या है, नहीं जानता हूँ तो दूसरों से क्या कहूँ?" उन्हें विचार समझाया गया और दूसरे दिन से प्राध्यापकों के साथ गाँवों में गये। तीसरे दिन रंगिया की एक ग्रामसभा की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने कहा कि "मैं ग्रामदान का तीन दिन का छात्र हूँ। तीन दिन पहले जानता नहीं था कि ग्रामदान क्या है।" फिर उन्होंने जिस सुन्दर ढंग से ग्रामदान का विचार समझाया और कुरान शरीफ का हवाला देते हुए ग्रामदान की आवश्यकता को बताया, उसे सुनकर, गौहाटी से आये हुए कुछ नेता विश्वास नहीं कर सके कि तीन दिन पहले ये सज्जन ग्रामदान के विचार जानते भी नहीं थे।

रंगिया प्रखंड के अभियान में मध्य-प्रदेश के इन्द्रों की जोड़ी की तरह वीरेन्द्रजी के साथ और दो इन्द्र एकत्रित थे। एक थे धाराप्रवाह असमीया में भाषण देनेवाले उत्तर प्रदेश के रवीन्द्र उपाध्याय, जो गत सात वर्षों में भूटान की सीमा पर कुमारीकाटा में शांतिसेना का कार्य कर रहे हैं, और दूसरे थे बी० डी० ओ० नगेन्द्र डेका। श्री डेका ने भी अपने पिता से राष्ट्रीय-आन्दोलन के समय के त्याग और सेवा के संस्कार पाये हैं। सरकारी नौकरी में घुटन महसूस करनेवाले उनके युवा मन को ग्रामदान में नये पराक्रम का क्षेत्र मिल गया था। वे चाहते थे कि हस्ताक्षर के बाद, जनशक्ति के द्वारा ग्रामस्वराज्य के निर्माण का चित्र भी फौरन उपस्थित किया जाय। प्रखंड के ग्रामसेवक तथा अन्य कर्मचारी भी लगन के साथ ग्रामदान में लगे।

स्त्री-शक्ति का नेतृत्व करनेवाले असम में, ग्रामदान अभियान में भी नेतृत्व स्त्रियों का रहा। अमलप्रभा दास के मार्गदर्शन में सेवा की दीक्षा ली हुई कस्तूरबा ट्रस्ट की बहनों का, और शांति-सेना विद्यालयों के अल्पकालीन सत्रों में प्रशिक्षण पानेवाली छात्राओं का इस अभियान में विशेष स्थान रहा। उसे देखकर गाँववालों को बड़ी प्रेरणा मिलती थी। एक शिक्षक कवि ने तो कविता ही लिख डाली :—

"क्रांति का संदेश लानेवाली उषा,
जनजीवन में आशा की किरण
पहुँचा रही है।"

— निर्मला देशपाण्डे

ग्रामसभा—क्रान्तिकारी ग्रामसभा

बिहार में, तथा दूसरे राज्यों में जहाँ जिलादान हो चुके हैं, ग्रामदान के बाद ग्रामसभाएँ बनाने का काम शुरू हुआ है। बिहार के अधिकांश जिलों में ग्रामदान के साथी अधिक सक्रिय हैं। दूसरे राज्यों के जिलादानी क्षेत्रों में भी सक्रिय हो रहे होंगे, ऐसी आशा है। बिहार ने राज्यदान तक पहुँचकर ग्रामसभाएँ बनाने का काम शुरू किया है। दूसरे राज्यों के लिए जरूरी नहीं है कि राज्यदान के लिए रुके रहें। इतना आन्दोलन के लिए बहुत बड़ी भूल होगी। इसलिए जिन राज्यों में ब्लाकदान या जिलादान हो चुके हैं उनमें राज्य, जिला, और ब्लाक के स्तर पर सर्वं (एडहाक) ग्राम-स्वराज्य समितियाँ बनाने में देर नहीं करनी चाहिए। इन समितियों में ऐसे ही नागरिक मित्र तथा रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता रहें जो ग्रामदान-प्राप्ति के काम में सक्रिय न हों। इस तरह पुष्टि और प्राप्ति के काम चल सकेंगे। समय कम है, इसलिए दोनों को साथ चलाने की पूरी कोशिश होनी चाहिए।

ग्रामदान की शर्तों में जिस प्रकार की ग्रामसभा (ग्राम स्वराज्य सभा) की कल्पना है वह ग्रामस्वराज्य का आधार है। वह जनता की क्रान्तिकारी शक्ति का माध्यम है। दूसरे क्रान्तिकारी, साम्यवादी या समाजवादी, दल को क्रान्ति का माध्यम मानते हैं, और अपना एक जबरदस्त दल संगठित करते हैं। इसलिए विप्लव के बाद जब व्यवस्था बदलती है तो नयी शक्ति विप्लवकारियों के उस दल के हाथ में चली जाती है, जनता के हाथ में नहीं आती। ग्रामदान आन्दोलन ने पहली बार ग्रामसभा को, यानी जनता के सरल स्वाभाविक संगठन को, क्रान्ति की शक्ति और माध्यम बनाने का साहस दिखाया है। हम जिस परिवर्तन की कल्पना करते हैं उसमें ये ग्रामसभाएँ—क्रान्तिकारी ग्रामसभाएँ—नयी व्यवस्था की आधार-शिला होंगी। इस दृष्टि से ग्रामस्वराज्य की सारी साधना में ग्रामसभा का सबसे अधिक महत्त्व है। इस ग्रामसभा को पूँजीवाद के शोषण और राज्यवाद के दमन का एक साथ उत्तर बनना है। इसी ग्रामसभा के आधार पर कुछ ही दिनों बाद हम लोकनीति का भवन खड़ा करना चाहते हैं। जाहिर है कि ऐसे महत्त्व की ग्रामसभा को बनाने में पहले ही दिन से अधिक-से-अधिक सतर्कता बरतनी पड़ती है। लेकिन दुःख है, कई जगहों में सूचना मिल रही है कि आवश्यक सतर्कता नहीं बरती जा रही है। जल्दी है। जल्दी तो है किन्तु सारी संख्या की नहीं, शक्ति की जल्दी है। क्या यह बताने की बात है कि इस मामले में दिखाई हमारी जल्दी पूरे आन्दोलन की जड़ खोद देगी? ग्रामसभा गठन का अर्थ है कि गाँव के बालिगों को सूचना हो, उनकी बैठक हो, सर्व-सम्मति से पदाधिकारी चुने जायँ, कार्यसमिति बने, और आगे का कार्यक्रम तय हो। यह सही है कि प्रमाद और अशिक्षा के कारण शुरू में गाँव के सब लोग उत्साह नहीं दिखाते।

जनता का प्रमाद हमारे राष्ट्रीय जीवन की एक बहुत बड़ी समस्या है। इसलिए और भी ज्यादा जरूरी है कि हम सब सोच विचार कर तय करें कि पहली किश्त में हम किन गाँवों में ग्रामसभा बनायेंगे। गाँवों का सही चुनाव जरूरी है। चुनाव कई आधारों पर किया जा सकता है। किसी पूरे क्षेत्र को लेकर व्यापक, लेकिन सघन, अभियान भी किया जा सकता है। रुचि और उत्साह जगाने के लिए हमें ग्रामसभा गठन के काम को किसी सार्वजनिक समस्या से जोड़ना अच्छा होगा। ग्रामसभाएँ बन जाने के बाद उनके अगुआ लोगों के शिक्षण का सुव्यवस्थित कार्यक्रम भी बनाना पड़ेगा। क्रान्ति की दीक्षा आसान नहीं है, लेकिन दीक्षा भी तो तभी होगी जब दीक्षा लेनेवाला अपनी जगह दुरुस्त होगा। अगर माध्यम कच्चा, कमजोर, प्रभावहीन हुआ तो क्रान्ति का बोझ कौन उठायगा? हमारी जल्दबाजी और ढिलाई हमारी क्रान्ति को बहुत बड़ा आघात पहुँचायगी। उसे खा जायगी। अगर शुरू में धीरज रखकर हम सही काम करने का आग्रह रखेंगे तो निश्चित है कि थोड़े ही दिनों में काम तेजी से आगे बढ़ेगा, और जनता का उत्साह दिखाई देगा। परिस्थिति भी समाज को धक्का दे रही है। सिर्फ इतना होना चाहिए कि जनता को ग्रामसभा में स्पष्ट और उपयोगी प्रेरणा दिखाई दे। यह नहीं मानना चाहिए कि जिन लोगों ने ग्रामदान के कागज पर हस्ताक्षर किया है वे केवल इसलिए ग्रामसभा बनाने के लिए आगे बढ़ेंगे कि उन्हें ऐसा करना चाहिए।

ग्रामसभाएँ बन जाने के बाद क्या काम हों, इस पर कई रायें हो सकती हैं। राय कुछ भी हो, इतना तय है कि जिस क्रान्ति के लिए ग्रामसभाएँ बनायी जा रही हैं, उस क्रान्ति की दिशा में ले जाने वाले काम होने चाहिए। वे काम तीन प्रकार के हो सकते हैं—(१) मुक्ति, (२) शक्ति, (३) समृद्धि। मुक्ति के अन्तर्गत वे सब काम आते हैं जिनसे शोषण, अन्याय, और अनीति मिटे। भूमिहीनता, बेदखली, सूदखोरी, अनुचित मजदूरी, जोर जबरदस्ती, छुआछूत, पुलिस, अदालत, दलबन्दी आदि सबसे मुक्ति इसके अन्तर्गत है। गाँव की एकता और सज्जनता इनसे मुक्त होने पर ही प्रकट होगी। हमारा आन्दोलन मुक्ति का आन्दोलन है। हमारा ध्यान सबसे पहले उसी ओर जाना चाहिए। दूसरा स्थल है शक्ति का। शक्ति संगठन से आती है। संगठन होता ही है शक्ति के लिए। संगठन का अर्थ है कि गाँव के जीवन में बाहर का हस्तक्षेप न हो। गाँव स्वायत्त है। उसमें इतनी शक्ति विकसित हो कि वह अपनी स्वायत्तता की रक्षा, और सरकार द्वारा अधिकारों के दुरुपयोग का प्रतिकार कर सके। 'स्वायत्त ग्रामसभा' ग्रामस्वराज्य का पहला तत्त्व है। ग्रामस्वराज्य के संगठन में ग्रामसभा, प्रखण्डसभा, जिलासभा, राज्यसभा, राष्ट्रसभा, नीचे से ऊपर तक स्वायत्त इकाइयाँ होंगी। ऊपर की हर इकाई की रचना नीचे की इकाइयों के आधार पर होगी। जनता के जीवन का नियमन और संचालन उसके प्रत्यक्ष संगठन, ग्रामसभा और नगरसभा, द्वारा होगा। ग्रामशान्तिसेना और नगर-शान्तिसेना

ग्रामसभा और नगरसभा की भूमिका होगी। इस शक्ति का जनता की समृद्धि के लिए भी उपयोग होगा। समृद्धि के अन्तर्गत पूरा आर्थिक कारोबार है। खेती, उद्योग, व्यापार, ऋण, आयात-निर्यात, रोजगार, मजदूरी, मुनाफे में साझेदारी, सुरक्षा, आदि सब समृद्धि से जुड़े हुए प्रश्न हैं। शिक्षण और स्वास्थ्य को भी हम समृद्धि में ही गिन सकते हैं। समृद्धि समग्र है।

हमारी ग्रामसभाओं को मुक्ति, शक्ति और समृद्धि की तीनों दिशाओं में कदम बढ़ाना है। इनमें से किसी को भी छोड़ा या टाला नहीं जा सकता। हर ग्रामसभा अपनी शक्ति और परिस्थिति को देखती हुई आगे बढ़ेगी। जिस ग्रामसभा का जितना अच्छा नेतृत्व होगा उसकी प्रगति उतनी ही तेज होगी।

देश की परिस्थिति जिस रफ्तार से बिगड़ रही है उसे देखते हुए ग्रामस्वराज्य और सर्वोदय जीवन-मरण का प्रश्न बन गया है। सर्वोदय नहीं तो सर्वनाश, यह अब कोरी कहने की बात नहीं रह गयी है। हिंसा की बढ़ती हुई शक्तियाँ गांधी के देश पर क्रूर व्यंग्य कर रही हैं। अगर हम लोक-शक्ति के संगठन द्वारा समस्याओं के समाधान के लिए हिंसा का विकल्प शीघ्र नहीं प्रस्तुत कर सके तो जो पीड़ित है वह अन्याय से मुक्त होने के लिए चाहे जो मार्ग अपनायेगा, और हम उससे कुछ कह नहीं सकेंगे। कहने का मुँह भी क्या रह जायगा? जो पीड़ित होता है वह न्याय-अन्याय का विचार छोड़कर बदला लेने पर उतारू हो जाता है। संहार उसका धर्म बन जाता है।

जिन ग्रामसभाओं से इतनी शक्तिकारी अपेक्षाएँ हैं वे अगर कच्ची और कमजोर रहेंगी तो काम कैसे चलेगा? कानूनी पुष्टि जब होगी तब होगी, लेकिन जहाँ तक ग्रामसभाओं के गठन का प्रश्न है, हमें भरसक कोई कचाई नहीं रहने देनी चाहिए। हमें उन ग्रामसभाओं को मान्यता क्यों देनी चाहिए जो बीघा-कट्ठा भी नहीं बाँट सकतीं? बीघा-कट्ठा का वितरण वह शर्त है जिसे पूरी किये बिना कोई ग्रामसभा, ग्रामसभा कहलाने का हकदार नहीं मानी जानी चाहिए।

बिहार की जिम्मेदारी सबसे बड़ी है। उसकी ओर देश के उन तमाम लोगों की आँखें लगी हुई हैं जो शान्ति की शक्ति से क्रान्ति में विश्वास रखते हैं। बाहर के लोग पूछते हैं—'बिहार में क्या हो रहा है?' उनको पूछने का हक है। यह बिहार का गौरव है कि शान्तिपूर्ण क्रान्ति की अगुआई करने का उसे मौका मिला है। बिहार में ग्रामदान-आन्दोलन को व्यापक समर्थन मिला है। बिहार में गांधी-विचार के लिए श्रद्धा है। श्रद्धा की उस पूँजी से ग्राम-स्वराज्य का भवन बनाना है। भवन की एक-एक ईंट पक्की, खरी होनी चाहिए। लोक संगठन १९७० में, लोक-नीति १९७१, '७२ में—यह कार्यक्रम सामने रखकर काम करना है।

ग्रामसभाओं के गठन में हर सम्भव सतर्कता रखनी चाहिए। उनकी शक्तिकारिता में ही हमारी शान्ति की सफलता है, जो हमारा संकल्प है।●

३१ जनवरी १९७० तक उत्तर प्रदेश में कमिश्नरीवार ग्रामदान आन्दोलन की प्रगति के आँकड़े

क्रम संख्या	कमिश्नरी का नाम	कुल जिले	कुल ग्रामदान	कुल प्रखण्डदान	कुल जिलादान
१	वाराणसी	५	५९३६	६०	३
२	गोरखपुर	४	५३६९	३६	१
३	आगरा	५	४७१८	२४	१
४	इलाहाबाद	५	४४४७	१३	१
५	फैजाबाद	६	१७२६	१३	—
६	रुहेलखण्ड	७	१७०५	१	—
७	गढ़वाल	४	१६६७	९	१
८	मेरठ	५	१६५६	२	—
९	कुमायूँ	३	९८७	४	—
१०	लखनऊ	६	४८०	—	—
११	झाँसी	४	१६९	—	—
	११	५४	२८८५७	१६२	७

कपिल भाई

—संयोजक, उ० प्र० ग्रामदान प्राप्ति समिति

भारत में शाकाहारी

बाबा ने एक चर्चा में बताया कि भारत के विभिन्न प्रान्तों में शाकाहारी लोगों का प्रतिशत इस प्रकार है :—

प्रान्त	प्रतिशत
१. असम, २ बंगाल, ३ उड़ीसा	५
४ मैसूर	८
५. आन्ध्र	१०
६ तमिलनाडु	१५
७ कश्मीर	१८
८ बिहार	२२
९. केरल	२८
१०. महाराष्ट्र	३२
११ मध्यप्रदेश	४५
१२ उत्तरप्रदेश	४८
१३ पंजाब	५०
१४. गुजरात	५९
१५. राजस्थान	६२
भारत का	३० प्रतिशत

बाबा ने कहा कि मध्यप्रदेश में नर्मदा के किनारे, उत्तरप्रदेश में गंगा के किनारे तथा पंजाब व राजस्थान में दूध अधिक मिलने से तथा गुजरात में धार्मिक भावना होने से शाकाहारी लोगों का प्रतिशत अधिक है।

—मानव मुनि

विनोबा-संवाद

आदमी और गाय
साहित्य और व्यापार
अध्यात्म और दारिद्र्य

कमलनयन—कल सुबह मैं कलकत्ता जा रहा हूँ। ढेबर भाई भी वहाँ परसों पहुँच जायेंगे। १५ से १८ तक सरकार से मिलने का रखा था। वहाँ पर कुछ गड़बड़ी चल रही है, उस कारण से इस समय में कुछ परिवर्तन हो सकता है। उसके लिए पूछताछ करवा रहा हूँ। अभी तक कोई जानकारी नहीं मिली है। फिर भी मैं जा रहा हूँ। व्यापारियों से बातें करने का प्रसंग अभी नहीं आया है। हरियाणा में भी यशोलालजी से बात नहीं हो पायी है और राजनीतिक कारणों से विशेष समय नहीं निकल पाया। बात अधूरी ही है। हमने सोचा कि कलकत्ता में लोगों से बात करेंगे। इस बीच आपने कुछ सोचा हो, और मार्गदर्शन करना हो, तो आप बतायें।

विनोबा—मुझे कुछ नया सुझाना नहीं है। कलकत्ते का मामला अत्यन्त आसान है। गोरक्षण हो, और कोई भी गाय या बैल कटे नहीं, यह बहुत बड़ी बात है। वह हम उठा नहीं रहे हैं। उपयोगी गायों का वध होता है वह न हो, केवल इतनी सादी-सी बात है, जो बात यूरोप भर में मान्य हुई है। लेकिन भारत में गोरक्षणी देश होते हुए भी यह माना न जाय, यह बिलकुल गलत है। वहाँ के व्यापारी, 'सेंट्रल गवर्नमेंट' और बंगाल सरकार, ऐसी तीनों की शक्ति सम्मिलित रूप से लगेगी तो यह काम आसानी से होगा।

कमलनयन— यूरोप की एक रिपोर्ट आयी है कि वहाँ पर दूध और दूध से बने हुए पदार्थों की इतनी बहुतायत हो गयी है कि हजारों टनों का स्टोर हो गया है। उसकी खपत कैसे हो, यह समस्या है। विचार-विमर्श के लिए विशेषज्ञ लोग बैठे और उसमें यह विचार आया कि जो गरीब देश हैं या जो विकासशील देश हैं, वहाँ पर इन पदार्थों को भेज दिया जाय। लेकिन उसमें लगा कि समस्या का स्थायी हल यह नहीं है। समुद्र में फेंक देने की बात भी आयी। आखिर में इस निर्णय पर पहुँचे कि गायें ही ज्यादा हैं, अतः उनकी संख्या ही मार कर कम कर दी जाय। इस तरह से जो उपयोगी गायें हैं, उनमें कुछ सीमा बाँधनी होगी, जो राजी-खुशी से दे देंगे, उनको सरकार की तरफ से १४०० रु० तक मुआवजा मिलेगा। यह जब मैंने पढ़ा, तो अपने यहाँ के खाद्य-मंत्री को पत्र लिखा कि ऐसी खबर आयी है। उन देशों से संपर्क कर ऐसी गायों को भारत में लाना चाहिए। सरकार ने इस उद्देश्य को स्वीकार किया है कि संकर नस्ल की गाय को दूध के लिए लाया जाय। इस तरह से वहाँ से अधिक गायें यहाँ पर लायी जायें और यहाँ के नस्ल को सुधारा जाय, तो अपने यहाँ दूध का बाहुल्य होगा, तब कुछ समस्याएँ हल होंगी और कुछ समस्याएँ खड़ी भी होंगी। अब देखना है कि इसमें क्या लाभ-हानि होती है। मैं आपको केवल यह जानकारी के तौर पर कह रहा हूँ।

विनोबा—आखिर में यह बात निश्चित है कि मनुष्य अगर ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करेगा, संयम नहीं करेगा तो गायों और बैलों के साथ उसकी टक्कर होगी और दोनों की संख्या बढ़ती चली जाय, यह संभव नहीं है। मनुष्य की संख्या बढ़ ही रही है तो बिना गायों के दूध के उसका चलना चाहिए, और गायों को जंगल में छोड़ देना चाहिए। मनुष्य अपने हाथों से खेती करे। उसको गायों और बैलों से मुक्ति पानी होगी। अभी जमीन का रकबा प्रति व्यक्ति भारत में एक एकड़ है, और अमेरिका में १२ एकड़ है। उत्तरी बिहार में पौन एकड़ है। तो पाव एकड़ जमीन में खेती बैलों के द्वारा करना और बैलों को सँभालना, उसके बजाय उसको समाप्त किया जाय और हाथों से खेती की जाय, जैसा कि जापान के लोग करते हैं। वहाँ पर काफी अच्छी खेती करते हैं। गायों को नहीं रखेंगे तो उसकी जगह पर कृत्रिम दूध बनाना होगा। उसका प्रयोग अनेक जगह चल रहा है। गाय घास खाती है और वह दूध बनाती है तो हम भी दूध बना सकते हैं। वैज्ञानिकों ने उत्तम दूध तो बना लिया है। उसमें गाय के दूध जितने ही सभी तत्त्व रहते हैं लेकिन उसमें एक कमी है कि दूध का रंग हरा है। उसको अभी तक सफेद नहीं बना सके हैं। लोग कोशिश कर रहे हैं कि हरा रंग कैसे हटाया जाय।

यह सारा प्रयोग मानव करता ही रहेगा। यदि मानव संयमी नहीं बना और उसकी संख्या इस गति से बढ़ती गयी तो फिर वह आपस में लड़ेगा। और फिर मारे हुए मानव को खाना भी शुरू कर देगा। कहेगा कि जो पाप था वह मारने में था खाने में क्या पाप? उसका सुन्दर गोश्त मिलेगा, जल्दी हजम होगा आदि'। यह सब बातें आगे आयेंगी।

कमलनयन—यह आगे की बात नहीं है। एक यूरोपियन किसी अखबार का 'जर्नलिस्ट' या वह किसी केन्द्र में गया। वहाँ पर उसने लोगों को मानव-मांस खाते देखा तो पूछा कि आप लोग मानव का मांसाहार क्यों करते हैं? उसके जवाब में उससे पूछा गया कि आप मारना गलत समझते हैं या खाना? तो वह आदमी पसोपेश में पड़ गया।" लेकिन अभी अपने सामने उपयोगी गायें कलकत्ते में जो कटती हैं उनको रोका जाय, यह हमारे सामने सवाल है।

दूसरी एक बात मुझे यह सूझी थी, मैंने उस पर पूरी तरह से विचार नहीं किया है। मेरा कहना है कि आपको भी उस पर विचार करना चाहिए। आगे के जो साहित्य हैं, वहाँ तक मुझे मालूम हुआ है,

मराठी-साहित्य पर 'कापी राइट' का अधिकार ग्राम-सेवा-मंडल को है और बाकी के साहित्य पर सर्व सेवा संघ को है। बापू का जो साहित्य है उस पर किसी को हक देने का नहीं तय हुआ था। परन्तु पिताजी (जमनालाल बजाज) ने आग्रह करके वह हक नवजीवन को दिलवाया। जहाँ तक मेरा ख्याल है बापू को यह पसन्द नहीं था। लेकिन पिताजी का कहना था कि पुस्तकों को ठीक से छापने के लिए कुछ कानूनी अधिकार होने चाहिए। उसी वजह से वह अधिकार दिया गया था। और नवजीवन ट्रस्ट की इस बारे में जो नीति रही है, उससे किशोर-लाल भाई भी खुश नहीं थे। नरहरि भाई को भी संतोष नहीं था। मनु गांधी को भी कुछ शिकायत थी। सस्ता-साहित्य वालों की भी शिकायत रही है। इससे इस तरह की परिस्थिति निर्माण होती है।

आपके साहित्य पर भी जो अधिकार दिया गया है उससे कहीं आगे चलकर ऐसी स्थिति न आये। इस बारे में आप विचार कर कोई नियम बना दें। नहीं तो आपके जाने के बाद कुछ लोग उसके मालिक बन जायेंगे, उसमें से आमदनी निकालने का लोभ आ सकता है। जन-हितार्थ वह नहीं होगा। क्योंकि अभी जो गांधीजी का साहित्य है उसको लाखों की तादाद में छापने का प्रयास किया है। उससे उसे सस्ता किया जा सकता है। लेकिन उस पर भी नवजीवन ने रायल्टी की माँग की है।

इसलिए मेरा कहना है कि आपके जाने के बाद ५-१० साल तक आपको जाननेवाले लोग रहेंगे। अतः इन सारी बातों को सोचकर आप दो-तीन आदमियों की कोई 'बॉडी' बना दें या छोटा-सा ट्रस्ट बना दें। जो नियम आप बनायें उसके अनुसार साहित्य का प्रकाशन आदि हो।

विनोबा—यह जो तुमने विचार रखा, उसके साथ मेरी सहानुभूति है। यह सोचने लायक है। तुम पूरी तरह से योजना तैयार कर पेश करो। मैं भी चाहता हूँ कि लोगों को उस साहित्य का अच्छा उपयोग हो। उसके लिए उचित पाबंदी हो।

कमलनयन—मैं इस बारे में सोचूँगा। सर्व सेवा संघ को और ग्राम-सेवा मंडल को, जो आपकी तरफ से लिखित अधिकार दिये गये हैं, उसकी प्रति चाहिए।

विनोबा—टालस्टाय ने अपनी हर एक किताब पर लिखा था कि 'नो राइट रिजर्व'; लेकिन उनकी पत्नी ने कोर्ट में दावा किया कि हमने उनकी अमुक किताबों में मदद की, इसलिए उस पर हमारा अधिकार होना चाहिए। तो कोर्ट ने विचार कर दो-तीन किताबों पर उसको अधिकार दिलाया और बाकी 'नो राइट रिजर्व'...।'

कमलनयन—उसकी पत्नी को कोई कच्चा वकील मिला रहा होगा। पक्का होता तो सभी किताबों पर उसे हक मिला होता।

विनोबा—विचार-प्रचार के मामले में बहुत सुन्दर उदाहरण कल्याण प्रेस-वालों का है। कम-से-कम सर्व में और बिना गलती के काफी किताबों का प्रकाशन किया। उसके लिए उनको कागज का व्यापार करना पड़ा। यहाँ तक हिसाब करते हैं कि किताब की कीमत २३ पैसे आयेगी तो उसका मूल्य उतना ही रखेंगे २५ पैसे नहीं।

कमलनयन—काम का विस्तार काफी किया और अच्छा भी किया। अभी हनुमान प्रसादजी की तबीयत बिगड़ी है। आपकी तरफ से कुछ पूछताछ हो तो अच्छा लगेगा। उनको क्या और आपको क्या, लेकिन दूसरे लोगों को अच्छा लगेगा।

विनोबा—आप लोग व्यापार करते हैं लोहे का, शक्कर का आदि...साहित्य का भी व्यापार करेंगे ?

कमलनयन—ऊँचे दर्जे का काम ऊँचे दर्जे के लोग करते हैं। धर्म का व्यापार आप लोगों पर छोड़ रखा है। फिर भी साहित्य के व्यापार में पड़ा जा सकता है।

विनोबा—इस मामले में 'बाइबल सोसायटी' का मुकाबिला कोई नहीं कर सकता है।

कमलनयन—उनके सभी तरीके दुरुस्त हैं, ऐसा मेरा मानना नहीं है। बहुत कुछ चंदे में लाकर लोगों में मुफ्त बाँटना, धर्म के लिए लोगों को प्रभावित करना, यह सब रहता है।

विनोबा—लेकिन उन्होंने 'बाइबल' का अनुवाद एक हजार भाषाओं में किया है। मैं असम में गया था। वहाँ पर कुल ५२ भाषाएँ हैं। उन सभी भाषाओं में उन्होंने बाइबल का अनुवाद किया है। उसको रोमन-लिपि में लिखा है। वह हमने पढ़ना शुरू किया तो जो मिशनरी आया था उसने कहा कि बिलकुल ठीक उच्चारण कर रहे हैं।

कमलनयन—हो सकता है। प्रचलित भाषाओं में किया होगा, अप्रचलित भाषाओं में नहीं। विशेषतः आदिवासियों की भाषाओं में उसका अनुवाद धर्म-प्रचार की दृष्टि से किया होगा, मारवाड़ी भाषा में शायद अनुवाद नहीं होगा।

अमेरिका के एक पादरी से चर्चा में हमने पूछा कि अमेरिका में धर्म का प्रभाव बढ़ रहा है या घट रहा है ? तो उसने जवाब दिया कि पिछले कुछ वर्षों में वहाँ धर्म का प्रभाव ३०० परसेंट बढ़ा। मैं तो यह सुनकर चकरा गया कि इतना धर्म का प्रभाव अमेरिका में बढ़ा है ! फिर मैंने पूछा कि इतना सही हिसाब आपने कैसे निकाला। उनका उत्तर था कि पहले चर्चों में दान की रकमें इतनी भारी थीं, और अब इतनी अधिक आने लगी है। तो धर्म के प्रभाव का पैमाना वे दान की शक्ति से करते हैं। वहाँ पर अध्यात्म की भूख जगी है और भौतिक विकास ज्यादा हुआ है। वह अध्यात्म की भूख है, इसका उनको भान नहीं है।

विनोबा—अध्यात्म अत्यन्त दारिद्र्य में टिकता नहीं और अधिक संपत्ति में भी टिकता नहीं। उसके लिए समत्व चाहिए।

अभी जयप्रकाशजी से बातें हुई थीं। व्यापारी वर्ग को गांधीजी ने ट्रस्टीशिप स्वीकार करने को कहा था। मैंने सुझाया कि जैसे हमने ग्रामदान को सुलभ बनाया

लोकतंत्र की निरर्थक हो रही प्रक्रिया

केन्द्र में लोकसभा व राज्यसभा तथा प्रान्तों में विधानसभाओं के अधिवेशन इस महीने शुरू हो रहे हैं। जनतंत्र में ये सभाएँ और सदन ही सारी समाज-व्यवस्था की धुरी हैं। इन सभाओं में जनता के प्रतिनिधि इकट्ठे होकर देश और प्रान्त की समस्याओं पर विचार-विनिमय करें और उनके हल निकालें, इसके लिए इनका निर्माण हुआ है। पर लोकसभा, विधान-सभाओं के अधिवेशन शुरू होते ही तरह-तरह के प्रदर्शन, जुलूस, हड़ताल आदि का क्रम भी शुरू हो जाता है और इन सदनों की कार्रवाई कभी शान्तिपूर्ण ढंग से नहीं चल पाती। समाज के जीवन में प्रदर्शन, जुलूस, हड़ताल, सत्याग्रह आदि चीजों का स्थान नहीं, सो बात नहीं है। पर हमारे देश में ये चीजें जिस हद तक पहुँच गयी हैं और इनका जो स्वरूप बनता जा रहा है, वह हर नागरिक के लिए गम्भीरता से सोचने का विषय है। क्योंकि, जिस जनतंत्र के नाम पर यह सब किया जा रहा है उस जनतंत्र के लिए ही इन चीजों के कारण खतरा बढ़ता जा रहा है। इन हड़तालों और प्रदर्शनों आदि के कारण आये दिन वातावरण अशान्त हो जाता है, लाठी, अश्रु गैस और गोली चलती है। इन चीजों को भड़कानेवाले नेताओं का तो शायद ही कुछ बिगड़ता है, पर कई बेगुनाह और गरीब लोग मारे जाते हैं, रोजमर्रा का सामाजिक जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। इतना ही नहीं, लोक-सभा तथा विधान-सभाओं के अधिवेशनों के साथ उनका सम्बन्ध जुड़ जाने से इन सभाओं की कार्यक्षमता और कर्तव्यपालन पर भी गम्भीर असर पड़ रहा है।

अधिवेशन शुरू होने के साथ ही हड़ताल, प्रदर्शन, जुलूस, भूख-हड़ताल, घेराव आदि के जरिये इन पर तरह-तरह के दबाव डालने की कोशिश होती है। सदनों के अन्दर भी हुल्लड़बाजी, गाली गलौज, प्रदर्शन और हाथापाई तक की नौबत पहुँच गयी है। नतीजा यह हुआ है कि ये सभाएँ और सदन जिस काम के लिए बने थे, उसके लिए अयोग्य साबित हो रहे हैं। कई प्रदेशों में तो स्थिति ऐसी बनी है कि सत्ताधारी पक्ष या सरकार विधानसभाओं को बुलाकर बला मोल लेना नहीं चाहते। इसलिए केवल उनकी कानूनी खानापूरी के लिए अनिवार्य हो तभी बैठकें बुलाना, अन्यथा उन्हें टालने और अध्यादेशों के मारफत राज चलाने, की वृत्ति बढ़ती जा रही है। विधायकों ने अपने मासिक वेतन बाँध लिये हैं, और सदन की बीसियों कमेटियों की मीटिंगों के बहाने सफर-भत्ता और दैनिक भत्ता आदि भी उन्हें मिलता रहता है, इसलिए उन्हें भी सदनों की बैठक हो ही, इसकी विशेष चिन्ता नहीं रहती। लोकतन्त्र की प्रक्रिया इस प्रकार बेकार हो रही है। इस परिस्थिति से फायदा सिवाय अव्यवस्था चाहनेवालों के और किसी का नहीं है। इस खतरे से मुल्क को बचाना हो तो तटस्थ और विचारशील नागरिकों को इसकी ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करना और लोकशिक्षण के संगठित कदम उठाना चाहिए।

उपद्रव की आदी सरकार

दुर्भाग्य की बात है कि सत्ताधारी लोग भी बिना उत्पात, प्रदर्शन, खूनखराबी या हुल्लड़बाजी के उचित और न्यायपूर्ण बात नहीं करते। राजस्थान के गंगानगर-क्षेत्र में जमीनें नीलाम करके देने के विरुद्ध भूमिहीन लोगों के नाम पर एक बड़ा आन्दोलन चल रहा है। पहले सरकार ने नीलामी रोकने की माँग को ठुकरा दिया, पर जब 'सत्याग्रह' ने जोर पकड़ा, हड़तालें हुईं, प्रदर्शन हुए, हुल्लड़बाजी हुई, दस-पाँच जानें गयीं तब सरकार द्वारा गंगानगर-क्षेत्र में नहरी जमीनों की नीलामी को रोकने की घोषणा की गयी। सरकार के इस फैसले की घोषणा करते हुए राज्य-पाल महोदय ने विधानसभा के अपने औप-चारिक भाषण में यह दलील दी कि नीलाम में भूमिहीन लोग जमीन नहीं पा सकते थे, इसलिए अब नीलाम बन्द किया जा रहा है। आश्चर्य है कि यह सामान्य-सी बात सरकार की समझ में इससे पहले क्यों नहीं आयी? क्या यह साफ जाहिर नहीं है कि सत्याग्रह, गिरफ्तारियों, गोलीकांड और प्राणों की आहुति के परिणाम-स्वरूप ही सरकार को अपना नीलाम करने का निर्णय बदलना पड़ा?

जमीनों को नीलाम करने का फैसला हर हालत में गलत था। जो सरकार समाजवाद के नारे लगाती है वह जमीन जैसे प्राकृतिक और उत्पादन के प्राथमिक साधन को सिर्फ 'बढ़े सो पावे' के आधार पर पैसेवालों के हाथ बेचे, यह कितनी असंगत बात है? नहर बनाने में करोड़ों रुपया खर्च हुआ है, इसलिए उस रकम की वसूली के लिए जमीनों का नीलाम जरूरी है। यह दलील भी निरर्थक है। सरकार विकास के काम करती है, पर

भूदान-यज्ञ।

', '७०

तो वह चलने लगा, वैसे ही बापू के बताये हुए ट्रस्टीशिप सिद्धान्त को सुलभ बनाया

तो वह चलने लगा, वैसे ही बापू के बताये हुए ट्रस्टीशिप सिद्धान्त को सुलभ बनाया जाय। उसमें व्यापारी लोग बतायें कि इतनी-इतनी बातें मुश्किल मालूम होती हैं, और इतना-इतना हम कबूल करते हैं। उसके अनुसार सुलभ ट्रस्टीशिप की योजना की जाय। तदनुसार यदि १०-५ बड़े व्यापारी उसको स्वीकार करते हैं, तो उसका भी व्यापक आन्दोलन हो सकता है। उसका सम्बन्ध ग्रामदान, ग्रामसभा के साथ जोड़ा जाय।

कमलनयन—जयप्रकाशजी ने बम्बई में इस बारे में बात की थी। कोई पुस्तिका भी निकाली है। रामकृष्ण ने मुझे वह बताया था, उसको मैंने मंजूरी दी थी। मेरा ख्याल है, उसको काफी लोगों ने मंजूरी दी होगी। लेकिन वह अधिक चला नहीं।

विनोबा—तुम भी इस पर सोचो।

कमलनयन—मैंने इस पर सोचने का काम रामकृष्ण पर सौंपा है।

शान्तिकुटी, वर्धा

१३-१-१९७०

व्यापार के लिए नहीं ! न ऐसा करके वह किसी पर अहसान करती है। क्या कारखानेदारों को सरकार करोड़ों-अरबों रुपया उधार नहीं देती ? उधार ही नहीं बल्कि वह पूंजी के रूप में भी करोड़ो रुपया उन्हें देती है। उसी प्रकार जमीन के विकास में लगनेवाली रकम भी सरकार को पूंजी के रूप में या उधार लगानी चाहिए। यह उसका कर्तव्य है। ये सब बातें सरकार के ध्यान में नहीं हैं सो बात नहीं है। पर उसका असली मकसद तो पैसेवालों को फायदा पहुँचाने का रहता है, क्योंकि सरकार में या विधानसभाओं में जो लोग हैं वे उन्हीं के पैसे या मदद से वहाँ जा पाते हैं। यह बात सामान्य नागरिक को और मतदाता को समझने की जरूरत है, जिससे वह ऐसी परिस्थिति पैदा कर सके कि चुनावों में उम्मीदवार मतदाता स्वयं खड़े करें, न कि केवल पार्टियों के द्वारा खड़े किये गये उम्मीदवारों में से किसी को अपना मत देकर संतोष मान लें।

मुख्यमंत्री की बहक

राजनैतिक नेता अपनी सत्ता को कायम रखने के लिए कभी-कभी अनर्गल, दुर्भाग्यपूर्ण और भड़कानेवाली बातें कहने में भी नहीं हिचकते। इसका एक उदाहरण अभी कुछ दिन पहले मध्य-प्रदेश की विधानसभा में वहाँ के मुख्यमंत्री श्री श्यामाचरण शुक्ल ने नर्मदा नदी के विवाद के सम्बन्ध में जो कुछ कहा, उससे मिलता है। कहीं भी बाँध बनाकर पानी को रोका जाय तो उसके नीचे कुछ-न-कुछ जमीन का डूबना स्वाभाविक है। नर्मदा नदी पर बाँध बनाने के सम्बन्ध में गुजरात और मध्य-प्रदेश के बीच कुछ बातों का विवाद चल रहा है। विरोधी पक्ष के किसी सदस्य के यह आरोप लगाने पर, कि मध्य-प्रदेश की सरकार इस मामले में असावधान है, शुक्लजी ने जोश में आकर कहा, "हमारे राज्य की एक इंच जमीन भी मध्य-प्रदेश की इजाजत के बिना डूब में नहीं ली जा सकती। इस राज्य की साढ़े तीन करोड़ जनता की लाशों पर ही यह संभव है।"

सामान्यतया देश के एक प्रदेश द्वारा दूसरे प्रदेश की जमीन बिना उसकी इजाजत के दबा लेने का सवाल नहीं उठता। इसलिए शुक्लजी को इतना जोश में आने की जरूरत नहीं थी। पर अगर वैसा हो भी जाय तो क्या गुजरात कोई विदेशी राष्ट्र है जो आक्रमण करके मध्य-प्रदेश की जमीन दबा रहा है? और जिसके कारण शुक्लजी को एक-एक इंच जमीन के लिए 'अपनी' साढ़े तीन करोड़ 'प्रजा' के बलिदान करने जैसी अनर्गल बात का उच्चारण करने की नौबत आयी ? अपने दलगत स्वार्थों या सत्ता को सुरक्षित रखने के आवेश में राजनैतिक नेताओं को यह भी भान नहीं रहता कि वे क्या बोल रहे हैं ? उनकी इस तरह की भड़कानेवाली बातें अखबार, रेडियो आदि के जरिये लाखों लोगों में फैलती हैं, उनसे गलत भावनाओं को उत्तेजना मिलती है, दोनों पक्षों की खींचतान बढ़ती है, और इस प्रकार साधारण प्रश्न भी उलझ जाते हैं। राष्ट्र को अक्सर इसकी बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। महाराष्ट्र-मैसूर सीमा, तेलंगाना, चण्डीगढ़, फाजिल्का आदि के विवाद इसी तरह के क्षुद्र राजनैतिक स्वार्थों की टक्कर से उलझे हुए सवाल हैं जो आज राष्ट्र के लिए सरदर्द बन गये हैं। इनका निपटारा आसानी से अदालती या पंच-फैसले से हो सकता है, पर राजनैतिक नेता यह नहीं चाहते। वे इनका श्रेय अपने लिए चाहते हैं। देश की लाखों-करोड़ों जनता का इन प्रश्नों के इधर या उधर निपटारे से कुछ खास बनता या बिगड़ता भी नहीं है। स्वार्थसाधन होता है नेताओं का, लेकिन उपद्रवों में जानें जाती हैं गरीब और बेगुनाह लोगों की। देश के जो साधन, समय और शक्ति विकास के कामों में खर्च होने चाहिए, वे होते हैं इन निरर्थक झगड़ों को सुलझाने के प्रयत्नों में। —सिद्धराज ढड्ढा

अध्यात्म के लिए समता

अध्यात्म की स्थिति गाड़ी जैसी है। जहाँ ऊपर चढ़ना होता है, वहाँ बैल रुक जाना चाहते है और निचान आती है, तो वे जोरों से दौड़ने लगते हैं। ऐसे समय गाड़ी गड्ढे में जा सकती है। दोनों अवस्थाओं में गाड़ी हाँकनेवाले को सावधान रहना पड़ता है। मात्र जहाँ समतल जमीन आती है, वहाँ गाड़ीवाला सो भी सकता है। सुख और दुःख अध्यात्म के घातक हैं और सुख-दुःख से भिन्न समता अध्यात्म में सहायक। सुख में इन्द्रियाँ जोरों से दौड़ती हैं। उन्हें रोकना पड़ता है।

तात्पर्य अधिक सुखी होना अध्यात्म के विरुद्ध है। अधिक दुःखी होना भी उसके विरुद्ध जाता है। तरकारी में अधिक नमक हुआ, तो दुःखी और कम हुआ तो भी दुःखी। सुख-दुःख का ऐसा ही है। जो मध्यम मार्ग है, उसी से अध्यात्म बनता है। गरीब मित्र के लिए हमें सहानुभूति होती है। वैसे ही श्रीमान् मित्र के लिए भी दया, अनुकम्पा होनी चाहिए। मध्यम मार्ग ही अध्यात्म के लिए अनुकूल पड़ता है। हिन्दुस्तान में दारिद्र्य है, इसलिए दारिद्र्य-निवारण हमारे लिए काम हो जाता है। पर, कितना भी दारिद्र्य-निवारण करें, परमात्मा की कृपा से वह रहेगा। भारत में प्रति व्यक्ति एक एकड़ जमीन है, तो भी 'कर गुजरान गरीबी में' यह चलता ही रहता है। दारिद्र्य मिटाने का आदर्श रखेंगे और कहेंगे कि दारिद्र्य मिटाना अध्यात्म के लिए अनुकूल है, तो गलत नहीं होगा। लेकिन सिद्धान्त के तौर पर सुख, दुःख दोनों अध्यात्म के लिए घातक हैं। —विनोबा

लार्ड रसेल से एक मुलाकात : अवशेष स्मृतियाँ

इस महीने की दूसरी तारीख को एक महान् मनीषी हमारे बीच से चला गया। सारे आलम में उसकी शोहरत थी और पिछले पचहत्तर बरस से, जब उसकी उमर चौबीस साल की थी, तभी से वह लगातार लेख, निबन्ध, कहानियाँ और पुस्तकें लिख रहा था। दार्शनिक था वह, वैज्ञानिक भी था, गणितज्ञ भी था, शिक्षक भी था और विद्वान तो था ही। उसने चार शादियाँ कीं, जिनमें उसकी तीन औलादें हैं। उसे अनेक विश्वविद्यालयों से डाक्टरेट की डिग्रियाँ मिलीं, ब्रिटेन की महारानी ने 'आर्डर आव मेरिट' नाम का सर्वोच्च ब्रिटिश पदक दिया और विश्व-विख्यात नोबल पुरस्कार भी उसे मिला। दुनिया में आज जो बड़े-बड़े शासक या नेता हैं, उन सबने अपने बचपन और जवानी में उसकी किताबें पढ़ी थीं और उसकी जितनी ज्यादा किताबों का नाम गिना सकें, समाज उन्हें उतना ही ज्यादा ज्ञानी मानता है। जवाहरलाल और चू-आन-लेई, कैनेडी और खु्श्चेव, मैकमिलन और हेरल्ड विल्सन, क्वामे एनक्रूमा और नासिर, मार्शल टीटो और कैनेथ काउण्डा, सभी से उसकी जान-पहचान थी और उसकी चिट्ठी पाना उनके लिए एक दुर्लभ सम्मान था।

बड़ा अनोखा आदमी था वह। साक्षात् मस्तिष्क की मूर्ति था। सिर से पैर तक दिमाग ही दिमाग था। धर्म नाम की चीज उसे छू तक नहीं गयी थी। कोई सम्राट हो या प्रधानमंत्री, किसी से वह दबता नहीं था। अपने स्वतंत्र मन की दुनिया में वह मस्त रहता था और सारा नाटक देखा करता था। जिसे ईश्वर कहते हैं उसे वह नहीं मानता था, लेकिन उसकी अपनी आत्मा की चेतना जबरदस्त थी और वह कहा करता था कि हर आदमी, अगर सम्भव हो तो ईश्वर बनना पसन्द करेगा, मगर चन्द लोग ऐसे हैं जिन्हें इसकी असम्भवता स्वीकार करना मुश्किल पड़ता है।

विचार से वह विद्रोही था। पाखण्ड और आडम्बर से हमेशा दूर भागता था। झूठ या बनावट की उसमें गन्ध तक नहीं थी। नर-नारी के खुले सम्बन्धों का वह हामी था। जिन्दगी उसे प्यारी थी और जीने का मजा उसे खूब आता था। नौजवानों को वह खुली छूट देना चाहता था और सिवाय अपने विवेक के, किसी दूसरे प्रभु को वह नहीं मानता था। उसके अन्दर घमंड नहीं था, लेकिन खुदी इतनी बुलन्द थी कि खुदा की खुदाई से भी टक्कर लेती थी।

× × ×

बर्टी, यही उनके घर का प्यारा नाम था और दुनिया उसे लार्ड बर्ट्रेण्ड रसेल कहा करती थी, वे इन गुणों से भी बढ़कर ज्ञानी मिलेंगे, वैज्ञानिक मिलेंगे, दार्शनिक मिलेंगे, लेखक मिलेंगे, लेकिन बर्टी से मुझे प्यार है, उनकी एक खास विशेषता के कारण। वह यह कि, जो लोग धनी होते हैं, चाहे कलम के, चाहे ज्ञान के, चाहे हुकूमत के, चाहे पैसे के और चाहे अकल के, उनके सर पर वह हमेशा बोझ बना रहता है, जिससे वे दबे रहते हैं और दूसरों को भी दबाते रहते हैं। बर्टी भी पहले इसी मर्ज के शिकार थे, लेकिन अपने जीवन के आखिरी बारह बरसों में उन्होंने अपना काया-कल्प कर डाला, सारे बोझ उतार फेंके, और एकदम हल्के हो गये। अपने अहंकार की सारी जड़ों को उन्होंने हिला डाला और उनकी आत्मा तड़प उठी भूत-मात्र से एकरस होने के लिए।

बर्टी ने सत्याग्रह कर दिया। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के आगे उन्होंने धरना दिया और आणविक शस्त्रों के खिलाफ दुनिया को और विशेषकर अपनी सरकार को चेतावनी दी। नब्बासी बरस के बूढ़े ने जवानों को मात कर दिया और कारागार में अपनी समुराल बना ली। एक हफ्ते में ही छूटकर बाहर आ गये, लेकिन अब वह पुराने बर्टी नहीं रह गये थे। उन्होंने मानो गांधी का साक्षात्कार कर लिया। और इसी नये बर्टी से मैंने मुलाकात की।

× × ×

बात है १९६३ की। इंग्लैंड में भयानक सर्दी पड़ रही थी। जानकार लोगों का कहना था कि सत्तर बरस बाद ऐसी आफत आयी थी और लन्दन शहर हो या कोई अन्य जगह, हर कहीं बर्फ ही दिखाई देती थी।

उसी समय आक्सफोर्ड में विश्व भर के शांतिवादी कार्यकर्ताओं का सम्मेलन था। बर्टी को बुलाया गया था, लेकिन नहीं आये। मैंने उनके निजी सचिव से उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की। वह मुझे अपनी कार से बर्टी के गाँव ले गये, गाँव में एक होटल में मुझे ठहराया और सबेरे का समय मेरे लिए तय कर दिया।

साढ़े आठ बजे थे। बर्टी अपने घर के ड्राइंग रूम में, अंगीठी के पास एक कुर्सी पर बैठे थे। जाते ही, मैंने उनके गले में अपने हाथ के कते सूत की एक माला डाली।

वे सहम गये। उनका सचिव भी घबरा गया कि क्या कर दिया है।

मगर बर्टी ने अपने को संभाला और मुस्कराकर बोले, "यही है जिसे गांधी बहुत पसन्द करते थे?"

मैंने कहा—"जी! मैंने अपने चर्खे पर कल जो सूत काता है उसी की यह माला आपको समर्पित कर रहा हूँ।"

कुछ देर बाद मैंने पूछा, "क्या आप गांधी से मिले थे?"

"मुझे दुःख है कि उनसे कभी भेंट नहीं कर सका।"

"सन् १९३१ की गोलमेज परिषद में जब वह आये थे, तब तो देखा होगा?"

"नहीं, तब भी नहीं देखा।" और सुनिये, लार्ड बर्ट्रेण्ड रसेल क्या कह रहा है।

"और, उस समय तो दार्शनिक होने

मैं मुझे इतना अभिमान था कि गांधी से बात करना कसरे-शान समझता था।"

वर्टी के सन् १९६३ के ये उद्गार हैं—१९३१ के वर्टी के बारे में।

आगे देखिये

"मुझे अपनी उस नादानी पर तरस आता है।"

आगे और।

"लेकिन, अब मैं गांधी को समझ गया हूँ और गांधी का ही काम कर रहा हूँ। कर रहा हूँ न?" यह कहकर मेरी ओर देखने लगे।

"जी हाँ, आपके सत्याग्रह की गूँज दुनिया के कोने-कोने में पहुँच गयी है और वही मुझे यहाँ खींच लायी है।"

वर्टी कहते हैं, "गांधी के काम के बिना दुनिया का निस्तार नहीं है। अगर आणविक शस्त्रों को हमने नहीं खत्म किया तो हम ही खत्म हो जायेंगे।"

बातचीत हो रही थी कि उनका कुत्ता आ पहुँचा। वह पहले मेरी तरफ आया। वर्टी ने उसे प्यार किया तो वह उनकी गोदी में चला गया। उसने अपना मुँह उनके मुँह से लगाया। वर्टी बहुत प्रसन्न थे और बोले, "बहुत कोशिश करता हूँ लेकिन गांधी की एक बात ऐसी है जिस पर अमल नहीं कर पाता।"

"वह क्या?" मैंने उत्सुकता से पूछा।

"गांधी कहते थे सबसे प्यार करो। यह मेरे लिए मुश्किल पड़ रहा है।"

"कैसे?"

"मैं प्यार तो करता हूँ, चाहता भी हूँ कि सबसे प्यार करूँ, लेकिन नहीं कर पाता और मेरा दिल बगावत कर बैठता है।"

"जैसे?"

"जैसे अमेरिकी विदेश मंत्री—जान फास्टर डलेस। उसे मैं अमेरिकन प्रतिक्रियाशीलता का भयानक प्रतीक मानता हूँ और मुझे उससे प्रेम करते नहीं बनता। आपने समझी मेरी बात?"

"जी हाँ, लेकिन मैं समझता हूँ कि आपको जो शिकायत है, वह डलेस से व्यक्तिगत नहीं है, बल्कि उसकी प्रतिक्रियावादिता से है।"

"तुम ठीक कहते हो। लेकिन जो भी हो, मैं उसे प्यार तो नहीं कर पाता।"

यह कहकर वर्टी हँसने लगे और हँसते-हँसते कहने लगे, "लेकिन इस मामले में यह मेरा कुत्ता मेरा उस्ताद है, जो भी मेरे घर आता है उससे यह प्यार करता है।"

यह कहकर कुत्ते को थपथपाने लगे।

हम सब हँस पड़े। समय काफी हो गया था। वर्टी के सचिव ने इशारा किया। मैं चलने को हुआ। वर्टी ने मुझे रोका और लाकर अपना एक सुवेनीर (स्मारिका) मुझे दिया।

उनको मैंने प्रणाम किया और विदा ली।

विनोबा-निवास से :

'मैं आपसे प्रेम करता हूँ'

सेवाग्राम में अन्तरराष्ट्रीय युवकों का सेमिनार शताब्दी के निमित्त हो रहा था। एक दिन दोपहर को ये युवक-युवतियाँ बाबा के सामने उपस्थित हुई। मारिशस, आस्ट्रेलिया, इंग्लैंड, स्विट्जरलैंड, अमेरिका, नेफा, नगालैण्ड, तमिलनाडु आदि अलग-अलग देशों-प्रदेशों के उस समाज ने बाबा के हाथ में सवालों की लम्बी फेहरिस्त रखी। बाबा ने जवाब में कहा, "मैं बरसों तक बोल चुका। अब मैं अशब्द की शक्ति देखना चाहता हूँ। भारत में एक पागलपन है। यहाँ दर्शन से तृप्ति होती है। लाखों लोग केवल दर्शन पाने जाते हैं। बोलने की अपेक्षा नहीं करते। दर्शनमात्रेण आनन्दः। भारत का यह पागलपन बाबा में भी है। हिन्दू-धर्म की विशेषता है, परमात्मा का वर्णन करता है—सहस्रशीर्ष सहस्राक्ष सहस्रपात—सैकड़ों हाथ, सैकड़ों पाँव, सैकड़ों आँखवाला, यह परमात्मा का दर्शन है। भारत की पदयात्रा १३-१४ साल हुई। प्रत्येक दर्शन में मुझे परमात्मा का साक्षात्कार हुआ। बहुत आनन्द हुआ। वही आनन्द आपके दर्शन से हुआ।"

पिछले सप्ताह बादशाह खान का दुबारा आगमन हुआ। इस वक्त वे खास बाबा से मिलने आये थे। उनका निवास महिलाश्रम में था। बाबा उनके स्वागत के लिए, उनसे चर्चा करने के लिए, उनके निवास पर जाते थे। महाराष्ट्र खादी-हस्था की ओर से, खुदाई खिदमतगारों के लिए खादी की एक हजार वर्दियाँ देने का प्रस्ताव श्री सोवनीजी ने रखा। खान साहब ने कहा, "मैं वर्दीवाले खिदमतगार नहीं बनाना चाहता। ऐसी वर्दियाँ आप मुझे मत दीजिए।" सारे खादी-कार्यकर्ताओं का उत्साह भंग हो रहा था। बाबा ने बीच की राह निकाली। खानसाहब के लिए एक पोशाक तैयार करके दी जाय। खानसाहब केवल दो जोड़ी कपड़े पास रखते हैं, ज्यादा परिग्रह नहीं। बाबा ने कहा, "आपकी एक जोड़ी पोशाक हमें दीजिए और उसके बदले में एक नयी लीजिए।" खानसाहब ने कहा, "मुझे पोशाक मत दीजिए, मैंने अभी-अभी नयी सिलायी है। मेरी चादर पुरानी हो गयी है, तो केवल एक चादर दीजिए।" "आपको हम चादर भी देंगे और नयी पोशाक भी देंगे।" बाबा ने कहा। खानसाहब को प्यार के सामने झुकना पड़ा।

एक दिन बड़ी फजर, ब्राह्ममुहूर्त पर एक अपरिचित व्यक्ति गीता के वर्ग में आकर चुपचाप कोने में बैठ गया। वर्टी आज वर्टी नहीं है। रह रहकर उनकी याद आती है, उनके हृदय-परिवर्तन की, दुनिया के दुख-दर्द से समरूप होने के लिए उनकी कोशिश की, अत्याचार के खिलाफ उनके सिंहनाद की। उनके जाने से हमने बहुत कुछ खोया है—शान्ति ने अपना पुजारी, मानवता ने अपना प्रहरी, विज्ञान ने अपना भाष्यकार और भलाई ने अपना साथी। लेकिन उनका गम करने की कोई वजह नहीं है, हमें लड़ाई जारी रखनी है और आगे बढ़ना है, ताकि इस दुनिया से आणविक शस्त्रों का ही नहीं शस्त्र-मात्र का खात्मा हो, और सब जगह करुणा व प्रेम का साम्राज्य हो। —सुरेश राम

खतम होने के पहले ही, उठकर इधर-उधर घूमने लगा। जयदेव भाई ने उसे समझाया कि ठीक तरह से बैठे। वर्ग खतम होने पर बाबा ने उससे उसकी पूछताछ की। उसने कहा, "मैं कच्छ से आया हूँ। आसाम में मेरे चाचा का व्यापार था, बागान थे। आजकल बीमार हूँ। सिर में चक्कर आता है, भ्रम होता है। कुछ दिन नागपुर के मानसिक अस्पताल में था, वहाँ से ठीक होकर आया, कुछ अच्छा रहा, लेकिन फिर से गड़बड़ शुरू हुई। इसलिए अब प्राकृतिक चिकित्सा के लिए आया हूँ।"

वह वहीं बैठा रहा, लेट भी गया। इधर बाबा का अध्ययन चला, फिर नाश्ता या और बाबा ने आराम किया। आराम के बाद अध्ययन के लिए मेज पर गुन्बोव की किताब देखने लगे। किताब वहाँ थी नहीं। जयदेव भाई आये, बाल-भाई आये। किताब ढूँढ़ने लगे। लेकिन किताब मिली नहीं। जयदेव भाई को शक हुआ। वह भाई अब वहाँ नहीं था। जयदेव भाई प्राकृतिक चिकित्सालय (शान्ति-कुटी की बगल में ही प्राकृतिक चिकित्सालय है) में चले गये। उससे पूछा, "बाबा की किताब आपने ली है?" उसने 'ना' कहा। जयदेवभाई ने फिर से पूछा—"पढ़ने के लिए ली होगी।" वह उठा और झोले में से किताब निकालकर उसने जयदेवभाई को दे दी। सुबह दस बजे सबसे बातें करते हुए बाबा ने इसका जिक्र किया और कहा—"वेदान्त सिद्ध हुआ। 'मैं पागल हूँ' यों कहकर वह स्वयं अस्पताल में दाखिल हुआ। यानी वह खुद पागल नहीं है। होता तो वह आता नहीं, उसकी बुद्धि पागल है। अपने पागलपन का वह साक्षी है।"

डा० वारदेकर कवि मनोहर पाडगाँवकर को लेकर आये थे। श्री पाडगाँवकर महाराष्ट्र के एक लोकप्रिय कवि हैं। शताब्दी के निमित्त 'मुक्तात्मा' नाम की एक किताब प्रकाशित हो रही है, जिसमें महाराष्ट्र के अग्रणी साहित्य-लेखकों के गांधीजी पर स्फुट लेख संगृहीत हैं। पाडगाँवकरजी ने बाबा से अनुरोध किया कि बाबा उस पुस्तक के लिए प्रस्तावना लिखें। बाबा ने कहा, 'मैं तो इन दिनों प्रस्तावना नहीं लिखता।" पाडगाँवकरजी ने पुस्तक की कच्ची प्रति बाबा को दिखायी। उसमें प्रस्तावना के लिए जगह खाली रखी थी। बाबा ने कलम उठायी और उस जगह पर लिख दिया—"सत्य, प्रेम, करुणा। विनोबा का जयजगत्"। पाडगाँवकरजी कहने लगे, "प्रस्तावना के लिए अक्सर 'दो शब्द' शीर्षक दिया जाता है। मैं इसे 'तीन शब्द' शीर्षक दूँगा।"

एक दोपहर को श्वेतवस्त्र पहना हुआ एक गौरवर्ण भाई बरामदे में विराजमान हुआ। सिर पर भी शुभ्र कपड़ा बाँधा हुआ था। ध्यानस्थ बैठा था। बाबा बाहर धूप में बैठे, तब वह भी उनके सामने बैठा। बालभाई ने उसका परिचय बाबा को दिया—"आप मेक्सिको से आये हैं।"

बाबा, "यहाँ क्या करते हैं?"

"यहाँ मैं एक कम्यूनिटी (सामूहिक जीवन) बनाना चाहता हूँ। आपका आशीर्वाद चाहिए। मैं शांतिदास* का साथी हूँ। मेरे यूरोप और अमेरिका के मित्रों ने बताया कि तुम भारत आ रहे हो, तो विनोबा से जरूर मिलना। उनके सत्संग में चन्द मिनट बिताना।"

चन्द मिनट के बाद उसने कहा, "कहते हैं, हिन्दू लोग मेक्सिको गये थे। मुझे लगता है, मैं उन्हीं में से हूँ।"

बाबा, "तुम दीखते हो मेक्सिको के ब्राह्मण। पवनार में बहनों की एक 'कम्यूनिटी' है, वहाँ जाओ। वहाँ मेरे भाई हैं।"

उसने कहा, "मैं वहाँ गया था। आपके भाई से मिला। वे बहुत सुन्दर हैं।"

बाबा, "तुम्हारे जैसे ही दीखते हैं।"

---

*दक्षिण फ्रांस में आपका आश्रम है। 'शान्तिदास' नाम बाबा ने दिया, जब आप भारत आये थे। बिहार में भूदान यात्रा में कुछ दिन वे बाबा के साथ रहे। उन्होंने भूदान-यात्रा पर फ्रेंच में एक किताब लिखी है।

लड़के ने बाबा के पाँव छुए, "मुझे आशीर्वाद दीजिए। आई लव यू, आई लव यू' (मैं आपसे प्रेम करता हूँ)। मुझे आशीर्वाद दीजिए, कहकर वह फूट फूटकर रोने लगा।" बाबा ने उसके सिर पर हाथ रखा।

बाद में इस घटना का जिक्र करते हुए बाबा ने कहा, 'उस लड़के ने न मुझे कभी देखा था, न मैंने उसे। फिर भी उसकी उत्कट भावना बनी। ऐसे किंड्रेड-स्पिरिट (सजातीय आत्मा) होते हैं दुनिया में। प्रत्यक्ष स्पर्श की जरूरत नहीं, फिर भी भावना बनती है।"

दिसम्बर के आखिर में बाबा के बायें पैर में घुटने के पास दर्द शुरू हुआ। सोलह साल पहले भूदान-यात्रा के आरम्भ में, रास्ते में एक साइकिल-सवार की साइकिल ठीक उसी जगह टकरायी थी। कमी दिन उसको दुःख रही थी। लेकिन उसके सोलह साल के बाद भी उसी जगह अचानक दर्द शुरू हुआ है। ठंड के कारण होगा। निर्गुंडी पत्ती की भाप और 'इन्फ्रारेड रेज' का सेंक दिया जाता था। अब पैर ठीक है। दर्द मामूली है।

बाबा जब सेंक लेने के लिए बैठते थे, तब उस समय एक चींटी वहाँ आया करती थी। बाबा उसका निरीक्षण करते रहते थे, "यह कल की ही चींटी है क्या? बाबा से दोस्ती करने आती है।" कभी कहते हैं, "ज्ञानदेव महाराज ने सिद्ध पुरुष का वर्णन किया है कि वह स्वयं की आलोचना सुनता है और चींटी का मानस पहचानता है—मग समुद्र पैलाडी देखे। स्वर्गीचा आलोच् आइके। मनोगत भोलखे। मुंगीयेचे।" कभी तुकाराम महाराज को याद करते हैं, 'मुंगी आणि राव आम्हां सारखाचि जीव (चींटी और धनी मनुष्य हमारे लिए समान हैं)।"

एक दिन तूफान आया, बारिश आयी, ओले गिरे। उस दिन चींटी आयी नहीं। बाबा ने कहा, "आज वह नहीं आयी, अच्छा नहीं लगा।"

—कुसुम

('मैत्री' से साभार)

महान् बा को नमन

'बा का जबर्दस्त गुण सहज अपनी इच्छा से मुझमें समा जाने का था। मैं नहीं जानता था कि यह गुण उनमें छिपा है।...लेकिन जैसे-जैसे मेरा सार्वजनिक जीवन उज्ज्वल बनता गया, वैसे-वैसे बा खिलती गयीं और पुख्ता विचारों के साथ मुझमें यानी मेरे काम में समाती गयीं।...'

—गांधीजी

'...मुझे अगर अब किसीसे ज्यादा उम्मीद है—सेवा करने की, कौम की खिदमत करने की—तो बहनों से, औरतों से है, क्योंकि उन लोगों में अभी तक खुद-गरजी नहीं आयी है...। परमात्मा के लोग बेगरजी होते हैं और परमात्मा का आशीर्वाद वे ही हासिल करते हैं।...'

—सीमांत गांधी (बादशाह खाँ)

सेवा, त्याग एवं करुणा की मूर्ति महान् कस्तूरबा को उनकी सौवीं जन्म-शती के अवसर पर शतशः नमन, जिनके कारण यह सत्य उद्घाटित हुआ और युग-पुरुषों को अनुभूति हुई कि स्त्री की अहिंसक-शक्ति के माध्यम से वर्तमान की सभी समस्याओं को सरलता से हल किया जा सकता है।

गांधी-जन्म-शताब्दी की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति, जयपुर-३ (राजस्थान) द्वारा प्रसारित।

बैंकों का राष्ट्रीयकरण और सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय

—समाचार पत्रों की प्रतिक्रिया—

गौर करने लायक फैसला

यह साफ है कि नयी परेशानियों का खतरा उठाकर भी अब नया कानून विदेशी और देशी ऐसे सभी बैंकों का राष्ट्रीयकरण करेगा जो पिछली जुलाई में छूट गये थे। विदेशी बैंकों की शाखाएं पहले यह सोचकर छोड़ दी गयी थीं कि इससे विदेशी पूंजी और हिन्दुस्तान के विदेशी व्यापार पर असर पड़ेगा। एक कठिनाई यह भी पड़ेगी कि विदेशी बैंकों की हिन्दुस्तानी शाखाएं अपना काम मलेशिया जैसी जगहों में कैसे चला सकेंगी जहां राज्य की तरफ से बैंक चलाने की मनाही है? और ठीक मुआवजा देने की बात पर भी सरकार को अच्छा-खासा धन देना होगा, क्योंकि विदेशी बैंकों को विदेशी मुद्रा में ही मुआवजे का भुगतान करना होगा। सुप्रीमकोर्ट के निर्णय ने सरकार को उसके उद्देश्यों और उन्हें प्राप्त करने के तरीकों पर सोचने का एक मौका दिया है।

बैंक राष्ट्रीयकरण के हामी भी यह मानेंगे ही कि इस चीज से कोई बड़ा मकसद हासिल नहीं हो सका है। इस राष्ट्रीयकरण से इसके सिवाय और ज्यादा हुआ भी क्या है कि आज के बजाय कुछ ज्यादा लोगों के फायदे की 'स्कीम' सामने आयी है? और आज जो मिल रहा है वह सब 'सामाजिक नियंत्रण' वाली उस योजना में भी था, जिसे अमल में लाये बिना ही ठुकरा दिया गया। हाल की राजनीतिक घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में व्यक्तिगत रोष को सही नीति के मुकाबिले बढ़ावा मिलने की गुंजाइश जरूर हो गयी है, लेकिन यह ठीक नहीं है। सारे मामले पर फिर से पूरा विचार हो, इसके लिए इस निर्णय ने एक बड़ा अच्छा मौका दिया है।

—'स्टेट्समैन', नयी दिल्ली

जल्दबाजी का नतीजा

बैंकों के राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी सरकार के पूरे निर्णय के रद्द हो जाने के लिए स्वयं सरकार ही जिम्मेवार है। मजे की चीज यह है कि सर्वोच्च न्यायालय के ११ सदस्यों में से १० ने राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी निर्णय के विरुद्ध और सिर्फ एक ने पक्ष में निर्णय दिया है। चौदह प्राइवेट बैंकों सम्बन्धी सरकार का सारा निर्णय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया जाना सरकार के ऊँचे-से-ऊँचे तबके के नाम पर नवाटल रहा है। यह ऐसा इसलिए और भी है क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय ने बैंकों के राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी पार्लियामेंट में अधिकार की ताईद की है, अमान्य नहीं किया है। बैंकिंग कम्पनी एक्ट की धाराओं—१४ प्राइवेट बैंकों के प्रति भेदभाव और अनुपयुक्त असंवैधानिक मुआवजा—पर गलत करार दिया गया है। यह सही है कि सुप्रीमकोर्ट ने सरकार के मुँह पर अच्छी चपत दी है, लेकिन सरकार के लिए अच्छा यही है कि वह जल्दबाजी में कोई प्रतिक्रिया न दिखाये।

अगर पहले ही किसी आर्डिनेंस द्वारा नहीं तो उसके शुरू होते ही नये कानून द्वारा सभी बैंकों के राष्ट्रीयकरण की लालच में सरकार पड़ सकती है, लेकिन इस लालच से उसे बचना चाहिए। इस फैसले को मद्देनजर रखते हुए उसे इस सारे मामले पर फिर से विचार करना चाहिए। पिछले सात महीनों का तजुरबा यह साफ बताता है कि आर्थिक लाभ की दृष्टि से राष्ट्रीयकरण 'सामाजिक नियंत्रण' के मुकाबिले ज्यादा अच्छा नहीं है। इसलिए सुप्रीमकोर्ट के फैसले से इस सारे मसले पर फिर से गौर करने का पूरा मौका मिला है।

—'इण्डियन एक्सप्रेस', नयी दिल्ली

असली मामला

चौदह मुख्य व्यापारी बैंकों के राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी केन्द्रीय सरकार के निर्णय के सुप्रीमकोर्ट द्वारा रद्द कर दिये जाने को लेकर अगर कोई राजनीतिक पार्टी जनमत को उभाड़ने की कोशिश करे तो यह अफसोस की ही बात है।

सुप्रीमकोर्ट ने सिर्फ इतना कहा है कि राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी सरकारी फैसला आज की हालत में जैसा है वह गैरकानूनी है। इस चीज पर मतभेद हो सकता है और ११ में से एक जज ने अपना मतभेद जाहिर भी किया है कि सुप्रीमकोर्ट ने कानून सम्बन्धी बड़ा तंग दृष्टिकोण अख्तियार किया है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि निर्णय केन्द्र पर लागू नहीं होता या जो लोग वैधानिक ढंग का शासन चाहते हैं उन्हें यह पसन्द नहीं आयेगा। हाँ, सुप्रीमकोर्ट का यह निर्णय कुछ समय तक केन्द्र को पसोपेश में जरूर रखेगा—लेकिन जनता और ज्यादातर राजनीतिक पार्टियां अब राष्ट्रीयकरण के इतने पक्ष में हैं कि शीघ्र ही नया बिल पार्लियामेंट में पेश होगा ही और इस बार कानूनी सभी गल्तियां ठीक कर ली ही जायेंगी। इस तरह सुप्रीमकोर्ट के इस निर्णय का अन्तिम परिणाम यही होगा कि देशी विदेशी, छोटे-बड़े सभी बैंकों का राष्ट्रीयकरण होगा। इस निर्णय का बहाना लेकर यह हल्ला मचाना भी गलत होगा कि सम्पत्ति का अधिकार कतई खत्म करने के लिए संविधान में संशोधन किया जाय। ऐसा कोई भी कदम राज्य के हाथ में बहुत अधिक अधिकार दे देगा जिसका गलत इस्तेमाल भी हो सकता है।

—'टाइम्स आफ इण्डिया', नयी दिल्ली

जबरदस्त फैसला

सुप्रीमकोर्ट ने बैंक बैंकिंग आदि मसलों पर पार्लियामेंट के कानून बनाने के अधिकार पर कोई आक्षेप नहीं किया है। फिर भी उसके ११ सदस्यों में से १० ने

१९६९ बैंक के राष्ट्रीयकरण अधिनियम के विरुद्ध जो फैसला किया है वह केन्द्रीय सरकार के जल्दबाजी में कोई कदम उठाने पर एक जबरदस्त टिप्पणी जरूर है। केन्द्रीय सरकार सुप्रीमकोर्ट को उनके छोटे-मोटे दया कार्यों पर धन्यवाद जरूर दे सकती है, लेकिन अगर वह उसके फैसले के सभी पहलुओं पर बिना ठीक से गौर किये अपनी खोई इज्जत पाने के लिए फिर से कोई कदम उठाती है तो वह फिर गलत होगा। 'छ महीने से ऊपर हो हो रहे हैं यह राष्ट्रीयकरण हुए, लेकिन इन बैंकों के अभी तक न 'बोर्ड ग्राव् डाइरेक्टर्स' बने हैं न कोई सलाहकार समिति। वे अभी तक रिजर्व बैंक के निदेशन में ही चल रहे हैं। छोटा कर्ज लेनेवालों की तरफ कुछ ध्यान जरूर दिया गया है, लेकिन दूसरी तरह के लोगों की तरफ वही दिलचस्पी नहीं दिखायी गयी है। यह जाहिर है कि कई चीजों के बारे में एक अनिश्चितता की हवा बन गयी है। इसलिए सरकार के किसी भी नये कदम का अब और भी दिलचस्पी से इन्तजार होगा।

ऐसी हालत में सरकार जो भी कदम उठाये वह पूरी तरह सोच-समझकर और उसे सभी खतरों से ठीक गुजारकर ही उठाये।" चीज यह है कि सरकार कोई ऐसा कदम न उठाये जो अर्थ-व्यवस्था में गड़बड़ी पैदा कर दे। खासकर ऐसे मौके पर जब कि वह सभी क्षेत्रों में ज्यादा तेजी से विकास की ओर बढ़ सकती है।

—'हिन्दू', मद्रास

अब क्या ?

सामाजिक न्याय के आधार पर अगर बैंकों का राष्ट्रीयकरण योजनाबद्ध विकास के लिए जरूरी है तो सरकार अपनी नीति को अब उलट नहीं सकती। चूँकि सुप्रीम-कोर्ट ने पार्लियामेंट के राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी कानून बनाने के अधिकार पर आक्षेप नहीं किया है इसलिए स्वाभाविक कदम यही है कि वैधानिक सभी बातों का ध्यान रखकर अब नया कानून बनाया जाय। पहले जिन हिन्दुस्तानी बैंकों को छोड़ दिया गया था, उनका भी राष्ट्रीय-करण कोई खास समस्या नहीं बनेगा और न विदेशी बैंकों का ही। जो हो, इस चीज में कुछ पेचीदा चीजें सामने आ सकती हैं। लेकिन वे ऐसी नहीं हैं कि जिन्हें हल न किया जा सके और जिनके बारे में उदाहरण मौजूद नहीं है। वर्मा ने विदेशी बैंकों के राष्ट्रीयकरण में कोई हिचक नहीं दिखायी। हिन्दुस्तान में भी बीमा-कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण हुआ ही। चूँकि अब सुप्रीम-कोर्ट ने वैधानिक स्थिति बिलकुल साफ कर दी है, इसलिए सरकार का नया कदम बड़ी दिलचस्पी के साथ देखा जायगा।

—'अमृत बाजार पत्रिका', कलकत्ता

राष्ट्रीयकरण और सुप्रीमकोर्ट

सुप्रीमकोर्ट के १० व १ के निर्णय ने सभी विकासशील प्रवृत्तियों को ताज्जुब में डाला है, लेकिन जहाँ तक प्रतिक्रियावादी लोगों का सम्बन्ध है उन्हें सतोष मिला है। लेकिन किसी कानून या किसी वैधानिक निर्णय के सही या गलत होने का यह मापदण्ड नहीं हो सकता। न्यायमूर्ति रे के विरोधी निर्णय से लोकमत को, जो कि कोई जरूरी नहीं कि गलत ही हो, बल मिलेगा। सुप्रीमकोर्ट ने पार्लियामेंट का अधिकार माना है कि वह इस सम्बन्ध में कानून बना सकती है। अब अब बहस और चलेगी और विशेष मुद्दों पर चलेगी। साथ ही, सम्पत्ति के अधिकार को मूलभूत अधिकारों से हटाने और संविधान में ही सुधार करने के लिए देशव्यापी आन्दोलन चलेगा। यह साफ है कि कानून, जैसा कि आज है, यदि वैसा ही रहता है और न्याय का दायरा इतना ही विस्तृत छोड़ दिया जाता है तो सामाजिक न्याय और उसके लिए अपनाये गये उपाय कुन्द हो जायेंगे, तथा समाजवाद एक सपना ही रह जायगा। सुप्रीमकोर्ट और पार्लियामेंट के बीच झगड़े की कोई बात नहीं है, लेकिन प्रतिक्रियावादी लोगों को जो खुशी हुई है उसे देखते हुए सम्पत्ति के अधिकार और न्याय की परिधि के बारे में अब संकुचित दृष्टि रखना कठिन है। जिन आधारों पर सुप्रीमकोर्ट ने अपना निर्णय दिया है उन्हें लेकर न्यायमूर्ति रे ने अपना जो पक्ष रखा है उससे विधान की पवित्रता और सामाजिक क्रान्ति को बल मिला है। सुप्रीमकोर्ट के फैसले से तो यही चीज सामने आयी है कि जनता के प्रतिनिधियों द्वारा की हुई कोई चीज अन्तिम मानी ही नहीं जा सकती। उसके निर्णय के बाद जनता के लिए यह आव-श्यक हो जाता है कि वह मूलभूत अधिकारों से सम्पत्ति का अधिकार हटाने और संविधान में संशोधन करने के तरीके में ही संशोधन के लिए जोर डाले। अब और अधिक रुकना संभव नहीं है। समाजवाद का दम भरनेवालों की अब यही कसौटी है।

—'नेशनल हेरल्ड', नयी दिल्ली

गैर कानूनी ?

बैंक राष्ट्रीयकरण को सुप्रीमकोर्ट ने जो अवैध ठहरा दिया है उससे यह चीज एक-बार फिर बिलकुल साफ तरीके से सामने आ जाती है कि संविधान और उसके जोर-दिन में सहायक होने के लिए जो अंग बनाये गये हैं, उनके अधिकार-क्षेत्र में सुधार की कितनी जरूरत है। सुप्रीमकोर्ट ने यह तो माना है कि पार्लियामेंट को कानून बनाने का अधिकार है, लेकिन अपने इस निर्णय में उसने उससे यह अधिकार छीनने की ही कोशिश की है। संविधान की धारा १४ व १९ का व्यक्तिगत सम्पत्ति की सुरक्षा के मामले को लेकर दुरुपयोग भी हो सकता है, इसकी संभावना संविधान गढ़नेवालों में ही नहीं, बल्कि न्यायमूर्ति फजले अली जैसे लोगों ने भी देखी थी। उन्होंने १९५१ में ही कहा था कि न्यायालयों को कोई ऐसा रुख नहीं अपनाना चाहिए जिससे जनता के लिए उपयोगी किसी कानून के रास्ते में अड़चन आये। दूसरे,

मुआवजा देने के मामले पर सुप्रीमकोर्ट ने जो निर्णय दिया है उससे भी देश के लोकतांत्रिक जनमत का समाधान नहीं होगा। कानून की व्याख्या करने का अधिकार सुप्रीमकोर्ट का है सही, लेकिन यदि उस अधिकार से पार्लियामेंट के अधिकारों में दस्तंदाजी होती है और लोकतंत्र का रास्ता रुकता है, तो फिर उसकी सुप्रीमेसी या बड़प्पन माना नहीं जा सकता।

—'पेट्रियट' नयी दिल्ली

पार्लियामेंट का निर्णय गिर गया

सुप्रीमकोर्ट ने पार्लियामेंट के बैंक राष्ट्रीयकरण को जो ठुकरा दिया है उससे केन्द्रीय सरकार के लिए एक कठिनाई की स्थिति सामने आ जाती है। लेकिन इस कठिनाई के लिए उसकी खुद की जल्दबाजी ही जिम्मेदार है। अब सरकार को आगे ऐसी जल्दबाजी में नहीं पड़ना है, और पार्लियामेंट को भी खूब सोच विचारकर ही अब कोई नया कानून बनाना है। सरकार को एक लालच यह भी लग सकती है कि उसके मुँह पर जो तमाचा लगा है उसका बदला वह नया आर्डिनेंस बनाकर ले, लेकिन इस लालच में उसे नहीं पड़ना चाहिए। सुप्रीमकोर्ट के फैसले ने जो अड़चनें सामने रखी हैं, उन्हें दूर करना आसान नहीं होगा। लेकिन चूँकि करीब-करीब सभी राजनीतिक पार्टियाँ राष्ट्रीयकरण के पक्ष में हैं, अत नया कानून बनाना कठिन नहीं होना चाहिए। लेकिन इस बार बहुत सोच-समझकर कदम उठाने की जरूरत है ताकि फिर धोखा न हो। फिलहाल जो बैंक राष्ट्रीयकरण में आ गये थे उन्हें अपना काम आगे करते रहना चाहिए। जिन बैंकों का राष्ट्रीयकरण हो चुका है, उनमें से कोई शरारत नहीं करेगा, ऐसी उम्मीद करनी चाहिए क्योंकि रिजर्व बैंक को वे अधिकार हैं ही, जिनसे वह शरारती बैंकों पर काबू रख सकता है।

'हिंदुस्तान स्टैंडर्ड' कलकत्ता

—अनुवादकर्ता रामभूषण

इंसानी बिरादरी : अगला कदम क्या हो ?

प्रिय मित्र,

गत वर्ष के नवम्बर महीने में खान अब्दुल गफ्फार खाँ, श्री विनोबाजी तथा मेरे द्वारा संयुक्त हस्ताक्षरों में जारी वक्तव्य आपने पढ़ा ही होगा। (देखें भूदान-यज्ञ—१७ नवम्बर, प्रथम पृष्ठ।) आपको याद होगा कि २४ दिसम्बर देश के विभिन्न भागों में 'इन्सानी बिरादरी' (मानव बन्धुत्व) दिवस के रूप में मनाया गया था। उस समय मैंने श्री विनोबाजी और खान साहब से सलाह कर एक दूसरा वक्तव्य जारी किया था, (देखें भूदान यज्ञ—१२ जनवरी '७०, पृष्ठ २२५), उसमें हम तीनों की सहमति से अगला कदम किस दिशा में हो इसका भी थोड़ा संकेत मैंने किया था। प्रस्तुत पत्र, अगला कदम इस दिशा में क्या हो, यह बतलाने के लिए है।

इस पत्र द्वारा मैं आपसे यह जानने का इच्छुक हूँ कि उपर्युक्त दोनों वक्तव्य में व्यक्त की गयी विचारधारा से क्या आप सामान्य रूप से सहमत हैं? यदि ऐसा हो, तो कृपया इस पर अपनी सहमति-पत्र भेजकर मुझे सूचित करें। साथ ही कृपया यह भी संकेत सम्भव हो तो कीजिये कि आप अपने फुरसत के समय में किस प्रकार के काम अथवा सेवा को पसन्द करेंगे। उत्तर के साथ ही-साथ कृपया आपका पूरा नाम, पता, व्यवसाय तथा आपके बारे में ऐसी जानकारी हमें भेजेंगे, जो आप चाहेंगे कि हमें हो।

चूँकि देश के हजारों लोगों को यह पत्र भेजा जा रहा है अत यह व्यवस्था की गयी है कि देश के विभिन्न क्षेत्रों में गांधी विचारधारा को माननेवाले मित्रों के पत्र के साथ यह पत्र एवं दोनों वक्तव्य हमारी ओर से आपके पास भेजा जाय। कृपया आप इसका उत्तर, जिस सम्बन्धित मित्र ने आपको आपके क्षेत्र से लिखा हो, उसको भेजने का कष्ट करें।

आनेवाले उत्तरों की संख्या, स्वरूप और गुणवत्ता पर हमारा आगे का कदम, तद्विषयक आवश्यक संगठन और कार्यक्रम निर्भर रहेगा।

कलकत्ता,
१८ जनवरी, '७०

विनीत,
जयप्रकाश नारायण

युद्ध विरोधी निदर्शन

वियतनाम में चल रहे अमानुषिक युद्ध को तत्काल रोकने की अपील करते हुए दिल्ली में अमेरिकी दूतावास तक एक शांत निदर्शन (साइलेंट मार्च) ५ फरवरी को किया गया। 'वर्तमान युग में गांधी की सार्थकता' इस विषय पर होनेवाले अन्तर्राष्ट्रीय परिसंवाद में शामिल होनेवाले कोई अस्सी प्रतिनिधियों ने उसमें भाग लिया। वियतनाम के विश्वविद्यालयीन प्राध्यापक श्री हन्, अमेरिका के जेम्स पति-पत्नी, श्री हामर जैक, नीग्रो आन्दोलन के तरुण नेता रॉबर्स, प्रसिद्ध शान्तिवादी तरुण जीन शार्प, भ्रांस के शांतिदासजी, ब्रिटेन के जॉन पॅपवर्थ, जापान के अनिरुद्ध फ्युजी गुरुजी तथा अन्य विभिन्न देशों के प्रतिनिधि इस मार्च में थे। भारतीय प्रतिनिधियों में सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् और मंत्री श्री ठाकुरदास बंग, प्रो० गोरा, आदि कई जाने-माने लोग भी थे।

करीब एक मील चलकर जब यह शांतिमय मार्च अमेरिकी दूतावास के सामने आया तो ५ लोगों को दूतावास में बात-चीत के लिए बुलाया गया। श्रद्धेय जयप्रकाशजी भी साथ थे। बातचीत के दौरान अमेरिकी दूतावास की ओर से आश्वासन दिया गया कि इस मार्च का यह युद्धविरोध अमेरिका के अध्यक्ष को पहुँचाया जायेगा।

भूदान-यज्ञ सोमवार, २१ फरवरी, '७०

भूदान-यज्ञ २३-२-'७० रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए ३९

आगामी तमिल नववर्षारम्भ तक तमिलनाडु का प्रदेशदान सम्भव

राजगिर सम्मेलन के बाद ५२ प्रखण्डदान

धरमपुरी का जिलादान और साम्यवादी आतंकवाले पूर्व तंजौर में भी प्रखण्डदान

सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने मद्रास से लिखे एक पत्र द्वारा सूचित किया है कि आगामी १४ अप्रैल '७० तक, यानी तमिल नववर्षारम्भ तक तमिलनाडु का प्रदेशदान सम्पन्न हो जाने की पूर्ण सम्भावना है। आपने अभियान की प्रगति का हवाला देते हुए लिखा है कि प्रदेश के शेष जिलों में राजगिर सम्मेलन के बाद ५२ प्रखण्डदान हो चुके हैं। एक जिलादान धरमपुरी भी पूर्ण हो चुका है।

सबसे कठिन और नक्सलपंथी साम्यवादियों के प्रभाववाले जिले पूर्व तंजौर में भी प्रखण्डदान हो जाने से कार्यकर्ताओं में अभूतपूर्व उत्साह का संचार हुआ है। यह स्मरणीय है कि इस जिले में वयोवृद्ध सर्वोदय नेता श्री शंकरराव देव ने प्रत्यक्ष अपनी शक्ति लगायी है, और कई बार पदयात्राएँ की है।■

टिहरी-गढ़वाल में शराबबन्दी-आन्दोलन

टिहरी गढ़वाल जिले की तीन सरकारी देशी शराब की दुकानों—नरेन्द्रनगर, टिहरी और काडीखाल को बन्द करवाने के लिए स्थानीय जनता ने आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया है। ११ फरवरी को काडीखाल एवं १५ फरवरी को टिहरी में सैकड़ों स्त्री-पुरुषों ने ढोल-नगाड़ों के साथ शराब की दुकानों पर प्रदर्शन किया। १६ फरवरी को जिले के मुख्यालय नरेन्द्रनगर में, जब अगले वर्ष के लिए शराब के ठीकों की नीलामी की जा रही थी तो विभिन्न स्थानों से आये हुए मद्यनिषेध समितियों के प्रतिनिधियों ने मूक-प्रदर्शन किया। प्रदर्शनकारियों से घबड़ाकर आबकारी विभाग के अधिकारियों ने ठीकों की नीलामी चुपचाप पुलिस के कड़े पहरे में की।

महिलाओं का एक शिष्टमण्डल जिलाधीश से मिला, जिनमें ग्रामीण महिलाएँ भी थीं। उन्होंने शराब से हुई उनके परिवारों की तबाही का हृदयस्पर्शी चित्रण उनके सामने पेश किया और सरकार को टिहरी-गढ़वाल में पूर्ण शराब-बन्दी करने की उनकी माँग को पहुँचाने की प्रार्थना की। इन शराब की दुकानों पर शांतिमय धरना प्रारम्भ हो रहा है। उत्तरकाशी में भी शराब-बन्दी के लिए महिलाओं का एक मौन जुलूस निकला।■

भोपाल में शांति जुलूस

गांधी शांति प्रतिष्ठान, केन्द्र भोपाल के तत्त्वावधान में नगर की सब रचनात्मक संस्थाओं के सहयोग से १२ फरवरी को गांधीजी के श्राद्ध-दिवस के दिन बहुत सादगीपूर्ण ढंग से सर्वोदय-दिवस मनाया गया। इस दिन तात्या टोपे नगर और बुधवारा से दो बड़े शांति जुलूस मौन रूप में नगर के निर्धारित मार्गों से होते हुए विधान सभा के सामने गांधी उद्यान में एकत्रित हुये।

श्री जयदेव सतपथी के सभापतित्व में आयोजित आमसभा में बापू को श्रद्धांजली अर्पित की गयी। श्री नथनमल जैन ने गांधीजी की अर्थनीति पर विशेष प्रकाश डाला।

केन्द्र के मंत्री श्री महेन्द्रकुमार शास्त्री ने अपनी भावभीनी श्रद्धांजली अर्पित की।■

सर्वोदय-पखवारे में पदयात्रा

सारण जिले के सीवान और गोपालगंज अनुमंडल में श्री साबिक अंसारी और श्री बनारसी प्रसाद के नायकत्व में दो ग्रामस्वराज्य पदयात्राएँ निकली। दोनों टोलियाँ ३० जनवरी से १२ फरवरी तक ३११ गाँवों में गयीं और ग्रामस्वराज्य के विचार का प्रचार किया। इस बीच कुल २७५ रु० २५ पैसे का साहित्य बिका, २४ सर्वोदयमित्र बने, १२ ग्रामसभाओं का गठन हुआ, २०० रु० की खादी बिक्री हुई और २५ शान्तिसैनिक बने।

१२ फरवरी को सर्वोदय मेला का आयोजन हुआ, जिसमें गांधीजी को अनेक वरिष्ठ लोगों ने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

१३ फरवरी को एकमा में जिला ग्राम स्वराज्य समिति तथा जिला सर्वोदय मंडल की बैठक हुई, जिसमें ९ प्रखण्डों में पुष्टि-अभियान आरम्भ करने का निश्चय हुआ। —विश्वनाथ शर्मा

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। प्रति का १० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : २२
सोमवार २ मार्च, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट वाराणसी-१
फोन : ११११५

आग्रह नहीं, सत्यनिष्ठा

सब धर्मों का सार जिसमें आता है वह है चित्त-शुद्धि की उपासना।

यह जमात (सर्वोदय की) बहुत व्यापक और विशाल है। उसका खयाल सबको होना मुश्किल है। बाबा को सारे भारत के १०-२० हजार लोगों के नाम मालूम हैं, ४००० तो लिखा सकता है। चित्त-शुद्धि की भावना और सामाजिक क्रांति की भावना जिनमें है, ऐसे लोग इसमें हैं।

यहाँ (ब्रह्म-विद्या-मन्दिर में) बैठे हैं हम। वह बहुत गहरी चीज है। इसमें से या तो शून्य मिलेगा या अनंत मिलेगा। बेकारों को अध्यात्म-विद्या यदि चली तो भारत में आज भी बीसियों स्थान मिलेंगे अध्यात्म-विद्या के, जिनको काम नहीं। यहाँ बहनें ब्रह्मचर्य-व्रत लेकर बैठती हैं और अपना कमाया हुआ खाती हैं। भारत में लल्ला, मीरा, मुक्ता, अक्का, ऐण्डाल—बहनें मशहूर हैं, फिर भी वे शास्त्रकार नहीं। शास्त्रकार पुरुष ही थे। शास्त्रकार बहिनें बनें, ऐसी बाबा अपेक्षा रखता है इस स्थान से।

पहले बाबा के जितने साथी आश्रम में थे, 'हुक्म बरदार' थे। हुक्म होता था कल से नमक छोड़ना है, नमक समाप्तम्। खाने के प्रयोग किये गये। काम के प्रयोग चले। वह भी एक बाबा का रूप था। उसमें जो व्यक्तित्व बनता है, उसकी मर्यादा बाबा ने देख ली। अब जो आश्रम बनेगा उसमें मार्गदर्शक नहीं होगा। आन्दोलन में भी गण-सेवकत्व का विकास हो रहा है। मार्गदर्शक पड़ा है न, यहाँ 'भरत-राम'। और अगर आप लोगों में ऐसा शक्ति हो तो चित्त-शुद्धि की प्रेरणा और सामाजिक शान्ति की तमन्नावाले लोग खिंचे हुए आयेंगे।

'हमसे होगा', यह बीच में आयेगा तो सारा समाप्त हो जायेगा। भगवान के औजार के तौर पर काम करें।

हम अध्ययन करते हैं—गांधीजी के ग्रन्थों का, बाबा के ग्रन्थों का, उतना पर्याप्त नहीं। विभिन्न विचारधाराओं का थोड़ा-थोड़ा अध्ययन होना चाहिए। किसी विचारधारा के बारे में चित्त में आग्रह न हो—सत्यनिष्ठा हो।

विनोबा का जय जगत्

ब्रह्म-विद्या-मन्दिर में चिंतन-मिलन के समारोप-प्रवचन से।

सामूहिक-चिन्तन

ब्रह्म-विद्या-मंदिर में मित्र-मिलन

ब्रह्म-विद्या-मंदिर, पवनार में प्रतिवर्ष मित्र-मिलन का आयोजन किया जाता है, प्रारंभ में यहाँ विनोबाजी द्वारा स्थापित आश्रमों का वार्षिक सम्मेलन होता था। उसके बाद अन्य आश्रमों से भी एक-एक व्यक्ति को बुलाया जाता रहा, फिर 'मैत्री' के कुछ ग्राहकों को भी इसमें बुलाने का सिलसिला शुरू हुआ। इस वर्ष आन्दोलन के प्रत्यक्ष काम में लगे हुए कुछ साथियों को भी इस दृष्टि से बुलाया गया कि आन्दोलन का कार्य व्यावहारिक ब्रह्म-विद्या है।

२ फरवरी को चर्चाएँ प्रारम्भ हो गयी थीं। उस दिन बाबा, जो आजकल शांतिकुटी, गोपुरी में रहते हैं, आये थे। दूसरे दिन सुबह सवा पाँच से सवा छः बजे तक बालकोबाजी के पास ब्रह्म-सूत्र के वर्ग के लिए हम लोग गये। बालकोबाजी की उम्र इस समय ७० वर्ष की है। प्राचीन ऋषियों की तरह उनका जीवन अध्ययन-अध्यापन में बीतता है। बालकोबा *की स्मरण-शक्ति इतनी विलक्षण है* कि वे ब्रह्म-सूत्र का भाष्य जबानी करते हैं। वेद, मंत्र, गीता के श्लोक, गीताई, संतों की वाणी–सबका हवाला जबानी देते हैं। उन्हें यह भी याद है कि किस पृष्ठ पर क्या लिखा है। उनके नाम आये बापू के पत्र तक उन्हें जबानी याद हैं। प्रति वर्ष वे कुछ समय ब्रह्म-विद्या-मंदिर में रहते हैं और वहाँ की बहनें उनसे 'ब्रह्म-सूत्र' पढ़ती हैं। 'ब्रह्म-सूत्र'–शांकर भाष्य पर उनकी टीका तीन खण्डों में प्रकाशित हुई है।

पहले दिन की गोष्ठी की अध्यक्षता डा० सूर्यनारायण ने की। आँख के रोगों के विशेषज्ञ तेनाली के डा० सूर्यनारायण हजारों सर्वोदय-पात्रों को कई वर्षों से नियमित रूप से चला रहे हैं और उनके माध्यम से हजारों परिवारों से सम्पर्क रखते हैं। पहली सभा में जो विचार प्रकट हुए उनके आधार पर तीन विषयों पर चर्चा करने का निश्चय हुआ :

१. आश्रमों से अपेक्षा और उनका परस्पर सम्बन्ध।

२ आन्दोलन की आध्यात्मिक बुनियाद कैसे मजबूत हो। तथा

३ स्वाध्याय के मेरे अनुभव।

चर्चा के तीन विषयों का सार तीन समितियों द्वारा तैयार किया गया। वह इस प्रकार है :

आंदोलन की आध्यात्मिक बुनियाद

१ हर स्तर पर आन्दोलन के सम्बन्ध में होनेवाली बैठकों एवं शिविरों में आध्यात्मिक बुनियाद मजबूत बनाने के विषय में भी चर्चा हो।

२ आध्यात्मिक आचार और विचार की दृष्टि से संहिता के तौर पर एक पुस्तिका तैयार हो, जो कार्यकर्ताओं के विचार और आचार के लिए एक मार्ग-दर्शिका का काम करे। ग्रामदान आज का युग-धर्म है, यह समझानेवाली आम जनता के लिए एक सरल पुस्तिका हो।

३ *विश्राम तथा अध्ययन* के स्थानों व मार्ग-दर्शन करनेवाले व्यक्तियों की सूची बनाकर उनसे सम्पर्क रखकर जानकारी देने का कार्य 'मैत्री' की ओर से किया जाय।

४ विशिष्ट विषयों के लिए आश्रमों में अध्ययन-सत्र चलाये जायें। इनमें कुछ ग्रन्थ-अध्ययन और कुछ विषय-अध्ययन का आयोजन हो।

५. सर्व-धर्म समन्वय की दृष्टि को लेकर ध्यान, प्राणायाम, जप, योगासन, भजन, संकीर्तन, तथा भक्ति के अन्य प्रकार के बारे में प्रत्यक्ष मार्ग-दर्शन की व्यवस्था हो।

६ प्रदेशीय या स्थानीय स्तर पर सुविधानुसार कार्यकर्ता-परिवार-मिलन का प्रबन्ध हो। कार्यकर्ताओं के तरुण बालक-बालिकाओं को संस्कार देने की दृष्टि से शिविरों का आयोजन हो।

७ आश्रमों के कार्य में प्रदेशीय सर्वोदय मंडल व घूमनेवाले साथी सक्रिय सहयोग दें। आध्यात्मिक वृत्तिवाले ऐसे सज्जनों को, जो हमारे काम में रुचि दिखाते हों, आश्रमों से सम्पर्क जोड़ने का काम घूमनेवाले साथी करें।

अध्ययन

१. अध्ययन के विषयों में मार्ग-दर्शन करनेवाले व्यक्तियों व स्थानों की जानकारी दी जाय।

२. सामान्य विषयों और किताबों की सूची बनायी जाय–नये लोगों के लिए, कुछ साल से काम करते हों उनके लिए तथा विशेषज्ञों के लिए।

३ नये साहित्य का निर्माण कार्य-कर्ताओं की दृष्टि से हो, जैसे अलग-अलग ग्रामदान कानून, विश्व में भूमि के मसले को लेकर हुए कामों की जानकारी, इतिहास, इस प्रकार लिखा जाय, जिससे हिन्दू-मुस्लिम द्वेष की भावना न पनपे।

एक-एक विषय को लेकर अपने अध्ययन में से कार्यकर्ताओं के लिए एक-एक छोटी पुस्तिका बना लें।

४. सर्वोदय-मण्डल विशिष्ट ग्रन्थों के अध्ययन के लिए छोटे-छोटे शिविर करें, जैसे 'कुरान सार' आदि पर।

५ आत्मचरित्र, अणुबम, तरुणों में क्षोभ आदि विषयों पर प्रकाशित पुस्तकों की सूची हो।

आश्रम-समन्वय

१ एकान्त साधना (Retreat) के लिए आश्रमों में कार्यकर्ता आयें।

२ सामूहिक एकांत साधना का भी अभ्यास हो, यह वार्षिक सम्मेलन में हो सकता है।

३ हर साल कार्यकर्ता सम्मेलन व सभा हर आश्रम में हो।

४. ईसाइयों की तरह आश्रमों में प्रविष्ट होनेवालों के लिए तीन प्रतिज्ञाओं पर विचार किया जाय –(१) ब्रह्मचर्य, (२) ऐच्छिक दारिद्र्य तथा (३) पूर्ण स्वातंत्र्य।

५ हर आश्रम में स्थिर व्यक्ति हो।

६. सर्वोदय समाज का दर्शन आश्रमों में हो।

—सुन्दरलाल बहुगुणा

अग्रलेख / अभ्यास्कीय

समाजवादी सब : समाजवादी कौन ?

समाजवादी कौन है ? इससे ज्यादा आसान सवाल शायद यह होगा कि कौन नहीं है ? सब समाजवादी हैं। और अगर कोई दिल से नहीं भी है तो वह मंजूर क्यों करे कि नहीं है। नास्तिक बनकर कोई बदनाम क्यों हो ? उसी तरह समाजवाद को इनकार कर कोई अपनी प्रतिष्ठा क्यों खोये ? इस वक्त समाजवाद राजनीति का सबसे चालू सिक्का है।

समाजवाद जितना चालू है उतना लोकतन्त्र नहीं। कई लोग लोकतन्त्र की निन्दा करने में अपनी शान समझते हैं, लेकिन समाजवाद को बुरा नहीं कहते। मौका है कि उसे बुरा कहेंगे तो 'आउट आफ डेट' माने जायेंगे। अगर उनसे पूछिए समाजवाद क्या है, तो शायद दस या बीस आदमियों में एक भी सही बात नहीं बता सकेगा। नये समाजवाद की कल्पना तो सैकड़ा पीछे भी एक को नहीं होगी। फिर भी हरएक समाजवादी है। अधिक नहीं तो इतना समाजवादी तो है ही कि अपने से ऊपरवालों और नीचेवालों, दोनों को नफरत की निगाह से देखता है। टाटा बिड़ला के नीचे पर सरकार को देखना चाहता है, और सबसे ज्यादा सुख के साधन चाहता है। कुछ भी हो समाज के नाते से समता की इतनी भावना तो जरूर आयी है—नकारात्मक ही सही—कि जो आदमी कल तक नीचे पड़ा रहने को तैयार था वह आज आगे आने के लिए अधीर है। वह यह सोचने के लिए कहने को तैयार नहीं है कि दूसरों को धक्का देकर आगे बढ़ना पूँजीवाद है, उन्हें साथ लेकर चलने में ही समाजवाद है।

दुनिया के जाने-माने समाजवादी आज दो शताब्दियों से बहस कर रहे हैं कि समाजवाद क्या है ? हम अपने देश के समाजवादी दलों को देखें। एक दल का समाजवाद दूसरे दल के समाजवाद को समाजद्रोह सिद्ध करने में लगा हुआ है। साम्यवादी तो समाजवादियों को निकम्मा मानते ही हैं। नतीजा यह है कि समाजवाद की न तो कोई सर्वमान्य परिभाषा बन पा रही है, और न तो कार्यक्रम तय हो पाता है। फिर भी इस वक्त देश के समाज की सबसे बड़ी समस्या है। पहली बात है गरीबी के अहिंसक उपायों की। जहाँ तक गरीबी का प्रश्न है कोई मतभेद नहीं है। हाँ, उसे दूर करने के उपायों के सम्बन्ध में गम्भीर मतभेद है। दूसरी बात है सरकार के अधिकार की। यह आम मांग है कि 'प्राइवेट' व्यक्तियों के स्थान पर सरकार आ जाय, क्योंकि लोग मानते हैं कि ऐसे व्यक्तियों के शोषण से रक्षा सरकार ही कर सकती है। सरकार के अलावा दूसरी कोई शक्ति दिखाई नहीं देती, इसलिए स्वयं जनता का, और सभी राजनैतिक दलों का, ध्यान सरकार पर रहता है। जनता चाहती है कि सरकार उसकी भलाई के काम करे, और दल चाहते हैं कि सरकार उनके हाथ में रहे। लेनिन ने एक बार लिखा था, 'एक विशाल सरकारी बैंक हो, जिसकी शाखाएँ हर जिले में और हर कारखाने में हो। बस, इतने से समाजवादी व्यवस्था का ९/१० हिस्सा पूरा हो जायगा।' आज कौन मानता है कि इतना हो जाने से समाजवाद होगा, या ऐसा होना समाजवाद के लिए जरूरी भी है। किन्तु भारत में स्थिति यही है कि समाजवाद 'सरकारवाद' से आगे नहीं जा सकता है। जो राजनैतिक विचारधाराएँ (जनसंघ, स्वतन्त्र) 'सरकारवाद' नहीं चाहतीं, वे क्या चाहती हैं, और समाज को किस साँचे में ढालना चाहती हैं, यह स्पष्ट नहीं है।

समाजवाद कहता आया है कि श्रमिक अपनी ही जरूरतों से प्रेरित होकर पूँजीवादी व्यवस्था को खतम करेंगे। उनके इस अभियान का माध्यम होगी एक पार्टी, जो मजदूर संगठनों के साथ जुड़ी होगी। इस पार्टी की सरकार उत्पादन, वितरण और विनिमय के साधन अपने हाथ में कर लेगी। इसका परिणाम यह होगा कि समाज एक शासनवादी, सुनियोजित, सरकारी अर्थ-व्यवस्था के मातहत चलेगा। लेनिन के इतने वर्ष बाद समाजवाद आज भी इन्हीं तत्त्वों को दुहराता जा रहा है।

यहीं एक प्रश्न उठता है। जिन देशों में इस नयी व्यवस्था को चलाने के लिए गुप्त पुलिस (सीक्रेट पुलिस) का कठोर संगठन नहीं है वहाँ क्या होगा ? वहाँ समाजवादी व्यवस्था कैसे चलेगी ? इसी प्रश्न को लेकर समाजवाद में एक नये तत्त्व का प्रवेश हुआ है। एक ओर तो यह देखने में आ रहा है कि जिन देशों में मजदूरों का जीवन-स्तर सबसे ऊँचा है, जैसे जर्मनी और अमरिका में, वहाँ पूँजीवाद सबसे अधिक मजबूत है। दूसरी ओर, लगभग हर जगह मजदूरों में एक नयी हवा यह बह रही है कि पूँजीवाद की जगह राज्यवाद को बिठा देना काफी नहीं है, उचित भी नहीं है। समाजवाद में मुख्य प्रश्न यह माना जा रहा है कि निर्णय किसके हाथ में है। पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर राज्य की ओर से बड़े बड़े कारपोरेशन बन जायें तो क्या काम चल जायगा ? इन कारपोरेशनों में भी वे ही पुराने लोग, जो पहले उद्योग चलाते थे, आकर जम जाते हैं। निर्णय उन्हीं के हाथ में होता है। इसीलिए कुछ श्रमिक-संगठन नियोजन को शुबहे की दृष्टि से देखने लगे हैं। आजकल पश्चिमी यूरोप में सबसे अधिक लोकप्रिय समाजवादी पश्चिमी जर्मनी के अर्थनीति के मंत्री प्रोफेसर कार्ल शिलर हैं। उनकी नीति यह है कि अन्तर-राष्ट्रीय प्रतियोगिता को बढ़ावा देकर मूल्य स्थिर रखे जायें। वह उद्योगों में कम से कम हस्तक्षेप के पक्ष में हैं, वह मानते हैं कि सरकार से कहीं अच्छा नियमन स्वतन्त्र बाजार का होता है।

मार्क्सवादी समाजवाद की इस बक्त क्या दिशा है ? उन्नत देशों के विश्वविद्यालयों में 'न्यूलेफ्ट' के नाम से किस समाजवाद की पुकार उठ रही है ? दुनिया भर में यह आवाज उठ रही है कि अब किसी व्यक्ति को अभावग्रस्त नहीं रहना चाहिए, तथा सबको जीवन में पसन्द की छूट होनी चाहिए। काम करनेवालों→

अध्यात्म का उपहास (?)

"२ फरवरी '७० के 'भूदान-यज्ञ' में श्री रामचन्द्र राही का एक लेख पढ़ा। मध्यप्रदेश के साथीपन की जानकारी सबको करायी, यह खुशी की बात है। उसके लिए उनको बधाई। किन्तु उस लेख के दो-एक वाक्य कुछ ठीक नहीं लगे—'साथी और समस्या - निरपेक्ष विचार एवं अध्यात्म की निष्ठा तो कभी-कभी हमारे अन्दर ऐसी कुण्ठा पैदा कर देती है कि हम अपने सम्बन्धों में तनाव-ही-तनाव पैदा करते चले जाते हैं।'

"यह हो सकता है कि कुछ लोग अध्यात्म का नाम लेकर गलत काम करते हों, लेकिन 'अध्यात्म की निष्ठा' तनाव पैदा करनेवाली चीज है, यह हमारी पत्रिका में पढ़कर दुःख हुआ। उसी अंक में विनोबा की चर्चा है, जिसमें अध्यात्म और विज्ञान की बात कही है। इस प्रकार अध्यात्म का उपहास आन्दोलन की बुनियाद पर ही प्रहार करनेवाला है। हमारा चिन्तन कुछ व्यक्तियों के प्रति पूर्वाग्रहों से दूषित नहीं होना चाहिए। चिन्तन तटस्थ होना चाहिए।"

उक्त लेख के लेखक की ओर से

सबसे पहले आन्दोलन के एक सम्माननीय साथी को मेरे दो-एक वाक्यों से दुःख हुआ, उसके लिए सविनय क्षमा के लिए निवेदन, और उनके सुझाव के लिए कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

चूँकि लेख का उक्त वाक्य, और उसकी प्रतिक्रिया आन्दोलन से सम्बन्धित है, इसलिए इसे आन्दोलन के मुखपत्र में प्रकाशित करना उचित होगा, इस निवेदन के साथ यह स्पष्टीकरण लिख रहा हूँ।

उक्त लेख में 'अध्यात्म की निष्ठा' का उपहास करना मेरा आशय नहीं रहा है, और न ही किसी व्यक्ति के प्रति कोई पूर्वाग्रहों के कारण यह लिखा गया है। लिखते समय लिखकीय मदद रही है कि, "मध्यप्रदेश के साथियों में जो साथीपन है, उसमें जाने-अनजाने एक ऐसा आध्यात्मिक मूल्य है, जो आज आन्दोलन में लगे हम साथियों के लिए अनिवार्यता की हद तक आवश्यक है, और जिसकी साधना मात्र सिद्धान्त और अध्यात्म की ऊँची बातों को दुहराने से नहीं हो सकेगी, विचार और अध्यात्म की अपनी निष्ठा को समाज की समस्या और व्यक्ति के सम्बन्धों एवं संदर्भों से जोड़कर उस दिशा में बढ़ने की कोशिश से हो सकेगी," यह बात उजागर सामने आये।

सौभाग्यवश ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन की मध्यधारा से जीवन्त सम्पर्क में रहने का मौका मुझे पिछले बारह वर्षों से मिलता रहा है और आन्दोलन के प्रति अपने अन्दर समर्पण का भाव भी पाता हूँ, इसलिए केवल सम्मेलन की रिपोर्टिंग करनेवाले पत्रकार की भावना से ही नहीं, बल्कि आन्दोलन के कार्यकर्ता की भावना से भी मैंने साथीपन के विकास में बाधक, अनुभव में आये, समस्या-निरपेक्ष, (तथाकथित) विचार एवं अध्यात्म-निष्ठा से उत्पन्न, कुण्ठा का जिक्र किया है। इसमें अध्यात्म के उपहास के लिए नहीं, बल्कि उसके सही सन्दर्भ को उजागर करने के लिए उक्त नकारात्मक शैली का आधार लिया है। जहाँ तक साथी और समस्या से निरपेक्ष मूल्यों का सवाल है, उसमें मेरा कहना है कि अध्यात्म को विज्ञान से और विज्ञान को अध्यात्म से समन्वित करने की आवश्यकता ही आज हम इसलिए महसूस कर रहे हैं, क्योंकि ये दोनों शक्तियाँ मनुष्य और उसकी समस्याओं से निरपेक्ष होकर विकसित हो रही हैं—कम-से-कम वर्तमान के परिणामों से तो यही तथ्य प्रकट होता है—और, जिसके कारण ये शक्तियाँ मानवता की तारक नहीं सिद्ध हो रही हैं।

इसलिए मेरा लिखते समय साथीपन के विकास में बाधक इस तथ्य की ओर भी ध्यान गया। लेकिन अगर मेरे इस विश्लेषण में भाषा-शैली की अपूर्णता रही, जिसके कारण उपहास करने का भ्रम पैदा हुआ हो, या फिर यह विश्लेषण ही गलत या मेरे मन में छिपे हुए किसी पूर्वाग्रह के कारण व्यक्त हुई प्रतिक्रिया मात्र लगा हो, तो मैं पुनः उक्त अनुभव करनेवाले सभी बुजुर्गों और साथियों से भूल के लिए क्षमा चाहता हूँ।

—रामचन्द्र राही

→के निर्णय से काम की व्यवस्था होनी चाहिए। निर्णय की यह स्वायत्तता नागरिक को नागरिक बनाती है, नहीं तो वह मजदूर है—मजदूर किसी मालिक का हो, या सरकार का। क्या नागरिक को मुक्ति, स्वतन्त्र, स्वायत्त जीवन बाजार की अर्थनीति में मिलेगा? क्या सरकार की केन्द्रित अर्थनीति में संभव होगा? क्या किसी प्रकार के सामूहिक नियमन के बिना वह विषमता के दुःख से बच सकेगा?

श्रमिक का श्रम बाजार में न बिके, और उसकी बुद्धि सरकार या किसी कारपोरेशन की शर्तों से न चले, यह माँग निरवच्छिन्न हो गयी है। श्रमिक अपने पार्टनरों और साथियों का सहयोगी हो, अपने निर्णय में स्वायत्त हो तब समाज में गुणात्मक क्रान्ति होगी। नया समाजवाद मात्र व्यवस्था-परिवर्तन से सन्तुष्ट नहीं है, उसे गुणात्मक परिवर्तन चाहिए।

भारत-जैसे गरीब देश में बहुत आसान है गरीबी का लोभ दिखाकर गरीब को उभाड़ना और उसकी सत्ता गुलाम कर देना, गुणों के नाम में उसे गर्वित कर देना और उसकी स्वायत्तता छीन लेना, इस दृष्टि से एक प्रकार की नयी तानाशाही नाम में समाजवाद गरीब का नाश कर सकता है। जनता गरीब के प्रभाव में होगी तो देगी और सरकार जनता के सीने पर सवार हो जायगी, जिसके लिए दुनी के ऐसा सरकार के औजारों से हम परिचित नहीं हैं। सरकारवादी समाजवाद में दोनों का गठबन्धन होता चारों ओर दिखाई दे रहा है। जो समाजवाद जनता की स्वायत्तता और आत्मनिर्भरता को स्वीकार न करे उससे, होशियार रहने की जरूरत है। जहाँ सब समाजवादी हैं, वहीं यह प्रश्न खड़ा हुआ है कि सचमुच कौन समाजवादी है? ●

वाराणसी विश्वविद्यालय में दीक्षांत भाषण:

परिस्थिति की चुनौती : नागरिक की जिम्मेदारी

–युवा पीढ़ी को श्री जयप्रकाश नारायण का उद्बोधन–

इस विश्वविद्यालय के कुलपति महोदय तथा विद्वत्परिषद् का अत्यन्त नम्रभाव से आभार मानता हूँ कि उन्होंने 'Doctor of laws' की उपाधि से मुझे सम्मानित किया है। इस सम्मान के लिए अपनी अयोग्यता का स्मरण करके इस अवसर पर ईश्वर से यही प्रार्थना करता हूँ कि ऐसा न होने पाये कि मेरे कारण इस उपाधि का अवमूल्यन हो।

अब सर्वप्रथम उन सभी स्नातकों को हृदय से बधाई देता हूँ जिन्होंने अपनी उपाधियाँ अभी प्राप्त की हैं। मेरा अनुमान है कि आप सब इस बात पर किंचित गर्व अनुभव कर रहे होंगे कि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय जैसे प्रख्यात विद्यापीठ के आप विद्यार्थी रहे हैं और उसकी उपाधियों से विभूषित हुए हैं।

इस शताब्दी के एक नये दशक के प्रारम्भ में आप विश्वविद्यालय के सुरक्षित सरोवर से निकलकर सांसारिक जीवन के अनजाने सागर में प्रवेश करने जा रहे हैं। इसलिए इस दशक की सम्भावनाओं तथा चुनौतियों के सम्बन्ध में दो शब्द निवेदन कर दूँ, तो स्यात् वह आपके लिए कुछ प्रयोजनीय सिद्ध हो। यह तो स्पष्ट ही है कि १९७०-८० के भारत का भविष्य, जैसे कि आपका अपना भविष्य, इस बात पर भी निर्भर करेगा कि आप स्वयं इन सम्भावनाओं का क्या उपयोग करते हैं तथा इन चुनौतियों का किस प्रकार मुकाबिला करते हैं।

पिछले दशक की चुनौती

पिछला दशक कुल मिलाकर असंतोषजनक रहा है, यद्यपि उसी दशक में 'हरित क्रान्ति' का भी प्रादुर्भाव हुआ तथा ग्रामदान-आन्दोलन तेजी से आगे बढ़ा। उस दशक में हमने दो प्रिय प्रधानमंत्रियों को खोया, दो युद्धों से गुजरे, दो भयंकर दुष्काल झेले। उसी दशक में राजनीतिक अस्तव्यस्तता तथा विघटन फैले, कांग्रेस सत्ता-एकाधिकार (Power monopoly) खण्डित हुआ शासकीय अस्थिरता फैली, कांग्रेस का अपना घर फूटा, राजनीतिक आचरण का घोर नैतिक पतन हुआ, दलबदल का रोग संक्रामक बना, राजनीतिक अनुशासनहीनता बढ़ी, व्यक्तिगत स्वार्थ, पदलोलुपता आदि का बोलबाला हुआ, विधायकों का खरीद बिक्री का बाजार गर्म हुआ, मतवादों (ideologies) का अवमूल्यन हुआ। उसी दशक में आर्थिक विकास की गति, जो पहले ही धीमी थी, और भी धीमी पड़ी, और कहीं-कहीं तो रुक गयी या पीछे की ओर मुड़ी। १९५०-६० के दशक में जहाँ प्रति व्यक्ति आय १.५ प्रतिशत प्रति वर्ष बढ़ी थी वहाँ पिछले दशक में वह घटकर मात्र आधा प्रतिशत प्रति वर्ष रह गयी। तथापि जैसा कि पहले कहा है, पिछले दशक में कृषि ने एक आशाजनक मोड़ लिया, यद्यपि यह मोड़ ग्रामीण समाज के पूर्वस्थित अ-समीकरण पर शान चढ़ाने का भी काम कर रहा है। स्पष्ट है कि हरित क्रान्ति का यथेष्ट लाभ यदि छोटे किसानों, बटाईदारों तथा भूमिहीन खेतिहरों को शीघ्र प्राप्त नहीं कराया गया तो असंतोष की ज्वाला हमारे गाँवों से फूट पड़ेगी। वर्तमान दशक की यह एक बड़ी-से-बड़ी चुनौती होगी। पिछले दशक में यद्यपि औद्योगिक प्रतिसरण (recession) हुआ, तथापि दशक के अन्त होते होते औद्योगिक विकास-रेखा ऊपर उठने लगी। यदि राजनीतिक अयोग्यताओं ने इस उत्थान को रोका, या नीचे की ओर मोड़ नहीं दिया तो ऐसा मानना पड़ेगा कि पिछला निराशा भरा दशक प्रस्तुत दशक के आरोहण के लिए एक सीढ़ी बन गया।

परन्तु राजनीति ही तो इस दशक का सबसे बड़ा प्रश्न चिह्न बन गयी है। इसकी कुछ प्रवृत्तियाँ (trends) स्पष्ट दीखती हैं। राजनीतिक विघटन जारी रहेगा। दलों के सैद्धान्तिक ध्रुवीकरण के बदले स्वार्थ-प्रेरित अपवर्तन चालू रहेगा। मतवादों का अवमूल्यन कायम रहेगा। जातीय भावना एवं निजी स्वार्थ के अभिप्राय से दल बदल, विधायकों की खरीद-बिक्री, दलों की आन्तरिक अनुशासनहीनता, सिद्धान्तविहीन सविदा का अवसरवादी गठन, शासकीय अस्थिरता - यह सब कायम रहेंगे।

यह परिस्थिति आप सबके लिए, देश के हम सब नागरिकों के लिए, एक चुनौती है और एक सम्भावना भी। यदि हम सब किसी चमत्कार की अपेक्षा में बैठे रहेंगे कि कोई प्रतिभावान नेता आकर हमारा उद्धार कर देगा, कोई अधिनायक या नया राजनीतिक दल जन्म लेकर यह सब कूड़ा कचरा साफ कर देगा, तो मैं नम्रतापूर्वक यही निवेदन करूंगा कि हम सबने अपनी बुद्धि ताक पर रख दी है, और अपने नागरिक-धर्म को तिलांजलि दे दी है।

लोकतंत्र रक्षण-सभाएँ

अब प्रश्न है कि हमें क्या करना चाहिए। उत्तर स्पष्ट है। एक लोकतांत्रिक राष्ट्र के नागरिकों का जो कर्तव्य है उसे हमें समझना तथा निभाना चाहिए। आज राजनीतिक नेता, विधायक, मंत्री आदि निरंकुश बन रहे हैं। जनमत का उन्हें भय नहीं, क्योंकि जनमत

है नहीं। अपने मतदाताओं का भय नहीं, क्योंकि वे प्रबुद्ध तथा संगठित नहीं। राजनीतिक दल अपना-अपना प्रचार अवश्य करते हैं, पर उससे स्वस्थ निष्पक्ष जनमत नहीं बन पाता—ऐसा जनमत, जो दलों से ऊपर उठकर अच्छे बुरे के सम्बन्ध में, नीति-अनीति के सम्बन्ध में, न्याय-अन्याय के सम्बन्ध में प्रभावकारी रूप से प्रकट हो सके। ऐसे स्वस्थ जनमत का निर्माण करना हम सबका परम राष्ट्रीय कर्तव्य है। दुर्भाग्य से विद्वत् समुदाय पिछले वर्षों में इस कर्तव्य से विमुख रहा है, यद्यपि कुछ शिक्षक तथा विद्यार्थी दलगत राजनीति में भाग लेते रहे हैं। वैसा करना जिनको रुचेगा वे तो करेंगे ही, परन्तु उससे दल-निरपेक्ष एक ऐसे जनमत का निर्माण नहीं होगा, जिसका प्रभाव सभी दलों पर पड़े। दलमत तथा जनमत के महत्वपूर्ण भेद को हमें समझना और समझाना पड़ेगा। इस हेतु नगर नगर में लोकतन्त्र-रक्षण-सभाएँ कायम की जा सकती हैं।

मतदाता-प्रशिक्षण

इस सन्दर्भ में दूसरा कार्य, जो कुछ मानों में पूर्वोक्त कार्य से भी अधिक महत्त्व रखता है, यह होगा कि मतदाताओं से व्यापक सम्पर्क तथा उनका उद्बोधन किया जाय। लोकतन्त्र में मतदाता भाग्यविधाता माने गये हैं, परन्तु व्यवहार में मतप्रार्थी ही उनके भाग्यविधाता बन गये हैं। व्यापक अशिक्षा मतदाताओं की प्रबुद्धता में बाधक अवश्य हो रही है, परन्तु इसके मानी यह नहीं कि जब तक वे शिक्षित नहीं हो जायेंगे तब तक वे विचारपूर्वक मतदान कर ही नहीं पायेंगे। भारत में श्रवण से ज्ञानोपार्जन की परम्परा रही है, इसलिए अशिक्षित भारतीय जनता में अप्रत्याशित रूप से बौद्धिक प्रौढ़ता पायी जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें जाग्रत किया जाय, मतदान के अपने अमूल्य अधिकार का उचित उपयोग बताया जाय। यह प्रशिक्षण इस प्रकार से कहीं अधिक महत्त्व का है कि किस दल या उम्मीदवार को मत दिया जाय। मतदाता पैसों के लिए वोट न दें। जाति के नाम पर, किसी प्रकार के प्रलोभन अथवा दबाव के वश होकर वोट न दें। उम्मीदवारों में जो चरित्रवान हों, जिन्होंने दल-बदल न किया हो, जो शराबी न हों, जो जातिवादी या सम्प्रदायवादी न हों, जो बेदखली आदि करके गरीबों को सताते न हों तथा जिनके कार्यक्रम और नीति उन्हें उपयुक्त लगें, ऐसे उम्मीदवारों को मतदाता अपना मतदान करें। परन्तु हम सभी जानते हैं कि आज वस्तु-स्थिति इससे बिलकुल भिन्न है। इस दशा में यदि यह काम हम नहीं करेंगे तो हमारे देश तथा लोकतन्त्र का भविष्य अन्धकारमय बन जायेगा।

मतदाता-सूची दुरुस्त करें

इतना ही नहीं, मतदाता सूची की जाँच करनी होगी और उसकी अशुद्धियों को दुरुस्त कराना होगा। निर्वाचन के समय मतदान-कक्ष पर नागरिकों के जत्थे, जिनमें प्रौढ़ विद्यार्थी भी हों, जाने चाहिए, जिनका यह दायित्व हो कि वहाँ किसी प्रकार का अनैतिक कृत्य कोई न करने पाये, जैसे बल-प्रयोग, बोगस वोट आदि। परन्तु जाहिर है कि यह सब वही नागरिक कर सकते हैं जो निष्पक्षता तथा प्रामाणिकता का दावा कर सकते हों। अब जब कि आम चुनाव एक-एक दो-दो दिन में होने लग गये न (presiding officer), न उनके सहायक (agent) इस दर्जे के मिल पाते हैं, न पुलिस की चौकसी ही ऐसी हो पाती है कि चुनाव उचित रीति से सम्पन्न हो सकें। चुनाव के समय झूठ का बाजार गर्म हो जाता है और गाली गलौज आम बात हो जाती है। दलों की चुनाव-घोषणाओं तथा उम्मीदवारों की कृतियों की प्रामाणिक जानकारी मतदाताओं को देना आवश्यक होता है। यदि विश्वविद्यालयों तथा अन्य विद्यालयों के शिक्षक एवं विद्यार्थी निष्पक्ष भाव से यह सब कार्य अपने हाथों में लें और सामान्य नागरिकों का सहयोग उन्हें प्राप्त हो तो वर्तमान राजनीति में जो दुर्बलता, अस्थिरता, अवसरवादिता, स्वार्थपरता आदि दोष पैदा हो गये हैं उनको दूर किया जा सकता है। क्या इस देश के शैक्षिक समाज से इतनी सेवा अपेक्षित नहीं है? इस कार्य को यदि (दलगत) राजनीति में भाग लेना माना जाय तो यह अन्याय होगा। यह तो लोकशिक्षण का एक उत्तम कार्यक्रम होगा।

विधायकों पर अंकुश

इस सिलसिले में एक और बात कह दूँ। जहाँ आजकल राजनीतिक गिरावट और भ्रष्टाचार की इतनी चर्चा है वहाँ क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि किसी निर्वाचन-क्षेत्र में मतदाताओं ने इकट्ठे होकर अपने प्रतिनिधि के भ्रष्टाचार की निन्दा नहीं की है? विधायकों पर अन्तिम अंकुश तो मतदाताओं का मत-प्रकाशन ही हो सकता है। इसके लिए भी आवश्यक है कि निष्पक्ष नागरिक मतदाताओं को जाग्रत और उद्यत करें। महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ऐसी मतदाता उद्बोधन सभाएँ (Voters Education Societies) व्यापक रूप से देश भर में बनायी जा सकती हैं।

अन्त में स्वयं राजनीतिक दलों का हाल देखिए। पार्टियाँ कतिपय राजनीतिक खिलाड़ियों के अखाड़े बनी हुई हैं। आम तौर पर उनके पीछे सदस्यों अथवा वर्गों या जनसमूहों का कोई समिति (Committee) बल नहीं है जो उनको सीधे मार्ग पर चला सके। इसलिए पार्टियाँ थोड़े से लोगों के स्वार्थ सेवन का माध्यम बनी हुई हैं। पार्टियों का समुचित विचार-धारित संगठन करना हमारे आप के हाथों में नहीं है। परन्तु हमारे पास यह शक्ति अवश्य है कि मतदाता उद्बोधन संगठन तथा लोकतन्त्र-रक्षण कार्यकर्ताओं एवं संस्थाओं के द्वारा उन्हें इस सही मार्ग पर चलने को बाध्य कर सकें।

यदि हम अपने इन दायित्वों का भली-भाँति निर्वाह किया तो यह दशक भारतीय लोकतन्त्र के इतिहास में सबसे सृजनात्मक एवं युगान्तरकारी अध्याय होगा। (पूर्णांश)●

गरम हवा में सात दिन

[जिस बिहार की ओर, राज्यदान की घोषणा (अनौपचारिक ही सही) के बाद, सारे देश की, कुछ देश के बाहर के लोगों की भी निगाहें अहिंसक क्रान्ति का करिश्मा देखने के लिए टकटकी लगाये हैं, उस बिहार के एक इलाके की प्रवास-डायरी पाठकों और कार्यकर्ता साथियों के लिए प्रस्तुत है। कम-से-कम आप इतना तो जानें कि किस वातावरण और परिस्थिति में ग्राम स्वराज्य की नींव डालनी है, और आज उसकी कितनी जल्दी है !—सं०]

१ फरवरी '७०

मुजफ्फरपुर से तेंतीस मील दूर, पक्की सड़क छोड़ने के बाद जीप दो घंटे चली तो हमलोग पारो ब्लाक के फतेहाबाद गाँव में पहुँचे। सभा की अच्छी तैयारी थी। पुस्तकालय के मैदान में, गांधीजी की अनावरित मूर्ति के सामने बच्चे, स्त्रियाँ, युवक, वृद्ध, सब मिलाकर सैकड़ों की संख्या में बैठे हुए थे। लोग कह रहे थे, 'मुखियाजी उत्साही व्यक्ति हैं।'

मुखियाजी कांग्रेस के पुराने 'सिपाही' हैं। अब भी सक्रिय हैं। ग्रामदान को विचारपूर्वक मानते हैं। उन्हें पूरा गाँव आदर की दृष्टि से देखता है। सब मालिक कहते हैं। 'मालिक जिधर जायेंगे गाँव उधर जायेगा।'—यह उनका और गाँव का सम्बन्ध है। जो आयु, धन, सेवा, पद और प्रभाव में आगे है, गाँव-समाज आज भी उसके पीछे चल रहा है।

गाँव में कई लोग भूदान में भूमि दे चुके हैं। लेकिन बीघा कट्ठा और ग्रामसभा बनाने का उत्साह नहीं दीख पड़ा। 'मालिक' चाहेंगे तो कुछ काम होगा, यही सुनने को मिला। उनके पास बार-बार जाना पड़ेगा। चर्चा हुई तो उन्होंने सलाह दी कि पहले ब्लाक की पंचायतों से सम्पर्क कर लिया जाय, फिर सहयोगियों को लेकर ब्लाकस्तरीय ग्रामस्वराज्य समिति बना दी जाय।

२ फरवरी '७०

फतेहाबाद से सात मील धनवर गण्डक के किनारे का गाँव—धड़फड़ी। बोलचाल की स्थानीय भाषा में धड़फड़ी का अर्थ है 'उतावली', परेशानी भरी जल्दी। लेकिन मैंने उस गाँव में कुछ नया करने की सोचने की जल्दी देखी नहीं। धड़फड़ी नयी कांग्रेस के एक बड़े नेता का गाँव है। वह रहते हैं पटना में, आते रहते हैं गाँव में। राजनीति भी बनती है पटना में, और पहुँचती रहती है गाँव-गाँव में।

तीसरे पहर हायर सेकेंडरी स्कूल में सभा हुई। स्कूल के विद्यार्थियों ने स्कूल के ही शिक्षक का लिखा हुआ, एकांकी नाटक प्रदर्शित किया। उसका कुल प्लाट यह था कि एक बड़ा भूमिवान मजदूरों के उग्र प्रदर्शन से घबड़ाकर सर्वोदय की ओर मुड़ता है, और उसी तरह एक बड़ा सेठ घेराव से डरकर सर्वोदय की शरण में जाता है। लेखक ने लिखते वक्त शायद यह समझा कि ऐसा होना सर्वोदय की बड़ी विजय है। उसने यह नहीं सोचा कि सर्वोदय ऐसे डरे हुए लोगों के लिए शरणार्थी गृह नहीं बना रहा है। बात यह है कि आमतौर पर लोगों का यह विश्वास है कि भय के बिना आदमी सही काम नहीं कर सकता। परिस्थिति को पहचानना एक बात है, भय के सामने झुकना दूसरी बात। लोगों को कितना भी समझाइये, वे अन्त में यही कहेंगे 'बिनु भय होहिं न प्रीति।' खैर, पूरे शिष्टाचार के साथ सभा हुई। मैंने भाषण दिया। कहने पर भी भाषण के बाद कोई प्रश्न नहीं हुए। केवल जलपान करते समय स्कूल के एक शिक्षक ने, जो 'डबल एम० ए०' थे, कहना शुरू किया, "किसी गाँव में शुद्ध 'प्रैक्टिकल' होना चाहिए।" मैंने कहा: "किसी गाँव में क्यों, आपके ही गाँव में क्यों नहीं?" इस पर बात बदलकर कहने लगे: "जब पंचायतों का बुरा हाल हुआ, तो ग्रामसभाओं से कैसे उम्मीद रखी जाय?" शंका, बस शंका। मन पर शंका इस तरह छायी रहती है कि सकल्प के लिए जगह नहीं रह जाती।

सभा की तत्काल सफलता इतनी थी कि गाँव के एक सज्जन, जो बड़े किसान हैं और गाँव से बाहर भी प्रभाव रखते हैं, धन्यवाद के दो शब्द कहते हुए बोले, "बड़े भाई ने पहले भी भूदान में जमीन दी है। मैं उन लोगों में नहीं हूँ जो अदरख पड़ने पर जमीन न देने की जिद पर अड़े रहते हैं। मुझे और ज्यादा जमीन देने से इनकार नहीं है।"

खान-पान, बर्तन, बात-व्यवहार, रहन-सहन, सबमें पिछले वर्षों में कितना परिवर्तन हो गया है! बिजली, सड़क, सुदूर देहात तक पहुँचनेवाली बस, रेडियो आदि ने गाँव को शहर के करीब ला दिया है। गाँव-गाँव में एक नहीं दो दुनिया बन गयी है—एक मालिक की, धनवान की, शिक्षित की, नेता की, और दूसरी गरीब की, अशिक्षित की, मजदूर बँटाईदार की। दोनों के बीच में जबरदस्त दीवाल है जिसके एक ओर धनी हैं, और दूसरी ओर गरीब। अमीर गर्व से भरा हुआ है, गरीब रोष और ईर्ष्या से। कोई शायद ही जब किसी का भी मन तनाव से मुक्त हो।

धड़फड़ी में ही देवरिया की, जहाँ हम लोग अगले दिन पहुँचनेवाले थे, चर्चा बात में पड़ने लगी।

३ फरवरी '७०

धड़फड़ी में नहा-धोकर जलपान करके निकले, और दस बजे देवरिया पहुँच गये। बाजार, डाकखाना, मिडिल स्कूल, हाई स्कूल, खादी भंडार देवरिया में सब मौजूद हैं। सड़क कच्ची है, लेकिन कई बसें रोज मुजफ्फरपुर आती-जाती हैं। पैदल चलने का रिवाज उठता जा रहा है। लोग चल लेते हैं, लेकिन मजबूरी की हालत में। जो जान-बूझकर पैदल चलता है, वह पदयात्री कहा जाता है। भूदानवालों को यह प्रतिष्ठा मिली है।

गिर गया। बाद को मर गया। कहा जाता है कि मरने के पहले पुलिस के सामने कुछ आखिरी बयान दे गया।

देखते देखते क्या-से-क्या हो गया? बात से गाली, और गाली से गोली की नौबत आयी। गोली उसने चलायी, जिसका सीधा झगड़ा नहीं था। गोली उसको लगी जो न खरीदनेवाला था, न बेदखल होनेवाला।

गनपत का दल भगत के गाँव से चला। चलकर दो ढाई मील दूर एक दूसरे गाँव में पहुँचा, जहाँ कुछ दूसरी जमीन का झगड़ा था—मालिक और उसके मजदूरों में। कुछ जमीन भूदान की भी थी। जिस पर मालिक ने जबरदस्ती कब्जा कर रखा था। मजदूरों में मुकदमेबाजी चल रही थी। भीड़ ने इस मालिक का घर घेर लिया। कुछ लूट भी हुई या नहीं, यह ठीक से मालूम नहीं, लेकिन हल्ला-गुल्ला गाली-गलौज जरूर हुआ। एक ही दिन ये दोनों काण्ड हुए। चारों ओर तहलका मच गया। अनहोनी बात थी। जो कभी नहीं हुआ था, हो गया। एक युवक नेता था, उसका एक गिरोह था और उसके पास पिस्तौल थी। उसकी जबान पर गरीब का नारा था। इससे ज्यादा नक्सलवादी चित्र के लिए क्या चाहिए? गनपत ने जमीन के झगड़े को धनी बनाम गरीब का धर्म-युद्ध बना दिया था।

३ मील दूर की चमरौटी में, जहाँ किसी वक्त गनपत के परिवार की झोपड़ी थी, हम लोगों ने सिर्फ लकड़ी के दो टूटे खम्भे खड़े देखे। उसकी युवती स्त्री बच्चों को लेकर मायके चली गयी है। बाप शोक से पागल होकर मर चुका है। गनपत खुद जेल में है। डकैती, हत्या, बिना लाइसेंस हथियार रखने, आदि के कई मुकदमे उसके ऊपर हैं। वह कुछ के लिए हत्यारा है, और कुछ का प्यारा है। पढ़ाई के समय वह उसी स्कूल का विद्यार्थी था जिसमें हम लोग ठहरे हुए थे। मिडिल की परीक्षा में फर्स्ट डिवीजन में पास हुआ था। मिडिल के बाद गनपत ने देवरिया के ही हाई स्कूल में पढ़ा। अभी उमर भी २२-२३ की ही है। मैंने मिडिल स्कूल के हेडमास्टर साहब से पूछा, "पढ़ते समय कभी आपको कुछ गनपत की प्रतिभा प्राप्त हुई थी या नहीं?" बोले, "एक बार खूब पीटा था।" "किसलिए?" मैंने फिर पूछा। उन्होंने बताया, 'स्कूल के एक मास्टर को खूब मारकर भगा दिया था और एक लड़की को प्रेम पत्र लिखा था। लेकिन लड़का जानदार था।' जानदार तो वह अब भी है, किन्तु अफसोस कि ऐसे जानदार लड़कों के लिए समाज के रास्ते बन्द होते जा रहे हैं। तभी तो वे सूने रास्तों की तलाश में भटकते जा रहे हैं।

देवरिया गाँव में फौजी पुलिस के दारोगा ने बताया कि, "अब सब शान्त है।" बेचारी पुलिस शान्ति-सुव्यवस्था (लॉ एण्ड आर्डर) से आगे सोच भी क्या सकती है? सरकार की ओर से एक शान्ति-समिति भी बनायी गयी है।

—राममूर्ति

अखबार की कतरन :

सामयिक चेतावनी

[लखनऊ की एक सभा में श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा व्यक्त विचारों पर लखनऊ से प्रकाशित हिन्दी दैनिक 'स्वतंत्र भारत' के १० फरवरी, सन् १९७० के पृष्ठ चार पर प्रकाशित सम्पादकीय।]

विवेक का स्वर सुनाई दे जाय तो विपथगामी सत्पथ पर चाहे न आये, विपथगमन का वेग तो रुक जाता ही है। इसीलिए वेगपूर्ण विपथगमन की पहली शर्त यह है कि इतना हंगामा हो, इतना कोलाहल हो कि संयम और विवेक का स्वर किसी को सुनाई न दे। देश में आज सत्ता, स्वार्थ, पदलोलुपता तथा संकीर्ण अर्थहीन नारेबाजी के फलस्वरूप राजनीतिक विपथगमन का वातावरण है और इस कुत्सा का सम्भवतः सबसे प्रबल गढ़ इस समय उत्तरप्रदेश की शिष्टाचार तथा शान्तिप्रेम के लिए शताब्दियों से विख्यात राजधानी—लखनऊ नगरी—बन गयी है। आज इस नगर में संयम, विवेक और सोच-विचार की सलाह सुनायी नहीं देती, अतः इस बात पर आश्चर्य क्यों हो कि श्री जयप्रकाश नारायण को अपने मन की बात कहने का अवसर नगर के कोलाहल से ६ मील दूर साधना-निकेतन में मिला। उन्हें अवसर मिला, इसके लिए निकेतन के कर्णधार बधाई के पात्र हैं।

श्री जयप्रकाश नारायण उन मनस्वी नेताओं में से हैं जिनकी साधना स्वातंत्र्य संग्राम की नींव में है। महात्मा गांधी की नैतिकता उन्हें उत्तराधिकार में गांधीजी के जीवनकाल में मिल गयी थी। समाजवाद का अर्थ और उसकी दिशा सबसे पहले इस देश में बतानेवाले आधे दर्जन नेताओं के बीच उनका नाम अग्रणी है। देश की राजनीतिक, सामाजिक, शैक्षिक तथा आर्थिक समस्याओं को समझकर उनका समाधान खोजने की उनकी क्षमता का लोहा उनके विरोधी भी मानते हैं। इसके अतिरिक्त वह दलबन्दी, पद, सत्ता आदि से दूर हैं, इसके प्रति निष्पक्ष, विरक्त तथा निर्लिप्त हैं और गाँव-गाँव घूमकर जनसेवा कर रहे हैं, अतः निष्पक्ष सत्य कहने के अधिकारी हैं। वह स्पष्टतः आकर पत्रकारों के प्रश्न के उत्तर में कहते हैं कि 'आपस में लड़नेवाले कांग्रेसी, लगता है, अब किसी की न सुनेंगे। ना बाबा ना, मैं दोनों गुटों के बीच मध्यस्थता कराने को तैयार नहीं हूँ। मैं बेकार बीच में क्यों पड़ूँ।" इस प्रदेश के राजनीतिक वातावरण में देश भर की राजनीति के शीर्षस्थ नेता पूरा जोर लगाये दे रहे हैं और श्री जयप्रकाश का उक्त वाक्य आगामी निर्वाचनों पर एक स्पष्ट टिप्पणी माना गया है। जिसमें परिस्थिति को सुधारने की क्षमता हो, सदसद् का विवेक हो, जनहित की दृष्टि हो उसे परिस्थिति जिस एक निराश बना दे तो मर्ज को लाइलाज मानना ही पड़ेगा।

वैशाली में सघन ग्रामदान पुष्टि-अभियान

मुजफ्फरपुर (बिहार) के वैशाली प्रखण्ड में २८ फरवरी से सघन ग्रामदान पुष्टि-अभियान चल रहा है। प्रखण्ड के पंच-सरपंच, शिक्षक, विकास अधिकारी, विभिन्न सरकारी अधिकारी और कर्मचारी, राजनीतिक दलों के लोग तथा अन्य लोग बड़े उत्साह से भाग ले रहे हैं। आचार्य राममूर्ति, निर्मला बहन तथा दूसरे सर्वोदय के विचारक इस अभियान में मार्गदर्शन दे रहे हैं। क्षेत्र में ग्रामस्वराज्य का वातावरण बन रहा है।

मधुबनी में अति तूफान

अति तूफान के सन्दर्भ में यहाँ प्रखण्ड सभा, ग्रामसभा तथा ग्रामदानी गाँवों की पुष्टि का कार्य पूरे अनुमण्डल में चल रहा है। अबतक तीन प्रखण्ड-सभाएँ बिस्फी, मधेपुर तथा लजमैली प्रखण्डों की बन चुकी हैं।

गांधी का जागतिक स्पर्श

[गांधी विचार से प्रेरित अहिंसक समाज रचना की दिशा में प्रयोग करने वाले दुनियाँ के कुछ प्रयोगकर्ताओं से हुई भेंट-वार्ताएँ]

दिल्ली के विज्ञान-भवन में बाहर है भीड़—पैर में चमचमाते नुकीले जूते, बदन पर आलीशान कोट-पतलून, मुँह में सिगरेट लिये घूमनेवालों की। लेकिन ऐसी इस बाहरी दुनिया में यह कौन है गौरवर्ण श्वेत दाढ़ीवाला, अपने हाथों से तैयार किये गये ऊनी कपड़ों की आधी-लिबास में, गले में हाथ-कते ऊन की मोटी-सी थैली लटकाये? कोई मसीहा या पैगम्बर? वेदकालीन कोई महर्षि या कोई अनोखा क्रान्तिकारी?

नाम तो है इनका रेवरेण्ड लांजा दल्वास्तो लेकिन अपने को 'शांतिदास' कहलवाना भी पसन्द करते हैं। फ्रांस की फैशन परस्त दुनिया में इस अनुपम सादगी से रहते हैं और उसी सादगी के साथ दिल्ली में होनेवाले इस 'International Seminar on Relevance of Gandhi to our Time' (वर्तमान युग में गांधीजी की सार्थकता पर अन्तर्राष्ट्रीय परिसंवाद) में शरीक हुए हैं।

शांतिदासजी के ही शब्दों—'कृत्रिम जीवन के बजाय सादगीपूर्ण अर्थ व्यवस्था की गांधीजी की बात से मैं बहुत प्रेरित हुआ।' दस साल से ऊपर हो गये, फ्रांस में दो और फ्रांस के बाहर एक, इस तरह से कुल तीन आश्रम शांतिदासजी के मार्गदर्शन में चल रहे हैं। आश्रम क्या है, उद्योगप्रधान अध्यात्मपरायण साधना की फुलवारियाँ ही कहिए।

सामूहिक तथा निजी प्रार्थना, स्वावलम्बन से निजी आवश्यकताओं की पूर्ति, वस्त्र के लिए चरखे पर कताई, बुनाई, खेतीकाम और बागवानी आदि कई प्रवृत्तियाँ चलती हैं। आश्रम का प्रमुख भी हर प्रकार के शरीरश्रम में अन्य सहचारियों से कोई कम हिस्सा नहीं लेता।

सामूहिक-जीवन के सारे निर्णय सर्वसम्मति से लिये जाते हैं, बहुमत से हरगिज नहीं। और किसी मामले में एक राय न हो तो परस्पर समभाव मनाव होता है, लेकिन सर्वसम्मति होने तक धीरज रखा जाता है। शांतिदासजी के ही शब्दों में—'इसमें समय का व्यय जरूर होता दिखायी देता है, परन्तु इस पद्धति के कारण हमारी एक 'अभिन्न आत्मा' बनी रहती है। और इसीलिए यह समय का अपव्यय साबित न होकर सदुपयोग साबित होता है।''

आश्रम के सुसंयमित और स्वानुशासित जीवन में किसीसे कोई चूक या गलती हो तो वह खुद ही अपने-आप उसकी सजा लेता है। लेकिन अपवाद-स्वरूप कोई व्यक्ति ऐसा चालाक हो कि अपनी गलती को स्वीकार ही न करे या तो सजा से भी चुराये तो?

शांतिदासजी ने बड़ी महत्व की बात कही, 'तो हम खुद बाकी के सारे लोग वह करते हैं जो उसे अपने लिए करना चाहिये, उसके लिए हम खुद सजा भुगतते हैं।" (We do what he ought to do.)

दोपहर का खाना निपटाकर हरियाली पर शांतिदासजी बैठे थे। फ्रांस के तरुणों ने जो दो साल पहले विद्रोह किया, उससे मैं अत्यन्त प्रभावित था। सहज मैंने उस सिलसिले में पूछा "१९६८ की गर्मियों में फ्रांस के तरुण विद्यार्थियों ने जो देशव्यापी विद्रोह किया था, जो क्रांति का प्रयास किया था उसपर आपकी क्या राय है?"

अपनी श्वेत दाढ़ी को सँवारते हुए शान्तिदासजी ने कहा—"उन तरुणों ने प्रखर और प्रभावकारी बलवा जरूर किया—प्रचलित समाज और अर्थव्यवस्था के खिलाफ। लेकिन वे कैसा समाज चाहते हैं जिसका उन्हें स्पष्ट दर्शन नहीं। स्वानुशासन का भी उनमें अभाव है। अति भौतिक, अति सम्पन्न व्यवस्था और केन्द्रीकरण वे नहीं चाहते, यह बात वे जानते हैं लेकिन फिर उसकी जगह कैसा समाज वे लाना चाहते हैं यह वे नहीं जानते। क्या नहीं चाहिए यह वे जानते हैं परन्तु क्या चाहिए यह उन्हें मालूम नहीं।'

लौटते समय मैं सोच रहा था, क्रान्ति का तरुण जो नहीं जानता वह उसे समझाने का, प्रत्यक्ष मूर्त रूप में दिखाने का ही प्रयास क्या शान्तिदासजी अपने आश्रमों में नहीं कर रहे हैं?

× × ×

अपने लम्बे बाल सँवारते हुए, चश्मा नासिका के अग्र तक खिसकाकर आँखें ऊपर उठाकर तथा चेहरे पर हाव-भाव प्रकट करते हुए नाटकीय ढंग से बोलने की लान पेंफ्वर्थ की अदा बड़ी ही अनूठी जायकेदार और सुभावनी होती है। लन्दन में आप एक पत्रकार तथा लेखक के रूप में काफी मशहूर हैं। लेकिन इससे भी बढ़कर मशहूर हैं वे अपने विचारों के लिए। 'नयी दुनिया' इस विषय पर बोलते हुए परिसंवाद में आपने कहा कि, 'विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था तथा छोटे-छोटे समुदायोंवाली समाज व्यवस्था—small units—ही आदर्श हो सकती है और उसकी स्थापना के लिए हमें प्रयत्न करना चाहिए।' दूसरे शब्दों में उन्होंने ग्राम प्रधान समाज रचना की हिमायत की।

इस पर सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष और तमिलनाडु में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन को तरुणों तथा ग्राम दाताओं के सहकार से बल आन्दोलन बनाने का प्रयास करनेवाले प्राणवान कार्यकर्ता श्री जगन्नाथन् ने जो मार्मिक अनुरोध परिसंवाद में सबसे किया वह अभी भी मेरे कानों में गूँज रहा है। जगन्नाथन्‌जी ने कहा था—

'आज के इन सब विचारकों से, विकेन्द्रित समाज रचना चाहनेवाले समाजशास्त्रियों और अर्थशास्त्रियों से क्या मैं यह अपील कर सकता हूँ कि वे

ग्रामदान-ग्रामस्व राज्य-आन्दोलन को देखें, परखें और समझें कि 'नयी दुनिया' की उनकी माँगों का समाधान इस आन्दोलन में मिलता है ?"

× × ×

दानिलो दोलची को कौन नहीं जानता ? इन्हें कई लोग 'इटली के गांधी' के नाम से भी जानते हैं। क्योंकि इटली में एक अनूठा अहिंसक आन्दोलन और संगठन आपने खड़ा किया।

कितने ही लोग बेकार रहते थे काम के बिना। इन सबको हिंसक बनने से रोक कर दानिलो दोलची ने नया मोड़ दिया। सारे बेकारों ने कहा समाज से, और सरकार से, कि "ठीक है, आप काम नहीं देते तो हम खुद ही काम करेंगे—बिना मेहनताना लिये।" और सबने एक सड़क बनाने का काम शुरू किया। सरकार ने बाधा डालने की कोशिश की, लेकिन सारे समाज की सहानुभूति और नैतिक समर्थन इन अहिंसक और अपनी न्याययुक्त माँगों के लिए अद्भुत सत्याग्रह करनेवालों के साथ था। अन्त में नैतिकता की विजय होना स्वाभाविक ही था।

दानिलो दोलची तबसे अबतक इटली में सामाजिक और आर्थिक प्रश्नों को लेकर जनता की अहिंसक शक्ति लोकशक्ति खड़ी करने का प्रयास करते चले आ रहे हैं।

× × ×

'फ्रान्स के विनोबा' कहलाये जानेवाले हैं आबे पियर। गरीब, बेघर, फुटपाथ पर जिन्दगी बसर करनेवाले बेसहारा लोगों को संगठित कर कूड़े पर फेंके जानेवाले सामान तथा फटे-पुराने कपड़ों को इकट्ठा करके उसके द्वारा उपेक्षितों को नयी जिन्दगी दिलाने का काम कई सालों से करते आ रहे हैं।

× × ×

मुलाकातों की यह शुरुआत फ्रान्स के एक वृद्ध, गौरवमय साधक से हुई थी। अन्त अमेरिका के एक नीग्रो युवक से हो रहा है।

डॉ० बाय० रॉजर्स अमेरिका में नीग्रों के अहिंसक आन्दोलन के एक सक्रिय कार्यकर्ता और नेता हैं। डा० मार्टिन लूथर किंग के कई साल तक सहकारी रह चुके हैं। इनका दृढ़ विश्वास है कि केवल अहिंसक मार्ग से ही नीग्रो जनता अपनी इज्जत और न्याय प्राप्त कर सकती है। रॉजर्स सदर्न क्रिश्चियन लीडरशिप कान्फरेंस के 'डायरेक्टर ऑव अफिलिएट्स' भी हैं। रॉजर्स का शरीर बहुत दुबला-पतला है, आँख कमजोर हैं। कुल मिलाकर स्वास्थ्य बहुत कमजोर है, किन्तु अहिंसा में तो दृढ़ विश्वास, और अहिंसक जंग में शरीर-बल के बजाय मनोबल की जरूरत होती है। और वे रॉजर्स में भरपूर हैं। रॉजर्स दोपहर के जलपान के समय गप-शप करते हुए कहने लगे

"डा० मार्टिन लूथर किंग की एक बात ने मुझे बहुत प्रभावित किया है। वे कहते थे—'दूसरों से प्यार करने के लिए जरूरी है आदमी अपने से भी सच्चा प्यार करना सीखे। दूसरों का आदर करना सीखने के लिए आदमी को अपनी इज्जत करना सीखना चाहिए। सामनेवाले को समझने के लिए हमें पहले खुद को भी समझ लेना चाहिए। अहिंसक आन्दोलन की खूबी यह है कि उसमें आदमी के भीतरी आध्यात्मिक स्रोतों का, नैतिक स्रोतों का उपयोग और प्रयोजन होता है।'

नीग्रो-आन्दोलन के समय के किसी प्रसंग का वर्णन करने के लिए जब मैंने उनसे अनुरोध किया तो कहने लगे

"१९६३ का वर्ष। नीग्रो नागरिकों पर होनेवाले अन्याय के खिलाफ अहिंसक आन्दोलन शुरू हुआ। नीग्रो को होटलों में खाने या रहने के लिए प्रवेश नहीं था। किसी काम पर लगाते समय भी नीग्रो और गोरे में भेद किया जाता था। ऐसे और दूसरे कई सारे अन्यायों के खिलाफ यह सत्याग्रह था। छोटे-छोटे विद्यार्थियों ने धरनाओं पर धरने दिये। होटलों और रेस्टोरों में रहना और खाना अपना हक मानकर हम वहाँ जाने लगे। पुलिस ने अत्याचार शुरू किये। अनगिनत तरुण जेल गये। पुलिस ने अश्रुगैस का इस्तेमाल किया। अग्निशामक दल (फायर ब्रिगेड) को भी पुलिस के तौर पर इस्तेमाल किया। पुलिस ने अपने कुत्तों से सत्याग्रहियों को नुचवाया तक। लेकिन नीग्रो पूर्ण अहिंसक और शान्त, किन्तु दृढ़ रहे। द्वेष और नफरत के बजाय प्यार और मुहब्बत दिल में कायम रखे। पीछे नहीं हटे। विजय न्याय और सत्य की ही होनी थी। और, सन् १९६४ में नागरिक-हक का नियम स्वीकृत हुआ।"

मुझे गांधीजी का वह वाक्य याद आया जो उन्होंने १९३५ में कहा था—"Perhaps it will through a Negro that the unadulterated message of nonviolence will be delivered to the world ! (शायद किसी नीग्रो द्वारा ही निर्भेळ अहिंसा का संदेश दुनिया को मिलेगा।)

× × ×

३० जनवरी से ५ फरवरी तक का यह स्मरणीय सप्ताह समाप्त होने पर मैं लौट रहा था। सोचता था, ये सात दिन क्या थे सत्संगति का एक पर्व ही था। रहीम ने ठीक ही कहा है—

'जो रहीम सुख होत है, उपकारी के संग।
बाँटनवारे को लगै, ज्यों मेहँदी के रंग॥'

—अशोक बंग

सीधी जिले में ६९ नये ग्रामदान

सीधी जिला गांधी शताब्दी समिति द्वारा चलाये जा रहे जिलादान-अभियान के अन्तर्गत ६९ नये गाँव ग्रामदान में शामिल हुए हैं। जिले में कुल ग्रामदानी गाँवों की संख्या ४१४ तक पहुँच गयी है।

११ फरवरी को गांधी शताब्दी समिति की बैठक में संकल्पित जिलादान के लक्ष्य को पूरा करने और ग्रामस्वराज्य की बुनियाद डालने हेतु एक "ग्रामस्वराज्य मण्डल" के गठन करने का तय किया गया।

१२ फरवरी को गांधी-श्राद्ध-दिवस के निमित्त सीधी स्थित गांधी-प्रतिमा के निकट सामूहिक प्रार्थना, सूत्रयज्ञ तथा सूत्रांजलि समर्पण के कार्यक्रम आयोजित हुए।

उत्तरप्रदेश प्रदेशदान का कार्यक्रम

२१ और ३० जनवरी सन् १९७० को उत्तरप्रदेश ग्रामदान प्राप्ति-समिति की बैठक और प्रदेश भर में ग्रामदान में लगे हुए मुख्य कार्यकर्ताओं का सम्मेलन हरदोई में हुआ। उस बैठक में श्री धीरेन्द्र मजूमदार, आचार्य राममूर्ति, सर्व सेवा संघ के महामंत्री श्री ठाकुरदास बंग और सुश्री सुमन बंग की उपस्थिति से समिति को भावी कार्यक्रम तय करने में काफी सुविधा हुई। श्री ठाकुरदास बंग ने पूज्य विनोबाजी का उत्तरप्रदेश के लिए यह संदेश सुनाया, "१९७० में उत्तरप्रदेश का प्रदेशदान पूरा हो जाना चाहिए।"

समिति ने इसी संदर्भ में निश्चय किया है कि २२ फरवरी १८ अप्रैल और ११ सितम्बर तक कम-से-कम ११ जिलों का जिलादान पूरा किया जाय। ११ सितम्बर से ३१ दिसम्बर १९७० तक की अवधि में इन समस्त जिलादानी जिलों के कार्यकर्ताओं की सम्मिलित शक्ति शेष २३ जिलों में एक साथ लगेगी तो प्रदेशदान का संकल्प आसानी से पूरा हो जायेगा।

उपर्युक्त निश्चय के अतिरिक्त निम्न-लिखित निर्णय भी किये गये—

(१) हरेक जिले में प्रति माह कम से-कम दो ग्रामदान-प्राप्ति के अभियान जिला परिषद के शिक्षकों व अन्य नाग-रिकों के सहयोग से चलाये जायेंगे।

(२) जिले में जो भी सरकारी एवं अन्य रचनात्मक संस्थाएँ हों उन सभी से निवेदन किया जाय कि वे ग्रामदान-अभि-यानों में अनिवार्य रूप से कार्यकर्ता एवं धन का सहयोग दें।

(३) प्रत्येक जिले में ग्रामदान-अभि-यान चलाने में सहयोग करने के लिए दो प्रतिष्ठित साथी जिम्मेदारी उठायें। श्री शिवप्रसाद गुप्त ने रामपुर जिलादान पूरा करने की जिम्मेदारी ली है।

(४) ग्रामदान-अभियान के सिलसिले में गांवों में जो सहयोगी मिलें उनसे आगे भी सम्पर्क रखा जा सके इसके लिए उनके नाम और पते जिले में तथा प्रान्तीय कार्यालय को दिये जायँ।

(५) विद्यार्थियों के ग्रीष्मावकाश का उपयोग ग्रामदान-प्राप्ति हेतु किया जाय। इसमें शिक्षकों की मदद ली जानी चाहिए।

(६) ग्रामदान-प्राप्ति में लगने के लिए कुछ और स्थायी कार्यकर्ता आगे आने चाहिए। इसके लिए श्री शिवभाई की एक अपील प्रकाशित हो।

(७) ग्रामदान-आन्दोलन के लिए समस्त रचनात्मक कार्यकर्ताओं को जो ग्रामदान के काम में लगे हैं अथवा नहीं लगे हैं, चाहिए कि इस आन्दोलन के प्रति सहानुभूति एवं सहयोग के लिए अपना कुछ न-कुछ समय और सम्पत्ता के लिए प्रतीकस्वरूप एक छोटा सहायता भेजना है।

(८) १८ अप्रैल १९७० तक फैजा-बाद, रामपुर, बदायूं, सहारनपुर मैन-पुरी कानपुर शाहजहाँपुर, बिजनौर का जिलादान पूरा हो जाने की उम्मीद है।

(९) ११ सितम्बर १९७० तक एटा-बरेली, लखनऊ सीतापुर, नैनीताल, फर्रुखाबाद, अलीगढ़, एटा, सुल्तानपुर, इलाहाबाद, जौनपुर, देवरिया, देहरादून, के आये प्रतिनिधियों ने जिलादान पूरा करने का आश्वासन दिया है।

(१०) जिलादानी जिलों में तरुण शांति सेना और ग्राम-शान्ति सेना के शिविर स्थानीय सहयोग से आयोजित किये जायें। इन शिविरों के साथ ही आवश्यक धन का संग्रह भी होना चाहिए।

—कपिल भाई

पूर्वी पाकिस्तान में गांधी जन्म-शताब्दी-वर्ष

३० जनवरी १९६९, कुमिल्ला स्थित अभय आश्रम में 'पाकिस्तान पल्ली उन्नयन एकाडेमी' के डाइरेक्टर डा० अख-तार हमीद खान की अध्यक्षता में एक सार्वजनिक सभा हुई थी जिसका आयो-जन अभय-आश्रम के सचिव श्री प्रबोध-चन्द्र दासगुप्त ने किया था। डा० खान ने गांधीजी की शिक्षा और जीवन दर्शन पर सुचिन्तित एवं सारगर्भित भाषण दिया था। अभय-आश्रम के सचिव ने शताब्दी वर्ष के लिए विभिन्न कार्यक्रम तैयार किया था जिसके अनुसार हर महीने की अंतिम तारीख को एक जनसभा आयोजित करनी थी, जिसमें विशिष्ट-सर्वोदय नेताओं व विद्वानों को समय-समय पर व्याख्यान देने के लिए बुलाने का निश्चय हुआ था। लेकिन दुर्भाग्यवश देश में सैनिक-शासन हो जाने के कारण यह कार्यक्रम पूरा नहीं किया जा सका।

२ अक्तूबर १९६९, नोआखाली गांधी आश्रम में श्री मदनमोहन चटर्जी की अध्यक्षता में एक प्रार्थना सभा हुई थी। सुबह से शाम तक प्रार्थना, प्रवचन, गीता, कुरान से आवृत्ति आलोचना आदि कार्यक्रम हुए थे। अन्त में गांधीजी के आदर्श व भावधारा पर श्री मदन बाबू ने चर्चा की थी। विद्यालय के विद्यार्थी व विद्या-र्थिनियों ने गांधीजी के बारे में कविता व प्रबन्ध आदि प्रस्तुत किए थे।

३० जनवरी १९७० मातृगर्द (राजशाही) गांधी प्रतिष्ठान में एक जनसभा हुई जिसमें सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री रजनी कुमार दत्त और स्थानीय राज-नैतिक नेता जनाब आतउर्रहमान चौधरी ने गांधीजी की दी हुई शिक्षा व जीवन-चर्या पर चर्चा की। सर्वोदय साहित्य की एक प्रदर्शनी का आयोजन भी किया गया था। प्रारम्भ में प्रार्थना, सूत्रयज्ञ, रामधुन भजन आदि हुआ, जिसमें विशेष विशेष स्थान के शिक्षितों ने भाग लिया।

गांधी जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में श्री रजन कुमार दत्त ने 'गांधीवाणी सतर्क' नामक एक पुस्तिका तैयार की, जिसमें बापू की बातें संकलित हैं। पूर्वी पाकिस्तान के सब जिलों में यह पुस्तिका प्रचारित करने का प्रबन्ध किया गया है, ताकि यह अधिकतम घरों में पहुँच जाय। अफसोस की बात है कि नोआखाली गांधी-आश्रम के सचिव श्री चारु चौधरी मिस्टर १९६३ की पहली नवम्बर से आज तक पाकिस्तान में बन्दी जीवन बिता रहे हैं। इस अवसर पर उनकी मुक्ति की प्रार्थना की गयी।●

धनबाद (बिहार) जिले में ग्रामस्वराज्य समिति का गठन

बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के निर्णयानुसार जिला ग्रामदान-प्राप्ति समिति का विघटन करके जिले में ग्राम-स्वराज्य के कार्यक्रम को सक्रियता प्रदान करने हेतु जिला ग्रामस्वराज्य समिति का गठन गत ८ फरवरी को हुआ।

१७ सदस्योंवाली कार्यसमिति के अध्यक्ष श्री रामनारायण शर्मा एवं मंत्री श्री हरिशंकर प्रसाद सर्वसम्मति से मनोनीत किये गये।●

रीवाँ जिले में १४ नये ग्रामदान

रीवाँ (डाक से)। जिला गांधी शताब्दी समिति के तत्त्वावधान में चल रहे प्रखण्डदान-अभियान का पाँचवाँ दौर १२ फरवरी, '७० गांधी-श्राद्ध दिवस को समाप्त हुआ। इस दौर में १४ नये गाँव ग्रामदान में शामिल हुए। इस प्रकार अब रायपुर प्रखण्ड में ग्रामदानी गाँवों की संख्या १४४ हो गयी है। इसे मिलाकर जिले में ग्रामदानों की संख्या १८१ है।

गांधी-कस्तूरबा मित्र-मण्डल

कस्तूरबाग्राम, इन्दौर में राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी की महिला-बाल उप-समिति और कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट के संयुक्त तत्त्वावधान में १२ से १६ फरवरी तक आयोजित पाँच दिन-सीय परिसंवाद और सम्मेलन सम्पन्न हुआ। इसमें विभिन्न राज्यों की ४८ महिला-प्रतिनिधि सम्मिलित हुईं।

परिसंवाद का विषय था—"शान्ति के लिए महिला-शिक्षण।"

सम्मेलन का उद्घाटन डा० श्रीमती हंसा बहन मेहता ने किया और अध्यक्षता श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय ने की। गांधीजी के निजी सचिव श्री प्यारेलालजी ने भी सम्मेलन को सम्बोधित किया। डा० सुशीला नय्यर ने परिसंवाद में हुई चर्चाओं का सार प्रस्तुत किया।

सम्मेलन में बा बापू जन्म शताब्दी काल में महिला-बाल-उपसमिति द्वारा किये गये कार्यों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हुए आगामी कार्यक्रम पर चर्चा की गयी। चूंकि महिला-बाल उपसमिति की अवधि मार्च, १९७० को समाप्त हो जायगी, लेकिन उपसमिति द्वारा शताब्दी-काल में किये गये कार्यों में से शेष कार्यों को पूरा करना आवश्यक है, इसलिए इन और ऐसे कार्यों को पूरा करने के लिए सम्मेलन के अन्तिम दिन की बैठक में की गयी सिफारिश के अनुसार "गांधी-कस्तूरबा मित्र-मण्डल" का गठन किया गया।●

"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक का प्रकाशन-वक्तव्य

[न्यूजपेपर रजिस्ट्रेशन ऐक्ट (फार्म न० ४, नियम ८) के अनुसार हर एक अखबार के प्रकाशक को निम्न जानकारी प्रस्तुत करने के साथ साथ अपने अखबार में भी वह प्रकाशित करनी होती है। तदनुसार यह प्रतिलिपि यहाँ दी जा रही है।

—सं०]

(१) प्रकाशन का स्थान	वाराणसी
(२) प्रकाशन का समय	सप्ताह में एक बार
(३) मुद्रक का नाम	श्रीकृष्णदत्त भट्ट
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक, राजघाट, वाराणसी–१
(४) प्रकाशक का नाम	श्रीकृष्णदत्त भट्ट
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक, राजघाट, वाराणसी–१
(५) सम्पादक का नाम	राममूर्ति
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक, राजघाट, वाराणसी–१
(६) समाचार-पत्र के संचालकों का नाम-पता	सर्व सेवा संघ, गोपुरी, वर्धा (सन् १८६० के सोसायटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट २१ के अनुसार रजिस्टर्ड सार्वजनिक संस्था) रजिस्टर्ड नं० ५२

मैं, श्रीकृष्णदत्त भट्ट, यह स्वीकार करता हूँ कि मेरी जानकारी के अनुसार उपर्युक्त विवरण सही है।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट, प्रकाशक

वाराणसी, २८–२–'७०

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सजिल्द १२ रु०, एक साल १२ पैं०), विदेश में २२ रु०; या २४ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वर्ष : १६
सोमवार
अंक : २३
९ मार्च, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट वाराणसी-१
फोन : ४३९१

श्रेष्ठ पुरुष : अव्यक्त जीवन

मैं मानता हूँ कि दुनिया में जो श्रेष्ठ पुरुष होते हैं वे अव्यक्त रह जाते हैं, प्रसिद्ध नहीं होते। जो अत्यन्त प्रसिद्ध हैं वे थे तो महापुरुष, लेकिन दूसरे नम्बर के। पहले नंबर के जो थे वे लगभग अज्ञात रह गये।

दुनिया जानती है आचार्य शंकर को। लेकिन उनके पूज्य गुरु गोविंदपाद नाम के महापुरुष हो गये। दुनिया उनको जानती नहीं। लेकिन उनका थोड़ा-सा नाम कायम है। इसलिए कि उनके शिष्य ने उनका नाम जाहिर कर दिया—भज गोविंदम्, भज गोविंदम्। गोविंद की भक्ति करो, ऐसा कहा। ऐसी कुशलता से शंकराचार्यजी ने स्तोत्र लिखा। लोग समझते हैं, और ठीक ही समझते हैं, भगवान की भक्ति करो ऐसा कहा—भज गोविंदम्। लेकिन मन में गुप्तता से अपने गुरु का नाम लिया। दुनिया से छिपाया। वे प्रसिद्ध नहीं होना चाहते थे। लेकिन शंकराचार्य के कारण प्रसिद्ध हुए। मेरा मानना है कि शंकराचार्य से कहीं अधिक योग्यता उनमें थी। लेकिन शंकराचार्य नहीं हुए होते तो दुनिया को उनका नाम भी मालूम नहीं होता।

ऐसी ही दूसरी मिसाल निवृत्तिनाथ की है। वह ज्ञानदेव के बड़े भाई भी थे और गुरु भी थे। अत्यन्त निवृत्त थे। बीच में ऐसा हुआ कि निवृत्तिनाथ की लिखी हुई गीता की एक छोटी-सी किताब प्रकाशित हुई मराठी में। वह मेरे पास आयी। जिसने उसको मेरे पास भेजा था उसको लिख दिया—"ऐसे ग्रंथ निवृत्तिनाथ के नहीं हो सकते। यह किताब उनकी हो ही नहीं सकती, यह मैं बिना पढ़े ही कह देता हूँ।" बाद में वैसा ही साबित हुआ। इतिहासकारों ने खोज निकाला कि कोई दूसरा निवृत्तिनाथ हुआ होगा। क्योंकि वह इतने ऊँचे थे कि उनके लिए कोई ग्रंथ लिखना गौण कार्य था। अगर ज्ञानदेव नहीं हुए होते तो उनका नाम भी हमलोग नहीं जानते। ऐसी और भी मिसालें हैं।

मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि जो बड़े दर्जे के पुरुष होते हैं, वे दुनिया में अज्ञात रह जाते हैं। दूसरे दर्जे के जो सर्वोत्तम पुरुष हैं, वे लोगों के सामने आते हैं।

दिनांक : ८-१२-'६९
पवनार, वर्धा

जिला सर्वोदय-मंडलों का पुनर्गठन

प्रिय बन्धु,

कृपया संघ-कार्यालय से उक्त विषय मे जारी परिपत्र-संख्या मडल । १९६९-७० । १ दिनाक ६ जुलाई ६९ का अवलोकन करने का कष्ट करें, जिसमे आपसे प्रार्थना की गयी थी, कि संघ के संशोधित विधान की भावनाओं को ध्यान मे रखते हुए लोक-सेवकों के निष्ठापत्र विधिवत् भरवाये जायें, और विभिन्न स्तरों पर क्षेत्रीय (प्राथमिक अथवा जिला) सर्वोदय-मडलों का पुनर्गठन किया जाय। कुछ जिलों में इस प्रकार सर्वोदय-मण्डलों का पुनर्गठन हुआ है, लेकिन अभी बहुत-से जिले ऐसे भी हैं, जहाँ संगठन का काम पूरा नहीं हो पाया है।

संघ के सदस्यों का कार्यकाल संघ-विधान के अन्तर्गत तीन साल है। लेकिन जिला सर्वोदय-मडल अगर चाहें तो अपने उपनियम बनाकर अपना कार्यकाल एक अथवा दो या तीन साल, जैसा चाहे वैसा, रख सकते हैं।

किसी भी सर्वोदय-मडल मे १० लोक-सेवकों से कम सदस्य नहीं होने चाहिए। यदि कोई लोक-सेवक किसी सर्वोदय-मडल का सदस्य हो जाय और उस सर्वोदय-मडल का कार्यकाल समाप्त होने से पहले ही वह लोक-सेवक, लोक-सेवक न रहे, तो वह साथ-साथ सर्वोदय-मंडल का सदस्य भी नहीं रहेगा।

संघ के संगठन का मुख्य आधार सत्य और प्रेम है, इसलिए अपने नियम बनाने और उसके पालन करने मे लक्ष्य का जितना ध्यान रहेगा उतना ही हमारा संगठन सही दिशा मे जा सकेगा। जिला सर्वोदय-मडल अपने कार्य सुचारु रूप से चलाने के नियम बना सकते हैं। आप अपनी परिस्थिति के अनुसार संघ-विधान की भावना मे जैसे ठीक समझें, उपनियम बना लें, और जैसा तय हो, उसकी जानकारी हमें देने की कृपा करें। जिन जिलों में अभी तक सर्वोदय-मडलों का पुनर्गठन नहीं हुआ है, उनसे प्रार्थना है कि वे कृपा कर संशोधित विधान के अनुसार लोक-सेवक बनाकर पुनर्गठन की कार्यवाही करें।

विनीत,

(हस्ताक्षर)

सर्व सेवा संघ, मंत्री
गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र)
दिनाक : १६-२-'७०

प्रबन्ध समिति की बैठक

सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक आगामी १७ से १९ मार्च तक पूना मे होने जा रही है। बैठक पूना स्थित राज्य-शिक्षण शास्त्र संस्था, सदाशिव पेठ, पूना ३० के भवन में होगी। पहुँचने आदि की सूचनाएँ, आरक्षण-सम्बन्धी पत्र सदस्यगण निम्न पते पर लिखें :

मंत्री,
महाराष्ट्र ग्रामदान नवनिर्माण समिति, ७२७ सदाशिव पेठ,
पूना-३०

भारत में कुल ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

(१५ फरवरी तक)

२९ जनवरी के बाद नयी प्राप्ति

प्रान्त	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान
बिहार	६०,०६५	५७३	१५	–	–	–
उत्तरप्रदेश	२८,८५७	१६२	७	१,३७८	७	१
तमिलनाडु	१४,६००	१८५	५	–	४	१
उत्कल	१२,८५६	७०	१	–	–	–
मध्यप्रदेश	९,०६१	४७	७	–	–	१
आन्ध्र	४,२३१	१५	१	–	–	–
महाराष्ट्र	४,२५०	२५	१	–	–	–
पंजाब हरि०	४,०११	७	–	२५	–	–
राजस्थान	१,७७७	२	–	–	–	–
असम	१,६८२	१	–	–	–	–
मैसूर	१,४००	९	–	२४४	५	–
गुजरात	१,११९	३	–	–	–	–
प० बंगाल	७४८	–	–	–	–	–
केरल	४१८	–	–	–	–	–
दिल्ली	७४	–	–	–	–	–
जम्मू-कश्मीर	१	–	–	–	–	–
कुल :	१,४५,१५४	१,०९९	३७	१,६४७	१६	३

प्रदेशदान—१ : बिहार

संकल्पित प्रदेशदान—तमिलनाडु, उत्कल, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और पंजाब।

नये जिलादान—१ आजमगढ़—उत्तरप्रदेश
२. इन्दौर—मध्यप्रदेश
३ धर्मपुरी—तमिलनाडु

विनोबा-निवास, गोपुरी, वर्धा —कृष्णराज मेहता

सम्पत्ति और संविधान

पिछले दिनों देश में एक विचित्र स्थिति पैदा हुई है। हमारा लोकतंत्र जिन अन्तर्विरोधों में फंसता जा रहा है, उनमें एक और अन्तर्विरोध है सरकार के नेताओं और न्यायाधीशों में वाद। इनमें से एक समाज के सुधार के लिए सम्पत्ति के कुछ नून बनाना चाहता है, और दूसरा संविधान में स्वीकृत मूल मावकारों के संरक्षण का आग्रह दिखा रहा है। जनता का हित दोनों के मन में सर्वोपरि है। न्यायाधीश कहते हैं कि अगर संवि धान का पालन सख्ती के साथ नहीं होगा तो जो मूल अधिकार संविधान में जनता को मिले हैं, और जिन पर उसकी स्वतंत्रता और प्रगति निर्भर है, वे टूट जायेंगे, और तानाशाही के लिए रास्ता साफ हो जायगा। दूसरी ओर सरकार के नेता, जिनका संसद में बहुमत है, उसी संविधान का इस्तेमाल जनता के हित में कुछ दूसरे कानून बनाने के लिए करना चाहते हैं—विशेष रूप से सम्पत्ति के कानून।

न्यायाधीश के लिए न्याय की चिंता स्वाभाविक है। लेकिन उसका न्याय वह है जो संविधान और कानून में लिख दिया गया हो। उस लिखित या परम्परा में मान्य न्याय के उल्लंघन को न्यायाधीश किसी तरह स्वीकार नहीं कर सकता। स्वयं सरकार द्वारा उल्लंघन में न्यायाधीश तानाशाही का संकेत देखता है। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को तानाशाही का भय सेना से नहीं, जनता के उन मान्य नेताओं से ही है जिन्हें उसने अपने वोट से सरकार में भेजकर शांति, सुव्यवस्था, न्याय और सामाजिक प्रगति के लिए कानून बनाने का खुला अधिकार दिया है। लगता है जैसे स्वयं जनता के प्रतिनिधियों से जनतंत्र की रक्षा का प्रश्न पैदा हो गया है।

जनता को किस पर भरोसा अधिक है—अपने नेताओं पर या न्यायाधीशों पर? जिनके पास सम्पत्ति है—थोड़ी या ज्यादा—वे न्यायाधीशों के अधिकारों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं चाहते। अन्य लोगों का रुख दूसरा है। ऐसे लोग भी हैं जो सिद्धान्त की दृष्टि से सम्पत्ति और उसके निजी स्वामित्व को समाज के विकास के लिए उपयोगी मानते हैं, और ऐसे लोग भी हैं जो निजी स्वामित्व को जहर समझते हैं। पर सामान्य स्थिति यही है कि मनुष्य अपने साधनों का स्वामी बना रहना चाहता है, जब तक कि उसे स्वामित्व से अधिक सुरक्षा और कहीं न दिखाई दे।

जो लोग संसद को न्यायालय से ऊपर रखते हैं वे मूल अधिकारों को मानते ही नहीं, ऐसी बात नहीं है। लेकिन वे यह मानते हैं कि सम्पत्ति का अधिकार दूसरे सब अधिकारों से भिन्न है। जिसे हम सम्पत्ति कहते हैं, और जिस पर आज निजी स्वामित्व है, उसमें प्राकृतिक और मनुष्यकृत ऐसी चीजें—भूमि, कल-कारखाने, उद्योग-व्यापार आदि—शामिल हैं जो जनता की जीविका के साधन हैं, और जनता की जीविका ऐसा प्रश्न है जिसे आज के जमाने की कोई सरकार कभी छोड़ नहीं सकती, और स्वयं जनता उसे कभी छोड़ने दे नहीं सकती। सम्पत्ति का स्वरूप और उसकी समुचित व्यवस्था आर्थिक और सामाजिक न्याय की बुनियाद है। इसलिए संसद के अधिकारों के हिमायती लोगों का मत है कि ऐसे बुनियादी महत्व के प्रश्न पर कानूनी दृष्टि से नहीं, सामाजिक दृष्टि से, देखा जाना चाहिए। संसद की दृष्टि सामाजिक है, जब कि न्यायाधीशों की कानूनी। सामाजिक क्रान्ति सरकारी कानून में नहीं बाँधी जा सकती। इसके अलावा सम्पत्ति के प्रश्न पर स्वयं संविधान में विरोध है। मूल अधिकारों के अन्तर्गत संविधान ने जो शर्तें रखी हैं वह इस प्रकार है

"सब नागरिकों को सम्पत्ति प्राप्त करने, रखने, और बेचने का अधिकार होगा। भारतीय नागरिक सम्पत्ति विरासत में, अपनी कमाई से, या किसी अन्य तरीके से, जो गैर कानूनी न हो, प्राप्त कर सकता है, रख सकता है, और बेच सकता है। इस अधिकार की मर्यादा केवल एक है—सार्वजनिक हित।"

संविधान ने नागरिक के इस मूल अधिकार की रक्षा यह शर्त लगाकर की है कि बिना कानून के सरकार सिर्फ अपने आदेश से किसी को उसकी सम्पत्ति से वंचित नहीं कर सकती, और संसद भी ऐसा कोई कानून नहीं बना सकती जिसमें बिना मुआवजा किसी की सम्पत्ति ले लेने की बात हो। ऐसा कानून भी तभी संविधान के अनुकूल समझा जायगा जब उससे स्पष्ट रूप से कोई सार्वजनिक हित सधता हो।

संविधान में एक ओर नागरिक का यह अधिकार है, दूसरी ओर उसी संविधान में 'निदेशक तत्वों' (डाइरेक्टिव प्रिंसिपुल्स) के अन्तर्गत सरकार का निम्नलिखित कर्तव्य बताया गया है

'राज्य को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए ताकि (क) सभी स्त्री पुरुष नागरिकों को समान रूप से समुचित जीविका के साधनों का अधिकार प्राप्त हो, (ख) समाज के भौतिक साधनों का स्वामित्व और नियंत्रण इस तरह बँटा हुआ हो कि सबका हित सधे (ग) आर्थिक व्यवस्था ऐसी न हो कि धन और उत्पादन के साधन कुछ हाथों में केन्द्रित हो जायें और सर्वसामान्य का अहित हो।"

जनता के मूल अधिकारों और सरकार के कर्तव्यों में अन्तर यह है कि जनता अधिकारों की रक्षा के लिए न्यायालय में फरियाद कर सकती है, किन्तु न्यायालय सरकार पर कर्तव्यों के पालन के लिए कानून का जोर नहीं डाल सकता। ऐसी स्थिति में जो लोग यह देखते हैं कि सरकार द्वारा कर्तव्य-पालन के रास्ते में संविधान में दिये हुए किसी मूल अधिकार द्वारा बाधा पड़ती है तो उसमें संशोधन होना चाहिए, तथा मूल अधिकार के प्रश्न को लेकर संसद के किसी प्रगतिशील कानून को रोकने का अधिकार

न्यायालय को नहीं होना चाहिए। सर्वोच्च न्यायालय कहता है कि "मूल अधिकारों को खंडित करने का कानून बनाने का अधिकार संविधान में संसद को नहीं है। संसद 'सार्वजनिक हित' और 'मुश्राविजे' की शर्तों के अन्दर ही कानून बनाने की बात सोच सकता है।" सर्वोच्च न्यायालय की निगाह में मूल अधिकारों की मूल भावना पर प्रहार नहीं किया जा सकता।

स्वतंत्रता के २२ वर्षों का यह अनुभव है कि सम्पत्ति के स्वामित्व के मूल स्वरूप में परिवर्तन किये बिना समाज-परिवर्तन असंभव है। उदाहरण के लिए १९५० में, जब से यह संविधान लागू हुआ, भारत ने भूमि-सम्बन्धी जितने कानून बनाये हैं, उतने दुनिया के किसी देश ने नहीं बनाये। लेकिन क्या हुआ? समाज के बुनियादी ढाँचे में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। वही सामंतवादी, पूँजीवादी ढाँचा और समाज-व्यवस्था आज भी है, जो पहिले थी। इसका परिणाम यह है कि समाज ऐसी स्थिति में पहुँच गया है जहाँ आमूल परिवर्तन ही उसे बचा सकता है, अन्यथा वह विघटन के गम्भीर खतरे से नहीं बच सकता। अगर समाज को निरंकुश अराजकता से बचाने के लिए सम्पत्ति और स्वामित्व पर अंकुश लगाना अनिवार्य हो तो क्या किया जाय? संविधान में किसी समय लिख दी गयी बातों को न छुआ जाय? समाज के प्रवाह को कौन संविधान रोकेगा, कौन सरकार रोकेगी? और, कैसे रोकेगी?

इस पूरे प्रश्न को सरकार, कानून और संविधान से अलग एक दूसरी दृष्टि से भी देखा जा सकता है। सचमुच, समाज सर्वोपरि है, और उसी के हित की सिद्धि के लिए सरकार और संविधान हैं। सरकार बनाम संविधान के प्रश्न की सामाजिक और राजनैतिक जड़ें भी हैं। संसद में जो सदस्य सम्पत्ति के अधिकार के समर्थक हैं उन्हें भी जनता का वोट प्राप्त है, और जो विरोधी हैं वे भी जनता के ही वोट से चुने गये हैं। दोनों में अन्तर यह है कि एक की संख्या अधिक है। संख्या के आधार पर निर्णय सही भी हो सकते हैं, गलत भी। उत्तरप्रदेश में गुप्त-सरकार ने छोटी जोतों पर लगान माफ करने की घोषणा की थी। कुछ ही दिन बाद सरकार बदल गयी। चरणसिंह-सरकार ने कह दिया कि लगान माफ करने से किसानों को कोई लाभ नहीं होता, उन्हें दूसरी सुविधाओं की जरूरत है। एम० एल० ए० नहीं बदले, उत्तरप्रदेश नहीं बदला, किसान नहीं बदले। सिर्फ संख्या इधर की उधर हो गयी, और सारी बात उलट गयी। यह सारा खेल है राजनीति का।

अगर हमारी संसद और हमारे विधानमण्डलों में निर्णय इसी तरह अस्थिर संख्याओं के आधार पर होता रहेगा, तो इतना ही नहीं होगा कि संख्या को अपने पक्ष में करने के सारे गलत-सही उपाय अपनाये जायेंगे, जैसा कि आज होता है, बल्कि यह भी होगा कि समाज का हर समुदाय संसद में अपनी संख्या ठीक रखने के लिए संगठित होगा। वह इतने से ही संतुष्ट नहीं होगा, बल्कि खेत, खलिहान और कारखाने में जरूरत पड़ने पर संघर्ष और प्रहार पर उतारू होगा। देश के कुछ भागों में ऐसा होना शुरू भी हो गया है। संख्या के शास्त्र का अनिवार्य परिणाम है शस्त्र। जनता शीघ्र शास्त्र का सहारा छोड़कर शस्त्र की शरण जायगी।

एक वर्ग के हित को कानून की शक्ति से दूसरे वर्ग के हित के ऊपर बिठाने की कोशिश में से संघर्ष का जन्म भले ही हो, जनता की मुक्ति नहीं निकलेगी। सभ्य समाज की व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जिसमें हरएक के वास्तविक हितों की रक्षा हो। आज समाज में हितों का जो विरोध दिखायी देता है उसकी जड़ में प्रचलित व्यवस्था है। जो अनीति और अन्याय से भरी हुई है। इसलिए कोशिश व्यवस्था को बदलने की होनी चाहिए, जो नहीं होती। जिनके पक्ष में संख्या होती है वह केवल चमत्कार प्रस्तुत करता है। चमत्कार की कला में हर सरकार, चाहे वह जिस दल की हो, माहिर हो गयी है।

स्वामित्व का स्वरूप बदलना चाहिए, यह लगभग सर्वमान्य है। लेकिन जनता सरकार-स्वामित्व की समर्थक नहीं है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण का स्वागत उसने इसलिए किया है क्योंकि धन या सत्ता का कुछ हाथों में केन्द्रित होना उसे पसन्द नहीं है। लोकमानस, और इस जमाने का प्रवाह, दोनों एकाधिकार के विरुद्ध हैं। लेकिन बड़े मालिकों से आगे बढ़कर अगर छोटे स्वामित्व के विरुद्ध भी कानून बन जाय तो उन्हीं छोटे लोगों का रुख बदल जायगा।

ग्रामदान-आन्दोलन में जिस तरह लाखों बड़े और छोटे लोगों ने ग्रामस्वामित्व के पक्ष में अपनी सहमति प्रदर्शित की है, उससे इतना स्पष्ट है कि जनता ऐसी व्यवस्था के लिए लगभग तैयार है जिसमें सबको समाधान हो। व्यापक समन्वय और समाधान की व्यवस्था तभी हो सकती है जब पहले उसके लिए शिक्षण द्वारा लोकसम्मति प्राप्त की जाय, और तब कानून की मुहर लगायी जाय। इतना तय है कि बहुमत का शास्त्र पुराना पड़ गया। अगर समाज को विनाशकारी संघर्ष से बचाना हो तो लोक-सम्मति को ही लोकतांत्रिक निर्णयों का आधार बनाना चाहिए, और, लोक-जीवन की स्वायत्त इकाइयों को निर्णय का उसी तरह अधिकार मिलना चाहिए, जिस तरह आज विधान-मण्डलों को मिला हुआ है। उनके हाथों में निर्णय-शक्ति का केन्द्रित होना लोक-जीवन के लिए शुभ नहीं है।

न्यायालय के अधिकार से समाज-परिवर्तन रुकता है। आज की सत्ता की राजनीति के रास्ते पर चलनेवाली संसद के अधिकार से संघर्ष, अराजकता और तानाशाही की स्थिति पैदा होती है। ऐसी स्थिति में स्वयं जनता क्या करे? उसके सामने एक ही रास्ता है। उसे क्रान्ति को अपने हाथ में लेना चाहिए—न संसद के हाथ में छोड़ना चाहिए, न न्यायालय के। फिर भी जब तक आज की शकल में संसद और न्यायालय मौजूद हैं तब तक क्रान्ति का जो भी काम वे करें, उसका स्वागत है।●

समाजवाद का नमूना

सिद्धराज ढड्ढा

लोकसभा में रेलवे विभाग का जो बजट पेश हुआ है उसने बहुत-से संजीदा लोगों को भी आश्चर्य में डाल दिया है। पिछले कितने ही महीनों से इस देश की गरीब जनता समाजवाद के सुनहले प्रभात की आशा लगाये बैठी है। समाजवाद के नाम पर अस्सी-पच्चासी बरस पुरानी सबसे बड़ी राजनैतिक संस्था के टुकड़े किये गये। कंधे-से-कंधा लगाकर आजादी की लड़ाई में लड़नेवाले बरसों के साथी समाजवाद के नाम पर अलग हुए। समाजवाद के नाम पर कितने ही राजनैतिक असूलों और नैतिक मूल्यों की बलि दी गयी। पर आखिर वह समाजवाद है क्या? क्या वह लोगों को भुलावे में डालने के लिए एक शब्द मात्र है, या उस शब्द का कुछ अर्थ भी है?

रेलवे बजट में यात्री-किरायों में वृद्धि करने के जो विभिन्न प्रस्ताव हैं वे सचमुच आश्चर्यजनक हैं। "समाजवादी" तो वे किसी भी अर्थ में नहीं हैं, बल्कि सामान्य मानदण्ड से भी प्रतिक्रियावादी हैं। कहने को तो सभी दर्जों के किराये बढ़ाये जा रहे हैं, पर गहराई से देखा जाय तो तीसरे दर्जे में सफर करनेवाले, यानी गरीब और निचले मध्यम वर्ग के लोगों पर सबसे ज्यादा बोझ डाला गया है। तीसरे दर्जे में सोने की जो सुविधा अब तक एक रात के लिए चार रुपये में, और लगातार यात्रा में दूसरी रात का केवल एक रुपया अतिरिक्त देकर पाँच रुपये में, मिलती थी, वह अब बढ़ाकर एक रात के लिए पाँच रुपये और दो रात के लिए एकदम आठ रुपये की जा रही है, जब कि पहले दर्जेवालों को बिना कुछ अतिरिक्त चार्ज दिये, निर्धारित किराये में ही रात को सोने की पूरी सुविधा मिलती है। पहले दर्जे का किराया प्रति रुपया केवल सात पैसा बढ़ाया जा रहा है, जब कि तीसरे दर्जे का करीब पौने चार पैसा। लेकिन, ऊपर बताये अनुसार तीसरे दर्जेवालों के लिए वास्तव में कुल मिलाकर १२% से भी अधिक की वृद्धि हो जाती है। इसी तरह मेल या एक्सप्रेस गाड़ियों में तीसरे दर्जे का कम-से-कम किराया जो अभी तक २० पैसे था, वह बढ़ाकर एकदम एक रुपया, यानी पाँच गुना, किया जा रहा है।

इस सारे मामले में थोड़ी और गहराई में जाने की जरूरत है, क्योंकि कुछ ऊपरी दलीलें देकर सामान्य लोगों को आसानी से भ्रम में डाला जा सकता है। उदाहरण के लिए यह कहा जा सकता है कि अगर सोने की सुविधा चाहिए तो उसके लिए ज्यादा पैसा भी देना चाहिए। इस दलील से अक्सर लोगों का मुँह बन्द हो जाता है। लेकिन थोड़ी गहराई से सोचने पर इस दलील के पीछे जो धोखा है वह स्पष्ट हो जायगा—खासकर के जब यह दलील देनेवाले समाजवाद की भी दुहाई देते हों। भोजन, शौच और नींद, ये मनुष्य की ऐसी बुनियादी आवश्यकताएँ हैं जो गरीब-अमीर सबके लिए समान महत्त्व रखती हैं। ऐसा नहीं है कि अमीर को ज्यादा नींद की जरूरत है, और गरीब को कम, या अमीर के लिए शौच की सुविधा चाहिए और गरीब के लिए नहीं। बल्कि ये चीजें तो मनुष्य और पशु, दोनों के लिए समान हैं—"आहार निद्रा भय मोह लोभा', सामान्यमेतद् पशुभिर्नराणाम्"। तब फिर यह कहाँ का न्याय है कि पहले दर्जे वाले को सोने की सुविधा के लिए किराये के अतिरिक्त एक पैसा भी न देना पड़े, लेकिन तीसरे दर्जेवाले को उसके लिए किराये के अतिरिक्त करीब २५ प्रतिशत और देना पड़े? कल्पना कीजिए कि तीसरे दर्जे के यात्री से पाखाना जाने की सुविधा के लिए भी अतिरिक्त चार्ज माँगा जाय। तब सोने की सुविधा के लिए सिर्फ तीसरे दर्जे के यात्री से अतिरिक्त चार्ज लेने की बात का अनौचित्य, अन्याय और नगापन स्पष्ट हो जायगा।

यह दलील दी जा सकती है कि रेलों में सोने की सुविधा सबको देना सम्भव नहीं है। यह ठीक है। लेकिन तब फिर जो सोना चाहें उन सबके लिए अतिरिक्त चार्ज लगाना चाहिए, सिर्फ तीसरे दर्जे-वालों के लिए नहीं, बल्कि यह चार्ज पहले दर्जेवालों पर तीसरे दर्जेवालों की अपेक्षा अधिक होना चाहिए। इसके जवाब में शायद यह कहा जाय कि पहले दर्जेवालों से पहले ही किराया अधिक लिया जाता है, पर यह दलील भी भ्रामक है। पहले, दूसरे और तीसरे दर्जों में किराये का जो अन्तर है उसके अनुपात में अगर वास्तव में देखा जाय तो पहले दर्जेवाले को पहले से ही बहुत अधिक सुविधाएँ और लाभ मिल रहा है। इसका हिसाब लगाया जाय तो इस दलील का खोखलापन, बल्कि इसके पीछे रहा हुआ अन्याय और धोखा-धड़ी साफ जाहिर हो जायगी। तीसरे दर्जे की अपेक्षा पहले दर्जे का किराया करीब तिगुना है। छोटी लाइन के तीसरे दर्जे के डिब्बे में रेलवे के अपने हिसाब और नियम के अनुसार कम-से-कम ६८ यात्रियों की जगह होती है, जब कि उतनी ही जगह पहले दर्जेवाले केवल २० यात्रियों के लिए दी जाती है। पहले दर्जे में निर्धारित संख्या से अधिक यात्री सामान्य तौर पर सफर नहीं कर सकते। रेलवे-कर्मचारी इसका ध्यान रखते हैं, जब कि तीसरे दर्जे में लोग भेड़-बकरी की तरह भरे रहते हैं। जितनी जगह रेलवे खुद के नियमों के अनुसार उन्हें मिलनी चाहिए उतनी भी नहीं मिल पाती। हो सकता है इस नियम को लागू करना सम्भव न हो, पर यहाँ तो हम सिर्फ इस बात की चर्चा कर रहे हैं कि पहले दर्जे के यात्री को तीसरे दर्जेवाले की अपेक्षा जो तिगुना किराया देना पड़ता है उतना, बल्कि उसमें भी ज्यादा, खर्च तो उस पर रेलवे विभाग

का सिर्फ स्थान पर ही जाता है। इसके अलावा बैठने के लिए गद्दे आदि अन्य सुविधाओं और हर डिब्बे के साथ एक सेवक, बढ़िया वेटिंगरूम, आदि पर खर्च होता है। पहले दर्जे के सफर में और अनेक प्रकार की जो सुविधाएँ मिलती हैं उन सबकी तफसील में जाना संभव नहीं है, पर जो अतिरिक्त प्रतिष्ठा मिलती है सो अलग।

जो सरकार किसी विशेष आदर्श का दावा नहीं करती, उसे भी आज के युग में ऐसी बातों का औचित्य साबित करना पड़ता है। पर रात-दिन समाजवाद की दुहाई देनेवाली सरकार से अगर लोग कुछ विशेष अपेक्षा रखें तो वह नावाजिब नहीं माना जायगा। तीसरे दर्जे का किराया बढ़ाने के बजाय उचित और आवश्यक तो यह है कि उस दर्जे के यात्रियों की असुविधाएँ और कठिनाइयाँ कम की जायँ और उनके लिए सुविधाएँ बढ़ायी जायँ। समाजवाद का आखिर कुछ अर्थ भी है या नहीं? या समाजवाद का उच्चारण सिर्फ विरोधियों का मुँह बन्द करने और उन्हें नीचा दिखाने के लिए ही है। समाजवाद के नाम पर–केवल किसी सुदूर भविष्य में उसकी प्राप्ति की आशा पर—कब तक लोगों को सब्र का पाठ पढ़ाया जाता रहेगा या कब तक उन्हें बेवकूफ बनाया जा सकेगा? गरीब देश में समाजवाद स्थापित करने के लिए भी आखिर धन चाहिए और लोगों को उसका बोझा उठाना चाहिए - इस दलील का औचित्य भी दो बातों पर निर्भर है। पहली बात तो यह कि समाजवाद का अगर कोई अर्थ है तो यह बोझ गरीब लोगों पर कम-से-कम, और अपेक्षाकृत ज्यादा साधनवान और अमीर लोगों पर ज्यादा पड़ना चाहिए। दूसरी, और पहली से भी ज्यादा जरूरी बात यह है कि उन नेताओं को, जो देश को समाजवाद की ओर ले जाने का दावा करते हैं, और उसके नाम पर सत्ता का उपभोग करते हैं, अपने खुद के जीवन से उसका आदर्श पेश करना चाहिए। तभी वे लोगों में उसके लिए उत्साह पैदा कर सकते हैं, और उनके द्वारा उस आदर्श के लिए कुरबानी की आशा रख सकते हैं। आज इस बारे में जो स्थिति है वह किसीसे छिपी नहीं है। गांधीजी के सामने जब नौजवान लोगों ने समाजवाद की चर्चा की, तब एक बार उन्होंने कहा था—"समाजवाद की शुरुआत पहले समाजवादी से होती है। अगर एक भी ऐसा (यानी समाजवाद को आचरण में लानेवाला) समाजवादी हो, तो उस अंक पर शून्य लगाने से भी उसका गुणाकार हो सकता है। हर शून्य या सिफर से उसकी कीमत दस गुनी बढ़ती जायगी। लेकिन अगर पहलेवाला खुद ही सिफर हो, दूसरे शब्दों में, अगर कोई आरम्भ ही न करे, तो उसके आगे कितने ही सिफर क्यों न बढ़ाये जायँ, उनकी कीमत सिफर ही रहेगी। सिफरों को लिखने में उल्टे मेहनत और कागज की बरबादी ही होगी।" ('हरिजन सेवक' साप्ताहिक, १३-७-४७)। क्या हमारे "समाजवादी" नेता गांधीजी के शब्दों से कुछ सबक लेंगे?

× × ×

सीधे और सच्चे इन्सान

चार महीने से हिन्दुस्तान के प्रवास के बाद खान अब्दुल गफ्फार खाँ गत ८ फरवरी को वापस काबुल लौट गये। इस चार महीने के अरसे में उन्होंने सारे देश का दौरा किया। जगह-जगह हजारों लोगों ने उनकी बातें सुनीं। उन्हें गांधीजी की सौवीं सालगिरह के मौके पर यहाँ आने का निमंत्रण दिया गया था, क्योंकि वे न सिर्फ आजादी की लड़ाई में गांधीजी के खास साथियों में से और अविभाजित हिन्दुस्तान के बड़े नेताओं में से थे, बल्कि गांधीजी की तरह ही वे भी आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों में अटूट विश्वास रखनेवाले व्यक्ति थे। बन्दूक जिसकी चिर-संगिनी रही है ऐसी पठान कौम के होते हुए भी उन्होंने अहिंसा को अपने जीवन का एक आदर्श बना लिया था।

ऐसे व्यक्ति का गांधी-शताब्दी के मौके पर हिन्दुस्तान में आना सचमुच हमारा सौभाग्य था। विनोबाजी के शब्दों में, खान साहब के आने से हमें एक बार ऐसा लगा जैसे गांधीजी का ही फिर से हमारे बीच अवतरण हुआ। यह भी एक संयोग था कि वे ऐसे वक्त हिन्दुस्तान में आये जब एक तरफ तो हम लोग अहमदाबाद के साम्प्रदायिक दंगों की हैवानियत से गुजरे थे और दूसरी ओर कांग्रेस की आपसी फूट से राजनीति का खोखलापन और उसकी असलियत सामने आ गयी थी। ऐसे नाजुक वक्त में खान साहब ने एक बार फिर अपनी सीधी और सच्ची वाणी से गांधीजी की याद को ताजा कर दिया। उन्होंने हमारी कमियों को समझ लिया और एक सच्चे मित्र व हितैषी की हैसियत से उन कमियों की ओर हमारा ध्यान खींचा।

जगह जगह बादशाह खान ने दो बातों पर जोर दिया। पहली बात तो यह कि धर्म या जाति का राष्ट्रीयता से या सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक मामलों से कोई सम्बन्ध नहीं है। धर्म तो इन्सान और ईश्वर के बीच का रिश्ता है जो उसका निजी या व्यक्तिगत मामला है। उन्होंने एक ऐसी मिसाल से यह बात समझायी जो इतनी सीधी और सादी है कि कभी हमारा ध्यान भी उस ओर नहीं जाता। उन्होंने कहा कि वे जिन दूसरे मुल्कों में गये और वहाँ के जिन निवासी से उन्होंने पूछा कि तुम कौन हो, तो जर्मनी में जवाब मिला जर्मन, फ्रान्स में जवाब मिला फ्रेंच और इंग्लैंड में जवाब मिला अंग्रेज। "वहाँ भी भिन्न-भिन्न धर्मों को माननेवाले लोग हैं, लेकिन किसीने भी यह नहीं कहा कि मैं यहूदी हूँ या मैं ईसाई हूँ। हिन्दुस्तान में किसीसे पूछिए कि वह कौन है तो आमतौर पर जवाब मिलेगा कि मैं हिन्दू हूँ, ब्राह्मण हूँ या बनिया हूँ, शायद ही कोई कहेगा कि मैं हिन्दुस्तानी हूँ।" राष्ट्रीय एकता की बातें तो यहाँ बहुत होती हैं लेकिन वह कितनी ऊपरी है यह हमारे ध्यान में नहीं आता। जनसंघ ने अभी पटना-अधिवेशन में मुसलमानों के भारतीयकरण

की बात उठायी थी, पर उनके ध्यान में नहीं आया कि मुसलमान अगर मजहब का कट्टर है तो आम हिन्दू भी असल में जात पाँत का ही पुजारी है, राष्ट्रीयता या इन्सानियत का नहीं।

दूसरी बात जिस पर खान साहब ने बहुत जोर दिया वह जनतंत्र में सही प्रतिनिधियों के चुनाव के बारे में थी। उन्होंने गरीबों को चेतावनी दी कि वे अपनी वोट की कीमत को समझें और हरगिज उसे न तो रुपये के लालच से बेचें न धर्म या जात पाँत के आधार पर दें। आज आम जनता के अज्ञान के कारण स्वार्थी लोग उन्हें जात-पाँत और मजहब के नाम पर बहकाकर, शराब पिलाकर, डरा धमकाकर या रुपये का लालच देकर उनके वोट हासिल कर लेते हैं, और फिर यही लोग गरीबों को धर्म आदि के नाम पर लड़ाते रहते हैं, ताकि उनके अपने ऐश आराम में खलल न पड़े, गरीब लड़ाई-झगड़े में फँसे रहें। उन्होंने गरीबों का ध्यान इस बात की ओर खींचा कि इन झगड़ों में मरने भी दोनों तरफ के गरीब ही हैं। इसलिए उन्होंने बार-बार आम जनता को यह सलाह दी कि वे धर्म, जात-पाँत या पार्टी के आधार पर वोट न दें बल्कि अच्छे आदमियों को सत्ता में भेजें।

ग्रामदान आन्दोलन में यह कोशिश की जा रही है कि जनता ग्रामसभाओं के जरिये अपने खुद के उम्मीदवार खड़े करे, ताकि वह भला है या बुरा, इसकी पसंदगी उसके हाथ में रहे न कि आज की तरह पार्टियों के हाथ में। जनता जागृत हो और उसे जिस व्यक्ति को अपने प्रतिनिधि के तौर पर भेजना है वह वह खुद तय करे। इसी तरह कौमी एकता के लिए राजनीतिक झगड़ों से दूर रहकर सेवा करनेवाला "खुदाई खिदमतगार" जैसा संगठन इस देश में भी खड़ा करने की बात स्वयं खान साहब की मौजूदगी में तय की गयी है। हिन्दुस्तान से जाने के पहले खान साहब के निमंत्रण पर देश के विभिन्न वर्गों के प्रमुख लोग अभी दिल्ली में इस काम के लिए मिले थे। आजादी के बाद शायद पहली बार इतनी बड़ी संख्या में मुसलमान नेता एक मंच पर हिन्दू, सिख आदि गैर-मुस्लिम नेताओं के साथ इकट्ठे हुए थे। बादशाह खान का हमारे बीच आना देश के लिए एक नयी आशा का कारण बना है।

× × ×

सच्ची और साफ-साफ बातें

आजादी की लड़ाई के दूसरे बड़े मुसलमान नेता शेख मोहम्मद अब्दुल्ला अभी राजस्थान आये थे। उनकी यात्रा किसी प्रोग्राम को लेकर नहीं बल्कि निजी तौर पर थी। पर उनकी मौजूदगी का फायदा उठाकर जयपुर में गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र और मुस्लिम मुसाफिरखाने में दो छोटी बैठकों का आयोजन किया गया था। मुसाफिरखाने की सभा में जयपुर शहर के लगभग दो-तीन हजार मुसलमान और गैर मुस्लिम भी थे। दोनों सभाओं में शेख साहब ने मुसलमानों को सलाह दी कि वे रहन सहन, व्यवहार, चाल ढाल, पोशाक आदि में अलग अलग दीखने के बजाय अपने दूसरे देशवासियों के साथ एकरूप होकर रहें, जिससे परस्पर विश्वास और प्यार का वातावरण बने।

उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि जब मुल्क ने राष्ट्रभाषा के तौर पर हिन्दी को मानने का तय किया है तो मुसलमानों को चाहिए कि वे बिना किसी आगा-पीछा के हिन्दी को अपनायें, लिबास या बोली का धर्म से सम्बन्ध नहीं है। उन्होंने समझाया कि यहाँ के मुसलमानों के लिए हिन्दुस्तान के सिवा दूसरा कोई वतन नहीं है। इस देश में ही उन्हें जीना है और मरना है। इसकी इज्जत में उनकी इज्जत है।

मुल्क के बँटवारे के वक्त जब हिन्दुस्तान और पाकिस्तान, दोनों तरफ साम्प्रदायिक आग भड़क रही थी और मार-काट चल रही थी, तब गांधीजी ने हिन्दुस्तान में मुसलमानों की रक्षा के लिए अपना बलिदान दिया था। उसकी याद दिलाते हुए उन्होंने मुसलमानों को यह प्रेरणा दी कि उस एहसान का बदला वे शान्ति कायम रखकर ही दे सकते हैं। साथ ही उन्होंने गैर-मुस्लिम लोगों से भी दर्द-भरे शब्दों में पूछा कि आये दिन हम गांधीजी की जय बोलते हैं लेकिन अहमदाबाद जैसी घटनाओं के वक्त जब अल्पसंख्यक लोगों की जान माल और इज्जत खतरे में पड़ जाती है, तब गांधीजी की तरह अपनी जान पर खेलकर उनकी रक्षा के लिए एक भी व्यक्ति आगे क्यों नहीं आता? उन्होंने बार-बार इस बात की याद दिलायी कि यह गौतम बुद्ध, गांधी और नानक का देश है। इसमें हमेशा इन्सानियत की पूजा होती रही है। पर अफसोस है कि आज उसकी आत्मा सोयी हुई है।

× × ×

कश्मीर का सवाल

कश्मीर के सवाल को लेकर शेख अब्दुल्ला का व्यक्तित्व काफी विवादास्पद रहा है। शेख साहब की अभी हाल की राजस्थान-यात्रा के समय खुद उन्हीं के मुँह से पिछले २२ बरसों की लम्बी और दुखद कहानी सुनने को मिली। देश के विभाजन के फलस्वरूप कश्मीर की जनता को बहुत भुगतना पड़ा है। विभाजन के साथ ही कश्मीर पर पाकिस्तान का हमला हुआ और व्यापक पैमाने पर खून-खराबी हुई। कश्मीर के मामले की वैधानिक या कानूनी स्थिति भी इतनी साफ नहीं है, लेकिन उसके आधार पर भी जो लोग यह कहते हैं कि कश्मीर का कोई सवाल बाकी नहीं है वे यह भूल जाते हैं कि बाईस बरस से आज भी दोनों मुल्कों की फौजें कश्मीर की धरती पर डेरा डाले पड़ी हुई हैं, हजारों परिवार बँट गये हैं, बाप इधर तो बेटा उधर, भाई इधर तो भतीजा उधर, और आपस का मिलना भी दुश्वार है। खुद शेख साहब को १२ बरस जेल में बिताने पड़े, लेकिन एक बड़ी बात जो उनसे मतभेद रखनेवाले भी स्वीकार करेंगे, वह यह कि इतने बरस की जेल के बाद भी उनके मन में उसकी कड़ुवाहट नहीं है। खुद शेख साहब के शब्दों में, 'जो शख्स किसी सिद्धान्त के लिए लड़ता है उसे तकलीफ भुगतने को→

बिहार : राज्यदान के बाद-२

आतंक में पलता आक्रोश

(गरम हवा में सात दिन : गतांक से आगे)

५ फरवरी '७० :

बाड़ा दाऊद देवरिया से ६ मील से कम नही है। पहुँचाने के लिए एक जीप मिल गयी थी, लेकिन हमलोग रास्ते मे चिऊँटा तक पैदल गये। उस मालिक का घर देखना था जो गनपत और उसके साथियों द्वारा घेरा गया था, और उन मजदूरों से मिलना था जिनसे उनका झगड़ा चल रहा है।

चिऊँटा से पहले ही कच्ची सड़क के किनारे एक बड़ा सफेद मकान मिला। देखने से लगा किसी धनी व्यक्ति का है। पूछा तो मालूम हुआ कि उन्हे सरकारी 'बॉडी गार्ड' भी मिला हुआ है। देवरिया मे मुसहरो की जमीन खरीदनेवाले चार खरीददारों मे एक इन्हीके ट्रक का ड्राइवर है। मालूम नही बात कहाँ तक सही है, लेकिन कहनेवाले यहाँ तक कहते हैं कि ड्राईवर के नाम मे खरीदी हुई जमीन आगे चलकर इन्हींके हाथ आती। कुछ भी हो बेचारे अरक्षित हैं। जब पड़ोसी से पड़ोसीपन न हो तो पुलिस की शरण के सिवाय दूसरा क्या उपाय है?

बाड़ा दाऊद ढाई-तीन हजार का गाँव है। अच्छी-से-अच्छी इमारतें हैं, बिजली है, फ्लश के पाखाने हैं, दरवाजों पर पड़ी चमकती प्लास्टिक से बुनी कुर्सियाँ हैं, अतिथि के लिए चाय के बढ़िया सेट हैं। और, मिडिल स्कूल पर सैनिक पुलिस की एक टुकड़ी भी है। गाँव मे अक्सर शाम के बाद सन्नाटा रहता है। किसीको कहीं जाना होता है, तो सोच-समझकर निकलता है। जब भी दो-चार आदमी किसीके दरवाजे पर बैठते हैं तो चर्चा का एक ही विषय रहता है। कैसे गाँव से बाहर एक झोपड़ी में पुलिस का धावा हुआ, जिसमे पिस्तौल मिली, बन्दूक मिली, शीशे के टुकड़े और कीलें मिलीं, तथा कैसे बाजार से रात को गाँव आते हुए रास्ते मे कालिका बाबू की हत्या हुई। देवरिया और बाड़ा दाऊद की हत्याओं के बीच मे मुजफ्फरपुर शहर के पास एक गाँव मे हत्या के साथ डाका पड़ा था, जिसमे भी गनपत और उसके साथियों का हाथ बताया जाता है।

हत्या क्यों हुई ?

कालिका बाबू की हत्या क्यों हुई? कई बातें कही जाती हैं। क्या मुखिया के चुनाव को लेकर पैदा हुई गाँव की राजनीति के कारण सारा फसाद फैला, और अंत मे यह नौबत आयी? या कालिका बाबू और गया साहु में रेहन की २॥ बीघा जमीन का झगड़ा था जो बढ़ते-बढ़ते यहाँ तक पहुँचा। अन्दर-अन्दर चाहे जो बात रही हो, बाहर तो जमीन का यह झगड़ा ही था। देवरिया, चिऊँटा, बाड़ा दाऊद, तीनों जगह जमीन का झगड़ा मिला।

गया साहु इस वक्त जेल में हैं। उमर ५० से ऊपर है, गाँव मे होमियोपैथी करते हैं। १९६७ के चुनाव मे उस क्षेत्र के कम्यूनिस्ट उम्मीदवार के कार्यकर्ता थे। १९६९ की बरसात मे गया साहु के बथान पर, जो गाँव से लगभग दो मील बाहर है, पुलिस का धावा हुआ था जिसमे बम बनाने का कुछ सामान मिला था और उनका जवान लड़का गिरफ्तार के साथ पकड़ा गया था। गया साहु घायल होने के बाद घर से, जो गाँव में है, बथान पर पहुँचे। इस मौके पर पुलिस की आड़ लेकर गाँव के कई लोगों ने उन्हें बुरी तरह लाठियों से पीटा।

जब कालिका सिंह की हत्या हुई तो गया साहु जेल में थे। इस वक्त बाड़ा दाऊद गाँव के कई लोग जेल में हैं—गया साहु कई मुसलमान युवक, मनोज (एक मजदूर)

—तैयारी भी रखनी चाहिए। उसके लिए फिर शिकायत कैसी? यह तो वह कीमत है जो सचाई के लिए चुकानी पड़ती है।"

× × ×

बड़प्पन की पहचान

हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई में यों तो कई मुसलमान नेता शामिल थे, लेकिन उनमे खान अब्दुल गफ्फार खाँ और शेख मोहम्मद अब्दुल्ला, ये दो ही ऐसे थे जो अपने-अपने प्रदेश के सर्वमान्य और एकछत्र जन-नेता थे। मौलाना आजाद, डा० अन्सारी, हकीम अजमल खाँ आदि दूसरे नेता ऐसे थे जिनका इस तरह न तो किसी क्षेत्र विशेष पर असर था, न इतनी बड़ी संख्या मे निश्चित अनुयायी थे। खान साहब और शेख अब्दुल्ला को सम्प्रदायवादी मुसलमानों की ओर से कई बार बड़े-बड़े प्रलोभन भी दिये गये कि वे आजादी की लड़ाई मे कांग्रेस का साथ छोड़ दें। लेकिन ये दोनों अन्त तक राष्ट्रीयता के प्रति पूरे वफादार रहे। लेकिन बदकिस्मती से इन्हीं दोनों के प्रति आजाद भारत के नेताओं ने न्याय नहीं किया। खान साहब ने अन्त तक देश के विभाजन को, और हिन्दू-मुसलमान दो अलग राष्ट्रीयताएँ हैं, इस बात को मंजूर नहीं किया। गांधीजी भी अन्त तक विभाजन के खिलाफ रहे। पर नेहरू, पटेल, आजाद आदि अन्य नेताओं ने उनकी पीठ पीछे उसे स्वीकार कर लिया। खान साहब उसके बाद भी अपने सिद्धान्त पर अडिग रहे। सम्प्रदायवादी मुस्लिम-लीग द्वारा पाकिस्तान की सरकार में शामिल होने के निमंत्रण को उन्होंने ठुकरा दिया और आजादी के बाद भी १५ बरस पाकिस्तान की जेलों में तरह-तरह की तकलीफें भुगतीं। शेख अब्दुल्ला को भी कश्मीर के मुख्यमंत्री रहते हुए जिस तरीके से बख्शी के द्वारा हटाया गया और फिर १२ बरस तक जेल में रखा गया वह आजाद और जनतंत्रीय भारत के इतिहास का एक अशोभनीय अध्याय है। पर इन दोनों के बड़प्पन का यह एक सबूत काफी है कि दोनों ही आज भी मजहबी सम्मुख या कट्टरता से परे रहकर अपने पुराने आदर्शों पर कायम हैं।●

आदि। देवरिया से लेकर बाड़ा दाऊद तक के करीब १० लोग गिरफ्तार हैं।

तीनों गाँव देवरिया, चिऊँटा, बाड़ा दाऊद—एक ही पंचायत मनन्धपुर मरौनी में है, जो लम्बाई में कई मील तक फैली हुई है। यह पंचायत मुजफ्फरपुर के 'नक्सालवादी क्षेत्रों' में से एक है। क्यों यह पंचायत पिछले १॥-२ वर्षों में इतनी गरम हो उठी, यह एक प्रश्न है। वहाँ कौनसी परिस्थिति है जो और जगहों में नहीं है, इसकी जाँच होनी चाहिए। हम लोगों ने बाड़ा दाऊद में ही रात को तय किया कि बाहर के तीन पक्षमुक्त और निष्पक्ष व्यक्तियों की एक जाँच कमेटी बनानी चाहिए जो गहराई में जाकर बातों को समझे और लोगों के दिलों को टटोले। एक दिन गाँव में रहकर हमलोग इतना ही कर सके कि कुछ लोगों से मिल सके। तीसरे पहर मिडिल स्कूल के मैदान में एक सभा भी हुई, जिसमें मैंने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का विचार समझाया।

सभा के बाद हम लोग सैनिक पुलिस के जवानों से मिले। अच्छे जवान थे। उन्होंने प्रेम के साथ चाय बनायी, पिलायी। पुलिस के लोग प्रेम के बहुत भूखे होते हैं।

शाम को गाँव में गये। कई मुसलमान परिवारों के सब पुरुष गिरफ्तार कर लिये गये थे। केवल स्त्रियाँ रह गयी थीं। हम लोगों को देखकर वे अपने दुःख की कहानी कहने को आतुर हो उठीं। गिरफ्तारी के बाद कुछ गाँव के लोग उनके घरों का बहुत-सा सामान उठा ले गये थे। उनके साथ पुलिस का एक आदमी भी शामिल था। जब हम लोग स्त्रियों से बातें कर रहे थे तो पास उनका एक ९-१० साल का बच्चा खड़ा था। आँखें फाड़कर देख रहा था। कहने लगा, "और चीजें तो ले ही गये, हाँड़ी में रखी सरसों भी ले गये।" मैंने पूछा, "और क्या ले गये?" बोला, "बाहर थोड़ा लहसुन लगा था, उसे उखाड़ लिया।" उसकी आवाज में कितनी करुणा थी, और कितनी कटुता! एक स्त्री ने भी कहा, "हुजूर, हमारे दिन बुरे हैं तो हमें सब कुछ बर्दाश्त करना है।" लेकिन हमने देखा कि मन में बर्दाश्त करने की तैयारी नहीं है, सिर्फ मौके का इन्तजार है।

अध्ययन से प्राप्त कुछ तथ्य

मैं और मेरे साथी श्री कैलाशबाबू और श्री रामेश्वर साही दो दिन में जो कुछ देख सके, वह यह है

(१) यह सही है कि इस क्षेत्र में जमीन के झगड़े, मालिक-मजदूर-बँटाईदार के तनाव, गाँव की गुटबन्दी, पंचायत से पार्लियामेन्ट तक के चुनाव की दलबन्दी, ऊँच-नीच के भेद-भाव, आदि की परिस्थिति प्रायः वही है जो दूसरे क्षेत्रों में है। लेकिन बात बदल जाती है तब जब हवा में गरमी पैदा करनेवाला नेतृत्व मिल जाता है। इस क्षेत्र को गनपत (जाति का चामार), निवल्लाल (चमार, गनपत का मित्र), गिरिश तिवारी, गया साहु (बनिया), खलील, उनके साथियों का नेतृत्व मिल गया। इन लोगों ने '६७ के चुनाव में क्षेत्र के कम्यूनिस्ट उम्मीदवार की ओर से काम किया था। गनपत पर उनकी विशेष कृपा भी रहती थी। इस सम्पर्क से इन युवकों को चेतन और सक्रिय बनने में मदद मिली। हो सकता है, इसी खिड़की से उन्होंने बाहर की दुनिया भी देखी हो। लोग कहते हैं कि इन लोगों के घर बाहर के काफी लोग आते-जाते थे। एक युवक 'दादा' गाँव में १० महीने रहे। कई बच्चों को पढ़ाया, कुछ युवकों को पक्का किया, और पुलिस-रेड के दिन अचानक लापता हो गये।

(२) हमने यह पाया कि हर जगह हरिजन और मुसल्मान, जो गरीब और भूमिहीन हैं, सवर्ण हिन्दुओं के, जो प्रायः धनी और भूमिवान हैं, खिलाफ हैं। इस तरह गाँव-गाँव में वर्ग-संघर्ष और वर्ण-संघर्ष की सम्मिलित भूमिका तैयार होती जा रही है।

(३) सवर्ण हिन्दुओं में, राजपूतों में, भूमिहारों में, किसी चुनाव को लेकर या पारिवारिक प्रतिद्वन्द्विता के कारण आपस में मूँछ की लड़ाई लगभग हर जगह है। बाड़ा दाऊद में यह आपसी तनाव बहुत अधिक है। बड़े लोग गाँव के छोटे लोगों का इस्तेमाल अपनी आपसी 'लड़ाई' में करते हैं, जिसके कारण गाँव में संघर्ष का वातावरण बना रहता है।

(४) इस पूरे क्षेत्र में राजनीति की तीन धाराएं हैं—कांग्रेस, एस० एस० पी०, कम्यूनिस्ट। कांग्रेस आमतौर पर 'बड़ों' की हो गयी। एस० एस० पी० में भी बड़े हैं, लेकिन वे 'छोटों' का वोट पाने की कोशिश करते रहते हैं, और उनके 'क्षोभों' को उभाड़ते रहते हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी के प्रति छोटों यानी गरीबों, अछूतों, मुसलमानों का लगाव अधिक है। अब कुछ बड़े लोगों का जनसंघ के प्रति झुकाव हो रहा है, क्योंकि वे सोचते हैं कि कम्यूनिस्टों का मुकाबिला करने की शक्ति जनसंघ में है, और जनसंघ सम्पत्ति का भी रक्षक है।

(५) इन गाँवों के जिन युवकों में कुछ राजनैतिक चेतना आ गयी है, और उन्हें अपने गाँव में अवसर नहीं है, वे 'अंडरग्राउण्ड' काम करने की कोशिश करते हैं। गाँव में खुलकर वे अपने क्षोभों को प्रकट नहीं कर सकते, और न तो अनीति और अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने का ही मौका है। बड़ों को यह बर्दाश्त नहीं है कि 'छोटे' उनके मुकाबिले बैठें, और ऐसी कोई बात कहें जो उनकी शान के खिलाफ हो। ऐसी हालत में गाँव के क्षुब्ध युवक किसी राजनैतिक दल का सहारा लेते हैं। वे छिपकर संगठन बनाते हैं, और किसी जरिये से कलकत्ता पहुँचते हैं, जहाँ पिस्तौल बन्दूक-बम प्राप्त करते हैं। इतना हो जाने पर सिवाय डाका और हत्या के दूसरी कौनसी क्रिया रह जाती है? जिसे 'रचनात्मक कार्य' कहा जाता है, उसके लिए न कहीं अनुकूल वातावरण है, न संगठन है, न साधन है, और न अवसर है। अपराध ही एक माध्यम रह गया है जिसके द्वारा जवान अपनी जवानी प्रकट कर सकता है। इस परिस्थिति के लिए किसे दोषी माना जाय?

(६) गाँव के जो बड़े लोग हैं, उन्होंने→

परिवर्तन और विकास के लिए स्वतंत्र जनशक्ति

[श्री जयप्रकाश नारायण का वाराणसी विश्वविद्यालय में दिये गये दीक्षांत-भाषण का पूर्वार्ध आप २ मार्च '७० के पिछले अंक में पढ़ चुके हैं, जिसमें उन्होंने आज की भारतीय परिस्थिति का संदर्भ, उसकी चुनौतियाँ और नागरिक-धर्म विषयक अपना विश्लेषण और विचार प्रस्तुत किया था, यह निबन्ध उसी भाषण का उत्तरार्ध है।—सं०]

प्रारम्भ से ही अन्य पिछड़े देशों की भाँति इस देश की दो समस्याएँ हैं . परिवर्तन एवं विकास (Change and Development), इन दोनों समस्याओं के सम्बन्ध में आरम्भ से ही एक बड़ी भूल हुई चली आयी है। उस भूल को गांधीजी ने सुधारने का प्रयत्न किया था, परन्तु उन्हें यथेष्ट समय नहीं मिला। भूल यह थी, और है, कि परिवर्तन एवं विकास, दोनों ही राज्य-शक्ति के द्वारा सम्पादित हो सकते हैं। केवल गांधीजी राज्यशक्ति की मर्यादाएँ जानते थे, इसलिए उसमें जनशक्ति का पुट डालना चाहते थे। साथ साथ वह यह भी जानते थे कि इस देश की जनता का परम्परागत सहज अभिक्रम ब्रिटिश काल में सोच-समझकर नष्ट कर दिया गया था जिसके फलस्वरूप स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद भी जाग्रत, सगठित, विधायक जन-शक्ति का देश में अभाव था। जनमानस में आत्मविश्वास और स्वावलम्बन के भावों के बदले 'सरकार माँ-बाप' का परावलम्बी भाव भरा था। उसके पूर्व के भारत में हजारों बरस पुरानी ग्राम-संस्थाएँ थीं, नगरों में व्यापारियों तथा कारीगरों की श्रेष्ठियाँ थीं, जाति-पंचायतें थीं, शासन से स्वतन्त्र अनाश्रित ऋषिकुल, गुरुकुल, विहार थे, साधु-संत-भिक्षुओं की परम्परा थी। इन सबके चलते राजनीतिक उथल-पुथल के बावजूद राष्ट्रजीवन का विविध प्रवाह बहता था। ब्रिटिशकाल में ये संस्थाएँ, परम्पराएँ या तो तोड़ दी गयीं या निर्वीर्य बना दी गयीं। यह सब गांधीजी के ध्यान में था, इसलिए जनशक्ति को जाग्रत, संगठित करने की योजना वह कर रहे थे। राष्ट्र-निर्माण के लिए कुल भारतीय जनता को संचालित करने के उपाय सोच रहे थे। परन्तु वह सब उनके साथ चला गया। उनको गये २२ वर्ष बीते। विनोबाजी ने उनकी इंगित दिशा में कुछ कार्य किया है। परन्तु अभी तो बहुत कुछ करना है।

परिवर्तन और विकास : सत्ता की सीमाएँ

परिवर्तन और विकास के सन्दर्भ में राज्यसत्ता की क्या मर्यादाएँ हैं? एक तो यह कि केवल हुक्म से, कानून से, पैसों से परिवर्तन नहीं हो सकता। उसके लिए लोगों को समझाकर उनका मानस परिवर्तन करना आवश्यक है। अस्पृश्यता, शराबबन्दी तिलक-दहेज, भूमि-सुधार, अधिकतम ब्याज, न्यूनतम मजदूरी, आयकर, मूल्य-नियंत्रण कन्ट्रोल आदि विषयक अनेक कानून बने पड़े हैं। परन्तु उनका कितना भाग कार्यान्वित हुआ है? 'पूँजीवाद का नाश हो' के नारे गूँजते हैं, पर पूँजीवाद साधारण जन के मानस में बैठा है। समाजवाद केवल कानून से नहीं स्थापित हो सकता। वह एक जीवन-पद्धति है, एक मूल्य प्रणाली (value-system) है, जो कानून के दबाव से नहीं, परन्तु एक व्यापक शैक्षिक प्रयास (educative effort) से ही प्रस्थापित हो सकता है। यह तो स्वैच्छिक सेवक और संस्थाएँ ही कर सकती हैं।

विकास के सम्बन्ध में भी यही स्थिति है और इसे तो सत्तावाले भी मान्य करते हैं। यानी वह कहते हैं कि जन-सहयोग के अभाव में विकास-योजनाएँ उतनी सफल नहीं हुईं जितनी अपेक्षित थीं। बात वास्तव में जनसहयोग की नहीं, बल्कि जनता के अभिक्रम को जगाने की है। यदि वह हो जाय तो जनता स्वयं संमिलित होकर अपना कार्य करेगी और प्रश्न जनसहयोग का न होकर जनता के साथ सत्ता के सहयोग का बन जायेगा। परन्तु जनता का अभिक्रम हुक्म और हाकिम, ऊपर की बनी योजनाओं और ऊपर से पैसों के द्वारा नहीं जगाया जा सकता। इसका सबूत तो सामुदायिक विकास-योजनाओं ने स्वयं दिया, जब कि उनके

—→ अपनी दुनिया अलग बना ली है, बिल्कुल दूसरी। किसी बड़े से अलग बातें कीजिए तो वह स्वीकार करता है कि पुरानी बातें अब नहीं चलेंगी, लेकिन नयी के लिए मन तैयार नहीं होता। बड़े लोग पुलिस, पार्टी, और मुकदमे के सिवाय दूसरा कुछ सोच नहीं पाते। "गाँव में उपद्रव है, पुलिस उपद्रवियों को कुचल क्यों नहीं देती?" "पार्टी के नेता कहाँ हैं जो इस वक्त दिखाई नहीं देते?" "मुकदमे में सब बदमाशों को एकसाथ फँसा देना चाहिए।" इसी तरह की बातें सुनने को मिलती हैं। बातें तरह-तरह की होती हैं, लेकिन वह साहस और बुद्धि नहीं दिखाई देती जो किसी कठिन स्थिति का मुकाबिला करने के लिए सामने आती है। क्षेत्र में जो काण्ड हुए हैं उनसे बड़े लोग बेहद भयभीत हैं। दूर-दूर तक चर्चा है, उनमें कुछ ऐसे जरूर हैं जो समय को पहचानते हैं और सुधार पर कुछ करने को तैयार भी हैं, लेकिन 'तुम बड़े कि मैं बड़ा' की भावना, जातिवाद, और चुनावबाजी ने उन्हें इतना तोड़ दिया है कि वे मिलकर कोई काम कर सकेंगे, इसमें सन्देह है। फिर भी समाज के चेतन तत्त्वों को, चाहे वे बड़े मालिक हों या मजदूर, हिन्दू हों या मुसलमान, साथ लेकर आगे बढ़ना चाहिए, और आपसी तनाव के जो सवाल हैं उनका पड़ोसीपन के आधार पर हल निकालना चाहिए। जो शरीर से पड़ोसी हैं वे मन से इस तरह दुश्मन क्यों हों? इतना निश्चित है कि इस बाढ़ भूमि की जो व्यवस्था है तथा मालिक-मजदूर-बँटाईदार के जो प्रचलित सम्बन्ध हैं उनमें जब तक बुनियादी परिवर्तन नहीं होगा तब तक दूसरा कोई हल कारगर नहीं साबित होगा।• —राममूर्ति

(सम्पादन विनय भागने प्रकाश।)

कारण गाँवों का रहा-सहा पारस्परिक सहयोग भी लुप्त हो गया। यह कार्य तो स्वैच्छिक सेवक ही जनता के बीच जाकर उनकी सेवा कर, उनकी बातें समझकर और उन्हें समझाकर कर सकते हैं।

भारतमाँ का ऋण। स्नातकों से अपेक्षा

इस प्रकार परिवर्तन तथा विकास दोनों ही के लिए हजारों लाखों स्वैच्छिक सेवकों की आवश्यकता है। परन्तु कहाँ हैं ऐसे युवक, ऐसे नागरिक जो अपना खाली समय भी राष्ट्र निर्माण के कामों में लगायें? राजनीति का यह बीभत्स रूप सामने है, परन्तु लगता है उसीका ही अधिक आकर्षण है, उसीकी चर्चा है, उसी की धूम है। जैसे देश का भविष्य उसीके हाथों में है। मित्रो, स्नातको, क्या मैं आशा करूँ कि आप लोग कुछ नये ढंग से सोचेंगे, कुछ नया और ठोस काम करेंगे? प्रस्तुत दशक प्रारम्भ में ही यह चेतावनी दे रहा है कि परिवर्तन तथा विकास की गति तीव्रतर, और पुन तीव्रतर, नहीं हुई तो यह देश उठ नहीं पायेगा। ५४ करोड़ की वर्तमान जनसंख्या १९८० में ६६ करोड़ ५० लाख हो जायेगी, और वह भी यदि परिवार नियोजन का काम सफलता से चलता रहा। १ करोड़ ३० लाख जो बेकारों की वर्तमान संख्या है वह चतुर्थ पंचवार्षिक योजना की समाप्ति पर दुने से भी अधिक बढ़कर २ करोड़ ७० लाख हो जायेगी। इतने ही आँकड़े यह चेतावनी देने के लिए काफी हैं कि अब समय नहीं है कि शासनकर्ताओं की ओर अपनी जिम्मेदारी टालकर हम राष्ट्र-ऋण से मुक्त हो जायें। इस राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के स्नातक के नाते आपसे अपेक्षा है कि भारत माँ का ऋण आप अवश्य चुकायेंगे।

दो शब्द : राजनीतिक नेताओं, सत्ताधारियों से

इस दशक की राजनीतिक सम्भावनाओं तथा चुनौतियों के सन्दर्भ में दो शब्द राजनीतिक नेताओं तथा सत्ताधारियों से निवेदन करना चाहता हूँ। १९६७ में लोकसभा ने एक प्रस्ताव के द्वारा केन्द्रीय शासन को आदेश दिया था कि दल-बदल के रोग का इलाज ढूंढने के लिए एक सर्वदलीय समिति नियुक्त की जाय। जैसा आपको विदित होगा, वह समिति श्री यशवंतराव चह्वाण के नेतृत्व में गठित हुई और पिछले वर्ष के पूर्वार्ध में उसने अपना प्रतिवेदन भी समर्पित कर दिया। उस समिति के एक सदस्य तथा नागरिक के नाते मेरा आग्रह है कि उस प्रतिवेदन के आधार पर भारत सरकार लोक सभा के अगले सत्र में विधेयक अवश्य उपस्थित करे।

वर्तमान जन प्रतिनिधित्व अधिनियम (People's Representation Act) में कुछ संशोधन आवश्यकीय मालूम होते हैं। चुनाव बहुत खर्चीला हो गया है और निरन्तर खर्चीला होता जा रहा है। इसकी चर्चा बराबर होती रहती है, परन्तु कोई उपाय नहीं किया जाता। बहुत वर्ष पूर्व ही स्वर्गीय राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसादजी ने इसकी ओर पंडित जवाहरलालजी का ध्यान खींचा था। चुनाव के दरम्यान जो अनीतियाँ होती हैं वह भी बढ़ती जा रही हैं। पार्टियों की संख्या में भी वृद्धि होती जा रही है, जिसके परिणामस्वरूप अन्य दुर्गुणों के साथ-साथ यह भी यदि सामान्यत नहीं तो अक्सर हो रहा है कि विधान सभाओं के प्रतिनिधि कुल मत पत्रों के बहुत थोड़े प्रतिशत के आधार पर निर्वाचित हो जाते हैं। अन्य भी दोष निर्वाचन पद्धति में प्रकट हुए हैं। यह अभी समयोचित नहीं होगा कि इन दोषों के उपाय यहाँ सुझायें जायें। परन्तु यह सुझाव अवश्य रखना चाहता हूँ कि लोकसभा अथवा भारत सरकार एक उच्च स्तरीय समिति वर्तमान अधिनियम के संशोधन के लिए नियुक्त करे। अच्छा हो कि यह समिति अपना प्रतिवेदन शीघ्र दे, ताकि अगले आम चुनाव के पहले अधिनियम में संशोधन किया जा सके।

दो परिषदें : राष्ट्रपति की, और सभी दलों की

एक और भी समस्या है जो दिन-प्रतिदिन स्पष्टतः सामने आ रही है, और जिसके समाधान के लिए संविधान में संशोधन लाजमी लगता है। आधे से अधिक राज्यों में राजनैतिक अस्थिरता की मैं बात कर चुका हूँ। वही समस्या कांग्रेस पार्टी के दो घटकों में बँटने से अब केन्द्र में भी उपस्थित हो गयी है। यद्यपि कुछ विपक्षीय दलों के सहयोग से केन्द्र की सरकार अभी टूटनेवाली नहीं लगती है तथापि निकट भविष्य में ऐसी भी समस्या देश के सामने आ सकती है, इस तथ्य से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता। अगर अभी से इस प्रकार की आपत्तिकालीन समस्या के लिए संविधान में वैधानिक एवं सहयात्मक व्यवस्था न की गयी तो, राज्यों में व्यापक अस्थिरता के साथ साथ केन्द्रीय अस्थिरता के परिणाम राजनीति एवं आर्थिक दृष्टि से भयंकर हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में राष्ट्रपतिशासन की व्यवस्था है, परन्तु केन्द्र में इस शासन का क्या स्वरूप हो इसकी स्पष्टता संविधान में नहीं है। १९६७ के आम चुनावों से उत्पन्न परिस्थिति के सन्दर्भ में एक सर्वदलीय परिषद का आयोजन हुआ था Council for National Conventions, जिसमें स्वतन्त्र पार्टी को छोड़कर सभी राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों का सहयोग था। अन्य सुझावों के साथ साथ परिषद ने यह भी सुझाव दिया था कि केन्द्रीय स्तर पर एक परामर्शदात्री परिषद का गठन होना चाहिए, जिसे राष्ट्रपति-परिषद (President's Council) कहा गया है। ऐसी परिषद के कार्य-क्षेत्र दर्शाने का भी प्रयास किया गया था जैसे—(१) राज्यों में राष्ट्रपति-शासन लागू करना, (२) राज्य विधान मण्डलों को भंग करना, (३) राज्यपालों की नियुक्ति इत्यादि पेचीदे तथा महत्त्वपूर्ण विषयों पर राष्ट्रपति को परामर्श देना। यह स्पष्ट कर दिया गया था कि इस परामर्शदात्री परिषद का उद्देश्य किसी प्रकार केन्द्रीय सरकार के अधिकारों को सीमित करना नहीं है परन्तु जनमानस में उत्पन्न शंकाओं तथा संशयों का समाधान करना है कि केन्द्र में सत्तारूढ़ राजनैतिक दल राज्यपालों को अपने दलीय हित की —

गुलाबी रंग का
एक्सप्रेस लिफाफा
आपके एक्सप्रेस पत्रों के लिए हमने हल्के गुलाबी रंग का एक विशेष लिफाफा तैयार किया है। ☐ आप इस रंगीन लिफाफे का इस्तेमाल करें। इससे पत्र छांटते समय उन पर फौरन दृष्टि पड़ेगी और उन्हें शीघ्र भेजने व वितरित करने में मदद मिलेगी। ☐ आप इसे सभी डाकघरों में खरीद सकते हैं। मूल्य ६० पैसे।
EXPRESS
DELIVERY
NEW DELHI-15
हमें बेहतर
सेवा का अवसर
दीजिए
भारतीय डाक व तार
davp 68/680
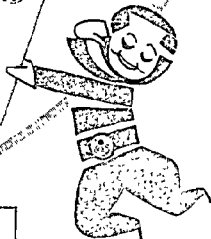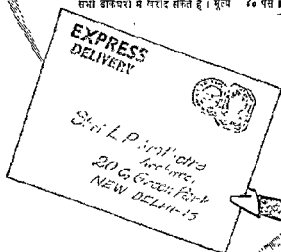
→दृष्टि से, परोक्ष रूप में ही सही, उपयोग कर सकता है।

इस परिषद के गठन के विषय में भी कुछ सुझाव रखे गये थे—इनमें कहा गया था कि उपराष्ट्रपति इसके संयोजक (Convener) हों और इसके सदस्य हों—प्रधान मंत्री या उनकी अनुपस्थिति में उनके मनोनीत व्यक्ति, मुख्य न्यायालय के एक भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश और पाँच अन्य व्यक्ति, जो अपनी निष्ठा एवं समदृष्टि के लिए प्रामाणिक दृष्टि से जाने माने हों। इन पाँच व्यक्तियों का मनोनयन या तो लोक-सभा के अध्यक्ष के सभापतित्व में गठित राज्य विधान सभाओं के अध्यक्षों का निर्वाचक मण्डल करे या राष्ट्रपति, केन्द्रीय संसद में विभिन्न दलों के नेताओं के परामर्श पर (सर्वसम्मति के आधार पर), इनका मनोनयन करें। मुझे ऐसा लगता है, और यह जाहिर भी हो गया है, कि आज की राजनैतिक परिस्थिति में इस प्रकार की व्यवस्था जरूरी हो गयी है। जिस सुझाव का मैंने अभी जिक्र किया, वह अपने में सम्पूर्ण या अन्तिम नहीं है। यह तो एक सुझाव मात्र है जो इस समस्या की ओर इंगित करता है। जब यह सुझाव रखा गया था, तब की और आज की राजनैतिक परिस्थिति में दो वर्षों के बीच ही अनपेक्षित उतार आये हैं, अतः इस दिशा में शीघ्र ही निश्चित कदम उठाने चाहिए, इस बात पर बार-बार बल देना मैं जरूरी नहीं समझता।

भा। चलकर मैंने भारतीय संविधान की धारा संख्या २६३ को संशोधित कर केन्द्र और राज्य की बीच के विवादों पर निर्णय लेने के लिए एक संवैधानिक परिषद् की भी बात की है। इन दोनों का भेद मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। संवैधानिक परिषद् के निर्णय उच्च न्यायालयों के निर्णयों की भाँति बाध्य होंगे और वह विवादास्पद मामलों पर निर्णय करेगी। राष्ट्रपति-परिषद् एक परामर्शदात्री परिषद् होगी। हाँ, मैं सोचता हूँ कि उसे सबल बनाने के लिए यह जरूरी हो कि समय-समय पर जो भी परामर्श वह राष्ट्रपति को दे, उन्हें लाजमी तौर पर जन-साधारण की सूचना के लिए प्रकाशित किया जाय।

कुछ और सुझाव : महत्त्वपूर्ण

प्रस्तुत संदर्भ में मेरे तीन अन्य छोटे-छोटे सुझाव हैं, यद्यपि मुझे वे महत्त्वपूर्ण लगते हैं। एक तो प्रशासनिक सुधार के विषय में है। स्वराज्य के प्रारम्भ में अंग्रेजों की विरासत के रूप में जो प्रशासन-व्यवस्था हमें प्राप्त हुई, उसकी कटु आलोचना जवाहरलालजी से लेकर इन्दिराजी तक सबने की है। उसके विषय में 'गये गुजरे' विशेषण का प्रयोग तो अति सामान्य है। परन्तु विस्मय इस बात पर होता है कि यद्यपि इस व्यवस्था में सुधार लाने के लिए कई समितियों ने सुझाव दिये हैं, पर यह आत्मा की तरह अपरिवर्तनीय है। जब कभी यह प्रश्न उठाया जाता है, एक समिति गठित कर दी जाती है, वह विद्वत्तापूर्ण प्रतिवेदन यथासमय पेश कर देती है और वह प्रतिवेदन बैताल की तरह पीपल के डाल पर फिर जा लटकता है। कल ही आकाशवाणी सुनी कि एक नूतनतम मुख्यमंत्री ने घोषित किया है कि वह गम्भीरता-पूर्वक सोच रहे हैं कि अपने प्रदेश में एक प्रशासनिक जाँच समिति शीघ्र नियुक्त करें। यदि वह महोदय समिति की रिपोर्ट आने तक अपने पद पर कायम भी रहते हैं तो भी मुझे सन्देह नहीं कि उसकी अनुशंसाओं का भी वही हाल होगा जो ऐपलबी कमिटी से लेकर आज तक की कमिटियों की सिफारिशों का हुआ है। आवश्यकता इस बात की नहीं है कि इस विषय का बार-बार अध्ययन किया जाय, बल्कि इस बात की है कि अब तक के अनुभवों तथा अध्ययनों के आधार पर साहस के साथ आवश्यक मूलगामी सुधार अविलम्ब किया जाय। एक लोक-सेवक की हैसियत से अपने अनुभवों के आधार पर यह निःसंकोच कह सकता हूँ कि यदि ऐसा शीघ्र नहीं किया गया तो देश का विकास, अच्छी-से-अच्छी सरकारी नीतियों का कार्यान्वयन, लोक-कल्याण के कार्य, सब मन्द पड़े रह जायेंगे।

दूसरा सुझाव है राज्यों के परस्पर विवादों तथा राज्य और केन्द्र के बीच के विवादों के विषय में। वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति में, जिसके विश्लेषण की पुनः आवश्यकता नहीं, यह राष्ट्रहित में अत्यन्त अवाञ्छनीय होगा कि इन विवादों के फैसले दलगत राजनीति के अवसरवादी हाथों में छोड़े जायँ। इसके लिए उत्तम यह होगा कि भारतीय संविधान की धारा २६३ को संशोधित करके एक संवैधानिक परिषद् गठित कर दी जाय जो इन सभी विवादों पर विचार कर निर्णय दिया करे, जो उसी प्रकार मान्य हों जिस प्रकार सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय। यदि ऐसा नहीं किया गया तो राष्ट्र की एकता राजनीति के दल दल में डूब जा सकती है।

मेरा अन्तिम सुझाव है विकास-कार्यों को राजनीतिक उलट-फेर से अलग रखने के सम्बन्ध में। मेरा निजी अनुभव है कि मंत्रिमण्डलों के बार बार टूटने और बनने के कारण विकास के कार्य कुंठित हो जाते हैं। बिहार में सन् १९६६-६७ के भयंकर दुष्काल के कारण वहाँ के किसानों में जो जागृति हुई थी उसका लाभ प्रदेश को इसलिए नहीं मिल सका कि शासन बार-बार बदलता रहा। इस कारण से प्रशासन ठप पड़ गया, नीतियाँ अनिश्चित हो गयीं। यही हाल औद्योगिक विकास या, शिक्षा आदि का हुआ। मुझे लगता है, जैसा कि पहले भी कह चुका हूँ, कि यह शासकीय अस्थिरता घटने के बजाय बढ़ने-वाली है। इसलिए मेरा सुझाव है कि हर प्रदेश में एक-एक औद्योगिक विकास और कृषि-विकास निगम कायम किए जायँ जो ईमानदारी से स्वायत्त शासित (autonomous) हों। इस प्रकार के निगम नाम भी कुछ प्रदेशों में कायम हैं, परन्तु उनका स्वायत्त शासनाधिकार एक बहाना मात्र है। इनसे कोई लाभ नहीं, सिवाय इसके कि अफसरों के लिए कुछ और ऊँचे पद उपलब्ध हो जाते हैं और मंत्रियों के लिए कृपाभाजन बनाने (Patronage) के अवसर। यदि राज→

हरियाणा

हरियाणा सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री दादा गणेशी लाल लिखते हैं कि जनवरी में जिला रोहतक के सरखोदी प्रखंड में ग्रामदान-अभियान चला। इस अभियान में विशेष तौर से २६ कार्यकर्ता खादी-आश्रम के थे। रोहतक जिले को सघन काम के लिए लिया है, और अगले माह भी अभियान चलेगा।

राजस्थान

राजस्थान ग्रामदान अभियान समिति से प्राप्त सूचना के अनुसार राजस्थान के उत्तरी क्षेत्र बीकानेर जिले के डिसावरा प्रखंड में जनवरी में ग्रामदान-अभियान चला। ११९ गाँवों से सम्पर्क हुआ, और ७८ गाँवों ने ग्रामदान का संकल्प लिया। इस अभियान से राजस्थान के उत्तरी क्षेत्र में, जो बिलकुल ही एक प्रकार से ग्रामदान की दृष्टि से अछूता था, बहुत ही अनुकूल वातावरण का निर्माण हुआ है।

बिहार

बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के मंत्री की सूचनानुसार जिला-स्तर पर जिला ग्राम-स्वराज्य समितियों को संगठित करने का निर्णय लिया गया है। अभी तक ११ जिलों में जिला ग्राम-स्वराज्य समितियाँ गठित हुई हैं। बिहार ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक में ग्रामदान-पुष्टि के अनुष्ठान अभियान के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लिये हैं। जिले के एक-दो अनुकूल प्रखंडों को सघन पुष्टि अभियान के लिए चुनकर जिले की सारी शक्ति उसमें लगाकर कार्य करने का सोचा गया है। स्थानीय सहयोग और अभियान की अनुकूलता देखकर प्रखंड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन किया जायगा। अभियान-संचालन हेतु आर्थिक आधार एवं लोक-सम्मति प्राप्त करने के लिए बड़े पैमाने पर सर्वोदय-मित्र बनाने का तय किया गया है। सघन पुष्टि-अभियान में आचार्यकुल, तरुण-शान्ति सेना और ग्राम शान्ति-सेना के प्रखंड-स्तरीय संगठन करने का प्रयत्न किया जायगा। जिलों में प्रतिष्ठान को समुचित मार्गदर्शन तथा नेतृत्व मिलता रहे, इस दृष्टि से हर प्रखंड के लिए साथियों को जिम्मेवारी सौंपी गयी है। इसी प्रकार के कार्यकर्ताओं तथा ग्राम-सभाओं का गठन हो जाने पर उनके पदाधिकारियों के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की जा रही है।

→नैतिक नेता और ऊँचे पदाधिकारी सच्चाई से अपना अधिकार छोड़ने को तैयार हों तो ऐसे स्वायत्तशासित नियम गठित करना कठिन नहीं होगा जो सरकारी विभाग की तरह नहीं, बल्कि स्वतन्त्र व्यवसायी संस्थाओं की तरह काम करें।●

गुजरात

गुजरात सर्वोदय मण्डल के मंत्री सूचित करते हैं कि अहमदाबाद के कौमी दंगे के बाद गुजरात शान्ति-सेना-समिति ने दंगा-ग्रस्त क्षेत्रों में काम शुरू किया। १२०० कम्बल और दूसरी वस्तुएँ संकट-ग्रस्त लोगों में बाँटी गयीं। विधवा बहनों के लिए एक तालीम-वर्ग चल रहा है। २८ से ३० जनवरी तक अहमदाबाद में नगर-यात्राएँ हुईं। ३० जनवरी को शान्ति-जुलूस निकाला गया, जिसमें ढाई हजार व्यक्तियों ने भाग लिया। नगर-यात्रा में ७५० नये शान्ति सैनिक बने, २५०० रुपये की साहित्य-बिक्री हुई, तथा 'भूमिपुत्र' के ४५० ग्राहक बनाये गये।

बंगाल

बंगाल सर्वोदय मण्डल के मंत्री ने बंगाल के काम के बारे में जानकारी देते हुए लिखा है कि नक्सलबाड़ी तथा उत्तर बंगाल के कुछ हिस्से में श्री चारु बाबू के नेतृत्व में ग्रामदान के लिए प्रयत्न चल रहा है। १४ कार्यकर्ता घूम रहे हैं। दो-तीन पंचायतों के क्षेत्र में एक-एक शिविर कर रहे हैं। इन बैठकों और शिविरों से लोगों में अनुकूलता पैदा हुई है। लेकिन परिस्थिति ऐसी है कि लोग ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए कलम हाथ में नहीं ले रहे हैं। २४ परगना जिले में कई स्थानों पर मार्क्सवादी साम्यवादियों और एस० यू० सी० दलों का उपद्रव चल रहा है। श्री चारु बाबू का जनवरी में इन क्षेत्रों में दौरा हुआ। चार स्थानों में सभाएँ हुईं। केशोरातला इलाके में ग्रामदान के लिए अनुकूलता दिखती है। यहाँ ग्रामदान के लिए हस्ताक्षर हो रहे हैं। पुरुलिया जिले के फाडा थाने में कुछ ग्रामदान हुए हैं। उस थाने से ही काम शुरू करने का निश्चय किया गया है। १० दिनों तक श्री चारु बाबू इस क्षेत्र में रहे और तीन दिन का शिविर किया गया। गाँव के करीब ५० मुख्य लोग शामिल हुए। मेदिनीपुर जिले के दो थाने में, डेबरा और गोपीवल्लभपुर, में नक्सलवादी साम्यवादियों का उपद्रव हुआ है। वहाँ भी श्री चारु बाबू का १० दिन का दौरा हुआ। ९ स्थानों में सभाएँ हुईं। डबरा थाने में ग्रामदान के लिए हस्ताक्षर शुरू हुआ है।

[सर्व सेवा संघ, प्र० का०, गोपुरी से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर]

हरदोई जिलादान के करीब

हरदोई जनपद की चारों तहसील—सण्डीला, हरदोई, शाहाबाद और बिलग्राम में क्रमशः दिनांक २४, २५ जनवरी, २७, २८ जनवरी, ३१ जनवरी, १ फरवरी व ४, ५ फरवरी को ग्रामदान ग्रामस्वराज्य के ४ प्रशिक्षण शिविर हुए, जिनमें विशेषकर प्राइमरी स्कूल व जूनियर हाईस्कूलों के अध्यापक १३००, ग्रामसेवक व पंचायत-मंत्री और स्वराज्य-आश्रम एवं श्री गांधी आश्रम के कार्यकर्ता लगभग २००, कुल १५०० प्रशिक्षणार्थियों ने प्रशिक्षण प्राप्त कर टोलियों में विभक्त हो, जनपद के लगभग सभी ग्रामों में जाकर 'ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य' का विचार समझाया। फलस्वरूप ११३८ ग्रामदान हुए। इसके पहले भी इस जनपद में ३०६ ग्रामदान हो चुके थे, अब कुल १४४४ ग्रामदान हुए।●

वाराणसी में "गांधीदर्शन रेल प्रदर्शनी"

राष्ट्रपिता के जीवन और कार्यों की प्रेरणापूर्ण मार्मिक झाँकी

(हमारे संवाददाता से)

वाराणसी सीटी स्टेशन पर गांधी-दर्शन रेल-प्रदर्शनी १ से ७ मार्च तक रही। नगर के लोगों ने उत्साह के साथ इस प्रदर्शनी का अवलोकन किया। यह 'गांधी-दर्शन प्रदर्शनी' रेल (मीटर गेज) के दस डिब्बों में नयनाभिराम साज-सज्जा से परिपूर्ण है। डिब्बा नम्बर १ में आजादी के कर्णधार, २. बचपन, ३ दक्षिण अफ्रीका में, ४ सत्य से साक्षात्कार, ५. स्वतंत्रता की ओर, ६ हिन्दू मुस्लिम एकता, ७. तीर्थयात्री, ८ बापू का सन्देश, ९ बा और बापू, और १० हे राम, का चित्रण अत्यन्त आकर्षक, प्रेरक एवं गांधीजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की दृष्टि से उत्तम है।

इस मीटर गेजवाली 'गांधीदर्शन रेल-प्रदर्शनी" का उद्घाटन ६ सितम्बर १९६९ को ११॥ बजे रामेश्वरम् में तमिलनाडु के मुख्यमंत्री श्री एम० करुणा निधि ने किया था। तब से यहाँ आने तक इस गाड़ी ने करीब १६,००० किलोमीटर की यात्रा की है। दर्शकों के बारे में अनुमान किया जाता है कि लगभग २४ लाख लोगों ने प्रदर्शनी देखी है और मुक्त कण्ठ से भूरि-भूरि सराहना की है।

इस रेल-प्रदर्शनी का आयोजन राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी समिति द्वारा किया गया है। जनसम्पर्क उपसमिति के मंत्री श्री एम० एन० सुब्बाराव रेल-प्रदर्शनी के डाइरेक्टर हैं। १७ प्रदेशों से आये हुए ३६ पुरुष और ९ महिलाएँ इस प्रदर्शनी में 'गाइड' हैं।

श्री रामाराव, जो आजाद हिन्द फौज के विख्यात सेनानी रह चुके हैं, इस रेल-प्रदर्शनी के साथ हैं। उन्होंने हमारे संवाददाता को बातचीत में बताया कि गांधीजी के प्रति सामान्य लोगों में अब भी अपार श्रद्धा देखने को मिलती है। वे लोग भली भाँति जानना चाहते हैं कि वह कौन-सी जीवन-शक्ति थी, जिसकी आवश्यकता गांधीजी ने आनेवाले भारत के लिए बतायी थी। आपने कहा कि दर्शकों को गांधीजी की सादगी और उदारचित्तता बहुत प्रभावित करती है।

रेल प्रदर्शनी के एक 'गाइड' श्री सुधीर मिश्र ने पूछने पर अपना अनुभव बताते हुए कहा कि छोटे छोटे स्थानों के लिए यह प्रदर्शनी बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। हमने दर्शकों की आँखों में जिज्ञासा का एक भाव यह देखा है। वे पूछना चाहते हैं कि आपाधापी के इस वातावरण में गांधी का नाम लेनेवाले तो बहुत मिलते हैं, परन्तु काम, ठोस काम करनेवाले कम क्यों हैं? जिन महिलाओं और बच्चों को न तो गांधी को देखने का और न उनके साहित्य को ही पढ़ने का मौका मिला है, उनको इस प्रदर्शनी ने बहुत कुछ बताया है। श्री सुधीर मिश्र ने यह भी बताया कि तमिलनाडु प्रदेश के नागरिकों ने जितने नियंत्रित, अनुशासनबद्ध, और श्रद्धाभाव से इस प्रदर्शनी का अवलोकन किया है, वैसा अभी तक किसी प्रदेश ने उदाहरण नहीं प्रस्तुत किया।•

आंध्र प्रदेश का सातवाँ सर्वोदय-सम्मेलन सम्पन्न

महावीरनगर, अम्बरपेट, हैदराबाद में गत माह फरवरी '७० में आंध्र के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का सम्मेलन अणुव्रत आन्दोलन के प्रवर्तक आचार्य तुलसी के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

आचार्य तुलसी ने सम्मेलन में आप्त सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के प्रत्यक्ष सम्पर्क के इस अवसर पर प्रसन्नता जाहिर करते हुए कहा कि हम एक दूसरे के अत्यन्त करीब हैं, और हमें जनता तक सही तथ्यों को पहुँचाना और उन्हें सही दिशा में बढ़ने के लिए प्रेरित करना है।•

पुस्तक-परिचय

गांधीदर्शन और शिक्षा

लेखक : डा० रामानन्द

प्रकाशक : सूर्यप्रकाश मन्दिर, बीकानेर

मूल्य : पाँच रुपये, पृष्ठ : ११०

प्रस्तुत पुस्तक शिक्षा विभाग राजस्थान बीकानेर ने २ अक्तूबर १९६९ को गांधी-शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशित किया है।

गांधीजी के जीवन, कर्म एवं ध्येय पर विस्तार से लिखी गयी इस पुस्तक में चार अनुच्छेद हैं व्यक्तित्व, दर्शन, शिक्षा, और विश्व। विश्व के चिन्तनशील विद्वानों के कथनों को उद्धृत करते हुए लेखक ने वर्तमान सामाजिक संदर्भों में गांधी-विचार की उपादेयता पर प्रकाश डाला है, जिसमें होकर मार्ग खोज सकता है।

मुखपृष्ठ आकर्षक एवं छपाई अच्छी है। प्रारम्भ में ही लगभग एक दर्जन पृष्ठों को खाली छोड़ना किसी प्रकाशन की विशिष्ट शैली भले ही हो, किन्तु गांधी के बारे में हुए प्रकाशन में पाठकों को शायद उचित नहीं लगेगा।

अमर चूंनड़ी

(राजस्थानी कहानी-संग्रह)

लेखक—नृसिंह राजपुरोहित

प्रकाशक—सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर

मूल्य—पाँच रुपये, पृष्ठ—१७०

राजस्थान शिक्षा विभाग बीकानेर ने राजस्थानी भाषा में राजपुरोहितजी का कहानी-संग्रह, जिसमें १४ कहानियाँ हैं, प्रकाशित करके अन्य प्रदेशीय सरकारों के लिए प्रेरणास्पद कार्य किया है। पुस्तक के प्रारम्भ में राजस्थान विधान-सभा के अध्यक्ष श्री निरंजन नाथ आचार्य की सम्मति इस पुस्तक का सबसे अच्छा परिचय कराती है। दिल्ली के रूपक प्रिंटर्स ने पुस्तक का मुद्रण बड़ी सफाई के साथ किया है। राजस्थानी संस्कृति को इन कहानियों के माध्यम से भली भाँति समझा जा सकता है। शिक्षा-विभाग इसके लिए धन्यवाद का पात्र है।

—कपिल

आन्दोलन के समाचार

ग्रामस्वराज्य का क्षेत्रीय चिंतन

मुंगेर जिले के चौथम प्रखण्ड के कुछ मित्रों ने पिछले कुछ वर्षों से 'गांधी चर्चा मंडल' का निर्माण कर रखा है। प्रखण्ड के विभिन्न हिस्सों में उसकी बैठकें होती रही हैं। गांधीजी ग्रामस्वराज्य की स्थापना किस तरह करना चाहते थे, यह चर्चा उन बैठकों में होती रही है। बिहारदान के लिए मुंगेर जिलादान अभियान के समय आचार्य राममूर्ति ने इस प्रखण्ड में प्रखण्डदान-प्राप्ति के क्रम में हर पंचायत की गोष्ठी में ग्रामदान ग्राम-स्वराज्य का विचार समझाया था। गांधी-जन्म-शताब्दी मनाने की दृष्टि से यहाँ के सर्वोदय-विचारवाले मित्रों ने 'प्रखण्ड गांधी-जन्म-शताब्दी समिति' बनायी थी। गत २२-२-७० को शताब्दी समारोह की बैठक चौथम स्थित जवाहर आश्रम में हुई। प्रखण्ड के विभिन्न हिस्सों के करीब सत्तर प्रतिनिधि आये थे। बा और बापू को श्रद्धांजलि अर्पण के क्रम में मुख्यतः यह बात कही गयी कि सर्वोदय-समाज की स्थापना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है। सर्वोदय-समाज की रचना अहिंसा के आधार पर हो सकती है और अहिंसा शिक्षण की प्रक्रिया है, इसे सभी प्रतिनिधियों ने बातचीत के क्रम में स्थिर किया। प्रतिनिधियों ने तय किया कि अपने-अपने पंचायत-क्षेत्र के हर गाँव में ग्रामसभा (ग्राम-स्वराज्य सभा) बनाने तथा बीघा कट्ठा जमीन बँटवाने की चर्चा करेंगे। बातचीत के दौरान प्रतिनिधियों ने यह महसूस किया, कि गाँव में ग्राम स्वराज्य की स्थापना के बिना गाँव का विकास सम्भव नहीं, अतः हर गाँव में ग्रामदान को पुष्ट किया जाय। इसी क्रम में अपने-अपने पंचायत-क्षेत्र में इस विचार को सघन रूप से समझाने का उन्होंने जिम्मा लिया।

प्रखण्ड क्षेत्र में खादी-ग्रामोद्योग का विकास करने की दृष्टि से तेरह सदस्यों की एक प्रखण्ड-स्तरीय खादी-ग्रामोद्योग समिति बनायी गयी। —हेमनाथ सिंह

बिजनौर में १२५ ग्रामदान

दिसम्बर १९ से २५ फरवरी १९७० तक हिन्दू इन्टर कालेज नगीना (बिजनौर) के प्राचार्य श्री द्वारिका प्रसाद गुप्त के सहयोग से नगीना तहसील में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य अभियान चला, जिसमें १२५ राजस्व गाँवों का ग्रामदान हुआ। अभियान में लगभग १५० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया, जिनमें स्थानीय कालेज के छात्र, अध्यापक एवं गांधी-आश्रम के कार्यकर्ता सम्मिलित थे।

शिविर का संचालन डा० दयानिधि पटनायक द्वारा हुआ। सर्वश्री राजाराम भाई, रामजी भाई, सोहनलाल भूभिशु, अलख नारायण भाई ने पूर्व संयोजक एवं प्रशिक्षण-कार्य में योगदान दिया।●

मथुरा जनपद की माँट तहसील में १०० ग्रामदान प्राप्त हुए

मथुरा जनपद की माँट तहसील के विकास-क्षेत्र नौहझील में गत माह एक सप्ताह का ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य अभियान चलाया गया।

प्रारम्भ में दो दिवसीय कार्यकर्ता-प्रशिक्षण शिविर चला। शिविर में खादी एवं रचनात्मक कार्यकर्ताओं के अलावा इन्टर कालेज बाजना के १६ और जनता-जनार्दन हाईस्कूल, एदलगढ़ी के ३८ विद्यार्थियों ने भी भाग लिया और अभियान में टोलियों के साथ रहे। क्षेत्र के स्थानीय कार्यकर्ताओं का शिराज जनसमूह शिविर में उपस्थित रहकर ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार का शिक्षण प्राप्त किया। शिविरार्थियों के प्रशिक्षण का कार्य श्री प्रकाश भाई ने किया।

उसके बाद ५० कार्यकर्ताओं की २३ टोलियों ने विकास क्षेत्र नौहझील के कुल १३४ ग्रामों में से १२३ ग्रामों में पदयात्रा करके ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का सन्देश जन-जन तक पहुँचाने का अभियान चलाया। कुल १०० ग्रामों के लोगों ने ग्रामदान घोषणा-पत्र पर अपनी सहमति दी और ग्रामदान के विचार को स्वीकार किया।●

सरगुजा में जिला सर्वोदय-मण्डल का गठन

पिछले माह हुई जिले के लोक-सेवकों की बैठक में जिला सर्वोदय-मंडल का गठन किया गया। श्री रामप्रसादजी को संयोजक तथा श्री सत्यपालजी पंवार को सर्व सेवा संघ का प्रतिनिधि सर्वसम्मति से मनोनीत किया गया। अभी तक जिले में लोक-सेवकों की कुल संख्या २४ है।●

उत्तरप्रदेश के पीलीभीत और बरेली में जिला सर्वोदय-मण्डल का पुनर्गठन

गत माह उत्तरप्रदेश के दो जिलों - पीलीभीत और बरेली में जिला सर्वोदय-मण्डल पुनर्गठित किये गये। मण्डल के पदाधिकारियों का निम्नानुसार सर्वसम्मत मनोनयन हुआ

पीलीभीत

अध्यक्ष—श्री काशीनाथ वानप्रस्थी
मंत्री - श्री राधेश्याम
प्रतिनिधि (स० से० सं०)—
श्री कुन्दनलाल

बरेली

अध्यक्ष—श्री दीनानाथ मिश्र
मंत्री—श्री ओमप्रकाश
प्रतिनिधि (स० से० सं०)—
श्री किशनलाल चौबे।●

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज, १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : २४
सोमवार १६ मार्च, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : १२२८५

मसलों से घबराने की जरूरत नहीं

राजगिर सर्वोदय-सम्मेलन में मैंने कहा था कि महात्मा गांधी का बलिदान जिन मसलों के लिए हुआ वे ही मसले मानो फिर से सिर उठा रहे हैं, फिर से हमारे सामने हाजिर हैं। ऐसी हालत में बादशाह गफ्फार खान का यहाँ आना मानो एक तरह से गांधीजी का ही अवतरण है। दुबारा गांधी ही हमारे बीच आये हैं, ऐसा भास मुझे हुआ। लाखों लोग सम्मेलन में जुटे हुए थे, वहीं मैंने जाहिर किया कि 'हमारे बड़े भाई साहब सेवाग्राम आ रहे हैं, तो उनसे मिलने मैं जाऊँगा।' वैसे मुझे यहाँ आना ही था। पाँच-पन्द्रह दिन देरी से आता। क्योंकि मैं यहीं से गया था। जिस काम के लिए गया था वह काम करीब पूरा हुआ। सारा बिहार सूबा ग्रामदान में आया है, तो आन्दोलन का एक चरण वहाँ समाप्त हुआ यह खुशी की बात है।

हमारे सामने कई मुख्तलिफ मसले हैं, लेकिन घबराने की जरूरत मैं नहीं मानता। क्योंकि यहाँ की जनता का दिल पाक है, साफ है। मसलों का होना इन्सान के लिए अच्छा है। मसले ही नहीं होंगे तो इन्सान की जिन्दगी में लुत्फ ही क्या रहेगा? इसलिए घबराने की बात नहीं है। कई दफा मुल्क की गिरावट होती है, तो वह ऊपर चढ़ने के लिए होती है। तो ऊपर उठने के लिए समाज भी मनुष्य के जैसे नीचे जाता है। परमेश्वर की यह खूबी है कि वह मनुष्य को ऊपर चढ़ाता है फिर नीचे गिराता है। वह भी उसको ऊपर उठाने के लिए ही। एक बात साफ है कि मसले सियासत से हल नहीं होंगे, रुहानियत से ही हल होंगे। ऐसा मेरा पक्का विश्वास है। भारत के अपने मसले तो हैं ही, उसके अलावा पाकिस्तान के भी मसले हैं, वह भी हमारे ही हैं। अभी सर्वोदय-सम्मेलन में दलाई लामा हमसे मिले थे। उनसे मैंने कहा कि तिब्बत का मसला भी हमारा ही मसला है। मैंने उनके सामने और एक बात रखी कि 'ए बी सी' यह एक त्रिकोण है—अफगानिस्तान, बर्मा और सीलोन। इस त्रिकोण में जितने देश हैं उन सबका 'कानफडरेशन' करना होगा। उसमें अफगानिस्तान, पाकिस्तान बर्मा, सीलोन, हिन्दुस्तान, तिब्बत ऐसे सारे देश हैं। इन देशों का 'कानफडरेशन' होगा, होगा होगा। यह मेरा विश्वास है। इसका उपाय हम ढूँढ़ेंगे। परमेश्वर की कृपा से कुछ-न-कुछ फल हाथ आयेगा, ऐसी उम्मीद है।

४ नवम्बर, '६९
पोचुरी, वर्धा

नहीं, मैं हार नहीं मानता...

[केरल के वयोवृद्ध नेता की यह आन्तरिक व्यथा और देश की निराशाजनक परिस्थिति को देखकर यदाकदा हताश होनेवाले मन में छिपी अदम्य आस्था की अभिव्यक्ति आपके लिए भी प्रेरक होगी, ऐसी आशा है।–सं०]

मैं सन् १९१८-२० के दरमियान बम्बई में एक हाईस्कूल का अध्यापक था, साथ ही-साथ कानून का विद्यार्थी भी थी। गांधीजी, लोकमान्य तिलक आदि के व्याख्यान सुनकर उन दिनों मैंने कालेज छोड़ा और आजादी की लड़ाई में कूद पड़ा, एक सिपाही के नाते। तब से आज तक मैं विनोबाजी की भाषा में एक शान्ति-सैनिक रहा, एक लोकसेवक के नाते। नमक-सत्याग्रह, आम रास्ते में सभी को आवागमन का समान हक, मन्दिरों में सभी हिन्दुओं के प्रवेश, शराब-बन्दी, अस्पृश्यता-निवारण आदि कार्यक्रमों में अगर मैं शरीक हुआ, तो उन सबके मूल में मुख्य उद्देश्य यही था कि कि समत्व, सुन्दर व स्वतन्त्र समाज की स्थापना हो जाय। बुनियादी तालीम का श्रीगणेश भी मैंने उसी स्थान से किया।

अब हम कहाँ पहुँचे? मुकाम पर पहुँचने के लिए हमने कितने मील की यात्रा की? आज की हालत देखने पर अपने अनुभव से यह लगता है कि हम गुमराह होकर बहुत दूर भटक गये हैं। स्वतन्त्र होने पर भी समत्व व सुन्दर समाज आज कहीं भी दिखाई नहीं देता। वह कहीं दूर, बहुत दूर छिप गया है। आज नीति-न्याय मिट गया है। दिन-दहाड़े मेहनत करके पसीना बहानेवाले मजदूर पीसे जाते हैं। मतदाताओं को कई तरह के प्रलोभन की बातें सुनाकर, अधिकार में आ जायें तो "मृगचर्म ओढ़े हुए भेड़िये" अपने पेट भरने के लिए दूसरों को खाने लगते हैं। लोगों को शराब पिलाकर उनकी बुद्धि, शक्ति और प्रतिभा को मन्द करके गाँवों में झगड़े बढ़ाते हैं और अपना स्वार्थ साधते हैं। सच्चाई, शिष्टता, नीति-धर्म, प्रेम, करुणा, दया, वात्सल्य आदि गुणोंवाले निःस्वार्थ सेवकों के स्थान पर झूठे, धोखेबाज, दगाबाज, घूसखोर लोगों का ही आज समाज में बोलबाला दीखता है।

मैं जिन आदर्शों को अपनाकर लोक-सेवा-कार्य में कूद पड़ा, उन आदर्शों से समाज हटता जा रहा है। अपेक्षा है कि जिस प्रकार सूरज जलाशयों से पानी को भाप के रूप में खींचकर बारिश के रूप में लौटा देता है, उसी प्रकार सरकार लोगों से कर के रूप में पैसा लेकर पूरे देश को सम्पन्न और सुखी बनाये। लेकिन आज की सरकार तो कर व लगान इकट्ठा करके समाज में झगड़ा बढ़ाती है, और सुखी परिवार को दुःखी बना देती है, सरकार खुद सम्पन्न बन जाती है। सरकार प्रजा को शराब पिलाती है, जुए खेलाती है, लॉटरी के मोह में फँसाकर पैसे इकट्ठा करती है, जिसके परिणामस्वरूप व्यभि-

के० केलप्पन

चार बढ़ता है, चोरी बढ़ती है विद्यार्थियों में अनुशासन नाम मात्र का भी रहा नहीं। सरकार की नीति और दलों की चालबाजी से ही अपना देश चौपट हो गया।

भविष्य के समाज का भी दर्शन मेरी कल्पना में है। जब अधर्म, अन्याय, असत्य बढ़ जाते हैं, तब दुनिया का अन्त होता है। आज की सरकार व राष्ट्रीय दलों के काम उसके सूचक हैं। मार्क्सिस्ट, नक्सलपंथी आदि कम्यूनिस्टों ने तो कमाल किया है। उनका रास्ता गलत है, यह साबित हो चुका है।

लेकिन जिस स्वप्न का साक्षात्कार करने के लिए मैंने आज तक प्रयत्न किया वह स्वप्न में ही रह गया है, यह मैं मानता हूँ। तो क्या मैं इस कार्य क्षेत्र से विदा लेने जा रहा हूँ? नहीं मैं विदा नहीं लेता, मैं कभी भी विदा नहीं लूँगा। अभी भी उम्मीद की गुंजी है। आगे प्रेम का ही राज आनेवाला है। वहाँ उच्च और नीच की खाई कम रहेगी, शोषणहीन समाज होगा, श्रम-प्रतिष्ठा बढ़ेगी, पैसे का मूल्य नहीं रहेगा, द्वेष मिट जायगा, प्रेम बढ़ जायगा।

भारतीय जनता, खासकर केरल की जनता के अधःपतन होता दिख रहा है, लेकिन उनका अधःपतन कभी नहीं हो सकता। आखिर में परिस्थिति परिवर्तित होगी, और गतिचक्र उन्नति की ओर होगा। यह प्रकृति का नियम है। इसलिए पहले जैसे ही मैं उत्साह के साथ सेवा-कार्य में लगा रहता हूँ। हम तो कालचक्र पर बैठी हुई मक्खी जैसे हैं। चक्र हमें घुमाता है, फिर भी हमें लगता है कि हम चक्र को घुमाते हैं। अनुवादक गोविन्दन्

'विनोबा-चिन्तन' विषयक दो सूचनाएँ

'विनोबा-चिन्तन' वर्ष ४ का ११-१२वाँ संयुक्तांक (संख्या ४७-४८) छप गया है और वह शीघ्र ग्राहकों के पास भेजा जा रहा है। इसमें 'नाम-घोषा' चिन्तन है। यह अंक दिसम्बर-जनवरी, १९६९-७० का है। सामग्री-संकलन में अनिवार्यतः अधिक समय लग जाने से कुछ विलम्ब हो गया है। पाठकगण क्षमा करेंगे।

× × ×

'विनोबा-चिन्तन' के ५वें वर्ष का प्रथम अंक शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

प्रेमी पाठकों तथा जिज्ञासुओं से निवेदन है कि 'विनोबा-चिन्तन' का वार्षिक शुल्क प्रथम अंक से पूरे वर्ष का ही भेजने का कष्ट करें। बीच के अंकों से ग्राहक-शुल्क स्वीकार करने में कठिनाई और असुविधा होती है। ग्राहक जब चाहें, बनें। लेकिन ग्राहक प्रथम अंक से ही माने जायँगे।

वार्षिक शुल्क रुपये ६.०० मात्र।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी

विस्मरण का तत्त्वज्ञान

❊ फूल की तरह नित्य खिलना, झड़ना, फिर-फिर खिलना ❊

— बा-बापू शताब्दी-समावर्तन-दिवस पर विनोबा के उद्गार —

आज मैंने यहाँ आने का कबूल किया तो आशा थी कि चार बजे मैं पहुँचूंगा। फिर कुछ कार्यक्रम शुरू होगा, भजन वगैरह होगा और मुझे ज्यादा बोलना नहीं पड़ेगा, क्योंकि ४-४० को यहाँ से जाने का कह ही दिया था। लेकिन इन लोगों ने कार्यक्रम ३॥ बजे से शुरू किया, ताकि ४ बजे से कसकर मेरा व्याख्यान सुना जाय।

मेरी एक आशा तो सफल नहीं हुई। दूसरी आशा मुझे यह थी, जो सफल होगी कि यह शताब्दी का आखिर का दिन है इसलिए अब फिर से आगे जब तक द्विशताब्दी आयेगी नहीं तब बोलना नहीं पड़ेगा। अगर हम १०० साल जी भी लें तो आगे देखा जायेगा। तब तक तो शायद बाबा यहाँ से उठ जायेगा। 'चादर भई है पुरानी साधो'। लेकिन यह चादर जैसे मिली थी वैसी-की वैसी वापस लौटा दी जाय तो हम पास हैं। अगर अनेक रंगों में रंगी हुई, अनेक प्रकार से मैली बनी हुई चादर वापस देंगे तो भगवान कहेगा कि तुझे तो स्वच्छ चादर दी थी और तूने उसे मैली करके वापस किया। तो यह बहुत बड़ी परीक्षा होगी। वह चादर ऐसी है—'सो चादर नर मुनि ओढ़ी, ओढ़ि के मैली कीन्ही चदरिया। दास कबीर जतन से ओढ़ी, ज्यों-की-त्यों धरि दीन्हीं चदरिया।' उस चादर को सुर नर मुनि ने ओढ़ी और उसे मैली बना दिया। लेकिन दास कबीर ने उसे बड़ी सावधानी से ओढ़ा और ज्यों-की त्यों स्वच्छ, निर्मल, निर्दोष चादर दे दी। बच्चा जन्म पाता है अत्यन्त निर्मल, ऐसा दुनिया भर के महापुरुषों ने माना है। बच्चा भगवान के पास से आता है तो वह भगवान के नजदीक होता है। इसलिए उसका मन अत्यन्त सरल होता है। वर्ड्स वर्थ ने लिखा है—'हेवन लाइज़ विथ अस इन इनफेंसी' हमारे बचपन में भगवान हमारे नजदीक रहता है। लेकिन फिर धीरे-धीरे मनुष्य भगवान को भूलता जाता है और दुनिया को याद करता है। दुनिया के अनेक रंग उस पर चढ़ते हैं। यहाँ पर बहनें बैठी हैं। कुछ तो अनेक रंगों में हैं। कई दफा मैं मनुष्यों को पूछता हूँ कि जरा-सा चमड़ी का रंग बदल गया तो कहते हैं कि कुष्ठ हो गया। अगर भगवान चट्टा-पट्टा देना चाहता तो शेर का ही जन्म देता। इस वास्ते रंग चढ़ाना नहीं चाहिए। जो रंग देकर भगवान ने भेजा था उसी रंग में चादर वापस कर देना चाहिए। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर, दंभ, तिरस्कार, विषमता का रंग चढ़ाकर, उसे गन्दा बनाकर, वह चादर हम वापस देते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। ऐसा आदेश हमें कबीर ने दिया।

अब यह चादर पुरानी तो हो गयी, इसमें कोई शक नहीं। ऐसी हालत में १०० साल के बाद द्विशताब्दी होगी तब बोलने का मौका आयेगा, बाबा को यह तो सम्भव दीखता नहीं है। तो यह मेरी जो दूसरी आशा थी कि यह मेरा आखिरी भाषण होगा इस सिलसिले में वह पूरी हुई। लेकिन लोग दूसरे सिलसिले ढूँढेंगे और मुझे बोलने के लिए मजबूर करेंगे। यह अलग बात है।

स्मरण, संस्मरण, विस्मरण

जो काम मुझे दिया गया है वह मेरे लिए कठिन काम है, क्योंकि गांधीजी की कई आज्ञाएँ पालन करने की पूरी कोशिश मैंने की है, लेकिन कुछ आज्ञाओं का पालन मैंने किया ही नहीं। जिन आज्ञाओं का पालन नहीं किया उनमें से एक आज्ञा यह थी कि रोज की डायरी लिखना। बापू हरएक आश्रमवासी के पीछे लगे रहते थे। कुछ लोगों की डायरी खुद देखते भी थे। इस तरह 'टास्क मास्टर' की तरह डायरी के पीछे लगे रहते थे। बाबा ने एक दिन की भी डायरी नहीं रखी। बापू का आत्मकथा लिखना, प्रतिदिन की डायरी लिखना, ऐसा उनका सत्य का प्रयोग था। लेकिन बाबा का विस्मरण का प्रयोग रहा है। न सत्य का, न असत्य का, ऐसा यह नया ही प्रयोग है। वैसे तो पुराना ही है। शास्त्रकारों ने आज्ञा दी है—'अतीतानुसंधानम् भविष्यद्विचारणम्'। कल तक जो हुआ उसको याद मत करो, भविष्य का विचार मत करो। उसका मन पर बोझ होगा, उससे आत्म स्मृति में बाधा आयेगी। बापू ने डायरी लिखने के लिए हरएक को हिदायत की और कहा कि ऐसा लिखो, जिसमें अपनी गल्तियाँ वगैरह लिखी जायें। उसमें परीक्षण होगा, यही उनका उद्देश्य था। लेकिन अब वह लिखनेवाला जैसा भी लिखता हो। परन्तु बाबा ने तय किया कि पुराना याद करने की जरूरत नहीं है। पुराना वस्त्र फट गया, पुराना दिन चला गया, आज नया दिन आया। 'नवो-नवो भवति जायमानः', ऐसा ऋग्वेद में भी मंत्र है। रोज नया-नया जन्म होता है। कल का मनुष्य आज नहीं, आज का कल नहीं और कल का परसों नहीं। इस वास्ते यह मान लेना कि हमारा पुराना इतिहास इतना है तो यह गलत है। वह तो खतम हो गया। आज यह नया मानव हो गया।

एक भाई मेरे पास आये थे। उन्होंने कहा कि गांधीजी के सारे लेख, भाषण आदि का संग्रह हुआ है। उसके ५०-६० खण्ड होनेवाले हैं। बचपन से लेकर आखिर तक के लेख, व्याख्यान वगैरह सब छाप रहे हैं। तो वह मेरे पास भी आये थे। वह बोले कि यह सारा देखकर आपको कैसा लगता है? आपकी क्या सूचनाएँ हैं? अब बापू नाम का महात्मा हो गया वह अलग, मोहनदास लड़का अलग। लेकिन

मोहनदास लड़के से लेकर बापू महात्मा तक जितना भी हुआ, लिख गया, वह सारा उन्होंने उसमें छाप दिया है और भी कुछ छापने को बाकी होगा तो वह भी छपेगा। उसमें और १०-५ साल जायेंगे। मैंने कहा कि 'मेरी एक सलाह है, अगर शक्य हो तो कीजिएगा।' तो ध्यानपूर्वक वह सुनने लगे। मैंने सुनाया कि 'महात्मा गांधी के पुराने जन्म का इतिहास यदि मिल जाय। उनके पत्र, लेखन आदि मिल जायँ, तो उनका संग्रह किया जाय।' अब वह क्या बोलेंगे?

तात्पर्य यह कि इतना सारा संग्रह हो जायेगा और गांधी ने कहा कि मेरे दो लेखों में कहीं विरोध होता हो तो जो आखिरी बात होगी वही सही मानी जाय। वह अगर आज होते तो कहते कि १९४८ में मैंने जो कहा था वह आज १९७० में प्रमाण मानने की कोई जरूरत नहीं है। उन्होंने बिलकुल ऊँची बात कही। हम सन् १९४२ में जेल गये तो सन् '४५ तक तीन साल जेल में रहे और बापू दो ही साल में, सन् '४४ में छूट गये। उसके बाद उन्होंने २-३ महीने के अन्दर एक लेख लिखा कि अगर सरकार इतनी-इतनी बातें करें तो हम सरकार के साथ बातचीत के लिए तैयार हैं। तो किसी पत्रकार ने उनसे पूछा कि दो साल पहले आपने 'क्विट इंडिया', 'भारत छोड़ो' कहा। लेकिन अब बातचीत के लिए तैयार हैं, ऐसा कैसे कहते हैं? तो गांधीजी ने उत्तर दिया '१९४४ इज नाट १९४२'। अंग्रेजी में बोला गया था इसलिए अंग्रेजी में ही आपके सामने रखा। आज अगर बापू होते तभी उनके १९४८ के विचारों को अगर उद्धृत करते तो आपको वे कहते, '१९७० इज नाट १९४८'। आज की परिस्थिति में नये ढंग से विचार करके तय करो।

यह सारा मैं इसलिए कह रहा हूँ कि वह तो रोजमर्रा डायरी रखनेवाले थे और वैसा आदेश देनेवाले थे। फिर भी पुरानी बातें भूलनेवाले और नयी-नयी बात कहनेवाले थे। पुरानी बातों को छोड़ दी, यह जब रोज डायरी लिखनेवाले की बात हुई तो डायरी न लिखनेवाले की क्या हालत होगी? हम तो आज हैं १९७० में नये आदमी आपके सामने, पुराना आदमी खतम हो गया। 'नवो-नवो भवति जायमान:'। नया नया रोज पैदा होता है। भागवत में सुन्दर वाक्य है —

सोय दीपोऽर्चिषा यद्वत्
स्रोतसां तदिदं जलम्।
सोय पुमानिति नृणां मृषा
गीर् धीर् मृषायुषाम्॥

ऐसा भास होता है कि वही दीया जल रहा है, लेकिन ज्योति नयी-नयी जल रही है। पुराना तेल खतम हो गया, नया तेल जल रहा है। पुरानी बत्ती खतम हो गयी, नयी बत्ती जल रही है। गंगा नदी बह रही है। पुराना पानी गया और प्रतिक्षण नया पानी आ रहा है, लेकिन भास होता है कि वही है। इस प्रकार से गंगा प्रतिक्षण नयी है। उसी प्रकार से भास होता है कि मनुष्य वही है, लेकिन मनुष्य का प्रवाह बह रहा है। ऐसा दीख पड़ता है कि वही विनोबा है, वही गांधी है, वही कस्तूरबा है, लेकिन ये प्रतिक्षण बदलते गये हैं।

गांधी की विलक्षणता

अब यह सारा विचार आपके सामने इसलिए रख रहा हूँ कि मैं कस्तूरबा के बारे में ज्यादा बोल नहीं सकता। उसका कारण निवेदन करके, फिर भी समय बिताने के लिए कुछ कहता हूँ। आज तक आपके ध्यान में आया होगा कि बाबा का तत्त्वज्ञान है भूलते जाना। जैसे झाड़ में कल के फूल आज गिर जाते हैं और फिर नये फूल आ जाते हैं उस प्रकार से हमारा मन नया-नया बनाना होगा। गांधीजी की बात दूसरी थी। वे पुराना भूलते भी जाते थे। वे बिलकुल बड़ा आंदोलन खड़ा कर देते और एकदम कह देते कि आन्दोलन बन्द करो। सारे लोग कहने लगे इतना जोरदार आन्दोलन चल रहा है तो लोगों पर क्या असर होगा? गांधीजी ने कहा, 'अभी आन्दोलन चलाना गलत है वह वापस ले लिया जाय। लोगों का असर लोग जानें।' अब यह अजीब शक्ति है कि भारतव्यापी आन्दोलन छेड़ दिया और फिर एकदम बन्द कर दिया। वे आश्रमों की स्थापना करते थे और बन्द भी करते थे। संहार और निर्माण की अजीब-सी शक्ति उनमें थी। उनमें दोनों शक्तियाँ मौजूद थीं। वेद में सूर्य नारायण का वर्णन आया है

"तत्सूर्यस्य देवत्वम् तत् महित्वम्
मध्याकर्तोर् विततं संजभार:"

हे सूर्य नारायण, तेरी क्या अद्भुत महिमा है! शाम के समय सारी किरणें फैली हुई थी और १०-५ मिनट में एकदम खींच लीं। ऋषि को इतना चमत्कार मालूम देता है कि वह कहता है, सारी फैली हुई किरणजाल को एकदम कैसा खींच लेता है और देखते-देखते अन्धकार होता है—'मध्याकर्तोर् विततं संजभार'। इसलिए बहुत बड़ी महिमा है सूर्य नारायण की। यह जो सूर्य नारायण का सामर्थ्य है कि किरणों को फैला दे और फिर खींच ले, वह शक्ति गांधीजी में भी थी। और हम हैं पामर जन। अगर हम फैलाते जायेंगे तो हमसे समेटना बनेगा नहीं। मकड़ी के जाल के जैसे बीच में जकड़ जायेंगे, छूट ही नहीं सकते। इसलिए गांधीजी के पीछे जाना अच्छा नहीं। बाबा कोई बात अपनी ओर से नहीं करता, शास्त्र की ओर से करता है।

बा ने संस्कृत सीखी

बाबा कभी-कभी दो-चार महीने में एकाध बार बापू के बुलाने पर आता था। नहीं बुलाये तो अपना काम जारी है— "तू तो राम सुमर ..." उसके आगे का बोलना नहीं। जब कोई खास चर्चा करनी हो तो बापू चिट्ठी लिखकर बुलाते थे, अन्यथा मैं अपने काम में लगा ही रहता था।

एक दफा क्या हुआ कि बापू ने (अब यह मेरा स्मरण सच्चा होगा ही यह ध्यान में मत रखें, क्योंकि इसका कोई डायरी का आधार नहीं है) मुझे बुलाना चाहा।

मैं पवनार मे था और वे सेवाग्राम में थे। किसीने उनसे कहा कि 'विनोबाजी तो बाहर गये हैं।' पूछा कि, 'कैसे गया होगा?' बताया कि, रेल में गये।' बापू ने कहा, 'विनोबा मुझसे पूछे बिना रेल में बैठेगा नहीं। इधर-उधर गाँव में घूम जरूर सकता है।' फिर वह आदमी मेरे पास आया तो ये सब बातें बतायीं। मैंने कहा कि, 'मैं तो चार मील दूर के गाँव में गया था। आपने बापू को ऐसा कैसे बताया? सुनी हुई बात कहना ठीक नहीं। झूठ और सच मे कितना अन्तर है? चार उँगली का (आँख और कान की दूरी का अन्तर)। प्रत्यक्ष देखे बिना बात मत करो।' विनोबा को दूर जाना हो तो बिना पूछे नहीं जायेगा, यह बापू को भरोसा था। जब बापू बुलाते थे तो घंटा-दो-घंटा चर्चा होती थी उतनी ही संगति, बाकी असंगति, और आप लोगों को तो निरन्तर उनकी संगति प्राप्त हुई है। आप लोगों के सामने कस्तूरबा के बारे मे बोलना यानी कोंकण मे (वहाँ नमक पैदा होता है) जाकर नमक बेचने जैसा है। बाहर का नमक वहाँ कैसे बेचा जायेगा? इसलिए यहाँ आकर कस्तूरबा का स्मरण और उनकी मनोरंजक कहानियाँ सुनाऊँ, यह होगा नहीं। अगर सुनाऊँ तो सच्ची होंगी, इसका भरोसा नहीं। मुझे किसीने कहा था कि आप अपने कुछ स्मरण लिख रखिए। मैंने कहा कि लिखूंगा और उसके आरंभ में ही यह लिखूंगा कि यह बात सच्ची है, ऐसा बाबा को भरोसा नहीं है। मनोरंजन, नवलकथा उसमें जो कुछ हो, वह बोधप्रद हो सकता है।

लेकिन एक किस्सा याद आता है उतना कहता हूँ। एक दफा बापू को इच्छा हुई या कस्तूरबा को हुई होगी मालूम नहीं। बा ने बापू से कहा होगा। तो बापू ने हमसे कहा कि, 'बा गीता सीखना चाहती है तुमसे, तो समय दोगे क्या?' मैंने कहा, 'थोड़ा-बहुत निकाल सकता हूँ। आधे घंटे से ज्यादा का सवाल नहीं है।' बापू ने कहा, '२० मिनट मे हो जायेगा।' मैंने कहा, 'ठीक है २४ मिनट दूंगा।' उन्होंने पूछा, '२४ मिनट ही क्यों बताया?' मैंने कहा, '२४ मिनट की एक घटिका होती है।' उसका अर्थ है जितनी देर ध्यान घटित होता है। यह अपने पुराने लोगों ने कहा है। सामान्यतः २४ मिनट ध्यान बना रहता है। इसलिए उसको नाम दिया 'घटिका'। ६० घटिका की एक दिन-रात होती है। प्रतिदिन वह २४ मिनट का वर्ग शुरू हुआ। रोज घड़ी के मुताबिक मैं हाजिर होता था। उनको मैंने पहले उच्चारण, फिर अर्थ सिखाना शुरू किया और उसके लिए १२ वाँ अध्याय लिया। दो तीन दिन के बाद बा ने बापू से कहा कि विनोबा ने एकदम १२वाँ अध्याय शुरू कर दिया। बापू ने कहा,—'मैं उससे पूछूंगा क्या कारण है।' बापू मुझसे पूछने लगे। मैंने कहा, 'यह संसार अनित्य है। शिक्षणकार्य कब तक चलेगा मालूम नहीं। ऐसी हालत में कौरव-पांडव के नामों को क्यों रटवायें? इसलिए १२वाँ अध्याय लिया। वह सरल भी है और वह भक्ति का भी अध्याय है। २० ही श्लोक हैं। वह अगर महीने-दो महीने में हो जाय तो फिर आगे देखा जायेगा।' बापू बोले, 'तुम्हारी बात बिलकुल जँच गयी।' वह वर्ग दो महीने तक चला होगा। मैं उच्चारण मे थोड़ी भी गलती सहन नहीं करता था, ऐसा आग्रहपूर्वक मैंने वह सारा सिखाया।

बापू ने शादी की जो विधि बनायी उसमें १२वें अध्याय को रखा। बापू ने मुझसे कहा—'पहले का जो हिस्सा है वह बड़े झमेले का है। निर्गुण, सगुण, यह करो, यह मत करो, यह न जमता हो तो यह करो ऐसा पहले के हिस्से में है। किसी टीकाकार का दूसरे टीकाकार के साथ मेल नहीं।' मैंने कहा, 'लेकिन वह सबसे छोटा अध्याय है—अद्वेष्टा सर्वभूतानाम्, मैत्रः करुण एव च। वह तो अत्यन्त सरल है। पहले सारा जंगल पार करना पड़ता है उसके बाद रास्ता आ जाता है। भक्त के लक्षण बड़े मीठे हैं।'

बा-बापू-सम्बन्ध
वशिष्ठ और अरुंधती जैसा

यह एक याददाश्त मुझे भी यह आपके सामने रखो। बा और बापू का जो सम्बन्ध था वह अवर्णनीय कहा जायेगा। अपने यहाँ शास्त्रकारों ने पति-पत्नी के विवाह के साथ एक विधि बतायी है—वशिष्ठ और अरुन्धती का दर्शन करना। आकाश में ये दो तारिकाएँ हैं। वशिष्ठ का जरा चमकीला है और अरुन्धती का तारा उनसे चार उँगली दूर दिखता है। वहाँ तो वह करोड़ों मील दूर होगा। वह बिल्कुल अस्पष्ट है। वह दीख नहीं सकता, इतना बारीक है। लेकिन स्वच्छ नजर हो तो दीखता है। ऐसा कहते हैं कि अरुन्धती का तारा नहीं दीखेगा तो वह मनुष्य जल्दी ही यानी ६ महीने में मर जायेगा। लेकिन मुझे अरुन्धती दिखती नहीं है, फिर भी मरा नहीं। क्योंकि मैं जिंदा रहना चाहता हूँ। वह चार उँगली दूर है, ऐसा देखने की कोशिश करता हूँ। मान लेता हूँ कि देख लिया। इस वास्ते वह दिखता है, ऐसा आभास करना मुझे अच्छा लगता है। आप भी ऐसी कोशिश करिए, जब तक आपको जीना है। वह जो बारीक तारा है, बाकी के ६ ऋषि इकट्ठा हैं। उन ऋषियों की पत्नियाँ उनके साथ नहीं हैं।

उन ऋषि-पत्नियों का अलग गुच्छ है, जिसको कृत्तिका कहते हैं। वह दूर है। वह ऋषि ऐसे थे जो अपनी पत्नियों को दूर ही रखते थे, और काम करते थे। ऐसे विलक्षण ऋषि थे। ऋषियों का यह तरीका था कि शादी किया ही नहीं, ऐसा मानना। यहाँ के जो हमारे मित्र साथी हैं उनको मैं बराबर पूछा करता हूँ कि सन्यास लोगे कि नहीं, कि आखिर तक उसीमें रहोगे? क्योंकि ऋषियों का रिवाज है कि अमुक समय तक घर में एक साथ रहेंगे फिर निकल जाना चाहिए। तो वह छः ऋषि निकल गये थे। बाकी की पत्नियाँ अलग थीं, लेकिन वशिष्ठ और अरुन्धती साथ साथ रहे। न उन्होंने इनको छोड़ा और न इन्होंने उनको

छोड़ा। दोनों साथ ही रहे। उसका दर्शन पति-पत्नी को कराते हैं और कहते हैं कि तुम्हारा जीवन निर्मल और अनुशासित हो, एक-दूसरे को न छोड़नेवाला हो, जैसा कि एकनाथ और अरुन्धती का था। अरुन्धती का अर्थ है—पति के मार्ग में रोध न करनेवाली। इसलिए यानी रोधन करनेवाली। अ-रुन्धती यानी रोध न करनेवाली। पति ऊँचा चढ़ना चाहता है तो वह भी ऊँचा चढ़नेवाली हो। बापू जेल में जाते तो बा भी जेल में, बापू सत्याग्रह करते तो बा भी सत्याग्रह करती। वह जो भी करें उनके साथ थीं। उनके अच्छे कामों में रुकावट डालनेवाली नहीं। जो वसिष्ठ और अरुन्धती का जो आदर्श था वह बहुत थोड़े लोगों के जीवन में दिखाई देता है, ऐसा नहीं कि बिलकुल नहीं है। इस जमाने में गांधीजी का उदाहरण है। ऐसा ही उदाहरण महाराष्ट्र में एकनाथ महाराज का है।

एकनाथ महाराज का गार्हस्थ्य

एक दिन एकनाथ महाराज ने अपने गाँववालों से कहा कि इतने दिन मैं आप लोगों के साथ रहा। अब मैं भगवान के पास जाना चाहता हूँ। मुझे पहुँचाने के लिए नदी तक आइएगा। मतलब नदी में डूबकर मरेंगे। उन्होंने लोगों को ऐसा तैयार कर दिया था। अब भगवान से मिलने के लिए जा रहा है। लोगों ने आनन्दपूर्वक मान लिया। 'राम, कृष्ण, हरि हरि बोल, हरि बोल' ऐसा हरिपाठ करते हुए सारे गाँववाले एकनाथ महाराज को पहुँचाने के लिए चले। उनकी पत्नी भी उनके साथ थी। आखिर किनारे पर वह खड़े हो गये और बोले कि मैं जा रहा हूँ भगवान का नाम लेते हुए। आप लोग भागवत पढ़ते रहिएगा।' (महाराष्ट्र में एकनाथी भागवत काफी चलती है।) वो कहा और नदी में कूद पड़े। उनकी पत्नी भी उनके साथ कूदी। दोनों तैरना जानते थे, इसलिए तैरते-तैरते थक गये। दूर जाकर डूबे होंगे। पर यह अजीब-सी बात है कि शादी के समय दोनों हाथ जोड़ लिया तो मरने के लिए भी साथ ही निकल गये। ऐसी यह मिसाल है। ऐसी और भी कहानी है, और भी उत्तम मिसालें हैं उनमें से एक बा और बापू की है। बहुत बड़ा आदर्श है माता का व्यवहार करना पत्नी के साथ। 'ज्ञाना विवाह तो विरक्ति सफल वर्तने निर्मल'' यह है, गांधी का व्रत-विचार। जिस पर बाबा ने अभंग लिखा है। जो विवाह हुआ उसे भूल जाना और उसे माता मानना, बहन मानना या कन्या मानना। यह सुवर्ण नियम है। इससे वृत्ति एकदम ऊँची जाती है और जीवन निर्मल बनता है, ऐसा उन्होंने आदेश दिया। गांधीजी ने जिसका पालन किया और अपने अनुभव पर से लिखा।

रामकृष्ण परमहंस का गार्हस्थ्य

वैसा ही पालन इसी जमाने में रामकृष्ण परमहंस ने किया। बचपन में रामकृष्ण परमहंस पागल जैसे माने जाते थे। लोगों को लगता कि अगर इनकी शादी कर दी जायगी तो दिमाग ठिकाने आ जायगा। यह अपने अक्लवालों की अक्ल है। तो दिमाग ठिकाने लगाने के लिए 'प्रयोजन' पेश किया। उन्होंने कहा, 'आप लोग मेरी शादी करना चाहते हैं तो करिएगा। आप चाहते हैं तो मेरा विरोध नहीं है।'

तो शादी कर ली और वह रोज भगवती की पूजा करते थे। गंध, अक्षत, धूप आदि से षोडशोपचार पूजा करते थे। यह भी उनके साथ बैठकर पूजा करती और काम में मदद करती थी। एक दिन पागल के मन में आया। वह बिलकुल आज्ञाकारिणी थीं। जैसा कहते थे वैसा करती थीं। रामकृष्ण ने कहा कि तुम इस पाट पर बैठ जाओ, बैठ गयी। आसन लगाओ, आसन लगाया, आँख बन्द करो तो आँख बन्द कर लिया। रामकृष्णजी की जो माताजी की मूर्ति थी वहाँ बैठाया और माना कि सामने शक्ति देवी बैठी है। फिर गंध ले लिया, सिर में लगा दिया। फिर फूल आदि चढ़ाया और आखिर में आरती की और फिर कहा—हे भगवती प्रणाम। तब से शारदा देवी उनकी शक्ति-सम शिष्या हो गयीं। रामकृष्णजी के जितने शिष्य थे वे इनको माता के समान मानते थे और ये उनको बच्चों के समान। इस तरह से ब्रह्मचर्य और पवित्र जीवन उनके साथ बिताया। गांधीजी ने ऐसा नाटक तो नहीं किया। फूल, गन्ध आदि नहीं चढ़ाया, लेकिन उनको 'बा' नाम दे दिया। 'बा' का अर्थ ही माता होता है। तदनुसार व्यवहार करना शुरू कर दिया। रामकृष्ण तो भक्त थे, पागल थे, इस वास्ते पागलपन का काम उन्होंने किया। लेकिन यह इस जमाने का बहुत सुन्दर उदाहरण है।

अरविन्द

ऐसा ही उदाहरण अरविन्द का है। मृणालिनी नाम की उनकी पत्नी थी। जब उन्होंने योगाभ्यास का तय किया तो उन्होंने पत्नी को पत्र लिखा कि मैं भगवत् मार्ग में जा रहा हूँ। तुम्हारी सम्मति इसमें होगी, ऐसा मैं मान लेता हूँ।

ये सुन्दर उदाहरण आपके सामने मैंने पेश किये, एक तो गांधीजी का ही इस जमाने का और दूसरे दो-चार व्यक्ति ऐसे महान हो गये, जिन्होंने आदर्श पेश किया है कि पवित्र गृहस्थ जीवन कैसे बिताया जाय।

बा सबकी बा

बा के जीवन में जो लोभ प्रकट होता था, जिसकी बापू टीका भी करते थे और कभी-कभी समाचारपत्रों में भी जाहिर कर देते। लेकिन वह जो मोह था वह हम सब बच्चों के लिए था। उनमें जरा भी व्यक्तिगत वासना नहीं थी। उनके चार ही बच्चे थे ऐसा मत समझो, बल्कि बाबा भी उनका बच्चा था। जिमनलाल भाई भी उनके बच्चे थे। आश्रम में जितने भी हमारे जैसे बच्चे थे, उन पर बा का समान प्यार था। जो लोभ उनमें कभी दीख पड़ा वह सब हमारे लिए था, ऐसा हम अत्यन्त कृतज्ञतापूर्वक आज स्मरण करते हैं।

सेवाग्राम, १२-२-'७०

पिछड़े हुए देशों का विकास

[यह लेख सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री शूमाखर का है। पहले इंग्लैण्ड मे प्रकाशित 'क्रूसिबुल' पत्रिका में छपा था। बाद को १२ नवम्बर '६६ के 'मानस' मे छपा था। लेख हम लोगों की दृष्टि से इतने महत्त्व का है, कि हम उसे यहाँ अपने पाठकों के लिए छाप रहे हैं।—सं०]

पूरबी अफ्रीका के एक डच मैनेजर ने मुझे अपना कारखाना दिखाया। उसने कहा—"यह कारखाना अधिकांश स्वयचालित है।"

मैंने कहा—"आप आगे कुछ बतायें उसके पहले मुझे एक बात बताइए। मैं आ रहा था तो फाटक पर लगभग एक सौ अफ्रीकी युवक खड़े थे। हथियारबन्द पुलिस उन्हें रोक रही थी। क्या कोई दंगा हो गया है ?"

वह डच मित्र हँसा। बोला—"नहीं, नहीं, वे यहाँ रहते ही हैं। इस आशा मे आते हैं कि यहाँ मैं किसीको निकालूँगा, तो वे उस खाली जगह में घुस जायेंगे।"

"तो इस शहर मे बेकारी भी है !"

"हाँ, बहुत ज्यादा है।"

"ठीक है, कृपया आगे बताइए।"

डच मित्र ने बताया—"पूरबी अफ्रीका में यह कारखाना सबसे अधिक स्वयचालित है। इसमे ५ सौ आदमी काम करते हैं, लेकिन इतने भी बहुत अधिक हैं। जब हमारे सब स्वयचालित यंत्र चलने लगेंगे तो ये आदमी और कम हो जायेंगे।"

"इसका यह अर्थ है कि फाटक पर खड़े लोगों के लिए लिए कोई आशा नहीं है।"

"नहीं, बिल्कुल नहीं।"

"बताइए, इस कारखाने में कितनी पूँजी लगी है ?"

"लगभग १५ लाख पौंड (यानी लगभग पौने तीन करोड़ रुपये)।"

"इतने रुपये लगे और काम सिर्फ ५ सौ को मिला। एक आदमी पर ३ हजार पौंड, लगभग पचपन हजार रुपये, एक गरीब देश के लिए इतना रुपया बहुत होता है। इतनी पूँजी तो पश्चिमी यूरोप या अमेरिका मे लगती है।"

"बेशक ! मेरा कारखाना उतना ही आधुनिक है जितना दुनिया का कोई दूसरा कारखाना। बात यह है कि हमे दुनिया के बाजार मे खड़ा होना है। हम खराब माल बनाकर क्या करेंगे ? यहाँ के मजदूरों को सिखाना बहुत मुश्किल है। उनके देश मे औद्योगिक परम्परा नहीं है। मशीनें भूल नहीं करतीं, मनुष्य करते हैं। इसलिए अगर 'क्वालिटी' का सामान तैयार करना है तो उत्पादन की प्रक्रिया मे आदमी को अलग करना पड़ेगा।"

"लेकिन यह बताइए कि इस कारखाने को आपने इतनी छोटी जगह मे क्यों बनाया ? इसके लिए राजधानी का शहर अधिक अनुकूल होता।"

"हाँ, जरूर। हम खुद वहाँ नहीं आना चाहते थे। सरकार का निर्णय था, इसलिए आना पड़ा।"

"क्या सोचकर उसने ऐसा निर्णय किया ?"

"यही कि यहाँ बहुत अधिक बेकारी है।"

"और आपकी कोशिश है, कि आदमी कम-से-कम लगाये जायँ।"

"मैं देख रहा हूँ कि दोनों बातों मे कितना विरोध है, लेकिन मैं क्या करूँ, मुझे तो यह देखना है कि जो पूँजी लगी है, उस पर मुनाफा हो।"

दोहरी समस्या

समस्या यह है कि तेज विकास चाहिए, या स्वस्थ विकास चाहिए। ऊपर से देखने पर दोनों मे विरोध है, लेकिन सचमुच दोनों पूरक हैं।

अस्वस्थ विकास के प्रमाण दुनिया मे मिलेंगे—धनी-से-धनी देशों मे भी। अस्वस्थ विकास से मनुष्य का भी पतन होता है, और वातावरण भी नष्ट होता है। स्वस्थ विकास वही है, जो बड़े पैमाने पर दोनों को ऊपर उठाये।

विकास में इस तरह की भूल होने का क्या कारण है ? विकास बड़े शहरों मे आसान होता है, देहाती क्षेत्रों मे बहुत कठिन। आर्थिक शक्तियाँ जिस तरह काम करती हैं, उसके कारण शहरी क्षेत्रों को लाभ होता है। बड़े शहर को छोटे शहर से अधिक लाभ होता है। आज की अर्थनीति तीन प्रकार के रोग पैदा करती है—(१) बड़े पैमाने पर लोगों का देहात छोड़कर शहर में जाना, (२) व्यापक बेकारी, (३) अकाल का भय।

तमाम दुनिया मे दिखाई देता है कि बड़े-बड़े शहर बसे हुए हैं, जिनके चारों ओर बेरोजगार सर्वहारा हैं, जिन्हें न शरीर के लिए भोजन मिलता है, न आत्मा के लिए। उनके बीच मे रहकर थोड़े-से लोग ऐशोआराम की जिन्दगी बिताते हैं। उनका अपना जीवन बहुत अरक्षित रहता है, क्योंकि उनके चारों तरफ की दुनिया अपराध से भरी हुई है। राजनैतिक अस्थिरता भी रहती है। ऐसे वातावरण मे अभावग्रस्त बहुसख्यक लोग पतन का नहीं तो दूसरा क्या जीवन बितायेंगे ?

यह तो हुआ शहरों के करीब की दुनिया का हाल। देहात तो और भी ज्यादा पतन के गड्ढे मे गिरते जाते हैं। जिस आदमी मे कुछ भी प्रतिभा है वह शहर मे जाने की कोशिश करता है। वह देहात की तकलीफों से दूर भागना चाहता है। बुद्धि के इस तरह निकल जाने के कारण देहात का विकास और कठिन हो जाता है। इसलिए ऐसे विकास का परिणाम सिवाय सामाजिक अराजकता तथा मनुष्य और उसके वातावरण के ह्रास के दूसरा क्या होगा ?

खेती पहली चिन्ता

अधिकांश विकासशील देश खेतिहर हैं। उन्हें सबसे पहले, और सबसे अधिक ध्यान खेती पर ही देना चाहिए। खेती शहरों में तो होती नहीं, इसलिए ध्यान पहले देहाती क्षेत्रों की ही ओर जाना चाहिए।

किस तरह का ध्यान ? जो खेतिहर अपढ़ या अधपढ़ हैं, और जो अपनी छोटी

खेती से अधभूखे रहकर अपना पेट पालते हैं, उनसे यह अपेक्षा रखना बेकार है कि वे आधुनिक वैज्ञानिक तरीके अपनायेंगे, और उनमें सफलता हासिल करेंगे। गरीबी एक दुश्चक्र है। गरीबी गरीबी को बढ़ाती है। यह दुश्चक्र तभी टूटेगा, जब देहाती क्षेत्रों में गैर-खेतिहार प्रवृत्तियाँ शुरू की जायेंगी। ये प्रवृत्तियाँ दो हैं—उद्योग और संस्कृति।

केवल खेती से—वह भी गरीबी खेती से—जिसमें मिट्टी खोदने और पशुओं के साथ रहने के सिवाय दूसरा कुछ है नहीं, बुद्धि का विकास नहीं हो सकता। ऐसे समुदाय में अगर उद्योग और संस्कृति का प्रवेश नहीं कराया जायेगा तो लोगों का अच्छे जीवन की तलाश में शहरों में जाना नहीं रोका जा सकता।

बिना संस्कृति के खेती के तौर-तरीके नहीं सुधारे जा सकते, और उद्योग भी नहीं चलाये जा सकते। संस्कृति से औद्योगिक विकास होता है, और औद्योगिक विकास से संस्कृति को बढ़ावा मिलता है।

अगर यह दृष्टि मान ली जाय तो विकास की व्यूह-रचना स्पष्ट हो जाती है। सबसे पहले गाँवों में संस्कृति का प्रवेश कराना चाहिए। उद्योग भी संस्कृति के साथ-साथ आने चाहिए। (गाँव का अर्थ है कुछ सौ लोग, या कुछ हजार। शुरू में दूर-दूर छितरी हुई झोपड़ियों की सहायता सम्भव नहीं है।)

संस्कृति के लिए सुनियोजित ढाँचा चाहिए, ठीक उसी तरह जैसे उद्योग के लिए चाहिए। संस्कृति के लिए एक से तीन लाख तक लोगों की इकाइयाँ बनायी जा सकती हैं। हर इकाई एक पिरॅमिड की तरह होगी—गाँव के स्तर पर प्राइमरी स्कूल, कई गाँवों के स्तर पर—जिनके बीच एक बाजार भी हो, एक हाईस्कूल, कई बाजारों के स्तर पर—जिनके बीच प्रखण्ड केन्द्र हो, ऊँची शिक्षा का विद्यालय।

औद्योगिक ढाँचा भी यही होगा। छोटे उद्योग गाँव में, मध्यम उद्योग बाजार में, बड़े उद्योग शहरों में, और कुछ विशिष्ट उद्योग राजधानी में। राजधानियों में प्रायः गैर-औद्योगिक सेवाएँ केन्द्रित रहती हैं।

हर स्थिति में इस तरह का ढाँचा नहीं बन पायेगा, लेकिन दिशा यही होनी चाहिए। स्वस्थ विकास की कोई एक कुंजी नहीं होती। विशाल योजनाएँ, चाहे वे खेती में हों, उद्योग, संचार, या शिक्षा में हों, देखने में और सिद्धान्त में भी बड़ी आकर्षक होती हैं, लेकिन व्यवहार में अत्यन्त हानिकर। सफलता की कुंजी बड़े पैमाने पर उत्पादन (मैस प्रोडक्शन) नहीं है, बल्कि व्यापक जनता द्वारा उत्पादन (प्रोडक्शन बाई मैसेज) में है। किसी नयी प्रवृत्ति को केवल आर्थिक दृष्टि से देखना गलत है। उसके राजनैतिक, समाजशास्त्रीय, तथा भौगोलिक पहलुओं और परिस्थितियों पर उतना ही ध्यान देना चाहिए। केवल आर्थिक दृष्टि हमेशा बड़े प्रोजेक्ट को छोटे से, शहरी प्रोजेक्ट को देहाती प्रोजेक्ट से, पूँजी-केन्द्रित को श्रम-केन्द्रित से अच्छा समझती है। मशीनों की व्यवस्था मनुष्यों की व्यवस्था से आसान होती है। इसलिए मूल नीति के बारे में ही हमें स्पष्ट होना चाहिए।

विकास की दृष्टि से हमारे प्रयत्न तीन दिशाओं में साथ-साथ होने चाहिए

(अ) देहाती क्षेत्रों में संस्कृति का प्रवेश,

(ब) खेती के तौर तरीकों का विकास,

(स) गाँवों में औद्योगिक प्रवृत्तियों का संघटन।

संस्कृति में ये चीजें हैं: देखने की सामग्री, संगीत, पढ़ने की चीजें, औद्योगिक हुनर, स्वास्थ्य और खेल। देहात इन सब चीजों में गरीब है। इनके संगठन के लिए नेतृत्व अधिक चाहिए, पैसा कम भी हो तो काम चल जायगा।

(क्रमशः)

<u>बिहार : राज्यदान के बाद—९</u>

बेबस लोग : बदले की भावना

(गरम हवा में सात दिन : समापन किश्त)

६ फरवरी '७०

हाई स्कूल—इमारत और खेती लायक भूमि में सम्पन्न। लेकिन खेती नहीं के बराबर। कारण साधन नहीं हैं। समय से मजदूर नहीं मिलते। मैंने प्राचार्य महोदय से पूछा 'आपके ढाई सौ तरुणों की श्रम-शक्ति आपके खेतों को नहीं मिलती ?' 'नहीं', उत्तर था। यह उत्तर अपने में एक बड़ी समस्या है जिसका कोई जवाब नहीं सूझता। बँटाईदारी की व्यवस्था में बँटाईदारों की अधिया कमाई युवकों का सत्व हर लेने के लिए यों ही काफी थी, लेकिन इस शिक्षा ने तो उनके बचे-खुचे रस को भी चूस लिया। 'आज का विद्यार्थी सेक्स और वायलेंस (हिंसा) के जगत में विचरण करता रहता है।' एक शिक्षक ने कहा। उसी जगत् में इस देश का भविष्य भी पल रहा है।

'ऐसे साधन-सम्पन्न स्कूल में इतने कम विद्यार्थी क्यों हैं ?' मैंने पूछा।

'स्कूल बहुत करीब करीब हैं।' उत्तर मिला।

'इतने स्कूल बने क्यों ?'

'हर नेता को ज्यादा नहीं, तो एक स्कूल तो चाहिए ही।'

'किसलिए ?'

'स्कूल ही नहीं रहेगा तो चुनाव में बेगार-सेना कहाँ से मिलेगी ?'

स्कूल नहीं, नेता को पंचायत और कोआपरेटिव भी चाहिए। ये संस्थाएँ राजनीति को समर्पित हैं।

तीसरे पहर रैली हुई। लगभग १० विद्यालयों के विद्यार्थी आये थे। मस्था का जो असर होना चाहिए वह हुआ। विभिन्न आयु के विद्यार्थियों को एक स्थान पर, एक कार्यक्रम के लिए इकट्ठा करना अच्छा नहीं होता।

रात को हम लोग वैशाली के पास बनियाँ गाँव में ठहरे। सड़क से कुछ हटकर, गाँव में एक तालाब के किनारे, १॥ एकड़ भूमि में संस्था की इमारतें हैं। छोटी संस्था, थोड़ा काम, ठोस लोग। खादी-उत्पादन और बिक्री का तथा तेलघानी आदि का काम होता है।

ऐसी जगहों में ग्रामस्वराज्य की 'सेल' बहुत अच्छी बन सकती है। ऐसी सक्रिय सेलों की शक्ति बड़ी जबर्दस्त होती है।

७ फरवरी :

सुबह बनियाँ में ही आस-पास के कुछ लोगों की गोष्ठी हुई। प्रश्न हुए, चर्चा हुई। मुखियाजी भी थे। गंभीर व्यक्ति हैं। संस्था के मंत्री श्री वैद्यनाथ बाबू, जो गाँव के एक अच्छे किसान भी हैं, बोल उठे : 'मुखियाजी और हम लग जायें तो ऐसा नहीं है कि गाँव में ग्रामदान के बाद का काम नहीं होगा।' बेशक, लग जाने पर क्या नहीं होगा?

नाश्ता और चर्चा के बाद हम लोग सरैया पहुँचे। ११ से १२ तक गोष्ठी हुई। लोकनीति की बात लोगों को चौंकाती है, और पसन्द भी आती है। जनता का मानस अन्दर से निर्दलीय हो चुका है। दल नहीं तो क्या? यह अभी स्पष्ट नहीं है।

३ बजे सरैया बाजार के चौराहे के पास ही पंचायत-घर के सामने आम सभा हुई। वह चौराहा ऐसा है जहाँ चाय और चर्चा का समन्वय होता है, और राजनीति की धज्जी उड़ायी जाती है।

लोग कह रहे थे—ग्रामस्वराज्य का विचार बहुत आकर्षक है। सवाल यह है कि चुनाव में ग्रामसभाओं के उम्मीदवार सर्वसम्मति से तय कैसे किये जायेंगे? क्या गाँव के लोग एक होकर कुछ सोच या कर सकते हैं? और, अगर वे करना भी चाहें तो क्या नेता लोग करने देंगे? ये ही सवाल बार-बार पूछे जाते हैं। और सामान्य व्यक्ति की बेबसी प्रकट की जाती है।

८ फरवरी :

आज मुजफ्फरपुर के दूसरे नक्सलवादी क्षेत्र में प्रवेश करना था। सुबह से ही मन में तरह-तरह की बातें उठने लगीं। श्री कैलाशबाबू और मैंने, दोनों जल्द उठकर नहा-धोकर, भरपूर नाश्ता कर, तैयार हो गये। कई गाँवों में जाना था। अन्त में तीसरे पहर १६-१७ मील दूर गिजौल में ग्रामसभा थी। जीप थी तो सारा काम अच्छी तरह पूरा हो गया। पहला गाँव गंगापुर। शहर दूर नहीं, बिहार खादी-ग्रामोद्योग-संघ के प्रधान केन्द्र सर्वोदयग्राम से लगभग ३ मील, सड़क के किनारे ही यह गाँव है। इसी गाँव ने राजकिशोर को जन्म दिया है, जो इस समस्त क्षेत्र का 'हीरो' और 'आतंक', दोनों बना हुआ है। पिछले साल भर में वह कई डाकों और हत्याओं में नामजद हो चुका है। उसकी गिरफ्तारी के लिए सरकार ने इनाम की घोषणा की है। लेकिन राजकिशोर फरार है। कहते हैं उसका क्षेत्र से सम्पर्क बना हुआ है। अभी १० दिन पहिले गंगापुर में रघुनाथ बाबू की शाम के वक्त जो हत्या हुई उसमें भी उसका नाम है। जो जान पर खेल जाय उसके साहस की कोई सीमा नहीं रहती। यह भी है कि ऐसे साहसी युवकों को गाँव के गरीब और छोटे लोग भीतर-भीतर मदद भी करते हैं, क्योंकि उनके मन में धनियों के लिए जो क्रोध और घृणा है उसके प्रतीक ये युवक बन जाते हैं। धनियों की हत्या और लूट से उन्हें बड़ा सतोष मिलता है।

राजकिशोर—आयु २५ से कम—भूमिहार—विवाहित—इस वक्त घर पर बूढ़े पिता—टूटा फूटा झोपड़ी का घर—गरीबी की जिन्दगी।

इस जीवन से पहिले मुजफ्फरपुर में आई० टी० आई० का विद्यार्थी था। पटना में गोलीकांड हुआ तो मुजफ्फरपुर में भी विद्यार्थियों ने जुलूस आदि निकाला, प्रदर्शन किया। एक बड़े नेता की कोठी के हाते में आग लगाने की कोशिश हुई। कई विद्यार्थी पकड़े गये। राजकिशोर जेल पहुँच गया। वहाँ कुछ कम्युनिस्ट साथी बंदियों का साथ हुआ। जोश था ही, जेल में दीक्षा हुई, काम की तकनीक मिली। जेल से निकला। अपने गाँव गया। मजदूरों-हरिजनों में काम करने लगा। मजदूरी बढ़ाने के लिए हड़ताल करायी। मजदूरी १२ आने रोज से १ रु० रोज हुई। विश्वास नहीं होता कि इस जमाने में भी १२ आने १ रुपये की मजदूरी हो सकती है।

राजकिशोर १० साल का बच्चा था तो उसने अपने पिता को पीटे जाते देखा था। एक सज्जन के खेत में महेंगु (राजकिशोर के पिता) की भैंस पड़ गयी थी, उसीसे विवाद शुरू हुआ। कहते हैं, राजकिशोर पिता का पीटा जाना भूला नहीं है।

राजकिशोर और गनपत, दोनों की घनी दोस्ती बतायी जाती है। एक तीसरा साथी रामप्रीति इसी गाँव के हरिजन टोले का है। आना-जाना, काम की योजनाएँ बनाना, और उन्हें पूरा करने में साथ रहना, आदि हर तरह का साथ था। कई लोगों को मिलाकर एक पूरा दल बन गया था।

गंगापुर से मिला हुआ नरसिंहपुर नाम का गाँव है। वहाँ पिछली बरसात में एक बड़े किसान बिजली सिंह के घर डाका पड़ा। दो व्यक्ति मारे गये, कई को चोटें लगीं।

बिजली बाबू के दरवाजे पर आज तक हथियारबन्द पुलिस पड़ी हुई है। गंगापुर और नरसिंहपुर के लोग बुरी तरह आतंकित हैं। मजदूरों की गिरफ्तारी के कारण मालिकों की खेती को नुकसान भी पहुँच रहा है, लेकिन क्या हो, लोग पड़ोसी और पुलिस के बीच पिस रहे हैं।

इन गाँवों की परिस्थिति के विश्लेषण से हम लोगों के सामने ये बातें आयीं :

(१) मालिकों में आपसी बँटवारे आदि को लेकर पैदा होनेवाले झगड़ों में एक-दूसरे के खिलाफ

हरिजनों-मजदूरों का इस्तेमाल किया है।

(२) मजदूरी के प्रश्न को लेकर राजकिशोर ने भी हरिजनों को संगठित किया। मजदूरी कम होने के कारण मजदूरों में असंतोष तो था ही।

(३) खेत काटने, शकरकंद खोद लेने, आदि की कई घटनाएँ हुईं, लेकिन पुलिस की ओर से कोई कार्रवाई नहीं हो सकी।

(४) समय-समय पर फौजदारी के मुकदमे दायर किये गये, जिनमें लोग सही-गलत ढंग से फँसाये गये।

(५) राजकिशोर के मन में पुरानी कड़ुआहट थी ही, परिस्थिति अनुकूल हुई तो उसका नेतृत्व प्रकट हो गया। और उस-जैसा नेता पाकर जो दबे हुए थे वे भी उभड़ आये।

(६) हरिजनों और मजदूरों में नयी चेतना साफ दिखाई देती है। उन्हें अपनी बेबसी खल रही है। ऊपर आने के दरवाजे बंद देखकर उनके दिमाग में बदला लेने की बात बहुत आसानी के साथ घुस रही है। फसल, धन, 'दुश्मन'—तीनों पर प्रहार।

(७) उनकी ओर से जमीन आदि पर कब्जा करने की कोशिश नहीं है। उनकी ओर से ज्यादातर कार्रवाई जवाबी (रिटेलिएटिव) और गुप्त होती है।

(८) अगर समाज की चेतना मात्र अनीति और अन्याय को दूर करने में लग जाय, और बड़े लोग दिल से मान लें कि छोटे लोग भी 'आदमी' हैं जिन्हें ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी मिलनी चाहिए, कम से-कम उनके साथ आदमी का बर्ताव तो होना ही चाहिए, तो बात बहुत आसानी से बन सकती है। सवाल है : अगर यह हो तब तो।

—राममूर्ति

पुस्तक परिचय

साबरमती का सन्त

लेखक : यशपाल जैन
पृष्ठ : १७२, मूल्य : २-००
प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली ३२

गांधी सन्त नहीं थे, लेकिन सन्त से बढ़कर उनका जीवन और कर्म रहा। गांधी ने अपने जीवन में बड़े-बड़े कार्य किये, भारी-भारी जिम्मेवारियाँ उठायीं, लेकिन इन सबमें भी वे अपने आचरण के प्रति, अपनी जीवन-निष्ठा के प्रति सावधान, चौकन्ना, जागरूक रहे। सत्य और अहिंसा को छोड़कर उन्होंने बड़ी से-बड़ी उपलब्धि की परवाह नहीं की। इसीलिए विश्व ने उनको महात्मा और सन्त कहा। उनको ईसा, बुद्ध और महावीर की तरह स्मरण किया जाता है, और अगली अनेक पीढ़ियों तक उनको देवों का स्मरण किया जायगा।

यह पुस्तक गांधीजी के कार्य-कलापों, विचारों, संस्मरणों, उद्गारों का संक्षिप्त संकलन है। पहले खण्ड में उनकी जीवन-कथा अत्यंत संक्षेप में, लेकिन साररूप में और प्रेरक ढंग से दी गयी है ताकि पाठक गांधी-जीवन के प्रवाह को आत्मसात् कर सकें। दूसरे खण्ड में गांधीजी के विविध विषयक विचारों का संकलन है।

गांधीजी की जन्म-शताब्दी इस वर्ष सारे विश्व में मनायी गयी। डाक टिकटों से लगाकर बड़े-बड़े ग्रन्थ गांधीजी पर प्रकाशित हुए, प्रदर्शनियाँ लगीं, गांधी-दर्शन की रेल चली, भवन बने। गांधी जैसा सर्वतोमुखी सन्त, लगता है, विश्व में पहली बार इस शताब्दी में अवतरित हुआ था जिसने जीवन के सब पहलुओं को स्पर्श किया, उन्हें सँवारा और शुद्ध किया।

लेखक की भाषा भावों से भरी और तथ्यों से पूर्ण है। नपी-तुली, कसी भाषा में गांधी जीवन को प्रस्तुत करने में लेखक सफल रहा है।

—अमनालाल जैन

सन्निवेश दो

(राजस्थान के सृजनशील शिक्षकों का विविध रचना-संग्रह)

सम्पादक : ज्ञान भारिल्ल, प्रेम सक्सेना, चन्द्र किशोर शर्मा,
प्रकाशक : चित्रगुप्त प्रकाशन, पुरानी मण्डी, अजमेर।
मूल्य : ४ रुपये पचास पैसे, पृष्ठ : २३६

शिक्षा विभाग राजस्थान के ४१ लेखकों की रचनाओं का उपर्युक्त संकलन पढ़कर राजस्थान की गौरव गरिमा का दर्शन हमें हुआ। भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में पले पुसे लेखकों ने अपनी कल्पनाप्रसूत अनुभूति का आस्वादन अपने पाठकों को कराया है। कई लेखकों और लेखिकाओं ने अपनी रचनाओं में समाज की पोंगापंथी पर चुटीला व्यंग्य किया है। साहित्य की वर्तमान प्रचलित विधा में अन्य पुरुष के माध्यम से अपनी बात इस पुस्तक में कही गयी है।

—कपिल अवस्थी

लेखकों से

- भूदान-यज्ञ में प्रेषित अस्वीकृत रचनाओं की वापसी तभी सम्भव है, जब रचना के साथ आवश्यक डाक-टिकट भेजे जायँगे।
- रचनाओं की स्वीकृति रचना प्राप्त होने के दो सप्ताह के अन्दर हम भेज देते हैं।
- भूदान-यज्ञ में प्रकाशित लेख हम अपने सहृदय लेखकों की ओर से अहिंसक क्रान्ति के अभियान में योगदान मानते हैं।
- किसी प्रकार का पारिश्रमिक देने की स्थिति हमारी नहीं है। प्रकाशित लेखवाला अंक हम लेखक को सप्रेम भेंट करते हैं।
- भूदान-यज्ञ जिस अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक है, उसमें योगदान करनेवाली सामग्री ही प्रकाशित होती है।

—सम्पादक

आयाराम-गयाराम की जगह अब भूलाराम

जैसे समाजवाद शब्द का कोई अर्थ नहीं रह गया है वैसे ही जनतंत्र या 'डेमोक्रेसी' शब्द भी धीरे-धीरे इस देश में अपना अर्थ खोता जा रहा है। कहने को तो यहाँ जनतंत्रीय व्यवस्था चल रही है और लोगों के चुने हुए प्रतिनिधियों के बहुमतवाली पार्टी का राज होता है, लेकिन बहुमत किसके साथ है और कौन उसका अधिकारी है यह न कोई निश्चित रूप से कह सकता है, न उसकी कोई समझ में आ सकने लायक कसौटी बाकी बची है। चुनाव के समय उम्मीदवार अपनी-अपनी पार्टी के टिकट पर, उसके घोषणा-पत्र के आधार पर और उसके समर्थन से मतदाताओं के सामने पेश हुए, लेकिन धारा-सभा में पहुंचने के बाद मनमाने ढंग से वे दल बदलने लगे। शुरुआत तो 'आयाराम-गयाराम' से हुई, लेकिन दल बदलकर इधर से उधर या उधर से इधर आ जाने की बात तो अब पुरानी हो गयी। अब 'आयाराम-गयाराम का जमाना चला गया' अब तो 'भूलाराम' का जमाना है। शाम को इधर, सबेरे उधर और फिर दोपहर को इधर—इस तरह विधायक लोग दलों के बीच भूलते रहते हैं। सामान्य विधायकों की बात छोड़ दीजिए, उत्तरप्रदेश के (यह लिखने समय तक के) मुख्यमंत्री श्री चरणसिंह खुद दो-तीन दिन तक इस तरह भूलते रहे और अपने सुबह-शाम के बयानों में बातें भी एक-दूसरे से विरोधी कहते रहे। इतना ही नहीं, सरकार की नीति को भी रोज बदलने की घोषणा वे करते रहते हैं। शुरू में लगान-माफी का सख्त विरोध करते रहे। मुख्यमंत्री बनते ही छोटी जोतों पर लगान माफ कर देने की नीति जाहिर की, लेकिन अपने समर्थकों में से कुछ का विरोध देखकर दो दिन बाद फिर बदल गये कि 'अभी तो मैंने सिर्फ नीति की घोषणा की थी, उसके कार्यान्वयन के समय उस पर फिर विचार होगा।'' विधायकों का कोई भरोसा नहीं रह गया है, दल भी इतने हो गये हैं और रोज इस

सिद्धराज ढड्ढा

तरह नयी नयी शाखें उनमें फूट रही हैं कि न दलों की कोई पहचान या कसौटी बाकी रही है, न सरकारी नीतियों का कोई स्थायित्व या मतलब रहा है, क्योंकि आज घोषणा कुछ और कल कार्यान्वयन दूसरा।

पश्चिमी बंगाल में मुख्यमंत्री अपनी खुद की सरकार को ही 'जंगली और असभ्य' कहते हैं, उप-मुख्यमंत्री मनमाना सरकारी अफसरों का तबादला करते हैं, मुख्यमंत्री उसको रद्द कर देते हैं। एक ही सरकार के साथ काम करनेवाले भिन्न-भिन्न दलों के अनुयायी आपस में मार-काट करते हैं, आये दिन खून होते हैं। सरकारी अफसर दलों की मंशा के माफिक नहीं करते हैं तो उन्हें 'घेराव' किया जाता है, नंगा करके सड़कों पर घुमाया जाता है।

सरकारें बनाने और गिराने की धुन में विधानसभाओं के बहुमत के दावों की सूचियाँ राज्यपालों के पास पेश होती हैं, उनमें बीसियों नाम इधर भी होते हैं, उधर भी। दस्तखत की तो कोई कीमत रही नहीं है, क्योंकि उसका उदाहरण तो स्वयं देश की प्रधानमंत्री ने पेश किया है, जो राष्ट्रपति के सर्वोच्च पद के प्रस्ताव पर दस्तखत तो एक उम्मीदवार के लिए किये और समर्थन दूसरे का किया। विधायकों तथा मंत्रियों के लिए तो दल बदलना, दोनों तरफ दस्तखत कर देना आदि बातें सामान्य हो ही गयीं, राज्यपाल और विधान-सभाओं के अध्यक्ष भी अपने निर्णय बदल देते हैं। बिहार के राज्यपाल ने दो दिन पहले अपनी लिखित राय पेश की कि प्रदेश में कोई स्थायी सरकार बन सके ऐसी सम्भावना नहीं है। लेकिन दिल्ली जाकर आते ही अपनी राय बदल दी और बिना बहुमत की आवश्यक छानबीन किये एक दल के नेता को सरकार बनाने का निमंत्रण दे दिया।

अभी हरियाणा में ताजा जो कुछ हुआ वह तो आश्चर्यजनक है। वहाँ के मुख्यमंत्री ने सारी विधानसभा को ही कठपुतली बना दिया। विधानसभा में विरोधी दल ने उनके बहुमत को चुनौती दी और अविश्वास का प्रस्ताव पेश किया। विधानसभा के अध्यक्ष ने प्रस्ताव को चर्चा के लिए स्वीकार कर लिया और एक सप्ताह बाद की तारीख उसके लिए मुकर्रर कर दी। लेकिन मुख्यमंत्री ने जब देखा कि बहुमत उनकी ओर से खिसक रहा है और विधानसभा में उनकी हार की सम्भावना है तो अध्यक्ष के निर्णय के दो घण्टे बाद ही विधानसभा का सत्र उसी दिन समाप्त करने का प्रस्ताव रख दिया और अध्यक्ष ने भी सदन की सभाओं के बारे में मुख्यमंत्री की राय मानने की वैधानिक मजबूरी बताकर अपने पहलेवाले निर्णय के खिलाफ सत्र समाप्त कर दिया। अब छः महीने तक न मुख्यमंत्रीजी को बहुमत साबित करने की जरूरत, न 'बेचारे' विरोधी पक्ष के पास कोई चारा। चूंकि सत्र तत्काल समाप्त हो रहा था और विरोधी दल सदन छोड़कर चला गया था इसलिए सिर्फ ३० मिनट में १४ कानून पास कर दिये गये।

जनतंत्र खतरे में!

इस प्रकार जनतन्त्र का केवल नाम बाकी बचा है। राजनैतिक नेताओं की धांधली ने उसकी व्यवस्था का कोई पहलू ऐसा बाकी नहीं छोड़ा जिस पर भरोसा रखा जा सके। सबसे खतरनाक बात तो यह है कि भरोसे का जो आखिरी आधार 'न्याय-पालिका' का है उस पर भी राजनैतिक लोग अपने स्वार्थ के कारण हमला करने लगे हैं। अभी कुछ दिन पहले सर्वोच्च न्यायालय ने बैंकों के राष्ट्रीयकरण कानून में कुछ खामियाँ रह जाने के कारण उसको रद्द किया तो यह आवाज उठने लगी है, और प्रचार किया जा रहा है, कि "न्यायालय प्रगति के रास्ते में रुकावट डाल रहा है। उसे जनता की आकांक्षाओं और जमाने की रफ्तार का खयाल रखना चाहिए," आदि। यह देश के सर्वोच्च न्यायालय को धमकी देना नहीं, या उसकी आबरू को धक्का पहुँचाना नहीं, तो और क्या है? इसका मतलब यही हुआ न कि सरकार के कानूनों के खिलाफ या उसकी कार्रवाइयों के खिलाफ कुछ भी कहा जाय-तो उसे 'प्रतिक्रियावादी' बताकर जनता की नजरों में उसकी इज्जत गिरायी जाय? कानून की मनमानी या सरकार की धांधली के खिलाफ जनता के पास एक ही चारा है—वह है न्यायालय का। उसके नीचे इस तरह सुरंग लगाना कितना खतरनाक और 'जनविरोधी' कदम है, यह समझना मुश्किल नहीं होना चाहिए। पर नेता कहे जानेवाले लोग अपनी सत्ता कायम रखने के लिए ऐसा करते हुए भी नहीं हिचक रहे हैं। प्रधान मंत्री खुद दुतरफा बात करने में कितनी सिद्ध हस्त हो गयी हैं यह इसी सोमवार को राज्यसभा में इस विषय पर कही गयी उनकी बात से जाहिर है। एक तरफ तो उन्होंने इस बात से साफ इनकार किया कि उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय की शान के खिलाफ कोई बात कही है या उसके अधिकार को कम करने की कोशिश की है और दूसरे ही क्षण यह भी कह दिया कि फैसले ने प्रगति के मार्ग में रुकावट तो डाली है। प्रधानमंत्री अपनी 'अन्तरात्मा की आवाज' के कारण भले ही इन बारीकियों को समझ सकें, पर सामान्य बुद्धिवाले व्यक्ति के लिए दोनों बातों का अन्तर समझना मुश्किल है।

जनता क्या करे?

ऐसी परिस्थिति में जनता अब क्या करे? यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है। क्या उसके पास कोई चारा है? वास्तव में तो, जैसा अभी कुछ सप्ताह पहले खान अब्दुल गफ्फार खाँ, विनोबा और जयप्रकाश नारायण ने अपने संयुक्त वक्तव्य में कहा था, "इस परिस्थिति का बुनियादी इलाज" लोगों के ही हाथ में है। "लोग अपने पैरों पर खड़े हों, अपनी संगठित शक्ति के जरिये राजनीति को नियंत्रित कर सकें तभी आज की समस्याओं पर काबू पाया जा सकेगा"। अभी लोगों ने अपने को और अपनी किस्मत को राजनैतिक पार्टियों के हाथ में छोड़ रखा है। एक से परेशान होते हैं तो दूसरी की शरण में जाते हैं। लोग समझते हैं कि सरकार के सिवाय, कानून या लाठी की ताकत के सिवाय, कुछ नहीं हो सकता और सत्ता तथा कानून का सचालन तो पार्टियाँ ही कर सकती हैं। ये दोनों बातें केवल भ्रम हैं। सरकार या कानून, या पार्टियाँ तो केवल औजार हैं। उन औजारों को बनाने और चलानेवाला हाथ अपनी असली ताकत पहचाने, यह जरूरी है। वास्तव में मालिक जनता है। जनतन्त्र में उसका वोट ही अन्ततोगत्वा इन चीजों को बनाता है और खतम भी कर सकता है।

तो जनता को अपनी यह ताकत पहचानकर दो बातें करनी होंगी। एक तो यह कि वह अपनी वोट की ताकत को समझे। आज तो लोग दस-पाँच रुपये के लोभ में उसे बेच देते हैं या दूसरों के दबाव या बहकावे में आकर जाति, धर्म या पार्टी के आधार पर वोट देते हैं। अब लोगों को यह फैसला कर लेना चाहिए कि वे पंचायत से लेकर लोकसभा तक के किसी भी चुनाव में वोट जाति, धर्म या पार्टी के आधार पर हरगिज नहीं देंगे, न उसे बेचेंगे, बल्कि अपनी जान में जो अच्छा और सच्चरित्र उम्मीदवार हो उसीको देंगे।

पर उससे भी समस्या का पूरा हल नहीं होगा। आखिरकार तो यह करना होगा कि उम्मीदवार कौन हो, यह क्षेत्र की सम्बन्धित जनता ही तय करे। आज तो उम्मीदवार पार्टियाँ खड़े करती हैं या कभी कभी कोई स्वतन्त्र रूप में खड़ा हो जाता है। जनता के लिए तो सिर्फ यही बात बचती है कि वह दो-चार में से किसीको वोट दे दे। यह जनतन्त्र नहीं है, यह तो पार्टीतन्त्र है। पार्टियों ने ख्वाहमख्वाह इसको जनतन्त्र का नाम देकर लोगों को भुलावे में डाल रखा है। होना यह चाहिए कि गाँव-गाँव में लोग अपनी ग्रामसभाओं के जरिए उम्मीदवार खड़ा करने की योजना करें। शहरों में इस तरह का संगठन आज मुश्किल जरूर है, पर हमारे देश में अस्सी प्रतिशत जनता तो गाँवों में ही है। उसका संगठन हो जाने पर फिर शहरों में भी यह काम आसान हो जायगा। ग्रामसभाओं के संगठन के लिए कुछ बुनियादी कदम उठाने होंगे जो अनुभव के आधार पर ग्रामदान की योजना में रखे गये हैं।

आज जनता अज्ञान है, असंगठित है। वह धोखे में है, बल्कि उसे जान-बूझकर धोखे में रखा जा रहा है। उसको अपनी ताकत का भान कराने, संगठित करने और उठाने का काम निःस्वार्थ सेवक ही कर सकते हैं। आज के खुदगर्जी के वातावरण के बावजूद देश में ऐसे निःस्वार्थ लोगों की कमी नहीं है। अगर देश को, जनतन्त्र को और नैतिक मूल्यों को बचाना हो तो उन्हें सक्रिय होना होगा, केवल पार्टियों को या नेताओं को कोसने से काम नहीं चलेगा। ●

श्री धीरेन्द्र भाई का वर्तमान पता
लोकभारती सेनहाँ,
डाकघर-सत्तर
जिला—सहरसा (बिहार)

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : २५
सोमवार २३ मार्च, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : [illegible]

स्थितप्रज्ञता का शिक्षण

बच्चों के शिक्षण में, लोकशिक्षण और समाजशास्त्र के चिन्तन में अधिक आवश्यकता इस बात की है कि हम मन से ऊपर उठें। इस युग में जो मन की भूमिका पर रहकर काम करेंगे, वे सब प्रकार से हतबल होंगे। अत हमें मन से ऊपर की अवस्था में जाना चाहिए।...

आज शिक्षा स्वतंत्र नहीं है। हर देश में शिक्षा का यंत्रीकरण हो रहा है। शिक्षा को अपने हाथ में लेकर उस पर अधिकार कर लेना और बच्चों के मन पर सत्ता चलाना आज के राजनीतिज्ञों का एक कार्यक्रम ही बन गया है। इसलिए यह बहुत आवश्यक हो गया है कि जगह-जगह स्वयंप्रज्ञ मनुष्य पैदा हों।

आज का प्रतिनिधि-शासन भेड़ों द्वारा गड़ेरिये का चुनाव-सा हो गया है। आज की चुनाव-पद्धति भी ऐसी है कि उसमें औसत अक्लवाले ही चुने जाते हैं। चाहे कोई भी पार्टी आये, वहाँ चुने जाने-वालों की योग्यता औसत दर्जे की ही होगी। इन दिनों तो 'कल्याणकारी राज्य' के नाम पर उद्योगों का राष्ट्रीकरण करने की भी बात चल रही है। यानी जिस सरकार के हाथ में पहले से ही भारी सत्ता है, उसके हाथ में और व्यापार, उद्योग आदि की सत्ता सौंपने की बात है। इस पर सोचें तो पता चलेगा कि यह व्यवस्था सुरक्षित नहीं है। इसलिए आज जगह-जगह स्वयंप्रज्ञ मनुष्यों की विशेष आवश्यकता है।

इसलिए आप सदा-सर्वदा स्थितप्रज्ञ और उसके लक्षणों को स्मरण करें कि समाज में ऐसे स्थितप्रज्ञ हों, हमारे बच्चे स्थितप्रज्ञ बनें। इसके लिए प्रत्येक बच्चे को यह शिक्षण देने की व्यवस्था करें कि वे अपनी इन्द्रियों पर काबू रखें। चारों ओर से संकटों के हमले हों, मान-अपमान, राग-द्वेष आदि पैदा करनेवाले मौके आयें तो भी वे अपने चित्त पर उनका असर न होने दें, मान-अपमान, निन्दा-स्तुति की परवाह न करें और आस-पास की हवा से चित्त को अलग रख सकें। तभी आज की स्थिति में उबार का कोई रास्ता निकल सकता है।

यलगिरि, १०-४-'५८

भूदान-यज्ञ १६-३-'७० रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए १४

बिहार में पिछले तीन महीनों में ३४ हजार एकड़ भूदान में प्राप्त भूमि का वितरण

अब तक कुल ३ लाख ६४ हजार एकड़ भूमि भूमिहीनों में वितरित

पटना : १० मार्च। बिहार भूदान-यज्ञ कमेटी के मंत्री श्री निर्मलचन्द्र द्वारा प्राप्त सूचनानुसार ३१ मार्च के प्रथम सप्ताह तक बिहार में कुल ३ लाख ९४ हजार एकड़ भूदान में प्राप्त भूमि का वितरण भूमिहीनों में किया जा चुका है। ज्ञातव्य है कि पिछले तीन महीनों मे बिहार मे भूमि-वितरण का विशेष अभियान चलाया गया, जिसके फलस्वरूप ३४ हजार एकड भूमि वितरित की गयी। इसके पूर्व तक ३ लाख ६ हजार-एकड भूमि वितरित की जा चुकी थी।

बिहार मे भूदान मे प्राप्त अवितरित भूमि का यह वितरण-अभियान अगले आर्थिक वर्ष मे भी चलाया जायगा। आशा की जाती है कि वितरण-योग्य भूमि का सम्पूर्ण वितरण अगले अभियान मे पूरा कर लिया जायगा। इस विशेष अभियान के लिए, बिहार-सरकार भूदान-कमेटी को सक्रिय सहयोग दे रही है।●

मध्यप्रदेश का सातवाँ जिलादान : ग्वालियर

ग्रामदान-आन्दोलन के अन्तर्गत "मध्यप्रदेश-दान" के संकल्प की पूर्ति की दिशा में ग्वालियर मध्यप्रदेश का सातवां जिलादान घोषित हुआ है।

प्राप्त जानकारी के अनुसार जिला गांधी-शताब्दी-समिति द्वारा चलाये गये, जिला ग्रामदान अभियान के परिणामस्वरूप ग्वालियर जिले के ७८० आबाद गाँवों में से ६६४ ग्रामदानी बन गये हैं। इस प्रकार ८५ प्रतिशत गाँव ग्रामदान मे शामिल हो जाने से ग्वालियर जिलादान की घोषणा हुई है। जिले में अब ११६ गांव ग्रामदानी बनना शेष हैं, जिनको ग्रामदान मे सम्मिलित करने के प्रयास किये जा रहे हैं।

ग्वालियर जिले मे कुल पांच विकासखण्ड हैं, जिनमें ग्रामदानों की संख्या इस प्रकार है :- भितरवार १४३, डबरा १३५, मुरार १६४, घाटीगांव १३० तथा भांडेर ९२।

यह उल्लेखनीय है कि ग्वालियर जिलादान अभियान में गांधी-निधि तथा सहरिया सेवा संघ के कार्यकर्ताओं का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

मध्यप्रदेश मे इससे पूर्व टीकमगढ, पश्चिम निमाड, दतिया, भिण्ड, देवास तथा इन्दौर जिलादान घोषित हो चुके हैं।

मलिहाबाद (लखनऊ) में ग्रामदान-अभियान का शुभारम्भ

जिला गांधी-शताब्दी समिति लखनऊ द्वारा महात्मा गांधी हायर सेकेण्ड्री स्कूल मलीहाबाद में द्विदिवसीय ग्रामदान ग्राम-स्वराज्य प्रशिक्षण-शिविर का आयोजन हुआ, जिसमे जिला परिषद के ५० शिक्षकों एवं १५ सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। ग्रामदान-शिविर का उद्घाटन रिटायर्ड जज श्री कामतानाथ गुप्त ने करते हुए कहा कि 'अब नारों का युग समाप्त हो गया है। ठोस काम करके इस राष्ट्र की प्रतिष्ठा हम गांववालों को बचानी है।' आपने विधानसभा व लोकसभा मे घटनेवाली घटनाओं पर खेद व्यक्त किया और कार्यकर्ताओं से कहा कि 'गांवों की स्वायत्तता के लिए अब सरकार की ओर न देखें। बल्कि हर गांव स्वयं कदम उठाने के लिए उद्यत हो।'

ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के कार्यकर्ता श्री रामजी भाई ने ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य की स्थापना का महत्त्व, क्रम एवं सम्भावनाओं पर विस्तार से प्रकाश डाला। श्री रामजी भाई ने शिक्षकों को ग्रामदान-विचार का सर्वोत्तम सन्देशवाहक बताते हुए कहा कि भारत की परम्परा मे राज्य की सत्ता गुरु पर नहीं थी। शिक्षा शासन-मुक्त थी। आज भी न्याय-विभाग शासन से ऊपर है। शासन यदि गलती करता है तो उसके खिलाफ भी फैसला देने का हक उसे है। अतएव शिक्षकों की अपनी जो स्वतंत्र हस्ती है उसीके आधार पर वे गांववालों को मानवता की रक्षा के लिए सही ज्ञान दें।

मलीहाबाद ब्लाक के शिक्षकों ने २ मार्च से ५ मार्च तक गांव-गांव जाकर लोगों को ग्रामदान और लोकनीति का शिक्षण देने का कार्यक्रम उठाया है। इस प्रशिक्षण-शिविर एवं पंचदिवसीय अभियान को सफल बनाने में विद्यालय के अधिकारीगण सक्रिय रूप से लगे हुए हैं।

— कपिल अवस्थी

अ० भा० यात्री दल का पता,
मार्फत-गांधी स्मारक निधि
रामकृष्ण सेवा-आश्रम
केनाल रोड
जम्मू-काश्मीर

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैं०), विदेश में २२ रु०; या ३५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६
सोमवार
अंक : २५
२३ मार्च, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : १०२८५

स्थितप्रज्ञता का शिक्षण

बच्चो के शिक्षण मे, लोकशिक्षण और समाजशास्त्र के चिन्तन मे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि हम मन से ऊपर उठें। इस युग मे जो मन की भूमिका पर रहकर काम करेंगे, वे सब प्रकार से हतबल होंगे। अत हमे मन से ऊपर की अवस्था मे जाना चाहिए।..

आज शिक्षा स्वतन्त्र नहीं है। हर देश मे शिक्षा का यत्रीकरण हो रहा है। शिक्षा को अपने हाथ मे लेकर उस पर अधिकार कर लेना और बच्चो के मन पर सत्ता चलाना आज के राजनीतिज्ञो का एक कार्यक्रम ही बन गया है। इसलिए यह बहुत आवश्यक हो गया है कि जगह-जगह स्वयप्रज्ञ मनुष्य पैदा हो।

आज का प्रतिनिधि-शासन भेडो द्वारा गडेरिये का चुनाव-सा हो गया है। आज की चुनाव-पद्धति भी ऐसी है कि उसमे औसत अक्लवाले ही चुने जाते हैं। चाहे कोई भी पार्टी आये, वहाँ चुने जाने-वालो की योग्यता औसत दर्जे की ही होगी। इन दिनो तो 'कल्याणकारी राज्य' के नाम पर उद्योगो का राष्ट्रीकरण करने की भी बात चल रही है। यानी जिस सरकार के हाथ मे पहले से ही भारी सत्ता है, उसके हाथ मे और व्यापार, उद्योग आदि की सत्ता सौंपने की बात है। इस पर सोचें तो पता चलेगा कि यह व्यवस्था सुरक्षित नहीं है। इसलिए आज जगह-जगह स्वयप्रज्ञ मनुष्यो की विशेष आवश्यकता है।

इसलिए आप सदा-सर्वदा स्थितप्रज्ञ और उसके लक्षणो को स्मरण करें कि समाज मे ऐसे स्थितप्रज्ञ हो, हमारे बच्चे स्थितप्रज्ञ बनें। इसके लिए प्रत्येक बच्चे को यह शिक्षण देने की व्यवस्था करें कि वे अपनी इन्द्रियो पर काबू रखें। चारो ओर से सकटो के हमले हो, मान-अपमान, राग-द्वेष आदि पैदा करनेवाले मौके आयें तो भी वे अपने चित्त पर उनका असर न होने दें, मान-अपमान, निन्दा-स्तुति की परवाह न करें और आस-पास की हवा से चित्त को अलग रख सकें। तभी आज की स्थिति मे उबार का कोई रास्ता निकल सकता है।

बजट : देश की गृहस्थी

हम, आप, दूसरे लोग, सभी कमाते और खर्च करते हैं। सरकार भी कमाती और खर्च करती है। लेकिन हमारे-आपके कमाने और खर्च करने, और सरकार के कमाने और खर्च करने में अन्तर है। अन्तर यह है कि हमें और आपको कमाने के लिए मेहनत करनी पड़ती है जब कि सरकार को हमारी-आपकी कमाई में से एक हिस्सा ले लेने की हिकमत सोचनी पड़ती है। वह खुद तय करती है कि किस हिकमत से दूसरों की कमाई में से कितना लेगी, और लेकर किस तरह खर्च करेगी। दूसरों की कमाई में से ले लेने को वह अपनी कमाई कहती है। हर साल फरवरी-मार्च में सरकार संसद को, और देश को, बता देती है कि एक अप्रैल से शुरू होनेवाले बारह महीनों में किन मदों से उसकी कितनी आमदनी होगी, और किन मदों में वह कितना खर्च करेगी। इसीको सरकार बजट कहती है। १९७०-७१ के लिए इन्दिराजी ने संसद में लगभग ३५ अरब का बजट पेश किया है। आमदनी से खर्च लगभग सवा अरब ज्यादा है। बजट घाटे का है।

अगर बात सिर्फ आमदनी-खर्च की ही हो, तो बजट का इतना महत्त्व क्यों? नेता, जनता, व्यापारी सभी बेहद उत्सुकता के साथ बजट की प्रतीक्षा क्यों करते हैं? वह कौनसी बात होती है जिसके कारण एक ही बजट को एक ओर से प्रशंसा मिलती है, तो दूसरी ओर से निन्दा ही निन्दा? लोग कहते हैं कि बजट में देश की गृहस्थी चलती है। वह गृहस्थी अच्छी जो समृद्ध हो, और जिसमें हर सदस्य सुखी हो। वह बजट अच्छा जिससे देश की दौलत बढ़े, और देश में रहनेवाले सुखी हों।

स्वतंत्रता के बाद हर बजट और हर योजना में यही कोशिश होती रही है कि देश की दौलत बढ़े। यह सोचा गया कि देश धनी होगा तो हर आदमी को कुछ-न-कुछ मिलेगा। और इस तरह धीरे-धीरे धन इतना हो जायगा कि कोई आज की तरह धनहीन रह ही नहीं जायगा। इसी दृष्टि से कल-कारखाने खोले गये, व्यापार बढ़ाया गया, खेती में सुधार किये गये। इसमें कोई शक नहीं कि काम बहुत हुआ, लेकिन कुछ ऐसा हुआ कि बढ़ी हुई दौलत का बहुत ज्यादा हिस्सा ऊपर के लोगों के पास गया, और बहुत कम बीचवालों को मिला। सबसे नीचेवाले मजदूर, छोटे किसान, कारीगर, दिनोदिन असहाय होते गये। बाजार और सरकारी नोटों से भर गया। क्या चीज कब किस कीमत पर मिलेगी इसका ठिकाना नहीं रहा। ऐसा हो गया कि पैसे की जैसे कोई कीमत ही नहीं रह गयी। बँधी-बँधाई कमाई करनेवाला मध्यम वर्ग परेशान हो गया। जो पैसे के लिए बेचता है, और जो पैसे से खरीदता है, दोनों सरकार और बाजार के हाथ में खिलौने बन गये। स्वभावतः धीरे-धीरे पुकार उठने लगी कि यह कैसा विकास है, जिसमें धनी अधिक धनी और गरीब अधिक गरीब होता जा रहा है? यह कैसी सरकार है जो इतना भी नहीं देख पाती कि देश की दौलत में किसको क्या मिल रहा है? अन्दर-अन्दर असन्तोष बढ़ता गया। जगह-जगह उपद्रव होने लगे। राजनीति—जिसके हाथ में देश था—टूटने लगी। नेताओं ने महसूस किया कि कुछ करना चाहिए। न करने का परिणाम भयंकर होगा। किसी दिन शीघ्र उनकी गद्दी भी खतरे में पड़ जायगी।

इस संकट से निकलने का एक रास्ता सूझा—समाजवाद। सबने—हर दल ने—नारा लगाया : 'समाजवाद'। प्रधानमंत्री की पुकार सबसे तेज हुई। प्रधानमंत्री भारत सरकार की वित्तमंत्री भी हैं, इसलिए जनता ने सोचा कि उनके बजट में समाजवाद की पहली झलक दिखाई देगी। प्रधानमंत्री ने अपने बजट भाषण में यह दावा भी किया है कि उन्होंने अपने इस पहले बजट का उद्देश्य रखा है 'सामाजिक न्याय के साथ विकास'। उनकी नजर में सरकार की ओर से होनेवाला समाजवाद = विकास + न्याय। इसी उद्देश्य को सामने रखकर उन्होंने पिछले दिनों कई कदम, जैसे—बैंकों का राष्ट्रीयकरण, औद्योगिक लाइसेंस-नीति, आदि भी उठाये थे, और अब इस बजट में टैक्स बचत, और खर्च की नयी नीति भी प्रस्तुत की है। हम देखें कि जिस आर्थिक नीति के अनुसार काम करने की घोषणा सरकार ने इस बजट में की है उससे देश के दोहरा विकास और समाज—मुख्य रूप से नीचे के लोगों—के साथ न्याय का मेल कैसे मिलाया गया है। अगर यह मेल मिल गया हो तो हम मान लेना होगा कि एक नया काम और अच्छा काम हुआ है। समाजवाद की बात दूसरी है। सरकार के समाजवाद और जनता के समाजवाद में अन्तर है। बहुत अन्तर है। लेकिन उस अन्तर की ओर जनता का ध्यान फिलहाल नहीं है।

विकास के साथ-साथ न्याय के लिए क्या करने को सोचा गया है? एक तो यह कि धन का थोड़े हाथों में केन्द्रित होना रोका जाय। धन के केन्द्रीकरण से धनवान व्यक्ति, संस्था, या औद्योगिक संगठन की शोषण-शक्ति बहुत बढ़ जाती है। इसके अलावा चिन्ता की बात यह होती है कि केन्द्रित धन देश की राजनीति पर हावी हो जाता है। तीसरे, धन के केन्द्रीकरण से धनी और गरीब में जो विषमता बढ़ती है वह समाज के लिए ज्वालामुखी बन जाती है। अन्याय और विषमता का समाज कभी सुखी और शान्त नहीं होता। शुरू-शुरू में समाजवाद की पुकार आदमी ने इसीलिए लगायी कि सरकार उसे पूँजीपतियों के शोषण से बचाये। आज के जमाने की सारी उत्पादन-पद्धति और उत्पादन के सारे यंत्र पूँजीप्रधान हैं। इसलिए और भी ज्यादा जरूरी है कि सरकार अपनी शक्ति से पूँजी और पूँजीपतियों के समाज-विरोधी कामों को रोके। यह एक बहुत बड़ा काम है। अगर पूँजी का केन्द्रीकरण रुके, और जो लोग साधनहीन हैं उन्हें साधन और सुविधा मिले, तो आशा की जा सकती है कि कमाई के अवसर अधिक-से-अधिक लोगों को मिलेंगे, और समाज में सुख फैलेगा।

हमारा देश एक अजीब कठिनाई में है। पिछले २२-२३ वर्षों में उत्पादन का विकास ऐसे ही यंत्रों और उपायों से हुआ है जिनमें पूंजी अधिक लगती है, श्रम कम। इस कारण सरकार पूंजीपतियों और पूंजीवाले औद्योगिक संगठनों के सम्बन्ध में इस तरह के कदम नहीं उठा सकती जिस तरह के कुछ गरम लोग चाहते हैं। हर वक्त इस बात का डर रहता है कि कोई ऐसा काम न हो जाय जिससे उत्पादन के ढाँचे पर आँच आ जाय। इस ढाँचे के स्थान पर नीचे से ऊपर तक उत्पादन और व्यापार का ही नहीं, बल्कि शिक्षण और प्रशासन का भी, एक नया ढाँचा खड़ा करने की कल्पना या साहस इस वक्त देश के नेतृत्व में नहीं दिखाई देता। इसमें हर दल की एक ही हालत है। अपवाद कोई नहीं है। इसलिए इन्दिराजी ने इस बात की हर सम्भव कोशिश की है कि औद्योगिक संगठनों पर ऐसे टैक्स न लगाये जायं कि उन्हें पूंजी की कमी पड़े और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव हो। इसलिए हर सम्भव कोशिश की गयी है कि लोग अपनी कमाई में से ज्यादा-से-ज्यादा रुपया बचाकर बैंकों में जमा करें, और बैंक वह रुपया उद्योगों को, खेती को, तथा अन्य धन्धों को दें, और उत्पादन बढ़े। उत्पादन बढ़ने से धन बढ़ेगा, लोगों को अधिक सामान मिलेगा, मूल्य स्थिर रहेंगे, और कुछ नये लोगों को रोजगार भी मिलेगा।

विकास के लिए दूसरी कठिनाई यह है कि देश गरीब है—बेहद गरीब है। गरीब देश गरीबी से निकलने के लिए पूंजी कहां से लाये? गरीबी से गरीबी बढ़ती है। गरीब के पास श्रम-शक्ति है, लेकिन वह शोषित है, अविकसित है, और सरकार की विकास-नीति में उसके लिए उचित स्थान भी नहीं है। सरकार नकद पैसा ही चाहती है। श्रमिक का श्रम, जो सचमुच पूंजी ही है, किस बैंक में जमा होगा? कैसे उसका उपयोग होगा, और कैसे वह उत्पादन में लगाया जायगा? उद्योगों को छोड़िए। इस खेतिहर देश की खेती भी श्रमिक के शोषण पर ही चल रही है। जिसे नयी, वैज्ञानिक, खेती कहते हैं, उसमें श्रम से ऊँचा स्थान यंत्र को मिला है। देश की गरीबी का यह हाल है कि लगभग ५५ करोड़ की जनसंख्या में सिर्फ २८ लाख ही जो आमदनी-कर देते हैं। अभी बजट में आमदनी-कर की सीमा ५ हजार कर दी गयी तो इस २८ लाख में एक दम ५ लाख लोग कम हो गये। थोड़े से धनियों से कितना कर वसूल किया जायगा? इसलिए कर की चाहे जो पद्धति अपनायी जाय गरीब कर से बच नहीं सकते। एक ओर गरीबी, बेरोजगारी और दूसरी ओर देश के विकास के लिए कर का बढ़ता हुआ बोझ—बेचारा गरीब समझ नहीं पाता कि यह कैसा विकास है, कैसा न्याय है? लेकिन टैक्स के बिना सरकार चले कैसे? ■

खादी-संस्थाओं के लिए कुछ सुझाव

•गांधीजी ने खादी के लिए जो विचार रखा था, और उसके लिए जिस निष्ठा और भावना को जन्म दिया था, वह न तो देश में ही है और न संस्थाओं में ही, लेकिन कुछ पुरानी खादी-संस्थाओं में प्रारम्भिक वर्षों की निष्ठा, भावना तथा विचार की एक परम्परा बन गयी है। मनुष्य के स्वभाव में परम्पराओं का निभाने की वृत्ति सहज है। इसलिए विचार और निष्ठा के अभाव में भी ऐसी संस्थाएँ परम्परा के घेरे में कुछ हद तक सुरक्षित हैं। प्रखण्डों में विकेन्द्रीकरण के नाम पर ऊपर से नयी संस्थाओं की स्थापना कर नये सिरे से उस परम्परा को शुरू करने का प्रयास आज की परिस्थिति में असफल रहेगा।

•खादी-संस्थाएँ प्रखण्ड के विकेन्द्रीकरण की बात न सोचकर इकाई कार्य के विकेन्द्रीकरण की योजना बनायें। जहाँ सम्भव हो, वहाँ नवीन प्राप्त कर बुनकरों को बसाने का प्रयास किया जाय।

•खादी बिक्री का सिरदर्द संस्थाओं के बदले कत्तिनों का हो, इसकी योजना बनायें। गांधीजी ने खादी-संस्था का नाम 'स्पीनर्स एसोसिएशन' रखा था। वे कत्तिन-शिक्षण पर बराबर जोर देते रहे। इस दिशा में कत्तिनों की सभाओं, गोष्ठियों, तथा उनके द्वारा खादी-फेरी के कार्यक्रम चलाने चाहिए।

•खादी संस्थाओं को अब ग्राममूलक खादी का नया सिलसिला शुरू करना चाहिए। उसके लिए गांव-गांव में शोषण से मुक्ति के लिए केन्द्रित उद्योगों के बहिष्कार की मनोभूमिका बनाने के साथ ही ग्रामसभाएँ खादी उत्पादन का काम अपने हाथों में ले सकें, ऐसी परिस्थिति का भी निर्माण करना चाहिए।

•जिन दिनों बिक्री-छूट का अभियान चलता है, उन दिनों गुड खादी-इकाई आदि बिक्री करने न जायें। २ अक्तूबर से एक सप्ताह तक कत्तिनों द्वारा खादी बिक्री का अभियान चलायें। उसके लिए यह जरूरी नहीं है, कि एक ही कत्तिन प्रतिदिन जाय। वह जितने दिन जाना चाहे, उतने दिन ही जाय। लेकिन प्रयास करके प्रतिदिन कुछ-न-कुछ कत्तिनों को बटोरकर अभियान को अखण्ड रूप से चलाया जाय। साथ-ही साथ उत्पादन की, बिक्री की, जिम्मेवारी उनकी है, यह विचार उनको समझाया जाय।

•हर प्रखण्ड में किसी प्रमुख त्योहार के समय किसी सुविधाजनक स्थान पर ग्रामस्वराज्य-मेला का संगठन करें। इस मेले में उस प्रखण्ड के सूत को उसी प्रखण्ड में बुनायी गयी खादी का खास 'स्टॉल' सजाया जाय।

•मेले में उस साल की ग्रामस्वराज्य की प्रगति की भूमिका में कोई नाटक तैयार कर खेला जाय। —धीरेन्द्र भाई

बिहार में पुष्टि-कार्य : बीघा-कट्ठा का वितरण

–बंगाल की भूमिहीनता तीव्र गति से मिटे : विनोबाजी के उद्गार–

[श्री गोविन्दराव देशपाण्डे और श्री ठाकुरदास बंग के साथ हुई विनोबाजी की चर्चा का एक अंश यहाँ प्रस्तुत है। पहले विनोबाजी ने बंगाल की परिस्थिति सुनी, उसके बाद उन्होंने अपना विचार रखा। –सं०]

विनोबा : बंगाल की परिस्थिति में क्या उचित है यह तो चारू बाबू को ही हमसे अधिक ज्ञात होगा। इसलिए उन्होंने ग्रामदान पर जोर दिया यह योग्य ही हुआ। और वह जहाँ हो नहीं सकता वहाँ आपलोग अपनी योजना चला सकते हैं। पर बिहार का पुष्टि-कार्य सही काम है। जब तक बिहार का ग्रामदान कागज पर है तब तक वह उपहास का विषय हो सकता है। आलोचनात्मक दृष्टि से विचार किया जाय तो ग्रामदान वास्तविक हुए, यह बात तब कही जायेगी जब कि गाँव की बीसवां हिस्सा भूमि भूमिहीनों को दी जायेगी। जहाँ आवश्यकता होगी वहाँ अधिक दी जायेगी और निवास के लिए जगह दी जायेगी। इसी प्रकार सरकारी जमीन दी जा सकती है। वह भी दी जायेगी। इतना यदि आप करते हैं तो सालभर में ग्रामदान वास्तविक होंगे और तब उनका प्रभाव बंगाल पर हुए बिना रहेगा नहीं। यह तब सम्भव होगा जब वहाँ बिहार में ताकत लगायी जायेगी।

मुझे बिहार छोड़े चार मास हुए। चार महीने में अमुक एक जिले में या तो एक प्रखण्ड में पूर्णतः पुष्टि-कार्य हो गया ऐसा यदि मालूम हुआ तो कार्य को चालना मिलेगी। पर मालूम नहीं हुआ कि ऐसा कुछ हो सका है। मैंने सुना, किसीने कहा कि बाबा ने बिहार छोड़ने में गलती की, उन्हें बिहार में ही रहना चाहिए था। मैंने तो दो बार बिहार इस विचार से छोड़ा कि बचा काम शेष लोग करेंगे। दोनों समय मैंने अपना काफी समय बिहार को दिया। दो बार समय देने के बाद अब वहाँ जाना शोभान्वित नहीं होगा। यह बात सही है कि यदि मैं वहाँ जाऊँ तो काम को अधिक बल मिलेगा। वहाँ जरा मेरा रोब-दाब है। यानी मंत्री आदि सभी पर रोब है, परन्तु केवल व्यक्तिगत रोब लगाना मुझे इष्ट प्रतीत नहीं होता।

(बंग साहब ने मुजफ्फरपुर में हुई बिहार ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक की जानकारी दी। उन्होंने जयप्रकाशजी की पुष्टि-कार्य के लिए दी हुई योजना बतायी कि तमिलनाडु में जिस प्रकार युवकों को प्रोत्साहित कर काम शुरू किया है उसी प्रकार बिहार में भी पैसे की चिन्ता न करें और काम ६ महीने में पूरा करें।)

विनोबा . यह निश्चित है कि बिहार, बंगाल की समस्या भूमि की समस्या है और तेलंगाना की समस्या भी भूमि की ही है। नक्सालवादी जो काम कर रहे हैं, वह सारा इसी भूमि को लेकर ही। केरल के मुख्यमंत्री नम्बूदरीपाद ने मेरे सम्मुख यह बात स्वीकृत की थी कि आप कहते हैं उस प्रकार क्रान्तिकारक विचार हमारा है नहीं। क्योंकि हम संविधान के अन्तर्गत काम करते हैं। और भूमि का स्वामित्व-विसर्जन संविधान में नहीं बैठता। यदि वह हम कहने लगें तो हमें मध्यमवर्ग के वोट नहीं मिलेंगे और इसलिए उन्होंने केरल में १५ एकड़ तरी जमीन पर 'सीलिंग' की। १५ एकड़ सिंचित भूमि, ७५ एकड़ खुश्की के बराबर होती है। स्पष्ट ही है कि यह क्रान्तिकारक कदम नहीं है। उससे भूमि की समस्या कभी हल नहीं होगी। अतः ग्रामदान की ही प्रणाली ऐसी है जो लोगों को भूमि देगी और जिसमें क्रान्तिकारी भाषा का प्रयोग होता है।

ठाकुरदास बंग : बंगाल में सुलभ ग्रामदान के द्वारा पर्याप्त भूमि प्राप्त नहीं होगी। भूमिहीनता मिटाने के लिए इससे आगे जाना होगा, यानी सुलभ और कठिन ग्रामदान के बीच का कुछ चाहिए।

विनोबा : उसके लिए आपको हिसाब करना होगा कि कितनी भूमि उपलब्ध है।

ठाकुरदास बंग . हिसाब किया है, वहाँ शहरी जनसंख्या को छोड़कर ४५ डि० जमीन प्रति व्यक्ति के हिसाब से एक परिवार को सवा दो एकड़ जमीन यानी ६-७ बीघा जमीन उपलब्ध हो सकती है। उसमें से एक बीघा हमें माँगनी चाहिए। सबसे समान हिस्सा नहीं माँगें, छोटों से कुछ नहीं, मध्यम से छठा, और ऊपर-वालों से ज्यादा। यह सब कुछ गाँववालों को तय करना है।

विनोबा इसका नाम 'फ्लोरिंग'। आपने एक जिले में यदि यह किया तो जमीन-मालिकों के पास कितनी जमीन बचेगी? तो फिर आप वहाँ ऐसा प्रचार कीजिए कि कम-से-कम बीसवां हिस्सा और आवश्यकतानुसार और अधिक दें। और यह सब तीव्र गति से होना चाहिए। वहाँ तीव्र गति का ही सारा विचार है।

हमारा बंगाल के बारे में ऐसा मत है कि वहाँ जो सबसे बड़े तीन कार्यकर्ता हैं—चारू बाबू, शक्ति बाबू और क्षितीश बाबू, इन तीनों को जिस पर एकमत होगा वह योजना बाबा को मंजूर है।

ठाकुरदास बंग ' शक्ति बाबू और क्षितीश बाबू एकमत हैं, और चारू दा का विरोध नहीं है।

विनोबा ठीक है। फिर तीन स्थानों में प्रयोग के तौर पर भूमिहीनता मिटाने का काम किया जा सकता है। (मूल मराठी)

[गोपुरी, वर्धा ३-३-'७०]

'विनोबा-चिन्तन' (मासिक)

'विनोबा-चिन्तन' प्रति मास प्रकाशित होता है। इसमें लगभग ५० पृष्ठों में किसी एक विषय पर समय-समय पर दिये गये विनोबाजी के प्रवचन कथात्मक ढंग से सजोये जाते हैं, जो अपने-अपने विषय में एक-एक पुस्तक बन जाती है। इसके स्थायी ग्राहक बनकर इस ज्ञान-राशि का संग्रह करना प्रत्येक जिज्ञासु एवं अभ्यासु के लिए लाभप्रद है। (मूल मराठी)

वार्षिक मूल्य : ६ रु०, एक प्रति : ६० पैसे

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी–१

बादशाह खाँ का दौरा : प्रभाव और सुझाव

बादशाह खाँ—खान अब्दुल गफ्फार खान—१ अक्तूबर १९६९ को अफगानिस्तान से भारत पधारे और ८ फरवरी १९७० को वहाँ लौट गये। श्री राधाकृष्ण, मंत्री, गाधी शान्ति प्रतिष्ठान के निमंत्रण पर मैं २० सितम्बर १९६९ को दिल्ली पहुँच गया था और १५ फरवरी १९७० को वहाँ से वापस आया। दिल्ली के अलावा गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, बिहार, आन्ध्र प्रदेश और मध्यप्रदेश में मैं बादशाह खाँ के साथ रहा।

बादशाह खाँ के साथ होने में मेरे तीन खास मकसद थे (१) मुसलमानों से सम्पर्क कायम करना, (२) बादशाह खाँ के विचारों का उन पर क्या प्रभाव (इम्पैक्ट) पड़ा है, उसका अध्ययन करना और (३) यह देखना कि राष्ट्रीय एकता—जिसे मैं मानवीय एकता कहना पसंद करूँगा—के क्षेत्र में इससे कैसे लाभ उठाया जा सकता है?

इस बारे में मैं अपना मूल्यांकन नीचे दे रहा हूँ :

बादशाह खाँ के भाषण

(क) बादशाह खाँ ने हिन्दुस्तान के मुसलमानों के सामने पहली बार गांधी-विचार, खास तौर पर अहिंसा की 'फिलासफी' पेश की, और स्पष्ट रूप से कहा कि वे 'अदम तशद्दुद' (अहिंसा) को बतौर 'अकीदा' (आर्टिकिल आफ फेथ) कबूल करें और अपने व्यक्तिगत और सामूहिक, सभी मसलों को हल करने में अहिंसा का उपयोग करें, और हर हालत में उस पर कायम रहें। गांधीजी को आजादी की लड़ाई के सेनापति के रूप में बहुत-से मुस्लिम नेताओं ने मुसलमानों के सामने पेश किया है, लेकिन गांधी के अहिंसा के विचार को दूसरे किसी बड़े मुस्लिम नेता ने मुसलमानों के सामने इतने जोरदार शब्दों में और विश्वास के साथ रखा हो, यह मेरी जानकारी में नहीं आया है।

(ख) भारत के मुसलमानों को अपने और अपने देश की समस्याओं से ज्यादा चिन्ता अक्सर दूसरे मुस्लिम देशों के मसलों में रही है, यह बात भी जितनी सफाई के साथ बादशाह खाँ ने कही, उतनी सफाई और हिम्मत के साथ दूसरे किसी राष्ट्रीय मुस्लिम नेता ने पहले नहीं कही थी। उन्होंने 'अल अक्सा' की मसजिद के लिए भारत में निकाले गये जुलूस की खुलकर निन्दा की, जब कि सारी दुनिया के मुसलमानों की दृष्टि में मक्का और मदीना के बाद तीसरा पवित्र स्थान अल अक्सा की मसजिद का ही है। उसकी निन्दा करने का साहस—'रियर करेज' बादशाह खाँ ही दिखा सके।

ऊपर की दोनों बातों को मैं भारत के मुसलमानों के चिन्तन के क्षेत्र में, बादशाह खाँ की बहुत महत्त्वपूर्ण देन मानता हूँ।

(ग) बादशाह खाँ ने इस देश के मुसलमानों से कहा

अहद फानमो

(१) 'कौम' मुल्क (राष्ट्र) से बनती है, मजहब से इसका कोई ताल्लुक (सम्बन्ध) नहीं है। (२) देश का बँटवारा करना गलत था। (३) भारत के मुसलमानों पर आज जो मुसीबतें हैं, वे बहुत हद तक देश के बँटवारे की विरासत (लिगेसी) हैं। (४) भारत और पाकिस्तान में होनेवाले दंगे धार्मिक नहीं, राजनीतिक और आर्थिक हैं। इनके पीछे पूँजीपतियों का हाथ होता है, और (५) दुनिया में एक भी देश ऐसा नहीं है, जो भारत के छह-सात करोड़ मुसलमानों को अपने यहाँ जगह दे सके—न ऐसी उनकी कोई इच्छा है, न उनके पास इतनी शक्ति है। (६) भारत के मुसलमानों का भविष्य भारत के साथ जुड़ा हुआ है। इसलिए उन्हें इस देश में मिल-जुलकर जीवन बिताने के उपायों पर विचार करना चाहिए और अपनी शक्ति देश को बनाने-सँवारने में खर्च करनी चाहिए।

बादशाह खाँ ने यह कोई नयी बात नहीं कही। नेशनलिस्ट मुस्लिम नेता और कार्यकर्ता ये बातें मुसलमानों से आजादी मिलने से पहले भी कहते रहे थे और उसके बाद भी बराबर कहते रहे हैं। लेकिन जिस मनोवैज्ञानिक क्षण में बादशाह खाँ ने ये बातें कहीं, वैसा अनुकूल वातावरण पहले कभी प्राप्त नहीं था।

मुसलमानों पर प्रभाव

बादशाह खाँ के पहले दो विचार—अहिंसा पर अटूट आस्था और अपने और अपने देश की समस्याओं को प्रधानता देने की बात को मुसलमानों ने किस हद तक ग्रहण किया है, उस पर अभी कोई निश्चित राय देना समय से पहले होगा, पर इतना स्पष्ट है कि मुसलमान इस बात को महसूस करने लग गये हैं कि अपने प्रश्नों को हल करने के उनके अब तक के उपाय असफल हुए हैं, इसलिए अब पुरानी डगर से हटकर नये रास्ते अख्तियार करने चाहिए। इस प्रकार विचार का बीजारोपण हो गया है और यदि इसका पोषण ठीक किया गया तो इस बीज की फसल लेने की आशा की जा सकती है।

जहाँ तक बादशाह खाँ की तीसरी बात—बँटवारे की भूल और उसके परिणामों के दुष्चक्र—का सम्बन्ध है, मुसलमानों की समझ में जितनी स्पष्ट रूप से अभी आयी है, अब से पहले कभी नहीं आयी थी। इसके दो खास कारण सहायक बने—(१) अहमदाबाद के दंगे के दिनों पाकिस्तान सरकार का यह एलान कि 'भारत से भागकर आये हुए मुसलमान को वह अपने देश में घुसने नहीं देगी', और (२) पाकिस्तान में एक इकाई खत्म करने के फैसले के साथ वहाँ क्षेत्रवाद का जोर पकड़ना और पाकिस्तान के अन्दर पाकिस्तानी और 'रिफ्यूजी' मुसलमानों के बीच दंगों का शुरू हो जाना।

पाकिस्तान में मुसलमान मुसलमान के बीच जिस पैमाने पर दंगे हुए हैं, और उनमें जो जो अमानवीय काम हुए हैं, और

'पूरब देश' से लुट-पिटकर भारतीय पाकिस्तानी मुसलमानों का जो काफिला भागकर पश्चिम पाकिस्तान पहुँचा तो वहाँ 'जय सिन्ध' के नारे के साथ उसकी ठुकाई की गयी ? इन सब बातों का जितना वर्णन पत्रिकाओं में छपा है, उससे कहीं ज्यादा यहाँ के मुसलमानों को अपने सगे सम्बन्धियों से मिला है। इन सब बातों से पाकिस्तान की कलई खुल गयी, और 'इस्लामी भाईचारे' का भंडा फूट गया। यह बात बहुत स्पष्ट हो गयी कि भारत के मुसलमानों को भारत में ही जीना और मरना है। शेख अब्दुल्लाह के शब्दों में—"तुम्हारे सामने दो समुद्र हैं, एक पानी का और दूसरा इन्सानों का। तुम्हें सोचना है कि इन दो समुद्रों में से किस समुद्र में कूदकर बच सकते हो !"

बादशाह खाँ के भाषणों का एक बहुत बड़ा लाभ यह हुआ कि इस देश के मुसलमानों में भरोसा पैदा हुआ और उनके सोचने के अन्दाज में फर्क पड़ा है।

मुसलमानों के अन्दर घुसकर काम करने के लायक जमीन बादशाह खाँ ने तैयार कर दी है। मेरा यह मानना है, और ऐसा मानने में अकेला मैं ही नहीं हूँ, कि इस देश के मुसलमानों में काम करने की जो फिजा बादशाह खाँ के कारण आज बनी है, ऐसी अनुकूल फिजा पिछले २०-२२ वर्षों में कभी नहीं बनी थी। इससे लाभ उठाना अब लोगों का काम है। साथ यह भी स्पष्ट है कि इस फिजा से लाभ उठाने का काम तुरन्त शुरू नहीं किया गया तो धीरे-धीरे यह फिजा खत्म हो जायगी।

आगे के काम की रूपरेखा

अब सवाल है कि इस काम को आगे बढ़ाने का काम कौन करेगा और इस काम की रूपरेखा क्या हो? इस बारे में अपने विचार मैं नीचे पेश कर रहा हूँ :

(१) इस काम को पूरा करने का बीड़ा गांधी-परिवार उठाये। गांधी परिवार से मेरा मतलब है, बापू के रचनात्मक काम करनेवाली कुल संस्थाओं से, यथा : सर्वोदय समाज, सर्व सेवा संघ, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, गांधी-शान्ति-प्रतिष्ठान, गांधी-स्मारक निधि, खादी-ग्रामोद्योग कमीशन, शान्ति-सेना-मण्डल और इस प्रकार की दूसरी अखिल भारत और स्थानिक संस्थाएँ, जिनमें 'इन्सानी बिरादरी कन्वेन्शन' की कोख में जन्म लेनेवाली संस्था भी शामिल की जा सकती है।

(२) निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति के लिए एक पंचवर्षीय योजना बनायी जाय और काम को दिशा देने और प्रगति का मूल्यांकन करते रहने के वास्ते केन्द्रीय और प्रादेशिक स्तर पर उपसमितियाँ हों, और जिला और नीचे की इकाइयों में, आवश्यकतानुसार उपसमिति बना ली जाय या किसी व्यक्ति-विशेष को, जिसकी इस काम में रुचि हो, इसका भार सौंपा जाय।

(३) रचनात्मक काम करनेवाली सभी संस्थाएँ अपने कार्यकर्ताओं को इस काम का महत्त्व बतायें, और अपने केन्द्रों और कार्यकर्ताओं की कार्यक्षमता का एक माप दण्ड यह भी करार दें, कि मुसलमानों के साथ वे कितना सम्पर्क स्थापित कर पाये हैं। मुसलमानों के साथ सम्पर्क के तीन स्तर माने जायें (क) मैत्री स्थापित करना। (ख) उनके जीवन में घुसकर और उनकी समस्याओं को हल करने में मददगार बनकर उनका विश्वास प्राप्त करना, और (ग) अपनी प्रवृत्तियों में उन्हें शामिल करके, उन्हें अपने विचारों के निकट लाना।

(४) विचार-प्रचार की दृष्टि से मुसलमानों में साहित्य पहुँचाने का काम विशेष रूप से करना, और उर्दू क्षेत्र (दिल्ली, उत्तरप्रदेश, बिहार, आंध्र प्रदेश, मध्यप्रदेश, पंजाब-हरियाणा, राजस्थान, कश्मीर आदि) के लिए उर्दू साहित्य का निर्माण करना।

(५) उर्दू-साहित्य-निर्माण की एक पंचवर्षीय योजना बनायी जाय, जिसके अनुसार हर साल एक हजार पृष्ठ, पुस्तकों के रूप में, छापे जायें और सस्ते दामों पर बेचे जायें। उर्दू-साहित्य के प्रकाशन में बाबोजी का खुद का लिखा साहित्य तो लिया ही जाय, कौमी एकता के ब्यान में और भी धार्मिक, नैतिक और आध्यात्मिक साहित्य भी लिया जाय। अहिंसा और कौमी-एकता पर सबसे ज्यादा जोर दिया जाय।

(६) 'भूदान-तहरीक' पत्रिका का नाम बदल दिया जाय और इसे साप्ताहिक का रूप दिया जाय। दूसरा विकल्प हो सकता है पाक्षिक के ही पृष्ठ बढ़ाना और कम दाम पर देना। 'भूदान-तहरीक' के ग्राहक बनाने का उर्दू क्षेत्र में अभियान चलाना।

विचार को अधिक व्यापक क्षेत्र में पहुँचाने के हेतु देश भर के ऐसी पुस्तकालयों और वाचनालयों में, जहाँ उर्दू पाठक जाते हों 'भूदान-तहरीक' के ग्राहक बनाने की कोशिश करना। ग्राहक न बनने की सूरत में मुफ्त भेजने और सभी उर्दू पत्रिकाओं के पास भेंट में भेजने के लिए विशेष अनुदान प्राप्त करना। उन-उन क्षेत्रों में, जहाँ उर्दू का चलन है, (उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, आंध्र प्रदेश, कश्मीर, दिल्ली, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा आदि) सरकारी जरिये से खरीदी जानेवाली पत्रिकाओं में शामिल कराने की कोशिश करना। ऐसे हर प्रदेश में एक-एक आदमी को इस काम को करने का जिम्मा दिया जाय।

(७) 'भूदान-तहरीक' के घाटे की पूर्ति के लिए केन्द्र और प्रादेशिक सरकारों से विज्ञापन प्राप्त करना। सभी प्रदेशों में कुछ ऐसे विज्ञापन होते हैं—जैसे टूरिस्ट इण्टरेस्ट के सेंटर्स—जो मिल ही सकते हैं। उर्दूवाले प्रदेशों में दूसरे प्रकार के विज्ञापन भी मिल सकते हैं। केन्द्रीय सरकार तो काफी विज्ञापन दे सकती है। कुछ लोग इस काम में पड़ने की जिम्मेदारी लें।

'भूदान-तहरीक' का जो उद्देश्य है, उसे सामने रखते हुए, अक्सर सरकारों से विज्ञापन प्राप्त हो सकते हैं—ऐसी मेरी मान्यता है, बशर्ते कि हर प्रदेश में कुछ व्यक्ति इस काम को अपने हाथ में लें।

(८) पाँच साल काम चलाने का बजट बनाया जाय और उसके वास्ते फण्ड इकट्ठा किया जाय। यह फण्ड सर्वोदय-परिवार के अपने पुरुषार्थ से और ऐसे सज्जनों की सहायता से खड़ा किया जाय, जो इस काम में दिलचस्पी रखते हैं। ऐसे कई लोग इस देश में मिलेंगे।●

दुनिया में शान्ति के प्रयास

मानव की आकांक्षा संसार में शान्ति का साम्राज्य स्थापित करने की रही है और मानव समाज हमेशा युद्धरत रहा है, मानव द्वारा निर्मित राज्य-व्यवस्था ने युद्ध कर सकने की शक्ति में ही अपना अस्तित्व सुरक्षित माना है। हर राजा की आकांक्षा राजसूय यज्ञ करने और 'राजशिरोमणि' बनने की रही है। हर शक्तिशाली राज्य ने अपना गौरव अपनी भौगोलिक और राजकीय सीमा का विस्तार करने में माना है। शान्ति की भूख और युद्ध की प्रवृत्ति मानव समाज की एक बड़ी विडम्बना है। दुर्भाग्य यह है कि प्रत्येक युद्ध अन्याय का निराकरण और शान्ति की स्थापना के नाम पर हुआ और युद्धरत लोग (समाज) उसे अपना पवित्र कर्तव्य मानते हैं, धार्मिक कृत्य समझते हैं, इसलिए युद्ध 'अल्लाह हो अकबर', 'जै बजरंग'; 'हर हर महादेव', 'सत श्री अकाल' सरीखी हुंकार से लड़े गये। राष्ट्रों द्वारा मान्य इस कत्लेआम को हिंसा नहीं माना गया, 'न हन्यते हन्यमाने शरीरे' कहकर इसे कर्तव्य की संज्ञा दी गयी। परन्तु मानव की आन्तरिक आत्मा, मानव की मानवता ने इसे कभी स्वीकार नहीं किया। बुद्ध, ईसा, अशोक, गांधी, मार्टिन लूथर किंग सरीखे मानवता के सच्चे पुजारियों ने अहिंसा की, शान्ति की आवाज बुलन्द की। संसार में आज हजारों व्यक्ति और कई संस्थाएँ अशान्ति, युद्ध और संघर्ष के कारणों को मिटाने में लगी हैं।

शान्तिवादी लोग

हिंसा और हथियार के आधार पर समस्या का जोर-जबर्दस्ती से हल करने का जो लोग विरोध करते हैं वे 'पेसफिस्ट' शान्तिवादी लोग माने जाते हैं। इस विचार का आधार (१) धर्म, (२) आदर्शवाद (युटोपिया), (३) मानवीय निष्ठा, (४) अध्यात्म और (५) परिस्थितिमूलक हो सकता है।

१. धर्म आधारित—'क्वेकर' (रिलीजस सोसायटी आफ फ्रेंड्स), 'मेनोनाइट', जापान बुद्ध संघ (निपजन म्यो हो जी) 'फेलोशिप आफ रिकंसीलियेशन' 'ब्रदरहोड', क्रानिनो ब्रेथ्रो एवं शान्ति दास के दल आदि संस्थाएँ अपने धर्म की सीख, जैसे—'अहिंसा परम धर्म है', 'तुम्हें हिंसा नहीं करना चाहिए' आदि के आधार पर युद्ध एवं हिंसात्मक सब कार्यवाहियों का विरोध करते हैं। जहाँ भी तनाव, संघर्ष, युद्ध की परिस्थितियाँ निर्मित हों वहाँ शान्तिमय ढंग से समाधान स्थापित करने में इन संस्थाओं के अनुयायी अपना तन-मन-धन समर्पित करने को सदा तैयार रहते हैं। साथ ही अपने जीवन, आचार व्यवहार द्वारा समाज में शान्ति स्थापित करना एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भाईचारा स्थापित करने का सतत प्रयत्न करते हैं। जिन देशों में युवकों का युद्ध में भाग लेना अनिवार्य है वहाँ के ये लोग युद्ध में नहीं,

बनवारीलाल चौधरी

परन्तु युद्ध से भी कठिन काम के लिए अपना जीवन होम देते हैं, बशर्ते कि उस कार्य में मानव की भलाई निहित हो। उदाहरणार्थ, अपने को बीमारी, औषधि के प्रभाव आदि प्रयोगों के लिए अर्पण करना।

२ आदर्शवादी ऐसे लोग जो यह विश्वास रखते हैं कि जीवन को सादा, सरल बना लेने, समाज में से शोषण मिटा देने से युद्ध या संघर्ष की स्थिति ही निर्माण नहीं होती। ये लोग सर्व रूप से निःशस्त्रीकरण के हिमायती हैं और संसार को एक राष्ट्र ही मानते हैं। ऐसे लोग किसी एक राष्ट्र की नागरिकता का नहीं वरन् विश्व-नागरिकता को मानते हैं। ये लोग विश्व-कुटुम्ब के हैं।

३ मानवता—"युद्ध मानव के प्रति एक अक्षम्य अपराध है, इसलिए मैं युद्ध में एवं युद्ध के प्रयत्नों में किसी भी रूप में जरा भी सहायक न होऊँगा और युद्ध न हो एवं युद्ध के कारणों को मिटाने का हमेशा प्रयत्न करूँगा। मानव-मानव एक समान, एक इन्सान का दूसरे इन्सान पर आक्रमण करना अमानवीय कृत्य है।" इस विचार के आधार पर संसार में कई व्यक्ति और संस्थाएँ शान्ति का कार्य कर रही हैं। 'वार रेजिस्टर्स इन्टरनेशनल', 'पीस प्लेज यूनियन' आदि संस्थाएँ इनमें प्रमुख हैं।

'वार रेजिस्टर्स इन्टरनेशनल' एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है। संसार के लगभग सब ही गैर-कम्यूनिस्ट देशों में इसकी शाखाएँ हैं। सन् १९६१ में इसका दसवाँ त्रिवर्षीय सम्मेलन भारत में गांधीग्राम, मदुराई में हुआ था। उसी अवसर पर इसकी भारतीय शाखा भी गठित हुई। इसके गांधीग्राम-सम्मेलन के सुझाव और प्रस्ताव के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति-सेना की स्थापना हुई थी। दिल्ली-पीकिंग शान्तियात्रा का आयोजन एवं नागालैण्ड में शान्ति-स्थापना का आयोजन इस संस्था और भारत की शान्ति-सेना के मिले जुले तत्त्वावधान में हुआ था। श्री जयप्रकाश नारायण इसके क्षेत्रीय अध्यक्ष थे। अब यह संस्था विसर्जित कर दी गयी है।

४ आध्यात्मिक—'भारतीय शान्ति-सेना', 'ब्रह्मविद्या मन्दिर' और विदेशों में भी कुछ एक ऐसी संस्थाएँ हैं जो आध्यात्मिक विकास, सत्य, प्रेम, करुणा के आधार पर अहिंसा को अपनी जीवन-पद्धति मानते हैं। गांधीजी का अहिंसा का दर्शन भी सत्य पर आधारित था। उनके मतानुसार अहिंसा के बिना सत्य की खोज सम्भव नहीं है। सत्य को प्राप्त करने का साधन अहिंसा है। साधन हमारे बस की बात है, इसलिए अहिंसा परम धर्म हुई और सत्य परमेश्वर हुआ।

५ परिस्थितिमूलक—(अ) ऐसे लोग, जो युद्ध को उसके गुणदोष और कारण के आधार पर उचित मानते हैं, तथाकथित अनुचित युद्ध को वे गलत मानेंगे और उसका विरोध करेंगे, पर वे क्रान्तिकारी लड़े जानेवाले युद्ध को प्रश्रय देंगे। ऐसे लोग अमेरिका के वियतनाम में हस्तक्षेप

को महान् हिंसक और अन्यायी कार्य मानेंगे, पर चेकोस्लोवाकिया में हुए रूस के हस्तक्षेप को शान्ति-स्थापना का अंग कहेंगे। इसी प्रकार का दूसरा पक्षीय दल इसी बात को पलटकर कहेगा।

(ब) ऐसे लोग जो सिद्धान्ततः 'पेसिफिस्ट' (शान्तिवादी) नहीं हैं, परन्तु विवेक से यह जान लिये हैं कि युद्ध में उपयोग आनेवाले वर्तमान अस्त्र इतने संहारक हो गये हैं कि उनका उपयोग ही बेमानी हो जाता है। वे केवल दुश्मन के मारक नहीं, वरन् सर्वमारक, सर्वसंहारक, मानव समाज को नेस्त-नाबूद कर देनेवाले हैं, इसलिए वे उपयोग के लायक ही नहीं रहे। और युद्ध आत्म-घातक बन गया है।

(स) युद्ध अ्मशः निरर्थक हो गये हैं। न किसीकी हार ही हो सकती है और न जीत ही। अमेरिका सरीखा शक्तिशाली राष्ट्र वियतनाम में कुछ भी निश्चयात्मक फल प्राप्त नहीं कर सका। इतने वर्षों के युद्ध ने यह सिद्ध कर दिया है कि समस्या युद्ध से नहीं, चर्चा से सुलझ सकेगी।

(ड) सामयिक शान्तिवादी – ये लोग आक्रमण के विरोधी हैं। जब-जब कोई देश किसी अन्य देश पर हमला करे, ये उसका विरोध करना अपना कर्तव्य समझते हैं।

(क) अणुशस्त्र-विरोधी—'कमेटी ग्राफ हण्ड्रेड', कमेटी फार न्यूक्लीग्रर डिस-ग्रामेमिण्ट' आदि संस्थाएँ। ये लोग अणु-युद्ध के विनाश को समझते हुए अणुशस्त्र के निर्माण एवं उपयोग का विरोध करते हैं।

(ग) धार्मिक एवं समाज-सेवी संस्थाएँ युद्ध की परिस्थिति, निर्माण न हो, संसार से गरीबी मिटे, शोषण खत्म हो, संसार के विभिन्न राष्ट्रों के लोगों का एक-दूसरों से परिचय बढ़े जिससे कि वे एक-दूसरे को समझ सकें, आपस में मैत्री कायम कर सकें, ऐसी दृष्टि से कुछेक संस्थाएँ कार्यरत हैं। उदाहरणार्थ—

१–रेस रिलेशन कमेटी

२–वार ग्रान वाण्ट

३–वार ग्रान हंगर

४–शेल्टर टू शेल्टर

५–ग्रोपन डोर 'सर्वास'

६–सर्विस सिविल इण्टरनेशनल

७–ग्राक्सफेम

८–सर्व सेवा संघ। आदि

शान्तिवादियों की अहिंसक जीवन-दर्शन की मूल भावनाएँ—

१–सत्यमेव जयते। यह दृढ़ विश्वास कि सत्य ही यशस्वी होता है और प्रकृति सत्य के अनुकूल है, उसका साथ देती है। इसलिए अहिंसावादी साधन-शुद्धि को तात्कालिक सफलता से अधिक महत्त्वपूर्ण मानता है।

२—'अहिंसा परमो धर्मः' इस परम धर्म का पालन कायर नहीं कर सकता। इसे वीर ही नहीं, महावीर ही स्वाभाविक रूप से वरण करता है। इसका अर्थ दुराचार के प्रति उदासीन मात्र रहना या दुष्कर्म न करना भर नहीं है। वरन् इसकी माँग है दुष्टता का सत्याग्रही रूप से निरा-करण करना।

३ - अहिंसा व्यक्ति का नहीं, असाधु प्रवृत्तियों, दुष्ट शक्तियों का विरोध करने की वृत्ति है। दुष्ट को प्रेम करो दुष्टता को घृणा।

४—अहिंसा विरोधियों को परास्त करने या नीचा दिखाने की नहीं उकसाती। यह शत्रु को प्रिय बनाने की प्रेरणा देती है। इसके फलस्वरूप समाज में मैत्री की स्थापना होती है। इसके विपरीत हिंसा की विजय कटुता की धात्री है।

५—केवल बाह्य हिंसा ही नहीं, आंतरिक मानसिक हिंसा, घृणा, ताप, क्षोभ, निष्ठुरता आदि प्रवृत्तियों से बचना, इनको जाग्रत न होने देना अहिंसा की साधना का अंग है।

६—अहिंसक नीति तब ही संभव है, जब मनुष्य (अहिंसक व्यक्ति) तप, त्याग और कष्ट सहन करने को उद्यत हो।

७—अहिंसक अन्याय के आगे, दुष्ट के आगे, निर्दयी शक्ति के सम्मुख झुकेगा नहीं। वह सिर झुकायेगा नहीं, कटा भले ही ले।

८—अहिंसक अपने विरोधियों का भी शुभाकांक्षी होता है। अहिंसा के परम प्रतिष्ठक जगत्गुरु ईसा ने क्रूर अन्याय को अमान्य कर सूली को वरण किया। मृत्यु को आलिंगन करते-करते उस महान् आत्मा ने अपने हत्यारों के लिए प्रार्थना की कि 'प्रभु, इन्हें क्षमा कर। वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं।' हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भी 'हे राम!' के उद्घोष में करबद्ध हो अपने हत्यारे की गोली को अंगीकार किया।

अहिंसक होने का अर्थ है—कायरता के अंधकूप से निकलकर वीरता के निर्भय प्रकाश में महावीरता या शौर्य प्राप्त करने की ओर अग्रसर होना, सबको अपना और अपने को सबका समझना अनुभव करना। सर्वत्र सुख की अगाध कामना और प्रार्थना करना।

प्रवृत्ति और कार्यक्रम

१—शान्ति-मार्ग का शोधन, अध्ययन, जिसमें युद्ध और तनाव के कारणों को गहराई से जानना और उनके निराकरण के उपाय योजना। संघर्ष के सामान्य कारण धर्मवादिता, राष्ट्रवादिता, राज-नीतिक विचार-धाराएँ, गरीबी-अमीरी, उद्योगों का केन्द्रीकरण और आधिपत्य आदि हैं। 'पीस रिसर्च' इसके समाधान की खोज करने का प्रयत्न करता है।

२—श्रमदान शिविर—विभिन्न राष्ट्र, धर्म, मत और विचार के लोगों का एक साथ मिलकर काम करना। काम के साथ-साथ एक-दूसरों को समझने का प्रयत्न करना। एक-दूसरों के बीच की संकीर्णता की दीवारों को गिराना।

३—शान्ति-स्थापना हेतु प्रदर्शन करना।

४—जिन देशों में युवकों को युद्ध में शामिल होना, सामरिक शिक्षा लेना अनिवार्य है वहाँ इसका विरोध करना। इस 'ड्राफ्ट' को खत्म कराने का प्रयास करना।

५—समाज को शान्ति के प्रति जागरूक करना।

६—ऐसी सेवा के लिए अपने को अर्पित करना, जो शान्ति की स्थापना में सहायक हो।

७—आवश्यकता पड़ने पर युद्ध और अशान्ति के विरुद्ध सत्याग्रह करना।

प्रशिक्षण—शान्ति-सैनिकों के प्रशिक्षण की कई देशों में व्यवस्था है। भारत में शान्तिसेना मण्डल यह कार्य कर रहा है। महिलाओं के लिए कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक निधि एक शान्ति-सेना विद्यालय चला रही है।

अन्य देशों में भी शान्तिवादी आन्दोलनकारियों को अहिंसक तरीकों से अन्याय का प्रतिकार करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। जो भी इसमें होनेवाली शारीरिक, आर्थिक एवं अन्य कठिनाइयों और मुसीबतों, विपदाओं को वहन करने में खरा नहीं उतरता, वह सक्रिय सत्याग्रही नहीं बनाया जाता। प्रत्येक चुने हुए शान्ति-सैनिकों को निम्नलिखित या इस प्रकार के निष्ठापत्र पर हस्ताक्षर कर इन निष्ठाओं को मानने की शपथ लेना होता है। ये निष्ठाएं मार्टिन लूथर किंग ने प्रस्तुत की थीं।

निष्ठा-पत्र

इस प्रतिज्ञा-पत्र के द्वारा मैं स्वयं को एवं अपने शरीर को अहिंसक आन्दोलन के लिए समर्पित करता हूँ। इसलिए मैं निम्नलिखित दस निष्ठाओं का पालन करूँगा—

१ प्रतिदिन ईसा के जीवन और सिखावन का मनन करूँगा।

२ हमेशा ध्यान रखूँगा कि अहिंसा के आन्दोलन की उपलब्धि न्याय और समाधान है, न कि विजय।

३ वाणी और व्यवहार प्रेमपूर्ण रखूँगा, क्योंकि प्रेम ही भगवान है।

४. प्रतिदिन ईश्वर से मेरे ऐसे उपयोग करने की प्रार्थना करूंगा, जिससे सब मनुष्य स्वतंत्र हो सकें।

५. अपनी निजी इच्छाओं का त्याग करूँगा, जिससे कि सब मनुष्य स्वतंत्र हों।

६ मित्र और प्रतिपक्षी (अमित्र), दोनों से एक-सा सामान्य शिष्ट विनम्र व्यवहार करूँगा।

७ दूसरों की और संसार की नियमित रूप से सेवा करने के अवसर की तलाश में रहूँगा।

८ अपनी वाणी, हृदय और हाथ की तमाम हिंसा का सदैव दमन करूँगा।

९ आध्यात्मिक और शारीरिक रूप से स्वस्थ रहने का प्रयत्न करूँगा।

१० आन्दोलन एवं आन्दोलन के संचालकों के आदेशों का पालन करूँगा।

गम्भीरता से विचार करके और यह समझबूझकर कि मैं क्या कर रहा हूँ, उसमें दृढ़ संकल्प और प्रयत्न-सातत्य के पूर्ण निश्चय के साथ मैं इस प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर कर रहा हूँ।

नाम

पता फोन नं०

सगे-सम्बन्धी का नाम एवं पता

सत्याग्रह में भाग लेने के अलावा मैं निम्नलिखित सेवाएं भी कर सकूँगा। (सेवा पर गोल चिह्न लगायें) वाहक का कार्य, अपनी कार ड्राइव करना, स्वयंसेवकों के भोजन की व्यवस्था, लिपिक का कार्य, फोन करना-लेना, प्रतिलिपि करना, टाइप करना, इश्तहार छापना, पत्रक वितरण करना।

गांधी की देन—उप एक अहिंसावादी ईसाई सम्प्रदाय को छोड़ पश्चिम के सभी शान्ति-दल गांधी के सत्याग्रह और अहिंसा के विचार से ओतप्रोत हैं। कई लोगों की मान्यता है कि गांधी की अहिंसा की नीति और सत्याग्रह की रीति नैतिक सिद्धान्तों और शक्ति (शासन) के परिमार्जक नियंत्रण की पावन और पावक विधि है। शान्ति दास (फ्रांस), डानिलो डोलची (इटली), स्व० मार्टिन लूथर किंग (अमरिका) ने, ईसाई शान्तिवादी होते हुए भी, यह माना कि उन्होंने ईसा की सिखावन का कार्यकारी प्रत्यक्ष दर्शन गांधी के जीवन और सत्याग्रह में पाया।

समय की चुनौती—विज्ञान और तकनीकी ने विनाश के ऐसे और इतने अधिक शस्त्र पैदा कर दिये हैं कि वे पूरे संसार को कई बार नष्ट कर सकते हैं। यह मानना कि इनका प्रभाव उद्योग-प्रधान बड़े-बड़े नगरवाले राष्ट्रों पर ही होगा और 'गांव' वाले राष्ट्र बच जायेंगे एक भ्रान्ति है। रेडियोधर्मिता का सब पर समान प्रभाव होगा। सब मरेंगे।

आज के युग में जब कि 'बैलास्टिक मिसाइल्स' और स्पूटनिक अंतरिक्ष में चक्कर लगा रहे हैं, चुनाव हिंसा या अहिंसा का नहीं रहा। अब निर्णय करना है अहिंसा या अनास्तित्व का। या तो संसार में शान्ति का राज्य स्थापित होगा या फिर मानव समाज का अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा। करुणा और प्रेम से ओतप्रोत अहिंसा की, सर्वोदय की पावन प्रेम गंगा ही मानवसमाज का उद्धार कर सकती है। ●

सर्वोदय और राजनीति

और प्रांतों का तो पता नहीं, लेकिन बादशाह खाँ की भारत-यात्रा के दौरान उनके द्वारा व्यक्त किये गये विचारों ने गुजरात में तो हलचल-सी मचा दी है। 'देश की आज की परिस्थिति में सर्वोदय-विचार के प्रति जिनकी श्रद्धा है, उन सबको संगठित होकर राजनीति में सक्रिय होना चाहिए।' इस आशय की उनकी बात अखबारों में छपी बस, फिर क्या था! गुजरात के वातावरण में गुनगुनाहट शुरू हुई—'नहीं, सर्वोदय-सेवकों को कभी भी राजनीति में नहीं जाना चाहिए।'—"भला सर्वोदयवाले राजनीति में नहीं जायेंगे, तो इसमें शुद्धि कैसे होगी, देश बरबाद हो जायेगा।"—इस गुनगुनाहट पर अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करने के लिए सर्वोदय कार्यकर्ताओं की एक विचार-गोष्ठी श्री नारायण भाई की अध्यक्षता में १५ फरवरी को साबरमती आश्रम में सम्पन्न हुई, जिसमें श्री गोविन्दराव देशपांडे भी शामिल हुए।

एक अध्यापक ने कहा, 'गुंडे दस मिनट में इकट्ठे हो सकते हैं, सज्जनों का संगठन नहीं है, इसलिए गुण्डाराज चलता है। जो अपने को निष्पक्ष कहलाते हैं, उनको सत्ता की राजनीति हाथ में लेनी ही चाहिए। पीने चुनाव-क्षेत्रों में प्रयत्न करना चाहिए, ताकि हम एक नमूना लोगों के सामने रख सकें।"

उत्तर में एक सर्वोदय-कार्यकर्ता ने कहा, "सत्ता तो आखिर दासी है, सेवा स्वामी है, कांग्रेस की शक्ति टूटी है, ध्रुवीकरण स्पष्ट है, लोकशाही खतरे में है। हमने देखा कि यथास्थिति को २० साल में भी कानून तोड़ नहीं सका। ऐसी परिस्थिति में एक ही शक्ति है विनोबा का विचार—सत्ता का विकेन्द्रीकरण, और वही है सच्ची राजनीति। हमें समग्र समाज को साथ में लेने का कार्यक्रम बनाना चाहिए।"

एक राजनीतिज्ञ उद्योगपति ने तुरन्त प्रतिक्रिया जाहिर की: "विनोबा ने क्या किया? सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने २२ साल व्यर्थ गँवाये। गांधीजी राजनीति में थे। आप लोग निष्क्रिय रहे, इसलिए देश की यह हालत है। दो-चार-पाँच के सिवाय सबको सत्ता की बागडोर हाथ में लेनी चाहिए। सत्ता में जाकर हम भी बिगड़ जायेंगे, इस भय से साधु होना ठीक नहीं है। गांधी कर्म के अवतार थे, सर्वोदयी निष्कर्म के बन गये हैं।"

एक लोकसेवक ने प्रत्युत्तर प्रस्तुत किया, "गांधीजी ने आजादी दिलवायी, फिर भी वे राजसत्ता में नहीं गये। लोक-हृदय में उनका स्थान था। वोट माँगने उनको घर-घर नहीं जाना पड़ता फिर भी वे राजसत्ता से अलग रहे, क्यों? क्या उनको जवाहरलाल रोकते थे? सरदार पटेल रोकते थे? रोकनेवाला कोई नहीं था, लेकिन वे अच्छी तरह जानते थे कि राजसत्ता में जानेवाले की शक्ति पहले सत्ता लेने में व्यय होती है और बाद में अपनी सत्ता की गद्दी को टिकाये रखने में। जनता के काम के लिए उनके पास शक्ति बचती ही कहाँ है? अभी तक न जाने कितने अच्छे-अच्छे लोग सरकार में गये हैं, बहुत अच्छे अच्छे लोगों ने उनको सत्ता दिलाने में मदद की, लेकिन परिणाम हमारे समक्ष मौजूद है।"

हमारे रविशंकर महाराज भी हम बच्चों की बातें सुनने आये थे। बहुत आग्रह किया, तो अपनी अनुभव की दो बातें उन्होंने भी रखी: "लोग अपना कारो-बार खुद चलायें। सरकार तो एक दीप जैसी रहे। सिर्फ प्रकाश देना ही उसका काम। सबका भला हम कर देंगे, ऐसा आज सरकार का जो रुख है, वह गलत है। गांधी की स्वराज की कल्पना ऐसी नहीं थी। वे तो शुद्ध प्रजा का राज्य चाहते थे। लेकिन हम तो गांधी के पीछे-पीछे चलनेवाले हैं, इसलिए हमने उनकी पीठ देखी, उनका मुँह किस दिशा में था वह नहीं देखा। और जब गांधी चल बसे तो हम असमंजस में पड़ गये कि हम किस दिशा में जायें?"

लेकिन स्वराज्य आया है तो उसे चलाने की जिम्मेवारी भी हम पर आती है, वह कैसे टाली जा सकेगी? यह भावना भी व्यक्त हुए बिना न रह सकी, एक जिला-पंचायत के अध्यक्ष ने कहा, 'मैं तो सत्ता की राजनीति में सीधा पड़ा हुआ आदमी हूँ। अनुभव से कहता हूँ कि लोक-शक्ति अपने-आप निर्माण हो सकेगी, ऐसी मुझे आशा नहीं। देश में परिवर्तन होना ही चाहिए, हम नहीं करेंगे तो और लोग करेंगे। लोकशाही में तो बहुमत का शासन चलता है। जब गरीबों का ही बहुमत है तो गरीबों का ही राज्य क्यों न चले? क्या सारे गुजरात में से गरीबों के डेढ़ सौ प्रतिनिधि नहीं मिल सकते, जो प्रतिज्ञा करें कि हम गरीबों का ही हित पहले रखेंगे? एक ऐसा लोक सेवक-संघ बने, जो ऐसे उम्मीदवारों को चुने। आज तो जनता पर असर डालनेवाला सबसे बड़ा शक्ति-केन्द्र राज्य है, राज्य का पैसा जनता का ही है, उसका कारोबार जनता क्यों न चलाये?

हर सिक्के की दूसरी बाजू भी होती ही है, एक पहलू आया कि दूसरा उसके पीछे आया ही समझो! साम्यवादी विचार-धारा में आस्था रखनेवाले एक युवक ने कहा, "साधन-शुद्धि या अहिंसा आदि बातें मैं नहीं करता। फलतः, बनाय-कांठा में इतना अकाल है, चाहे उसको भले-बुरे रास्ते ले लें, मैं परवाह नहीं करता। फिर भी मैं आप लोगों से हाथ जोड़कर अनुरोध करता हूँ कि आप सर्वोदयवाले सत्ता की राजनीति में कभी न जायें। तेलंगाना की हिंसा के बीच भूमि-दान का बीज पनपा। एक आदमी पूछता है कि क्या माँगने से जमीन मिलेगी? और जमीन मिली, एक दो नहीं, लाखों एकड़, और अब तो डेढ़ लाख ग्रामदान भी हो चुके। इन सब कामों के पीछे है मानव-निष्ठा। अब आप लोग भी राजनीति में—

राजस्थान अपनी घोषणा निभाये

केन्द्रीय सरकार का रवैया खेदजनक

तारीख २७ फरवरी '७० के अखबारों द्वारा राजस्थान के वित्त एवं आबकारी मंत्री श्री मथुरादासजी माथुर ने राजस्थान में १ अप्रैल १९७२ से पूर्ण शराबबन्दी नीति की क्रियान्विति के विषय में आशंका प्रकट की है, यह पढ़कर आश्चर्य हुआ। कारण बताते हुए उन्होंने कहा है कि केन्द्रीय सरकार की ओर से घाटापूर्ति नहीं हो रही है, यह पढ़कर विशेष दुःख हुआ। केन्द्रीय सरकार अपने वादे से मुकर क्यों? आशा करता हूँ कि मद्यनिषेध के समर्थक राष्ट्रपतिजी तथा प्रधान मंत्री शराबबन्दी को आगे बढ़ाने में पूरा योगदान दें।

साथ-ही-साथ राजस्थान-सरकार को अपने लक्ष्य को सिद्ध करने में विशेष काम करना होगा। शिथिलता न आने पाये इसका ध्यान जन-सेवकों का है। इसके पहले अलग-अलग दो दिन शराब की दूकानें बन्द कराने के बारे में हमने चेतावनी दी थी, कि इसका अपेक्षित परिणाम नहीं आयगा। वैसा ही हुआ। नाममात्र के दो दिन की बन्दी ही नहीं थी, सरकारी नियन्त्रण अत्यन्त ढीला था। अब दिनों के बजाय क्षेत्र-विस्तारों में शराबबन्दी होगी, ऐसा ऐलान करते हुए मंत्रीजी ने जालोर, बाड़मेर तथा जैसलमेर जिले तथा उदयपुर जिले की और तीन तहसीलें बढ़ाने जा रहे हैं, यानी १ अप्रैल १९७० से राजस्थान के २६ जिलों में से ६ जिले तथा ६ तहसीलें शराबमुक्त होंगी। सन् १९७२ की अप्रैल की पहली तारीख तक पहुंचने के लिए प्रारम्भ बड़ा होना चाहिए। कम-से-कम और ८ जिले, जैसे कि जालोर, बाड़मेर, जैसलमेर, पाली, उदयपुर, झालावाड़, भरतपुर, अलवर का विस्तार बढ़ाना चाहिए। सब मिलकर ११ जिले हो जायें, तो वह कदम लक्ष्यपूर्ति के लिए पर्याप्त होगा।

राजस्थान की मद्यनिषेध परामर्शदात्री

→आयेंगे, तो मानवता देखेगी कि एक माला थी, एक छोटा-सा दीया था, वह भी बुझ गया। आप लोग सत्ता में जायेंगे तो आप अपनी मूल मानव निष्ठा खो बैठेंगे, आपकी जो ताकत है वह इस निष्ठा में ही है।"

श्री नारायण भाई ने चर्चा का समापन किया

"हमारे सामने शोषणहीन समाज जैसा ही शासनमुक्त समाज का लक्ष्य भी है। सेवा के लिए शासन उपयुक्त है, ऐसा विचार यहाँ प्रस्तुत हुआ। लेकिन विनोबा तो आज की राजनीति को मूल में से ही उखाड़ने का पुरुषार्थ कर रहे हैं। वह एक अति व्यापक राजनीति है। विनोबा उसे लोकनीति कहते हैं।"

राजनीति में हमारे जाने से देश की परिस्थिति में क्या फरक पड़ेगा, वह तो हमारी समझ में नहीं आता, बुद्धि छोटी, अनुभवशून्य, चालाकी की कमी। लेकिन इस सारी चर्चा में किसीकी बात ने हमारे हृदय पर अमिट छाप छोड़ी, तो उस साम्यवादी युवक की बातों ने। बार-बार वह वाक्य कानों में गूंजता है: "आपकी मूल-निष्ठा है मानव-निष्ठा, आपकी जो कुछ शक्ति है, वह इस निष्ठा में ही है।"

—कान्ता हरविलास

सरकार प्रभु की पूजा कब तक ?

हरेक समय कई समस्याएँ उत्पन्न हुईं और उन्हें हल करनेवाले कई लोग हुए। समस्या और समस्या परिहार का प्रश्न सतत चलता रहा है। हमारे सम्मुख का प्रश्न यह है कि आप राज्य (स्टेट) को मान्यता देनेवाले हैं क्या? यह प्रश्न नहीं हल होगा तब तक जनता के दुःख कायम रहेंगे, किसी-न-किसी स्वरूप में। हम भूमि बाँटते हैं तो इसका प्रमुख अर्थ यह है कि हम गाँव के लोगों का इकट्ठा जमा करके यह काम करते हैं। इसके लिए सरकार की जरूरत नहीं पड़ती। जिस काम में सरकार की जरूरत पड़ती है वह काम 'आउट डेटेड' है, चाहे वह 'चलन मुक्ति' का काम हो या 'शराब मुक्ति' का। अब आपने राजस्थान में शराबबन्दी के लिए आन्दोलन किया और कुछ प्रस्ताव भी माने गये और अब राजस्थान-सरकार ने शराबबन्दी उठा दी है। उनका कहना है कि इससे लोगों का शराब पीना तो रुकता नहीं और सरकार का पैसा भी नष्ट होता है। ऐसा कहकर बरसों में उन्होंने बेधड़क नीति में ही परिवर्तन किया। मैंने तो कहा था कि यह बात आप सरकार पर थोप रहे हैं। इसके बजाय सरकार को ही चुनौती दो कि आप चाहे जितनी चाहें उतनी शराब की दूकानें खोलिए। हम गाँव-गाँव जाकर इस प्रकार का लोकमानस तैयार करेंगे कि कोई मनुष्य शराब पीये ही नहीं। ऐसी जन-शक्ति आपने दिखायी ही नहीं। आप कहते हैं कि हम सरकार द्वारा ही करेंगे। मैं उसका विरोधी नहीं हूँ। जब तक सरकारें हैं तब तक उनसे ये काम करा ही लेने पड़ते। लेकिन आपको तो चुनौती देना चाहिए और जनता को ही तैयार करना चाहिए। हम जो कहते हैं वही बात जनता को जँचेगी हमारा विश्वास है, क्योंकि हमारा कथन सत्य है। इसलिए जनशक्ति खड़ी कीजिए तभी यह सब होगा। हम लोगों को सभी कामों में सरकार की आवश्यकता लगती है। साहित्य-प्रचार के पत्रक पर भी मंत्रियों के हस्ताक्षर की आवश्यकता प्रतीत होती है। ऐसा यह साष्टांग दण्डवत, यह चरणस्पर्श और यह दर्शनपूजन, इस सरकार प्रभु के कितने दिन करते रहेंगे ?

— विनोबा

[सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग तथा श्री गोविन्दराव देशपाण्डे के साथ गोपुरी, वर्धा में ३-३-७० को हुई चर्चा के दरम्यान व्यक्त किया गया विचार।]

समिति में यह चर्चा पहले हो जानी चाहिए थी। शराब की दुकानों की नीलामी की प्रक्रिया के बारे में भी सोचना होगा। सरकार को शराब की आमदनी तो बड़ी है, फिर घाटे का प्रश्न ही कहाँ रहता है? प्रचार और नियंत्रण, दोनों साधनों का पूरा उपयोग होगा तब शराब-बंदी सफल होगी, यह हम सबको समझ लेना चाहिए।

जनता को शराब जैसे शैतान से मुक्ति दिलाने में सरकार त्वरित कदम उठाने में, अपनी प्रगतिशील घोषित नीति को सफल बनाने में पीछे नहीं रहेगी यही आशा, अपेक्षा और धारणा है।

जयपुर, २-३-'७० —गोकुलभाई दौ० भट्ट

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में नयी औद्योगिक पद्धति

(गतांक से आगे)

बिना संस्कृति के न खेती सुधर सकती है, और न उद्योग स्थापित किये जा सकते हैं। संस्कृति मुख्य है। संस्कृति औद्योगिक विकास के लिए रास्ता साफ करती है, और उद्योगों से संस्कृति को बढ़ावा मिलता है।

अगर यह बात मान ली जाय तो विकास की व्यूह-रचना स्पष्ट हो जाती है। सबसे पहले गाँवों में संस्कृति ले जानी चाहिए, साथ ही उद्योग भी। गाँव का अर्थ है छिटके हुए झोपड़े नहीं, बल्कि इकट्ठा कुछ हजार निवासी।

हर चीज के लिए ढाँचे (स्ट्रक्चर) की जरूरत होती है। जैसे उद्योग के लिए योजनापूर्वक बनाया हुआ ढाँचा चाहिए, उसी तरह संस्कृति के लिए भी चाहिए। उद्योग और संस्कृति, दोनों के लिए ढाँचा भौगोलिक भी चाहिए, और गुणात्मक भी।

संस्कृति की दृष्टि से एक आदर्श ढाँचा कुछ इस प्रकार होगा। हर देश में कई सांस्कृतिक इकाइयाँ होती हैं। उनमें से हर एक में लगभग १० लाख, या ज्यादा-से ज्यादा ३० लाख लोग होते हैं। सांस्कृतिक इकाई एक पिरैमिड की तरह होती है। गाँव में आइमरी स्कूल, कुछ गाँवों के बीच बाजार में सेकेंडरी स्कूल, कुछ बाजार-क्षेत्रों को मिलाकर एक क्षेत्रीय केन्द्र, उसमें महाविद्यालय।

औद्योगिक रचना भी कुछ इसी प्रकार की होगी। गाँव में छोटे (स्माल स्केल) उद्योग, बाजारों में मध्यम स्तर (मीडियम स्केल) के उद्योग, क्षेत्रीय केन्द्रों में बड़े स्तर (लार्ज स्केल) के उद्योग, राजधानी में विशेष प्रकार के उद्योग। राजधानी में इस तरह के उद्योगों का होना आवश्यक नहीं है, क्योंकि वहाँ से देश को गैर-औद्योगिक सेवाएँ मिलती हैं।

इस तरह के आदर्श ढाँचे हर जगह सम्भव नहीं होंगे। लेकिन इससे विकास की दिशा स्पष्ट होती है। उद्योगों को अक्सर भौगोलिक दृष्टि सामने रखनी पड़ती है इसलिए वे हमेशा 'आदर्श' से नहीं बँध सकते।

औद्योगिक विकास ऐसी चीज है जिसमें यह नहीं कहा जा सकता कि यही सही है, फिर भी यह तो मान ही लिया जा सकता है कि विशालकाय योजनाएँ, चाहे वे खेती में हों, उद्योग या यातायात में हों या शिक्षा में ही हों, सोचने में आकर्षक मालूम होती हैं, लेकिन व्यवहार में भयंकर साबित होती हैं। सफलता की कुंजी बड़े पैमाने पर उत्पादन (मैस-प्रोडक्शन) में नहीं है जनता द्वारा उत्पादन (प्रोडक्शन बाई मैसेज) में है। किसी नयी प्रवृत्ति को केवल आर्थिक दृष्टि से देखना गलत है, उसके राजनैतिक, समाजशास्त्रीय, तथा भौगोलिक पहलुओं को

डा० ई० एफ० शूमाखर

भी उतना ही महत्त्व देना चाहिए। अर्थशास्त्र हमेशा छोटे उद्योग के मुकाबिले बड़े को, ग्रामीण से शहरी को, श्रम-केन्द्रित से पूँजी-केन्द्रित को महत्त्व देता है। नीति का निर्धारण अर्थशास्त्र के हाथ में नहीं छोड़ना चाहिए। नीति तय हो जाने के बाद ही अर्थशास्त्र को हस्तक्षेप करने देना चाहिए। नीति में हमेशा छोटे, ग्रामीण, श्रम-केन्द्रित उद्योग को तरजीह मिलनी चाहिए।

विकास की दृष्टि से तीन दिशाओं में प्रयत्न एकसाथ होना चाहिए

(क) ग्रामीण क्षेत्रों में संस्कृति का प्रवेश हो,

(ख) ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग कायम हों,

(ग) खेती के तौर-तरीके उन्नत किये जायें।

संस्कृति में देखने की, पढ़ने की चीजें, संगीत, औद्योगिक हुनर, खेल, स्वास्थ्य, सफाई आदि शामिल हैं। इन सभी में पाँव परीब हैं। लेकिन ये चीजें ऐसी हैं जिनके लिए ज्यादा रुपये की नहीं, सही नेतृत्व की जरूरत है।

स्थानीय कला (लोकल आर्ट) विकास का बहुत बड़ा माध्यम है। इससे मस्तिष्क में स्फूर्ति पैदा होती है, और मस्तिष्क की स्फूर्ति से ही सारी चीजें शुरू होती हैं। रेडियो के संगीत से अपना संगीत कहीं ज्यादा अच्छा होता है।

सबसे अधिक महत्त्व है पढ़ने की सामग्री का। साक्षरता के बाद क्या ? हम साक्षरता पर जितना खर्च करते हैं, उसका एक भाग अगर पढ़ने लायक अच्छा साहित्य बनाने पर खर्च हो तो बहुत अच्छा होगा। साहित्य कुछ थोड़े प्रकार का नहीं, हर प्रकार का होना चाहिए। सुव्यवस्थित 'दिमाग को भोजन दो' कार्यक्रम चलाना चाहिए।

इन सब कार्यक्रमों में पुरुषों के साथ-साथ स्त्रियों को भी शरीक करना चाहिए, क्योंकि अगली पीढ़ी उन्हींकी देख-रेख में है।

यह सारा काम कैसे होगा ? क्या थोड़े से शिक्षा-विभाग या सामुदायिक विकास के अधिकारी इतना बड़ा काम कर सकते हैं ? नहीं, देश के पूरे शिक्षित समुदाय को शरीक करना पड़ेगा।

हमें संस्कृति का महत्त्व महसूस करना चाहिए। अक्सर यह बात भुला दी जाती है कि विकास की मुख्य प्रेरणा शक्ति पैसे में नहीं संस्कृति में है।

गाँवों और शहरों में अकेलापन इस कारण खलता है क्योंकि वहाँ पढ़ने लायक चीजें नहीं मिलतीं। राजधानी में छपने-वाले अखबार वहाँ अक्सर देर से पहुँचते हैं, और बहुत खर्चीले होते हैं। अनुकूल व्यवस्था हो तो छोटी, स्थानीय, समाचार-बुलेटिनें निकाली जा सकती हैं।

एक विकासशील देश में इस तरह की एक योजना अपनायी गयी। बड़े गाँवों और छोटे शहरों के कुछ सुशिक्षित लोगों को, जिनमें से अधिकांश स्कूल-शिक्षक थे, राजधानी में ट्रेनिंग दी गयी। ट्रेनिंग के बाद उन्हें 'अपने आप-करो-प्रेस' (डू-इट-योरसेल्फ किट) दिया गया जिसमें ट्रेनिंग-स्टर, टाइप राइटर, हाथ का डुप्लिकेटर,

और कागज दिया गया। यह तय हुआ कि हफ्ते में तीन बार रेडियो एक समाचार-बुलेटिन धीमी गति से ब्राडकास्ट करेगा, और ये लोग उसको सुनकर अपनी समाचार-बुलेटिन तैयार कर लेंगे। यह योजना बहुत सफल हुई। कई जगह स्थानीय सम्पादक स्थानीय खबरें और एक छोटा सम्पादकीय लेख भी दे देता था।

पढ़ने की सामग्री संस्कृति के मुख्य साधनों में एक है, और उसे तैयार करने में बहुत खर्च भी नहीं होता। बस इतना ख्याल रखने की जरूरत है कि सामग्री का गरीब लोगों के वास्तविक जीवन से मेल बैठता हो। खबरों के अलावा, गरीब लोगों को छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ और देखने लायक चीजें चाहिए जिनमें आत्म-निर्भर होने के सरल, सुगम उपाय सुझाये गये हों, जैसे छोटी सड़क कैसे बनायी जाय, अपने घर का थोड़ा सुधार कैसे किया जाय, अपने और बच्चों के भोजन में किन बातों का ध्यान रखा जाय, स्वास्थ्य-सफाई की प्रारम्भिक बातें क्या हैं, रंग का काम कैसे होता है, तथा मशीन कैसे सीखा जाता है, आदि।

हम यह न सोचें कि इन छोटी चीजों को तैयार करना आसान होता है। पढ़े-लिखे, जन-जीवन में रुचि रखनेवाले, बौद्धिक लोग अपने खाली वक्त में यह काम कर सकते हैं। लेकिन उन्हें यह बात समझ लेनी होगी कि उनके और गरीब के बीच तीन बड़ी खाइयाँ हैं जिन्हें भरने के लिए करुणा की वृत्ति जरूरी है। एक खाई है अमीरी-गरीबी की; दूसरी है शिक्षित-अशिक्षित की; तीसरी है ग्रामीण-शहरी की।

औद्योगिक विकास ऐसी चीज है जिसके लिए हर जगह गुंजाइश है—जहाँ भी कुछ सौ या हजार लोग साथ रहते हों। उसी तरह उद्योग वहाँ भी खड़े हो सकते हैं, जहाँ कीमती कच्चे माल पैदा होते हों, या किये जा सकते हों।

एक जिले का, जिसमें कई लाख लोग रहते होंगे, औद्योगिक विकास इन बातों पर निर्भर करेगा : (क) लोगों का अभि-क्रम और नयी दिशा में काम करने की तैयारी, (ख) तकनीकी जानकारी, और स्थानीय कच्चे माल का ज्ञान, (ग) व्यापारिक जानकारी, (घ) पैसा।

देहाती क्षेत्रों, और छोटे शहरों में ये सब चीजें बहुत कम मात्रा में मिलती हैं इसलिए औद्योगिक विकास इस बात पर निर्भर करेगा कि जो कुछ भी स्थानीय तौर पर मिले उसका अधिक-से-अधिक लाभ उठाया जाय, और जो कमी पड़े उसकी सुनियोजित ढंग से बाहर से पूर्ति की जाय।

गरीबी एक दुश्चक्र है, और किसी चीज को शुरू करना कठिन होता है। औद्योगिक विकास भी—कम से-कम शुरू में—उन्हीं चीजों से शुरू करना पड़ता है जिनमें शुरुआत की जा चुकी है। इसलिए सबसे पहले जरूरी है कि लोग जो कुछ कर रहे हैं उसका अध्ययन किया जाय। ऐसा हो नहीं सकता कि लोग कुछ कर ही न रहे हों। इतना मालूम हो जाने पर लोग जो कुछ कर रहे हैं उन्हें उसीमें मदद की जाय, यानी मदद इस दृष्टि से हो कि वे कच्चे माल से इस्तेमाल के लायक माल तैयार करने लगें।

दूसरा काम यह अध्ययन करने का है कि लोगों की आवश्यकताएँ क्या हैं? आवश्यकताएँ मालूम हो जाने पर इस तरह की मदद दी जाय कि वे अपने ही प्रयत्न से अपनी आवश्यकताएँ पूरी कर लें।

ये दो काम पूरे हो जायँ तो तीसरा शुरू किया जा सकता है। वह तीसरा काम यह है कि बाहर के बाजार के लिए माल तैयार किया जाय।

अपने अभिक्रम से अपनी मदद, और अपनी उन्नति का सबसे अधिक महत्त्व है। बिना उसके सन्तुलित, समन्वित विकास, सम्भव नहीं है। इसलिए जहाँ ऐसा अभिक्रम दिखाई दे उसे पूरा संरक्षण मिलना चाहिए, और बाहर की पूरी मदद मिलनी चाहिए।

ऐसी स्थिति में जो उद्योग खड़े होंगे उनमें प्रति व्यक्ति ज्यादा पूँजी की जरूरत नहीं होगी। थोड़ी पूँजी से ज्यादा उत्पादन-केन्द्र खोले जा सकते हैं। ऐसे उत्पादन-केन्द्र जितने ही अधिक होंगे उतना ही आसान होगा बढ़ती हुई बेकारी को रोकना। (क्रमशः)

उत्तरप्रदेश में ३१,०२१ गाँव ग्रामदान में प्राप्त

उत्तरप्रदेश के ग्रामदान ग्रामस्वराज्य आन्दोलन की फरवरी सन् १९७० तक की प्रगति के बारे में उत्तरप्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समिति के कार्यालय से सूचना प्राप्त हुई कि सिर्फ फरवरी महीने में फैजाबाद जिले में ४२८ ग्रामदान, ४ प्रखण्डदान, हरदोई जिले में ११३९ ग्रामदान, देवरिया जिले में १७७ ग्रामदान ३ प्रखण्डदान, एटा जिले में १२४ ग्रामदान, मथुरा जिले में १०० ग्रामदान १ प्रखण्डदान, बिजनौर जिले में १२५ ग्रामदान, सुल्तानपुर जिले में ३ ग्रामदान और रायबरेली जिले में ६८ ग्रामदान प्राप्त हुए। इस प्रकार फरवरी के अन्त तक प्रदेश के ४५ जिलों में कुल ३१,०२१ ग्रामदान, १७० प्रखण्डदान और ७ जिलादान घोषित हो चुके हैं।●

खादीबाग में ग्रामदान-अभियान

कार्यकर्ताओं को, विशेषतः ग्रामदानी गाँव के मुखिया लोगों को, प्रशिक्षित करने के उद्देश्य से राजस्थान खादी संघ ने अपने प्रधान कार्यालय, खादीबाग, जयपुर में दो दिन का एक शिविर आयोजित किया। ५ शिविरार्थियों ने जयपुर जिले के गोविन्दगढ़, दूदू पंचायत-समितियों तथा झुन्झुनू जिले में ग्रामदान तथा ग्रामदान के लिए और साथियों का तैयार करने का संकल्प प्रकट किया।

दो दिन के शिविर में टोलियों में बैठकर आन्दोलन के दौरान उत्पन्न होनेवाले प्रश्न, समस्याओं आदि पर विचार से चर्चा हुई।

इस शिविर में सर्वश्री दयानिधि पटनायक, रामेश्वर अग्रवाल और पूर्णचन्द्र जैन उपस्थित थे और शिविर को उनका मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।●

टिहरी-गढ़वाल में पूर्ण मद्य-निषेध की माँग

टिहरी-गढ़वाल के समस्त राजनैतिक पक्षों—कांग्रेस, साम्यवादी दल, प्रसोपा और जनसंघ—ने राज्य-सरकार से देश के इस सर्वाधिक गरीब जिले में पूर्ण शराबबन्दी करने की माँग की है। सनातन दल भारतीय क्रांति दल ने राज्य-सरकार को एक ज्ञापन भेजा है, जिसमें इस जिले के प्रशासन और राजनीति को शराब के व्यापारियों के कुप्रभाव से मुक्त करने के लिए तत्काल शराबबन्दी करने की प्रार्थना की है। जिले के दोनों विधायकों—श्री इन्द्रमणि बडूनी (संगठन कांग्रेस) और श्री गोविन्द सिंह नेगी (साम्यवादी)—तथा जिला परिषद के अध्यक्ष श्री प्रेमलाल वैद ने राज्य-सरकार से सीमान्त जिलों से मिले हुए इस जिले में शराबबन्दी करने की माँग की है। टिहरी नगर के आस-पास की ग्रामसभाओं ने भी इस आशय के प्रस्ताव पास किये हैं और सैकड़ों हस्ताक्षरों से युक्त एक ज्ञापन सरकार को भेजा है।

महिलाओं द्वारा धरना

दूसरी ओर, पिछले कई महीनों से शराबबन्दी के लिए होनेवाले प्रदर्शनों और प्रस्तावों के बावजूद वर्ष १९७०-७१ के लिए आबकारी के ठेके हो जाने के फलस्वरूप अब महिलाओं ने शराबबन्दी के लिए सीधी कार्यवाही प्रारम्भ कर दी है। ८ मार्च को आस पास के गाँवों की महिलाओं के एक दल ने शराब की दूकान के दरवाजे पर धरना दे दिया। ठेकेदार, आबकारी विभाग के अधिकारी और पुलिस इस आकस्मिक कदम से हक्के बक्के रह गये और नगर के हिस्ट्री शीटर तथा अन्य बदनाम व्यक्तियों की मदद से उन्होंने घेरा तोड़ने की कोशिश की, परन्तु विफल रहे। अन्त में उन्होंने दूकान की रोशनियाँ बन्द कर उपद्रव मचाने की कोशिश की। महिलाएँ टस-से-मस नहीं हुईं। एक शराबी की, जो महिलाओं पर झपट पड़ा, चप्पलों से मरम्मत हुई। आस-पास के गाँवों की महिलाओं ने शराब की दूकान बन्द होने तक बारी-बारी से धरना-आन्दोलन जारी रखने का निश्चय किया है।

टिहरी नगर से १६ मील दूर श्रीनगर सड़क पर स्थित काडीखाल में भी, जो गंगोत्री—केदारनाथ—बद्रीनाथ मोटर-मार्ग पर है, शराब की दूकान को बन्द करने के लिए कोटी और आस-पास के गाँवों के लोगों ने आन्दोलन प्रारम्भ किया है। इस आन्दोलन का सचालन भूतपूर्व सैनिक कर रहे हैं। इस गाँव के १०० से अधिक व्यक्ति सेना में हैं। उनका कहना है कि हम घरों से बाहर रहकर देश की रक्षा कर रहे हैं, पर हमारे घर पर सरकार ने हमारी माँ बहिनों की इज्जत पर प्रहार करने के लिए शराब की दूकान खोल दी है। प्रदेश के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री चन्द्रभानु गुप्त ने पिछले वर्ष इसी स्थान पर इस दूकान को बन्द करने की घोषणा की थी।

शराब के व्यापारियों ने बिक्री बढ़ाने के लिए शराब के दामों में २५ प्रतिशत से अधिक कमी कर दी है और जिले के मुख्य-मुख्य स्थानों में ट्रकों पर भरकर शराब पहुँचाना प्रारम्भ कर दिया है। उनके इस प्रकार के गोदाम चौंबार (रैका), सिराई, पुल, चम्पा और मदननेगी में हैं। पुलिस को भी, जिसके संरक्षण में वे यह अवैध कार्य कर रहे हैं, अब राज्य में सरकार बदलने के कारण चिंता होने लगी है। पिछले दिनों शराबियों ने गडोलिया में स्वास्थ्य विभाग की सिनेमा-गाड़ी को तोड़ दिया और पुलिस की जमकर पिटाई की।

—सुन्दरलाल बहुगुणा

टिहरी में शराबबन्दी आन्दोलन ने जोर पकड़ा

—धारा १४४, बहुगुणा सहित ११ महिलाओं की गिरफ्तारियाँ, पुलिस का दमनचक्र प्रारम्भ, नगर में पूर्ण हड़ताल—

टिहरी, १६ मार्च। टिहरी में भागीरथी के तट पर स्थित देशी शराब की दूकान बन्द करवाने के लिए चल रहे आन्दोलन में अचानक ही भारी तेजी आ गयी, जब कि दूकान के चारों ओर सौ गज की दूरी तक शासन ने धारा १४४ लागू करके टिहरी के जाने-माने समाजसेवक श्री सुन्दरलाल बहुगुणा सहित ११ महिलाओं को हिरासत में ले लिया। शराब की दूकान के सामने सैकड़ों की संख्या में सभी स्त्री पुरुष इकट्ठे होकर भजन-कीर्तन कर रहे थे कि तभी शासन ने किसी सफाई-कर्मचारी को भेजकर वहाँ पर धारा १४४ लागू करवा दी। इस घोषणा के तुरन्त बाद ही पी० ए० सी० के १०० से अधिक सशस्त्र जवानों ने शान्त भाव से बैठी भीड़ को अपनी लाठियाँ घुमाकर तितर-बितर कर दिया और दूकान के चारों ओर नाकेबन्दी कर दी।

७ बजे पहली पंक्ति के सत्याग्रहियों की गिरफ्तारी के बाद प्रदर्शनों और जुलूसों से पूरे टिहरी शहर में उमंग की लहर फैल गयी। ९ बजे रात को स्वामी लोकानन्द, पंडित विशम्भर दत्त और विश्वेश्वर प्रसाद जोशी को पुलिस ने जबरदस्ती और चालबाजी से हिरासत में ले लिया।

पूरे शहर में पी० ए० सी० के आतंक के बावजूद आस-पास के इलाके से सैकड़ों नर-नारी अपने को गिरफ्तार करवाने के लिए बैठे हुए हैं। सरकार के दमनचक्र के प्रारम्भ होते ही दूर-दूर के गाँवों में भी गरमी आ गयी है। टिहरी-बाजार में पूर्ण हड़ताल है।

उधर काडीखाल की दूकान पर भी धरना जारी है। शराब की बिक्री ठप्प हो गयी है। शराब की खपत करने के लिए ठेकेदारों ने दामों में भारी कमी कर दी है।

—योगेशचन्द्र बहुगुणा

भूदान-यज्ञ · सोमवार, ३१ मार्च '७०

रोहतक में पदयात्रा

दिनांक ३ मार्च १९७० को कन्या गुरुकुल, खानपुर में जिला सर्वोदय मंडल की मीटिंग हुई, जिसमें जिला पदाधिकारियों का चुनाव हुआ।

अध्यक्ष श्री रामस्वरूपजी, मंत्री श्री मांगेराम शीतल और श्री राम मेहरजी जिला-प्रतिनिधि सर्वसम्मति से चुने गये।

इसके पश्चात् ता० ९ मार्च को एक सभा हुई, जिसमें तय हुआ कि —

(१) जिले में शेष रहे आठ ब्लाकों में अभियान चलाकर चालू वर्ष के अंत तक जिलादान करवाया जाय।

(२) अभियान चलाने और जिला सर्वोदय मंडल की दूसरी प्रवृत्तियाँ चलाने के लिए बीस हजार रुपये का बजट अनुमानित किया गया।

(३) उक्त रकम को सम्पत्तिदान, भक्तिदान और श्रमदान के रूप में इकट्ठा किया जाय, ऐसा सोचा गया।

(४) २० हजार रुपये इकट्ठे करने तथा जनशक्ति को खड़ी करने के लिए ता० ११-३-'७० से एक पदयात्रा गुरुकुल खानपुर से निकालने का कार्यक्रम बना।

तदनुसार रोहतक जिला सर्वोदय-मंडल की तरफ से वयोवृद्ध सर्वोदय लोक-सेवक, आजादी की लड़ाई के जनरल श्री गरीब रामजी, अपने साथी नम्बरदार दयोदयाल और बाबा दीपू के साथ ता० ११ मार्च को ४ बजे सायं भक्त फूलसिंहजी महाराज की तपोभूमि कन्या गुरुकुल खानपुर से आचार्या बहन सुभाषिणी का आशीर्वाद लेकर २७ दिन की पदयात्रा पर रवाना हुए।

गुरुकुल में यात्रा के प्रस्थान पर प० अभिमन्युजी की अध्यक्षता में एक भावपूर्ण समारोह हुआ।

बहन सुभाषिणीजी ने यात्रा के उद्देश्य की पूर्ति के लिए शुभ कामना व्यक्त करते हुए सर्वोदय के काम में अपने पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया। गुरुकुल परिवार ने १७५ रु० यात्रीदल को अनुदान-रूप में भेंट किये।

—मांगेराम शीतल

राँची जिला ग्रामस्वराज्य समिति के निर्णय

राँची जिला ग्रामस्वराज्य समिति की प्रथम बैठक, समिति के अध्यक्ष श्री जोएल लकड़ाजी के सभापतित्व में १३ मार्च को हुई। बैठक में यह तय किया गया कि जिले के लोहरदागा, सिसुनपुर, बाघरा, सेन्हा और कुण्डू में ग्रामदान के बाद का कार्यक्रम सघन रूप से अविलम्ब प्रारम्भ किया जाय। प्रारम्भ में प्रयोग के तौर पर लोहरदागा और कुण्डू प्रखण्डों को चुना गया है, जहाँ ग्रामसभा का गठन और निर्माण के कार्य चलाये जायेंगे।●

बेनीपट्टी में ग्रामसभा तथा बीघा-कट्ठा-अभियान

मधुबनी, ११ मार्च। इस अनुमण्डल के बेनीपट्टी प्रखण्ड में पिछले एक माह से ग्रामसभा बनाने, ग्रामदानी गाँवों की पुष्टि तथा बीघा-कट्ठा अभियान श्री दिनेश झा, व्यवस्थापक, खादी भण्डार बेहट तथा श्री विश्वनाथ मिश्र सर्वोदय कार्यकर्ता के नेतृत्व में पदयात्रा-टोली द्वारा चल रहा है। इस सिलसिले में पूरे प्रखण्ड के १२९ गाँवों में ग्रामसभा का गठन हो चुका है। प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति का भी गठन हो चुका है। ५९ गाँवों की पुष्टि जिला पुष्टि पदाधिकारी महोदय के द्वारा हो चुकी है तथा ४ गाँव बिहार सरकार द्वारा गजटेड भी किये जा चुके हैं। बीघा-कट्ठा वितरण का काम भी तेजी से बढ़ रहा है।●

मुजफ्फरपुर जिला सर्वोदय मंडल, ग्रामस्वराज्य-समिति का गठन

मुजफ्फरपुर। गत दिनांक ९-३-'७० को बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ, प्रधान कार्यालय 'लक्ष्मीनारायण-स्मारक भवन' में रचनात्मक कार्यकर्ताओं की एक बैठक श्री ध्वजा प्रसाद साहु की अध्यक्षता में हुई, जिसमें सर्वसम्मति से जिला ग्रामस्वराज्य समिति के बाबा रामबहादुर लाल अध्यक्ष एवं श्री गोपालजी मिश्र मंत्री चुने गये।

द्वितीय बैठक में जिला सर्वोदय मंडल का पुनर्गठन हुआ। इस बैठक की अध्यक्षता श्री जगन्नाथ प्रसाद साहु ने की। इस बैठक में लोक सेवकों की उपस्थिति अच्छी रही। सर्वसम्मति से श्री बद्रीनारायण सिंह अध्यक्ष, एवं श्री विन्देश्वरी प्रसाद सिंह मंत्री चुने गये। श्री मथुरा प्रसाद सिंह सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधि चुने गये।

स्वावलम्बी शिविर

१४ फरवरी से १८ फरवरी तक अन्धराठाढ़ी, मधुबनी में मधुबनी अनुमंडल के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का एक शिविर हुआ, जिसमें उपस्थिति ५०-६० के बीच रही। शिविर में भाग लेनेवाले सदस्य अपने साथ प्रतिदिन एक किलो के हिसाब से चावल लाये थे। कुछ सदस्य चावल नहीं लाये थे। कुछ खर्च आस-पास के लोगों से माँग-माँगकर भी जुटाया गया। शिविर समाप्ति के बाद हिसाब करने पर मालूम हुआ कि शिविर पर करीब अस्सी रुपये कर्ज हुआ। इसलिए तय यह हुआ कि भविष्य में हर सदस्य प्रतिदिन एक किलो के बदले १½ किलो चावल शिविर में लायेगा। शिविरार्थी चावल अपने-अपने इलाके से माँग-माँग कर लायें।

इस प्रकार ग्रामस्वराज्य की स्वावलम्बी शिक्षण-प्रक्रिया का प्रारम्भ हुआ।●

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैं०), विदेश में २२ रु०, या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० ... मुद्रित

भूदान-यज्ञ

ग्रामदान-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : २६

सोमवार ३० मार्च, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१, फोन : [illegible]

सामूहिक साधना

'साधना सामूहिक तौर पर होनी चाहिए', इसका इतना ही अर्थ नहीं कि मनुष्यों को इकट्ठा कर साधना करें। बल्कि इसका अर्थ यही है कि 'समूह-जीवन ही जीवन है।' व्यक्ति के जीवन में समाज का जितना हिस्सा है, उतने ही अर्थ में वह जीवन माना जायगा। समाज से अलग जीवन हो ही नहीं सकता। इसलिए हमारा हर सद्गुण सामाजिक होना चाहिए।

वैराग्य को ही लीजिए। वह उचित है या अनुचित तथा कितनी मात्रा में उचित है और कितनी मात्रा में अनुचित ? इन चारों प्रश्नों का उत्तर कुल समाज की दृष्टि से सोचकर ही दिया जायगा। समाज के लिए जितनी मात्रा में जरूरी हो, उससे अधिक मात्रा में अगर किसीमें वैराग्य हो तो, या तो वह व्यक्ति एकांगी वैरागी माना जायगा या उसमें विकृति मानी जायगी। इस तरह सभी गुणों के बारे में सामाजिक दृष्टि से सोचना होगा।

कोई भी गुण व्यक्तिगत नहीं रखना चाहिए। उसे समुदाय में व्यापक बनाना चाहिए। जब तक गुण को सामूहिक रूप नहीं देते तब तक उसकी ताकत ही प्रकट नहीं होती। हिन्दुस्तान में व्यक्ति की महिमा बहुत प्रकट हो चुकी है। लेकिन हम नहीं कह सकते कि यहाँ के लोगों की औसत ऊँचाई दुनिया के दूसरे देशों से ज्यादा हो गयी। यहाँ केवल ऊँचे ऊँचे हिमालय जैसे सत्पुरुष दीख पड़ते हैं, बाकी सारी जमीन अपनी ही जगह है। इससे कोई लाभ नहीं।

आजकल सज्जनता खास लोगों का गुण बन गया है। उसके लिए 'महात्मा' शब्द रूढ़ हुआ है। लेकिन आत्मा न महान् है, न अल्प। वह जितना है, उतना ही रहता है। पर हम सबने स्वयं 'अल्प-आत्मा' बनकर चन्द लोगों को 'महात्मा' बनाया और कहने लगे कि 'महात्मा है यह। लेकिन सब लोगों ने झूठ का इतना प्रयोग किया कि झूठ न बोलनेवाला 'महात्मा' कहा गया। यानी उसकी योग्यता का आधार दूसरों की अयोग्यता हो गयी। इसलिए गुणों की प्रक्रिया व्यापक बनानी होगी। हमें यह समझने की जरूरत है कि सत्य, दया, प्रेम आदि गुणों को महापुरुषों के ही गुण समझकर हम निष्ठुर बने रहेंगे, तो देश आगे नहीं बढ़ेगा। जो प्रेम और दया का प्रयोग महापुरुषों ने अपने जीवन में किया, वह सारे समुदाय में लागू करना हमारा काम है।

२-१०-'६८

विनोबा

बजट : देश की गृहस्थी

(पिछले अंक से आगे)

इस बजट में जो लोग विकास का नया चित्र देखना चाहते हैं उन्हें निराशा होगी। आज तक हमारी सरकार उत्पादन बढ़ाने, किसी तरह उत्पादन बढ़ा लेने, से आगे की बात नहीं सोच सकी है। किसी तरह माल तैयार हो, ज्यादा-से-ज्यादा माल तैयार हो, विकास की यह कल्पना पुरानी पड़ गयी। उत्पादन बढ़ाना जनता के विकास के लिए जरूरी है, लेकिन उत्पादन ही विकास नहीं है। अगर माल नहीं, मनुष्य मुख्य हो, तो उत्पादन से अधिक महत्त्व उत्पादन-पद्धति का है। हमारे बजट में उत्पादन की किसी नयी पद्धति का संकेत नहीं है। हमारा बजट विकास के किन्हीं नये मूल्यों के आधार पर नहीं बना है। नये मूल्यों को हमारे देश के राजनैतिक नेता और सरकारी अधिकारियों ने माना भी कहाँ है? सरकार की पंचवर्षीय योजनाएँ विकास के लिए नहीं बनी हैं, सिर्फ उत्पादन वृद्धि के लिए बनी हैं। हमारा नया बजट चौथी पंचवर्षीय योजना के लिए है जिसका एक वर्ष बीत चुका है।

जिस तरह सरकार की विकास-नीति अधूरी है, उसी तरह उसका समाजवाद भी अधूरा और एकांगी है। जो लोग यह सोचते होंगे कि समाजवाद के नारों के बीच बने बजट में आज के पूँजीवादी-सामन्तवादी समाज के स्थान पर एक नये समाज की रचना शुरू होगी, जिसमें हर व्यक्ति को ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी मयस्सर होगी, उन्हें निराशा होगी। समाजवादी दल और समाजवादी नारों से आगे बढ़कर समाजवादी समाज बनाने की कल्पना अभी हमारे नेताओं के मन में नहीं आयी है। उनके मन में इतना ही है कि देश का अधिक-से अधिक धन सरकार के हाथ में इकट्ठा किया जाय, और जनता के सुख-सुविधा के लिए जितना किया जा सके किया जाय। बैंक, व्यापार और उद्योगों के कंट्रोल आदि का इतना ही अर्थ है। यह सरकारवाद है। इसे कल्याणवाद कह सकते हैं। किसी भी अर्थ में यह नये जमाने का नया समाजवाद नहीं है।

नया विकास भी नहीं, और नया समाजवाद भी नहीं, तो बजट में नया क्या है? जनता से अलग सरकार की जो अपनी गृहस्थी है उसमें देश के लगभग एक करोड़ नेता और नौकर पल रहे हैं। वे सरकार को चला रहे हैं। सरकार को चलाना, और उसे बढ़ाते जाना ही उनका धंधा है, उद्योग है, व्यवसाय है। जीविका के लिए वे सरकार पर आश्रित हैं। हर बजट की तरह इस बजट में भी वे सुरक्षित हैं। विकास हो या न हो, सरकार का खर्च बढ़ता जा रहा है।

लेकिन देश का विशाल जन-समूह, जो अपने वोट से सरकार को बनाता है, और अपने टैक्स से सरकार को चलाता है, सरकार की गृहस्थी से बाहर है। वह अपनी तकलीफों से परेशान है, वह दूसरों के वैभव से नाराज है। उसके मन में तरह-तरह प्रश्न उठ रहे हैं जिनका उत्तर पाने के लिए वह अधीर होता रहा है।

सरकार के कागजों में इनकम-टैक्स देनेवालों की संख्या भले ही २३ लाख रह गयी हो, लेकिन देश में लगभग एक करोड़ ऐसे लोग हैं जिनके पास दौलत की कमी नहीं है। वे कोई भी चीज किसी भी कीमत पर खरीद सकते हैं। वे चाहे जैसे रह सकते हैं। वे देश में ५-६ अरब का तस्कर व्यापार करनेवाले हैं। वे ३० अरब रुपये से देश में काला बाजार का जाल बिछानेवाले लोग हैं। उनका क्या होगा? वे किस कानून की पकड़ में आयेंगे? कितना टैक्स देंगे? उनके मायाजाल से जनता कैसे उबरेगी?

बजट में बड़े उद्योगों को पूँजी बढ़ाने और कर्ज पाने आदि की सुविधा दी गयी है। सरकार का जोर मुख्य रूप से ऐसे उद्योगों पर है जिनका माल बाहर भेजा जाता है। तस्कर व्यापार, काला बाजार, आयात निर्यात, सरकार का घाटा और नोटों का छपना, आदि ये सब चीजें ऐसी हैं जिनके भयंकर परिणामों से जनता सहमत है। एक परिणाम यह है कि उत्पादन चाहे जो हो बाजार में चीजों के दाम नहीं गिरने पाते। सरकार के आँकड़े कुछ भी कहें, हमारी-आपकी जेबें यही कह रही हैं कि चीजों के भाव बराबर बढ़ते जा रहे हैं। वे क्या कभी घटेंगे? अगर इन बढ़े हुए मूल्यों का लाभ छोटे किसान को होता, कारीगर-दस्तकार को होता, तो कुछ सन्तोष की बात होती, लेकिन हो तो यह रहा है कि नीचे के लोगों के हाथ में एक ओर से अगर कुछ आता भी है तो दूसरी ओर से निकल जाता है। सारी दौलत का रुख ऊपर की ओर है। भला यह भी कोई बात है कि जिस देश में समाजवाद के नाम से दिन-रात इतनी उठा-पटक मची हुई हो उसमें नीचे के १०-१५ फीसदी गरीब ही नहीं, बिलकुल कंगाल हों, और उनकी संख्या दिनोंदिन बढ़ती जाती हो?

हमारी सारी अर्थनीति बड़े उद्योगों और बड़ी खेती के चारों ओर घूम रही है। छोटी खेती और छोटी कारीगरी का क्या हाल है? भारत छोटे गाँवों, छोटे लोगों, और छोटी जरूरतवालों का देश है। सरकार के चिंतन में इस बड़े देश के बहुसंख्यक गाँवों और उनके छोटे लोगों का क्या स्थान है? छोटी जमीनवाले भूमिहीन होते जा रहे हैं, और छोटे रोजगारवाले बेरोजगार होते जा रहे हैं। शिक्षित निकम्मे हो रहे हैं। धन, विद्या, शक्ति और हुनर, सब गाँव छोड़कर शहर में जा रहे हैं। क्या बजट में इस क्रम को रोकने की कोशिश है? क्या गाँव को एक इकाई मानकर उसे समन्वित समुदाय बनाने की कल्पना है? गाँव में जो मनुष्य है उसके विकास की क्या योजना है? गाँव को जब तक एक इकाई बनाने का काम नहीं होगा तब तक क्या उसका कोई विकास संभव है?

भारत के गाँवों की बेरोजगारी और गरीबी का उत्तर उद्योग में है। भूमि सबको नहीं मिल सकती और अगर थोड़ी मिल भी जाय तो उससे गरीबी और बेरोजगारी का हल नहीं निकलेगा।

और न तो हल निकलेगा—कुछ दिनों के लिए थोड़ी राहत भले ही मिल जाय—निर्माण की उन फुटकल योजनाओं से, जिन्हें 'रूरल वर्क्स' कहते हैं और जिनके लिए बजट में कुछ करोड़ रुपये रखे गये हैं। इन कामों से देश की अपार, और हर साल बढ़ती हुई, श्रम-शक्ति देश के विकास के साथ नहीं जुड़ेगी। और, अगर विकास की यह शक्ति अलग छोड़ दी गयी तो वह विनाश की शक्ति बनेगी। क्या बजट में एक शब्द भी ऐसा है जिससे पता चलता हो कि इस समस्या को हल करने का प्रयत्न है? प्रतीति सरकार को है, और उसे अक्सर यह कहा गया है कि बेरोजगार को रोजगार देना केवल दया का प्रश्न नहीं, नीति का प्रश्न है। "विकास और आय की वृद्धि की पूरी गति नहीं रखी जा सकती जब तक कि समाज के कमजोर वर्गों की भलाई का उचित ध्यान न रखा जाय।" उचित ध्यान का अर्थ ही है गाँवों का उद्योगीकरण, जिसकी तैयारी न मन में है, न योजना में, न बजट में। प्रधान मंत्री ने बजट में रोजगार की जो कई नयी योजनाएँ गिनायी हैं उनमें बारानी खेती, डेयरी उद्योग, ग्रामीण निर्माण-कार्य, आदि कुल २२ करोड़ दिन के काम का अनुमान लगाया गया है। कुछ भी हो, ये योजनाएँ न पर्याप्त हैं न स्थायी। सरकार खुद कहती है कि १९७५ तक बेरोजगारों की संख्या ६ करोड़ हो जायगी। मगर अर्ध-रोजगारी को जोड़ लें तो आज ही यह संख्या १० करोड़ से भी अधिक है।

गाँव दोहरे शोषण का शिकार है। एक शोषण है शहरों द्वारा जो गाँव से कच्चा माल खरीदते हैं, और गाँव को तैयार माल बेचते हैं, गाँव से सस्ता खरीदते हैं, और गाँव को महँगा बेचते हैं। जहाँ लोग सस्ते 'वोटर' और 'कस्टमर' रहते हैं उन गाँवों का न सरकार पर काबू है, न बाजार पर। दूसरा शोषण गाँव में खुद गाँववालों का चलता है। बड़े किसान और बड़े महाजन, शहर की बाजार-नीति के एजेण्ट बन गये हैं, और गाँवों की दौलत को शहरों में पहुँचाने का काम करते हैं। यह क्रम आज भी जारी है, और आगे भी जारी रहेगा। जो रीति-नीति गाँवों के एक बड़े जन-समूह को स्थायी अकाल की स्थिति में रख रही है उसे बन्द न किया जाय, और केवल अकाल-ग्रस्त क्षेत्रों के लिए कुछ करोड़ रुपये रख दिये जायें तो क्या होगा? और, इसकी भी क्या गारंटी है कि कृपा की थोड़ी वर्षा भी धरती तक पहुँचेगी, बीच में ही नहीं सूख जायेगी?

खर्च की दृष्टि से भी देखा जाय तो लगभग ५३ अरब के प्रस्तावित खर्च में विकास-कार्यों पर कुल मिलाकर लगभग १२ अरब से ज्यादा नहीं खर्च होगा। सिर्फ २०-२१ प्रतिशत! राज्यों को दी जानेवाली सहायता और कर्ज की रकमों को मिलाकर भी बस २९-३० प्रतिशत! केन्द्रीय सरकार के खर्च में कुल लगभग ११ अरब खेती, सिंचाई, बिजली में खर्च होगा जिसका सम्बन्ध गाँवों से है। यह दूसरी बात है कि सरकार के पैसे से गाँव में समाज कैसा बन रहा है।

कुल मिलाकर यह कतर-ब्योंत का बजट है। राजनीति भी कतर-ब्योंत की, अर्थ-नीति भी कतर-ब्योंत की। किसीको पूरा खुश न कर सकने, और किसीको पूरा नाराज न करने, की नीति से संसद में बजट बहुमत से पास तो कराया जा सकता है, लेकिन उससे देश के जीवन को नयी दिशा नहीं दी जा सकती। जरूरत अब उसीकी है। परिस्थिति की दुहाई देकर हम कब तक बुनियादी बातों से कतराते रहेंगे? लेकिन सरकार—सरकार ही क्यों, पूरी राजनीति—मकड़ी की तरह अपने ही जाल में फँस गयी है। जो खुद ही फँसा हुआ हो वह दूसरे को मुक्ति कैसे दिलायेगा? यही वह स्थिति होती है जब मुक्ति का एक ही मार्ग रह जाता है—लोक शक्ति! (समाप्त)

रत्नागिरी जिले का प्रथम प्रखण्डदान, १५० ग्रामदान तथा ६८ हजार रुपये की थैली जे० पी० को समर्पित

पूना जिले की ओर से सर्वोदय-नेता का अभिनन्दन

पूना सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक के अवसर पर १८ मार्च को पूना जिले की ओर से श्री जयप्रकाश नारायण का अभिनन्दन किया गया। इस अवसर पर महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल की ओर से मण्डल के अध्यक्ष श्री गोविन्दराव शिंदे ने रत्नागिरी जिले का प्रथम प्रखण्ड-दान और अन्य दो जिलों के १५० ग्राम-दान श्री जयप्रकाश नारायण को समर्पित किये। 'जयप्रकाश नारायण सत्कार समिति' के अध्यक्ष ने इस अवसर पर ६८ हजार रुपयों की थैली समर्पित की।

पूना को विद्या का प्राचीन केन्द्र होने और देश को उसके बौद्धिक योगदान की महत्ता का स्मरण कराते हुए नगर में आयोजित आमसभा में श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि दुनिया में केन्द्रीय सत्ता और सम्पत्ति की शक्ति को छोटे-छोटे मानवीय समुदायों में बाँटने और इस तरह यान्त्रिक-जकड़ और सत्ता की तान्त्रिक पकड़ से मनुष्य को मुक्त करने की जो कोशिश शुरू हुई है, उसे यहाँ के बुद्धिवादी लोग तटस्थता से समझने का प्रयत्न करें। आपने कहा कि सर्वोदय आन्दोलन भारतीय संदर्भ में मानव की मुक्ति के लिए उसी दिशा में प्रयत्नशील है। सर्वोदय मनुष्य को सत्ता और सम्पत्ति की शक्ति का नियन्त्रक बनाना चाहता है, और उसे इनकी जड़ ढाँचे की जकड़ से छुड़ाना चाहता है।●

अगला सर्वोदय-सम्मेलन

सन् १९७२ तक के समय को आन्दोलन की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। इस दृष्टि से सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति ने पूना की बैठक में आपस में मिलकर विचार करते रहने और संयोजित कदम उठाते रहने की आवश्यकता का अनुभव करते हुए हर साल सर्वोदय-सम्मेलन करने का निर्णय किया है। तदनुसार इस वर्ष नवम्बर में सर्वोदय-सम्मेलन होगा। निश्चित तिथि और स्थान का निर्णय होना बाकी है।●

मानवता की रक्षा के लिए संयम द्वारा संतति-नियमन

'संयम की बात कहने की हिम्मत सर्वोदय के सेवकों में आनी चाहिए' — विनोबाजी की सलाह

आप लोगो को बैठकर सर्वसामान्यतः विचार करना चाहिए कि क्या संयम के द्वारा जनसंख्या का नियमन सम्भव है ? यदि हाँ, तो आप उस प्रकार लोगो से कहें। जन संख्या का पृथ्वी पर भार होगा। भूमि पर भार होने के बाद पृथ्वी हिलने लगती है। ऐसी स्थिति पैदा होगी तो मनुष्य मनुष्य को मार कर खायेगा। यह प्रश्नचिह्न उपस्थित है।

एक अपूर्व विजय-महोत्सव

कम्यूनिस्ट पार्टी मे 'रिफ्ट' हुई और लड़ाई हुई, उसमे जिस पक्ष की जीत हुई और जिसकी हार हुई, वे दोनो कम्युनिस्टों के वंशज हैं। उनका सिद्धान्त बदला और लड़ाई हुई और उसमे आदमी मारे गये। फिर विजयी लोगो ने विचार किया कि हम विजय-महोत्सव करें। उस उत्सव म उन्होने उन मारे हुए मनुष्यो का मांस पकाया और वह रस प्रसाद रूप से सेवन किया। आपने सुना है ? नहीं ! यानी आपका ज्ञान 'आउट डेटेड' है। बाबा 'अपटूडेट' ज्ञान रखता है। यह क्या घटना हुई इसके विषय मे यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि हिंसा यदि पाप है तो वह तो हो ही चुका है। अब 'विटेमिन्स' छोड़ने मे क्या अर्थ है ? युद्ध के लिए जो लोग आते हैं वे उत्तम स्वास्थ्य के लोग होते हैं। उन्हें व्यर्थ गँवाना कहाँ तक योग्य है ? मारने का पाप हो ही गया, अब खाने का पुण्य क्यों गँवायें ? यह प्रश्न मैंने 'स्थितप्रज्ञ-दर्शन' मे उपस्थित किया। वह किताब पढ़कर एक जवान ने मुझे कहा कि मैं आपको एक गुप्त बात कहता हूँ। लड़ाई मे अन्न की 'सप्लाई' कम हो जाने पर हम चुपचाप मारे हुए मनुष्य को खा लेते हैं। इस प्रकार खाने की अनुज्ञा मिल जाय तो मारने के लिए भी प्रेरणा मिलेगी। चीन मे उन लोगो ने मांस का रस खाया और जय-जयकार किया। मैंने आपको यह बात इसलिए कही कि जनसंख्या बढ़ती गयी और भूमि अपर्याप्त हुई तो उस स्थिति मे मनुष्य मनुष्य को मारने लगेगा।

अब चीन मे करीब-करीब सब प्राणी खाने के काम आते हैं। आपके देश से मेढ़क विदेश मे भेजे जाते हैं। कहते है कि उनकी टांगो मे बहुत स्वाद होता है और इसलिए उनकी बहुत कीमत मिलती है। इस प्रकार यह हिंसा उत्तरोत्तर बढ़ती जायेगी। जनसंख्या बढ़ी कि हिंसा बढ़ेगी। इसलिए गीता ने शरीर-तप का वर्णन करते हुए ब्रह्मचर्य व अहिंसा को एक कोटि मे डाला है। यदि आपको अहिंसा चाहिए तो ब्रह्मचर्य आवश्यक है। और ब्रह्मचर्य नही होगा तो हिंसा टलेगी नही। मनुष्य को मनुष्य खायेगा, गाय आदि कोई भी प्राणी बचेगा नहीं। संयम का पालन करो यह आप कहनेवाले हैं ? यह नहीं कहेंगे तो भूदान आदि सब बेकार हो जायेगा। और दस वर्षों के बाद जनसंख्या बढ़ेगी और भूमि की यही समस्या फिर उत्पन्न होगी। इसलिए संयम की बात कहने की हिम्मत आपमें है ? आपको दूसरी बातों के साथ आपको यह बात भी कहनी चाहिए।

राम का आदर्श दो बच्चे

बोधगया में भारत के कुछ बड़े लोगो का सम्मेलन हुआ था। उसमे मैंने यही बात कही थी। मैंने कहा कि मैं लोगो को रामायण का दृष्टान्त देता हूँ। एक बार बिहार मे एक किसान से बात करते हुए मैंने उसको कहा, "तुम रामायण पढ़ते हो ? उसम क्या है ? रामचन्द्र की दो सन्तानें थीं। तब तुम रामायण के भक्त राम का आदर्श अपने सामने रखते हो ?" उस सुननेवाले की आँखों से धारा बहने लगी और वह बात समझ गया। उसने कहा, "हमे इस प्रकार किसीने अब तक समझाया ही नही।" तो रामायण के आधार से यह विषय समझाया जा सकता है।

माता और पिता मिलकर दो हैं। दो का स्थान लेनेवाले दो सन्तान पर्याप्त हैं। यह भारत की संस्कृति है और वह रामायण में बतायी गयी है। आज भूमि बहुत कम है, इसलिए ब्रह्मचर्य को आज सामाजिक मूल्य प्राप्त हुआ है। आध्यात्मिक मूल्य तो है ही। ऐसी स्थिति मे ब्रह्मचर्य का प्रचार कठिन क्यों प्रतीत हो ?

वेद मे कहा है, जिसे बहु प्रजा है वह नरक मे जाता है। बहु यानी क्या ? व्याकरण मे द्विवचन के बाद बहुवचन आता है। अर्थात् बहु यानी तीन। यानी वेद ने दो सन्तान मंजूर की। मनुस्मृति मे कहा है कि पहली सन्तान धर्मजन्य होती है और उसके बाद की सन्तान कामजन्य। बाद मे चार सौ पाँच सौ साल के पश्चात् उस पर भाष्य लिखा गया। तब भाष्यकार ने उसका अर्थ किया कि यदि मनु ने ऐसा किया है कि पहली सन्तान मात्र धर्मजन्य है तो भी माता और पिता, दो होने के कारण दो सन्तान होना धर्मानुकूल ही होगा। दो से अधिक सन्तान होना धर्म को मंजूर नहीं होगा। इसका अर्थ यह कि भाष्यकार ने दो सन्तानों को स्वीकृति दी और उसके इस कथन को रामायण का आधार है। आगे क्या हुआ ? दो लड़के ही हुए समझो। दो लड़के ही हुए तो तीसरी लड़की चाहिए। यानी दो 'सेक्स' चाहिए, इसलिए तीन मंजूर हो गया। यह इतिहास मैंने इसलिए कहा कि यह बात स्पष्ट हो जाय कि प्राचीन काल से काम-नियमन का ही चिन्तन हुआ है। उसके अनुसार आज के जमाने मे दो से अधिक सन्तान न हो।

ब्रह्मचर्य से संतति-नियमन

२८ वर्ष की आयु तक ब्रह्मचर्य का पालन करें। उसके बाद गृहस्थाश्रम को स्वीकार करें, ४८ वर्ष की आयु तक गृहस्थाश्रम रहे, यानी २० वर्ष के गृहस्थाश्रम के बाद विधिपूर्वक वानप्रस्थाश्रम का प्रारम्भ हो जाय, अर्थात् प्रजोत्पत्ति का समय २० वर्ष का हो। आज क्या है ? यह समय है, १८ वर्ष की आयु से ५८→

पिछड़े देशों का विकास

सामान या समाज ? माल या मनुष्य ?

(गतांक से आगे)

डा० ई० एफ० शूमाखर

विकास की योजना में छोटे श्रम-केन्द्री और इकाइयों का क्या स्थान होगा, इसका निर्णय राजनीति को करना है, न कि केवल अर्थशास्त्रियों या व्यापारियों को। किसी देश की अर्थनीति के दो लक्ष्य हो सकते हैं—माल तैयार करना, या देश के मनुष्यों का विकास करना। अगर हम पहले लक्ष्य को मानते हैं तो बड़े पैमाने के उत्पादन (मास-प्रोडक्शन) की ओर जाना होगा, अगर दूसरे को मानते हैं तो मनुष्यों द्वारा उत्पादन (प्रोडक्शन बाई मैसेज) की पद्धति अपनानी होगी। निजी अभिक्रम (प्राइवेट इन्टरप्राइज) को छूट दे दी जाय तो वह पहले लक्ष्य की ही ओर मुड़ेगा। उसकी स्वाभाविक वाहिश होगी मनुष्य को अलग करने की, क्योंकि यन्त्र—स्वय-चालित यन्त्र—ज्यादा तेज होता है, और मशीन का होता है। यह स्थिति खास तौर पर उन पिछड़े देशों में बहुत होती है जहाँ मजदूरों को औद्योगिक काम का अभ्यास नहीं है। उन्हें प्रशिक्षित करने और अभ्यास दिलाने की परेशानी कौन मोल ले? इसलिए आसान है मनुष्य को छोड़कर यन्त्र रख लेना। तर्क यह होता है कि बड़े पैमाने के उत्पादन से जनता को सस्ता माल मिलेगा। लेकिन सचमुच होता यह है कि पूँजी-केन्द्रित उत्पादन के कारण बेरोजगारी बढ़ती है। जो बेरोजगार हैं वे माल कैसे खरीदेंगे, चाहे माल कितना भी सस्ता क्यों न हो। दूसरा तर्क यह भी है कि बड़े पैमाने के उत्पादन से दौलत बढ़ेगी, और बढ़ी हुई दौलत धीरे धीरे ऊपर से नीचे उतरकर जनता में फैलेगी। लेकिन दुनिया का अनुभव यही बताता है कि ऐसा कभी होता नहीं। होता यही है कि धनी अधिक धनी होते जाते हैं, और गरीब या तो जहाँ के-तहाँ पड़े रहते हैं, या ज्यादा गरीब होते जाते हैं। जब यह प्रक्रिया चलती है तो 'आत्म-निर्भरता', 'जनता की भागीदारी' या 'विकास' के नारे ही रह जाते हैं। नारों से ज्यादा कुछ नहीं हो पाता।

अगर देश का राजनैतिक नेतृत्व जनता द्वारा उत्पादन के पक्ष में निर्णय करता है तो सबसे पहले गाँव-गाँव में उद्योग फैलाने पर ध्यान देना होगा। उनमें रहनेवाले लाखों लोगों को शहरों में बुलाना भयंकर होगा। बड़े शहरों में दो ही तरह के उद्योग होने चाहिए—एक, वे जो 'राष्ट्रीय' उद्योग हैं, दूसरे, वे छोटे उद्योग, जो स्थानीय बाजार के लिए आवश्यक हैं। राष्ट्रीय उद्योगों से आशय ऐसे उद्योगों से है जो अत्यन्त विशिष्ट हैं, और जिनके लिए बहुत बड़ी पूँजी की जरूरत है। ऐसे उद्योगों में नये से नये यन्त्र लगाने चाहिए, क्योंकि शहरों में बड़ी संख्या में श्रमिकों को बुलाना ठीक नहीं है। देहात में उद्योग ऐसे ही होने चाहिए जिनमें अधिक से अधिक लगें, और पूँजी कम, ताकि लोग अपनी जगह रहकर काम कर सकें, और औद्योगिक हुनर सीख सकें।

अब यह बात आमतौर पर मान ली गयी है कि गरीब देश में छोटी अचानक छलाँगें मारकर उन्नति नहीं कर सकती। विकास के क्रम में बीच की स्थिति अनिवार्य है, जहाँ पहुँचकर आसान, सस्ते, सक्षम यन्त्रों से हुए लाभ को व्यापक बनाना चाहिए तथा अपने काम को आगे के लिए संगठित करना चाहिए।

एक प्रश्न यह है कि खेतिहर किस तरह चुने कि उसकी आवश्यकता के यन्त्र क्या हैं, वे कहाँ मिलेंगे, जरूरत पड़ने पर मरम्मत कहाँ होगी, और खरीदने के लिए पैसे कहाँ से आयेंगे? खेती के बुनियादी यन्त्र थोड़े होते हैं। उनमें कई स्थानीय कारीगर द्वारा बनाये जा सकते हैं, शेष बाहर से मँगाने पड़ते हैं। आम तौर पर व्यापारी कई तरह के सामान नहीं रख पाता, और खेतिहर भी नहीं तय कर पाता कि कौनसा यन्त्र उसके लिए सबसे अधिक उपयुक्त है।

विकासशील देशों में यह व्यवस्था होनी चाहिए कि खेती की सेवा में लगे हर अधिकारी के पास हल तथा दूसरे यन्त्र हर वक्त मौजूद रहें, ताकि जब वह गाँवों में जाय तो प्रत्यक्ष दिखा सके कि किस हल की क्या उपयोगिता है। इसके अलावा एक ऐसा संगठन होना चाहिए जो जरूरी यन्त्र मँगा सके, और उसकी मरम्मत और उसे गाँव-गाँव में पहुँचाने की व्यवस्था कर सके। यह काम सरकारी माध्यम से ही हो सकता है। यह भी जरूरी है कि यन्त्र दिये जायँ तो उसके साथ किसानों को उनके रख रखाव का प्रशिक्षण भी दिया जाय। यह सारा काम ऐसा है जिसमें उन्नति चाहनेवाले देशों की सरकारों को आगे बढ़ना चाहिए। उनके बिना यह काम नहीं हो सकता।

विकास के इस कार्य में धनी देशों का

→वर्ष की आयु तक यानी ४० वर्ष। इस योजना से वह एकदम आधा होगा। यानी आधा नियमन हो गया। फिर दूसरी बात यह कि जिस परिवार में तीन सन्तान होंगी, वहाँ तीन सन्तानों में से कम-से-कम एक ब्रह्मचर्य का पालन करे और अपने भाई की सन्तान को अपनी ही सन्तान माने। यह असंभव नहीं। तो तीन बातें हुईं। एक, विवाह देर से करें। दो, वानप्रस्थ की सूचना और तीन, तीनों में से एक ब्रह्मचर्य का पालन करे। और चौथी बात यह कि यथासंभव दो सन्तानों में सन्तोष माना जाय। क्या इस विचार से ब्रह्मचर्य का प्रचार व्यवहार्य है? इस पर आप सोचें। इसका उत्तर यदि हाँ में है तो ही मानवता है, अन्यथा मानवता है नहीं।

(श्री गोविन्दराव देशपाण्डे तथा श्री ठाकुरदास बंग के साथ गोपुरी, वर्धा में ३-३-'७० को विनोबाजी की हुई चर्चा का अंश। मूल मराठी से अनूदित।)

क्या और होगा? पैसा देकर संतोष मान लेना या और कुछ? केवल पैसे से जो विकास होगा वह असन्तुलित होगा। असन्तुलित इस अर्थ में कि विकास का फल शहरों में अत्यधिक धनी धनी होंगे, और गरीब गरीब। उद्योगपति और व्यवसायी मनुष्य को दुहते जायेंगे, तथा अर्थशास्त्री और आंकड़ों के विशेषज्ञ 'विकास की गति' (रेट आफ ग्रोथ) पर खुशियाँ मनायेंगे। बस यही होगा।

अगर हम मनुष्य को सामने रखकर काम करना चाहते हैं, और नये देशों में एक ऐसी उद्योग का समन्वित ढाँचा देखना चाहते हैं, जिसमें हर व्यक्ति शरीक हो सके तो कुछ दूसरा ही करना पड़ेगा। हम सोचें कि हम क्या करना चाहते हैं, कैसी व्यवस्था चाहते हैं।

नये देशों के विकास के लिए सबसे ज्यादा जरूरी है, कल्पना शक्ति। जो धनी हैं, शिक्षित हैं, शहरी हैं, वे उनकी कैसे मदद करेंगे जो गरीब हैं, अशिक्षित हैं, ग्रामीण हैं? हम उन्हें मदद पहुँचा सकें इसके लिए जरूरी है कि हम उनका आदर करें, उनकी बात सुनें। हम धनी देशवाले उन्हें ज्ञान दे सकते हैं, लेकिन वे हमारे ज्ञान का किस पद्धति से इस्तेमाल करेंगे, यह उन्हींको तय करना है। हम उन पर अपनी पद्धति नहीं थोप सकते। समस्याएँ हमारी नहीं, उनकी हैं। हम उन्हें उनकी समस्याएँ हल करने में सहायता दे सकते हैं। अगर हम अपनी समस्याओं का हल उन्हें देंगे तो हमारी नीयत चाहे जो हो हम उन्हें बरबाद कर देंगे। प्रोफेसर मायरडल ने अपने ग्रन्थ 'एशियन ड्रामा: एन इनक्वायरी इन्टू दी पावर्टी आफ नेशन्स' में यह चेतावनी दी है कि पश्चिम में जो तकनीकी विकास हुआ है वह नये देशों के लिए उपयुक्त नहीं है। हम उनकी परिस्थिति का ध्यान रखकर शोध करना चाहिए और उनकी समस्याओं का समाधान ढूँढ़ना चाहिए।

पश्चिम का उद्योगवाद एक दिशा में बहुत आगे जा चुका है। नये देशों को बीच की तकनीक (इन्टरमीडिएट टेकनालोजी) की जरूरत है। उन्हें ऐसी सहायता चाहिए, ताकि वे खुद अपनी सहायता कर सकें।

लन्दन में 'इन्टरमीडिएट टेकनालोजी डेवलपमेन्ट ग्रुप' नाम से कुछ लोग इस काम में लगे हुए हैं। इसमें वैज्ञानिक हैं, प्रशासक हैं, व्यापारी हैं, जिनका विश्वास है कि पश्चिम का ज्ञान और धन गरीब देशों के काम आ सकता है, लेकिन नये ढंग से। यह ढंग ऐसा होना चाहिए कि वे बिना अपनी विशिष्टता और आत्म-सम्मान की हत्या किये हमारी सहायता से लाभ उठा सकें। (समाप्त)

म० प्र० गांधी-निधि का पारिवारिक शिविर

मध्यप्रदेश गांधी-स्मारक निधि की परम्परा के अनुसार हर साल की तरह इस साल भी निधि के कार्यकर्ताओं का पाँच दिन का एक शिविर २४ से २८ फरवरी, '७० तक ग्रामभारती-आश्रम, टवलाई (धार) में सम्पन्न हुआ। मध्यप्रदेश के विभिन्न जिलों से [illegible] कार्यकर्ताओं ने इसमें भाग लिया। इस बार शिविर को पारिवारिक शिविर का रूप दिया गया था, इसलिए अधिकांश कार्यकर्ता अपने परिवार के साथ आये थे। निधि ने अप्रैल, '७० से अपनी प्रवृत्तियों को सीमित करने और अपने अधिकांश कार्यकर्ताओं को मुक्त करने का जो निर्णय लिया है, उसके कारण यह समझा जाता था कि शिविर के वातावरण में कुछ गरमी रहेगी, किन्तु पाँच दिन तक कार्यकर्ताओं ने जिस उत्साह, सजगता और उत्कटता के साथ विचार-विमर्श में भाग लिया और जिस मौलिकता तथा साहसभरी सूझ-बूझ के साथ सारे आन्दोलन के सन्दर्भ में अपनी भावी भूमिका रखी, उससे यह सिद्ध हो गया है कि रचनात्मक संस्थाओं में कार्यकर्ताओं का आरोहण कितना आश्चर्यजनक और सुखद होता है।

शिविर में विचार के अनेक मुद्दे थे; जैसे, ग्रामदान की प्रगति, पुष्टि-कार्य की दिशा तथा योजना और समाज तथा शासन से इस आन्दोलन में मदद लेने की प्रक्रिया आदि। किन्तु शिविर का सबसे महत्त्वपूर्ण और आकर्षक अंग कार्यकर्ताओं के 'आत्म-निवेदन' का रहा। लगभग ५०-६० 'आत्मनिवेदन' प्रस्तुत किये गये और एक भी निवेदन में सुननेवालों को यह नहीं लगा कि कार्यकर्ता महज किसी मजबूरी से सर्वोदय-आन्दोलन में आया है। जीवन-पथ की ओर व्यक्ति के लिए स्वतः एक क्रियात्मक प्रेरणा होती है। दो चार कार्यकर्ताओं को छोड़कर, जो आजादी के संघर्ष-काल से ही सार्वजनिक जीवन में रहे थे और इनमें से कुछ भाई तो साम्यवादी तथा समाजवादी दलों के कार्यकर्ता भी रह चुके थे, शेष सभी भाइयों को अपने स्कूल, गाँव या शहर में चल रहे किसी-न-किसी प्रकार के सार्वजनिक सेवा-कार्य को देखकर सेवा की प्रेरणा मिली। दो-तीन भाई भारत-सेवक-समाज के माध्यम से, कुछ हरिजन-सेवक-संघ के माध्यम से और कुछ राष्ट्रीय स्वयंसेवक-संघ के कार्यकर्ता रहने के बाद वहाँ से वैचारिक धक्का खाकर इधर आये थे। कुल मिलाकर रचनात्मक प्रेरणा ही उनके इस तरफ आने की प्रमुख प्रेरणा रही है।

चर्चाओं का सार यही रहा कि हम अपने रचनात्मक संगठनों को क्षीण करने के बदले उन्हें और अधिक सुदृढ़ तथा व्यापक बनाना चाहिए। यह समाज का महत्त्वपूर्ण दायित्व है कि वह रचनात्मक दिशा देनेवाले संगठनों तथा व्यक्तियों को अपना ले। किसी भी सभ्य और स्वस्थ राष्ट्र की यही पहचान होती है। भारत के पास आज गांधी (सर्वोदय)-विचार के सिवाय अन्य कोई पूँजी नहीं, जिसके बल पर वह विश्व-परिवार में सम्मानजनक स्थान पाकर जी सके।

इस प्रकार विचार को जीवननिष्ठ और व्यापक बनाने के लिए जीवन को अर्पण करने की आकांक्षा से युक्त संकल्पों के साथ शिविर समाप्त हुआ। इसमें सन्देह नहीं कि इस शिविर ने शिविर में भाग लेनेवालों के मन पर अपना एक स्थायी प्रभाव अवश्य ही छोड़ा होगा।

—कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा

'संघर्ष' की जगह 'संवाद' के लिए 'बीघा-कट्ठा' का वितरण अनिवार्य

वैशाली-गोष्ठी के सुझाव के अनुसार दिसम्बर १९६९ में बिहार में राज्यस्तरीय ग्रामस्वराज्य समिति का गठन हुआ। यह समिति इस समय राज्यदान के बाद के काम में लगी हुई है। बिहार के काम के सम्बन्ध में सर्व सेवा संघ की ग्रामस्वराज्य समिति इतना ही श्रेय ले सकती है कि राज्यदान के बाद के लिए जो दृष्टि और कार्यक्रम वैशाली गोष्ठी की ओर से प्रस्तुत किया गया था उसे बिहार की समिति ने पूरा पूरा मान्य कर लिया है, और इस वक्त बिहार में उसीके अनुसार काम भी हो रहा है।

बिहार का काम अभी सीमित है—कार्यकर्ता, क्षेत्र, और गहराई, सभी दृष्टियों से। अभी यह नहीं कहा जा सकता कि हमने शुरू की कठिनाइयों पर काबू पा लिया है। किसी भी अर्थ में 'ब्रेकथ्रू' की स्थिति नहीं आयी है। अभी रास्ता टटोलने का ही क्रम चल रहा है। ज्यादा से ज्यादा इतना ही कहा जा सकता है कि कुछ क्षेत्रों में, जिनकी संख्या शायद एक दर्जन से अधिक नहीं होगी, प्रकाश की धुंधली रेखाएँ दिखाई देने लगी हैं।

ये वे ही क्षेत्र हैं जहाँ पहले कुछ गहराई से ग्रामदान का काम हुआ था, और जहाँ अपना कोई समर्थ साथी है। सुव्यवस्थित काम की दृष्टि से बिहार के १७ जिलों को क्रम से चार श्रेणियों में बाँटा जा सकता है

(क) दरभंगा, पूर्णिया, सहरसा, मुजफ्फरपुर, गया, मुंगेर

(ख) पटना, शाहाबाद, सारण

(ग) संथालपरगना, चम्पारण, भागलपुर

(घ) धनबाद, राँची, सिंहभूमि, हजारीबाग, पलामू।

इनमें (क) श्रेणी के जिलों में ही अब तक जो काम हुआ है उसमें कुछ सोचने लायक अनुभव आये हैं।

जनवरी की १४, १५ तारीखों को, ग्रामस्वराज्य समिति, बिहार की कार्य-समिति की बैठक सोखोदेवरा (गया) में हुई थी, जिसमें एक समग्र कार्ययोजना बनी थी। उसके अनुसार श्री जयप्रकाशजी का पूर्णिया, पटना, मुजफ्फरपुर, चम्पारण, हजारीबाग और शाहाबाद जिलों में कार्यक्रम हुआ है। श्री धीरेन् भाई ने मधुबनी (दरभंगा) में तथा मुजफ्फरपुर में कार्यकर्ताओं के शिविर लिये हैं। सहरसा जिले को उनका काफी समय ग्रामभारती-योजना के अन्तर्गत मिल रहा है।

वैशाली-गोष्ठी के निर्णय के अनुसार, जिसकी पुष्टि बिहार की ग्रामस्वराज्य समिति की कार्य-समिति ने सोखोदेवरा की बैठक में की, बिहार की खादी संस्थाओं से निवेदन किया गया कि वे अपने कार्य क्षेत्र के जिलों में प्रति जिला दो कार्यकर्ता ग्रामदान के बाद के काम के लिए निकालें, जिन्हें वे वेतन तो देती रहें, किन्तु संस्था की दैनन्दिन जिम्मेदारी से मुक्त रखें। बिहार की सात संस्थाओं ने अब तक हमारा निवेदन स्वीकार किया है। उन्होंने कुल ३६ कार्यकर्ता निकाले हैं। अगर 'स्टेटबोर्ड' की ओर से भी दो कार्यकर्ता मिल जायेंगे तो संख्या ३८ हो जायगी।

इन कार्यकर्ताओं की पहली गोष्ठी खादीग्राम (मुंगेर) में ५, ६, ७ मार्च को हुई थी। कुल २५ कार्यकर्ता शरीक हुए थे। तीन दिन की गोष्ठी में सबने खुले दिल से चर्चा की और आगे दो महीनों के लिए काम के प्रारम्भिक कदम (फर्स्ट स्टेप्स) तय किये। ये साथी अपने अपने जिले में एक या दो ब्लाकों का, जो सबसे अनुकूल होंगे, सघन-क्षेत्र बनाकर काम करेंगे। अभी कुछ साथी ऐसे हैं, जिन पर खादी की जिम्मेदारी है। आशा है संस्थाएं उन्हें पूरे तौर पर मुक्त कर देंगी। पहले कदम के रूप में बीघा-कट्ठा के साथ ग्राम-सभा के गठन तथा 'सर्वोदय-मित्र' बनाने पर शक्ति केन्द्रित करने का निर्णय हुआ है। मई में हम लोग फिर मिलेंगे और अनुभव के आधार पर आगे के लिए कार्यक्रम तय करेंगे। इसी तरह दो-दो महीने पर मिलते, सोचते, करते रहेंगे।

आर्थिक संयोजन की दृष्टि से बिहार में जनसंख्या के १ प्रतिशत के हिसाब से ५ लाख 'सर्वोदय-मित्र' बनाने का निर्णय हुआ। अगर अकेले सर्वोदय मित्र इतने न हो सकें तो हर हालत में रु० ३ ६५ वार्षिक के सर्वोदय मित्र' और रु० १०० वार्षिक के 'सर्वोदय-सहयोगी' मिलाकर उतना कोष इकट्ठा होना चाहिए, जितना ५ लाख सर्वोदय-मित्र बनाने से होता।

अब तक जो काम हुआ है, विशेष रूप से 'क' श्रेणी के जिलों में, जिनमें ग्राम-स्वराज्य समितियाँ गठित हो चुकी हैं और किसी हद तक सक्रिय हैं, उनके उल्लेखनीय अनुभव निम्नलिखित हैं

ग्राम सभाओं का गठन : बीघा-कट्ठा का वितरण

(१) दरभंगा के कई क्षेत्रों में पहले से ही बड़ी संख्या में ग्रामसभाएं गठित हैं। मधुबनी अनुमंडल के तरौनियाँ और मधेपुरा प्रखण्डों का यह अनुभव है—दूसरे प्रखण्डों का इससे बहुत भिन्न नहीं होगा—कि ग्रामसभाओं के गठित हो जाने मात्र से बीघा-कट्ठा वितरण में कोई खास प्रगति नहीं होती। इन ग्रामसभाओं ने कोई खास अभिक्रम भी नहीं प्रकट किया है। वे कार्यकर्ता की प्रतीक्षा में उसी तरह बैठी रहती हैं, जैसे दूसरे गाँव। जब कोई कार्यकर्ता जाता है तो थोड़ी देर के लिए कुछ हलचल हो जाती है—उसके बाद – जैसे थे (ऐज यू वेयर)।

(२) पूर्णिया में ग्रामसभाएं गठित की जा रही हैं, और उनसे ग्रामदान का कागज तैयार करने को कहा जा रहा है। आशा की जा रही है कि कागज तैयार करने के क्रम में बीघा कट्ठा निकलेगा।

(३) मुंगेर के दो प्रखण्डों, झाझा और चोरम, में सघन रूप से काम हो रहा है। झाझा में ५४ ग्रामसभाओं में

काफी मात्रा में बीघा-कट्ठा बँट चुका है। शेष में बँट रहा है। चौथम में लगभग ३० बड़े भूमिवानों ने अपना बीघा-कट्ठा बाँटने की तैयारी बतायी है। इन दो प्रखण्डों में जिस तरह हमारे दो समर्थ साथी तथा उनके स्थानीय सहयोगी काम में लगे हुए हैं, उससे पूरी आशा होती है कि जून तक ग्रामसभाएँ ही नहीं, प्रखण्डसभाएँ भी, गठित हो जायेंगी। लेकिन कठिनाई एक दूसरी दिशा से उपस्थित हुई है। जिन प्रखण्डों में काम इस गति से आगे बढ़ रहा है और लोक-शक्ति का संगठन आगे बढ़ता दिखाई दे रहा है, उनमें खादी-कमीशन ने ब्लाक-इकाइयाँ बन्द कर देने का निर्णय किया है, और इन दोनों प्रखण्डों में काम करने-वाले हमारे साथी कार्य-मुक्त कर दिये गये हैं। उनकी जीविका का प्रश्न उपस्थित हो गया है। लोग सोच नहीं पा रहे हैं कि तत्काल क्या व्यवस्था करें। मेरी सलाह है कि राज्यदान के बाद बिहार के काम के सम्बन्ध में खादी-कमीशन को ग्राम-स्वराज्य-समिति से भी परामर्श कर लेना चाहिए। इस तरह के निर्णयों का परिणाम यह होगा कि लोक-शक्ति के संगठन से खादी के लिए जो मजबूत आधार बन रहा है, उसे आघात लगेगा। इस वक्त पुरानी ब्लाक-इकाइयाँ बन्द करने या नयी खोलने, क्षेत्र के चुनाव तथा कार्यकर्ता-प्रशिक्षण आदि प्रश्नों पर कमीशन को नये सिरे से विचार करना चाहिए।

कुछ दिशा-निर्देशक नये अनुभव

(४) मुजफ्फरपुर के वैशाली-क्षेत्र में निर्मलाजी के मार्गदर्शन में २४ से २८ फरवरी तक ग्रामसभाएँ बनाने का एक सघन अभियान हुआ। कुल ७० साथी लगे, जिनमें से अधिकांश स्थानीय थे। ८ पंचायतों में काम हुआ। आँकड़ों में निष्पत्ति जो रही वह रही, किन्तु इस अभियान से कुछ बड़े महत्त्व के अनुभव आये। एक यह कि बीघा-कट्ठा को शर्त रखने पर ग्रामसभा बनाने की गति बहुत धीमी पड़ जाती है। बीघा-कट्ठा की शर्त के साथ ५ दिनों में कुल एक ग्रामसभा गठित हो सकी, यद्यपि बीघा-कट्ठा निकालनेवाले मित्र लगभग एक दर्जन मिले। यह देखने में आया कि कई लोग ग्रामसभा को बीघा-कट्ठा से बचने की आड़ बनाते हैं, इसलिए ग्रामसभा बनाने में तो उत्साह दिखाते हैं, लेकिन बीघा-कट्ठा का नाम नहीं लेते। यह अनुभव कई दूसरी जगहों में भी आया है। किसी तरह थोड़े-से लोगों को लेकर ग्रामसभा बना भी दी जाय तो ग्रामदान की शर्तें पूरी होने में, तथा आगे के काम में, आसानी होगी, इस आशा में गम्भीर शंका पैदा हो गयी है। इसलिए खादीग्राम में कार्यकर्ताओं की जो गोष्ठी हुई, उसमें यह तय हुआ कि जब तक गाँव में ४-६ लोग तुरन्त बीघा-कट्ठा बाँटने को तैयार न हों तब तक उस गाँव की ग्रामसभा बनाने का कोई अर्थ नहीं है। हमें गाँव के सामने यह बात आग्रहपूर्वक रखनी चाहिए कि कम-से-कम ग्रामसभा के सभापति, मंत्री और कोषाध्यक्ष, इन तीन पदाधिकारियों के लिए बीघा-कट्ठा का तत्काल वितरण अनिवार्य माना जाय। गोष्ठी ने यह महसूस किया कि बीघा-कट्ठा के बिना ग्रामसभा सार्थक नहीं होगी, और जनता के सामने आन्दोलन का सही चित्र नहीं उभरेगा। वस्तुस्थिति की यह चेतावनी है कि अगर हमने ग्रामसभाओं के बनाने में कचाई रखी, तो हमारा आन्दोलन बुनियाद में ही कमजोर हो जायेगा। हो सकता है कि बीघा-कट्ठा की शर्त पर सीमित आग्रह रखने से शुरू में समय कुछ अधिक लगता दिखाई दे, लेकिन यह निश्चित है,और संकेत भी ऐसे हैं कि अगर हमने धैर्य रखा और बीघा-कट्ठा का आग्रह न छोड़ा तो आगे चलकर काम होगा—शीघ्र होगा, सही होगा, ठोस होगा।

(५) वैशाली के अभियान में एक यह अनुभव भी आया कि कुछ जगहों में मजदूरों ने बीघा-कट्ठा लेने से इनकार कर दिया। उन्होंने कहा : 'इतने से क्या होगा?' यह बात छोटी है, लेकिन संकेत बड़ा है। वहाँ काम करनेवाले हमारे साथियों को सन्देह है कि इस इनकार के पीछे राजनैतिक इशारा है। कुछ जगहों में भूमिहीन खुद भूमि माँगने को तैयार दीख पड़ने लगे हैं। भूमिहीनों द्वारा भूमि माँगने के 'इम्प्लिकेशन' पर आन्दोलन की व्यूह-रचना की दृष्टि से विचार करना फौरन जरूरी है।

वैशाली-अभियान की तात्कालिक निष्पत्ति भले ही कम रही हो, किन्तु आगे के काम के लिए आधार ठोस बना है। विद्यार्थियों, युवकों, शिक्षकों का सहयोग, तथा कुछ स्थानीय नागरिकों का खुलकर सामने आना, उत्साहप्रद अनुभव है। बहन निर्मलाजी के शब्दों में 'विचार मान्य हुआ है, किन्तु मोह नहीं जा रहा है।'

हमारे लिए चुनौती

'मोह' को ही शायद दूसरे शब्दों में 'वेस्टेड इण्टरेस्ट' कहते हैं। मोह कभी-भी आसानी से नहीं जाता, यह एक ऐसी गाँठ है जिसे खोलना हमारे लिए चुनौती है। मानना पड़ेगा कि अभी कुंजी हमारे हाथ नहीं आयी है। लेकिन ऐसा लगता है कि हम विचार में दृढ़ रहेंगे, और विचार का सामाजिक दबाव बढ़ेगा तो मोह जरूर टूटेगा।

(६) ग्रामसभा बनाने की दृष्टि से अभी तक तीन स्थितियों के गाँव सामने आये हैं। एक, वे छोटे गाँव हैं, गरीब लोगों के गाँव, जो अपनी अलग ग्रामसभा बनाना चाहते हैं। ग्रामदान की मर्यादा में उन्हें अलग ग्रामसभा बनाने का अधिकार भी है। दूसरे, ऐसे बड़े गाँव हैं, जिनमें आन्दोलन का परिचय तो हुआ है, लेकिन जिनमें अभी प्रवेश नहीं हुआ है। तीसरे, वे मझोले गाँव हैं, जिनमें दो चार लोग बीघा-कट्ठा देने को तैयार हो रहे हैं।

इन तीनों तरह के गाँवों को सामने रखकर खादीग्राम की कार्यकर्ता-गोष्ठी ने निर्णय किया कि जिन गाँवों में कुछ लोग बीघा-कट्ठा देने को तैयार हैं उनमें समारोह वितरण किया जाय और वितरण-सभा में ही ग्रामसभा बनायी जाय। जो बड़े गाँव हैं उनसे अधिक-से अधिक सम्पर्क

जारी रखा जाय, गोष्ठियाँ की जायें, तथा अन्य उपायों द्वारा उन्हें प्रभावित किया जाय। इन दोनों के अलावा जो छोटे गाँव बीघा-कट्ठा बाँटकर ग्रामसभा बनाने को तैयार हैं, उन्हें बनाने दिया जाय, बड़े गाँवों के साथ जोड़कर उन्हें रोका न जाय।

(७) अब तक के अनुभव से यह सिद्ध होता है कि बीघा-कट्ठा के सिवाय दूसरी कोई चीज नहीं है, जिसका एक ओर बड़े किसान और दूसरी ओर मजदूर पर 'इम्पैक्ट' हो। बीघा-कट्ठा में ही कल्पना को छूने, भूमिवान के मोह को ढीला करने, भूमिहीन में विश्वास पैदा करने तथा आन्दोलन को समाज के हृदय में पहुँचाने की शक्ति है। बीघा कट्ठा के बाद समस्याएँ प्याज की परतों की तरह खुलती दिखाई देने लगती हैं। इसलिए अगर हम ग्रामसभा बनाने की जल्दीबाजी में बीघा कट्ठा को टालेंगे तो हमारा पूरा आन्दोलन मजदूर से अलग (आइसोलेट) हो जायेगा। और तब मजदूर, वह मजदूर जिसका कलेजा प्रतिहिंसा की आग से जल रहा है, बस और बन्दूक का रास्ता अपनाने के लिए विवश होगा। मुजफ्फरपुर जिले के नक्सलवादी क्षेत्रों का अनुभव इस बात का साक्षी है कि मजदूर, हरिजन, और मुसलमान भावना की दृष्टि से अपने को अपने गाँव से अलग करते जा रहे हैं और गाँव में न्याय न मिलने के कारण गुप्त तरीकों से बदला लेने पर उतारू हो रहे हैं। बीघा कट्ठा के साथ बनी हुई ग्रामसभा—ऐसी ग्रामसभा जिसके कम-से-कम पदाधिकारी बीघा-कट्ठा बाँट चुके हों—इतना अवसर तो देगी कि गाँव के मालिक-मजदूर आमने-सामने बैठें, एक दूसरे की बात सुनें और आपस की समस्याओं का हल निकालें। दबे हुए लोगों को हिंसा से रोकने का, तथा शांति के साथ न्याय के आश्वासन का रास्ता यही है कि योजनापूर्वक ग्रामसभा को सबसे सजीव सम्मतीय का माध्यम बनाया जाय, ताकि संघर्ष की जगह संवाद शुरू हो। आज गाँव में मालिक-मजदूर में किसी तरह का संवाद नहीं रह गया है। संवाद की स्थिति पैदा करना ग्रामसभा का पहला काम होना चाहिए।

छोटे गाँवों की ग्रामसभा के सामने तत्काल तीन काम हो सकते हैं —

(क) वास की जमीन के अधिकार का पट्टा दिलाना,

(ख) मालिकों से बीघा-कट्ठा की माँग,

(ग) बेदखली का प्रतिकार,

(घ) चुनावों में भय और लोभ से मुक्त स्वतंत्र मतदान।

इन कामों के द्वारा गाँव की संगठित लोक शक्ति का सबसे प्रामाणिक और शुभ प्रदर्शन होगा।

(८) लोक-शक्ति के संगठन की दृष्टि से यह आवश्यक है कि ग्रामसभाएँ सबसे पहले गाँव के जीवन के उन पहलुओं में सक्रिय हों, जिनमें गाँव में परस्पर सद्भावना की हवा नये सिरे से बहनी शुरू हो। वे पहलू ये हैं

उचित मजदूरी, बढ़े हुए उत्पादन में मजदूरों के अलावा उचित भाग, बेदखली, जबरदस्ती भूमि पर कब्जा, समर्थ लोगों द्वारा कमजोर लोगों को मुकदमे में फँसाना, सूदखोरी, हरिजनों मुसलमानों-गरीबों के साथ दुर्व्यवहार।

नक्सलवादी काण्ड कुछ मुख्य स्रोत

मुजफ्फरपुर के गाँवों में जो नक्सलवादी काण्ड हुए हैं उनके मुख्य स्रोत रहे हैं—जमीन से बेदखली, मुकदमे में फँसाया जाना, और दुर्व्यवहार। नीचे के लोगों में जो युवक कुछ शिक्षित हो गये हैं, या जिनको परदेश में जमाने की नयी हवा लगी है, या जिनका गरम राजनीति से सम्पर्क हो गया है उनके मन में इतनी कटुता है कि वे दुर्व्यवहार और जुल्म-जबरदस्ती नहीं बर्दाश्त करना चाहते। उनसे बर्दाश्त करने को कहा भी क्यों जाय? गाँव में न्याय का रास्ता न पाकर वे बाहर निकलकर सहारा ढूँढ़ते हैं, और बन्दूक में मुक्ति या बदले का समाधान पाते हैं। बिहार के हिंसक काण्ड सामान्यतः ऐसे कामों के विरुद्ध प्रतिकार के रूप में ही किये गये हैं, जो आज के समाज में भी अन्यायपूर्ण माने जाते हैं। बंगाल की तरह बिहार के काण्ड आक्रामक (ऐग्रेसिव) नहीं हैं। इसलिए अनीति और अन्याय से मुक्ति दिलाने में ग्रामसभा की शक्ति सबसे पहले लगनी चाहिए। खेती, सिंचाई, उद्योग आदि का काम—अगर सर्वोदय की दृष्टि रखनी है तो—उसके बाद ही हो सकता है। अगर यह बात सही हो तो बड़े मालिकों और मजदूरों में प्रवेश पाने का हमें सुनियोजित प्रयत्न करना चाहिए। बीघा-कट्ठा प्रवेश का समर्थ माध्यम बन सकता है। इसके अलावा जिस क्षेत्र में पाँच ग्रामसभाएँ बन जायें, उनके पदाधिकारियों के शिविर किये जायें, ताकि नये नेतृत्व की शुरुआत होने में देर न हो।

बीघा-कट्ठा को टालकर ग्रामसभा बनाने, और मुक्ति-कार्य को छोड़कर कल्याण या समृद्धि (विकास) के काम करने का प्रलोभन जनता और कार्यकर्ता, दोनों में है। मेरे विचार में यह हमारे आन्दोलन के लिए घातक है। इस पर हमें विचार करना चाहिए, और विचार कर अपने काम के ढंग में परिवर्तन करना चाहिए।

ऐसा सोचा गया है कि पहले उत्तर बिहार के जिलों में प्रगतिशील किसानों की बैठकें की जायें, उसके बाद मजदूरों-बँटाईदारों की की जायें। अन्त में दोनों-तीनों की सम्मिलित की जायें। इस संवाद-पद्धति की प्रक्रिया मुजफ्फरपुर जिले से शुरू हुई है। वहाँ प्रगतिशील किसानों की बैठक २१,२२ फरवरी को हुई थी। उस बैठक ने मजदूरी के सम्बन्ध में एक फार्मूला' पेश करने के लिए एक उप-समिति बनायी है। अगली बैठक शीघ्र होगी। यह क्रम जारी रहेगा। पूर्णिया की बैठक १०,११ अप्रैल को है। मुंगेर के चौथम प्रखण्ड में भी यह क्रम शुरू है।

—राममूर्ति

तंजावूर की भूमि-समस्या

समाजवादी मुखौटे के अन्दर बदरूप चेहरे

"अक्का! वे बूढ़े बाबाजी फिर से कब आनेवाले हैं?"

"क्यों?"

"पिछली बार वे पदयात्रा करते हुए हमारे गाँव में आये थे। मिरासदार (जमींदार) को उन्होंने समझाया था। परिणामस्वरूप मिरासदार ने छः मजदूरों को एक एकड़ के हिसाब से छः एकड़ भूमि ठीके से दी है। वे फिर से आकर मिरासदार को समझायेंगे तो हम लोगों को जमीन मिल सकेगी। कितना अच्छा होगा!"

हम कृष्णाम्मा के साथ एक देहात में शान्ति-केन्द्र की ओर से चलनेवाले एक शिविर में जा रहे थे। बात है तंजावूर जिले की। खलिहान में ८-१० मजदूर काम कर रहे थे। उन्होंने कृष्णाम्मा से यह बात की; क्योंकि कृष्णाम्मा उन बूढ़े बाबाजी के साथ थीं। वे बूढ़े बाबाजी थे शंकरराव देव।

बात करनेवाले हरिजन मजदूर थे। तंजावूर जिले की एक खास परिस्थिति है। यहाँ ३३ प्रतिशत लोग हरिजन हैं। इन हरिजनों के पास भूमि न होने से मजदूरी करके ही ये लोग अपना निर्वाह करते हैं। मजदूरी कानून से यद्यपि तीन रुपये तय है, लेकिन वह कहीं-कहीं ही दी जाती है। इन्हें डेढ़ रुपया मिलता है। दो फसली भूमि है। फिर भी बारह महीने काम मिलता नहीं। गाँव में दूसरा कोई ग्रामोद्योग न होने से दारिद्र्य की कोई सीमा नहीं।

जमींदारों के पास सैकड़ों एकड़ भूमि है। मन्दिर-मठों के पास भी हजार, दो हजार, ढाई हजार एकड़ तक भूमि है। और वह सब इन मिरासदारों के कब्जे में है। यह सारी खेती मजदूरों से करवायी जाती है। मजदूरी के बजाय कम-से-कम यह भूमि उन्हें ठीके से भी मिले, ऐसी यहाँ के मजदूरों की माँग है। पर यह छोटी-सी माँग भी यहाँ के मिरासदारों को मंजूर नहीं है। अतः मजदूर अत्यंत असंतुष्ट हैं और तेजी के साथ वे कम्यूनिस्ट हो रहे हैं।

हर देहात में कम्यूनिस्टों ने मजदूरों को संगठित किया है। अतः हर जगह लाल झंडा लहरा रहा है। सवर्णों में भी कुछ मजदूर हैं, पर उनकी हालत हरिजनों से कुछ अच्छी है।

देश भर में हर गाँव में हरिजन मोहल्ला अलग होता है, पर तंजावूर में जो हरिजन मोहल्ले होते हैं वे गाँव से काफी फासले पर होते हैं। हरिजन मोहल्ला यहाँ 'चेरी' कहलाता है। चेरी कभी-कभी गाँव से ३-४ फर्लांग दूर होता है। पीने के पानी का, रोशनी का, या रास्ते का कोई भी प्रबन्ध चेरी में नहीं होता। गाँव में भले ही बिजली आ गयी हो, पर वह चेरी के नसीब में नहीं होती है।

सुमन बंग

मालिक-मजदूरों में बहुत तनावपूर्ण वातावरण है। आज भी मजदूरों की मालिक कहीं-कहीं पिटाई करते हैं। मजदूरों में भूमि की भूख भयंकर है। तंजावूर जिले में दो हजार एकड़ भूदान मिला है। एक जगह का बँटवारा राजाजी के हाथों से हुआ था। तब उन्होंने जो उद्‌गार प्रकट किये थे उस पर से यहाँ की भूमि-समस्या की तीव्रता ख्याल में आयेगी। राजाजी ने कहा था—"किसीने यदि मुझे कहा होता कि तंजावूर जिले में भूदान द्वारा भूमि का बँटवारा हो रहा है, तो मुझे कदापि विश्वास नहीं होता। लेकिन भूदान के बँटवारे का यह कार्यक्रम मेरे ही हाथों हो रहा है, प्रत्यक्ष भूमि का बँटवारा मैं अपनी आँखों से यहाँ देख रहा हूँ, अतः अब अविश्वास का कोई सवाल ही नहीं है। बिना जबरदस्ती जमींदार यहाँ जमीन छोड़ सकता है यह असंभव-सा था।"

पश्चिम से पूर्व तंजावूर जिले में भूमि की समस्या अधिक तीव्र है। यथावत् स्थिति कायम रखने की दृष्टि से यहाँ की डी० एम० के० सरकार मिरासदारों की हिमायती है।

बात करते-करते सहजता से कृष्णाम्मा ने मजदूरों के साथ काम करना शुरू कर दिया था। मजदूरों के साथ कृष्णाम्मा की इस तादात्म्यता के कारण उनके दिल में कृष्णाम्मा को स्थान मिला। हरिजनों को भूमि किस तरह मिलेगी इसकी धुन कृष्णाम्मा पर सवार है। खुद को भी वह भूल गयी हैं, ऐसा लगता है। उनकी सादगी और तड़पन से वह हरिजनों के साथ समरस हो गयी है। न खाने की सुध, न विश्राम, रात-दिन हरिजनों को भूमि कैसे मिलेगी, यही धुन।

× × ×

एक माह पूर्व ही आनन्दनपट्टै के मजदूर अपने घर वापिस आये हैं। यह गाँव छोटा सा है। ४ अक्तूबर, '६९ की बात है। मिरासदार और मजदूरों के बीच झगड़ा मिटाने के लिए दोनों की सलाह से एक कम्यूनिस्ट जमींदार नेता, जिस पर दोनों का विश्वास था, पड़ोस के गाँव से बुलाया गया। पर घर में प्रवेश करते ही किसी जमींदार के आदमी ने सिर पर प्रहार कर वहीं उसे खतम कर दिया! सारे मजदूर संतप्त हुए और उनमें से किसी एक ने जमींदार के घर के तीन लोगों का खून कर डाला। फिर क्या? पुलिस बुलायी गयी। मजदूर इधर उधर भाग गये। चार मील का क्षेत्र पुलिस ने घेर लिया। महीनों यह क्षेत्र पुलिस से घिरा रहने के कारण बाहर भागे हुए मजदूर काम करने अपने गाँव में नहीं आ सके। घरवाले भूखे मरने लगे। कइयों ने भीख माँगना शुरू कर दिया। कुटुम्ब के प्रमुख पुरुष जेल में और स्त्रियाँ तथा बच्चे शहर में भीख माँगकर पेट भरने लगे। पुलिस ने उनकी अनुपस्थिति में कइयों के झोपड़े उजाड़ डाले, गरीबों के संसार का साज, जो मिट्टी के थे, पत्थर से चकनाचूर कर दिये गये। बैलगाड़ी के चक्के तोड़े हुए जगह-जगह नजर आ रहे

थे। एक बूढ़ा बाप अन्न-पानी माँगते माँगते अपने झोंपड़े में ही मर गया। उसका तरुण लड़का, जो पुलिस की डर से मारे-मारे फिर रहा था, कुछ भी नहीं कर सका। अपनी गर्भवती पत्नी को (जो पहली बार माँ बननेवाली थी) पुलिस के अत्याचार के डर से मायके पहुँचाकर एक नौजवान ने आत्महत्या कर ली।

लोकतन्त्र और समाजवाद की रात दिन हम दुहाई देते हैं, गरीबों की भलाई की बात करते थकते नहीं हैं। उसी देश में ये घोर अत्याचार! कानून से जो भी करना हो करें, पर इस तरह बेकार में आतंक फैलाने के 'लिए, जो निरपराध हैं, उन्हें भी क्यों तंग किया जाता है, समझ में नहीं आता। मजे की बात यह है कि मजदूर-नेताओं ने जब कम्यूनिस्ट पक्ष छोड़कर डी० एम० के० पक्ष में शामिल होने का वादा किया तब उन्हें जल से छोड़ा गया और पुलिस हटी। गाँव में एक कम्यूनिस्ट लाल झंडे के साथ दूसरा डी० एम० के० का लाल-काले पट्टोंवाला झंडा भी लहराने लगा। भागे हुए लोग गाँव में वापस आये। पर अभी भी जमींदार अपने खेत पर मजदूरों को काम नहीं देता और उन्हें काम के लिए दर दर भटकना पड़ता है। आज वे बेहाल, बेसहारा हो गये हैं। मुर्गियाँ, बकरियाँ, गाय, बैल, भैंसे सब कुछ उनका लुट गया है। बचे हैं निराधार, लाचार ये जीव।

यहाँ के मजदूरों की माँग भी क्या है! यदि उन्हें ½ एकड़ भी भूमि मिलती है तो उन्हें संतोष है। खेत पर रात दिन पसीना बहाकर जीनेवाले इन लोगों को क्या इतना माँगने का हक नहीं है? किसी विचार से नहीं, बल्कि इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए वे कम्यूनिस्ट पक्ष में शामिल होते हैं। क्योंकि कम्यूनिस्ट उन्हें इसका आश्वासन देते हैं। केवल बंटाई से भी भूमि मिले तो मजदूर समाधान की साँस ले सकता है। ऐसी यहाँ की आज की हालत है।

कम्यूनिस्ट कार्यकर्ता रात-दिन काम में लगे रहते हैं। तंजावूर जिले में हरेक सर्किल में उनका केंद्र है। वहाँ वे हर अमावस को सभा करते हैं। उनके तीन प्रकार के कार्यकर्ता हैं—कुछ सिर्फ विचार-प्रचार का काम करते हैं, कुछ कार्यकर्ता मजदूरों की समस्याओं की ओर ध्यान देते हैं, और कुछ भूमि के प्रश्नों की ओर।

यहाँ के कम्यूनिस्ट-आन्दोलन को संगठित रूप से यहाँ के जमींदार विरोध कर रहे हैं। 'प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन'—जमींदार संग-राम की संस्था उन्होंने स्थापित की है। इस क्षेत्र में पहले कांग्रेस का काफी प्रभाव था। आज भी अनेक जमींदार खादीधारी दिखाई दिये। लेकिन आज कांग्रेस देहातों में प्रभावहीन हो चुकी है। डी० एम० के० का देहातों में विशेष प्रभाव नहीं है। अब कम्यूनिस्टों को काम करने के लिए खाली मैदान मिल रहा है।

× × ×

कीलवेणमणी वह दुर्दैवी देहात है, जहाँ ४४ हरिजन जिन्दा जला दिये गये थे। आज वहाँ शान्ति नहीं है। मालिक-मजदूर संघर्ष तीव्र है। दोनों अशान्ति की आग में झुलस रहे हैं।

ता० १२ फरवरी को स्थानीय सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के साथ मैं इस देहात में गयी। एक जमींदार वहाँ की पंचायत का अध्यक्ष है। मजदूर और मालिक, दोनों की बात सुननी चाहिए, इस दृष्टि से हम एक जमींदार से बात करने गये। एक दंडधारी भाई पहरा दे रहा था। सुबह साढ़े दस का समय था। सामने घास की एक छत के नीचे तीन-चार मजदूर-परिवार खाना बनाने के प्रबन्ध में लगे थे।

"ये मजदूर यहाँ क्यों रहते हैं?"—मैंने प्रश्न किया।

"यहाँ के मजदूर हमारे यहाँ काम करने के लिए तैयार नहीं हैं।"—जमींदार ने जवाब दिया।

"क्यों, आपके यहाँ बिना काम किये इनका पेट कैसे भरेगा?"

इसके जवाब में उन्होंने सुनाया, "इन मजदूरों ने हमारे खेत में जबरदस्ती काम करना शुरू किया। अतः मैंने पुलिस को बुलाया। गिरफ्तारियाँ हुईं और हमारे बीच की दुश्मनी और भी ज्यादा बढ़ी। अब हम इन्हें कैसे काम पर रख सकते हैं? इसलिए चालीस पचास मील दूर से हमने कुछ मजदूर-परिवारों को यहाँ बुलाकर अपने आश्रय में रखा है।"

यह संघर्ष कैसे मिटाया जा सकता है इसकी जमींदार के साथ चर्चा की और इसके लिए ग्रामदान किस तरह उपयुक्त है यह समझाया। उसने बात मानी और कहा, "पर मजदूर तो कम्यूनिस्टों के हाथ का खिलौना बने हैं। वे यह नहीं होने देंगे। कम्यूनिस्ट संघर्ष चाहते हैं। उन्हें हमारी सम्पूर्ण भूमि चाहिए। वे हमें भिखारी बनाना चाहते हैं। उनकी माँग पर हमने मंदिर की ३३ एकड़ भूमि जोतने के लिए दी है। पर उसके बदले में वे हमको कुछ भी नहीं दे रहे हैं। जैसे-जैसे सुविधाएँ हम उन्हें देते हैं वैसे वैसे उनकी माँगें बढ़ती ही जाती हैं। गाँव के मजदूर मौके के समय काम पर न आकर बेढंगी माँगें पेश करके हमें डराते रहते हैं। अब उन पर हम कतई विश्वास नहीं कर सकते।

"ता० २५-१२-'६८ को जिन ४४ आदमियों को जिन्दा जला दिया गया था, उनके स्मारक के तौर पर एक स्मारक-शिला ता० २८-६-'६९ को बनायी गयी है। पश्चिम बंगाल के उपमुख्यमंत्री श्री ज्योति बसु के हाथों यह स्मारक-शिला बैठायी गयी है। यह स्मारक शिला तंजावूर जिला सी० पी० एम० पक्ष ने बैठायी है। यह सारा कार्यक्रम श्री पी० राममूर्ति एम० पी० की अध्यक्षता में हुआ था।"

तमिल भाषा में लिखी हुई यह स्मारक शिला दूर से दिखाई दी और मेरे तो रोंगटे खड़े हो गये। किस जमाने में हम रहते हैं?

क्यों यह दुर्घटना हुई? यद्यपि हरिजनों को जलाया गया था, फिर भी यह निश्चित बात है कि यह केवल अस्पृश्य-सवर्ण का झगड़ा नहीं है। आर्थिक और राजकीय कारण इस घटना के पीछे हैं। आर्थिक विषमता भयंकर है। अतः राज-

दिन मालिक मजदूर-संघर्ष जारी है। मजदूरों को हर रोज छः माप धान देने का 'अवार्ड' होते हुए भी यह नहीं दिया जाता था। अतः मजदूरों ने आन्दोलन किया, कम्यूनिस्टों के मार्गदर्शन में। उसमें जमींदार की ओर का एक भाई मारा गया। फिर क्या था! दोनों ओर से शस्त्र चले और जमकर लड़ाई छिड़ गयी। जमींदारों ने चेरी को आग लगा दी, जिसमें मजदूरों के चौबीस झोपड़े जलकर भस्म हो गये। एक झोपड़ी में दो कमरे थे। वह झोपड़ी जमींदार की ओर से लड़नेवाले मजदूर के लड़के की थी। लोगों को लगा कि जमींदार इसको नहीं जलायेगा। अतः उस १०'×१०' की छोटी-सी कुटिया में मोहल्ले के सारे वृद्ध (३), सारी स्त्रियां (१९), और सारे बच्चे (२२) छिपा दिये गये और बाहर से ताला लगा दिया गया! दुर्दैव से उस झोपड़ी को भी आग लगा दी गयी और वे ४४ अभागे जलकर खाक हो गये!

सत्य घटना क्या है, खोजना कठिन है। भिन्न-भिन्न रायें जाहिर की गयी हैं, इसके बारे में।

तंजावूर जिले में २१ हजार एकड़ भूमि मंदिर और मठ आदि के हाथों में है। यह सारी जमीन भिन्न-भिन्न ट्रस्टों के नाम से है, लेकिन उसका लाभ जमींदार अपने निजी स्वार्थ के लिए उठाता है। मजदूरों का भयंकर शोषण किया जाता है, अतः हद दर्जे की गरीबी है। मजदूर की भूमि की भूख बड़ी है, बढ़ रही है और भूमि उनसे उतनी ही दूर जा रही है। अतः बहुत असंतोष है। उसका लाभ कम्यूनिस्ट उठा रहे हैं।

इस जिले में बहुत कम भूदान मिला है। यहाँ की समस्या जितनी गम्भीर और उग्र है उतना ही हमारा काम भी नहीं के बराबर है। पिछले साल श्री शंकरराव देव और निर्मलाताई देशपांडे की पदयात्रा होने से कुछ जागृति हुई है। तीन गांधी शांति केन्द्र यहाँ शुरू किये गये हैं। काफी अनुभवी कार्यकर्ता वहाँ काम कर रहे हैं। घनी आबादी और सिंचाई खेती के दूसरा धंधा नहीं है, अतः बेकारी की समस्या बड़ी भयानक है। इसलिए ये शांति-केन्द्र कुछ कुटीरोद्योग शुरू कर रहे हैं। देहातों में लोग काम करने के लिए तैयार हैं, लेकिन उन्हें काम मिलता नहीं। अपने पसीने की रोटी मजदूर खा सके ऐसी स्थिति स्वराज्य के २३ साल बाद भी नहीं बनी। अरबों रुपयों का विदेशी कर्ज लाकर हमारी सरकार पंचवार्षिक योजनाएँ चलाती है और देश में पड़ी यह इतनी बड़ी मानव-शक्ति, श्रम-शक्ति बेकार जा रही है। क्या श्रमाधारित योजनाएँ बनायी नहीं जा सकती थीं? रात दिन समाजवाद का नारा लगानेवाले हमारे नेताओं की आँखें कब खुलेंगी, मालूम नहीं। यह नारेवाला समाजवाद मजदूर को न जमीन दे सका है, न काम। कब तक वह राह देखेगा? यदि तंजावूर की समस्या तुरंत हल नहीं होती है तो वहाँ बंगाल-सरीखी स्थिति का निर्माण होने में देर नहीं लगेगी।●

पुस्तक-परिचय

प्रस्तुति दो

(शिक्षकों का कविता-संग्रह)

सम्पादक : सर्वश्री ज्ञान भारिल्ल, प्रेम सक्सेना, चन्द्रकिशोर शर्मा

प्रकाशक : कल्पना प्रकाशन, बीकानेर।

मूल्य रु० ४.५०। पृष्ठ १२०

अभिव्यक्ति दो

(शिक्षकों का कहानी-संग्रह)

सम्पादक उपर्युक्त

प्रकाशक राजस्थान प्रकाशन त्रिपोलिया, जयपुर-२

मूल्य चार रुपये पचहत्तर पैसे

पृष्ठ १५५

यदि गांधी शिक्षक होते

(शिक्षकों का निबन्ध-संग्रह)

सम्पादक उपर्युक्त

प्रकाशक चिन्मय प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर-३

मूल्य चार रुपये पचास पैसे।

पृष्ठ : १४०

उपर्युक्त पुस्तकों में राजस्थान के सृजनशील शिक्षकों की कविताओं, कहानियों और निबन्धों का संग्रह है। आज के विद्यार्थी कल देश के कर्णधार बनेंगे। इस युवा पीढ़ी के मन में तरह-तरह की भावनाएँ रोज उठती हैं। उनमें क्षोभ भी और तज्जन्य असन्तोष भी समय-समय पर प्रस्फुटित होता रहता है। शिक्षक का दायित्व सिर्फ इतना ही नहीं है कि वह पुस्तकों में संजोये परम्परागत ज्ञान की घुट्टी अपने होनहार विद्यार्थियों को पिलाता रहे, अपितु नित्य-नूतन होनेवाले परिवर्तनों की अद्यतन जानकारी को प्रस्तुत करना एवं छात्रों के अन्दर विवेक जागृत करना शिक्षक का धर्म है।

इन प्रकाशित पुस्तकों में विद्वान एवं जागरूक शिक्षक लेखकों ने अपनी उत्तम कृतियाँ पाठकों के समक्ष शिक्षा विभाग के माध्यम से प्रस्तुत की हैं। प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा निदेशक श्री हरिमोहन माथुर बधाई के पात्र हैं जिन्होंने शिक्षकों का पर्याप्त उत्साहवर्धन किया है, और जिनकी प्रेरणा से राजस्थान में शिक्षकों का स्थान सर्वोत्कृष्ट माना जाता है।

विचार चाहे जितना ही उत्तम क्यों न हो, जब तक वह सामान्य जीवन में आचरित नहीं होता, तब तक वह महत्त्वहीन रहता है। इन पुस्तकों में जीवन की जिस ऊँचाई को लक्ष्य किया गया है, आशा है, शिक्षक एवं छात्र-समुदाय इन पुस्तकों का अध्ययन करके उसे अमल में लायेगा।

गेटअप एवं छपाई सुन्दर है। पुस्तकें पठनीय एवं पुस्तकालयों में संग्रहणीय हैं। हिन्दी साहित्य जगत् के लिए उपर्युक्त पुस्तकें अमूल्य निधि हैं। यदि प्रत्येक प्रदेश की सरकारें के शिक्षा-विभाग इसी तरह का प्रकाशन करें तो जिज्ञासु छात्रों के लिए बड़ी उपयोगी सामग्री मिल सकेगी। —कपिल अवस्थी

रचनात्मक कार्यकर्ता और राजनीति

सिद्धराज ढड्ढा

पिछले महीनों में देश में जो राजनीतिक परिस्थिति बनी है, और जो अभी चल रही है, उसकी प्रतिक्रिया के तौर पर कई प्रकार का चिंतन शुरू हुआ है। कई लोग ऐसा महसूस करते हैं कि अब समय आया है जब रचनात्मक कार्यकर्ताओं को, खासकर सर्वोदय आन्दोलन में लगे हुए लोगों को, राजनीति में आना चाहिए। पिछले दिनों बादशाह खान हिन्दुस्तान आये थे। उन्होंने भी जगह-जगह जो कुछ कहा, उसमें एक बात पर जोर दिया था कि रचनात्मक कार्यकर्ताओं को राजनीति से उदासीन नहीं रहना चाहिए। हमारे प्रान्त के एक बुजुर्ग श्री हरिभाऊजी उपाध्याय ने भी "ग्रामराज" के पिछले अंकों में इसी आशय के कुछ लेख लिखे हैं।

रचनात्मक कार्यकर्ताओं का राजनीति में क्या 'रोल' हो इस बारे में स्पष्टता होना जरूरी है। मैं स्वयं इस बात से पूरा सहमत हूँ कि रचनात्मक या सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को राजनीति से उदासीन नहीं होना चाहिए, जैसे कि उनमें से बहुत से आज नजर आते हैं। जनतंत्र में किसी भी नागरिक को राजनीति से उदासीन नहीं होना चाहिए। पर सर्वोदय-कार्यकर्ता राजनीति में सक्रिय हिस्सा लें या न लें, अर्थात् वे राजनीतिक दलों में और सत्ता में जायें या नहीं यह प्रश्न थोड़ा गहराई से विचार करने का है।

एक बात शुरू में स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। बहुत से लोग समझते हैं कि हम जो सत्ता की राजनीति से अलग हैं उसका कारण यह है कि हमारे ख्याल से राजनीति गंदी है और इसलिए हम अपने आपको उस गंदगी में डालना पसन्द नहीं करते। यह सही नहीं है। सर्वोदय-कार्यकर्ता दलगत और सत्ता की राजनीति से अलग हैं उसका कारण तात्विक है। जनतंत्र में यह बहुत आवश्यक है कि जनता जाग्रत हो और उसमें राजनीतिक चेतना बराबर बनी रहे। हम पिछले बरसों के अपने अनुभवों में देख रहे हैं कि जनता के बेखबर होने के कारण राजनीति का घोड़ा बे-लगाम हो रहा है। राजनीतिक दलों के लोगों ने जिस प्रकार की धांधली मचा रखी है उससे स्वयं जनतंत्र के लिए खतरा उपस्थित हो गया है। ऐसी मनोवृत्ति लोगों में फैलती जा रही कि जनतंत्रीय राजनीति और व्यवस्था असफल हो गयी है, अतः उसका कोई विकल्प ढूँढना चाहिए। बात अब सामान्य लोगों तक ही सीमित नहीं रही। भूतपूर्व भारतीय सेनाध्यक्ष जनरल करियप्पा जैसे जिम्मेदार व्यक्ति ने अभी हाल ही में एक आश्चर्यजनक, लेकिन बहुत ही गैर-जिम्मेदाराना, वक्तव्य में संविधान को स्थगित करके सैनिक-शासन लागू करने की सिफारिश की है। जनता अगर जागरूक हो तो वह राजनीति को अंकुश में रख सकती है। अतः जनतंत्र के सफल संचालन के लिए, बल्कि यह कायम रह सके इसके लिए भी, शासन की अपेक्षा जनता के बीच काम करना, उसमें चेतना भरना और उसकी संगठित शक्ति को प्रकट करना ज्यादा जरूरी है। गांधीजी इस बात को अच्छी तरह समझते थे। इसलिए उन्होंने आजादी के बाद राज्य-सत्ता हाथ में लेने के बजाय लोगों के बीच रहकर काम करना ज्यादा आवश्यक माना। बल्कि उन्होंने कांग्रेस को भी यह सलाह दी थी कि आजादी की लड़ाई के दरमियान उपार्जित की हुई जनता के प्रेम और आदर-रूपी पूँजी का उपयोग वह सत्ता से अलग रहकर जनशक्ति के जागरण के लिए जनता को जाग्रत और संगठित करने, तथा राज्यसत्ता को अंकुश में रखने के लिए समाज में एक ऐसी शक्ति का बना रहना आवश्यक है जो निष्पक्ष और तटस्थ हो।

जिनकी यह मान्यता हो कि आज राजनीति पर गांधी-विचार का प्रभाव डालने के लिए यह जरूरी है कि रचनात्मक कार्यकर्ता संगठित रूप में राज्यसत्ता में जायें उनके लिए भी मेरी राय में, प्रचलित तरीके से कोई नया राजनीतिक दल बनाकर या किसी मौजूदा दल को अपनाकर, वैसा करना लाभदायक नहीं होगा। आज जो राजनीति चल रही है वह सत्ता के भवन में मुख्य दरवाजे से नहीं, बल्कि खिड़कियों से घुसने जैसी बात है। आज उम्मीदवार पार्टियों के द्वारा खड़े किये जाते हैं, वे सीधे जनता के प्रतिनिधि नहीं होते। जनता इतनी संगठित नहीं है कि वह स्वयं उम्मीदवारों को खड़ा कर सके। आज जो सत्ता में जाता है वह पार्टियों रूपी निसैनी से खिड़कियों के द्वारा जाता है, जनता के अभिक्रम और शक्ति के आधार पर सीधे मुख्य द्वार से नहीं। आज जो सत्ता की राजनीति में नहीं हैं ऐसे गांधी विचार-वाले अगर यह मानते भी हों कि उस राजनीति पर प्रभाव डालने के लिए उन्हें सत्ता में जाना चाहिए तब भी आज की तरह पार्टी बनाकर राजनीति के मैदान में उतरना उनके लिए फायदेमंद नहीं होगा। उन्हें सीधे जाग्रत और संगठित जनता की शक्ति के आधार पर, राजनीति में जाना चाहिए, अन्यथा वे भी आज के पार्टीवालों की तरह केवल 'फूंक भरे हुए गुब्बारे' साबित होंगे।

एक बात और समझ लेना चाहिए कि सत्ता की राजनीति स्वयं 'आउट-आफ-डेट' होती जा रही है। १०० या ५० बरस पहले राज्य सत्ता समाज में शक्ति का प्रमुख केन्द्र था यह कहा जा सकता है। लेकिन पिछले बरसों में जो तकनीकी विकास हुआ है उसके कारण सत्ता का मध्य-बिन्दु अब वह नहीं रहा है। वास्तव में सत्ता रूपी यंत्र बहुत जटिल हो गया है। सत्ता कई वर्तुलों में बँट गयी है। अब राजनीति के हाथ में समाज के संचालन की शक्ति नहीं रही है। दुनिया→

ग्रामस्वराज्य निधि

प्रबन्ध समिति की पूना-बैठक का महत्त्वपूर्ण निर्णय

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् द्वारा पूना की प्रबन्ध समिति में प्रस्तुत ग्रामस्वराज्य निधि संग्रह की योजना स्वीकृत की गयी। इस योजना की रूपरेखा श्री जगन्नाथन् ने निम्न प्रकार पेश की थी :

"सन् १९७० सर्वोदय-आन्दोलन के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण वर्ष है। यह ग्राम-स्वराज्य का नया वर्ष है। सहस्रों सर्वोदय के सेवापरायण कार्यकर्ताओं का ग्राम-स्वराज्य का जो लक्ष्य था, उसके उदय का वर्ष यही है। हम लोग सीढ़ी-दर-सीढ़ी बढ़ते-बढ़ते एक महत्त्वपूर्ण मंजिल पर पहुँच गये हैं। सन् १९५१ में जब भूदान-आन्दोलन शुरू हुआ, तब ग्रामदान से राज्यदान तक की कोई कल्पना नहीं थी। ऐसा लगता है कि यह सब भगवान की योजना के अनुसार विनोबा के विचार-गर्भ में ये बातें रही होंगी। इस आन्दोलन के करीब २० साल पूरे होने पर भी हम थकावट का अनुभव नहीं कर रहे हैं। हमारा उत्साह बढ़ता ही जा रहा है। कारण यह है कि हम क्रमशः लक्ष्य की ओर बढ़ते जा रहे हैं। बल्कि अब तो लक्ष्य की प्राप्ति के निकट आ रहे हैं। राज्यदान साध्य है, यह साबित हुआ है। एक-एक करके सभी प्रदेश यह लक्ष्य शीघ्र ही प्राप्त कर सकेंगे। बिहार का राज्य-दान पूरा हो चुका है। अभी पाँच छ महीनों में तमिलनाडु, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश उत्तरप्रदेश, उड़ीसा आदि प्रान्तों में यह काम पूरा हो सकने की आशा है।

"सन् १९७० में ग्रामसभाएँ, प्रखण्ड-सभाएँ, भूमि-वितरण आदि कार्य तूफान की गति से शुरू होने चाहिए। बिहार के राज्यदान की लक्ष्य पूर्ति होने के बाद ग्राम एवं राज्य के शिल्पी, पवनार के तपस्वी, सेवाग्राम में पुनः अन्तर्योग में बैठे हैं। बाह्य दृष्टि से ऐसा प्रतीत होता है कि वे मौन बैठे हैं, परन्तु उनके चिन्तन का तूफानी दौरा आन्दोलन के साथ है।

"यह युग-पुरुष सन् १९७० में ११ सितम्बर को पचहत्तरवाँ वर्ष पूरा करेंगे। इस अवसर पर पूरे देश में उनकी जयन्ती मनायी जानी चाहिए। जिस देश ने गांधी शताब्दी को मनाया वही देश अब गांधीजी के आत्मीय पुत्र का उत्सव श्रद्धा से मनाये, तो यह उत्तम कार्य होगा। यह उत्सव किस प्रकार मनायें ? यदि उस दिन ७५ जिलादान प्राप्त कर समर्पित किये जायँ, तो यह बहुत ही अच्छा होगा। लेकिन ७५ तो अपूर्ण हैं। अगर हम एक सौ जिलादान की प्राप्ति के लिए कोशिश करेंगे, तो वह सर्वोत्तम कार्यक्रम होगा।

"इसके साथ-साथ ग्रामस्वराज्य निधि के रूप में एक करोड़ रुपया ग्राम-स्वराज्य के लिए प्राप्त किया जाय। इसके लिए हर प्रान्त अपनी धन-राशि व लक्ष्य निर्धारित करे। इस देश में दस करोड़ परिवार हैं, अतः एक करोड़ रुपए प्राप्त करना कठिन नहीं है। पूरे देश में चौदह साल पदयात्रा करके आये नवयुग के इन्कलाबी ऐतिहासिक पुरुष द्वारा शुरू किये गये इस काम के लिए इस देश के लोग हर्ष से निधिदान देंगे, इसमें कोई शंका नहीं।

"इस निधि का उपयोग ग्रामस्वराज्य के लिए किया जायगा। राज्यदान के पूरा होते ही तूफानी वेग से ग्रामसभाओं का संगठन, भूमि-वितरण, ग्राम-कोष, खादी, ग्रामोद्योग, शान्ति-सेना आदि का श्रीगणेश होना चाहिए। जन-शक्ति से ग्रामसभाओं के द्वारा ही न्याय के आधार पर किसानों को मजदूरी, बँटाइदारों को कानूनी हक, उच्चतम भूमि सीमा-निर्धारण आदि कानून अमल किये जायेंगे।

"ग्रामसभा, ग्रामपंचायत, राज्यसभा और लोक-सभाओं के चुनावों में ग्राम-सभाओं के प्रतिनिधि मिलकर जनता के उम्मीदवारों को चुननेवाली 'लोक नीति' निर्धारित करेंगे। ये सब काम जैसे-जैसे पूरे होंगे वैसे-वैसे ग्रामसभाएँ ग्रामस्वराज्य की ओर बढ़ेंगी। ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन तूफानी वेग से पूरा करने के लिए सैकड़ों कार्य-कर्ताओं को इस काम में जुट जाने की जरूरत है। इसके लिए निधि चाहिए। तिलक महाराज का 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध हक है' पूरा हो गया। उसके लिए गांधीजी ने एक करोड़ रुपया निधि के रूप में इकट्ठा किया था। अभी गांधीजी ने जो ग्राम-स्वराज्य चाहा, उसकी सिद्धि के लिए फिर एक करोड़ की निधि आवश्यक है।"

प्रबन्ध समिति ने इस योजना को अपनी स्वीकृति देकर अध्यक्ष, मंत्री के ऊपर आगे के काम के आयोजन की जिम्मेदारी सौंपी है।■

—के विनाशक और अन्य लोग भी, जिन्होंने बरसों सत्ता की राजनीति में बिताये हैं, इसी नतीजे पर पहुँचते जा रहे हैं। भविष्य की असली राजनीति 'लोकनीति' ही होगी। लोकनीति ही सार्थक राजनीति (मीनिंगफुल पोलिटिक्स) हो सकती है।

इस प्रकार चाहे तात्त्विक दृष्टि से देखें, चाहे व्यावहारिक दृष्टि से, और चाहे जमाने की रफ्तार की दृष्टि से—हर हालत में, पहला और मुख्य काम जनता की शक्ति को जाग्रत करने और उसे संगठित करने का है। सत्ता में जाकर व्यक्तिगत स्वार्थ-साधना हो या झूठा समाधान मानना हो तो बात दूसरी है, लेकिन अगर वास्तव में समाज का सफल संचालन करना हो तो लोकनीति का आश्रय लेना जरूरी है। भविष्य में उसीके जरिये राजनीति का सफल संचालन सम्भव है। यह नहीं हो सका तो जनतंत्र भी नहीं बचेगा। फिर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में, वामपंथी या दक्षिणपंथी, तानाशाही कायम होगी।

१०-३-'७०

उपहास या अपना पूर्वाग्रह ?

मध्यप्रदेश के ग्यारहवें सर्वोदय-सम्मेलन के बारे में श्री रामचन्द्र राही की लिखी समीक्षा पढ़ी। उस समीक्षा पर २ मार्च १९७० के "भूदान-यज्ञ" में एक टिप्पणी और लेखक का स्पष्टीकरण भी देखने को मिला। कुल मिलाकर ऐसा लगा कि टिप्पणी-लेखक महोदय ने सिर्फ सरसरी निगाह से ही पढ़ा था अन्यथा धैर्य और सहिष्णुता की सीमा लांघकर यथार्थ चमन पर झनकते नहीं। मैं अपने विचारों के सार्वजनिक अभिव्यंजन से विरत ही रहता, अगर "अध्यात्म का उपहास" न किया गया होता। विनोबाजी के अध्यात्म और विज्ञान का अर्थ समझ लेने पर यह मन में शंका ही नहीं उठती कि अध्यात्म का उपहास किया जा रहा है। इन्सान से लेकर भगवान तक का उपहास करनेवाले जमाने में कुण्ठा एक बहुत बड़ा सम्बल है जो एकान्तप्रिय बनाकर समाज को 'मेन स्ट्रीम' से अलग हो जाने की प्रेरणा देती है। क्या आज हम कुण्ठाग्रस्त समाज और सरकार के साये में नहीं जी रहे हैं? यही वह तत्त्व है जो हमें कुछ नया सोचने के लिए प्रेरित कर रहा है। धर्म, अध्यात्म और राजनीति, इन तीनों के नये अर्थ प्रस्तुत हो रहे हैं, क्योंकि इन तीनों ने स्वधर्म का परित्याग किया है।

हम सब न भी स्वीकार करें तो भी यह तथ्य तो है कि अध्यात्म की चर्चा के नाम पर, साधना में तल्लीन होनेवाले अपने को दूसरों से अलग मानते हैं। इस सर्वोदय आन्दोलन को जो प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है वह इसलिए नहीं कि गांधी और से आंख मूंदकर स्वान्तःसुखाय अध्यात्म में डूबने का उपदेश देनेवाला था, अपितु अध्यात्म की प्रतिष्ठा को कायम रखते हुए समाज के उपयोगी कार्यों में सर्वोदय लगा है, इसलिए सर्वमान्य हुआ है। अध्यात्म के कोरे नारे न तो अपने साथियों को जोड़े रख सकते हैं और न जनता को ही आकृष्ट कर पाते हैं। भारत को ऐसा अध्यात्म (हिप्पियों जैसा) चाहिए भी नहीं। ६० लाख साधुओं की एकान्तिक साधना का ही बोझ इस धरती के लिए क्या कम है? जिन लोगों का अध्यात्म "क्रियेशन" के बजाय "सेपरेशन" का द्योतक हो, उन्हें कुण्ठाग्रस्त न कहा जाय तो और क्या कहा जाय? सर्वोदय विचारधारा के प्रति लोगों के मन में यह सहज भावना है कि अध्यात्म के लिए सर्वोदय नहीं अध्यात्म की लाइन पर चलता हुआ सर्वोदय क्रान्तिकारी परिवर्तन चाहता है, कर भी रहा है, इसलिए सर्व-ग्राह्य है।

हम सबका यह अनुभव है कि अध्यात्म में निष्ठा रखनेवाला व्यक्ति निष्क्रिय हो नहीं सकता, लेकिन पहले से ही निष्क्रिय लोग अध्यात्म अथवा साधना के नाम पर दूसरों की क्रियाशीलता के लिए बाधक साबित होते हैं। विनोबाजी जिस अध्यात्म की व्याख्या करते हैं वह पूर्ण रूप से सृजनात्मक है। उसका भाष्य जब लोग अपनी बात की पुष्टि के लिए करने लगते हैं तो उसका मूल अर्थ गायब हो जाता है।

कई ऐसे अवसर हमें भी देखने को मिले हैं, जिनमें अध्यात्म की दुहाई देकर फायदा उठा लेनेवालों ने अपना आग्रह दूसरों पर लादने की चेष्टा की। खुशी की बात है कि सर्वोदय की यह जमात 'भेड़िया धसान' नहीं बनी। सर्वोदय-वालों का यही विवेक आज देश और दुनिया के नक्शे पर सर्वोदय की प्रतिष्ठा बनाये है।

कौन होगा जो मध्यप्रदेश के साथियों के आयोजन को बधाई नहीं देगा! वहां 'क्रियेशन' को प्राथमिकता दी जाती है। हर प्रदेश के लोग अपने दिलों पर हाथ रखकर देखेंगे तो पायेंगे कि जवान और बुजुर्गों के बीच खिंचाव और कुढ़न की मात्रा भरपूर है। जो सवाल दूसरे प्रदेशों में है उनका ही उत्तर तो मध्यप्रदेश ने दिया है। हममें से कितने लोग हैं जो जवानों को साथ लेकर निभाने की, काम करने की बात तो दूर रही, उनकी बात तक सुनने को तैयार हैं? अब सिर्फ अध्यात्म की चर्चा करने का समय बीत चुका। इतिहास के परिप्रेक्ष्य में परम्परागत परिभाषा को नये सांचे में ढालने की बहुत जरूरत है। जिनके मन में अध्यात्म के कारण श्रेष्ठता का भाव आ गया हो उन्हें हिमालय की गुफा में जाने से कौन रोक सकता है?

एक बात और आन्दोलन के सम्बन्ध में फैली हुई अथवा फैलायी जानेवाली भ्रान्तियों का निराकरण आन्दोलन के मुखपत्र के द्वारा नहीं होगा तो किसके द्वारा होगा? अध्यात्म का कल्पित चित्र अगर हमारे मन में रहेगा तो हमें दूसरों की बात उपहास ही लगेगी। अपना पूर्वाग्रह दूसरों पर लादने के पहले हमें अपने अन्दर टटोल लेना चाहिए कि हमारा अध्यात्म कितने गहरे पानी में है।

—कपिल अवस्थी, लखनऊ

कोंच ब्लाक में ग्रामदान प्रारम्भ

इधर कुछ ही माह से उत्तरप्रदेश के जिला जालौन में कोंच ब्लाक में अब ग्रामदान का सन्देश पहुंच रहा है। कोंच एक छोटा-सा कसबा और तहसील-केन्द्र है तथा बड़ी अच्छी मंडी भी। यहां नगर में सर्वोदय विचार गोष्ठी एवं शिविर भी आयोजित हुए, जिसमें श्री कपिल भाई, श्री आचार्य राममूर्ति पधारे, व सुश्री सरला बहनजी की यात्रा क्षेत्र में चली। क्रान्तिकारी पंडित परमानन्दजी ने भी अपनी ८० वर्ष की आयु में ग्रामदान के लिए पैदल यात्रा की। परिणामस्वरूप अब इस क्षेत्र में भी ११ ग्रामदान प्राप्त हो चुके हैं। इसके अलावा लेबोय एवं कोंच नगर के सर्वोदय मित्र मण्डल की स्थापना हुई है।●

टिहरी, गढ़वाल जिले में नशाबन्दी की घोषणा

जन-आन्दोलन और सत्याग्रह का सुपरिणाम

सत्याग्रही रिहा हुए

उत्तराखण्ड के प्रमुख कार्यकर्ता श्री सुन्दरलाल बहुगुणा ने शराबबन्दी आन्दोलन के सिलसिले में जेल से रिहा होने के बाद एक पत्र में लिखा है

"मैं १५ तारीख की रात को ही गिरफ्तार हो गया था। श्री भवानी भाई ने तो बहुत ही बहादुरी से अकेले ही हजारों प्रदर्शनकारियों का मार्ग दर्शन कर कमाल ही कर दिया। २० तारीख को सुश्री सरला बहन भी पहुँच गयी थीं।

"अब शराबबन्दी की घोषणा और सत्याग्रहियों की रिहाई के बाद गाँवों में सर्वोदय-पात्र का काम शुरू हुआ है।

"जेल में प्रात-सायं प्रार्थना होती थी। धरना-स्थल पर भी प्रार्थना और उसके बाद प्रवचन के कार्यक्रम चलते रहे। पूरे आन्दोलन ने जेल के बाहर और भीतर शान्ति-सेना शिविर का रूप ले लिया था। ३७ महिलाएँ, १७ पुरुष गिरफ्तार हुए थे। १० वर्ष के लड़के से लेकर ९१ वर्ष की बुढ़िया तक जेल में रहे।

"३ दिनों तक टिहरी में हड़ताल और २० मार्च को 'टिहरी जिला-बन्द' का कार्यक्रम पूर्ण सफल रहा।

"सभी पक्षों के लोग एक सूत्र में बँधकर श्री भवानी भाई के मार्गदर्शन में काम करते रहे। अब गांधियों की छुट्टी में ५० तरुणों की टोली को जिले भर में घुमाने की योजना है।"•

श्री वसंत नारगोलकर गिरफ्तार और रिहा

आदिवासियों की भूमि-समस्या के संदर्भ में आन्दोलन

महाराष्ट्र के ठाणा जिले में आदिवासियों के बीच सर्वोदय-कार्यकर्ता और उनकी पत्नी श्रीमती कुसुम नारगोलकर स्थायी रूप से कैनाड में रहकर सेवा-कार्य कर रहे हैं। ठाणा जिले की जंगल-भूमि की समस्या को लेकर कैनाड और आसपास के आदिवासी किसानों के लगभग डेढ़ सौ प्रतिनिधियों का मण्डल श्री वसंत नारगोलकर के नेतृत्व में उठाया गया था। उसी संदर्भ में श्री नारगोलकर और दो आदिवासी प्रमुखों पर कोर्ट में मुकदमा चला और जुर्माना हुआ। जुर्माना देने से इनकार करने पर उनको सात दिन की कैद की सजा हुई। कैद के दिनों में १३ से १९ मार्च तक श्री नारगोलकर ने उपवास किया, जिसका उद्देश्य था—वहाँ की भूमि-समस्या की तीव्रता जनता के ध्यान में आये। [इसके बारे में उनका निवेदन अगले अंक में पढ़ें।]•

ग्राम-स्वराज्य समिति, मुंगेर की बैठक

६-३-७० को पाँच बजे सन्ध्या में जिला ग्राम स्वराज्य समिति की कार्यसमिति की बैठक आचार्य राममूर्तिजी की अध्यक्षता में श्रमभारती, खादीग्राम में हुई।

ग्रामदान-पुष्टि अभियान के लिए धन-संग्रह के कार्यक्रम पर विचार हुआ। धन-जन, दोनों ही प्राप्त करने की दृष्टि से बिहार ग्राम-स्वराज्य समिति के पाँच लाख सर्वोदय-मित्र बनाने के निश्चय को बल देने के लिए मुंगेर जिले की जनसंख्या के अनुपात में ३५ हजार सर्वोदय-मित्र बनाये जायँ ऐसा तय हुआ। जिले के ३७ प्रखंडों में प्रति प्रखण्ड एक हजार सर्वोदय-मित्र बनाने का निर्णय लिया गया।

ग्रामसभाओं के गठन में बीघा-कट्ठा देनेवाले सज्जनों को ही ग्रामसभा के अध्यक्ष, मंत्री और कोषाध्यक्ष बनने का अधिकार हो। या जो सभा के अधिकारी हों वे इस शर्त का अवश्य ही पालन करें। ग्रामसभा के गठन के बाद सभा का प्रथम कार्य बीघा-कट्ठा के वितरण का हो, ऐसा नहीं होने से फिर ग्रामसभा बनने का कोई अर्थ नहीं रह जाता, ऐसा सर्वसम्मत निर्णय रहा।

प्रखण्डस्तरीय ग्राम स्वराज्य समिति के गठन का निर्णय हुआ।

सर्वोदय-मण्डल और ग्राम-स्वराज्य समिति की आय के स्रोतों के मदों पर विचार हुआ। इस पर अंतिम निर्णय यह हुआ कि सूताञ्जलि और लोक-सेवकों की रु० ३६५ वाली रकम सर्वोदय-मण्डल की आय मानी जाय और सर्वोदय-मित्र और सर्वोदय-सहयोगीवाली रकम को ग्राम-स्वराज्य समिति की आय मानी जाय।

—साकेतबिहारी

नयी तालीम आवासिक शाला

५ अप्रैल से नये सत्र का आरम्भ

दिल्ली से ८० मील उत्तर में जी० टी० रोड पर ग्राम पट्टीकल्याणा में स्थित गांधी स्मारक निधि के आश्रम की नयी तालीम आवासिक शाला का नया सत्र ५ अप्रैल से आरम्भ हो रहा है। यहाँ कक्षा १ से ७ तक की उत्तम पढ़ाई, तथा स्वस्थ आवास की समुचित व्यवस्था है। प्रवेशार्थी अपना प्रार्थनापत्र तुरन्त भेजें या प्रत्यक्ष चर्चा के लिए ता० ५ अप्रैल को आयें। विशेष जानकारी के लिए पत्र-व्यवहार का पता :

मंत्री, गांधी स्मारक निधि, (पंजाब, हरियाणा, हिमाचल) आश्रम, पट्टीकल्याणा, जि० करनाल, (हरियाणा)।

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : २७
सोमवार ६ अप्रैल, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४२८५

आन्तरिक अनुभूति और बाह्य क्रिया

प्रश्न : स्वप्नहीन अवस्था का साधन क्या है ?

विनोबा : प्रतिदिन जो-जो स्वप्न आयें उनको लिखकर रखना। दूसरे दिन आयें या तीसरे दिन आयें, सभी लिखकर रखना। फिर यह देखना कि कौनसे स्वप्न बराबर आते हैं, और हर दफा अलग-अलग कौनसे आते हैं। फिर अपने मन के अन्दर ढूँढना कि अमुक स्वप्न किस वासना के कारण हुआ है। फिर मालूम होने पर उसको तोड़ना। इस प्रकार से स्वप्न लाभदायी होते हैं, और अपनी परीक्षा करने में मदद करते हैं।

प्रश्न : 'ज्योतिर्मयोहि शुभ्रो' 'लोहित कृष्ण शुक्ल', इसकी स्थिर प्रतीति कैसे और कब होती है ?

विनोबा : दिव्य ज्योति आदि जो स्वप्न में दिखाई देगा, वह आश्वासन मात्र है। साक्षात्कार के लिए उससे उत्तेजन मिलता है। जैसे छोटा बच्चा अच्छा काम करता है और माँ उसको शाबाशी देती है, तो उसको प्रेरणा मिलती है, वैसे ही स्वप्न में यदि दिव्य-दर्शन हुआ तो वह साक्षात्कार नहीं समझना चाहिए और मिथ्या भी नहीं समझना चाहिए, बल्कि वह आश्वासन मात्र है, ऐसा समझना चाहिए।

ज्योतिर्मय आदि जो भाषा है वह केवल मानव-भाषा में वर्णन करने के शब्द नहीं हैं। उसके लिए सूर्य, चन्द्र की ज्योति की तुलना की जाय तो वह चलता नहीं। वह बिलकुल दूसरी श्रेणी है। उसके लिए हमारे पास शब्द नहीं हैं। उसको अंधार भी कह सकते हैं, अगर आप उसको ज्योति कहते हैं तो। यह भौतिक है, और वह गूढ है। दोनों नाम लिये जा सकते हैं। लेकिन दर्शन होने पर जाहिर न किया जाय। जैसे पानी को रोककर खेत में डालते हैं, तो फसल अच्छी आती है, यदि रोकेंगे नहीं तो वह बिखर जायेगा। उसी तरह आन्तरिक अनुभव को जाहिर न करते हुए पचायेंगे तो वह क्रिया के रूप में प्रकट होगा।

प्रश्न : कर्मेन्द्रियों के सहारे के बिना, केवल मानसिक चिन्तन, ध्यान व साधना से, समाज में वांछित परिणाम संभव है क्या, और कैसे ?

विनोबा : केवल चिन्तन से भी हो सकता है, अगर अहं-मुक्ति हुई हो। ऐसा नहीं हुआ है तो चिन्तन के साथ क्रिया को जोड़ना होगा। बिना क्रिया के नहीं होगा। परन्तु अहं शून्य हो गया तो अस्तित्व मात्र से सेवा होगी, ऐसा मैं मानता हूँ।

शान्तिकुटी, गोपुरी (वर्धा)

खूनी राजनीति

गाली के बाद गोली, दूसरा क्या ? जब एक बार प्रहार को प्रतिष्ठा मिल गयी, तो कोई नहीं कह सकता कि गाली कहाँ समाप्त होगी, और गोली कहाँ शुरू होगी। गोली और गाली की जाति एक है, दोनो की प्रकृति एक है।

२२ वर्ष पहले गांधी को गोली मारी गयी। गांधी की हत्या क्यों की गयी ? क्या इसके सिवाय कोई दूसरा कारण था कि गांधी की अहिंसा असह्य हो गयी थी ? अप्रिय अहिंसा का प्रतिकार घातक हिंसा से किया गया। लेकिन अब इतने वर्षों बाद ३१ मार्च को पटना में श्री ज्योति बसु की हत्या का प्रयत्न क्यों किया गया ? ज्योति बसु तो उन लोगों में हैं जो क्रान्तिकारी अहिंसा में नहीं, क्रान्तिकारी हिंसा में विश्वास करते हैं। क्या यह माना जाय कि जिस तरह गांधी की क्रान्तिकारी अहिंसा मान्य नहीं थी, उसी तरह ज्योति बसु की क्रान्तिकारी हिंसा भी मान्य नहीं है ? अगर देश के प्रचलित मानस को क्रान्तिकारी अहिंसा और क्रान्तिकारी हिंसा, दोनो में से कोई मान्य नहीं है, तो मान्य क्या है ? यथास्थिति मान्य है ? शायद नहीं। क्रान्ति मान्य है ? शायद वह भी नहीं। शायद हमने अभी निर्णय ही नहीं किया है, कि हम क्या मान्य है और क्या नहीं मान्य है। हमारी स्थिति यही है कि क्षणिक उत्तेजना जिधर ले जाय उधर जाने को हम तैयार बैठे हैं।

हत्या के प्रयत्न का उद्देश्य क्या था ? स्वयं ज्योति बसु का अनुमान है कि उद्देश्य राजनैतिक ही हो सकता है, और गोली चलानेवाला उनका कोई विरोधी ही होगा। कुछ दूसरे लोगों ने यह भी कहा है कि स्वार्थियों और यथास्थितिवादियों का एक षडयंत्र है। सत्य क्या है इसका पता तो बाद को चलेगा—हो सकता है न भी चले, या देर से चले—लेकिन इतना तो मान ही लिया जायगा कि घटना का सम्बन्ध राजनीति से है। ज्योति बसु जैसे व्यक्ति पर प्रहार की प्रेरणा दूसरी हो भी क्या सकती है ?

पटना की आमसभा में ज्योति बसु ने खुद कहा कि लोकतंत्र में विरोधियों का विरोध समाप्त करने का तरीका हिंसा नहीं है। कुछ इसी तरह की बात अनेक दूसरे नेताओं ने कही है। सबने बसु पर होनेवाले आक्रमण की निंदा की है। यह संतोष की बात है कि देश के नेताओं द्वारा हिंसा की इतनी व्यापक निन्दा हुई है, और सरकार ने भी जाँच आदि की हर सम्भव तत्परता दिखाई है। लेकिन सोचने की जो बात है, वह यह, कि अगर राजनीति में अहिंसा का आग्रह न हो तो समय-समय पर होनेवाले हिंसात्मक विस्फोटों की निंदा का कितना असर होगा ? हिंसा की निंदा तभी सार्थक होगी, जब राजनीति के लिए भी अहिंसा की मर्यादा मान ली जायगी। अगर ऐसा नहीं होता तो सामान्य जन में हिंसा के रास्ते पर न चलने की क्या प्रेरणा रह जायगी ?

हिंसा और अहिंसा के संदर्भ में, १९४२ से भारतीय जीवन में हिंसा का नये सिरे से प्रवेश शुरू हुआ, और १९४७ में स्वतंत्रता का सूत्रपात ऐसी हिंसा से हुआ जैसी हिंसा इस देश ने कभी देखी नहीं थी। देखने को कौन कहे, कभी कल्पना भी नहीं की होगी।

स्वतंत्रता के बाद जब बालिग मताधिकार, तथा विचार-भाषण-संगठन आदि के विविध अधिकारों के आधार पर बना हुआ नया संविधान लागू हुआ तो यह आशा हुई कि अब देश की राजनीति शांति की शक्ति से चलेगी, और लोक-जीवन के तरीके गांधीजी के जमाने से भी अधिक सौम्य होंगे। लेकिन यह सब कुछ हुआ नहीं। विदेशी दमनकारी सत्ता के मुकाबले गांधी ने दबाव की जो आन्दोलनात्मक पद्धति चलायी थी, वह घेराव तक पहुँची। संविधान के तरीके निकम्मे बताये गये, और यह खुलकर कहा जाने लगा कि राजनीति के प्रश्न विधान-मण्डल और संसद में नहीं, आपस में मिलकर भी नहीं, बल्कि सड़क पर हल होंगे। जनता की शांतिपूर्ण विद्रोह-शक्ति, जो गांधी की देन थी, जानबूझकर भुला दी गयी। सारी राजनीति योजनापूर्वक विरोधवादी बनायी गयी। विरोध किसी हालत में, सत्ता किसी तरीके से, बस इसके सिवाय राजनीति में दूसरी कोई प्रेरणा ही नहीं रह गयी। जब इस प्रेरणा को लेकर विभिन्न दलों के अनुयायी सड़क पर निकलेंगे, तो क्या होगा उनके दिलों में, और क्या रहेगा उनके हाथों में ? दिलों में होगी हिंसा की आग, और हाथ में होंगे पत्थर। अभी कुछ दिन पहले बंगाल सरकार के इस्तीफे के बाद कलकत्ता में जो मार्क्सवादी कम्यूनिस्ट-रैली हुई थी, उसमें हरेकृष्ण कोनार ने क्या कहा था ? 'अपने बल्लम-भाले तेज करके रखो !' किसके लिए ? किस काम के लिए ? विरोधियों के लिए, राजनैतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए। राजनीति के हाथ में बल्लम भाले का इससे भिन्न क्या प्रयोजन है ?

भाषण में गाली का प्रहार, विधानसभा में घूंसे-जूते का प्रहार, और सड़क पर लाठी गोली का प्रहार यह है हमारी राजनीति का विरोधवाद से प्रहारवाद तक का क्रम। और जब इसमें दलगत-जातिगत-वर्गगत-क्षेत्रगत चतुर्विध ध्रुवीकरण का नारा जुड़ जाता है तो सामने सिवाय गृहयुद्ध के दूसरा कुछ दिखाई नहीं देता।

शिक्षण में जिस तरह शिष्य के पापों से गुरु नहीं बच सकता, उसी तरह राजनीति में जनता के कुकृत्यों से नेता नहीं बच सकते। हमारे नेताओं ने जो राजनीति चलायी है, तथा दल और सिद्धान्त के नाम में जनता को जो सीख दी है, वह राष्ट्रविरोधी है, लोकतंत्र-विरोधी है, शान्ति-विरोधी है, मनुष्यता-विरोधी है। जब जनता ने हाथ में पत्थर उठा लिया तो नेताओं के सिर पर प्रयोग नहीं होगा, इसकी गारंटी कोई नहीं दे सकता।

दुख है कि देश के करोड़ों नागरिकों के लिए राजनीति संगठित गुंडागिरी का दूसरा नाम बन गयी है। एक ओर सम्प्रदायवादी हिंसा संगठित होती दिखाई दे रही है, और दूसरी ओर→

कार्य-योजना के संदर्भ में

पूना में ता० १७ से १९ मार्च तक प्रबन्ध समिति की बैठकें हुईं। उनमें चार मुख्य विषयों पर चार प्रस्ताव पारित हुए। उस संदर्भ में आपका ध्यान उस ओर आकर्षित करने के लिए यह पत्र आपकी सेवा में प्रेषित है :

१ ग्रामदान-प्राप्ति की पद्धति में कई सुधार कर उसमें यथेष्ट परिवर्तन करने का तय हुआ है। तदनुसार :

- हर जिले में बड़ी संख्या में शिक्षित युवकों को भरती कर उन्हें ग्रामदान प्राप्ति के काम में लगाया जाय।
- सरकारी सेवकों के साथ ही ग्रामीणों एवं नगर के निवासियों को शिविरों तथा पदयात्राओं में शामिल करने के लिए विशेष प्रयत्न किया जाय।
- ग्रामदान-घोषणापत्र पर हस्ताक्षर प्राप्त करने से पूर्व गांव में ग्राम-सभा की जाय, उसमें ग्राम-स्वराज्य के संदर्भ में ग्रामदान का विचार समझाया जाय।
- ग्रामदान हो जाने पर फिर लोगों की सभा करके उस गांव के ग्रामदान की घोषणा की जाय।
- जिन लोगों ने ग्रामदान-प्राप्ति में मदद की हो, उन्हें उनकी स्वीकृति से शांति-सेवक बनाकर ग्राम-शांतिसेना गठित की जाय।
- ग्रामदानी गांव में ग्राम-स्वराज्य के विचार की संदेशवाहक किसी-न-किसी पत्रिका का ग्राहक बनाया जाय और उसके वाचन की भी व्यवस्था की जाय।

ये छः मुद्दे प्रबन्ध-समिति में तय हुए। आशा है, आप ग्रामदान-प्राप्ति की प्रक्रिया में तदनुसार सुधार करेंगे।

२ इस वर्ष की विनोबा-जयंती पर बाबा की उम्र के ७५ वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। उस निमित्त देश भर से कुल १०० जिलादान उन्हें अर्पित करने का तय हुआ है। साथ ही ग्रामदान प्राप्ति एवं उसके बाद के काम के लिए एक करोड़ रुपये की ग्राम-स्वराज्य निधि ११-९-७० तक देश भर से एकत्रित कर भू-जयंती के दिन पू० बाबा को समर्पित करने का तय हुआ है। इस निधि को एकत्रित करने के लिए श्री जयप्रकाशजी की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय समिति का गठन हो रहा है। इस निधि का कम-से-कम आधा हिस्सा 'सर्वोदय मित्र' बनाकर एवं छोटी-छोटी रकमों द्वारा एकत्रित करना है। इससे आन्दोलन का अर्थ-संकट मिटेगा और काम बढ़ाने में सुविधा होगी। महाराष्ट्र ने २० लाख रुपये इकट्ठा करने का तय किया है। छोटी रकमों के लिए एक लाख सर्वोदय मित्र बनाने का तय हुआ है।

आप कितनी राशि इकट्ठा करने का तय करेंगे? कृपया इस पर शीघ्र विचार कर लक्ष्यांक एवं प्रस्तावित प्रांतीयनिधि-समिति की जानकारी श्री सिद्धराज ढड्ढा, चौड़ा रास्ता, जयपुर-३ के पते पर भेजें। इस पत्र की एक प्रतिलिपि संघ के गोपुरी कार्यालय को भी कृपया भेजें। आगामी १८ अप्रैल के दिन अर्थ-संग्रह का प्रारम्भ करना है, उस दृष्टि से आप तैयारी कीजिएगा। आपके प्रदेश में ११ सितम्बर तक कुल कितने जिलादान हो सकेंगे? उनकी संख्या एवं नाम कृपया मुझे भेजें। जिस प्रांत में जितनी निधि का संग्रह होगा उसका १० प्रतिशत उस प्रदेश में ही खर्च करने के लिए रहेगा।

३. देश में केरल, बंगाल सरीखे प्रदेशों में, एवं भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में हिंसा बढ़ रही है। इसका एक प्रमुख कारण लोगों की उलझी हुई समस्याएं हैं। खास-कर इन २३ वर्षों में जो प्रगतिशील कानून बने, उनमें से भी कइयों पर अमल नहीं हुआ है। उन पर अमल हो, इसका प्रयत्न करना, और इस काम में निहित स्वार्थों द्वारा बाधा डाली जा रही हो, तो समझाने के अन्य मार्ग समाप्त होने पर आवश्यकतानुसार सत्याग्रह करना, यह स्थानीय सर्वोदय-मण्डलों का कर्तव्य है।

४ भारत के सभी गांवों को ग्रामदान में लाकर आगे का ग्राम-स्वराज्य का काम करना है। नगरों में भी काम को गति देनी है। यह सब काम प्राथमिक सर्वोदय-मंडलों को करना है, जिनकी इकाई लोक-सेवक है। लोक सेवक व्यापक रूप से बनाये जायं, इसलिए लोक-सेवकों की अन्य सब निष्ठाएं कायम रखते हुए, मुख्य समय एवं चिन्तन की शर्त को ढीला किया गया है। जीवन-निर्वाह के लिए लगनेवाले समय को छोड़कर बचा हुआ समय एवं चिन्तन का मुख्य अंश यदि कोई भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रांति के लिए देता हो, और अन्य सब निष्ठाओं का पालन करता हो तो वह भी लोक-सेवक बन सकेगा। इस पर कृपया आप ध्यान दें, और तदनुसार लोक-सेवक बनाने के लिए विशेष यत्न करें। इसके लिए एक सप्ताह या पक्ष मनाने का आयोजन करें।

[handwritten: illegible]

सर्व सेवा संघ, गोपुरी, वर्धा

मंत्री

...साम्यवादी हिंसा। ये दोनों हिंसाएं घातक हैं। इन्हीं के कारण हमारी राजनीति खूनी बनती जा रही है। राजनीति ही नहीं, देश का सारा जीवन खूनी बनता जा रहा है। हम सोचें कि खून विद्रोह और क्रान्ति का लक्षण है। हिंसा जनता की शक्ति नहीं है। हिंसा सरकार और षड्यन्त्रकारी की शक्ति है। जो शक्ति जनता की नहीं है, उससे जनता को मुक्ति नहीं है। गांधी ने बरसों पहले सिद्ध करके दिखा दिया कि अगर जनता संगठित होकर सीधी खड़ी हो जाय तो कोई शक्ति नहीं जो उसे झुका सके। लेकिन आज? जनता भयभीत है, उत्तेजित है, पत्थर भी चला सकती है, लेकिन संगठित होकर सीधी खड़ी नहीं हो सकती।

अगर यही हाल रहा तो शीघ्र ऐसी स्थिति आ जायगी, जब हम चाहते हुए भी कुछ नहीं कर सकेंगे। उसके पहले ही आत्मघाती हिंसा से देश को बचाने का उपाय निकालने के लिए क्या हमारे नेता कुछ कर सकेंगे? ●

सामूहिक चिन्तन के लिए

जरा हम पीछे मुड़कर देखें, कहीं कोई भयंकर भूल तो नहीं हो रही है ?

[राजगिर-सम्मेलन तक हमने प्रदेश-दान की मंजिल पूरी की। क्या प्रदेश-दान के बाद की चुनौती के जवाब में अब तक कोई प्रभावकारी कदम उठ पाया है ? यह सवाल बराबर पूछा जा रहा है। ..शायद हम समाधानकारी उत्तर देने की स्थिति में नहीं आ पाये हैं। क्या यह सचमुच हमारे आन्दोलन का एक तथ्य है ? आन्दोलन का तूफान 'प्रतितूफान' क्यों नहीं बन रहा है ? क्या इसका कोई बुनियादी कारण है ?....साथियों के मन में ये सवाल तीव्रता से आजकल उठ रहे हैं।.. लीजिए, आन्दोलन के इस संदर्भ में प्रस्तुत है **श्री धीरेन्द्र भाई** के चिंतन के कुछ मुद्दे ! आप भी सोचें इस प्रश्न पर।—सम्पादक]

अंग्रेजों को भारत में राज नहीं करना था, उन्हें तो देश का आर्थिक शोषण करना था। शोषण के लिए राज करना १९वीं शताब्दी के साम्राज्यवाद का सिद्धान्त रहा है। यह शोषण पूंजीवादी और नौकरशाही तरीके से होता था। साम्राज्यवाद के इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए गाँव के बनियाँ और नेता, ये दो मुख्य 'एजेण्ट' रहे हैं। ये नेता पुलिस, अदालत और दूसरे सरकारी अधिकारी के दलाल होते थे, और उनके सहारे गाँव पर आतंक जमाकर पूरे गाँव की पूरी जनता का शोषण और निर्दलन करते रहे थे। अंग्रेजों के चले जाने के बाद भी देश के नीचे के स्तर पर उन्हींके जमाये हुए तत्त्व ज्यों-के-त्यों बने रहे।

स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में कांग्रेस के रूप में एक ऐसी जमात देहातों में फैली हुई थी, जो एक हद तक इनका मुकाबला करती थी। लेकिन अंग्रेजों के चले जाने पर उनके द्वारा प्रतिपादित पद्धति में तो कोई परिवर्तन हुआ नहीं, उल्टे वह जमात, जिसके पास गरीब जनता अपने उलझनों को लेकर आती थी, जनता के बीच से निकलकर अंग्रेजों की छोड़ी हुई गद्दी पर जाकर बैठ गयी, और उसी तरह पूंजीवादी और नौकरशाही पद्धति से देश को चलाने लगी, जिस तरह अंग्रेज चलाते थे। हम रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने भी, जो आन्दोलन के दिनों में जनता में घुसे रहते थे, कांग्रेस के साथ-साथ ग्रामीण जनों का साथ छोड़कर सरकारी साधन के सहारे अपने को, संस्थाओं की बड़ी-बड़ी चारदीवारियों से घेर लिया, अपने को उसीके अन्दर मर्यादित कर लिया। फलस्वरूप स्वराज्य में तथाकथित नेताओं का एकछत्र राज्य हो गया और जनता असहाय होकर उनके अन्याय और अत्याचार के नीचे दब-सी गयी।

स्वराज्य के बाद

सन् १९४७ के अगस्त के महीने में जब देश आजाद हुआ तब मैं फैजाबाद जिले के देहातों में काम करता था और उस कारण उत्तरप्रदेश की सरकार ने मुझको जिले के ग्राम-विकास समिति का अध्यक्ष बनाया।

ग्राम-विकास समिति की ओर से कुँआ, पंचायतघर, बीज-गोदाम आदि बनाने का काम होता था, लेकिन मेरे दिमाग में गांधीजी द्वारा प्रस्तावित चरखा संघ के नवसंस्करण का विचार भरा हुआ था। उसी विचार को लेकर जिले की जनता में विचार-शिक्षण के काम में लग गया।

जिन दिनों बापू चरखा संघ के नवसंस्करण की बात करते थे, उन्हीं दिनों मैं सेवाग्राम में गांधीजी के सान्निध्य में पूरा एक माह रहा था, और मैंने बापू के नवसंस्करण के रहस्य को समझने का भरपूर प्रयत्न किया था।

चतुर्भुज राक्षस का प्रेमालिंगन

चरखा संघ के नवसंस्करण के विचार को समझाने के लिए मैंने पूरे उत्तरप्रदेश का दौरा किया था। उस दौरे के सिलसिले में मुझे अनुभव आया कि खादी-जगत् में गांधीजी के सुझाव को स्वीकार करने की तैयारी नहीं है। क्योंकि खादी के नेताओं को वह विचार मान्य नहीं था। अतः जब मुझको ग्राम-विकास समिति के माध्यम से देहाती जनता के पास फिर से पहुँचने का अवसर मिला तो मैंने स्वावलम्बी ग्रामराज के विचार के शिक्षण का काम ही अपने ऊपर लिया और जिले भर में दौरे कर बड़ी-बड़ी सभाओं में स्वराज्य के लिए लोक-शिक्षण का काम करता रहा। हर जगह मैं यह कहता था कि "जनता आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से स्वावलम्बी नहीं होगी तो जो स्वराज्य मिला है वह उसके लिए मुक्ति का साधन न होकर शोषण और उत्पीड़न का साधन बन जायगा। मैं उनसे कहता था कि अंग्रेज चले गये हैं, लेकिन वे अपनी चलायी पद्धति को छोड़ गये हैं। उन्होंने देश में पूंजीपति और नौकरशाही का संगठन कर दिया है, और इनके दलाल के रूप में गाँव-गाँव में मुखियाशाही को भी जमा गये हैं। अंग्रेज स्वदेशी पूंजीवाद के मार्फत विदेशी पूंजीवाद का भी संगठन कर गये। फिर यह दोमुँहा पूंजीवाद, नौकरशाही और गाँव के ये दलाल नेता, तीनों का त्रिगुट हम-जैसे देशभक्तों को भी खरीद लेगा। फिर देश में एक चतुर्भुज राक्षस का जन्म होगा, जिसकी एक भुजा दोमुँहा पूंजीवाद, दूसरी भुजा नौकरशाही, तीसरी भुजा गाँव के ये दलाल और चौथी भुजा खरीदे हुए देशभक्त होंगे, और यह राक्षस चारों भुजाएँ फैलाकर जनता का उसी तरह प्रेमालिंगन करेगा, जिस तरह महाभारत में धृतराष्ट्र ने भीम का बड़े प्यार से आलिंगन करना चाहा था।"

मेरे भाषणों के कारण कांग्रेस के साथी मुझसे असन्तुष्ट जरूर होते थे, लेकिन मैं जो कुछ स्पष्ट देखता था वही कहता

था। अपने इन विचारों को मैंने "यह स्वराज्य अंश", "आजादी का खतरा" और 'स्वराज्य की असली लड़ाई' शीर्षक से छोटी-छोटी तीन पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित करायी थी। मैं अपने देश का यह सद्भाग्य मानता हूँ, कि उस असली लड़ाई के लिए विनोबा का नेतृत्व मिला है, और जनता उस चतुर्भुज राक्षस को समझने भी लगी।

वही रोग यहाँ भी

गाँवों में जो शक्तिशाली ग्राम-नेता पैदा हुए थे, और जिन्होंने कांग्रेस के प्रभाव का नाम लेकर क्षेत्र भर में अपना दबदबा कायम किया था, उन्हीं में से अधिकांश लोग जब विनोबा का भूदान-आन्दोलन आया, तो उसमें भी शामिल हो गये, और 'सर्वोदयी' कहलाने लगे, यद्यपि उनकी पुरानी हरकतें पूर्ववत् चलती रहीं। यह मेरा एक क्षेत्र-विशेष का अनुभव है, लेकिन शायद यह स्थिति आमतौर पर पूरे देश की भी रही।

जिस क्षेत्र विशेष की बात मैं लिख रहा हूँ, उसी पूरे क्षेत्र में पदयात्रा करने पर अनुभव हुआ कि भूदान और सर्वोदय के नाम से लोकमानस में नफरत की भावना भरी हुई है। जहाँ कहीं जाता था, वहाँ की जनता उस तरह के नेताओं द्वारा किये गये अन्याय, अत्याचार और भ्रष्टाचार की कहानी सुनाती थी।

धीरे-धीरे मुझको यह मालूम होता गया कि भूदान की जमीन बाँटने में व्यापक भ्रष्टाचार हुआ है। यह भी मालूम हुआ कि लगभग यही स्थिति पूरे प्रदेश की है। इसमें काफी ऊपर से नीचे तक के कार्यकर्ता सम्बन्धित हैं। तब सुधारने की कोशिश बेकार समझकर मैंने उसे छोड़ दिया। लेकिन मेरे मन में वेदना बनी रही। यही कारण है कि भाई सिद्धराज को लिखे किसी एक पत्र में मैंने इसका जिक्र भी किया था और वह पत्र "भूदान-यज्ञ" में छपा भी था। वह पत्र रायपुर सर्वोदय-सम्मेलन के कुछ ही दिन पहले छपा था, इसलिए सम्मेलन में यह एक चर्चा का विषय बन गया था।

मैंने जो कुछ लिखा था, उसके कारण कई साथी मुझसे नाखुश भी हो गये थे। लेकिन मेरे सामने सवाल केवल किसी व्यक्ति-विशेष या कुछ साथियों का नहीं था, सवाल था कि ऐसी परिस्थिति में सर्वोदय-क्रान्ति की व्यूह-रचना किस प्रकार की होगी? आज जब हमारा आन्दोलन प्रदेशदान के स्तर को पार कर भारतदान की ओर अग्रसर हो रहा है, तो हमें आन्दोलन की व्यूह-रचना पर गम्भीरता से विचार करना ही होगा।

बात केवल भूमि-वितरण का प्रसंग लेकर ही उठी है लेकिन अगर हम गौर से देखें तो हमारे बहुत सारे कामों की हालत ऐसी ही है। खादी में मिल के धागे के मिश्रण की बात कहने पर हमारे पुराने साथी, जो आज खादी जगत् के प्रमुख नेता माने जाते हैं, नाराज होते थे। आखिर जब इसकी सत्यता प्रकट हुई, तो समिति बनी, उलटे बट का सुझाव आया, कुछ कोशिश हुई। लेकिन मैं देख रहा हूँ कि हालत में कुछ विशेष सुधार नहीं हुआ है, और न ही कार्यकर्ता इसके लिए चिंतित हैं।

रोग के निराकरण के लिए

जब कोई रोग समाज में व्यापक रूप से फैल जाता है तो समझना चाहिए कि उसका कारण किसीकी व्यक्तिगत कमजोरी नहीं है, बल्कि वातावरण के विपाक्त होने पर ही ऐसा हो रहा है। और जब सामाजिक वातावरण विपाक्त होता है तो समाज की पद्धति में ही विष का कारण छिपा हुआ रहता है। वस्तुतः विनोबा के नेतृत्व में जो आन्दोलन चल रहा है, वह उसी पद्धति को बदलने का आन्दोलन है। यह आन्दोलन उस पद्धति के निराकरण के लिए है जिसके कारण आज की दुनिया में शोषण, निर्दलन, अन्याय, अत्याचार अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचा हुआ है, और जिसके चक्र-व्यूह में फँसकर समाज का जीवन सम्पूर्ण रूप से भ्रष्ट हो गया है। यह इतना व्यापक बन गया है, कि विनोबा भी विनोद में उसे 'शिष्टाचार' ही कहने लगे हैं। आखिर 'शिष्टाचार' उसीको कहते हैं न, जो सज्जन कहे जानेवालों लोगों के आचरण में भी पाया जाता है।

लेकिन प्रश्न यह है कि यह कैसी बात है कि जिस जमात ने जिस चीज के निराकरण का बीड़ा उठाया है, वही जमात उसीके ग्रास में इस कदर ग्रसित है। यहीं पर गांधीजी के लक्ष्य और साधन का सिद्धान्त सामने आता है। इतिहास साक्षी है कि गांधीजी के इस सिद्धान्त को न समझने या न अमल करने के कारण ही हर क्रान्तियाँ विपथगामिनी हुई हैं। मैं जब इस विचार को रखता हूँ तो बार-बार यह कहता हूँ क्रान्ति के लक्ष्य के अनुसार साधन इस्तेमाल न करने तथा विचार के अनुसार पद्धति के न अपनाने के कारण फ्रांस की लोकतांत्रिक क्रान्ति का परिणाम नेपोलियन हुआ, और रूस की समाजवादी क्रान्ति की कोख से स्तालिन पैदा हुआ। इतिहास के इस अनुभव से सर्वोदय-क्रान्ति के पथिकों को गहराई के साथ जाँच करना होगा, कि हम भी लोकतांत्रिक तथा समाजवादी क्रान्ति के साधकों की तरह ही परम्परागत साधन और पद्धति को अपना रहे हैं, या क्रान्ति के नये लक्ष्य तथा विचार के अनुसार नये साधन और पद्धति की खोज भी कर रहे हैं?

हम कहते हैं कि हमारा लक्ष्य अहिंसक समाज-रचना है, जिसके लिए यह आवश्यक है कि समाज से हिंसामूलक तथा दण्डशक्ति-आधारित राज्य-संस्था का लोप हो। हम कहते हैं कि समाज शोषण-मुक्त हो, अर्थात् वह विशिष्ट सेवक-संस्था का भरोसा छोड़कर परस्पर के सहकार के सहारे संगठित हो, और हम चाहते हैं कि अगर राज्य किसी स्तर पर रह भी जाय तो वह राजनैतिक दल के रूप में किसी एक जमात के कब्जे में न रहे, बल्कि सीधे लोकशक्ति के अधीन रहे। इसका मतलब है कि हम बुनियादी तथा वास्तविक लोकतंत्र का अधिष्ठान करना चाहते हैं, और इसके लिए स्वतंत्र लोकशक्ति का विकास करना चाहते हैं।

आज जब हम प्रदेशदान की मंजिल→

ठाणा जिले के आदिवासियों की समस्या

— सरकार समाधानकारी रुख अपनाये —

[महाराष्ट्र के ठाणा जिले के आदिवासियों के बीच रहकर वर्षों से सेवाकार्य कर रहे जागरूक सेवक श्री वसंत नारगोलकर ने आदिवासियों की भूमि-समस्या पर सरकार का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रदर्शन किया था, जिसके कारण उन पर जुर्माना किया गया था। जुर्माना देने से इनकार करने पर उनको ७ दिन की जेल की सजा हुई थी। जेल में उपवास करते हुए श्री नारगोलकर ने आदिवासियों की समस्या की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित करते हुए निम्नलिखित वक्तव्य दिया था।]

ठाणा जिले की बंजर भूमि पर कब्जे की समस्या पिछले पूरे सालभर से किसी-न-किसी कारण सरकार और जनता के सामने आती रही है। सन् १९६९ की बरसात की शुरुआत में बंजर-भूमि पर फसल लगाने की दृष्टि से आदिवासियों द्वारा तैयार की हुई धान की पौद को नष्ट करने का अभियान जब जंगल-विभाग के अधिकारियों ने शुरू किया, तब उसके खिलाफ विभिन्न पक्षों के स्थानीय नेताओं और सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने भी अपना तीव्र विरोध व्यक्त किया। सरकार की इस कार्रवाई के खिलाफ अखबारों में भी काफी चर्चा हुई थी। अन्त में सरकार ने अपनी गलती महसूस की थी और वह अभियान स्थगित करना पड़ा था।

लेकिन बंजर-भूमि के कब्जे में आदिवासियों को अलग करने और वह भूमि हथियाने की सरकार की नीति बदली नहीं। उसके बदले लगभग ४२,००० एकड़ चरागाहवाली जमीन भूमिहीन आदिवासियों और अन्य लोगों को देने का तय किया गया। इस भूमि पर लगे पेड़-पौधे बहुत ही सस्ते भाव पर, सरकारी आय का नुकसान करके, जंगल के ठीकेदारों को बेच दिये गये। अब वह भूमि वितरित करने का सरकार का विचार है, और उसके लिए जंगल-विभाग के छपे हुए फार्मों पर आदिवासियों से अर्जियाँ मँगायी गयी हैं।

लेकिन अधिकतर आदिवासी अपने पुराने खेतों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं हैं, क्योंकि उपर्युक्त चरागाहवाली भूमि में खाली, यानी जिस पर अधिकृत रीति से खेती नहीं की जा रही हो, ऐसी जमीन बहुत ही कम है। जो भूमि बँटने लायक है, वह इतनी कम है कि बहुत ही कम भूमिहीनों के हिस्से में आयेगी। इसलिए बहुसंख्यक आदिवासियों को निराश ही होना पड़ेगा।

देश में भूदान-ग्रामदान आन्दोलन गत १९ वर्षों से चल रहा है। उसमें कुछ लाख एकड़ भूमि भूमिहीनों में वितरित हुई है और अब भी वितरित हो रही है। लेकिन भूमि समस्या का स्वरूप विकराल है, और उस समस्या का पूरा हल अब तक नहीं निकला है। देश के विभिन्न प्रदेशों में भूमि समस्या से असंतोष पैदा हो रहा है, भूमिहीन खेतिहर मजदूर या बहुत कम भूमिवाले किसान हिंसात्मक कार्रवाइयों की ओर खिंचते जा रहे हैं। इससे यह समस्या और भी विकट बनती जा रही है। ठाणा जिले में भी स्फोटक परिस्थिति पैदा होने की संभावना है। इस सारी पृष्ठभूमि में ठाणा जिले की बंजर-भूमि की समस्या पर ध्यान देना जरूरी है।

सरकार से मेरी नम्र प्रार्थना है कि इस समस्या को वनमंत्री अपनी प्रतिष्ठा का विषय न बनाकर सन् १९६९ की बरसात तक आदिवासियों द्वारा बंजर-भूमि पर किये गये कब्जे को कानूनी रूप दे दे, उनके कब्जे की भूमि नापकर उसका पट्टा दे दें, और उसका लगान तय कर दें। विरोधी पक्षों की ही नहीं, बल्कि सत्तारूढ़ पक्ष के अनेक स्थानीय नेताओं की भी इसके बारे में यही राय है। इस बात पर सरकार को ध्यान देना चाहिए। 'अधिक अन्न उपजाओ'- सरकार की इस योजना के अन्तर्गत ही शुरू में जंगल की कृषियोग्य भूमि पर खेती करने के लिए आदिवासियों को प्रोत्साहन दिया गया था। वैसे ही पिछले बीस सालों में, यानी पूरी एक पीढ़ी की अवधि में आदिवासियों को उनके गाँवों में छोटे-छोटे→

→पूरी कर भारत-दान का स्वप्न देख रहे हैं, और साथ-ही-साथ यह भी देख रहे हैं कि जनता इस काम को उठाने में पहल नहीं कर रही है तो हमको परेशानी होती है। यहीं पर यह बात सोचने की है कि हमने भी लोकतांत्रिक क्रान्ति तथा समाजवादी क्रान्ति के नेताओं के जैसी ही कोई बुनियादी गल्ती तो नहीं की है? हमने भी विचार-शक्ति से जमात-शक्ति पर अधिक भरोसा तो नहीं किया है? हम लोकतन्त्र और लोकक्रान्ति की बात जरूर करते हैं, लेकिन क्या हमने आन्दोलन के प्रारम्भ-काल से ही लोक पर भरोसा किया है अथवा उन पर विश्वास किया है? हमने तो आन्दोलन की गतिविधि के लिए प्रारम्भ से ही जनता के पास न जाकर गांधी निधि के पास पहुँचना अधिक पसन्द किया था और प्राप्त भूमि के वितरण के लिए दाता पर अविश्वास किया था। हमने माना कि हमारी संस्थाओं के कार्यकर्ता दाताओं से अधिक ईमानदारी बरतेंगे। हम भूल गये कि जिन दाताओं ने अपनी जमीन का दान किया, उनमें संस्था के कार्यकर्ताओं से अधिक विचार निष्ठा संभव है। कुछ भी हो, हमने विचार के अनुसार पद्धति को नहीं अपनाया। लोक-शक्ति के अधिष्ठान के लक्ष्य की प्राप्ति में लोकनिरपेक्ष साधन का सहारा लिया, तथा मालिक, मजदूर और महाजन के सम्बन्धों में क्रान्ति के लक्ष्य को प्राप्त करने में मालिक-मजदूर के बीच सीधे सम्बन्ध को जोड़ने के माध्यम को ही छोड़ दिया। क्या आज भी हम इस संदर्भ में नये सिरे से सोचने को तैयार हैं?-धीरेन्द्र मजूमदार

गांधी और लेनिन

[गांधी-शताब्दी का वर्ष पूरा होने के साथ ही लेनिन की जन्म-शताब्दी का वर्ष शुरू हुआ है। बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध के इन दो महान् क्रांतिकारियों का जन्म करीब-करीब साथ हुआ था। एक ने रूस की जारशाही के खिलाफ विद्रोह करके अन्तर्राष्ट्रीय साम्यवादी क्रांति की नींव डाली, दूसरे ने दुनिया के तत्कालीन सबसे बड़े साम्राज्य के चंगुल से भारत को आजाद किया और दुनिया को सर्वोदय की नयी शोषण-हीन समाज-रचना का संदेश दिया।]

किन्हीं भी दो महापुरुषों की तुलना करना आसान नहीं है, न वह जरूरी ही है, क्योंकि हरएक की अपनी विशेषता होती है। विशेषता में ही महानता प्रकट होती है, और विशेषता की तुलना का प्रश्न नहीं उठता। बाहरी दृष्टि से कामों और पद्धतियों में अन्तर होते हुए भी—और गांधी तथा लेनिन के बीच इन दोनों बातों में बहुत अन्तर था—महापुरुषों के व्यक्तिगत चारित्रिक गुण, जैसे निर्भयता, साहस, ध्येय के प्रति एकाग्र निष्ठा, व्यक्तिगत स्वार्थ का अभाव आदि, समान ही होते हैं। पर उनके आदर्शों में और कार्यप्रणाली में अन्तर हो सकता है, और अक्सर होता है, जिसके कारण समाज पर उनके कामों का असर और परिणाम भिन्न-भिन्न होते हैं।

गांधी का मूल्यांकन : केसलर के प्रहार

गांधी-शताब्दी वर्ष में इस दृष्टि से गांधी का मूल्यांकन करने की बहुत कोशिशें हुईं। पर किसी भी क्रांतिकारी व्यक्तित्व के मूल्यांकन में एक बहुत बड़ी विसंगति यह रहती है कि मूल्यांकन करनेवाले "विद्वान" भले ही हों, उनमें क्रांतिकारी के जैसी समाज की समस्याओं के मूल में जा सकनेवाली और भविष्य के गर्भ को भेदनेवाली अन्तर्दृष्टि अक्सर नहीं होती। वे प्रचलित मूल्यों, मान्यताओं और विचारों के पैमाने को सामने रखकर ही मूल्यांकन करते हैं। समाज में मूलगामी परिवर्तन के जो प्रच्छन्न प्रवाह चल रहे होते हैं, और उनके कारण जो सारा संदर्भ अन्दर-ही-अन्दर बदल रहा होता है उसका एहसास अक्सर मूल्यांकन करनेवाले विद्वानों को नहीं होता। गांधीजी के बारे में

सिद्धराज ढड्ढा

शताब्दी-वर्ष में जो सैकड़ों गोष्ठियाँ, भाषण आदि हुए उनमें अक्सर एक विषय चर्चा का यह रहता था कि "क्या आधुनिक जमाने में गांधी प्रासंगिक है?" शिष्टाचार के नाते चाहे घुमा-फिराकर कहा गया हो, लेकिन आज के पढ़े-लिखे प्रबुद्ध वर्ग का अक्सर यही निष्कर्ष सुनने को मिलता था कि आज के जमाने में गांधी के आदर्श लागू करना कठिन है। इस पक्ष का शायद सबसे जोरदार प्रतिपादन अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक आर्थर केसलर ने पिछली गांधी जयन्ती के अवसर पर लन्दन के प्रमुख पत्र "संडे टाइम्स" के अपने लेख में किया था। गांधी पर आश्चर्यजनक तीखा प्रहार करते हुए केसलर ने एक-एक करके गांधीजी के खादी सम्बन्धी विचार, रेलों की उनकी नापसंदगी, अदालतों की आलोचना, अस्पतालों और दवाओं का उनका विरोध, आज की शिक्षा-प्रणाली का तिरस्कार, अहिंसा के उनके आदर्श और अणुबमों से रक्षा के लिए बनाये जानेवाले सुरक्षित स्थानों का उनका अस्वीकार आदि की कड़ी आलोचना की है। केसलर के अनुसार उनके ये विचार अज्ञान से भरे हुए, अव्यावहारिक, असंबद्ध और निरर्थक हैं।

गांधी की आधुनिकता : पाल गुडमैन की टिप्पणी

पर केसलर के इस मूल्यांकन का पश्चिम के ही एक दूसरे विद्वान और विचारक पाल गुडमैन ने उतने ही जोरदार शब्दों में खंडन किया है। अमरिकन मासिक 'लिबरेशन" के नवम्बर १९६९ के अंक में अपने सम्पादकीय में उन्होंने लिखा है

"सच तो यह है कि आर्थर केसलर खुद असामयिक और १०० वर्ष पुरानी मान्यताओं के आधार पर विचार करनेवाले हैं, जब कि गांधी के सन १९२० के विचार आज १९७० की आर्थिक, शैक्षणिक, राजनैतिक, तकनीकी और परिस्थिति विज्ञान (एकोलोजी) सम्बन्धी समस्याओं के लिए विशेष प्रासंगिक हैं, और वह भी केवल हिन्दुस्तान के लिए नहीं, लेकिन संयुक्त राष्ट्र अमरिका जैसे आगे बढ़े हुए मुल्कों के लिए भी।

"उदाहरण के लिए आज की समाज-रचना में हवाई जहाज और सड़कों के सफर को यथा-सम्भव कम करने और शहरों की योजना में पैदल चलने को प्रोत्साहन देना उत्तरोत्तर बुद्धिमानी की निशानी मानी जाती है। ५० वर्ष पहले गांधी की कही हुई यह बात कि अदालतों की प्रणाली बोझिल है, और उससे वास्तव

→उद्योग देकर उनके स्वावलम्बी जीवन-निर्वाह की सुविधा देना समाजवादी सरकार की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी थी, वह सरकार नहीं निभा सकी। जंगल राष्ट्रीय संपत्ति है, यह बात सही है, लेकिन पिछड़े हुए, आज तक अज्ञान में रहनेवाले भूमिहीन आदिवासी और विशेषतः उनकी नयी तरुण पीढ़ी और बच्चे भी, क्या राष्ट्रीय संपत्ति नहीं है? कुछ काम नहीं है, जो खेती है, वह सबके लिए पर्याप्त नहीं है, तो फिर आदिवासी तरुणों को क्या करना चाहिए, इसका उत्तर कौन देगा?

इन बातों को ध्यान में रखते हुए इस समस्या के बारे में सरकार को अपनी नीति पर पुनर्विचार करना चाहिए, ऐसी सरकार से मेरी नम्र प्रार्थना है। निकट भविष्य में लगभग ११,००० आदिवासी परिवारों के भूमिहीन हो जाने की भयंकर परिस्थिति पैदा होने की सम्भावना है।

ठाणा सेन्ट्रल जेल —वसंत नारगोलकर
ता० १३-३-'७०

म न्याय नहीं मिलता, प्राज नयी बात मालूम नहीं होती। लोग अब यह भी समझने लगे हैं कि आज के अधिकाधिक रोग दवाओं के ज्यादा इस्तेमाल से होते हैं और स्वास्थ्य के लिए दवाओं की अपेक्षा शरीर में प्रतिरोध की शक्ति बढ़ाना ज्यादा आवश्यक है। आज की शिक्षा-प्रणाली की भी जोरदार आलोचना की जा रही है। सामान्य और छिटपुट हिंसा के बारे में जो भी राय हो, इस बारे में अब कोई शंका नहीं रही है कि बड़े और संगठित युद्ध कोई राजनैतिक उद्देश्य सिद्ध नहीं करते और इन लड़ाइयों की तैयारियाँ उन राष्ट्रों को बरबाद कर देती हैं जो उनमें लगते हैं। इसी प्रकार बमों से रक्षा के लिए सुरक्षित स्थानों में न जाना ही शायद आणविक अस्त्रों के खिलाफ सबसे बड़ा बचाव है। क्या कैंसलर के पास कोई दूसरा सुझाव है?

"गांधी द्वारा प्रतिपादित विचार अक्सर अनगढ़ मालूम होते हैं, पर आज जब कि सैनिक राष्ट्रवाद और यांत्रिक विकास मानव-जाति के लिए सबसे बड़े खतरे साबित हो रहे हैं, गांधी ने जो मुद्दे खड़े किये थे उनमें एक अजीब शक्तिशाली सजीवता मालूम होती है, जब कि यंत्रों के हिमायती, चाहे वे उदारवादी हों या मार्क्सवादी, वास्तव में पुराणपंथी मालूम होते हैं।

"गांधी ने चरखे और ग्रामोद्योग की जो बात कही थी वह कैंसलर के अनुसार अव्यावहारिक और मूर्खतापूर्ण होने के बजाय हम सब लोगों के लिए गम्भीरता से सोचने की वस्तु है। हाल के अनुभव इस बात की जोरदार गवाही दे रहे हैं कि पिछड़े हुए राष्ट्र बड़े पैमाने के और तेज गतिवाले उद्योगीकरण के जरिये कभी भी गरीबी, भुखमरी और रोग से छुटकारा नहीं पा सकते। इन मुल्कों के पास इस प्रकार के उद्योगीकरण के अनुरूप न तो सामाजिक रचना है, न कार्य-कुशलता। इस काम के लिए बाहर से पूँजी का आयात सांस्कृतिक अव्यवस्था, शहरीकरण, मुद्रा के बढ़ाव, जो थोड़े-बहुत साधन उपलब्ध हैं उनकी भी क्षति, फलस्वरूप और ज्यादा गरीबी, आन्तरिक संघर्ष अन्ततोगत्वा तानाशाही की ओर ले जाता है। वास्तव में प्रत्येक राष्ट्र अपनी परिस्थिति के अनुरूप उद्योगीकरण से ही फायदा उठा सकता है। इसके अलावा और कोई दूसरा रास्ता लेना सांस्कृतिक साम्राज्यवाद को निमंत्रण देना है।

"गांधी ने ५० वर्ष पहले यह सब देख लिया था। न्येरेरे (तानजानिया, अफ्रीका के राष्ट्रपति) यह जानता है। यह आशा की बात है कि क्यूबा का राष्ट्रपति केस्ट्रो भी यह समझ रहा लगता है।"

प्रमुख समस्याएँ :

यंत्रीकरण और केन्द्रीकरण

वास्तव में आज की दुनिया की सबसे बड़ी समस्या यंत्रीकरण और केन्द्रीकरण की है। १९वीं सदी के मध्य में मार्क्स ने उद्योगीकरण की केवल एक बुराई, आर्थिक शोषण, की ओर ध्यान दिया। लेकिन हजारों बरसों पुरानी, सामाजिक मान्यताओं और परम्पराओं की ठोस बुनियाद पर खड़े हुए गांधी ने इस बात को पहिचान लिया कि यंत्रीकरण से केवल आर्थिक शोषण ही नहीं, मनुष्य का समूचा जीवन ही अस्त-व्यस्त, विकृत और खंडित हो जाने का खतरा है। आज यह प्रत्यक्ष हो रहा है। अमेरिकन और पश्चिमी विचारक स्वयं यह महसूस करने लगे हैं कि उनकी समाज-व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो रही है, अत्यधिक आर्थिक समृद्धि के बावजूद, मानसिक रोग, पागलपन, आध्यात्मिक सूनापन, परस्पर मानवीय सम्बन्धों में कटुता, आदि के कारण जीवन का कोई अर्थ नहीं रह गया है। ये दोष केवल पूँजीवाद के कारण नहीं हैं यह बात साम्यवादी रूस के लेखकों, विचारकों और बुद्धिजीवियों में जो विद्रोह प्रकट हो रहा है उससे भी स्पष्ट है। पूँजीवाद, मुनाफाखोरी और स्वार्थ-भावना तो समाप्त होनी ही चाहिए, पर यंत्रीकरण और केन्द्रीकरण के रहते इन दोषों का निराकरण संभव नहीं है, केवल उनका स्वरूप बदल सकता है।

गांधी-शताब्दी का बरस समाप्त हुआ। क्या लेनिन की शताब्दी के इस वर्ष में मार्क्सवाद का भी मूल्यांकन होगा? और हमारे भारतवासियों के लिए तो सबसे बड़ी बात यह है कि क्या भारत के बुद्धिजीवी, और अपकचरे राजनैतिक नेता समाजवाद, साम्यवाद जैसे गये-बीते, १९वीं सदी के पुराने विचारों से चिपके रहकर भारत को भी सामाजिक विस्फोट की कगार पर ले जायेंगे, जिस पर पूँजीवादी और साम्यवादी दोनों ही प्रकार के देश आज पहुँच गये हैं?

●

भूमि का सवाल : धधकता ज्वालामुखी

[इस रिपोर्ट के लिखे जाने के बाद बंगाल में संयुक्त मोर्चा-सरकार की जगह राष्ट्रपति शासन लागू हो चुका है, फिर भी वहाँ जो हवा बह रही है उसे समझने में इससे बहुत मदद मिलेगी। परिस्थिति का प्रत्यक्ष अध्ययन करने के लिए सर्व सेवा संघ की ओर से सर्वश्री रा० कृ० पाटील, ठाकुरदास बंग, सुमन बंग, एस० जगन्नाथन् और गोविन्दराव देशपाण्डे बंगाल गये थे। यह अध्ययन-मण्डल बंगाल में २४ से २८ फरवरी, '७० तक रहा और इस अवधि में मण्डल ने वहाँ के विभिन्न राजनैतिक दलों के नेताओं, राज्य सरकार के मंत्रियों, बंगाल सर्वोदय मण्डल के सदस्यों तथा रचनात्मक कार्यकर्ताओं और गाँवों के भूमिवानों तथा भूमिहीन लोगों से चर्चाएँ की। इस अंक में हम चार प्रमुख नेताओं की प्रतिक्रियाएँ प्रस्तुत कर रहे हैं। अगले अंक में शेष अध्ययन की जानकारी प्रकाशित करेंगे।—सं०]

लोकसेवक संघ की ओर से संयुक्त मोर्चा सरकार में पंचायत मंत्री और पुराने गांधीवादी कार्यकर्ता श्री विभूतिभूषण दासगुप्ता :

"बंगाल की अपनी विशेष स्थिति है। यहाँ गांधी को समझा नहीं गया। स्वतंत्रता के पहले बंगाल को नेतृत्व और प्रेरणा पूर्वी बंगाल से मिलती थी। उन दिनों बंगाल के मानस पर पूर्वी बंगाल के क्रान्तिकारियों का असर था। सारा नेतृत्व मध्यवर्गीय लोगों का था। फिर जब भारत का विभाजन हुआ तो यहाँ लोगों में आम धारणा यह फैली कि उसके लिए गांधीजी जिम्मेवार हैं। शरणार्थियों की बड़ी समस्या तब से बराबर बनी हुई है। प० बंगाल का नेतृत्व भी बहुत दिनों तक पूर्वी बंगाल से आये हुए नेताओं ने ही किया। कांग्रेस का संगठन करीब-करीब अतुल्य घोष के हाथ में था। सन् '६७ के पहले के चुनावों में कांग्रेस बराबर जीतती रही। '६७ के चुनाव में 'प्रोग्रेसिव युनाइटेड लेफ्टिस्ट फ्रन्ट' जैसा मोर्चा कांग्रेस-विरोधी दलों का बन चुका था। उन्हीं दिनों अजय बाबू को कांग्रेस से हटाया गया, इसकी बंगाल के कुछ क्षेत्रों में प्रतिकूल प्रतिक्रिया हुई। फलस्वरूप चुनाव में कांग्रेस हार गयी। गैर-कांग्रेसी सरकार बनी, फिर बाद में सरकार हटायी गयी और राष्ट्रपति-शासन चला। हजारों कार्यकर्ताओं को जेल में भेजा गया। फिर मध्यावधि चुनाव आये, जिसमें मतदाताओं ने निश्चित रूप से संयुक्त मोर्चे को वोट दिया। संयुक्त मोर्चे में सी० पी० आई० (कम्युनिस्ट पार्टी आफ इण्डिया), सी० पी० एम० (कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी), दोनों शक्तिशाली दल हैं। लगता है ये दोनों एक-दूसरे के शत्रु हैं। संयुक्त मोर्चे में लोक-सेवक संघ और बंगला कांग्रेस छोड़कर बाकी सभी सदस्य-दल मार्क्स को माननेवाले हैं। लोक सेवक संघ रचनात्मक कार्य करनेवालों की जमात है। हम लोग १९६८ में एक नैतिक प्रश्न पर संयुक्त मोर्चे से अलग हो गये थे। सी० पी० आई० और सी० पी० एम०, दोनों दलों के सम्बन्ध गाँवों से है। कांग्रेस तथा गांधीवादियों का आम जनता से बहुत सम्पर्क नहीं रहा है। गांधीजी बंगाल के खिलाफ हैं, इस भावना का व्यापक पैमाने पर प्रचार किया गया है।

"कलकत्ता और उसके इर्दगिर्द बहुत बड़ा औद्योगिक क्षेत्र है। लाखों मजदूर उसमें काम करते हैं। इसी प्रकार उत्तर बंगाल में बागान में मजदूरों की बहुत बड़ी जमात रहती है। गांधीवालों तथा कांग्रेसियों ने मजदूर क्षेत्रों में कभी काम नहीं किया। अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस की मारफत साम्यवादियों ने काफी धाक जमा ली है। इसी तरह ग्रामीण क्षेत्रों में तिभागा-आन्दोलन चला। उसमें भी साम्यवादी अगुवा थे। जमींदारों के द्वारा चलाये गये अन्यायपूर्ण कार्यों का एक दर्दनाक इतिहास बंगाल का है। बड़े-बड़े तालाब, मछली उगाने के तालाब जिन्हें 'भेरी' कहा जाता है, बड़े जमींदारों ने जबरदस्ती अपने कब्जे में ले लिये। भूमिहीनों और छोटे भूमिवालों की ओर से इस स्थिति का मुकाबला किसीने नहीं किया। पूरे ग्रामीण क्षेत्र में गरीब के हितैषियों के नाते साम्यवादी ही आगे थे। सन् ५०-५१ में इनका जन्म हुआ। तब से आज तक जनता ने चुनाव के दिनों को छोड़कर एक ही पार्टी को समझा, एक ही नारे को सुना और एक ही तरीके को जाना। दल है साम्यवादी, नारा है साम्यवाद, और तरीका है हिंसा। उन्हींके वोट से साम्यवादी विधानसभा में चुनकर आये। प्रत्येक दल अपने दल को मजबूत और व्यापक बनाने का प्रयास कर रहा है। वे एक ही तरीका जानते हैं हिंसा का। मतभेदों को मिटाने में भी वे इसी तरीके का उपयोग करते हैं। हर दल दूसरे दल से मुठभेड़ ले रहा है। इस अवस्था में समाजद्रोही तत्त्वों पर से सबका काबू हट गया। वे सभी समाजद्रोही तत्त्व साम्यवादियों में शामिल हो गये हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में, दलों पर से साम्यवादी नेताओं का प्रभाव मिट गया है। किसी दिन कोई आता है, लोगों को बहकाता है, और दूसरों का धान काटने को कहता है। वे लोग धान काट लेते हैं। पुलिस उन्हें रोकती नहीं। एक तो पुलिस से कहा गया कि ग्रामीणों के विवादों में वे नहीं पड़ें, और दूसरे, पुलिस संयुक्त मोर्चा-सरकार से असन्तुष्ट है। उसी तरह आई० ए० एस० और आई० सी० एस० के स्तर के अधिकारी भी संयुक्त मोर्चा-सरकार से नाराज हैं। उन्हें लगता है कि उनकी प्रतिष्ठा घट रही है।

"मंत्रियों से भेंट करना पहले से एकदम आसान हो गया है। वे सादगी से रहते हैं, केवल ५०० रु० वेतन लेते हैं। कोई अपने ही मकान में रहता है, तो कोई अपने भाई आदि के साथ। कोई

भूदान-यज्ञ : सोमवार, ६ अप्रैल, '७०

मेस में खाना है तो कोई होटल में। उन लोगों ने पुरानी शानदार मोटरें बदलकर छोटी मोटरों का उपयोग करना शुरू किया है। लोकतान्त्रिक आन्दोलन को हम लोग कुचलना नहीं चाहते। पुलिस का उपयोग पहले इस काम के लिए किया जाता था, पूँजीपतियों की सुरक्षा के लिए किया जाता था। अब वह सारा नहीं चलेगा। हम चाहते हैं कि वे अपना बर्ताव बदलें। हो सकता है कि इसमें पुलिस-मंत्री पुलिस का उपयोग अपने राजनैतिक दल के लिए कर लेंगे।

"संयुक्त मोर्चा अपने स्वयं के लिए ही एक समस्या बन गया है। दलों के आपसी झगड़े दिनोंदिन बढ़ते जा रहे हैं। सी० पी० एम० के द्वारा ज्यादतियाँ हुई हैं; बंगला कांग्रेस प्रतिकार के लिए आगे आयी है। मैं मानता हूँ कि समाजद्रोही तत्वों का उपयोग दल के हितों के लिए किया जा रहा है।

"यह सही है कि जनता में काफी उत्साह आया है। समस्या सुलझाने के लिए उसका उपयोग भी हो रहा है। लेकिन उस उत्साह में छोटे जमीन-मालिकों की जमीन पर भी कब्जा किया गया है। यह सारा काम अहिंसा से होता तो बहुत ही अच्छा होता।

"जमीन-मालिकों और भूमिहीनों के बीच एक पुराना संघर्ष वर्षों से चल रहा है, उसे मिटाना चाहिए, और उसके लिए खुद जमीन-मालिकों को आगे बढ़कर जमीन देनी चाहिए। आवश्यक हो तो उन पर थोड़ा दबाव भी डालना चाहिए। संयुक्त मोर्चा भिन्न-भिन्न विचारधाराओं से बना है, इसलिए मत-भेद होना स्वाभाविक है। मार्क्स के बाद लेनिन आया और क्राइस्ट के बाद सेंट पाल आया, लेकिन गांधी के बाद कोई नहीं आया। हम सबने मिलकर गांधी को भुला दिया।"

सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर के प्रमुख नेता, जिन्होंने घेराव के तंत्र का आरम्भ किया, और भूतपूर्व संयुक्त मोर्चा सरकार के मजदूर मंत्री श्री सुबोध बाबू

'भूमि-समस्या हल तो नहीं हो सकती है, हाँ, उसकी तीव्रता घटायी जा सकती है। जमीन एक साधन है और उस अर्थ में सम्पत्ति भी है। आज उसकी बिक्री और गिरवी चल रही है। 'सीलिंग' तो लगायी जा सकती है। लेकिन वह बहुत-कुछ जमीन की किस्म पर निर्भर करती है। पुराने सीलिंग-कानून को जमीन मालिकों ने टाला है, पुरानी तारीखें डालकर कागजात तैयार किये हैं, मन्दिरों के नाम से जमीनें दान कर दी हैं, बेनामी बन्दोबस्त किये हैं। इस तरह की करतूतें करके सीलिंग कानून से मिलनेवाली जमीन नहीं मिलने दी। १९५३ में यह कानून लागू किया गया है। हम लोग मानते थे कि दस लाख एकड़ जमीन सरकार के हाथ में आनी चाहिए, लेकिन कांग्रेस के राज में करीब एक लाख पच्चीस हजार एकड़ जमीन सरकार को मिली। उसमें भी कई दोष थे। स्वयं मंत्रियों ने अपने स्वार्थ के लिए गैर-कानूनी काम किये। कई लोगों ने मुआवजा भी लिया, लेकिन जमीनें उन्हींके हाथों में बनी हुई हैं। मुआवजा लेनेवालों की संख्या भी बढ़ती गयी। ५-६ और कहीं-कहीं १०-१२ बेनामी हस्तान्तरण हुआ है, और सबने मुआवजा लिया है। प्रत्येक हस्तान्तरण करनेवाले ने मुआवजा पाया है। इस तरह से ८० करोड़ रुपये का मुआवजा देने की स्थिति थी। अब शायद यह १०० करोड़ होगा। हम लोगों ने सोचा कि सही मालिक कौन हैं, यह गाँववाले किसान ही जानते हैं। वे जानते हैं कि खेत की उपज किसके पास जाती है। १९६७ में हमारे दल ने सुझाया था कि केवल छोटे किसान, और छोटे मालिक ही बड़े मालिकों की जमीन पर कब्जा कर सकते हैं और सरकार उस कब्जे को कानूनी मान्यता दे देगी, जैसा कि पूर्व बंगाल से आनेवाले विस्थापितों के लिए किया गया था। इस तरह करीब ३ लाख एकड़ जमीन पर लोगों ने कब्जा कर लिया है, और पुरानी एक लाख पचास हजार एकड़ जमीन कानून से दी जा चुकी है। हमारा खयाल है कि अभी ६ लाख एकड़ जमीन और दी जा सकती है।

"हम भी कांग्रेस में थे। हमने यह देखा है कि जमीन का कानून तोड़नेवाले मालिकों को कांग्रेस सरकार ने संरक्षण दिया है। इसीसे कांग्रेस का पतन हुआ। हम जोतदार उन्हें मानते रहे जो बड़ी जमीन के गैर-हाजिर मालिक थे।'

बंगाल के मुख्यमंत्री और बंगला कांग्रेस के नेता श्री अजय मुखर्जी.

"कई ज्यादतियाँ हुई हैं, इसमें कोई शक नहीं। ज्यादतियाँ बड़े पैमाने पर हुई हैं। लोगों को डराने का प्रयास चल रहा है, गैर-कानूनी ढंग से लोगों ने जमीन रखी थी, इसमें भी कोई शक नहीं। कानून का सहारा लेकर वे लोग जमीन अपने हाथ में रखना चाहते हैं। लेकिन जिस ढंग से जमीन लेने का काम किया गया उससे कई गुना अच्छे ढंग से किया जा सकता था।

'कानून तो खतरे में है—लोगों की तरफ से भी और पुलिस की तरफ से भी। कारखाने के मजदूरों और मालिकों के, तथा ग्रामीण मालिकों-मजदूरों के झगड़ों में पुलिस हमारी आज्ञा से ही जाती है, मालिकों के बुलाने से नहीं। यह एक नयी चीज है, लेकिन इससे कानून टूटता नहीं है। पुलिस खुद घबराती है, क्योंकि मार्क्सवादी दल घेराव करेंगे, ऐसा भय हो रहा है। पुलिस धैर्य खो चुकी है। संयुक्त मोर्चा ने जमीन बाँटने का एक तरीका बनाया था कि 'सीलिंग' से ज्यादा जमीन की जानकारी गाँववाले नजदीक के राजस्व अधिकारियों को दें। वे अन्य लोगों को भी बुलावें। फिर राजस्व-अधिकारी और गाँव के लोग 'सीलिंग' से ऊपर की जमीन भूमिहीनों में बाँट दें। लेकिन मार्क्सवादियों ने यह नहीं होने दिया। जमीन उन्होंने अपने ही लोगों में बाँटी। संयुक्त मोर्चे के निर्णय के खिलाफ यह बात थी। जमीन के लिए लूट-खसोट और हत्याएँ बंगाल के कई हिस्सों में हो रही हैं। कई दलों द्वारा यह किया जा रहा है।

लेकिन मार्क्सवादी कम्युनिस्ट दल सबसे बड़ा गुनाहगार है। फसल की मालकियत के विषय में भी एक निर्णय हम लोगों ने किया था कि यहाँ जो जमीन जिसकी जोत में होगी और जिसने बोया होगा, फसल उसीकी होगी। जिस जोतदार के पास २५ एकड़ से अधिक जमीन है उसने भी अपनी जमीन पर फसल बोयी थी। अब ये लोग वहाँ बड़ी संख्या में हथियार पिस्तौल पाइपगन लेकर जाते हैं और फसल काट लेते हैं। यह तो साम्यवाद नहीं है। अभी मैं 'प्रावदा' के प्रतिनिधि से बात करके आ रहा हूँ। उसने भी कहा कि यह कम्युनिज्म नहीं है। इसको तो मैं प्रत्यक्ष लूट ही मानता हूँ। लूट को संयुक्त मोर्चे ने या उसकी सरकार ने मंजूर नहीं किया था। इसलिए बंगला कांग्रेस ने इसका विरोध किया। उसने माना नहीं। फिर हमने कहा कि निर्णय बदल दो, लेकिन निर्णय भी बदला नहीं। तब हमें उपवास करना पड़ा। इससे लोगों में काफी साहस आया।

"मैं तो कहना चाहता हूँ कि लूट का माल वापस करो, जमीन पर जबरन कब्जा मत करो। इसमें कुछ दल मेरे साथ हैं, कुछ नहीं। किसी दिन बहुमत मेरे पक्ष में अवश्य होगा। मैंने अगर इस्तीफा दिया तो बंगाल में कोई सरकार नहीं बन पायेगी। नेता के तौर पर किसीको मान्यता नहीं मिल सकेगी। मैं आशा करता हूँ कि केरल की तरह की व्यवस्था यहाँ भी पैदा होगी। कारखानों के विवादों के लिए भी एक तरीका है। मजदूरों को श्रम-निर्देशालय में जाना पड़ता है और इसमें बहुत पैसा खर्च होता है, मजदूर इतना पैसा खर्च नहीं कर सकते हैं। छोटी-छोटी उचित माँगें भी पूरी नहीं होतीं। तब हिंसा फूट पड़ती है। मैनेजर पुलिस को बुला लेता है। ऐसा ही आज तक चलता था। पुलिस हिंसा को दबा देती है। यानी उचित माँगों के खिलाफ और अन्याय की रक्षा के लिए पुलिस का उपयोग होता रहा है। तो हमने, यानी संयुक्त मोर्चे ने, पुलिस से कह दिया कि वह मैनेजर के बुलाने पर न जाय। मैनेजर को चाहिए कि वह मंत्री को परिस्थिति की जानकारी कराये और मंत्री जरूरत समझें तो पुलिस को वहाँ जाने का आदेश दें। इसका फायदा मजदूरों ने उठाया है।

"सब जगह घेराव चलता है। घेराव अब प्रदर्शन नहीं रहा, वह सताने का तरीका बन गया है। हमने कहा कि मजदूर, मालिक और सरकार की एक मिली-जुली समिति बने, उसमें एक उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होगा, और उसका निर्णय अन्तिम होगा। तो मजदूरों ने माँग की कि सरकार का प्रतिनिधि उनकी पसंद का होना चाहिए यानी उनका साफ मतलब था कि इस व्यवस्था में वे बहुमत चाहते थे। यह नहीं चल सका। अब उन्होंने 'धीमे चलो' का तरीका अख्तियार किया है। मजदूर नेता उनको इसके लिए उत्तेजना दे रहे हैं। मैं उनको देश का शत्रु नम्बर एक मानता हूँ। शांति अगर नहीं रहेगी तो 'ट्रिब्यूनल' भी नियुक्त नहीं किये जा सकेंगे।"

सी० पी० एम० (कम्यूनिस्ट पार्टी मार्क्सिस्ट) के प्रमुख नेता श्री हरेकृष्ण कोनार :

'१९५३ में बने हुए 'सिलिंग' कानून में कई गल्तियाँ थीं

(१) कानून में केवल २५ एकड़ की 'सिलिंग' कही गयी, लेकिन वह परिवार के लिए 'सिलिंग' है या व्यक्ति के लिए, इसकी स्पष्टता नहीं दी। फलस्वरूप कई व्यक्तियों के नाम से जमीन रखी गयी है।

(२) 'सीलिंग' की मर्यादा में मच्छी-तालाब और सिंचाई के तालाबों को दाखिल नहीं किया गया था।

(३) देवतार्थ के नाम पर चाहे जितनी जमीन दान करने की अनुमति दे दी गयी।

(४) बगानों को 'सिलिंग' में शामिल नहीं किया गया।

"हो सकता है, कानून बनानेवालों ने पच्चाइयों को ध्यान रखा होगा लेकिन उनका गलत फायदा उठाया गया। १९५५ से कानून लागू हुआ, लेकिन यहाँ की कानून व्यवस्था में रजिस्ट्री न किये गये दस्तावेज भी जमीन के मामले में कानूनी माने जाते हैं। इसलिए कई हस्तान्तरण अवधि बीतने के बाद भी किये गये और वे कानूनी माने गये। जमीन-मालिकों ने सब तरह के उपाय किये, और कानून को विफल बनाया। १९६७ में मैंने देखा कि १६ लाख एकड़ जमीन सरकार के हाथ में आनी चाहिए थी। लेकिन आयी केवल ४ लाख ५० हजार एकड़। और, उस पर भी कब्जा जमीन मालिकों का ही था। हमने बड़े पैमाने पर जाँच कराने का सोचा था। अधिकारियों से सही आचरण की अपेक्षा रखी थी और माना था कि एक शक्तिशाली किसान-आन्दोलन हम खड़ा करेंगे, ताकि जमीन का बँटवारा जल्द हो सके। इसलिए अधिकारियों को हमने सूचित किया था कि भूमिहीनों के संगठन के नेताओं से चर्चा करके हस्तक्षेप करें।

"इस बीच लोग उच्च न्यायालय में गये और कानूनी कार्रवाई शुरू हुई। सारा काम बन्द हो गया। एक मामले में तो सौ एकड़ जमीन के मालिक को सुप्रीम कोर्ट में हारने के बाद भी हाईकोर्ट में मामला दर्ज करने की अनुमति मिली और 'इंजक्शन' दिया गया। करीब तीन लाख एकड़ के मामले में आज भी 'इंजक्शन' लागू है। इसलिए हमने किसानों से कहा कि वे संगठित होकर जमीन पर कब्जा करने की कार्रवाई करें और पुलिस को हम हस्तक्षेप नहीं करने देंगे। सन् १९३८ से मैं किसान आन्दोलन में हूँ, किसान-मानस को जानता हूँ। लाखों किसान और भूमिहीन लोग इकट्ठा हुए और करीब एक साल के भीतर ३ लाख से अधिक एकड़ जमीन पर उन्होंने कब्जा कर लिया। मैं मानता हूँ कि करीब ९५ फीसदी जमीन ठीक ढंग से बाँटी गयी है। आज के कानून भी इससे आगे नहीं जा सकते। उन्हें बदलना होगा। कुमारप्पा एग्रेरियन कमेटी की सूचनाओं के आधार पर नया कानून बनाना चाहिए और किसी प्रकार का अपवाद न रखते हुए ५-६ सदस्यों के परिवार को २५ एकड़ में

अधिक 'सीलिंग' मे नही रखनी चाहिए। खेती के अलावा दूसरे कामो के लिए तीन एकड़ से अधिक जमीन नहीं रखनी चाहिए। कारखानेदार और व्यापारियो के पास जमीन क्यो रहे? जब तक संविधान की धारा २२६ नही बदली जाती, तब तक क्या होगा? क्यो उसका उपयोग अमीरों की रक्षा के लिए किया जाय? फिर श्री जगजीवनराम से मैंने बात की। वे मुझसे सहमत रहे। प्रधान मंत्री ने केवल इतना ही कहा कि आप सही परिस्थिति जानते हैं। १० लाख से अधिक परिवारो के पास २ एकड से ज्यादा जमीन नही है, और करीब तीस लाख भूमिहीन परिवार हैं। क्या किया जाय इनका? हमने कहा कि किसानो को फैसला करने दीजिए।

"दूसरा सवाल है बँटाईदारो का। बंगाल के ग्रामीण क्षेत्रो मे लगभग ३५ फीसदी लोग बँटाईदार हैं। ६० फीसदी फसल को वे ले लेते हैं और ४० फीसदी मालिक को दे देते हैं। हजारो लोगो को बेदखल करने का तरीका मालिको ने अपनाया है। उसको रोकने के लिए हमने अध्यादेश तैयार किया। बाद मे उसका कानून बनाया, तो इस साल बेदखलियाँ नहीं हुईं। अब हम चाहते हैं कि बँटाईदारों को विरासत का हक मिले। मैं मानता हूँ कि इससे जमीन की समस्या हल नही होगी। यह तो अस्थायी व्यवस्था है। १० से २० साल तक ग्रामीण क्षेत्रों मे शांति रहनी चाहिए और इसलिए थोडी जमीन क्यों न हो, भूमिहीनों को मिलनी चाहिए। नही तो औद्योगीकरण संभव नही होगा और बेरोजगारी को मिटाना भी सभव नही होगा। मानव की सहन-शीलता की एक सीमा होती है। धैर्य का बाँध टूटता है तो एक बाढ़ आती है। रूस, चीन, वियतनाम आदि मे यही हुआ। यहाँ भी हो सकता है। हमारी कोशिश है कि यह मर्यादा न टूटे।

"आपके (सर्वोदय) और हमारे उद्देश्यो मे काफी साम्य है। तरीकों मे मतभेद है। मेरा खयाल है कि अंत मे समाज-क्रान्ति के लिए हिंसा का सहारा लेना ही पडेगा। लेकिन तब तक सचाई के साथ जमीन के बँटवारे की पूरी कोशिश हम करेंगे, और कानून की रुकावट होती है, तो हम उसे दूर करने की कोशिश करेंगे। उससे नहीं हुआ तो आम हड़ताल का सहारा लेंगे। उससे कुछ तनाव जरूर होगा और वही आज बंगाल मे हुआ है। उसकी खबरें बढ़ा-चढ़ाकर आती हैं। कुछ तो असत्य भी होती हैं। अवश्य ही कुछ गल-तियाँ हुई हैं, जो लाखों लोगों के आन्दोलन मे हुआ करती हैं।"—गो० देशपांडे

अणु, मनुष्य, और अहिंसा—१

विज्ञान और अहिंसा

• डा० डी० एस० कोठारी

[प्रस्तुत लेखमाला 'आजाद स्मारक व्याख्यान-माला' के अन्तर्गत 'अणु, मनुष्य और अहिंसा' पर भारत के प्रमुख वैज्ञानिक डा० डी० एस० कोठारी द्वारा दिये गये भाषणो के आधार पर प्रकाशित कर रहे हैं। उक्त व्याख्यान-माला अंग्रेजी दैनिक 'नेशनल हेरल्ड' मे प्रकाशित हुई है। अहिंसा पर प्रस्तुत एक बड़े वैज्ञानिक का चिन्तन हमारे पाठको के लिए प्रेरक होगा, ऐसी आशा है—सं०]

विज्ञान ही नहीं, वैज्ञानिक वृत्ति भी

अणु, मनुष्य, और अहिंसा की चर्चा का महत्त्व हर व्यक्ति के लिए, और पूरी मनुष्य-जाति के भविष्य के लिए है। आज दुनिया मे जितने मानव-समुदाय हैं, वे चाहे जिस विचार के हो, चाहे जिस मतवाद (आइडियालोजी) को मानते हों, सबका विकास, विकास ही नहीं अस्तित्व भी, विज्ञान पर निर्भर है। विज्ञान किसी देश या जाति का अलग नही है। सारी दुनिया का एक ही विज्ञान है। दुनिया एक घर की तरह होती जा रही है। विश्व-शान्ति और अहिंसा अब कोरा आदर्शवाद या स्वप्न नहीं है; व्यावहारिक लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि विज्ञान का मानवीय इस्तेमाल हो। विज्ञान का प्रयोग सत्ता और शोषण के लिए न होकर गरीबी दूर करने के लिए हो, अज्ञान और लोभ से मुक्ति पाने के लिए हो। इसके लिए विज्ञान जितना जरूरी है, उतनी ही जरूरी वैज्ञानिक वृत्ति और वैज्ञानिक 'स्पिरिट' है।

भारत की विशिष्ट परंपरा है। उसका जीवन संभावनाओं से भरा हुआ है। वह नवजागरण के युग मे प्रवेश कर रहा है। ऐसे भारत का दुनिया के प्रति विशेष उत्तरदायित्व है।

यह दुर्भाग्य की बात है कि जिस समय योरप औद्योगिक और वैज्ञा-निक क्रान्ति से गुजर रहा था, उसे पूरब, विशेष रूप से भारत, के तत्त्व-ज्ञान का पता नही था। विज्ञान के प्रसिद्ध इतिहासकार जार्ज सारटन ने लिखा है कि १८वी शताब्दी मे भारतीय संस्कृति की खोज कोलम्बस की नयी दुनिया की खोज से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण थी, लेकिन उसकी ओर किसीका ध्यान नही गया। पश्चिमवालो ने पूरब के लोगो का शोषण किया, उन्हे गुलाम बनाया। वे उनकी आध्यात्मिक परंपरा को नही समझ सके। उन्होने उनकी दौलत तो लूटी ही, उनकी आत्मा को भी गुलाम बनाया। आज पश्चिम उनकी लिप्सा और मूर्खता का मूल्य चुका रहा है।

"मनुष्य को नये ज्ञान की जरूरत है, नये यंत्रो और नयी तकनीक की जरूरत है, शायद उससे ज्यादा विवेक, करुणा और मन की शक्ति की जरूरत है।

ज्ञान

ज्ञान इतनी तेजी से बढ़ रहा है कि १०-१५ वर्षो मे ज्ञान बिल्कुल दूना हो जाता है। अगले १५ वर्षो में इतना ज्ञान इकट्ठा हो जायगा जितना कई शताब्दियों में नहीं हुआ था। यह बात अब तक साफ नहीं हो सकी है कि वैज्ञानिक क्रान्ति

पश्चिमी योरप में क्यों शुरू हुई, भारत या चीन में क्यों नहीं शुरू हुई ? यह भी स्पष्ट नहीं है कि ज्ञान की वृद्धि में १५ वर्षों की अवधि का इतना महत्व कैसे हो गया ? एक बात तो यह है कि विज्ञान सच्चे अर्थ में विश्व-व्यापी है। दूसरी बात यह है कि वैज्ञानिक होने के लिए असाधारण प्रतिभा आवश्यक नहीं है। विज्ञान के अधिकांश प्रयोग सामान्य, अत्यन्त सामान्य, लोगों द्वारा हुए हैं।

एक नयी चिंता

पिछले दूसरे महायुद्ध के बाद से वैज्ञानिकों में एक नयी चिंता प्रकट हुई है। अणुबम ने वैज्ञानिकों के चित्त में घोर विह्वलता पैदा की है। वे पूछने लगे हैं कि क्या विज्ञान इसीके लिए है। महान् भौतिक शास्त्री मैक्स बार्न ने अपनी चिंता दुखभरे शब्दों में प्रकट की है। अणु अस्त्रों के विकास में उसके कुछ शिष्यों, जैसे—ओपन हाइमर, फरमी, टेलर, आदि ने बड़ा नाम कमाया है। अपनी जीवनी 'मेरा जीवन और मेरे विचार' (माई लाइफ ऐण्ड माई व्यूज) में उनका उल्लेख करते हुए उसने लिखा है : 'ऐसे योग्य शिष्यों का होना बड़े संतोष की बात है, लेकिन कितना अच्छा होता अगर वे बुद्धि कुछ कम और विवेक कुछ अधिक दिखाते। यह दोष मेरा ही है कि मैं उन्हें शोध करने के सिवाय और कुछ नहीं सिखा सका। अब उनकी बुद्धि ने दुनिया को कितने बड़े संकट में डाल दिया है।'

विज्ञान और नैतिकता में अन्तर है, किन्तु विज्ञान में विश्वास रखना एक नैतिक गुण ही है। बहुत-से वैज्ञानिकों ने अपनी जान देकर इस गुण की रक्षा की है। दो क्षेत्रों में विज्ञान ने अपनी जबरदस्त सफलता सिद्ध कर दी है—सैनिक शक्ति, और औद्योगिक विकास। ये सफलताएँ इतनी विलक्षण हैं कि विज्ञान की पूजा इस जमाने का फैशन बन गयी है। नयी संस्कृति में जितना स्थान विज्ञान का है, उससे अधिक स्थान विज्ञान की प्रशंसा का है। प्रशंसा तो बहुत होती है, लेकिन जब आचरण का प्रश्न आता है, तो व्यक्ति और राष्ट्र, दोनों अधूरे साबित होते हैं। राष्ट्रों की कमाई का बहुत थोड़ा हिस्सा वैज्ञानिक अनुसंधान और शिक्षण में खर्च होता है। विज्ञान और शिक्षण, जो हर चीज की बुनियाद है उस पर सबसे कम ध्यान है।

आज दुनिया चौराहे पर है। पहली बार, वह भी पिछले दो सौ वर्षों में ही, मनुष्य की औसत जिन्दगी दूनी हो गयी है। सोचने की बात है कि जब रोम की सभ्यता चरम सीमा पर थी तो औसत जिन्दगी सिर्फ ३० वर्ष थी। आज के औद्योगिक देशों की समृद्धि की तो पहले कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। हमारे जैसे उन्नतिशील देशों में विकास लगभग ठप है। हम लोग किसी तरह जी रहे हैं। धनी और गरीब देशों के बीच की खाईं दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। विज्ञान और शिक्षण पर खर्च प्रति व्यक्ति वार्षिक भारत में लगभग १६ रुपये है, जब कि अमरिका में २४०० रुपये है। बड़े देशों की दौलत भी बड़ी है, और अस्त्र-शस्त्र भी बड़े हैं। उनके पास क्षणों में लाखों-लाख मनुष्यों को मौत के घाट उतारने के साधन हैं। उनके पास विध्वंसनाम है। उनके पास चरस तथा दूसरे मादक द्रव्य हैं। अतिशय दौलत मनुष्य की उसी तरह दुश्मन है, जिस तरह अतिशय गरीबी। अतिशय वैभव और अतिशय विपन्नता में पड़कर व्यक्ति तो चौपट होते ही हैं, राष्ट्र भी चौपट हो जाते हैं। हम सब जानते हैं कि अति प्राचीन युग में वे विशालकाय जीव (डिनोसार) अपने शरीर के वजन के कारण पंगु होकर खत्म हो गये।

मनुष्य

सारी प्रकृति में मनुष्य ही ऐसा जीव है जो अपनी ही जाति के दूसरे प्राणी की हत्या करता है—कभी निष्प्रयोजन भी हत्या करता है। मनुष्य ने दूसरे मनुष्य का मारना प्रकृति से नहीं सीखा है। यह उसकी अपनी अनोखी खोज और देन है। आदिम युग में भी हत्या, बर्बरता का लक्षण था, लेकिन नयी बर्बरता को इस अणु-युग में जारी रखने का परिणाम व्यापक सर्वनाश के सिवाय दूसरा क्या होगा ? शिक्षण के लिए यह एक चुनौती है।

मनुष्य—हममें से हरएक—लाखों वर्षों की परम्परा का प्रतिनिधित्व कर रहा है। जितना लम्बा हमसे अतीत है, उससे कम लम्बा भविष्य नहीं है। मनुष्य विश्व-नागरिक बनने के क्रम में है। यह लगभग निश्चित है कि सौर-मंडल के बाहर भी समझ रखनेवाले प्राणियों का अस्तित्व है। विकास के क्रम में मनुष्य का मस्तिष्क इतना विकसित हो गया है कि उसका भविष्य उसके अपने ही हाथों में है। एक ओर मनुष्य है, दूसरी ओर उसका भविष्य। जीवन की परिस्थिति आदिम युग में जितनी जटिल थी उससे कहीं अधिक संकटपूर्ण टेकनालोजी के इस युग में है। इसे पार करने के लिए उसे उत्साह और कौशल की जरूरत है—पूरब और पश्चिम की सारी प्रतिभा, यानी विज्ञान और अहिंसा की जरूरत है।

विज्ञान मूलतः सरल है, यद्यपि देखने में कठिन है, अहिंसा देखने में सरल है, लेकिन अन्दर से कठिन। विज्ञान मुख्यतः बौद्धिक है, अहिंसा नैतिक और आध्यात्मिक। शिक्षण जैसे-जैसे बढ़ता जायगा, दुनिया विज्ञान और टेकनालोजी आधारित होती जायगी। ●

नयी तालीम आवासिक शाला

१५ अप्रैल से नये सत्र का आरम्भ

दिल्ली से ४० मील उत्तर जी० टी० रोड पर ग्राम पट्टीकल्याणा में स्थित गांधी स्मारक निधि के आश्रम की नयी तालीम आवासिक शाला का नया सत्र १५ अप्रैल से आरम्भ हो रहा है। यहाँ कक्षा १ से ७ तक की उत्तम पढ़ाई, तथा स्वस्थ आवास की समुचित व्यवस्था है। प्रवेशार्थी अपना प्रार्थनापत्र तुरन्त भेजें या प्रत्यक्ष चर्चा के लिए आयें। विशेष जानकारी के लिए पत्रव्यवहार का पता :

मंत्री, गांधी स्मारक निधि, (पंजाब, हरियाणा, हिमाचल) आश्रम, पट्टीकल्याणा, जि० करनाल (हरियाणा)।

मेरा जीवन : अवाम की खिदमत में

• अमानत अली

[रांची जिलादान अभियान में श्री अमानत अली साहब ने महत्त्वपूर्ण योगदान किया था, और जिलादान के बाद के काम में आपसे सक्रिय सहयोग की आशा है। आपके सेवामय जीवन का परिचय आन्दोलन में लगे साथियों को हो, इसके लिए सुर बाबा ने उनसे यह लिखित परिचय मंगाया था।]

एक जमाना था जब कि छोटा नागपुर के गांवों में लदनिया (बैलों पर सामान लादकर) तिजारती लोग देहातों की जरूरतों को पूरा किया करते थे। मेरे पूर्वज इस काम में माहिर समझे जाते थे और इसी सिलसिले में शायद १८वीं सदी में मेरे परदादा कुन्डू स्टेट में आया-जाया करते थे। वह बेहद मिलनसार थे। यही वजह है कि कुन्डू स्टेट के राजा ने उन्हें कुन्डू में बस जाने के लिए जागीर मोकर्रर कर दी थी। महाराजा से जागीर हासिल हो जाने के बाद वे अपने आबाई जगह रफीगंज, जिला गया को छोड़कर अपने सभी परिवार सहित कुन्डू में आकर बस गये और अपने कारोबार को इस तरह चमकाया कि कुन्डू के खासे सुखी परिवारों में उनकी गिनती होने लगी।

दादा भी खुश-मिजाज थे तथा अवाम की खिदमत करने का जोश उनके दिल में था। उन दिनों के ग्राम-पंचायत के सर्व-सर्वा वही माने जाते थे। वह अपना नुकसान बर्दाश्त करते हुए गांववालों की तकलीफ, दुख-दर्द को दूर करने में लग जाते थे। आपस में भाईचारा कायम रखने में वह दिन-रात लगे रहते थे। इन सब खूबियों को देखकर महाराजा साहब भी इनकी कद्र किया करते थे। गांव का अन्तिम फैसला मेरे दादा ही किया करते थे, जिसे गांववाले बखुशी मान लिया करते थे। अब भी लोग उनके जमाने को भाईचारे का जमाना मानकर याद किया करते हैं।

मेरे वालिद साहब में भी ये खूबियां थीं और उन्होंने गांव की खिदमत में ही अपनी जिन्दगी गुजार दी। गांव में स्कूल बनाना, स्कूल के और मास्टरों के लिए चन्दा जमा करना, अस्पताल खुलवाना, बीमारों की दवा व इलाज में लगे रहना उनका दिनभर का काम था। उन दिनों हिन्दू-मुसलमान का कोई भेदभाव नहीं था। इसीलिए हर फिरके के लोगों का आना-जाना मेरे यहां लगा रहता था और हर काम में मेरे वालिद को ही लोग आगे-आगे रखते थे। कीर्तन मंडली में कीर्तन करते हुए मैंने अपने वालिद को देखा है। उस जमाने में हिन्दू-मुसलमानों के बहुत-से रस्म-रिवाज एक जैसे थे। इसलिए मेरे वालिद ने मेरी पैदाइश की तारीख हिन्दी में १९३० पौष सं० का लिख रखा है।

जब मैं १२ साल का था और ७वीं कक्षा में पढ़ता था, तो एक पागल कुत्ते ने काट लिया था। इसके इलाज के लिए रांची आया हुआ था। एक दिन मैंने देखा कि कुछ स्कूल के लड़के तिरंगा झंडा लिये 'महात्मा गांधी जिन्दाबाद' का नारा लगाते हुए अस्पताल के रास्ते से गुजर रहे हैं। मुझे भी जोश आ गया और जुलूस में आकर मैं भी नारे लगाने में शामिल हो गया। कुन्डू वापस जाकर मैंने भी चन्द स्कूल के लड़कों को इकट्ठा किया, तिरंगा झंडा रांची से मैं लेता गया था। वहां मैंने भी लड़कों का एक जुलूस निकाला और खूब नारे लगाये। इसके बाद रोजाना मैं लोगों का जुलूस निकालने लगा, जिसमें बूढ़े, बच्चे, मर्द, औरत सभी लोग शामिल होते थे। यह कार्यक्रम काफी दिनों तक जारी रहा। जुलूस तो बच्चों का निकलता था, लेकिन थोड़ी ही देर में जुलूस में गांव के सभी लोग, यहां तक कि औरतें भी, शामिल हो जाया करती थीं। कभी-कभी ऐसा भी हुआ कि जुलूस निकालने में देर होती तो गांव के लोग उतावले हो जाया करते और सोचने लगते कि अभी तक अमानत क्यों नहीं आया। गांववालों का यह उत्साह देखकर मेरे दिल में भी जोश बढ़ा और धीरे-धीरे मैंने अपने कार्यक्रम को पड़ोस के गांव में भी बढ़ाया और उसी समय मैंने 'कुन्डू विद्यार्थी कांग्रेस' का गठन किया, जिसका संयोजक मैं बना।

सन् १९४६ में रांची जिला विद्यार्थी कांग्रेस का संगठन हुआ, जिसका मंत्री मुझे चुना गया। इसी सिलसिले में स्वर्गीय राजेन्द्र बाबू का सम्पर्क मुझे प्राप्त हुआ। रांची विद्यार्थी कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन खूंटी में रखा गया। इसमें राजेन्द्र बाबू भी पधारे थे। यह जमाना चुनाव का था। कांग्रेस के टिकट पर लोहारदगा कुन्डू क्षेत्र से श्री पी० सी० मित्रा उम्मीदवार थे और झारखंड पार्टी से झारखंड पार्टी के नेता श्री जयपाल सिंह थे। जयपाल सिंह को रांची से हटाना उन दिनों कोई मामूली काम नहीं था। लेकिन उनसे टक्कर लेने के लिए मैंने विद्यार्थियों को इकट्ठा किया और हम लोगों ने इस जोश में उनका मुकाबिला किया, कि कांग्रेस के टिकट से श्री पी० सी० मित्रा विजयी हुए।

उसी जमाने में 'लीग' का भी बोलबाला था। 'मुस्लिम लीग' वालों ने मुझे भी अपनी ओर मोड़ने की कोशिश की, मगर नाकामयाब रहे। नतीजा यह हुआ कि मेरे खिलाफ तरह-तरह के प्रचार शुरू किये गये। मुझे हिन्दुओं का दलाल, काफिर और न जाने कितने अलकाब दिये गये। मुझे लोगों ने समाज में बहिष्कृत कर दिया। मुझे याद है कि उस जमाने में मेरे भाई के मर जाने पर मुसलमानों ने मेरे भाई के जनाजे का भी बहिष्कार कर दिया था। लेकिन मैं अपने विचारों पर अटल रहा और अभी तक कायम हूं।

सन् १९४८ में मैंने लाह मजदूर राष्ट्रीय यूनियन कायम किया। इसके संगठन में भी मुझे बड़ी परेशानियों का सामना करना पड़ा। इसी समय में छोटा नागपुर युवक कांग्रेस का संगठन किया और उसका संयोजक मैं बना। हर जगह

इसकी शाखाएं स्थापित कीं। काफी तादाद में युवकों को खींच लाया। इसी बीच मैंने मैट्रिक पास कर लिया। वालिद साहब को डर लग गया, कि राजनीति में फंस जाने की वजह से अमानत हाथ से निकल जायेगा, इसे किसी तरह बांध रखना चाहिए। यही कारण था कि १९४८ में मेरे पिताजी ने जल्दबाजी में मेरी शादी कर दी। मुझे पटना कालेज में दाखिल करवा दिया। लेकिन वहां दिल नहीं लगा और मैंने रांची वापस आकर रांची कालेज में दाखला ले लिया, जहां से सन् १९५४ में 'ग्रेजुएट' हुआ।

सन् १९४८ में सोनाहातू क्षेत्र से प्रदेश कांग्रेस कमेटी का सदस्य चुना गया और अभी तक मैं उसी क्षेत्र से बराबर चुनकर सदस्य बनता आ रहा हूं। सन् १९५१ में जिला कांग्रेस कमेटी का मंत्रीपद मिला। सन् १९५८ से १९६२ तक जिला कांग्रेस कमिटी रांची का 'जेनरल सेक्रेटरी' रहा। सन् १९६२ से १९६८ तक जिला कांग्रेस कमिटी का अध्यक्षपद सम्भाला। सन् १९६२ से १९६८ तक अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी का सदस्य रहा। इस समय भी अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी का सदस्य हूं। सन् १९५८ में हटिया प्रोजेक्ट वर्कर्स यूनियन रजिस्टर्ड कराया। उसका वाइस प्रेसिडेंट अभी तक मैं हूं। सन् १९६४ में बिहार विधान परिषद का मेम्बर चुना गया, और अभी उसी पद पर हूं।

मेरा ताल्लुक पिछड़े वर्ग के मुस्लिम जो मोमिनों से है। अपनी कौम को आगे बढ़ाने का काम भी करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। छोटा नागपुर में मोमिनों की तादाद आदिवासियों के बाद है। उनकी हालत भी ठीक आदिवासियों जैसी है। सन् १९५५ में हम लोगों ने छोटा नागपुर मोमिन कांग्रेस का एक अधिवेशन करवा लिया और उसका चेयरमैन मुझे बनाया गया।

जब बाबा जिलादान के सिलसिले में पुन: विनोबा रांची पधारे। लगभग ५ माह तक उनका समय रांची के जिलादान के लिए लग गया। मगर जिलादान का काम संतोषजनक नहीं रहा। स्थानीय जनसंघ, बिरसा सेवा दल आदि जिलादान का विरोध करते थे। ता० २ अक्तूबर १९६९ को रांची के मुख्य-मुख्य कार्यकर्ताओं की मीटिंग हुई, जिसमें यह तय पाया कि १८ अक्तूबर सन् १९६९ को जिलादान बाबा को दे देना है, जिसकी जिम्मेदारी मुझे दी गयी। प्राप्ति समिति का मंत्री मुझे चुना गया। मैंने सबसे पहले रातू के महाराजा तथा पुराने जमींदारों के हस्ताक्षर लिये। श्री जयपाल सिंह, झारखंड पार्टी के नेता, से मिलकर उन्हें इस काम में सहयोग देने के लिए राजी किया। और उनकी बाबा से भेंट करायी। १६ दिन के कठिन परिश्रम के बाद ठीक १८ अक्तूबर को जिलादान समर्पण किया गया।

१० दिसम्बर १९६९ को बादशाह खान अब्दुल गफ्फार खां का रांची में दो दिनों का दौरा हुआ, जिसके स्वागत समिति का प्रधानमंत्री मुझे चुना गया। हम लोगों ने रांची में एक लाख की थैली भेंट करते हुए उनका शानदार इस्तकबाल किया। आगे रांची जिलादान के पुष्टि के काम को सम्भालने का विचार कर रहा हूं।

करबला चौक, रांची, बिहार

आन्दोलन के समाचार

आधा मुरैना जिला ग्रामदान

मध्यप्रदेश के मुरैना जिले के कुल १२१० आबाद गांवों में से अब तक ५७५ गांव ग्रामदानी बने हैं। जिला गांधी-शताब्दी-समिति के अन्तर्गत चलाये गये जिलादान-अभियान के फलस्वरूप ३७१ गांव ग्रामदान में शामिल हुए हैं। २०४ गांव इसमें पूर्व के ग्रामदान हैं। इस प्रकार लगभग आधा मुरैना जिला ग्रामदानी बन चुका है।

जिले के वयोवृद्ध सेवक ठाकुर उदयभानु सिंह के मार्गदर्शन में क्षेत्रीय संगठक श्री प्रेमनारायण शर्मा, सहरिया सेवा संघ के मंत्री श्री रामसेवक पाठक तथा मध्यप्रदेश भूदान यज्ञ बोर्ड के मंत्री श्री हेमदेव शर्मा के नेतृत्व में गांधी निधि, सहरिया सेवा संघ तथा खादी संस्था और स्थानीय कार्यकर्ताओं ने ग्रामदान अभियान में उल्लेखनीय योगदान दिया है। इसके अलावा सर्वश्री काशिनाथ त्रिवेदी, दादाभाई नाईक, डा० दयानिधि पटनायक, शम्भूनाथ शुक्ला, हरप्रसाद शुक्ल, मुरलीधर घुले, लक्ष्मण जैन आदि महानुभावों का भी मार्गदर्शन मिला है। (सप्रेस)

रायपुर सर्वोदय मण्डल का पुनर्गठन

११ मार्च '७० को २ बजे दिन को श्री बाबूलालजी मित्तल की उपस्थिति में एवं वरिष्ठ सेवक श्री रामानन्दजी दुबे की अध्यक्षता में जिला सर्वोदय मंडल रायपुर की वार्षिक बैठक सर्वोदय कार्यालय में सम्पन्न हुई। ग्रामदान विषय पर चर्चा हुई। नये वर्ष के लिए श्री नन्दकुमार दानी पुन: संयोजक, श्री रोमलाल शर्मा, ग्राम कूरा जिला-प्रतिनिधि, ग्रामदान-संयोजक श्री हरिप्रेम बघेल, सर्वोदय मित्र-मण्डल संयोजक श्री मोतीलाल त्रिपाठी, सर्वोदय-पात्र संयोजक श्रीमती सरस्वती दुबे, एवं शांति सेना मंडल संयोजक श्री नन्दकुमार दानी चुने गये। अंत में श्री मित्तलजी के उद्बोधन से मंडल की वार्षिक बैठक समाप्त हुई।●

तमिलनाडु में दो जिलादान : सेलम और कन्याकुमारी

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् ने हमारे प्रतिनिधि को बताया है कि तमिलनाडु में ग्रामदान आन्दोलन तेजी से आगे बढ़ रहा है। तमिलनाडु "प्रदेशदान" की दिशा में हाल में ही सेलम और कन्याकुमारी का भी जिलादान हो चुका है। आगामी १८ अप्रैल "भू-क्रान्ति दिवस" तक समूचा तमिलनाडु ग्रामदान के अन्तर्गत आ जायगा, इसकी पूरी सम्भावना है। यह भारत का दूसरा 'प्रदेशदान' होगा।●

राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिक शान्ति

इन्सानी बिरादरी संगठन का मुख्य लक्ष्य

गत फरवरी महीने में बादशाह खान अब्दुल गफ्फार खाँ द्वारा दिये गये सुझाव पर आयोजित सम्मेलन द्वारा गठित तदर्थ समिति ने भारत में साम्प्रदायिक शक्तियों का मुकाबला करने तथा गांधीवादी आदर्शों को पुनर्जीवित करने के लिए 'इन्सानी बिरादरी' नामक संगठन की स्थापना के लिए प्रस्ताव प्रस्तुत किये हैं। समिति ने सुझाव दिया है कि खान अब्दुल गफ्फार खाँ जिन्हें खुदाई खिदमतगार कहते हैं, वैसे स्वयंसेवक दल का संगठन बनाया जाय।

अभी हाल में ही नयी दिल्ली में तदर्थ समिति की तीन दिवसीय बैठक में व्यापक विचार-विमर्श के बाद जो मतैक्य हुआ, उसी के परिणामस्वरूप उक्त प्रस्ताव प्रस्तुत किये गये हैं। २५ सदस्यीय समिति ने, जिनमें सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, शेख अब्दुल्ला, शाहनवाज खान, बदरुद्दीन तैयबजी, पण्डित सुन्दरलाल एवं मोइनुद्दीन (?) मुश्ताक अहमद शामिल हैं, इन प्रस्तावों को अंतिम रूप देने के लिए पुनः सम्मेलन संयोजित करने का निश्चय किया है। यह सम्मेलन आगामी जून माह में सम्भवतः बम्बई में होगा और गत फरवरी में दिल्ली में हुए सम्मेलन से कहीं बड़ा होगा।

इस सिलसिले में नयी दिल्ली में पत्रकारों को संबोधित करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने बताया कि प्रस्तावित "इन्सानी बिरादरी" का मुख्य लक्ष्य होगा राष्ट्रीय ऐक्य का संवर्द्धन तथा साम्प्रदायिक शांति बनाये रखना। उन्होंने बताया कि इस संस्था की सदस्यता उन सबके लिए खुली रहेगी जो राष्ट्रीय ऐक्य संवर्द्धन एवं मानवीय सौहार्द्र के प्रति जाति, धर्म, वर्ण, रंग आदि का भेदभाव किये बिना विश्वास व्यक्त करते हुए शपथ लेंगे। सदस्यता-शुल्क १ रु० वार्षिक होगा। (सप्रेस)

नैनीताल की तराई में सर्वोदय-आन्दोलन का प्रारम्भ

श्री रामकिशोर शास्त्री के संयोजकत्व में उत्तरप्रदेश के नैनीताल जिले के तराई क्षेत्रीय सर्वोदय-मण्डल का गठन हो गया है। बहुत से स्वतंत्रता-आन्दोलन में भाग लिये हुए बुजुर्ग तथा कई विद्यालयों के अध्यापकों ने सर्वोदय-आन्दोलन को तराई क्षेत्र में शुरू करने का निश्चय किया है। अब तक १० गाँवों में ग्रामदान-गोष्ठियाँ हुई हैं। कुछ गाँवों में लोगों ने बीघा-कट्ठा या स्वेच्छया भूमिहीनों में वितरण भी किया है। निकट भविष्य में ग्रामदान-अभियान शुरू किया जायगा।

सहारनपुर में ग्रामदान-अभियान

गत मार्च महीने में उत्तरप्रदेश के सहारनपुर जिले में दो अभियान चलाये गये। एक लंकार प्रखण्ड में और दूसरा बहादराबाद प्रखण्ड में। इन प्रखण्डों में क्रमशः ४२ और ४६, इस प्रकार कुल ८८ ग्रामदान घोषित हुए। —चन्द्रशेखर

अ० भा० तरुण शांति-सेना शिविर

अखिल भारत शांति-सेना मण्डल द्वारा प्रसारित एक जानकारी के अनुसार इस वर्ष ग्रीष्मकालीन अवकाश में तरुण-शांति-सेना का अखिल भारतीय शिविर १ से १५ मई तक गुजरात में अहमदाबाद के निकट होगा। इस शिविर में केवल तरुण शांति-सेना के सदस्य तथा सहयोगियों को ही प्रवेश दिया जायेगा। शिविरार्थियों की संख्या एक सौ तक सीमित रहेगी।

शिविर में समूह जीवन, श्रमदान के अतिरिक्त तरुण-शांति-सेना के संगठन और देश-विदेश की वर्तमान समस्याओं पर चर्चा, गोष्ठियाँ एवं व्याख्यान आयोजित किये जायेंगे। शिविर में प्रवेश की अनुमति पानेवाले शिविरार्थी को ५ रुपया शिविर-शुल्क देना होगा। भोजन-शिविर की ओर से निःशुल्क दिया जायेगा। शिविरार्थी अपने आवागमन का व्यय स्वयं वहन करेंगे। रेलवे-कन्सेशन के लिए प्रयत्न किया जा रहा है। आवेदन पत्र १५ अप्रैल १९७० तक १ रुपया शुल्क के साथ निम्न पते पर भेजें।

मंत्री,
अखिल भारत शांति-सेना-मण्डल,
राजघाट संघ वाराणसी—१

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

खुदा हाफिज !

'मैंने अक्तूबर में बिहार छोड़ा। अक्तूबर-नवम्बर-दिसम्बर-जनवरी-फरवरी : कुल पाँच महीने बीत चुके, और अब छठवाँ चल रहा है। इतने महीनों में कितना काम हुआ है? बीघा कट्ठा में कितनी जमीन बँटी है? कितनी ग्राम-सभाएँ बनी हैं? देखो, चारों ओर बेहद विस्फोटक स्थिति है। अगर इस साल के खतम होते-होते हम कुछ न कर सके तो फिर खुदा हाफिज!'

विनोबाजी मुस्कराते हुए फिर बोले बिहार, बिहार को ही नहीं पूरे भारत को बचा सकता है।'

यह बात अभी १५ मार्च की है। १७,१८,१९, मार्च को पूना में प्रबन्ध समिति की बैठक थी। उसके पहले एक मुलाकात में विनोबाजी ने यह बात कही। उनके ओठों पर मुसकराहट थी, लेकिन एक-एक शब्द में गहरी चिंता प्रकट हो रही थी। यह साफ जाहिर था कि किस तरह वह बिहार को देश की समस्याओं की कुंजी मान रहे हैं।

बिहार का राज्यदान हुआ है। वहाँ की जनता के प्रबल बहुमत ने खेती की भूमि का बीसवाँ भाग भूमिहीनों को देने का, तथा अपनी कुल भूमि का स्वामित्व ग्रामसभा को सौंपने का संकल्प किया है। अब समय संकल्प की पूर्ति का है। इस संकल्प की पूर्ति से बड़े संकल्प की पूर्ति की शुरुआत होती है। वह बड़ा संकल्प है ग्राम-स्वराज्य की स्थापना का। ग्राम-स्वराज्य को हमने दूर के आदर्श के रूप में नहीं स्वीकार किया है। हमने माना है कि ग्राम-स्वराज्य हमारी आज की उन सारी समस्याओं की कुंजी है जो हमारे सामने हमें निगल जाने को मुँह बाये खड़ी हैं। एक बार यह कुंजी हाथ आ जाय तो भविष्य का रास्ता खुल जाय - हमारे ही लिए नहीं, बल्कि दुनिया की उन सारी जनता के लिए, जो संतप्त है, और व्यापक संहार के भय में जी रही है।

'बीघा में कट्ठा' ग्राम-स्वराज्य का पहला प्रहार है। यही वह सूत्र है जो मालिक-मजदूर को करीब लायेगा। हम जानते हैं कि मालिक-मजदूर के करीब आये बिना गाँव गाँव नहीं बनेगा, जब तक गाँव नहीं बनेगा, तब तक ग्राम-स्वराज्य की बात सोचना निरर्थक है। बिहार में लगभग ४ लाख एकड़ भूमि भूदान में बँट चुकी है। ग्रामदान में १०-११ लाख और निकल आय तो ४-५ लाख एकड़ भूमि भूमिहीनों के हाथ में चली जायगी। ग्राम-कोष में मालिक की कुल उपज का चालीसवाँ हिस्सा जोड़ लिया जाय तो माना जायेगा कि मालिक ने बीसवाँ भाग नहीं, दसवाँ भाग भूमि दी।

हम सब जानते हैं कि भारत की गरीबी का उत्तर भूमि के बँटवारे में नहीं है। देश की जितनी भूमि है वह देश के सब वासियों में गणित के हिसाब से बराबर-बराबर बाँट दी जाय, फिर भी गरीबी का उत्तर नहीं मिलेगा। सचमुच गरीबी का उत्तर ग्रामोद्योगों में है, तथा खेती में श्रम का जो शोषण है उसका अन्त होने में है। जो कुछ हो, आगे की कोई बात बीघा-कट्ठा के बाद ही सोची जा सकती है, उसके पहले नहीं। इस दृष्टि से अगर आज ग्रामसभाएँ किसी तरह बन भी गयीं तो चलेंगी नहीं। विनोबा ने उस दिन की चर्चा में जोर देकर कहा, 'बीघा-कट्ठा के बिना ग्राम सभा ढोंग है।' बेशक ढोंग है। शान्ति में ढोंग और धोखे के लिए स्थान नहीं है। विनोबा ने अन्त में यह चेतावनी दी : 'जल्दबाजी में अपने सिद्धान्त के साथ समझौता नहीं करना है।' जब तक गाँव में कुछ लोग भी बीघा कट्ठा बाँटने को तैयार न हों तब तक ग्राम-सभा बनाने का कोई अर्थ नहीं है। वह ग्राम-सभा भी किस काम की जिसके पदाधिकारियों ने भी अपना बीघा-कट्ठा न बाँटा हो? लोग बीघा-कट्ठा नहीं देंगे यह मानने का कोई कारण नहीं है। जरूरत इस बात की है कि हम अपने सिद्धान्त पर दृढ़ रहें, और अपनी बात लोगों के कान में डालते रहें—बार-बार डालते रहें। अब समय आ गया है कि भूमिहीन भी ग्राम कोष में अपने दान की घोषणा करें, और भूमि-वानों से बीघा-कट्ठा के संकल्प की पूर्ति की माँग करें। ग्रामदान के बाद संकल्प की पूर्ति की चिन्ता भूमिहीन और भूमिवान को समान रूप से होनी चाहिए।

बिहार में ग्राम सभाएँ बनाने का काम हो रहा है। उसमें अति-तूफान की गति अभी नहीं आयी है। शीघ्र आनी चाहिए। लेकिन आयेगी तब, जब प्राप्ति की तरह पुष्टि का काम भी अभियान-पद्धति से ही होगा। देश में जो तूफान उठ रहा है उसका मुकाबिला हम इत्मीनान से नहीं, अति तूफान से ही कर सकते हैं। इस कठोर सत्य से आँखें हटाकर हम अपने आन्दोलन को अब आगे नहीं बढ़ा सकेंगे। हमने तय किया है कि इस साल बीघा-कट्ठा और ग्राम सभा का काम पूरा करेंगे और सन् १९७१, १९७२ के वर्ष लोकशक्ति के संगठन में लगायेंगे। यह टाइम-टेबुल है, जिसके अनुसार हमें अगले ढाई बरसों में काम करना है। केवल काम नहीं करना है, उसे पूरा करना है।

बिहार के सर्वोदय के लिए जीवन-मरण का प्रश्न है। बिहार में सर्वोदय के एक-एक कार्यकर्ता, साथी और मित्र को परिस्थिति की यह पुकार सुननी चाहिए। अगर पुकार हमने समय से न सुनी तो समय हमें क्रूरतापूर्वक छोड़कर आगे बढ़ जायगा। इसलिए बिहार के ऊपर तो जिम्मेदारी है ही, देश के दूसरे राज्यों की भी, जहाँ किसी प्रखण्ड या जिले का दान हो चुका है, जिम्मेदारी कुछ कम नहीं है। राज्य-दान की प्राप्ति हो जायगी तब पुष्टि का काम शुरू होगा, यह विचार गलत साबित हो चुका है। पुष्टि का काम उसी दिन शुरू होना चाहिए जिस दिन प्रखण्ड का दान पूरा हो। अनुभव के प्रकाश में हमें प्राप्ति की सारी पद्धति में संशोधन करना चाहिए। संशोधन की दिशा सर्व-सेवा-संघ के मंत्री ने ध्यान हाल के परिपत्र में सुझायी है। (देखिए 'भूदान-यज्ञ' ६ अप्रैल '७०)

प्राप्ति में से ही पुष्टि की शक्ति निकलनी चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता तो निश्चित है कि प्राप्ति अधूरी है, जो आगे चलकर बहुत काम की नहीं सिद्ध होगी।

ग्राम-राज्य में, जिले जिले के साथी मिलकर बैठें, और अपने क्षेत्र में आन्दोलन की सारी परिस्थिति पर विचार करें। शक्ति और भक्ति का मेल मिलाकर आगे बढ़ने का उपाय निकालें। लोक-शक्ति को 'लोक' के हाथों में सौंपने का कार्यक्रम बनायें।

'खुदा हाफिज'—यह आशीर्वाद भी है, और चेतावनी भी। भगवान ही मालिक है! इन शब्दों में अटल आस्था भी है, और भविष्य के प्रति आशंका भी।

यहाँ एक बात ध्यान देने की है। भूमिहीनों को थोड़ी भूमि मिले, गरीबों को थोड़ी राहत मिले, यही काफी नहीं है। इनमें से जिन्हें उनके नये 'मन' का परिचय होगा वे देखते होंगे कि जो स्थिति बनती जा रही है उसमें उपकार काफी नहीं है। गरीब को महसूस होना चाहिए कि वह परिवर्तन की प्रक्रिया में इज्जत के साथ शरीक हो रहा है। अगर वह अपने दान, यानी महीने में एक दिन की मजदूरी, की घोषणा करता है तो उसे बीघा-कट्ठा मांगने में शरीक करना चाहिए। इसी तरह अगर मालिक अपना बीघा-कट्ठा दे देता है तो उन भूमिहीनों से उनके दान की मांग करने का हक है। ग्रामदान दोनों को समान भागीदारी है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से गरीब को इस अनुभूति का सुख मिलना चाहिए कि उसका सम्मान वापस आ रहा है, तथा भूत में उसका चाहे जो स्थान रहा हो वर्तमान में चाहे जो स्थान हो, लेकिन भविष्य में, जिसका संदेश ग्रामदान दे रहा है, उसकी मनुष्यता सुरक्षित है। सर्वोदय की क्रान्ति में निरुपाधिक मानव का महत्त्व है।

क्रान्ति भौतिक स्तर में होती है। उसके पहले वह मानसिक, मनोवैज्ञानिक रहती है। ऐसा ही होना भी चाहिए। इसलिए हमें अपनी नीति रीति के मनोवैज्ञानिक 'इम्पैक्ट' के प्रति सतत सतर्क रहना चाहिए।●

बिकाऊ माल

लोगों को खबर है कि अभी अभी राज्यसभा के जो चुनाव हुए हैं उनमें कई जगह खुलकर पैसे से वोट खरीदे गये हैं। इतनी बड़ी संख्या में लोग अपनी पार्टी के उम्मीदवार को छोड़कर दूसरे उम्मीदवार को वोट दें, इसका पैसा और जाति के सिवाय दूसरा क्या कारण हो सकता है?

पिछले आम चुनाव में भी पैसे की चर्चा रही थी। देशी पैसे की नहीं, विदेशी पैसे की भी चर्चा थी। संसद में गृहमंत्री ने पार्टियों का नाम तो नहीं लिया लेकिन उन्होंने स्वीकार किया कि चुनाव में विदेशी पैसे का इस्तेमाल हुआ था। अब भारत के बाजार में विदेशी पैसा है, सरकार में विदेशी पैसा है, संस्थाओं में विदेशी पैसा है, शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, आदि हर जगह विदेशी पैसा है, तो राजनीति ही क्यों बची रहे? जब कोई चीज बिकाऊ हो जाती है तो हर एक को उसे खरीदने का हक हो जाता है। आज हमारे देश में कौनसी ऐसी चीज है जो बिकाऊ नहीं है?

१९६७ के मध्यावधि चुनाव के बाद जब दल-बदल होने लगे तो एक बड़े नेता ने अपने भाषण में कहा 'अब तो नेता गाय-बैल की तरह बिकने लगे हैं!' उस पर एक अखबार ने टिप्पणी लिखी। उसने लिखा, 'हमारे नेता ने बात बहुत ठीक कही है, लेकिन सबसे पहले उन्हें अपनी ही गोशाला देखनी चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि ज्यादा गायें उन्हीं की निकल गयी हों।' बात सचमुच ऐसी ही थी।

अभी तक गरीब वोटरों को पैसे की लालच दिखाई जाती थी, लेकिन अब कुछ एम० एल० ए०, और एम० पी० भी, बिकाऊ हो गये। अन्तर इतना ही है कि छोटा आदमी सस्ता है, बड़ा आदमी महँगा। जितना बड़ा पद, उतनी बड़ी कीमत। मालूम नहीं कुछ दिनों में कौन बचेगा जिसकी कीमत न हो जो बिकाऊ न हो।

सेठ खरीद रहा है शासक को, और शासक खरीद रहा है सेवक को। सत्ता दासी हो सम्पत्ति की और सेवा दासी हो सत्ता की, तो समझ लेना चाहिए कि समाज को किसी गम्भीर नैतिक-सामाजिक व्याधि ने घेर लिया है। समाज सचमुच एक गम्भीर व्याधि से ग्रस्त है, इसमें अब संदेह क्या है?

कभी माना जाता था कि शस्त्र-शक्ति भ्रष्ट नहीं होती, इसलिए व्याप्त भ्रष्टाचार से मुक्ति के लिए लोग डिक्टेटर का नाम लेते थे, लेकिन अब तो डिक्टेटरों ने भी अपना बचा खुचा यश खो दिया, और शस्त्र भी सम्पत्ति के सामने झुक गया। पैसे ने तलवार की धार को भी कुन्द कर दिया।

सेवा जब संन्यास के साथ जुड़ी रहती थी तो उसमें पैसे के प्रभाव को रोकने की शक्ति होती थी, लेकिन जब से सेवा ने संस्थाओं का सहारा लिया है, तब से वह सेठ और शासक, सत्ता और सम्पत्ति, दोनों के सामने मुहताज हुई है। बिकी हुई सेवा ऊँचे सिद्धान्तों की आड़ में खड़ी रहती है, इसलिए वह नैतिक दृष्टि से दोहरी जहरीली होती है। सेवा-संस्थाओं के संचालक, सत्ता और सम्पत्ति की लिप्सा में, धर्म को तो बेचते ही हैं, अपने साथियों को भी बिकाऊ बना डालते हैं, और समाज के नैतिक भविष्य को गिरवी रख देते हैं।

हमारे देश के बाजार में कौन सी चीज नहीं बिकती? जवानी बिकती है, मजदूर की मेहनत बिकती है, औरत की इज्जत बिकती है। क्या नहीं बिकता? लेकिन अब तो नेताओं के बिकाऊ होने के कारण देश के बिकने की नौबत आ गयी है। खरीददार दो हैं—विदेशी साम्राज्यवाद और देशी सत्तावाद, जिसके द्वारा पूँजीवाद, धनवाद, दलवाद, सम्प्रदायवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद, तथा राजनैतिक दलबाजी सब एक साथ प्रकट हो रहे हैं।●

हिंसा कहाँ तक पहुँचेगी ?

●डा० डी० एस० कोठारी

['आजाद स्मारक-व्याख्यान-माला' के अन्तर्गत अणु, मनुष्य और अहिंसा' के वैज्ञानिक विश्लेषण की यह दूसरी किस्त है।]

भौतिकशास्त्र में क्रान्ति

आधुनिक भौतिक विज्ञान वास्तव में दर्शन है। आइन्सटाइन के बाद पीसवी बार के 'काम्प्लीमेनटेरिटी के सिद्धान्त' से यह सिद्ध हो गया है कि जाननेवाले व्यक्ति और जानी जानेवाली वस्तु (सब्जेक्ट ऐण्ड आब्जेक्ट) में तीव्र भेद करना अब न संभव है, न उचित। व्यक्ति और वस्तु का यह अभेद भौतिक विज्ञान के लिए बिलकुल नयी चीज है। मनुष्यों की दुनिया में यह अभेद बहुत स्वाभाविक है। उदाहरण के लिए वक्ता अपने श्रोताओं को प्रभावित करता है, और श्रोता वक्ता को।

युग-युग से दार्शनिकों ने माना है कि हर पदार्थ अणुओं से बना है। लेकिन अभी सौ वर्ष से भी कम हुए कि यह धारणा प्रत्यक्ष प्रयोग से सही सिद्ध हुई है। सारा विश्व अणुओं का ही बना हुआ है। अन्तर इतना ही है कि प्राचीन दार्शनिक मानते थे कि अणु अविभाज्य है, जब कि आधुनिक विज्ञान उन्हें विभाज्य मानता है। अणु निरपेक्ष अर्थ (ऐब्सोल्यूट सेंस) में सूक्ष्म है। उस निरपेक्ष अर्थ में बड़े या छोटे होने की सारी अवधारणा सन् १९३० और उसके बाद के कुछ वर्षों में सामने आयी है।

विश्व अणुओं का है, हमारा शरीर भी अणुओं का ही है, और अणुओं का जो आचरण बाहर है, वही शरीर के भीतर भी है। यदि ऐसी बात है तो मन या चेतना का क्या? अणुओं की गतिविधि, आचरण, पहले से मालूम है, लेकिन क्या मनुष्य का आचरण भी जाना जा सकता है?

दो सत्य प्रकाट्य हैं। एक तो यह कि हमारा शरीर अणुओं का है, और प्रकृति के कुछ स्पष्ट नियमों के अनुसार काम करता है, दूसरा यह कि मेरी स्वतंत्र इच्छा-शक्ति है। अपने शरीर पर मेरा काबू है। अगले क्षण में क्या करूँगा, इसका निर्णय मैं ही करूँगा। यह एक विरोधाभास है। क्या कोई उपाय है इस विरोध को मिटाने का? निम्नलिखित चार उपाय हो सकते हैं :

(१) भूल जाइए विरोधाभास को। दुनिया में इतने काम हैं, मन को लगाये रहने के साधन हैं, कि इस असमंजस में पड़ा ही क्यों जाय?

(२) मान लिया जाय कि शरीर में अणुओं के अलावा भी 'कुछ' है। उस 'कुछ' को आत्मा (सोल) कहा जा सकता है। प्राणिविज्ञान में ऐसा कुछ नहीं है जिससे 'आत्मा' को पूरा-पूरा असिद्ध किया जा सके।

(३) हम यह कहें कि स्वतंत्र इच्छा-शक्ति एक भ्रम है। अगर यह मान लिया जाय, तब तो हममें से कोई अपने किसी काम के लिए जिम्मेदार होगा ही नहीं। कई दार्शनिकों, वैज्ञानिकों और समाजशास्त्रियों ने ऐसा माना भी है। स्पिनोजा, शोपेनहावर, आइन्सटाइन, फ्रायड, टाल्सटाय तथा कई प्रसिद्ध समाजशास्त्रियों के नाम गिनाये जा सकते हैं। आइन्सटाइन ने कहा है कि मनुष्य बाहर के दबाव और भीतर की आवश्यकता से काम करता है। शोपेनहावर का वाक्य है, 'मनुष्य जो चाहे कर सकता है, लेकिन जो चाहे वह चाह नहीं सकता है।' इस वाक्य में मनुष्य के लिए बहुत बड़ा आश्वासन है। इससे मन बहुत हल्का हो जाता है, और हम एक-दूसरे के प्रति उदार बन जाते हैं। फ्रायड ने तो यहाँ तक कह डाला कि जिसे हम अपना निर्णय मानते हैं वह वास्तव में हमारे अचेतन मन का निर्णय है।

(४) चौथा मत अरविन श्राडिंजर का है जो इस जमाने के बड़े-से-बड़े सैद्धान्तिक भौतिक-वैज्ञानिकों में है। वे कहते हैं : 'मेरा शरीर यंत्रवत् प्रकृति के नियमों के अनुसार काम करता है। फिर भी मैं जानता हूँ कि मैं उसकी गति-विधि को चला रहा हूँ। मैं जान लेता हूँ कि मेरे किस कार्य का क्या परिणाम होगा और उसकी मैं पूरी जिम्मेदारी लेता हूँ। यह 'मैं' कौन है? यह 'मैं' वह व्यक्ति है जो अणुओं की गति-विधि को प्रकृति के नियमों के अनुसार संचालित कर रहा है।' यही विचार ढाई हजार वर्ष पहले के उपनिषदों में भी है। उपनिषदों ने कहा : 'आत्मा ही ब्रह्म है।'

(५) एक पाँचवाँ उपाय भी है। हम लोग पूर्व-निर्णयवाद (डिटरमिनिज्म) और स्वतंत्र निर्णय (फ्री विल) को परस्पर-पूरक मानते हैं। दोनों अनिवार्य हैं, दोनों आंशिक रूप में सत्य हैं। दोनों किस मात्रा में एक दूसरे के पूरक हैं, इसका पता शायद शताब्दियों में लगेगा, लेकिन तब तक यह मानकर चलना पड़ेगा कि यह दृष्टि सबसे अधिक समाधानकारी है।

इसलिए हमें मानना है कि किसी-न-किसी मात्रा में हम अपने चारों ओर की दुनिया के लिए जिम्मेदार हैं। और यह कौन नहीं मानेगा कि आज की दुनिया हिंसा से भरी हुई है।

पृथ्वी ५ अरब वर्ष पुरानी है। मनुष्य तो कुछ ही लाख वर्ष से धरती पर आया है। भाषा, ध्यान, धारणा, चिंतन आदि लगभग ३० हजार वर्ष से अधिक पुराने नहीं हैं। आज से पहले जितने मनुष्य रह चुके हैं उनकी संख्या दस अरब से अधिक नहीं है। इनमें से एक-तिहाई से अधिक हमारे साथ इस वक्त दुनिया में मौजूद हैं। इसीको हम 'जनसंख्या का विस्फोट' (पापुलेशन एक्सप्लोजन) कह रहे हैं। हिंसा में आज तक जितने लोग मरे हैं उनकी संख्या लगभग १० करोड़ है। इनमें से ¾ यानी लगभग ७½ करोड़ इस बीसवीं शताब्दी में ही मारे गये हैं। प्रथम महायुद्ध में १ करोड़ मारे गये थे,→

स्रोत सूखे नहीं हैं

पूना शहर में गत १७ से १९ मार्च तक सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक थी। उस निमित्त श्री जयप्रकाश नारायण का आगमन पूना शहर में होनेवाला था। इसलिए जयप्रकाश नारायण के विचार सुनने के लिए पूना शहर में एक आमसभा आयोजित की जाय, उस अवसर पर उनकी ६८ वर्ष की उम्र को ध्यान में रखकर ६८,००० रुपयों की थैली सर्वोदय-कार्य के लिए उन्हें समर्पित कर उनका स्वागत किया जाय, ऐसा पूना के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने सोचा। तदनुसार श्री मोहोल एम० एल० ए० के सभापतित्व में जनवरी '७० में 'जयप्रकाश नारायण-सत्कार समिति' का गठन किया गया।

क्या संकल्प पूरा हो पायेगा ?

ज्यों ही लोगों ने यह सुना, त्यों ही मित्र, हितैषी, नागरिक, सब कहने लगे कि यह काम पूरा होना कठिन है। यह दुःसाहस आपने क्यों किया ? पूना पेशवाओं के जमाने से लेना जानता है, देना नहीं। लोगों ने दलीलें दी कि जनवरी '७० में जब बादशाह खान को पूना जिले से केवल ३०,००० रुपये ही मिले, तब जयप्रकाशजी और सर्वोदय के नाम पर इतना भी कैसे इकट्ठा होगा ? देनेवाले हमेशा वे ही लोग होते हैं। एक बार खानसाहब के लिए दे दिया, अब इतनी जल्दी वे ही लोग सर्वोदय के लिए कैसे देंगे ? पूना शहर में सर्वोदय का कोई खास कार्य नहीं था। सन् १९६० में महाराष्ट्र के अर्थ-संग्रह दौर के निमित्त जयप्रकाशजी जब पूना आये थे तो १,००० रुपयों से ज्यादा रकम इकट्ठा नहीं हो सकी थी, इसका स्मरण भी हम था। लेकिन इससे हम हतोत्साहित नहीं हुए, सावधान जरूर हुए।

इस कार्य में मदद करने हेतु फरवरी के मध्य में तीन दिनों के लिए मैं पूना गया था। तब तक वहाँ चन्दे का श्रीगणेश भी होना बाकी था। एक मध्यवित्त मित्र से मिलने के लिए, और उनसे चन्दा मांगने के लिए हम लोग तांगे में बैठकर निकले। रास्ते में चौक पर 'ट्राफिक सिग्नल' की लाल बत्ती के कारण हमें चन्द मिनट रुकना पड़ा। किसी प्रकार जल्दी-से जल्दी काम आरम्भ हो जाय, इसके लिए मैं व्यग्र था। मैंने कहा, "चलिए, यहीं हम उतर जायें, और सामने की 'बिल्डिंग' में 'सुरेश ट्रेडर्स' की दूकान पर चलें। इस फर्म के मालिक श्री द्वारकादास बाहेती से २४ साल पूर्व मेरा थोड़ा परिचय वर्धा के कालेज में हुआ था। जनवरी में मैं पूना आया था, तब मैंने इनसे 'फरवरी में आपको चन्दा देना होगा', यह चर्चा की थी।" जनवरी का वह मिलना पूरे २४ वर्ष के बाद का मिलन था। दूकान में प्रवेश करते-करते मैंने पूना के साथियों से पूछा कि इनकी आर्थिक स्थिति कैसी है और इनसे क्या अपेक्षा रखी जाय ? साथियों ने कहा कि १०१ रुपये दे सकते हैं और इनसे माँगना चाहिए। मैंने पूछा कि इतना देने की तैयारी न हो तो कितने पर सन्तोष माना जाय ? जवाब मिला, "५१ रुपयों से कम न लिया जाय।" श्री बाहेती से मिलने पर मैंने उनसे बातचीत शुरू की। उन्होंने एक क्षण की भी देर न करके कहा, "चन्दा तो देना ही है, लेकिन कितना, यह हम तय करें कि आप तय करेंगे ?" मैंने कहा, "इसे तो दोनों ही तय करेंगे।" उन्होंने तिजोरी खोलकर पाँच सौ एक रुपये दिए। और वह भी इतनी नम्रता एवं शालीनता के साथ, कि देखते ही बनता था। इस घनोखे प्रारम्भ से सबका उत्साह बढ़ा और ६८,००० रुपये हो जायेंगे, ऐसा विश्वास पैदा हुआ। तीन दिनों में ४-५ हजार रुपये इकट्ठा कर मैं एक सुमन विदा हुए।

मार्च में बैठक के दस दिन पूर्व जब हम पूना पहुँचे, तो चन्दे की रकम १० हजार रुपयों के लगभग पहुँची थी, जब कि योजना के अनुसार २५,००० रुपयों का संग्रह होना चाहिए था। जिला परिषद्, कार्पोरेशन, शिक्षक एवं विद्यार्थी, व्यापारी, उद्योगपति, सहकारी समितियों इत्यादि के हर तबके से दस-बारह हजार रुपये प्राप्त करने की योजना जनवरी में बनायी गयी थी। लेकिन प्रत्यक्ष काम कम हुआ था। अतः थोड़ी चिन्ता होने लगी थी, कि क्या किया जाय ?

कुछ प्रेरक अनुभव

व्यापारियों में एवं उद्योगपतियों में काम आगे बढ़ाने के लिए श्रीमती पानकुँवर बहन फिरोदिया ने एक सप्ताह का समय दिया। इस बहन ने ३० साल बाद सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया था। उनके पैर में कई दिनों से सूजन हो गयी थी और डाक्टरी इलाज चालू था। डाक्टर ने चलने की मनाही की थी। बावजूद इसके यह बहन सर्वोदय में श्रद्धा होने के कारण निकली। पहले दिन रात को ८ बजे तक ५७ लोगों से १७५० रुपये इकट्ठा हुए। रात को ८ बजे एक बहन के आग्रह पर वे भजन सुनने के लिए उनके साथ एक परिवार में गयीं। सहज में ही वहाँ पानकुँवर बहन के मुँह से निकला, "बहन, तुम्हारी एवं मेरी कोई पहचान नहीं। मैं तुम्हारे यहाँ चन्दा माँगने के लिए वास्तव में आयी भी नहीं। तुम्हारे पति दिल्ली गये हैं, यह भी तुम कह सकती हो। लेकिन मेरी इच्छा आज

→जिनमें से ५ प्रतिशत नागरिक थे। दूसरे महायुद्ध में ५ करोड़ से अधिक मारे गये, जिनमें आधे से अधिक नागरिक थे। कोरिया के युद्ध में ९० लाख मारे गये जिनमें ८४ प्रतिशत नागरिक थे। द्वितीय महायुद्ध में जितने बम जर्मनी पर गिराये गये उनसे अधिक अब तक वियतनाम पर गिराये जा चुके हैं। अगर अणु-युद्ध छिड़ जाय तो मरनेवालों की संख्या अरब में होगी। हिंसा के इस परिप्रेक्ष्य में गांधी को देखिए।•

[अगले अंक में]

दो हजार रुपये इकट्ठा करने की है। उसमें २५० रुपये कम पड़ रहे हैं। तुम यह रकम दो, यह मेरी प्रार्थना है।" उस बहन ने थोड़ी हिचकिचाहट के बाद सचमुच २५१ रुपये देकर चकित कर दिया।

पहला दिन ऐसा बीता तो उत्साह कई गुना बढ़ गया। फिर तो हर रोज अधिकाधिक रकम इकट्ठी होने लगी। एक मोर्चे पर यश मिल रहा है, यह देखकर दूसरे मोर्चों पर भी साथी डट गए, और देखते-देखते आठ दिनों में कुल रकम ७,००० रुपयों से ऊपर पहुँच गयी। लोगों को समझाने के कई तरीके मित्रों ने अख्तियार किये। बहन कांता, हरविलास एवं श्री सावन्त वकील चार दिन पूर्व मदद के लिए पूना पहुँचे थे। कांता बहन पाँच सात मिनट में एक दाता को निपटाती थी, तो दूसरी ओर बम्बई के कार्यकर्ता श्री कांतिलाल भाई बोरा गांधीजी के चंपारण्य सत्याग्रह से बिहारदान तक, घंटे भर में पूरी गाथा सुनाते-समझाते थे। पानकुँवर बहन कहती थीं, दूसरे सत्कार्य मरहमपट्टी हैं, लेकिन ग्रामदान, शांति-सेना आदि समाज के शरीर के खून को शुद्ध करनेवाले बुनियादी इलाज हैं। समझाने की भिन्न-भिन्न शैलियाँ साथियों ने विकसित कीं। हरएक की कोई-न-कोई विशेषता थी। पिछले पन्द्रह सालों की साधना का यह निचोड़ देखकर किसे प्रसन्नता न होगी?

पूना के प्राथमिक शाला के विद्यार्थियों ने भी इस काम में योग दिया। बालगोपाल आखिर कितना दे सकते थे? पाँच या दस पैसे। शामको इन पैसों का ढेर लग जाता था और गिनते-गिनते हाथ थक जाते थे। इस छोटी राशि का भावमूल्य कितना बड़ा था! और मुद्रामूल्य भी कम नहीं हुआ। इन विद्यार्थियों से पाँच हजार रुपये इकट्ठा हुए। एक मारवाड़ी घूँघटवाली बहन ने अपनी छोटी-सी किराना-दूकान से, हमारे माँगने पर १०१ रुपये देने का आश्वासन दिया। उसकी दूकान में उतनी रकम भी नहीं थी। पड़ोसी से माँगकर उसने १०१ रुपये दिये। इतना ही नहीं उसने दूसरों से भी दिलवाये। एक छोटे 'साइकिल-डीलर' के पास हम गये, और उन्होंने १०१ रुपये लिखने को कहा। पानकुँवर बहन ने २०१ रुपये कहा। पाँच मिनिट बाद दूकानवाले भाई ने १५१ रु० कहा। पानकुँवर बहन ने आग्रह किया। उन्होंने कहा कि ठीक है। और चेक लिखकर दे दिया। चेक २५१ रुपये का था। देखकर हमने उनकी भूल बतायी। उन्होंने कहा, "भूल मेरी नहीं है, भूल आप कर रहे हैं। मुझे सचमुच २५१ रुपये देने हैं।" एक उद्योगपति ने हमारा स्वागत किया। हमने १००१ रुपयों की माँग की। उन्होंने एक क्षण भी न लगाते हुए 'हाँ' कहा। हमारे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। एक दूसरे उद्योगपति श्री छाबरिया से हमने १००० रुपये माँगे। उन्होंने ५०१ रुपये देने को कहा। हमने थोड़ा आग्रह किया। तब वे कहने लगे, 'आप लोग अहिंसक क्रान्ति की गम्भीरता को समझते नहीं हो। मेरे ५०० या १००० से यह काम होनेवाला नहीं है। इस क्रान्ति को सम्पन्न करने के लिए करोड़ों रुपये लगेंगे, और रुपयों के अलावा अनेक लोगों का बहुमूल्य समय, लगेगा।" हमने कहा, 'आप ठीक कह रहे हैं। तब आप १००० रुपये दीजिए, और दूसरे उद्योगपतियों से दिलवाने में श्रमदान कीजिए।" उन्होंने एक हजार रुपये नहीं, कान्ता बहन के कहने पर १,१११ रुपये दिये। खुद उसी क्षण वे उठे, और दो-तीन उद्योगपतियों से भी काफी बड़ी रकमें दिलवायीं। उद्योगपतियों से पैसा दिलवाने में पानकुँवर बहन के पति श्री हस्तीमलजी फिरोदिया ने भी बहुत मदद की।

सभी अनुभव मीठे नहीं थे। पाँच प्रतिशत व्यक्तियों से नकार भी मिला। लेकिन ऐसे अनुभव कितने कम थे! एक अनोखा अनुभव लिखने लायक है। श्री राघवी नाम के एक ठेकेदार के पास हम गये। हमने उनसे कहा, "आप इस काम के लिए कुछ रकम दें।" उन्होंने कहा, "मैं देनेवाला कौन, मेरा पैसा है नहीं। देनेवाला-लेनेवाला तो भगवान है।" मैंने कहा, "अच्छा, आप दीजिएगा तो यह पैसा ग्रामदान-शान्तिसेना के काम में यानी अच्छे काम में लगेगा।" उन्होंने कहा, "मुझे पैसा कहाँ जाता है, यह देखने की क्या जरूरत? मेरे पास माँगनेवाला भगवान है। उस भगवान को उसके विनियोग की फिक्र होगी। मैं फिक्र क्यों करने लगूँ?" मैंने कहा, "इस ऊँचे आध्यात्मिक धरातल पर बातें करना मुझे आता नहीं। मैं तो नीचे के व्यावहारिक स्तर पर आपसे बात कर रहा हूँ।" उन्होंने कहा, "नीचे के धरातल पर मैं उतरता नहीं, मुझे उतरना आता नहीं। अलावा इसके मेरे पास शायद ही पैसे हों।" मैंने कहा, "जरा देखिए तो!" तब उन्होंने अपनी पुत्रवधू से कहकर ४०१ रुपये हमको दिलाये।

ऐसे कितने अमृतानुभव लिखे जायँ! पूना के इस एक सप्ताह के काम से कार्यकर्ताओं का उत्साह शतगुणित हुआ। इसी पूना में एक करोड़ रुपयों की ग्राम-स्वराज्य निधि भू-जयन्ती तक इकट्ठा करने करने का तय हुआ। यदि ठीक से योजना बनी, और साहसपूर्वक आत्मविश्वास से सब छोटे-बड़े कार्यकर्ता इसमें दो माह के लिए लगे, तो सिद्धि दूर नहीं है, यही अनुभव आनेवाला है।

—ठाकुरदास बंग

श्रद्धांजलि

जिला सर्वोदय मण्डल रोहतक के सदस्य और लोकप्रिय सर्वोदय सेवक श्री माँगराम क्रान्तिकारी का गत २५ मार्च को पदयात्रा में ही अचानक हृदयगति रुक जाने से देहावसान हो गया।

श्री माँगराम पिछले ६ वर्षों से सर्वोदय-आन्दोलन में लगे हुए थे। क्षेत्र में उनका सघन सम्पर्क था। उनके मधुर गीतों की गूँज गाँव-गाँव की यादों में बसी हुई है।

सर्वोदय समाज की ओर से दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि और उनके शोक-संतप्त परिवार को हार्दिक समवेदना।

शान्ति-सैनिकों के लिए आपत्तिकालीन मार्गदर्शक संहिता

[शान्ति-सैनिकों का काम दो प्रकार का माना गया है। आम दिनों में वह लोगों से परिचय करेगा, उनकी सेवा करेगा और शान्ति के विचार तथा दर्शन का प्रसार करेगा। अशान्ति के दिनों में अशान्ति-शमन का प्रयास करेगा। अगर हर क्षेत्र में लोगों की निष्काम सेवा करनेवाले शान्ति-सैनिक हों तब तो वे अशान्ति होने से पहले ही परिस्थिति को सम्हालने में समर्थ हो सकते हैं, किन्तु अभी देश भर में इस प्रकार शान्ति-सैनिक फैले हुए नहीं हैं, अतएव आज की परिस्थिति में आपत्तिकाल के समय उपयोग में आने लायक कुछ हिदायतें नीचे दी जा रही हैं। –सं०]

दंगे से पूर्व

आमतौर पर यह पाया गया है कि किसी भी स्थान पर दंगा होने से पूर्व वहाँ का वातावरण तनावपूर्ण हो जाता है। शान्ति सैनिक दंगे के स्फोट को टालने की भरसक कोशिश अवश्य करें। किन्तु यह काम अपनी शक्ति से बाहर का मालूम हो तो शान्ति-सैनिकों को नीचे लिखी कार्रवाई करनी चाहिए.

१—नगर के या उस स्थान के सभी शान्ति सैनिक इकट्ठा होकर परिस्थिति के बारे में विचार-विमर्श करें।

२—यह बैठक बुलाने का काम नगर-शान्ति सेना के संयोजक करें। यदि संयोजक न चुने गये हों, अनुपस्थित हों या अन्य किसी कारण से सक्रिय न हों, तो नगर के किसी भी शान्ति-सैनिक को इस प्रकार की आपत्कालीन बैठक बुलाने का अधिकार है।

३—शान्ति-सैनिकों की यह बैठक अपने नगर के लिए काम की कोई तात्कालिक योजना बनाये, तथा नगर की परिस्थिति के बारे में तार या टेलीफोन से प्रादेशिक शान्ति-सेना के संयोजक को सूचना दे।

४—आवश्यक समझने पर प्रदेश के और स्थानों से शान्ति सैनिकों की माँग भी प्रादेशिक शान्ति-सेना के संयोजक से की जा सकती है।

५—नगर में यदि प्रतिष्ठित नागरिकों को परिस्थिति के बारे में अवगत कराया जा सकता है, तो वैसा तुरन्त किया जाय। यदि सम्भव हो तो प्रतिष्ठित नागरिकों के हस्ताक्षर से शान्ति के लिए अपील भी निकाली जाय और समाचार-पत्रों तथा आकाशवाणी से उसे प्रसारित करने की कोशिश की जाय।

६—यदि सम्भव हो तो सम्बन्धित पक्षों के अगुआ लोगों से मिला जाय।

७—परिस्थिति का अध्ययन करने के लिए अखबार आदि की कतरनें, पत्रिकाएँ आदि संग्रहीत करने की व्यवस्था की जाय, ताकि आगे चलकर निष्पक्ष रिपोर्ट तैयार करने में उससे सहायता हो।

दंगा होते ही

दंगे की घटनाओं की सूचना मिलते ही शान्ति सैनिकों को नीचे लिखी कार्रवाई करनी चाहिए

१—घटना स्थल पर शान्ति-सैनिक पहुँच जायें।

२—खुद देखी हुई घटना का संक्षिप्त निष्पक्ष विवरण अन्य शान्ति-सैनिकों को दें।

३—सब शान्ति सैनिक मिलकर आगे की कार्रवाई के बारे में तुरन्त योजना बनायें।

४—प्रादेशिक शान्ति-सेना समिति के संयोजक को परिस्थिति से अवगत करायें, अपनी योजना की जानकारी दें, और आवश्यक हो तो और शान्ति-सैनिकों की माँग उनसे करें।

५—दंगे के बाद काम करने में निम्न बातों का ध्यान रखा जाय.

अ—अफवाहें बढ़ाने में कोई शान्ति-सैनिक गलती से स्वयं हिस्सेदार न बन जाय। लोगों से सम्पर्क करके अफवाहों को रोकने का प्रयत्न करें।

आ—अफवाहों को रोकने के लिए पर्चा आदि निकालना आवश्यक लगे, तो निकाला जाय।

इ—जिन पक्षों के बीच विवाद हो, उनके नेताओं से तुरन्त मिलने की योजना बनायी जाय। इस काम के लिए ऐसे शान्ति सैनिक जायँ, जो अपनी सेवाओं के लिए नगर में सुपरिचित हों, जो तटस्थता से तथा बुद्धिपूर्वक चर्चा कर सकें, और जो परिस्थिति को देखकर आवश्यक हो तो कुछ नये निर्णय भी ले सकें।

ई—स्फोटक स्थानों पर शान्ति सैनिकों को भेजा जाय। यदि हिंसा फूट पड़े तो जान का खतरा उठाकर भी ये शान्ति-सैनिक बीच बचाव करें। ऐसे स्थानों पर उन्हीं शान्ति सैनिकों को जाना चाहिए जो इस प्रकार का साहस दिखाने को तैयार हों। इन स्थानों पर आमतौर पर शान्ति-सैनिकों को अकेले नहीं भेजना चाहिए।

उ—परिस्थिति अनुकूल हो तो शान्ति-जुलूस निकाला जाय, जिसमें शान्ति-सेवकों के अलावा नगर के कुछ और नागरिक भी शामिल हो सकते हैं।

दंगे के बाद तुरन्त

१—शान्ति-सैनिक घायलों को अस्पताल में पहुँचायें और उन्हें देखने के लिए जायँ। घायलों के परिवारों से भी भेंट करें।

२—राहत के तात्कालिक कार्यक्रम में शान्ति-सेना शामिल हो। शान्ति-सैनिकों की निष्पक्षता उन्हें यह काम करने में अधिक सक्षम बनायेगी।

३—जिस मसले को लेकर दंगा हुआ हो, उसके बारे में यदि सर्वोदय का कोई सुनिश्चित दृष्टिकोण बन सका हो, तो उसका प्रसार किया जाय। वैसा न हो तो विवादास्पद विषय के बारे में चुप रहना ही ठीक होगा। शान्ति-सैनिक अपनी

सर्वोदय-पात्र : अब तक और आगे

*दादा भाई नाईक

[बम्बई के समीप उरण स्थित सर्वोदय-आश्रम में मार्च के अन्त में आयोजित अखिल भारतीय सर्वोदय-पात्र परिचर्चा के अवसर पर प्रस्तुत 'सर्वोदय-पात्र' कार्यक्रम का लेखा-जोखा।]

निधि-मुक्ति के प्रस्ताव के पश्चात जब सर्व सेवा संघ के प्रमुख लोगों के सामने सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के जीवन निर्वाह का सवाल चिंता का विषय हो गया था, तो बाबा ने कहा था कि भौतिक निधि का आधार छोड़ा, तो क्या हुआ? हम निराधार के आधार उस प्रभु की सन्निधि में हैं। वही हमारा योगक्षेम चलायेगा। सर्वत्र व्याप्त ईश्वर ही सहस्रशीर्ष सहस्राक्षः सहस्रपात् परमपुरुष है, जो जनता जनार्दन के रूप में हमारे सामने है।

अतः अब हम सीधा जनसम्पर्क साधें और जनाधार पर ही रहें। पर वह भिक्षा या परावलम्बन नहीं होगा। घर घर में हम पहुँचें, उन्हें सर्वोदय का महत्व बतायें, उसके लिए शान्ति की आवश्यकता समझायें, और सम्मति-रूप में उनके हस्ताक्षर लें। सर्वोदय-पात्र तब विश्वशान्ति के लिए सम्मति-रूप बन जायेगा। और विश्वशान्ति हेतु करुणा को जीवन में उतारकर संघर्ष, और परिणामतः हिंसा को समाप्त करने का वह एक छोटा-सा सामूहिक कदम होगा। प्रतिदिन प्रातः भगवन्नाम के साथ गृहिणी अपने छोटे बालक या बालिका के हाथ से मुट्ठीभर अनाज या एक पैसा पात्र में डलवायें, ताकि बच्चों को भी उदारता के, शान्ति के, संस्कार मिलें, और वह आगे चलकर आदर्श मनुष्य बने।

सर्वोदय पात्र परम्परागत

सर्वोदय पात्र की कल्पना कोई नयी चीज नहीं थी। महाराष्ट्र में स्वदेशी आन्दोलन के समय "पैसा फण्ड" कायम करके सफलतापूर्वक चलाया गया था। वैसे ही गरीब विद्यार्थियों के लिए मुष्टि-फण्ड या मधुकरी वृत्ति चलती थी। पर यह सब एक सीमित हेतु लेकर ही हुआ था। बाबा ने उसे विश्वशान्ति के साथ जोड़ा। बच्चों के शिक्षण-संस्कार तथा गृहस्थों के संकल्प के साथ भी जोड़कर उसे सार्वत्रिक, सहज तथा परम्परायुक्त स्थायी-भाव दिया।

बाबा की इस घोषणा से सर्वत्र एक आशा की लहर दौड़ गयी और भारत के अनेक नगरों में सर्वोदय-पात्र आरम्भ किये गये। अहमदाबाद शहर में श्री रविशंकर महाराज के तत्वावधान में चालीस हजार परिवारों में सर्वोदय-पात्र रखे गये। गया, परभणी वर्धा, बड़ौदा, बम्बई और अन्य स्थानों में योजनापूर्वक कार्य आरम्भ हुआ।

इन्दौर में

इन्दौर आने के लिए बाबा ने नगर के छठे हिस्से परिवारों द्वारा सर्वोदय-पात्र की प्रतिष्ठापना की बात रखी, और मध्य-प्रदेश के कार्यकर्ताओं ने, तथा उनकी मदद में आये विभिन्न प्रदेश के साथियों ने अभियान चलाया और दस हजार परिवारों में पात्र रखे गये। बाबा के इन्दौर के मुकाम की अवधि में वह संख्या चौदह हजार तक यानी पूरे छठे हिस्से तक पहुँच गयी।

इसके स्थायित्व के लिए बाबा ने एक योजना भी बनायी। हर परिवार महीने के अन्त में सर्वोदय पात्र का अनाज या रकम अपने मोहल्ले के सर्वोदय मित्रों के घर पहुँचाये और ये मित्र अपने मोहल्ले का एकत्रित कोष आश्रम में या नगर के केन्द्र में पहुँचायें। इस कोष का छठा हिस्सा सर्व-सेवा संघ को, और एक प्रतिशत बाबा की यात्रा के लिए दिया जाय।

पर हमारा यह आरम्भशूरत्व ही रहा। इसमें सातत्य की कमी रही। अतः प्रतिदिन, और बच्चे के हाथ से अर्पण की प्रथा, नहीं चल पायी। इतना ही नहीं, माहभर की एकत्रित रकम भी स्वयं जाकर सर्वोदय-मित्रों के यहाँ या केन्द्र में देने की बात कुछ सज्जनों के अलावा औरों ने नहीं चलायी। सर्वोदय-मित्र भी कुछ दिन जनता को स्मरण दिलाते रहे, या स्वयं जाकर वसूल करने का प्रयत्न करते रहे। पर थोड़े ही दिनों में उन्होंने इस कार्य को चलाने की अनिच्छा प्रकट की। बाबा के इन्दौर नगर छोड़ने के साथ विभिन्न स्थानों से आये कार्यकर्ता लौट गये। और केवल नगर के इने-गिने कार्यकर्ताओं के बूते की यह बात नहीं रही। नतीजा यह निकला कि सर्वोदय-पात्र की संख्या एकदम घट गयी और अब वह दसवें हिस्से (१४००) पर स्थिर है। इन आठ वर्षों में अहमदाबाद जैसे अन्य नगरों की स्थिति कुछ इसी तरह की रही है।

आंध्र में

इसके ठीक विपरीत आंध्र में डॉ० सूर्यनारायण राव ने एक अनोखा प्रयोग किया और अपने नगर तेनाली में, तथा

→प्रधान कार्यालय, राजघाट, वाराणसी–१ में है। प्रायः हर प्रदेश में प्रादेशिक शान्ति-सेना-समिति का कार्यालय है। दंगे के बाद यदि काम लम्बे अर्से तक चलनेवाला हो तो उस स्थान पर भी स्थानीय कार्यालय शुरू कर देना ठीक होगा।

इस कार्यालय में दफ्तरी कार्यवाही के लिए आवश्यक सामग्री के अलावा निम्नलिखित चीजें होनी चाहिए.

१—जहाँ दंगा हुआ हो, उस क्षेत्र का मानचित्र,

२—नगर के सारे शान्ति-सैनिक, शान्ति सेवकों के नाम पते और उनका तार का पता और टेलीफोन नम्बर,

३—कौन शान्ति-सैनिक किस कर्तव्य पर तैनात है, इसकी जानकारी,

४—अनुपस्थित शान्ति-सैनिकों की अनुपस्थिति के कारण,

५—यदि राहत के काम हो रहे हों, तो उसकी जानकारी।

—नारायण देसाई
मंत्री,
अ० भा० शान्ति-सेना मण्डल

इर्द-गिर्द के गांवों में, और विजयवाड़ा, गुंटूर, हैदराबाद आदि शहरों में करीब तीस हजार पात्र बगैर भी वर्षों तक सफलतापूर्वक चलाये। डॉ० सूर्यनारायण राव आंध्र के प्रख्यात सर्जरी कुशल और सफल नेत्र-चिकित्सक हैं। पू० बाबा के परम भक्त हैं और अपना अस्पताल सर्वोदय-सिद्धान्त पर चलाते हैं। वे तथा उनकी सहधर्मचारिणी, दोनों ही आध्यात्मिक वृत्ति के, सेवापरायण हैं। पूरे आंध्र प्रदेश में उनके लिए आदर है। अतः विजयवाड़ा जैसे साम्यवाद के गढ़ में भी सर्वोदय-पात्र सर्वसम्मत हैं, क्योंकि सूर्यनारायण रावजी की सज्जनता पर जनता का पूरा विश्वास है। पात्र की वसूली के लिए डाक्टर साहब ने 'आश्रम' चलाया है, और उसमें कितनी ही गरीब, निराधार बहनें आकर अपने जीवन को विकास की ओर बढ़ाती हैं, और साथ-साथ वसूली का कार्य भी करती हैं।

पात्र की रकम में से ही इन बहनों का निर्वाह होता है, और नगरों में कुछ सेवाकार्य भी किया जाता है। जैसे—राष्ट्र-भाषा प्रचार, साक्षरता-अभियान, गरीब बस्ती में बालवाडी, सिलाई तथा अन्य गृहउद्योग, त्योहारों पर भूखे बच्चों को भोजन तथा सर्व-धर्म-सामूहिक प्रार्थना, और सबसे महत्त्व की प्रवृत्ति तो नियमित नेत्रदान ऑपरेशन। एक और बात है। 'सर्वोदय-पात्र' पत्रिका भी निकाली जाती है और वह सब सर्वोदय-पात्रियों के घरों में बिना शुल्क ये बहनें वितरित करती हैं।

डाक्टर साहब का यह सर्वोदय-पात्र-कार्यक्रम राजनीति या समाज का सम्पत्ति पर स्वामित्व, ट्रस्टीशिप आदि विषयों की चर्चा से जान बूझकर दूर रखा गया है। विवाद से सर्वोदय-पात्र पर विपरीत असर पड़ने की सम्भावना नजर-अंदाज नहीं की जा सकती। आंध्र के सर्वोदय-पात्रों की रकम में से अब तक सर्व सेवा संघ का हिस्सा भी नहीं निकाला जा सका। न वहाँ प्रतिदिन सर्वोदय-पात्र में अनाज या रकम डाली जाती है। फिर भी इतने बड़े पैमाने पर और इतने दिनों तक सतत यह प्रयोग चला और उसमें सर्वोदय-तत्त्व का प्रचार भी व्यवस्थित होता रहा, यह गौरव की बात है। हाँ, उसकी बुनियाद राव-दम्पति के प्रेममय, सेवाभावी आदर्श व्यक्तित्व पर ही स्थिर है।

तामिलनाडु में

इसी प्रकार का एक और प्रयोग तामिलनाडु में भी सफलतापूर्वक चलाया जा रहा है। प्रारम्भ में बड़े व्यक्तियों के व्याख्यान मोहल्ले-मोहल्ले में कराये गये। देश भर से शुभ संदेश तथा आशीर्वाद प्राप्त किये गये, और फिर सप्ताह विविध कर प्लेकार्ड्स, बैनर्स, बिल्ले, पर्चे, पैम्फलेट, घोषवाक्य आदि से सुसज्जित एक विशाल जुलूस सर्वोदय-पात्र सम्बन्धी पोस्टर्स के साथ शहर भर में घूमा। नगर के सारे रचनात्मक कार्यकर्ताओं द्वारा, मुख्यतः खादी-प्रवृत्ति के प्रमुख श्री एस आर सुब्रह्मण्यम्जी के योजनाकौशल द्वारा, मद्रास शहर में बीस हजार और मदुरै में बारह हजार, कोयम्बटूर में दस हजार, त्रिचनापल्ली में पाँच हजार पात्र रखे गये, और ये रचनात्मक कार्यकर्ता ही अपने-अपने केन्द्र द्वारा उसकी वसूली में सहयोग देते हैं। वसूली का तरीका आंध्र जैसा ही है। पर आंध्र में निराधार, अल्पशिक्षित, अकिंचन बहनों द्वारा कार्य किया जाता है, मद्रास में मुख्यतः गरीब, पर मध्यम वर्ग की शिक्षित, कुछ उपाधिधारी गृहिणियों द्वारा यह कार्य होता है। वे अपने-अपने घर रहकर मोहल्लों का काम सम्हालती हैं। केवल सप्ताह में एक दिन वे केन्द्रीय कार्यालय में रहकर हिसाब देती हैं, आगामी कार्य की चर्चा करती हैं, साथ-ही-साथ शरीरश्रम, स्वाध्याय, प्रार्थना आदि का कार्यक्रम भी चलता है। आंध्र में बहनों को निर्वाह-व्यय के रूप में आवश्यकतानुसार ४५ से ७५ रुपये तक मासिक दिया जाता है, मद्रास में ६० से १०० रुपये तक। एक बहन के जिम्मे ४०० से ५०० तक पात्रों की वसूली रहती है। ये बहनें जिन परिवारों से सम्पर्क रखती हैं, उनके सुख-दुःख में भी शामिल होती हैं, आवश्यकता पड़ने पर सहयोग भी देती हैं, और सर्वोदय-साहित्य, पत्र पत्रिकाओं की बिक्री, खादी-ग्रामोद्योग तथा सेवा-शुश्रूषा आदि कार्य भी करती हैं।

बड़ोदा में

बड़ोदा शहर में यह प्रवृत्ति यद्यपि बिलकुल अल्पप्रसिद्धित रूप में प्रारंभ की गयी, पर धीरे-धीरे सातत्य से वह बढ़ी, विकसित होती जा रही है। ऐसा लगता है कि वहाँ ठोस नमूने का कार्य हो सकेगा।

अत में, राजगिर सर्वोदय-सम्मेलन में बाबा ने फिर एक बार सर्वोदय-पात्र को आधारभूत घोषित किया, तथा उसे शान्ति-स्थापना की दृष्टि से केवल उपयोगी ही नहीं, अपितु प्रत्यक्ष सकल्प व आचरण की भूमिका तैयार करने का जरिया भी माना। ग्रामों के साथ जब से नगर-अभियान की बात आगे बढ़ी है तब से सर्वोदय-पात्र किस तरह सफल बनाया जाय, इस पर पुनः चिंतन शुरू हुआ है।

चिंतन के कुछ विषय निम्न प्रकार हैं -

(१) सर्वोदय-पात्र आर्थिक आधार तो हो ही, फिर भी मुख्य रूप से वह शान्ति, सौहार्द का प्रतीक और शिक्षा-दीक्षा, सकल्प-व्रत का साधन बने।

(२) सर्वोदय पात्र रखनेवाले परिवारों से कार्यकर्ताओं का सम्पर्क नियमित रूप से रहे।

(३) सर्वोदय-पात्र के जरिये शांति-सेना मुख्य प्रवृत्ति के रूप में चले।

(४) सर्वोदय-पात्र के संग्रह में भाग लेनेवाले कार्यकर्ताओं का निरन्तर किस तरह गुणात्मक विकास हो, इस पर ध्यान दिया जाय।●

सर्व सेवा संघ के नये पदाधिकारी

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् ने श्री गोविन्दराव देशपांडे को सर्व सेवा संघ का सहमंत्री, श्री रामसहाय पुरोहित को कार्यालय-मंत्री तथा श्री देवेन्द्र कुमार गुप्ता को संघ की प्रबन्ध समिति का सदस्य मनोनीत किया है।

गोपुरी, वर्धा —ठाकुरदास बंग, मंत्री

समस्याओं की जटिलता और समाधान की दिशा

[पिछले अंक में आप बंगाल की परिस्थिति के सदर्भ में वहाँ के चार प्रमुख नेताओं की बातें पढ़ चुके हैं। इस अंक में क्षेत्रीय अध्ययन और अध्ययन-दल द्वारा समाधान के कुछ सुझाव प्रस्तुत हैं।—सं०]

२४ परगना में अध्ययन-दल दो स्थानों पर गया। एक श्री चारु बाबू के आश्रम होटगी में, जहाँ सर्वश्री चारु द्र, शिवित्राय चौधरी, शक्ति बाबू और मन-कुमार सेन उपस्थित थे। बंगाल की परिस्थिति के बारे में उन साथियों के साथ सभी पहलुओं पर चर्चाएँ हुईं।

श्री चारु बाबू का कहना था कि,

- योजनाबद्ध पद्धति से सी० पी० एम० का काम चल रहा है। वह पूरी सत्ता अपने हाथ में लेने के प्रयास में है।
- बहुत बड़े पैमाने पर अशान्ति, भय और गैर-कानूनी कार्य हो रहे हैं।
- पुलिस को नाकामयाब बनाया गया है।
- सैकड़ों व्यक्तियों के समुदाय ने जबरदस्ती जमीनों पर कब्जा कर लिया है, फसल काट ली है, और अपने अपने राजनैतिक दलों में बाँट दी है। जिनकी जमीनें छीनी गयीं, उनको मुआवजा देने की आवश्यकता अब नहीं रहेगी, क्योंकि जमीन का मालिक अदा-लत में जाने की हिम्मत नहीं करता।
- जमीन के बारे में नया कानून बनाने की चर्चा हो रही है। कानून बनने के पहले ही सम्बन्ध धाराओं को अमल में लाने की कार्रवाई एस० यू० सी० और सी०पी० एम० ने शुरू कर दी है। कहा जाता है कि गैर-कानूनी जमीनों को बाद में कानूनी रूप दिया जायगा।
- पार्टी के फण्ड के लिए जबरदस्ती लेवी शुरू की जा रही है। जबर-दस्ती करनेवाले हथियारबन्द होते हैं। उनके खिलाफ किसी प्रकार की कार्यवाही नहीं की जाती। हजारों मन धान अब तक पार्टी के लिए इकट्ठा किया जा चुका है। चौबीस परगना में एस० यू० सी० और सी० पी० एम० दल लोगों के लिए भयकर साबित हो रहे हैं। लोगों के चेहरों पर भय और आतंक की जो छाया दिखाई देती है, उसे भूलना मुश्किल है।
- गैर वाजिब मजदूरी मांगने के लिए भूमिहीनों को उकसाया जा रहा है।
- काम मिले, चाहे न मिले, खाना देने की जिम्मेदारी जमीन मालिकों पर डाली जा रही है।
- कहीं-कहीं आदिवासियों को उक-साया जा रहा है।
- नक्सालवादी कार्रवाइयाँ, जिनका उद्देश्य आतंक फैलाना है और जिनके साधन अत्यंत हिंसात्मक हैं कुछ विभागों में फैल रही हैं। इन सब स्थितियों के मुकाबले के लिए.

(१) सिवाय ग्रामदान के कोई दूसरा उपाय नहीं है।

(२) जहाँ एक बीघा जमीन देने के लिए पर्याप्त भूमि भूमिहीनों को ग्रामदान में नहीं मिलती हो, वहाँ बीसवें भाग से ज्यादा जमीन भी मांगी जा सकती है।

(३) हर एक को एक बीघा जमीन दिलाने का आन्दोलन ग्रामदान के पर्याय के रूप में हमें नहीं चलाना चाहिए, क्योंकि उससे ग्रामदान की भूमिका पर कुठा-राघात होगा।

(४) ग्रामदान सी० पी० एम० की कार्रवाइयों से आगे बढ़ा हुआ है।

(५) किसी भी काम के लिए कार्य-कर्ताओं का अभाव महसूस होने ही वाला है। इस अवस्था में हर एक को एक बीघा जमीन देने का अभियान चलाने में कार्यकर्ताओं की कमी अवश्य बाधक सिद्ध होगी।

श्री चारु बाबू के आश्रम से करीब २० मील दूर एक गाँव में २०-२५ गाँवों के ४०-५० लोग इकट्ठा हुए थे। इनमें कुछ शिक्षक भी थे। सभी लोग भयभीत मालूम हुए। एक शिक्षक ने डरते-डरते थोड़ी जानकारी दी। इस समस्या का मुकाबला कैसे किया जा सकता है, इस चर्चा में लोगों ने थोड़ा हिस्सा लिया। भूमि-हीनों को जमीन देना ही इसका एकमात्र इलाज है, इस राय से सभी सहमत थे। भूमिवान जमीन देने के लिए तैयार हो सकते हैं, यह संभावना भी व्यक्त की गयी।

मिदनापुर जिले के डेबरा थाने में बहुत आतंक फैला है। ६ हत्याएँ हुई हैं, काफी जमीनों पर कब्जा किया गया है, फसल भी काटी गयी है। श्री शिवित्राय चौधरी ने उस थाने में उपद्रव के समय कुछ काम किया था। और यह अनुभव किया था कि जमीन मालिक परिस्थिति को समझेंगे। वहाँ एकत्रित भूमिवानों ने यह भावना व्यक्त की, कि हर एक भूमिहीन को एक बीघा जमीन दी जा सकती है, उसके लिए जमीन-मालिक सामने आयेंगे और मध्यावधि व्यवस्था के लिए इतना ठीक भी है। आश्रम से एक-डेढ़ मील दूर के एक गाँव में भी अध्ययन-दल गया।

यहाँ दिन-दहाड़े खून हुआ था। इस घटना के शिकार गृहस्वामी से भी मिला।

उसी दिन समीप के एक गाँव में भूमिहीनों से बातचीत करने का एक कार्यक्रम रखा गया था। प्रत्येक परिवार को एक बीघा जमीन मिले, यह बात आमतौर पर भूमिहीनों को अस्वीकार नहीं थी। उनकी शंका थी कि क्या इतनी भी जमीन उन्हें कोई देगा? उसी रात उपस्थित कार्यकर्ताओं ने इस योजना के बारे में बातचीत हुई। कार्यकर्ताओं ने इस योजना को स्वीकृति दी। दूसरे दिन अध्ययन-दल बांकुड़ा पहुँचा। यहाँ गांधी तत्त्व-प्रचार केन्द्र श्री शिशिर सान्याल के द्वारा चलता है। कुल मिलाकर ११ कार्यक्रम यहाँ आयोजित हुए, जिनमें – विद्यार्थी प्रतिनिधि-मण्डल, किसान प्रतिनिधि-मण्डल, जिला सी० पी० एम०, प्रजा-समाजवादी, जिला कांग्रेस-सत्तारूढ़ और संगठन, बंगला कांग्रेस तथा सी० पी० आई० के नेताओं से मुलाकात हुई। कांग्रेस संगठन और सत्तारूढ़, बंगला कांग्रेस तथा प्रजा समाजवादी दलों के नेताओं ने ग्रामीण जीवन की स्थिति के बारे में चिन्ता प्रकट की। कई दुर्घटनाओं का हवाला दिया। जब उन लोगों के सामने अपनी योजना रखी गयी, तो इन चार दलों ने योजना का समर्थन किया और सहयोग का आश्वासन दिया।

बांकुड़ा से करीब २० मील दूर सिमला पाल प्रखण्ड में मलदवाल स्थित शिक्षा-निकेतन में यहाँ के इर्द-गिर्द के भूमिवानों के एक दल के साथ भेंट हुई। उनके सामने जब यह योजना रखी गयी तो उनमें से एक ने जमीन वहीं पर देने का ऐलान किया। सभी जमीन-मालिक मध्यम श्रेणी के नवयुवक थे।

भूमिहीनों से भी भेंट हुई। इस क्षेत्र में थोड़े ही दिन पूर्व ५०० गाँवों के करीब १-१॥ लाख भूमिहीनों ने मजदूरी-वृद्धि हेतु एक अभियान चलाया था। किसी भी प्रकार की तोड़फोड़, गलत प्रचार या हिंसा की घटना नहीं हुई। अभियान का नेतृत्व एक सामान्य व्यक्ति ने किया था। अभियान सफल हुआ। मजदूरों की माँगें पूरी हुईं। जमीन-मालिकों के मन में किसी भी प्रकार का क्षोभ पैदा नहीं हुआ। यह अभियान और इसका नेतृत्व राजनीति से मुक्त था।

इन भूमिहीनों से जब योजना के बारे में बातचीत हुई तो उन्होंने उसकी सराहना की और भूमिहीनों को एक बीघा प्रति परिवार जमीन देने की बात को उचित माना।

बंगाल की परिस्थिति के इस अध्ययन को संक्षेप में निम्न प्रकार रखा जा सकता है :

१ जिन कामों में पहले पुलिस मददगार होती थी, उन कामों में आज पुलिस को मददगार नहीं होने दिया जाता।

२ सरकार-विरोधी दलों में न एकता है, न बल। उनका संगठन भी दिन-ब-दिन कमजोर बन रहा है। इन विरोधी दलों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। विद्यार्थी, मजदूर, मध्यम तथा प्राथमिक श्रेणी के शिक्षक, छोटे किसान तथा भूमिहीन मजदूर, इन सबके मन में आमतौर से संयुक्त मोर्चे की सरकार के प्रति प्रेम, आदर व सद्भावना है।

३ व्यापक पैमाने पर विद्यार्थियों का उपयोग राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जा रहा है।

४ हिंसा का निषेध शक्तिशाली राजनीतिक दल, जैसे—सी पी एम, सी पी आई आदि बहुत कम करते हैं।

५ गाँवों में भय का वातावरण है।

६ संयुक्त मोर्चे की सरकार पदलिप्तों के पक्ष में अधिक है।

७ पुरानी रचना को बदलने की उत्कट इच्छा रहनेवाले व्यक्ति मंत्रिमण्डल के सदस्य हैं। वे सादगी से रहते हैं।

इस परिस्थिति का मुकाबला करने के लिए जो योजना सुझायी गयी, उसका स्वरूप इस प्रकार है :

१. गाँवों में फैले हुए आतंक का कारण वास्तव में भूमिहीनता, गरीबी और बेरोजगारी है। इसलिए आतंक का मुकाबला इन समस्याओं को हल करके ही हो सकता है, और वह जल्द तथा व्यापक पैमाने पर होना चाहिए। इसके सफल होने पर भूमिहीनों को हिंसा के लिए प्रवृत्त नहीं किया जा सकेगा।

२ भूमि की विषमता मिटाने का सिलसिला शुरू होना चाहिए। ऐसा माना और सोचा गया कि करीब २०० गाँवों में भूमिहीनता मिटाने का प्रयास किया जाना चाहिए। प्रत्येक भूमिहीन परिवार को कम-से-कम एक बीघा जमीन मिलनी ही चाहिए। यह जमीन तुरन्त उसके कब्जे में दी जानी चाहिए। इस जमीन की मालकियत उसे मिलनी चाहिए। आवश्यक कानूनी कागजात जल्द-से-जल्द तैयार कर लेने चाहिए। इसके साथ ही उसे दो बीघा जमीन बँटाई पर खेती करने के लिए मिलनी चाहिए। यह जमीन उस गाँव के भूमिवान आपस में सोच-विचार कर निकालें।

३ आज की बंगाल की परिस्थिति में भूमिवान इस काम के लिए अनुकूल बनाये जा सकते हैं, ऐसा वहाँ के मित्रों का खयाल है।

४ एक बीघा मालकियत की जमीन और दो बीघा बँटाई खेती की जमीन की बात, बंगाल की आज की जनसंख्या और जमीन के अनुपात में उचित मानी जा सकती है।

५ जमीन की रजिस्ट्री जल्दी हो, इसके लिए सरकार से उचित मदद प्राप्त करनी चाहिए।

६ यह सारी कार्यवाही अभियान के तौर पर चलायी जाय और इसे राजनीति से मुक्त रखा जाय।

७ सर्व सेवा संघ के साथियों से इस अभियान में मदद प्राप्त होनी चाहिए।

यह योजना बांकुड़ा जिले के एक प्रखण्ड और मिदनापुर जिले के केशपुर नामक प्रखण्ड में चलायी जायगी। इसके प्रयोजन की जिम्मेवारी श्री क्षितिजराय चौधरी ने उठायी है।

इस योजना को करीब-करीब सभी दलों का समर्थन प्राप्त हुआ है। (समाप्त)

—गोविन्दराव देशपांडे

सर्वोदय और शैतान : सीमित दायरे का चिंतन

'भूदान-यज्ञ' में प्रजा-समाजवादी पत्र 'जनता' के सम्पादकीय के अंश व उसके उत्तर की लेखमाला उक्त शीर्षक से पढ़ने को मिली।

जहाँ 'जनता' का सम्पादकीय एकांगी है, वहाँ आपका उत्तर भी एकांगी है। 'जनता' ने जहाँ प्रचलित राजनीतिक ढंग से अर्थात् पार्टियों के दायरे में विचार किया, वहाँ आपने भी अपने ही दायरे में सीमित होकर विचार किया।

जहाँ तक ग्रामदान के विचार की बात है, यह निःसंदेह क्रांतिकारी विचार है। परन्तु क्या सिर्फ विचार ही पर्याप्त है? वही विचार क्रांति कर सकता है जो व्यवहार में भी उसी तेजी से लाया जा सके। लेकिन इतने समय से इस आन्दोलन के चलने व इतने ग्रामदान के हो जाने पर भी जनता में इसकी चर्चा व पूरी जानकारी तक न होने के कारणों पर गम्भीरता से विचार करना होगा, और विचार कर उन्हें कार्य रूप में परिणित करना होगा, तब ग्रामदान आन्दोलन क्रांतिकारी आन्दोलन बन सकेगा।

ग्रामदान-आंदोलन का लक्ष्य जनता को स्वावलम्बी बनाना व मिलजुलकर कार्य करने की प्रेरणा देना, अर्थात् राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक व्यवस्थाओं का विकेन्द्रीकरण और सर्वसम्मति या सर्वानुमति से निर्णय करना है।

लेकिन हमने इस लक्ष्य के साथ आन्दोलन में अन्य बहुत सारी बातें जोड़कर मुख्य लक्ष्य के महत्त्व को कम कर दिया है। जितने अच्छे काम हमने उसके साथ जोड़े हैं, क्या वे सब बातें मुख्य लक्ष्य पूरा होने पर अपने आप नहीं सिद्ध हो जाते? अगर हम सचमुच क्रांति करना चाहते हैं तो हमें मुख्य लक्ष्य पर ही अपना सम्पूर्ण ध्यान केन्द्रित कर उसे प्राप्त करने की हर सम्भव कोशिश करनी चाहिए।

क्रांति के तीन माध्यम हैं—(१) समझाना, (२) आन्दोलन करना, और (३) संगठन बनाना।

ग्रामदान आन्दोलन में अभी पहला काम, क्रांति का शिक्षण, भी अधूरा ही हुआ है। हमारा सारा जोर गाँवों में प्रचार करने तक ही सीमित है। कोई भी क्रांति मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग, अर्थात् बुद्धिजीवी और श्रमजीवी, दोनों के सम्मिलित सहयोग से ही हो सकती है।

हमने ग्रामदान को आन्दोलन का नाम तो अवश्य दे दिया, परन्तु उसमें आन्दोलन जैसी चीज नहीं है। आन्दोलन में प्रतिकार होता है, उसमें प्रचलित व्यवस्था व सत्ता से संघर्ष होता ही है। गांधीजी ने भी रचना के साथ-साथ प्रतिकार (सत्याग्रह) को अपनाया। अतः आज की सत्ता को राजनैतिक चुनौती देनी ही होगी।

सरकार समाज का एक संगठित व शक्तिशाली अंग है। शासनमुक्त समाज हमारा आदर्श हो सकता है, परन्तु इस युग में शासन बिलकुल लोप नहीं हो सकता। अतः शासन को बदलना समाज को बदलने की—क्रांति करने की—मुख्य शर्त है।

अगर हम ग्रामदान को क्रांति मानते हैं तो क्या हमने यह आन्दोलन किया है कि जो गाँव ग्रामदानी हो चुके वे सरकार से कह दें कि वे अपने दायरे में सरकार के कानून नहीं मानते, वे अपनी व्यवस्था स्वयं कर लेंगे? सरकार के अनावश्यक टैक्स नहीं देंगे? हम प्रचलित नियमों के अनुसार चुनाव न कर अपने आदमी अपनी मर्जी से चुनकर विधान-सभाओं व संसद में भेजेंगे? क्या पूरे बिहार का दान होने जाने पर भी इस प्रकार का आन्दोलन छिड़ा है या इसकी हवा बनी है? आप कह सकते हैं कि यह हम पूरे देश का दान हो जाने पर करेंगे या स्वयं हो जायेगा। परन्तु क्या समय तब तक रुका रहेगा? ये आन्दोलन करने के विचार नहीं हैं।

हमारे पास 'सर्व सेवा संघ' के नाम से संगठन है, परन्तु उसका स्वरूप व कार्य एक क्रांतिकारी संगठन जैसा नहीं है। निःसन्देह इसमें कुछ प्रतिभाशाली व विचारक नेता हैं, परन्तु अधिकांश निलिप्त भाव के व्यक्ति हैं। कुछ आजादी के आन्दोलन के समय के व्यक्ति हैं, जो आदतन इसमें बने हैं। कुछ गांधी-विनोबा के भक्त हैं जो भावनावश उसमें चल रहे हैं। संगठन के इस ढाँचे से क्रांति नहीं हो सकती।

अब हमें एक ऐसे नये संगठन की जरूरत है, जिसका कोई वाद न हो। इसके सिर्फ दो उद्देश्य व नियम हों — (१) सभी स्तरों पर राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक व्यवस्थाओं का विकेन्द्रीकरण, (२) सभी निर्णय सर्वानुमति-सर्वसम्मति या फिर कम से कम ८० प्रतिशत के बहुमत से करना। इन दोनों को मानने वाले प्रत्येक नागरिक इसके सदस्य हों। इस संगठन की शाखाएँ गाँव से शुरू होकर प्रखण्ड, जिला, प्रान्त व देश तक बढ़ें। प्रत्येक शाखा अपने क्षेत्र में पूर्ण व स्वतंत्र रहे।

यह संगठन संसद, विधान सभाओं, नगरपालिकाओं व पंचायतों के सदस्यों को अपना सदस्य बनाकर उनमें सभी निर्णय सर्वानुमति या कम-से-कम ८० प्रतिशत के बहुमत से कराने का प्रयत्न करे। अगर संसद, विधान-सभाएँ, नगरपालिकाएँ और पंचायतें इसके लिए राजी न हों तो उनके खिलाफ हस्ताक्षर आन्दोलन, अनशन, हड़ताल व प्रदर्शन कर उन्हें मनाने का प्रयत्न यह संगठन करे। चुनाव की पद्धति को भी मामूल बदलने के लिए यह संगठन आन्दोलन करे। और ऐसी स्थिति पैदा कर दी जाय कि प्रचलित रीति से चुनाव न हो सके।

सत्ता के विकेन्द्रीकरण के लिए सभी नगरपालिकाएँ व ग्राम-पंचायतें इस प्रकार—

विनोबा का 'साम्यसूत्र'

उपनिषद् एवं सूत्र-रचना की परम्परा भारत की अपनी है। १०८ उपनिषदों का निर्माण हो चुका है। मेरी दृष्टि में अन्य ऋषि-परम्परा में विनोबा ने अपनी अनुभूति के आधार पर एक और उपनिषद् का निर्माण किया है, जिसका नाम है 'साम्यसूत्र'। इसके निर्माण का वर्ष है सन् १९५९। इसकी सृष्टि का स्थल है कोरापुट का अरण्य। ७२ पृष्ठों की यह छोटी-सी कृति। कुल ३७ पैसे मात्र दाम। १ पैसे में दो पृष्ठ से अधिक ही पड़ा। हाँ, १ पैसे में ३ सूत्रों से कुछ कम पड़ा। जो हो, यह तो हुई प्रारम्भ की बात। पुस्तिका का विषय अत्यन्त गम्भीर है। और इसका विभाजन आठ खंडों में है। प्रकाशक है—सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१।

ये खण्ड निम्न हैं :

पहला खण्ड है ज्ञान-योग की प्रक्रिया, जिसमें विनोबा ने बताया है कि किस प्रकार महावाक्य चिन्तन से आत्म शक्ति का ज्ञान होता है और परिपूर्ण स्वतन्त्रता का दर्शन होता है। दूसरे खण्ड में बताया गया है कि किस तरह भक्ति-तत्त्व से वासना में सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता है और मानव अपने को एक समर्पण-पुष्प मात्र सामाजिक शान्ति की प्रक्रिया में समझ पाता है। न रिक्त ज्ञान, न केवल भक्ति से जीवन,जीवन का सत्य-शोधन हो सकता है तभी तीसरे खण्ड में विनोबा ने कर्म की मर्यादा की व्याख्या की है। ज्ञान और भक्ति की परिणति असीम कर्म से ही हो सकती है। अनासक्त कर्म ही ज्ञान और भक्ति का विज्ञान है जो आत्मज्ञान की दिशा देता है।

विनोबा अपने ही शब्दों में इस पुस्तिका के सम्बन्ध में लिखते हैं —"मुझे ये चिन्तन उपयोगी पड़ते हैं। बीच-बीच में चिन्तन में एक सरीखा मथन चलता रहता है। वेद-उपनिषद् आदि के सूचक शब्दों से वे उपस्कृत हैं। इनके चिन्तन से सेवकों और साधकों के हृदय में साम्ययोग स्फूरित हो, यही अभिलाषा है।"

परम्परा के सत्व को लेकर भी विनोबा परम्परावादी नहीं हैं। हमारे पुरान उपनिषद्कारों की तरह उन्होंने अनुभूति का सूत्र केवल भारतीय परम्परा में ही नहीं, जागतिक परम्परा में बनाया है। एक ओर उन्होंने बुद्ध, शंकर, मिल्टन, वर्ड्सवर्थ, डारविन, तिलक, अरविन्द और मार्क्स की समालोचना की है तो दूसरी ओर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का व्यावहारिक आधार सूत्र में निर्माण किया है। निर्माण के पथ में वे एक निष्पक्ष संश्लेषणकर्ता हैं। ऐसे स्थलों में विश्व-परम्परा को नूतन दिशा दी गयी है। बरबस पुनः बुद्ध, ईसा सुकरात, मार्क्स और जेम्स जिन्स की अनुभूति का सम्मिश्रण पुस्तिका में निखरता है।

बार-बार मैं पढ़कर इतना तन्मय हो चुका हूँ कि इस पर लिखने का मन नहीं करता। लिखते समय भी हृदय एक बार फिर पढ़ लेने का ही मोह रखता है। फिर भी केवल एक-दो सूत्र का उदाहरण मात्र लेता हूँ। विनोबा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सूत्र, जो इस पुस्तिका में नहीं आ सका है, वह है 'ब्रह्मसत्यं जगत् स्फूर्ति जीवनम् सत्य शोधनम्।' इसीकी व्याख्या उन्होंने इस पुस्तिका में की है। जीवन, समाज और सृष्टि में तादात्म्य स्थापित करने के लिए किया है। शंकर के 'ब्रह्म सत्यं, जगत् मिथ्या' में से 'ब्रह्मसत्य' को उन्होंने लिया। अपनी लोक-शिक्षण यात्रा में से उन्होंने जगत् को 'स्फूर्ति' माना और बाद में 'एक्सपेरिमेन्ट्स वीथ ट्रुथ' में से 'जीवनम् सत्य शोधनम्' को लिया। यह मेरा अपना विश्वास है, कह नहीं सकता, सन्त की परिकल्पना क्या है।

जो हो, विनोबा का मोह सर्वथा आत्मज्ञान है। और इसी उद्देश्य से वे भौतिक एवं आध्यात्मिक साम्य की स्थापना चाहते हैं। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है इसमें ज्ञान, भक्ति और कर्म की आवश्यकता तो है ही। इसी उद्देश्य से उन्होंने इस पुस्तिका में १०८ सूत्रों की रचना की है। सूत्र ज्यामिति का आधार है। सूत्र विज्ञान का मातृत्व और गणित का प्राण है। भारतीय संस्कृति में अनुभूति का मिलना जीवन का 'एक्सपेरिमेन्ट' है और अनुभूतिगत सूत्रों से सम्पूर्ण सत्य की खोज में सहारा मिलता है। विनोबा स्वयं लिखते हैं—सूत्र का अर्थ 'सूचनात् सूत्रम्', जो सूचन करता है, वह सूत्र है। जो सुझाता है वह सूत्र है।

इसी तरह प्रथम सूत्र है—'अभिधेय परम साम्यम्'। हमारे चिन्तन का विषय क्या है? 'अभिधेय' 'ध्येय' से भिन्न है। लक्ष्य से भी भिन्न है। 'ध्येय' दूर का होता है। 'लक्ष्य' नजदीक का। 'अभिधेय' कुछ→

→के प्रस्ताव पास कर सरकार को भेजें कि वे सरकार के अमुक-अमुक नियम नहीं मानेंगी, जो उनके कार्य में हस्तक्षेप करते हों। वे अधिकांश सामाजिक कार्य और उद्योग अपने हाथ में ले लें और सरकार से कह दें कि अमुक अमुक टैक्स वे वसूल करेंगी और उसका अमुक अंश सरकार को देंगी। अगर सरकार न माने तो सामूहिक शक्ति से उसे मनाया जाय। हम यह न भूलें कि हमारी सरकार प्रजातान्त्रिक है, अतः अगर हमने थोड़ा भी जन-आन्दोलन खड़ा कर दिया तो वह उसे अवश्य मानेगी।

आन्दोलन की इस प्रगति में शान्ति करने के लिए यहाँ यह स्पष्ट हो जाता है कि इस प्रकार बनाये गये संगठनों का स्थान ग्राम सभाएँ, नगरपालिकाएँ, प्रखण्ड-सभाएँ, जिला-सभाएँ, विधान सभाएँ व संसद ले लेंगी। और धीरे-धीरे ऐसी स्थिति आयेगी कि समाज में सतत परिवर्तन की प्रक्रिया चलती रहेगी।

आशा है, 'भूदान यज्ञ' के पाठक इस चर्चा को आगे बढ़ायेंगे।

—मदनमोहन व्यास,
वोल्गा टाकीज के पास,
रतलाम (म० प्र०)

बिहारदान के बाद

अति तूफान की दिशा में

गत नवम्बर, '६९ में बिहार ग्राम-स्वराज्य समिति के गठन के बाद समिति की कार्य समिति ने अतितूफान की एक योजना बनायी थी, जिसके अनुसार बिहार के करीब करीब सभी जिलों में जिला स्तरीय ग्राम स्वराज्य समितियों का गठन हो चुका है। बिहार ग्राम स्वराज्य समिति द्वारा निर्देशित बिहारदान के बाद जिलों में हुए काम की प्रगति निम्न प्रकार है :

पटना

जिला ग्राम-स्वराज्य समिति ने बिहार-शरीफ अनुमण्डल के रहुई एवं राजगिर प्रखण्ड में सघन रूप से काम प्रारम्भ कर दिया है। रहुई प्रखण्ड में मंत्री जयप्रकाश नारायण एवं वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के दौरे भी हो चुके हैं। इस प्रखंड में एक सघन अभियान ग्रामसभा के गठन एवं बीघा कट्ठा के वितरण के लिए चलाया गया। ४८ ग्रामसभाओं का गठन हो चुका है, तथा तीन गांवों में कुछ भूमि-वानों ने कुल ६३ कट्ठे जमीन का वितरण किया है। अभी भी कार्यकर्ता उस प्रखण्ड में काम कर रहे हैं।

धनरूआ एवं मसौढ़ी प्रखण्ड में दो दिनों का एक शिविर आयोजित किया गया था। रहुई प्रखण्ड में आचार्यकुल का संगठन हो चुका है। अब राजगिर एवं मसौढ़ी में भी आचार्यकुल का संगठन होनेवाला है।

गया

तीन प्रखण्डों में प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन हो चुका है। २८ प्रखण्डों में काम शुरू करने का निश्चय किया गया है। चार प्रखण्डों को सघन क्षेत्र मानकर भी काम करने का निश्चय किया गया है। ६ प्रखण्डों में २०२ ग्रामसभाओं का गठन भी हुआ है और जिले में २० बीघे जमीन का भी वितरण हुआ है।

शाहाबाद

भगवानपुर, सहार एवं पीरो प्रखण्ड में सघन रूप से काम करने का तय किया गया है। अभी सहार प्रखण्ड में सघन अभियान चलाया जा रहा है। उक्त प्रखण्ड में श्री जयप्रकाश बाबू की एक सभा हो चुकी है। जिले के कार्यकर्ताओं की एक गोष्ठी श्री राममूर्तिजी की उपस्थिति में हुई थी।

मुजफ्फरपुर

इस जिले में नक्सलवादियों की ओर से कुछ हिंसात्मक घटनाएँ पिछले महीनों में घटी है। इन क्षेत्रों में आचार्य राममूर्ति का दौरा स्थिति के अध्ययन के लिए हुआ था। उन्होंने दौरे में आयोजित सभाओं, गोष्ठियों में ग्रामदान से ग्राम स्वराज्य का विचार समझाते हुए यथाशीघ्र ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति करने पर जोर दिया।

जिलास्तर पर बड़े किसानों की एक गोष्ठी बुलायी जा चुकी है। प्रमंडलीय तरुण-शांति-सेना सम्मेलन भी हो चुका है, जिसमें श्री जयप्रकाश नारायण ने तरुणशांति-सैनिकों को ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रम में हिस्सा लेने का आह्वान किया है।

वैशाली प्रखण्ड में सुश्री निर्मला बहन के मार्गदर्शन में बहनों का एक महीने का शांति सेना-शिविर चला, जिसमें संस्था की सात कार्यकर्त्री बहनें तथा उस क्षेत्र की १८ ग्रामीण बहनें शामिल थीं। वैशाली-अभियान में इन बहनों ने भी गाँव-गाँव घूमकर काम किया। शिविर के अलावा सुश्री निर्मला बहन का कई प्रखण्डों में दौरा भी हुआ, जिसके कारण आगे के काम के लिए काफी उत्साहवर्धक वातावरण बना। ७ प्रखण्डों में प्रखण्ड-ग्राम स्वराज्य समितियों का गठन हो चुका है। वैशाली, बंदरानियाँ, सकरा, बोली, मुसहरी तथा सरैया प्रखंड में काम प्रारम्भ हो गया है। अब तक १६ कामचलाऊ ग्राम सभाओं का गठन हुआ है।

वैशाली में सुश्री निर्मला बहन देशपांडे के नेतृत्व में ५ दिनों का सघन अभियान चलाया गया था। जिले के ८ गाँवों में आंशिक बीघा-कट्ठा का वितरण हुआ है।

चंपारण

चंपारण की भूमि-समस्या के अध्ययन के लिए जिले में श्री जयप्रकाश नारायण का चार दिनों का दौरा हुआ है।

सारण

५ प्रखण्डों में प्रखण्ड ग्राम-स्वराज्य समितियाँ गठित हो चुकी हैं। एकमा, जलालपुर, दरौंदा, सिसवन, उचकागांव, हथुआ और मांझी प्रखण्डों में सघन रूप से काम करने का तय किया गया है। मांझी प्रखण्ड में ८७ ग्राम-सभाओं का गठन हो चुका है।

—जीवन के चिन्तन का विषय है। सिर्फ ध्यान और दृष्टि का नहीं बल्कि कृति, उक्ति सबका वही अधिष्ठान है। और फिर 'परम साम्य' क्या है? न केवल साम्य, किन्तु 'परम साम्य'। साम्य आर्थिक और सामाजिक तक सीमित हो सकता है। 'परम साम्य' नैतिक पक्ष को भी स्पर्श करता है। वह है मानसिक सन्तुलन की बात। मानसिक साम्य। परन्तु आर्थिक, सामाजिक, वैज्ञानिक और नैतिक साम्य से ऊपर एक और साम्य है वह है चित्त का सन्तुलन। चित्त का साम्य। व्यक्तिगत चित्त-साम्य के बिना सामाजिक एवं आर्थिक क्रान्ति का मानस तैयार हो पायेगा क्या? सामूहिक चित्त-साम्य के बिना व्यक्ति चित्त-साम्य का धरातल ठोस बन पायेगा क्या?

—इन्द्रनारायण तिवारी

दरभंगा

दरभंगा सदर, मधुबनी तथा समस्तीपुर अनुमण्डलों में अनुमण्डलीय ग्राम-स्वराज्य समितियों का गठन हो चुका है। दरभंगा अनुमण्डल के ७ प्रखण्डों में प्रखण्ड ग्राम-स्वराज्य समितियाँ बन चुकी हैं। ९८ ग्राम-सभाओं के गठन की भी सूचना मिली है।

मधुबनी अनुमण्डल के १० प्रखंडों में प्रखंड ग्राम-स्वराज्य समितियों का तथा कुल ६ सौ कामचलाऊ ग्राम-सभाओं का गठन हो चुका है। लदनियाँ प्रखंड के खाजेडीह गाँव में आंशिक बीघा-कट्ठा का वितरण हुआ है। लदनियाँ और मधेपुर प्रखंडों में सुश्री निर्मला देशपांडे के मार्ग-दर्शन में शिविर हो चुके हैं। पदयात्राएँ भी हुई हैं।

भागलपुर

बीहपुर, नवगछिया, गोपालपुर, सुलतानगंज, नाथनगर, शाहकुंड एवं शंभुगंज प्रखंडों में [illegible] की बैठकें हुई हैं। बीहपुर, गोपालपुर एवं नवगछिया प्रखंड में [illegible] चलाने का तय किया गया है।

सहरसा

२३ प्रखंडों में से छह क्षेत्रों में बाँटकर एक-एक समर्थ साथी ने उस क्षेत्र के काम की जिम्मेदारी ली है। ४ प्रखंडों में प्रखंड ग्राम-स्वराज्य समितियों का गठन हो चुका है। ३१५ ग्राम-सभाएँ बनी हैं। इस जिले में ग्रामकोष जमीन का पर्चा दिलवाने का काम बड़े पैमाने पर किया गया है।

पूर्णिया

जिले में श्री जयप्रकाश नारायण एवं आचार्य राममूर्ति के दौरे हुए हैं। भूदान की ३५० एकड़ जमीन १५ दिसम्बर तक भूमिहीनों को बाँटी गयी है। २ अक्तूबर से १२ फरवरी तक गांधी-जन्म-शताब्दी वर्ष के कार्यक्रम के रूप में प्रखण्ड-पदयात्रा टोली ने जिले में ग्राम-स्वराज्य के विचार-शिक्षण का काम गाँव-गाँव पहुँचकर किया।

मनिहारी, रानीगंज, भागामा, कृत्यानन्दनगर एवं बनमनखी प्रखंडों में ग्रामदान पुष्टि का सघन-अभियान चलाने का तय हुआ है। ४५ ग्राम-सभाओं का गठन हुआ है।

मुंगेर

चौथम एवं खगड़ा प्रखंड में सघन रूप से काम प्रारम्भ हुआ है। खगड़ा प्रखंड में करीब ५० ग्रामसभाओं का गठन और आंशिक बीघा कट्ठा का वितरण हो चुका है। ग्राम-कोष की शुरुआत भी कई गाँवों में हुई है। शीघ्र ही पूरे प्रखण्ड में ग्राम-सभाओं के गठन हो जाने की आशा है।

संतालपरगना

जिला-स्तरीय कार्यकर्ता-गोष्ठी हुई थी। अमरापाड़ा, सारठ, मधुपुर एवं मेहरमा प्रखण्ड में सघन काम करने का निश्चय किया गया है।

हजारीबाग

प्रतापपुर प्रखण्ड में श्री जयप्रकाश नारायण का दौरा हुआ था। उस समय *बीघा-कट्ठा का वितरण भी किया गया* था। तिसरी, गावा, प्रतापपुर एवं बगोदर प्रखण्डों में सघन काम करने का सोचा गया है।

—कैलाश प्रसाद शर्मा
मंत्री,
बिहार ग्राम स्वराज्य समिति

कानपुर में १८२ ग्रामदान

उत्तरप्रदेश की प्रमुख रचनात्मक संस्था स्वराज्य आश्रम के तत्त्वावधान में गत २८ मार्च से २ अप्रैल तक ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य शिविर एवं अभियान कानपुर जिले के बिल्हौर प्रखण्ड में चलाया गया। अभियान में स्वराज्य आश्रम के ७० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

२८ मार्च को भरोल स्वराज्य आश्रम में श्री एम० जी० शर्मा के संचालन में प्रशिक्षण-शिविर चला। आश्रम के मंत्री श्री ब्रजमोहन तिवारी का आशीर्वाद प्राप्त कर ३२ टोलियों ने क्षेत्र के गाँवों में प्रस्थान किया। कार्यकर्ताओं ने बिल्हौर ब्लाक के गाँव-गाँव में घूमकर विचार समझाया और *घोषणापत्रों पर ग्रामवासियों* के हस्ताक्षर प्राप्त किये। इस अभियान में १८२ ग्रामदान प्राप्त हुए।

—देवचन्द्र त्रिपाठी

मध्यप्रदेश में पुष्टि-कार्य

मध्यप्रदेश के ग्रामदानी जिलों में पुष्टि-कार्य का अभियान शुरू करने की योजना बनी है, जिसके अन्तर्गत ग्रामदानी गाँवों में ग्रामसभा का गठन, बीसवाँ हिस्सा भूमि का भूमिहीनों में वितरण तथा ग्राम-विकास के लिए ग्रामकोष की स्थापना मुख्य है।

पुष्टि-कार्य के सिलसिले में उक्त *निर्णय मध्यप्रदेश गांधी स्मारक निधि तथा* मध्यप्रदेश सर्वोदय-मण्डल ने गत मार्च महीने में भोपाल में सम्पन्न हुई अपनी बैठकों में लिया है। पुष्टि-कार्य को सुयोजित ढंग से चलाने के लिए गांधी-निधि ने अपने वरिष्ठ कार्यकर्ताओं में से इंदौर तथा देवास के लिए श्री अब्दुल हमीद खादिम, टीकमगढ़ के लिए श्री बलराम मिश्र, भिण्ड के लिए श्री प्रेमनारायण शर्मा को मनोनीत किया है। शेष तीन ग्रामदानी जिलों—दतिया, ग्वालियर तथा पश्चिम निमाड़—के लिए भी शीघ्र ही पुष्टि-संगठक नियुक्त किये जायेंगे। इसके अलावा जिलादान की पूर्ति हेतु श्री रामचन्द्र भार्गव को उज्जैन, श्री यशवन्तकुमार सिन्धु को सीहोर और विदिशा, श्री इन्द्रपाल मिश्र को सीधी और शहडोल, श्री बालाराम अवसरे को सिवनी, श्री राधेलाल भूते को रायपुर, श्री द्वारकाप्रसाद तिवारी को सतना, श्री कल्याणचन्द्र त्रिपाठी को शिवपुरी, श्री शिवनाथ शर्मा को सरगुजा जिलों में अभियान के लिए संगठक मनोनीत किया गया है।●

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुखपत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : २९
सोमवार २० अप्रैल, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३६१

कांग्रेस की फूट और देश का अहित (?)

आचार्यश्री तुलसी अभी कांग्रेस में दो टुकड़े हुए। उसके बाद पार्टीबाजी में छींटाकशी होने लगी। इससे देश का बड़ा अनिष्ट हुआ। इसके बारे में कोई विचार या चिंतन होना चाहिए था। क्या आपने उस विषय में कुछ किया ?

विनोबा टेनीसन नाम का अंग्रेजी का एक कवि हो गया। उसने एक कविता लिखी है। झरना बोल रहा है। वह अनादिकाल से बह रहा है। वह कहता है 'मेन मे कम एण्ड मेन मे गो, बट आई गो ऑन फार-एवर', मनुष्य आते हैं और जाते हैं, लेकिन मैं तो बहता रहता हूँ। वैसे ही राजा आये और गये। देखा जाय तो सैकड़ों राजा आये और गये। उनका आना और जाना, इतना ही है। लेकिन समाज अखण्ड बह रहा है। इस वास्ते कांग्रेस के दो टुकड़े हुए तो हिन्दुस्तान का खास कुछ नुकसान नहीं हुआ।

आचार्यश्री तुलसी लोगों ने अपेक्षा की थी कि आप इस विषय में कुछ बोलेंगे।

विनोबा बाबा काहे को बोलेगा ? तुलसीदासजी ने लिखा है "वाणी सरस्वती देवी है और भगवान के नामों और गुणों के वर्णन के सिवा वाणी से दूसरा उच्चारण होता है तो 'सिर धुनि-धुनि पछिताई', वाणी सिर पटकती है, और कहती है कि हमारी क्या हालत है ? इस वास्ते वाणी का उपयोग अच्छे कामों में करो।

आचार्यश्री तुलसी उस अच्छे काम के लिए वाणी का उपयोग करना चाहिए था।

विनोबा महाराष्ट्र के बहुत बड़े नेता लोकमान्य तिलक हो गये। उन्होंने लगभग ४० साल तक सतत लेख आदि लिखा। उनके लेख और व्याख्यानों के 'वाल्यूम्स' (खण्ड) प्रकाशित हुए हैं। आज उनमें से कुछ भी पढ़ा नहीं जाता। उन्होंने जो 'गीता रहस्य' पुस्तक लिखी, वही केवल पढ़ी जाती है। सर्वोत्तम नेता जो कहलाये, उनके वचनों की यह हालत है। वह वचन जिस वक्त उन्होंने कहा, लोगों ने सुना। 'गीता-रहस्य' उनका स्थायी है, वही पढ़ा जाता है।

मुझे अनेकों ने यह सलाह दी थी कि कांग्रेस की जो हालत है, उसके बारे में मुझे बोलना चाहिए, कुछ कहना चाहिए। तो मैंने कहा कि आप मुझ पर तीन जिम्मेवारियाँ डालते हैं (१) मैं अपने काम के अलावा कांग्रेस के काम के बारे में सोचूँ, यानी सोचने की जिम्मेवारी, (२) सिर्फ सोचूँ ही नहीं, निर्णय भी करूँ, और (३) बिना पूछे सलाह दूँ। ऐसी तीन जिम्मेवारियाँ मुझ पर डाल रहे हैं। वह बोझ मैं उठा नहीं सकता।

[गोपुरी, वर्धा, १४-४-७०]

समस्याओं के समाधानार्थ सीधी कार्रवाई हो

सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति प० बंगाल, बिहार, केरल, तमिलनाडु तथा अन्य प्रदेशों के देहाती इलाकों में बढ़ रही हिंसा पर गहरी चिन्ता व्यक्त करती है। हमारे देश की सामाजायिक रचना में अन्याय एवं विषमता भद्दे-से-भद्दे स्वरूपों में आज भी मौजूद है, और हिंसक विस्फोट, खासकर देहाती क्षेत्रों में, उसीके कारण है। समिति यह मानती है कि इस हिंसा को अन्याय और विषमता के निराकरण द्वारा ही समाप्त किया जा सकता है।

समिति मानती है कि पिछले तेईस वर्षों में भूमि-सुधार के कानून बहुत-से राज्यों में बने, लेकिन खेद है कि उन कानूनों पर कोई उल्लेखनीय अमल नहीं हुआ। स्वयं कानून अपने में पूर्ण नहीं थे, फिर भी यदि तीव्रता और प्रभावकारी ढंग से उन पर अमल होता तो देहाती जनता में भरोसे का वातावरण बनता और हिंसक पद्धति का सहारा लेने के लिए वे प्रोत्साहित नहीं होते।

अतएव मौजूदा अशांति के लिए वे लोग जिम्मेदार हैं, जिन्होंने भूमिसुधार-कानून को लागू नहीं होने दिया है। एक तरफ भूमि के निहित स्वार्थियों ने भूमि-सुधार-कानून को लागू न होने देने के लिए हर सम्भव गैरकानूनी और अनैतिक तरीके अपनाये हैं, तो दूसरी ओर सरकारी अफसरशाही ने बने हुए कानून को लागू करने के अपने कर्तव्य-निर्वाह में उदासीनता बरती है। परिणामस्वरूप कानून बनाने का मकसद पूरा नहीं हो सका है, और हिंसा को बढ़ावा मिला है, जो देश के व्यापक हितों के संदर्भ में खतरनाक है।

समिति की राय में भूमि-सुधार कानून के प्रति पैदा हुई निराशा ने कानून की व्यवस्था के प्रति अनादर का भाव पैदा किया है, और इस कारण हमारे लोकतांत्रिक सामाजिक जीवन के लिए एक गम्भीर परिस्थिति पैदा हो गयी है।

इस परिस्थिति में समिति का यह विचार है कि मौजूदा हालत में ग्रामदान-आन्दोलन की भूमिका के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता है।

ग्रामदान-आन्दोलन की शुरुआत आमतौर पर हमारी सामाजिक रचना में, और विशेष रूप से भूमि सम्बन्धी क्रान्तिकारी परिवर्तन के लक्ष्य को लेकर हुई थी। आन्दोलन का प्रथम चरण, लगभग दो राज्यदान, और अन्य प्रदेशों में कई जिलादान के साथ सफलता की एक ऊंची मंजिल पर पहुंच चुका है।

अब समिति यह महसूस करती है कि ग्रामदान-आन्दोलन के द्वारा जो व्यापक लोक-जागरण और उत्साह पैदा हुआ है उसका, उस अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के, जो देहाती क्षेत्रों में आज भी कायम है, परिवर्तन में तत्काल इस्तेमाल होना चाहिए। ग्रामदानी गांवों में जो समूह-भावना सक्रिय हुई है उसे विधायक क्रियाशीलता की ओर मोड़ना चाहिए।

ग्रामदान की बुनियादी शर्तों के पूरा हो जाने के बाद, ग्रामदानी गांवों का पहला काम होना चाहिए कि वे बेंटाईदारी, भूमि-सुधार-कानूनों की अवहेलना करके गैर-कानूनी तरीके से जमीन पर कब्जा, वासगीत की जमीन और सूदखोरी आदि समस्याओं के हल निकालने की कोशिश करें। जाहिर है कि किसी भी हालत में इन समस्याओं के जो हल ग्रामदानी गांव ढूंढ़ेंगे उन्हें कानून के बताये हुए हल से पीछे नहीं रहना चाहिए। ग्रामदानी गांवों के हल अधिक प्रगतिशील होंगे।

समिति देश के भूमि-मालिकों और महाजनों से अपील करती है कि वे समय के संकेत को समझें, बेनामी तथा अन्य प्रकार के गैर-कानूनी ढंग से कब्जे में कर ली गयी जमीन को स्वेच्छा से छोड़ दें, तथा अन्य भूमि-सुधार और कर्ज के कानूनों का उनकी सही 'स्पिरिट' में पालन करें। समिति सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को भी सलाह देती है कि वे इन समस्याओं में सक्रिय दिलचस्पी लें और ग्रामस्वराज्य में निहित उनके समाधान सुझावें, जिसे वे आज तक जनता के समक्ष रखते आये हैं। इस प्रकार की दिलचस्पी ग्रामदान आन्दोलन के प्रति उनकी एकाग्रता को कम करने की जगह, लोगों का ध्यान अधिक आकर्षित करेगी और आन्दोलन की शक्ति को बढ़ायेगी।

समिति महसूस करती है कि भूमि-सम्बन्धों में व्याप्त अन्यायों को मिटाने में 'मनाव' की सभी कोशिशों के विफल होने पर सीधी कार्रवाई के रूप में सत्याग्रह किये जा सकते हैं। हर हालत में इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि सत्याग्रह का लक्ष्य उस व्यक्ति या उन व्यक्तियों के विचारों में परिवर्तन लाना है, जिनके साथ सत्याग्रह किया जा रहा हो। विपक्षी के प्रति प्रेम और आदर सत्याग्रह की शर्तों में से एक है। इसलिए कोई व्यक्ति या समूह द्वारा की गयी किसी कार्रवाई का परिणाम मनाव की प्रक्रिया को गहराई और व्यापकता प्रदान करनेवाला होना चाहिए। उसमें निराशा नहीं झलकनी चाहिए। इस तरह की कार्रवाई की प्रक्रिया में असहकार (नानकोआपरेशन) पर पहले कदम के रूप में विचार होना चाहिए।

समिति का मानना है कि इस प्रकार की अहिंसक सीधी कार्रवाई का प्रभावशाली प्रदर्शन देहातों में फैल रही हिंसा को रोकने में मददगार होगा।

समिति की राय है कि सत्याग्रह के किसी भी कार्यक्रम को शुरू करने के पहले, संगठकों को प्रदेशीय सर्वोदय-मण्डल और सर्व सेवा संघ से सलाह-मशविरा कर लेना चाहिए, जब तक कि परिस्थिति ऐसी न हो जिसमें प्रतिकारात्मक कार्रवाई तत्काल अनिवार्य हो जाय और पहले से परामर्श करने का मौका ही न मिले।

(सर्व सेवा संघ-प्रबन्ध समिति की पूना की बैठक में पारित प्रस्ताव)

क्षमा करें

'अणु मनुष्य और अहिंसा' लेखमाला की तीसरी किस्त कुछ खास कारणों से इस अंक में हम नहीं दे पा रहे हैं। कृपालु पाठक क्षमा करें। —सं०

षड्यंत्र : किसका, किसके विरुद्ध ?

उस दिन पटना में श्री ज्योति बसु पर जो प्रहार हुआ उसकी जाँच पुलिस कर रही है। मुकदमे में एक आदमी पटना में पकड़ा भी गया है। जाँच जारी है। आगे और लोग भी पकड़े जा सकते हैं। दिल्ली, बिहार, बंगाल की पुलिस मिलकर कोशिश कर रही है तो असली अपराधी का पता चल जायेगा, यह आशा की जा सकती है। जब तक पक्का पता नहीं चल जाता तब तक तरह-तरह की अटकलबाजियाँ लगायी जाती रहेंगी। जनता न्यायालय के निर्णय की प्रतीक्षा करेगी।

लेकिन जहाँ तक स्वयं श्री ज्योति बसु और उनकी पार्टी का सम्बन्ध है, उन्होंने अपराध के सम्बन्ध में—अपराधी के नहीं—अपने विचार प्रकट कर दिये हैं। श्री बसु ने कांड के ही दिन अपनी यह राय जाहिर कर दी थी कि उनके ऊपर प्रहार राजनैतिक षड्यंत्र के कारण हुआ। उनके मन में राजनैतिक षड्यंत्र की बात इसलिए आयी कि उनकी किसीसे निजी दुश्मनी नहीं है। श्री बसु की घोषणा के बाद मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी ने विचार किया और सामूहिक रूप से घोषणा की कि यह काम वर्ग-शत्रुओं (क्लास एनिमीज) का है। मार्क्सवादी पार्टी यह मानती है कि वह सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधि है। वही प्रतिनिधि है, दूसरा कोई नहीं। सर्वहारा वर्ग के लिए लड़नेवाली इस पार्टी के श्री ज्योति बसु एक श्रेष्ठ नेता हैं। यही कारण है कि शोषकों और प्रतिक्रियावादियों ने उनका काम तमाम करने का षड्यंत्र रचा और उन पर वार किया। इस प्रकार इस घटना का सम्बन्ध मार्क्सवादी पार्टी के नेतृत्व में सर्वहारा की मुक्ति के लिए होनेवाले वर्ग-संघर्ष के साथ जोड़ा गया है।

ऐसे मामलों में कहने को कुछ भी कहा जा सकता है, और होने को कुछ भी हो सकता है। लेकिन भारत की सारी जनता को, जिसमें अधिक संख्या गरीबों की ही है, वर्गों में बांटकर किसीको मित्र और किसीको शत्रु मानना, और इस तरह की मित्रता-शत्रुता को ही हिंसा का कारण बताना कुछ अजीब-सा लगता है। ऐसा मालूम होता है जैसे इस देश में बाकायदा वर्ग-संघर्ष छिड़ गया हो, और उससे भिन्न दूसरा युद्ध हो ही न।

हत्याएँ इस वक्त देश में जगह-जगह हो रही हैं। इनमें से कुछ 'सामाजिक' हैं, कुछ 'राजनैतिक'। सामाजिक हत्याओं के कारण दूसरे हैं, किन्तु ये राजनैतिक हत्याएँ क्यों हो रही हैं? क्या बंगाल में कोयले की खानों के क्षेत्र में जो हत्याएँ हुई हैं वे वर्ग-मित्रों और वर्ग-शत्रुओं के बीच हुई हैं?

उदाहरण के लिए संयुक्त समाजवादी और मार्क्सवादी साम्यवादी एक-दूसरे पर प्रहार क्यों करते हैं? क्या वे एक-दूसरे के वर्ग-शत्रु हैं? संयुक्त समाजवादी और मार्क्सवादी साम्यवादी, दोनों अपने को गरीबों का मित्र मानते हैं। जब दोनों मित्र हैं तो गरीबों के ये मित्र दल के नाम से आपस में क्यों लड़ते हैं? क्या यह सच है कि गरीबों के जितने मित्र हैं उससे कहीं अधिक वे प्रतिद्वन्द्वी हैं। प्रतिद्वन्द्विता सत्ता की है, इसीलिए सेवा और संगठन में भी प्रतिद्वन्द्विता है। यह प्रतिद्वन्द्विता ही इस समय हिंसा का असली कारण है। दलों की यह आपसी प्रतिद्वन्द्विता इतनी बढ़ गयी है कि उसने गरीबों को भी एक नहीं रहने दिया है। गरीब या सर्वहारा भी दलों में बँट गये हैं। एक दल का सर्वहारा दूसरे दल के सर्वहारा को अपना भाई नहीं समझता, शत्रु समझता है। प्रतिद्वन्द्विता की राजनीति अब प्रहार की राजनीति बन चुकी है। दल गुटों में बँट चुके हैं। वर्ग भी वर्ग कहाँ हैं? जो हैं वे दल और गुट हैं। यह प्रतिद्वन्द्विता समाज के विभिन्न समुदायों को तरह-तरह के नाम देकर शत्रु और मित्र में बाँट रही है। एक बार जब शत्रुता मन में आ जाती है तो हिंसा दूर नहीं रह जाती। और जब मनुष्य एक बार हिंसा पर उतारू हो जाता है तो उसे हिंसा करने के औचित्य और अवसर ढूँढ़ने में देर नहीं लगती। वर्ग, वर्ण, जाति, धर्म, भाषा, दल, सम्प्रदाय, ईर्ष्या, दुराव आदि किसीको भी अवसर बनाया जा सकता है। सत्ता का संघर्ष दलों के बीच भी हो सकता है, और एक ही दल के विभिन्न गुटों के बीच भी। रूस, चीन या दूसरे साम्यवादी देशों की साम्यवादी पार्टियों में भयंकर आपसी झगड़े हुए हैं और होते रहते हैं। मुकदमों में सैकड़ों लोग मौत के घाट उतारे जा चुके हैं। क्या समाप्त होनेवाले सब वर्ग-शत्रु थे? वर्ग-शत्रु कौन, और वर्ग-मित्र कौन; इसका फैसला कैसे होता है? क्या हमारे सत्तावादी भाई, चाहे वे जिस दल के हों, अपने से अलग किसीको वर्ग-मित्र मानने को तैयार हैं? मतवाद सत्तावाद के साथ जुड़कर मनुष्य को मनुष्य के, गरीब को गरीब के, खून का प्यासा बना रहा है।

अगर हम एक बार यह मान लें कि वर्ग वास्तविक है और न्याय की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष आवश्यक है तो प्रहार को स्वाभाविक और संहार को अनिवार्य मानना चाहिए। यह दर्शन ही ऐसा है कि इसमें हिंसा हुए बिना रह नहीं सकती। जब एक बार बिगुल बज गया तो जान हथेली पर रख लेनी चाहिए। तब गोली कब, किस पर चली, इसका क्या महत्त्व है?

वास्तव में संघर्ष सत्ता का है। बेचारा सर्वहारा तो नारा बनाया जा रहा है। जिस देश में अस्सी प्रतिशत से अधिक गरीब हैं वहाँ इस चीज की जरूरत क्या है कि गरीब दलों को अपना वकील बनायें? करोड़ों गरीबों का मन एक बार खड़ा हो जाना काफी है। लेकिन गरीब की क्रान्ति स्वयं गरीबों द्वारा हो, इसके लिए हमारे 'क्रान्तिकारी' अभी तैयार नहीं हैं, और हमारा भूला-भटका गरीब क्रान्ति के नाम से दूसरे गरीब को समाप्त कर रहा है।

श्री ज्योति बसु के विरुद्ध हो या न हो, एक दूसरा षड्यंत्र साफ दिखाई दे रहा है। वह है गरीबों के विरुद्ध उनके तथाकथित मित्रों का षड्यंत्र। काश, गरीब इस षड्यंत्र को समझ पाते! ■

भूदान-यज्ञ : सोमवार, २० अप्रैल, '७०

आचार्य-संवाद

अशान्ति और अहिंसा
संहार और हिंसा

[अणुव्रत आन्दोलन के प्रवर्तक आचार्य श्री तुलसी के साथ विनोबा की चर्चा]

आ० श्री तुलसी : देश की अशांत स्थिति के विषय में आपका क्या ख्याल है?

विनोबा : किस समय देश शान्त था? किस समय स्वस्थ था? हमें मालूम नहीं। इतिहास में भी देखते हैं तो पता चलता है कि लोग अशान्त ही थे। त्रिगुणात्मक सृष्टि है, तो ऊधम चलता रहता है। रजोगुण का काम रजोगुण करता है, सत्त्वगुण का काम सत्त्वगुण करता है, तमोगुण का काम तमोगुण करता है। हर जमाने में अशान्ति थी। अपने जमाने में भी अशान्ति है। अपने जमाने में जो अशान्ति होती है, उसका स्पर्श हमें होता है, और इसीलिए वह ज्यादा अखरती है। बाकी बुद्ध के जमाने में, महावीर के जमाने में, कबीर के जमाने में, रामदास के जमाने में देश शान्त नहीं था। ऊधम चलता ही रहता था और ऐसा ऊधम न चले, तो आपको काम क्या मिलेगा? अपने मठ में ही रहना होगा। घूमने की जरूरत नहीं रहेगी। गांधीजी के जमाने में भी अशान्ति थी।

स्वराज्य प्राप्त हो गया और अशान्ति बढ़ गयी। और आखिर गांधीजी क्या बोलकर गये? "मैं चिल्लाता हूँ, लेकिन मेरी कोई बात सुनता नहीं है।" महाभारत में अन्त में व्यास की यही कहानी है। उन्होंने यही कहा कि 'मेरी कोई सुनता नहीं है।' वही बात गांधीजी ने दुहरायी। और यही सिलसिला चला है। भगवान अवतार लेता है। अगर शान्ति रहेगी तो वह काहे अवतार लेगा? हमारे एक मित्र थे। उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा सात दफा दी और आखिर पास हो गये। भगवान बार-बार परीक्षा दे रहा है, लेकिन फेल होता जाता है। इसलिए उसे फिर-से आना पड़ता है। वह बार-बार फेल हो रहा है। वह ऐसी रचना रखता है कि अशान्ति बनी रहे और शान्त मनुष्यों को काम मिले। हम समझते हैं कि अशान्ति रहे, यह अच्छा लक्षण है। रांची में हमसे कहा गया कि अहमदाबाद में दंगे हुए। लोग मारे गये, जख्मी हुए। कुछ मकान भी जलाये गये। हमने कहा, यह बिलकुल मूर्खता है। हिन्दुस्तान में ५५ करोड़ लोग हैं। २५-३० करोड़ लोग मारे जायें तो योजना आयोग को आसानी होगी। लोगों को जमीनें दुगुनी मिलेंगी। दो-चार हजार को मारना यानी नाक काटकर अपशकुन करना है। उससे मसला हल नहीं होता।

नथमलजी : इसीलिए लोग कहते हैं कि विनोबा कम्यूनिस्टों का कभी कभी समर्थन करते हैं।

विनोबा : विनोबा कम्यूनिस्टों का समर्थन करेगा, अगर कम्यूनिस्ट सफल होंगे। सारी सत्ता मिलीटरी के हाथ में देने से वे सफल कैसे होंगे? मैंने दो सलाह दी थी। एक तो मारकाट व्यापक हो, और दूसरा मालमत्ता वगैरह न जलाया जाय। जो लोग बचेंगे उनको वह मकान आदि मिलेंगे।

आ० श्री तुलसी : आपके जैसे अहिंसक चिंतक यह परामर्श कैसे दे सकते हैं?

विनोबा : अब दिया तो है। एक बात मैंने कही थी, वह हरेक को कहाँ तक जँचेगी मालूम नहीं। परिभाषा है। संहार और हिंसा में फर्क है। संहार ईश्वरीय कृत्य है। उत्पत्ति, स्थिति, लय यानी संहार, यह ईश्वरी कार्य है। हिंसा पाप है। आज बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ चलेंगी। उसमें बम फेंके जायेंगे, 'बैलेस्टिक वेपन' का इस्तेमाल होगा। उसे बराबर सही कोण से डालना पड़ेगा, नहीं तो पेकिंग के बदले मास्को पर बम पड़ेगा। और यह जो शस्त्र चलायेगा, उसकी फोटो लीजिए, वह अत्यन्त शांत दिखेगा। जो हाथ में तलवार लेकर लड़ेगा, उसकी फोटो लीजिए, तो उसका चेहरा आवेश और राग द्वेष से भरा हुआ दीखेगा। 'बैलेस्टिक-वेपन' चलानेवाले का काम गणित का है, ज्यामिति का है। वह संहार कार्य है, और संहार-कार्य भगवान की इच्छा से होता है। अगर आप मारकाट ज्यादा प्रमाण में करेंगे, तो आज बाबा को जो जमीन माँगने के लिए नाहक घूमना पड़ता है, वह घूमना नहीं पड़ेगा।

आ० श्री तुलसी : ऐसी मारकाट में भी ईश्वर की इच्छा होती है क्या?

विनोबा : उनकी इच्छा के बिना क्या होता होगा? वैसे भगवान को मानना या न मानना आपकी मर्जी की बात है। अगर मानेंगे तो ऐसा ही मानना पड़ेगा।

आ० श्री तुलसी : आप यह तो जानते हैं कि जैन और बौद्ध इस रूप में भगवान को स्वीकार नहीं करते।

विनोबा : इसीलिए हमने कहा कि भगवान का मानना या न मानना आपकी मर्जी की बात है। भगवान ने आपको पैदा किया, यह जितना सही है, उससे ज्यादा सही यह है कि आपने भगवान को पैदा किया। इसकी उत्तम मिसाल हमने बचपन में देखी। हमारे घर में गणपति की मूर्ति बनाते थे। चंदन घिस घिसकर हम भी दस दिन तक उसकी पूजा करते थे, और ११वें दिन किसी तालाब में डुबो दिया करते थे। उस वक्त हम बच्चों को बहुत दुःख होता था। लेकिन इसका मतलब यह है कि ईश्वर ने आपको तालीम दी, जिसे आपने पैदा किया उसे आप ही समाप्त कर रहे हैं।

आ० श्री तुलसी : वैसी हालत में क्या प्रयत्न होना चाहिए?

विनोबा : प्रयत्न तो आप कर ही रहे हैं। लोगों को विचार समझाने के अलावा और क्या हो सकता है? और लोगों को विचार समझाने का प्रयोग यथाशक्ति, यथामति कर ही रहे हैं। ● (२ अप्रैल '७०)

१८ अप्रैल : भू-क्रान्ति दिवस की याद में

क्रान्ति-यात्रा का आरम्भ

सन् १९५० में उड़ीसा के अंगुल में द्वितीय सर्वोदय-सम्मेलन हुआ। लेकिन वहाँ से उचित नेतृत्व न मिलने के कारण कार्यकर्ता निराश ही लौटे।

वर्धा में सर्व सेवा संघ की बैठक थी। शिवरामपल्ली में सम्मेलन होना तय हुआ। शंकरराव देव ने प्रश्न उठाया कि विनोबाजी सम्मेलन में हाजिर रहेंगे या नहीं? विनोबाजी ने वहाँ जाने की अनिच्छा प्रकट की। तब शंकरराव देव ने यह प्रस्ताव रखा कि सम्मेलन न किया जाय। पिछले साल विनोबाजी की अनुपस्थिति से कार्यकर्ताओं को बड़ी निराशा हुई थी। इसलिए सबने इस बात पर जोर दिया, कि विनोबाजी सम्मेलन में अवश्य हाजिर रहें। अन्तत विनोबाजी मान गये और सम्मेलन की तारीखें निश्चित कर दी गयीं। दूसरे दिन विनोबाजी ने अपना यह निर्णय सुनाया कि वे सम्मेलन में पैदल जायेंगे। यात्रा की इस नवीन प्रणाली ने रचनात्मक कार्यकर्ताओं में नयी दिलचस्पी पैदा कर दी। लोग बड़े उत्साह से शिवरामपल्ली पहुँचे और वहाँ पर विनोबाजी से प्रेरणा लेकर वापस गये।

उन दिनों हैदराबाद के तेलंगाना जिले में अशान्ति की आग धधक रही थी। एक तरफ से कम्यूनिस्ट पार्टी के हिंसात्मक संगठन ने, और दूसरी तरफ से सरकारी दमन-चक्र ने वहाँ की जनता को त्रस्त कर रखा था। शिवरामपल्ली तक पहुँचकर विनोबाजी ने आग्रह किया कि वे तेलंगाना जाकर शान्ति का प्रयास करेंगे। वहाँ की भयावह परिस्थिति के कारण कुछ लोगों ने वहाँ जाने से रोका, लेकिन वे नहीं माने और पैदल चल पड़े। यह यात्रा वैसी ही थी, जैसी बापू की नोआखली यात्रा।

विनोबाजी की तेलंगाना यात्रा और उसके फलस्वरूप भूदान की गंगोत्री की कहानी आज देश का बच्चा-बच्चा जानता ही है। शान्ति का मार्ग खोजकर विनोबाजी सेवाग्राम लौटे।

सेवाग्राम आते ही उन्होंने वहाँ की संस्थाओं का आह्वान किया और उनसे कहा कि जहाँ बापू थे, जहाँ बापू द्वारा प्रतिष्ठित सारी संस्थाओं का केन्द्र है, जहाँ सैकड़ों कार्यकर्ता और अनेक नेता हैं, उस जिले से दुनिया को सर्वोदय का दर्शन मिलना चाहिए। वर्धा तहसील में सघन कार्य होना चाहिए, और यह काम सभी संस्थाएँ मिलकर करें। विनोबाजी के आह्वान पर तमाम संस्थाओं की सम्मिलित समिति बनी और विनोबाजी के मार्गदर्शन में काम करने के लिए योजना बनी। वह सितम्बर का महीना था, उस समय हमारे अधिकांश कार्यकर्ता सेवाग्राम में मौजूद थे।

यह तो हुआ, लेकिन दूसरे ही दिन एकाएक मालूम हुआ कि विनोबाजी पण्डित जवाहरलाल नेहरू से मिलने के लिए दिल्ली की ओर पदयात्रा करनेवाले हैं। यह सुनकर हमें बड़ा अजीब सा लगा।

दूसरे दिन विनोबाजी को बिदाई देने के लिए हम सेवाग्राम-आश्रम गये। प्रार्थना आदि के बाद विनोबाजी ने यात्रा प्रारम्भ कर दी। उनके साथ तालीमी संघ के बच्चे कीर्तन करते हुए चल रहे थे। हम भी उनके साथ हो लिये। चरखा-संघ के के सामने से सड़क जहाँ स्टेशन की ओर मुड़ती है, वहीं से विनोबाजी ने सड़क छोड़ दी और पवनार की ओर मुड़ गये। वहाँ तक सबके साथ चलकर मैं रुक गया और सड़क पर बने हुए पुल पर बैठकर मैं देखता रहा कि यात्री-दल किस तरह आगे बढ़ रहा है।

वह पहाड़ी रास्ता थोड़ी ही दूर आगे से नीचे की ओर चला गया है। अतएव यात्रा-टोली भी थोड़ी देर में अदृश्य हो गयी, लेकिन मैं बैठा-बैठा एकाग्रता से उस ओर देखता रहा। उस समय क्या सोच रहा था, आज याद नहीं है लेकिन एकाएक मेरे मन में विचार आया कि यह यात्रा साधारण नहीं है। इसका अन्त पण्डितजी से मिलने से ही नहीं होगा। गांधीजी द्वारा परिकल्पित शान्ति का यह पूर्वाभास है। इस यात्रा से देश में बापू की शान्ति निखरेगी, अर्थात यह शुद्ध शान्ति-यात्रा है। क्रान्ति-यात्रा का आरम्भ हो रहा है। इस बात की कल्पना से ही मेरा सारा अस्तित्व नाच उठा।

—धीरेन्द्र मजूमदार

मई में राष्ट्रीय सहमति मंच का सम्मेलन इन्दौर में

इन्दौर। देश की मूलभूत एवं ज्वलन्त समस्याओं के निराकरण हेतु राष्ट्रीय सहमति प्राप्त करने तथा सम्भव हो तो एक राष्ट्रीय कार्यक्रम तय करने हेतु देश के शीर्षस्थ नेताओं का एक सम्मेलन आगामी मई के अन्तिम सप्ताह में इन्दौर में बुलाया जा रहा है।

उक्त जानकारी देते हुए सम्मेलन की आयोजक समिति के प्रधान मंत्री श्री रामेश्वरदयाल तोतला ने बताया कि गत २-३ फरवरी को नयी दिल्ली में गांधी-शांति प्रतिष्ठान द्वारा आमंत्रित बैठक में देश में एक "राष्ट्रीय सहमति मंच" की स्थापना की पहल की गयी थी। राष्ट्रीय सहमति मंच के प्रस्ताव को देश के वरिष्ठ नेता सर्वश्री गुरु गोलवलकर, जगद्गुरु कांची एवं पुरी, दोनों समाजवादी दल, दोनों कांग्रेस, भारतीय जनसंघ, सर्व सेवा संघ तथा भारत के राष्ट्रपति का भी समर्थन प्राप्त है।

आपने आगे बताया कि प्रस्तावित सम्मेलन को आमंत्रित करने हेतु श्री आर० आर० दिवाकर की अध्यक्षता में एक आयोजक समिति का गठन किया गया है, जिसके कार्याध्यक्ष डा० के० जी० सैयदेन तथा सदस्यों में सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, दुर्गादास (पत्रकार), यू० एन० ढेबर, एम० एल० सिंघवी तथा अनन्त गोपाल शेवडे (पत्रकार) सम्मिलित हैं।●

"...तो मेरी आत्मा रुदन करेगी"

• मो० क० गांधी

मार्च, १९३६ : प्रान्तीय स्वराज्य की घोषणा का 'ब्रिटिश अधिनियम १९३५' घोषित हो चुका था। चुनाव की तैयारियाँ शुरू हो गयी थीं, पर कुछ राष्ट्रीय नेता सत्ता में न जाकर महात्मा गांधी के साथ उनके रचनात्मक कार्यक्रमों में लगे रहना चाहते थे। उन लोगों ने गांधी सेवा संघ के अन्तर्गत 'गांधी विचार समिति' नाम से एक संस्था बनायी जिस पर टीका करते हुए उस समय श्री रामनारायण ने कहा था :

"गांधीवाद एक नया सम्प्रदाय बन जायेगा, अंधश्रद्धा और बौद्धिक परावलंबिता बढ़ेगी, गांधीवाद का अर्थ करने में गांधीवादियों में ही मतभेद बढ़ेगा, आचरण का महत्त्व घटकर केवल विचार को अनावश्यक महत्त्व प्राप्त होगा, गांधी-विचार की विकासशीलता मटेगी, गांधीवाद शास्त्र का रूप धारण करके दम्भ को जन्म देगा, लिखने-पढ़ने की अधिकता की कुटेव और बढ़ेगी और सेवा की वृत्ति घटेगी।"*

गांधीजी ने जब श्री रामनारायण की शंकाएँ सुनीं तो बिना माँगे ही कर्तव्य-रूप समझ (उनके शब्दों में अनधिकार चेष्टा के रूप में) अपनी राय दे डाली।

मेरे विचारों का नयापन

"गांधीवाद जैसी कोई चीज मेरे तो दिमाग में ही नहीं है। मैं कोई सम्प्रदाय-प्रवर्तक भी नहीं हूँ। तत्त्वज्ञानी होने का तो मैंने कभी दावा भी नहीं किया है। मैंने तो केवल बगैर योजना के अपने निजी ढंग से यही प्रयत्न किया है कि हम अपने निजी जीवन में सत्य, अहिंसा आदि सनातन तत्त्वों का व्यापक प्रयोग करें। बालक की तरह जैसी प्रेरणा मिली, प्रवाह में जो चीजें आ गयीं, उसमें जो सूझा, वह किया।

"सत्य और अहिंसा में मेरी श्रद्धा बढ़ती ही जाती है। और अपने जीवन में जैसे-जैसे उन पर अमल करता हूँ, मैं भी बढ़ता ही जाता हूँ। उसीके साथ मेरे विचारों में नयापन आता है। मैं वृद्ध हो गया हूँ तो भी मेरी बुद्धि क्षीण नहीं हुई है। मेरी बुद्धि का विकास होता ही जा रहा है। सत्य और अहिंसा के विषय में नित्य नयी-नयी चीजें उसके सामने आती हैं। उनमें मैं नया प्रकाश देखता हूँ, रोज नया अर्थ दिखाई देता है। इसीलिए चरखा संघ, हरिजन सेवक संघ और ग्राम-उद्योग संघ आदि संस्थाओं के सामने मैं बराबर नये-नये विचार रखता आ रहा हूँ। इसका मतलब यह है कि वे संस्थाएँ और उनके संचालक जिन्दा हैं, और वृक्ष की तरह वे नित्य बदलती रहेंगी, नयी-नयी बनती रहेंगी। उनका गुण भी यह है कि वे बढ़ें, गतिमान हों, नहीं तो गिर जायेंगी। मुझे यह तो लगता ही नहीं कि मैं गिर रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप भी मेरे साथ विकास की ओर बढ़ें।"

हिन्दू-मुस्लिम एकता के बिना स्वराज्य नहीं चाहिए

"जैसे मैं यह कहता हूँ कि असत्य या हिंसा से स्वराज्य मिले तो मुझे नहीं चाहिए, उसी तरह मैं आज यह भी कहना चाहता हूँ कि अगर हिन्दू-मुस्लिम एकता के बिना स्वराज्य मिले तो मुझे ऐसा स्वराज्य नहीं चाहिए। क्योंकि मैं तो यह चाहता हूँ कि आजाद भारत में न हिन्दू मुसलमानों के मातहत हों और न मुसलमान हिन्दुओं के। मैं तो सबको समान रूप से देखना चाहता हूँ। शायद आपको इस सवाल का यह पहलू कुछ नया-सा मालूम पड़े। अगर आपके लिए यह चीज नयी है तो मेरे लिए भी बिलकुल नयी है। कोई सीधा रास्ता नजर नहीं आता, सामने तमाम अंधेरा है। लेकिन इतना विश्वास जरूर है कि श्रद्धा से कदम बढ़ाऊँ तो मुकाम पर पहुँच ही जाऊँगा।"

ऐसे मन्दिरों में न जाना धर्मकृत्य

"हमको तो यह प्रार्थना करनी चाहिए कि अगर अछूतपन हिन्दू धर्म का अंग है और वह नहीं मिट सकता, तो फिर भले ही हिन्दू धर्म ही मिट जाय, अछूतपन जैसा धब्बा किसी कौम पर न रहे। मुझसे कहा जाता है कि अछूत तो मन्दिरों में नहीं जाना चाहते। यह मान भी लिया जाय, तो इसका कारण यह है कि हमने उन्हें ऐसे हैवान बना दिए हैं कि उन्हें मन्दिरों से कोई मतलब नहीं रहा। लेकिन उन्हें मन्दिरों में जाने की दरकार नहीं है तो हमें उन्हें वहाँ जाने देने की होनी चाहिए। मैं वर्षों से चीख-चीखकर कह रहा हूँ कि जिस मन्दिर में हमारे अछूत भाई नहीं जा सकते, वहाँ हम न जायें। क्या उस मन्दिर में मेरी औरत, लड़की या माँ जा सकती है? हमारा कर्तव्य है कि उन्हें समझायें और यदि वे न मानें तो हमारा कर्तव्य है कि हम माता को भी त्याग दें, और पिता को भी। हम दूसरों से बहस करते हैं, इसलिए जिसको हमने अपना धर्म मान लिया है, उसके लिए हमको अपनी माता, स्त्री, बच्चे सबको छोड़ने के लिए तैयार हो जाना चाहिए।

"सिर्फ झाड़ू लगा देने से हरिजनों के साथ तादात्म्य सिद्ध नहीं होता। जो मन्दिर सैकड़ों-हजारों वर्षों से पवित्र गिने गये हैं, जहाँ चैतन्य जैसे महात्माओं ने पूजा की है, वहाँ जाने के लिए हम तरसते हैं। वहाँ पर अगर हम सिर्फ इसलिए न जायें कि हमारे हरिजन भाई नहीं जा सकते तो बड़ा भारी धर्मकृत्य होगा और अगर उन मन्दिरों में दरअसल ईश्वर है, जैसा कि हम मानते हैं, तो उसका प्रभाव पड़ने ही वाला है।

"क्या गांधी सेवा संघ का कोई सदस्य यह भी कहेगा कि मेरे लिए धर्म और है, और मेरी स्त्री और बहन के लिए दूसरा।

---

* गांधी सेवा संघ रिपोर्ट, सावली, ३ मार्च, १९३६।

यह न तो धार्मिक उदारता है और न अहिंसा ही। आप इस कभी समझेंगे। धर्म तो उत्कृष्ट श्रद्धा का नाम है। धर्म का निचोड़, उसका दूसरा नाम अहिंसा है। उसमें यह ताकत है कि अंग्रेज के हाथ से उसकी तलवार गिर जाय, मुसल-मान का गुण्डापन धरा रह जाय। पतंजली ने कहा है कि अहिंसा के सामने हिंसा निकम्मी हो जाती है। अगर आज तक ऐसा नहीं हुआ है तो उसका कारण यह है कि हमारी अहिंसा दुर्बलों और भीरुओं की थी।"

चरखा : अहिंसा का असाधारण प्रतीक

"मैं पूछता हूँ कि चरखे में जितनी श्रद्धा आपमें से कितनों की है? चरखे के बारे में तो निडरता से और बेशरम होकर मैंने कहा है, वह स्वराज्य का प्रत्यक्ष साधन है, अहिंसा का असाधारण प्रतीक है। अगर आप चरखे के विशारद भी बनें परन्तु उसे अहिंसा का प्रतीक न मानें तो आपका चरखा चलाना व्यर्थ है। अगर चरखे में हमारी जीवित श्रद्धा हो तो हम उसमें अद्भुत शक्ति देखेंगे। मैं तो चरखे को सविनय भंग की अपेक्षा श्रेष्ठतर प्रतीक मानता हूँ। जो लोग सत्याग्रही होना चाहते हैं, लेकिन चरखे में विश्वास नहीं रखते, उनसे मैं फिर कहूँगा कि वे सत्याग्रह को भूल जायँ।"

'गांधीवाद' का शीघ्र ध्वंस हो

"तीसरी बात एक वाक्य में कह दूं। सच बात तो यह है कि आपको गांधीवाद नाम को ही छोड़ देना चाहिए, नहीं तो आप अन्धकूप में जाकर गिरेंगे। गांधीवाद का तो ध्वंस होना ही है। गांधी-वाद का ध्वंस होने की आवाज मुझे प्यारी लगती है। 'वाद' का तो नाश ही होना उचित है। वाद तो निकम्मी चीज है। असली चीज अहिंसा है। वह जिन्दा रहे, इतना मेरे लिए काफी है। गांधीवाद का ध्वंस तो मैं शीघ्र ही देखना चाहता हूँ। आप साम्प्रदायिक न बनें। मैं तो कभी भी साम्प्रदायिक नहीं बना। कोई सम्प्रदाय कायम करना कभी मेरे स्वाब में ही नहीं आया। मेरे मरने के बाद मेरे नाम पर अगर कोई सम्प्रदाय निकला, तो मेरी आत्मा रुदन करेगी। इतने वर्षों तक हमने जो चीज चलायी वह कोई 'वाद' नहीं है। हमें किसी 'वाद' में नहीं पड़ना है, मौन धारण करके अपने सिद्धान्तों के अनुसार सेवा करते रहना है।'

चाहे सारा जगत् मुझे छोड़ दे

"अहिंसा अगर व्यक्तिगत गुण है, तो वह मेरे लिए त्याज्य वस्तु है। मेरी अहिंसा की कल्पना व्यापक है। वह करोड़ों की है। मैं तो उनका सेवक हूँ। जो चीज करोड़ों की नहीं हो सकती, वह मेरे लिए त्याज्य है। मेरे साथियों के लिए भी त्याज्य ही होनी चाहिए। हम तो यह सिद्ध करने के लिए हैं कि सत्य और अहिंसा केवल व्यक्तिगत आचार की नीति नहीं है। वह समुदाय जाति और राष्ट्र की नीति हो सकती है। अभी हमने यह सिद्ध नहीं कर दिया है, लेकिन यही हमारे जीवन का उद्देश्य हो सकता है। जिनका यह विश्वास न हो, या जिनसे यह बन न सके, वे कृपा करके हट जायं। लेकिन मेरा तो यही स्वप्न है, जिसको मैंने अपना कर्तव्य माना है। चाहे सारा जगत् मुझे छोड़ दे, तो भी मैं अहिंसा-व्रत नहीं छोड़ूंगा। मेरी श्रद्धा इतनी गहरी है। इसे सिद्ध करने के लिए ही मैं जीऊँगा और उसी प्रयत्न में मरूंगा। मेरी श्रद्धा मुझे नित्य नया नया दर्शन कराती है। मेरी उत्तर अवस्था में अब मुझसे इसके सिवाय दूसरा कुछ होनेवाला नहीं है। हाँ, अगर मेरी बुद्धि ही कलुषित हो जाय, और मैं दूसरा कोई नया दर्शन कर लूं तो बात दूसरी है। लेकिन आज तो अहिंसा के नित्य नये-नये चमत्कार मैं देखता हूँ। रोज नया दर्शन और नया आनन्द मुझे मिलता है। मेरा यह विश्वास है कि अहिंसा हमेशा के लिए है। वह आत्मा का गुण है, इसलिए वह व्यापक है, क्योंकि आत्मा तो सभी के होती है। अहिंसा सबके लिए है, सब जगहों के लिए है, सब समय के लिए है। अगर वह दर-असल आत्मा का गुण है तो हमारे लिए वह सहज हो जानी चाहिए। आज कहा जाता है कि सत्य व्यापार में नहीं चलता, राजनीति में नहीं चलता। तो फिर वह कहां चलता है? अगर सत्य जीवन के सभी क्षेत्रों में और सभी व्यवहारों में नहीं चल सकता, तो वह कौड़ी कीमत की चीज नहीं है। जीवन में उसका उपयोग ही क्या रहा? मैं तो जीवन के हर एक व्यवहार में उसके उपयोग का नित्य नया दर्शन पाता हूँ।"

गांधीजी के उपरोक्त स्पष्टी-करण के बावजूद भी क्या श्री रामनारायणजी की शंकाएँ आज सही साबित नहीं हुई हैं?

—प्रस्तुतकर्ता गुरुशरण

पुष्टि का अभियान : अनुभवों की उपलब्धि

वैशाली नाम का मुजफ्फरपुर में एक प्रखण्ड है। इस प्रखण्ड में १९६५ में नवल भाई के नेतृत्व में ग्रामदान-विचार का बड़े पैमाने पर असरदार ढंग से प्रचार किया गया था, तथा सन् १९६७ में यह प्रखण्ड-दान घोषित हुआ था। यह क्षेत्र आज भी राजनीतिक दृष्टि से सजग क्षेत्र कहा जाता है।

वैशाली क्षेत्र में अभी भाई लक्ष्मणदेवजी काम कर रहे हैं। वे बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के एक समर्थ एवं अनुभवी कार्यकर्ता हैं। इस क्षेत्र में ग्रामदान-आन्दोलन के मित्र बनाने में उन्हें अच्छी सफलता मिली है। पिछले अगस्त '६९ में इसी प्रखण्ड के एक गांव में अखिल भारतीय ग्राम-स्वराज्य समिति की चार दिवसीय गोष्ठी हुई थी। उस अवसर पर क्षेत्र के प्रमुख सज्जनों ने गोष्ठी की चर्चा को नजदीक से सुना था। इस अवसर पर तरुण शांति सेना की रैली का भी आयोजन किया गया था। तीन गांवों में ग्रामसभा का गठन एवं आंशिक बीघा-कट्ठा का वितरण भी हुआ था। यानी ग्रामदान के बाद की शर्तों को पूरा करने की दृष्टि से इस क्षेत्र में काफी सम्पर्क किया जा चुका है। लेकिन एक प्रतिकूल स्थिति गत नवम्बर दिसम्बर '६९ में प्रखण्ड की पंचायतों के चुनाव के समय बन गयी थी। उसमें खुलकर जाति-पांति के आधार पर मतदाताओं को उभारा गया था। कुछ हिंसात्मक घटनाएँ भी घटी थीं। इन कारणों से पिछले दिनों जनमानस बहुत ही उद्विग्न रहा है।

अभियान की पूर्वतैयारी

अभियान के पूर्व सुश्री निर्मला बहन का ५ दिनों का दौरा प्रखण्ड के विभिन्न गांवों में हुआ। ६ फरवरी को प्रखण्ड के युवकों की एक रैली बुलायी गयी। अधिकांश गांवों से युवक एवं प्रखण्ड के बहुत-से हाई-स्कूलों से छात्र रैली में उपस्थित थे जिसमें प्राचार्य राममूर्ति का उद्बोधक भाषण हुआ। रैली में युवक शक्ति का अभिनन्दन किया गया और अभियान में उनके सहयोग की मांग की गयी। सुचारु रूप से अभियान चलाने के लिए प्रखण्ड अभियान समिति का गठन किया गया। सोचा यह गया कि १५० गांवों के लिए १५० टोलियों का गठन किया जाय। कुल ४५० कार्यकर्ता इस अभियान में शामिल रहे। इनमें स्थानीय शिक्षक-प्रशिक्षण विद्यालय के प्रशिक्षार्थी, उच्च विद्यालय के छात्र तथा स्थानीय नागरिकों के अलावा जिले के चुने हुए कुछ वरिष्ठ कार्यकर्ता भी शामिल रहे। अभियान सम्बन्धी पोस्टर एवं पर्चे काफी संख्या में छपवाये गये।

इस प्रखण्ड में शांति-सेना विद्यालय, इन्दौर की ओर से ग्रामीण बहनों का एक महीने का एक शिविर चल रहा था। शिविर के उद्घाटन के अवसर पर निर्मला बहन जब पहुँची, तो उनकी यह राय हुई कि इस प्रखण्ड में एक सप्ताह का सघन अभियान चलाया जाय। निर्मला बहन की उपस्थिति से कार्यकर्ता मित्रों में उत्साह पैदा हुआ और अभियान चलाने का निर्णय ले लिया गया। अभियान में शिविरार्थी बहनें भी रहें, ऐसा निर्णय लिया गया।

किन्तु जितने बड़े पैमाने पर अभियान सोचा गया था, निश्चित रूप से उसके अनुसार संयोजन करने में, मुख्य रूप से धन एवं जन इकट्ठा करने में, कई सामयिक व्यवधान के कारण सफलता मिली नहीं। लेकिन क्षेत्र के प्रमुख मित्रों की अनुकूलता के कारण उत्साह में कमी नहीं हुई।

अभियान प्रारम्भ

अभियान प्रारम्भ होने की तिथि पर निर्मला बहन पहुँच गयीं। मैं भी उसी दिन पहुँचा। २४ फरवरी को जब सभी इकट्ठा हुए तो कार्यकर्ता-शक्ति के अभाव में निश्चय किया गया कि सभी पंचायतों में न जाकर एक सघन-क्षेत्र मानकर आठ पंचायतों में ही हमारी टोलियां जायें। टोलियों का गठन किया गया। हर टोली में एक वरिष्ठ कार्यकर्ता, तीन शिविरार्थी ग्रामीण महिलाएँ, चार प्रशिक्षार्थी एवं एक या दो स्थानीय नागरिक मित्र रखे गये। ये टोलियाँ २४ की शाम से १ मार्च की दोपहर तक अपने निर्धारित क्षेत्र के गांवों में घूमती रहीं।

टोलियों को कार्य पद्धति का निर्देश

- प्रमुख ग्रामीणों से सम्पर्क कर बीघा-कट्ठा के वितरण तथा ग्रामसभा के गठन के सम्बन्ध में बातचीत करना,
- गांव में छोटी-बड़ी सभाओं का आयोजन करना उनमें ग्राम-स्वराज्य के विचार को समझाना,
- जिस गांव में दो-चार भूमिवान भी बीघा-कट्ठा निकालने को तैयार हो जायँ, उस गांव में ग्रामसभा-गठन का प्रयास करना, ग्रामसभा के गठन के लिए बुलायी जानेवाली सभा में अधिक-से-अधिक ग्रामीणों के इकट्ठा होने पर ही ग्रामसभा का गठन कराना, तथा बीघा-कट्ठा का कागज भरकर प्रत्यक्ष रूप से भूमिहीनों के बीच वितरण कर देना। या उतनी तैयारी न हो सके तो सभा में भूमिवानों से व्यक्तिगत रूप से बीघा-कट्ठा वितरण करने की घोषणा कराना। जब तक कुछ भी भूमिवान बीघा-कट्ठा के वितरण के लिए तैयार न हों, ग्रामसभा का गठन नहीं करना।

अनुभव के आधार पर एक दिन के बाद दो निर्देश और जोड़े गये,

(१) गांव में भूमिहीनों की एक सूची बनाकर सभा में प्रस्तुत करना,

(२) सभा में विशेष प्रयास करके भूमिहीनों को उपस्थित रखना।

निष्पत्ति

८ पंचायतों के ४२ गांवों में ७० लोगों की ८ टोलियों के काम करने के पश्चात २ गांवों में ग्रामसभा का गठन हुआ। २ गांवों में आंशिक रूप से बीघा-कट्ठा वितरण की घोषणा हुई, तथा २ गांवों में प्रत्यक्ष रूप से कुछ भूमिहीनों में बीघा-कट्ठा का कागज भरकर करीब दो बीघे जमीन का वितरण किया गया। किन्तु भविष्य में ग्रामसभा के गठन और भूमि-वितरण की भूमिका स्पष्ट रूप से बनी। कार्यकर्ताओं में भरोसा पैदा हुआ।

• आमतौर पर ग्रामदान का अब विरोध नहीं रहा। किन्तु बीघा-कट्ठा निकालने में अभी भी हिचक है। छिटपुट भूमिवानों का तीव्र विरोध भी है।

• ग्रामदान-समर्पणपत्र पर हस्ताक्षर करनेवाले एवं न करनेवाले, दोनों प्रकार के लोगों की अनुकूलता एवं प्रतिकूलता समान रूप से पायी गयी।

• प्राप्ति अभियान में भूमि-मालिकों एवं मजदूरों से ही कार्यकर्ताओं का सम्पर्क आया था। इस अभियान में ग्रामीण युवकों से सम्पर्क आया। उनके मन में ग्रामस्वराज्य की कल्पना के प्रति आकर्षण है। नौजवानों का ग्रामसभा बना देने पर काफी जोर रहा, किन्तु कार्यकर्ताओं के मन में शंका थी कि जब तक कुछ लोग भी बीघा-कट्ठा निकालते नहीं हैं, तब तक ग्रामसभा स्वतः आगे का कदम उठा नहीं पायेगी और आन्दोलन का चित्र धूमिल हो जायेगा।

• ग्रामसभा के गठन के लिए बुलायी गयी बैठकों में उपस्थिति प्रयास के बावजूद भी बहुत कम रहती थी, मन में यह भय काम करता था कि सभा में जायेंगे तो बीघा-कट्ठा निकालना पड़ेगा, यानी प्रत्यक्ष विरोध का साहस नहीं, और भूमि-वितरण की हिम्मत भी नहीं। ग्रामसभा के प्रति साधारण लोगों का मानस बहुत सशंकित रहता है। सबकी ओर से एक दो ग्राम सभाओं के सफल संचालन के उदाहरण दिखाने के सुझाव मिलते हैं।

• आमतौर पर भूमिवानों में भूमि के प्रति अधिक मोह है। भूमि-वितरण सम्बन्धी सभी कानून बने, और पड़े के-पड़े रह गये, वैसे ही इस आन्दोलन का तूफान बन्द होगा, फिर कोई आयेगा ही नहीं, अतः मीठी-मीठी बात करके टालने का प्रयास रहा। भूमिहीनों को कोई भरोसा नहीं। उनके मन में वर्षों पहले हस्ताक्षर के समय आशा जगी थी, लेकिन अब तक कुछ हुआ नहीं, इस कारण उनको चर्चा में उत्साह नहीं था। किन्तु जब जब भूमि वितरण की चर्चा होती है, तो इनके मन में कुछ हलचल तो अवश्य प्रारम्भ होती है।

• बीघा-कट्ठा वितरण नहीं करने के पक्ष में दलीलें —

(क) मजदूरों को घर के लिए जमीन के अलावा भूमि चाहिए नहीं। घर की जमीन अब मिल गयी है। उनकी आर्थिक हालत भूमि का छोटा टुकड़ा पाने से सुधरेगी नहीं। तब सुधर सकती है, जब उनकी मजदूरी बढ़े, और मजदूरी तब बढ़ेगी जब कृषि की तरक्की होगी, गांव में उद्योग-धन्धे शुरू होंगे।

(ख) ये मजदूर अच्छी खेती नहीं करते हैं। इनको जमीन देंगे तो उत्पादन में कमी होगी। मजदूरों को अपनी जमीन पर खेती करने का तो अभ्यास है नहीं।

(ग) कुछ बड़े किसान मजदूरों को जमीन पहले से दिए हुए हैं, जिससे वे अपना गुजारा करते हैं। उनको दी हुई उस जमीन के लिए ही प्रमाण पत्र दे दें तो क्या हर्ज है? इसके जवाब में भूमि-वानों का कहना है, "तब वे हमारे खेतों में काम करने से कतरायेंगे। उन पर हमारा कोई अंकुश नहीं रहेगा। दूसरे भूमिपति अपने खेतों में उन्हें ले जायेंगे, हमारा काम नहीं होगा।"

(घ) जमीन ४०० रुपये से १००० रुपये कट्ठे तक बिकती है। कई हजार की सम्पत्ति देनी पड़ेगी। क्या हर्ज है, कुछ सौ रुपये ही भूमिहीनों को दिलाकर जान छोड़ दें।

(च) हम खुद ही कम जमीनवाले हैं। कम्यूनिस्ट भी बड़े भूमिवानों से ही जमीन लेने की बात करते हैं, हम क्यों दें?

(छ) भूदान में जमीन दान दिया था, सभी लोगों ने नहीं दिया। जिन्होंने दिया नहीं, उनका कानून से लिया भी नहीं गया। अतः समाज में देनेवाले बेवकूफ समझे गये। ग्रामदान में भी सज्जन लोग दे देंगे, बाकी लोग देंगे नहीं, उनका कानून से लिया भी नहीं जायेगा तो फिर हम ही बेवकूफी क्यों करें? ऐसी स्थिति में जमीन-सम्बन्धी जो भी कानून बनेगा, या जो भी उलट-फेर होगा, सबके लिए होगा, उसका मुकाबिला करेंगे।

पड़ोस के प्रखण्डों में घटी नक्सल-वादी घटनाओं का प्रभाव है, उस पर लोगों की प्रतिक्रियाएँ

• जमीन नहीं देंगे, छीननेवालों का मुकाबिला करेंगे, आपस का संगठन बनाने की आवश्यकता है।

• आवाज निकल गयी है, तो रुकेगी नहीं, जमीन बँटकर रहेगी। अच्छा है, शान्तिपूर्वक इसका कोई हल निकल तो।

कुछ प्रेरणादायी प्रसंग

अभियान में कई दिलचस्प अनुभव आये। एक गांव में भूमिमालिकों ने कहा, "इस गांव में कोई भूमिहीन है ही नहीं।" कार्यकर्ताओं ने सर्वेक्षण किया तो ४१ घर भूमिहीनों के निकले। फिर चर्चा हुई तो गांव के किसी चलते-पुर्जे आदमी ने कहा, "घरबास की जमीन है ही, और इन्हें जमीन किसलिए चाहिए? आप लोग फिजूल नेतागिरी के लिए घूम रहे हैं।" तब से यह कोशिश शुरू हुई कि सभा में भूमिहीन भी अधिक से-अधिक संख्या में इकट्ठा हों।

एक सभा में एक भूमिवान ने शिकायत की कि भूदान की जमीन जिन्हें मिली है, वे अच्छी खेती नहीं करते। भूमिहीन झट बोल उठा, "हमारे खेत के आस पास के खेतों से बुरी फसल तो नहीं है।" भूमिवान ने कहा, 'तुम्हें अच्छी खेती करनी चाहिए।" भूमिहीन बोला, "बिना किसी साधन के अच्छी खेती हो जायगी?" सभा स्तब्ध रह गयी उसका जवाब सुनकर।

एक सभा में भूमिवानों ने शिकायत की कि भूमिहीन श्रमदान नहीं करते। भूमिहीनों ने कहा, "श्रमदान करेंगे, उस दिन खायेंगे क्या?" कार्यकर्ता ने समझाया कि ग्रामदान में महीने में एक दिन श्रम-दान करना ही होगा। भूमिहीन ने कहा, 'ग्रामदान में जमीन मिलेगी तो हम श्रम-दान क्यों नहीं करेंगे? जरूर करेंगे।" और दूसरे ही दिन श्रमदान के लिए पचासों भूमिहीन कुदाल लेकर निकल पड़े।

→

टिहरी का शराब-बन्दी आन्दोलन :
सशक्त नागरिक-शक्ति का इजहार

[टिहरी के शराब-बन्दी आन्दोलन मे सक्रिय कार्य करनेवाले कार्यकर्ताओं ने अलग-अलग भूमिका से काम किया था, परन्तु सबके सामने लक्ष्य एक ही था। जिला-सर्वोदय के मन्त्री और शान्ति-सेना के सगठक श्री भवानी भाई इस आन्दोलन के एक मुख्य कार्यकर्ता थे। कई वर्ष पहले टिहरी नगर के बीच से शराब की दुकान हटवाने के आन्दोलन मे मुख्य रूप से उन्होंने भाग लिया था और तब से वह पूर्ण शराब-बन्दी के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे। पिछले महीने उत्तराखण्ड मे शराब बन्दी का जो सफल आन्दोलन चला, डायरी के इन पन्नों मे उसका जीवन्त परिचय पाठको को मिलेगा, ऐसी आशा है।—सम्पादक]

११ जनवरी, '७०

अठूर मद्य-निषेध समिति की बैठक सरला बहन के मार्गदर्शन मे होनेवाली थी, लेकिन लोग बैठक में न जाकर भैंसो की लड़ाई देखने चले गये! अठूर की बैठक लगभग असफल रही। इससे हमे चिन्ता हुई। भैंसो की लड़ाई मे मजा लेनेवाले भला आन्दोलन कैसे चलायेंगे? फिर भी गाँव गाँव की फेरी करने का, तथा लोगों को शराब-बन्दी आन्दोलन मे रुचि न होने का कारण ढूँढ़ने का निश्चय हुआ।

गाँवो मे घूमते समय यह आवाज सुनने को मिली, "हमारे घर मे कोई शराब नही पीता।" कोई कहतीं, "स्त्रियो से भी कहीं शराब की दुकान बन्द हुई है?"

दूसरे दिन प्रात काल अपने बुजुर्ग साथी श्री रतनसिह व श्री धर्मानन्दजी को साथ लेकर खेत खलिहानो मे जाकर मजमा जोड़ना शुरू कर दिया। बहनों को बहनो के द्वारा बन्द करायी गयी शराब की दुकानो की गाथा सुनवायी, साथ ही यह कहना शुरू किया, "बहनो, यह मत सोचो कि हमारे घर मे शराबी नहीं है, इसलिए हमको क्या चिन्ता, शराब का भूत सबका पीछा करनेवाला है। जो बहनें शराबी के आतक से पीड़ित है, क्या वे हमारी बहनें नही हैं? जो घर शराब से उजड रहा है, क्या उस घर मे हमारे भाई व बच्चे नही हैं? मैं तो चाय भी नहीं पीता, पर जब मैंने बाजार से लौटते हुए लोगो की गाढी कमाई के पैसे शराब की दुकानों मे जाते देखा, तो मुझे बड़ी पीड़ा हुई, मुझसे न रहा गया और दौड़े-दौड़े आपके पास पहुँचा हूँ। पुरुष इतना क्रूर हो गया है कि उसे अपने बाल-बच्चों की भी फिकर नही है। जिन बच्चो के लिए आप रात-दिन मेहनत कर रही हैं, उनके खोतो मे भी मुझे शराब की बोतलें मिली।" जिस गाँव मे जाता वहीं की बहनो को सगठित करने के लिए अपने गढ़वाली गीतों मे एक-दो कडी और जोड लेता। मेरी इन बातो और गीतो ने जादू का असर किया। यह आवाज घर-घर गूँजने लगी। खेत-खलिहान, जगल-पनघट, सभी जगह चर्चा होने लगी, "सचमुच हम तभी सुखी रह सकते हैं, जब यह शराबरूपी राक्षस हमारे यहाँ से भाग जाय। हमलोगों को अपने शराबी पतियो की कितनी मार खानी पड़ती है। लेकिन क्या सचमुच शराब की दुकानें बन्द होगी? अरे दीदी, ऐसा होता तो हम सबकी हालत सुधर जाती। देखती नहीं, पड़ोसवाली दीदी के सभी कपड़े फटे हुए हैं, बच्चे भूखे हैं, पर उनके पति हमेशा शराब मे बेहोश पड़े रहते हैं!"

इस प्रकार पूर्वतैयारी का कार्यक्रम चलता रहा, और धीरे-धीरे आन्दोलन की हवा बनने लगी।

१५ मार्च '७०

सायकाल शराब की दुकान के सामने धरना देनेवालों ने शान्ति-केन्द्र की प्रार्थना पूरी ही की थी, कि दफा १४४ लगने का ऐलान सुनायी दिया। पहले ही यह निश्चय हो गया था, कि हम शान्ति-सैनिक जन-आन्दोलन को शान्त और व्यवस्थित बनाने के लिए बाहर रहेंगे, महिलाओं के दूसरे दल के साथ सुन्दरलालजी धरने को

→भूमिहीन और भूमिवान के बीच इकरू सवाल शुरू होता है तो किस तरह की चुनौतियाँ सामने आती हैं, इसका अनुभव आगे के काम के लिए बहुत उपयोगी होगा।

शिविर की बहनो ने अभियान मे महत्वपूर्ण काम किया। ये बहनें इसके पहले कभी भी सार्वजनिक काम के लिए गाँवों मे घूमी नहीं थीं। किन्तु इस बार ग्रामस्वराज्य का सन्देश बहुत ही असरदार ढग से घर के आँगन तक पहुँचाया, उसके कारण बड़ी अनुकूलता पैदा हुई। सभाओं मे उनके कारण बहनो की भी बहुत अच्छी उपस्थिति रहती थी।

छात्रों ने भी खूब मेहनत की। सुबह से बहुत रात बीते तक वे गाँव मे घूमकर ग्रामस्वराज्य की चर्चा करते थे। समय पर भोजन-नाश्ता मिले, इसकी चिंता नहीं, लोगो द्वारा किये जा रहे व्यगो की परवाह नहीं। बार-बार कहते रहे, "विद्यालयों की चहारदीवारी मे हमारी शक्ति बेकार क्षीण होती है, और हमारा समय बेकार जाया होता है। ऐसे कामों मे आप लोग हमे जब भी खोजेंगे, हम खुशी से शामिल होगे।" छात्रो की मेहनत और लगन को देखकर बहुत भरोसा हुआ।

निष्पत्ति की दृष्टि से इस अभियान को सफलता मिली ऐसा नही कहा जा सकता, किन्तु कार्यकर्ताओं का मनोबल ऊँचा हुआ, और यदि लगे रहे तो सफलता जरूर मिलेगी, ऐसा महसूस हुआ।

—कैलाश प्रसाद शर्मा

बहनों को भी छुट्टी दे दी गयी, फिर भी बहनें दुकान पर आती-जाती रहीं। हम साथी भी अपने-अपने घरों को चले गये थे। शाम को चर्चा हुई, लोगों की राय थी कि अभी विश्वास नहीं करना चाहिए। तय हुआ कि जिले में २० मार्च को पूर्ण हड़ताल रहे।

१९ मार्च '७०

आज काफी जोरों की वर्षा हो रही थी, फिर भी सारे बाजार में बहनें हाथों में छाते लिये दिखाई दे रही थीं। बहनों की बहुत बड़ी संख्या जुलूस में शामिल होने आयी थी। सबने तय किया कि जुलूस के बाद डाकखाने के पास एक सभा होगी। बहनें जोश के साथ नारे लगा रही थीं। सारी भीड़ को नियन्त्रित करते-करते मैं काफी भीग चुका था। आज जिला परिषद के अध्यक्ष भी जेल जाने के लिए घर से तैयार होकर आये थे। सभा में बोलनेवालों तथा सुननेवालों को वर्षा की तनिक भी परवाह नहीं थी। कितना अद्भुत दृश्य था वह!

सायंकाल बाजार में आतंक फैल गया। अफवाहें फैल गयीं कि कल के जुलूस में बाजार लूटा जायगा, गोली-कांड होगा, और हजारों की जानें जायेंगी। पुलिस के डंडे और गोलियाँ भी तैयार थीं, क्योंकि अब उनको बहाना मिल गया था कि शराब की दुकान बन्द हो गयी, और अब जो जुलूस निकल रहा है, उसमें बाजार में लूटमार करने की तैयारी है। मैंने बाजार में जैसे ही प्रवेश किया, कई सरकारी कर्मचारी एवं व्यापारी मुझसे मिले और कहने लगे, "हम सब हमेशा आपके साथ हैं, पर कल क्या होनेवाला है? न जाने कितने को प्राणों से हाथ धोना पड़ेगा! आपसे निवेदन है कि कल के जुलूस में शामिल न होना। इनका सोचना भी कुछ-कुछ ठीक ही था, क्योंकि इसके पूर्व कई छोटे-मोटे आन्दोलनों में लोग गोली के शिकार हो चुके थे। मैंने इन सब साथियों को ढाढस बंधाते हुए कहा, "मेरा काम शराब-बन्दी तक ही सीमित नहीं है। मैं तो विनोबाजी का शान्ति-सैनिक हूँ। पूरे देशभर में शान्ति-सेना काम करती है। जहाँ अशान्ति फैलने की आशंका होती है, वहाँ हमें पहुँचना आवश्यक हो जाता है। मैं कल पूरा प्रयत्न करूँगा कि न तो पथराव हो, और न ही गोली चले। मगर यदि ऐसा हुआ भी, तो उसमें सर्वप्रथम शांति-व्यवस्था कायम करते हुए मेरा बलिदान होगा।"

२० मार्च '७०

प्रातः ही अपने साथियों को इकट्ठा किया, और उनसे कहा कि अब परीक्षा की घड़ी आ गयी है। सब कफन बाँधकर निकल आओ, अपने प्राणों की बाजी लगाते हुए यदि हमने शांति-व्यवस्था कायम की, तो हम गांधी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित करेंगे। जुलूस शहर से २ मील दूर से निकलनेवाला था। शान्ति-सेना का केसरिया साफा झोले में रखकर जुलूस में शामिल होने के लिए मैं निकल पड़ा। रास्ते में परगनाधिकारी मिले, जीप खड़ी करके कहने लगे, आप मीटिंग में चलें, मैंने कचहरी में एक मीटिंग बुलायी है। मैंने उनसे निवेदन किया कि अब जुलूस का समय हो गया है। शराबबन्दी से बड़ी जिम्मेवारी का काम तो शांति-व्यवस्था का है, इसलिए मेरा उसमें जाना बहुत जरूरी है।

गाँव-गाँव से सैकड़ों-हजारों भाई-बहन नारे लगाते आ रहे थे। कई लोग उत्तेजित नारों की ट्रेनिंग भी देने लगे। ऐसी स्थिति में किसीका विरोध करना भी सम्भव नहीं था। हाँ-में-हाँ मिलाते हुए अपने नारे लगाने शुरू किया, "उत्तराखंड की यही पुकार, दारू बन्द करे सरकार", "माँ-बहनों की यही पुकार, दारू बन्द करे सरकार।" बस फिर क्या था, सभी लोग वही नारे दुहराने लगे। जुलूस में लगभग ५ हजार तक भाई-बहनों ने भाग लिया। अपने साथियों, सर्वश्री चन्दन सिंह, हुकुम सिंह, रतन सिंह, ज्ञान सिंह, दलीप सिंह आदि को जुलूस व्यवस्थित बनाये रखने के लिए हर दस्ते के साथ जोड़ दिया। जुलूस बाजार होते हुए कचहरी की ओर बढ़ा। कचहरी में सब साथियों ने आग्रह किया कि तुम्हारे संयोजन में वहीं पर एक आम सभा की जाय। कचहरी में जाते समय कुछ लोगों ने 'मुर्दाबाद' के नारे लगाने शुरू किये। मैंने बहनों को मौन रहने का संकेत किया। बस, ऐसे नारों का किसीने उत्तर ही नहीं दिया।

इस सभा में सरला बहनजी भी उपस्थित थीं। सभा अपूर्व उत्साहमय वातावरण में पूरी हुई। इस शांतिपूर्ण कार्यक्रम के लिए बाजार के लोगों, सरकार के कर्मचारियों आदि सबने हार्दिक बधाई दी। और इस प्रकार जनशक्ति का एक अभियान सफलता की मंजिल पर पहुँचकर सम्पन्न हुआ।

—भवानी भाई

ज्ञानेश्वर महाराज की सहज-नम्रता

सहज-नम्रता की सर्वोत्तम मिसाल, जहाँ तक मराठी जनता का ताल्लुक है, ज्ञानेश्वर महाराज हैं। उन्होंने धर्मग्रन्थ में लिखा भगवत्प्रेरणा से, लेकिन पाठकों से प्रार्थना करते हैं—"न्यून ते पुरतें करा"। मेरे ग्रन्थ में जो कुछ न्यूनता रह गयी होगी। उसको आप पूर्ण करिएगा। सामने जो श्रोतृवृन्द बैठा है, उनसे प्रार्थना करते हैं कि जो न्यूनता होगी लिखने में, कथन में, उसकी पूर्ति आप करिएगा। फिर कहा, 'हम अधिक लिख गये होंगे तो वह निकाल दीजिएगा'—"न्यून ते पुरतें अधिक ते सरतें करणि आवें"। इतनी सहज नम्रता उस महापुरुष में थी। "ज्याचि विनय हे चि संपत्ति।"—नम्रता ही उनकी परम सम्पत्ति है। ऐसे जो सहज नम्र होते हैं वे अत्यन्त सहज भाव से सबके साथ घुल-मिल जाते हैं, एकरूप हो जाते हैं।

पवनार (वर्धा), दि० ८-१२-६९

—विनोबा

मंत्री का पत्र : उत्साह से संग्रह के काम में जुटने की अपील

प्रिय बन्धु,

पूज्य विनोबा को, ७५ वर्ष पूर्ति के अवसर पर एक करोड़ रुपये का एक ग्राम-स्वराज्य-कोष समर्पित करने के सम्बन्ध में प्रबन्ध-समिति ने १७-१९ मार्च को हुई पूना की बैठक में निर्णय किया है।

इस कोष के लिए अधिक-से-अधिक संग्रह किये जाने के महत्त्व के बारे में आपको ज्यादा लिखने की आवश्यकता नहीं है। विनोबा जैसे युग पुरुष के प्रति श्रद्धा और कृतज्ञता का प्रतीक तो यह होगा ही, साथ ही ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन के लिए भी इससे बहुत मदद मिलेगी। अर्थ-संग्रह के साथ साथ ग्रामदान आन्दोलन की जानकारी व्यापक रूप से लोगों तक पहुँचाने का यह अच्छा अवसर होगा।

कोष के लिए दानदाताओं से छोटे-बड़े दान प्राप्त करने के अलावा अगर हम व्यापक पैमाने पर 'सर्वोदय-मित्र' बनाने का कार्यक्रम आयोजित करेंगे तो धन-संग्रह तो होगा ही, आन्दोलन का विचार भी हम फैला सकेंगे। धन-संग्रह के लिए कूपन और रसीदें छपायी जा रही हैं। उनमें एक विशेष कूपन १ रुपया १५ पैसे का सर्वोदय-मित्र के लिए छपवाने का सोचा जा रहा है। इनका उपयोग आप अधिक-से-अधिक 'सर्वोदय मित्र' बनाने में करें। कूपन, रसीद बुक आदि के सम्बन्ध में केन्द्रीय समिति से जल्दी ही आपको आवश्यक सूचनाएँ मिलेंगी।

संग्रह का दूसरा तरीका, जो हमारे आन्दोलन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है वह गाँव-गाँव में अन्न-संग्रह का है। देश भर में करीब डेढ़ लाख गाँवों का ग्रामदान हो चुका है। इसके अलावा अन्य बहुत-से गाँवों से खादी तथा अन्य रचनात्मक कामों के जरिये हमारा सम्बन्ध आता है। इनमें से, जितने अधिक-से-अधिक हो सकें उतने, गाँवों के किसानों से हम अन्न संग्रह करें तो कोष में तो वृद्धि होगी ही, साथ ही गाँव गाँव के लोगों को ग्रामस्वराज्य आन्दोलन की जानकारी होगी और गाँव वालों को उसमें हाथ बँटाने का अवसर मिलेगा। सौभाग्य से अभी तत्काल रबी की फसल कट रही है। अगर आप तुरन्त कदम उठायेंगे तो इसी फसल से अच्छा संग्रह हो सकता है। अतः आप कृपया तुरन्त अपने क्षेत्र में सम्बन्धित कार्यकर्ताओं तथा संस्थाओं को इस काम के लिए लिखें।

आपके प्रदेश में इस प्रकार जितने गाँवों में जितना अन्न संग्रह हो, उसकी जानकारी केन्द्रीय कार्यालय को नीचे लिखे पते पर भेजें।

देश भर में कम-से-कम एक करोड़ रुपये की राशि इकट्ठी करने का तय किया गया है। समय कम है इसलिए तुरन्त उत्साहपूर्वक इस काम में लगने की आपसे प्रार्थना है।

ग्रामस्वराज्य-कोष,
(केन्द्रीय कार्यालय)
७, राजघाट कॉलोनी,
नयी दिल्ली-१

आपका,
सिद्धराज ढड्ढा
मंत्री

सर्वोदय और अणुव्रत राष्ट्रोत्थान का नैतिक आन्दोलन

आचार्य श्री तुलसी और विनोबा का संयुक्त वक्तव्य

वर्धा। गत २३ अप्रैल को यहाँ गोपुरी स्थित शांति-कुटी में अणुव्रत आन्दोलन के प्रणेता आचार्य श्री तुलसी और आचार्य श्री विनोबा भावे के बीच हुई दो विचार-गोष्ठियों के परिणामस्वरूप निम्नलिखित संयुक्त वक्तव्य प्रसारित किया गया है

"अणुव्रत आन्दोलन एवं सर्वोदय-आन्दोलन मानव की नैतिक पृष्ठभूमि को सुदृढ़ बनाने एवं सर्वतोमुखी विकास एवं स्वस्थ राष्ट्र-निर्माण के लिए सतत प्रयत्नशील है। इस दिशा में दोनों आन्दोलनों में अनेक सेवक व कार्यकर्ता देश भर में काम कर रहे हैं। कार्य की दृष्टि से दोनों की अपनी-अपनी सीमाएँ हैं। ऐसा होते हुए भी दोनों आन्दोलन एक दूसरे के सहयोगी व पूरक के रूप में काम कर सकते हैं और इससे कार्य को अधिक शक्ति व गति मिल सकती है। अतः हमारा निवेदन है कि

अणुव्रत आन्दोलन के कार्यकर्ता ग्रामदान के विचार को जन-साधारण को समझाने के प्रयत्न करें। और सर्वोदय-आन्दोलन के कार्यकर्ता अणुव्रतों को अपने जीवन में अपनायें।

दोनों आन्दोलनों के कार्यकर्ताओं का निम्नलिखित समान (कामन) कार्यक्रम रहे :

(१) शासन मुक्त समाज-रचना का विचार, जन-साधारण को समझायें।

(२) बढ़ती हुई आबादी की रोकथाम के लिए ब[illegible] के पालन पर बल दें, कृत्रिम [illegible] पर नहीं।

(३) चुनाव-शुद्धि के लिए दलगत राजनीति को प्रश्रय व प्रोत्साहन न देने और चरित्र को महत्त्व देने के लिए लोकमत को शिक्षित करें।

(४) समाज व सरकार में व्याप्त बुराइयों का ओजस्वी भाषा में प्रतिवाद करें।

(५) अणुव्रत व सर्वोदय—दोनों आन्दोलनों के कार्यकर्ताओं के समय-समय पर संयुक्त शिविर हों, जिनमें पारस्परिक विचार-विमर्श किया जाय।

ऋषभदास रांका
उपाध्यक्ष
अणुव्रत समिति

ठाकुरदास बं[illegible]
मंत्री
सर्व सेवा संघ

पूर्णिया में किसान-गोष्ठी

गत १०-११ अप्रैल को पूर्णिया (बिहार) में प्रगतिशील किसानों की एक गोष्ठी हुई। गोष्ठी की अध्यक्षता श्री राममूर्तिजी ने की। अन्त में श्री जयप्रकाशनारायणजी ने भी गोष्ठी को सम्बोधित किया।

प्रगतिशील किसान कौन? सबसे पहले प्रश्न छिड़ा। गोष्ठी में बड़े किसानों की—बिहार में बड़ा किसान सैकड़ों बीघे जमीन रखता है—संख्या अधिक नहीं थी, लेकिन जो थे वे सोचने-समझनेवाले थे। उन्होंने यह परिभाषा फौरन अस्वीकार कर दी कि जो खेती में मशीनें इस्तेमाल करता हो, ज्यादा पैदा करता हो, अधिक पैसे कमाता हो। आज अनेक ऐसे बड़े किसान हैं जो खेती, व्यापार महाजनी, तीनों करते हैं और 'हरित क्रान्ति' के नाम में बेतहाशा कमाई कर रहे हैं। इतना कर लेने मात्र से कोई प्रगतिशील नहीं हो जायगा। प्रगतिशील वह होगा जो नये जमाने के नये सवालों पर नये ढंग से सोचने को तैयार हो।

इस दृष्टि से नये सवालों को तीन वर्गों में बाँटा गया – (१) किसान और सरकार, (२) किसान और उसके पड़ोसी मजदूर और बँटाईदार, (३) किसान और ग्रामदान।

बिहार में खेती के क्षेत्र में बँटाईदार का प्रश्न सबसे अधिक जटिल है। अकेले पूर्णिया जिले में—वहां सबसे अधिक है—किसानों (मालिकों) और बँटाईदारों के बीच ६० हजार 'टाइटिल सूट' बरसों से अदालत में पड़े हुए हैं, जब कि १९५८ के सर्वे में हजारों बँटाईदारों ने मालिकों पर भरोसा किया, अपना नाम नहीं लिखवाया, या प्रलोभन में आकर बँटाई की जमीन से इस्तीफा दे दिया। मालूम नहीं इन मुकदमों का कब फैसला होगा! लेकिन गोष्ठी के हर सदस्य ने यह महसूस किया कि यह झगड़ा कानून से कभी सुलझ नहीं सकता। इसलिए बँटाईदारी के पूरे प्रश्न पर आमराय से ये बातें तय हुईं :

(१) बँटाईदारी के मामले संवाद-पद्धति (आपसी चर्चा और समझौता) से हल करने की जोरदार कोशिश की जाय। इस कार्य के लिए सरकार द्वारा मान्य समझौता-बोर्ड (कन्सिलियेशन बोर्ड) स्थापित किये जायें। (२) बँटाईदार मालिक की जो जमीन जोतता है उसका एक अंश—समझौते से जो तय हो—स्थायी रूप से तथा कानूनी तौर पर—बँटाईदार को दे दी जाय। (३) शेष भूमि को यदि मालिक चाहे तो वापस ले ले, और खुद खेती करे या निजी समझौते के आधार पर किसी दूसरे को दे। (जाहिर है कि मालिक की कुल भूमि 'सीलिंग' के अन्दर ही होगी।) यह भी विचार हुआ कि क्रमशः बँटाईदारी की प्रथा समाप्त कर दी जाय।

इसी तरह 'सीलिंग' पर विचार हुआ। यह मान्य हुआ कि आज जो सीलिंग है उसे कम किया जाना चाहिए। और 'परिवार' की नये सिरे से परिभाषा करनी चाहिए। कितना कम किया जाय यह सोचकर तय किया जाय। दूसरी बात यह मान्य हुई कि सीलिंग के अलावा 'लेवी' भी लागू की जाय जिसका कानून पहले से बिहार में मौजूद है। कानून में १/६ से १/३ तक लेवी रखी गयी है। लेकिन सीलिंग के भीतर जो जमीन लेवी में ली जाय उसका उचित मुआवजा दिया जाय।

बँटाईदारी और लेवी के अलावा तीसरा प्रश्न मजदूरी का था। मजदूरी के सम्बन्ध में नया विचार यह मान्य हुआ कि जहाँ नये साधनों के कारण खेती अच्छी हो रही है वहाँ मालिक खेती का खर्च (जिसमें लगान आदि भी शामिल हैं) काटकर अपनी शुद्ध आय (नेट इनकम) का एक भाग अपने स्थायी श्रमिकों को सामान्य दैनिक मजदूरी के अलावा बोनस के रूप में दे। सरकार मजदूरी के लिए कन्ट्रोल के मूल्यों पर अन्न उपलब्ध कराये, ताकि उसके पैसे की कीमत एक सीमा के नीचे न गिरने पाये।

किसान और सरकार तथा किसान और ग्रामदान पर पूरी चर्चा नहीं हो सकी, लेकिन ग्रामदान के बाद का उसकी शर्तों के अनुसार पुष्टि-कार्य होना चाहिए इस पर सहमति रही। जे० पी० ने भी जोर दिया कि सीलिंग काफी कम की जाय, ग्रामदान के बाद का काम हो, और समझौते के रास्ते से झगड़े तय किये जायें। लेकिन उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि जो विचार मान्य हो चुका है उसे लागू करने के लिए अनुकूल क्षेत्रों में 'सत्याग्रह' (असहयोग, अनशन आदि) की बात शीघ्र सोचनी चाहिए, क्योंकि परिस्थिति ऐसी हो गयी है कि जनता की उचित मांगों को टाला नहीं जा सकता।●

बिहार में कानूनी ग्रामदान-पुष्टि-कार्य

—जनवरी '७० तक की उपलब्धि—

बिहार से प्राप्त जानकारी के अनुसार बिहार के दरभंगा, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया तथा संतालपरगना जिलों में बिहार ग्रामदान अधिनियम के अनुसार पुष्टि का जो कार्य जनवरी '७० तक हुआ है उसकी उपलब्धि निम्न प्रकार है

कुल १,२३१ गाँवों के ग्रामदान-समर्पण-पत्र पुष्टि-कार्यालय में दाखिल हुए। इन गाँवों के कुल ५२,०२६ समर्पण पत्रों में से १८,२७३ भूमिवानों और ३३,७५३ भूमिहीनों के थे। इनमें से १२,६०० भूमिहीनों और ३१,१४८ भूमिहीनों को ग्रामदान-पुष्टि के लिए अधिनियम के अनुसार नोटिस जारी की।

अधिनियमानुसार कुल १,०९३ गाँव पुष्ट हुए, जिनमें १५,९६९ भूमिवानों, तथा २९,१३८ भूमिहीनों के, इस प्रकार कुल ४५,१०७ समर्पण-पत्र थे। कुल ७८१ समर्पण-पत्र रद्द हुए और ६७० विचाराधीन हैं। अब तक कुल ३०४ गाँवों का गजट हुआ है, और ११४ ग्रामसभाएँ बनी हैं।●

सर्व सेवा संघ, प्रधान कार्यालय से

संगठन के सम्बन्ध में कुछ स्पष्टीकरण

प्रबन्ध समिति की १७ से १९ मार्च '७० की पूना बैठक में संगठन को व्यापक बनाने के सम्बन्ध में इस बार गहराई से विचार हुआ। संगठन की आज स्थिति यह है कि देश में कुल मिलाकर केवल १०० जिलों में जिला सर्वोदय मंडल हैं, लेकिन इनमें भी सक्रिय थोड़े ही हैं। लोकसेवक कुल मिलाकर दो हजार हैं। सर्व सेवा संघ के मौजूदा विधान में कुछ बातें अस्पष्ट हैं, जिनके कारण व्यवहार में, खासकर लोकसेवकों के बनने, सर्वोदय मंडलों के गठन तथा प्रतिनिधियों के चुनाव आदि में, उलझन पैदा होती है। उक्त संदर्भ में प्रबन्ध समिति की बैठक में लिये गये निर्णय के अनुसार उनका स्पष्टीकरण निम्न प्रकार किया जा रहा है :

१. नये बननेवाले लोक-सेवकों के निष्ठापत्र सामान्य तौर पर जिला सर्वोदय मण्डल या जिले में सर्वोदय मण्डल नहीं हो तो प्रान्तीय मण्डल के पास दाखिल किये जायँ और वहाँ स्वीकृत होकर नये लोकसेवक का नाम अधिकृत सूची में दर्ज किया जाय। रजिस्टर में लोकसेवक और क्रमांक लिखने के बाद निष्ठापत्र की एक प्रति प्रादेशिक सर्वोदय-मण्डल तथा एक प्रति सर्व सेवा संघ के कार्यालय में भेजी जाय। संगठन में प्रवेश के लिए आवश्यक या अनुचित रुकावट न हो, इसके लिए अस्वीकृत निष्ठापत्र के सम्बन्ध में प्रादेशिक या केन्द्रीय संगठन से पुनः विचार के लिए प्रार्थना की जा सकती है।

२. पहले से चले आ रहे लोकसेवकों द्वारा, जिनके नाम अधिकृत सूची में दर्ज हैं, किया हुआ अनुमोदन ही मान्य रहेगा।

३. संघ विधान के नियम नं० २ में उल्लिखित प्राथमिक सर्वोदय-मण्डलों की मान्यता सर्व सेवा संघ द्वारा होना उचित होगा। प्राथमिक सर्वोदय मण्डलों की संख्या बहुत बढ़ जाय तब यह कार्यवाही प्रान्तीय या जिला सर्वोदय मण्डल कर सकते हैं।

४. प्रतिनिधि के चुनाव के लिए लोकसेवकों की सभा जिला सर्वोदय-मण्डल बुलाये। जहाँ जिला सर्वोदय मण्डल न हो, उस जिले के प्रतिनिधि के चुनाव के लिए लोकसेवकों की सभा बुलाने का काम प्रादेशिक सर्वोदय मण्डल करे।

५. लोकसेवक व्यापक रूप से बन सकें इसके लिए लोकसेवकों की अन्य सब निष्ठाएँ कायम रखते हुए, मुख्य समय व चिंतन की शर्त को ढीला किया गया।

"अपनी आजीविका के लिए लगनेवाले समय एवं चिंतन को छोड़कर बचे हुए समय एवं चिंतन का मुख्य भाग देनेवाला व्यक्ति और अन्य सब निष्ठाओं का पालन करनेवाला व्यक्ति लोकसेवक हो सकता है।" निष्ठा पत्र में इस आशय का परिवर्तन किया जाय।

सर्व सेवा संघ,
गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र)

मंत्री

लोकनीति कार्यक्रम

१. दलमुक्त राजनीति या वास्तविक लोकशाही अर्थात् लोकनीति की रचना का काम नीचे से यानी ग्रामसभा की बुनियाद से शुरू करना होगा।

२. इस दृष्टि से ग्राम पंचायतों का चुनाव सर्वसम्मति से या सर्वानुमति से हो, और राजनैतिक दलों के हस्तक्षेप से मुक्त हो, ऐसी कोशिश की जाय।

३. पंचायती राज क्षेत्र में लोगों द्वारा नामजद किये गये व्यक्ति चुनाव में खड़े हों ऐसा प्रयास किया जाय।

४. खासकर शहरों में और नगरों में लोकशाही के मूल्यों की तथा व्यवहार की निगरानी के लिए नागरिकों की समितियाँ बनें, जिनमें बुद्धिवादी वर्ग के लोग विशेष तौर पर हिस्सा लें।

५. बादशाह खान, विनोबाजी और जयप्रकाश नारायण के संयुक्त वक्तव्य के उत्तर में कई पत्र आये हैं। इनसे स्पष्ट होता है कि इस वक्तव्य के प्रति जागृत व्यक्ति इस तरह के काम के लिए आगे आ सकते हैं। इस वक्तव्य को व्यापक पैमाने पर प्रसारित करना चाहिए और जिनकी ओर से उत्तर आये हैं, उनसे सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास होना चाहिए। उनके नाम प्रादेशिक सर्वोदय मण्डलों को भेजे जायँ।

६. आमतौर से मतदाता शिक्षण का काम व्यापक पैमाने पर आयोजित किया जाना चाहिए।

७. इस काम में शिक्षक-वर्ग की विशेष सहायता हो सकती है। इसी प्रकार से प्रौढ़ शिक्षा परिषद, लोकसेवक संघ, महिला मण्डल आदि से सहयोग प्राप्त करने का काम प्रदेश तथा जिला सर्वोदय मण्डलों को करना चाहिए।

८. दलों का निर्माण होने तथा उनकी कार्यवाही इत्यादि के बारे में गहराई से अध्ययन हो। इस विषय पर विचार-गोष्ठियाँ आयोजित की जायँ।

[सर्व सेवा संघ की नयी प्रबन्ध समिति की बैठक में लोकनीति के सम्बन्ध में स्वीकृत कार्यक्रम]

भण्डारा जिले में अखिल भारत ग्रामदान-अभियान

वर्धा, ९ अप्रैल। महाराष्ट्र सर्वोदय-मण्डल के तत्त्वावधान में गत ४ अप्रैल से भण्डारा जिले में अखिल भारत ग्रामदान-अभियान शुरू हुआ है, जिसमें महाराष्ट्र के प्रमुख कार्यकर्ताओं के अलावा विभिन्न प्रदेशों के अनुभवी ग्रामदान कार्यकर्ता भाग ले रहे हैं। मध्यप्रदेश से अभियान में भाग लेने के लिए प्रदेश सर्वोदय-मण्डल के अध्यक्ष श्री नरेन्द्रकुमार दुबे, गांधी स्मारक-निधि के वरिष्ठ सेवक श्री अब्दुल हमीद साहिब तथा श्री शिवनाथ शर्मा गये हुए हैं।

उक्त अभियान का मुख्य उद्देश्य विभिन्न प्रदेशों में चल रहे ग्रामदान-प्राप्ति अभियानों की कार्य-विधियों में एकरूपता लाने के लिए प्रयोग एवं प्रशिक्षण है। ●

भूदान-यज्ञ २०-४-'७० रजिस्टर्ड नं० एल ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए ३४

आचार्यकुल : मानवीय एकता और अखण्डता का स्वर

—महान कवयित्री महादेवी वर्मा के उद्‌गार—

कानपुर विश्वविद्यालय के तत्वावधान मे, पिछले महीने डी० ए० वी० डिग्री कालेज, कानपुर के आडिटोरियम मे आचार्यकुल की एक बैठक हुई। सभा की अध्यक्षता डी० ए० वी० कालेज के प्राचार्य श्री राजस्वरूप माथुर ने की। केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के संयोजक श्री वंशी-धरजी ने आचार्यकुल के सिद्धान्त और संगठन पर प्रकाश डाला और हिन्दी की प्रख्यात कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा से प्रार्थना की कि वे अध्यापकों को दलगत राजनीति से मुक्त होकर सार्वभौम सत्य का माध्यम बनने के लिए प्रेरित करें।

श्रीमती महादेवी वर्मा ने आचार्यों को सम्बोधित करते हुए कहा, "भाई वंशीधर ने कहा है कि 'आचार्यकुल' की संकल्पना विनोबा का ऐसा स्वप्न है, जिसमे लोक-मंगल का कल्याणकारी तत्त्व अन्तर्निहित है। लोक-कल्याण के स्वप्न की एक विशेषता होती है। वह एक आंख का स्वप्न नहीं रह जाता। अनन्त आँखें इस स्वप्न को देखती है। विनोबा का यह स्वप्न अनन्त आंखों का स्वप्न होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

"मानवता के कल्याण के जितने स्वप्न भारतवर्ष ने देखे हैं, उतने किसी दूसरे देश ने नहीं। उन्हीं सपनों की शृंखला में आता है, विनोबा का यह स्वप्न, जिसको साकार-करने का उत्तरदायित्व हमारा और आपका है।

"आज देश मे सब कुछ टूटता और बिखरता दिखाई दे रहा है। यदि भारत खंड-खंड में बँट गया, तो मानव की एकता और अखंडता का स्वर कहाँ से उठेगा? भारत का राजनीतिज्ञ इस बिखराव को रोक नहीं पा रहा है। भारत का आचार्य ही इसकी एकता को अक्षुण्ण रख सकेगा। इसीलिए विनोबा ने आचार्य-कुल का आह्वान किया है। हम उनकी सुनें, और उनके सपने को साकार करें। इसीमें हमारे देश का और अखिल मानवता का कल्याण है।

"किसी भी राष्ट्र की सबसे बड़ी रचना उसका विद्यार्थी है, और सबसे बड़ा रचनाकार उसका आचार्य है। आचार्य यह रचना तभी कर सकता है, जब उसके हृदय में छात्र के लिए स्नेह हो। स्नेह की यह धारा जब ज्ञान के शिखर से आती है, तभी वह विद्यार्थी का निर्माण कर सकती है। इसीलिए विनोबा आचार्यकुल में सतत मनन, अध्ययन और प्रेमपूर्वक शिष्य को पढ़ाने और सिखाने की बात करते हैं।

"आज देश के ही संकट का समय नहीं है, भारतीय मूल्यों के संकट का भी समय है। इन मूल्यों का सृजन भारत के आचार्यों ने ही किया है। उनकी रक्षा वह नहीं करेगा तो दूसरा कौन करेगा? परन्तु जो आचार्य स्वयं पीड़ित और खंडित है, खंडित सत्य को लेकर जी रहा है, वह पूर्णता का संदेश कैसे दे सकेगा? इसीलिए मैंने कहा है कि आचार्यकुल का स्वप्न विनोबा का ही नहीं, प्रत्येक शिक्षक का स्वप्न है। मैं इस स्वप्न को साकार करने का आह्वान करती हूं।"•

अल्मोड़ा में व्यापक शराबबन्दी हेतु जन-आन्दोलन

हिमालय के अल्मोड़ा जिले के ३४ भाई-बहन ४ अप्रैल '७० को जेल से रिहा कर दिये गये। शराबबन्दी अभियान के अन्तर्गत वे ३० मार्च को गिरफ्तार कर लिये गये थे, जब शराब की भट्ठी की सरकार द्वारा नीलामी हो रही थी। सत्याग्रहियों को धारा १४४ तोड़ने के आरोप में हिरासत में ले लिया गया। कौसानी लक्ष्मी आश्रम की प्रमुख कार्यकर्त्री सुश्री राधा भट्ट, देवकी कुंजवाल और उनके पति केदार सिंह, देवी पुरस्कार भी जेल में थे। उनके अलावा पाँच वकील, एक विद्यार्थी, एक पत्रकार, दोनों कांग्रेस, संसोपा, प्रसोपा, जनसंघ के सदस्य, एक मुस्लिम भाई, दो ब्लाक-प्रमुख, सब्जीवाले, खोमचेवाले जेल गये। जिस दिन वे पकड़े गये उनकी सहानुभूति मे सारे नगर की दुकानें बन्द रहीं। नगरवासी जेल में नित्य खाद्य-सामग्री पहुँचा आते। रोज जुलूस निकालते। मुकदमा चला, तो वकीलों ने सत्याग्रहियों की मुफ्त पैरवी की। सुश्री सरलादेवी भी आशीर्वाद देने आयीं। शराब की भट्ठी के सम्मुख सैकड़ों स्त्रियां प्रति-दिन धरना दे रही है। अल्मोड़ा के लिए बयालीस के आंदोलन के बाद यह पहला अवसर है जब पूरा नगर आंदोलित हो गया है। वातावरण अनुकूल है।

छः पहाड़ी जिलों में शराबबन्दी लागू हो गयी है, केवल यही एक जिला रह गया है। इसका एक राजनीतिक कारण यह भी बताया जाता है कि यहाँ का रानीखेत चुनाव-क्षेत्र श्री चन्द्रभानु गुप्त का है, जो वर्तमान मुख्यमंत्री श्री चरणसिंह के विरोधी हैं। किन्तु जनता के उमड़ते हुए उत्साह को देखते हुए अब शराबबन्दी होने में देर नहीं है। शराब के ठेकेदार ने स्वयं इस्तीफा दे दिया है, क्योंकि बिक्री पिछले माह से बन्द थी। अहिंसक सत्याग्रह जारी है। ग्रामदान के कारण शराबबन्दी का वातावरण बना है, क्योंकि अल्मोड़ा नगर के चारों ओर प्रखण्डदान हो चुके हैं। इस जिले के सोलह प्रखण्डों में से छः प्रखण्डदान घोषित हो चुके हैं। अन्य प्रखण्डों में कार्यकर्ता पहुँच नहीं पाए हैं।

— जगदीश पवानी

वार्षिक शुल्क . १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पं०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ३०
सोमवार २७ अप्रैल, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ४१२८५

अच्छे लोग, चुनाव, और लोकशाही

प्रश्न : सर्वोदय के अच्छे मंजे हुए लोगों को आप राजनीति में क्यों नहीं भेजते?

विनोबा : लोकशाही जो कहलाती है उसका स्वरूप समझने की जरूरत है। वह डेयरी के दूध के जैसी होती है। डेयरी का दूध यानी अनेक गायों के दूध का मिश्रण होता है। वह दूध किसी भी रद्दी गाय के दूध के बराबर का नहीं होगा, और किसी भी उत्तम गाय के दूध के बराबर नहीं होगा। वह औसत होगा। लोकशाही में जो चुनकर आयेंगे वे सर्वोत्तम नहीं हो सकते, न सर्वाधम। लोकशाही औसत काम करती है।

लोकशाही न उत्तम राज्य के बराबर होगी, न अधम राज्य के बराबर होगी, वह मध्यम होगी जैन होगी। मध्यम का अर्थ 'मिडिल लेवल' होगा। इसलिए उनमें जो चुनकर आयेंगे वे कौन होंगे? समझना चाहिए कि उसमें सर्वोत्तम चुनकर नहीं आयेंगे। जो सज्जन होंगे, वे पैसे खर्च नहीं कर सकते हैं। अपनी प्रशंसा और दूसरे की निन्दा भी नहीं कर सकेंगे, और उसके बिना उसको वोट नहीं मिलेगा। चुनाव में तीनों चीजें करनी होती हैं। बचपन में हमने एक कविता सुनी थी—'आत्मस्तुति, परनिन्दा, मिथ्या भाषण कभी न ये वदना।' यानी ये तीन चीजें मुख में कभी नहीं आनी चाहिए। मैंने कविता के नीचे लिखा : अपवाद—'इलेक्शन।'

जो इलेक्शन में खड़े होते हैं, वे कहते हैं कि हम फलाना-फलाना काम करेंगे। मान लीजिए, कल मैं अगर खड़ा होऊँगा तो मैं यह कहूँगा कि 'आर्मी डिस्बैंड' करूँगा। लोग कहेंगे, आपको सहस्र प्रणाम है। आपका व्याख्यान सुनने के लिए हम जरूर आयेंगे, लेकिन आपको वोट नहीं देंगे।

सर्वोत्तम पुरुष आज के 'इलेक्शन' के तरीके में भाग नहीं ले सकते। उनकी बातों को लोग मानेंगे नहीं। लोग यही कहेंगे कि ये वन्दनीय पुरुष हैं लेकिन हमारे काम के नहीं। इसलिए सर्वोत्तम पुरुष वहाँ नहीं जा सकते, तथापि जो वहाँ जायेंगे उनका शील, चारित्र्य कैसा होना चाहिए, इस बारे में लोगों को शिक्षित करना चाहिए। लोकमत को जगाना चाहिए। लोग पार्टी न देखें, चारित्र्य देखें। ऐसा लोकमत तैयार करने के काम में आप मदद दे सकते हैं। लेकिन हमारे लोगों को हम 'इलेक्शन' में खड़ा करेंगे तो आज बाहर रहकर वे जो काम कर सकते हैं वह नहीं कर पायेंगे, अन्दर गिरफ्तार हो जायेंगे। परिणाम यह होगा कि अनेकों के बीच उनकी आवाज दब जायेगी। यहाँ तो बाहर रहकर आवाज बुलन्द करते हैं तो जनता पर असर पड़ेगा। वहाँ जाने पर यह नहीं होगा। यह सब सोचते हुए हम ऐसी सलाह नहीं देते, कि 'इलेक्शन' में भाग लें।

गोपुरी, वर्धा, दिनांक : २-४-'७०

'भूदान-यज्ञ' के दो सक्रिय पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'भूदान-यज्ञ' को आद्योपान्त पढ़कर, उसके लेखों पर अपनी राय बनाकर उसका प्रचार हमउमर लोगों में जज साहब* (श्री कामतानाथ गुप्त) पूरी तल्लीनता के साथ करते हैं। 'भूदान-यज्ञ' जिस दिन उनको मिलता है, उसी दिन कम-से-कम दिनभर में दो-तीन बार शुरू से आखिर तक एक-एक लाइन और एक-एक शब्द पढ़ जाते हैं। सम्पादकीय को तो एकाग्र होकर पढ़ते हैं, और सिर्फ पढ़ते ही नहीं, कई-कई बार पारायण करते हैं। जब कभी मैं उनके यहाँ जाता हूँ तो एक बार मुझसे भी पढ़ाकर सुनते हैं, और प्रत्येक शब्द और वाक्य पर टिप्पणी करते हुए चलते हैं। जज साहब 'भूदान-यज्ञ' का 'पोस्टमार्टम' कर देते हैं, ताकि जब कभी कोई उनका अंक उठाकर पढ़े तो वह प्रत्येक शब्द का भाव अच्छी तरह से समझता चले।

और अगर उनका यह क्रियाकलाप स्वान्तःसुखाय ही होता तो कोई बात नहीं थी, वह चर्चा के लायक होती भी नहीं, परन्तु जज साहब को जो बात जँचती है, उनकी अपनी न्यायिक बुद्धि पर खरी उतरती है, उसका सार्वजनिक रूप से प्रचार भी करते हैं। 'भूदान-यज्ञ' के पिछले दो सम्पादकीय—समाजवादी सब, समाजवादी कौन? तथा संपत्ति और संविधान—इन दोनों के लिए मुझसे कहा कि बाजार में पैसे देकर टाइप कराओ और 'स्वतंत्र भारत' (लखनऊ से प्रकाशित प्रमुख दैनिक) में छपवाओ। मैंने उनकी आज्ञा का पालन किया और ये दोनों लेख आचार्य राममूर्तिजी के नाम से उक्त अखबार में छपे।

श्री जज साहब रोज सवेरे टहलने जाते हैं तो ग्रामदान का फोल्डर और आचार्यकुल का फोल्डर अपने झोले में लेकर जाते हैं। अन्य रिटायर्ड लोग जो उनकी तरह ही टहलने आते हैं, उनसे ग्रामदान की बातें करते हैं, और उक्त लेखों की चर्चा करते तथा बताते हैं कि अमुक दिन के अखबार में छपा था, आपने पढ़ा ही होगा। फिर उस लेख के भाव अपने शब्दों में बताते हैं।

इस उमर में भी जज साहब में गजब की स्फूर्ति है। कोई सर्वोदय की बात छेड़ दे तो वे अपना सब कुछ भूलकर उसे प्रारम्भ से लेकर अद्यतन आन्दोलन तक तफसील से बताते हैं। अगर कोई इस बारे में किसी पुस्तक की बात पूछता है तो दो पुस्तकें बताते हैं—'गाँव का विद्रोह' और 'राज्यदान के बाद क्या?' एक अजीब-सी लगन है उनमें।

सरकार के इतने जिम्मेदार पद पर रहने के बाद भी उनमें गजब की अहंकार-शून्यता है। सादगी और निष्कपटता तो बच्चों जैसी है। कोई जरा-सा भी बीमार हो जाये और वह सिर्फ खबर भेज दे तो जज साहब होम्योपैथी की दवाओं का बक्स लेकर उसके यहाँ पहुँच जाते हैं और फिर धीरे-धीरे सर्वोदय की बात बताकर ही आते हैं। उनको इस प्रकार के कामों में कभी थकावट नहीं आती, और न वे ऊबते ही हैं।

अभी 'भूदान-यज्ञ' में प्रकाशित 'सम्पत्ति और संविधान' वाला सम्पादकीय पढ़कर वे कुछ असमंजस में पड़ गये। भारतीय संविधान की कई मोटी-मोटी पुस्तकें खरीद लाये और उनको पढ़ा, तब सम्पादकीय पर अपनी पूरी स्वीकृति की मुहर लगायी, और कहा कि भाई, आचार्यजी ने पूरा संविधान ही निचोड़कर थोड़े में रख दिया है। बजटवाली सम्पादकीय में लिखित एक वाक्य पर अब वे पूरे बजट का अध्ययन करनेवाले हैं।

लखनऊ, २०-४-'७० —कपिल अवस्थी

* रिटायर होने के बाद से आपने अपनी पूरी शक्ति और प्रतिभा ग्रामस्वराज्य आन्दोलन को समर्पित कर दी है। उत्तर-प्रदेश के ग्रामदान-आन्दोलन में आपका प्रत्यक्ष महत्त्वपूर्ण योगदान प्राप्त हो रहा है।

× × ×

ता० १३-४-७० के अंक में आपके लिखे सम्पादकीय लेख दोनों पसंद आये। खासकर 'खुदा हाफिज' तो बार-बार पढ़ने को जी चाहता है। कितना जानदार बन पाया है वह लेख! आंदोलन में रुचि रखनेवाले हर व्यक्ति को चेतावनी देनेवाला अत्यन्त समयोचित लेख लगा। वैसे तो 'भूदान-यज्ञ' का नियमित पाठक हूँ। परन्तु इस बार का यह लेख इतना अच्छा लगा कि आपको पत्र लिखे बिना रहा नहीं गया।

यह पत्र एक पाठक तथा आंदोलन में रुचि रखनेवाले और प्रत्यक्ष कुछ करने की ख्वाहिश रखनेवाले अदने-से व्यक्ति के नाते लिखा। —अशोक बग

२०, सी० सी० ए० होस्टल,
नयी दिल्ली-१२

...तो खुदा हाफिज!

हमने बिहार अक्तूबर के अंत में छोड़ा। आज १५ तारीख है, ४॥ महीने हो गये। वहाँ 'अति तूफान' का संदेश दिया गया कि साल भर में जमीन का बँटवारा सब समाप्त होना चाहिए। बिना बीघा-कट्ठा बँटे ग्रामसभा एक ढोंग हो जायेगी। साफ शब्दों में उससे गाँव का कोई काम बनेगा नहीं, बल्कि गाँव में दो पक्ष होकर संघर्ष अटल होगा और वह संघर्ष जोरों से आ रहा है। बंगाल में खुल्लमखुल्ला माओवाली पार्टी माओ का नाम सामने रखकर चुनाव में खड़ी होती है, और उनको लोग वोट देते हैं। ऐसी हालत में बिहार ही बचा सकता है बंगाल को भी, और हिन्दुस्तान को भी। बिहार में इतना जो काम हुआ वह अगर कल कागजवाला साबित हो जाय, तो खुदा हाफिज!... —विनोबा

१५ मार्च '७०, गोपुरी (वर्धा)

एक करोड़

पूरा एक करोड़, कम नहीं !

ग्राम-स्वराज्य के प्रति-तूफानी अभियान के लिए धन भी चाहिए, और जन भी। हमारे सामने दोनों की कमी रही है—बेहद कमी। इस कमी के कारण हम अपने अच्छे-से-अच्छे, वस्तुत निराधार रहकर भी दिन-रात काम में लगे रहनेवाले कई साथियों को जीविका के लिए भी कुछ नहीं दे पा रहे हैं, और कई काम जो आन्दोलन की दृष्टि से अत्यंत आवश्यक हैं, नहीं कर पा रहे हैं।

अभाव की भी अपनी एक शक्ति होती है। शक्ति अभाव में पलती है, बढ़ती है। अभाव क्रान्तिकारी की कसौटी है। लेकिन जब अभाव मन और तन को तोड़ने लगे तो वह अवसर नहीं अभिशाप बन जाता है। उससे बचने की कोशिश में ही सर्व-सेवा संघ ने निर्णय किया है कि अगले ११ सितम्बर तक, जो विनोबाजी की उम्र के ७५ वर्ष पूरा होने का दिन होगा, हम एक करोड़ का कोष इकट्ठा करेंगे। निमित्त है सन्यासी का, जरूरत है गृहस्थों के आन्दोलन की।

कोष-संग्रह-अभियान का शुभारम्भ १८ अप्रैल को स्वयं राष्ट्रपति के ढाई हजार के दान से हुआ। उस दिन अनेक स्थानों पर छोटी-बड़ी रकमें इकट्ठा हुई होंगी। खबरें आ रही हैं कि शुरुआत अच्छी हुई है। जरूरत है लोगों के पास पहुँचने की।

दान पर कोई शर्त नहीं है। अपनी श्रद्धा से कोई ग्राम-स्वराज्य-कोष के लिए एक पैसा दे सकता है, कोई एक हजार, या उससे भी ज्यादा। समान आदर के साथ हम सबका सहयोग प्राप्त करना है। विशिष्ट दान देनेवाले विशिष्ट व्यक्ति ही होंगे। सामान्य तौर पर हमें सामान्य दान मिलेंगे। इस सम्बन्ध में हम दूसरी जगहों के लिए भी कुछ उस तरह की योजना सोच सकते हैं जो बिहार ने अपने लिए सोची है, यद्यपि वहाँ अभी तक काम कुछ खास नहीं हुआ है। योजना यह है कि राज्य की कुल जन संख्या के एक प्रतिशत को 'सर्वोदय-मित्र' या 'सर्वोदय-सहयोगी' बनाया जाय। 'सर्वोदय-मित्र' वह है जो आन्दोलन के लिए रोज एक पैसे के हिसाब से, साल में ३.६५ नकद, अथवा उस मूल्य का अन्न, या सूत दे। 'सर्वोदय सहयोगी' एक रुपया, अथवा उस मूल्य का अन्न या सूत दे। संख्या की दृष्टि से हम चाहे जितने सर्वोदय-मित्र, और चाहे जितने सर्वोदय-सहयोगी बनायें, हम यह सोच सकते हैं कि कुल कोष हम उतना इकट्ठा करेंगे जितना राज्य की १% जन-संख्या को सर्वोदय मित्र बनाने से होगा। इस योजना में हमें धन भी मिलेगा, और जन भी मिलेंगे। इस अवसर पर हम जितने मित्र और सहयोगी बनायेंगे उनमें से काफी ऐसे निकलेंगे जो हमारे स्थायी मित्र और सहयोगी बने रहेंगे। हमारा दायरा बहुत बढ़ जायगा, हमारी शक्ति बहुत बढ़ जायगी। हमारे आन्दोलन की जड़ें नागरिक-जीवन में पहुँचेंगी।

ग्रामस्वराज्य कोष केवल तीन वर्षों के लिए होगा। स्थायी कोष बनाकर सूद बटोरने की तो बात भी नहीं सोचनी चाहिए। उससे हमारा पुरुषार्थ टूटेगा, और हम आलस्य और ईर्ष्या के शिकार हो जायेंगे। हम काम आगे बढ़ाने के लिए साधन चाहिए जो तीन वर्षों में समाप्त हो जाय। उसके बाद फिर जरूरत होगी, और हम पात्र बन सकेंगे, तो समाज दूसरी किस्त देगा और काम को आगे बढ़ायेगा। इस संग्रह का $\frac{2}{3}$ भाग क्षेत्र में रह जायगा, सिर्फ $\frac{1}{3}$ भाग सर्व-सेवा संघ के पास अखिल भारतीय स्तर के कामों के लिए जायगा। यह बहुत अच्छा अवसर है स्थानीय अभिक्रम और संयोजन के लिए, जो आगे के काम की ठोस बुनियाद बन सकता है। श्री जयप्रकाशजी अध्यक्ष, और श्री सिद्धराजजी मंत्री—ऐसे समर्थ साथियों के नेतृत्व में हमारा अभियान सफल होगा, इसमें सन्देह नहीं।●

अभी मीलों चलना है !

३ मई को आजमगढ़ का जिलादान-समारोह, ४ मई को फैजाबाद का। इन दो को जोड़कर उ० प्र० में कुल ७ जिलादान हो गये। दोनों जिलादान श्री जयप्रकाशजी को समर्पित किये जायेंगे। उनसे बड़ा, और उनसे अच्छा, इस यज्ञ के लिए दूसरा पुरोहित कौन मिलता ? आज जब कि देश में चारों ओर सत्ता की अबाध उपासना चल रही है, वह ही एक व्यक्ति हैं जिनकी शान्ति-साधना शुरू से आज तक अखण्ड चलती आ रही है। उनके पौरोहित्य में दोनों समारोह यशस्वी होंगे, इसमें शक नहीं। और इसमें भी शक नहीं कि उनके उद्‌बोधन से उन सारे कार्यकर्ता-साथियों के सामने, जिन्होंने गाँव-गाँव में ग्रामदान का सन्देश और संकल्प पहुँचाया है, तथा उन सारे नागरिक मित्रों के सामने, जिनके सक्रिय सहयोग से ही इतना कठिन और बड़ा काम पूरा हुआ है, ग्रामदान के बाद ग्रामस्वराज्य तक पहुँचने के लिए अभी क्या-क्या करना है, उसका पूरा चित्र स्पष्ट होगा। कौन नहीं जानता कि ग्रामदान मुक्ति की एक लम्बी यात्रा का शुभारम्भ-मात्र है ?

अगर श्रेय देना ही हो तो इन दो जिलों के दान के लिए मुख्य रूप से श्री गांधी आश्रम, और ठोस सहायता के लिए हरिजन गुरुकुल, आजमगढ़ पूरे श्रेय के अधिकारी हैं। वास्तव में बिहार, और उ० प्र०, और उधर दक्षिण में तमिलनाडु, इनमें से हर जगह खादी की भरपूर शक्ति ग्रामदान को मिली है। खादी की शक्ति न होती तो ग्रामदान शायद अधूरा रह जाता। उसी तरह यदि ग्रामदान न आया होता तो खादी में उसके मिशन का क्या रह गया था ?

जिलादान बहुत बड़ी उपलब्धि है, लेकिन कोई कह सकता है, कि अपने में जिलादान क्या है? क्या सिर्फ कागजों का एक बड़ा ढेर नहीं है? नहीं, ढेर नहीं है, लोक-सम्मति का संकेत और प्रतीक है। अविरोधी समाज-परिवर्तन का सुनहला अवसर है। क्रान्ति की गाड़ी के लिए पटरी है जिस पर हम निःशंक चल सकते हैं।

यों तो उचित यह था कि जिस दिन जिले का पहला प्रखण्ड-दान हुआ उसी दिन पुष्टि का कार्य शुरू हो गया होता, लेकिन अब जिलादान समारोह के समाप्त हो जाने पर नया काम शुरू करने में एक दिन की भी देर क्रान्ति के संगठन और विकास की दृष्टि से अक्षम्य होगी। जितनी ही देर होगी हमारी सारी मेहनत पर पानी फिरता जायगा। बीघे में बिस्वा, ग्रामकोष, सरकारी ग्राम-सभा से अलग अपनी ग्रामस्वराज्य-सभा—ये अपने में निर्दोष कार्यक्रम हैं, लेकिन जब इनको पूरा करने का हमारी ओर से आग्रह होगा तो हम देखेंगे कि हस्ताक्षर और संकल्प, तथा संकल्प और उसकी पूर्ति में कितनी-कितनी रुकावटें हैं। कितने प्रकार के भय और संकोच लोक-मानस में भरे हुए हैं। कितनी गाँठें हैं जिन्हें खोलना आसान नहीं है।

लेकिन, कठिनाइयाँ चाहे जितनी हों, रुकना नहीं है। रुकने का अर्थ है खत्म हो जाना। क्या खत्म हो जाने के लिए हम भूदान से चलकर जिलादान तक पहुँचे हैं? साथी, अभी और चलना है! ●

●

सबका उत्तर : बीघा-कट्ठा का वितरण

रामपूर्ति : भूमिहीनों में प्रतिक्रिया तीव्र हो रही है, उसके कारण तरह-तरह के प्रश्न अपने मन में उठते हैं। बंगाल की हवा यहाँ सीधी आती है, और सिर्फ हवा ही नहीं, लोग भी आते हैं। यहाँ पर प्रश्न यह उठता है कि जो काम बंगाल में हो रहा है, 'सीलिंग' से अधिक जमीन पर हिंसा से कब्जा कर लेना, उस काम को यहाँ पर शान्तिपूर्वक क्यों नहीं किया जाता? क्योंकि सरकार ने कानून बना दिया है। सरकार लागू नहीं कर पा रही है तो कौन लागू करेगा?

विनोबा : इन सबका उत्तर है २०वाँ हिस्सा जमीन बाँटना। उसके अलावा उत्तर नहीं है। बहुटाल करके उत्तर नहीं। इससे थोड़ा उत्तर मिल जायगा। २०वें हिस्से का अर्थ काफी होता है। अब बिहार में ३।। लाख एकड़ जमीन बँटी है, १।। लाख एकड़ और मिल जाय तो पाँच लाख एकड़ जमीन बँट जायगी। इससे गाँवों में बल बढ़ेगा। ग्रामसभा बनाना, यही हमारा मुख्य उत्तर है सारे प्रश्नों का। और आप लोगों की अपनी ही सरकार बने। यह काम तो इसी आधार पर बनेगा, अगर यह जमीन का बँटवारा हुआ। नहीं तो गाँव-गाँव में झगड़े बढ़ेंगे, और आप चाहते हैं कि अपना मनुष्य खड़ा करें, तो वह बनेगा नहीं। इसलिए उसका बनना भी इस बँटवारे पर निर्भर है।

रामपूर्ति : लेकिन अगर ग्रामसभा बनाने के साथ-साथ बीघे-कट्ठे की शर्त का पालन करते हैं तो गति धीमी दिखती है।

विनोबा : ग्रामदान का मतलब है गाँव के हर एक मनुष्य का दान। जिसके पास जमीन है उसका २०वाँ हिस्सा मिलना चाहिए। छोटे लोग हैं तो गाँव को उतना पैसा लेकर छोड़ दे। परन्तु उतनी जमीन उसके बदले में दूसरा दे, यों करके जमीन पूरी करें, जितना गाँव का होता है। यह आग्रह रखना चाहिए। इसको हमारा आग्रह कम नहीं करना चाहिए, इस आशा से कि काम जल्दी हो जाय। जल्दी करना चाहते हैं तो पूरे सिद्धान्त के साथ करना चाहिए।

[१२-३-'७० , सोपुरी, पूर्णिया]

आदर्श के पीछे त्याग और बलिदान

"बोल्शेविज्म का... उद्देश्य निजी सम्पत्ति की पद्धति को मिटा देना है। यह आर्थिक क्षेत्र में अस्तेय-व्रत के नैतिक आदर्श का व्यावहारिक रूप ही है। और यदि लोग इस आदर्श को अपनी इच्छा से अपनाते या उन्हें शान्ति-पूर्वक समझाकर ऐसा करने पर राजी किया जा सके, तो इससे अच्छी कोई बात हो ही नहीं सकती। मेरा दृढ़ विश्वास है कि हिंसा के आधार पर किसी टिकाऊ चीज का निर्माण नहीं किया जा सकता। लेकिन कुछ भी हो, इसमें कोई सन्देह नहीं है कि बोल्शेविज्म आदर्श के पीछे असंख्य नर-नारियों का शुद्धतम त्याग और बलिदान है, जिन्होंने इसके लिए अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया है, एक ऐसा आदर्श, जिसे लेनिन जैसी महान विभूतियों ने अपने बलिदान से पवित्र कर दिया हो, वह व्यर्थ नहीं जा सकता। उनके त्याग का उदात्त उदाहरण सदा प्रोज्ज्वल रहेगा और समय की गति के साथ उस आदर्श को शुद्धता तथा अधिक वेग प्रदान किया जायगा।"

('यंग इंडिया' : १५ नवम्बर, '१९२८)

—मो० क० गांधी

आचार्य-संवाद

अणुव्रत और सर्वोदय

नथमलजी—एक ओर राजनीति का बल और दूसरी तरफ अध्यात्म और नैतिक बल, दोनों मे सामंजस्य की क्या मर्यादा मानते हैं ?

विनोबा—अणु का अर्थ मैं यह समझा हूँ कि महाव्रत देश, काल, समय अविच्छिन्न होता है, और अणुव्रत में थोड़ी छूट होती है। गृहस्थ की एक मर्यादा में उनका पालन करने की बात मानी गयी। उससे ज्यादा करें तो अच्छी ही बात है। कानूनी, नैतिक और आध्यात्मिक, ऐसी तीन प्रकार की परिभाषा है। जहाँ कानूनी ख्याल है वहाँ कानून यह अपेक्षा करता है कि कम से कम नीति के नियम जो बताये हैं उनका पालन मान्य हो। जैसे—चोरी न करना, यह कम से-कम बात है कानूनी तौर पर। लेकिन चोरी नहीं करने से आप बड़े सज्जन बन गये, नैतिक बात हुई, ऐसा नहीं। कानूनी तौर पर सजा नहीं होगी। लेकिन मानसिक पाप करें तो कानून सजा नहीं देता। कृति से दूसरे को पीड़ा दें, तो वह कानून में गलत माना जायेगा। तो वह अणु एक प्रकार से कानून बनाया। लेकिन उतने कानून से आपका समाधान नहीं है। कानून कम-से कम है। जो कानून भंग करेगा, वह मानवता से नीचे गिरेगा। वह पशुवत होगा। और आप मनुष्य को ऊँचा उठाना चाहते हैं। इतना ऊँचा नहीं कि हिमालय तक ऊँचा उठायें। लेकिन नीचे से ऊपर उठे, ऐसी मर्यादा आप अणुव्रतवाले रखना चाहते हैं।

आज के जितने भी राजनैतिक पुरुष हैं, दो-चार अपवादों को छोड़ दें, तो बाकी सभी पार्टी के ऊपर के जितने लोग हैं वे सारे आपकी बात सुनकर ''योग्य है, करना चाहिए। लेकिन हमसे नहीं बन सकता है, जनता से इतना ही हम करवा सकते हैं,' ऐसा कहेंगे। इस वास्ते अब वातावरण को ऊँचा उठा करके अहिंसा के लिए जनता को आप कितना तैयार कर सकते हैं, इस पर निर्भर है। मैं यह पसन्द करता हूँ कि हिन्दुस्तान में कम-से-कम अन्दर की शांति के लिए फौज का उपयोग न हो, यह मेरा विचार है। फौज का उपयोग छोड़ ही देना चाहिए मतलब आर्मी 'डिस्बैंड' करना चाहिए, यह मेरा अपना विचार है ही, लेकिन यह तब होगा जब हर देश के लोग फौज का त्याग करेंगे, और एक-दूसरे से डरेंगे नहीं। परन्तु देश के अन्दर के व्यवहार मे जगह-जगह जो दंगे वगैरह होते हैं वहाँ मिलीटरी की जरूरत न पड़े। और देश के नागरिक ही अपना काम कर रहे हैं ऐसी हालत होनी चाहिए, अन्दर के काम का बोझ मिलीटरी पर नहीं होना चाहिए। मतलब अन्दर का काम एक पुलिस, और दो-शांतिसैनिकों को करना चाहिए। पुलिस और शांतिसैनिक, ये दोनों इकट्ठा हो सकते हैं कि नहीं, यह सवाल है। पुलिस को आदेश है रक्षण करने का, मारने का नहीं, आत्म रक्षा के लिए मार सकते हैं। लेकिन यदि जरूरत से ज्यादा मारे तो उसकी तहकीकात होगी। मिलीटरी को यह भय नहीं है। उनको तो 'शूट' करने का आदेश है। पुलिस मार सकती है लेकिन जरूरत-से ज्यादा नहीं। इसलिए फौज से पुलिस का काम ज्यादा कठिन है। जनता की यानी नागरिकों की मदद मिली तो पुलिस भी पहले शांतिसैनिक होकर ही वहाँ जाये। मिलीटरीवालों से आपकी पहुँच होगी नहीं। लेकिन पुलिसवाले आपकी बात सुनने के लिए आयेंगे। उनसे आप कहें कि आप मारने के बजाय मरने के लिए तैयार हो जाइए। मारकर प्रतिकार करेंगे, मारकर नहीं। इस काम में गाँव के लोग यानी नागरिकों की मदद मिलती है तो वातावरण बनाने में कामयाब होंगे। ऐसा काम पुलिस और शांतिसैनिकों के जरिए हो। दंगा होने पर दौड़े जायें, यह तो ठीक ही है, लेकिन दंगा होने से पहले ही अन्दाजा लगे, इस दृष्टि से लोगों का परिचय होना चाहिए। हर एक परिवार के साथ परिचय रखना, यह भी हमारे कार्यकर्ताओं का कार्य होना चाहिए।

उसमें आपलोगों के जो अनेक सेवक हैं, हजारों की संख्या में उनकी मदद मिलनी चाहिए। आपलोगों की, यानी जैनियों की नहीं, आप सर्व-धर्म समभाव रखते हैं इसलिए दूसरे धर्म में भी जो सज्जन हैं उन सबकी, सहयोग की भूमिका शांति कार्य में उपस्थित की जा सकी, तो अणुव्रत आन्दोलन में यह एक बहुत बड़ा कदम होगा।

आ० श्री तुलसी—सर्व-धर्म समभाव के बारे में हमने मानवता की जो बात रखी है। दक्षिण की यात्रा में तीन मुख्य उद्देश्य कायम किये। १ मानवता का निर्माण, २ धर्म-समन्वय, ३ धर्म क्रान्ति। आजकल धर्म नाम के रह गये हैं, धर्म की रूढ़ि रही है और मूल निकल गया है। इसलिए आध्यात्मिक धर्म हो। जैसा कि आप कहते हैं कि अध्यात्म हो। धर्म के दिन निकल गये हैं। लोगों को इस बात का आश्चर्य हुआ कि धर्म-सम्प्रदाय के आचार्य अपने धर्म की बात न कहकर मानवता की बात बता रहे हैं।

विनोबा—धर्म-समभाव की बातें, जहाँ तक मैंने शास्त्र पढ़े हैं, मुझे लगा कि यह महावीर स्वामी की बात है, 'माध्यस्थ दृष्टि' है। हर वस्तु एक पहलू से सही होती है, यह उनका विचार है। यह बहुत बड़ी बात है कि किसीके भी पक्ष को तोड़ना नहीं, वह भी एक अर्थ में सही है। पूरे अर्थ में कोई भी बात सही नहीं होती। 'प्रमाण' अलग है, 'नय' अलग है। हरेक का अपना-अपना 'नय' है। यह जो उन्होंने बात कही वह सबसे मुख्य है। महावीर अहिंसा की बात भी कही, लेकिन यह नयी बात नहीं है। क्योंकि महावीर के पहले से वेद में भी आया है—'मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्, मित्रस्याहं

चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।' सारी दुनिया की तरफ मित्र की दृष्टि से देखना। महावीर की विशेषता यही है कि तटस्थ बुद्धि से देखना। जो उनके साथ बात करने आता था, उसकी भूमिका में जाकर वे बात करते थे। महावीर की सबसे बड़ी विशेषता यह मानी है कि जिस किसी सम्प्रदायवाले के साथ वे बात करते थे, उनकी श्रद्धा क्या है, तदनुसार बात करते थे। अपनी श्रद्धा उन पर लादते नहीं थे। मुझे लोग पूछते हैं कि जैनों की संख्या इतनी कम क्यों है? मैं कहता हूं, वे शक्करवाले हैं। वे शक्कर बने हैं। दूध में शक्कर डालकर लोग पीते हैं। उनको पूछा जाय क्या पीते हैं, तो कहते हैं, 'दूध पीते हैं।' कहते हैं, 'दूध मीठा है।' मीठी तो होती है शक्कर, जो दूध में चुपचाप रहती है। वैसे एक-एक धर्म के साथ एकरूप होकर हम चुपचाप उसमें रहें, और वे मीठे बने रहें।

ऐसी खोज हुई है कि महाराष्ट्र में विद्या देनेवाले लोग जैन थे। और उनके विद्यार्थी हिन्दू थे। लेकिन वे धर्म-परिवर्तन नहीं करते थे, जैसा कि क्रिश्चियनों ने किया। वे विद्यार्थियों को प्रथम—'ओम् श्रीगणेशाय नमः' सिखाते थे और फिर 'ओम् नमः सिद्धम्'। उसके बाद क ख ग सिखाते थे। पहले 'ओम् नमः सिद्धम्' नहीं, बल्कि पहले 'ओम् श्री गणेशाय नमः' सिखाते थे। इसलिए जैन धर्म जो थोड़ा-बहुत दिखता है वह भी लोप हो जायगा, मगर शक्कर बनकर सब दूर फैलेगा। जैन उसमें अपने को सफल मानेंगे—अपने अस्तित्व को मिटाने में, न कि संख्या बढ़ाने में।

आ० श्री तुलसी—जैन शास्त्र में ऐसा आया है कि कौन आदमी है, और किस मत को माननेवाला है, यह देखकर उससे बात करनी चाहिए—'कोयं पुरुषः कंच नतये।' किसको नमस्कार करता है।

विनोबा—यह सारा गोरखधन्धा हमने जवानी में किया। उसके लिए मागधी पढ़ी। मागधी का कोष प्राप्त किया। और आचारांग, उत्तराध्ययन, समय सार, कुंदकुंदाचार्य के ग्रन्थ इत्यादि जितना देख सका, सब देख चुका। अभी सब झमेले से मैं हट गया हूं। सन् १९२३ में हम जेल में थे। हमारे साथ एक जैन थे। उन्होंने हमें एक किताब दी थी। उसका नाम था—छह ढाला। जैन परिभाषा समझानेवाली वह सुन्दर किताब थी।

प्रश्न—अणुव्रतवाले और सर्वोदयवाले एक-दूसरे के पूरक और सहयोगी कैसे बन सकते हैं?

विनोबा—दोनों की अपनी-अपनी मर्यादाएं हैं। दोनों को एक-दूसरे की ये मर्यादाएं समझ लेनी चाहिए। अगर समझने में सम्यकत्व न रहा, तो निष्कारण अपेक्षाएं रहेंगी और फिर निराशा होगी। इसलिए सर्वोदयवालों की कुछ मर्यादाएं हैं, अणुव्रतवालों की कुछ मर्यादाएं हैं। उन मर्यादाओं में एक दूसरे की मदद मिलेगी, उतने में सन्तोष मानना चाहिए। जैसे सर्वोदयवाले अपेक्षा करेंगे कि अणुव्रत के सेवक गांव-गांव जायें और भूदान-ग्रामदान लोगों को समझायें, और हस्ताक्षर प्राप्त करें तो यह नहीं बनेगा, और यह गलत अपेक्षा होगी। ये विचार समझानेवाले हैं। विचार समझानेवाली जमात है तो इतना काम, ग्रामदान का, विचार बताने का, आपके लिए पर्याप्त है। फिर आपकी तरफ से यह अपेक्षा न रखी जाय कि जैसे आप प्रचार करते हैं, वैसे सर्वोदयवाले भी प्रचार करेंगे। लेकिन वे वैसा आचरण करें, यह अपेक्षा आप रख सकते हैं। प्रचार तो आप करते ही हैं। लेकिन आप जो कहते हैं, कम-से-कम न्यूनतम इतना तो करो, जो कानून से ऊपर है। उस मध्यम मार्ग का आचरण सर्वोदयवाले करें, न कि प्रचार। और ग्रामदान के प्रचार के लिए आपका आशीर्वाद रहे, और मानसिक सहयोग रहे। तीसरी बात, शिविर किये जायें, जिसमें दोनों इकट्ठा हों। उसमें एक-दूसरे के कामों का परिचय किया जाय, विचार की सफाई की जाय और काम की जानकारी दी जाय। (गोपुरी, वर्धा, २-४-'७०)

वेदांत और अध्यात्म का व्यावहारिक कार्यक्रम : ग्रामदान

—स्वामी रामानंद तीर्थ के उद्गार—

वेदांती संत स्वामी रामतीर्थ स्मारक ट्रस्ट के अध्यक्ष हैदराबाद के स्वामी रामानंद तीर्थ ने १२ अप्रैल को टिहरी के नागरिकों की एक सभा में कहा कि, "सन् १९७३ में सारे देश में स्वामी रामतीर्थजी की जन्म-शताब्दी मनायी जायेगी। इस अवसर पर उनके चुने हुए उपदेशों का एक संग्रह प्रकाशित किया जायेगा, जिसको अंतिम रूप देने का कार्य आचार्य विनोबा भावे करेंगे। टिहरी-स्थित गोलकोठी में, जहां स्वामी राम अंत तक रहे, स्वामी रामतीर्थ शान्ति-आश्रम स्थापित किया जायेगा। और यहां पर स्वामी राम के व्यावहारिक वेदांत का प्रचार करनेवाले कार्यकर्ताओं को अध्ययन की सुविधा दी जायेगी। स्वामी राम हिन्दुस्तान की गरीबी मिटाना चाहते थे, क्योंकि देश के प्रत्यक्ष जीवन में जब तक परिवर्तन नहीं आता, वेदांत और अध्यात्म तब तक पनप नहीं सकता। ग्रामदान के द्वारा यह कार्य हो रहा है। अतः ग्राम-स्वराज्य के वैचारिक और सामाजिक प्रशिक्षण का कार्य यहां होगा।"

स्मारक ट्रस्ट की ओर से १२ सदस्यों की एक स्थानीय सलाहकार समिति भी बनायी गयी, जो निर्माण-कार्यों को संपन्न करायेगी। समिति के संयोजक नगर के प्रमुख पत्रकार श्री सच्चिदानन्द पैन्यूली हैं और सदस्य सर्वश्री चिरंजीलाल भगवाल, शूरवीरसिंह, वीरेन्द्रदत्त सकलानी, कृष्णकुमार, इन्द्रसिंह, सुन्दरलाल बहुगुणा, टिहरी-नरेश के एक प्रतिनिधि, निर्माण-विभाग के अधिशासी अभियंता, जिला परिषद एवं नगरपालिका के अध्यक्ष होंगे। निर्माण-कार्य सितम्बर तक संपन्न होने की आशा है।

—सुन्दरलाल

सामयिक चिंतन

संत्रास की जागतिक भूमिका और भारतीय साहित्यकार का दायित्व

• महादेवी वर्मा

आज साहित्यकार की भूमिका अत्यन्त कठिन है। अमेरिका में तो बौद्धिकता पर यांत्रिकता की छाप है। इस ओर साहित्यकार की उपेक्षा है, तो उस ओर रूस में साहित्यकार कठिन बन्धनों में जकड़ा हुआ है। डाक्टर जिवागो का नाम हम जानते हैं, पर इस तरह के कितने ही वहाँ के नियन्त्रण के शिकार हो रहे हैं। इस प्रकार पूरा विश्व दो खेमों में बंटा हुआ है। भारतीय साहित्यकार की स्थिति बीच की है। कहीं इधर से प्रेरणा लेते हैं तो कहीं उधर से। साहित्य बिकने की वस्तु तो नहीं है, लेकिन हर दिशा उसे खरीदने को उत्सुक है। हम तो उस महान संस्कृति के गायक हैं, जिसने मानव को नया स्वर दिया था। अकेले तुलसीदास ने एक कमंडल लेकर मांग-मांग खाकर मध्ययुग को एक दिशा दे दी। तुलसी में भारत का हृदय बोला तभी वो इतने बड़े देश में यह सबंध रखे हुए हैं।

जीवन का स्वर मृत्यु से अधिक शक्तिवान है। स्वाधीनता के संघर्ष के युग में यही विशेषता थी कि हमारे संकल्प किसी क्षितिज पर नहीं रुकते थे। वह स्वप्न-द्रष्टा युग चला गया। साधना का युग बीत गया। हमने राजनीतिक स्वतन्त्रता को लक्ष्य मान लिया, वह तो साधन मात्र था। अब हम अपने-अपने जीवन को लिये बैठे हैं। जो जाति लक्ष्य के प्रति जागरूक नहीं, वह नष्ट हो जायगी। सरस्वती ने जो यह उत्तराधिकार हमें सौंपा है, यदि निभाते नहीं, तो कुपुत्र बनेंगे। नये निर्माण के लिए, नये सृजन के लिए नया हृदय चाहिए। हमारे कण्ठ में पहले जैसा बल नहीं। स्वाधीनता-संग्राम में साहित्यकारों ने बलिदान द्वारा ऐसा वातावरण पैदा किया था कि लाखों ने हंस हंसकर यातनाएं झेलीं। वही ओज और वर्चस्व साहित्यकारों में होता तो आज भोगवाद और भौतिकवाद की धारा इतनी प्रबल न होने पाती। भगीरथ न होते तो गंगा की धारा शंकर की जटाओं या कमंडल में ही कैद रह जाती, धरती पर कैसे आती? आज संस्कृति की गंगा अपने भगीरथ साहित्यकार की खोज कर रही है। राजनैतिक व्यक्ति से अधिक आशा नहीं की जा सकती है। राजनीतिक स्वतन्त्रता तो आत्मदान की स्थिति है, प्राप्ति या भोग की नहीं। यदि राजनीतिज्ञों ने यह बात समझ ली होती तो आज यह दशा न होती। यदि आज का साहित्यकार, कलाकार, शिक्षक, पत्रकार इस प्रवाह को नहीं रोक सकता, तो समझिए यह देश मर गया, तब आप मर्सिया गाइए, बस।

अब वह हृदय और आत्मा के शिल्पी कहाँ हैं, जिन्होंने भारत की एकता को गढ़ा और युगों से उसे बनाये रखा? भारत की एकता का स्वर परायी पीड़ा की अनुभूति में है। 'वैष्णवजन तो तेने कहिए जो पीर पराई जाणे रे।' चाहे नरसी मेहता हो या सन्त पोतना, सबमें करुणा की यही भावना मिलती है। इस विशाल देश को एक रखने का दायित्व जिन्होंने निभाया, उन मनीषियों के हम उत्तराधिकारी हैं। यदि हम यह कर्तव्य न निभा सकें, तो उनके प्रति अपघात जैसा होगा।

कोई स्रोत ऐसा नहीं जो मार्ग के प्रत्येक शिला से हाथ जोड़कर रास्ता मांगे। वह तो स्वयं अपना रास्ता बनाता जाता है। हमें भी मार्ग मांगना नहीं, स्वयं बनाना है। वैसा मार्ग अब भी बनायें समय है। जो अत्यन्त अतीतजीवी हो जाते हैं, वे अपना मूल्य खो बैठते हैं। हम अपने पिछले क्षण में नहीं जी सकते। अतीत तो हमें हमारे देश के विश्वास, आस्था और दर्शों का स्मरण दिलाता है। हम जीवन को विशाल करके देखते हैं।

समुद्र की अगाधता का प्रमाण है, उसकी मर्यादाशीलता। इसी प्रकार साहित्य जीवन को चारों ओर अगाधता एवं विराटता में घेरता है। साहित्य की अन्तर्वाणी जग तो हर दृष्टि में आमन्त्रण भर दे और नया स्वरूप फूट पड़े। साहित्य मुरझाये स्वप्न जगा सकता है। नयी गति, नयी दिशा दे सकता है। जीवन आज हमारी प्रतीक्षा में है, साहित्यकार अनगढ़ जीवन को गढ़ता है। साहित्यकार में यदि पराजय का भाव है तो हेय है। पराजय का विश्वास पराजय से भी अधिक हानिकर होता है। घने-से-घना अन्धेरा एक छोटे से दीपक को नहीं निकाल सकता। अंधकार के तरकश में कोई ऐसा तीर नहीं जो आलोक के हृदय को भेद सके। गांधीजी ने भारत की हर जाति को अपना लिया। हम आत्मा की चेतन-अणु की शक्ति समझें। भारत का साहित्यकार यदि एकता का स्वर उठाये तो, भय से त्रस्त सारी मानवता उसे सुनेगी।

सुख के साधनों से सम्पन्न अमेरिका में भी आन्तरिक प्यास है, वहाँ भीतर के शून्य को भर नहीं पाते। शून्यता को भरने के लिए जीवन का लक्ष्य चाहिए। केवल भोजन तो पशु को चाहिए, मनुष्य भोजन का पात्र भी देखता है।

मानव-जीवन के उल्लास का अतिरेक ही साहित्य है। मनुष्य को जोड़ने के लिए आंसुओं की आवश्यकता है। उन यन्त्रों की नहीं, जो मानव का नाश करते हैं। हजार यन्त्र भी आंसुओं को स्नेह प्रदान नहीं कर सकते। यन्त्र से हमारा विरोध नहीं, किन्तु यह मनुष्य को ही निगल जाय तो उसकी चिन्ता करनी ही होगी। यान्त्रिकता के इस युग में भी मानवीय कला का स्थान है। चन्द्रमा का हमारा रागात्मक सम्बन्ध टूट गया है। यदि यहाँ का मनुष्य चन्द्र पर भी द्वेष लेकर जायेगा तो वहाँ भी संघर्ष छिड़ेगा। ध्वंस की गति को मनुष्य का सहानुभूतिपूर्ण हृदय ही रोक सकता है। मनुष्य का बौद्धिक आधार हृदय का है।→

भूदान-यज्ञ : सोमवार, २७ अप्रैल, '

अणु, मनुष्य और अहिंसा—२

दोनों : विज्ञान भी और गांधी भी

▪ डा० डी० एस० कोठारी

प्राणिमात्र की एकता अहिंसा की बुनियाद है। अहिंसा इतनी ही नहीं है कि किसीकी जान न ली जाय। जानबूझकर किसी प्राणी पर प्रहार, या उसे किसी प्रकार की क्षति न पहुँचाना अहिंसा है। अहिंसा में हर एक के लिए प्रेम और आदर है।

अहिंसा बौद्ध, ईसाई, जैन सभी धर्मों में है। जैन धर्म में अहिंसा का सब दूसरे सिद्धान्तों से ऊपर स्थान है। लेकिन महात्मा गांधी ने अपने सत्याग्रह द्वारा अहिंसा का प्रयोग समाज परिवर्तन तथा राजनैतिक स्वाधीनता के माध्यम के रूप में किया।

प्राचीन और मध्ययुगों में सामाजिक ढाँचे में स्थायित्व था। परिवर्तन बहुत धीरे-धीरे होता था। फ्रांस की राज्य-क्रांति, अमेरिका का गृहयुद्ध, और अभी हाल की रूसी और चीनी क्रांतियाँ—ये सब औद्योगिक-वैज्ञानिक युग में हुई हैं। विज्ञान की क्रांति के पहले शिक्षण, संस्कृति, कल्याणकारी सुविधाएँ बहुत थोड़े लोगों तक सीमित थीं। स्वर्ग भी थोड़े ही लोगों को मिलता था। जब से विज्ञान आया, तेज गति से परिवर्तन के लिए अनुकूलता पैदा हुई। नयी तकनीकों, तथा उत्पादन के नये साधनों के कारण समाज के नये निर्माण के लिए भूमिका पैदा हुई। अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान संचार के साधनों का है। उनके बिना न सेनाएँ चल सकती हैं, न सत्याग्रह या सविनय अवज्ञा के आन्दोलन चल सकते हैं।

समाज-परिवर्तन और स्वतंत्रता के साथ जोड़कर गांधीजी ने अहिंसा में एक नया आयाम जोड़ा। गांधीजी की इस देन को विज्ञान के संदर्भ में देखना चाहिए। व्यापक अर्थ में गांधीजी की अहिंसा बड़ी वैज्ञानिक क्रांति का अंग ही है। गांधीजी ने अपनी आत्मकथा को 'सत्य के प्रयोग' कहा। विज्ञान की तरह अहिंसा में भी अनन्त विकास की क्षमता है।

अहिंसा एक नैतिक सत्य है। वह गणित का सत्य नहीं है।

ईश्वरीय सत्य को छोड़ दें तो सत्य तीन प्रकार के हैं (१) गणितीय, (२) वैज्ञानिक, (३) नैतिक। इसमें से हर एक अलग-अलग प्रमाणों पर आधारित हैं। उदाहरण के लिए गणित में हम यह कैसे जानते हैं कि एक त्रिभुज के तीनों कोणों का योग दो समकोणों के बराबर होता है—न कम, न ज्यादा? नापने से हमें यह प्रमाण नहीं मिलता। मिलता है तर्क से, जिनके आधार गृहीत सत्य (थ्योरेम) होते हैं। इन गृहीत सत्यों में शंका की गुंजाइश नहीं है। ये गृहीत सत्य परस्पर-विरोधी नहीं हैं। गणित के सारे सत्य इन्हीं गृहीत सत्यों से तर्क द्वारा प्राप्त हुए हैं। त्रिभुज के कोणों का योग भी हमें इसी तरह इकलिड की ज्योमिति से प्राप्त हुआ है। दूसरी ज्योमिति में योग ज्यादा होगा, या कम।

विज्ञान में सत्य का प्रमाण है प्रयोग, इसलिए वह हमेशा आंशिक रहेगा, कभी पूर्ण सत्य नहीं होगा।

नैतिक सत्यों की स्थिति बिल्कुल भिन्न है। गणित या विज्ञान से अहिंसा कैसे सिद्ध होगी? विज्ञान न नैतिक है, न अनैतिक। वह मूल्यों, आदर्शों, उद्देश्यों के प्रश्न से परे है। गांधीजी के लिए किसी सिद्धान्त की नैतिकता इस बात में थी कि उसके लिए मनुष्य, बिना किसीको कष्ट पहुँचाये, कष्ट सहने को तैयार रहे। इसलिए नैतिकता की प्रयोगशाला में सत्य की खोज तभी हो सकती है जब मनुष्य मन, वाणी, कर्म, तीनों में अहिंसा का अभ्यास करे। गांधीजी ने कहा कि अहिंसा सत्य तक ले जाने का मार्ग है, और सत्य ईश्वर है। आज जब कि विज्ञान के कारण मनुष्य के हाथ में नयी शक्ति आयी है, उसे यह जानना ही है कि क्या उचित है, क्या अनुचित, क्या शुभ है, क्या अशुभ। जब हमारा विकास हमारे हाथ में आ गया है तो हमारे सामने हमारे उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिए। आज दुनिया में जो पीड़ा है, ताड़ना और हिंसा है, उसे यदि विज्ञान न दूर कर सका तो वह उपहास का विषय होकर रह जायगा। इस दृष्टि से मनुष्य को विज्ञान और गांधी दोनों की आवश्यकता है।●

→बिना सम्पूर्ण पृथ्वी देखे ही हमने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का स्वर गाया था। तो इस युग में भारत का स्वर मानवता का स्वर होना चाहिए। यदि साहित्यकार बिकना नहीं चाहता तो उसे जागते रहना चाहिए। 'जो घर फूंके आपना चले हमारे साथ', आत्मदान की यह भावना ही विघटन-वृत्ति को रोक सकती है।

(गत ३० मार्च, '७० को गांधी-शांति प्रतिष्ठान केन्द्र, कानपुर में आयोजित साहित्य-गोष्ठी में प्रकट विचारों का सार।)

—प्रस्तुतकर्ता : विनय अवस्थी

बागी श्री डरेलाल रिहा

उ० प्र० सरकार ने गत सप्ताह श्री डरेलाल को पाँच-पाँच हजार के दो मुचलकों पर रिहा कर दिया है।

स्मरण रहे कि सन् १९६० में विनोबाजी के समक्ष २० बागियों ने आत्म-समर्पण किया था, जिनमें से १५ अदालत से मुक्त हुए थे, ३ को मध्यप्रदेश-शासन द्वारा बिना शर्त रिहा किया गया था। अब केवल श्री डरेलाल ही जेल में थे, जिन्हें रिहा किया गया है।

श्री डरेलाल ने यहाँ गांधी शांति-प्रतिष्ठान, आगरा केन्द्र पर बताया कि मैंने १० वर्ष बागी जीवन व्यतीत किया तथा १० वर्ष जेल में रहा। इस समय सुखद जीवन का अनुभव कर रहा हूँ।

श्री डरेलाल शीघ्र विनोबाजी से मिलेंगे। इस समय सभी बागी खेती तथा अन्य उद्योग-धन्धे कर रहे हैं। इनको छुड़ाने में चम्बल घाटी शान्ति-समिति काफी प्रयत्नशील थी। —कृष्णचन्द्र सहाय

ग्रामस्वराज्य की पुष्टि के लिए पुष्ट कार्यकर्ताओं की 'टीम' कैसे बने ?

[ग्रामदान के बाद प्रखण्ड और जिलादानी क्षेत्रों में पुष्टि-कार्य के लिए पुष्ट कार्यकर्ताओं के दल तैयार होने चाहिए, इसकी आवश्यकता हर जगह महसूस की जा रही है। यह आवश्यकता किसी क्षेत्र विशेष की नहीं, बल्कि पूरे आन्दोलन की है। रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं का प्राप्ति की तरह पुष्टि के काम में भी सक्रिय सहयोग मिलेगा ही, लेकिन उनकी शक्ति का समुचित उपयोग ग्रामस्वराज्य के इस अभियान में हो सके, इसके लिए उनका प्रशिक्षण आवश्यक है। शिविर-पद्धति से प्रशिक्षण के लिए, संस्थाओं के कार्यकर्ताओं को ध्यान में रखकर, सर्व सेवा संघ की ग्रामस्वराज्य समिति के संयोजक द्वारा निम्न सुझाव प्रस्तुत किये हैं।—सं०]

कुछ बुनियादी बातें

१—हमारे शिविर शिक्षण-शिविर हों। उनका वातावरण 'मिलन' का हो। ऐसा लगे कि कुल साथी समान उद्देश्य लेकर इकट्ठा हुए हैं, और उसकी सिद्धि के लिए मिलकर कुछ सोचना और करना चाहते हैं।

२—स्वाभाविक मिलन तभी होता है जब समानता और भाईचारा का वातावरण होता है। साथ रहना, साथ खाना-पीना, साथ गपशप करना, समय हो तो साथ खेलना भी, और फिर मिलकर सोचना, और काम की योजना बनाना—ये चीजें मन को मन से मिलाती हैं और लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सहकारी पुरुषार्थ की प्रेरणा देती हैं।

अगर किसी व्यक्ति के लिए आयु या अस्वास्थ्य आदि की दृष्टि से किसी विशेष सुविधा की व्यवस्था करनी हो तो जरूर की जाय, लेकिन पद, प्रतिष्ठा, जाति धन, शिक्षा आदि के भेद भाव शिविर में नहीं होने चाहिए।

३—शिविर उपदेश के लिए नहीं है, आदेश के लिए भी नहीं है, सहजीवन और सहचिंतन के लिए है। हर एक जिज्ञासा, अनुभव और सुझाव लेकर आये। हर एक को अपनी बात कहने का मौका मिले। हर एक दूसरों की बात सुनने का धीरज दिखाये। हर एक आम राय से हर निर्णय को मानने की तैयारी रखे।

४—शिविर के मुख्य व्यक्तियों की जिम्मेदारी है कि वे ऐसा वातावरण बनायें कि अपना छोटा-से-छोटा साथी भी भीतर से खुले, अपनी बात निडर होकर कहे, और यह महसूस करे कि साथी के नाते आदर के साथ उसकी बात सुनी जा रही है, और दूसरे लोग उसके चिंतन में, और जिज्ञासा में शरीक हो रहे हैं। कभी भी चर्चा में उपेक्षा, उपहास, व्यंग्य या तिरस्कार का प्रदर्शन न हो। ये सब चीजें ऐसी हैं जिनके कारण मन में दुराव, भय, संकोच आदि पैदा होते हैं, और परस्पर सामीप्य बढ़ने की जगह दूरी बढ़ती है।

५—दिनचर्या तथा चर्चा के मुद्दे आदि शिविरार्थियों की राय से तय किये जायें। पहले से बनी-बनायी चीज या एकपक्षीय विचार लादने की कोशिश न की जाय।

६—अभी तक शिविरों में आमतौर पर भाषण ही होते आये हैं। अब यह पद्धति बदलनी चाहिए। पहले से निर्धारित विषयों पर भाषण न होकर, स्थितियों, कठिनाइयों, सम्भावनाओं और समस्याओं आदि पर चर्चा होनी चाहिए। चर्चाओं के क्रम में अगर कोई विषय निकल आये, जिस पर किसी वरिष्ठ साथी या जानकार व्यक्ति की बात सुननी हो तो उससे भाषण और चर्चा का अनुबन्ध जरूर रहे। भाषण ज्यादा प्रभावकारी होगा, अगर भाषण करनेवाला खुद चर्चा में शरीक रहा होगा।

७—शिक्षण की सुविधा की दृष्टि से कुछ स्थूल साधन, जैसे-ब्लैकबोर्ड, चाक, पत्र-पत्रिकाएँ तथा पुस्तकें आदि भी रखी जायें। हर सम्भव उपाय किया जाय कि शिविरार्थियों की भूख जगे, उनकी अपनी सूझ-समझ खुले, समस्याओं को परखने तथा क्रान्ति के संदर्भ में उनका लोकग्राह्य समाधान निकालने की शक्ति विकसित हो। उनमें से हर एक यह महसूस करे कि सौ साथियों में वह एक साथी है, और उसका काम शेष ९९ के साथ जुड़ा हुआ है। क्रान्ति के हर कदम की आवश्यकता और व्यावहारिकता पर उसकी श्रद्धा और विश्वास (फेथ और कन्विक्शन) जगना चाहिए, ताकि वह दूसरों में भी श्रद्धा और विश्वास पैदा कर सके।

८—कोशिश की जाय कि अन्तिम दिन चलने के पहले, हर शिविरार्थी को पूरे शिविर में हुई चर्चा का सार, टाइप या साइक्लोस्टाइल होकर मिल जाय, ताकि शिविरार्थी अपने कार्य क्षेत्र में पहुँचकर शिविर के निष्कर्ष खुद दोहरा सके और दूसरों को भी सुना सके।

९—शिविर में संगठित चर्चा के अलावा मुक्त चर्चा के लिए भी समय रखा जाय। कुछ समय सामूहिक श्रम, सफाई, रसोई, शिविर-व्यवस्था आदि करने में जाय तो कोई हर्ज नहीं।

१०—शिविर स्वाश्रयी हो। हर शिविरार्थी सफर खर्च, तथा आवश्यक शिविर-शुल्क, आदि की व्यवस्था स्वयं करे। वह कर सके तो पूरा खर्च खुद बर्दाश्त करे, स्थानीय संग्रह करे, या अपनी या किसी दूसरी संस्था से सहायता ले।

११—जहाँ विभिन्न रुचि, संस्कार और स्वभाव के लोग इकट्ठा होते हैं, वहाँ कुछ आचरण-भेद भी पैदा होने की सम्भावना रहती है। अगर शिविर का मूल उद्देश्य न खण्डित होता हो, तो सामान्य आचरण-भेद बर्दाश्त करना चाहिए।

१२—स्थानीय कार्यकर्ताओं के लिए

मगर हर दो या तीन महीनों में मिलना सम्भव हो तो ३ से ५ दिन के लिए मिलें। ५ दिन के शिविर में औसत २०-२५ घंटों का समय चर्चा और आयरण के लिए होना चाहिए।

१३—अनुभव के आधार पर शिविर के कार्य और क्रम में संशोधन करते रहना चाहिए। इस बात का ध्यान रहे कि चर्चा के विषय शिविरार्थियों के स्तर से बेमेल न हों।

चर्चा के सामान्य मुद्दे

एक ही शिविर में आदि से अन्त तक सारी बातें बता देने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। शिक्षण लगातार चलनेवाला क्रम है। स्थायी रूप से पूरा समय देकर काम करनेवाले साथियों को हर दो-तीन महीने पर एक बार मिलना चाहिए। शुरू में दो महीने पर मिलना जरूरी होगा, लेकिन बाद को तीन महीने पर मिलना काफी होगा।

ऐसे कार्यकर्ताओं के शिविरों में चर्चा के मुख्य स्तम्भ निम्नलिखित हो सकते हैं :

(१) सामान्य विवरण :—सबसे पहले शिविर का मुख्य व्यक्ति बीती अवधि में राज्य भर में हुए काम का संक्षिप्त विवरण दे दे, तथा अपनी ओर से कुछ मुख्य समस्याएँ, जो सामने आयी, या सम्भावनाएँ जो प्रकट हुई प्रस्तुत कर दे।

(२) क्षेत्रीय विवरण :—राज्य के विवरण के बाद हर साथी अपने क्षेत्र के काम का संक्षिप्त विवरण दे। विवरण के बाद आपस में खुली चर्चा हो। किसीको कुछ पूछना हो तो पूछे और विवरण देनेवाला साथी उत्तर दे। इसमें एक-दूसरे के काम की समीक्षा करने का अभ्यास होगा।

(३) साथियों के विवरण में जो मुद्दे निकलें, उन्हें नोट कर लिया जाय और बाद को आम राय से चर्चा के मुद्दे तफसील के साथ तय कर लिये जायें। कुछ मुद्दे निम्नलिखित हो सकते हैं :

(क) संस्था की कठिनाइयाँ, जैसे—दूसकर, दूसरी जिम्मेदारियों का बोझ, समय से वेतन न मिलना, या दूसरी कोई बात।

(ख) कार्य के लिए आवश्यक साधनों का अभाव। आर्थिक कठिनाई।

(ग) क्या काम हुआ ?

• बीघा-कट्ठा कितना बँटा ?

• ग्रामसभाएँ कितनी बनी ? कितनी सक्रिय हैं ? सक्रियता की दिशा क्या है ?

• ग्रामकोष कितने गाँवों में कितना इकट्ठा हुआ ? हिसाब कैसे रखा जाता है ? आदि।

• ग्रामदान के कागजों की तैयारी।

[आँकड़ों के लिए अलग फार्म बनाये जा सकते हैं।]

(घ) कठिनाइयाँ, भावी सम्भावनाएँ। स्थानीय सहयोग की क्या स्थिति है ? शिक्षकों, युवकों, वेतन मजदूरों, प्रगतिशील किसानों का सहयोग। अगर सहयोग नहीं मिलता तो क्यों ? लोग आन्दोलन के सम्बन्ध में क्या कहते हैं, क्या सोचते हैं ?

(च) क्षेत्र में वास की भूमि, बेदखली, मजदूरी, सूदखोरी आदि की क्या स्थिति है ? क्या आन्दोलन के प्रभाव से लोगों के रुख में फर्क पड़ रहा है ?

(छ) अगर कोई ग्रामसभा बनी है तो क्या उसकी बैठक होती है ? कार्यवाही रखी जाती है ? क्या (ग) और (च) में गिनायी बातों की चर्चा हुई है ? लोगों की क्या राय है ?

(ज) क्षेत्र में कोई विशेष बात, जैसे प्राकृतिक कोप, सामाजिक तनाव, राजनैतिक हलचल, विद्यालयों में अशान्ति, सरकार की ओर से कोई विशेष हलचल आदि।

कुछ तात्त्विक ऐसे विषय, जिन पर किसी जानकार व्यक्ति के विचार सुनने की इच्छा शिविरार्थियों को हो सकती है, जैसे :

१—अहिंसक क्रान्ति की प्रक्रिया—क्रान्तिकारी अहिंसा बनाम क्रान्तिकारी हिंसा-पद्धति और परिणाम, लोकतन्त्र और विज्ञान की भूमिका में क्रान्ति का स्वरूप, आधुनिक क्रान्तियाँ।

२—दलमुक्त ग्राम प्रतिनिधित्व-स्वायत्त ग्रामसभा, लोकतन्त्र और समाजवाद के मूल्य, भारत-जैसे खंडित देश में लोकतन्त्र और समाजवाद का स्वरूप।

३—ग्रामाभिमुख अर्थनीति—खेती, ग्रामोद्योग, क्षेत्र-उद्योग, राष्ट्र-उद्योग, विकास की नयी दिशा। अन्तिम व्यक्ति से कैसे शुरू करें ?

सरकार की योजनाएँ।

४—सम्पत्ति :—परिवार-स्वामित्व, सरकार-स्वामित्व, ग्राम-स्वामित्व, उत्पादन-पद्धति और समाज-व्यवस्था का सम्बन्ध, एशिया और अफ्रीका के अनुभव।

५—भूमि का प्रश्न—समाधान की दिशाएँ क्या हैं ? विभिन्न दलों के मत, सरकार के कानून।

प्रदेश की भूमि-व्यवस्था।

६—साम्यवाद :—दर्शन और पद्धति, रूसी व्यवस्था, चीनी व्यवस्था, कल्याणकारी राज्य।

दुनिया के विचार।

विभिन्न देशों में ग्राम-विकास के आधुनिक प्रयोग।

(७) देश की कुछ मुख्य समस्याएँ—दलगत राजनीति, ध्रुवीकरण, साम्प्रदायिक-हिंसा, साम्यवादी-हिंसा, जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद, भ्रष्टाचार, बेकारी, विषमता, देश की प्रतिरक्षा, आतंरिक अशान्ति, बाह्य आक्रमण।

(८) लोगों में प्रचलित प्रमाद (दुर्व्यसन) और उनका असर।

(९) गुण-विकास—व्यक्तिगत, सामूहिक।

(१०) शिक्षा का प्रश्न—शिक्षा और विकास, निरक्षरों का जीवन शिक्षण।

ये तथा इस तरह के दूसरे विषय क्रम से पूरे साल भर में लिये जा सकते हैं।

इन तात्त्विक प्रश्नों के अलावा कुछ व्यावहारिक प्रश्न ऐसे हैं, जिन्हें जानकार व्यक्ति के साथ बैठकर, लेकिन चर्चा-पद्धति से ही, समझा जाना चाहिए :

(क) ग्रामदान से दमन और शोषण-मुक्ति की सम्भावनाएँ।

(ख) गाँव की कुल जोत की भूमि का बीसवाँ हिस्सा कैसे निकलेगा ?

राजगिर-सर्वोदय-सम्मेलन के बाद गुजरात में आन्दोलन की गतिविधि और आगे की व्यूह-रचना

शांति-सेना

राजगिर-सर्वोदय-सम्मेलन के बाद अहमदाबाद में शांति-सेना का कार्य ही गुजरात के कार्यकर्ताओं के लिए मुख्य रहा। सम्मेलन के बाद श्री जयप्रकाशजी ने अहमदाबाद में एक सप्ताह का समय दिया, और शहर के प्रमुख व्यक्तियों और संस्थाओं से मिले। कई सभाएँ भी हुईं। उन्होंने जिस निर्भयता से लोगों के सामने अपने विचार रखे, उसका बहुत गहरा और अनुकूल असर हुआ। शहर के शांति कार्य के लिए इससे अच्छी भूमिका तैयार हुई। श्री नारायण देसाई ने करीब दो महीने का समय अहमदाबाद के शांति-कार्य में लगाया। उनके मार्गदर्शन में वहाँ काम अच्छी तरह चला और आज हम कह सकते हैं कि गुजरात ग्रामदान के काम में जरूर पीछे है, लेकिन शांति-सेना के काम के लिए अहमदाबाद और सूरत जिले में बुनियाद पक्की बनी है।

दंगे के समय शहर में शांति-सैनिक घूमते रहे थे, उसके बाद बादशाह खान द्वारा व्यक्त की गयी अपेक्षाओं, और अपनी कर्तव्य-भावना से भी, प्रेरित होकर हमने वहाँ शांति-सेना का काम शुरू किया। हिन्दू-मुस्लिम लोगों से सम्पर्क बनाये रखा गया, शिविरों में पड़े हुए लोगों की स्थिति का, और विशेषकर विधवा बहनों की स्थिति का, अध्ययन किया गया, टूटे हुए मकानों की सफाई की गयी, जो लोग अपना घर छोड़कर चले गये थे, उनको समझाकर उनके घर में वापस लाया गया। यह एक बहुत महत्त्व का काम हुआ। इससे परस्पर विश्वास पैदा हुआ। सरकार की ओर से झोपड़ियाँ, मकान आदि बनवाने का जो काम होता रहा, उसमें गुजरात-शांति-सेना समिति की ओर से जो सूचनाएँ दी गयीं, उन पर सरकार ने अच्छी तरह ध्यान दिया। ठंडी के दिनों में ३,००० कम्बल बाँटे गये। लगभग ६,००० बीमारों को दवाएँ दी गयीं, जिसकी कीमत करीब १,२०० रुपये हुई। ५,००० रुपय के २५० बरतन के 'सेट' बाँटे गये। विधवा बहनों और बच्चों का एक शिविर हमारी ओर से चालू हुआ है, जिसमें ११० बहनें और बच्चे हैं। बहनों को सिलाई का काम सिखाया जा रहा है, जिससे वे आर्थिक मामलों में आत्म-निर्भरता प्राप्त कर सकें।

जिन लोगों के धंधे खत्म हो गये हैं, उनको कर्ज के रूप आर्थिक मदद २५० रु० तक की जाती है। बिहार रिलीफ कमिटी की ओर से इस काम के लिए जे० पी० ने पचास हजार रुपये अ० भा० शांति-सेना मंडल को दिये हैं।

'इनसान' नाम की पाक्षिक पत्रिका की तीन हजार प्रतियाँ प्रकाशित होती रहीं, और विद्यार्थियों के द्वारा शहर में बाँटी गयीं। एकता की भावना जगाने में इससे भी काफी मदद मिली।

२५ से २९ जनवरी तक नगर शांति-यात्रा का कार्यक्रम चला, जिसमें ५०० भाई-बहनों ने भाग लिया। २,५०० रुपये का साहित्य बिका, १०० शांति-सेवक बने और 'भूमिपुत्र' के ४५० ग्राहक बने। विशेषतः शांति सेना के विचार और कार्य का अच्छा प्रचार हुआ।

३० जनवरी को अन्तर्राष्ट्रीय शांति-दिवस शहर में मनाया गया। शहर के विभिन्न छह स्थानों से जुलूस निकाले गये, जिसमें करीब ५,००० हिन्दू-मुस्लिम भाई-बहनों तथा विद्यार्थियों ने भाग लिया। जुलूस ने कौमी एकता का उत्तम उदाहरण पेश किया।

शांति-सेना के कार्य से कुछ स्थूल परिणाम जरूर आये, लेकिन मानसिक सान्त्वना देने का, और दोनों कौमों में प्रेम और विश्वास पैदा करने का जो काम हुआ है, वह हमें संतोष, और आगे के काम के लिए प्रेरणा देनेवाला है।

शहर में तात्कालिक कार्य के लिए शांति-सेना का कार्यालय चालू किया गया था, उसे स्थायी बनाने का सोचा गया। पूरे समय के नये कार्यकर्ता भी रखने का सोचा है। जिन्होंने शांति-सेवक के तौर पर अपने नाम दिये हैं, उनकी मदद से शांति केन्द्र खोलने का तय हुआ है। इस बार ग्रीष्मावकाश में अ० भा० शांति-सेना-मण्डल की ओर से तरुण-शांति-सेना का शिविर भी अहमदाबाद में होगा। शांति-सेना के कार्य के विकास की दृष्टि से अन्य शिविर भी होते रहेंगे।

ग्रामदान

ग्रामदान के लिए दिसम्बर में जामनगर जिले में व्यापक पदयात्रा का कार्यक्रम चलाया गया था। उस समय पाँच ग्रामदान प्राप्त हुए थे। सौराष्ट्र के राजकोट, सुरेन्द्र-नगर और अमरेली जिले में अभी ग्रामदान के लिए अनुकूलता नहीं है। बाकी भाव-नगर, जूनागढ़ और जामनगर जिले में ग्रामदान के लिए कोशिश जारी रखने का सोचा है। इन तीनों जिलों में व्यापक पदयात्राएँ हो चुकी हैं। यहाँ जिन गाँवों में ५० प्रतिशत लोगों ने ग्रामदान के लिए हस्ताक्षर कर दिये हैं, वहाँ फिर से पहुँच-कर उसको पूरा करने की कोशिश भी करेंगे। एक-एक तहसील में वहाँ के ग्रामीणों को ग्रामदान के शिविर में निमंत्रित करके, उनके द्वारा ही पदयात्राओं का आयोजन करने का सोचा गया है।

कोई एक जिला लेकर जिलादान कराने का संकल्प अब तक गुजरात में नहीं हो सका है। लेकिन बड़ौदा, भरूच और पंचमहाल जिले की सीमाएँ जहाँ मिलती हैं, इस विभाग के गाँवों का ग्राम-दान कराने की कोशिश करने का सोचा गया है। श्री हरिवल्लभ भाई और उनके साथियों से इसके लिए गुजरात सर्वोदय-मण्डल ने विचार-विमर्श किया है। उन

लोगों का सहकार मिल सकेगा ऐसी आशा है।

रंगपुर और धरमपुर के ग्रामदानी क्षेत्र में लोक-जागृति की दृष्टि से कार्यक्रम आयोजित किये जाते रहे हैं।

सर्वोदय-पात्र

अहमदाबाद में अभी करीब १,२०० सर्वोदय-पात्र चालू हैं। वहाँ के कार्यकर्ताओं ने सोचा है कि इसकी संख्या पाँच हजार तक ले जायेंगे। भावनगर में अभी २५० सर्वोदय-पात्र चालू हैं। वहाँ भी संख्या बढ़ाने का सोचा गया है।

संगठन

१६ फरवरी को गुजरात सर्वोदय-मण्डल की बैठक अहमदाबाद में हुई थी, जिसमें श्री गोविंदराव देशपांडे भी उपस्थित थे। गुजरात के जिन जिलों में सर्वोदय-मण्डल नहीं है, वहाँ सर्वोदय-मण्डल की स्थापना करने का सोचा है। आशा है, इससे जिले में सर्वोदय विचार में सहानुभूति रखनेवालों को कुछ सक्रिय करने में सहायता मिलेगी।

परिचर्चा

इन दिनों 'सर्वोदय और राजनीति' इस विषय पर गुजरात में बहुत चर्चा चली है। १५ फरवरी को इस विषय पर अहमदाबाद में एक गोष्ठी का हमने आयोजन किया था। करीब १००-१५० लोगों ने इसमें भाग लिया। चर्चा अच्छी हुई, विचार-सफाई भी हुई। मतदाता-शिक्षण की दृष्टि से मण्डल ने कई कार्यक्रम भी सुझाये हैं। वर्तमान परिस्थिति और समस्याओं के बारे में गुजरात सर्वोदय-मण्डल बाहर रहकर अपना मंतव्य समय समय पर प्रकट करता रहे, इस दृष्टि से एक छोटी-सी समिति भी बनायी गयी है।

सर्वोदय मेला

१२ फरवरी को, बापू श्राद्ध-दिवस पर गुजरात के विभिन्न जिलों में बहुत अच्छी तरह गाँव मेले के आयोजन किये गये। इस बार सूरत जिले में बहुत बड़े पैमाने पर मेले का आयोजन हुआ, जिसमें करीब एक लाख लोगों ने भाग लिया। ११ फरवरी को आयोजित सामूहिक-कताई में २८,००० विद्यार्थियों और जनता ने भाग लिया।

साहित्य

विनोबाजी बार-बार कहते हैं कि गुजरात के उन्नीस हजार गाँवों में 'भूमिपुत्र' पहुँचना चाहिए। इसके लिए प्रयोग और प्रयत्न चालू किये हैं। कई कार्यकर्ता अपने अभिक्रम से साहित्य-प्रचार का कार्य करते ही रहते हैं।

यज्ञ 'प्रकाशन' की ओर से 'खुदाई-खिदमतगार' (बादशाह खान की आत्म-कथा), 'तीसरी शक्ति', 'मोहब्बत का पैगाम' (बादशाह खान के गुजरात के प्रवचनों की पुस्तिका), और गांधीजी के बारे में विनोबाजी के द्वारा आज तक जो विचार प्रकट हुए हैं, उनका एक संकलन, ऐसी चार पुस्तकें पिछले महीनों में प्रकाशित हुई।

—कान्ता शाह

शांति कुटी (विनोबा निवास) से

• क्रोध की मात्रा • शिष्ट, विशिष्ट, अशिष्ट • मन तो रंगा राम में • विश्वसंघ राज्य • व्यापारी और स्वर्ग • शरीर नहीं, चित्त से

दोपहर का समय था, बाबा लेटे-लेटे कुछ पढ़ रहे थे। बाल भाई ने बताया कि नागपुर से सीतारामजी कारेमोरे आये हैं। सीतारामजी नागपुर में सर्वोदय-साहित्य प्रचार का काम करते हैं। वहाँ उनका छोटा सा एक आश्रम है। बाबा के पुराने साथियों में से हैं। बाबा ने उनसे पूछा—"क्रोध की मात्रा कम हो रही है कि नहीं ?"

"जी हाँ, बाबा।"

"मरने से पहले छूट जायेगा कि नहीं ?"

"जी हाँ, बाबा।"

"कब मरना है ?"

"वह तो अपने हाथ की बात नहीं है"।

"क्रोध जाना अपने हाथ की बात है कि नहीं ?"

"जी हाँ, बाबा।"

× × ×

अखिल भारत युवक कांग्रेस के अध्यक्ष श्री दासप्पाजी एक सुबह आये थे। उन्होंने पूछा, "क्या सज्जनों को राजनीति से अलग रहना चाहिए ?" बाबा ने कहा, "नहीं, सज्जनों को राजनीति से अलग नहीं रहना चाहिए। सज्जनों के दो वर्ग हैं—१ शिष्ट, २ विशिष्ट। तीसरे होते हैं जो अशिष्ट होते हैं, असज्जन। जो शिष्ट सज्जन हैं उनको राजनीति में जाना चाहिए, और विशिष्टों को अलग रहना चाहिए। विशिष्ट अलग नहीं रहेंगे और शिष्टों में शामिल हो जायेंगे तो नियंत्रण करनेवाला पक्ष नहीं रहेगा। राजनीति चलाना एक बात है, राजनीति को नियंत्रित करना दूसरी बात है। खेल के अंदर जो शामिल होता है, वह खेल की गलती समझ नहीं सकता। इसीलिए 'अम्पायर' (निर्णायक) रखते हैं। इसी प्रकार विशिष्ट पुरुषों के हाथ में कंट्रोल रखना चाहिए। वे भी राजनीति में जायेंगे तो निर्णयात्मक 'कंट्रोलिंग पावर' नहीं रहेगा। यही गांधीजी ने कहा था, कि कांग्रेस को लोक-सेवक संघ बनना चाहिए। सरकार चलानेवाली पार्टी और विरोधी पार्टी दोनों अगर गलती करें, तो कंट्रोल कौन करेगा ? दोनों एक-दूसरे की मदद करके अच्छा काम करें यह ठीक है, लेकिन दोनों का मिलकर गलत विचार हुआ, तो कंट्रोल कौन करेगा ? इसलिए विशिष्टों को अलग रहना चाहिए। हिन्दुस्तान में विशिष्ट सज्जन बहुत थोड़े हैं और राजनीति में जो दाखिल हुए हैं उनमें शिष्ट और अशिष्ट दोनों हैं। राजनीति में मुझे जाना चाहिए कि नहीं ऐसा सवाल मुझसे पूछते हैं, पूछनेवाले 'गुड मैन' (अच्छे लोग, शिष्ट लोग) होते हैं। 'बैड मैन' तो पूछे बगैर दाखिल होते हैं। आज राजनीति में दो न्यूनताएँ हैं—१ राजनीति में केवल अच्छे लोग दाखिल हुए हैं ऐसा नहीं है, गलत लोग भी, सत्ता के अभिलाषी भी दाखिल हुए हैं। २. 'कंट्रोल' करनेवाले यानी विशिष्ट लोग कम हैं।"

× × ×

बिहार के विद्यासागर भाई आये थे।

बिहार का काम, जो कागज पर है उसे, प्रत्यक्ष में लाने के लिए क्या किया जाय, ऐसी चर्चा हो रही थी विद्यासागर भाई ने कहा, "हमने पाँच लाख सर्वोदय-मित्र का लक्ष्य रखा है। लोक-सम्मति और लोकाधार पर ये लोग काम करेंगे।"

बाबा: "हमें एक तो वानप्रस्थ चाहिए। दूसरी बात, बिहार में सामूहिक कुटुम्ब पद्धति है, यद्यपि वह टूटती जा रही है, फिर भी वह है। हम चाहते हैं कि हर घर से एक कार्यकर्ता मिले। उसका खर्चा घरवाले उठायें। राजेन्द्र बाबू कहा करते थे कि इसकी मिसाल तो मैं हूँ। मेरी चिन्ता मेरे भाइयों ने की, इसीलिए सार्वजनिक सेवा मैं कर सका। वानप्रस्थ वृत्ति के लिए आज सामाजिक मूल्य आया है। हर गाँव से एक वानप्रस्थ मिले, जो ४० के ऊपर की उम्रवाला हो। उसकी सेवा हमें दस साल भी मिल जाय तो भी बहुत सेवा होगी। फिर जो विद्यार्थी है, वे गृहस्थाश्रम में और नौकरी या धंधे में प्रवेश करने से पहले एक पूरा साल हमें दें और फिर अपने काम में अथवा धंधे में जायें। इस तरह विद्यार्थियों का एक साल, गृहस्थों का आंशिक समय और वानप्रस्थ पूरे पाँच लाख और सन्यासी कम से कम १०० तो निकलें। बिहार के साथ गौतम बुद्ध और महावीर, ऐसे दो बड़े नाम जुड़े हैं। उनके नाम से लोगों को प्रोत्साहित करो। इसके बिना काम नहीं होगा। शंकर, रामानुज, गौतम बुद्ध, महावीर, ये गाँव-गाँव जाते थे, लोगों को समझाते। घर-घर जाकर समझाना, यह एक 'थैंकलेस टास्क' (अत्यन्त नीरस काम) है। यह कौन करेगा? इसके लिए भिक्षु, श्रमण, सन्यासी निकलने चाहिए। इस काम के लिए बहनें भी निकल सकती हैं। असम में हमारे काम में बहनें हैं। अमलप्रभा बहन, शकुन्तला, हेम बरुआ, हम काकती, ये ब्रह्मचारिणी हैं। उनकी परम्परा वहाँ चली है। बहनों के कारण वहाँ काम होता है। पुअरठ में कान्ता और हरविलास हैं। दोनों ब्रह्मचारिणी हैं, रात-दिन काम करती हैं। हिन्दुस्तान में कहीं भी पैसा इकट्ठा करना हो तो उनको बुलाया जाता है। ४०-५० हजार रुपया इकट्ठा कर देती हैं। लोगों के पास जाती हैं, समझाती हैं। वे शिक्षित हैं। इधर निर्मला सारे देश में घूमती है, तमिलनाडु से लेकर उत्तरकाशी तक लोगों को ग्रामदान समझाती है, अध्यात्म समझाती है। उधर असम में गुजरात की प्रवीणा है। ऐसी बहनें भी निकल सकती हैं।"

विद्यासागर भाई: "इस तरह से काम होगा तो संगठन का झमेला नहीं रहेगा।"

बाबा: "संगठन वगैरह तो शुरुआत के लिए रहता है। एक दफा गंगा मैदान में आ जाय, फिर उसकी जरूरत नहीं रहती। इस काम के लिए ऐसे लोग चाहिए जो 'मन लो रमा राम में' ऐसी धुनवाले हों। अन्योन्य प्रेम हो, निष्ठा हो, चित्त शुद्ध हो। सबके लिए आदर हो। यही मुख्य बात है।"

बाबा गुनगुनाने लगे, 'कटुक वचन मत बोल, तोहे राम मिलेंगे।' फिर कहा "जीसस ने एक सादा सिद्धान्त बताया, 'जज नाट देट ई बी नाट जज्ड बाई अदर', दूसरों का 'जज' नहीं करना चाहिए। 'जजमेंट' के लिए अन्तर्यामी बनना पड़ता है तभी सच्चा मूल्यांकन होगा। हम किसीके अन्तर्यामी नहीं हो पाते हैं। हृदय का हिसाब तो वहाँ है। (ऊपर इशारा करते हुए) वहाँ 'जजमेंट' मिलेगा। यहाँ तो गुणवर्णनम्, गुणगानम् करना चाहिए। 'मेरे रामजी, मैंने तो गोविन्द गुण गाना।' घट-घट में वह विराजमान है, उसके गुण गाना। बच्चे का एकाध गुण हो तो भी माँ उसका उच्चार बार-बार करती रहती है, ऐसा मातृ हृदय दुनिया के लिए होना चाहिए।

× × ×

ब्रह्मविद्या मन्दिर की बहनें बीच-बीच में यहाँ आती हैं। आजकल यहाँ जापान की मिचुको ओमिको आयी हुई हैं। उन्होंने एक दिन बाबा से विश्व-संघ राज्य और शांतिसेना के बारे में चर्चा की।

बाबा ने कहा: "विश्व-संघ राज्य तो होनेवाला है। क्या अमेरिका, क्या रशिया क्या हिन्दुस्तान और क्या चाइना, सब देश चाहते हैं कि विश्व-संघ-राज्य बने लेकिन उनके मन में एक-दूसरे के लिए डर है। वह डर छोड़ना होगा। जब तक यह डर नहीं टूटता तब तक राष्ट्रीय क्षेत्र में अहिंसा से काम हो। मिसाल के तौर पर हिन्दुस्तान बड़ा देश है। उसमें कई प्रश्न खड़े होते हैं। लेकिन सभी समस्याओं का हल अहिंसा में है। इसलिए अहिंसा से ही अन्दरूनी मसले हल करेंगे, ऐसा निश्चय करना होगा। मिलीटरी का उपयोग अन्दर की समस्या के लिए कभी नहीं करेंगे। हर एक देश इतना तय करेगा तो धीरे-धीरे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी मिलीटरी का उपयोग नहीं होगा। देश में मिलीटरी के बदले शांतिसेना का उपयोग हो। शांतिसेना राष्ट्रीय क्षेत्र में शांति स्थापन करने में सफल होती है तो उसे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में प्रतिष्ठा पायेगी। अभी 'यू० एन० ओ०' ने भी अपनी सेना रखी है। अलग-अलग देश की अपनी-अपनी सेना है ही। 'यू० एन० ओ०' को अपनी सेना नहीं रखनी चाहिए थी। उसके बदले में शांतिसेना रखनी चाहिए थी।"

जापान में अहिंसा कैसे बढ़ेगी, इस आशय का एक सवाल ओमिको बहन ने पूछा। बाबा ने कहा: "जापान के लोगों को अहिंसा बहुत जँचेगी। वहाँ बौद्ध धर्म की शिक्षा है। वह तो गौण है। 'प्राइमरी फैक्टर' वहाँ का भूकम्प है। भूकम्प के कारण जापान किसी भी क्षण पूरा-का-पूरा समुद्र में जा सकता है। इसलिए जीवन की ज्यादा आसक्ति होने का कारण नहीं। भूकम्प और बुद्ध की शिक्षा, दोनों मिलकर जापान का बल बढ़ेगा।"

× × ×

कलकत्ता से आए हुए एक व्यापारी भाई से चर्चा करते हुए बाबा ने कहा: "व्यापारियों के, या तो पैसा रखनेवाले के बारे में दो वचन प्रसिद्ध हैं: १. जीसस क्राइस्ट का और २. गीता का। जीसस—

आन्दोलन के समाचार

आजमगढ़ और फैजाबाद जिलादान समारोह

आगामी ३ मई को आजमगढ़ और ४ मई को फैजाबाद जिले का जिलादान समारोह सम्पन्न होने जा रहा है। उत्तर प्रदेश ग्रामदान, प्राप्ति समिति के संयोजक श्री कपिल भाई की एक सूचना के अनुसार दोनों समारोहों में श्री जयप्रकाश नारायण मुख्य अतिथि होंगे। इस अवसर पर आचार्यकुल की बैठकें भी होंगी।

नशाबन्दी-आन्दोलन का जिले भर में विस्तार

टिहरी-गढ़वाल-मण्डल में सरकार द्वारा शराबबन्दी की घोषणा के बाद भी टिहरी-गढ़वाल जिले में अभी तक नशाबन्दी आन्दोलन जारी है। पहले केवल सरकारी शराब की दुकानों पर ही धरना दिया जाता था, परन्तु अब जिले के देहाती क्षेत्रों में नशाबन्दी को सफल बनाने के लिए सभाएँ और पदयात्राएँ आरम्भ हो गयी हैं। आन्दोलन के सिलसिले में जेल गयी ७ महिलाओं के एक दल ने टिहरी के आस-पास के देहातों में पदयात्रा आरम्भ कर दी है।

११ अप्रैल को टिहरी नगर में टिचर-मिक्चर, और देहरादून, मसूरी से चोरी-छिपे शराब की रोकथाम के सम्बन्ध में महिलाओं की एक सभा हुई, जिसे स्वामी रामानन्दजी तीर्थ एवं सुश्री सरला बहन ने सम्बोधित किया। महिलाओं ने मोहल्ला-समितियाँ बनाने का निश्चय किया, तथा सभा की समाप्ति पर वे एक मौन जुलूस बनाकर बाजार में गयीं। जिन दुकानों के सम्बन्ध में यह चर्चा थी कि वहाँ नशीली वस्तुओं का व्यापार होता है, उनके सामने खड़े रहकर उन्होंने मौन-प्रदर्शन किया।

कीर्तिनगर में भी उसी दिन इस प्रकार का जुलूस निकला। राज्य सरकार से मद्य-निषेधवाले जिलों में दवाई विक्रेताओं व सरकारी अस्पतालों के अलावा अन्य स्थानों पर टिचर रखने पर पाबन्दी लगाने की माँग की गयी। (सुप्रेम)

रोहतक में पदयात्रा

११ मार्च से ६ अप्रैल तक सर्वश्री गरीब राम, शिवदयाल और दीपू बाबा की सर्वोदय पदयात्रा हुई। पदयात्रा में जन सम्पर्क, सभाएँ, गोष्ठियाँ और साहित्य-प्रचार आदि कार्यक्रम सम्पन्न हुए। पदयात्रा से क्षेत्र में सर्वोदय आन्दोलन के अनुकूल हवा तैयार हुई।●

लोक-यात्री कश्मीर में

६ अप्रैल '७० से अ० भा० लोक यात्री दल की पद-यात्रा जम्मू-कश्मीर में चल रही है। उनका आगे का कार्यक्रम निम्न प्रकार है

अप्रैल .

२८—चन्द्रकोट से मैतरे
२९—मैतरे से रामबन
३०—रामबन से डिगडोल

मई

१—डिगडोल से मगर कोट
२—मगरकोट से रामसू
३—रामसू से नाचलयाना
४—नाचल्याना से बानिहाल
५—बानिहाल
६—बानिहाल से तरिया
७—तरिया से नूगाम
८—नूगाम से वेरीनाग
९—वेरीनाग से डोरू शाहबाद
१०—डोरू से अनन्तनाग
११—अनन्तनाग
१२—अनन्तनाग से बिज बिहाड़ा
१३—बिज बिहाड़ा से संगम
१४—संगम से अवन्तिपुरा
१५—अवन्तिपुरा से पाम्पुर
१६—पाम्पुर से हाजनपुरा
१७—हाजनपुरा से श्रीनगर

पता— मार्फत 'गांधी स्मारक निधि,
रामकृष्ण सेवा-आश्रम,
कनाल रोड, जम्मू

—ने कहा कि सुई के छेद में से ऊँट का जाना सम्भव है, लेकिन पैसेवाले का भगवान के दरबार में प्रवेश नहीं हो सकता। साफ शब्दों में कहा—'इट इज ईजीयर फार ए कैमल टु गो थ्रू द आय आफ ए नीडिल दैन फार ए रिच मैन टु इन्टर इन टु द किंगडम आफ गाड।' भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है—'ब्राह्मण हो, वैश्य हो, या शूद्र हो, वह अपना-अपना काम भगवत् समर्पणपूर्वक करेगा तो मुक्ति पायेगा। अगर ब्राह्मण वेदाभ्यास करेगा और भगवत् समर्पणपूर्वक नहीं करेगा तो बन्धन में पड़ेगा।

जो मुक्ति ब्राह्मण को भगवत् समर्पणपूर्वक वेदाभ्यास करने से मिलेगी वही मुक्ति वैश्य को अपना व्यापार आदि भगवत् समर्पणपूर्वक करने से मिलेगी।' इन दो वाक्यों में से जो सिद्ध करता है वह आप अपने आचरण से सिद्ध करें।"

तमिलनाडु प्रान्तदान की तैयारी में है। प्रान्तदान स्वीकार करने के लिए बाबा तमिलनाडु आयें, ऐसा अनुरोध करने के लिए श्री जगन्नाथनजी तथा एस० आर० सुब्रह्मण्यमजी आये थे। बाबा ने कहा : "अभी हमने शरीर से काम करना छोड़ दिया है, चित्त से काम करता हूँ। इसलिए एक जगह बैठे बैठे तमिलनाडु भी जाता हूँ, पंजाब, कश्मीर भी जाता हूँ, बिहार भी जाता हूँ। सब जगह जाता हूँ।"

—कुसुम

भूदान-यज्ञ २७-४-'७० रजिस्टर्ड सं० एल. १७४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेंस नं० ए ३१

भूक्रान्ति-दिवस के अवसर पर ग्रामस्वराज्य-कोष का शुभारम्भ

भारत के राष्ट्रपति द्वारा पहला दान प्राप्त

—देश के कोने-कोने में कार्यकर्ता कोष-संग्रह में जुटे—

'भूक्रान्ति-दिवस' १८ अप्रैल को सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् की अपील और प्रबन्ध समिति के निर्णय के अनुसार एक करोड़ रुपये के ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह का देश भर में शुभारम्भ हुआ। भारत के राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरि ने इस कोष का उद्घाटन करते हुए ग्रामस्वराज्य-कोष के अध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण को ढाई हजार रुपये का चेक समर्पित किया।

देश के कोने-कोने में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं और मित्रों द्वारा इस कोष के संग्रह-हेतु अभियान शुरू किये गये। यह कोष आगामी ११ सितम्बर '७० को आचार्य विनोबा को उम्र के ७५ साल पूरे होने के उपलक्ष्य में समर्पित किया जायगा।

सर्व सेवा संघ, वाराणसी में शान्तिसेना मण्डल, प्रकाशन, गांधी विद्या संस्थान के कार्यकर्ताओं की संयुक्त सभा में आचार्य राममूर्ति ने इस कोष की भूमिका स्पष्ट करते हुए कार्यकर्ताओं से योगदान का आवाहन किया। श्री नारायण देसाई की अपील पर कार्यकर्ताओं ने अपना एक दिन का वेतन कोष के लिए समर्पित किया।•

भूदान-किसानों का विशाल जुलूस

मुंगेर में भूक्रान्ति-दिवस के अवसर पर किसान-सम्मेलन

मुंगेर 'नगर-भवन' में 'भू-क्रान्ति-दिवस' (१८ अप्रैल) के अवसर पर भूदान-किसान सम्मेलन सम्पन्न हुआ। इस आयोजन में १ मील लम्बा भूदान-किसानों का विशाल जुलूस निकला, जो शहर में 'भूक्रान्ति सफल करेंगे' के उद्घोष के साथ घूमा। यह कार्यक्रम बहुत ही प्रभावशाली रहा।

जनसभा में जिले भर से आये लगभग दो हजार भूदान किसानों, दाताओं, सर्वोदय-आन्दोलन के प्रेमी तथा सरकारी पदाधिकारियों ने भाग लिया। सभा की अध्यक्षता सर्वोदय-नेता श्री वैद्यनाथ प्र० चौधरी ने की। सभा में इनके अलावा श्री निर्मलचन्द्र, मंत्री, बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी, श्री विद्यासागर भाई, मंत्री, बिहार ग्रामस्वराज्य समिति और श्री कृष्णराज मेहता भी उपस्थित थे। श्री निर्मलचन्द्र ने दाताओं को सम्बोधित करते हुए उन्हें संगठित होने तथा जरूरत पड़ने पर अपनी जमीन के लिए मरने को बलिदान कर देने की सलाह दी। कुछ दाताओं के द्वारा भूदान-किसानों की जमीन छीनी गयी है इस बात पर आपने दुःख प्रकट किया, तथा सरकार से इस पर सख्त कार्रवाई करने की मांग की।

इस अवसर पर ५७१ भूदान-किसानों को ८०० (आठ सौ) बीघे जमीन के प्रमाण-पत्र श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी द्वारा वितरित किये गये। भूदान-किसानों ने ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए यथाशक्ति अपने योगदान दिये।

सभा में सर्वश्री विद्यासागर भाई, और कृष्णराज मेहता ने ग्रामस्वराज्य का विचार स्पष्ट किया।

—सूर्यनारायण शर्मा

श्री अप्पा साहब का स्वास्थ्य

बम्बई से प्राप्त २२ अप्रैल की तार-सूचनानुसार श्री अप्पा साहब पटवर्धन का 'प्रोस्टेट ग्लैण्ड्स' का ऑपरेशन सफल हुआ है।•

राजस्थान का प्रथम जिलादान

प्रबन्ध-समिति की बैठक के समय समर्पित होगा

आगामी जुलाई माह में होनेवाली सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध-समिति की बैठक राजस्थान के सीकर जिले में होगी। इस अवसर पर सीकर जिलादान का काम पूरा करके समर्पित करने का प्रयास शुरू हो गया है। इसी अवसर पर राजस्थान का प्रान्तीय सर्वोदय-सम्मेलन भी आयोजित किया जानेवाला है।

सीकर जिले के नीमका थाना, धोद, श्रीमाधोपुर तथा दातारामगढ़ प्रखण्डों में ग्रामदान-अभियान चलाये जा चुके हैं, और अब लक्ष्मणगढ़, फतेहपुर, खण्डेला तथा पिपराली प्रखण्डों में २५ मई से अभियान चलाये जायेंगे, जिसमें ५०० कार्यकर्ता १३८ ग्राम-पंचायतों में क्रान्ति के लिए टोलियाँ बनाकर जायेंगे। अभियान का मार्गदर्शन डा० दयानिधि पटनायक करेंगे।•

-वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पं०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ३१

सोमवार ४ मई, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ५४२८५

बढ़ती हुई जनसंख्या और कृत्रिम नियमन

आज सबसे बड़ी समस्या बढ़ती हुई आबादी है। यह मैं जगह-जगह बोलता हूँ। जब हम बच्चे थे तब कहा करते थे कि हिन्दुस्तान में ३३ करोड लोग हैं, और ३३ करोड देवता। उस वक्त हिंदुस्तान-पाकिस्तान एक था। आज दोनो मिलकर ७५ करोड हो गये हैं। अगले पचास साल मे १०० करोड हो जायेंगे। आज १९७० है, इन तीस सालों मे इतनी आबादी हो जायेगी। वैसे ही दुनियाभर मे आबादी बढ़ेगी। मतलब आज जितनी जमीन है, उससे आधी जमीन मिलेगी। इसलिए मैं बार-बार समझाता हूँ कि जब जमीन कम नही थी तब संतान-निर्मिति को उत्तेजन देते थे। आज भी रशिया मे दे रहे हैं, क्योंकि वहाँ जमीन ज्यादा है। परन्तु यहाँ अभी हालत ऐसी है कि असंतोष बढ़ा है, इसलिए लोकमत संख्या-वृद्धि के लिए अनुकूल नहीं है।

ब्रह्मचर्य का प्राचीन काल से आध्यात्मिक मूल्य था। आज वह सामाजिक मूल्य भी बन गया है। आज दोनो इकट्ठे हैं। उस हालत मे ब्रह्मचर्य की दीक्षा जितने लोग ले सकते हैं, उतने लोगो को लेना चाहिए। परिवार मे तीन भाई हो तो उनमे से एक भाई निश्चय करे कि मैं ब्रह्मचारी रहूँगा और दूसरे भाइयो की संतानो को अपनी संतान मानूँगा।

आज १६ साल मे शादी होती है, और ५६ साल तक बच्चे पैदा होते हैं। यानी गृहस्थाश्रम की चालीस साल की अवधि है। उसके बदले मे २० साल मे शादी हो, और ४० साल मे वानप्रस्थाश्रम को स्वीकार करें। यानी मर्यादा आधी हो जाय। वानप्रस्थाश्रम की मर्यादा बढ़ानी और गृहस्थाश्रम की मर्यादा कम करनी चाहिए। यह बात लोगों को समझायी जाय तो कुछ उपाय होगा।

विषय-सेवन करते रहे, और संतान पैदा न हो, यह अत्यन्त पापी विचार है। इस प्रकार से चलेगा तो हिन्दुस्तान नीति-भ्रष्ट हो जायेगा। इस विचार का प्रचार सर्वोदयवाले भी करें और आप लोग (अणुव्रतवाले) भी करें। कृत्रिम उपाय जो बढ़ रहे हैं उसका विरोध करना चाहिए।

आचार्यश्री तुलसी से हुई चर्चा, गोपुरी, वर्धा, ३-४-'७०

—विनोबा

रोजगार का विश्वव्यापी संदर्भ

—डेविड ए० मोर्स, महानिदेशक,
अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय

विश्वव्यापी रोजगार कार्यक्रम की आवश्यकताओं के मूल में आधुनिक विश्व के दो कटु सत्य निम्नलिखित है :

• विकासशील देशों मे आर्थिक प्रगति स्पष्ट होते हुए भी, धीमी है, निर्धन और धनाढ्य के बीच का अंतर दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

• इन देशों की तेजी से बढ़ती हुई जन-संख्या प्रगति में अवरोध उत्पन्न करती है, और इनमें से बहुत से देशों में तो बड़े उत्पादन का अधिक-से-अधिक वर्तमान जीवन-स्तर, जो कि पहले ही बहुत निम्न है, को बनाये रखने में खप जाता है, जब कि लोगों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती चली जा रही है।

श्रम के साधन इतनी तेजी से नहीं बढ़े हैं जितनी तेजी से श्रमिकों की संख्या बढ़ती जाती है। करोड़ों लोग आर्थिक विकास के लाभ से वंचित रह जाते हैं। भविष्य-निर्माण की आशा पहले से भी अधिक धुंधली पड़ गयी है। संयुक्त राष्ट्र और अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की योजनाओं से यह ज्ञात होता है कि सन् १९७० में विश्व की जनसंख्या ३६० करोड़ होने का अनुमान है और इनमें से १५१ करोड़ श्रमिक होंगे।

वर्तमान दशक के दौरान श्रमिकों की संख्या २ करोड़ प्रति वर्ष की दर से बढ़ती चली जा रही है और आगामी दशक के दौरान इसके २ करोड़ ८० लाख प्रति वर्ष की दर से बढ़ने की संभावना है। सन् १९७० और १९८० के बीच विश्व के श्रमिकों में २८ करोड़ से अधिक लोगों की वृद्धि होगी, जिनमें से २२ करोड़ ६० लाख लोग तो विश्व के कम विकसित क्षेत्रों में बढ़ेंगे और ५ करोड़ ६० लाख लोग अधिक विकसित क्षेत्रों में बढ़ेंगे।

इन २८ करोड़ से भी अधिक में से एशिया में १७ ३ करोड़, अफ्रीका में ३ २ करोड़, लेटिन अमरीका में २ १ करोड़, सोवियत रूस में १.८ करोड़, उ० अमरीका में १ ७ करोड़, यूरोप में १ २ करोड़ और ओसिनिया में १ ३ करोड़ श्रमिकों की वृद्धि होगी। संसार के २५ वर्ष से कम आयु के श्रमिकों में वास्तविक वृद्धि ६ ८ करोड़ की होगी। इनमें से लगभग सभी (६ ४५ करोड़) श्रमिक संसार के अर्ध-विकसित देशों में ही होंगे।

इन्हीं आंकड़ों ने मैनफ्रेड हेल्पर्न जैसे लेखक को इस स्थिति का वर्णन इन शब्दों में व्यक्त करने के लिए बाध्य किया "आधुनिक युग में कृषकों की स्थिति यह है कि जीना तो क्या, उनके लिए मरना भी कठिन हो गया है। बहुत से कृषक तो इतिहास में पहले कभी सुने गये कष्ट झेलने के लिए ही जीवित हैं। अच्छे जीवन की आशा पर चढ़ी अभिलाषाओं ने पूर्ण उनके संताप इतने बढ़ गये हैं कि उन्हें सहन भी नहीं किया जा सकता।"

प्रसन्नता का विषय है कि एक अधिक आशाजनक तीसरा मूल तथ्य भी है और वह यह कि पिछले कई वर्षों में अंतर्राष्ट्रीय विकास-सहायता में तो नगण्य वृद्धि हुई है, परन्तु अंतर्राष्ट्रीय सहयोग का एक साधन और विद्यमान है। एक ऐसा सहयोग जिसमें धनाढ्य देशों को इस ओर प्रवृत्त किया जाता है कि वे आर्थिक और सामाजिक अल्प-विकास का कुछ भार अपने कंधों पर लें।

विश्वव्यापी रोजगार कार्यक्रम का उद्देश्य निरंतर बढ़ते कृषकों और मलिनता में रहनेवालों के रुख को मोड़ा जाय जिनका विकास में कोई योगदान नहीं। यह कार्य प्रथतः उत्पादक-कार्य के लिए अपेक्षित कौशल प्रदान करके और प्रथतः ग्राम विकास उद्योगीकरण, युवक रोजगार योजनाओं और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में पूंजी लगाकर किया जा सकेगा। इन उपायों से विकासशील देश अपने जन-साधनों का अधिक लाभ उठा सकेंगे और इस प्रकार विकास के अपने मुख्य उद्देश्य की पूर्ति कर पायेंगे, जिससे लोगों का जीवन-स्तर उन्नत हो जायेगा।

१९७०वें दशक में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का मुख्य कार्य विश्वव्यापी रोजगार कार्यक्रम होगा—हमारा यह कार्य (वही) है जिसका निर्देश द्वितीय विकास-दशक के रूप में पहले ही किया जा चुका है।

यह अवश्य रोजगार-कार्यक्रम ही होना चाहिए, क्योंकि निर्धन देशों में जीवन स्तर ऊंचा उठाने का मात्र यही रास्ता है कि वहां के लोग ही उत्पादन कार्यों में लगें। यह अवश्य ही विश्वव्यापी कार्यक्रम होना चाहिए, क्योंकि मुख्य भार विकासशील देशों के कंधों पर होते हुए भी यह कार्यक्रम उद्योगीकृत राष्ट्रों की सहायता के बिना सफल नहीं हो सकता—व्यक्तिगत सहायता द्विपक्षी कार्यक्रमों द्वारा और सामूहिक सहायता अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा दी जाती है।

—'यूनेस्को कूरियर' से पुनर्मुद्रित
अंक ' अगस्त, १९६९ (हिन्दी)

श्री अण्णा साहब सहस्रबुद्धे का स्वास्थ्य

पिछले अंक में हमने श्री अण्णा साहब के 'प्रोस्ट्रेट ग्लैण्ड्स' के सफल ऑपरेशन की संक्षिप्त सूचना दी थी। श्री अण्णा साहब पिछले दिनों मूत्राशय-विकार से पीड़ित थे। १० अप्रैल '७० को उन्हें बम्बई के जे० जे० अस्पताल में भर्ती किया गया था, और १२ अप्रैल को ऑपरेशन हुआ था। सर्वोदय-परिवार के साथियों ने श्री अण्णा साहब के लिए जरूरत के मुताबिक खून दिया, और अब उनकी देखभाल कर रहे हैं। उनके स्वास्थ्य में संतोषजनक सुधार हो रहा है।•

सिवाय हिंसक प्रहार के दूसरे किसी उपाय से वह टूट नहीं सकती। अगर ऐसा हो तो बात दूसरी है, किन्तु क्या कोई मान सकता है कि आज के भारत में करोड़ों की संख्या में पीड़ित जनता अपनी पीड़ा के प्रतिकार में एक बार सिर्फ गर्दन सीधी करके खड़ी हो जाय तो है कोई शक्ति जो उसका मुकाबिला कर सके ? गांधी ने कहा था कि जनता बस एक शब्द सीख ले : 'नहीं'। उसके 'नहीं' में उसकी मुक्ति की शक्ति है। 'नहीं' की इस शक्ति को जनता के हाथ से कौन छीन सकता है ? बन्दूक छीनी जा सकती है, लेकिन 'नहीं' को कौन छीनेगा ? न भी छीनी जाय तो बन्दूक जालिम को मारने के बाद मारनेवाले के ही हाथ में रह जाती है, जनता के हाथ में कभी नहीं जाती। बन्दूक जनता को छोड़कर सत्ता और सैनिक की सेविका बन जाती है। आज दुनिया के अनेक देशों में हम क्या देख रहे हैं ? मुक्ति का भूखा मानव जिस बन्दूक का सहारा लेता है, वही बन्दूक उसके सीने पर सवार हो जाती है। हर चीज की तरह बन्दूक की भी एक प्रकृति है, जिसके अनुसार उसका आचरण हुआ है, और होगा।

लेनिन चाहता था कि पुराना समाज टूटे और नया समाज बने। उसने स्वायत्त इकाइयों के रूप में छोटे सोवियटों की कल्पना की थी। ट्राट्स्की ने क्रान्ति को स्थायी प्रक्रिया (परमानेन्ट रेवोल्यूशन) के रूप में देखा था। वर्षों बाद चीन में माओ ने राजनैतिक परिवर्तन से आगे बढ़कर सांस्कृतिक क्रान्ति की जरूरत महसूस की। क्यों महसूस की ? साम्यवादी चिन्तन स्थिर नहीं है। दुनिया का जीवन और परिस्थिति भी स्थिर नहीं है। बदलती हुई परिस्थिति में क्रान्ति की पद्धति ही कैसे स्थिर रहेगी ? क्रान्ति की शक्ति मनुष्य की शान्तिकारिता है, न कि उसकी हिंसा। हम जरा देखें कि गांधी की मनुष्य को हिंसा से अलग रखते हुए भी उसे क्रान्तिकारी बनाने की क्या योजना थी ? किस तरह उसके 'स्वराज्य' में लेनिन के 'सोवियट', ट्राट्स्की की स्थायी क्रान्ति, और माओ के सांस्कृतिक आयामों का एकसाथ समन्वय है।

जिस पूंजीवाद को लेनिन ने समाप्त करने की कोशिश की उसकी दो शक्तियां थीं—एक केन्द्रित यंत्रवाद (सेंट्रलाइज्ड टेकनालोजी), और दूसरी केन्द्रित शस्त्रवाद। यंत्र सब पूंजीपतियों के थे, और शस्त्र सब राज्य के। साम्यवादियों ने मान लिया कि यंत्रों को पूंजीपतियों के हाथ से और शस्त्रों को राजा या शासक के हाथ से छीन लिया जाय, और दोनों को साम्यवादी दल के हाथ में दे दिया जाय, तो अपने आप, इतिहास के सहज विकासक्रम में क्रान्ति की कामनाएं पूरी हो जायंगी। साम्यवादी क्रान्ति ने पूंजीवाद की दोनों शक्तियों को स्वीकार कर लिया, और पूंजीवादी व्यवस्था को अस्वीकार। यह विसंगति थी जिसने स्तालिनवाद को जन्म दिया; जिसने क्रांति को मानवीय रहने नहीं दिया। गांधी ने पूंजीवाद की व्यवस्था को ही नहीं, उसकी शक्तियों को भी अस्वीकार किया। जब शक्तियां नहीं रहेंगी तो व्यवस्था कैसे चलेगी ? उसका आग्रह था कि जिन शक्तियों से पूंजीवाद ने जनता का शोषण और दमन किया उससे भिन्न शक्ति उसकी मुक्ति की होनी चाहिए। अगर विज्ञान नयी शक्तियों की खोज कर रहा है, तो वैज्ञानिक क्रांतिकारी भी नयी शक्तियों की खोज क्यों न करे ? भारत में इस नयी खोज का अवसर था। गांधी ने उस अवसर का लाभ उठाया। अब यह हमारा काम है कि हम उस खोज को जारी रखें।

कई लोग कहते हैं कि लेनिन आज का नेता है, गांधी आनेवाले कल का। क्या वे यह कहना चाहते हैं कि आज की दुनिया हिंसा के रास्ते चलेगी, और कल की दुनिया अहिंसा के ? क्या यह कभी संभव है ? जो शक्ति आज की समस्याओं को नहीं हल कर सकती, वह आनेवाले कल की बुनियाद कैसे बन सकती है ? यह बात हिंसा और अहिंसा, दोनों पर लागू है। विज्ञान के इस युग में हिंसा का अर्थ है गृहयुद्ध और संहार, लोकतन्त्र में हिंसा का अर्थ है दमन और तानाशाही। इनमें से हम किसे आज के लिए स्वीकार करना चाहते हैं ? किस कौतुक से हम आज की हिंसा को कल की अहिंसा में परिणत करना चाहते हैं ?

हिंसा सामान्य जनता की अपनी शक्ति में विश्वास नहीं करती। वह मानती है कि बन्दूक के बिना वह असहाय है। इसके विरुद्ध अहिंसा को जनता की ही शक्ति में श्रद्धा है। वह शक्ति अपने में काफी है। उसे बन्दूक की जरूरत नहीं। आज हम लेनिन के बाद के इतिहास को सामने रखें तो हमें साफ दिखाई देगा कि मुक्ति के क्रांति-शास्त्र में गांधी की एक विलक्षण देन है। सामान्य जनता की शक्ति का इतना बड़ा क्रांतिकारी प्रयोग गांधी के पहले किसीने नहीं किया। लेनिन होता तो उसकी प्रतिभा इस प्रयोग को पहचानती। लेकिन गांधी से एक साल बाद पैदा होकर वह गांधी से चौबीस साल पहले ही चला गया। दोनों समसामयिक थे। दोनों के सपने हमें उत्तराधिकार में मिले हैं। अगर हमें मुक्ति के उन सपनों को साकार करना है तो हम सोचें कि हम क्या लेंगे लेनिन से, और क्या लेंगे गांधी से। लेनिन और गांधी, दोनों महान थे, किन्तु जिस मानव की उन दोनों ने उपासना की वह दोनों से अधिक महान है।●

धर्म-परिवर्तन

हमें लोगों को समझाना चाहिए कि जन्म से किसीको धर्म मिलता नहीं। यह जो धर्म-परिवर्तन का विचार चला है, वह गलत है। हरएक को उत्तम उम्र के बाद अपना धर्म प्राप्त होना चाहिए। मेरा विचार है कि १८ साल तक मनुष्य किसी धर्म में नहीं है। वह अपनी माता-पिता के अनुसार बरते। लेकिन १८ साल के बाद उसको अपना धर्म घोषित करना चाहिए कि मैं यह धर्म मानता हूं। —विनोबा

३-४-७० . गोपुरी, वर्धा

आचार्य-संवाद

लोकतंत्र की नयी दिशा : सरकारमुक्त जनता और दलमुक्त सरकार

नथमलजी—अन्याय के प्रतिकार का कोई अहिंसक कार्यक्रम बन सकता है क्या ?

विनोबा—अन्याय दो प्रकार के होते है—१. कानून ही गलत है तो उस कानून को तोड़ना, २. कानून तो अच्छा है लेकिन उस कानून पर अमल नहीं किया जा रहा है, कानून के खिलाफ काम होता है। अन्याय के ऐसे दो प्रकार होते हैं। कानून ठीक नहीं बनता तो उसके खिलाफ आपको आवाज उठानी है। उसके लिए लोकतंत्र में प्रचार के लिए मुक्तता है। इसलिए इस बारे में सत्याग्रह नहीं हो सकता। अगर प्रचार में मनाही की जायगी, बाधा डाली जायगी तो सत्याग्रह कर सकते हैं। लेकिन मत-प्रचार का स्वातन्त्र्य है, कोई रोकता नहीं है तो सत्याग्रह नहीं हो सकता। इस प्रकार मत-स्वातन्त्र्य होते हुए गलत कानून पर सत्याग्रह नहीं हो सकता, उसको रद्द कराने के लिए लोकमत तैयार कर सकते हैं।

दूसरी बात यह है कि जहाँ कानून का अमल नहीं हो रहा है, वहाँ सत्याग्रह हो सकता है, यह हमने कहा था। कई लोगों को बेदखल किया जाता है, जमीन तो उनकी ही है, फिर भी उनको हटाते हैं। ऐसे मसले के लिए हमने दक्षिण भारत में सत्याग्रह की इजाजत दी थी। वहाँ पर सत्याग्रह किया था और वह सफल भी हुआ था। इस प्रकार से सविनय सत्याग्रह करने के लोकतंत्र में मौके हो सकते हैं। और उसका अहिंसक प्रतिकार हो सकता है।

लेकिन मेरे सामने जो समस्या है वह दूसरी है। आज के लोकतंत्र में जिनको आपने वोट दिया, उनके बारे में पाँच साल के लिए आप कुछ नहीं कर सकते। आपको कुछ चलती नहीं। वे प्रतिनिधि जो करेंगे, सो करेंगे। वहाँ जाकर पार्टी भी बदल सकते हैं, लेकिन आप कुछ नहीं कर सकते। पाँच साल के बाद जो करना है वह करें। लेकिन इस काल में, जब कि इतना विज्ञान बढ़ा है, उस हालत में पाँच साल की अवधि पुराने जमाने के ५० साल की अवधि की बराबरी करता है। पाँच साल में अरबों रुपयों का खर्च कर डालते हैं। पुराने जमाने में राजा ५० साल में जो नहीं कर सकता था, वह अब ये पाँच साल में करते हैं। इसलिए पाँच साल की अनियन्त्रित सत्ता देना बहुत खतरनाक है, ऐसा मैं मानता हूँ। लोगों की अपनी स्वतन्त्रता पर यह बड़ा प्रहार है। इसलिए शासन-मुक्त समाज कैसे बने, और राज्य-मुक्ति कैसे हासिल हो, यह सवाल बाबा के सामने है। प्रजा राज्य मुक्त हो, अराज्य हो, राज्य न हो। यानी प्रजा का राज्य हो। इसलिए गाँव-गाँव में ग्राम-स्वराज्य हो। गाँव की अन्दर की सत्ता में शासन का प्रवेश न हो। गाँव की अपनी सम्मिलित सत्ता चले। पंचों की इकट्ठा सभा—जिसे हमने प्राचीन काल में माना है। लोग अपने ही प्रतिनिधि खड़ा करें। किसी पक्ष के बजाय लोगों के अपने ही प्रतिनिधि खड़े हों। सरकार मुक्त जनता और तन्त्र-मुक्त सरकार, ऐसा होना चाहिए।

अच्छी सरकार नहीं, सरकार-मुक्ति

नथमलजी—क्या यह दूरगामी कल्पना नहीं है ?

विनोबा—विज्ञान के जमाने में यह दूरगामी नहीं है। भारत में ५॥ लाख गाँव हैं, उनमें से १॥ लाख गाँव ग्रामदान में आ गये हैं। वे सारे कागज पर न रहें, सचमुच ही जमीन का बँटवारा हो, तब फिर जो ग्रामसभा बनेगी, वह चुनाव के बिना काम कर सकती है, इसलिए यह दूर की कल्पना नहीं, नजदीक की है।

नथमलजी—अभी विहारदान जो हुआ है वह कागजी हुआ है ऐसा आपने माना है।

विनोबा—जी हाँ। सरकारी 'प्रामिजरी' नोट भी कागज है। वैसे ही वह भी कागज है। लेकिन जनता के 'प्रामिसेज' हैं। जनता के 'प्रामिसेज' को मैं गलत नहीं मानता। पहले तो कागज पर ही होता है'। उसके आगे जाकर लोग जमीन का बँटवारा करें और ग्रामसभा बनावें, तो वह कागजी नोट अनाज में आ गयी। वह हो जाना चाहिए। वह यदि एकाध साल में वहाँ कर लें, तो वहाँ पर लोक-प्रतिनिधि खड़े करने का कार्यक्रम हो सकता है। लेकिन इस काम में आप लोगों का सहयोग मिलना चाहिए। ग्रामदान-प्राप्ति में नहीं, विचार समझाने में। वह विचार यह कि जनता की अपनी सत्ता होनी चाहिए। यह समझाने के लिए आपके सहयोग की अपेक्षा है। सरकार अच्छी हो, अच्छी सत्ता चले, इसके बजाय लोगों की अपनी ही सत्ता होनी चाहिए। राज्य मुक्ति का विचार समझाने में आप लोगों का सहयोग चाहिए।

आ० श्री तुलसी—यह ठीक है विचार-परिवर्तन में सहयोग अपेक्षित ही है, और रहना चाहिए।

विनोबा—इंग्लैण्ड के एक भाई ने मुझे लिखा है कि हिन्दुस्तान में जो आन्दोलन चल रहा है वह हिन्दुस्तान के लिए तो ठीक ही है, लेकिन इंग्लैण्ड और अमेरिका के लिए भी इसकी जरूरत है। यों कहकर मुझे लिखा कि हमारे यहाँ ऐसा चलता है कि आप लोगों का भला किया करेंगे या निश्चय करेंगे। राज्य के अध्यक्ष द्वारा लोगों का भला होगा, फिर चाहे वह लोकतन्त्र हो, समाजवाद हो या कल्याणवाद हो। लेकिन जब तक हमारा भला दूसरे के हाथ में है तब तक, नाम भले समाजवाद या लोकतन्त्र का हो, लेकिन वास्तव में वह है 'दे इज्म'—'दे विल डू फार अस' (हमारे लिए वे करेंगे)। अगर सरकार से बनता नहीं है तो वह आखिर में मिलीटरी भेजती है। उन्होंने यह कहा कि एक तरफ 'दे इज्म'

वाद) है और दूसरी तरफ सैनिकवाद है। आखिरी सत्ता मिलीटरी के हाथ में है, चाहे कोई भी 'इज्म' हो, मिलीटरी के बिना चलेगा नहीं। 'सत्ता' मिलीटरी की और वाद—'दे इज्म'; ये दोनों आज दुनिया भर में चल रहे हैं। बाबा जो समझा रहा है वह है—'दे-इज्म' से मुक्ति।

आ० श्री तुलसी—आपका विचार आगे के लिए ठीक है, लेकिन वर्तमान पार्टी-पालिटिक्स में परिवर्तन होना चाहिए।

विनोबा—उसीके लिए यह है। आप पाँच साल राह देखेंगे तो वह सारे भारत में ऊधम मचायेंगे। अगर दो साल में आप जन-शक्ति खड़ी करते हैं तो अगले चुनाव में आप कुछ कर सकेंगे। पाँच-सात साल राह देखेंगे तो बात २०-२५ साल दूर ढकेली जायेगी। जितना शीघ्र करेंगे उतना अच्छा होगा।

अहं इन्द्र नहीं, ग्रामइन्द्र

आ० श्री तुलसी—जैन आगमों में कहा है कि किसी पर शासन न हो, शासन-मुक्त समाज हो। उसमें एक प्रसंग आता है जहाँ 'अहं इंद्र', याने सब इंद्र होते हैं। कोई प्रेष्य या प्रेषिक नहीं होते। स्वामी और सेवक का सम्बन्ध नहीं होता। लेकिन यह तब हो सकता है जब काम, क्रोध, मद, माया, मोह, लोभ कम होगा।

विनोबा—आप जो कह रहे हैं वह बात दूसरी है। यह तो कम्यूनिस्ट भी कहते हैं। उनका कहना है कि 'स्टेट विल विदर अवे'। जब हर मनुष्य नीति पर अमल करेगा, स्वयं उसका अनुकरण करेगा, तब शासन की जरूरत नहीं रहेगी। वह सत्ययुग की बात है। यानी दूर की बात है। परन्तु मैं जो बात कर रहा हूँ वह निकट की बात है। वह नजदीक के काल के लिए शब्द है। मैं 'अहं इन्द्र' नहीं कहता हूँ, 'ग्राम-इन्द्र' कहता हूँ। आप जो कहते हैं 'अहं इन्द्र' की बात, जब पूरी जनता मुक्त होगी तभी होगा। इसमें गाँव के लिए जितना त्याग कर सकते हैं, उतना करेंगे। व्यक्ति कुटुम्ब के बजाय सारे गाँव का सोचें। वेद में भी एक अच्छा वाक्य आया है—'विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन् अनातुरम्' (हमारे इस गाँव में परिपुष्ट, आरोग्यवान विश्व का नमूना पेश हो)।

आ० श्री तुलसी—ऐसे कुछ गाँव नमूने के लिए बन जायें तो लोगों को विश्वास होगा और आकर्षण बढ़ेगा।

विनोबा—यह मोह अनेकों को होता है। नमूना बनाने के लिए कहते हैं। रशिया में नमूने बने, लेकिन शांति नहीं हुई। जहाँ-तहाँ नमूने हैं, लेकिन क्रांति नहीं। लोक-क्रांति हवा से बनती है। नमूने के लिए, जैसा कि आप कहते हैं, चारों ओर गर्मी है और हमारे गाँव में ठंडा होना चाहिए, 'कोल्ड स्टोरेज' होना चाहिए। एक ही गाँव को शीतागार में रखना सम्भव नहीं है। सब दूर गर्मी होते हुए एक गाँव को शीतागार में रखेंगे तो दूसरे गाँववाले कहेंगे कि उतनी ताकत हमारे गाँव में भी लगाइए तो हमारा गाँव भी होगा। मान लीजिए, विनोबा ने किसी गाँव में बैठकर कुछ नमूना पेश किया। तो लोग कहेंगे कि विनोबा जैसा आदमी हमारे गाँव में आयेगा तो हमारा गाँव भी वैसा होगा। कितने विनोबा एक-एक गाँव को आप 'सप्लाई' कर सकते हैं ? इस वास्ते नमूना का मोह मैं उचित नहीं मानता। जैसे चुनाव सब दूर एकदम होता है, उसी तरह हवा एकदम फैलनी चाहिए कि हमारे गाँव में ग्राम-स्वराज्य करना है। फिर किसी गाँव में गलत काम हुआ, सबने मिलकर कुछ गलत निर्णय कर लिया, तो ठीक है, दूसरे गाँव में वह गलती नहीं होने देंगे, और वह उस गाँव के उदाहरण से सुधरेगा। हर एक गाँव अपना स्वतंत्र नमूना बनेगा।

नथमलजी—नमूने के लिए नहीं, प्रायोगिक भूमिका की दृष्टि से कुछ होना चाहिए।

विनोबा—प्रायोगिक शब्द ठीक है। उसमें गाँव का जो भला होगा सो-होगा, लेकिन अपने को तालीम मिलेगी।

अभी टाटा ने व्यापारियों के सामने एक व्याख्यान दिया है कि भारत में हमने (उद्योगपतियों ने) बहुत पैसा खर्च किया, लेकिन लोगों की श्रद्धा हम पर नहीं, और सरकार भी हमारा तिरस्कार करती है। उसका कारण है कि हमने गाँव की तरफ ध्यान नहीं दिया। इस वास्ते अब हमें गाँवों को 'एडाप्ट' करना चाहिए। अगर टाटा के जैसे लोग तैयार हो जायें, गाँवों को 'एडाप्ट' करने के लिए, जिसमें वह ग्रामसभा को पैसा दें, व्यक्तिगत नहीं, उसके द्वारा ग्राम की सेवा होगी। इस प्रकार टाटा जैसे लोग सामने आयें तो मदद हो सकती है।

गोपुरी, वर्धा २ अप्रैल '७०

दान का अर्थ

एक लेख मैंने बहुत पहले लिखा था। उसमें मैंने त्याग और दान के बारे में समझाया था कि 'दान से ब्याज कटता है, और त्याग से पूँजी घटती है।' दान ब्याज को काटता है और त्याग मूल को काटता है। बुद्ध लोगों की भक्ति दान की होती है। दान की व्याख्या की। जो शंकराचार्य ने की, वही भगवान गौतम बुद्ध ने की। भगवान बुद्ध ने संविभाग शब्द किया है, और शंकराचार्य ने दान यानी सम्यक् विभाजन। दान शब्द 'दा' धातु से बना है। उस धातु का एक अर्थ है देना और दूसरा अर्थ है काटना। काटना और देना, दोनों अर्थ इकट्ठा करके समविभाजन किया—अपना कुछ काट करके देना। —विनोबा

३-४-'७० : गोपुरी, वर्धा

खादी : संगठन और कार्य-दिशा

[इन्दौर में खादी-ग्रामोद्योग संस्थाओं के प्रतिनिधियों के दूसरे सम्मेलन के अवसर पर प्रस्तुत विचार। इस सम्मेलन में महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, व गुजरात प्रदेशों को खादी ग्रामोद्योग संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने खादी-ग्रामोद्योग के अगले कदमों के बारे में विचार-विमर्श करने के लिए भाग लिया। ऐसा ही एक सम्मेलन दाक्षिणात्य प्रदेशों के खादी-ग्रामोद्योग संस्थाओं के प्रतिनिधियों का हैदराबाद (आंध्र प्रदेश) में सम्पन्न हो चुका है। देश के आर्थिक, सामाजिक व औद्योगिक वातावरण में तेजी से आ रहे बदलावों को मद्दे नजर रखते हुए ऐसे सम्मेलनों की विशेष आवश्यकता है।]

तीन पंचवर्षीय योजनाओं के नियोजित विकास के बावजूद विकेन्द्रित क्षेत्र ही ऐसा क्षेत्र है जो खेती-बारी के बाद सबसे बड़ा रोजगार व उद्यम देनेवाला है। भारत के सवा पांच लाख से अधिक गांवों में बसनेवाली जनता का लगभग तीन-चौथाई भाग आज भी खेती बारी के धन्धे पर निर्भर है। विकेन्द्रित क्षेत्र ही खेती बारी के पश्चात् सबसे बड़ा रोजगार देनेवाला स्रोत है। चूंकि विकेन्द्रित क्षेत्र स्वयं में यथानाम यथागुण है। असंगठित होने से उसकी आवाज बुलंद नहीं होने पाती. बड़े और विकसित उद्योग केवल दो प्रतिशत जनता को रोजगार का साधन देते हैं, जब कि विकेन्द्रित क्षेत्र सात प्रतिशत से कुछ अधिक के लिए रोजगार के साधन मुहैया करता है। भारत में किसान, और ग्रामोद्योग के काम में लगे दस्तकार, संगठन के अभाव में अपनी शक्ति का परिचय नहीं दे पा रहे हैं। खादी ग्रामोद्योग का काम करनेवाले कार्यकर्ताओं को सोचना है कि उनके कार्यक्रमों की जड़ें कैसे गहराई में पहुँचे। सबसे जरूरी काम आज के जमाने अपनी संगठन सज्जा को मजबूत बनाने के लिए कत्तिन-बुनकर-दस्तकार की त्रिमूर्ति से कारगर संवाद कायम करने का है। यह कारगर संवाद पहले गांवों में गांव-पंचायतों के माध्यम से किया जाय। हर प्रदेश की खादी ग्रामोद्योग संस्थाएँ स्वैच्छिक सेवा संगठन के रूप में प्रादेशिक स्तर पर एक सूचना सेवा-सदन के माध्यम से प्रदेश के विकेन्द्रित क्षेत्र को गतिशील बनाने के उपाय करें। जरूरी नहीं कि स्वैच्छिक संगठन पंजीकृत ही हों, केवल सूचना-संकलन और सूचना-सेवा ही उसका उद्देश्य रहे, ताकि अपने प्रदेश की विभिन्न खादी-ग्रामोद्योग संस्थाओं को वह विविध प्रकार की सूचनाओं से जागरूक रख सके, तथा संस्था सहकारियों के तत्त्वावधान में क्रियाशील कत्तिन बुनकर व दस्तकारों का ग्रामसभा या पंचायतवार ब्योरा पंचायतों व संस्थाओं के माध्यम से संकलित करे। प्रादेशिक स्वैच्छिक संगठन प्रदेश के नियमित कत्तिनों (सभी प्रकार के नियमित कर्तैये), बुनकरों व दस्तकारों की सूची प्रति वर्ष बनाये। वह सूची पंचायत, तालुका व जिला-स्तर पर बने तथा सक्रिय कत्तिनों, बुनकरों व दस्तकारों को उनके कार्य की अहमियत समझायी जाय, और राष्ट्रीय आमदनी तथा राष्ट्रीयता के प्रति एक सजीव अनुराग पैदा किया जाय।

दस्तकार फोरम'

प्रदेश भर के दस्तकार समाज को एक 'फोरम' पर लाना ग्रामोद्योगों को सक्रिय पुनर्जीवन देने के लिए रामबाण औषध का काम कर सकता है। यद्यपि कार्यकर्ताओं की अपनी भूमिका है, पर केवल कार्यकर्ताओं का ही सक्रिय रहना काफी नहीं है। दस्तकार, बुनकर व कत्तिन का संगठन में गौण स्थान आज खादी ग्रामोद्योग अभियान की मुख्य व भयावह कमजोरी है। यह कमजोरी तभी दूर हो सकती है जब कि खादी-कार्यकर्ता अपने से ज्यादा दस्तकार को महत्व दें तथा निरक्षर कत्तिन, बुनकर व दस्तकार से संत विनोबा की भांति ही कारगर संवाद चालू रखें। खादी ग्रामोद्योगों के काम में केन्द्रीय या प्रदेशिक शासन केवल वित्तीय स्रोत की भूमिका अदा कर सकते हैं। वे संगठन दस्तकारों के प्रादेशिक व सार्वदेशिक 'फोरम' नहीं बन सकते, दस्तकार 'फोरम' कायम करने के लिए खादी-कार्यकर्ताओं को पहल करनी ही पड़ेगी। गांव-समाज, ग्राम पंचायत व खादी ग्रामोद्योग संस्थाओं के सक्रिय सहयोग से देश के तमाम दस्तकारों को एक प्लेटफार्म पर खड़ा करने और उन्हें अपना बल पहचानने की प्रेरणा देना आज जरूरी है। खादी-ग्रामोद्योग संगठनों का यह कर्तव्य है कि वे देश के दस्तकार समाज को एक गतिशील 'फोरम के परिवेश में संगठित करें।

संगठन-सेवा

खादी ग्रामोद्योग संस्थाओं को आज संगठन सम्बन्धी विविध कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है।

आज भारत में मजदूर संगठनों के महासंघों और समन्वय संघों के साथ-साथ सेवा योजक संघ, उद्योग व व्यापार संघ तथा विविध निर्माताओं, व्यापारियों, उपभोक्ताओं के संगठित आंदोलन हैं। इन संगठनों के जरिये वे क्रियाशील वर्ग अपनी प्रगति व आकांक्षाओं का उद्घोष करते हैं तथा जनमत को अपनी ओर आकर्षित करने के विविध आयाम खोजते आ रहे हैं। रचनात्मक क्षेत्र की लोक-सम्पर्क की विधाएं पुरानी पड़ गयी हैं. उनमें आमूल परिवर्तन यदि संभव न भी हो तो कारगर स्थूल परिवर्तन अपेक्षित है। इसलिए खादी-ग्रामोद्योग-संस्था संगठनों के लिए आवश्यक है कि वे देश के विपन्न समाज और कमजोर वर्गों के रहनुमा के रूप में एक संगठित, संयमित और सोद्देश्य संगठन खड़ा करें। ऐसे संगठन में वर्तमान संस्था सहकारियों को समन्वयकारी महामण्डली माला के रूप में गूंथा जा सकता है।

ज्वलंत समस्या, जो खादी ग्रामोद्योग संगठनों के समक्ष है वह उनके संगठनात्मक तौर-तरीकों व संगठन कानून को खादी-ग्रामोद्योग कानूनों व भूदान-यज्ञ बोर्डों के कानूनों से तालमेल न होने की है। जरूरत इस बात की है कि संस्था, समितियों का पंजीयन, दातव्यता व धर्मादा वृत्ति की

परिधि से हटाकर सामाजिक संरक्षण के क्षेत्र में लाया जाना चाहिए, और खादी-ग्रामोद्योग कमीशन या उसके समकक्ष संगठन को अखिल भारतीय स्तर में व राज्य खादी ग्रामोद्योग मंडलों को प्रादेशिक स्तर में पंजीयन के अधिकार दिये जाने चाहिए, ताकि खादी ग्रामोद्योग संगठन अपने उद्देश्य में उपयोगी रूप से सफलता हासिल कर सकें तथा सामाजिक संरक्षण के संगठनों व धर्मादा-संगठनों के एकरूप विधान में सामयिक उपयोगी परिवर्तनों का समावेश किया जाये।

विकेन्द्रित ग्रामोद्योग

'अशोक मेहता समिति' के प्रतिवेदन के बावजूद खादी और ग्रामोद्योगों की सूची में कोई व्यापकता नहीं आ पायी है। ग्रामोद्योग किसे माना जाय? उसे जो सामूहिक हित का देहाती उद्योग है। सार्वदेशिक सूची का गठन विकेन्द्रित उद्योगों के लिए पिंजरापोल है। इसलिए खादी-कार्यकर्ताओं को यह विचार करना है कि क्षेत्रानुकूल ग्रामोद्योगों की क्षेत्रीय सूची बनायी जाय और खादी-ग्रामोद्योग संस्थाएँ यह तय करें कि वे ग्राम-विकास के समग्र रूप को ही लक्ष्य मानकर आगे बढ़ेंगी। यह तो समझ में आ सकता है कि राजकीय शासन निकाय अपने सीमित उद्देश्यों से ही गतिशीलता रखें, परन्तु स्वैच्छिक संगठनों पर शासन निकायों की क्रियाएँ थोपना युक्तियुक्त नहीं जँचता।

सहायता व प्रामाणिकता के मानक

खादी-ग्रामोद्योगों के लिए वित्तीय सहायता के मानकों का स्थानीय आवश्यकतानुकूल अनुशासन मौजूदा रूढ़ वित्तीय नियमों से मुक्ति पाने के लिए जरूरी है। जरूरत इस बात की है कि विकेन्द्रित उद्योगों के लिए स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल सहायता मानक निश्चित किये जायँ। इसके लिए आवश्यक है कि संस्था सहकारियों की स्थानीय स्थितियों का विश्लेषणपूर्ण अध्ययन किया जाय। सम्मेलनों में आर्थिक सहायता-सम्बन्धी यथार्थताओं का खुला विश्लेषण होकर प्रादेशिक अध्ययन-दल कायम किये जायँ, जो विषय वस्तु का गहन अनुशीलन करें, तथा उनकी संस्तुतियों को आगामी सम्मेलनों में प्रचारित किया जाय, और तदनुकूल मानक कायम किये जायँ।

दूसरा सवाल प्रामाणिकता का है। यदि शासन निकायों को त्रिविध पंजीयन पात्रता मौजूदा खादी-ग्रामोद्योग कानूनों के अन्तर्गत केन्द्र व राज्य शासनों से मिल जाती है, तो पृथक् प्रामाणिकता की आवश्यकता नहीं रह जाती। प्रतिनिधियों को पंजीयन अधिकारों के सम्बन्ध में समीचीन विवेचनपूर्ण चिंतन करके खादी-ग्रामोद्योगों की प्रामाणिकता के तरीकों में परिवर्तन, संशोधन, आदि के बारे में भी सोचना चाहिए।

—रमेशचन्द्र पंत

लोक-यात्रा से

खूबसूरत प्रकृति और प्रेमल जनता के सान्निध्य में

जम्मू और कश्मीर-यात्रा का एक माह समाप्त हो गया। जम्मू नगर के बाद ही हम पहाड़ों की गोद में आ पहुँचे थे। उस दिन नौ मील का पड़ाव था। मार्ग में बहुत भूख लगी तो प्रकृति ने मदद की। एक भाई ने हमें मीठे बेर का पेड़ बताया, उसके ऊपर एक आदमी को चढ़ाया, और उस पेड़ को हिला दिया। बस, फिर क्या था, बेरों का मेंह बरस पड़ा, और हमने झोलियाँ भर लीं।

जैसे-जैसे आगे बढ़ते गये, प्राकृतिक सौन्दर्य भी बढ़ता गया। पहाड़ों के ऊपर से उतरनेवाले तेज जलप्रपात, पर्वत की ढलानों पर स्थित सीढ़ीनुमा खेत, हरे-भरे पेड़, सुरभित समीर, सब मन को मोहित करते थे, और चिन्तन मनन के लिए एक अनुकूल वातावरण प्रस्तुत करते थे।

जम्मू कश्मीर की यात्रा भी प्रारम्भ में विशेष जमी नहीं थी। परन्तु जम्मू नगर में जब हम ९ दिन रहे, तो रचनात्मक संस्थाओं, जैसे—स्टेट खादी बोर्ड, स्टेट खादी कमीशन, श्री गांधी सेवा-सदन, गांधी शताब्दी, के प्रमुख कार्यकर्ताओं से सम्पर्क करके उनको लोकयात्रा का 'मिशन' समझाया। फिर सरकारी विभागों के प्रमुखों, जैसे—शिक्षा-विभाग, महिला-शिक्षण, समाज-कल्याण आदि को भी गांधी-शताब्दी के मंत्री ने सभा बुलायी, और सम्बन्धित व्यक्तियों को सूचना प्रसारित की। आजकल हमें तीन कार्यकर्ता मिल गये हैं—एक हरिजन सेवक संघ के, एक खादी-बोर्ड के, तथा एक शिक्षा विभाग के शिक्षक। कुछ दिन के बाद तीनों वापस चले जायेंगे। गाँवों के शिक्षकगण यात्रा में काफी सहयोग दे रहे हैं। इस प्रकार वैचारिक दृष्टि से अच्छा सम्पर्क हो रहा है।

कश्मीर की परिस्थिति विशेष है। लेकिन यहाँ भी गाँव की जनता अन्य स्थानों की तरह ही प्रेमल और श्रद्धालु है। सामान्य जनता में अभी भी ऊपर की राजनीति का विष नहीं पहुँच पाया है। पैदल चलते समय हम तरह-तरह के लोग मिलते हैं। हमारी पदयात्रा विचार-प्रचार का महत्त्वपूर्ण माध्यम बन गयी है।

एक माह में १७ पड़ावों पर ३५ सभाएँ कीं, और १२८ मील की यात्रा पूरी हुई। यहाँ यात्रा करते हुए हमें महसूस हुआ कि यदि इस प्रकार की प्रेम-यात्रा ३-४ वर्ष तक यहाँ चले, तो लोगों में फैले तरह-तरह के भ्रम दूर हो जायेंगे। जम्मू और कश्मीर की समस्या का हल निकल आयेगा। यहाँ की जनता सर्वोदय-विचार को गौर से सुनती है, बहुत प्रभावित होती है, और विचार की सराहना करती है। परन्तु आत्मविश्वास लोगों में नहीं आता, रचनात्मक कदम उठाने की हिम्मत नहीं होती। तो भी विचार-प्रचार का लोगों पर असर अच्छा होता है। हम तो आशा रखते हैं कि इन जनता में से ही लोग निकलेंगे और परिस्थिति को सम्भाल लेंगे।

हम चारों बहनें स्वस्थ और प्रसन्न हैं। —निर्मला वैद्य

सामयिक चर्चा

गांधी : प्रहारों से परे

भारत के राजनीतिक रंगमंच पर अब एक नया नाटक शुरू हुआ है। बंगाल में माओवादियों ने गांधी के चित्रों, साहित्यों आदि को नष्ट करके गांधी को समाप्त करने और अध्यक्ष माओ को प्रतिष्ठित करने का अभियान शुरू किया है। इसकी विरोधी कार्रवाई भी छिटपुट शुरू हुई है, और गांधी को पुनर्स्थापित करने की कोशिशें कांग्रेस से सम्बन्धित छात्र-परिषदों ने की हैं।

लोकसभा में गांधी-विरोधी इन हरकतों पर रोष व्यक्त किया गया है, और सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने इसे 'बचकाना हरकत' कहा है।

गांधी को मिटाने की भारत में यह पहली कोशिश हुई है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। यह भी कहना कठिन है कि माओवादियों के अलावा बाकी देश के राजनीतिक नेता गांधी-विचार को कायम रखना ही चाहते हैं।

गांधी असह्य हो गये तो सन् १९४८ में उन्हें गोली मार दी गयी। यह सोचने की भूल की गयी कि गांधी इससे समाप्त हो जायेंगे। लेकिन देखा गया कि गोली मारनेवालों का मकसद पूरा हुआ नहीं, गांधी देश की जनता के करोड़ों हृदयों में बस गये। गांधी की भक्ति हृदय में संजोये जनता की निगाहें कांग्रेस की ओर लगीं, कि अब गांधी की कमी कांग्रेस पूरी करेगी। करोड़ों की आंखों में उतर आये गांधी के सपने कभी साकार होंगे, यह आशा पलती रही तब तक, जब तक यह स्पष्ट दिखाई नहीं देने लगा कि गांधी की छाया में जिस कांग्रेस का स्वरूप विकसित हुआ है, उसका आकार-प्रकार तो कुछ और ही है।

दिखाई यह दिया कि 'गांधी की जय' बोलनेवाले और गांधी को गोली मारनेवाले, दोनों गांधी से दूर हैं, बहुत दूर, लेकिन अपनी-अपनी जरूरत के मुताबिक 'गांधी महात्मा' का इस्तेमाल दोनों कर ले रहे हैं।

गांधी-विरोध की बुनियादें

जिन्हें गांधी की असाम्प्रदायिक भूमिका नापसन्द थी, और जिनका अस्तित्व ही साम्प्रदायिक था, उन्होंने गांधी को मिटाने का षड्यन्त्र किया, जिन्हें गांधी की कल्पित समाज-रचना अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के प्रतिकूल पड़ी, और जिनमें 'देन' नहीं, 'सत्ताप्रियता' अधिक थी, उन्होंने गांधीवादी नकाब ओढ़कर गांधीविरोधी—यानी लोक-विरोधी—रचना खड़ी की, और अब गांधी के शरीर और सपनों को

गांधी-चित्र प्रहार के बाद

मिटाने की कोशिश के बाद गांधी के विचार को मिटाने का यह नया उपद्रव उनके द्वारा शुरू हुआ है जो गांधी के विचार और अहिंसा की शक्ति से डरते हैं, और जिनका अस्तित्व ही किसी खास विचार की तानाशाही और हिंसा की शक्ति पर विकसित हो रहा है।

लेकिन यह भी तो कहा जा सकता है कि ये उपद्रवी इस मानी में ईमानदार हैं कि अपनी मान्यता को मुलेआम पेश कर रहे हैं। कम-से-कम पर्दा पोश तो नहीं हैं।

एक शिकार : दो निशानें

कलकत्ते में गांधी-साहित्य जलाये जाने की खबर जब सुनी तो मुझे अहमदाबाद की एक घटना याद आ गयी। कलकत्ता की घटना भी विश्वविद्यालय की, और अहमदाबाद की घटना भी विश्वविद्यालय-क्षेत्र की हो। एक के सर्जक दूसरे को देशद्रोही और खुद को देशभक्त कहनेवाले, और दूसरे के सर्जक अपने को क्रान्तिकारी और दूसरे को प्रतिक्रियावादी शोषक कहनेवाले, और दो के शिकार एक—गांधी।

अहमदाबाद में गुजरात-विश्वविद्यालय के 'स्टुडेण्ट-रेस्तरां' के पास ही एक मित्र परिवार में पिछले दिनों रुकना हुआ। ड्राइंगरूम में गांधी का एक टूटा चित्र टंगा था। ताज्जुब हुआ कि इस सुन्दर ड्राइंगरूम में गांधी का टूटा चित्र क्या खास अर्थ रखता है? पूछने पर मालूम हुआ कि अहमदाबाद में हुए उपद्रव के समय इस मकान का पूरा सामान फूंक दिया गया था, और गांधी के इस चित्र पर प्रहार कर कूड़े में फेंक दिया गया था।

लेकिन देशभक्तों ने इनके मकान को अपना लक्ष्य क्यों बनाया, कैसे बनाया? इस इलाके में यह परिवार १२ सालों से रह रहा है। जब इनके सामानों की होली जली तो पड़ोसियों ने पूछा, "इनका सामान क्यों जलाया जा रहा है?" जलानेवालों में से किसीने कहा, "मुसलमान हैं।" "क्या कहते हो जी, हमारा इतने दिनों का साथ है, हमारे हर तीज-त्योहार, सुख दुख में साथ रहते हैं, पूरा परिवार खादी पहनता है, गांधीजी के साथ इन्होंने काम किया है। इन्हें मुसलमान कैसे कहते हो?" "आपको नहीं मालूम है तो जान लीजिए, ये मुसलमान हैं, हमारी सूची में इनका नाम दर्ज है।"

अनुत्तरित प्रश्न

बूढ़ी लैला बहन आंखों में आंसू भरकर पूछती हैं, "यह सब क्या हो रहा है? हमने तो सपने में भी नहीं सोचा था कि हमें कभी भारतीय नहीं, मुसलमान माना जायगा, और ..मुसलमान खुद हमें मुसलमान नहीं मानते।"

छोटी पप्पू कहती है, "हमाले खिलौने फूक (फूंक) दिये। बले (बड़े) गन्ने (गन्दे) लोग हैं।"

मैं क्या जवाब दूं उन बूढ़ी लैला बहन

को, जिनकी आँखों में मैं एक भारतीय माँ का भाव-दर्शन पा रहा हूँ, और क्या कहूँ उस नन्ही मुन्नी से, जिसकी तुतली बोली में भारत का भविष्य बोल रहा है ?

क्षतिग्रस्त गांधी का चित्र वैसे ही दीवाल पर कील के सहारे टँगा है, और मैं वहीं चुपचाप बैठा हूँ। कुछ बोल नहीं पा रहा हूँ।

× × ×

कलकत्ता में इससे भिन्न क्या हुआ ? अहमदाबाद में 'देशभक्तों' ने गांधी को शिकार बनाया और कलकत्ता में क्रान्तिकारियों ने। तो क्या यह माना जाय कि गांधी न क्रान्तिकारी थे, न देशभक्त ? या दोनों थे, और इसलिए सीमित और एकांगी दृष्टि में क्रान्तिकारी और देशभक्त गांधी की विराटता अँट नहीं रही है ?

इतिहास साक्षी है कि हर क्रान्तिकारी यथास्थिति और पूर्वज्ञात एवं मान्य मूल्यों से भिन्न कुछ नयी अवधारणाएँ लेकर मानव-विकास के क्षितिज पर प्रकट होता है। और यह कि, उसे अपनी अवधारणा को प्रतिष्ठित करने की चेष्टा का मूल्य भी चुकाना पड़ता है।

'जब मनुष्य के जीवन का दायरा सीमित था, उसकी गति अत्यन्त धीमी थी, तब की अपेक्षा विज्ञान के साथ जीवन के जुड़ जाने से जीवन का दायरा अति-व्यापक और उसकी गति इतनी तीव्र हो गयी है कि जीवन के सदर्भ जल्दी-जल्दी बदलने लगे हैं, और इस बदलते संदर्भ में मनुष्य के समक्ष ऐसी नयी-नयी चुनौतियाँ खड़ी होने लगी हैं कि उनका सामना पुराने तरीकों से नहीं किया जा सकता।' यह बात आमतौर पर वैज्ञानिक कहने लगे हैं।

फिर गांधी हैं क्या ?

अगर गांधी देशभक्त भी नहीं, क्रान्तिकारी भी नहीं, व्यावहारिक भी नहीं, और वैज्ञानिक भी नहीं, तो गांधी हैं क्या, जो इतने सारे लोगों की परेशानी के कारण बने हुए हैं ?

अगर गांधी को एक विचार मानकर चलें तो क्या उस विचार में कोई वैज्ञानिकता नहीं, कोई क्रान्तिकारिता नहीं, कोई व्यावहारिकता नहीं ? तो इतनी बेकार चीज को मिटाने की इतनी जबरदस्त एक के बाद दूसरी कोशिशें क्यों हो रही हैं ?

इतना तो जाहिर है कि इस युग में मानव-विकास की गाड़ी को पीछे ढकलनेवाला कोई विचार टिक नहीं सकता, वह अपने आप समाप्त हो जायगा। गांधी-विचार को प्रतिगामी विचार माननेवाले फिर क्यों नहीं उसे इतिहास के क्रम में अपने आप मिटने देते ?

क्योंकि हर परम्परा-पोषक क्रान्ति की नयी अवधारणा से घबराता है और प्रतिक्रिया में विरोधी हरकतें करता है। यह इतिहास में जिस तरह गांधी के पहले के क्रान्तिकारियों के लिए एक तथ्य रहा है, उसी तरह गांधी के लिए भी एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है। यह विरोध यथास्थिति-प्रेमियों द्वारा तो होता ही है, तथाकथित क्रान्तिकारियों द्वारा भी होता है। रूस की बोल्शेविक क्रान्ति और चीन की जनक्रान्ति के बीच पैदा हुए विरोध इसके ताजे नमूने हैं। क्रान्ति की शक्ति सिर्फ औद्योगिक मजदूर ही नहीं बन सकता, खेतिहर मजदूर भी बन सकता है, इस विचार को प्रतिष्ठित करने के लिए भी संघर्ष हुए।

आज के संदर्भ में राष्ट्रवाद, समाज की रचना और परिवर्तन आदि सभी ज्ञात पद्धतियों और मूल्यों में क्रान्ति चाहिए। विज्ञान की गतिशीलता के कारण दो खास चीजें जुड़ गयी हैं क्रान्ति के सन्दर्भ में, जो बिल्कुल नयी हैं : एक तो क्रान्ति आधिक नहीं होगी, और दूसरे, क्रान्ति की प्रक्रिया बराबर चलती रहनी चाहिए। कुछ परिवर्तन, और उसके बाद ठहराव, ऐसी क्रान्ति अब गयी-बीती हो चली है।

विरोध के हंगामे

गांधी का राष्ट्रवाद अब तक की राष्ट्रवादी धारणा से भिन्न है, वह जागतिक सन्दर्भ लिये है, इसलिए इस नवीनता के कारण पुराने राष्ट्रवादी को गांधी ग्राह्य नहीं; गांधी की समाज-रचना औद्योगिक और साम्यवादी रचना से आगे की, दोनों के दोषों से मुक्त, अभिनव परिकल्पना है, और इसलिए इग्लैंड, अमेरिका, या रूस और चीन की रचना को नमूना मानकर चलनेवालों को गांधी अस्वीकार हैं; और गांधी ने क्रान्ति की पद्धति और शक्ति, दोनों की नयी अवधारणाएँ प्रस्तुत की, इसलिए क्रान्ति की लीक पर चलनेवाले क्रान्तिकारियों को गांधी की क्रान्ति स्वीकार नहीं। केन्द्रीय शक्ति और सत्ता के पोषण में लगे विज्ञान की भी दिशा बदलने की बात गांधी ने कही, इसलिए गांधी को दकियानूस और अवैज्ञानिक भी घोषित कर दिया गया।

लेकिन इतने विरोधों के बावजूद गांधी-विचार जिन्दा है, और जिन्दा रहेगा, क्योंकि उसमें इतिहास की चुनौतियों का जवाब है। विचार न गोली मारने से खत्म होगा, न दबाने से दबेगा, और न जलाने से जलेगा। यह बात जितनी माओ के विचार के लिए लागू होती है, उतनी ही गांधी के विचार के लिए भी। और अगर इसमें वैसा कुछ नहीं होगा, तो मूर्तियाँ, चित्र और प्रदर्शनियाँ तो गांधी को अमर नहीं ही कर सकेंगी।

स्वीकृति के स्वर

एक तरफ हमें गांधी-विरोधी ये स्वर सुनाई पड़ रहे हैं, तो दूसरी ओर दुनिया के क्षितिज पर—नीग्रो लोगों की सविनय अवज्ञा के रूप में, चेकोस्लोवाकिया के अहिंसक प्रतिकार के रूप में, पश्चिम की यांत्रिकता से त्रस्त नयी पीढ़ी द्वारा सामाजिक ढाँचे के पूर्ण अस्वीकार के रूप में, भारत में ग्रामदान के रूप में—नये आयाम प्रकट हो रहे हैं। भले ही आरोहण के क्रम में ये कभी प्रखर, कभी धूमिल दीखते हों, लेकिन मिटनेवाले नहीं हैं।

गांधी भारत की सीमा में सीमित नहीं हैं, उनका जागतिक विस्तार हो गया है, गांधी मूर्तियों, चित्रों, पुस्तकालयों, ग्रन्थों में जकड़े हुए नहीं हैं, इतिहास के प्रश्नों के जवाब हो गये हैं, तथाकथित देशभक्तों और क्रान्तिकारियों के प्रहारों से परे हो गये हैं। जरूरत है कि उन जवाबों को अधिक-से-अधिक लोगों तक हम शीघ्र पहुँचाने का प्रयत्न करें।—रामचन्द्र राही

आजमगढ़ : ऊसर धरती के सरस निवासी

परिचय

उत्तरप्रदेश के पूर्वांचल में गोरखपुर कमिश्नरी के दक्षिण भाग में आजमगढ़ जनपद स्थित है। इस जिले की उत्तरी सीमा घाघरा नदी बनाती है, जो आजमगढ़ और गोरखपुर जिले के बीचोबीच बहती है। इस जिले के पूरब में गाजीपुर-बलिया, पश्चिम में फैजाबाद-सुल्तानपुर-जौनपुर, उत्तर में गोरखपुर देवरिया और दक्षिण में जौनपुर-वाराणसी-गाजीपुर जिले हैं। भूमि यहाँ की समतल है जो प्रायः दक्षिण पूर्व की ओर ढालू होती चली गयी है। छोटी-छोटी कई नदियाँ हैं, घाघरा और टौंस सबसे बड़ी नदी है। तमसा, जिसे अब टौंस कहा जाता है, जिले के बीचोबीच बहती है। कहा जाता है कि वाल्मीकि ने कभी तमसा के तट पर निवास किया था और भगवान राम दण्डक वन जाते समय इस क्षेत्र से गुजरे थे।

आजमगढ़ शहर आज जहाँ है, वहाँ पहले बहुत बड़ा जंगल था। जंगल में रहनेवाले चोर डाकू उस समय के महनगर राज्य के लिए सिरदर्द थे। नवाब आजम शाह ने इन डाकुओं के अड्डों का सफाया करने तथा अपनी कीर्ति पताका को अक्षुण्ण बनाने की दृष्टि से जंगल कटवा कर एक किला बनवाया था। बाद में उस किले के सहारे नगर बसा, और इसका नाम आजमगढ़ पड़ा।

इस जिले का क्षेत्रफल २,२१३ वर्ग-मील (१४,१६,७३० एकड़) है। ताल, पोखरे, नदियाँ और इनके ऊँचे कगार, बड़े टीले तथा भीटे और ऐतिहासिक खण्डहर काफी मात्रा में हैं। दोहरीघाट में एशिया की सबसे बड़ी पम्प नहर है, जिसकी कुल लम्बाई ७१२ किलोमीटर है।

कृषि-उद्योग

यहाँ आदमी ज्यादा, जमीन कम, और काम उससे भी कम है। जो जमीन है भी वह प्रतिवर्ष बरसाती नदियों में बाढ़ आने पर जलमग्न रहती है और खाने भर का अन्न नहीं हो पाता। लालगंज तहसील में कृषि-भूमि बहुत कम, ऊसर ज्यादा है। बाढ़ आने पर जनजीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। घर की कमाई पूरी होती नहीं। पूरक धन्धे के रूप में खादी का काम बड़े पैमाने पर फैला हुआ है। हथकरघा-उद्योग भी काफी लोगों की जीविका का साधन है। इस जिले में श्री गांधी आश्रम हरिजन गुरुकुल, सघन-क्षेत्र दोहरीघाट ग्राम सेवा समिति, खादी उद्योग सहकारी समिति, आदि संस्थाओं द्वारा खादी ग्रामोद्योगों का काम चलाया जा रहा है। खादी का अधिकतम वार्षिक उत्पादन २३ लाख रुपये का तथा बिक्री १७ लाख रुपये तक हुई है। अगर पूरा जिला खादी को अपना ले तो कपड़े के लिए प्रतिवर्ष निकलनेवाला लगभग तीन करोड़ का अन्न (प्रतिव्यक्ति औसत बीस रुपये वार्षिक) पेट के लिए बच जायगा। कत्तिनों और कारीगरों को रोजी मिलेगी। खादी के सिवाय दूसरा कौनसा धन्धा है जो गरीब-से-गरीब को भी मेहनत का अवसर देकर उसकी उदरपूर्ति कर सके।

हथकरघा उद्योग के भी इस जिले में दो बड़े केन्द्र मऊनाथ भंजन और मुबारकपुर हैं। यहाँ के बने कपड़े इंग्लैंड, अमेरिका तथा रूस तक को भेजे जाते हैं। मुबारकपुर का रेशमी कारोबार बहुत प्रसिद्ध है। चर्मोद्योग भी यहाँ का विकसित और विकासशील है। मिट्टी के बर्तन, साबुनगीरी, ईंट के भट्ठे और माचिस बनाने का काम भी इस जिले में होता है।

खादी की सबसे बड़ी संस्था श्री गांधी आश्रम का काम यहाँ के गाँव-गाँव में फैला है। स्थानीय रचनात्मक संस्था हरिजन गुरुकुल दोहरीघाट की स्थापना नवम्बर १९३५ में इसी जिले के कर्मठ संन्यासी, तेजस्वी व्यक्तित्व एवं ओजस्वी देशभक्त स्वामी सत्यानन्दजी ने की थी। इस संस्था ने बुनियादी तालीम, खादी-कार्यकर्ता प्रशिक्षण, ग्रामनेता प्रशिक्षण आदि कार्यक्रम चलाकर काफी लोकप्रियता अर्जित की है। हरिजनोत्थान और कल्याणकारी कार्यों का व्यापक कार्यक्रम भी इस संस्था की मुख्य प्रवृत्ति है। कृषि गोपालन और खादी ग्रामोद्योगों में हरिजनों को तरजीह दी जाती है। खादी, साबुन, दियासलाई का निर्माण यह संस्था करती है।

सामाजिक चेतना

स्वामी सत्यानन्दजी पहले व्यक्ति इस प्रदेश में हुए, जो अपनी जाति-बिरादरी और समाज द्वारा बहिष्कृत किये जाने पर भी गांधीजी के हरिजनोद्धार आन्दोलन में सक्रिय रहे और अन्त तक उसीमें लगे रहे।

स्वतन्त्रता के राष्ट्रीय संग्राम के दिनों में बलिया की ही तरह मऊनाथ भंजन में कितने ही तपस्वी निष्ठावान कार्यकर्ता ब्रिटिश सत्ता को उखाड़ फेंकने के प्रयत्न में गोली के शिकार हुए थे। उन ज्ञात एवं अज्ञात शहीदों के नाम पर यहाँ प्रतिवर्ष एक बहुत बड़ा मेला लगता है, जिसमें सभी पक्ष, सम्प्रदाय, जाति और विचार के लोग अपनी श्रद्धांजलियाँ शहीदों के प्रति अर्पित करते हैं।

इसी आजमगढ़ जिले में स्वामी सत्यानन्दजी, महापंडित राहुल सांकृत्यायन एवं श्री 'हरिऔध' जी जैसे त्यागी, तपस्वी, कर्मठ देशभक्त और विद्वान हुए हैं। आज उत्तरप्रदेश के मुख्य कम्युनिस्ट पॉकेट-वाले जिलों में से यह मुख्य जिला है। प्रमुख साम्यवादी नेताओं का यह कार्यक्षेत्र भी है। फिर भी जिस प्रकार बलिया, गाजीपुर, फैजाबाद, वाराणसी में साम्यवादी कार्यकर्ताओं और नेताओं का सहयोग ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन के लिए मिला

था, उसी प्रकार इस जिले में भी मिला। मुस्लिमबहुल गाँवों ने ग्रामदान के घोषणा-पत्रों पर सहर्ष हस्ताक्षर किये हैं। बुद्धिजीवी वर्ग ने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार को भलीभाँति समझकर स्वयं तो मान्य किया ही, जनता को इस दिशा में कदम उठाने के लिए भरपूर प्रोत्साहित किया है।

जिलादान : संकल्प और सातत्य

बलिया में १५ जुलाई सन् १९६८ को ११ बजे आचार्य विनोबा भावे के समक्ष उत्तरप्रदेश की रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं द्वारा हाथ उठाकर प्रदेशदान का संकल्प कर लेने के बाद आजमगढ़ जिले के कार्यकर्ताओं और नागरिकों ने आजमगढ़ के जिलादान की व्यापक योजना बनायी। इस योजना-निर्माण के पूर्व फतेहपुरमंडाव, ठेकमा, लालगंज और दोहरीघाट ब्लाकों में ग्रामदान के छिटपुट अभियान चलाये गये थे, और उन अभियानों के दौरान जो ग्रामदान-प्राप्ति हुई, वह बहुत उत्साहवर्धक थी। जिला सर्वोदय मण्डल यहाँ कायम ही था, इसके माध्यम से सर्वोदय-विचार-गोष्ठियाँ और सभाओं का क्रम चलता रहा। बलिया, जो कि इसका पड़ोसी जिला है, में ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य का विचार फैल जाने के बाद यहाँ भी उत्कण्ठा का पैदा होना स्वाभाविक ही था। पहली ग्रामदान-गोष्ठी मऊ में और उसके बाद फतेहपुरमंडाव में हुई। हरिजन गुरुकुल के तत्कालीन अध्यक्ष पं० धननयविहारी पाण्डे की प्रेरणा से इस दिशा में तेजी से काम शुरू हुआ। जिले की सभी संस्थाओं के कार्यकर्ताओं की सम्मिलित बैठकें हुईं और निश्चय हुआ कि सभी संस्थाएँ, जिन-जिन ब्लाकों में खादी का काम चलता है, उसे ग्रामदान में लाने का संकल्प करें। इसी निश्चय के अनुसार पहला संयुक्त ग्रामदान-शिविर मधुबन शहीद स्मारक विद्यालय में हुआ, और शिविर के बाद अभियान चलाया गया। इससे कार्यकर्ताओं में उत्साह पैदा हुआ और यह अनुभव आया कि गाँवों में इस विचार के प्रति बहुत आकर्षण है।

अपनी सुविधानुसार खादी के काम को सँभालते हुए, पड़ोस के जिलों—जौनपुर, बलिया और अकबरपुर श्रीगांधी आश्रम से भी कार्यकर्ताओं का सहयोग प्राप्त करके एक के बाद दूसरे ब्लाक में शिविर और अभियान के कार्यक्रम चलाये गये। जिला परिषद के अध्यक्ष ने और विकास-अधिकारियों ने इस आन्दोलन के महत्त्व को समझा और 'पक्षमुक्त अराजनीतिक कार्यक्रम' मानकर पूरा सहयोग दिया। इस जिले में ग्रामदान के काम को करनेवाले कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन एवं उत्साहवर्धन तथा सम्भ्रान्त लोगों को भी विचार की महत्ता एवं व्यापकता बताने तथा सबका सहयोग प्राप्त करने के लिए आचार्य राममूर्ति, उत्तरप्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समिति के संयोजक श्री कपिल भाई, ग्रामदान-शिविरों के तरुण प्रशिक्षक श्री रामजी भाई और आचार्यकुल के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव का समय इस जिले को मिला। श्री गांधी आश्रम के तत्कालीन व्यवस्थापक श्री रामनारायण चौबे और हरिजन गुरुकुल के श्री मेवालाल भाई, देवपति सिंह तथा अन्यान्य सैकड़ों कार्यकर्ताओं ने पूरी भावना और निष्ठा से ३० जनवरी १९७० तक 'जिलादान' पूरा करने का संकल्प करके जिले में 'ग्रामदान-तूफान-अभियान' चलाया। नियत तिथि पर प्रदेश के ७ घनी और बड़ी आबादीवाले जिलों में से प्रथम का जिलादान पूरा हुआ। जिलादान की स्थिति निम्नांकित आँकड़ों से स्पष्ट होती है :

भूमि और भौगोलिक स्थिति

कुल क्षेत्रफल : २,२१७ वर्गमील
आबादी का घनत्व : ९५१ प्रति वर्गमील
काश्त में कुल भूमि : १०,२१,४७५ एकड़
कुल सिंचित भूमि : ५,३६,९९० एकड़

जनपद के ग्रामदान और समाज

कुल जनसंख्या : २२,८६,८९६
शहरी जनसंख्या : २,५१,११८
ग्रामीण जनसंख्या : २०,३५,७८१
साक्षरता : १६.३ प्रतिशत
तहसील : ६
ब्लाक : २९
न्याय पंचायत : ३६१
गाँव-सभा : २,८२८
राजस्व गाँव : ५,६३५
ग्रामदान के योग्य गाँव : ४,५५०
ग्रामदान में शामिल गाँव :
३,८९२ (८६ प्रतिशत)
ग्रामदान में शामिल रकबा :
६,९०,९८७ एकड़
ग्रामदान में शामिल जनसंख्या :
१६,८२,८२७
(ग्रामीण जनसंख्या का ८२ प्रतिशत)

जिलादान अभियान

(सितम्बर १९६७ से जनवरी १९७० तक)

पहला चरण—

४ सितम्बर १९६७ : ग्रामदान अभियान की कल्पना और योजना तथा अभियान का शुभारम्भ
४ फरवरी १९६८ से : लालगंज तहसील में अभियान
१६ अगस्त १९६८ से : सगड़ी तहसील में अभियान

दूसरा चरण—

१० मई '६९ से : सदर (आजमगढ़) तहसील में अभियान
७ अगस्त '६९ से : फूलपुर तहसील में अभियान
१० दिसम्बर '६९ से : मुहम्मदाबाद तहसील में अभियान

तीसरा चरण—

३ जनवरी १९७० से
३० जनवरी १९७० तक : घोसी तहसील में अभियान तथा जिले के अन्य अधूरे ब्लाकों की पूर्ति।

जिलादान की घोषणा :
३० जनवरी १९७०
जिलादान समारोह : ३ मई १९७०
मुख्य अतिथि : श्री जयप्रकाश नारायण

इस जिलादान की सफलता में सरकारी अधिकारी, कर्मचारी, जनता, सभी पार्टियों के लोग, और रचनात्मक संस्थाओं का समन्वित योगदान रहा है। अब सबका ध्यान ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए किये गये संकल्प की पूर्ति की तरफ जाना चाहिए। सबसे पहले गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य सभाओं का गठन हो और उनकी बैठक नियमित रूप से हो। जो भी मसले इस सभा में उठें उन पर निर्णय सर्वसम्मति से किया जाय। ग्रामदान की और जो शर्तें हैं, जैसे—बीघा में एक बिस्वा भूमि भूमिहीनों को देना, और ग्रामकोष का निर्माण; वे भी पूरी की जायँ। विद्यालयों में तरुण शान्तिसेना और गाँव-गाँव में ग्राम-शान्तिसेना का संगठन गाँव की सुरक्षा और भलाई के लिए किया जाय। जिले भर में कम-से-कम दो हजार सर्वोदय-मित्र बनाये जायँ। गाँव गाँव में अपनी आवश्यकता के लिए लोग खादी का उत्पादन करें। और, इस प्रकार सबके सहयोग से, सबके लिए, सबके द्वारा अहिंसक समाज की रचना का अगला अभियान शुरू हो, यह अपेक्षित है।

फैजाबाद : रामराज्य की धरती पर ग्रामस्वराज्य

२१ अगस्त सन् १९६६ को अकबरपुर ब्लाक के अरिया बाजार में श्रीगांधी आश्रम के कार्यकर्ताओं का पहला शिविर हुआ, जिसमें मध्यप्रदेश के वयोनिष्ठ सर्वोदय नेता श्री दादाभाई नाइक का मार्गदर्शन मिला। जिलादान की योजना बनी और पहले ही अभियान में ३ ग्रामदान प्राप्त हुए।

इस जिले के कई कार्यकर्ताओं को बलिया में ग्रामदान-अभियान चलाने का अनुभव था। १३ अगस्त १९६८ को पुरा-बाजार में शिविर और ब्लाकस्तरीय ग्रामदान अभियान का श्रीगणेश श्रीगांधी आश्रम अकबरपुर ने कराया और बाद में तो जिलादान के कार्यक्रम में सघन विकास-क्षेत्र रनौंही तथा ग्रामस्वावलम्बी विद्यालय आचार्यनगर का पूरा-पूरा सहयोग मिला। फिर तो जब-जब इस जिले में ग्रामदान-अभियान चले तब-तब रिटायर्ड जज श्री कामतानाथ गुप्त, श्री धीरेन्द्र मजूमदार, आचार्य राममूर्ति, श्री विपिननारायण वर्मा और श्री कपिल भाई का मार्गदर्शन मिलता ही रहा। सबसे पहले फैजाबाद तहसील में अभियान चला और अप्रैल १९६९ में इस तहसील के चारों ब्लाकों का प्रखण्डदान पूरा हुआ। अगस्त १९६९ में टाण्डा तहसील में अभियान चले और सितम्बर तक इसके चारों प्रखण्डदान पूरे हो गये। फरवरी १९७० में बीकापुर तहसील के बचे हुए ब्लाकों में अभियान चले और प्रखण्डदान पूरे हुए। चौथी तहसील अकबरपुर जहाँ ग्रामदान-आन्दोलन का श्रीगणेश हुआ था, फरवरी, मार्च, अप्रैल १९७० में अभियान चलाकर १८ अप्रैल १९७० (भूक्रान्ति दिवस) को पूरा किया गया। इस प्रकार फैजाबाद जिले में आदर्श रामराज्य की धरती पर के अठारहों ब्लाकों के ८५ प्रतिशत गाँव (जिले के २३०८ गाँव) ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के संकल्प में शामिल हो चुके हैं। आज जिले के गाँव गाँव में चर्चा है सपत्ति सब रघुपति कै आही, इसलिए व्यक्तिगत स्वामित्व के बजाय ग्रामस्वामित्व ही हमारे अभाव, अन्याय और अज्ञान से मुक्ति का एकमेव मार्ग है।

ऐतिहासिक गौरव

सत्यवादी महाराजा हरिश्चन्द्र जिन्होंने सत्य का प्रथम साक्षात्कार अपने जीवन में किया और संसार को भी कराया, उनका जन्म इसी पावन नगरी अयोध्या में हुआ था। उसी सत्य का अपने जीवन में निरंतर प्रयोग करनेवाले महात्मा गांधी के स्वप्न ग्रामस्वराज्य को रामराज्य की धरती पर साकार होने का गौरव मिल रहा है। सरयू नदी के तट पर अयोध्या को स्थापित करने का श्रेय भले ही मनु महाराज को है, किन्तु आधुनिक अयोध्या के निर्माता तो विक्रमादित्य ही माने जाते हैं। इस परम पुनीत प्रेरणादायी नगरी का सौभाग्य यह है कि वीर रघु, दानी दिलीप, सत्यवादी हरिश्चन्द्र, मातृ-पितृभक्त श्रवणकुमार और मर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्र यहीं पैदा हुए हैं।

जिस आदर्श राज्य की कल्पना ग्रामस्वराज्य के रूप में गांधीजी ने की थी उसका मूर्तरूप रामराज्य इसी अयोध्या में प्रतिष्ठापित हो चुका है। दैहिक, दैविक और भौतिक तापों से मुक्त रामराज्य ग्राम स्वराज्य के रूप में प्रकट होगा।

दैहिक, दैविक, भौतिक तापा,
रामराज नहिं काहुहि व्यापा।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती,
चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।
अल्प मृत्यु नहिं कवनिउ पीरा,
सब सुन्दर सब बिरुज सरीरा।
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना,
नहिं कोउ अबुध न लच्छनहीना।
सब गुनग्य पंडित सब ज्ञानी,
सब कृतज्ञ नहिं कपट सयानी।
बयरु न कर काहू सन कोई,
राम प्रताप बिषमता खोई।

तो यह था रामराज्य का आदर्श, और अब इसीको फिर से धरती पर उतारने का आन्दोलन ग्रामस्वराज्य है। कहा जाता है कि महाभारत के युद्ध के बाद अयोध्या नगरी बिल्कुल उजड़ गयी और सूर्यवंशी राजाओं के शासन का सूर्य अस्त हो गया। महात्मा बुद्ध के समय यहाँ कोशल की राजधानी थी और गुप्त साम्राज्य के समय चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने इसकी काफी उन्नति की। राजपूत युग में प्रतिहार वंश ने अपनी कीर्ति-पताका यहाँ फहरायी। उत्तर भारत में मुगलराज्य स्थापित होने के बाद अवध कमिश्नरी भी उनकी चपेट में आयी और फैजाबाद में उन्होंने सन् १६३९ में अवध की राजधानी स्थापित की। और, अवध के आखरी नवाब वाजिद अलीशाह के समय में अवध की राजधानी फैजाबाद से लखनऊ चली आयी।

क्रान्तिकारियों की कर्मभूमि

१० मई १८५७ को अवध के

सत्यग्राही महावीर

महावीर की बात हम मानें तो झगडा ही नहीं होगा। झगडे का मूल ही कट जाता है। सामनेवाले का विचार परिपूर्ण असत्य है, और मेरा अपना विचार पूर्ण सत्य है, ऐसा आग्रह करना गलत है। जो मनुष्य विचार रखता है उसमें सत्य का कुछ अंश जरूर है। उस सत्य के अंश को ग्रहण करना चाहिए। उसको मैंने 'सत्यग्राही वृत्ति' नाम दिया है। आज तो जो उठा सो सत्याग्रही बन जाता है। 'पहले दूसरे का सत्य ग्रहण करो, फिर अपना सत्य रखो'—महावीर का यह मुख्य विचार हमने समझा है। उस दृष्टि से वह विचार समझाया जाय।

वैसे महावीर के जीवन में क्या क्या घटनाएँ हुई हैं, यह कहना मुश्किल है। दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों अलग अलग कहते हैं। हम जैसा पसन्द करते हैं, तदनुसार महावीर होना चाहिए, ऐसा है। मुझे कुछ लोगों ने कहा कि महावीर अविवाहित थे। दूसरा पक्ष कहता है कि वे विवाहित थे और फिर त्याग किया। उसमें जैनों के दोनों विभागों के दो मत हैं। मैंने कहा कि महावीर के जमाने में मैं हाजिर नहीं था, इस वास्ते मैं कुछ कह नहीं सकता। —विनोबा

३-४-७० : गोपुरी, वर्धा

क्रान्तिकारियों ने स्वतंत्रता का प्रथम युद्ध छेड़ दिया और १० दिन के अन्दर ही क्रान्तिकारियों ने सत्ता की बागडोर अपने हाथ में ले ली थी, लेकिन मार्च १८५८ में अंग्रेजी सेनाओं ने अस्त्र-शस्त्र से लैस होकर एकाएक चढ़ाई कर दी और अवध पर कब्जा कर लिया।

आजादी की लड़ाई के प्रथम नायक मौलवी अहमद शाह, सशस्त्र विद्रोही मंगल पांडे, क्रान्तिकारी अशफाक उल्ला ने इस जिले की धरती पर अपना जीवन न्योछावर किया। किसान-आन्दोलन की जो चिनगारी रायबरेली में शुरू हुई थी उसने फैजाबाद जिले में बाबा रामचन्दर के नेतृत्व में विराट रूप धारण किया था।

गांधीजी के असहयोग आन्दोलन में सक्रिय भाग लेनेवाले काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से आचार्य कृपालानी के साथ निकले हुए विद्यार्थियों ने वाराणसी में श्रीगांधी आश्रम की बुनियाद डाली थी। सन् १९२२ में जेल से छूटते ही इन लोगों ने फैजाबाद जिले के अकबरपुर नामक कस्बे में खादी का योजनाबद्ध काम शुरू किया। आज न सिर्फ अकबरपुर तहसील में, अपितु टाण्डा और फैजाबाद तहसीलों के हर गाँवों में खादी का काम फैल चुका है। फैजाबाद जिले में सूती खादी का अधिकतम वार्षिक उत्पादन श्रीगांधी आश्रम अकबरपुर व ग्रामस्वावलम्बी विद्यालय आचार्यनगर और तीन सघन विकास क्षेत्रों द्वारा करीब ३० लाख रुपये का, और बिक्री करीब १२॥ लाख रुपये की खादी की होती है।

सन् १९३४ में श्रीगांधी आश्रम द्वारा ही ग्राम-सेवा कार्य के लिए रनीवाँ में एक आश्रम की स्थापना श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने की। इस आश्रम द्वारा अनुशासित सैकड़ों तरुण देहातों में काम करने के लिए प्रशिक्षित हुए और प्रदेश के प्रायः हर जिले में सेवा-कार्य कर रहे हैं। सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण अकबरपुर और रनीवाँ आश्रम ब्रिटिश सरकार के प्रमुख रूप से कोपभाजन हुए। फलस्वरूप ३॥ साल के लिए इनको बन्द कर देना पड़ा। इन दोनों आश्रमों से सम्बन्धित प्रायः सभी कार्यकर्ताओं को प्रतिबंधित कर जेलों में डाल दिया गया। सन् १९४५ में अकबरपुर में खादी का काम पुनः जारी हुआ और रनीवाँ आश्रम ने १९४६ में ग्रामस्वावलम्बी विद्यालय की स्थापना की।

भौगोलिक स्थिति

फैजाबाद कमिश्नरी का मुख्यालय यहीं पर है। जिले की उत्तरी सीमा बनाती हुई घाघरा नदी बहती है। इस जिले में इस नदी की लम्बाई ८५ मील के लगभग है। अयोध्या में इसे 'सरयू' नदी के नाम से पुकारा जाता है। टोंस, मड़हा, बिसुही, टोडी नदियाँ भी इस जिले में प्रवाहित होती हैं। फैजाबाद का क्षेत्रफल १६८० वर्गमील है। १२१६ प्राइमरी स्कूल, १४० जु० हा० स्कूल, ५३ उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, और ३ डिग्री कालेज हैं। जिले में अनेक ऐतिहासिक और धार्मिक आकर्षण के केन्द्र, और अवशेष हैं।

टाण्डा और जलालपुर में मुगलकाल से मिल के सूत से बननेवाले हथकरघा-वस्त्र जो मावियाँ, और शबनमी किस्मों के लिए प्रसिद्ध थे, वे समाप्त-से हो गये थे। परन्तु खादी का काम शुरू होने पर हथकरघा उद्योग भी पुनरुज्जीवित हुआ। तालुकदारी प्रथा के कारण बहुत छोटी-छोटी जोतवाले किसान यहाँ थे, इनको तालुकदारी और गुलामी, इन दोनों से मुक्त होने के लिए एकसाथ दोहरे मोरचे पर लड़ाई लड़नी पड़ी थी। आर्थिक विषमता और मानवीय त्रास की परिस्थितियों ने यहाँ के दो महान नेताओं—आचार्य नरेन्द्रदेव और डा० राममनोहर लोहिया—को समाजवाद की ओर उन्मुख किया। जमीन छोटे-छोटे टुकड़ों में बँटी होने के कारण भूदान-यज्ञ आन्दोलन के दौरान इस जिले में बिस्वा-बिस्वा तक जमीन दान में मिली थी। इसीलिए विनोबाजी ने यहाँ के तत्कालीन भूदान समिति के संयोजक को 'विश्वामित्र' की उपाधि दी थी।

जिले में सहकारी-समितियों का जाल बिछा हुआ है। कृषक यहाँ के बहुत उद्यमी हैं। जिलादान के संकल्प से उनमें नयी चेतना आयी है। फैजाबाद जिला कर्तव्य-परायण मर्यादा-पुरुषोत्तम राम की भक्ति और भावना से ओत-प्रोत है। रामराज्य इसी क्षेत्र में साकार हुआ था। भरत की निस्पृहता और राम की उदार वृत्ति की परम्परा इस जिले के लोग अभी भूले नहीं हैं। आशा है कि उनका विकास जिलादान की घोषणा के बाद 'ग्राम स्वराज्य' के रूप में होगा। —कपिल अवस्थी

ग्रामस्वराज्य-कोष

गुजरात के फेणाई क्षेत्र में एक लाख व्यक्तियों से एक लाख रुपये संग्रह करने का निर्णय

लोकक्रान्ति की व्यापक भूमिका तैयार करना ही मुख्य उद्देश्य

बड़ौदा के फेणाई क्षेत्र के ग्रामस्वराज्य मण्डल के प्रमुख श्री हरिवल्लभ परीख ने एक पत्र द्वारा सूचना दी है कि ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह हेतु मण्डल ने क्षेत्र की एक लाख जनता से एक-एक रुपया माँगकर एक लाख का कोष संग्रह करने का निर्णय किया है। श्री परीख ने इस आशय की अपील प्रसारित करते हुए ग्रामस्वराज्य की लोक-क्रान्ति के समर्थन में जनता से इस रूप में सहयोग देने का निवेदन किया है।

आपने अपील में कहा है कि भूमि-समस्या को सुलझाने का भगीरथ प्रयत्न करनेवाले इस अहिंसक आन्दोलन के द्वारा देश में भूदान माँगकर १२ लाख एकड़ से भी अधिक भूमि भूमिहीनों में बाँटी जा चुकी है, और सवा लाख से भी अधिक गाँवों को विचार की प्रेरणा देकर ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए संकल्पबद्ध कराया जा चुका है।

ग्रामस्वराज्य-मण्डल ने इस लक्ष्य को सफल बनाने के लिए और इस आन्दोलन के प्रेरक आचार्य विनोबा के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने के लिए लाखों लोगों तक ग्रामस्वराज्य का सन्देश पहुँचाने और उनका समर्थन एवं सहयोग प्राप्त करने की योजना बनायी है।•

<u>तरुण शान्ति-सेना</u>

समस्तीपुर में अनुमण्डलस्तरीय सम्मेलन

पिछले १५-१६ अप्रैल को समस्तीपुर (बिहार) में अनुमण्डल-स्तरीय तरुण-शान्ति-सेना-सम्मेलन आयोजित किया गया था। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में श्री जयप्रकाश नारायण ने उपस्थित रहकर तरुणों का उत्साहवर्धन किया।

१५ अप्रैल को पूर्वाह्न में आचार्यकुल की गोष्ठी हुई, जिसमें अनुमण्डल के लगभग ४०० शिक्षकों ने भाग लिया। श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने व्याख्यान में वर्तमान शिक्षा की समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए परीक्षा-प्रणाली के सम्बन्ध में सुझाया कि यों तो पूरे देश में ही, लेकिन विशेषकर बिहार प्रदेश में, परीक्षाओं के सिलसिले में जो भ्रष्टाचार चल रहा है, उसे देखते हुए ऐसा लगता है कि परीक्षाएँ समाप्त कर देनी चाहिए। और छात्रों को सत्र के अन्त में विद्यालय के आचार्य द्वारा लिखित रूप में एक पत्र इस आशय का दिया जाना चाहिए कि अमुक ने इतने वर्ष इस विद्यालय में रहकर अमुक कक्षा तक की अपनी पढ़ाई पूरी की है। फिर नौकरी देते समय सरकार को या व्यापारिक औद्योगिक प्रतिष्ठानों को चाहिए कि वे फिर से परीक्षा लेकर काम की दृष्टि से आवश्यक प्रशिक्षण दिलाने की व्यवस्था करें।' गोष्ठी की अध्यक्षता शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय के आचार्य श्री बधु प्रसादजी ने की।

अपराह्न में 'ग्राम-स्वराज्य के सन्दर्भ में तरुणों का दायित्व' विषयक विचार-गोष्ठी का शुभारम्भ करते हुए श्री जयप्रकाशजी ने ऐतिहासिक सन्दर्भों के हवाले से बताया कि 'देश के निर्माण, रक्षण तथा पोषण की दृष्टि से जनता तब कितनी सक्षम थी। पूरे समाज-संचालन में सरकार निरपेक्ष स्वतंत्र जनशक्ति का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता था।' वर्तमान राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति में लोक-शक्ति को जाग्रत करने पर आपने विशेष बल दिया।

गोष्ठी में विभिन्न तरुण शान्ति-सेना केन्द्रों से आये हुए तरुण शान्ति-सेवक भाई-बहनों ने सक्रिय भाग लिया। उनकी चर्चाएँ अत्यन्त सारगर्भित तथा उपयोगी रहीं। १६ तारीख की दोपहर को गोष्ठी का समापन हुआ। अपराह्न में ५०० तरुण शान्ति सेवकों की रैली हुई। रैली में 'जय-जगत्' के गगन भेदी उद्घोष से श्री जयप्रकाशजी का स्वागत किया गया। रैली के तुरन्त बाद ग्रामसभा का आयोजन किया गया था।

ग्रामसभा में बोलते हुए श्री जयप्रकाशजी ने वर्तमान राष्ट्रीय समस्याओं की चर्चा की, तथा दुनिया की अनेक हिंसक क्रान्तियों के परिणामों का उदाहरण देकर इन समस्याओं के हल करने की दिशा में अब तक हुए हिंसक यत्नों की व्यर्थता सिद्ध की। आपने कहा कि, 'आज के इस आणविक युग में शान्तिपूर्ण प्रयत्नों का ही महत्त्व है।' सत्याग्रह की चर्चा करते हुए आपने कहा कि, 'भूदान, ग्रामदान-आन्दोलन के माध्यम से पिछले १५-१६ वर्षों तक विचार-प्रचार के रूप में सत्याग्रह का प्रारम्भिक चरण पूरा हुआ। अब शोषण तथा अन्याय के विरुद्ध प्रत्यक्ष सत्याग्रह की तैयारी भी हमारी होनी चाहिए।'

ग्रामसभा में उपस्थित श्रोतागण जयप्रकाशजी का पूरे दो घंटे का व्याख्यान शान्→

इस विरोध से विचार नहीं मिट सकता

गांधी-विरोधी नक्सालवादी हरकतें अत्यन्त निंद्य

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का वक्तव्य

यह अत्यन्त खेद की बात है कि प० बंगाल में, खासकर कलकत्ता और उसके आस-पास, नक्सालवादियों द्वारा महात्मा गांधी की प्रतिमाएं नष्ट की जा रही हैं, चित्र और साहित्य जलाये जा रहे हैं। कहीं-कहीं नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के चित्रादि की भी यही दुर्गति की गयी है। नक्सालवादियों ने लेनिन तक को नहीं छोड़ा है, जिनकी सारी दुनिया में जन्म-शताब्दी मनायी जा रही है। ये बचकानी हरकतें अत्यन्त घिनकार्य हैं, और सभी सम्बद्ध क्षेत्रों से इसकी भर्त्सना की जानी चाहिए।

लोक-मानस से कोई भी विचार इस प्रकार के कुकृत्यों से मिटाया नहीं जा सकता। प० बंगाल के नागरिकों के लिए यह दृढ़ कदम उठाने का वक्त है। उन्हें मुख्य रूप से गांधीजी तथा अन्य नेताओं के चित्र अपने घरों और कार्यालयों में सजाने चाहिए, तत्काल गांधी साहित्य के प्रसार-प्रचार के प्रयत्न करने चाहिए, और इस प्रकार अपने विचार और कर्तृत्व स्वातंत्र्य की रक्षा करनी चाहिए।

—एस० जगन्नाथन्

गोपुरी वर्धा, २२-४-'७०

अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

महाराष्ट्र-मैसूर सीमा-क्षेत्र में ग्रामदान

महाराष्ट्र और मैसूर प्रदेश के सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने दोनों प्रदेशों के सीमा क्षेत्र, जत तहसील में पदयात्राएँ कीं। विभिन्न १२ टोलियों ने ९० गांवों में ग्राम-स्वराज्य का विचार समझाया। फलस्वरूप ३४ ग्रामों ने ग्रामदान घोषणापत्र पर दस्तखत किये। पदयात्रा का समारोह महाराष्ट्र सर्वोदयमण्डल के अध्यक्ष श्री गोविन्दराव शिंदे द्वारा १८ अप्रैल को, जत में हुआ। वहीं पर सांगली जिला सर्वोदय-मण्डल की बैठक में जिलादान की दृष्टि से पदयात्राओं का आयोजन, ग्रामस्वराज्य-कोष, आचार्यकुल, साहित्य प्रचार आदि विषयों पर चर्चा भी हुई।

सांगली जिले के कार्यकर्ता श्री नेमिनाथ कर्वे ने पिछले कुछ वर्षों में विनोबाजी के 'गीता प्रवचन' ग्रंथ का घर-घर प्रचार किया था। उस समय की साहित्य-बिक्री से प्राप्त कमीशन में से १००१ रु० ग्राम-स्वराज्य-कोष को समर्पित करने की घोषणा आपने की। सांगली जिले से ५० हजार ६० ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए संग्रहित करने की जिम्मेवारी आपको सौंपी गयी।

→के ८ बजे तक मंत्र मुग्ध होकर सुनते रहे। सभा की अध्यक्षता श्री कर्पूरी ठाकुर ने की थी। आरम्भ में श्री कर्पूरीजी ने जयप्रकाशजी की साहसिकता और शौर्यता के जीवन-प्रसंगों का स्मरण कराते हुए उन्हें तरुणों के लिए प्रेरणादायी, उत्साहवर्द्धक तथा पुरुषार्थ की चुनौती देनेवाला बताया।

सम्मेलन में आरम्भ के दो दिनों तक लगभग १५० तरुण शांति-सैनिक तथा मार्ग-दर्शक शिक्षक उपस्थित थे। तरुण-शांति-सेना के काम को आगे बढ़ाने की दृष्टि से श्रीजयप्रकाशजी को ७,००० रुपये की थैली भेंट की गयी। तरुण-शांति-सैनिकों ने आगामी जून महीने में एक जिला-स्तरीय शिविर आयोजित करने का निश्चय किया।

—अमरनाथ

भूल-सुधार

कृपया 'भूदान-यज्ञ' के पिछले २७ अप्रैल के अंक में सम्पादकीय लेख 'अभी मीलों चलना है!' की दूसरी पंक्ति में 'कुल ७ जिलादान' की जगह 'कुल ८ जिलादान' पढ़ें। —सं०

मध्य प्रदेश में भूदान की प्राप्ति और वितरण

१८ अप्रैल १९५१ से ३१ मार्च १९७० तक

(एकड़ में)

क्रमांक	कमिश्नरी	प्राप्त भूमि	वितरित भूमि	वितरण के अयोग्य भूमि	वितरण-योग्य शेष भूमि
१	भोपाल	१९,६६४ ६७	१०,००६ ३०	४,०५३.६०	५,०९२ ७७
२.	इन्दौर	१३,८७५ २६	८,००८ ९३	४,११८ ७३	१,७४७ ५५
३	ग्वालियर	२,६८,४१६ ५०	८४,३८४ ७६	३६,११०·००	१४७,९२१·७४
४	जबलपुर	६३,२४७ ५८	४३,८०८ ७२	९,८३७·८१	९,३००·९९
५	रायपुर	१९,४१३·६२	१५,५४६ ६२	२९८·१५	३,५९८·८५
६.	बिलासपुर	२४,३३४ ४१	८,७१९·२७	८७५ ७०	४,७३९ ४४
७.	रीवां	१०,९७६·६३	६,३६४·१३	९६७·९६	३,६४४ ५४
योग		४,०९,९२९·६२	१,७७,१३८ ७३	५६,२३२·०१	१,७६,५५५ ८८

नोट - वितरण के लिए जो शेष भूमि है, उसमें से अधिकांश भूमि शासकीय अधिकारियों द्वारा भूदान-बोर्ड के नाम निहित नहीं की गयी है। कार्यवाही चालू है।

—सत्यनारायण शर्मा, संयुक्त सचिव, मध्यप्रदेश भूदान यज्ञ-बोर्ड

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैं०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ३२
सोमवार ११ मई, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४२८५

पुनरावृत्ति न हो

आज मेरे चित्त की जो वृत्ति है उसके अनुसार कहीं जाने की अनुकूलता नहीं है। मैंने गांधीजी के बारे में भी कहा है कि वह आखिर तक सलाह देते रहे, यह ठीक नहीं किया। आखिर के ५-६ साल में उनको निवृत्त होना चाहिए था। साथियों से कहना चाहिए था कि तुम लोग आपस में बात करो, और मिलजुलकर काम करो। काम तो समूह करता है, फिर भी समूह अपने को कमजोर महसूस करता है। अब जगह-जगह जयप्रकाशजी को लोग बुलाते हैं। जयप्रकाशजी आनेवाले हैं, उनको इतने रुपयों की भेंट देनी है तो लोग देते हैं। जयप्रकाशजी नहीं आनेवाले हैं, लेकिन अमुक काम के लिए पैसा मांगा जाय, तो कहते हैं कि प्रेरणा नहीं होती है। गांधीजी थे तब भी यही होता था। सारी (कांग्रेस) वर्किंग कमिटी एक बाजू, और वाद-विवाद वगैरह जो भी हो, आखिर निर्णय उनके पास आता था। इसलिए बाबा को लिए बिना आपको जाना चाहिए और उत्साहित होकर जाना चाहिए। नहीं तो हम लोग कमजोर हो रहे हैं, यह साबित होगा। बाबा आयेगा तो लोग अनुकूल होंगे, इसमें कोई शक नहीं। लेकिन बाबा नहीं आ रहे हैं इसलिए उत्साह बढ़ रहा है, ऐसा होना चाहिए।

बापू के नजदीक के बहुत-से लोगों को यह आदत थी कि हर बात में वे पूछते थे। बोधगया में पिछले साल जो सम्मेलन हुआ था, उसमें ढेबर भाई ने कहा था कि हमलोगों में आशा नहीं दीखती है। बापू थे तो हममें आत्मविश्वास था, आज हम आत्मविश्वास खो चुके हैं। मैंने उत्तर दिया कि बापू के जमाने में हममें ठीक आत्मविश्वास नहीं था, बापू-विश्वास था। आज उनके अभाव में थोड़ा तो विश्वास है। वह जब थे, तब तो वह भी नहीं था। इसकी पुनरावृत्ति होनी नहीं चाहिए। यहाँ पर 'चेम्बर प्रैक्टिस' का काम करने का विचार है। अब तो केवल व्यक्तिगत प्रश्नों के जवाब ही देना चाहता हूँ। अन्दर कोई सफाई चाहिए, तो सलाह दूँगा। काम के बारे में तुम लोग सोचो। बाबा को इत्तिला देते जाओ। कोई आध्यात्मिक सवाल हो तो पूछा जाय। बाबा के रहने से जब तक लाभ होता है, ऐसा अनुभव होगा, तब तक कार्यकर्ताओं की आध्यात्मिक शक्ति प्रकट नहीं होगी। दीपक से दीपक जलेगा नहीं।

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष के साथ हुई चर्चा से; गोपुरी, वर्धा ८-४-'७०

आगे क्या, कैसे ?

गत २८, २९ अप्रैल सन् १९७० को बोधगया में बिहार ग्रामस्वराज्य समिति की तथा उसकी कार्यसमिति की बैठकें हुईं। उसी समय, लेकिन इन बैठकों से अलग, दो और बैठकें हुईं। २७, २८ को खादी के काम में लगे हुए मित्रों की बैठक में इस प्रश्न पर विचार हुआ कि राज्यदान की भूमिका में मौजूदा तथा आगे बननेवाली खादी-ग्रामोद्योग की संस्थाओं के संगठन का स्वरूप कैसा हो। इन बैठकों में एक प्रारूप भी स्वीकृत हुआ।

२८, २९ को 'आक्सफैम'—ग्रामदान-ऐक्शन प्रोग्राम—की बैठकें हुईं। मुंगेर और गया जिलों के चार क्षेत्रों में 'आक्सफैम' नाम की एक विदेशी सेवा संस्था तथा सर्व-सेवा-संघ के सम्मिलित तत्त्वावधान में 'विकास' का जो काम होता है—मुख्यतः खेती और सिंचाई का—उनके कार्यकर्ताओं की बैठकें थीं।

लेकिन इन सबसे अधिक महत्त्व की बैठकें ग्रामस्वराज्य समिति की थीं। बिहार में हमारा आन्दोलन एक अत्यन्त कठिन स्थिति से गुजर रहा है। उस स्थिति को हम संकट मान सकते हैं। संकट इस बात का कि यद्यपि कुछ छिट-पुट गाँवों में बीघा-कट्ठा निकलने लगा है, और ग्रामसभाएँ भी बनने लगी हैं, फिर भी उनकी संख्या बहुत छोटी है। यह मानना पड़ेगा कि अभी तक बीघा-कट्ठा और ग्रामसभा की गाँठ खोलने की तरकीब हमारे हाथ नहीं आयी है। कैसे आयेगी, यह प्रश्न हर कार्यकर्ता के दिमाग में है—जे० पी० के दिमाग में स्वभावतः सबसे ज्यादा।

समिति ने यह महसूस किया कि हमें अपने काम की गति, जहाँ तक सम्भव हो, अधिक से अधिक तेज करनी चाहिए। इस दृष्टि से निम्नलिखित निर्णय लिये गये :

(१) राज्य में पुष्टि का कार्य तीन स्तरों पर हो :

एक, १७ जिलों में से हर जिला अपनी शक्ति के अनुसार एक या दो ब्लाकों को 'सघन क्षेत्र' चुने और उसमें ग्रामदान के बाद के काम को पूरा करने—सबसे पहले ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति—की कोशिश करे।

दो, बिहार भर में एक-दो दर्जन ऐसे क्षेत्र मौजूद हैं जिनमें अपने कुछ समर्थ साथी, संस्था के कार्यकर्ता या नागरिक, पूरी लगकर काम कर रहे हैं। ऐसे क्षेत्रों को हम प्रारम्भिक कसौटी पर कस लें, और यदि वे खरे उतरते हैं तो उन्हें 'संकल्प-क्षेत्र' मानकर काम करें।

'संकल्प क्षेत्र' की कसौटियाँ ये मानी गयीं

(क) पंचायत पीछे (एक ब्लाक में औसत २०-२२ पंचायतें हैं) दो साथी ऐसे निकलें जो अपनी पंचायत में या बाहर पुष्टि के काम में समय देने के लिए तैयार हों।

(ख) ऐसे साथियों के शिविर तथा उसके बाद १० दिन के अभियान के लिए स्थानीय साधन, अन्न और नकद रुपया उपलब्ध हो। १२ दिन में दो दिन का शिविर, ८ दिन का अभियान, और अन्त में फिर दो दिन का मूल्यांकन-शिविर होगा। शिविर और अभियान के खर्च के लिए लगभग ३५ मन अनाज चाहिए।

(ग) हर पंचायत में कम-से-कम एक भूमिवान ऐसा निकले जो अपना बीघा-कट्ठा तुरन्त बाँटने को तैयार हो। इसमें भूदान के पुराने दाता नहीं शामिल हैं। नया दाता होना चाहिए जिसकी तैयारी भूमिहीनों को तत्काल जमीन देने की हो।

ये तीन न्यूनतम शर्तें हैं। इनको पूरी कर लेने पर यह क्षेत्र 'संकल्प-क्षेत्र' का कार्य-क्रम उठाने का अधिकारी होगा। इसका अर्थ यह है कि श्री जयप्रकाशजी उस क्षेत्र में लगातार अपना लगभग पन्द्रह दिन का समय देंगे, और प्रत्यक्ष उनके मार्ग-दर्शन में वहाँ का अभियान चलेगा।

स्थानीय शक्ति के अलावा राज्य ग्राम-स्वराज्य समिति की ओर से एक टोली उनके साथ रहेगी। शुरू में सारी शक्ति बीघा कट्ठा, ग्रामसभा के संगठन, ग्रामकोष, ग्राम-शान्ति सेना, और तरुण-शान्ति-सेना, पर केन्द्रित की जायगी।

तीन, चम्पारण और पूर्णिया के 'समग्र-क्षेत्र'। चम्पारण की भूमि-समस्या के कुछ पहलुओं के अध्ययन के लिए जे० पी० की प्रेरणा और सुझाव पर एक कमीशन बिठाया जा रहा है। कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित हो जाने पर चम्पारण में—सम्भवतः पूर्णिया में भी—भूमि की समस्या उसकी समग्रता में ली जायगी।

इस तरह अब काम 'सघन-क्षेत्र', संकल्प-क्षेत्र', 'समग्र-क्षेत्र' में बँटकर होगा। 'संकल्प-क्षेत्रों' तथा 'समग्र-क्षेत्रों' में विचार प्रचार तथा ग्रामदान पर हस्ताक्षर के रूप में सम्मति प्राप्ति का 'पूर्व-सत्याग्रह' के रूप में अब तक जो काम हुआ है, उससे आगे बढ़कर 'उत्तर-सत्याग्रह' की अन्य विधियों और पद्धतियों का भी आवश्यकता के अनुसार प्रयोग होगा। ये प्रयोग समाज की समस्याओं के अनुबन्ध में किये जायेंगे।

(२) इस व्यूह-रचना के लिए धन और जन प्राप्त करने का प्रश्न है। वे कहाँ से आयेंगे ? उनके लिए निम्नलिखित कार्यक्रम तय हुआ है.

(क) बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ तथा गया, पूर्णिया, मुंगेर, संथालपरगना की विकेन्द्रित संस्थाएँ अपने कुल कार्यकर्ताओं में से छठवाँ भाग अब से सितम्बर तक के लिए देंगी। इनके अलावा शिक्षकों, तथा अन्य नागरिकों में से आंशिक या पूरा समय देनेवाले साथी प्राप्त किये जायेंगे।

(ख) जहाँ तक धन का प्रश्न है, ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए एक 'संग्रह पखवारा' मनाया जाय।

आगे के काम की यह व्यूह रचना हुई है। बोधगया से लौटकर साथी 'संकल्प-क्षेत्र' विकसित करने के काम में लग जायेंगे। जे० पी० जुलाई से उपलब्ध होंगे।

—राममूर्ति

सम्पादकीय

हमारा आन्दोलन : कुछ समस्याएँ और सम्भावनाएँ-१

कागज का प्रयोग

अभी हाल में संघ के अध्यक्ष के साथ चर्चा के दौरान में विनोबाजी ने एक बात कही : 'बिहार में मैंने कागज का प्रयोग किया, लेकिन दूसरी जगह कागज का प्रयोग नहीं होना चाहिए।'

बिहार में कागज का प्रयोग इस अर्थ में हुआ कि हमने ग्रामदान के लिए लोक-सम्मति कागज पर ली, और बीच में जब जब विकास का प्रश्न उठा तो बराबर हम आग्रहपूर्वक यही कहते रहे कि ग्रामदान के बाद के काम के बारे में राज्यदान के बाद सोचेंगे। वर्षों तक सारी शक्ति इस तरह हमने राज्यदान पर ही केन्द्रित की। ग्रामदान, प्रखण्डदान, जिलादान को छोड़ते हुए हम इस तरह आगे बढ़ते गये जैसे वे बीच के स्टेशन हों।

४ अप्रैल को उत्तरप्रदेश के फैजाबाद के जिलादान-समारोह के अवसर पर अपने भाषण में जयप्रकाशजी ने 'कागज बटोरने' का उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि शुरू की स्थिति में कागज का काम हमें करना ही था। और उसे हमने जान-बूझकर किया। जिले के अस्सी पचासी फीसदी गाँवों में कार्यकर्ताओं का जाना, लोगों के सामने ग्रामदान की बात रखना, और उनसे ऐसे कागज पर हस्ताक्षर लेना जिसमें भूमि का स्वामित्व छोड़ने की बात लिखी हो, अपने में कोई मामूली बात नहीं है। यह एक बहुत बड़ा काम है जिसे हमने अपने संकल्प से पूरा किया है। जिस देश में कागज के नोट से बाजार चलता हो, कागज के वोट से सरकार बनती हो, वहाँ लोक सम्मति को आधार माननेवाली सामाजिक क्रान्ति पहले सम्मति के पत्र नहीं बटोरेगी तो दूसरा क्या करेगी? अगर हमें जनता के विवेक में नहीं, बन्दूक की गोली में विश्वास होता तो भले ही हम सम्मति को छोड़कर दूसरी बातें सोचते, लेकिन हमने लोक सम्मति को लोक-क्रान्ति का पहला कदम माना, और ऐसा मानकर ही उसे प्राप्त करने में इतना समय और शक्ति लगायी। कागज के इन टुकड़ों के पीछे हमारी यह श्रद्धा छिपी हुई है कि लोकतंत्र को कायम रखते हुए भी जनता की प्रत्यक्ष कारवाई (डाइरेक्ट ऐक्शन) द्वारा क्रान्ति की स्थिति पैदा की जा सकती है। क्रान्ति के लिए छिपकर या घुसकर गला काटने की जरूरत नहीं है।

हमारी क्रान्ति में यह बात नयी है, इतनी नयी है कि उसका बयान हमारे और जनता, दोनों के लिए एक समस्या बन गया है। सन् १९३० में नमक बनाना भी क्रान्तियों के इतिहास में एक नया ही काम था। लेकिन उस वक्त अंग्रेजी सरकार नमक बनाने के विरुद्ध थी। इसलिए उसके विरोध में हमें अपना पुरुषार्थ प्रकट करने का अवसर था, और उस अवसर में जो जोखिम थी उसमें आनन्द था। ग्रामदान में अविरोध का आनन्द हमें और जनता, दोनों को अभी मिला नहीं है। संघर्ष में ही सुख देखनेवाला दिमाग, विज्ञान और लोकतंत्र के जमाने का दिमाग नहीं है, यह बात अभी समझ में नहीं आयी है। इसके अलावा यह भी है कि नमक के पीछे जो स्वराज था उसे जनता देख सकती थी, समझ सकती थी, किन्तु ग्रामदान के पीछे जो 'ग्रामस्वराज्य' है उसे वह पहचान भी नहीं पा रही है।

इस स्थिति को हम अपनी आँखों के सामने देख रहे हैं। एक नहीं, हर अवसर पर देख रहे हैं। हम जिलादान के समारोह करते हैं। पर्चे बाँटते हैं, पोस्टर लगाते हैं, लाउडस्पीकर से कई-कई दिन गला फाड़-फाड़कर प्रचार करते हैं। छपे हुए आमंत्रण-पत्र भेजते हैं। शामियाने लगाते हैं। ऊँचे मंच बनाते हैं। गांधी-विनोबा के चित्र रखते हैं। बिजली की चकाचौंध पैदा करते हैं। पास-पड़ोस के अपने कार्यकर्ता-साथियों को इकट्ठा करते हैं। उत्सव के लिए जो कुछ करना चाहिए, सब करते हैं।

इतनी तैयारी और सजधज के साथ हमारा समारोह होता है। दूसरा कोई नहीं, स्वयं जयप्रकाशजी आते हैं। उन्हें जिलादान समर्पित किया जाता है। जयप्रकाशजी भाषण देते हैं। इस आयु में भी वह पूरे दो घण्टे तक सुननेवालों के सामने अपना दिल उँडेलते हैं। दुनिया में समाज-परिवर्तन का जो नया-से नया विचार है उसे बताते हैं। अहिंसा का सारा क्रान्ति शास्त्र समझाते हैं। अपने भाषण में किस ऊँचे धरातल पर वह ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन को ले जाते हैं, यह सुनते ही बनता है।

लेकिन जब सभा समाप्त होती है तो क्या होता है? मन के प्रश्न मन में बने रह जाते हैं। सभा में जिस जिलादान की इतनी चर्चा हुई वह सुननेवालों में से कितने लोगों के दिमाग में है? कितने हैं जो जिलादान के बारे में कुछ भी जानते हैं? संस्थाओं के जो कार्यकर्ता हैं उनमें से कितने हैं जिनका मन थका ही नहीं, अनास्था से मुक्त है? अगर संस्था उन्हें ग्रामदान में न लगाये तो कितने अपनी तबीयत से इस काम में लगाना चाहेंगे? जिस सिपाही ने ग्रामदान की लड़ाई वर्षों से लड़ी है वह स्वयं इतना ऊबा हुआ क्यों है? थक वह सकता है लेकिन इतना चिढ़ा हुआ क्यों है?

समारोह से चलने पर दिमाग में बार-बार यही बात उठती है कि सारी दौड़-धूप और सज-धज संस्थाओं की है। लोक जीवन के पास अभी हम नहीं पहुँचे हैं। इसलिए ढूँढ़ने पर भी इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता कि जिलादान के समारोह के बाद का काम कौन करेगा? क्या कुछ ऐसे लोग भी हैं जो सोचते हैं कि जिलादान के बाद क्या काम करना है, कैसे करना है? क्या हम संस्था के ही घरौंदे में पड़े रहेंगे या उससे निकलकर समाज में भी पहुँचेंगे? आन्दोलन की स्थिति और समाज की परिस्थिति में जो जबरदस्त खाई है वह कब भरेगी, कैसे भरेगी, किसके द्वारा भरेगी?

(अगला अंश अगले अंक में)

भारत की सांस्कृतिक परम्परा और चातुर्वर्ण्य की जीवन-व्यवस्था

• विनोबा

दशरथ रोज आईना नहीं देखता था, एक दिन देखा तब सफेद बाल दिखे। देखते ही उसने सोचा कि अब राम को राज्य देना होगा और खुद वनवास जाना होगा। रामायण में यह कहानी आयी है। दशरथ ने सब लोगों को जाहिर किया कि राम के राज्याभिषेक की तैयारी करें। लोगों का आशीर्वाद उसने मांगा। फिर आप जानते हैं क्या हुआ। भरत को राज दिया गया व राम को वनवास। लेकिन दशरथ राज्य से मुक्त हो गये। रामजी मां के पास गये, तब मां भगवान से प्रार्थना कर रही थी कि हे भगवन्, मेरे लड़के को राज्याभिषेक होगा, उसे आशीर्वाद दो। उसे मालूम नहीं था कि राम को वनवास जाने का तय हुआ है। जब मालूम हुआ, तब मां ने कहा कि, 'हम लोगों को, यानी राजाओं को एक समय जंगल में जाना ही पड़ता है, लेकिन तुमको थोड़ा जल्दी जाना पड़ रहा है, फिर भी तुम्हारे पिताजी की आज्ञा है तो जाओ।' मां ने पूछा कि, 'पिता की आज्ञा तो तुम्हें मिली है, लेकिन मां की भी मिली है क्या?' तब रामजी ने बताया कि, 'मां की (यानी कैकेयी की) भी आज्ञा मिली है।' तब यह मां कहती है, अच्छी बात है, सुख गच्छ।

तुलसीदासजी लिखते हैं कि रामजी की मां ज्यादा दुःख नहीं करती है, क्योंकि अन्त में राजा को वनवास जाना ही पड़ता है। लेकिन रामजी को जरा जवानी में जाना पड़ रहा है, इतना ही वह कहती है। लक्ष्मणजी अपनी मां के पास गये और कहा, 'मैं जा रहा हूं रामजी के साथ वनवास में।' तब मां बोली, 'ठीक है।' वाल्मीकि लिखते हैं—'राम दशरथं विद्धि, मां विद्धि जनकात्मजाम्'। यानी राम को दशरथ समझो और सीता को मेरी जगह समझो, यानी मां समझो। 'अयोध्याम् अटवीं विद्धि सुख गच्छ'—जंगल को अयोध्या समझो और सुख से जाओ। ऐसी आज्ञा लक्ष्मण को मिली। जब रामजी को राज्याभिषेक के बदले जंगल जाने को कहा गया तो उनको कितना आनन्द हुआ! जैसे जंगल का हाथी शृङ्खला से बांधकर पकड़कर लाया हो, और उसकी शृङ्खला टूट जाती है तो वह जैसे आनन्द से जाता है, वैसा ही आनन्द रामजी को हुआ। राज्य तो शृङ्खला ही है। यह वर्णन तुलसीदास ने किया है। जंगल में रहने की आज्ञा हुई तो रामजी ने उसका इतना अक्षरशः पालन किया कि सुग्रीव की राजधानी में प्रवेश नहीं किया। जंगल में ही रहे। सुग्रीव की नगरी में नहीं जाना ऐसी आज्ञा तो नहीं थी, फिर भी वे नगरी से बाहर बागिचे में पर्णकुटी में रहे।

भारत की आरण्य संस्कृति

राजाओं को और सब क्षत्रियों को वन में जाना ही था। धृतराष्ट्र ने भी पीर पजाल लांघा है। उसके साथ संजय था। वह मर्गालिया में मरा है। रवीन्द्रनाथ ने कहा है, 'भारत की संस्कृति यानी आरण्य संस्कृति है।' गांधीवाले कहते हैं, 'हमारी ग्रामीण संस्कृति है।' नये लोग कहते हैं, 'हमारी नागर संस्कृति है।' दिल्ली को पेरिस बना रहे हैं। इस तरह से शहरों को बढ़ा रहे हैं। लेकिन हिन्दुस्तान का सबसे श्रेष्ठ तत्त्वज्ञाता याज्ञवल्क्य आखिर जंगल में गया। पाणिनी ने शिष्यों को व्याकरण सिखाया जंगल में बैठकर। वहां शेर आता है, शिष्य घबड़ा जाते हैं, लेकिन पाणिनी समझाते हैं—'घबड़ाने की जरूरत नहीं है। 'व्याजिघ्रति इति व्याघ्रः'। जिघ्रति 'घ्रा' धातु का रूप है। घ्रा यानी सूंघना। इसलिए उसका नाम है—व्याघ्र। गुरुजी बैठे रहे, शिष्य कांपते रहे, पाणिनी जरा भी डरा नहीं। इसलिए उसका श्लोक है, पाणिनी के प्रिय प्राण को शेर ने खा लिया—'व्याघ्रो व्याकरणस्य कर्तुरहरत् प्राणान् प्रियान् पाणिनेः।'

मृत्यु तो हर एक को आती है। लेकिन पाणिनी की मृत्यु अद्भुत ही थी। इसलिए शंकराचार्य ने पाणिनी की जहां जहां आधार दिया है, वहां-वहां भगवान् पाणिनी ऐसा कहा है।

बादरायण ने ब्रह्मसूत्र लिखे। सब जंगल में ही लिखे। ज्ञानी जंगल में ही रहते थे। तैत्तरीय आरण्यक भी जंगल में लिखा गया। ऐसी हमारी आरण्यक संस्कृति है।

अपरिग्रही जीवन-व्यवस्था

चातुर्वर्ण्य की व्यवस्था में परिग्रह का अधिकार एक ही अवस्था में है। चार आश्रम और उनके चार वर्ण, १६ अवस्थाएं हैं। उनमें ब्रह्मचर्य में परिग्रह नहीं—गुरु के घर सीखना और गुरु जो देगा वह खाना। श्रीकृष्ण को भी जंगल की लकड़ी चीरने का काम दिया गया था। वे राजपुत्र थे, लेकिन गुरु के घर राजपुत्र को भी 'स्पेशल ट्रीटमेंट' (विशेष व्यवस्था) नहीं थी। क्षत्रिय, ब्राह्मण और वैश्य को ब्रह्मचर्य में परिग्रह नहीं, वानप्रस्थाश्रम में भी परिग्रह नहीं। वानप्रस्थाश्रम में एक जगह रहना, गांव छोड़कर जंगल में रहना और विद्यार्थियों को सिखाना, लोग जो देंगे वह खाना, यानी परिग्रह का अधिकार नहीं। सन्यास में भी परिग्रह का अधिकार नहीं। सन्यासी को भटकते रहना है, पांव से चलना मुश्किल होगा तब तक घूमते रहना। तीन आश्रमों में परिग्रह का अधिकार नहीं है। एक आश्रम में है—गृहस्थाश्रम। उसमें भी ब्राह्मण को परिग्रह का अधिकार नहीं है। गृहस्थाश्रमी ब्राह्मण भी परिग्रह नहीं कर सकता। ब्राह्मण की बात तो दूर रही, दूसरों को भी एक साल से ज्यादा का 'प्राविजन' (पुंजिया) नहीं होना चाहिए, एक महीने का हो तो अच्छा, तीन दिन का खाना है तो बेहतर है और एक दिन का हो तो सर्वोत्तम। क्षत्रिय राजा हो, या दूसरे भी क्षत्रिय हों, उनको परिग्रह का अधिकार नहीं। 'ट्रेजरी' तो सरकार की होती है, व्यक्तिगत नहीं।

क्षत्रिय राजा को, शूद्र को गृहस्थाश्रम में परिग्रह का अधिकार नहीं। ब्राह्मण को तो है ही नहीं। केवल वैश्य को है, वह भी सिर्फ गृहस्थाश्रम में। यानी १६ अवस्थाओं में एक ही अवस्था में परिग्रह का अधिकार है। बाकी सबके लिए 'अद्य: श्व: श्व:'—आज का आज और कल का कल।

तो वर्ण-व्यवस्था में पूर्ण अपरिग्रह का ख्याल है। फिर जिसे जो खाना है वह मिलेगा। जो भी अपना काम उत्तम करेगा उसे रोटी का अधिकार मिलेगा। रोजी सबको समान मिलेगी। किसी भी वर्ग में सामाजिक स्थान सबको समान रहेगा, अगर वह ठीक काम करते हैं। बल्कि मनु ने इतना ही कहा है कि सामने अगर दशमिस्थ आता हो, चाहे वह सामान्य नागरिक हो, लेकिन दशमिस्थ यानी ९० वर्ष का हो तो राजा को रुकना चाहिए और उसे पहला स्थान देना चाहिए। कोई भारवाही आता है यानी सिर पर भार लेकर आता हो तो उसे भी राजा जगह देगा। तीसरी बात, स्त्री को जगह देगा। यह प्रतिष्ठा का सवाल है। मृत्यु के बाद समान मोक्ष मिलेगा अगर ईश्वरार्पण बुद्धि से काम किया हो। ईश्वरार्पण बुद्धि से वेद सिखाया, या ईश्वरार्पण बुद्धि से रेलवे में काम किया तो भी मोक्ष समान मिलेगा यानी दर्जा समान होता है। अगर ईश्वरार्पण बुद्धि से काम नहीं किया तो पाप-पुण्य का हिसाब हो जायेगा। यानी प्रतिष्ठा, तनख्वाह और मुक्ति, तीनों समान मिलेगा।

वेदाध्ययन का अधिकार

वेद अध्ययन का अधिकार तीनों वर्णों को है। वेद के उच्चारण पर जोर था। उन दिनों प्रेस नहीं था तो गुरु शिष्य को सिखाते थे और शिष्य अपने शिष्यों को। इस तरह परंपरा से वेद चलता आया है। उसमें पाठ-भेद नहीं है। सिर्फ दो जगह पाठ-भेद है, और दोनों मान्य हैं। स्वर-भेद होगा तो अर्थ बदलेगा, इसलिए बराबर चोटी पकड़ करके अध्ययन करते थे। एक मुखेन ठीक उच्चार हो, यह अनुशासन तीनों वर्णों को लागू किया था। मजदूरों को, चौथे वर्ण को नहीं था। वे काम करेंगे। वेदाध्ययन भी एक 'टेन्शन' है। लेकिन वे शारीरिक काम करते थे इसलिए उनको वेदाध्ययन नहीं कहा था। हमारी माँ एक कहानी हमेशा सुनाती थी। एक माँ के दो बेटे थे। एक वेदाभ्यासी था और दूसरा खेत में काम करता था। काम करने के बाद दोनों घर आते थे तो माँ वेदाभ्यास करनेवाले लड़के को घी-मक्खन वगैरह खिलाती थी और खेत में काम करनेवाले लड़के को ज्वार की रोटी खिलाती थी। एक दिन उस बेटे ने माँ से पूछा कि ऐसा भेद क्यों? माँ ने कहा कल बताऊँगी। दूसरे दिन सुबह दोनों बेटों को पास बुलाकर माँ ने दोनों के सिर पर मक्खन रखा? वेदाभ्यास करनेवाले के सिर पर जो मक्खन रखा वह पिघलकर घी बन गया। तब माँ ने कहा अब तुम्हारी समझ में आया?

यह सारा विचार इसलिए रखा कि चातुर्वर्ण्य की क्या कल्पना थी, वह समझ में आये। वर्ण-व्यवस्था हर युग में लागू नहीं होती। लेकिन हर युग के लिए आश्रम-व्यवस्था लागू हो सकती है। कृतयुग में एक ही वर्ण था—हंस वर्ण। 'स्टेट विल विदर अवे' जो कहते हैं वह 'विदरिंग अवे' उत्तम है। यह जब होगा तब लोग हंस वर्ण होंगे। ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र नहीं रहेंगे। तो कहते हैं कृत युग में एक वर्ण था। बाद में काम पूरा नहीं पड़ा, तो दो वर्ण हुए। फिर काम पूरा नहीं पड़ा तो तीन वर्ण हुए। फिर भी काम पूरा नहीं पड़ा तो चार वर्ण हुए। देवों में भी ये चार वर्ण हैं। अग्नि ब्राह्मण है, सूर्य क्षत्रिय है, हवा, मरुतगण वैश्य और पृथ्वी शूद्र है। वह सबका भार उठाती है, सेवा करती है। माता पृथ्वी शूद्र है। शास्त्र कहता है—'जन्मना जायते शूद्र:, संस्कारात् द्विज उच्यते'। आज जो जन्म पाया है वह हर मनुष्य शूद्र है। संस्कार पायेगा तब द्विज बनेगा।

मानवेन्द्र मनु और मानव चेतना

वाल्मीकि रामायण में राम ने हर समय मनु का नाम लिया है। मानवेन्द्र मनु का जो आदेश होगा वह देखकर रामजी काम करते थे। 'यत्किंच मनुरवदत् तद् भेषजम्', मनु ने जो कुछ कहा, वह दवा है और उसे लेना है। रामचन्द्र मनु की परंपरा में जन्मे हैं। सूर्यवंश के हैं। भगवान् कृष्ण ने मनु का आदर्श माना है।

'इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्'॥

मनुस्मृति से हमने चार सौ श्लोक निकाले और मनुबोध नाम नहीं दिया। शंकराचार्य बोध देते हैं फिर वैसा करो या न करो। लेकिन मनु का तो शासन चलता है। उसमें ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, इन सबका कर्तव्य बताया है। 'लाज आफ मनु', ऐसा तर्जुमा किया जाता है। दुनिया में कोई भी 'ला' का ग्रंथ ऐसा नहीं मिलेगा, जिसमें संसार की उत्पत्ति और आखिर में मुक्ति कैसे मिलेगी, यह लिखा होगा। लेकिन मनु ने यह लिखा है। मुक्ति का नाम 'परम साम्यम्' लिखा है। फिर उसी में प्रजा के साथ राजा का व्यवहार कैसा हो, यह बताया है और राजा का व्यक्तिगत कर्तव्य भी बताया है 'नागरिकवत् राज्ञ प्रथम कर्तव्यम्'।

मनु का मूल कानून जो है, उसमें 'शूद्रा पचेरन्' ऐसा आता है। यानी शूद्र सेवक वर्ग है। उसकी स्वतंत्र प्रतिष्ठा है। उनको रसोई का काम करना चाहिए, ऐसा है। आज तो 'ब्राह्मणा पचेरन्' ऐसा हुआ है। आज ब्राह्मण शूद्र बन गया है। पहले अपराध के लिए 'डिटरेण्ट' दंड (कठोर-दंड) था। स्मृति में भी हाथ तोड़ने की बात है, कुरान में भी है। आज यह कोई कबूल नहीं करेगा। आज तो चोरों को सुधारने की बात होती है। मानव चिंतन धीरे-धीरे बढ़ रहा है। सारी दुनिया में चेतना बढ़ रही है।

गोपुरी, वर्धा, २३-३-'७०

हिंसा स्वभाव नहीं, संस्कृति की देन

• डा० डी० एस० कोठारी

['आजाद स्मारक व्याख्यानमाला' के अन्तर्गत भारत के प्रमुख वैज्ञानिक डा० डी० एस० कोठारी के भाषणों पर आधारित अहिंसा की वैज्ञानिक व्याख्या की समापन किस्त।—सं०]

प्रकृति में प्राणियों की किसी जाति के अस्तित्व के लिए एक प्रकार की संतुलित जीवन-नीति आवश्यक है। एक ओर समूह में रहने की वृत्ति, आक्रमणशील आचरण—इन दोनों में संतुलन होना चाहिए। ये दोनों वृत्तियाँ वास्तव में परस्पर-विरोधी नहीं हैं। वातावरण में होनेवाले परिवर्तनों के साथ जीवन का मेल मिलाने के लिए कभी इसकी, कभी उसकी जरूरत पड़ती है।

पशु जगत् के प्राणियों में लगभग हर पशु समूह में दिखाई देता है कि एक प्रकार की वर्ग व्यवस्था है। नीचे से ऊपर तक अलग-अलग स्तर बने हुए हैं। ऊपरवाले पशु नीचेवालों पर अधिकार और अंकुश रखते हैं; अनुशासन भंग करने पर दंड भी देते हैं।

मानव समाज राष्ट्र के नाम से भिन्न-भिन्न समूहों में बँटा हुआ है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के प्रति ऐसा व्यवहार रखता है गोया वह किसी दूसरी 'जाति' का हो। इस तरह का अलगाव उस जमाने में हुआ जब भोजन कम था, और मनुष्य प्राकृतिक संकटों के मुकाबिले असहाय था। यह दुर्भाग्य की बात है कि भाषा, कविता, देशप्रेम, धर्म, मत आदि तत्वों का भी, जिन्होंने मनुष्य को सांस्कृतिक बनाने में इतना योग दिया है, इस्तेमाल अलगाव और प्रतिद्वंद्विता बढ़ाने में ही हुआ है।

पशुओं में अपनी जाति के दूसरे प्राणी की हत्या पर एक स्वाभाविक अंकुश है—पशु की मूलवृत्ति (इंस्टिंक्ट) का। मनुष्य में यह अंकुश नहीं रह गया है। इसीलिए वह इतना हिंसक हो गया है। यहाँ तक कि विनोद के लिए भी मनुष्य दूसरे मनुष्यों की हत्या—सार्वजनिक तौर पर भी—करता है। मौजर की लड़ाइयों में पकड़े गये लगभग १० लाख युद्ध के कैदियों की जान रोमवासियों के मनोरंजन में गयी। रोम के पतन में इस पाशविक हिंसा का बहुत बड़ा हाथ था।

मनुष्य की हिंसा ज्यादातर उसके सांस्कृतिक विकास का अंग है। हिंसा उसके खून में नहीं है। सही शिक्षण से हिंसा काफी कम—शायद दूर भी—की जा सकती है। जिन तत्वों ने मनुष्य को जातियों, उपजातियों में बाँटा है, उनको यदि सही दिशा मिल जाय ताकि मनुष्य अपने मूल स्वभाव को समझने लगे, तो ऐसा समाज बनाया जा सकता है जो हिंसा से मुक्त हो—कम-से-कम ऐसा तो बनाया ही जा सकता है जिसमें अनियंत्रित हिंसा न हो। ऐसा करने के लिए सबसे पहले हिंसा-अहिंसा का गहरा वैज्ञानिक अध्ययन होना चाहिए।

आज के हमारे हिंसा-आधारित समाज का स्थायित्व हिंसा और दण्ड के भय पर निर्भर है। हिंसा को 'और अधिक हिंसा' से रोकना पड़ता है। इस तरीके से हिंसा कैसे मिटेगी? उलटे, दबी हुई हिंसा का और भी अधिक भयंकर विस्फोट होगा। हिंसा से और अधिक हिंसा पैदा होती है, कायरता पैदा होती है, भय पैदा होता है।

मनुष्य ऐसी जगह पहुँच गया है जहाँ उसे नया रास्ता अपनाना ही पड़ेगा—अहिंसा का रास्ता—अन्यथा परमाणु-युद्ध का संहार स्वीकार करना पड़ेगा। अहिंसा के युद्ध में, युद्ध करनेवाले भी, पहले से अधिक मानवीय हो जाते हैं। यह प्रश्न हो सकता है कि अहिंसा को माननेवाला समुदाय दूसरे समुदायों की हिंसा से कैसे अपनी रक्षा करेगा? हिंसा से ही रक्षा कैसे होती है? क्या हिंसा से रक्षा की गारंटी है? गारंटी नहीं है; जोखिम तो है। लेकिन बिना जोखिम के न प्रगति है, न विकास। यह नहीं है कि अहिंसा के समाज में जोखिम नहीं रह जायेंगी, वे रहेंगी, लेकिन अहिंसक समाज मनुष्य के सांस्कृतिक विकास में ऐसा शानदार अनुभव होगा जैसा आज तक कभी नहीं हुआ। मिसाल के लिए जनसंख्या बढ़ने की समस्या लीजिए। हिंसा की दुनिया में इस समस्या का क्या समाधान है? वास्तव में आज की दुनिया की तीन मुख्य शक्तियाँ—जनसंख्या की वृद्धि, विशाल पैमाने पर शहरीकरण, और परमाणु-अस्त्र—मनुष्य को अहिंसा स्वीकार करने को विवश कर रही हैं।

अहिंसक उपाय—सत्याग्रह—से दमन और शोषण का सफल प्रतिकार किया जा सकता है, यह गांधी ने करके दिखा दिया है। वास्तव में मनुष्य के भविष्य की दृष्टि से यह अत्यन्त महत्वपूर्ण उपलब्धि हुई है।

सत्याग्रह में नैतिक दृष्टि से साध्य जितना शुद्ध हो, उतना ही शुद्ध साधन होना चाहिए, नहीं तो प्रतिपक्षी पर जो प्रभाव पड़ना चाहिए, नहीं पड़ेगा। भ्रष्ट साधन और अहिंसा परस्पर-विरोधी हैं। अहिंसा की लड़ाई में हार-जीत नहीं है, है प्रतिपक्षी का नैतिक परिवर्तन। कितनी भिन्न है यह स्थिति हिंसा के युद्ध से?

विज्ञान और टेक्नालोजी का इतना विकास हो गया है कि अपने ही देश में, अपने ही उद्योग से, अपार दौलत पैदा की जा सकती है; दूसरे कमजोर देशों को लूटने की जरूरत नहीं है। मनुष्य के इतिहास में यह बहुत शुभ स्थिति है। पहले सत्ता और सम्पत्ति का यही रास्ता था कि दूसरों को वंचित किया जाय। पिछले महायुद्ध के बाद प० जर्मनी और जापान को देखिए।

अहिंसक दुनिया की दिशा में बढ़ने के लिए दो चीजें आवश्यक हैं—एक, निःशस्त्रीकरण, और दो, उन्नत देशों की ओर से विकासशील देशों की मदद।

यह बात हर जगह मान्य हो गयी है कि परमाणु-युद्ध सभ्यता को समाप्त कर देगा। इसलिए हम लोग इतना तो कह ही→

सामयिक चिन्तन

आज गांधीजी होते तो क्या करते ?

• काका कालेलकर

जहाँ तक हो सके, चालू राजनैतिक परिस्थिति के बारे में मैं कुछ लिखता नहीं हूँ। उपेक्षा के कारण नहीं, किन्तु अपनी शक्ति का संग्रह करने के लिए।

सब अखबार, दैनिक और साप्ताहिक, सभी नेता और सब पक्ष, दिन रात राजनीति की चर्चा करते हैं। हजार आवाजों में एक आवाज बढ़ाने से कुछ भी लाभ नहीं होगा। लोग पूछते हैं, 'गांधीजी होते तो क्या करते ?' जवाब में मैं कहता हूँ,

'गांधीजी जीवित थे तब भी देश के नेता उनकी सब बातें कहाँ मानते थे ?' स्वराज पाने के लिए जितना मानना अपरिहार्य था, उतना ही थोड़े समय के लिए और 'केवल नीति के तौर पर' मानने का, नेताओं ने वचन दिया और उसका यथाशक्ति अच्छा पालन किया। इसके बाद से गांधीजी ने सन्तोष माना और नेताओं को अपने रास्ते जाने दिया। ये बातें पसन्द न होते हुए भी गांधीजी ने उनका विरोध नहीं किया।"

चन्द लोगों ने गांधीजी का रचनात्मक काम चलाया। उसके लिए स्वराज सरकार ने पैसों का प्रबन्ध किया। लेकिन उस कार्यक्रम को पूरा करवाया नहीं।

ऐसी हालत में रोज पूछते रहना कि 'आज गांधीजी होते तो क्या करते ?' व्यर्थ है।

अभी-अभी गुजरात के एक-दो व्यक्ति मिलने आये थे। देश के प्रधान बैंकों को सरकार ने अपने हाथ में ले लिया, उसके बाद अब देश का अनाज इकट्ठा करके बेचने का धन्धा भी सरकार अपने हाथ में लेना चाहती है. इससे घबराकर वे सोच-विचार करने आये थे कि सरकार इसमें क्या करना चाहती है, और अनाज के व्यापारियों की हालत क्या होगी।

आज की हालत में उन्हें क्या करना चाहिए, यह सवाल उन्होंने नहीं पूछा। वे जानते थे कि इसमें मेरी सलाह कुछ काम नहीं आयेगी। वे तो गुजरात के राजनैतिक प्रतिनिधियों से ही सलाह-मशविरा कर सकते थे। उनका सवाल था 'गांधीजी आज की हालत में क्या करते ?'

गांधी का मार्ग ही भिन्न था

मैंने कहा, 'गांधीजी का रास्ता ही अलग था। गांधीजी को अहिंसक संस्कृति की स्थापना करनी थी। गांधीजी मानते थे कि लोकनियुक्त सरकार भी अहिंसक संस्कृति के लिए पूरी पूरी सहायक नहीं हो सकती। गांधीजी सरकार को तोड़ने के पक्ष में नहीं थे। किन्तु सरकार का कार्यक्षेत्र जितना कम हो सके उतना करते जाना, सरकार पर आधार न रखते हुए जनता का राष्ट्रीय संगठन, लोकमत के बल पर अधिकाधिक करते जाना, यही उनका इष्ट था।'

प्रजामान्य सरकार भी, अन्ततोगत्वा, हिंसा के बल पर ही राज्य कर सकती है। वह देश की रक्षा के लिए सशस्त्र और जबरदस्त फौज रखती है, देश के अन्दर दंगा-फसाद न हो, गुण्डाराज्य न चले, इसलिए पुलिस रखती है। शारीरिक बल का प्रयोग करने के लिए पुलिस डंडा, लाठी टीयर-गैस आदि शस्त्र रखती ही है।

स्वराज्य-सरकार प्रजामान्य होने से प्रजा के प्रतिनिधियों द्वारा कानून बनाती है सही, लेकिन उन कानूनों का अमल तो पुलिसों के द्वारा, कोर्टों के द्वारा और जेलों के द्वारा करवाती है। इन सब बातों में हिंसा के प्रयोग का ही अंतिम आधार रहता है।

कबूल करना चाहिए कि ऐसे सरकार के सारे अधिकार आज की जनता को मान्य हैं। सरकार द्वारा जो हिंसा हो सकती है उसे जनता मान्य करती है। जनता कदम-कदम पर सरकारी हिंसा की मदद माँगती है और सरकार की हिंसा शक्ति को मजबूत करने के लिए कर भी देती है। (टैक्स मंजूर करना जनता के प्रतिनिधियों का काम है। लेकिन वसूल

→सकते हैं कि कम-से-कम एक युद्ध—परमाणु-युद्ध—सर्वथा अनैतिक और अनुचित है। अभी यह बात हिंसा के दूसरे कार्यों, जैसे—क्रांति, गृहयुद्ध, गोरिल्ला युद्ध, सीमा-संघर्ष, विदेशी आक्रमण का मुकाबिला, स्वतन्त्रता की लड़ाई आदि के लिए नहीं कही जा सकती। अभी तक ऐसा कोई राष्ट्र सामने नहीं आया है जिसने अहिंसा को जीवन का सिद्धान्त बना लिया हो।

सत्याग्रही के लिए हर प्रकार का युद्ध त्याज्य है। दूसरों के लिए ऐसी स्थितियाँ हो सकती हैं जब हिंसक कार्रवाई के सिवाय दूसरा रास्ता न हो। निश्चित रूप से हिंसा कायरता से अच्छी है, लेकिन निश्चित रूप से युद्ध से युद्ध नहीं मिट सकता। मार्क्स का विचार गांधी के विचारों से भिन्न है। वह कहता है: 'बन्दूक से मुक्त होने के लिए बन्दूक उठाना जरूरी है।' यह समझना कठिन है कि कैसे हिंसा से हिंसा और युद्ध से युद्ध का अंत होगा। हिंसा से हिंसा बढ़ेगी, युद्ध से युद्ध बढ़ेगा। हिंसा घटानी हो तो विषमता, गरीबी, अन्याय, अकेलापन, आदि को घटाना पड़ेगा। इस क्षेत्र में सबसे बड़ा स्थान शिक्षण का है। तनावों और संघर्षों को दूर करने में अधिकाधिक अहिंसा से ही काम लेना चाहिए। इस दृष्टि से हर देश में एक 'अहिंसा कमीशन' की स्थापना होनी चाहिए। एक ही सरकार में प्रतिरक्षा मन्त्रालय के साथ-साथ अहिंसा मन्त्रालय भी हो सकता है। अन्त में मनुष्य का भविष्य ज्ञान पर निर्भर है। और ज्ञान के लिए 'खुली दुनिया' (ओपन वर्ल्ड) आवश्यक है। हर देश खुलकर दूसरे को ज्ञान दे, अनुभव दे, साधन दे, और उसी तरह दूसरा देश उसे दे।

अहिंसा और खुली दुनिया—दोनों का साथ है।•

करने का काम, जरूरत पडने पर, सरकार हिंसा के द्वारा ही करती है।)

गांधीजी कहते थे कि सरकार नामक संस्था प्रजामान्य भले हो, हिंसा पर आधार रखती है, इसलिए उसके द्वारा कम-से-कम काम लेना चाहिए। और जनता को स्वेच्छा से, राष्ट्रीय चारित्र्य के बल पर, गैरसरकारी सार्वजनिक संगठन के बल पर, अपना बहुत-सा काम चलाना चाहिए।

लोक-संगठन की प्राचीन परम्परा

ये सारी बातें अव्यवहार्य नहीं हैं। जनता चाहे तो सरकार की मदद के बिना अपने बहुत-से काम, अपने नैतिक संगठन द्वारा (बिनसरकारी प्रजाकीय संगठन द्वारा) कर सकती है। उसके दो-तीन उदाहरण सोचने से बात पूरी ध्यान में आयेगी।

हजारों बरस हुए, भारत की जनता ने अपने छोटे-बड़े 'जाति संगठन' चलाये हैं। हरेक जाति अपने जीवन का संगठन अपनी जाति के द्वारा करती आयी है। इसमें न सरकार की मदद की जरूरत थी, न सरकार कोई हस्तक्षेप कर सकती थी। हरेक जाति का व्यवहार जाति-नियुक्त नेताओं के द्वारा चलता था। जाति के पास अपने-अपने फण्ड थे। जातियाँ अपनी-अपनी शिक्षा-संस्था चलाती थीं, अपनी जाति के गरीबों को आर्थिक सहायता देती थीं; परोपकार भी करती थीं, यह तो ठीक। बाज दफे आत्मरक्षा के लिए भी सरकार की मदद न लेते हुए जनता अपना संगठन काम में लाती थी।

मेरे बचपन का एक प्रसंग मुझे याद है। शाम के सात-आठ बजे का समय होगा। नगरपालिका के दो प्रतिनिधियों ने हमारे घर का दरवाजा खटखटाया। दरवाजा खुलते ही उन्होंने कहा, "समाचार मिले हैं कि गुण्डे लोग रात को दानापीठ (अनाज की दूकानें और गोदाम) लूटने आनेवाले हैं। इसलिए हरेक घर में से दो-दो जवानों को दानापीठ की रक्षा के लिए रात को आना चाहिए।" ऐसा कहकर दो लाठियाँ हमारे घर के अन्दर फेंक कर वे चले गये।

इत्तफाक से उस दिन घर के बड़े गाँव में नहीं थे। मर्दों में मैं अकेला था। खाना खाकर एक लाठी लेकर मैं दानापीठ पहुँच गया। वहाँ बहुत इकट्ठे हुए थे। रक्षा की योजना की चर्चा चल रही थी। मुझे देखकर वे हँस पड़े। थोड़े समय के बाद उन्होंने मुझे घर जाने की सूचना की।

हमारी जाति-संस्थाएँ उन दिनों Non Governmental public sector (बिनसरकारी लोक-संगठन) थीं।

आजकल की नगरपालिकाएँ (म्युनिसिपालिटियाँ) एक तरह से 'बिनसरकारी लोक-संगठन' ही हैं। (दिन प्रतिदिन वे ज्यादा-से-ज्यादा सरकार-आश्रित हो रही है, यह दुख की बात है।)

दूसरा उदाहरण लीजिए। आजकल जगह-जगह पर सहकारी संस्थाएँ (कोऑपरेटिव सोसायटियाँ) स्थापित होती हैं। अपना काम बढ़ाकर वे 'मल्टी-परपज' (बहुधधावाली) बनती जाती हैं। यह भी बिनसरकारी लोकतंत्र है।

तीसरा उदाहरण हमारी युनिवर्सिटियों का—विश्वविद्यालय और विद्यापीठों का। इनमें आजकल गवर्नर को कुलपति बनाते हैं, सरकारी सहायता ली जाती है। स्वराज्य के बाद और समाजवाद के नाम पर, हमारा सारा जीवन सरकार आश्रित होता जा रहा है, जिसका गांधीजी को अत्यन्त दर्द था।

नेताओं ने सहूलियत की राह पकड़ी

गांधीजी चाहते थे कि जनता की राष्ट्रीयता, सरकार की मदद के बिना संगठित हो जाये। लोकसेवा के असंख्य काम सरकारी मदद के बिना और सरकार के समर्थन के बिना हम संगठित करते जायें, तो हम अहिंसक संस्कृति की ओर बढ़ते जायेंगे। यह था गांधीजी का 'सर्वोदयी मार्ग'। इसके लिए नेताओं को दिन-रात मेहनत करनी पड़ती, जनता का नैतिक सामर्थ्य संगठित करना पड़ता, और सेवा में कितना सामर्थ्य है, इसका अनुभव अपने को और जनता को कराना पड़ता।

इतनी तपस्या कौन करे? अंग्रेजों ने भारत सरकार को संगठित किया ही था। फौज, पुलिस, कॉर्ट, I. C. S. अमलदार—सब तैयार थे। इनकी सत्ता और इनका आधार छोड़कर दिन-पर-दिन कम करके 'जनता की बिनसरकारी शक्ति' संगठित कौन करे? सस्ता रास्ता था समाजवाद का। इसके पीछे योरप-अमरीका का अनुभव मौजूद था। अंग्रेजी में साहित्य भी तैयार था। सरकारी कानून और सरकारी अमलदार भी 'प्रजा पर कानून के जोर से राज्य करने के आदी थे'। अंग्रेजों की जगह देशी नेता राज्यकर्ता बने और सरकारी काम सफल हो या न हो, सरकार के अधिकार हम बढ़ाते गये। और चूँकि राज्य प्रजा के प्रतिनिधियों के हाथ में आया था, इसलिए 'सरकारीकरण' को हम 'राष्ट्रीयकरण' कहने लगे। अब सबके सब काम और प्रजाजीवन के सब क्षेत्र धीरे-धीरे सरकार के हाथों में ही दे देने का कार्यक्रम शुरू हुआ है। फिर तो देश में युवकों को और युवतियों को समाजवादी सरकार की नौकरियाँ करने का ही काम रहेगा। कॉलेज में जाकर 'किसी भी सूरत से' डिग्री प्राप्त करो। डिग्री मिलने के बाद, 'रिवाज के अनुसार' (!) नौकरी प्राप्त करो, उसके बाद पे, प्रमोशन और पेन्शन (तनखा कितनी मिलेगी, वेतन-वृद्धि कब, कितनी होगी, और नौकरी पूरी होते पेन्शन या ग्रेच्युइटी कितनी मिलेगी) इसकी चर्चा और चिन्ता करते रहो। यही होगा हमारा समाजवाद।

जनता के काम तीन—(१) चुनाव के दिनों में अपने प्रतिनिधियों को वोट दे दो, (२) सरकार माँगे उतना कर (टैक्स), समय समय पर दे दो। और (३) राज्य-व्यवस्था सदोषकारक नहीं है, इसकी चर्चा और निंदा करते रहो—व्याख्यानों द्वारा या अखबारों द्वारा।

यहाँ सभी दल एक हैं

आजकल राजनैतिक पक्ष बढ़ते ही जाते हैं। एक-एक पक्ष के अन्दर फूट पड़ती है अथवा फूट बढ़ाने के 'महँगे रास्ते' भी कहीं-कहीं काम में लाये जाने लगे हैं। लेकिन इन सब पक्षों में एक बात में एकवाक्यता

है। समाजवाद की दुहाई देकर सरकार के अधिकार बढ़ाते जाओ और सरकार के हाथ में जो सत्ता और संपत्ति इकट्ठा होती है उसे भी बढ़ाते जाओ। (झगड़ा केवल इस बात का है कि सत्ता और संपत्ति काम में लाने का अधिकार किसके हाथ में हो?)

गांधीजी का कहना था कि सरकार हिंसा के बल पर काम करनेवाली संस्था है। उसके हाथ में सत्ता और संपत्ति कम-से कम जाने दो। अन्यथा सरकार चलानेवाले नेता, मंत्री और राज्य कर्मचारी—किसीकी भी नीयत सर्वोत्कृष्ट नहीं रहेगी।

गांधीजी चाहते थे कि जीवन, जहां तक हो सके, सादा, संयमित और शुद्ध हो। प्रजाहित के बहुत से काम स्थानिक संगठन के द्वारा हों। ऐसे संगठन, नैतिक बल पर, चलाने की शक्ति बढ़ाने के बाद, 'संगठनों के संगठन' बढ़ाते बढ़ाते राष्ट्रव्यापी बनाते जायें।

इसके लिए राष्ट्र में तेजस्वी चारित्र्य-वाले नेताओं की परंपरा कायम रहनी चाहिए। नैतिक चारित्र्य ही सामाजिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय और अखिल मानवीय संगठन का अंतिम आधार है।

अहिंसक समाज-रचना के लिए

गांधीजी कहते थे कि देश की सामान्य जनता को खाना-पीना अच्छे से अच्छा मिले, पहनने के लिए कपड़े अच्छे मिलें, रहने के लिए अच्छे घर मिलें, सफर की सहूलियतें हों, अच्छी-से अच्छी शिक्षा जनता को, जनता की भाषा में, मिले, देश की समृद्धि पूरी बढ़े, लेकिन ऐसी अहिंसक संस्कृति की सरकारें सर्वव्यापी न हों। बिनसरकारी राष्ट्रीय नैतिक संगठन मजबूत करने के लिए देश के नेताओं में सेवाभावना अधिक और धन-दौलत व अधिकार का शौक कम-से-कम होना चाहिए। नेताओं के त्याग के कारण, सादगी के कारण और उत्कट सेवाभाव के कारण, जनता में उनके प्रति अत्यन्त आदर रहे यह जरूरी है। गांधीजी मानते थे कि उनका 'बिनसरकारी राष्ट्रीय संगठन' भी चारित्र्य के बल पर ही टिक सकेगा। सरकारी संगठन में जो दोष आते हैं, वे सब बिनसरकारी संगठन भी आ सकते हैं। सरकारी संगठन कानूनी हिंसाबल के जोरों पर काफी दिन तक चल सकता है। बिनसरकारी संगठन का आधार जनता की सार्वजनिक राष्ट्रीयता पर ही हो सकता है और इसके लिए नेताओं का चारित्र्य साधारण जनता के चारित्र्य से ऊंचा होना चाहिए।

यह था गांधीजी का सर्वोदयी तरीका। जनता को अहिंसा के बल का अनुभव और साक्षात्कार होने पर जनता हिंसा के रास्ते नहीं जायेगी, यह भी इतना विश्वास होने पर ही कि अन्याय का प्रतिकार सत्याग्रह के द्वारा हो सकेगा।

देश की आंतरिक शान्ति और सुव्यवस्था शांति-सेना और सत्याग्रह के बल पर जब दृढ़ होगी तब (उसके पहले नहीं), बाह्य आक्रमण का भी मुकाबिला शांति-सेना के द्वारा हो सकेगा, यह था गांधीजी का विश्वास। तब तक देश की रक्षा के लिए शस्त्रसेना रखने में गांधीजी का विरोध नहीं था।

इस तरह आप देखेंगे कि गांधीजी का तरीका, सार्वजनिक नीति के बल पर, अहिंसा को प्रधानता देना चाहता था। आज की हमारी राष्ट्रमान्य राज्य-व्यवस्था, ठीक इसके विपरीत, सरकार के अधिकार बढ़ाकर राष्ट्रीय जीवन अधिकाधिक, सरकार के हाथों सौंप देने के पक्ष में है।

('मंगल प्रभात' से साभार)

भण्डारा जिले का प्रायोगिक अभियान : प्रेरक अनुभव

• सुमन बंग

"ये मन कुछ देकर नहीं आये हैं, ना ये मन कुछ मांगकर आये हैं। ये मन सिर्फ रास्ता बताकर आये हैं।"—विचारपुर के डा० प्रमोदचन्द्र दास देहातियों की भाषा में समझा रहे थे। बजारी नाम के छोटे-से देहात में लोगों को वे डेढ़ घंटे से अनवरत समझा रहे थे। और ऐसे ढंग से मानो बरसों से इस आन्दोलन के मंजे हुए कार्यकर्ता हों।

पत्रिका का प्रभाव

'क्या इसके पहले भी आप कभी ग्रामदान की पदयात्राओं में घूमे हैं?' मैंने प्रश्न किया।

'नहीं तो।'

'फिर इतनी अच्छी तरह पूरी गहराई से आप ग्रामदान का विचार कैसे समझा लेते हैं?'

'हां, उसका तो एक इतिहास है। शुरू में मैं इस आन्दोलन के सख्त खिलाफ था। आप भी एक साल पहले आयी होतीं, तो मैं आपको अपने यहां कदम भी नहीं रखने देता। भीख मांगकर कहीं शान्ति होती है? और विनोबा तो सबको भीख ही मांगना सिखाता है, ऐसी मेरी धारणा थी। पर एक साल पहले तुमसर के श्री महादेवराव कुंभारे मेरे पास आये और कहा कि दस रुपया पानी में जा रहा है, ऐसा समझकर भी क्यों न हो, पर आप कम-से-कम एक साल के लिए हमारी 'भूदान-यज्ञ' साप्ताहिक पत्रिका मंगाइए। पिंड छुड़ाने के लिए मैंने उन्हें चन्दा दे दिया। तब से नियमित 'भूदान-यज्ञ' पढ़ता हूं और आज हम दोनों भाइयों को यह विश्वास हो गया है कि सर्वोदय सर्वोत्तम विचार है।'

विचार में कितनी ताकत होती है। इसीलिए तो हर देहात में हमारी पत्रिका पहुंचनी ही चाहिए, यह विनोबाजी बार-बार आग्रहपूर्वक कहते रहे हैं। इस विचार से प्रमोदभाई इतने आकृष्ट हुए हैं कि एक-एक गांव में दो-दो, तीन-तीन बार, और कहीं-कहीं तो चार-चार बार जाकर ग्रामदान का विचार समझाते हैं। कहीं शादी हो या सत्यनारायण की कथा, सब जगह वे पहुंच जाते हैं। कहीं अगर अपमान भी होता है, तो भी उससे उनके उत्साह में कोई कमी नहीं आती। दूसरे दिन से फिर अपना 'रेंगू' (घोड़ा-गाड़ी) लेकर वे ग्रामदान-प्राप्ति

के लिए चल देते हैं। कभी दोपहर का भोजन सन्ध्या के चार बजे, तो कभी रात का भोजन रात को बारह बजे, लेकिन दोनों भाई हमारी दो टोलियों के साथ जी-जान से प्राप्ति-अभियान में भिड़े रहे।

प्रमोदभाई एम० एस-सी० ((टेक०) पी एच० डी० हैं। और भाई प्रफुल्लचन्द्र बी० ए०। जमीनदार घर के ये दोनों रईस तरुण आज गाँव की सेवा में जुटे हुए हैं। जैसा इनके गाँव का नाम (विचारपुर) है, वैसे ही ये विचारवान तरुण हैं। अपने गाँव का ग्रामदान कराया है, अपनी भूमि का बँटवारा किया है और ग्रामसभा भी स्थापित की है।

'हमें जो नया मार्ग दिखाई दिया है इसकी खुशी में अपनी १२.३८ एकड़ भूमि का मैं चार भूमिहीनों में बँटवारा करता हूँ। अपनी स्वेच्छा से इन नये भूमिवानों को बोने के लिए बीज के रूप में तीन खण्डी धान भी दूँगा।' ग्रामसभा में डॉ० प्रमोदचन्द्र ने घोषणा की। ग्रामवासी मानो स्वप्न-जगत् में विहार कर रहे हों, ऐसा उनके चेहरे पर उभर रहे भावों को देखकर लग रहा था। शायद अपनी आँखों पर उनको विश्वास नहीं हो रहा था। कलियुग में यह कैसा सत्ययुग!

'मैं राजनीतिज्ञों का द्वेष्टा हूँ। इन लोगों ने देश को बरबाद किया है। मैं बड़ी आशा से सर्वोदय की ओर देखता हूँ। सब दृष्टि से ग्रामदान तारक है ऐसा मुझे विश्वास हो गया है, अतः आपके साथ घूम रहा हूँ।' रात को १०-३० बजे देहात से लौटते समय प्रफुल्लभाई ने चर्चा में कहा। दोनों भाई अच्छे शिकार खेलनेवाले हैं, अतः उस घने जंगल में इतनी रात को पैदल चलने में भी उन्हें डर नहीं लग रहा था। पर मुझे तो हर कदम पर, हर पेड़ के नीचे शेर ही दिखाई दे रहे थे!

अभियान की योजना

भण्डारा जिले में जो ग्रामदान-प्राप्ति का प्रायोगिक अभियान ४ से १८ अप्रैल तक चला, उसमें इन दोनों भाइयों से परिचय हुआ। सालेकसा प्रखंड में आप लोग रहते हैं।

देशभर में ग्रामदान-आन्दोलन का काम कहीं धीमी, कहीं तेज गति से चल रहा है। हर जगह के काम की अपनी-अपनी पद्धति है। हर पद्धति में गुण-दोष हैं। यदि इन सब पद्धतियों का अध्ययन करके उसमें से एक समर्थ और समग्र पद्धति विकसित की जाय तो काम अधिक गति से आगे बढ़ेगा, ऐसा सोचकर भण्डारा जिले के आमगाँव और सालेकसा प्रखंडों को प्रयोग-क्षेत्र के रूप में लिया गया। आमगाँव प्रखंड में जनसंघ का प्रभाव है और लोग जागृत हैं, आबादी घनी है। इसके बिल्कुल विपरीत स्थिति सालेकसा प्रखंड की है। सालेकसा प्रखंड जंगली है। आदिवासी लोग वहाँ रहते हैं। लेकिन आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ होने पर भी राजनीतिक दृष्टि से यह प्रखण्ड काफी जागृत है। आमगाँव प्रखंड में ५० गाँव हैं, और सालेकसा प्रखंड में ८०। परन्तु एक-एक गाँव में अनेक टोले हैं। एक टोले से दूसरे टोले में काफी फासला है। किसी-किसी गाँव में ११-१२ टोले भी हैं। अत उस क्षेत्र में काम करना अत्यन्त कठिन है।

एक दृष्टि से पदयात्रा के लिए समय अनुकूल भी था, पर अनेक दृष्टियों से प्रतिकूल भी था। शादियों का मौसम होने के कारण लोग सुनने की मनःस्थिति में नहीं पाये जाते थे। गरमी में खेती में कुछ भी काम न होने के कारण जंगल के काम पर लोग जाते थे, इसलिए जल्दी मुलाकात भी नहीं हो पाती थी।

ता० ४ अप्रैल को आमगाँव में कार्यकर्ताओं का शिविर हुआ, जिसमें विभिन्न प्रदेशों से आये हुये भाई तथा इस काम के लिए बिलकुल नये नवयुवक शामिल हुए थे। हर प्रदेश से दो-दो समर्थ कार्यकर्ता आयें, जो अपने यहाँ जाकर यथोचित नयी पद्धति से अभियान चलायें, ऐसी कल्पना थी। पर अनेक कारणों से यह संभव नहीं हो पाया। कुछ प्रदेशों से तेरह कार्यकर्ता आ पाये थे। इनमें से कुछ लोग काम शुरू होने के कुछ दिन बाद वापस गये। बाहर के शेष कार्यकर्ता और महाराष्ट्र के साथी पूरे समय तक रहे।

पद्धति और दिशा की शोध

ता० ४ के शिविर में पूर्वतैयारी और ग्रामदान-प्राप्ति की पद्धति पर काफी चर्चाएँ हुईं। ता० ५ से ८ तक की पूर्व-तैयारी में कुछ ग्रामदान भी मिले। फिर दोनों विकास-खण्डों में पदयात्रा-शिविर हुए। शिविरों में काफी ग्रामीण लोग भी आये थे। पदयात्रा में तीन बातों की ओर विशेष ध्यान देने का तय किया गया—(१) जन-आन्दोलन की दृष्टि से ग्रामीणों का अभिक्रम जागृत करना और उनके सहयोग से ग्रामदान प्राप्त करना, (२) ग्रामदान होने पर वहाँ अपना संगठन खड़ा करना, (३) ग्रामदानी गाँवों में भूमि-वितरण करना, ग्रामसभा स्थापित करना, और ग्रामस्वराज्य की घोषणा करना।

यद्यपि सामने व्यापक उद्देश्यों के होते हुए भी पुरानी आदतों के कारण, और कुछ व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण इस प्रकार का अपेक्षित परिणाम नहीं निकल सका, तो भी दोनों प्रखण्डों के कुल १३० गाँवों में से ११९ गाँवों में कार्यकर्ता पहुँचे। ४६ गाँवों का ग्रामदान हुआ, करीब २५० रुपये की साहित्य-बिक्री हुई, पत्रिका के १६ ग्राहक बने, ५३ शान्ति-सेवक बने, ३ अध्ययन-मण्डलियाँ स्थापित हुईं। विचारपुर में १२.३८ एकड़ का भूमि-वितरण हुआ, और ग्रामसभा स्थापित हुई।

१८ अप्रैल, 'भूमि-क्रान्ति दिवस' को पनुरा में डा० प्रमोदचन्द्र दास की अध्यक्षता में समाप्ति-समारोह हुआ। 'काम तेज गति से होना आवश्यक है। आप लोग आज चले जायेंगे, पर आगे भी काम चलना चाहिए। इसलिए प्रखण्ड-स्तर पर आप ग्रामदान-प्राप्ति समिति बनाइए और अपना कार्यालय खोलिए।' ऐसी माँग दोनों पंचायत-समितियों के अध्यक्षों ने की। तुरन्त स्थानीय नागरिकों की दो प्रखण्डस्तरीय समितियाँ बनायी गयीं, और

आन्दोलन के आगे के काम की जिम्मेदारी नागरिकों ने स्वतः प्रेरित होकर स्वेच्छा से अपने-अपने ऊपर ली। यह विशेष खुशी की बात है। इस पदयात्रा की दूसरी विशेषता यह रही कि १५-२० नवयुवक आन्दोलन में काम करने के लिए आगे आये। आधलगांव में उनका दस दिन का प्रशिक्षण-शिविर चल रहा है।

ग्रामस्वराज-कोष की शुरुआत दिल्ली में आज के दिन ही होनेवाली थी। अतः इस समापन-समारोह में कार्यकर्ताओं ने अपने योगदान की रकम की घोषणा की। अध्यक्ष महोदय भी चुप बैठनेवाले नहीं थे। उन्होंने भी कोष के लिए ५०१ रु० देने की घोषणा की। छोटे-बड़े, सभी कार्यकर्ताओं, और नागरिकों के योगदान का कुल योग करीब तीन-चार हजार रुपयों तक देखते-देखते पहुँच गया।

विरोधी भूमिका

लेकिन इस विचार का विरोध भी शुरू हो गया है। आदिवासी लोगों का कमला मांझी नाम का नेता है। उसने अपनी समानान्तर सरकार तक स्थापित कर ली है। चाहे जितना समझाने पर भी मांझी सरकार के भक्त लोगों ने ग्रामदान घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर नहीं किये। इन भोले, निरक्षर आदिवासियों को शहर-वालों ने इतना धोखा दिया है, उनका इतना शोषण किया है कि विचार पसन्द होने पर भी हम शहरवासी सफेदपोश लोगों पर वे विश्वास ही नहीं करते। 'कहीं धोखा तो नहीं होगा, ठगे तो नहीं जायेंगे', ऐसा बार-बार पूछते रहते हैं। साहूकार, ठीकेदार, सरकारी अधिकारी आदि इनका इतना भयंकर शोषण करते हैं, कि उसके आंकड़े सुनकर सिर चकरा जाता है। ३०० रु० मूलधन पर सात साल में ४५० रु० ब्याज दिया, जिसपर भी साहूकार ने एक आदिवासी किसान की ग्यारह एकड़ भूमि हड़प ली। कहाँ है कानून का संरक्षण? शारदा-कानून बना है, फिर भी ८-१० साल के लड़के-लड़कियों की शादियाँ यहाँ आमतौर पर होती हैं। कौन परवाह करता है कानून की! दहेज-बन्दी का कानून है, फिर भी डटकर दहेज लिया जाता है, कौन सुनता है कानून को!

दारिद्र्य, उपेक्षा और भय के कारण कुछ कार्यकर्ताओं को दो-दो दिन खाना नहीं मिला। ग्रामदान में 'दान' शब्द होने से अनेक गलत फहमियाँ पदयात्रियों के जाने से पहले ही फैलने लगती हैं। 'ग्रामदान यानी सब कुछ दान में दे देना, सामूहिक खेती करना, एकसाथ खाना, घंटी बजने पर काम पर जाना' इत्यादि गलत फहमियों के कारण कई जगह लोग डरते थे, और सभा में ही नहीं आते थे।

पढ़ाई से लाभ?

कई गाँव इस क्षेत्र में ऐसे हैं जहाँ से एक भी बच्चा स्कूल में नहीं जाता है। बातचीत करने से पता चला कि गरीबी और पालकों का अज्ञान तो इसका एक कारण है ही, पर इसमें केवल पालकों का ही दोष नहीं है। शिक्षक और शिक्षण-पद्धति भी दोषी है। कोपालगढ़ के केजू-भाई का कहना था—'बच्चों को स्कूल में भेजने से क्या फायदा? शिक्षक तो बहुत कम दिन स्कूल में आते हैं। चौथे दर्जे तक पढ़ लेने पर भी ठीक से एक पत्र तक लिखना नहीं आता, और न पढ़ने ही आता है। थोड़ा-सा पढ़-लिख लेने पर लड़का खेत में काम नहीं करना चाहता, तो कहाँ ढूंढे उसके लिए नौकरी? उसका खर्च भी बढ़ जाता है। इन सारी झंझटों से तो बच्चों को न पढ़ाना ही अच्छा है।'

शहर का कोई आदमी आता है तो वह 'वोट' माँगता है, यह भी यहाँ की एक आम धारणा है। हम भी उनसे 'वोट' माँगने आये हैं, ऐसा समझकर साठ साल की धोंगीबाई ने कहा, 'बैलों को वोट दिलवाकर हमको आपने बैल बना दिया है। शराब पिला-पिलाकर और पैसे दे देकर हमसे वोट लिये हैं आपने। अब हम बैल बनना नहीं चाहते, न आपको वोट देना चाहते हैं।' बुढ़िया को क्या मालूम कि वह तो हमारे ही मन की बात कह रही है।

चोरी की तहकीकात!

एक प्रसंग तो मैं कभी नहीं भूलूंगी। विचारपुर के एक बड़े किसान साहूकार के यहाँ ५-१० हजार रुपयों की चोरी हुई थी। सर्कल इन्स्पेक्टर अपने साथ १०-१५ पुलिस का जत्था लेकर आये थे। तीन दिन वे रहे। सर्कल इन्स्पेक्टर महाशय को चार लोगों ने पकड़कर गाड़ी से उतारा। बेहोश थे। शराब के नशे का उन पर गहरा असर था। आँख खोलना, बोलना उनके लिए असम्भव था। जरा भी नशा उतरने लगता तो वे फिर चढ़ा लेते थे। अंडा, मुर्गी आदि जाने क्या-क्या खाने के लिए माँगते थे। एक दिन तो दो मुर्गियाँ उन्होंने पकवायी और अकेले खा डालीं। साथ में शराब तो थी ही। भला आदमी आया था चोरी की जाँच करने, पर एक कदम भी घर के बाहर नहीं रख सका। तीसरे दिन फिर चार लोगों ने उसे गाड़ी में बैठाया और वे महाशय रवाना हुए।

यह सारा जंगली क्षेत्र है। अतः अनेक छोटे-बड़े उद्योग यहाँ शुरू किये जा सकते हैं। परन्तु हमारी सरकार की कृपा से यहाँ के निवासी काम के लिए मारे-मारे घूमते हैं। साल भर काम न मिलने से खाने के लाले पड़ते हैं। बांस, लकड़ी, लाख, इत्यादि कच्चे माल से पक्का माल बनाने के उद्योग यहाँ तुरन्त शुरू किये जा सकते हैं। पर कौन इधर ध्यान दे?

इस अभियान में कई प्रदेशों से लोग आये थे, इससे बहुत अनुकूल हवा बनी। केवल भण्डारा जिले में या महाराष्ट्र में ही नहीं, देश भर में यह काम चल रहा है, यह लोगों में ताकत पैदा करनेवाली बात सिद्ध हुई। देश भर के साथी एक-त्रित होकर काम करते हैं, तो स्नेह तो बढ़ता ही है, राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से भी अनुकूल वातावरण बनता है। कम-से-कम साल में एक बार तो ऐसा प्रयोग कहीं-न-कहीं होना चाहिए, ऐसा कई लोगों का विचार था। ●

भूमि-समस्या

महाराष्ट्र के थाना जिले में
जंगल की जमीन पर आदिवासियों के 'अतिक्रमण' की समस्याएँ और समाधान की दिशाएँ

वर्षों से महाराष्ट्र राज्य सरकार की, और विशेषकर थाना जिले के सरकारी वनविभाग की, शिकायत रही है, कि पहाड़ों के नजदीक के देहातों में रहनेवाले आदिवासी भूमिहीन लोग जंगलों में काश्त करनेलायक जमीन ढूंढ लेते हैं, उसे काश्त के काबिल बनाते हैं, और गैरकानूनी ढंग से उस पर खेती करते हैं। इस अतिक्रमण (encroachment) से वन-सम्पदा नष्ट होती है, पहाड़ बंजर हो जाते हैं और बारिश के औसत मान पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। अतः राष्ट्रीय सम्पत्ति का नाश करनेवाले इस अतिक्रमण को रोकना महाराष्ट्र सरकार ने अपना कर्तव्य माना है।

सन् १९६९ के जुलाई महीने में वनविभाग के अधिकारी हथियारबन्द पुलिस का जत्था साथ लेकर जंगलों में गये, और छोटे छोटे भूखण्डों पर आदिवासियों ने जो फसल लगायी थी, उसको काटने या नष्ट करने का अभियान शुरू किया। यह खबर जब फैली, तब सत्तारूढ़ कांग्रेस-पक्ष के विरोधी अन्य सारे पक्षों ने महाराष्ट्र विधानसभा में और बाहर भी, तथा समाचारपत्रों ने इस कठोर कदम की बहुत कड़ी आलोचना की। एक होहल्ला-सा मच गया। थाना जिले के कांग्रेसी नेताओं और कार्यकर्ताओं ने भी अपनी असहमति व्यक्त की। राजनीति में भाग न लेनेवाले, ग्रामदान के कार्य में लगे हुए प्रमुख सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने सरकार के इस निष्ठुर कार्य के बारे में अपना प्रतिकूल अभिप्राय व्यक्त किया। आखिर, लोकमत का प्रभाव सरकारी नीति पर पड़ा और वनविभाग ने वह गलत अभियान स्थगित कर दिया। सन् १९६९ की बरसात में आदिवासियों ने जंगल में स्थित उन भूखंडों में धान, रागी आदि की खेती की, और उनको फसल प्राप्त हुई।

सरकार की बेदखली योजना

वैसे महाराष्ट्र की दृष्टि से यह सवाल बहुत बड़ा नहीं है। थाना के अलावा अन्य जिलों में भी जंगल की जमीन पर आदिवासियों ने कब्जा किया है, लेकिन वहाँ उनकी संख्या कम है। थाना जिले में सन् १९६९ की सरकारी गणना के अनुसार इन 'अतिक्रामकों' (encroachers) की संख्या करीब १७,००० है और उतनी ही एकड़ जमीन पर उन्होंने कब्जा किया है। अब महाराष्ट्र सरकार ने तय किया है कि सन् १९७० में बरसात का मौसम शुरू होने से पहले ही इन १७,००० आदिवासी 'अतिक्रामकों' को इस सरकारी जमीन से, आवश्यकता पड़ने पर दण्ड-बल अथवा शस्त्रबल से भी, बेदखल किया जायगा। उग्र साम्यवादी, संयुक्त समाजवादी आदि पक्षों ने भी जाहिर कर दिया है कि इस बेदखली का मुकाबला वे डटकर करेंगे। ऐसा दिखाई दे रहा है कि मई महीने में यहाँ एक संघर्ष छिड़ जायगा।

इस बीच महाराष्ट्र सरकार ने एक भू-वितरण योजना की घोषणा की है, जिसका जिक्र करना जरूरी है। महाराष्ट्र के वनमंत्री ने घोषणा की है कि सरकार थाना जिले के जंगल में अतिक्रमण न करनेवाले भूमिहीन आदिवासियों, हरिजनों और नवबौद्ध खेतिहर मजदूरों को जंगलों के पास की ४२,००० एकड़ चारागाह-वाली जमीन बाँटेगी। यह सुनकर ऐसा लगता है कि सरकार की नीति बिलकुल दुरुस्त है। अतिक्रमण से जंगल का बचाव भी हो, और भूमिहीनों को जमीन भी मिले तो सरकार की यह नीति गलत कैसे मानी जायगी? विरोधी पक्षों की बात छोड़ दें, क्योंकि वे कभी-कभी सिर्फ विरोध के लिए भी विरोध करते हैं, लेकिन सर्वोदयवाले इस नीति का विरोध कैसे कर सकते हैं?

एक भ्रामक घोषणा

४२,००० एकड़ जमीन बाँटने की जो सरकार की घोषणा है, उसमें अगर तथ्य होता, और सचमुच आदिवासियों को जमीन मिल पाती तो जंगल की जमीन से 'अतिक्रामक' आदिवासियों को बेदखल करना युक्तिसंगत होता। लेकिन यह जो ४२,००० एकड़ जमीन है, जिसे बाँटने की सरकार ने घोषणा की है, उसमें आधी से ज्यादा जमीन तो इतनी पथरीली है कि उसमें घास भी नहीं उगती। थोड़ी बहुत काश्त काबिल जमीन है भी, तो उसमें से अधिकांश जमीनों पर पड़ोसी आदिवासी भूमिहीनों ने पहले से ही कब्जा कर रखा है। खेती लायक ऐसी जमीन, जो किसी के कब्जे में न हो, इतनी कम है कि उससे बहुत ही कम आदिवासियों को जमीन मिल पायेगी। इसके अलावा इस भू-वितरण योजना में एक शर्त भी रखी गयी है कि जिसने जंगल की जमीन पर अतिक्रमण किया है, उसको नयी जमीन पाने का अधिकार ही नहीं होगा, क्योंकि वह सरकार की दृष्टि में अपराधी है, मुजरिम है। यह तफसील जानने के बाद यह शक होता है कि कहीं यह योजना लोगों की आँखों में धूल झोंकने के लिए ही तो नहीं तयार की गयी है?

वन-संरक्षण का सवाल

यह ठीक है कि वन सम्पदा का अतिक्रमण और गैरकानूनी कटाई से बचाव करना सरकार के वन विभाग का कर्तव्य है। और, यह भी सही है कि देश की कुल जमीन का एक-तिहाई हिस्सा यानी ३३% जमीन वनाच्छादित रहनी चाहिए, ताकि बारिश से होनेवाला भूमि-कटाव (Soil erosion) रुक सके और बारिश की मात्रा में भी वृद्धि होती रहे।

महाराष्ट्र की कुल जमीन का सिर्फ २०% हिस्सा वनाच्छादित है। लेकिन यह आँकड़ा महाराष्ट्र के २६ जिलों का औसत

है। थाना जिले की परिस्थिति बिलकुल भिन्न है। यहाँ ३३% से भी ज्यादा जमीन पर जंगल है और बारिश की मात्रा जरूरत से ज्यादा है। तीसरी बात यह कि जितनी जमीन पर 'अतिक्रमण' हुआ है उसका क्षेत्रफल जिले में जो वनाच्छादित जमीन है उसके क्षेत्रफल के अनुपात में नगण्य ही मानी जायेगी। ऐसी परिस्थिति में गरीब आदिवासियों ने, चोरी की नीयत से नहीं बल्कि सिर्फ पेट भरने के लिए, अगर जंगल की जमीन का आधार लिया तो उनके खिलाफ समाजवाद का नारा बुलंद करनेवाली सरकार की कठोर कानूनी कार्रवाई उचित नहीं ठहरायी जा सकती। केवल मानवीय दृष्टि से ही थाना जिले के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने आदिवासियों को बेदखल करने के इस अनुचित निर्णय के विरुद्ध अपनी आवाज उठायी है।

'अतिक्रमण' क्यों ?

इस सवाल के और कई पहलू हैं, जिन पर गौर करने के बाद बेदखली का यह निर्णय और भी गलत मालूम होता है। एक तो यह है कि, आदिवासियों के कथनानुसार जंगल की जमीन को कृषियोग्य बनाने और उसमें अनाज पैदा करने के काम को 'अतिक्रमण' कहना गलत होगा। आदिवासियों का कहना है कि सन् १९५४ से लेकर सन् १९६५ तक, जब-जब सरकार ने 'अधिक अनाज उपजाओ' का आन्दोलन देश में चलाया, तब तब ग्रामीण स्तर के जंगल-अधिकारियों ने उन्हें यह सलाह दी, कि वे जंगल में अपने लिए जमीन के कृषियोग्य टुकड़े ढूंढ़ लें और उस पर काश्त करें। पहले एक दो साल उन्हें वनविभाग को थोड़ा जुर्माना देना पड़ेगा, बाद में उन भूखंडों का सर्वेक्षण होगा और कानून के अनुसार उनका लगान तय कर दिया जायेगा। आमतौर पर आदिवासी अज्ञानी और भोले भाले होते हैं। उन्होंने कड़ी मेहनत करके ऐसे भूखंडों को उपजाऊ बनाया, हर साल वनविभाग की तरफ से जो भी जुर्माने की रकम तय की गयी, उसे बराबर सरकारी खजाने में जमा किया। बहुतों के पास जुर्माना जमा करने की रसीदें भी हैं। लेकिन कुछ आदिवासी ऐसे हैं, जिन्होंने पैसे तो जमा किये, लेकिन उनको रसीद मिली ही नहीं। कुछ रसीदों को देखकर हिसाब लगाया गया तो पता चला कि कई आदिवासियों ने फी एकड़ १०० रुपयों से लेकर ३०० रुपया तक जुर्माने की रकम सरकार को अदा की है। जमीन की किस्म को देखते हुए मानना पड़ेगा कि आदिवासियों ने सरकार से जमीन खरीद ही ली है। अब इतने सालों के बाद इन १७,००० लोगों को जमीन से बेदखल करना कहाँ का न्याय है ?

आश्चर्य की बात तो यह है कि सरकार सन् १९६० के पहले के 'अतिक्रमणों' को अपने एक आदेश द्वारा कानूनी बना चुकी है। इसलिए भी सरकार को चाहिए कि सन् १९६१ की बारिश के मौसम तक जिन्होंने जंगल की जमीन पर काश्त की है, उनको वे भूखंड बराबर के लिए दे दिये जायें, और उनका सर्वेक्षण करके लगान तय कर दिया जाय।

समस्या का असली समाधान

सरकार की तरफ से यह प्रश्न उठाया जाता है कि अतिक्रमणों को कानूनी बनाने का यह सिलसिला कब तक जारी रखा जाय ? इससे तो जंगलों का नाश ही हो जायगा। इसका सीधा जवाब यह है कि थाना जिला ग्रामदान हो गया है। कुछ ही महीनों में हर ग्रामदानी गाँव में ग्रामसभा स्थापित होगी। उस ग्रामसभा को सामूहिक रूप से, और जिसको जंगल की जमीन का टुकड़ा मिला है ऐसे हरेक आदिवासी को व्यक्तिगत रूप से, यह जिम्मा सौंपा जाय कि सन् १९७० के बाद जंगल में अतिक्रमण न हो। वनविभाग के छोटे कर्मचारियों को भी यह कहा जाय कि वे आदिवासियों से रिश्वत न लें, उन्हें झूठे आश्वासन न दें, और अतिक्रमण करते समय ही उन्हें सख्ती से रोकें। जंगल राष्ट्रीय संपत्ति है, और उसका संवर्धन करना है, यह भावना ग्रामसभा ही अपने गाँव के निवासियों में फैला सकेगी। जंगलों को बचाने का इससे और कोई कारगर तरीका हो ही नहीं सकता।

जंगलों में आदिवासियों का अतिक्रमण होता है, इसका एक कारण यह भी है कि पिछले सात आठ दशकों में सफेदपोश जमीन-मालिकों ने आदिवासियों की जमीन इस या उस बहाने, हड़प ली है, और बहुतों को भूमिहीन बना दिया है। आदिवासियों की जनसंख्या बढ़ती जा रही है। गाँव में ग्रामोद्योग अथवा कुटीरोद्योग शुरू कराने अथवा बढ़ाने की बात समाजवादी सरकार को सूझती नहीं। कोई उद्योग धंधा गाँव में है नहीं, तो क्या करें आदिवासी जवान ? भूखे मरें ? इस परिस्थिति में यह स्वाभाविक है कि वे जंगलों में कृषियोग्य जमीन ढूंढ़ते हैं।

यदि महाराष्ट्र-सरकार महाराष्ट्र राज्य की आज की भूस्वामित्व की अधिकतम मर्यादा को घटाये और इससे प्राप्त अतिरिक्त जमीन को भूमिहीन आदिवासियों में बाँट दे, तो फिर आदिवासियों की जंगल की जमीन पर कब्जा करने की प्रवृत्ति को रोकना कठिन नहीं होगा। लेकिन ऐसा कुछ न करके सरकार इन आदिवासियों को निरी मामूली गुनहगारों में करती है, उनके खिलाफ दण्डबल का प्रयोग करके उनको बेदखल करना चाहती है, तो राजनैतिक दृष्टि से भी वह एक गलत कदम होगा। देश के दूसरे राज्यों में जमीन के न्यायपूर्ण बँटवारे लिए जो हिंसात्मक उपद्रव और वर्ग संघर्ष की हवा फैलती जा रही है, उसकी शुरुआत महाराष्ट्र राज्य में भी हो सकती है। अगर ऐसा कोई हिंसात्मक आंदोलन थाना जिले में शुरू हुआ, तो उसमें गरीब आदिवासियों को ही सबसे अधिक कष्ट झेलने पड़ेंगे।

इसलिए इस समस्या के सभी पहलुओं को ध्यान में रखकर महाराष्ट्र-सरकार इन १७ ००० भूमिहीन आदिवासियों को जंगल की जमीन से तब तक बेदखल करने की बात न सोचे, जब तक कि इन आदिवासियों को पर्याप्त जमीन देने की योजना उसके पास न हो।

—वसंत नारगोलकर,
विज्ञानाश्रम, कैनाड, जिला थाना, महाराष्ट्र

अध्ययन-दल की सिफारिशें

[थाना जिले की वन-भूमि के 'अतिक्रमण' की समस्या पर महाराष्ट्र सर्वोदय-मण्डल के अध्यक्ष सहित तीन प्रमुख सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के अध्ययन का सारांश ।]

(क) हमारा सुझाव है कि सन् १९६९-७० की खेती के मौसम में अतिक्रामकों को उनकी दखल की जमीन से बेदखल करने की मौजूदा सरकारी नीति पर पुनर्विचार होना चाहिए ।

(ख) वित्त और वन-विभाग के जिम्मेदार अधिकारियों द्वारा एक सामूहिक सर्वेक्षण ऐसी सभी जमीनों का होना चाहिए, यह निश्चय करने के लिए कि वन-सम्पदा के संरक्षण और अभिवृद्धि एवं कुशल विभागीय व्यवस्था के लिए किन अतिक्रामकों को बेदखल करना उचित और आवश्यक है। निःसन्देह सर्वेक्षक दल इस बात पर भी ध्यान देगा कि थाना जिले में ऐसे और भी कितने क्षेत्र हैं, जिनमें वन का विस्तार किया जा सकता है। उन्हें इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि क्या 'अतिक्रमित' भूमि खेती से अधिक वन-विकास के लिए उपयोगी है ?

(ग) वन-विकास और व्यवस्था की दृष्टि से आवश्यक होने पर वैकल्पिक व्यवस्था सुलभ करके 'अतिक्रामकों' को स्थानान्तरित करना चाहिए ।

(घ) करीब ४,००० एकड़ 'अतिक्रमित' भूमि को भूमिहीनों में बाँटी जानेवाली में जोड़ लिया गया है। अतिक्रामकों के सदस्य ऐसी जमीन पाने के लिए आवेदन कर सकते हैं, यह मान्य हो चुका है। वितरण समिति को यह निर्देश दिया जाना चाहिए कि ग्राम भूमि-वितरण कार्यक्रम में, ऐसी 'अतिक्रमित' भूमि 'अतिक्रामकों' के परिवारों के आवेदनकर्ताओं में ही निश्चित रूप से बाँटी जानी चाहिए ।

(च) भविष्य में जंगल की भूमि का 'अतिक्रमण' न होने पाये, इसके लिए ग्रामपंचायतों को अतिक्रमण रोकने या होने पर उसकी इत्तिला देने, तथा और अन्य प्रकार से भी वन-संरक्षण के नियमों का उल्लंघन करने पर जानकारी देने की जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए ।

(छ) वन-भूमि के अतिक्रमण की प्रेरणा ही न हो, इसके लिए सुरक्षित वनों के पास के ग्रामीणों के पूरे रोजगार की व्यवस्था की जानी चाहिए ।

—रा० कृ० पाटील

—गोविन्दराव शिन्दे

—दा० रा० भिसे

गांधी-शांति प्रतिष्ठान के जमशेदपुर केन्द्र पर हिंसक उपद्रवियों का आक्रमण

बम-विस्फोट से स्वयं आक्रामक युवक ही घायल

गत १-५-७० को करीब ३.३० बजे शाम को ५-६ नौजवान अचानक गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र, जमशेदपुर के पुस्तकालय में घुस आये। उस समय पुस्तकालय खुला हुआ था और एक आदमी पुस्तकालय में पढ़ रहा था। श्री रामधनी सिंह, सहायक कार्यकर्ता, जो पुस्तकालय के चार्ज में हैं, 'बाथरूम' गये हुए थे। उन नौजवानों में से दो भीतर गये, और बाकी बरामदे में ही खड़े रहे, ऐसा श्री दुबेजी ने, जो उस समय पढ़ रहे थे, बताया। भीतर जानेवालों में से एक ने उसी क्षण सामने टँगे गांधीजी के चित्र पर पत्थर फेंका, और दूसरे ने कोई चीज जमीन पर पटकी, जो शायद हथगोले-जैसी कोई चीज थी। आवाज भी बम जैसी हुई। इसके बाद वे लोग भाग निकले। भागते हुए लोगों को श्री रामधनीजी ने देखा, जो अब बाथरूम से निकल आये थे। पूरा मकान धुएँ से भर गया, जिसमें बारूद की गंध आ रही थी। श्री रामधनीजी ने पुलिस को सूचना दी, और पुलिसवाले शीघ्र ही केन्द्र पर आये। थोड़ी देर बाद डिप्टी-कमिश्नर, सिंहभूम; एस० पी० जमशेदपुर; एस० डी० ओ०, धालभूम और अन्य पदाधिकारी घटना-स्थल पहुँचे। धुआँ कम होने पर पाया गया सभी आलमारियों के शीशे टूटे हुए हैं, प्र दीवाल पर कई जगह धब्बे दिखाई पड़ हैं। बाहर कुछ खून भी टपका हुआ था पुलिस-अधिकारियों ने अनुमान लगाया सम्भवतः बम फेंकनेवालों के हाथ में ही बम फूट गया है। करीब दस बजे रात क पुलिसवालों ने अभियुक्तों को खोज निकाला एक दो घंटों के बाद ही उनमें से तीन को पकड़ने में वे लोग सफल भी हुए। पकड़े हुए अभियुक्तों में एक बुरी तरह जख्मी हैं। पुलिस की छानबीन जारी है। दो पुलिस केन्द्र पर बैठा दिये गये हैं।

—अयूब खाँ,

संगठक

सारण जिले में पुष्टि-कार्य

सारण जिले के कार्यकर्ताओं की एक बैठक २० अप्रैल को बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के मंत्री श्री विद्यासागरजी की उपस्थिति में सम्पन्न हुई। बैठक म यह निश्चय किया गया कि पुष्टि-कार्य किसी एक प्रखण्ड में ही शुरू करना चाहिए। इसके अनुसार पहले मांझी प्रखण्ड में पुष्टि-कार्य का सघन अभियान चलाया जायेगा। यहाँ तत्काल कार्य शुरू हो सके इसके लिए श्री जलेश्वर दुबे ने ५ मन अनाज देने की घोषणा की। इसके बाद क्रमशः सिसवन और भोरे प्रखण्ड को लिया जायेगा।

ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह की चर्चा में यह निश्चय किया गया कि बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के निर्णयानुसार सर्वोदय-मित्र और सर्वोदय-सहयोगी बनाने पर पूर्ण ध्यान दिया जाय।

गाँव-गाँव में 'भूदान-यज्ञ' और 'गाँव की आवाज' को पहुँचाने की चर्चा हुई और इसके अनुसार ताजपुर, सिवान, महराजगंज, एकमा और भोरे में एजेंसी शुरू करने का निश्चय हुआ।

दो जिलादान-समारोह : भविष्य के संकेत

गत ३ और ४ मई को उत्तरप्रदेश के दो जिलों—आजमगढ़ और फैजाबाद—के जिलादान समारोह भी जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में सम्पन्न हुए।

आमतौर जैसा कि ऐसे अवसरों पर होता है, नगर के कुछ प्रमुख लोग, थोड़े-से कार्यकर्ता और गिने-चुने गाँव के लोग, जो शहर में आते रहते हैं, सभाओं में आये। किसीके मन में कोई जिज्ञासा थी, तो किसीके मन में जे० पी० के व्यक्तित्व का आकर्षण। लेकिन जिलादान के संकल्प की स्फूर्ति और प्रेरणा लोगों में कोई देखना चाहता, तो उसे ऐसे चेहरों की बारीकी से तलाश करनी पड़ती। यही स्थिति करीब-करीब दोनों समारोहों में थी। लगभग यही स्थिति प्रायः हर जगह रहती है।

आजमगढ़ में पहुँचते ही रोटरी क्लब की सभा में जे० पी० बोले, तीसरे पहर आचार्यकुल की बैठक हुई, और शाम को जिलादान-समर्पण समारोह। ग्रामस्वराज्य की सामूहिक घोषणा का संकल्प पत्र पढ़ा जाने लगा तो 'ग्रामदानी प्रतिनिधियों' की अत्यल्प संख्या के कारण सभा में आये हर व्यक्ति से खड़ा होकर संकल्प दुहराने के लिए कहना पड़ा। फैजाबाद में रोटरी क्लब की जगह एक कॉलेज में छात्रों के श्रमदान से बने 'गांधी-साहित्य मन्दिर' का उद्घाटन-कार्यक्रम था। आचार्यकुल की बैठक यहाँ भी थी। और ग्रामसभा का जो स्वरूप वहाँ दिखाई दिया था, उसमें कोई भिन्नता यहाँ की सभा में नहीं थी। केवल यहाँ की सभा में करीब १ घण्टा जे० पी० के भाषण से पूर्व आचार्य राममूर्तिजी के साथ श्रोताओं का प्रश्नोत्तर-कार्यक्रम चला।

दोनों में से कहीं जिलादान के बाद की व्यूहरचना के लिए कोई कार्यकर्ता-सभा नहीं हो सकी। आश्चर्य तो यह कि इस कार्यक्रम का अभाव भी शायद ही किसी कार्यकर्ता ने महसूस किया हो। एक क्रान्तिकारी संकल्प, एक क्रान्तिकारी व्यक्तित्व की उपस्थिति में, जहाँ तक पहुँचे, वहाँ से आगे चलने का संकल्प-समारोह, और वैसे समारोह का वातावरण किसी स्कूल के वार्षिकोत्सव जैसा!

जे० पी० की अतिनम्रता और हमारी ढिलाई के कारण अनावश्यक कार्यक्रमों का बोझ, अनिवार्य कार्यक्रमों का टलना, यह सब देखकर अत्यन्त वेदना होती है। जे० पी० ने एक भाषण में खुद संकेत किया कि एक शहर में एकसाथ कई-कई कार्यक्रम रख देने से ग्रामसभा पर उसका असर पड़ता है। फैजाबाद की सभा में भाषण के अन्त में जे० पी० को यहाँ तक कहना पड़ा, "काफी लोग चले गये। देर भी हो गयी। सर्वोदयवाले भी चले गये, दीखता है। उनको तो ऐसे विचार समझने की जरूरत ही नहीं है सब समझे हुए हैं। मैं तो कहता हूँ कि आप जितना विचार गाँवों में समझाते हैं, वह पर्याप्त नहीं है, आपको और अपनी जानकारी बढ़ानी चाहिए। लेकिन ।" जे० पी० को सभामंच से यह कहना पड़े तो क्या यह टिप्पणी गलत होगी कि विचार का आन्दोलन विचार-निरपेक्षता की दिशा में बढ़ रहा है।' शायद इसीलिए हम जे० पी० के व्यक्तित्व को समारोह की शोभा बढ़ाने के लिए इस्तेमाल करने लगते हैं, और इस प्रकार उनकी क्रान्तिकारी प्रेरणाओं को समारोहों की माहौल में गौण बना देते हैं।

"जिस तरह मूषकवाहनवाले गणेशजी पृथ्वी की परिक्रमा करने की जगह माँ बाप की परिक्रमा करते रहे, उसी तरह ये सर्वोदयवाले क्रान्ति के अपने सपने के चारों तरफ चक्कर लगाते रहते हैं। ग्रामदान प्रखण्डदान जिलादान प्रदेशदान आदि सब कुछ ये अपने आप कर डालते हैं, इनके लिए गाँव, प्रखण्ड, जिला और प्रदेश के नागरिक कोई अर्थ नहीं रखते।" आजमगढ़ जिलादान समारोह के अवसर पर शामियाने की तपन से ऊबकर पेड़ की छाया में बैठे कुछ लोगों की यह आपसी चर्चा थोड़ी ही दूर पर खड़े होकर मैंने सुनी थी। अक्सर ऐसे आयोजनों में लोगों की प्रतिक्रियाओं का, सहज अभिव्यक्तियों का अध्ययन करने के लिए मैं इस प्रकार की चर्चाओं को थोड़ी दूर से खड़ा होकर सुननेकी कोशिश करता हूँ।

ऐसा नहीं कि ऐसी आलोचना पहली बार सुनने को मिली थी, लेकिन समारोह में शामिल होनेवाले स्थानीय लोगों की संख्या और उनके चेहरे के भावों ने भी इस→

बिहार के एक कार्यकर्ता की साथियों के नाम खुली चिट्ठी

मित्रो,

पीरो खादी-भण्डार के व्यवस्था भार से मैंने मुक्ति पा ली। शायद आपको आश्चर्य हुआ होगा कि आखिर मैंने यह कदम क्यों उठाया? तो मित्रो, मैं निवेदन करूँ कि मेरा यह कदम कोई पलायनवादी नहीं, बल्कि खादी-आन्दोलन और ग्राम स्वराज्य की दिशा में काफी सोच समझकर लगाया हुआ एक छलाँग है, हनुमान-कूद जैसा।

आज देश में सर्वत्र जिस प्रकार की विस्फोटक स्थिति का निर्माण हो रहा है-उसे लक्ष्य कर सर्व सेवा-संघ की प्रबन्ध समिति के सदस्यों के साथ हुई चर्चा में विनोबाजी ने कहा, 'मैंने अक्तूबर में बिहार छोड़ा। अक्तूबर, नवम्बर, दिसम्बर, जनवरी, फरवरी, कुल पाँच महीने बीत चुके, और अब छठा चल रहा है। इतने महीनों में कितना काम हुआ? बीघा कट्ठा में कितनी जमीन बँटी? कितनी ग्रामसभाएँ बनी हैं? देखो, चारों ओर बेहद विस्फोटक स्थिति है। अगर इस साल के खतम होते होते हम कुछ न कर सके तो फिर खुदा हाफिज।"

तो मित्रो, मैं आशा करता हूँ कि आप सभी विनोबाजी की उपरोक्त व्यथा और चेतावनी को समझेंगे। क्या मैं आशा करूँ कि आप सभी साथी अपने अपने क्षेत्रों में आन्दोलन की सफलता हेतु मुस्तैदी से लग जायेंगे? मैं तो निकल पड़ा, अब आगे खुदा हाफिज।

आप सबका,
रामवृक्ष

शान्ति-केन्द्र, पीरो, शाहाबाद (बिहार)

अब कागजवाला प्रयोग दूसरा न हो

अभी अनुभव ऐसा है कि जब हम बहुत ज्यादा घूमते थे, तो जितना काम होता था उससे ज्यादा काम हुआ, जब हमने एक-एक जगह बैठना शुरू किया। अब तीसरा अनुभव है कि एक ही जगह पर बैठकर खूब काम हो। अभी कपिल भाई आये थे। उन्होंने कहा कि इस साल पूरा उत्तरप्रदेश करना है। हमने उनसे कहा कि, 'आपके प्रान्त में राम हो गये, कृष्ण हो गये। वह युक्त प्रदेश है। दोनों का जोड़ है तो आपको किस चीज की कमी है।' उन्होंने कहा कि, 'खादीवाले थोड़ी ताकत लगाते हैं, ज्यादा ताकत शिक्षक लगा रहे हैं।' तमिलनाडु में तो मेरा ख्याल है कि हर गाँव के कार्यकर्ता काम कर सकते हैं। वह जागृत प्रदेश है। एक-एक गाँव में एक-एक मंदिर है। भक्ति की विशेष भूमिका है। अभी बिहार में जो है वह कागज पर है, प्रामिसरी नोट है। तमिलनाडु में तो प्रामिसरी नोट अमल में आना चाहिए, मतलब पुष्टि जल्दी होनी चाहिए। एक जगह हमने कागज का प्रयोग किया, अब कागजवाला प्रयोग दूसरा न हो।

—विनोबा

ता० ८-४-'७०, गोपुरी, वर्धा

...फीकापन की ओर बढ़ाया। 'ऐसा भी क्या जिलादान, जिसके समारोह में उसकी स्फूर्ति का लोक-जीवन में कोई लक्षण ही न दिखाई दे?' दो-चार जगहों की इन उपचर्चाओं को सुनने के बाद मुझे इन समारोहों की कार्यकर्ता केन्द्रित थोड़ी-सी चहल पहल के बावजूद एक-दूसरे पहलू पर भी सोचने के लिए मजबूर होना पड़ा।

ग्रामदान के आँकड़े पूरे हो गये और आँकड़ों के अनुसार जिलादान की शर्तें भी पूरी हो चुकी हैं, इसमें कोई शक नहीं। इन आँकड़ों की पूर्ति में कार्यकर्ताओं ने जो कठिन श्रम किया वह निश्चय ही अभिनन्दनीय है, लेकिन यह तो क्रांति की एक महायात्रा के शुभारम्भ की पूर्वतैयारी भर ही है न? तो, ऐसे शुभारम्भ में इन अशुभ लक्षणों को नजरअन्दाज कैसे किया जा सकता है? ऐसा लगता है कि इन लक्षणों के संकेत को समझना अब आन्दोलन के लिए बहुत ही नाजुक सवाल हो गया है, लेकिन इसे टालना आन्दोलन के भविष्य को दूर ढकेलने जैसा भी लगता है।

चिन्तन का सबसे महत्त्व का पहलू यह है कि आन्दोलन की मुख्य शक्ति का जो आधार है, वह सम्पूर्ण रूप से आन्दोलन का नहीं है। पूरक शक्ति मुख्य शक्ति से जुड़कर उपयोगी होती है, लेकिन पूरक शक्ति को ही हम मुख्य शक्ति मान लें, जैसा कि दिखाई दे रहा है, तो वह शक्ति आन्दोलन को सम्भालने में असमर्थ होगी। और मुख्य शक्ति अब बढ़ती हुई संख्या (ग्रामदानों की) में से उभरती दिखाई नहीं देती। और हमें ऐसी अपेक्षा करनी भी नहीं चाहिए। किसी भी आन्दोलन में उसकी व्यूह रचना अत्यन्त महत्त्व की चीज होती है, जिसकी ओर हमें अब ध्यान देना चाहिए। बिहारदान की घोषणा तक तो ग्रामदानों की बढ़ती संख्या ने प्रेरणा का संचार किया, लेकिन अब उसके बाद की स्थिति में, विचार को आमतौर पर देश के मानस और वातावरण में प्रतिष्ठित करने के बाद, अब हमें वही सिलसिला दुहराते चलने की जगह उसके साथ आन्दोलन के शक्ति-केन्द्र बनाने की बात पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। इसके लिए ग्रामदान के मूल्यों को लोक-सम्मति से आगे समर्थन और मान्यता में उतारने की सक्रिय और सघन चेष्टा होनी चाहिए। यह कैसे हो, यह आन्दोलन का इस वक्त मुख्य सवाल है, और हम सबका ध्यान इस ओर जाना चाहिए।

—रामचन्द्र राही

भीलवाड़ा सर्वोदय-मण्डल की बैठक

दिनांक २७-४-७० को भीलवाड़ा जिला सर्वोदय-मण्डल की बैठक मण्डल के अध्यक्ष श्री केसरपुरी गोस्वामी की अध्यक्षता में हुई, जिसमें ग्राम-स्वराज्य-कोष के लिए ३१,००० रु० एकत्र करने का निर्णय लिया गया।

जिले में मई-जून महीने में ग्रामदान-अभियान चलाने का भी निर्णय हुआ।

झुंझुनूं जिले के कार्यकर्ताओं की सभा

गत २८ अप्रैल '७० को राजस्थान खादी संघ के अध्यक्ष श्री पूर्णचन्द्र जैन तथा मंत्री श्री रामेश्वर अग्रवाल की उपस्थिति में खादी तथा सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की एक सभा हुई।

सभा में निश्चय किया गया कि २०-२१ मई की लक्ष्मणगढ़-अभियान में अधिकाधिक साथियों को शामिल किया जाय, तथा ग्राम-स्वराज्य-कोष में २५ हजार रुपये एकत्र करने का प्रयत्न किया जाय। कोष-संग्रह के लिए एक अर्थ संग्रह समिति का गठन भी किया गया।

श्री सुरेशराम भाई को पितृ-शोक

श्री सुरेशराम भाई के पिता श्री केदारशरनजी का ३० अप्रैल '७० की सुबह १० बजे देहान्त हो गया। उनकी अवस्था ७८ वर्ष की थी। हम अपने साथी श्री सुरेशराम भाई के इस दुख में समवेदना व्यक्त करते हैं।

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु० या २५ शिलिंग या ३ डालर। इस प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ३३

सोमवार १८ मई, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४२९१

गांधी का विरोध : नादानी का इजहार

आजकल नक्सलवादियों की ओर से गांधी का विरोध खूब किया जा रहा है। शायद उन्होंने यह समझा है कि आज गांधी-विचार से खतरा है। आदमी तो वह नहीं है, लेकिन कागज पर उसके जो विचार लिखे हुए हैं, उनसे इनको खतरा है। मुझे तो बड़ी आशा होती है, और बड़ा भरोसा होता है, बड़ा बल मिलता है इस बात से। दुनिया में धर्म के नाम पर, सत्ता के नाम पर, धन के नाम पर, सत्य को मिटाने के बहुत प्रयत्न हुए, सत्य के शोधकों को मिटाने के बहुत प्रयत्न हुए।

माओवादी हैं तो भारतीय, लेकिन इस प्रकार के उनके नारे, उनके पर्चे हैं 'माओ जो चीन का चेयरमैन है हमारा भी चेयरमैन है।' इसलिए कह रहा हूँ—उस माओ साहब के देश में विचार-स्वातंत्र्य नहीं है। माओ के विचार 'लाल किताब' में छपकर लाखों-करोड़ों के हाथों में हैं, और जिस तरह से माला जपते हैं कर्मकाण्डी वैसे ही जपते हैं ये लोग माओ के मंत्र। लेकिन दूसरे मंत्र, दूसरे विचार माओ के देश में जा नहीं सकते हैं। माओ के विचारों का कोई खण्डन करना चाहे तो नहीं कर सकता है। यहाँ (भारत में) तो खण्डन भी होता है, और आग भी लगायी जाती है, तोड़ फोड़ आदि सब की जाती है।

सत्य के जो विचार हैं, सत्यशोधकों के जो काम हैं, उनके जो प्रयोग हैं, उनको मिटाने का चाहे जितना भी प्रयत्न हो, वे कभी मिट नहीं सकते। उनके अन्दर जो शक्ति छिपी हुई है, मानव-समाज के लिए और मानव-भविष्य के लिए, वह शक्ति इससे घटती नहीं; बल्कि बढ़ती है। इस विरोध से देश में गांधी-विचार की शक्ति बढ़ेगी। हममें से कुछ लोग शिकार हो जायँ माओवादियों को, उनके गोलियों के, तो हमारी शक्ति बढ़ेगी ही।

दूसरी बात यह कि जो माओपंथी लोग हैं, उनकी जमात बहुत थोड़ी है। परन्तु ऐसा लगता है कि ये लोग बहुत नादान हैं। बहुत मूर्ख हैं ऐसा भी कहा जाय तो बहुत अतिशयोक्ति नहीं होगी। क्योंकि ऐसी मूर्खता है उनको—किताबों में आग लगाने से यह विचार मिट जायेगा।

जिन विचारों को लेकर वे काम कर रहे हैं, बड़े छिछले विचार हैं वे, हलके विचार हैं, उनमें गहराई नहीं है। पुस्तकालयों में आग लगा देने से दुनिया से अहिंसा समाप्त हो जायगी ? गांधी को गोली से उड़ा दिया ईसा मसीह को सूली पर चढ़ा दिया गया, तो क्या हुआ ? अहिंसा का विचार मिट गया इस पृथ्वी पर से ? इतिहास पुकार-पुकार कह रहा है कि ये लोग तो बहुत बेवकूफ लोग थे।

—जयप्रकाश नारायण

पंजाबार, ४-५-'७०

हमारा आन्दोलन : कुछ समस्याएँ और संभावनाएँ—२

समस्या का माध्यम

हमारी स्थिति और समाज की परिस्थिति के बीच जो फासला है वही हमारे आन्दोलन का सबसे बड़ा संकट है। भूख और चेतना के संयोग से क्रान्ति का जन्म होता है। जब मनुष्य वर्तमान के भयों को छोड़कर भविष्य की आशा से प्रेरित होता है तो समाज क्रान्ति की दिशा में कदम बढ़ाता है।

पिछले वर्षों में हम भूदान से राज्यदान तक पहुँचे हैं। हमने तूफान से आगे बढ़कर प्रति तूफान का उद्घोष किया है। हमारा 'ग्रामस्वराज्य' अब मात्र स्वप्न या दर्शन नहीं है, बल्कि एक स्पष्ट कार्यक्रम और योजना बन गया है। इतना सारा काम हमने किया है, लेकिन स्वयं समाज कहाँ है? क्या हमारा विचार सामाजिक शक्ति बन सका है? वह सामाजिक माध्यम (इन्स्ट्रुमेन्ट) कहाँ है जिसके द्वारा हम समाज में प्रति-तूफान (अपसर्ज) पैदा करना चाहते हैं? प्रति-तूफान का अर्थ यह है कि गाँव-गाँव ग्रामस्वराज्य, यानी मुक्ति, की घोषणा करने के लिए खड़ा हो जाय, और अपनी सामूहिक शक्ति से क्रान्ति के रास्ते पर चल पड़े। क्या उसके लक्षण कहीं दीख पड़ रहे हैं? उलटे दिखाई तो यह दे रहा है कि जिन संस्थाओं को धन-जन की सहायता से हम राज्यदान तक पहुँचे हैं उनकी कठिनाई आन्दोलन की मजबूरी बन गयी है। हर मौके पर यही स्थिति सामने आती है कि आन्दोलन वहीं तक जा सकता है जहाँ तक संस्थाएँ उसे ले जायेंगी। क्या हमने मान लिया कि संस्थाओं की तैयारी ही आन्दोलन की शक्ति है? और आन्दोलन का वह नेतृत्व कहाँ है जो अयोध्या छोड़कर बनवास में १४ वर्ष क्या १४ दिन भी बिताने को तैयार हो, या 'अकेला चलो रे' कहकर किसी ओर चल पड़े? क्रान्ति एक अर्थ में अज्ञात की साधना होती है। उस साधना के साधक कहाँ हैं?

हम कुछ भी कहें, जो जी चाहे मानें, और जैसी चाहें व्याख्या करें, हम इस बात से आँख नहीं मूँद सकते कि हमारा आन्दोलन अभी समाज को आन्दोलित नहीं कर सका है। समाज हमारे आन्दोलन से विमुख नहीं है, लेकिन अभिमुख भी नहीं है। हमारी जो बातें उसे अच्छी लगती हैं उन पर उसे भरोसा नहीं हो पाता। हमारी बातों के बल पर वह वर्तमान के भय छोड़कर भविष्य की आशा मन में नहीं बसा पा रहा है। हम जानते हैं कि इस देश की जनता के सामने ग्रामस्वराज्य के सिवाय दूसरा विकल्प नहीं है, लेकिन हमारा मुक्तिदायी विकल्प जनता का संकल्प क्यों नहीं बनता?

हमारे सामने बिहार का राज्यदान है। हम देख रहे हैं कि बीघा-कट्ठा की गाँठ खुले बिना राज्यदान की गाड़ी आगे नहीं बढ़ेगी। लेकिन वह गाँठ कैसे खुले, यह हम अभी तक नहीं समझ सके हैं। पिछले १९ वर्षों में हमने वितरण के रूप में जो 'सत्याग्रह' किया वह समाप्त हुआ। पूर्व-सत्याग्रह के बाद उत्तर-सत्याग्रह का क्या स्वरूप होगा, यह हम अभी नहीं तय कर पा रहे हैं। हम जानते हैं कि यही हमारी समस्या है, और यही संभावना भी है। समस्या और संभावना के बीच में संकट है। बिहार ही हमारे आन्दोलन का धर्मक्षेत्र है, कुरुक्षेत्र है।

दूसरे राज्यों में आन्दोलन के मित्र समझते हैं, और कि हद तक ठीक समझते हैं, कि वे अभी प्राप्ति का काम कर रहे हैं। लेकिन क्या वे कभी इकट्ठा बैठकर यह भी सोचते हैं कि प्राप्ति किस चीज की कर रहे हैं? बिहार में आन्दोलन के विकास का एक स्टेज था जिसमें हमने कागज बटोरा, लेकिन क्या दूसरे राज्यों में भी वही स्टेज है? क्या हम यही मानते हैं कि बारी-बारी से हर राज्य में बिहार की डू-कापी निकल आये तो भारतदान पूरा हो जायगा?

क्रान्तियों के इतिहास में जितना स्थान 'सत्य' का है उससे कम 'भ्रम' का नहीं है। भ्रम और धोखा में अन्तर है। दूसरे जिसे भ्रम कहते हैं वह क्रान्तिकारी की आशा होती है जिसमें उसकी आस्था छिपी रहती है, जिसके लिए वह जीता है, मरता है। ईसा का 'ईश्वर का राज्य निकट है', मार्क्स का 'मुक्त मानवों का मुक्त भाईचारा', या गांधी का 'एक वर्ष में स्वराज' आदि कोई भी आज तक सत्य नहीं सिद्ध हुए हैं, लेकिन इन भ्रमों में जरूर कोई शक्ति है कि मनुष्य ने इन्हें छोड़ा नहीं है, और कभी छोड़ेगा भी नहीं।

क्या कारण है कि हमारे साथियों में बिहार के अनुभव से सीखने की वह तत्परता क्यों नहीं दिखाई देती जो दिखाई देनी चाहिए? क्या हम जान-बूझकर धोखे में पड़े रहना चाहते हैं? हम उन प्रश्नों की चुनौती को क्यों नहीं स्वीकार करते जो वहाँ सामने आये हैं और बारी-बारी हर राज्य में सामने आयेंगे?

जनता सर्वोदय की ताकत और शक्ति देखना चाहती है। वह चाहती है कि उस विचार का प्रयोग उसकी समस्याओं के अनुबन्ध में किया जाय, और उसमें से शक्ति निकाली जाय, ताकि वह उन तमाम भयों से मुक्त हो सके जिनसे वह घिरी हुई है। उसकी यह माँग अनुचित नहीं है। यह माँग कैसे पूरी होगी, अगर हम उन क्षेत्रों को छोड़ते जायेंगे जिनमें जिलादान हो चुके हैं? इतना ही नहीं, हमें ग्रामदान-प्राप्ति के तरीकों में भी परिवर्तन करना चाहिए। हमें मान लेना चाहिए कि भावना के स्पर्श से जितना काम हो सकता था हो चुका। निष्ठा का प्रभाव जितना पैदा हो सकता था पैदा हो चुका। अब भावना और निष्ठा से आगे बढ़कर समस्या को हाथ में लेने का समय है। जब हम ठोस समस्या को हाथ में लेंगे तब पता चलेगा कि सचमुच हम कहाँ हैं। इसलिए जरूरत इस बात की है कि हमारा सारा चिंतन और सारी पद्धति समस्या-मूलक हो। समस्या का माध्यम ही हमें लोक-हृदय तक पहुँचायेगा।●

प्रश्नोत्तर

सेवक के गुण : सेवा की दिशा

सेवकों का शिक्षण

प्रश्न : दिन-प्रतिदिन निःस्वार्थ, कीर्ति की लालसा व सत्ता का मोह त्यागनेवाले प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की जरूरत महसूस हो रही है, यह कमी कैसे दूर की जाय ?

विनोबा निःस्वार्थ, सत्ता का मोह न रखनेवाले कार्यकर्ताओं की जरूरत हर-एक सद्विचार प्रचार के लिए होती है। जहाँ सद्विचार की प्रेरणा हुई, अक्सर किसी महापुरुष को ऐसी प्रेरणा होती है, वहाँ उसे तुरन्त एक प्रचारक-वर्ग खड़ा करना पड़ा। वैसा प्रचारक-वर्ग महावीर, गौतम बुद्ध, रामानुज, शंकर, इन्होंने खड़ा किया और हमारे नजदीक के जमाने में महाराष्ट्र के सन्त रामदास स्वामी ने किया। उस प्रचारक-वर्ग को आप भिक्षु, श्रमण, सन्यासी, ये नाम दें या आधुनिक भाषा में लोक सेवक नाम दें, लेकिन उसके गुण वही होने चाहिए--स्वार्थ-मुक्त, मोह-मुक्त, सत्ता से दूर। यह आवश्यकता इसी जमाने में पैदा हुई ऐसा नहीं है, अंग्रेजों का राज था तो भी उसकी जरूरत थी। उन दिनों में हमने राष्ट्रीय शालाएँ खड़ी की थीं। वे सरकार से स्वतन्त्र थीं, जनता द्वारा संचालित थीं। ऐसी शालाएँ पूना, साबरमती इत्यादि जगहों पर थीं। रवीन्द्रनाथ का शान्तिनिकेतन भी इसीलिए था। आर्य समाज की ओर से भी काम होता था। इस तरह राष्ट्रीय शिक्षण की संस्थाएँ थीं उनमें से हमें अच्छे कार्यकर्ता मिले। लेकिन स्वराज्य के बाद हमने समझा कि यह सरकार तो हमारी ही है, इसलिए ऐसी संस्थाओं की क्या जरूरत है? यों समझकर सरकार से सब तरह की मदद लेना शुरू किया। पैसा भी सरकार का, परीक्षाएँ भी सरकार की। वे संस्थाएँ आज भी चल रही हैं, लेकिन वे सरकारी काम करती हैं, यानी उनके शिक्षण का 'कोर्स' सरकार का बनाया हुआ रहता है, परीक्षाएँ भी सरकार लेती है और उसमें सेवा की दृष्टि नहीं रहती, नौकरी पाने की दृष्टि रहती है। इसलिए उन संस्थाओं से जो अपेक्षाएँ थीं, वे आज पूरी नहीं हो सकतीं। तो हम सोचना चाहिए कि अगर सामूहिक अहिंसा के विचार के वाहक तैयार करने हैं, तो जनता द्वारा शिक्षण संस्थाएँ चलानी चाहिए।

प्रश्न जैसे बापूजी, जमनालालजी कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करते थे, क्या वैसा कुछ प्रयत्न होना जरूरी है ?

विनोबा गांधीजी, लोकमान्य, डा० एनीबेसेंट, रवीन्द्रनाथ, भगवानदास, स्वामी श्रद्धानन्द, अरविन्द, इन्होंने इसके लिए प्रयत्न किया। ये थोड़े-से नाम हैं। इन लोगों ने कई उत्तम कार्यकर्ता राष्ट्र को दिये। ऐसे विद्यार्थी हमें मिलने चाहिए। मिल भी सकते हैं, बेकारी बढ़ी है तो बेकार विद्यार्थी मिल सकते हैं। लेकिन तालीम देने के लिए भी बेकार लोग मिलने चाहिए। आज विद्वान लोग ज्यादातर सरकारी नौकरी में चले गये हैं, फिर भी ऐसा प्रयत्न तुरन्त शुरू कर देना चाहिए। इस काम के लिए व्यापारी-वर्ग भी पैसा देगा। विद्यार्थियों की कमी नहीं पड़ेगी। पैसे के बिना कोई भी उत्तम काम रुकता नहीं। इसलिए इस प्रकार का प्रयत्न तुरन्त शुरू होना चाहिए, लेकिन वह सर्व सम्प्रदाय मुक्त होना चाहिए, नहीं तो टुकड़े-टुकड़े पड़ेंगे। आज देश में सम्प्रदायों की कमी है। इस्लाम, क्रिश्चियन, वैष्णव, शैव, बौद्ध और जैन। फिर जैनों में भी दिगम्बर, श्वेताम्बर, तेरापंथी, स्थानकवासी, ऐसे सम्प्रदाय हैं, और उनके कोर्ट में मामले चलते हैं, आपस में लड़ते हैं। 'प्रिवी कौंसिल' तक उनके झगड़े जाते हैं। इसलिए सम्प्रदाय से मुक्त होना चाहिए। तो सर्व-सम्प्रदायों की मदद भी मिलेगी। सम्प्रदायों को समझना चाहिए कि नदी की मुक्तता समुद्र में मिलने में है। वैसे सब सम्प्रदायों की मुक्ति सर्वोदय-विचार में मिलने में है।

कार्यकर्ताओं की कमी

प्रश्न : हमारे सेवा-कार्यों में कुशल कार्यकर्ताओं की जो कमी है, वह कैसे दूर हो ?

विनोबा हमारे पास जो कार्यकर्ता आते हैं वे अच्छे हृदयवाले होते हैं, लेकिन बुद्धिवाले कम होते हैं। ज्यादा बुद्धिवाले सरकार में गये हैं। अब यह स्वराज्य की सरकार है। जब अंग्रेज सरकार थी तब भी बुद्धिमान लोग उत्तम से-उत्तम बुद्धि रखनेवाले रानडे, राजा राममोहन राय, बंकिमचन्द्र, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर आदि कई लोग सरकारी नौकरी में थे। यहाँ तक हुआ है कि जिन्होंने कांग्रेस स्थापित की, उनमें से भी कई लोग सरकारी नौकर थे या सरकार से सहयोग करनेवाले थे। वे केवल स्वार्थ के लिए सरकारी नौकरी में नहीं गये थे, बल्कि वे सोचते थे कि अंग्रेजों के कारण अखिल भारतीयता बनेगी। अखिल भारत राज होगा, तो अखिल भारतीयता होगी, ऐसी आशा से वे वहाँ गये थे। परकीय राज्य होते हुए भी सेवा की आशा होती है तो स्वराज्य में तो जरूर सेवा होगी, ऐसा मानते हैं। इसमें आश्चर्य नहीं है, और यह मानना होगा कि सरकार में भी जो सच्चे और प्रामाणिक काम करनेवाले लोग हैं, वे आज भी आपकी सच्ची सेवा करते हैं।

ऐसी हालत में हमारे पास एकाध बुद्ध, ज्यादातर दो नम्बर की बुद्धिवाला और एक नम्बर का हृदयवाला पहुँचता है। इसलिए व्यावहारिक कुशलता की कमी रहती है। वह कैसे बढ़ायी जाय, यह सोचने का विषय है। भारत में व्यवहारकुशलता और भावना का बँटवारा हो गया है। भावना पूर्व में है--बिहार, बंगाल, उड़ीसा, असम, इन प्रान्तों में भावना का जोर है, और पश्चिम में--गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र में व्यवहार-कुशलता अधिक है। ऐसी हालत में आप जैसे व्यवहारकुशल लोग भगवत्कृपा से सद्भावना रखते हैं, उनको हमारे शिविरों में आना चाहिए। सबको की भावना और

भूदान-यज्ञ : सोमवार, १८ मई, '७०

व्यवहारकुशलता, दोनों की आवश्यकता है। आप हमारे शिविरों मे आयें और सिखायें। थोड़ा गणित भी सिखाना चाहिए। सारे भारत मे ही हिसाब नही है। कितना अनाज आया, कितना खर्च हुआ उसका हिसाब नही। किसानो से लेकर कार्यकर्ताओं तक ऐसा है। जीवन मे गणित की अत्यन्त आवश्यकता है। पर कार्यकर्ता तो लोगो मे से ही आते हैं, इसलिए उनके पास हिसाब नही होता है। सेवको मे ये सब गुण आयें, उसके लिए शिविरो का आयोजन किया जाय और उसमें आप जैसे लोग आयें।

मैं जिनके साथ रहा, वे दोनो बनिया थे। एक बनिया थे गांधीजी और दूसरे बनिया थे जमनालालजी। लेकिन सद्भाग्य से हमारे पिताजी वैज्ञानिक और गणितज्ञ थे। तो बाबा को बचपन से गणित मे बहुत रस था। उन दोनो ने देखा कि यह सूक्ष्म गणित मे उतरेगा। एक दफा मैंने, सन् १९२४-२५ की बात है, जमनालालजी से पूछा, "आप मुझे अपनी पेढ़ी पर नौकरी देंगे?" उन्होने कहा, "हाँ देंगे।" मैंने पूछा, "तनख्वाह कितनी देंगे?" वे बोले, "पाँच सौ रुपये तनख्वाह देंगे, और जैसा अनुभव आयेगा वैसा आगे बढ़ाते जायेंगे।" यह तो उस समय की बात है, जब रुपये की कीमत बहुत ज्यादा थी।

मै कहता हूँ कि मुझे गणित का बहुत शौक है। मैं चाहता हूँ कि हर बात मे गणित हो। हर काम गणित से करता हूँ। रात को जाग गया तो पहले अन्दाज करता हूँ कि ११ बजकर १५ मिनट हुए होगे। अगर उसमे दो-चार मिनट की भूल हुई तो मैं अपने को माफ करता हूँ, पास करता हूँ, नही तो नापास करता हूँ। अगर पौने बारह बजे हों, तो अपने को ठपका देता हूँ। निद्रा मे भी जागृति रहनी चाहिए। एक बार मैंने विनोद मे कहा था कि बाबा घड़ी देखे बिना मरेगा भी नही। अगर रास्ते मे ही कहीं ठोकर लगकर मर गया तो अलग बात है, नही तो घड़ी देखूँगा १२ बजकर ७ मिनट हुए हैं, अब मैं मर रहा हूँ। प्राण निकलने मे कितना समय लगा, यह देखूँगा। यह इसलिए कहा कि व्यवहारकुशलता यानी गणित। और गणित से ही काम करना चाहिए। हर कार्यकर्ता को उसका ध्यान रखना चाहिए।

स्वाभिमानी और सशक्त सेवक

प्रश्न : सेवक तेजस्वी तथा स्वाभिमानी, शक्तिसम्पन्न कैसे बनें?

विनोबा : आपने सेवको के लिए प्रश्न पूछा है। तेजस्विता ब्रह्मचर्य से आती है। ब्रह्मचर्य जितना होगा, उतनी तेजस्विता अधिक बढ़ेगी। स्वाभिमान-कर्तृत्व-शक्ति से आता है। अगर कर्तृत्व शक्ति नहीं है तो स्वाभिमान नहीं आता। इस कर्तृत्वशक्ति के लिए उत्तम तालीम होनी चाहिए। अच्छी तालीम की योजना करेंगे, ताकि कार्यकर्ता अपने पाँव पर खड़े हों, स्वावलम्बी बनें। कार्यकर्ता स्वावलम्बी न बनते हुए भिक्षु बनेगा तो स्वाभिमानी नहीं बनेगा। स्वावलम्बी और कर्तृत्ववान नहीं होगा, तो उसे दीन बनना पड़ेगा। वह दूसरे की सहायता की अपेक्षा करेगा, भीख माँगेगा, हीन बनेगा, कमजोर होगा। शंकराचार्य ने कहा है–'अदैन्य-भैक्ष्यमन्नम्', भिक्षु या सन्यासी को भिक्षा का अन्न भी अदैन्य होकर ही ग्रहण करना पड़ेगा। मितव्ययतापूर्वक जीवन-निर्वाह करे तो वह स्वावलम्बी बन सकता है। स्वावलम्बन और कर्तृत्व-शक्ति के बिना स्वाभिमान नही रह सकता।

दुर्जनो के गुण : सज्जनों के दोष

प्रश्न : समाज मे भलो की कमी नहीं है, परन्तु वे मिलकर काम नहीं करते, इसके लिए क्या करना होगा?

विनोबा : जो दुर्जन हैं, उनमे बहुत बड़ा गुण है। वे इकट्ठा होकर काम करते हैं। हमलोग, जो सज्जन माने जाते हैं, वे, एकसाथ करेंगे तो भी हमारी बनेगी नहीं। यह होता है सज्जन में, इसलिए एक सज्जन का दूसरे सज्जन से नहीं बनता। हरएक की अलग-अलग राय होती है। 'एकोचरे खड्ग विषाण'–गेंडे के सींग जैसा अकेला ही चलता है, कोई साथी नहीं। गौतम बुद्ध ने ऐसा अपने भिक्षुओं को कहा है, कि गेंडे का सींग जैसा अकेला होता है, वैसे भिक्षु को अकेला चलना चाहिए। जैनों ने कहा है, श्रमणों को अकेले नहीं घूमना चाहिए, दो या तीन मिलकर घूमना चाहिए, तो एक दूसरे को वे बचा लेते हैं। मिलजुलकर काम नहीं करना यानी मार खाना है। सज्जनों मे सज्जनता तो होती है, इतना ही नहीं, लेकिन सज्जनता का अहंकार भी होता है। इसलिए एक का दूसरे से पटता नही।

सेवा और साधना

प्रश्न : सेवा आत्म-साधना मे सहायक बने, इसलिए क्या करना चाहिए?

विनोबा : आत्मसाधना अन्दर की वस्तु है, सेवा उसका बाह्य रूप है। दोनों बिम्ब प्रतिबिम्ब होने चाहिए। आत्मनिष्ठा प्राप्त किये बिना मनुष्य सेवा करेगा तो वह सेवा नही होगी, असेवा होगी। सेवा के अन्त मे आत्मज्ञान तो होगा ही। लेकिन आरम्भ मे आत्मनिष्ठा होनी चाहिए। आत्मनिष्ठा हो तो सेवा कल्याणकारी होगी। केवल सेवा करने के लालच से ऐसे ही कच्चेपन मे सेवा मे उतरना ठीक नही। तुकाराम ने भगवान से कहा है—'आलीया दर्शन करीन मी सेवा।' हे भगवन्, तुम्हारा दर्शन होगा, तभी मै सेवा कर सकूँगा, नही तो सेवा के नाम से कुछ-का-कुछ कर डालूँगा। वैसे हमारा निश्चय होना चाहिए कि पहले आत्मनिष्ठा मजबूत हो जाय, फिर हम सेवा करेंगे। आत्मनिष्ठा परमेश्वर की कृपा से आती है। परमेश्वर एक बाजू अनेक अज्ञानियों को जन्म देता है, और साथ साथ अनेक ज्ञानियो को जन्म देता है। दोनों की गाँठ होती है। इसीलिए सत्संगति की योजना होनी चाहिए। छोटे-छोटे शिविर हों, दो-तीन शिक्षक और दस-बारह विद्यार्थी। शिविर यानी सत्संग, इसकी योजना हो। उसमे जो दाखिल होंगे, उन्हे आत्मनिष्ठा का स्पर्श होगा।

प्रश्न : क्या परमार्थ या सेवा-कार्यों मे व्यावहारिकता आवश्यक है?

विनोबा : ऐसा सवाल पूछा कि लाख रुपयों में हजार रुपये आवश्यक हैं। दोनों→

महात्मा गांधी : योगी या सरदार

• आर्थर कोसलर

[गांधी जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में दुनिया के अनेक देशों में गांधीजी के विचारों को तथा उनके जीवन और समाज-दर्शन को समझने की कोशिश हुई। उसी क्रम में जाने-माने विचारक और 'डार्कनेस ऐट नून' के लेखक आर्थर कोसलर का एक लेख लंदन के 'टाइम्स' पत्र में छपा। उसे इस देश की अंग्रेजी पत्रिका 'इम्प्रिण्ट' ने दिसम्बर सन् १९६९ के अंक में प्रकाशित किया। कोसलर ने गांधीजी के विचारों की डटकर आलोचना की है। दादा कृपालानी ने उतना ही डटकर सिद्ध किया है कि कोसलर की आलोचना कितनी हलकी और सतही है। हम दोनों लेखों को सार रूप में छापेंगे, ताकि हमारे साथी और पाठक तटस्थ बुद्धि से गांधी विचार को सत्य की कसौटी पर कस सकें। गांधी की गांधी-भक्तों से यही मांग थी कि वे गांधी के लिए सत्य को न छोड़ें। सत्य छूटा तो गांधी छूटा।

इस अंक में कोसलर के लेख का सारांश प्रकाशित कर रहे हैं। अगले अंक में दादा कृपालानी का लेख प्रकाशित करेंगे। —सं०]

१. चरखा और खादी

खादी आश्रमवासियों और कांग्रेस के निष्ठावान सदस्यों के लिए श्रद्धा और सिद्धान्त का विषय जरूर बनी लेकिन जिन करोड़ों देहवासियों के लिए उसका जन्म हुआ था उनके लिए वह कुछ नहीं थी। भूख-दुखी ग्रामीण जनता के सामने चरखे को यह कहकर प्रस्तुत किया गया था कि उससे समृद्धि आयगी, लेकिन इस काम में खादी पूरी तरह विफल हुई। पहले से ही मालूम था कि वह फेल होगी। चरखे को राष्ट्रीय झंडे पर तो जगह मिल गयी, लेकिन किसानों की झोपड़ियों में नहीं मिली।

गांधी को गरीबी में रखने के लिए बहुत पैसा लगता था, बहुत आदर्शवाद और शक्ति लगती थी। खादी को एक निर्दोष नासमझी मानकर छोड़ देना संभव नहीं है। गांधी की नजर में चरखा आर्थिक संकट की औषधि था, और मुक्ति का साधन। इतना ही नहीं, चरखा गांधी के दर्शन और सामाजिक कार्यक्रम का केन्द्र बिन्दु था।

२. पाश्चात्य सभ्यता

गांधी ने पाश्चात्य सभ्यता को उसके सभी पहलुओं में अस्वीकार किया। उनकी अस्वीकृति भावुकता से भरी हुई थी, और उसके लिए वह ऐसे तर्क देते थे जो वाहियात माने जा सकते थे। उनकी दृष्टि में पश्चिम की सबसे बड़ी बुराइयां थीं—रेलें, अस्पताल और वकील। वह मानते थे कि ये चीजें ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध हैं क्योंकि इनके कारण मनुष्य प्रेम और प्रकृति से दूर जाता है।

उन्होंने अपनी पुस्तक 'हिन्द स्वराज' (या इण्डियन होम रूल) में जो तर्क दिये हैं वे अगर मान लिये जायें तो भारत में सरकार को जो रेलें हैं वे निन्दा का विषय बन जायेंगी। केवल रेलें नहीं, बल्कि गांधी की प्रिय पुस्तक भगवद्गीता भी निन्दित होगी। गीता का नायक अर्जुन रथ चलाता है जिसमें स्वयं कृष्ण बैठे हुए हैं। यह ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध है, क्योंकि गांधी के अनुसार ईश्वर की इच्छा यह है कि मनुष्य वहीं तक जाय जहाँ तक उसके पैर उसे ले जा सकते हैं, जब कि गांधी स्वयं अपनी जिन्दगी में रेलों में ही दौड़-धूप करते रहे, क्योंकि नेता की हैसियत से वह चाहते थे, कि जनता के सम्पर्क में अधिक से अधिक रहें। सचमुच गांधी का जीवन विरोधाभासों से भरा हुआ है। प्रकृति के पास वापस जाने का उनका हर विचार थोथा और दुर्भाग्यपूर्ण था। जब वह कांग्रेस के प्रेसिडेण्ट थे उस वक्त भी वह थर्ड क्लास में ही चलते थे, यद्यपि उनके लिए थर्ड क्लास का एक डिब्बा रिजर्व कर दिया जाता था।

गांधी वकीलों के भी उतने ही खिलाफ थे जितने रेलों के। वह मानते थे कि अपने झगड़े को किसी दूसरे व्यक्ति के या अदालत के सामने ले जाना मनुष्यता की प्रतिष्ठा के विरुद्ध था। उनकी नजर में सबसे अच्छा यही था कि न्याय-अन्याय समझकर लोग अपने झगड़े अपने आप तय कर लें।

गांधी समझौते की कला में निपुण थे। अंग्रेजों से उन्होंने जो समझौता किया उसमें उनके व्यक्तित्व का प्रभाव भी था, और कानूनी होशियारी भी।

गांधी आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र को भी नहीं मानते थे। वह कहते थे कि अस्पताल पाप के साधन हैं। इनके कारण लोग अपने शरीर की कम देख-भाल करते हैं, और अनैतिकता बढ़ती है।

जीवन भर उन्होंने अपने विश्वास के अनुसार प्राकृतिक चिकित्सा, आयुर्वेद, निरामिष भोजन और फलाहार आदि के प्रयोग किये। लेकिन जब-जब उन्हें पिस्तुला, अपेन्डिसाइटिस, मलेरिया, हुकवर्म, पेचिश, रक्तचाप आदि के रोग हुए, उन्होंने पहले उपचार के अपने ही प्रयोग किये, लेकिन हर वक्त उन्हें बाद को आधुनिक उपचार ही करना पड़ा। वह अपने सिद्धान्त पर टिके नहीं रह सके। वे सिद्धान्त ही ऐसे थे कि असफलता अनिवार्य थी।

अस्पताल की तरह वह स्कूल और 'बौद्धिक शिक्षा' को भी नापसंद करते थे। वह मानते थे कि अंग्रेजी शिक्षा ने भारतीय को अनीति और मक्कारी सिखायी है।

→का विरोध नहीं है। लेकिन हजार में लाख नहीं होते। हमारा कार्यकर्ता सेवक उत्तम व्यवहारकुशल होना ही चाहिए। इसलिए हम आशा करते हैं कि आप कुछ व्यवहार कर चुके हैं, उससे कुछ पुख्ता हो गये हैं, तो आपके जैसे लोगों को हम कहते हैं कि—'यही है मस्तों का मयखाना, इसीके बीच आ जाना।'

[श्री शिवदास राका से हुई चर्चा, २८ मार्च '७० : गोपुरी, वर्धा]

गांधी ने अपने बच्चों को कभी स्कूल नहीं भेजा। अंग्रेजी शिक्षा के कट्टर विरोधी होते हुए भी उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा-प्राप्त जवाहरलाल नेहरू को अपना उत्तराधिकारी बनाया। अगर पाश्चात्य सभ्यता जहर थी तो जो सबसे बड़ा जहर देनेवाला था उसे ही गांधी ने अपनी गद्दी पर बिठाया।

३. सत्याग्रह और ब्रह्मचर्य

तीस-पैंतीस साल से गांधी के मन में सत्याग्रह और ब्रह्मचर्य की धुन थी। ३७ साल की आयु में उन्होंने ब्रह्मचर्य का व्रत लिया, और उसी साल उनका पहला अहिंसक आन्दोलन हुआ। ब्रह्मचर्य के मामले में वह इतने कट्टर थे कि वह अपने लड़कों से, तथा दूसरों से भी, यही अपेक्षा रखते थे। जब उनका लड़का हरिलाल १८ साल की उम्र में शादी करना चाहता था तो उन्होंने मना किया। ३० साल की उम्र में पहली पत्नी के मरने पर जब उसने शादी करने की कोशिश की तो फिर उन्होंने मना किया। तभी से हरिलाल का पतन शुरू हुआ।

हरिलाल को कई दृष्टियों से असाधारण कहा जा सकता है, लेकिन मणिलाल के साथ कोई खास बात नहीं थी। गांधी ने उनके साथ भी अमानुषिक व्यवहार किया। २० साल की आयु में मणिलाल का किसी स्त्री से सम्बन्ध हो गया। वह उसका पहला सम्बन्ध था। जब गांधी को यह मालूम हुआ तो उन्होंने प्रायश्चित का उपवास किया, और कहा कि मणिलाल को शादी करने की कभी अनुमति नहीं मिलेगी। जिस स्त्री के साथ मणिलाल का सम्बन्ध हुआ था, गांधी ने उसका सिर मुंडवा दिया। पूरे पन्द्रह साल बाद कस्तूरबा के अनुनय-विनय करने पर उन्होंने मणिलाल को शादी करने की अनुमति दी। उस वक्त मणिलाल ३५ साल का हो गया था। लेकिन उसी बीच मणिलाल आश्रम से निकाल दिया गया था, क्योंकि अपने पैसों में से कुछ पैसा बचाकर उसने हरिलाल को कर्ज में दे दिया था। जब गांधी ने सुना तो उन्होंने मणिलाल पर भ्रष्टाचार का आरोप लगाया, यह कहकर कि आश्रमवासी जो कुछ बचाते हैं वह आश्रम की सम्पत्ति है। मणिलाल घर से निकाल दिया गया। उससे एक बुनकर के साथ काम करने को कहा गया, और यह आदेश दिया गया कि अपने नाम के साथ गांधी का नाम न जोड़े। एक साल बाद मणिलाल 'इंडियन ओपीनियन' के सम्पादन के लिए नैटाल भेज दिया गया। मणिलाल कुछ अवसरों को छोड़कर गांधी के जीवन भर देश निकाले में ही रह गया।

इन दो लड़कों के सम्बन्ध में गांधी ने उसी तरह का अधिकारवादी व्यवहार किया जिस तरह का हिन्दू संयुक्त परिवार में पिता करता है। पिता के आदेश की अवज्ञा करना अक्षम्य है। उनका अपराध यही था कि गांधी के ऊंचे ब्रह्मचर्य-सिद्धान्त का पालन वे नहीं कर सके।

अपने भतीजे मगनलाल और एक दूसरे भतीजे को उसी गांधी ने इंग्लैण्ड भेजा। ऐसा क्यों? ४५ साल की उम्र में मगनलाल का देहान्त हुआ तो गांधी ने कहा कि यह पहला साथी था जिसने ब्रह्मचर्य का पालन किया।

गांधी ने हमेशा प्रेम को वासना के साथ ही जोड़कर देखा है। स्त्री को उन्होंने पुरुष की विषय-लिप्सा का शिकार माना है। उनकी नजर में संभोग तभी क्षम्य है जब संतति की इच्छा हो। उन्होंने कृत्रिम उपायों से संतति-नियमन को हमेशा अस्वीकार किया।

जब १९३६ में मारगरेट सैंगर भारत गयीं तो उन्होंने बढ़ती हुई जनसंख्या के खतरे की ओर ध्यान खींचा, लेकिन गांधी अपने विचार पर हठपूर्वक दृढ़ रहे। गांधी यही कहते रहे कि परिवार में ३-४ बच्चों से अधिक क्यों हों, इसलिए संभोग भी ३-४ बार से अधिक क्यों हो?

गांधी की दृष्टि में भारत की समस्याओं के समाधान के लिए चरखा उतना ही वास्तविक और उपयोगी था जितना उनका ब्रह्मचर्य। खादी उनके लिए मुक्ति का मार्ग थी, और ब्रह्मचर्य ईश्वर-प्राप्ति का साधन था।

गांधी स्त्रियों को, उनके पतियों की इच्छा के विरुद्ध, ब्रह्मचर्य की सीख देते थे। इस सीख ने कितने ही परिवारों को चौपट कर दिया।

गांधी ने लगभग अन्तिम समय तक आत्म-संयम को कठोर प्रलोभनों की कसौटी पर कसा। ब्रह्मचर्य को वह 'सत्य का प्रयोग' मानते थे। गांधी मानते थे कि अगर ब्रह्मचर्य का प्रयोग सफल हो गया तो सत्य का प्रयोग सफल हो गया। गांधी के लिए उनके राजनैतिक कार्य और सत्य के सघन प्रयोग अभिन्न थे। सत्याग्रह और ब्रह्मचर्य एक-दूसरे पर आश्रित थे। उनके लिए सत्याग्रह मात्र अहिंसक कार्रवाई नहीं है, बल्कि उसके पीछे आत्मा या सत्य की शक्ति है।

गांधी के व्यक्तित्व की सबसे महत्त्वपूर्ण कुंजी ब्रह्मचर्य है। यह भी है कि ब्रह्मचर्य गांधी-परम्परा का अंग बन गया, और उसने देश के सामाजिक, सांस्कृतिक वातावरण पर स्थायी छाप छोड़ी।

हिन्दू धर्म में 'काम' (सेक्स) के प्रति विचित्र धारणाएं हैं। एक ओर तो लिंग की उपासना है, कामसूत्र है, और दूसरी ओर संयम और धातु-क्षय का इतना महत्त्व है। चूंकि संयम-भंग का कारण स्त्री है इसलिए उसके प्रति इतना अधिक क्षोभ है। वास्तव में हिन्दू-धर्म में प्रेम नहीं है, वासना ही वासना है। हिन्दू के मन में काम (सेक्स) के प्रति एक प्रकार की अपराध-भावना है। यह सारा विषय ढोंग में ढका हुआ है।

४. अहिंसा

लुई फिशर ने गांधी को 'एक विशिष्ट व्यक्ति, महान व्यक्ति, शायद पिछले १९०० वर्षों में सबसे महान व्यक्ति,' माना है। दूसरे लेखकों ने गांधी की तुलना ईसा, बुद्ध और सन्त फ्रैंसिस से की है।

गांधी की अमरता का मुख्य दावा इस बात का है कि हिंसा-ग्रस्त दुनिया में उन्होंने अहिंसा का राजनैतिक अस्त्र के रूप में प्रयोग किया। गांधी ने प्रतिकार के जो अस्त्र निकाले, वे बिलकुल नये और विलक्षण थे। जैसा कि लोगों ने मान

रक्षा है, गांधी की यह स्थायी देन नहीं थी कि उन्होंने भारत को स्वतन्त्र किया। उनकी देन यह है कि उन्होंने दुनिया को यह बताया कि सत्ता की राजनीति के पिटे-पिटाये तरीके ही सब कुछ नहीं हैं, बल्कि कुछ परिस्थितियों में अहिंसा उनका विकल्प बन सकती है। गांधी की कमी यह है कि उन्होंने अहिंसा का क्षेत्र बहुत सीमित कर दिया। अहिंसा का प्रयोग उसी शत्रु के विरुद्ध किया जा सकता था जो परम्परा के प्रभाव में सभ्य संघर्ष के कुछ नियमों को मानता था। अगर ऐसा न होता तो गांधी की अहिंसा का अर्थ होता बड़े पैमाने पर जनता द्वारा आत्म-हत्या।

अधिकांश आविष्कर्ताओं की तरह गांधी भी मानते थे कि उनका विचार हर जगह, हर स्थिति में लागू हो सकता है। लेकिन सबसे पहली निराशा सन् १९१९ में हुई जब 'राष्ट्र-व्यापी सविनय अवज्ञा आन्दोलन' के कारण देश भर में दंगे हुए। गांधी ने आन्दोलन स्थगित कर दिया, प्रायश्चित्त का उपवास किया, और स्वीकार किया कि उनसे 'हिमालय-जैसी भूल' हो गयी कि समुचित तैयारी के बिना ही आन्दोलन शुरू कर दिया गया।

दूसरे साल मुसलमानों का साथ लेकर उन्होंने दूसरा असहयोग आन्दोलन छेड़ा। फिर दंगे हुए, और चौरी-चौरा का हत्याकांड हुआ। एक बार फिर आन्दोलन स्थगित हुआ, और गांधी ने उपवास किया।

सबसे सफल 'सविनय-अवज्ञा आन्दोलन' १९३०-३१ में नमक-कानून के विरुद्ध हुआ, जिसमें डांडी की कौतुकपूर्ण यात्रा हुई। इस बार भी जगह-जगह दंगे हुए, लेकिन आन्दोलन चलता रहा, जब तक कि वाइसराय से समझौता नहीं हो गया।

सन् १९३२-३४, १९४०-४१, १९४२-४३ के सत्याग्रहों के कोई खास परिणाम नहीं हुए। लेकिन राजनीतिज्ञों, बुद्धिवादियों तथा दुनिया भर के लोगों पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि गांधी एक कहानी बन गये। गांधी ने कुल १८ सार्वजनिक उपवास किये, और ६½ वर्ष जेल में बिताये—पहली बार जोहान्सबर्ग की काली कोठरी में, और अन्तिम बार आगा खां के महल में।

गांधी के अहिंसक तरीकों में एकरूपता कभी नहीं रही। दूसरे राष्ट्रों को उन्होंने जो सलाहें दीं वे अक्सर मानवीय दृष्टि से अमानुषिक होती थीं। यद्यपि वह बार-बार कहते थे कि आध्यात्मिक दृष्टि से बढ़े हुए लोग ही अहिंसक प्रतिकार कर सकते हैं, फिर भी उन्होंने इसे सबके लिए संभव बताया। यहाँ तक कि नाजियों के नीचे दबे हुए जर्मन यहूदियों के लिए भी। सन् १९४६ में जब यह मालूम हुआ कि ६० लाख यहूदी गैस से मार डाले गये तो उन्होंने लिखा: "यहूदियों को यह करना चाहिए था कि वे अपने को कसाई के चाकू के सामने डाल देते, अपने को पहाड़ की चोटी से समुद्र में फेंक देते। ऐसा करने से वे जर्मन जनता और दुनिया की आत्मा जगा देते।"

गांधी की इन बेतुकी बातों का कारण यह था कि अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में उनका घोर अज्ञान था। दूसरे महायुद्ध के छिड़ने पर उन्होंने मित्र-राष्ट्रों का समर्थन किया। फ्रान्स के पतन के बाद उन्होंने पेताँ के आत्म-समर्पण करने पर उसके साहस की सराहना की, और ६ जुलाई १९४० को अंग्रेजों के नाम अपील निकाली कि इंग्लैण्ड नात्सीवाद से अहिंसा की लड़ाई लड़े।

गांधी की अहिंसा को कायम रखने के लिए असंख्य लाशों की जरूरत थी, ठीक उसी तरह जैसे उन्हें गरीबी में रखने के लिए बहुत धन आवश्यक था।

इसी तरह की सलाह उन्होंने चेक, पोल, फिनिश और चीनी लोगों को भी दी थी। मरने के कुछ घण्टों पहले जब 'लाइफ' पत्रिका के संवाददाता ने उनसे पूछा, 'अहिंसा से आप अणु-बम का कैसे मुकाबला करेंगे,' तो उन्होंने कहा, "मैं छिपूंगा नहीं। मैं खुलकर सामने आऊँगा। मेरे मन में उसके लिए कोई शत्रु भाव नहीं होगा। मैं जानता हूँ कि उतनी दूर से चालक हमारे चेहरे भी नहीं देख सकेगा, लेकिन हमारा हृदय उस तक पहुँचेगा, और उसकी आँखों को खोलेगा।"

इस वक्तव्य से पता चलता है कि अहिंसा में गांधी की श्रद्धा पूर्ण थी। लेकिन, सचमुच, कई अवसरों पर उन्होंने खुद अपने सिद्धान्तों को छोड़ा। सन् १९१८ में वह अंग्रेज सेना के लिए भरती का काम करते थे। और उनके जीवन के अन्तिम दो वर्षों में हिन्दू-मुस्लिम हत्याकांड हुए जिनसे विभाजन हुआ, और कश्मीर में युद्ध हुआ जिससे अहिंसा का जहाज पूरा-पूरा टूट गया। जब वह पूर्वी बंगाल के गाँवों में घूम रहे थे, और उन्हें चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा दिखाई देता था, तो उन्होंने कहा था। 'फिलहाल जनता के पैमाने पर लागू किसी अहिंसक उपाय का चिन्तन मैंने छोड़ दिया है।' कुछ दिन बाद उन्होंने लिखा: 'हिंसा भयंकर है और पीछे ले जानेवाली है, लेकिन आत्म-रक्षा में इस्तेमाल की जा सकती है।' उसके कुछ ही बाद उन्होंने लिखा। 'अहिंसक आत्म-रक्षा सर्वोत्कृष्ट आत्म-रक्षा है, क्योंकि वह कभी विफल नहीं होती।' इन परस्पर-विरोधी बातों से स्पष्ट है कि गांधी हिंसा-अहिंसा के झमेले में खो गये थे।

निर्मल बोस ने लिखा है कि एक उजड़े गाँव में एक मुसलमान मुल्ला ने कई हिन्दुओं की जान नकली धर्म परिवर्तन का नाटक करके बचायी। गांधी ने जब सुना तो उनसे कहा कि इस तरह जान बचाने से अच्छा होता कि वह हिन्दुओं को बताते कि भय के कारण अपना धर्म छोड़ने से अच्छा है धर्म के लिए मर जाना। वह मुल्ला कहता रहा कि जीवन रक्षा के लिए नकली धर्म-परिवर्तन धर्म द्वारा मान्य है, लेकिन गांधी ने नहीं माना। गुस्से में उन्होंने यहाँ तक कहा कि 'अगर कभी भगवान से भेंट होगी तो मैं कहूँगा कि ऐसे आदमी को धर्मगुरु क्यों बनाया।' वह बेचारा चुप रह गया, और उठकर चला गया।

गांधी ने भारत के विभाजन का

विरोध किया था। उन्होंने कहा था: 'भारत का विभाजन मेरा विभाजन होगा।' लेकिन कांग्रेस महासमिति में उन्होंने विभाजन का समर्थन यह कहते हुए किया: 'ऐसे अवसर होते हैं जब कुछ निर्णय मानने पड़ते हैं चाहे कितने भी अप्रिय हों।' कुछ महीनों बाद जब कश्मीर में पाकिस्तान और भारत की लड़ाई हुई तो उन्होंने अपनी एक प्रार्थना-सभा में कहा। 'अगर पाकिस्तान से न्याय पाने का कोई दूसरा उपाय नहीं है और अगर वह अपनी स्पष्ट भूल को भी नहीं मानता, तो भारत को उससे युद्ध करना ही पड़ेगा। युद्ध से विनाश होता है लेकिन मैं किसीको यह सलाह नहीं दे सकता कि वह अन्याय को स्वीकार करे।' लेकिन पाकिस्तान ने जो अन्याय किया था उससे कहीं बड़े अन्याय की स्थिति में उन्होंने अंग्रेजों, फ्रान्सीसियों, चेकों, पोलों, यहूदियों को हथियार फेंकने और अन्याय को सहन कर लेने की सलाह दी थी। जब कभी सिद्धान्त और जीवन की कठोर वास्तविकता में विरोध होता था तो वास्तविकता जीतती थी और गांधी सरदार बन जाता था। गांधी का प्राकृतिक चिकित्सा में विश्वास था, लेकिन जब सख्त बीमार पड़ते थे तो जिस पश्चिमी चिकित्सा-शास्त्र से उन्हें नफरत थी उसीके विशेषज्ञों को बुलाते थे। अहिंसा और सत्याग्रह ने अंग्रेजों पर जादू का काम किया था, लेकिन मुसलमानों पर जादू नहीं चला। क्या सचमुच अहिंसा मनुष्य मात्र के रोगों की औषधि थी?

उन्होंने प्रोफेसर स्टुअर्ट नेलसन से कहा था कि जिसे उन्होंने सत्याग्रह समझा था वह 'पैसिव रेजिस्टेंस' के सिवाय और कुछ नहीं था, जो कमजोर का अस्त्र है। गांधी ने स्वीकार किया है कि वह बरावर भ्रम पालते रहे हैं।

यह गांधी का भ्रम ही था कि भारत को अहिंसा से स्वराज मिला। स्वराज मिला इसलिए कि अंग्रेजों ने खुद साम्राज्य को समाप्त कर दिया। गांधी का चरखा भारत के राष्ट्रीय झंडे पर तो रह गया (?), लेकिन स्वतंत्र भारत की रीति-नीति गांधी-विचार से नहीं बनी, यद्यपि शब्दों में श्रद्धा प्रकट की जाती रही। पाकिस्तान और चीन से लड़ाई के समय युद्ध का जो नशा पैदा हुआ उससे पता चल गया कि गांधी की शान्तिवादी नीति का शायद ही कोई प्रभाव रह गया हो। बार-बार हिन्दू भारतीयों और अहिन्दू भारतीयों में होनेवाले दंगों का क्या संकेत है? *जब गांधी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी विनोबा भावे से पूछा गया, 'क्या आप चीनी आक्रमण के विरुद्ध, सैनिक कार्रवाई का समर्थन करते हैं?' तो उन्होंने कहा: हां, क्योंकि जनता अभी अहिंसा के लिए तैयार नहीं है।' सन्त अगस्तीन ने कभी कहा था 'प्रभु, हमें अहिंसा दो, लेकिन अभी नहीं।'*

५ निराशा और विफलता

गांधी एक निराश व्यक्ति मरे। ४० वर्ष पहले 'हिन्द स्वराज्य' में उन्होंने जो सिद्धान्त बनाये थे, और जिनके अनुरूप वह भारत को ढालना चाहते थे, वे सब खत्म हो गये। स्वतन्त्रता के समारोह में उनकी विफलता पूरी हो गयी। अंतिम प्रहार एक हत्यारे का हुआ जो शत्रु-पक्ष का नहीं था, बल्कि एक श्रद्धालु हिन्दू था।

गांधी—लंगोटीवाले गांधी—गरीब भारत के छोटे आदमी के प्रतीक थे। किसीने गांधी से पूछा 'आपका इतना प्रभाव क्यों है?' तो उन्होंने उत्तर दिया 'जब हमारे देश का छोटा आदमी मुझे देखता है कि मैं उसकी तरह रहता हूं तो सोचता है कि मैं उसीका एक अंग हूं।'

गांधी की सबसे बड़ी देन यह थी कि सदियों के बाद उन्होंने भारतीयों में आत्म-सम्मान जगाया। लेकिन साथ ही उन्होंने हिन्दुओं की परम्परा को भी आशीर्वाद दे दिया। भोजन, स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध, पितृसत्ता, चिकित्सा, उद्योग, शिक्षा—इन सब पर उन्होंने हिन्दू दृष्टिकोण का समर्थन किया। *जहां उन्होंने परम्परा का विरोध भी किया वहां विरोध परम्परा के ही आधार पर हुआ। अछूत हरिजन यानी ईश्वर की सन्तान हो गये। टट्टी सफाई आश्रमवासियों के लिए—दूसरों के लिए नहीं—एक धर्मकार्य मानी गयी।*

गांधी का भारतीय जनता पर इतना जबरदस्त प्रभाव था कि वह बहुत-से लोगों की नजर में अवतार बन गये। यहां मन में यह विचार उठता है कि अगर वह सततिनियमन के लिए आन्दोलन करते तो आज भारत का दूसरा ही चित्र होता। वह न करके वह ब्रह्मचर्य और चरखे की बात करते रहे।

गांधी के साथ तर्क करना कठिन था, लेकिन उनसे बात करना अत्यन्त सुखद। उनसे संवाद जितना ही सुखद था उतना ही बेकार तर्क करना उन बुद्धिवादियों से है जो गांधी विचार को मानते हैं, और ऐसे दर्शन की खोखली स्तुति करते हैं जिसे अमल में लाना अत्यन्त कठिन है। यही रोग है जिसके कारण भारतीय जीवन में इतनी अवास्तविकता है, और मुख्य प्रश्नों को टालने की प्रवृत्ति है। *गांधी की गाढ़ी भरी छाया अब भी भारत पर है। अब दिनोंदिन अधिकतर लोग मानने लगे हैं कि चरखा कारखाने का मुकाबला नहीं कर सकता, तथा सबसे कीमती द्रव वह पानी है जो बड़े बांधों से निकलकर खेतों में जाता है, न कि वह जो शरीर में है। अन्त में यह मानना पड़ता है कि गांधी बीसवीं शताब्दी की सबसे बड़ी विसंगति थे, और यह बात मन में उठती ही है कि गांधी-परम्परा को छोड़कर ही भारत आज जैसा है उससे कहीं अच्छा और आश्वस्त होता।*●

६ हजार कार्यकर्ता

देश के कार्यकर्ताओं का 'एल्बम' हमारे पास आयें तो रोज-रोज थोड़ा ध्यान करेंगे। फोटो इसलिए कि मुझे ज्ञान नहीं होता कौन कार्यकर्ता है। फोटो होगा तो पहचान होगी। ऐसे सारे भारत का 'एल्बम' होना चाहिए। छः हजार ब्लाक सारे भारत में हैं तो छ हजार कार्यकर्ता चाहिए। कार्यकर्ता के बिना कोई ब्लाक न हो। —विनोबा

दीन और मध्यस्थ श्री श्यामलाल आदिवासी समाज के सम्मानित परिवार के दो व्यक्ति हैं। एक दिन हमने इन दोनों के साथ इस सारी परिस्थिति पर चर्चा की। दोनों ने एक स्वर से कहा कि "यह एक ऐसी समस्या है, जिससे हमारे यहाँ के ९७ प्रतिशत लोग पीड़ित हैं। यदि यहाँ की जनशक्ति को खड़ी करना है तो इस समस्या का कोई हल ढूंढना चाहिए। इस समस्या के सन्दर्भ में गाँव के सभी लोगों का सहयोग सहज प्राप्त हो सकेगा। समाजवाद, सर्वोदय, जनतंत्र आदि ऊँचे सिद्धान्त गाँव के सरल लोगों के लिए कोई अर्थ नहीं रखते। उनके साथ उनकी समस्या के सन्दर्भ में ही बातचीत होनी चाहिए।"

ठाकुरदीन और श्यामलाल की इस बात ने काम करने के लिए अनुकूल परिवेश दिया और यह तय किया गया कि हम लोग पहले से कोई गढ़ा गढ़ाया समाधान लेकर लोगों के पास न जायें। गाँव के लोगों की एक सभा हो; और आपस की चर्चा के बीच लोग खुद-ब-खुद इस अन्याय से मुक्त होने का रास्ता सोचें। हम सभा में उपस्थित रहें और जहाँ-तहाँ बातचीत में हिस्सा लेते रहें।

आकर्षक डोंगरी टोला

जमडी ग्राम-पंचायत में सात गाँव हैं। पंचायत के अध्यक्ष श्री ठाकुरदीन का घर 'डोंगरी टोला' में पड़ता है। श्री ठाकुरदीन ने सबसे पहली सभा अपने गाँव में करने का तय किया। यह गाँव अहिंसा-विद्यालय से दो मील दूर है। लन्दन की कुमारी रोजान ब्रुक और श्री अनन्त के साथ मैं करीब सात बजे डोंगरी टोला पहुँचा। सफेद चाँदी-सी चाँदनी में लिपटा गाँव बहुत सुन्दर लग रहा था। साफ-सुथरी गलियाँ, मिट्टी के खूबसूरत घर, घरों की दीवारें सफेद, काली और लाल मिट्टी के रंग से रंगी हुई। आदिवासी समाज की यह भित्ति कला कुमारी रोजान को बहुत भायी। वह कहने लगी, "मुझे लगता था कि 'अब्स्ट्रैक्ट आर्ट' यानी अमूर्त-कला और रंगों का सन्तुलित कम्पोजीशन मॉडर्न आर्ट की देन है, पर ये आदिवासी तो इस कला में खूब माहिर हैं। ये गाँव कितने मोहक हैं!" लन्दन की रहनेवाली रोजान को डोंगरी टोला की सुन्दरता ने मुग्ध कर दिया। फिर वह बोली, 'मेरी समझ में नहीं आता कि भारत के 'आर्किटेक्ट' इस मौलिक ग्रामीण स्थापत्य को क्यों नहीं अपनाते? शहडोल और अनूपपुर जैसे नगर कितने भद्दे, कुरूप और कलाहीन हैं। इन नगरों में स्थापत्य के नाम पर ईंट और कंक्रीट के बक्से जैसे मकान ही ज्यादातर देखने में आते हैं। जब भारत अपने ग्रामीण स्थापत्य में इतना समृद्ध है तो उसे ठंडे मुल्कों के औद्योगिक स्थापत्य की नकल क्यों करनी चाहिए?'

सूदखोरी से मुक्ति का मार्ग

हम लोग आगे बढ़े। ठाकुरदीन के घर के सामने कुछ चारपाइयाँ और कुछ दरियाँ बिछी हुई थीं। एक-एक करके कोई आधे घंटे में ५०-६० लोग एकत्र हो गये। सभा को कोई औपचारिक स्वरूप नहीं दिया गया। अनौपचारिक चर्चाएँ होने लगीं। जंगलात विभाग के अफसरों की किस तरह ज्यादतियाँ चलती हैं, गाँवों में पीने के पानी की क्या दिक्कतें हैं, नये खुलनेवाले स्कूल के लिए लकड़ी की जरूरत कैसे पूरी की जा सकती है, इत्यादि बातें चलती रहीं। इन्हीं बातों के बीच हमने कर्ज और सूदखोरी का सवाल भी धीरे से लोगों के कान में डाल दिया। ज्यों ही यह बात उठी कि दो मिनट के लिए मौन-सा छा गया। "हम लोग सूदखोरी से तंग आ चुके हैं।"—एक ने कहा, "इसमें तुमने कौनसी नयी बात कही। तंग तो सभी आ चुके हैं।"—दूसरे ने टिप्पणी की। फिर मौन छा गया। "अगर हमें मात्र ड्योढ़ा ब्याज ही देना पड़ता तो भी गनीमत थी, पर उनके बाकी अन्यायों ने तो गले तक उबा दिया है।"—पीछे से एक आवाज आयी। "हमारी मजबूरी का तो वह फायदा उठायेगा ही। इसमें कौनसी नयी बात है?"—किसीने जवाब देकर समाधान किया। यों गेंद एक ओर से दूसरी ओर उछलती रही। "क्या बनिये का कोई विकल्प नहीं ढूंढ़ा जा सकता?"—अनन्त ने अटकी हुई चर्चा की गाड़ी को आगे बढ़ाया। "विकल्प जरूर मिल सकता है, अगर गाँव में एकता हो।"—गाँव के ही एक बुजुर्ग ने सुझाया। जो बात हम कहने आये थे, वह गाँव के लोगों ने खुद महसूस की।

"क्या गाँव की एकता कहीं बाजार से दाम देकर खरीदी जायेगी?"—हमने मौका पाकर टिप्पणी की। इस तरह गेंद फिर गाँववालों के पास चली गयी। "अगर गाँव के सब लोग एक मन से और एकमत से राजी हों तो थोड़ा थोड़ा इकट्ठा करके गाँव की एक 'बखारी' (कोष) बनायी जा सकती है।" मानो बिल्ली के भाग्य से छींका टूटा। हमारे मन की बात हमको कहनी नहीं पड़ी। ठाकुरदीन को भी बोलना नहीं पड़ा। गाँव के ही एक नौजवान ने यह सुझाव रख दिया। अनन्त ने और मैंने उसका समर्थन करके अप्रत्यक्ष रूप से उनकी बात का, उनकी सलाह का वजन जरूर बढ़ा दिया। श्री ठाकुरदीन इतनी देर की चुप्पी के बाद बोले "अगर ऐसी गाँव की बखारी बन जाय तो कर्ज की समस्या हल होगी, अकाल के समय का सहारा बन जायगा। गाँव के पास अपनी पूंजी बन जायेगी, जिससे कुछ जरूरी 'विकास' के काम हम कर सकेंगे। ग्रामकोष के अनेक लाभ हमें मिलेंगे।'

गाँव के सभी लोग मौन थे। इस मौन में स्वीकृति का भाव था। धीरे से एक आवाज आयी—' इस समय किसीके पास देने लायक अनाज है नहीं। यह काम तो बरसात की फसल के बाद जब खलिहान लगेंगे तभी हो सकता है।" सभा में इस दिक्कत का समाधान ढूंढ़नेवाले भी बैठे थे। पीछे से किसीने भावुक स्वर में कहा—"जहाँ चाह, वहाँ राह। अनाज नहीं तो क्या महुवा तो है। मीठा महुवा। ग्रामकोष का आरम्भ इसीसे क्यों न हो?" ज्यों ही यह सुझाव आया कि चारों

सत्य प्रेम करुणा।

७५ वर्ष पूर्ति पर विनोबाजी को समर्पण हेतु

ग्रामस्वराज्य-कोष

उद्देश्य, संग्रह तथा वितरण सम्बन्धी कुछ स्पष्टताएँ

मार्च के तीसरे सप्ताह में सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक पूना में हुई थी। प्रबन्ध समिति ने यह तय किया कि ११ सितम्बर १९७० को पू० विनोबाजी की आयु के ७५ वर्ष पूरे होने के अवसर पर उनके प्रति हम सबकी श्रद्धा के प्रतीक-स्वरूप १०० जिलादान तथा ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के काम के लिए एक करोड रुपये का एक कोष एकत्र करके उन्हें समर्पित किया जाय। विनोबाजी भूदान-ग्रामदान आन्दोलन के प्रणेता हैं। इस आंदोलन के जरिये देश के पुनर्जीवन और पुनर्निर्माण के लिए, खास तौर से गरीबों और पद दलितों के उत्थान के लिए, उन्होंने जो कुछ किया है उसके प्रति कृतज्ञता और श्रद्धा व्यक्त करने के लिए १०० जिलादान और १ करोड रुपये का 'ग्रामस्वराज्य-कोष' दोनों ही उपयुक्त माध्यम हैं।

भूदान ग्रामदान आन्दोलन के जरिये जिस प्रकार के सामाजिक परिवर्तन की हम कल्पना करते हैं उसके साथ संचित निधि का मेल नहीं बैठता, यह स्वयं विनोबाजी ने कई बार स्पष्ट किया है। प्रबन्ध समिति में जब ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह का निर्णय हुआ तब यह बात सबके ध्यान में थी और इसलिए प्रबन्ध समिति ने अपने प्रस्ताव में इस बात को स्पष्ट कर दिया कि इस कोष के विनियोग के लिए कोई अलग ट्रस्ट या निधि न बनायी जाय। इसका उपयोग ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के काम के लि सामान्यतया तीन साल में हो जाय ऐसा कल्पना है। आज भी आन्दोलन में काम के लिए केन्द्रीय से लेकर प्रान्तीय, जिला और स्थानीय, हर स्तर पर कार्यकर्ताओं को धन संग्रह करना ही पडता है। १ अप्रैल १९७० से आरम्भ होनेवाले वर्ष में आन्दोलन के काम में जो खर्च होगा वह भी कोष के संग्रह में से किया जाय, यह भी स्पष्ट कर दिया गया है। पू० विनोबाजी ने कोष के उद्देश्य और उसके विनियोग-सम्बन्धी नीति को अपनी स्वीकृति दी है।

यह नीति भी स्पष्ट कर दी गयी है कि कोष के कुल संग्रह का १०% आन्दोलन के केन्द्रीय खर्च के लिए सर्व सेवा संघ को दिया जायेगा, शेष ९० % सामान्य तौर पर उसी प्रान्त में खर्च होगा, जहाँ से वह संग्रह हुआ हो। आज देश में कुछ ऐसे बड़े शहर हैं जहाँ भिन्न भिन्न प्रान्तों के लोग रहते हैं। अनुभव ऐसा आया है कि इन लोगों के पास अगर उनके अपने प्रान्त के लोगों की मदद से पहुँचा जाय तो संग्रह अधिक होता है। अन बड़े शहरों में, जहाँ इस प्रकार अन्य प्रान्तों के साथियों की मदद से संग्रह किया जाय, वह आधा-आधा दोनों प्रान्तों के लिए बाँट लिया जाय। हर प्रान्त में जो कुल संग्रह हो उसमें से १० % केन्द्रीय अंश निकाल देने के बाद जो शेष रकम बचे उसका बँटवारा प्रान्तीय काम जिला प्रखंड या स्थानीय काम के लिए कितना, किस प्रकार हो यह सम्बन्धित प्रान्तीय संगठन या इकाइयाँ तय करेंगी।

कोष-संग्रह हमारी कोशिश हमेशा यह रही है कि सर्वोदय आन्दोलन जन-आधारित हो। इसलिए कोष-संग्रह में

→ओर से "ठीक है! ठीक है!!" की आवाजें उठीं। हमने कहा—"यदि सबकी राय है और यह काम ठीक है तो बताइए कौन कितना महुवा देगा?" ठाकुरदीन ने कागज कलम हाथ में लिया। 'कोई भी एक मन महुवा से कम न दे।'—एक सुझाव आया। "एक मन से कम कौन देगा?"—कई आवाजों ने एकसाथ समर्थन किया। देखते-देखते करीब २५० रुपये का महुवा एकत्र हो गया। ३० घरों की आबादीवाले इस छोटे से गाँव के लिए यह एक अच्छा आरम्भ था।

ऐसी ही सभा जमही में हुई और करीब ४०० रुपये का महुवा एकत्र हुआ। तीसरी सभा बेरहनी में हुई। वहाँ भी ऐसा ही नक्शा रहा। चौथी सभा बरीबांध में हुई। वहाँ भी ग्रामकोष स्थापित हो गया। चार ग्रामों ने ग्रामकोष बनाये। हमने माना कि पुष्टात्मक ग्रामदान की बुनियाद इन गाँवों में पड गयी है। इन चारों गाँवों के ग्रामकोष एक बार पक्के हो जायें, तब आगे इसी तरह के ग्रामकोष अन्य गाँवों में भी स्थापित किये जायें, ऐसा हम लोगों ने सोचा। ग्रामकोष का संचालन करने के लिए हर गाँव में एक तदर्थ समिति बना दी गयी है। इस समिति में कहीं पाँच, तो कहीं सात आठ तक सदस्य हैं। चारों गाँवों ने तय किया है कि बनिया ५० प्रतिशत ब्याज लेता है, तो ग्रामकोष को लोग २५ प्रतिशत ब्याज दें और जब ग्रामकोष के पास अच्छी पूंजी एकत्र हो जाय तो यह ब्याज और घटा दिया जाय।

इस तरह ग्रामकोष के माध्यम से इस क्षेत्र में ग्रामदान की व्यूह रचना बन रही है। मई महीने में सहरसा के प्रमुख सर्वोदय-सेवक श्री रामदास गुप्त और श्री अनन्त के साथ जिले के प्रमुख केन्द्रों का दौरा करके ग्रामदान ग्रामकोष, ग्रामस्वराज्य के अनुकूल भूमिका तैयार करने का काम हमने बनाया है।●

भूदान यज्ञ : सोमवार, १८ मई '

हमारा जोर अधिक-से-अधिक लोगों के पास पहुँचकर उनसे दान प्राप्त करने का होना चाहिए। 'सर्वोदय मित्र' से हम एक पैसे प्रतिदिन की अपेक्षा करते हैं। वर्ष में यह सहायता रुपये ३.६५ होती है। हम इस वर्ष अधिक-से-अधिक सर्वोदय-मित्र बनायें तो दोनों काम होंगे, ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए धन-संग्रह भी होगा और सर्वोदय-आन्दोलन के लिए ज्यादा लोगों की सहानुभूति हम प्राप्त कर सकेंगे। इसी तरह गाँवों में हर किसान से अन्न-संग्रह भी किया जाय। खादी-कार्यकर्ताओं, कामगारों और कत्तिनों से इस वर्ष ग्रामस्वराज्य कोष के लिए सूत की एक गुण्डी, या ५०० मीटर कती हुई ऊन प्राप्त की जाय। संग्रह के इन उपायों के अलावा छोटे-बड़े दान तो प्राप्त किये ही जायँ।

ग्रामस्वराज्य कोष के लिए जब १ करोड़ रुपये के लक्ष्य की घोषणा हुई तो कई मित्रों और समर्थकों ने इस बात की चेतावनी देना जरूरी समझा कि लक्ष्य बहुत बड़ा है और साथ ही उसे कम समय में पूरा भी करना है, इसलिए गंभीरता से सोच लिया जाय। इन मित्रों की चेतावनी एक अर्थ में सही है। पर भूदान ग्रामदान आन्दोलन के जरिये देश के करीब १५० लाख गाँवों से हमारा संपर्क आया है, पू० विनोबाजी की करीब १३ वर्ष तक देश के एक कोने से दूसरे कोने तक निरन्तर पदयात्रा हुई है और लाखों करोड़ों लोग उनके प्रति श्रद्धा रखते हैं तथा सर्वोदय-आन्दोलन का काफी व्यापक पैमाने पर प्रचार हुआ है—इन सब बातों को हम ध्यान में रखें, और ऊपर बताये अनुसार सर्वोदय-मित्र, अन्न-संग्रह, सूताजलि आदि को हम अच्छी तरह से संगठित कर सकें तो हम देखेंगे कि १ करोड़ के लक्ष्यांक को पार करना मुश्किल नहीं होगा। अभी भी कई प्रदेशों से जो समाचार मिल रहे हैं। उनसे यह स्पष्ट हो रहा है।

यह तय किया गया है कि ग्राम-स्वराज्य-कोष के लिए धन या अन्न का संग्रह कार्यालय की ओर से छपे हुए कूपन और रसीदों पर ही किया जाय। १,५,१० और १०० रुपये के तथा सर्वोदय-मित्र के लिए रुपये ३.६५ के तथा १ और १० किलो अनाज के अलग-अलग कूपन छपाये गये हैं, जो इसी सप्ताह सब प्रदेशों को रवाना किये जा रहे हैं। (कुछ रसीद-बुकें प्रान्तों को भेजी जा चुकी हैं।) इस बीच जो संग्रह स्थानीय रसीदों पर हुआ हो उसका हिसाब कृपया ग्रामस्वराज्य-कोष-कार्यालय को अलग से भेज दिया जाय और आइन्दा तमाम संग्रह ग्राम-स्वराज्य-कोष के कूपन तथा रसीदों पर ही किया जाय। चूंकि मौजूदा वर्ष का खर्च भी ग्रामस्वराज कोष के संग्रह से किया जा सकेगा, इसलिए आन्दोलन के काम के लिए जो भी संग्रह करना हो वह ग्रामस्वराज्य कोष के अन्तर्गत किया जाना चाहिए।

कुछ मित्रों ने यह सुझाया था कि चूंकि संग्रह की ९० प्रतिशत रकम प्रान्तों में ही खर्च होगी, इसलिए संग्रह का सिर्फ १० प्रतिशत ग्रामस्वराज-कोष को भेजा जाय। लेकिन चूंकि कोष विनोबाजी को समर्पण किया जानेवाला है, और हिसाब तथा आडिट की दृष्टि से भी यह जरूरी है, इसलिए यह तय किया गया है कि चालू साल के खर्च के लिए २५ प्रतिशत रकम प्रदेश में रखकर हर माह के संग्रह की शेष ७५ प्रतिशत रकम महीना समाप्त होते ही ग्रामस्वराज-कोष के केन्द्रीय कार्यालय, दिल्ली को भेज दी जाय। पू० विनोबाजी को कोष-समर्पण हो जाने के बाद प्रदेशों की रकम सम्बन्धित प्रदेशों को तुरन्त भेज दी जायगी। यह तो सर्व सेवा संघ ने निर्णय ही कर दिया है कि संग्रहीत राशि के लिए अलग ट्रस्ट या निधि नहीं बनेगी।

कोष में से खर्च की स्वीकृति

आज भिन्न-भिन्न प्रदेशों में ग्रामदान-आन्दोलन का जो काम चल रहा है उसे ध्यान में रखते हुए किस प्रदेश या क्षेत्र के काम के लिए कौन संगठन जिम्मेवार है और अतः ग्रामस्वराज्य कोष में से मौजूदा साल के काम में खर्च करने को कौन संगठन अधिकृत है यह सर्व सेवा संघ तय करके ग्रामस्वराज्य-कोष को, तथा सम्बन्धित इकाइयों या संगठनों को सूचित करेगा। जिन प्रदेशों में प्रदेश-स्तर के संगठन नहीं होंगे, या अन्य कारणों से जहाँ क्षेत्रिय इकाइयाँ बनाना ज्यादा लाभ-दायक होगा तो सर्व सेवा संघ वैसा तय करके सूचना करेगा। इस प्रकार सर्व सेवा संघ द्वारा अधिकृत इकाइयों के अलावा कोई व्यक्ति या संगठन कोष में से खर्च करने के लिए अधिकृत नहीं होगा। पर स्वाभाविक ही ये अधिकृत इकाइयाँ अपने-अपने क्षेत्र में सम्बन्धित मित्रों और संगठनों के सहयोग से ही आन्दोलन का काम चलायेंगी, और इसलिए कोष के संग्रह और उसके विनियोग में सबका सहयोग मिलेगा ऐसी आशा है।→

भारत के राष्ट्रपति श्री वराहगिरि वेंकटगिरि का संदेश

आचार्य विनोबा भावे की ७५वीं जन्मतिथि के अवसर पर उन्हें समर्पण किये जानेवाले कोष में पहला दान देते हुए मुझे बड़े गौरव और सौभाग्य का अनुभव हो रहा है। सर्व सेवा संघ ने, जो इस कोष का आयोजन कर रहा है, इसका नाम "ग्रामस्वराज्य-कोष" उचित ही रखा है। इस कोष का उपयोग ग्रामदान और ग्राम-स्वराज्य के विनोबाजी के महान कार्य को आगे बढ़ाने के लिए होगा। १९ वर्ष पहले आज के ही दिन विनोबाजी के द्वारा तेलगाना में भूदान-आन्दोलन का आरम्भ हुआ था। आज यह आन्दोलन सारे देश में फैल गया है और इसने दुनिया का ध्यान आकर्षित किया है। मुझे आशा है कि जिस कोष का अब आरम्भ किया जा रहा है वह विनोबाजी के लक्ष्य की पूर्ति में मदद पहुंचायेगा। मैं श्री जयप्रकाश नारायण और उनके साथियों के प्रयत्नों की सफलता चाहता हूं।

अर्थ-संग्रह के सम्बन्ध में कुछ सुझाव

एक करोड़ रुपयों का देशव्यापी ग्राम-स्वराज्य-कोष निधि पू० विनोबाजी की ७५वीं जयन्ती के निमित्त तारीख ११ सितम्बर '७० तक इकट्ठा करने का सर्व सेवा संघ ने तय किया है। कोष इकट्ठा करते समय यदि निम्न बातों का ख्याल रखा जाय तो काम में आसानी होगी।

नीचे लिखी सूचनाएँ जिले को अर्थ-संग्रह की इकाई मानकर लिखी गयी हैं। संग्रह के आयोजन के लिए प्रदेश-स्तर पर ग्रामस्वराज्य कोष-समितियाँ बनायी जा रही हैं। अतः जिला, तहसील आदि समितियाँ प्रदेश की योजना के अंग-स्वरूप और प्रदेश-समिति के तत्त्वावधान में बननी चाहिए, जिससे प्रदेश के पूरे काम में एकरूपता रहे और परस्पर बल पहुँचे।

(१) जिले में संग्रह का काम शुरू करने के पहले सब तबकों के प्रभावशाली व्यक्तियों की एक समिति बनायी जाय। इस समिति का नाम "ग्रामस्वराज्य-कोष समिति" या "विनोबा हीरक महोत्सव कोष समिति" रख सकते हैं। इस समिति के लिए अध्यक्ष और आवश्यकता हो तो कार्याध्यक्ष भी रहें। अध्यक्ष या कार्याध्यक्ष सर्वोदय-कार्यकर्ता के बजाय जिले के दूसरे कोई प्रभावी नागरिक हों, जो स्वयं इसमें रुचि रखते हों और इस काम के लिए प्रत्यक्ष कुछ समय देनेवाले हों। मंत्रियों में एक मंत्री सर्वोदय कार्यकर्ता को बनाया जाय जो संगठन का और कार्यालय का काम सँभाले। दो-चार उपाध्यक्ष और चार और मंत्री भी हों, जिससे ज्यादा से ज्यादा संख्या में जिम्मेदार व्यक्ति इस काम में लग सकें। इस तरह विभिन्न राजनैतिक पक्षों के नेता, एम० एल० ए०, एम० पी०, जिला-परिषद के अध्यक्ष, विद्यार्थी-नेता, व्यापारी-नेता, रचनात्मक एवं समाजसेवी संस्थाओं के प्रमुख, मजदूर-नेता, शिक्षण संस्थाओं के प्रमुख पंचायत-समिति के सभापति और जिले के प्रमुख नागरिक इस समिति के सदस्य रहें। सौ-दो सौ भी सदस्य हों तो हर्ज नहीं। इनमें से एक छोटी कार्यसमिति बना ली जाय।

(२) जिला स्तरीय समिति बनने पर उसी तरह एक तहसील-स्तरीय समिति भी आवश्यकता हो तो बनायी जाय।

जिला स्तरीय समिति की बैठक में पहले कोष का लक्ष्यांक तय हो।

(३) कोष संग्रह के काम के लिए प्रान्त के या नजदीक के जिलों के प्रभावशाली कार्यकर्ताओं की मदद ली जा सकती है। जिले में परस्पर मदद लाभदायी हो सकती है।

(४) ग्रामस्वराज्य कोष-समिति की ओर से लोगों के नाम एक अपील छपवायी जाय, जिसमें ग्रामदान तथा कोष के लिए आवाहन किया जाय।

(५) जिला परिषद की ओर से सब पंचायतों को व पाठशालाओं को निधि-संग्रह में सहयोग देने के लिए परिपत्र निकलवाया जाय। सहकारी बैंक के रजिस्ट्रार द्वारा और उनके जिला-अधिकारियों द्वारा परिपत्र निकाला जाय और प्रान्तीय कोआपरेटिव यूनियन का भी सर्वोदय-कार्य के लिए सहायता देने का अनुमतिदर्शक प्रस्ताव साथ में जोड़ा जाय।

(६) व्यापारियों के भिन्न-भिन्न संगठन होते हैं। यदि हमारी शक्ति हो तो किसी व्यापारी-संगठन से रकम लेने के बजाय हर एक व्यक्ति से अलग-अलग ली जाय, जिससे रकम भी ज्यादा मिलती है और उनसे वैचारिक सम्पर्क भी आता है। काम की दृष्टि से उसका अच्छा, स्थायी असर होता है। सौ या सौ से ऊपर रकम देनेवाले को एक साल तक उसकी मातृभाषा में सर्वोदय-पत्रिका भेजी जाय, जिससे दाता हमारे विचारों के, और काम के नित्य सम्पर्क में रहें और गहराई से विचार समझें।

(७) निधि-संग्रह के विभिन्न स्रोत

१. व्यापारी — २ रचनात्मक संस्था
३ सहकारी बैंक एवं समितियाँ — ४ जिला परिषद् कर्मचारी
५ म्युनिसिपल कर्मचारी — ६. जिला परिषद्
७ नगरपालिका — ८ शिक्षक
९. पुलिस, पी० डब्लू० डी० जंगल, अन्य सरकारी विभाग — १० रेलवे
११ बस व ट्रक-मालिक — १२. मिल-मजदूर
१३ ट्रस्ट्स — १४ ग्राम-पंचायतें
१५. किसान — १६ डाक्टर, वकील इत्यादि शहर का मध्यम वर्ग
१७ सिनेमा — १८. उद्योगपति
१९ विद्यार्थी — २०. ग्रामदानी गाँव
२१ भूदान-आदाता

(८) नौकरी पेशेवालों से एक दिन का वेतन माँगा जा सकता है। कई जगह शिक्षक, विद्यार्थी, पुलिस आदि छोटे छोटे

—हम सबके ध्यान में यह बात आनी चाहिए कि ग्रामस्वराज्य कोष एक करोड़ का काम केवल धन संग्रह का काम नहीं है। हर काम में धन की और साधना की आवश्यकता तो होती ही है—ग्रामदान आन्दोलन में भी उनकी आवश्यकता है और काफी बड़ी मात्रा में है—पर ग्राम-स्वराज्य-कोष के संग्रह का काम वास्तव में एक ऐसा अवसर है जिसके जरिये हम आन्दोलन का विचार और उसके काम की जानकारी अधिक से-अधिक लोगों तक पहुँचा सकते हैं। यह इस बात का भी अवसर उपस्थित करता है कि इस आन्दोलन के जनक और प्रेरक संत विनोबा के प्रति न सिर्फ हम कार्यकर्ता बल्कि आम जनता, जिनके हृदय में उनके प्रति श्रद्धा है, अपनी कृतज्ञता व्यक्त कर सकें। आशा है, हम सब इस अवसर का लाभ उठायेंगे।

ठाकुरदास बंग

मंत्री, सर्व सेवा संघ
गोपुरी, वर्धा

[illegible]

महामंत्री, ग्रामस्वराज्य-कोष समिति, नयी दिल्ली-१

सौदा हमेशा लाभ का
कीजिये...
घाटा क्यों उठाते हैं?
और लाभ का यह सौदा आपके सामने है। डाकघर में 5 वर्षीय टाइम डिपोज़िट यानी सावधि जमा। इसमें ब्याज 6¼% की ऊँची दरों पर दिया जाता है। इसमें जमा करने पर कोई सीमा भी नहीं है, जितना चाहें, जमा कीजिये। सावधि जमा 1 वर्ष (5¼% ब्याज) के लिये भी है और 3 वर्ष (6¼% ब्याज) के लिये भी किन्तु जमा की रकम 50 रु० के गुणितों में होनी चाहिये। और जमा के ये खाते एकल रूप में या संयुक्त रूप से भी खोले जा सकते हैं।
ब्याज की 3,000 रु० सालाना तक की रकम पर कर नहीं लगेगा। इस सीमा में बैंकों में जमा रकम पर मिलने वाला ब्याज भी शामिल है।
★ ब्याज सालाना दिया जायेगा
★ निर्धारित सीमा के अन्दर पर सम्पदा कर से भी छूट दी जायेगी
★ कर की रकम मूल रकम को लौटाने पर नहीं काटी जायेगी
पूरी जानकारी के लिये किसी भी डाकघर में सम्पर्क कीजिये या राष्ट्रीय बचत के जिला संगठक से मिलिये।
राष्ट्रीय
बचत संगठन

लोगों ने एक-एक रुपया देकर हजारों रुपयों का निधि दिया है। हर जिले में पाँच हजार से ज्यादा शिक्षक होते हैं और सौ से ऊपर माध्यमिक शालाएँ होती हैं। इनमें से हर शाला से १००-१२० रु० भी मिलें तो १०,००० रु० इकट्ठा हो सकता है। वैसे ही हर शिक्षक से एवं सरकारी कर्मचारी से औसत १ रु० मिले तो भी १०,००० रु० से अधिक रकम हो सकती है। शिक्षकों को एवं कर्मचारियों को वेतन मिलने के समय के ८-१० दिन पूर्व संगठनों के कार्यकर्ता एवं पंचायत समिति के सभापति, बी० डी० ओ० शिक्षण-अधिकारी, मिल मालिक आदि से मिलकर इस निधि में हिस्सा लेने के लिए उन्हें प्रवृत्त किया जाय। दो दिन पहले ही रसीद बुक उनके पास पहुँचायी जाय। वेतन बँटने के समय उनके नेता तथा हमारे कार्यकर्ता निधि इकट्ठा करें।

(९) कोष इकट्ठा करने का आरम्भ प्रथम अनुकूल लोगों से और बड़े मालिकों से किया जाय। उसका अच्छा असर होता है। ठीक ढंग से व्यापक योजना बनाकर और काम का बँटवारा करके उसका समय-पत्रक बनाकर हर तबके से धन इकट्ठा करने का काम शुरू करना चाहिए। बड़े लोगों को इन्कमटैक्स-मुक्त दान देने की सुविधा है, यह बताया जाय। जो पत्रक छपाया जाय, उसमें भी इसका जिक्र किया जा सकता है।

(१०) यह संगठन खड़ा करने के लिए हमारे प्रमुख कार्यकर्ताओं को हर प्रखण्ड में दौरा करके काम का ठीक ढंग से संयोजन करना चाहिए। शुरू में इस काम में थोड़ा खर्च भी लग सकता है।

(११) आखिरी क्षण तक कोष इकट्ठा होता रहता है। कुछ रसीद-बुक समय पर नहीं पहुँच पाती हैं। कुछ आश्वासन भी अधूरे रह जाते हैं। उसके लिए ११ सितम्बर के बाद भी कुछ समय तक कोष-संग्रह का काम चलता रह सकता है।

(१२) यह कोष पू० विनोबाजी की स्वीकृति के अनुसार ग्रामदान प्राप्ति और पुष्टि के काम के लिए ही खर्च होगा। इसकी पहले से ही स्पष्टता हो।

—सुमन बंग

ग्रामस्वराज्य-कोष

एक करोड़ रुपया इकट्ठा करने का तय किया है। यह ठीक है। एक करोड़ तीन साल में खर्च करेंगे, तो हर साल ३३ लाख रुपये होते हैं। हमने सर्वोदय-पात्र की माँग की थी कि पूरे हिन्दुस्तान में १० लाख सर्वोदय-पात्र चलें। उससे हर साल ३५ लाख रुपये होते हैं। एक करोड़ रुपये की माँग तीन साल के लिए बहुत सरल है, कठिन नहीं है।

छोटे लोगों से पैसा मिलेगा और अपना काम ऐंठ से चलेगा तो बड़े लोग आयेंगे और कहेंगे पैसा लीजिए।

ता० ८-४-'७०, गोपुरी, वर्धा।

—विनोबा

ग्रामस्वराज्य-कोष : केन्द्रीय समिति

ग्रामस्वराज्य कोष की एक केन्द्रीय समिति का गठन किया गया है, जो कोष संग्रह के सम्बन्ध में देश के भिन्न भिन्न भागों में काम कर रहे सर्वोदय कार्यकर्ताओं को दिशा निर्देश देगी। इस समिति में निम्नलिखित व्यक्ति हैं :

१	श्री जयप्रकाश नारायण	अध्यक्ष
२	श्री उ० न० ढेबर	उपाध्यक्ष
३	श्री श्रीमन्नारायण	"
४	श्री एन० महालिंगम्	"
५	श्री रं० रा० दिवाकर	"
६	श्री एस० जगन्नाथन्	सदस्य
७	श्री ठाकुरदास बंग	"
८	श्री रामेश्वर ठाकुर	"
९	श्री सिद्धराज ढड्ढा	कोषाध्यक्ष
१०	श्री राधाकृष्ण	महामंत्री
११	श्री देवेन्द्रकुमार गुप्ता	मंत्री
१२	श्री चरनसिंह भरकतिया	"
		"

राज्यों में कार्यारंभ

ग्रामस्वराज्य-कोष की केन्द्रीय समिति से निर्देश प्राप्त करते ही देश के विभिन्न भागों में काम कर रहे सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने कोष-संग्रह का कार्यारंभ कर दिया।

आन्ध्र प्रदेश और राजस्थान में कोष-संग्रह समितियों का गठन किया जा चुका है। आंध्र प्रदेश कोष संग्रह समिति का कार्यालय आंध्र प्रदेश सर्वोदय मण्डल, गांधी भवन, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश) में है, तथा श्री प्रभाकरजी और श्री उत्तम दत्तजी समिति के क्रमशः संयोजक तथा सह-संयोजक हैं।

श्री गोकुलभाई भट्ट की अध्यक्षता में गठित राजस्थान समिति का कार्यालय "राजस्थान समग्र सेवा संघ, किशोर-निवास, जयपुर-२" में है।

अन्य राज्यों में भी समितियाँ गठित करने के प्रयास चल रहे हैं।

पोचमपल्ली में

आन्ध्र प्रदेश के पोचमपल्ली गाँव के निवासियों ने २० तारीख को कोष के लिए १०१ रुपये का दान दिया। यही वह गाँव है जहाँ १९ साल पूर्व भूदान-आन्दोलन का जन्म हुआ था। कोष-संग्रह का उद्घाटन गाँव की बालवाड़ी के एक सदस्य ने पाँच रुपये प्रदान कर किया। इस गाँव ने कोष के लिए एक हजार रुपये एकत्र करने का संकल्प किया है।

असम में कोष संग्रह

मैं अप्रैल ३० से मई ३ तक असम में था। वहाँ कोष-संग्रह के काम का प्रारम्भ इन दिनों में किया गया। राज्यपाल ने ५०० रुपये मुख्यमंत्री श्री चालिहा ने १,००१ रुपए, एक उद्योगपति श्री रामनगीना सिंह ने ३५० रुपये, प्रसिद्ध सर्वोदय-कार्यकर्त्री श्रीमती अमलप्रभा दास ने ५,००० रुपये एवं अन्य रकम मिलाकर करीब ११,००० रुपये के कोष का श्रीगणेश किया गया। श्रमिक, सहकारी समितियाँ, उद्योगपति, शिक्षक इन स्रोतों से छोटी एवं बड़ी रकम इकट्ठा कर ४ लाख रुपयों के लक्ष्यांक तक पहुँचने की योजना बनायी गयी है।

—ठाकुरदास बंग

आन्दोलन के समाचार

उत्तर प्रदेश : ग्रामस्वराज्य-कोष में १८ लाख रुपये का संकल्प

उत्तरप्रदेश में ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह के निमित्त पहली बैठक ५ मई को लखनऊ में श्री गांधी आश्रम, शाहनजफ रोड में श्री विचित्रनारायण शर्मा की अध्यक्षता में हुई।

इस बैठक में ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह और विनियोग की पद्धतियों पर विशद चर्चा हुई और एक विधिवत् समिति बनाने का निश्चय हुआ, जिसके लिए श्री गांधी आश्रम के प्रधानमंत्री श्री विचित्र नारायण शर्मा से अनुरोध किया गया कि वे इस समिति के अध्यक्ष-पद को स्वीकार करें। उन्होंने सदस्यों के अनुरोध को स्वीकार किया और श्री अक्षयकुमार करण को मंत्री नियुक्त किया। समिति के अन्य सदस्यों का चयन कराने के लिए ७-८ जून को मथुरा में सभी जिलों के प्रमुख सर्वोदयी कार्यकर्ताओं की बैठक बुलायी जाने का भी निश्चय हुआ।

प्रदेश में जनसंख्या के अनुपात से ११ सितम्बर १९७० तक सर्वसम्मति से १८ लाख रुपये संग्रह करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। धनसंग्रह के लिए केन्द्रीय ग्रामस्वराज्य कोष-संग्रह समिति की ओर से ही उत्तरप्रदेश को रसीद बहियाँ और कूपन प्राप्त होंगे और जिलों में वहीं भेजे जायेंगे। उन्हीं अधिकृत रसीदों पर ही धन संग्रह किया जा सकेगा।

—कपिल अवस्थी

महाराष्ट्र

महाराष्ट्र में भंडारा जिले के प्रसिद्ध सर्वोदय-नेता श्री सेंदुर्णीकर वकील १००१, 'भूदान-यज्ञ' के प्रचारक श्री महादेवराव कुम्भारे १००१, डा० प्रमोदचन्द्र दास ५०१, सेवा समिति धापलगांव ५०१, सर्वोदय नेता श्री राधाकृष्ण बजाज, वर्धा ५०१, श्री राजमल ललवाणी, जामनेर, जिला जलगांव ने १००१ रुपये दिये हैं। जगह-जगह कोष-समितियाँ बनाकर काम का प्रारंभ किया जा रहा है। —ठाकुरदास बंग

भण्डारा और अकोला जिले में पद-यात्राएँ चलीं। ५० ग्रामदान हुए। भंडारा जिले में ६ गाँवों के कागजात पुष्टि की कार्यवाही के लिए दिये गये। रत्नागिरी जिले में मण्डणगढ़ तहसीलदान हुआ। पूना जिले में ३४ ग्रामदान मिले। सातारा जिले में पदयात्रा हुई। सांगली जिले में जिला सर्वोदय मण्डल का पुनर्गठन किया गया। वर्धा जिले में 'इन्सानी बिरादरी' की शाखा कायम हुई। महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल ने ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए २० लाख रुपये और ७ जिलादान ११ सितम्बर तक करने का निश्चय किया है। सासवड में महाराष्ट्र के प्रमुख कार्यकर्ताओं का तीन दिन का एक परिसंवाद हुआ। परिसंवाद में ग्रामदानी गाँवों में वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता और लोकशाही में लोकशक्ति का स्वरूप, इन विषयों पर चर्चा हुई।

—वसंत बोंबटकर

गुजरात

बड़ौदा जिले में "भूमिपुत्र" के ग्राहक बनाने का सघन प्रयास हुआ। गुजरात में इस माह 'भूमिपुत्र' के ६१८ ग्राहक बने। अहमदाबाद में राहत-कार्य चल रहा है, इस काम में मण्डल के चार-पाँच कार्यकर्ता लग रहे हैं। भरूच में भूकम्प आया। मेहसाना और बनासकांठा में अकाल है। गुजरात सर्वोदय-मण्डल के सभी कार्यकर्ता दिनांक २५ से ३१ तक अकालग्रस्त क्षेत्र में गये। इस क्षेत्र में ग्रामदान भी हुए हैं। राहत कार्य शुरू किया गया है। गरीब लोगों को सस्ती कीमत में अनाज मिले, इस प्रकार से कार्ड वितरित किये गये हैं। पदयात्री भाई-बहनों ने गाँव में जाकर हरेक परिवार का सर्वेक्षण किया। ग्रामसभाओं की बैठकें की गयीं। ऐसा अनुभव हुआ कि ग्रामदान हो जाने के बाद हम उन गाँवों की खबर तक नहीं लेते तो उसका बुरा प्रभाव होता है। २५ मार्च को गुजरात सर्वोदय-मण्डल की बैठक हुई। सौराष्ट्र के एक गाँव में हरिजनों की बेदखली को लेकर एक गम्भीर स्थिति का निर्माण हुआ है। सत्याग्रह भी करना पड़ रहा है। इसके लिए मण्डल ने एक समिति बनायी है। —कान्तिभाई शाह

बंगाल

श्री प्रनब विजय मुखर्जी सूचित करते हैं कि श्री चारुचन्द्र भण्डारी दक्षिण २४ परगना जिले के उपद्रवग्रस्त इलाके में अहिंसक प्रतिरोध आन्दोलन का संगठन कर रहे हैं। भूमिहीनों को जमीन दिलाने का आन्दोलन मेदिनीपुर जिले के केशवपुर अंचल और बाँकुड़ा जिले के सिमलापाल अंचल में शुरू करने का तय हुआ है।

बीघा कट्ठा का वितरण

जिला ग्रामस्वराज्य समिति के तत्वावधान में पटना जिला के रहुई प्रखण्ड के पाँची टोला गाँव में ४ मई को ग्रामीणों की एक ग्रामसभा हुई जिसकी अध्यक्षता रहुई प्रखण्ड के विकास पदाधिकारी ने की।

ग्रामदान-अधिनियम के अनुसार पाँची टोला गाँव के भूमिवानों ने अपनी जमीन का बीघा में कट्ठा की दर से ५५ कट्ठा जमीन भूमिहीनों के जोतने-बोने एवं फसल काटने के लिए दी है, जिसका गाँव के भूमिहीनों ने सर्वसम्मति से ३० भूमिहीन परिवारों के बीच वितरण किया है।

जिला ग्रामस्वराज्य-समिति पटना के मंत्री श्री कपिलदेव कुमार के नेतृत्व में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के एक दल ने लगभग दो सप्ताह तक रहुई प्रखण्ड की पदयात्रा की है। उनके प्रयास के फलस्वरूप पाँची टोली गाँव में ग्रामसभा का गठन किया गया है, जिसके अध्यक्ष एक भूमिहीन ही बनाया गया है।

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ३४

सोमवार २५ मई, '७०

सम्पादक
राममूर्ति?

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ५४२८५?

समाज-सेवा और राजनीति की प्रेरणा

प्रश्न समाजसेवा और राजनीति, इन दोनों की प्रेरणा कहाँ से मिलती है ?

विनोबा : इसका उत्तर हमारे शास्त्रकारों ने दे रखा है। मनुष्य में चार प्रेरणाएं काम करती हैं—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। इन्हें चार पुरुषार्थ कहते हैं : यह जो प्रेरणा का विश्लेषण है वह भारतीय चिन्तन की एक विशेषता है। इतना बारीक, सूक्ष्म विश्लेषण और कहीं नहीं मिलता है। आधुनिक युग में मानसशास्त्र का विकास हुआ है, विज्ञान की भी उसे मदद मिलती है। फिर भी इस तरह का विश्लेषण देखने को नहीं मिला है। इन चार प्रेरणाओं में धर्म, अर्थ और काम—ये तीन प्रेरणाएं मनुष्य को समाजसेवा और राजनीति की तरफ ले जाती हैं। मोक्ष की प्रेरणा स्वतंत्र है। वह जिस मनुष्य को होती है वह सब छोड़कर परमेश्वर-चिन्तन में लग जाता है। आप देखते हैं, मजदूर हड़ताल करते हैं। उनको मजदूरी कम मिलती है, उनका शोषण होता है। इसलिए हड़ताल होती है। यह अर्थ-प्रेरणा ही काम करती है। उनको पूरा अर्थ मिलता है तो भी सन्तोष नहीं होता है। इसके अलावा कुछ कर्तव्य की भावना होती है। फलाना कानून प्रतिकूल है, तो उसे तोड़ना धर्म मालूम होता है। जैसे गांधीजी को प्रेरणा हुई। नमक न बनाने का कानून था। गांधीजी ने कहा, 'नमक बनाने का अधिकार सबको होना चाहिए। यह कानून अनैतिक (इम्मोरल) है। इसलिए वह तोड़ना धर्म है', यों कहकर गांधीजी ने नमक-सत्याग्रह किया। इस तरह कहीं अर्थ प्रेरणा, कहीं धर्म-प्रेरणा काम करती है। वासनातृप्ति नहीं होती है तो मनुष्य उठ खड़ा होता है जाति बनाता है। यह काम-प्रेरणा ही है। अपनी जाति बढ़े इसलिए अपनी जाति में ही विवाह हो, अपना वंश बढ़े, यह काम-प्रेरणा है। ये तीन प्रेरणाएं काम करती हैं। इसलिए शास्त्रकारों ने कहा, 'धर्मार्थकामाः सममेव सेव्याः'—धर्म, अर्थ और काम का समान सेवन होना चाहिए, यानी समत्व, संयम होना चाहिए।

इतनी मानसिक तृप्ति हो गयी तो मनुष्य मोक्ष की तरफ जाता है, या तो कोई इन तीनों की परवाह किये बगैर ही मोक्ष की तरफ जाता है। गीता ने समझाया है कि मोक्ष-प्रेरणा हो तो भी लोगों में जाकर सद्विचार समझाना चाहिए। लोगों के स्तर पर जाकर निष्काम बुद्धि से यह काम करना चाहिए। गांव में आग लगी हो तो मुक्ति की साधना करनेवाला भी आग बुझाने के लिए दौड़ेगा, क्योंकि वह सामाजिक कर्तव्य है।

गोपुरी, वर्धा, मार्च '७०। प्र० आ० युवक कांग्रेस के अध्यक्ष, श्री दासप्पा? से हुई चर्चा से।

सम्पादकीय

लोकतंत्र का शत्रु कौन ?

यह कहा जा रहा है कि नक्सालवादियों के कारण देश के लोकतन्त्र के लिए जबरदस्त खतरा पैदा हो गया है। कैसे ? इस-लिए कि वे हिंसा में विश्वास करते हैं। वे नहीं मानते कि आज की राजनीति, प्रशासन, भूमि-व्यवस्था, व्यापार, शिक्षण, आदि में चुनाव और संविधान के रास्ते कोई सुधार हो सकता है। भीतर से सुधार नहीं, तो बाहर से प्रहार—यह उनकी नीति है।

एक बार शांति का रास्ता छोड़ने पर हिंसा के सिवाय दूसरा क्या रह जाता है ? अभी उनकी हिंसा आतंक तक सीमित है। चुन-चुनकर व्यक्तियों की हत्या, लूट, तथा किसी विद्यालय या कारखाने में उत्पात मचा देना उनका काम है। वे मानते हैं कि ऐसा करने से मालिक और शासक-वर्ग, जिसे वे वर्ग शत्रु मानते हैं, आतंकित हो जायगा, तथा गरीब जो दबे हुए हैं उभर आयेंगे। इसमें भी अधिक, हिंसक कार्रवाइयों से जनता के सामने कानून और संविधान से अलग प्रत्यक्ष कार्रवाई (डाइरेक्ट ऐक्शन) का एक नया रास्ता खुल जायगा जिसमें उसकी लाठी भी काम आ जायगी। यह पूर्व-तैयारी है। बाद का काम, यानी राज्य पर कब्जा, छापामार युद्ध से (गेरिल्ला वार) तथा चीन की मुक्ति-सेना से पूरा होगा। यह है हिंसक विद्रोह की पूरी व्यूह-रचना।

नक्सालवादियों की संख्या कितनी है ? ज्यादा-से-ज्यादा कुछ हजार। और देश में कुल वोटरों की संख्या कितनी है ? २५ करोड़। तो, क्या हमें यह भय है कि ये कुछ हजार इन करोड़ों वोटरों से अधिक शक्तिशाली हैं ? अगर ये वोटर लोकतन्त्र को कायम रखना चाहें तो किस तरह मुट्ठी भर युवक उसे तोड़ डालेंगे ? क्या लोकतांत्रिक राज्य की सैनिक-शक्ति, जो संगठित हिंसा की ही शक्ति है, नक्सालवादियों की छिट-फुट हिंसा का मुकाबला नहीं कर सकती ? क्यों हम अपने लोकतन्त्र के लिए नक्सालवादियों के कारण इतने भयभीत हो उठे हैं ?

माओवादी, मार्क्सवादी, मास्कोवादी, तीनों के मन में मौजूदा लोकतन्त्र और उसके ढाँचे से नफरत है। वे मानते हैं कि गरीबों की एक पार्टी हो—एक ही पार्टी हो—और उस पार्टी की तानाशाही हो। उनकी सारी हिंसा की प्रेरणा के दो स्रोत हैं—एक, गरीबों के लिए प्रेम, दूसरा, गरीबों का दमन और शोषण करनेवाली व्यवस्था के लिए घृणा। यह मान लेना भूल है कि नक्सालवादी उस तरह के बदमाश हैं जो अपनी धन-लिप्सा, अधिकार-लिप्सा, या काम-लिप्सा के लिए तरह-तरह के अपराध करते फिरते हैं।

मौजूदा सामाजिक व्यवस्था तथा कानून और संविधान से नफरत फासिस्टवादियों को भी है, लेकिन उनके मन में शोषितों के लिए वह आत्यंतिक प्रेम या अन्याय के विरुद्ध वह तीव्र प्रतिकार-भावना नहीं है जो दूसरों के मन में है।

इस देश में नक्सालवादी-साम्यवादी ही हिंसा में विश्वास न करते, सम्प्रदायवादी, क्षेत्रवादी, भाषावादी और जातिवादी ः करते हैं। उग्र साम्यवादी और साम्प्रदायवादी, दोनों का समा प्रहार गांधी पर है। अन्तर इतना है कि एक खुलेआम गांधी चित्र तोड़ता है, उनकी किताबें जलाता है, और दूसरा प्रचार औ वर्षों के सम्पर्क द्वारा धीरे-धीरे तरुणों और युवकों के दिमाग गांधी को निकालता है। एक, गांधी को वर्ग-शत्रु मानता है औ दूसरा, राष्ट्रद्रोही। लेकिन दोनों मानते हैं कि अहिंसक प्रतिका और अहिंसक विद्रोह की उनकी सारी पद्धति निकम्मी है। इस लिए अगर हिंसा से लोकतन्त्र को खतरा हो तो इस देश में अकेले नक्सालवादी ही हिंसा के उपासक नहीं हैं।

लोकतन्त्र के लिए असली खतरा दूसरा है। अभी हाल में फैजाबाद की एक आमसभा में बोलते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि लोकतंत्र के लिए सबसे जबरदस्त खतरा उनसे है, जो लोकतन्त्र को चला रहे हैं। लोकतन्त्र को कौन चला रहे हैं ? गद्दी-धारी और डिग्रीधारी। गद्दीधारी नेता हैं, डिग्रीधारी अफसर और प्रोफेसर हैं, साहित्यकार और पत्रकार हैं, वकील और विशेषज्ञ हैं। इन्हीसे आज का लोकतन्त्र चल रहा है। वोटर तो समय पर वोट दे देता है, और जब नहीं बच पाता तो टैक्स दे देता है। बस, उसका इस लोकतन्त्र में इतना ही काम है।

गद्दीधारियों ने, जिनमें गद्दी पर जो बैठे हुए हैं तथा वे विरोधी जो गद्दी के लिए लड़ रहे हैं सभी शामिल हैं मान लिया है कि उनकी गद्दी ही लोकतन्त्र है, और यह सारा चुनाव और संविधान उन्हें गद्दी दिलाने के लिए ही है। शुद्ध चुनाव और योग्य प्रतिनिधि लोकतन्त्र की सफलता की पहली शर्त है। गद्दी-धारियों ने दोनों को भ्रष्ट कर डाला है। इतना भ्रष्ट कर डाला है कि चुनाव और राजनीति गुंडागिरी के दूसरे नाम बन गये हैं। उनमें न शरीफ के लिए जगह रह गयी है, और न गरीब के लिए। हमारे प्रतिनिधि देश और सिद्धान्त को छोड़कर गद्दी के बाजार में बिकाऊ माल हो गये हैं।

मन्त्रालय, विद्यालय, न्यायालय, यानी लोकतन्त्र का पूरा तन्त्र डिग्रीधारियों द्वारा संचालित है। ये ही देश के लिए योजना बनाते हैं, प्रशासन चलाते हैं, न्याय देते हैं, और भारत के भावी नागरिक तैयार करते हैं। पत्रकार इनके ही किये हुए कामों का, और कही हुई बातों का, प्रचार करते हैं। इन्हींके इर्द-गिर्द साहित्यकार भी घूमते हैं।

यह है हमारे लोकतन्त्र का रूप। पिछले तेईस वर्षों में गद्दीधारियों और डिग्रीधारियों ने क्या किया है ? कैसा जी रहा है इस देश का नागरिक, और क्या बन रहे हैं हमारे तरुण और तरुणियाँ ? कितनों को मयस्सर है ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी ? कितनों को आशा रह गयी है एक सुखी, शान्त भविष्य की ? निगाह उठाकर देखिए तो ऐसा लगता है जैसे यह देश तथा इसके सब साधन इन मुट्ठीभर गद्दीधारियों और डिग्री-धारियों के ही लिए बने हैं। दूसरे सब लोग पराये हैं; गुलाम हैं,→

भारत की सांस्कृतिक गरिमा, विक्षोभ की परिस्थिति और शान्तिसैनिक की कार्य-दिशा

—नेफा में शान्तिसैनिकों के बीच विनोबा का प्रेरक प्रवचन—

यूरोप के लोग हमसे हर बात मे आगे हैं, ऐसा मानने का रिवाज पड गया है। विज्ञान में वे लोग आगे थे, इसमे कोई शक नहीं, और अब भी इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी वगैरह कुछ राष्ट्र विज्ञान मे हिन्दुस्तान से आगे गये हैं। लेकिन जहाँ तक समाजशास्त्र का ताल्लुक है वे लोग बहुत पिछड़े हुए हैं। यूरोप का नक्शा हम लोगो ने देखा है। उसमे रूस को हटा दें तो बाकी का जो भाग रहेगा वह भारत की बराबरी मे आयेगा। क्षेत्रफल और आबादी के ख्याल से भी हिन्दुस्तान के बराबर है। उतने ही क्षेत्र मे १५-२० भाषाएँ हैं, वैसे ही भारत मे भी है। लेकिन भारत मे एक-एक भाषा का राष्ट्र नहीं बना है, बल्कि हम लोगों ने एक-एक भाषा का एक एक प्रान्त बनाया है। उन लोगों ने एक-एक राष्ट्र बनाया है।

भारत की विशालता

मैं बिहार मे दरभगा जिले में था। वह जिला ग्रामदान में आ गया था। उस वक्त हमसे मिलने के लिए डेनमार्क का एक भाई आया था। मेरे कमरे मे नक्शा टँगा हुआ था दरभगा का। उसमे दिखाया गया था कि सारा दरभगा ग्रामदान में आ गया है और यह ५५ लाख की आबादी का जिला है। वह देखकर उसने कहा, 'दरभगा इज डेनमार्क' (दरभगा डेनमार्क के बराबर है)। क्योंकि डेनमार्क की भी आबादी ५५-६० लाख के लगभग है। इसका उसको आश्चर्य हुआ कि सारा-का-सारा राष्ट्र ग्रामदान में आ गया। मैंने कहा, 'ठीक है, लेकिन यहाँ पर उसको जिला कहते हैं। हिन्दुस्तान मे ३०० जिले हैं। ऐसे दरभगा की बराबरी के १०० जिले हो जायेंगे।' उसको आश्चर्य हुआ कि इतना बडा राष्ट्र ग्रामदान मे आ गया, बडी अद्भुत बात है। ऐसे छोटे-छोटे राष्ट्रों को उनकी आदत है। एक दूसरे राष्ट्र म जाना हो तो 'पासपोर्ट' चाहिए, 'वीसा' चाहिए। व्यापार के लिए इजाजत नहीं है। 'कामन मार्केट' (साझा बाजार) की बहुत कोशिश हो रही है, ताकि व्यापार के लिए इधर से उधर जाने के लिए सहूलियत हो। लेकिन अभी तक वह नहीं हो सका है। उसमे मतभेद है। लेकिन हिन्दुस्तान मे सारे भारत के लोग व्यापार करते हैं। असम के लोगों को मालूम ही है कि यहाँ पर व्यापार करनेवाले कहाँ-कहाँ के लोग होते हैं। आखिरी हद तक भी आप जायें तो वहाँ व्यापारी राजस्थान के होंगे। यहाँ 'कामन मार्केट' है, और इतने बडे देश के लिए एक सेंटर (केन्द्र) है, एक आर्मी (सेना) है, यह बहुत बडी बात है। और ऐसे कामो के लिए, शान्ति-सेना के काम के लिए, भारत के इतने सारे लोग इकट्ठा होते हैं। यूरोप में यह नही हो सकता। मनोरंजन के लिए इकट्ठा हो सकते हैं। संगीत के लिए दुनिया भर के लोगों को इकट्ठा होने के लिए 'पासपोर्ट' मिल जाता है। लेकिन इंग्लैण्ड के लोग निकले हैं, और स्पेन में पहुँचकर काम कर रहे हैं, ऐसा आपको दिखाई नहीं देगा।

बातें छोटी, लेकिन उपेक्षा नहीं

यह सब आप लोगों के सामने इसलिए रखा कि भारत की जो महिमा है उसका हमको ख्याल होना चाहिए। यह महिमा जब हम याद करते हैं तो भारत में जो दगे होते हैं वह कुछ है ही नही, ऐसा लगता है। चाइबासा मे रामनवमी के दिन जुलूस पर बम फेंके गये। सिंहभूम जिले की यह घटना कुल भारत मे फैल गयी। उसमे २०-२५ लोग मारे गये,

---

→उनकी मर्जी के। इतना सब होते हुए भी सरकार के प्रचार और विद्यालयों की पढाई का ऐसा जबरदस्त धुध छाया हुआ है कि जनता तक सत्य पहुँच नहीं पाता। पहुँचने दिया नहीं जाता। वास्तव मे नक्सालवाद का जन्म नेतृत्व की इसी विफलता के कारण हुआ है। शुरू से सरकार के सामने समाज का कोई नक्शा नहीं रहा। नेताओ, शासकों और विशेषज्ञों ने अंग्रेजी ढांचे को चलाते रहने मे ही अपने विशेषाधिकारों की रक्षा देखी। किसने परवाह की उस 'अंतिम व्यक्ति' की जिसकी गाधी ने बार-बार याद दिलायी थी, और जिसको ही उन्होंने सारे विकास का मापदण्ड माना था?

सरकारों ने कानून बनाने में कमी नहीं की। सब कानून आलमारियों मे बन्द पडे हैं। लेकिन दृढ़तापूर्वक उन्हें लागू करने की कोशिश नहीं हुई। अगर हुई होती तो कौन भूमिहीन बनता आज नक्सालवादी होने को? क्यों होता इतना रोष हरिजनो, आदिवासियों के मन मे? अगर शिक्षानीति बदली होती तो क्यो यह बेकारी होती, और क्यों हमारे युवक हमसे बदला लेने के लिए जगलो-पहाडों में जान हथेली पर रखकर मारे-मारे फिरते? भूमिहीन मजदूर और भविष्यहीन युवक का नक्सालवाद हमारे अन्याय का ही जवाब है। विनोबा ने मांग की कि देश की भूमि का बीसवां भाग भूमिहीनों के लिए निकाल दो, और गाँवों का उद्योगीकरण करो। लेकिन नेताओं ने कहा यह अव्यावहारिक है, शासकों ने; विशेषज्ञों ने कहा अवैज्ञानिक है। अव्यावहारिक और अवैज्ञानिक कहकर कब तक हम पीडितो को, बेकारो को, धोखे मे रखेंगे?

अब हमारे पास नक्सालवाद का क्या जवाब है? क्या यही राजनीति, यही प्रशासन, और यही शिक्षा? या एक ऐसा नया समाज जिसमे सबके लिए सम्मान का स्थान हो? अशान्ति का उत्तर दमन नहीं है, क्रान्ति है। शान्ति की शक्ति से क्रान्ति होगी तो लोकतत्र सच्चा होगा, सुदृढ होगा। बन्दूक मे भय का राज होगा। उस राज मे गरीब गुलाम बनेगा।●

पुलिस को गोली चलानी पड़ी। अब हिन्दुस्तान मे ५५ करोड लोग हैं, उसमे अगर २०-२५ मरे तो कुछ विशेष नहीं हुआ। लेकिन उसकी रिपोर्ट भारत मे ही नहीं, अमेरिका और यूरोप में भी फैल गयी। मान लीजिए, यह घटना २०० साल पहले हुई होती तो पता ही नही चलता। तो, इतने दंगे भारत मे हो रहे हैं, मैं समझता हूं कुछ भी नहीं हो रहे हैं। ५५ करोड मे से ५५ लाख लोग दंगा करेंगे तो वह केवल १ प्रतिशत होगा, और ५५ लाख के बदले ५५ हजार लोग करेंगे तो वह दसवां हिस्सा होगा। ऐसे थोड़े दंगे होते हैं तो कोई खास बात नहीं। जब हम यह ख्याल करते हैं कि इतना सारा देश एक कर रखा गया है, तो हम पर बहुत बडी जिम्मेदारी आती है। इतनी बडी जिम्मेदारी होने के साथ-साथ इन छोटी बातों की उपेक्षा हम करें, ऐसा नहीं। क्योंकि जहर थोडा भी शरीर मे जाय तो वह नुकसान करेगा। इस वास्ते बराबर कोशिश करें। लेकिन अपनी नीद मे जरा भी खलल नही पहुंचनी चाहिए, यों समझकरके कि कुछ भी नहीं है। ऐसा जब मानस बनेगा तब वह होगा शांति-सैनिक। नहीं तो उसके दिमाग मे अशांति आ जाय तो वह सब खो देगा।

असम मे दंगा हो रहा था। बंगाली लोग मारे जा रहे थे। मैं पदयात्रा कर रहा था। पं० नेहरू ने मुझसे कहा था कि आप वहां जायेंगे तो अच्छा होगा। मैंने 'जाऊंगा' कहा, और पदयात्रा मे ५ महीने के बाद पहुंच गया। पं० नेहरू से किसीने कहा कि 'आपने उनको जाने के लिए कहा और उन्होंने हां कहा, और तुरन्त आपको लिख दिया कि जा रहा हूं लेकिन पदयात्रा छोड़ी नहीं। पदयात्रा का दूरवाला रास्ता कायम रखा और पांच महीने के बाद वे पहुंचेंगे, यह कितना विचित्र है।" हमारे साथियो ने भी हमसे कहा था कि ऐसे मौके पर पदयात्रा छोडकर जाना चाहिए। मैंने कहा, 'हाथी चलत है अपनी गति से!' आगे का बोलने का है नहीं। वह अपने हक मे नहीं है, कबीर का है। यह जब पं० नेहरू के सामने रखा तो वे बोले कि 'उनकी हालत में मैं होता तो मैं भी ऐसा ही करता।' तब हमारे साथियों की समझ म भी आया कि बाबा ठीक कर रहा है। क्योंकि अपना जो कार्य है, उस कार्य को करते हुए जाना था। तुरन्त चले जाते तो लोगों को लगता कि क्या भयानक हुआ!

वहां पर यूरोप के एक भाई हमारे साथ थे। उन्होंने कहा कि कितना भयकर है यह मारा! मैने कहा, 'यह हमारे लिए बड़े अभिमान की बात है कि हमारे देश मे ऐसे दंगे होते हैं।' तो वह देखते ही रहा। मैंने कहा, 'ऐसे दंगे अगर यूरोप मे हो जायें तो उसको इंटरनेशनल (अन्तर्राष्ट्रीय) दंगे कहेंगे, नेशनल (राष्ट्रीय) नहीं और हमारा यह इंटरनेशनल (अन्तर्राष्ट्रीय) नही, नेशनल (राष्ट्रीय) है।' इतना बडा राष्ट्र बनाया है तो ऐसी छोटी छोटी घटनाएं हो ही जाती हैं, कोई बडी बात नहीं। असम और बंगाल की अलग-अलग सेना होती और उस हालत मे दंगे होते तो 'इण्टरनेशनल वार' (अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध) का रूप आ जाता। लेकिन भारत मे ऐसा नहीं है। यह बाबा के कहने की बात नहीं है। अंग्रेज इतिहासकार ने लिखा है कि अंग्रेज जब सन् १६०० म आये तो भारत मे सब दूर सिविल-वार (गृह-युद्ध) हो रही थी। मतलब ३०० साल पहले सारा भारत अंग्रेज इतिहासकारों ने एक माना।

इस वास्ते आप लोगों को कभी भी अफसोस नहीं करना चाहिए कि यहां पर दंगे होते हैं। हम लोग अत्यन्त शान्त हैं, इस वास्ते इतने कम दंगे होते हैं यह अगर ध्यान में न आ जाय तो बुड्ढा जियेगा कैसे?

मुझे पूछा जाता है कि आजकल विद्यार्थियो मे खूब दंगा चलता है। मैं कहता हूं कि यह कितने आश्चर्य की बात है। विद्यार्थी ज्यादातर शान्त दिखते हैं। केवल एक प्रतिशत दंगा करते हैं। मैने कहा कि यदि मैं उनकी जगह होता तो और ज्यादा दंगा करता। ऐसी खराब हालत शिक्षण की है कि नौकरी का ठिकाना नहीं और स्वतंत्र रूप से कुछ कर सकते नहीं। तो इतने कम दंगे कैसे होते हैं? उसका एक ही उत्तर मिलता है कि भारतीय संस्कृति मे सभ्यता है, उसके कारण लोग अनुशासन का पालन करते हैं।

वैभव के शिखर पर पहुंचा अमेरिका

अमेरिका बिल्कुल वैभव के शिखर पर पहुंचा हुआ देश है, लेकिन वहां पर कितने प्रकार के 'मन्यु' हैं? मन्यु शब्द वैदिक है। वेद मे आता है कि मन्यु मुझे तकलीफ देते हैं। मन्यु याने मेनिया इंग्लिश म कहते हैं। मेनिया का वहां एक स्वतंत्र विभाग है। अनेक प्रकार के मन्यु हैं। छोटी छोटी बातो मे भी हत्याएं हो जाती हैं। मां ने जल्दी खिलाया नहीं, बेटे को गुस्सा आ गया और पिस्तौल निकाला, शूट कर दिया।

मैं यह कह रहा था कि अपने देश की व्यापकता और अत्यन्त दारिद्रय, इन दोनों को देखते हुए इतने कम दंगे होते हैं इसका आश्चर्य होता है। ऐसा क्यो है, तो एक ही उत्तर है कि भारतीय संस्कृति के कारण—दूसरा कोई उत्तर हो नहीं सकता।

कालपुरुष की मॉंग

अपना काम अच्छा चल रहा है सब दूर, लेकिन कालपुरुष की मांग है कि तीव्रता चाहिए, उतना तीव्र नहीं है। बंगाल तो आपके हाथ से गया। केरल भी गया ही है और बिहार में काम पूरा नहीं हुआ, तो बंगाल का आक्रमण बिहार पर होगा। नक्सलवादी बिहार मे आयेंगे। और यदि बिहार का पूरा हुआ तो बिहार का बंगाल पर चलेगा।

गोपुरी, वर्धा : ९-४-'७०

—विनोबा

कानून और अहिंसा

प्रश्न—हिंसा को अहिंसा में बदलने के लिए कानून के अलावा और कौनसा मार्ग है ?

विनोबा—कानून का आधार ही हिंसा पर है। कानून का लोग अमल करें, ऐसा कानून चाहता है। नहीं करेंगे तो 'मिलीटरी' आयेगी। इसलिए कानून के द्वारा अहिंसा कभी लायी नहीं जा सकती, क्योंकि उसका आधार मिलीटरी है। अगर अहिंसा लानी हो तो जन शक्ति के द्वारा लायी जा सकती है। कानून मिनिमम होता है, कम-से-कम चीज कानून करता है। 'मिनिमम मारल'—चोरी नहीं करना, किसीका खून नहीं करना, उसका नाम है कानून। अहिंसा लाना यह कानून का कार्य नहीं है। यह आपका-हमारा सबका काम है।

गोपुरी, वर्धा : २८-४-७०

—विनोबा

अक्षोभ मन, एकाकी पुरुषार्थ

आप लोग नेफा में जायेंगे और कुछ लोग वहाँ काम करते भी हैं। तो अब यह सोचने की बात है कि अपने देश की हालत अपने सामने रखें। हम लोगों ने उनकी कितनी उपेक्षा की है। असम में पहाड़ियों में जो आदिवासी लोग हैं उनकी ५० से ज्यादा भाषाएँ हैं। उन सभी भाषाओं में बाइबिल का अनुवाद है, जिन भाषाओं में अपना एक भी ग्रन्थ नहीं है। ऐसी एक हजार भाषाओं में बाइबिल का अनुवाद हुआ है और वह भी पूरे १२०० पन्ने की बाइबिल का। उसका पूरा अनुवाद उन-उन भाषाओं में और रोमन लिपि में उन्होंने प्रकाशित किया है। यह उन्होंने कितना पुरुषार्थ किया और हम लोगों ने उनके लिए कुछ नहीं किया।

अब एक बाजू हमने भारत की विशेषता बतायी और दूसरी बाजू उपेक्षा का आरोप किया। क्योंकि आपने बड़ी जिम्मेदारी उठायी है तो आपका यह 'मिशन' होना चाहिए कि वहाँ ज्ञान फैले। वह हुआ नहीं। बीच के जमाने में बहुत गहरी निद्रा हम लोगों को आ गयी, जिसके परिणामस्वरूप भारत ने अपनी आजादी खोयी। अब आजादी दुबारा मिली है लेकिन हजारों वर्षों के बाद यह जागृत हुआ देश है। आज विज्ञान के जमाने में खबरें एकदम फैलती हैं तो बहुत भयंकर हुआ, ऐसा आभास होता है।

आज मैं आप लोगों से कहनेवाला था कि आपको भारत की महिमा का भान हो और जो दंगे होते हैं उसके कारण मन में विक्षोभ होने की जरूरत नहीं, बल्कि अपमानित होने का भी कारण नहीं। यह मुख्य बात कहनी थी। दूसरी बात यह थी कि आप लोग दूर-दूर जायेंगे। आजकल तो आने-जाने के साधन सुलभ हो गये हैं इस वास्ते जल्दी पहुँच सकते हैं। फिर भी एक बार वहाँ आप पहुँच जायें तो वहाँ से 'कट-आफ' हो जायेंगे। तीन-चार टीले मिलाकर एक गाँव होता है। ऐसे जंगलों में जहाँ आप रहेंगे, वहाँ पर आपका अखबार पहुँचेगा। लेकिन यह सारा पहुँचकर भी सहाय करनेवाले आप ही होंगे। कहा है कि 'पुरुषार्थ एकाकी कुर्यात्' पुरुषार्थ अकेले को करना चाहिए। सवाल यह है कि जो अकेला काम करनेवाला है उसके हृदय में कौनसी ताकत चाहिए? अकेलापन जरा भी महसूस नहीं होना चाहिए, बल्कि यह होना चाहिए कि जो सामने कुत्ता दिखता है, वह भी हमारे साथ है। ईसपनीति आप लोगों ने पढ़ी होगी। मुझे लोग पूछते हैं कि आपको कौनसी किताब सर्वप्रिय है तो मैं तीन किताबों का नाम देता हूँ—१. ईसपनीति कथा, २. यूक्लीड की भूमिति और ३. गीता, और तीनों छोटी हैं। ईसपनीति में सब जानवर बात कर रहे हैं, चर्चा कर रहे हैं।....'विचारपोथी' में हमने लिखा है कि रात को सोया था तो कुत्ता खूब जोर से भूँका, तो बड़ा दुःख हुआ, लेकिन सुबह उठा तो पता चला कि उसके भूँकने से चोर भाग गये, तो बड़ा आनन्द हुआ।..

सर्वत्र हरिदर्शन

मैं कहता यह था कि आप अकेले नहीं रहेंगे आपके साथ चींटियाँ भी होंगी। वैज्ञानिकों ने यह कहा है कि कुछ करोड़ साल के बाद मानव मिट जायेगा, लेकिन चींटियाँ आगे भी रहेंगी। चींटियों का सामूहिक जीवन आपको देखने को मिलेगा। तो आप अकेले नहीं, अनेक के साथ हैं। ऐसी भावना होनी चाहिए कि सर्वत्र हरि-दर्शन, स्नेह हो, तब ऐसे मौके पर अकेले भी जूझ सकते हैं। मौका आयेगा तो अकेले करना पड़ेगा। मृत्यु के बाद का जो उद्योग है, वह किया जा सकता है, परन्तु आपको तुरन्त मदद पहुँचाना सम्भव नहीं है। इस वास्ते आप अकेले हैं, फिर भी पराक्रम होना चाहिए, हिम्मत होनी चाहिए। इसका अर्थ यह है कि आत्मशक्ति होनी चाहिए। नामदेव ने बताया है—'एकले चि येणे एकले चि जाणें'—अकेले आये हैं और अकेले जायेंगे। नामदेव महाराज की इस साल सप्त-शताब्दी मनायी जायेगी। फिर मनु महाराज लिख रहे हैं—जाने के समय पति, पुत्र कोई भी साथ जानेवाला नहीं है, केवल जिस धर्म का आचरण किया होगा वही तुम्हारे साथ आयेगा, बाकी सब यहीं ही छूट जायेगा। इस वास्ते इतने दूर के स्थलों में काम करनेवाले का चित्त अध्यात्मनिष्ठ होना चाहिए। आसपास के सब लोग और प्राणियों के साथ ऐसा महसूस होना चाहिए कि वे अपने साथ हैं। सर्वत्र हरि-भावना हम लोगों में होनी चाहिए। ईश्वर पर उत्तम श्रद्धा हो। आइजनहावर अमेरिका का एक बड़ा सेनापति हो गया। उससे कुछ प्रश्न पूछे गये थे। उनका उत्तर उन्होंने लिखित दिया। एक प्रश्न था कि आपको ईश्वर पर श्रद्धा है क्या? उत्तर दिया—'सिपाही समरांगण में जाकर ईश्वर की श्रद्धा के बिना काम काम करता होगा क्या? जहाँ मृत्यु के साथ मुकाबला करना पड़ता है वहाँ पर ईश्वर पर श्रद्धा रखकर काम करना पड़ता है, ऐसा उन्होंने उत्तर दिया।

—(गोपुरी, वर्धा : २८-४-७०)

गांधीजी : कोसलर का मत—कृपालानी का उत्तर

कुछ प्रारम्भिक कठिनाइयाँ

गांधीजी के विचारों को समझने में एक कठिनाई है। गांधीजी पुराने जमाने के सुधारकों और ऋषियों की तरह उन व्यक्तियों में थे जो किसी नये विचार, नये सिद्धान्त, या किसी नये सत्य को लम्बे अध्ययन या प्रयोग से नहीं प्राप्त करते, बल्कि उन्हें यह प्राप्ति उनकी आन्तरिक प्रतिभा (इनट्यूशन) से होती है। सत्य पहले सूझ जाता है। शोध और प्रयोग उसके बाद शुरू होते हैं। सत्य-प्राप्ति की यह पद्धति असाधारण है, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि इस तरह सत्य अपने में दूषित या अपूर्ण है। कभी-कभी गांधीजी स्वयं अपने किसी सिद्धान्त या मान्यता को वैज्ञानिक तर्क से नहीं सिद्ध कर पाते थे, लेकिन इससे उसका मूल्य नहीं घटता था, क्योंकि व्यावहारिक दृष्टि से वे सही और उपयोगी सिद्ध होते थे। शायद कोसलर को नहीं मालूम होगा कि अंग्रेज अधिकारी, जिन्हें गांधी के विद्रोह का मुकाबला करना पड़ता था, जानते थे कि गांधी एक अत्यन्त व्यावहारिक व्यक्ति ही नहीं, बल्कि एक खतरनाक प्रतिद्वंद्वी हैं।

आज के बुद्धिवादी जैसा समझते हैं, उस अर्थ में गांधीजी 'बुद्धिवादी' नहीं थे। उन्होंने कोई विषय लेकर पुस्तकालयों में अध्ययन नहीं किया था। उन्होंने भारत के सामने खादी की बात रखी। खादी देश के गाँवों में फैले बेकारों और अर्द्ध-बेकारों को काम देती है। खादी को प्रस्तुत करते हुए गांधीजी ने अर्थशास्त्र के अनुसार विकेन्द्रित उद्योग के उत्पादन, वितरण, और विनिमय का सारा शास्त्र नहीं प्रस्तुत किया था। उन्होंने 'मूल्य सिद्धान्त' की भी चर्चा नहीं की। उन्होंने इतना ही सोचा कि भारत के खेतिहर के पास समय है। उसे काम चाहिए। काम भी ऐसा चाहिए जिसके कारण उसे घर न छोड़ना पड़े, और घर बैठे कुछ मजदूरी मिल जाय। गांधीजी जानते थे कि बंग-भंग आन्दोलन के समय का स्वदेशी कपड़े का आन्दोलन विफल हो चुका था, क्योंकि उसमें मिलों पर भरोसा किया गया था। यह भूल उन्होंने सुधार ली, और कहा कि भरोसा मिलों पर नहीं, बल्कि स्वयं गाँव-वालों के उत्पादन पर करना चाहिए। वे उत्पादन करें, बाजार के लिए नहीं, अपने लिए।

गांधीजी को समझने में एक दूसरी कठिनाई भी है। वह है उनकी भाषा की। वह विद्वानों की भाषा नहीं बोलते लिखते थे। उनकी भाषा सामान्य मनुष्यों की होती थी। वह परमेश्वर को राम कहते थे, जिसे हर हिन्दू जानता है। गांधीजी नहीं चाहते थे कि जिस श्रद्धा के बल पर सामान्य व्यक्ति जीवित है, उससे उसे अलग किया जाय। लेकिन गांधीजी ने स्पष्ट कर दिया था कि उनका राम दशरथ का बेटा या सीता का पति नहीं है, बल्कि 'वह है जो हर मनुष्य के हृदय में रहता है, और सर्व-व्यापी है'। इसके अलावा देश को क्षति पहुँचानेवाली हर क्रिया को उन्होंने 'पाप' कहा। अस्पृश्यता पाप थी; विदेशी कपड़ा पहनना पाप था, अंग्रेजी स्कूलों में जाना पाप था।

हर सुधारक, या नये विचार के प्रवर्तक, की तरह गांधीजी भी अपने नय विचार का मूल्य कुछ बढ़-चढ़कर बताते थे। वह कहते थे कि चरखे में स्वराज है। चरखे की इतनी महिमा के बावजूद उन्होंने दूसरे कार्यक्रमों को छोड़ा नहीं, न अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलन को छोड़ा, न हिन्दू-मुस्लिम एकता को, और न विदेशी वस्त्र-बहिष्कार को।

हर सुधारक पर 'माया' का कुछ-न-कुछ असर तो रहता ही है जिसके कारण वह वास्तविकता को पूरी-पूरी नहीं पहचानता। गांधीजी ने अपने अन्तिम दिनों में इस तथ्य को पहचाना और कहा कि वह धोखे में थे कि उनके देश-वासियों ने उनकी अहिंसा को स्वीकार कर लिया है। क्या ईसा, क्या रामकृष्ण परमहंस, कोई भी 'माया' के इस प्रभाव से मुक्त नहीं था। क्रान्तिकारी पर भी यह प्रभाव रहता है, अगर न रहे तो वह अपने लक्ष्य तक पहुँच नहीं सकता। ईसा ने कहा था : 'ईश्वर का राज निकट है।' २ हजार वर्ष तो बीत गये, लेकिन कहाँ है ईश्वर का वह राज्य ? ईसा को उनकी सारी आध्यात्मिक मान्यता के लिए क्या मिला ? सूली। प्राय यही होता है कि आध्यात्मिक आचरण का पुरस्कार भौतिक वस्तुओं में नहीं मिलता। तात्कालिक दण्ड और पुरस्कार से ऊपर उठकर ही आध्यात्मिक लक्ष्य प्राप्त किये जा सकते हैं।

एक तीसरी कठिनाई यह है कि गांधीजी आदर्श और व्यवहार में प्राय भेद नहीं करते थे। उन्होंने स्वयं कहा है कि जब तक मनुष्य का शरीर है वह आदर्श की प्राप्ति नहीं कर सकता। वह स्वयं अपने को आदर्श सत्याग्रही नहीं मानते थे—न पूर्ण अहिंसक व्यक्ति। लेकिन वह यह भी कहते थे कि जो आदर्श है वह व्यवहार में भी प्राप्त किया जा सकता है।

गांधीजी के प्रकट विरोधाभासों (कान्ट्रैडिक्शन्स) को समझना चाहिए। उन्होंने कहा है : 'जब मैं लिखने लगता हूँ तो यह नहीं सोचता कि इस प्रश्न पर मैं पहले क्या कह चुका हूँ। मैं यह कोशिश नहीं करता कि मैं इस वक्त जो कुछ कहूँ उसका पहले कही हुई बात से मेल बैठे, बल्कि कोशिश यह करता हूँ कि इस समय सत्य का जो दर्शन हो रहा है, उसके प्रति वफादार रहूँ। इस तरह विकास क्रम में मैं एक सत्य से दूसरे सत्य पर पहुँचता हूँ। इस तरह मुझे आज कही हुई और पचास साल पहले कही हुई बात में कोई विसंगति नहीं दिखाई देती। लेकिन जिन लोगों को संगति (कन्सिस्टेंसी) का बहुत ध्यान रहता है उन्हें चाहिए कि सबसे बाद की कही हुई बात को प्रामाणिक मानें।

गांधी के दर्शन को समझने में ये कुछ कठिनाइयाँ हैं, जिन्हें ध्यान में रखना चाहिए।

खर्चीली गरीबी

कोसलर का पहला आक्षेप है कि

सरोजिनी के शब्दों में 'बापू को गरीबी में रखने के लिए बहुत पैसे की जरूरत होती है।' सरोजिनी कवयित्री थीं और उन्होंने कविता की भाषा का प्रयोग किया है, लेकिन मैंने गांधी को वर्षों ऐसा भोजन खाकर निर्वाह करते देखा है जिसकी कीमत कुछ पैसों से ज्यादा नहीं रही होगी। लेकिन जब स्वास्थ्य गिरने लगा तो डाक्टरों ने दूध लेने की सलाह दी, क्योंकि गांधीजी दूध या अण्डा नहीं लेते थे। तब उन्होंने बकरी का दूध लेना शुरू किया था। भारत में बकरी का दूध सस्ता मिलता है और सब जगह उपलब्ध है। वह उबाली हुई सब्जी और दो-चार चपातियों के अलावा डेढ़ लीटर बकरी का दूध लेते थे। मौसम में आम का एक गिलास रस लेते थे। उस समय सब्जियाँ कम कर देते थे। चीनी नमक या दूसरा कोई मसाला एकदम नहीं लेते थे। स्वाद के लिए कतई कोई चीज नहीं लेते थे। जो कुछ लेते थे, स्वास्थ्य के लिए। उनकी प्रार्थना में अस्वादव्रत का उच्चारण है। उनके कोई साथी या शिष्य इस तरह का भोजन नहीं खाते थे। यह सही है कि समय बीतने पर जब लोग उन्हें 'महात्मा' कहने लगे तब बहुत साव-धानी और असुविधा के बावजूद उन्हें बहुत यात्रा करनी पड़ती थी। उनके साथ काम के लिए ९ या उससे भी अधिक लोग रहते थे। उनके कई साथी भोजन में अजीब चीजों का इस्तेमाल करते थे। लेकिन जहाँ वे लोग ठहरते थे, वहाँ लोग उनका प्रेमपूर्वक आतिथ्य करते थे। मैं गांधी को कभी 'महात्मा' नहीं कहता था। मैं बापू या गांधीजी कहता था। शायद सरोजिनी ने गांधीजी की पूरी पार्टी के खर्च की बात कही है, अकेले गांधी के खर्च की नहीं।

विशेष डिब्बे

लेखक ने लिखा है कि गांधीजी यहाँ रेलवे के विशेष डिब्बे में सफर करते थे, जो उनके लिए आरक्षित रहते थे। लेखक को जानना चाहिए कि ऐसा गांधी के आराम या सुविधा के लिए नहीं, बल्कि दूसरे यात्रियों की सुविधा के लिए किया जाता था। गांधीजी जिस रास्ते से गुजरते थे, उसके स्टेशनों पर बड़ी-बड़ी भीड़ें इकट्ठा हो जाती थीं। मुसाफिरों का सामान लेकर निकलना मुश्किल हो जाता था। गाड़ियाँ लेट हो जाती थीं। अगर लेखक को मालूम होता कि भारत में इस विलक्षण आदमी के दर्शन के लिए ऐसी भीड़ें इकट्ठा होती थीं कि वह स्पेशल डिब्बे के आरक्षण की बात नहीं कहता। गांधीजी का डिब्बा ट्रेन में आखिरी होता था, फिर भी अक्सर उन्हें किसी अलग स्टेशन पर उतर जाना पड़ता था, ताकि अनियं-त्रित भीड़ के कारण अस्त व्यस्तता न हो। शुरू-शुरू के दिनों में मैंने खुद देखा था कि किस तरह गांधीजी रात को घण्टों एक तीसरे डिब्बे में ऊपर का पटरा पकड़कर खड़े रहते थे। तब कहीं किसीको दया आ जाती थी, वह बैठने को जगह दे देता था। गांधीजी ने खुद कभी किसी प्रकार की विशेष सुविधा नहीं चाही।

विकेन्द्रित उद्योग

सबसे पहले गांधीजी के खादी और ग्रामोद्योगों के विचार को लें। प्रश्न यह नहीं है कि खादी-ग्रामोद्योग का उत्पादन बड़े-बड़े कारखानों में होता है या नहीं, मुख्य प्रश्न यह है कि खादी ग्रामोद्योगों से खेतिहरों को काम मिलता है, तथा राष्ट्र का धन बढ़ता या नहीं। खेतिहरों के पास समय है। वह उत्पादन करे या न करे, कुछ-न-कुछ उपयोग तो करता ही है। अगर वह अपने खाली समय में थोड़ा भी उत्पादन कर ले तो देश की दौलत बढ़ेगी और उसका भी काम चलेगा। इस तरह गांधीजी सिर्फ उस समय का सदुपयोग कर रहे थे जो बेकार जा रहा था। वह यह नहीं चाहते थे कि जिनके पास पूरा काम है वे अपना काम छोड़कर चरखे-करघे में लग जायें। मैं नहीं समझ पाता हूँ कि राष्ट्र की जो चीज बेकार पड़ी हो उसका इस्तेमाल कर लेने से अर्थशास्त्र के किस नियम का उल्लंघन होता है। गुलामी के दिनों में गांधी बड़े-बड़े कारखाने कायम करने के लिए कारखाने कहाँ से लाते? और अगर ला भी पाते तो बड़े कारखानों से करोड़ों लोगों की बेकारी का सवाल कैसे हल होता? एक बार एक भारतीय समाजवादी ने उनसे पूछा : "क्या आप मशीन और बड़े पैमाने पर उत्पादन के विरुद्ध हैं?" उन्होंने उत्तर दिया : "मैंने कभी ऐसा नहीं कहा। आपने अखबार में छपी गलत-सही रिपोर्टों के आधार पर मेरे बारे में ऐसी धारणा बनायी है। मैं इस बात के खिलाफ हूँ कि जिन चीजों को गाँव के लोग आसानी से पैदा कर सकते हैं उनका बड़े कल कारखानों से उत्पादन किया जाय। मैं सचमुच मशीन के नहीं, मशीन के पीछे पागल होने के खिलाफ हूँ। लोग ऐसी मशीन के पीछे पागल हैं जिससे मेहनत बचे। लोग मेह-नत बचाते चले जाते हैं। यहाँ तक कि हजारों-लाखों लोगों के पास काम नहीं रह जाता, और वे भूखों मरने के लिए मजबूर हो जाते हैं। सबसे बड़ा प्रश्न है मनुष्य। मशीन का यह अर्थ नहीं है कि मनुष्य के हाथ-पैर बेकार हो जायें।" अंत में उन्होंने कहा : "मैं कल्पना करता हूँ कि बिजली होगी, जहाज बनेंगे, इस्पात के कारखाने होंगे, यंत्र बनेंगे, तथा इनके साथ-साथ गाँव के उद्योग भी चलेंगे। लेकिन महत्त्व का क्रम बदल जायगा। अब तक बड़े उद्योगों का विकास इस ढंग से हुआ है कि गाँव और उसके उद्योग नष्ट हो जायें। भविष्य में योजना ऐसी होगी कि गाँव और उसके उद्योगों के पोषण के लिए बड़े उद्योग होंगे। समाजवादियों की तरह मैं नहीं मानता कि मनुष्य की बुनियादी आवश्य-कताओं का केन्द्रीकरण करने से लोगों का भला होगा। जब केन्द्रित उद्योगों का स्वामित्व और संयोजन राज्य के हाथ में होता है तो बुनियादी आवश्यकताओं का केन्द्रीकरण हो जाता है।"

बाद को गाँवों में जिन हजारों लोगों ने खादी-ग्रामोद्योगों को अपनाया उन्होंने गांधीजी के विकेन्द्रित उद्योगों से प्रभावित होकर ऐसा नहीं किया। बहुतों ने गांधी का नाम भी नहीं सुना रहा होगा। उन्होंने इसलिए अपनाया कि इन उद्योगों से उन्हें कुछ मजदूरी मिल गयी, खेती से

होनेवाली आमदनी में कुछ ऊपरी आमदनी जुड़ गयी। इन दो-चार पैसों का भी उनके जीवन में महत्त्व था। स्वतंत्र भारत ने पिछले २२ वर्षों में बहुत-से कारखाने बनाये हैं, करोड़ों रुपये खर्च किये हैं, और काफी घाटा भी उठाया है, फिर भी बेकारी का सवाल नहीं हल हो सका है। हर पंचवर्षीय योजना के खतम होते-होते बेकार लोगों की संख्या बढ़ जाती है। गाँवों में काम भी घटा है, और वास्तविक मजदूरी भी घटी है। सरकारी रिपोर्ट खुद ऐसा कहती हैं। सरकारी अधिकारी अब छोटे उद्योगों और खेती की बात करने लगे हैं। जापान में प्रति वर्गमील भारत से दूनी आबादी है, लेकिन विकेन्द्रित उद्योगों की बदौलत वहाँ हरएक को काम मिलता रहता है। लोग अपने-अपने घरों में काम करते हैं, बिजली घर-घर पहुँचती है। बड़ी मशीनों के छोटे पुर्जे घरों में बनते हैं। फिर बड़ी मशीनें उन्हें इकट्ठा करती हैं। इस तरह के विकेन्द्रित उद्योगों से जापान ने बेकारी के सवाल को हल किया है। उसने बेकारी के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिद्वन्द्विता का प्रश्न भी हल किया है।

विदेशी कपड़े की होली

कोसलर ने विदेशी कपड़े जलाने के लिए गांधीजी की आलोचना की है, और रवीन्द्रनाथ टैगोर की राय का हवाला दिया है। उसने गांधीजी के उत्तर को महत्त्व नहीं दिया है। विदेशी कपड़ा जलाना उचित था, उसके बारे में दो रायें नहीं हो सकतीं। मान लीजिए कि एक शराबी ने शराब छोड़ दी, तो आलमारी में पड़ी दो-चार बोतलों का वह क्या करेगा? क्या वह खुद शराब पीना छोड़ते हुए भी इन बोतलों को पड़ोसी को दे देगा जिसने अभी शराब नहीं छोड़ी है? गांधीजी नहीं चाहते थे कि जिन चीजों को अमीरों ने छोड़ दिया उन्हें गरीब अपना लें। कुछ भी हो, इस मतभेद के कारण रवि बाबू के मन में गांधीजी के लिए आदर और श्रद्धा का भाव जरा भी कम नहीं हुआ। (क्रमशः)

गांधी-भक्त तरुण-तरुणियों से निवेदन

२१ अप्रैल तथा ११ मई के 'भूदान-यज्ञ' में प्रकाशित कुछ सामग्री की ओर मैं अपने तरुण साथियों का तथा देश के समस्त तरुण-तरुणियों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ।

शाहाबाद जिले के सिरो खादी भण्डार के व्यवस्थापक श्री रामव्रत भाई ने बिहार के साथियों के नाम जो खुली चिट्ठी लिखी है, वह विचारणीय और प्रेरक है। विनोबाजी ने सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति के सदस्यों को जो यह कहा है कि "चारों ओर बेहद विस्फोटक स्थिति है। अगर इस साल के खतम होते-होते कुछ न कर सके तो खुदा हाफिज।" उसका हवाला देते हुए उन्होंने यह कहा है कि उन्होंने खादी भंडार के व्यवस्था भार से मुक्ति पा ली है, और अब बाबा के इस प्रति-तूफान के काम में लग जायेंगे। उन्होंने अपने समस्त साथियों को जो यह कहा है कि "मैं तो निकल पड़ा, अब आगे खुदा हाफिज।" यह देश के तरुणों के लिए योग्य भावना है।

लेकिन वह किसलिए निकले हैं? विनोबाजी ने भाई राममूर्ति के सभी सवालों का उत्तर देते हुए कहा है—"इस सबका उत्तर है बीसवाँ हिस्सा जमीन का बँटना। उसके अलावा दूसरा उत्तर नहीं है, उसको टालकरके उत्तर नहीं मिलेगा।" अतएव देश के तरुण-तरुणियों को मुस्तैदी के साथ इस काम में लगना होगा, जिससे समस्त शान्तिमय उपायों से निराश, भूमिहीन जनता को लगे कि कुछ हो रहा है। यह काम कुछ थोड़े गाँवों में धीरे-धीरे बीघा-कट्ठा बाँटकर नहीं होगा, बल्कि प्रति तूफानी वेग से करना होगा। केवल एक-आध नौजवान के निकलने से विस्फोट रुकेगा नहीं।

दैनिक पत्रिकाओं में नक्सलवादियों की हरकतें छपती हैं। वे देश में विस्फोटक परिस्थिति पैदा कर रहे हैं। भूमिहीनों को हिंसा के लिए प्रेरित कर रहे हैं गांधीजी की तस्वीर और किताबें जला रहे हैं। उनकी मूर्ति तोड़ रहे हैं। उनके पीछे-पीछे गांधीभक्त मूर्तियाँ और तस्वीरें फिर से लगाते जा रहे हैं! ये तस्वीर लगानेवाले सब तरुण-तरुणी ही हैं। उन्हें समझना होगा कि तस्वीर जलाने का उत्तर तस्वीर लगाना नहीं है। नक्सलवादी गांधी के विरोधी नहीं हैं, वे गांधी विचार के विरोधी हैं। वे केवल तस्वीर नहीं जलाते हैं। वे गांधी-विरोधी विचार का उद्बोधन, प्रसारण और संगठन करते हैं। देश के गरीब, शोषित और दलित वर्ग की समस्याओं का अपने विचार से उत्तर दे रहे हैं। क्या तस्वीर लगानेवाले तरुण-तरुणी उनके विचार का उत्तर भी देंगे, भूमिहीन तथा साधनहीन, शोषित और दलित जनता की निराशा का समाधान गांधी-विचार से देने में उसी तत्परता से लग सकेंगे? अगर नहीं, तो तस्वीर लगाने तथा मूर्ति गढ़ने के नाटक से क्या होनेवाला है?

विनोबा कहते हैं कि "सबका उत्तर बीघा-कट्ठा-वितरण है।"

नौजवान कहते हैं, बीघा में कट्ठा से क्या होनेवाला है? उनको समझना चाहिए कि कितना मिल रहा है, यह मुख्य सवाल नहीं है। सवाल यह है कि वह कितने को मिल रहा है। बीघा-कट्ठा-अभियान से जब सबको भूमि मिलेगी तब सर्व की एक विशिष्ट शक्ति निखरेगी, जिसका मुकाबला वर्ग-शक्ति नहीं कर सकती। वर्ग-शक्ति तात्कालिक चाहे जितनी तीव्र हो उसकी 'काट' उसी वर्ग-परिस्थिति के अन्दर मौजूद है। इसलिए वह सर्वशक्ति चाहे जितनी धीमी दिखती हो उसका मुकाबला वर्ग-शक्ति नहीं कर सकती।

अतएव उन तमाम गांधीभक्त तरुण-तरुणियों से मेरा निवेदन है कि वे गांधी की तस्वीर लगाने के काम को छोड़कर देश भर में गांधी-मन्त्र से दीक्षित आन्दोलन में लग जायें। —धीरेन्द्र मजूमदार

हमारा आन्दोलन : कुछ समस्याएँ और सम्भावनाएँ-२
खादी की बैसाखी

•राममूर्ति

खादी नहीं होती तो ग्रामदान का क्या होता, यह कहना कठिन है। हो सकता है कि आज ग्रामदान का नाम भी न सुनाई देता। यह भी हो सकता है कि खादी का सहारा न होता तो इतने वर्षों मे ग्रामदान मजबूती के साथ अपने पैरो पर खड़ा हो गया होता। और, शायद, जगह-जगह ग्रामस्वराज्य की नयी खादी भी दिखाई देने लग गयी होती। कुछ भी हो, ग्रामदान आन्दोलन का जिस तरह विकास हुआ उसमें खादी-संस्थाओं ने-उन संस्थाओं ने जिनकी राष्ट्रीय परम्परा थी और जिनके संचालक और मुख्य कार्यकर्ता स्वतंत्रता की लड़ाई के सिपाही रह चुके थे—शानदार रोल अदा किया। खादी-संस्थाओं के अलावा गांधी-स्मारक निधि, खादी-कमीशन, आदि कुछ दूसरी रचनात्मक संस्थाओं का भी ग्रामदान-आन्दोलन में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। क्रान्तियों के इतिहास में बहुत कम ऐसा होता है कि इस तरह का रोल प्रचलित समाज का कोई प्रतिष्ठान (इस्टेब्लिश-मेण्ट) नया समाज बनाने के आन्दोलन में अदा करे। ऐसा करने मे विशेष रूप से खादी का काफी धन लगा है, उसके कार्य-कर्ताओं की मेहनत लगी है। लेकिन बदले में उसे क्या मिला है? ग्रामदान की जो 'गुडविल' खादी को मिली है। वह मामूली चीज नहीं है। वह अपने मे बहुत बड़ी नैतिक पूंजी है। उससे भी अधिक मूल्य-वान विकास के वे नये आयाम हैं जिन्हें ग्रामदान ने खादी—खादी ही नहीं, सभी रचनात्मक कार्य—के सामने खोल दिये हैं।

रचनात्मक संस्थाओं और ग्रामदान-आन्दोलन का लेन-देन आगे भी चलता रहेगा, लेकिन ग्रामदान के सामने एक दूसरा प्रश्न है। उसे सोचना चाहिए कि मित्रों की उदारता के होते हुए भी क्यों उसकी जड़ें सीधे समाज में नहीं पहुँच सकी हैं। खादी से ग्रामदान को व्यापकता तो मिली, लेकिन गहराई क्यों नहीं मिली? खादी ने ग्रामदान को भरपूर आश्रय दिया, और अस्तित्व के लिए प्रारंभिक संघर्ष से बचा लिया, किन्तु यह भी हुआ कि इस आश्रय के कारण ग्रामदान अपने बल पर जीने की शक्ति नहीं पैदा कर सका। ग्रामदान बड़ा हुआ लेकिन माँ का दूध माँगता रहा। खादी की सीमाएँ ग्रामदान की भी सीमाएँ बनती गयीं। ग्रामदान के पास क्रान्ति का विराट दर्शन था; जन-जन को छूनेवाला कार्यक्रम था, विनोबा-जयप्रकाश जैसा व्यक्तित्व था। उसके पास क्या नहीं था, पर सब कुछ होते हुए भी क्रान्तिकारियों का वह स्वतंत्र माध्यम नहीं बन सका जो क्रान्ति-विचार को सामाजिक शक्ति बनाता है। क्यों? क्या कारण है कि आज इतने वर्षों के बाद भी ग्रामदान खादी की बैसाखी पर ही चल रहा है? निश्चित ही त्रिविध कार्यक्रम मे खादी और ग्रामदान में इस तरह के सम्बन्ध की कल्पना नहीं की गयी थी।

खादी आज केवल खादी नहीं है। वह एक विशाल प्रतिष्ठान बन गयी है। खादी ही क्यों, हर रचनात्मक प्रवृत्ति एक प्रतिष्ठान बन गयी है। हर एक की अपनी एक स्थिति है, अपना अलग हित है अपनी सीमाएँ हैं। इस दृष्टि से आज देश मे जितने भी सरकारी, अर्द्ध-सरकारी, गैरसरकारी, प्रतिष्ठान हैं वे सब लोक-कल्याणकारी राज्य के देश-व्यापी प्रतिष्ठान के अन्तर्गत हैं, उसी पर आश्रित हैं, उसीके अंग हैं। सारे रचनात्मक प्रतिष्ठानों मे खादी का अपना विशेष स्थान है। उसने अपना विशेष हित विकसित किया है जो कमीशन और उसके द्वारा सरकार से जुड़ा हुआ है। ये सब ऐसी चीजें हैं जिनके कारण खादी को ग्रामदान के अलावा दूसरी तरफ भी देखना पड़ता है। देखे बिना उसका चल नहीं सकता। नयी खादी-संस्थाएँ तो दूसरी ही तरफ देखती हैं, ग्रामदान की ओर देखना भी नहीं चाहतीं। संस्थावाद के तर्क के अनुसार छोटी संस्था बड़ी की ओर देखती है, और सब संस्थाएं मिलकर राज्य की ओर देखती हैं। प्रतिष्ठान के लिए समाज का तीसरा नम्बर है; पहले नम्बर पर वह अपने को रखता है, और दूसरे पर सरकार को, जिससे वह पोषण पाता है। यह स्थिति सभी प्रतिष्ठानों की होती है। ऐसा होना अनिवार्य भी है। समाज, संस्था या कोई प्रतिष्ठान केवल भावना से नहीं चलता। हमारे रचनात्मक संचालक और कार्यकर्ता व्यक्तिगत तौर पर भावना चाहे जो रखें, उनकी अलग-अलग क्रान्ति में भक्ति चाहे जितनी हो, लेकिन उनका प्रतिष्ठान अपने सामूहिक हित को सर्वोपरि रखेगा, और नये रास्ते पर उसी जगह तक जायेगा जहाँ तक जाने का खतरा वह बर्दाश्त कर सकेगा। ऐसा करना अनुचित भी नहीं है। भावना और परम्परा के कारण कोई प्रतिष्ठान ज्यादा-से-ज्यादा मददगार हो सकता है, मददगार से ज्यादा होने की अपेक्षा उससे नहीं रखी जा सकती। यह प्रतिष्ठानवाद की मजबूरी है। प्रश्न किसीकी नीयत का नहीं है; यह परि-स्थिति का कठोर तर्क है। उससे ऊपर उठना कुछ व्यक्तियों के लिए भले ही संभव हो, किन्तु पूरे संस्थान के लिए कभी भी संभव नहीं होता। ग्रामदान के लिए मौजूदा खादी आत्महत्या कर ले, यह अपेक्षा अव्यावहारिक तो है ही, अन्याय-पूर्ण भी है।

भारत का 'लोक-कल्याणकारी राज्य' मध्यमवर्गीय है। उसके अन्तर्गत चलनेवाले सभी सरकारी, अर्द्धसरकारी, गैरसरकारी संस्थान मध्यमवर्गीय हैं, जो अनेक रूपों मे 'स्टेटस्को' के साथ जुड़े हुए हैं। खादी-संस्थान भी अपवाद नहीं हैं, वह कितना भी चाहे, अपवाद नहीं हो सकता। यही कारण है कि खादी की आबोहवा में पलने-वाला ग्रामदान—क्रान्तिकारी ग्रामदान—

भी अभी तक अपना मध्यमवर्गीय चोला नहीं छोड़ सका है। वह अपने चारों ओर 'अंतिम व्यक्ति' का वातावरण नहीं बना सका है। जिस तरह खादी जनता के लिए है लेकिन जनता की नहीं है, उसी तरह ग्रामदान भी जनता के लिए भले ही हो, किन्तु जनता का नहीं बन सका है। जब खादी की यह सीमा है तो गांधी-स्मारक-निधि, गांधी-जन्म-शताब्दी, खादी-ग्रामोद्योग-कमीशन, गांधी-शान्ति प्रतिष्ठान तथा अन्य सस्थानों की क्या भिन्न स्थिति होगी? वे सब जनता के लिए है, जनता के नहीं हैं। उनकी निगाह नीचे की ओर कम, ऊपर की ओर अधिक है। प्रतिष्ठानों के हाथ मे पड़कर गांधी भी प्रतिष्ठान बन गया है।

रचनात्मक प्रतिष्ठानों ने देश के दूसरे प्रतिष्ठानों की ही तरह कुछ प्रवृत्तियाँ विकसित कर ली हैं--जान-बूझकर नहीं, सहज, स्वाभाविक, अनिवार्य क्रम मे। इन प्रतिष्ठानों मे निर्णय किसका चलता है? इनमे उत्पादक या श्रमिक का क्या स्थान है? सामान्य कार्यकर्ता का क्या स्थान है? सारे रचनात्मक जगत् मे ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिनमे एक व्यक्ति अनेक सस्थाओं मे अधिकार और पैसे के स्रोतों पर कण्ट्रोल रखता है—ठीक उसी तरह जैसे बड़े उद्योगों की दुनिया मे उद्योगपति रखते हैं। ऐसे ही व्यक्तियों द्वारा सस्थाओं का नियमन और सचालन होता है। भले ही लक्ष्य रचनात्मक हो, संचालक रचनात्मक हों, लेकिन 'मनी पावर' गुणात्मक दृष्टि से रचनात्मक नहीं होता। उसकी प्रकृति है दमन और शोषण। 'सर्वसम्मति', और 'मार्ग दर्शन' आदि शब्दों से हम उसकी इस मूल प्रकृति को नहीं बदल सकते। ग्रामदान और इस 'मनी पावर', तथा ग्रामदान और इस तरह के एकाधिकारवाद मे मेल कैसे बैठेगा? मेल बिठाने की कोशिश मे ग्रामदान की अपार क्षति हुई है। वह समाप्त आने के बिन्दु पर पहुँच गया है।

ग्रामदान के क्रांतिकारी दर्शन और उसके क्रांतिकारी कार्यक्रम मे आज के मध्यमवर्गीय राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक ढाँचे के लिए गुन्जाइश नहीं है। ग्रामदान दल, वर्ग, जाति के स्थान पर जनता को प्रतिष्ठित करना चाहता है। यह उसकी घोषणा है। समाज और युग की यह माँग है कि मौजूदा ढाँचा टूटे और नया ढाँचा कायम हो। इस अर्थ मे ग्रामदान की घोषणा विद्रोह की घोषणा है, मुक्ति की घोषणा है। विद्रोह अविरोधी है, किन्तु विद्रोह है। लेकिन जनता ने - वह जनता जो जानती नहीं - ग्रामदान का अभी तक विद्रोही स्वरूप नहीं देखा है। तन्त्र-मुक्ति, निधि-मुक्ति आदि के एक-से एक क्रांतिकारी निर्णय हुए, लेकिन जनता ने ग्रामदान के राम को हमेशा अयोध्या के इर्द गिर्द ही देखा, कभी बन-वास मे नहीं देखा। जनता ने जिस स्वरूप को देखा ही नहीं, उसे वह कैसे मानेगी? जिस भूमिहीन के नाम मे १९ साल पहले भूदान शुरू हुआ था, उस तर्क को हम अपनी क्रांतियोजना मे नहीं शामिल कर सके तो जनता कैसे माने कि ग्रामदान की क्रांतिकारिता 'स्टेटस्को' की शक्तियों से कहाँ भिन्न है? हम जनता को दोष नहीं दे सकते अगर उसके ऊपर यह असर हो कि जिस तरह खादी गद्दी और सजावट की चीज है, उसी तरह उसका अभिन्न-हृदय मित्र ग्रामदान भी शायद सजावट और गद्दी की ही वस्तु होगा, उसमे अधिक क्या होगा?

अगर ग्रामदान खादी के कन्धे से उतर जाय तो ग्रामदान का भी कल्याण हो, और खादी का भी। तब खादी ग्रामदान की आज जितनी मददगार है उससे ज्यादा मददगार होगी, क्योंकि दोनों के बीच समता के आधार पर सम्मानपूर्ण सम्बन्ध होगा। अगर ग्रामदान योजनापूर्वक जल्द-से-जल्द खादी के कंधे से न उतरा तो वह अपने और खादी, दोनों के लिए बोझ बन जायगा। खादी तो शायद जनता की नजर मे अपनी खोयी हुई इज्जत को कभी वापस भी पा ले, लेकिन बेचारा ग्रामदान तो हमेशा के लिए खत्म हो जायगा। ग्रामदान ऐसी नाव पर बैठा है जिसमे छेद है।

गांधी की खादी सर्वाधिकारवादी यान्त्रिकी (टोटैलिटेरियन टेक्नालोजी) का उत्तर थी, विनोबा का ग्रामदान सर्वाधिकारवादी राज्यवाद (टोटैलिटेरियन स्टेट-पावर) का उत्तर है। एक के बिना दूसरा सम्भव नहीं है। लेकिन गांधी की खादी खादी-कमीशन की खादी हो गयी और उसने अपना मिशन खो दिया। गांधी ने कोशिश की थी खादी को व्यापार से मुक्त करने की, लेकिन कमीशन ने उसे व्यापार मे तो जोड़ा ही, सरकार से भी बुरी तरह जोड़ दिया। दुष्यन्त के गले मे शकुन्तला बाँधी गयी। जैसे-जैसे सरकार जनता से अलग होती गयी, खादी भी जनता से अलग होती गयी। अगर ग्रामदान 'लोक' की उपासना करना चाहता है तो उसे अपने कार्य, कर्ता, और कोष, तीनों के प्रकार और पद्धति मे नये सिरे से परिवर्तन करना पड़ेगा। अगर ग्रामदान एक बार बेसहारा भी हो जाय तो उसे इस परीक्षा का स्वागत करना चाहिए। दुःख है कि इतने वर्षों तक वह इस परीक्षा को किसी-न-किसी बहाने टालता रहा है। मीठी बातों का आश्वासन, और मोहताजी की सुरक्षा का भुलावा छोड़े बिना कोई क्रांति अपनी शक्ति नहीं प्रकट कर सकती। और जिस क्रांति मे शक्ति नहीं वह समाज के लिए मुक्ति का रास्ता क्या खोलेगी?

राज्यदान ने एक बार फिर अवसर दिया है कि ग्रामदान सिद्ध करे कि वह समाज के मौजूदा प्रतिष्ठान का अंग नहीं है, बल्कि वास्तव में उसे तोड़कर अंतिम व्यक्ति को मुक्त करनेवाली विद्रोही शक्ति है।●

संस्थीकरण का राहु

•प्रबोध चोकसी

[१ करोड़ रुपये के ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह का निर्णय सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति ने किया तो सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के मन में भिन्न-भिन्न सवाल उठे। विभिन्न निधियों का जो सदुपयोग के साथ साथ दुरुपयोग होता आया है, उसीके कारण 'ग्रामस्वराज्य-कोष' के बारे में भी शंका का उठना निर्मूल नहीं मानना चाहिए। इस कोष के संग्रह और विनियोग में अत्यन्त सावधानी और विवेक की आवश्यकता है। अपने लेख में श्री प्रबोध भाई ने अपनी शंकाएँ व्यक्त की हैं। शंकाएँ कोष से अधिक ऐसे कोषों के इर्द-गिर्द पनपनेवाले संस्थावाद के सम्बन्ध में हैं। प्रबोध भाई हमारे आन्दोलन के पारखी हैं। वह अपने हैं, इसलिए उनकी शंका, उनकी आलोचना, उनकी चेतावनी हमें सचेत करने की दृष्टि से बहुत मूल्यवान है। हमारे ऐसे मित्र उस दर्जी की तरह हैं जो कैंची से काट काटकर कपड़े को पहनने लायक बना देता है, उसे बिगाड़ता नहीं।—सं०]

विनोबा की अमृत जयंती के निमित्त १ करोड़ रु० की निधि सर्व सेवा संघ इकट्ठा कर रहा है। विनोबा ने ११ सितम्बर के दिन उस निधि को स्वीकार करना माना है।

गांधी-स्मारक-निधि संचित करने का जब राष्ट्रनेताओं ने तय किया, तब विनोबा ने कहा था कि 'निधि' शब्द सुनते ही निर्धन की याद आती है और 'ट्रस्ट' सुनते ही ही 'डिस्ट्रस्ट' (अविश्वास) पैदा होता है। यह भी कहा था कि गांधी-निधि अन्तिम राष्ट्रीय निधि होगी। 'सर्वमनर्थं भावय नित्यम्। नास्ति ततः सुखलेशः सत्यम्।' यह शंकराचार्य का मंत्र गुनगुनाते हुए अभी-अभी वे बोले थे : "सार्वजनिक कार्य बिना पैसे के सम्भव होगा तभी क्रान्ति होगी।" ('मैत्री', अप्रैल १९७०)

इस प्रकार उनके मूलभूत विचार में अन्तर नहीं आया, फिर भी उन्होंने १ करोड़ रुपये के ग्रामस्वराज्य-निधि को सम्मति दी है। निधिमुक्ति एवं संस्थामुक्ति के विचार-शासन के प्रवर्तक ने संस्था को बल देनेवाले निधि-संग्रह को मान्यता दी है। नित्य के उपासक ने नैमित्तिक के लिए मनाही नहीं की।

विनोबा का अनेकांतवाद

गीता प्रवचन के 'भी' सिद्धान्त के प्रकाश में विनोबा के इस व्यवहार को समझा जा सकता है। एक आकर कहता है : 'बाबा, ऊब गया हूँ। जंगल चला जाऊँ क्या?' बाबा उससे कहते हैं : 'घर क्यों छोड़ता है रे! जनक से सबक ले।' दूसरा आया और बोला : 'मैं जंगल जा रहा हूँ। अनुज्ञा दीजिए।' बाबा ने कहा : 'जा बच्चे, मेरा आशीर्वाद है।'

हर एक को अपने-अपने स्वधर्म में मृत्यु का भी सामना क्यों न करना पड़े, विनोबा उसमें सम्मति जरूर देंगे। उनके लिए उसमें वदतोव्याघात कतई नहीं।

ग्रामदान-पुष्टि एवं नवनिर्माण के सार्वजनिक कार्य बिना पैसे होते तो बाबा नाचता, पैसे से ही हो सकते हैं तो विरोध न करेगा। क्योंकि वह जानता है कि क्रान्तिकारी वायुमंडल के अभाव में व्यवहार अर्थ से निरपेक्ष रह नहीं सकता।

परन्तु व्यवहार-पटु व्यक्तियों के लिए यह सोच लेने का मौका है कि व्यवहार की दृष्टि से भी अर्थ-निधि में अनेक अनर्थ निहित हैं। उन्हें भुलाना शान्ति की जड़ें काटनेवाला सिद्ध होगा। निधि स्वीकारनी पड़ी है तो उसके निहित अनिष्टों का निराकरण भी सोच लेना होगा।

गांधी-स्मारक-निधि की ताजा तवारीख कई सबक सिखाती है।

अमर गांधी-निधि

जवाहरलालजी के अनुरोध पर गांधी-स्मारक निधि ने संकल्प किया था कि १० वर्षों में १० करोड़ कुल-के-कुल खर्च करके निधि से हाथ धो डालेंगे। सन् १९६० में लगभग वह अवधि समाप्त होती थी। पर बढ़ाते-बढ़ाते शताब्दी-वर्ष के समोहक लक्ष्य तक पहुँच गयी। शताब्दी के उपरान्त भी गांधी-निधि का अन्त नहीं हुआ! गांधी के यश की भाँति वह भी अनन्त होना चाहता है। जवाहर-संकल्प के अनुसार मूलधन खर्च करते गये तो सूद को संचित करते चले गये। प्रारम्भ के वर्षों में ब्याज ही सालाना ३२ लाख रु० आता था। अभी कुछ करोड़ बरबस बच ही गये हैं! और उसकी भारतव्यापी शाखाओं, भगिनी-संस्थाओं आदि के कर्मचारियों के सम्मेलन में साग्रह प्रस्ताव हुआ कि निधि की अभी देश को अतीव आवश्यकता है। ट्रस्टियों ने इसे सहर्ष या सखेद स्वीकार किया।

सारी दुनिया की सभी ब्यूरोक्रेसियों (नौकरशाहियों) में जो होता आया है वही इस सेवक-तंत्र में भी हुआ—सेल्फ पर-पेच्यूएशन—अपने को अमर रखने की वृत्ति हावी हो गयी।

अमरत्व की एषणा

गांधी ने 'तिलक स्वराज्य फण्ड' को इकट्ठा करते ही खर्च कर एक मिसाल खड़ी की थी। संस्थाओं का वे सर्जन करते, वैसे विसर्जन भी बेहिचक कर डालते। विनोबा ने भी विसर्जन आश्रम का सर्जन करके इसी तत्त्व की सांकेतिक मूल्य-प्रतिष्ठा की है।

किन्तु अमरत्व की एषणा संस्थाओं का स्वभाव है। प्राचीनों ने इसे राक्षसों के लक्षणों में गिनाया था। अपने इस अर्वाचीन युग में पूँजी साम्यवादी तथा पूँजीवादी, दोनों तरह की विश्व-व्यवस्थाओं का समान लक्षण है। अतः संचय और सातत्य के यत्न को हम राक्षसी कहकर हेय करार दें, यह अव्यवहार्य होगा। और संस्था के सामाजिक हेतु जब तक सिद्ध होते रहते हों तब तक इस अमृतपणा का मूल्य भी मानना होगा। आक्सफर्ड और केम्ब्रिज जैसी विद्या-संस्थाओं का सातत्य आंग्ल-इतिहास का सांस्कृतिक मेरुदण्ड-सा बन

गया है, इसे भुलाया कैसे जा सकता है? परन्तु व्यक्ति की तरह संस्था भी योवन-जरा-मरण के प्राकृतिक नियम के वश है। अतः इसमें विवेक की आवश्यकता है।

मोहग्रस्त गांधी-विवेक

जिस संस्था का सामाजिक हेतु जीवन्त और सार्थक है, उसे लगातार लोक-सहाय मिलता ही रहता है। उसे अपने संचित निधि या सरकारी सहाय पर जिन्दा रहने की नौबत नहीं आती। सजीव देह-पिण्ड में जैसे पुराने कोष मरते हैं और नये पैदा होते रहते हैं, तभी उस शरीर को जीवित माना जाता है, वैसे ही जीवित संस्थाओं में भी मानना पड़ेगा।

गांधी ने यह सूत्र 'इण्डियन ओपिनियन' का ट्रस्ट करते वक्त दिखाई थी। उन्होंने साफ लिखा था कि इस पत्र को भरसक चलाया जाय, मगर घाटे पर कभी नहीं, क्योंकि घाटे का मतलब होगा जनता को उसकी जरूरत नहीं है।

इस गांधी-विवेक पर अनुगांधी युग में मोहावरण छा गया-सा दीखता है। संस्था के महान उद्देश्यों, मूल्य-कामनाओं और सेवक-भरण से मुग्धचित्त हम लोग उसे कैसे भी, कहीं से भी, पैसे का प्राण-वायु डाकर जिन्दा रखने की कोशिश करते रहते हैं। नतीजा यह है कि गड्ढे के पानी-जैसे फण्डों और ग्राण्टों के बल-बूते पर पैरकटी संस्थाएं चलती हैं और उसमें नौकरशाही अपने सभी भले-बुरे लक्षणों के साथ पनपती है।

जमींदारी के बाद संस्थादारी

भारत यह पुराना देश राजाशाही और जमींदारशाही का देश है। मौर्यों और नंदों के जमाने से यहाँ जमींदारशाही और नौकरशाही की परम्परा विविध रूपान्तरों में अविच्छिन्न चली आयी है। भांति-भांति के विशेषाधिकार खड़े करके वर्गीय सम्पन्नता का उपभोग करने की आदत हमारे सफेदपोश भद्रजनों के खून में मानो घुलीमिली है। कर्तव्यशून्य स्वामित्व (फंक्शनलेस ओनरशिप) हमारी संस्कृति का लाञ्छन है।

अब, जमींदारी को तो हमने ऊपर-ऊपर से नाबूद कर दिया। किन्तु इसी बीच उससे कहीं बड़े विशेषाधिकार खड़े हो गये हैं। एक 'नया वर्ग' स्वराज्य के फल भोगने के लिए पैदा हो गया है।

गांधी के नाम पर किवा, उनके पदचिह्नों पर चलनेवाली संस्थाओं, कमीशनों, सर्वोदय की प्रवृत्तियों, इन सबमें इस नये वर्ग के लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे हैं। जमींदारी के बाद संस्थादारी और नौकरशाही में असमान विशेषाधिकारों ने, कर्तव्यशून्य सत्ताधिकारों ने, युगानुरूप आश्रय-स्थान खोजा है।

पाश्चात्य समाज में 'जेट-सेट' नामक एक नया वर्ग आया है, जो जेट विमानों में दुनिया की सैर करता है, क्लबों-सभा गोष्ठियों-सेमिनारों में मिलता-जुलता है। उस अलिखित संविधानवाले वर्ग के सदस्य आपस में छोटी-बड़ी असूया करते हैं, फिर भी जब निर्णय देने का, कमेटियों या ओहदों पर नामजदगी का मौका आता है, तब एक-दूसरे के नाम ही आगे बढ़ाते हैं। कुल मिलाकर वे परस्पर-समर्थन करते हैं। जब किसी बात पर सलाह मशविरा करना हो तो अपने ही इस दायरे के सज्जनों को बुलाते हैं, अन्य संस्कारवृत्तिवाले दूसरों को भूल में भी भीतर नहीं आने देते, आ भी गये तो निर्णय तब नहीं करते। क्योंकि वे खूब जानते हैं कि अपने तबके का आदमी अपना समर्थन अवश्य करेगा।

विमानचारी विदेशोन्मुख मंत्री-वर्ग

गांधी-सर्वोदय जगत् में भी संचित निधियों और सरकारी सहाय के कारण ऐसे लक्षणोंवाला विमानचारी वर्ग अब दिखाई देने लगा है। बम्बई, कलकत्ता, मद्रास जैसे शहरों में, आम रास्ते पर, जानबूझकर सर पर बिस्तर धरे चलने में जो कार्यकर्ता शान का इजहार समझते थे, वे ही अब जहाँ तक सम्भव हो, विमान को छोड़ यात्रा करना नहीं चाहते। और इन महासेवकों को देश के एक कोने से दूसरे कोने तक अनवरत आवागमन करते ही रहना पड़ता है। इसलिए नहीं कि वे देश के महान नेता हैं, बल्कि इसलिए कि वे बेशुमार संस्था-कमेटी वगैरह के ओहदों पर हैं, बहुत-से ट्रस्टों के ट्रस्टी, परस्पर-अनुराग के वश, बन गये हैं और सिर्फ देश में ही नहीं, हरएक दो साल के फासले पर किसी निमित्त विदेश-यात्रा करना यही इस वर्ग के श्रेष्ठजनों की स्वर्गकामना सी होती है, जिसने सर्वोदय के मौलिक क्रान्ति-विचार का एक हद तक विकृतीकरण किया है।

संस्था-मुक्ति का विनोबा-वायु जब जोरों से चला था तब जिन्होंने अपने साथियों से बीसों संस्थाओं के मंत्री-अध्यक्षादि पदों से त्यागपत्र लिखवाये थे, वे ही आज सारे कुंजी-रूप पदों, ट्रस्टीपदों को हथियाने और हथियाकर सारी संस्थाकीय सत्ता पर अपना एकाधिकार कायम करने की साम्राज्यवादी नीति का अनुसरण करते हुए-से प्रतीत होते हैं। उनका प्रभाव इतना बढ़ चुका है कि उनके भूतपूर्व साथी और वर्तमान नौकर उनकी इस प्रवृत्ति को लेकर एक अक्षर भी बोल नहीं पाते। तिसपर विनोबा-युग के सर्वोदय में सम्मति का जितना मूल्य हुआ है उतना असम्मति का नहीं हुआ, जितना प्रियवचन का हुआ है उतना तथ्यकथन का नहीं हुआ। अतः इक्का-दुक्का अप्रिय असम्मतिवादी अहिंसक उपक्षाशस्त्र से किंवा मधुर उपालम्भपूर्वक बहिष्कृत कर दिया जाता है।

फलत, सर्वोदयी संस्थाओं के वेतनदारों में, स्पष्ट, किन्तु अव्यक्त विभाजन हो गया है ' मंत्री-वर्ग और संत्री-वर्ग'। मंत्री-वर्गवालों के घर में पूछिए तो कहेंगे : "हम तो सिर्फ ३०० 'लेते' हैं।" संत्री-वर्ग से पूछिए तो कराहेंगे ' "हमें महज ३०० 'मिलते' हैं, क्या करें?" रकम एक ही होगी, चाहे समानता एक-सी नहीं है। आर्थिक साम्य सामाजिक साम्य से कितना भिन्न है यह देखना हो तो किसी भी आश्रम-संस्था में चले जाइए।

श्री धीरेनभाई की सेवकमुक्त समाजवाली बात हठात् याद आ जाती है। इतिहास हमारे ही शब्दों को ठीक हमारे मुँह पर फेंक रहा है!

कुल मिलाकर, विनोबा-युग के सर्वो-

दय-आन्दोलन का भी तेजी से मत्स्यीकरण हो रहा है। अंबर, प्लेटो, पेन्लेन आदि पाश्चात्य समाज-परिवर्तन विद्या के पंडितों की परिभाषा में कहा जाय तो नये पराक्रम करके नये मार्गों का निर्माण करनेवाले 'सिंहजन' अब परास्त हो रहे हैं और उनकी सत्ता चतुर 'शृगालजन' हथिया रहे हैं। सिंहजन उनके शासन में न रहना चाहें तो नये क्षेत्रों की खोज में पुनः वनगमन करें अथवा उतनी हिम्मत न बची हो तो स्वयं शृगाल बनकर रहें।

इसका उपाय क्या ?

इस व्यापक संदर्भ में विनोबा के नाम से जयप्रकाश जैसे क्रान्तिकारी ने ग्रामस्वराज्य-निधि का अभियान आरम्भ किया है। उसके ९० प्रतिशत जहाँ इकट्ठा होगा वहीं रहेगा और व्यय किया जायेगा, ऐसा निर्णय हुआ है। फिर भी, आशा रखी जाय कि गांधी-निधि की तरह रुपये दिल्ली या वर्धा में एकसाथ नहीं रखे जायेंगे या बड़े उद्योगों में उसको ब्याज के लिए नहीं लगाया जायेगा। अन्यथा ब्याज-सम्बन्धी विनोबा की उक्ति व्याजोक्ति बन जायेगी।

किन्तु अधिक चिंतन तो संस्थावादों के पनपते हुए नये पाप के बारे में करना होगा।

जिस ट्रस्ट के ट्रस्टी हमेशा के लिए ओहदे पर चिपके रहते हैं वह ट्रस्ट 'मिस्ट्रस्ट' पैदा करता है। हर तरह के ट्रस्टी को चाहिए कि ५ साल की मियाद के बाद निवृत्त हो जाय। क्या सर्वोदय ऐसी रस्म शुरू कर पायेगा ?

उसी प्रकार, किसी व्यक्ति को दो या तीन से अधिक संस्थाओं में ट्रस्टी के या मंत्री-अध्यक्ष के ओहदे पर एकसाथ नहीं रहना चाहिए। "दो या तीन बस!" यह परिवार-नियोजन का सूत्र सत्ता-नियोजन के लिए भी उपयुक्त होगा। क्या सर्वोदय का संयम-सिद्धान्त यहाँ काम देगा ? ताकि अनेक नयी प्रतिभाएँ निखर पायें ? जो पद छोड़ता है उसका स्वाभाविक महत्त्व तो उसे नहीं छोड़ जाता! स्व० राजूजी ने ऊपर का पद छोड़कर नीचे का पद निभाकर यह करके ही दिखाया है। जिस महत्त्व का पद के साथ ही उदय और अस्त होता है, वही तो नौकरशाही का निर्विवाद चिह्न है।

कार्यवाहक समितियाँ, उप-समितियाँ, प्रान्तीय संस्थाएँ आदि सभी अंगोपांगों पर सर्व सेवा संघ क्या 'कामराज-योजना' का दस वर्ष का कानून लागू करेगा ? उम्मीदवारी की राजनीति पर आमूल प्रहार करनेवाले आन्दोलन का स्थूल देह स्वयं 'बने रहो' की ज्ञात-अज्ञात वृत्ति का आहुतिपूर्वक परित्याग करके क्या चिरंजीवी बनेगा ?

संस्था को अमर करना हो तो उसमें रक्ताभिसरण अनवरत चलना चाहिए। नया खून हर रोज आना चाहिए। पुराना खून नवजीवन प्राप्ति के लिए फेफड़ों में वापस जाना चाहिए। तभी कार्यकर्ताओं के बीच समानता बनी रहेगी। मंत्री-संत्री का विभेद रुकेगा।

विनोबा ने थैली लेना माना है तो इन गौण बातों पर भी उन्हें गौर करना होगा। अन्यथा गांधी द्वारा एकत्र पैसों पर आज तक निभा हुआ संघ इस नये फंड के भारीपन पर चंद रोज और काटेगा और मत्स्यीकरण व वर्गीकरण की पुनः लगकर नष्ट भ्रष्ट और अप्रतिष्ठ होगा।

यह सब जो मुँह पर भी लोग लाने हिचकते हैं, लिखने में मैं जो खतरा मोल ले रहा हूँ, उसका कुछ-कुछ अंदाज तो है। दोस्त लोग कहते आये हैं वैसे कहेंगे 'वह पद पर है नहीं, इसलिए ऐसा सब उसे सूझता है।'

उनकी बात सही भी होगी। गांधी का काम पैसे से होगा नहीं, ऐसी प्रतीति ने सन् १९५३-५४ में मेरे गांधी निधि छोड़कर भूदान में आने में खासा हिस्सा अदा किया था। फिर भी संस्कार सम-धर्मी जो है। जब तक पेट है, मन है, भूख और वासनाएँ हैं, तब तक चाहे गृहस्थ हो, चाहे क्रान्तिकारी, अर्थ के बिना किसी का नहीं चलता, ऐसा अनुभव में आया है। तो दोस्तों का उपालम्भ सही होगा।

यह हमारी परिस्थितियाँ हैं। हमें उनका प्रभावकारी उत्तर चाहिए है। परिस्थिति की अनिवार्यताओं के सामने घुटने न टेक दें तब तक शांति की उम्मीद बनी रहेगी।

नक्सालवाद के नगाड़े नाहक ही जब बज उठे हैं तब सर्वोदय को क्षोभ परिप्लुत होकर सोत्साह उससे भरतमिलाप के लिए दौड़ना न होगा ?

३१ चन्द्रोदय, अहमदाबाद-१४

ग्रामस्वराज्य-कोष

महाराष्ट्र के वर्धा तथा भंडारा जिले में पचहत्तर-पचहत्तर हजार रुपये एकत्र करने का निश्चय किया गया है।

महाराष्ट्र में कुल लक्ष्य २० लाख रुपये रखा गया है। इसमें से १० लाख रुपये केवल बम्बई में एकत्र किया जायेगा। महाराष्ट्र में एक लाख से अधिक 'सर्वोदय मित्र' बनाने का भी प्रयास किया जायेगा।

बम्बई के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने निश्चय किया है कि बम्बई में संग्रहीत राशि का ४०% शहर में ही खर्च किया जायेगा, ४०% महाराष्ट्र राज्य को तथा शेष २०% सर्व सेवा संघ को दे दिया जायेगा।

बम्बई में कोष-संग्रह के काम में यदि अन्य राज्य के मित्रों की सहायता ली जायगी तो उस स्थिति में संग्रहीत राशि बम्बई तथा उक्त राज्य के बीच आधी-आधी बाँट दी जायगी।

हरियाणा में कोष के लिए पहली किस्त के रूप में हिसार ने २०० रुपये दिये।

हिमाचल प्रदेश में कोष संग्रह अभियान का उद्घाटन १८ अप्रैल को शिमला में एक महिला सम्मेलन में किया गया। हिमाचल प्रदेश में एक लाख रुपये एकत्र करने का लक्ष्य रखा गया है।

अन्य राज्यों द्वारा निर्धारित लक्ष्य इस प्रकार हैं : राजस्थान—५ लाख रुपये, आन्ध्र प्रदेश—५ लाख रुपये, उड़ीसा—४ लाख रुपये और मध्य प्रदेश—७ लाख रुपये।

—सिद्धराज ढड्ढा

राष्ट्र के प्रति निवेदन

ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए एक करोड़ रुपये का संग्रह

११ सितम्बर, १९७० के दिन आचार्य विनोबा की ७५वीं वर्षगाँठ मनायी जायगी। उनका समग्र जीवन उत्कट आध्यात्मिक अनुसंधान, बौद्धिक अनुशासन, निःस्वार्थ समाज-सेवा तथा अहिंसात्मक सामाजिक कृत्य के लिए किये गये सृजनात्मक प्रयोगों से परिपूर्ण है। सन् १९४१ में ही स्वयं गांधीजी द्वारा 'प्रथम और सुन्दरतम सत्याग्रही' के रूप में स्वीकृत विनोबा ने सत्याग्रह को एक उच्च कोटि के विज्ञान के रूप में विकसित किया है। अगर मानव-समाज बर्बरता के स्तर पर गिर जाने से अपने को बचाना चाहता है तो उसे इस विज्ञान का सहारा लेना ही पड़ेगा।

ईश्वरपरायण, गहरी अन्तर्दृष्टि-सम्पन्न साधु-पुरुष, उद्‌भट विद्वान तथा विचारक, तीक्ष्ण बुद्धि व असाधारण स्मरण शक्ति-सम्पन्न, भाषावेत्ता, उच्च कोटि के लेखक, जन्म-जात शिक्षक और मौलिक शिक्षा-विचारक, मनुष्यों के नेता और निर्माता, समग्र राष्ट्र स्तर पर दूसरों को क्रियाशील बनानेवाले तथा बाल-ब्रह्मचारी विनोबा का व्यक्तित्व सचमुच अनुपम है। अध्यात्म-विज्ञान, तत्त्वदर्शन, समाज-विज्ञान तथा समाज-रचना-शास्त्र के क्षेत्रों में उनकी देन यथार्थतः मौलिक तथा स्फूर्तिदायक है, जो कि ज्यों-ज्यों वर्तमान दकियानूसी विचार-पद्धति के स्थान पर नयी जिज्ञासा और तर्क को स्थान मिलता जायेगा, त्यों-त्यों अधिकाधिक प्रशंसित होगी। परम्परागत भारतीय विचार के अनुसार कहना हो तो कहना पड़ेगा कि विनोबा में एक ही साथ ज्ञानयोगी, भक्तियोगी तथा कर्मयोगी का दुर्लभ समन्वय है।

विनोबाजी द्वारा शुरू किये गये भूदान, ग्रामदान तथा शांति-सेना आन्दोलन ने आज सारे विश्व का ध्यान आकर्षित किया है। अहिंसात्मक समाज-परिवर्तन के तथा भारतीय समाज के पुनर्निर्माण के प्रारंभिक कदमों के रूप में यह आन्दोलन चलाया जा रहा है। इस दृष्टि से देखा जाय तो यह गांधीजी द्वारा चलाये गये अहिंसात्मक सामाजिक क्रांति के अधूरे काम को पूरा करने के लिए किया गया आन्दोलन है।

आज के सामन्तशाही-पूँजीवादी समाज में अहिंसात्मक क्रांति लाने की दिशा में भूदान एक छोटा-सा कदम था। भूमि-समस्या का मर्म यह है कि आज इस देश में भूमि तथा मनुष्यों के बीच का अनुपात अनुकूल नहीं है। इस संदर्भ में भूदान-आन्दोलन द्वारा स्वेच्छा से प्राप्त करीब ४२ लाख एकड़ जमीन में से लगभग १२ लाख एकड़ का वितरण देशभर के चार लाख साठ हजार भूमिहीन परिवारों में हुआ है।

ग्रामदान ने इस अहिंसात्मक समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया को और आगे बढ़ाया है, इसमें (१) जमीन के व्यक्तिगत अधिकार को सामूहिक अधिकार में परिवर्तित करने का, (२) ग्राम-समूह के अन्दर ही जमीन का, उपज का, कमाई तथा श्रम का हिस्सा बाँटकर खाने का, तथा (३) सर्वसम्मति के आधार पर हर तरह का निर्णय लेने का तरीका निकाला गया है। इस तरह जन-समूह के समन्वय से सामूहिक सहकार की जड़मूल से जागृत करने और इस तरह गांधी-विनोबा के विचार के अनुसार सही ग्रामराज या ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए आवश्यक मानसिक तथा सामाजिक नींव डालने की कोशिश ग्रामदान आन्दोलन द्वारा हो रही है।

यद्यपि ग्रामदान अब तक इसके सिद्धान्त के अनुसार चलने के लिए प्रतिज्ञा-पत्र पर लोगों से हस्ताक्षर प्राप्त करने की प्रारम्भिक स्थिति में है, संकल्प लेनेवाले गाँवों की संख्या डेढ़ लाख से अधिक यानी पूरे देश के गाँवों की संख्या की २५ प्रतिशत हो गयी है। इधर देश में ऐसे सैकड़ों ग्रामदानी गाँव हैं, जिन्होंने नैतिक तथा भौतिक उत्थान की दिशा में काफी काम किये हैं। ग्रामसभाएँ काम कर रही हैं, हजार-हजार रुपये ग्रामकोष में इकट्ठे हुए हैं, उपज दुगुनी-तिगुनी हुई है, भूमि-विवाद निर्मूल हुआ है। यह पहले की अपेक्षा काफी कम हुआ है और सबसे बड़ी बात यह हुई है कि लोगों में सहकार की वृत्ति पैदा हुई है।

एक तरफ जहाँ ग्रामदान की प्राप्ति की दिशा में आन्दोलन की शक्ति लगायी गयी है, जैसे—बिहार, तमिलनाडु, उड़ीसा, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश आदि प्रान्तों में, दूसरी तरफ, आन्दोलन ग्रामदान के संकल्प का कार्यान्वयन करने के दूसरे चरण में पहुँच गया है। आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक विकास के साथ-साथ गाँवों को अन्दर से बाहर तक निर्माण करने का यह दूसरा और महत्त्वपूर्ण काम है। देश के विकास की धीमी गति के संदर्भ में सैकड़ों, हजारों गाँवों में स्वेच्छया की गयीं ये सामूहिक चेष्टाएँ बहुत ही महत्त्व की हैं। यह एक चुनौती देनेवाला काम है। इस काम के लिए अधिकाधिक उन्मुक्त कार्यकर्ताओं, संगठन-शक्ति, योजना और प्रशिक्षण, तथा पूँजी की आवश्यकता है। आन्दोलन की इन आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए इस आन्दोलन के प्रणेता आचार्य विनोबा भावे को—जिन्होंने इस देश के पुनरुत्थान तथा पुनर्निर्माण के उद्देश्य से, निःशस्त्र गरीबों तथा निचले वर्ग के लोगों के लिए जो कुछ किया है—उनके प्रति अपनी अगाध कृतज्ञता प्रकट करने तथा उनको सम्मानित करने के लिए सर्व सेवा संघ ने यह निश्चित किया है कि उनकी ७५ वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष में 'ग्रामस्वराज्य कोष' में एक करोड़ रुपये एकत्रित करके समर्पित किया जाय।

मैं निवेदन करता हूँ कि हरेक व्यक्ति, चाहे अमीर हो चाहे गरीब, इस कोष के लिए जो कुछ भी दे सके, अवश्य दे।

जयप्रकाश नारायण

अध्यक्ष, ग्रामस्वराज्य-कोष

अक्तेश्वर में भूमि-सत्याग्रह

—२५ ग्रामदानी किसान गिरफ्तार—

—८ मई, अखात्रीज को भूमि जोतने का नया साल आरम्भ—

गुजरात के भड़ोच--बड़ोदा जिले के फेनाई प्रदेश के कार्यक्षेत्र मे आये हुए ग्रामदानी गाँव अक्तेश्वर मे भूमि-सत्याग्रह शुरू हुआ है। एक वर्ष पहले यहाँ के ९ परिवारों से गुजरात सरकार ने भूमि छीनकर मिलीटरी के अधिकारी मेजर वीरेन्द्र सिंह को दी है। इस बेदखली के खिलाफ एक साल तक शान्तिपूर्ण सारे प्रयत्न ग्रामसभा व फेनाई प्रदेश सर्वोदय मडल ने किये। सरकार कोई हल नही निकाल सकी।

अक्तेश्वर गाँव के आदिवासी किसानों की यह जमीन साहूकारों के पास वर्षों पहले गिरवी पडी थी। राजपिपला के राजा के भाई ने साहूकारों से यह जमीन खरीद ली। लोगों ने आपत्ति उठायी। श्री चपकसिंहजी ने कहा, "क्या मैं साहूकारों से रा हूँ? तुम जब रुपया दोगे मैं जमीन ोटा दूँगा।" इसके बाद स्वराज आया। राजाओं ने अपने दफ्तर सरकार को सौंपे। समें यह जमीन श्री चपकसिंहजी के नाम ो गयी थी। उन्होंने अपने नाम दर्ज करके ही दफ्तर सौंपे थे। बबई राज्य का टेनेन्सी ऐक्ट आया। टेनेन्ट फिर मालिक बने। यहाँ के किसान भी मालिक बने। ५ परिवारों के पास जो १६ एकड़ जमीन थी, वह चपकसिंहजी के वारिस मेजर वीरेन्द्र सिंहजी ने अपनी सहमति से सरकार के कानून के मुताबिक बेच दी, उसकी कीमत भी किसानो से ले ली। यह बिक्री सन् १९६२ मे हो गयी। सन् १९६५ मे डिफेन्स पसनल ऐक्ट आया। आपने मिलीटरी के मुलाजिम होने से इस ऐक्ट के मातहत सरकार से जमीन माँगी। गुजरात सरकार ने वीरेन्द्र सिंहजी को, जो टेनेन्ट अभी मालिक नहीं बन पाये थे, उनसे जमीन लेने की दरख्वास्त की। ये ऐसे गरीब किसान थे कि इनसे जमीन लेने पर ये बेजमीन हो जानेवाले थे। फिर भी सरकार ने परवाह नहीं की। इन गरीब परिवारों से जमीन छीनकर सरकार ने वीरेन्द्र सिंह को गत वर्ष कब्जा भी सिपुर्द कर दिया। किसान चिल्लाये, रोये, कौन सुने गरीबो की? इस प्रकार ९ परिवारो से ४४ एकड जमीन छीन ली गयी। इनमे से २ परिवार तो बिलकुल भूमिहीन बन गये। दूसरे ७ भी करीब-करीब भूमिहीन जैसे हो गये। किसीके पास अब २ एकड रही तो किसीके ३-४ एकड। इस ४४ एकड जमीन पर २०० लोगों का गुजारा था। हमने काफी कोशिश की। नाकामयाब रहे। आश्चर्य तो इस बात का हुआ कि जिन ५ परिवारो की १६ एकड़ जमीन सन् '६२ मे रुपया लेकर बेच दी थी, जो जमीन किसानो के नाम दाखिल हो चुकी थी, वह जमीन भी सरकार ने मेजर वीरेन्द्र सिंह को दिला दी। न सरकार ने और न वीरेन्द्र सिंह ने लिये हुए पैसे वापिस भी लौटाये। मतलब कि सरकार ने अन्याय किया, बेदखल तो किया ही।

१८ अप्रैल 'भूमिक्रान्ति-दिवस' पर अक्तेश्वर मे ३०० गाँवो की विशाल रैली हुई। पार्लियामेंट के सदस्य श्री इन्दुलाल याज्ञिक का और मेरा भाषण हुआ। लोगों ने सरकार को तीन-तीन माह से सत्याग्रह की नोटिस दी थी। फिर एक बार ८ मई तक नोटिस दी। ८ मई को अक्षातृतीया (वैशाख शुक्ल ३) पड़ती है, जो गुजरात मे खेती के नये मौसम का शुभारम्भ-दिवस है। ८ मई '७० को ३५० गाँवों के किसानों की विशाल रैली हुई। गुजरात के मशहूर प्रजा-समाजवादी नेता श्री सनतकुमार मेहता और उत्तर गुजरात के भीष्मपितामह श्री साकलचन्द पटेल और गुजरात किसान सभा के प्रधान श्री चन्दुभाई पटेल ने रैली मे भाषण किया। सब वक्ताओं ने इस बात पर जोर दिया कि "प्रार्थना और अर्जियों का युग कब का समाप्त हो चुका है। अन्याय के प्रतिकार के बिना प्रजा-शक्ति का विकास न हो पाता। आप लोगो ने श्री हरिवल्लभभाई परीख के मार्गदर्शन मे प्रतिकार का यह तीसरा मार्ग खोलकर भूमिमुक्ति-दिवस को नजदीक लाने का जो पुरुषार्थ शुरू किया है उसमे हम सबके आशीर्वाद है।"

बुजुर्ग नेता श्री साकलचन्द भाई पटेल ने २५ सत्याग्रहियों को तिलक लगाकर हाथ मे नारियल देकर विदा किया। आगे-आगे सब सत्याग्रही व नेतागण चले। उनके पीछे हजारो स्त्री पुरुषों ने सभा को जुलूस मे बदल दिया। उन पाँच खेतों पर, जो बिक चुके थे, प्रथम सत्याग्रह हुआ। एक एक टोली एक एक खेत पर गयी। उनके साथ पूरा जुलूस चला। नारियल फोडकर अपने खेत मे प्रवेश का मुहूर्त किया। वहीं पुलिस ने उन्हे गिरफ्तार किया। जुलूस ने जोर जोर से विनोबा-गाधी की जय के नारे लगाये। 'जोते उसकी जमीन', 'अपनी जमीन लेकर रहेंगे' आदि नारो से आकाश भर दिया। २०० से ज्यादा एस० आर० पी० पुलिस की मौजूदगी मे ग्रामदानी किसान भाई-बहनो ने जिस उत्साह से, अनुशासन से सत्याग्रह किया उससे सब प्रभावित हुए। स्वराज्य के दिनो की याद आती थी—पहली टोली मे अक्तेश्वर गाँव के ६ भाई और, दूसरे आठ ग्रामदानी गाँवो के १८ भाई और फेनाई सर्वोदय मडल के कार्यकर्ता, श्री दानाभाई पटेल, कुल २५ लोग गिरफ्तार हुए। १५ दिन के बाद १०० सत्याग्रहियो की दूसरी टोली सत्याग्रह करेगी, जिसमे २५ बहनो की भी एक टोली होगी। तीसरा सत्याग्रह १५ जून को होगा, जिसमे ५०० लोग सत्याग्रह करेंगे। जुलाई के प्रथम सप्ताह मे १००० लोग सामूहिक रूप से सत्याग्रह करेंगे।

इस गाँव के लोगों को सर्व सेवा सघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन्‌जी का भी मार्गदर्शन मिला है। 'भूमिपुत्र' के सम्पादक श्री कान्तिभाई शाह ने भी उस गाँव के लोगों से भेंट की है।

अब समय आ गया है कि अन्याय के सामने प्रतिकार करके हमे अहिंसक शक्ति में जो ताकत है, उसे प्रगट करनी होगी। →

आन्दोलन के समाचार

सहरसा जिले में श्री जयप्रकाश नारायण के हाथों १०० एकड़ भूमि का वितरण

श्री जयप्रकाश नारायण का सहरसा जिले में १२ मई से १६ मई तक तूफानी दौरा हुआ। इन चार दिनों में उन्होंने ८ ग्राम सभाओं में भाषण किया। श्री जयप्रकाशजी के कार्यक्रम से इस जिले में उत्साह का संचार हुआ और शीघ्राति-शीघ्र बीघा-कट्ठा बाँटने, ग्रामसभा के संगठन तथा ग्रामकोष-संग्रह के काम को पूरा करने के लिए एक योजना बनायी गयी। श्रीकृष्णराज मेहता वहाँ ज्यादा से-ज्यादा समय देकर काम को गति देने में मदद करेंगे।

श्री जयप्रकाशजी के करकमलों द्वारा १०० बीघा भूमि का बँटवारा विभिन्न पड़ावों पर हुआ। इसमें भूदान की भूमि भी शामिल है, पर ज्यादा-से-ज्यादा बीघा-कट्ठा की भूमि बँटी है। सभी पड़ावों का मिलाकर २,७४८ रु० की थैली ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए श्री जयप्रकाशजी को समर्पित की गयी।

मधेपुरा प्रखण्ड के मलिया गाँव के कुल ११९ परिवारों में ४० परिवार भूमिहीन थे। अब उस गाँव में कोई भूमिहीन नहीं रहा। इस गाँव में ग्रामसभा बनी है, *ग्रामकोष का संग्रह शुरू हुआ है।* ग्रामसभा ने ग्रामकोष में १२५ रु० ग्राम-स्वराज्य कोष में दिया।

उल्लेखनीय बात यह है कि इस गाँव का एक भी मुकदमा अदालत में नहीं है। सभी झगड़े ग्रामसभा तय करती है।

यहाँ के काम में जिले के कार्यकर्ताओं के अलावा सर्वश्री गोखले भाई, ब्रजमोहन शर्मा और विद्यासागर भाई का सहयोग प्राप्त हुआ। जिले के समाहर्ता ने जिले के सरकारी अधिकारियों से बीघा-कट्ठा के बँटवारे में मदद करने की अपील की है।●

श्री जयप्रकाश नारायण का कार्यक्रम

(२५ मई से २० जून '७० तक)

	टिकने का सम्भावित स्थान (डाक व तार का पता)
मई '७०	
२५–२९	गंगोत्री वन-विश्राम-भवन (डा० गंगोत्री, जि० उत्तरकाशी)
३०	गंगोत्री से उत्तरकाशी, विश्राम भवन (गंगोत्री ग्रामस्वराज्य संघ, डा० उत्तरकाशी, तार खादी कमीशन)
३१	पौड़ी, विश्राम-भवन (द्वारा, खादी बोर्ड, पौड़ी)
जून, '७०	
१	पौड़ी विश्राम-भवन (द्वारा खादी बोर्ड, पौड़ी)
२	टिहरी, विश्राम-भवन, (जिला सर्वोदय मण्डल, डा० टिहरी, तार-सर्वोदय, टिहरी, फोन ५६)
३–२०	राणी चौरी वन विश्राम-भवन (चम्बा, ग्रामस्वराज्य संघ, डाक व तारघर, चम्बा, जि० टिहरी गढ़वाल)

—सुन्दरलाल बहुगुणा

—इस सामाजिक व आर्थिक क्रान्ति के युद्ध में जो भी व्यक्ति या समुदाय अहिंसा व अनुशासन के केन्द्र को मान्य कर, उन सबको साथ लेकर हमें आगे बढ़ना होगा। ग्रामस्वराज्य के द्वार ग्रामदान से ही खुलते हैं, इस आस्था के साथ ग्रामस्वराज्य लाने के लिए जन-शक्ति को जागृत करके, उसके द्वारा ही अन्याय के खिलाफ जन-आन्दोलन करना होगा। ग्रामदान खुद आन्दोलन है ही। ग्रामस्वराज्य के लिए 'ग्रामदान' आन्दोलन का मार्ग प्रशस्त करता है। हिंसा से ज्यादा ताकत अहिंसा में है, यह कहने मात्र से या २०वाँ हिस्सा दिलाने के आश्वासन मात्र से भूमि-समस्या हल नहीं होगी, न अहिंसा की ताकत प्रकट होगी। २० वें हिस्से में पुरुषार्थ होगी। हर प्रकार की हिंसा हम रोकेंगे, सरकार की हो या समाज की हो, प्रत्यक्ष हो या परोक्ष। इस पुरुषार्थ में ही जवाब है नक्सलवाद का, सिर्फ जवाब ही नहीं, हल भी है।

११ मई, '७० —हरिवल्लभ परीख

अम्बिकापुर में ग्रामस्वराज्य-कोष

अम्बिकापुर (मध्यप्रदेश) जिले में अन्यत्र छोटी-छोटी रकमों के अलावा जिले के चिरमिरी कोयला-खदान क्षेत्र से पचास हजार रुपये एकत्रित करने का निश्चय किया गया, जिसके लिए श्री जयप्रकाश नारायण की यात्रा-कार्यक्रम बनाने का तय हुआ है।

जिले के सीतापुर और बतौली प्रखण्ड के १८ ग्रामदानी गाँवों में ग्रामकोष स्थापित किये गये हैं, जिनमें ५७५ रु० नकद और ५२५ मन धान इकट्ठा हुआ है।

दुर्घटना

श्री दाताराम मक्कड़ ने कलकत्ता से लिखा है कि सर्वोदय का कार्य करते करते एक दुर्घटना में उनके दायें पैर की हड्डी टूट गयी है। प्लास्टर हो जाने के बाद वह भोपाल चले जायेंगे। उनके ठीक होने में ३-४ महीने लगेंगे। सर्वोदय परिवार की ओर से भगवान से प्रार्थना है कि वह शीघ्र स्वस्थ हों, ताकि अपने काम में लग सकें। श्री दातारामजी कलकत्ता में साहित्य-प्रचार का कार्य करते हैं।

भूल-सुधार

पिछले अंक के पृष्ठ ५११ पर 'प्रथम में कोष-संग्रह' में 'एक उद्योगपति श्री रामनगीना सिंह ने ३५० रुपये' के स्थान पर पढ़ें ' '३,५०० रुपये' इसीमें नीचे प्रथम का लक्ष्यांक ४ लाख छपा है, उसे ५ लाख पढ़ें। भूल के लिए क्षमा करेंगे।—स०

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

आन्दोलन के समाचार

वर्ष : १६ अंक : ३५

सोमवार १ जून, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४२८५

चित्त का प्रवाह और स्थिरता

बाबा ने तय किया है कि सूक्ष्म-प्रवेश के बाद बाबा मर गया, ऐसा मान लें और मरने के बाद जो कुछ होगा वह अगर जीवित अवस्था मे होगा, तो आगे का दर्शन बाबा को होगा। मरने के बाद जो होनेवाला है वह मरने से पहले हो जाय तो इसमे इतना ध्यान में आयेगा कि मनुष्य के कर्तृत्व मे कोई खास फर्क नही है, इसलिए शान्ति से परमात्मा-स्मरण करो। इसको तुकाराम ने नाम दिया है—'मरने से पहले ही मैं मर गया, इसका अनुभव लेना।' इसलिए मरने के बाद जो होनेवाला था उसका दर्शन जीवित अवस्था मे मुझे हुआ तो बड़ा आनन्द आया, ऐसा उन्होंने वर्णन किया है। बाबा उस आनन्द का आस्वाद लेना चाहता है।

गाधीजी गये। इस साल गाधीजी जीवित होते तो अहमदाबाद मे क्या हुआ वह देखने को मिलता। दो-एक हजार आदमी अहमदाबाद में मारे गये। वह उनका मुख्य स्थान है। साबरमती आश्रम है, गुज-रात विद्यापीठ है। सरदार वल्लभभाई पटेल वहाँ रहे। इतना सारा होते हुए भी वहाँ पर उन्माद हुआ। अब यह जो उन्माद है, वह दक्षिण मे नहीं है। जहाँ-जहाँ मुस्लिम लोगो मे और हिन्दू लोगो में झगडा है, वही यह है, और ज्यादातर उत्तर भारत मे है। ये प्रदेश बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान—बहुत पिछड़े हुए हैं, शिक्षण ज्यादा नहीं है। बहनो मे परदा है। बाहर कोई बहन आयेगी नही। बिहार की ५ हजार की मीटिंग मे ३०-४० बहनें आपको दिखेंगी। उत्तरप्रदेश मे आधी जनसख्या स्त्रियो की है, और वे परदे मे हैं। स्त्री विरुद्ध पुरुष, यह बहुत बडा प्रश्न वहाँ है। स्त्रियाँ पिछड़ी हुई हैं इसलिए नीचे सोचती हैं। व्यवहार-पद्धति में कोई सुधार होगा नही। पुरुष तैयार हो जायं तो भी स्त्रियो की पिछड़ी हुई अवस्था होने से कोई सामाजिक पुनर्निर्माण नहीं हो पाता। हिन्दू-मुस्लिम सवाल है, जाति का सवाल है। और अत्यन्त दारिद्रय है। वहाँ बडे-बडे शहर हैं। शहरों द्वारा लोगों का शोषण होता है। स्त्रियों में शिक्षण है नही, पुरुषो में भी प्रतिशत कम है। राजनीति में स्थायित्व है नही।

अभी भारत के मध्य मे मैं हूँ, और ध्यान से सर्वत्र सम्बन्ध रखता हूं। अगर कही पर बडा सकट हो और अन्दर से आवाज आयी कि जाना चाहिए, तो पहले से मैं अपने को बांध करके रखूं, यह उचित नही। इसलिए मन को मुक्त रखा है। एक हफ्ते से ज्यादा का सोचता नही। अक्सर चित्त का प्रवाह स्थिरता में है और एक जगह रहकर सब दूर ध्यान मे क्या परिणाम हो सकता है, यह देखना है। —विनोबा

गोपुरी, वर्धा : ९-४-'७०

शिक्षण एक निहित स्वार्थ

यों तो जहाँ तक राष्ट्र-निर्माण का सम्बन्ध है, स्वतंत्रता के बाद का इतिहास हमारे नेताओं की विफलता का इतिहास है, किन्तु शिक्षण की स्थिति देखने से तो ऐसा लगता है जैसे देश के भविष्य के विरुद्ध कोई छिपा हुआ षड्यंत्र काम कर रहा हो। क्या पढ़ाई, क्या पुस्तक, और क्या परीक्षा, किसी भी चीज में इतने वर्षों में समझ में आने लायक कोई भी परिवर्तन तो हुआ होता ! गुलामी के दिनों से आज तक शायद ही कोई दीक्षान्त भाषण हुआ हो जिसमें राष्ट्रपति से लेकर नीचे तक के नेताओं ने गला फाड़कर शिक्षण की प्रचलित पद्धति को न कोसा हो, और उन्हीं विद्यार्थियों के सामने न कोसा हो जो उस पद्धति के निरपराध शिकार हैं। लेकिन कोई भलमानुस यह तो बताता कि परिवर्तन होता क्यों नहीं ! इस प्रश्न पर सबने समान रूप से चुप्पी साध रखी है। और इतने वर्षों में स्वयं पार्लियामेन्ट ने भी शिक्षण के प्रश्न पर कितना समय दिया है ? भाषा के प्रश्न पर चर्चाओं का कोई अन्त नहीं रहा है, लेकिन राष्ट्र के शिक्षण के प्रश्न पर क्या हुआ ? क्या यह कहना गलत होगा कि शिक्षण बदलता है तो समाज बदलता है, और समाज बदलने के लिए हमारे समाज के कर्णधार तैयार हैं नहीं, इसलिए शिक्षण पर पुस्तकें बनती हैं, प्रवचन होते हैं, किन्तु शिक्षण में परिवर्तन नहीं होता। शायद यह श्रेय विद्यार्थियों को—और अब नक्सलवादी विद्यार्थियों को—मिलनेवाला था, जिन्होंने यह कहकर ललकारा है : 'सुधार नहीं कर रहे हो तो प्रहार लो।' वे पूछ रहे हैं : 'क्या प्रयोग होंगे इन प्रयोगशालाओं में ? क्या होगी वे ढेर-की-ढेर पुस्तकें जो पुस्तकालयों में भरी पड़ी हैं ?' ठीक भी है, जहाँ विद्या का लोप होता हो, जहाँ थोथी डिग्रियों से प्रतिभा आँकी जाती हो; जहाँ सनद और सर्टिफिकेट से भविष्य का पासपोर्ट बनता हो, और जहाँ युवकों और युवतियों की नैतिक और बौद्धिक 'हत्या' की जाती हो, वे फाँसी-घर हैं या ज्ञान-विज्ञान के केन्द्र ?

यह सन् १९७० यूनेस्को की ओर से अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षण-वर्ष मनाया जा रहा है। लगभग ५ महीने बीत गये। इस वर्ष में भारत क्या करनेवाला है ? बाकी दुनिया कहीं जाय, कुछ भी करे, हमारे लिए जैसा सन् १९६९, वैसा सन् १९७०, और वैसा ही १९७१। भारत-सरकार के शिक्षा-मंत्रीजी ने, जो स्वयं किसी समय, जब वह नेता नहीं थे, अर्थशास्त्र के प्राध्यापक थे, एक बात कही है : 'हम लोग हवा विश्वविद्यालय (एयर युनिवर्सिटी) कायम करने की योजना बना रहे हैं।' यह विश्वविद्यालय ऐसा होगा जिसमें विद्यार्थी घर बैठे अपने-अपने रेडियो पर विद्वानों के भाषण सुन लेंगे। मालूम नहीं हवा-विश्वविद्यालय की यह योजना और योजनाओं की तरह कितनी हवाई होगी और कितनी वास्तविक, लेकिन यदि नीचे से ऊपर तक की पूरी शिक्षा इस तरह 'हवाई' बना दी जाय तो कम-से-कम इतना लाभ तो होगा कि कुछ स्कूल और कालेज तोड़-फोड़ से बच जायेंगे।

दिल्ली हवा की बात सोच रही है, लेकिन राज्य-सरकारें ? और स्वयं ये विश्वविद्यालय, जहाँ नामधारी विद्वान दिन रात 'पे-प्रमोशन-पेंशन' की ही कतर-ब्योंत में लगे हुए हैं ? किसीको सोचने की फुर्सत नहीं है, शायद जरूरत भी नहीं है। राजनैतिक दलों के लिए यही सन्तोष काफी है कि विद्यालयों में उनकी अपनी छात्र-शाखाएँ सगठित हो जायँ, ताकि प्रदर्शनों और उपद्रवों के लिए तरुण मिलते रहें, और विद्यालय गृहयुद्ध के अखाड़े बने रहें। वास्तव में हमारा सारा शिक्षण प्रशासक-प्रबन्धक-शिक्षक नेता का सम्मिलित निहित स्वार्थ (वेस्टेड इन्टरेस्ट) बन गया है। अब यह निश्चित है कि यह निहित स्वार्थ शिक्षण को समाज-परिवर्तन का माध्यम नहीं बनने देगा। जब समाज बदलेगा तो शिक्षा भी बदलेगी। वह तब होगा जब नये हाथ पुरानी दीवारों को एक एक करके ढहाते चले जायेंगे। सन् १९५३ में माओ ने कहा था कि विशेषज्ञों द्वारा शिक्षण पूँजीवादी धारणा है। आज लगता भी ऐसा ही है कि हमारा शिक्षण तब बदलेगा जब समाज 'विशिष्ट जन' के हाथों से निकलकर 'सर्वजन' के हाथों में जायगा। तब तक प्रतीक्षा ही करनी पड़ेगी।

सुनते हैं दिल्ली में परीक्षा-प्रणाली में सुधार की चर्चा हो रही है। क्यों हो रही है ? इसलिए नहीं कि परीक्षा-प्रणाली निकम्मी है, बल्कि इसलिए कि परीक्षार्थियों ने परीक्षा का जनाजा निकाल दिया है, और प्रहारों के डर के मारे अब निरीक्षक पनाह माँगने लगे हैं। मुरादाबाद में एक प्रिंसिपल साहब का, जो स्वयं कानून की परीक्षा में परीक्षार्थी थे, नकल करते हुए पकड़ा जाना इस बात का प्रमाण है कि नकल इस दूषित परीक्षा-पद्धति का अंग है, लड़कों की सिर्फ बदमाशी नहीं है। जब तक यह परीक्षा रहेगी तब तक नकल रहेगी।

क्या गाँव, क्या स्कूल, क्या दफ्तर और क्या कारखाना, हर जगह घर में आग घर के चिराग से लग रही है। श्रमिक, बाबू, विद्यार्थी सब उठ बैठे हैं, भले ही उन्हें यह न मालूम हो कि खड़े होकर उन्हें जाना कहाँ है। इन सारी स्थितियों का हल गांधीजी की उस शिक्षण-योजना में था जो उन्होंने सन् १९३७-३८ में प्रस्तुत की थी। गर्भ से मृत्यु तक के शिक्षण की वह योजना थी, उत्पादन से जुड़ी हुई, वातावरण के प्रति संवेदनशील। उसे हमारे नेताओं, विद्वानों और प्रशासकों ने मिलकर खत्म कर दिया, यद्यपि आज भी हमारे स्कूलों में 'बेसिक स्कूल' के तख्ते→

'हमारा आन्दोलन': कुछ समस्याएँ और संभावनाएँ—४
कार्य, कर्ता, कोप

१. 'इनिशिएटिव' का प्रश्न

आजकल कई जगह नक्सालवादी उपद्रव हो रहे हैं। नक्सालवादी कहते हैं कि उनका प्रयत्न 'श्वेत आतंक' (ह्वाइट टेरर) को समाप्त करने का है। आतंक का जवाब आतंक से देने की कोशिश वे कर रहे हैं। यह मानने में किसीको क्या कठिनाई हो सकती है—ग्रामदान को तो नहीं ही होगी—कि आज समाज 'श्वेत आतंक' यानी सफेदपोशों के आतंक से त्रस्त है। यह दूसरी बात है कि यह आतंक समाज की व्यवस्था में पिरोया हुआ है, और हम सब उसके आदी हो गये हैं। लेकिन किसी-न किसी रूप में आतंक तो है ही। नक्सालवादियों का दावा है कि उनका 'लाल आतंक' इस 'श्वेत आतंक' का जवाब है।

हमारे कई मित्रों की राय है कि जहाँ 'लाल आतंक' प्रकट होता है वहाँ सर्वोदय को अपना ग्रामदान और शान्ति-सेना आदि का कार्यक्रम लेकर फौरन पहुँचना चाहिए, और अशान्ति-शमन का काम करना चाहिए। मेरे विचार में ऐसा सोचना गलत है। नक्सालवाद को अपनी चिंता का मुख्य विषय बना लेना ग्रामदान का काम नहीं। अभिक्रम (इनिशिएटिव) नक्सालवाद के, अथवा किसी दूसरे 'वाद' के हाथ में रहे और ग्रामदान प्रतिक्रिया के रूप में उसके पीछे पीछे चले, यह किसी क्रान्तिकारी आन्दोलन का स्वधर्म नहीं है। एक क्रान्तिकारी आन्दोलन को 'इनिशिएटिव' हमेशा अपने हाथ में रखना होगा, तभी वह प्रभावकारी होगा। ग्रामदान समाज के सामने ऐसी शान्ति-योजना प्रस्तुत कर रहा है जिसमें न सफेद आतंक होगा, न लाल आतंक। दोनों आतंकों को वह प्रचलित दूषित व्यवस्था का परिणाम मानता है, इसलिए उसका ध्यान उस क्रान्तिकारी समाज-परिवर्तन पर है जो इन दोनों आतंकों से मुक्ति देगा। विशेष स्थिति में कोई तात्कालिक कदम उठाना पड़े, वह दूसरी बात है।

सफेद या लाल, किसी तरह का आतंक हो, आतंक से भय का राज पैदा होता है। भय के राज में नया समाज नहीं बनता। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य में शान्ति और क्रान्ति की सम्मिलित प्रक्रिया द्वारा समाज के जीवन से भय को निर्मूल करने का प्रयास है। इसलिए हम न एक आतंक के समर्थक हैं, और न दूसरे आतंक के विरोधी। सफेद और लाल, दोनों वर्ग-आतंक हैं। हम दोनों तरह के वर्ग-आतंक का अन्त चाहते हैं। हम किसी एक वर्ग की शक्ति से काम नहीं करते। हम काम करते हैं सर्व की शक्ति से। हमारे बीघा-कट्ठा और भूमि के स्वामित्व-विसर्जन के कार्यक्रम में वर्ग की शक्ति का निराकरण और ग्रामसभा (ग्रामस्वराज्य-सभा) के संगठन में सर्व की शक्ति की स्थापना है। इसलिए तत्काल हमारा ध्यान सबसे अधिक इन्हीं दो मुद्दों पर होना चाहिए। इनके कारण समाज में जो नैतिक-सामाजिक वातावरण पैदा होगा उसमें भूमि-सम्बन्धी दूसरे प्रश्नों का हल आसान हो जायगा, तथा साथ-साथ संगठन और विकास की योजनाओं के लिए सामूहिक पुरुषार्थ भी प्रगट होगा। यही रास्ता है समाज को आतंक-मुक्त करने का।

२. वर्ग-शक्ति बनाम सर्व-शक्ति

इतने वर्षों के विचार-शिक्षण के बाद यह उचित और आवश्यक है कि हम क्रान्ति के लक्ष्यों की सिद्धि के लिए 'सत्याग्रह' के नये कदम उठायें। यह महसूस किया रहा है कि 'परसुएशन' बहुत हो चुका, अब 'प्रेशर' का प्रयोग होना चाहिए। लेकिन ऐसा दिखायी देता है कि दबाव 'प्रेशर' की बात सोचने के पहले मनाव 'परसुएशन' को सघन (इन्टेंसीफाई) बनाने का प्रयत्न परिस्थिति के ज्यादा अनुरूप होगा, और शायद परिणाम की दृष्टि से ज्यादा उपयोगी भी। हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारे कदम परिस्थिति में से विकसित होते हुए दिखायी दें, न कि बाहर से थोपे हुए। मनाव को मजबूत और व्यापक बनाने के कई कदम सोचे जा सकते हैं।

जो भी कदम उठाये जायँ उनकी एक कसौटी यह होगी कि उनके पीछे 'सर्व' (भूमिवान और भूमिहीन, दोनों) की शक्ति कितनी है। अभी तक बिहार में राज्यदान के बाद जो काम हुआ है उससे ऐसी भूमिका बनती दिखायी देती है कि ग्रामदान की भूमिका में भूमिवान-भूमिहीन के सम्मिलित प्रयत्न सम्भव हैं। जो सम्भव है उसे वास्तविक बनाने का पूरा प्रयत्न होना चाहिए। हम वर्गाग्रह को सत्याग्रह नहीं मान सकते। इसका यह अर्थ है कि भूमिवानों और भूमिहीनों, दोनों को आन्दोलन की मुख्य धारा में लाना चाहिए। अभी धारा में एक भी नहीं है। उन्हें यह अनुभूति होनी चाहिए कि क्रान्ति के रंगमंच पर वे समान हैसियत के अभिनेता हैं। अभी तक ऐसी अनुभूति उन्हें नहीं हुई है। अगर भूमिहीन ग्रामकोष में अपना भाग दे देते हैं तो वे भूमिहीनों से बीघा-कट्ठा की माँग करने के अधिकारी

→साइनबोर्ड लटके हुए हैं। चालीस साल से अधिक हो गये। इस बीच कमीशन और कमेटियाँ कितनी ही बैठीं, किन्तु गांधीजी की उस योजना से अधिक सम्पूर्ण, समग्र योजना किसने बनायी? राष्ट्रीय शिक्षण के जो मुद्दे उन्होंने सामने रखे उनसे भिन्न और नये मुद्दे किसने रखे? हम जब भी भारत की शिक्षण-समस्या का समाधान यहाँ की परिस्थिति, परम्परा, और प्रतिभा के अनुबन्ध में ढूंढेंगे, तो हमें नयी बुनियादों की बुनियादी तालीम के सिवाय दूसरा कुछ मिलेगा नहीं। कम-से-कम अभी तो दूसरी कोई पूँजी हमारे पास नहीं है।

दुनिया बढ़ रही है, बदल रही है। हम बढ़ती-बदलती दुनिया को विस्मयभरी आँखों से देख रहे हैं। और हमारे ये बच्चे? वे क्रोधभरी आँखों से हमें देख रहे हैं।●

शिक्षण एक निहित स्वार्थ

यों तो जहाँ तक राष्ट्र-निर्माण का सम्बन्ध है, स्वतन्त्रता के बाद का इतिहास हमारे नेताओं की विफलता का इतिहास है, किन्तु शिक्षण की स्थिति देखने से तो ऐसा लगता है जैसे देश के भविष्य के विरुद्ध कोई छिपा हुआ षड्यन्त्र काम कर रहा हो। क्या पढ़ाई, क्या पुस्तक, और क्या परीक्षा, किसी भी चीज में इतने वर्षों में समझ में आने लायक कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ होता। गुलामी के दिनों से आज तक शायद ही कोई दीक्षान्त भाषण हुआ हो जिसमें राष्ट्रपति से लेकर नीचे तक के नेताओं ने गला फाड़कर शिक्षण की प्रचलित पद्धति को न कोसा हो, और उन्हीं विद्यार्थियों के सामने न कोसा हो जो उस पद्धति के निरपराध शिकार हैं। लेकिन कोई भलमानुस यह तो बताता कि परिवर्तन होता क्यों नहीं! इस प्रश्न पर सबने समान रूप से चुप्पी साध रखी है। और इतने वर्षों में स्वयं पार्लियामेन्ट ने भी शिक्षण के प्रश्न पर कितना समय दिया है? भाषा के प्रश्न पर चर्चाओं का कोई अन्त नहीं रहा है, लेकिन राष्ट्र के शिक्षण के प्रश्न पर क्या हुआ? क्या यह कहना गलत होगा कि शिक्षण बदलता है तो समाज बदलता है, और समाज बदलने के लिए हमारे समाज के कर्णधार तैयार हैं नहीं, इसलिए शिक्षण पर पुस्तकें बनती हैं, प्रवचन होते हैं, किन्तु शिक्षण में परिवर्तन नहीं होता। शायद यह श्रेय विद्यार्थियों को—और अब नक्सलवादी विद्यार्थियों को—मिलनेवाला था, जिन्होंने यह कहकर ललकारा है: 'सुधार नहीं कर रहे हो तो प्रहार लो।' वे पूछ रहे हैं: 'क्या प्रयोग होंगे इन प्रयोगशालाओं में? क्या होगी ये ढेर-की-ढेर पुस्तकें जो पुस्तकालयों में भरी पड़ी हैं?' ठीक भी है, जहाँ विद्या का लोप होता हो, जहाँ थोथी डिग्रियों से प्रतिभा आँकी जाती हो, जहाँ सनद और सर्टिफिकेट से भविष्य का पासपोर्ट बनता हो, और जहाँ युवकों और युवतियों की नैतिक और बौद्धिक 'हत्या' की जाती हो, वे फाँसी-घर हैं या ज्ञान-विज्ञान के केन्द्र?

यह सन् १९७० यूनेस्को की ओर से अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षण-वर्ष मनाया जा रहा है। लगभग ५ महीने बीत गये। इस वर्ष में भारत क्या करनेवाला है? बाकी दुनिया कहीं जाय, कुछ भी करे, हमारे लिए जैसा सन् १९६९, वैसा सन् १९७०, और वैसा ही १९७१। भारत-सरकार के शिक्षा-मंत्रीजी ने, जो स्वयं किसी समय, जब वह नेता नहीं थे, अर्थ-शास्त्र के प्राध्यापक थे, बात कही है: 'हम लोग हवा-विश्वविद्यालय (एयर युनिवर्सिटी) कायम करने की योजना बना रहे हैं।' यह विश्वविद्यालय ऐसा होगा जिसमें विद्यार्थी घर बैठे अपने-अपने रेडियो पर विद्वानों के भाषण सुन लेंगे। मालूम नहीं हवा-विश्वविद्यालय की यह योजना और योजनाओं की तरह कितनी हवाई होगी और कितनी वास्तविक, लेकिन यदि नीचे से ऊपर तक की पूरी शिक्षा इस तरह 'हवाई' बना दी जाय तो कम-से-कम इतना लाभ तो होगा कि कुछ स्कूल और कालेज तोड़-फोड़ से बच जायेंगे।

दिल्ली हवा की बात सोच रही है, लेकिन राज्य सरकारें और स्वयं ये विश्वविद्यालय, जहाँ नामधारी विद्वान दिन-रात 'पे-प्रमोशन-पेंशन' की ही कतर-ब्योंत में लगे हुए हैं? किसी को सोचने की फुर्सत नहीं है; शायद जरूरत भी नहीं है। राजनैतिक दलों के लिए यही सन्तोष काफी है कि विद्यालयों में उनकी अपनी छात्र शाखाएँ संगठित हो जायँ, ताकि प्रदर्शनों और उपद्रवों के लिए तरुण मिलते रहें, और विद्यालय गृह-युद्ध के अखाड़े बने रहें। वास्तव में हमारा सारा शिक्षण प्रशासक-प्रबन्धक-शिक्षक-नेता का सम्मिलित निहित स्वार्थ (वेस्टेड इन्टरेस्ट) बन गया है। अब यह निश्चित है कि यह निहित स्वार्थ शिक्षण को समाज-परिवर्तन का माध्यम नहीं बनने देता। जब समाज बदलेगा तो शिक्षा भी बदलेगी। वह तब होगा जब नये हाथ पुरानी दीवारों को एक-एक करके ढहाते चले जायँगे। सन् १९५३ में माओ ने कहा था कि विशेषज्ञों द्वारा शिक्षण पूँजीवादी धारणा है। आज लगता भी ऐसा ही है कि हमारा शिक्षण तब बदलेगा जब समाज 'विशिष्ट जन' के हाथों से निकलकर 'सर्वजन' के हाथों में आयगा। तब तक प्रतीक्षा ही करनी पड़ेगी।

सुनते हैं दिल्ली में परीक्षा प्रणाली में सुधार की चर्चा हो रही है। क्यों हो रही है? इसलिए नहीं कि परीक्षा-प्रणाली निकम्मी है, बल्कि इसलिए कि परीक्षार्थियों ने परीक्षा का जनाजा निकाल दिया है, और प्रहारों के डर के मारे अब निरीक्षक पनाह माँगने लगे हैं। मुरादाबाद में एक प्रिंसिपल साहब का, जो स्वयं कानून की परीक्षा में परीक्षार्थी थे, नकल करते हुए पकड़ा जाना इस बात का प्रमाण है कि नकल इस दूषित परीक्षा-पद्धति का अंग है, लड़कों की सिर्फ बदमाशी नहीं है। जब तक यह परीक्षा रहेगी तब तक नकल रहेगी।

क्या गाँव, क्या स्कूल, क्या दफ्तर और क्या कारखाना, हर जगह घर में आग घर के चिराग से लग रही है। श्रमिक, बाबू, विद्यार्थी सब उठ बैठे हैं, भले ही उन्हें यह न मालूम हो कि खड़े होकर उन्हें जाना कहाँ है। इन सारी स्थितियों का हल गांधीजी की उस शिक्षण-योजना में था जो उन्होंने सन् १९३७-३८ में प्रस्तुत की थी। गर्भ से मृत्यु तक के शिक्षण की वह योजना थी, उत्पादन से जुड़ी हुई, वातावरण के प्रति संवेदनशील। उसे हमारे नेताओं, विद्वानों और प्रशासकों ने मिलकर खत्म कर दिया, यद्यपि आज भी हजारों स्कूलों में 'बेसिक स्कूल' के झूठे→

'हमारा आन्दोलन' : कुछ समस्याएँ और संभावनाएँ—४
कार्य, कर्ता, कोष

१. 'इनिशिएटिव' का प्रश्न

आजकल कई जगह नक्सालवादी उपद्रव हो रहे हैं। नक्सालवादी कहते हैं कि उनका प्रयत्न 'श्वेत आतंक' (ह्वाइट टेरर) को समाप्त करने का है। आतंक का जवाब आतंक से देने की कोशिश वे कर रहे हैं। यह मानने में किसीको क्या कठिनाई हो सकती है—ग्रामदान को तो नहीं ही होगी—कि आज समाज 'श्वेत आतंक' यानी सफेदपोशों के आतंक से त्रस्त है। यह दूसरी बात है कि यह आतंक समाज की व्यवस्था में पिरोया हुआ है, और हम सब उसके आदी हो गये हैं। लेकिन किसी-न-किसी रूप में आतंक तो है ही। नक्सालवादियों का दावा है कि उनका 'लाल आतंक' इस 'श्वेत आतंक' का जवाब है।

हमारे कई मित्रों की राय है कि जहाँ 'लाल आतंक' प्रकट होता है वहाँ सर्वोदय को अपना ग्रामदान और शान्ति-सेना आदि का कार्यक्रम लेकर फौरन पहुँचना चाहिए, और अशान्ति-शमन का काम करना चाहिए। मेरे विचार में ऐसा सोचना गलत है। नक्सालवाद को अपनी चिंता का मुख्य विषय बना लेना ग्रामदान का काम नहीं। अभिक्रम (इनिशिएटिव) नक्सालवाद के, अथवा किसी दूसरे 'वाद' के हाथ में रहे और ग्रामदान प्रतिक्रिया के रूप में उसके पीछे पीछे चले, यह किसी क्रान्तिकारी आन्दोलन का स्वधर्म नहीं है। एक क्रान्तिकारी आन्दोलन को 'इनिशिएटिव' हमेशा अपने हाथ में रखना होगा, तभी वह प्रभावकारी होगा। ग्रामदान समाज के सामने ऐसी क्रान्ति-योजना प्रस्तुत कर रहा है जिसमें न सफेद आतंक होगा, न लाल आतंक। दोनों आतंकों को वह प्रचलित दूषित व्यवस्था का परिणाम मानता है, इसलिए उसका ध्यान उस क्रान्तिकारी समाज-परिवर्तन पर है जो इन दोनों आतंकों से मुक्ति देगा। विशेष स्थिति में कोई तात्कालिक कदम उठाना पड़े, यह दूसरी बात है।

सफेद या लाल, किसी तरह का आतंक हो, आतंक से भय का राज पैदा होता है। भय के राज में नया समाज नहीं बनता। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य में शान्ति और क्रान्ति की सम्मिलित प्रक्रिया द्वारा समाज के जीवन से भय को निर्मूल करने का प्रयास है। इसलिए हम न एक आतंक के समर्थक हैं, और न दूसरे आतंक के विरोधी। सफेद और लाल, दोनों वर्ग-आतंक हैं। हम दोनों तरह के वर्ग-आतंक का अन्त चाहते हैं। हम किसी एक वर्ग की शक्ति से काम नहीं करते। हम काम करते हैं सर्व की शक्ति से। हमारे बीघा-कट्ठा और भूमि के स्वामित्व-विसर्जन के कार्यक्रम में वर्ग की शक्ति का निराकरण और ग्रामसभा (ग्रामस्वराज्य-सभा) के संगठन में सर्व की शक्ति की स्थापना है। इसलिए तत्काल हमारा ध्यान सबसे अधिक इन्हीं दो मुद्दों पर होना चाहिए। इनके कारण समाज में जो नैतिक सामाजिक वातावरण पैदा होगा उसमें भूमि सम्बन्धी दूसरे प्रश्नों का हल आसान हो जायगा, तथा साथ-साथ संगठन और विकास की योजनाओं के लिए सामूहिक पुरुषार्थ भी प्रगट होगा। यही रास्ता है समाज को आतंक-मुक्त करने का।

२. वर्ग-शक्ति बनाम सर्व-शक्ति

इतने वर्षों के विचार-शिक्षण के बाद यह उचित और आवश्यक है कि हम क्रान्ति के लक्ष्यों की सिद्धि के लिए 'सत्याग्रह' के नये कदम उठावें। यह महसूस किया रहा है कि 'परसुएशन' बहुत हो चुका, अब 'प्रेशर' का प्रयोग होना चाहिए। लेकिन ऐसा दिखायी देता है कि दबाव 'प्रेशर' की बात सोचने के पहले मनाव 'परसुएशन' को सघन (इन्टेंसीफाई) बनाने का प्रयत्न परिस्थिति के ज्यादा अनुरूप होगा, और शायद परिणाम की दृष्टि से ज्यादा उपयोगी भी। हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारे कदम परिस्थिति में से विकसित होते हुए दिखायी दें, न कि बाहर से थोपे हुए। मनाव को मजबूत और व्यापक बनाने के कई कदम सोचे जा सकते हैं।

जो भी कदम उठाये जायँ उनकी एक कसौटी यह होगी कि उनके पीछे 'सर्व' (भूमिवान और भूमिहीन, दोनों) की शक्ति कितनी है। अभी तक बिहार में राज्यदान के बाद जो काम हुआ है उससे ऐसी भूमिका बनती दिखायी देती है कि ग्रामदान की भूमिका में भूमिवान-भूमिहीन के सम्मिलित प्रयत्न सम्भव हैं। जो सम्भव है उसे वास्तविक बनाने का पूरा प्रयत्न होना चाहिए। हम वर्गाग्रह को सत्याग्रह नहीं मान सकते। इसका यह अर्थ है कि भूमिवानों और भूमिहीनों, दोनों को आन्दोलन की मुख्य धारा में लाना चाहिए। अभी धारा में एक भी नहीं है। उन्हें यह अनुभूति होनी चाहिए कि क्रान्ति के रंगमंच पर वे समान हैसियत के अभिनेता हैं। अभी तक ऐसी अनुभूति उन्हें नहीं हुई है। अगर भूमिहीन ग्रामकोष में अपना भाग दे देते हैं तो वे भूमिहीनों से बीघा-कट्ठा की माँग करने के अधिकारी

→साइनबोर्ड लटके हुए हैं। चालीस साल से अधिक हो गये। इस बीच कमीशन और कमेटियाँ कितनी ही बैठीं, किन्तु गांधीजी की उस योजना से अधिक सम्पूर्ण, समग्र योजना किसने बनायी? राष्ट्रीय शिक्षण के जो मुद्दे उन्होंने सामने रखे उनसे भिन्न और नये मुद्दे किसने रखे? हम जब भी भारत की शिक्षण-समस्या का समाधान यहाँ की परिस्थिति, परम्परा, और प्रतिभा के अनुबन्ध में ढूँढ़ेंगे, तो हमें नयी दुनियादों की बुनियादी तालीम के सिवाय दूसरा कुछ मिलेगा नहीं। कम-से-कम अभी तो दूसरी कोई पूँजी हमारे पास नहीं है।

दुनिया बढ़ रही है, बदल रही है। हम बढ़ती-बदलती दुनिया को विस्मयभरी आँखों से देख रहे हैं। और हमारे ये बच्चे? वे क्षोभभरी आँखों से हमें देख रहे हैं।•

हो जाते हैं। उनके इस तरह शरीक होने से आन्दोलन को बहुत बल प्राप्त होगा। वास्तव में उनके सहयोग के बिना गाँव में वह स्थिति नहीं पैदा होगी जो किसी समस्या के हल होने के लिए आवश्यक है। अगर हमारा आन्दोलन उन्हें छोड़कर आगे बढ़ने की कोशिश करेगा तो नहीं बढ़ सकेगा। इससे यह कोशिश करनी भी नहीं चाहिए। अगर हम वर्ग-शक्ति की जगह सर्व-शक्ति न जगा सके तो आज की तरह भूमिवान लाल आतंक के भय से पुलिस की शरण में जाते रहेंगे, और भूमिहीन सफेद आतंक पर प्रहार के लिए गुप्त षड्यन्त्र करते रहेंगे।

३. शान्तिसेना-क्रान्तिसेना

इस सन्दर्भ में ग्राम-शान्तिसेना का संगठन अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाता है। ग्राम-शान्ति-सेना ग्राम-क्रान्ति-सेना भी है। उसका मुख्य काम है गाँव को दोनों प्रकार के आतंक से मुक्त करना। उस दृष्टि से वह 'मुक्ति-सेना' भी है। अगर हम यह भूमिका प्रस्तुत करेंगे तो निश्चित है कि बड़ी संख्या में भूमिवान और भूमिहीन ग्राम-शान्तिसेना के काम के लिए आगे आयेंगे। आतंक-मुक्ति की आकांक्षा दोनों की है।

४. प्रयोग क्षेत्र

(क) जो काम हमारे सामने है, और जो हमारी शक्ति है, उसे देखते हुए हमें कुछ 'प्रयोग-क्षेत्र' चुनने पड़ेंगे। इन प्रयोग-क्षेत्रों में ग्रामदान-खादी-शान्तिसेना का त्रिविध कार्यक्रम केन्द्रित करना पड़ेगा। त्रिविध 'तीन-विध' होकर अलग-अलग चले, इससे काम नहीं चलेगा। अलग-अलग क्षेत्र बनाने से तीनों कमजोर पड़ेंगे। लेकिन क्षेत्र का चुनाव ग्रामदान के ही आधार पर हो सकता है। खादी और शान्तिसेना ग्रामदान के साथ जुड़ेंगे।

(ख) हमें पूरा प्रयास करना है कि है कि हमारे चुने हुए 'प्रयोग-क्षेत्र' जल्द-से-जल्द ऐसी स्थिति में पहुँचें कि उनमें 'प्रखंडसभाएं' बन जायं। जिस तरह ग्रामसभा गाँव में लोक-संगठन की इकाई होगी, उसी तरह ब्लाक-स्तर पर प्रखंड-सभा होगी। प्रखंड-सभा के बन जाने पर आगे ग्रामस्वराज्य का जो भी काम हो—शिक्षण, संगठन, सेवा या विकास का, वह इन लोकसंगठनों के ही माध्यम से हो, संस्थाओं के माध्यम से नहीं।

(ग) इस सारे कार्य के लिए हमारे कोष के आधार मुख्य रूप से दो ही हैं—एक, 'सर्वोदय-मित्र', और दूसरा ग्राम-सभाओं द्वारा दान। जो ग्रामसभा बीघा-कट्ठा के साथ गठित होगी, और उसका छोटा भी कोष होगा, वह आन्दोलन के लिए दान नहीं देगी ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है। यह हमारा काम है कि शिक्षण द्वारा हम अनुकूल व्यक्तियों, और ग्रामसभाओं को आन्दोलन के साथ जोड़ें। खादी तथा रचनात्मक संस्थाओं को यह तय करने के लिए हम मुक्त छोड़ दें कि धन और जन से वे इस आन्दोलन में क्या रोल अदा कर सकती हैं। हमारा आन्दोलन सर्व-सापेक्ष है। अभी जो कार्यकर्ता और धन उनसे मिला है वह कुछ क्षेत्रों में काम को आगे बढ़ाने के लिए काफी है।

५. क्रान्ति का कमांड

(क) हमारी स्थिति संकट की है, किन्तु निराशा की कदापि नहीं है। अगर हम परिस्थिति के साथ, अपने रास्ते को पहचानते हुए, दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ेंगे तो सफलता मिलेगी। लेकिन परिस्थिति की परख, रास्ते की पहचान, दृढ़तापूर्ण प्रयत्न, इन तीनों का मेल मिलाने की दृष्टि से नये ढंग से कमांड की रचना करनी होगी, जो अपने-अपने क्षेत्र में पूरे आन्दोलन को आगे बढ़ायें। अपने काम के लिए हम जो ढीली-ढाली समितियाँ आदि बनाते हैं, उनमें अनेक लोगों को कई तरह के लेहाज के कारण रखना पड़ता है। ऐसा करना आन्दोलन के साथ अन्याय है। आन्दोलन को पूरी शक्ति और समर्पण की जरूरत है। आन्दोलन 'पार्ट-टाइम' काम नहीं है। हर स्तर पर ठोस कमांड की जरूरत है।

(ख) जितना आवश्यक है, उतना ही आवश्यक राजस्तरीय 'कार्यकर्ता-केडर' है। उसके बिना हमारी शक्ति अधूरी साबित हो रही है। चुने हुए भरोसे का कार्यकर्ता-केडर होना ही चाहिए।

—राममूर्ति

शिक्षण के निहित स्वार्थ

१—राज्य सरकारें विशाल औद्योगिक योजनाएं चाहती हैं, शिक्षण नहीं।

२—राजनैतिक नेता शिक्षण को अपने हाथ में रखना चाहते हैं—शिक्षकों को भी, विद्यार्थियों को भी।

३—सरकारें प्राथमिक शिक्षण का पैसा ऊँची शिक्षा में लगाती हैं।

४—शिक्षक अभ्यास क्रम नहीं बदलना चाहते, ताकि उन्हें पढ़ाने में आसानी हो, नोट लिखवाकर छुट्टी पा लें।

५—विद्यार्थी पिटे-पिटाये प्रश्न तैयार करना चाहते हैं, अध्ययन नहीं करना चाहते—आसान कोर्स चाहते हैं।

ये कुछ निहित स्वार्थ हैं, जो शिक्षण में सुधार नहीं होने देना चाहते।

—'हिन्दू', मद्रास से

प्रश्नोत्तर

व्यक्ति का गुणात्मक विकास और शान्ति की सामाजिक शक्ति

—शान्ति-सैनिकों के प्रश्न : विनोबा के उत्तर—

क्रोध और मिश्री

प्रश्न—आदमी को गुस्सा क्यों आता है ? गुस्सा नहीं आने के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर—आदमी को गुस्सा अनेक कारणों से आता है। मुख्य कारण यह है कि वह आदमी है इसलिए आता है। जो आदमी है उसको गुस्सा आना लाजिमी है। गुस्सा न आये, इसके लिए क्या किया जाय, तो इसका उपाय अत्यन्त सरल है। बाबा का अपना अनुभव है। बाबा को गुस्से का आभास है। दूसरे लोग जो कहते थे कि मुझमें गुस्सा या वह आवेश था। एक भाई के साथ बात हो रही थी। मैं कुछ आवेश में बोला था। मैंने कहा, "जो बोल रहा हूँ वह ठीक है या बेठीक ? अगर ठीक है तो तुम ही ठीक नहीं कह रहे हो। क्योंकि गुस्से से बुद्धि का नाश होता है और आपका बोलना अगर बुद्धि-हीन दिख रहा है तो गुस्सा आपमें दिख रहा है, गुस्से का आरोपण मुझ पर क्यों कर रहे हैं ?" लेकिन कुछ गुस्सा मुझमें आता था उसका अनुभव है। मैं अध्ययन-शील मनुष्य था। कोई आकर ऐसी ही बातें बोलने लगता था तो मुझे अन्दर से गुस्सा आने लगता। उस वक्त मैं अपने पास मिश्री की एक डिबिया रखता था उसमें से एक टुकड़ा उसके मुँह में डालने के लिए दे देता और एक टुकड़ा अपने मुँह में डाल लेता। उसका बोलना बन्द हो जाता और मेरा गुस्सा बन्द हो जाता। सार यह है कि क्रोध जरूर रिपु है लेकिन वह हमेशा रिपु नहीं है। द्वेष जो है वह रिपु है। द्वेष ऐसे मिश्री के टुकड़े से जायेगा नहीं। वह वंश-परम्परा चलता है। अमुक चीज में दुश्मनी बड़ी थी, उसको याद करते रहते हैं। इस प्रकार द्वेष भयंकर शत्रु है। क्रोध का वेग सूकर के जैसे होता है। रास्ते से थोड़ा सा हट जायें तो सूकर के आक्रमण से बच जाते हैं, वैसे ही क्रोध के वेग से बचा जा सकता है। उस वेग को मिश्रीवाली बात हो तो हटा देती है। हमने बचपन में पढ़ा था कि क्रोध आता हो तो १० तक गिनती गिनो। इतने से उसकी धड़क (वेग) चली जाती है। क्रोध में तो मनुष्य अपनी याददाश्त भूल जाता है। कुछ-का-कुछ कर बैठता है। लेकिन आपको इतना याद रहा कि क्रोध आ रहा है तो आप क्रोध के साक्षी हुए, क्रोध से अलग हो गये। 'स्थित-प्रज्ञ दर्शन' में हमने बताया है कि उसका प्रथम असर होने नहीं देना चाहिए। कोई भी खराब वार्ता सुनी तो पहले क्षण में सावधान होना चाहिए।

कथनी और करनी

प्रश्न—समाज में व्यक्ति खुद ही गलत रास्ते से जा रहा है, लेकिन वह दूसरों को सुधारने के लिए कोशिश करता है तो उसके साथ हम कैसा बर्ताव करें ?

उत्तर—वह अगर दूसरे के साथ अच्छा व्यवहार करता है तो उसकी बात सुननी चाहिए। वह खुद शराब पीता है तो उससे आपका मतलब क्या ? लेकिन दूसरे से कह रहा है कि शराब नहीं पीनी चाहिए तो अच्छी बात है, हमको सुनना चाहिए। अगर आप कहें कि तुम तो पीते हो, तो मेरे जैसा अक्लवाला होगा तो कहेगा कि 'हाँ मैं पीता हूँ। उसका बुरा अनुभव मुझको है। उसकी आदत छुड़ा नहीं पाता हूँ, लाचार हूँ। इसलिए आपको बचाना चाहता हूँ कि भाई तुम बचो।'

सीमा और संकोच

प्रश्न—देश में प्रान्त और देश की सीमा होना जरूरी है क्या ? क्योंकि इससे मन संकुचित बनता है।

उत्तर—देश की सीमा होने से अपने देश और दूसरे देश से भेद रखना चाहिए, ऐसा मन में भेद रखने की जरूरत नहीं है। लेकिन प्रान्त बनता है, देश बनता है तो वह व्यवस्था के लिए बनते हैं। व्यवस्था के लिए एक छोटा-सा हिस्सा हो तो व्यवस्था करने में आसानी होती है। वह इसलिए बनाये जाते हैं, चित्त में भेद करने के लिए नहीं। यह जो प्रान्त बनते हैं उनमें मन संकुचित बनता है, ऐसा कहते हैं। 'बनता नहीं', बन सकता है। बनना ही चाहिए ऐसा नहीं, लेकिन बन सकता है। वह समझाना होगा कि यह जो मर्यादा है वह इस कारण से है। कारण समझाने के लिए कह सकते हैं कि वहाँ दूसरी भाषा चलती है, वहाँ का कारोबार उनकी भाषा में चलेगा तो उनको अनुकूलता होगी, इसमें आपसे अलग होने की बात नहीं है।

हिन्दुस्तान में तो समझाना बहुत आसान है, क्योंकि आपको किसी भी प्रान्त में जाकर मकान बनाने की सुविधा है, व्यापार करने की सुविधा है, शिक्षा भी पा सकते हैं। अपने प्रान्त में चोरी करते हैं तो उस प्रान्त में भी चोरी कर सकते हैं। आपके प्रान्त में उसके लिए जो दंड मिलेगा, वही दंड उस प्रान्त में मिलेगा, क्योंकि सारे भारत के लिए एक कानून है। चोरी के प्रकार के अनुसार उसे सजा होगी। फिर कहते हैं कि भाषा एक ही है। तो १०-१२ करोड़ लोग हो जायें तो 'मैनेजमेंट' के लिए कठिन जाता है, इस वास्ते एक से अधिक हिस्सा करना ठीक होता है।

सत्ता और सज्जनता

प्रश्न—लोगों का कहना है कि शासन की बागडोर गुण्डों के हाथ में चली गयी है। वास्तव में गुण्डों की परिभाषा क्या है ?

उत्तर—शासन की बागडोर गुण्डों के हाथ में गयी है, ऐसा मैं मानता नहीं। जिनके हाथ में आज शासन है उनमें

काफी लोग सज्जन हैं। भिन्न-भिन्न पार्टियों के अनेक नेता सज्जन हैं; विद्वान हैं। तो गुण्डों के हाथ में शासन गया है, यह मानना ठीक नहीं। यह अतिशयोक्ति है। लेकिन ऐसों के हाथ में जरूर बागडोर गयी है, जिनका नीचे के लोगों से सम्पर्क टूटा है। आम जनता की जरूरत क्या है, इसका जिनको सम्पर्क नहीं, ऐसे लोगों के हाथ में बागडोर चली गयी है। लोगों का उनके साथ सम्बन्ध आता नहीं। जो आता है वह प्रतिनिधियों के द्वारा आता है। लोगों ने प्रतिनिधि चुने और वह जो लोग चुने गये उसमें से मिनिस्टर चुने गये। इसलिए लोगों के साथ सम्बन्ध होता नहीं, यह मुख्य अड़चन है। लोगों के द्वारा ऐसे लोग चुने जायें जिनको आम लोग पसन्द करते हों, यह तब होगा जब गाँव-गाँव में ग्रामदान होगा और उन ग्रामसभाओं के द्वारा उनका मनुष्य खड़ा किया जायगा, किसी पार्टी की तरफ से नहीं। इस प्रकार होने से दल-मुक्त सरकार होगी। और मैंने कई दफा कहा है कि दल-मुक्त सरकार हो और सरकार-मुक्त जनता। जो कुछ करना हो वह हमारे हाथ में हो। उसमें किसीकी दखल नहीं हो सकती, मदद मिल सकती है। इस प्रकार शासन-मुक्त जनता और दल-मुक्त सरकार जब होगी तब यह सुधरेगा। परन्तु आज यह कहना कि हिन्दुस्तान में गुण्डों का राज है, यह ठीक नहीं। बहुत सज्जन लोग उसमें पड़े हैं।

विदेशी आक्रमण और अहिंसक प्रतिकार

प्रश्न—यदि आज की परिस्थिति में चीन ने भारत पर हमला किया तो शान्ति-सैनिकों का क्या कर्तव्य होगा?

उत्तर—बहुत ही कठिन प्रश्न पूछा है। आज की परिस्थिति में चीन हमला करेगा कि नहीं, यह तो मैं नहीं जानता। लेकिन जहाँ तक मैं सोचता हूँ, भारत पर हमला करने से चीन को कोई फायदा होगा नहीं, क्योंकि चीन के जैसा ही भारत भी अधिक लोक-संख्यावाला देश है। चीन को ऐसा मुल्क चाहिए जहाँ पर लोक-संख्या कम हो और जमीन आदि ज्यादा हो। जैसे तिब्बत है, रूस की सीमा से लगा हुआ मंगोलिया है। वहाँ आबादी कम और जमीन ज्यादा है। परन्तु भारत पर आक्रमण होगा तो भारत के अन्तर्गत जो शक्तियाँ काम करती होंगी, उनके बुलाने पर उनको मदद करने के लिए ही हो सकता है। उसके लिए जरूरी है कि भारत में कम्यूनिस्टों का जबर्दस्त संगठन हो और भारत में हर जगह दंगे हो रहे हों, ऐसी हालत में आक्रमण हो सकता है। ऐसा मौका आये तो शान्ति-सैनिकों को क्या करना चाहिए, यह सवाल पूछा है।

मैंने कहा कि यह कठिन सवाल है। उस समय जो सरकार होगी वह तुरन्त 'आर्मी' भेजेगी और उसको तुरन्त बाबा का आशीर्वाद मिल जायेगा कि ठीक किया। बाबा सरकार का बराबर समर्थन करेगा। इसलिए समर्थन करेगा कि 'आर्मी' रखी है तो क्या केला खाने के लिए रखी है? अगर आपको विरोध करना था तो 'आर्मी' रखने का करना था। वह आप कर नहीं पाये, उस हालत में 'आर्मी' रखकर आप कहें कि 'आर्मी' अपने स्थान पर रहे, यह उचित नहीं। 'आर्मी' को तुरन्त जाना चाहिए और जाना उचित है। शान्ति-सैनिकों को ऐसे मौके पर क्या करना चाहिए? तो उनको वहाँ बिलकुल नहीं जाना चाहिए। वह 'आर्मी' के लिए क्षेत्र है, उसके लिए छोड़ देना चाहिए। 'आर्मी' वालों में अक्ल होगी तो आपको वहाँ सीमा पर जाने नहीं देंगे। शान्ति-सैनिकों को करना यह चाहिए कि हिन्दुस्तान के अन्तर्गत व्यवहार में 'आर्मी' का उपयोग न करना पड़े, यह करके दिखायें। आज तो जहाँ-तहाँ 'आर्मी' बुलाना पड़ता है। दंगों के स्थानों में हमारी सेना उपस्थित है वह दंगों को शान्त कर लेती है, यह अगर हम सिद्ध करेंगे तब फिर आगे हम माँग कर सकते हैं, हमारी सरकार के पास कि 'आर्मी डिस्बैंड' करो। बाहरी आक्रमण होगा तो विश्व-युद्ध होगा, उसकी चिन्ता करना नहीं, और अन्दर-अन्दर का हम लोग देख लेते हैं। लेकिन जब तक आप यह कर न पायें, अन्तर्गत व्यवस्था को रोकने के लिए बार-बार 'आर्मी' को बुलाना पड़े, पुलिस को बुलाना पड़े, तब तक 'इण्टर-नेशनल वार' में 'आर्मी' न भेजी जाय, यह माँग करने का अधिकार नहीं, और न यही माँग करने का अधिकार होगा कि हम वहाँ जायेंगे। आपको यदि वहाँ जाने से नहीं रोका जाता और आप वहाँ जाते हैं तो आपको मार डालते हैं। इसमें हिन्दुस्तान में बगावत होगी। हिन्दुस्तान में ऐसा हो कि आपका इतना कब्जा हो कि आपके मारे जाने से दंगा नहीं होगा तो दूसरी बात है।

इस वास्ते जहाँ पर 'आर्मी' है वहाँ पर लड़ाई को रोकने के लिए जाने में कोई लाभ नहीं है। शंकरराव देव ने दिल्ली-पीकिंग मैत्री यात्रा चलायी थी। उन्होंने कहना शुरू किया कि हिन्दुस्तान को लड़ाई में शामिल नहीं होना चाहिए। दुनिया में इस विषय में दो तीन राष्ट्र हैं। कुछ ऐसे हैं जहाँ पर लड़ाई में हर एक को शामिल होना ही चाहिए और नहीं शामिल होंगे तो सरकार की आज्ञा पर उनको जेल में डाला जायगा और कभी कत्ल भी कर सकते हैं। दूसरे ऐसे देश हैं, जैसे इंग्लैण्ड, जहाँ 'कान्शियन्स आब्जेक्टर्स' वाले कुछ लोग हैं। वे लड़ाई में शामिल होना नहीं चाहते। उनका 'कान्शेंस' उसके खिलाफ आता है। वहाँ का कानून कहता है कि ऐसे लोगों को लड़ाई में शामिल होने की जबर्दस्ती नहीं है।

लेकिन कोई ऐसा देश नहीं है कि वहाँ पर कोई यह प्रचार करे कि सरकार लड़ाई बन्द करे और लोगों को लड़ाई में जाने से मना करे। इन लोगों ने तीसरी बात माँगी थी कि हम तो लड़ाई में शामिल होना नहीं चाहते, लेकिन दूसरों को भी रोकेंगे और लोगों को कहेंगे कि लड़ाई नहीं होनी चाहिए, ऐसा प्रचार की आजादी अगर लड़ाई शुरू हो, वहाँ माँगना और देना, ये दोनों 'गांधी मेनिया' हैं। इन्होंने ऐसी इजाजत माँगी क्योंकि उनका 'गांधी मन्त्र' था और

उन्होंने इजाजत दे दी, क्योंकि उनको भी 'गांधी मन्यु' था। उन्होंने कहा, 'चलो करो प्रचार।' पं० नेहरू ने तो यहां तक कहा कि तुम्हारी टोली में विदेश के काफी लोग हैं उनका वजन के लो। उनका वजन घटना नहीं चाहिए। रास्ते में उनके खाने-पीने आदि का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए। वे लोग प्रचार करते असम पहुँच गये तो कांग्रेस के लोगों ने पंडितजी से पूछा कि क्या हम इन लोगों का स्वागत कर सकते हैं? वे बोले, 'व्यक्तिगत तौर पर कर सकते हैं, कांग्रेस-मैन के नाते नहीं।' उन लोगों ने कहा, 'ठीक है, व्यक्तिगत तौर पर करेंगे।' यों करके उनका स्वागत हुआ और आखिर वे मैत्री-आश्रम में पहुँच गये जहां से चीन की सीमा १००-१२५ मील होगी। उसके आगे का हिस्सा 'मिलीटरी' का है। भारत सरकार ने कहा कि उधर से चीन की इजाजत आपको यदि मिल जाती है तो हम उधर जाने की इजाजत देते हैं। उनकी बिना इजाजत के हम आपको खड़ा कर दें, यह उचित नहीं। चीनवालों ने इजाजत नहीं दी तो कुल मिलाकर चीन 'राग बाक्स' में आ गया। उस वक्त भारत की नैतिक शक्ति बहुत बढ़ी थी।

यह सब मैंने आपके सामने इसलिए कहा कि शांति-सैनिकों को व्यक्तिगत तौर पर 'फ्रण्ट' पर जाकर काम करने की सहूलियत मिले, ऐसी आशा करना गलत है, और उनके लिए ऐसी सहूलियत देना भी गलत है, और वैसी योग्यता हममें है भी नहीं। आज की लड़ाई किस फ्रण्ट पर चल रही है और बम कहाँ गिरेगा, यह कहना मुश्किल है। अगर चीन-भारत में घोषित युद्ध होगा तो बम अहमदाबाद पर पड़ेंगे। जहाँ-जहाँ उद्योगों का 'कान्सेन्ट्रेशन' है वहाँ-वहाँ बम गिरते। ऐसी हालत में शान्ति-सैनिक क्या करेगा? 'इण्टरनेशनल' लड़ाई होती है तो कुल-के-कुल गाँव 'वार फ्रण्ट' हो जाते हैं।

इसलिए 'इण्टरनेशनल' क्षेत्र में शान्ति का प्रयोग करना हो तो प्रथम, देश की अन्तर्गत व्यवस्था में शान्ति हो, दूसरा, दोनों देशों के बीच बातचीत हो सके, मतभेद मिटाना, प्रेम बढ़ाने की कोशिश, और तीसरा, यू० एन० ओ० की शान्ति सेना बनी है। उन्होंने भी अपनी 'आर्मी' रखी है। रूस, अमेरिका वगैरह देशों ने अपनी-अपनी 'आर्मी' रखी है, और इनकी भी छोटी-सी 'आर्मी' है। यह उन्होंने गलत काम किया। 'आर्मी' रखने का अधिकार तब होता जब सभी देशों ने अपनी 'आर्मी डिबैंड' कर दी होती। परन्तु प्रत्येक राष्ट्र को 'आर्मी' रखने का अधिकार हो और ये भी अपनी छोटी-सी 'आर्मी' रखें, इसमें कोई अर्थ नहीं था। उनको तो अपनी शान्तिसेना ही बनानी थी। अगर यू० एन० ओ० ने १० लाख शान्ति-सैनिक बनाये होते और वह उनकी तरफ से दुनिया में जा रहे हैं तो मैं कल्पना कर सकता हूँ। दूसरी बात मैंने कई बार कही है, कि आजकल की लड़ाई में आपका नैतिक असर नहीं पड़ेगा। आपके शान्त चेहरे को देखने का मौका ही उनको नहीं मिलेगा। उनका चेहरा आपको नहीं दिखेगा और आपका चेहरा उनको नहीं दिखेगा। दूर से हमला होगा। ऊपर से बम गिरेगा। आजकल जो ऊपर से बम गिराता है उसका चेहरा देखा जाय तो एकदम शान्त दिखेगा। वह बराबर गणित लगाकर, कोशिश करके बम गिराता है। लेकिन आमने-सामने की लड़ाई में चेहरा भयानक दिखाई देगा।

गोपुरी, वर्धा : २९-४-'७०

खादी : संगठन की नयी दिशा

[खादी के संगठन के सम्बन्ध में बिहार के मित्रों द्वारा तैयार किया हुआ एक प्रस्तावित प्रारूप छाप रहे हैं। उन लोगों ने तय किया है कि अगले तीन वर्षों में खादी का इस प्रारूप के आधार पर नया संगठन करेंगे। हमारा निवेदन है कि खादी में लगे हुए देश भर के साथी इस प्रारूप पर विचार करें और अपनी राय लिखें।

हमें इस प्रारूप के सम्बन्ध में अपनी ओर से अभी सिर्फ इतना कहना है कि ग्रामदान के बाद ग्रामस्वराज्य की योजना में जिस ग्रामसभा, प्रखण्ड-सभा, जिलासभा और राज्यसभा की कल्पना है उससे भिन्न संगठन खादी के लिए बनाने की जरूरत नहीं होनी चाहिए। राज्यदान के बाद अगर हम इस तरह के लोक संगठन नहीं खड़ा कर सकेंगे तो स्पष्ट है कि राज्यदान में जिस लोक-क्रान्ति की कल्पना है वह साकार नहीं होगी। इसलिए इस समय पूरी शक्ति इसी संगठन में लगानी चाहिए। जैसे-जैसे प्रखंडों में ग्रामसभाओं के आधार पर प्रखंड-सभाएँ बनती जायँ साहस करके हम आज का खादी-कार्य उनके हाथों में सौंपते जायँ। यह क्रम शुरू हो जाय तो नयी दिशा मिलेगी। कोशिश हो कि इस क्रम में तेजी आये। अगर हम यह न कर बीच की सीढ़ियाँ बनाते जायँगे तो विशुद्ध लोकसंगठनों के विकास में बाधा ही आयेगी। इस प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए।—सं०]

खादी का नया संगठन : एक प्रस्तावित प्रारूप

राज्यदान के संदर्भ में बिहार के खादी-साथियों ने मिलकर, जिसमें श्री जयप्रकाश नारायणजी भी शामिल थे, खादी के भावी संगठन का एक प्रारूप तैयार किया है। संयोजक का दावा है कि यह प्रारूप सर्वोदय-क्रान्ति के मूल्यों, तथा विशेष रूप से ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त का ध्यान रखकर बनाया गया है। उस प्रारूप को हम अपने पाठकों और साथियों की जानकारी के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं।

प्रखंड-स्तरीय संस्था

१. हर ब्लाक में 'प्रखंड-निर्माण-संघ' नाम की एक संस्था होगी। उसका कार्यक्षेत्र पूरा प्रखंड रहेगा।

२. यह 'प्रखंड-निर्माण-संघ' जिला संघ से सम्बद्ध रहेगा।

३. सदस्यता : संघ की सदस्यता दो प्रकार की होगी—सम्बद्ध और व्यक्तिगत।

सम्बद्ध सदस्य ये होंगे.

प्रखंड में कार्यरत—

(क) ग्रामदानी ग्रामसभाएँ

(ख) ग्रामोदय या सर्वोदय सहयोग समितियाँ

(ग) कारीगरों की सहकारी समितियाँ

(घ) अन्य स्वैच्छिक संस्थाएँ।

व्यक्तिगत सदस्य

(क) व्यक्तिगत सदस्य वे होंगे जो निम्न समूहों में प्रतिनिधि-स्वरूप संघ द्वारा निश्चित संख्या में नामजद होकर आयेंगे.

(i) संघ के कार्य में लगे सवैतनिक कार्यकर्ता।

(ii) स्थायी रूप से संस्था के प्रत्यक्ष उत्पादन एवं सेवा-कार्य में लगे पंजीकृत कत्तिन, बुनकर, धोबी, आदि कारीगर।

(iii) निबंधित उपभोक्ता। निबंधित उपभोक्ता वे व्यक्ति होंगे जिन्होंने प्रखंड संघ के कार्यक्षेत्र से प्रखंड संघ या उससे सम्बद्ध संस्थाओं द्वारा संचालित बिक्री-भंडार से कम-से-कम दो सौ रुपयों के मूल्य की वस्तु प्रतिवर्ष क्रय करते हों।

४. संगठन का स्वरूप

संस्था के दो अंग होंगे—एक, प्रतिनिधि-परिषद, और दूसरा, कार्य-समिति-प्रतिनिधि-परिषद।

(क) प्रतिनिधि-परिषद के सदस्य निम्न होंगे :

(i) सभी सम्बद्ध संस्थाओं के अध्यक्ष और मंत्री पदेन। उसके अतिरिक्त वे व्यक्ति जो सम्बद्ध संस्थाओं के लिए निर्धारित अंश में से सम्बद्ध संस्थाओं द्वारा प्रतिनिधि-स्वरूप चुनकर आये हों।

(ii) व्यक्तिगत सदस्यों के प्रतिनिधि।

(ख) प्रतिनिधि-परिषद का कार्य-काल १ वर्ष होगा। बजट तथा संविधान में संशोधन आदि का अधिकार प्रतिनिधि-परिषद को ही होगा।

(ग) प्रतिनिधि-परिषद अपने सदस्यों में से कार्यसमिति के सदस्यों का चुनाव निम्न प्रकार करेगी :

सम्बद्ध सदस्यों एवं व्यक्तिगत सदस्यों में ३ और २ के अनुपात में सदस्य चुने जायेंगे। सदस्यों की संख्या १५ होगी। कार्यसमिति के एक-तिहाई सदस्य हर दो वर्ष पर निवृत्त हुआ करेंगे।

५. पदाधिकारी

कार्यसमिति अपने सदस्यों में से एक अध्यक्ष, एक कोषाध्यक्ष, और एक मंत्री का निर्वाचन करेगी।

६. लाभ का वितरण

(१) सामान्यतः संघ के आर्थिक कार्यक्रम इस प्रकार चलाये जायेंगे कि पारिश्रमिक एवं मूल्य-सम्बन्धी नीतियों के कारण अतिरिक्त मुनाफा न पैदा हो। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए हिसाब के नैतिक अंकेक्षण के अतिरिक्त प्रत्येक वर्ष पारिश्रमिक एवं मूल्यों की संरचना की सूक्ष्म छानबीन की जायगी। इसके बावजूद यदि संस्था वास्तविक स्थापना व्यय चलाने के लिए आवश्यक राशि से अधिक मुनाफा कमायेगी तो वह पूँजी-निर्माण, कारीगर-कल्याण, उपभोक्ता मूल्य घटती बढ़ती जैसे सुरक्षित कोषों में जमा की जायगी।

(२) ये कोष दो वर्ष तक सुरक्षित रखे जाने के बाद जिन उद्देश्यों के लिए सुरक्षित रखे गये हैं उनमें व्यय किये जायेंगे।

(३) किसी वर्ष हानि की स्थिति में इसका सर्व-प्रथम उपयोग उसकी पूर्ति के लिए, इस निमित्त समिति द्वारा बनाये गये विशेष नियम के अंतर्गत किया जायगा।

जिला निर्माण-संघ

७ सदस्यता

जिला-संघ की सदस्यता दो प्रकार की होगी—सम्बद्ध और व्यक्तिगत।

सम्बद्ध सदस्य ये होंगे :

(i) प्रखंडस्तरीय संस्थाएँ

(ii) जिला-संघ के कार्य-क्षेत्र की सीमा के अंतर्गत एक से अधिक प्रखंडों में कार्यरत कारीगरों की औद्योगिक सहकारी समितियाँ।

(iii) जिला-संघ के कार्यक्षेत्र में कार्यरत अन्य स्वैच्छिक संस्थाएँ।

८. संगठन के स्वरूप, पदाधिकारी आदि के सम्बन्ध में ठीक वही नमूना रखा गया है जो 'प्रखंड-निर्माण-संघ' के लिए रखा गया है।

राज्य-स्तरीय संस्था

९ जिला-स्तरीय संस्थाओं, कारीगरों की सहकारी समितियों तथा स्वैच्छिक संस्थाओं को सम्बद्ध कर राज्य-स्तरीय संस्था बनेगी। उसके भी प्रखंड और जिला संस्थाओं की तरह सम्बद्ध और व्यक्तिगत सदस्य होंगे, तथा व्यवस्था के लिए प्रतिनिधि-परिषद, कार्यसमिति और पदाधिकारी होंगे।•

धरती, आकाश, पानी, हवा
क्या मनुष्य आत्म-हत्या पर उतारू है ?

धरती का ध्यान

अभी कुछ दिन हुए अमेरिका में 'धरती-दिवस' मनाया गया। अमेरिका और धरती : सुनकर आश्चर्य होता है। अचानक अमेरिका के यंत्र-उन्मत्त लोगों को धरती की याद कैसे आ गयी ? कई बरस हुए एक दिन रात को न्यूयार्क में बिजली फेल हो गयी। कहा जाता है कि उस रात जब चारों तरफ अंधेरा छा गया तो बहुत-से लोगों ने जिन्दगी में पहली बार चांद देखा ! दूर के चांद तक दौड़ लगानेवाले अमेरिकन को घर का चांद देखने की फुरसत कहां है ? मनुष्य प्रकृति पर विजय पाना चाहता है, लेकिन प्रकृति के पास नहीं रहना चाहता। लेकिन अब वह देखने लगा है कि प्रकृति से दूर हटने का अर्थ है जीवन से दूर हटना। जीवन से हटकर वह जीयेगा कैसे और किसलिए, जीवन किसी गुण का नाम है या मात्र सामानों के ढेर का ? इसलिए वह छटपटा रहा है। छटपटा रहा है वास्तविक जीवन के स्पर्श के लिए जो उसे नहीं मिल रहा है। और, अब तो नौबत यहां तक आ गयी है कि हवा, पानी, धरती सबको उसने और उसके कारखानों ने गंदा कर डाला है—इतना गंदा कर डाला है कि वैज्ञानिक कहने लगे हैं कि अगर वातावरण की यह गंदगी न रुकी तो आदमी का जीना मुश्किल हो जायेगा। अब मनुष्य 'धरती को मनुष्य से बचाने के लिए' लड़ रहा है। लड़ाई शुरू ही हुई है।

लड़ाई किस बात की है ? समस्या क्या है ? आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र ने हमें रोगों से बचाया। इस बचाव से जनसंख्या इतनी बढ़ती जा रही है कि भविष्य में आदमी कहां रहेगा, क्या खायेगा, कहना कठिन है। उसी तरह यंत्रों से सुसज्जित मनुष्य ने यह समझा था कि प्रकृति के कठोर नियमों की ओर से आंखें मोड़कर वह सिर्फ यंत्रों की शक्ति से एक सुखी, यांत्रिक समाज बना लेगा। अब वह समझ रहा है कि कितना बड़ा भ्रम था यह ! सारे ज्ञान-विज्ञानों के बाद अब वह महसूस कर रहा है कि एक विज्ञान छूट गया था—जिन्दा रहने का विज्ञान (दी साइंस आव सरवाइवल), 'इकालोजी'। अब इस नये अस्तित्व-विज्ञान के विशेषज्ञों को सबसे अधिक चिन्ता इस बात की है कि जीवन की 'क्वालिटी' क्यों नहीं बढ़ रही है। एक वैज्ञानिक ने कहा है : 'बस एक पीढ़ी का समय और है। हमने अपने चारों ओर की प्रकृति के साथ बेहद ज्यादती की है। एक पीढ़ी में हम वातावरण को बचा सके तो बचा लें। इससे ज्यादा समय नहीं है।'

यह अस्तित्व विज्ञान अभी नया है। दूसरे विज्ञानों की तरह इसकी दृष्टि संकुचित नहीं है। यह विज्ञान मनुष्य और उसके वातावरण को समग्रता में देखता है। यह यह सिद्ध कर रहा है कि मनुष्य चारों ओर प्राणधारियों से घिरा हुआ है। विभिन्न प्राणधारियों की व्यवस्थाएं एक-दूसरे से अलग दिखाई देती हैं, लेकिन सचमुच वे सब एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। विभिन्न प्राणियों का अपना-अपना दायरा है, लेकिन सबने मिलकर एक संसार बनाया है जिसमें सब जिन्दा हैं। अगर यह बड़ा दायरा ('बायो-स्फियर') जिसमें आक्सीजन आदि हैं, न रहे तो मनुष्य नहीं रह सकता।

संतुलन

संतुलन की दृष्टि से हर जीव-जगत् (ईकोसिस्टम) को चार चीजों की जरूरत होती है : (१) गैस, खनिज आदि 'इनारगेनिक वस्तुएं'; (२) 'उत्पादक' पौधे जो तरह-तरह की वस्तुओं से खाद्य-पदार्थ बनाते हैं; (३) वे प्राणी जो इन पदार्थों को खाते हैं, (४) सड़ानेवाले—वे 'बैक्टीरिया' जो मरी हुई चीजों को खाद्यपदार्थों की दृष्टि में उपयोगी बना देते हैं। यह प्रकृति का विलक्षण गुण है कि मरी हुई चीजों से उपजाऊ मिट्टी को सुधारती-संवारती रहती है। ऊपर की एक इंच अच्छी मिट्टी बनाने में ५०० साल लगते हैं।

हर जीवधारी के जीवन का एक ताना-बाना है जिसमें अगर एक जगह कोई बात हो जाती है तो उसका असर हर जगह पड़ता है। सारी प्रकृति कुछ नियमों द्वारा संचालित है। हर जीवधारी उपलब्ध भोजन से अधिक अपनी संख्या बढ़ा लेता है। संतुलन को कायम रखने के लिए जंगल में एक प्राणी दूसरे को खा लेता है। प्रकृति में असीम विविधता (डाइवर्सिटी) है। एक क्षेत्र में अधिक-से-अधिक प्रकार के जीव रहेंगे तो कोई एक जीव सीमा से बाहर नहीं बढ़ने पायेगा, और संतुलन कायम रहेगा।

यंत्र की गुलामी से पैदा हुए गुलाम

आज के यंत्रवादी मनुष्य ने इन नियमों को तोड़ दिया है। वह नहीं जानता कि प्रकृति को भ्रष्ट करके उसने अपने जीवन को जोखिम में डाल दिया है। प्रकृति मनुष्य की की हुई बरबादी को दुरुस्त करने की कोशिश तो करती है, लेकिन बदला भी लेती है। डी० डी० टी० फसल बरबाद करनेवाले कीड़ों को मारता है। कीड़ों को ही नहीं, उन चिड़ियों को भी मार देता है जो कीड़ों को खाती हैं। डी० डी० टी० का असर उस अन्न और वनस्पति पर भी पड़ जाता है, जिसे मनुष्य खाता है। क्या मनुष्य जानता है कि जिस तेजी के साथ उनकी संख्या बढ़ रही है—दो हजार ईस्वी में दुनिया की जनसंख्या ७ अरब हो जायगी—उस संख्या को उसके चारों ओर का वातावरण बर्दाश्त कर सकेगा ? अस्तित्व-विज्ञान के विशेषज्ञ (इकालोजिस्ट) कोल ने एक दूसरा प्रश्न उठाया है। वह कहता है कि ८० फीसदी लोग शहरों में रहनेवाले हैं, यानी २ फीसदी भूमि पर। इस तरह की केन्द्रित भीड़ों का वातावरण पर जबरदस्त प्रभाव पड़ेगा। और, इन शहरों में रहनेवाले लोग ऐसे होंगे जिनकी संवेगात्मक आवश्यकताएं भीड़ की जिन्दगी

में पूरी होंगी। आगे की पीढ़ी इन्हीं के द्वारा पैदा होगी। क्या हम अपने बच्चों को पागलखाने, जेल, या आत्म-हत्या के लिए पैदा कर रहे हैं?

विशेषज्ञ बैरी कामनर का कहना है कि आज की परिस्थिति में पृथ्वी पर ६ से ८ अरब मनुष्यों के लिए जगह है। अगर संख्या उससे अधिक बढ़ेगी तो भोजन और वातावरण को ठीक रखने की समस्या काबू के बाहर हो जायेगी। वातावरण-वैज्ञानिकों को यह भरोसा नहीं है कि 'हरित क्रान्ति' से भी हम आज से दूनी जन संख्या को खिला सकेंगे। जो पिछड़े हुए देश हैं वे अपनी पूरी खेती का यंत्रीकरण नहीं कर सकते, क्योंकि नित्य नये बीजों के लिए नित्य नये कृत्रिम साधनों—ट्रैक्टर, गैसोलीन आदि—की आवश्यकता है, जो उनके वश की बात नहीं है।

आज की यांत्रिकी (टेकनालोजी) हजारों ऐसी कृत्रिम चीजें पैदा कर रही है जिनका जहर मनुष्य और उसके साथी अन्य प्राणियों के शरीर में घुस रहा है। जिस हवा से सभी प्रकार के प्राणी जीवित हैं वह पृथ्वी के सिर्फ ६ मील ऊपर तक फैली हुई है। प्रकृति की कूड़े-करकट को साफ करने की जो अपनी प्रक्रियाएँ हैं उन्हें हम चलने नहीं दे रहे हैं।

यह अमेरिका : मां का दूध भी नहीं बचा

इस दृष्टि से सबसे अधिक जिम्मेदारी अमेरिका की है। पृथ्वी पर एक अमेरिकी बच्चा एक भारतीय बच्चे के मुकाबले ५० गुणा अधिक भार है। अमेरिका में दुनिया की कुल जनसंख्या की ५.७ प्रतिशत संख्या रहती है, जब कि वह दुनिया के प्राकृतिक साधनों का ४० प्रतिशत भाग का उपयोग करता है। अपनी ७० साल की आयु में एक औसत अमेरिकी नागरिक इतनी चीजें इस्तेमाल करता है—२ करोड़ ६० लाख गैलन पानी, २१ हजार गैलन गैसोलीन, १० हजार पौंड मांस, २८ हजार पौंड दूध और क्रीम, ६४ हजार रुपये की कीमत की स्कूल-बिल्डिंग, ४८ हजार रुपये का कपड़ा और ५६ हजार रुपये का फर्नीचर। और, ४१ प्रतिशत अमेरिकी ४ या ४ से अधिक बच्चों के परिवार को अच्छा मानते हैं।

जितना ही अधिक उत्पादन होता है, उतना ही अधिक कूड़ा-कचरा (वेस्ट) इकट्ठा होता है। अमेरिका हर साल ७० लाख मोटरें कूड़े में फेंकता है, १० करोड़ टायर, २ करोड़ टन कागज, लगभग ३ अरब बोतलें और ५ अरब डिब्बे। इस कूड़े को साफ करने में हर साल ३ अरब रुपये खर्च होते हैं! एक साल में दुनिया के औद्योगिक जहर—कूड़ा, धूआँ, गैस आदि—का ५० प्रतिशत सिर्फ अमेरिका में निकलता है! खेती में खाद की जगह रासायनिक चीजें इस्तेमाल होने लगी हैं, जिसका नतीजा यह है कि पशुओं का कूड़ा इतना अधिक हो रहा है जितना एक अरब मनुष्यों का होता है। सारी हवा, पानी, सारी वनस्पतियाँ जहर से भरती चली जा रही हैं। सोचिए, अमेरिकी माताओं की छाती के दूध में, जितनी डी०डी०टी० बाजार के दूध में क्षम्य है, उससे २ से ६ गुना अधिक डी०डी०टी० घुसी हुई है! कितना भयंकर है?

अमेरिका में ८ करोड़ ३० लाख कारें हैं। केवल इनसे इतनी गैस निकलती है कि हवा का ६० प्रतिशत जहर इनके ही कारण पैदा होता है। जिस गति से पृथ्वी के ऊपर हवा में नाइट्रोजन आक्साइड इकट्ठा हो रही है, इससे यह भय होता है कि सूर्य की रोशनी में इतनी मिलावट हो जायगी कि हम धरती का इस्तेमाल नहीं कर सकेंगे। लासएन्जेलेस शहर का तो यह हाल हो गया है कि उसके ऊपर केवल ३ सौ फुट अच्छी हवा रह गयी है। स्कूलों में हर तीसरे दिन बच्चों को मना किया जाता है कि व्यायाम मत करो, नहीं तो गहरी सांस लेनी पड़ेगी, और फेफड़ों में ज्यादा जहर घुस जायगा। कैलिफोर्निया राज्य में खुली जगह की कमी, उपजाऊ भूमि में अति सिंचाई के कारण रेह, खाद में रासायनिक नाइट्रोजन के नाइट्रेट से दूषित होनेवाला पानी और उसका मनुष्य के ऊपर कुप्रभाव तथा औद्योगिक रासायनिक कूड़े की समस्याएँ विकट पैमाने पर पैदा हो गयी हैं।

विश्व-व्यापी समस्या

अमेरिका में ही मनुष्य-संख्या और कूड़े की समस्या नहीं है, दूसरी जगहों में भी है। टोकियो (जापान) में लोग कहने लगे हैं कि कार रखने में क्या सुख है जब उसे चलाने के लिए खुला, नीला आसमान नहीं रह गया है! स्वीटजरलैंड के लोग चिन्तित हैं कि उनकी तीन बड़ी, खूबसूरत, झीलें औद्योगिक गन्दगी के गिरने के कारण बरबाद होती जा रही हैं, और उनमें रहनेवाली मछलियाँ आदि मरती जा रही हैं।

दुनिया की सारी गन्दगी अन्त में कहाँ जाती है? समुद्रों में, जो दुनिया की ७० प्रतिशत सतह पर फैले हुए हैं। वैज्ञानिक चिन्तित हैं कि अगर आज की ही गति से समुद्र में गन्दगी पड़ती रही तो समुद्र भी अपने को साफ नहीं रख सकेगा। समुद्र के लिए तो भय है ही, हवा की गन्दगी और उसके कणों के कारण पृथ्वी की गर्मी कम होती जा रही है। सन् १९४५ से आज तक २° सें० गर्मी कम हो चुकी है। जिस दिन यह मात्रा ४° सें० पर पहुँच जायगी उस दिन वर्फ युग शुरू हो जायगा! इसी तरह बड़े-बड़े बाँधों से, जिनमें बहुत बड़ी मात्रा में पानी इकट्ठा हो रहा है, भूकम्प का डर बढ़ रहा है। मिस्र में विशाल आसवान बाँध से जितनी भूमि को पानी मिल रहा है, उससे अधिक भूमि तथा मछलियों आदि के बरबाद होने का खतरा है। इस तरह की अनेक मिसालें दी जा सकती हैं। यान्त्रिकी ऐसी हो गयी है कि वह एक ओर इन समस्याओं को हल करने की कोशिश करती है, और किसी हद तक करती भी है, किन्तु एक समस्या को हल करती है तो दूसरी दो समस्याएं खुद पैदा कर देती है। नतीजा यह होता है कि कुल मिलाकर समस्या जैसी-की-तैसी बनी रहती है।

विज्ञान की चुनौती : नया चिन्तन

दुनिया में यह आम धारणा है कि ईश्वर ने मनुष्य को प्रकृति को जीत लेने

का अधिकार दिया है। लेकिन आज के वैज्ञानिक बता रहे हैं कि ऐसा सोचना गलत है। पुराने जमाने की बड़ी सभ्यताओं ने अपने-अपने क्षेत्र में प्राकृतिक साधनों का जरूरत से ज्यादा इस्तेमाल किया। नतीजा यह हुआ कि वे समाप्त हो गयीं।

एक दूसरी गलत धारणा यह है कि प्रकृति के पास साधनों का अक्षय भंडार है। यह भी गलत है। सही यह है कि भूमि भी सीमित है, और दूसरे साधन भी सीमित हैं। हम नहीं समझ रहे हैं कि किस तेजी के साथ ये साधन समाप्त होते चले जा रहे हैं।

एक तीसरी भयंकर धारणा यह है कि किसी भी कीमत पर आर्थिक विकास होना चाहिए। पूंजीवादी और साम्यवादी, दोनों की अर्थनीति का यही सिद्धान्त है कि जितना उपयोग करते हो उससे अधिक उत्पादन करो, ताकि और अधिक उत्पादन कर सको। वैज्ञानिक कामनर यह कहता है कि अमेरिका में प्रति व्यक्ति ११ हजार कैलरी खाद्य पदार्थ पैदा करता है, जब कि उसे जरूरत है केवल २५०० कैलरी की। कितना भोजन तो अमेरिका अपनी बिल्लियों को खिला देता है। जितना बरबाद करता है उसका हिसाब नहीं।

सबसे दुःखद बात तो यह है कि मनुष्य जानता भी नहीं कि उसकी करनी का क्या परिणाम हो रहा है। जिन राजनैतिक नेताओं और भौतिक शास्त्रियों ने पहला अणुबम बनाया, क्या वे उसके घातक परिणामों को नहीं जानते थे? जिन्होंने मोटर-कार बनायी उन्होंने दूरी जरूर समाप्त की, लेकिन सड़कें बनाने के लिए अकेले अमेरिका हर साल १० लाख एकड़ में आक्सीजन देनेवाले पेड़ काटता है।

खुशी की बात है कि अब जनता का ध्यान इस दिशा में जा रहा है, और खेती में खाद और फसल संरक्षण के नये तरीके निकल रहे हैं। बहुत-से वैज्ञानिक इस काम में दिन-रात लगे हुए हैं। लेकिन सरकारों को बहुत अधिक सजग और तत्पर होना पड़ेगा। उसके कई विभाग हैं, जो वातावरण को क्षति पहुँचा रहे हैं। कोई भी काम हो, यह देखने की जरूरत है कि किस काम का मनुष्य और वातावरण पर क्या असर होता है। मनुष्यों की एक जगह भीड़ न होने देने के लिए नये नियोजित शहर बसाने चाहिए, और देहातों का विकास होना चाहिए, ताकि कोई गाँव छोड़ने के लिए विवश न हो। जनसंख्या को सीमा के भीतर रखना बहुत जरूरी है। दो बच्चों से अधिक की कामना किसी माता-पिता को नहीं रखनी चाहिए।

गंदगी रोकने में उद्योगों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे अपने कूड़े को दोबारा इस्तेमाल कर सकते हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि रद्दी कागज और कचरे को जलाने से देश में जितनी बिजली है उसकी १० प्रतिशत बिजली पैदा की जा सकती है।

लेकिन सबसे बड़ा हल स्वयं मनुष्य के दिमाग में है। आज तक मनुष्य की सारी शक्ति दो कामों में लगी है – युद्ध और चन्द्रलोक यात्रा। टुकड़ों में सोचने का परिणाम भयंकर होगा। अब इकाइयों में चिन्तन छोड़कर चिन्तन में एकता, समग्रता पैदा करनी होगी। मनुष्य को नये मूल्यों की आदत डालनी होगी। वैज्ञानिकों को विश्वास है कि मनुष्य ने हमेशा परिस्थिति की विवशता स्वीकार की है, और आवश्यक सुधार स्वीकार किया है। वह अब भी कर लेगा और सर्वनाश से बच जायगा।

(अंग्रेजी 'टाइम' साप्ताहिक पत्रिका के एक लेख के आधार पर।)

<u>*गांधीजी : कोसलर का मत, कृपालानी का उत्तर–२*</u>

अधूरी जानकारी : मिथ्या निष्कर्ष

['भूदान-यज्ञ' के १८ मई के अंक में आर्थर कोसलर का मत और आचार्य कृपालानी द्वारा २५ मई के अंक में प्रकाशित उसके उत्तर की पहली किस्त आपने पढ़ी। इस अंक सहित अगले तीन अंकों में प्रकाश्य इस उत्तर से कोसलर की अधूरी जानकारी और मिथ्या निष्कर्षों का पर्दाफाश होता है। —सं०]

बिहार-भूकम्प

लेखक ने कहा है कि बिहार के सन् १९३४ के भयंकर भूकम्प के सम्बन्ध में गांधीजी ने जो तर्क दिया उसका रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने जोरदार विरोध किया। गांधीजी ने यह कहा था कि अस्पृश्यता के कारण ही बिहार पर यह दैवी प्रकोप हुआ। इसका मतलब यह निकाला गया कि गांधीजी ने यह कहा कि भूकम्प, भूगर्भ कारणों से नहीं, बिहारी लोगों के पाप के कारण ही हुआ। गांधीजी का यह अर्थ कदापि नहीं था। दैवी प्रकोपों का कारण भी दैवी होता है, लेकिन जब उससे आदमियों को तकलीफ होती है तो उसके पीछे एक मनोवैज्ञानिक कारण ढूंढ़ निकालने की एक परिपाटी चली आ रही है। अस्पृश्यता को ही भूकम्प का कारण बताने में गांधीजी की गलती जरूर थी, लेकिन रवि बाबू जैसे वैज्ञानिक लोगों का यह कहना भी गलत था कि भूकम्प सरासर दैवी कारणों पर आधारित है, जब कि उससे आदमियों को भी तकलीफ हुई। ईसा ने एक बार कहा था, "मृत्यु पाप का परिणाम है"। लेकिन हम रोज देख रहे हैं कि साधु और पतित, दोनों ही मरते हैं। ईसा के कहने का सम्भवतः यही अर्थ है कि पाप से मनुष्य की नैतिक मृत्यु होती है, क्योंकि उसकी आत्मा कुण्ठित होती है। या जैसा कि हिन्दुओं की मान्यता है, उससे सद्‌असद् विवेक की क्षति होती है।

दवा और डाक्टर

बीमारी और उसके इलाज के सम्बन्ध में गांधीजी के विचारों को लेखक ने कुछ इस प्रकार रखा है कि वे अजीब-से लगते हैं। आज वास्तविकता यही है कि चिकि-

लेखक लोग अधिकाधिक रूप से अब यह मानते जा रहे हैं कि इलाज से रोक अच्छा है। लेकिन भोजन-वस्त्र, रहन-सहन आदि में संयम और विवेक के बिना यह रोक होगी कैसे? यह भी सही है कि लोग अपने साथ हर तरह की ज्यादती करते हैं, और फिर उसके बुरे नतीजों से बचने के लिए दवाओं की शरण लेते हैं। यह बताने की जरूरत नहीं है कि आज अनेकानेक प्रकार की दवाएँ और पेटेन्ट औषधियाँ ज्यादतियों के नतीजे से बचाने के लिए किस प्रकार उपाय बन गयी हैं। दवाओं के प्रयोग के बारे में गांधीजी ने कुछ भी कहा हो, यह निर्विवाद है कि पुराने तरीकों के मुकाबले वह विज्ञान-सम्मत आधुनिक तरीकों की श्रेष्ठता में विश्वास रखते थे। स्वयं उन्हें जब कभी भी डाक्टरों की सलाह की जरूरत पड़ती थी, वह आधुनिक अच्छे-से-अच्छे डाक्टरों की सलाह लेते और उस पर अमल करते थे। जेल में ही उनका खुद का ऑपरेशन हुआ। जिस अंग्रेज सरकार से वह लड़ रहे थे, उसीकी सेवा में लगे डाक्टर ने उनका ऑपरेशन किया। सर्जन ने गांधीजी से कहा भी कि यदि वे चाहें तो अपना डाक्टर बुला लें। लेकिन गांधीजी ने कहा कि उन्हें उस पर पूरा विश्वास है। ऑपरेशन सफल रहा और गांधीजी और सर्जन जीवन भर के लिए मित्र बन गये।

भोजन-सम्बन्धी प्रयोग

गांधीजी के भोजन-सम्बन्धी प्रयोगों को भी कोसलर ने ठीक से नहीं समझा है। ऐसे सभी प्रयोग गांधीजी पहले स्वयं अपने ऊपर करते थे, किसी अन्य मनुष्य या 'गिनी सूअर' पर नहीं, जैसा कि लेखक ने कहा है। ऐसे प्रयोग इसलिए भी नहीं किये गये, क्योंकि हिन्दुस्तान में पेचिश, अतिसार और उदर-सम्बन्धी रोगों का घर है, बल्कि इसलिए कि गरीबों के लिए सस्ते मूल्य पर कोई सन्तुलित भोजन खोजा जा सके। मुझे मालूम नहीं था कि कोसलर मनोविश्लेषक भी हैं और गांधीजी के भोजन सम्बन्धी प्रयोगों का सम्बन्ध उन्होंने उनके मनोविश्लेषण से जोड़ रखा है। भोजन-सम्बन्धी अपने प्रयोगों के कारण कभी-कभी गांधीजी को स्वयं जोखिम उठानी पड़ती थी, क्योंकि वह कभी-कभी लम्बी बीमारी के शिकार हो जाते थे। इस सम्बन्ध में वह डाक्टरों से बराबर सलाह लिया करते थे। इसलिए दवा, डाक्टर व भोजन-शास्त्र के सम्बन्ध में गांधीजी दकियानूसी ख्याल के नहीं थे, प्रतिक्रियावादी होना तो दूर की बात है।

उत्तराधिकारी का चुनाव

लेखक के लिए यह समझना जरा कठिन है कि दृष्टिकोणों में इतना फर्क होते हुए भी गांधीजी ने जवाहरलाल को उत्तराधिकारी कैसे चुना। गांधीजी अक्सर अपने साथियों के गुणों को बढ़ा-चढ़ाकर कहा करते थे और विरोधियों के अवगुणों को कम करके कहते थे। दुश्मन तो उनका कोई था ही नहीं। राजगोपालाचारी को उन्होंने एक बार अपनी 'राजनीतिक आत्मा' कहा था। लेकिन आज इस चीज का कोई जिक्र भी नहीं करता। सेन्ट एण्ड्रूज को उन्होंने 'दीनबन्धु' कहा। गांधीजी अच्छी तरह जानते थे कि जवाहरलाल का उनसे कई बातों में मतभेद है, लेकिन वह यह भी जानते थे कि जवाहरलाल बहादुर और वीर सेनानी भी थे। जवाहरलाल से वह उम्मीद रखते थे कि वह आजादी की लड़ाई जारी रखेंगे, और इसी अर्थ में उन्होंने उन्हें अपना उत्तराधिकारी भी बताया था। किसी जगह जवाहरलाल ने स्वयं भी इसे स्वीकार किया है। इस चीज का जिक्र पहले-पहल सन् १९४२ में वर्धा में 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के कुछ पहले हुई अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में हुआ। गांधीजी को उम्मीद नहीं थी कि आजादी की लड़ाई इतनी जल्दी खत्म हो जायगी। हम लोगों में से भी किसीको ऐसी उम्मीद नहीं थी। सन् १९४५ में अहमदनगर जेल से हम लोगों के छूटने के बाद गांधीजी ने उससे कहा था कि अभी वह अंग्रेजों से एक मोर्चा और लेंगे। इसके अलावा, गांधीजी हिन्दुस्तान के प्रधान मंत्री या ऐसी ही कोई हस्ती थे नहीं कि वह जवाहरलाल को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर देते। और यदि वह होते तो भी लोकतंत्र में आस्था रखने के कारण वह उत्तराधिकारी मंत्री नियुक्त करने की बात भी न सोचते। गांधीजी यह भी कहते थे कि इनकी जिन्दगी में जवाहरलाल का उनसे चाहे मतभेद हो, लेकिन उनके मरने के बाद वह उनकी ही भाषा बोलेंगे। गांधीजी की मृत्यु के बाद जवाहरलाल ने उनकी भाषा बोली या नहीं, इसका निर्णय पाठक करें। मुझे मालूम नहीं, जवाहरलाल ने कभी यह कहा था कि गांधीजी एक 'राजनीतिक बोझ' बन गये हैं, जैसा कि कोसलर कहते हैं। अगर वह ऐसा कहते तो गांधीजी का नेतृत्व मानकर वह स्वयं झूठे बनते हैं। हम लोगों में से भी कइयों का गांधीजी से कई बातों में मतभेद था। दास और मोतीलाल के नेतृत्व में चलनेवाली स्वराज पार्टी का विश्वास व्यवस्थापिका-सभाओं के बहिष्कार में निहित था। लेकिन इस कारण इन लोगों का गांधीजी से सम्बन्ध बिगड़ नहीं गया था। आजादी की लड़ाई में हमने उनका नेतृत्व माना था। हम यह जानते थे कि हिन्दुस्तान की जनता का वे ही सबसे अच्छा प्रतिनिधित्व करते थे और वही उसकी जरूरतें भी सबसे अच्छी प्रकार समझते थे। अहिंसक प्रतिकार के वे अधिष्ठाता थे, और उसमें उनकी पहुँच सबसे तगड़ी थी। हम सभी यह जानते थे कि उस समय की परिस्थिति में अहिंसक प्रतिकार का रास्ता ही हमारे लिए श्रेयस्कर था।

पुत्रों की पढ़ाई-लिखाई की उपेक्षा

लेखक ने गांधीजी की इसलिए भी आलोचना की है कि उन्होंने अपने बच्चों की पढ़ाई लिखाई का ठीक प्रबन्ध नहीं किया और उनकी उपेक्षा की। लेकिन उस समय के हिन्दुस्तान की हालत को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि गांधीजी के बच्चों ने घर पर, और पहले दक्षिणी अफ्रीका और फिर हिन्दुस्तान में, आजादी की लड़ाई में भाग लेकर जैसी

शिक्षा प्राप्त कर ली थी वह गुलाम बनानेवाली प्रचलित अंग्रेजी शिक्षा से कहीं अच्छी थी। किसी भी दशा में गांधीजी के बच्चों को उनके लाखों लाख देशवासियों के मुकाबले कहीं अधिक अच्छी शिक्षा मिली थी। लेकिन क्या सुधारकों और क्रान्तिकारियों ने अपनी इच्छा के अनुसार अपने बच्चों का भी जीवन ढालने की कोशिश नहीं की है? हो सकता है, उनका निर्णय गलत रहा हो, लेकिन स्वयं वे यही मानते रहे हैं कि वह अपने आश्रितों की सबसे अच्छी भलाई में लगे रहे हैं।

अंग्रेजी राज्यकाल में प्रत्येक भारतीय सुधारक ने प्रचलित शिक्षा-पद्धति में सुधार की कोशिश की। शुरुआत स्वामी दयानन्द से हुई। उनका गुरुकुल, रवि बाबू का शान्तिनिकेतन तथा बंगाल के अन्य राष्ट्रवादियों के प्रयास, श्रीमती एनी बेसेंट की शिक्षा-सुधार योजना और फिर गांधीजी की नयी तालीम, ये सभी शिक्षा में सुधार की अलग-अलग कोशिशें थीं। सिर्फ गांधीजी ने ही नहीं, हममें से कइयों ने भी विदेशी शिक्षा-प्रणाली का बहिष्कार किया था और अपने बच्चों को किसी-न-किसी राष्ट्रीय संस्था में भेजा था। कुछ भी हो, गांधीजी के बच्चों को जो भी शिक्षा मिली उससे वे किसी घाटे में नहीं रहे। क्या देवदास गांधी अंग्रेजी पत्र 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के मैनेजिंग एडिटर नहीं बने थे? उनका एक दूसरा लड़का दक्षिणी अफ्रीका में एक साप्ताहिक का सम्पादक था। मैंने यह कभी नहीं सुना कि मणिलाल गांधी दक्षिणी अफ्रीका में रहने के लिए मजबूर कर दिये गये थे, जैसा कि लेखक महोदय कह रहे हैं। वह अक्सर हिन्दुस्तान आते थे और अपनी इच्छानुसार वे जब तक यहां रहना चाहते थे रहते थे। एक अच्छी शिक्षा के बिना ये दोनों अंग्रेजी पत्र का सम्पादन नहीं कर सकते थे। यह बात दूसरी है, कि शिक्षा के नाम पर इन लोगों ने किसी प्रचलित शिक्षा-संस्था का इस्तेमाल नहीं किया था, लेकिन क्या शिक्षा संस्थाओं द्वारा ही मिलती है? दुनिया के कई बड़े लोगों ने कभी ऐसी संस्थागत शिक्षा नहीं पायी। गांधीजी का सबसे बड़ा लड़का बैरिस्टर बनना चाहता था। उनके जैसे सुधारक की कमाई का बड़ा हिस्सा गरीबों की सेवा में खर्च होता था, तो अगर उन्होंने अपने लड़कों को कोई महंगी शिक्षा नहीं दी तो इसके लिए उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। हिन्दुस्तान आने पर हीरालाल गांधी उद्योग-व्यापार में लगा और वह इस दिशा में काफी आय भी कर रहा था, लेकिन शराब की बुरी लत ने उसका व्यापार, और जिन्दगी चौपट कर डाली। जब वह नशे में न रहता तो वह काफी अच्छा आदमी रहता था। लेकिन नशा रहने पर काबू के बाहर हो जाता। गांधीजी ने सार्वजनिक रूप से यह कह दिया था कि उनके उस लड़के के कामों की जिम्मेदारी उन पर नहीं थी। फिर भी जब भी वह मुसीबत में होता, गांधीजी के मित्र भरसक उसकी पूरी सहायता करते थे। बड़े लोगों के लड़कों को अनेक सुविधाएं मिलती हैं, लेकिन उन्हें कुछ अभाव भी भुगतने पड़ते हैं।

सद्भावनापूर्ण अंग्रेज

लेखक की दृष्टि में गांधीजी की सफलता का कारण यह था कि अंग्रेजी दमन का तरीका नाजियों, फासिस्टों और कम्यूनिस्टों के मुकाबले कम कठोर था। खैर, इतना तो सही है कि अंग्रेजों ने 'मौत कोठरियां' नहीं बनायी थीं। उन्होंने मनोवैज्ञानिक अत्याचार व बर्बरता के तरीके भी नहीं निकाले थे, जो 'ब्रेनवाशिंग' के जरिये शत्रु ही नहीं, मित्र से भी मनमानी बातें कबूल करवा ले। यह भी कहा जा सकता है कि जिन किसीको भी अधिकारियों ने चंगुल में फंसाना चाहा, उनमें से सभी को उन्होंने चंगुल में नहीं फंसाया।

लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि अंग्रेज अधिकारी बड़े पाक-साफ थे। भारतीय सशस्त्र क्रान्तिकारियों को दबाने में उस समय जो भी उपाय चालू थे उन सभी का इस्तेमाल अंग्रेजों ने उनके खिलाफ किया ही। राजनीतिक अपराधियों से तो वे चीजें भी कबूल करवायी जाती थीं जिन्हें उन्होंने किया भी नहीं होता। जुल्म जबरदस्ती के जरिये पुलिस उन्हें दूसरों को भी फंसाने के लिए मजबूर कर देती थी। सिर्फ अपराधियों को ही नहीं, जिन पर महज शुबहा होता, उन्हें भी कठोर सजाएं दी जाती थीं। सिर्फ 'वन्दे मातरम' कहने के अपराध में किसी-किसीको सात-सात साल की सजाएं दी जाती थीं। राजनीतिक बन्दी अक्सर कालापानी, अण्डमान भेज दिये जाया करते, जहां उनकी जिन्दगी तबाह हो जाती। उन्हें वहां अपनी उस जिन्दगी से आधी जिन्दगी नसीब न होती, जिसका बयान कोसलर ने अपनी किताब 'डार्कनेस ऐट नून' यानी 'दोपहर में अंधेरा' में किया है। ज्यादातर तो वहां से लौट ही नहीं पाते और लौटते भी तो जिन्दगी भर के लिए अपंग होकर।

अहिंसक आन्दोलनकारियों को भी काफी जुल्मो-सितम का सामना करना पड़ता था। हां, यह बात जरूर थी कि कोई चीज कबूलवाने के लिए सिर्फ शारीरिक यातनाएं कम दी जाती थीं। ऐसा इसलिए होता था कि अहिंसक क्रान्तिकारियों के पास छिपाने को कोई चीज ही नहीं होती थी। वे जब भी कानून तोड़ते, यह स्वीकार कर लेते, कि ऐसा उन्होंने राष्ट्र-हित में किया है, और वे उसके लिए दण्ड सहने को तैयार हैं। फिर भी सामूहिक जुर्माने, गोली-काण्ड, लाठियों की मार, आगजनी, लूट और बलात्कार का खुलकर प्रयोग होता ही था। इन ज्यादतियों के बारे में कभी कोई जांच न होती। गांधीजी को बार-बार यह चेतावनी देनी पड़ती कि थोड़ी बहुत हिंसा दबाने के लिए अधिकारी लोगों ने घोर कौन-सी पाशविक हिंसा का प्रयोग किया।

लगता है, कोसलर ने पंजाब के जालियानवाला बाग-काण्ड की बात सुनी ही नहीं। जेनरल डायर ने यहां निहत्थे, शान्त और अरक्षित लोगों को गोली से भूनकर जिस बर्बरता और हिंसा का परिचय दिया, वह संसार के इतिहास में→

महाराष्ट्र के दंगे

जार्ज फर्नान्डिज के अनुभव और मत

भिवंडी

१ लाख ४० हजार का छोटा शहर। ४ दिन में ६० हजार लोग बेघरबार। २० हजार शहर छोड़कर भाग गये। प्रति १ सौ, २० घर जला दिये गये। ४० हजार बुनाई-करघों में से ८ हजार जलकर खाक हो गये, और उन पर काम करनेवाले १० हजार की रोटी छिन गयी। ४० में से १६ साईजिंग कारखानों में आग लगा दी गयी; १ हजार बेकार हो गये। कम-से-कम १२५ की हत्या हुई। २ हजार घायल हुए।

कुल १ लाख ४० हजार में ६५% मुसलमान हैं। दंगा किसने शुरू किया? पहला पत्थर किसने फेंका? अगर एक पत्थर से इतना बड़ा हत्याकांड हो सकता है तो जाहिर है कि दंगे की पूरी तैयारी थी। जो चीज मन में थी उसे पत्थर ने बाहर ला दिया।

महाराष्ट्र में इधर कुछ वर्षों से शिव-सेना का डटकर मुसलमान-विरोधी प्रचार होता रहा है। ऐसा लगता है जैसे कल्याण, कासा, महाड के दंगे भिवंडी, जलगाँव और थाना के नर-संहार के लिए 'रिहर्सल' थे।

उठते बादलों की सरकार को पूरी जानकारी थी। पूरा भिवंडी कहता है कि दंगे की आशंका थी। पूरी तैयारी थी। शहर में कई जगह तख्तों पर दूसरे सम्प्रदाय के लिए चेतावनियाँ लिखी हुई पायी गयीं। ७ मई को भिवंडी के आस-पास के लोग संगठित रूप में बुलाये गये।

१८ अप्रैल को मुसलमान लोगों ने 'शान्ति कमेटी' के सामने अपने भय प्रकट किये थे, और कुछ सुझाव रखे थे।

सुझाव ये थे :

(१) गुलाल न छोड़ा जाय।

(२) उत्तेजना दिलानेवाले, या गाली-भरे नारे न लगाये जायँ।

(३) उत्सव राष्ट्रीय है, इसलिए जुलूस में भगवा ध्वज न फहराया जाय।

(४) जुलूस का रास्ता तय कर दिया जाय ताकि खतरे के मौके टल जायँ।

ये प्रस्ताव मुसलमान लोगों ने इस-लिए रखे कि सारा उत्सव 'राष्ट्रीय' रहे, और झगड़े की नौबत न आये।

शान्ति कमेटी की बैठक १९ अप्रैल को हुई, लेकिन मुसलमान लोग नहीं शामिल हुए—यह कहकर कि कमेटी कुछ साम्प्रदायिक हिन्दुओं के हाथों में पड़ गयी है। कमेटी भिवंडी में हिन्दू-मुस्लिम एकता की स्थायी संस्था है। उसका अध्यक्ष म्युनिसिपैलिटी का चेयरमैन पदेन होता है, जो इस साल एक मुसलमान है।

शान्ति कमेटी में जो नारे तय हुए वे ये थे : 'छत्रपति शिवाजी महाराज की जय', 'हिन्दू-मुस्लिम ऐक्याचा विजय असो', 'भारतीय ऐक्याचा विजय असो।'

जुलूस में गुलाल या नारों आदि की शर्तों का पालन नहीं हुआ। हवा का रुख देखकर मुसलमान जुलूस से धीरे-धीरे अलग हो गये।

५-३० बजे शाम को मछली बाजार में जुलूस पर पत्थर और एसिड बल्ब फेंके जाने लगे। बस, आधे घंटे के भीतर-भीतर सारा भिवंडी जल उठा। बिजली, तार, सब काट दिये गये, दमकल रोक दिया गया। केवल लाठियों से लैस ६०० पुलिस बेकार साबित हुई। २४ घंटों तक शहर गुण्डों के हाथ में रहा।

कुछ अनुभव :

(१) अगर हिन्दू का मकान था और मुसलमान किरायेदार तो हिन्दुओं ने मुसल-मानों की क्षति की, मकान नहीं जलाया। उसी तरह मुसलमानों ने मुसलमान-मालिकों और हिन्दू किरायेदारों के साथ किया।

(२) सारा दंगा विस्तार के साथ सुनियोजित था, और सुनियोजित ढंग से पूरा किया गया।

(३) कई जगह घायल तीन दिन तक पड़े रहे, लेकिन उन्हें ले जाने के लिए ऐम्बुलेंस नहीं थी। कई जगह मनुष्यों या पशुओं के लिए तीन-तीन दिन तक खाने की कोई चीज नहीं पहुँची।

(४) दंगे के चौथे दिन भी दोनों सम्प्रदायों के मुख्य लोगों को लेकर जनता को आश्वस्त करने की कोशिश नहीं की

→बेमिसाल है! गोलियाँ तब तक चलती रहीं, जब तक खतम नहीं हो गयीं! एक हजार से भी अधिक स्त्री-पुरुष, बच्चे भून दिये गये। घायलों को कोई चिकित्सा-सहायता तक नहीं दी गयी। यही नहीं, खुली सड़कों पर लोगों को पेट के बल रेंगने पर मजबूर किया गया। दो महीने से भी अधिक समय तक सारी खबरें गुप्त रखी गयीं। देश को पता तक न चलने दिया गया कि पंजाब पर क्या गुजरी है। अंग्रेजी पार्लियामेण्ट में इस कत्लेआम का मसला पेश हुआ, लेकिन मजा की कौन कहे, जेनरल डायर को इनामी थैली दी गयी! इससे भी भयंकर यातनाएँ, सिर्फ इसलिए नहीं दी जाती थीं, क्योंकि आन्दोलन का स्वरूप अहिंसक था। इसलिए सीमातीत बर्बरता की गुंजाइश भी कहाँ थी? दक्षिण अफ्रीका में एक राजनीतिज्ञ ने गांधीजी से कहा भी था कि अधिकारियों के लिए उनके साथ व्यवहार करना इसलिए कठिन था क्योंकि वह अहिंसक थे, और अधिकारियों की कठिनाइयों में वह उनकी मदद भी करते थे। अगर वह हिंसा का सहारा लेते तो अधिकारियों का काम काफी आसान हो जाता।

हिन्दुस्तान पर अंग्रेजों के जुल्मो-सितम की कहानी कभी पूरी लिखी नहीं गयी। कारण दो हैं : एक तो यह कि, हिन्दुस्तानी इतिहास लिखने के मामले में जरा कमजोर हैं, और दूसरे यह कि, अंग्रेजों का यहाँ से जाना कुछ ऐसा शान्तिपूर्ण रहा कि दिल से बहुत कुछ मलाल जाता रहा। (क्रमशः)

गयी। कहने पर महाराष्ट्र सरकार के मंत्री श्री भाऊसाहब वर्तक ने कहा : 'हाँ, कुछ शान्ति सैनिक घूम रहे हैं।' लेकिन मंत्री और नेता कहाँ थे? ऐसे अवसरों पर मंत्रियों को न जाने क्या हो जाता है?

मुख्य मंत्री श्री नाईक ७ और १० मई के बीच केवल एक बार भिवंडी गये, वह भी श्री चौहान के साथ।

(५) हिन्दुओं-मुसलमानों में से किसीमें अब उदार नेतृत्व नहीं रह गया है। नेतृत्व युवकों के हाथ में चला गया है, जिनके दिल में एक-दूसरे के लिए बेहद घृणा है। भाऊसाहब धामनकर और मुस्तफा फकी, दोनों सम्प्रदायों के विश्वास-पात्र थे, लेकिन दोनों की जान दूसरे सम्प्रदायवालों ने बचायी, अपने सम्प्रदाय-वालों ने नहीं!

(६) भिवंडी में वामपंथी दलों का प्रभाव बिलकुल नहीं रह गया है। जनसंघ और शिवसेना का प्रभाव बढ़ा है, लेकिन जैसा कि जनसंघ के एक नेता ने कहा 'भिवंडी ने शिवसेना की बड़ी मदद की है। मेरे दल को बहुत लाभ नहीं हुआ है।'

(७) यह सही है कि पुलिस न दंगों को पहले से रोक सकी और न उन्हें दबा सकी, फिर भी यह जानना चाहिए कि साम्प्रदायिक दंगे अब केवल शान्ति और सुव्यवस्था के प्रश्न नहीं रह गये हैं। जब हिन्दू-मुसलमान लड़ने पर उतारू हों तो इनका मुकाबला न कलक्टर कर सकता है, न पुलिस। यह सामाजिक-राजनैतिक प्रश्न है, जिसकी जड़ें देश के इतिहास में हैं।

(८) पुलिस और सरकारी अधिकारी भी साम्प्रदायिक पक्षपात के शिकार हो गये हैं, इसलिए वे न पहले से रोकथाम कर पाते हैं और न बाद को उचित कार्र-वाई। जब राजनैतिक दल स्वयं सम्प्रदाय-वाद और क्षेत्रवाद को बढ़ावा देते हैं तो पुलिस को बुरा भला कहना बेकार है।

(९) महाराष्ट्र के दंगों के लिए जिम्मे-दार हैं शिवसेना, आर० एस० एस०, जन-संघ, तामीरे मिल्लत, जमाते-इस्लामी। यों पुलिस, नौकरशाही तथा दूसरे दल सभी जिम्मेदार हैं। श्री नाईक की जिम्मे-दारी सबसे अधिक है।

(१०) जो राजनैतिक दल भारत की एकता को बनाये रखना, और हर भार-तीय को समता और शोषण-मुक्ति के आधार पर सम्मान का जीवन देना चाहते हैं, उनके हाथ से तेजी के साथ समय निकलता जा रहा है। उन्हें अपनी कार्य-पद्धति से साम्प्रदायिकता बिलकुल निकाल देनी चाहिए या सम्प्रदायवादी दलों और शक्तियों के मुकाबले मिट जाने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। हिन्दू सम्प्रदाय-वाद और मुस्लिम सम्प्रदायवाद एक-दूसरे पर पल रहे हैं। हमें धार्मिक असहिष्णुता और साम्प्रदायवाद के विरुद्ध संघर्ष छेड़ना चाहिए। अगर हम यह काम अभी नहीं करेंगे तो देश की एकता और अखण्डता की रक्षा का दूसरा अवसर इस पीढ़ी को नहीं मिलेगा।●

तरुण शान्ति-सेना का मौन कूच

अहमदाबाद में १३ मई को १ मई से चलनेवाले १०वें अ० भा० तरुण शान्ति-सेना शिविर में भाग लेनेवाले देश के १२ राज्यों के ७० तरुणों ने 'शिक्षण में क्रान्ति' की आवश्यकता पर लोकमत निर्मित करने के उद्देश्य से एक मौन कूच निकाला। ये लोग अपने हाथों में जो प्लेकार्डस् लिये थे, उनमें से कुछ में लिखा था : (१) नयी पीढ़ी—नयी शिक्षा, (२) स्वावलम्बी शिक्षण चाहिए, (३) वर्तमान शिक्षा बीते जमाने की है, (४) जीवन और शिक्षण में दीवार क्यों? (५) हमें उत्पादक शिक्षा चाहिए। साथ ही उत्पादक श्रम और सफाई को शिक्षण का अंग बनाने की अपनी भावना को व्यक्त करने के लिए ये छात्र अपने हाथों में फावड़े, गंडे, और झाड़ू भी लिये थे। वर्तमान शिक्षा के दोषों और नयी शिक्षा के स्वरूप का भान कराने के लिए मौन-कूच के कुछ सदस्य मार्गों के दोनों ओर पर्चों का भी वितरण करते रहे।

शिक्षा में क्रान्ति की आवश्यकता पर बल देनेवाला यह अपने ढंग का पहला मौन कूच होने के कारण यह नागरिकों के आकर्षण का विशेष कार्यक्रम बन गया और वे दोनों ओर सड़कों पर लाइन लगाकर इसे देखने के लिए खड़े रहे।

तरुण शान्ति-सैनिकों ने तय किया था कि वे दो घण्टे के अपने कूच में पूर्णतया मौन रहेंगे, चलते ही रहेंगे और पानी भी नहीं लेंगे, और उन्होंने इसका पालन किया। इस प्रथम प्रयोग से अनुप्राणित होकर तरुण शान्ति सेना देश भर में "शिक्षण में क्रान्ति" के लिए अहिंसक अभियान चलाने की व्यूह रचना पर विचार कर रही है। —विनय भाई

दिवंगत साथी श्री पुरुषोत्तमजी पुरोहित

छतरपुर जिला सर्वोदय मण्डल के भूत-पूर्व संयोजक और भूदान बोर्ड के भूमि-वितरक श्री पुरुषोत्तमजी पुरोहित का गत १५ मई, '७० को सुबह कुसमा-महाराजपुर, जिला-छतरपुर (म० प्र०) में अचानक देहावसान हो गया है। श्री पुरोहितजी रचनात्मक कार्यों में बहुत रुचि लेते रहे हैं। ग्रामदान के काम में भी उनकी निष्ठा थी। वे आजन्म अविवाहित रहकर जनता की निरन्तर सेवा करते रहे।

हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि उनके शोक सन्तप्त परिवार को यह महान दुःख सहन करने की शक्ति दे और उनकी दिवंगत आत्मा को चिरशान्ति प्रदान करे।

—रामकुमार दुबे
मंत्री, म०प्र० गांधी-स्मारक निधि

कोष-संग्रह अभियान में तेजी

नयी दिल्ली। देश के कोने-कोने से ग्रामस्वराज्य कोष के केन्द्रीय कार्यालय में पहुँचे समाचारों के अनुसार कोष-संग्रह अभियान निरन्तर तेजी पकड़ता जा रहा है। अगस्त में १२,००० रुपये से अधिक एकत्र किया जा चुका है। वहाँ प्रदेश-स्तरीय ग्रामस्वराज्य-कोष समिति का गठन भी किया जा चुका है, जिसके अध्यक्ष राज्य के मुख्य मंत्री श्री विमल प्रसाद चालिहा हैं।

राजस्थान से प्राप्त समाचारों के अनुसार जयपुर जिले में (जयपुर शहर को छोड़कर) नकद या अन्न के रूप में एक लाख रुपया एकत्र किया जायेगा। जिले के प्रत्येक प्रखण्ड में १० हजार रुपये एकत्र किये जाने की आशा है। धन-संग्रह का लक्ष्यांक पूरा हो जाने के बाद जिले में ग्रामदान-आन्दोलन को तेज किया जायेगा। ग्रामदान कार्यकर्ताओं ने इस काम में खादी-कार्यकर्ताओं, समाजसेवियों, पंचों-सरपंचों, शिक्षकों और छात्रों की सहायता लेने का निश्चय किया है।

राजस्थान में हनुमानगढ़ कस्बे के श्री कैलाशजी ने १००० रुपये एकत्र करने का संकल्प किया है।

बम्बई में लेडी हीराबाई कावसजी जहाँगीर ने ५,००० रु०, श्री प्रेमचन्द भाई डी० गांधी तथा श्री गुलाबचन्द डी० सिराज ने ढाई-ढाई हजार रुपये कोष के लिए दिये। श्रीमती मंगलाबेन ने ५०० रुपये का दान दिया। बम्बई में कुल संग्रह १५,००० रुपये से आगे बढ़ चुका है।

गत १९ मई को रायपुर जिले (म० प्र०) के प्रमुख व्यक्तियों की बैठक में सर्व सेवा-संघ के निर्णयानुसार ग्राम स्वराज्य कोष-संग्रह हेतु एक तदर्थ समिति का श्री नन्दकुमार दानी के संयोजकत्व में गठन हुआ। समिति कोष-संग्रह के काम को आगे बढ़ाने का काम करेगी।•

—मंत्री, ग्रामस्वराज्य कोष

हिमालय सेवा संघ की स्थापना

हिमालय क्षेत्र में सदियों से अलग-थलग पड़े लोगों और उनकी समस्याओं के बारे में चीन के आक्रमण के बाद सन् १९६२ के अन्त में हमारा ध्यान उधर आकृष्ट हुआ। उसी समय क्षेत्र की रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधियों की बैठक में एक "सीमा-क्षेत्र समन्वय समिति" का गठन किया गया और नेफा, असम, उत्तराखण्ड, हिमाचलप्रदेश, कश्मीर आदि सीमा-क्षेत्रों में शान्ति-केन्द्रों की स्थापना हुई और प्रत्यक्ष कार्य प्रारम्भ हुआ।

सीमा क्षेत्र समन्वय समिति की प्रवर्तक संस्थाएँ थीं :—

१. अ० भा० शान्ति-सेना मंडल
२. कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट
३. खादी एवं ग्रामोद्योग कमीशन
४. गांधी स्मारक निधि
५. गांधी शान्ति प्रतिष्ठान
६. भारतीय आदिम जाति सेवक संघ
७. सर्व सेवा संघ, और
८. हरिजन सेवक संघ।

इस समिति द्वारा सीमा-क्षेत्रों में पिछले वर्षों में जो काम हुआ है, उसकी सर्वत्र सराहना हुई है, और यह काम आर्थिक अभाव अथवा अन्य कारणों से बन्द नहीं होना चाहिए ऐसी सरकारी तथा गैर-सरकारी, सभी क्षेत्रों ने राय प्रकट की है।

सीमा-क्षेत्रों के इस कार्य को बढ़ावा देने और स्थायी तौर पर चालू रखने के अभिप्राय से यह तय किया गया कि एक स्वतंत्र रजिस्टर्ड संस्था इस काम के लिए बनायी जाय।

तदनुसार सीमा-क्षेत्र समन्वय समिति के स्थान पर अब हिमालय सेवा संघ की स्थापना अप्रैल १९७० से की गयी है। संघ का प्रधान कार्यालय केन्द्रीय गांधी निधि के प्रांगण में राजघाट, नयी दिल्ली में रखा गया है।

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ३६
सोमवार ८ जून, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट वाराणसी-१
फोन : ५४२८५

काम की अनुप्रेरणा और क्रान्ति

जब हम लोग कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी में थे सन् ३४ में, तब मैं बापूजी के पास गया, और बापूजी को पार्टी का कार्यक्रम दिखाया। बापूजी ने एक मुद्दे पर अपनी उंगली रखकर कहा, "जयप्रकाश, तुम लोग यह कर लो तो हम सोलह आने तुम लोगों के साथ हैं।" मुझे हंसी आयी। मैंने पूछा, "वह क्या बापू?" हम लोगों ने लिखा था—'फ्राम इच एकार्डिंग टु हिज कैपिसिटी, ऐण्ड टु इच एकार्डिंग टु हिज नीड।' यह कार्ल मार्क्स का प्रसिद्ध वाक्य है कि समाज में रहनेवाले हर व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति होगी। 'हर व्यक्ति को आवश्यकता भर मिलेगा, और हर व्यक्ति शक्ति भर समाज को देगा।'

लेकिन रूस में क्रान्ति हुई। स्टालिन का जमाना था, तो जिस प्रकार का समाज बनाना चाहते थे वे लोग, समता का, तो उनके सामने एक समस्या खड़ी हो गयी। और भी कम्यूनिस्ट देशों के सामने खड़ी हो गयी। जबतक माओ है, वहाँ किसी प्रकार से समस्या सतह के नीचे दबी हुई है, उसके बाद उभर जानेवाली है वहाँ भी। रूस के शुरू के जमाने में एक इंजीनियर की तनख्वाह में और एक मजदूर की तनख्वाह में कोई फर्क नहीं था। अब स्टालिन के सामने समस्या पैदा हो गयी कि अगर इस तरह से वेतन में समता रहती है, या थोड़ा अन्तर रहता है, तो काम करने की अनुप्रेरणा (इंसेंटिव) नहीं मिलती है। उन्होंने देखा कि काम नहीं हो रहा है। तो बाद में पूंजीवादी सिद्धान्त को उन्होंने अपनाया, कि काम के बराबर दाम मिलेगा। यानी उनको अपने सिद्धान्तों के साथ समझौता करना पड़ा। और धीरे-धीरे असमता बढ़ती गयी वहाँ, एक से चालीस तो साधारण हो गयी। और एक से सौ गुना तक होनेवाली है। अब उसको कुछ नीचे लाने की कोशिश में वे लोग हैं। लेकिन यह समस्या उनके सामने है। आवश्यकता भर देने का प्रयास वे करते हैं, लेकिन काम नहीं होता। तो फिर अधिक देते हैं, जिससे काम अधिक हो। साम्यवादी क्रान्ति हुई, सत्ता उनके हाथों में आयी, परन्तु साम्यवाद के जो मूल्य हैं, वे तो दूर ही छूट गये। बस, ऊपर का एक ढाँचा तैयार हो गया।

तो, काम की अनुप्रेरणा के लिए मजदूरों का भाग होना चाहिए प्रबन्ध में। सिर्फ कहने के लिए या सुविधाएँ मांगने के लिए नहीं, पूरी जिम्मेदारी निभाने के लिए। अगर यह होता नहीं है तो समाज में मालिक-मजदूर का भेद मिटता नहीं है। वह समाज नहीं बनता, जिसे बनाना लक्ष्य है। इसलिए मालिक-मजदूर का भेद मिटाना जरूरी है। व्यवस्था-सचालन में मजदूर का बराबरी का स्थान जरूरी है।

अकबरपुर, फैजाबाद : दिनांक ४-५-'७० — जयप्रकाश नारायण

चौखटे के बाहर

आजकल श्री जयप्रकाशजी अपने भाषणों में बार-बार एक बात की ओर ध्यान दिलाते हैं। वह यह है कि अगर हमें समाज-परिवर्तन की बात सोचनी है तो पुरानी मान्यताओं के बने-बनाये चौखटे के बाहर निकलकर सोचने की आदत डालनी चाहिए। जो चौखटे परिचित और प्रचलित हैं उनके भीतर समाज परिवर्तन का चित्र बिठाने की कोशिश करना बेकार है। प्रयत्न करने पर थोड़ा-बहुत सुधार भले ही हो जाय, लेकिन बस उतना ही होगा, उससे अधिक नहीं होगा।

ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की बातें लोगों को अटपटी लगती हैं। क्यों? किसीसे कहिए कि लोकनीति का लोकतंत्र दलों के प्रतिनिधित्व से नहीं, संगठित स्वायत्त गाँवों के प्रतिनिधित्व से चलेगा, तो वह कहेगा। यह कैसे होगा? या, कहिए कि ग्रामस्वराज्य की अर्थनीति में गाँव स्वाश्रयी होंगे, तो वह आज के जमाने की दुहाई देगा, उद्योगों और शहरों की बात कहेगा, और अन्त में यह कहकर टाल देगा कि यह चीज चलनेवाली नहीं है। इसी तरह समता के समाज, सर्व-धर्म-समभाव या प्रत्यक्ष जीवन से अनुबन्धित शिक्षण नीति की भी बात कहिए तो लोग कहेंगे कि ऐसा हो जाय तो बहुत अच्छा होगा, लेकिन बात गले के नीचे नहीं उतरती। ऐसा क्यों होता है? लोग आज की स्थिति से निराश भी हैं और समाज-परिवर्तन के नारे से प्रभावित भी होते हैं, लेकिन न जाने क्या हो जाता है कि सर्वोदय-विचार के लिए बुद्धि में विश्वास नहीं जमता, और हृदय में आशा की लहर नहीं दौड़ती। और, जब आशा और विश्वास नहीं तो पुरुषार्थ कैसे पैदा हो?

इसका एक कारण तो यह है, जैसा कि श्री जयप्रकाशजी अपने श्रोताओं को समझाते हैं, कि लोग मौजूदा व्यवस्था के अन्दर ही सुधार चाहते हैं। बने-बनाये चौखटे के बाहर कदम नहीं रखना चाहते। चाहते यह हैं कि उनके सब सवाल हल हो जायँ, लेकिन ढाँचा जैसा है वैसा बना रहे। वे यह नहीं सोचते कि क्या ऐसा होना सम्भव भी है!

सामान्य लोगों की बात छोड़िए ऊँची शिक्षा के लोग, बड़े ओहदों पर काम करनेवाले लोग, और नेता लोग, सब इसी लाइन पर सोचते हैं। दलों में काम करनेवाले लोग अपने-अपने दलों की दुर्दशा से निराश हैं, और निजी चर्चा में मानते भी हैं कि दलों से कुछ नहीं होगा, फिर भी दलमुक्त लोकतंत्र की बात सोचने के लिए तैयार नहीं होते। बार बार यही कहते हैं कि दल नहीं होंगे तो लोकतंत्र कैसे चलेगा? जो हाल राजनीति में है वही दूसरे क्षेत्रों में भी है।

अगर यही स्थिति है तो मानना पड़ेगा कि हमारे नारे चाहे जो हों, मगर मूल विश्वास में हम लोग अपरिवर्तनवादी हैं। हमारे मन में यह रहता है कि बदलना ही हो तो दूसरे बदलें, लेकिन हम खुद परिवर्तन के जोखिम से बच जायँ। सामान्य समाज को छोड़िए, स्वयं सर्वोदय में आम तौर पर सोचने का यही ढंग है। खादी पर चर्चा होगी—अनेक बार चर्चाएँ हुई हैं—तो यह मान लिया जायेगा कि और चाहे जो हो, संस्था तो रहेगी ही, और जब संस्था रहेगी तो कागज रहेगा, दफ्तर रहेगा, कार्यकर्ता रहेंगे। कभी संस्था के ढाँचे से अलग हटकर सोचने की कोशिश नहीं होती। ज्यादा-से-ज्यादा संस्था के मौजूदा ढाँचे में कुछ नये लोगों को जोड़ लेने की बात कही जायगी, मानी जायगी। पिछले वर्षों में खादी में नये मोड़ को लेकर न जाने कितनी गोष्ठियाँ, बैठकें, सभाएँ हुई हैं, लेकिन खादी न मुड़ी न मुड़ी। मुड़ती कैसे? मोड़ने की इच्छा के साथ-साथ संकल्प यह भी था कि संस्था का खंभा अपनी जगह से हिलने न पाये। नतीजा यह हुआ कि खादी अपनी जगह रह गयी, और क्रान्ति अपनी जगह पड़ी रही।

किसी देश में रहनेवाले लोगों का चित्त अनेक तत्त्वों से बनता है। भारतीय चित्त किन तत्त्वों से बना है यह एक गहरे शोध और अध्ययन का विषय है। समाज का काम करनेवालों को समाज के चित्त की रचना गहराई के साथ समझनी चाहिए। अभी इतनी बात साफ दिखाई देती है कि हमारा चित्त शायद इस तरह को नहीं स्वीकार कर पाता कि समाज भी बदला जा सकता है—हाड़-मांस के मनुष्यों के निर्णय से बदला जा सकता है। लोग कहते हैं कि समाज भी कोई बदलने और बनाने की चीज है? शायद सनातन समाज में विश्वास भी एक कारण है, जिससे हमारे रचनात्मक साथी भी ज्यादातर निर्माण और विकास की ही ओर झुकते हैं, और नये मार्मिक और मानवीय सम्बन्धों की बात, जो सर्वोदय की बुनियाद है, उन्हें कम रुचती है। उनके ध्यान में यह बात नहीं आती कि जब पुराना ढाँचा कायम रह गया तो रचना क्या हुई और रचनात्मक कार्य क्या हुआ?

क्रान्ति के लिए क्रान्ति का दिमाग चाहिए। परिवार, जाति, संस्था, और दल—यह हमारे दिमाग के रहने का चौखम्भा महल है। हम इसीमें रहते हैं। इससे बाहर हम नहीं जाना चाहते। हम इस पुराने महल के खंभों में घिरे रहेंगे तो नये जमाने की क्रान्ति का दर्शन कैसे होगा?

मन और मंच

मन में कुछ, मंच पर कुछ। निजी और पर धका (प्राइवेट डाउट) और सार्वजनिक तौर पर श्रद्धा (पब्लिक प्रोफेशन)। इस तरह का दोरंगापन मनुष्य के चरित्र में अक्सर दिखाई देता है। हममें से अधिकांश लोग इस रोग, या दोष के शिकार हैं। दूसरे देशों के लोगों की बात मुझे नहीं मालूम, लेकिन हमारे यहाँ यह रोग बहुत प्रचलित है। मुख्य लोग, बड़े लोग, छोटों की अपेक्षा इस रोग से अधिक ग्रस्त दिखाई देते हैं। कथनी और करनी में तो अन्तर रहता ही है, अलग-अलग अवसरों पर या परिस्थितियों में कथनी और कथनी या करनी और करनी में भी बहुत अन्तर रहता→

अग्नि-परीक्षा का वक्त करीब है

बिहार के मुजफ्फरपुर जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष और ग्रामस्वराज्य समिति के मंत्री को नक्सालवादियों की ओर से धमकी भरा पत्र मिला है, जिसमें कहा गया है कि उनकी हत्या ६ और ७ जून को कर दी जायगी। प्रस्तुत अंक जब तक पाठकों के हाथ में पहुँचेगा, तब तक क्या घटित हो गया रहेगा, यह भविष्य के गर्भ में है, लेकिन गांधी-चित्रों और साहित्य की दूकानों पर हो रहे प्रहारों के बाद प्रत्यक्ष सर्वोदय-कार्यकर्ताओं पर इस तरह के प्रहार की बात हमारे लिए गम्भीर चिंतन का विषय है।

सत्ता और कांग्रेस की कतार में जो गांधी प्रतिष्ठित हैं, उन पर प्रहार की बात नक्सालवादियों ने सोची, तो वह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी, क्योंकि उनके अपने विचार के अनुसार सत्ता और सत्ताधारियों के श्वेत आतंक में ही वे उनको भी शामिल करके सोचते होंगे। और उनके इस चिन्तन के अनुसार गांधी भी वर्ग-शत्रुओं में गिने जा सकते हैं।

लेकिन ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन में जिस गांधी की प्रेरणा काम कर रही है, और जिस रूप में काम कर रही है, उसके कारण हम यह नहीं सोचते थे कि इतनी जल्दी नक्सालवादियों के प्रहार के पात्र सर्वोदय कार्यकर्ता भी बनेंगे। विनोबा ने स्वयं कितनी बार यथास्थिति को असह्य बताया है, और साम्यवाद तथा यथास्थिति, दोनों में से ही किसी एक को चुनना पड़े तो साम्यवाद को चुनने योग्य कहा है। स्वयं जे० पी० ने नक्सालवादियों के कारुण्य भाव की सराहना की है। लेकिन जैसा कि सर्वोदय-विचार की मान्यता है, दोनों ने उस रास्ते को उस लक्ष्य तक पहुँचाने में अक्षम बताया है—और ऐसा उन्होंने ऐतिहासिक तथ्य प्रस्तुत करते हुए बताया है—जिस लक्ष्य की ओर साम्यवाद समाज को ले जाना चाहता है।

जिस समस्या के समाधान में नक्सालवादी लगे हैं, जिस अन्तिम व्यक्ति की मुक्ति की प्रेरणा से लगे हैं, हम ग्रामस्वराज्य का सपना देखनेवाले साथी भी उन्हीं समस्याओं के समाधान में लगे हैं, और हमारी प्रेरणा भी आखिरी आदमी की मुक्ति है। लेकिन हम 'श्वेत आतंक' से उस आखिरी आदमी को मुक्त करके 'लाल आतंक' में जीने की विवशता उसके लिए नहीं पैदा करना चाहते, और यहीं हम नक्सालवादियों से अलग होते हैं। अगर इसके कारण उन्होंने हमें अपना या वर्ग का शत्रु मान लिया है, तो इसे हम उनकी नादानी के सिवाय और क्या कहें?

हम यह सोच सकते हैं कि हमारे काम से गाँव-गाँव में मालिक-मजदूर के बीच समझदारी और साझेदारी का विकास होता है, वे एक-दूसरे के पूरक बनकर गाँव को एक ठोस ईकाई के रूप में विकसित करते हैं, तो नक्सालवादियों के क्रान्तिदर्शन के अनुसार वर्ग-संघर्ष की धार कुण्ठित होगी। तब हमारा काम उनकी दृष्टि में शत्रुतापूर्ण, और इसलिए हम उनके शत्रु माने जा सकते हैं। बहुत सम्भव है मुजफ्फरपुर में जो काम ग्रामस्वराज्य का चल रहा है, उसे नक्सालवादियों ने इसी रूप में लिया हो, और उसके कारण उक्त दो व्यक्तियों को धमकी दी गयी हो।

वैसे तो प्रत्यक्ष चर्चा में एक नक्सालवादी ने बताया कि हम लोग सर्वोदयवालों को प्रभावहीन मानकर चलते हैं, और यह मानते हैं कि सरकारी सहारे पर टिका और पल रहा सर्वोदय सरकार के पतन के साथ ही समाप्त हो जायगा। इसलिए सर्वोदयवालों को अपने शत्रुओं की मुख्य श्रेणियों में हम रखते ही नहीं।

चाहे जो हो, लेकिन अब हमें यह मानकर अपनी तैयारी रखनी चाहिए कि ऐसी धमकियाँ और ऐसे प्रहार हमारे ऊपर हो सकते हैं और हमें उसका सामना करना है। यह विषय अत्यन्त गम्भीरता से सोचने का है। शायद हमारी अग्नि-परीक्षा का वक्त करीब आ गया है।

—है। इस दोरंगेपन के कारण—ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, या समाजशास्त्रीय—चाहे जो हैं, लेकिन इससे देश को नुकसान बहुत हुआ है और हो रहा है। इसमें कोई शक नहीं।

ग्रामदान-आन्दोलन इस दोरंगेपन के कारण होनेवाले नुकसान का एक उदाहरण है। हम लोगों को, जो ग्रामदान का काम करते हैं, अनेक अवसरों पर इसका अनुभव हुआ है। कितने ही ऐसे लोग हैं, वरिष्ठ या नये, जिन्होंने बरसों ग्रामदान का काम किया है, दौरे किये हैं, भाषण दिये हैं, लेकिन अलग आपसी बैठक में ग्रामदान को जी भरकर कोसते हैं। 'इससे क्या होगा?', 'सब बोगस है', 'हवाई आन्दोलन है', 'करो नहीं, आसमान का कार्यक्रम है', आदि बातें जिम्मेदार लोगों के मुँह से सुनी गयी हैं। ईमानदारी की बौद्धिक शंका या चर्चा में विचारपूर्ण आलोचना एक चीज है, और सरासर अविश्वास बिल्कुल दूसरी। इस तरह किसी दबाव, लोभ, या लाज के कारण किन्चित मन से किये हुए काम की 'क्वालिटी' बहुत गिर जाती है। हम कितना भी छिपायें हमारे असली मन को लोग, न जाने कैसे, भाँप लेते हैं, और उनके ऊपर हमारे नकली रूप का असर हो जाता है।

ग्रामदान में सत्या की शक्ति प्रकट करने का एक औजार था, लेकिन उसे हम अपने दोरंगेपन का बहाना न बनायें। ग्रामदान के गुणात्मक पहलू को बहुत अधिक क्षति पहुँच चुकी है। उसका कल्याण होगा अगर हम नये सिरे से अपने मन को टटोल लें, और टटोलकर ही आगे ग्रामदान के काम में लगें या न लगें। संस्थाएँ अपने किसी कार्यकर्ता को ग्रामदान में लगाने के लिए दबाव न डालें; उन्हें ही मौका दें जो उत्साहपूर्वक लगना चाहते हैं। ग्रामदान का दावा है कि वह आध्यात्मिक आन्दोलन है। सत्य और अहिंसा उसके मूल्य हैं। ये दोनों मूल्य उसके साध्य और साधन, दोनों हैं। लेकिन आध्यात्मिकता को क्या कहें, जब ग्रामदान की गुणात्मकता भी खतरे में हो!●

'यज्ञ' में आहुति-समर्पण के बिना 'यज्ञ'-क्रिया पूर्ण होती नहीं, हो सकता है, उस आहुति की माँग इस सन्दर्भ में ही पैदा हो।

इस तरह की धमकियों और प्रहारों का सामना कैसे किया जाय, इस पर विचार करते समय कुछ मुद्दे सूझे हैं, उन्हें साथियों के समक्ष चिन्तन के लिए प्रस्तुत कर रहा हूँ :

(१) ऐसी धमकी का पत्र मिलने पर आवश्यक समझा जाय तो राज्य और केन्द्रीय सरकार को सूचना भेज दी जाय, संरक्षण की माँग अपनी ओर से न की जाय। अपनी ओर से इसका सामना विचार और जन-स्तर पर ही किया जाय।

(२) पत्र मिलने पर दो निवेदन एक, नक्सालवादी कामरेडों के नाम, दूसरा, क्षेत्र की जनता के नाम, तैयार करके छपाये जायँ, और जितना ही अधिक व्यापक पैमाने पर हो सके, दोनों निवेदनों को जनता में बाँटा जाय। कामरेड लोगों के नाम लिखे निवेदन में यह भाव व्यक्त किया जाय कि हम उनके विरोध में काम नहीं कर रहे हैं, बल्कि हम भी सामाजिक क्रान्ति का काम कर रहे हैं। क्रान्ति की पद्धतियों में भेद है, और हम नक्सालवादियों की क्रान्ति-पद्धति को सही नहीं मानते। ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि हिंसा की शक्ति से हुई क्रान्ति हिंसा की ही प्रतिक्रान्तिकारी संगठित शक्ति के शिकंजे में गिरफ्तार हो जाती है, समाज की क्रान्तिकारी शक्ति कुण्ठित हो जाती है, और 'मुक्त मानवों का मुक्त समाज' एक दूर का सपना ही रह जाता है। यह भी स्पष्ट कर दिया जाय कि नक्सालवादी जिसे 'श्वेत आतंक' कहते हैं, हम न उस 'श्वेत आतंक' के समर्थक हैं, न हम उसे कायम रहने देना चाहते हैं, न ही हम उसकी जगह 'लाल आतंक' पैदा हो, यह चाहते हैं। इस मतभेद के कारण नक्सालवादी हमें चाहे जो मानें हम उनके प्रति शत्रुता का भाव नहीं रखते। उनके कारुण्य-भाव के प्रति सहानुभूति रखते हुए उचित उद्देश्यवाले गलत राह के पथिक हम उन्हें मानते हैं। साथ ही यह भी जाहिर कर दिया जाय कि हम उनकी किसी धमकी या प्रहार से आतंकित नहीं होनेवाले हैं।

जनता के नाम जो निवेदन तैयार किया जाय, उसमें इन बातों का जिक्र करते हुए यह लिखा जाय कि सर्वोदय-आन्दोलन सही है या गलत, लोकहित का है या अहित का, यह फैसला जनता करे। हम यह अधिकार किसी भी पार्टी या पथवालों को नहीं देते कि वे हमें गलत घोषित करें। अगर कोई हमें गलत घोषित करके हमारे ऊपर प्रहार करता है, तो भी हम न डरनेवाले हैं, न उसके आरोप को स्वीकार करनेवाले हैं। हम अपना काम जनता के बीच करते रहेंगे, प्रहार होगा, तो उसे सहेंगे। अपनी तरफ से हम किसी प्रकार का प्रहार नहीं करेंगे, लेकिन जब तक साँस है, प्रहार के कारण कदम पीछे नहीं हटायेंगे। यह स्पष्ट किया जाय कि हम जन-शक्ति को ही अपनी शक्ति मानते हैं, और उसी आधार पर काम करना चाहते हैं। हमारा विश्वास है कि जनता के दिल-दिमाग में आन्दोलन अगर सही साबित होगा तो सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की हत्या से यह काम बन्द नहीं होगा, बल्कि एक कार्यकर्ता की जगह सैकड़ों-हजारों कार्यकर्ता जनता में से निकल आयेंगे काम को आगे बढ़ाने के लिए। हमारा तो आखिरी हद तक विश्वास है कि वह वक्त भी आयेगा जब स्वयं नक्सालवादी ऐतिहासिक तथ्यों से सबक लेंगे और इस काम को अपना लेंगे।

(३) उक्त दोनों भावों को व्यक्त करते हुए (उसमें जोड़ने घटाने की चर्चा होनी चाहिए और सबकी राय से मसविदा तैयार होना चाहिए।) उस क्षेत्र के कार्यकर्ता साथी मिलकर मसविदा तैयार करें, जिस क्षेत्र के कार्यकर्ता पर प्रहार की धमकी का पत्र मिला हो। प्रान्तीय और अखिल भारतीय स्तर पर भी इसमें आवश्यकतानुसार योगदान हो। निवेदन छपवाकर, टोलियों में घूम घूमकर कार्यकर्ता साथी दोनों निवेदन बाँटें। जीप पर दौड़ लगाकर पर्चे फेंकने की अपेक्षा टुकड़ियों में पैदल घूम-घूमकर पर्चे बाँटेंगे तो अधिक अच्छा रहेगा। बाँटनेवाले साथी शान्ति-सैनिक के गणवेश में रहें, तो अति-उत्तम।

(४) कामरेड लोगों के नाम जो निवेदन हो, उसमें यह भी लिखा जाय कि हम उनसे मिलकर चर्चा करने को तैयार हैं, एक-दूसरे की बातों को समझने-समझाने के लिए तैयार हैं, लेकिन अगर उन्हें यह सब मंजूर नहीं, केवल उन्हें खून की प्यास ही बुझानी है तो जिस दिन के लिए उनकी सूचना है, उस दिन एक नहीं, अनेक कार्यकर्ता साथी उनकी प्यास बुझाने के लिए अपने कार्यालय में तैयार मिलेंगे। हमारी ओर से कोई प्रतिरोधात्मक प्रहार नहीं होगा। हम उन्हें अपना मानव बन्धु मानते हैं, अन्त तक मानते रहेंगे।

(५) जिस दिन की धमकी हो, उस दिन अधिक-से-अधिक कार्यकर्ता साथी, और जनता में से जितने लोग स्वेच्छया शामिल हों, उतने सब लोग उस दिन शान्ति-सैनिक के गणवेश में सर्वोदय-कार्यालय में उपस्थित हों। संभव हो तो उस दिन सुबह एक जुलूस निकाला जाय, जो पूर्णतः मौन हो। जुलूस में भाग लेनेवाले गणवेशधारी हों। सिर्फ निवेदन के पर्चे बाँटे जायँ।

हम मानव-हृदय की परिवर्तनशीलता में प्रचण्ड आस्था रखते हुए इस प्रकार का कदम उठायेंगे, तो हम कभी भी पराजित नहीं होंगे, मिटकर भी हम विचार को अजेय कर जायेंगे।

—रामचन्द्र राही

कृपया क्षमा करें

(१) जिस प्रेस में 'भूदान-यज्ञ' छपता है, उसमें मालिक-मजदूर के विवाद कारण अंक कुछ देर से छप रहा है।

(२) तात्कालिक महत्त्व की सामग्री अधिक हो जाने के कारण इस बार 'गांधी : कौसलर का मत, कृपालानी का उत्तर' शीर्षक लेखमाला रोकनी पड़ रही है।

प्रश्नोत्तर

जीवन का हेतु, विज्ञान का संदर्भ, साधना की दिशा

—श्री ऋषभदास रांका के प्रश्न : आचार्य विनोबा के उत्तर—

प्रश्न—मानव-जीवन का हेतु क्या है?

उत्तर—लोग जी रहे हैं, मरने तक जीना, और क्या? अब यह कुत्ता देखो, पड़ा है। दिन भर पड़ा रहता है। रात को थोड़ा इधर-उधर घूमता है। उसका मुख्य कार्यक्रम है २० घंटे सोने का। बचे हुए चार घंटे में खाना-पीना, प्रजोत्पत्ति इत्यादि। क्योंकि कुत्ता जाति की रक्षा होनी चाहिए। अविच्छिन्न जाति-परंपरा कर्तव्य समझता होगा वह अपना। इसलिए संतान-उत्पत्ति करता है। खाने-पीने के सिवाय देह चलाता नहीं। वह मालिक की सेवा करता है। मालिक उसे खिलाता है।

एक मालिक का कुत्ता सदासर्वदा मालिक की सेवा करता था। मालिक उसे खिलाता पिलाता था। एक दिन मालिक मर गया तो उसकी लाश जलायी गयी। कुत्ते ने खाया नहीं, और जिस स्थान पर लाश जलायी गयी उस स्थान पर वह बैठा ही रहा। वह स्थान भी नहीं छोड़ा और खाया भी नहीं, यद्यपि लोगों ने बहुत कोशिश की। कुत्तों की ऐसी अनेक कहानियाँ हैं। लेकिन कुत्ते के जन्म का हेतु क्या है, इसकी चर्चा कुत्ते आपस में करते होंगे क्या? कभी कभी आपस में प्रश्न इत्यादि पूछते होंगे। एक-दूसरे को जवाब भी देते होंगे। मुख से बोलते तो नहीं। उनकी भाषा हमारी समझ में नहीं आती। चींटियाँ तो बहुत करामात करती हैं। समाज के लिए बलिदान करती हैं, त्याग करती हैं, मकान बनाती हैं। किशोर-लाल भाई ने एक किताब लिखी है 'उधईनूं जीवन'। वह एक अंग्रेजी किताब का अनुवाद है। उसमें उन्होंने अपना एक 'चेप्टर' जोड़ा है। वह भी एक बहुत बड़ा समाज है। कितनी चींटियाँ होंगी, क्या अंदाज है? ३०० करोड़ मनुष्य हैं तो क्या उससे दस गुना होगी? उनकी गणना हुई नहीं। उनका भी जीवन है, ऐसे मानव का भी जीवन है।

अब यह सारे मानव, सारे लोग जी रहे हैं, जीते जा रहे हैं, और पूछते हैं जीने का उद्देश्य क्या है। तो क्यों जीते हैं? प्रवास करते हैं और पूछते हैं कि क्यों प्रवास कर रहे हैं? प्रवास की शुरुआत में ही पूछना चाहिए कि किसलिए प्रवास कर रहे हैं। बाबा को कहा जायेगा प्रवास के के लिए चलो तो बाबा पूछेगा प्रवास क्यों करना? ५०-६० साल आप जी लिये। अब उद्देश्य पूछ रहे हैं जीने का, कि काहे के लिए हम जी रहे हैं? अजीब बात है। सतत जी रहे हैं और ऐसा प्रश्न पूछते हैं। मतलब जीवन निरुद्देश्य है और क्या?

हमें एक सुंदर उदाहरण याद आता है। जब हम जेल में थे, सन् १९४५ की बात है, उसमें जेलर ने घास उगायी थी—'१९४५'। इस आकार में वह घास थी। उसे रोज पानी देते थे और काटते भी थे, ताकि वह आँकड़ा साफ रहे। उसमें अनेक घासें उगी थीं। घास को पूछा जाय कि तुम्हारे जन्म का उद्देश्य क्या है तो वह क्या बतायेगी? जेलर से पूछा जाय तो कहेगा कि '१९४५' बनाना मेरा उद्देश्य है। अगले साल ५ का आँकड़ा हटाकर ६ बनायेंगे और बाकी का कायम रहेगा।

वैसे हमारा उद्देश्य क्या? १९७० का आँकड़ा बनाना, यानी जो उद्देश्य जेलर का होगा वह प्रधान होगा कि तिनके का उद्देश्य होगा वह प्रधान होगा? तिनका छोटा था उसे पानी दिया गया। अब वह बढ़ रहा है। उसका अपना जीवन है, लेकिन कुल मिलाकर उसके जीवन का उद्देश्य क्या, वह जेलर को पूछना चाहिए। वैसे ही जिस जेलर ने पानी दे देकर हमें बनाया, उससे पूछना चाहिए कि हमें क्यों बनाया है?

प्रश्न—इसका उत्तर तो संत ही बता सकते हैं।

उत्तर—संत क्या बतायेगा? उद्देश्य तो वह ही जाने। किम् इदम्, किम् अस्य रूपम्, कथमिवासीत् अमुष्य को हेतु। इति न कदापि विचिंत्य चिंत्य मायेति धीमता विश्वम्॥ "यह क्या है, इसका रूप क्या है, पहले यह क्या था, इसका हेतु क्या, ऐसा फाल्तू चिंतन बुद्धिमान को कभी नहीं करना चाहिए। समझना चाहिए कि माया है।" जीवन का उद्देश्य क्या, इत्यादि सोचना नहीं चाहिए। हमें तो पता नहीं कि जीवन का उद्देश्य क्या है। पानी पीने का उद्देश्य क्या है, यह पूछ सकते हैं। उसका उत्तर है—प्यास बुझाना।

प्रश्न—साधना और धार्मिक परंपरा का सम्बन्ध क्या है?

उत्तर—धार्मिक परंपराएँ क्या हैं, यह जानने की जरूरत है। क्योंकि उन परंपराओं का अंतिम परिणाम हम हैं। हमारे पूर्वजों ने अनेक प्रकार के प्रयोग किये और हमको जन्मत: उसका लाभ मिला। रास्ते में दुकान है, उसमें बकरी का मांस काट करके रखा हुआ है। लेकिन जिन लोगों के पूर्वजों ने मांसाहार छोड़ा था, और जिनकी वंश-परंपरा में मांस खाने की आदत नहीं रही, उनको वह दुकान देखकर हम भी मांस खायें, ऐसी इच्छा कभी होगी नहीं, बल्कि नाक दबायेंगे, आँख दूसरी तरफ कर लेंगे। अब यह परंपरा है। परंपरा से उनको मांसाहार-परित्याग मिला है। यह चीज उनके खून में बैठ गयी। इस वास्ते हम जैसा बने हैं, उसमें सारा वेद आ गया, गीता, महाभारत, रामायण, सब उसमें आ गया। आखिरी फल हम हैं। वह बीज है पुराना। बीज में से अंकुर, अंकुर में से शाखा, शाखा में से पत्तियाँ, फूल और फिर फल। फल में वही बीज फिर से आता है। बीज से आरंभ होता है, वही फल में देखने को मिलता है। वैसे यह अखंड सिलसिला चल रहा है।

प्रश्न—विज्ञान-युग में साधना का स्वरूप क्या होगा?

उत्तर—वह पूछने की जरूरत नहीं। क्योंकि विज्ञान के कारण वैसा जीवन बन ही जाता है। भाऊ पानसे का घर यहाँ से आधा फर्लांग दूर भी नहीं होगा, लेकिन उनके बच्चे यहाँ साइकिल पर बैठकर आते हैं। हमारे जमाने में साइकिल इतनी थी नहीं। अब तो साइकिल आम हो गयी है। जीवन का स्वरूप बदल गया। पुराने जमाने में हजामत के लिए उस्तुरा आदि नहीं था। ऋषियों की दाढ़ी और सिर के बाल बढ़े हुए रहते थे। वे ऋषि बट वृक्ष का दूध लगाकर उसकी लट बना लेते थे। वे आज होते और आपका सुंदर चेहरा देखते तो कहते कि आप कितने भाग्यवान हैं, हम लोगों को तो कोई मौका ही नहीं था। लेकिन अब हमारे पास कितने अच्छे औजार हैं। तो विज्ञान के कारण जीवन बदलता ही है। साधना विज्ञान के विरोधी हो नहीं सकती, उसके अनुकूल ही होगी। उस युग के अनुकूल। विज्ञान के कारण मनुष्य में गंभीरता ज्यादा आ गयी। विज्ञान-युग में जो सिपाही होते हैं वे गुस्से से काम नहीं करते, शांति से काम करते हैं। सोच करके, योजना करके, बराबर दिशा-यंत्र लगाकर तदनुसार काम करते हैं। पहले तो एकदम गुस्से में आकर मार काट करते थे। लेकिन अभी ऐसा करेंगे तो हमारा ही नाश होगा, ऐसा वे सोचते हैं। इस वास्ते मारना ही है, तो ठीक से, व्यवस्थापूर्वक, योजनापूर्वक मारना चाहिए। इसका मतलब योजना-प्रधान युग हो गया, पहले आवेश-प्रधान था। अभी का योजना-प्रधान, बुद्धि-प्रधान है। जैसे विज्ञान के कारण युग का स्वरूप बदला, वैसे ही साधना का स्वरूप भी विज्ञान के कारण बदलेगा। जो भी आपको करना हो, वह विज्ञान को देखकर, विज्ञान को ध्यान में रखकर करना होगा।

प्रश्न—आपकी साधना का स्वरूप कहिएगा?

उत्तर—हमारी साधना क्या हुई? हमने तो इतना ही समझा कि बचपन से हम पर अनेकों के उपकार हैं। माता-पिता, भाई, मित्र, शिक्षक, प्रोफेसर, मार्ग-दर्शक आदि, उसके अलावा हमारे लिए कपड़ा बनानेवाले, खेती करनेवाले, मकान बनानेवाले ऐसे असंख्य लोगों की सेवा बचपन से हमको मिलती रही है। घड़ी की सेवा मिली। वह न मिली होती तो बाबा का काम बनता नहीं। बाबा ने सोचा कि लोगों का इतना उपकार हम पर है और मरते तो आज भी हम हैं, तो हम भी थोड़ी सेवा करें, जितनी अपने से बनती हो। उससे लोगों का उपकार चुक जायेगा, ऐसी बात नहीं है। पूरा चुकेगा नहीं, लेकिन थोड़ी कोशिश करें। इसीको आप साधना नाम दें, तो दें। बाकी, हम साधना जानते नहीं। हम खाते हैं तो दूसरे को भी मिले, उसके लिए कोशिश की। उसमें से भूदान-ग्रामदान निकला। लोगों को भी खाने को, काम करने को साधन मिले।

दूसरा यह कि बचपन से हम आलसी और भीरू हैं। शादी करने में कितनी झंझट है। रात को जागना पड़ेगा, और फिर क्या-क्या आपत्ति आयेगी! ३० साल के लिए अपने को बाँध लेना पड़ेगा, न मालूम कैसे इसमें से निभेगा। यह भय और आलस हमारा है। रात को मैं गाढ़ी नींद लेता हूँ। मैं यह नहीं मानता हूँ कि बाबा को जितनी उत्तम नींद आती है उसका थोड़ा सा भी अंश संसार में पड़े हुए लोगों को मिलती होगी। अनेक चिन्ताओं के कारण उनको नींद ठीक नहीं आती होगी। इस वास्ते बाबा ब्रह्मचारी रहा तो कोई खास बात नहीं। वह तो भय और आलस्य का परिणाम है। बाकी भूदान-ग्रामदान वगैरह जो होता है वह इस वास्ते कि खुद खाता है तो दूसरों को भी मिले। इसको आप साधना कहेंगे? आलस्य के कारण तरह-तरह की जिम्मेदारियों को लेने से भागना हुआ आदमी। लेकिन लोग कहते हैं कि बड़ा है, ब्रह्मचारी है। मुझे गृहस्थ को देखकर बहुत आदर होता है। कितना कठिन काम है। बच्चा पैदा हुआ। वह क्यों रोया, क्यों हँसा, मालूम नहीं। भूख लगी, दस्त लगी और कुछ दर्द हुआ, वह क्यों हुआ, यह सब मालूम नहीं। फिर भी उसको सँभालना, तरह-तरह के प्रयोग करना, रूठ जाय तो शांत करने की कोशिश करना, यों करके उसको बढ़ाया। फिर उसको तालीम देना, शादी कराना, आगे की व्यवस्था करना, इतना सारा उपकार होता है। मनु महाराज ने लिखा है—

य माता पितरौ क्लेश सहेते सम्भवे नृणाम्
न तस्य निष्कृति शक्या कर्तुं वर्ष शतैरपि ॥

मनुष्य को जन्म देने में माता-पिता को जो क्लेश सहन करना पड़ता है उसका सौ साल में भी बदला चुकाया नहीं जा सकता। एक जीवात्मा को जन्म देना, उसका आगे का इंतजाम करना, इन सबके लिए जो कष्ट उठाते हैं, उसका बदला चुकाना चाहेंगे तो १०० साल में भी नहीं हो सकेगा, ऐसा मनु महाराज लिख रहे हैं। यह बात बाबा को जँचती है, यह बात सही है। इस वास्ते ऐसी जवाबदारी अपने पर लेना नहीं। दुनिया का उपकार हुआ है, तो उसके बदले में सेवा करना और नया बोझ करना नहीं। उसका भार होता है यों समझ करके केवल स्वार्थपरायण बुद्धि से, भीरुता से और आलस से ऐसा बाबा ने किया। यह है बाबा की साधना। साधना का स्वरूप ध्यान में आया या नहीं? संयम और करुणा सभी धर्म-शास्त्र समझाते हैं। संयम यानी झंझट में नहीं पड़ना, दूसरे को तकलीफ में नहीं उतारना यह बाबा का विचार है। आलस वगैरह जो है, उससे संयम सधता है। दूसरा, करुणा यानी हमने दूसरों से उपकार पाया है तो थोड़ा देना।

प्रश्न—आपके साथियों की साधना के बारे में बताइएगा।

उत्तर—अगर उनका आरम्भ ही करना हो तो अपनी जो कुत्ती है वहीं से आरम्भ करना होगा। उसका परिचय अभी थोड़े ही समय से हुआ है। मैं यहाँ खेत में घूमता हूँ। एक दिन सुबह देखा कि वह मेरे साथ घूम रही है। हम सात फेरे घूमते हैं वह भी उतना ही घूमी। हमें शास्त्र याद आया—"सप्तपदीनं सख्यम्"

सज्जनों के साथ सात कदम चलते हैं तो दोस्ती हो जाती है। तब से यह यहाँ रहती है। वह एक साधिका है।

एक कुत्ता था। जब मैं बजाजवाडी आश्रम में रहता था तब हमारी प्रार्थना की घंटी होती थी, तो रोज ठीक समय से पहुँचता था। दोनों दफा प्रार्थना में आता था, कभी चूका नहीं। खाने की घंटी तीन दफा होती थी तब आता था, उस समय उसे थोडा देते थे। जितना खिलाते थे उतना बस नहीं होता था तो वह गाँव में पेट भरने के लिए जाता था। एक दिन म्यूनिसपैलिटीवालों ने देखा कि कुत्ते ज्यादा हुए हैं तो कुत्तों को जहर खिलाया। उसे भी जहर दिया गया। उसके गले में मालिक का पट्टा नहीं था। वह बहुत जोर से दौडते हुए आश्रम आया। उसे दुःख होता था, पीडा होती थी। तडपता हुआ उसे देखकर तो पता चला कि किसीने उसे जहर खिलाया है। आश्रम में जितनी छाछ थी, उतनी सबकी सब उसे खिलायी गयी, यह सोच करके कि उसे उल्टी हो जायेगी तो जहर निकल जायेगा। लेकिन वैसा नहीं हुआ। वह तड़पते हुए मर गया। उस वक्त हममें से किसीने भी खाना नहीं खाया। हमारा एक साथी मर गया, उस निमित्त से आश्रम में उपवास हुआ। एक गड्ढा खोद करके उसका प्रेत-संस्कार किया और उसे दफनाया। उस वक्त बाबा ने वेद के मंत्र भी कहे। वह साधक था और हमारा साथी था।

तीसरा एक हाथी था। हम बडोदा में जब थे तो जहाँ हमारा घर था, वहाँ से दो फर्लांग दूर एक मन्दिर के पास सयाजीराव गायकवाड का हाथी बंधा हुआ रहता था। बाबा घूमकर आता था और मन्दिर में भजन करता था। पाँच-दस मिनट बैठता था। वहाँ से दो फर्लांग दूर घर था। एक दिन बाबा उस मन्दिर में एक मिनट ही बैठा और भजन गाये बिना ही वापस चलना शुरू किया तो हाथी जोर-जोर से चिल्लाने लगा। हमने सोचा कि इसे क्या हुआ? इसलिए हम वापस गये तो वह शान्त हुआ। फिर हम चलने लगे तो फिर वह चिल्लाने लगा। इसलिए हम फिर से वापस जाकर मन्दिर में बैठे और भजन गाना शुरू किया। तब वह शान्त हुआ। वह भजन सुनने का आदी था। वह हमारा गुरु बन गया। किसी कारण से हमें उस दिन जल्दी थी इसलिए हम जा रहे थे। लेकिन उसने हमें सुझाया कि भजन गाये बिना आगे नहीं बढ़ना। वह हाथी हमारी साधना का साथी हो गया। इस प्रकार से अनेक साथी हो गये। और अब कितने संस्मरण सुनाना?

प्रश्न—साधना के क्षेत्र में भारत की देन क्या है?

उत्तर—मेरा ख्याल है कि भारत की अपनी देन कहना मुश्किल है। क्योंकि दुनिया में अनेक जातियाँ निर्माण हुईं और और अनेक प्रकार की सेवाएँ उन्होंने की। लेकिन भारत की अपनी देन अगर कहनी हो तो अहिंसा ही है। बीच में बिहार में बहुत बड़ा अकाल पड़ा था। जे० पी० इधर-उधर से माँग करके पैसा आदि लाते थे। पश्चिम के एक अखबार में एक लेख आया कि 'भारत में अकाल की तकलीफ क्यों होनी चाहिए? भारत में ५५ करोड़ लोग हैं, उसमें से चार पाँच करोड लोगों के क्षेत्र में अकाल पडा है। अगर दसवाँ हिस्सा अनाज ज्यादा होता तो अकाल नहीं होता। उसके बदले में यहाँ इतने लाख जानवर हैं। एक-एक जानवर को अगर मनुष्य खायें तो कोई कारण नहीं है फाका करने का। इतनी खाद्य-वस्तु वहाँ पड़ी है, ऐसा हिसाब उस भाई ने बताया। अब भारत के मूर्खों की मूर्खता ही नहीं कि खाद्य-वस्तु पड़ी है उसे खाना चाहिए। यह वैसा ही हुआ जैसे घर के सामने आम है लेकिन हम खाते नहीं। इस वास्ते अकाल-वकाल यह तो सब कल्पना ही है।' ऐसा उस भाई का कहना था।

अब हम गाय-बैल का मांस नहीं खाते हैं इसका अर्थ है अहिंसा। हम लोग गुड़ में चींटी लगी हो तो उन्हें हटा करके खाते हैं लेकिन चीनी लोग चीटियों के साथ खायेंगे। इतना पौष्टिक द्रव्य है उसे क्यों खोना? लीन युटांग ने लिखा है। वह विनोदी लेखक है। लिखता है कि मेरे पेट का ऑपरेशन करना हो तो मैं चीनी डाक्टर पसन्द नहीं करूँगा, क्योंकि आपरेशन करते-करते पेट के अन्दर उसको कोई अच्छा अवयव मिलेगा तो उसे खाने का मोह हो जायेगा। और ऑपरेशन रुक जायेगा। यह उसने विनोद में लिखा है। तात्पर्य इतना ही है कि जो हजम नहीं होता वह छोड़कर बाकी सब खाना, यह है चीनी लोगों का रवैया। लेकिन भारत में मांसाहार का त्याग किया है। भारत में अहिंसा है इतनी ही बात नहीं, इसके अलावा भारत की तरफ से दूसरे देशों पर आक्रमण कभी हुआ नहीं।

गोपुरी, वर्धा : ४ मई, '७०

अनुशासन : स्वानुशासन

प्रश्न—लादे हुए अनुशासन के बदले स्वानुशासन, स्वैच्छिक अनुशासन कैसे सधे, यह हमारी एक सामूहिक समस्या है। शिबिरों में और अन्य प्रवृत्तियों में अधिकाधिक स्वानुशासन कैसे सधे?

विनोबा—"आर्गनाइजेशन इज द टेस्ट आफ नान-वायलेंस"—गांधीजी ने जब यह कहा तब उनका मतलब यह नहीं था कि संगठन बहुत कड़ा और लादे हुए अनुशासन-वाला होना यह अहिंसा की कसौटी है। उन्हें कहना यह था कि संगठन में लादा हुआ अनुशासन न होने से स्वानुशासन साधने में संगठन की, और अहिंसा की कसौटी है।

दो आकर्षण ऐसे होते हैं, जो अनुशासनहीनता से परावृत्त करते हैं—

१. ध्येय-प्रेरणा, २ अन्योन्य प्रेम।

गोपुरी, वर्धा : २०-५-'७० (तरुण शान्ति-सेना के एक सदस्य के साथ हुई चर्चा से)

साम्प्रदायिक विस्फोट

दुर्घटना नहीं हुई होती, अगर...

•रामनन्दन सिंह

चाईबासा मे दगे का प्रारम्भ सध्या मे लगभग पाँच बजे बड़ा बाजार के उस स्थान से हुआ, जहाँ मुख्य सड़क से एक छोटी सड़क बड़कन्दाज मुहल्ले में स्थित मसजिद की ओर जाती है। मुख्य सडक एव मसजिद की ओर जानेवाली सडक पर सर्वश्री रामघनी एव गजाधर साहब का मकान है। दूसरी ओर भी एक हिन्दू का मकान है। उसके बाद ही मुसलमानों की बस्ती शुरु होती है। इसी स्थल पर रामनवमी के अवसर पर निकाले गये जुलूस पर बम फेंका गया। इसके पहले जुलूस सदर बाजार, कुम्हारटोली एव अधिक दूर तक बड़ा बाजार की सडक से बिना किसी बाधा के चला आया था। धार्मिक परम्परा के नाम पर जुलूस मे लाठी, तलवार, फरसा आदि घातक हथियार भी थे। साथ मे तीन ट्रक थीं जिन पर से जुलूस मे शामिल प्यासे को पानी पिलाया जाता था, और कुछ गाने बजानेवाले लोग भी थे। जुलूस का कुछ भाग मुख्य सड़क एवं मसजिद की ओर जानेवाली सड़क के मिलन-स्थान से बिना बाधा के आगे बढ गया। लेकिन कुछ भाग आगे बढनेवाला था ही कि, कहा जाता है कि, एकाएक बम की आवाज हुई। बम किस घर से आया, इसका पता किसीको नहीं है।

दगा का प्रारम्भ होते ही जुलूस के लोग तो बेतहाशा भागे। इसी समय श्री रामाशीष सिंह नामक एक सिपाही का, जो १० बजे दिन मे ही लाठी के साथ अकेले बड़ी मसजिद के नजदीक ड्यूटी पर था, लोगो ने घायल कर दिया। श्री रामाशीष सिंह ने बताया कि ५ बजे की नमाज पढने के बाद मसजिद से मुसलमान खाली हाथ निकले और मुख्य सड़क की ओर प्रस्थान किये। श्री रामाशीष सिंह भी उनके साथ हो लिये। कुछ दूर जाने पर कुछ लोगो ने अगल-बगल के घरो से निकलकर उन्हे घातक हथियारो से घायल कर दिया। घायल करनेवाले अल्पसख्यक समुदाय के थे, ऐसा श्री सिंह का कहना है। जुलूस मे बन्दूक से लैस चार से छः की सख्या तक सिपाही तो थे ही, लगभग एक दर्जन लाठीधारी सिपाही भी थे। श्री रामाशीष सिंह का घायल होना पुलिस विभाग के एक एक अधिकारी एव कर्मचारी की उत्तेजना का कारण बना। पुलिस के अनुसार २३ व्यक्तियों की मृत्यु हुई है, जिसमे ११ की घातक हथियारो से तथा ७ की जलने से। लेकिन जले हुए घरों की स्थिति स्पष्ट प्रमाणित करती है कि ऐसे घरों मे मनुष्य जलकर नही मर सकता। भागने की काफी गुजाइश थी। अतः अल्पसख्यको की इस शिकायत म, कि मृत्यु तो पुलिस की गोली से हुई है, कुछ तथ्य दीखता है। हो सकता है पुलिस की ज्यादती को छिपाने के लिए लाश को जलते हुए घरो मे डाल दिया गया हो।

दगे की आशका अल्पसख्यो को पहले से ही थी। प्रशासन को १३ अप्रैल को इस सम्बन्ध मे बेनामी पत्र प्राप्त हुआ था। साथ ही रामनवमी के अवसर पर १४ अप्रैल को ध्वनि विस्तारक यत्र से सभी दूकानें बन्द रखने की सूचना जुलूसवालों की ओर से दी गयी थी। किन्तु आश्चर्य है कि फिर भी प्रशासन सचेत न हो सका। गुप्तचर विभाग बिलकुल ही निकम्मा साबित हुआ। अल्पसख्यक समुदाय के ऐसे परिवार, जो बहुसख्यक समुदाय की आबादी वाले मुहल्ले में रहते थे, १५ अप्रैल को जुलूस निकलने के पहले ही ऐसे स्थानो मे चले गये, जहाँ उन्हे सुरक्षा का भरोसा था। साथ ही आत्मरक्षार्थ वे अपने घर पर किसी भी स्थिति का सामना करने को तैयार थे, और यह भी सत्य है कि जैसे ही जुलूस मे भगदड मची, अल्पसख्यक मुहल्ले मे बाहर आने-जानेवाले बहुसख्यक समुदाय के कुछ व्यक्तियो पर घातक हथियारो से आक्रमण भी हुआ।

यह बात कही जा सकती है कि यदि पुलिस सजग रहती, तो दगा होता ही नही, और अगर दगा प्रारम्भ हो भी गया तो भी, पुलिस यदि प्रतिक्रिया मे नहीं होती, तो इतने घर नही जलते, और इतनी हत्याएँ नही होती।

यह दगा दोनो समुदायो के कुछ गुडों द्वारा पूर्वनियोजित हो सकता है, जिसकी जानकारी आमलोगो को नही थी। आमलोगों को जानकारी होती, तो जुलूस मे बच्चो को तो कोई हर्गिज शामिल नहीं होने देता।

शान्ति-सेना का काम

दिनाक १७-४-७० को श्री श्यामबहादुरजी टाटानगर से अपने दफ्तर से तीन साथियो के साथ चाईबासा पहुँच गये। पहुँचते ही स्थानीय खादी-भडार एव भूदान कार्यालय के कार्यकर्ताओ को इकट्ठा करके शान्ति-सूचना-कैम्प खोलकर काम प्रारम्भ कर दिया। सरकार की ओर से सभी प्रकार का सहयोग शान्ति-सेना-कैम्प को मिला।

जिला शान्ति सेना-कार्यालय के श्री श्यामबहादुरजी के अलावा ३ और, खादी-भडार के तीन, सर्वोदय मडल के एक, भूदान कमेटी के दो, गांधी-शान्ति-प्रतिष्ठान के एक, इस तरह कुल ११ शान्ति सैनिक कार्यरत रहे। २० तारीख को पटना से दो शान्ति-सैनिक पहुँचे, तथा २२ को ५ शान्ति सैनिक पहुँचे। इस तरह कुल १८ शान्ति सैनिक चाईबासा एवं चक्रधरपुर मे कार्यरत रहे। इन शान्ति-सैनिकों ने अफवाह को रोकने, दोनो समुदायो के बीच जाकर सहानुभूतिपूर्वक बात करके दिलों को जोडने तथा राहत के काम मे सरकार को उचित सलाह देने का काम किया। यह काम और भी अधिक असरदार ढग से हो सकता था, यदि कुछ स्थानीय शान्ति-सैनिक भी होते।●

निष्कलंक भिवंडी पर काले धब्बे

•सुमन बंग

भिवंडी में ता० ७ मई को जो दंगा हुआ, उसका निमित्त बना शिवजयंती का उत्सव। पिछले ७-८ वर्षों से महाराष्ट्र में शिवाजी महाराज की जयंती धूमधाम से मनाने की प्रथा चल पड़ी है। गणपति उत्सव और शिवजयंती, ये दोनों त्योहार कई जगह हर साल अशांति का कारण बन रहे हैं। स्व० लोकमान्य तिलक ने ये दोनों उत्सव स्वराज्य की लड़ाई लड़ने के लिए शुरू किये थे। इनके द्वारा उन्होंने महाराष्ट्र में संगठन किया और लोगों में देशभक्ति जगायी। लेकिन वे ही उत्सव आज समाज के टुकड़े कर रहे हैं, और स्वराज्य खोने का देशद्रोही वातावरण बना रहे हैं, यह बड़ी दुःख की बात है। विशेषतः मुसलमानों की संख्या जहाँ ज्यादा है, वहाँ दंगे का विशेष भय रहता है। भिवंडी शहर में कपड़े के व्यापार के लिए उत्तरप्रदेश से कई मुसलमान परिवार आये थे। और धीरे-धीरे उनकी मदद के लिए, और कुछ अपने पेट के लिए भिवंडी में सब जगह से मुसलमान मजदूर परिवार भी आते रहे हैं। आज भिवंडी शहर में बहुसंख्यक लोग मुसलमान हैं। अगल-बगल के देहातों में भी काफी मुसलमान हैं, पर वे अल्पसंख्यक हैं।

लंका-दहन की तैयारी

अहमदाबाद के दंगे के बाद 'भिवंडी में अहमदाबाद का बदला लेंगे', ऐसी बात आमसभा में 'तामिरे मिल्लत' के नेताओं ने कही, ऐसा कहा जाता है। और उसकी तैयारी भी की गयी। एसिड बल्ब, हथगोले, सोडा वाटर की बोतलें, पत्थर, पेट्रोल इत्यादि सामान मुसलमानों ने इकट्ठा कर रखा था, और उसका खुलकर उपयोग उन्होंने किया, ऐसा पाया गया।

दूसरी तरफ, गाँव-गाँव में झंडा और डंडा लेकर सैकड़ों हिन्दू इस बार जुलूस में योजनापूर्वक गुजारे गये थे, ऐसा कहते हैं। जुलूस में कुछ गलत घोषणाएँ हिन्दुओं ने कीं, और मुसलमानों की ओर से जुलूस पर पथराव हुआ। और एकसाथ हिन्दुओं के कुछ प्रमुख मुहल्लों में आग लगा दी गयी। पुलिस के पास सिवाय लाठी के कुछ नहीं था। अतः दोनों ओर से मनमानी की गयी। दंगा दमन करने में कलेक्टर भी जखमी हुए। पुलिस हिन्दुओं का पक्ष लेती है, हमें संरक्षण नहीं देती है, अतः हमने स्फोटक द्रव्य और शस्त्र इकट्ठा कर रखे थे, ऐसा कुछ मुसलमान भाई कहते हैं। पुलिस पूर्णतः तटस्थ नहीं है, यह हमने भी महसूस किया।

ऐसा क्यों हुआ? देश भर में चाहे जितने भी दंगे हुए हों, चाहे जितनी अशांति मची हो, पर भिवंडी शहर को कभी उसकी छूत नहीं लगी थी। औरों के लिए वह हरदम साम्प्रदायिक एकता का उदाहरण रहा है। हिन्दू-मुस्लिम यहाँ भाई-भाई की तरह प्यार से रहे हैं। धर्म ने उनके स्नेह में कभी कोई दखल नहीं दी। पर भिवंडी के इस धवल मुख पर ७ मई की घटना ने कलंक लगा दिया। बरसों से साथ साथ रहनेवाले, प्यार से गले मिलनेवाले एकाएक एक-दूसरे के शत्रु बन गये।

यह अशांति क्यों हुई? किसने करवायी? धर्म की गलत धारणाओंवाले समाज में जो इनेगिने सिरफिरे लोग होते हैं, उन्होंने। यद्यपि इनकी संख्या बहुत-बहुत अल्प होती है, फिर भी ये लोग औरों को किस तरह गुमराह करते हैं, यह अहमदाबाद, भिवंडी, जलगाँव में देखने को मिला। जनसंघ, शिवसेना, तामीरे मिल्लत सरीखी साम्प्रदायिक संस्थाओं के महीनों पहले से चल रहे विषैले प्रचार ने हिन्दू-मुसलमान, दोनों के मन जहरीले बना डाले थे, और उसी में से निकला ७ मई का दंगा।

शांति-सैनिकों द्वारा सांत्वना और सेवा-कार्य

'भिवंडी की घटना शर्मनाक थी, उसने तो हमारी इज्जत पर धब्बा लगाया।' ऐसा भिवंडी के कई सज्जनों ने भिवंडी के घर-घर जाकर नागरिकों को सांत्वना देनेवाले शांति-सैनिकों से कहा। ८ मई को कुछ शांति-सैनिकों की एक टुकड़ी ने नगर में घूमकर परिस्थिति देखी, और ९ मई से शांति-सेना ने व्यवस्थित रूप से नगर में काम करना शुरू किया। औसतन २५ शांति-सैनिकों ने ता० ९ से १९ मई तक भिवंडी शहर तथा अगल-बगल के देहातों में शांति-कार्य किया। इन शांति-सैनिकों में काफी बहनें भी थीं, जो निडर होकर मुस्लिम हो या हिन्दू, किसी भी घर में जाकर बहनों से तथा भाइयों से मिलती थीं। सरकार की ओर से शांति-सैनिकों को कभी भी, और कहीं भी जाने की पूरी छूट थी। हमारा कैम्प था एक मुस्लिम भाई के घर पर। घरवालों ने जो स्नेह और आदर हम लोगों को दिया, वह कभी नहीं भूला जा सकता। भाई हाफिज युसूफ, भाई अकबर फकी, भाई धालीरकरजी, बाबा नागरात आदि लोग इतना वैर हिन्दू-मुसलमानों में फैलाये जाने पर भी आशा के दीप हैं। इनसे मिलकर मन में विश्वास होता था कि अभी भी इन्सानियत जिन्दा है। इन लोगों के लिए क्या हिन्दू और क्या मुसलमान, सब एक समान!

बदले की भावना मन से हटाना, शांति की चाह निर्माण करना, अफवाहों का खंडन करना, कोई कठिनाई हो तो दूर करने का प्रयास करना, और सही स्थिति का दर्शन कराना, ये काम घर-घर जाकर विशेष रूप से हम करते थे। वातावरण अच्छा बनाने के लिए सार्वजनिक स्थान पर, घर की दिवालों पर, सड़कों पर :

'जनता जागो, गुण्डे भागो'

'हिन्दू हो या मुसलमान,
सबसे पहले हैं, इन्सान'

'मजहब नहीं सिखाता,
आपस में बैर रखना'

'वैर से वैर नहीं मिटता'

आदि घोषणाएँ हिन्दी, उर्दू, तेलगु, मराठी भाषाओं में हमने लिखीं। उसका काफी अच्छा असर जनमानस पर हुआ। दंगे के कारणों की छानबीन में हम लोग नहीं पड़े। ऐसे समय मानसिक पुनर्वास

सबसे महत्वपूर्ण होता है। क्योंकि उसके बिना कायमी शांति स्थापित हो नहीं सकती।

वह दृश्य फिर कब दिखायी देगा ?

"जले घर दुबारा बना लिये जायेंगे, निर्वासितों को बसाया जायेगा, लेकिन जले दिल, टूटे दिल, फटे मन कैसे जोड़े जायेंगे? एक थाली में भोजन करनेवाले भिवंडी के हम हिन्दू मुस्लिम आज दुश्मन बन गये हैं। स्नेह से गले मिलनेवाले हिन्दू मुसलमान कब भिवंडी में फिर से देखने को मिलेंगे?" भाई हाफिज बड़े दुख के साथ बोल रहे थे।

भिवंडी के दंगे का तात्कालिक कारण कुछ भी हो, लेकिन मूल कारण है साम्प्रदायिकता, जात्यंधता और राजनीतिज्ञों की सत्तापिपासा। सरकार सावधान रहती, तो शायद ७ मई का दंगा रुक जाता। लेकिन मन में जो जहर था, वह तो कभी-न-कभी मौका देखकर फूटे बिना नहीं ही रहता। इतना भीषण दंगा होने पर भी दोनों सम्प्रदायों के नौजवान शांत नहीं हुए हैं। बदले की भावना से वे उत्तेजित हैं, वैर की आग में वे झुलस रहे हैं, इस प्रकार फिर से दंगा करवाने की योजना बनाने में वे व्यस्त हैं।

भिवंडी के इस दंगे में करीब एक हजार झोपड़ियाँ जलायी गयीं और तीन सौ के करीब बड़े मकान और कारखाने जलाये गये। करीब १००० करघे जले होंगे और १००-१२५ लोग मरे होंगे। दोनों सम्प्रदायों के गरीबों को ही ज्यादा भुगतना पड़ा है। गरीब ने दोनों ओर से थप्पड़ खायी है, लेकिन मध्यम और धनवान वर्ग भी इस सामूहिक आघात से बच नहीं सका है। लाखों रुपयों की संपत्ति नष्ट हुई है।

अंधेरे में उजाला

लेकिन इतने तूफान के बीच में भी जगह जगह दोनों सम्प्रदायों में ऐसे लोग मिले, जिन्होंने अपनी खुद की जान खतरे में डालकर भी दूसरे सम्प्रदाय के लोगों को बचाया। भिवंडी में आज भी अनेक शिविर ऐसे हैं जिनमें दोनों सम्प्रदायों के लोग रहते हैं, अनेक मुहल्ले ऐसे हैं जिनमें हिन्दू-मुसलमान दोनों सुरक्षित हैं। "जिन्दगी-भर एक ही मुहल्ले में साथ रहे, अब तुम हमें छोड़कर डर के मारे भाग जाओगे? यह कैसे सम्भव है? साथ रहे तो संकट आने पर उसका मुकाबला भी साथ करेंगे और प्रसंग आने पर साथ ही मरेंगे। मुस्लिमों ने तुम पर हमला किया तो पहले हम मरेंगे, बाद में तुम। लेकिन यहाँ से भागो नहीं।" इस्लामपुरे के हिन्दू परिवारों को वहाँ के मुसलमान नेता समझा रहे थे। और खुशी की बात है कि इस्लामपुरवाले दोनों सम्प्रदायों के लोग सुरक्षित रहे। ऐसे और भी मुहल्ले हैं।

लक्ष्मीनिवास, मापकनगर और विठ्ठलनगर भिवंडी के छोटे-छोटे मुहल्ले हैं। ता० ७ मई को दंगा शुरू होते ही तीनों मुहल्लों के हिन्दू, मुसलमान, जैन, सब लोगों ने बैठकर सोचा कि हम अपने मुहल्लों में यह साम्प्रदायिकता की आग नहीं लगने देंगे। पुलिस का संरक्षण कब और कितना मिलेगा मालूम नहीं, भरोसा नहीं। अतः अपने यहाँ के नौजवानों का संरक्षण-दल बनाकर उन पर बारी-बारी से टोलियाँ बनाकर पहरा देने की, और हमला हुआ तो प्रतिकार करने की जिम्मेदारी सौंपी गयी। हर रोज शाम को एकसाथ बैठकर कठिनाइयों की चर्चा ये लोग करते, और रास्ता निकालते रहे। अभी भी यह क्रम चल रहा है। अभी तक इस मुहल्ले में कोई दुर्घटना नहीं हुई। जान माल-मन, सब सुरक्षित हैं। इस तरह हर मुहल्ले के लोगों ने किया होता, तो शायद भिवंडी के इतिहास पर कलंक का धब्बा नहीं लगा होता।

करीब बारह हजार लोग भिन्न-भिन्न शिविरों में रहते हैं, क्योंकि उनके घर जला दिये गये हैं।

भिवंडी में शान्ति-सैनिकों ने जो काम किया, उसके कारण शान्ति-सेना के बारे में लोगों के मन में प्रेम, सहानुभूति, आदर निर्माण हुआ, और तटस्थ होने के कारण ये लोग ऐसे मौके पर बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं, यह विश्वास उनके मन में जगा।●

क्या भारत कायदे आजम का अनुगामी बनना चाहता है?

• सुरेशराम

आज देश में साम्प्रदायिक समस्या उग्र रूप ले रही है। दोनों विशाल सम्प्रदायों के बीच अविश्वास लगातार बढ़ रहा है। यह सही है कि दोनों के बीच इस खाई को बढ़ाने के लिए आर्थिक और सामाजिक ताकतें काम कर रही हैं। लेकिन राजनीति भी कम दोषी नहीं है। चुनाव के लिए जिस ढंग से उम्मीदवार चुने जाते हैं और जिस ढंग से वे अपना प्रचार करते-कराते हैं, उससे साम्प्रदायिकता का जहर तेजी से फैल रहा है। कांग्रेस ही वह पार्टी है जिसने केरल में वोट पाने की खातिर सबसे पहले मुस्लिम लीग से समझौता किया था। उसके बाद दूसरी पार्टियाँ भी मौके-महल के मुताबिक साम्प्रदायिक तत्वों के साथ गठ-बन्धन करने लगीं। हिन्दू राष्ट्रीयता की कल्पना जोर पकड़ रही है और सारे देश में धार्मिक ध्रुवीकरण हो रहा है। कैसे आश्चर्य की बात है कि सनातनी हिन्दू पाकिस्तान के जन्मदाता के द्वि-राष्ट्रवाद के सिद्धान्त का अनुगामी बनता जा रहा है। कायदे आजम जिन्नाह की रूह आधुनिक भारत पर छायी हुयी है, और उसके बहके हुए जवानों के दिमाग पर हावी है। मुसलमानों को समानता के अधिकार देने से हम जितना संकोच करते हैं उतना ही उनका मानस पाकिस्तान की तरफ आकर्षित होता है, और जितना ही उनका मानस पाकिस्तान की तरफ आकर्षित होता है उतना ही उनके प्रति हमारा संकोच बढ़ता है। नतीजा यह है कि दोनों एक-दूसरे से दूर होते जा रहे हैं, कायदे-आजम की बातों को न्याय-संगत ठहरा रहे हैं, और धर्म निरपेक्ष राज्य के हमारे दावों को झूठा साबित कर रहे हैं।

साम्प्रदायिकता से टक्कर लेने की जरूरत

मौजूदा राष्ट्रीय परिस्थिति हमको आवाहन कर रही है कि साम्प्रदायिकता से टक्कर ली जाये और हम प्राण-पण से उसका विरोध कर उसे खत्म कर दें। क्या हिन्दू और क्या मुसलमान, दोनों को ईमानदारी के साथ अपना हृदय-मंथन करना होगा और गहराई में उतर कर अपने को जाँचना होगा। हिन्दू को समझ लेना चाहिए कि अपने मुसलमान भाई के साथ उसे मिलकर प्यार और शान्ति के साथ रहना है। क्योंकि, अन्य तीन विकल्प संभव ही नहीं हैं, (१) उसका सफाया कर देना, (२) उसको हिन्दू बना लेना, (३) उसे पाकिस्तान भेज देना। सात-आठ करोड़ की आबादी को नेस्त-नाबूद कर देना एकदम नामुमकिन है। उनको हिन्दू बना लेने की बात भी उतनी ही असम्भव है। उनको वहाँ भेज देने का सवाल उठता ही नहीं क्योंकि इसका मतलब होगा कि उनके निवास और आजीविका के लिए अपनी भूमि में से ही टुकड़ा अलग निकालकर उनको सौंप देना।

दूसरी ओर, मुसलमान को समझना चाहिए कि उसे बड़े भाई का विश्वास और सहानुभूति प्राप्त करना होगा। उन दिनों की याद करना या सपने देखना बेकार है जब उसकी अपनी हुकूमत थी और सरकारी निजाम को वह अपने मन-माने मकसद के लिए जा-बेजा इस्तेमाल कर सकता था। अपने धार्मिक क्षेत्र को उसे मक्का-मदीने तक सीमित न रखकर भारतीय अध्यात्म तक बढ़ाना चाहिए, अपने पृथक् कानून का उसका आग्रह उसकी संकीर्णता और अभिन्नता का द्योतक है। हिन्दी भाषा और लिपि से उसका परहेज भी उसके लिए हानिकारक सिद्ध होगा। हम ऐसे उत्साही और मेधावी मुसलिम तरुणों को जानते हैं जिनका दृष्टिकोण व्यापक है, जो भारतीय परम्परा और संस्कारों का आदर करते हैं, जो भेदभाव-मूलक सारे कानूनों के खिलाफ हैं, और हिन्दी के प्रति जिनका प्रेम किसी दूसरे से कम नहीं है। लेकिन आज उनकी कोई ज्यादा कद्र नहीं है और कट्टर-पंथी तथा प्रतिगामी तत्वों के शोर गुल में उनकी आवाज सुनायी नहीं देती। मगर उन्हें अपना असर पैदा करना होगा और आगे आकर अपने सहयोग और समर्थन का हाथ अपने हिन्दू साथी—जिसे परम्परागत रीति-रिवाजों और पाखण्ड से उसी तरह मोर्चा लेना है—के हाथ में मिलाना होगा।

धर्म क्या है ?

हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच बहुत-से शक-शुबहे और गलत-फहमियाँ तो अंग्रेजी राज्य की विरासत है। पुरानी पीढ़ियाँ—जो गुलामी में पैदा हुई और परवरिश पायीं—अपने संकुचित और स्वार्थी घरौंदे में बन्द पड़ी हैं और आजाद भारत की नयी पीढ़ी की प्रगति और विकास में बाधा डाल रही हैं। बड़ी उमरवालों में से अधिकांश को धर्म का मतलब कुछ रीति-रिवाजों और दिखावों से है जिनका आधुनिक परमाणु-युग में और जनतांत्रिक समाज में कोई अर्थ नहीं रह गया है। लेकिन वास्तव में धर्म कुछ और ही चीज है। इस विषय पर विश्व-विख्यात साहित्यकार और मनीषी, रोम्याँ रोलाँ ने अपनी राय पेश की है

"विचार का शीर्षक नहीं, बल्कि उसके अन्दर का गुण ही वह चीज है जो उसके स्रोत का सूचक है, और हमें यह तय करने में मदद देता है कि वह धर्म से सम्बन्धित है या नहीं। अगर वह निर्भयतापूर्वक सत्य की खोज में, पूरे दिलजान से, एकाग्र निष्ठा के साथ मुड़ जाता है और हर तरह के बलिदान के लिए तैयार है, तो मैं उसे धार्मिक विचार कहना पसन्द करूँगा। क्योंकि उसका मतलब यह है कि वह एक ऐसे लक्ष्य में श्रद्धा रखता है जो व्यक्ति के जीवन से ज्यादा ऊँचे मानवीय प्रयत्न की माँग करता है, कभी-कभी तो वर्तमान समाज के जीवन से भी ज्यादा ऊँचे की ओर, कभी तो सारे मानव-समुदाय के जीवन से भी ज्यादा ऊँचे की। स्वयं शंकाशीलता भी—जब वह ऐसी बलवान प्रकृतियों की ओर से आती है जिनके रोम-रोम में सच्चाई भरी है, जब वह कमजोरी की न होकर ताकत की निशानी है—ऐसी शंकाशीलता धार्मिक आत्मा की महान सेना की यात्रा में शामिल हो जाती है।"

हमें आगे बढ़कर "धर्म के व्यवसाय" में सौदा करने की बजाय नये अध्याय का श्रीगणेश करना चाहिए और जिस तथ्य को रोम्याँ रोलाँ ने "धार्मिक चेतनशीलता" कहा है, उसमें हमें खुद अपनी तरफ से प्रयोग कर अनुभव लेना चाहिए। तभी भारत के साम्प्रदायिक दंगे बन्द होंगे।

युग की चुनौती

आधुनिक नवयुवकों के लिए इस युग की यह चुनौती है कि

(१) क्या उन्होंने अपने अन्दर से सम्प्रदाय या जाति के भेद-भाव निकाल दिये हैं ?

(२) क्या साम्प्रदायिक सौहार्द और राष्ट्रीय एकता के लिए नेकचलनी की मिसाल पेश कर रहे हैं ?

(३) क्या "धार्मिक आत्मा की महान सेना" में शामिल होने के लिए उत्सुक हैं, और सारी सृष्टि से प्रेम का रिश्ता बनाये रखना चाहते हैं ?

यह साफ सवाल है जो साफ जवाब चाहते हैं। किन्हीं बहानों या दाँव पेचों से काम नहीं चलेगा। हमको अपने प्रति सच्चा और वफादार होना होगा और उसके बाद ही हम समाज और राष्ट्र के प्रति ईमानदार साबित हो सकेंगे। हम चाहे किसी भी धर्म, सम्प्रदाय, जाति या पंथ के क्यों न हों, हम सबको मिलकर एक वर्ण रहित और वर्ग रहित भारत का निर्माण करना चाहिए, जो तमाम घृणा और अविश्वास के ऊपर हो, जो हर तरह के शोषण और दमन के परे हो, और जो सारी हिंसा और संघर्ष से मुक्त हो।•

तरुण शान्ति-सेना

दसवाँ अखिल भारतीय शिविर :
तरुणों की विधायक शक्ति का साक्षात्कार

• अभय बंग

पिछले साल के शिविरों के कुछ निराशाजनक अनुभवों के बाद अहमदाबाद-शिविर की जो सफलता रही, वह आश्चर्यजनक थी।

समाज के पापों का प्रक्षालन

इस शिविर का श्रमदान एक अलग ही अनुभव था। यह श्रमदान नहीं था, समाज के पापों का प्रायश्चित था, जो हम तरुण कर रहे थे। गांधी-जन्म-शताब्दी अहमदाबाद ने मनायी थी दंगे करके! इस क्रूर कर्म से जो मुस्लिम बेघर हुए थे, लूटे गये थे, उनकी एक बस्ती जालमपुर में हम लोगों ने सहायता का काम किया। उन लोगों के लिए नहाने और पानी के ड्रेनेज की पक्की व्यवस्था का काम था। काम का महत्व, तरीका, तकनीकी ज्ञान श्री ईश्वरभाई पटेल ने एक सुन्दर भाषण और प्रात्यक्षिक द्वारा शुरू में ही समझाया था। हर रोज ढाई घंटा श्रमदान रहता था।

व्यवस्थापक जहाँ २५ घरों की व्यवस्था का काम उठाने की बात सोच रहे थे, वहाँ ७६ घरों का काम पूरा करके तरुणों ने उन्हें चकित कर दिया। इस काम के पीछे एक पश्चाताप की, पाप-प्रक्षालन करने की भावना थी, जो हमें जी-जान से काम करने की प्रेरणा दे रही थी। हाथ में छाले पड़ गये, छाले फूटकर खून बहने लगा, फिर भी कुदाल रुकती नहीं थी। कैसे रुके ये हाथ, जब इतनी आँसूभरी दुःखी आँखें हमारी बाट देख रही थीं।

स्थानिक सहकार्य बहुत कम मिला। शुरू में हमको निराशा भी होती थी कि हम जिनके लिए काम कर रहे हैं वे इस तरह उदासीन क्यों हैं हमारे काम के प्रति? लेकिन जब हम उनमें घुलने-मिलने लगे तो उपेक्षा के पर्दे अलग हो गये। उनकी मानसिक स्थिति हमारी समझ में आयी। शुरू में वे लोग हमें किसी पार्टी के लोग समझते थे, जो कि दो दिन काम करेंगे और फिर वोट माँगेंगे। कुछ लोग हमें सरकारी नौकर समझते थे, जो पैसे के लिए काम कर रहे हैं। लेकिन फिर हमारे काम का तरीका, सातत्य, उत्साह और उनसे सम्पर्क देखकर वे लोग दिलचस्पी लेने लगे। दंगों के समय के अनुभव सुनाते थे। उनमें निराशा इस कदर भरी हुई थी, और वे इस तरह टूट चुके थे, कि फिर से खड़े होने की आकांक्षा तक मन में नहीं बची थी। 'क्या करोगे इतना काम करके बेटा तुम? दंगे तो फिर से होने ही वाले हैं। हमें कोई जिंदा तो रहने नहीं देगा। क्या फायदा फिर यह मेहनत करके?' भिवंडी में दंगे होने की खबर जब आयी तो वे पूरी तरह पस्त हो गये। असाम्प्रदायिक भारत में यह स्थिति देखकर दिल हिल उठता था।

याद आयेगी तुम्हारी

लेकिन हमारा विश्वास था कि "तलवार मारती जिन्हें, बाँसुरी नयी जिन्दगी देती, लोहे के पेड़ हरे होंगे, तू गीत प्रेम के गाता चल।" और धीरे-धीरे सेवा अपना रंग जमाने लगी। हठीले बच्चे अपनी माँ के हाथ चाय पीने से इन्कार कर देते थे और हमारे हाथों चुटकी में चाय पी लेते थे। हमें कोई चोट लगने पर बहनें दौड़ती आतीं और दवाई लाकर लगातीं।

शिविर के आखिरी दिन जब हम उनसे विदाई माँगने गये तो बहनें रो पड़ीं। कहाँ-कहाँ से आये हुए अपरिचित तरुण हम! और १५ दिन के बाद जब लौटते थे तो क्यों उन आँखों में आँसू? न कोई रिश्ता, न कोई पूर्व-परिचय! बस, हम इन्सान थे और उन टूटे दिलों को सहारा देने के लिए १५ दिन पसीना बहाया था। और उसका मूल्य वे उन कृतज्ञता के अश्रुओं से चुका रही थीं। "कहाँ के अनजाने लड़के तुम, और आज तुम जाते हो तो मेरी आँखों में आँसू क्यों?" 'यह घर हमेशा अपना समझना बेटा और जब भी जरूरत पड़े, बेखटके चले आना?" "हमेशा याद आयेगी तुम्हारी, तुम्हारा काम देखकर खुदा भला करे तुम्हारा बेटा!" 'खुदा हाफिज, खुदा हाफिज'! इस शिविर का श्रमदान ही इतना जिन्दा और दिल को छूनेवाला रहा कि शिविर का सबसे आकर्षक समय वही लगता था, जो श्रमदान में बीता।

शिविर का स्वरूप

अहमदाबाद का यह शिविर जो १ से १५ मई तक हुआ, तरुण शान्ति-सेना का दसवाँ अखिल भारतीय शिविर था। पुराने अनुभवी तथा सक्रिय तरुणों को ही प्रवेश दिया गया था। इसलिए शिविरार्थियों का स्तर ऊँचा था, और इसलिए इस शिविर से बहुत अपेक्षाएँ भी थीं। शिविर का स्थान सरसपुर कालेज था। जान बूझकर यह स्थान चुना गया था, क्योंकि यह मुस्लिम दंगा-पीड़ित क्षेत्र में था।

शिविर में कुल ७० तरुण थे। तरुण नहीं, धधकते आग के शोले थे। प्रदेशानुसार संख्या—गुजरात २३, महाराष्ट्र १८, तमिलनाडु ६, मध्यप्रदेश ४, आंध्र ४, बिहार ., उड़ीसा ३, बंगाल २, उत्तरप्रदेश २, राजस्थान २, मैसूर १ और दिल्ली १।

शिविर का उद्घाटन गुजरात के राज्यपाल श्रीमन्नारायण के हाथों हुआ। दकियानूस मूल्य और 'एस्टाब्लिशमेंट' (प्रतिष्ठान) के विरुद्ध ऐसी हवा इस शिविर में थी कि उद्घाटन एक 'राज्यपाल' के हाथों क्यों? किसी तरुण के हाथों क्यों नहीं, यह आवाज उठायी गयी। आभार-प्रदर्शन की औपचारिक प्रथा को भी उखाड़कर फेंक दिया गया। शिविर का

टाइमटेबल, अभ्यासक्रम, विषय, सब कुछ शिविरार्थियों ने ही पहले दिन खुद तय किये।

शिविरार्थी स्वेच्छानुसार ८ टोलियों में बंटे थे। टोलियों के नाम भी प्रतीकात्मक थे—समता, प्राण, मैत्री, तरुण, अरुण, युवक, किशोर, अभय।

सुबह ४-३० को वैतालिक टोली के मधुर गायन-वादन से शिविर जागता था। जगाने के इस सुन्दर तरीके के कारण रोल-पोस्ट पर प्रायः सब दिन १०० प्रतिशत और दो दिन ९९ प्रतिशत उपस्थिति रही। अभी तक के शिविरों में यह एक नया ही अनुभव था।

प्रार्थना में दो मिनट मौन और फिर भजन होता था। शुक्रवार को कुरान-पाठ हुआ।

प्रार्थना के बाद ढाई घंटा श्रमदान होता था।

जहाँ हर पिछले शिविर में खेलों के बारे में असन्तोष रहता था वहाँ इस बार ४२ तरह के सामूहिक खेल, जो बिना किसी सामग्री के खेले जा सकते हैं, सिखाये गये। ये खेल इतने सुन्दर होते थे कि खेल छोड़कर खाने के लिए जाने की हमारी इच्छा नहीं होती थी। ६ बजे इन्द्र सिंह भाई की सीटी सुनते ही आजूबाजू की झोपड़ियों में से सैकड़ों बच्चे दौड़ते आते थे हमारे खेल देखने के लिए।

रात का शिविर-मूल्यांकन आत्म-परीक्षण के आइने का काम करता था। गलतियों की कबूली, नये सुझाव, कल्पनाएँ, इनके फव्वारे उड़ते थे। संगीत की बड़ी मंडली इस बार शिविर में थी। नृत्य जाननेवाले भी थे। इसलिए रात का सांस्कृतिक कार्यक्रम बड़ा शानदार रहता था।

गोवा-मुक्ति आन्दोलन के सेनानी डा० तेलो मस्कारन्हेस की मुक्ति के लिए एक स्मरणपत्र तैयार करके सब शिविरार्थियों के हस्ताक्षरसहित जनरल सेक्रेटरी, यू० एन० ओ०, प्रधानमंत्री, भारत, और अध्यक्ष, पोर्तुगाल को भेजा गया।

शिविर का एक दोष यह रहा कि भाषा की भिन्नता के कारण तमिलनाडु के तरुण कुछ अलग ही रहे। वैसे ही इतना जिन्दा कार्यक्रम और चर्चा होने पर भी कुछ शिविरार्थी तटस्थ या उदासीन ही रहे। अपनी ओर से अभिक्रम लेनेवाले 'कुछ ही सक्रिय' हों, ऐसा लगा।

बौद्धिक चर्चाएँ

इस शिविर में जान-बूझकर भाषण कम और चर्चाएँ ज्यादा रखी गयी थीं। तीन विषय मुख्य रूप से थे—१ विश्व युवा आन्दोलन, २ शिक्षा-पद्धति, ३ तरुण शान्तिसेना : अनुभव, समस्या, संगठन और कार्यक्रम पर विचार।

विश्व युवा आन्दोलन पर श्री नारायणभाई देसाई के छः सुन्दर भाषण हुए। पूरे संसार में आज तरुणों की जो नयी पीढ़ी, नयी संस्कृति, नयी शक्ति निर्माण हुई है, और वह जो क्रान्ति की माँगें, और काम कर रही है, उसका ऐसा प्रेरणादायी दर्शन उन्होंने करवाया कि उत्साह से हमारी भी नाड़ें फड़कने लगीं।

वैसे पूरे शिविर में कुल मिलाकर १८ विषयों पर २३ भाषण हुए। इन्हींमें श्री उमाशंकर जोशी का शिक्षण पर, श्री बार्नबी मार्टिन का अहिंसक प्रतिरक्षा पर अप्रतिम भाषण हुआ। पूज्य रविशंकर महाराज और बबलभाई मेहता भी पधारे थे। महाराज के शब्दों के पीछे झलकती सेवा की शक्ति और पवित्रता ने सबको प्रभावित किया। 'खादी' पर वाद-विवाद, अन्याय का विरोध, सेक्स, इन पर चर्चा हुई। विद्यार्थी हिंसा का आश्रय क्यों लेते हैं, इस पर 'पैनल'-चर्चा हुई। अहिंसात्मक सत्याग्रह का एक प्रात्यक्षिक के रूप में 'रोल प्ले' हुआ।

आज की शिक्षा प्रणाली, ये क्लर्कों के कारखाने, इससे सबको असन्तोष है। इस पर चर्चा हुई और कैसी शिक्षा प्रणाली हो, इसका एक पूर्ण चित्र प्रस्तुत किया गया। इस शिक्षा का विरोध किस तरह किया जाय? इस विचार में से एक अभिनव कल्पना निकली—जुलूस की।

शिक्षण में परिवर्तन की माँग : विधायक क्रान्ति की आवाज

भारत में पहली बार, विद्यार्थियों को "आज की शिक्षा-पद्धति बदलो और उसे जीवनोन्मुख बनाओ", इस तरह की क्रान्तिकारी विधायक माँग करते हुए देखने का सौभाग्य अहमदाबाद को प्राप्त हुआ। इस माँग को जनता के सामने रखने के लिए एक जुलूस निकाला गया। जुलूस की कल्पना, नियोजन, व्यवस्था, प्रचार, हर चीज पूरी तरह शिविरार्थियों ने ही की। संचालकों पर कोई अवलम्बन नहीं रखा गया। अहमदाबाद में पिछले २४ सालों में ऐसी गर्मी पड़ी नहीं थी, जैसी इस साल थी। १३ मई को, उस कड़ी धूप में, शाम को ४॥ से ६॥ बजे तक दो घंटे अहमदाबाद की सबसे घनी बस्ती में ५ मील का पैदल कूच किया गया। ७० शिविरार्थी, संचालक और कुछ स्थानिक नागरिक तरुण शान्ति-सेना के गणवेश में उसमें शामिल हुए थे। जुलूस की अभिनवता यह थी कि पूरा जुलूस, जिसे मौन-कूच नाम दिया गया था, पूरी तरह मौन, बिलकुल मौन रहा। न कोई नारेबाजी, न कोई गाने। यहाँ तक कि आपस में भी एक शब्द बातचीत नहीं। दो घंटे के बीच कहीं भी रुकना या पानी तक पीना नहीं। इस कड़ी परीक्षा में कोई धूप-प्यास से बेहोश होकर गिर जाय तो भी बिना रुके, बिना किसी शब्द के कूच चलता रहेगा, यह तय किया गया था। दांडी यात्रा के पावित्र्य का अनुभव हमें हो रहा था। हर व्यक्ति को अपनी जिम्मेवारी का भान होने से मौन कहीं भी नहीं टूटा। 'जय जगत्' के नारे से कूच शुरू हुआ और ५ मील की यात्रा और दो घंटों के मौन के बाद 'जय जगत्' से ही समाप्ति हुई। मौन ने ऐसा अन्तर्मुख किया था कि समाप्ति के बाद भी बोलने की इच्छा ही नहीं हो रही थी। हमारी श्रम-निष्ठा और शिक्षा में प्रत्यक्ष काम की माँग को

व्यक्त करने के लिए हमारे कधो पर कुदाली, फावड़े, झाड़ू, ये औजार थे, जिनसे हम हर रोज श्रमदान करते थे। इन औजारों ने, और मौन ने जनता को चकित कर दिया, और इस तरह आकर्षित किया कि लोग काम छोड़कर जुलूस देखने भागते थे। अपनी माँगें व्यक्त करने के लिए ३० फलक, जिन पर हमारी माँगें लिखी थीं, हम हाथो मे लिये थे।

जनता को इन माँगो ने झकझोर दिया। आज की शिक्षा के दोष, शिक्षा कैसी हो, और तरुण शान्ति-सेना क्या है, इसकी जानकारी देनेवाले ५००० पर्चे जुलूस के आगे-पीछे बाँटे गये।

यह मौन-कूच सचमुच बडा प्रभाव-शाली और प्रेरणादायी रहा। शिविर के कुछ भाई किसी मतभेद के कारण जुलूस मे शामिल नही होनेवाले थे, परन्तु उनसे भी जुलूस का प्रभाव, उत्साह देखकर रहा नही गया और वे भागते आकर जुलूस मे शामिल हो गये। जुलूस का उद्देश्य और तरीका, दोनो ही क्रान्तिकारी थे। इस तरह का जुलूस हर शहर, गाँव मे तरुण शान्ति-सैनिक निकालें, ऐसा तय हुआ।

अनुशासन नहीं, स्वानुशासन

स्वानुशासन अभी तक एक अव्यावहारिक चीज लगती थी। लेकिन इस शिविर ने इस भ्रम को उखाड दिया। जबर्दस्ती किसी भी चीज की नहीं थी, सिवाय अपनी विवेक-बुद्धि के। फिर भी अनुशासन, समय की पाबदी पक्की रही। बीच मे कुछ ढिलाई आने लगी थी, उसे रोकने के लिए कुछ शिविरार्थियों ने सत्याग्रह का अनूठा तरीका अपनाया। अपने साथियों के दिल मे हलचल पैदा करने के लिए और अनुशासन की बढती हुई ढिलाई के प्रति अपना विरोध व्यक्त करने के लिए वे एक दिन बौद्धिक के सभी वर्गों मे ४ घटे सभा के सामने मौन खड़े रहे। उसी तरह दिन भर सबको समय की पाबदी की याद आये, इसलिए दो शिवि-रार्थी दिन भर कमीज उल्टी पहने हुए रहे, ताकि उन्हे देखते ही समय की याद सबको

अहमदाबाद-सम्मेलन में निर्धारित तरुण शान्ति-सेना के कार्यक्रम

बम्बई-सम्मेलन मे हमने तरुणशांति-सेना की नीति तय की थी। उसके केन्द्रों के कार्यक्रमों मे १ श्रम, २. स्वाध्याय, ३. सेवा-ये तीनो पहलू रहें, यह सोचा गया था। लेकिन प्रत्यक्ष कार्यक्रम कुछ भी नही दिया गया था। इसलिए इस बार के शिविर मे इस विषय पर खास विचार किया गया। केन्द्रो के अपने-अपने अनुभव, समस्याएँ सुनायी गयीं। सबने मिलकर तरुणशाति सेना के लिए सीधा प्रत्यक्ष कार्यक्रम तय किया केन्द्रो पर करने के लिए। हम सब विधायक वामपथी हैं (कान्ट्रक्टिव लेफ्टिस्ट), हम निम्न कार्यक्रम करेंगे

१ चूंकि हम विद्यार्थी हैं और शिक्षण-क्षेत्र से सम्बन्धित हैं, शिक्षा मे क्रांति हो, इसलिए अपनी-अपनी जगह पर अहमदाबाद के तरीके से जुलूस निकालना। (जुलूस के लिए जो फलक और पर्चे तैयार किये थे वे भी प्रकाशित किये जा रहे हैं, ताकि हर-एक के काम आ सके।)

२ तरुणो का मानस जानकर उसमे से कार्यक्रम का सूचन मिले, इसलिए तरुणो का सर्वेक्षण किया जाय। उसके लिए प्रश्नावली भी तैयार की गयी जो तरुण शाति-सेवको को अपने मित्रों से भरवाने के लिए भेजी जायेगी।

३ अपना सपर्क और क्षेत्र हमे बढ़ाना है। इसलिए नये सदस्य बनाये जायें और अपनी-अपनी जगह केन्द्र शुरू किये जायें। अधिकाधिक तरुणो को इसमे लाना चाहिए। जुलूस और सर्वे के कारण हमारा सम्पर्क बढ़ेगा और यह चीज सभव होगी।'

४ अपना दायरा सिर्फ विद्यार्थियों तक ही सीमित न रखकर शिक्षित बेकार, शिक्षित तरुण, जो नौकरी करते हैं, और देहातों के अशिक्षित तरुण, इन लोगो तक भी हम बढ़ाना चाहिए।

५ गोवा-मुक्ति आदोलन के सेनानी डा० तेलो मस्कारन्हस अभी भी पोर्तुगीज-

हो। इन तरीको का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

१२ तारीख को शिविरार्थी-दिन था। यानी सुबह से रात तक सब सचालकों को उनकी जिम्मेवारियों मे से पूरी तरह मुक्त कर दिया गया और शिविरार्थियो ने ही जिम्मेवारियाँ बाँटकर पूरा संचालन किया। यह प्रयोग इतना योजनाबद्ध और सफल हुआ कि सचालकों ने फिर १५ तारीख तक का पूरा सचालन शिविरार्थियों पर ही सौंप दिया और उन्होंने उसे उत्कृष्ट तरीके से निभाया। यह एक सामूहिक शक्ति का और समूह-नेतृत्व का साक्षात्कार था। इस चीज का इससे अच्छा प्रात्यक्षिक उदाहरण मैंने अभी तक कहीं भी नही देखा था। नया नेतृत्व इससे सामने आया, सामूहिक शक्ति का भान हुआ।

फिर मिलेंगे

यह सब शिविर का ऊपर से दिखने-वाला स्वरूप हुआ। लेकिन शिविर-जीवन एक ऐसी शब्दों की अभिव्यक्ति के परे की चीज है, जो ऐसी जादू करती है कि सबको लगने लगता है कि यह शिविर खतम ही न हो। प्रेम और मैत्री का एक अव्यक्त धागा सबको जाने-अनजाने एक-साथ बाँध देता है। और जब शिविर की समाप्ति का दिन आता है तो एक-दूसरे के पते लेकर पत्रों से स्नेह बढ़ाने के वादे करके, आँखों के आँसू छिपाकर हर कोई लौटता है, इस आशा के साथ कि फिर कभी मिलेंगे—किये हुए काम और अनुभव के साथ। तब तक के लिए दिल मे कहते हुए कि—

> अब जो बिछड़े हैं
> शायद कभी ख्वाबो मे मिलें,
> जैसे कि सूखे हुए फूल
> पुरानी किताबो मे मिले।

और यह सम्बन्ध, काम फैलता रहता है अखिल भारतीय स्तर पर—पानी मे ककड डालने पर लहरों के वर्तुल विशाल विशालतर होते जाते हैं—वैसे।●

सरकार की कैद में हैं। उनकी मुक्ति के लिए एक स्मरण-पत्र: १ जनरल सेक्रेटरी, यूनो, २. प्रधानमंत्री, भारत, ३. अध्यक्ष, पोर्तुगाल—तीनों को भेजा जाय, जिस पर ज्यादा-से ज्यादा लोगों के हस्ताक्षर—चार प्रतियों पर—लेकर उन्हें वाराणसी केन्द्र के पास भेजें, ताकि एकसाथ सब भेज जा सकें। शिविर की ओर से इस तरह का एक स्मरण-पत्र सब शिविरार्थियों के हस्ताक्षर के साथ भेजा गया है।

६. तरुणों में बढ़ती विध्वंसक प्रवृत्ति, नक्सलवाद, इनको हमें जवाब देना है तरुण शांति-सेना द्वारा। हमें आपस में जोड़ने के लिए और ज्यादा-से-ज्यादा प्रचार के लिए हम तरुणों की ही माँग पर 'तरुण' मासिक शुरू किया गया है। पता-अ०भा० शांति सेना मण्डल, राजघाट, वाराणसी–१ वार्षिक चंदा ५ रुपये।

७. आकर्षक कार्यक्रम के तौर पर सिनेमा के अश्लील पोस्टर्स जलाना, अश्लील चित्रपट जहाँ चल रहे हों, वहाँ पर चित्रपट-गृहों के सामने विरोधी प्रदर्शन करना।

८. तरुण शांति सेना को अब अधिक समय तक पुरानी पीढ़ी के आधार पर न रखा जाय। तरुण ही अब उसकी जिम्मेवारी सँभालें। इसलिए 'अपनी शिक्षा के बाद एक साल दो!' ऐसी माँग की गयी। इस माँग पर, (१) श्री ... ने २ अक्तूबर '७० से एक साल और (२) ... ने '७१ का साल देने की घोषणा ... की लहर के साथ की। अन्य तरुण भी इसी तरह एक वर्ष दें।

९ श्रम निष्ठा और सेवा के लिए श्रमदान, एक दिवसीय शिविर किये जायँ।

१०. केंद्रों पर सतत स्वाध्याय, चर्चा की जाय। केन्द्रों पर कम-से-कम हफ्ते में एक बार तो सब लोग मिलें ही। आकर्षण के लिए खेल, संगीत, वाद-विवाद इत्यादि व्यक्तिगत विकास को अवसर देनेवाले कार्यक्रम रखे जायँ। भाषण, चर्चा, अध्ययन किया जाय।

तरुण शांति-सेना अब नये आयाम, नयी अवस्था में कदम रख रही है। नया उत्साह, नयी प्रेरणा और प्रत्यक्ष कार्यक्रम अब हमारे हाथों में है। अब अमल करने की जिम्मेवारी हमारी है। उठ जाओ सभी तरुण! और शांति की इस लहर में सहभागी होने का भाग्य प्राप्त करो। सारे क्षेत्र अब हमारे लिए खुले हैं। नया संसार हमारा संसार, हम गढ़ेंगे। नया जमाना लायेंगे: गफलत को छोड़ दीजिए, कुछ काम कीजिए, इन्सों हुनर से नाम का ... कीजिए, गर कुछ नहीं तो हजरते गालिब का कोल है, मुर्दों के साथ कब्र में आराम कीजिए!●

प्रचलित शिक्षण-विरोधी मौन शांति-कूच

("शिक्षा में क्रांति" की माँग करने के लिए भारत में पहली बार तरुणों ने आवाज उठायी। १३ मई को अहमदाबाद में एक मौन कूच तरुणों ने आयोजित किया। अपनी विधायक माँगों को जनता के सामने रखने के लिए खुद तरुणों द्वारा तैयार किया हुआ यह पत्रक तथा सूचना-फलक पाठकों के लिए दे रहे हैं।—सं०)

पत्रक

आज का शिक्षण क्यों नहीं?

क्योंकि:

१. शिक्षण का सम्बन्ध जीवन और समाज की आवश्यकताओं के साथ नहीं है।

२ विद्यार्थियों को नौकरीपरस्त बनाता है।

३ बेकारी बढ़ाता है।

४. विद्यार्थी श्रम-विमुख बनता है।

५ विद्यार्थी परावलंबी बनता है।

६. शिक्षण सिर्फ परीक्षा-केन्द्रित है।

७ शिक्षण सद्गुण विकास के बदले दुर्गुण और भ्रष्टाचार बढ़ाता है।

तरुण क्या चाहते हैं?

यह कि

१ शिक्षण का सम्बन्ध जीवन के साथ हो।

२ समाज की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षण का नियोजन हो।

३ सिर्फ दिमागी शिक्षा न रखकर हाथ पैर का उपयोग करना सीखाये, ऐसा शिक्षण हो।

४ विद्यार्थी को स्वावलम्बी बनाये, ऐसा शिक्षण हो।

५ खुद अपने काम-धन्धे की व्यवस्था कर सके, ऐसा शिक्षण हो।

६ शिक्षण में नैतिक शिक्षा भी दी जाय।

७. शिक्षण का संचालन सरकार-मुक्त हो।

प्रचलित शिक्षा के विरोध के लिए, शिक्षण में नये मूल्य प्रस्थापित करने के लिए और तरुणों को विधायक क्रांतिकारी कार्यक्रम देने के लिए तरुण शांति-सेना में दाखिल होइये। तरुण शांति-सेना आवाहन करती है उन तरुणों को, जिन्हें: (१) लोकतंत्र, (२) सर्व धर्म-समभाव, (३) राष्ट्रीय ऐक्य, (४) विश्वशांति, (५) सामाजिक समता और आर्थिक न्याय में विश्वास है।

सूचना-फलक

Revolution in Education.
New generation, New Education.
We want productive Education Now!
Evaluation should be continuous,
Education—for the life,
through the life,
throughout the life.
Present education is out of date.
New age, new Education
आज का अभ्यासक्रम पानी में डालो।
बदलो आज की शिक्षा, नहीं तो
माँगनी पड़ेगी भिक्षा।
शिक्षण और जीवन के बीच दीवार क्यों?
क्लर्कों के कारखाने बन्द करो!
स्वावलम्बी शिक्षण चाहिए!
शिक्षण में भ्रष्टाचार,
नहीं करेंगे, नहीं सहेंगे।
विद्यालय = विद्या + लय है,
विद्या + आलय हो।
परीक्षा-पद्धति बदलो!
अहिंसक क्रान्ति के लिए, तरुण शान्तिसेना!●

भूदान-यज्ञ ८-६-'७० लाइसेंस नं० ए २४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३१४

२८ महिलाओं, ५ कार्यकर्ताओं सहित ५८ ग्रामदानी किसान गिरफ्तार

८ मई को शुरू हुए अंकलेश्वर में भूमि-सत्याग्रह का दूसरा चरण

सरकार के अन्याय के खिलाफ ग्रामीणों का भूमि-मुक्ति अभियान जारी

बड़ौदा से प्राप्त तार-सूचना के अनुसार गत ८ मई को शुरू हुए बड़ौदा-भड़ोच फेनाई क्षेत्र के भूमिमुक्ति-सत्याग्रह में ५८ ग्रामदानी किसान गिरफ्तार किये गये। गिरफ्तार लोगों में २८ महिलाएँ और ५ फेनाई के सर्वोदय-कार्यकर्ता भी हैं।

स्मरणीय है कि इस सत्याग्रह का प्रारम्भ ८ मई को सरकार द्वारा गलत भूमि-व्यवस्था किये जाने और परिणामस्वरूप उक्त ४४ एकड़ भूमि के सहारे गुजारा कर रहे २०० लोगों के बेसहारा हो जाने के कारण हुआ था, और उस समय २५ व्यक्ति (१८ ग्रामदानी किसान और ७ कार्यकर्ता) गिरफ्तार हुए थे। उसी समय १५ दिनों बाद सत्याग्रह के दूसरे चरण की घोषणा कर दी गयी थी। योजनानुसार १५ जून को तीसरे चरण में ५०० व्यक्ति सत्याग्रह में भाग लेंगे। (इस सम्बन्ध में पूरी जानकारी २५ मई '७० के अंक में पृष्ठ ५३५ पर छप चुकी है।)

ग्रामस्वराज्य-कोष

घर-घर से संग्रह

वर्धा जिलावालों ने ७५ हजार रुपये का अपना लक्ष्यांक सितम्बर से पहले अगस्त अन्त तक ही पूरा करने का निश्चय किया है। ता० २४ मई को गोपुरी में हुई वर्धा जिला सर्वोदय-मण्डल की बैठक में यह निर्णय लिया गया। श्री ठाकुरदास बंग संग्रह के काम को गति देने के लिए एक सप्ताह जिले का दौरा कर रहे हैं।

इस सभा में ही करीब ५ हजार रुपये के दान की घोषणा हुई।

महाराष्ट्र के दूसरे जिले, भंडारा में २३ मई से घर-घर जाकर संग्रह का अभियान शुरू किया गया। सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने सुझाया है कि जून और जुलाई के महीनों में देश के विभिन्न हिस्सों में इस प्रकार के संग्रह-अभियान चलाने चाहिए।

राजस्थान में सीकर जिले की समिति ने जिले के तमाम निवासियों से अपील की है कि वे अपनी उपज में से मन पीछे एक सेर, और नकद आमदनी में से ढाई प्रतिशत कोष में दें। समिति ने वेतन पानेवाले लोगों से दस दिन का वेतन कोष में देने की अपील की है। जिले के हर निवासी से प्रति दिन एक पैसे या एक मुट्ठी अनाज के हिसाब से इस वर्ष के रु० ३.६५ या ५ किलो अनाज कोष में देने की प्रार्थना की गयी है।

सीकर जिले का लक्ष्यांक ५१ हजार रुपये का है। सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की आगामी बैठक इसी जिले में जुलाई के प्रथम में हो रही है। उस समय तक जिलादान और कोष का काम पूरा करने की योजना बनी है।

मध्यप्रदेश ने लक्ष्यांक बढ़ाया

मध्यप्रदेश में संग्रह का काम उत्साहपूर्वक शुरू हो गया है। साढ़े सात लाख रुपये के लक्ष्यांक को बढ़ाकर अब दस लाख कर दिया गया है। राज्य गांधी-निधि के कार्यकर्ताओं ने अपना एक दिन का वेतन कोष में देने का तय किया है। मुख्य मंत्री श्री श्यामाचरण शुक्ल ने राज्य-स्तरीय कमेटी का अध्यक्ष बनना स्वीकार कर लिया है। श्री चंदन सिंह भरकतिया कार्यकारी अध्यक्ष, श्री नरेन्द्र दुबे मंत्री और श्री विमल कुमार मित्तल कोषाध्यक्ष हैं।

श्री मनमोहन चौधरी यूरोप-प्रवास में

सर्व सेवा संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष तथा खादी और ग्रामोद्योग कमीशन के सदस्य श्री मनमोहन चौधरी लगभग दो महीने के लिए यूरोप की यात्रा पर ता० २३ मई को कलकत्ता से रवाना हो गये। पश्चिम बर्लिन के निमंत्रण पर एक टेलीविजन विचार-गोष्ठी में भाग लेना इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य है। इस यात्रा के दरम्यान आस्ट्रिया, जर्मनी, स्वीडन, नार्वे, डेनमार्क, इंग्लैंड, बेलजियम, इटली, फ्रांस, स्विट्ज़रलैंड, हालैण्ड आदि यूरोपीय देशों में जाने का उनका कार्यक्रम बन चुका है। उपरोक्त विभिन्न देशों में भारत में चल रहे ग्रामदान-आंदोलन की अद्यतन जानकारी श्री चौधरी द्वारा दी जायगी। यात्रा के अंतिम दौर में रूस भी जाने की संभावना है। श्री चौधरी यूरोप के अधिकांश देशों की यात्रा करके जुलाई के अंतिम सप्ताह में भारत लौटेंगे।

भूल-सुधार

कृपया 'भूदान-यज्ञ' अंक ३४ दिनांक २५ मई '७०: पृष्ठ ५३२: कालम-२, पैरा-२ की प्रथम पंक्ति में 'सेट सेट' की जगह 'सेट-सेट' (अर्थात् सेट में सेट करने वाला सेट—(वर्ग), एवं

अंक वही, पृष्ठ ५३३, कालम-२, आखिरी पैरा की आखिरी पंक्ति-'उपालम्भ सही होगा।' के बाद 'लेकिन मान लीजिए निजी कर्मों के कारण मैं नहीं खिलता, तो कोई और खिलता। और कोई भी नहीं खिलता, तो भी जो वस्तुगत तथ्य है, वह तो नहीं मिटता?'-पढ़ें। भूल के लिए क्षमा करें।—सम्पादक

वार्षिक शुल्क: १० रु० (सफेद कागज: १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में १९ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

JUN

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ३७

सोमवार १५ जून, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४२८३

सबको ज्ञान और सबको काम

गांधीजी ने, कृष्ण ने, पतंजलि ने सिखाया कि ज्ञान और कर्म इकट्ठा होना चाहिए, ज्ञान और कर्म के दो टुकड़े नहीं होने चाहिए। अगर कुछ लोगों के पास ज्ञान और कुछ लोगों के पास कर्म, ऐसा हुआ तो राहु, केतुवाला समाज बनेगा। राहु यानी सिर ही सिर—और केतु यानी रुण्ड ही रुण्ड—नीचे का हिस्सा—उसका मुण्ड नहीं। ऐसा राहु-केतु समाज बना तो बड़ा मुश्किल हो जायेगा। देश में पहले से ही जाति-भेद है, प्रान्त-भेद है, भाषा-भेद है, ये नये पक्ष-भेद और दाखिल हो गये हैं। अब अगर यह भी हो जाय कि कुछ तो काम ही करें और कुछ ज्ञान ही हासिल करें ज्ञानवाले को काम नहीं, कामवाले को ज्ञान नहीं तो स्थिति बड़ी भयानक होगी। काम करने की शक्ति किसान के हाथ में, ज्ञान की शक्ति शहरवाले के हाथ में, ऐसा नहीं होना चाहिए। अगर उत्पादन भी बढ़ाना है तो पराक्रम का काम भी करना है, तब ज्ञान और कर्म इकट्ठा होना चाहिए। यह गांधीजी के कहने का तात्पर्य था।

आश्चर्य की बात है कि गांधीजी की बात का स्वीकार भारत में अभी तक हुआ नहीं। लेकिन इसका पूरा स्वीकार चीन ने कर लिया। उन लोगों ने सारे देश के तमाम लोगों को एक ही स्कूल में रखा। उस स्कूल का नाम दिया 'हाफ-हाफ स्कूल।' यानी उसमें तीन घण्टे काम करना पड़ता है और तीन घण्टे सीखना पड़ता है। वहाँ तो कम्युनिज्म है। जो तय करते हैं उस पर फौरन अमल करते हैं। यह कम्युनिज्म का बहुत बड़ा गुण है। हम लोग हमेशा डाँवाडोल रहते हैं, सोचते रहते हैं, चिन्तन करते रहते हैं, कानून बनते रहते हैं, जैसे कोई नाटक कम्पनी आती है और खेल दिखाती है। लेकिन चीन में सब-के-सब एक ही स्कूल में पढ़ते हैं। कन्धे-से-कन्धा लगाकर काम करते हैं। बराबरी के नाते से बर्ताव करते हैं। ऊँच और नीच का भेद खत्म है। कर्म और ज्ञान, दोनों सबको मिलता है। सबको एक ज्ञान और सबको एक काम।

यहाँ पर भी हमको इस बात का आयोजन करना होगा। हमारे सब बच्चों को काम और ज्ञान, दोनों समान रूप से मिलने चाहिए।

—विनोबा

पूसा रोड : ७-१२-'६५

"शहर में यह मेरी आखिरी सभा है"

"कल से मैं और प्रभावतीजी गाँव-गाँव घूमेंगे"

श्री जयप्रकाश नारायण की क्रान्तिकारी घोषणा

सत्याग्रह के दूसरे चरण को प्रारम्भ करने का बिगुल बज उठा

मुजफ्फरपुर (बिहार) में गत ८ जून को आयोजित एक विशाल जनसभा का विवरण देते हुए हमारे प्रतिनिधि ने बताया है कि श्री जयप्रकाश नारायण ने उस सभा को शहर की अपनी आखिरी सभा बताते हुए इस महान क्रान्तिकारी और ऐतिहासिक निर्णय की घोषणा की, कि कल से वे स्वयं और उनकी सहधर्मिणी श्रीमती प्रभावती-जी गाँव गाँव में ग्रामस्वराज्य का संदेश लेकर जायेंगे।

श्री जयप्रकाश नारायण के द्वारा व्यक्त भावों को उनके ही वाक्यों में उद्धृत करते हुए हमारे प्रतिनिधि ने बताया कि अत्यन्त गम्भीर और भावपूर्ण मुद्रा में श्री जयप्रकाश नारायण ने सभा में उपस्थित जनता को सम्बोधित करते हुए कहा, "कोई यह न समझे कि सत्याग्रह के तरकस के सारे तीर निकल चुके हैं, खत्म हो चुके हैं। सर्वोदय-आन्दोलन ने सत्याग्रह का 'लोक-शिक्षण' का प्रथम चरण बड़े पैमाने पर पूरा किया है। अब विचार की शक्ति प्रकट करने के लिए 'लोक-शिक्षण' और 'दबाव' के कार्यक्रम को और अधिक सघन और प्रभावकारी बनाने के लिए सत्याग्रह का दूसरा चरण शुरू होने जा रहा है। कल से मैं और प्रभावतीजी मुसहरी प्रखण्ड के गाँव-गाँव में घूमेंगे। आपके दरवाजे पर जायेंगे। आपको समझायेंगे। जरूरत हुई तो आपके यहाँ हम दोनों भूखे रहकर धरना देंगे, और आपसे यह कहेंगे कि अगर आप हमें खिलाना चाहते हैं तो अपने गाँव के भूखों को खिलाने की व्यवस्था करें। उन्हें अपनी भूमि का बीसवाँ भाग तो कम-से-कम दें।"

श्री जयप्रकाश नारायण ने मुजफ्फरपुर के दो प्रमुख कार्यकर्ताओं, सर्वश्री बद्री बाबू और गोपालजी मिश्र की हत्या करने की नक्सलवादियों की धमकी और स्वयं के उत्तराखण्ड के कार्यक्रम को रद्द कर मुजफ्फरपुर आने के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए कहा, "यह न समझा जाय कि हम धमकियों या हत्या से डरनेवाले हैं। हम तो घर घर घूमते रहते हैं। चाहे कोई कभी भी हमें मार सकता है। भारी संरक्षण-व्यवस्था के बावजूद जब गांधीजी और केनेडी तक को नहीं बचाया जा सका, तो हत्या करने पर उतारू आदमी से दूसरे का बचाव कहाँतक हो सकेगा? हमें अपनी हत्या की जरा भी चिन्ता नहीं है। हमें जब तक बचाना चाहेगा, भगवान बचायेगा; जब मारना चाहेगा, मारेगा।"

श्री जयप्रकाश नारायण ने यह भी स्पष्ट किया कि "यह नहीं समझना चाहिए कि नक्सलवादियों की धमकी के कारण ही यहाँ आये हैं। हम तो ग्रामस्वराज्य का काम कर ही रहे थे, उसको और अधिक गतिशील और प्रभावकारी बनाने की आवश्यकता महसूस हुई इसलिए आकर इस प्रकार काम में लग रहे हैं।"

अपने इस निर्णय के अनुसार श्री जयप्रकाश नारायण और श्रीमती प्रभावतीजी ने मुजफ्फरपुर के शायद सबसे अधिक समस्याग्रस्त प्रखण्ड मुसहरी में अपनी शान्तियात्रा शुरू कर दी है। बीघा-कट्ठा का वितरण, घरवास की जमीन का पट्टा दिलाना, ग्रामसभा गठित करना, बेदखल मजदूरों को पुनः भूमि पर दखल दिलाना आदि कार्यक्रम इस यात्रा में चलाये जायेंगे।

स्मरणीय है कि ५ और ७ जून को मुजफ्फरपुर के जिन दो कार्यकर्ताओं को हत्या की धमकी दी गयी थी, वे सकुशल हैं। ५ जून को मुसहरी में एक किसान की हत्या की गयी। लेकिन वे कार्यकर्ता नहीं थे।

श्री जयप्रकाश नारायण ने यह महान ऐतिहासिक और क्रान्तिकारी कदम उठाकर सर्वोदय-आन्दोलन में लगे साथियों को नये कदम उठाने और अपने प्राणों की बाजी लगाकर मोर्चे पर जुट जाने का बिगुल बजा दिया है। आशा है कि इस निर्णय से सर्वोदय आन्दोलन में विद्युत्-गति का संचार होगा।•

परिस्थिति उत्तरोत्तर गम्भीर होनेवाली है

बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के दो प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ताओं के नाम नक्सलवादियों ने धमकी का पत्र दिया है कि उनकी हत्या ५ और ७ जून को कर दी जायेगी। इस विषय पर बंग साहब ने बाबा से चर्चा की, तब बाबा ने पूछा, 'इससे कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ता है या नहीं?' बंग साहब ने बताया, 'मराठवाड़ा में ग्रामदानी कार्यकर्ताओं को ऐसी धमकी दी गयी थी। उनका साहित्य छीनकर जला दिया था। लेकिन उन कार्यकर्ताओं ने उसके बाद भी ग्रामदान कराये।' बाबा ने कहा, 'परिस्थिति उत्तरोत्तर गम्भीर होनेवाली है यह जाहिर है। आपको यह चुनौती है। मानो वे कहते हैं, आप काम कीजिए अथवा हमें करने दीजिए। बहुत उत्साहजनक परिस्थिति है। यदि किसी एक का भी इस तरह से बलिदान होगा तो लोग हड़बड़ाकर जग जायेंगे। उनको धक्का लगेगा कि सूर्योदय हुआ है, अब उठना चाहिए, ऐसा मानेंगे। लेकिन मुझे डर है कि ऐसा बलिदान होनेवाला नहीं है।' —कुसुम

बिगुल बज उठा

अतीत के इतिहास का अध्ययन कर कोई विद्वान आनेवाले इतिहास की दिशा का अनुमान तो कर सकता है, और उसका अनुमान बहुत हद तक सही भी साबित हो सकता है, लेकिन इति- हास के सहज-प्रवाह में आनेवाले आकस्मिक मोड़ के बारे में कोई क्या कह सकेगा? जब कि होता यह है, कि इतिहास के ये आकस्मिक मोड़ ही नये अध्याय का सृजन करते हैं।

बहुत दूर अतीत में न जायें, तो भी स्वराज्य आन्दोलन के जमाने में इतनी जल्दी अंग्रेजी साम्राज्यवाद से मुक्ति मिल जाने की कल्पना बहुत पहले से कौन कर पाया था? लेकिन एक झटके के साथ सन्दर्भ बदले और भारत कुछ-कुछ आश्चर्य-भाव के साथ अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त हुआ। स्वराज्य का सुनहला क्षितिज जब झलकने लगा था, उस समय हो सकता है कुछ नेताओं की निगाहों में बंटे हुए भारत का नकशा रहा हो, लेकिन सामान्य जनता कहाँ इसकी कल्पना करती थी? स्वराज्य मिलने के बाद वर्षों वर्षों तक भारत की बुनियादी समस्याओं में सुलझाव की जगह और भी उलझाव हो आयेगा, और पं० नेहरू के सम्मोहक नेतृत्व के बाद भी भारत समस्याओं के बोझ से दबा ही रहेगा, इसकी आशा किसे थी?

चीन भारत संघर्ष, नेहरू के बाद कौन का सवाल, भारत-पाक संघर्ष और समझौता, कांग्रेस के अजेय दीख रहे दुर्ग में भयकर दरार, गैर-कांग्रेसवाद के होवा का इतनी जल्दी 'फिस' हो जाना और टूटती बिखरती राजनीतिक अस्थिरता के बीच 'नक्सालवाद' के उदय और अत्यल्प अवधि में देश के राजनीतिक आकाश में उसके इस कदर छा जाने की कल्पना कौन विद्वान या सामान्य नागरिक करता था? २२-२३ वर्षों के जीवन काल में स्वतंत्र भारत के इतिहास में कितने ही ऐसे आकस्मिक मोड़ आए हैं, और परिस्थिति ने कल्पना से परे एक-न-एक नयी शकल अख्तियार की है।

इतिहास की इन्ही आकस्मिक घटनाओं के क्रम में १८ अप्रैल न् १९५१ को शुरू हुआ भूदान आन्दोलन आता है, और उसके ।वाह में आते हैं और भी अनेक महत्वपूर्ण मोड़। ग्रामदान के साथ ही भूमि के ग्राम-स्वामित्व की अभिनव कल्पना, समाज परि- वर्तन की समग्र इकाई के रूप में ग्रामस्वराज्य की स्पष्ट रूपरेखा, राज्यदान के उद्घोष के साथ ही देश के नेतृत्व परिवर्तन मानो दलमुक्त प्रत्यक्ष लोक-प्रतिनिधित्व द्वारा मौजूदा राजनीति को बदलनेवाली लोकनीति की परिकल्पना, आदि ऐसे कुछ महत्व के मोड़ हैं, जिनके बाद आन्दोलन के ऐसे आयाम प्रकट हुए हैं, जिनका पहले से अनुमान कर पाना कठिन ही नहीं, असम्भव-सा होता।

लेकिन जिस सन्दर्भ में भूदान आन्दोलन का जन्म हुआ, वह सन्दर्भ अभी तक बदला नहीं, यह स्पष्ट है। भूमि की समस्या हल हुई नहीं, और इसीलिए तेलगाना में शुरू हुआ भूमि का वर्ग-संघर्ष नक्सालवाद के नाम से अपने विकट रूप में प्रकट हो रहा है। तेलगाना के ही कोख से जन्मा भूदान आन्दोलन यद्यपि अपने सौम्य स्वरूप के साथ राज्यदान की मंजिल तक पहुँच गया है, लेकिन भूमि के नाम पर हो रहे संघर्ष की आग बुझ जाय, समस्या का हल निकल आवे, तब तो राज्यदान की सार्थकता सिद्ध हो?

जिस गति से यह आन्दोलन राज्यदान की मंजिल तक पहुँचा, उसके बाद उसकी वह गति नहीं रह गयी है ऐसा राजगिर सर्वोदय-सम्मेलन के बाद से महसूस किया जाता रहा है। ऐसा लगता रहा है कि एक थकान-सी आयी है, कदम शिथिल हो गये हैं। विनोबा की यह चेतावनी – 'आधी नदी तैर चुके यह ठीक है, लेकिन बहुत तैर लिया यह सोचकर अगर तैरना बन्द कर दोगे तो इतनी मेहनत के बाद मझधार में ही डूबोगे'—भी त्वरा नहीं पैदा कर पा रही है, यह महसूस किया जाता रहा है। पिछले चार-छ महीनों में निरन्तर बढ़ती शिथिलता कैसे रोकी जाय, यह चिन्ता की बात बनी रही है।

लेकिन इतिहास का प्रवाह कहीं रुकता नहीं। भूदान से शुरू हुआ ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन इतिहास का एक जबरदस्त प्रवाह है, भला फिर यह रुकता कैसे?

इसी ८ जून को एक झटका-सा लगा है, और ऐसा लग रहा है कि इतिहास का एक आकस्मिक मोड़ पुन आ गया है। फिर प्रवाह की गति पिछले सारे कीर्तिमानों को पीछे छोड़ने जा रही है। मुजफ्फरपुर की आम-सभा में श्री जयप्रकाश नारायण की यह घोषणा—'शहर की हमारी यह आखिरी सभा है। कल से मैं और प्रभावतीजी गाँव-गाँव घूमेंगे, लोगों के दरवाजे-दरवाजे जायेंगे, और सत्याग्रह का दूसरा व्यापक लोक-शिक्षण के बाद का अगला कदम उठायेंगे। आवश्यक हुआ तो भूखे रहकर हम दोनों आपके (भूमालिकों के) दरवाजे पर धरना भी देंगे, और कहेंगे कि खिलाना है तो पहले गाँव के भूखों को खिलाने की व्यवस्था कीजिए।'—वास्तव में 'करो या मरो' का शंखनाद है। अचानक सेनापति ने युद्ध मोर्चे पर जुटकर बिगुल बजाया है, हाँक लगायी है कि तन्द्रा में पड़े रहने का वक्त नहीं!

विनोबा ने न जाने कितनी बार दुहराया है कि 'सन् '७२ तक का ही मौका है। इस अवधि में कुछ कर लिया गया तो ठीक, नहीं तो इतिहास हमें कूड़े में डाल देगा।' इस चेतावनी को बार-बार दुहराते हुए विनोबा ने बिहार में तूफान के बाद अति- तूफान का उद्घोष किया था।

नक्सालवादी भी सन् १९७२ तक मिटा देने या मिट जाने के संकल्प के साथ मोर्चेबन्दी कर रहे हैं, ऐसा सुना जा रहा है। उनके इस संकल्प का जिक्र हम यहाँ इसलिए नहीं कर रहे हैं कि हमें उनसे भिड़ने की तैयारी करनी है, बल्कि सिर्फ इतिहास की→

सम्पादकजी,

तारीख २५ मई के 'भूदान यज्ञ' मे आपके और प्रबोधभाई के लेखों ने सोचने के लिए प्रेरित किया। गाधी-स्मारक-निधि, खादी-कमीशन, गाधी-शान्ति प्रतिष्ठान हैं तो सब जनता के लिए, फिर क्यों जनता के नही बन पाये ! 'प्रतिष्ठानो के हाथ मे पड़कर गाधी भी प्रतिष्ठान (इस्टेब्लिशमेंट) बन गया है। तन्त्र-मुक्ति, निधि-मुक्ति आदि के एक-से एक क्रान्तिकारी निर्णय हुए, लेकिन जनता ने ग्रामदान के राम को हमेशा अयोध्या के इर्द-गिर्द ही देखा, कभी वनवास मे नहीं देखा।'

कामिनीकाचन जिस प्रकार ऋषि-मुनियो की तपस्या भग करते थे, उसी प्रकार सस्थाओ की कामिनी, सुरक्षा या मोहताजी कार्यकर्ता की तेजस्विता को समाप्त करती है। बिहारदान मे लगे रहकर देखा, कि खादी-सस्थाओ ने ग्रामदान के काम को बढ़ाया भी, तो दूसरी ओर नुकसान भी कम नही पहुँचाया। जनता कैसे ग्रामदान को अपना समझे, जब वह देखती है कि यह वेतनभोगी कार्यकर्ताओ का आन्दोलन है ? 'हम क्यों करें', 'हमे क्या मिलता है', ऐसा जनता सोचती है। जब तक जनता प्रेरित होकर स्वय न करने लगे, तब तक रुकने का धैर्य हम रख नही पाते। हमे जिलादान जल्दी पूरा करने की फिक्र लगी होती है। फलस्वरूप ग्रामदान जनआन्दोलन नहीं बन पाता। यह निष्पत्ति अवश्य है, कि हम गाँव-गाँव के लोगो तक पहुँचे, व्यापक सपर्क हुआ। अब हमारी पत्रिकाएँ उस सम्पर्क को कायम रखें, और आगे का काम गाँववालों को समझायें करवायें। बिहार के सत्तर हजार गाँवो मे कार्यकर्ता स्वय तो जा नहीं सकते। परिव्राजक घूमते रहे। लेकिन ऐसे मुक्त साथी सारे भारत मे हमारे पास सौ से अधिक शायद नही हैं। धीरेन्द्रदा का आह्वान छपा है। लोगो के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती।

—जगदीश भवानी, कोसानी

× × ×

२५ मई '७० के 'भूदान-यज्ञ' मे प्रकाशित दो लेख 'खादी की बैसाखी' और 'शस्त्रीकरण का राहु' चेतावनी देनेवाले हैं। दोनों के लेखकों को इसके लिए धन्यवाद। —महेन्द्रकुमार, इंदौर

× × ×

२५ मई के 'भूदान-यज्ञ' मे प्रबोध के और आपके लेख विचार-प्रवर्तक हैं, लेकिन समाधानकारी सुझाव और उन पर अमल, यह सम्भव होगा, तो एक नया अध्याय सर्वोदय-जगत् मे शुरू होगा।

—दत्तोबा दास्ताने

× × ×

हरिवल्लभ परीख द्वारा प्रस्तुत अवतेश्वर में भूमि सत्याग्रह पढ़ा। वास्तव मे गरीब किसानो के ऊपर किये गये सरकार के अन्यायपूर्ण अत्याचार का विवरण पढ़कर अत्यन्त दुःख हुआ। भूदान-आन्दोलन का उसमे किया गया सहयोग वास्तव मे महत्वपूर्ण तो है ही, सामयिक भी है। ऐसे आन्दोलन मे हम सब आपके साथ हैं, तथा इस प्रकार के उत्पीड़न का सब जगह हर तरह से हमें विरोध करना है। आज ग्रामीण किसानों के ऊपर, अध्यापकों के ऊपर, तथा मजदूरों के ऊपर पूंजीपतियो तथा पूंजीपति मनोवृत्तिवाले लोगो के द्वारा किये जा रहे शारीरिक, मानसिक तथा आर्थिक उत्पीड़न से समाज का सम्पूर्ण अग परेशान-सा हो रहा है। ऐसे समय यदि हम सजग होकर इन बुराइयों का प्रतिकार नहीं कर सके तो यह हमारे लिए बड़ी ही लज्जास्पद बात होगी।

आपका ही एक नवयुवक भाई,
बलरामकुमार मणित्रिपाठी,
बलरामकुमार मणित्रिपाठी,
आनन्दनगर, गोरखपुर, उ० प्र०

→उस नाजुक घड़ी का आभास देने के लिए कर रहे हैं, जिसका संकेत विनोबा ने बार-बार किया है। भिड़ना तो है हमें उन समस्याओं से, जिन्होंने सघर्ष को जन्म दिया है, और आज उसकी भड़की हुई आग मे भारत जलने के करीब पहुँच रहा दीखता है।

हिंसक लड़ाई मे सेनापति पीछे रहता है, सैनिक आगे रहते हैं, अहिंसक लड़ाई में खुद सेनापति ही आगे रहता है।... बल्कि पुष्ट और सबल अहिंसक सेना मे हर सैनिक सेनापति की जिम्मेदारी भी सँभालने के काबिल होता है। आज हमारी वह स्थिति भले न हो, लेकिन जब सेनापति ने बिगुल बजा दिया है तो सेना को पीछे नही रहना है।

भारत को वियतनाम बनाने का ख्वाब देखनेवाले शायद यह नहीं जानते कि भारत मे मारनेवाला वीर तो होता है, लेकिन मरनेवाला परम वीर होता है। शायद स्वराज्य की अहिंसक लड़ाई के बाद इतिहास भारत के द्वारा दुनिया मे सामाजिक क्रान्ति की अहिंसक शक्ति का भी उदाहरण पेश करना चाहता है। इसलिए आज फिर दिगत पुकार रहा है 'सर पर बाँध कफन जो निकले..!'

पेरु में प्रलय

अमेरिकी महाद्वीप के एक छोटे-से देश पेरु मे ३१ मई को भयानक भूकम्प आया और नगर-के नगर बर्बाद हो गये। अब तक की सूचना के अनुसार मरनेवालों की सख्या ५० हजार से ऊपर पहुँच गयी है। मलबो के नीचे दबी लाशों को निकालना सम्भव नहीं हो पा रहा है, इसलिए सड़ती लाशोंवाले बर्बाद नगरो मे लाशों को जलाने के लिए उन खण्डहरो मे आग लगाने की नौबत आ पहुँची ! ।

आस्ट्रेलिया के एक वैज्ञानिक ने दावा किया है कि अणु-परमाणु आयुधो के महासागरीय और भूगर्भीय परीक्षणो के परिणामस्वरूप ही पेरु मे यह प्रलय की स्थिति आयी है। शक्ति-सतुलन के नाम पर, विकास और सरक्षण के नाम पर आयुधों की होड़ करनेवाले सत्ताधीश नरसहारकों से दुनिया की जनता पूछे कि उन्हें इस अपराध के लिए कौनसी सजा दी जाय ?...और भारत की जनता चेते कि क्या इस होड़ मे शामिल होकर सुरक्षा की मृगमरीचिका मे भटकना और ऐसे ही नरसहार मे भागीदार बनना है ?

—राही

गांधी : कोसलर का मत, कृपालानी का उत्तर-२

साम्राज्यवादी अंग्रेजों के प्रति कोसलर की विशेष हमदर्दी

[कोसलर के आरोपो का जवाब देते हुए इस लेखाश मे भारतीय स्वतन्त्रता-सग्राम और उसके पूर्व के अंग्रेजो के कारनामे के आधार पर आचार्य कृपालानी ने यह स्पष्ट किया है कि भारत पर शासन करनेवाले अंग्रेज आम इंग्लिस्तानियो से भिन्न होते थे, और उस सदर्भ मे गांधी की नीति भारत के लिए कितनी उपयुक्त थी।—स०]

अंग्रेजी नौकरशाही

हिन्दुस्तान मे अंग्रेजी सल्तनत की गलतियों के बारे मे कोसलर को थोडी हमदर्दी सी है। कोसलर का यह मानना है कि अंग्रेज आजादी-पसन्द लोग हैं, वे प्रजातन्त्र मे पले हैं, और ऐसे लोग हिन्दुस्तान पर शासन कर रहे थे। लेकिन असलियत यह नहीं है। हिन्दुस्तान पर असली शासन तो अंग्रेज नौकरशाही का था, क्योंकि मौके पर वही मौजूद रहती थी। ये नौकरशाही के लोग कुछ समय के लिए आकर फिर चले जाते थे। जब वे धन नहीं भी बटोरते, तो भी यह श्रेय तो लेते ही थे कि व्यक्तिगत खतरे उठाकर भी उन्होंने साम्राज्य की रक्षा मे सहायता की। हिन्दुस्तान मे बस जाने की उन्हे इजाजत नहीं थी। उन्हे ट्रेनिंग ही ऐसी मिली थी कि वे हिन्दुस्तानियों को नीचा और गया-गुजरा समझते थे। यहाँ के धर्म को वे अंध-विश्वास से अधिक मानते नहीं थे।

हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता, सस्कृति और विद्या उनके लिए बकवास मात्र थी। सारे पूर्वी साहित्य को आधुनिक योरोपीय साहित्य की एक आलमारी के बराबर भी नहीं माना जाता था। हिन्दू लोगों का विश्वास सती-प्रथा मे बताया जाता था, जिसे कि उदारमना अंग्रेजों ने बन्द किया। हिन्दू लोग अस्पृश्यता व जाति-प्रथा को माननेवाले बताये जाते थे। पर्दा-प्रथा की भर्त्सना की जाती थी। यह भी कहा जाता था कि पर्दा के कारण ही स्त्रियाँ समाज में पतनों और उसीमे मर जाती थीं। हिन्दुस्तानियो को काहिल, सुस्त और बदजात सो ... सजा दी जाती थी। इस देश की आबोहवा भी घृणा का विषय बन गयी थी। जब कभी बादल होते, कुहासा व सिलन छायी रहती, तो अंग्रेज साहबों को अपने देश की आबोहवा का थोड़ा मजा मिलता था। हिन्दुस्तानी खानपान और वेशभूषा, रीति रिवाज, व्यवहार आदि सभी अंग्रेजी चीजों के मुकाबले नीचे स्तर के माने जाते थे। अंग्रेज तो गर्मी मे भी गर्म कपड़े, कड़े कालर और ऊनी मोजे पहनते थे। हिन्दुस्तानी लोगो के अधिक सपर्क मे वे इसलिए नहीं आते थे कि उनका ऊँचा चरित्र कहीं गिर न जाय। कोई अंग्रेज किसी हिन्दुस्तानी स्त्री से विवाह नहीं कर सकता था। उसे हिन्दुस्तानी रहन सहन से ही नफरत थी। हिन्दुस्तानी तौर-तरीके बरतनेवालों से भी नफरत थी। जो हिन्दुस्तानी उनकी नकल करते, उनकी भी वह खिल्ली उड़ाते थे।

हिन्दुस्तानियो के विरुद्ध अंग्रेजों का कोई अपराध कभी अपराध माना ही नहीं जाता था। अगर वह कभी अधिक गड़बड़ी मचाता भी, तो उसे इंग्लिस्तान रवाना कर दिया जाता था। अंग्रेज अगर हिन्दुस्तानी की हत्या भी कर देता, तो वह सयोग की बात मान ली जाती थी। हिन्दुस्तानियों के जिगर व गुर्दे इतने कमजोर बताये जाते थे कि अंग्रेज की एक ही ठोकर से उनकी मौत हो जाती है। अच्छे-से-अच्छे हिन्दुस्तानी भी सन्देहास्पद चरित्रवाले, अंग्रेजों से नीचे माने जाते थे। अंग्रेजी साम्राज्यशाही ने पूरे देश के लोगों को इस बुरी तरह गिरा रखा था कि वे अपने देश में ही डरे, सहमे हुए बाशिन्दों की-सी जिन्दगी बिताने को मजबूर हो गये थे।

शैतानी शासन

अब जरा इस बात पर गौर किया जाय कि अंग्रेजों के इतने जबरदस्त हिमायती होते हुए भी गांधीजी उनके खिलाफ कैसे हो गये? दक्षिणी अफ्रीका से लौटने के बाद वर्षों तक गांधीजी अपने को साम्राज्य का एक स्वामी-भक्त नागरिक कहते रहे। गोया गुलामी मे भी जैसे कोई अपने को स्वतन्त्र नागरिक कह सकता हो। उन्होंने दक्षिणी अफ्रीकी सरकार की उस समय सहायता भी की जब कि वे भारतीय बाशिन्दो को वहाँ के नागरिक-अधिकार दिलाने के लिए उससे सघर्ष कर रहे थे। बोयर-युद्ध और जुलु विद्रोह के समय प्रशसनीय सेवाओ के उपलक्ष मे गांधीजी को दो तमगे भी मिले थे। प्रथम महायुद्ध मे लड़ने के लिए उन्होंने स्वेच्छा से हिन्दुस्तानियों की भरती भी प्रारम्भ की थी। फिर भी हिन्दुस्तान आने के कुछ ही वर्षों के अन्दर उनका अंग्रेजो पर से विश्वास कैसे डिग गया? उन्होंने खुद देखा, और अच्छी तरह देखा कि अंग्रेजी सरकार ने देश को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, हर तरह से बरबाद कर रखा है, और नैतिक तथा सास्कृतिक रूप से भी उसे पतित कर रखा है। गांधीजी अपनी मृदुभाषिता के लिए मशहूर थे। फिर भी उन्होंने अंग्रेजों के हिन्दुस्तानी शासन को 'शैतान का शासन' कहा।

भय का निराकरण

हम यह कह चुके हैं कि भारतीय राष्ट्र मे ही डर व्याप्त हो चुका था। अपने अहिंसक आन्दोलन से गांधीजी ने हिन्दुस्तानी दिलो से यह डर निकाल दिया। अहिंसक लड़ाई मे उन्हें कोई चीज छिपाने की जरूरत ही नहीं थी। अत वे डरते भी क्यों? वे जब भी राजद्रोही करार दिये जाते थे, खुशी-खुशी जेल के सीकचों के अन्दर चले जाते थे। सड़कों पर खेलते बच्चे भी निडर होकर अंग्रेजों के मुँह पर यह कहते थे कि 'उनका राज्य शैतान का राज्य है, जिसका विरोध करना और जिसे नष्ट करना उनका राष्ट्रीय धर्म है।'

प्रजातन्त्र : सोमवार १५ जून '५

लेखक का ध्यान मैं इस बात की ओर निःसंकोच आकर्षित कर सकता हूँ कि यदि गांधीजी ने इस देश के लिए और कुछ न करके सिर्फ यहाँ के लोगों के दिलों से डर निकाल देने का ही काम किया होता, तब भी वह किसी करिश्मे से कम न होता, और सिर्फ इसी चीज के लिए इस देश के वासी हमेशा के लिए उनके कृतज्ञ रहते। दुनिया भी इसके लिए उनकी तारीफ ही करती। यहाँ मैं यह कहना भी चाहूँगा कि यदि सशस्त्र क्रान्ति की गुंजाइश रही होती, तो भी हिंसा के जरिये लोगों में यह अभय-भावना ला ना सम्भव न होता। हिन्दुस्तानियों के सामने हिंसा का एक ही मार्ग खुला था और वह था छिटपुट हत्याएँ करने का, जिसमें यदि अंग्रेज मारे जाते थे तो हिन्दुस्तानियों की भी हत्या होती थी। कभी-कभी तो एकदम निर्दोष लोगों को भी जान से हाथ धोना पड़ता था।

आजादी की लड़ाई में सहायक अन्य बातें

अंग्रेजों के हिन्दुस्तान से चले जाने के सम्बन्ध में मैं सिर्फ इतना कहना चाहूँगा कि इतिहास में स्वतन्त्रता प्राप्ति की शायद ही कोई सशस्त्र क्रान्ति केवल युद्ध भूमि में सफलता प्राप्त करके अपने उद्देश्यों की प्राप्ति कर सकी हो। ऐसी हर क्रान्ति को अक्सर अपने राष्ट्र के अन्दर अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की सहायता मिल सकी है। अमरिका या इटली के लोगों को क्या अपने ही आजादी मिल सकी थी? इन्हें यदि फ्रान्सीसी लोगों की सहायता न मिलती तो आजादी मिलती जरूर, पर उतनी जल्दी नहीं, जितनी जल्दी मिल गयी। क्या अंग्रेजों और रूसियों को बगैर अमेरिकी सहायता के बिना ही हिटलर के खिलाफ सफलता मिल जाती? आजादी की लड़ाइयों को हमेशा विश्व-शक्तियों से मदद मिली है। हाँ, पहल हमेशा-हमेशा देश-वासियों को ही करनी पड़ी है। गांधीजी के आने के पहले हिन्दुस्तान की हालत का जिनको पता है, उनके लिए उनके आन्दोलन के महत्त्व को कम करके देखना बड़ा मुश्किल है।

दूसरे महायुद्ध के खात्मे के बाद इंग्लिस्तान जानता था कि हिन्दुस्तान में उसे एक बड़ी ही क्रान्तिकारी स्थिति का सामना करना पड़ेगा। थोड़े-से अंग्रेज ३३ करोड़ अहिंसक हिन्दुस्तानियों का मुकाबला नहीं कर सकते थे। और नेतृत्व भी किस प्रकार का था? गांधीजी ने 'भारत छोड़ो' आन्दोलन उस समय शुरू कर दिया, जब केवल इंग्लैंड ही नहीं, बल्कि जापान का मुकाबला करने के लिए करीब-करीब दुनिया भर की सेनाएं हिन्दुस्तान में मौजूद थीं। इस निहत्थे और १०० पौंड से अधिक वजन न रखनेवाले 'छोटे से भूरे आदमी गांधी' ने इतिहास में सबसे अधिक शक्तिशाली ऐसे साम्राज्य को चुनौती दे दी, जिस पर सूर्य कभी अस्त नहीं होता था। कांग्रेस वर्किंग कमेटी के जब कुछ खास सदस्यों ने इस आन्दोलन के प्रति अरुचि और अश्रद्धा दिखायी, तो गांधीजी ने उन्हें बताया था कि वे उनका दृष्टिकोण समझते हैं। कांग्रेस जैसी प्रतिष्ठित संस्था को वे ऐसी जोखिम में डालना नहीं चाहते हैं। ऐसी दशा में वे अकेले ही आगे बढ़ने को तैयार हैं। मेरा दावा है कि इतिहास में ऐसी निर्भीक, निडर और शौर्यपूर्ण नेतृत्व की मिसालें नहीं के बराबर हैं।

लेखक ने यह भी कहा है कि गांधी न होते तो आजादी और पहले आ जाती। गांधीजी का नेतृत्व १९२१ से १९४५ तक सिर्फ २४ वर्ष रहा। इनमें से अधिकांश वर्ष तो देश-निर्माण के कार्यों में ही निकल गये। और देशों में क्या स्वतन्त्रता-संग्राम इससे कम समय तक चला है?

अंग्रेजों की वापसी

यह मानना ही होगा कि अंग्रेज चतुर और व्यावहारिक लोग हैं, जो कि सैद्धांतिक बातों या आदर्शों के बोझ से लदे नहीं रहते, फ्रांसीसियों की तरह वे समय के संकेत को समझने से इन्कार नहीं करते। लड़ाई में हार जाने पर भी फ्रांसीसी अपने पराधीन लोगों की इच्छा के विरुद्ध साम्राज्य से चिपके रहे। लेकिन यह सोचना कि लड़ाई जीतकर भी अंग्रेज सिर्फ मनुष्यता के कारण हिन्दुस्तान से चले गये, साम्राज्य-शाही की खामियतों के बारे में गैरजान-कारी दिखाना होगा। लेखक ने अंग्रेजों में वे गुण देखने की कोशिश की है, जो शासक के रूप में उनमें नहीं थे। कम से-कम हिन्दुस्तान पर दो शताब्दियों के शासनकाल में तो उन्होंने ये गुण नहीं दिखाये। इस काल में तो हिन्दुस्तानियों ने सिर्फ यही जाना कि उनके और उनकी हर चीज के प्रति अंग्रेजों में घृणा है। अगर उनकी कोई तारीफ हो सकती है, तो यही कि वे चतुर और व्यावहारिक लोग हैं। अच्छे व्यापारी की तरह वे लोग लड़ाई में हुई अपनी हानि को कम करना चाहते थे। लड़ाई ने उनके युवा वर्ग का खात्मा कर दिया था, इसलिए अपनी वापसी स्वयं करने की बात तय करके उन्होंने ठीक ही किया। अगर आज के साम्राज्यशाही देश, चाहे वे प्रजातांत्रिक हों या पूंजीवादी, फासिस्ट हों या कम्यूनिस्ट, वैसे ही करें, जैसा अंग्रेजों ने किया, तो विश्व शान्ति कोई बहुत दूर की चीज नहीं रह जायगी। अपना पूर्व-साम्राज्य न रह जाने पर भी अंग्रेज आज भी अच्छा ही चला रहे हैं।

लेखक की यह भी राय है कि यदि हिन्दुस्तान ने गांधीजी का अनुसरण न किया होता तो उसे आजादी जल्दी मिल जाती। क्या निहत्था हिन्दुस्तान हिंसा के जरिये आजादी पा लेता? यह प्रश्न अपने ऐतिहासिक दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। यहाँ राय भिन्न होने की थोड़ी गुंजा-इश है, लेकिन हिन्दुस्तान में लेखक की राय से शायद ही कोई सहमत हो। आजादी के लिए कितने वर्ष संघर्ष में लगने चाहिए, यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है। हिंसा के रास्ते को अलग कर देने पर वैधानिक लड़ाई के अलावा हिन्दु-स्तान के सामने दूसरा रास्ता ही क्या था, जब कि ऐसी हालत थी कि भारतीय प्रतिनिधियों को वोट द्वारा अंग्रेजों को हटाने का कोई अधिकार नहीं था।

(क्रमशः)

आदि कई पहलू हैं जिनमें शिक्षण ही उपयोगी है। शिक्षण के इन तथा दूसरे क्षेत्रों में, जैसे शिक्षक-प्रशिक्षण, पाठ-पद्धति, विद्यार्थियों का चुनाव (विशेष रूप से ऊँची शिक्षा में), भवन-निर्माण, शिक्षा का खर्च, प्रशासन आदि में आज की अपेक्षा कहीं अधिक शोध की आवश्यकता है।

उन्नत या उन्नतिशील सभी देशों में शिक्षण संकट में है। नया तरुण प्रचलित शिक्षण को अस्वीकार कर रहा है। आर्थिक, सामाजिक, नैतिक या सांस्कृतिक विकास के लिए मात्र शिक्षण नहीं, बल्कि विशेष गुणों का शिक्षण चाहिए।

वे गुण क्या हैं? पाँच तरह की कमियाँ हैं जो शिक्षण द्वारा दूर की जानी चाहिए: (१) शिक्षण की माँग और पूर्ति में अन्तर, (२) आर्थिक व्यवस्था के लिए प्रशिक्षित लोगों की आवश्यकता और शिक्षण द्वारा उसकी पूर्ति, (३) समाज और विद्यार्थियों की आवश्यकताएँ, (४) शिक्षकों और प्रबन्धकों का सवाल और (५) साधन। इस वर्ष शिक्षण के सामने मुख्य रूप से १२ प्रश्न प्रस्तुत किये गये हैं, किन्तु उन सबमें सबसे अधिक महत्त्व 'जीवन-भर के शिक्षण' का है। समाज में कुछ ऐसे लोग हमेशा होते हैं जो जिन्दगी भर बौद्धिक और नैतिक विकास करते रहे हैं। लेकिन ऐसे लोग बहुत कम हैं। नयी बात यह है कि अब यह माना जाने लगा है कि जीवन-भर शिक्षण की सुविधा समाज के प्रत्येक व्यक्ति को मिलनी चाहिए। इस विचार के अनुसार शिक्षण ६ साल की आयु से शुरू होकर डिग्री मिलने तक ही नहीं है, बल्कि अन्तिम साँस तक है। शिक्षण समाज के जीवन का प्रवेश द्वार नहीं है; उसके मध्य में है। शिक्षण जीवन की तैयारी नहीं है, स्वयं जीवन का अंग है।

अगर यह बात सही हो तो शिक्षण की सारी कल्पना और योजना में बुनियादी अन्तर करने की जरूरत है। प्रचलित पद्धति का इस नये विचार से कहीं मेल नहीं है। शिक्षण को आमूल बदलना चाहिए।

नये शिक्षण में स्कूल का क्या रोल होगा, यह नये सिरे से सोचना चाहिए। स्कूल को अब वास्तविक शिक्षण का केन्द्र बनना पड़ेगा। कुछ विषयों में ज्ञान दे देना काफी नहीं है। विद्यार्थी में ऐसी योग्यता आनी चाहिए जिससे वह अपने को अच्छी तरह व्यक्त कर सके, और दूसरों से आदान-प्रदान कर सके। भाषा का ज्ञान, ध्यान केन्द्रित करने और पर्यवेक्षण का अभ्यास, ज्ञान के स्रोतों की जानकारी, दूसरों के साथ काम करने की क्षमता, आदि आवश्यक अभ्यास हैं। ये अभ्यास हो जायँ तो विद्यार्थी सतत सीखता, जानता रहेगा।

चार बातें मुख्य रूप से ध्यान देने योग्य हैं:

(१) शिक्षण, व्यापक शिक्षण, में वे सब क्रियाएँ शामिल हैं जिनसे मनुष्य को शैक्षणिक अनुभव हो सकता है।

(२) शिक्षण केवल यूनेस्को नहीं, पूरे संयुक्त राष्ट्रसंघ, और उसकी सब शाखाओं और एजेंसियों की जिम्मेदारी है।

(३) यह वर्ष मात्र प्रचार के लिए नहीं है, बल्कि अध्ययन और शोध, नये चिन्तन और नये कामों के लिए है।

(४) चिन्तन पूरे राष्ट्रीय शिक्षण का किया जाना चाहिए, थोड़े हिस्से का नहीं।●

संगम तट से

दक्षिणी अफ्रीका की गोराशाही में दरार

• सुरेशराम

राजनैतिक दृष्टि से शासन-व्यवस्था के दो प्रकार हैं—स्वाधीन और पराधीन। या तो देश आजाद है और वहाँ के निवासी मिलकर स्वयं अपना राजकाज चलाते हैं, या गुलाम है और हुकूमत की बागडोर किसी बाहरी सरकार के हाथ में होती है। लेकिन इन दो के अलावा एक तीसरा प्रकार भी है जिसका अकेला नमूना दक्षिणी अफ्रीका है। वहाँ आबादी दो हिस्सों में बँटी है—मूल निवासी, जो काले हैं और बाहर से आकर बसे हुए लोग, जो सफेद चमड़ीवाले हैं और गोरे कहलाते हैं। इनमें गोरे तो आजाद हैं जिनका अपना 'प्रजातंत्र' है, और कालों पर उनका मनमानी राज चलता है। हाल ही में दक्षिणी अफ्रीका से क्रिकेट की एक टीम इंग्लैण्ड आना चाहती थी, लेकिन इंग्लैण्ड-वालों ने उसको यह कहकर ठुकरा दिया कि उसमें सब गोरे हैं और वह सारे दक्षिणी अफ्रीका का प्रतिनिधित्व नहीं करती। गोरा-सरकार को मुँह की खानी पड़ी और चुप रह गयी।

इतिहास की झाँकी

दक्षिणी अफ्रीका ही वह देश है जहाँ इस शताब्दी के शुरू में अहिंसक सत्याग्रह के अमोघ अस्त्र का आविष्कार महात्मा गांधी ने किया। उन्नीसवीं सदी में वहाँ की खदानों में काम करने के लिए बड़ी तादाद में मजदूर भारत से बुलाये गये थे। लेकिन उनके साथ भेदभाव बरता जाने लगा और तरह-तरह के जुल्म उनके ऊपर किये जाने लगे, इसी अन्याय के खिलाफ वहाँ सत्याग्रह किया गया और गोरा-सरकार ने—जिसके मुखिया जान स्मट्स थे—कुछ सुविधाएँ देने का वचन दिया। बाद में जब गांधीजी भारत लौट आये तो वह मुकर गयी। विरोध थोड़ा-बहुत चलता रहा। साथ ही वहाँ के मूल निवासियों ने आजादी के लिए आन्दोलन करना शुरू किया। नोबुल पुरस्कार-विजेता, स्वर्गीय जॉन लूथूली नामक अफ्रीकी नेता के नेतृत्व में उन्होंने जोरदार प्रदर्शन किये। उनका कुछ आत्म विश्वास जगा, उनको कुछ उम्मीदें हुईं। लेकिन मिलनेवाले अधिकारों की तमन्ना से आपस में मन-मुटाव हुआ, संगठन ढीला पड़ा और गोराशाही ने मौका पाकर शार्पविले नामक स्थान पर जलियाँवाला बाग जैसा दमन-

चक्र चलाकर आन्दोलन को कुचल दिया। सैंकड़ों मारे गये, हजारों घायल हुए और अनेकों को जेल में ठूंस दिया गया। फिर एक के बाद एक कड़े कानून बनाये, ताकि स्वतन्त्रता का कोई नाम तक न ले सके। फिर भी नेलसन माण्डेला नामक बहादुर सेनानी वहां मौजूद हैं, जो कारागार में बन्द होने पर भी, स्वाधीनता का दीपक जलाये हुए हैं, और तरुणों का मार्गदर्शन करते रहते हैं।

स्थिति और जनसख्या

तीन ओर सागर से घिरा दक्षिणी अफ्रीका बड़ा सुन्दर और सम्पन्न देश है। पूर्व में हिन्द महासागर, पश्चिम में एटलान्टिक और दक्षिण में एण्टार्कटिक महासागर की लहरें इसके तटों से टकराती हैं। अधिकांश क्षेत्र पहाड़ी है और जलवायु बड़ा सुहावना तथा ठंडा है। गेहूं, जौ, चना, दालें, तिलहन और फल खूब होते हैं। इसके अलावा खनिज पदार्थों की भी बहुतायत है। और सोना तथा हीरा तो वहां की विशेष निधियां हैं, जिनके कारण दक्षिणी अफ्रीका मालामाल बन गया है।

सोना और हीरे की खान में काम करनेवाले गोरे मजदूर को जहां २,४०० रुपये हर महीने वेतन मिलता है, उतना ही और उसी जगह काम करनेवाले अफ्रीकन को केवल १४० रुपये दिया जाता है। काले मजदूरों की अलग से एक बस्ती बना दी जाती है और लगातार बारह, कभी पन्द्रह महीने तक रहकर उन्हें काम करना पड़ता है। फिर एक दो महीने की छुट्टी मिलती है घर जाने की, और अठारह साल का होने पर उनका लड़का भी बरबस भर्ती कर लिया जाता है। मालिक और नौकर कानून के अन्तर्गत ये मजदूर अपना कोई यूनियन नहीं बना सकते और न हड़ताल कर सकते हैं। इस तरह भयानक शोषण के आधार पर दक्षिणी अफ्रीका की अर्थनीति चल रही है।

वहां की आबादी लगभग दो करोड़ है, जिनमें दो-तिहाई से ज्यादा मूल अफ्रीकन निवासी हैं। गोरे लगभग बीस प्रतिशत है। ब्योरा इस प्रकार है:—

क्रम	कौन	कितने	प्रतिशत
१.	मूल अफ्रीकी	१,३३,४०,०००	६८
२.	गोरे	३८,२८,०००	१९
३.	मिश्रित	१९,५९,०००	१०
४.	एशियाई (भारतीय व पाकिस्तानी)	५,९१,०००	३

प्रशासन और ससद

दक्षिणी अफ्रीका में ब्रिटिश राज चलता था। सन् १९०९ में वहां की गोरा-सरकार को औपनिवेशिक स्वराज्य दे दिया गया और दक्षिणी अफ्रीका ब्रिटिश कामनवेल्थ का सदस्य हो गया। मई १९६१ में गोरा सरकार ने 'प्रजातन्त्र' की घोषणा की और रगभेद नीति के परिणामस्वरूप यह तय किया कि देश के राजनीतिक जीवन में गैर-गोरे कोई भाग नहीं ले सकते, और न 'ससद' आदि के लिए खड़े हो सकते हैं। इस भयानक गोराशाही नीति के विरुद्ध कामनवेल्थ के अन्य सदस्यों (जैसे तन्जानिया, भारत आदि) ने विरोध किया और कहा कि कामनवेल्थ में वे ही देश रह सकते हैं जहां अपने कुल निवासियों को बराबर के अधिकार हों। इस सिद्धान्त को न मानने के कारण दक्षिणी अफ्रीका को कामनवेल्थ से निकाल दिया गया और आज तो वह सयुक्त राष्ट्रसघ (यूनो) में भी शामिल नहीं है। भारत तथा कामनवेल्थ के बहुत-से देशों के पिछले पन्द्रह-बीस वर्ष से दक्षिणी अफ्रीका से व्यापारिक व राजनीतिक सम्बन्ध नहीं हैं।

दक्षिणी अफ्रीका की 'प्रजातन्त्र' की की पार्लियामेण्ट या 'ससद' में १६६ सीटें हैं। पिछले चुनाव (१९६५) में उनका बंटवारा इस प्रकार था:

राष्ट्रीय पार्टी	सयुक्त पार्टी	प्रगतिशील पार्टी
१२६	३९	१

राष्ट्रीय पार्टी के नेता श्री वोर्स्टर हैं, सयुक्त के हैं सर डिविलियर्स ग्राफ और प्रगतिशील के हैं डा० जान स्टाइटलर। राष्ट्रीय पार्टी एकदम गोरा राज्य चाहती है, लेकिन सयुक्त पार्टी गैर-गोरों को एक सीमा तक कुछ अधिकार देने के पक्ष में है। प्रगतिशील पार्टी जनसख्या के अनुसार सबको समान प्रतिनिधित्व चाहती है, लेकिन उसका अभी कोई खास असर नहीं है और श्रीमती सुजमान उसकी अकेली प्रतिनिधि उस 'ससद' में सिहनाद अवश्य करती हैं, मगर कोई नहीं सुनता।

कुछ अर्सा हुआ राष्ट्रीय पार्टी में थोड़ी फूट पड़ गयी। उसके दो हिस्से हो गये—वरलिगटेस (जागृत) और वरक्रेम्पटेस (रूढ़िवादी)। रूढ़िवादी वर्ग के नेता हैं डा० अलबर्ट हर्तजोग। वह तीन अन्य सदस्यों के साथ (श्री जाप मारेस, उप नेता, विली मारेस और लुई स्टोफबर्ग) अलग हो गये। उनकी शिकायत यह थी कि श्री वोर्स्टर पक्के गोरे नहीं हैं, क्योंकि पड़ोसी देश मलावी की काली अफ्रीकी सरकार से उन्होंने राजनैतिक सम्बन्ध रख छोड़े हैं, जिसके कारण दक्षिणी अफ्रीका के कालों को प्रोत्साहन मिलता है।

गोराशाही चरम सीमा पर

राष्ट्रीय पार्टी की स्थापना जनरल स्मट्स ने की थी। उनके बाद, अप्रैल १९४८ से इसका नेतृत्व डा० मालन ने किया। उनके बाद डा० फरवुर्ड नेता हुए। जहां तक अफ्रीकी (जिन्हें 'बान्टू' कहते हैं) निवासियों का सम्बन्ध है, प्रत्येक शासक अपने पिछलेवाले से ज्यादा प्रतिक्रियावादी साबित हुआ है। डा० फरवुर्ड के जमाने में न्यायमंत्री श्री वोर्स्टर थे। उन्होंने प्रशासन को ऐसा कठोर बनाया और विशेष पुलिस दल खड़ा किया, जिससे कि आजादी या बगावत का नाम भी कोई न ले सके। अब तो

वैया बान्टू, क्यों एशियाई, सब गैर-गोरों की बस्तियाँ ही एकदम अलग कर दी गयी हैं। गत ३ मई से तो शहरों के अन्दर होटलों, दुकानों, सरकारी दफ्तरों आदि में कहीं भी जो गैर-गोरे कर्मचारी थे, उनको भी अलग कर दिया है, जिससे गोराशाही चरम सीमा पर पहुँच गयी है। बान्टू प्रशासन के डिप्टी मिनिस्टर, डा० पीट कुर्न हाफ ने इस पर कहा था—"मुझे गर्व है कि इस नये नियम के परिणाम-स्वरूप मजदूर-क्षेत्र में गोराशाही पूरे जोर से कायम हो जाती है।"

संयुक्त पार्टी भी राष्ट्रीय पार्टी के चरण चिह्नों पर चल रही है। हाल ही में डरबन नगरी में एक सार्वजनिक सभा में उसके एक प्रमुख सदस्य, श्री वाउजेरा ने कहा कि अगर हमारी पार्टी की सरकार कायम हो जाये तो भी वह विश्व-जनमत को सन्तुष्ट करने के लिए गोरा-शाही की दक्षिणी अफ्रीका की परम्परागत पद्धति को नहीं छोड़ सकती।

इस साल के चुनाव

गत २२ अप्रैल को 'संसद' के लिए नये चुनाव हुए। इस बार मैदान में चार पार्टियाँ थीं—तीन तो पुरानी-राष्ट्रीय, संयुक्त और प्रगतिशील। इनके अलावा चौथी थी डा० हर्टजोग नव पार्टी। उसने ८१ उम्मीदवार खड़े किये। एक सीट को छोड़कर चुनाव-परिणाम इस प्रकार रहे :

राष्ट्रीय पार्टी	संयुक्त पार्टी	प्रगतिशील पार्टी
११७	४७	१

इससे स्पष्ट है कि डा० हर्टजोग को एक भी सीट नहीं मिली। उनके स्वयं के और उनके उपनेता (श्री जाप मारेस) के अलावा, बाकी सब ७९ उम्मीदवारों की जमानतें जब्त हो गयीं। राष्ट्रीय पार्टी नौ सीटें हार गयी, जिससे पता चलता है कि गोरे मतदाताओं पर युग का थोड़ा-बहुत असर पड़ रहा है। इसका एक प्रमाण यह भी है कि प्रगतिशील पार्टी ने अपनी पुरानी एक सीट तो प्राप्त कर ली, एक और नयी सीट भी कुछ ही वोटों से हारी है। और डा० हर्टजोग की जबरदस्त हार यह दिखाती है कि प्रतिक्रियावादी रूढ़िवादी गोरे जमींदारों का कोई भविष्य नहीं है, और उन्हें जमाने के साथ अपने को बदलना होगा।

संयुक्त राष्ट्र ने दक्षिणी अफ्रीका के विरुद्ध अनेक प्रस्ताव पास किये हैं और व्यापारिक दृष्टि से गोरी सरकार का बहिष्कार करने के लिए भी आह्वान किया है। मगर उसकी सोने और हीरे की खानों के कारण अमरीका, ब्रिटेन और फ्रांस बराबर सम्बन्ध बनाये रखे हैं, जिसकी वजह से वहाँ की सरकार संसार के लोक-मत की तरफ उदासीन जैसी रहती है और बान्टू तथा एशियाई बन्धुओं के साथ मन-मानी करती है।

भविष्य का संकेत

मगर 'सब दिन होत न एक समान।' दक्षिणी अफ्रीकी सरकार के अत्याचार का घड़ा भर चुका है। राष्ट्रवादी और स्वा-धीन अफ्रीका अपने बान्टू भाई-बहनों की गुलामी अब और बर्दाश्त नहीं कर सकता। स्वतंत्रता की गंगा जेम्बिया तक पहुँच गयी है, और वहाँ के राष्ट्रपति काउन्डा दक्षिणी अफ्रीका के सच्चे स्वराज्य तक के लिए कटिबद्ध हैं। जेम्बिया से सटा रोडेशिया राज्य है, जो है तो गोरों के हाथ में, लेकिन भयभीत होकर वे वहाँ से भाग रहे हैं और दक्षिणी अफ्रीका की शरण ले रहे हैं। कुछ हद तक तो वहाँ की गोराशाही ने उनका स्वागत किया, लेकिन आगे वह उनको प्रोत्साहन नहीं देना चाहती।

उधर इस चुनाव के दौरान में राष्ट्रीय पार्टी की सरकार-विरोधी दलों (जो सब गोरे ही थे) के साथ दमन का व्यवहार किया, उससे भी गोरों में रोष पैदा हुआ है और शासन के खिलाफ आवाज उठ रही है। संयुक्त पार्टी की पहले से ज्यादा सफलता इस बात की द्योतक है कि वहाँ का जन मानस कट्टर गोराशाही को पसन्द नहीं करता और गैर गोरों को भी कुछ अधिकार देने के पक्ष में है। इस प्रकार गोराशाही में एक दरार पड़ गयी है जो आगे चलकर बढ़ती ही जायेगी। इसका सबसे प्रबल और नवीनतम प्रमाण भी है कि १८ मई को जोहान्सबर्ग नगरी में दक्षिणी अफ्रीका के इतिहास में छात्रों का सबसे बड़ा प्रदर्शन हुआ। बारह बारह की लाइनें बनाकर एक हजार विद्यार्थियों का जुलूस निकला। उसका उद्देश्य यह था कि २२ अफ्रीकी बान्टू निवासियों को एक साल से ज्यादा अरसे तक नजरबन्द रखने पर विरोध प्रकट करे। इन २२ पर मुक-दमे चले और एकदम निर्दोष पाये गये। फिर भी इन्हें रिहा नहीं किया गया है, जिसके विरुद्ध तरुणों ने अपना असन्तोष प्रकट किया। इन हजार में से ३५७ छात्र गिरफ्तार कर लिये गये और फिर इनकी गिरफ्तारी के विरोध में प्रदर्शन हुए। सारांश यह है कि एक नयी चेतना जाग्रत हो रही है जो गोराशाही को खत्म कर देगी।

हमें विश्वास है कि दक्षिणी अफ्रीका की गुलामी अब ज्यादा समय तक नहीं टिकेगी, और इस दशक में वह स्वतंत्रता प्राप्त करेगा। लेकिन इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वहाँ के बान्टू और एशियाई, सभी गैर-गोरे निवासियों को मिलकर, एक सूत्र में बंधकर आन्दोलन करना होगा और साथ ही कुछ बलिदान भी देना होगा। इसके अतिरिक्त, एशिया और अफ्रीका के सभी आजाद देशों को दक्षिणी अफ्रीका की नाकेबन्दी करनी होगी और अमरीका, ब्रिटेन तथा फ्रांस पर भी दबाव डालना होगा कि बहिष्कार में शरीक हों। सब देशों के संयुक्त प्रयास से और मूल निवा-सियों के साहसपूर्ण पुरुषार्थ के बल पर ही दक्षिणी अफ्रीका से गोराशाही का कलंक मिटेगा, और विश्व भर में स्वाधीनता की नव-ज्योति प्रज्वलित होगी।●

शासकों की बाजीगरी और सम्मोहित जनता

•सिद्धराज ढड्ढा

दुनिया में बीसों मजहब, सैकड़ों मुल्क और हजारों जातियाँ हैं, पर सच पूछा जाय तो सारी मनुष्य जाति दो ही वर्गों में बंटी हुई है—एक छोटा-सा लेकिन बुद्धिमान, चालाक, जाग्रत और परोपजीवी तबका; दूसरा अज्ञान, बेकारी और गरीबी से पीड़ित, शोषित बहुजन समाज। इस परिस्थिति के इलाज का जो नुस्खा मार्क्स ने बताया था वह तो सही नहीं था, पर रोग का उसका निदान ठीक था। हिंदुस्तान की परिस्थिति से हम परिचित हैं, पर इसके अलावा चाहे एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के गरीब देशों को लें, चाहे सम्पन्न कहे जानेवाले मुल्कों को—सब जगह पीड़ित, दलित, शोषित मानवता निर्दलन और शोषण की चक्की में पिसती हुई कराह रही है। "चार लोगों" ने इस परिस्थिति को भी अपने स्वार्थ-साधन का अवसर बना लिया है। जो आते हैं, गरीब के उद्धारक बनकर ही सामने आते हैं। उस बहाने पहलेवाले को हटाकर खुद कर्ता-धर्ता बनते हैं, लेकिन गरीब और पददलित इन हिमायतियों के बावजूद जहाँ के तहाँ रह जाते हैं। "उद्धारकों" में कुछ ईमानदार भी होते हैं, पर वे बेचारे इतने भर होते हैं कि व यह नहीं देख पाते कि पुरानी सड़ी हुई व्यवस्था को कायम रखते हुए गरीबों की हालत में कोई फर्क नहीं लाया जा सकता।

इण्डोनेशिया (जावा) में अभी ३-४ वर्ष पहले सुकर्ण की मनमानी के खिलाफ उसीके कुछ साथियों ने बगावत की और सुहर्तो ने शासन अपने हाथ में लिया। उसने स्थिति को सुधारने की कुछ कोशिश की—वह तो उसके सारे परिवर्तन के लिए भी जरूरी था—पर उस मुल्क में गरीब की आज भी क्या हालत है इसका अन्दाज उन्हींमें से एक की रामकहानी से लगाया जा सकता है।

मसरोनी इण्डोनेशिया के २ लाख साईकिल-रिक्शा चलानेवालों में से एक है। प्रसिद्ध अमरीकी साप्ताहिक "न्यूज वीक" के संवाददाता को ३५ वर्षीय मसरोनी ने, जो १२ वर्ष पहले अपने गाँव से रोजी की तलाश में इण्डोनेशिया की राजधानी जकार्ता आया था, बतलाया—

"मैं सबेरे ६ बजे से लेकर रात को १० बजे तक रिक्शा चलाता हूँ, और काम के बाद में फिर शरीर में जान बाकी नहीं रहती। ऐसी हालत में ४५ या ५० वर्ष की उम्र के बाद फिर रिक्शा चलाना भी सम्भव नहीं होगा, पर पीछे गाँव में छोड़े हुए अपने बाल-बच्चों की याद करके ही इस काम में लगा रहता हूँ। मैं अपनी आमदनी का अधिकतर हिस्सा अपने परिवार को भेज देता हूँ।" और यह आमदनी भी कितनी? जावा में रिक्शा चलानेवालों की औसत आमदनी भारतीय मुद्रा के हिसाब से करीब एक रुपया रोज है। १२ वर्ष रिक्शा चलाते रहने के बाद आज मसरोनी की "सम्पत्ति" दो कमीज और एक पतलून है। वह रात को रिक्शे में ही या मस्जिद में सो रहता है और सबेरे बहती हुई नहर में नहा लेता है। कपड़े धोने होते हैं तो रिक्शा मालिक के घर पर जाकर धो लेता है। पर उसके गाँववालों की नजर में यह मसरोनी भी 'भाग्यवान' है, क्योंकि 'गाँव में तो लोगों को पैसे का दर्शन भी नहीं होता।'

"कोउ नृप होई हमें का हानी"

४०० वर्ष पहले तुलसीदास ने दासी मंथरा के मुँह से कहलाया था कि अयोध्या के राजा राम हों या भरत "हम गरीबों का उससे क्या नुकसान है।" मंथरा अपने अनुभव से जानती थी कि राजा कोई हो उससे गरीबों 'लाभ' होने का तो कोई सवाल ही नहीं, 'हानि' नहीं हो तो बस है। मसरोनी ने भी मंथरा की भावना को प्रतिध्वनित करते हुए कहा—'नेता या शासक सुकर्ण हो या सुहर्तो, हमारे लिए उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। हम न सुकर्ण के भाषणों से प्रभावित थे और न अब सुहर्तो के भाषणों से हैं। हम तो 'सबूत' को देखने के आदी हैं। हमारी मुख्य चिन्ता जिन्दा रहने की है। और दिन के अन्त में उस दिन जिन्दा रह सकने के उपलक्ष्य में हम ईश्वर को धन्यवाद देते हैं। सच कहें तो आज हमारी हालत पहले से बदतर ही है।"

वर्षों 'समाजवाद' के नारों, उद्घोषों, प्रस्तावों और गम्भीर घोषणाओं—मालूम डिक्लेरेशन—के बाद, रेलों, बसों, कारखानों, और बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद, भारतीय जनता के उद्गारों का भी क्या यह सच्चा प्रतिबिम्ब नहीं है? क्या पटना, कलकत्ता, मद्रास या जबलपुर—या भारत में कहीं भी—रिक्शा चलानेवाले 'रामभरोसे' या 'मुथुसामी' का अनुभव "मसरोनी" के अनुभव से भिन्न है? और इस बीच, भारत के अर्थशास्त्रियों, योजनाकारों, अफसरों और नेताओं के मुँह से भी हम अक्सर वही सुनते हैं जो इण्डोनेशिया के सफेद लोग मसरोनी जैसे सामान्य लोगों के रोजमर्रा के जीवन के अनुभव की ज्वलन्त गवाही के बावजूद कहते रहते हैं। इण्डोनेशिया के मुख्य आर्थिक योजनाकार, डा० नीतिशास्त्र का कहना है कि सन् १९६६ में, यानी सुकर्ण की पदच्युति के समय मुद्रास्फीति (इन्फ्लेशन) का परिमाण ६५०% था वह घटकर १९६९ में १०% रह गयी है, और प्रतिवर्ष आर्थिक विकास की मात्रा १.६ से बढ़कर अब ५% हो गयी है। भारत के हमारे अर्थशास्त्री भी तो भारत की आर्थिक प्रगति के सबूत में यह कहते रहते हैं न, कि भारत की प्रतिव्यक्ति औसत आमदनी और देश का कुल उत्पादन पिछले वर्षों में इतने से बढ़कर इतना हो गया है! पर अमरीका की पत्रिका 'बिजनेस न्यूज"—व्यापार समाचार—ने

सरकार से मिलनेवाली मोटी-मोटी तनख्वाहों और सुविधाओं पर पलनेवाले योजनाकारों और अर्थशास्त्रियों की दलीलों का बुलबुला यह सवाल करके फोड़ दिया है कि "आमदनी किसकी बढ़ी है? भ्रष्टाचारियों की और पूंजीपतियों की। सामान्य लोगों का तो कुछ बढ़ा है तो ब्लड-प्रेशर (रक्तचाप या खून का दबाव) ही बढ़ा है।"

कागजी जादूगरों के करिश्मे

कागजी और औसत आंकड़ों के बल पर ये अर्थशास्त्री, योजनाकार और विशेषज्ञ अपने वातानुकूलित कमरों से समय-समय पर इस तरह के बयान निकालकर कब तक मसरोनियों, रामभरोसों और मुसु-सामियों को धोखा दे सकेंगे? इंडोनेशिया हो या भारत, खुद सब तरह की सुख-सुविधाओं का उपभोग करते हुए ये अफसर और विशेषज्ञ लोगों को कमर-कसकर करने का, सादगी से रहने का और कमखर्ची का उपदेश देते रहें, यह कब तक चलेगा? और यह दुनिया के एक दो मुल्कों की नहीं, करीब-करीब सभी मुल्कों की स्थिति है। दक्षिण अमेरिका के मुल्कों में वहाँ की कुल संपत्ति—कारखाने, व्यापार, खनिज, जंगल आदि सब मिलाकर—का ७५% कुल आबादी के सिर्फ दो या तीन प्रतिशत लोगों के हाथ में है। 'न्यूजवीक' के इसी अंक (२५ मई १९७०) में फिलिपीन के बारे में बताया गया है कि उस मुल्क की सारी अर्थ-व्यवस्था पर करीब ६० अत्यधिक धनवान परिवारों का कब्जा है, जब कि उस सुन्दर द्वीप के करीब पौने चार करोड़ निवासियों में से ९०% लोग १०० डालर से भी कम आमदनी पर पूरे साल-भर गुजर करते हैं। पाकिस्तान में अयूब खां के "सैनिक" शासन के पतन का एक बड़ा कारण यह बताया गया था कि वहाँ की अर्थव्यवस्था पर अयूबखां के रिश्तेदारों और मित्रों के १६ परिवारों का आधिपत्य था। यह स्थिति केवल "पूंजीवादी" मुल्कों की ही नहीं है, साम्य-वादी रूस में भी सामान्य मजदूर और शासकों के बीच वेतन और सुख-सुविधाएँ सब मिलाकर देखा जाय तो करीब करीब उतना ही अन्तर है जितना किसी पूंजी-वादी मुल्क में।

'न्यूजवीक' के प्रतिनिधि का कहना है कि "सुहर्तो की शायद सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि उन्होंने अपने साथी अफसरों से अभी तक उस त्याग और सादगी की मांग नहीं की है जिसकी मांग वे आम लोगों से करते रहते हैं। उनके 'जनरल' आलीशान कोठियों में रहते हैं और शानदार गाड़ियों में घूमते हैं। रोज रात को मंत्रियों के लड़के-लड़कियाँ, जिनमें खुद सुहर्तो का लड़का भी है, जकार्ता की सड़कों पर अपनी तेज गाड़ियाँ दौड़ाते हुए, पैदल चलनेवालों को भय से तितर-बितर करते हुए, सर्राटे से निकल जाते हैं।"

'नायकों' के 'अधिनायकत्व' से मुक्ति अनिवार्य

क्या यह वर्णन हिन्दुस्तान के शासक-वर्ग को और यहाँ की परिस्थिति को ज्यों का-त्यों लागू नहीं होता? इंडोनेशिया और भारत ही नहीं, दुनिया भर में चंद 'भाग्य-वानों' और बहुसंख्यक शोषित जनता के बीच की यही स्थिति है। पर सामान्य लोग फिर भी नहीं चेतते। घूमफिरकर इन्हीं लोगों के चंगुल में फंसते हैं। वे समझते हैं कि यह नहीं तो वह पार्टी हमारा उद्धार कर देगी। इस बार इसे नहीं, उसे वोट दें। अभी आजकल में ही श्रीलंका के चुनावों में जो कुछ हुआ है, वह इसका ताजा उदाहरण है। १० वर्ष पहले श्रीलंका की जनता ने श्रीमती भंडार-नायके की पार्टी को वोट देकर सत्तारूढ़ किया। ५ वर्ष बाद आम चुनाव में उस पार्टी को छोड़कर विरोधी पार्टी को जिताया और अब फिर ५ वर्ष बाद श्रीमती भंडारनायके की पार्टी को विजयी बनाया। आम जनता की यह कैसी दयनीय स्थिति है? "भंडारनायक" हो या "सेना-नायक", उसे कोई-न-कोई "नायक" चाहिए। और इसी तरह चक्की के पाटों के बीच अपने खुद की नासमझी से जनता पिसती रहती है।

इस परिस्थिति का एकमात्र इलाज यह है कि पार्टियों का या सरकार का मुँह ताकना छोड़कर जनता स्वयं अपने पैरों पर उठ खड़ी हो, एक हो और संगठित हो। परस्पर होड़ और संघर्ष नहीं, बल्कि परस्पर सहयोग और सुख-दुख में साझेदारी के बल पर अपने-आपको संगठित करें। जहाँ-जहाँ, जिस स्तर पर संभव हो, वह अपनी व्यवस्था स्वयं अपने हाथ में ले। लोग शंका करते हैं कि क्या यह संभव हो सकता है? अवश्य हो सकता है, बशर्ते कि लोग आज की परि-स्थिति के मायाजाल से थोड़ा सा ऊपर उठकर सोचें और थोड़े समय के लिए तात्कालिक कठिनाई को सहने के लिए तैयार हों। यह संभव हो सकता है, बशर्ते कि लोग बहकानेवाले स्वार्थी नेताओं, अफसरों, तथाकथित विशेषज्ञों और योजनाकारों आदि का असली स्वरूप पहचान लें, उन पर निर्भर रहना छोड़ दें, और आवश्यक हो तो उनसे तथा उनके द्वारा संचालित व्यवस्था से असहयोग करें। यह अवश्य संभव हो सकता है अगर सामान्य लोग, सज्जन लोग, एकता, संगठन और परस्पर-सहयोग की शक्ति को पहचान लें।•

अंकलेश्वर (गुजरात) सत्याग्रह के लिए सन्देश

सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने लिखा है: "अंकलेश्वर के सत्याग्रह की सब बातें बाबा को बतायीं तो बाबा ने कहा कि अहिंसापूर्वक काम करेंगे तो बाबा का आशीर्वाद है।"

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् ने तार भेजा है:

खेतिहरों को भूमि से बेदखल करना अत्यन्त अन्यायपूर्ण है। वास्तविक खेति-हरों को भूमि का अधिकार मिले,' यह सर्वथा उचित है। सत्याग्रह की सफलता के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ।•

—जगन्नाथन्

पुलिस की बर्बरता से पीड़ित उड़ीसा के कुछ जिले

—जहाँ सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को भी निरंकुश पुलिस सता रही है—

•ठाकुरदास बंग

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् और मैं, ता० १६ मई को पाँच दिनों के लिए उत्कल गये थे। हमारे साथ उत्कल की सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्री श्रीमती मालतीदेवी चौधरी, उत्कल सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री विश्वनाथ पटनायक एवं अन्य कार्यकर्ता थे। नक्सालवादियों और पुलिस की जो कार्रवाइयाँ वहाँ चल रही हैं, उनका अध्ययन करना, राज्यदान के आन्दोलन को तथा ग्रामस्वराज्य-कोष को बढ़ावा देना, हमारी यात्रा के उद्देश्य थे।

पुलिस की ज्यादती का साक्षात्कार

ता० १७ को २० मील बस से एवं दो मील पैदल चलकर हम गंजाम जिले के सबरा गाँव में सवेरे पहुँचे। धूप में चलने से थोड़ी थकान का आना स्वाभाविक था। अतः श्री जगन्नाथन् लेट गये। तभी एकाएक बन्दूकों से लैस चार सिपाही आये और हमसे पूछा, 'तुम कौन हो?' हमने कहा, 'आपने विनोबा का नाम सुना है?' चार में से तीन ने 'ना' कहा। एक ने कहा कि मैंने सुना है। उनमें से एक-दो ने हमसे इस क्षेत्र में आने का 'परमिट' दिखाने को कहा। हमने पूछा, 'सरकार ने ऐसा कोई हुक्म इस क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए निकाला है?' उन्होंने कहा, 'हाँ'। तब मैंने कहा कि, ऐसा कोई हुक्म हमारी जानकारी में नहीं निकला है। हो तो आप दिखायें।' उन्होंने कहा, 'आप पुलिस स्टेशन पर चलिए।' हमने कहा, 'आप लिखित हुक्म लाइए।' उन्होंने कहा, 'बिना वारंट के किसीको भी गिरफ्तार करने का अधिकार हमें है, और आपको थाने पर चलना पड़ेगा।' मालतीदेवी ने पूछा, 'थाना कितनी दूर है?' 'आठ मील।' यह उत्तर मिलने पर मालतीदेवी ने कहा, 'इतनी दूर तो मैं चल नहीं सकूँगी, इसलिए वारंट के साथ आप वाहन लेते आयें।' इस पर गरमागरम बहस छिड़ गयी। तब मालती देवी ने कहा, 'आप सिपाही हैं, इसका प्रमाण क्या है? कोई भी नक्सालवादी पुलिस को मारकर, उनके लिबास पहनकर आ सकता है। इसलिए आप सिपाही होने का प्रमाणपत्र अपने पास रखें।' मैंने कहा, 'आपको सोचना चाहिए, कि आप अपने पचास करोड़ मालिकों में से हम पाँच के साथ कैसा व्यवहार कर रहे हैं। क्या कोई कर्मचारी मालिक के साथ ऐसा व्यवहार करेगा? यदि भूतपूर्व मुख्यमंत्री की पत्नी से और हम सरीखे कार्यकर्ताओं से आप ऐसा व्यवहार करने की धृष्टता करते हैं, तो सामान्य जनता के साथ कैसा व्यवहार करते होंगे? आपको कानूनों के पालन के लिए तैनात किया गया है, और बिना वारंट के हमें गिरफ्तार कर और परमिट के बारे में झूठ बोलकर आप कानून के रक्षक ही कानून भंग कर रहे हैं।' पाँच दस मिनट तक वे फुसफुस करते रहे, और फिर चले गये।

यह सारी घटना हो रही थी, और जगन्नाथन्‌जी स्थितप्रज्ञ की भाँति लेटे हुए थे। पुलिस के आगमन तक वे जगे थे। पहला वाक्य उन्होंने आधा सुना तो उन्हें लगा कि रोजमर्रा की तहकीकात पुलिस कर रही है, ऐसा समझकर वे निश्चिन्तता से सो गये।

पुलिस की यह आपबीती अनुभव कर हमने सबरा के लोगों से नक्सालवादी, पुलिस इत्यादि की जानकारी माँगी। तब पता चला कि पुलिस इसी प्रकार कई गाँवों के लोगों को बहुत तंग करती है। इस गाँव की ज्यादातर जमीन, अच्छी जमीन, राधाकान्त मठ की है, और मठ की ओर से एक मुस्तेदार उसे जोतते हैं। ये मुस्तेदार कई प्रकार से गाँववालों का शोषण करते हैं, ऐसा हमने सुना। गाँववालों ने कोर्ट का आश्रय लिया। लेकिन कोर्ट की थकान लानेवाली लम्बी पद्धति में ग्रामवासी कितने दिन टिक सकते? मठ-जमीन आज भी मुस्तेदार के पास है, जो गैर-कानूनी है। साहूकारों की भीषण सूदखोरी तो है ही। ऐसी परिस्थितियाँ नक्सालवाद को जन्म देती हैं। पुलिस इस निमित्त को लेकर भयानक अत्याचार करती है।

नक्सालवादियों का निमित्त कितना-सा है? श्री दीनबन्धु चौधरी नाम के एक ७ एकड़ जमीन-मालिक को और एक पुलिस-नायक को नक्सालवादियों ने मार डाला। यह ६ माह पूर्व की घटना है। इस क्षेत्र में ये दो हत्याएँ नक्सालवादियों के द्वारा हुईं। उसके बाद नक्सालवादियों की हरकतें बन्द हो गयीं। इस घटना को लेकर पुलिसने जो अत्याचार यहाँ किये हैं, उसके बारे में उत्कल नवजीवन मंडल के एक कार्यकर्ता श्री बैकुंठ पात्र की आपबीती सुनिए—

पुलिसराज के बर्बर कारनामे

'गरीश पुलिस कैंप के एक हवलदार एवं तीन सिपाही पीतलसांगी नाम के गाँव में २२ सितम्बर को गए, और वहाँ अपने कुत्ते से गाँव की मुर्गियाँ मरवा डाले, जबर्दस्ती सब्जी तोड़ डाली। गाँव के गरीब लोगों ने इसका विरोध नम्रता से किया। पुलिस ने गाँव के सब मर्दों को इकट्ठा किया और उनको लाठी से मारते-मारते बेहोश कर दिया। सबको पकड़कर गटलापादर के बड़े कैंप में ३ रोज रखा गया, और कुछ भी खाने को नहीं दिया गया। तब उनकी औरतों एवं बच्चों को भूखे मरते देखकर मैं पुलिस-कैंप गया। और इन निर्दोष लोगों को नक्सालवादी कहकर मारा गया, मुर्गियाँ चुरायी गयीं,

इत्यादि शिकायतें गराडा-कैम्प के इन्चार्ज अधिकारी से की।

कुछ दिनों के बाद गांधी-जयन्ती के दिन पुलिस मुझे बुलाकर बड़े कैम्प में ले गयी। वहाँ ए० एस० पी० ने मुझसे बहुत-से प्रश्न पूछने के बाद मुझे कम्युनिस्ट, नक्सलवादियों का सहयोगी कहा। पूज्य *विनोबाजी की एवं श्री नवकृष्ण चौधरी* की बहुत निन्दा की। वहाँ गराडा के पास के हर गाँव के करीब २५० व्यक्तियों को कम्युनिस्ट कहकर कैम्प में बन्द कर रखा था। पुलिस ने इन लोगों से मुझे मारने के लिए कहा। उनके ना कहने पर पुलिस ने उन्हें बहुत पीटा। अधिक पीटे जाने के डरसे वे लोग मुझे मारने लगे। करीब ८ मिनट तक मुझे मारा। फिर २४ घण्टे तक मुझे कैम्प में बन्द करके रखा गया। मार की वजह से मेरा दिमाग खराब हो गया था। क्या करना चाहिए, यह विचार शक्ति बिगड़ गयी थी। ऐसी हालत में पुलिस ने मुझसे यह लिखवा लिया कि 'गाँव के लोग मुझे (बैकुण्ठ पात्र) को मार रहे थे, पुलिस ने मुझे बचाया।' क्या कोई विश्वास करेगा कि सन् १९६९ में, स्वराज्य के बाईस वर्ष बाद एक कार्यकर्ता के साथ पुलिस ऐसी नृशंसता कर सकती है? श्री बैकुण्ठ भाई ने 'मैं गांधी मार्गी हूँ, और क्षमा करना मेरा धर्म है', ऐसा मानकर मजिस्ट्रेट के पास शिकायत नहीं की।

कार्यकर्ता पर जब यह बीतती है तो सामान्य प्रजा पर क्या बीतती होगी? नमूने की कुछ घटनाएँ इस प्रकार हैं:

"'कौसीमगुडा के श्री बिसगयोंग के घर उनकी गैरहाजिरी में पुलिस गयी और उनकी पत्नी का हाथ पकड़ा। पति घर आया तो उसे भी मारा गया। गटआपादर कैंप में ले जाकर उसे पीटा गया। और फिर उल्टा उसी पर पुलिस ने केस चलाया कि 'बिसग ने पुलिस को मारा है।' मारिगुडा के वागारी गयोग की दो पत्नियाँ हैं। पुलिस ने वागारी को दो पत्नियों में से एक देने के लिए कहा। इसकी रिपोर्ट गुणुपुर एस० डी० ओ० को दी गयी।"

स्वतन्त्र भारत में भी यह हो रहा है

इन हरकतों का निरीक्षण करने के लिए श्री बी० पी० राय, एम० एल० ए० एवं अन्य लोगों का एक दल अप्रैल के अन्त में घूमा। उनके सामने बयान किया गया, जो निम्न प्रकार है।

ग्राम जागडा (पुलिस-थाना-लहूनी-गुडा, जि० गंजाम) की रतनी (भुजघी की पत्नी) ने कहा, 'उसका सारा सोना पुलिस ले गयी और उसके पति की दूसरी *पत्नी को भी पुलिस ले गयी।* रतनी को खून बहने तक पीटा गया और उसके घर को जला दिया गया। जंगल में उसने कुछ चावल एवं अन्य चीजें छिपा रखी। पुलिस को खबर मिली, तो उसे भी ले गयी।'

गुनुदा गाँव के अर्का (विश्वनाथ की पत्नी) ने कहा, 'मैं घर झाड़ रही थी। ४ पुलिस आये। उन्होंने पानी माँगा तो मैंने पानी दिया। जब मैं पानी पिलाकर बरतन अन्दर ले जाने लगी, तब उन्होंने मेरा पीछा किया, और ५ रुपये की नोट देकर मुझे मोहित करने की चेष्टा की, और मेरा कपड़ा पकड़ा। तब मैं कपड़ा छुड़ाकर भागने लगी तो पुलिस ने मुझे तंग किया।'

प्रन्तासीं, थाना-लहूनीगुडा, जिला गंजाम में डेमा नाम के एक वृद्ध को पुलिस ने घसीटा और पीटते-पीटते उसे मार ही डाला। गाँव के अन्य लोगों को *दो दिन बिना अन्न के रखा और गाँव* जला डाला। डरकर लोग जंगल में भागे। तब पुलिस ने जंगल का घेराव किया और लोगों को बेहोश होने तक पीटा।

बुधी साबरी (गुमाच की पत्नी), ग्राम-कराटीगुडा, थाना—गुणपुर, जिला कोरापुट, के घर तीन माह पूर्व पुलिस के चार आदमी आये, और पति अनुपस्थित है यह जान लेने पर उसके कंधे पकड़कर उसे घसीटा। उसने किसी कदर उनसे पीछा छुड़ा लिया, और पीछे के दरवाजे से भाग निकली।

श्री बी० पी० राय, एम० एल० ए० एवं श्री भागीरथ गुमाच, एम० एल० ए० के सामने दिया हुआ करनडीगुडा के चार व्यक्तियों (थाना गुणपुर, जि० कोरापुट) का बयान:

'मुकु गुमाग को पुलिस ने औंधा पटककर उन पर चलकर बूटों से उन्हें रौंदा। हमारी मुर्गियों के चूजे ले गये और उन्हें खा डाला। पैसे देने का तो नाम ही नहीं लिया।'

जनता कब तक सहेगी?

इन अत्याचारों की कहानी कहाँ तक लिखी जाय! श्रीमती मालतीदेवी ने गराडा में अपना आसन जमाया है। अतः वहाँ अत्याचारों में इन दिनों कुछ कमी हुई है। हम कोरापुट जिले के तास्की नाम के एक गाँव में गये। वहाँ ९० प्रतिशत आदिवासी एवं १० प्रतिशत हरिजन (जिन्हें वहाँ 'डब' कहा जाता है) हैं। इन दोनों में जमीन के प्रश्न को लेकर झगड़ा है। यह मामला दीवानी में दावे का विषय हो सकता है। पुलिस ने इसमें से अपना उल्लू-सीधा करने की कोशिश की और रिश्वतों का बाजार गर्म हुआ। पुलिस मुर्गियाँ ले गयी, कोई लड़के से मिलने गया, कोई जंगल में लकड़ी काटने गया, तो उन सबको पुलिस ने पीटा। सच्चे नक्सलपंथियों को पुलिस ने छोड़ दिया, दूसरों को ही पीटा। बाद में जाँच हुई। दयानिधि दियाल, हवलदार रंगे हाथों पकड़ा गया, और उसे मुअत्तल किया गया। बाद में उसे फिर काम मिल *गया। गाँव की मुर्गियाँ पुलिस के पेट में* गयीं। अतः गाँव में मुर्गियाँ कम हो गयीं। तास्की में उमेन्द्र को पुलिस ने मारा कि तुम कम्युनिस्ट हो। बाद में इसी इल्जाम पर और सात लोगों को पीटा। गोवर्धन बाबू वहाँ के स्थानीय आदिवासी कार्यकर्ता हैं। बहुत सताये जाने पर गाँववालों ने पुलिस का सामाजिक बहिष्कार किया और उनका हुक्म मानना बन्द कर दिया। पुलिसवालों ने अत्याचार बढ़ाया। लेकिन आखिर कब तक यह सब चलता! पुलिस तंग आ गयी और तास्की से कैंप उठा लिया।

यह उपाय सूझ गया था। मर्ज की

ग्रामस्वराज्य-कोष

राज्य-स्तर समितियों तथा संग्राहकों की सेवा में

प्रिय बन्धु,

ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह का निर्णय किये दो महीने बीत चुके हैं। शुरू का कुछ समय प्रारम्भिक तैयारी में तथा काम जमाने में जाना स्वाभाविक था, लेकिन आशा है अब तक कोष के संग्रह का काम आपके यहाँ चल पड़ा होगा। कई प्रान्तों में इसकी शुरुआत हुई है। देश में जगह-जगह इस काम के सम्बन्ध में प्रगति हुई है, उसकी जानकारी आपको दी जाती रही है। आगे भी यह सिलसिला कायम रहे, इसके लिए आपसे प्रार्थना है कि आप अपने क्षेत्र के काम के बारे में हर पखवाड़े एक पत्र लिख दिया करें।

साथ ही आपसे प्रार्थना है कि कोष के प्रारम्भ से मई के अन्त तक आपके राज्य में जितना संग्रह हो चुका हो, उसकी जानकारी और संगृहीत रकम की ७५% धनराशि भी बैंक-ड्राफ्ट से यथाशीघ्र यहाँ भेजने की व्यवस्था करें। शेष २५% धनराशि प्रान्त के ग्रामदान-आन्दोलन में होनेवाले खर्च के लिये वहीं रखें। कोष के संग्रह में जो २ या ३ प्रतिशत तक खर्च हो, वह भी इसी में से किया जाय। इस खर्च का हिसाब कृपया अलग रखें और उसकी भी अब तक की जानकारी भेजें।

नयी दिल्ली में हमने "ग्रामस्वराज फंड" के नाम से नीचे लिखे बैंकों में या तो खाता खोल दिया है या उसकी कार्रवाई जारी है :—

१ सेन्ट्रल बैंक आफ इण्डिया, 'प्रेस एरिया' शाखा, नयी दिल्ली।

२ बैंक आफ इण्डिया, जनपथ शाखा, नयी दिल्ली।

३ पंजाब नेशनल बैंक, दरियागंज शाखा, नयी दिल्ली।

४. युनाइटेड कमर्शियल बैंक, आसफअली रोड शाखा, दिल्ली।

इन सभी बैंकों ने "ग्रामस्वराज्य फंड" की रकम बिना कमीशन लिये भेजने का तय किया है। (केवल बैंक आफ इण्डिया की स्वीकृति आना बाकी है।) अतः आप अपने यहाँ इनमें से किसी बैंक के मार्फत निःशुल्क रकम भेज सकते हैं।

ग्रामस्वराज्य-कोष सर्वोदय-आन्दोलन को ही बल देने के लिए है, इसलिए पूज्य विनोबाजी ने कहा है कि 'इधर-उधर के सब काम छोड़कर कोष में भिड़ो। इसमें यश मिला तो उत्साह बढ़ेगा।' कोष-संग्रह के पीछे जो उद्देश्य है, और उसके बँटवारे तथा उपयोग के बारे में जो नीति तय की गयी है उसकी जानकारी आपको परिपत्र नं० २ द्वारा दी जा चुकी है। (देखें 'भूदान-यज्ञ' दिनांक १८ मई, '७० के अंक का पृष्ठ ५१५)।

अब हमारे पास इस काम के लिए समय बहुत कम बचा है इसलिए आपसे प्रार्थना है कि आप लोग अपने प्रान्त में योजना-पूर्वक इस काम में लगने में विलम्ब न करें। जुलाई के अन्त में सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक राजस्थान में हो रही है, तब तक हर प्रान्त के अपने लक्ष्य का आधा या कम-से-कम एक-तिहाई संग्रह तो अवश्य हो जाना चाहिए।

केन्द्रीय कार्यालय से कृपया बराबर सम्पर्क कायम रखें। —सिद्धराज ढड्ढा

प्रधान मंत्री

× × ×

दवा मिल गयी थी। ता० २१ को उत्कल सर्वोदय मण्डल की कार्यकारिणी की बैठक हुई। वहाँ तय हुआ कि कोरापुट, गंजाम एवं मयूरभंज जिले में १००० ग्राम-शांति-सैनिकों की, वहाँ के निवासियों में से, भर्ती कर २००-२०० सैनिकों के दो-दो दिनों के ५ शिविर लिये जायँ। नक्सलपंथियों से मत डरो, पुलिस से मत डरो, एकता से शोषण एवं आतंक को रोको, यह इन शिविरों में जानकारी दी जाय। इन शिविरों के बाद १०-१० शान्ति-सैनिकों के १०० शांति-केन्द्र कायम किये जायँ। इसी प्रकार भूमिवितरण हो, सरकारी परती जमीन बँटे, साहूकार गैरकानूनी ब्याज छोड़ें, आदि शोषण विरोधी अभियान चलाये जायँ। इससे नक्सलवादियों के प्रादुर्भाव का कारण मिटेगा।

राज्यदान एवं ग्रामस्वराज्य-कोष को सहारा देने की भी योजना बनी। मुख्यमंत्री से मुलाकात की। शान्ति-सेना-शिविर एवं शोषण-मुक्ति के काम में सहयोग देने का, एवं ग्रामस्वराज्य कोष की अपील पर हस्ताक्षर करने का उन्होंने आश्वासन दिया। मयूरभंज बिलादान हो गया है। उसके ९० गाँवों में भूवितरण एवं ग्रामसभा गठन भी हो गया है। आगे बंगाल से सटे हुए तीन प्रखण्डों में भूवितरण एवं ग्रामसभा गठन का काम करने का तय हुआ है। ये सब काम विद्युत्गति से करने का निश्चित हुआ है। शांतिकेन्द्रों को १५ जून के पूर्व यानी बारिश के पूर्व, स्थापित कर लेने का निर्णय हुआ है।

मुख्यमंत्री की बहक

लेकिन मुख्यमंत्री की हमारी मुलाकात के तीसरे दिन अखबारों में हमने पढ़ा, 'उड़ीसा के मुख्यमंत्री ने पत्रकार-सम्मेलन में कहा है कि लोगों को सर्वोदय कार्यकर्ता एवं नक्सलवादी में खास फर्क नजर नहीं आता।' यह है मुख्यमंत्री का सहयोग! अब उत्कल के कार्यकर्ताओं की कड़ी परीक्षा होनेवाली है। शायद इसीमें से अहिंसक क्रान्ति पुष्ट हो सकती है, भगवान की ऐसी योजना हो।●

●महाराष्ट्र राज्य में अब तक संग्रहीत राशि २०,००० रु० से आगे बढ़ चुकी है।

●गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण ने, जो महाराष्ट्र में वर्धा के निवासी हैं, महाराष्ट्र तथा गुजरात राज्यों को कोष के लिए ढाई ढाई हजार रुपये दिये हैं।

●महाराष्ट्र में एक लाख सर्वोदय-मित्र बनाये जाने के प्रयास चल रहे हैं।

●बरई शहर ग्रामस्वराज्य-कोष समिति ने स्कूली बच्चों के लिए ७५ पैसे मूल्य के विशेष कूपन छपवाने का निश्चय किया

है। कूपन में ७५ का अंक विनोबाजी की उम्र के ७५ वर्षों को ध्यान में रखकर निर्धारित किया गया है।

•तमिलनाडु में, राज्य-कोष संग्रह समिति की पहली बैठक २८ मई को त्रिचनापल्ली में हुई। तमिलनाडु कोष-संग्रह समिति के अध्यक्ष श्री के० अरुणाचलम् हैं। तमिलनाडु के प्रमुख खादी-संस्थान के श्री वी० रामचन्द्रन् तथा श्री के० एम० नटराजन् समिति के मंत्री हैं।

•उत्तरप्रदेश में भी कोष-संग्रह का काम प्रारंभ हो गया है। लखनऊ में श्री कपिल अवस्थी ने श्री हकीमदास को ढाई सौ रुपये के कूपन बेचकर कूपन-बिक्री अभियान शुरू किया।

•श्री ध्वजा प्रसाद साहु की अध्यक्षता में गठित बिहार कोष-संग्रह समिति के मंत्री तथा कोषाध्यक्ष क्रमशः श्री प्रभुनाथ तिवारी और श्री नवल किशोर सिंह हैं।

•बिहार के राज्यपाल ने ढाई सौ रुपये देकर कोष का शुभारम्भ किया है।

•मध्यप्रदेश के सरगुजा जिले के चिरीमिरी कोयला-खदान क्षेत्र से ५७५ रुपये के अलावा ५२५ मन अनाज का भी संग्रह हुआ है। चिरीमिरी क्षेत्र ने अपना लक्ष्यांक ५० हजार का स्थिर किया है।

•पंजाब के जालन्धर जिले में एक सौ लोकसेवक और एक सौ सर्वोदय-मित्र बनाये गये। —सं०

बीघा-कट्ठा वितरण

तदर्वा प्रखण्ड में २३ मई से २६ मई तक सुश्री निर्मला देशपांडे के नेतृत्व में प्रति-तूफान के सन्दर्भ में सघन ग्रामदान-पुष्टि-अभियान चलाया गया। २४ मई को इस प्रखण्ड के खाजोडीह गाँव के लोगों ने ग्रामसभा में ४० बीघा जमीन भूमिहीनों के लिए बीघा-कट्ठा के हिसाब से निकालकर दी। दाताओं की परिवार-संख्या ५० थी। —गुणानन्द झा

क्षेत्रीय आचार्यकुल परिगोष्ठी

सर्व सेवा संघ के राजघाट, वाराणसी स्थित केन्द्र पर केन्द्रीय आचार्यकुल के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव के संयोजकत्व में एक परिगोष्ठी का आयोजन ९ से १२ जून तक किया गया था। परिगोष्ठी का उद्घाटन आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी और समावर्तन श्री राजाराम शास्त्री ने किया। परिगोष्ठी में पूर्वी उत्तरप्रदेश के बलिया, आजमगढ़, देवरिया, गोरखपुर, वाराणसी जिलों के २३ आचार्यकुल के सदस्यों—आचार्यों, प्राचार्यों, प्राध्यापकों—ने भाग लिया। परिगोष्ठी में आचार्यकुल के उद्देश्य, कार्यक्रम और संगठन के स्वरूप के बारे में विस्तृत चर्चा हुई।

भूल-सुधार

'भूदान-यज्ञ' १ जून '७० के के अंक में पृष्ठ ५३९ के तीसरे कालम में नीचे से दूसरी पंक्ति में 'वे भूमिहीनों में' की जगह 'वे भूमिवानों से' पढ़ें। —सं०

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०, या २५ शिलिंग या ३ डालर।

सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ३८
सोमवार २२ जून, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ५४२८५

समाज-परिवर्तन : परिस्थिति और पद्धति

अपने देश में २३ वर्ष हुए स्वराज्य स्थापित हुआ, विदेशियों का राज्य समाप्त हुआ, परन्तु आज भी बहुत असन्तोष है, गरीबी है, दुःख है, शोषण है, और विषमता है। २३ वर्षों के बाद युवकों में धीरज टूट रहा है। देश में जहां-तहां—पूर्वी भारत में, बंगाल में, बिहार में, उ० प्र० के कुछ भागों में, आंध्र में, केरल में—हिंसा प्रकट हो रही है। अपने देश की जो राजनीति है, उसकी अवनति हो रही है, उसका पतन हो रहा है। नेताओं में झगड़े हो रहे हैं, हर पार्टी में फूट पड़ रही है।

इस परिस्थिति में देश की जनता एक नया मार्ग खोज रही है, अपने त्राण के लिए। कहीं-कहीं लोग सोचते हैं हिंसा का एक मार्ग हो सकता है। यह परिस्थिति स्वराज्य के थोड़े दिनों बाद बनी। मैं यह नहीं कहता कि स्वराज्य में कोई प्रगति नहीं हुई। नये कारखाने खुले, बिजली, लोहा और सीमेंट का उत्पादन बढ़ा। सिंचाई के क्षेत्र का विस्तार हुआ। परन्तु एक तरफ धन पैदा होता है, जिससे लखपति करोड़पति बनता है, और दूसरी तरफ गरीबों की गरीबी बढ़ती है। इसका कारण यह है कि जिस प्रकार का हमारा समाज बना है, उसकी बनावट ही ऐसी है कि जो धन पैदा होता है; उसका अधिक भाग उनके पास जाता है, जिनके पास पहले से ही अधिक है। यह पूंजीवाद है।

इन सारी परिस्थितियों को एक प्रकार की दिव्य-दृष्टि से राष्ट्रपिता महात्मा गांधीजी ने दूर से देखा था। इस प्रकार की परिस्थिति का परिणाम हिंसा ही हो सकती है। जब गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में रहते थे, उस समय के अनुभव से ही उन्होंने यह निर्णय लिया था कि भारत स्वतन्त्र होगा तो उसमें सर्वोदय की स्थापना करेंगे। ऐसा समाज बनायेंगे, जिसमें सब सुखी हों। यह कैसे होगा ? गांधीजी ने कहा, "इसका रास्ता तो धर्म का होगा, प्रेम का होगा, अध्यात्म का होगा, विचार का होगा।"

ऐसा समाज कानून से नहीं बनेगा। हिंसा से भी नहीं बनेगा। हिंसा से भाई-भाई का कत्ल होगा, गृह-युद्ध होगा। उसमें जो समाज बनेगा, उसमें अशांति रहेगी। मुट्ठी भर लोगों का, जिनके हाथों में हिंसा के साधन होंगे, राज्य रहेगा। जिनके पास बंदूकें हैं, तलवारें हैं, युद्ध के साधन हैं, उनका राज्य होगा। इसीलिए गांधीजी ने अहिंसा से, प्रेम से लोगों को समझा-बुझाकर समाज को बदलने का रास्ता सुझाया था। —जयप्रकाश नारायण

गयोजी : १७-१-'७०

गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य की स्थापना ही मेरा उद्देश्य

—मुजफ्फरपुर में काम करने के संदर्भ में श्री जयप्रकाश नारायण का स्पष्टीकरण—

मुजफ्फरपुर में ६ जून को विभिन्न राजनैतिक दलों के मुजफ्फरपुर जिले के नेताओं एवं विधायकों की बैठक में श्री जयप्रकाश नारायण ने निम्नलिखित मुख्य मुद्दे लिखित रूप में प्रस्तुत किये तथा इन मुद्दों की व्याख्या मौखिक रूप से की, ताकि मुजफ्फरपुर में ये जो काम करने जा रहे हैं, उसका संदर्भ स्पष्ट हो। करीब-करीब यही मुद्दे अखबारवालों को और आकाशवाणी को भी दिये गये थे।

- *नक्सालपंथी समस्या गौण रूप में ही* शांति व्यवस्था की समस्या है। मुख्य रूप में यह सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा प्रशासनिक समस्या है।
- मैं आपका सहयोग इस समस्या के मुख्य रूप के समाधान में चाहता हूँ।
- हर राजनीतिक पार्टी इन समस्याओं के हल के लिए अपने अपने ढंग से प्रयत्नशील है। अब तक की निष्पत्ति अपर्याप्त है। परन्तु आप अपना प्रयास जारी रखें। मेरा समर्थन आपके उन सभी कार्यों को प्राप्त रहेगा जो लोकतांत्रिक ढंग और आधार पर होंगे।
- सर्वोदय का विचार तथा उसका कार्यक्रम निर्दलीय है। हम किसी दल विशेष के न पक्ष में हैं न विपक्ष में। दलगत प्रथा मात्र के हम आलोचक हैं, और उस प्रथा का विकल्प प्रस्तुत करना चाहते हैं। सर्वोदय के आदर्श समाजवाद तथा साम्यवाद के निकट हैं, यद्यपि हम प्रत्यक्ष लोकसत्ता पर जोर देते हैं—समुदाय, कारखाना, संस्थान, दफ्तर आदि के स्तर पर इस दृष्टि से विकेन्द्रीकरण पर हमारा विशेष जोर है।
- उपर्युक्त मत के अनुसार हमारी न कोई राजनीतिक पार्टी है, न बनने-वाली है, न हममें से कोई चुनावों में उम्मीदवार कभी होगा। न हम किसी पार्टी के प्रचार, संगठन आदि कार्यों में कोई विघ्न डालते हैं। हाँ, वैचारिक स्तर पर आलोचना-प्रत्यालोचना करते हैं, यद्यपि वह भी बहुत कम। अधिकतर हम अपना ही विचार लोगों के सामने रखते हैं, तथा अपने कार्यों में लगे रहते हैं, जिनमें सभी दलों का सहयोग माँगते हैं।
- सर्वोदय अपने उद्देश्यों की प्राप्ति लोकशक्ति के द्वारा करना चाहता है। इस विषय में वह हिंसक क्रांति के जैसा है। हिंसक क्रांति कानून से नहीं होती है। वह भी प्रत्यक्ष लोकशक्ति से होती है। अन्तर इतना है कि हिंसक क्रांति जब एक लम्बे प्रयास के बाद विजयी होती है, तभी पुराना समाज मिटता है, यद्यपि उसके बाद नये समाज के निर्माण में बहुत समय लगता है, और निर्माण धीरे-धीरे ही हो पाता है। दूसरी ओर अहिंसक क्रांति में पुराने समाज का बदलना और नये का बनना, दोनों साथ-साथ और कदम-ब-कदम होते हैं।
- यह सब आपका विचारार्थ करने के लिए नहीं कह रहा हूँ, बल्कि सिर्फ इस हेतु से, कि हम लोगों के कार्यों की वैचारिक पृष्ठभूमि आप लोगों के ध्यान में आ जाय।
- आप जानते हैं कि सर्वोदय का पहला कार्यक्रम भूदान था। लगभग चार लाख एकड़ खेती योग्य भूमि बिहार में अब तक वितरित हो चुकी है।
- सर्वोदय का दूसरा कार्यक्रम ग्रामदान था, जिसकी प्राप्ति का कार्य पूरा हुआ है। अब उस कार्य की पुष्टि करनी है और ग्रामस्वराज्य की स्थापना करनी है। इसके लिए चार आवश्यक कार्य करने हैं :
  - (क) ग्रामसभा की स्थापना,
  - (ख) गाँव की जमीन के २० वें हिस्से का बँटवारा भूमिहीनों में करना,
  - (ग) ग्रामकोष का निर्माण,
  - (घ) ग्राम-शांति-सेना की स्थापना।
- नक्सालपंथी कार्यों के सन्दर्भ में मैंने निश्चय किया है कि मुसहरी प्रखण्ड में *ग्रामदान-पुष्टि तथा ग्रामस्वराज्य-स्थापना* का कार्य स्वयं गाँव-गाँव जाकर करूँगा। ९ जून से सलहा-जलालपुर पंचायत से यह कार्य प्रारम्भ करूँगा। ग्रामदान-पुष्टि के कार्य के साथ साथ निम्नलिखित कार्य भी करूँगा
  - (क) भूदान-भूमि का वितरण पूरा या दुरुस्त करना,
  - (ख) बासगीत जमीन के पर्चे दिलवाना या उनकी दुरुस्ती कराना,
  - (ग) मजदूरों की समस्याएँ समझना, और उन्हें सुलझाने का यत्न करना,
  - (घ) गाँव के शक्तिशाली तत्त्वों के द्वारा गरीबों को सताने के विषय में उचित कार्रवाई करना।

उपर्युक्त मुद्दों से स्पष्ट होता है कि मुजफ्फरपुर में काम करने के पीछे श्रीजयप्रकाश नारायण क्या दृष्टिकोण है। और आकाशवाणी, पटना तथा दूसरे समाचार सूत्रों से अखबारों में बार-बार प्रसारित-प्रकाशित यह समाचार कि जे० पी० ने नक्सालवाद की चुनौती में मुजफ्फरपुर में काम करने का संकल्प किया है, कितना भ्रामक है!

प्रसारित और प्रकाशित समाचार चाहे नासमझी से किये जा रहे हों, या किसी खास नीयत से, जे० पी० के प्रयासों [शेष पृष्ठ ५९९ पर]

सम्पादकीय

सम्प्रदायवाद का त्रिभुज

जब भारत में अंग्रेज थे तो सम्प्रदायवाद का एक त्रिभुज था। हिन्दू, मुसलमान और अंग्रेज उस त्रिभुज की तीन भुजाएँ थीं। अंग्रेज, आधार-भुजा थे।

और अब स्वतंत्रता के बाद? शायद त्रिभुज तो किसी रूप में अब भी कायम है, लेकिन उसकी भुजाएँ बदल गयी हैं। त्रिभुज की दो भुजाएँ हैं भारत और पाकिस्तान। तीसरी भुजा बनने की कोशिश कभी चीन करता है, कभी रूस। सम्प्रदायवाद, दलवाद, क्षेत्रवाद और यहाँ तक कि राष्ट्रवाद और दलवाद को भी, साम्राज्यवाद अपना हथकंडा बना लेता है, और अपने हित में उसका मनचाहा इस्तेमाल करता है। एशिया और अफ्रीका के देशों में यही हो रहा है। अपने प्रभाव-क्षेत्र का विस्तार करने के लिए साम्यवादी रूस और चीन भी वही कर रहे हैं, जो ब्रिटेन कभी करता था, और अमेरिका आज कर रहा है। हाँ, अब साम्राज्य विस्तार के लिए बन्दूक के साथ-साथ सन्दूक का भी भरपूर इस्तेमाल होने लगा है। क्या विदेशी शस्त्र, और क्या विदेशी धन और विदेशी रुपया, सब साम्राज्यवादी रीति-नीति के साधन बन गये हैं। भारत और पाकिस्तान में इन साधनों का भरपूर इस्तेमाल किया जा रहा है। पूँजीवादी साम्राज्यवाद और साम्यवादी साम्राज्यवाद में गुणों का कोई अन्तर नहीं रह गया है।

सम्प्रदायवाद का एक दूसरा नया त्रिभुज है जो स्वतंत्रता के बाद बना है। पहले की तरह अब हिन्दू और मुसलमान का नाम नहीं लिया जाता, लिया जाता है अल्पसंख्यक, और बहुसंख्यक का। त्रिभुज की इन दो भुजाओं के साथ तीसरी भुजा बनने की होड़ है। देश का हर राजनैतिक दल तीसरी भुजा बनाना चाहता है। जो दल सम्प्रदायवाद के त्रिभुज में अपनी जगह नहीं बना पाता वह अलग त्रिभुज बनाने की कोशिश करता है। हिन्दू बनाम हरिजन, आदिवासी बनाम भारतवासी, बंगाली बनाम हिन्दुस्तानी या उत्तरी बनाम दक्षिणी, और अनेक भुजाएँ मौजूद हैं जिन्हें लेकर त्रिभुज बनाये जा सकते हैं और बनाये जा रहे हैं। हर दल स्वयं आधार-भुजा बनकर दूसरी दो भुजाएँ जोड़ लेता है। इस तरह के अनेक त्रिभुज हमारे राजनैतिक दलों ने बना रखे हैं।

त्रिभुज बनाने का यह सारा खेल सत्ता के नाम में खेला जा रहा है। जो खेल साम्राज्यवादी खेल सकते हैं वह सब खेल हमारे सत्तावादी भी खेल रहे हैं। साम्राज्यवाद को राष्ट्रवादी सत्तावाद का विस्तार मानें या सत्तावाद को साम्राज्यवाद का परिणाम, साम्राज्यवाद और सत्तावाद एक ही जाति के शेर हैं जो छोटे जानवरों के खून पर पलकर जंगल में राज करते हैं।

कौन नहीं जानता कि सम्प्रदायवाद कितना बुरा है? कितना मानव विरोधी और राष्ट्रविरोधी है। फिर भी सम्प्रदायवाद घटने की जगह बढ़ रहा है, अपने आप नहीं बढ़ रहा है, जानबूझकर ऊँचे राजनैतिक सिद्धान्त के नाम में बढ़ाया जा रहा है। हर दल दूसरे दल पर सम्प्रदायवाद जातिवाद, क्षेत्रवाद आदि को बढ़ावा देने का आरोप लगाता है। इन्दिराजी और अटल बिहारीजी की बुद्धि बहुत-कुछ एक-दूसरे को अपराधी सिद्ध करने में लग रही है, सम्प्रदायवाद को दूर करने में नहीं। दोनों एक दूसरे को वोट के लिए साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देने का दोषी बता रहे हैं। अटल बिहारीजी की नजर में इन्दिराजी और उनकी कांग्रेस सन् १९७२ को सामने रखकर अल्पसंख्यकों को फुसला रही है। दूसरी ओर इन्दिराजी कहती हैं कि वाजपेयीजी का जनसंघ, आर० एस० एस० को पीछे रखकर भारत में साम्प्रदायिक तानाशाही कायम करना चाहता है। उसका राष्ट्रवाद हिन्दू राष्ट्रवाद है, और उसका भारतीयकरण वस्तुतः अल्पसंख्यकों में अविश्वास की घोषणा है।

इन्दिराजी और अटलजी में बात चाहे जिसकी जितनी सही हो, दोषी या निर्दोष जो चाहे जितना हो, प्रश्न यह है कि इस देश में जो राजनीति चल रही है वह क्या इन 'वादों' को छोड़कर भी चल सकती है? इनके अलावा दूसरे कौनसे स्रोत हैं जिनसे राजनैतिक सत्तावाद अपना पोषण प्राप्त करेगा? आपस के आरोपों से यह सत्य नहीं छिपाया जा सकता कि हमारे देश में दलवाद का अनिवार्य परिणाम है सत्तावाद, और सत्तावाद के साथी हैं सम्प्रदायवाद, जातिवाद क्षेत्रवाद आदि। सत्तावाद और सम्प्रदायवाद का चोली दामन का सम्बन्ध है। इसका सीधा अर्थ यह है कि राजनीति के लोग चाहे जितनी नेकनीयती के साथ एक-दूसरे पर आरोप लगायें, जब तक यह सत्ता की सत्तावादी राजनीति (पावरपालिटिक्स) चलेगी तब तक साम्प्रदायवाद रहेगा। और उनके सम्प्रदायवाद ही नहीं, दूसरे सारे 'वाद' रहेंगे। और उनके कारण पैदा होनेवाले विवादों से यह देश टूटता चला जायगा। कौन नहीं देख सकता कि आज ही जगह जगह शीत गृहयुद्ध की स्थिति बनती जा रही है? जरा कोई अवसर मिलता है कि हिंसा फूट पड़ती है। हिंसा की बढ़ती हुई लपटें अपनी बाहों में पूरे देश को समेटती चली जा रही हैं। लगता है देश का भूत, वर्तमान और भविष्य, तीनों एकसाथ हिंसा की आग में जल जायेंगे।

राजनीति अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक की भाषा बोलती है। यह भाषा लोकतंत्र की भाषा नहीं है। लोकतंत्र की इकाई 'व्यक्ति' होता है न हिन्दू, न मुसलमान, न हरिजन, न ईसाई, न पुरुष, न स्त्री। जो हिन्दू यह सोचते हैं, कि भारत में हिन्दू बहुसंख्यक हैं, और राजनैतिक दृष्टि से सदा बहुसंख्यक बने रहेंगे, वे भारी भ्रम में हैं। अगर आज की दलवादी, सत्तावादी राजनीति रह गयी तो हिन्दू और मुसलमान दो ही सम्प्रदाय नहीं रहेंगे बल्कि हिन्दुओं में सवर्ण, बैकवर्ड, और हरिजन, अलग-अलग 'सम्प्रदाय' बन जायेंगे। हर जाति, हर समुदाय, एक सम्प्रदाय बनेगा। अनने

भूदान यज्ञ : सोमवार, २२ जून '७०

की प्रक्रिया तेजी के साथ चल भी रही है। जिस वोट के नाम में यह सारा सम्प्रदायवाद चलाया जा रहा है, वह वोट दो सम्प्रदायों के भीतर अनेक 'सम्प्रदाय' पैदा कर चुका है। अगर समाज को टूटना है तो दो ही टुकड़ों में टूटकर क्यों रुकेगा?

भारत की जनता सम्प्रदायवादी नहीं है। सम्प्रदायवादी नेता हैं, उनकी राजनीति है। धर्म सम्प्रदायवादी नहीं है, राजनीति के प्रभाव में चलनेवाली शिक्षा सम्प्रदायवादी है। ये सब मिलकर जनता को सम्प्रदायवादी बनाते हैं। उसका भय उभाड़कर दंगे कराये जाते हैं, और उसका संकीर्ण स्वार्थ उभाड़कर चुनाव जीते जाते हैं। अगर सम्प्रदायवाद को मिटाना हो तो जनता को जनता रहने दिया जाय, उसे वोट के लिए दलों में विभाजित न किया जाय। अब लोकतंत्र के लिए दल आवश्यक नहीं है। दलमुक्त लोकतंत्र कोरा नारा नहीं है, बल्कि व्यावहारिक योजना है। उसे समझना चाहिए। दलमुक्त लोकतंत्र के दो छोर हैं—एक दलमुक्त सरकार, और दूसरा सरकारमुक्त गांव। यह अराजकता का चित्र नहीं है। इसका अर्थ यह है कि गांव में, जो करोड़ों के जीवन की स्वाभाविक इकाई है, जनता की सहकारी व्यवस्था हो—नगर में भी—और सरकार में जनता की सत्ता हो, दलों की नहीं। दलसत्ता बनाम लोकसत्ता के पूरे विषय पर नये सिरे से विचार होना चाहिए।

जो व्यक्ति लोकतंत्र का आधार है उसे सब 'वादों' के विवाद से ऊपर रखने में ही लोकतंत्र का भविष्य है। 'वाद' में विवाद और विवाद में उन्माद होता है। लोकतंत्र को उन्माद नहीं, विवेक चाहिए। हिन्दू को काफिर समझनेवाले मुसलमान, और मुसलमान को म्लेच्छ समझनेवाले हिन्दू का जमाना लद चुका। साथ ही दलवाद को ही लोकतंत्र समझनेवाले नेता का भी जमाना बीत चुका। भारत को ऐसी समाज-व्यवस्था चाहिए जो मानव-विरोधी न हो, और ऐसी राजनीति (लोकनीति) चाहिए जो राष्ट्र विरोधी न हो। अगर भारत में लोक-क्रान्ति होगी तो पाकिस्तान क्रान्ति से बच नहीं सकता। क्या पूंजीवाद, क्या सम्प्रदायवाद, और क्या राज्यवाद और क्षेत्रवाद, सबका एक ही उपाय है—लोकक्रान्ति, और गांव गांव में संगठित लोकसत्ता।•

हममें से हरएक तय करें

सेठ होंगे और थैली दिखायेंगे तो पत्थर खायेंगे, सेवक होंगे तो सलाम मिलेगा, साविर होंगे, सिपाही होंगे तो गुणगान होगा, शहीद होंगे तो अमरत्व मिलेगा। सर्वोदय का हर आदमी तय कर ले कि वह क्या होकर रहना चाहता है।

जब रचनात्मक कार्य के नाम में करोड़ों का व्यापार होता हो तो थैली हाथ में लेकर चलनेवाले त्यागी सेठों की कमी क्यों हो? जब सेवा के नाम में लाखों का निपटारा करनेवाले बड़े-बड़े संस्थान बने हुए हों तो उनकी सेवा में हजारों सेवकों का लगा होना कोई आश्चर्य की बात क्यों हो? आज के सर्वोदय में सेठों और सेवकों की कमी नहीं है। जब से ग्रामदान का आन्दोलन शुरू हुआ तब से विनोबा की प्रेरणा में सर्वोदय में कुछ सिपाही भी पैदा हुए हैं, लेकिन बहुत कम। शहादत का मौका तो अब कहीं इतने दिनों बाद आया है।

शहीद होने के लिए किसी दूसरे के हाथों मारा जाना कोई जरूरी नहीं है। जो क्रान्तिकारी हर दिन, हर घंटा, हर क्षण, क्रान्ति के लिए समर्पण का जीवन जीता है वह जिन्दा शहीद है, क्योंकि वह जीता है अपने लक्ष्य के लिए, और तैयार रहता है मरने के लिए उसी लक्ष्य के लिए। उसका समर्पण इतना घना और गहरा होता है कि जीने और मरने में उसे कोई अन्तर नहीं मालूम होता है। अन्तर सचमुच है भी क्या?

सर्वोदय के सामने शहादत का मौका तो आया लेकिन दुःख है कि वह हमारे समर्पण के कारण नहीं आया। अगर वह हमारे समर्पण से आया होता तब तो बात ही दूसरी होती। वह आया है हमारे ही देशवासी कुछ 'क्रान्तिकारी' मित्रों की नादानी के कारण। न जाने किस खाम खयाली में उन्होंने हमारे कुछ साथियों को मार डालने की धमकी दे डाली। आगे वे अपनी धमकी पर अमल भी कर सकते हैं। हिंसा में यही तो सबसे बड़ा दोष है कि वह स्वयं क्रान्ति को अलग रखकर अपने-आप लक्ष्य बन जाती है। तब हिंसा हिंसा के लिए होने लगती है, क्रान्ति से उसका सम्बन्ध नहीं रह जाता। जो हिंसा साधन थी, वह साध्य हो जाती है। ऐसी हिंसा को रोज दोनों वक्त खून चाहिए, खून चाहे जिसका हो।

हिंसा का जवाब हम हिंसा से नहीं दे सकते। पुलिस के पास जाकर हम संरक्षण की मांग भी नहीं कर सकते। वैसा करना जीते-जी मरने के बराबर होगा। हमारा उत्तर एक ही हो सकता है: अपनी क्रान्ति के लिए जियेंगे, अपनी क्रान्ति के लिए मरेंगे। अगर अब तक हम अपनी क्रान्ति के लिए जीना सीख गये होते तो हरगिज हमें आज मौत की धमकी न मिलती, और अगर मिलती भी तो हमारी रक्षा की चिन्ता जनता कर लेती। हम सोचें कि क्रान्ति के लिए जीना हमें अब तक क्यों नहीं आया, और अब कैसे आयेगा?

श्री जयप्रकाशजी मुजफ्फरपुर जिले के उस क्षेत्र में डटे हुए हैं, जिसमें कई हत्याएं की गयी हैं। वह भय का उत्तर अभय से दे रहे हैं। क्रान्तिकारी दूसरा करता भी क्या?

भय एक नहीं, दो हैं। एक ओर सफेद आतंक (व्हाइट टेरर) है, तो दूसरी ओर लाल आतंक (रेड टेरर)। ऊपरवालों का नीचेवालों पर 'सफेद आतंक' है, और नीचेवालों का ऊपरवालों पर 'लाल आतंक'। इसी 'लाल आतंक' को नक्सलवाद कहा जा रहा है। जनता को इन दोनों भयों से मुक्त करना है।

हमने माना है कि ग्रामस्वराज्य में एक साथ दोनों भयों से मुक्ति का मार्ग है। फौरन बीघा-कट्ठा निकले, ग्राम-सभा बने, ग्राम-कोष शुरू हो, और ग्राम-शान्ति-सेना का संगठन शुरू हो जाय, तो निश्चित है कि गांव-गांव की जनता दमन, शोषण और→

विज्ञान को मुनाफाकांक्षी और सत्ताकांक्षी नियंत्रण से मुक्त किया जाय

यांत्रिक विकास समाज के हित में हो

राजनैतिक और आर्थिक सत्ता का अतिकेन्द्रीकरण गुलामी का नया प्रकार

• जयप्रकाश नारायण •

जिस संस्था (श्री गांधी आश्रम) का एक गौरवमय इतिहास हो, एक प्रेरणादायिनी जिसकी परम्परा हो, उसके केन्द्रीय स्थान (मुजफ्फरपुर) में आकर जो कुछ मैंने थोड़ा-बहुत घूम करके देखा, उससे मुझे कल्पना हुई कि कितना बड़ा काम आप सब लोग इस केन्द्र में कर रहे हैं। जो कुछ काम हो रहा है, उसके लिए मैं आप सबको बधाई देता हूं। साथ ही, कुछ बातें आपकी सेवा में निवेदन करना चाहता हूं।

केवल रोजी नहीं

और जगह जो कार्य होते हैं, उनमें जो कार्यकर्ता, जो श्रमिक काम करनेवाले होते हैं, उनकी दृष्टि अपने काम की तरफ रोजी कमाने की होती है। क्या काम वे करते हैं, क्या वे बनाते हैं, जो काम होता है, उसका प्रबन्ध कैसे होता है, किस हेतु से होता है, क्या कुछ होता है, इस सम्बन्ध में न उनको जानकारी की आवश्यकता होती है, और न वे स्वयं महसूस करते हैं कि उन्हें जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। न कोई प्रेरणा ही उनको मिलती है उन संगठनों की तरफ से, जिनमें वे काम करते हैं। चाहे वह कपड़े का, लोहे का, किसी चीज का कारखाना हो, या और कोई दफ्तर ही हो, जहां लोग काम करते हों। उससे भिन्न हमारे-आपके लिए बहुत महत्व की बात है कि यह सारा काम रोजी के लिए हम नहीं करते। या ऐसा कहें तो ज्यादा सही होगा, कि केवल रोजी के लिए ही नहीं करते हैं। रोजी का सवाल सामने रहता है। बच्चे हैं, गृहस्थ लोग हैं, जो योगी-सन्यासी होता है उसको भी कम से-कम एक वक्त उदर भरना ही पड़ता है, तो रोजी चाहिए, रोजी कमाना स्वधर्म भी है अपना।

लेकिन उसके साथ साथ और भी कुछ है, बहुत कुछ है। आप जानते हैं कि गांधीजी के जो विचार हैं, सर्वोदय के जो विचार हैं जो आदर्श हैं, जो उसके उद्देश्य हैं, वर्तमान के जो कार्यक्रम हैं, वे सब, जो कुछ हम काम करते हैं, उनमें अर्थ भरनेवाले हैं। इसलिए हम जो काम कर रहे हैं, उसके आगे-पीछे जो विचार हैं उन्हें समझना चाहिए। 'कातो, समझ-बूझकर कातो', ऐसा गांधीजी ने कहा। खादी कपड़ा नहीं, विचार है ऐसा भी उन्होंने कहा। तो खादी कपड़ा-ही-कपड़ा रह जाय, कातना-ही-कातना रह जाय, तब तो वह निर्जीव हो जायगी। उसमें कुछ रह नहीं जायगा। लेकिन अगर उसके पीछे कोई विचार है, तो उसे हम समझें महसूस करें।

हम सब एक महान क्रान्ति के क्रान्तिकारी कार्यकर्ता हैं, क्रान्तिकारी सचालक हैं, यह दृष्टि हमारी होनी चाहिए। आप (कार्यकर्ताओं) को भी, और रंगाई छपाई, धुलाई करनेवाले एक-एक मजदूर को भी यह समझना-समझाना चाहिए। यह सब नहीं होता है, तो संस्था की सारी परम्पराएं, त्याग-बलिदान-वाला इतिहास, सब कुछ बेकार-सा हमारे लिए हो जाता है। इसलिए हम जाग्रत रहें, विचार की दृष्टि से, अपने कार्यों के महत्व की दृष्टि से, तो फिर एक तेज मिलेगा हमको, अपने में, अपने काम में।

समान स्तर की सामुदायिकता का विकास

दूसरी बात जो आपके, हम सबके ध्यान में रखने की है, वह यह है कि जो गांधीजी की कल्पना थी, जो सर्वोदय की कल्पना है, उसके अनुसार जहां भी काम होता है तो उस काम में लगे हुए जितने भी लोग हों, चाहें वे शीर्षस्थ व्यक्ति हों, अथवा दफ्तर में लिपिक हों या श्रमिक हों, ये सब लोग, आपस में मिलकर और समान स्तर पर खड़े होकर एक परिवार, एक समुदाय जैसा मानकर काम करें और जितने लोग काम करनेवाले हों, ऊपर, नीचे, बीच में, सभी लोग यह महसूस करें कि जो काम चलता है, जो प्रबन्ध होता है, जो मुनाफा होता है, या घाटा होता है जो कुछ भी होता है, उस सबमें हमारा भी हाथ है, हम केवल दर्शक नहीं हैं, हम सब उसमें पड़े हैं, सब साथ साथ तैर रहे हैं। गांधीजी के जो विचार थे, जिन्हें मैं मानता हूं कि समाजवाद और साम्यवाद, दोनों से आगे के विचार हैं, हम कैसे उनको अमल में ला सकें, यह आज भी हमारे सामने प्रश्न है। कैसे सबका सहभाग हो सके, सबमें सद्भाव पनप सके, किस प्रकार समुदाय बन सके, कोई भी काम

→मानक सबके भय से मुक्त होने के रास्ते पर खुद चल पड़ेंगी। देखते देखते एक नयी शक्ति पैदा हो जायगी जो आज कहीं दिखाई नहीं देती। वह शक्ति ऐसी होगी जो सफेद और लाल दोनों आतंकों का साथ-साथ मुकाबला कर सकेगी। इस शक्ति का जल्द-से-जल्द निर्माण हमारा उत्तर भी है, और उत्तरदायित्व भी। उसके सिवाय दूसरा कोई उत्तर किसीके पास नहीं है। नक्सालवाद पुलिस और फौज की समस्या नहीं है। वह समस्या है समाज की। उसका जन्म समाज के भीतर से हुआ है। समस्या समाज की है तो समाधान भी समाज का ही होगा। जिसका दर्द है उसीको दवा ढूंढनी है।•

मिलकर कैसे किया जा सके, यह सवाल हमारे सामने है। किस प्रकार के सम्बन्ध हों, और कैसा नेतृत्व हो, ताकि उस समुदाय में इन गुणों का विकास हो सके ?

बड़ी बड़ी हमारी संस्थाएं हैं, अब उनको हम छोटी छोटी कर रहे हैं, देश भर में यह प्रक्रिया जारी है। लेकिन केवल इस विकेन्द्रीकरण से काम नहीं चलता। गांव है छोटा-सा। देश का बहुत ही नगण्य-सा भाग है, जो विकेन्द्रित है। लेकिन वह ५०० आबादी का छोटा सा गांव क्या एक समुदाय है, वहां लोगों में बराबरी है, समता है, परस्पर-सहयोग है, सद्भावना है ? ऐसा नहीं है। इसीलिए केवल हम संस्थाएं छोटी कर देंगे, तो केवल छोटा करने से हमारा काम नहीं चलेगा। इस दृष्टि को किस प्रकार से हम हर क्षेत्र में उतार सकते हैं अपने काम के, यह विचार तो हम सभी कर रहे हैं, लेकिन बहुत स्पष्ट उत्तर नहीं मिल सका है अभी तक। प्रयोग हो रहे हैं।

गांधी-विचार : साम्यवाद से आगे का

हमने अभी कहा कि समाजवाद और साम्यवाद से आगे गांधी का विचार है तो क्यों कहा ? क्योंकि समाजवाद में राष्ट्रीयकरण होता है, उद्योग का, व्यापार का, तो उस राष्ट्रीयकरण में इतना ही होता है कि जो सम्पत्ति, उद्योग, व्यापार पहले पूंजीपतियों के हाथों में था, अब वह राज्य के हाथों में आ जाता है। अब उसमें मुनाफा होता है तो राज्य के खजाने में जाता है। लेकिन वे बातें तो उसमें नहीं आतीं जिनका जिक्र हमने किया। गाउर-केला में या भिलाई में, चित्तरंजन में या और भी कहीं, या जीवन-बीमा निगम में, या इन राष्ट्रीयकृत बैंकों में, वे सम्बन्ध तो नहीं हैं, वे समुदाय तो नहीं बने हैं। वहां काम करनेवाले और काम करानेवाले दिखते हैं। हम नौकर हैं, हम मजदूर हैं, व्यवस्था में जो हैं मालिक हैं, या काम देनेवाले हैं, इस प्रकार का टकराव है। राष्ट्रीयकरण होने के बाद भी वहां हड़ताल होती है। वहां भी घेराव होता है। तो यह स्थिति कि, हम सब इसको चला रहे हैं, इसमें हमारी राय ली जा रही है, हर स्तर से, जो इसमें काम करनेवाले हैं, वे सब उसमें भाग लेनेवाले हैं, कहां आ पायी है ? जहां बहुत दिनों से समाजवादियों के हाथों में सत्ता रही है, उस स्वीटजरलैंड देश में कई वर्ष पूर्व मैं गया था। चूंकि मैं यहां समाजवादी पार्टी में था, समाजवादी था, इसलिए वहां के समाजवादी लोग परिचित हैं, कम से कम नाम से परिचित हैं। तो वहां के समाजवादी पार्टी के जो बड़े नेता थे, उन्होंने एक दावत दी थी हमारे लिए। उस दावत में वहां के राष्ट्रीयकृत लोहे के उद्योग के डाइरेक्टर जनरल कहिए, मैनेजिंग डाइरेक्टर कहिए, वह हमारे बगल में ही बैठे थे, तो हमने पूछा कि 'आपके जो मजदूर हैं, वे कारखाने को चलाने में, उसकी व्यवस्था संभालने में कोई रुचि लेते हैं ?' उन्होंने कहा, 'कोई रुचि नहीं दिखाता है। हम चाहते हैं, उसके लिए गुंजाइश है। उनकी मजदूरी काफी है, आमदनी काफी है, तो उनकी दिलचस्पी इस बात में रहती है कि आज इस मुहल्ले में दो कमरे का फ्लैट मिला है, तो दूसरे मुहल्ले में तीन कमरे का फ्लैट कब मिल जायेगा। आज फलाने किस्म की मोटर गाड़ी हमारे पास है तो उससे अच्छी किस्म की गाड़ी कब ले लेंगे। साल में एक महीने की छुट्टी होगी तो हम इटली जायेंगे कि दक्षिण फ्रांस जायेंगे घूमने के लिए।' बल्कि रिवियरा का नाम लिया, जहां लोग जाकर तैरते हैं, नहाते हैं, और इसी तरह कुछ करते हैं। यानी केवल समाजवादी शासन है, वर्षों से है, और राष्ट्रीयकरण हो गया है। लेकिन इतने से वहां के लोगों में कोई समाजवादी मूल्य स्थापित हो गये हों ऐसा कुछ नहीं दिखाई दिया।

केन्द्रित उद्योगों के दुष्परिणाम

अब जरा आगे भारी केन्द्रित उद्योगों के दुष्परिणामों पर भी ध्यान दीजिए। अमेरिका में एक बहुत बड़ा झील क्षेत्र था। वह झील क्षेत्र मर चुका है। अमेरिका की एक कमेटी ने यह रिपोर्ट दी कि उसमें कोई जीवन नहीं रहा। क्यों ? इसलिए कि उस झील के किनारे अत्यधिक पेस्टिसाइड, और इन्सेक्टिसाइड (जीवाणु और कीटाणुनाशक दवाओं) के प्रयोग हुए। कारखाने का पानी, जिसमें अनेक प्रकार की जहरीली चीजें मिली होती हैं, वह सब वर्षों तक झील में जाता रहा। धीरे-धीरे मछलियां मर गयीं, पानी के सब जीव मर गये। झील ही मर गयी। अब उनका कहना है कि अगर हम झील को वापस लाना है, उसको मानव के उपयोग के लायक बनाना है, तो एक सौ वर्ष लगेगा। उसके लिए यह सारी दूषण प्रक्रिया रोकनी पड़ेगी।

प्रेसिडेण्ट निक्सन ने न जाने कितने मिलियन डालर का बजट बनाया है इसे रोकने के लिए। अब यह देखिए टेक्नोलॉजी का हाल, सब तरफ जहर—हवा में, पानी में, जानवरों में। डी० डी० टी० का प्रयोग बन्द कर दिया उन्होंने। उसका कहीं इस्तेमाल नहीं होता है। क्योंकि यह एक ऐसा जहर है कि उसका जहां कहीं भी प्रयोग हुआ, वहां से चारे आदि के मार्फत मवेशियों के शरीर में वह चला गया। जब मनुष्य उनका मांस खाता है, तो उसका बुरा परिणाम होता है। जैसे अणु का परिणाम होता है, 'रेडियेशन' का, उसी प्रकार का परिणाम होने लगता है।

कैलिफोर्निया का एक बड़ा शहर है लॉस-एंजिलस के पास। अब बहुत बड़ा हो गया है। वह फिल्म-उद्योग का केन्द्र है। उसे दुनिया भर का क्रीड़ा स्थान समझ लीजिए। अच्छी आब-हवा है। अब वहां जितनी मोटरें हैं, उतनी मोटरें अमरिका में और कहीं नहीं हैं। फिल्म-उद्योग और क्रीड़ास्थल होने की वजह से सब लोग आते हैं। वहां बड़ा धन है। शायद अमरिका में औसत आबादी में तीन आदमी के पीछे एक मोटर है, लेकिन वहां हर आदमी के पीछे एक मोटर है। अब इसका परिणाम यह हुआ कि—मोटरें जो धुआं छोड़ती हैं, उस धुएं में होता है कार्बन मोनोक्साइड,

जो फेफड़ों को नुकसान पहुँचाता है—वहाँ का सारा वायुमण्डल दूषित हो गया, बहुत जबरदस्त पोल्यूशन (कलुषीकरण) हो गया। अब वहाँ 'प्लांट' (संयत्र) तैयार कर रहे हैं, कि हवा को शुद्ध करें। यह पूंजीवाद का, और यन्त्रवाद का एक नतीजा है। मुनाफे के लिए कारखाने बढ़ाते गये, बढ़ाते गये। समाज क्या कीमत चुका रहा है, उसको जोड़ते नहीं, उससे उन्हें कोई मतलब नहीं।

हमारे यहाँ ही किसी गांव में चीनी का कारखाना खोल दिया जाता है, चारों तरफ उसके कारण जो बदबू फैलती है, उसी में लोगों को रहना पड़ता है। अब आस पास के जो गांव हैं, उनको यह कीमत चुकानी पड़ती है, क्योंकि हवा दूषित हो जाती है।

मैं गया प्रतापपुर, जंगली इलाका है हजारीबाग का। वहाँ एक नाला बहता है। गर्मी में वह सूखता नहीं और पहाड़ी नदियों की तरह। उस पानी में कुछ खास तत्त्व हैं, जो स्वास्थ्यप्रद हैं, जिसे वैज्ञानिकों ने पाया है। अब जहाँ से वह निकलता है करीब-करीब वहीं पर एक शराब का कारखाना बन गया। उसकी सब गन्दगी उस नाले में जाती है, पानी खराब होता है। हमारे यहाँ की नदियों का इतना कलुषीकरण हुआ है, जिसका ठिकाना नहीं। शहरों का सारा कचरा नदियों में जाता है, कारखानों का जाता है। इन कारखानेदारों को—चाहे वह सरकार हो, या पूंजीपति—इसकी कीमत चुकानी चाहिए। कहीं और डालो, साफ करो। नदी में फेंक देते हो? हवा में छोड़ देते हो? जमीन पर डाल देते हो? यह तो सरासर अन्याय है आम जनता के साथ!

मशीन मालिक न बने

यह सब मैं क्यों कह रहा हूँ? इसलिए कह रहा हूँ कि अमेरिका और यूरोप में ऐसे लोग हैं, जो कि इस परिस्थिति को देखकर यह कह रहे हैं कि विलियम मारिस, थोरो, टालस्टाय, गांधी आदि लोगों ने जो कुछ कहा है, इस टेक्नालॉजी के बारे में, इन यन्त्रों के बारे में, इस विज्ञान को किस प्रकार से इस्तेमाल करना चाहिए इसके बारे में, वह बिलकुल सही है। टेक्नालॉजी के गांधीजी दुश्मन नहीं थे, मशीन के दुश्मन नहीं थे। मशीन हमारी मालिक न बने, यह वह चाहते थे। मालिक बन गयी है मशीन, कोई नियन्त्रण ही नहीं उसके ऊपर। चाहे कोई राज्य हो, पूंजीपतियों का हो, कम्यूनिस्टों का हो, समाजवादियों का हो, इससे फर्क क्या होता है? सबकी कोशिश है कि स्वयंचालित उद्योग बढ़ें। इस तरह की टेक्नालॉजी विकसित हो, कि केंद्रीकरण अधिक-से अधिक होता रहे, और सत्ता केन्द्रित रहे। राजनैतिक सत्ता उनके हाथ में आ गयी और आर्थिक सत्ता भी उन्हीं लोगों के हाथों में गयी है। रोजी भी उनके हाथ में है, आपको जेलखाने में डालने का अधिकार भी उनके हाथों में है। इस तरह राज्य के हाथों में सारी सत्ता आ जाय, यह तो भयंकर गुलामी की स्थिति है। विज्ञान का इस्तेमाल मुनाफे के हित में हो रहा है, या तो सत्ता के हित में हो रहा है। 'मुनाफा' और 'सत्ता', इन्हीं दोनों की मातहत मशीन आज तक रही है और इन सत्ताकांक्षियों ने, मुनाफा चाहनेवालों ने मशीनों का उपयोग किया है, जिसका नतीजा हम देखते हैं कि आज क्या हो रहा है।

अगर समाज का हित हम सोचेंगे, तो उस दृष्टि से हमको विचार करना होगा कि मशीन को हम कहाँ तक ले जायें, जिससे समाज का हित इसमें से निकले। मशीन का अपना हित तो कोई है नहीं।

तीन खण्ड

मूल्य ६.००

लेकिन समाज का एक अंग, चाहे वह सत्ता का आकांक्षी हो, चाहे वह मुनाफाकांक्षी हो, उसके ऊपर हावी न होने पाये, इस प्रकार से टेक्नालॉजी का सामाजीकरण किया जाय। प्रश्न राष्ट्रीयकरण का नहीं, समाज के अधीन कैसे बनाया जाय, इसका है।

यहाँ (गांधी आश्रम, अकबरपुर में) छोटी-छोटी मशीनों से काम होता है, उसके पीछे ये सब विचार हैं। हम नहीं समझते हैं कि जो मशीनें आज हैं, वे कल भी रहेंगी। लेकिन ये जो विचार हैं, वे रहेंगे। और इन विचारों की कसौटी पर कसना होगा टेक्नालॉजी को, बेकारी की दृष्टि में, विकेन्द्रीकरण की दृष्टि से। क्योंकि केन्द्रीकरण होगा, तो चाहे लाख सहकार हो मजदूरों का व्यवस्था में, कोई फर्क नहीं पड़ेगा। इसलिए यह दृष्टि रखनी होगी, कि अतिकेन्द्रित समाज न हो, बेकारी फैले नहीं, और इसमें से इस प्रकार का 'पोल्यूशन' न हो।●

अकबरपुर, (फैजाबाद), ४ मई '७०

[पृष्ठ ५९६ का शेषांश]

को गलत रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। वास्तव में जे०पी० नक्सालवाद के कारणों को समाप्त करने के काम में लगे हैं, जैसा कि उन्होंने पहले ही स्पष्ट किया है।

अहिंसक क्रांति से समस्याएं हल हो जायेंगी और उसके परिणामस्वरूप नक्सालवाद निरर्थक हो जायगा, यह अलग बात है, और उन समस्याओं की ओर ध्यान न देकर नक्सालवादियों को अशांति और अव्यवस्था का कारण मानकर उनसे प्रत्यक्ष संघर्ष में जूझना अलग बात है। स्पष्ट है कि जे० पी० का दृष्टिकोण समस्याओं के समाधान के लिए अहिंसक शक्ति विकसित करना है, शोषण और निर्दलन की मौजूदा समाज में अन्तरनिहित हिंसा की ओर से निगाहें फेरकर केवल नक्सालवादी हिंसा को समाप्त करने के प्रयत्न में लगना नहीं।●

विनोबा-निवास से

वेदाभ्यासी बाबा : निवृत्ति का आनन्द

सुबह के आठ बजे हैं। स्नान करके बाबा सायणाचार्य का ऋग्वेद का भाष्य लेकर बैठे हैं। तीन-चार दिन हुए उसीमें उनका ज्यादा समय जा रहा है। किसीने पूछा, "बाबा ऋग्वेद सार पर लिखेंगे ?" जवाब मिला, "कोई संकल्प नहीं है। संकल्प सिर्फ सात दिन का होता है। सात दिन में कोई किताब कैसे लिखी जायेगी ?" फिर इतना गहरा अध्ययन किसलिए ? यह सवाल मन में उठता है, लेकिन पूछा नहीं जाता।

विद्यार्थी बाबा और मित्र दोस्त

उस दिन बंग साहब दोपहर में आये थे। उन्होंने देखा, बाबा खाट पर छोटा टेबल लिये बैठे हैं दीवाल की तरफ मुंह करके। बंग साहब ने कहा, 'विद्यार्थी-दशा प्रारम्भ हो गयी दीखती है।"

बाबा विद्यार्थी कब नहीं थे ? अध्ययन के बिना उनका एक दिन नहीं जाता।

परधाम आश्रम के गिरिधारी भाई तीन-चार दिन के लिए आये थे। साधना-मार्ग में कुछ मार्ग-दर्शन चाहते थे। २२ साल की उम्र है। पैदाइश है राजस्थान की। जवानी में घरबार, सुख-सुविधाओं को छोड़कर आश्रम में रहनेवाले इस लड़के को घरवाले पागल समझते हैं। ऐसे गिरिधारी भाई से बाबा कह रहे थे, "बाबा का भाग्य कहो या पुरुषार्थ, बचपन से ऐसे मित्र मिले हैं कि आज तक वे साथ दे रहे हैं। १२-१५ मित्र थे, जी-जान से सार्वजनिक काम में मदद करते रहे आज तक। सात-आठ तो मर गये। जो हैं वे अभी भी इसी काम में हैं। बाबा ने मित्रों की सेवा भी की, रात में जागकर भी। इसलिए वे ऐसे चिपके हैं कि छोड़ते नहीं। इनके अलावा दूसरे भी मित्र हैं। बाबा का मित्र परिवार कितना बड़ा है, यह राजगिर सम्मेलन में आनेवाले को पता चला होगा। वहां हजारों लोग ऐसे आये थे, जिनका बाबा से व्यक्तिगत परिचय था। फिर भी बाबा के जो असल मित्र हैं वे तो दूसरे ही हैं। इस साल नामदेव की सप्तशती है तो उस मित्र से बात करता हूं। वैसे ही ज्ञानदेव, तुकाराम, रामदास के साथ मैत्री है। नानक, तुलसीदास कबीर, नरसी मेहता, शंकरदेव, माधवदेव इन सन्तों से मैत्री है। और शंकर, रामानुज, गौतम बुद्ध, व्यास, वाल्मीकि, शुकदेव, जीसस, मुहम्मद, ये सारे हमारे बचपन से दोस्त रहे हैं। इसलिए अकेलापन कभी महसूस नहीं हुआ।

'सालीटरी सेल' और ध्यान का शिक्षण

मैं जेल में था तब की बात है। साथवाले कैदी ऊधम मचाते थे। जेलर के पास शिकायत गयी। उसे कहा गया कि विनोबा उनका (ऊधम करनेवालों का) नेता है। जेलर ने हुक्म दिया, "भेज दो साले को गुसलखाने में।" बाबा की रवानगी 'सालीटरी सेल' (तनहाई की सजा दी जानेवाली कोठरी) में हो गयी। आठ फुट चौड़ी, आठ फुट लम्बी वह कोठरी। कोई काम नहीं दिया, न खबरें दी, न कागज, न पेंसिल, न किताब। फांसी के कैदी को जो कोठरी दी जाती है वही कोठरी, और वैसी ही सजा। उस कोठरी के अन्दर मैं सुबह से शाम तक चारों ओर घूमता था। हिसाब लगाता था, १६ मील घूमना होता था। गति मेरी घंटे में दो मील की थी। तगड़ी भूख लगती थी। खाना हजम होता था। कोई काम तो था नहीं। मुझे करीब ४० हजार श्लोक कंठस्थ थे—संस्कृत मराठी, गुजराती, हिन्दी, तमिल, तेलगू आदि भाषाओं के। चिन्तन, मनन करता था और मजे में रहता था। रात में पहरेदार आता था, देखता था कि बाबा ध्यान कर रहा है। एक दिन उसने मेरी आंख पर प्रकाश डाला, मेरी आंख खुल गयी। उसने पूछा, "आप रोज रात में आंख बन्द करके क्या करते हैं ?" मैंने बताया "मैं ध्यान करता हूं।" फिर वह ध्यान के बारे में पूछने लगा। मैंने उसे बताया। फिर तो वह मेरा विद्यार्थी बन गया। रोज रात में उसे समझाता था। वह भी ध्यान करने लगा और उसके अपने अनुभव मुझे सुनाता था।

मैं तो कोष ही पढ़ता हूं

आजकल बाबा के पास ऋग्वेद-सार, विष्णुसहस्रनाम, नामदेव के भजन और आक्सफोर्ड डिक्शनरी, इतनी किताबें चिन्तन के लिए रहती हैं। डिक्शनरी का उनका अध्ययन प्रत्यक्ष देखने जैसा है। 'एस' में कितने शब्द हैं, 'आर' में कितने शब्द हैं, सबका हिसाब है। नागरी लिपि में इसकी रचना कैसे की जा सकती है, इसकी उनकी योजना, कल्पना भी है।

एक बार उन्होंने कहा, "कुछ लोग मुझे आग्रह करते हैं कि फलानी किताब पढ़ो, फलाना लेख पढ़ो। अरे भाई ! मैं तो डिक्शनरी ही पढ़ता हूं। आप जो लिखते हैं उसमें डिक्शनरी के बाहर के शब्द तो नहीं रहते हैं न ! तमाम सब लेख आदि डिक्शनरी में मैं पढ़ लेता हूं।"

जब से गर्मी बढ़ी है, बाबा का सुबह का घूमना जारी है। शाम का घूमना बन्द है। बरामदे में तो दिन भर में कई बार घूम लेते हैं। उसमें व्यायाम और चिन्तन, दोनों हो जाता है।

शाम को ५-३० बजे सब काम से निवृत्त होकर खटिया पर वेद पढ़ते रहते हैं, और ६-३० बजे मौन प्रार्थना के बाद फिर वे सो जाते हैं। एक दिन शाम को तूफान आया तो बाबा ने वेद की किताब बन्द की और उठकर बैठे। सामने बैठे थे ग्रामसेवा मंडल के मंत्री रणजीत भाई, जो बाबा के परधाम-आश्रम के पुराने और प्रमुख सदस्य हैं, उनके अलावा उसी आश्रम के असमिया भक्त-हृदय भाई हेमदत्त और ब्रह्म-विद्या मन्दिर की मीरा बहन, जिन्होंने कर्नाटक में कस्तूरबा ट्रस्ट में कई वर्ष काम किया है, भूदान मांगने

हुए यात्राएँ भी की हैं। ऐसी ही बातें हो रही थीं।

चित्त की शुद्धि और साधना

बाबा ने कहा, 'अक्सर लोगों की शिकायत यह रहती है कि ध्यान करते समय एकाग्रता सधती नहीं। मन इधर-उधर दौड़ता है या नींद आ जाती है। एक तो शून्य की तरफ चित्त दौड़ता है या फिर अनेकाग्रता। चित्त में आलस होता है इसलिए नींद आती है, यह है तमोगुण। और दूसरा रजोगुण। असल में ध्यान करने की चीज है नहीं। यह भावना है, सहज होती है, चित्त में अनेक कामनाएँ होती हैं, मत्सर होता है, एक साथ रहते हैं लेकिन इसका मुख वह देख नहीं सकता, उसका मुह नहीं देख सकता। नजदीक रहते हैं तो एक-दूसरे के साथ ही नजर आते हैं। इस तरह से मनुष्य अपना चित्त अशुद्ध कर लेता है। इसलिए गीता कहती है, प्रसन्नता से बुद्धि की स्थिरता होती है। प्रसन्नता यानी चित्त में मल का न होना। उस दृष्टि से सोचकर चित्त में कौनसा मल है, यह देखना, उसे धोना। फिर चित्त को एकाग्र करने की जरूरत ही नहीं। बाबा को चित्त को एकाग्र बनाने के लिए प्रयत्न ही करना नहीं पड़ता। हमेशा चित्त एकाग्र ही होता है। चारों तरफ ध्यान देना पड़ता है तब प्रयत्न करना पड़ता है। उसमें चित्त को श्रम होता है। मन का एक जगह रहना स्वाभाविक होता है, इधर-उधर दौड़ना वह नहीं चाहता। ऐसा बाबा का है। यानी क्या? यह आलसी मनुष्य का लक्षण है।"

× × ×

देश की दुरावस्था : सुशीला नैयर की चिंता, बाबा की अचिंता

अचानक दोपहर में सुशीला नैयर आयी थीं। उन्होंने देश की परिस्थिति की चर्चा की। नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है, बड़ों से लेकर छोटे लोगों तक असत्याचरण कर रहे हैं। इधर-उधर हिंसा फूट निकलती है। देश के टुकड़े होने का खतरा है, इत्यादि बातें करते हुए दुःख से उनकी आँखों में आँसू आ गये थे। बाबा को कुछ कहना चाहिए, बोलना चाहिए, ऐसा उनका अनुरोध था।

बाबा ने कहा—"१९१८ में मेरी माँ की मृत्यु हुई, उस दिन से मैंने वेद का अध्ययन शुरू किया। उसका सार भी निकाला है। आज भी अधिक-से-अधिक समय उसीमें दे रहा हूँ। अखबार कब पढ़ता हूँ? जब दोपहर का खाना खत्म होता है, नींद आने लगती है तब १०-१५ मिनट पढ़कर फेंक देता हूँ। यह बाबा का आज लोगों पर उपकार है कि बाबा अभी थोड़ा अखबार पढ़ता है। कुछ दिन के बाद वह भी नहीं पढ़ेगा। कल का अखबार आज पढ़ा नहीं जाता, और यह वेद दस हजार साल पुराना है। लोकमान्य तिलक ने कई ग्रंथ लिखे थे, लेकिन आज उनके 'गीता रहस्य' को छोड़कर कुछ भी नहीं पढ़ा जाता। गांधीजी की आत्मकथा को भी संक्षिप्त करना पड़ा। गांधीजी का 'मंगल-प्रभात' पढ़ा जायेगा। यानी जिसका स्थायी मूल्य है, ऐसा साहित्य पढ़ा जायेगा; राजनीतिक जो लिखा गया वह पुराना पड़ गया। कायम क्या रहेगा? मन में गो, एण्ड मेन में कम, बट आई गो आन फारएवर'। वेद पढ़ने में बाबा को अपना कल्याण मालूम होता है। सारी दुनिया का क्या होगा, उसे चलानेवाला भगवान है ही। वह देख लेगा।

'पहले हिमालय नीचे था और राजस्थान में समुद्र था। अब वह समुद्र हट गया और हिमालय ऊपर आ गया। आज ही पेपर में पढ़ा कि पेरू में भूकम्प हुआ है। ऐसी सारी हलचलें पृथ्वी में चल रही हैं। इसलिए क्या भूदान, क्या ग्रामदान और क्या आपकी राजनीति, सारा-का-सारा एक दिन पानी में डूब सकता है। इसलिए मैं यह करूँगा, वह करूँगा, उसमें कोई सार नहीं है। हमें क्या करना चाहिए, और हमारा क्या कर्तव्य है, वह हमें सोचना चाहिए, और उसे करना चाहिए। लोग कहते हैं कि बाबा सेवा करता है, लेकिन लोग ही मेरी सेवा ज्यादा करते हैं, मैंने तो कुछ नहीं किया है। मैं खाना खाता हूँ तो ऋण-मुक्ति के लिए थोड़ा कुछ करता हूँ। अगर मैं परमेश्वर के पास जाता हूँ ऐसा बाबा सोच लेगा तो खाना भी छोड़ देगा और तब उतनी भी सेवा नहीं करेगा। ध्यान करता बैठेगा। आज खाता है इसलिए थोड़ी कुछ सेवा करता है।

दिल बिगड़ा नहीं, दिमाग में खराबी आयी

"जितनी और जगहों में जो घटनाएँ हुईं व ४०० साल पहले हुई होतीं तो आपको पता भी नहीं चलता। चीन ने हिन्दुस्तान का कोई भाग ले लिया, यह खबर आज विज्ञान के कारण तुरन्त मालूम हो जाती है। मगर, ऐसी जो घटनाएँ होती हैं उसका मन पर एकदम असर नहीं होना चाहिए। अगर 'परसेंटेज' निकाला जाय कि कितने लोग काटे गये, मारे गये, तो बहुत कम आयेगा। मतलब लोगों का दिल बिगड़ा नहीं है, दिमाग में थोड़ी खराबी आयी है। उसका क्या इलाज है? हमें एक-दूसरे के ग्रंथ एक-दूसरे के पास पहुँचाना चाहिए। एक-दूसरे के धर्मों का क्या सार है, यह जानना चाहिए। हमने 'कुरान सार' निकाला तब हमारे अच्छे-से-अच्छे एक कार्यकर्ता ने पूछा कि आप कुरान का अध्ययन करते हैं तो क्या कुरान में भी कोई अच्छी बात है? इतना अज्ञान भरा हुआ है! वह किताब हिन्दुओं के पास पहुँचानी चाहिए और 'गीता प्रवचन' मुसलमानों के पास पहुँचानी चाहिए। इसीसे दिल जुड़ेगा।"

—कुसुम

मरनेवालों के सम्मान में ?

•सिद्धराज ढड्ढा

मरनेवालों के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए हमारे देश में कुछ ऐसी परम्पराएँ हम डाल रहे हैं जिनके बारे में शुरू में ही गम्भीरता से सोचना आवश्यक है, वरना आगे जाकर ये परम्पराएँ देश के विकास में बाधक बन सकती हैं, और रूढ़ हो जाने पर फिर उनको दूर करना मुश्किल हो सकता है।

अभी कुछ दिन पहले भारत सरकार के विधि-मंत्री श्री गोपाल मेनन का देहान्त हुआ, और न सिर्फ दिल्ली में भारत सरकार के दफ्तर, बल्कि राज्य-सरकारों के दफ्तर भी उनके "सम्मान" में बन्द कर दिये गये। श्री गोपाल मेनन जिस विभाग के मंत्री थे उस विभाग का दफ्तर अगर बन्द हो तो बात कुछ समझ में आ सकती है, लेकिन भारत सरकार के सारे दफ्तर बन्द हो जायँ और राष्ट्र का काम ही एक दो दिन के लिए विलम्बित हो जाय, इससे मरनेवाले के प्रति हम कौनसा सम्मान व्यक्त करते हैं यह समझ में नहीं आता? यह समझा जा सकता है कि किसी भी व्यक्ति के मरने पर उसके इष्ट-मित्र, या जिन लोगों का उससे व्यक्तिगत सम्बन्ध आया हो, उनकी यह स्वाभाविक इच्छा हो सकती है कि वे मृतक की अन्त्येष्टि में शरीक हों या मातम पुरसी के लिए उसके घर जायँ। मंत्रियों से इस प्रकार का सम्बन्ध रखनेवाले, या उनके सम्पर्क में आनेवाले सामान्यतया कुछ बड़े अफसर या अन्य उसी श्रेणी के लोग हो सकते हैं, और जिन्हें इधर-उधर जाने के लिए किसीसे छुट्टी लेने की या दफ्तर बन्द करने की आवश्यकता नहीं होती।

एक कदम और आगे सोचें। भारत सरकार के मंत्रियों की मृत्यु पर दिल्ली में भारत सरकार के जो दफ्तर हैं वे भले ही बन्द हों, पर दिल्ली से बाहर भारत सरकार के दफ्तर बन्द हों इसका सिवाय इसके और कोई कारण नहीं हो सकता कि मरनेवाले के प्रति "सम्मान" प्रदर्शित करने का हम एक ही तरीका जानते हैं, और है वह काम बन्द करने का! इस तरह काम बन्द करने में सम्मान का क्या प्रदर्शन है, यह गम्भीरता से सोचने की बात है।

राष्ट्र के ऐसे किसी व्यक्ति की मृत्यु हुई हो, जिसने स्वभावतः आम लोगों के दिलों में अपना स्थान बना लिया हो, और लोग उसकी मृत्यु से शोकमग्न हो जायँ यह दूसरी बात है। ऐसे व्यक्ति इने-गिने ही हो सकते हैं और होते हैं। अगर काम बन्द करना और सरकारी दफ्तर की छुट्टी करना सम्मान का चिह्न माना भी जाय तब भी राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री (भगवान उन्हें दीर्घायु करे!) की बात अलग है, लेकिन अन्य मंत्रियों आदि के मरने पर दफ्तर 'बन्द' करना कहाँ तक उचित है इस पर सोचना चाहिए। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस विवेचन का सम्बन्ध श्री गोपाल मेनन या अन्य किसीके व्यक्तित्व से नहीं है, यह चर्चा व्यक्ति-निरपेक्ष-सिद्धान्त की चर्चा है। केन्द्रीय सरकार में ५०-५५ मंत्री हैं। अगर केबिनेट स्तर के "बड़े" मंत्रियों की ही बात लें, तो वह भी २०-२५ है। हर बार किसीकी मृत्यु पर दफ्तर बन्द हों इसका राष्ट्र के काम पर कितना असर पड़ सकता है यह समझना मुश्किल नहीं है।

श्री गोपाल मेनन के निधन पर भारत सरकार के ही नहीं, राज्य-सरकारों के दफ्तर भी बन्द हुए। कम-से-कम राजस्थान का मुझे मालूम है, क्योंकि उस दिन मैं जयपुर में था। ऊपर, केन्द्रीय सरकार के दफ्तर बन्द किये जाने के सम्बन्ध में जो कुछ कहा गया है वह राज्य-सरकारों के दफ्तर बन्द किये जाने के बारे में और भी ज्यादा प्रासंगिक है। केन्द्रीय सरकार के मंत्रियों के अलावा राज्य सरकार के मंत्री भी हैं। फिर एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच शिष्टाचार का यह आदान-प्रदान भी बिल्कुल सम्भव है कि किसी एक राज्य के मंत्री के मरने पर दूसरे राज्य में छुट्टी हो। इस प्रकार हर मंत्री की मौत पर छुट्टी का यह सिलसिला हमको कहाँ ले जायगा यह सोचने की बात है। दफ्तर बन्द होता है, तो काम करनेवालों को छुट्टी मिलती है, लेकिन राजधानियों में सरकार के विभिन्न विभागों में अपने अपने काम से दूर-दूर से रोज सैकड़ों लोग आते हैं, उन्हें कितनी परेशानी, खर्च और कामों में देरी होती है, इसका अन्दाज लगाना भी मुश्किल नहीं है।

मंत्रियों के मरने पर दफ्तर बन्द होने के अलावा एक और परम्परा चल पड़ी नजर आती है, वह है राजकीय "अन्त्येष्टि" की। किसीकी भी शवयात्रा में अधिक-से-अधिक लोग शरीक हों यह अच्छा ही है। कई समाजों में तो अजनबी व्यक्ति की शवयात्रा में शरीक होना, सांकेतिक रूप से ६० कदम ही सही, सामान्य शिष्टाचार का एक अंग माना जाता है। पर "राजकीय अन्त्येष्टि" में सवाल सिर्फ सरकारी लोगों के शवयात्रा में शरीक होने का नहीं है, बल्कि उसका कुछ विधि-विधान और आर्थिक पहलू भी है। जहाँ तक मुझे याद है, श्री गोपाल मेनन की राजकीय शवयात्रा में करीब ५०० जवान सेना के, अमुक टुकड़ियाँ अन्य सैनिक शाखाओं की, इत्यादि थीं। इसके कारण राष्ट्र के कामों में होनेवाले विक्षेप के अलावा, खर्च का आर्थिक पहलू भी है, जो कम-से-कम एक गरीब राष्ट्र के लिए महत्त्व रखता है।

इस तरह की परम्पराएँ कुछ और आगे बढ़ जायँ और रूढ़ हो जायँ, उसके पहले ही इन बातों की चर्चा और इन पर विचार होना अप्रासंगिक नहीं होगा। ऐसी बातों में अगर शुरू में ही सोच—

गांधी के प्रयोग : कोसलर की प्रतिक्रियाएँ

[प्रस्तुत है आर्थर कोसलर की गांधी-आलोचना के जवाब में आचार्य कृपलानी द्वारा प्रस्तुत लेखमाला की आखिरी किश्त। किसी पाश्चात्य लेखक की भारतीय चिन्तन की मूलधारा से अनभिज्ञता या अलगाव उस चिन्तक की तात्विक भूमिका को समझने में कितनी बाधक है, इस आखिरी किश्त में यह स्पष्ट होता है। —सं०]

यौन-सम्बन्धी प्रयोग

विद्वान लेखक ने गांधीजी के जीवन और विचार के अन्य पहलुओं को भी आलोचना के लिए स्पर्श किया है। उनकी सारी गलतफहमियों को दूर करना मेरे लिए सम्भव नहीं है। फिर भी एक ऐसा विषय छोड़ देना मैं ठीक नहीं समझता जिसने न केवल विदेशी लोगों, बल्कि इस देश के अनेक लोगों के जिनमें कई तो गांधीजी के निकट के साथी हैं, मन में गलतफहमी पैदा कर रखी है। यह विषय है गांधीजी का यौन-सम्बन्धी प्रयोग, जिसे उन्होंने अपने जीवन के अंतिम वर्षों में नोआखाली (बंगाल) में किया था। लेखक ने गांधीजी द्वारा मुझे लिखे हुए पत्र का उद्धरण भी दिया है। मैंने गांधीजी को क्या उत्तर भेजा था उसका मैं यहाँ जिक्र नहीं करूँगा। कोसलर के लिए मेरी बात समझना कठिन होगा। इस चीज से लेखक तथा अन्य दूसरे लोगों को जैसा धक्का लगा, वैसा कुछ मुझे नहीं हुआ। गांधी ने जो कुछ किया वह हिन्दुस्तान के लिए कोई नयी चीज नहीं है। इस देश में पूर्ण योगी उस मनुष्य को कहा गया है जो बाह्य रूप से इन्द्रियों के विषयों में लिप्त दिखाई देने पर भी स्वयं अलिप्त और अछूता रहता है। मन और चित्त की यही अवस्था क्रियमाण रहते हुए गीता में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युद्ध करने का आदेश दिया है। गीता की यह शिक्षा यदि कोसलर को हृदयंगम नहीं होती तो इसके लिए उन्हें दोषी नहीं ठहराया जा सकता। यह आध्यात्मिक विकास की एक अवस्था है, जो साधना से ही शक्य है।

मनुष्य के अन्दर काम एक अत्यन्त शक्तिशाली वेग है, जिस पर काबू रखना बड़ा कठिन है। यह शक्ति मनुष्य ने वनस्पति-जगत् से प्राप्त की है। साधक को शरीर के इस वेग पर काबू रखना पड़ता है। हिन्दू धर्म-ग्रन्थों में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब कि बड़े-बड़े ऋषि व साधु इस प्रलोभन के सामने विचलित हो गये। गांधी यह देखना चाहते थे कि स्वयं वे इससे मुक्त हैं या नहीं। इतनी सतर्कता उन्होंने जरूर बरती कि यह प्रयोग उन्होंने अपनी पोती के साथ किया, जिसे हिन्दुस्तान में अपनी लड़की की बराबर यानी पुत्रीवत् माना जाता है। इस बारे में मतभेद हो सकता है कि जो कुछ गांधी ने किया वह ठीक था या नहीं। लेकिन यहाँ विचारणीय वह चीज है कि इस प्रयोग के पीछे गांधी का मन्तव्य व उद्देश्य क्या था? क्या यह प्रयोग कामुकता से प्रभावित था या इसके पीछे यह भावना निहित थी कि काम विषय में गांधी को कहाँ तक सफलता मिली थी? ईश्वर-प्राप्ति के लिए ऐसे प्रयोग भारत में और भी हुए हैं। बरसात को छोड़कर हर मौसम में गांधीजी खुले आसमान के नीचे सोते थे। बरसात में भी वह बरामदे में सोते थे। वह कभी अकेले न सोते, बल्कि कई एक साथियों के साथ सोते थे। अगर उनके प्रयोग के पीछे कामुकता होती तो वह मुझे क्यों लिखते? उनके लिखने के पहले मुझे यह मालूम भी नहीं था कि वह क्या प्रयोग करने जा रहे हैं।

फिर यह कहना कि वह एक युवा लड़की को 'गिनी सुअर' की तरह इस्तेमाल कर रहे थे बिलकुल ओछी बात है। 'गिनी सुअर' पर बिना उसकी सम्मति के प्रयोग किया जाता है। सुधारकों

—समझकर मर्यादाएँ तय न की जायँ, तो फिर सामान्य तौर पर इन चीजों की प्रवृत्ति इनके उत्तरोत्तर विस्तार की ओर, इनमें होनेवाले विधि विधानों के बढ़ने की ही होती है। कभी-कभी "सम्मान" प्रदर्शित करने की होड़ भी लग जाती है। जनतंत्र में, जहाँ एक से अधिक पार्टियाँ हैं, वहाँ सरकारी खजाने और सरकारी व्यवस्था के बल पर यह उत्तरोत्तर बढ़ सकती है। पिछले सप्ताह केन्द्रीय मंत्री श्री गोपाल मेनन के सम्मान में यह सब हुआ, इसी सप्ताह मध्यप्रदेश के एक वरिष्ठ मंत्री श्री मुजीब-उल-हसन दुबे के सम्मान में वहाँ के सरकारी दफ्तर बन्द रहे, और उनकी राजकीय अन्त्येष्टि भी की गयी। यह कल्पना करना गलत नहीं होगा कि अगर इस प्रवृत्ति को रोका या मर्यादित नहीं किया गया तो आगे जाकर यह फिर विधायकों, जिला परिषद् के पदाधिकारियों आदि तक पहुँच सकती है—कम-से-कम उनके अपने अपने दायरे में।

इन राजकीय अन्त्येष्टियों को, और ऐसे मौकों पर सरकारी कामकाज बन्द कर देने की परम्परा का एक और पहलू भी विचारणीय है। जहाँ तक हो सके वहाँ तक एक नागरिक और दूसरे नागरिक के बीच समानता जनतंत्र या लोकशाही का प्राण है। लोकशाही में विशिष्ट व्यवहार या—प्रिविलेजेज—जितने कम विस्थापित हों उतना अच्छा, वरना धीरे धीरे ऐसी विशिष्टताओं के बढ़ने पर लोकशाही सामन्तवाद में परिणत हो सकती है। ऐसी बातों से समाज में तानाशाही के लिए जमीन तैयार करने का काम भी होता है। मुझे मालूम नहीं कि राजकीय अन्त्येष्टि या मृतक के सम्मान में काम बन्द के पक्ष की दलीलों में कितना वजन है, लेकिन लोकशाही के भविष्य की दृष्टि से, और खासकर के एक गरीब मुल्क के लिए आवश्यक प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए, यह उचित लगता है कि ये सामन्तवादी परम्पराएँ बन्द की जायँ।●

और आविष्कारकों ने अपने साथियों पर प्रयोग किये हैं। जबतक स्वयं की इच्छा के विरुद्ध किसी पर प्रयोग न किया जाय तब तक 'गिनी सुअर' का उदाहरण ठीक नहीं है। गांधी ने जब अपने देशवासियों को अहिंसात्मक आन्दोलन में कूद पड़ने का आह्वान किया तो यह जानते हुए भी कि यह जोखिम का काम है, हजारों हजार लोग उनके आन्दोलन में कूद पड़े। यह कोई 'गिनी सुअर' वाला प्रयोग नहीं कहा जा सकता। गांधी ने आन्दोलन में शामिल होने के लिए अनिवार्य सैनिक-सेवा जैसी चीज नहीं लागू की थी। मनु गांधी गांधीजी के प्रयोग में शामिल होने-न-होने के लिए स्वतंत्र थी और उम्र के लिहाज से भी काफी बड़ी हो चुकी थी, कोई छोटी अबोध लड़की नहीं थी। जहाँ तक मुझे मालूम है, अपने जीवन में बाद में भी उन्हें इस प्रयोग के लिए कभी भी क्षोभ या पश्चात्ताप महसूस नहीं हुआ। कोसलर की इस सम्बन्ध में चिन्ता निरर्थक है।

ब्रह्मचर्य

आध्यात्मिक साधना के लिए हिन्दू ही नहीं, बौद्ध, जैन तथा ईसाई धर्म भी ब्रह्मचर्य का महत्त्व स्वीकार करते हैं। इन धर्मों के पुजारी-वर्ग को इसकी साधना करनी पड़ती है। हिन्दू धर्म ने ही आध्यात्मिक क्षेत्र में पदार्पण करनेवाले हर व्यक्ति के लिए इसका विधान किया है। पाश्चात्य जगत् के कुछ आधुनिकतावादियों की यह मान्यता है कि वीर्य पानी या ऐसे ही किसी अन्य तरल पदार्थ की तरह है और इसे पेशाब की तरह ही जब इच्छा हो बाहर निकाला जा सकता है और इससे कोई शारीरिक या मानसिक हानि नहीं होती। साम्यवादियों का भी प्रारम्भ में यही विचार था। मुझे मालूम नहीं, अब उनकी क्या मान्यता है। इस सम्बन्ध में कोसलर से वाद-विवाद नहीं करूँगा। मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि हिन्दू धर्म में ब्रह्मचर्य की बड़ी ही महिमा है और इसकी रक्षा के लिए उसने अनेक नियमों-उपनियमों का विधान किया है। जहाँ तक मुझे मालूम है, आधुनिक मनोविज्ञान की यह मान्यता है कि काम के पूर्ण निरोध से शारीरिक और मानसिक विकृति पैदा होती है। ऐसा शायद स्वाभाविक भी है। आज लोग काम का दमन करना चाहते हैं। वे केवल दमन पर जोर देते हैं। लेकिन हिन्दू जीवन-शास्त्र की यह मान्यता है कि काम का दमन तभी सम्भव है जब अन्य इन्द्रियों को भी उनके आसक्ति के विषयों से हटाया जाय। अगर ऐसा नहीं किया जाता तो आज की भाषा में 'बैचलर' या कुँआरा रहा जा सकता है, लेकिन ब्रह्मचारी नहीं बना जा सकता और यदि कोई इस तरह का 'कुँआरा' मात्र रहना चाहेगा तो उसे शारीरिक व मानसिक तनाव महसूस होगा ही। कुछ भी हो, कोसलर से यह उम्मीद नहीं रखी जा सकती कि ब्रह्मचर्य के हिन्दू आदर्श के वह कायल होंगे। यहाँ मैं इतना ही कहूँगा कि काम के सम्बन्ध में जितनी खोज हिन्दू, जैन, बौद्ध व ईसाई मनीषियों, चिन्तकों व विचारकों ने की है उतनी न पाश्चात्य शरीर-शास्त्र ने, न चिकित्सा या मानव शास्त्र ने ही। फर्क सिर्फ इतना ही है कि इन अन्वेषकों ने अपने ज्ञान को व्यवस्थित ढंग से सश्लिष्ट व लिपिबद्ध नहीं किया।

निष्कर्ष

लेखक ने गांधी के भाषणों और लेखों से अनेक उद्धरण लेकर उनका विरोधाभास और उनकी त्रुटियाँ सिद्ध करने की कोशिश की है। किसी भी ऐसे सुधारक के सम्बन्ध में, जिसने अधिक लिखा या कहा हो, यह सब किया जा सकता है। बाईबिल और 'न्यू टेस्टामेण्ट' से भी उद्धरण लेकर यह दिखाया जा सकता है कि पुराने धर्मगुरु व स्वयं ईसा मसीह अज्ञान व अन्धविश्वास में डूबे हुए थे। हिन्दू धर्मग्रन्थों में तो ऐसी अनेक चीजें मिल जायेंगी। लेकिन इन सभी धर्मग्रन्थों में जो भी ऐसी चीजें हैं वे आस्था के विषय हैं। और जहाँ तक आस्था का सम्बन्ध है वे सही हैं। गीता में कहा भी गया है कि जैसी मनुष्य की आस्था होती है वह स्वयं भी वैसा ही होता है। एक अंग्रेज कवि ने भी कहा है कि 'जहाँ हम सिद्ध नहीं कर सकते वहाँ हम आस्था पर निर्भर करते हैं।' आस्था और विश्वास भी ज्ञान के साधन हैं। व्यक्ति में यदि आस्था व विश्वास न हो तो वह कुछ सोच ही न सके, फिर भी कभी-कभी आस्था धोखा भी सिद्ध होती है। मानवीय बुद्धि और तर्क की भी एक सीमा है। बड़े बड़े राजनीतिज्ञ, जो दुनिया को भयंकर और विनाशकारी युद्धों में झोंक देते हैं, कोई बेवकूफ तो नहीं होते। वे बुद्धिमान लोग होते हैं, शायद उससे भी अधिक बुद्धिमान जितना उनके और दुनिया के लिए जरूरी होता है!

किसी नये क्रान्तिकारी चिन्तन या विचार का सन्देश इस बात में नहीं रहता कि उस क्रान्तिकारी या विचारक के लेखों या भाषणों में कितनी असंगतियाँ या विरोधाभास हैं। वह इस तथ्य में निहित है कि अपने समकालीन तथा बाद में आनेवाले लोगों को वह कितना प्रकाश और जीवन प्रदान करता है। यह सही है कि यह प्रकाश पूरी तरह से सिर्फ कुछ ही लोगों को प्रकाशित करता है। लेकिन लाखों लोग उससे सांत्वना प्राप्त करते हैं। अगर ऐसा न होता तो आधुनिक वैज्ञानिक और परिष्कृत दिमाग सभी धर्मों के धर्म-ग्रन्थों व उनमें सन्निहित नैतिक मूल्यों को तुरन्त अस्वीकृत कर देता। इन नैतिक मूल्यों का उनके अपने जमाने में मूल्य तो था ही, आज भी है।

पुराने बड़े लोगों ने समाज को जोड़े रखने में बड़ी मदद की। आज भी ज्ञान-वान, समझदार और उदारमना मनुष्य इन पुराने लोगों द्वारा लिखी व कही चीजों में जीवित व शाश्वत सत्य की ही तलाश करता है। अपने तमाम भूत-प्रेतादि के बावजूद भी 'न्यू टेस्टामेण्ट' 'सरमन आन द माउण्ट' के रूप में जीवित है। इसी तरह हिन्दू धर्म ग्रन्थ भी गीता व उपनिषदों के अमृत उपदेशों में मनुष्य की सनातन सम्पत्ति है। गांधी विचार की

दीर्घकाल तक जीवित रहनेवाली विशेषताओं व मूल्यों पर हम थोड़ा विचार कर लें। संक्षेप में वे इस प्रकार हैं :

(१) आदमी का अर्थ है, समाज में आदमी या जैसी कि पुरानी यूनानी मान्यता है : 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।' समाज में ही मनुष्य वास्तविक मनुष्य हो सकता है।

(२) सभी सम्पत्ति सामाजिक रूप से उत्पादित होती है। उसे केवल एक वर्ग, चाहे वह मजदूर ही क्यों न हो, उत्पादित नहीं करता।

(३) मनुष्य समाज से जो कुछ पाता है, उसका कुछ-न-कुछ हिस्सा उसे लौटाना ही चाहिए।

(४) कोई भी समाज बिना कुछ नियमों उपनियमों के चल नहीं सकता, और यही चीज जीवन के सभी क्षेत्रों—सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, वैयक्तिक व सामूहिक—पर लागू है। इन सभी नियमों-उपनियमों की जड़ में नैतिक नियम स्थित हैं। विभिन्न समूहों के बीच छोटी-छोटी चीजों के बारे में भेद हो सकता है, लेकिन आधारभूत सिद्धान्तों में कोई भेद नहीं है।

(५) गांधीजी के अनुसार सत्य और अहिंसा नैतिकता की आधारशिला हैं। ये पारस्परिक रूप से सम्बद्ध हैं। जहाँ हिंसा है वहाँ असत्य आ ही जायगा। असत्य स्वयं अपने में हिंसा का एक प्रकार है। जैसा कि गांधीजी कहा करते थे, सत्य और अहिंसा एक ही सिक्के के दोनों बाजुओं के समान हैं।

(६) साधन साध्य के नियमन में नहीं रखे जा सकते। साधन और साध्य एक-दूसरे के पूरक हैं। साध्य जितना ही ऊँचा हो, साधन भी उतने सही हों। साध्य तो प्रयुक्त साधनों की अन्तिम परिणति है।

संक्षेप में गांधी विचार के यही जीवित सत्य हैं। इन्हींके प्रकाश में उन्होंने जहाँ तक संभव था, अपने और जनसमूह के जीवन को ढालने तथा आजादी की लड़ाई को परिचालित करने की कोशिश की। आदर्श का अन्तर्निहित अर्थ 'मनुष्य-स्वभाव की असम्भव सम्भावनाएँ, ही हैं न! गांधी का अपने सम्बन्ध में पूर्णता का कोई दावा नहीं था। यह सही है कि उन्होंने अपनी व्याप्ति देश की आजादी की लड़ाई तक सीमित कर रखी थी। लेकिन यदि दुनिया के राष्ट्र व लोग उनके सिद्धान्तों के प्रकाश में चलें तो विश्व-शान्ति एक सम्भावना बन सकती है।

आइए, अब हम थोड़ी देर के लिए गांधीजी को भूल जायें। अब हम जरा इस बात पर गौर करें कि आज के व्यावहारिक राजनीतिज्ञ, अन्दरूनी और अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति रखने के लिए किन चीजों के इच्छुक होंगे। किसी देश के अन्दरूनी प्रशासन के लिए वे लोकतंत्र की कामना करते हैं। सर्वसत्तावादी सरकारों के राजनीतिज्ञ भी अपने देशों की सरकारों को लोकतंत्रीय ही कहते हैं। और उन्हें 'जनता का लोकतंत्र' 'जड़ तक पहुँचने वाला लोकतंत्र', 'परिचालित लोकतंत्र', आदि नामों से पुकारते हैं। साम्यवादी सरकारें भी अपने को एक तरह का लोकतंत्र ही कहती हैं। लेकिन जब वे यह कहती हैं कि लोकतंत्र वर्गहीन समाज में ही स्थापित हो सकता है तो वे स्वयं अपनी ही बात काटती हैं। लोकतंत्र जन-प्रतिनिधियों द्वारा परिचालित होता है और इस प्रकार के तंत्र में ईमानदारी की बड़ी जरूरत है, नहीं तो सारा ढाँचा ही ठप हो जायगा। लोकतंत्र की यह सद्भावना और ईमानदारी गांधी के सत्य के अलावा और क्या है?

विश्व शान्ति के लिए भी ये राजनीतिज्ञ क्या कहते हैं, उस पर भी थोड़ा विचार कर लें। आज के अणुयुग में विश्व-शान्ति सबसे अधिक अभीष्ट चीज है, इसे तो सभी मानते हैं। लेकिन यह विश्व शान्ति आये कैसे? प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान अमेरिका के प्रेसिडेण्ट विल्सन ने 'निःशस्त्रीकरण व खुली कूटनीति' की बात कही थी। यह निःशस्त्रीकरण और खुली कूटनीति अहिंसा के अलावा और क्या है?

खुशी इस बात की है कि अपनी तमाम आलोचनाओं के बावजूद भी कोसलर ने न चाहते हुए गांधीजी की तारीफ की है। वह कहते हैं : "गांधी की चिरस्थायी कीर्ति यह नहीं है कि उन्होंने हिन्दुस्तान को आजाद कराया, बल्कि यह है कि आज की राजनीति के प्रचलित तरीके ही सब कुछ नहीं हैं, बल्कि कुछ दशाओं में उनकी जगह अहिंसा का प्रयोग किया जा सकता है। गांधीजी की कमी यह थी कि उन्होंने अपने प्रयोग सीमित क्षेत्र में ही किये। बेशक उनका खेल बड़ा ही ऊँचे दरजे का था, लेकिन वह तभी खेला जा सकता था, जब दूसरी तरफ के लोग भी सौजन्य और सद्भावना के कुछ परम्परागत नियमों का पालन करते, नहीं तो गांधी का सारा प्रयोग 'सामूहिक आत्महत्या' ही बनता।"

पहले ही यह दिखाया जा चुका है कि सशस्त्र और निःशस्त्र क्रान्तिकारियों के साथ अंग्रेज गोराशाही कैसा बर्ताव करती थी। लेकिन कहने की चीज यह है कि अहिंसात्मक प्रतिरोध करने पर यदि कभी सफलता न मिले तो भी सामूहिक आत्महत्या नहीं, बल्कि सामूहिक आत्मोत्सर्ग, बलिदान या शहादत की सज्ञा उसे दी जायगी। ऐसा आत्मोत्सर्ग तो सशस्त्र सैनिकों के लिए भी कोई नया नहीं है। सैनिकों ने आत्मसमर्पण के मुकाबले आत्मोत्सर्ग को अकसर अच्छा समझा है। मनुष्य के विकास का इतिहास उसके आत्मोत्सर्ग का ही इतिहास है। इस चीज को ध्यान में रखकर गांधीजी ने कहा था कि वह हिन्दुस्तान को इसलिए आजाद रखना चाहते हैं, ताकि जरूरत पड़ने पर सारे मानवता के हित में हिन्दुस्तान अपना उत्सर्ग कर सके।

(समाप्त)

ग्रामस्वराज्य-कोष

विभिन्न प्रान्तों में ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह की प्रगति

बिहार : आचार्य सीताराम दास सरस्वती ने ३६५ रुपये का मनीआर्डर भेजकर "सर्वोदय-मित्र" चन्दे का श्रीगणेश किया है।

मध्यप्रदेश : अभी तक ४०,००० रु० का संग्रह हो चुका है। प्रसिद्ध उद्योगपति श्री आर० सी० जाल से २५,००० रु० और मध्यप्रदेश के राज्यपाल श्री के० सी० रेड्डी से १,००१ रु० के दान प्राप्त हुए हैं।

कोष के संभागीय संयोजक नीचे लिखे अनुसार नियुक्त किये गये हैं :

श्री मानव मुनि व श्री विमलप्रकाश, इन्दौर संभाग; श्री हेमदेव शर्मा, ग्वालियर संभाग; श्री चतुर्भुज पाठक और श्री यशवन्त कुमार सिंह, भोपाल संभाग, महन्त लक्ष्मी नारायण दास व श्री हरि प्रेम बघेल, रायपुर और दादाभाई नाइक व डा० पराडकर, बिलासपुर संभाग।

२९ मई से ३ जून तक ग्रामस्वराज-कोष अभियान की बैठक हुई, जिसमें प्रदेश सर्वोदय-मण्डल, गांधी-स्मारक-निधि और विसर्जन-आश्रम के साथियों ने भाग लिया।

उत्कल : श्री हरिमोहन पटनायक, ग्रामस्वराज-कोष के महामंत्री चुने गये। उन्होंने अपना कार्यभार सम्भाल लिया है।

केरल : श्री मन्मथन्, आचार्य, महात्मा गांधी कालेज, छुट्टी लेकर कुछ महीने संग्रह कार्य में लगेंगे।

हरियाणा : हरियाणा के लिए लक्ष्यांक २ लाख रु० का घोषित किया गया था, इसे सुधार कर ३ लाख रु० किया गया है।

गांधी-अध्ययन केन्द्र, हिसार ने अभी तक ७७७ रु० एकत्रित किये हैं।

मैसूर : कडोली (बेलगांव) से दो बहिनें कोष संग्रह हेतु लोकयात्रा पर निकली हैं, उनका लक्ष्य ११ सितम्बर तक पांच जिलों की यात्रा पूरी करने का है।

कडोली ने अपना लक्ष्यांक ५,००० रु० का रखा है, इसमें से ७०० रु० का संग्रह हो चुका है।

महाराष्ट्र : राज्य के लिए ग्रामस्वराज-कोष समिति का गठन हुआ है।

अध्यक्ष—आचार्य भिसे, कार्याध्यक्ष—प्रो० ठाकुरदास बंग, उपाध्यक्ष—श्री रा० कृ० पाटील, श्री मधुकरराव चौधरी, श्री नरेन्द्र तिडके, सेक्रेटरी—श्री गोविन्दराव तिडके, श्री रामलीक स्वामी, श्री पानकंवर बाई फिरोदिया, श्री वसन्तराव बोम्बटकर, खजान्ची—श्री बद्रीनारायण गाडोदिया।

पंजाब : प्रान्तीय ग्रामस्वराज-कोष समिति के संयोजक श्री उजागर सिंह बिलगा नियुक्त किये गये हैं। श्री उजागर सिंह के संयोजकत्व में स्टैंडिंग कमेटी नियुक्त की गयी है, जिसके अन्य सदस्य श्री बनारसीदास गोयल, श्री सुशीलकुमारजी हैं।

जिला संगठक नीचे लिखे अनुसार नियुक्त किये गये हैं :

फिरोजपुर—श्री चांदीराम वर्मा, भटिण्डा—शमशेर सिंहजी, अमृतसर—सरदार गोपाल सिंहजी, गुरदासपुर—श्री उदयचन्द्रजी; जालन्धर—बहन हंसकुमारी, कपूरथला—श्री द्वारकादास शर्मा, होशियारपुर—श्री मेहरचन्दजी, लुधियाना—चौ० मन्सा सिंहजी, पटियाला—श्री सुशील कुमारजी; संगरूर—श्री मणिकान्त खेतान, रोपड़—श्री पृथ्वी सिंह आजाद।

ग्रामस्वराज-कोष में दी गयी राशि आयकर मुक्त

केन्द्रीय ग्रामस्वराज कोष समिति द्वारा प्रसारित जानकारी के अनुसार सरकार द्वारा ग्रामस्वराज कोष हेतु दी जानेवाली राशि को आय-कर से मुक्त होने की मान्यता प्रदान की गयी है। (सप्रेस)

वैशाली क्षेत्र में बीघा-कट्ठा का वितरण-समारोह

समाचार मिला है कि आगामी २७ जून से २ जुलाई तक मुजफ्फरपुर के वैशाली क्षेत्र के कई गांवों में बीघा-कट्ठा वितरण-समारोह किये जायेंगे। वैशाली प्रखण्ड की सात पंचायतों के १५ प्रमुख किसान और मुखिया लोगों ने अपनी भूमिका बीसवां भाग निकालने की घोषणा की है। उक्त अवधि में आचार्य राममूर्तिजी क्षेत्र में दौरा करेंगे, और समारोहपूर्वक गांवों में भूमिवितरण-समारोह सम्पन्न होगा।

ज्ञातव्य है कि इस आयोजन की तैयारी पूरी तरह स्थानीय नागरिकों की ओर से की जा रही है। २१ जून से पूर्वतैयारी का कार्य शुरू हो गया है। इसके लिए ५ उत्साही व्यक्तियों की एक टोली बनायी गयी है।●

ग्रामस्वराज-कोष में उदारता से दान दें
महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री की अपील

विनोबाजी को उनकी ७५ वीं वर्षपूर्ति के अवसर पर भेंट किये जानेवाले एक करोड़ रुपये के ग्रामस्वराज-कोष हेतु नागरिकों से सहयोग की अपील करते हुए महाराष्ट्र के मुख्य मंत्री श्री वी० पी० नाईक ने कहा है कि 'श्री विनोबाजी द्वारा प्रारम्भ किये गये भूदान, ग्रामदान और शान्ति-सेना ने पूरे विश्व का ध्यान आकर्षित किया है। विनोबाजी द्वारा किया जा रहा कार्य गांधीजी के अहिंसक समाज-परिवर्तन और भारतीय समाज के पुनर्निर्माण के अधूरे कार्य को आगे बढ़ाता है। अतः यह सर्वथा उपयुक्त है कि ऐसे दैवी पुरुष को देश के लाखों पददलितों के उद्धार और आनेवाली पीढ़ी के उज्ज्वल भविष्य के लिए श्रद्धा-स्वरूप ग्रामस्वराज-कोष भेंट दें। इस कोष में उदारता से दान देकर सम्पूर्ण सहयोग के लिए सबसे प्रार्थना है।'

श्री नाईक ने स्वयं अपने परिवार की ओर से कोष के लिए २,५०० रुपये दिये हैं।

ग्रामस्वराज्य की ओर

दरभंगा के मधेपुरा प्रखण्ड में ग्रामदान-पुष्टिकार्य

प्रखण्ड-स्तरीय ग्रामस्वराज्य समिति के कार्यालय से प्राप्त जानकारी के अनुसार प्रखण्ड में बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के निर्देशानुसार काम चल रहा है। गत जनवरी '७० महीने में प्रखण्ड के लगभग सभी पक्षों के नेताओं का प्रत्यक्ष सहयोग प्राप्त किया गया। पुष्टिकार्य को बल देने के लिए वे लोग पदयात्राओं में भी शरीक हुए।

प्रखण्ड के पूर्वी क्षेत्र में लगभग दो हजार एकड़ जमीन भूदान में मिली थी, उसका समुचित वितरण नहीं हो पाया है। कई लोगों ने जबरदस्ती कब्जा कर लिया है। जिन भूमिहीनों को भूमि मिली है, प्रमाण-पत्र मिला है, उनको भी अभी तक सरकारी रसीद नहीं मिली है। बिहार-भूदान-यज्ञ कमेटी को बार-बार लिखा गया, लेकिन अब तक कोई कार्रवाई नहीं हुई।

कुछ दिनों पूर्व वसीपट्टी पंचायत के वसीपट्टी गाँव के ही लोगों ने दो अमीन रखकर नापी करायी। १५७ एकड़ जमीन वहाँ भूदान की है। ४५ एकड़ जमीन निकली है। नापी का काम चल रहा है। सभी सामाजिक-राजनैतिक कार्यकर्ताओं का समर्थन लेकर इस जमीन पर नाजायज कब्जा करनेवाले लोगों से जमीन भूमिहीनों के लिए छोड़ देने का आग्रह किया गया है। अब तक हुई नापी में जो जमीन निकली है, उस पर कब्जा करनेवालों ने सहर्ष अपना कब्जा हटा लिया है। नापी में जो जमीन निकली है, उसकी मेड़बन्दी भूदान प्रदाता किसानों की मदद से करा दिया गया है, ताकि फिर उस जमीन को कोई अपने खेत में मिला न सके। वसीपट्टी पंचायत के स्तर की एक समिति भी भूदान की जमीन तथा ग्रामदान में निकलनेवाली बीघा-कट्ठा जमीन को वितरित करने के लिए बना दी गयी है। इस भूमि-वितरण समिति के संयोजक हैं श्री इसमाइल गनपुरी। एक दूसरी भूमिसेवा समिति भी बनी है जो वितरित जमीन को काश्त योग्य बनाने में भूमिहीनों की मदद करेगी। इन कामों को सुचारु रूप से चलाने के लिए वसीपट्टी गाँव में एक केन्द्र स्थापित किया गया है, जहाँ से कार्यकर्ता ६ पंचायतों के काम को गति देंगे।

इस प्रखण्ड में कुल १३३ राजस्व गाँव हैं। जनसंख्या १,५३,५२२ और रकबा १३६.०७ वर्गमील है। प्रखण्ड में कुल ४५ शान्ति सैनिक बने हैं, जिनके प्रशिक्षण की व्यवस्था की जा रही है।

सरकारी ग्रामदान-पुष्टि के लिए २८ गाँवों के कागज पुष्टि-अधिकारी के पास दाखिल किये गये हैं, दो गाँव सम्पुष्ट हो चुके हैं। तीन गाँवों में बीघा-कट्ठा निकालने, ग्रामकोष शुरू करने की तैयारी चल रही है।

प्रखण्ड-स्तरीय ग्रामस्वराज्य समिति का संगठन हो चुका है, श्री जटेश्वर ठाकुर, अध्यक्ष और श्री कामेश्वर प्र० सिंह मंत्री चुने गये हैं।●

सहरसा में १५३ ग्रामसभाएँ गठित, १६६ बीघा, १० कट्ठा जमीन प्राप्त, २५ बीघा, ७ कट्ठा वितरित

सहरसा में पुष्टि के लिए अनुकूल वातावरण बनाने हेतु श्री जयप्रकाश नारायण का गत १२ मई से १६ मई '७० तक दौरा हुआ। उनके कार्यक्रम को अधिक-से-अधिक सफल और प्रभावकारी बनाने की दृष्टि से पूर्वतैयारी का जो काम हुआ, उसमें श्री कृष्णराज मेहता का महत्त्वपूर्ण योगदान मिला। श्री मेहता २ मई को ही सहरसा आ गये थे। जिले के सरकारी अधिकारियों, राजनैतिक तथा *सामाजिक कार्यकर्ताओं को* अपने पुष्टि-कार्य में सहयोग देने की प्रेरणा दी। जगह-जगह गाँव के प्रमुख लोगों तथा पंचायत के पदाधिकारियों की गोष्ठियाँ आयोजित की गयीं, जिसमें श्री कृष्णराज भाई ने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार को समझाते हुए पुष्टि-कार्य को जल्द-से-जल्द पूरा करने का आग्रह किया।

१० मई को ग्रामदानी गाँव मनिया में बीघा-कट्ठा निकलवाकर श्री कृष्णराज भाई ने भूमिहीनों को उस पर कब्जा दिलाया।

प्रदेश के सर्वश्री भाई गोखले, विद्यासागरजी, ब्रजमोहन शर्मा आदि साथियों ने पुष्टि-कार्यक्रम को सफल बनाने में प्रत्यक्ष सहयोग किया।

श्री जयप्रकाश बाबू को सहरसा के दौरे में २,९९६ ७५ रु० की थैली भेंट की गयी। ९८ बीघे जमीन भी भूमिहीनों के लिए दान में प्राप्त हुई। श्री जयप्रकाश बाबू के दौरे के बाद ३१ मई '७० तक मरौना प्रखण्ड में पुष्टि का सघन काम हुआ। परिणामस्वरूप प्रखण्ड का ३५% काम पूरा हुआ। प्रखण्ड के ४६ गाँवों में ग्रामसभाएँ संगठित हुईं और बीघा-कट्ठा में ८१ बीघा भूमि प्राप्त हुई।

जिला सर्वोदय-मण्डल के संयोजक श्री महेन्द्र नारायणजी ने अपने साथियों की मदद से आम, खास, बासगीत तथा बटाईदारी की जमीनों का पर्चा दिलाने के लिए करीब दो हजार ग्रामीणों के आवेदन-पत्र जिलाधीश के कार्यालय में प्रस्तुत किये, जिन पर आवश्यक कार्रवाई शुरू होने की सूचना मिली है।

जिले में इस समय करीब ५० कार्यकर्ता काम कर रहे हैं, जिनमें ३० पाक्षिक और २० पूरा समय देनेवाले कार्यकर्ता हैं। कुल १५३ ग्रामसभाएँ गठित हुई हैं। १६६ बीघा, १० कट्ठा, ५ धूर जमीन बीघा-कट्ठा के अन्तर्गत प्राप्त हुई है। २५ बीघा, ७ कट्ठा, ४ धूर जमीन भूमिहीनों में वितरित भी की जा चुकी है।

—मंत्री, जिला ग्रामस्वराज्य समिति

मुजफ्फरपुर की डाक से

परिस्थिति का प्रत्यक्ष अध्ययन और काम की प्रारम्भिक तैयारी

दिनांक ४-६-७० को सुबह ९ बजे जमालाबाद के मजदूर-प्रतिनिधियों, मुखिया, सरपंच आदि से मिलकर श्री जयप्रकाशजी ने वहाँ के मजदूरों की समस्याओं पर चर्चा की, तथा उनके द्वारा की गयी सभा के सम्बन्ध में जानकारी ली।

जिले के कलक्टर एवं एस० पी० से जिले में हुई हिंसक घटनाओं तथा शान्ति-व्यवस्था के सम्बन्ध में जानकारी ली, फिर जिले के ए० डी० एम० (रेवेन्यू) से भूमिहीनों को वासगीत जमीन के पर्चों तथा भूदान में वितरित जमीन की स्थिति तथा उस सम्बन्ध में आने किये जानेवाले कार्यक्रम के बारे में बातचीत की। सन्ध्या समय जिले के प्रेस-प्रतिनिधियों के सम्मेलन में अपने विचार रखे।

दिनांक ५-६-७० को दोपहर के पूर्व विभिन्न पार्टियों के नेताओं से नक्सलवादी सन्दर्भ में चर्चा की। दोपहर के बाद तीन बजे मुसहरी प्रखण्ड के मुखिया एवं अन्य लोगों से क्षेत्र में काम करने के सम्बन्ध में विचार-विमर्श किये। मुसहरी प्रखण्ड के सलहा जलालपुर पचायत में श्री जे० पी० का कार्यक्रम शुरू हो, ऐसा निश्चय भी इसी बैठक में उनके समक्ष किया गया। जिले के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की बैठक में सघन काम करने की आवश्यकता पर श्री जयप्रकाशजी ने अपना विचार प्रकट किया।

दिनांक ६-६-७० को दिन में जिले के कुछ वकीलों तथा अन्य नागरिकों से वर्तमान सन्दर्भ में बातचीत की। संध्या समय ५ बजे सभी राजनीतिक पार्टियों के विधायकों एवं पदाधिकारियों की बैठक में श्री जयप्रकाशजी ने भाग लिया। उक्त बैठक में जिले के विभिन्न दलों के १६ प्रमुख नेताओं, विधायकों के साथ चर्चाएँ हुईं। करीब-करीब सभी पार्टियों के लोगों ने इस कार्यक्रम में सहायता का आश्वासन दिया।

दिनांक ७-६-७० को दिन के तीन बजे जिले के तरुण शान्ति-सैनिकों की बैठक में भाग लिये, जिसमें तरुण शान्ति-सेना, ग्राम-शान्ति-सेना तथा ९ जून से मुसहरी प्रखण्ड में प्रारम्भ होनेवाले कार्यक्रम के बारे में भी बोले।

दिनांक ८-६-७० को सीतामढ़ी के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं से उक्त अनुमण्डल में सघन-अभियान चलाने के सम्बन्ध में बातचीत हुई। हाजीपुर अनुमंडल के वैशाली प्रखण्ड के कार्यकर्ताओं एवं नागरिकों से उस प्रखण्ड में विचार प्रचार एवं पूर्ण सम्पर्क के बाद सत्याग्रह करने के सम्बन्ध में चर्चा की। सन्ध्या समय साढ़े-पाँच बजे मुजफ्फरपुर के टाउनहाल के मैदान में आम-सभा में देश में बढ़ रही हिंसा और आतंक की परिस्थिति, तथा सर्वोदय आन्दोलन एवं मुसहरी प्रखण्ड में सघन-अभियान प्रारम्भ करने आदि के बारे में भाषण दिये।

× × ×

श्री रामनन्दन बाबू ने लिखा है कि नक्सलवादियों की धमकी के कारण श्री बद्रीबाबू या श्री गोपालजी मिश्र को कोई घबड़ाहट नहीं हुई। श्री बद्रीबाबू ने इस धमकी भरे पत्र को अपने कार्यक्षेत्र के मजदूरों के पास उनको ही अपना पत्र मानकर आवश्यक कार्रवाई के लिए भेज दिया। पत्र मिलने पर मजदूरों ने कई बैठकें कीं। इन बैठकों में श्री बद्रीबाबू की सेवाओं की प्रशंसा करते हुए हत्या की धमकी देनेवालों की निन्दा की गयी, तथा श्री बद्रीबाबू के संरक्षण की जिम्मेदारी उठाने का निर्णय लिया गया।

श्री जयप्रकाश बाबू का आतंकित क्षेत्र में इस तरह कार्यरत हो जाना बापू की नोआखाली-यात्रा की याद दिलाता है।

× × ×

एक अन्य जानकारी के अनुसार जिस गाँव से श्री जयप्रकाशजी ने काम शुरू किया है, उस सलहा गाँव में उन्होंने यह भाव व्यक्त किया कि 'या तो ग्रामस्वराज्य होगा, या मेरी हड्डी यहीं की मिट्टी में मिलेगी।' अभी मुख्य रूप से क्षेत्र की सम्पूर्ण समस्याओं का विस्तृत और प्रत्यक्ष अध्ययन चल रहा है। उस गाँव के भूमिवानों से बीघा-कट्ठा निकालने की बात कही जा रही है। कुछ जमीन निकाली भी गयी है।

श्री जयप्रकाशजी का विचार है कि जो कार्यकर्ता जहाँ काम कर रहा है, वहीं पूरे समर्पण के साथ काम में अविलम्ब जुट जाय। सुश्री निर्मला देशपांडे दरभंगा के लदनियाँ प्रखण्ड में और आचार्य राममूर्ति मुजफ्फरपुर के बरारी प्रखण्ड में इसी प्रकार जमकर और डटकर काम शुरू कर रहे हैं। श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी सम्भवतः पूर्णिया सहरसा में कोई 'क्षेत्र' बनायेंगे।●

पंजाब सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष को धमकी

पंजाबी भाषा में प्रकाशित 'सर्वोदय-समाचार' के सम्पादक और पंजाब सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष श्री उजागर सिंह बिलगा को नक्सलवादी छात्रों की ओर से धमकी भरा पत्र मिला है कि अगर आप नक्सलवादियों के खिलाफ अपनी बकवास बन्द नहीं करेंगे तो आपको माफ नहीं किया जायगा।●

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ३९

सोमवार २९ जून, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-1
फोन : ६४२८५

ग्रामस्वराज्य : प्रत्यक्ष लोकतंत्र की परिकल्पना

गांधीजी पूरी कांग्रेस को ही चाहते थे कि सेवकों की सेना बना दें। भारत के ७ लाख गांवों में—वे तो ७ लाख ही मानते थे, साढ़े पांच लाख भारत के और डेढ़ लाख पाकिस्तान के—सेवा करनेवालों की एक जमात बनायें। केवल शब्दों में ही नहीं, आचरण में भी। विनोबाजी ने कांग्रेस का रूपांतर करने की बात तो छोड़ दी, क्योंकि वे कांग्रेस में रहे ही नहीं थे, सर्व सेवा संघ बनाया और उसके सेवकों से कहा कि यह सर्वोदय-विचार, यह गांधी-विचार लेकर जाओ और जनता को समझाओ। यह देश कृषि-प्रधान देश है। १०० में ७० लोग कृषि पर अवलंबित हैं और ८२ प्रतिशत गांवों में रहते हैं। इस कृषि-प्रधान देश में भूमि की समस्या जटिल है। कुछ भूमिवान हैं, कुछ भूमिहीन हैं। इसलिए इस प्रश्न को पहले लिया कि इसको हल करें।

अब कानून से देखिए कि क्या होता है। जमीन की हदबंदी के कानून करीब-करीब हर प्रदेश में बने। लेकिन उससे कितनी भूमि बँटी ? उत्तरप्रदेश में १०-१२ हजार एकड़ से अधिक जमीन हदबंदी से नहीं बँटी। भूदान से करीब ३ लाख ४० हजार एकड़ जमीन बाँटी गयी। बिहार में ४ लाख एकड़ जमीन बँटी। इससे अनुभव हुआ कि मानव-हृदय को स्पर्श करने के लिए हम कोई शुद्ध विचार रखें, तो उसका प्रभाव पड़ता है। सीलिंग का कानून बना तो उससे उस आदमी को क्रोध हुआ जिसके पास जमीन थी। बदले की भावना पैदा हुई। खुद देता है तो देनेवाले का आत्मिक विकास होता है। जिसको मिलता है उसका भी बाद में विकास होता है। बहुत लोग थे, जिन्होंने कहा, 'क्या होता है इससे ?' लेकिन आप देखें कि पश्चिमी बंगाल को छोड़कर हर प्रांत में सीलिंग से कई गुना जमीन भूदान से बँटी है।

इस प्रकार से इसमें कुछ विकास हुआ तो विनोबाजी ने ग्राम-स्वराज्य की बात कही। गांधीजी कहते थे कि ग्रामस्वराज्य में सबसे अधिक सत्ता गांव में होगी। जैसे-जैसे ऊपर का राज्य होगा, सत्ता कम होती जायेगी। हमारे देश के कुछ अधकचरे लोग कहते हैं कि गांधीजी के विचार पुराने थे। परन्तु जो गांधीजी कहते थे, ठीक वही बात आज पश्चिम के तरुण कह रहे हैं। वहाँ तरुणों का विद्रोह हुआ। उनमें से अधिकांश की मांग है कि जितने 'मतवाद' हैं उन सबको आजमा लिया, देख लिया। सब 'वाद' बासी हो गये। हमारी अपेक्षाएँ पूरी नहीं होती हैं। हमें प्रातिनिधिक लोकतंत्र नहीं चाहिए, हमें प्रत्यक्ष लोकतंत्र चाहिए। और ग्रामस्वराज्य उसी प्रत्यक्ष लोकतंत्र की परिकल्पना है।

संपादक,
"भूदान-यज्ञ" राजघाट, वाराणसी–१

बिहारदान के बाद जिस गति से बिहार में नक्सलवादी आन्दोलन चल रहा है या सर्वोदय कार्यकर्ताओं को मारने की जो धमकियाँ दी जाती हैं, वह हमारे लिए चुनौती है। बिहारदान का असर कैसे प्रकट होगा, यह हम सब सर्वोदय-वालों के लिए सोचने का विषय है। विनोबाजी कहते हैं कि १९७२ तक का समय आपके हाथ में है। मगर मुझे लगता है कि अब १९७० तक का ही समय हमारे हाथ में है। हमने बिहारदान को साकार रूप नहीं दिया, तो परिस्थिति हमारे या अहिंसा के हाथ में नहीं रहेगी। हम सबको बिहार तथा पूरे देश की हमारी शक्ति १५ या ३० दिन के लिए बिहार में लगाकर पुष्टि का कार्य पूरा कर देना चाहिए, यानी जमीन का २० वाँ हिस्सा बाँटना, ग्राम-कोष में ४० वाँ हिस्सा इकट्ठा कराना तथा ग्रामसभा का गठन करा देना चाहिए। यह कार्य हम न करा सके, तो हमें प्रामाणिकता से कह देना चाहिए कि अब लोग देने या करने के लिए तैयार नहीं है या पहले तैयार थे, अब तैयार नहीं हैं या हमने दान-पत्र सही ढंग से नहीं भराये। यह कार्य हमने न किया और एक करोड़ रुपये का ग्राम-स्वराज्य कोष इकट्ठा कर दिया, तो क्या होगा? हम करोड़ रुपये के मालिक बन जायेंगे, तब न समाजवादी रहेंगे, न सर्वोदयी होंगे; पूंजीवादी ही कहलायेंगे।

—भगवान बजाज

× × ×

'अग्निपरीक्षा का वक्त करीब है' (८ जून के 'भूदान यज्ञ' में) अच्छा लगा। कई महत्त्वपूर्ण उपयोगी सुझाव हैं।

—एक कार्यकर्ता पाठक

× × ×

नक्सलवादियों की गतिविधियों पर केन्द्र-सरकार का मौन बहुत खल रहा है। लगता है कि उसके इशारे पर ही यह सारा गोरखधन्धा हो रहा है। शायद सरकार सोचती होगी कि नक्सलवादियों के आतंक से जनता जब पूरी तरह आतंकित हो जायेगी तब राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ और शिवसेना को भी हिंसक संगठन कहकर पूरा प्रतिबन्ध लगाने में सरकार को सहूलियत होगी और जनता का मनोसमर्थन भी मिलेगा। मेरे इस कथन से भले ही लोग असहमत हों, लेकिन सरकार की मंशा यही है। इसकी पुष्टि श्री बंग साहब के उड़ीसावाले लेख ('भूदान यज्ञ' : १५ जून के अंक, पृष्ठ ५८१ पर) से भी हो जाती है। सरकार को पूरी कड़ाई से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को दबाने के लिए कम्युनिस्टों को भी छूट देनी पड़े तो वह देगी, भले ही उसका खामियाजा बाद में निरीह जनता को ही चुकाना पड़े।

राजनीतिक दलों में रोज दरारें पड़ रही हैं। पड़ी हुई दरारें पाटने की कोशिश नहीं की जाती बल्कि चौड़ी ही हो रही हैं। उन मँजे राजनीतिज्ञों की निगाह सर्वोदय की ओर भी है। छिटपुट प्रलोभनों में से वे सर्वोदयवालों की आस्थाओं को भी डिगाने की कोशिश करेंगे। कुछ तो पहले से ही डिगने को मशा लिये हैं पर जो वास्तविक कार्यकर्ता हैं उनकी पूरी-पूरी वफादारी सर्वोदय में है। किन्तु बिहारदान के साथ सर्वोदय-आन्दोलन एक मोड़ पर आकर खड़ा हो गया है। लोग देखना चाहते हैं कि अब किस ओर?

मेरे मन में सिर्फ स्वायत्त ग्रामसभा, ग्रामस्वामित्व और उसके बाद ग्रामस्वराज्य का असली स्वरूप ग्राम प्रतिनिधित्व का चित्र है। जब तक आदमी को मंजिल नहीं मिलती है उसमें तीव्रता और सातत्यता बनी रहती है। मंजिल मिल जाने पर शैथिल्य और खालीपन लगने लगता है। बिहारदान की मंजिल मिल जाने से कहीं हम लोगों में भी वह शैथिल्य तो नहीं आ रहा है?

—कपिल अवस्थी

पहले नारे लगे :
धन और धरती बंट के रहेगी।
भूखी जनता अब न सहेगी॥
जमीन किसकी? जोते उसकी।

अब वही तैयार हो गये हैं बंगाल में हथियार लेकर। हम कब तक जनता के तैयार होने की राह देखते रहेंगे? बिहार का ग्रामदान हो गया। अभी बीघा-कट्ठा भी नहीं मिला। लगता है अगर निकले भी तो 'ऊंट के मुँह में जीरे के बराबर होगा।' अतः 'डाइरेक्ट ऐक्शन'—सीधी कार्रवाई जमीन लेने की की जाय। भूमिपुत्र सीधे अपने मालिकों को सूचित करें, हम भूमि को १२ वर्षों से अधिक समय से जोतते हैं, अतः अब हमारा उस पर नैतिक अधिकार है। यदि भूमिवान उन पर केस करें तो कोर्ट की अवहेलना करें। जेल जाना हो तो लाखोंकी संख्या में जायं। भूमि दखल करने के बाद ग्रामदान के सारे नियम वहाँ लागू किये जायें।

इसके लिए मैं अपने ६ बँटाईदारों को, वे २० एकड़ जमीन जोत रहे हैं, उसे छोड़ने के लिए तैयार हूं। इसकी चर्चा गत वर्ष मैंने आचार्य राममूर्तिजी से की थी। ग्रामदानी गाँवों में भी सब भूमि का पुन: वितरण करना पड़ेगा।

बापू ने भी तो नमक-आन्दोलन में जनता से कानून तुड़वाया था। भूमि के बारे में ऐसा क्यों नहीं हो सकता? नक्सलवादियों को धन्यवाद जिन्होंने जन-मानस को तैयार कर दिया, तूफान की गति से। (विनोबाजी को लिखे पत्र की प्रतिलिपि)

—शैलेन्द्र कुमार निर्मल
ग्रा० खपरैल, डा० न्यू चमटा, दार्जिलिंग

× × ×

२५ मई '७० के 'भूदान-यज्ञ' में श्री प्रबोध चोकसी तथा आपके लेख बड़े ही विचार-प्रेरक हैं। आज पुरानी लीक पर न चलकर इन लेखों के अनुसार चिन्तन और अमल करने की जरूरत है।

आज सर्वोदय विचार स्वयं ही यथा-स्थिति के दलदल में फँसा है। इन लेखों से उस दलदल से निकलने की प्रेरणा मिलेगी।

—डा० हरिहर प्रसाद पाण्डेय

मेरी हड्डी गिरेगी या...!

किसकी हड्डी गिरेगी ? किसलिए गिरेगी ? वह कौन है जो इस तरह का संकल्प कर रहा है ? और क्यों कर रहा है ?

मुजफ्फरपुर से आठ मील चलकर मुसहरी प्रखण्ड में सल्हा एक गांव है। गांव के नाम से पूरी पंचायत का भी नाम है—सल्हा। सड़क के ठीक किनारे मिडिल स्कूल है। आजकल स्कूल में छुट्टी है। छुट्टी होते हुए भी चहल-पहल है। सुबह से रात तक लोगों का आना-जाना लगा रहता है। सरकारी अधिकारी, सर्वोदय कार्यकर्ता, गांव के लोग, खेतिहर मजदूर, विद्यार्थी, स्त्रियाँ आदि कोई-न-कोई बराबर आता ही रहता है। किसीसे पूछिए कि किसलिए आये हैं, तो उत्तर मिलेगा—जयप्रकाशजी से मिलने ! आजकल हरेक जयप्रकाशजी से मिल रहा है, और हरेक से जयप्रकाशजी मिल रहे हैं। सल्हा गांव जयप्रकाशजी का पड़ाव बना हुआ है। ९ ता० से आज तक अगर वह दिन में कहीं बाहर गये भी हैं तो कोई रात उन्होंने बाहर नहीं बितायी है। वह जमकर बठे हुए हैं। उन्होंने जाहिर किया है कि इस पंचायत का काम पूरा करके ही वह दूसरी पंचायत में जायेंगे। मुसहरी ब्लाक में कुल १७ पंचायतें हैं। पूरे ब्लाक का काम पूरा करना है। उन्होंने संकल्प किया है : 'यहां मेरी हड्डी गिरेगी या काम पूरा होगा।'

वह कौनसा काम है जिसके लिए जे० पी० ने अपने प्राणों की बाजी लगायी है ? क्या काम है जो दूसरों से नहीं हो सकता था और खुद जे० पी० को 'करो या मरो' का संकल्प करना पड़ा ?

सल्हा का ग्रामदान हो चुका है। मुसहरी का प्रखण्डदान हो चुका है, मुजफ्फरपुर का जिलादान हो चुका है, और पूरे बिहार का राज्यदान हो चुका है। ये सारे काम हो चुके हैं। लेकिन कोई पूछे कि दान के बाद क्या हुआ है तो हम क्या उत्तर दें ? राजगिर सम्मेलन में बिहारदान की बात कही गयी थी। तब से जाड़ा बीता, गरमी बीती, और अब बरसात आयी। इन सारे महीनों में बिहार के साथियों के सामने यह प्रश्न रहा है कि बिहारदान के बाद का काम कैसे होगा, कब होगा ? हमने देश के सामने चित्र ग्रामस्वराज्य का रखा है, और ग्रामदान को उसकी शुरुआत मानी है। हम सब चिंतित हैं कि ग्रामदान पक्का कैसे होगा, और ग्रामस्वराज्य शुरू कब होगा ? दिसम्बर में बिहार के साथियों ने ग्रामस्वराज्य समिति बनायी, और काम की योजना तय की। उसके अनुसार जे० पी० ने यात्राएं कीं, और कार्यकर्ताओं ने जनता को उसके संकल्प की याद दिलायी। इससे कुछ जगहों में कुछ ठोस काम भी हुआ, लेकिन कुल मिलाकर बात बनती नहीं दिखायी दी। क्रान्ति की गाड़ी पटरी पर नहीं लगी। भूमिवान मानने तो लगा है कि भूमिहीन को जमीन मिलनी चाहिए, लेकिन उसके मन की गांठ नहीं खुलती, और जमीन का टुकड़ा उसके पास से निकलकर भूमिहीन के पास नहीं पहुँचता। पूरे राज्य में कुछ सौ एकड़ बीघा-कट्ठा में निकल भी आये तो उससे क्या होगा ? छिट-फुट गांवों में कुछ काम होना एक बात है, और व्यापक पैमाने पर आन्दोलन बिलकुल दूसरी चीज है।

पिछले महीनों में हमने देखा कि हमारा आन्दोलन समस्याओं की भँवर में फँसता जा रहा है। हिंसा की लपटें बढ़ती जा रही हैं। एक ओर सफेद आतंक है तो दूसरी ओर लाल आतंक। अगर खुलकर दमन है, शोषण है, तो छिपकर हत्या है, लूट है। अकेले मुसहरी ब्लाक में ८ हत्याएँ की जा चुकी हैं। सिलसिला जारी है। कोई नहीं कह सकता कि कल कौन मारा जायगा। हममें से कई लोगों के मन में प्रश्न उठने लगा था कि क्या अहिंसा अपने किसी अस्त्र से इस स्थिति का मुकाबला कर सकती है ? क्या उसके तरकश में कोई तीर ऐसा है जिसका निशाना अचूक लगे ?

ये सब प्रश्न जे० पी० से पूछे जाते थे। वह स्वयं चिंतित थे। कहते थे कि हम कब तक समझाने जायेंगे ? क्या कभी लोग हिलना-डुलना भी शुरू करेंगे ? क्या अहिंसा यों ही देखती रहेगी और आतंकवादी मालिक और आतंकवादी मजदूर एक-दूसरे से दुश्मनी साधने के लिए समाज को तहस-नहस कर डालेंगे ?

मई के मध्य में जब जे० पी० उत्तराखण्ड विश्राम के लिए गये तो मन में यह सारा मन्थन लेकर गये थे। अचानक मुजफ्फरपुर से अशुभ सूचनाएँ पाकर उन्होंने वहाँ की यात्रा बीच में समाप्त कर दी, और सीधे मुजफ्फरपुर आ गये। साथियों से मिले, अधिकारियों से मिले, पत्रकारों-नेताओं से मिले। ८ जून को मुजफ्फरपुर शहर में आमसभा की। ९ को सल्हा पहुँच गये—सीधे समाज और समस्याओं के बीच में। उन्होंने साथियों से कहा कि ग्रामदान हुआ है तो बीघा-कट्ठा निकलना चाहिए, ग्रामसभा बननी चाहिए, भूमि का स्वामित्व ग्रामसभा को समर्पित होना चाहिए, और ग्रामकोष की शुरुआत होनी चाहिए। इतना ही नहीं, भूमिहीन को वास की जमीन का परचा मिलना चाहिए। गांव में अगर सरकार की जमीन हो तो उसका भी तत्काल भूमिहीनों में बँटवारा होना चाहिए। अगर भूदान में मिली जमीन से कोई भूमिहीन बेदखल हुआ हो तो उसे भूमि वापस मिलनी चाहिए। इन सब प्रश्नों के साथ साथ मजदूरी और बटाईदारी आदि के प्रश्न हैं जिनके हल होने का रास्ता खुलना चाहिए। वास्तव में जे० पी० के मन में आज की भूमि-व्यवस्था से जूझने, मालिक-मजदूर को ग्रामसभा के मंच पर इकट्ठा करने, और गांव-गांव को ग्रामस्वराज्य की दिशा में बढ़ाने की बात है। वह यह श्रद्धा लेकर गये हैं कि सत्याग्रह के शास्त्र में हर समस्या का अहिंसक समाधान सम्भव है, केवल सत्य के रास्ते पर चलने का साहस होना चाहिए।

जयप्रकाशजी का यह कदम सर्वोदय-आन्दोलन के लिए 'शाक-ट्रीटमेण्ट' है। हम जिस तरह संशय और प्रमाद के शिकार होते जा रहे थे, और हमारा आन्दोलन जिस प्रकार 'इनीशियेटिव'→

संवाद

बिगड़ी राजनीति : सुधार का उपाय ?

—गंगोत्री के संन्यासी संत हंस से जे० पी० की चर्चा—

साल में बारहो महीने गंगोत्री और गोमुख में वास करनेवाले संन्यासी संत हंसजी से २७ मई '७० की सायंकाल गंगोत्री में उनकी कुटी पर जे० पी० मिले। ७७ वर्षीय संन्यासी ने, जो देश की मौजूदा परिस्थिति से चिन्तित थे, चर्चा प्रारम्भ करते हुए कहा :

संत हंस—दो ही चीज हैं अपने पास। एक शब्द है, एक हृदय है। कोई फार्मूला बनता हो तो आप देने की कृपा करें। मैं तो सकता नहीं, जा भी नहीं सकता। जिस 'फील्ड' (क्षेत्र) के आप थे, उसी 'फील्ड' का मैं था। बम्बई की ओर जल सेना का अफसर था, फिर प्रोफेसर था, उसके बाद हिमालय में आ गया। देश की स्थिति आप देख ही रहे हैं। बड़ी कठिन स्थिति है, कोई भी लीडर दिखाई नहीं दे रहा है।

जे० पी०—यहाँ बैठकर भी आप देश के लिए सोचते हैं। हमको इससे बल मिलता है। हम सोचते रहते हैं। अपने को लगता है यह रास्ता ठीक है, यह काम ठीक है। आप मिले होंगे, तब हम राजनीति में थे। राजनीति छोड़े कई वर्ष हो गये, लोकनीति के काम में आ गये। जनता के बीच रहते हुए उनकी सेवा की जाय, उनकी मदद की जाय, उनके सुधार के लिए यह सब किया जाय तो परिस्थिति बदल सकती है। अभी तो लोगों का ध्यान राजनीति की तरफ है। वह बिगड़ती जा रही है।

हिंसा का जो कुछ अध्ययन किया, उससे हम नतीजे पर पहुँचा कि साधारण प्रजा के लिए—जनता के लिए—उस मार्ग से कुछ निकलेगा नहीं। एक मार्ग गांधी का, विनोबा का, रहता है। राजनीति से परे रचनात्मक काम करते हुए जहाँ जनता रहती है, उसको बदलने का काम करना है।

कुछ लोगों की सलाह हुई कि सब नेताओं को इकट्ठा कर लिया जाय, इस दृष्टि से कि राष्ट्र-निर्माण के प्रश्नों पर वे एकमत हो सकें। वे इकट्ठे हुए भी। चर्चाएँ हुईं। लेकिन उसकी निष्पत्ति कागज पर ही रह गयी। राजनीतिवालों का सारा ध्यान सत्ता, चुनाव और पद की तरफ चला जाता है, National Concensus (राष्ट्रीय एकता) बने कैसे, यह कोशिश थी। अब भी कुछ लोग उस दिशा में कोशिश कर रहे हैं।

संत हंस—राजनीति का पहलू कैसे ठीक किया जा सकता है।

जे० पी०—यहाँ अनेक दल हैं। दल-बदल होते रहते हैं। दलों में भी आपसी एकता नहीं है। कांग्रेस में तो विघटन हो ही गया, कम्यूनिस्ट पार्टी के बारे में मान्यता थी कि ठोस है, उसमें भी टुकड़े हो गये। समाजवादियों का भी यही हाल है। जनसंघ में भी झगड़े हैं। यह सारा है। नकारात्मक ही उनका काम अधिक होता है। ईर्ष्या, द्वेष, वैमनस्य बहुत बढ़ता है। उनके असली भाग्य-विधाता मतदाता हैं। उनका भय रहता है।

एक सज्जन—इसमें तो सदियाँ लग जायँगी ?

जे० पी०—जो भी लगे, कोई 'कट शार्ट' (छोटा रास्ता) है क्या ? साधारण लोग हैं, वे समझते हैं। जाति को लेकर लोकतंत्र को बहुत हानि पहुँचायी गयी है। चाहे किसी पार्टी का उम्मीदवार हो, जाति के नाम पर अपील करते हैं। कोशिश हो तो जनमानस में विवेक जागृति करना कठिन नहीं है।

संत हंस—क्या फार्मूला है ?

जे० पी०—सर्वोदय-विचार।

संत हंस—राजनीति में इसका क्या सम्बन्ध है ?

जे० पी० जिस प्रकार की राजनीति है, उससे इसका कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता। उसको विनोबाजी ने 'लोकनीति' का शब्द दिया है। विचार के साथ-साथ कोई कार्यक्रम चाहिए। कार्यक्रम भूदान से शुरू हुआ। अब ग्राम स्वराज्य की पूरी कल्पना स्पष्ट हुई है। अभी काम चल ही रहा है। जमीन की मालकियत गाँव की हो, ग्रामकोष बने, परस्पर एक-दूसरे की सहायता करते हुए जीने का नियम बने, यह ग्रामदान का कार्यक्रम बना। ग्रामदान के बाद ऐसी भूमिका बनती है कि वयस्कों की ग्रामसभा गाँव का काम सर्वसम्मति से करे। बहुमत और अल्पमत से फूट पड़ जायेगी। अगर ऐसी ग्रामसभाएँ चलती हैं, तो इनके ऊपर का ढाँचा भी सुधर जायेगा। दो प्रदेशों, बिहार और तामिलनाडु, में यह काम काफी आगे बढ़ गया है। वहाँ हम उम्मीद करते हैं कि लोकनीति विकसित होगी।

इंग्लैंड में इतने वर्ष गुजर गये, फिर भी लोगों के हाथ में क्या आया ? राष्ट्रीयकरण होता है तो अफसरों के हाथ में सत्ता जाती है। जनसत्ता का नाम लोग बहुत लेते हैं, खास तौर से कम्यूनिस्ट आदि। हालाँकि उनकी मूल कल्पना यही थी, जो गांधीजी की ग्रामराज की कल्पना थी। यह

→खोला जा रहा था, उससे आन्दोलन का संकट दिनोदिन बढ़ रहा था। वह संकट बैठकों और निर्णयों से दूर होनेवाला नहीं था। रोग गहरा था, उसके लिए कोई गहरा उपचार अनिवार्य था। बिहार के ही नहीं, देश के, सर्वोत्तम आन्दोलन ने अपने सबसे बड़े साथी और सिपाही को बाजी पर चढ़ाया है। उसकी जीत आन्दोलन की जीत है; उसकी हार, आन्दोलन की हार। समय की माँग है कि अब एक-एक साथी खड़ा हो जाय और चल पड़े। हर वरिष्ठ साथी अपना एक प्रयोग-क्षेत्र लेकर जे० पी० की तरह गड़ जाय।

अगर हड्डी ही गिरनी होगी तो क्या अकेले जे० पी० की गिरेगी ? हजार हड्डियाँ हजार जगह गिरेंगी। जिस क्रांति का हमने आज इतने वर्षों से जप किया है उसकी यही माँग होगी तो हमें उसकी भी तैयारी रखनी होगी।●

आन्दोलन सन् १९५२ से शुरू हुआ है। समाजवाद और साम्यवाद को शुरू हुए कितने वर्ष हो गये ? उनका परिणाम सामने है। अब गांधीजी के रास्ते पर यह ग्रामस्वराज्य का प्रयोग चल रहा है। हम तो आपका आशीर्वाद चाहते हैं। इसमें हृदय और शब्द, दोनों चाहिए। हम ऐसा न मानते तो अपना जीवन इसम समर्पित न करते।

सत हंस—राजनीति मे तात्कालिक प्रयत्न क्या हो ?

जे० पी०—हमने दो उपाय बताये जो पतन हो रहा है उसको रोकने के लिए। एक उपाय तो यह हो सकता है, कि जो पढ़े लिखे लोग हैं वे अपना नागरिक सगठन बनायें लोकतन्त्र की रक्षा के लिए। उनके अदर हिम्मत इतनी हो कि जो भी गलत हो रहा हो, वे प्रतिनिधि के सामने रखें, चाहे उनका प्रतिनिधि प्रधान मत्री ही हो। लोकतन्त्र की रक्षाए समितियाँ बनें।

जुलाई म हम दिल्ली मे इसकी एक गोष्ठी भी करनेवाले हैं। इसम लाला लाजपतरायजी द्वारा सस्थापित लोकसेवक मडल और पूना की एक सस्था, ये दो सस्थाएँ विशेष कार्य कर रही हैं। चुनाव से पहले प्रत्यक क्षेत्र म मतदाताओ की समितियाँ बनें, जो चुनाव से पहले सब उम्मीदवारो के काम के सम्बन्ध मे तटस्थ रूप से सारी बातें प्रकाशित कर दें।

दूसरा हमने यह सोचा है कि मतदाताओ का शिक्षण भी वे करें।

एक उपस्थित—क्या तानाशाही और लोकतन्त्र के बीच की कोई चीज नहीं हो सकती ?

जे० पी०—मैं तो तानाशाही का सख्त विरोधी हूँ। चाहे व्यक्ति की हो या पार्टी की तानाशाही हो, दोनो का परिणाम भयकर होता है। पाकिस्तान मे अयूबखाँ तानाशाह था, अब उसीकी पार्टी के लोग कहते हैं कि २ करोड़ रुपया खा गया।

—प्रस्तुतकर्ता : सुन्दरलाल बहुगुणा

परिचर्चा

आचार्यकुल परिगोष्ठी : दिशा, कार्य और संगठन का निर्धारण

१० जून को डाक्टर हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उत्तरप्रदेश के पूर्वी जिलो—आजमगढ, बलिया, देवरिया, गोरखपुर, और वाराणसी नगर के आचार्यकुल के सयोजको एव सदस्यो की परिगोष्ठी का उद्घाटन किया। सभा की अध्यक्षता श्री केदारचन्द्र मिश्र, प्राचार्य, मदनमोहन मालवीय डिग्री कालेज और सयोजक आचार्यकुल, देवरिया ने की। केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के सयोजक श्री वशीधर श्रीवास्तव ने देश के आचार्यकुल-आन्दोलन की रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए बताया कि देश के पाँच प्रदेशो मे—बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान में—आचार्यकुल का काम हो रहा है और प्रगति सतोषजनक है। सबसे प्रेरणादायक समाचार यह है कि आगरा विश्वविद्यालय से सलग्न सभी डिग्री कालेजो के प्रिंसिपलो ने प्रस्ताव किया है कि वे अगले सत्र से अपनी सस्थाओ मे आचार्यकुल की स्थापना करेंगे। उन्होने कहा कि गोरखपुर मण्डल के चारो जिलो—देवरिया बस्ती, गोरखपुर और आजमगढ—मे जिला-स्तर पर आचार्यकुल की स्थापना हुई है, और वहाँ की कई शिक्षण-सस्थाओ मे आचार्यकुल बने हैं। फैजाबाद, बलिया, फर्रुखाबाद और गाजीपुर मे भी आचार्यकुल स्थापित हुए हैं। इन जिलो के आचार्यकुल क्या कार्यक्रम उठायें, इस विषय पर विचार करने के लिए यह परिगोष्ठी बुलायी गयी है।

आचार्यकुल की इस परिगोष्ठी मे उत्तरप्रदेश के पूर्वी अचल के (गोरखपुर, देवरिया, आजमगढ़ और बलिया जिलो के) लगभग २५ सदस्यो को बुलाया गया था, जिनमे से २२ सदस्य आये थे।

आचार्य हजारी प्रसादजी द्विवेदी ने अपने उद्घाटन-भाषण मे कहा कि 'इस समय शिक्षा की परिस्थिति अत्यन्त विषम है। इन विषम परिस्थिति मे से मार्ग निकालने का माध्यम ही आचार्यकुल है। आज की शिक्षा-व्यवस्था के केन्द्र मे गुरु नहीं है, आचार्य नहीं है, कानून है। छात्रो के प्रवेश के लिए, अध्यापक की नियुक्ति के लिए, परीक्षा और परीक्षक के लिए, सारी व्यवस्था के लिए, कानून बने हैं। इस शिक्षा-व्यवस्था को आप 'कानूनकुल' कह सकते हैं। यह सारी व्यवस्था अविश्वास पर आधारित है। आचार्य अपने आचरण से इस अविश्वास के वातावरण को दूर करके विश्वास का वातावरण उत्पन्न करें, तो आचार्यकुल सफल हुआ, ऐसा मानना चाहिए। किसी काम की प्रगति के लिए सगठन आवश्यक है। परन्तु आचार्यकुल के सगठन मे अधिक महत्त्व आचार्य के चरित्र का है।'

आपने आज शिक्षा की सबसे बड़ी समस्या के रूप मे शिक्षा मे व्याप्त जड़ता को प्रस्तुत करते हुए कहा कि '६ वर्ष की अवस्था मे विद्यार्थी इस कोल्हू मे डाला जाता है और २५ वर्ष की अवस्था म निकलता है, तो केवल खली बच जाती है, स्नेह रहित खली। यही कारण है कि विश्वविद्यालय से निकले हुए छात्र में नयी बात सोचने की शक्ति और रचनात्मक प्रतिभा (क्रिएटिव जीनियस) नहीं रह जाती। भले ही वह आलोचक बन जाय। शिक्षा वातावरण से विच्छिन्न है और इसमे प्राण शक्ति का अभाव है। छात्रो का स्वच्छन्द विकास इसमे नहीं हो पाता। स्वच्छन्द विकास के

') सुझाव-पत्र :

लिए प्रकाशधर्मा गुरु चाहिए। प्रकाश की छाया में पीपल और दूब, दोनों अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार विकसित होते हैं। आचार्यकुल में ऐसे प्रकाशधर्मा गुरु होंगे, तो आचार्यकुल सफल होगा। मेरा विश्वास है कि आचार्यकुल की इस सकल्पना में बाबा ने ऐसे प्रकाशधर्मा गुरु की कामना की है। आचार्यकुल अभी गर्भावस्था में है। अभी मूर्ति बनी है, उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करनी है। इस परिगोष्ठी के विचार-मंथन में यह प्राण-प्रतिष्ठा होगी, इस आशा के साथ मैं गोष्ठी का उद्घाटन करता हूँ।'

१० जून की सुबह से १२ जून की दोपहर तक हुई आचार्यकुल की कई बैठकों में विविध पहलुओं पर विशद चर्चाएँ हुईं, और परिगोष्ठी में भाग लेनेवालों ने महत्त्वपूर्ण योगदान किया। इस सामूहिक विचार-मंथन के निष्कर्ष इस प्रकार हैं :

संगठन

—आचार्यकुल शिक्षक संघों का अविरोधी और हितों का पूरक संगठन है, अतः एक व्यक्ति दोनों संगठनों का सदस्य हो सकता है।

—यदि कोई हड़ताल न्यायपूर्ण मांगों के लिए हो और उसका मार्ग अहिंसा का हो, तो आचार्यकुल की हड़ताल से सहमति हो सकती है। परन्तु अगर आचार्यकुल हड़ताल में भाग न लेने का निर्णय करता है, तो सदस्य को या तो आचार्यकुल की बात माननी चाहिए या सदस्यता छोड़ देनी चाहिए।

—हड़ताल में भाग लेने या न लेने का निर्णय जनपदीय अथवा प्रादेशिक आचार्यकुल करेगा।

—आचार्यकुल की इकाई की स्थापना में संख्या पर जोर नहीं दिया जायगा।

—आचार्यों के अलावा साहित्यिक, चित्रक, पत्रकार या समाज-सेवक भी आचार्यकुल के सदस्य हो सकेंगे। जिस स्तर का व्यक्ति होगा, उस स्तर की इकाई का वह सदस्य माना जायेगा।

—प्राइमरी, जूनियर हाईस्कूल, इंटर कालेज और डिग्री कालेज में प्रत्येक में अपनी अलग-अलग इकाई होगी। प्रारम्भिक इकाई का क्षेत्र ब्लाक होगा और प्रत्येक ब्लाक से जनपद आचार्यकुल में दो प्रतिनिधि जायेंगे। ब्लाक के इन्हीं प्रतिनिधियों से जनपद का आचार्यकुल बनेगा। चुनाव सर्व-सम्मति से होगा।

—इस प्रकार के प्रतिनिधियों का आचार्यकुल जिले के अध्यक्ष, संयोजक सहित अधिक-से-अधिक ११ सदस्यों की कार्यकारिणी का सर्वसम्मति से निर्वाचन करेगा।

—प्रत्येक जिले के अध्यक्ष एवं संयोजक अथवा कार्यकारिणी के एक सदस्य के प्रतिनिधित्व से प्रादेशिक आचार्य कुल का निर्माण होगा।

—प्रादेशिक आचार्यकुल की कार्य-कारिणी समिति के अध्यक्ष एवं संयोजक सहित अधिक-से-अधिक २१ सदस्यों की होगी।

—प्रादेशिक संगठन के अध्यक्ष और संयोजक अथवा कार्यकारिणी का कोई एक सदस्य मिलकर केन्द्रीय आचार्यकुल बनायेंगे, जो अपना अध्यक्ष और संयोजक चुनेगा।

—प्रत्येक स्तर की कार्यकारिणी को अपनी सख्या का एक-चौथाई सदस्य मनोनीत करने का अधिकार रहेगा। विशेष आमंत्रित व्यक्ति भी शामिल किये जा सकते हैं।

सदस्यता-शुल्क और उनका विनियोग

डिग्री कालेज के सदस्य कम-से-कम १ रु० प्रतिमास और प्रारम्भिक और माध्यमिक स्तर के सदस्य कम-से-कम १ पैसा प्रतिदिन सदस्यता शुल्क के रूप में दें।

इस प्रकार जो शुल्क एकत्र होगा, उसका ५ प्रतिशत केन्द्रीय आचार्यकुल के लिए, ५ प्रतिशत प्रादेशिक आचार्यकुल के लिए, १० प्रतिशत जिला आचार्यकुल के लिए भेजा जायेगा और शेष ८० प्रतिशत संस्थागत आचार्यकुल के लिए रहेगा।

आचार्यकुल की इकाइयाँ अपने शुल्क के ८० प्रतिशत कोष का जिस प्रकार विनियोग करें, उसकी जानकारी 'नयी तालीम' पत्रिका में सूचनार्थ प्रकाशित कराती रहें।

संस्थागत आचार्यकुल अपने अंश का ५० प्रतिशत आचार्यकुल विचार-प्रचार और संगठनात्मक कार्यों में लगायेगा, और ५० प्रतिशत को पूँजी के रूप में उत्पादक उद्योगों में लगायेगा, जहाँ उत्पादक उद्योग की सुविधा न हो, वहाँ सर्वोदय-साहित्य के काम में। प्राकृतिक चिकित्सा आदि में भी यह रकम खर्च की जा सकती है।

आचार्यकुल के व्यापक प्रचार के लिए गोष्ठी और सभाएँ की जायें। सहयाः, क्षेत्र और जिला स्तर के शिविर किये जायँ। साल में एक बार प्रादेशिक स्तर की परिषद भी हो। अखबारों में लेख दिये जायें, और जब तक आचार्यकुल का कोई अलग मुखपत्र नहीं होता, 'नयी तालीम' और 'भूदान-यज्ञ' में नियमित लेख दिये जायँ।

यह भी निर्णय हुआ कि आचार्यकुल समान मंच के निर्माण का प्रयास करे, जिससे हर दल के लोग देश की ज्वलन्त समस्याओं पर अपने विचार प्रकट कर सकें।

आचार्यकुल और तरुण शांति सेना

—जहाँ आचार्यकुल स्थापित हो, वहाँ तरुण शांति सेना अवश्य बनायी जाय, जिससे दोनों के पराक्रम का प्रयोग नये समाज के निर्माण कार्य में हो सके।

—सरकार से तरुण शांति-सेना के लिए आर्थिक सहायता मिलती है, तो उसका उपयोग व्यक्तिगत सुविधा के स्थान पर कार्यक्रम के संचालन और व्यवस्था पर किया जाय, जिससे छात्र व्यक्तिगत प्रलोभन से बचें।

—आचार्यकुल को देश की परि-स्थितियों का मूक-दर्शक नहीं रहना है। उसे कुछ निषेधात्मक और कुछ विधायक कार्य अवश्य करते रहना चाहिए, अर्थात् अप्रासंगिक कार्यों की भर्त्सना और प्रासंगिक कार्यों की सराहना करना आचार्यकुल का दायित्व है।

—आचार्य अपने विवेक के अनुसार

परिस्थिति के पैदा करने का प्रयत्न करे, लेकिन कानून और व्यवस्था की दृष्टि से विषम परिस्थिति हो जाती है, तो पुलिस और कानूनी व्यवस्था की सहायता ली जा सकती है।

दलगत राजनीति और गुटबन्दी

—शालाओं में दल-मुक्त आचार्यकुल की स्थापना की जाय।

—शालागत गुटबन्दी से बचने के लिए आचार्यों के वेतन में साम्य हो, आचार्यकुल इसके लिए प्रयास करे।

शिक्षा की स्वायत्तता

—पूरा पैसा सरकार का और पूरी स्वायत्तता आचार्य की, ऐसी स्थिति बननी चाहिए।

—प्राथमिक स्तर पर शिक्षा बोर्डों से, माध्यमिक-स्तर पर मंत्रालयों से, और विश्वविद्यालय-स्तर पर शासन से मुक्ति का प्रयास हो।

—प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर विविध कार्यों का संचालन स्थानीय अध्यापक, अभिभावक, और छात्र की समितियाँ करें। आचार्य अपने क्षेत्र में ऐसी स्वायत्त समितियों की स्थापना का प्रयास करें।

ग्राम-स्वराज्य और लोकनीति

—आचार्यकुल को ग्रामदान-प्राप्ति के पहले और पीछे ग्रामदान के दर्शन को समझने-समझाने में, और गाँवसभा निर्माण आदि की प्रक्रिया में पूर्ण सहकार करना चाहिए।

—गाँवसभा को गुटबन्दी से बचाने के लिए आचार्यकुल उसे सर्वसम्मति की चुनाव-पद्धति का अनुसरण करने में मार्ग-दर्शन दे, क्योंकि जब तक आचार्यकुल ग्राम-स्वराज्य के निर्माण का साधन नहीं बनता, तब तक वह लोकशक्ति का निर्देशन नहीं कर पायेगा।

लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा

—लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति व्यक्तिगत जीवन में निष्ठा और आपसी व्यवहार में लोकतांत्रिक सम्बन्ध रखना चाहिए।

—विद्यार्थियों को उत्तरदायित्व दिया जाय और दिया भाव के स्थान पर सद्भाव का प्रयास किया जाय।

—लोकतंत्र के मूल्यों के विरुद्ध आचरण करनेवालों के खिलाफ आवाज उठाई जाय।

—चुनाव-सम्बन्धी भ्रष्टाचार को रोकने के लिए मतदाता शिक्षण किया जाय।•

देश-विदेश लोकजीवन

ओहियो (अमेरिका) में भूदान-आन्दोलन

डाइगा के मुन्दो पर आधारित ओहियो की एक संस्था 'पीसमेकर्स' (शान्ति स्थापक) ने 'पीसमेकर लैण्ड ट्रस्ट' के नाम से एक संगठन बनाया है, जो वहाँ भूदान से प्रेरित होकर भूमि माँगने का आन्दोलन चला रहा है। उक्त संगठन की पत्रिका 'पीसमेकर' ने अपने २१ मार्च '७० के एक अंक में उक्त जानकारी प्रकाशित की है। लेख में लिखा गया है

'आमतौर पर 'पीसमेकर्स' में, और शान्ति का जीवन में लगे हुए लोगों में सामुदायिकता के प्रयोगों में दिनोंदिन दिलचस्पी बढ़ रही है। ऐसे सभी क्षेत्रों में, जहाँ एक भिन्न संस्कृति (काउण्टर-कल्चर) का विकास हो रहा है, इस प्रकार के प्रयोग हो रहे हैं। इससे प्रेरित होकर, तथा बहुत सारे 'पीसमेकर्स' के इस दृष्टिकोण से—कि अमेरिकी समाज के हृदय में जो अत्यन्त गम्भीर विग्रह पैदा हुए हैं, और हो रहे हैं, उसका कारण भूमि, भवन और दूसरे बुनियादी साधन के ऊपर उन लोगों का बढ़ता हुआ एकाधिकार है, जो अमेरिका को चला रहे हैं—'पीसमेकर लैण्ड ट्रस्ट' की स्थापना की गयी है।'

ट्रस्ट के कार्यक्रमों को वास्तविक अर्थ में और नमूने के तौर पर शुरू करने के लिए नगरों और देहातों में भूमि और भवन के दान प्राप्त करने के लिए 'पीसमेकर्स' को प्रयत्नशील होने का निवेदन करते हुए लेख में लिखा गया है :

"इन नमूनों की आवश्यकता इसलिए है कि भविष्य में मौजूदा सम्पत्तिक व्यवस्था से अधिक-से-अधिक भूमि को मुक्त करने के महत्त्वपूर्ण किन्तु नये प्रयत्नों में उनका उपयोग किया जा सके। इन बुनियादी प्रयोगों के बिना ट्रस्ट केवल सिद्धान्त बना रहेगा, और सम्पत्तिक व्यवस्था पर चोट करने के लिए आवश्यक अनुभव प्राप्त नहीं होगा।"

इस आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में 'पीसमेकर्स' का आह्वान किया गया है कि वे अपने सम्पत्तिक अधिकारों के बारे में विचार करें। साथ ही आशावान होकर वे अपने मित्रों से ट्रस्ट के विचारों के सम्बन्ध में चर्चा करें और सुझायें कि वे भूमि, भवन आदि दान में देने की बात सोचें।

ट्रस्ट की स्थापना से लोगों में इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय दिलचस्पी पैदा हुई है। बहुतेरी हाल में ही शुरू हुई सामुदायिक बस्तियों ने, जिन्हें भूमि, भवन आदि की जरूरत है, पूछताछ की है। अब हर चीज आस्थावाले दूरदर्शी उन व्यक्तियों की प्रतीक्षा में है, जो आगे बढ़ेंगे और अपने मौजूदा सम्पत्तिक अधिकारों को स्वेच्छया त्यागने के सम्बन्ध में विचार-विनिमय करेंगे।

'लैण्ड ट्रस्ट' के सम्बन्ध में कुछ स्पष्टीकरण

"लैण्ड ट्रस्ट एक खुला प्रयास है भूमि को अधिकाधिक अमेरिकी लोगों की पहुँच में लाने का, जो मौजूदा व्यवस्था में अपने जन्मसिद्ध अधिकारों से भी वंचित हैं, जो अपना जीवन-यापन अपनी मर्जी के अनुसार नहीं कर सकते, क्योंकि मौजूदा व्यवस्था में जीवन-यापन के साधन पर

केन्द्रीकरण और एकाधिकरण है, स्वभावतः जो हर व्यक्ति की चीज है।

प्रारम्भ में हम 'ट्रस्ट' के उद्देश्यों से सहानुभूति रखनेवाले लोगों से भूमि का दान प्राप्त करने की आशा रखते हैं। पहले दान में प्राप्त होनेवाली भूमि का सावधानीपूर्वक विकास किया जायगा। अधिक भूमि प्राप्त होने पर विभिन्न प्रयोग किये जायेंगे, उदाहरणार्थ, शहर के किसी समुदाय को देहात में ले जाकर बसाना; प्राप्त भूमि के क्षेत्र में भूमिहीनों, बेकारों को खेती के लिए भूमि देना।

एक या अधिक नमूने के ठोस रूप में स्थापित और उत्पादनशील हो जाने के बाद भूमि अधिकरण का दूसरा चरण शुरू किया जायगा। पुनः विनोबा के उदाहरण से प्रेरित होकर हम आशा करते हैं कि हम स्वयं तथा अन्य लोग भी, सक्रिय होकर भूमि और भवन के दान प्राप्त करने के प्रयत्न में लगेंगे। उनके लिए सीधी कार्रवाई और जन-जागरण अभियान चलायेंगे, ताकि उनका नगरों और देहातों के बड़े-बड़े भूमिवानों पर स्वेच्छया भूमि (या अन्य उत्पादन के स्रोतों) के स्वामित्व को त्यागने के लिए नैतिक प्रभाव पड़े, और भूमिहीन अपना जन्मसिद्ध अधिकार पुनः प्राप्त कर सकें।

भूमि-प्राप्ति के प्रयत्न में लगा कार्यकर्ता भूमि के सवाल पर लोगों का ध्यान आकर्षित करेगा। लोगों को इस विषय में शिक्षित करेगा कि मौजूदा व्यवस्था में भूमि के स्वामित्व का जो स्वरूप है, उसका समाज पर क्या असर पड़ता है। उदाहरणस्वरूप यह समझाया जायगा कि युद्ध और साम्राज्यवाद का भूमि से अलग रहने के साथ क्या सम्बन्ध है।

नगरों की औद्योगिक मुनाफाखोरी का स्थानान्तरण अवश्य ही सहकारी खेती, भूमि के सामूहिक उपयोग द्वारा, तथा औद्योगिक उत्पादन का स्थानान्तरण विकेन्द्रित इकाइयों द्वारा, जो मानवों का व्यापार और सहकार सेवा के रूप में करें, और जो आर्थिक स्वावलम्बन और पुरुषार्थ की प्रेरणा दें, होना चाहिए। यह वैकल्पिक व्यवस्था है, जिसको प्रायोगिक नमूनों के रूप में ट्रस्ट विकसित करना चाहता है। वर्तमान व्यवस्था के कायम रहने का अर्थ है सम्पूर्ण एकाधिकरण, जिसका अर्थ है कुछ ही दशाब्दियों के अन्दर स्रोतों का सूख जाना, वातावरण का विषाक्त होना, और हिंसा—जिसके साथ ही व्यापक पैमाने पर लोग निराधार होते हैं, भुखमरी होती है, और निरंकुश प्रतिद्वन्द्विता होती है—के कारण धरती की ही मृत्यु। ट्रस्ट द्वारा प्रस्तुत भूमि के उपयोग का विकल्प इसमें बच निकलने का एक मार्ग है।●

जरा गम्भीरता से सोचें

● रमेश पटेल ●

अभी चीन ने अन्तरिक्ष युग में प्रवेश किया है। अणु परमाणु बम तो वह बना ही चुका था। चीन को अपनी नयी अर्थ-व्यवस्था का संरक्षण करना है। अणु-परमाणु बम बनाये बिना उसके लिए कोई दूसरा चारा नहीं था। अब भारत में भी पुराने जमाने के—'इस्लाम खतरे में है' जैसे—आवेशपूर्ण नारों की तरह 'देश खतरे में है, अणुबम बनाओ!' के नारे लगाये जा रहे हैं। यह बहुत ही आकर्षक और जोश-खरोशवाला नारा है, परन्तु जरा स्वस्थ चित्त से इस पर सोचना होगा। अत्यंत नाजुक प्रश्न है, कहीं हमारी शक्ति बुद्धि को ये आवेशपूर्ण नारे लील न लें, और इस खिंचाव में देश का दिवाला न निकल जाय।

अणुबम बनाने का विचार करने से पूर्व यह प्रश्न उठता है कि अणुबम बनाकर हम किसकी रक्षा करना चाहते हैं? क्या भारत की असीम गरीबी को बचाना है? भयंकर अट्टहास करती हुई बेकारी का संरक्षण करना है? प्लेग-हैजा से भी अधिक क्रूर नौकरशाही की रक्षा करनी है? गरीबी, बेकारी नौकरशाही बनी रहेगी, तो क्या देश का संरक्षण हो सकेगा? आखिर, अणुबम से कितनी रक्षा करनी है?

कहते हैं कि सीमाओं की रक्षा के लिए भारत में सेना रखी गयी है। जरा सोचें, शस्त्रों के मामले में दुनिया के महाशक्तिशाली राष्ट्रों की बराबरी करने से आज राष्ट्र की रक्षा होगी या विनाश? सेना तो अब दिखावे की चीज बन गयी है। क्या लंका, बर्मा, नेपाल—इन छोटे-छोटे राष्ट्रों की सेनाएँ अपने देश को, अगर यह समस्या खड़ी हो तो, भारत और चीन से रक्षा कर सकती हैं? क्या भारत की बहुत बड़ी सेना अपनी सीमाओं की रक्षा कर सकती है? और वह भी तब जब सारा देश आन्तरिक रोगों और भयंकर प्रश्नों के दलदल में फँसा हुआ हो?

सबसे पहली आवश्यकता है मन और बुद्धि को आवेशरहित और स्वस्थ बनाने की, उत्तरदायित्व के साथ सोचने व बोलने की। सबसे पहले यह बात समझ लेने की जरूरत है कि भारत को खतरा बाहर से नहीं है, बल्कि अपनी आन्तरिक रोगग्रस्त व्यवस्थाओं से है। भारत के आन्तरिक प्रश्नों का यह तकाजा है कि जितनी शीघ्रता से और बुनियादी तौर पर हम उनका निराकरण कर सकेंगे, उतनी ही जल्दी सही मानों में भारत का संरक्षण हो सकेगा। और तभी भारत दुनिया को कुछ नयी चीज दे सकेगा। इसी रास्ते से स्वार्थ और परमार्थ, दोनों सिद्ध होगा।

क्षण भर के लिए सोचें, जितनी शक्ति बुद्धि-धन-योजना-साधन-सामग्री सेना के लिए खर्च करते हैं, वह सब सीमा की सुरक्षा के नाम पर ही तो खर्च किया जाता है। उस सेना का और उपयोग क्या होता है? सीमा-सुरक्षा के अलावा दूसरे सवालों को हल करने में सेना का उपयोग न किया जाय, यही उचित है। (भारत की लोकतान्त्रिक व्यवस्था को अब सबसे ज्यादा खतरा उसकी अपनी सेना से है, इसे ध्यान में रखना होगा, नहीं तो नींद में पड़े-पड़े ही हम गिर जायेंगे।) सेना पर जितना कुछ

शक्ति-बुद्धि-धन-योजना साधन-सामग्री खर्च होती है, देश के पच्चीस तीस लाख युवक-युवतियाँ उसके साथ भारत के आन्तरिक रोग, निर्बलता, कुरूपता को समाप्त करने में लग जायँ तो दस वर्षों में भारत कैसा होगा, उसकी कल्पना करना मुश्किल है। लेकिन कल्पना को उस दिशा में मोड़ देना है, निर्माण के लिए, विनाश के लिए नहीं।

भारत के एक महान शान्ति-आचार्य विनोबा भावे इस बात को समझते हैं। क्योंकि भारत की सुरक्षा के प्रश्न पर उनकी नीयत सच्ची है, और यह सुरक्षा किस तरह हो सकती है, उसकी पूरी पकड़ भी उनको है। कुरूपताओं के संरक्षण की उनको बिलकुल तैयारी नहीं है। अणुयुग को वे अच्छी तरह समझ गये हैं, इसीलिए कहते हैं कि अणुबम बनाने के बदले सेना को ही खत्म कर दो! और, शान्ति-सेना की व्यवस्था से ही देश में आन्तरिक शान्ति, सुव्यवस्था और स्वस्थ वातावरण बनाओ। सेना को खत्म करके उसको विकेन्द्रित व्यवस्था के अन्तर्गत दूसरे ही नक्शों की पूर्ति में लगाया जाय, यही सही राह है। साथ-साथ आर्थिक रचना, शासन और न्याय-तंत्र तथा शिक्षण में विकेन्द्रित व्यवस्था की जाय। नौकरशाही को तोड़कर ही नये युग में प्रवेश किया जा सकेगा।

अणुबम बनाने का रास्ता भारत के लिए गलत दिशा की दौड़ ही साबित होगी। यह केवल आत्मघात का रास्ता है। राष्ट्रध्वज और धर्मध्वज की सुरक्षा का भ्रम लोगों को होगा, परन्तु भारत अन्दर से टूट जायेगा, मिट जायेगा।

सबसे अधिक दुखद बात यह है कि अपने को भारत का हित-रक्षक समझनेवाले जनसंघ, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ आदि संगठनों के मार्ग और दिशा निर्देश के अनुसार चलने पर इस देश का सबसे अधिक अहित होनेवाला है, और इसकी संभावनाएँ निरन्तर बढ़ती जा रही हैं।

हम सेना को खत्म करेंगे कि अणुबम को बनायेंगे? जीने की योजना बनायेंगे या मात्र हमारी आत्मनाश की ही इच्छा है?

(गुजराती 'भूमिपुत्र' से अनूदित)

वैशाली की स्नेह-यात्रा

लिच्छवियों के शक्तिशाली गणतंत्र की भूमि, भगवान् महावीर की जन्म-भूमि, भगवान् बुद्ध की तपोभूमि वैशाली के लिए स्वाभाविक आकर्षण था हमारे मन में, और उसी महिमामयी भूमि पर पुनः अहिंसा और करुणा की धारा बहाने के उद्देश्य से चलनेवाले ग्राम-स्वराज्य अभियान के प्रति भी कम आकर्षण नहीं था। बलिया के हम तीन शिक्षकों ने निश्चय किया कि हम वहाँ जायेंगे और ग्राम-स्वराज्य के निमित्त चल रही प्रवृत्तियों में सक्रिय भाग लेकर उस भूमि के साथ और आन्दोलन के साथ तादात्म्य स्थापित करेंगे। आचार्य राममूर्ति ने हमें आवश्यक निर्देश दे दिये थे।

वैशाली के नगवाँ केन्द्र पर पहुँचने के बाद मुख्य कार्यकर्ता श्री लक्ष्मण देव सिंह के साथ आठ दिनों तक भ्रमण और सम्पर्क की योजना बन गयी। नगवाँ से ही सम्पर्क प्रारम्भ हुआ। साधारण आकार का गाँव! गरीब लोगों की बस्ती, ताड़ी के नशे में गम गलत करते हुए अर्द्ध-नग्न जीर्णकाय लोग, ताश के पत्तों में उलझे हुए निराश युवक! केवल एक व्यक्ति डा० गुलजार, यहाँ के भूतपूर्व एम० एल० सी० के अतिरिक्त अन्य प्रायः भूमिहीन लोग। उत्तरप्रदेश में हम इस प्रकार के गाँव देखने के आदी नहीं हैं, जैसे यहाँ देखने को मिले। भयानक आर्थिक असमानता, अहिंसा के लिए चुनौती, गर्भ में हिंसा पालती हुई भूमि! वहाँ के शिक्षकों से सम्पर्क कर 'आचार्यकुल' का संदेश सुनाया।

डा० गुलजार से मिले तो उन्होंने ग्राम-स्वराज्य के लिए अपनी योजना जाहिर की। उस गाँव के मुखिया ने बार-बार कहा कि बीघा-कट्ठा निकालकर जल्दी ग्रामसभा बना लो। हम देख रहे थे कि आजादी की लड़ाई ने जिसका अंग-अंग तोड़ दिया है, वह बूढ़ा अभी मन से पूरा जवान है, परिवर्तन के लिए व्याकुल है! उन्होंने हमसे निरलस होकर काम करने और हतोत्साह न होने का उद्बोधन किया और बतलाया कि इस क्षेत्र की 'जर्मन जाति' (उनका मतलब भूमिहार भाइयों से था) यदि विचार स्वीकार कर बीघा-कट्ठा निकाल देती है, तो कोई कारण नहीं कि ग्राम स्वराज्य न हो जाय। अगले दिनों की यात्रा में यह सूचना एक तथ्य के रूप में प्रकट हुई।

उस क्षेत्र के विद्यालय शीघ्र ही बन्द होनेवाले थे, इसलिए हम लोग पहले वहाँ के शिक्षकों से मिले। बेलवर और साइन के उच्च विद्यालयों में, और कुछ माध्यमिक स्कूलों में भी हमने शिक्षक भाइयों से भेंट की, और वर्तमान संक्रमण-काल में, तथा आगे की कल्पित लोकनीति में पथ-प्रदर्शन करने के अपने गुरुतर दायित्व के विषय में चर्चाएँ कीं। उपस्थित भाइयों ने चर्चाओं में रुचि ली, और कुछ लोगों में संगठन के लिए उत्साह भी झलका। हर जगह हमने देखा कि ग्राम-स्वराज्य के विचार को स्वीकार करते हुए भी कोई शिक्षक अभी ग्रामदान-पुष्टि के काम को अपना काम नहीं समझता। आन्दोलन में लगे साथियों को इस पर गौर करना चाहिए।

अपनी यात्रा के आठ दिनों के दौरान हम बेलवर, मुरहन्या, परेड़ा, बीबीपुर, परेड़ी, सिहुमा, चिन्तामणिपुर आदि गाँवों में गये और प्रायः एक ही जैसा अनुभव आया। गाँव के दो-चार सम्पन्न लोगों के पास भूमि का जमाव और शेष लोग उनकी रैयत। पुराने ज़माने की दासप्रथा याद आ जाती थी। सम्पन्न लोगों में अपनी भूमि और अपने 'स्टेटस' का अनन्त मोह, और तथाकथित रैयत में उबलता आक्रोश, एक तरफ घनीभूत

जड़ता और दूसरी तरफ 'मार्गाचलव्यतिकराकुलितेव सिन्धुः शैलाधिराज तनया न ययौ न तस्थौ' की स्थिति।

हमने भूमिहीनों से भी मिलने का प्रयत्न किया। विनोबा की मंशा और वर्तमान विनाशकारी परिस्थिति को बतलाया, तो कई तह राख की ढेर में पड़ी हुई उनकी आशा की चिनगारी का थोड़ा आभास हुआ। एक दिन संध्या के धुंधलके में मुसहर लोगों की एक टोली में जा रहे थे, तो मालिक-वर्ग के एक भाई ने हमें शंका की दृष्टि से देखा और यह खबर कई ऐसे रईसों में फैल गयी। अपने साथियों के सफाई देने पर भी उनकी शंका का समाधान नहीं हुआ। वे समझते रहे कि ये सर्वोदयी भी अब मुसहरों को उकसाने ही जा रहे हैं। खैर, जब हमने मुसहरों की दोपड़ियों के पास अपनी साइकिलें खड़ी कीं और बताया कि हम आपसे मिलने के लिए आये हैं तो सब झोपड़ों से बिजली की तरह तेजी से धूल-धूसरित नग्न-प्रायः युवा-वृद्ध, नर-नारी, बालक सभी जुट गये। जब हमने उनसे प्रार्थना की कि अपनी शक्ति को समझो और नया जमाना लाने के लिए तुम भी कोशिश करो, तो एक बूढ़े मासी ने कहा, 'करते तो बाबूजी, लेकिन पुलिसवालों का डर बना रहता है।' वे लोग समझ रहे थे कि हम उनके उपरथी उद्धारक हैं। हमने अपनी स्थिति साफ की, और विनोबाजी का नाम लेकर ग्रामस्वराज्य की बात समझायी, तो कुछ ने ध्यान से सुना और कुछ उठकर अपने घरों में चले गये। बूढ़े का 'टोन' बदल गया। वह समझ रहा था कि ये भी बाबू लोग हैं सफेद-पोश वर्ग के। काश, हम उनसे और अधिक मिल पाते, उनको अपना सकते। हमने महसूस किया कि अन्त्योदय का नारा बोलनेवाले हम लोग भी इनके यहाँ पहुँच नहीं पाते। कुछ पुराने संस्कार, कुछ आलस्य, कुछ सफेद-पोशी और विशृत होने की ईहा, और कुछ लक्ष्मी की छाया-ग्राहिणी माया, ये सब इन धरती के बेटों से हमें भी नहीं मिलने देते। यदि हिंसा के पक्षधर इनको अपने बाहुपाश में भर लेते हैं, तो किसका दोष है?

यात्रा के अन्तिम दिन प्राचीन वैशाली के वैभव के अवशेष देखने हम गये। लिच्छवियों के गणतंत्र का किला, सभासदों की अभिषेक-पुष्करिणी, बौद्ध स्तूप और अशोक-स्तम्भ को देख वैशाली का महिमामय अतीत हमारे मन को सराबोर करने लगा। भगवान् महावीर की जन्म-भूमि को प्रणाम कर जब हम वापस आ रहे थे, तो वैशाली की वर्तमान दुरावस्था में उसके प्राचीन गौरव की तुलना कर इसके भविष्य के सपने बुनने लगे। शायद कालपुरुष वैशाली की गरिमा की रेखा अब फिर ऊपर की ओर खींचे। ऊँचे-ऊँचे ताड़ के पेड़, खजूर, नारियल, शीशम के पेड़, अशोक-स्तम्भ सबका ऊर्ध्वमुखी होना मुझे सांकेतिक लग रहा था। ताड़ों के नशे में मदहोश लिच्छवियों के वंशजों की तन्द्रा टूटेगी, और नये प्रभात का उदय होगा।

अपनी इस स्नेह-यात्रा से लौटते हुए मुजफ्फरपुर में जब हमने जयप्रकाशजी का गम्भीर उद्घोष सुना—"अब मैं ग्राम सभाओं में नहीं बोलूंगा। गाँव-गाँव, घर-घर जाकर हम दोनों, प्रभावतीजी और मैं, बीघा-कट्ठा मांगेंगे। न मिलने पर हम भूखे रहकर उनके दरवाजे पर बैठकर उनकी आत्मा को जगाने का प्रयत्न करेंगे। शब्दों में समझाने से जितना हुआ सो हुआ, अब हम सत्याग्रह के दूसरे चरण में जायेंगे। लोगों को यह नहीं समझना चाहिए कि अहिंसा के तर्कश के सभी तीर समाप्त हो गये।"—तो हमारे हृदय के भाव पुष्ट हुए, लगा जैसे नये प्रभात की ऊषा झलक रही हो! प्रकाश की जय निश्चित ही होगी! —शिवकुमार

प्रबन्ध समिति की आगामी बैठक के लिए विचारणीय मुद्दे

सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक ता० २९ से ३१ जुलाई, '७० तक सीकर (राजस्थान) में होने जा रही है। इस बार की यह बैठक एक महत्त्वपूर्ण अवसर पर और एक विशेष हेतु से हो रही है। पूना की प्रबन्ध समिति में विनोबाजी की ७५ वीं वर्षगाँठ के अवसर पर ग्रामस्वराज्य-कोष के रूप में एक करोड़ रुपये, तथा १०० जिलादान भेंट करने का निर्णय लिया गया था। देश में बंगाल, बिहार, केरल, तमिलनाडु तथा भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में हिंसात्मक प्रवृत्तियाँ बढ़ रही हैं। देश की सामाजिक, आर्थिक रचना में अन्याय एवं विषमता भद्दे से-भद्दे स्वरूपों में आज मौजूद है, और हिंसक विस्फोट खासकर देहाती क्षेत्रों में उसीके कारण हैं। पूना की प्रबन्ध समिति में इस पर गहरी चिन्ता व्यक्त की गयी थी, और इसके लिए एक ओर जहाँ ग्रामदान के द्वारा गाँवों में जो सामुदायिक भावना सक्रिय हुई है, उसे विधायक क्रियाशीलता की ओर मोड़ने; तथा दूसरी ओर भूमि-सम्बन्धों में व्याप्त अन्यायों को मिटाने में 'मनाव' की सभी कोशिशों के विफल होने पर सीधी कार्यवाही के रूप में 'सत्याग्रह' करने की भी बात सोची गयी थी। आज यह समस्या चुनौती-स्वरूप में हमारे सामने खड़ी है। इस दृष्टि से इस बार सीकर की प्रबन्ध समिति में मुख्य रूप से निम्न विचारणीय विषय रखे गये हैं :

(१) ग्रामदान आन्दोलन की प्रगति,

(२) ग्रामस्वराज्य-कोष,

(३) बढ़ती हुई हिंसा एवं पूना प्रबन्ध समिति का प्रस्ताव,

(४) सर्वोदय-मण्डल का नाम-परिवर्तन,

आज प्राथमिक स्तर पर जिला सर्वोदय-मण्डल तथा उसके आगे क्रमशः जिला और प्रादेशिक सर्वोदय-मण्डल है। प्राथमिक इकाइयों को लेकर सर्व सेवा संघ बना है। लेकिन दोनों के नाम में आज भिन्नता है। या तो सर्व सेवा संघ का नाम बदलकर सर्वोदय-मण्डल किया जाय या फिर नीचे की इकाइयों का नाम बदलकर सर्व सेवा संघ प्रान्तीय, जिला और स्थानीय स्तर पर, जैसी भी स्थिति हो, किया जाय। —ठाकुरदास बंग, मंत्री

प्रयोग-क्षेत्र और ग्रामसभा का गठन : कुछ सुझाव

१५-१६ जून को बीहपुर (भागलपुर) में बिहार के कुछ प्रमुख साथियों की बैठक हुई। इस प्रश्न पर विचार हुआ कि जे० पी० के कदम के बाद हमारे काम का क्या स्वरूप हो। राय यह रही कि हमारे समर्थ साथियों में से अधिक-से-अधिक लोग अपना प्रयोग क्षेत्र चुनें, और जिस तरह जे० पी० गड़कर-जमकर काम कर रहे हैं, उस तरह काम करें। कई उपस्थित लोगों ने अपने क्षेत्र चुने। श्री वैद्यनाथ बाबू ने पूर्णिया का धमदाहा ब्लाक लिया। सुश्री निर्मला बहन ने दरभंगा जिले का सहरसा ब्लाक चुना। आचार्य राममूर्ति ने मुजफ्फरपुर जिले को अधिक समय देना तय किया।

इन प्रयोग-क्षेत्रों में मुख्य काम है लोक शक्ति प्रकट करने का। लोक-शक्ति का माध्यम है ग्रामसभा। सशक्त ग्रामसभा का संगठन अभी भी हमारे आन्दोलन की एक समस्या है। अनुभव से यह सिद्ध हो चुका है कि किसी तरह गाँव के कुछ लोगों को बिठाकर ग्रामसभा बना देने से काम नहीं चलता, बल्कि उल्टा असर होता है। ऐसी स्थिति में ग्रामसभा के संगठन की, खास तौर पर ऐसे प्रयोग-क्षेत्रों में, क्या पद्धति अपनायी जाय ? इस सम्बन्ध में जो विचार सामने आये—मुख्यतः श्री वैद्यनाथ बाबू के सुझाव पर—वे ये हैं :

१ जिस ग्रामदानी गाँव के लोगों को उत्साह हो, वह पहले गाँव के निवासियों का रजिस्टर तैयार करे। रजिस्टर में बालिग-नाबालिग, पुरुष स्त्री, सबके नाम लिखे जायँ। यह भी लिखा जाय कि किस परिवार में कितने सदस्य हैं, तथा कौन परिवार भूमिवान है, कौन भूमिहीन, कौन ग्रामदान में शरीक है, कौन नहीं। इस प्रकार ग्रामसभा के सदस्यों तथा ग्राम-निवासियों का रजिस्टर सबसे पहले तैयार करना चाहिए।

२ रजिस्टर तैयार होते ही ग्रामसभा की सदस्यता की योग्यता रखनेवाले सभी स्त्रियों और पुरुषों की बैठक बुलायी जाय। ग्रामसभा में वे भी शरीक होने के हकदार हैं, जो ग्रामदान में नहीं शरीक हैं। इस सभा में साफ-साफ बता दिया जाय—बाहर के कार्यकर्ता द्वारा या गाँव के किसी मान्य, सक्रिय, नागरिक द्वारा—कि सभा ग्रामदान के काम को आगे बढ़ाने के लिए बुलायी गयी है। अगर यह बात कबूल न हो तो ग्रामसभा बनाने का कोई अर्थ नहीं।

३. यह ध्यान रहे कि इस बैठक के लिए ७ रोज पहले घर-घर सूचना दे दी गयी हो। दूसरी सूचना घर घर बैठक के दिन भी दे देनी चाहिए। सभा का कोरम तभी पूरा माना जाय जब गाँव के कुल परिवारों के ७५ प्रतिशत के प्रतिनिधि मौजूद हों।

४ ग्रामसभा के पदाधिकारियों तथा कार्य-समिति के सदस्यों का चुनाव हो। सर्व सम्मत चुनाव का आग्रह रखा जाय। इसमें ढिलाई न की जाय, भले ही ग्रामसभा का बनना कुछ दिन रुका रहे।

५. सब पदाधिकारी तथा कार्यसमिति के सदस्य अपना बीघा-कट्ठा सभा में ही घोषित करें।

६ अनुरोध किया जाय कि जो परिवार ग्रामदान में नहीं शरीक हैं, वे शरीक हो जायें।

इतना करके, तथा यह तय करके, कि गाँव की भूमि का विवरण तैयार किया जाय तथा बीघा-कट्ठा का वितरण हो सके, यह पहली सभा विसर्जित की जाय।

भूमि विवरण

१ इस विवरण में भूमिहीन परिवारों तथा भूमिवान परिवारों की सूची बनायी जाय, इस सूचना के साथ कि किसके पास कितनी भूमि है।

२ भूमि का खाता-खसरा भी दर्ज कर लिया जाय।

उस भूमि का खाता-खसरा अलग दर्ज किया जाय जिसे परिवार बीघा-कट्ठा में देना चाहता है। उस भूमिहीन का नाम भी लिख लिया जाय जिसे दाता अपना बीघा कट्ठा देना चाहता है।

३. भूमि का विवरण बनाते समय ये जानकारी भी दर्ज कर ली जाय : (क) गाँव में भूदान की जमीन है या नहीं, बँटी है या नहीं, आदाता का दखल है या नहीं। (ख) किन भूमिहीनों को दान की भूमि का पर्चा मिल गया है, किसे नहीं। (ग) गाँव में सरकार की जमीन है या नहीं। अगर है तो किसके कब्जे में है ? क्या बाँटी जा सकती है ?

४ समर्पण-पत्र पर परिवार के किसी एक व्यक्ति का—प्राय मालिक का—हस्ताक्षर है। इस बार प्रयत्न हो कि परिवार के सभी बालिग पुरुष-सदस्यों का हस्ताक्षर हो जाय।

ग्रामसभा का उद्घाटन

इतनी तैयारी हो जाने पर, जिसमें लगभग १० दिन का समय लगेगा, ग्रामसभा की बैठक बुलायी जाय और समारोह के साथ भूमि का वितरण किया जाय। हो सके तो बीघा कट्ठा का, दान की, भूदान की, सरकार की, आदि सब जमीन का एकसाथ सभा में वितरण किया जाय।

अगर गाँव में सरकारी जमीन हो और उस पर किन्हीं लोगों ने नाजायज तरीके से कब्जा कर लिया हो, तो उसे खाली कराने का निर्णय किया जाय। नाजायज दखल करनेवाले पर ग्रामसभा उचित दबाव डाले और भूमि खाली कराये।

शपथ-ग्रहण

भूमि वितरण के बाद पूरी सभा ग्रामस्वराज्य का मसौदा (जो पहले से तैयार कर लिया गया हो) दुहराये। कुछ गाना-बजाना हो। गाँव के काम के लिए ग्राम-शान्तिसेना की भरती हो।

शिक्षण-शिविर

इस तरह ग्रामसभा बनायी जाय। ग्रामसभा बन जाना अपने में बड़ा काम→

विनोबा-निवास से

अनासक्त जीवन

१६ मई। बाबा के बचपन के साथी-मित्र भाई धोत्रे की मृत्युतिथि। सुबह छ: बजे सेवाग्राम की टेकडी पर जहाँ भाई की अंतिम क्रिया हुई थी, उस स्थान पर प्रार्थना हुई। छोटा-सा समूह इकट्ठा हुआ था। अक्का धोत्रे, दत्तोबा दास्ताने, लेलेजी, पापटे गुरुजी आदि भाई के स्वजन और स्नेहीजन थे। बाबा के सुझाव पर उस स्थान पर एक पत्थर रखा गया है, जिस पर भाई का पूरा नाम लिखा है, जन्म तथा मृत्यु की तारीख लिखी है और नीचे लिखा है—

'ॐ रामाय रामभद्राय रामचद्राय वेधसे, रघुनाथाय नाथाय।' बस इतना ही।

प्रार्थना के बाद बाबा ने कहा, "मनुष्य जीता है तब जितना व्यापक होता है, उससे अधिक व्यापक मृत्यु के बाद होता है, अगर वह अनासक्त हो। जो दुनिया छोड़कर जाते हैं, उनके पीछे उनकी परम्परा चलानेवाले पुत्ररूप से, मित्ररूप से, शिष्यरूप से रहते हैं। मनुष्य की परम्परा चलती रहे ऐसी योजना सृष्टि मे होती है। ऐसी परम्परा चलानेवाले मृत व्यक्ति से आगे जायेंगे तो उन्होने प्रगति की ऐसा अर्थ होगा। नही तो पीछेहट होगी। 'पुत्रात् इच्छेत् पराजयम्, शिष्यात् इच्छेत् पराजयम्।' जिस बाप की परम्परा आगे गयी, वह बाप धन्य और जिस गुरु की परम्परा आगे गयी, वह गुरु धन्य। रघुनाथ (धोत्रे) की परम्परा आगे चलायी जायेगी तो वह स्वय अपने को धन्य समझेगा। वैसा नही होगा तो मेरी परम्परा तो आगे नहीं चली, लेकिन मनुष्य की परम्परा तो आगे गयी, ऐसा समाधान मानकर वह शान्ति रखेगा, ऐसी मैं आशा करता हूँ।"....

× × ×

विसर्जन आश्रम (इंदौर) से किशोरी-लालभाई, किशोरभाई तथा अशोक बैराले आये थे। आश्रम-जीवन के बारे मे उन्होने कुछ सवाल, शकाएँ पूछी।

बाबा ने उनसे कहा, "ब्रह्मचर्य-पालन का निर्णय सामूहिक नहीं होता है, व्यक्तिगत होता है। हम दस बारह मित्र थे। हममे से कइयों ने शादी की। मैंने उन्हे आशीर्वाद भी दिया। लेकिन हमारा साथ छूटा नहीं। मेरे काम मे वे अभी तक है। बहुत काम उन्होने किये। आखिर गृहस्थजीवन नही होता तो हम पैदा ही नही होते। अब ऊँची उडान उडो और आमरण ब्रह्मचारी रहो तो पुरुषार्थ की बात है। लेकिन दूसरों का मत्सर करके यह बात नही होगी। गृहस्थों को तुच्छ दृष्टि से देखने से यह नहीं होगा। जय-प्रकाश नारायण विवाहित हैं। लेकिन पतिपत्नी ब्रह्मचर्य मे रहते हैं। आपको उसकी खूबी शायद मालूम नहीं होगी। गांधीजी के साथ रहने के कारण प्रभावती का निश्चय हुआ। जयप्रकाशजी ने कहा, 'मैं तुम्हारे अनुकूल रहूँगा।' यह बिलकुल सहज। जयप्रकाशजी के जीवन मे अहंकार नही है। मैंने कोई बहुत बडी बात की है, ऐसा अहम् नहीं। 'अनएस्युमिंग'—सहज निरहकार। हम समझते हैं कि इस जमाने की बहुत ही बडी मिसाल है। ऐसी दूसरी भी मिसालें हैं, जो जीवनभर ब्रह्मचारी रहे और उन्हे ब्रह्मचारी जीवन का अहकार नहीं, जैसे अण्णासाहब सहस्रबुद्धे। विवाह के बाद ब्रह्मचर्य से रहने की मिसालें है—श्री अरविंद, रामकृष्ण, गांधीजी।

× × ×

बेटी के विवाह के लिए न्योता देने के लिए सौ मालूताई और दत्तोबाजी आये थे। दत्तोबाजी की सारी शिक्षा बाबा के पास हुई। दत्तोबाजी के पिताजी अण्णासाहब दास्ताने खानदेश के बडे कार्यकर्ता, बाबा के मित्र थे—अपने बेटे-बेटियों को विनोबाजी से संस्कार मिले, यह अण्णासाहब की चाह थी। बच्चों ने विनोबाजी से संस्कार पाये, शिक्षा पायी और वात्सल्य भी। मालूताई ने बाबा के हाथ मे अपनी आरजू लिखित दी. "आपके आशीर्वाद से हमे जीवन भर जो समाधान मिला, वह हमारी बेटी को आपके आशीर्वाद से मिले, उसके विवाह-प्रसंग मे उपस्थित होकर आप आशीर्वाद दें, यह हमारी इच्छा है। आज तक मैंने आपके पास किसी भी चीज की मांग नहीं की। दत्तोबा के माता-पिता दोनों नहीं हैं। आप ही उनके माता-पिता-गुरु सब कुछ हैं।" अपना स्थान छोड़कर बाबा विवाह मे वधूवर को आशीर्वाद देने जायेंगे ऐसी कल्पना किसीने भी नहीं की थी। लेकिन २३ ता० की सुबह ७॥ बजे बाबा मगनवाडी के लिए चल दिये। विवाह-विधि के बाद आशीर्वाद के लिए बोलते हुए बाबा ने कहा. →

→है, लेकिन उससे बड़ा और कठिन काम है उसका सही दिशा मे चलते रहना।

ज्यों ही एक पचायत के गांव मे ग्राम-सभाएँ बन जायें, उनके पदाधिकारियों का पंचायत-स्तरीय शिविर हो। ग्राम-शान्तिसेना का शिविर अलग हो।

इन शिविरों मे अच्छी तरह समझाया-बताया जाय कि ग्रामसभा क्या काम करेगी, और कैसे करेगी। (शिविरो का सुव्यवस्थित अभ्यासक्रम होना चाहिए।)

सत्याग्रह

ऐसा अवसर आ सकता है कि अपने उत्तरदायित्व के निर्वाह मे ग्रामसभा को अपने किन्हीं सदस्यों के प्रति सत्याग्रह की प्रत्यक्ष कार्रवाई करने की जरूरत पडे। सदस्यों ने ग्रामदान की जिन शर्तों को समर्पण-पत्र म स्वीकार किया है उन्हे एक निर्धारित अवधि के भीतर पूरा करना ही चाहिए। न करने पर ग्रामसभा को प्रत्यक्ष कार्रवाई की तैयारी रखनी पडेगी। अवश्य प्रत्यक्ष कार्रवाई को अन्तिम अस्त्र मानना चाहिए।

प्रत्यक्ष कार्रवाई कौन करेगा, कैसे करेगा, किन स्थितियो में करेगा, उसका क्या स्वरूप होगा, आदि प्रश्न अलग चिन्तन और प्रयोग के हैं।•

"विवाह में आशीर्वाद देने के मौके कई बार आये, लेकिन उसके लिए कभी अपना निवास स्थान छोड़कर जाना नहीं हुआ। आज वैसा करना पड़ा। हमारी लड़की (मानूताई) ने हमें लिखा, अब अण्णासाहब दास्ताने गये, उनकी जगह पर हमारे लिए आप ही हैं। मैंने सोचा, अण्णासाहब आज अगर होते तो वे यहाँ आशीर्वाद देने आते। तो उनके नाम से मैं यहाँ आया हूँ। विवाहादि समारोह का एक मुख्य उद्देश्य—कुल के जो धर्म होते हैं, उनकी उत्तरोत्तर वृद्धि हो, आगे की पीढ़ियों को प्रेरणा मिले तथा गुणविकास हो, यह अध्यात्म-शास्त्रकारों ने माना है। कुलधर्म सबसे बलवान धर्म है। अण्णासाहब के दो बड़े गुण थे—सार्वजनिक सेवा की तड़प और काम की
उ। वे वकील थे। उनकी बुद्धिमत्ता तो थी नहीं। 'फिर भी आपको
। यश कैसे मिलता है?'—मैंने उनसे
.। उन्होंने रहस्य बताया, 'जो भी मैं हाथ में लेता हूँ, वह मेरा घर है ऐसा मानता हूँ, और लड़ता हूँ।
का बारीकी से अभ्यास करना पड़ता
। इसलिए यश मिलता है। उसके
रण पैसा तो मिलता ही है, लेकिन मेरे
शकिल मेरे मित्र बनते हैं, तो उन्हें मैं
र्वजनिक सेवाकार्य में खींच सकता हूँ।'
—ऐसी उनकी तड़प। और जो भी कार्य
ाथ में लेंगे उसमें काया-वाचा-मन प्राण
। कूद पड़ते थे। इष्ट काम होना चाहिए
अथवा देह गिर जाये, यह लगन! मैं आशा
करता हूँ कि उनके ऐसे गुणों की वृद्धि करने की प्रेरणा उनके कुल के लोगों को होगी।"

× × ×

महाराष्ट्र के जलगाँव और भिवंडी शहरों में दंगे हुए। वहाँ शान्तिसेना के काम के सिलसिले में जाकर लौटे हुए वसंतराव बोबटकर, सुमनताई बंग बाबा को रिपोर्ट दे रहे थे। एक मुस्लिम सज्जन के घर में उनका निवास रहा। बाबा ने प्रकट चिंतन किया—"इसमें हृदय बिगड़ा है ऐसा नहीं मानना चाहिए, दिमाग बिगड़ा है। वे ही लोग आगे आकर पश्चात्ताप करते हैं।...महाभारत में कहानी है। भीम भात खा रहा था, बकासुर उसे पीट रहा था। भीम ने कहा, 'तुम मुझे पीटो, मेरा भात खाना खत्म होने के बाद मैं तेरी खबर लूँगा। भात खाकर मजबूत बनूँगा।' अगर भीम बीच में ही उठता तो शायद बकासुर पर जय नहीं पाता। वैसे आप अपना काम करते जाइए। बहुत चिन्ताजनक स्थिति है नहीं। आपके काम से आपको परावृत्त करनेवाली जितनी भी चीजें हैं, उन्हें आपको छोड़ना चाहिए। आँखें बन्द कर लेनी चाहिए। दंगे करानेवाले और करनेवाले, दोनों अलग हैं। हम दोनों में से एक भी नहीं। जहाँ दंगे के पीछे राजनैतिक हेतु होता है, वहाँ दंगे को 'पोलिटिकल' रूप आता है। उसमें आप भी दाखिल होंगे, उसकी तीव्रता कम होने के लिए? आप उसमें क्यों पड़ें? आप दाखिल नहीं होंगे तो दंगे की तीव्रता बढ़ेगी, बढ़ने दीजिए...।" —कुसुम ('मैत्री' से साभार)

ग्रामस्वराज्य-कोष

कुछ महत्त्वपूर्ण स्पष्टीकरण

२५ मई के 'भूदान-यज्ञ' में पृष्ठ ५१५ पर ग्रामस्वराज्य-कोष के उद्देश्य, उसके खर्च इत्यादि बातों के बारे में स्पष्टता कर दी गयी थी। पर इस बीच फिर कुछ बातों के बारे में स्पष्टता चाही गई है, इसलिए फिर से स्पष्टीकरण प्रकाशित किया जा रहा है।

१ कोष का उद्देश्य : यह कोष पू० विनोबाजी को उनकी आयु के ७५ वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर राष्ट्र की ओर से श्रद्धा-स्वरूप भेंट किया जायेगा।

२ कोष का उपयोग सर्व सेवा संघ ने अपने प्रस्ताव द्वारा यह तय किया है, और पू० विनोबाजी की स्वीकृति भी इसे मिल चुकी है, कि इस कोष का उपयोग ग्रामदान-आन्दोलन के काम में होनेवाले खर्च के लिए होगा—जैसे, ग्रामदान अभियान व शिविर, सभा-सम्मेलन, कार्यकर्ता-प्रशिक्षण तथा निर्वाह, प्रचार-प्रकाशन, सफर-व्यय आदि, कार्यालय-खर्च, ग्रामदान-पुष्टि के लिए, अर्थात् ग्रामसभाओं के गठन आदि में और ग्राम-कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण में होनेवाला खर्च, इस प्रकार ग्रामदान-प्राप्ति और पुष्टि इन दोनों कामों में होनेवाले खर्च के लिए इस कोष का उपयोग होगा।

३ खर्च का अधिकार : ग्रामस्वराज्य-कोष में से रकम खर्च करने का अधिकार प्रदेश सर्वोदय-मंडल आदि उन संगठनों को होगा जिन्हें सर्व सेवा संघ इस काम के लिए अधिकृत करेगा। यह मंशा बिलकुल नहीं है कि इस कोष के लिए कोई अलग ट्रस्ट बनाया जाय और वह खर्च का नियंत्रण करे। सर्व सेवा संघ ने यह भी तय कर दिया है कि इस कोष को संग्रहीत निधि के रूप में नहीं रखना है, जिसके ब्याज में से केवल खर्च किया जाय, बल्कि सामान्यतया ३ वर्ष में, ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के चालू काम में इसको खर्च कर दिया जाय।

४. चालू साल का खर्च : चूँकि ग्रामदान आन्दोलन का काम बराबर चला आ रहा है, इसलिए चालू वर्ष, अर्थात् १ अप्रैल १९७० से ग्रामदान के काम में होनेवाला खर्च इस कोष में से किया जा सकेगा। उसके लिए सामान्य तौर पर यह मर्यादा मानी गयी है कि कुल संग्रह का २५% तक इस साल के आन्दोलन के काम के लिए खर्च किया जा सकता है।

५ कोष का विभाजन : कोष में जितना भी संग्रह होगा उसका ९०% उस राज्य के काम के लिए ही खर्च होगा, जिसमें संग्रह हुआ हो। सिर्फ १०% आन्दोलन के केन्द्रीय खर्च के लिए सर्व सेवा संघ को दिया जायेगा। राज्य के अन्तर्गत स्थानीय, ब्लाक, जिला या प्रान्तीय इकाइयों के बीच कोष का बँटवारा किस अनुपात में हो, यह प्रदेश सर्वोदय-मंडल, या उसकी अनुपस्थिति में अन्य अधिकृत संगठन, तय करेगा। →

अक्लेश्वर में किसान-सत्याग्रह का तीसरा चरण

८१ सत्याग्रही गिरफ्तार और रिहा

अक्लेश्वर-किसान-सत्याग्रह के तीसरे चरण में मूसलाधार वर्षा के बावजूद १५ जून को हजारों लोगों प्रदर्शन और सत्याग्रह-समारोह में भाग लिया। कई सत्याग्रहियों के जत्थे बरसाती नदियों में बाढ़ आ जाने के कारण इधर-उधर गाँवों में घिरे रह गये, फिर भी ८१ सत्याग्रहियों ने सत्याग्रह में भाग लिया, जिसमें ३१ महिलाएँ भी थीं।

इन ८१ सत्याग्रहियों को गिरफ्तार करके कुछ ही घंटों बाद छोड़ दिया गया। सत्याग्रही महिलाएँ रिहाई के बाद वापस नहीं आना चाहती थीं। उनकी माँग थी कि या तो हमारी जमीन वापस करो, या हमें जेल भेजो। श्री हरिवल्लभ परीख ने सबको समझाकर वापस किया।

स्मरणीय है कि सरकार द्वारा आदिवासियों की भूमि गलत ढंग से छीनकर दूसरों को अधिकार दे दिये जाने के खिलाफ यह सत्याग्रह ८ मई '७० से ही चल रहा है। क्षेत्र के हजारों ग्रामीण समारोहपूर्वक सत्याग्रहियों को विदाई देते हैं, सत्याग्रही गगनभेदी नारे लगाते हुए अपनी जमीन पर जाते हैं, और गिरफ्तार होते हैं।

अब जुलाई में बहुत ही बड़े पैमाने पर सत्याग्रह आयोजित किया जानेवाला है।●

सत्याग्रही किसानों का जुलूस : महिलाओं को गिरफ्तार कर रही पुलिस

→६. रकम कहाँ संग्रह हो ? संग्रह का हिसाब बराबर रहे और इस बात को निश्चितता रहे कि कितना संग्रह हुआ है और रुपया कहाँ-कहाँ पड़ा है, इस दृष्टि से यह सोचा गया था कि चालू साल में आन्दोलन के खर्च के लिए जो संग्रह का २५% खर्च करना है, उसे छोड़कर शेष ७५% रकम हर महीने कोष के केन्द्रीय कार्यालय को भेज दी जाय। विनोबाजी को कोष-समर्पण कर देने के बाद, केन्द्र का १०% हिस्सा सर्व सेवा संघ को और शेष रकम वापस प्रान्तों को लौटा दी जायेगी, पर कई प्रान्तों ने यह सवाल उठाया है कि जब रकम अन्ततोगत्वा वहीं खर्च होनी है, तब उसे एक जगह केन्द्र में क्यों इकट्ठी की जाय ? यह प्रश्न कोष-समिति के विचारार्थ रखा जा रहा है, लेकिन हर सूरत में मासिक संग्रहीत रकम का १०% तो हर माह के अन्त में इस कार्यालय को अवश्य भेज दिया जाय।

अब तक जो रकम आपके पास इकट्ठी हुई है, उसमें से १०% रकम कृपया तुरन्त भेजें।

आपका,

[हस्ताक्षर]

प्रधान मंत्री

ग्रामस्वराज्य कोष
६-राजघाट कॉलोनी,
नयी दिल्ली-१

"इन्सानी बिरादरी" का अखिल भारतीय सम्मेलन

प्राप्त जानकारी के अनुसार हाल ही में नयी दिल्ली में श्री जयप्रकाश नारायण की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई "इन्सानी-बिरादरी" (खुदाई खिदमतगार) की वर्दा समिति की बैठक में आगामी १६, १७ व १८ अगस्त, १९७० को नयी दिल्ली में एक अखिल भारत सम्मेलन आयोजित करने का निश्चय किया गया। श्री जयप्रकाश नारायण और शेख मोहम्मद अब्दुल्ला के संयुक्त हस्ताक्षरों से देशभर से कोई ६०० लोगों को आमंत्रित किया जा रहा है।●

तमिलनाडु का प्रदेशदान

प्रदेश के कुल ३७५ प्रखण्डों में से ३०० से अधिक प्रखण्डों का दान पूर्ण

प्रदेशीय सर्वोदय-सम्मेलन में महत्वपूर्ण घोषणा

काफी विलम्ब से प्राप्त जानकारी के अनुसार पिछली ९-१० मई को मद्रास में आयोजित तमिलनाडु प्रदेशीय सर्वोदय-सम्मेलन में ग्रामदान-आन्दोलन के प्रदेश-दान की मंजिल तक पहुँच जाने की महत्व-पूर्ण घोषणा की गयी। तमिलनाडु सर्वोदय संघ के अध्यक्ष श्री वी॰ रामचन्द्रन् की अध्यक्षता में आयोजित इस सम्मेलन में यह जानकारी प्रस्तुत की गयी कि प्रदेश के कुल ५७५ प्रखण्डों में से ३०० से भी अधिक प्रखण्ड का दान पूरा हो चुका है।

इस सम्मेलन में विनोबाजी के आने की अपेक्षा थी, लेकिन वे अपने सूक्ष्म प्रयोग के कारण नहीं जा सके, परिणामतः जनता में निराशा फैली। कुसंयोग ऐसा हुआ कि पटना से जिस हवाई जहाज से श्री जयप्रकाश नारायण जानेवाले थे, वह हवाई उड़ान रद्द हो गयी और वे भी नहीं जा सके। इसके कारण भी समारोह में कुछ फीकापन महसूस किया गया।

फिर भी ९ मई की शाम को कार्य-कर्ताओं और प्रदेश भर से आये ग्रामदानी गाँव के लोगों का एक विराट जुलूस 'आईलैण्ड्स मैदान' से शुरू होकर 'मेरिना' तक गया। दूसरे दिन आगे के काम के सम्बन्ध में विस्तार से चर्चाएँ हुईं, और

तमिलनाडु ग्रामस्वराज्य की स्थापना का संकल्प

विनोबाजी की वर्षगांठ पर समर्पण हेतु ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए १५ लाख रुपये संग्रह करने का संकल्प किया गया।

सम्मेलन ने निश्चय किया कि शीघ्राति-शीघ्र ग्रामसभाओं के संगठन, बीघा-कट्ठा के वितरण और ग्रामकोष के संग्रह की गुणदान करके ग्रामदान-पुष्टि की दिशा में तेजी से आगे कदम बढ़ाया जाय।●

नगरों में क्या करें ?

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के प्रमुख कार्यकर्ताओं की १५ दिवसीय 'कर्मशाला' में, जो वाराणसी में १६ जून से चल रही है, 'हिंसा की चुनौती और विकल्प' विषयक चर्चा में आचार्य राममूर्ति ने परिस्थिति के ऐतिहासिक और भौगोलिक विवेचन के बाद जे॰ पी॰ के द्वारा लिये गये अद्यतन महान क्रान्तिकारी निर्णय और किये जा रहे प्रयत्न से प्रेरणा लेकर 'करो या मरो' की मनोभूमिका के साथ कार्य-कर्ता साथियों को अपने अपने क्षेत्र में कार्यरत हो जाने का आह्वान किया। नगरों में कार्य कर रहे कार्यकर्ताओं की भूमिका के सम्बन्ध में पूछे गये एक सवाल का जवाब देते हुए आपने तीन मुद्दों पर उन्हें ध्यान केन्द्रित करने की सलाह दी। (१) ग्रामस्वराज्य की क्रान्तिकारी मन-धारणा को विभिन्न माध्यमों से जन-जन तक पहुँचाना, ताकि लोगों के सामने हमारी क्रान्ति और निर्माण का दर्शन स्पष्ट हो जाय, (२) प्रतिभावान तरुणों को इस काम की ओर प्रवृत्त करना, और उनको ग्रामस्वराज्य आन्दोलन का वाहक बनने लायक बनाना, (३) गाँव-गाँव में चल रहे ग्रामस्वराज्य के काम में मदद पहुँचाने के लिए साधन एकत्रित करना।

'कर्मशाला' में भाग ले रहे कार्यकर्ताओं ने इस दिशा में सक्रिय होने का आश्वासन दिया और तत्काल प्रतीक रूप में ११० रुपये मुजफ्फरपुर के मोर्चे के सहायतार्थ एकत्र करके उन्हें भेंट किया।●

मुजफ्फरपुर की डाक

जयप्रकाशजी गाँव में : कुछ रोचक अनुभव

लड़के

स्कूल के एक किनारे शीशम के कुछ पेड़ हैं। उसके नीचे तीन-चार नयी उम्र के स्कूली लड़के खड़े हैं। जयप्रकाशजी खड़े-खड़े उनसे घुल-घुलकर बातें कर रहे हैं। तय हो रहा है कि कुछ को पास-पड़ोस के विद्यार्थियों को, जो छुट्टी में घर पर हैं, एक बैठक होगी जिसमें जयप्रकाशजी बोलेंगे।

मेरे नाम पर

गाँव से कुछ औरतें आयी हैं। निर्मलाजी जे० पी० से कह रही हैं 'आप रहने दीजिए, थके हुए हैं, मैं इन लोगों से बातें कर लेती हूँ।' इतना कहकर वह चल पड़ती हैं। कुछ रुककर जे० पी० भी चल पड़ते हैं। करीब जाकर बोलते हैं, 'आखिर, वे मेरे नाम से बुलायी गयी हैं, मुझे उनके सामने जाना ही चाहिए।'

'जयप्रकाश भाई'

'जयप्रकाश भाई' कानों को कैसा लगता है? कामरेड जयप्रकाश, जयप्रकाशजी, जयप्रकाश बाबू, जे० पी०, जयप्रकाश नारायण आदि नाम जाने हुए हैं, माने हुए हैं, लेकिन यह मुखियाजी, जो अभी युवक हैं, मुजफ्फरपुर तक दौड़ लगाते हैं, जोश के साथ गरीबों की हिमायत करते हैं। आते हैं तो जे० पी० के बिलकुल पास बैठते हैं, और देर तक अपनी तुक-बेतुक बातें 'जयप्रकाश भाई' को सुनाते हैं। बीच-बीच में इस नाम को दोहराते रहते हैं। जे० पी० का जी ऊबता है, समय जाता है, फिर भी वह कान लगाये रहते हैं। क्या करें, गाँव और गाँव के लोगों के बीच में बैठे हैं न? सुनना है सबकी, करना है अपनी।

ग्रामसभा नहीं

कितने उदार हैं भोला बाबू? खिलाने-पिलाने में, खातिर-बात में, हर चीज में। एक दिन कहने लगे : 'जयप्रकाशजी जैसा आदमी हमारे दरवाजे पर आकर जमीन माँगे, वह भी बीघे में एक कट्ठा, और हम लोग न दें, भला यह कैसे हो सकता है? यह बीघा-कट्ठा से ज्यादा भी माँगेंगे तो मैं उनको निराश नहीं होने दूँगा।' जब वह यह कह रहे थे तो मुजफ्फरपुर के एक कार्यकर्ता-साथी मेरे साथ थे। उनकी बात सुनकर बोल उठे 'भोला बाबू, आप बीघा-कट्ठा दे देंगे तो गाँव में कौन नहीं देगा? और, तब ग्रामसभा बनने में कितनी देर लगेगी?' भोलाबाबू कुछ देर चुप रहे फिर बोले : 'देखिए, असली चीज है जमीन। भूमिहीन जमीन चाहता है। जमीन हम लोग उसे देंगे। उसको ग्रामसभा से क्या लेना देना है? जमीन माँगिए और बाँटिए, ग्रामसभा की बात अभी छोड़ दीजिए।'

भोला बाबू किसी तरह यह मानने को तैयार नहीं हुए कि ग्रामसभा के बिना ग्रामदान का कोई उद्देश्य पूरा नहीं होगा। ग्रामसभा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा गाँव में स्वराज्य आयेगा। भोला बाबू से विदा होकर जब हम लोग गाँव से चले तो मैंने अपने साथी श्री रमेश्वरबाबू से पूछा कि, 'क्या कारण है कि भोला बाबू इतने उदार हैं, बीघा-कट्ठा से अधिक भूमि देने को तैयार हैं, लेकिन ग्रामसभा का नाम तक नहीं सुनना चाहते?' उन्होंने बताया कि 'भोला बाबू ही नहीं, पास-पड़ोस के कई बड़े भूमिवान ग्रामसभा के बारे में इसी तरह की बातें करते हैं। उनके मन में डर है कि ग्रामदान की ग्रामसभा बनेगी तो उसमें छोटे-बड़े, धनी गरीब सब शामिल होंगे। सबकी हैसियत बराबर होगी। सबकी राय से काम होगा। जमीन की खरीद-बिक्री ग्रामसभा की इजाजत से होगी। गाँव में गरीबों की संख्या अधिक है तो ग्रामसभा में उनका पक्ष मजबूत रहेगा। इससे भूमिवान घबड़ाते हैं। जो अब तक पैर के पास बैठते हैं वे ग्रामसभा में आमने-सामने बैठेंगे, मुकाबले में बात करेंगे, फैसला देंगे, यह उनको स्वीकार नहीं है।'

यह है संख्या का भय! संख्या भी धन, अधिकार, कानून और डंडे से कम भय की चीज नहीं है, बल्कि ज्यादा है!

'गांधीजी का काम क्यों नहीं करते?'

चौबे-परिवार गाँव का सबसे धनी परिवार है। बहुत बड़ा परिवार है, शायद सौ से अधिक लोग हैं। शहर के नमूने का तिमंजिला, अप-टू-डेट मकान, अच्छी खेती, परदेश की ठोस कमाई, गाँव में रोब दाब? किसी परिवार को बड़ा बनने के लिए इससे अधिक और चाहिए क्या?

हम लोग उनके दरवाजे पर गये, तो पहुँचते ही बौछार पड़ने लगी! कुछ उपदेश कुछ आलोचना, कुछ डाँट, सरकार की कुछ निन्दा, जमाने को गाली, बहुत मजेदार मिला-जुला स्वागत हुआ। तेज धूप थी, गर्मी थी, दोपहर का समय था, लेकिन किसीने यह नहीं पूछा 'पानी पीओगे?'

लगभग डेढ़ घंटे तक वे लोग सुनाते रहे, हम लोग सुनते रहे। हर दस पाँच मिनट के बाद यह जरूर सुना देते थे, 'आप लोग गांधीजी का काम क्यों नहीं करते? क्यों ग्रामदान आदि की बातें कहकर गाँव में आग लगाते हैं। भला जयप्रकाशजी प्रधान मंत्री होते तो आज देश का क्या हाल होता! यहाँ तो बेकार गाँव के मूरख लोगों के पीछे अपना समय बरबाद कर रहे हैं।'

गांधी सबके हैं तो स्वामियों के क्यों नहीं?●

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का संदेशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख्य पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ५०
सोमवार ६ जुलाई, '७०

सम्पादक
रामूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

दो ऐतिहासिक पत्र

"बाबा डा० रविशंकर शर्मा को कह रहे थे कि जयप्रकाशजी पहाड़ का विश्राम छोड़कर मुजफ्फरपुर आये हैं, तो मैं सोच रहा हूँ कि मुझे भी आवश्यकता हुई तो चुप नहीं बैठना होगा, मुझे भी जाना होगा। बंगाल के उपद्रव का उत्तर हमने बिहार का मोर्चा माना था। लेकिन बिहार में ही गड़बड़ शुरू हो और वह बढ़े तो मुझे चुप नहीं बैठना है। मैं अभी परिस्थिति को देख रहा हूँ।"

(१३-६-'७० को श्री ठाकुरदास बंग, मंत्री, सर्व सेवा संघ द्वारा श्री जयप्रकाशजी को लिखे गये पत्र से)

× × × ×

"बाबा के हृदय में बिहार लौटने का विचार उठा है, यह उत्साहप्रद है। परन्तु मैं समझता हूँ कि इस समय उन्हें नहीं आना चाहिए। बिहार के हम सभी इस समय सान पर चढ़ाये गये हैं। यदि बाबा अभी पहुँच जायेंगे तो उनके तेज में हम सबका भोथरापन छुप जायगा। यदि हम लोगों का लोहा पक्का है तो सान पर हम सब भी तेज बनेंगे। यदि हम सब कच्चे हैं तो बाबा के उधार तेज से कब तक काम चलेगा?

मेरे निर्णय से थोड़ी गुनगुनाहट पैदा हुई है। देखें, पूर्ण जागरण होता है या नहीं!"

(१९-६-'७० को श्री जयप्रकाशजी द्वारा श्री ठाकुरदास बंग को लिखे गये उत्तर से)

सम्पादक के नाम चिट्ठी

श्री जयप्रकाशजी की क्रान्तिकारी घोषणा

१५ जून के 'भूदान-यज्ञ' में श्री जयप्रकाशजी की 'क्रान्तिकारी घोषणा' और सम्पादकीय पढ़कर संतोष हुआ। 'सत्याग्रह के दूसरे चरण' का बिगुल जयप्रकाशजी ने बजाया है। उन्हीं से इसकी अपेक्षा थी। लेकिन कोई सन्दर्भ वह ढूंढ़ रहे थे, ऐसा लगता है। भूदान मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसात्मक क्रान्ति का उद्देश्य हम सबको प्रेरणादायी रहा। सन् १९५७ तक इस प्रेरणा से मन में क्रान्ति का भाव ज्वलन्त रहा। ग्रामदान से समग्र क्रान्ति की कल्पना स्पष्ट हुई। लेकिन उसका स्वरूप भूदान मूलक नहीं रहा। इसलिए ग्रामदान से मन में क्रान्ति का भाव ज्वलन्त नहीं हो सका। जो सत्तावन तक था वह भी आज नहीं के जैसा है। विनोबाजी ने 'तूफान' 'प्रति-तूफान' आदि जोश पैदा करने के अपने तरीके अपनाये। लेकिन मौजूदा स्थिति में इसका असर बहुत कम रहा। ग्रामस्वराज्य का अभियान चलाना है इतना ही समझकर अभी तक हमने निरुत्साहित रहते हुए भी उसे चलाया। लेकिन क्रान्तिमूलक परिवर्तन जन-मानस में आने की दृष्टि से इसका कोई खास असर नहीं दिखाई दिया। आज फिर क्रान्तिमूलक परिवर्तन के लिए जयप्रकाशजी ने बिगुल बजाया है। बिगुल की धुन हमारे कानों में सिर्फ गूँजेगी ही नहीं, बल्कि हमारी चित्तवृत्ति नये साहस से जग उठेगी।

मुझ जैसे कुछ कार्यकर्ता भूमि-समस्या को लेकर सत्याग्रह करने के पक्ष में रहे। दो तीन बार जेल काटकर भी आये। फिर भी इस समस्या के हल के लिए जो आस्था हमारे बुद्धिजीवी नेताओं के मन में पैदा होनी चाहिए थी वह नहीं हो सकी थी। इससे हमें निराशा नहीं हुई। लेकिन हमारे प्रयत्नों का समर्थन हो ऐसी चाह मन में रही। एक तरह से आज वह समर्थन जयप्रकाशजी से मिला है। इसीलिए मैं और मेरे जैसे कार्यकर्ता एक अलग प्रकार का एहसास अनुभव कर रहे हैं। नया चैतन्य हममें आया है। जयप्रकाशजी की क्रान्तिकारी घोषणा सार्थक करने के लिए हमारी सारी शक्ति हम लगायेंगे। महाराष्ट्र के चन्द्रपुर जिले में सत्याग्रह के दूसरे चरण का संगठन हम करेंगे। जयप्रकाशजी का उनके जैसी कृति करके ही हम समर्थन कर सकते हैं। परिस्थितिनुरूप तरीके में कुछ फर्क रहेगा ही।

इसीसे सम्बन्धित एक बात सोचने के लिए पेश करना चाहता हूँ। सार्वजनिक संस्थाओं के पास जो भूमि होती है उसका उपयोग सार्वजनिक हित के लिए होता है। लेकिन जिस क्षेत्र में ऐसी संस्थाएँ हैं उस क्षेत्र में भूमि-समस्या के हल के लिए इनका कोई उपयोग नहीं हो पाता। जरूरत से ज्यादा भूमि रखनेवाली ये संस्थाएँ एक तरह से भूमिहीन मजदूरों के शोषण के केन्द्र ही बन बैठी हैं। इनका समर्थन सर्वोदय में माननेवाले कुछ बड़े कार्यकर्ता भी करते आये हैं। इन सबका दृष्टिकोण बदलना चाहिए। यह जरूरी है। कुछ प्रयोगशील सर्वोदयी कार्यकर्ता 'अधिक उपज' के प्रभाव में हैं, और इसके समर्थन में वे भूमि का केन्द्रीकरण होना अनिवार्य है ऐसा मानते भी आये हैं। लेकिन जिसका लाभ श्रमजीवी मजदूरों को नहीं मिलता हो उस उपज का महत्त्व ही क्या है। ऐसे कार्यकर्ताओं से और इस प्रकार की संस्थाओं से संघर्ष करना अनिवार्य होगा। तब हमें पीछे नहीं आना चाहिए और किसी भी सार्वजनिक संस्था में भूमि का केन्द्रीयकरण न हो ऐसा प्रभाव हमें खड़ा करना चाहिए।

भूमिसमस्या के हल के लिए जो संस्था रुकावट पैदा करती है—वह संस्था कुछ उपयोगी कार्य करती है तो भी—उसका समर्थन नहीं होना चाहिए, बल्कि इन संस्थाओं के लिए भी 'सत्याग्रह के दूसरे चरण' का उपयोग होना अनिवार्य है। हमें 'धर्मयुद्ध' ही करना होगा 'धर्मयुद्ध' अपने के लिए होता है।

—बाबूराव चन्दावार

चिन्तन के लिए

आन्दोलन में आज जो ५ प्रतिशत भूमि-वितरण पर जोर दिया जा रहा है, वह असलियत में सन् '५७ में भूदान को जहाँ छोड़ा था, उसे पुनः ग्रामदान के माध्यम से प्रारम्भ करना है। इसलिए ऐसा लगता है कि यह उचित नहीं है। नक्सलवादी भूमिहीनों को जोर-जबरदस्ती से भूमि दिलाने का प्रयत्न कर रहे हैं, इसलिए हम भी उसी मुद्दे पर जोर दें, इस चिन्तन में दोष है। असलियत में हम इससे बहुत आगे कदम उठा चुके हैं कि भूमि की मालकियत गाँव की हो और गाँव समाज भूमि की सभी समस्याओं का हल करे। हमें ग्रामसभा-गठन व गाँव-मालकियत पर सर्वाधिक बल देना चाहिए। भूमिहीनों की समस्या का समाधान ग्रामसभा पर छोड़ना चाहिए। आज हम ग्रामसमाज पर अविश्वास की भूमिका पर से आगे बढ़ना चाहते हैं, जो सम्भव नहीं। इसके अलावा भूमिहीनों की समस्या सब जगह समान नहीं है इसके उपरांत भी ५ प्रतिशत का संग्रह व वितरण शक्य नहीं लग रहा है। एक दूसरा विचार युवाशक्ति को संगठित कर उसे समाज-परिवर्तन में कार्यरत करने का है। इसके लिए दो कदम हमें उठाने लाजमी लगते हैं—युवा शक्ति की मनोभूमिका के आधार पर प्रतिकारात्मक व सर्जनात्मक, दोनों प्रकार के कदम उठाने पर उनके संगठित व सक्रिय होने की पूरी सम्भावना है। तीसरा मुद्दा हमारे अपने संगठन का है। इसे सुव्यवस्थित व सुसंगठित करना व समाज के सामने इस नैतिक संगठन के 'रोल' का स्पष्ट दर्शन कराना परम आवश्यक है। —बद्रीप्रसाद स्वामी,
नागोर जिला सर्वोदय मण्डल

सम्पादकीय

तुलसी दल से झाडू तक

एक पंचायत में तीन हफ्ते रहकर जब जयप्रकाशजी पड़ाव बदलने लगे तो उन्होंने गांव के लोगों से बिदा ली। बिदा लेने के लिए वह अंतिम दिन सुबह निकले। गांव-गांव घूमे। घर-घर गये। उन लोगों के दरवाजे पर भी गये जो बराबर उनसे कतराते रहे, और यह सोचकर सामने आने से बचते रहे कि देख लेने पर जयप्रकाशजी ग्रामदान की बात कहेंगे, और फौरन बीघा-कट्ठा की मांग करेंगे। ऐसे लोगों ने सहसा उन्हें अपने दरवाजे पर देखा तो अवाक रह गये। कई लोगों को तो जैसे अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हुआ। एक मास्टर साहब भावनाओं की इतनी उथल-पुथल में पड़ गये कि सोच नहीं सके कि जे० पी० की क्या खातिर करें, कैसे करें। शायद घर में कुछ था भी नहीं। हर एक के घर में रहता भी क्या है? बेचारे को और कुछ नहीं सूझा तो दौड़कर तुलसी के कुछ पत्ते तोड़ लाये और अत्यन्त विनीत भाव से ये पत्ते जयप्रकाशजी के सामने प्रस्तुत किये। जे० पी० ने भी तुलसी के पत्ते उसी प्रेम के साथ स्वीकार किये जिसके साथ मास्टर साहब के पड़ोसी के दरवाजे पर झाडू स्वीकार किये थे।

बिदाई के इस पूरे कार्यक्रम में शब्द कम थे, भाव अधिक। शब्द उतने ही थे जितने इस आश्वासन के लिए आवश्यक थे कि 'हम लोग आपके साथ हैं।' जे० पी० ने सबका दिल छू लिया था—ऊंची इमारतों में रहनेवाला और टूटी झोपड़ियों में रहनेवालों, दोनों का। दोनों ने जान लिया कि जरूर यह बड़ा आदमी कोई बड़ी बात लेकर आया है जिसे समझने और मानने में दोनों का हित है, अहित किसी का नहीं है।

जे० पी० ने ग्रामदानमूलक सत्याग्रह का दूसरा चरण शुरू किया है। क्रिया मनाव की ही चल रही है किन्तु उसका स्वरूप बदल रहा है। अब तक विचार के टुकड़े आसमान में बिखेरे गये थे, विनोबा का जादू दिखता रहा था, हस्ताक्षर कराये गये थे। लेकिन यह मान लेना कि हम समाज को मनमाना को ... सके थे सही नहीं होगा। वह प्रक्रिया अब शुरू हुई है। हम विचार प्रचार के बाद अब एक निश्चित क्षेत्र में सघन मनाव (इन्टेंसीव परसुएशन) का क्रम शुरू कर रहे हैं। घर घर जाना; ग्रामदान में भूमिहीनों और भूमिवालों को उनका स्थान बताना, जो तैयार हों उनका बीघा-कट्ठा समारोह बांट देना; जो गांव या टोले तैयार हों उनकी ग्रामसभा संगठित करना, बीघा कट्ठा, ग्रामकोष, ग्रामसभा के अलावा वास की भूमि, सरकारी भूमि, मजदूरी, बेदखली आदि गांव की विविध समस्याओं को लेना अनीति और अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाकर वातावरण में इस प्रकार की तेजी लाना कि इन समस्याओं को जल्द-से-जल्द हल होना है, तथा इस काम के लिए विशेष रूप से युवकों और सज्जनों का आवाहन करना, और ग्राम शान्ति-सेना का संगठन करना, आदि ऐसे कार्य हैं जिन्हें संगठित रूप से करने पर मनाव (परसुएशन) में एक नयी शक्ति और गति आ जाती है। ऐसा लगने लगता है जैसे ग्रामदान एक नये ढंग से प्रस्तुत हो रहा है। इस प्रक्रिया से स्थूल रूप से जो काम होता है वह तो होता ही है, उसके अलावा मालिकों और मजदूरों की एक सम्मिलित शक्ति स्पष्ट रूप से ग्रामदान के पक्ष में उभर आती है। साथ ही कुछ ग्रामसभाएं बन जाती हैं जो एक नया रूप अपनाने और एक नयी भाषा बोलने लगती हैं।

इस नयी स्थिति में हमारा यह प्रयत्न होना चाहिए कि मनाव की प्रक्रिया को जहां तक ले जा सकते हैं ले जायें। उसे छोड़कर सत्याग्रह की दबाव (प्रेशर)-पद्धति का सहारा तभी लें जब मनाव की शक्ति समाप्त हो जाय और क्षेत्र में मालिक-मजदूरों युवकों की नयी सम्मिलित शक्ति आगे बढ़ने के लिए तैयार हो जाय।

अनीति या अन्याय के किसी खास लेकिन सीमित प्रश्न को लेकर असहयोग या घेरा के रूप में सत्याग्रह करना एक बात है, और ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति के लिए मनाव के अलावा दबाव के सत्याग्रही अस्त्रों का प्रयोग करना बिलकुल दूसरी बात है। इन दो भिन्न प्रश्नों पर सत्याग्रह के दो भिन्न स्वरूप होंगे। ग्रामदान का अब तक जो काम हुआ है, या नहीं हुआ है, उसे अच्छी तरह परखकर ही अगले कदम का निर्णय किया जा सकता है। कुछ भी हो, ग्रामदान को ग्रामस्वराज्य की दिशा में ले जाने की दृष्टि से की जानेवाली प्रत्यक्ष कारवाई का साधन (इन्स्ट्रुमेन्ट) कार्यकर्ता-शक्ति नहीं, स्थानीय नागरिक-शक्ति, (जो मालिक-मजदूर की सम्मिलित होगी, अलग मजदूर की नहीं) और उसकी संगठित ग्रामसभा ही हो सकती है। कार्यकर्ता का काम हो पूरा अगर उसने नयी चेतना जगा दी, नये मूल्य प्रस्तुत कर दिये, नयी पद्धति सुझा दी। प्रत्यक्ष क्रिया में वह हमेशा पूरक शक्ति ही रहेगा।

ब्रह्मविद्या

प्रश्न—ब्रह्मविद्या का क्या तात्पर्य है?

विनोबा—ब्रह्मविद्या यानी अत्यन्त नम्र होना। उसकी यह मुख्य योग्यता है। सामने एक चींटी है, उसमें ब्रह्म है, मैं ब्रह्म हूं, मेरे में ब्रह्म है। ब्रह्म यानी 'कामन फैक्टर' है, और वह हायस्ट कामन फैक्टर है। जो ब्रह्म यानी सभी चेतन प्राणियों में वह मौजूद है। एक चींटी को भी जान-बूझकर मारता नहीं।

भूमिवान अपनी भूमि का बीसवाँ भाग भूमिहीनों में बाँटें, वरना सत्याग्रह का सहारा लेना पड़ेगा

• जयप्रकाश नारायण

[सलहा गाँव के भू-वितरण-समारोह में श्री जयप्रकाश नारायण के दिये हुए भाषण का कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।--सं०]

मैं देखता हूँ कि आपकी सभा में स्त्रियाँ बहुत कम आयी हैं। मुझे लगता है कि यह ठीक नहीं है। उन्हें घर के लोगों को लाना चाहिए था। समाज की वह भी एक महत्त्वपूर्ण अंग हैं, बिना उनके यह यज्ञ सफल नहीं होगा।

मैं आपका एक सेवक मात्र हूँ और इसी हैसियत से यहाँ आया हूँ। यह सभा और भाषण मेरे लिए कुछ विशेष अर्थ रखता है। मैं बराबर घूमता रहता हूँ—स्वराज्य की लड़ाई के जमाने में, सोशलिस्ट पार्टी के जमाने में और अब सर्वोदय के जमाने में भी। सभा हुई, भाषण हुआ और चला गया। बोलकर आगे बढ़ता गया। इस बार आपके बीच आया हूँ। भाषण देकर चला नहीं जाऊँगा। काम असफल होगा ऐसा मैंने सोचा नहीं। मुझे उम्मीद है कि इस काम में आप सभी लोगों का मुझे पूरा-पूरा सहयोग मिलेगा।

आज लम्बा भाषण नहीं करना है। जरूरत पड़ने पर घर-घर जाऊँगा, मजदूरों की टोली में बैठूँगा। स्वराज्य की लड़ाई का सिपाही था, जेल की दीवारों को फाँद-कर भाग गया। जिस समय नेपाल की तराई में था, फिर पकड़ा गया। लेकिन वहाँ से भी भाग निकला। हम लोग अपनी जान हथेली पर लेकर लड़ते थे, कौन जानता था कि स्वराज हो जायगा। कई पीढ़ियों के खपने की नौबत थी। गांधीजी के नेतृत्व में भारत में जनता का उफान उठा और ऐसी परिस्थितियाँ आयीं कि अंग्रेजों ने सोचा कि यहाँ रहने में उन्हें कोई लाभ नहीं और अंग्रेज इतनी जल्दी भारत छोड़कर चले गये।

इस देश में आजादी के पहले या बाद, जब से चुनाव प्रारम्भ हुए, मैं किसी भी चुनाव में नहीं खड़ा हुआ, नहीं किसी पद की आकांक्षा की। मैंने स्वराज्य की जो लड़ाई लड़ी थी उसका यह मतलब नहीं था कि हम पद पर जायँ। उसका मतलब था कि शोषण बन्द हो, मालिक-मजदूर आपस में एक-दूसरे से सहयोग करें और गरीब-अमीर का फर्क मिटे।

२३ वर्ष स्वराज्य के पूरे हो गये, लेकिन गरीब की हालत वही बनी हुई है। मुट्ठी भर अमीरों की तरक्की होती गयी। आज गाँवों में भी खेती के नये-नये तरीके आये हैं, नया बीज आया है, नये औजार आये हैं और नयी उपज आयी है। लेकिन इससे भी गाँव का नक्शा नहीं बदला है। गरीब को इससे कोई लाभ नहीं हुआ है। गाँव में अधिकांश लोगों के पास जमीन ही नहीं है, जिसके पास जमीन है वह १० बीघे के अन्दर है। १०० बीघा से १००० बीघावाले किसानों को ही खेती के इन नये तरीकों से अधिक लाभ पहुँचा है।

इतनी राजनैतिक पार्टियाँ हैं। आज मन्त्रिमण्डल बनता है तो कल टूट जाता है। लेकिन नक्शा आज तक बदला नहीं है। यदि कानून से देश का नक्शा बदला होता तो समाज में असन्तोष नहीं होता। आज पूरे देश में अशान्ति है, असन्तोष है। स्कूल, कालेज और विश्वविद्यालय बढ़ते जाते हैं। लेकिन डिग्रियाँ लेकर नवजवान बैठे हुए हैं, फिर भी उन्हें काम नहीं मिलता है।

हिंसा-लूट और कतल का रास्ता?

आपके यहाँ ५ कतल हो गये। जिन लोगों के कतल हुए क्या उनकी जमीन मजदूरों में बँट गयी? आगे अधिक होगा, खूनी क्रान्ति होगी। हिंसा का जो मार्ग है उसमें अधिकतर बेगुनाह लोग भी फाँस दिये जाते हैं। ज्यादातर किसान भी ऐसे ही हैं जो गरीब हैं। थोड़े मध्यम दर्जे के किसान हैं। आप गाँव-गाँव में क्या चाहते हैं, झगड़ा हो, अशान्ति हो, कतल हो, लूट-मार हो?

जहाँ ज्यादा अशान्ति होगी, पुलिस से काम नहीं चलेगा तो सरकार फौज लगायेगी और भय तथा आतंक का वातावरण बनेगा। इसलिए सभी वर्गों के लोगों को सोचना है। आपने वोट का रास्ता भी देखा है। यदि दारोगा बाबू का मन्त्रिमण्डल टूटा तो क्या होगा? यहाँ के अधिकारियों के हाथ में सारा प्रशासन चला जायेगा और लोकशाही पर नौकर-शाही का राज होगा। आज का प्रशासन जैसा है आप सभी जानते हैं। रिश्वतखोरी इतनी बढ़ गयी है कि गरीब की कोई सुनवाई नहीं होती। न्याय ऐसा महँगा हो गया है कि वह गरीब को मिल नहीं पाता।

जनता को अपना राज बनाना चाहिए। आपने वोट दिया है जिससे दिल्ली में इन्दिराजी और पटना में दरोगा बाबू आज गद्दी पर हैं। गांधीजी ने क्या कहा था? स्वराज्य के बाद गाँव-गाँव में गाँव के लोगों का राज रहेगा। प्राचीन-काल से गाँवों में गाँव का राज्य रहा है।

आज गाँवों में विषमता, द्वेष तथा झगड़ा है। आज ऐसी हालत जो गाँवों की है उसमें यदि गाँवों का राज होगा तो किनका राज होगा? या तो बड़े लोगों का, लाठीवालों का, या फिर जाल-फरेब करनेवालों का ही राज होगा। मालिक और मजदूर की लड़ाई से क्या गाँव चलेगा? गाँव में मेल होना चाहिए, एकता होनी चाहिए, उसके लिए सच्चाई

और अच्छाई होनी चाहिए और ऐसी शक्ति होनी चाहिए, ताकि कोई अन्याय करता है, चोरी करता है, जुल्म करता है तो उसे ग्रामसभा दंड दे सकती हो।

आखिर गाँव कैसे सुखी होगा? अपना गाँव कैसे आगे बढ़ेगा? गाँव की तरक्की कैसे होगी और गाँव का शासन गाँव कैसे करेगा? इतिहास साक्षी है कि ५००० वर्ष तक गाँव का शासन गाँव करता था। वहाँ राजा का शासन नहीं चलता था। दिल और दिमाग का दरवाजा खोले बिना यह नहीं होगा। गाँवों के लोगों की दृष्टि बदलनी होगी, उनका दिमाग बदलना होगा और उनका हृदय बदलना होगा।

गाँव में नवजवान हैं, वे क्रान्तिकारी होते हैं। वे ही नवजवान शहर में शीशा तोड़ते हैं, बसों में आग लगाते हैं और सार्वजनिक सम्पत्ति को हानि पहुँचाते हैं। यह कौनसी क्रान्ति हुई? लेकिन गाँव में उन्हींके घर के लोग तथा रिश्तेदार भूदान की जमीन जबरदस्ती कब्जे में किये हुए हैं, वहाँ वे चुप हैं।

पंचायती राज का परिणाम

७ वर्ष तक मुखिया लोगों से मैं कहता रहा कि मैं सब मुखिया लोगों का मुखिया हूँ (७ वर्ष तक मैं अखिल भारतीय पंचायत परिषद का अध्यक्ष रहा)। इस बीच उनके अधिकारों के लिए तथा आर्थिक स्रोतों के लिए लगातार लड़ता रहा। केवल जमीन का लगान और टैक्स की वसूली ग्रामराज नहीं है। इस पंचायत-राज से समाज का और गाँव का कुछ भी भला नहीं होगा। क्या-क्या नहीं होता इसमें! मुखिया के चुनाव में लाठी चली, गोली चली, जातिवाद जैसा सब कुछ हुआ। जो मुखिया के चुनाव में १,००० रुपये खर्च कर देगा वह कैसे ईमानदारी से काम करेगा? जिस गाँव में कोई झगड़ा नहीं था, पंचायत के चुनावों के कारण वहाँ झगड़ा हो गया। गाँव को स्वावलम्बी बनाना है, अपने पैरों पर खड़ा होना है तथा अपना इन्तजाम करना है। एक मत से फैसला हो वह भगवान का निर्णय होगा। लेकिन यह सब होगा कैसे? ग्रामदान के जरिये। लोगों को समझाना होगा कि जमीनवाले लोगों को बीघा-कट्ठा देना चाहिए, फसल में एक मन पर एक सेर अनाज ग्रामकोष में देना चाहिए जो भूमि मिलेगी उसका बँटवारा भूमिहीनों में किया जायेगा। मजदूर महीने में एक दिन की मजदूरी या फिर एक दिन का श्रम देगा। गाँव में निजी सम्पत्ति का ग्राम सभा में विसर्जन होगा। ग्राम सभा का निर्माण होगा। इसके अध्यक्ष तथा कार्यकारिणी का एकमत अथवा सर्वानुमति से चुनाव किया जायेगा। गाँव की सुरक्षा के लिए ग्राम-शान्तिसेना का निर्माण होगा जो गाँव की सुरक्षा करेगी।

सबसे दुखी को पहले मदद

जिस ग्राम का ग्रामदान हो रहा है उस गाँव में जमीन-मालिक की मिल्कियत ग्रामसभा में विसर्जित हो। ग्रामसभा से पूछकर वह गाँव के अन्दर ही बिक्री अथवा बंधक कर सकते हैं। उनकी मृत्यु के बाद उनके वारिसों को जमीन मिलेगी। उनका कब्जा रहेगा, उत्तराधिकार तथा बन्धक का इनका अधिकार होगा लेकिन उन्हें अपनी जमीन का बीसवाँ हिस्सा ग्रामसभा को भूमिहीनों के लिए देना है। गाँव में जितने लोग हैं गाँव में एक दूसरे की मदद करें। जो पैदा करें, १ मन में १ सेर हर फसल में, नौकरी करनेवाले लोग १ महीने में १ दिन का वेतन, मजदूर महीने में १ दिन की मेहनत, सबके हित के लिए दें। इससे गाँव का एक कोष बनेगा, भंडार बनेगा और यह सब गाँव में ही रहेगा। अनाथ, दुखिया, रोगी, कुष्टरोगी आदि लोगों को ग्रामसभा विचार करके जो दुखी हो उसकी सबसे पहले मदद करे। इसके बाद गाँव का विकास हो, परिश्रम सेट लगे, गाँव में छोटे छोटे उद्योगों की स्थापना हो। ग्रामसभा के पास इन खर्चों के बाद जो धन बचे उसे ग्रामसभा किसानों को सामान्य ब्याज पर ऋण दे। कोई भी लाइसेंसी महाजन १२॥ प्रतिशत वार्षिक से अधिक ब्याज नहीं ले सकता, आज ६० से ७५ प्रतिशत ब्याज लिया जाता है।

मित्रो, यह ग्रामदान का कार्यक्रम चला, बाबा (विनोबाजी) भी आये और मुजफ्फरपुर में काफी दिनों तक रहे। मुजफ्फरपुर जिलादान हुआ। मुजफ्फरपुर के ८० फीसदी गाँव ग्रामदान में आये, ७५ फीसदी लोग आये तथा ५१ फीसदी जमीन मिलने पर कागजी ग्रामदान हो गया। यह तो भूमिका हुई। पूछने पर कोई भी इनकार नहीं करता कि उसने ग्रामदान के प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं, लेकिन बीघा-कट्ठा निकालने को कोई भी तैयार नहीं होता। अधिकांश लोग हीला-हवाली और टाल-मटोल करते हैं।

आज गाँव-गाँव में अस्पृश्यता है। हरिजन गाँवों से बहिष्कृत हैं। गाँवों में उनकी अलग अलग टोली है, कहीं चमारटोली, तो कहीं मुसहरटोली आदि। कानून बना, संविधान से अस्पृश्यता हट गयी, किन्तु हमने-आपने अभी तक नहीं हटायी।

यदि यह सब नहीं होगा तो मैं यह तो नहीं कहूँगा कि बमवाले लोग, गोली-वाले लोग आपसे निपटेंगे, लेकिन फिर इससे कोई बचा भी नहीं पायेगा।

चम्पारन में निलहा साहब लोगों को तथा अहमदाबाद में मिल मालिकों को गांधीजी समझाते थे। वायसराय को तथा लन्दन को चिट्ठी लिखते थे, उन्हें समझाने के लिए अपने दूत भेजते थे, खुद जाते थे, फिर भी यदि वे नहीं समझते थे तो असहयोग आन्दोलन लाते थे तथा इसके बाद सत्याग्रह का रास्ता चुनते थे। हम लोग काफी समझा चुके हैं। यह काम अब बाकी नहीं है। आपने जो वादा किया है वह पूरा करें। यदि नहीं पूरा करेंगे तो हम बैठेंगे।

माओवादी राष्ट्रवादी बनें

नवजवान लोग आज 'माओ जिन्दाबाद' और 'माओ हमारा चेयरमैन' का

नारा लगाते हैं। ये लोग महात्मा गांधी, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी दयानन्द सरस्वती और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की प्रतिमाओं पर आघात करते हैं; जो हमारे देश की संस्कृति के प्रतीक बन चुके हैं। उनके इन कार्यों से ऐसा लगता है जैसे वे चीनी हो गये हों। यदि चीनी पैसे और हथियारों से उन्होंने शासन पर अधिकार किया तो क्या फिर देश उनका रह जायेगा? मैं उन लोगों से कह देना चाहता हूँ कि माओ राष्ट्रवादी है इसलिए उन नवयुवकों को, जो माओ को अपना सब कुछ मानने लगे हैं, पहले राष्ट्रवादी बनना चाहिए।

सत्याग्रह होगा

मैं सभी लोगों से बात करूँगा। यदि बात से काम नहीं चलेगा तो फिर गांधीजी के बताये हुए रास्ते, सत्याग्रह का सहारा लूँगा। यह सत्याग्रह कैसा होगा, मैं नहीं जानता। अहिंसा नपुंसक नहीं है। इसके आगे ब्रिटिश सरकार को झुकना पड़ा। आज गांधीजी नहीं हैं लेकिन एडिसन (बल्ब आविष्कारक) जैसा दिया हुआ प्रकाशमय असाधारण मार्ग जो गांधीजी ने जनसाधारण के लिए दिया वह एकमेव मार्ग है, सारी दुनिया के लोग उसे मानने जा रहे हैं।

मित्रो, यह ऐसी शक्ति है जिसका कोई मुकाबला नहीं है। आप लोगों को मैं धमकी नहीं देना चाहता हूँ। मैं उन्हीं लोगों तक, जिन्होंने हस्ताक्षर किये हैं, अपने को नहीं सीमित रखना चाहता। अहिंसा कानून की तरह एक-एक कदम आगे चलेगी। २० वाँ हिस्सा, जिन्होंने हस्ताक्षर किया या जिन्होंने हस्ताक्षर नहीं किया या आसपास के लोगों की जमीन है, उनको सबको निकालना होगा।

यह जमीन जब बँटेगी तब कुछ भला होगा। लेकिन वासगीत की जमीन बाड़ी-झाड़ी, सहन आदि पर उनका अधिकार होते हुए भी अन्यायपूर्ण ढंग से उनका झोपड़ा फेंकवा दिया जाता है। उस जमीन पर कानूनी तौर से उसका अधिकार है। मैं यहाँ यही सब काम करने या कराने आया हूँ। क्या जरूरत थी मुझको यहाँ आने की? देश को अशान्ति से बचाना है तो हर हालत में यह काम पूरा होना ही चाहिए।

'या तो मेरी हड्डी इस मुशहरी में गिर जायेगी या मेरा काम सफल हो जायेगा।'

जो पहले का कार्यक्रम निश्चित है उसके अनुसार इस जून के महीने के अन्त में कुछ दिनों के लिए पटना जाना है तथा जुलाई के महीने में दिल्ली जाना है। लेकिन अब आगे कोई बाहर का कार्यक्रम नहीं ले रहा हूँ। अगस्त के बाद कहीं बाहर नहीं जाऊँगा।

मुशहरी में ही मैंने यह काम क्यों प्रारम्भ किया, इसका बहुत बड़ा कारण यहाँ हाल में हुई ५ हत्याएँ हैं। यही जिले का सबसे अशान्त हिस्सा है, और हिंसा के इस तरीके पर कहीं-न-कहीं पाबन्दी लगाना जरूरी ही है।

स्वराज्य की लड़ाई के लिए कितनी कुर्बानी हो गयी, लोगों ने वकालतें छोड़ दीं, विद्यार्थियों ने स्कूल छोड़ दिये, हजारों माताओं की गोदें सूनी हो गयीं, हजारों बहनों की माँग का सिंदूर पुँछ गया, न जाने कितने दूधमुँहे बच्चों को संगीन की नोकों पर उछाल दिया गया और न जाने कितने लोग हँसते-हँसते फाँसी पर चढ़ गये? इतना बलिदान हुआ और उसके बाद यह नक्शा रहे इससे अधिक शर्म की क्या बात होगी।

युवकों तथा शिक्षकों से निवेदन

आज गाँव-गाँव दुर्योधन के दरबार हैं। द्रौपदी का चीरहरण हो रहा है और भीष्म, द्रोणाचार्य तथा विदुर आदि चुप बैठे हैं। गाँव-गाँव में यह नहीं होना चाहिए। युवक चुप बैठे हैं और गाँवों में अन्याय हो रहे हैं। युवकों को चाहिए कि वे गाँव में समझा-बुझाकर उस गरीब को इस अन्याय से छुटकारा दिलायें। आज की दुनिया बड़ी दुखदायी है। अगर यह पूरा नहीं होगा तो फिर सर्वनाश होगा। यदि शान्ति का रास्ता सफल नहीं होगा तो निश्चित रूप से देश रसातल में चला जायेगा। दल बदल, प्रलोभन, विधायकों की खरीद-फरोख्त होती है और आपकी आवाज नहीं उठती। जब जनता एक स्वर से बोलेगी तभी कुछ होगा। मैं सभी लोगों, नवजवान, शिक्षकों, मुखिया तथा अधिकारियों का सहयोग चाहता हूँ। इसमें गाँव का लाभ ही लाभ है। देनेवाला पायेगा और भर-भर पायेगा।

सलहा (मुजफ्फरपुर)
२१-६-'७०

आपके पत्र

८ जून का 'भूदान-यज्ञ' सामने है। 'अग्निपरीक्षा का वक्त करीब है' बड़ा अच्छा लगा। जो पत्रक वितरित करने का आपने सुझाव दिया है वह धमकी का पत्र मिलने पर ही क्यों? तब तक क्यों रुका जाय? लोकशिक्षण की दृष्टि से उसका सर्वत्र प्रसार होना चाहिए। उसे क्षेत्रीय लोग आपसी सलाह से भले तैयार करें और इसलिए थोड़ी-बहुत विविधता भी भले रह जाय, पर ऐसे विविध पत्रों का प्रसार अवश्य होना चाहिए।

महमदाबाद के तरुण शांति-सेना-शिविर का वृत्त बड़ा अच्छा लगा। भिवंडी में शान्ति-सैनिकों के कार्य का जितना (अल्प-सा) परिचय दिया गया है, श्री रामनन्दन बाबू ने चाईबासा के बारे में उतना भी नहीं दिया। इतनी कंजूसी क्यों?

मन और 'मंच' ठीक लिखा गया है। भगवान करे यह हम लोगों को हिम्मत दे कि प्रामाणिकता से दोरंगापन मिटाने में हम समर्थ बनें।

—नि० न० प्रांजपे

नक्सलवादी क्रान्ति-योजना :

छापामार युद्ध का आह्वान

[प० बंगाल के सिलीगुड़ी के ग्राम के एक प्रखण्ड नक्सलबाड़ी में शुरू हुआ छोटा-सा संघर्ष अब तक भारत के सामाजिक और राजनीतिक चर्चा का शायद सर्वाधिक महत्वपूर्ण विषय बन चुका है। छिट-पुट हिंसक घटनाओं के रूप में दिखनेवाले इस आन्दोलन की भूमिका की जानकारी के लिए हम उनकी पार्टी की घोषित नीति, कार्यक्रम, उद्देश्य और व्यूह-रचना के सम्बन्ध में प्राप्त रिपोर्ट सारियों, पाठकों की सेवा में प्रस्तुत कर रहे हैं। —सं०]

भारतीय साम्यवादी दल—मार्क्सवादी, लेनिनवादी (नक्सलपंथी)—ने हाल ही में सम्पन्न हुए अपने सम्मेलन में दल की नीतियों के अनुसार राजनीतिक कार्यक्रम के रूप में भारत में 'जनवादी लोकतान्त्रिक अधिनायकवाद' स्थापित करने पर जोर दिया गया है।

'देशव्रती' (उक्त दल का पत्र) की घोषणा के अनुसार दल का सम्मेलन किसी अज्ञात स्थान पर १५-१६ मई '७० को आयोजित किया गया था। प्राप्त सूत्रों के आधार पर ऐसा अनुमान है कि दल का उक्त सम्मेलन असम में गौहाटी के आस-पास किसी स्थान पर हुआ था। सम्मेलन में पूरे भारत के सदस्यों ने भाग लिया था।

एक तरफ तो राजनीतिक रिपोर्ट में भारत में किसान संघर्ष के महत्व पर प्रकाश डाला गया है, और दूसरी तरफ इतिहास की विभिन्न मंजिलों पर क्रान्ति के प्रति गद्दारी का आरोप साम्यवादी दल पर लगाया गया है। रिपोर्ट में कहा गया है कि 'जनवादी लोकतान्त्रिक पद्धति में ९०% जनता के लोकतन्त्र की स्थापना का निश्चित आश्वासन है। मेहनतकश मजदूरों और खेतिहरों के नेतृत्व में वह अधिनायकवाद श्रमिकों, खेतिहरों, निर्बल बुर्जुआ और छोटे और बिचले बुर्जुआ वर्ग के एक वर्ग का होगा।'

इस प्रकार रिपोर्ट में राजनीतिक उद्देश्य स्पष्ट किया गया है। दल की सदस्यता के लिए कुछ सख्त नियम सम्मेलन ने निर्धारित किये हैं। श्रमिक वर्ग, मेहनतकश जनता, खेतिहर, क्रान्तिकारी, मध्यमवर्ग या ऐसे अन्य क्रान्तिकारी लोगों के लिए सदस्यता खुली रहेगी, जो किसी भी क्षण संगठित जनता को क्रान्ति के लिए तैयार करने हेतु दल की इकाई के निर्देश पर देहातों में जाने को तैयार हों। संगठनात्मक दृष्टि से दल 'लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद' के सिद्धान्त पर चलेगा।

ऐसा लगता है कि दल के सम्मेलन ने श्री चारु मजुमदार द्वारा प्रस्तावित दल की राजनीतिक दिशा और कार्यक्रम को बिना किसी खास संशोधन के स्वीकार कर लिया है।

उक्त राजनीतिक रिपोर्ट में कहा गया है कि १८५७ के प्रथम स्वातन्त्र्य संग्राम के समय से भारत में असंख्य सशस्त्र खेतिहर विद्रोह हुए। ये विद्रोह विफल हो गये, क्योंकि उनके पास कोई वैज्ञानिक विचार नहीं था, और न ही 'विजय तक पहुँचाने वाला कोई सक्षम क्रान्तिकारी नेतृत्व था। भारत के बुर्जुआ लोगों ने हस्तक्षेप करके राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्ष को क्रान्ति के रास्ते से हटाकर समझौते और समर्पण की राह पर ला दिया।

अहिंसा, सत्याग्रह, निःशस्त्र प्रतिकार और चरखे की अपनी विचारधारा के साथ गांधीवादी बुर्जुआ नेतृत्व ने, चम्पारण के खेतिहर-संघर्ष में जिसकी शुरुआत हुई थी भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासन और उनके सामन्तवादी अनुचरों के हितों का पोषक बना दिया।

विज्ञप्ति में भारतीय साम्यवादी दल का उल्लेख करते हुए कहा गया है

बहुत सारी घटनाओं के बावजूद राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्ष में मेहनतकश जनता का नेतृत्व स्थापित नहीं किया जा सका, क्योंकि दल के नेतृत्व ने क्रान्ति के पथ पर बढ़ने और गांधीवाद एवं गांधीवादी नेतृत्व से संघर्ष करने से इन्कार किया। नेतृत्व ने मार्क्सवादी लेनिनवादी शाश्वत सत्यों को भारतीय क्रान्ति के ठोस प्रयत्नों में जोड़ने से इन्कार किया। इसने दल की बहादुर जनता—खासकर क्रान्तिकारी खेतिहरों—के साथ जोड़कर एक क्रान्तिकारी मोर्चा तैयार करने से इन्कार किया।

इसने चीनी साम्यवादी दल और अध्यक्ष माओ के नेतृत्व में हुए महान राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष से सीख लेने से और सशस्त्र क्रान्ति के पथ पर चलने से इन्कार किया। इसके विपरीत जानबूझकर साम्राज्यवादी समर्थक कांग्रेस के बुर्जुआ नेतृत्व के पीछे लगी रही, और क्रान्ति के साथ गद्दारी की।

१९४७ के बाद

सन १९४ के बाद बड़े बुर्जुआ और बड़े जमींदारोंवाले शासक वर्ग ने देश को साम्राज्यवादी ताकतों के पास गिरवी रख दिया, खासकर अमेरिकी साम्राज्यवादी और सोवियत सामाजिक साम्राज्यवादी ताकतों के पास। इस प्रकार भारत अमेरिकी साम्राज्यवाद और सोवियत सामाजिक साम्राज्यवाद का एक नया उपनिवेश बन गया। इन ताकतों द्वारा हुए भारतीय जनता के निर्दय शोषण और निर्दलन के कारण अपूर्व घोर दारिद्र्य और दुःख पैदा हुए। लाखों लोग मौत के दरवाजे पर जीवन के लिए संघर्ष कर रहे हैं। लाखों लोग भूखे, नंगे, बेघरबार और बेरोजगार हैं।

संक्षेप में, हमारे देश में व्याप्त सभी मुख्य अन्तर्विरोधों में आज का सर्व-प्रमुख अन्तर्विरोध जमींदारों और खेतिहरों के बीच है, जो कि सामन्तवाद और व्यापक भारतीय जनता के बीच का अन्तर्विरोध है। इस सर्वप्रमुख अन्तर्विरोध का निराकरण ही भारतीय जनता को अन्य दूसरे अन्तर्विरोधों के निराकरण के लिए भी दिशा देगा।

भुवन-रुस : सोमवार, ६ जुलाई, '७०

विज्ञप्ति में भारतीय मार्थिकी पर अमेरिकी और सोवियत सामाजिक साम्राज्यवादी चंगुल की जकड़ की भी चर्चा की गयी है। इन कठोर सत्यों से यह सिद्ध होता है कि हमारा देश अब भी अर्ध-उपनिवेशवादी और अर्ध-साम्राज्य-वादी है। इसलिए भारतीय क्रान्ति का बुनियादी काम है सामन्तवाद नौकरशाही पर टिके पूंजीवाद और साम्राज्यवाद को समाप्त करना। इससे हमारी क्रान्ति की मंजिल निर्धारित होती है। हमारा देश लोकतांत्रिक क्रान्ति की मंजिल पर है, जिसका अर्थ है खेतिहर क्रान्ति।

विज्ञप्ति में कहा गया है कि यह कोई पुराने प्रकार की क्रान्ति नहीं होगी बल्कि एक नये प्रकार की नयी जनवादी लोकतांत्रिक क्रान्ति होगी, जो जागतिक समाजवादी क्रान्ति का एक अंग होगी, और इस प्रकार की क्रान्ति का नेतृत्व केवल श्रमिक वर्ग द्वारा ही हो सकता है, और किसी वर्ग के द्वारा नहीं। श्रमिक वर्ग ही सर्वाधिक क्रान्तिकारी वर्ग है, और सबसे अधिक संगठित तबका है।

क्रान्ति से मजदूरों, किसानों, छोटे बुर्जुआ, यहाँ तक कि कुछ बिचले बुर्जुआ की तानाशाही मजदूरों और खेतिहरों के नेतृत्व में स्थापित होगी। इन्हीं का भारत में प्रबल बहुमत है। इनके राज्य में जनता के ९०% का लोकतंत्र होगा। तानाशाही मुट्ठी भर वर्ग शत्रुओं के ऊपर लागू होगी, इसीलिए इसे जनता का लोकतंत्र (पीपुल्स डिमाक्रेसी) कहा जाता है। इसलिए लोकतांत्रिक क्रान्ति की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि श्रमिक वर्ग के नेतृत्व में इन सब वर्गों का लोकतांत्रिक मोर्चा संगठित किया जाय। यह मोर्चा तभी बन सकता है, जब कि मजदूरों और खेतिहरों में एकता हो। यह एकता तब आयेगी जब सशस्त्र संघर्ष की प्रक्रिया शुरू होगी और देश के कुछ भागों में 'लाल राजनैतिक सत्ता' कायम हो जायगी।

लोक युद्ध

भारत की क्रान्ति का रास्ता लोक-युद्ध का रास्ता है। श्रमिक वर्ग सशस्त्र संघर्ष के छोटे-छोटे अड्डे देश भर में कायम करके, तथा छापामार युद्ध को विकसित करके ही लड़ सकता है। लोकतांत्रिक क्रान्ति की पूरी अवधि में छापामार युद्ध ही हमारे संघर्ष का मुख्य स्वरूप हो सकता है।

छापामार युद्ध (गुरिल्ला वार) से ही भारत की जनता का अभिक्रम जगेगा, और उनकी सर्जनात्मक प्रतिभा प्रस्फुटित होगी। तब वे बड़े-बड़े कौतुकपूर्ण काम करेंगे, और उन सबको जोड़कर लोकसेना की शक्ति को बढ़ायेंगे। छोटे-छोटे अड्डे इतने बड़े और व्यापक हो जायेंगे कि प्रतिक्रिया के पहाड़ गिर जायेंगे। शहर घेराव के अन्दर आ जायेंगे। देश भर में जनता की लोकतांत्रिक तानाशाही कायम हो जायगी, और यह तानाशाही समाज-वाद की दिशा में बढ़ती जायगी।

यह राज्य निम्नलिखित मुख्य कार्य करेगा :

(१) विदेशी पूंजी के सब बैंकों और उद्योगों की जब्ती, और साम्राज्यवादी सम्पत्तियों की समाप्ति।

(२) नौकरशाही से चलनेवाले सब पूंजीवादी उद्योगों की जब्ती।

(३) 'जो जोते-बोये, उसकी जमीन' के सिद्धान्त के अनुसार जमींदारों और बड़े किसानों की जमीन की जब्ती; खेतिहरों और मेहनतकश लोगों के कर्जों की समाप्ति। खेती के विकास के लिए सब आवश्यक साधनों और सुविधाओं की गारण्टी।

(४) सेना के जवानों की स्थिति में सुधार, और भूतपूर्व सैनिकों को भूमि और रोजगार।

(५) जनता को रोजगार, और उसकी स्थिति में सुधार।

(६) जाति-प्रथा की समाप्ति सामाजिक विषमता तथा धर्म पर आधारित भेदभाव को समाप्त करना, स्त्रियों की समता की गारण्टी।

(७) भारत की एकता और राष्ट्रीय आत्मनिर्णय का अधिकार, कई तरह के करों के भारी बोझ के स्थान पर आय के आधार पर कर-व्यवस्था।

(८) सभी स्तरों पर जनता की क्रान्तिकारी कमेटियों द्वारा प्रशासन।

(९) चीन के साम्यवादी दल के नेतृत्व में अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारा और दुनिया की मजलूम कौमों के साथ भाईचारा।

('हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड' के तारीख ३-६-'७० के अंक में प्रकाशित उनके विशेष सम्वाद-दाता द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट से।)

केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय तथा रेल-विभाग द्वारा गांधी-शताब्दी साहित्य सेटों की खरीदी

भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने गांधी-जन्म-शताब्दी के निमित्त एवं व्यापक प्रचार-प्रसार की भावना से पूरे देश में गांधी-शताब्दी साहित्य सेट वितरित करने का निश्चय किया है। प्रयोग के तौर पर मंत्रालय द्वारा इस प्रकार के १२०० सेट खरीदे गये हैं, जो कि केन्द्रशासित प्रदेशों तथा विभिन्न राज्यों के मुख्यमंत्रियों को वितरण के लिए भेजे जायेंगे।

ज्ञातव्य है कि गांधी जन्म-शताब्दी के अवसर पर सर्व सेवा संघ प्रकाशन, केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि तथा गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के सम्मिलित सहयोग से पाँच लाख सेट सस्ते मूल्य के 'गांधी-शताब्दी साहित्य सेट" प्रकाशित किये गये थे, जिनमें क्रमशः आठ रु० मूल्य की छः तथा ग्यारह रु० मूल्य की आठ पुस्तकें उपलब्ध की गयी हैं। उल्लेखनीय है कि इन शताब्दी-सेटों का देश भर में स्वागत हुआ है।

इसी प्रकार रेलवे विभाग ने भी देश भर की रेलवे-पुस्तकालयों के लिए लगभग १२ सौ सेट खरीदे हैं।●

दुनिया में अमेरिकी सरकार की भूमिका : शोषकों का संरक्षण

अमेरिकी सरकार ने कम्बोडिया में अपनी सेना भेजकर विएतनाम युद्ध का विस्तार करना ठीक समझा था। जब कि खुद अमेरिका में ही इस कार्रवाई का बहुत बड़े पैमाने पर वहाँ के लोगों द्वारा ही विरोध हुआ, और विरोध-प्रदर्शनों में लाखों अमेरिकी लोगों ने भाग लिया। इसके बावजूद भी हमारे देश में ऐसे लोग हैं, जिनके मन में अमेरिकी सरकार के लिए कोमल भावनाएँ हैं। साम्यवादियों की बढ़ती हुई हिंसा से वे बेहद डरे हुए हैं, और अमेरिकी सरकार को इस हिंसा से दुनिया को बचानेवाला मानते हैं।

अमेरिकी सरकार पोस्टर और गाजे-बाजेवाले अपने प्रचार-तन्त्र के द्वारा अपने आपको इसी रूप में प्रस्तुत करने की पूरी कोशिश कर रही है। नेकनीयत लोगों के लिए अब यह भ्रम दूर कर लेने का वक्त है।

निःसन्देह साम्यवादी अपने लक्ष्य की सिद्धि के लिए हिंसक शक्ति पर भरोसा करते हैं। वे लोकतन्त्रीय शासन-व्यवस्था में उपलब्ध बहुविध नागरिक-स्वतन्त्रता की बहुत कम परवाह करते हैं। इस सदर्भ में दुनिया की सभी साम्यवादी सत्ताएँ दोषी हैं। इस प्रकार वे हर काल और परिस्थिति के उन तथाकथित राजनीतिक व्यवहार-वादियों से भिन्न नहीं रहे हैं।

तब भी यह कहने से कोई लाभ नहीं है कि रूस, चीन, क्यूबा या और जहाँ कहीं की भी सत्ता साम्यवादी क्रान्तियों ने समाप्त की, वे दुनिया की बुरी-से-बुरी सत्ताएँ थीं। साम्यवादियों ने एक ऐसी दुनिया का सपना देखा जिसमें सामान्य आदमी, सबसे नीचे का और आखिरी आदमी अपने अस्तित्व को महसूस करेगा, और वास्तव में मेहनतकश लोगों की जिन्दगी बेहतर बनाने की उनकी कोशिशों की महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों के कारण वे इसके लिए श्रेय के हकदार हैं।

दुनिया को व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य और मानवीय बराबरी की परम्पराओं का योगदान अमेरिका से बहुत मिला है। लेकिन दुर्भाग्यवश पूँजीवादी प्रवृत्तियों के प्रभाव ने उसका दर्जा घटाकर 'जितना लूट सको, लूटो' की नीति तक ला दिया है, और अब भी कालों और अमेरिकन भारतीयों तक उस देश में बराबरी का फैलाव अभी होना बाकी है।

दक्षिण और मध्य अमेरिका के अधिकांश देशों की आर्थिक स्थिति पर विशाल अमेरिकी व्यापारिक और औद्योगिक हितों का पूर्ण नियन्त्रण है, और जिनका वे निर्ममता से शोषण करते हैं। इन देशों में अमेरिकी सरकार अत्यन्त निर्दय, विवेकशून्य और प्रतिक्रियावादी सरकारों—जैसी कि पहले कभी नहीं थी—की सत्ता में बनाये रखने में सक्रिय समर्थन और सहायता करती है। अमेरिकी सरकार का हमेशा छिपे या खुले रूप में ऐसी किसी भी सत्ता को उलटने में हाथ रहा है जिसने इन देशों में भूमि-सुधार की कोशिश की है, या अमेरिकन निगमों के व्यापक निजी हितों पर अंकुश लगाने की कोशिश की है।

अमेरिकी सरकार फ्रान्को, सालाजार जैसी घृणित तानाशाही के साथ गठबन्धन करने में नहीं हिचकती। फारमोसा और दक्षिण कोरिया में अमेरिका ने जिन सत्ताओं को अपने सहारे टिकाये रखा है, वे किसी मानी में मानवीय स्वातन्त्र्य की कम दुश्मन नहीं हैं।

और अधिक स्पष्टता से कहा जाय तो अमेरिकी सरकार ने द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर फ्रांसिसी उपनिवेशवादी सरकार को फिर से स्थापित करने की कोशिश की, और विएतनामी स्वातन्त्र्य संघर्ष को दबाने में उनकी हर सम्भव सहायता की। जब फ्रांसिसी हिन्दचीन छोड़ने को मजबूर कर दिये गये तो इसने दक्षिण विएतनाम में एक के बाद दूसरी कठपुतली सरकार को अपने सहारे खड़ा करना शुरू किया, जो एक-से-एक बढ़कर भ्रष्ट और निकृष्ट कोटि की स्वार्थी रहीं। कल्पना में आ सकने लायक हर प्रकार के क्रूर कारनामे उस छोटे से देश के लोगों पर किये, नगरों को खण्डहर बना दिया, गाँवों को श्मशान बना दिया, जंगलों को नष्ट कर दिया, स्त्रियों को वेश्या बना दिया, नागरिकों का सफाया कर दिया।

अमेरिकी सरकार यह सब एक अजीब प्रकार की आजादी के संरक्षण के लिए कर रही है,—जमींदारों और साहूकारों को जी भरकर किसानों को लूट लेने की आजादी, व्यापारी जोंकों को खून की आखिरी बूँद तक चूस लेने की आजादी, खुदगर्ज लोगों को सरकारी तन्त्र का अपने निजी स्वार्थ के लिए इस्तेमाल की आजादी, संक्षेप में कहा जाय तो एक अन्यायपूर्ण अमानवीय सामाजिक ढाँचे को बनाये रखने की आजादी!

इसलिए, यद्यपि साम्यवादियों के तरीकों और हथकण्डों से सहमत नहीं हुआ जा सकता, लेकिन अपने अन्तस्तल से दुनिया के शोषकों के संरक्षण की अमेरिकी भूमिका का बदजायका अनुभव किया जा सकता है। किसी भी सही दिल-दिमाग के आदमी के अन्दर दुनिया के इतिहास में इन सबसे अधिक भद्दे और घिनौने कुकर्मों के प्रति रंचमात्र भी सहानुभूति नहीं हो सकती।

अमेरिका द्वारा अपनाये गये तौर-तरीके से दुनिया में निकृष्ट कोटि की प्रारम्भिक युग की बर्बरता के सिवाय और कुछ हासिल होगा, इसकी कल्पना करना भी फिजूल है। मानव-स्वभाव और समाज की गतिशीलता की महत्ता अन्तरदृष्टिवाले आन्दोलन से ही साम्यवाद को चुनौती दी जा सकती है, जो अपेक्षाकृत अधिक मानवीय, प्रभावकारी और तीव्रगति से दुनिया की वर्तमान विषम समाज-रचना को परिवर्तित करने का माध्यम प्रस्तुत कर सके।

गांधीजी ने इस प्रकार का माध्यम हमें दिया था। भारत में विनोबा ने इसको आगे बढ़ाया और एक व्यापक कृषिमूलक आन्दोलन के लिए इसका प्रयोग किया।→

उत्तराखण्ड की डाक से :

आन्दोलन के नये सन्दर्भ में मित्रों की उत्कटता

बिहार में नक्सालवादी आतंक के कारण जयप्रकाश बाबू का उत्तराखण्ड की यात्रा को बीच में ही रद करके पौड़ी से पटना वापिस जाना पड़ा। इससे यहाँ के साथियों को लगा कि अहिंसक क्रान्तिकारियों के सामने एक चुनौती प्रस्तुत हुई है। अतः १९-२० जून, '७० को उत्तराखण्ड में ग्राम-स्वराज्य-आन्दोलन में लगे साथी शणीचौरी (जहाँ पर जे० पी० तीन सप्ताह विश्राम करनेवाले थे) में इकट्ठे हुए। सौभाग्य से श्रद्धेय शंकरराव देव भी इसमें उपस्थित हो सके और सारे चिंतन को उनका मार्गदर्शन मिला।

यद्यपि थोड़े-से ही साथी आ पाये थे, फिर भी अहिंसक क्रांति के सभी पहलुओं पर गहरा आत्मशोध हुआ और अब तक के कामों का सही मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया। सबके मन में चिन्ता के साथ इस बात का असंतोष भी था कि अब तक जितना हम कर पाये हैं वह काफी नहीं है। अब तक के किये गये काम की समीक्षा से निम्नलिखित निष्कर्ष निकले :—

१—ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन की बुनियाद बनाने के लिए उत्तराखण्ड में जिन विकास-क्षेत्र-स्तर के संगठनों को हमारे साथियों ने संगठित किया वे भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में अपने ढंग से कुछ बहुत उपयोगी काम कर रहे हैं, परन्तु यह भी सच है कि उनके कार्यों में से ग्रामस्वराज्य की शक्ति प्रगट नहीं हो रही है और न जनता उनको अपना संगठन मान रही है।

२—लोगों के ऊपर हमारे सारे विचार और कामों का यह प्रभाव पड़ता है कि ये भले लोग हैं और भला काम करते हैं, परन्तु यह सारा काम पूरे 'पावर-स्ट्रक्चर' को बदलने का है, इसका स्पर्श तक लोगों को नहीं हो पाया है। नैतिक, आध्यात्मिक मूल्यों का शिक्षण व साधना आवश्यक है; परन्तु साथ ही यह भी आवश्यक है कि लोगों में स्वामित्व-विसर्जन और सम-विभाजन के अनुकूल चेतना पैदा हो। भूमिहीनों की तरफ से अभी तक यह माँग नहीं आ रही है कि उन्हें जमीन मिलनी चाहिए। हम अभी तक उसको वाणी नहीं दे पाये हैं।

३—जिन लोगों ने जनता की समस्याओं के लिए कानून बनाये हैं, उनको वे अमल में नहीं ला रहे हैं तो उनके प्रति हमारी भूमिका क्या हो, यह स्पष्ट नहीं है। शराब-बन्दी को छोड़कर बाकी किसी भी लोक-समस्या को लेकर सत्याग्रह नहीं छेड़ा है।

आज तक जो कुछ भी हुआ हो, अब देर करना अपने को ही मिटा देना है। ग्रामस्वराज्य की शक्ति शीघ्र प्रकट होनी चाहिए, उसके लिए निम्नलिखित निश्चय लिये गये :

१—श्री सुन्दरलाल बहुगुणा ने अपने लिए निर्णय लिया कि वे बाहर की बैठकों में जाना बहुत कम कर देंगे और अकेले ही टिहरी जिले के गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए घूमेंगे।

२—यह तय हुआ कि उत्तराखण्ड के सभी विकास-क्षेत्र-स्तर के संगठनों से निवेदन किया जाय कि वे अपने मौजूदा स्वरूप को विसर्जित करके उसे ग्राम-स्वराज्य सभाओं के संगठन के रूप में अपने को विकसित करें। यह काम एक साल के अन्दर पूरा कर लेने की प्रार्थना की जाय। चम्बा की संस्था ने एक साल के भीतर इस दिशा में कदम पूरा कर लेने का निश्चय किया। जब तक ऐसा नहीं होता तब तक ये संगठन यथासम्भव ग्रामस्वराज्य की पूरक शक्ति के रूप में काम करते रहें।

३—विचार प्रस्तुत करने की शैली हमें बदलनी चाहिए। हमारा आन्दोलन उत्पादन के साधनों पर से व्यक्तिगत मालिकी मिटाने और समता कायम करने के लिए है, यह बात सब ओरों से कहनी चाहिए। अब तक कुछ घुमा-फिराकर या झिझक के साथ हम ऐसा कहते रहे हैं, क्रान्तिकारी शैली के साथ-साथ हम जो कुछ भी कहें उसके साथ हमारी भावनाएं भी जुड़ी होनी चाहिए। अभी हमारे साथी भी 'मंच' पर एक बात कहते हैं और 'लंच' पर दूसरी बात।

४—ग्रामदान द्वारा अहिंसक क्रान्ति→

→दुनिया में हजारों लोगों ने गांधीजी के जीवन और विचारों से प्रेरणाएँ ग्रहण की, और छोटी-बड़ी समस्याओं के समाधान की कोशिश उनके बताये तरीकों से कर रहे हैं। एक बहुत बड़ी तादाद में, जिनकी संख्या निरन्तर बढ़ रही है, लोग समाज और मानव-स्वभाव के वैज्ञानिक अध्ययन में समर्पण-भाव से लगे हुए हैं, इस आशा में कि इस प्रकार के अध्ययन से समता और शान्तिपूर्ण समाज की रचना करने में मदद मिलेगी।

लेकिन यह अनुभव, ज्ञान और कर्म की बढ़ती हुई ताकत एक जागतिक शक्ति का स्वरूप लेने में अभी कमजोर है, लेकिन निःसन्देह दुनिया का रुझान उस तरफ है। पिछले दो दशकों में इसका महत्त्वपूर्ण विस्तार हुआ है।

यही वह बढ़ता हुआ आन्दोलन है, जो अन्ततोगत्वा साम्यवाद का सामना करेगा, और उसको निरर्थक बना देगा। लेकिन इस आन्दोलन के विचार और तरीके अमेरिकी सरकार के तरीकों से भिन्न दिशा की ओर पर हैं। दूसरी तरफ लाखों लाख अमेरिकी युवक और बुजुर्ग, जो आज वियतनाम युद्ध, और कम्बोडिया में हस्तक्षेप का विरोध कर रहे हैं, किसी दिन इस नयी शक्ति का वे ही अगुआ बन सकते हैं। हम उनका तहेदिल से समर्थन करते हैं। (मूल अंग्रेजी)

—मनमोहन चौधरी

जयप्रकाश बाबू मुजफ्फरपुर में क्या कर रहे हैं ?

जब आपने अपने कानों से सुना या अखबार में पढ़ा होगा कि जयप्रकाश बाबू मुजफ्फरपुर के मुसहरी प्रखंड के एक गांव में चले गये हैं, तो आपके मन में जरूर यह यह प्रश्न उठा होगा कि जिस जयप्रकाश नारायण को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं से मिनट भर की फुरसत नहीं मिलती थी, वह व्यक्ति लगभग एक पखवारे से मुसहरी प्रखंड के गांवों में पड़कर क्या कर रहा है? वह कौनसी चीज है, जो जयप्रकाश बाबू को खींचकर एक गांव में ले गयी है, और उसके लिए उन्होंने अपनी जान की बाजी लगायी है?

आजादी के बाद हमारे देश के सामने एक के बाद एक समस्याएँ उपस्थित होती रहीं। गांव तथा देश के नव निर्माण की समस्या तो थी ही। इन सभी समस्याओं को दूर करने के लिए सरकार ने अनेक कानून बनाये, और योजनाएँ चलायीं। इस में भी काफी हुआ, किन्तु सबके समाधान का रास्ता नहीं निकल सका। गांव और भूमि की समस्या तो इतनी विकट हो गयी कि कुछ लोगों ने बम और बन्दूक तक हाथ में ले ली है। वे मरने और मारने पर उतारू हो गये हैं। लेकिन इससे क्या होगा? अगर कानून विफल हुआ तो बन्दूक भी आतंक पैदा कर देने के सिवाय दूसरा क्या कर सकेगा?

सर्वोदय आन्दोलन तथा जयप्रकाश बाबू ने इतने दिनों के अनुभव और अन्वेषण से यह देख लिया है कि देश की कोई भी समस्या बल या कानून के तरीके से सुलझाने के बदले उलझती ही जाती है। अतः हम मानते हैं कि हमारी समस्याओं का जवाब स्वयं जनता के पास है, उसके लिए जनता को तड़पना और आगे बढ़ना पड़ेगा। जयप्रकाश बाबू ने मुसहरी के गांवों में लोकशक्ति को ही जगाने और संगठित करने का काम शुरू किया है।

जयप्रकाश बाबू मुसहरी के मलहा गांव में ९ जून को गये। तब से वहां क्या काम हुआ है? जयप्रकाश बाबू सलहा पंचायत के गांव-गांव और गांव के घर-घर जा रहे हैं। उनके जाने से, और हर छोटे-बड़े में मिलकर बातें करने से, मालिक और मजदूर दोनों के मन की गांठें खुल रही हैं। अब तक के उनके प्रयास से—

१ २४ तारीख को गांव के १६ भूमिहीनों में बीघा-कट्ठा से मिली ४ बीघा खेती लायक भूमि बांटी गयी।

२ मालिकों ने खुशी से मजदूरों की मजदूरी साढ़े तीन सेर से बढ़ाकर चार सेर कर दी।

३ सलहा में जितने भूमिहीन मजदूर हैं उनको बास की जमीन का पर्चा मिल गया।

४ बंकटपुर की ग्रामसभा बन गयी। सर्वसम्मति से पदाधिकारी चुन लिये गये और काम शुरू हो गया।

हम लोगों को अभी इस स्थिति से सन्तोष नहीं है, लेकिन हम जागरण के चिह्न स्पष्ट देख रहे हैं। मालिक मजदूर एक दूसरे के करीब आ रहे हैं। भय और आतंक का वातावरण दूर हो रहा है। ग्रामसभा बनाने की अच्छाई महसूस की जाने लगी है। बीघा-कट्ठा निकलने लगा है। ग्राम कोष शुरू हो गया है। युवक सेवा की ओर मुड़ने लगे हैं। लोग समझने लगे हैं कि रोटी और इज्जत आज की व्यवस्था से कहीं अधिक गांव की एकता और नव संगठन में सुरक्षित होगी। ग्रामस्वराज्य का चित्र पहले से अधिक स्पष्ट होने लगा है।

लेकिन एक दूसरी बात भी है। हमें और आपको ग्रामस्वराज्य और नगर-स्वराज्य तक पहुँचना है यह कठिन काम है, बड़ा काम है किन्तु जरूरी काम है। जिसे जल्द-से-जल्द पूरा करना है। उसके लिए—जयप्रकाश बाबू का करो या मरो का संकल्प पक्का है। उन्होंने अपनी जान की बाजी लगा दी है। 'काम पूरा होगा या मेरी हड्डी गिरेगी' की बात यों ही मुँह से नहीं निकल गयी है। लेकिन इतना बड़ा काम अकेले जयप्रकाश बाबू या उनके मुट्ठी भर साथियों से नहीं होगा। उसके लिए आपकी सद्भावना और आपका सक्रिय सहयोग चाहिए। काम दो-चार महीनों में या १०-२० लोगों द्वारा पूरा होने का नहीं है। मुजफ्फरपुर के ४० ब्लाकों के एक-एक गांव में पहुँचना है। सैकड़ों लोगों और हजारों रुपयों की जरूरत है। सचमुच जयप्रकाश बाबू ने स्वराज्य की दूसरी लड़ाई छेड़ दी है, जिसे हर जगह लड़ना है—गांव से लेकर पटना और दिल्ली तक। पूरा देश नये प्रकाश के लिए मुजफ्फरपुर की ओर देख रहा है।

हमारी अपील है कि इस महान अभियान में आपमें से हर व्यक्ति शरीक हो। शिक्षक, विद्यार्थी, डाक्टर, वकील, पत्रकार, दूकानदार, व्यापारी, अधिकारी, पुरुष और स्त्री सबको इस अवसर पर उत्साहपूर्वक आगे आना चाहिए। सबका हाथ लगेगा तो कठिन-से-कठिन काम आसान हो जायेगा। छात्र तरुण शान्ति-सेना के सदस्य बनें। नागरिक सर्वोदय-मित्र बनें और इस आन्दोलन को एक पैसा प्रतिदिन के हिसाब से सालभर के लिए तीन रुपया पैंसठ पैसा दें। आपमें से सम्पन्न लोग अपनी इच्छानुसार और अधिक भी दे सकें तो हमारी विशेष सहायता होगी। शिक्षक, विद्यार्थी या अन्य नागरिक जो भी समय दे सकें वे टोलियां बनाकर गांव में चलें, शहर के मुहल्ले-मुहल्ले जायें, और लोगों को स्वराज्य का यह नया विचार समझायें और उन्हें प्रेरित करें।

देश के नागरिक इस ऐतिहासिक→

→की बुनियाद बनाने के साथ-साथ लोक-समस्याओं के सन्दर्भ में लोक शिक्षण द्वारा जन आन्दोलन संगठित किये जाने की आवश्यकता है।

मित्र-मिलन के साथ-साथ इसी स्थान पर १७-१८ जून को टिहरी जिले के पत्र-कारों की दो दिन की बैठक हुई। २०-२१ जून को शांति-सेना विद्यालय की ओर से दो दिन का शिविर चलाया गया और उसके बाद पन्द्रह विकास-क्षेत्र में ९ टोलियों ने ग्रामदान के लिए कूच किया।

—योगेशचन्द्र बहुगुणा

नयी तालीम-परिवार की 'माँ'

[श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम् का देहान्त नागपुर के अस्पताल में ३० जून '७० को हुआ! आप ६७ वर्ष की थीं। आप फेफड़े के कैंसर रोग से पीड़ित थीं। इलाज के लिए १४ जून को नागपुर अस्पताल में आप दाखिल की गयी थी। हम सर्वोदय-परिवार की ओर से उन्हें श्रद्धांजलि समर्पित करते हैं! --सं०]

गांधी के जिन साथियों ने अपने जीवन की पूँजी मानव-बैंक में लगाने का काम किया था, स्वर्गीया आशादेवी आर्यनायकम् उन्हींमें से एक थीं। तैंतीस साल तक उन्होंने अपने सहधर्मचारी श्री आर्यनायकम्‌जी के साथ यही काम किया। परिणामतः उनकी मानवीय सुवास आज देश के कोने-कोने में और जगत् के कई राष्ट्रों में फैल चुकी है।

मिर्जो जिले का एक छोटा-सा देहाती होटल। मेरे साथ बाँस के मच के बने टेबुल पर खानेवाले एक सज्जन ने पूछा: 'आप वर्धा गये हैं कभी?' मैंने जब बताया कि वहाँ बारह वर्ष रहा हूँ, तो वह कहने लगा, 'वहाँ सेवाग्राम में मेरी माँ है।'

नागालैण्ड के अत्याचार के समाचार सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति को आर्यनायकम् दम्पति से ही सर्वप्रथम मिले थे! घाना के एक छोटे-से ग्राम विनेबा में एक नीग्रो लड़की ने आकर पूछा, 'तुम भारत से आये हो, तो वहाँ आशादेवी को जानते हो?'

सेवाग्राम के नयी तालीम-परिवार में उनका नाम था माँ। और यह परिवार सेवाग्राम के नयी तालीम क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रहा, क्षितिज-व्यापी हो चुका था।

संस्कृत की प्रकाण्ड पंडिता आशादेवी के दिलचस्पी के विषय थोड़े नहीं थे। जब कभी उनके पास जाओ, सबसे ताजा किताब उनके हाथ में या दराज में मिल जाती थी। इतिहास, दर्शन, संस्कृत, संस्कृति इत्यादि उनके प्रिय विषय थे। लेकिन उन्होंने तय किया था, उस सारी विद्वत्ता को सेवाग्राम की शाला में समर्पण करने का। आधी जिन्दगी उसी में डाल दी। दोनों की आधी जिन्दगी यानी एक

स्वर्गीया आशादेवी आर्यनायकम्

पूरी जिन्दगी ही समझिए। एक जगह पल्थी लगाकर साधना करनेवाले इस प्रकार के दम्पति इस देश में तो क्या, दुनिया भर में कम ही मिलेंगे। और इस साधना में विद्वत्ता के विषयों से कम दिलचस्पी पाठशाला की समस्याओं में, खेती के प्रयोगों में, छात्रों की बीमारियों में, और परिवार में बच्चों की शादियों में नहीं थी।

आशादेवी की आरम्भ की साधना शान्तिनिकेतन में हुई थी। उसका नतीजा यह हुआ कि वे गांधी के सादगी-भरे आश्रम में रवीन्द्रनाथ की सरकारिता ले आयीं। सेवाग्राम के विद्यालय में आपको उत्तमोत्तम संगीत ही सुनने को मिलेगा, वहाँ नाटक अगर होंगे तो उसकी पसन्दगी में पश्चिमण होना सम्भव नहीं था। आज जब राष्ट्र में मनोरंजन और संस्कारिता का मानो तलाक-सा हो गया दीखता है, तब आशादेवी के द्वारा प्रेरित सांस्कृतिक कार्यक्रम विशेष तौर पर याद आते हैं।

अपनी प्रतिभा के कारण अगर चाहतीं तो स्वराज्य के बाद उन्हें अनेक प्रकार के जगमगाते काम मिल सकते थे। लेकिन उनके व्यक्तित्व में तो एक सौम्य प्रतिभा थी। उसी प्रतिभा के कारण जब राष्ट्रपति की ओर से उन्हें कोई पदक दिया जा रहा था तब उन्होंने उसे नम्रता से अस्वीकार किया था। इस प्रकार के इनकार देने की परम्परा छोड़ देनी चाहिए, यह सलाह देनेवाले तो कई लोग होते हैं, लेकिन मिला हुआ इनाम छोड़नेवाली शायद आशादेवी अकेली ही थीं।

सर्वधर्म-समभाव आशादेवी को सहज सधा था। स्वयं हिन्दू संस्कार की, सहधर्मचारी ईसाई संस्कार के, और जिसकी अध्यक्षता में काम किया वे मुसलमान थे। शान्तिसेना मण्डल की संयोजिका कई वर्षों तक रहीं। इस बीच साम्प्रदायिक दंगे ज्यादा तो नहीं हुए, लेकिन अलीगढ़ के दंगे के समाचार सुनते ही पहुँच गयी वहाँ। वहाँ से तार आया, 'शान्ति विद्यालय से कुछ विद्यार्थी शीघ्र भेजो।'

जूझती रहीं प्रायः अकेले ही। घायलों के घर-घर जाकर मिलीं। जिन्होंने हिंसा की थी उनको भी खोजकर मिलीं। प्रेम से पूछती रहीं, 'भाई, तुम्हें जरा भी पश्चात्ताप नहीं होता?' वे खोज रही थीं पश्चात्ताप के लुप्तप्राय स्रोत को जिस स्रोत से, उन्हें विश्वास था, कि भयंकर-से-भयंकर हिंसा का पाप भी धुल सकता था।

चंबल की घाटी के बागियों की समस्या में उनको दिलचस्पी थी, क्योंकि हर प्रकार की मानवीय समस्या में उन्हें दिलचस्पी थी। आरम्भ में आर्यनायकम्‌जी, और उनकी मृत्यु के बाद आशादेवी सर्वोदय-आन्दोलन की चंबल समिति की अध्यक्षता करती रहीं।

'यूनेस्को' में भारतीय प्रतिनिधि के

→अवसर पर उठ खड़े होंगे तो देश की हवा बदलने में देर नहीं लगेगी। देश के जीवन में नया मोड़ आयेगा और तब हमारे छोटे ही नहीं, राजनीति, विकास और शिक्षा के बड़े सवाल भी हल होते दिखाई देंगे।

—राममूर्ति

थाते वे कई बार विदेश गयी थीं, और जहाँ गयी अपने जीवन से भारतीय संस्कृति का सच्चा प्रचार किया था।

सभी भाषाओं के भजनों को इकट्ठा करने का उन्हें शौक था। सेवाग्राम में दर्जनों ऐसे प्रसंग घटे होंगे जब देश की चौदह भाषाओं के सन्तों के उत्तम भजनों से वहाँ का वातावरण गूँज उठा होगा। हर भजन के चुनाव के पीछे, हर भजन के गान के तर्ज के पीछे आशादेवी की सत्वा-रिता छिपी रहती थी।

इतनी विद्वता और इतनी कर्मठता के बावजूद भी आशादेवी का मुख्य गुण तो उनकी भक्ति ही थी। वह भक्ति बच्चों के प्रति उनके प्यार के रूप में प्रकट हुई। पति के साथ अनेक विषयों पर मतभेद होने के बावजूद भी उनकी अनुव्रता बनी रहने में वे कृतार्थता अनुभव करती थीं। रवीन्द्रनाथ के प्रति उनकी भक्ति तो शान्तिनिकेतन के उनके साथियों में सुवि-दित थी। एक बार रवीन्द्रनाथ पास से गुजरे। आशादेवी वहीं खड़ी हुईं, बस उसी स्थान को काफी समय तक देखती रहीं। सहाध्यायिनी मालती देवी ने झकझोरकर उनसे पूछा - 'दीदी क्या देखती हो?' उत्तर मिला, 'तुम क्या समझ सकोगी? हम यहाँ जी रहे हैं, यह हमारा कैसा भाग्य है? वे हमारे बीच ही आना जाना कर रहे हैं, वही मैं देखती थी।' गांधी के प्रति भक्ति तो उनकी जीवन साधना के रूप में ही प्रकट हुई। और विनोबा के प्रति जो भक्ति थी उसने उनको बहुत हद तक संस्था की आसक्ति से भी छुड़ाया था।

मैसूर के 'निवेदक'-सम्मेलन में मैंने विनोबा को शान्तिसेना मण्डल के 'सुप्रीम कमाण्डर' न बनने को जब कहा, तो आशादेवी को उससे सदमा लगा। उन्होंने मुझसे सिर्फ इतना ही कहा 'नारायण, बोलने में शालीनता चाहिए।' इस एक वाक्य में विनोबा के प्रति उनकी जो भक्ति थी वह प्रकट हुई। किन्तु वास्तव में उनकी भक्ति परमेश्वर के लिए थी, जो प्रकट होती थी उनके भजनों में। भजनों का एक संग्रह भी वे करना चाहती थीं। अपनी अन्तिम बीमारी में भी उन्होंने इस भजन-संग्रह को पूरा करने के लिए कुछ मित्रों से आग्रह किया था।

आशादेवी ने अपने पुत्र बटुनी को सेवाग्राम में ही खोया था। श्री आर्य-नायकम्‌जी की समाधि भी उसी टेकड़ी पर हुई, जहाँ बटुनी की समाधि थी। अब उनकी खुद की समाधि भी उसी स्थान पर बनेगी! वैसे आशादेवी के परिवार के हम सभी समान सदस्य हैं, फिर भी उनकी पुत्री उपना (मित्तू) और दामाद मुबक के साथ हमारी हार्दिक प्रार्थना है।

—नारायण देसाई

आन्दोलन के समाचार

सलहा में बीघा-कट्ठा का वितरण

सलहा ग्राम के जलधर मिडल स्कूल के प्रांगण में २४ जून को सायं ४ बजे सलहा ग्राम के निवासियों की एक सभा हुई। यह सभा श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में गाँव के भूमिहीन मजदूरों में बीघा-कट्ठा में प्राप्त जमीन वितरित करने के लिए बुलायी गयी थी।

सभा प्रारम्भ होने के पूर्व श्री रामदेव झाजी ने अपने मधुर कंठ से एक उद्बोधक गीत सुनाया—

लोगो रे लोगो, लोगों रे लोगों।
मोह के बन्धन, तोड़ो रे लोगो॥

सचमुच मोह के बन्धन तोड़ना कितना कठिन काम होता है। श्री जयप्रकाश जैसे राष्ट्रविभूति की कई दिनों की अनवरत उपस्थिति के बाद गाँव के १६ भूमिहीन मजदूरों के लिए गाँव के मुख्य किसान श्री जलधर ठाकुर द्वारा ४ बीघा जमीन प्राप्त हुई थी।

आचार्य श्री राममूर्ति की अध्यक्षता में सभा की कार्यवाही शुरू हुई। श्री जलधर बाबू ने उठकर अपनी ओर से श्री जयप्रकाश नारायण, श्री ध्वजा प्रसाद साहु, श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी और श्री जयलोक ठाकुर को माल्यार्पण किया। श्री कैलाश प्रसाद शर्मा ने ग्रामस्वराज्य-अभियान का प्रतिवेदन प्रस्तुत किया और बताया कि बैंकटपुर में ग्रामदान की सभी शर्तें पूरी हो गयी हैं और वहाँ सर्वसम्मति से ग्राम-सभा का गठन हो गया है। बैंकटपुर ग्राम-सभा के अध्यक्ष श्री रामखेलावन महतो, उपाध्यक्ष श्री रामऔतार चौधरी, मंत्री श्री फुलहाई साह, कोषाध्यक्ष श्री राजेन्द्र राय तथा अन्य ७ सदस्य सभा में उपस्थित थे। श्री कैलाश प्रसाद शर्मा ने बताया कि ग्रामसभा के गठन के समय गाँव के १५० वयस्क स्त्री, पुरुष उपस्थित थे।

सलहा जलालपुर और माधोपुर में ग्रामदान का काम अभी तक पूरा नहीं हो सका है। उसे पूरा करने की कोशिश जारी है। श्री कैलाश प्रसाद शर्मा के प्रतिवेदन के बाद गाँव के १६ भूमिहीनों को श्री जलधर बाबू ने बारी-बारी से माल्यार्पण किया। उसके बाद श्री जय-प्रकाशजी ने अपना भाषण आरम्भ करते हुए कहा—"अभी जो शुभ कार्य हुआ है वह आपने देखा। यह शुभ काम एक छोटा-सा आरम्भ है उस बड़े काम का जो आगे होनेवाला है। काम ज्यादा हुआ नहीं, और समय बहुत लगा।

'श्री कैलाश प्रसाद शर्मा ने अभी अपने प्रतिवेदन में बताया कि बैंकटपुर में ग्राम-सभा सर्वसम्मति से गठित हो गयी। यह ग्रामस्वराज्य की स्थापना का काम ऐसे गाँव में हुआ जहाँ मजदूर ज्यादा हैं। उन लोगों ने जो शुभ कार्य आरम्भ किया उनको बधाई और धन्यवाद।

"कल ७ बजे सुबह मैं आपकी ग्रामसभा में पहुँचूंगा। वहाँ आप से चर्चा होगी कि किस तरह ग्रामसभा को काम करना है। वहाँ आप मिल-जुलकर विचार करेंगे कि कैसे गाँव की शक्ति से गाँव का विकास हो। गाँव की शक्ति मुख्य रूप से प्रेम की शक्ति, मेल की शक्ति है। उस शक्ति से

गाँव सुखी कैसे हो इसकी पहली मंजिल गाँवसभा है। इस मंजिल से आप बराबर आगे बढ़ते जायेंगे ऐसी मुझे उम्मीद है। जबतक इस क्षेत्र में ग्रामस्वराज्य का काम पूरा नहीं होगा तबतक मैं आपके प्रखंड में ही रहूँगा।"

भाषण के अंत में श्री जयप्रकाशजी ने श्री जलधर बाबू को उनके आतिथ्य-सत्कार तथा बीघा-कट्ठा का हिस्सा निकालने के लिए अपनी ओर से बधाई दी। उन्होंने श्री जलधर बाबू को इस बात के लिए भी धन्यवाद दिया कि उन्होंने अपने मजदूरों को प्रति दिन की मजदूरी साढ़े तीन सेर से बढ़ाकर चार सेर कर दी है। सभा में जिलाधीश श्री कृष्ण पाटनकर भी उपस्थित थे।●

बीघा-कट्ठा का वितरण

स्मरण रहे कि श्री जयप्रकाश नारायण का शुभागमन यहाँ फरवरी '७० में हुआ था। उनकी उपस्थिति में तत्कालीन मंत्री बि० खा० ग्रामोद्योग संघ के श्री रमापति चौधरी ने पुरजोर प्रयत्न किया था। उनके सहपाठी श्री विक्रमा पाडेय की तत्परता से इस जिले में अहिंसा की सामूहिक शक्ति संगठित कर सम्भावित हिंसा से बचाने का कार्यक्रम बना, और नरकटियागंज गौनहा प्रखण्ड में सघन कार्यारम्भ हुआ।

अब तक २५ गाँव में सर्वसम्मति से ग्रामस्वराज्य-सभा का गठन हुआ है। ६१ गाँवों में सभा-गठन हेतु एडहॉक कमेटी, तथा १४६ गाँवों में विचार-प्रवेश हो चुका है। पहकौल ग्रामस्वराज्य-सभा में ग्रामकोष जमा हुए हैं, और तीन गाँवों में जमा करने का काम आरम्भ हुआ है।

ग्रामस्वराज्य-सभा के अध्यक्ष श्री सिद्धेश्वरप्रसाद वर्मा ने अपनी काश्तकारी जमीन में से २० एकड़ देकर तथा गाँव की गैरमजरुआ-सरकारी जमीन में से १५ एकड़, कुल ३५ एकड़ का वितरण ६५ परिवारों में श्री केदार पाण्डे, उद्योग-मंत्री, बिहार सरकार के हाथों वितरण कर दिया—२१ जून '७० को पहकौल गाँव में। सैकड़ों गाँवों के हजारों व्यक्ति सभा में उपस्थित थे। साठी फार्म-मालिक से भी उन्होंने इसी रास्ते का अवलम्बन करने का निवेदन किया है। इस क्षेत्र के सभी काश्तकारों से अध्यक्ष महोदय ने इसी रास्ते से जमीन वितरण करने की अपील की है।

—उचितनारायण
क्षेत्रीय ग्रामस्वराज्य समिति,
नरकटियागंज (चम्पारण)

राज्यों में सर्वोदय-कार्य

उड़ीसा

मयूरभंज जिलादान की घोषणा हुई। कोरापुट को मिलाकर उड़ीसा में दो जिलादान हो गये। फुलवाणी जिला करीब आधा दान हो गया है। ढेंकानाल और बालेश्वर जिले में काम चालू है। केऊँझर में काम जल्दी शुरू होनेवाला है। इसी तरह यदि काम चलता रहा तो अक्तूबर-तक उड़ीसा के आधे जिलादान हो जायेंगे और यदि तूफान की गति से चला तो प्रदेशदान हो जायगा। अभी तक तूफान शुरू नहीं हुआ है, लेकिन क्षेत्र बन गया है। सरकार ने भूदान समिति की आर्थिक सहायता बंद कर दी है, कारण मालूम नहीं। ग्रामदान कार्यकर्ताओं को आर्थिक संकट का मुकाबला करना पड़ रहा है। उड़ीसा का ग्रामदान-अभियान चन्दे से चल रहा है। साम्यवादी और दूसरे राजनैतिक दल के लोग भूमि-समस्या को लेकर आन्दोलन करने की तैयारी में हैं। शिक्षा-संस्थाओं में भी वैसी तैयारी कर रहे हैं। किसान और ईसाई दोनों तरफ से आन्दोलन की सूचना सरकार को मिली है। पुलिस भी तैयार है, ऐसी सूचना मिली है। कभी भी संघर्ष हो सकता है। केवल ग्रामदान-आन्दोलन ही व्यापक हिंसा से रक्षा कर सकता है, इसलिए उड़ीसा में अधिक शक्तिशाली नेतृत्व की आवश्यकता है।

—हरमोहन भाई

उड़ीसा में भूदान में ८६,२९३ दाताओं से १,९८,२०२ एकड़ जमीन तथा ग्रामदान में २,६२,२१० दाताओं से ८,८४,५२१ एकड़ जमीन मिली। ८९१२ ग्रामदान हुए। २२,९६७ आदाताओं में १,२८,६४४ एकड़ जमीन भूदान की तथा ७८,२५१ ग्रामदान-किसानों को ४,३२,९८९ एकड़ ग्रामदान की जमीन का वितरण हुआ। ४,६६,०४२ एकड़ जमीन के दान-पत्र पुष्टि के लिए प्रस्तुत किये गये, उसमें से १,७७,२८० एकड़ जमीन पुष्ट हुई, ५१,८३२ एकड़ जमीन खारिज हुई। ८९८ गाँवों की ग्रामदान के रूप में पुष्टि हुई, २६४ खारिज हुए।

—सुधांशु शेखरदास
मंत्री, उड़ीसा भूदान-यज्ञ समिति

महाराष्ट्र

थाणा जिले में भूमिहीनों को सरकारी जमीन पर से बेदखल करने के सरकारी नीति के खिलाफ सत्याग्रह करने का मण्डल ने निर्णय किया था। सरकार ने जानवरों के चरागाहों की जमीन कब्जेदारों को दी है। सुरक्षित की हुई जंगल की जोत को भी इस साल मनाई करने का आदेश सरकार ने अस्थायी रूप से वापिस लिया है। जिन्होंने जंगल में जोत की थी, उन लोगों के मामले सरकार ने वापिस न लिये हैं और कुटुम्बियों को सरकारी पड़ती जमीन और खिलिंग की जमीन नहीं दी जायगी, यह पाबंदी हटा ली है। इसलिए ता० १२ को राज्य के मुख्यमंत्री और सत्याग्रह-समिति के बीच वार्तालाप हुआ और सत्याग्रह का कदम वापिस लिया गया। भिवण्डी और जलगांव में शर्मनाक हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए। जान और माल की काफी क्षति हुई। शान्ति-सैनिकों ने इस समय बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। सफाई से लेकर जीवनावश्यक चीजों की पूर्ति करने तक सब कार्यों में उन्होंने हिस्सा लिया।

महाराष्ट्र के ६० सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने पुनर्वास के काम में सहयोग दिया। चन्द्रपुर और वर्धा जिलों में ग्राम स्वराज्य-समितियाँ गठित हुईं। वर्धा, चन्द्रपुर

और यवतमाल में ७५-७५ हजार रुपये संग्रह का लक्ष्य रखा गया। करीब ३८ हजार रुपये का आश्वासन मिला है। वसमत और पुरेपर में शान्ति-सेना शिविर हुए। इस महीने सांगली में ४० और अकोला, अमरावती, मराठवाड़ा में ७ ग्रामदान प्राप्त हुए। तीन गाँव ग्रामदान कानून के अंतर्गत विधिवत् घोषित हुए। पाँच जिलों में जिला सर्वोदय मण्डलों का पुनर्गठन हुआ। परभणी जिले के ग्रामदान पदयात्रा के समय एक कार्यकर्ता पर ग्राम दान-प्रचार को रोकने हेतु उपद्रवियों ने हमला किया। साहित्य जला दिया। नक्सालपंथी होने की आशंका है, सी० आई० डी० पुलिस तलाश कर रही है।

— वसंत बोंबटकर,
मंत्री, महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल

कर्नाटक

बेलगांव (कर्नाटक) जिले की बैल-होंगल तहसील में पदयात्रा हुई और इसका दौरा हुआ। ६५० रु० की साहित्य-बिक्री हुई। 'भूदान' पत्र के ५१ ग्राहक बने, ५२ सर्वोदय मित्र तथा ५४ शान्ति-सैनिक हुए। इस तहसील में आगे के काम के लिए क्षेत्रीय समिति बनायी गयी। इसी तहसील के एक गोकाक तहसील में पूर्व-तैयारी की; ६ ग्रामदान हुए और ४० सर्वोदय-मित्र बने। इस तहसील में पदयात्रा चालू है। लोकयात्री बहनों ने ग्रामस्वराज्य कोष के लिए कडोली से ११ सितम्बर तक के लिए पदयात्रा शुरू की है। ५ हजार रुपये संग्रह का आश्वासन मिला।

—सदाशिव भावले

उत्तरप्रदेश में अब तक ३२,६७६ ग्रामदान एवं ८ जिलादान

उत्तरप्रदेश में ३१ मई तक प्रदेश के ५१ जिलों में कुल ३२,६७६ ग्राम, १८० प्रखण्ड और ८ जिले ग्रामदान का संकल्प कर ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए घोषणा कर चुके हैं। सबसे अधिक ग्रामदान गोरखपुर कमिश्नरी में हुए। प्रखण्डदान तथा जिलादान की संख्या वाराणसी कमिश्नरी में सबसे अधिक है। कमिश्नरीवार क्रमशः संख्या इस प्रकार है :

गोरखपुर मण्डल में ६०८५ ग्रामदान, ४६ प्रखण्डदान, १ जिलादान, वाराणसी मण्डल में ५९४७ ग्रामदान, ६० प्रखण्डदान, ३ जिलादान; आगरा मण्डल में ५१५८ ग्रामदान, २५ प्रखण्डदान, १ जिलादान, इलाहाबाद मण्डल में ४६२९ ग्रामदान, १३ प्रखण्डदान, १ जिलादान; फैजाबाद मण्डल में २५११ ग्रामदान, २० प्रखण्डदान, १ जिलादान, रुहेलखण्ड मंडल में ११२४ ग्रामदान, १ प्रखण्डदान; मेरठ मंडल में १७०५ ग्रामदान, २ प्रखण्डदान, लखनऊ मण्डल में १७४२ ग्रामदान, गढ़वाल मंडल में १६६७ ग्रामदान, ९ प्रखण्डदान, १ जिलादान, कुमाऊँ मंडल में ९८७ ग्रामदान, ४ प्रखण्डदान और झाँसी मंडल में १७३ ग्रामदान हुए हैं। मई महीने में सिर्फ ३३५ ग्रामदान और ६ प्रखंडदान हुए हैं।

—कपिल भाई,
संयोजक, उ० प्र० ग्रामदान-प्राप्ति समिति
कैसरबाग, लखनऊ-१

हरदोई जिले में एक हजार कार्यकर्ताओं की ग्रामदान-यात्रा

६ जुलाई से १० जुलाई तक ४-५ जुलाई को हुए शिविर में प्रशिक्षण प्राप्त किये हुए शिविरार्थी हरदोई जिले के शेष ग्रामों में ग्रामस्वराज्य का विचार लेकर जायेंगे तथा ग्रामदान के सामूहिक घोषणा-पत्र पर गाँववालों की सम्मति प्राप्त करेंगे। इस अभियान का मार्गदर्शन श्री० दयानिधि पटनायक करेंगे।

भूदान-यज्ञ ६-७-'७० लाइसेंस नं० ए ३७ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १७४

ज्ञातव्य है कि जिले भर में १९०० राजस्व गांव हैं। २४ जनवरी से १० फरवरी '७० तक इस जिले के चारों तहसीलों के सभी गांवों—सण्डीला, बिलग्राम, शाहाबाद और हरदोई—में एकसाथ ग्रामदान-अभियान चलाया गया था, जिसमें ११२९ ग्रामदान प्राप्त हुए थे। बचे हुए गांवों का ग्रामदान प्राप्त करने के लिए इस बार अभियान चलाया जा रहा है।

शिविर और अभियान को सफल बनाने के लिए सर्वश्री मोहनलाल वर्मा, मंत्री स्वराज्य आश्रम, शंकरनाथ गुप्त, वीरेन्द्रनाथ मिश्र, विश्वम्भरनाथ मिश्र और योगेन्द्रनाथ मिश्र पूर्णरूप से सक्रिय हैं।

ग्रामस्वराज्य को असली रूप देने के लिए जिलादान-पूर्ति हेतु, जिला गांधी-शताब्दी-समिति ने छः हजार रुपये प्रदान किये हैं। यह शिविर पूरे जिले भर का होगा, जिसमें ग्रामस्वराज्य की दिशा में जाने के लिए विशेषकर ग्रामीण जन तथा युवा वर्ग के सहयोग की अपेक्षा की गयी है।•

श्री चतुर्भुज पाठक मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ बोर्ड के अध्यक्ष मनोनीत

मध्यप्रदेश सरकार ने सर्व सेवा संघ की सलाह के अनुसार प्रदेश के सुप्रसिद्ध लोकसेवक श्री चतुर्भुज पाठक को मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ बोर्ड का अध्यक्ष मनोनीत किया है। यह स्थान श्री दादाभाई नाईक द्वारा व्यक्तिगत कारणों से इस्तीफा देने के कारण रिक्त हुआ था।

एक अन्य जानकारी के अनुसार बोर्ड का कार्यालय भोपाल में ११०।३ माता-मंदिरनगर से हटकर ४९।३१ दक्षिण साक्षा टोपेनगर में चला गया है। बोर्ड के मंत्रीजी की सूचनानुसार समस्त पत्र-व्यवहार नये पते पर ही किया जाय।

ग्रामस्वराज्य-कोष

घर-घर से संग्रह का अभियान

नयी दिल्ली। आन्ध्र प्रदेश के कार्यकर्ताओं ने बड़े उत्साह से घर-घर जाकर चन्दा उगाहने का अभियान प्रारम्भ किया है।

आन्ध्र प्रदेश एवं हरियाणा के राज्यपाल अपने-अपने प्रदेश की ग्रामस्वराज्य-कोष समिति के संरक्षक हैं। आन्ध्र प्रदेश के राज्यपाल ने कोष में ७५० रु० प्रदान किये हैं तथा वहां के मुख्यमंत्री श्री ब्रह्मानन्द रेड्डी ने ५०० रु० का दान दिया है।

हरियाणा में राज्यपाल ने १००० रु० दान दिया है। वहां श्री भीमसेन सच्चर ग्रामस्वराज्य-कोष समिति के अध्यक्ष बने हैं।•

कोष संग्रह में महाराष्ट्र सबसे आगे

महाराष्ट्र में अभी तक अलग-अलग जिलों से ६०,००० रु० (बम्बई नगर सहित) के आश्वासन मिले हैं। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने ३०११ रु० का अनुदान दिया है जिसमें व्यक्तिगत चन्दा ११०० रु० से ५१ रु० तक है।

महाराष्ट्र में नगरनिगम व नगर-पालिकाएं आय का २ प्रतिशत सार्वजनिक कार्य में दे सकती हैं। स्वायत्त-शासन विभाग ने नगरनिगम व नगरपालिका के नाम एक परिपत्र में उन्हें अनुमति दी है कि वे चाहें तो कोष में दान दे सकते हैं।

इन्दौर नगर में अभियान के प्रथम सप्ताह में ही ४०,००० रु० संग्रह कर लिये गये। इन्दौर के निवासियों के लिए विशेष अपील प्रसारित की गयी है। कोष के प्रतिनिधि के अनुसार रायपुर दुर्ग व बस्तर से लगभग डेढ़ लाख रु० प्राप्त होने की आशा है।•

गांधी-शान्ति-प्रतिष्ठान का योग

श्री राधाकृष्ण, मंत्री, गांधी-शान्ति-प्रतिष्ठान, ने केन्द्रों के संयोजकों के नाम एक परिपत्र में कोष को सफल बनाने में सहयोग देने को एवं केन्द्रवार १०,००० रु० लक्ष्यांक निर्धारित करने को कहा है।

केन्द्रीय कार्यालय में उपलब्ध सूचना के अनुसार अभी तक संग्रह लगभग एक लाख इक्कीस हजार हुआ है, जिसमें महाराष्ट्र के ६०,००० रु० इन्दौर नगर के (म० प्र०) ४०,००० रु०, असम के ११,५०० रु०, (लगभग), आन्ध्र प्रदेश के ५,७६२ रु०, गुजरात के ३,००० रु० हरियाणा के १,००० रुपये सम्मिलित हैं।•

ग्रामस्वराज्य-कोष-सम्बन्धी प्रचार साहित्य

ग्रामस्वराज्य-कोष की केन्द्रीय समिति ने कई प्रान्तों की मांग को देखते हुए नीचे लिखे अनुसार कुछ प्रचार साहित्य तैयार करवाया है।

१ दीवार पर लगाने के पोस्टर,

२. विनोबाजी के जीवन और कार्य के सम्बन्ध में फोल्डर,

३ ग्रामदान ग्रामस्वराज्य के बारे में फोल्डर,

४ विनोबाजी के २ ३ प्रकार के चित्रकार्ड।

इन चीजों की कुछ नमूने की प्रतियां केन्द्र हर प्रान्त को भेजेगा। पर अतिरिक्त प्रतियां लागत मूल्य पर ही मिल सकेंगी। अब अंग्रेजी या हिन्दी, किस भाषा की कौनसी चीज की कितनी प्रतियां चाहिए, इसकी सूचना केन्द्रीय ग्रामस्वराज्य-कोष, गांधी-स्मारक निधि, राजघाट, नयी दिल्ली-१ को भिजवा दें। चित्र-कार्ड पर बिक्री-मूल्य छपा रहेगा।•

सारण जिले में कोष-संग्रह

जिला के सर्वदलीय बैठक में जिला ग्रामस्वराज्य-कोष-समिति का गठन सर्व-सम्मति से किया गया है। इस जिले से १ लाख रुपये संग्रह करने का निश्चय किया गया है।•

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ४१
सोमवार १३ जुलाई, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ५४२८५

हमारी परीक्षा है बिहार में

ग्रामदान के बाद दोहरायें जो फर्क यह होगा। गांव सरकार-मुक्त होगा। लोग लगान सरकार को नहीं देंगे, ग्रामसभा को देंगे।

भारत का प्रथम ग्रामदान उत्तरप्रदेश में हुआ। कानून ने उसे मान्य नहीं किया था। गांववालों ने मुझसे पूछा तो मैंने कहा, 'आप लोगों ने सरकार को लिख दिया है कि हमने ग्रामदान किया है। अब सरकार को व्यक्तिगत तौर पर लगान न दी जाय।" वे गांव के लोग सत्याग्रह करेंगे, ऐसा जाहिर हुआ था। उस वक्त पंतजी मुझसे मिलने आये थे। मैंने उनसे कहा, 'लगान ग्रामसभा को देने से सरकार का काम आसान हो जाता है।" पंतजी को बात जंची। उन्होंने तुरन्त आर्डर निकाल दिया।

अब हमारी परीक्षा है बिहार में। आज हिन्दुस्तान को खतरा है बंगाल से। बिहार का काम पूर्ण होगा, तो बंगाल उस दिशा में जायेगा। नहीं तो बिहार के हर गांव में नक्सलवाद फैलेगा। वह शुरू भी हो गया है। इसीलिए जयप्रकाशजी वहां दौड़े आये, हिमालय में अपना आराम का कार्यक्रम रद्द करके। दोनों—पति पत्नी—वहां गांव-गांव घूम रहे हैं। काम पूर्ण किये बगैर आगे नहीं बढ़ेंगे। नक्सलवादियों ने वहां मालिकों का कतल शुरू कर दिया है। कभी जयप्रकाशजी का भी कतल हो जाये तो आश्चर्य की बात नहीं। तेलंगाना में हम घूमते थे तब जैसी हालत थी वैसी ही हालत वहां आज है। इस साल काम नहीं होता है तो अगले साल नक्सलवाद जोर पकड़ेगा।

राजनीति में लोगों का विश्वास रहा नहीं। कांग्रेस टूट गयी है। कल अगर केन्द्र में भी यह हालत हो जाये संसद की, कि तीन महीने में इस पार्टी की सरकार तीन महीने में दूसरी, तो इस तरह जो अस्थिरता आयेगी उसमें सिवाय राष्ट्रपति के शासन के और कोई उपाय रहेगा नहीं। इससे देश को बचाना है, तो हर गांव में ग्राम-स्वराज्य की स्थापना होनी चाहिए। सरकार का गांव में कोई दखल नहीं।

दलमुक्त सरकार और सरकारमुक्त जनता, यह हमें १९७२ तक करना चाहिए।

(२-७-'७० को ब्रह्मविद्या मन्दिर, पवनार में श्री राधाकृष्ण बजाज से हुई चर्चा का एक अंश)

श्री संपादकजी,
'भूदान-यज्ञ', साप्ताहिक

श्री आर्थर कोसलर ने गांधीजी के जीवन के प्रयोगों, कार्यक्रमों और मानवीय आदर्शों का जो मजाक उड़ाया था, उसका आचार्य कृपालानी द्वारा दिया गया बहुत उपयुक्त उत्तर पढ़ने को मिला। इस लेख से पता चलता है कि विदेशों में भारत की, और भारत के मूर्धन्य नेताओं की गलत तस्वीर पेश करने का कितना शौक है। यही बात कमोवेश भारत में भी है। फर्क इतना ही है कि भारत के वे लेखक किसी विदेशी की नहीं, अपितु भारत के ही गलत चित्र पेश करने में अपनी लेखनी का कौशल दिखाया करते हैं। कोसलर का लेख तो एक बानगीमात्र है, ऐसे ही, न जाने कितने लोग भारत या भारत जैसे विकासशील अन्य देशों के बारे में मतिभ्रम पैदा करनेवाले लेख लिखकर 'लेखक' बनने की अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति वहां कर रहे होंगे।

भारत के जो लोग विदेशों में हैं, उनको चाहिए कि भारत के बारे में भ्रमोत्पादक लेख लिखनेवालों से व्यक्तिगत तौर पर मिलकर उन्हें सही तथ्यों की जानकारी करायें और उनके लेख की कतरनों को आचार्य कृपालानी, श्री जयप्रकाश नारायण, श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, श्री जैनेन्द्र, दादा धर्माधिकारी, श्री काका कालेलकर सरीखे लोगों के पास भेजकर उसका सही उत्तर भी प्रयास करके वहां के अखबारों में प्रकाशित करायें।

इसका क्या प्रभाव पड़ेगा कि लेख तो विदेश के अखबारों में छपा, उससे वहां जितनी गलतफहमी फैल सकती थी वह तो फैल गयी, और अब उसका उत्तर भारत के अखबारों में (सिर्फ एकाध में ही) छपे तो विदेशियों के भ्रम का निवारण तो नहीं हो पायेगा। भारत के अखबार विदेशों में जाते ही कितने हैं? और जो जाते भी हैं उनमें सिवाय कर्ज की मांग और विदेशी राजनयिकों की प्रशंसा के "आज के भारत" की जानकारी छपती ही कहां है?

—कपिल अवस्थी

× × ×

'भूदान-यज्ञ', वर्ष १६, अंक ३८, सोमवार, २२ जून, ७० के पृष्ठ ५९५ पर गांधीजी के सम्बन्ध में कोसलर का मत और कृपालानी का उत्तर प्रकाशित हुआ है।

इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि गांधीजी एक धर्म-निष्ठ, तत्पर और असीम-शक्तिवाले ज्ञानी पुरुष थे, जिन्होंने निरन्तर अपने को एक महान वीर की तरह धर्म के मार्ग पर बढ़ाने का प्रयास किया, और सत्य का पालन किया। वास्तविकता यह है कि वह एक जितेन्द्रिय और स्थितप्रज्ञ सिद्ध पुरुष की अवस्था प्राप्त करने की स्थिति में आ गये थे, जहां मनुष्य को आत्म ज्ञान की प्राप्ति सम्भव हो जाती है, और फिर वह अपने को देह से अलग करके संसार की गतिविधियों पर निर्णय देने की अवस्था को प्राप्त कर लेता है। उसके लिए आत्मज्ञान और शरीर के गुण, ये दोनों अलग-अलग चीजें हो जाती हैं। और जब वह अपने को शरीर से अलग कर लेता है, तो उसे किसी भी प्रकार के प्रयोग की छूट हो जाती है, क्योंकि वह शोक और मोह से परे हो जाता है। वास्तविकता यह है कि वह स्वयं में कुछ नहीं रहता है, और उसे इस शरीर में ही सर्वोच्च स्थिति, जिसे निर्वाण कहा जाता है, प्राप्त हो जाती है।

गांधीजी के बारे में यह साफ है कि वह सन्यासावस्था को प्राप्त हो गये थे और इस भौतिक जगत की परिस्थितियों का उनके ऊपर कोई असर नहीं पड़ता था। इसीलिए वह सारी बाह्य परिस्थितियों के विपरीत होते हुए भी अन्त तक अहिंसा पर डटे रहे, और जैसा वह कहा करते थे कि 'अहिंसा को हिंसा के मुंह में झोंक देना ही अहिंसा की सफलता है'—अपने को उन्होंने हिंसा में झोंक दिया। ऐसा पुरुष जब कोई प्रयोग करता है तो उसका अपना कुछ नहीं रहता। वह बिलकुल तटस्थ और मोह-रहित होकर ही प्रयोग करता है, और वह उस ऊंचाई पर पहुंच जाता है, जो साधारण पुरुष की समझ से परे है। उसे हम पूर्ण ज्ञानी और पूर्ण भक्त की संज्ञा से सम्बोधित करते हैं। मुझे आश्चर्य होता है कि कोसलर, जो कुल मिलाकर एक साधारण व्यक्ति ही हैं, गांधीजी के बारे में बिना पूरी बात समझे ही कैसे टीका-टिप्पणी कर गये? इससे अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि कैसे भारतीय लोग उनके लेखों से प्रभावित हो सके!

दादा कृपालानी का उत्तर अत्यन्त सामयिक और ठीक है लेकिन उसे विदेशी अंग्रेजी अखबारों में देने की जरूरत थी, ताकि कोसलर के लेख से विदेशों में जो गलतफहमी होती वह दूर हो जाती। भारत में तो कोसलर के विचार को प्रकाश में लाने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि भारतीय अपनी पुरानी परम्परा के कारण यौन सम्बन्धी विचार से घृणा करते हैं। ये लोग अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य आदि की भक्ति-सिक्त धारा में अपने को सराबोर रखकर किसी सीमा तक अलिप्त तो रह सकते हैं, लेकिन देह से अलग करके आत्मज्ञान प्राप्त करने की स्थिति बिरले सन्यासी या ज्ञानी को ही प्राप्त होती है।

—शिवमूर्ति

[पत्र-लेखकों और पाठकों को यह जानकर खुशी होगी कि श्री कोसलर की आलोचना का उत्तर आचार्य कृपालानी ने एक प्रमुख अन्तरराष्ट्रीय ख्याति की अंग्रेजी पत्रिका की मांग पर लिखा था, उस मूल अंग्रेजी लेख का अनुवाद हमने 'भूदान यज्ञ' में धारावाहिक प्रकाशित किया था। विचार और सत्य शोधन के लिए आलोचनाओं को समझना, उन पर सामूहिक चर्चा और तटस्थ चिंतन करना एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया मानी गयी है। ऐसी आलोचनाओं और उनके उत्तरों को प्रकाशित करने के पीछे हमारा यही दृष्टिकोण होता है।—सं०]

बैलेंस-शीट

बीस बरसों में हम कहाँ पहुँचे हैं ?

मनुष्य की यात्रा अनन्त है, किन्तु आज के जमाने में किसी देश के जीवन में बीस बरस कम नहीं है। इतने बरसों तक 'भूदानयज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति' की दिशा में चलने के बाद हमें जानना चाहिए कि सचमुच हम हैं कहाँ। हमें अपनी 'बैलेंस-शीट' बनानी चाहिए। बैलेंस-शीट प्रबन्ध-समिति को बनानी चाहिए, अच्छी तरह छानबीन कर बनानी चाहिए, और सर्व सेवा संघ का विशेष अधिवेशन बुलाकर उसके सामने पेश करनी चाहिए। जे० पी० के कदम के बाद तो यह काम फौरन जरूरी हो गया है। इस कदम के पहिले हम अपने आन्दोलन को आँकड़ों में, केवल आँकड़ों में, देख सकते थे, और हमने उसी तरह देखा भी, लेकिन अब हम आन्दोलन को खुली आँखों से देखना चाहते हैं; हम देखना चाहिए भी। जे० पी० ने खुद गाँव में बैठकर—एक आत्मनिक संकल्प के साथ बैठकर—आन्दोलन को ऐसे स्थल पर पहुँचा दिया है जिसके एक ओर विविध, व्यापक, पारंपरिक समाज है, और दूसरी ओर उसकी अनगिनत समस्याएँ हैं। क्रान्तियों के परिचित रास्तों को छोड़कर जे० पी० ग्रामदान की डोरी पकड़कर समस्याओं के गहरे कुएँ में उतर चुके हैं। वही बता सकते हैं कि कुआँ कितना गहरा है, और डोरी कितनी बड़ी। वही जानते हैं कि रस्सी कुएँ की गहराई तक पहुँचती है या ऊपर ही रह जाती है।

पिछले वर्षों में हम जब-जब मिले हैं हमने जन-आन्दोलन की बात की है, लेकिन हमेशा हम बात का भात खाकर उठ गये हैं। पूरी बैलेंस-शीट हमने कभी बनायी नहीं, जब कि वह हर साल बनने की चीज थी। हर साल क्यों, साल में दो बार बनाना भी ज्यादा न होता। अपने काम के दौरान हमने कितनी ही धारणाएँ बनायीं, कितनी ही मान्यताएँ विकसित कीं, जिनका आज कोई आधार नहीं दिखाई देता। हम स्वयं अविरोधी थे। हमारा आन्दोलन अविरोधी था। अपने अविरोध के साथ-साथ दूसरों के अविरोध को हमने उनकी अनुकूलता मान ली। हमने अविरोध के चश्मे से देखा तो हर एक—शासक, अधिकारी, किसान, भूमिवान, भूमिहीन, सब—हमारे लिए प्यार की थाली सजाये हुए खड़े दीख पड़े। जिस किसी रास्ते हम निकले हमारी झोली में लोगों ने इतना प्यार भर दिया कि प्यार के भार से हम दब गये। कभी हमने इस बात की जरूरत नहीं समझी कि चारों ओर से अनायास मिलनेवाले प्यार को जरा परख तो कर लें।

हमने कामना की जन-आन्दोलन की, कल्पना की जन-आन्दोलन की, लेकिन अपने आन्दोलन को जन की दृष्टि से भरपूर हमने देखा नहीं। भाषा हम सौम्य, सौम्यतर, सौम्यतम को बोलते रहे, लेकिन कभी हमने बैठकर यह तय नहीं किया कि क्रान्ति की किस भूमिका में क्या है सौम्य, क्या है सौम्यतर, और क्या होगा सौम्यतम ? और, किस स्थिति में कौन पद्धति लागू होगी, और उसे लागू करने के माध्यम (इन्स्ट्रूमेन्ट्स) क्या होंगे ?

वर्ण और वर्ग की बात छोड़कर हमने सर्व की बात कही। बात बहुत अच्छी थी, बहुत ऊँची थी, इस जमाने की थी। लेकिन जिन ग्रामीण क्षेत्रों में हमने इतने वर्ष काम किया, जहाँ हमने लाखों लोगों की लिखित सम्मति प्राप्त की, क्या वहाँ जाकर हमने यह भी देखा कि हमारे आन्दोलन की प्रेरणा और प्रक्रिया से कितने ऐसे व्यक्ति निकले हैं, और कितनी ऐसी ग्रामसभाएँ बनी हैं जो वर्ण और वर्ग की बात छोड़कर 'सर्व' की बात कहें। बिना मालिक-मजदूर के बीच निडर होकर पुल बननेवाली शक्तियों (ब्रिज-पर्सनेलिटीज) के 'सर्व' का आन्दोलन किस माध्यम से आगे बढ़ेगा ? भूदान ने हमें एक मौका दिया था। दाता-आदाता के बीच हम चाहते तो पुल बना सकते थे, और उनमें से पुल बनने-वाले व्यक्तित्व निकाल सकते थे, लेकिन वह मौका हमने प्रमाद और नासमझी में गँवा दिया। भूदान या तो खालिस दान—संविभाग नहीं—होकर रह गया, या बेदखली की हालत में मुकदमेबाजी का विषय बन गया। ग्रामदान भी इस दिशा में अभी कुछ खास नहीं कर सका है। जे० पी० मुजफ्फरपुर में ग्रामदान के जरिये पर मालिक-मजदूर को जोड़नेवाला पुल बनाने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन उन्हें ग्रामदान को पहले अक्षर से लिखना शुरू करना पड़ रहा है। प्रश्न समय का है, साथी का है, साधन का है। इन सबका अभाव है। दूसरी ओर वर्णों में सामाजिक-सांस्कृतिक तथा वर्गों में आर्थिक ध्रुवीकरण बहुत आगे बढ़ चुका है। प्रबल प्रवाह के विरुद्ध लड़ना, और लड़कर विजयी होना, अंतिम और आत्यंतिक पुरुषार्थ का काम है।

वर्ग-संघर्ष नग्न हिंसा है। हम हिंसा को नहीं मानते, वर्ग-संघर्ष को नहीं मानते। हम नहीं मानते कि वर्ग संघर्ष से कभी समाज वर्ग-मुक्त हो सकता है। अपनी परिभाषा में हमने वर्ग-संघर्ष को क्रान्ति विरोधी माना है। लेकिन क्या हिंसा का अभाव होना अहिंसा के मान्य हो जाने के लिए काफी है ? क्या हिंसा न करने से ही यह अर्थ निकलता है कि हमने समाज के मूल अन्तर्वि-रोध (बेसिक कान्ट्रैडिक्शन) को पहचान लिया है, और पहचान-कर उसे हल करने के लिए हमने क्रान्तिकारी अहिंसा की शक्ति विकसित करने के लिए जो कुछ करना चाहिए था कर लिया है ? या कहीं ऐसा तो नहीं हुआ कि हम क्रान्ति का सरलीकरण करने में ही लगे रहे, और स्कूल के विद्यार्थियों की तरह 'शार्ट कट' ढूँढ़ते रहे ?

हमारा आन्दोलन व्यक्ति से शुरू हुआ था। अवश्य उसकी प्रेरणा परिस्थिति में से निकली थी। लेकिन क्रान्ति के लिए व्यक्ति की कल्पना और परिस्थिति की प्रेरणा पर्याप्त नहीं है जब तक कि इनका संयोग समाज की चेतना से न हो जाय।→

हिंसा की परिस्थिति और अहिंसा का संदर्भ

•रोहित मेहता

हिंसा की समस्या सिर्फ भारत की ही नहीं है, यह समस्या विश्वव्यापी है। जब-तक हम इस समस्या का हल विश्व-समस्या के रूप में खोजने का प्रयत्न नहीं करेंगे, भारत की समस्या का निराकरण नहीं हो सकेगा। जो कुछ हो चुका वह बहुत कम है, उसकी तुलना में जो कुछ होने जा रहा है।

हिंसा का निराकरण

नक्सलवादियों की समस्या एक बड़े रूप में हमारे सामने है। हमें इस समस्या के अहिंसक समाधान की दिशा में सोचना है, पर साथ ही यह सोचना है कि क्या अहिंसक प्रतिरोध का तात्पर्य बल के सामने आत्मसमर्पण है?

प्रतिरोध के दो रास्ते हो सकते हैं, एक तो समर्पण, दूसरा, हिंसा का बड़ी हिंसा से मुकाबला। अगर हमने हिंसा का बड़ी हिंसा-शक्ति से मुकाबला किया तो इस बड़ी शक्ति का और बड़ी हिंसक-शक्ति मुकाबला करेगी।-हिंसक संगठनों की एक लम्बी श्रृङ्खला होती है। समता, स्वतन्त्रता और न्याय के सिद्धान्तों पर हुई फ्रांस की क्रान्ति ने नेपोलियन दिया। अब तक का अनुभव और इतिहास बताता है कि हिंसा का यह रास्ता उपयोगी नहीं है। समर्पण का मार्ग कायरता का मार्ग है। दोनों ही रास्ते उपयोगी नहीं हैं। अगर हम कोई तीसरा मार्ग ढूँढ़ने में समर्थ हो सके, तो उससे न सिर्फ भारत की समस्या का हल निकलेगा, बल्कि विश्व की समस्या का समाधान भी हो सकेगा।

स्थिति बहुत जटिल है। आज चारों ओर हिंसा का वातावरण व्याप्त है। लोग हिंसा की भाषा बोल रहे हैं। राजदूतों की हत्या और उनके अपहरण, विमानों को भगा ले जाने की घटना, आम बात हो गयी है। विद्रोह ने तरह-तरह के रूप धारण कर लिये हैं। पर सारे विद्रोह की बुनियाद एक है। सारे विद्रोह कुंठा की उपज हैं। पूर्व और पश्चिम में उनके स्वरूपों में भिन्नता है। पूर्व का विद्रोह अत्यधिक गरीबी के कारण है, जब कि पश्चिम के विद्रोह में अत्यधिक सम्पन्नता कारण है। स्वीडन के तरुणों का यह नारा कि–'सम्पन्नता से हमें बचाओ' पश्चिम की अत्यधिक सम्पन्नता का द्योतक है। बड़ी संख्या में हिप्पी लोग पश्चिम छोड़-कर भारत आ रहे हैं। वे कहते हैं कि हम किसी चीज की खोज में हैं, जो हमें पश्चिम में नहीं, भारत में ही मिल सकती है। हालांकि हम स्वयं नहीं जानते कि वह चीज क्या है।

वर्तमान का विद्रोह और भविष्य की सभ्यता

हाल ही के कुछ वर्षों में विश्व में जो कुछ हुआ उसे हमें नजरअन्दाज नहीं करना चाहिए। फ्रांस, इंग्लैंड और इन्डो-नेशिया आदि देशों में हुए विद्रोहों को भारत की समस्या से अलग रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। वह पूरी एक ही समस्या है। हमें अपने दिमाग के दायरे को विश्व तक बढ़ाना होगा और समस्या को विश्व-समस्या के रूप में ग्रहण करना होगा। आज जो चारों तरफ तरुणों का विद्रोह हम देख रहे हैं, मैं इसे एक अच्छा संकेत मानता हूँ। इस विद्रोह से लगता है, कुछ चल रहा है, कुछ हो सकता है। यह विद्रोह तरुणाई की जागरूकता का परि-चायक है। इस विद्रोह से तरुणों का तारुण्य प्रकट हो रहा है। इस विद्रोह का भविष्य की सभ्यता से गहरा सम्बन्ध है। इस विद्रोह को यदि विधायक दिशा दी जा सके तो बहुत बड़ा काम होगा। अतः आज की परिस्थिति में रचनात्मक विचार की बहुत बड़ी आवश्यकता है।

अहिंसा, लोकतन्त्र और शान्ति, तीनों का एक-दूसरे से सम्बन्ध है। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या आज भारत में लोकतन्त्र है? भारत में लोकतन्त्र अभी आना बाकी है। भारत में लोकतन्त्र नहीं है। और, भारत ही क्या, लोकतन्त्र की मातृभूमि इंग्लैंड और अमेरिका में भी लोकतन्त्र नहीं है। लिंकन ने लोकतन्त्र की परिभाषा में लोकतन्त्र को जनता का, जनता के द्वारा और जनता के लिए राज्य बताया है। परन्तु आज लोकतन्त्र कुछ लोगों का, कुछ लोगों द्वारा और कुछ लोगों के लिए ही राज्य है।

अहिंसा के बिना लोकतन्त्र की कल्पना व्यर्थ है और दोनों के बिना शान्ति की। अहिंसा का सम्बन्ध केवल शारीरिक अहिंसा से नहीं है। वह कुछ ज्यादा धनात्मक है। अगर हम अहिंसा के अर्थ को संकुचित कर देंगे तो हम लोकतन्त्र और शान्ति के सन्दर्भ में विचार नहीं कर पायेंगे।

सच्चे अहिंसक की मनोभूमिका

वास्तव में यदि इस समय १••

→वही अभी नहीं हुआ है। हमने सोचा था कि आन्दोलन जिस तरह व्यक्ति से संस्थाओं तक पहुँचा, उसी तरह संस्थाओं की गोद में निकलकर व्यापक समाज में पहुँचेगा, लेकिन हमारा सोचना अभी सही नहीं निकला है। हम सोचें कि क्यों नहीं सही निकला है!

आज हमारी शान्ति वस्तुतः कुछ इने-गिने व्यक्तियों के इर्द-गिर्द सिमट गयी है। कम-से-कम बिहार में ऐसा ही है। लगता नहीं कि बिहार के बाहर भी साथियों ने बिहार के अनुभव से कुछ सीखा है। इस तथ्य को स्वीकार करना चाहिए, और स्वीकार कर आन्दोलन की व्यूह-रचना नये सिरे से बनानी चाहिए। शायद समाज हमारी शान्ति को पहचानने के लिए 'जिन्दा शहीदों' की प्रतीक्षा कर रहा है।

शान्ति इस जमाने में संघर्ष मुक्त तो हो सकती है, लेकिन शहीद-मुक्त होने का समय अभी नहीं आया है।•

आदमी भी सच्चे अहिंसक विचारवाले हों, तो बड़ा परिवर्तन किया जा सकता है। सच्चे अहिंसक होने के लिए हमें पूर्वाग्रहों से मुक्त होना होगा। हमें यह भूलना होगा कि हम कुछ जानते हैं। प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात कहता है : 'वह जो यह जानता है कि वह कुछ नहीं जानता, वही बुद्धिमान है।' तभी हमारे लिए यह सम्भव होगा कि हिंसा के प्रतिरोध के लिए हिंसा और समर्पण के रास्ते के अलावा कोई तीसरा मार्ग ढूँढ़ सकें।

गांधीजी की तीन देनें बड़ी महत्त्वपूर्ण हैं—सत्य, अहिंसा और अपरिग्रह। परन्तु हमने सत्य और अहिंसा पर ही जोर दिया और अपरिग्रह को छोड़ दिया। वास्तव में बिना अपरिग्रह के अहिंसा को समझा ही नहीं जा सकता। अपरिग्रह का अनाग्रह से ज्यादा सम्बन्ध है, बजाय भौतिक वस्तुओं के बहिष्कार के। आग्रह की यह अवस्था कि 'यह मेरा विचार, यह मेरा वाद, वह मेरा' ही हिंसा का मार्ग है। इस स्थिति में हम कभी तीसरे रास्ते की खोज नहीं कर पायेंगे। आज चारों तरफ से समाजवाद की आवाज उठ रही है। सभी राजनीतिक दल समाजवाद का नारा लगा रहे हैं। पर वास्तव में समाजवाद है क्या? समाजवाद के इस नारे में व्यक्ति छूट गया है और आग्रह आ गया है। आज तो मानसिक स्तर पर तैयार अपरिग्रही लोगों की जरूरत है, जो समस्याओं के हल ढूँढ़ सकें। मेरी दिलचस्पी समस्याओं में नहीं है। मेरी दिलचस्पी समस्याओं के हल ढूँढ़ने में है। 'मैं सही हूँ और तू गलत है'—यही सारी समस्या की जड़ है।

युवकों में शक्ति भरपूर है, पर उनके पास दिशा नहीं है। हम चाहते हैं, युवकों की शक्ति बँटे नहीं। सारी शक्ति किसी एक दिशा में लगे। वर्तमान युग में विज्ञान ने बड़ी प्रगति की है। विज्ञान ने अपनी प्रगति से गति पर नियंत्रण पा लिया है। गति हमारी सबसे बड़ी उपलब्धि है। प्रकाश की गति से भी अब तो चल सकना सम्भव हो सकेगा। पर हमें यह सोचना है कि इतनी तीव्र गति आखिर है किस-लिए? क्या हमें दिशा ज्ञात है? आज तो हम विज्ञान पर इतने आश्रित हो गये हैं कि अपनी सब समस्याओं के हल उससे पूछते हैं। 'कम्प्यूटर' से कहते हैं कि तुम हमारी समस्या हल करो। आदमी का तो अस्तित्व ही गुम हो गया है। उसका दर्जा *कम हो गया है। समस्याओं के हल आदमी* को ही ढूँढ़ने होंगे। और ये वे आदमी होंगे जो अहिंसक समाज-रचना करेंगे, अपने अनाग्रह से, अपने मानसिक अपरिग्रह से।

रचनात्मक कार्यक्रमों का मनोविज्ञान

यह तो बात सिद्धान्त की हुई। अब प्रायोगिक स्तर पर किये जानेवाले कार्यक्रम पर विचार करना है। गांधीजी ने रचनात्मक कार्यक्रम देश के सामने रखा। आज हम रचनात्मक कार्यक्रमों को कर्मकाण्ड के रूप में ही ले रहे हैं। हमने उन रचनात्मक कार्यक्रमों के पीछे छुपे मनोविज्ञान को छोड़ दिया है। रचनात्मक कार्यक्रम इसलिए आज 'कर्मकाण्ड' भर रह गये हैं। अगर हम रचनात्मक कार्यक्रमों का मनोविज्ञान समझ जायें तो हमें अपनी समस्याओं के हल मिल सकते हैं। गांधीजी की महत्त्वपूर्ण देन रचनात्मक कार्यक्रम नहीं थे, उनकी महत्त्वपूर्ण देन थी—देश में आत्म-विश्वास का जागरण करना। अन्धेरे को कोसने के बजाय एक छोटे-से दीये का प्रकाश करना कहीं ज्यादा अच्छा है। हममें आज आत्म-विश्वास ही खत्म हो गया है। हर काम में हम सरकार के मुँह की ओर ताकते हैं। सरकारी आलोचना में व्यस्त रहते हैं, कि सरकार ने यह *नहीं किया, वह नहीं किया।* गांधी की सबसे बड़ी खूबी यही थी कि उनका सम्बन्ध कार्यक्रमों से ज्यादा मनोविज्ञान से रहता था। गांधी मनोविज्ञान को बहुत अच्छी तरह जानते थे। असहयोग-आन्दोलन को वापस लेने की उस समय आलोचना की गयी, पर गांधी देश के मनोविज्ञान को समझते थे, इसलिए उन्होंने आलोचनाओं की फिक्र नहीं की और आन्दोलन वापस ले लिया। आत्म विश्वास का जागरण गांधी की बहुत बड़ी देन थी। विनोबा जब लोकनीति की बात करते हैं, तब उसका मतलब लोगों में आत्म-विश्वास उत्पन्न करना ही होता है।

आज हमें व्यक्तिगत नेतृत्व की जरूरत नहीं है। सामूहिक नेतृत्व आज की माँग है। व्यक्तिगत नेतृत्व का युग गांधी का युग था। सामूहिक नेतृत्व भी ऐसा, जिसमें आत्म विश्वास हो। दुर्भाग्य से आज हर चीज का केन्द्रीयकरण और शहरीकरण होता जा रहा है। अप्रतिबन्धित शहरीकरण सारी समस्याओं का कारण है। अगर आत्म-विश्वास पैदा करने की दिशा में हमें आगे बढ़ना है तो विकेन्द्रित व्यवस्था को आत्मसात करना होगा। शहरीकरण और केन्द्रीयकरण के कारण व्यक्ति का व्यक्तित्व खो गया है। अगर हम चाहते हैं कि व्यक्ति जिन्दा रहे, तो केन्द्रित व्यवस्था को तोड़ना होगा और शहरीकरण को रोकना होगा। तब वह व्यक्ति समस्याओं का हल दे सकेगा।

विकेन्द्रित पद्धति में व्यवस्था छोटी-*छोटी इकाइयों में बँटेगी। नक्सलवादियों* की खूबी छोटी छोटी इकाइयों में बँटकर कार्य करने की है। छोटी-छोटी इकाइयों में ही शक्ति को मोड़ा जा सकेगा। तब यह आन्दोलन खुली आँखोंवाला होगा। इस आन्दोलन में तरुणों पर नैतिकता *थोपी नहीं जायेगी।*

तरुणों से विद्यालयों में सम्पर्क कर हम उनका साथ नहीं पा सकेंगे। हमें उनके ही क्षेत्र में जाकर व्यक्तिगत रूप से उनसे मिलना होगा, और उन्हें अपने क्षेत्र की समस्याओं के प्रति जाग्रत करने का प्रयत्न करना होगा। मेरी दृष्टि में यही तीसरा रास्ता होगा—समस्याओं के हल का।

हम जन-शक्ति को जगायें, परन्तु हमारा दिमाग मुक्त रहे, किसी आग्रह को समर्पित न हो।

वाराणसी : १७ जून '७०

प्रस्तुतकर्ता श्रवण कुमार गर्ग

मुकाबला साम्यवाद का या गरीबी का ?

•दादा धर्माधिकारी•

हम सर्वोदयवाले गरीबी के दुश्मन हैं, ऐसी मान्यता जनता में नहीं है। साम्यवादियों के बारे में ऐसी मान्यता है। उन लोगों ने अपने विषय में ऐसा वातावरण तैयार किया है। वे लोग आततायी हैं, अत्याचारी हैं, परन्तु वे जो कुछ करते हैं, सब गरीबी का नाश करने के लिए करते हैं ऐसी मान्यता जनता में बनी है। लेकिन हमारे बारे में जनता ऐसा नहीं मानती। फलस्वरूप हम लोग जो शान्ति और अहिंसा की बात करते हैं, वह मौजूदा परिस्थिति को बनाये रखने के लिए, 'जैसे थे' रखने के लिए करते हैं, ऐसी मान्यता समाज में बन रही है।

अहिंसा के स्वरूप की प्रतिक्रिया ऐसी क्यों हो रही है? सोचने की आवश्यकता है। क्या हमारी अहिंसा क्रान्तिकारी नहीं है? राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघवाले लाठी चाकू आदि चलाने की तालीम देते हैं, बम विस्फोट करते हैं तो उनकी हिंसा हिन्दुत्व की रक्षा के लिए है, नक्सलवादियों की हिंसा गरीबी मिटाने के लिए है, ऐसी मान्यता है।

आध्यात्मिक लोग गांधी को केवल संत समझे, क्योंकि गांधी सत्य-शोधक थे। मूलतः समाज-परिवर्तन की प्रेरणा उनके मन में नहीं थी, परन्तु सत्य प्राप्ति का वह एक साधन है, ऐसा वे समझते थे। अगर हमारी भूमिका समाज परिवर्तन की न रही होती तो हम श्रीअरविंद, रमण महर्षि या आनन्दमयी माता के साथ गए होते। परन्तु जो लोग गांधी के अनुयायी बने, वे समाज-परिवर्तन की दृष्टि से ही बने।

सेवापुरी-सम्मेलन में यह सवाल आचार्य कृपालानीजी ने उठाया था। तब विनोबाजी ने कहा था कि, 'मेरे मन में उन दोनों में कोई भेद नहीं है। समाज-परिवर्तन और ईश्वर-प्राप्ति, दोनों बातें मेरे मन में एक हैं।' जब कि साम्यवादियों को आत्म-उन्नति की कोई परवाह नहीं है। वे लोग तो समाज-परिवर्तन और क्रान्ति, दो ही बातें जानते हैं।

समाज-परिवर्तन की दो शक्तियाँ

अब, मैदान में मात्र दो ही शक्तियाँ रही हैं—नक्सलवादियों की, और हमारी। इसीलिए नक्सलवादी हम लोगों को सबसे बड़े प्रतिस्पर्धी समझ रहे हैं। शान्तिकार्य में अब हमारी उपेक्षा नहीं हो सकेगी। हम कितने भी असफल क्यों न रहे हों, किन्तु साम्यवादियों का सबसे बड़े प्रतिस्पर्धी विनोबा ही हैं।

हिंसा अनिवार्य न बने, ऐसा वर्ग-विहीन समाज बनाने का साम्यवादियों का संकल्प है, यानी कि मनुष्य को मनुष्य की हत्या न करनी पड़े, इस मूल्य को उन्होंने स्वीकार कर लिया है, क्योंकि मनुष्य अन्तिम मूल्य है। किसी भी परिस्थिति में मानव-हत्या शुभ कार्य नहीं है, परन्तु क्रान्ति की प्रक्रिया में वह अनिवार्य अनिष्ट (नेसेसरी इविल) है। ट्राटस्की की आत्मकथा का लेखक आइज़ेक डूचर 'मार्क्सिज्म एण्ड वायलेंस' पुस्तक में यह बात कहता है। लेकिन जोर किस पर अधिक दिया जाता है, 'अनिवार्य' पर या 'अनिष्ट' पर? यह सवाल पूछना चाहिए। हिंसा अनिवार्य हो, तब तो अनिवार्य पर ज्यादा जोर पड़ता है। इसीलिए सत्य की खोज के साथ समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में भी यह एक नयी खोज करने का काम हमारे जिम्मे आया है। वास्तव में शान्ति की प्रक्रिया में हिंसा की अनिवार्यता कम होती जा रही है। फिर भी हम कातरता प्रवाह में ऐसे बह रहे हैं कि, 'क्या करें? अहिंसा काम नहीं आ रही है। अहिंसा निष्फल हो रही है।' हम खोज असफलता को ही पराजय मान बैठे हैं, जिसके फलस्वरूप एक प्रकार का नैराश्य फैलता है। अहिंसा में गतिशीलता है। गांधी ने उसमें नयी दिशाएँ दिखायी हैं, नए मूल्य दाखिल किए हैं। यही गांधी की विशेषता है।

अहिंसा की मजबूरी

परन्तु उस अहिंसा ने वे वीरता पैदा हुई? अहिंसा वीरवृत्ति की पोषक बनी? लोकमान्य तिलक से लेकर आज तक के अहिंसा के तत्त्वज्ञान से, उपदेश से वीरवृत्ति का क्षय हुआ है ऐसा आक्षेप हो रहा है। बुद्ध और महावीर पर भी यही आक्षेप हुआ। क्या गांधी की अहिंसा के लिए भी ऐसा ही कहा जायगा? गांधी प्रतिकार पर बल देते थे, ऐसा मैं मानता हूँ। शरणागति वे स्वीकार नहीं करते थे। अन्याय-बुराई के आगे सिर झुकाना दोष है, ऐसा वे समझते थे। शस्त्रधारी में जो वीरता होती है, उससे कम वीरतावाला गांधी का कोई साथी नहीं मिलेगा। फिर भी पत्थर से ईंट नरम होती है ऐसा मानकर देश के कई लोगों ने, धनवानों ने, गांधी की अहिंसा को अपनाया। गांधी के किसी साथी या अनुयायी में ऐसी भावना नहीं थी। परन्तु जो लोग हथियारों के आगे झुक जाते थे, वे गांधी के आगे नहीं झुके। गांधी की बात को स्वीकार किया तो मानो गांधी पर एहसान, मेहरबानी की हो, ऐसा मानने लगे। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद भी गांधी—विनोबा के आन्दोलन को सहायता कर रहे हैं, तो उन पर कृपा कर रहे हैं ऐसा पूँजीपति मान बैठे हैं।

साम्यवादियों की ताकत

अब एक दूसरा पहलू भी देखें। बीच-बीच में सरकार साम्यवादियों की बात भी मान लेती है। बंगाल में तो पूरी राज्य-शक्ति साम्यवादियों के अनुसार चलने लगी है। फिर भी हम महरबानी पर रह रहे हैं ऐसा राज्यशक्ति ने नहीं माना, जब कि हमको सरकार की मदद मिलती है तो हम राज्याश्रित मान जाते हैं। उनको जो मदद मिलती है वह उनकी शक्ति के कारण मिल रही है या गरीब जनता और सरकार के बीच हम खाई कर रहे हैं इसलिए मिल रही है? कार्यकर्ताओं के लिए यह सोचनीय है। आज हर आदमी जो दान करता है वह यही समझता है कि महरबानी कर रहा है। सर्वोदय-जगत का उपजीव्य साधक जीवन-यापन के लिए दान है तो लोग उसका हिसाब पूछते हैं। इस दान के दा

व्यक्ति आज शान के साथ दान ले रहे हैं—एक बाबा वैरागी और दूसरा नक्सालवादी। वे अधिकारपूर्वक पैसा लेते हैं।' अगर आपने एक बार पुलिस को पाँच रुपये की रिश्वत देने की बात कही, तो फिर आप ईमानदारी के साथ उसको देंगे ही, क्योंकि उसमें सम्मति की शक्ति है। सम्मति में लोकशक्ति है। जिसकी खोज हम करनी है। अलबत्ता यह लोकशक्ति कार्यकर्ता शक्ति में से पैदा होगी। लोग डर के मारे हिंसक आन्दोलनों की मदद करते हैं। अहिंसक आन्दोलनों का ऐसा डर लोगों को नहीं लगता है, परन्तु आदर तो पैदा होना ही चाहिए।

साम्यवादी गरीबों के हिमायती, पक्षपाती माने जाते हैं। लेकिन हम नहीं माने जाते हैं, यह मेरा प्रकट चिन्तन है, निष्कर्ष नहीं। हम लोग नक्सालवाद को समस्या समझ रहे हैं, परन्तु समस्या नक्सालवाद या साम्यवाद नहीं है, समस्या गरीबी है। गरीबी के परिणामों का प्रतिकार साम्यवादी करते हैं। अगर साम्यवादी आपके प्रतिपक्षी हैं, तो साम्यवाद-विरोध यह आपका सिद्धान्त हो जायेगा। परन्तु आपका मुकाबला साम्यवाद के साथ नहीं, गरीबी के साथ है।

हिंसा अनिवार्य है, अपरिहार्य है, तो क्या आप उसे क्षम्य मानेंगे? हमारे आन्दोलन में संख्या बढ़ाने पर ज्यादा जोर दिया गया, उससे कुछ कमजोरियाँ भी आन्दोलन में आ गयीं। फिर भी आन्दोलन की गतिविधि के लिए बाह्य परिस्थिति कम जिम्मेवार नहीं है। लोकतांत्रिक साधनों के द्वारा क्रान्ति चाहनेवाले लोग अगर विनोबा के साथ में रहे होते तो नक्सालवाद आ नहीं सकता।

प्रयोग-सिद्ध विनोबा का रास्ता

एक जमाने में क्रान्ति का केन्द्र शहर था, आज गाँव है। बंगाल, आन्ध्र, और राजस्थान में जमीन का कब्जा लोग ले रहे हैं। अब जो क्रान्ति होगी वह गाँवों में भूमि के लिए होगी। माओ ने गाँवों से—जमीन से क्रान्ति का प्रारम्भ किया। हरेकृष्ण कोनार कहते हैं, 'भूमि से सम्बन्धित जितने भी कानून हैं, सबका अमल करना है। इसीलिए कानून के अनुसार जितनी भी जमीन मिलती हो, ले लो और उसमें जो रुकावट डाले, उसको बीच में आने का मौका ही न दो!' इसके लिए हमारे पास क्या उत्तर है? विनोबाजी ने उसका उत्तर प्रयोग करके सिद्ध कर दिया है। थोड़ी-सी भी जबरदस्ती किये बिना जमीन मिल सकती है, यह विनोबाजी ने व्यवहार में सिद्ध कर दिया है। कहते हैं कि विनोबाजी को निकम्मी, पथरीली जमीन मिली है। मैं कहता हूँ, १०० बीघे में से ७५ बीघा ऐसी खराब, निकम्मी, पथरीली जमीन मिली, परन्तु *२५ बीघा तो अच्छी मिली है न? इस* अनुपात में अन्य किसीको मिली है क्या? कानून से या कत्ल से भी अभी तक इस देश में किसीको भी इतनी जमीन हासिल हो सकी है? कच्छ सत्याग्रह हुआ। वह जमीन बिलकुल निकम्मी थी, फिर भी उसकी रक्षा करनेवाले सैनिकों को महावीर-चक्र प्रदान करते हैं। पत्थर या पहाड़वाली जमीन भी लोगों ने विनोबा को क्यों दी? उसके पास न रिवाल्वर है, न सत्ता, फिर भी उसको ही दी, क्योंकि *परिस्थिति का यही तकाजा था।* आज भी चारू बाबू बंगाल में जहाँ-जहाँ जाते हैं, भूमिहीन और भूमिवान सब सन्तोष की साँस ले रहे हैं। इसीलिए मैं कहता हूँ कि भूमि-समस्या को सुलझाने में जितना हमारा दोष है उतना ही दोष लोकतांत्रिक सिद्धान्तों में विश्वास रखनेवाले लोगों और पक्षों का भी है। तीसरी शक्ति—लोकशक्ति—के बिना इस समस्या को सुलझाने का और कोई मार्ग नहीं है। कहते हैं, बिहार में कागजी ग्रामदान हुए, झूठा संकल्प किया। किसको समझाने के लिए ऐसा किया गया? सद्गुण का ढोंग लोग क्यों करते हैं? क्योंकि उसमें शक्ति है। उस शक्ति की कीमत कम मत मानना।

नक्सालवाद की परिस्थिति

अब सोचना यह है कि वह काम पूरा क्यों नहीं हुआ? क्योंकि लोकतांत्रिक साधनों में विश्वास रखनेवाले लोग विनोबाजी के साथ साथ चले नहीं। जिन प्रान्तों में साम्यवादी शासन नहीं है, वहाँ की सरकार जमीन का वितरण क्यों नहीं कर देती? नक्सालवादियों की समस्या कानून या व्यवस्था की समस्या नहीं है। जैसे कि जयप्रकाशजी कहते हैं कि 'आपके हाथ में सत्ता है तो आप ही जमीन का बँटवारा कर दो न, फिर नक्सालवादियों के खड़े रहने की भूमिका ही खत्म हो जायगी।' साम्यवादियों का मुकाबला करने को सब कहते हैं। गोरे, एस० एम०, निजलिंगप्पा, इन्दिराजी, ये सब मिलकर जमीन का न्यायपूर्वक बँटवारा कर दें तो *नक्सालवादी किस भूमि पर टिकेंगे?*

पूर्णिया जिले में नक्षत्र मालाकार हैं। वे विनोबाजी के प्रति प्रेम और आदर रखते हैं। उन्होंने विनोबाजी से कहा कि 'अगर जमींदार आपकी बात स्वीकार कर लें और जमीन बाँट दें तब तो अच्छा है ही, लेकिन अगर वे भूमिहीनों को जमीन पर से बेदखल कर दें तो आप कुछ कीजिएगा, वरना मैं तो करूँगा ही।

विनोबाजी ने पूछा, 'क्या करोगे? उन लोगों को मारोगे?'

उन्होंने कहा, 'नहीं, संख्या के दबाव का उपयोग करूँगा। दस हजार लोगों को लेकर जमींदार के पास जाऊँगा।' तब बाबा ने कहा, 'मैं तुम्हारे रास्ते का रोड़ा नहीं बनूँगा।'

अब रजनीशजी का सवाल आता है। वे कहते हैं, 'आज हिंसा समाजमान्य है। हजारों गरीब स्त्रियों की इज्जत लूटी जा रही है, लाखों गरीबों की झोपड़ियाँ नष्ट कर दी जा रही हैं, हर रोज उनको धोखा दिया जा रहा है, यह समाजमान्य कायमी हिंसा है, जब कि दूसरी ओर संगठित हिंसा है। अगर ये दोनों विकल्प ही हमारे पास रहें तब तो जो पीड़ित हैं, दुःखी हैं, उनकी हिंसा भी क्षम्य मान लेंगे।' तब→

सामयिक चिन्तन

क्या सर्वोदय 'वाद' बनने से बचेगा ?

• प्रबोध चोकसी

विनोबा के सूक्ष्म प्रवेश के साथ सर्वोदय-आन्दोलन के समक्ष एक सूक्ष्म निर्णय का समय आ गया है। एक के बाद एक गांधी विनोबा जैसे दो-दो पर-द्रष्टा और कर्मयोगी उसे मिले हैं। अब तीसरा पारगामी द्रष्टा एकदम आयेगा ऐसी उम्मीद करना सही न होगा। अब तो यदि समर्थ भाष्यकार, टीकाकार, स्मृतिकार एवं विचारों को व्यवहार में मूर्त करनेवाले पुरुषार्थी व्यक्ति प्राप्त हों, तो वह परमेश्वर की कृपा माननी होगी।

किन्तु सर्वोदय अब क्या करेगा? द्रष्टाओं के विचारों को सुग्रथित करके किसी निश्चित वाद या विचारसरणि का रूप देगा, या उनका विश्व-विचार के साथ मुक्त संगम होने देगा? अनुभूति की गहन गुहा में एवं महान विचारों के संगम पर नये भाव-दर्शन पानेवाले ऋषि प्रकट होते हैं।

वाद और विचार का फर्क सर्वोदय-विचार में आचार्य दादा धर्माधिकारी द्वारा बिलकुल स्पष्ट कर दिया गया है। विचार नित्य परिवर्तन खोजता हुआ मुक्त सृजनशील प्रवाह है। वाद जमा हुआ, अपरिवर्तनशील विचार-शिला है। एक बहता पानी है, दूसरा बर्फ। एक जीवन है, दूसरा मरण। विचार मनुष्यों को मिलाता है, वाद लड़ाता है। वाद घातक शस्त्र है, विचार संजीवनी।

निरन्तर विचार-क्रांति

हम सर्वोदय-धारा में विचार की क्रांति को निरन्तर जारी रखते हैं या उसे वाद की सुखद भ्रांति में स्थिर कर देते हैं, इस ऐतिहासिक प्रश्न का सही उत्तर तो आज का अपना व्यवहार ही दे पायेगा। उसकी एक कठोर परीक्षा है। गांधी-विनोबा की किसी भी एक दो बातों में, विचारपूर्वक, अनुभवपूर्वक, नम्रतापूर्वक जब हम सुधार करेंगे, परिवर्तन करेंगे, उसका इन्कार भी करेंगे, तब सर्वोदय विचार को वाद में न जमने देने का श्रेय हमें प्राप्त होगा।

सुना है, अंध-अनुकरण और जड़ अर्थघटन से त्रस्त कार्ल मार्क्स ने कभी कहा था : "मैं खुद मार्क्सवादी नहीं हूँ यह मेरा सौभाग्य है।" फिर भी उसका विचार मार्क्सवाद के हिमखंड में जम गया। उससे लेनिन ने समर्थ शास्त्र गढ़कर प्रथम साम्यवादी राज्य की दुनिया को देन दी। आज उस शस्त्र का घातक उपयोग दुनिया के साम्यवादी आपस में कर रहे हैं। मार्क्स के विचार का लेनिन द्वारा किया गया अर्थघटन अंतिम वेदवाक्य-सा बन गया है। माओ ने उसमें जो आकार बनाया, वह और कुछ लोगों के लिए मसीहा के शब्द बन गये हैं। उसमें कोई फर्क हो नहीं सकता। थोड़ा-सा सुधार करते ही उसे 'सुधारवादी' (रिविजनिस्ट) कह दिया जाता है, जो कि साम्यवादी जगत् की अंतिम अभिशाप-वाणी-सा विशेषण बन गया है। 'रिविजनिस्ट' यानी अधम, पापी, क्रांति का दुश्मन, कांटे की तरह उखाड़ फेंकने लायक दगाबाज।

जब विचार वाद बन जाता है, तो यह हालत होती है। मार्क्सवाद का यह अंजाम सर्वोदय के लिए आँखें खोल देनेवाला साबित होगा क्या?

गांधी की वैज्ञानिक पद्धति

गांधी की तो पद्धति ही निराली थी। सत्य भी उनके लिए ऊपर से कहीं से अंतिम निश्चित रूप लेकर सामने आ नहीं गया था। सत्य के भी प्रयोग वे तो जीवन भर करते ही रहे। केवल तर्क या अनुमान से सत्य का निर्णय गांधी ने नहीं किया। तर्कसिद्ध बातों को भी प्रत्यक्ष प्रयोग से परखा, खोजा और जब खरा उतरा तो सच माना। सच माना तब भी उसे अंतिम सत्य नहीं माना। उसे भी सतत परखते रहना, सुधारते चले जाना, गांधी ने आवश्यक माना।

वाद में 'सुधारना' महापाप है। विचार में 'सुधारना' नित्यकार्य ही है।

गांधी ने तो कहा था—"गांधीवाद? यह किस चिड़िया का नाम है, मैं तो नहीं जानता। इतना जानता हूँ कि मैं ऐसा कोई 'उपद्रव' करने नहीं आया।" गांधी ने वाद को उपद्रव, तकलीफ, संकट ही माना।

आधुनिक विज्ञान की नींव दो बातों पर रखी गयी थी : डेकार्ट के तर्क पर और बेकन के प्रयोगों पर। और इनमें भी तर्क से प्रयोग की श्रेष्ठता मानी गयी थी। प्रयोग की कसौटी पर जो खरा साबित हो वही सही और आज जो सही मालूम पड़ा, वह कल नये प्रयोगों में गलत भी साबित हो सकता है।

इस प्रकार 'सतत परीक्षणीयता' (constant testability) विज्ञान के कार्यों का प्रधान लक्षण बन गयी। जब तक जो बात नित्य नये अनुभवों का प्रहार झेलकर टिक जाय तब तक उसे सत्य माना जाय।→

→विनोबाजी कहते हैं कि 'अगर ये दोनों प्रकार की हिंसाएँ चालू रहीं तब तो मैं नःशस्त्र आक्रमण का प्रतिकार नहीं करूँगा।'

नवसंस्करण की आवश्यकता

यह एक यथार्थ दर्शन है। हमको अपने नवसंस्करण करने की जरूरत है। नहीं तो पक्षों की तरह हम और साम्यवादी एक-दूसरे के लिए समस्या-रूप बन जायेंगे। साम्यवादियों के साथ हम संवाद करें। कोनार कहते हैं कि 'हम कोई सामान्य खूनी नहीं हैं, हत्यारे नहीं हैं। हत्या किये बिना अगर काम हो सके तो हम वैसा ही करेंगे।' परन्तु आपस में संवाद कब हो सकता है? जब गरीबी को अपना दुश्मन मानें तभी हो सकता है। हमारा और साम्यवादियों का समान दुश्मन है गरीबी। • (गुजराती से अनुदित)

मुजफ्फरपुर की डाक से

'देश की किस्मत का फैसला'

देश भर में फैले श्री जयप्रकाशजी के लाखों प्रशंसकों और सहयोगियों को जब यह मालूम हुआ होगा कि वे मुजफ्फरपुर के मुसहरी-प्रखंड में ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए संकल्पित होकर अपने जीवन को दाँव पर चढ़ा चुके हैं, तो उनको यही प्रतीत हुआ होगा कि उनकी सफलता या विफलता पर न केवल सर्वोदय-जमात, बल्कि समूचे देश की किस्मत का फैसला होनेवाला है। मुजफ्फरपुर से प्रकाशित होनेवाले एक निर्भीक और नियमित साप्ताहिक पत्र 'आइना' ने श्री जयप्रकाशजी के इस ऐतिहासिक निर्णय पर अपने सम्पादकीय में लिखा

"आज सवाल यह नहीं है कि जयप्रकाश के अभियान का क्या होगा? सवाल यह भी नहीं है कि गाँववाले उनकी सुनेंगे या नहीं?" फिर जैसे स्थानीय जनता के सामने चुनौती पश करते हुए सम्पादक ने लिखा—"अब तो चाहे गोलियों की बोली सुनो या अन्तरात्मा को जगाओ, उसको बोलने का अवसर दो। यह भूमि का बँटवारा नहीं, पूँजी का समानीकरण नहीं, बह विकृत संस्कृति का नया मोड़ होगा। लूटनेवाली संस्कृति बाँटने की विद्या से बदल जायगी। हड़पने के बदले सामूहिक विकास की हवा बहेगी।" और फिर अन्त में सबको चेतावनी देते हुए लिखा—"अगर जयप्रकाश इस अभियान में असफल हुए तो निश्चित है कि या तो देश की अराजकता इसे पुनः गुलाम बना देगी या गृह-युद्ध में करोड़ों सर कटेंगे।"

अब दूसरी पंचायत में

जयप्रकाशजी ३० जून को मुसहरी प्रखण्ड की दूसरी पंचायत नरौली पहुँच गये। गाँव की कच्ची सड़क के किनारे खपरैल से छाये गये एक छोटे-से मकान उनके ठहरने की व्यवस्था की गयी है। सड़क के एक किनारे निवास और दूसरी ओर एक विशाल बरगद का पेड़। बरगद के नीचे पहले से ही बना एक कच्चा चबूतरा। ३० जून को गाँव के ३०-४० भूमिहीन मजदूर बरगद की छाया में बैठकर श्री जयप्रकाशजी के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। ग्राम-सम्पर्क रखनेवाले कार्यकर्ताओं के लिए बरगद के नीचे दो छोटे तम्बू भी गाड़े हुए थे। तम्बू में दो चौकियों की जगह थी। कार्यकर्ताओं के तम्बू के बगल में दो और तम्बू लगे हुए थे, जिनमें ४ चौकियों की जगह थी। वे तम्बू सुरक्षा-विभाग के लोगों के हैं, यह पता लगते ही श्री जयप्रकाशजी ने उनसे तम्बू हटा लेने की बात कही। धीरे-धीरे पास-पड़ोस के मजदूरों की उपस्थिति बढ़ने लगी। गाँव के किसान भी वहाँ आये। ५ बजे के लगभग श्री जयप्रकाशजी ने उपस्थित मजदूरों से बातचीत की।

एक जुलाई को सन्ध्या समय चार बजे नरौली-डीह के भूमिवान किसान अच्छी सख्या में श्री जयप्रकाशजी से मिले। मिलनेवालों में गाव के मुखिया भी थे। आये हुए सभी लोगों ने बीघा-कट्ठा वितरण और ग्रामसभा के गठन में अपना सहयोग देने का आश्वासन प्रदान किया। नरौली पंचायत के बाकी दो टोलों के मजदूर भी सन्ध्या समय जयप्रकाशजी से मिले।

नागरिकों से अपील

मुजफ्फरपुर के सभी विद्यालय और महाविद्यालय गर्मी की छुट्टियों में बन्द थे। अब विद्यालय खुल रहे हैं। विद्यालयों के खुलते ही नगर-शान्ति-सेना के सक्रिय सदस्य नगर के हर मुहल्ले में पहुँचकर हर घर के लोगों से सम्पर्क स्थापित करने जा रहे हैं।

जिला सर्वोदय मंडल और जिला ग्रामस्वराज्य-समिति ने मिलकर मुजफ्फरपुर के नागरिकों के नाम एक अपील प्रकाशित की है। उस अपील में यह बताया गया है कि श्री जयप्रकाश नारायण मुसहरी प्रखड में क्या कर रहे हैं, और उनके कार्य में स्थानीय नागरिक क्या और किस प्रकार का सहयोग कर सकते हैं। (देखें 'भूदान-यज्ञ' दिनांक ६ जुलाई '७० के अंक में पृष्ठ ६२७ पर।)

स्थानीय पत्रों की टिप्पणी

"आर्यावर्त" बिहार का प्रमुख दैनिक पत्र है। आर्यावर्त के एक जुलाई के अंक में मुसहरी प्रखड के बीघा-कट्ठा वितरण का समाचार प्रकाशित हुआ। समाचार का शीर्षक था—'नक्सलवादी भारत को चीन का गुलाम बना देना चाहते हैं'—सर्वोदयी नेता जयप्रकाश नारायण का कथन। उसी अंक की सम्पादकीय टिप्पणी के कुछ अंश

"श्री जयप्रकाश नारायण के जीवन

—पुराना 'सत्य' यदि टूटता है तो खुश होना चाहिए, क्योंकि उसके टूटने से ही नये सत्य का जन्म हुआ।

इस प्रकार सत्य-शोधन निरंतर चलना चाहिए, ऐसी कल्पना विज्ञान-युग में स्थिर हुई। तब तक परम सत्य, निरपेक्ष सत्य, शास्त्रों के शब्द-प्रमाण आदि का बोलबाला था। किन्तु गांधी ने तो स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि परम निरपेक्ष सत्य (किंवा ईश्वर) तो इस सापेक्ष देह में रहते हुए कभी प्राप्त ही नहीं हो सकता। फिर भी उसे प्रत्यक्ष देखना यही जीवन का ध्येय है। अतः अपने सापेक्ष परिवर्तनशील सत्य को शुद्ध करते-करते परम के जितने भी निकट आ सकते हैं, जायँ। और विनोबा ने इस गांधी विचार को सत्र-रूप दे दिया :

"जीवन सत्यशोधनम्"

× × ×

अब सर्वोदय की इस वैज्ञानिक भूमिका के आधार पर हमें हमारे कई दृढ़ विचारों को फिर-फिर से परखना होगा, नये अनुभवों के प्रकाश में सुधारना होगा और सम्भव है, कभी-कभी सर्वथा छोड़ भी देना होगा।●

को हम अमूल्य मानते हैं। उनके हम कटु आलोचक हैं, किन्तु उनके व्यक्तित्व पर हम गर्व का अनुभव भी करते हैं और उनके प्रति सहज अगाध स्नेहभाव भी है।"

सुरक्षा-व्यवस्था के बारे में जे० पी० का वक्तव्य

अपनी सुरक्षा-व्यवस्था के प्रति श्री जयप्रकाशजी ने निम्नलिखित वक्तव्य २६ जून को पटना से प्रसारित किया—"सरकार मेरे लिए जो सुरक्षा की व्यवस्था करती है, उससे मुझे बहुत परेशानी महसूस होती है। मैं उसे बिलकुल अनावश्यक और सार्वजनिक धन का अपव्यय मानता हूँ। इसके अलावा, वह बड़ी परेशानी पैदा करनेवाली और बनावटी भी है। मैंने मुख्यमंत्री को लिखा है कि मुझे अपने लिए कोई सुरक्षा की व्यवस्था नहीं चाहिए और उनसे निवेदन किया है कि वह उसे वापस ले लें। लेकिन अगर सरकार मेरी रक्षा की व्यवस्था करने का आग्रह रखती ही है तो मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि ऐसी व्यवस्था के साथ मैं किसी भी प्रकार सहयोग नहीं करूँगा। मिसाल के लिए, किसी सुरक्षा-कर्मचारी को मैं अपनी गाड़ी में यात्रा करने या अपने कैम्प में ठहरने नहीं दूँगा और न अपने निवास के प्रांगण में प्रवेश करने दूँगा। अगर मेरे साथ कोई दुर्घटना होती है तो मैं बिहार सरकार और भारत सरकार को आश्वस्त करना चाहता हूँ कि उस स्थिति में मेरे परिवार का कोई सदस्य या मेरे निकटवर्ती मित्रों में से कोई व्यक्ति यह दोषारोपण नहीं करेंगे कि सरकार ने अपने कर्तव्य की उपेक्षा की है।'

श्री जयप्रकाश नारायण के इस वक्तव्य का हवाला देते हुए पटना के अंग्रेजी दैनिक "इंडियन नेशन" ने १ जुलाई को सम्पादकीय टिप्पणी में लिखा है—

"जिस भावना से यह वक्तव्य दिया गया है उसे उसी रूप में स्वीकार करना चाहिए, लेकिन सरकार को भी अपने कर्तव्य का निर्वाह तो करना ही है। श्री जयप्रकाश नारायण का जीवन इतना मूल्यवान है कि वह इस तरह खतरे में नहीं डाला जा सकता। हमें यह भी स्मरण रखना होगा कि यद्यपि गांधीजी सरकारी सुरक्षा-व्यवस्था को नापसंद करते थे, उनकी मृत्यु के बाद सरकार को लापरवाही के लिए दोषी माना गया। श्री जयप्रकाशजी की भावना और सरकार के कर्तव्य के बीच का कोई सामंजस्यपूर्ण उपाय ढूँढना आवश्यक है।"

श्री जयप्रकाशजी का स्वास्थ्य

श्री जयप्रकाशजी के स्वास्थ्य के बारे में लोगों का चिन्तित होना स्वाभाविक है। सामान्यतः उनका स्वास्थ्य ठीक है। लेकिन अपनी मधुमेह की बीमारी के लिए वे एक स्थानीय वैद्य की सलाह से गाँव में मिलनेवाली औषधि का उपयोग कर रहे थे, लेकिन उसका परिणाम अनुकूल नहीं आया, इसलिए पुनः पहलेवाला इलाज चल रहा है। उनके पाँव अक्सर बहुत ठंडे रहते हैं।

जिलास्तरीय अभियान समिति का गठन

ग्रामस्वराज्य-अभियान के दौरान उपस्थित होनेवाली हर समस्या और वस्तुस्थिति पर नजर रखते हुए, उसे सही मार्गदर्शन देने की दृष्टि से एक जिलास्तरीय अभियान समिति का गठन हुआ है, जिसकी नियमित बैठक प्रत्येक शुक्रवार को दिन में तीन बजे जिला सर्वोदय मंडल के कार्यालय में होती है। इसकी बार-बार सूचना न देनी पड़े इसलिए दिन और समय पूर्वनिर्धारित है। अभियान समिति के निम्नलिखित सदस्य हैं :

(१) श्री बद्री नारायण सिंह, अध्यक्ष, जिला सर्वोदय मंडल, मुजफ्फरपुर

(२) श्री बाबा रामबहादुर लाल, अध्यक्ष, जिला ग्रामस्वराज्य समिति, मुजफ्फरपुर

(३) श्री गोपालजी मिश्र, मंत्री, जिला ग्रामस्वराज्य समिति, मुजफ्फरपुर

(४) श्री जयलोक ठाकुर, मंत्री, बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ, सर्वोदयग्राम, मुजफ्फरपुर

(५) श्री कामेश्वर ठाकुर, क्षेत्रीय संचालक, बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ

(६) श्री कैलाश प्रसाद शर्मा, मंत्री, बिहार ग्रामस्वराज्य समिति, पटना

(७) श्री नवलकिशोर सिंह, संयोजक, बिहार तरुण-शांति-सेना समिति, पटना

(८) श्री लक्ष्मणदेव प्रसाद सिंह, क्षेत्रीय कार्यकर्ता, वैशाली

सुरक्षा-व्यवस्था का परित्याग

श्री बद्री नारायण सिंह, अध्यक्ष जिला सर्वोदय मंडल, मुजफ्फरपुर तथा श्री गोपालजी मिश्र, मंत्री, जिला ग्रामस्वराज्य समिति, मुजफ्फरपुर ने पुलिस-अधिकारियों से सरकार द्वारा प्रदत्त सुरक्षा-व्यवस्था को लौटा लेने का आग्रह किया है। वे बिना पुलिस-संरक्षण के अपने-अपने कार्य में संलग्न हैं।

समस्याएँ और संभावनाएँ

(१) सरकारी सूत्रों और समाचार-पत्रों ने श्री जयप्रकाशजी के ग्रामस्वराज्य-अभियान को नक्सलवादी चुनौती की प्रतिरोधात्मक प्रवृत्ति के रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा की है, जब कि वह दरअसल समाज की तात्कालिक समस्याओं के समाधान की रचनात्मक प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत होना चाहिए था। समाचार पत्रों ने अभियान-सम्बन्धी समाचारों के लिए जिस प्रकार के शीर्षक चुने, उससे कुछ लोगों की भी ऐसी धारणा बन गयी है कि जयप्रकाशजी नक्सलवादियों का प्रभाव समाप्त करने के कठिन काम में जुटे हुए हैं।

(२) सनहा पंचायत में रहते समय श्री जयप्रकाशजी गाँव के हर लोगों से निकट-संपर्क स्थापित करके ग्रामस्वराज्य के विचार समझाने की कोशिश में लगे रहे। गाँव के कुछ भूमिवान किसान श्री जयप्रकाशजी से मिलने का वादा करके भी न मिल सके। अपने पड़ाव के आखिरी दिन जयप्रकाशजी स्वयं ही उन लोगों के घर पहुँच गये। इस प्रयास से किसानों→

मुजफ्फरपुर के अग्रिम मोर्चे से :

बीघा-कट्ठा वितरण-यात्रा के अनुभव : नयी सम्भावनाएँ

मुजफ्फरपुर में 'करेंगे या मरेंगे' की भावना से ग्रामस्वराज्य की स्थापनार्थ जे० पी० जब से लगे हैं, मुजफ्फरपुर मही मानी में इस आन्दोलन का 'वाटरलू' बन गया है। विनोबा ने अपनी तूफान-यात्रा में चम्पारण और अन्य कई क्षेत्रों में इस विशेष शब्द का प्रयोग किया था, लेकिन उस समय के तूफान में कोई भी 'वाटरलू' साबित नहीं हुआ। तूफान के बाद की एक प्राकृतिक स्तब्धता के बाद अब यह जो पुन: एक कम्पन शुरू हुआ है, ऐसा लगता है, कि 'वाटरलू' साबित होने का खतरा इसमें अपेक्षाकृत अधिक है।

मुसहरी प्रखण्ड आन्दोलन की दृष्टि से जिले का सबसे कठिन प्रखण्ड है। और शायद यह संयोग है कि जे० पी० के भगीरथ-प्रयत्न का प्रथम क्षेत्र यही प्रखण्ड बना है। सलहा पंचायत की सफलताएँ, और इस समय जे० पी० जिस पंचायत मरौली-में हैं, उसकी सम्भावनाएँ निःसन्देह बहुत ही उत्साहवर्धक हैं। लेकिन सफलता और सम्भावना को और अधिक बढ़ाने तथा प्रतिकूलता को अनुकूलता में बदलने के लिए मुसहरी प्रखण्ड के अलावा भी जिले के विभिन्न क्षेत्रों में विविध पद्धतियों से काम शुरू किया गया है। काम सघन हो, और हुआ व्यापक बने, इस दृष्टि से काम करने की कोशिशें हो रही हैं।

इसी कोशिश में जिले के वैशाली प्रखण्ड में २७ जून से २ जुलाई तक 'बीघा-कट्ठा वितरण पदयात्रा' हुई। इस क्षेत्र को आचार्य राममूर्ति ने अपना सघन कार्य-क्षेत्र माना है, इसलिए उनकी प्रेरणा और मार्गदर्शन में यह कार्यक्रम क्षेत्रीय पुरुषार्थ के फलस्वरूप महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों के साथ सम्पन्न हुआ।

उद्देश्य

कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य था 'बीघा-कट्ठा वितरण' की हवा बनाना। इसलिए यह सोचा गया कि हर पचायत में कुछ भूमिवानों को भूमि-वितरण के लिए राजी किया जाय। क्षेत्र के प्रमुख कार्यकर्ता श्री लक्ष्मणदेव ने अपने क्षेत्रीय सहयोगियों के साथ मिलकर इस यात्रा के ६ पड़ावों पर—जो ६ पचायतों में हुए—क्षेत्र का नेतृत्व करनेवाले कुछ प्रमुख भूमिवानों को बीघा-कट्ठा वितरण के लिए तैयार किया।

२७ जून की सायंकाल नगवाँ पचायत के प्रमुख भूमिवान और प्रभावशाली व्यक्ति डा० गुलजार ने दो अन्य भूमिवानों सहित अपनी भूमि का बीघा-कट्ठा भूमिहीनों को वितरित किया। प्रमाण-पत्र के साथ सद्भावना के प्रतीक रूप में भूमिहीनों को फूल भेंट करते हुए उनके माथे पर मिट्टी का तिलक लगाया, और इस प्रकार धरती के इन बेटों का धरती से सम्बन्ध जुड़ा।

लोकशक्ति

नगवाँ के बाद पटेढ़ा पचायत में पचायत के मुखिया और ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के समर्थ समर्थक श्री श्याम-नारायण बाबू ने अपनी भूमि का बीघा-कट्ठा वितरित किया। पचायत के ६ अन्य भूमिवानों ने भी अपना बीघा-कट्ठा वितरित किया। इस वितरण-सभा की अध्यक्षता की चितामनपुर के प्रमुख भूमिवान श्री मोहन बाबू ने। वे खुद अपनी भूमि का बीघा-कट्ठा बाँट चुके हैं। अपने पट्टीदारों और अन्य भूमिवानों को बीघा-कट्ठा वितरित करने के लिए प्रेरित करते और ललकारते रहनेवाले मोहन बाबू अपना इरादा व्यक्त करते हैं कि बार-बार कहने के बाद भी अगर लोग नहीं मानेंगे, बीघा-कट्ठा नहीं बाटेंगे तो उनके दरवाजों पर हमें धरना देना ही पड़ेगा। पटेढ़ा की सभा में आये हुए आस-पास के गाँवों के कई प्रमुख लोगों को समझाते हुए मोहन बाबू जब उस दिन रात को नौ-साढ़े नौ बजे श्यामनारायण बाबू के दरवाजे पर इस प्रकार समझा रहे थे, तो मैं सोच रहा था कि यह भी एक सांस्कृतिक क्रान्ति हो रही है। वर्गों में समाज को विभाजित करने-वाले तर्क को ध्रुव-सत्य माननेवाले शायद इसे भूमिवानों द्वारा अपने को बचानेवाली पूँजीवादी सामन्तवादी-प्रतिक्रिया और सशोधनवादी चाल घोषित करें, लेकिन भरी सभा में—जिसमें तथाकथित दोनों वर्गों के प्रतिनिधि मौजूद हों—जब यह क्रिया-प्रक्रिया चल रही है, प्रत्यक्ष लोग इसे देख-सुन और समझ रहे हैं, उनको नकारना और अपनी पूर्वधारणाएँ इस पर आरोपित करना एक ओछी और अवैज्ञानिक बात नहीं होगी, तो और क्या होगी?

इस यात्रा में पिछले पड़ाव के वे लोग अगले पड़ाव पर जाते थे, जिन्होंने अपना बीघा-कट्ठा वितरित किया है, और वे अपनी ओर से बीघा-कट्ठा बाँटने की अपील करते थे। लोगों के दरवाजों पर जाकर उन्हें समझाते थे।

पटेढ़ा से जारग पचायत के सिहमा गाँव में गये और वहाँ शाम को पड़ोस के बाजार में सभा हुई। इस बाजार के गाँववाले ग्रामदानी-आन्दोलन की बहुत खिलाफत करते रहे हैं, ऐसा सुनने को मिला। इसके पहले तक कभी वहाँ सभा का आयोजन भी सम्भव नहीं हो पाया था। लेकिन इस बार तो क्षेत्रीय लोगों की शक्ति काम कर रही थी। लोगों ने सोचा कि वहीं सभा करेंगे और वहीं भूमि का प्रमाण-पत्र बाटेंगे। आखिर कुछ तो सोचने के लिए विवश होंगे वहाँ के लोग। मनाव की प्रक्रिया को सघन बनाने और प्रतिकूल को अनुकूल बनाने का यह भी एक विशेष कोशिश क्षेत्र के लोगों की थी, जिसका अपेक्षित परिणाम आया। सभा अच्छी हुई। इस पचायत में मुखियाजी की ही जमीन बँटनेवाली थी, लेकिन सभा में ही एक और भूमिवान ने अपना हिस्सा निकाल कर बाँट दिया और इस प्रकार दाताओं की संख्या दो हो गयी।

सिहमा के मुखियाजी और क्षेत्र के

अन्य लोगों ने तय किया कि जुलाई के प्रथम सप्ताह में ही सिहमा पंचायत में सघन-अभियान चलाकर पूरी पंचायत का काम पूरा कर लिया जाय, ताकि बीघा-कट्ठा का वितरण ग्रामसभा का गठन, गांव-गांव में हो जाय।

संकल्प की पुष्टि

अगला पड़ाव भगवानपुर रत्ती में था। गत साल अखिल भारतीय ग्राम-स्वराज्य-गोष्ठी इसी गांव में हुई थी। उस समय गांव के कई प्रमुख लोगों ने बीघा-कट्ठा वितरित करने की घोषणा सभा में की थी। लेकिन मालूम हुआ कि भूमि का वितरण इस साल तक नहीं हो पाया है। आचार्य राममूर्ति ने क्षेत्र के लोगों के सामने यह विचार रखा कि अगर इस गांव के लोग बीघा-कट्ठा अपनी गत साल की घोषणा के अनुसार नहीं बांटते, तो उनके दरवाजा पर धरना दें और इस प्रकार गत साल बीघा-कट्ठा बांटने का जो शुभ संकल्प उन्होंने किया था, साल भर में ढीला हुए उस संकल्प को पुनः उनके अन्तर में पुष्ट करने और बीघा-कट्ठा बांटने के लिए प्रेरित करने का प्रयत्न करेंगे।

लेकिन धरना की नौबत नहीं आयी। वास्तव में बुनियादी बात है विचार को समझाना, उसकी तात्विकता और युक्ति सगतता को परिस्थिति के सन्दर्भ में प्रस्तुत करना। धैर्य और आस्थापूर्वक यह कोशिश की जाय तो अब यह प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है कि बहुत कम गांवों के बहुत कम लोग ऐसे निकलेंगे, जिनके ऊपर मनाव और लोक-प्रभाव के बाद दबाव डालने की कोई आवश्यकता रह जाय।

भगवानपुर रत्ती वैशाली प्रखण्ड का बहुत ही महत्वपूर्ण और नेतृत्व देनेवाला गांव है। और यह आशा दिनोदिन दृढ़ हो रही है कि ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन में भी यह गांव नेतृत्व देगा। पुराने सर्वोदयवादी श्री चन्द्रशेखर बाबू, स्वयं मुखियाजी युवा किसान श्री राधेश्याम बाबू आदि इस आन्दोलन की अगुवाई करने की पूरी क्षमता रखते हैं। गांव के युवकों में भी काफी उत्साह है। श्री मुद्रिका बाबू तो लगभग पूरे समय हमारे साथ रहे और बीघा-कट्ठा बांटने के लिए लोगों को उकसाने का काम करते रहे। उनकी लड़की प्रेमलता भी घर के आंगन तक ग्रामस्वराज्य के सन्देश को पहुंचाने का महत्वपूर्ण काम कर रही है।

इस गांव के कुल ९ दाताओं ने अपनी भूमि का बीघा-कट्ठा निकाला, जो १७ हरिजन और २ मुसलमान भूमिहीनों में बंटा। इस गांव से जब हम अगले पड़ाव के लिए रवाना हो रहे थे, तो श्री चन्द्रशेखर बाबू के दरवाजे पर मजदूर महिलाओं का एक दल आया, और पूछा, "हमको कब जमीन मिलेगी?" हमने उनके प्रश्न को श्री चन्द्रशेखर बाबू और गांव के लोगों के हवाले किया, इस आशा से कि भूमिवानों और भूमिहीनों के बीच समझदारीपूर्ण सद्भाव-प्रचार हो रहा है तो अवश्य ही कोई उपयुक्त उत्तर इनको मिलेगा।

गहरा प्रभाव

पौनी हुसनपुर पंचायत के चकदरिया पड़ाव पर गांव के मुखियाजी की कुल १० बीघे जमीन में से १० कट्ठा जमीन बंटी। बरसात तथा कुछ आपसी तनाव के कारण वहां अच्छी सभा नहीं हो पायी। लेकिन दूसरे दिन सुबह हमें मालूम हुआ कि सभा में लोग भले न आयें, इस समय चर्चा घर घर में भूमि वितरण की ही है, समर्थन या विरोध में।

२ जुलाई का आखिरी पड़ाव जतवौली पंचायत के चिंतामणिपुर गांव में था। वहां के ६२ साल के बुजुर्ग श्री हेमन बाबू कुछ दिनों पूर्व तक विरोध के अन्तिम बिन्दु पर थे, लेकिन विचार समझने के बाद समर्थन में भी उसी तरह काफी आगे के बिन्दु पर हैं। उन्होंने अपनी भूमि का बीघा-कट्ठा वितरित किया, और गांव के भूमिवानों को ललकारा कि जमीन को समझकर चलने में ही भलाई है।

सलहा पंचायत में भूमि-वितरण-सभा

भूमिहीनों को भूमि का प्रमाण-पत्र दिया जा रहा है। ये भूमिहीन, जो अब भूमिवान बन गये
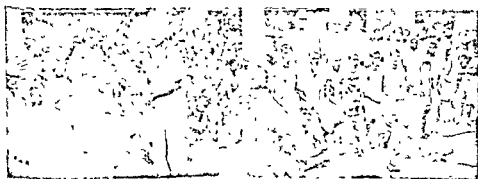
इस भूमि-वितरण-यात्रा की स्थूल निष्पत्ति आंकड़ो में निम्न प्रकार हैं :

क्रमांक	पंचायत	कुल दाता	कुल भूमि			कुल आदाता
			बीघा	कट्ठा	धूर	
१	नगवाँ	३	२	१६	–	५
२.	पटेढ़ा	७	३	१७	–	१२
३.	जारंग (सिहमा)	२	१	१६	५	१३
४.	भगवानपुर रत्ती	९	३	१०	१२	१९
५.	पोनी हुमनपुर	१	–	१०	–	२
६.	जनकौली	१	–	१७	–	४
	कुल योग .	२३	१३	६	१७	

कई लोगों ने कहा कि हुमन बाबू जिस काम को हाथ में लेते हैं, उसे पूरा करके ही छोड़ते हैं। उनकी दृढ़ता और संकल्प शक्ति का जो प्रत्यक्ष-परिचय हमें उनके सानिध्य में मिला।

यद्यपि आंकड़ों में निष्पत्ति बहुत थोड़ी है, लेकिन आन्दोलन की दृष्टि से भूमि-वितरण की जो हवा बनी है, वह महत्त्वपूर्ण और अनुभव दिशाबोधक है।

अभी तक हम कहते जरूर आये हैं कि वर्ग-संघर्ष नहीं मानते, लेकिन समस्याओं के समाधान की वर्ग-संघर्ष से भिन्न जन-शक्ति का स्वरूप क्या होगा, इसका प्रत्यक्ष दर्शन नहीं के बराबर हो पाया है। इस क्षेत्र में भूमि-वितरण करनेवाले किसानों की बदली हुई मनोभूमिका और आन्दोलन के प्रति उनकी सक्रियता को देखकर ऐसा महसूस हुआ कि वर्ग भावना से मुक्त जन-शक्ति–भूमिवान-भूमिहीन, दोनों की मिली-जुली शक्ति—प्रकट हो रही है जो संघर्ष का विकल्प ढूंढ लेगी।

दूसरी बात कि ग्रामस्वराज्य आन्दोलन को सही नेतृत्व दे सकनेवाले और इसके सक्षम वाहक बन सकनेवाले लोग गाँवों में से–और खासकर किसानों में से ही निकलेंगे।

अब इस क्षेत्र में शान्ति की स्वय चालित शक्ति बन गयी है, ऐसा भी मान सकते हैं। इसलिए इस क्षेत्र के एक-मात्र संस्था के कार्यकर्ता श्री लक्ष्मणदेव–जो संस्थावादी मनोवृत्ति से मुक्त हैं—के साथ क्षेत्र के सहयोगियों ने सघन और व्यापक, दोनों छोरों से काम शुरू करके ३१ दिसम्बर '७० तक बीघा-कट्ठा-वितरण और ग्रामसभा के गठन का काम पूरा कर लेने की योजना बनायी है, और उसके अनुसार काम हो रहा है। १ जनवरी '७१ को नये वर्ष में ग्रामस्वराज्य के नये कदम की घोषणा एक बड़े ग्रामस्वराज्य सम्मेलन में करने की बात है। बीच के लगभग साढ़े पाँच महीने मुजफ्फरपुर के काम के लिए ही नहीं, इस आन्दोलन के लिए महत्त्वपूर्ण हैं, सिर्फ महत्त्वपूर्ण ही नहीं, जीवन-मरण के निर्णायक हैं। वक्त हमें इससे अधिक मौका देने को अब शायद तैयार नहीं।

—रामचन्द्र राही

सब जन एक समान

(रेडियो-रूपक संग्रह)

लेखक : यशपाल जैन

इस संकलन में गांधी, विनोबा, बुद्ध, ईसा, महावीर, सर्वोदय आदि विषयक और गांधी-विचार के मूलभूत विषयों पर रेडियो-रूपक दिये गये हैं। सर्वजनहिताय, अस्पृश्यता-निवारण, विश्व-बन्धुत्व, कर्म-योग आदि की नैतिक शिक्षाओं का सार सबके लिए पठनीय है। सरल सुबोध भाषा। मूल्य २-००

खादी-विचार

लेखक विनोबा

खादी सिर्फ वस्त्र नहीं है, वह अहिंसक समाज रचना का प्रतीक है। गांधीजी ने चरखे को भारत की गरीब जनता का सबसे बड़ा आधार माना था और यह ऐसा साधन है, जिसे हर व्यक्ति अपना सकता है।

पिछले ४० वर्षों में खादी-विचार किस तरह विकसित होता गया, इसका सम्पूर्ण चित्र विनोबाजी के शब्दों में संकलित है।

संशोधित दूसरा संस्करण। मूल्य ४-००

आगामी प्रकाशन

विनोबा-जयन्ती के अवसर पर उपलब्ध होंगे

विनोबा और सर्वोदय क्रांति

काका साहब कालेलकर की इस कृति में विनोबाजी के व्यक्तित्व और उनके प्रयोगों, आन्दोलनों का मूलगामी और दूरगामी विश्लेषण काका साहब ने विश्व-परिस्थिति के सन्दर्भ में किया है।

गांधीजी : जैसा देखा-समझा

लेखक : विनोबा

विनोबाजी के शब्दों में गांधीजी के विराट् व्यक्तित्व, गांधीजी के कार्यकलापों, उनके देश और देश के लिए किये गये प्रयोगों का वैचारिक दृष्टि से विवेचन। विनोबाजी गांधीजी के अत्यन्त निकटतम विचार-अनुयायी रहे हैं। गांधीजी के व्यक्तित्व और विचार को सूक्ष्मता से समझने और ग्रहण करनेवालों में विनोबा का स्थान अप्रतिम है।

इस दृष्टि से यह ग्रन्थ प्रत्येक आबाल-वृद्ध के हाथ में पहुँचना चाहिए।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी

दिल्ली में साहित्य प्रचार

दिल्ली शहर और नजदीक के क्षेत्रो मे साथियों के सहयोग से जो कार्य हुआ, वह थोड़े में इस प्रकार है:

विभिन्न शिक्षा-संस्थाओं मे ८१० विद्यार्थी भाई-बहनों ने, और वहाँ के कुछ पुस्तकालयों ने ३,८१५ रुपयों का साहित्य खरीदा, और गांधी-प्रदर्शनी में लगाये गये केन्द्र मे २८० स्त्री-पुरुष और बच्चो ने १५०० रुपयों का साहित्य खरीदा।

शिक्षा-संस्थाओं के छात्रों और प्राध्यापक भाई-बहनों ने अपनी संस्थाओं मे और नजदीक के मुहल्लो मे शताब्दी-सर्वोदय-साहित्य-सेटों का प्रचार किया।

इन शिक्षा संस्थाओं में और गांधी-दर्शन प्रदर्शनी में जिन ग्राहकों और छात्रों से परिचय हुआ है, उनमें से कइयों के साथ आगे भी विचार का और कार्य का, सम्बन्ध बना रहेगा।

अब तक दिल्ली शाखा घाटे मे चल रही थी। अब इस काम से जो कमीशन मिला है, व आगे जो साहित्य-प्रचार होगा, उसका हिसाब दिल्ली शाखा के नाम रखा जायेगा और उसका उपयोग दिल्ली-प्रदेश मे साहित्य-प्रचार के माध्यम से समग्र रूप से सर्वोदय कार्य खड़ा करने मे किया जायेगा।

साहित्य एक साधन है, जिसके द्वारा लोक-संग्रह करना है। लोगों के सम्पर्क बने, उनकी समस्याएँ समझें, उनके दिल-दिमाग तक पहुँचा जाय, और उसमें से सर्वोदय की सांस्कृतिक क्रान्ति के लिए लोक-शक्ति पैदा हो, यह ध्येय है। इसको ध्यान में रखते हुए भावी कार्य-योजना इस प्रकार सोची गयी है:

- दिल्ली शाखा के भण्डार मे, गांधी-स्मारक संग्रहालय के स्टाल पर, और गांधी-दर्शन प्रदर्शनी में भारत की सभी भाषाओं के महत्वपूर्ण साहित्य की बिक्री की व्यवस्था की जाय।
- सर्वोदय आन्दोलन की समग्र जानकारी हमारे केन्द्र से मिले, ऐसी व्यवस्था की जाय।
- दिल्ली शहर के हजारों घरों में सर्वोदय-साहित्य और पत्रिकाएँ पहुँचें, ऐसी कोशिश की जाय।
- नगर-यात्रा, प्रदर्शनियाँ, छात्र और और शिक्षक-शिविर, गोष्ठियों और व्यापक लोक-सम्पर्क द्वारा विचार-प्रचार, सर्वोदय-मित्र, शांति-सेवक, तरुण शांति-सैनिक, श्रमदान, लोक-नीति आदि के कार्यक्रम चलाये जायें।
- दिल्ली प्रदेश और नजदीक के राज्यों तक पाठ्य-क्रमों में गांधी विचार की चुनी हुई किताबें स्थान पा सकें, इसकी कोशिश की जाय।
- इन कार्यों के लिए विचार से प्रेरित कार्यकर्ता भाई-बहनों की एक टोली बनायी जाय। —वसन्त व्यास

इन्दौर में साहित्य-बिक्री

मई, '६९ से अप्रैल, '७० तक १,५२,२७६ रु० की साहित्य-बिक्री हुई। औसतन मासिक साहित्य की बिक्री १२,६९० रु० रही। ३३,७०८ सर्वोदय-साहित्य के सेटों की बिक्री की। ४५ दिन तक साहित्य प्रदर्शनी लगायी गयी। ११७० रु० की इसमें साहित्य-बिक्री हुई। इसके कमीशन से २८१ रु० प्राप्त हुए जो कुष्ठ संस्था को दिये गये।

—जसवंत राय,
सर्वोदय साहित्य भण्डार, इन्दौर

तरुण शान्ति-सेना शिविर

भागलपुर तरुण शान्ति-सेना के तत्वावधान में एक प्रखण्ड-स्तरीय ग्राम-शान्ति सेना शिविर का सफल आयोजन १४ जून से १६ जून तक सर्वोदय उच्च विद्यालय बिहपुर में किया गया। शिविर स्वावलम्बी था। प्रत्येक शिविरार्थियों ने तीनों दिनों के लिए नकद या भोज्य सामग्री दिये थे। शिविरार्थियों की कुल संख्या ४९ थी। शिविर में मुख्य अतिथि के रूप में श्री आचार्य राममूर्ति, सुश्री निर्मला देशपाण्डे, चीफ इन्जीनियर रोहतगी, श्री मथुरा प्रसाद सिंह, सेनीय निदेशक श्री आनन्द शास्त्री, डा. रामजी सिंह ने अपने विचारों से शिविरार्थियों को प्रेरित किया।

शिविर की दिनचर्या में श्रमदान, ग्रामसंपर्क, का अपना विशेष महत्व रहा। श्रमदान में साथियों ने स्कूल के सड़क की मरम्मत की, एवं खेत बनाने का काम किया। निम्नलिखित तीन विषयों पर चर्चा-गोष्ठियाँ आयोजित की गयी:

१. ग्राम-जीवन में हिंसा एवं ग्राम-शान्ति-सेना
२. युवक एवं समाज-परिवर्तन
३. हिंसा का विस्फोट एवं शान्ति-शिक्षा

अंतिम दिन पाँच टोलियों में आगे के कार्यक्रम एवं संगठन पर चर्चाएँ हुईं। और संगठन के लिए ठोस निर्णय लिए गये। संगठन को आगे बढ़ाने के लिए यह निश्चित किया गया कि २१ जुलाई को सभी साथी नारायणपुर उच्च विद्यालय में मिलें। अपने साथ नये साथियों को भी लाने का प्रयास करें।

शिविर-संचालन एवं व्यवस्था सम्बन्धी भार मुख्य रूप से श्री श्यामदेव भाई पर रहा। गोपालपुर और नवगछिया प्रखण्ड में भी प्रखण्ड-स्तरीय शिविर करने की योजना बनायी गयी है।

विवाह में कूपदान

अहमदाबाद के सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री भगुभाई पटेल की सुपुत्री चि० कोकिला एवं श्री दशरथकुमार के शुभ विवाह-मुहूर्त के उपलक्ष्य में दिनांक ११ मई के दिन वर-वधू दोनों पक्षों की ओर से गुजरात के तपोधन श्री रविशंकर महाराज को कूपदान के रूप में एक हजार एक रुपये की राशि अर्पित की गयी। विवाह-प्रसंग पर होनेवाले अन्य खर्चों में कटौती करके यह शुभ-कार्य सम्पन्न किया गया। यह आयोजन आचार्य विनोबा भावे के 'लग्न प्रसंग में कूपदान' विचार का कार्यान्वयन था। इसी अवसर पर भूमि पूजन के निमित्त भी एक सौ एक रुपये अर्पित किये गये, जिनका उपयोग किसानों को खाद दिलाने में किया जायेगा। —वसंत व्यास

आन्दोलन के समाचार

हरियाणा में ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन

गत ७ जून को हरियाणा राज्य गांधी जन्म शताब्दी समिति की सचिव बहन प्रभात शोभा पंडित के नेतृत्व में हरियाणा प्रान्त के अनुभवी ग्रामदानी कार्यकर्ताओं की एक सभा हुई, और हरियाणा में अब तक चलाये गये ग्रामदान-आन्दोलन के अनुभवों के आधार पर ग्रामदान-कार्य को सुव्यवस्थित ढंग से आगे बढ़ाने पर विचार हुआ। हरियाणा राज्य गांधी-जन्म-शताब्दी समिति ने आगामी ३१ मार्च '७१ तक ७५,००० रुपया इस प्रवृत्ति के लिए मंजूर किया है।

८ जून को १५ कार्यकर्ता महम खण्ड में ग्रामदान-अभियान में लगे। १५ जून '७० तक १२ गांवों में १२ सार्वजनिक सभाएँ हुईं। सर्वोदय-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाये गये। [illegible] गांवों में १२ 'मित्र-मंडल' स्थापित किये गये। ये मित्र मंडल अपने-अपने गांवों [illegible] ग्राम-स्वराज्य की दिशा में ले जाने का काम करेंगे।

१५ जून को [illegible] गांव में सभी टोलियां इकट्ठी हुईं। अनुभवों का आदान-प्रदान हुआ और फिर अगले दिन यानी १६ जून को सभी कार्यकर्ता ३ टोलियों में [illegible] गांवों में ग्रामदान का विचार-शिक्षण करने के लिए फैल गये। —[illegible] शीतल सगठन

बीकानेर जिलादान की तैयारी

बीकानेर क्षेत्रीय ग्रामदान ग्रामस्वराज्य-अभियान समिति बीकानेर ने बीकानेर जिलादान की दिशा में कोलायत और बीकानेर में चलाए गये ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य अभियान की आशातीत सफलता के बाद जिले के नोखा ब्लाक में दिनांक १७-६-७० से २३-६-७० तक अभियान चलाया। दिनांक १७ व १८ को सोमलसर ग्राम में शिविर का आयोजन किया व १९ से २२ तक कार्यकर्ताओं द्वारा ३१ टोलियों में विभक्त होकर अभियान-पदयात्रा हुई। दिनांक २३ को समापन-समारोह हुआ। शिविर में श्री गोकुलभाई भट्ट, श्री राधाकृष्ण बजाज, श्री रामेश्वर अग्रवाल, तथा श्री बद्रीप्रसाद स्वामी की उपस्थिति उल्लेखनीय है। इस अभियान में क्षेत्र के ११९ आबाद गांवों से सम्पर्क स्थापित हुआ, जिनमें से ७५ ग्राम ग्रामदान में प्राप्त हुए और औसत ६३ प्रतिशत रहा। ब्लाकदान के लिए आवश्यक बाकी बचे गांवों में सम्पर्क स्थापित कर ग्रामदान संकल्प प्राप्त करने हेतु कार्यकर्ता जुटे हुए हैं। इस जिले के कोलायत तहसील का सम्पूर्ण ग्रामदान हो चुका है और बीकानेर व नोखा ब्लाक इसकी तैयारी में है। समिति ने जुलाई '७० के अन्त तक सम्पूर्ण जिलादान प्राप्त किये जाने का संकल्प किया है।●

चाकसू प्रखण्ड ग्रामदान-अभियान

चाकसू पंचायत समिति (राजस्थान) में १६ जून से ग्रामदान-अभियान प्रारंभ किया गया। इस अभियान के दौरान ३० टोलियों में लगभग ११० कार्यकर्ता पंचायत-समिति के गांव-गांव में गांधीजी के ग्राम-स्वराज्य का सन्देश लेकर पहुँचे और गांवों में ग्रामसभाएँ बनाकर ग्रामराज्य स्थापित करने के लिए ग्रामदान आन्दोलन के उद्देश्यों को समझाया, जिसके फलस्वरूप ६० गांवों ने ग्रामदान का संकल्प जाहिर किया।●

मथुरा में ग्रामदान

मथुरा जनपद की मांट तहसील विकास खण्ड में २२ अप्रैल '७० से १७ जून '७० तक ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का विचार-प्रचार किया गया। १० गांवों के लोगों ने ग्रामदान के घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किये। इस विकास खंड में कुल ११० ग्रामदान हुए और ८ शान्ति-सैनिक बनाये गये।●

विश्वशांति-आन्दोलन

विज्ञापन-विरोधी-संगठन

लन्दन में अतिशय विज्ञापन-बाजी के विरोध में कार्रवाई करने हेतु एक संगठन तैयार किया गया है। यह संगठन नागरिकों को अनिरोधात्मक कार्रवाई के लिए तैयार करेगा। संगठन ने विज्ञापन विरोध की कार्रवाई एक जगह शुरू भी कर दी है, जिसमें वहाँ के युवा संगठन-यापू, ईसाई अहिंसक कार्रवाई चर्च, लन्दन युवा-ऐक्य समिति भी शामिल हैं। विरोध प्रकट करनेवाले पर्चे आदि बांटे गये हैं।●

न्यू इंग्लैण्ड में शान्ति कूच

न्यू इंग्लैण्ड की अहिंसक कार्रवाई समिति ने पिछले १ अप्रैल से १५ अप्रैल '७० तक एक शान्तिकूच आयोजित किया था। इसके द्वारा १ हजार मील की यात्रा और १ हजार लोगों से चर्चाएँ हुईं। कूच के चार सदस्यों ने शिक्षण, धार्मिक तथा अन्य सामाजिक संगठनों से भी सम्पर्क किया।

जनता ने इस कूच में गहरी दिलचस्पी दिखाई। जल्द ही अगला कूच भी आयोजित किये जाने की आशा है।

(यु० वि० स० की समाचार बुलेटिन सं० ९१ के आधार पर)

उज्जैन जिले में ७५ ग्रामदान प्राप्त

स्थानीय जिला गांधी-शताब्दी समिति द्वारा संचालित जिला ग्रामदान-अभियान के अन्तर्गत जिले के उज्जैन प्रखण्ड में ७५ ग्रामदान मिले हैं। तहसील के दूसरे प्रखण्ड घटिया में अभियान जारी है।

१० से १७ जून तक सम्पन्न इस अभियान में स्थानीय कार्यकर्ताओं और सेवकों के अलावा गांधी निधि, विसर्जन आश्रम तथा भूदान बोर्ड के ७ कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया।

यह उल्लेखनीय है कि उज्जैन जिले में पहली बार ही ये ग्रामदान मिले हैं।●

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में :

वर्ष : १६ अंक : ४२
सोमवार २० जुलाई, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

करुणा : कर्म की प्रेरणा

दूसरो को सुखी देखकर सुखी होना, यानी प्रेम। दूसरो का दुःख देखकर दुःखी होना, यानी करुणा। लेकिन करुणा केवल इतने से सतुष्ट नही है। दूसरो के दुःखो को देखकर, उन्हे दूर करने के लिए काम करती है, वह है करुणा। कह सकते हैं कि करुणा का अर्थ है कर्म-प्रेरणा–भला काम करने की प्रेरणा।

समाजशास्त्र का यह एक बहुत बड़ा सवाल है कि सदाचार, भलाई की प्रेरणा कहाँ से मिलेगी? इसका उत्तर कुछ लोगो ने दिया है कि भलाई की प्रेरणा के लिए हर आदमी का कुछ-न-कुछ स्वार्थ सधना चाहिए। जब मनुष्य का हित सधता है, तब उसको अच्छा काम करने की प्रेरणा मिलती है। अच्छे काम की प्रेरणा है स्वार्थ। मनुष्य अपने हित की कामना करता है। उत्पादन बढ़ाया, तो 'पद्मश्री' उपाधि मिलेगी। अच्छे ग्रंथ को पुरस्कार मिलेगा। यानी पुरस्कार कर्म-प्रेरणा हुई। मनुष्य का कुछ गौरव करो, धन दो, कुछ इनाम दो, तो कर्म प्रेरणा होगी। आज का यह सिद्धान्त है।

करुणा इससे बिलकुल विरुद्ध खड़ी है। करुणा कहाँ से आयेगी? वह कहती है कि करुणा से ही करुणा आयेगी। माता-पिता अपना पेट काटकर बच्चो का पालन-पोषण करते है। क्यों करते है? करुणा है इसलिए करते है। करुणा की प्रेरणा से मनुष्य घर मे रह सकता है। मनुष्य को घर याद आता है। क्यो आता है? क्योकि घर मे करुणा का व्यवहार है। इस तरह करुणा काम कर रही है। लेकिन करुणा की धारा बहती नही है। वह घर मे ही सीमित हो गयी है। आज करुणा घर मे बद्ध हो गयी है।

जैसे पानी किसी डबरे मे बद्ध हो गया, तो गधाता है, क्योकि वह बहता नही, आगे नही जाता है, वैसे करुणा की धारा अगर बहती नही रही, घर मे ही संकुचित हो गयी, तो वह आसक्ति का रूप लेती है। पुत्र, पत्नी, माता-पिता तक ही करुणा सीमित रहती है, तब वह आसक्ति बन जाती है। इसलिए गुरुदेव ने कहा कि 'करुणा की धारा बहने दो।' एक गाँव से दूसरे गाँव की ओर, एक जाति से दूसरी जाति की ओर, एक धर्म से दूसरे धर्म की ओर, एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र की ओर, इस तरह सारे मानव समाज में वह बहती रहे।

—विनोबा

आपके पत्र

प्रबन्ध समिति के सदस्यों और साथियों की सेवा में

फरवरी के प्रथम सप्ताह में बाबा ने मेरे एक प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा था : "तुम्हारी बात के साथ मैं पूरा सहमत हूँ कि हर प्रांत से थोड़ी-थोड़ी शक्ति बिहार के पुष्टि-कार्य में लगनी चाहिए। बाबा बैठा है यहाँ, परन्तु उसका ध्यान है बिहार की ओर। आज सुबह ही मैंने निर्मला को वहाँ भेजा और कहा कि ज्यादा-से-ज्यादा समय वहाँ लगाओ। यदि वहाँ काम नहीं होता है तो बाबा फिर से बिहार जा सकता है।"

इस चर्चा के बाद पाँच महीने बीत चुके, बिहार के काम में कोई खास तेजी नहीं आयी। परन्तु जब कि श्री जयप्रकाश बाबू के नये अभियान के साथ नया प्रकरण शुरू हो गया है, ऐसी स्थिति में सभी प्रान्तों के प्रमुख कार्यकर्ताओं की शक्ति बिहार में कुछ महीनों तक लगे, यह आवश्यक है। लोहा फिर से गरम हो रहा है, और उसे कुछ आकार दे सकें, ऐसी स्थिति इस समय पैदा होरही है। अच्छा हो, यदि सर्व सेवा संघ और बिहार ग्रामस्वराज्य समिति इसका आयोजन तुरन्त करे।

बिहारदान की प्राप्ति के समय कुछ साथियों ने प्राप्ति की पद्धति के बारे में कुछ असहमति जाहिर की थी। लेकिन वह आवाज धीमी पड़ी, या तो फिर वह अनसुनी कर दी गयी। बाद में बाबा को कहना पड़ा कि अब दूसरे प्रान्तों में कागजी काम न चले। अभी जिन प्रान्तों में ग्रामदान का कार्य तेजी से चल रहा कहा जाता है, वहाँ से भी उसके कच्चेपन की बात सुनायी पड़ती है।

अच्छा यह होगा कि आन्दोलन की पत्रिकाओं में आगे से जिलादानों की आबादी और भूमि के आँकड़े छापने के बजाय उन जिलों के कितने देहातों में कितने किसानों की, कितनी भूमि कितने भूमिहीनों में बँटी, कितने गाँवों में ग्रामकोष की शुरुआत हुई, कितने गाँवों ने अपनी पूरी जमीन का एक ही खाता कर लिया, आदि जानकारी छापी जाय; प्रांतीय या प्र० भा० सम्मेलनों में भी इसी तरह रिपोर्ट देने का सिलसिला जारी किया जाय। यह आन्दोलन के लिए श्रेयस्कर होगा।

सन् १९५५ में राजस्थान की पदयात्रा में मैंने बाबा से कहा था कि सन् १९५७ तक आन्दोलन ऊपर चढ़ता गया, सारे देश में एक माहौल बन गया, जमीन की कीमतें गिर गयीं। और देश के भूमिवानों को लगने लगा कि अब तो जमीन जानेवाली है और लाखों करोड़ों गरीब भूमिहीनों को लगने लगा कि अब हमें भूमि मिलनेवाली है। ऐसी हालत में आन्दोलन को ढीला पड़ने देने के बजाय आपने किसी बड़े भूमिवाले के खेत पर जाकर कुदाल से खेत की मेड़ तोड़कर यह क्यों नहीं कहा कि यह जमीन की मालिकियत टूटी ? अब आगे से भूमि की व्यक्तिगत मालकियत नहीं रहेगी, ऐसा सत्याग्रह क्यों नहीं किया ? तब विनोबाजी ने कहा कि मैं ऐसा सत्याग्रह करना चाहता हूँ, परन्तु एक साथ सारे देश में ऐसी शक्ति सफल करनेवाले कार्यकर्ता कहाँ हैं ? बाबा ने प्रतिप्रश्न किया तो मैं निरुत्तर हो गया। हम कार्यकर्ताओं की मर्यादाओं की वजह से उनके कितने सपने सपने ही रहे होंगे ! परन्तु आज जब देश में हिंसा तेज हो रही है, ऐसे मौके पर जहाँ-जहाँ गरीबों पर अन्याय हो रहा हो, वहाँ वहाँ अहिंसक सत्याग्रह का आयोजन करके आज की प्रमुख समस्या का समाधान ढूँढ़ने की घड़ी आ गयी है। —वसंत व्यास

कानपुर विश्वविद्यालय तरुण शांति-सेना शिविर (द्वितीय)

युवकों को देश और दुनिया की महत्त्वपूर्ण समस्याओं पर सहचिन्तन करने और इन समस्याओं के समाधान के लिए उनके पुरुषार्थ को जाग्रत करने के उद्देश्य से कानपुर में तरुण शान्ति सेना के कार्यक्रम पिछले तीन वर्षों से सातत्यपूर्वक चल रहे हैं। इसी क्रम में गांधी-शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र, कानपुर द्वारा कानपुर विश्वविद्यालय के आर्थिक सहयोग से गत १ से १२ जून तक फर्रुखाबाद नगर से लगभग २५ मील दूर जनता इण्टर कालेज, राजेन्द्रनगर में एक शिविर का आयोजन किया गया। इस शिविर में ५ जिलों की १४ शिक्षण-संस्थाओं के तीस विद्यार्थियों ने भाग लिया।

शिविर की बौद्धिक चर्चाओं में मुख्य रूप से दुनिया के तरुण-विद्रोह के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया। श्रमदान से सड़क की मरम्मत की गयी। गाँव की समस्याओं का प्रत्यक्ष अध्ययन करने के लिए शिविरार्थी ८ टोलियों में बँटकर गाँव में गये और २ दिन गाँववालों के साथ ही बिताये।

शिविर में भाग लेनेवालों ने 'शिक्षा में क्रान्ति' अभियान चलाने की योजना बनायी है। इसके प्रचार के लिए एकसाथ एक ही दिन में कई क्षेत्रों में हर जगह हस्तलिखित पोस्टर लगाने का कार्यक्रम बना है।

आर्यनगर (कानपुर) इण्टर कालेज में आयोजित तरुण शान्ति-सेना की सभा में 'शिक्षण में क्रांति का अभियान' चलाने का निश्चय किया गया। अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षण-वर्ष के सन्दर्भ में इस वर्ष ६ अगस्त 'तरुण शान्ति-सेना-दिवस' को 'शिक्षा में क्रांति-दिवस' के रूप में मनाने का निश्चय किया गया। इस अवसर पर तरुणों ने १५,००० पोस्टर अखबारों पर लिखकर लगाने का सोचा है।

—विनय अवस्थी

हमारा विकास का काम

ग्रामदान में जब क्रांति का काम होता था तो बार-बार यह प्रश्न उठाया जाता था कि निर्माण का काम कब होगा? कई रचनात्मक मित्रों को इसीलिए ग्रामदान में रुचि नहीं होती थी कि ग्रामदान हो जाने पर भी निर्माण का काम नहीं होता था।

विनोबाजी ने निर्माण और विकास में भेद किया है। उनके विचार में ग्रामदान से एक इकाई के रूप में गाँव का नया जन्म होता है। नया जन्म यानी निर्माण। निर्माण के बाद भौतिक-सांस्कृतिक विकास का क्रम शुरू होता है। इस विकास के अन्तर्गत गांधीजी के सुझाये हुए तथा दूसरे रचनात्मक कार्य आते हैं। निर्माण और विकास के इस भेद के कारण रचनात्मक कार्य को ग्रामदान से एक नया आयाम मिला है। ग्रामदान ने रचनात्मक कार्य द्वारा रचनात्मक सम्बन्धों पर आधारित रचनात्मक समाज बनाने का एक रास्ता खोला है। यह बात पहले उतनी स्पष्ट नहीं थी जितनी आज हो गयी है। सारे रचनात्मक कार्य ग्राम-स्वराज्य के अन्तर्गत आ गये हैं।

इस वक्त देश के कई क्षेत्रों में सघन रूप में रचनात्मक कार्य हो रहा है—कुछ में ग्रामदान के बाद का, कुछ में ग्रामदान के बिना ही खादी-ग्रामोद्योग आदि का। ग्रामदान के बाद के कामों में दो धाराएं हैं। एक में प्रमुखता खेती, और सिंचाई आदि की है, दूसरी में भूमि-सम्बन्धी प्रश्नों की है। खेती-सिंचाई आदि की दृष्टि से सर्व-सेवा संघ और आक्सफॅम (एक ब्रिटिश सेवा-संस्था) के सहकार से कुछ क्षेत्र लिये गये हैं। उनमें दो बरस काम हो चुका है, जिससे कुछ मूल्यवान अनुभव भी हाथ आये हैं। भूमि तथा मालिक-मजदूर के सम्बन्धों को लेकर रचनात्मक कार्य बिहार के कुछ क्षेत्रों में शुरू हुआ है। ग्रामदान की भाषा में इसे पुष्टि-कार्य कहते हैं। ऐसे पुष्टि-कार्य का एक क्षेत्र स्वयं जयप्रकाश नारायणजी ने अपने कठोर संकल्प के साथ लिया है। बिहार के कुछ दूसरे साथी भी अपना अपना प्रयोग-क्षेत्र बनाकर इसी दिशा में काम कर रहे हैं। अभी प्रारम्भ की स्थिति है, इसलिए सफलता की निष्पत्ति बहुत नहीं बतायी जा सकती, फिर भी समस्याओं और सम्भावनाओं का दर्शन भरपूर हो रहा है।

अगर हम रचनात्मक कार्य के खेती-सिंचाई-प्रधान क्षेत्रों को 'विकास क्षेत्र' और भूमि-समस्या प्रधान क्षेत्रों को 'प्रयोग-क्षेत्र' कहें, तो दोनों का मूलभूत अन्तर साफ होता है। अभी तक विकास-क्षेत्रों, जिनमें से पाँच बिहार में ही हैं, के बारे में हम इतना ही कह सकते हैं कि खेती-सिंचाई की योजनाओं से कुछ गरीबों को मदद जरूर पहुँची है, और कुछ गाँवों का उत्पादन भी बढ़ा है, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि विकास की कोई नयी 'डाइनेमिक्स' हाथ आयी है, अथवा लोकशक्ति के संगठन की दिशा में कोई बहुत ठोस काम हुआ है। बल्कि कहा तो यह जा सकता है कि बाहर के पैसे या किलो-दो किलो फूड-फार-वर्क के अनाज के आधार पर स्थूल-निर्माण के काम चाहे कुछ हो भी जायँ, लेकिन जिस प्रकार की लोकशक्ति की बात आज बरसों से हम कहते आ रहे हैं उसका संगठन असम्भव है। उसके लिए विकास-क्षेत्र के कार्य की सारी रीति-नीति में बुनियादी परिवर्तन करना पड़ेगा।

प्रयोग क्षेत्रों में खेती या सिंचाई का काम नहीं है। उनमें काम है संगठन और शिक्षण का। संगठन और शिक्षण में पूरा ध्यान ग्रामदान-मूलक कामों पर है। ग्रामसभा का गठन, बीघा-कट्ठा का वितरण, ग्रामकोष, भूदान की जमीन की बेदखली, मजदूरी, बटाईदारी आदि के भूमि-सम्बन्धी प्रश्न विभिन्न प्रयोग क्षेत्रों में स्थानीय परिस्थिति और शक्ति के अनुसार लिये जा रहे हैं। साथ-साथ ग्रामदान के हस्ताक्षर भी पूरे कराये जा रहे हैं।

यह सारा काम ग्रामदानी गाँव को पुष्ट करने की दृष्टि से किया जा रहा है ताकि वह विकास के रास्ते पर बढ़ सके—ऐसे विकास के रास्ते पर, जिसमें उत्पादन वृद्धि, शोषण-मुक्ति और संस्कारों के परिष्कार का मेल है।

हमारे आन्दोलन में इस बात की जरूरत है कि विकास-क्षेत्र और प्रयोग क्षेत्र दोनों में होनेवाले कार्यों की गहरी छान-बीन हो। लेकिन इतना स्पष्ट है कि विकास के नाम में हमारी संस्थाएँ जो काम कर रही हैं उनकी सम्भावनाएँ अत्यन्त सीमित हैं। समाज-परिवर्तन की दृष्टि से हमारा असली काम शिक्षण और संगठन का ही है। स्थूल-निर्माण की दृष्टि से हम गाँवों को साधन और सुविधाएँ उपलब्ध करा सकते हैं। गाँव-गाँव जाकर योजनाएँ पूरी कराने की जिम्मेदारी हमारी नहीं मानी जा सकती। हमें उसे लेना भी नहीं चाहिए। वह काम ग्रामसभा, प्रखण्डसभा का है, यानी जनता के संगठन का है। विकास उसे करना है, हमें नहीं। वह विकास चाहे, और उसके लिए प्रयत्न करे, यह आकांक्षा और बुद्धि पैदा करना तथा विकास के मूल्य प्रस्तुत करना हमारा काम है। हमारा मुख्य काम है संगठन और शिक्षण का। हम विकास के लिए 'भूमिसेना' का संगठन और शिक्षण कर सकते हैं। हम कोष की व्यवस्था कर सकते हैं। हम सेवा-भावी विशेषज्ञ जुटा सकते हैं। हम अपने केन्द्रों में, या अनुकूल किसानों के साथ शोषण-मुक्त खेती की वैज्ञानिक पद्धति विकसित कर सकते हैं। हमें ऐसी खेती के प्रयोग करने चाहिए जिसमें पूँजी और श्रम का समान स्थान है। ये काम निश्चित रूप से हमारे करने के हैं। हमारा ध्यान अभी तक इस ओर नहीं गया है, अब जाना चाहिए।

प्रयोग-क्षेत्रों में—या सभी क्षेत्रों में जिन्हें ग्रामदान कहा जाता है—मुख्य प्रश्न है 'स्वामित्व विसर्जन' को ग्रामीण जीवन की जीवंत वास्तविकता बनाना। स्वामित्व सर्व का, और निर्णय सर्व का, इन्हीं दो पैरों पर हमारा आन्दोलन खड़ा है, सत्याग्रह की

किस प्रक्रिया और पद्धति से ये दोनों लक्ष्य प्राप्त होंगे, इसकी खोज और प्रयोग होने चाहिए। यह काम हमारे सिवाय दूसरा कौन करेगा? प्रयोग-क्षेत्रों में कुछ काम हो रहा है। लेकिन अभी बहुत काम बाकी है। लोगों के कान तक ग्रामदान का शब्द पहुँच गया है। ग्रामदान के कागज पर लाखों लोगों के हस्ताक्षर हुए हैं। लेकिन हमें स्वीकार करना चाहिए कि ग्रामदान अभी हस्ताक्षर करनेवालों को पुरुषार्थ की प्रेरणा नहीं दे रहा है। जहाँ-तहाँ कुछ अपवाद अवश्य हैं, लेकिन अपवाद अपवाद है।

हम किसी भी तरह का प्रयोग करें—गेहूँ उगायें, गाय पालें, या ग्रामसभाओं का संगठन करें—आज देश में सामाजिक न्याय और सामाजिक परिवर्तन के नाम से जो हिंसा उठ रही है उसका अहिंसक विकल्प हम क्या सुझा सकते हैं, यही हमारे काम की कसौटी है। दूसरी कोई कसौटी न समाज मानेगा, और न हमें स्वयं मान्य होगी। क्रान्ति की पुकार प्रतीक्षा नहीं कर सकती। प्रतिक्रान्ति के भय से तात्कालिक शान्ति रुकी नहीं रह सकती। अन्याय से भरे हुए आज के समाज को प्रहार से बचाया नहीं जा सकता। क्रान्ति को किसी शक्ति का माध्यम चाहिए—वह शक्ति हिंसा की हो, या अहिंसा की। यह समय है कि अहिंसा दृढ़तापूर्वक अपना मजबूत हाथ आगे बढ़ाये, और क्रान्ति के शिशु को प्यार के साथ अपनी गोद में बिठा ले। ग्रामदान हो, खादी हो, शान्ति सेना हो, या और कोई रचनात्मक कार्य हो, वह अहिंसक-क्रान्ति के लिए नहीं तो और है किसलिए?

अहिंसा वर्ग या वर्ण में विश्वास नहीं करती। वर्ग या वर्णवाद का नारा लगाकर क्रान्ति को भटकाने का काम नहीं कर सकता। लेकिन वह पुल कैसे बनेगा, और कौन बनायेगा, जिस पर चलकर नदी के दोनों किनारों पर आँखें लाल किये हुए खड़े मालिक-मजदूर सवर्ण-अवर्ण, एक-दूसरे के करीब आयेंगे? हिंसा को पुल नहीं चाहिए; वह प्रहार का स्थल और अवसर ढूँढ़ती है। अहिंसा को पुल ही चाहिए; क्योंकि वह मिलाना चाहती है, मारना नहीं।

ग्रामदान में यही कोशिश है कि ग्रामसभाएँ गाँव-गाँव में पुल बनें। रचनात्मक काम करनेवाले सोचें कि व्यक्तियों के या लोक-संगठन की इकाइयों के रूप में उन्होंने कितने 'पुल' बनाये हैं।●

विकास और क्रान्ति

क्रान्ति और विकास में फर्क है। विकास करते-करते एक क्षण ऐसा आता है, जब क्रान्ति हो जाती है। जब क्रान्ति होती है, तब बीच का अन्तर टूट जाता है। जब तक वह क्षण नहीं आता, भगवान दूर-दूर रहता है, अन्तर कायम रहता है। लेकिन प्रयत्न हमेशा जारी रखना होगा। बिना प्रयत्नवाद के भक्ति खण्डित होगी। भास कायम रहेगा कि अभी अन्तर बाकी है, परन्तु जब पूरा-का-पूरा परमात्म-पुंज प्रकट होगा, तब वह अन्तर एक क्षण में टूट जायेगा। —विनोबा

भारत का विकास और विदेशी सहायता

अनुदान और कर्ज

(अप्रैल, '५१ से सितम्बर '६९ तक)

स्रोत *	सहायता प्रदान करनेवाले स्रोतों द्वारा निर्धारित रकम करोड़ रुपये	भारत द्वारा द्वारा इस्तेमाल की गयी रकम करोड़ रुपये	भारत द्वारा इस्तेमाल की गयी सम्पूर्ण विदेशी सहायता में विभिन्न स्रोतों का प्रतिशत प्रतिशत
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	६,८०१	६,४१५	५७'८
विश्वबंक तथा अन्य	१,६०५	१,४१९	१२.८
पश्चिमी जर्मन	८६५	७६३	६९
ब्रिटेन	६९७	६२८	५.७
सोवियत रूस	१,०३१	६२४	५.६
कनाडा	६१८	४७२	४.३
जापान	३०८	३०४	२.७
इटली	१६७	१०९	१.०
फ्रांस	१५९	७४	०.७
चेकोस्लोवाकिया	९७	६२	०.६
आस्ट्रेलिया	६०	५८	०.५
नीदरलैंड्	५९	४७	०.४
यूगोस्लाविया	२८	२८	०.३
पोलैंड	५७	२४	०२
स्विटजरलैंड	३६	२३	०.२
बेल्जियम	३०	२१	०.२
आस्ट्रिया	२१	१८	०२
स्वीडन	२६	१३	०.१
डेनमार्क	१४	१०	०.१
नार्वे	१२	१०	०.१
न्यूजीलैंड	६	५	**
हंगरी	१३	—	
बल्गेरिया	११	—	
योग	१२,७६१	११,१३४	१००० ***

* भारत द्वारा इस्तेमाल की गयी सहायता के अनुसार क्रम निर्धारित है।

** ०.०५% से कम। *** तकरीबन।

से आये हैं। नारायण भाई ने कहा है कि सीमा-प्रदेश में जाकर सेवा करो। मेरा नाम डा० दांपी है।" और उनके साथ ही दो नवयुवकों और एक प्रौढ़ सज्जन से उन्होंने मेरा परिचय कराया—'ये हैं बिहार के मोहन भाई झा। ये हैं गुजरात के उम्मेद भाई पटेल, और ये हैं अप्पासाहब के गोपुरी आश्रम के श्री बाघलकर।'

मैंने कहा, "आप पहाड़ में बड़े बुरे मौसम में आये हैं। कहाँ सौराष्ट्र का समुद्र-तट और कहाँ यह बर्फीला हिमालय।"

"हम तो शान्ति-सैनिक हैं। जहाँ आदेश होगा, जायेंगे। सैलानी या तीर्थयात्री होते तो मौसम का ख्याल करते। हम तो यहाँ के लोगों के कष्टों में शामिल होने आये हैं।" उनका यह उत्तर था।

और मेरे सामने प्रति वर्ष मैदानों की लू से मुक्ति पाने के लिए मसूरी और नैनीताल आनेवाले हजारों सैलानियों का दृश्य नाच उठा। दूसरे ही क्षण बद्री-केदार की यात्रा के लिए आनेवाले सहस्रों तीर्थयात्रियों की, जिनको श्रद्धा उन्हें देश के कोने-कोने से खींचकर लाती है, याद ताजी हो आयी। सैलानियों ने हिमालय के प्राकृतिक दृश्यों का रस-पान किया है, और तीर्थयात्रियों ने परलोक के उद्धार के लिए स्वर्ग की हुण्डी हासिल की है। निस्सन्देह दोनों की ओर से पहाड़ के लोगों को रोजगार मिला है। इनके अलावा एक तीसरा वर्ग भी हिमालय में घूमता है और वह है यहाँ की वन-सम्पदा से मुनाफा कमाने वाला व्यापारी वर्ग। पर, विश्वास के साथ दृढ़तापूर्वक यह कहनेवाले कि "हम तो यहाँ के लोगों के कष्टों में शामिल होने आये हैं" कौन हो सकते थे, सिवाय विनोबा के शान्ति-सैनिकों के। इनके सामने न दृश्य-दर्शन की लालच थी, न परलोक में स्वर्ग-प्राप्ति का मोह। वे रोज इस मंत्र का जप करते आये हैं :

'न त्वहं कामये राज्यं, न स्वर्गं न पुनर्भवम्,
कामये दुःख तप्तानां प्राणीनां आर्तिनाशनम्।'

× × ×

जनता के साथ एकरूप

"इनके पाँव पाले से फटकर लहू-लुहान हो गये हैं, पर चप्पल छोड़कर जूता नहीं पहनते। आप इन्हें समझा दीजिए।" मेरे एक साथी ने श्री बाघलकर की ओर इशारा करते हुए मुझसे कहा।

बाघलकरजी के लिए सिल्यारा आश्रम के आस-पास का क्षेत्र सेवा-कार्य के लिए तय किया गया था। वे गाँव-गाँव घूमकर फावड़ा उठाकर लोगों को खाद के गड्ढे बनाने की, निरन्तर चलनेवाली अपनी तकली से वस्त्र स्वावलम्बन की, और सभाओं में प्रवचन कर अहिंसक प्रतिकार की प्रेरणा देते रहते थे। आश्रम में रहने पर खेती और दफ्तर के काम में जुटे रहते थे। इससे पहले कि मैं कुछ कहता वे स्वयं ही उत्तर देने लगे, "मेरे पास तो चप्पल हैं। पर मेरे चारों ओर तो अधिकांश नंगे पाँव चलनेवाले लोग हैं।' मैंने बीच में टोका, 'बाघलकरजी, ये तो यहीं जन्मे और बड़े हुए। इनके पाँवों ने पाला पचा लिया है।"

"पर मैं भी तो महाराष्ट्र के रत्नागिरी जिले का रहनेवाला हूँ। वहाँ का जीवन भी कठोर है। यहाँ से कुछ अधिक मजबूत होकर जाना चाहता हूँ।" उनका उत्तर था।

और, बाघलकरजी स्वयं तो मजबूत बनकर लौटे ही, हमें भी स्वयं कष्ट सहन कर सेवक को "जनता के साथ एकरूप होने' की कामना का पदार्थ पाठ पढ़ा दिया।

ग्राम-निर्माण के प्रेरक

गाँव के प्रधान श्री वाचस्पति के साथ दो नवयुवक गैंती-फावड़ा चलाकर खेत चौरस बना रहे थे। उनका नारा था "अब इन खेतों में मडोरा-कोदा नहीं, गोभी-टमाटर पैदा करेंगे।"

अलकनन्दा की घाटी में चमोली जिले के गडोरा गाँव के निवासी भी अन्य पहाड़ी गाँवों के निवासियों की तरह पीढ़ियों से मडोरा और कोदा उगाते थे। इन मोटे अनाजों में पौष्टिक तत्त्व तो हैं ही नहीं। गाँव के ऊपर सिंचाई के लिए नाली आती थी। उसके नीचे के खेतों को थोड़ी मेहनत से चौरस बनाकर सब्जी की अच्छी क्यारियाँ बन सकती थीं। परन्तु विरासत में पायी हुई उदासीनता और दैव के भरोसे रहने की भावना गाँव को आगे नहीं बढ़ने देती थी। प्रधानजी के साथ काम करनेवाले मित्र हमारे शान्ति सैनिक साथी श्री मोहन झा और श्री उम्मेदभाई पटेल थे, जिन्होंने इस गाँव को अपना सेवा केन्द्र बनाया था। गाँव के बच्चे उनके साथ खेलते, प्रार्थना करते, तरुण पढ़ाई-लिखाई में मदद माँगते, प्रौढ़ देश और दुनिया की बात सुनने आते। गाँव के लोग उनसे प्रेम भी खूब करते। खाने के लिए राशन लाकर देते, परन्तु अपने गाँव के हित के लिए उनके साथ फावड़ा उठाने के लिए आगे नहीं बढ़ते।

प्रधानजी का खेत बना, उसमें सब्जी के बीज बोये गये। देखा-देखी २-३ और सज्जनों ने भी सब्जी की क्यारियाँ बना लीं।

गडोरा अपने उत्तम सढ़रों के लिए प्रसिद्ध है। परन्तु ८ माह में ही मडोरा और कोदा की फसल लेने का मोह न तो सब्जी पैदा करने देता था और न फलदार पेड़ ही लगाने देता।

लेकिन तीन साल बाद ही गडोरा गाँव में फलदार पेड़ की कई फर्लांग लम्बी एक फलपट्टी कायम हो गयी। वहाँ के लोगों को सब्जी पैदा करने का चस्का लग गया। हिमालय के दूरस्थ गाँव में बैठकर मूक-सेवा करनेवाले इन दो युवक शान्ति-सैनिकों की तपस्या फलवती हुई। गडोरा गाँव उत्पादन बढ़ाकर देश की सुरक्षा-शक्ति को मजबूत बनाने के संकल्प को निबाहने में अब भी जुटा हुआ है।

देवता डाक्टर

भागीरथी के दायें तट पर स्थित उत्तरकाशी के छोटे नगर को नया सीमावर्ती जिला बनाने के बाद जिले के मुख्यालय बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यहाँ सिर्फ विश्वनाथ, परशुराम और दत्तात्रेय के प्राचीन मन्दिरों और काशी के माहात्म्य के कारण ही देशभर के हजारों तीर्थ-यात्री नहीं आते, बल्कि सीमाक्षेत्र का अन्तिम बाजार होने के कारण भी दूर-दूर के ग्रामीण यहाँ आते रहते हैं।

दिल्ली के सफेद हाथी : समाजवादी

सरकार और उनके नेता समाजवाद का जप करते नहीं अघाते। तिब्बती लामाओं की तरह हरदम समाजवादी चरखी (सुमिरनी) घुमाते हुए मंच पर समाजवादी संकल्प दुहराते हैं। इन समाजवादी सफेद हाथियों के रख-रखाव का खर्च संसद-सदस्य श्री नारायण दाण्डेकर ने ४ मई '७० को लोकसभा में पेश किया था :

ब्योरा		आयकर से मुक्त रुपयों में
वेतन (२७,०००—आयकर ५,१८०)		२१,७२०
सम्प्चुअरी एलाउन्स —		६,०००
बंगले का किराया —		७,८००
फर्नीचर तथा अन्य फिटिंग्स का किराया		७,००४
माली, चौकीदार और भंगी —		५,०४०
बंगले फर्नीचर, फिटिंग्स, वाटिका के रख-रखाव, मरम्मत सजावट पर व्यय —		१०,०००
बिजली और पानी — —		२,४००
मोटरगाड़ी (निजी प्रयोग)	रुपयों में	
ड्राइवर का वेतन	२,४००	
पेट्रोल	६,०००	
ह्रास	४,२००	
कीमत पर ब्याज	२,१००	
बीमा	६००	
	१५,३०० का ⅙*	६,०६०
निजी सफर	३०,००० का ⅙	६,०००
निजी टेलीफोन	६,००० का ⅙	१,२००
	योग :	७०,९२४

[*आयकर विभाग का नियम है कि जब मोटरगाड़ी और टेलीफोन का प्रयोग तथा सफर निजी तथा व्यावसायिक, दोनों कार्यों के लिए मिश्रित ढंग से किया जाय, तब कुल खर्च का केवल ⅙ भाग निजी आय में जोड़ा जाता है। उसी नियम के अनुसार मोटरगाड़ी, टेलीफोन और सफर का केवल ⅙ भाग मंत्रियों की आय में जोड़ा गया है।]

श्री दाण्डेकर के अनुसार ७०,९२४ रुपये खर्च करने योग्य आमदनी के लिए अन्य किसी व्यक्ति को वर्तमान आयकर की दरों पर ४,४८,००० रु० कमाना पड़ेगा, जिसका ब्योरा उन्होंने निम्न प्रकार प्रस्तुत किया था : रकम रुपयों में

कुल आय	आयकर	सरचार्ज	टोटल आयकर	कर अदायगी के बाद बची आय
४,४८,०००	३,४२,८००	३४,२८०	३,७७,०८०	७०,९२०

इन आँकड़ों के अनुसार ये देशसेवक मंत्री देश के औसत नागरिकों की तुलना में, जिनकी आय ५२५ प्रतिवर्ष है, ८४८ गुना अर्थात् ४ लाख ४८ हजार रुपये वार्षिक आय की सुविधाएँ भोग रहे हैं !•

→१२ फरवरी सन् १९४८ को यहाँ के मणिकर्णिका घाट पर बापू की अस्थियाँ प्रवाहित की गयी थीं। उसी दिन यहाँ के लोगों को सूझा कि उत्तरकाशी में राष्ट्रपिता का कोई स्थायी स्मारक होना चाहिए, और कई वर्षों के बाद वहाँ पर एक कमरे और छोटे बरामदेवाली छोटी कुटिया बन पायी, जिसे उन्होंने 'गांधी वाचनालय' का नाम दिया।

मकान बन गया, पुस्तकें भी आ गयीं, कभी-कभी यह घर खुला भी रहने लग गया। पर यहाँ बैठकर गांधी का दर्शन कौन कराये ? वाचनालय में जीवन का संचार कौन करे ? शान्ति-सैनिक डा० दोषी ने कहा, "हाल ही में आपरेशन कराया है। पहाड़ों पर चढ़ नहीं सकता। उत्तरकाशी में बैठूँगा।"

"परन्तु उत्तरकाशी में तो इतना बड़ा जिला अस्पताल है, कई डाक्टर और सिविल सर्जन हैं। यहाँ आपके पास कौन आयेगा ?" एक कार्यकर्ता ने कहा।

डा० दोषी का उत्तर था, "मैं जानता हूँ मेरे भाई। कौन आयेगा ? मैं वर्षों तक सरकारी अस्पताल में रह चुका हूँ। वहाँ जितनी अधिक दवाइयाँ होती हैं, उतनी ही कम दया होती है।"

और कुछ ही दिनों में उत्तरकाशी जिले के दूर-दूर के गाँवों से रोगियों के झुण्ड-के-झुण्ड आने लगे। 'बीमारियाँ दैवी प्रकोप के कारण होती हैं, और उन्हें शान्त करने के लिए बलि देकर देवता को प्रसन्न करना पड़ता है'— इस तरह की धारणा जिस समाज में फैली हुई थी, वहाँ डा० दोषी की निःस्वार्थ सेवाओं और अपने रोगियों के प्रति हार्दिक सहानुभूति ने इस विश्वास को जमा दिया कि बीमारियाँ गंदगी और असावधानी के कारण होती हैं और इनका इलाज दवाइयों से हो सकता है।

गांधी-वाचनालय की छोटी कोठरी एक ही दिन में कई रूपों में दिखाई देती— प्रातः प्रार्थना-मन्दिर, दिनभर औषधालय और रोगी-परिचर्या का केन्द्र, और रात को डा० दोषी के शयन-कक्ष के रूप में। उसीके साथ एक टिन का कच्चा छप्पर रसोई और गुसलखाने के लिए जोड़ दिया गया।

प्रातः ४ बजे उठकर वे अपने कमरे और आस-पास की सड़क साफ करते, दिनभर के लिए पानी भरते। कपड़े धोते और रसोई की तैयारी करते। इसी बीच उजाला होते ही रोगी आने लगते और फिर तन्मयता से उनकी सेवा में डूब जाते। डा० दोषी स्वयं ही डाक्टर, सर्जन, कम्पाउण्डर, परिचायक और भंगी का काम करते। ५, ७ मील से ही नहीं, २-२, ३-३ दिन पैदल चलकर हताश रोगी उनके पास आते, और उनकी दया और दवा का सेवन कर स्वस्थ होकर गाँव-गाँव में 'देवता डाक्टर' की कहानियाँ लेकर लौटते।

डा० दोषी जून १९६३ तक उत्तरकाशी में रहे। विदाई के दिन उत्तरकाशी का छोटा-सा मोटर अड्डा इस मूक-सेवक, को अश्रुपूर्ण विदाई देने के लिए नगर के वकील, शिक्षक, कर्मचारी, व्यापारी, ब्राह्मण, भंगी, बच्चे-बूढ़े, सभी से घिर गया। उन सबके मन की एक ही माँग थी, "डाक्टर ! फिर कब आओगे ?"•

ग्रामस्वराज्य के संदर्भ में सत्याग्रह

• जयप्रकाश नारायण •

जो प्रच्छन्न हिंसा सारे सामाजिक ढाँचे में व्याप्त है वह समाप्त की जानी चाहिए। यह अहिंसक शान्ति के लिए बिलकुल जरूरी है। जमीन की मिल्कियत इस हिंसा में बहुत बड़ी भागीदार है। इसकी समाप्ति के लिए समझा-बुझाकर और प्रेम से लोगों के तैयार हो जाने पर भी यदि कुछ रुकावट रहती है तो उसे सत्याग्रह, *अहिंसक असहकार या अहिंसक प्रतिकार* के द्वारा हल किया जाय। समाज में ज्यादा लोग समझे हों, पर कुछ न समझे हों, तभी यह सत्याग्रह सम्भव है।

'नमूनावाद' नहीं

सियासी लोग मानते हैं कि विनोबा ने गांधी के सत्याग्रह के अस्त्र को भोथरा *बना दिया है। पर यह गलत है। गांधीजी* ने स्वयं कहा है कि हमारा आदर्श सौम्य "परसुएशन" द्वारा परिवर्तन है। सत्य को लोगों के सामने लाना, और उस पर लोग अमल कैसे करें यह समझाना, इसका *नाम ही सत्याग्रह है।* एक कदम आगे का स्पष्ट हो जाय तो हमारे लिए पर्याप्त है। हर कदम सही दिशा में हो तो कदम-ब-कदम उस मंजिल पर पहुँचेंगे, जहाँ हमें जाना है। गांधीजी ने हमें *लोकहृदय-परिवर्तन का रास्ता जनमत प्रशिक्षित* करने का बताया है। यही सत्याग्रह है। इसीको भूदान-आन्दोलन में जमीन की मिल्कियत मिटाने के काम में लगाया गया है—"सबै भूमि गोपाल की—नहीं किसीकी मालिकी" यह समझाकर। भूदान के बाद ग्रामदान का काम उस दिशा में अगला कदम है। ग्राम-समाज तभी बनेगा जब पहले ग्राम-भावना बनेगी, गाँव में सामूहिक ममत्व पैदा करने का काम किये बिना यह नहीं होगा। सामुदायिक विकास के काम में यह भावना *कभी रही नहीं थी,* इसलिए वह निष्फल सिद्ध हुआ। *कुछ विकास-काम* अवश्य उसके कारण हुए, पर उसमें ग्रामभावना *विकसित होने के बजाय घटी।* उसीकी पूर्ति आज ग्रामदान कर रहा है सम्पत्ति के बँटवारे और सामूहिक निर्णय शक्ति के विकास के द्वारा। २० वाँ हिस्सा जमीन का, ४० वाँ *अपने उत्पादन या श्रम का* हरएक देगा। इस प्रकार हर शख्स कुछ-न-कुछ देगा ग्रामसभा के लिए। सामूहिक-निर्णय के क्षेत्र में पंचायतराज *के कारण तो जात-पाँत का बोलबाला* बढ़ा है और उसमें गाँव के टुकड़े हुए हैं। ग्रामदान में दलमुक्त सामूहिक निर्णय एकमत के आधार पर करने से यह *टलेगा।*

नमूनावाद का विचार गलत है। एक गाँव में अच्छा काम हो और वह नमूना बन जाय तो भी उसका बाकी जगहों पर असर नहीं होता। इसलिए जरूरी है कि *विस्तृत आधार पर परिवर्तन कराया* जाय। ग्रामदान में ७५ प्रतिशत लोग तथा ५१ प्रतिशत जमीन ग्रामदान के लिए मान्य करते हैं। पहले कदम में तो इसकी मंजूरी होने पर ग्रामदान-प्राप्ति होती है। यह कागजी ही है यह सच है। पर दूसरा कदम है पुष्टि का, जो तय हुआ उस पर अमल करने का। जो गांधी की तस्वीर है राजनैतिक स्वरूप की, वह ग्राम-पंचायतें पूरी नहीं करतीं; क्योंकि उनमें सामूहिक *भावना पनपती नहीं। आज तो यह होता* है कि साल में दो बार पूरी ग्रामसभा को मिलना चाहिए, पर पाँच प्रतिशत गाँवों में भी यह नहीं होता। न सामूहिक-कार्य है, न सामूहिक निर्णय।

ग्रामस्वराज्य यानी 'न्यू लेफ्ट'

ग्रामराज या ग्राम प्रजातंत्र के बारे में गांधीजी बराबर जोर देते रहे। ग्रामस्वराज्य को आज "न्यू लेफ्ट" और बागी विद्यार्थी समाज में 'पार्टीसिपेटरी डेमाक्रेसी' का नाम देते हैं। लोक-शासन का *काम लोक-प्रातिनिधिक शासन द्वारा हो नहीं पाता।* ग्रामसभा जनता को अपने शासन की ओर बढ़ाती है। ग्रामकोष के द्वारा बड़ी मात्रा में लोगों की अपनी ताकत से ग्राम विकास के लिए धन एकत्र होता है। *हजारों करोड़ रुपये ग्रामदान की* पद्धति से मिल सकेगा। ग्राम-संगठन और शासन को भी इसीके द्वारा बदला जा सकता है।

यह आन्दोलन राजनीति से अलग नहीं है पर आज के राजनैतिक सत्ता स्थलों को हथियाने की भावना इसमें नहीं है, बल्कि यह उनको परिवर्तित करना चाहता है, *प्रातिनिधिक प्रजातंत्र के स्थान* पर सहभागी प्रजातंत्र में।

राष्ट्रीयकरण आसान, लेकिन ग्रामीकरण?

बिहार में समझाने का काम ग्रामदान के पहले कदम के रूप में पूरा हो चुका है। वहाँ पिछले १९ सालों में हर गाँव में जाकर ग्रामदान की बात समझायी *जा चुकी है। पर अब भी अगर कहीं,* जो संकल्प लोगों ने किये हैं, उनको पूरा करने में रुकावट आती है तो उस स्थिति में सत्याग्रह की पद्धति निकाली जा सकती है। आज तो जमींदारी क्षेत्रों में 'लैण्ड रेकार्ड" ही नहीं है। कानूनी अधिकार के *बारे में जानकारी नहीं है।* ऐसे ही क्षेत्रों में नक्सालपंथी तीव्र हैं। स्थापित हितोंवाले ऊँची जातिवाले और जमीनवाले हैं, उन्होंने प्रभुत्व जमाया हुआ है पूरे ग्राम-जीवन पर। व कानूनन, गैरकानूनन सब *प्रकार से हिंसा करते रहते हैं।* उन्होंने कानून को पूरी आजादी से भंग किया है। कानून से क्रांति नहीं होगी, कहीं नहीं हुई है भारत में और भी असंभव है, यह बात स्पष्ट होनी चाहिए। भूमि-*स्वामित्व के संबंध में सरकार कानून बना* *दे, तो भी उन पर अमल कराने की ताकत* *शासन में नहीं है।* बिहार में कम्यूनिस्टों के प्रभाव की सरकारों ने भी कानून बनाये, पर वे भी उनको अमल नहीं करा सके। छोटे प्रभुत्वगुटों का हर पार्टी में बोलबाला है, कांग्रेस में भी और दूसरे दलों में भी। उन्हींके हाथों में सारे वोट रहते हैं। उनके खिलाफ कोई बोल नहीं सकता। चम्पारन एक बदनाम जिला है। वहाँ→

पहाड़ों में सिमटी जिन्दगी और शान्ति के सिपाही

[सैलानियों, तीर्थयात्रियों, व्यापारियों के रूप में मैदानी इलाकों से हिमालय की उदार प्रकृति और सीधे-सरल लोगों के बीच हर आदमी कुछ-न-कुछ लेने ही जाता है। सौंदर्य, स्वर्ग और सम्पत्ति के लोभ में खिंचकर आये हुए लोग शायद कभी उनकी बात नहीं सोचते, जो इस यानकी की झोली सदा-सर्वदा भरते आये हैं। लेकिन कुछ ऐसे भी हैं, जो हिमालय में गये, इनसे भिन्न प्रेरणा लेकर। वे शान्ति के लिए सेवा करनेवाले वहाँ 'सेवा देने' हेतु गये। उनके सेवा-कार्य के सहयोगी, स्वयं हिमालय की गोद में पैदा हुए हिमालय के सक्रिय सेवक श्री सुन्दरलाल बहुगुणा ने ऐसे ही सेवकों के कुछ अनुभव प्रस्तुत किये हैं, जो वास्तव में अत्यन्त प्रेरक हैं।—सं०]

सन् १९४६ में जब 'भारत छोड़ो' आन्दोलन की सफलता स्पष्ट दीखने लगी, तो आजादी के अधिकांश लड़ाकों की निगाहें दिल्ली, लखनऊ और अपने जिले की कुर्सियों की ओर लगीं। इस भीड़-भाड़ के बीच से इंग्लैंड में पली-पुसी और बड़ी हुई एक प्रौढ़ महिला ने बापू से पूछा, "बापू, मैं अब हिमालय की सेवा करना चाहती हूँ और हिमालय में भी सदियों से पीड़ित, और उपेक्षित महिला समाज की।"

बापू ने अपना आशीर्वाद देते हुए कहा, "जरूर करो! मैं यही चाहता हूँ, पर इसका परिणाम तुम्हें जीते जी मिल जाय, इसकी आशा मत करना।"

यह महिला सरला बहन (मिस कैथरिन हेलीमैन) थीं। अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध कौसानी के छोटे-से गाँव में उन्होंने कस्तूरबा महिला उत्थान मण्डल नाम की संस्था की ओर से बालिकाओं के एक आश्रम की स्थापना की। सरला बहन दूर-दूर के गाँवों से आयी हुई इन नन्हीं लड़कियों की माँ, शिक्षिका और सेविका सब कुछ बन गयीं।

× × ×

और, कुछ वर्षों के बाद उनकी तपस्या के फल स्पष्ट दीखने लगे। अपनी ससुराल, मायके और घास-लकड़ी के जंगलों की छोटी-सी दुनिया में सिमटी हुई पहाड़ी महिलाओं में से कस्तूरबा ट्रस्ट की ओर से गाँव-गाँव में सेवाकार्य के लिए बैठनेवाली सेविकाएँ निकल पड़ीं। यही नहीं, विनोबा के भूदान-अभियान के लिए भी गाँव-गाँव घूमकर अलख जगानेवाली बहनें कौसानी में तैयार हुईं, और फिर अपनी छोटी-सी टोली को लेकर सरला बहन स्वयं उत्तराखण्ड में विनोबा का सन्देश फैलाने के लिए निकल पड़ीं।

इस कार्य को स्थायी स्वरूप देने के लिए सन् १९५५ के प्रारम्भ में श्री मानसिंह रावत और शशिप्रभा रावत गढ़वाल जिले में जा बैठे। इस प्रकार एक और आश्रम की स्थापना टिहरी-गढ़वाल जिले के खिल्यारा गाँव में जून १९५६ में हुई। और तीसरा जनाधारित ग्राम-सेवा-केन्द्र पिथौरागढ़ जिले के बोंगाड गाँव में जनवरी सन् १९६१ में शुरू हुआ।

× × ×

'हिमालय के लिए मेरे मन में भारी आकर्षण है। हिमालय का नाम लेकर ही मैं घर से निकला था। अब वहाँ के गाँव-गाँव में सर्वोदय का सन्देश पहुँचना चाहिए'—यह विनोबा की आकांक्षा थी। इसे पूरा करने के लिए उत्तराखण्ड के कुछ इने गिने नवयुवक, जिन्हें सरला बहिन का मातृत्व प्राप्त हुआ था, आगे बढ़े। गाँव-गाँव में 'प्रेम से रहो और बाँटकर खाओ' का मन्त्र गूँज उठा। कुछ गाँवों में भूदान प्राप्त हुआ। कई स्थानों पर शान्ति-सेना की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कार्य हुए। इन कार्यों को आगे बढ़ाने की प्रेरणा देने के लिए कई बार दादा (आचार्य धर्माधिकारीजी) ने उत्तराखण्ड में शिविर किये और स्वर्गीय ब्रह्मदेव वाजपेयी तो गाँव-गाँव में पैदल घूमकर एक सच्चे शान्ति-सैनिक की छाप लोगों के मन पर छोड़ गये।

वेड़छी-सम्मेलन में भारत-चीन सीमा संघर्ष के सन्दर्भ में सीमा-क्षेत्रों की ओर सारे देश के कार्यकर्ताओं का ध्यान गया। दुनिया की निगाहों में अलग-थलग पहाड़ की अन्धेरी से भी अन्धेरी गुफाओं में बसे हुए पहाड़ी गाँव शान्ति-सैनिकों की कर्मभूमि बनें, यह जे०पी० की माँग थी। रचनात्मक संस्थाएँ और कार्यकर्ता संगठित रूप से वहाँ पर कार्य प्रारम्भ करें, यह सबने महसूस किया।

योजना बनी, और काम शुरू हुआ। इस काम का अनुभव अपने आप में एक दिलचस्प और प्रेरक दास्तान है।

× × ×

हम तो लोगों के कष्टों में शामिल होने आये हैं!

दिसम्बर की एक ठंडी रात कोटि हरी के ठाकर बाबा छात्रावास में हिमालय के काट खानेवाले पाले के थपेड़ों के कष्ट को छिपाते हुए एक गुजराती सज्जन ने मुझसे कहा, "हम ४ शान्ति-सैनिक हैं। बाकी

→गांधीजी ने भी काम शुरू किया था। वहाँ गरीब को कोई संरक्षण नहीं। १० प्रतिशत जमीन, जो हमने भूमिहीनों में उस जिले में बाँट दी, उसे पुनः प्रभुत्वशाली वर्ग ने अपने कब्जे में कर ली। कानून बने तब भी उन पर अमल नहीं किया जाता, और निहित स्वार्थी लोगों का राज चलता है। राष्ट्रीयकरण करना आसान है, क्योंकि उसमें थोड़े-से उद्योगपतियों का सम्बन्ध आता है। पर गाँवों में काम करने का मतलब है वोट देनेवाले और दिलानेवालों को छेड़ना, उसकी हिम्मत कोई नहीं करता। मार्क्सिस्ट लोगों ने कानून के साथ जन-आन्दोलन का उपयोग किया। पर उससे वहाँ जो हिंसा चलती है वह पार्टी पार्टी के बीच भड़कती है। जो आंतरिक हिंसा है उसे दूर रखना हो तो अब हमें सत्याग्रह भी करना होगा। (सप्रेस)

सर्वोदय-पर्व की पूर्वतैयारी
रचनात्मक कार्यकर्ताओं से निवेदन

पिछले आठ दस वर्षों मे ११ सितम्बर (विनोबा-जयंती) से २ अक्तूबर (गांधी-जयंती) तक सर्वोदय-पर्व बराबर मनाया जा रहा है। इन तीन सप्ताहों में विविध प्रकार के आयोजनों द्वारा घर-घर सर्वोदय साहित्य पहुँचाने के प्रयास किये जाते हैं। इसे विनोबाजी ने 'शारदारंभ शारदोपासना' का पर्व कहा है।

अभी-अभी हमारे देश मे और विदेशों मे भी गांधी जन्म शताब्दी-वर्ष मनाया गया है। यह वर्ष भी गांधी शताब्दी वर्ष ही है।

एक ओर देश की करोड़ो करोड़ जनता गांधी शताब्दी मनाती है, तो दूसरी ओर नक्सालवादियो की ओर मे गांधी-साहित्य जलाया जा रहा है। चारों ओर अशांति, विद्रोह, संघर्ष और मानव मर रहा है। नक्सालवादी अथवा हिंसात्मक क्रान्ति मे विश्वास रखनेवाले यह समझ गये हैं कि उनका मुकाबला करने की ताकत गांधी विचार में ही है। अहिंसक क्रान्ति की संभावनाओं को निष्फल बनाने के लिए वे गांधी-साहित्य जला रहे हैं।

ऐसे समय अहिंसा मे विश्वास रखनेवालों का क्या दायित्व है? क्या केवल नक्सालवादियो को भला-बुरा कहकर चुप बैठ जाने से अहिंसक समाज-रचना हो जायगी? या हमने गांधी-विचार के सान्निध्य मे बैठकर अहिंसक क्रान्ति को सफल बनाने का विश्वास संजोया है तो हम अहिंसक-क्रान्ति का सही जवाब देना पड़ेगा?

हिंसक क्रान्ति तभी रुक सकती है जब कि जनमानस अहिंसक क्रान्ति के, अहिंसक समाजरचना के बुनियादी उसूलों को समझे। विचार-परिवर्तन के बिना जनता सही राह पर नहीं जा सकती। इसका प्रथम कदम यह है कि घर-घर सर्वोदय-साहित्य पहुंचाने का जोरदार अभियान चलाया जाय।

गांधी शताब्दी पर्व में रचनात्मक कार्यकर्ताओं का विशेष दायित्व है कि वे सर्वोदय-विचार को पूरी शक्ति से घर घर पहुँचायें। लोगों को अध्ययन की प्रेरणा दें, और इस तरह अहिंसा का वातावरण तैयार करने मे मदद करें।

सच पूछा जाय तो अब तक सर्वोदय विचार और गांधी-विचार घर-घर मे पहुँचा ही नहीं, और जहां पहुँचा है, वहां उसे पूरा पढ़ा नहीं गया। और तो और, रचनात्मक कार्यक्रमों मे लगे कार्यकर्ता तक अध्ययन के प्रति उदासीन हैं। घर-घर साहित्य पहुँचाने का काम आत्मविश्वास पूर्वक वे ही कार्यकर्ता कर सकते हैं, जो विचार को समझे हैं। जिन्होंने सर्वोदय-साहित्य पढ़ा है।

हमारी रचनात्मक संस्थाओं मे सबसे मजबूत और शक्तिशाली संगठन खादी-ग्रामोद्योग संस्थाओं का है। इन संस्थाओं मे लगे प्रत्येक पढ़े-लिखे कार्यकर्ता का कर्तव्य है कि स्वयं सर्वोदय साहित्य लें और उसका अध्ययन करें। सर्वोदय-मंडल, शान्तिसेना तथा ग्रामदान मे लगे कार्यकर्ताओं का तो सीधा सम्बन्ध क्रान्ति से है। उन पर तो अध्ययन की विशेष जिम्मेदारी है, क्योंकि सर्वोदय-साहित्य प्रचार से उनका सीधा सम्बन्ध है।

सर्व सेवा संघ ने गांधी स्मारक निधि तथा गांधी शान्ति-प्रतिष्ठान के सहयोग से गांधी-शताब्दी-पर्व मे सर्वोदय-साहित्य का एक सेट प्रकाशित किया है। इसमें गांधी-विचार की अर्थात् देश मे अहिंसक समाज-रचना की सभी मूलभूत बातें गांधी-विनोबा के शब्दों मे आ गयी हैं। हम चाहते हैं कि देश मे ऐसा कोई पढ़ा लिखा घर शेष न रहे, जहां यह सर्वोदय-साहित्य सेट न पहुँचे। लेकिन सबसे पहले आवश्यक यह है कि हमको, यानी कार्यकर्ताओं को—चाहे वे खादी के हों या ग्रामदान के ↓

—चर्चा समाप्त करते हुए बाबा ने कहा, "अब हमारा यह सप्ताह भी यहीं बीतेगा।" सुनते ही बहनों ने तालियां बजायीं। बाबा ने हंसते हुए कहा, "अब हम आनन्द मे यहां बैठना नहीं चाहिए।"

मंदिर से निकलकर बाबा बाहर आये और कुटी के सामने जामुन के पेड़ के नीचे सफाई मे मग्न हो गये। ('मैत्री' से)

—कुसुम

गांधी जन्म-शताब्दी-सेट : सर्वोदय-साहित्य-सेट

पृष्ठ १४०० से १५००, रु० ७)

पुस्तक	लेखक	मूल्य
१ आत्मकथा (१८६९–१९१९)	गांधीजी	१.००
२ बापू-कथा (१९२०–१९४८)	हरिभाऊजी	२.५०
३ तीसरी शक्ति (१९४८–१९६९)	विनोबा	२ ५०
४ मेरे सपनों का भारत (संक्षिप्त)	गांधीजी	१ ५०
५ गीता-बोध व मंगल-प्रभात	गांधीजी	१ ००
६ गीता-प्रवचन	विनोबा	२ ००
७ संघ-प्रकाशन की एक पुस्तक		१ ००
८ दो चित्र (गांधी-विनोबा)		
		११ ५०

यह पूरा साहित्य-सेट केवल रु० ७) मे प्राप्त होगा।

ऊपर की प्रथम पांच किताबों का पृष्ठ १००० का साहित्य-सेट केवल रु० ५) मे प्राप्त होगा।

मुख्य कार्यालय : सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१

फोन : ६४२८५, ६४३९१, तार : 'सर्वसेवा'

: सोमवार, २० जुलाई, '७०

ग्रामस्वराज कोष

शीघ्रता करें, समय कम है !

प्रिय बन्धु,

मैंने निवेदन किया था कि प्रांतीय संग्रह का कम-से कम १०% अंश हर माह के अंत में यहाँ केन्द्रीय कार्यालय को भेज दें। जून का महीना समाप्त हो चुका है। आपसे प्रार्थना है कि आपके यहाँ जो भी नकद संग्रह हुआ हो उसका १०% तुरन्त यहाँ "ग्रामस्वराज कोष" के नाम ड्राफ्ट या चेक से भेजने की कृपा करें।

प्रारंभ से ३० जून तक आपके यहाँ जितना संग्रह हुआ हो, नकद या करार, उसकी जानकारी भी भेजें। जुलाई के अंत में सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति तथा कोष समिति की बैठक हो रही है, उस समय सब प्रांतों की अद्यतन जानकारी पेश की जा सके इस दृष्टि से ता० १५ जुलाई तक आपकी ओर से पूरी जानकारी अवश्य मिल जानी चाहिए।

कोष संग्रह के लिए आपने जो विशेष कार्यक्रम बनाया हो या आपके प्रदेश में कार्यकर्ताओं या संस्थाओं ने कोई विशेष संकल्प या योजनाएँ की हो तो उसकी जानकारी जरूर भेजें, जिससे एक-दूसरे को योजनाओं का लाभ सब उठा सकें। उदाहरण के लिए कुछ क्षेत्रों में या शहरों में अगले दो महीने कुछ कार्यकर्ताओं ने गाँव-गाँव, घर-घर जाकर संग्रह करने का कार्यक्रम बनाया है। कुछ प्रांतों ने २५ या ५० पैसे के टिकट या बिल्ले बनाये हैं। कुछ जगह मजदूरों से एक दिन की मजदूरी और उतनी ही रकम कारखानेदारों से प्राप्त करने के प्रयत्न चल रहे हैं। कहीं लोगों से एक दिन के वेतन या आय की मांग की गयी है, और उन्होंने दी है, इत्यादि। आपके यहाँ भी ऐसी विशेष बात हो तो उसकी पूरी जानकारी जरूर दें।

११ सितम्बर नजदीक है। समय बहुत कम है। कम-से कम-दो महीने हम पूरा समय और शक्ति कोष के काम में लगा देंगे, तो अवश्य सफलता मिलेगी। अनुभव यही आ रहा है कि जहाँ-जहाँ कार्यकर्ता काम में जुट गये हैं वहाँ लोगोंकी ओर से अच्छी प्रतिक्रिया प्रकट हुई है।

आपका

सिद्धराज ढड्ढा

मंत्री

→हरिजन सेवा के हों या मजदूर-सेवा केन्द्र—सबको तुरंत एक-एक सर्वोदय साहित्य सेट तथा कुछ अन्य पुस्तकें निजी तौर पर खरीद लेनी चाहिए और सर्वोदय साहित्य-पक्ष प्रारम्भ होने के पूर्व यानी ११ सितम्बर से पहले पढ़ लेना चाहिए। प्रचार की पूर्वतैयारी के लिए इतना कर लेना अत्यन्त जरूरी है।

इस पूर्वतैयारी के बाद जो कार्य प्रारम्भ होगा, वह बहुत ही उत्साहवर्धक और सफलता लिये हुए होगा। यही हिंसक-शक्ति के दावेदारों को सही जवाब होगा और देश की सुरक्षा भी इसीमें है। अहिंसक-प्रयास की सफलता इसीमें है कि अगर नक्सलवादी एक जगह गांधी-साहित्य जलाते हैं तो हम सौ जगह उसे पहुँचायें।

लोग शान्ति के प्यासे हैं, पातक से, भय से, मुक्ति चाहते हैं। वे खोज रहे हैं, टटोल रहे हैं, पर जो चाहिए वह उन्हें मिल नहीं रहा है। गांधी विनोबा साहित्य में वह चीज है। प्रश्न सिर्फ उसे प्यासों तक पहुँचाने का है। अभी तो गांधी-विचार के प्रचार का काम सागर में बूंद के बराबर भी नहीं हुआ है।

खादी-कमीशन ने संचालकों से सोचा था कि खादी-केन्द्रों को दो सौ रुपये की खादी के पीछे कम-से-कम एक सेट जरूर बेचना चाहिए। यह प्रमाण चाहे और कम करके, पाँच सौ रुपये की खादी के पीछे एक सेट का कर दिया जाय, लेकिन इतना काम भी हो सके तो वह भी गांधी-विचार को फैलाने में बड़ा सहायक होगा।

—राधाकृष्ण बजाज

अध्यक्ष

सर्व सेवा-संघ प्रकाशन

संग्रह-अभियान में नये प्रयोग

हैदराबाद नगर में सामाजिक कार्यकर्ता घर-घर जाकर चन्दा उगाह रहे हैं। उन्हें एक घर से रु० १००० प्राप्त हुए। कडोली (जिला बेलगाँव) में एक महिला यात्री-दल पहले से ५ जिलों का भ्रमण कर रहा है। इसके अतिरिक्त ४० कार्यकर्ताओं की टोलियाँ श्री सदाशिवराव भोसले के नेतृत्व में सतत पदयात्रा कर ६ जिलों में गाँव-गाँव से कोष-संग्रह करेंगी। यहाँ नगरों में तथा विशेषकर श्रमिक क्षेत्रों में भी कार्य हो रहा है, तथा लोगों को एक दिन की मजदूरी या वेतन दान देने को कहा जा रहा है।

रेवाड़ी (हरियाणा) में भूतपूर्व अध्यापक व स्वतंत्रता के सिपाही वयोवृद्ध श्री कंवर कृष्णजी पदयात्रा पर निकले हैं, जो कि ७५ दिन तक चलती रहेगी तथा ११ सितम्बर १९७० को समाप्त होगी। इन्होंने अभी तक रु० २२५ तथा ६० किलो अन्न संग्रह किया है। जिला गांधी-जन्म-शताब्दी समिति के अध्यक्ष ने रु० १०१ दान में दिये हैं। रेवाड़ी जिले में कुल संग्रह रु० ४०० हो गया है। हिसार गांधी अध्ययन केन्द्र, जो निरन्तर संग्रह में संलग्न है, उसने अपना संग्रह रु० १४०१'३० तक बढ़ा लिया है।

कई और जिलों में संग्रह-कार्य प्रारम्भ

गुजरात के कच्छ क्षेत्र में गांधीधाम में, प्रधान मंत्री श्री सिद्धराज ढड्ढा की उपस्थिति में रु० १८५० से कोष संग्रह प्रारम्भ हुआ। प्रसिद्ध सर्वोदयी लोकनायक श्री कुन्दनलालजी ने इस कार्य में पहल की। इसके पहले गुजरात के श्री मुकुन्द भाई मेहता ने रु० ५०१ का दान दिया था।

राजस्थान में कुल संग्रह रु० ३०७५ हुआ है, जिसमें रु० १००० श्याम काटेज इन्डस्ट्रीज, कोटा, रु० ११७५ सर्वोदय-केन्द्र सोमसर तथा रु० ३२० खादी ग्रामोद्योग केन्द्र, डिबडासपुरा के हैं। अधिकांश उल्लिखित राशि कार्यकर्ताओं की एक दिन की कमाई है।

कुछ जिलों के लक्ष्यांक

जोधपुर (राजस्थान), कोलाबा व→

विनोबा-निवास से

चौबीस घंटे आनन्द

बगशाहब का बेटा अशोक छुट्टी में घर आया था। उसने एक दिन बाबा से पूछा, "पश्चिम के जवान जब कोई आन्दोलन (विद्रोह) करते हैं, तो उनके पीछे कुछ मूल्य है, ऐसा लगता है। हमारे देश के जवानों के आन्दोलन के पीछे शुद्ध स्वार्थ से अधिक शायद ही कुछ होता है। इसका कारण क्या है ?"

बाबा ने कहा, 'यह भेद इसलिए है कि दुरून डोंगर साजरे'—दूर से पहाड़ सुन्दर दीखते हैं। नजदीक से जो दीखता है, वह शुद्ध मालूम होता है। असल में जैसे यहाँ कम-ज्यादा है, वैसे ही वहाँ भी कम ज्यादा है। मुख्य बात यह है कि उन लोगों को युद्ध का अनुभव है। दूसरे महायुद्ध में, केवल एक जर्मनी में दो करोड़ से ज्यादा लोग मारे गये थे ज्यादातर जवान थे। बचे बूढ़े और स्त्रियाँ। देश को फिर से खड़ा करने का काम उन लोगों ने किया। युद्ध से कितना नुकसान होता है, यह उन लोगों ने देखा है। हमें वैसा अनुभव नहीं है। उन पर जो बीती, वह हम पर नहीं बीती। इसलिए हम जरा ज्यादा बहकते हैं।"

ब्रह्मविद्या-मंदिर की विजया बहन सिरदर्द से परेशान थीं। आजकल उनका आहार इत्यादि बाबा के मार्गदर्शन में चला है। एक दिन बाबा ने उनसे कहा, 'दर्द बढ़ता है, तब नामस्मरण करती हो या नहीं ? दुख दो प्रकार के होते हैं। एक, शारीरिक, और दूसरा मानसिक। मानसिक दुख वियोग, क्रोध, द्वेष इत्यादि के कारण होता है। सिरदर्द शारीरिक दुख है, ता नामस्मरण के लिए दिक्कत नहीं। बचपन में मेरे सिर में बहुत दर्द होता था। तब मैं गणित की किताब लेकर पढ़ाई करने बैठ जाता था। वेदना जब तीव्र हो जाती थी, तब मैं गणित की किताब छोड़ देता था और जोर-जोर से कहता था—'मेरा सिर नहीं दुखता, मेरा सिर नहीं दुखता।' बीच बीच में फिर कहता था—'दुखता है, दुखता है।' मैं सो जाता था। माँ मेरे लिए हलुआ बनाती थी। वह खाकर मैं घूमने चला जाता था। स्कूल के रास्ते पर ही जाता था। मुझे देखकर स्कूल के लड़के पूछते थे—'क्या रे, स्कूल में क्यों नहीं आया ?' मैं कहता था—'मेरे सिर में दर्द है।' 'तो अभी कैसे घूमने निकला ?' वे पूछते थे। 'अब मैं अच्छा हूँ, यों कहकर मैं उन्हें भी अपने साथ खींचकर ले जाता था।"

सात जून ! इतवार ! सुबह से अध्ययन, अध्यापन, विष्णुसहस्रनाम, मुलाकातें इत्यादि सब नित्य के अनुसार हो रहा था। सवा ग्यारह बजे थे। बाबा नित्य के अनुसार चारपाई से उतरकर अपनी छोटी मेज के पास बैठ गये। बगशाहब, जानकी माताजी, कालिन्दी-बहन, विजयाबहन, बालभाई की भाभी बीणा, सब लोग सामने बैठे थे। बाबा ने वेद की किताब खोली और अचानक कहा, "आज सात जून है। ५४ साल पहले इसी दिन हम बापू के पास पहुँचे थे। पचास साल उनकी आज्ञा के अनुसार सेवा की, और चार साल पहले वह सारी सेवा उनको समर्पित कर मुक्त हो गये आज सात जून है, तो क्यों न ब्रह्मविद्या मंदिर जाया जाय ? सात दिन वहाँ रहने का तय कर सकते हैं।" माताजी 'ना, ना' कहने लगीं। बाबा ने जयदेवभाई की ओर देखते हुए पूछा, 'क्यों रे, तुम्हारी क्या राय है ?' उन्होंने कहा, "ठीक है।" और साढ़े ग्यारह बजे बाबा निकल पड़े। एक हाथ में लाठी, दूसरे हाथ में जयदेव भाई का हाथ। पैदल निकले। माताजी और बगशाहब साथ थे। अणु बाईदेऊ भी थीं। करीब सवा मील चलने के बाद गाड़ी आयी, तो गाड़ी में बैठकर बाबा ब्रह्मविद्या-मंदिर पहुँचे। शान्तिकुटी में साढ़े छः मास निवास रहा। बिना पूर्वसूचना के बाबा ने जाने का जाहिर कर दिया, तो गोपुरी के लोग भी जान नहीं सके। वहीं, नजदीक प्राकृतिक चिकित्सालय है। वहाँ के मरीज रोज विष्णुसहस्रनाम के पाठ के लिए आया करते थे। गोशाला के शर्माजी, भाऊ पानसे और उनका परिवार, सर्व सेवा संघ के लोग, सर्वोदय मंडल के लोग रोज शाम को बाबा के पास आया करते थे। बाबा के ब्रह्मविद्या-मंदिर चले जाने की खबर सुनने के बाद, सब लोग बाबा से मिलने के लिए आये। एक मरीज बहन ने कहा, "शान्तिकुटी की तरफ देखा नहीं जाता है। खाली स्थान देखकर रोना आता है।" गोपुरी को अपना निवास-स्थान बनाने के लिए आये हुए बम्बई के श्री जगन्नाथजी ने कहा, 'अयोध्या से राम के चले जाने के बाद अयोध्या की जो हालत हुई थी, वैसी हालत गोपुरी की लगती है।"

डा० रविशंकर शर्मा शाम को बाबा के पास आये। उनसे बाबा ने कहा—"सात दिन के लिए हम यहाँ आये हैं। हम अपने को बाँध लेना नहीं चाहते। उधर बिहार में नक्सलवादियों ने सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को धमकी दी है, यह खबर सुनकर, जयप्रकाशजी अपना आराम का कार्यक्रम रद्द कर, बिहार के गाँव गाँव में घूम रहे हैं। और हम अपना 'माईंड,' (दिमाग) बंद रखें, यह हो नहीं सकता। हमने अपना 'ओपन माईंड' (दिमाग खुला) रखा है।"

इधर बाबा के आने की खबर सुनते ही, ब्रह्मविद्या मंदिर की बहनों के आनन्द को उफान आया था। भाई-बहनें बाबा के निवास की तैयारी में जुट गये थे। बाबा-कुटी में बाबा का निवास है। पहले दो-तीन दिन, बहन रोज शाम को बाबा की कुटी के बाहर आँगन में आकर बैठती थीं। बाबा भी बैठते थे। सहज बातचीत होती थी। एक दिन बाबा ने कहा, "यहाँ तो हमने एक ही कार्यक्रम दिया है—आनन्द ! चौबीस घंटे आनन्द करो। इतनी ही बात है कि पुराने जमाने में ब्रह्मविद्या की साधना सामूहिक दृष्टि से हुई नहीं था, व्यक्तिगत थी। ऐसे, वेद-

काल में ऋषियों ने सामूहिक चिंतन किया हुआ दिखायी देता है, पर बहनों ने इस प्रकार किया हो, ऐसी जानकारी नहीं। इसलिए इस आश्रम की कसौटी, यहाँ सामूहिक भावना कितनी पैदा हुई, उस पर है। मीराबाई, मुक्ताबाई, वगैरह जो हो गयीं, उनके लिए एक ही कसौटी थी, आध्यात्मिक-निष्ठा। क्योंकि उन लोगों ने समूह बनाया नहीं था। यहाँ समूह है, इसलिए सामूहिक कसौटी भी है। दूसरी बात, इस जमाने में, जब कि इतना दारिद्र्य सब दूर है, लाखों लोगों को पूरा खाना भी नहीं मिल रहा है, उस हालत में ब्रह्मविद्या केवल भिक्षा पर नहीं रह सकती। इसलिए यहाँ थोड़ा उद्योग भी रखा है।'

दो चुनौतियाँ

रामभाऊ ने बाबा से माँग की कि 'बाबा रोज सुबह साढ़े-पाँच बजे परधाम प्रकाशन विभाग में आयें और वहाँ के भाइयों से चर्चा करें।' प्रकाशन विभाग 'बाबा-कुटी' से एकाध फर्लांग दूर है। पाँच दिन, रोज सुबह बाबा वहाँ जाते थे। एक दिन सुबह जोरदार बारिश हो रही थी। फिर भी बाबा निकले, 'रमारमण गोविन्दो हरि' कहकर। कीचड़वाला रास्ता पार करते हुए और परधाम आश्रम का टीला चढ़ते हुए बाबा को पदयात्रा की याद आ गयी। वहाँ की चर्चा में एक बार बाबा ने जे० पी० के मुजफ्फरपुर जिले में गाँव-गाँव घूमने का जिक्र करते हुए कहा

"आज हमारे सामने दो चुनौतियाँ खड़ी हैं : एक कम्यूनिजम (साम्यवाद), दूसरा कम्यूनलिजम (सम्प्रदायवाद)। अगर देश के अन्दर गरीब लोग असन्तुष्ट होंगे, तो बगावत करेंगे और उसका लाभ चीन उठा सकता है। अगर कौमी तनाव रहा, तो उसका लाभ पाकिस्तान उठा सकता है। ये हमारे पड़ोसी हैं। उनकी ताकत खतम होगी, अगर हम गरीबी का प्रश्न शांतिमय तरीके से हल करेंगे और हिन्दू-मुस्लिम जमातों में प्यार का रिश्ता पैदा करेंगे। हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रश्न की तरफ बाबा 'लाग रेंज' (दूरदृष्टि) से देखता है। और जमीन की समस्या का हल 'शार्ट रेंज' (त्वरा दृष्टि) में सोचता है। सरकार इससे उलटा सोचती है। जमीन की बात 'लाग रेंज' में सोचती है और हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न 'शार्ट रेंज' से सोचती है।"

एक सप्ताह पूर्ण हुआ। दूसरे सप्ताह का प्रथम दिन–इतवार आया। बाबा का निर्णय सुनने के लिए सब बड़े उत्सुक थे। बाबा ने एलान किया—"यह सप्ताह हमारा यहीं बीतेगा, लेकिन हम ज्यादातर मौन रहेंगे।" इस सप्ताह में बाबा का मौन ही रहा। सुबह ५॥ से ६ बजे तक समूह के लिए समय दिया था। आश्रमवासियों के प्रश्न के जवाब में कुछ कहते थे। इसके अलावा कोई व्यक्ति खास समय लेकर प्रश्न पेश करता, तो उसके साथ चर्चा होती थी। बाकी समय सायणाचार्य का वेदभाष्य लेकर बैठ जाते थे। कभी आँगन में बैठकर सफाई करते थे। घास के तिनके, कचरा आदि चुनने का काम। दिनभर में—सुबह और दोपहर में—डेढ़-दो घंटे आँगन की सफाई का काम चलता है। कभी नीचे रास्ते पर, गांधी-छत्री के आसपास की भी सफाई होती है। कभी दोपहर में बहनों के प्रेस विभाग में चले जाते हैं। काम करते समय आँखों पर प्रकाश न पड़े इस तरह बैठने को कहते हैं। कभी किसीके कमरे में चले जाते हैं। काकाजी (श्री बालू भाई मेहता) के कमरे में तो करीब रोज ही जाते हैं। एक दिन तो उनके साथ शतरंज खेलने में एक घंटा बिताया।

एक दिन दोपहर को बाहर निकल पड़े। साथियों को पता नहीं चला, किधर जा रहे हैं। पहले तो आश्रम के पीछेवाले खेत से आगे बढ़े। लगा, शायद सुरगाँव जा रहे हैं। लेकिन गये नाग-टेकड़ी पर। कड़ी धूप थी। बीच में दो बार पाँच-पाँच मिनट बैठे। टेकड़ी पर पहुँचने के बाद भी बैठे। वहाँ के पत्थर देखकर बालभाई से पूछने लगे, "क्यों रे पत्थरशास्त्री! ये पत्थर कितने हजार साल पुराने होंगे? इस पर जो लेयर्स (स्तर) दीखते हैं, वे एक एक करोड़ साल पुराने होंगे या नहीं?" साढ़े चार साल पहले जब ब्रह्मविद्या-मंदिर में निवास था, तब चन्द साथियों को साथ लेकर बाबा ने उस टेकड़ी पर एक रास्ता बनाया था। वह रास्ता कायम था। उस टेकड़ी पर एक छोटा-सा तालाब है, उसके किनारे थोड़ी देर बाबा बैठे। टेकड़ी पर बड़ी बड़ी ईंटें भी मिलती हैं। बाबा का कहना है कि पुराने जमाने में यहाँ राजधानी होगी। उस दिन डेढ़-पौने दो घंटे की सैर हुई।

संकेत या प्रवाह?

एक दिन अभय बंग के नेतृत्व में वर्धा की तरुण-शान्ति-सेना की टोली ब्रह्मविद्या-मंदिर में आयी थी। वे लोग दिनभर आश्रम में रहे। खेत में घास चुनने का काम किया। शाम को, उनके साथ बाबा ने गपशप की। हर एक का परिचय पूछा, उम्र पूछी और कहा, 'तरुण शान्ति-सैनिकों को साईकिल चलाना, तैरना, पेड़ पर चढ़ना आना चाहिए। रसोई बनाना भी हर एक को आना चाहिए।"

तीसरा इतवार आया। सब भरतराम-मंदिर में इकट्ठा हुए थे। क्या ऐलान होगा? बाबा ने पहले तो प्रश्नों के जवाब देना आरम्भ किया। गीता बहन ने पूछा था, "बाबा सात दिन का कार्यक्रम कैसे तय करते हैं? भगवान से संकेत मिलता है, या प्रवाह में तय होता है?" बाबा ने कहा

"भगवान से संकेत तो नहीं मिलता, न प्रवाह में तय होता है, लेकिन संकेत मिलता है। मान लीजिए, चिड़िया उड़ गयी, उसकी तरफ ध्यान गया, तो बाबा कहता है, चिड़िया उड़ गयी, खास आकर्षण नहीं हुआ, ध्यान गया नहीं, तो चलो छोड़ो स्थान को, संकेत मिल गया।" मुझे यहाँ (ब्रह्मविद्या-मंदिर) खींचनेवाली शक्ति 'भरतराम' है। लेकिन भरतराम तो सब दूर, दुनिया में व्यापक है, इस वास्ते इसी स्थान में रहना चाहिए ऐसा बन्धन भरत-राम डालता नहीं। फिर भी आकर्षण होता है।" →

मद्य-निषेध के लिए सामूहिक सत्याग्रह

—गाँव ने गाँव को व्यसन मुक्त कराया—

(हमारे विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

२८ जून '७० कोई मेले का दिन नहीं था और न ही कोई त्योहार का दिन। फिर भी तेज धूप में ५० से अधिक स्त्री-पुरुष और बच्चों का एक जुलूस जलकूर नदी को पार करता जा रहा था। नदी में कमर भर पानी था, लेकिन वह भी उनकी हिम्मत तोड़ न सका। इस दल में तीर्थयात्रियों की श्रद्धा और तपस्वियों की कष्ट-सहन करने की उत्साही वृत्ति थी। उनका तीर्थ और तपोभूमि बननेवाला था—पिपलोगी गाँव। जलकूर घाटी के शिक्षण और जागरण केन्द्र लम्बगाँव के उस पार बसा हुआ पिपलोगी गाँव है, जहाँ राजाओं के शासनकाल में दारू की भट्ठी थी और उसके बाद से निरन्तर अवैध शराब चुआने का केन्द्र था। एक-दो नहीं, लगभग ५० परिवारों के इस गाँव में आधे से अधिक लोग इस घृणित व्यवसाय में फँसे हुए थे। स्त्रियाँ, पुरुष और बच्चे सभी इसकी लपेट में आ चुके थे। कुछ असहाय परिवारों के, और खास तौर से विधवा स्त्रियों के लिए यह रोजगार का साधन था। बच्चे लम्बगाँव के इण्टर कालेज में पढ़ने जाते तो कंधे पर किताबों का झोला और दोनों हाथों में एक ही तरह के अल्यूमिनियम के डिब्बे होते थे। एक में दूध और दूसरे में शराब भरी होती थी। लम्बगाँव के होटल चाय भी बेचते थे और शराब भी। इण्टर कालेज सरस्वती का मन्दिर था, परन्तु उसके ऊपर का बाजार शराब का प्रसार-केन्द्र।

×   ×   ×

यह स्थिति उस क्षेत्र के विचारवान लोगों के लिए असहनीय थी। गांधी-शताब्दी के सिलसिले में सरस्वती विद्यालय के नेतृत्व में, जिसकी स्थापना के साथ टिहरी रियासत के स्वातन्त्र्य-संग्राम की परम्पराएँ जुड़ी हुई हैं, कन्या-विक्रय और पशुबलि की कुप्रथाओं के खिलाफ सफल जन-आन्दोलन हुए थे। तीन-चार महीने टिहरी में महिलाओं द्वारा चलाये गये शराबबन्दी आन्दोलन की वीरतापूर्ण कहानियाँ उन्होंने सुनी थीं। ये परीक्षा के दिन थे, फिर भी लम्बगाँव में 'शराबबन्दी के लिए टिहरी चलो' का नारा गूंज उठा था। वे टिहरी पहुँचते, इससे पहले टिहरी का सत्याग्रह सफल हो गया। सरकार ने शराबबन्दी की घोषणा कर दी। इससे अवैध शराब के अड्डे स्वतः ही समाप्त हो गये। पर पिपलोगी में आधी रात के बाद भी जलनेवाली भट्ठियाँ लम्बगाँव के समाज-सेवकों के लिए चुनौती थीं।

×   ×   ×

"क्या पुलिस के पास इसका इलाज है?" पुलिस पर से तो उनका विश्वास उठ गया था। पास के लवारखा गाँव में कुछ महीने पहले सहकारी ऋण की वसूली के लिए पुलिस का डेरा पड़ा था। भय और आतंक के कारण कुछ लोग गाँव छोड़कर भाग गये थे। बकरों का बलिदान हुआ था, और रुपयों से जेबें गरम हुई थीं। जाँच-पड़ताल के लिए तहसीलदार आये और अन्याय की कहानी पर हमेशा के लिए स्याही पुत गयी। जिस व्यक्ति ने सहकारी ऋण का पैसा वसूल कर अपनी मोटर गाड़ी में खर्च कर दिया था, उसका कुछ नहीं हुआ। ऋण की वसूली अपनी जगह पर है। इस तजुरबे को दुहराने के लिए कोई तैयार नहीं था।

इस बीच सर्वोदय के विचारक ७६ वर्षीय श्री शंकरराव देव सर्वोदय का संदेश सुनाने लम्बगाँव गये। पास के नोघर और बौसाड़ी गाँवों में भी उनकी सभाएँ हुईं। लोकशक्ति के सम्बन्ध में लोगों को कुछ सोचने का मौका मिला। स्त्रियाँ भी खेत और चूल्हा छोड़कर सभा में आयीं। "७६ वर्ष का बूढ़ा हमारे लिए इतनी दूर आ सकता है, तो क्या हम अपने पड़ोस के गाँव में जाकर शराबबन्दी नहीं करा सकते?' काफी रात बीतने तक इस प्रकार का मंथन चलता रहा।

और अगले दिन ढोल-नगाड़ों के साथ इन दोनों गाँवों से जुलूस निकल पड़े। जब वे लम्बगाँव से गुजर रहे थे तो अधिकांश लोग उपहास भरी निगाहों से देख रहे थे, परन्तु उस पार पिपलोगी में अप्रत्याशित हलचल शुरू हो गयी थी। लाहन और शराब के भरे हुए टिनों को लोग झाड़ियों में छिपा रहे थे। जिस समय जुलूस गाँव में पहुँचा, कई लोग छज्जों पर बैठकर यह सोचकर हँस रहे थे कि खूब बेवकूफ बनाया। गाँव के मंडाण' (पाण्डव नृत्य का पंचायती चौक) में जुलूस समाप्त हुआ और स्त्रियों के अलावा शेष लोग गाँव के कई मुहल्लों में बँट गये। इनमें से दो टोलियाँ झाड़ियों और लकड़ियों की कठगली (ढेरों) के नीचे से लाहन के टिन और शराब चुआने के बर्तन लेकर लौटीं।

पिपलोगी के कुछ बुजुर्ग बैठने के लिए निरपाल और मेहमानों के लिए हुक्का ले आये। धीरे धीरे गाँव के लोग आये, परन्तु स्त्रियाँ नहीं आयीं। गाँव के एक मुख्य व्यक्ति ने अपना अपराध स्वीकार करते हुए कहा, "मैं स्वयं अपने पीने के लिए शराब चुआता था। जो दण्ड चाहो दो।"

→रत्नागिरि (महाराष्ट्र) में एक एक लाख, महाराष्ट्र के ही कोल्हापुर में ५१,००० रु०, धारणा में ५०,०००, मध्य प्रदेश के सतना में २५,००० रु० का लक्ष्यांक तय हुआ है।

भण्डारा में कोष-संग्रह

महाराष्ट्र के भण्डारा जिले में गत ८ से ३० जून '७० तक कई टोलियों ने घूम-घूमकर अर्थ संग्रह का काम किया। तीन प्रखण्डों से २,२०० रुपये का संग्रह हुआ। जिले में जून के अन्त कुल तक संग्रह ३,००० रुपये तक पहुँचा है। •

बहिनों में से एक ने कहा, "हम अपने साथ हुए अन्याय का फैसला कराने आयी हैं। तुम्हारी स्त्रियां क्यों नहीं आती? वे जंगल में पत्रावल (वन-रक्षक) के लिए शराब ले गयी, बदले में उसने पेड़ काटकर उन्हें लकड़ियां दी। और हम खाली जुडी-दाथुडी (रस्सी-दराती) लेकर वापस लौटीं। तुम मर्दों ने नाक काटकर जेब पर रख दिए हैं। अब हम तुम्हारे गांववालों को घास-लकड़ी के लिए जंगल में नहीं आने देंगी, जब तक शराब छोड़ने की प्रतिज्ञा नहीं कर लोगे।"

इसी बीच गांव के एक घर से जोर-जोर से गालियां देने की आवाज आयी। कुछ स्वयंसेवक घर के अन्दर जाकर देखना चाहते थे। एक विधवा बहिन जो 'घर की मालकिन थी, इसका विरोध कर रही थी।

शाम हो रही थी। पहाड़ों में यह समय बहिनों के लिए रसोई की तैयारी, पशुओं को बांधने व गाय दुहने का होता है। इसलिए धरना देने आये पुरुषों ने बहिनों को यह विश्वास दिलाकर वापस भेजा कि हम यहां से आपके उद्देश्य की पूर्ति करके ही हटेंगे। १५ सत्याग्रहियों का एक दल इसी स्थान पर यह घोषणा करके बैठ गया, कि "जब तक इस गांव के सब लोग सामूहिक और व्यक्तिगत रूप से शराब बनाना व पीना छोड़ने का संकल्प नहीं करेंगे, हम यहां से नहीं हटेंगे। हम इस गांव का अन्न भी ग्रहण नहीं करेंगे।" रात बिताने के लिए तिरपाल ताने गये।

× × ×

इस घोषणा का गांव पर जादू का-सा असर हुआ। नवयुवकों का एक दल घर-घर घूमा। झाड़ियों और खेतों में शराब बनाने व रखने के बर्तन ढूंढ़ लाया। रात को देर तक विचार-विमर्श और उसके बाद कीर्तन होता रहा। सुबह गांव के लोगों के साथ उस स्थान की सफाई करने व चौरस करने का काम प्रारम्भ हुआ। लम्बगांव से एक सज्जन ने मिठाइयां भेजीं। धरना देनेवालों ने तय किया कि, "यद्यपि हम लोग एक दिन से अधिक उपवास नहीं रखेंगे, परन्तु कीमती चीजें ग्रहण नहीं करेंगे। गरीब लोग जो खाते हैं वही भोजन करेंगे।"

पास के इलाके के पटवारीजी यह जानने के लिए आये कि वे किस प्रकार धरना देनेवालों की मदद कर सकते हैं। उनसे निवेदन किया गया कि "हमारा दण्डशक्ति पर विश्वास नहीं है।" लोग उनके सामने खुलकर बातें नहीं करते थे।

आज गांव की बहिनें काम पर नहीं गयीं। उनके सामने धरना देनेवालों ने अपना अभिप्राय रखा। सबके चेहरों से प्रायश्चित की भावना झलक रही थी। उन्होंने सामूहिक रूप से अपने घरों को शराब के व्यसन से मुक्त करने की घोषणा की। इसके बाद पुरुषों ने एक-एक करके शपथ ली। इस बीच कल दोपहर को जोर-जोर से गाली देनेवाली बहिन भी आ पहुँची, और सारी सभा के सामने फूट-फूटकर रोने लगी। उसने अपनी गलतियों के लिए क्षमा मांगी और भविष्य में शराब न चुआने की शपथ ली।

गांव के युवकों की खुशी का ठिकाना न था। उनकी मद्य-निषेध-समिति सजीव हो उठी। भविष्य में अधिक मुस्तैदी से काम करने का पदार्थ-पाठ उन्हें मिल चुका था। सायंकाल ४ बजे के करीब रिम-झिम वर्षा हो रही थी।

जलकूर में बाढ़ का पानी बढ़ गया था। पिपलोगी से लम्बगांव की ओर नदी पार करता हुआ जुलूस जा रहा था, मद्य-निषेध का संदेश लम्बगांव में और वहां से पूरे क्षेत्र में पहुंचाने के लिए। इसमें बौंसाडी, नौघर और लम्बगांव के ही नहीं पिपलोगी के लोग भी थे।●

'ग्रामदान से समाज बदलेगा'

—ग्रामदानी गांव के एक किसान की अभिव्यक्ति—

गत २७ जून से २ जुलाई तक मुजफ्फरपुर के वैशाली क्षेत्र में बीघा-कट्ठा वितरण-यात्रा हुई। उस यात्रा में मैंने कई भूमि देनेवाले और भूमि पानेवाले व्यक्तियों से चर्चाएं कीं। इसी क्रम में पटेढ़ा पंचायत के मुखिया और एक प्रभावशाली किसान श्री श्यामनारायण बाबू से मेरी जो बातचीत हुई, उसे यहां ज्यों-का-त्यों प्रस्तुत कर रहा हूं। इस प्रश्न-चर्चा से यह स्पष्ट होता है कि समझदार किसान ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन को नेतृत्व देने की पूरी क्षमता रखते हैं, और उनकी सहज व्यावहारिक-बुद्धि की पकड़ आन्दोलन को ठोस आधार दे सकती है। वैशाली क्षेत्र में इस तरह के कई किसान आगे बढ़कर ग्रामदान-पुष्टि के काम में अपनी शक्ति लगा रहे हैं। उन्होंने अपनी ओर से बीघा-कट्ठा निकालने के लिए एक अपील भी छपवायी है, जिसे गांव-गांव में बांटा जा रहा है। इन लोगों का चिंतन इस दिशा में भी चल रहा है कि बार-बार समझाने पर भी जो लोग बीघा-कट्ठा नहीं निकालेंगे, उनके दरवाजे पर हम लोग धरना देंगे। ऐसे स्थानीय व्यक्तियों की सक्रियता से आन्दोलन को महत्त्वपूर्ण योगदान प्राप्त होगा, ऐसी आशा बन रही है।

प्रश्न : आपको अपनी कीमती जमीन में से बीसवां भाग भूमिहीनों के लिए दान में देने की प्रेरणा क्यों हुई?

उत्तर : जहां तक मेरा सवाल है, मैंने स्वराज की लड़ाई के समय भी कुछ काम किया था। स्वराज के बाद वह नहीं हो सका, जो होना चाहिए था। इस दलबन्दी के कारण देश की स्थिति में कोई खास सुधार नहीं हुआ। बल्कि दलगत राजनीति से समाज की स्थिति और बिगड़ती चली गयी। इसीका नतीजा हम आज अपने सामने देख रहे हैं। अब जब तक हम गरीब और मजदूर लोगों को अपना नहीं बना लेते, और जब तक वह समुदाय यह नहीं महसूस करने लगता कि यह गांव हमारा है, यही हमारी जमीन है, हमारा

मुजफ्फरपुर की डाक से

विभिन्न स्तरों पर आन्दोलन की हलचल

विरोध करनेवालों के रुख में परिवर्तन प्रारम्भ

मालिक मजदूर के बीच एक-दूसरे की समस्याओं को समझने की भूमिका बनी

मुजफ्फरपुर के मोर्चे से प्राप्त जानकारी के अनुसार इस समय जिस पंचायत में श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा ग्रामस्वराज्य का सघन अभियान चलाया जा रहा है, उस नरौली पंचायत के मोमिनपुर गाँव में ग्रामसभा बन गयी है। बीघा-कट्ठा का वितरण भी शुरू हो गया है। इस पंचायत के ४० ग्रामीण युवकों का एक तीन दिवसीय शिविर जे० पी० के पड़ाव के नजदीक के स्कूल में सम्पन्न हुआ। पूरी पंचायत में बीघा-कट्ठा वितरण और ग्रामसभा के गठन की पूरी कोशिश हो रही है, और जल्दी ही काम पूरा हो जाने की आशा है।

मलहा पंचायत (जिसमें जे० पी० ९ जून से २५ जून तक थे) में काम को पूरा करने का प्रयास जारी है। माधोपुर गाँव में एक बड़े किसान—जो अब तक ग्रामदान के विरोधी माने जाते थे—ने भी बीघा-कट्ठा का वितरण कर दिया है।

जिले के दूसरे दो प्रखण्डों मरौल और सकरा में भी अभियान शुरू हो गया है। गत १४-१५ जुलाई को आचार्य राममूर्ति के मार्गदर्शन में एक गोष्ठी हुई। काम की विस्तृत योजना बनी। आगामी १६ अगस्त को प्रखण्ड के १९ प्रमुख किसानों की भूमि का बीसवाँ भाग भूमिहीनों को बाँटने का एक समारोह किसी केन्द्रीय स्थान पर करने का निश्चय हुआ है।

जिले के एक प्रमुख किसान के सुझाव पर इसी अगस्त महीने के मध्य में ५ भूमिवानों और ५ बेजमीन खेतिहर मजदूरों के प्रतिनिधियों की एक बैठक होने जा रही है। इस बैठक में दोनों तरफ के लोग अपनी-अपनी समस्याएँ खुलकर रखेंगे, और आपसी समझौते का कोई आधार तय करेंगे, जिसको जिले भर में क्रियान्वित किया जायगा।

जिले के हाजीपुर और सीतामढ़ी अनुमण्डल में भी काम शुरू हो रहा है। विद्यालयों के खुल जाने के बाद विद्यार्थियों में इस अभियान की ओर आकर्षण बढ़ा है। आशा की जाती है कि ऊँची कक्षाओं के कुछ छात्र इस काम में शीघ्र ही लगेंगे।●

→सभा संगठित हो जायगी, तो दलों का प्रभाव खतम हो जायगा, ऐसा आप मानते हैं। लेकिन इस सरकारी अड़चन का क्या इलाज आप सोचते हैं ?

उत्तर : जब पूरे इलाके में ग्रामसभाएँ मजबूत हो जायेंगी, तब ग्रामसभा के ही आदमी जाकर सरकार बनायेंगे। फिर वे ग्रामसभा के अनुकूल कायदा-कानून बनायेंगे। इस तरह सरकार पर ग्रामसभा का कब्जा हो जायेगा।

प्रस्तुतकर्ता : रामचन्द्र राही

आन्दोलन के समाचार

राजस्थान के २५ प्रखण्डों में २५०० ग्रामदान

राजस्थान समग्र सेवा संघ ने अपने प्रादेशिक सर्वोदय सम्मेलन जयपुर के अवसर पर राजस्थान प्रदेशदान का संकल्प लिया। राजस्थान की रचनात्मक संस्थाओं के सहयोग से राजस्थान के १५ जिलों के २५ प्रखण्डों में ग्रामदान अभियान आयोजित किये गये। आयोजन की फलश्रुति स्वरूप राजस्थान प्रान्त में अब तक लगभग २,५०० ग्रामदान प्राप्त हो चुके हैं।

समस्तीपुर अनुमण्डलीय तरुण शांति-सेना शिविर

गत १० जून से २१ जून '७० तक सरायरंजन उच्च विद्यालय में समस्तीपुर अनुमण्डलीय शिविर सम्पन्न हुआ। शिविर में १२ शिक्षण-संस्थाओं के कुल ७० तरुणों, छात्रों, शिक्षकों ने भाग लिया।

शिविर का दैनिक संचालन शिविरार्थियों द्वारा ही बड़ी कुशलता से हुआ। शिविर के दौरान सरायरंजन प्रखण्ड के ११ गाँवों का सेवा-कार्य भी शिविरार्थियों ने किया।

अ० भा० लोकयात्री दल का कश्मीर में कार्यक्रम

२२-७-७० पहलगाम

२३-७-७० बटकोटा

२४-७-७० ऐशमुकाम

२५-७-७० सीर

२६-७-७० }
२७-७-७० } मत्तन

२८-७-७० अच्छबल

२९-७-७० शांगस

३०-७-७० कोकरनाग

३१-७-७० }
१-८-७० } काजीगंज
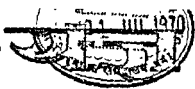
२-८-७० नौगाँव

पता :

मा० श्री गांधी आश्रम, श्रीनगर, कश्मीर

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैं०), विदेश में २२ रु० या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ४३

सोमवार २७ जुलाई, '७०

सम्पादक

राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,

राजघाट, वाराणसी-१

फोन : ५४२८५

मुसहरी प्रखण्ड के नागरिकों से

मित्रो,

६ जून से आज तक आपके प्रखण्ड के सलहा, नरौली, बुधनगरा पंचायतों में रहकर मैं आप लोगों से गाँव के संगठन तथा विकास के लिए ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रम की चर्चा करता रहा। मैंने, और मेरे साथियों ने, जिस ग्रामस्वराज्य के विचार की चर्चा की, वह आपको जँचने लगा है ऐसा मैं मानता हूँ। इस विचार को मानकर जिन ग्रामीण भाइयों ने ग्रामदान के घोषणापत्र पर हस्ताक्षर कर दिया है, इसके लिए उन्हें हृदय से धन्यवाद! आशा है, ग्रामदान के विचार को समझ-बूझकर वे ग्रामदान में भी शीघ्र ही शामिल होंगे।

ग्राम स्वराज्य की मुख्य शर्तें

यानी, १–भूमिहीनों के लिए बीघा-कट्ठा निकालना,

२–ग्रामसभा का गठन करना,

३–ग्रामकोष इकट्ठा करना, और

४–गाँव की रक्षा के लिए ग्राम-शान्तिसेना का गठन, आदि की चर्चा मैं आपसे करता रहा हूँ। इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन से गाँव की छिपी हुई निर्माण शक्ति लोकशक्ति के रूप में प्रकट होगी और गाँव की आज की परिस्थिति बदलने में देर नहीं होगी।

गाँव गाँव में गाँव का राज्य हो सकता है, इस कल्पना में अभी आपमें से कुछ लोगों की आस्था जमी नहीं है, इसलिए उनके दिल के दरवाजे इस विचार के लिए खुले नहीं हैं। ऐसे लोग जब तक स्वेच्छा से ग्रामस्वराज्य का विचार स्वीकार नहीं करते, तब तक उन्हें समझाने का हमारा प्रयास जारी रहेगा।

आज १७ जुलाई को कुछ आवश्यक काम से मैं बाहर जा रहा हूँ। परन्तु मेरे साथी आपके बीच काम करते रहेंगे। पुनः मैं ४ अगस्त को लौट रहा हूँ, और बाकी पंचायतों में एक-एक कर जाऊँगा। मैं फिर से आपको सूचित करना चाहता हूँ कि जब तक इस प्रखण्ड का काम पूरा नहीं होगा, मैं इसी प्रखण्ड में रहनेवाला हूँ।

अब तक इन पंचायतों में २० दाताओं द्वारा १४ बीघा ५ कट्ठा भूमि बीघा-कट्ठा में प्राप्त और वितरित हुई है।

मुझे विश्वास है कि बचे हुए लोग भी अपना बीघा-कट्ठा देकर और गाँव की सर्वसम्मत ग्रामसभा का गठन कर ग्रामस्वराज्य का मार्ग प्रशस्त करेंगे।

आपका,

नरौली

१७-७-'७०

[signature]

एक आगाही

'भूदान-यज्ञ' में जयप्रकाशजी की सराहना करनेवाला श्री चदावारजी का पत्र मैं पढ़ा और विस्मित हुआ। संस्थाओं की जमीन के बारे में उन्होंने जो कुछ लिखा है वह बेतुका और बेमतलब है। ग्रामसभा की आखिर सत्ता ही तो होगी। और हमने माना है कि भूमि का स्वामित्व व्यक्ति का नहीं, ग्रामसभा का होगा। ग्रामसभा पूरी जमीन के लिए फसल की योजना बनायेगी। खाद, बीज, यंत्र आदि के लिए सहायताएँ प्राप्त करेगी। अगर ग्रामसभा के खिलाफ भी सत्याग्रह किया जाने लगे, तो भूदान-यज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रांति का उद्देश्य ही विफल हो जायगा। दत्तपुर (वर्धा के पास) में कोढ़ियों की बस्ती है। उनकी अपनी जमीन है, जिसमें वे फसलें उगाते हैं। क्या दत्तपुर की जमीन पर भी सत्याग्रह किया जा सकता है? ऐसे अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। गांधीजी ने जो कल्पनाएँ देश के सामने रखी थीं, उन दिशाओं में अगर हमको प्रयोग करने हैं, तो हमें विवेक करना होगा। 'मन धान बाइस पसेरी' का हिसाब हम करें, तो वह सत्याग्रह नहीं दुराग्रह होगा। 'स्थितप्रज्ञ-दर्शन' में विनोबा ने इसका अच्छा वर्णन किया है: "व्यवहार में विवेक और भावना का संतुलन होना चाहिए।" मैं यह देखता हूँ कि श्री चदावार साहब जैसे सत्याग्रह के हिमायती इस बात को भूल रहे हैं। सत्याग्रह को ऐसे लोग बदनाम करेंगे, ऐसा डर है।

महात्मा गांधीजी ने एक बार हिंसा-अहिंसा के मार्ग के बारे में चर्चा करते हुए बताया था कि "लोगों को यह कभी भूलना नहीं चाहिए कि सेना के लिए जितना अनुशासन तथा संगठन आवश्यक होता है, उससे कई गुना अधिक अनुशासन तथा संगठन अहिंसक सत्याग्रह के लिए आवश्यक है।" अगर ऐसा नहीं हुआ तो हमारी अहिंसा भी बेकार साबित होगी और उसको हम निबाह भी नहीं पायेंगे। ऐसा संगठन अगर नहीं है तो अहिंसा हिंसा का मार्ग प्रशस्त करने का काम करेगी। सत्याग्रही के लिए जिस नैतिक बल की आवश्यकता है वह बल नहीं है, तो हमारी हालत 'धोबी का कुत्ता न घर का, न घाट का' जैसी होगी। हम कहीं के नहीं रहेंगे। न नक्सलबाड़ीवालों जैसे करतब दिखा सकेंगे, न अहिंसा से सवाल को सुलझा सकेंगे। जमीनों पर कब्जा अवश्य किया जा सकता है, फसलें काटी और लूटी जा सकती हैं, लेकिन सम्भव है कि 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' ही कहीं चरितार्थ न हो जाय। अहिंसक, व्रत-अनुशासित, संगठित दल अगर नहीं है तो हमारी 'लीडरी' मालामाल हो जायेगी, लेकिन गरीब वैसे ही झुलसते रहेंगे। श्री चदावार जैसे नव-सत्याग्रहियों को सचेत हो जाना चाहिए। न पास कोई अनुशासित दल है, न स्वार्थ के बिना और कोई प्रयोजन है। ऐसा सत्याग्रही दुराग्रही ही होगा। जिन गाँवों का ग्रामदान जाहिर हो चुका है ऐसे गाँवों में अगर भूमि का बँटवारा नहीं हुआ, गाँव व्यसनमुक्त नहीं हुआ, रोजगारी बढ़ाने के लिए उद्योग-धंधे शुरू नहीं हुए, न ग्रामसभा ही बन पायी; और दूसरों की या सरकार की जमीन पर कब्जा करने का आन्दोलन छेड़ा गया, तो वह अव्यवस्था तथा विध्वंस को निमंत्रण देगा।

देश में कृषि विद्यापीठ स्थापित हो रहे हैं। कृषि विद्यापीठ जैसी संस्थाओं को प्रयोग के लिए आवश्यकतानुसार जमीनें अपने कब्जे में लेनी होंगी। वहाँ देश के किसान तालीम पायेंगे, तथा अपनी खेती में नये यंत्रों का उपयोग कर उपज बढ़ायेंगे। कृषि महाविद्यालयों के लिए भी सरकार जमीन ले सकती है। क्या ऐसी शिक्षण-संस्थाओं की जमीन पर भी सत्याग्रह का नाम लेकर जबरन कब्जा किया जायगा? सिंचाई और बिजली के लिए बड़े-बड़े बाँध बनाने होंगे, उसके लिए भी सरकार को जमीन लेनी होगी। फिर उसके बारे में क्या रुख अपनाया जायगा? सरकार के पास की जमीनें अगर विद्यापीठ, महाविद्यालयों आदि को कृषि-उद्योग के प्रयोग के लिए दी जाती हैं, तो क्या सत्याग्रह के नाम पर दुराग्रह चलाया जायगा? और जयप्रकाशजी की दुहाई देकर यह सब ढकोसला होगा?

जहाँ तक जयप्रकाश बाबू को मैं समझा हूँ, उनका इरादा ऐसा हरगिज नहीं है। ग्रामसभा की तथा ग्रामदान की पुष्टि का काम वे हाथ में लिये हैं। जो ग्रामदान हुए हैं, उनकी पुष्टि का कार्य किये बगैर जो सत्याग्रह का नारा लगायेंगे, उनकी वह वृत्ति अनैतिक होगी। कम-से-कम सर्वोदय के नाम पर ऐसा कोई कर नहीं पाये, इसके बारे में सचेत रहना चाहिए। अगर जाने अनजाने इस बारे में हम गाफिल रहेंगे, तो ग्रामदान, नवनिर्माण, सत्याग्रह आदि कार्यक्रमों, आन्दोलनों की बदनामी होगी। श्री चदावार जैसे सत्याग्रह के हिमायती कार्यकर्ताओं को अगर सावधान नहीं किया जायगा, तो वह खतरनाक होगा। —यदुनाथ थत्ते

'साधना,' ४३०, शनिवार पेठ,
पूना-३० (महाराष्ट्र)

तरुण शान्ति-सेना
अगला अखिल भारत सम्मेलन इन्दौर में

तरुण शान्ति सेना का दूसरा अ० भा० सम्मेलन इन्दौर में करने का निश्चय किया गया है। दीपावली अवकाश के मध्य २३,२४ व २५ अक्तूबर, १९७० को होनेवाले इस सम्मेलन में देश भर के तरुण शान्ति-सैनिक भाग लेंगे। इस अवसर पर राष्ट्रीय समस्याओं पर चर्चाएँ होंगी, जिसमें तरुण अपने विचार रख सकेंगे। वामपंथी हिंसा और तरुण शान्ति-सेना, सम्प्रदाय-वाद, शिक्षा में क्रान्ति, रचनात्मक क्रान्ति की दिशा में भारत के तरुण—इन विषयों पर मुख्य रूप से चर्चा होगी।

सम्मेलन में भाग लेनेवाले प्रतिनिधियों के लिए रेलवे-कन्सेशन की सुविधा भी प्राप्त की जा रही है।●

जनेऊ और सिन्दूर

हमारा कार्यकर्ता-साथी गांव मे किसका प्रतिनिधि होकर जाता है? मात्र संस्था का या एक नये समाज और नयी संस्कृति का? गांव के लोग उसमे दूसरों से भिन्नता, विशिष्टता देखना चाहते हैं। इसीलिए जिस साथी के जीवन मे उसकी निष्ठाओ की झलक अधिक होती है उसका प्रभाव भी अधिक होता है। क्रान्ति के मूल्य जन-जीवन मे भाषणों और पुस्तकों से कहीं अधिक क्रान्तिकारी व्यक्ति के उन जीवन-मूल्यो से पहुंचते हैं जिनके लिए वह समर्पित होता है। त्याग भी तभी सार्थक है जब वह किन्हीं ऊंचे मूल्यो के लिए किया जाय। मन मे रखे कुछ और मुंह से बोले कुछ, तो प्रभाव नही के बराबर हो जाता है।

एक बार एक अखण्ड पदयात्रा-टोली चल रही थी। उसमें कुल लगभग १३-१४ साथी थे। एक पडाव पर स्थानीय साथियों ने गाँववालों से मिलकर पदयात्रियो के ठहरने, खाने आदि की व्यवस्था की। गरीब लोग थे, उन्होंने बडे उत्साह के साथ सफाई की, नीम का चबूतरा लीपा, शाम को सभा के लिए लाउडस्पीकर ठीक किया, और बाजार से बारीक, पुराना चावल लाकर भोजन तैयार किया। उन्होने कुल लगभग पचास रुपये खर्च किये। भोजन का वक्त हुआ। लोग अतिथियों को बुलाने गये। लेकिन जब पदयात्रियो ने सुना कि खाना मुसहरो (एक हरिजन जाति) के घर खाना है तो अचानक तेरह मे से छः के पेट मे दर्द शुरू हो गया। लोग परेशान हुए। चिन्ता हुई कि इस तरह इतने अधिक लोगो को दर्द कैसे हो गया? बेचारे मुसहरो ने चाहे जो समझा हो, दूसरे ने तो समझ लिया कि दर्द पेट से अधिक मन में है—शारीरिक से अधिक सास्कृतिक है। पदयात्री मुसहरों के लिए भूमि मांग सकते थे, उनके लिए जरूरत पडने पर त्याग भी कर सकते थे, लेकिन उनके घर खाना कैसे खायें? पदयात्री जनेऊधारी जो ठहरे।

हमारे आन्दोलन के अधिकाश साथी हिन्दू हैं। भारत की अधिकाश जनता हिन्दू है। हिन्दू-मुसलमान के बीच झगडे पुराने हैं, लेकिन कई कारणो से सवर्ण हिन्दू और हरिजन मे तथा 'दिकू' और आदिवासी में नये-नये तनाव पैदा होते जा रहे हैं जो, अगर बने रह गये तो, हिन्दू-मुसलमान के तनावों से कम भयकर नहीं होंगे। ऐसी स्थिति में 'सर्व' की बात कहनेवाले सर्वोदय के साथियों को बहुत सतर्क रहने की जरूरत है। वे सबै की बात कहते हैं। जो सबका प्यारा बनना चाहता है वह तलवार की धार पर चलता है, और एक बार उसे सबके तिरस्कार के लिए भी तैयार रहना पड़ता है।

हममे से जो सवर्ण हिन्दू हैं उनमें अधिकांश 'द्विज' संस्कृति के धर्म-कर्म से बंधे हुए हैं। भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक परंपरा मे इस संस्कृति ने दूसरी देन चाहे जो दी हो, लेकिन उसने भारतीय समाज को दो अनमोल 'सांस्कृतिक' देनें तो दी ही हैं। एक देन है शूद्र, दूसरी है सती। शूद्र और सती को इस द्विज-संस्कृति ने साक्षात मनुष्य को अछूत बनाया, और जीवित स्त्री को जलती चिता पर जलाया। इसने द्विज को जनेऊ पहनाया ताकि शूद्र उससे मिलने न पाये, और पति के मरने पर स्त्री की माँग से सिन्दूर मिटाया ताकि विधवा कभी भूल न जाय कि वह विधवा है। जनेऊ और सिन्दूर ने शूद्र और विधवा को समाज के सास्कृतिक दायरे के बाहर ढकेला, और आज तक उन्हें वहीं रखा है। जनेऊ की इस दीवाल ने द्विजो को भीतर रखा, और दूसरे सबको बाहर। शूद्र, मुसलमान, ईसाई, पारसी, सब इसके लिए 'अस्पृश्य' थे। छूत और अछूत का यह सस्कार आज भी हमारे भीतर घुसा हुआ है। हम सोचें, आज के जीवन मे जनेऊ और सिन्दूर का क्या महत्त्व है, सिवाय इसके कि हमारे सारे सस्कार जनेऊ और सिन्दूर के चारो ओर बने हुए हैं, और सर्वोदय के ऊंचे-से-ऊंचे विचारों के बावजूद हम जनेऊ और सिन्दूर जैसे मानव-विरोधी प्रतीकों को ढोते चले आ रहे हैं? इनका मनुष्य के भौतिक, सास्कृतिक, आध्यात्मिक, किस विकास से क्या सम्बन्ध है? हम चाहते तो हैं आसमान मे उड़ना, लेकिन धरती पर जाने-अनजाने हम इन्हीं प्रतीको और प्रभावों मे फँसकर रह जाते हैं। क्या हम कार्यकर्ताओ के जीवन मे कोई ऐसा समय नहीं आयेगा जब हम तय करेंगे कि हमारा विद्रोह यहीं से शुरू होगा?

हर क्रान्ति की एक संस्कृति होती है। क्रान्ति की मूल प्रेरणा उन मूल्यों में ही होती है जिन्हें वह समाज के सामने प्रस्तुत करती है। सर्वोदय ने समता के, सेवा के, श्रम के, और इसी प्रकार सत्ता के, सम्पत्ति के, सतति के, आज के भारतीय जीवन के सन्दर्भ में, नये सशोधित मूल्य प्रस्तुत किये हैं। अगर हमें ये मूल्य मान्य हैं तो हम परम्परा को उसी सीमा तक मान सकते हैं जहाँ तक उसका हमारी क्रान्ति के नये मूल्यो से मेल हो। द्विज संस्कृति खड़ी ही है इस आधार पर कि जो द्विज नहीं है वह हीन है। जनेऊवाला श्रेष्ठ है, सिन्दूरवाली सौभाग्यवती है अलगाव और दुराव के इस मानवता का अपमान करनेवाले सामाजिक-सास्कृतिक मूल्य को आज का कोई क्रान्तिकारी व्यक्ति कैसे मान सकता है? यह सही है कि क्रान्तिकारी को कई बातों में समझौता करके अपने मूल उद्देश्य को आगे बढ़ाना पड़ता है, लेकिन वे बातें गौण होती हैं, सिद्धान्त की नहीं। किसी मनुष्य को अछूत मानकर, या विधवा की परछाई से बचकर, हम क्रान्ति का बिगुल नहीं बजा सकते। मानवता के अपमान और समता की क्रान्ति का मेल नहीं बैठ सकता। अगर चीन मे माओ को राजनैतिक-आर्थिक परिवर्तन के बाद भी 'सास्कृतिक क्रान्ति' की जरूरत पड़ सकती है, तो उससे कहीं अधिक जरूरत सांस्कृतिक क्रान्ति की भारत मे गांधी और विनोबा को है।

गांव मे जाइए तो कुछ बातें साफ दिखायी देंगी। गांव में जो→

मालिक-मजदूर आमने-सामने

प्रगतिशील किसान की आप लोगो ने क्या परिभाषा रखी है?' मैंने पूछा। 'जो अधिक उत्पादन करे', उत्तर मिला। 'क्या इतने से ही प्रगतिशीलता मान ली जायगी? उत्पादन तो वह भी बढ़ा सकता है जो घोर स्वार्थी है, असामाजिक है, सभी दृष्टियों से प्रतिक्रियावादी है।'

'तो, और क्या-क्या बातें हो सकती है?' 'दो बातें तुरन्त सूझती हैं। एक, खेती का सही हिसाब रखना ताकि मालूम हो कि नेट मुनाफा (प्रॉफिट) क्या हुआ, और दूसरी यह कि मालिक-मजदूर के पुराने सम्बन्धों को छोड़कर नये सम्बन्धों को स्वीकार करने की तैयारी हो।'

'बातें दोनो ठीक हैं। इन्हें मानने मे किसी प्रगतिशील किसान को कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।' 'लेकिन, मालिक-मजदूर-सम्बन्धो के बारे में शीघ्र कोई राय कायम करना चाहिए। जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा है बात बिगड़ती जा रही है।'

'हां, देर नहीं होनी चाहिए। मेरा तो यह सुझाव है कि ५ भूमिवान (बड़े किसान) चुन लिये जायें, और ५ मजदूर। दोनों आप लोगो की उपस्थिति मे एक जगह बैठें, और दिल खोलकर एक-दूसरे के सामने अपनी बात रखें, और तय करें कि दोनों सम्मान के साथ पड़ोसी बनकर कैसे रह सकते हैं। उसके सिवाय दूसरा उपाय नहीं दिखायी देता।'

'संघर्ष से बचना है तो संवाद के सिवाय दूसरा उपाय क्या है? बहुत अच्छी बात कही आपने। सोचते तो हम लोग भी थे कि मालिक-मजदूर मे आमने-सामने खुलकर चर्चा हो, लेकिन हमें यह भरोसा नहीं हो रहा था कि अन्य लोगो को यह सुझाव मंजूर भी होगा।'

'नहीं साहब, मैं खुद चर्चा मे शरीक हूंगा, और अपने मित्रो पर दबाव डालूंगा कि वे भी शरीक हों। चर्चा की तारीख शीघ्र किसी इतवार को रखिए।'

ये बातें बिहार के प्रगतिशील किसान-संघ के संयोजक श्री वसन्त बाबू से अभी हाल मे हुई थी। सम्भव हुआ तो अगस्त में भूस्वामी-भूसेवक गोष्ठी होगी।

ग्रामसभा मालिक-मजदूर के बीच पुल है जिसके द्वारा दोनो मिल सकते हैं, मिलकर संवाद कर सकते हैं, और सम्मानपूर्वक साथ रहने का रास्ता निकाल सकते हैं।

'आज नया क्या सोचना है?'

मरौना ब्लाक के कुछ मुख्य नागरिकों की बैठक थी। बड़े किसान थे, शिक्षक थे, सामाजिक कार्यकर्ता थे, खादी-संस्था के साथी थे। सबके साथ देर तक चर्चा हुई। अन्त मे यह तय हुआ कि सबसे पहले हर एक अपना बीघा-कट्ठा दे दे, और तब दूसरों से मांगने के लिए निकल पड़े। मिश्रजी ने पूछा, 'बोलिए कौन-कौन तैयार है?'

फौरन प्रचंड उम्र के एक सज्जन बोल उठे, 'हस्ताक्षर क्या सोचकर किया था? आज नया क्या सोचना है?' एक-एक करके बैठे हुए लोगों में से पूरे पन्द्रह ने कहा: 'हम तैयार हैं। जिस दिन चाहिए आकर बीघा-कट्ठा बांट दीजिए।'

'हमारी बिरादरी में आ गये'

दोनो गुटो मे जबरदस्त दुश्मनी है। कई लोगो पर १०७ लागू है। गांव मे हथियार-बन्द पुलिस की एक टुकड़ी पड़ी हुई है। दूसरी टुकड़ी रात को पास-पड़ोस के गांवों मे गश्त लगाती है। सारे गांव मे सन्नाटा दिखायी देता है। ऐसा लगता है जैसे हर आदमी किसी अज्ञात भय मे जी रहा है।

नरसिंह बाबू ने उस दिन तक ग्रामदान के कागज पर हस्ताक्षर नहीं किया था। इतना ही नहीं कि हस्ताक्षर नहीं किया था, बल्कि ग्रामदान का जितना विरोध कर सकते थे, करते थे। लेकिन आज वह बदले हुए थे। कभी-कभी चिन्ता चिन्तन की जननी बन जाती है। थोड़ी देर की चर्चा के बाद बोले, 'लाइए ग्रामदान का कागज दीजिए। मैं समझ रहा हूं कि इससे भागना समझदारी की बात नहीं है।' उन्होंने कागज लिया और हस्ताक्षर किया।

कानो-कान बात फैल गयी कि नरसिंह बाबू ने भी हस्ताक्षर कर दिया। सहसा किसीको विश्वास नहीं हुआ, लेकिन बात सही थी तो छिपती कैसे? अब दूसरे गुट के, जिसके लोग पहले ही ग्रामदान मे शरीक हो चुके थे, एक अगुवा ने सुना तो बोला, 'अब नरसिंह बाबू हमारी बिरादरी मे आ गये। बिरादरीवाले से दुश्मनी कब तक चलेगी?'

—रामूर्ति

→जनेऊधारी द्विज है वही भूमिपति है। जो जनेऊविहीन है वह बटाईदार है, मजदूर है। गांव के समाज मे आर्थिक और सामाजिक ध्रुवीकरण का मेल हो जाता है, और वर्ग-संघर्ष के साथ वर्ण-संघर्ष जुड़ जाता है। इस दोहरे संघर्ष की भूमिका गांव-गांव मे बन रही है। राजनैतिक दृष्टि से द्विजों की आपसी प्रतिद्वंद्विता तीव्र से तीव्रतर होती जा रही है, तथा मुसलमानों और 'शूद्रों' का द्विजो के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा बन रहा है—कहीं खुलकर, कहीं छिपकर।

गांधीजी ने राष्ट्रीय आन्दोलन मे, मुख्य रूप से अपने आश्रम-जीवन में, इस अलगाव को बहुत-कुछ दूर किया था, लेकिन सफलता उन्हें सीमित ही मिली। जनेऊ ने समाज की एकता को तोड़ा, और सिन्दूर ने समाज के सुधार को। आदर्शों की संस्कृति को समाज ने नहीं स्वीकार किया। ग्रामदान ने मानवीय संस्कृति म कई नये आयाम जोड़े हैं, किन्तु अपने संस्कारों पर हम अडिग खड़े हैं। जीवन की दृष्टि, धर्म कर्म, विवाह, रस्म-रिवाज, सामाजिक सम्बन्ध, हर चीज में हम द्विज बने रहना चाहते हैं। हमारे इस द्वन्द्व से शान्ति की शक्ति कम, और प्रतिकार की शक्ति बढ़ रही है। क्या इसका पता हमें है?●

मुजफ्फरपुर की डाक से

१७ जुलाई '७० तक का लेखा-जोखा

श्री जयप्रकाश नारायण जब से ग्राम-स्वराज्य के संगठन और विकास का लक्ष्य लेकर मुसहरी प्रखंड में पहुँचे हैं तब से ही क्षेत्र के भूमिहीन मजदूरों में आशा की एक लहर-सी दौड़ गयी है। श्री जयप्रकाशजी के पड़ाव पर पास पड़ोस के भूमिहीन मजदूर आकर अपनी कठिनाइयों की चर्चा करते हैं। जिस दिन सलहा में बीघा-कट्ठा के वितरण का समारोह था, उस दिन वे भूमिहीन मजदूर तो सभा में उपस्थित थे ही जिन्हें जमीन मिलनेवाली थी, उनके अलावा वहाँ के वे भूमिहीन मजदूर भी अच्छी संख्या में उपस्थित थे, जिन्हें जमीन नहीं मिलनेवाली थी। भूमिहीन परिवारों की कुछ स्त्रियाँ भी आयी थीं। लेकिन जहाँ तक प्रमुख भूमिवान किसानों का सम्बन्ध था, वहाँ सिर्फ श्री जलधर ठाकुर सभा में आये, जिन्हें अपनी जमीन का बीघा-कट्ठा भूमिहीनों को बाँटना था।

जयप्रकाशजी जब ३० जून को नरौली पंचायत में पहुँचे तो भूमिहीन मजदूर पचासों की संख्या में पहले से ही उपस्थित थे। जो लोग उस समय मजदूरी कर रहे थे, वे काम से छुट्टी मिलने पर संध्या-समय जयप्रकाशजी के निवास-स्थान पर आये। भूमिहीनों के अतिरिक्त गाँव के कुछ किसान भी जयप्रकाशजी से मिले। जो लोग किसी कारणवश वहाँ नहीं पहुँचे उन्होंने इधर-उधर के सूत्रों से यह जानकारी पाने की चेष्टा की कि जयप्रकाशजी से कौन-कौन लोग मिले हैं, और उनके इर्द-गिर्द क्या बातचीत हो रही है। धीरे-धीरे न केवल नरौली पंचायत, बल्कि नरौली से दूर के गाँवों के भूमिवान किसान भी जयप्रकाशजी के कार्य की ओर आकर्षित हुए। रोहुआ के बड़े किसान श्री बैजनाथ प्रसाद सिंह, सकरा मुरौल क्षेत्र के प्रतिष्ठित किसान श्री रामनन्दन बाबू, कुधनवारा पंचायत के मुखिया और जिला ससौधा के अध्यक्ष श्री रामकरन सहनी, बिहार प्रगतिशील किसान संगठन के संयोजक श्री बसंत बाबू, और सिमरा के श्री कामेश्वर बाबू, प्रभृति बड़े किसानों का सहयोग प्राप्त होने के समाचार से न केवल पास-पड़ोस, बल्कि पूरे जिले के किसान-मानस पर वांछित प्रभाव पड़ा। नरौली पंचायत के समीपवर्ती गाँव मोमिनपुर, डुमरी और माधोपुर में जब बीघा-कट्ठा-वितरण की सभा हुई तो उसमें भूमि पानेवाले भूमिहीन-मजदूरों और बीघा-कट्ठा बाँटनेवाले दाता के अलावा गाँव के कई किसान दर्शक भी शामिल हुए।

भूमिहीन मजदूर और भूमिवान किसान के बीच जो खाई है उसे जोड़नेवाले सेतु अभी तक नहीं थे। श्री जयप्रकाशजी के मुसहरी क्षेत्र में आने के बाद क्षेत्र के किसानों और मजदूरों में ऐसे अनेक लोग सामने आने लगे हैं, जो भूमिवान और भूमिहीन के बीच सद्भावनापूर्ण सम्बन्ध बनाने के इच्छुक हैं। कुछ राजनीतिक पक्ष जब ध्रुवीकरण की प्रक्रिया को तीव्र बनानेवाले कार्यक्रम जोर-शोर के साथ ग्रामीण क्षेत्र में चलाये जाने की तैयारियाँ कर रहे हों, वैसे समय में ऐसे सेतु व्यक्तियों का प्रकट होना बड़े महत्व की बात है।

मुसहरी प्रखण्ड की वर्तमान परिस्थिति

मुजफ्फरपुर जिला तीन अनुमण्डलों में बँटा हुआ है—(१) सीतामढ़ी, (२) सदर, (३) हाजीपुर। मुसहरी प्रखण्ड सदर अनुमण्डल में है। ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए श्री जयप्रकाशजी ने जो क्षेत्र चुना, वह कार्य की दृष्टि से सुगम क्षेत्र नहीं था। जयप्रकाशजी के आने पर सलहा पंचायत के जिस बेंकटपुर गाँव में ग्रामसभा का गठन हुआ, वह ऐसा गाँव है जिसमें गाँववालों के पास थोड़ी जमीन है, और गाँव के बाहर के लोगों के कब्जे में ज्यादा जमीन है। कुल मिलाकर बेंकटपुर छोटे किसानों और भूमिहीन मजदूरों का गाँव है। नरौली के भूमिवान किसानों के कुछ-कुछ अनुकूल होते हुए भी १७ जुलाई तक ग्रामदान की घोषणा के लिए आवश्यक शर्तें पूरी न हो सकीं। नरौली पंचायत का पड़ोसी गाँव मोमिनपुर भी लगभग बेंकटपुर जैसा ही है। मोमिनपुर में १५ जुलाई को बीघा-कट्ठा बाँटा गया, और सर्व सम्मति से ग्रामसभा का चुनाव भी हुआ। १६ जुलाई को डुमरी और माधोपुर में बीघा-कट्ठा वितरण हुआ। डुमरी के कुछ भूमिवानों ने बीघा-कट्ठा से कुछ अधिक भूमि भूमिहीनों में बाँटने के लिए अलग की। सलहा, नरौली की तरह डुमरी और माधोपुर में भी गाँव की अधिकांश आबादी के लोग ग्रामदान-पत्र पर अपना हस्ताक्षर कर चुके हैं। रकबा का प्रतिशत पूरा न हो पाने से बाजाब्ता ग्रामसभा नहीं बन सकी। माधोपुर सलहा पंचायत का गाँव है। जब जयप्रकाशजी सलहा में थे, उस समय माधोपुर के लोगों में कोई विशेष सुगबुगाहट नहीं थी। श्री जयप्रकाशजी के सलहा से नरौली जाने के बाद माधोपुर के किसानों की मनोभावना में परिवर्तन हुआ।

श्री जयप्रकाशजी १७ जुलाई को मुजफ्फरपुर से बाहर गये हैं। अब वे पुनः ४ अगस्त को क्षेत्र में लौटेंगे। उस समय उनका कैम्प मणिका गाँव में रहेगा। मणिका गाँव मुसहरी ब्लाक के पास ही मुजफ्फरपुर शहर से लगभग ४ मील पर सड़क के किनारे है।

नरौली में शान्ति-सेना शिविर

बिहार तरुण-शान्ति-सेना के मंत्री श्री नवल किशोर सिंह, तरुण शान्ति सैनिक श्री सचन चौधरी और श्री शम्भुशरण सिंहा के अभिक्रम से श्री जयप्रकाशजी के सान्निध्य में एक त्रिदिवसीय शिविर का आयोजन हुआ। इस शिविर में मुजफ्फरपुर नगर के ३ और नरौली

— [illegible] —ाई '७०

पंचायत-क्षेत्र के ४१ छात्र सम्मिलित हुए। रामेश्वर विद्यालय, बिन्दा के शिक्षक श्री भृगुनाथ मिश्र ने शिविर की चर्चाओं का मार्गदर्शन किया। शिविर की मुख्य चर्चा का विषय था—बेकारी की समस्या का निदान। इस शिविर का उद्घाटन और समापन श्री जयप्रकाशजी ने किया। शिविरार्थियों के भोजन के लिए स्थानीय लोगों ने स्वेच्छा से इतना अनाज दिया कि शिविर के बाद भी कुछ सामग्री बच गयी।

वासगीत का पर्चा

श्री जयप्रकाशजी जब सन्हा पंचायत में थे, उस समय वहां १४१ भूमिहीनों को वासगीत के पर्चे दिये गये थे। नरौली पंचायत में १२८ भूमिहीनों को पर्चे दिये गये। अब तक ६५ पर्चों की गलतियां सुधारी गयी हैं, और १८ ऐसे भूमिहीनों को वासगीत के पर्चे दिये गये, जिनका नाम सूची में नहीं था।

ग्राम और तरुण शांति-सैनिकों की संख्या

सन्हा और नरौली पंचायत—

ग्राम-शांति सैनिक—१००

तरुण-शांति-सैनिक—२०

सकरा, मुरौल प्रखण्ड

सकरा, मुरौल-प्रखंड श्री गोपालजी मिश्र का कार्य क्षेत्र है। १४ जुलाई को ७ पंचायतों के २५ भूमिवान आचार्य राममूर्तिजी के सान्निध्य में एकत्र हुए। इनमें से १७ भूमिवान किसानों ने अपना बीघा-कट्ठा देने की तैयारी बतायी। वहां यह तय हुआ कि १६ अगस्त को वितरण-समारोह मनाया जाय। उसी बैठक में बिहार प्रगतिशील कृषक संघ के मंत्री श्री बसंतनारायण सिंह ने सुझाव दिया कि क्षेत्र के भूमिवान किसान और भूमिहीन मजदूर के ५-५ प्रतिनिधि आमने-सामने बैठकर अपनी समस्याओं को दिल खोलकर चर्चा करें। श्री बसंतनारायण सिंह का सुझाव स्वीकार कर लिया गया। भूमिवान किसान और भूमिहीन मजदूर की यह अपने ढंग की पहली बैठक होगी।

हाजीपुर अनुमंडल

गांधी आश्रम, हाजीपुर में बाबा रामबहादुरलाल की उपस्थिति में हाजीपुर अनुमंडल के कार्यकर्ताओं की बैठक हुई। वहां तय किया गया है कि महुआ प्रखंड की कन्होली पंचायत में बीघा-कट्ठा वितरण का अभियान चलाया जाय। अभियान की जिम्मेदारी श्री रामजी सिंह (संयोजक, अनुमण्डलीय ग्रामस्वराज्य समिति) पर सौंपी गयी है।

वैशाली प्रखण्ड

वैशाली प्रखण्ड के कुछ प्रतिष्ठित किसानों ने आपस में मिलकर यह तय किया है कि वे अपना बीघा-कट्ठा बांट कर अपनी ग्रामदान की घोषणा को पुष्ट करेंगे। उन्होंने अपने हस्ताक्षर से अपने क्षेत्र के अन्य किसानों के नाम एक अपील प्रसारित की है, जिसमें ग्रामस्वराज्य के विचार का स्वागत करते हुए सबको शीघ्रतापूर्वक सहयोग देने का निवेदन किया गया है।

अपना-अपना बीघा कट्ठा बांटकर वैशाली क्षेत्र के किसान जारंगपुर, बीबीपुर और परेड़ा पंचायत में सघन प्रयास करेंगे। ज्ञातव्य है कि वैशाली क्षेत्र को आचार्य राममूर्ति ने अपना सघन कार्य-क्षेत्र बनाया है।

सीतामढ़ी अनुमंडल

बाबा रामबहादुरलाल के प्रयत्न से सीतामढ़ी अनुमण्डल में स्थित डुमरा प्रखण्ड के प्रमुख कार्यकर्ताओं की एक बैठक श्री जयप्रकाश नारायण के सान्निध्य में १३ जुलाई को हुई। उक्त बैठक में श्री मथुरा प्रसाद व श्री सत्यनारायण सिंह उपस्थित थे। उस बैठक में यह तय हुआ कि डुमरा प्रखण्ड के प्रमुख भूमिवानों की एक बैठक २० जुलाई को बुलायी जाय। आशा है कि उस बैठक के बाद डुमरा प्रखण्ड में ग्रामस्वराज्य के संगठन और विकास का कार्यक्रम जोर पकड़ेगा।

मुजफ्फरपुर नगर

मुजफ्फरपुर बिहार का मध्यम दर्जे का नगर है। नगर की जनसंख्या में विद्यार्थियों, दूकानदारों और वकीलों की प्रधानता है।

यहां के अधिकांश नागरिकों के कान तक यह खबर पहुंच चुकी है कि श्री जयप्रकाशजी मुसहरी प्रखण्ड में रह रहे हैं। मुसहरी प्रखण्ड में श्री जयप्रकाशजी नक्सलवादियों का प्रभाव मिटाने की कोशिश में जुटे हुए हैं, यह मुजफ्फरपुर के आम नागरिकों की धारणा है।

मुसहरी प्रखण्ड के गांव में बैठकर श्री जयप्रकाशजी मुजफ्फरपुर के नागरिकों की समस्याओं में ही उलझने में लगे हुए हैं, यह भावना और प्रतीति कुछ गिने-चुने नागरिकों तक ही सीमित है। अधिकांश नागरिकों को जयप्रकाशजी के कार्य की सफलता या विफलता के बारे में कोई गहरी दिलचस्पी नहीं है। कुछ लोग मानते हैं कि 'मुजफ्फरपुर का जिलादान हो गया और बिहार का राज्यदान भी हो गया, फिर भी कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ, क्योंकि सारा ग्रामदान आन्दोलन ही बोगस है। जब श्री जयप्रकाशजी को यह बात समझ में आ गयी तो वे ग्रामदान को नया कलेवर देने के प्रयास में लग गये हैं।'

मुजफ्फरपुर के राजनैतिक दलों में से किसी भी दल के लोगों की ओर से मुसहरी में ग्रामस्वराज्य के संगठन के काम में दल के अनुयायी की हैसियत से कोई उल्लेखनीय सहयोग नहीं मिल रहा है। किसी दल की ओर से प्रत्यक्ष विरोध भी नहीं है।

जयप्रकाशजी से मिलनेवाले व्यक्ति

नरौली में श्री जयप्रकाशजी से निम्नलिखित व्यक्ति पिछले दिनों मिले :

(१) श्री कर्पूरी ठाकुर, (२) श्री रामानन्द तिवारी, (३) श्री बदरीनाथ सिंह, (४) श्री उपेन्द्रनाथ वर्मा, अध्यक्ष, बिहार प्रसोपा (५) श्री महामाया प्रसाद सिंह, (६) श्री रामजनम ओझा, पी० एस० पी० (७, श्री अम्बिका सिंह—ग० सो० पा० १--

सेवा की दुर्गम राह पर

[हिमालय की कठिन जिन्दगी अपनाकर वहाँ के निवासियों की सेवा करना, उन्हें विकास की तालीम देना कोई सरल काम नहीं है। लेकिन जब हृदय में सेवा की उत्कटता हो और समर्पण की वृत्ति हो तो हर मुश्किल आसान हो जाती है। पिछले अंक में आपने कुछ शान्ति-सेवकों के सेवाकार्य की कुछ झलकियाँ प्राप्त की थीं, उसी क्रम में प्रस्तुत हैं कुछ और प्रेरक अनुभव।--सं०]

खेल द्वारा शिक्षण

अक्तूबर की एक चाँदनी रात को जब पहाड़ी गाँवों में लोग फसल कट जाने की खुशी में सामूहिक लोकगीत गाकर और नाचकर आनन्द मनाते हैं, एक गाँव में जोर-जोर से 'बाघ आयो', 'बाघ आयो' की आवाज सुनाई दी। उसके साथ-साथ ही बाघ के गरजने का स्वर भी। परन्तु थोड़ी ही देर में वहाँ पर जमा नर-नारियों के अट्टहास से सारा वातावरण गूँज उठा।

बाघ और उसके बाद अट्टहास के इस रहस्य को जानने के लिए मैं महफिल में पहुँचा तो सोमभाई पटेल अब तक ओढ़ी हुई बाघ की खाल को उतार रहे थे और कुछ लड़के भेड़-बकरियों की खालें उतार रहे थे। समझने में देर नहीं लगी। वे 'बाघ आया, बाघ आया' नाटक द्वारा गाँव के लोगों का मनोरंजन कर रहे थे और गाँव के तरुणों और बच्चों से मित्रता कर रहे थे। कुछ ही देर में "करना है निर्माण हमें, नवभारत का निर्माण" के सामूहिक गीत के स्वरों से आँगन गूँज उठा और उसके बाद तकली और चरखे की चर्चा शुरू हो गयी।

इतिहास-प्रसिद्ध दाण्डी गाँव के श्री सोमभाई पटेल जुगतराम काका के क्षेत्र के प्रमुख नयी तालीम कार्यकर्ताओं में से थे। शान्ति सेना की माँग पर उत्तराखण्ड में एक वर्ष तक कार्य करने के लिए उन्होंने अपनी सेवाएँ दीं, और उत्तरकाशी जिले के चौंद गाँव में अपना सेवा-केन्द्र बनाया।

पहाड़ों में जीवन के लिए संघर्ष इतना कठोर है कि लोगों को मरने तक की फुरसत नहीं! सोमभाई ने बागीकों के पहाड़ी जीवन की कठिनाइयों का अध्ययन किया। बच्चों के अलावा उनके काम में कौन सहयोगी हो सकता था? उन्होंने इस गाँव में बालवाड़ी प्रारम्भ की और बच्चों को स्वच्छ रहने के संस्कार दिये। रात को जब प्रौढ़ लोग घर लौटते तो वे अपने मनोरंजन के कार्यक्रम के साथ ही उन्हें विचार देते।

कताई और बुनाई के तो वे दक्ष थे। इस गाँव में उन्होंने सूती चरखे का प्रवेश कराया और उनकी कताई व धुनाई के लिए धुनाई-मुठिया पर प्रयोग किये। सोमभाई एक वर्ष रहकर पुनः गुजरात लौट गए। अब चौंद में गांधी-स्मारक-निधि और खादी-कमीशन के केन्द्र हैं।

सेवा : सब्जी-खेती के माध्यम से

एक अंधेरी रात को पिथौरागढ़ जिले के देवराड़ी पत्त गाँव में मध्यप्रदेश का एक नवयुवक पहुँचा। गाँव के वृद्ध सेवक शक्ति दादा कई वर्षों से अकेले वहाँ पर 'जय जगत' का मंत्र जपते थे। नवयुवक ने कहा, "दादा! मैं आपकी मदद के लिए और यहीं रहने के लिए आया हूँ।" दादा को एकाएक विश्वास नहीं हुआ। शहर और सड़कों से दूर इस अकेले गाँव में भी कई दिनों तक रहने और काम करने के लिए कोई कार्यकर्ता आयेगा, इसकी वे कल्पना तक नहीं करते थे।

नये आनेवाले साथी मध्यप्रदेश गांधी-स्मारक निधि के कार्यकर्ता श्री बालाराम अब्बारे थे। बालाराम भाई ने थोड़े ही समय में गाँव के बच्चों और तरुणों से मित्रता कर ली। उन्होंने एक किशोर-मंडल संगठित किया और इसके द्वारा आस-पास के गाँवों में सब्जी-उत्पादन का कार्य फैलाया। इसका केन्द्र गोभी, टमाटर और दूसरे पौधों का वितरण-केन्द्र बन गया।

बीमार पड़ने पर दूर-दूर से लोग औषधियाँ लेने आते और दूसरी समस्याओं का समाधान करने में उनकी सहायता लेते। बालाराम भाई ने ग्रामोद्योगों के विकास की दृष्टि से उस क्षेत्र का सर्वेक्षण किया। वहाँ पर रेशा-उद्योग के लिए पर्याप्त कच्चा माल है। अब खादी-ग्रामोद्योग कमीशन ने वहाँ पर अपना केन्द्र खोला है।

पहाड़ का पहला सबक

बागेश्वर और पिथौरागढ़ के बीच कोट-मन्या मोटर का एक छोटा सा पड़ाव है। मोटर से उतरते ही दूर निरंतर हिमाच्छादित रहनेवाली नन्दाघुटी, नन्दादेवी, त्रिशूल और चौखम्भा की चोटियों के दर्शन होते हैं। जनवरी '६३ की एक दोपहरी को यहाँ से नीचे पगडंडी की ओर नवयुवकों का एक दल जा रहा था। उनकी पीठ पर बँधे हुए थैलों में हल्का बिस्तर, कपड़े और छोटी-मोटी चीजें थीं। इसी रास्ते से अक्सर मोर्चे से छुट्टी पाकर घर लौटनेवाले सैनिक भी अपनी चुस्त वर्दी और फौजी बूट पहने हुए गुजरते हैं। पर आज का दल मोर्चे से लौटनेवाले नहीं, मोर्चे पर जाने का प्रशिक्षण पानेवाले सैनिकों का था। इनका नेतृत्व अ० भा० शान्ति-सेना मण्डल के मंत्री श्री नारायण देसाई, उत्तर प्रदेश गांधी-स्मारक निधि के संचालक श्री करण भाई और सरला बहन कर रही थीं। वे गाते जाते थे—

"विश्व के ये पासबाँ, लेके सेवा का निशाँ,
भीरता से सावधान, चल पड़े हैं बेगुमान।"

चीड़ और बाँज की सूखी पत्तियों से भरी हुई घटिया पर एक साथी का पाँव फिसल गया। लपककर दूसरे ने सँभाल लिया, तीसरे ने कहा, "कोई बात नहीं। पहाड़ का पहला सबक है। जो चलेगा, वह फिसलेगा भी, पर फिसलनेवाले को सँभाल लो और हिलमिलकर आगे बढ़ो।"

बहिनजी (सरला बहन) ने कहा, "पहाड़ में रोज फिसलते हैं। कुछ लोग तो

कभी चट्टान से गिरकर मर भी जाते हैं। पर फिर भी लोग पहाड़ों पर चढ़ना-उतरना और बोझा ढोना, परिश्रम करना छोड़ते नहीं, क्योंकि पहाड़ के जीवन का वैभव इसीमें है।"

मैदानी क्षेत्र में सेवा-कार्य करने के कई वर्षों के अनुभवी माधी, सीमा-क्षेत्र में सुरक्षा की दृष्टि से कम से-कम पाँच वर्ष तक कार्य करने का संकल्प लेकर आये थे। उनका पहला शिविर राजा बहिन के अनाधारित सेवा-केन्द्र बौंगाड़ में हुआ। नारायण भाई ने उन्हें शान्ति-सैनिक का धवल वेश, श्रम और स्वाध्याय की दीक्षा दी। और वहाँ से वे *हिमालय की घाटियों* और चोटियों में फैल गये।

मेरे घोड़े तो बहुत मजबूत हैं

"महाराज! आज के पड़ाव पर पहुँचने के लिए सीधी चढ़ाई है। पहाड़ की चोटी तक पहुँचने के लिए मेरा घोड़ा ले लीजिए।"

"परन्तु मेरे ये घोड़े तो बहुत मजबूत हैं। इन्होंने जवानी में एक-एक दिन में ४०-५० मील तक की यात्रा की है। आपके घोड़े पर चढ़कर इनका अपमान कैसे करूँ? ये तो अन्त तक मेरा साथ देनेवाले हैं।" यह था ८२ वर्षीय श्री रविशंकर महाराज का उत्तर देवदुंग (जिला उत्तरकाशी) के व्यापारी श्री विशनलाल को, जो अपने गाँव के पड़ाव से विदा देने के लिए अपना सजा-सजाया घोड़ा लेकर महाराज के साथ चल रहे थे।

'बेड़छी-सम्मेलन में उत्तराखण्ड की पदयात्रा के लिए कोई बुजुर्ग आयें, ऐसी प्रार्थना हमने की। तत्काल ही पूज्य रविशंकर महाराज ने कहा—'मैं उत्तराखण्ड में घूमने के लिए तैयार हूँ।' अप्रैल १९६३ में महाराज की पदयात्रा देहरादून जिले से प्रारम्भ हुई। एक-दो पड़ाव तक स्वामी आनन्द उनके साथ रहे। यमुना के किनारे-किनारे ज्यों ही पहाड़ों की यात्रा प्रारम्भ हुई, धोती से कमर कसकर हाथ में डंडा लिये हुए महाराज सारे दल का नेतृत्व करते थे। उनके कदम इतनी तेजी से पड़ते कि पीछे चलनेवाले हाँफते-हाँफते दौड़ते। एक बार तो महाराज रास्ता भटक गये। सारा दल उनकी खोज में परेशान। आखिर झाड़ी के बीच में एक भेड़-पालक ने महाराज को देख लिया। उनके तीनों ओर भयंकर चट्टानें थीं और नीचे गहरा खड्डा।

महाराज की यात्रा यमुना, भागीरथी, जलकूर, बालगंगा व भिलंगना की घाटियों तथा १० हजार फुट तक ऊँची चोटियों से होकर डेढ़ माह तक टिहरी, उत्तरकाशी और देहरादून जिलों में चली। उसके बाद यात्रा का दूसरा दौर अल्मोड़ा, *नैनीताल और पिथौरागढ़ जिलों में चला।* स्थानीय कार्यकर्ताओं के अलावा अहमदाबाद के श्री भाईदास भाई उनके साथ रहे।

पड़ाव पर पहुँचते ही महाराज चरखा कातने बैठ जाते। और सहज भाव से अपने आस-पास घिरे हुए किसानों से चर्चा छेड़ देते। उनकी चर्चाओं में भूदान, ग्रामदान, चरखा और अदालत-मुक्ति से व्यसन-मुक्ति तक की बातें होती थीं। किसानों के हृदय को स्पर्श करनेवाली उनकी मधुर वाणी ने लोगों में कूट-कूटकर आत्म-विश्वास भरा। वे कहते, "आपके परिश्रम के लिए नमस्कार करता हूँ। आप इतने बहादुर हो कि ये पहाड़ भी आपके सामने हार गये हैं। पर बीड़ी के इस छोटे से टुकड़े ने आपको भी गुलाम बना दिया है। इसे छोड़ो।"

सामान्य व्यक्ति के अन्दर छिपी हुई शक्तियों को प्रकट कर उसमें स्वाभिमान की भावना जागृत करने की कला कार्यकर्ताओं ने महाराज से सीखी। उत्तरकाशी में जिलाधिकारियों को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा, "लोग तीर्थयात्रा के लिए उत्तराखण्ड में आते हैं। भगवान ने आपको यहाँ की जिन्दा मूर्तियों की सेवा करने का अवसर दिया है। एक-एक क्षण का उपयोग जनता को सुखी बनाने में करो और हजारों लोगों के आशीर्वाद प्राप्त कर स्वयं सुखी बनो।"

मौत से केवल चार इंच दूर

दिनभर की यात्रा के बाद जब हम एक पड़ाव पर थकावट के मारे अचेत पड़े थे, हमारे एक साथी बिस्तर की गठरी बनाकर, गढ़वाली मजदूरों की तरह उसे पीठ पर बाँधने का अभ्यास कर रहे थे। वे गठरी खोलते और बाँधते, ५-४ कदम चलते और फिर वही क्रम दुहराते। हम शायद घंटे-भरसे अधिक सो गये होंगे कि उन्होंने जोर से चिल्लाकर कहा 'देखो! मैंने पा लिया। जान लिया।"

मैं हड़बड़ाकर उठा, यह देखने के लिए कि "क्या पाया?" क्योंकि उनके स्वर में वही उल्लास था, जो पानी में सोने के मुकुट का भार कम होने के रहस्य को जान लेने पर आर्कमिडिज को हुआ होगा। ये थे हमारे सर्व सेवा संघ के तत्कालीन अध्यक्ष मनमोहन भाई।

रायपुर-सम्मेलन के बाद ३० जनवरी '६४ से उन्होंने सीमा क्षेत्र में कार्य के लिए आनेवाले शान्ति सैनिकों के एक दल के साथ उत्तराखण्ड (चमोली जिले) की यात्रा प्रारम्भ की थी। रुद्रप्रयाग से हमारी टोली मंदाकिनी और अलकनन्दा घाटी के लिए दो दलों में बँट गयी। चमोली से पदयात्रा प्रारम्भ हुई तो सबने अपने-अपने पिट्ठू पीठ पर लाद लिये। हमारे साथ एक मजदूर भी था। पहले ही पड़ाव से मनमोहन भाई को लगा कि दूसरे साथियों की तरह उन्हें भी अपना बिस्तर पीठ पर लादकर चलना चाहिए। इसीका अभ्यास वे कर रहे थे।

"पर आप इस उधेड़ बुन में क्यों पड़े? हमें तो पहाड़ में रहना है और हमेशा पीठ पर बोझा ढोना है। रास्ते तंग और चढ़ाई के होते हैं, इसलिए पहाड़ चढ़ते हुए दोनों हाथ स्वतंत्र रहने चाहिए। आदमी को गदहा बनना पड़ता है।" मैंने कहा।

और उन्होंने तपाक से उत्तर दिया, "कई गदहों के साथ एक समझदार गदहा बनने में कोई हर्ज नहीं।"

चमोली जिले के नागपुर परगने के कई गाँवों में यह यात्रा चली। पहाड़ों में अस्पृश्यता का भूत लोगों के दिलों में डेरा डाले हुए है। वे ग्रामदान और सर्वोदय की बातें बड़े प्रेम से सुनते, पर जब हमारे—

शिक्षण या अभ्यास?

[सहारनपुर जिले के घाटेढ़ा में चल रहे ग्रामस्वराज्य विद्यालय के कुछ महत्वपूर्ण प्रयोग और अनुभव]

दो शब्द हैं—शिक्षण और अभ्यास, अंग्रेजी में 'एजूकेशन' और 'ट्रेनिंग'। इन दो शब्दों के अर्थ एक-दूसरे से बिलकुल ही अलग हैं। ग्रामस्वराज्य विद्यालय प्रारम्भ करते समय से आज तक यह विचार बार-बार सामने आता रहा है कि जो युवक इस विद्यालय में आते हैं, उनका शिक्षण होगा या किसी विशेष क्रिया का अभ्यास मात्र ही कराया जायेगा? अभ्यास कराना कोई निम्न कोटि की चीज है, ऐसा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सरकस में अभ्यास के द्वारा हाथी, घोड़ा, शेर, भालू आदि पशुओं से बहुत विचित्र-विचित्र कार्य कराये जाते हैं। लेकिन इन सब करामातों की शक्ति रिंगमास्टर के चाबुक और मदारी के डंडे में होती है। सड़क किनारे बैठे बहुत-से व्यक्ति सीन चिड़िया को चावल का एक दाना देकर अनेक व्यक्तियों का भाग्य-निर्णय कराते हैं, यह अभ्यास चिड़िया को चावल के दाने का लालच देकर कराया जाता है। केवल पशु-पक्षियों में ही क्यों, मनुष्य समाज में भी आदिकाल से कार्य की प्रेरणा भय और लालच के बीच चक्कर काटती रही है। बारीकी से देखा जाय तो हिंसा इस भय और लालच की बुनियाद पर खड़ी है। समाज में प्रचलित शिक्षण व्यवस्था भी भय और लालच से मुक्त नहीं है। भय और लालच जहाँ है, वहाँ मैत्री, समानता, स्वतन्त्रता का विकास तो असम्भव है ही, समाज को इस दिशा में शिक्षित करने के लिए लोक-शिक्षक तैयार करना और भी मुश्किल है।

ग्रामस्वराज्य विद्यालय में इस कठिन काम को कैसे हल किया जाय, यह चिन्तन बराबर चलता ही रहता है। जो शिक्षार्थी विद्यालय में आये हैं, उनको ग्राम स्वराज्य के मूल विचार मैत्री, स्वतंत्रता, समानता, भाईचारे के अध्ययन का वातावरण मिले, तथा उस दिशा में साधना करने की प्रेरणा हो, इसी दृष्टि से कार्यक्रम बनाने की कोशिश की जाती है। अतः विद्यालय के कार्यक्रम में व्याख्यानमाला न चलाकर निबन्ध-लेखन तथा चर्चाओं का ही कार्यक्रम रखा जाता है। इसका परिणाम यह है कि विद्यालय में शिक्षण देनेवाले, और शिक्षण लेनेवाले, ऐसे दो वर्ग नहीं बने हैं, बल्कि समस्याओं, परिस्थितियों और विचारों का परस्पर के सहयोग करने-वाला एक ही वर्ग बना है।

आरम्भ में इस प्रयोग के कारण कई छात्रों ने काफी उदण्डता भी दिखाई, जिसके कारण एक बार तो विद्यालय का कार्य बिलकुल ही अस्तव्यस्त होनेवाला था। उस समय हमारी कसौटी थी कि सजा के डर और इनाम के लालच से भिन्न अब कौनसा तरीका इस्तेमाल किया जाय। परिस्थिति विषम थी, लेकिन सब मिलकर बैठेंगे, सोचेंगे, योजना बनायेंगे, और यथासम्भव कदम बढ़ायेंगे, इस सूत्र का सहारा लिया गया। थोड़ा समय लगा, सहनशीलता और विचार-निष्ठा की कठिन परीक्षा हुई, लेकिन परिणाम बहुत ही अच्छे आये। इस सारे मथन में से विद्यालय-पंचायत का जन्म हुआ। छात्रों में से एक साथी ने सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर सब छात्रों से अलग-अलग चर्चा की। इस उभार के बाद विद्यालय का वातावरण बहुत ही अच्छा हो गया। सबमें उत्साह की लहर दौड़ गयी। यदि इस अवसर पर हम थोड़ी चूक करके किसी प्रकार की दण्ड व्यवस्था से विद्यालय में अनुशासन बनाये रखने की कोशिश करते, तो शायद उपद्रव का दमन

→रहने और खाने की बात आती तो प्रायः हरिजनों के लिए निश्चित स्थान तक ही पहुँच पाते। इन अनुभवों ने अनायास ही हमें क्रान्ति की तीव्रता का भान कराया। सीमा क्षेत्र में आर्थिक और सामाजिक असमानताओं का विस्फोट सुरक्षा की दृष्टि से कितना भयंकर हो सकता है? जिस हरिजन को अस्पृश्य मानकर कोई अपनाने को तैयार नहीं, वह कब तक अन्याय सहेगा? इससे पहले कि वह मुक्ति के लिए किसी दूसरी दिशा को ढूंढे, क्या हम ग्रामदान के द्वारा गाँव में ही उसका समाधान नहीं कर सकते?

केनुण्डी श्री बाघसिंह रावत का गाँव है। कई वर्षों तक वे सारे गाँव के साथ जमीन के लिए झगड़ते रहे और हाई-कोर्ट से अपने पक्ष में मुकदमा भी जीत लिया। भूदान का सन्देश सुनते ही उन्होंने ऐलान किया कि अपने साथ मैं ५ अन्य परिवारों को भी शामिल कर लूँगा। अब तो इस गाँव का ग्रामदान हो गया है। हमारा दोपहर का पड़ाव बाघसिंह भाई के घर पर रहा। दोपहर के बाद उनके नेतृत्व में रतुँवा के लिए आगे बढ़े तो मुख्य सड़क छोड़कर पगडंडी पकड़ी। नीचे उतरते हुए एक ऐसे स्थान पर पहुँच गये, जहाँ मुश्किल से पैर टिकाने लायक जगह थी। ऊपर पहाड़, नीचे पहाड़, पकड़ने के लिए घास का तिनका तक न था। पीछे मुड़े तो कई मील चलकर रास्ता मिलता। हम पहाड़ों पर चलने के अभ्यस्त लोग ही घबड़ा गये। जूते तो पहले ही झोलों में रख लिये थे। गायत्री भाई ने कहा, "मौत और हमारे बीच में केवल ४ इंच का फर्क है।" और जय जगत् का नारा बुलन्द करते हुए हम लोग आगे बढ़े। इस कठोर मार्ग को सबसे पहले पार करने-वाले मनमोहन भाई थे।

इस प्रकार के कई जोखिम भरे अनु-भवों के बाद यह यात्रा अगस्त मुनि में १२ फरवरी '६४ को समाप्त हुई। श्री अमरनाथ भाई के नेतृत्व में मंदाकिनी घाटी के गाँवों से पदयात्रा करती हुई दूसरी टोली भी यहाँ पहुँच गयी। इस यात्रा की साहसपूर्ण स्मृतियों को लेकर हम अपने कार्य-क्षेत्रों के लिए विदा हुए।

—सुन्दरलाल बहुगुणा

रों हो जाता, परन्तु उत्साह का वातावरण नहीं बनता।

विद्यालय में खादी पहनने, सफाई और श्रम करने के लिए नियम बनाने की बात कई बार मन में आयी, कई मित्रों तथा बुजुर्गों का भी इस सम्बन्ध में बहुत ही आग्रह रहा। लेकिन नियम बनाकर उसे पालन कराने के लिए जो सर्कस के रिंग-मास्टर की चाबुक की तरह का दण्ड-विधान चाहिए, वह शिक्षण के शास्त्र में ठीक नहीं बैठता, इसीलिए इस विषय में कोई आग्रह न किया जाय, ऐसा ही सोचा गया। हाँ, स्वावलम्बी अर्थ-व्यवस्था तथा शोषण उन्मूलन के विचार की चर्चा करते समय खादी और श्रम-सम्बन्धी विचार सहज रूप से सामने आते रहे। जैसे-जैसे विचार की बुनियाद बनेगी, वैसे-वैसे संकल्प की शक्ति अन्दर से विकसित होगी, इस विश्वास के साथ एक वैचारिक वातावरण बनाने का सतत प्रयास जारी रहा। इस प्रयास के परिणामस्वरूप एक माह में श्रम का अच्छा अभ्यास हुआ। खादी के वस्त्र भी सबने बनाये। मिल के वस्त्र घर भेज देने की व्यवस्था धीरे-धीरे सब सोच कर रहे हैं। खादी केवल विद्यालय की पोशाक नहीं है, वह स्वावलम्बी तथा विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था का आधार है, यह विचार हृदयंगम हो रहा है।

इन सारे प्रयोगों में से यह स्पष्ट हो रहा है, कि हमको शिक्षण-प्रक्रिया ही चलानी चाहिए, अभ्यास-प्रक्रिया नहीं। शिक्षण-प्रक्रिया में पहले विचार-चर्चा, उसके साथ ही विचार का अध्ययन, और फिर विचार का ग्रहण होगा। विचार-ग्रहण करने के बाद संकल्प और जीवन में अमली रूप देने के लिए साधना शुरू होगी। इस प्रकार चर्चा, अध्ययन, ग्रहण, संकल्प और साधना, ये शिक्षण-प्रक्रिया की सीढ़ियाँ दिखायी देने लगी हैं। •

तरुण शांति सैनिकों द्वारा बाँध का निर्माण

भारतीय तरुण शांति-सेना, भागलपुर के नारायणपुर उच्च विद्यालय शाखा के सदस्यों एवं ग्रामीण केन्द्र के सदस्यों द्वारा वर्षों से टूटे हुए एक बाँध का निर्माण-कार्य किया गया। इस बाँध के निर्माण से किसानों एवं विद्यालय आनेवाले छात्रों को काफी लाभ हुआ। इससे प्रेरणा लेकर ग्रामीणों ने नारायणपुर गाँव की सड़क-मरम्मत का काम शुरू कर दिया है। तरुण शान्ति-सेना के सदस्य इसमें सहयोग दे रहे हैं। प्रत्येक रविवार को तरुण शांति-सैनिक १ घंटा श्रमदान करते हैं। •

बीकानेर में जिलादान-अभियान

अब तक के अभियानों की उपलब्धियाँ :

प्रखण्ड	आबाद गाँव	प्राप्त ग्रामदान	प्रतिशत
कोलायत	११६	९५	८२
बीकानेर	१२७	१०६	८३
नोखा	११८	९६	८१
लूणकरणसर	१४८	१०५	७१६

उपरोक्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि प्रथम तीन प्रखण्डों का प्रखण्डदान हो चुका है। चौथा प्रखण्ड भी लक्ष्य के अन्तिम चरण में है। इसकी पूर्ति के लिए कार्यकर्ता प्रयत्नशील हैं। जुलाई '७० के अंत तक जिलादान हो जाने की सम्भावना है। •

जयप्रकाशजी का संकल्प : एक दूसरे कोण से

क्या हम सरकार के साथ सीधी टक्कर लेने से कतराते नहीं रहे ?

—रघुकुल तिलक

बिहार में ग्रामदान के पुष्टि-कार्य के लिए श्री जयप्रकाश नारायण एवं प्रभावतीजी का गाँव-गाँव घूमने का निश्चय, विशेषकर उस क्षेत्र में जहाँ कुछ सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की हत्या की धमकी दी गयी है, एक क्रान्तिकारी कदम है। ग्रामदान-आन्दोलन में जो एक प्रकार का गतिरोध आ गया है, वह इससे हटेगा, और देश भर में यत्र तत्र जो अनेक अवांछनीय प्रवृत्तियाँ उभर रही हैं, उनका भी कुछ शमन होगा। साथ ही सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को एक नयी प्रेरणा मिलेगी, और वह अपने कार्य में एक नये उत्साह के साथ लगेंगे,' ऐसी आशा की जा सकती है।

किन्तु जयप्रकाशजी के निर्णय का एक दूसरा पहलू भी है। भूदान ग्रामदान आन्दोलन को चलते १९ वर्ष पूरे हो गये, अब २० वाँ वर्ष चल रहा है। यदि इस अर्से में इस आन्दोलन ने विराट जन-आन्दोलन का रूप ले लिया होता, यदि एलवाल के निश्चय के अनुसार सभी राजनैतिक दलों का सहयोग मिला होता, और देश के युवजन को हमने अपनी ओर खींचा होता, तो भी क्या आज जयप्रकाशजी को ऐसा निर्णय लेने की जरूरत पड़ती ? यह सब क्यों नहीं हो पाया, इस पर गम्भीरता से सोचने की जरूरत है।

आज देश के अनेक पढ़े लिखे प्रतिभाशाली युवक नक्सलवाद की ओर खिंच रहे हैं। इस आन्दोलन में समाज-विरोधी तत्त्व भी अवश्य हैं, किन्तु विश्वविद्यालय-स्तर का जो शिक्षित युवक इसमें जा रहा है, वह ऊँचे दर्जे का है, इसमें सन्देह नहीं है। पश्चिम बंगाल के भूतपूर्व मुख्य-मंत्री अजय बाबू ने इन युवकों को 'मिस-गाइडेड जेम्स' (पथभ्रष्ट रत्न) कहा है, और जिन लोगों का इस आन्दोलन से थोड़ा भी परिचय है, वे मानेंगे कि यह अत्युक्ति नहीं है। इस प्रकार का युवक ग्रामदान-आन्दोलन की ओर क्यों आकृष्ट नहीं होता ? क्या इसलिए कि उसको स्वभावतः हिंसा पसन्द है ? या इसलिए कि हमारे आन्दोलन में कोई ऐसी कमी है, जिसके कारण देश का युवक इसको वास्तव में क्रान्ति का आन्दोलन नहीं मानता ? जिस आन्दोलन की ओर देश का युवक उदासीन अथवा विमुख है, उसका कोई भविष्य नहीं है, इसमें दो राय नहीं हो सकती। इसलिए इस प्रश्न का उत्तर ढूंढना हमारे लिए अनिवार्य हो जाता है।

जैसा कि जयप्रकाशजी ने कहा है, देश में "आज भी बहुत असंतोष है, गरीबी है, दुःख है, शोषण है, और विषमता है। २३ वर्ष बाद युवकों का धीरज टूट रहा है। इस परिस्थिति में देश की जनता एक नया मार्ग खोज रही है अपने त्राण के लिए। कहीं-कहीं लोग सोचते हैं कि हिंसा का एक मार्ग हो सकता है।" प्रश्न यह है कि आज हमारे युवक और अन्य सभी लोग यह क्यों नहीं सोचते कि हमारे देश के लिए और विश्व के लिए, गांधी का मार्ग, सर्वोदय का मार्ग, एकमात्र कल्याणकारी मार्ग है ? यदि इस मार्ग से उनकी आस्था टूट रही है, और वे हिंसा की बात सोचते हैं, तो इसके लिए कौन जिम्मेदार है ? कौन दोषी है ? दोष जनता का नहीं हो सकता। मनुष्य हिंसा को एक अनिवार्य साधन के रूप में तभी अपनाता है, जब उसके लिए कोई दूसरा साधन उपलब्ध नहीं होता। हम अभी भूले नहीं हैं कि इन्हीं युवकों और इसी जनता ने, कितनी श्रद्धा और उत्साह के साथ, गांधी के अहिंसक स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया था।

सरकार को भी दोषी नहीं मान सकते, क्योंकि हम यह मानकर चलते हैं, कि सर्वोदय समाज का या किसी भी आदर्श समाज का कानून द्वारा निर्माण नहीं हो सकता और सरकार का एकमात्र साधन कानून ही होता है। सरकार किसी भी दल की हो, उसका अधिक रुझान पूर्व-स्थिति (स्टेटसको) बनाये रखने की ओर ही होता है। अतः कोई भी क्रान्ति, जो वर्तमान आर्थिक सामाजिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन चाहती है, सरकार द्वारा नहीं, सरकार के विरुद्ध ही हो सकती है।

विनोबा : सरकारी साधु ?

भूदान-ग्रामदान आन्दोलन की एक विशेषता यह रही है कि हम शुरू से सरकार के सहयोग और प्रश्रय की आशा लेकर चले हैं, इसलिए हम कोई ऐसा कदम उठाने से बचते रहे हैं, जिसमें सरकार से सीधी टक्कर लेनी पड़े। इस प्रसंग में दिसम्बर सन् १९६१ की एक घटना मुझे याद आती है। उत्तर प्रदेश से गुड़ का निर्यात बन्द था, किन्तु तस्करी व्यापार में हजारों मन गुड़ बाहर गुजरात आदि प्रान्तों में जाकर तिगुने दामों पर बिक रहा था। बीच का मुनाफा पुलिस और तस्कर व्यापारियों की जेब में जाता था। सरदार स्वर्ण सिंह उस समय खाद्य मंत्री थे। हम लोगों ने उनसे मिलकर प्रतिबन्ध हटाने का आग्रह किया। उन्होंने कहा कि, 'प्रतिबन्ध हटा तो उत्तर प्रदेश में गुड़ महँगा हो जायेगा। हम नहीं चाहते कि जिस क्षेत्र में गुड़ बनता हो, वहाँ के रहनेवालों को वह उचित दामों पर न मिले।' तस्करी व्यापार के बारे में उन्होंने कहा कि, 'आप सर्वोदयी हैं, अपने नैतिक प्रभाव से उसे रोकिए।' हमने कहा कि 'सरकार में भ्रष्टाचार फैलाने की शक्ति जितनी है, उतनी नैतिक-शक्ति उसे रोकने की हमारी नहीं है।' प्रतिबन्ध नहीं हटा। वास्तव में सरकार को भय था कि यदि गुड़ महँगा हुआ तो किसान गुड़ ही बनायेगा, चीनी-मिलों को गन्ना नहीं देगा। इस पर हमारे साथियों ने सत्याग्रह करने का निश्चय किया और स्वर्गीय श्री त्रिवेणी

सहाय, तत्कालीन अध्यक्ष, उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल, और श्री सोम प्रकाश गौड़ जेल भी गये। उसी समय रायपुर में सर्वोदय-सम्मेलन हो रहा था। वहाँ से तार आने पर हम लोग बाबा की अनुमति के लिए सम्मेलन में गये। बाबा ने पहले सत्याग्रह करने के निश्चय का स्वागत किया और जयप्रकाशजी ने इसके समर्थन में एक वक्तव्य भी समाचार-पत्रों को दिया। किन्तु इसके तुरन्त ही बाद ढेबर भाई, अध्यक्ष-खादी-ग्रामोद्योग आयोग, और श्रीमन्नारायणजी, योजना आयोग के सदस्य (तत्कालीन), बाबा से मिले और बाबा ने सत्याग्रह के लिए दी हुई अपनी अनुमति वापस ले ली, और कहा कि 'जब तक 'सुप्रीम कमाण्ड' की आज्ञा न हो, सत्याग्रह न किया जाये।' कारण एक ही हो सकता था कि 'बाबा कोई ऐसा काम नहीं करना चाहते थे, जिससे सरकार से संघर्ष हो, या प० जवाहरलाल नेहरू की परेशानियाँ बढ़ें।' इसके पीछे नीयत तो अच्छी ही थी, किन्तु परिणाम यह हुआ कि सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की जमात जनता की दृष्टि में सरकार की पिछलग्गू मानी जाने लगी। और प्रायः लोग कहने लग गये कि, 'विनोबा सरकारी साधु हैं।' ऐसी जमात से क्या देश का युवक क्रान्ति की आशा रख सकता है?

हमारे दावे, और असलियत

हमारी ओर से दावा किया जाता है कि ग्रामदान का पुष्टि-कार्य पूरा होने पर देश की काया-पलट हो जायेगी, और जिन कारणों से आज जनता परेशान है, उन सबका उपाय निकल आयेगा। इस कल्पना में दो बड़ी भूलें हैं। हम मानते हैं कि विषमता हटनी चाहिए। किन्तु, सुलभ ग्रामदान में हम प्रत्येक भू-स्वामी को आश्वासन देते हैं कि यदि वह २०वाँ भाग भूमिहीनों को देने के लिए तैयार हो, तो शेष भूमि उसके और उसकी सन्तान के लिए सुरक्षित हो जायेगी। केवल वह गाँव से बाहर उसे बेच न सकेगा। ऐसी दशा में उसके स्वामित्व-विसर्जन का कोई अर्थ नहीं रहता, और विषमता ज्यों-की-त्यों बनी रहती है।

हमारी दूसरी भूल यह मानकर चलना है कि ग्रामदानी गाँवों में सभी ग्रामसभाएँ आपस का द्वेष और भेद-भाव भूलकर पारिवारिक भावना से काम करेंगी। कहीं-कहीं ऐसा हो सकता है। किन्तु देशभर में इस समय जो सम्प्रदाय-वाद, जातिवाद, और दलवाद का विष फैला हुआ है, उससे ये सभाएँ मुक्त रहेंगी, ऐसा मानने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है।

मेरा यह अभिप्राय कदापि नहीं है कि ग्रामदान का कार्यक्रम गलत है, और इसको छोड़ देना चाहिए। कार्यक्रम अच्छा है और चलना चाहिए। पर यदि हम मान लेते हैं कि इससे देश के सभी रोगों का इलाज हो जायेगा या क्रान्ति की ऐसी भूमिका तैयार होगी कि फिर युवजन के लिए नक्सालवाद का आकर्षण समाप्त हो जायेगा, हमें अन्त में निराश ही होना पड़ेगा।

बेकारी के विरुद्ध आन्दोलन करें

आज हमारे सामने बेकारी की बड़ी समस्या है। ग्रामदान द्वारा बहुत-से भूमि-हीनों को भूमि या काम मिल जाने से देहात में इस समस्या का कुछ समाधान निकलेगा, पर शहरों में जो लाखों पढ़े-लिखे युवक बेकार फिरते हैं, और जिनमें से अनेक नक्सालवादी बन रहे हैं, उनके विषय में हमने क्या सोचा? इस समस्या का एक ही हल है। हमें ग्रामदान के साथ-साथ बेकारी के विरुद्ध एक देशव्यापी आन्दोलन शुरू करना चाहिए, जिसके द्वारा सरकार को विवश किया जाय कि वह इन युवकों को या तो काम पर लगाये या बेकारी भत्ता दे। जिस बेकार युवक का भार माता-पिता के ऊपर रहता है, या जो चोरी डकैती करके निर्वाह करता है, उसका भार भी वास्तव में समाज के ऊपर ही आता है। अतः नैतिक दृष्टि से इस भार को लेना सरकार का कर्तव्य हो जाता है, चाहे इसके लिए एक नया बेकारी-कर ही क्यों न लगाना पड़े। इस उद्देश्य से जो आन्दोलन शुरू होगा उसमें सत्याग्रह के सभी तरीकों का प्रयोग हो सकता है, जिनमें सविनय अवज्ञा, कर-बन्दी, भूख-हड़ताल, शान्तिपूर्ण प्रदर्शन आदि शामिल हैं। मुझे विश्वास है कि ऐसे आन्दोलन में सभी गैर-कांग्रेसी दलों का सहयोग मिलेगा और अनेक नक्सालवादी भी हिंसा और उपद्रव का मार्ग छोड़कर हमारे साथ आयेंगे।

गांधीजी ने युद्ध और हिंसा का जो विकल्प हमारे सामने रखा था, वह सत्याग्रह ही था। इसका उन्होंने केवल प्रतिपादन ही नहीं किया, बल्कि पहले सीमित क्षेत्रों में प्रयोग करके उसकी व्यवहारिकता भी सिद्ध कर दी। यही कारण था कि सैकड़ों आतंकवादी उनके साथ आ गये और बाकी ने आतंकवाद का कार्यक्रम स्थगित कर दिया। हमने क्या किया? केवल भूदान-ग्रामदान चलाया। इसके द्वारा अच्छा काम हुआ पर इसमें सत्याग्रह (जिस अर्थ में मैं यहाँ उसका प्रयोग कर रहा हूँ) की न गुंजाइश थी, न आवश्यकता। साथ ही इस पवित्र और अचूक साधन को जहाँ-तहाँ ऐसे लोग इस्तेमाल करते रहे, जिनमें न तो इसके प्रति श्रद्धा ही थी, और न इसके प्रयोग की योग्यता ही। फलतः 'सत्याग्रह' बदनाम हुआ, और उपहास का विषय बन गया। जो लोग इसके प्रयोग की योग्यता रखते थे वे अन्यत्र लगे रहे। गांधीजी की इस बात को हम बिलकुल भूल गये कि जिस समाज के मूल में अन्याय और शोषण हो, उसमें सत्याग्रही का उपयुक्त स्थान जेल में होता है। लेकिन ऐसा नहीं हुआ।

यही कारण है कि आज गांधी के साधनों में युवजन की आस्था नहीं है, और नक्सालवादियों को गांधी के चित्र और प्रतिमाएँ नष्ट करने और गांधी-साहित्य फूँकने का दुःसाहस हो रहा है। यदि नक्सालवाद फैलता है, और हम उसका कोई कारगर विकल्प पेश नहीं करते तो इतिहास हमें क्षमा नहीं करेगा। इसलिए आज आत्म-निरीक्षण की आवश्यकता है।●

दत्तपुर कुष्ठधाम में कुष्ठियों का पराक्रम

• वसंत वोंबटकर

यद्यपि भारत में कुष्ठरोगियों की सेवा का कार्य ईसाई मिशनरियों द्वारा ही प्रारम्भ हुआ था, लेकिन राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कुष्ठरोगी स्व० परचुरे शास्त्री की सेवाग्राम-आश्रम में खुद अपने हाथों से सेवा की, और भारतीयों का ध्यान कुष्ठ की ओर खींचा। इसके लिए एक सेवा-संस्था की भी शुरुआत की। अब यह सेवाकार्य जगह-जगह अच्छी तरह चल रहा है। दत्तपुर, वर्धा की कुष्ठसेवा-संस्था इसकी एक सुन्दर मिसाल बनकर आगे बढ़ रही है।

श्री मनोहरजी दिवाण ने बापू और विनोबा के मार्ग-दर्शन में यह संस्था खोली थी। उजड़ी भूमि, टूटीफूटी झोपड़ियां और उसमें अपाहिज बीमार, इस स्थिति में सालों सेवा-कार्य चला। इस संस्था की सेवा से बहुत सारे लोग आरोग्य-लाभ कर चुके। इस समय सैकड़ों लोग 'इनडोर पेशेण्ट' के रूप में हैं। हजारों 'आउट डोर पेशेण्ट्स' का इलाज होता है। गांधी मेमोरियल लेप्रेसी फाउण्डेशन बोर्ड, सरकार और दत्तपुर की संस्था के प्रयत्न से हजारों रोगियों को अगले दस साल में रोग-मुक्त कराने की योजना सफलता के साथ चल रही है। इस समय दत्तपुर कुष्ठधाम का संचालन इस सेवा-कार्य के लिए समर्पित जीवन जीनेवाले सत्त-हृदय जवान डाक्टर शिवाकर शर्मा कर रहे हैं।

रोग के साथ-साथ कुष्ठियों की आर्थिक समस्या भी विकट है। जिस भारत में हट्टे-कट्टे नवजवान बेकार बनकर घूम रहे हों, वहां अपाहिज कुष्ठ-रोगियों को भीख मांगने के अलावा कौन-सा रास्ता सुलभ हो सकता है?

लेकिन दत्तपुर कुष्ठधाम में वे ही कुष्ठरोगी सैकड़ों क्विंटल अनाज अपने और अपने देशबन्धुओं के लिए पैदा करके अद्भुत कार्य कर रहे हैं। हजारों मीटर खादी, सैकड़ों मन दूध, तरकारी आदि वे पैदा कर रहे हैं। कुष्ठधाम में बड़े बड़े मकान खड़े हो रहे हैं। तालाब, कुएं खोदे जा रहे हैं, खेतों की मेढ़बन्दी हो रही है। नये बीज नया पराक्रम दिखा रहे हैं। इस साल दत्तपुर कुष्ठधाम के 'हायब्रीड' ज्वार की फसल को सरकार द्वारा पारितोषिक प्राप्त हुआ है। वर्धा जिले में आलू की प्रथम बार इतनी अधिक फसल (६० क्विंटल फी एकड़) पैदा करके उन्होंने सभी को आश्चर्य में डाल दिया है। खादी-उत्पादन भी बहुत हुआ है। (इसकी विस्तृत जानकारी तालिका में दी गयी है।) वास्तव में दत्तपुर की मरुभूमि में इन अपाहिज हाथों ने सोना उगाया है, और ग्रामीण भारत में सफल कुटीर-उद्योग का नमूना खड़ा किया है। भारत की भूमि और भारतीय नागरिकों की शक्ति के अक्षय स्रोत का दर्शन इस उजाड़ भूमि और अपाहिज हाथों ने कराया है। इन कुष्ठियों का पराक्रम वास्तव में अभिनन्दनीय है। →

दैनंदिनी : १९७१

प्रति वर्ष की भांति सर्व सेवा संघ की सन् १९७१ की दैनंदिनी शीघ्र ही प्रकाशित हो रही है। इस दैनंदिनी के ऊपर प्लास्टिक का चित्ताकर्षक कवर लगाया गया है। इसकी कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

- इसके पृष्ठ रूलदार हैं।
- इसके प्रत्येक पृष्ठ पर विनोबाजी के प्रेरक वचन दिये गये हैं।
- इसमें भूदान-ग्रामदान आन्दोलन की अद्यतन जानकारी तथा सर्व सेवा संघ के कार्य की संक्षेप में जानकारी दी गयी है।
- गत वर्षों की भांति यह दैनंदिनी दो आकारों में छपायी गयी है, जिसकी कीमत प्रति दैनंदिनी निम्न अनुसार है :

(अ) डिमाई साइज ९″ × ५½″ मूल्य : रु० ३)७५

(ब) क्राउन साइज ७½″ × ५″ मूल्य : रु० ३)००

आपूर्ति के नियम

- विक्रेताओं को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायगा।
- एकसाथ ५० अथवा उससे अधिक प्रतियां मंगाने पर ग्राहक के निकटतम स्टेशन तक दैनंदिनी की पहुँच भिजवायी जायगी।
- इससे कम संख्या में दैनंदिनी मंगाने पर पैकिंग, पोस्टेज और रेल-महसूल ग्राहक को वहन करना पड़ेगा।
- भेजी हुई दैनंदिनी वापस नहीं ली जाती।
- *दैनंदिनी की बिक्री पूर्णतया नकद ही रखी गयी है, अतः आप कीमत अग्रिम भिजवाकर या वी० पी० या बैंक के मार्फत दैनंदिनी प्राप्त कर सकते हैं।*
- आर्डर देते समय आप अपना *नाम, पता और निकटतम रेलवे-स्टेशन का नाम सुवाच्य लिखिए और यह निर्देश स्पष्ट रूप से दीजिए कि दैनंदिनी को बिल्टी वी० पी० या बैंक से भेजी जाय या आप दैनंदिनी की रकम अग्रिम भिजवा रहे हैं।*

उपर्युक्त शर्तों को ध्यान में रखते हुए आप अपना क्रयादेश अविलम्ब भिजवायें। —राधाकृष्ण बजाज

अध्यक्ष,
सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१

अक्तेश्वर में किसान-सत्याग्रह

चौथी टोली में २५ बहनें, ७ सर्वोदय-कार्यकर्ता एवं ५३ ग्रामदानी किसान, कुल ८५ सत्याग्रही गिरफ्तार

मूसलाधार वृष्टि के बावजूद सत्याग्रह का क्रम जारी

८ मई '७० से ही गुजरात के बड़ौदा जिले के अक्तेश्वर गाँव में चल रहे सत्याग्रह की पृष्ठभूमि से 'भूदान यज्ञ' के पाठक परिचित हैं। सरकार द्वारा अक्तेश्वर के ९ परिवारों की ४४ एकड़ जमीन छीनकर दूसरों के नाम कर दिये जाने के विरोध में चल रहा यह सत्याग्रह निरन्तर जोर पकड़ता जा रहा है।

पिछले कई दिनों से लगातार हो रही घनघोर वृष्टि के बावजूद ३ जुलाई को रैली शुरू हुई। वृष्टि एक बजे अपराह्न में बन्द हो गयी। ३५ गाँवों के तीन हजार के करीब लोग एकत्रित हो गये। सर्व सेवा संघ के सहमंत्री श्री गोविन्दराव देशपांडे ने लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा, "सत्याग्रह ग्रामस्वराज्य का पर्याय है। अक्तेश्वर गाँव के जिन परिवारों के साथ अन्याय हुआ है, उसके खिलाफ अक्तेश्वर गाँव के ही नहीं, बल्कि आसपास के ३५ गाँवों के लोग कष्ट सहन करने को तैयार हुए हैं, यही बात साबित करती है कि प्रेम और परिवार की भावना को उसने व्यापक किया है। सर्वोदय की यही मूलशक्ति है।"

गुजरात की सुप्रसिद्ध सर्वोदय-कार्यकर्त्री सुश्री हरविलास बहन शाह ने सत्याग्रही बहनों की ओर इशारा करते हुए कहा, "जिस तरह बहनें उत्साह से इसमें लगी हैं, उसे देखकर स्पष्ट लगता है कि अब अन्याय दूर होने में देर नहीं है। सत्य की विजय अवश्य होगी। अहिंसक सत्याग्रह में खूबी यह है कि दोनों की विजय होती है। सत्याग्रह दूसरों को कष्ट देकर नहीं, खुद कष्ट सहन करके दूसरों के दिल में प्रवेश करने का जोरदार माध्यम है।"

श्री हरिवल्लभ परीख ने ३५ गाँवों के लोगों को इस प्रकार की वृष्टि के बावजूद एकत्र हो जाने पर बधाई दी, और कहा, "यह हमारा धर्मयुद्ध है—अन्याय के खिलाफ, असत्य के खिलाफ, भ्रष्टाचारी तंत्र और तत्त्व के खिलाफ।

"यहाँ जो अन्याय हुआ है, उसे मिटाना है। यह सवाल ४८ एकड़ या अक्तेश्वर का नहीं, पूरे भारत के ४८ करोड़ किसानों का है। हर गाँव में किसी-न-किसी बहाने जमीनें छीन ली गयी हैं। देशभर में भूमि का प्रश्न अहम प्रश्न बन चुका है। तेलंगाना में भूमि के प्रश्न पर हिंसा की जो आग २० वर्ष पहले जली थी, अन्दर ही-अन्दर वह देशभर में सुलगती रही। और अब बंगाल-बिहार-उड़ीसा-आन्ध्र में नक्सलवाद के नाम से भड़क उठी है। ऐसे नाजुक समय में जमीन के प्रश्न पर सबका ध्यान जल्दी जाना चाहिए, और ये समस्याएँ शीघ्र हल होनी चाहिए। अहिंसक प्रतिकार के अस्त्र को अब हमें उपयोग में लाना होगा। उसे ज्यादा असरदार बनाना होगा।"

रैली और सभा के बाद जोरदार नारों के साथ किसान अपनी धरती माँ से मिलने चले। श्री देशपाण्डे ने सत्याग्रहियों को श्रीफल भेंट किये। सुश्री हरविलास बहन ने सबको तिलक लगाकर सत्याग्रह के लिए विदायी दी। जोरों से वृष्टि शुरू हुई। फिर भी जुलूस चला खेतों की ओर। कानून के रक्षकों ने भूमिपुत्रों को माँ से मिलने नहीं दिया। बीच में ही गिरफ्तार कर लिया। लेकिन कितने दिनों तक माँ-बेटों का वियोग समय बरदाश्त करेगा?

एस० आर० पी० पुलिस के सामने जब आदिवासी बहनें निडर होकर कह रही थीं, "हम गिरफ्तार करके जेल भेजो या फिर हमें खेतों में काम करने जाने दो। हम मोटर से नीचे नहीं उतरेंगी।" तो सीरीयमबादों को इस आशा व पुलिस-कप्तान के भय के मारे भ्रम नष्ट हो रहे थे। एक पुलिस अधिकारी ने कहा, 'यह अक्तेश्वर का प्रश्न तो ठीक है, किन्तु जिस भय के भरोसे हमारा कार्य चलता था, वह तो इस सत्याग्रह ने खतम कर दिया।"

अब तक इस सिलसिले में ४ रैलियाँ हुईं। २३५ लोगों को गिरफ्तार किया गया, जिनमें १०१ बहनें भी शामिल हैं। यह अखण्ड सत्याग्रह होगा।

कुष्ठियों द्वारा हुए खादी काम की जानकारी

कताई (माह अप्रैल व मई '७०)

माह	वजन किग्रा०	सूत की कीमत रु० पैसा	कताई मजूरी रु० पैसा	पिंजाई किग्रा०	पिंजाई मजूरी रु० पैसा
अप्रैल	२१६.९००	२,३०६-४८	१,१५६-९१	१५-०००	९-६०
मई	३००-१५०	३,१९७-२४	१,१०७-२४	८-३००	५-२२
कुल	५१७-०५०	५,५०३-७२	२,३६४-१५	२४-३००	१४-८२

बुनाई (माह अप्रैल व मई '७०)

माह	लम्बाई मी० सें०	खादी-कीमत रु० पैसा	बुनाई मजदूरी रु० पैसा
अप्रैल	४५६-२५	१,२१०-८५	३०५.६७
मई	४६२-२५	१,२३२-४५	३१०-२५
कुल	९१८-५०	२,४४३-३०	६१६-१२

ग्रामस्वराज कोष

प्रदेशों में कोष-संग्रह

(१४ जुलाई '७० तक केन्द्रीय कार्यालय में प्राप्त जानकारी के आधार पर)

क्रमांक	प्रदेश	रु० पै०
१.	असम	११,४३८ ००
२.	बंगाल	—
३.	बिहार	—
४.	उत्तरप्रदेश	६०१'००
५.	हिमाचल	—
६.	कश्मीर	—
७.	पंजाब	१,८२५'००
८.	हरियाणा	३,०३३'६०
९.	राजस्थान	३,३९५ ००
१०.	गुजरात	७,०००'००
११.	महाराष्ट्र	१,००,०००'००
१२.	मध्यप्रदेश	३५,४३७ ००
१३.	उड़ीसा	—
१४.	आन्ध्र	२६,५२० ७५*
१५.	मैसूर	४,०० ०००
१६.	केरल	—
१७.	तमिलनाडु	९,००० ००
१८.	दिल्ली	१,००१ ००
		२,०३,२५१'३५
१९.	सीधे केन्द्रीय कार्यालय मे प्राप्त दान	२,५२० ९५
	कुल योग	२,०५,७७२'३०

*केवल हैदराबाद नगर मे ता० ८-७-७० तक प्राप्त।

संग्रह में प्रगति

•एक दिन एक भाई केन्द्रीय कार्यालय मे आये और बोले, "मैं 'भूदान-यज्ञ' और अन्य सर्वोदय पत्रिकाओं मे आता तथा उनके काम के बारे मे पढ़ता रहता हूँ। मुझे ग्रामस्वराज्य कोष के संग्रह का भी पता चलता रहता है। अपने माता पिता की स्मृति मे कोष मे १,००० रु० देना चाहता हूँ।" माता-पिता की स्मृति मे दिये गये दान का इससे अधिक अच्छा उपयोग क्या हो सकता है।

दरियागंज के श्री नेमराजजी कालरा के उपरोक्त दान से दिल्ली का संग्रह प्रारम्भ हुआ।

•हैदराबाद नगर मे अभी तक २६,००० रु० का संग्रह हुआ है। श्री उत्तमचन्द, मंत्री, आंध्र प्रदेश ग्राम-स्वराज्य कोष समिति ने ५,००० रु० का दान दिया है।

•पंजाब व हरियाणा मे भी घर-घर से चन्दा लिया जा रहा है। लुधियाना मे रोटरी क्लब ने ३०० रु० का दान दिया है। जालन्धर जिले मे प्रारम्भिक संग्रह १५० रु० व फिरोजपुर मे १७५ रु० हुआ है।

•मध्यप्रदेश की जिला समितियों के संग्रह-कार्य मे तीव्रता आयी है।

•नागपुर जिला समिति के अध्यक्ष, श्रम व विकास-मंत्री, श्री नरेन्द्रजी तिडके हैं, तथा वहाँ का लक्ष्यांक एक लाख है। अमरावती जिला समिति का लक्ष्यांक ७१ हजार है, तथा उसके अध्यक्ष गव-साहब इंगोले हैं, जो जिला परिषद के भी अध्यक्ष हैं।

•महाराष्ट्र ग्रामस्वराज्य-कोष समिति के कार्याध्यक्ष व मंत्रियों ने पिछले दिनों मराठवाड़ा के पाँच जिलों का दौरा कर वहाँ जिला कोष-समितियों का गठन करने मे सहायता की। वहाँ जिला परिषदों के अध्यक्ष सभी जिलों की कोष समिति के भी अध्यक्ष हैं। पाँचों जिलों के संग्रह का लक्ष्यांक ढाई लाख रुपये है। पूना जिले का लक्ष्यांक एक लाख है। जलगाँव जिले का लक्ष्यांक रु० ५१,००० का है। वहाँ भी जिला कार्य-समिति का गठन हो गया है। वर्धा के विधायक श्री नारायण काले ने ५०१ रु० दान में दिये हैं, जो कि उनका एक माह का वेतन है।

•केन्द्रीय कार्यालय मे प्राप्त सूचनाओं के अनुसार अभी तक का संग्रह दो लाख रु० से ऊपर है। जहाँ से सूचनाएं नहीं प्राप्त हुई हैं, या अपूर्ण हैं, वहाँ का अनुमान एक लाख रु० का है। इस प्रकार कुल संग्रह लगभग तीन लाख रु० का होता है।

(सिद्धराज ढड्ढा)
प्रधान मंत्री

सिंहभूम में ग्रामस्वराज्य कोष-समिति का गठन

गत १३ जुलाई को बिहार के वनमंत्री श्री बागुन सुमरुई की अध्यक्षता मे सिंहभूम जिला ग्रामस्वराज्य-कोष समिति गठित करने हेतु एक बैठक चाईबासा के खादी भण्डार-भवन मे हुई, जिसमें सर्व-सम्मति से निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गये :

श्री बागुन सुमरुई—अध्यक्ष,
वनमंत्री, बिहार सरकार
" मु० अयूब खाँ—सचिव
" दिवाकर मिश्र—सहसचिव
" हरिकिशोर प्रसाद—कोषाध्यक्ष
" सीताराम रुंगटा—सदस्य
" के० के० विद्यार्थी—सदस्य
" शिवराम महतो—सदस्य

कोष का शुभारम्भ वनमंत्री श्री बागुन सुमरुई ने ५१ रुपये देकर किया और तत्काल २०५ रुपये उपस्थित सज्जनों से प्राप्त हुए। जिले से १ लाख रुपये एकत्र करने का लक्ष्यांक निर्धारित किया गया।•

वार्षिक शुल्क . १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ४४

सोमवार ३ अगस्त, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी–१
फोन : ६४२८५

बड़ा होने की जिम्मेदारी

भारत रूस को छोड़कर पूरे यूरोप के बराबर है। यूरोप में अधिकांश लोगों का एक धर्म है, भाषा भी करीब-करीब समान है। ८-१५ दिन में एक-दूसरे की भाषा सीख सकते हैं। करीब-करीब एक लिपि है। इतना होते हुए भी भिन्न भिन्न भाषा के आधार पर राष्ट्र बनाये हैं, यह 'जंगलीपन' है। फ्रांस और इंग्लैण्ड की लड़ाई होगी, तो उसे राष्ट्रीय-युद्ध कहा जायेगा। परन्तु भारत में भाषा के नाम पर झगड़े होते हैं, यह खराब बात है ऐसा हम कबूल करते हैं। फिर भी, चिंतित होने की बात नहीं। हमारी समस्या बड़ी इसलिए है कि सारा भारत एक है।

ऋषियों ने कहा है कि, 'हे भारत! तू हमारा है, एक है, और समुद्र से हिमालय की गुफा तक हमारी मातृभूमि है।' ऋषियों के इस दर्शन के कारण हम तकलीफ में आ गये। यह सारी जिम्मेदारी बड़ा होने के नाते है। इसलिए हमको दिल बड़ा बनाने का एक छोटा-सा काम करना है, जिससे हमारी बहुत-सी समस्याएं सुलझ जायेंगी। यहां आर्थिक समस्याएं पड़ी हैं, इसमें शक नहीं। उसमें ताकत लगानी होगी। परन्तु जहां तक सामाजिक समस्याओं और ऊँच-नीच का भाव है, वह तंग दिल के कारण है। बड़ा दिल बनाने से वे सुलझ सकती हैं। यहां छोटी-छोटी अनेक जातियां हैं, उसका कारण 'को-एक्जिस्टेन्स' (सह-अस्तित्व) है। पुराने जमाने में कई जमातें भारत में आयीं, भारत ने उनको 'लूट' नहीं किया, बल्कि उनको आश्रय दिया, और कहा कि, 'आप अपने आचार-विचार से रहें, और हम भी अपने आचार-विचार से रहेंगे।' इस प्रक्रिया को हमें आगे चलाना है।

आप ग्रामदान की गिनती सुनाते हैं। जब ग्रामदान पुष्ट हो जायेगा, तब बाबा एक से गिनती शुरू करेगा। इसका मतलब है कि आपको पूरी ताकत से पुष्टि का काम जल्दी करना है। इसके लिए समस्या है कार्यकर्ताओं की कमी। इसमें सन्देह नहीं। इसलिए हमें सोचना चाहिए कि इसको जनता की सहानुभूति कैसे मिले, और यह जन-आन्दोलन कैसे बने। नये-नये लोगों को सामने रखकर उनको हम यश दें, और अपने को पीछे रखें तो नये-नये कार्यकर्ता आयेंगे।

इन दिनों नक्सालबाड़ी की बड़ी चर्चा है। आजकल मैं वेद पढ़ता हूं। तो लगा कि वेद में भी नक्सालबाड़ी के बारे में मुझे इसका जवाब मिला। 'वषट्-वषट् इति उर्ध्वासो अनक्षन्। नमो नम इति उर्ध्वासो अनक्षन्।' (सूक्ति-११६) त्याग, नम्रता। यहां नक्सालबाड़ी का जवाब मिलता है। वषट् यानी त्याग, हम त्याग करें, और लोगों से त्याग करायें। त्याग से अहंकार आता है। इसलिए नम्रता बतायी है। तो हमको नम्र बनना चाहिए।

११ सितम्बर '६७
पूर्णिया, बिहार

[signature]

पहले खुद ग्रामदान की शर्तें पूरी करें

१३ जुलाई के 'भूदान-यज्ञ' में सम्पादकीय लेख 'बैलेंस शीट' और दादा धर्माधिकारी, श्री प्रबोध चोकसी के लेखों से यह ध्वनि निकलती है कि ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन जन-आन्दोलन नहीं बन सका। २० वर्ष के लगभग हो गये, लेकिन हमारे समझाने-बुझाने का जितना असर जनता पर पड़ना चाहिए, उतना असर नहीं पड़ा। हमें अपने आन्दोलन में कुछ रद्दोबदल करनी पड़ेगी, सत्याग्रह का सहारा लेना पड़ेगा।

• समझाने-बुझाने का जनता के ऊपर जैसा चाहिए वैसा असर नहीं हो रहा है, यह मेरे अनुभव में भी आया है, पर उसका कारण हम लोग ही हैं। हम लोग लोकसेवक हैं, ग्रामदान प्राप्ति-पुष्टि का कार्य करते हैं, लेकिन हममें से कितने लोगों ने अपनी जमीन का बीघा-कट्ठा दिया है, ग्रामदान की अन्य शर्तें भी पूरी की हैं? इसलिए हम लोगों को चाहिए कि पहले हम लोग स्वयं ग्रामदान की शर्तें पूरी करें। हमारे पास जो भी धन, जमीन, श्रम आदि हैं, उसमें से गाँव के लिए हिस्सा निकालें; और फिर गाँव में अन्य लोगों से भी ऐसा करने को कहें। हम सभी अपने से नीचे के गरीब आदमी को अपनी जायदाद में से हिस्सा दें तो गाँव में गरीब, मालिक और धनवान में प्रेम बढ़ेगा, और शक्ति बढ़ेगी, दूसरे लोग भी ऐसा करेंगे। इससे जो शक्ति बनेगी, उस शक्ति से फिर ऐसे दो-चार व्यक्तियों से—जो देश एवं गाँव के हित में इस योजना के अनुसार अपनी सम्पत्ति, जमीन, धन आदि नहीं दे रहे हैं—गरीबों के लिए हिस्से की माँग की जा सकती है, उसके लिए सत्याग्रह किया जा सकता है। इसमें हिंसा नहीं होगी। लेकिन जब तक हमने अपने से अधिक गरीबों को अपने में से हिस्सा नहीं दिया है, तब तक यदि हम दूसरे से हिस्सा लेने के लिए सत्याग्रह करेंगे तो वह अहिंसक नहीं रहेगा।

• यदि हम दादा धर्माधिकारी के विचारों के अनुसार कम्यूनिस्टों से संवाद करना चाहते हैं, तो हमें इसी विचार पर जोर देना चाहिए, कि कम्यूनिस्ट भी पहले अपने से नीचे के गरीबों को उनका हिस्सा दें। उसके बाद हम दूसरों से देने के लिए कहें या हम शक्ति का दबाव डालकर धनवानों से या जमीनवालों से धन और जमीन प्राप्त करें।

• अकेले कम्यूनिस्टों से ही नहीं, बल्कि सभी पार्टियों के साथ बैठकर हमें एक सम्मिलित कार्यक्रम बनाना चाहिए, और सबसे मिल करके जमीन की समस्या हल करने की कोशिश करनी चाहिए।

—भैरव सिंह भारतीय, फर्रुखाबाद

ग्रामदान-गंगा : आश्रमों-संस्थाओं के घेरे में

लोकतंत्र या जनतंत्र का लक्ष्य है—जनता के लिए, जनता के द्वारा, जनता का राज्य। इस प्रकार की लक्ष्य-प्राप्ति के लिए आवश्यक है—जनता के लिए, जनता के द्वारा, जनता का आन्दोलन। गांधीजी की दृष्टि में हिन्द-स्वराज्य प्रजातंत्र के लिए साधन मात्र ही था। अतः जिस लोकतांत्रिक पार्टी के माध्यम से यह प्राप्त किया गया उसीको जनता में विसर्जित करने की बात उन्होंने कही, किन्तु जब प्रशासन को ही उस पार्टी ने अपना साध्य बनाया, तो गांधीजी के पश्चात् विनोबाजी को विशुद्ध जन-आन्दोलन के लिए 'भूदान-यज्ञ' के माध्यम से समाज में आना पड़ा। आन्दोलन के बढ़ते चरण प्रदेशदान तक पहुँच गये, किन्तु तब भी आन्दोलन जन-आन्दोलन क्यों नहीं बन सका?

आज देश का वातावरण और परिस्थिति शान्ति के अनुकूल है। यह शान्ति कोई भी पार्टी या सरकार ला नहीं सकती। उसका माध्यम होगा देश का सामान्य नागरिक, जिसकी प्रसुप्त चेतना को जगाने भर के लिए कार्यकर्ता का आह्वान सर्वोदय-आन्दोलन ने किया। विनोबा के अनुसार जिस समय सर्वोदय-आन्दोलन जन-आन्दोलन बन जायगा, तो कार्यकर्ता का स्वतन्त्र अस्तित्व जन-महासागर में विलीन हो जायगा। तो, जन-आन्दोलन की ओर लोक-प्रवाह कितना गतिमान हुआ है, इसका सही पर्यवेक्षण किया जाय, तभी सर्वोदय-आन्दोलन का वास्तविक मूल्यांकन कर सकेंगे।

ग्रामदान में गाँव से गाँव को प्रकाश मिलता, इसी प्रकार विकास-खंड, तहसील तथा जिला और प्रदेश तक व्यापक रूप से यह प्रकाश गतिमान होता, तो लोकशक्ति का उदय हुआ, लोकचेतना जागृत हुई, जनता का मानसिक स्तर बदला, उसने नैतिकता को स्वीकार किया, यह स्थिति प्रकट होती। किन्तु इसके विपरीत 'लोक' अपनी जगह प्रसुप्त चेतना में ही रहा, और संस्था के कार्यालयों में दानपत्र ढेर-के-ढेर जमा किये जाते रहे। उसके आँकड़े समाचार पत्रों में प्रकाशित कराकर आन्दोलन का पौरोहित्य प्राप्त किया जाता रहा। अब कागज का काम न दुहराया जाय, ऐसा विनोबाजी कह रहे हैं। पत्रिकाओं के सम्पादकीय लेखों से ध्यानाकर्षित किया जा रहा है कि जिन कार्यकर्ताओं का ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार में निष्ठा न हो, उन्हें इस काम के लिए हरगिज न भेजा जाय।

जिस प्रकार गंगा जह्नु के आश्रम में आकर रुक गयी, जिसके लिए भागीरथ को पुनः प्रयास करना पड़ा, उसी प्रकार यह ग्रामदान-गंगा भी संस्था और आश्रमों के घेरे में पड़कर चक्कर काट रही है। यदि यहाँ से मुक्ति न मिली, तो यह लोक-प्रवाह की शान्तिधारा जन-महासागर की ओर अपनी तीव्र गति से बढ़ सकेगी, इसकी सम्भावना बहुत कम है।

—शिवनारायण शास्त्री, मथुरा

आयोजन और आमजनता

पिछले महीने राजधानी दिल्ली में योजना-आयोग की सलाहकार समिति में देश के सभी बेकारों को काम देने के बारे में बहुत जोरदार चर्चाएँ हुईं। समिति ने आगामी सन् १९८० तक प्रत्येक नागरिक को काम देने की, और कम से-कम ३६ रुपये मासिक के मूल्य के उपभोग-स्तर की आय हर आदमी के लिए निश्चित रूप से उपलब्ध कराने का लक्ष्य निर्धारित करने की सलाह दी। समिति ने रोजगार बढ़ाने के उपाय सुझाये, और मूल्यों को स्थिर करने की आवश्यकता पर बल दिया। एक सदस्य ने यह सुझाव दिया कि मूल्य निर्धारण नीति ऐसी होनी चाहिए, जिसका गरीबों पर बुरा असर न पड़े। एक दूसरे सदस्य ने योजना को श्रम-अभिमुख करने और देहाती क्षेत्रों में कृषि-औद्योगिक इकाइयों को फैलाने की दिशा में मोड़ने पर बल दिया। १७ संसद-सदस्यों, प्रधानमंत्री सहित ३ केन्द्रीय मंत्रियों, और उच्च अधिकारियों की इस बैठक में प्रो० गाडगिल, उपाध्यक्ष, योजना-आयोग ने कहा कि बेरोजगारी के सम्बन्ध में विशेषज्ञों की एक रिपोर्ट शीघ्र ही प्रकाशित की जानेवाली है।

पिछली तीन पंचवर्षीय योजनाओं के बाद अब चौथी योजना को पहले से अधिक ठोक-पीटकर वस्तुपरक बनाने और समस्याओं से अधिकाधिक जोड़ने की कोशिश प्रधानमंत्री और उनके सहयोगी कर रहे हैं। ऐसा करना देश की परिस्थिति को देखते हुए समस्याओं को हल करने के लिए जितना जरूरी है, उससे अधिक प्रधानमंत्री और उनके दल के लिए अपने राजनीतिक प्रभाव और परिणाम को अनुकूल बनाने हेतु जरूरी हो गया है, ऐसा भी कहनेवाले कहते हैं। लेकिन हम इस झगड़े में नहीं पड़ते, इसलिए कि, जो भी दल सत्तारूढ़ होगा, वह इस प्रकार की कोशिश करेगा ही।

हम यहाँ एक दूसरी दृष्टि से आयोजन के इस प्रश्न पर विचार करना चाहते हैं। हमारा देश लोकतांत्रिक है। हम व्यक्ति की स्वायत्तता और सामाजिक दायित्व, दोनों में संतुलन कायम करते हुए विकास की ओर बढ़ना चाहते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि विकास का दायित्व देश के हर नागरिक पर है, और उसका परिणाम भोगने का हक भी हर नागरिक को है। व्यक्ति और समाज के हितों में टकराव नहीं आये, व्यक्ति किसी विशेष शक्ति के सहारे समाज के बहुत सारे लोगों का अहित नहीं करने पाये, और समाज के नाम पर मनुष्यों का समुदाय व्यक्ति की स्वायत्तता को कुचल नहीं डाले, इसीके लिए हमारे देश में लोकतांत्रिक व्यवस्था की बुनियाद डाली गयी है। इसी रचना के लिए देश के हर छोटे-बड़े बालिग नागरिक को सत्ता में सहभागी बनने के लिए समान मताधिकार दिया गया है। यानी यह माना गया है कि जिस रचना में सम्पूर्ण समाज सहभागी होगा, उस रचना में समाज और व्यक्ति के बीच संतुलन होगा और किसीके हित की उपेक्षा नहीं होगी। हर स्तर के, हर तबके के, हर परिस्थिति के, लोगों का प्रतिनिधित्व उस व्यवस्था में सम्भव होगा।

लेकिन असलियत क्या है? क्या ऐसा हो रहा है? अगर ऐसा हुआ होता तो क्या देश के बेकार हाथों को काम मिलना चाहिए, उनके भूखे पेट भरने चाहिए, नंगे तन ढकने चाहिए, यह इतने दिनों बाद भी जोरदार चर्चा करने और विशेषज्ञों की रिपोर्ट प्रकाशित कराने का ही विषय रहा होता? अगर योजना-आयोग में देश की बहुसंख्य जनता का प्रतिनिधित्व होता, तो इस समस्या को बहुत-बहुत पहले ही प्राथमिकता नहीं मिली होती, और इसका कोई हल नहीं निकल पाया होता? समस्या का कोई हल वैसी हालत में नहीं निकल पाया होता, यह मानने का कोई कारण नहीं है। सवाल यहाँ पर यह खड़ा होता है कि आज के लोकतांत्रिक ढाँचे में, उसकी प्रवृत्तियों में बहुसंख्य जनता का प्रतिनिधित्व सम्भव है क्या? क्या इतने दिनों बाद भी विभिन्न दलों में बँटे देश के नेताओं के समर्थन में जनता गर्दन हिलानेवाली कठपुतली भर ही नहीं है? क्या हमारे देश में समस्याओं के समाधान हेतु कभी जनता के ऊपर सोचने और उपाय ढूँढ़ने की जिम्मेदारी डाली गयी है? नहीं, सत्ता चलाने की जिम्मेदारी दल के नेताओं ने अपनी, सिर्फ अपनी, मानी है, और विकास आदि के काम की, देश की उलझी समस्याओं के समाधान ढूँढ़ने और करने की जिम्मेदारी इन्हीं नेताओं ने विशेषज्ञों और सरकारी अधिकारियों के कंधे पर डाल दी है। और ये सब दल के नेता और विशेषज्ञ एवं अधिकारी समस्याओं के समाधान किसी न किसी खास संदर्भ में ढूँढ़ते हैं, जिनमें राजनीतिक और आर्थिक निहित स्वार्थ मुख्य होते हैं। इसीलिए कुछ थोड़े हेर-फेर के बावजूद अति दक्षिणपंथी से लेकर अति वामपंथी योजनाएँ तक घूमफिरकर यथास्थिति-पोषक बनकर रह जाती हैं। क्योंकि समस्या-ग्रस्त लोगों को समस्याओं का निखालिस प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता है, और न तो समाधान में उनकी बुद्धि, शक्ति का जैसा चाहिए, वैसा उपयोग हो पाता है। यही तो मौजूदा लोकतंत्र के नाम पर जो कुछ चल रहा है, उसका मूल दोष है। शक्ति के केन्द्रीकरण के रहते लोकतंत्र का वह रूप विकसित हो ही नहीं सकता, जिसमें हर नागरिक अपना दायित्व वहन कर सके और अपने हक को प्राप्त कर सके।

यह स्थिति केवल भारत की है, ऐसी बात नहीं है। पूँजीवादी देशों के सरदार अमेरिका में पूँजीपतियों—व्यवस्थापकों—सत्ताधीशों के प्रभावशाली गठबन्धन में आयोजन यथास्थिति को पोषण देनेवाला ही चल रहा है, और समाजवादी देशों के अगुवा सोवियत रूस में भी दलपतियों और सत्ताधिकारियों के नियंत्रण में आयोजन यथास्थिति-संरक्षक ही बना हुआ है। क्योंकि जहाँ भी शक्ति का केन्द्रीकरण होगा, विभिन्न विशिष्ट शक्तियों के नियामक प्रभावशाली व्यक्ति उस गठबन्धन में हावी रहेंगे, और इस प्रकार निहित स्वार्थों का ही उसमें प्रतिनिधित्व होगा, साधारण जनता उनकी कृपा पर ही आधारित रहेगी। →

पूर्णिया में नया मोर्चा

[बिहार के बुजुर्ग सर्वोदय-नेता श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने श्री जयप्रकाश नारायण की तरह अपने लिए सघन कार्य का क्षेत्र पूर्णिया जिले के रूपौली प्रखण्ड को बनाया है। कार्य के शुभारम्भ की जानकारी देते हुए आपने विनोबाजी को जो पत्र लिखा है, उसका मुख्य अंश यहाँ प्रस्तुत है।—सं०]

भरगामा प्रखण्ड में पुष्टि-टोली कार्य कर रही थी। कई नये भूमिवान, जो पहले ग्रामदान में सम्मिलित नहीं थे, सम्मिलित हुए और बीघा-कट्ठा दिया। १६ जुलाई को खजूरी गाँव में भू-वितरण समारोह रखा गया था। ११६ वर्ष की उम्र के एक पुराने सेवक गरीबदासजी के सभापतित्व में सभा हुई। उस गाँव के सबसे बड़े भूमिवान वही हैं। यद्यपि वे ग्रामदान के बहुत अनुकूल नहीं हैं, फिर भी भापण कबीरदास के उपदेशों के आधार पर अच्छा ही दिया। उनके तीन लड़के थे। एक मर गया। एक लड़का तथा एक पोता ग्रामदान में सम्मिलित है। एक लड़का ग्रामदान में सम्मिलित नहीं है। उस पंचायत तथा पैकपार पंचायत के कुल २० भूमिवानों से प्राप्त १० एकड़ ९६ डि० जमीन ४० भूमिहीनों में वितरित की गयी। अल्प भूमिवानों की भूमि उनके पास ही रहने दी गयी।

इस यात्रा के सिलसिले में ही रूपौली भी गया। जिस गाँव से कार्य प्रारम्भ करने का कार्यक्रम रखा गया, वह आझोकोपा गाँव लगभग ६०० घरों का है। लगभग एक-चौथाई भूमिवान और शेष भूमिहीन हैं।

गाँव में कांग्रेस (सत्तारूढ़), संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी, तथा कम्यूनिस्ट (तीनों गुट) के लोग हैं। पर यह खुशी की बात है कि ग्रामदान का विरोध किसी ओर से नहीं है। यों इस क्षेत्र में पहले से बटाईदारी संघर्ष तो है ही। इन दिनों फसल-लूट, डकैती की घटनाएं प्रायः दिन होती रहती हैं। यह गाँव सन् १९६५ के अगस्त में, बाप (बाबा) के बिहार-आगमन के पूर्व, ग्रामदान में आया था। इस साल फरवरी महीने में सर्वोदय-पक्ष में मैं पदयात्रा के दौरान इस गाँव में गया था। इस क्षेत्र में क्षेत्रीय संगठक के प्रयत्न से ग्रामसभा बन गयी है। गाँव के प्रमुख व्यक्ति श्री कपिलेश्वर मंडल सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुने गये हैं। सहकार सभी का है। वे तथा गाँव सभा के अन्य लोग उत्साह से ग्रामदान के कागजी काम में जो कमी थी, उसकी पूर्ति में लगे हुए हैं। नये सिरे से समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षर प्राप्त किया जा रहा है। क्षेत्र के अन्य गाँवों में भी काम चल रहा है। सब जगह से अनुकूलता की ही सूचना है। बीघा-कट्ठा निकालने के लिए जमीन का विवरण सरकारी कर्मचारियों ने तैयार कर देने का जिम्मा लिया है।

घनघोर वर्षा के बावजूद दो दिन में मेरे निवास के लिए एक झोपड़ी ग्रामीणों ने तैयार की है। उसी झोपड़ी में बैठकर यह जानकारी लिख रहा हूँ। आशा है, बीघा कट्ठा निकालने और उसके वितरण का काम जल्द ही प्रारम्भ हो जायगा। पर वस्तुस्थिति का ठीक-ठीक पता तो तभी चलेगा।

इस गाँव में पूर्णिया शहर के एक बड़े आदमी की सैकड़ों बीघा जमीन है। गाँव के लोग अपनी जमीन का बीघा-कट्ठा बाँट लेंगे, तो यहाँ की जो स्थिति है उसे देखते हुए लगता है कि ग्रामसभा उनकी जमी[न] गाँव के भूमिहीनों के लिए ठीके पर प्रा[प्त] करने का प्रयत्न करे, तो यह उचित होगा। मैं यह भी मानता हूँ कि यदि जमी[न] मालिक ने सहानुभूतिपूर्वक कोई निर्ण[य] नहीं किया और ग्रामसभा की तैयारी हु[ई] तो यहाँ सत्याग्रह की भी स्थिति आ सकती है। —वैद्यनाथ प्रसाद चौध[री]

उत्तरप्रदेश में ग्रामदान-जिलादा[न]

उत्तरप्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समि[ति] के कार्यालय मंत्री श्री कपिल अवस्थी द्वार[ा] प्रेषित जानकारी के अनुसार ३० जू[न] '७० तक प्रदेश के ४६ जिलों में कुल ३२,९४० ग्रामदान, १८४ प्रखण्डदान और ८ जिलादान हो चुके हैं।•

भूल-सुधार

(१) पिछले अंक के सम्पादकीय लेख 'जनेऊ और सिन्दूर' के आखिरी वाक्य के पहले के वाक्य को इस प्रकार पढ़ें : हमारे इस हठ में क्रान्ति की शक्ति कम, और प्रतिक्रिया की शक्ति बढ़ रही है।

(२) पिछले अंक ४३ के ही पृष्ठ ६७८ पर दैनन्दिनी : १९७१ में आपूर्ति के नियम में विक्रेताओं को ३५ प्रतिशत नहीं, २५ प्रतिशत कमीशन मिलेगा।

दैनंदिनी १९७१

प्रतिवर्ष की भाँति सन् १९७१ की दैनंदिनी १५ अगस्त के आसपास प्रकाशित हो रही है।

साइज	मूल्य
क्राउन (छोटी ७॥"×५")	रु० ३-००
डिमाई (बड़ी ९"×५॥")	रु० ३.७५

प्लास्टिक का सुन्दर आवरण।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

→ क्या इसका कोई उपाय है? उपाय है, और एक ही, कि सत्ता की शक्ति और आयोजन की जिम्मेदारी जनता अपने हाथों में ले ले। अगर कोई केन्द्रीय ढाँचा बने तो वह जनता की ऐसी समर्थ इकाइयों का ही बने, नेताओं, विशेषज्ञों, नौकरशाहों का नहीं। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन इसीलिए सर्वजन की विकेन्द्रित इकाइयों के निर्माण की कोशिश में लगा है। जब तक यह नहीं होगा, आयोजन के आकर्षक नारे दुहराये जाते रहेंगे, और समस्याएँ उलझती चली जायेंगी।•

गांधी का सत्य

['गांधीजी'ज ट्रूथ' शीर्षक से प्रकाशित अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के लेखक श्री एरिक एरिकसन की पुस्तक की सारी दुनिया में आलोचना-समालोचना-प्रत्यालोचना हुई है। उक्त बहुचर्चित पुस्तक के कुछ अंश—जो गांधीजी लिखित 'सर्वोदय', आर० के० प्रभु लिखित 'इण्डस्ट्रियलाईज-एण्ड पेरिश!' और गांधीजी के ग्रामस्वराज्य के सम्बन्ध में व्यक्त भावों-विचारों से उद्धृत हैं—हम यहां प्रकाशित कर रहे हैं। ये अंश कैलिफोर्निया से प्रकाशित 'मानस' (अंग्रेजी) के २० मई '७० के अंक में भी प्रकाशित हुए हैं।—सं०]

सच्चा अर्थशास्त्र

धन नदी की भांति है। जिस तरह नदी हमेशा समुद्र की ओर, अर्थात् नीचे की ओर बहा करती है, उसी प्रकार धन को जहां जरूरत हो, उस जगह जाना चाहिए—ऐसा नियम है। परन्तु जिस तरह नदी की गति में परिवर्तन हो सकता है, उसी प्रकार धन की गति में भी परिवर्तन हो सकता है। अनेक नदियाँ जहां-तहां बहा करती हैं और उनके आस-पास बहुत पानी जमा हो जाने के कारण विषाक्त वायु उत्पन्न होती है। अगर उन्हीं नदियों पर बाँध बाँधकर उनका पानी, जहां जरूरत समझी जाये, वहां ले जाया जाय तो वह पानी जमीन को उपजाऊ बनाता है, और आसपास की हवा को भी शुद्ध करता है। इसी प्रकार, धन का यदि मनमाना उपयोग किया जाय तो लोगों में दुष्टता बढ़ेगी और भुखमरी फैलेगी। संक्षेप में, वह धन विषरूप हो जायगा। परन्तु यदि उसी धन की गति पर नियंत्रण कर लिया जाय, उसका उपयोग नियमानुसार किया जाय, तो बाँधी हुई नदी की भांति वह धन सुख समृद्धि फैलायेगा।

अर्थशास्त्री लोग धन की गति की रोकथाम का नियम बिलकुल ही भूल जाते हैं। उनका शास्त्र केवल धन पाने का शास्त्र है, परन्तु धन तो अनेक प्रकार से प्राप्त किया जाता है। एक जमाना था, जब यूरोप में लोग धनवान व्यक्ति को विष देकर, उसका धन खुद लेकर, धनवान बन जाते थे। आजकल निर्धन लोगों के लिए जो खुराक तैयार की जाती है, उसमें व्यापारी लोग मिलावट कर दिया करते हैं—जैसे दूध में सोहागा, आटे में आलू, काफी में चिकोरी, मक्खन में चर्बी आदि। यह भी जहर देकर धनवान बनने के समान है। क्या इसे हम धनवान बनने की कला या शास्त्र का नाम दे सकते हैं?

लेकिन ऐसा नहीं मानना चाहिए कि अर्थशास्त्री बिलकुल ऐसा ही कहते हैं कि लूट के द्वारा धनवान बनना चाहिए। उन्हें कहना चाहिए कि उनका शास्त्र—"कानून और न्याय के" रास्ते धनवान बनने का शास्त्र है। आज के जमाने में ऐसा होता है कि बहुत सी बातें कानून के अनुकूल होने पर भी न्याय बुद्धि के प्रतिकूल होती हैं। इसलिए न्याय के रास्ते पर धन कमाना ही धन कमाने का सही रास्ता है। और यदि न्याय के रास्ते धन कमाना ही ठीक हो, तो मनुष्य का पहला काम न्याय बुद्धि को सीखना है। केवल लेन देन के नियम के अनुसार काम लेना या व्यापार करना ही काफी नहीं है। मछलियाँ, भेड़िये, चूहे इसी प्रकार रहते हैं। *बड़ी मछली छोटी मछली को खा* डालती है, चूहे छोटे जन्तुओं को खा जाते हैं। भेड़िया मनुष्य तक को खाता है। उनका दस्तूर ही यही है। उनको बुद्धि में कुछ और आता ही नहीं है। परन्तु ईश्वर ने मनुष्य को समझ दी है, न्याय-बुद्धि दी है। अतएव दूसरों को खाकर, उन्हें ठगकर, उन्हें भिखारी बनाकर, मनुष्य को खुद धनवान नहीं होना है।

तो अब हमें यह देखना है कि मजदूरों को मजदूरी देने का नियम क्या है? हम ऊपर कह आये हैं कि मजदूर की वाजिब मजदूरी यह है कि वह आज हमारे लिए जितना श्रम करे, उतना श्रम उसे, आवश्यकता पड़ने पर, हम दे दें। अगर उसे (उसके परिश्रम को देखते हुए) कम मजदूरी दी गयी तो कम, और ज्यादा दी गयी तो ज्यादा, बदला मिला।

(मान लीजिए) एक व्यक्ति को मजदूर की जरूरत है। दो आदमी मजदूरी करने को तैयार होते हैं। अब जो मजदूर कम मजदूरी पर काम करने को तैयार है, उसे काम दिया जाये तो उस मजदूर को कम मिलेगा। यदि मजदूर माँगनेवाले ज्यादा हों और मजदूर एक ही हो तो उसे मुँहमाँगा पैसा मिलेगा और उस मजदूर को जितना चाहिए उसकी अपेक्षा अधिक मजदूरी मिलेगी। इन दोनों मजदूरों की मजदूरी की औसत मजदूरी वाजिब मजदूरी मानी जायगी।

मुझे कोई व्यक्ति कुछ रकम उधार दे, और वह रकम मुझे अमुक समय के पश्चात् वापस देनी हो, तो मैं उस व्यक्ति को ब्याज दूंगा। उसी प्रकार अगर आप मुझे कोई अपना श्रम दे तो यह उचित है कि मैं उतना श्रम और उससे कुछ अधिक ब्याज के रूप में उसे दूं। आज अगर कोई व्यक्ति मेरे लिए एक घंटा काम करता है तो उसके लिए मुझे एक घंटा और पाँच मिनट अथवा उससे भी कुछ अधिक काम करने का वचन देना चाहिए। इसी प्रकार प्रत्येक मजदूर के विषय में समझना चाहिए।

अब अगर मेरे पास दो मजदूर आयें और उनमें से जो कम मजदूरी लेता है, उसे मैं काम पर लगाता हूँ, तो परिणाम यह होगा कि जिसे मैंने काम पर लगाया, वह आधा भूखा रहेगा, और जो काम के बिना रह गया है, वह यों ही रह जायगा। जिस मजदूर को मैं रखता हूं, उसे मैं पूरी मजदूरी चुकाऊँ तो भी दूसरा मजदूर तो बेकार रहेगा ही। लेकिन जिसे मैंने रख लिया है, उसे भूखों नहीं मरना पड़ेगा और (तब) मैंने अपने धन का उचित उपयोग

किया है, ऐसा माना जायगा। सच्ची भुखमरी तब प्रारम्भ होती है, जब कम मजदूरी चुकायी जाती है। यदि मैं उचित मजदूरी देता रहूँ तो मेरे पास फालतू दौलत जमा न होगी, मैं गुलछर्रे नहीं उड़ाऊँगा और मैं गरीबी बढ़ाने का साधन न बनूँगा। जिसे मैं उचित दाम दूँगा वह दूसरों को भी उचित दाम देना सीखेगा, और इस प्रकार न्याय का झरना सूखने के बजाय, जैसे-जैसे आगे बढ़ता जायगा, और जोर पकड़ेगा। जिस प्रजा मे इस प्रकार की न्याय-बुद्धि होगी, वह प्रजा सुख पायेगी, और उचित रीति से खुशहाल होगी।

इस विचार-सरणी के अनुसार अर्थ-शास्त्री गलत ठहरते हैं। वे कहते हैं कि जैसे-जैसे स्पर्धा बढ़ेगी, वैसे-वैसे प्रजा समृद्ध होगी। वास्तव में यह बात गलत है। स्पर्धा – होड़—का हेतु मजदूरी की दर घटाना है। ऐसी दशा मे धनवान अधिक धन जमा करता है, और गरीब ज्यादा गरीब होता जाता है। इस प्रकार की स्पर्धा से अन्ततोगत्वा प्रजा के विनाश की सम्भावना है। लेन-देन का सही नियम ऐसा होना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुसार पारिश्रमिक मिले। स्पर्धा इसमें भी रहेगी, फिर भी परिणाम यह निकलेगा कि लोग सुखी होंगे, और कुशल बनेंगे, क्योंकि तब मजदूरी प्राप्त करने के लिए उन्हें अपनी दर घटाने की जरूरत न रहेगी। तब उन्हें काम प्राप्त करने के लिए कुशल होना पड़ेगा। ऐसे ही कारणों से लोग सरकारी नौकरी प्राप्त करने के लिए तयार हो जाते हैं। उसमें श्रेणी के अनुसार वेतन निश्चित किया हुआ रहता है। स्पर्धा केवल कुशलता की ही होती है। प्रार्थी कम वेतन लेने की बात नहीं कहकर, दूसरों की अपेक्षा अपने मे अधिक कुशलता होने की बात कहता है। जलसेना में और सिपाही की नौकरी मे ऐसा ही नियम बरता जाता है। और इसीलिए ऐसे विभागों में अनीति और गड़बड़ी कम देखने में आती है। गलत होड़ व्यापार मे ही चल रही है, और उसके परिणामस्वरूप छल, कपट, चोरी इत्यादि अनीति बढ़ गयी है। दूसरी ओर जो माल तैयार होता है, वह खराब और सड़ा हुआ होता है। व्यापारी सोचता है कि मैं खाऊँ, मजदूर चाहता है कि मैं ठगूँ और ग्राहक को लगता है कि मैं बीच मे कमा लूँ। इस तरह व्यवहार बिगड़ता है, लोगों मे खटपट पैदा होती है, भुखमरी जड़ पकड़ती है, हड़तालों में वृद्धि होती है, साहूकार बेईमान बनते हैं, और ग्राहक नीति पर नहीं चलते। एक अन्याय से अनेक अन्याय पैदा होते हैं, और अन्त मे साहूकार, कारीगर तथा ग्राहक, सब दुखी होते हैं। जिस प्रजा मे ऐसी प्रथा प्रचलित है, वह प्रजा अन्त मे हैरान होती है। प्रजा का धन ही विष हो जाता है।

इसीलिए ज्ञानियों ने कहा है कि जहाँ पैसा ही परमेश्वर है वहाँ सच्चे परमेश्वर को कोई पूजता ही नहीं। धन और ईश्वर में बनती नहीं। गरीब के घर मे ही प्रभु निवास करते हैं। अग्रेज लोग यों जबान से तो बोलते हैं, लेकिन व्यवहार मे पैसे को सबसे ऊँचा स्थान देते हैं। धनिकों की गिनती करके प्रजा की सुख समृद्धि का अन्दाजा लगाते हैं। और अर्थशास्त्री पैसा झटपट कमा लेने के नियम गढ़ते हैं, जिन्हे सीखकर लोग पैसा कमायें। सच्चा अर्थ-शास्त्र तो न्याय-बुद्धि पर आधारित अर्थ-शास्त्र है। प्रत्येक स्थिति मे रहकर न्याय किस प्रकार का किया जाय, नीति का पालन किस प्रकार हो—इस शास्त्र को जो समाज सीखता है, वही सुखी होता है। बाकी सब निस्सार है, "विनाशकाले विपरीत बुद्धि" के समान है। जनता को यह सिखाना कि वह किसी भी कीमत पर धनवान बने, उसे विपरीत बुद्धि सिखाने जैसा है। (मूल गुजराती में)

'इंडियन ओपिनियन', ४-७-१९०८

यंत्र और ग्रामोद्योग

एक समाजवादी ने मशीन के सम्बन्ध मे चर्चा करते हुए गाधीजी से पूछा कि क्या ग्रामोद्योग-आन्दोलन का उद्देश्य सभी प्रकार के यत्रों का बहिष्कार नहीं है ?

"क्या यह चक्र एक यत्र नहीं है ?" गाधीजी ने जवाब मे प्रतिप्रश्न किया, जो उस समय चरखे पर सूत कात रहे थे।

"मेरा मतलब इस यत्र से नहीं, बडे यत्रों से है।"

"क्या आपका मतलब सिंगर सिलाई मशीन से है ? वह भी ग्रामोद्योग-आन्दोलन मे सुरक्षित है। और यही बात हर ऐसे यत्र के बारे में लागू है जो जनसमूह को श्रम करने के अवसर से वचित नहीं करता, बल्कि व्यक्ति की मदद करता है और उसकी कुशलता मे वृद्धि करता है, और जिसे मनुष्य बिना उसका गुलाम हुए अपनी इच्छा के अनुसार चला सकता है।"

"लेकिन महान शोधकार्यों का क्या होगा ? आपको बिजली का कोई प्रयोजन नहीं रहेगा ?"

"ऐसा कौन कहता है ? अगर हम गाँवों के घर-घर मे बिजली पहुँचा सकें, तो ग्रामीणों को अपने साधनों और औजारों को बिजली की मदद से चलाते देखकर मुझे कोई एतराज नहीं होगा। लेकिन तब ग्रामसमुदायों या सरकार के अधिकार मे विद्युत-शक्ति-गृह होने चाहिए, बिलकुल वैसे ही, जैसे उनके पास चारा-गाह हैं। लेकिन जहाँ बिजली नहीं है, और यत्र नहीं हैं, वहाँ बेकार हाथ क्या करेंगे ? क्या आप उन्हें काम देंगे या काम के अभाव मे उन्हें बेकार और निराश्रित बने रहने देंगे ?"

"सर्वहित के लिए किये गये हर प्रकार के शोध का मैं स्वागत करूँगा। आविष्कार और उपायज्ञता मे अन्तर है। एक ही बार मे जनसमूह को किसी मार डालनेवाली दमघोटू मशीनों के बारे मे अभी मैं फिलहाल विचार नहीं कर रहा हूँ। जो काम मनुष्य के श्रम से नहीं हो सकते, वैसे सामाजोपयोगी कामों के लिए भारी यत्रों का अनिवार्य स्थान है, लेकिन ऐसे सभी यत्र राज्य के नियत्रण में होने

चाहिए, और उनका इस्तेमाल पूर्णतः लोकहित के लिए होना चाहिए। मैं ऐसे यन्त्रों के बारे में सोच भी नहीं सकता, जिनसे बहुतों की कीमत पर कुछेक समृद्ध बनें, या अकारण बहुतों के उपयोगी श्रम का स्थान वे ले लें।

"लेकिन आप जैसे समाजवादी भी यन्त्र के अविवेकपूर्ण इस्तेमाल के पक्ष में नहीं होंगे। छापखानों को लीजिए, वे चलते रहेंगे। शल्य-चिकित्सकीय औजारों को ले लीजिए। अपने हाथों से इन्हें कौन बना सकता है? इनके लिए भारी यन्त्रों की आवश्यकता पड़ेगी ही। लेकिन निठल्लेपन का इलाज करनेवाला कोई यन्त्र नहीं है सिवाय इसके," गांधीजी ने चरखे की ओर संकेत करते हुए कहा, "आपसे बातचीत करते हुए भी मैं इससे कताई कर सकता हूं, और इस प्रकार राष्ट्रीय सम्पत्ति में कुछ योग ही दे रहा हूं। इस यंत्र को कोई भी हटा नहीं सकता।"

मेरी दृष्टि में चरखा जनता की आशा का प्रतिनिधित्व करता है। चरखे को खोने के साथ ही जनता ने अपनी स्वतन्त्रता खो दी। चरखा ग्रामीणों की खेती का पूरक था और उसे गरिमा प्रदान करता था। यह विधवाओं का मित्र और सान्त्वना देनेवाला था। यह ग्रामीणों को निठल्लेपन से दूर रखता था। चरखे के साथ कताई के पूर्व और पश्चात् के कई उद्योग जुड़े हुए थे—लुनाई, धुनाई, ताना-बाना, माड़ी देना, रंगाई, बुनाई आदि। इससे गांव के बढ़ई-लोहार को भी भरपूर काम मिलता था। चरखा ७ लाख गांवों को आत्मनिर्भर होने योग्य बनाया था। चरखे के जाने के साथ ही अन्य ग्रामोद्योग भी तिरोहित हो गये, जैसे कि तेलघानी। इन उद्योगों का स्थान किसी दूसरी चीज ने नहीं लिया। अतएव ग्रामीणों के विविध धन्धे, और उनकी क्रियात्मक प्रतिभा और इनसे जो थोड़ी सम्पत्ति अर्जित होती थी, वह सब कुछ समाप्त हो गये।

ऐसे देशों के गांवों से भारत गांवों की तुलना ठीक नहीं होगी, जहां भी हमारे गांवों की तरह ग्रामोद्योग नष्ट कर दिये गये थे। क्योंकि उन देशों के ग्रामीणों को विकल्प में दूसरी चीजें मिलीं, जब कि अपने देश के ग्रामीणों को ऐसी कोई भी चीज नहीं मिल सकी। पश्चिम के औद्योगिक देश दूसरे राष्ट्रों का शोषण करते रहे। हिन्दुस्तान खुद एक शोषित देश है। इसलिए अगर गांववालों को अपनी स्वाभाविक हालत फिर से प्राप्त करनी है तो सबसे सही चीज यही होगी कि चरखे का उसके विस्तृत अर्थों में उद्धार किया जाय।

लेकिन यह पुनरुद्धार तब तक नहीं हो सकेगा, जब तक बुद्धिमान व देशभक्त भारतीयों की एक बड़ी संख्या चरखे का संदेश फैलाने के लिए, और गांववालों की सूनी आंखों में आशा की एक किरण लाने के लिए एकाग्रचित्त होकर गांव-गांव में फैल नहीं जाती। सहकारिता और सही प्रौढ़ शिक्षण की दृष्टि से यह एक बहुत बड़ी कोशिश होगी। इससे एक शांत और सुनिश्चित क्रांति आयेगी। उसी तरह, जैसे चरखा एक शांत और सुनिश्चित जीवनदायिनी क्रान्ति का वाहन है।

['इण्डस्ट्रियलाईज—एण्ड पेरिश।' (लेखक आर० के० प्रभु) का एक अंश]

स्वराज्य की बुनियादी रचना

आजादी नीचे से शुरू होनी चाहिए। हरएक गांव में प्रजातंत्र या पंचायत का राज होगा। उसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। इसका मतलब यह है कि हरएक गांव को अपने पांव पर खड़ा रहना होगा—अपनी जरूरतें खुद पूरी कर लेनी होंगी, ताकि वह अपना सारा कारोबार खुद चला सके। यहां तक कि वह सारी दुनिया के खिलाफ अपनी रक्षा खुद कर सके। उसे तालीम देकर इस हद तक तैयार करना होगा कि वह बाहरी हमले के सामने अपनी रक्षा करते हुए मर-मिटने के लायक बन जाय। इस तरह आखिर हमारी बुनियाद व्यक्ति पर होगी। इसका यह मतलब नहीं कि पड़ोसियों पर या दुनिया पर भरोसा न रखा जाय, या उनकी राजी खुशी से दी हुई मदद न ली जाय। खयाल है कि सब आजाद होंगे और सब एक-दूसरे पर अपना असर डाल सकेंगे। जिस समाज का हरएक आदमी यह जानता है कि उसे क्या चाहिए और इससे भी बढ़कर जिसमें यह माना जाता है कि बराबर की मेहनत करके भी दूसरों को जो चीज नहीं मिलती है वह खुद भी किसीको नहीं लेनी चाहिए, वह समाज जरूर ही बहुत ऊंचे दर्जे की सभ्यतावाला होना चाहिए।

ऐसे समाज की रचना स्वभावतः सत्य और अहिंसा पर ही हो सकती है। मेरी राय है कि जब तक ईश्वर पर जीता-जागता विश्वास न हो, तब तक सत्य और अहिंसा पर चलना असंभव है। ईश्वर या खुदा वह जीती-जागती ताकत है, जिसमें दुनिया की तमाम ताकतें समा जाती हैं। वह किसीका सहारा नहीं लेती और दुनिया की दूसरी सब ताकतों के खतम हो जाने पर भी कायम रहती है। इस जीती-जागती रोशनी पर, जिसने अपने दामन में सब कुछ लपेट रखा है, अगर मैं विश्वास न रखूं, तो मैं समझ न सकूंगा कि मैं आज किस तरह जिन्दा हूं।

ऐसा समाज अनगिनत गांवों का बना होगा। उसका फैलाव एक के ऊपर एक के ढंग पर नहीं, बल्कि लहरों की तरह एक के बाद एक की शक्ल में होगा। जिन्दगी मीनार की शक्ल में नहीं होगी, जहां ऊपर की तंग चोटी को नीचे के चौड़े पाये पर खड़ा होना पड़ता है। वहां तो समुद्र की लहरों की तरह एक के बाद एक घेरे की शक्ल में होगी और व्यक्ति उसका मध्यबिन्दु होगा। यह व्यक्ति हमेशा अपने गांव के खातिर मिटने को तैयार रहेगा। गांव अपने आसपास के गांवों के खातिर मिटने को तैयार होगा। इस तरह आखिर सारा समाज ऐसे लोगों का बन जायगा, जो उद्धत बनकर कभी किसी पर हमला नहीं करते, बल्कि हमेशा नम्र रहते हैं और अपने में समुद्र की उस शान को महसूस करते हैं, जिसके वे एक अभिन्न अंग हैं।

इसलिए सबसे बाहर का घेरा या दायरा अपनी ताकत का उपयोग भीतर-वालों को कुचलने में नहीं करेगा, बल्कि उन सबको ताकत देगा और उनसे ताकत पायेगा। मुझे ताना दिया जा सकता है कि यह सब तो खयाली तसवीर है, इसके बारे में सोचकर वक्त क्यों बिगाड़ा जाय? युक्लिड की परिभाषावाला बिन्दु कोई मनुष्य खींच नहीं सकता, फिर भी उसकी कीमत हमेशा रही है और रहेगी। इसी तरह इस तसवीर की भी कीमत है। इसके लिए मनुष्य जिन्दा रह सकता है। इस तसवीर को पूरी तरह बनाना या पाना सम्भव नहीं है, तो भी इस सही तसवीर को पाना या इस तक पहुँचना हिन्दुस्तान की जिन्दगी का मकसद होना चाहिए। जिस चीज को हम चाहते हैं, उसकी सही-सही तसवीर हमारे सामने होनी चाहिए। तभी हम उससे मिलती-जुलती कोई चीज पाने की आशा रख सकते हैं। अगर हिन्दुस्तान के हरएक गाँव में कभी पंचायती राज कायम हुआ, तो मैं अपनी इस तसवीर की सचाई साबित कर सकूँगा, जिसमें सबसे पहला और सबसे आखिरी, दोनों बराबर होंगे या यों कहिए कि न कोई पहला होगा, न आखिरी।

इस तसवीर में हरएक धर्म की अपनी पूरी और बराबरी की जगह होगी। हम सब एक ही आलीशान पेड़ के पत्ते हैं। इस पेड़ की जड़ हिलाई नहीं जा सकती, क्योंकि वह पाताल तक पहुँची हुई है। जबरदस्त-से-जबरदस्त आँधी भी उसे हिला नहीं सकती।

इस तसवीर में उन मशीनों के लिए कोई गुंजाइश न होगी, जो मनुष्य की मेहनत की जगह लेकर कुछ लोगों के हाथों में सारी ताकत इकट्ठी कर देती हैं। सभ्य लोगों की दुनिया में मेहनत की अपनी अनोखी जगह है। उसमें ऐसी मशीनों की गुंजाइश होगी, जो हर आदमी को उसके काम में मदद पहुँचायें।[1]

आदर्श भारतीय गाँव इस तरह बसाया और बनाया जाना चाहिए, जिससे वह सम्पूर्णतया नीरोग रह सके। उसके झोपड़ों और मकानों में काफी प्रकाश और वायु आ-जा सके। ये ऐसी चीजों के बने हों, जो पाँच मील की सीमा के अन्दर उपलब्ध हो सकती हैं। हर मकान के आस-पास या आगे-पीछे इतना बड़ा आँगन हो, जिसमें गृहस्थ अपने लिए साग-भाजी लगा सकें और अपने पशुओं को रख सकें। गाँव की गलियों और रास्तों पर जहाँ तक हो सके धूल न हो। अपनी जरूरत के अनुसार गाँव में कुएँ हों, जिनसे गाँव के सब आदमी पानी भर सकें। सबके लिए प्रार्थना-घर या मंदिर हो, सार्वजनिक सभा वगैरा के लिए एक अलग स्थान हो, गाँव की अपनी गोचर-भूमि हो, सहकारी ढंग की एक गोशाला हो, ऐसी प्राथमिक और माध्यमिक शालाएँ हों जिनमें औद्योगिक शिक्षा सर्वप्रधान वस्तु हो और गाँव के अपने मामलों का निपटारा करने के लिए एक ग्राम-पंचायत भी हो। अपनी जरूरतों के लिए अनाज, साग-भाजी, फल, खादी वगैरा खुद गाँव में पैदा हों। एक आदर्श गाँव की मेरी अपनी यह कल्पना है। ..मुझे तो यह निश्चय हो गया है कि अगर ग्रामवासियों को उचित सलाह और मार्गदर्शन मिलता रहे, तो गाँव की—मैं व्यक्तियों की बात नहीं करता—आय बराबर दूनी हो सकती है। व्यापारी दृष्टि से काम में आने लायक साधन सामग्री हर गाँव में भले ही न हो, पर स्थानीय उपयोग और लाभ के लिए तो लगभग हर गाँव में है। पर सबसे बड़ी बदकिस्मती तो यह है कि अपनी दशा सुधारने के लिए गाँव के लोग खुद कुछ नहीं करना चाहते।

ग्रामीणों को इस प्रकार के उच्च कोटि के कौशल का विकास करना चाहिए, ताकि बाहर के बाजार में उनके द्वारा तैयार की गयी चीजों की अच्छी खासी माँग पैदा हो। जब हमारे गाँवों का पूर्ण विकास हो जायगा, तो ऊँचे दर्जे की कारीगरी और कलाकारीयुक्त प्रतिभाओं की कोई कमी नहीं होगी। गाँव में कवि, कलाकार, शिल्पी, भाषाविद और शोध-कार्यकर्ता होंगे। संक्षेप में, ऐसी कोई चीज नहीं होगी, जो जीवन के लिए होनी चाहिए और गाँव में न हो। आज तो गाँव कूड़े के ढेर हैं। कल वे छोटे-छोटे चमन जैसे होंगे, जिनमें ऊँची बौद्धिक क्षमतावाले लोग रहेंगे, जिन्हें न कोई बहका सकेगा, और न जिनका कोई शोषण कर सकता है।

इस दिशा में गाँवों का निर्माण तत्काल शुरू होना चाहिए। गाँवों के निर्माण का संगठन अस्थायी नहीं, स्थायी तौर पर किया जाना चाहिए।

१—'हरिजन सेवक': २८-७-'४६, पृ.२३६,
२—'हरिजन': ९-१-'३७ पृ० ३८३

मुजफ्फरपुर में तरुण शांति-सेना की सक्रियता

यद्यपि मुजफ्फरपुर के महाविद्यालय के छात्रों की परीक्षाएँ चल रही थीं, फिर भी जब आचार्य राममूर्ति १९ जुलाई को मुजफ्फरपुर आये, तो गांधी-शांति-प्रतिष्ठान-केन्द्र, नयाटोला में पास-पड़ोस के महाविद्यालय के तरुण-शांति-सैनिकों ने आचार्य राममूर्ति से कई टोलियों में आकर चर्चाएँ कीं। चर्चा का विषय था—मुसहरी प्रखण्ड में श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा हो रहे कार्य का महत्त्व।

तरुण-शांति-सैनिकों ने आपस में मिलकर तय किया कि वार्षिक परीक्षा का कार्यक्रम-संभालते हुए, जो भी समय मिलेगा उसका उपयोग वे अपने मुहल्ले के लोगों से मिलने में करेंगे। तरुण-शांति सैनिकों ने तीन निर्णय लिये हैं (१) मुहल्ले के लोगों के हाथ में एक छपा हुआ पर्चा देना, जिसमें जयप्रकाशजी के कार्य का विवरण रहेगा, (२) जयप्रकाशजी के कार्यक्रम की सफलता के लिए लोगों से छोटी रकमें इकट्ठी करने का कार्यक्रम चलाना, (३) सप्ताह में एक या दो दिन के लिए श्री जयप्रकाशजी के क्षेत्र में जाकर वहाँ की परिस्थिति का प्रत्यक्ष अध्ययन करना, और स्थानीय नवयुवकों से परिचय बढ़ाकर उन्हें तरुण-शांति-सेना में शामिल करना।●

सीमा-सुरक्षा की रचनात्मक योजना

[हिमालय में हुए और हो रहे सेवा-कार्यों की जानकारी देनेवाली लेखमाला की आखिरी किश्त प्रस्तुत है। इस क्षेत्र में लोक जीवन को सगठित और समृद्ध करने की जो कोशिशें चल रही हैं, उनका संक्षिप्त परिचय इसमें मिलेगा।—स०]

वस्त्र-स्वावलम्बन की ओर

सीमा-क्षेत्र के अन्तिम गांवों का मुख्य व्यवसाय भारत चीन सीमा संघर्ष के पूर्व तिब्बत के साथ व्यापार था। तिब्बत से भारत आनेवाले माल में ऊन का मुख्य स्थान था। कच्ची ऊन की आवश्यकता हिमालय के गाँवों में केवल लोगों को जाड़े के खाली दिनों कताई-बुनाई का रोजगार देने के लिए ही नहीं पड़ती थी, बल्कि स्वयं तन ढकने और बर्फीली ठंड से बचने हेतु ऊनी कपड़े के लिए भी थी। इस कमी को पूरा करने के लिए खादी ग्रामोद्योग आयोग ने उत्तरकाशी, चमोली और पिथौरागढ़ जिलों में १५ अगस्त सन् १९६३ को १०-१० केन्द्रों की स्थापना की थी। इन केन्द्रों में जनता को लागत-कीमत पर ऊन और रियायती कीमत पर चरखाम देने की व्यवस्था हुई। अब इन केन्द्रों के द्वारा व्यापारिक ऊनी खादी का उत्पादन भी प्रारम्भ हुआ है।

ऊनी खादी के उत्पादन के अलावा कमीशन ने रेशा-उद्योग और मधुमक्खी पालन का काम हाथ में लिया है। ग्रामीण नवयुवकों को इन उद्योगों का प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

उत्तराखण्ड सर्वोदय मण्डल के मार्गदर्शन में भटवाड़ी (जिला-उत्तरकाशी) कोठियाड़ा (टिहरी-गढ़वाल), गोपेश्वर (जिला चमोली) और पाँखूं (जिला-पिथौरागढ़) में ग्राम इकाइयाँ सन् १९६२ में ही प्रारम्भ हो गयी थीं। इन इकाइयों ने स्थानीय जनता के अभिक्रम को जगाकर उन क्षेत्रों में आर्थिक विकास का कार्यक्रम चलाने के लिए अपनी योजनाएँ बनायी हैं। भटवाड़ी क्षेत्र में प्रति परिवार २ भेड़ पालने की योजना आरम्भ हुई है। यही योजना कोठियाड़ा क्षेत्र में 'कम्युनिटी-एड-अब्रॉड' (आस्ट्रेलिया) की मदद से २० परिवारों को भेड़ पालने के लिए प्रति परिवार १०० रुपये बिना सूद का कर्ज देकर प्रारम्भ हुई है। इस क्षेत्र में जनता की ओर से एक पूर्व माध्यमिक विद्यालय भी खोला गया है, जिसमें बुनाई-उद्योग के प्रशिक्षण की व्यवस्था है। गोपेश्वर में बुनाई केन्द्र की स्थापना हुई है। पाँखूं में बुनाई केन्द्र के अलावा प्रत्येक परिवार में रिंगाल (पहाड़ी बांस) के पौधे लगाने का आन्दोलन शुरू हुआ है। रिंगाल की छान से हरिजन शिल्पकारों को चटाइयाँ व टोकरियाँ बुनने का रोजगार घर बैठे ही मिलने लगा है।

यद्यपि खादी बिक्री और कुछ क्षेत्रों में ऊनी खादी के उत्पादन का कार्य भी एक लम्बे अरसे से उत्तराखण्ड में श्री गांधी आश्रम और उद्योग विभाग की ओर से चल रहा है, परन्तु यह कार्य जन-जागरण का माध्यम कैसे बने, इसके लिए उत्तराखण्ड सर्वोदय-मण्डल ने विकास क्षेत्र स्तर पर छोटी संस्थाएँ बनाने की योजना बनायी है। इन संस्थाओं का उद्देश्य ग्राम-स्वराज्य की समस्त प्रवृत्तियों को संगठित करना है। इनका संचालन करने का भार ऐसे लोकनिष्ठ कार्यकर्ताओं को सौंपा गया है जो सत्ता और दलगत राजनीति से अलग रहकर जनसेवा के लिए अपना जीवन समर्पित करते हैं।

इन संस्थाओं ने अपने कार्य-क्षेत्र में मुख्यतः वस्त्र-स्वावलम्बन का कार्य प्रारम्भ किया है। इससे पूर्व कि खादी का कार्य आरम्भ हो, उसके लिए ग्रामदान के द्वारा भटवाड़ी, दशोली और बेरीनाग विकास-क्षेत्रों में बुनियाद बनाने का प्रयास किया गया।

योजना को नयी दिशा

कुछ वर्ष पहले टिहरी-गढ़वाल की जिला योजना समिति के पास राज्य सरकार से उस जिले की योजना का जो वार्षिक लक्ष्यांक आया उसमें कुएँ बनवाने की योजना देखकर सब सदस्य चक्कर में पड़ गये। पहाड़ों में कुएँ कैसे खुदवाये जा सकते हैं? कुओं के लिए निर्धारित धनराशि बिना खर्च किये सरकार को वापस लौटा दी गयी। उधर एक-दो नहीं, सैकड़ों गाँव पानी के लिए तरस रहे थे। दिल्ली और लखनऊ में बननेवाली योजनाओं में ऐसी विसंगतियाँ सामान्य हैं। पर्वतीय क्षेत्रों की अपनी विशिष्ट समस्याएँ और जीवन का ढंग है। पिछली तीन पंचवर्षीय योजनाएँ वहाँ के जीवन में भारी खर्चों के बावजूद भी परिवर्तन ला सकी हैं, ऐसा वहाँ के सामान्य लोग ही नहीं, जागृत लोकमत के प्रतिनिधि भी महसूस नहीं करते। आर्थिक मामलों की व्यावहारिक राष्ट्रीय अनुसंधान परिषद् ने इन जिलों में प्रति व्यक्ति वार्षिक औसत आय के सम्बन्ध में ये चौंकानेवाले आँकड़े प्रकाशित किये हैं

१—टिहरी गढ़वाल, उत्तरकाशी ८४ रु० (भारत में सबसे कम)

२—अल्मोड़ा, पिथौरागढ़ ११५ रु०

३—गढ़वाल, चमोली १९२ रु०

पिछली तीन योजनाओं में इन जिलों में शिक्षा प्रसार के लिए विशेष प्रयास किया गया है, परन्तु सन् १९६१ की जन-गणना के आँकड़ों के अनुसार टिहरी और उत्तरकाशी जिलों में केवल १५ प्रतिशत व्यक्ति साक्षर हैं। स्त्रियों की साक्षरता तो केवल २२ प्रतिशत है।

फिर पर्वतीय जिलों का विकास कैसे हो? इस दिशा में उत्तराखण्ड में रचनात्मक कार्यों की संस्था पर्वतीय नवजीवन मण्डल, सिल्यारा ने सितम्बर-अक्टूबर सन् १९६४ के बीच सर्वदलीय विकास-गोष्ठी का आयोजन कर एक कदम उठाया था। इस गोष्ठी में सब राजनीतिक पक्षों के प्रतिनिधियों, जिला परिषद और विकास खंडों के प्रतिनिधियों व अधिकारियों सहित लगभग ७० व्यक्तियों ने भाग लिया था।

इस गोष्ठी ने पर्वतीय क्षेत्रों की योजना के सम्बन्ध में कुछ मूलभूत परिवर्तन सुझाये थे। पहाड़ी जिलों में कृषि-भूमि तो नाममात्र की है। टिहरी-गढ़वाल में २७ प्रतिशत परिवारों के पास एक एकड़ से कम, ४४ प्रतिशत के पास १ से २४ एकड़, १९ प्रतिशत के पास २·५ एकड़ से ४·२ एकड़ कृषि-भूमि है। इसमें से अधिकांश भूमि ढलुवा और सूखी है। इसलिए खेती यहाँ के जीवन का आधार नहीं हो सकती। परन्तु पहाड़ी जिलों में ४५ प्रतिशत भूमि पर वन है और इनमें से अधिकांश चीड़, देवदार और दूसरी कीमती लकड़ियों के वन हैं। वन यहाँ के आर्थिक जीवन की उन्नति के आधार हो सकते हैं। परन्तु आज की वन-नीति के अनुसार, अपने पुत्रों के समान चीड़ के पेड़ों की रक्षा करनेवाले, वनवासी उनकी लकड़ी ढोने और चीरनेवाले सस्ते मजदूर मात्र हैं, जिनके जंगल में काम करते हुए मर जाने पर कहीं सुनवाई तक नहीं होती। इसके लिए गोष्ठी ने बम्बई, गुजरात आदि राज्यों की तरह वनों के निजी ठीके बन्द कर वन-श्रमिकों की सहकारी समितियों के माध्यम से जंगलों के काम कराने की सिफारिश की थी।

दूसरी महत्त्वपूर्ण सिफारिश वन-उपजों के आधार पर चल सकनेवाले ग्रामोद्योगों की स्थापना के सम्बन्ध में थी।

पहाड़ों में अधिकांश समय और शक्ति जीवन की सामान्य आवश्यकताओं को जुटाने में खर्च होती है। विनोबा ने कहा था, "पहाड़ी आदमी को पीठ के बोझ से मुक्ति मिलनी चाहिए।" पीठ पर बोझ उठाने के समय प्रायः जंगल से जलाने के लिए लकड़ी या गट्ठर लाना, घाटी से पानी की गगरी लाना, कई मील नीचे बाजारों से आटा पीसकर लाने में जाते हैं। यहाँ पर अधिकांश गाँवों में छोटे झरनेमें लगाकर पन-बिजली दी जा सकती है और यह बिजली मनुष्य को पीठ के बोझ से मुक्ति दिला सकती है।

कृषि-उत्पादन बढ़ाने के लिए छोटी सिंचाई योजनाओं से खेती की रक्षा की योजनाओं को प्राथमिकता देने का सुझाव था। इनमें पहला स्थान गाँव में खेती के चारों ओर पत्थर की ऊँची घेर-बाड़ देने का था। इसके अनुसार उत्तरकाशी जिले के ग्रामदानी गाँव जमोल ने ३ मील लम्बी और ५ फुट ऊँची रक्षा-दीवार का निर्माण-कार्य प्रारम्भ कर दिया।

निर्माण-कार्य में लगे श्रमिकों को संगठित कर श्रमिक सहकारी समितियों का निर्माण भी इस गोष्ठी की एक मुख्य सिफारिश थी।

गोष्ठी ने गाँवों के विकास के लिए विकास-क्षेत्र स्तर की रचनात्मक कार्य की संस्थाओं का महत्त्व स्वीकार किया और ग्रामदान-आन्दोलन को अपना समर्थन दिया।

नीचे से आयोजन की दिशा में यह एक शुरुआत मात्र है। जनता में योजना के प्रति जागृति पैदा करने और सरकार को लोकाभिमुख करने का उत्तराखण्ड का यह प्रयास समग्र देश के अन्य भागों के लिए भी प्रेरणा का स्रोत बन सकेगा।

श्रमिक सहकारी समितियाँ

तीसरी पंचवर्षीय योजना में उत्तराखण्ड के निर्माण-कार्यों पर सरकार ने २१ करोड़ रुपये की धनराशि खर्च की। इसका एक-चौथाई भी यदि निर्माण-सामग्री में खर्च हुआ होता तो लगभग १६ करोड़ रुपये इन योजनाओं पर काम करनेवाले श्रमिकों को वेतन में होना चाहिए था। परन्तु निर्माण-कार्य कराने की मौजूदा ठीकेदारी प्रणाली के कारण इसमें यदि किसीको सबसे कम मिला तो वह श्रमिकों को।

चमोली जिले के गोपेश्वर गाँव में कुछ शान्ति-सैनिक रोज शाम को बैठकर प्रार्थना करते थे। और प्रार्थना के बाद अपने क्षेत्र की समस्याओं पर चर्चा। थोड़ा-वृष्टि के कारण अन्न-संकट की समस्या उनकी चर्चा का एक विषय था। ग्रामवासियों के निर्धन किसानों को वे किस प्रकार सहायता कर सकते हैं?

पिछली फसल नष्ट हुई, फिर भी आनेवाली फसल की तैयारी के लिए तो उन्हें घर के पास रहना ही है। इन शान्ति-सैनिकों में से एक ने केसर नहर पर श्रमिकों को मिलजुलकर अपनी सहकारी समिति के द्वारा कार्य करते हुए देखा था। उसने सुझाव दिया, "क्यों न हम भी श्रमिक सहकारी समिति बनायें?" और इस प्रकार 'मल्ला नागपुर श्रम संविदा सहकारी समिति' का जन्म हुआ।

समिति तो बन गयी, पर पीढ़ियों से ठीकेदारी प्रथा पर जिन श्रमिकों का विश्वास जमा हुआ था, उन्हें समिति के प्रेरक पढ़े-लिखे नवयुवकों पर कैसे विश्वास होता? समिति का पहला ठीका, कभी जिन्होंने कठोर शारीरश्रम नहीं किया था, ऐसे पढ़े-लिखे नवयुवकों ने लिया। उन्होंने अपनी कमाई को आपस में बराबर बाँटा। यह समाचार बिजली की तरह गाँव-गाँव में फैल गया और कुछ ही दिनों में सुपरिचित श्रमिक समिति में शामिल होने के लिए आने लगे। अब समिति की सदस्य-संख्या काफी हो गयी है और कई वर्षों से समिति द्वारा हो रहे निर्माण-कार्य में सदस्यों को रोजगार मिल रहा है।

समिति के शिविर सर्वोदय का प्रत्यक्ष चित्र पेश करते हैं। प्रातः उठकर प्रार्थना और भजन, दोपहर तक श्रम, दोपहर को सफाई और गीता प्रवचन पढ़ना, पुनः श्रम और सायंकाल की प्रार्थना के बाद दिनभर के काम की समीक्षा व रामायण का पाठ। कुछ सदस्य इसी समय पढ़ना-लिखना सीखते हैं।

समिति की कार्यपद्धति ने जनता और सरकारी अधिकारियों—दोनों को प्रभावित किया है। उत्तरप्रदेश सरकार के सहकारिता-विभाग ने समिति का चलचित्र बनाया है।

अक्टूबर '६४ में टिहरी-गढ़वाल में कमर पट्टी के कुछ गाँवों के लोगों ने संगठित होकर भागीरथी नदी पर ठेकेदार का पुल बाँध लिया। उनके इस प्रयत्न ने छोटे-छोटे श्रमिक सहकारी समितियों का बल दे दिया और यहाँ पर भी कई '६५→

सर्वोदय-आन्दोलन में मार्ग-दर्शन की प्रक्रिया

सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के एक अखिल भारतीय सम्मेलन की कारवाई चल रही थी, कि तभी यह पता चला कि केन्द्र-सरकार के एक महत्त्वपूर्ण मंत्रीजी पधार रहे हैं। कारवाई बीच में ही रोक दी गयी। मंत्रीजी पधारे। मंच पर आसीन लोगों ने अभ्यागत मंत्री महोदय का स्वागत किया। मंत्रीजी मंच पर प्रमुख लोगों के बीच मुस्कराते और सभा में उपस्थित, स्वागत में खड़े हो गये, कार्यकर्ताओं की ओर निहारते हुए बैठ गये। सबकी आँखें मंच की ओर लगी थीं। कुछ मिनटों की कानाफूसी के बाद माइक पर घोषणा हुई कि चूंकि मंत्री महोदय के पास सिर्फ आधे घंटे का समय है, इसलिए हम सबका निवेदन उन्होंने स्वीकार कर लिया है और अब उनका मार्गदर्शक प्रवचन होगा। घोषणा के समय मंत्री महोदय के व्यक्तित्व की कुछ विशिष्टताओं का सुन्दर वर्णन भी पेश किया गया। और तत्पश्चात् मंत्री महोदय ने सर्वोदय दर्शन के अनुसार कार्यकर्ताओं को क्या करना चाहिए, और क्या नहीं करना चाहिए, देश की प्रगति में वे किस प्रकार योगदान कर सकते हैं। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की नैतिक शक्ति किस प्रकार बनेगी, और किस प्रकार उससे देश का कल्याण हो सकेगा, आदि-आदि बातों पर सुन्दर भाषा-शैली और रूपकों, अनुभवों, संस्मरणों के सहारे प्रकाश डाला और न समय दे पाने, इसके लिए क्षमा मांगते हुए सबसे विदा ली।

बात ४-५ साल पहले की है। लेकिन उस समय का सारा दृश्य अब भी मेरी निगाहों में स्पष्ट है। याद उसको इसलिए नहीं कायम है कि मंत्री महोदय ने कुछ ऐसी अविस्मरणीय बातें कही थीं। याद इसलिए है कि मेरी बगल में बैठा एक कार्यकर्ता साथी मंत्री महोदय का भाषण शुरू होने के साथ ही घुटनों में सिर छिपाकर ऊँघ गया था और उनके जाने के बाद जब मैंने उसे झकझोरकर जगाया तो सिर उठाकर आँख मलते हुए एक बार उसने मंच की ओर देखा, और धीरे से पूछा, "मंत्रीजी चले गये?" मैंने कहा, 'हाँ, लेकिन उनके भाषण के समय आप सो क्यों रहे थे?" "और क्या करूँ? कंधे पर झोला लटकाये भूदान मांगते और साहित्य बेचते १४ वर्ष बीत गये, एक तरह से पूरी जवानी इसीमें खप गयी। किसी किसी तरह गाड़ी किराया जुटाकर यहाँ सम्मेलन आये कि काम के अनुभवों का आदान प्रदान होगा, समाज की समस्याओं का विश्लेषण होगा, उस पर सामूहिक प्रकट चिंतन होगा, कोई नयी बात होगी नयी रोशनी मिलेगी, नये उत्साह और नयी प्रेरणा से क्षेत्र में जाकर काम में लगेंगे, आन्दोलन को प्रभावकारी बनाने का कोई अखिल भारतीय संयोजन होगा, लेकिन यहाँ आकर लगता है कि हम किसी मेले में आये हैं रंगबिरंगे तमाशे देखने के लिए।" उस साथी की उम्र ३७-३८ वर्ष की रही होगी। चेहरे पर आन्तरिक परेशानी का भाव झलक रहा था। मुझे उस साथी के मनोभावों में बहुत महत्त्व के तथ्य नजर आये। उससे और बातें मैं करना चाहता था, लेकिन तब तक सभा की कारवाई पूर्ववत् शुरू हो गयी थी। इसलिए उस बीच आपसी चर्चा करना अनुचित था। कुछ दुर्योग ऐसा हुआ कि उस साथी से दुबारा चाह कर भी नहीं मिल पाया। दूसरे दिन पता लगाने पर मालूम हुआ कि वह वापस लौट गया। उसकी इस भावुकता पर मैं मन-ही-मन रंज भी हुआ, और सोचा कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए था। आखिर, समय लेकर वह भी अपने मन की बात सबके सामने रख ही सकता था।

लेकिन दूसरी तरफ यह भी खयाल हो आया, कि अब तक न जाने कितने ऐसे भावुक युवक साथी इस आन्दोलन में आये, और बीच में ही अपनी मन की बात मन में लेकर चले गये। इसीलिए आज हालत यह है कि हर सभा सम्मेलन में वही वही परिचित चेहरे नजर आते हैं। और हर सभा-सम्मेलन में इसकी एक बार चर्चा भी वही-वही लोग कर लिया करते हैं।

वस्तुस्थिति

इधर राजगिर सम्मेलन, बिहारदान की उपलब्धि और बाबा के बिहार छोड़ने के बाद सर्वोदय आन्दोलन में जीवन खपानेवाले लोगों में काफी मंथन शुरू हुआ है। आन्दोलन के विशाल आकार-प्रकार को कुछ बारीकी से देखने की जरूरत महसूस हुई है। ऐसा इसलिए तो हुआ ही है कि इतनी बड़ी उपलब्धि में से आगे बढ़ने की कोई ठोस शक्ति नहीं विकसित हो पायी है, लेकिन उससे अधिक इस कारण हुआ है कि परिस्थिति ने हमारे सामने 'करो या मरो' की चुनौती उपस्थित कर दी है। समस्याएँ समाधान के ठोस हल मांग रही हैं, सिर्फ हमारे वक्तव्यों से वह संतुष्ट होती नहीं दीख रही हैं।

बाबा जब बिहार में थे तब सब जगह अनुकूलता ही अनुकूलता नजर आती थी। और हम अक्सर यह दावा

→ए केसर श्रम संविदा सहकारी समिति का संगठन हो गया। इस समिति ने भी समान मजदूरी वितरण का सिद्धांत अप नाया है।

उत्तराखण्ड में निर्माण-कार्यों में रोजगार देनेवाली मुख्य संस्था सरकार है। यद्यपि नीति के तौर पर छोटे छोटे निर्माण-कार्यों के ठीके बिना होड़ के श्रमिक समितियों को देना सरकार ने स्वीकार किया है, परन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं हो पाता। जब तक ग्रामदान के द्वारा जन शक्ति संगठित रूप से प्रकट नहीं होती, ये अच्छी नीतियाँ दफ्तरों में ही बंद रहेंगी। श्रमिक समितियों को इस संक्रमण-काल में स्थायी रोजगार देने की दिशा में चिन्तन चल रहा है। ये समितियाँ अब पंचायतों व दूसरे निजी निर्माण-कार्यों के ठीके लेकर अपने सदस्यों को रोजगार दे रही हैं।

—सुन्दरलाल बहुगुणा

दुहराते थे, "जनता तो तैयार बैठी है, सिर्फ हमारे पहुँचने भर की देर है!" लेकिन बाबा ने जब अपने व्यक्तित्व के स्थूल प्रभाव को समेट लिया, और हमारी चौंधियाई आँखों ने अपनी मूल क्षमता में वस्तुस्थिति का दर्शन किया तो कुछ और ही दृश्य नजर आये। न तो उस तरह जनता तैयार बैठी मिली, जैसा कि हम सोचते थे, और न ही उसके पास क्रान्ति का सदेश लेकर जानेवाले लोग अपेक्षित संख्या में मिले। बाबा ने स्वयं को समेटने का जो काम किया, वह बहुत ही अच्छा किया, और सुदूर भविष्य के लिए वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा, इसमें कोई शक नहीं। लेकिन हमने क्या किया? क्या हमने एक ही खेल के खिलाड़ियों की तरह कोई ठोस टीम बनायी? क्या हम खेलनेवालों ने एकसाथ मिलकर यह कोशिश की कि मैदान के किन बिन्दु पर हमारी क्या कमजोरी है, और उसे दूर करने के लिए मिलजुलकर क्या उपाय किया जा सकता है? अक्सर हमने आत्म-विश्लेषण को आलोचना मान लिया और वस्तुस्थिति का सामना करने से कतराते रहे।

अन्तरविरोध

हम उनकी बात नहीं करते, जो दूर-दूर से हमें कर्तव्य का बोध कराते हैं, और अपने मन की अपेक्षाएँ हमसे पूरी कराना चाहते हैं, हम नहीं करते तो अपनी खीस प्रकट करते हैं, हम उनकी भी बात नहीं करते, जो अपनी मूल निष्ठाओं में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष आर्थिक और राजनीतिक सत्ता के सहगामी बने रहकर सर्वोदय के आदर्शों पर प्रवचन करते हैं, १४-१८ साल तक झोला कंधे पर लटकाये, अपने परिवार को अभाव की जिन्दगी में छोड़कर, खुद भूखे-प्यासे रहकर भी गाँव-गाँव भटकने और सर्वोदय का सदेश पहुँचानेवाले कार्यकर्ताओं का मार्ग-दर्शन करते हैं। क्योंकि पहले प्रकार के लोग 'निष्क्रिय चिन्तक' हैं, और दूसरे प्रकार के लोगों के लिए मंच चाहिए, चाहे वह किसी फिल्म के उद्घाटन का हो, खादी के इनाम-वितरण का हो, धर्म सम्प्रदाय का हो, कवि-सम्मेलन-मुशायरे का हो, और चाहे 'सर्वोदय' का हो! हर जगह ऐसे लोग 'मार्ग-दर्शन' करने के लिए सदैव तत्पर होते हैं। शायद आर्थिक या राजनीतिक सत्ता से जुड़ा हुआ हर आदमी सर्वगुण और सर्वकला-सम्पन्न होता है! यह सब हम ऐसे लोगों के लिए अनादर का भाव प्रकट करने हेतु नहीं लिख रहे हैं, बल्कि इस बात पर जोर देने के लिए लिख रहे हैं कि मूलतः जो व्यक्ति सत्ता की बुनियादी हिंसक शक्ति और आर्थिक रचना के शोषण-तंत्र से जुड़ा हुआ होगा, वह ऐसे आन्दोलन का मार्गदर्शन कैसे कर सकता है जो बुनियादी तौर पर सत्य और अहिंसा के मूल्यों पर आधारित है? और, जो सत्ता-निरपेक्ष, शोषण मुक्त स्वतन्त्र जनशक्ति के निर्माण को कोशिश में लगा है?

चाहिए था कि हम अपने शिविरो-गोष्ठियों में मिलकर अधिक-से-अधिक समाज की समस्याओं, आन्दोलन की विचार-धाराओं, अपनी कार्य की पद्धतियों, उसके अनुभवों का विस्तृत विश्लेषण करते और पर्याप्त मंथन के बाद 'सामूहिक विवेक' के अनुसार आगे की योजना बनाते, उसके अनुसार कार्य का संयोजन करते। (जहाँ कहीं भी इस प्रकार की कोशिशें हुई हैं, उसका सुपरिणाम देखने में आया है।)

लेकिन आमतौर पर ऐसा नहीं किया गया। हमने अपने शिविरों-सम्मेलनों के रहस्यों (?) का उद्घाटन ऐसे लोगों से कराया, जिनके कारण वर्षों से काम करनेवाले सामान्य कार्यकर्ताओं और आम जनता के लिए सर्वोदय आन्दोलन की असली शक्ल अनेक भ्रामक आवरणों में ढकी और अनुद्घाटित ही रह गयी। सर्वोदय के दर्शन और उसकी बाह्य रूपरेखा में दिखाई देनेवाले अन्तर-विरोध ने आम जनता को हमसे दूर रखा। आन्दोलन के प्रति आकर्षित नये प्रतिभाशील क्षमतावान युवकों को वापस लौटने के लिए विवश किया। और हम विनोबा के व्यक्तित्व के प्रभाव को ही आन्दोलन का प्रभाव मानने का भ्रम पालते रहे।

व्यापकता (?)

अब वह भ्रम टूट रहा है। लेकिन अब भी सामन्तवादी और पूँजीवादी मूल्य हमारा पीछा नहीं छोड़ रहे हैं। हम अब भी वैष्णव मन्दिर में शाक्त को पुरोहित बना रहे हैं, और यह मोह व भ्रम पाल रहे हैं कि यह हमारी व्यापकता है। (मंदिर का दरवाजा बन्द न किया जाय, लेकिन जिसकी निष्ठा वैष्णव धर्म के प्रतिकूल हो, वह उस मन्दिर में आनेवाले भक्तों को आन्तरिक समाधान कैसे दे सकेगा?) वह जलाशय समुद्र कैसे कहा जायगा, जिसमें मिलनेवाली धाराएँ उस जलाशय का रंग बदल डालें? समुद्र वह है जिसका अपना रंग है, और विभिन्न रंगों को अपने में समाहित कर उसे अपनी व्यापकता प्रदान करने की क्षमता रखता है। समुद्र अगर अपना मूल रंग खोने लगे, तो उसे क्या मानेंगे?

सर्वोदय-आन्दोलन सागर बन सकता है, अगर व्यापक जन-प्रवाह उस दिशा में गतिमान हो जाय। उस स्थिति तक आन्दोलन को पहुँचाने के लिए हमें अभी बहुत साधना करनी है—उस तरह की साधना, जिसकी शुरुआत जे० पी० ने बिहार में शुरू की है। अब तक का अनुभव यह माँग कर रहा है कि आन्दोलन की दृष्टि से कुछ कम ही प्रभावशाली किन्तु समर्पणवाले, कुछ कम ही बुद्धिशाली किन्तु विचार के प्रति निष्ठा रखनेवाले सामान्य कार्यकर्ताओं को हम अधिक महत्त्व दें, और उनकी बौद्धिक क्षमता बढ़ाने का यत्न करें। आन्दोलन के लिए जीने-मरनेवालों की एक ठोस टीम तैयार करें। और, किन्हीं अन्य कारणों से विशिष्ट प्रभाव और शक्ति रखनेवाले बड़े लोगों से मार्गदर्शन प्राप्त करने की कोशिश हम अब छोड़ें!

—रामचन्द्र राही

आज का १ रुपया आठ वर्ष पहले के ५८ पैसे के बराबर

'दी इकॉनॉमिक टाइम्स' के शोध-विभाग के अनुसार सन् १९६१-६२ और सन् १९६९-७० के बीच में थोक मूल्यों में ७१'५% की वृद्धि हुई। इसका अर्थ यह हुआ कि इस अवधि में १ रुपये की कीमत घटकर ५८ पैसे से ४२ पैसे तक हो गयी।

इस तथ्य की जानकारी बहुत लोगों को नहीं है। इसका कारण शायद यह है कि हमारा मन मुद्रास्फीति का अभ्यस्त हो चुका है। इसलिए हम इस तथ्य को नजरअंदाज कर गये कि बढ़ती महँगाई के अनिवार्य परिणाम के रूप में रुपये की क्रय-शक्ति घट गयी है।

सन् १९६१-६२ की तुलना में सन् १९६९-७० में उपभोक्ता मूल्यों के पैमाने से, १ रुपया ५९ पैसे के बराबर था। दुर्भाग्यवश खुदरा कीमतों के, या देहाती मूल्यों के अभिसूचक अंक प्राप्त नहीं हैं, जिससे कि विभिन्न स्तरों की जनसंख्या के लिए रुपये के अवमूल्यन की माप उपलब्ध की जा सके। बाजू की तालिका में रुपये की क्रय-शक्ति उपभोक्ता-मूल्यों के आधार पर तैयार की गयी है।

पिछले आठ वर्षों में—सिर्फ सन् १९६८-६९ को छोड़कर, जैसा कि तालिका में दिखाया गया है कि उपभोक्ता मूल्यों में थोड़ी गिरावट आयी है—रुपये के मूल्य में सतत अपसरण हुआ है। सन् १९६४-६५ में सर्वाधिक ह्रास अंकित किया गया, जब कि पहले के वर्षों की तुलना करने पर रुपये के मूल्य में १२ पैसे से ८१ पैसे तक का ह्रास पाया गया।

थोक और उपभोक्ता-मूल्यों में वृद्धि सन् १९६१-६२ और १९६९-७० में अनुमानत एक ही परिमाण में हुई है। यह उस सामान्य तथ्य के विपरीत पड़ता है, जिसके अनुसार यह माना जाता है कि थोक मूल्य साधारणतः उपभोक्ता-मूल्य का अनुगामी है। उपर्युक्त आँकड़े बाजू की तालिका में दिये गये हैं।

वर्ष	थोक मूल्यों की अभिसूची १९६१-६२ = १००	उपभोक्ता मूल्यों की अभिसूची १९६१-६२ = १००	रुपये की क्रय-शक्ति: थोक मूल्यों पर आधारित १९६१-६२ = रुपया १'००	रुपये की क्रय-शक्ति: उपभोक्ता मूल्यों पर आधारित* १९६१-६२ = रुपया १'००
१९६१-६२	१००'०	१००'०	१'००	१'००
१९६२-६३	१०३'८	१०३'१	०'९६	०'९७
१९६३-६४	११०'२	१०७'८	०'९१	०'९३
१९६४-६५	१२२'३	१२३'६	०'८२	०'८१
१९६५-६६	१३१'६	१३३'०	०'७६	०'७५
१९६६-६७	१४९'९	१५०'३	०'६७	०'६७
१९६७-६८	१६७'३	१६०'८	०'६०	०'६०
१९६८-६९	१६५'४	१६६'८	०'६०	०'६०
१९६९-७०	१७१'५	१६९'२	०'५८	०'५९

* ये आँकड़े सन् १९६१-६२ में रुपये की जो क्रय-शक्ति थी, उसको आधार मानकर औद्योगिक श्रमिकों के उपभोक्ता मूल्यों को प्रदर्शित करते हैं।

('दी इकॉनॉमिक टाइम्स' के २० जुलाई के अंक से साभार।)

चित्त की प्रेरणा

करुणा चित्त में रहती है, और हाथ, पाँव, आँख आदि इंद्रियों द्वारा प्रकट होती है। जड़ इंद्रियों को चित्त से प्रेरणा मिलती है। अगर वहाँ से प्रेरणा न मिले, तो इंद्रियाँ ठंडी पड़ेंगी। पानी स्वभाव से गरम नहीं है, मगर अग्नि के संयोग से गरम बनता है। उसी तरह हाथ, पाँव, आँख आदि ठंडे हैं, उनमें करुणा नहीं है। आँख पर प्रहार हुआ, तो उसका दुःख आँख को ही होगा। इंद्रियाँ निज दुःख से दुःखी हैं। किंतु चित्त पर इस दुःख का प्रभाव पड़ता है, तब अन्दर के चित्त को, दुःख की प्रेरणा अन्य इंद्रियों को होती है। तब उनको भी दुःख होता है। इस तरह चित्त की प्रेरणा ठंडी इंद्रियों को गरमी देती है। —विनोबा

भूदान-यज्ञ, सोमवार, ३ अगस्त, '७०

मुजफ्फरपुर की डाक से

किशोर हृदय की व्यथा

अमावस की रात के नौ बजे हैं। चारों तरफ घुप्प अंधेरा है। समाज-भवन के बरामदे पर रखी लालटेन की मद्धिम रोशनी अपनी क्षमता भर प्रकाश फैला रही है। अभी-अभी जे० पी० लौटे हैं पड़ोस के गाँव की सभा में बोलकर। बरामदे में लगभग १२ साल का एक छोकरा सिर्फ निकर पहने बैठा है। पूछा जाता है, "क्यों भाई, कुछ कहना है?" लेकिन वह चुप्प! "किसे खोजते हो?" फिर वही चुप्पी। "यदि कुछ कहना नहीं है तो घर जाओ, रात अधिक हो गयी है।" किन्तु वह न तो बोलता है, और न डोलता है। कहीं गूँगा तो नहीं है! निकट बुलाकर पूछा जाता है, "कुछ कहना है तो निःसंकोच कहो।" तब जाकर छोकरे की चुप्पी टूटती है। ऐसा लगता है कि अब तक भीतर से कुछ कहने की हिम्मत बटोर रहा था। कहना शुरू किया। जे० पी० का आदेश हुआ कि इसकी पूरी बात सुन ली जाय।

फिर तो वह कहता गया, और कहता गया। एक बार धारा फूटी तो फिर मानो बाढ़ ही आ गयी। उसके परिवार के लोग उसके मामा की बुलाहट पर अपना गाँव छोड़कर आये, और इस गाँव में बस गये। अब मामा धनी हो गया। मामा-भांजा का रिश्ता टूट गया और उसके स्थान पर मालिक-मजदूर का सम्बन्ध स्थापित हो गया। भाई-बहन का सम्बन्ध मालिक और रैयत के सम्बन्ध में बदल गया और फिर वही सब कुछ शुरू हो गया, जो प्रचलित है—दबाव, डांट-फटकार, कम मजदूरी, मजदूरी में रद्दी अनाज, घर उजाड़ने की धमकी, आदि। इन सबसे उत्तेजित है मन भानजे का। सहन करे तो कैसे, और कहे तो किससे? जब देखता है कि कई दिनों से सब लोग अपनी दुःख और पीड़ा की कहानी जयप्रकाश बाबू को सुना रहे हैं, तो वह भी छिपकर रात के अंधेरे में कुछ सुनाने आया है। उसे अपने पिता से भी शिकायत है। माँ और पिता के बीच अनबन है, वह भी भात के लिए। उसके किशोर हृदय को यह बात कचोटती है। पिता चाहता है अच्छा भोजन, किन्तु परिवार में तो मजदूरी में अरहर और खेसारी ही मिलती है। कहता है, "हुजूर, भला मजदूरों के परिवार में कोई भात खाना चाहे तो कहाँ से आयेगा?" पूछा, "घर में भात खाये कितने दिन हुए?" "ठीक-ठीक याद नहीं लेकिन तीन-चार महीने हुए होंगे।" रात के १० बज गये और वह जाने का नाम नहीं लेता। प्रकट करता जा रहा है आक्रोश-पिता के प्रति, मामा के प्रति, समाज के प्रति और अपने आपके प्रति। मैं सोच रहा हूँ "ऐसे ही छोकरे तो, जिनको अपने आक्रोश को प्रकट करने का अवसर नहीं मिलता, नक्सलपंथियों के साथ में पलने लगते हैं।"

× × ×

"हमें भी जमीन चाहिए"

सूर्यास्त हो गया है। टिप-टिप बारिश हो रही है। गाँव में एक किसान के दरवाजे पर हमारी टोली बैठी है। वे भूदान में जमीन दे चुके हैं। ग्रामदान में बीघा-कट्ठा के हिसाब से जितनी जमीन चाहिए, उतनी जमीन देने का संकल्प है उनका। वितरण के लिए किस प्लाट-नम्बर को निकालना है, उसका विचार कर रहे हैं। दरवाजे पर कुछ लोग इकट्ठे भी हो गये हैं। इतने में किसी मजदूर का १२ साल का एक लड़का दौड़ा आता है, और कहता है, "मालिक हमें भी जमीन चाहिए।" मालिक अवाक् हैं उसकी निर्भयता पर। पूछता हूँ "किसने भेजा है तुझे?" बोलता है, "पिता बगान रहते हैं। घर में माँ है, उसने भेजा है।"

भूमि पाने की आकांक्षा जब इस तरह शांति-पूर्ण माँग में बदल जाय, तो कौन रोक सकता है भू-वितरण की इस क्रांति को? मुझे याद आ रहा है कि जयप्रकाश-जी ने इसी गाँव की सभा में बोलते हुए कहा था, "अहिंसा की ताकत को जो लोग कमजोर समझते हैं, वे भूल करते हैं।" स्वराज्य-आन्दोलन के जमाने की याद दिलाते हुए उन्होंने कहा था, "१०-१२ साल के लड़के भी हाथ में तिरंगा झंडा लेकर कहते थे—भारत आजाद है, हम अंगरेजी सरकार का हुक्म नहीं मानेंगे, चाहे भले ही गोली से तुम उड़ा दो हमें।" और जब ऐसा जागरण हुआ तो क्या सचमुच अंगरेज चले नहीं गये?

× × ×

"अब कोई चारा नहीं, जमीन बाँटनी ही पड़ेगी"

मिश्रजी देश-दुनिया की हवा से वाकिफ रहनेवाले एक सुखी किसान हैं। ४० बीघा जमीन के मालिक हैं। प्रभाव है गाँव में, और पास पड़ोस में भी। पहुँच है सरकारी अधिकारियों के पास, और पार्टी के नेताओं तक भी। नक्सलवादी घटनाओं के लिए दोषी मानते हैं इन्दिराजी से लेकर थाने के दारोगाजी तक को। समोपा और कम्यूनिस्ट पार्टी के जमीन बाँटने के नारों से उन्हें तनिक भी चिन्ता नहीं। पक्का विश्वास है उन्हें कि ये नारे राजनीतिक नारे हैं, असली नहीं। उनका मानना है नक्सलपंथी जान भले ही मारें, जमीन दखल नहीं कर सकेंगे। हाँ, जान की रक्षा के लिए सावधान रहना है, और संगठित होना है।

किन्तु जब से जे० पी० इस क्षेत्र में आये हैं, वे कुछ विचलित-से हैं। भेंट होने पर कहते हैं, "सोशलिस्टों और कम्यूनिस्टों का तो सिर्फ नारा है, उस तरफ ध्यान देने की भी आवश्यकता नहीं, नक्सलपंथियों का मुकाबला किया जा सकता है। किन्तु जयप्रकाशजी का मुकाबला कैसे होगा, समझ में नहीं आता! उनके प्रभाव से अब तो जमीन बँटने भी लगी है। लगता है, अब कोई चारा नहीं, जमीन बाँटनी ही पड़ेगी।"

—कैलाश प्रसाद शर्मा

ग्रामस्वराज-कोष

शुभारम्भ

ग्रामस्वराज्य कोष की शुरुआत करने के लिए नरेन्द्रभाई ने हमें इन्दौर बुलाया था। उस दिन उन्होंने कहा, "कान्ता बहन, इस समय हम जा तो रहे हैं लाल साहब के पास, लेकिन अभी उनसे कुछ माँगना नहीं है।' बड़े आदमी हैं, लेकिन हजार दो हजार देकर ही हमसे छुटकारा ले लेंगे; र कि मुख्य मन्त्री या अन्य किसी बड़े आदमी के जरिये उनसे दस-पन्द्रह हजार लेने का हमारा इरादा है। अभी तो हम सिर्फ उनके स्वास्थ्य के बारे में पूछताछ कर आयें, और शहर में कोष एकत्रित करने का कार्य शुरू किया है इतनी बात उनके कानों में डाल आयें।"

'ठीक है।" हम उनके निवास-स्थान पर पहुँचे। कल्पना तो थी किसी शानदार महल, विशाल बाग, भव्य सजधज आदि की, लेकिन इनमें से कोई चीज देखने को नहीं मिली। एक साधारण से मकान में मामूली-सी चारपाई पर जीवन की सन्ध्या वेला में पहुँचे हुए 'बड़े आदमी' सामान्य मनुष्य की तरह सोये हुए थे मोतिया बिन्द का आपरेशन कराकर।

"लाल साहब, ये बहनें आपसे मिलने आयी हैं।"

"आओ बेटा, आओ।" हम बैठ गये। थोड़ी इधर उधर की बातें हुईं। "आज की राजनीति और भ्रष्टाचार आदि को देखकर इतना दुःख होता है कि इस संसार में अब रहने की इच्छा नहीं होती। गीता में लिखा है कि लोगों का कल्याण करो, बदले की अपेक्षा रखे बिना, परन्तु यहाँ तो हर कोई बदला ही बदला चाहता है। इन्सान को जिस धर्म का पालन करना हो, करे, लेकिन धर्म के नाम पर खून-खराबी, यह मार-काट क्यों?' दर्द से भर आया। थोड़ी देर चुप रहे। फिर बोले, 'दिन में परमात्मा का गुणगान हुआ काम करें, और रात को दरगाह में जाकर सोयें, बस अपनी तो यही इच्छा है।"

कोष-संग्रह के बारे में बाबा के विचार

पिछले दिनों ग्रामस्वराज्य-कोष समिति के प्रधानमन्त्री श्री सिद्धराज ढड्ढा की विनोबाजी से निधि-मुक्ति व कोष-संग्रह के प्रश्न पर बातचीत हुई। बाबा ने पहले प्रकट किये हुए विचार को दोहराया—"निधि-मुक्ति व कोष-संग्रह में कोई विरोध नहीं है। निधि का मतलब इकट्ठा करके रखी हुई संचित निधि से होता है। आपने तो तीन साल में इसे खर्च कर डालने का तय किया है। वो साल में भी हो सकता है, बल्कि आपका काम व्यापक हो तो हर साल आपको इतना धन लगेगा। आन्दोलन के काम के लिए हर साल एक दिन में देशभर में संग्रह होना चाहिए।"

८० साल के उन बूढ़े आदमी को मैंने ग्रामदान, ब्रह्मविद्या मन्दिर, लोकयात्रा, सर्वोदय-पात्र आदि की जानकारी दी। ग्रामस्वराज्य-कोष के काम के बारे में भी कहा। माँगना तो था नहीं, परन्तु बिना माँगे ही उन्होंने कहा, "बेटा, मुझसे पाँच हजार ले जाना।"

"नहीं, दादाजी, मैं इसलिए नहीं आयी हूँ।'

"परन्तु मैं कहाँ कह रहा हूँ कि तू पैसे लेने आयी है!"

"दादाजी, असत्य तो नहीं बोलूंगी, आजकल हम लोग घूमते तो हैं पैसे लेने के लिए ही परन्तु आपके पास से पाँच नहीं, पच्चीस हजार लेने हैं।"

"अच्छा बेटा, पच्चीस हजार ले जा। यह सब लोगों का ही है न! आज जो कुछ कमाई करता हूँ, उसे मैं अपने साथ थोड़े ही ले जानेवाला हूँ। वैसे तो मैंने ट्रस्ट ही बना दिया है। मुझे बहनों और बच्चों के शिक्षण में बहुत ही रुचि है। उसके सिवाय और कहीं खर्च नहीं करता हूँ, परन्तु विनोबाजी भी तो लोक शिक्षण का ही कार्य कर रहे हैं न!"

किसी तरह की खींचतान नहीं, कोई तनाव, या दबाव नहीं, दया या एहसान-उपकार का कोई भाव नहीं। रकम तो बड़ी मिली ही, परन्तु उसके पीछे की जो भावना थी, वह उससे भी बड़ी चीज मिली है, ऐसा महसूस हुआ।

—कान्ता हरविलास

उत्तरप्रदेश ग्रामस्वराज-कोष समिति की बैठक

अन्य प्रदेशों की भाँति इस ग्रामस्वराज-कोष में उत्तरप्रदेश ने अपना योगदान १८ लाख रुपये का निर्धारित किया है। उत्तर-प्रदेश में ग्रामस्वराज-कोष की प्रदेशीय समिति के पैट्रन महामहिम राज्यपाल श्री बी॰ गोपाल रेड्डी, अध्यक्ष श्री विचित्र नारायण शर्मा और मन्त्री श्री अक्षय कुमार करण हैं। प्रदेश में ग्राम स्वराज्य-कोष के संग्रह की दृष्टि से योजना बनाने के लिए सभी रचनात्मक कार्यकर्ताओं की पहली बैठक १५ जुलाई को स्वराज्य आश्रम, सर्वोदयनगर, कानपुर में हुई, जिसमें ग्रामस्वराज्य कोष की साधारण सभा तथा कुछ प्रमुख व्यक्तियों की एक कार्यकारिणी समिति का गठन हुआ। इसी अवसर पर समस्त कमिश्नरियों के संयोजक भी मनोनीत किये गये। —कपिल अवस्थी

मध्यप्रदेश में सरकारी विभाग सक्रिय

मध्यप्रदेश में, मुख्यमन्त्री श्री श्यामा-चरण शुक्ल की कोष संग्रह हेतु जन-साधारण को की गयी अपील के बाद, सरकार के विभिन्न विभागों से—सामान्य प्रशासन, स्वायत्त शासन (नगर), सह-कारिता, कृषि विभाग ने आवश्यक परिपत्र जारी किये हैं। शिक्षा व पंचायत विभागों से भी शीघ्र अनुकूल परिपत्र जारी किये जानेवाले हैं।

→

मुलाकातें

कपिलदेव मिश्र : जमाने की पहचान

बीघा-कट्ठा का दान : बुद्धिमानी की बात

वैशाली (जिला मुजफ्फरपुर, बिहार) प्रखण्ड की सिहमा पंचायत के मुखिया श्री कपिलदेव मिश्र ने अपनी भूमि का बीसवाँ भाग ग्रामदान की शर्त के अनुसार निकालकर भूमिहीनों में बाँट दिया। बहुत कम पढ़े-लिखे, लेकिन व्यावहारिक सूझबूझवाले मुखियाजी से हमारी जो चर्चा हुई, वह यहाँ प्रस्तुत है। भूमि देनेवालों की प्रतिक्रियाओं के बारे में जानने के इच्छुक लोगों को, आशा है, यह वार्ता रुचिकर लगेगी।

प्रश्न : आपने अपनी जमीन का बीसवाँ भाग भूमिहीनों को बाँट दिया। इससे क्या आपके गाँव से अब भूमिहीनता मिट जायगी?

उत्तर : इतने से तो नहीं मिटेगी, लेकिन गाँव के सभी लोग निकाल दें, तो मिट ही जायगी।

प्रश्न : क्या आपको उम्मीद है कि गाँव के सब लोग अपनी जमीन का बीघा-कट्ठा निकाल देंगे?

उत्तर : देना तो होगा ही। जमीन का आन्दोलन बढ़ ही रहा है। अब वह रुकनेवाला तो है नहीं।

प्रश्न : लेकिन क्या समझाने-बुझाने से ही लोग जमीन दे देंगे?

उत्तर : समझ लेने पर देंगे क्यों नहीं? आखिर, मैंने भी तो समझकर ही दिया है। कोई ग्रामदानवाले डण्डा या कानून लेकर तो आये नहीं थे। चार-पाँच सौ रुपयों के लिए हमारे काम रुके रहते हैं, लेकिन आखिर ग्रामदान में ३ हजार ४ हजार रुपये कीमत की जमीन तो दे ही रहे हैं।

प्रश्न : आपको इतनी कीमती जमीन का हिस्सा देने की प्रेरणा क्यों हुई?

उत्तर : 'उथल-पाथरी' (उथल-पुथल) जब होगा, तो देना ही पड़ेगा। तब उसमें अपनी मर्जी कुछ नहीं रह जायेगी। देकर भी हम कहीं के नहीं रहेंगे। इसलिए बुद्धिमानी इसीमें है कि आगे आनेवाले जमाने को पहचानकर चला जाय। आन्दोलन एक बार जब शुरू हो जाता है, तब भला रुकता है? स्वराज्य का आन्दोलन तो हम अपनी आँखों देख चुके हैं। और फिर आज जो भूमिहीन बन गये हैं, कुछ समय पहले उनमें से कई भूमि मालिक भी थे। हमारे गाँव में बहुत-से लोग हैं, जो दूसरों की जमीन किसी-किसी तरह से लेकर आज भूमिवान बने हैं। तो भलाई इसीमें है कि जमीन दे दी जाय।

—प्रस्तुतकर्ता राही

बिहार में कोष-संग्रह अभियान पक्ष

→ बिहार के मुख्यमंत्री श्री दारोगाप्रसाद राय ने भी अपील प्रसारित की है। सारण जिले के कलेक्टर ने परिपत्र जारी कर कर्मचारियों व अधिकारियों से कोष में सभी प्रकार से सहयोग करने की अपील की है। सारण जिले का लक्ष्यांक १ लाख रुपये का है।

दिनांक २६ जुलाई से ९ अगस्त तक बिहार भर में कोष-संग्रह अभियान पक्ष के द्वारा सघन कार्यक्रम आयोजित किया गया है। आठ जिलों में जिला-कोष-समितियों का गठन हो चुका है। राज्य की खादी-संस्थाओं की सभी इकाइयाँ कोष-संग्रह कार्य में संलग्न हैं। इन्होंने घर-घर जाकर ७५,००० रु० संग्रह करने का लक्ष्य रखा है।

गुजरात के कार्य में तीव्रता

तीन-चार जिलों को छोड़कर गुजरात के बाकी जिलों में कोष समितियों का गठन हो गया है। सभी स्थानों पर कोष-संग्रह अभियान तीव्रता से चल रहा है। प्रादेशिक समिति के मंत्री व अन्य प्रमुख कार्यकर्ता स्थान स्थान का दौरा कर कार्य को आगे बढ़ा रहे हैं। अभी तक प्रदेश में १० हजार रुपये एकत्र हुए हैं।

सूतांजलि द्वारा ग्रामस्वराज्य-कोष में योगदान

बलसाड जिले के खादी के निष्ठावान बुजुर्ग कार्यकर्ता श्री दिलखुशभाई दीवानजी ने सौराष्ट्र-गुजरात के सभी जिलों के लिए ७५,००० गुंडियों की सूतांजलि संग्रह की योजना बनायी है।

हरियाणा में ग्रामस्वराज्य कोष संग्रह

हरियाणा में २० जुलाई '७० तक ग्रामस्वराज्य कोष में कुल संग्रह निम्न प्रकार हुआ :

हिसार जिले में रुपये २,५८० ६०। श्री बलवन्तराय तायल, विधायक और श्री रामेश्वरदास, संयोजक का भी संग्रह-कार्य में सहयोग रहा। रिवाड़ी (गुड़गाँव) में पदयात्रा द्वारा, और अन्य प्रकार से जन सम्पर्क करके रुपये ७०९ और अनाज ६० किलो प्राप्त हुआ। राज्यपाल महोदय से रुपय १,००० और जिला सर्वोदय-मण्डल करनाल द्वारा रुपये १०० इस प्रकार कुल ४३८९-६० पैसे का प्रदेश में संग्रह हुआ।

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६
अंक : ४६

सोमवार
१७ अगस्त, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

हिन्दस्वराज्य की सार्थकता : ग्रामस्वराज्य

१५ अगस्त सन् १९४७। आजादी का प्रथम दिवस। उस रोज मैं एक देहात में गया था। वहाँ पिंजड़े में एक तोता देखा। हमें उसका पिंजड़े में बन्द होना अच्छा नहीं लगा। उस दिवस के व्याख्यान में हमने उस बात का जिक्र किया और कहा कि आज स्वराज्य का दिन है। आज से हम आजाद हो गये हैं। आजादी के दिन हमें उस तोते को भी आजाद कर देना चाहिए। आज भी यदि तोता पिंजड़े में ही बन्द रहा तो 'आजादी का उल्लास कहाँ रहा ? आजाद आदमियों के मनोरंजन के लिए किसी प्राणी को कैद में रखना, यह कहाँ का न्याय है ? हमें आजादी मिली है तो उसे भी आजादी मिलनी चाहिए। जंगलों में कोयल, मिट्ठू आदि सभी अपने-अपने ढंग से मस्ती में घूम रहे हैं, वैसे ही इस तोते को भी मस्ती में झूमने देने के लिए अब मुक्त कर देना चाहिए।

स्वराज्यप्रिय मनुष्य किसीको बन्धन में डालकर रख नहीं सकता। हमारी यह बात सुनकर वहाँ तोते को उन्मुक्त कर दिया गया। तभी वह उड़कर एक पेड़ पर जा बैठा। हमने उसे संकेत कर कहा कि अब तुम किसीके गुलाम नहीं हो। जिन्होंने तुम्हें गुलाम बनाया था वे आजाद नहीं थे।

आज लोग ग्रामस्वराज्य की कल्पना नहीं कर सकते, इसमें आश्चर्य की बात नहीं है। जब हमारे देश का राज्य अंग्रेजों के हाथ में था, तब बड़े-बड़े नेता भी स्वराज्य की बात नहीं कर पाते थे। बड़े-बड़े लोग इस श्रद्धा से काम करते थे कि अंग्रेजों का राज्य तो अच्छा है, परन्तु उसमें कुछ दुःख भी है। अंग्रेजों के पास जाकर कहेंगे, तो वे कोई रास्ता निकालेंगे। हमारे सबसे बड़े नेता दादाभाई नौरोजी ने भी प्रजा के दुःखों को अंग्रेजों के सामने रखा और कोशिश की कि कोई राहत का रास्ता निकले।

उन्होंने तीस-चालीस वर्षों तक काम किया। सन् १८६०-७० से उन्होंने काम शुरू किया और सन् १८८५ में कांग्रेस की स्थापना हुई। उसके बाद भी ३०-४० वर्षों तक काम चलता रहा। इससे उन्हें यह अनुभव हुआ कि बिना स्वराज्य मिले पूरी तरह दुःख नहीं मिट सकता। तब उन्होंने सन् १९०६ में कलकत्ते की कांग्रेस में पहली बार स्वराज्य की घोषणा की। इस तरह जब हमारे यहाँ विदेशी राज्य था, तब स्वराज्य की माँग की बात ४० वर्ष बाद सूझी। ऐसी हालत में ग्रामस्वराज्य की बात जल्दी-जल्दी नहीं सूझती है, तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है ? अन्त में लोगों के ध्यान में आयेगा कि हमारे दुःख सरकार के सामने रखने से नहीं, बल्कि ग्रामस्वराज्य की स्थापना करने से ही मिटेंगे। जब तक लोग अपने पैरों पर खड़े नहीं हो जाते, तब तक ऊपर की मदद व्यर्थ ही रहेगी, गाँव का भला नहीं होगा, और गाँव का रक्षण भी नहीं होगा। संक्षेप में, हिन्दस्वराज्य की सार्थकता ग्रामस्वराज्य के बिना सम्भव नहीं है।

—विनोबा

पुत्र का पत्र : पालकों के नाम

कुछ दिन पहले तरुण-शांतिसेना के नाम से वर्धा के एक बुजुर्ग सर्वोदय-कार्यकर्ता के पास गया था। उन्हें विचार बताया और योजना उनके सामने रखी। फिर सिर उठाकर देखा तो उनकी आँखों में आँसू झलक रहे थे। बोले, "चुप क्यों हो गये बेटा? बोल और बोल! बड़ा अच्छा लगता है तेरे जैसे तरुण की जबान से ये विचार सुनते हुए। मुझे तो लगने लगा था कि शायद यह विचार हमारी पीढ़ी के साथ ही खत्म हो जायगा। लेकिन फिर से एक तरुण के मुख से यह सुनकर आशा बँधने लगी है।"

मेरी आँखों में भी पानी आ गया। उनकी करुण आवाज से नहीं, एक बड़ी ट्रेजेडी देखकर। एक बड़े कार्यकर्ता, जिनके पाँच लड़के-लड़कियाँ हैं, सब बड़े होकर अपने-अपने काम-धंधों में लग गये हैं और इतने के बाद भी वे तरसते ही रह गये हैं सर्वोदय-विचार एक तरुण के मुँह से सुनने के लिए! क्या इनके खुद के बच्चे तरुण हुए ही नहीं? वे चाहते, और संस्कार देते, तो क्या यही भाषा उन्हें उनके बच्चों की जबान से सुनने का सौभाग्य नहीं मिल सकता था?

वर्धा तो विधायक कार्यकर्ताओं का अड्डा रहा है। आन्दोलन के अनेक सक्रिय कार्यकर्ता भी हैं। एक बार 'सर्वे' किया तो दुःख के साथ पाया कि हमारे कार्यकर्ताओं के एक भी—जी हाँ एक भी—लड़के या लड़की को ग्रामदान की शर्तों तक का पता नहीं है। जो कार्यकर्ता दिन-रात बाहर ग्रामदान का प्रचार करते हों, उनके घरों में यह अँधेरा क्यों?

तरुण शांतिसेना की एक सभा में 'खादी और ग्रामोद्योग' चर्चा के लिए विषय रखा था। वर्धा केन्द्र की इस सभा में सब हमारे कार्यकर्ताओं के तरुण या किशोर लड़के-लड़कियाँ थी। चर्चा थोड़ी प्रस्तावना के बाद शुरू हुई और फिर चुप्पी! किसीके मुँह से कोई सवाल नहीं निकला, कोई विचार नहीं प्रकट हुआ। सचमुच कोई सवाल नहीं है, पूरा समाधान हो गया है, ऐसी स्थिति होती तो बहुत खुशी की बात थी। मगर यह खामोशी इसलिए थी कि कभी खादी पर सोचा तक नहीं। हम खादी क्यों पहनते हैं? क्योंकि पिता खादी के ही कपड़े खरीद देते हैं! जिन्होंने कभी समझकर खादी पहनी नहीं, उन्हें बड़े होने के बाद खादी छोड़ने में क्या देर लगनेवाली है?

आखिर यह सब क्यों? आपके ही लड़के आपके काम, विचार से इतने अनभिज्ञ, उदासीन और कभी-कभी विरोधी क्यों?

इसके गुनहगार आप सब हैं। यह इल्जाम आप पर लगाते हुए मुझे दुःख होता है। लेकिन मेरा अनुभव मुझे यह कहने को विवश कर रहा है। कोई भी बच्चा जन्म के साथ विचार नहीं लाता। उसे संस्कार और विचार दिये जाते हैं। कभी आपने अपने बच्चों को अपने विचार, अपने काम के बारे में समझाने का प्रयास किया? और अगर नहीं, तो क्यों? क्यों अपने घर को आपने इस तरह अलग रखा?

आंदोलन में कार्यकर्ता, नये तरुण नहीं आते यह शिकायत सब लोग करते हैं। मगर जो एक पूरी पीढ़ी आपके हाथों में थी, वह आपने पूरी तरह खो दी, सिर्फ खो नहीं दी, अधिकांशतः प्रतिक्रिया के कारण विरोधी बना दी। अगर अपनी सन्तानों को आपने अपना विचार दिया होता तो ग्रामदान-प्राप्ति और पुष्टि के बाद निर्माण के लिए बड़ी टीम आज हमारे साथ होती। बहुत सोचने के बाद भी मैं कारण नहीं सोच पाता हूँ। क्या अपने विचार के प्रति विश्वास, श्रद्धा आपमें, खुदमें, नहीं है जो उसे अपने बच्चों को देने लायक आपने नहीं समझा? कभी सर्वोदय-विचार की किताबें, पत्रिकाएँ पढ़ने की रुचि उनमें पैदा की होती, कभी खुद समझाया होता, कभी पद-यात्राओं, आन्दोलनों में उन्हें प्रत्यक्ष भाग लेने के लिए प्रेरित किया होता, तो यह हालत आज नहीं पैदा होती।

आप सब बुजुर्ग हैं, अनुभवी हैं, बड़ी सेवा आपने की है। मैं एक अनुभवहीन तरुण हूँ। आपसे यह सब कहने का मेरा अधिकार ही क्या है? फिर भी यह उद्दंडता मैंने सिर्फ इसीलिए की कि अभी भी आप यह स्रोत हमारे काम की ओर मोड़ें।

एक सफल कार्यकर्ता के साथ आप असफल पालक भी हैं। हमारी पूरी पीढ़ी कभी-न-कभी यह दोषारोपण आप पर जरूर करेगी। आज भी अगर आप चाहें तो "तरुण-शांतिसेना" के जरिये सब कार्यकर्ताओं के लड़के-लड़कियों को साथ जोड़ सकते हैं। आन्दोलन का विचार-साहित्य और प्रत्यक्ष बातचीत से उन्हें समझाया जाय। छुट्टियों में पदयात्रा या अन्य कार्यक्रमों में उन्हें लाया जाय। ग्रामदान-पदयात्राओं में खुद हिस्सा लेने के बाद ही उसका प्रभाव मैं समझ सका हूँ। सर्वोदय-सम्मेलन के साथ एक समानान्तर सम्मेलन हम कार्यकर्ताओं के लड़के-लड़कियों का भी चलाया जाय। 'तरुण-शांतिसेना' के शिविर-सम्मेलनों में भेजना, अपने जगह केन्द्र शुरू करना, 'तरुण' मासिकपत्र का ग्राहक बनना, इत्यादि कार्यक्रमों द्वारा अगर सबको 'तरुण-शांतिसेना' के अन्तर्गत संगठित किया जाय, तो क्या नयी शक्ति, नया उत्साह नहीं पैदा होगा?

आनेवाला जमाना तरुणों का है। इसके बावजूद भी अगर आपने सर्वोदय को तरुणों के साथ जोड़ने का कोई अमल नहीं किया, और फिर अगर वे नक्सलवादी या साम्प्रदायिक बन गये तो, दोष किसका होगा?

—अभय बंग

'वादा जल्द-से-जल्द पूरा होना चाहिए'

भारत आजाद हुआ तो देश के एक-एक आदमी को—छोटे-से-छोटे आदमी को—यह आशा बंधी, कि अब इस देश की धरती पर फिर से हमारा अपना हक कायम हो गया। अब हमें भी सुख से जीने का अवसर मिलेगा।

लेकिन कुछ वर्षों में ही यह आशा निराशा में बदल गयी। नीचे के स्तर के लोग आजाद भारत में भी अपने हक से वंचित रहे। आजादी का अर्थ उनके लिए सिर्फ एक ही रह गया, "नेता लोग जब चुनाव लड़ें, और वोट देने को कहें, तब वोट दे दिया जाय।"

जीविका के साधन तो कुछ थोड़े लोगों के हाथों में पहले से ही थे, आजादी के बाद वे साधनवाले और अधिक साधनों को अपने अधिकार में लेते गये, और साधनहीनों की संख्या बढ़ती गयी।

इसीलिए ग्रामदान में गांव की जीविका के मुख्य साधन भूमि की मिल्कियत गांव की ग्रामसभा के हाथ में रखने की बात कही जाती है, और हर ग्रामवासी को कुछ-न-कुछ जमीन मिले, तथा साधनहीनों को ग्रामसभा कोई-न-कोई जीविका का साधन दे, यह बात कही जाती है।

पांच-पांच सौ बीघे जमीन रखनेवाले मालिक ने पूछने पर कहा है कि हमारे होश में १०० मन से अधिक अनाज हमारे घर में नहीं आया। और बहुत धनवान, समझदार, पढ़े-लिखे मालिक, कोई व्यसन नहीं उनको, ऐसे मालिक ने ऐसा कहा है। क्योंकि उनको यह भी पता नहीं कि जमीन उनकी कहां-कहां है। जो अनाज घर में आ जाय, उतनी ही फसल पैदा हुई, ऐसा मानते हैं। इतनी जमीन में तो कम-से-कम १०-१२ हजार मन धान लोग पैदा कर सकते हैं। तो यह जमीन की बर्बादी ही है न। ऐसा क्यों होता है? क्योंकि पूरी खेती मजदूर करता है। और खेत की ऊपज बढ़े या न बढ़े, इसकी उसे कोई चिंता नहीं। क्योंकि ऊपज बढ़ने से उसकी मजदूरी तो बढ़ती नहीं।

जहां-जहां सिंचाई आदि की सुविधाएं हुई हैं, सरकार से नयी-नयी सुविधाएं मिली हैं, वहां-वहां खेती की ऊपज बढ़ी है। लेकिन मजदूर को मजदूरी नहीं बढ़ी है। आप खुद सोचिए, कि मालिक पूंजी लगाता है, मजदूर अपनी मिहनत लगाता है, तब जाकर ऊपज बढ़ती है। केवल मालिक की पूंजी से या केवल मजदूर की मिहनत से तो ऊपज नहीं बढ़ती। जब पूंजी और मिहनत का मेल होता है तो ऊपज बढ़ती है, लेकिन सारा हिस्सा मालिक का हो जाता है, और मजदूर को वही मजदूरी मिलती है, जो कभी उसको मिलती थी। आप ही बताइए कि मजदूर को ऊपज बढ़ाने में फिर क्या स्वारस्य है? वह क्यों ऊपज बढ़ायेगा?

कारखानों में उत्पादन बढ़ता है तो मजदूर को मजदूरी बढ़ती है, बोनस मिलता है। इसलिए उसको रुचि रहती है कि उत्पादन बढ़े। सरकार भी कारखानेदारों को रुपये में सवा छ पैसे से ज्यादा मुनाफा नहीं लेने देती।

मालिकों की आमदनी बढ़ती है तो वे क्या करते हैं? तिलक-दहेज जैसे फालतू कामों में खर्च करते हैं, लेकिन मजदूर की मजदूरी नहीं बढ़ाते। उसे बारह आने की जगह १ रुपया नहीं देते।

अनाज की उपज केवल पूंजी लगाने वाले मालिकों के पुरुषार्थ से नहीं बढ़ती है। कुएँ की बोरिंग होती है। उसकी मशीन २०-३०, ४०-४० हजार की होती है। यह मशीन किसकी है? समाज की है न? यह बिजली किसकी है, जिस बिजली से कुएं से पानी निकाला जाता है? क्या कोई मालिक लगवा सकता है बिजली? वह भी समाज की ही है न। करोड़ों रुपये के खर्च से बिजली आती है। समाज का पैसा लगा है। गरीब-से-गरीब आदमी का भी पैसा लगा है। नमक, तेल, माचिस कुछ भी खरीदने जानेवाला अपने देश का हर आदमी ८० से ९० रुपये तक टैक्स देता है। ये गरीब लोग जो टैक्स देते हैं, क्या सरकार उनको चालीस रुपये की सुविधा देती है? कौनसा काम सरकार करती है जिससे इनको ४० रुपये का फायदा होता है? इनको चलने के लिए पक्की सड़क चाहिए? इनके लिए बिजली चाहिए, रेडियो चाहिए, हवाई जहाज चाहिए? कहा जाता है कि २०-२२ वर्षों में सरकार ने बहुत-से काम किये। हम मानते हैं। लेकिन गरीबों को क्या चाहिए? कच्ची सड़क नहीं रहेगी तो इनका क्या बिगड़ेगा? नहीं बनेगा रेडियो-स्टेशन मुजफ्फरपुर में तो इनका क्या बिगड़ेगा? नहीं बी० डी० ओ० जीप लेकर दौड़ेगा तो इनका क्या बिगड़ेगा? हमारा बिगड़ेगा, इनका कुछ नहीं बिगड़ेगा। फिर भी सरकार इनसे ४० ५० रुपये तक टैक्स लेती है।

सरकारी सुविधाओं से ऊपज बढ़ती है। एक नया बीज निकालने में सरकार के लाखों रुपये खर्च होते हैं। पूना की शोध संस्था में ५० लाख रुपये की लागत से लाल भिण्डी का बीज तैयार किया गया, जिसको कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली का रईस खाता है। ये पचास लाख रुपये कहां से आये थे? क्या सिर्फ बड़े रईसों के पैसे से यह सब होता है? हिन्दुस्तान में तो १०० में ६० आदमी ऐसे हैं जिनकी आमदनी १ रुपये रोज से ज्यादा नहीं है। ये सब लोग सरकार को टैक्स देते हैं। और तब सरकार सुख के साधन और सुविधाएं हमें दे रही है।

इसीलिए ग्रामदान-आन्दोलन मांग कर रहा है कि कुछ तो समाज को वापस करो। बीघे में कट्ठा दो। भूख का सवाल इससे हल नहीं होगा। लेकिन हल करने की शुरुआत होगी। फिर और भी काम शुरू करने होंगे, ताकि भूख का सवाल हल हो। गरीब-से-गरीब को भी ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी मिलनी चाहिए। यह बात अब टाली नहीं जा सकती। जितनी ही देर हो रही है, उतनी ही अंधेर हो रही है।

जिन लोगों ने स्वराज्य लाने का काम किया है, उन लोगों ने वादा किया है कि स्वराज्य का सुख हर आदमी को मिलेगा। वह वादा अब जल्द-से-जल्द पूरा हो।

तब के सपने : आज की असलियत

वैशाली प्रखण्ड (जि० मुजफ्फरपुर) के चिंतामणिपुर गांव के श्री हेमन बाबू भारत के उन लाखों-करोड़ों लोगों में से एक हैं, जिनकी आंखों ने स्वराज्य के बाद के सुनहले सपने देखे थे। ···लेकिन सब सपने सच कहां होते हैं ? श्री हेमन बाबू यह महसूस करते हैं, निराश होते हैं, खीझते हैं, फिर भी मन के किसी कोने में पल रही आशा के सहारे सुखमय भविष्य की कल्पना को समाप्त नहीं करते। और कहते हैं :

"···पुराना ढर्रा अब नहीं चलेगा !"

प्रश्न : आपकी उम्र क्या है इस समय ?

उत्तर : बासठ बरस।

प्रश्न : तब तो आपने स्वराज्य-आन्दोलन अपनी आंखों से देखा होगा ?

उत्तर : हां, और कुछ काम भी किया था।

प्रश्न : कब किया था ? क्या काम किया था ?

उत्तर : सन् '४२ में, घर-घर हम लोग 'कोहा' धराए थे।

प्रश्न : 'कोहा' क्या ?

उत्तर : मिट्टी को हंड़िया। उसमें मुठिया निकाल करके धरा जाता था। और उसमें जो मिलता था, वह एक हफ्ता में घूम-घूमकर जुटाते थे।

प्रश्न : वह क्या होता था ?

उत्तर : कांग्रेस के जो कार्यकर्ता लोग था, उनही के खर्च के लिए दिया जाता था। '४२ में एक रोज तो तीन गो मारे पड़े लालगंज में।

प्रश्न : किसको मारे पड़े ?

उत्तर : पुलिस के हाथ से थाना पर। जान से मार दिया सफाई। इलाके के जनता लोग बूढ़े से लेकर बच्चे तक, सब थाना पर गये, सरकारी कानून हटाने के लिए। जब हम लोग इकट्ठा होकर चला थाने की ओर, तो बारह गो पुलिस खड़ा था बन्दूक ले करके, और डिप्टी मजिसट्रेट भी था। एक तिवारी-जी थे—मधुसुदन तिवारी। उनके पीछे झण्डा था। एक आदमी रखले रहा था, उनका पीछे हम रहो। पुलिस तो खड़ा रहा बन्दूक लिये, बाकी डिप्टी मजिसटरेट आया और तिवारीजी से पूछा कि, 'ये सब लोग सुराजीये हैं ?' तब तिवारीजी कहिन कि 'हां, सुराजी हैं ?' मजिसटरेट ने कहा कि, 'हाथ त उठावे !' त एक हाथ के कौन कहे दूनो हाथ उठा दिया लोग। त मजिसटरेट को आंख में आंसू बहने लगा।

हेमन बाबू : बुढ़ापे में जवानी
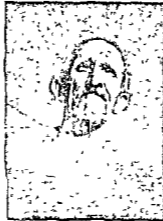
प्रश्न : मजिस्ट्रेट अंग्रेज था कि हिन्दुस्तानी ?

उत्तर : हिन्दुस्तानी। उसने फिर तिवारी-जी का बांह धर करके झण्डा गड़वा दिया थाना पर। उसका कैफियत चार्ज हुआ सरकार के तरफ से कि काहे तुम झण्डा गड़वाया ? फिर वह 'सस्पेन' (सस्पेण्ड) हुआ। एक दूसरा के बाद हम लोग फेनु (फिर) गया। तब कम लोग था। लोगों को पकड़ा गया। हमारा भी बांह धरा गया, त हम कहा जे हम नहीं जायेंगे। यही हालत हुआ।

प्रश्न : उस समय आप लोग गांव के लोगों से क्या कहते थे ? मुठिया रखवाने जाते होंगे तो कुछ कहते होंगे लोगों से ?

उत्तर : उस समय हम लोग कहते थे जे 'दूर हटो ए दुनियावालो, हिन्दुस्तान हमारा है।'

प्रश्न : लेकिन गांववालों से क्या कहते थे कि स्वराज्य होगा तो उनके लिए क्या होगा ? कुछ उनकी भलाई होगी, कुछ फायदा होगा ?

उत्तर : हां, हम लोग ये भी नारा लगाता था कि :

'छूआछूत उठ जाय !' 'लोकतंत्र राज कायम हो !' 'पूंजीपति नाश हो !' 'जमींदारी प्रथा नाश हो !' और सुराज हो जाय तो हम लोग का विश्वास था कि अपना राज बनेगा। अपना हाकिम-हुकुम होगा। अमन-चैन से रहेंगे।

प्रश्न : तो आपको स्वराज्य के बाद कैसा लगा ?

उत्तर : स्वराज्य के बाद तो बड़े-बड़े दरोगा-पुलिस से झगड़ा होता है, हाकिम-हुकुम से झगड़ा होता है तो कहते हैं कि, 'स्वराज्य का फल आप लोग ने नहीं मिलने दिया। घूसखोरी बढ़ रहा है।

मान लीजिए कि दगा करके अपना दरमाहा (वेतन) बढ़वा लेता है, तो वह गरीबों को ही तो देना पड़ता है। काम कम करता है।'' अब यहाँ एक स्कूल है। चार दिन शनीचर को बंद रहता है। चारगो अतवार पड़ता है। दो दिन दरमाहा (फीस आदि) वसूला जाता है। येहीमें कोई मरल है, दुनियाँ जहान की छुट्टी है। १५ दिन पढ़ाई होता है। और गरीबों का महीना भर का फीस लिया जाता है। ई सब बोलते हैं, कहीं-कहीं कहते हैं। मास्टर लोग का दुख बुझाय, चाहे मुस बुझाय।

प्रश्न : आपको क्या उपाय सूझता है इसे दूर करने का ? आखिर इसका इलाज क्या है ? स्वराज्य तो लिया गया, उसका लाभ आप कहते हैं लोगों को मिला नहीं, वह कैसे मिलेगा आखिर ?

उत्तर : समाज में तो इसके लिए एकता होना चाहिए। गाँव में एकता होना चाहिए। ग्रामस्वराज्य होना चाहिए।

प्रश्न : लेकिन गाँव में तो वैर-वैमनस्य है, फूट वैर है। तो इसके रहते एकता कैसे बनेगी ?

उत्तर : अब एकता तो आप ही लोगों को लाना है। हम लोग तो फूट हो गये हैं। तो हम लोग का गर्दन आप ही लोगों को मिलाना है, हाथ-से-हाथ मिलाना है।

प्रश्न : लेकिन हाथ तो आप लोग ही बढ़ायेंगे न मिलाने के लिए ?

उत्तर : जरूर। मिलाना तो चाहते हैं।

प्रश्न : आपने अपनी जमीन का बीसवाँ हिस्सा निकालकर भूमिहीनों को दिया। अगर इसी तरह गाँव के सभी लोग अपनी जमीन का बीसवाँ हिस्सा निकालकर भूमिहीनों को दें, तो क्या गाँव में एकता स्थापित होने में मदद मिलेगी ?

उत्तर : हाँ, मिल सकता है। मदद मिलेगा। भूमिहीन लोग को जमीन मिल जायगा तो वो भी सोचेगा कि यह हमारा गाँव है। हम इस गाँव के हैं। एकता हो जायगा तो आपकी भलाई हम सोचेंगे हमारी भलाई आप सोचेंगे। इसके लिए ग्राम सभा बनानी होगी।

प्रश्न : आप ग्रामसभा बनाने की बात सोचते हैं। ग्रामसभा बनेगी तो क्या करेगी ?

उत्तर : बहुत बढ़िया काम हो सकता है। आपस में जब मेल होगा, तो जो भी काम होगा बढ़िया होगा।

प्रश्न : अभी आपने कहा कि पढ़ाई ठीक से नहीं होती है। सरकारी अधिकारी काम ठीक से नहीं करते हैं। तो इन मामलों में ग्रामसभा क्या करेगी ? ये तो ऊपर की व्यवस्थाएँ हैं।

उत्तर : ग्रामसभा जब बन जायेगी, तो इसको देखेगी, सुधारेगी। अभी तो लोगों को आजादी है।

प्रश्न : ग्रामसभा क्या यह भी सोचेगी कि पढ़ाई कैसी होनी चाहिए, कैसी नहीं होनी चाहिए ?

उत्तर : सोचेगी कि बढ़िया पढ़ाई हो। गाँव के जरूरत के मोताबिक पढ़ाई हो। इसका हमको अनुभव है। ग्रामसभा बनाया था हम गाँव में। दस-बारह बरस पहले वह खूब ठीक से चला था। नया लोग उसको तोड़ दिया। जब से गाँवसभा टूट गया, गाँव में कुछ तरक्की नहीं हुआ। सब जाति के लोग उसमें रहा। जेतना झगड़ा होता था, उसमें दूर होता था। कोई झगड़ा-टंटा नहीं था। रामराज्य-ग्रामराज्य बनाया गया था।

एक ग्रामीण : तब त बहुत बढ़िया हो गईल था। आज पूरा गाँव फूटल (टूटा) बाजा हो गया है।

प्रश्न : आपको क्या कुछ आशा होती है कि ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन से समाज में कुछ बदल होगा ?

उत्तर : बदलेगा। जरूर बदलेगा।

प्रश्न : नक्सलवादी जो उपद्रव हो रहे हैं, उसके बारे में आपका क्या विचार है ?

उत्तर : इसके बारे में हमारा कुछ दोसरा ख्याल है। समाज में माहटर और सरकारी हाकिम जियादे 'गदाल' (उपद्रव करनेवाला) है। सम्पत्ति रखनेवालों से ज्यादे 'गदाल' है। हम लोग कोट-कचहरी में जाते हैं मामले मुकदमे में, तो नाजायज-नाजायज तौर से हम लोगों से घूस लिया जाता है। कतने हाकिम को देखते हैं कि कचहरी में जाते हैं ग्यारह या साढ़े ग्यारह बजे, और वकील मुख्तार बोल रहा है, वे अखबार पढ़ रहे हैं... ३ महीना केवल स्कूल-कालेज में पढ़ाई करता है। और लड़का वहाँ हुल्लड़बाजी करता है, दंगा करता है, गदाल करता है। माहटर अलग बउआते (इधर-उधर भटकते) हैं, लड़का लोग अलग बउआता है।...तीन महीने की पढ़ाई और साल भर की फीस। काम कम, दरमाहा ज्यादा।

प्रश्न : यह ठीक है। लेकिन केवल इसी-लिए तो उपद्रव नहीं हो रहे हैं ? इसलिए भी हो रहे हैं कि सम्पत्ति वाले बेसहारा लोगों पर अत्याचार करते हैं।

उत्तर : यह सब तो हो ही रहा है। कुछ लोग तो गरीबों से मिल गये हैं। लेकिन कुछ लोग पुराने ढर्रे से चल रहे हैं। उनको अपने आपको बदलना है। पुराना ढर्रा नये जमाने में कैसे चलेगा ?

प्रस्तुतकर्ता : रामचन्द्र राही

विनोबा-जयन्ती

११ सितम्बर को ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह दिवस के रूप में मनाएँ

देश के नागरिकों से सर्व सेवा संघ का निवेदन

यह संतोष का विषय है कि सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति ने पूना की अपनी पिछली बैठक में पू० विनोबा की ७५ वीं जन्म-जयन्ती के अवसर पर ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह का जो निर्णय किया था, उसका आमतौर पर देश में स्वागत हुआ है और अधिकांश राज्यों में कोष का काम प्रारंभ हो गया है। पूना के प्रस्ताव में यह स्पष्ट कर दिया गया था कि यह कोष संचित निधि के रूप में नहीं रहेगा। यह कोष ग्रामदान-आंदोलन के चालू खर्च के लिए है। और ऐसा अनुमान है कि सामान्य तौर पर अधिक-से-अधिक ३ वर्ष के अन्दर ग्रामदान प्राप्त करने, ग्रामसभाओं के गठन, ग्राम-कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण तथा शान्तिसेना और उनके विभिन्न अंगों, जैसे—ग्राम-शान्तिसेना, तरुण-शान्तिसेना आदि, अन्य कामों के लिए यह खर्च हो जायगा। ग्रामस्वराज्य आन्दोलन जन-शक्ति को जाग्रत और संगठित करने का आन्दोलन है, इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि आर्थिक दृष्टि से भी वह संचित निधि पर निर्भर न रहे, बल्कि जनाधारित हो।

यह कोष जहाँ एक ओर संचित निधि न हो, उसी तरह दूसरी ओर इसका उपयोग भी अधिकाधिक विकेन्द्रित हो, यह वांछनीय है। अत. इस कोष के विनियोग का अधिकार भी जिले या प्रदेश में ग्रामदान-ग्रामस्वराज के काम में लगी हुई सर्व सेवा संघ द्वारा मान्य संस्थाओं को होगा। जिन प्रदेशों या जिलों में अभी इस प्रकार के संगठन न हों, वहाँ स्थानीय कार्यकर्ताओं की सलाह से सर्व सेवा संघ उचित व्यवस्था करेगा।

यह भी तय किया जा चुका है कि मोटे तौर पर कुल संग्रह का १० प्रतिशत अखिल भारतीय कार्य के लिए सर्व सेवा संघ को दिया जायेगा और बम्बई, कलकत्ता जैसे सर्व-देशीय और बड़े नगरों के संग्रह के बारे में जो विशेष व्यवस्था करना उचित हो वह की जाकर, शेष ९० प्रतिशत कोष सम्बन्धित प्रदेश में ही ग्रामदान-ग्राम-स्वराज आंदोलन के लिए खर्च होगा। प्रबंध समिति की यह अपेक्षा है और सिफारिश है कि जिस प्रकार केन्द्रीय खर्च के लिए १० प्रतिशत अंश निकाला जाय, उसी प्रकार प्रदेशीय स्तर के लिए भी कम-से-कम १० प्रतिशत अंश निकाला जाय। शेष रकम का उपयोग जिलों और प्रखण्डों में किस प्रकार हो यह प्रदेश सर्वोदय-संगठन या ऊपर बताये अनुसार अन्य मान्य संगठन तय करें। ज्यों-ज्यों संग्रह होता जाय त्यों-त्यों संग्रह का १० प्रतिशत प्रदेशों द्वारा ग्रामस्वराज्य-कोष के केन्द्रीय कार्यालय को तुरन्त भेजा जाना चाहिए।

विनोबाजी के आगामी जन्म-दिन, ११ सितंबर, '७० को उनके और उनके काम के प्रति श्रद्धा तथा कृतज्ञता व्यक्त करने की दृष्टि से देश भर में अन्य कार्यक्रमों के साथ-साथ हर नागरिक उस दिन अपने-स्थान पर ग्रामस्वराज्य-कोष का संग्रह करे ऐसी प्रार्थना है। ११ सितंबर एक करोड़ रुपये के ग्रामस्वराज्य-कोष के संकल्प की पूर्ति की अवधि है इसे ध्यान में रखते हुए, जैसा कि पू० विनोबाजी ने भी अपेक्षा रखी है, एक बार देशभर में फैले हुए सर्वोदय-कार्यकर्ता तथा इस आंदोलन से सहानुभूति रखनेवाले अन्य सब मित्र अपनी पूरी शक्ति के साथ इस काम में जुटकर लक्ष्य को पूरा करेंगे ऐसी आशा है। ११ सितंबर के बाद जल्दी-से-जल्दी सब प्रान्तों से संग्रह का हिसाब आदि एकत्र करके तारीख २ अक्तूबर को पू० विनोबाजी को इस ग्रामस्वराज्य-कोष का समर्पण किया जा सके, ऐसी कोशिश होनी चाहिए।

सीकर ३१ जुलाई '७०

ग्रामदान के बाद क्या ? जिलादान के बाद क्या ??

कुछ सुझाव

(बिहार के अनुभव पर आधारित)

पहला कदम : (१) प्रखंड-स्तरीय गोष्ठी—सहयोगियों, कार्यकर्ताओं की।

(२) बीघा-कट्ठा का वितरण—जो भी व्यक्ति या गाँव तैयार हो।

सम्भव हो तो गाँव की खेती-योग्य भूमि का बीसवाँ भाग भूमिहीनों में बँटे—actual transfer हो।

भूमि-वितरण के वातावरण में ही दूसरे काम शुरू किये जायें।

यह काम एक के बाद दूसरे ब्लाक में किया जा सकता है, या यदि शक्ति हो तो सब ब्लाकों में एकसाथ किया जाय।

दूसरा कदम : (१) ग्रामसभाओं का गठन :

(क) पदाधिकारियों का सर्व-सम्मत चुनाव।

(ख) गाँव में जनसंख्या का विवरण।

(ग) भूमि का विवरण, किस परिवार को कितनी भूमि है, कौन परिवार भूमि-हीन है, आदि।

(२) पदाधिकारियों का शपथ-ग्रहण, और गाँव का भूमि-वितरण-उत्सव।

ग्रामकोष की शुरुआत।

तीसरा कदम : (१) ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों की छोटी, एक दिन की→

विनोबा-निवास से

'मरने तक जीऊँगा'

श्रावण मास आया है। पावस की झड़ी लगी है। धाम नदी में कई बार बाढ़ आती है, पानी पुल के ऊपर से बहने लगता है। एक दफा तो नागपुर-वर्धा की मोटरगाड़ियों को भी इस नदी ने रोक रखा था। रात-दिन नदी की आवाज सुनाई देती है। नदी की बाढ़ को देखकर एक दिन बाबा ने वीणा बहन से पूछा "नदी की तरह तुम्हारा उत्साह भी रोज बढ़ता है या नहीं ?"

मक्के की फसल ठीक बाबा के कमरे की खिड़की के सामने खड़ी है। जया बहन से बाबा ने कहा, "कैसी प्रसन्न दीखती है फसल ! वैसी ही तुम्हारी प्रसन्नता दीखनी चाहिए !" उधर नदी में पानी बढ़ता है, इधर खेत की फसल के साथ घास भी बढ़ती है। बाबा का इन दिनों मुख्य कार्य-क्रम है सफाई का। दिन के चार-पाँच घंटे उसमें जाते हैं। पिछला सप्ताह तो 'सफाई सप्ताह' ही था। आश्रम में छ घंटे का श्रमक्रम रहता है। बाबा ने भी छ घंटे सफाई में देने का सोचा। इन दिनों उनके हाथ में किसी ग्रंथ के बजाय 'हँसिया' दीखता है। दो कार्यकर्ताओं के बीच १५ मिनट का समय मिला, तो वे बाहर निकल पड़ते हैं। ज्यादा-से-ज्यादा समय उनका आकाश के नीचे जाता है। मंदिर के अहाते में, ध्यानपथ पर, लाल बंगले के सामने, ऐसे स्थानों पर ही वे दिखाई देते हैं।

आश्रम के एक कोने में बालूभाई मेहता की स्वतन्त्र कोठी है। उसे बाबा ने नाम दिया है "वैष्णव नी वाड़ी।" सन् १९२० से बालूभाई मेहता ने बापू के साथ काम किया। सतत शरीर सेवा में तपाया। अब वे इस आश्रम में आध्यात्मिक जीवन बिता रहे हैं। अभी-अभी उनके अस्सी साल पूरे हुए। उस दिन शाम की प्रार्थना में बहनों ने "वैष्णव जन तो तेने कहिये" यह भजन (बाबा के सुझाव पर) गाया था। बाबा कहते हैं, "अति परिचय के कारण हम मनुष्य की कीमत समझते नहीं है तो ईश्वर-ग्रहण की, ईश्वर-साक्षात्कार की दृष्टि हम खोते हैं।"

सफाई की अवस्थाएँ

बाबा का सफाई का मोर्चा नीचे की सड़क तक बढ़ गया था। रोज सुबह का घूमना बंद हुआ है। उसके बजाय उस सड़क पर गांधी-मंडप पर सफाई होती थी। इस सप्ताह से सड़क पर जाना भी बंद हुआ है, आश्रम में ही सफाई चलती है। शाम की प्रार्थना के पहले बहनें बाबा के पास बैठती हैं। कल बाबा ने कहा, "तुम लोग देखती हो कि इन दिनों मेरे चार घंटे सफाई में जाते हैं। उसमें मैं ज्ञानदेव महाराज की आज्ञा का पालन कर रहा हूँ। उनकी आज्ञा है 'देवाचिये द्वारी उभा क्षण भरी। तेणे चारी मुक्ति साधि-लिया।' (भगवान के दरवाजे पर एक क्षण भर भी जो ठहरेगा उसने चारों मुक्ति साध लिया)। परधाम मेरे लिए परब्रह्म है। उसकी सन्निधि में समय जाना चाहिए। इसलिए मंदिर में समय देता हूँ (सफाई में)। वैसे चारों ओर भगवान का मंदिर है। सब जगह प्रभु का द्वार है। जहाँ भी सफाई करता हूँ यही भावना रहती है। जितना भी समय जाता, है, अत्यन्त प्रसन्नता होती है। वृद्धावस्था के कारण पीठ, कमर थोड़ी दर्द करती है। लेकिन रात में सोता हूँ तो आसन वगैरह कर लेता हूँ।" स्वच्छता और अपरिग्रह, दोनों साथ रहते हैं। अपरि-ग्रह न हो तो स्वच्छता नहीं रहेगी। सन् १९१८ की बात है। मैं महाराष्ट्र में पैदल घूम रहा था। उस वक्त एक फकीर से मुलाकात हुई। वह दक्षिण की तरफ पैदल जा रहा था। उससे बात चली। उसने कहा 'हम दुनिया को साफ करने जायेंगे तो ध्यान करने का मौका ही नहीं आयेगा। इसलिए अपने आसपास के क्षेत्र में सफाई कर लें।' उसकी बात मेरे मन में बैठ गयी। कुल दुनिया साफ करना अपना काम नहीं। ज्यादा परिग्रह रखेंगे तो सफाई में ही समय जायगा। ध्यान, धारणा, चिंतन, मनन, पठन, यह ब्रह्मविद्या में प्रधान है। साथ-साथ थोड़ी सफाई करें।"

भूदान-यज्ञ। सोमवार, १७ अगस्त, '७०

→गोष्ठियाँ, जिनमें स्वामित्व विसर्जन तथा सर्व-सम्पत्ति की कल्पना और पद्धति बतायी जाय। 'सर्व' तथा 'अंतिम व्यक्ति' के सामाजिक मूल्य स्पष्ट किये जायें।

चौथा कदम : ग्राम-शान्तिसेना का संगठन।

विद्यालयों में तरुण-शान्तिसेना का गठन।

आचार्यकुल का संगठन।

शहर में सर्वोदय-मित्र बनाना।

पाँचवाँ कदम : ग्राम शान्तिसेना तथा तरुण-शान्तिसेना के श्रम-विचार शिविर। आचार्यकुल की गोष्ठियाँ।

छठवाँ कदम : (१) ग्रामदानी गाँवों की शान्तिसेना के माध्यम से पुलिस-अदालत-मुक्ति।

(२) हर गाँव में सर्वोदय की पत्रिका।

सातवाँ कदम : (१) संगठन तथा विचार का इतना काम हो जाने पर विशेष स्थिति में स्थानीय तात्कालिक प्रश्न लिये जायँ।

(२) ग्रामसभाओं के अध्यक्ष, मंत्रियों या प्रतिनिधियों को लेकर प्रखंड-सभा का गठन।

(३) प्रखंड-सभाओं से जिला-सभा का गठन।

आठवाँ कदम : इन लोक-संगठनों के माध्यम से खादी-ग्रामोद्योग आदि के विकास-कार्य।

नवाँ कदम : जिले के 'सिपाही' पड़ोसी जिलों में जायँ।

Sharing for social change—ग्रामकोष में से सर्व-सेवा-संघ, राज्य-सर्वोदय मंडल, जिला-सर्वोदय-मंडल आदि को 'दान'।

दसवाँ कदम : १९७२ का चुनाव—दल-मुक्त सरकार, सरकार-मुक्त गाँव। ●

एक दिन कहा, "सफाई की अवस्थाएँ होती हैं। सफाई करते हैं, तो क्षेत्र पहले मस्त होता है, फिर सफाई करें तो वह स्वच्छ होता है। उसके बाद और सफाई करें तो वह सुन्दर होता है और आखिर में पवित्र होता है।" "यह बाह्य सफाई का है। वैसे ही अंदर की सफाई का होता है।"

बाबा को शतरंज बहुत प्रिय है। इन दिनों रोज एक घटा (दोपहर में तीन से चार) जामुन के पेड़ के नीचे उनका खेल चलता है। बालूभाई मेहता और शीला बहन खेल में रहते हैं। बीच में निर्मला बहन, नवल बाबू, सिद्धराज भाई आये थे। उन्होंने भी बाबा के साथ खेलने का आनन्द लिया था।

धर्मों के निर्देश

वर्धा में 'इन्सानी बिरादरी' का संगठन बना है। एक रविवार को वे लोग आये थे। इन दिनों बाबा की मुलाकातें भरत-राममंदिर में ही होती हैं। यह सभा भी मंदिर में ही हुई। सहज ही लोग बाबा के इर्द-गिर्द बैठ जाते हैं। सभा का औपचारिक रूप रहता नहीं। गपशप चली हो, ऐसा लगता है। 'इन्सानी बिरादरी' ने अपने काम की रिपोर्ट दी। वह पढ़कर बाबा ने कहा, 'वेल बिगन इज हाफ डन।' फिर थोड़ी बातें चली। बाबा ने कहा, "हम समझते हैं, इन दगों का कारण सियासी है। राजनीतिवालों को कुछ पकड़ने के लिए बात मिल जाती है। और वे दगों को बढ़ावा देते हैं। इसलिए जितने लोग सियासत से बरी होंगे उतना हिन्दुस्तान के लिए अच्छा है। एक बड़ी जम्हूरियत हमने खड़ी की है, दुनिया में उतनी बड़ी दूसरी नहीं है। इस देश से बड़ा चीन है। लेकिन वहाँ कम्यूनिस्टों का राज है। सब जमातों को कानूनी निगाह से समान देखा जाता है, वह यही एक देश है। इसलिए हमें ऐसे नागरिकों को खड़ा करना चाहिए, जो सियासतदाँ के पंजे में नहीं आयेंगे। अखबारों में जो बातें आती हैं, उनको ज्यादा महत्त्व नहीं देना चाहिए। यहाँ ५५ करोड़ लोग हैं, अनेक धर्म, पंथ हैं। ऐसी हालत में जो दंगे होते हैं, वे बहुत कम हैं। विज्ञान का जमाना है, इसलिए छोटी-छोटी आवाज होती है जो दुनिया में पहुँचती है। ५५ करोड़ में से कितने लोग दंगा करते हैं ? दस हजार में एकाध होगा दंगा करनेवाला। मैं यह बताना नहीं चाहता कि (१) दंगों को सहन करना चाहिए या दंगे अच्छे हैं। बल्कि यह कहना चाहता हूँ कि उसका दिमाग पर असर नहीं होने देना चाहिए। इस दृष्टि से दंगों को बहुत महत्त्व नहीं देना चाहिए। (२) शांतिसेना तैयार रखनी चाहिए। (३) लेकिन इन सबसे बढ़कर जो चीज है वह यह है कि एक-दूसरे को एक-दूसरे के मजहब का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। इस्लाम धर्म के मुख्य विचार से हिंदू को वाकिफ होना चाहिए और हिंदू धर्म में क्या है, इससे मुसलमान को वाकिफ होना चाहिए। इसी तरह ईसाई आदि धर्म की बात है। कोई भी धर्म नहीं कहता कि दूसरे धर्मवालों से झगड़ा करो। कुरान में आया है, सारे लोग खतरे में हैं सिवाय उनके, जो लोग—(१) अल्लाह को मानते हैं, (२) रहम करते हैं, (३) एक-दूसरे को सत्य पर चलने के लिए मदद करते हैं, (४) एक-दूसरे को सब्र रखने में मदद करते हैं। इसमें सब धर्मों का सार आ गया सत्य, प्रेम, करुणा। यही तीन बातें हिंदू धर्म में हैं। सत्य रामजी ने सिखाया, प्रेम कृष्ण ने, करुणा बुद्ध ने। ईसा ने कहा, 'अपने दुश्मन पर प्यार करो।' दुश्मन के साथ लड़ने के लिए सब लोग तैयार होते हैं। लेकिन ईसा ने दुश्मन पर प्यार करने की तैयारी सिखायी है। और हमारे यहाँ तो मित्रों से लड़कर उन्हें दुश्मन बनाने की तैयारी चली है।"

दुनिया की चिंता

श्री ऋषभदास रांका एक दिन बाबा से मिलने आये थे। उन्होंने देश में फूट निकलनेवाली हिंसा के बारे में चिंता प्रकट करते हुए प्रश्न पूछा।

बाबा, "मैं इन दिनों ऐसे मामलों पर कुछ भी सोचता नहीं। सूक्ष्म-प्रवेश के बाद मैंने यह दुनिया जवानों पर छोड़ दी है।

"दुनिया का व्यवहार बाबा के भरोसे नहीं है। बाबा का क्या भरोसा ? अभी आप चर्चा करने आये हैं। कल सुबह आपको बाबा की स्मशान-यात्रा में शामिल होने का मौका आ सकता है। इसलिए यह सारा झमेला तरुणों को सौंप दिया है। भगवान कृष्ण के जीते जी लोग खड़े शराब पीकर। मैं हाजिर तो था नहीं उस वक्त, लेकिन पढ़ा है। यादव एक-दूसरे के साथ लड़ने लगे, तो भगवान ने क्या किया ? मैं भी तुममें से एक हूँ, तुम पीटते हो तो मैं भी पीटूँगा, यूँ कहकर गदा का प्रहार एक के सिर पर किया और चले गये ध्यान के लिए।"

ऋषभदासजी, "इन दिनों शराब बढ़ रही है, अश्लील नृत्य, जुआ, लाटरी इत्यादि का जोर चला है।"

बाबा, "क्या होगा इसका परिणाम ? सहार कि आनन्द ? कोई शराब पी रहा है, नाचता है, आनन्द आता है। आप शराब नहीं पीते हैं, तो आप पुराने नमूने के हैं। आपको लोग हँसेंगे। आप तो किसी भी हालत में शराब पीने को राजी नहीं होंगे। आप शराब नहीं पियेंगे तो आपको कतल करेंगे, ऐसा कहेंगे तो भी। मान लीजिए, यूँ कहकर कोई आपको मारने आयेगा तो उसके लिए आपके मन में प्रेम होगा कि नहीं ? भगवद्मूर्ति सामने आयी है, ऐसा आप समझेंगे कि नहीं ? या सिर्फ मार ही खायेंगे ? और यही कहेंगे, शराब न पीना हमारा व्रत है ? अगर आप समझेंगे कि भगवान हरि सामने हैं, मुझ पर प्रसन्न हुए हैं, तब तो आपकी मुक्ति है। भगवान की भावना करके उसे आलिंगन देने जायेंगे, तो आपकी मुद्रा देखकर या तो उसका हाथ रुक जायेगा या तो वह मारेगा तो भी आप मुक्त हो जायेंगे। आप यह भी कह सकते हैं कि तू इतना कष्ट करने आया है तो लाओ मैं थोड़ी-सी पी लेता हूँ, कितनी पिऊँ ? थोड़ा-सा ही पीता→

तरुणों से

'देश के सही नेतृत्व की जिम्मेदारी आपकी है !'

आज देश की जो सामाजिक-आर्थिक स्थिति है, उसमें जमीन के मालिक कम हैं, भूमिहीन अधिक हैं। मध्यम दर्जे के जो किसान हैं, उनका सम्बन्ध भी मजदूरों से अच्छा नहीं है। मजदूरों को मजदूरी भी कम मिलती है, जब कि अनाज की जो दर पूरे जिले में है, उसके अनुसार नकद मजदूरी मिलनी चाहिए। गाँव और देश में शान्ति तो रहे, लेकिन परिवर्तन भी होना चाहिए, और जन-साधारण को न्याय भी मिलना चाहिए। वैसे, आम तरीके से कानून का रास्ता है, जिस पर अमल नहीं होता। इसलिए समाज के लोग, विशेषकर तरुण यह निश्चय करें कि हम अपने-अपने गाँव में अन्याय नहीं होने देंगे। इसी उद्देश्य से सर्वोदय-आन्दोलन को गाँव-गाँव जगह जगानी पड़ रही है। गाँव-गाँव में जमीन का बीसवाँ हिस्सा बँटे, ग्रामसभा बने, ग्रामकोष निकले, यह कोशिश हो रही है। इस पर आप विचार करें।

समाज में अन्याय इसीलिए है कि ऊपरवाले लोग मुट्ठी बाँधे हुए बैठे हैं। उनके लिए फिर क्या हो? हम नहीं चाहते कि गाँव-गाँव में उपद्रव हों, और लोग हिंसा का रास्ता अपनायें। इन लोगों पर दबाव पड़ना चाहिए, इसीलिए मैंने सत्याग्रह की बात कही है। कुछ परिवर्तन समाज का हो, और कुछ निर्माण गाँव का हो। यदि इसके लिए सत्याग्रह का मार्ग अपनाना पड़े, तो आप तरुण लोग इस पर विचार करें। आपके भाई, पिता, चाचा आदि जो भी भूमिवान हों, उनसे बीघा-कट्ठा बाँटने, यथोचित मजदूरी देने आदि की बातें कहें। गाँव में यदि शक्ति बनेगी, गाँव के विकास में युवक भाग लेंगे, तभी समाज में परिवर्तन हो सकता है।

आजादी के बाद तरुणों को उचित नेतृत्व नहीं मिला। गांधीजी नहीं रहे, अन्यथा वे कोई-न-कोई नया रास्ता अवश्य सुझाते। राजनैतिक लोग अपने निहित स्वार्थ के लिए ५ वर्ष तक—एक आम चुनाव से दूसरे आम चुनाव तक—तरुणों को आन्दोलित करते रहे, यह अच्छा नहीं है। इस देश का दुर्भाग्य ही है कि तरुणों की शक्ति का उपयोग सही दिशा में नहीं किया गया।

हम तो अब बूढ़े हो चले, यह दुनिया आप लोगों की है। यदि आप लोग आने-वाले समय में देश के परिवर्तन और नेतृत्व की जिम्मेदारी अपने ऊपर नहीं लेंगे, तो मैं नहीं जानता कि देश कहाँ जायगा!

—जयप्रकाश नारायण

१० जून '७०, सनहा, मुजफ्फरपुर

→हैं, क्योंकि मैं वृद्ध हूँ। यूँ कहकर थोड़ा-सा पीयेंगे। तीन बातें हो सकती हैं—(१) मारने आयेगा तो 'नहीं पीता' यूँ कह-कर मरना, (२) उसे खुश करने के लिए, मित्र बनाने के लिए उदासवर भाव से थोड़ा पीना, (३) उसे हरिस्वरूप समझ कर प्रेमपूर्वक आलिंगन करना।

विदेश के अनुभव

श्री मनमोहन चौधरी जर्मनी, स्विट्-जरलैंड, आदि यूरोप के देशों की यात्रा करके हाल ही में लौटे। व सीधे बाबा के पास पहुँचे। यात्रा के उनके विविध अनुभव उन्होंने बाबा को सुनाये। जगह-जगह उनका यही दावा कि लोग अहिंसा के लिए लालायित हैं। भारत से बहुत आशा रखते हैं। जापान के एक प्रो० नाकामुरा को मनमोहन भाई ने बाबा के सस्कृत ग्रन्थ भेंट किये। उसके लिए नाकामुरा ने मनमोहन भाई से सहृदय में आनन्द व्यक्त किया। यूरोप के आर्च बिशप, जो जर्मनी में मनमोहन भाई से मिले, उन्होंने कहा, "विनोबाजी के लिए मेरे मन में अत्यन्त आदर और प्रेम है। मुझे भारत जाने की और विनोबाजी का आंदोलन देखने की तीव्र इच्छा है। हम अपने देश में अहिंसक पद्धति से काम करके गरीबों को मदद देने का यत्न कर रहे हैं।" मनमोहन भाई ने बाबा से कहा, "वर्धा से एक रात में बम्बई जाते हैं। लेकिन यूरोप में इस तरह कहीं जायें, तो वीसा पासपोर्ट बदलना पड़ता है। यानी दूसरा देश शुरू होता है। कुछ घंटे सफर करके देश ही बदलता है, यह सुना तो था, लेकिन प्रत्यक्ष देखा तो उसका इतना असर हुआ कि उस स्थिति से अभ्यस्त होने में बहुत देर लगी।" बाबा ने कहा, "मतलब, तुमको दुनिया बहुत छोटी मालूम हुई।"

शतरंज का खेल

गांधी-निधि के अध्यक्ष श्री दिवाकरजी दिल्ली से आये थे। दो बार उनकी बाबा से मुलाकात हुई। दूसरी बार आध्यात्मिक विषय—निवृत्ति-प्रवृत्ति इत्यादि—पर चर्चा हुई। पहले दिन आज की स्थिति पर चर्चा हो रही थी

दिवाकरजी, "आज सब कुछ राज-नीतिज्ञ तय करते हैं। जनता को कोई पूछता नहीं।"

बाबा, "जनता ने ही तो उनको वोट दिया है। लेकिन कुल मिलाकर हिंदुस्तान में विचार का मंथन इन दिनों ठीक हो रहा है।"

दिवाकरजी, "पर वह 'पालिटिक्स' (राजनीति) को केंद्रीभूत मानकर चला है। 'पावर' (सत्ता) के बारे में ही ज्यादा विचार चलता है।"

बाबा, "यह तो शतरंज का खेल है।"

दिवाकरजी, "मानव का हित सधना चाहिए, हमारी प्रगति कुछ होनी चाहिए।"

बाबा, "आपने तीन—तिलक, गांधी, नेहरू—युगों में काम किया। अब चौथा युग चला है। आपकी जिम्मेदारी ज्यादा है।"

दिवाकरजी, "जिम्मेदारी तो आप पर ज्यादा है। लेकिन आप उसे कबूल नहीं करते हैं।→

दूसरों की नजर में

'एक चिनगारी घास के पूरे मैदान को जला देगी'

नक्सलवादी नाम से पहचाना किसान-विद्रोह सन् १९६७ में पश्चिमी बंगाल में शुरू हुआ। तब से पुलिस और सेना ने नक्सलवादी हिंसा को दबाने की जितनी ही ज्यादा कोशिश की उतनी ही वह फैलती गयी – पहले किसानों-मजदूरों में, उसके बाद दरिद्रता-ग्रस्त शहरों में, जहाँ उग्र विद्यार्थियों और बेरोजगार युवकों ने नक्सलवादी आन्दोलन की सहानुभूति में विश्वविद्यालय और दूसरी संस्थाओं में तोड़-फोड़ शुरू की।

पिछले हफ्ते प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी उपद्रव के केन्द्र कलकत्ता गयीं। वह शांति और सुव्यवस्था से अधिक भूमि-सुधार की बात कहने गयीं। उन्होंने वहाँ कहा: 'सामाजिक दृष्टि से न्यायोचित भूमि-व्यवस्था कायम करने के लिए हमलोग जो कुछ कर सकते हैं, करेंगे।' ऐसे देश में, जहाँ ८ करोड़ से अधिक भूमिहीन खेतिहर—ग्रामीण जनसंख्या का पाँचवाँ भाग—भूमि के मालिकों और महाजनों की कृपा पर किसी तरह अपना पेट पालते हैं, इस तरह का संकल्प करना बहुत बड़ी बात है। जिस 'हरित क्रान्ति' की इतनी चर्चा है, जिसमें खेती के नये यंत्रों और उन्नत पद्धतियों का इस्तेमाल होता है, उसका लाभ बड़े भूमिवान और धनी किसान ही उठा पाते हैं। इस हरित क्रान्ति के कारण बहुत-से बँटाईदार, छोटे किसान और भूमिहीन मजदूर दुर्दशा के शिकार हो रहे हैं। इस क्रान्ति की कमाई से बड़े भूमिपति और व्यापारी, जो अब किसान हो गये हैं, जमीनें खरीद रहे हैं, और छोटे-छोटे खेतिहरों को निकाल रहे हैं। पिछले वर्ष केवल बिहार में मालिकों ने ४० हजार बेदखली के मुकदमे दायर किये; मैसूर में ८० हजार मामले अदालत में पेश हैं।

ऐसी विस्फोटक स्थिति का राजनैतिक लाभ उठाया जाना स्वाभाविक है। इस नक्सलवादी आन्दोलन के आधार पर माओ का नाम लेनेवाली और बम फेंकने वाली 'कम्यूनिस्ट पार्टी आव इंडिया मार्क्सिस्ट-लेनिनिस्ट' कायम हो गयी है। इस दल के नेताओं ने घोषणा की है कि एक नक्सलवाद की चिनगारी ने पूरे भारत में आग लगा दी है। नक्सलवादियों ने माओवादी युद्ध-नीति का अनुसरण करते हुए जगह जगह किसान-संगठन कायम किये हैं, और अपने 'रेड गार्ड' संगठित किये हैं, और हथियार इकट्ठा किये हैं।

हथियारों से लैस होकर ये नक्सलवादी पहाड़ों और जंगलों में छिपे रहते हैं। वहीं से छिपकर प्रहार करते हैं। धीरे-धीरे वे भारत के हर राज्य में फैल गये हैं। वे जमींदारों पर उनकी अनुपस्थिति में 'मुकदमा' चलाते हैं, अपना फैसला सुनाते हैं, तब उन्हें फाँसी पर लटकाते हैं या कत्ल कर देते हैं। पश्चिमी बंगाल में अभी हाल में, दिन-दहाड़े गरीब किसानों की एक 'सेना' जमीन हथियाने के अभियान में निकली और रास्ते में निजी और सरकारी जमीनों पर कब्जा करती गयी। शहरों में नक्सलवादी जत्थे बैंकों को लूटते हैं, पुलिसवालों की हत्या करते हैं और प्रतिद्वंद्वी मार्क्सवादी नेताओं को मारते हैं। इन वारदातों का एक मुख्य क्षेत्र ८० लाख की जनसंख्या का शहर कलकत्ता है, जहाँ हड़ताल, हिंसा और गुप्त कार्रवाइयों का बोलबाला है।

सरकारी अफसर कहते हैं कि नक्सलवादियों की संख्या १० हजार से अधिक नहीं है, जिनमें से ४ हजार अकेले कलकत्ता में हैं, लेकिन वह यह भी मानते हैं कि उनका प्रभाव बढ़ रहा है। भय के कारण हो, या सहानुभूति के कारण, बहुत-से किसान-मजदूर नक्सलवादियों के विरुद्ध पुलिस का साथ नहीं दे रहे हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि गरीब किसानों और मजदूरों के बारे में माओवादी नीति काम कर रही है। फिर भी पुलिस का दावा है कि नक्सलवादियों के मुकाबले में वह जोरदार साबित हो रही है। अभी दो बड़े नक्सलवादी नेताओं को पुलिस ने गोली से सफाया किया है, और उनके दर्जनों साथी पकड़े हैं। बहुत-से हथियार भी मिले हैं।

लेकिन लोकतंत्रवादी भारत में सामाजिक न्याय और आर्थिक विकास के पहिये धीरे-धीरे चलते हैं—अत्यंत धीरे-धीरे। यह स्पष्ट है कि बावजूद आतंकवाद के, बहुत-से किसानों और विद्यार्थियों को, जो अच्छी जिन्दगी के लिए अधीर हैं, उन्होंने अपनी ओर आकर्षित किया है। अधिकांश सरकारी अधिकारी इस बात पर सहमत हैं कि स्थिति पर पुलिस की कार्रवाइयों से कहीं अधिक असर भूमि-सुधारों का होगा, बशर्ते वे जल्द पूरे किये जायें। लेकिन भूमि-सुधार का विषय राज्य-सरकारों के क्षेत्र में है, केन्द्रीय सरकार के क्षेत्र में नहीं। श्रीमती गांधी की नीयत चाहे जो हो वह बेबस हैं। वह इस समस्या का न्यायोचित समाधान कैसे प्राप्त करेंगी? तब तक ऐसी स्थिति बनती जा रही है, जिसमें भारत की हरित क्रान्ति शायद अन्त में लाल हो जायगी।

(अमेरिकी 'न्यूज वीक' से साभार)

→ बाबा, "वही तो खूबी है!"

बाबा की इस बात पर सब लोग जोर से हँस पड़े।

दो महीने से बाबा का निवास ब्रह्म विद्या मंदिर में है। बाबा का स्वास्थ्य अच्छा है। डा॰ महोदय रोज सुबह मालिश करने आते हैं। स्वास्थ्य के बारे में कोई अतिथि पूछता है, तब बाबा कहते हैं कि उम्र के हिसाब से स्वास्थ्य मेरा अच्छा है। मेरा आहार और नींद मैंने अपने हाथ में रखी है। इसलिए स्वास्थ्य अच्छा है और मरते तक जोड़ूँगा, यह पक्की बात है।

—कुसुम देशपांडे

ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन राष्ट्रीय आन्दोलन बने

समर्पण-भाव से समर में जुट जाने का वक्त आ गया है

—राजस्थान सर्वोदय-सम्मेलन में शं० जगन्नाथन् का अध्यक्षीय उद्बोधन—

आज अपना देश और आन्दोलन एक बड़े संकटकाल से गुजर रहा है। इसलिए भाषण देने का और चर्चा करने का यह समय नहीं है। हमारे आन्दोलन के बीस साल के इतिहास में अब एक नया अध्याय खुला है। दुनिया के इतिहास का अध्ययन करने से मालूम होता है कि भिन्न-भिन्न देशों के आर्थिक या सामाजिक परिवर्तन के लिए प्रतीक्षा करने की अधिक-तम अवधि बीस साल की होती है। उसके बाद बहुत बड़ा परिवर्तन होता है। सन् १९५१ में भूदान-यज्ञ जो आरम्भ हुआ उसमें उत्तरोत्तर बड़ी प्रगति हुई, यह हमने देखा। इससे हमें सन्तोष व असन्तोष, दोनों ही हुआ। वैसे तो कुछ हद तक हम सफल हुए। फिर भी उतना पर्याप्त नहीं है, यह महसूस कर असंतोष भी है। ग्रामदान, प्रखण्डदान, जिलादान, राज्यदान पाने के बाद भी एक तरह का असन्तोष हमारे सबके मन में है। तमिलनाडु राज्यदान की सीमा पार करने के बाद हम ठीक उस गर्भवती माता की स्थिति में हैं, जो नौ महीनों के बाद या तो बच्चे को जन्म दे या मर जाय। राज्यदान के बाद हमें तमिलनाडु में ग्रामस्वराज्य की स्थापना करनी है, वरना हम कहीं के नहीं रहेंगे। यह असन्तोष ही हमारी प्रगति का लक्षण है, ऐसा मैं समझता हूँ।

हमारे लिए चुनौती का समय

हमारे मार्गदर्शक विनोबाजी फिर एक बार एकान्त में अपने यथास्थान जा बैठे हैं और आज तक जो हुआ, और आगे क्या हो, इस पर गहरा चिन्तन करते हुए सूक्ष्मप्रवेश में हैं। हमारे नेता श्री जयप्रकाशजी अहिंसा शक्ति को प्रकट करने के प्रयोग में लगे हुए हैं। हमारे आन्दोलन की जीत-हार श्री जयप्रकाशजी की जीत-हार पर निर्भर है। उनके सफल होने पर अहिंसा के इतिहास में नये अध्याय जुड़ेंगे। अपनी जान हथेली पर रखकर हमारे प्रिय नेता समरक्षेत्र में कूदे हैं। उनके पद-चिह्नों का अनुकरण सैनिकों के नाते करते हुए इस समर में भाग लेने का मौका हम सब लोगों के लिए आ गया है। अब समय को व्यर्थ गँवाना देश और दुनिया के लिए खतर-नाक है। नक्सलवादी हिंसक आन्दोलन का केन्द्रस्थान विदेश में है। इस नक्सल-वादी आन्दोलन में देश को गुलाम बनाने का, राजनैतिक स्वतंत्रता छीनने का तथा एकाधिपत्य स्थापित करने का षड्यंत्र निहित है। यद्यपि राजनैतिक पार्टियाँ इसको महसूस करती हैं, फिर भी वे दलगत झगड़ों और सत्ता की होड़ में लगी हुई हैं।

आन्दोलन राष्ट्रीय बने

सन् १९५२ तथा उसके बाद के भूदान-यज्ञ की शुरुआत के दिन मुझे याद आते हैं। विनोबाजी, जयप्रकाशजी जैसे नेताओं का ही नहीं, बल्कि सैकड़ों-हजारों भूदान-सेवकों की गाँव-गाँव में यात्राएँ होती थीं। तब सेवकों ने भी भूदान प्राप्त किया और इस तरह राष्ट्रीय आन्दोलन का स्वरूप बहुत ही महत्त्वपूर्ण रहा। लेकिन धीरे-धीरे उस राष्ट्रीय आन्दोलन का स्वरूप बिगड़ता गया। लेकिन अब पुन ग्रामसभा का संगठन और उसके द्वारा भूमि-वितरण, यह सब एक राष्ट्रीय आन्दोलन के रूप में चलना चाहिए। यह कोई लम्बे अर्से तक करने का कार्यक्रम होना नहीं चाहिए। अगले सन् १९७२ के चुनाव के अन्दर-अन्दर देशभर में ग्रामसभाओं का संगठन तथा उनके द्वारा भूमि का वितरण-कार्य राष्ट्रीय आन्दोलन के रूप में कैसे चलाया जाय, यही हमारे आन्दोलन के सामने सवाल है। देश में अन्य कई समस्याएँ हैं। सूक्ष्म सोच-विचार करने पर समझ में आयेगा कि इन सब समस्याओं का हल ग्राम-सभाओं को संगठित करने और उनके द्वारा लोक-शक्ति को प्रकट करने में ही है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि गाँव के गरीबों को बीसवाँ भाग भूमि, तथा चालीसवाँ भाग फसल बाँटने के इस कार्य से लोक-शक्ति अपने आप पैदा होगी। कुछ लोग समझते हैं कि यह कार्य ही सब कुछ है, और अन्तिम कदम भी। लेकिन वे यह भूल जाते हैं कि १/२० भूमि-वितरण केवल पहला कदम है। १/२० से शुरू कर समता की ओर तीव्र गति से आगे बढ़ना चाहिए। अपेक्षित समता की मंजिल तक पहुँचने में थोड़ा समय लगेगा। परन्तु कम से-कम भूमि के बीसवें भाग का वितरण ग्रामसभाओं द्वारा तुरन्त होना चाहिए। ग्रामसभाएँ जब काम करने लगेंगी तो खादी तथा ग्रामोद्योग, ग्रामरक्षा आदि कार्यक्रमों की भी शुरुआत होगी।

जनता प्रत्यक्ष जिम्मेदारी ले

एक खास बात आप लोगों के सामने यह रखना चाहता हूँ कि राजनीतिक, आर्थिक या अन्य कोई भी आन्दोलन हो, इस देश के करोड़ों लोग आज भी उनसे अछूते हैं। मध्यमवर्गी राजनीतिज्ञ, जिनके लिए राजनीति एक व्यवसाय बन गयी है, राजनैतिक विषयों और कार्यक्रमों से जनता को बहुत अलग रखते हैं। चुनाव के समय व जनता के पास जाते हैं, और तरह-तरह के उपायों से उनके वोट प्राप्त कर लेते हैं, तथा इस तरह जनता के मालिक बनकर बैठते हैं। इन मालिकों को ही सब कुछ मानकर बेचारी जनता, अपनी शक्ति की महिमा से अनभिज्ञ, लाचार होकर पड़ी है। केवल लोकतंत्र में नहीं, हिंसक क्रान्ति जिन राष्ट्रों में हुई, वहाँ की भी यही हालत है। जनता गुलाम

है। जन-क्रान्ति के बाद एक छोटे, परन्तु शक्तिशाली दल के राजनीतिज्ञों के पंजे में जनता फँस जाती है। राजनैतिक, आर्थिक लाभों को जनता नहीं पाती।

हम सर्वोदय कार्यकर्ताओं को एक ऐसी नयी पद्धति का विकास करना चाहिए, जिसमें जनसाधारण हमारे आन्दोलन का नेतृत्व करे तथा जिम्मा ले। हमारे कार्यकर्ता केवल लक्ष्य के प्रचार तथा जन-जागरण के कार्य करें ताकि आन्दोलन के हर पहलू पर लोग प्रत्यक्ष भाग लेने लगें।

हम कार्यकर्ता लोग इधर-उधर दौड़कर कुछ-न-कुछ काम करते हैं। पदयात्राएँ कीं, भूदान प्राप्त किया, उसका वितरण किया, ग्रामदान का प्रचार किया तथा संकल्प-पत्रों पर हस्ताक्षर कराया। लेकिन खुद हम ही सब कुछ करते रहें, यह ठीक नहीं है। समाज-जीवन की समस्याओं में उलझे हुए लोग स्वयं जिम्मा लेकर आन्दोलन को कैसे चलायें, इस पर हम कार्यकर्ताओं को चिन्तन करना चाहिए। गाँव के लोग स्वयं पद-यात्रा करें, ग्रामदान का प्रचार करें तथा दानपत्रों पर हस्ताक्षर करवायें, यह स्थिति शीघ्र लानी चाहिए। हम सिर्फ उनको प्रशिक्षण दें, उनके लिए साहित्य दें, मार्गदर्शन करें। कृषि-कार्य में लगे हुए ग्रामीण लोग अपना पूरा समय आन्दोलन के लिए नहीं दे सकेंगे। वे बहुत कम समय ही दे सकते हैं। फिर भी गाँव में एक शक्ति निहित है, जो हमारे आन्दोलन को आगे बढ़ा सकती है। ●

मुजफ्फरपुर की डाक

नगर-क्षेत्र में सक्रियता

१७ जुलाई से ६ अगस्त तक मुसहरी प्रखण्ड में श्री जयप्रकाशजी के कार्यरत होने के बाद भी हत्या और आतंक की घटनाएँ छिटपुट रूप में मुजफ्फरपुर के विभिन्न क्षेत्रों में जारी रहीं, लेकिन मुख्य रूप से मुसहरी प्रखण्ड में ऐसी घटनाएँ नहीं घट रही थीं। अचानक २४ जुलाई की रात में लगभग साढ़े दस बजे छरौरा गाँव में जनसंघ के जिला-मंत्री श्री गरीबदास पर पिस्तौल से गोली चलायी गयी। उनकी उसी रात अस्पताल में जाकर मृत्यु हो गयी। श्री गरीबदास की हत्या के समाचार से मुसहरी इलाके में पुनः भय और आतंक का वातावरण घनीभूत हो गया है। गरीबदास जनसंघ के जिलास्तरीय नेता थे। वे न तो बड़े भूमिवान थे और न तो अपने गाँव के ऐसे आदमी थे, जो अनीति और अन्याय अथवा अत्याचार के लिए अपने इलाके में कुख्यात रहे हों। इसके विपरीत वे एक नेकनीयत, मृदुल और न्यायनिष्ठ व्यक्ति माने जाते थे। वे जनसंघ के नेता होते हुए भी साम्प्रदायिक वृत्ति के नहीं थे। उनके गाँव में मुसलमान सम्प्रदाय के लोग अच्छी संख्या में हैं। उनमें से कई लोगों के साथ उनका आत्मीयता का सम्बन्ध था। निश्चय ही श्री गरीबदास की हत्या के पीछे कुछ राजनैतिक तत्त्वों का हाथ रहा है, पर उन राजनैतिक तत्त्वों ने श्री गरीबदास की हत्या 'भूमि आन्दोलन' की पृष्ठभूमि में नहीं, बल्कि राजनैतिक अखाड़े-बाजी या प्रतिरोध के कारण की है।

मुसहरी प्रखण्ड में रहते हुए श्री जयप्रकाशजी ने अब तक मुख्य रूप से फुलहा, मरोली, डुमनगरा और मनिका पंचायत के लोगों से प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित किया है। अब ९ जून से ३१ जुलाई की अवधि में चारों पंचायतों में ग्रामदान की दृष्टि से जो कुछ कार्य हुआ, उसकी विवरण-तालिका यहाँ प्रस्तुत है।

९ जून '७० से ३१ जुलाई '७० तक के काम की प्रगति के आंकड़े

पंचायत	गाँव	परिवार	जनसंख्या	पूर्व के हस्ताक्षर		९ जून से १७ जुलाई		१७ जुलाई से ३१ जुलाई		कुल		योग	प्रतिशत	
				भूमिवान	भूमिहीन	भूमिवान	भूमिहीन	भूमिवान	भूमिहीन	भूमिवान	भूमिहीन		जमीन	जनसंख्या
फुलहा	फुलहा	१०६	५००	२०	१०	३८	२०	—	—	६५	३०	१०२		७०
	कलानपुर	२५२	१,४००	१६	७९	१८	२१	५	—	३७	१००	१३७		५५
	माधोपुर	२२५	१,३६०	१४	११७	१०	२५	१२	२	३७	१४४	१८१		८०
	बैकुंठपुर	१२२	९०५	२०	१३	११	४०	३	—	४६	४३	१०९	५१	९०
	द्वारिका नगर	१८०	११७	२	८	३३	५३	—	—	१५	६१	९६		५३
मरोली	मरोली सैन	१४०	१,७९५	१५	११०	६२	४६	१५	—	९२	१५६	२४८		७३
	,, कल्याण	७३	३९८	—	१४	२४	२१	—	—	३४	३५	६९		६४
	,, बीहू	१४०	७६०	३२	५४	२१	२	—	—	५३	५६	१०९		७७
	बिन्दा	२५७	१,२३५	१२	७२	७६	२८	८	—	९६	१००	११६		७६
डुमनगरा	मोमीनपुर	१०३	४८६	५	९	३६	४१	—	—	४१	५०	९१	७०	९१
	डुमरी	३५५	२,१००	—	—	५३	७२	७९	५८	१३२	१३०	२६२		७४
	डुमनगरा धाधी	३७५	१,८९५	७	४	७३	५२	१०७	३६	१८७	९२	२७९		७४
	,, जगन्नाथ	२१२	१,२८४	१८	३६	२३	३३	३१	२६	६२	८५	१४७		६३
मं	बिशुनपुर मनोहर	१०२	५८५	—	—	—	—	३३	४१	३३	४९	८२		८०
	कुल :	२,९०२	१४,८००	१६६	५२६	५०१	४६१	२११	१६१	९६०	१,१४८	२,१०८		

रकबे की दृष्टि से अब तक केवल नैपुरपुर और मोमिनपुर ही ग्रामदान की शर्तें पूरी करते हैं। बचे गांवों में गांव के सामान्य ग्रामवासियों का समर्थन तो मिला है, लेकिन प्रमुख भूमिवान किसान ग्रामस्वराज्य की विचारधारा में अभी शामिल नहीं हुए हैं। चूंकि अभी बरसात का मौसम चल रहा है, इसलिए गांव के लोगों को आपस में मिलने-जुलने की अनुकूल परिस्थिति नहीं है। सब लोग अपनी-अपनी खेती के कार्य में जुटे हुए हैं। इसीलिए उनसे सम्पर्क और चर्चा करने का कार्यक्रम अभी धीमा चल रहा है।

१७ जुलाई से ६ अगस्त की अवधि में मुजफ्फरपुर का नगर-क्षेत्र सक्रियता का मुख्य केन्द्र बना। मैं अपनी पिछली चिट्ठी में मुजफ्फरपुर में तरुण-शांतिसेना के सक्रिय होने की चर्चा कर चुका हूं। कालेज की परीक्षा जारी होते हुए भी तरुण शांति-सैनिकों ने उत्साहपूर्वक अपना नगर-सम्पर्क जारी रखा। 'मुसहरी प्रखण्ड में जयप्रकाशजी क्या कर रहे हैं?'—इस आशय की छपी नोटिस की हजारों हजार प्रतियां मुजफ्फरपुर के नागरिकों में उन्होंने बांटी। नोटिस बांटने के साथ-साथ 'ग्रामस्वराज्य-कोष' के लिए धन-संग्रह करने का कार्यक्रम भी उन्होंने चलाया। मिट्टी के ८ बड़े गोलकों में १० नये पैसे से लेकर रुपये तक की रकम इकट्ठी की गयी। ६ जुलाई को मणिका ग्राम में श्री जयप्रकाशजी के समक्ष उन गोलकों में एकत्रित रकम उन्हें समर्पित का गयी, जो रुपये ३२८.५० था।

नागरिक-सम्पर्क के लिए तरुण-शांति-सैनिकों ने ४–५ सदस्यों की टोली बनाकर सिनेमा-घर, रेलवे-स्टेशन, बस-स्टेशन, और बाजार में एकत्र लोगों से मिलने की योजना बनायी। योजना की सफलता से तरुण-शांतिसैनिकों में उत्साह की लहर फैलती जा रही है। शुरू में सक्रिय शांति-सैनिकों की संख्या ४ थी। १ महीने के भीतर वह संख्या बढ़कर ४० हो गयी। आगे भी यह संख्या बढ़ती ही जायेगी, यह विश्वास पक्का हुआ है।

मंत्री का पत्र

प्रेमपूर्ण अनुरोध

प्रिय बन्धु,

सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति और ग्रामस्वराज्य कोष समिति की संयुक्त बैठक सोकर में तारीख २८ जुलाई '७० को हुई। उसमें पता चला कि जहां कार्यकर्ताओं ने शक्ति लगायी है वहां नयी पद्धतियां विकसित हुई हैं। और वहां लक्ष्यांक से अधिक रकम इकट्ठी होने की सम्भावना पैदा हुई है। उदाहरणार्थ—कहीं-कहीं उद्योग क्षेत्र के मजदूर एक दिन की मजदूरी दें और उतनी ही रकम उद्योग के संचालक लोग दें, इसके लिए मजदूरों को उनकी यूनियनों द्वारा और उद्योगपतियों को चेम्बर आफ कामर्स द्वारा आह्वान किया गया। ग्रामीण क्षेत्रों में हर ग्राम पंचायत के क्षेत्र से १०० रु० इकट्ठा करने का आह्वान किया गया और उसकी जिम्मेदारी उन गांवों में समिति बनाकर, उस पर सौंपी गयी। इस समिति के अध्यक्ष उस ग्राम पंचायत के सरपंच और शिक्षक मंत्री बनाये गये। जिला परिषद के अध्यक्षों द्वारा उचित परिपत्र आदि निकलवाये गये।

उस बैठक में यह दिखाई दिया कि महाराष्ट्र, म० प्र०, हैदराबाद शहर और उत्तर कर्नाटक में शक्ति लगी, और अच्छी खासी रकम इकट्ठी हुई। इन अपवादों को छोड़कर अन्य जगह अभी शक्ति लगाना बाकी है, ऐसा दिखाई दिया। लेकिन शक्ति लगायी गयी तो हर प्रदेश का लक्ष्यांक पूरा हो सकता है, इतना ही नहीं, बल्कि उससे अधिक भी हो सकता

नागरिकों से सम्पर्क बढ़ाने के दौरान तरुणों को जो अनुभव आया, उससे उनका आत्मविश्वास तो बढ़ा ही है, इसके साथ-साथ उनकी वैचारिक निष्ठा भी गहरी होती गयी है। तरुण-शांतिसैनिकों का यह पराक्रम आसमान में छाये बादलों में बिजली की चमक जैसा रोमांचक है।

—वर्धमान

है, ऐसा, एकाध प्रदेश को अपवाद रूप में छोड़कर, प्रायः सभी प्रदेशों ने महसूस किया।

विनोबाजी के नाम से यह कोष हम प्रथम बार इकट्ठा कर रहे हैं। पिछले तीन-चार महीनों में कोष का काम करते-करते यह दिखाई दिया कि विनोबाजी के लिए जनता में अपार श्रद्धा है। असम्भव माने जानेवाले किले भी विनोबाजी के नाम से टूट रहे हैं, और उन किलों पर विजय हासिल हुई है। कार्यकर्ताओं में पू० बाबा के लिए अपार भक्ति है। कई भूदान-जगत् के बाहर के मित्रों ने चेतावनी दी थी कि एक करोड़ रुपये का संग्रह होना असम्भव है। लेकिन दो-तीन माह के अनुभव से यह साफ दिखता है कि असम्भव चीज सम्भव हो सकती है। हम सब लोग एकाग्र होकर शक्ति लगायें तो यह लक्ष्य निश्चित ही पूरा हो सकेगा। आज तक पू० विनोबाजी ने अपने नाम का उपयोग करने की इजाजत नहीं दी। कहीं ऐसा न हो कि अब इजाजत दी है तो हमने पूरी शक्ति नहीं लगाई, इसलिए एक करोड़ के लक्ष्य तक हम पहुंच नहीं पाये, ऐसा पछतावा थैली-समर्पण के दिन हमारे मन में हो। इसलिए यह पत्र मैं आपकी सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूं। बाबा का नाम, एक करोड़ का (पहुंच के भीतर का) लक्ष्य, और देश की बिगड़ती हुई परिस्थिति में सर्वोदय कार्यक्रम की सबको महसूस होनेवाली आवश्यकता—यह त्रिवेणी संगम शायद बारबार न हो। बाबा ने इजाजत दी और हमारे प्रयत्नों में कमी रह गई, ऐसा न हो जाय। अतः पू० बाबा के शब्दों में 'सब काम छोड़कर कोष के काम में भिड़ जाओ।' हम सब ऐसा करें, और अपने-अपने जिले और प्रदेश का लक्ष्य पूरा करके ही रहें, ऐसा मेरा आपसे प्रेमपूर्ण अनुरोध है।

[illegible]

सर्व सेवा संघ, गोपुरी, वर्धा

यह है हरित क्रान्ति !

● हरित क्रान्ति पूंजीवादी क्रान्ति है। नयी खेती में इतनी ज्यादा पूंजी की जरूरत है कि सामान्य किसान उतनी पूंजी जुटा ही नहीं सकता। नीचे के आंकड़ों से इसका अनुमान हो जायगा। ये आंकड़े पंजाब के बड़े फार्मों (१९६७-६८) के हैं।

पूंजी प्रति फार्म (रुपयों में)

एकड़ों में फार्म का आकार	ट्रैक्टर	ट्यूब वेल और पम्प	दूसरे सामान	मकान, भूमि का सुधार, मरम्मत
२०-२५	१,९००.००	२,०००.००	५००.००	१,१००.००
२५-३०	१,६००.००	१,६००.००	३००.००	१,२५०.००
३०-४०	४,४००.००	२,२००.००	९००.००	१,८५०.००
४०-५०	४,०००.००	२,२००.००	१,०००.००	१,६००.००
५०-७५	७,६००.००	४,७००.००	१,९००.००	३,५००.००
७५-१००	७,५००.००	७,४००.००	१,४००.००	५,२००.००
१००-१५०	२१,०००.००	—	७,०००.००	६,७५०.००
१५०+	३४,४००.००	२१,१००.००	११,५००.००	१३,८५०.००

● पंजाब में २० एकड़ से ऊपर के फार्मों की संख्या १७,००० है जिनमें कुल २१.११ लाख एकड़ भूमि है। १९५५ से १९६७ के बीच बड़े फार्मों की भूमि ९.१ प्रतिशत बढ़ गयी। २०-२५ एकड़ के फार्मों में ४ प्रतिशत की वृद्धि हुई जब कि १००-१५० एकड़ के फार्मों में ४० प्रतिशत की। यह वृद्धि जमीन की खरीद से हुई। यही कारण है कि अब खेती में बिटाई (बटाई) अधिकारी, तथा शहर के व्यापारी भी शरीक हो रहे हैं।

अध्ययन से पता चला है कि

(१) २-३ एकड़ के किसानों ने रासायनिक खाद के इस्तेमाल से कुछ ज्यादा कमाया है, लेकिन वे इतनी कमाई नहीं कर सके हैं कि भूमि का सुधार कर सकें।

(२) जमीन के मालिकों ने बँटाईदारों से जमीन निकालकर अपने हाथ में कर ली है।

(३) १० एकड़ से ऊपरवाले किसान कुछ पूंजी इकट्ठा करके सिंचाई आदि में लगा सके हैं, और कुछ नया सामान खरीद सके हैं।

(४) २० एकड़ और ऊपर के किसानों ने दो-तीन फसलें लेकर, या व्यापारिक फसलों से, खूब कमाई की है।

(५) धान के क्षेत्रों के ७५-८० प्रतिशत किसानों की आर्थिक स्थिति को धक्का लगा है। दूसरे की जमीन जोतनेवालों की स्थिति पहले से भी नीचे गयी है।

● पंजाब में ४३.१ प्रतिशत जनसंख्या के पास ८३.७ प्रतिशत भूमि है, और १०.२ प्रतिशत के पास १५.० प्रतिशत। १९.७ खेतिहर मजदूरों के पास केवल ०.४ प्रतिशत भूमि है !

आन्दोलन के समाचार

तरुण-शान्तिसेना का मौन जुलूस शिक्षा में क्रान्ति-अभियान

गत ६ अगस्त को कानपुर तरुण-शान्ति-सेना के तत्त्वावधान में एक 'मौन जुलूस' 'शिक्षा में क्रान्ति-अभियान' के शुभारम्भ के लिए निकला। भयंकर वर्षा के बावजूद लगभग १०० तरुण-शान्तिसैनिक गांधी-प्रतिमा फूलबाग से निकलकर माल रोड, नयागंज, बनरलगंज, बादशाहीनाका, नयी सड़क होते हुए बड़े चौराहे से कैलाशनाथ कन्या विद्यालय पहुँचे, जहाँ जुलूस एक सभा में परिवर्तित हो गया। तरुण शान्तिसैनिकों के हाथ में प्लेकार्ड्स थे, जिनमें-'बदलो आज की शिक्षा को, मांगने नहीं भिक्षा,' 'शिक्षा से शान्ति हो', 'शिक्षा स्वावलम्बन हो', 'विद्रोह वर्तमान शिक्षा-प्रणाली से', 'शिक्षा में उत्पादन का समावेश हो', इत्यादि नारे लिखे हुए थे।

लोकसेवा आश्रम समालखा द्वारा व्यापक लोक-शिक्षण का उल्लेखनीय प्रयास

पिछले दो महीने (जून-जुलाई '७०) में लोकसेवा आश्रम, समालखा (हरियाणा) द्वारा सर्वोदय-विचार को उत्साहवर्धक पत्रिकाओं के माध्यम से व्यापक स्तर पर सर्वोदय-विचार के लोकशिक्षण का उल्लेखनीय प्रयास हुआ है। उक्त संस्था ने इन दो महीनों में 'गाँव की आवाज', 'भूदान-यज्ञ' पत्रिकाओं के २३२ ग्राहक बनाये हैं 'भूदान-तहरीक' उर्दू तथा सर्वोदय' एवं 'पीपुल्स एक्शन' अंग्रेजी पत्रों के भी ग्राहक बनाये हैं। इस प्रकार लोकसेवा आश्रम समालखा विनोबा की 'घर घर विचार पहुँचाने का काम' का पूरा करने की दिशा में रचनात्मक ढंग से जो शिक्षा-निर्देशक काम कर रहा है, वह अभिनन्दनीय है। ●

ग्रामदान-प्राप्ति के साथ-साथ पुष्टि-कार्य में लगने का आह्वान

राजस्थान के १६ वें सर्वोदय-सम्मेलन का निवेदन

१६ वें राजस्थान प्रादेशिक सर्वोदय-सम्मेलन में पारित निवेदन में कहा गया है कि लगभग डेढ़ वर्ष पूर्व जयपुर में प्रादेशिक सर्वोदय सम्मेलन में प्रदेशदान का संकल्प लिया गया था। उस दिशा में जो प्रयास हुआ, उसके फलस्वरूप ३० खण्डदान-अभियान चले, और चुरू, नागौर व बीकानेर के जिलादान की निष्पत्ति हुई। लेकिन अभियान की गति संकल्प की दृष्टि से अत्यन्त धीमी है, और इसमें गति लाने की तुरन्त आवश्यकता है, ताकि आगामी वर्ष तक हम प्रदेशदान के निकट पहुँच सकें।

अभी तक केवल ग्रामदान-प्राप्ति पर ही ध्यान केन्द्रित रहना स्वाभाविक था, पर अब आवश्यक हो गया है कि प्राप्ति के साथ-साथ ग्रामदान-पुष्टि का कार्यक्रम भी उतनी ही तीव्रता और दृढ़ता के साथ चले। बीकानेर में तो इस कार्य को तुरन्त सुनियोजित ढंग से हाथ में लिये जाने की आवश्यकता है।

सम्मेलन में इस बात पर भारी क्षोभ व चिन्ता प्रकट की गयी कि राजस्थान सरकार ने भूमिहीन व गरीब कृषकों के लाभ के लिए अनेक कानून व आदेश बनाये, फिर भी कुल मिलाकर जिनको लाभ राहत मिलनी चाहिए थी, उनको न मिलकर साधन-सम्पन्न लोगों को ही ज्यादा लाभ मिला। अतः निवेदन में सरकार से इस स्थिति को दूर करने व जनता में अन्याय को अधिक बर्दाश्त न कर संगठित होने और अहिंसक तरीके से रचनात्मक कदम उठाने का आह्वान किया गया है, ताकि सामाजिक विषमता मिटायी जा सके।

ग्रामदानी क्षेत्रों के लोगों से अपने-अपने गाँव में तुरन्त ग्रामसभाओं का गठन करने, दलमुक्त ग्राम-प्रतिनिधित्व की दिशा में आगे बढ़ने का आह्वान करते हुए इसी सन्दर्भ में राजस्थान सरकार से माँग की गयी है कि जहाँ जिलादान व प्रखण्डदान हो चुके हैं वहाँ पंचायतों के चुनावों को ६ मास तक के लिए स्थगित कर दिया जाय, और ग्रामसभाओं के संगठित होने पर उन्हें वैधानिक अधिकार प्रदान किये जायें, ताकि वे सर्वसम्मति के आधार पर लोकतन्त्र की नयी बुनियाद बनाने का उदाहरण पेश कर सकें।

निवेदन में राज्य सरकार से प्रस्तावित सुलभ ग्रामदान-कानून को राज्य में अविलम्ब लागू करने की भी माँग की गयी है।

ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए राजस्थान से ५ लाख रुपया इकट्ठा करने के काम में राजस्थान की जनता, जन-सेवकों, संस्थाओं और सरकार, सबसे सहयोग देने का अनुरोध भी निवेदन में किया गया है। ●

भारतीय क्रान्ति की रूपरेखा : नये दिगंत की खोज...

उक्त विषयक एक परिचर्चा आगामी २८, २९, ३० अगस्त को आगरा में आयोजित की जा रही है। परिचर्चा का आयोजन अहिंसक क्रान्ति की तड़प महसूस करनेवाले भारत के कुछ भावनाशील सुजनों ने किया है। इसमें भाग लेने के इच्छुक लोगों को खुला आमंत्रण है। कृपया निम्न पते पर सम्पर्क करें

४५, महात्मा गांधी मार्ग,
आगरा-२

गांधी जन्म-शताब्दी सर्वोदय-साहित्य

निवेदन

२ अक्तूबर १९६९ से राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की जन्म-शताब्दी चालू है। गांधीजी की वाणी घर-घर में पहुँचे, इस दृष्टि से गांधीजी की अमर जीवनी, कार्य तथा विचारों से सम्बद्ध लगभग १५०० पृष्ठों का उच्च कोटि का और चुना हुआ साहित्य-सेट केवल रु० ७-०० में देने का निश्चय किया गया है। लगभग १००० पृष्ठ का सेट रु० ५-०० में दिया जायेगा।

सेट नं० २, पृष्ठ १५००, रु० ७-००

पुस्तक	लेखक	मूल्य
१. आत्मकथा (१८६९-१९१९)	गांधीजी	१-००
२. बापू-कथा (१९२०-१९४८)	हरिभाऊजी	२-५०
३. तीसरी शक्ति (१९४८-१९६९)	विनोबा	२-५०
४. गीता-बोध व मंगल प्रभात	गांधीजी	१-००
५. मेरे सपनों का भारत (संक्षिप्त)	गांधीजी	१-५०
६. गीता प्रवचन	विनोबा	२-००
७. सघ-प्रकाशन की एक पुस्तक		१-००
		११-५०

यह पूरा साहित्य सेट केवल रु० ७ में प्राप्त होगा। एकसाथ २५ सेट लेने पर फ्री डिलीवरी मिलेगा।

सेट नं० १, पृष्ठ १०००, रु० ५-००

ऊपर की प्रथम पाँच किताबों का पृष्ठ १००० का साहित्य सेट केवल रु० ५-०० में प्राप्त होगा। एकसाथ ४० सेट लेने पर फ्री डिलीवरी दिया जायगा। अन्य कमीशन नहीं।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१

वार्षिक शुल्क १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०, या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ सोमवार

अंक : ४७ २४ अगस्त, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

सह-अस्तित्व की भारतीय परम्परा

इसमें कोई शक नहीं कि अगर भारत के इतिहास की तरफ तटस्थ बुद्धि से देखा जाय, और बावजूद इसके कि, यहाँ अनेक लड़ाइयाँ हुई हैं, काफी निष्ठुर कार्य भी हुए हैं। कुल मिलाकर सोचा जाय, तो मान्य करना होगा कि यह भूमि सकल-सहा, सकल-वहा दरअसल रही है। वस्तुतः उसने बहुत सारा बोझ वहन किया है। कुछ लोग समझते हैं कि यह सहन करने की वृत्ति कमजोरी का लक्षण है। परंतु जिनमें यह वृत्ति नहीं थी, बल्कि आक्रमण की वृत्ति थी, उनकी आज जो दशा है, वह देखें तो सहिष्णुता में क्या शक्ति है, इसका भान होगा। रोम और ग्रीस में सहन-शक्ति नहीं थी, बल्कि ये दोनों देश काफी आक्रमणशील देश रहे। वह पुराना रोम और ग्रीस आज कहाँ है? भारत में पुराने भारत का आज भी दर्शन होता है। यहाँ की भाषा में, चिंतन में, जीवन-धारा में, साहित्य में, पद्धति में अनुभव होता है कि प्राचीन भारत आज भी कायम है। अब काल का कुछ तो असर होगा ही, वह हुआ है, वह अलग बात है, वैसा होना ठीक भी है, लेकिन प्राचीन भारत लुप्त नहीं हुआ है।

यहाँ कौन कौन जमातें नहीं आयीं? दुनियाभर की जमातें यहाँ आयीं। सबके सब आक्रमण करके ही आये, ऐसी बात नहीं। कुछ लोग तो आश्रय के लिए भी आये। तेरह सौ-चौदह सौ साल पहले बम्बई के किनारे पर ईरान से पारसी लोग आये। उनका यहाँ पूरा रक्षण हुआ। अपनी जमात के लिए स्वतंत्र रक्षण की माँग उन्होंने कभी नहीं की। वे जब आये, तब 'देवताओं' की निंदा और 'असुरों' की प्रशंसा करते हुए आये। पर्शियन भाषा में भगवान को असुर कहते हैं और राक्षस को देव कहते हैं। ऐसे विचित्र शब्द लेकर वे यहाँ आये, फिर भी यहाँ के लोगों ने उनको प्रेमपूर्वक आश्रय दिया, उनकी सभ्यता का आचरण करने का उनको पूरा स्वातंत्र्य दिया।

हमारे यहाँ पूर्व-पश्चिम संगम हुआ। बिल्कुल एक दूसरे के विरुद्ध आचरण करनेवालों का, एक चीज को एक पाक समझे तो दूसरा नापाक, ऐसों का भी समावेश लगभग हर-एक गाँव ने कर लिया। कहीं अलग-अलग गाँव ही बसा दिये गये, कहीं एक ही गाँव में भिन्न-भिन्न टोले बसा दिये गये। आज देखने में यह संकुचित कल्पना लगेगी। लेकिन उस जमाने में जाकर और फिर सोचें, तो ध्यान में आयेगा कि यह भारत की सभ्यता का लक्षण है। किसी की सभ्यता का हम पर आक्रमण न हो और हमारी सभ्यता का किसी पर आक्रमण न हो, प्रेम से एक-दूसरे को जीत कर एसीमिलेट (एकरूप) होने दें, यह जातिसंस्था का मूल है। यह बात अलग है कि कोई चीज काल के बाहर चली जाती है, तो हानिकारक होती है; लेकिन मूलतः इसका अर्थ सह-अस्तित्व था।

'मैत्री' : अगस्त '७० —विनोबा

भूमि-सत्याग्रह और संस्था-स्वामित्व

२७ जुलाई के 'भूदान-यज्ञ' में श्री यदुनाथ थत्ते का पत्र पढ़ा। 'विवेक और भावना का सतुलन' सत्याग्रह के लिए अति आवश्यक है। लेकिन ग्रामसभा को सस्था मानने, और स्वामित्व-विसर्जन को सस्था के स्वामित्व का रूप देने में विवेक और भावना का सतुलन नहीं दिखाई देता। सस्था का प्रयोजन तथा ग्रामसभा का प्रयोजन एक-दूसरे से भिन्न है। क्रान्तिमूलक भावनाओं का परिपोषण ग्रामसभाओं द्वारा होगा। सस्था तो कुछ सेवा करेगी। सेवा का भी महत्त्व है। लेकिन क्रान्ति का महत्त्व उससे कई गुणा अधिक है। सस्था में कार्यकर्ता-सदस्य होते हैं। ग्रामसभा लोगों की होती है। उनमें पारिवारिक भावना का होना सहज माना गया है। सस्था का हित उसके कार्यकर्ता और सदस्यों का हित होता है। ग्रामसभा का हित लोगों का और गांव का होता है। दोनों के उद्देश्यों में भी काफी फर्क है। ग्रामसभा खुद अहिंसात्मक परिवर्तन की बुनियाद बनेगी। सस्थाएँ क्रान्ति की बुनियाद नहीं बन सकती। सस्थाएँ बैंक के ब्याज पर पलती हैं। सस्था और ग्रामसभा, इन दोनों में जो भिन्नता है, उसे शायद श्री थत्ते ने जानने की कोशिश नहीं की। श्री थत्ते अपनी मराठी साप्ताहिक 'साधना' पत्रिका द्वारा ग्रामदान को अव्यावहारिक ही घोषित करते रहे हैं।

अहिंसक सत्याग्रह में सगठन और अनुशासन के महत्त्व को चाहनेवाला कोई भी सत्याग्रह को भूला नहीं है। लेकिन इसके महत्त्व को भुलाया गया या भुलाया जाता है। शायद ऐसा करनेवाले कभी भी सत्याग्रह को चाहते नहीं हैं। इसका कारण और चाहे जो भी हो, लेकिन एक कारण सबको स्पष्ट रूप से सहज ही ध्यान में आ जाता है। समाज-जीवन के ढाँचे को बदलने की जिनकी इच्छा नहीं होती, उनको यथास्थिति से 'मुहब्बत सी' हो जाती है। और यथास्थिति में कुछ परिवर्तन होता हुआ दिखाई दे तो ऐसे लोगों के मन में एक 'विग्रह' की भावना पैदा हो जाती है। और 'विध्वंस' 'अव्यवस्था' आदि के बहाने बनाकर समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया को ऐसे लोग रोकने की कोशिश करते हैं।

अहिंसक सत्याग्रह के लिए सगठन और अनुशासन चाहिए। लेकिन अगर यह नहीं सम्भव हो पा रहा है तो क्या यथास्थिति को अपनाया जाय? यह कोई इसका इलाज माना जायगा? जो आज सत्याग्रह करना चाहते हैं, वे कुछ विकल्प खोजने के लिए ही ऐसा करना चाहते हैं। क्योंकि बिना किसी प्रयोग के यह शक्य नहीं। श्री थत्ते ने कोई इलाज अपने पत्र में नहीं सुझाया है।

शिक्षण-सस्था या विद्यापीठ और किसी बड़े सस्थान के लिए भूमि की आवश्यकता होगी। लेकिन भूमि का सही उपयोग तो अनाज उगानेवाले भूमिहीन मजदूर ही कर सकते हैं। इसलिए विद्यापीठों तथा सस्थानों द्वारा भूमि का सही उपयोग नहीं होता हो तो, वहाँ भूमि न रहे, यही उचित है। क्योंकि कृषि-उद्योग आदि के नाम पर केवल जमीन और उसके उपज पर स्वामित्व बनाये रखने की भावना सस्थानों में बढ़ रही है, इससे समाज का कोई लाभ नहीं होता। शिक्षण-सस्थाओं से, तथा कृषि-विद्यापीठों से बेकारों की ही उपज हो रही है। इस वस्तु-स्थिति को भुलाया नहीं जा सकता।

—बाबूराव चंदावार

[इस स्तम्भ को शुरू करने के पीछे सम्पादकीय मंशा यह रही है कि हमारे साथी कार्यकर्ता, पाठक, सहानुभूति रखनेवाले मित्र इसके माध्यम से आन्दोलन से सम्बन्धित अपनी अनुभूतियों का आदान-प्रदान कर सकें।

यद्यपि व्यक्त भावों, विचारों से सम्पादक की सहमति-असहमति आवश्यक नहीं है, फिर भी एक स्वस्थ सवाद का माध्यम यह स्तम्भ बने, इसके लिए निवेदन है कि पत्र-लेखक किसी सस्था-विशेष या व्यक्ति-विशेष के प्रति अपना आक्रोश आदि व्यक्त करने या आरोप-प्रत्यारोप करने का माध्यम इसे न बनायें।

—सम्पादक]

× × ×

रचनात्मक संस्थाएँ : संगठन का स्वरूप

'रचनात्मक कार्य में सगठन स्वरूप' के विषय में रचनात्मक सस्थाओं प्रमुख अधिकारियों के सम्मेलन के निर्ण को प्रकाश में लाने के लिए इन संस्था के सभी साथी श्री देवेन्द्रभाई और आप आभार मानेंगे। किन्तु जब ये निर्णय इ विलम्ब से लिये गये और नवम्बर, '६ के सम्मेलन के बाद अब प्रकाश लाये गये, तो कैसे आशा की जाय सस्थाओं के संचालक इन्हें कार्यान्वि करने में शीघ्रता करेंगे? वैसे हम मान हैं कि यदि हमें 'इस्टेब्लिशमेन्ट' औ 'स्टेट्सको' के सरक्षक या उसमें सरक्षि नहीं रहकर जनता के बीच अपनी 'इमेज को सुधारकर अपनी अहिंसक शक्ति प्रकट करनी है तो अब भी इन निर्णयों क अविलम्ब लागू करने का साहस हमारे सस्थाओं के प्रमुखों में आना ही चाहिए। और अधिक विलम्ब हमारे अस्तित्व के लिए भी खतरनाक सिद्ध होगा।

यदि ये निर्णय लागू होंगे तो 'फील्ड-वर्क' तथा 'फील्डवर्कर' को उचित महत्त्व मिलेगा और हमारे कार्य में तेजस्विता बढ़ेगी, ऐसा हमारा विश्वास है।

अतः आपके माध्यम से हम दे को सभी गांधी-विचार की रचनात्मक सस्थाओं के अधिकारियों से यह अनुरोध करते हैं कि वे इस दिशा में शीघ्र कदम बढ़ायें।

—विनयमार्ग

अल्पसंख्यक

जिनकी संख्या कम है वे पूछ रहे हैं कि २५ करोड़ के इस देश में उन्हें कैसे रहना है। वे यह भी जानना चाहते हैं कि जिनकी संख्या अधिक है वे कम संख्यावालों को कैसे रखेंगे। ये सवाल इसलिए उठे हैं कि अब मनुष्य को कुछ खा-पीकर किसी तरह जी लेने से संतोष नहीं है। वह चाहता है कि अच्छी तरह जीये, सबके साथ जीये, और समान, स्वतंत्र होकर जीये।

हम सब अलग-अलग व्यक्ति तो हैं, पर केवल व्यक्ति नहीं हैं। हम किसी जाति, क्षेत्र, धार्मिक सम्प्रदाय, दल अथवा आर्थिक वर्ग आदि से जुड़े हुए भी हैं। इन समूहों से हमारा लगाव इतना गहरा है कि दूसरी जाति, दूसरे सम्प्रदाय, दूसरे वर्ग या समूह हमें पराये, प्रतिद्वंद्वी दिखायी देते हैं। उनकी हर क्रिया हमें अपने ऊपर प्रहार मालूम होती है। हमारी हर प्रतिक्रिया उनमें भय और अविश्वास पैदा करती है। इस तरह आज देश में परस्पर भय और अविश्वास का वातावरण बन गया है। अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक का प्रश्न इस भय और अविश्वास के कारण दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। यह कम कहाँ रुकेगा, यह कहना कठिन है।

भारत में हर एक को 'भारतीय' बनकर रहना है, इसमें दो राय नहीं है। जो इस देश का नमक खाता है, उसे नमक का हक अदा करना ही चाहिए। अगर यह भूमिका भी न मानी जाय तो किसी देश में रहनेवालों के लिए दूसरी कौनसी भूमिका होगी? लेकिन बात कुछ ऐसी बिगड़ गयी है कि आज हम बड़ी निष्ठा के लिए अपनी कोई छोटी निष्ठा छोड़ने को तैयार नहीं हैं। छोटी निष्ठाओं से ऊपर उठे बिना हमारा कोई भी सवाल कैसे हल होगा?

अल्पसंख्यक कौन है? सबसे बड़ा अल्पसंख्यक मुसलमान है, और सबसे बड़ा बहुसंख्यक हिन्दू है। इन दो 'बड़ों' के झगड़े का परिणाम हिंदुस्तान-पाकिस्तान के रूप में हमारी आँखों के सामने है। लेकिन इधर कुछ बड़े परिवर्तन हुए हैं। 'हिन्दू' में दरारें पड़ी हैं। ऊपर का हिन्दू, बीच का हिन्दू, नीचे का हिन्दू— ये तीनों आपस में पहले से कहीं अधिक अलगाव महसूस करने लगे हैं। उनकी अलग-अलग राजनैतिक निष्ठाएँ बन रही हैं। वे दलों में संगठित हो रहे हैं। कहीं-कहीं ग्रामीण क्षेत्रों में यह भी दिखायी दे रहा है कि हरिजन और मुसलमान सवर्ण हिन्दू के मुकाबिले में खड़े हो रहे हैं। यह सत्ता की राजनीति का नया रंग है। यह ग्रामीण हिंसा का नया राजनैतिक स्वरूप है। जो दबे हुए हैं उनके उभरने के लिए दल और हिंसा के सिवाय दूसरा कोई उपाय नहीं है।

इस अलगाव की प्रक्रिया में मुसलमान और आदिवासी दूसरों से आगे हैं। पाकिस्तान का इशारा हो या राष्ट्रीय परिस्थिति की विवशता, मुसलमान अपने हितों की रक्षा के लिए अपने अलग राजनैतिक अस्तित्व की बात कह रहे हैं। एक तरफ उन्होंने 'जमाते-इस्लामी' बनायी है, और दूसरी ओर नये सिरे से मुस्लीम लीग का संगठन किया है। इसी तरह मध्यम वर्गीय हिन्दू की संस्कृति का रक्षक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ है, और राजनैतिक हितों का रक्षक जनसंघ है। हर 'समूह' (ग्रुप) यह महसूस करने लगा है कि उसके हितों की रक्षा तभी होगी जब राजनैतिक सत्ता में उसका स्थान होगा। सत्ता के लिए वह राजनैतिक दल के रूप में अपनी संख्या-शक्ति का संगठन चाहता है, और 'गृहयुद्ध' के लिए स्वयंसेवकों के रूप में अपनी हिंसा-शक्ति का। संख्या की शक्ति से वह चुनाव लड़ेगा, और हिंसा की शक्ति से गले काटेगा। यही काम राजनैतिक दल भी कर रहे हैं। वे भी संख्या और शस्त्र, दोनों की शक्तियाँ संगठित कर रहे हैं। एक से लड़ाई संसद में होगी, दूसरी से सड़क पर।

अल्पसंख्यकों की समस्या को लोग कई दृष्टियों से देखते हैं। एक दृष्टि पारम्परिक है जो हिन्दू-मुसलमान के बीच की खाई को ऐसी मानती है जो कभी पाटी ही नहीं जा सकती। इस दृष्टि से देखने पर एक-दूसरे को शैतान ही-शैतान दिखायी देता है। यह दृष्टि काफिर और म्लेच्छ को मनुष्य बनाने की दृष्टि से किये गये हर सुधार का विरोध करती है। इसी काफिर और म्लेच्छ के दिमाग से 'एक राष्ट्र, एक भाषा, एक संस्कृति' का 'दर्शन' निकला है।

दूसरी दृष्टि अपने को आधुनिक और बुद्धिवादी मानती है। इसका विश्वास है कि अगर लोग धर्म-निरपेक्ष (सेक्युलर) और आधुनिक हो जायँ तो दूसरे सब भेद-भाव मिट जायँ, और लोग एक दूसरे के करीब आ जायँ। इसलिए इस विचार के लोगों को उद्योगीकरण, शिक्षा, सिनेमा, नयी राजनैतिक और सामाजिक संस्थाएँ आदि बहुत आकर्षित करती हैं।

तीसरा दृष्टिकोण 'समाजवादी' है। उसे संघर्षवादी भी कह सकते हैं, क्योंकि उसका विश्वास सबसे अधिक वर्ग संघर्ष (क्लास-स्ट्रगिल) में है। इस दृष्टिकोण का आधार है कि वर्ग-संघर्ष दूसरे सब संघर्षों के ऊपर है, और उनका अन्तिम हल भी है।

इनमें से कौनसा दृष्टिकोण हमारी परिस्थिति में लागू होता है? क्या कोई एक भी लागू होता दिखायी देता है? हिन्दू, मुसलमान, आदिवासी, सिक्ख, ईसाई, कौन अधिक भारतीय है? दिखाई तो यह देता है कि ये सब क्षेत्रीय हैं, कई धार्मिक विश्वासों और सांस्कृतिक भूमिकाओं के हैं। ये सब विभिन्न भूमिकाएँ इतिहास तथा आर्थिक प्रश्नों के साथ जुड़कर भिन्न-भिन्न अवसरों पर भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट होती रहती हैं।

इस समय हमारा देश भावनात्मक चेतनाओं के प्रभाव से गुजर रहा है। एक ही क्षेत्र में नहीं, सब क्षेत्रों में यही हाल है। हमारी सामाजिक समस्याओं का समाधान न ... में है,

भूदान-यज्ञ : सोमवार, २४ अगस्त, '७०

न पश्चिम के अंधानुकरण में, और न वर्ग-संघर्ष में। हमारे देश का समाज खेतिहर है, इसकी परम्पराएँ खेतिहर हैं, इसकी सांस्कृतिक चेतना खेतिहर है। हम नयी बातों को भी पुरानी भाषा में समझते हैं। लेकिन पश्चिम के प्रभाव से देश में एक ऐसे 'शहरी, मध्यवर्गीय, पश्चिमी' समाज का उदय हो गया है जो भारतीय जीवन की वास्तविकता को जानता नहीं, पहचानता नहीं। इस शहरी समाज और खेतिहर समाज के बीच जो खाई अंग्रेजी जमाने से पैदा होती आयी और आज बढ़ती जा रही है वह राष्ट्रीय जीवन में शायद सबसे भयंकर खाई है। इस नये समाज में नये-नये अलगाव, तनाव, और टकराव पैदा होते हैं, और खेतिहर समाज में पहुँचकर नये रूपों में प्रकट होते हैं।

इस स्थिति का उत्तर शहरों में नहीं है, है गाँवों में। समन्वय की नयी प्रक्रिया भारतीयकरण से नहीं, ग्रामीकरण से शुरू होगी, जो अवसर देगी ग्रामीणों को कि वे अपनी परिस्थिति में से समन्वय का कदम उठायें। वहाँ आर्थिक और सांस्कृतिक सह-अस्तित्व है। वहाँ सहकार की परिस्थिति है। वहीं समन्वय की संभावना भी है। अगर विघटन ऊपर से शुरू हुआ था तो अब संघटन नीचे से शुरू होना चाहिए।

हमारी बैठकें

कई साथियों को शिकायत रहती है कि हम लोगों का बहुत-सा वक्त बैठकों में चला जाता है। उनकी राय में बैठकें कम होनी चाहिए और काम अधिक।

कई ऐसे साथी हैं जिन्हें यह शिकायत है कि बैठकों से क्या फायदा, जब लोग अपने मन की बात नहीं कहते। अक्सर बैठक में जो बात कही जाती है उससे भिन्न बात बैठक के बाहर कही जाती है। मन में चोर (रिजर्वेशन) रखकर बात कहने से क्या फायदा? और जिसे लोग अपनी राय समझते हैं वह सचमुच उनका हठ है, आग्रह है, या किसी कारण से बन गयी धारणा है। इस तरह जब सही बात सामने नहीं आती, तो राय कैसे कायम की जाय ?

कई लोग बैठकों में अपने मन की असली बात यह सोचकर नहीं कहते कि क्यों दूसरे लोगों का दिल दुखाया जाय; लोग सच्ची बात पसंद नहीं करते, इसलिए नाहक किसीसे दुराव क्यों मोल लिया जाय?

युवक साथी बैठकों में बुजुर्गों का दबाव महसूस करते हैं। उनका कहना है कि बुजुर्ग अपनी मर्जी के खिलाफ कोई बात या अपने कामों की आलोचना बर्दाश्त नहीं करते। होता भी वही है जो बुजुर्ग चाहते हैं, इसलिए कोई दूसरी राय देने से क्या फायदा ?

सबसे अच्छे वे हैं जो यह सोचकर संतोष कर लेते हैं कि बैठकें चाहे जितनी हों, फैसले चाहे जो हों, वे करेंगे वही जो उन्हें करना है।

ये सभी बातें सही हैं—कुछ कम, कुछ ज्यादा। लेकिन अगर एक आदमी के नहीं, बल्कि सामूहिक निर्णय से काम करना हो तो बैठकें जरूरी हैं। हाँ, बैठकें उतनी ही हों जितनी जरूरी हैं। लेकिन जो बैठकें जरूरी हैं, वे जरूर हों।

पश्चिम के लोग इस मामले में हम लोगों से बहुत आगे हैं। वे बैठकों में निस्संकोच अपनी बात रखते हैं। खूब बहस करते हैं। कभी-कभी तैश में भी आ जाते हैं। लेकिन सब कुछ होने पर अंत में जब कोई निर्णय हो जाता है, भले ही वह उनकी राय के बिल्कुल खिलाफ हो, तो बिना कोर-कसर उसे मान लेते हैं। जैसे वह उनका अपना ही निर्णय हो। व्यक्तिगत मान-अपमान का प्रश्न सामने नहीं आने देते। और जब एक निर्णय को मान लेते हैं तो ईमानदारी के साथ उस पर चलते हैं।

हम लोग इस मामले में कच्चे हैं—बहुत कच्चे। हमें अपनी बात निडर होकर कहने, दूसरे की बात आदरपूर्वक सुनने, और धीरज के साथ सर्व-मान्य निर्णय करने और खुशी-खुशी उसे मान लेने और ईमानदारी के साथ उस पर चलने की आदत डालनी होगी। इसमें नये लोगों, और पुराने लोगों, दोनों की बराबर जिम्मेदारी है। इस जिम्मेदारी को निभाये बिना बैठकें सचमुच बहुत-कुछ बेकार होंगी। और हम थोड़े लोगों के मत को सर्व-सम्मति मानकर छोले रहेंगे, या अपने मन को बैठक में हुए निर्णय से हटा लेंगे और मनमाने ढंग से काम करते रहेंगे।

लोकतंत्र के लिए यही काफी नहीं है कि ढेर से आदमी बैठकर देर तक चर्चा करें, यह भी जरूरी है कि नये दिल और दिमाग से चर्चा करें। लोकतंत्र का एक मंत्र यह भी है - आग्रहमुक्त मन, और आक्रमणमुक्त हाथ।

मंत्री का पत्र

सर्वोदय-पर्व में साहित्य-प्रचार

११ सितम्बर से २ अक्तूबर की अवधि सर्वोदय-पर्व के नाम से सर्वोदय-जगत् में मशहूर है। इस अवधि में साहित्य-प्रचार विशेष रूप से किया जाता है। इस आंदोलन में साहित्य-प्रचार का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अभी सर्वोदय-विचार के लिए जो चुनौती मिल रही है, उस दृष्टि से साहित्य का अध्ययन एवं मनन का मूल्य और बढ़ जाता है।

अतः सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध-समिति सभी कार्यकर्ताओं से निवेदन करती है कि इस पर्व में साहित्य-प्रचार की ओर विशेष ध्यान देकर साहित्य-बिक्री के संगठित आयोजन किये जायँ।

यह सुझाव आया है कि १०० रुपये या उससे अधिक की रकम ग्रामस्वराज्य-कोष में देनेवालों को शताब्दी-साहित्य का एक सेट दिया जाय। कुछ वर्ष पूर्व कलकत्ते में इस सुझाव के अनुसार काम हुआ था। प्रदेश सर्वोदय-मण्डल और जिला सर्वोदय-मण्डल इस सुझाव के बारे में निर्णय लेकर उस पर अमल करें।

[signature]

गोपुरी, वर्धा

मंत्री, सर्व सेवा संघ

मुजफ्फरपुर की डाक

मालिक-मजदूर गोष्ठी

(१६ अगस्त, १९७०)

झोपड़ी के लिए भूमि, पीने के लिए पानी, पेट के लिए अन्न
यह है भूमिहीन मजदूर की त्रिविध माँग
—सब माँगें भूमिवानों को मान्य—

सुबह १०.३० बजे हम लोगों के पहुँचते ही बाग में बैठे, घंटों प्रतीक्षा कर रहे लोग कमरे में आ गये। नरसिंहपुर (मुजफ्फरपुर) के खादी-भवन के ऊपर के बड़े कमरे में एक ओर इलाके के कुछ प्रमुख भूमिवान बैठे हैं, दूसरी ओर दस चुने हुए मजदूर और उनके पीछे सौ डेढ़ सौ दूसरे भूमिहीन बैठे हैं। दोनों के बीच में सर्वोदय कार्यकर्ता हैं, जो नरसिंहपुर खादी गस्था, जिला सर्वोदय मण्डल, जिला भूदान कमेटी तथा बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के हैं। एक कोने में दीवाल के सहारे आक्सफोर्ड (इंग्लैण्ड) की छात्रा कुमारी कैरोलाइन भी है, जो भारत में ग्रामदान को देखने समझने आयी है।

प्रस्ताव हुआ कि बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के एक मंत्री और इस समय मुजफ्फरपुर में जे० पी० के एक मुख्य सहयोगी श्री कैलाश बाबू सभा का सभापतित्व करें। सचमुच, यह सभा नहीं, गोष्ठी थी। गोष्ठी भी विद्वानों, नेताओं, या कार्यकर्ताओं की नहीं, बल्कि भूमिवानों और, भूमिहीनों की। चर्चा भी किन्हीं तात्त्विक विषयों पर नहीं थी। भूमिवानों और भूमिहीनों दोनों को एक-दूसरे के सामने अपने मन की बात रखनी थी। एक को दूसरे से कहना था 'हमें तुमसे ये शिकायतें हैं।'

नरसिंहपुर के कार्यकर्ता, उसी क्षेत्र के निवासी, पहले स्वराज्य अब ग्राम-स्वराज्य के सिपाही, श्री गोपाल मिश्र ने गोष्ठी के उद्देश्य बताये। मालिक और मजदूर, जिनमें कई उन्हीं मालिकों के मजदूर थे जो सभा में बैठे हुए थे, इस तरह आमने-सामने बैठें, बिना आँखें लाल किये हुए एक-दूसरे की बातें, सभी खोटी खरी, सुनें, और मन में यह इरादा रखें कि मतभेद लेकर नहीं, बल्कि मतभेद मिटाकर, उठना है, इसकी कुछ दिन पहिले कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था।

सभापतिजी ने पहले एक भूमिहीन का नाम पुकारा, और कहा 'आपको जो कहना हो, कहिए।' इसके बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा भूमिहीन उठा, और इस क्रम में दो-चार नहीं, पूरे चौदह भूमिहीन उठे, बोलने की जगह पर आये और निडर होकर बोले। किसीके चेहरे पर भय नहीं था, और वाणी में कटुता नहीं थी। झोपड़ी खड़ी करने की जमीन चाहिए, एक टुकड़ा खेती के लिए चाहिए, उस टुकड़े में सिंचाई का पानी चाहिए। खेतों में जो अन्न पैदा होता है वह मजदूरी में मिलना चाहिए, और मालिकों को अपने मजदूरों के लिए रोजगार की चिन्ता करनी चाहिए—बस, ये ही बातें थीं जो भूमिहीनों ने कहीं।

भूमिहीन बोल चुके, तो भूमिवानों ने अपनी बातें कहीं। सबसे पहले रतवारा गाँव के एक सम्पन्न, प्रगतिशील भूमिवान श्री हरी बाबू ने कहा 'इन माँगों में कौन-सी ऐसी माँग है जिसे मानने से कोई समझदार आदमी इनकार कर सकता है? इनकार करेगा भी क्यों?' १ बज रहा था, गोष्ठी उठ गयी।

भोजन के बाद २ बजे फिर बैठी। उस बीच तय हुई बातें जिला सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष श्री बद्री बाबू ने लिख डालीं। एक के बाद दूसरी बात पेश की गयी। जिस प्रश्न पर मतभेद हुआ, वह अगली गोष्ठी के लिए टाल दिया गया, लेकिन ऐसे प्रश्न एक ही दो थे। पूरा 'समझौता' ४ बजे ग्रामसभा में प्रस्तुत हुआ, और मान्य हुआ। ग्रामदान के बाद बीघा-कट्ठा में मिली कुछ भूमि भी वितरित हुई। सभापति ने दो शब्द कहे। सभा विसर्जित हुई। चलते हुए सबने कहा: 'आज एक बड़ा काम हुआ'।

बड़ा काम क्या था? यही कि मालिक-मजदूर साथ बैठे, चर्चा के लिए बैठे, और निर्णय करके उठे। यह शंका कि मजदूर बोलेगा नहीं, निर्मूल सिद्ध हुई। यह अविश्वास कि मालिक मानेगा नहीं, निराधार निकला। श्रमिक के पास संख्या की शक्ति है, वह श्रम का मालिक है, ठीक उसी तरह जैसे भूमि का मालिक है। जिस दिन वह ग्राम-सभा में बराबरी का सदस्य होकर बैठेगा और ग्रामस्वराज्य में अपनी जिम्मेदारी लेगा, उस दिन न वह जुल्म सहेगा, और न जुल्म करेगा। जब शोषण और दमन मिटेगा तो हिंसा अपने आप खत्म हो जायगी। वही दिन लाने के लिए तो ग्राम-दान है, और हम सब उसके कार्यकर्ता हैं।

लेकिन अभी मजदूर पेट की भाषा बोलता है, और वही भाषा समझता भी है—भूखा जो है। अभी वह सम्मान और समता की भाषा न बोल रहा है, न समझ रहा है। उसके मन में पैदा होनेवाली हिंसा का स्रोत भी उसका पेट ही है। उसे नये समाज की, जिसमें उसे नयी जिम्मेदारी लेनी होगी, जिसमें उसे नया सम्मान मिलेगा, कल्पना अभी नहीं है। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की भव्य कल्पना उसे अभी नहीं छू सकी है।

जब तक भूमिहीन चेतन नहीं होता, तब तक उसके और प्रगतिशील किसान के बीच 'पुल' कैसे बनेगा? और कब तक ग्रामदान समाज के इन दो छोरों को जोड़ेगा कैसे?

गोष्ठी में निम्नलिखित निर्णय मान्य हुए :

(१) बासगीत जमीन स्थानीय सुविधा-नुसार प्रत्येक परिवार को ५ से १० डिसमल जमीन के लिए मिले।

(२) जोत की जमीन : प्रत्येक भूमिहीन परिवार को कम से कम पाँच कट्ठा

खेती लायक जमीन अवश्य मिले।

(३) मजदूरी : (क) सभी तरह के अनाज जो खेत में पैदा होते हों, मजदूरी में दिये जायँ, सिर्फ सस्ते और रद्दी अनाज नहीं।

(ख) तीन में से दो दिन मजदूरी अनाज में और एक दिन पैसे में मिले।

(ग) जलपान के अतिरिक्त कच्चा चार सेर अनाज या इसके बदले डेढ़ रुपया मजदूरी मिले। जहाँ जलपान न दिया जाय वहाँ कच्चा साढ़े चार सेर या पक्का ढाई सेर अनाज या नकद पौने दो रुपया मिले।

(४) काम : (क) मजदूर के काम का स्तर गिर गया है, उसे पुनः स्थापित किया जाय।

(ग) कितनी देर काम हुआ यही नहीं, बल्कि कैसा काम हुआ इसका भी ध्यान रखा जाय।

(५) पानी : (क) प्रत्येक दस-पन्द्रह परिवार के छोटे-छोटे टोले पर एक हैण्डपम्प या कुएँ का प्रबन्ध हो, ताकि पीने के पानी का कष्ट न रहे।

(ख) सिंचाई के पानी के लिए स्टेट बोरिंग से पानी मिले। गरीब को भी पानी मिल सके, इसलिए पानी लेनेवालों का क्रम स्थिर कर लिया जाय। उचित मूल्य पर प्राइवेट बोरिंग से भी पानी मिले।

ये सब काम पूरे हों, इसके लिए निम्नलिखित कदम उठाये जायँ

(१) बासगीत भूमि के लिए सरकार के बासगीत जमीन-सम्बन्धी कानून पर अमल कराने की मुस्तैदी के साथ कोशिश की जाय।

(२) जोत की जमीन के लिए ग्रामदान की बीघा-कट्ठा जमीन, सरकारी गैर-मजरुआ जमीन, तथा 'सीलिंग' कानून का फिलहाल सहारा लिया जाय।

(३) मजदूरी के सम्बन्ध में जहाँ उदार रिवाज है, उन्हें कायम रखा जाय। ... न माननेवालों पर सामाजिक दबाव डाला जाय।

(४) काम और दाम, दोनों के सम्बन्ध में मालिकों और मजदूरों, दोनों का नैतिक स्तर ऊँचा उठना चाहिए। पूरा काम हो, पूरा दाम मिले।

(५) पानी का प्रबन्ध व्यक्तिगत रूप से नहीं हो सकता। सामूहिक रूप से ग्रामसभा के ग्रामकोष से, तथा सरकार की सहायता से किया जा सकता है।

मुख्य रूप से ग्रामदान की शर्तों को पूराकर ग्रामसभा को सक्रिय और सशक्त बनाकर ही उपर्युक्त कदम उठाये जा सकते हैं।
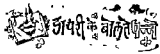
नागरिक-शक्ति से ही आन्दोलन आगे बढ़ेगा

पहले ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य के काम से जब हम गाँवों में जाते थे, तो सब जगह हमें सद्भाव मिलता था, समर्थन मिलता था और इस काम के सफल होने की शुभ कामनाओं के साथ ही सहयोग का आश्वासन भी मिलता था। हम आशान्वित होते थे, और उत्साह से लौटते थे। जब भी गाँवों में गये, यही अनुभव हुआ। इन्हीं अनुभवों के आधार पर गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य की स्थापना का विचार हम करते रहे, और अपनी योजनाएँ बनाते रहे। कभी-कभी मन में आता था कि आखिर जब परिवर्तन के इस कार्य के लिए कहीं कुछ कठिनाई का अनुभव होता ही नहीं, यदि कहीं कुछ विरोध होता भी है, तो वह नगण्य-जैसा ही, फिर परिस्थितियों में अपेक्षित परिवर्तन क्यों नहीं हो पाता और 'गाँव गाँव में गाँव का राज' स्थापित करने की प्रतिबद्धता क्यों नहीं पैदा हो पाती? यह प्रश्न बार-बार मन में उठता था।

आश्वासन और समर्थन : परिवर्तन को टालने की एक पद्धति

असल में ही आश्वासन और समर्थन तो परिवर्तन को टालने का ही एक ढंग था। हर गाँव अविश्वास और निराशा के बीच आज खड़ा है। जो भी मालिक कहे जानेवाले लोग हैं, वे अविश्वस्त, और मजदूर कहे जानेवाले लोग निराशा की स्थिति में हैं। मालिक की अविश्वस्तता का कारण आज की बढ़ती हुई हिंसा, अस्थिर सरकारें, उनके ढुल-मुल रुख और सबसे बढ़कर अपने मजदूरों की उदासीनता है। मजदूरों की निराशा का कारण है—गाँव में उनकी उपेक्षा, भयानक आर्थिक तंगी और सबसे बढ़कर अपने गाँव के उन लोगों की बेरुखी दृष्टि, जिनसे वे कुछ आशा कर सकते थे। आज भी ऐसे बहुत-से गरीब इन्सान गाँव में पड़े हैं, जो दिनभर की गाढ़ी कमाई से दोनों वक्त सूखी रोटी और नमक प्राप्त नहीं कर पाते, तथा इस

हस्ताक्षर

भूमिहीन प्रतिनिधि

१—चतुर्भुज पोद्दार, ढोली
२—जसनराम, रतवारा
३—भोदू सहनी, मुकुन्दपुर
४—झरीलाल दास, सिमरा
५—रामसकल चौधरी, सिमरा
६—चरित्र राम रैनी
७—बैयाली दास, मेघरतवारा
८—प्यारे मांझी, सिमरा
९—योगेन्द्र दास, रतवारा
१०—रामनारायण सहनी, फेकटसा

भूमिवान प्रतिनिधि

१—श्यामनन्दन प्रसाद सिंह (हीरा बाबू), रतवारा
२—त्रिलोकी नन्दन प्रसाद सिंह, रतवारा
३—विन्ध्याप्रसाद सिंह, बुधनगरी
४—मदनमोहन ठाकुर, पियर
५—देवीप्रसाद ठाकुर, सिमरा
६—बसन्त नारायण सिंह, रतवारा
७—सुखदेवप्रसाद ठाकुर, हरपुर

भरोसे के साथ रात नहीं बिता पाते कि इनकी झोपड़ी कल बनी ही रहनेवाली है। तरह-तरह के शोषण और उत्पीड़न में कोई कमी होती न देखकर उन्होंने आशाएं खो दी हैं। उन्हें लगता नहीं कि समाज में हमारे लिए सभ्य और सम्मानपूर्ण जीवन का कोई मौका शेष रह गया है।

'सर्व' की भूमिका का अभाव

सर्वोदय-आन्दोलन के पिछले अनेक वर्षों की लम्बी अवधि में, मजदूरों तथा अति गरीब श्रेणी के जो लोग गांवों में घुटन और बेबसी की जिन्दगी जीते हैं, उनके बीच जाने का सिलसिला अत्यन्त कम रहा। गरीबों के बीच संपर्क नहीं के बराबर हुआ। ग्रामदान-प्राप्ति के समय भी यही माना और देखा गया कि विचार समझाने का काम भी उनके बीच कम ही हुआ। जिस वर्ग के लिए सामाजिक परिवर्तन शीघ्र-से-शीघ्र होना अनिवार्य हो गया है, उसी वर्ग के लोगों ने समाज-परिवर्तन के हमारे महान विचारों को नहीं जाना-समझा, और हम मालिक और सफेद-पोश लोगों को क्रान्ति का विचार एकतरफा समझाते रहे। 'वर्ण' और 'वर्ग' से ऊपर 'सर्व' के इस आन्दोलन का विचार 'सर्व' को ध्यान में रखकर नहीं समझाया जाना आन्दोलन की प्रगति के लिए बड़ी भयानक भूल साबित हुई, और हो रही है। हकीकत भी यही है कि जो थोड़े लोग आज अपेक्षाकृत अच्छी जिन्दगी जी रहे हैं, उन्हें सामाजिक परिवर्तन की बात कम ही जँचेगी। किन्तु परिवर्तन की जोरदार पृष्ठभूमि तब ही तैयार हो सकती है, जब विचार उन सब लोगों तक जाय। अब तो वह समय आ ही गया है कि ग्रामस्वराज्य की बात मालिकों और मजदूरों में एकसाथ चलायी जाय।

भूमि की अटल चाह

गाँव के भूमिहीन या नाममात्र की भूमिवाले मजदूरों ने पुश्त-दर-पुश्त से जिस भूमि पर खून-पसीना बहाकर काम किया है, उस भूमि का कोई टुकड़ा उन्हें अवश्य प्राप्त हो, यह उनकी अटल चाह बन चुकी है। चाह अदम्य तो है ही, तीव्र इतनी ज्यादा है कि कल के बदले आज ही जमीन उन्हें मिले, तो अच्छा, ऐसी भावना भूमिहीन युवक जाहिर करने लगे हैं। इस चाह की पूर्ति के लिए दो कोशिशें से वे आशान्वित दीख पड़ते हैं। एक कोशिश दिन में खुलेआम और दूसरी रात के अंधेरे में लुक-छिपकर चल रही है। भूमि के एक टुकड़े की अटल चाहवाले वे लोग इन कोशिशों का भेद समझना उतना महत्त्वपूर्ण नहीं मानते जितना जल्द भूमि पा लेना। यों अब वे इस बात को ऊपर-ऊपर और साधारण ढंग से समझने लगे हैं कि दिन की कोशिशों से भी भूमि इन्हें प्राप्त हो सकती है, और ग्रामसभाओं के द्वारा उनके जीवन में कुछ बेहतरी हासिल हो सकती है। लेकिन मालिक मजदूर तथा छोटे-बड़े सबके हित गाँव की एकता और संगठन से सुरक्षित होंगे, यह धारणा अभी सीमित है, इसे व्यापक करने की आवश्यकता है।

आशा के आधार

आज भी ऐसे मालिक हैं, भले ही इनकी संख्या कम ही हो, जो यह मानते हैं कि गरीबों का भी भूमि पर हक है और उसे जमीन देने तथा अपनाने में ही ग्राम-हित है, सर्वहित है। मजदूर भी हैं जो यह मानते हैं कि ग्रामवासियों की एकता, पारस्परिक विश्वास तथा सर्वहित की चेष्टा के बिना समाज में सुख शांति नहीं पैदा होगी। इसकी जरूरत आज हम सभी महसूस करते हैं, तथा किसी हद तक उसकी खोज भी कर रहे हैं। ऐसे मालिक अपनी जमीन का बीघा-कट्ठा वितरित कर रहे हैं, तथा ग्रामदान की अन्य शर्तों के पालन का निश्चय दुहरा रहे हैं, मजदूर महीने में एक दिन की कमाई अथवा श्रम देने की घोषणा कर रहे हैं, एवं गाँव में जल्द ग्रामसभा बनाने की माँग कर रहे हैं, जिससे ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन आकार ग्रहण करने की ओर अग्रसर हो रहा है। बिना बीघा-कट्ठा के आन्दोलन की शुरू-आत निराधार कल्पना-लोक में विचरण मात्र है। बिना बीघा-कट्ठा के वितरण के ग्रामसभाएं आन्दोलन का क्रूर मजाक साबित होंगी, और हो रही हैं।

वैशाली क्षेत्र के अनुभव

वैशाली क्षेत्र में कोई ३-४ वर्ष पूर्व यानी ग्रामदान-प्राप्ति के समय ही कुछ गांवों में ग्रामस्वराज्य सभाएँ बनायी गयी थीं। आज उन्हीं ग्रामस्वराज्य-सभाओं का उदाहरण विरोधी ख्यालवाले सज्जनों के सामने रहता है। दूसरी ओर ग्राम-सभाएँ बनी नहीं, किन्तु थोड़े लोगों को बीघा-कट्ठा भूमि बँटते ही हवा का रुख बदलता दिखलाई पड़ने लगा है। गरीबों-भूमिहीनों में निराशा की जगह आशा की हल्की लहर दौड़ती दिखलाई पड़ने लगी है। ऐसे लोग, जो इस आन्दोलन की व्यावहारिकता को असंभव मानकर प्यार और सहयोग के व्यंग्यपूर्ण आश्वासनों की वर्षा करते रहे हैं, उन्हें भी समय और बात की पदचाप स्पष्ट सुनाई पड़ने लगी है। जिन्हें ये बातें सन्त-साधुसन्तों की बहुत सुन्दर किन्तु अव्यावहारिक कल्पना मात्र लगती थीं, वे अब सहम-सहम-कर कहने लगे हैं कि अहिंसा के रास्ते देश को आगे बढ़ाने का यह एक उपयुक्त माध्यम है। इस दिशा में वैशाली में जो प्रयास हुए हैं, उसकी चर्चा क्षेत्र में सर्वत्र चल रही है, और जो प्रभाव और परिवर्तन दिखलाई पड़ रहा है, वह आज तक के सारे भाषणों और प्रयत्नों से कई गुणा ज्यादा है।

सतही विरोध गहरी सक्रियता

आज जो समर्थन मिल रहा है, वह पहले से काफी भिन्न और ठोस है। साथ ही विरोध का भी एक स्वर उभर रहा है। किन्तु उसका महत्त्व बुझते हुए दीपक की आखिरी लौ जैसा ही है। क्योंकि विरोध का आधार अफवाहों के सिवाय और कुछ नहीं रहता। जैसे—सर्वोदयवालों की अमुक सभा होने नहीं दी गयी, किसीको जाने नहीं दिया गया, उन लोगों को भाषण नहीं करने दिया गया, आदि प्रचार ऐसी सभाओं के बारे में किया गया, जो सभी शान्तिपूर्ण हुईं। दूसरा विरोध है कि सर्वोदय-वाले भी अब मजदूरों को→

वैशाली क्षेत्र के अपने किसान-भाइयों से निवेदन

हमारे किसान भाई,

हम आप पड़ोसी हैं। हमारा क्षेत्र एक है। वैशाली की हमारी परंपरा एक है। हमारे गांव भले ही अलग-अलग हों, लेकिन हमारी खेती-बारी और सुख-दुख एक है। इस नाते आज हम आपकी सेवा में यह निवेदन करने का साहस कर रहे हैं।

अब यह बात कहने की नहीं रह गयी है कि दिनादिन हमारे जीवन की चिंताएँ बढ़ती जा रही हैं। यह सही है कि नये बीज, नयी खाद, बिजली और पानी के कारण खेती का भविष्य अच्छा हो गया है, और आगे इससे भी अधिक अच्छा होगा, किन्तु कहीं कोई बात ऐसी बिगड़ गयी है कि हमारे गांव अशान्ति के शिकार होते जा रहे हैं। जीवन नये-नये खतरों से घिरता जा रहा है। अपने और अपने बाल-बच्चों को लेकर जिस सुख और शान्ति के लिए मनुष्य जीता और काम करता है उसका आधार ही समाप्त होता जा रहा है। यह देखकर मन में बार-बार प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यों हो रहा है?

राजनैतिक दलबन्दी ने गांव में जो कुछ किया है, उसे हम-आप सभी अपनी आंखों से देख रहे हैं। पंचायत से लेकर संसद तक के चुनावों ने गांव को राजनीति का अखाड़ा बना दिया है। इस हालत में शान्ति और सुव्यवस्था कैसे कायम रहेगी, और विकास का काम कैसे होगा?

इससे भी अधिक चिन्ता की बात है हमारे और हमारे मजदूरों के बीच के सम्बन्धों का बिगड़ना। हमारे सम्बन्ध पहले जैसे नहीं रह गये हैं, यह स्पष्ट है। यह भी स्पष्ट है कि जब देश का संविधान बदल गया, हरएक को समान वोट का अधिकार मिल गया, शिक्षा फैल गयी और देश-दुनिया में नयी हवा बहने लगी, तो मालिक-मजदूर के सम्बन्ध में भी परिवर्तन होना अनिवार्य है। न्याय और भाईचारे की मांग इस जमाने की मांग है। लेकिन राजनीति हमें और हमारे मजदूरों को एक-दूसरे का दुश्मन मानती है, और यह मानकर दक्षिण पथ और वामपथ के नाम में गांव-गांव में हमारे और मजदूरों के बीच संघर्ष कराना चाहती है। सोचिए, अगर जाति का जाति से, वर्ण का वर्ण से, और वर्ग का वर्ग से संघर्ष होने लगे तो हम लोगों का, हमारे गांवों का, और हमारे देश का क्या हाल होगा? आज भी उग्र विचार के लोगों द्वारा जगह-जगह आतंकवादी काण्ड हो रहे हैं, वे इस बात के संकेत हैं कि हिंसा कितनी आसानी से फैल सकती है और फैलकर कहां तक जा सकती है।

ऐसी हालत में हमारा विचार है कि हम लोगों को गांव के जीवन तथा किसान-मजदूर-सम्बन्ध के बारे में नये ढंग से सोचना चाहिए। हम यह महसूस करते हैं कि गांव-गांव में जल्द-से-जल्द ऐसी व्यवस्था कायम होनी चाहिए, जिसमें किसान, मजदूर, व्यापारी, महाजन, नौकरीवाले, सब शरीक हो सकें और मिलकर काम कर सकें। ऐसा होने से आपसदारी और पड़ोसीपन का वातावरण बनेगा, और सब एक-दूसरे के सुख-दुख में शरीक हो सकेंगे।

यह हमारा सौभाग्य है कि जयप्रकाश बाबू जैसे नेता हमारे ही जिले के मुसहरी प्रखंड में बैठे हुए हैं। वह वहां अपने काम से हम सब लोगों को सही रास्ता दिखा रहे हैं।

हमारे क्षेत्र के अधिकांश गांवों का ग्रामदान घोषित हो चुका है। हमने, आपने, तथा अनेक लोगों ने ग्रामदान के समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षर किया है। सोचने-विचारने के बाद हमें यह विश्वास हो गया है कि अगर ग्रामदान का काम एक जन-आन्दोलन की तरह तेजी के साथ आगे बढ़े तो जबरदस्त नयी हवा बहेगी और हमारे बहुत-से सवाल हल होते दिखायी देंगे। मुख्य काम है अपने गांव को साथ लेकर आगे बढ़ना।

पहले कदम के रूप में हम लोगों ने अपने गांव में अपनी खेती योग्य भूमि का बीसवां भाग, यानी बीघे में कट्ठा निकालकर अपने मजदूरों में बांट दिया है। इसमें बास की जमीन शामिल नहीं है। हमारी आपसे प्रार्थना है कि आप भी ऐसा ही करें। देर न करें। यह काम जल्द होना चाहिए। बीघा-कट्ठा के तुरंत बाद गांव के सब बालिगों को मिलाकर ग्रामसभा बनाइए, और ग्रामकोष शुरू कीजिए। ग्रामसभा में ही गांव के सब झगड़े तय किये जायें, तथा ग्रामकोष के आधार पर गांव के विकास की योजना तैयार की जाय।

गांव में इतना काम करना है तो युवकों को सामने लाये बिना काम नहीं चलेगा। इस दृष्टि से ग्राम-शान्तिसेना का कार्यक्रम बहुत आकर्षक है।

यह सारा काम नया है। इसके लिए कुछ लोगों को दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ना पड़ेगा। आप देखेंगे कि बीघा-कट्ठा के बंटते ही दूसरे कामों के लिए रास्ता खुलने लगता है।

हमें पूरी आशा है, कि आपके भाई के नाते हम लोगों ने जो बातें लिखी हैं आप उन पर विचार करेंगे, और उन्हें अपने गांव में लागू करने में देर नहीं करेंगे। —आपके भाई

[वैशाली प्रखण्ड (जि० मुजफ्फरपुर) के उन किसानों द्वारा प्रसारित किया गया निवेदन, जिन्होंने अपनी जमीन का बीघा-कट्ठा बांट दिया है।]

→भड़काने लगे हैं। मजदूरों को ग्रामहित, सर्वहित के लिए सजग, सचेष्ट और शिक्षित करने का काम भी थोड़े लोगों के लिए भड़काऊ हो सकता है। किन्तु ये सब मामूली और ऊपरी बातें हैं। वैशाली-क्षेत्र में अनेक ऐसे लोग हैं, जो इस आन्दोलन को सफल करने के लिए कृत-संकल्प हैं। इस प्रकार की नागरिक-शक्ति से ही यह आन्दोलन सफल होगा। जैसे-जैसे, और जितनी ही नागरिक-शक्ति बढ़ेगी वैसे-वैसे एवं उतनी ही गति से आन्दोलन बढ़ेगा, और व्यापक बनेगा।

चोचकबाबा-नगवां, —लक्ष्मणदेवप्रसाद सिंह
मुजफ्फरपुर (बिहार)

यह सड़ा-गला समाज हम बदलना चाहते हैं, एक नया समाज बनाना चाहते हैं !

—मुजफ्फरपुर के तरुण-शान्तिसैनिकों के उद्गार—

आठ जून, '७० को टाउनहाल के मैदान में जयप्रकाश बाबू की घोषणा कि 'काम पूरा होगा, या मेरी हड्डी गिरेगी' ने हम नवयुवक छात्रों को झकझोर कर रख दिया। हम छात्र अब तक सर्वोदय-आन्दोलन को विवेचनात्मक तथा सहानुभूति की दृष्टि से ही देखते थे, पर अब मन में, प्रश्न उठा कि 'मुसहरी में सिर्फ जयप्रकाश की हड्डी गिरेगी या वहाँ हमारा भी लहू बहेगा ?' इन्हीं उलझनों तथा बेचैनी के दिनों में अचानक अ० भा० शान्तिसेना मण्डल के प्रशिक्षक श्री अमरनाथ भाई तथा श्री रामगोपाल दीक्षित मुजफ्फरपुर पहुँचे। स्थानीय गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र के श्री दुलारजी भी साथ जुट गये और राममूर्तिजी के निर्देश तथा इन पूर्वानुभवी मित्रों के प्रत्यक्ष सहकार से मुजफ्फरपुर की तरुण-शान्तिसेना कार्यशील बनी। उलझन को दूर करने तथा बेचैनी को कम करने का रास्ता मिला, तो हम लोग बैठे कैसे रह जाते ? चल पड़े। साधन कम हैं, पर उत्साह अदम्य है और लगन सच्ची। हमारे तीन कार्यक्रम हैं। विचार-प्रचार, धन-संग्रह तथा गरीबी या रक्त-क्रान्ति से जनते जनों से मार्फ।

हम सभी तरुण-शान्तिसैनिक छात्र हैं। आज की मान्यताओं से पूरी तरह मुक्त न हो सकने के कारण तथाकथित विद्वानता व महाविद्वानता के अनुसार हमें पढ़ाई करनी पड़ती है। इस तरह पढ़ाई तथा घर के कामों से जो दो-ढाई घंटों का समय बच रहता है, हम लोग उतना ही समय इस काम में देते हैं। इस अल्प समय में दस पैसे न्यूनतम माँग द्वारा धन-संग्रह के साथ-साथ पर्चों तथा निवेदन से विचार-प्रचार तथा दूसरों की बातें पूरी-पूरी और खुले दिमाग के साथ सुनने से अपेक्षित जनों से सम्पर्क भी हो जायेगा, ऐसा सोचकर हम लोगों ने धन-संग्रह को ही मुख्य अभियान बनाया। बाजार में कितने गोलकों का प्रयोग हुआ। सबोते छुट्टी के दिनों में जयप्रकाश बाबू के कैम्प में जाकर कुछ घंटे गाँव को भी समर्पित करना हम लोगों ने तय किया है।

हमारा विचार है कि आज की शिक्षा तथा शिक्षा-पद्धति गन्दी है, दलगत राजनीति घातक है, सामाजिक व्यवस्था घोर अन्यायपूर्ण है, अर्थात् सारा समाज सड़ चुका है। इसे बदलना है, हमें बदलना है, और शीघ्र बदलना है। और बदलना है सिर्फ बेकारी को हटाने के लिए और राजनैतिक स्थिरता के लिए नहीं, हम मनुष्य बनानेवाली शिक्षा पाना चाहते हैं, सभी सबों के साथ न्यायपूर्ण, मित्रता-पूर्ण व्यवहार करें, ऐसा समाज बनाना चाहते हैं, और चाहते हैं कि हम पर हमारी सत्ता चले, परिवर्तन हमें इसके लिए भी करना है। सुराज की हम कोई कीमत नहीं लगाते, हमें स्वराज्य की भूख है। हम सम्मान नहीं, सारे अधिकार चाहते हैं। इन सबों की प्राप्ति के लिए पहली शर्त है गाँव गाँववालों का हो, नगर नगरवालों का हो। ग्रामस्वराज्य हो, नगरस्वराज्य हो। दिल्ली में दिल्ली का राज्य हो, मनका गाँव में मनका गाँव का राज्य हो। इसके अलावा हिंसा में हमारा रत्ती भर भी विश्वास नहीं है। यह स्वयं एक समस्या है, किसी समस्या का हल नहीं, यह बात तर्क से और प्रत्यक्ष भी सिद्ध हो चुकी है। आज हमारे सामने हिंसा और अहिंसा में चुनाव का प्रश्न नहीं है, वरन् हम अहिंसा के ही कारगर रास्तों को खोजना चाहते हैं। आज मुसहरी की प्रयोगशाला में सच्चा वैज्ञानिक जयप्रकाश अहिंसा के सिद्धान्त पर प्रयोग कर रहा है, अतः सबको इसमें सामर्थ्य भर अपेक्षित सहयोग देना चाहिए। प्रयास होंगे, तभी उपलब्धि होगी और तभी हमारा समाधान होगा। पहले ही बिहार में लगभग चार लाख एकड़ भूमि-वितरण की उपलब्धि छोड़कर मात्र महीने भर में चौदह बीघे पाँच कट्ठे और गरीब-अमीर के जुड़े दिलों की उपलब्धि को ही लें तो यह अपर्याप्त प्राप्ति भी हिंसा ने कभी भी हमारी झोली में नहीं दी।

जहाँ तक धन-संग्रह का सवाल है, हम धन का परिमाण न जानते हैं, न उसे आवश्यकता से अधिक महत्त्व देते हैं। हमने धन देनेवालों की श्रद्धा को पहचाना है, उनकी भावनाओं को अनुभूत किया है, और निःसंदेह विभिन्न तबकों के लोगों से धन पाया है। और इससे हमें पूरा संतोष है। जन-सम्पर्क का अनुभव तो बहुत ही सुखदायी रहा। कुछ आदि मित्र हमारे विचारों को बिना अनुभूत किये ही श्रद्धा, प्रेम व प्रेरणावश हमारा समर्थन करते हैं, तो कुछ पढ़े-लिखे हमें भिखमंगे, अभिभावकों को ठगनेवाले छात्र व कायर के सिपाही की उपाधि देते हैं। लेकिन अधिकांश जाग्रत या पढ़ी-लिखी जनता तो हमारा समर्थन ही करती है और कुछ तो साथ आने को उत्सुक होती है।

बिहार में मई १९७० तक की गयी ग्रामदान-सम्बन्धी कानूनी कार्रवाई

• कुल गाँवों की संख्या, जिनका पुष्टि हेतु घोषणा-पत्र दाखिल हुआ	१,२७०
• आपत्ति हेतु जिन गाँवों में नोटिस जारी की गयी, उनकी संख्या	१,१९९
• वैसे गाँवों की संख्या, जिनसे सम्बन्धित घोषणा-पत्रों की संपुष्टि की जा चुकी	१,१४१
• सरकारी गजट में ग्रामदान घोषित हुए गाँवों की संख्या	३२३
• गाँवों की संख्या, जिनमें बाजाप्ता ग्रामसभा का संगठन हो चुका	१४

—बिहार भूदान-यज्ञ कमेटी, पटना

रात्रि आठ से दस तक का समय हममें से दो-तीन, जिन्हें आन्दोलन की अच्छी समझ है, जो अपना पूरा समय इसे समर्पित कर चुके हैं, तथा वे, जिन्हें फुर्सत का समय है, किसी एक पूर्व-सूचित छात्रावास में देते हैं। छात्रों को अपने विचार, अपनी प्रक्रिया समझाना, उनके प्रश्नों का समाधान करना इनका काम होता है। उत्सुक छात्रों को अपनी सेना में शामिल भी किया जाता है। सभा का स्वरूप भाषणवाला नहीं, परिचर्चा का होता है। उपलब्धि का निर्गुण स्वरूप सुन्दर है।

हमारे साथ आने को उत्सुक लोगों को हम अपने केन्द्र में साढ़े पाँच से छः बजे शाम की बैठक में निमंत्रित करते हैं, जहाँ प्रतिदिन इसी समय हम एकत्रित होते हैं तथा नये और पुराने साथी मिलकर आपसी चर्चा के बाद एक घंटा धन-संग्रह के काम में लगते हैं। स्थान स्टेशन, सिनेमाघर या व्यस्त बाजार होते हैं। फिर सभी अपने-अपने निवास को लौट जाते हैं। कुछ चुने हुए सटीक नारों के पोस्टर्स लगाने तथा उन्हें दीवालों पर लिखने का भी कार्यक्रम है। शहर के स्कूलों से भी सम्बन्ध स्थापित किया गया। छात्रों तथा कुछ शिक्षकों में उत्साह दीखा। उनके उत्साह का उपयोग करने की कोशिश है। इस सिलसिले में एक सुन्दर कार्य सूझा कि छात्र अपने घर से कपड़े तथा धातुओं के कतरे लायें और उन्हें इकट्ठा बेचकर धन जुटाया जाय। इससे धन-संग्रह के साथ-साथ छात्रों की एकता को बल मिलेगा, कूड़े को कांचन में बदलने के रहस्य का भी अनुभव होगा। कुछ स्कूलों में कार्य का प्रारम्भ हुआ भी है।

हम लोगों को काफी बल मिलता है जब हम लोग प्रतिकूलता के बावजूद अपने बीच छोटी-बड़ी बहनों को पाते हैं।

आज ६ अगस्त का दिन, राजनीति का गुनाम विज्ञान कितना नृशंस हो सकता है उसकी यादगार है, आज 'हिरोशिमा-दिवस' है। खासकर हम लोगों के लिए आज 'तरुण शान्तिसेना दिवस' भी है। अतः हम मुजफ्फरपुर नगर के तरुण-शान्तिसैनिक अपने धन-संग्रह की पहली किस्त स्वयं जयप्रकाश बाबू को समर्पित कर रहे हैं, तथा उनके प्रेरक आशीर्वाद के आकांक्षी हैं।

—कुमार शुभमूर्ति, कुमारी प्रियदर्शी
तरुण-शान्तिसेना, मुजफ्फरपुर

व्यापार, दान, शोषण

हमारे देश में, कई दूसरे देशों की तरह, बड़े व्यापारी दान-धर्म के लिए ट्रस्ट बनाते हैं। बहुत अच्छी बात है यह, लेकिन देखा यह जा रहा है कि सचमुच ट्रस्ट टैक्स से बचने तथा उद्योग-व्यापार में और अधिक फायदा कमाने के लिए बनाये जाते हैं, न कि दया और दान के लिए।

भारत सरकार के 'कम्पनी अफेयर्स विभाग' के 'रिसर्च डिविजन' ने इस विषय का एक अध्ययन प्रस्तुत किया है। देश के ७५ ट्रस्टों में, जिनका अध्ययन हुआ है, ६१ का सम्बन्ध बड़े औद्योगिक संगठनों से है। उदाहरण के लिए—बिड़ला के ७.५३ करोड़ के ८ ट्रस्ट हैं, टाटा के ४.३८ करोड़ के ६, मफतलाल के २.३ करोड़ के १६, बर्ड-हीलगर के १.९७ करोड़ के ३, जार्डीन-हेन्डरसन का २.३२ करोड़ का १, बांगुर के १.०४ करोड़ के दो हैं।

ट्रस्ट बनाना बुरा नहीं है, लेकिन सवाल यह है कि ये ट्रस्ट अपनी पूँजी कैसे खर्च करते हैं। दिखाने के लिए वे धर्म का नाम लेते हैं, किन्तु सचमुच ये अपनी पूँजी 'आर्थिक शक्ति' बढ़ाने में लगाते हैं। देखिए, नीचे लिखे आँकड़ों को :

कुछ 'धर्मार्थ' ट्रस्टों का 'बिजिनेस'

(१) व्यवसाय-समूह	(२) इसके पास कितने ट्रस्ट हैं	(३) इन ट्रस्टों की व्यवसायों में लगी हुई पूँजी	(४) भूमि, मकान, सरकारी सेक्योरिटी में	(५) ट्रस्टों की कुल पूँजी
१. बजाज	२	३,६०,७०,०००	२,९१,०००	५६,८८,०००
२. बिड़ला	८	२,१५,२८,०००	३१,१३,०००	७,५२,८१,०००
३. कस्तूरभाई लालभाई	४	७१,९४,०००	५,६०,०००	४०,६५,०००
४. मफतलाल	१६	१,३१,१५,०००	७१,७१,०००	२,३५,५७,०००
५ टाटा	६	४,०२,५४,०००	३४,५३,०००	४,३८,१४,०००

इसी तरह अन्य ट्रस्टों की भी पूँजी लगी हुई है।

इन आँकड़ों से स्पष्ट है कि ट्रस्टों ने अपना रुपया ज्यादातर अपनी ही कम्पनियों में लगाया है। देश में कुल २०० ट्रस्ट हैं। इनमें से अभी सिर्फ ७५ ट्रस्टों के बारे में जानकारी मिली है। बाकी ने अपने बारे में जानकारी अभी तक नहीं दी है। विशाल तिरुपति मंदिर ट्रस्ट का हिसाब अभी नहीं मिला है, जब कि यह मालूम है कि उसकी पूँजी का इस्तेमाल गोयनका ने, जो अखबारों का सम्राट है, इण्डियन आयरन के शेयर खरीदने में किया है। बिड़ला के कुल २६ ट्रस्ट हैं, जब कि जानकारी केवल ८ के बारे में मिली है। इसी तरह टाटा के १० ट्रस्टों में ६ ने ही सूचना भेजी है। यही हाल दूसरों का भी है। मगनलाल, साराभाई, साहू-जैन आदि के बारे में तो कोई जानकारी ही नहीं मिली है।

इन ट्रस्टों का काम सन् १८८२ के कानून के अनुसार चलता है। यह कानून बहुत पुराना पड़ गया है। आज की परिस्थिति में कानून को बदलने की जरूरत है, ताकि अगर ट्रस्ट बनें तो जिस उद्देश्य के लिए बनें, उसीके लिए उनकी पूँजी का इस्तेमाल हो।

विनोबा निवास से

गरम चूल्हा

"आत्मा इस पत्थर की तरह मजबूत होना चाहिए—उपनिषद् में वर्णन है।" विनोबा खेत से कंकड़ चुनते हुए समझाते हैं। "देखो, झाड़ू ऐसे लगाना" और बाबा बहन के हाथ से झाड़ू छीनकर स्वयं लगाने लगते हैं। कमरदर्द के बावजूद बाबा दिनभर घास चुनते रहते हैं, सफाई में लगे रहते हैं, जिसका बाबा के लिए आध्यात्मिक महत्त्व है, स्थूल नहीं। दुखने पर बार-बार अपनी कमर पर मुक्के मारते हैं। मालिश तो चलती ही है। अखबारों के सिवाय विशेष कुछ नहीं पढ़ते हैं। 'अष्टादशी' अठारह उपनिषदों का सार, जो उन्होंने निकाला है, उसे देखते हैं। जामुन के पेड़ के नीचे बैठकर कुसुम को 'मनुशासनम्' पढ़ाते हैं। वहीं शाम को तीन से चार बजे तक बापूभाई मेहता के साथ शतरंज खेलते हैं। हँसते-हँसाते हैं।

कुल सवा किलो दूध का छेना-पानी दिन में तीन बार लेते हैं। मधु की जगह गुड़ लेते हैं। और उबला हुआ एक सेब। दिनभर में कुल बारह सौ कैलरी खुराक। दोपहर के बारह बजे के बाद कुछ नहीं लेते। प्रातः चार बजे की सामूहिक प्रार्थना में शरीक होते हैं, फिर साढ़े नौ बजे और शाम के साढ़े छः बजे की प्रार्थना में। सन्नाटा शयन। बाबा का स्वास्थ्य अच्छा है। दिन में दो बार एक-एक पात्र पानी का "एनीमा" लेते हैं। अन्य कोई औषध नहीं। बाबा का सारा ध्यान बिहार की ओर है। 'ब्रह्मविद्या मंदिर' की सुशीला दीदी को 'टू और फ्रॉम' कहकर दरभंगा जिले भेजा है। हो सकता है, बाबा स्वयं बिहार जायें। फिलहाल पवनार में हैं।

× × ×

एक अवसर की बात जामुन के पेड़ के नीचे मैंने चम्पारन के साथियों की चर्चा छेड़ी, जिनके परिवारों में मैं रहकर आया था, तो बाबा ने कहा कि "वहाँ बाबा का चित्त अभी नहीं है। बिहार की तरफ है। गत वर्ष हमने बिहार छोड़ा, एक वर्ष में पुष्टि का 'अतितूफान' रूप हुआ था, लेकिन अब तक खास कुछ नहीं हो सका है। इसलिए जनता में धैर्य नहीं रहा और नक्सलवाद बंगाल से बिहार की ओर बढ़ा।"

जगदीश : नक्सलवाद के कारण सर्वोदय बढ़ेगा, क्योंकि जनता को लगेगा कि नक्सलवाद को अगर रोकना है तो विकल्प सर्वोदय ही है।

बाबा : लेकिन हम लोग कुछ करें तब तो। चुप बैठे रहेंगे तो कैसे सर्वोदय बढ़ेगा? चूल्हा ठंडा हो जाय तो रसोई नहीं बनती। अच्छी रसोई करनेवाला चूल्हा गरम रहते ही रसोई बना लेता है। 'दीदी' को हमने बिहार भेजा है और कहा है कि पुष्टि पूरी हो जाय (कम-से-कम एक जिला) तब तक रहना। तब लौटना। या वहीं तुम काम करते-करते खतम हो जाना।

काम के तीन 'एप्रोच' हो सकते हैं। सबसे सरल जिला पहले लिया जाय, अथवा कठिन जिला, जैसे मुजफ्फरपुर, पहले लिया जाय। अथवा, हर प्रान्त में जहाँ-जहाँ कार्यकर्ता लगे हैं वहीं अपने स्थान पर ध्यान दें। जे० पी० ने बाबा को बिहार आने से रोका अच्छा किया। क्योंकि बाबा के आने से, लोग शर्मिन्दा होकर काम करें यह अच्छा नहीं। विचार से समझकर स्वतः करें, यह अधिक अच्छा है। बाबा बिहार की जनसभाओं में कहता था "प्राण जाईं", तो सब श्रोता कहते थे "बचन न जाई"। अब जब ग्रामदान का वचन, हाल्ट ले चुके हैं, पुष्टि में स्वार्थ थोड़ा छोड़ने का वक्त आयेगा तो क्यों नहीं छोड़ेंगे? बाबा जायेगा तो शर्मिन्दा होकर छोड़ेंगे। लेकिन, 'बापू' के जाने के बाद जिस तरह बापू-विश्वास खतम हुआ, वैसा बाबा-विश्वास न हो। बाबा तीव्र चिंतन द्वारा वहाँ (बिहार) पहुँच जाता है, जहाँ लोग लगे हैं। कैसे पहुँच जाता है यह आध्यात्मिक सवाल है—अभिध्यानम्।

जगदीश : मुझे मोतीबाबू ने सताल परगना बुलाया है। दरभंगा जिले में संस्था-शक्ति के कारण लोक-शक्ति नहीं पनप सकती, यह मेरा वहाँ के एक साल के काम का अनुभव रहा।

बाबा : कौनसा जिला पहले लिया जाय? जमशेदपुर सोचा था, वहाँ श्याम-बहादुर हैं, लेकिन जवान-बूढ़े टक्कर में गमय गया।

जगदीश : सहरसा और चम्पारण जिलों में अनुकूलता अधिक है, चूँकि वे संस्था-शक्ति की चपेट में नहीं आये हैं, अछूते हैं। अतएव लोक-शक्ति के लिए अधिक अवकाश है।

बाबा : हाँ, सहरसा जिला छोटा भी है, वहाँ महेन्द्र का प्रभाव अच्छा है, और धीरेन्द्रदा बैठे हुए हैं। विद्यासागर को आफिस का काम छोड़ दिया, इसका मतलब क्षेत्र में काम नहीं कर सकेगा। कुल बिहार के बारे में सोचनेवाले तीन व्यक्ति हैं—निर्मला, जे० पी० और वैद्यनाथ बाबू।

जगदीश : यह सही है कि बिहारदान बाबा-आधारित हुआ।

बाबा : इसलिए अब पुष्टि जवान-आधारित हो।

इतना कहकर बाबा घास चुनने में लग गये। एक भाई ने प्रश्न किया, "आप अपने छिहत्तरवें जन्मदिन पर क्या संदेश देंगे?" इसके उत्तर में बाबा ने कहा, "कोई नया सन्देश नहीं दूँगा। हमारे जीवन से जो अब तक मिला होगा, वही संदेश है।" दूसरे प्रश्न के उत्तर में बाबा बोले, "अर्थ के अभाव से अधिक सुयोग्य कार्यकर्ताओं का अभाव है।" वे भाई शिवाजी भावे को बुलाना चाहते थे। बाबा ने उत्तर दिया, "शिवाजी सर्वतंत्र-स्वतंत्र हैं। न उन्हें हम यहाँ लाने का→

पूर्वांचल में नक्सालवादी रणनीति

नक्सालवादियों में कई धाराएँ हैं, लेकिन दो मुख्य हैं। एक है—'कम्यूनिस्ट पार्टी आव इण्डिया, मार्क्सवादी-लेनिनवादी' (सी० पी० आई० एम० एल०), और दूसरी है 'माओवादी कम्यूनिस्ट सेन्टर' (एम० सी० सी०)।

भारतीय राज्य के वर्ग-लक्षणों (क्लास करेक्टर) के सम्बन्ध में एम० सी० सी० का दृष्टिकोण है कि वह नव-उपनिवेशवादी (नियो-कलोनियल) यानी अर्द्ध-उपनिवेशवादी और अर्द्ध-सामंतवादी है, जिसमें साम्राज्यवादी तत्त्व तथा अफसरशाही के साथ मिलकर पूँजीपति और सामंतवादी तत्त्व हुकूमत करते हैं। इससे भिन्न सी० पी० एम० एल० की मान्यता है कि शासक मुख्यत: सामंतवादी लोग हैं।

एम० सी० सी० मानता है कि इस देश में सारे साधनों पर स्वामित्व सचमुच साम्राज्यवादियों का है, तथा बिड़ला-टाटा आदि मात्र उनके प्रतिनिधि और प्रबंधक हैं।

एम० सी० सी० का लक्ष्य नयी लोकतांत्रिक क्रान्ति को पूरा करने का है, जिसके दो स्टेज हैं—(क) लोकतांत्रिक क्रान्ति यानी सामंतवादी 'बुर्जुवा' के विरुद्ध संघर्ष; (ख) राष्ट्रीय क्रान्ति यानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष। दोनों को मिलाकर लोकतांत्रिक राष्ट्रीय क्रान्ति पूरी होती है। एम० सी० सी० का कहना है कि सी० पी० एम० एल० दल अपने को सामंतवादविरोधी संघर्षों तक ही सीमित रखता है।

एम० सी० सी० के अनुसार भारतीय समाज के दो बुनियादी अन्तर्विरोध (फण्डामेन्टल कान्ट्रडिक्शन) हैं। एक है सामन्तवाद बनाम जनता, तथा दूसरा है साम्राज्यवाद बनाम जनता, जिसमें छोटे बुर्जुवा लोग भी शामिल हैं। इनके स्वतंत्र छोटे-छोटे स्वामित्व भी हैं, लेकिन साम्राज्यवादी इन्हें पीसते-पचाते जा रहे हैं।

सी० पी० एम० एल० इस दोहरे अंतर्विरोध को नहीं पहचान पाता, और मानता है कि वास्तविक अंतर्विरोध सामंतवाद और किसानों (खेतिहरों) के ही बीच है।

देखने में ऐसा लगता है कि असली अंतर्विरोध सामंतवाद और जनता में है, लेकिन जब साम्राज्यवादियों से संघर्ष छिड़ेगा तो लोकतांत्रिक क्रांति राष्ट्रीय क्रान्ति का रूप धारण कर लेगी। एम० सी० सी० की दृष्टि में क्रान्ति सामन्तवाद-विरोधी भी है, और साम्राज्यवाद-विरोधी भी। लोकतांत्रिक और राष्ट्रीय, दोनों क्रान्तियों का नेतृत्व श्रमिक-वर्ग करेगा, क्योंकि आज के युग में उसके नेतृत्व के बिना कोई क्रान्तिकारी अभियान नहीं सफल हो सकता। इसके विपरीत सी० पी० एम० एल० मानता है कि राष्ट्रीय क्रान्ति का नेतृत्व 'राष्ट्रीय बुर्जुवा' (नेशनल बुर्जुवा) का कोई संयुक्त मोर्चा करेगा, न कि श्रमिक-वर्ग।

एम० सी० सी० और सी० पी० एम० एल०, दोनों मानते हैं कि केवल आर्थिक प्रश्नों (इकनामिज्म) में उलझकर श्रमिक-वर्ग अपनी शक्ति खो देगा, फिर भी ट्रेड यूनियन मोर्चे पर दोनों की स्ट्रेटेजी में अंतर है। सी० पी० एम० एल० शहरों में आन्दोलन के पक्ष में है, और श्रमिक-आन्दोलनों में खुलकर हिस्सा लेना चाहता है। एम० सी० सी० ट्रेड-यूनियनों के नेतृत्व से अलग रहना चाहता है, और चाहता है कि शहरी क्षेत्रों में आन्दोलन 'गुप्त बालशेविक गुटों' (सीक्रेट बालशेविक ग्रुप्स) द्वारा चलाया जाय; जिसमें श्रमिक, विद्यार्थी, छोटे मध्यमवर्गीय लोग तथा दूसरे मेहनतकश लोग शामिल हों।

कार्यक्रम (ऐक्शन) के प्रश्न पर इन दोनों धाराओं में सबसे अधिक भेद है। एम० सी० सी० का निश्चित मत है कि सीमित क्षेत्र में जन-आन्दोलन (मैस-एक्शन) का कार्यक्रम उस वक्त तक नहीं उठाना चाहिए, जब तक कि प्रचार और सत्ता की अवज्ञा के द्वारा जनता की चेतना इस स्तर तक न पहुँच जाय कि वह अपनी इच्छा से इस 'एक्शन' में शरीक होने के लिए सामने आ जाय।

सी० पी० एम० एल० मानता है कि इस स्तर की लोक-चेतना के लिए प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि एक बार लड़ाई छिड़ जाती है तो सरकार का प्रहार होना ही है, और जब प्रहार होने लगता है तो प्रतिकार की शक्ति पैदा हो जाती है, और इस तरह जनता 'लड़ाई' के लिए तैयार हो जाती है। एम० सी० सी० इस तर्क को नहीं मानता। वह कहता है कि यह मान लेना कि ऐसा होगा ही, अंत में जनता के संगठन में बाधक होता है। इसलिए एम० सी० सी० अलग-अलग जोतदारों की हत्या का विरोधी है। वह हत्या का तभी समर्थन करता है जब हत्या लोक-संघर्ष के अंग के रूप में की जाय।

एम० सी० सी० भूमि-मालिकों के साथ साथ सरकारी तंत्र को भी कुचल देना चाहता है। उसका मुख्य निशाना सरकारी तंत्र है इसलिए उससे अलग हटकर आतंकवादी कार्यों का वह समर्थन नहीं करता। जब कि सी० पी० एम० एल० मालिकों और उनके दलालों पर ही अपना अपनी शक्ति केन्द्रित करते हैं, और चाहते हैं कि इस तरह वे स्थानीय स्तर पर समानान्तर सरकार बना लें। एम० सी०

→आदेश देते हैं न कहीं जाने से रोकते ही हैं।"

पहले चौबीस साल अध्ययन, चौवालीस साल सेवा, अन्तिम अड़तालीस साल ध्यान—इस प्रकार एक सौ सोलह साल की कृष्ण-योजना बाबा ने बतायी। और "जनक, एकनाथ आदि ने शादी की ऐसा उदाहरण जब एक सज्जन ने मुझे दिया, तो मैंने उनसे कहा कि तुम अपनी मिसाल देते कि 'मैंने शादी की फिर भी अलिप्त रहा' तो मैं तुम्हारे पीछे आता," बाबा के इस वाक्य ने वातावरण को हँसी से गूँजा दिया।

—जगदीश धवानी

प्रो० इस प्रकार की स्थानीय सत्ता में विश्वास नहीं करता। वह जनता की चेतना को सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राष्ट्रीय दमन एवं शोषण के विरुद्ध जगाना चाहता है। इस तरह सरकारी तंत्र के साथ टक्करें होंगी, और इन टक्करों के माध्यम से क्रान्तिकारी संगठन मजबूत होगा।

क्रान्तिकारी संघर्षों के विकास के तीन स्टेजों की कल्पना है—(क) आत्म-रक्षा (डिफेंसिव), (ख) आक्रमण-आत्मरक्षा-आक्रमण (अफेंसिव-डिफेंसिव-अफेंसिव), (ग) आक्रमण (अफेंसिव)।

पहले स्टेज में किसान मालिकों और महाजनों के मुकाबले में खड़ा होता है, और लिये हुए कर्जों का सूद या बटाई का धान देने से इनकार करता है। अगर सरकार उनकी ओर से अपनी शक्ति का इस्तेमाल करती है तो किसान उससे लड़ते हैं—पुरुष लाठियों, भालों से, स्त्रियाँ कुल्हाड़ियों से, बच्चे मिर्च आँखों में डालकर। दूसरे स्टेज में किसान आक्रमण की कार्रवाई करते हैं, लेकिन पुलिस के आते ही पीछे हट जाते हैं, और 'आत्मरक्षा' की लड़ाई लड़ते हैं। तीसरे स्टेज में वे आक्रमण करते हैं, और विजय प्राप्त कर अपने क्षेत्र को अपने हाथ में कर लेते हैं। 'दुश्मन' के अस्त्र-शस्त्र भी छीन लिये जाते हैं। मुक्ति की इस लड़ाई में क्षेत्र कभी सरकार के, तो कभी क्रान्तिकारियों के हाथ में चला जाता है, लेकिन अंत में विजय क्रान्तिकारियों की ही होती है। यह लड़ाई छापामार-पद्धति से होती है, ताकि शत्रु को जगह-जगह दौड़ना-भागना पड़े, और उसकी शक्ति का ह्रास हो। अंतिम स्थिति में जब क्षेत्र मुक्त हो जायगा तो इसका सम्बन्ध चीन और पाकिस्तान से होगा, ताकि अस्त्र-शस्त्र आ-जा सकें। ये छापामार दस्ते अपने-अपने अड्डे पर स्वतंत्र होंगे, और ६ महीने की रसद सुरक्षित रखकर काम करेंगे। इन दस्तों में प्रशासन, जनसम्पर्क, खाद्य, चिकित्सा आदि के लिए अधिकारी रहेंगे। डाक्टर, नर्स, नाई, रसोइए आदि भी रहेंगे।

एम० सी० सी० इस पद्धति से 'ऐक्शन' शुरू करना चाहता है—भारत के सभी कोनों में। जब जो क्षेत्र तैयार हो जायगा तब वह दूसरे क्षेत्रों की प्रतीक्षा किये बिना 'ऐक्शन' शुरू कर देगा। छापामार युद्ध के लिए नेफा, मणीपुर, नगालैण्ड, असम, मिजो पहाड़ियों और त्रिपुरा का क्षेत्र बहुत अनुकूल माना जाता है। पहाड़ी क्षेत्र तथा पाकिस्तान और बरमा के निकट होना अनुकूलता है, लेकिन गरीबी का होना, भाषा और लड़ाकू के भेद तथा एक जाति का दूसरी से वैमनस्य बहुत बड़ी प्रतिकूलताएँ भी हैं। फिर भी एम० सी० सी० को आशा है कि शिक्षण और संगठन से एक बार में क्षेत्र तैयार हो जायगा।

एम० सी० सी० की निगाह में सी० पी० एम० एल० क्रान्ति के रास्ते में बाधक सिद्ध हो रहा है। उसके आतंकवादी काम क्रान्ति की 'इमेज' को धूमिल कर रहे हैं।

(अंग्रेजी साप्ताहिक 'मेनस्ट्रीम' के एक लेख के आधार पर।)

विश्व-शान्ति

बम-विस्फोट !

एक पत्रकार-परिषद में प्रो० नफ ने 'नैतिक बम' की बात जाहिर की : "मेरा बनाया हुआ बम है तो बहुत विनाशक, परन्तु उसमें एक अद्भुत गुण है। जो लोग शान्तिभंग करनेवाले होंगे और युद्ध-समर्थक होंगे, उन्हीं लोगों पर इस बम का असर होगा।"

प्रो० नफ की इस बात से पूरी दुनिया में गहरी उथल-पुथल पैदा होने लगी। तुरन्त ही प्रधान मंत्री ने फोन पर उनको चेतावनी दी, "यह क्या पागलपन शुरू किया है? 'मैंने जो कुछ पहले जाहिर किया वह सच नहीं है'—ऐसा आप घोषित कर दीजिए।" प्रो० नफ नाराज हो गये। उनका गुस्सा भड़क उठा, "तो क्या जिन्दगी-भर की मेहनत व्यर्थ कर दूँ? यह बम उपकारक है, इसका भी आप कोई विचार करेंगे कि नहीं? युद्ध का वातावरण बनाने में जिस किसी ने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहयोग दिया होगा, उसीका नाश होगा। इसके बाद धरती पर केवल शान्ति और अहिंसा के पुजारी लोग ही बच रहेंगे।"

गुस्से के साथ प्रधानमंत्री ने फोन का रिसीवर पटक दिया। प्रो० नफ के चेहरे पर क्षोभ का भाव छा गया, परन्तु दस मिनट बाद स्काटलैंड यार्ड ने उनको नजरबन्द रखने का हुक्म दिया। बम के बारे में दिये गये वक्तव्य का एक भी शब्द वापस लेने से उन्होंने साफ इन्कार कर दिया। उनका एक ही कथन था, "शाम को ६ बजे बम-विस्फोट होगा, उस समय आप अपने-आप सब कुछ जान सकेंगे।"

दुनिया-भर की सभी प्रयोगशालाओं को जाँच करने का हुक्म जगह-जगह पर दिया जाने लगा, अफसर व अधिकारी लोगों की दौड़-धूप शुरू हो गयी। राजनीतिज्ञों की चिंता बढ़ गयी। "अब क्या होगा?" की गंभीर चिंता संसद के सदस्यों को हो रही थी। थोड़ी देर बाद वित्तमंत्री ने टेबुल पर हाथ मारते हुए कहा, "मुझे लगता है कि प्रो० नफ पागल हो गये हैं, वर्ना ऐसा मजाक वे नहीं करते।"

"वाह, वाह!" विरोध पक्ष के एक सदस्य ने ऊँची आवाज में कहा, "प्रो० नफ के काम में कभी कोई मामूली भी चूक हुई नहीं है। बजट का ३ हिस्सा तो आप लोगों ने सैन्य व शस्त्रास्त्रों के पीछे खर्च किया है। इसीलिए संभव है कि ..."

"परन्तु वह बजट जब बनाया गया था, तब तो सत्ता आप लोगों के पक्ष के हाथ में थी।" गुस्से में वित्तमंत्री बोले।

'परन्तु ६ बजने में अभी दो घंटे का समय बाकी है। बचाव का कोई रास्ता किसीको भी सूझता है? विचार तो किस प्रकार बचाव संभव हो, उसका करना है।' प्रधानमंत्री के इस प्रश्न के उत्तर में किसीने सुझाया कि, "नफ को हाउस

ाक सांइं स' में नियुक्त कर दीजिए न...
ो सब कुछ ठीक हो जायेगा।"

प्रधानमंत्री खुशी से उछल पड़े। ुरन्त ही जेलखाने से फोन मिलाया या, "आपको लार्ड' का खिताब दिया ाता है। जिन्दगीभर के लिए आयकर ी भी आपको मुक्ति दे सकते हैं।" रन्तु गुस्से से भरे हुए प्रो० नफ ने कहा, 'वैज्ञानिक ईमान नहीं बेचते!"

उस समय अमेरिका में जगह-जगह र यही प्रश्न पूछा जा रहा था कि प्रो० फ कम्यूनिस्ट तो नहीं हैं न? और ास्को रेडियो चिल्ला रहा था, "पूंजी-ादियों की अधमता का एक जीवन्त तीक है—प्रो० नफ। पूंजीवादियों ने ो० नफ द्वारा सोवियत यूनियन के विरोध ें एक भयंकर षड्यन्त्र रचा है। प्रो० नफ नीरो"* है।" उधर अमेरिका के प्रमुख लोग लिविजन के माध्यम से लोगों को हिम्मत खने का अनुरोध कर रहे थे।

परन्तु विश्वभर की आम जनता ाश्चर्यजनक ढंग से शान्त थी। हाँ, बम-स्फोट से कितनी भयंकर आवाज होगी, ितने लोग मरेंगे, आदि की उस समय र्चा चारों ओर लोग कर रहे थे।

इतने में ही घड़ी में ६ बजने के घंटे जने लगे और एक आश्चर्यजनक घटना टी। ब्रिटिश संसद के अधिकांश सदस्य पनी-अपनी कुर्सियों से उछल-उछलकर ीचे जमीन पर गिर पड़े। कई बेहोश हो ये। एक-एक को स्ट्रेचर पर डालकर स्पताल पहुंचाया गया।

थोड़ी देर में समाचार मिला कि त्रीमंडल के तीन सदस्यों पर हृदयरोग ा हमला हुआ था, परन्तु सब कुछ ठीक । संसद के ४०० सदस्य मूर्छित हुए थे, रन्तु अब ६ के अलावा और सब होश में ा गये हैं। प्रधानमंत्री ने संतोष की ांस ली, "तब तो हमारा देश युद्ध-समर्थक नहीं है, यह निश्चित हो गया। बम का हमारे यहाँ कुछ भी असर नहीं हुआ।"

अमेरिका से भी ऐसे ही समाचार मिले। "परन्तु मास्को के क्या समाचार हैं?" प्रधानमंत्री ने उत्सुकता से पूछा।

"बहुत आश्चर्य की बात है।" निजी सचिव ने जवाब दिया, "कहते हैं कि रूस में जरा भी क्षति नहीं पहुंची है।"

"क्या???" प्रधानमंत्री चिल्ला उठे, "तो क्या सारे रूस में कोई युद्ध चाहता ही नहीं है? असंभव है!"

रात को रेडियो से प्रधानमंत्री का संदेश प्रसारित हो रहा था, "प्रो० नफ ने हमेशा मानव-जाति के कल्याण के ही कार्य किये हैं। उनका अन्तिम दाव भी अभूतपूर्व ही है। राष्ट्र का गौरव बढ़ानेवाले ऐसे मानव का देशभर के सभी लोग आपस के मतभेद भूलकर सम्मान करें और गलत अफवाहें फैलाना बन्द करें। 'लोहे के परदे' के उस पार की वास्तविकता तो कौन कह सकता है? परन्तु रूस में लाखों लोगों की मृत्यु होने की सम्भावना है।" उसी समय मास्को रेडियो समाचार दे रहा था, "इस नैतिक बम के विस्फोट ने साबित कर दिया है कि रूस युद्ध का नहीं, परन्तु शान्ति का समर्थक है। उस बम का रूस के एक भी व्यक्ति पर कोई असर नहीं हुआ, परन्तु अमेरिका और ब्रिटेन में लाखों लोगों के मरने का समाचार मिला है।"

(नोबल पुरस्कार विजेता श्री यिलिफांक नर के नाटक के आधार पर)

* रोम का एक शासक, जो अपने दुष्कारनामों के लिए विश्व इतिहास में ख्यात है।

भूमि हथियाओ आन्दोलन : प्रतिक्रियाओं का अध्ययन

● 'तीर-धनुष हाथ में लो और जो जमीन पहले कभी तुम्हारी थी, उस पर कब्जा करो।'—यह सलाह एक नेता द्वारा, जो इस वक्त सरकार में है, आदिवासी जनता को दी गयी है।

● 'हाथ में हथियार लो और भूमि के लुटेरों को मार भगाओ।'—इन शब्दों में एक दल के बड़े नेता ने भूमिवानों को आत्म-रक्षा की सलाह दी है। उनका दल कम्यूनिस्ट-प्रेरित इस भूमि-आन्दोलन का घोर विरोधी है।

● 'जमीन पर कब्जा हमारा दल करेगा। हमारा दल जमीन को बांटेगा। सरकार को हमारे बँटवारे को मान्य करना पड़ेगा।'—यह है ललकार एक नेता की, जो अपने और अपने दल के निर्णय को सर्वोपरि मानते हैं।

● 'मजाल है कि हमारी जाति के किसी आदमी की भूमि पर कोई हाथ लगा दे।'—यह है भावना एक जाति-भक्त नागरिक की, जो सोचता है कि भूमि जाय तो दूसरी जाति के लोगों की जाय। उसकी जाति के किसी आदमी की न जाय।

● 'ये दूसरी पार्टीवाले तो हम लोगों का जूठन बटोर रहे हैं, असली आन्दोलन तो हमारी पार्टी चला रही है। हमारी पार्टी गरीबों की पार्टी है, क्रान्ति की पार्टी है।' बारी-बारी ये शब्द भूमि-आन्दोलन चलानेवाली तीनों पार्टियों के ग्रामीण कार्यकर्ताओं के मुँह से सुनने को मिले हैं।

● 'इन शूद्रों को जमीन लेने दी जायगी? सर्वोदयवाले भी समर्थन कर रहे हैं। वे भी नक्सालवादी हो गये।'—यह है वर्ण-अभिमान और वर्ग-हित को प्रकट करने का ढंग।

९ अगस्त से चल रहे भूमि-आन्दोलन में सचमुच कितनी भूमि भूमिवानों के हाथ से निकलकर भूमिहीनों के हाथों में गयी है, इसका लेखा-जोखा बाद में होगा, लेकिन गांवों में इस आन्दोलन ने जो हवा फैलायी है, उसे तो प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। नेता भले ही समझते हों कि इस आन्दोलन से कम-से-कम इतना तो हुआ कि भूमि-समस्या सब समस्याओं से ऊपर आ गयी, लेकिन गांवों में क्या हो रहा है? उनमें कौनसी हवा बह रही है? भूदान-ग्रामदान आन्दोलन ने इतने वर्षों में भूमिवानों के

मन में यह भावना पैदा कर दी थी कि उनको भूमि का एक—अभी बीसवाँ ही—भाग भूमिहीनों को मिलना चाहिए। बीसवाँ हिस्सा देने के अलावा कितने ही भूमिवान इस बात के लिए भी राजी होते जा रहे थे कि भूमि का स्वामित्व ग्रामसभा के हाथ में रहे, और गाँव की व्यवस्था ग्रामसभा द्वारा हो।

ऊपर लिखी हुई ६ बातें किस बात का संकेत कर रही हैं? वे संकेत इस बात का कर रही हैं कि भूमि-समस्या को लेकर आन्दोलन चलानेवालों में वर्ण, वर्ग और दल को परस्पर-यमुना से ऊपर उठाकर काम करने की कल्पना नहीं है। और न तो यही कल्पना है कि कोई नयी भूमि-व्यवस्था स्थापित हो, जो नयी समाज-व्यवस्था का आधार बन सके। कुल मिलाकर गाँवों में आन्दोलन की 'इमेज' अभी तक छीना-झपटी की ही बनी है। आन्दोलनकारियों का ध्यान समस्या के समाधान से कहीं अधिक अगले चुनाव की दृष्टि से अपने दल की स्थिति अभी से मजबूत करने पर है। शायद इसीलिए कितनी जमीन बँटी इससे ज्यादा चिन्ता इसकी रहती है कि कितने लोग गिरफ्तार हुए और कितनों को १०७ की नोटिस मिली।

श्री जयप्रकाशजी ने आन्दोलनकारियों को जो सलाह दी थी, वह सम्भवतः नीचे के कार्यकर्ताओं के पास पहुँची नहीं, या अगर पहुँची तो मानी नहीं गयी। जयप्रकाशजी ने कहा था कि—(१) सारा काम पूर्ण शान्ति के साथ किया जाय; (२) किसी जमीन पर जाने के पहले उसके बारे में अच्छी तरह जाँच कर ली जाय, तथा मालिक और सरकार को सूचना दे दी जाय, क्योंकि शान्तिपूर्ण कार्रवाई का छिपकर काम करने से मेल नहीं है, और लोकशक्ति का इस तरह विकास भी नहीं होता, (३) भूमि का बँटवारा ग्रामसभा में स्वयं भूमिहीनों के द्वारा हो।

इन शर्तों का पालन कहाँ हो रहा है? कहीं तो यह कोशिश की जाती कि समस्या का सामने रखकर उसे सम्मिलित रूप से हल किया जाता? इतनी फौजदारियाँ क्यों

हो उतनी न हुई हो जितनी की आशा थी, फिर भी शायद ही कहीं शान्तिपूर्ण ढंग से भूमि प्राप्त करने और उसे सही तरीके से बाँटने का प्रयत्न हुआ हो। उकसाने, भड़काने, लड़ाने के प्रयत्न अनेक स्थानों पर हुए हैं। व्यापक हिंसा नहीं हुई, इसका यह कारण नहीं है कि हिंसा से बचने का प्रयत्न हुआ, बल्कि यह कारण है कि भूमिहीन असंगठित हैं, कमजोर हैं, भीरु हैं। हमारी चिंता जनता की शक्ति जगाने की नहीं है, चिन्ता है यह दिखाने की कि हम गरीबों के लिए कितने चिंतित हैं। हम व्याकुल हैं गरीब की गरीबी को अपने वोट के साथ जोड़ने के लिए।

दूसरी ओर सरकार को भी सिवाय 'ला एण्ड आर्डर' के दूसरा कुछ सूझता नहीं है। अगर कानून ने अपना काम किया होता, तो इतनी दुर्व्यवस्था ही क्यों पैदा होती? कानून की बात करने का मुँह सरकार का नहीं रह गया है। उसकी इज्जत बढ़ती अगर वह जे० पी० की सलाह मा लेती, और आगे बढ़कर आन्दोलनकारि और मालिकों के बीच में पड़ती, औ पहली किस्त में बड़े मालिकों की फाजि भूमि भूमिहीनों में बाँट देती। कितनी स और शानदार बात होती यह? लेकिन क किसीको सही बात सूझे, और सूझ जाये तो उस पर चलने की हिम्मत क से आये?

दुर्भाग्य है कि क्या सरकार में औ क्या बाहर, हर जगह शान्ति की शक्ति धक्के दे-देकर पीछे खदेड़ा जा रहा है शान्ति जितनी ही पीछे हट रही है, समस उतनी ही उग्र होती जा रही है लगता है जैसे सब मिलकर मैदान अशान्ति के लिए खाली कर रहे हैं। —राममूर्ति

ग्रामस्वराज्य-कोष

संग्रह के आँकड़े

यहाँ केन्द्रीय कार्यालय में जगह-जगह से कोष के काम की जानकारी आती है, जिनमें अक्सर संग्रह के आँकड़े भी होते हैं। जानकारी की दृष्टि से यह अच्छा है, पर हिसाबी दृष्टि से संग्रह का आँकड़ा वही सही मानना ठीक होगा, जो प्रदेश समिति या संगठन की ओर से हमें मिला हो, ताकि पुनरावृत्ति का खतरा न रहे।

११ सितम्बर, 'विनोबा-जयन्ती' को हमारे संग्रह के प्रयत्न पूर्णता पर पहुँचेंगे। २ अक्तूबर, 'गांधी-जयन्ती' के दिन कोष विनोबाजी को समर्पित किया जायगा। अतः प्रदेश-समितियों से प्रार्थना है कि वे नीचे लिखे अनुसार समय पर संग्रह की जानकारी हमें भेजें। संग्रह की सूची में जिलों तथा प्रमुख शहरों के हिसाब से आँकड़े दिये जायँ, जिससे हमारे पास सीधे इन स्थानों से कोई जानकारी मिली हो तो हम उसका मिलान करें।

३१ अगस्त तक प्रदेश में प्राप्त जानकारी के संकलित आँकड़े की सूचना तार द्वारा १ सितम्बर को भेजें। इसी प्रकार ११ सितम्बर तक के संग्रह का १२ य १३ सितम्बर को तथा १८ सितम्बर तक सब जगहों से पक्का आँकड़ा प्राप्त करके २० सितम्बर को संकलित जानकारी भेजें तार भेजने के साथ ही उसी दिन पत्र द्वारा जिलावार सूची भी भेज दें।

११ सितम्बर तक हमें अपना-अपना लक्ष्य पूरा कर लेना है, पर कुल संग्रह क हिसाब, और पक्का हिसाब, पक्का आँकड़ा सब जगहों से प्राप्त करने में एकाध सप्ताह और लग सकता है। अतः अन्तिम आँकड़ा ता० २० सितम्बर क तार द्वारा इस कार्यालय को तथा सर्व सेवा संघ, गोपुरी (वर्धा) को भी भेज दें कोष में दान तो समर्पण के पहले तक लिए जा सकते हैं, पर एक बार २० सितम्ब को पक्का आँकड़ा अवश्य भेज दें।

(हस्ताक्षर)

प्रधान मंत्री
ग्रामस्वराज्य कोष, केन्द्रीय कार्यालय
राजघाट, नयी दिल्ली-

इन्सानी बिरादरी का संगठन

गत १६-१७ अगस्त को दिल्ली में आयोजित इन्सानी बिरादरी-सम्मेलन में इसी नाम से भारत में साम्प्रदायिक सद्भावना विकसित करने के लिए एक संगठन बनाया गया।

सम्मेलन ने सर्वसम्मति से श्री जयप्रकाश नारायण को इस संगठन का अध्यक्ष, शेख अब्दुल्ला को वरिष्ठ उपाध्यक्ष और श्री शाहनवाज खाँ को महामंत्री चुना। संगठन की ३१ सदस्यीय कार्यकारिणी समिति का भी चुनाव इस अवसर पर सम्पन्न हुआ।

इस संगठन के स्वयंसेवकों को 'खुदाई खिदमतगार' कहा जायगा।

उक्त सम्मेलन में ३०० प्रतिनिधियों ने भाग लिया था।

वाराणसी में रक्षाबन्धन का विशिष्ट आयोजन

शान्तिसेना-मण्डल तथा वाराणसी की अन्य रचनात्मक संस्थाओं के सद्प्रयासों से इस वर्ष का रक्षा-बंधन त्योहार हिन्दू-मुस्लिम सद्भावना का प्रतीक बना।

स्थानीय श्री गांधी आश्रम में एकत्रित हिन्दू-मुसलमान भाइयों को बहनों ने स्नेह की अभिव्यक्ति के तौर पर राखी बांधी, और इस अवसर पर सबने हार्दिक एकता और सौमनस्य का अनुभव किया।

स्व० श्रीमती आशादेवी का अस्थि-विसर्जन

गत १६ अगस्त को सर्व सेवा संघ, वाराणसी के सभा-भवन में वाराणसी की सभी शिक्षण एवं रचनात्मक संस्थाओं की ओर से श्रद्धाञ्जलि समर्पित करने के बाद गंगा में स्व० श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम् की अस्थि प्रवाहित की गयी।

कोष-संग्रह की प्रगति

टाटा का दान : श्री जयप्रकाश नारायण की अभी हाल की बम्बई-यात्रा के समय देश के विख्यात उद्योगपति श्री जे० आर० डी० टाटा ने ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए एक लाख रुपये दान दिया है। उन्होंने यह भी घोषित किया है कि इस रकम से अधिक जितनी राशि मजदूरों के द्वारा दी जायेगी, उतनी ही और राशि वे भी देंगे।

गोल्डेन टोबैको कम्पनी ने भी ग्राम-स्वराज्य-कोष के लिए पचास हजार रुपये का दान घोषित किया है। कोष के जगह-जगह से प्राप्त समाचारों के अनुसार कोष में बड़े-छोटे, सभी लोगों का सहयोग मिल रहा है।

'भूदान-यज्ञ' के पाठक का दान : पूना से एक बहन श्री कृष्णा घोसला ने ५५१ रुपये का चेक भेजते हुए लिखा है—"मैंने 'भूदान-यज्ञ' में पढ़ा था कि पू० बाबा की ७५वीं वर्षगांठ मनाने के लिए एक करोड़ का कोष उनको भेंट किया जायेगा। यह छोटी-सी भेंट उनके चरणों में मेरी तरफ से अर्पित कीजिए। यह हमारे लिए बड़े सौभाग्य की बात है कि हमारे युग में उनका यह शुभ दिन आया है।"

बैंकों का सहयोग : "आपकी संस्था एक पवित्र कार्य कर रही है, इसलिए कार्य में सहयोग देना हमारा कर्तव्य है।" इन शब्दों के साथ सेन्ट्रल बैंक ने अपनी नीति स्पष्ट करते हुए सूचित किया है कि उन्होंने अपनी सब शाखाओं को कोष के काम में निःशुल्क सेवा देने के अतिरिक्त सब प्रकार का सहयोग देने के लिए लिखा है। देश के चार प्रमुख बैंकों ने अपनी सब शाखाओं में ग्रामस्वराज्य-कोष के पोस्टर प्रदर्शित करने का तय किया है।

प्रदेशों के समाचार

महाराष्ट्र : महाराष्ट्र का संग्रह तीन लाख तक पहुँच गया है, जिसमें बम्बई का दान सम्मिलित है।

महाराष्ट्र नगरपालिकाओं के डायरेक्टर, राज्य सहकारी संघ तथा प्रादेशिक 'इटक' के अध्यक्ष की ओर से, और कई जिलों में जिलाध्यक्षों की तरफ से ग्रामस्वराज्य-कोष में सहायता देने के लिए परिपत्र निकाले गये हैं।

महाराष्ट्र में दाताला और निमगाँव, इन दो बड़े गाँवों में हर घर से एक रुपया प्राप्त करने का संकल्प किया गया है। दाताला-निवासियों ने ७५० रुपये प्राप्त कर अपने संकल्प को पूरा भी कर लिया है। मोताला की पंचायत समिति ने भी अपने क्षेत्र के तेरह हजार परिवारों से तेरह हजार रुपया प्राप्त करने का संकल्प किया है। खामगाँव प्रखण्डवालों ने इसी प्रकार के संकल्प की पूर्ति के लिए एक कार्य-योजना बनायी है, जिसमें प्रखण्ड के सभापति और बी० डी० ओ० से लेकर हर व्यक्ति से उसकी आमदनी के अनुपात से चंदा प्राप्त किया जायेगा।

गुजरात : श्री काकुभाई दोषी और श्री नरेन्द्रकुमार पंड्या ने दो हजार सर्वोदय-मित्र बनाने का संकल्प किया है। अब तक ३२५ मित्र बना चुके हैं।

मैसूर : अब तक राज्य में ११ हजार रुपया संग्रह हो चुका है। राज्य के वयो-वृद्ध सर्वोदय-सेवक श्री तिमप्पा नायक कारवार जिले में कोष-संग्रह हेतु यात्रा कर रहे हैं। उत्तर कर्नाटक के क्षेत्र में सदाशिवराव भोसले तथा उनके साथी सक्रिय हैं।

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ सोमवार

अंक : ४८ ३१ अगस्त, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

आत्मचिन्तन

प्रश्न : आत्मचिंतन यानी क्या ?

विनोबा : इस पर हमने तीन-चार दृष्टि से सोचा है, और अनुभव भी किया है। विकारों से मुक्त होना, पहला काम है। प्रथम साधकावस्था में विकार-मुक्ति की साधना होती है। उसके बाद 'आत्मचिंतन' नाम देते हैं, यद्यपि उसमें मन विचार-शून्य-'ब्लैंक'-रहता है। तो विचार-शून्य बनना, यह पहली प्रक्रिया हुई।

दूसरी प्रक्रिया : मन, प्राण, इन्द्रियाँ शरीर से लेकर बुद्धि तक जो भी हैं-उनके गुण भी और दोष भी-इन सबसे हम अलग हैं। यह अलगापन, पृथकत्व अनुभव करना। हम अपने से ही पृथक् हैं, चिंतन की यह एक पाजिटिव (विधायक) प्रक्रिया है। आत्मचिन्तन नहीं, बल्कि अनात्म-निरसन। अनात्मा से जो बचेगा, वही अपना मूल स्वरूप है, यह जानना।

तीसरी प्रक्रिया : मनुष्य में गुण और दोष, दोनों रहते हैं। मनुष्य यानी क्या ? संगम-स्थान। आत्मा और देह जुड़ा हुआ है—उपाधि के कारण, मोह के कारण, जिस किसीके कारण हो, जुड़ा हुआ है। गुण आत्मा के हैं। निर्विकारिता, धैर्य, सत्य, प्रेम—ये सब आत्मा के गुण हैं। तो दोषों को अपने से अलग रखकर अपने में कौनसा गुण ज्यादा है, यह देखें। परमात्मा अनंतगुण-संपन्न हैं। उन्होंने अपना एक-एक गुण एक-एक को बाँट दिया है। किसीमें साहस, किसीमें करुणा, किसीमें धैर्य, किसीमें समत्व है। किसीमें कोई एक गुण विशेष रूप से दिखाई देता है। उस गुण का विकास करते-करते उसका परमोत्कर्ष करें और उससे परमात्मा को स्पर्श करें। गुण का विकास करते करते हम परमेश्वर तक पहुँच सकते हैं : परमेश्वर और हमारे बीच अन्तर रहेगा, पर लगभग उसके पास पहुँच सकते हैं। तो अपने में जो प्रधान गुण है (छोटे-छोटे गुण नहीं), उसे प्रथम पहचानना पड़ेगा। फिर उसका चिन्तन करना पड़ेगा।

भिन्न-भिन्न पुरुषों में भिन्न-भिन्न गुणों का उत्कर्ष दीखता है, उन गुणों का चिन्तन करें और उतना गुण ले लें। भगवान कृष्ण में प्रेम का गुण दीखता है, रामचन्द्र में सत्य का। महात्मा गांधी के जीवन में भी सत्य दीखता है। तो कृष्ण का चिन्तन यानी प्रेम-गुण का चिन्तन करें। राम यानी सत्य-गुण का चिन्तन। उसी तरह सृष्टि में भी गुणों का दर्शन होता है। सृष्टि में नियमितता का भी गुण है। सूर्य, तिथि, ग्रहण, चन्द्र सारे नियमित चलते हैं। उतनी नियमितता अपने में लानी चाहिए।

शून्य मन, आत्मा को अनात्मा से अलग मानना, अपने गुणों के द्वारा ईश्वर के पास पहुँचना—ये तीन रास्ते हैं। जिसको जो पकड़ में आये, वह पकड़ सकता है। तीनों भिन्न-भिन्न अवस्था में प्राप्त हो सकते हैं।●

छात्र चुनौती स्वीकार करें

उत्तरप्रदेश में चौधरी चरण सिंह के द्वारा छात्र-संघों के प्रति अपनायी गयी नीति ने छात्र-नेताओं और राजनीति के दगल-बाजों को सक्रियता और सरगर्मी का एक मसाला दे दिया है। विद्यार्थियों के पवित्र अधिकारों का अतिक्रमण, लोकतन्त्र पर आक्रमण जैसे नारों की धूम मच रही है। आखिर यह सब किसलिए? क्या इन नारा लगानेवालों को यह भय है कि सदस्यता ऐच्छिक हो जाने पर छात्र-संघों की शक्ति कम हो जायगी या उनका अस्तित्व खतरे में पड़ जायगा? यदि सच-मुच इस भय के कारण ही चीख-पुकार मच रही है तो कब तक जबरदस्ती इकट्ठा किये हुए विद्यार्थियों पर इनकी नेतागिरी चल सकेगी और कब तक जबरदस्ती वसूले गये चन्दे से इनकी कारगुजारी चलेगी?

यदि ऐसा नहीं है, और विद्यार्थी समझ रहे हैं कि बिना उनसे परामर्श किये सरकार का उनके संगठन में हस्तक्षेप करना ठीक नहीं है, तो उन्हें परिस्थिति की चुनौती स्वीकार करनी होगी। अपनी ईमानदारी, बुद्धिमत्ता, सद्भाव, उत्साह और संगठन-शक्ति से यह दिखला देना होगा कि सदस्यता अनिवार्य हो या ऐच्छिक, छात्र-संगठन-शक्ति और छात्र-एकता पर कोई आँच नहीं आने पायेगी। इसके लिए उन्हें ऐसी प्रक्रिया विकसित करनी होगी, जिससे छात्र की यूनियन सही अर्थों में छात्रों की एकता के प्रतीक बन सकें, न कि विरोध और अलगाव का कारण।

वस्तुस्थिति यह है कि आज छात्र, श्रमिक, शिक्षक कोई भी अपने वर्ग-हित के प्रति भी निष्ठावान नहीं हैं, सर्वहित की बात तो दूर की है। छात्र, श्रमिक, शिक्षक, ये निरपेक्ष अर्थवाले शब्द नहीं रह गये हैं। इनमें कोई-न-कोई विशेषण, जैसे—कम्यूनिस्ट, सोशलिस्ट, जनसंघी, ब्राह्मण, क्षत्रिय, भूमिहार आदि चाहे-अनचाहे लग ही जाते हैं और तब विशेषण की तीव्रता में मूल शब्द की महिमा ही खो जाती है। भिन्न-भिन्न दलों, सम्प्रदायों और गुटों में सिमट-सिमटकर ये ऊर्ध्वस्वान् वर्ग टूट रहे हैं। जिन वर्गों की गति-शीलता से पूरी मानवता में नया रंग आने की आशा है, वे ही बिखर रहे हैं, और उनके नेता लोग अपना-अपना प्रभाव स्थापित करने के लिए उनके नित नये टुकड़े करते जा रहे हैं।

कारण एक ही है। 'अपने काम से काम', यह एक अच्छी नीति समझी जाती है, किन्तु लोकतन्त्र की भावना से इस भावना का मेल नहीं बैठता। अपना काम करने के बाद भी एक अपना ही काम बच जाता है—दूसरों के काम से अपने काम का सामंजस्य साधने का, अपने को अपने परिवेश में सुसम्बद्ध करने का। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण काम है। यहाँ ही प्रत्येक व्यक्ति को बड़ी चौकसी रखने की जरूरत है। इसी बात को पुराने अर्थों में ईमानदारी से अपना काम करनेवाले लोग भूल जाते हैं और अपने को नेता नामधारी जीव के हवाले कर देते हैं। अभिक्रम (इनिशियेटिव) उनके हाथ से निकल जाता है।

लोग कहते हैं कि अस्सी प्रतिशत से अधिक छात्र शान्तिप्रिय होते हैं, और उपद्रव को नापसन्द करते हैं। परन्तु उपद्रव होते ही हैं। इसलिए कि अभिक्रम इन शान्तिप्रिय और उपद्रव-विरोधी लोगों ने अपने हाथ से निकल जाने दिया है। स्वयं अपनी गतिशीलता का खोने दिया है, और परिणामत: रेलवे साईड पर खड़े हुए डिब्बों की तरह जिस इंजन में जोड़ दिये जाते हैं, उसीकी मर्जी से उसके पीछे दौड़ते फिरते हैं।

यह स्थिति शीघ्र समाप्त होनी चाहिए। इसके लिए सभी छात्रों को दलों, गुटों से अलग रहकर अपना हित अपने हाथों में सुरक्षित करना होगा। एक-एक कक्षा, और वर्ग में सशक्त, छिद्रहीन, संगठन बनाकर शुद्ध छात्र-एकता का राष्ट्रव्यापी और विश्वव्यापी उद्घोष करना होगा, क्योंकि उन्हें कई चुनौतियों का सामना करना है।

१८ वर्ष के तरुण-तरुणियों को मता-धिकार मिले, इसके हम हिमायती हैं। शिक्षा की व्यवस्था में शिक्षार्थियों की भी आवाज हो, यह हम चाहते हैं। हम चाहते हैं कि नयी दुनिया बनाने के लिए नया खून सामने आये। परन्तु यह तभी होगा, जब सभी विद्यार्थी सजग होंगे, सक्रिय होंगे, और एक होंगे। यही कसौटी है। क्या इस देश के तरुण इस चुनौती को स्वीकार करेंगे?

बलिया —शिवकुमार

दिल्ली नगर में सर्वोदय-यात्रा

श्री जयप्रकाशजी तथा प्रभावतीजी के आशीर्वाद प्राप्त कर १५ अगस्त को राजघाट गांधी-समाधि से दिल्ली नगर में एक सर्वोदय-यात्रा शुरू हुई, जो ११ सितम्बर तक चलेगी। इस यात्रा के दरम्यान तीन महत्त्वपूर्ण कार्य किये जायेंगे—(१) सर्वोदय-विचार प्रचार—जन-सम्पर्क, साहित्य-प्रचार तथा विद्यार्थियों के वार्तालाप के द्वारा, (२) ग्रामस्वराज्य-कोष का संग्रह, (३) सर्वोदय परिवार का विस्तार—लोक-चेतना जागृत करके, सर्वोदय-मित्र, शान्ति-सैनिक और आचार्यकुल के द्वारा।

यात्रा-टोली के एक प्रमुख सदस्य श्री वसंत व्यास ने सूचना दी है कि यात्रा पूर्णत: जनाधारित होगी, और शिक्षण-संस्थाओं से विशेष तौर पर यात्रा के दौरान सम्पर्क स्थापित किया जायगा। पूरक कार्यक्रम के रूप में साहित्य-प्रचार और पत्रिकाओं के ग्राहक बनाने का काम भी चलाया जायगा। ●

अरब-यहूदी संघर्ष

श्रेय अमेरिका को मिले, या रूस को, या अमेरिका-रूस-फ्रांस-ब्रिटेन चारों को, अगर किसी तरह अरब-यहूदी संघर्ष समाप्त हो जाय और दोनों अपने-अपने देश में सुख और शांति का जीवन बिताने लगें तो उनका ही नहीं, पूरे पश्चिमी एशिया का कल्याण होगा। दक्षिण-पूर्व एशिया में वियतनाम और कम्बोडिया का युद्ध तो मालूम नहीं कब बन्द होगा, लेकिन पश्चिमी एशिया में ११६० दिन लम्बे अरब-यहूदी संघर्ष और ६ दिन के खुले युद्ध के बाद अमेरिका के प्रस्ताव पर और बड़े राष्ट्रों की सहमति से ९० दिन की जो विराम-संधि हुई है, उससे आशा बंधी है कि शायद स्थायी सुलह और शान्ति के दिन करीब हैं। जाना तो अभी दूर है, लेकिन पहला कदम उठ गया है। इससे भी ज्यादा, यह लड़ाई जिन बड़े देशों, मुख्यतः अमेरिका और रूस, के शस्त्रों और कुमंत्रणा से लड़ी जा रही थी वे खुद चाहने लगे हैं कि लड़ाई बन्द हो जाय। अन्देशा यह है कि लड़ानेवाले कहीं खुद न लड़ने लग जायें। कुछ भी हो, अमेरिका के संधि-प्रस्ताव से मिस्र में खुशियाँ मनायी गयीं, इजराइल में युवक नाचे और स्वयं सैनिकों ने कूद-कूदकर टोस्ट खाये। लड़ाई किसको प्यारी है?

हर एक जानता है कि ९० दिन की संधि और स्थायी शान्ति के बीच में कितनी खाइयाँ हैं जिन्हें पार करना बाकी है और उन्हें पार करना आसान भी नहीं है। अरब राष्ट्रों में संधि को मिस्र ने माना है, यर्दान ने माना है, लेकिन ईराक और सीरिया ने नहीं माना है। अल्जीरिया ने भी नहीं माना है। सबसे बड़ा सवाल है यर्दान के फिलिस्तीनी बागियों का।

इजराइल के लिए प्रश्न है अपने अस्तित्व और सुरक्षा का, मिस्र के लिए प्रश्न है राष्ट्रीय सम्मान का। मिस्र चाहता है कि सन् १९६७ के युद्ध में इजराइल ने जिस भू-भाग पर कब्जा कर लिया उसे वह पहले छोड़े, इजराइल की माँग है कि मिस्र एक देश के रूप में उसे मान्य करे, तथा स्वेज और दूसरे सामुद्रिक रास्तों तक उसका अबाध प्रवेश हो, और सीमाएँ इस तरह बनायी जायें कि आगे उसकी सुरक्षा की गारंटी रहे। राष्ट्रीय हित की दृष्टि से इजराइल सिनाई के बड़े विस्तार को अपने और मिस्र के बीच 'बफर' के रूप में रखना चाहता है; अकाबा की खाड़ी चाहता है, यर्दान नदी का पश्चिमी किनारा चाहता है, तथा पूरे यरूशलम और गोलन के ऊँचे प्रदेश को चाहता है। वह शर्म-अल-शेख में अपनी सेना भी रखना चाहता है। हर तरह से इस बार उसकी यह कोशिश है कि यर्दान और मिस्र दोनों ओर से वह अपनी सीमाओं को मजबूत कर ले। उसने मिस्र से लड़ाई में जीत पायी है। अपनी जीत का वह शान्ति के लिए त्याग नहीं करना चाहता, बल्कि चाहता है जीत को सुरक्षा का स्थायी आधार बनाना।

यरूशलम का प्रश्न अरबों और यहूदियों दोनों के लिए कठिन है। यरूशलम के साथ अरबों की जबरदस्त भावनाएँ जुड़ी हुई हैं जिन्हें रोकना नसर के वश की बात नहीं, दूसरी ओर यरूशलम को छोड़कर सुरक्षा का अनुभव करना इजराइल के लिए संभव नहीं।

इजराइल की स्वतंत्र सत्ता के सबसे बड़े शत्रु फिलिस्तीन के छापामार विद्रोही हैं। ६ दिन की लड़ाई में मिस्र की हार के बाद ये एक करोड़ तीस लाख फिलिस्तीनी, जो सन् १९४८ और '६७ के युद्धों में इजराइल से निकल भागने के कारण वस्तुतः अपने को शरणार्थी मानते थे, संगठित होकर अपने पैरों पर खड़े हो गये। २१ मार्च, १९६८ को उनके एक केन्द्र पर आक्रमण करके इजराइल ने उनसे सीधी लड़ाई मोल ली। तब से वे मरने-मारने पर उतारू हैं। आज वे अपने को एक राष्ट्र मानते हैं, और अपने लिए एक 'घर' चाहते हैं। दुनिया भर में कुल ३० लाख फिलिस्तीनी हैं, जिनमें से कुल १५ लाख शरणार्थी हैं, ३ लाख स्वयं इजराइल में हैं, और ७ लाख विभिन्न अरब देशों में हैं। ५ लाख पूरी धरती पर फैले हुए हैं। ये जहाँ कहीं भी हैं वहाँ विद्रोही हैं और अपने लड़ाकू साथियों का साथ दे रहे हैं।

इनके छापामार सैनिक हजार-दो हजार नहीं, पूरे बीस हजार हैं। 'फिलिस्तीन की मुक्ति' उनका नारा है। पीकिंग से प्रभावित इस मुक्ति-आन्दोलन का अर्थ है कि मौजूदा अरब सरकारों को उलटकर अरब जनता को मुक्त किया जाय, ताकि इजराइल के विरुद्ध मुक्ति की अन्तिम लड़ाई लड़ी जा सके। उनका भरोसा माओ के ढंग के 'जन-युद्ध' में है। यर्दान में उनकी शक्ति सबसे संगठित है। कुछ भी हो, नसर अब भी जनता में लोकप्रिय हैं, और एक बार मिस्र से सुलह हो जाने पर इजराइल की कुशल सेना इन छापामारों का मुकाबिला नहीं कर सकेगी, यह मानने का कोई कारण नहीं है। खतरा इतना ही है कि छापामार कार्रवाइयों के कारण कहीं विराम संधि खतरे में न पड़ जाय। धीरे-धीरे उनके द्वारा फिलिस्तीन की राष्ट्रीयता जागृत हो उठी है, और उसके मुक्ति-संगठन का समर्थन अल्जीरिया, सीरिया, ईराक और चीन ने किया है।

इन तमाम उलझनों के कारण स्थायी संधि की चर्चाएँ अभी शुरू नहीं हो सकी हैं। इतना ही नहीं, मिस्र और इजराइल दोनों की ओर से एक-दूसरे के खिलाफ शिकायतें संयुक्त राष्ट्रसंघ के शान्ति-दूत डा० गुन्नार यारिंग के पास पहुँचने लगी हैं कि संधि की शर्तें तोड़ी जा रही हैं। इजराइल की सबसे बड़ी शिकायत इस बात की है कि स्वेज-क्षेत्र में मिस्र ने प्रक्षेपास्त्र के अड्डे बना लिये हैं। इनके हटे बिना इजराइल बात नहीं करना चाहता। अभी तो यह भी तय नहीं हुआ कि बातचीत का स्थान क्या हो। न्यूयार्क या सिप्रस, कोई हो सकता है। डा० यारिंग ने प्रारंभिक कार्रवाइयाँ शुरू कर दी हैं। अविश्वास की दीवारें बहुत ऊँची हैं। रूस और अमेरिका के पश्चिमी एशिया में स्वार्थ गहरे हैं। इन सबको पार करना है। शान्ति-दूत यारिंग के साथ पश्चिमी एशिया की युद्ध से त्रस्त जनता की शुभकामनाएँ हैं। ●

अणु-परमाणु आयुध : भारत का जनमत और जगत् का भविष्य

पिछले कुछ महीनों से, भारत भी अणु-परमाणु आयुधों का निर्माण शुरू करे, और इस प्रकार अपनी शक्ति का परिचय दे, जनता की सुरक्षा का आश्वासन दे —और सबसे बढ़कर चीन के मुकाबिले में आ जाय, यह चर्चा जोरों से देश में हो रही है। माँग बढ़ती जा रही है, या बढ़ायी जा रही है, और यहाँ तक अनुमान लगाया जा रहा है कि अगले आम चुनाव में इस सम्बन्ध में दलों की घोषित नीति ही निर्णायक साबित होनेवाली है। एक राजनीतिक दल ने तो इसके समर्थन में हस्ताक्षर-अभियान भी चलाने की घोषणा की है।

'दी इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ पब्लिक ओपीनीयन' द्वारा हाल में किये गये सर्वे के अनुसार अणु-परमाणु आयुधों की माँग बेहद बढ़ गयी है। देश के चार सबसे बड़े नगरों —कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली और मद्रास में ढाई-ढाई सौ व्यक्तियों की राय जानने के बाद यह तथ्य हासिल हुआ कि कलकत्ता, बम्बई और दिल्ली की दो-तिहाई से भी अधिक लोगों की माँग आयुधों के निर्माण के पक्ष में है, मद्रास में करीब-करीब आधो-आधी की स्थिति है। लेकिन हमारा ख्याल है कि पूरे देश के जनमत का आधार इन महानगरवासियों की मान्यता को बनाना उचित न होगा। यहाँ प्रस्तुत आँकड़े बताते हैं कि आयुधों का निर्माण होना चाहिए, यह माँग फीकी पड़ जाती है, घट जाती है, जब यह पता चलता है कि उसके लिए अतिरिक्त टैक्स देना पड़ेगा, या फिर विकास के काम में कटौती करनी पड़ेगी।

देश को शक्तिशाली बनाने और सुरक्षित करने की इस राजनीतिक होड़ में क्या सामान्य मनुष्य के सामने अणु-परमाणु आयुधों के उस पहलू को भी रखा जा रहा है, जिसे दुनिया के वैज्ञानिक आज दुनिया के सामने रख रहे हैं ? अगर उस तथ्य को सामने लाया जाय कि इस होड़ में कितनी सुरक्षा की सम्भावना है, और कितनी संहार का, तो जनता को पता चलेगा कि वैज्ञानिकों का दृष्टिकोण कितना मानवीय और राजनीतिज्ञों का दृष्टिकोण कितना अमानवीय है। यह भी स्पष्ट हो जायगा कि सत्तान्धता किसे कहते हैं।

अगले पृष्ठ के लेख में विश्वविख्यात रसायन-शास्त्री—दो-दो बार नोबुल पुरस्कार के विजेता—श्री लिनस पॉलिंग ने अणु-परमाणु आयुधों के उसी पहलू को पेश किया है।—सं०

*सारिणी : १

		(प्रतिशत)				
		सभी नगर	दिल्ली	कलकत्ता	बम्बई	मद्रास
क्या आप चाहते हैं कि भारत सुरक्षा के लिए अणु-परमाणु आयुधों का निर्माण करे ?	हाँ	६९	७८	७७	७१	४९
	नहीं	३१	२२	२३	२९	५१
क्या आप ऐसा तब भी चाहेंगे, जब कि : (१) भारी कर-बोझ कंधे पर पड़े ?	हाँ	५३	७६	४६	५२	३५
	नहीं	४७	२४	५४	४८	६५
(२) विकास-खर्च में भारी कटौती करनी पड़े ?	हाँ	४६	७५	२८	४२	३६
	नहीं	५४	२५	७२	५८	६४

→

शांति-प्रेमी परमाणु

व्यापक अज्ञानता ने परमाणु को बदनाम किया हुआ है। अधिकांश लोगों के लिए, परमाणु ऊर्जा का मतलब भयंकर विस्फोट और भयानक हथियार हैं, जो हमारी सभ्यता को समाप्त कर सकते हैं। अधिकांश लोगों के लिए परमाणु विज्ञान पूर्णतः अज्ञात था, जब पहला परमाणु बम गिराया गया था, और इसलिए उसने मानव-जाति पर एक अविस्मरणीय आघात पहुँचाया।

तो भी, नये ज्ञान का यह सैनिक उपयोग एक पहलू मात्र है। मानव-जाति की भलाई की सम्भावनाओं से युक्त परमाणु ऊर्जा के पूरे विज्ञान की उपेक्षा करना, समस्त वैज्ञानिकों के मन को विमुख कर देने के समान है, क्योंकि युद्ध के दौरान वैज्ञानिकों ने ही भयानक बमवर्षक प्रदान किये थे। आजकल हवाई जहाज के प्रति भय का भाव नहीं है। इसी प्रकार परमाणु के चिकित्सा सेवाओं, औद्योगिक और कृषिगत उपयोगों के साथ कारगार भी है।

जैसे महान् अन्वेषकों ने पृथ्वी का नक्शा तैयार किया, और खगोलज्ञों ने आकाश का चार्ट बनाया, इसी प्रकार परमाणु वैज्ञानिक ने, पदार्थ और ऊर्जा की छानबीन करके एक अज्ञात दुनिया, अर्थात् दार्शनिकों के लिए एक रहस्य का उद्घाटन और भविष्य की पीढ़ी के लिए विशाल स्रोत का आविष्कार किया है।

—जेराल्ड वेंडट

अग्नि-निर्पूर्ण प्रयोग

मात्रा का दूषण होगा। विस्फोट, आग तथा तात्कालिक उच्च ऊर्जा के विकिरण के विनाशकारी और प्राणघातक प्रभावों के अतिरिक्त, स्थानीय ह्रास के प्रभाव भी होंगे।

विस्फोट के दुष्परिणाम

जहाँ पर बम या विस्फोट होता है, वहाँ से शत-शत मीलों के अन्दर के उत्तर-जीवियों पर प्राणघातक मात्रा के लगभग आधे भाग का प्रभाव पड़ेगा, जो सूक्ष्म प्रसारण रोग तथा कुछ ही दिनों में मृत्यु का कारण बनता है, और उन उत्तर-जीवियों के जनन-द्रव्य के केन्द्र पर काफी प्रभाव पड़ेगा। इस उच्च ऊर्जा के विकिरण के प्रभाव से दस या पन्द्रह वर्षों के अनुपात में उनकी आयु पर्याप्त मात्रा में कम होगी।

आजकल का मानक अणुबम २०-मैगाटन बम है (एक मैगाटन दस लाख टन के बराबर है)। सोवियत संघ ने एक ६०-मैगाटन बम बनाया है, जो १००-मैगाटन बम के पूर्व के वो बम मात्र है। एक १००-मैगाटन बम में साढ़े तीन टन विस्फोटक पदार्थ होते हैं तथा एक महाद्वीप से दूसरे तक सम्भवत एक छोटे राकेट में ले जाये जा सकते हैं। किन्तु १००-मैगाटन बम का कोई अभिप्राय नहीं दीख पड़ता, क्योंकि एक २०-मैगाटन बम से पृथ्वी के किसी भी एक शहर को विनष्ट किया जा सकता है।

पृथ्वी पर किसी भी शहर में गिराया गया एक २०-मैगाटन बम, उसको पूरी तरह नष्ट कर देगा और वहाँ के अधिकांश लोगों को मार डालेगा। वह २०-किलोमीटर व्यास का एक गर्त बना देगा, एक भयानक अग्नि-तूफान उत्पन्न करते हुए ५० से १०० किलोमीटर तक आग लगा देगा और तात्कालिक उच्च ऊर्जा के विकिरण तथा रेडियोधर्मी निक्षेप द्वारा, लोगों को क्षति पहुँचायेगा। ३०० किलोमीटर दूर तक के लोग मारे जायेंगे।

मेरा अंदाजा यह है कि दुनिया के संचय में, करीब १६,००० या उसके बराबर की संख्या में, २०-मैगाटन बम होते हैं। किन्तु दुनिया में १६,००० बड़े शहर नहीं हैं, और कोई पूछ सकता है कि इतनी बड़ी मात्रा में फिर क्यों अकारण ये विस्फोटक पदार्थ तैयार किये गये हैं?

इसका उत्तर मैं यू दूँगा कि यह इसलिए है कि भूतकाल की हमारी सारी वैज्ञानिक शिक्षा इतनी दोषपूर्ण थी कि निर्णय करनेवाले लोग स्वयं स्पष्टत यह नहीं जानते थे कि वे क्या कर रहे थे—निर्णय करनेवाला वास्तव में कोई हो, क्योंकि इसमें थोड़ा संदेह रहा कि क्या इन भयानक बड़े संचयों का विकास निर्णय लेने के फलस्वरूप हुआ अथवा किसी संयोग से या जिम्मेदारी को प्रथमत, संयुक्त राज्य और रूस पर तथा कुछ हद तक ग्रेटब्रिटेन पर डालने के कारण हुआ।

सन् १९४५ में, संयुक्त राज्य में परमाणु बम-परियोजना पर काम करनेवाले वैज्ञानिकों द्वारा लिखी गयी फ्रैंक रिपोर्ट में, दुनिया की भावी आणविक स्थिति पर एक भविष्यवाणी की गयी, जो वर्तमान समय तक आते सही सिद्ध हुई है।

मेरे हिसाब से दुनिया के वर्तमान अणु-संचय की मात्रा तीन सौ बीस हजार मैगाटन है। यदि एक परमाणु-युद्ध में इस संचय का दस प्रतिशत (३२,००० मैगाटन) बमों के रूप में लक्ष्य के औसत डेढ़ सौ किलोमीटर के अन्दर गिराया जाय (उद्दिष्ट परिणाम के लिए लक्ष्य पर ही गिराने की जरूरत नहीं है) तो युद्ध के हो जाने के ६० दिन बाद—और हम मान लें कि उसमें सारा यूरोप, सारा सोवियत संघ और संयुक्त राज्य आ जायेगा—इन प्रदेशों में रहनेवाले ८० करोड़ लोगों में ७२०० लाख मारे जायेंगे, ६०० लाख सख्त घायल होंगे और सिर्फ हल्की चोटों से २०० लाख लोग बच जायेंगे।

किन्तु इन उत्तरजीवियों को निम्नलिखित समस्याओं का सामना करना पड़ेगा, सारे शहरों, केन्द्रीय जिलों तथा संचार एवं परिवहन का पूर्ण विनाश, संमुदाय का पूर्ण नाश, सारे जीवों की मृत्यु, पनपनेवाले सारे खाद्य का भारी रेडियोधर्मी दूषण। यह दुनिया के इस भाग का अंत बन जायगा, और दुनिया के शेष भाग का कितना बड़ा विनाश होगा, इसकी विश्वसनीय गणना कोई नहीं कर सकता।

शान्ति की दिशा में एक कदम

सन् १९६३ में मास्को में अनुमोदित आंशिक परीक्षण निरोधन संधि, एक महान्

←हिरोशिमा : अणुबम के विस्फोट के बाद→
इंसान की हैवानियत का उदाहरण

कदम है। दुःख की बात है कि यह संधि तीन वर्ष पहले, उस लम्बी अवधि के दौरान, जब फ्रांस को छोड़कर किसी भी राष्ट्र ने कोई बम-परीक्षण नहीं किया, नहीं की गयी। उस समय फ्रांस ने छोटे बम-परीक्षण किये हैं।

परीक्षित कुल ६०० मैगाटन में से, ४५० मैगाटन या कुल के एक-तिहाई भाग का पिछले तीन वर्षों में परीक्षण किया गया। लाखों अजन्मे बच्चों की बलि दी गयी, क्योंकि उन्होंने इस पर ध्यान नहीं दिया कि तीन वर्ष पहले ही परीक्षण-निरोधन का समाधान स्वीकार किया जा सकता था। मैं आशा करता हूँ कि इस प्रकार की भूल आगे नहीं की जायेगी, बम-परीक्षण संधि के प्रति मैं आभारी हूँ, किन्तु निश्चय ही हमें आगे जाना है। परीक्षण-निरोधन संधि केवल आरंभ मात्र है।

इसी बीच मैं कुछ ऐसे कार्यों को देखना चाहता हूँ, जो शायद मनोवैज्ञानिक या शिल्पवैज्ञानिक दुर्घटना द्वारा या ऐसी परिस्थितियों के संयोग द्वारा कि सबसे विवेकी नेता भी उसकी महाविपत्ति को रोक न पायें, एक विध्वंसकारी अणु-युद्ध के फूटने की संभावना को कम करें।

ओसलो में, दिसम्बर १९६३ में किये गये मेरे भाषण (शान्ति के लिए प्रोफेसर पॉलिंग को नोबेल-पुरस्कार प्रदान करते समय किया गया था) में मैंने प्रस्ताव किया था कि अमरीका के अणु-आयुधों का संचय, अलग-अलग ही, संयुक्त राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रण के अधीन रखना चाहिए, जिससे रूसी अणु-आयुध, रूस के प्रधान मंत्री तथा संयुक्त राष्ट्र के महामंत्री, दोनों की अनुमति के बिना प्रयुक्त न किये जायें, और अमरीका के अणु-आयुध संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति तथा संयुक्त राष्ट्र के महामंत्री, दोनों की अनुमति के बिना प्रयुक्त न किये जायें।

मैंने यह भी प्रस्ताव रखा था कि दोनों राज्यों के नियंत्रण-स्टेशनों का अधिकार, एक तरफ रूस में संयुक्त राष्ट्र तथा रूस के कार्यकर्ताओं के अधीन और दूसरी तरफ संयुक्त राज्य में अमरीका तथा संयुक्त राष्ट्र के कार्यकर्ताओं के अधीन होना चाहिए। मैं विश्वास करता हूँ कि इस दिशा की ओर के पहले कदम तक, इन नियंत्रण-स्टेशनों में संयुक्त राष्ट्र के निरीक्षकों का होना, हमारी सुरक्षा को बढ़ाने एवं इन आयुधों के उपयोग की संभावना को कम करने में, बहुत ही महत्त्वपूर्ण होगा।

एक ऐसे भविष्य की प्रतीक्षा

मैं भविष्य में एक ऐसे समय की प्रतीक्षा में हूँ जब दुनिया में युद्ध के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय नियम की सत्तात्मक व्यवस्था विद्यमान होगी। दुनिया से युद्ध के उन्मूलन के साथ हम मानव की स्वतंत्रता, और मानव के अधिकारों के लिए भी प्रयत्न करते हैं। युद्ध, सैन्यवाद, तथा संकीर्ण राष्ट्रवाद—हरेक राज्य में—यही मानव समाज के सबसे बड़े शत्रु हैं। मेरा विश्वास है कि जैसे-जैसे हम इस दुनिया में शांति तथा निरस्त्रीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करेंगे, वैसे-वैसे सारे राष्ट्रों की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक व्यवस्थाओं में और दुनिया भर के व्यक्तिगत मानव के अधिकारों में हम बड़े-बड़े सुधार पायेंगे।

विश्व-परिवार के नियम के द्वारा, युद्ध को मिटाने का विचार पुराना है और वह वर्तमान समय तक प्रगति की ओर बढ़ने लगा है। अब ऐसा समय आ गया है, जब कि वह स्वीकार्य होगा। ●

समुद्र का प्रदूषण

❀ निकोलाई गोर्स्की ❀

[अभी कुछ ही दिन पहले अमेरिका द्वारा प्राण-घातक गैसों के ढब्बे महासागर में डुबाये गये। विज्ञान के विनाशकारी उपयोग के सिलसिले में इस तरह घातक अवशेषों के विसर्जन की समस्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। प्रस्तुत लेख में इसके दुष्परिणामों की संक्षिप्त जानकारी लेखक ने दी है, जो रूस के भौगोलिक समिति के सदस्य हैं।—सं०]

महासागरों तथा समुद्रों के पानी में विसर्जित रेडियोधर्मी पदार्थों की मात्रा अत्यल्प है, तथा वहाँ की अत्यधिक विविध वनस्पति और जानवर रेडियोधर्मी पदार्थों की बहुत ही हल्की सान्द्रता को बरदाश्त कर सकते हैं। ठीक इसी दिशा में एक बहुत बड़ा खतरा पैदा हुआ है।

यह ज्ञात है कि मछलियाँ अपने शरीरों में फास्फोरस तथा जस्ता संकेंद्रित करती हैं, जब कि मोलस्क तथा क्रस्टेशिया कैल्शियम, स्ट्रोंशियम तथा रेडियोधर्मी विखंडन पदार्थों में अन्तर्निहित अन्य अनेक तत्त्वों को संकेंद्रित करते हैं।

बिकिनी प्रवालद्वीप पर परमाणु बमों के परीक्षणों के दो दिन बाद, पानी की ऊपरी सतह की रेडियोधर्मिता, सामान्य स्थिति से दस लाख गुनी बढ़ गयी। चार महीनों के बाद १२०० मील दूर के पानी की रेडियोधर्मिता सामान्य स्थिति से तिगुनी अधिक थी। तेरह महीनों में वह दूषित पानी करीब दस लाख वर्गमील तक फैल गया था।

परमाणु उद्योग के तीव्र विकास के कारण, रेडियोधर्मी अवशेष पदार्थों को सुरक्षित रूप से निपटाने की समस्या अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बन गयी है। ब्रिटेन में रेडियोधर्मी अवशेष चीजें कुछ प्रदेशों से नलियों द्वारा आयरिश सागर में निकाल दी जाती हैं, जब कि संयुक्त राज्य के ओक रिज में टेनिसी नदी-व्यवस्था द्वारा वे निकाल दी जाती हैं। संयुक्त राज्य में कुछ अवशेष भूमि के अन्दर गाड़ दिये जाते हैं या विशेष डिब्बों में सागर की गहराई में डुबो दिये जाते हैं।

फिर भी सागर का पानी जल्द ही इन डिब्बों की दीवारों को बरबाद करेगा और उनकी भयावह अंतर्वस्तुओं को घोल देगा। अगर आज इन अनर्थकारी पदार्थों

मनुष्य के खतरनाक कारनामे

नदी एक मलप्रणाल है—इस प्राचीन धारणा के कारण, दुनिया के कई जलमार्ग अपने भरपूर वनस्पति एवं मत्स्य जीवन को बरबाद करके निर्जीव एवं नामावशेष हो गये हैं। शहरों तथा औद्योगिक क्षेत्रों में, जहाँ सभी प्रकार की गदगी एक दमघोट, विषैला वातावरण बनाती है, मनुष्य के कारनामे प्रायः अत्यंत स्पष्ट हैं। —निकोलाई गोर्स्की

के बीसों या शत-शत डिब्बे सागर में डुबोये जाते हैं तो भविष्य में उनकी संख्या दस या सौ हजारों में बढ़ जायेगी।

सागरों में, विशेषकर पैसेफिक में, गहरी जगह या खाइयाँ हैं। सागर की औसत गहराई लगभग ढाई मील है, किन्तु इन खाइयों में यह चार और पाँच मील के बीच पहुँच जाती है और कहीं-कहीं सात मील तक। इन खाइयों को रेडियोधर्मी अपशेष चीजों की क्षेपण भूमि के रूप में प्रयुक्त करने के प्रस्ताव किये जाते हैं।

समुद्र की गहराई में विलीन रेडियोधर्मी पदार्थ के ऊपरी तल तक पहुँचने में कितना समय लगेगा? क्या रेडियोधर्मी अपकर्ष की प्रक्रिया, जो हमेशा चालू रहती है, ऊपरी तल तक पहुँचने के पहले उनको अहानिकर सिद्ध करेगी, या तब भी उनकी रेडियोधर्मिता इतनी पर्याप्त होगी कि ऊपरी, उपजाऊ परत विषैली बन सके?

समुद्रतल के पानी में परिवर्तन के लिए अपेक्षित समय के बारे में वैज्ञानिक बिलकुल भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण रखते हैं। जार्ज युस्ट (संघीय जर्मन गणराज्य) ने गणना की है कि अटलांटिक का ठंडा भारी पानी, गहराइयों में फैल जाने के बाद, पाँच वर्ष चार महीनों के बाद भूमध्य रेखा तक पहुँचता है, जब कि जी० ई० आर० डीकन (ब्रिटेन) के अनुसार यह समय अठारह वर्ष है। ई० बी० वर्थिंगटन (संयुक्त राज्य) का मत है कि अटलांटिक के तल का पानी सन् १८१० का है जब मौसम ज्यादा ठंडा हो गया था, और उसके बाद की डेढ़ शताब्दी तक वह बदला नहीं है।

न्यूजीलैंड के समुद्र-वैज्ञानिक ब्रोडी तथा बलिंग ने व्यक्त किया है कि स्कॉट उपद्वीप के उत्तर में ८,५०० फीट गहराई का अटलांटिक पानी २,५०० वर्ष पुराना है तथा कैंपबेल द्वीप के निकट २,६२४ फीट गहराई का पानी १,९०० वर्ष पुराना है। न्यूजीलैंडवालों ने पानी की आयु निश्चित करने के लिए कार्बन-१४ का तरीका अपनाया है। किंतु दूसरों का मत है कि समय के अलावा कार्बन-१४ को प्रभावित करनेवाले अन्य कई तत्त्व हैं, और तदनुसार इन निर्णयों को सतर्कता से अपनाना चाहिए।

गैलेटी पर डैनिश अभियान तथा वित्याज पर रूस के अभियान से पैसेफिक खाइयों की अत्यन्त गहराई के पानी में विलीन प्राणवायु का पता चला है। शत-शत वर्षों तक, केवल हजार तक लें, सागर की गहराई में पड़े रहे पानी में प्राणवायु नहीं हो सकती। कुछ समय के अन्दर, वह कई प्रक्रियाओं—आकृति-रासायनिक (धातु पदार्थों का उत्पादन) और जीव-रासायनिक (जीवित प्राणियों का श्वासोच्छ्वास और मृत प्राणियों का सड़ान) दोनों प्रक्रियाओं द्वारा, जो सागर के तल में और ऊपर के पानी में लगातार चालू रहती है, उपयुक्त हुई होगी।

डैनिश तथा रूस के अभियानों ने सागर की खाइयों, जो अब तक जीवन से शून्य समझी जाती थी, की गहराइयों में प्राणी-जगत् के विभिन्न रूपों का पता चला है। ये सब प्राणी निरंतर प्राणवायु का उपभोग करते हैं और यदि वहाँ कोई जलप्रवाह न होते तो अब तक वे पानी में विलीन प्राणवायु को समाप्त कर देते।

सागर का पानी एकरूप नहीं है, उसका तापमान अनुलंब तथा समतल, दोनों प्रकार से बदल जाता है। इतना ही क्यों, सागर का पानी लगातार गतिशील है, आसपास की परत विविध दिशाओं में चलती रहती है। इस प्रकार विभिन्न तापमान का पानी निरन्तर मिलाया जा रहा है और भारी बनने पर धँस रहा है। समान आयतन का हलका पानी स्थान बदल देता है और ऊपरी तल में आ जाता है। यह निरंतर प्रक्रिया सागर की सारी गहराइयों में व्याप्त है, स्पष्टत: खाइयों के तल में भी।

अब भी हम नहीं जानते हैं कि ऊपरी तल के पानी को सागर के तल तक पहुँचने में कितना समय लगता है, किन्तु स्पष्टतः उसकी गति अपेक्षाकृत तीव्र है, उसमें प्राणवायु विलीन है।

वित्याज पर, इस वर्ष के रूसी अभियान द्वारा विवेचित कई गर्तों में होना

हमारा विषैला ग्रह

प्रगति के नाम पर, मनुष्य ने धुएँ, गन्दे पानी, धूम-कोहरे, प्रक्षालकों और कोलाहल की एक २०वीं शताब्दी की पण्डोरा की पेटी खोली है, जो एकसाथ मिलकर हमारे युग की सबसे बड़ी समस्या—हमारे ग्रह का प्रदूषण बन गयी है। हम फालतू चीजों को नदियों या झीलों में फेंक देते हैं, इस प्रकार जिस वायु में हम साँस लेते हैं उसे अपवित्र कर देते हैं, मिट्टी को खराब कर देते हैं और आपस में कोलाहल की बौछार करते हैं। यह कोलाहल, स्नायविक परेशानी, गूँगेपन तथा अन्य मानसिक एवं शारीरिक अव्यवस्थाओं को बढ़ानेवाली शिल्प-वैज्ञानिक संस्कृति का उप-उत्पादन है। जल्दी ही एक नयी आवाज, अविस्वन जेट विमान की गूँज और जोड़ दी जायेगी। —निकोलाई गोर्स्की

पाई थी, जिसका आविष्कार ६ वर्ष पूर्व गैलेटी के डेनिश अभियान ने किया था। इस वर्ष की माप के अनुसार पानी के तापमान में ०·२ का अन्तर देखा गया है।

समुद्र-वैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त गहरे पानी की तापमान की परिशुद्धता को ध्यान में रखने से कोई भी यह समझ सकता है कि यह, समुद्र के तल, मध्य और ऊपरी तल के बीच, सबसे गहरी खाइयों तक, पानी के सम्भवत धीमे किन्तु निरंतर विनिमय के अस्तित्व को सूचित करनेवाला एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है।

जब वितरण समुद्र की गहरी परत को साफ करता है और ऐसी एक परत को ऊपरी तल पर उठाता है, जो पोषक फासफोरस तथा नाइट्रेट से भरी हुई है, जो अनंत जीवन का आधार बनती है। अगर परमाणु उद्योग की अपशेष चीजों के हानिकर रेडियोधर्मी पदार्थ सागर की गहराइयों में संचित करें, तो यह प्रक्रिया मृत्यु का कारण बन जायेगी।

महासागरों और समुद्रों में एक दूसरी घटना होती है, जिसे ऊपरी स्रोत कहते हैं। हवा, धाराओं तथा समुद्र की गहरी परत की शिथिलता के कारण पोषक लवणों से भरे पानी की ठंडी परत कुछ प्रदेशों में महाद्वीप की तराइयों या जलप्लावित तीरों की बगल में ऊपरी तल तक आती है। यह उत्तरी अमरीका के अटलांटिक तट, कैलिफोर्निया तट, और दक्षिण अमरीका और अफ्रीका के पश्चिमी तटों पर लगातार होता है। जहाँ ऊपरी स्रोत होता है, वे प्रदेश जलवायुस्वरूप वनस्पतियों तथा जीवों, जिनमें मछलियाँ भी सम्मिलित हैं, से समृद्ध हो जाते हैं। ऊपरी तल को उठानेवाला पानी अगर रेडियोधर्मी अपशेषों से विसर्जित पदार्थों से दूषित हो जाय, तो उसका मतलब है इन प्रदेशों के श्रेष्ठ उत्पादनकारी मत्स्य-उद्योग की समाप्ति।

महासागर और समुद्र, दोनों मिलकर एक विराट् अविभाज्य रूप—विश्वमहासागर बनते हैं। उसका कोई भी भाग पृथक् और किसी एक राज्य की संपत्ति नहीं मानी जा सकती। समुद्र के किसी भी एक भाग में रखे गये रेडियोधर्मी पदार्थ हजारों मील दूर तक व्याप्त होंगे और लाखों वर्गमील के क्षेत्र को दूषित करेंगे।

इसी कारण से, रेडियोधर्मी पदार्थों द्वारा समुद्र के दूषण-सम्बन्धी सारे प्रश्न, उनके मूल या प्रयोजन पर ध्यान दिये बिना, अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व के होते हैं और मैत्रीपूर्ण, सम्मिलित अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सहयोग द्वारा हल किये जाने चाहिए।

जिस मात्रा में परमाणु-उद्योग विकसित हो रहा है, उससे पता चलता है कि इस समस्या का अध्ययन तुरत ही आरंभ करना चाहिए। महासागरों और समुद्र का अनियंत्रित दूषण, दस या बीस वर्षों के अन्दर असंशोधनीय महाविपत्ति की ओर ले जा सकता है। मानव के भोजन का बड़ा तथा अक्षय स्रोत, महासागर, आज विपत्ति में है।

[प्रस्तुत विषयों की सारी सामग्री विश्वदर्शन की पत्रिका 'यूनेस्को कूरियर' संग्रह विशेषांक से साभार पुनर्मुद्रित की गयी है।]

मंत्री के पत्र

सर्व सेवा संघ-अधिवेशन : सेवाग्राम

प्रिय बन्धु,

सर्व सेवा संघ का वार्षिक अधिवेशन दिनांक २ से ४ अक्तूबर १९७० को प्रात ९ बजे से सेवाग्राम, वर्धा (महाराष्ट्र) में आयोजित करने का निर्णय लिया गया है।

अधिवेशन के विचारणीय विषय

१. राजगीर-अधिवेशन की कार्यवाही की स्वीकृति
२. मंत्री का प्रतिवेदन
३. ग्रामस्वराज्य-कोष का समर्पण
४. कोष की रिपोर्ट एवं उसके अनुभवों पर चर्चा
५. देश की वर्तमान परिस्थिति
६. ग्रामदान-प्राप्ति एवं पुष्टि
७. ग्रामदानी गाँवों में निर्माण-कार्य
८. सत्याग्रह—पूना की प्रबन्ध-समिति की बैठक में पारित प्रस्ताव के संदर्भ में
९. लोकनीति का अगला कदम
१०. तरुण-शान्तिसेना
११. सर्वोदय-मण्डल का नाम-परिवर्तन
१२. लोक-सेवक-निष्ठा-पत्र में परिवर्तन
१३. अध्यक्ष की अनुमति से अन्य विषय

● रेलवे-कन्सेशन प्राप्त करने की कोशिश की जा रही है।

● लोक-सेवक भी यदि चाहे तो इस अधिवेशन में भाग ले सकेंगे।

तरुण शांतिसेना-शिविर : इंदौर

आपको मालूम होगा कि २३ से २५ अक्तूबर '७० तक इन्दौर में अखिल भारतीय तरुण-शान्तिसेना-शिविर हो रहा है। तरुण-शान्तिसेना का महत्त्व बताने की आवश्यकता नहीं है। यह एक ऐसा विषय है जिस ओर सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने कम ध्यान दिया है। इससे क्या हानि हो सकती है, इसको सोचकर ही दिल काँप उठता है।

मेरा आपसे अनुरोध है कि तरुण-शान्तिसेना का प्रारंभ हम अपने बच्चों से करें और इन्हें सर्वोदय के इस कार्य से परिचित करायें। इसलिए आप विशेष प्रयत्न कर तरुण-शान्तिसेना-शिविर में अपने-अपने बच्चों को भेजें, ऐसी मेरी प्रार्थना है। जिला सर्वोदय-मण्डल की अगली बैठक में इस विषय पर चर्चा करके इस कार्यक्रम को गतिशील बनायें और अधिक-से-अधिक लड़के और लड़कियाँ इस शिविर में भेजें। शिविर के लिए रेलवे-कन्सेशन आप मंत्री, अ० भा० शान्तिसेना मण्डल, राजघाट, वाराणसी-१ को लिखकर मँगवा सकते हैं। इस अच्छे काम का प्रारम्भ हमें खुद से ही करना चाहिए, यह समझकर आपकी सेवा में यह पत्र लिख रहा हूँ। आप इस विषय में क्या करने जा रहे हैं, यह मुझे कृपया लिखने का कष्ट करें।

आपका

[signature]

सर्व सेवा संघ,
गोपुरी, वर्धा
मंत्री

लोक-यात्रा से

लोक-शिक्षण का प्रभाव

❀ निर्मल वैद ❀

अगस्त की ९ तारीख, लोकयात्रा रामबन आ पहुँची है। खुली हवा में विहार करनेवालों का मन बन्द कमरे में कैसे लगे! सारा दिन यात्रिकों ने शहतूत के पेड़ों की घनी शीतल छाया के तले बिताया। सामने सड़क के उस पार नीचे पहाड़ों के साथ-साथ चनाब नदी उछलती-कूदती हुई तेज गति से बही चली जा रही है, मगर आस-पास के खेत सूखे पड़े हैं। पिछले वर्ष भी पानी का अभाव रहा, और इस वर्ष भी कुछ इलाकों में पानी नहीं पड़ा। आकाश में बादल प्रायः रोज ही आते हैं, करीब-करीब रोज ही बिजली चमकती है, मगर बरसे बिना उड़ जाते हैं। चनाब नदी के भागते हुए जल को देखकर लगता है कि अगर 'लिफ्ट इरिगेशन' का इन्तजाम हो जाय, तो ये पहाड़ों की ढलानों पर के खेत हरे-भरे हो जायँ। मगर जनता ने सब कुछ सरकार के भरोसे छोड़ रखा है। वह अपनी शक्ति नहीं पहचान पायी है।

कश्मीर-घाटी के अनुभव

दिनांक ४-८-७० को ३ माह की कश्मीर-घाटी की यात्रा पूरी करके हम जवाहिर टनल के इस पार जम्मू क्षेत्र में दाखिल हुए उस वक्त हमें उन दिनों की याद ताजी हो आयी, जब मई-जून के महीने में २० दिन तक, हालात खराब होने की वजह से, हमें श्रीनगर में रुकना पड़ा था। अपनी पिछली रिपोर्ट में इसकी कुछ जानकारी हमने दी थी, लेकिन पुनः उन बातों का स्मरण कराना आगे के काम की परिकल्पना के संदर्भ में आवश्यक लगता है। आगजनी की घटनाओं की वजह से साम्प्रदायिक तनाव बढ़ा हुआ था और हमारे साथ यात्रा में चलने की कोई हिम्मत नहीं करता था। जिस द्वार को खटखटाते थे, वही बन्द मिलता था। यात्रिक शान्तिपूर्वक प्रभु-इच्छा को जानने की कोशिश कर रही थी। एक साथी ने तो यहाँ तक कह दिया कि आपको हवाई-जहाज का टिकट कटा देते हैं, आप यहाँ से ही लौट जाइए। इतने में परिस्थिति अनुकूल बनने लगी, मानो प्रभु ने हमारे धैर्य की परीक्षा लेकर सब रास्ते खोल दिये हों! सरकारी, गैरसरकारी तथा आवाम की मदद आ पहुँची। कश्मीर-सरकार ने एक जीप उपलब्ध कर दी और विकास-खण्ड, पंचायत, तहसीलवालों को सहयोग हेतु सूचनाएँ प्रसारित कर दीं। श्री गांधी-आश्रम और खादी-कमीशन ने अपने कार्यकर्ताओं की सेवाएँ प्रदान कीं। जनता ने भोजन और निवास की व्यवस्था के साथ-साथ पेट्रोल के खर्च के लिए रकमें भेंट कीं। सुश्री मृदुला बहिन ने बारामुल्ला के अधिक तनाव के क्षेत्र में यात्रा निर्विघ्न चलाने की जिम्मेदारी उठायी।

यात्रा में कभी-कभी हमारे साथ १०-१५ लोग चलते हैं, तो कभी-कभी रास्ता दिखानेवाले एक व्यक्ति की भी खोज करनी पड़ती है। कभी निवास की डाक-बंगलों में शाही व्यवस्था होती है, कभी बिना दरवाजावाले इतने छोटे-से कमरे में रहना होता है, जिसमें यात्रिकों के चार बिस्तरे भी मुश्किल से समा पाते हैं! कभी बहुत अच्छा भोजन मिलता है, और कभी तो स्वयं ही बनाना पड़ता है। परन्तु हमारे लिए तो दोनों प्रकार की परिस्थितियाँ समान हैं, क्योंकि दोनों ही अस्थायी हैं।

आखिर दिनांक १९ जून, '७० को श्रीनगर से बारामुल्ला की ओर लोकयात्रिक बढ़ी। वातावरण तनावपूर्ण था। मार्ग में जगह-जगह लोग यात्रिकों को रोककर रूखे शब्दों में जब पूछते 'कहाँ से आये? कहाँ जा रहे हैं?' तो आसपास के खेतों में काम करनेवालों के कान एकदम खड़े हो जाते, और वे भागकर यात्रिकों को घेर लेते। कश्मीरी साथी उन्हें कश्मीरी में समझाते, यात्रिक उन्हें संक्षिप्त उत्तर देकर, "गाँव की गुरबत मिटे और मोहब्बत हो", तथा एक पत्रक उनके हाथ में थमाकर आगे बढ़ जाती। इस उत्तर से उनकी उग्रता कम होती और जिज्ञासा बढ़ती। कई बार तो मार्ग में ही ३-४ छोटी-छोटी सभाएँ भी हो जातीं।

कश्मीर घाटी की ७० दिन की यात्रा में ४८ पड़ाव पड़े और यात्रिकों ने २७८ मील का सफर किया। इन दिनों में १४५ सभाएँ हुईं, और करीब ३९,००० लोगों ने सर्वोदय-विचार सुना। ये सभाएँ गाँव, कस्बे और नगर के स्त्री, पुरुष, युवक, विद्यार्थी, शिक्षकों, बुद्धिजीवियों, सियासी पार्टियों, विकास-खण्ड, तहसील और शिक्षा-विभाग के कर्मचारियों, श्री गांधी-आश्रम और खादी-कमीशन के कारकूनों, माचिस फैक्टरी के कर्मचारियों, प्रेसमैन तथा पुलिस के सिपाहियों में हुईं। सब लोगों ने सर्वोदय-विचार को तस्लीम किया। कइयों ने काम को आगे बढ़ाने की उत्सुकता बतायी, तथा अपने नाम व पते दिये। कुछ गाँवों में 'यूथफ्रण्ट' के नौजवानों ने दूसरे पड़ावों पर भी पहुँचकर सर्वोदय-विचार को गहराई से समझने की रुचि दिखाई। दूसरे एक गाँव के २५ नौजवानों ने सर्वोदय-समाज के नाम की एक कमेटी बनाकर काम प्रारम्भ करके यात्रिकों को पत्र द्वारा सूचित किया। कहीं-कहीं सभाओं में कुछ जमीनदारों ने बेजमीनों को अपनी जमीन का २०वाँ हिस्सा देने की ख्वाहिश जाहिर की। एक मुस्लिम ग्राम-सेवक भाई ने सर्वोदय के काम के लिए जीवन-दान देने और ब्रह्मचर्य के पालन का संकल्प प्रकट किया। काजीमुराद के कुछ मुस्लिम भाइयों ने आमसभा के बाद ही शाम तक ग्रामकोष के लिए ६०० रु० इकट्ठे कर लिये, और यात्रिकों को जानकारी दी कि फिलहाल वे एक पुस्तकालय और अध्ययन-मण्डल से अपना काम शुरू करने का इरादा रखते हैं। सैकड़ों ग्रामीण 'भूदान-तहरीक' के ग्राहक बने, सर्वोदय-

साहित्य काफी बिका तथा किसी मुस्लिम भाई ने 'गीता-प्रवचन' खरीदा तो हिन्दू भाई ने 'रूहुल कुरान' की पूछताछ की।

चन्द्रकोट नामक गाँव में लौटती बार हमारा पड़ाव दुबारा पड़ा। वहाँ ८-१० 'भूदान-तहरीक' के ग्राहक बने थे। वे पत्रिका को बहुत शौक से पढ़ रहे हैं, सर्वोदय-विचार को काफी समझने लगे हैं। एक भाई ने कहा, "अपनी मुश्किलों के लिए हम दूसरों को कोसते हैं, मगर हमें स्वयं ही जीना नहीं आता। गाँव के पास १५ चश्मों का पानी व्यर्थ बह रहा है और ग्रामीण प्यासे मर रहे हैं। ३ साल पहले ३ पक्के हौज बनवाकर रबर के पाईप डलवाये, तो लोगों ने हौज में मिट्टी-पत्थर डाल दिये और चलते राही ने पाईप को काटकर पानी पी लिया।"

रूहानी तत्त्व की समानता

मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, पंजाब आदि सूबों में यात्रियों से यह सवाल आमतौर पर पूछा जाता था, "आपकी जाति क्या है ?" कश्मीर में पग-पग पर यह पूछा जाता था कि, "आपका मजहब क्या है ?" दूसरी एक बात जो कश्मीर में सर्वत्र सुनने को मिलती वह यह कि, "गुजरात और महाराष्ट्र में जाकर आप मोहब्बत का पैगाम क्यों नहीं देती, जहाँ साम्प्रदायिक दंगे हुए हैं और जहाँ के लोगों के दिल साम्प्रदायिकता के विष से भरे हुए हैं।" इस सवाल का हम कई बार कई प्रकार से उत्तर देती, और प्रश्नकर्ताओं को जब हम इस मसले को हल करने के लिए मिलकर शक्ति जुटाने का आह्वान करतीं, तो वे आत्मनिरीक्षण में डूब जाते और अपनी असमर्थता महसूस करते। रूहानी तत्त्व की समानता को सिद्ध करने के लिए उन्हें कुरानशरीफ, गीता, गुरुग्रन्थ-साहिब आदि के उदाहरण लेकर समझाती तो लोगों पर उसका गहरा असर होता। कश्मीर-यात्रा के काफी पहले सुश्री कालिन्दी सवंटे ने लोक-यात्रियों को कुरान-शरीफ के कुछ अंश अरबी में पढ़ाये थे। अब यात्रा के दौरान जहाँ कहीं कुरान-शरीफ का अच्छा ज्ञाता मिल जाता है, उससे भी हम पढ़ लेते हैं। इसके जरिये लोगों से अच्छा सम्पर्क स्थापित होता है और उसी सिलसिले में मजहबों के बारे में जो चर्चा होती है, उससे दृष्टि काफी साफ होती है। एक इमाम भाई हमें तीन बार यात्रा में मिलने आये। वे अच्छा कुरानशरीफ पढ़ाते हैं। उनकी सर्वोदय में भी रुचि बढ़ी है।

कश्मीर में कश्मीरी के अलावा उर्दू चलती है। उर्दू सीखने में हिन्दी लिपि और उर्दू भाषा के 'गीता-प्रवचन' और *विनोबाजी की 'मोहब्बत का पैगाम'* आदि पुस्तकों से काफी मदद मिली। गाँवों में कई बार सभाओं में कश्मीरी में तर्जुमा करने की जरूरत पड़ती थी। कई बार हमें काफी अच्छे तर्जुमा करनेवाले भी मिल जाते थे।

'सर्वोदय' के लिए अनुकूल भूमिका

३ माह की यात्रा में हमने पाया कि कश्मीर घाटी में सर्वोदय के काम के लिए एक अनुकूल भूमिका विद्यमान है। यहाँ का बच्चा-बच्चा गांधी के नाम से परिचित है, और उनका आदर करता है। बाबा की कश्मीर-यात्रा से, यहाँ के लोगों की सर्वोदय-तहरीक के लिए श्रद्धा पैदा हुई है। हमें इस बात की खुशी हुई कि यहाँ कइयों के द्वारा हिन्दुस्तान और हिन्दुस्तानी के प्रति नफरत भर देने के बावजूद भी आवाम ने सर्वोदय-तहरीक की निष्पक्षता या गैरजानिबदारी पर कभी कोई शुबा नहीं उठाया। गुरबत मिटाने और इन्सानी बिरादरी कायम करने की इसे वे एक बेलौस तदबीर मानते हैं। चार बहनों के १२ वर्षीय पैदल सफर के मिशन से यहाँ के स्त्री-पुरुषों का दिल द्रवित हो उठा और सर्वोदय के लिए जिज्ञासा उत्पन्न हुई। यहाँ के आवाम की खुद की वृत्ति भी सर्वोदय के अनुकूल है। ये स्वभावतः सरल, पवित्र, मोहब्बतवाले और मेहमाननिवाज हैं। सर्वोदय के काम में ये सहयोग देंगे।

इसके अलावा शेख अब्दुल्ला ने मुल्क में इन्सानी बिरादरी का काम उठाया है। उनसे लोक-यात्रियों की दो बार मुलाकात हुई। काफी चर्चाएँ हुईं। यद्यपि सब बातों में हम सहमत नहीं थे, तथापि चार बहिनें, बारह वर्ष के लिए मुल्क में पैदल घूम रही हैं, इस बात की कद्र उनके मन में पैदा हुई। उन्होंने सुश्री मृदुला बहन के जरिये इस बात की फिक्र रखी कि कश्मीर घाटी में लोकयात्रा निर्विघ्न सम्पन्न हो। शेख साहब ने चर्चा के अन्त में कहा, "हिन्दुस्तान की ओर आँख उठाते हैं तो सिर्फ विनोबा और जे० पी० ही दिखाई देते हैं। जे० पी० *सियासत* में आ जायें तो हम उनके पीछे हैं।"

श्रीनगर की विद्या-प्रचारिणी सभा के सदस्यों तथा अन्य कई लोगों ने कश्मीर घाटी में सर्वोदय को बढ़ावा देने पर जोर दिया। उन सबके सुझावों को मद्देनजर रखते हुए हमें महसूस हुआ कि, श्रीनगर में एक अनुभवी और सक्षम कार्यकर्ता के संचालन में एक सर्वोदय-केन्द्र खुले, जिसके द्वारा पुस्तकालय, अध्ययन-मण्डल, अलग-अलग मज़हबों का अध्ययन, गोष्ठियाँ, स्कूल-कालेजों तथा अलग-अलग वर्गों में प्रवचन आदि का आयोजन, यात्राएँ, भिन्न स्तरीय कार्यकर्ताओं को नये संदर्भ में प्रशिक्षित करने आदि प्रवृत्तियाँ चलें। इसी केन्द्र के जरिये श्री गांधी-आश्रम, खादी-कमीशन और खादी बोर्ड के ६-७ सौ कार्यकर्ताओं की शक्ति इस काम के लिए संजोयी जाय। आज ये लोग, गांधी के नाम के अलावा कुछ नहीं जानते और सिर्फ व्यापारी बनकर रह गये हैं, यद्यपि ये बहुत ईमानदार और मेहनती हैं। एक बात जो इनके पक्ष की है वह यह, कि यहाँ *का आवाम इन संस्थाओं को गैरजानिबदार* समझकर, आदर से देखता है।

यहाँ यह प्रत्यक्ष-दर्शन हुआ कि जो काम फौज और पैसे से नहीं किया जा सका, वह काम ऐसी यात्राओं से हो सकता है। खुले मौसम में यहाँ एक या दो टोलियाँ, सर्वोदय-प्रचार हेतु घूमती ही रहनी चाहिए।

विश्वशान्ति को चुनौती देनेवाले→

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय : संघ-भवन विवाद

-- वाराणसी के प्रमुख नागरिको द्वारा समाधान का प्रयास –

विभिन्न विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व करनेवाले वाराणसी के नागरिको की एक सभा में गहरी चिन्ता के साथ उस नयी परिस्थिति पर विचार किया गया जो बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की परिधि के भीतर राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के कब्जे में विद्यमान भवन के प्रश्न को लेकर पैदा हो गयी है। यह सभा अनुभव करती है कि अविलम्ब उक्त समस्या का सौहार्दपूर्ण समाधान ढूँढ कर निकाला नही जाता तो विश्वविद्यालय के निर्विघ्न कार्य-सचालन में बाधा उत्पन्न होने का खतरा सम्भावित है। और वह भी उस समय, जब विश्वविद्यालय का नया शैक्षणिक सत्र आरभ हुआ है। किसी भी प्रकार की अशाति या उपद्रव से विश्वविद्यालय को सुरक्षित रखना सभी सम्बद्ध जनो के हित की दृष्टि से नितात आवश्यक है।

नागरिको की यह सभा अनुभव करती है कि असदिग्ध रूप से साधारण सी समस्या आज अनावश्यक ढग से जटिल बन गयी है। इसका परिणाम यह है कि इस प्रश्न को लेकर बाहरी उत्तेजना भी बढ़ती जा रही है। फलतः विश्वविद्यालय में और नागरिको के सार्वजनिक जीवन में तनाव बढ़ता जा रहा है। यदि यहाँ इस तर्कसंगत सिद्धान्त को मान लिया जाय कि बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की परिधि के भीतर विश्वविद्यालयेतर कोई भी अन्य सस्था किसी भी ऐसे भवन को अपने कब्जे में नहीं रख सकती जिस पर विश्वविद्यालय का पूर्ण नियत्रण न हो, तो इस विवादास्पद विषय से सम्बद्ध सभी तरह की उत्तेजना और तनाव को दूर किया जा सकता है। यह सही है कि छात्रो के अनेक राजनीतिक, अर्धराजनीतिक एवं सास्कृतिक सगठन विश्वविद्यालय की परिधि के भीतर काम कर रहे हैं, पर राष्ट्रीय स्वयसेवक, सघ के अधिकार में विद्यमान भवन के अलावा किसी भी वर्ग या दल का किसी भवन पर पूरा कब्जा नही है। यदि कोई अन्य वर्ग या दल किसी भी भवन को इस प्रकार अपने कब्जे में रखता, तो चाहे उस वर्ग या दल को कोई भी राजनैतिक या सास्कृतिक रूप क्यो न दिया गया होता, विश्वविद्यालय के अधिकारियो ने विवश होकर उस वर्ग या दल को अपना कब्जा छोड़ने का आदेश दिया होता। वर्तमान समस्या का सौहार्दपूर्ण एव सम्मानजनक समाधान ढूँढ निकालना सभव है। विचार-विनिमय एव बातचीत द्वारा ही ऐसा समाधान उपलब्ध हो सकता है, जो विश्वविद्यालय के निर्बाध कार्य-सचालन में तथा नगर और बाहर के जनमन में फैलते हुए तनाव को शान्त करने में सहायक सिद्ध हो। आपसी बातचीत द्वारा समझौता कराने के निमित्त यह सभा निम्नाकित सदस्यों की एक समिति को नियुक्त करती है जो सम्बद्ध पक्षो के साथ आपसी बातचीत द्वारा उभय-पक्षमान्य समाधान एक मास के भीतर ढूँढ निकालने का प्रयास करेगी।

समिति के सदस्य :

१. श्री रोहित मेहता, अध्यक्ष
२. प० करुणापति त्रिपाठी
३. सुश्री शुभदा तैलग
४. श्री प्यारे कृष्ण गुर्त्तो
५ श्री वशीधर श्रीवास्तव, सयोजक

पारस्परिक वार्तालाप चलाने के लिए अनुकूल वातावरण उत्पन्न करने की दृष्टि से इस सभा का सुझाव है कि :

(१) इस आपसी वार्तालाप की अवधि में उस भवन में, जो आज राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के कब्जे में है, तालाबन्दी कर दी जाय, जिससे कि विश्वविद्यालय या सघ द्वारा वहाँ कोई क्रियाकलाप न किया जा सके।

(२) पारस्परिक वार्तालाप की इस अवधि में सम्प्रति संघ द्वारा कब्जे में रखे हुए भवन की ताली किसी ऐसे तृतीय पक्ष की सुपुर्दगी में रख दी जाय, जो दोनो पक्षो को मान्य हो।

(३) पारस्परिक वार्तालाप की इस अवधि में सभी सम्बद्ध पक्ष या लोग ऐसा कोई काम करने से दूर रहें, जो छात्रों या जनता के मन में तनाव उत्पन्न करने का कारण हो सकता हो।

वाराणसी के नागरिकों की यह-सभा सम्बद्ध पक्षो से, जनता से, तथा प्रेस से इस पारस्परिक वार्तालाप समिति को पूर्ण सहयोग देने की प्रार्थना करती है, जिससे इस वर्तमान दुर्भाग्यपूर्ण विवाद के कारण महामना मालवीय द्वारा प्रतिष्ठापित विश्वविद्यालय का नाम कलुषित न होने पाये।

वाराणसी : ता० १०-८-'७०

→ साम्यवाद और साम्प्रदायिकता के दो ज्वलन्त प्रश्न आज भारत के सामने मुँह बाये खड़े हैं। बिहार में सर्वोदय-आन्दोलन के सफल होने से इन दोनो मसलो का हल मिल सकेगा। श्री जयप्रकाशजी ने 'करो या मरो' का नारा देकर बिहार में ग्राम-स्वराज्य का जो अलख जगाया है, उससे सर्वोदय-तहरीक में एक नया अध्याय प्रारम्भ हुआ है। इसने आज के अधकार में नयी आशाओं और नयी प्रेरणाओं का दीप जलाया है, ऐसा हम यहाँ से महसूस करते हैं। ●

पं० बंगाल में उग्रवादी उपद्रव और गांधी का प्रभाव

❀ शैलेशकुमार बन्द्योपाध्याय ❀

बंगाल में गांधी-चित्र और साहित्य पर आक्रमण क्यों हो रहा है? यह सवाल अक्सर पूछा जाता है, न केवल देश के दूसरे भागों में, बल्कि स्वयं प० बंगाल में भी। यह एक ऐसा प्रश्न है, जिस पर न केवल आम लोगों की, बल्कि गांधी-विचार को माननेवालों की भी विभिन्न रायें हैं। इस प्रश्न के तथ्यपूर्ण जवाब की आवश्यकता है, केवल जानकारी के लिए ही नहीं, बल्कि इस चुनौती का सामना करने हेतु उपयुक्त समर-नीति बनाने के लिए भी।

भ्रामक धारणाएँ

उदाहरण के लिए एक राय यह है कि गत १६ अप्रैल '७० को गांधी-साहित्य की जो प्रदर्शनी कलकत्ता में आयोजित हुई थी, उस पर—और उसके बाद लगातार गांधी-साहित्य और चित्रों पर होनेवाले—आक्रमण का कारण यह है कि उसका आयोजन एक बेईमान सेठ के द्वारा किया गया था, और उस समारोह के मुख्य अतिथि एक ऐसे बदनाम राजनैतिक नेता थे, जो अपने को गांधीवादी कहते हैं। अगर हम इस तर्क को थोड़ी देर के लिए मान भी लें कि साहित्य-विक्रेता बेईमान और उद्घाटनकर्ता बदनाम राजनैतिक थे, तो भी यह प्रश्न उठता है कि क्या और कोई गांधी-साहित्य के अलावा अन्य चीजों का व्यापार करनेवाला बेईमान सेठ, और अन्य कोई अपने को गांधी-भक्त के रूप में प्रस्तुत करनेवाला बदनाम राजनैतिक प्रदेश में नहीं है? अगर ऐसा है तो, क्या उग्रवादियों ने ऐसे व्यापारिक संस्थानों को अपने आक्रमण का निशाना बनाया है, और ऐसे राजनैतिकों द्वारा संचालित संगठनों को तहस-नहस करने का अभियान चलाया है? और क्या उग्रवादियों द्वारा लूटे गये सभी स्थान (कारागार विश्व-संस्थाएँ, सार्वजनिक इमारतें, अस्पताल भी, जिनको गांधी-चित्र से कुछ भी लेना-देना नहीं है) ऐसे बेईमान व्यापारियों या इसी तरह के अन्य लोगों से ही सम्बन्धित हैं? मुझे आशा है कि पाठक इन प्रस्तुत प्रश्नों से सहमत होंगे, जो अपने आप में जवाब भी हैं।

और फिर प्रदेश में कम-से-कम आधे दर्जन राजनैतिक दल मार्क्स, लेनिन, और माओ के प्रति भी, निष्ठा व्यक्त करनेवाले हैं। उग्रवादी, जो नक्सलवादी कहे जाते हैं, भी इन्हीं नेताओं के प्रति निष्ठा व्यक्त करते हैं, लेकिन वे बाह्य रूप से या इन दलों की, क्रान्तिकारी सिद्धान्तों को विकृत करनेवाला मानकर, भर्त्सना करते हैं, लेकिन तब भी कभी वे न तो ऐसे दलों के प्रति अभद्र हुए हैं, या उनके साहित्य पर आक्रमण ही किये हैं। इससे हमें यह समझने में मदद मिलेगी कि गांधी के विरुद्ध उनका कोप उस तथाकथित प्रतिष्ठान के कारण नहीं है, जिसके साथ गांधी के जुड़े होने की बात कही गयी है। अगर ऐसा होता तो इसी तर्क के अनुसार उन्होंने मार्क्स तथा अन्यों के विरुद्ध भी ऐसे ही जिहाद शुरू किये होते, क्योंकि वे भी प्रतिष्ठानों से जुड़े हैं, यद्यपि भिन्न प्रकार के प्रतिष्ठानों से।

और भी एक अभियोग यह है कि, क्या यही भी, यहाँ तक कि बहुत ही उत्तेजक परिस्थिति में भी, नक्सलवादियों ने सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को अपमानित या आहत किया है? यह बात वस्तुस्थिति से बहुत दूर की है। मुझे कम-से-कम एक आधी दर्जन घटनाओं की जानकारी है, जिनके अनुसार नक्सलवादियों ने सर्वोदय-कार्यकर्ताओं और उनकी संस्थाओं को अकारण नुकसान पहुँचाया है, धमकाया है या अपमानित किया है। उदाहरण के लिए उनके द्वारा की गयी, न केवल देवा और मिदनापुर के बल्कि पूरे प्रदेश-स्तर के एक प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ता श्री नरेन्द्रनाथ सेन के सिर की कीमत रखी गयी, जो ले सकते हैं। उग्रवादियों द्वारा कटाई स्थित गांधी शांति-प्रतिष्ठान केन्द्र को हानि पहुँचायी गयी। मुर्शिदाबाद के बरहमपुर शांति-प्रतिष्ठान-केन्द्र पर बम फेंका गया, और इस घटना के परिणाम-स्वरूप केन्द्र कुछ समय तक आश्रयहीन रहा। खादी-मन्दिर (जिसके अध्यक्ष बंगाल के प्रमुख सर्वोदय-नेता श्री चारुचन्द्र भण्डारी हैं) द्वारा संचालित खादी-भण्डार के व्यवस्थापक को, भण्डार में गांधी चित्र लगाने पर उसके भयंकर दुष्परिणाम भुगतने होंगे, इस आशय की धमकी दी गयी। देवा और होशियारों के दो तरुण सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने मुझे बताया कि उग्रवादियों ने न केवल बहु-विधयों द्वारा उनको अपमानित किया, बल्कि उन्हें धमकी भी दी। प० बंगाल की गांधी-शताब्दी-समिति द्वारा आयोजित गांधी साहित्य प्रदर्शनी पर दिन के उजाले में ६ बम फेंके गये। ध्यान देने लायक बात है कि उस प्रदर्शनी में सब पुराने निष्ठावान सर्वोदय-कार्यकर्ता थे, और इसलिए वहाँ 'बेईमान सेठ' वाला सिद्धान्त लागू नहीं होता।

बात कुछ और ही है

इन बर्बर कृत्यों के क्या कारण हैं? जाहिर बात है कि किसी भी महत्त्वपूर्ण कार्रवाई के पीछे कई कारण होते हैं, और इस मामले में भी कोई अपवाद नहीं है। बंगाल अनेकानेक सामाजिक, आर्थिक व्याधियों से पीड़ित होकर कराह रहा है, और निश्चित ही प्रदेश में उग्रवादी तत्त्वों के उद्भव और विकास में इसका योगदान है। यद्यपि इस मामले में यह एक बड़ी बात नहीं है, लेकिन राष्ट्रीय समाजवादी-निष्ठ वाली अन्तर्राष्ट्रीयवादी मिथ्या विचारधारा के मिले-जुले दर्शन, जो प्रदेश में सब विकसित हुआ है, वह भी कम पावरान नहीं है। उग्रवादियों ने यह महसूस किया है, और यह ठीक है, कि जब तक गांधीजी का प्रभाव कायम रहेगा, उनके कार्यों को साकार रूप एक असम्भावना ही बनी

रहेगी। क्योंकि गांधी आज मात्र मोहनदास करमचन्द गांधी नहीं हैं, इस नाम के साथ कुछ मूल्य, कुछ विचार जुड़े हुए हैं, जिन्हें ये उग्रवादी उखाड़ फेंकने के लिए कटिबद्ध हैं, अगर सम्भव हो तो सिद्धान्त-शिक्षण द्वारा, नहीं तो निरी आतंकवादी और सत्रास की पद्धति से।

स्वाभाविक ही यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि क्या प० बंगाल में गांधी का कोई प्रभाव है ? सवाल दिलचस्प है और इस पर गम्भीर चिन्तन आवश्यक है। यह सही है कि प्रदेश के मध्यमवर्गीय बुद्धि-वादी, खासकर नगर क्षेत्रीय, जो जीवन के हर क्षेत्र में अधिक वाचाल थे और आज भी हैं, गांधी को उनके जीवनकाल में मानने से झिझकते थे। लेकिन यहीं पूरी बात खत्म नहीं होती है। सामान्य आदमी, और खासकर बंगाल की देहाती जनता ने महात्माजी को बराबर ही बहुत ऊँचा सम्मान दिया है। बंगालियों द्वारा गांधीजी के आन्दोलन, स्वराज्य आन्दोलन तथा रचनात्मक कार्यक्रम दोनों, में भाग लिये जाने की जो जानकारी और आँकड़े उपलब्ध हैं, उनसे मेरी इस बात की पुष्टि होती है कि स्थिति अनुरागहीन नहीं रही है। बंगाल में गांधी का प्रभाव सन् १९४६-४७ में सर्वाधिक था, जब कि वे बंगाल के दंगाग्रस्त क्षेत्रों में शान्ति-स्थाप-नार्थ घूम रहे थे। बंगाल यह भूला नहीं है कि जिस समय दूसरे सब धुरंधर नेता लोग सरकार या दंगा करानेवाले किसी सम्प्रदाय के विरोध में वक्तव्य दे देने भर से अपने कर्तव्य को पूरा हुआ मान लेते थे, उस समय अपने अत्यन्त कमजोर स्वास्थ्य के बावजूद इस वृद्ध आदमी ने बंगाल के हिन्दू-मुसलमान लोगों की झोपड़ियों तक जा-जाकर शान्ति और प्रेम का संदेश पहुँचाया था, उन्हें राहत पहुँचायी थी, जिसकी उन्हें सख्त जरूरत थी।

बंगाल गांधी को भूला नहीं है

यह सही है कि भूदान-ग्रामदान आन्दोलन ने बंगाल का ध्यान अपेक्षित मात्रा में आकर्षित नहीं किया है, लेकिन इतने से ही बंगाल में गांधी के प्रभाव की माप नहीं की जा सकती। बंगाल में गांधी का प्रभाव कितना गहरा है इसका अनुमान दो नवीनतम उदाहरणों से हो सकता है। प० बंगाल गांधी-शताब्दी-समिति ने यह तय किया कि गांधीजी के चुनिंदा लेखों-विचारों को ६ भागों में प्रकाशित किया जाय, और २४ रुपयों में बेचा जाय। उस समय संयुक्त मोर्चे की सरकार थी, इस-लिए हम लोगों के मन में यह भय ठीक ही था, कि सरकार इन सेटों की बिक्री में संरक्षण नहीं देगी। इसलिए संगठक कितनी प्रतियाँ छपें, इस बारे में अनिर्णयावस्था में थे। जिला-समितियों को यह भरोसा नहीं था, कि वे एक सौ सेट भी अपने जिले में बेच पायेंगे। इसलिए उन्होंने केवल ३००० प्रतियाँ ही छापने का निर्णय किया, लेकिन इसके प्रकाशन की घोषणा के १५ दिनों के अन्दर ही करीब ६,००० लोगों ने १० रुपये पेशगी देकर अपना नाम ग्राहकों के तौर पर दर्ज कराया। परिणामस्वरूप इस प्रकाशन-योजना के पहले दो भागों को दुबारा छपवाना पड़ा। आज तक करीब १०,००० लोगों ने अपनी जेब से २४ रुपये खर्च कर महात्मा गांधी के चुनिंदा लेखों-विचारों के संग्रह खरीदे हैं। इसके अलावा शताब्दी-वर्ष में ८०,००० रुपये का गांधी-साहित्य बिका है।

इन आँकड़ों को इस परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए कि बंगाल में टैगोर, विवेका-नन्द की रचनाओं और शास्त्रीय साहित्यिक कृतियों के अलावा अन्य किसी लेखक की रच-नाओं की इतनी व्यापक बिक्री नहीं हुई है।

प० बंगाल शायद राष्ट्रीय समिति द्वारा निर्देशित पद्धति से गांधी-शताब्दी नहीं मनानेवाला दूसरे नम्बर का प्रदेश था। यह सही है कि प्रदेश के सभी सार्वजनिक जीवन की मुख्य धारा को गांधी-अभिमुख करना सम्भव नहीं हो सका है। लेकिन तब कहाँ यह सम्भव हो पाया है ? दूसरी तरफ प्रदेश में शताब्दी-वर्ष के दौरान हजारों सभाएँ, परिचर्चाएँ, गोष्ठियाँ, शिविर और प्रदर्श-नियाँ गांधीजी पर आयोजित हुई थीं, जो स्वतःस्फूर्त थीं, और जिनमें जनता का उत्साहवर्धक योगदान मिला था, जिनमें गांधीजी के बारे में विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार-विमर्श हुआ था, और श्रद्धांजलियाँ अर्पित की गयी थीं। इस तथ्य को दबाया नहीं जा सकता कि शताब्दी-वर्ष के दौरान और उसके बाद भी, बंगाली युवा और वृद्ध स्त्री-पुरुषों के दिमाग में गांधीजी को जानने की वास्तविक जिज्ञासा दिखाई पड़ी। गांधी को पूर्णतः या अंशतः स्वीकार करने की बात सहज क्रम में पैदा होती हो, जिसे ये उग्रवादी सहन नहीं कर सकते थे, क्योंकि इससे उनका वह आधार ही उनसे दूर हट जाता, जिसके ऊपर वे अपनी क्रान्ति की इमारत खड़ी करना चाहते हैं।

भविष्य के लिए

गत मई '७० के तीसरे सप्ताह में नव-गठित प्रदेशीय गांधी-स्मारक-निधि की बैठक हुई थी। प्रदेशीय गांधी-स्मारक-निधि का कोष अब समाप्तप्राय है, और समिति ने अपनी प्रवृत्तियों को एक सीमा में समेटने का निर्णय किया है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि अच्छे केन्द्र समाप्त कर दिये जायेंगे। नयी योजना के अनुसार यह आशा की गयी है, कि कम-से-कम एक दर्जन केन्द्र स्वावलम्बी इकाई के रूप में अपने दैनन्दिन आवश्य-कताओं का अर्जन करते हुए चल सकने लायक स्थिति में आ जायेंगे। अन्य १०-१२ केन्द्र स्वायत्त इकाई के रूप में बदल दिये जायेंगे, जो प्रदेशीय निधि के साथ नैतिक रूप में सम्बद्ध रहेंगे। निःसन्देह यह बेहतर होगा, अगर निधि का केन्द्रीय नेतृत्व प्रदेशीय निधि को कुछ अतिरिक्त कोष उपलब्ध कर दे, ताकि कुछ केन्द्रों को दो-तीन वर्षों में मदद देकर स्व-आधा-रित बनाया जा सके। प्रदेश की वर्तमान अशान्त स्थिति में यह एक तरह से अनि-वार्य-सा हो गया है। कोई भी शताब्दी के समाप्त होते ही इन केन्द्रों को समाप्त होते देखना पसन्द नहीं करेगा, यद्यपि कुछ मामलों में यही स्थिति है। निधि के केन्द्रीय नेतृत्व द्वारा अब भी उचित कार्र-वाई किये जाने के लिए समय है। ●

(मूल अंग्रेजी से)

प्रादेशिक पत्री

ग्रामदानी क्षेत्र और पंचायती राज चुनाव

सर्व सेवा संघ के सामने ग्रामदान में शामिल हुए कई क्षेत्रों की यह समस्या सामने आयी है कि इनमें ग्रामदान की भावना व कानून के अनुसार ग्रामस्वराज्य की दिशा में कार्य चल पड़ने से पूर्व यदि पंचायतीराज संस्थाओं के मौजूदा प्रणाली, के दल व साधारण अल्पमत-बहुमत आदि, के आधार पर चुनाव होते हैं, तो उससे क्षेत्र में नयी, बननेवाली भूमिका को क्षति पहुँचती है, तथा ग्राम समुदाय के मिलजुलकर चिन्तन व कार्य करने की भावना को धक्का पहुँचने का खतरा पैदा होता है।

राजस्थान के हाल ही में ग्रामदान में शामिल हुए बीकानेर जिले के कार्यकर्ताओं ने इस ओर विशेष रूप से ध्यान आकर्षित किया है। संयोग से अभी कुछ समय बाद ही सारे राजस्थान में पंचायतों के चुनाव हो रहे हैं। आवश्यकता बनायी गयी है कि जिलादानी क्षेत्र को साल-छः महीने मौजूदा चुनाव-प्रथा के दोषों से मुक्त करने का और ग्रामस्वराज्य की भावना व पद्धति से ग्राम-सभाएँ गठित कर स्वायत्त शासन को पूरे गाँव-समुदाय द्वारा संभालने, संचालित करने का मौका मिलना चाहिए।

सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध-समिति ने इस विषय पर गंभीरता से विचार किया है। समिति मानती है कि इस स्थिति की ओर सहानुभूतिपूर्वक और नये ढंग से सोचना राज्य-सरकारों के लिए आवश्यक और उपयोगी होगा। प्रबन्ध-समिति राजस्थान राज्य से अपेक्षा करती है कि बीकानेर जिले में पंचायतीराज-संस्थाओं के चुनाव फिलहाल स्थगित रखे जायेंगे और वहाँ की जनता को ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की मूलभूत भावना से गाँव-गाँव में ग्राम-सभाओं के गठन का अवसर दिया जायेगा।

[सीकर में आयोजित सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति का प्रस्ताव।]

उड़ीसा

मार्च '७० से अब तक उड़ीसा में फुलवाणी, बालेश्वर और कटक में कुल मिलाकर २१८ नये ग्रामदान हुए। मयूरभंज, केउंझर, कटक और ढेंकानाल जिलों के कार्यकर्ताओं के शिविर और ग्रामदान-अभियान आयोजित किये गये। बालेश्वर जिले के ६ प्रखंडों में अभी प्रखंडदान के काम में कार्यकर्ता लगे हुए हैं। कोरापुट जिले के कोलनरा और रामनागुडा प्रखंडों में दो शांति-शिविर आयोजित हुए। इन शिविरों में ६७ गाँवों के ७५० लोगों ने भाग लिया। ३६ गाँवों में १५९ शांति-सैनिक बनाये गये। कुल ६ शिविर करने की योजना बनायी गयी थी, लेकिन बरसात आरंभ होने की वजह से शिविर स्थगित किये गये। —सच्चिदानन्द महांती,

मंत्री, उत्कल सर्वोदय मण्डल

कर्नाटक

बीजापुर जिलादान के बाद बेलगाँव जिले में जिलादान की दृष्टि से शक्ति केंद्रित की है। सोनदट्टी, रामदुर्ग और बेलहोंगल, तीन तालुकादान हुए। गोकाक और रायबाग तालुकों में ग्रामदान की दृष्टि से सघन काम हुआ है। सोनदट्टी तालुकादान क्षेत्र के मित्रों की एक बैठक के अवसर पर वहाँ के एक भाई श्री महादेव अप्पा ने कन्नड़ 'भूदान' पत्रिका के प्रकाशन के लिए एक प्रिंटिंग मशीन सहायता में देने की घोषणा की है। उस तालुके में चार हजार से ऊपर की आबादी के गाँव ग्रामदान में आये। ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह के लिए प्रांतीय स्तर पर राज्य के मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में एक समिति गठित हुई है। संग्रह का काम शुरू हुआ है। श्री नीलकंठ ज्ञानाचारी के संयोजकत्व में ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए पदयात्रा शुरू हुई है। एक हजार गाँवों में यह पदयात्रा-टोली जायेगी, ऐसा तय हुआ है।

—एच० आर० वेंकटरमण अय्यर

अध्यक्ष, कर्नाटक सर्वोदय मण्डल

बेलगाँव जिले के गोकाक और रायबाग तहसील में पदयात्राएँ चलीं। ११४ ग्रामदान हुए, ११९ सर्वोदय-मित्र बने, ११८ भूदान-पत्रिकाओं के ग्राहक बने तथा ७०० रुपये की साहित्य-बिक्री हुई। दोनों तहसीलें तहसीलदान की ओर बढ़ रही हैं। महिलाओं की पदयात्रा चल रही है। श्री बी० एम० भूमाजी ने 'भूदान' के १५ ग्राहक बनाये। वे सर्वोदय-मित्र बनाने के काम में लगे हैं। यहाँ के एक पुराने सर्वोदय-सेवक श्री बसाया बेटेगिरी का २२ जून को देहान्त हो गया। १५ सालों से वे लगातार पदयात्राएँ कर रहे थे।

—सदाशिवराव भोंसले,

बेलगाँव जिला सर्वोदय-मंडल

गुजरात

जून महीने का मुख्य समय ग्राम-स्वराज्य-कोष में ही गया। विभिन्न जिलों के काम की जिम्मेदारी साथियों को दी है। बलसाड, सूरत और विशेषकर खेड़ा और बड़ौदा जिले में शक्ति केन्द्रित की है। अन्य जिलों में भी जरूरत के अनुसार जाना पड़ रहा है। खेड़ा और बड़ौदा जिले में जिला-स्तरीय कोष-समितियाँ गठित हुई हैं। सवा-सवा लाख का लक्ष्यांक रखा है। अब तक दोनों मिलकर घूम-घूमकर चंदा एकत्रित करती थीं, लेकिन इस बार अन्य लोगों को इसके लिए बाहर निकलने के लिए तैयार कर रही हैं। १५ से २० जून तक प्रदेश के कार्यकर्ताओं का नाहक-मिलन हुआ। कार्यकर्ताओं की मनःस्थिति, आंदोलन-कार्यक्रम, आर्थिक प्रश्न, ग्राम कोष संग्रह आदि विषयों पर विस्तार से दिल खोलकर बातें हुईं। ऐसे नाहक-मिलन से सबको आनंद और संतोष की अनुभूति हुई। इस तरह साल में दो-तीन बार मिलना चाहिए। —कान्ता हरविलास शाह,

गुजरात सर्वोदय मण्डल

ग्रामस्वराज्य-कोष

श्री यशवन्तराव चौहान का दान
ठाणा जिला द्वारा लक्ष्यांक की पूर्ति

श्री यशवन्तराव चौहान, केन्द्रीय वित्तमंत्री ने कोष में १००० रु० का दान दिया है।

● महाराष्ट्र में ठाणा भारत का प्रथम जिला है, जिसने ग्रामस्वराज्य-कोष हेतु अपना ५०,००० रु० का लक्ष्यांक १५ अगस्त को पूरा कर लिया, तथा अब अपना लक्ष्यांक बढ़ाकर ७५,००० रु० कर लिया है। महाराष्ट्र में अब तक साढ़े पाँच लाख रु० का संग्रह हो चुका है। इसमें बम्बई नगर का साढ़े तीन लाख रु० का संग्रह भी शामिल है।

उप-कुलपति की अपील

जोधपुर विश्वविद्यालय के उप-कुलपति एवं नगर कोष-समिति के अध्यक्ष प्रोफेसर वी० वी० जॉन ने अपील की है कि, "आचार्य विनोबाजी जो करना चाह रहे हैं वह है बिना हिंसा के, बिना वर्ग-संघर्ष पनपाये आमूल सामाजिक परिवर्तन का काम। इस आदर्श की ओर बढ़ने में हम जो भी सहायता करेंगे, वह देश के कल्याण-कार्य में हमारी देन होगी।"

छात्रों द्वारा कोष-संग्रह

गुजरात के दो छात्रों ने अपने महाविद्यालय के छात्रों तथा शिक्षकों से ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए निधि-संग्रह-कार्य शुरू कर दिया है। आणंद कृषि महाविद्यालय के श्री हरीश जानी ने अपने महाविद्यालय से ८०० रुपये इकट्ठा कर लिया है, कुल १५०० रुपये तक इकट्ठा कर लिये जाने की आशा है। वल्लभ विद्यानगर के छात्र श्री शरद पटेल ने भी ६०० रुपये इकट्ठा कर लिया है। १००० रुपये तक हो जाने की आशा है। तरुण-शांति-सेना के ग्रीष्मकालीन शिविर से लौटने के उपरान्त उक्त दोनों छात्रों ने यह शुभ संकल्प किया था। —अशोक बंग

आचार्यकुल का योगदान

सन्त विनोबा द्वारा प्रणीत देशव्यापी शिक्षक-संगठन 'आचार्यकुल' के लिए निश्चय किया गया है कि इस वर्ष का उनका चन्दा ग्रामस्वराज्य-कोष में जमा होगा तथा १०% केन्द्रीय व २०% प्रान्तीय कामों के लिए दिये जाने के बाद बाकी ७ प्रतिशत संस्था-स्तर पूर खर्च होगा।

मजदूर-संगठनों द्वारा एक दिन की कमाई कोष में : उद्योग-संस्थाओं द्वारा उतना ही अंशदान

पूना के मजदूर-संगठनों के निश्चय के अनुसार प्रत्येक मजदूर एक दिन की कमाई ग्रामस्वराज्य-कोष में देगा, तथा इसके लिए किसी छुट्टी के दिन अतिरिक्त काम करेगा। मालिकों ने इस व्यवस्था को मान्यता दी है तथा मजदूरों द्वारा दिये गये चन्दे के बराबर रकम अपनी ओर से भी देने की घोषणा की है।

अन्य प्रदेशों में प्रगति

मैसूर : मैसूर में प्रदेश कांग्रेस कमेटी महिला-विभाग की संयोजिका कामेश्वरम्मा कुप्पुस्वामी ने महिला-संगठनों की एक बैठक बुलायी, जिसमें प्रस्ताव स्वीकृत हुआ कि सदस्यगण कोष के लिए चन्दा इकट्ठा करने में अपनी शक्ति लगायें।

मैसूर के वित्तमंत्री एवं प्रदेश कोष-समिति के कार्याध्यक्ष श्री रामकृष्ण हेगडे ने मैसूर चैम्बर्स ऑव् कामर्स के ४७५ सदस्यों को कोष में उदारतापूर्वक दान देने के लिए व्यक्तिगत पत्र लिखे हैं। स्मरणीय है कि मुख्य मंत्री श्री वीरेन्द्र पाटिल, जो प्रदेश कोष-समिति के अध्यक्ष भी हैं, इसके पहले ही सर्वसाधारण से दान देने के लिए जोरदार अपील कर चुके हैं।

उड़ीसा : उड़ीसा के मुख्यमंत्री ने सर्वसाधारण से ग्रामस्वराज्य-कोष के प्रदेशीय ४ लाख रुपये के लक्ष्य को पूरा करने की अपील की है।

वयोवृद्ध समाज-सेविका श्रीमती रमादेवी को उनकी ५,८भज जिले की यात्रा में २७०० रु० मिले हैं। स्वास्थ्य ठीक न होते हुए भी श्रीमती रमादेवी कोष-संग्रह के लिए सतत यात्रा कर रही हैं। उड़ीसा में अब तक ५,००० रु० का संग्रह हुआ है।

हरियाणा : करनाल जिले में कोष-संग्रह का काम चल रहा है, पानीपत में घर-घर जाकर संग्रह किया जा रहा। इस काम में लगे हुए भाई लिखते हैं—"अनुभव यह आ रहा है कि अब तक किसीने भी मना नहीं किया, हर कोई प्रसन्नता से देता है।"

राजस्थान : गंगानगर जिले में कोष-संग्रह समिति बनी है, जिसके अध्यक्ष सनातन धर्म डिग्री कालेज के प्रिंसिपल श्री ताराचंदजी हैं।

जोधपुर नगर कोष समिति की अध्यक्षता जोधपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति और प्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री श्री वी० वी० जॉन ने स्वीकार की है। जयपुर नगर में श्री देवीशंकर तिवारी की अध्यक्षता में बनी कोष-समिति ने अपना लक्ष्य एक लाख रुपये का तय किया है।

मध्यप्रदेश : रायपुर जिले में कोष-संग्रह का कार्य उत्साह से चल रहा है और लक्ष्य को पूर्ण करने का विश्वास दृढ़ हुआ है। अब तक करीब १२ हजार रुपये का शहर में संग्रह हो चुका है।

उत्तरप्रदेश : लखनऊ में ग्रामस्वराज्य-कोष संग्रह-कार्य में हकीम श्यामदासजी तत्पर हैं। उन्होंने ८०० रुपये कोष में अकेले इकट्ठे किये हैं। खबर मिली है कि आगरा में स्वामी कृष्णानन्दजी के प्रयास से संगठन अच्छा बन गया है, जिसने व्यापक ढंग से कार्य प्रारम्भ कर दिया है। गोरखपुर में जिला-समिति के गठन के लिए बुलायी गयी बैठक में ही श्री कपिल भाई की अपील पर ६४५ रुपये मिले। पश्चिमी जिलों में और गोरखपुर मंडल में ग्राम स्वराज्य का कार्य बहुत ही अच्छे ढंग से प्रारम्भ हो गया है। ●

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्री कृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

लोकनीति यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ • सोमवार

अंक : ४९ ७ सितम्बर, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

बाबा !

अपने पवित्र जीवन का ७५वाँ वर्ष आप ११ सितम्बर, '७० को पूरा कर रहे हैं। हमारा अहोभाग्य है कि इस अनुपम वेला में साक्षात् दर्शन देते हुए आप हमारे बीच सुखासीन हैं ! विनम्र भाव से नतमस्तक हो, इस शुभ अवसर पर हम आपका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। परमात्मा से हमारी यह याचना है :

"जीवेम शरदः शतम् !"

विनम्र भेंट :
एक : महान कार्य के लिए

गत २० अगस्त १९७० को भारत की उत्तरी सीमा पर स्थित सैनिक कैम्प में हम तीन सर्वोदय-सेवक ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह के लिए पहुँचे। समुद्र की सतह से नौ हजार फुट से भी अधिक ऊँचाई पर बर्फीली हवाओं के थपेड़ों के बीच काम करनेवाले इन सैनिकों को प्राकृतिक प्रकोपों का सामना भी करना पड़ता है। एक सप्ताह पूर्व एक बड़ा ग्लेशियर अपने साथ मिट्टी, पत्थर, पेड़-पौधों का रेला बहाकर लाया था और इसके नीचे उनकी लाखों की सम्पत्ति नष्ट हो गयी थी। जानें मुश्किल से बच पायी। कई घण्टों के कठोर परिश्रम के बाद भी नदी की तेज धार में बह जानेवाले एक ट्रक को वे बचा नहीं पाये। इस दुर्घटना से सबके दिल बैठे हुए थे।

असैनिक लोगों के लिए जाने की अंतिम सीमा तक पहुँचने के बाद हमने संतरी से अपना मंतव्य कहा, और टुकड़ी के सेनाध्यक्ष महोदय के नाम मिलने की अनुमति के लिए पुर्जा लिखकर भेजा। कुछ देर बाद एक अफसर आये। उन्होंने विस्तार से हमसे पूछा, हमने ग्रामस्वराज्य-कोष की एक अपील उन्हें दे दी। उन्होंने बताया कि वहाँ से दूर वही व्यस्त होने के कारण सेनाध्यक्ष अभी मिल नहीं सकेंगे, वे हमारा संदेश उन तक पहुँचा देंगे। उन्होंने जहाँ हम टिके हुए थे, उस नागरिक बस्ती का पता ले लिया।

वापस लौटते हुए हम सोच रहे थे कि दोपहर के भोजन और विश्राम के बाद वहीं हमारी सुनवाई होगी, आज का पूरा दिन शायद यहीं बीतें। हम विश्राम के बाद उठे ही थे कि हमारे स्थानीय सर्वोदय-सेवक साथी के साथ दो जवानों ने हमारी झोपड़ी में प्रवेश किया। उन्होंने कहा, "हमने बस्ती का कोना-कोना आपको ढूँढने के लिए छान डाला।" हम यह जानने के लिए उत्सुक थे कि हमें कब बुलाया गया है ?

उन्होंने हमारे हाथ पर एक पुर्जा दिया, जिस पर लिखा था

"सर्वोदय के लिए १०० रु० का दान इसके साथ भेज रहे हैं। कृपया महान कार्य के लिए हमारी विनम्र भेंट स्वीकार कीजिए।"

जमीन का बँटवारा क्यों नहीं हुआ ?

हम वापस लौटने के लिए एक ट्रक की प्रतीक्षा कर रहे थे, तीन सैनिक भी घूमते हुए वहाँ पहुँच गये। एक महाराष्ट्र के सांगली जिले के, दूसरे तमिलनाडु के रामनाड जिले के और तीसरे असम के शिवसागर जिले के। ग्रामस्वराज्य-कोष और विनोबा के काम के सम्बन्ध में संक्षिप्त जानकारी देने के बाद हमने अपने झोले टटोलने शुरू किये। भाई नटराजन ने तमिल भाषा में पोस्टर व अपीलें भेजी थीं, उसे तमिल मित्र को दिया और वे ध्यान से पढ़ने लगे, महाराष्ट्र के मित्र को मैंने 'गीताई' दी। असम के मित्र को उसी बस्ती में रहनेवाले सर्वोदय-मित्र का पता दे दिया, जिन्हें आज ही मैंने 'नामघोषा-नवनीत' पढ़ने को दिया था। नामघोषा का नाम सुनते ही उस जवान की आँखें चमक उठीं। वह उसे पाने के लिए व्यग्र हो उठा।

फिर कहने लगा, 'विनोबा असम में कब गये थे ?' मैंने कहा, "शायद, नौ-दस वर्ष पहिले।"

"हाँ ! हाँ ! ठीक है। मैं उस समय सातवीं में पढ़ता था। हमारे स्कूल में आये थे। उनके स्वागत के लिए हमने एक ऊँचा मंच बनाया था। मैं स्वयं एक माह तक उनकी यात्रा में रहा। एक बहन असमिया में उनके हिन्दी प्रवचनों का अनुवाद करती थी। क्या वह अभी उन्हींके साथ हैं ?" मैंने कहा, "अमल प्रभा बाई देउ होंगी। असम में विनोबा का काम कर रही हैं। उनके साथ कई बहनें यह काम कर रही हैं।"

असमी जवान, "उन्हें जमीनें दान में मिली थीं, पर अभी वे जमीनें उन्हींके पास हैं जिन्होंने दी थीं। गरीबों को मिली नहीं।" फिर वह एकाएक उत्तेजित हो गया, "जानते हो, हम नगाओं के पड़ोसी हैं। हमारे साथ धोखा हुआ है। जमीन ली और बाँटी क्यों नहीं ? इसलिए तो इस समय जमीन छीनने का आन्दोलन चल रहा है। हजारों लोग पकड़े जा रहे हैं।"

मेरे साथी ने कहा, "आप ही बताइए छीनना अच्छा है, या जमीन का शांतिपूर्ण बँटवारा होना अच्छा है ?"

उसका उत्तर था, "अच्छा तो शांतिपूर्ण बँटवारा ही है, परन्तु वह होता ही नहीं··· !"

हमने कहा, "कौन करेगा ? यहाँ हमारे तमिल मित्र हैं। इनके यहाँ पढ़े-लिखे युवक ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का काम कर रहे हैं, तमिलनाडु या राज्यदान हो गया है।"

ट्रक आ गयी थी, जिसकी हमें प्रतीक्षा थी। तीनों मित्रों से विदा लेकर हम वहाँ से आगे बढ़े, वे अपनी चर्चाओं में व्यस्त थे। एक के हाथ में 'गीताई' और दूसरे हाथ में तमिल फोल्डर था। अन्य साथियों के साथ वे इन्हें पढ़ेंगे।

देवदार के सघन-वन की छाया में बर्फीली नदी की गति के साथ हमारा ट्रक होड़ कर रहा था। पर उससे भी अधिक तेजी से दौड़ रहे थे हमारे विचार—'हिमालय की चोटियों और समुद्र की गहराइयों तक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में काम करनेवाले विभिन्न भाषा-भाषी करोड़ों लोगों तक जमाने की चुनौती का उत्तर देनेवाला सर्वोदय-विचार कैसे पहुँचेगा, कब पहुँचेगा ?'

—सुन्दरलाल बहुगुणा

मुक्ति का मसीहा

विनोबा अब व्यक्ति नहीं रह गये हैं। जिस शरीर को हम विनोबा नाम से जानते हैं—उठने-बैठने, बोलने-चालने, खाने-पीने-वाला शरीर—विनोबा उससे बड़े, सूक्ष्म, सौम्य हो गये हैं। विनोबा अब एक प्रकाश हैं, प्रेरणा हैं, इसलिए जीवन की सामान्य सीमाओं से परे हैं। विनोबा एक विभूति हैं।

विनोबा का शरीर और कितने दिन धरती पर रहेगा, यह, उनके विश्वास के अनुसार, उनके और परमेश्वर के बीच की बात है। लेकिन हम इतना जानते हैं कि प्रकाश और प्रेरणा के रूप में विनोबा हमारे पास सदा रहेंगे, जैसे गांधी जाकर भी हमारे पास हैं।

विनोबा ने जो शक्ति जीवन की साधना से कमायी वह उन्होंने हमें यों ही दे दी। उस शक्ति के स्पर्श से हम सशक्त हुए हैं। उससे हमारा संकल्प सुदृढ़ हुआ है। उस शक्ति से हमें अपनी साधना का आधार मिला है। हमारे सामने उस साधना की दिशा और प्रक्रिया दोनों स्पष्ट हैं। विनोबा ने हमें लाकर क्रान्ति के एक राजपथ पर खड़ा कर दिया है। उन्होंने इतना तो किया ही है, साथ ही यह भी किया है कि हमारे ऊपर अपना 'बोझ' नहीं रखा है, उन्होंने कभी हमें बाधा नहीं, दबाया नहीं, हमेशा जगाया, उठाया, बढ़ाया। हम स्वतंत्र हैं उन्हें स्वीकार या अस्वीकार करने के लिए। इस त्याग की दूसरी कोई मिसाल नहीं है।

आज की दुनिया में हर जगह विचार बंदी है—कहीं अंधी स्वीकृति का, कहीं अंधी अस्वीकृति का। विनोबा ने विचार को इस दोहरे अंधेपन से मुक्त किया है। इस युग में विज्ञान ने मुक्ति की प्रेरणा दी; लोकतंत्र ने मुक्ति का अवसर दिया, और विनोबा ने हमें मुक्ति का मार्ग दिखाया।

मुक्ति के ऐसे मसीहा को क्या हम कभी भूल सकेंगे? क्या दुनिया कभी भूल सकेगी?

सफल, असफल, अल्प-सफल

बीकानेर की एक गोष्ठी में एक सज्जन मित्र ने कहा 'आप अहिंसावाले फेल हो गये।' मैंने पूछा 'हम फेल हो गये तो होने दीजिए। देश में उसका—व्यक्ति का, दल का, समुदाय का—नाम बताइए जिसे पास होने भर को नंबर मिले हों।' बोले 'कोई दिखायी नहीं देता।'

कई जगह ऐसे मित्र मिलते हैं जिन्होंने, जब उनसे ग्राम-स्वराज्य-कोष के लिए दान मांगा गया तो, कहा है कि जो चीज असफल हो चुकी उसके लिए दान देने से क्या फायदा? वे कहते हैं कि विनोबा को भले ही अपनी निष्ठाओं में सफल मान लिया जाय, लेकिन उनका आन्दोलन तो असफल हो ही गया। कई ऐसे मित्र भी मिलते हैं जिन्हें सफलता के बारे में आन्दोलन में अविश्वास है, किन्तु जिनमें विनोबा के प्रति असीम आदर का भाव है, इसलिए उन्होंने खुशी के साथ दान दिया है।

हमारे आन्दोलन को लेकर आज जगह-जगह सफलता-विफलता की बात कही जाती है। हर एक के पास अपनी अलग तराजू है जिस पर वह आन्दोलन को तौलता है। न सबकी तराजू समान है, न उसके बाट-बटखरे।

जो लोग इस आन्दोलन में लगे हुए हैं वे खुद भी नहीं कहते हैं कि आन्दोलन सफल हो गया। सफलता की चाहे जो पहचान मानी जाय, हमें खुद समाधान नहीं है। इस लोक-आन्दोलन में 'लोक' का पक्ष आज भी कमजोर है। लोक की चेतना अभी जगी नहीं है, उसकी शक्ति अभी प्रकट नहीं हुई है। आन्दोलन बहुत कुछ अभी हमारा है, लोक का नहीं। यह आन्दोलन की कमी है, कमजोरी है। इस कमी के रहते हुए हम उसे सफल नहीं कह सकते। लेकिन क्या पूरा-पूरा असफल कह दें? असफल तब कहते जब हम मान लेते कि हमारी दिशा गलत है, और हमने सही कदम नहीं उठाये हैं। हम देख रहे हैं कि अहिंसक क्रान्ति की प्रक्रिया शुरू हो गयी है। हम तो क्या, क्या कोई भी मानता है कि हमारी दिशा गलत है, और इतने वर्षों में हम एक ही जगह खड़े रहे हैं? हमारी गति धीमी है, यह हमारे मित्रों, शुभचिंतकों की निराशा है। यह हमारी भी चिन्ता है।

अगर हम सफल नहीं हुए हैं तो विफल भी नहीं हुए हैं। सचमुच हम अल्पसफल हुए हैं। यह सही है कि अगर हम इस स्थिति से शीघ्र निकल कर आगे नहीं बढ़ सकेंगे तो अल्प-सफलता असफलता होकर रह जायगी। अल्प-सफलता को सफलता में परिणत करना हमारे पुरुषार्थ की कसौटी है।

विनोबा ने देश की नैतिक कल्पना को जगा दिया है। उसमें एक नया चित्र बिठा दिया है। लुई फिशर के शब्दों में ग्रामस्वराज्य पूरब का सबसे नया और रचनात्मक विचार है। उस विचार को विनोबा ने प्रतिष्ठित कर दिया है। नया गांव नहीं तो नया भारत नहीं, इस सत्य से अब कोई इनकार नहीं कर सकता। और, यह प्रतीति भी बढ़ती जा रही है कि चारों ओर बढ़ती हुई हिंसा का कोई उपाय ढूंढना हो तो अहिंसा में ही मिलेगा, हिंसा में नहीं—न सरकार की मान्य हिंसा में, न किसी दूसरी हिंसा में।

लेकिन यह हमारा भ्रम था कि हमने मान लिया था कि हस्ताक्षर का अर्थ है सत्य को मान लेना और उस पर चलने को तैयार हो जाना। कुछ क्षेत्रों में जहां लोगों ने विचार को अच्छी तरह समझ लिया है, वहां की हवा बदल रही है। यह हमारी सफलता है। हां, अल्प-सफलता है।

हस्ताक्षर संकल्प नहीं है, और संस्था समाज नहीं है। हमने हस्ताक्षर को संकल्प की घोषणा मान लिया था और संस्थाओं की सहायता को समाज की शक्ति। इस तरह जिन आधारों को सही मानकर हम आगे बढ़ने की कोशिश करते रहे हैं वे गलत निकले। अब इन कमियों को दूर करना चाहिए। लेकिन कौन दूर करेगा, और कैसे?

क्रान्ति का सम्पूर्ण दर्शन हमें विनोबा से मिल गया है। उसमें कोई कमी नहीं है। कार्य की दृष्टि अब हमें जयप्रकाशजी से मिल रही है। वह समाज के बीच पहुँच गये हैं। जयप्रकाशजी ने सत्याग्रह की प्रक्रिया को सघन बनाया है। उनका अपना संकल्प दृढ़तर हुआ ही है, जनता की प्रतीति भी गहरी हो रही है। सत्याग्रह की प्रक्रिया में प्रतिकार अभी नहीं शुरू हुआ है। समय आयेगा तो वह भी होगा। लेकिन प्रतिकार की शक्ति उस समाज के ही अन्दर से निकलनी चाहिए जिसने सत्य को ग्रहण किया है। समाज-परिवर्तन के लिए कुछ चुने हुए कार्यकर्ताओं का, चाहे वे कितने भी बड़े और अनुभवी हों, मात्र कष्ट-सहन काफी नहीं है।

असफल और अल्प-सफल का भेद स्पष्ट हो जाने पर सोचने की भूमिका बदल जाती है। असफलता की तो बात हो नहीं है, बात है अल्प-सफलता की। विनोबा के ७५वें जन्मदिन के अवसर पर हम इससे बढ़कर दूसरी क्या श्रद्धांजलि दे सकते हैं कि हम मुक्त बुद्धि से अपनी अल्प-सफलता को परखें, और परखकर मुक्त मन से ग्रामस्वराज्य की ओर आगे बढ़ने का संकल्प करें। विनोबा मुक्ति का उद्घोष बन गये हैं। वह उद्घोष हमारे सबके कण्ठ से साथ निकलना चाहिए।●

मित्रता का नया दौर

कौन सोच सकता था कि कभी पश्चिमी जर्मनी और रूस भी साथ बैठेंगे, खुशी के साथ गिलास में गिलास मिलाकर संतोष की शराब पीयेंगे, और यह संकल्प करेंगे कि अब हम एक-दूसरे के खिलाफ शस्त्र नहीं उठायेंगे? कहाँ हिटलर और स्टालिन के वे सर्वनाशी युद्ध, और कहाँ रूसी विदेश मंत्री ग्रामीको और पश्चिमी जर्मनी के विदेश मंत्री वाल्टर शील के बीच हुई उस दिन की संधि!

अभी संधि जर्मन-संसद के सामने जायगी, लेकिन १२ अगस्त को सोवियत संघ के प्रधान मंत्री कोसीजिन और प० जर्मनी के चांसलर विलिब्रांट ने संधि पर हस्ताक्षर कर दिये। जर्मनी बर्लिन में अधिक मुक्त प्रवेश चाहता है। इस संधि में उसका उल्लेख नहीं है, किन्तु संभवतः रूस को वह स्थिति मान्य हो गयी है। हो सकता है भीतर-भीतर रूस का मन इसके लिए भी तैयार हो रहा हो कि पश्चिमी और पूर्वी, जर्मनी के दोनों भागों को एक होने दिया जाय। पश्चिमी जर्मनी की राजधानी बॉन से एक वक्तव्य प्रकाशित होनेवाला है जिसमें जर्मनी के एकीकरण का प्रयत्न करने के अधिकार की पुष्टि होगी। रूस इस अधिकार को अमान्य नहीं करेगा। तत्काल बॉन और मास्को के सम्बन्ध बढ़ेंगे, रूस तथा पूर्वी योरप का पश्चिमी जर्मनी से व्यापार बढ़ेगा। पोलैण्ड और चेकोस्लोवाकिया भी इन सम्बन्धों से लाभ उठायेंगे। सब एक-दूसरे के करीब आयेंगे।

यह संधि रूस और प० जर्मनी के लिए तो शुभ है ही, इससे पूरे योरप में एक नयी हवा बहेगी। हो सकता है, आगे शीत-युद्ध के स्थान पर पश्चिमी और पूर्वी योरप की सामूहिक सुरक्षा की स्थिति पैदा हो तथा एक-दूसरे के प्रति भय के कारण बढ़ती हुई सेनाएँ भी घटें। इतना निश्चित है कि योरप के लिए सन् १९८० के दस वर्ष १९७० के दस वर्षों से भिन्न होंगे। साझा बाजार में, जो कुछ वर्षों से कई देशों में चल रहा है, अब अधिक देश शरीक होंगे, और कौन जाने साझा बाजार से आगे बढ़कर साझा सरकार की भी कोशिश—सफल कोशिश—हो। योरप का मन अमेरिका के विश्व-प्रभुत्व को नहीं कबूल करता। योरप के देश अपने-अपने मन को टटोल रहे हैं। योरप पश्चिमी और पूर्वी में बँटकर नहीं रहेगा। दोनों तरफ के देश करीब आना चाहते हैं। रूस भी सोचता है कि साम्यवादी दुनिया की बात चाहे जितनी हो, उसका स्वाभाविक स्थान पिछड़े एशिया से कहीं अधिक औद्योगिक-व्यापारिक योरप में ही है। चीन और योरप, दोनों का प्रतिद्वंद्वी होने में उसका भविष्य नहीं है।

जर्मनी और रूस की घोषित मित्रता एक कौतुक हो सकती है, लेकिन उससे कम बड़ा कौतुक यह नहीं है कि जब योरप सहकार के वृत्त बढ़ा रहा है तो हम भारत में—एशिया और अफ्रीका में भी—संघर्ष के नये वृत्त बना रहे हैं।

अगर हमने अपनी समस्याओं के शांतिपूर्ण हल न निकाले, और हम दूसरों के पिछलग्गू ही बने रहे, तो हम विदेशी प्रपंचों के शिकार बने ही रहेंगे। हम न भूलें, साम्राज्यवाद समाप्त नहीं हुआ है, उसने सिर्फ स्वरूप बदला है।

ग्रामस्वराज्य-कोष

संग्रह-कार्य महत्त्वपूर्ण दौर में

केन्द्रीय कार्यालय में प्राप्त सूचना के अनुसार मध्यप्रदेश में अब तक ग्रामस्वराज्य-कोष का संग्रह ४.५ लाख, गुजरात में १.३३ लाख; पश्चिम बंगाल में ५०,०००; मैसूर (कडोली क्षेत्र) में ३०,०००; पंजाब में १८,०००, उत्तरप्रदेश में १६,००० तथा केरल में ८,४०० रुपये हो चुका है।

नगरों का उत्साहपूर्ण योगदान

सौराष्ट्र के उपलेटा और धोराजी शहरों में १३,००० रु० का संग्रह हुआ है। श्री भीमसेनजी सच्चर को पंजाब में कोष-संग्रह के प्रवास में मोगा में ४,५०० रु० तथा अबोहर में १,३०० रु० भेंट किये गये।

मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री द्वारा ११०० रु० का दान

मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री श्यामाचरण शुक्ल, जो कि प्रदेश ग्रामस्वराज्य-कोष के अध्यक्ष भी हैं, ने इन्दौर में कोष में ११०० रु० का दान दिया है।

विनोबा का स्वास्थ्य

आकाशवाणी और समाचार-पत्रों से प्राप्त सूचना के अनुसार विनोबाजी इस समय मियादी ज्वर से पीड़ित हैं। उन्होंने डाक्टरों की सलाह के अनुसार दवा लेना स्वीकार किया है। अद्यतन जानकारी के अनुसार स्थिति में संतोषजनक सुधार हो रहा है।

विशेष मुलाकात :

विनोबा के व्यक्तित्व को स्वीकारना व्यक्ति-पूजा नहीं

❀ जॉन पापवर्थ, सम्पादक, 'रीसर्जेंस', लन्दन ❀

मैं विनोबा के सामने खो-सा गया। मैंने उनके बारे में जो कुछ सुन रखा था, उससे मैं उनके व्यक्तित्व की इस नाटकीयता के लिए तैयार नहीं था। वर्धा में उनका निवास ऊँची टेकरी पर है, जहाँ से चारों ओर का देहात अच्छी तरह दिखायी देता है। यह स्थान भौगोलिक दृष्टि से भारत के मध्य में भी है।

मैंने सोचा था कि मुलाकात के लिए मैं किसी कमरे में बुलाया जाऊंगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। एक बरामदे में, लगभग एक दर्जन लोगों के बीच, दरी पर मुझे बिठा दिया गया। मैं पैर मोड़कर बैठ गया। हम सब लोग दीवाल से सटे एक तख्त की ओर मुँह करके बैठे हुए थे। तख्त पर विनोबा लेटे हुए थे। उनका चेहरा एक हरे कपड़े से ढका हुआ था। विनोबा ने करवट बदली। एक सेवक ने कटोरी में दही दिया। विनोबा ने उसे बड़े चाव से खा लिया। खाकर उपस्थित लोगों को देखा। लगा, जैसे सबकी आँखों में समेट लिया। और एक किताब उलटने लगे। विनोबा ने अपनी दाढ़ी बनवा दी है। वह गाढ़े रंग का चश्मा पहनते हैं, और अक्सर चेहरे पर हरा कपड़ा लपेटे रहते हैं। देखनेवाले को यह सब रहस्यपूर्ण-सा लगता है। विनोबा का खाना-पीना, उठना-बैठना, सब सबके सामने ही होता है।

अचानक विनोबा ने अपनी घड़ी देखी और उनके सचिव ने हममें से एक को बुलाया। मुलाकात शुरू हुई। दूसरे लोग देखते रहे, सुनते रहे। मैं कुछ नहीं समझ सका। चर्चा हिन्दी में थी। उसके बाद मेरी बारी आयी। विनोबा अब पदयात्री नहीं रहे, लेकिन उनका मस्तिष्क उतना ही सजीव और स्पष्ट है। चर्चा के दौरान उन्होंने मेरे पत्र 'रिसर्जेंस' के एक पाठक के पत्र का एक अंश पढ़ा जिसमें उसने लिखा था कि यह पत्रिका कितनी नीरस और शब्द-जाल से भरी हुई है। पत्र पढ़कर उन्होंने मेरी ओर देखा और कहा 'बोलो ...!' इसके पहले कि मैं कुछ कहूँ, बैठे हुए लोग हँस पड़े।

जो लोग मानते हैं कि कौतुक का युग नहीं रहा, उनके लिए विनोबा चुनौती के रूप में मौजूद हैं। उन्होंने नम्रता किन्तु दृढ़ता के साथ भारत के धनियों को राजी किया है कि वे अपनी भूमि का एक भाग भूमिहीनों को दें। विनोबा ने जितनी भूमि बाँटी है उतनी भारत की सरकार आज

विनोबा : सान्निध्य का अपूर्व आनंद

इतने वर्षों में भी नहीं बाँट सकी है। भूदान और ग्रामदान से विनोबा ने ऐसी ज्योति जलायी है जो शानदार तो है ही, चमत्कारपूर्ण भी है। अगर इसके साथ परिवर्तन करने का दृढ़ संकल्प जुड़ जाय तो यह ज्योति भारत का स्वरूप बदल देगी। भारत की सबसे बड़ी समस्या गाँवों की निष्क्रियता है। इस निष्क्रियता की बात सभी कहते हैं, लेकिन उपाय क्या है? मर्ज पहचानना एक बात है, इलाज ढूँढ़ना दूसरी। आज तक जितने इलाज ढूँढ़े गये हैं वे सब फेल हो चुके हैं। लेकिन मुझे लगता है कि कोई भी सामाजिक समस्या हो, उसके समाधान में एक तत्त्व जरूरी है, वह है असाधारण व्यक्ति का नेतृत्व। लोग आजकल इसका महत्त्व कम मानते हैं, शायद इसलिए कि कुछ पश्चिमी नेता नैतिक, आध्यात्मिक दृष्टि से मानव नहीं, दानव हुए हैं। स्वेतलाना ने अपने पिता स्तालिन का इन्हीं शब्दों में उल्लेख किया है। लेकिन हम न भूलें कि मानव के विकास-क्रम में बड़े कदम ऊँचे आशय और प्रेरणा के व्यक्तियों ने ही उठाये हैं। क्या सत पॉल के गिरजाघर को किसी कमेटी ने बनाया था? उसके निर्माता रेन ने कभी निर्माण-कला के किसी स्कूल का मुँह भी नहीं देखा था। डिग्री-डिप्लोमा की दृष्टि से वह 'क्वालिफाइड' भी नहीं था।

विनोबा भी 'क्वालिफाइड' समाजशास्त्री नहीं हैं, और न तो वह 'रूरल डेवलपमेन्ट' के विशेषज्ञ ही हैं। लेकिन अपने व्यक्तित्व के प्रभाव से उन्होंने ग्रामीण जीवन में परिवर्तन की वह प्रक्रिया शुरू की है, जो पीढ़ियों तक चलती रहेगी। विनोबा के व्यक्तित्व को स्वीकार करना व्यक्ति-पूजा नहीं है, और अगर हो तो भी मैं विनोबा के व्यक्तित्व को कहीं अधिक हर्ष से स्वीकार करूंगा बनिस्बत उन लोगों के व्यक्तित्व के, जो आज राजनीति पर हावी हैं।

विनोबा को देखने पर तुरत कोई यह सोच सकता है कि यह एक स्कूल-मास्टर है जिसकी अभी ऊँची और अच्छी अच्छी बातें कहने की आदत नहीं छूटी है। लेकिन नहीं, इस व्यक्ति के व्यक्तित्व में एक शक्ति है जिसका अनुभव किया जा सकता है, वर्णन नहीं। मैं जॉन कालिन्स, और उनकी पत्नी डायना से चर्चा कर रहा था। वे भी दिल्ली की गोष्ठी के बाद विनोबा से मिलने आये थे। वे विनोबा के बारे में मेरी राय से सहमत थे। महान व्यक्ति? हाँ, सज्जन, एक संत! लेकिन क्यों? कैसे? उनके व्यक्तित्व के गुण को शब्दों में उतारना संभव नहीं है, ठीक उसी तरह जैसे संगीत का उसके→

ग्रामस्वराज्य : पूर्व से आनेवाला सर्वाधिक सृजनात्मक विचार

❀ लुई फिशर ❀

एक बार नेहरू ने मुझे कहा था : "जयप्रकाश भारत के भावी प्रधानमंत्री हैं।" लेकिन इधर जयप्रकाश नारायण ने राजनीति छोड़ दी है। सन् १९४६ में मैं उनसे सटकर एक ही फर्श पर बैठा था और हम दोनों महात्मा गांधी के साथ चर्चा कर रहे थे। उस समय जयप्रकाश अंग्रेजों के विरुद्ध अपनी हिंसक कार्यवाहियों को उचित सिद्ध करने में लगे थे, जब कि गांधीजी हर हालत में अहिंसा की ही हिमायत कर रहे थे। उन दिनों गांधी की बात जयप्रकाश के गले उतरी नहीं थी। गांधी सन् १९४८ में गुजरे। १९५२ में जयप्रकाश ने आत्मशुद्धि के लिए २१ दिन के उपवास किये और कहा "इतने सालों तक मैंने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की पूजा की, अब मैं अहिंसा के मन्दिर में पहुँचा हूँ।" इस प्रकार वे गांधीमार्गी बने। उन्होंने लिखा : "मुझे खेद इस बात का है कि गांधीजी के जीवन-काल में ही मैं अपनी जीवन-यात्रा की इस मंजिल तक पहुँच नहीं सका।" लेकिन इसके बाद जो करने योग्य था, सो उन्होंने किया। वे गांधीजी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी माने जानेवाले विनोबा भावे के आन्दोलन में सम्मिलित हो गये। इस प्रकार अब जयप्रकाश की राजनीति का यह रूप बना है। यद्यपि अब भी प्रसंग-प्रसंग से जब कभी वे राजनीतिक प्रश्नों के विषय में अपनी राय जाहिर करते हैं, तो कइयों के दिल में शक पैदा होता है। वे पूछते हैं : 'क्या सचमुच जयप्रकाश ने राजनीति को हमेशा के लिए छोड़ दिया है ?" इसका जवाब है कि "हाँ, आज की राजनीति को।"

ये हैं विनोबा भावे के शब्द : "विज्ञान के इस युग में संकुचित आदर्शों और निष्ठाओं को लेकर चलनेवाले राजनीतिक पक्ष गये-गुजरे जमाने की चीज बन गये हैं।" विनोबा शिकायत करते हैं कि "हर छोटी-बड़ी चीज के लिए सरकार का मुँह ताकने की बात लोगों को सिखायी जा रही है। यह सब लोकतंत्र के नाम पर चल रहा है। हर कोई कहता है कि हमें मत देकर हुकूमत की जगह पर बैठा दो। बाकी सब कुछ हम आपके लिए कर देंगे। इस प्रकार लोग अपने प्रतिनिधि चुनकर भेजते हैं, लेकिन जब ये प्रतिनिधि अपने किये हुए वचनों का पालन नहीं कर पाते, तो लोगों में असन्तोष उत्पन्न होता है। ऐसी परिस्थिति में फौज के लिए यह आसान हो जाता है कि वह बीच में पड़कर हुकूमत पर कब्जा कर लें।"

जयप्रकाश ने लिखा है : "आज की पक्ष-पद्धति लोगों को पुरुषार्थहीन बना रही है। उसके द्वारा लोगों की शक्ति और उनके अभिक्रम का विकास नहीं होता। लोगों में अपना प्रबंध स्वयं कर लेने की शक्ति भी प्रकट नहीं होती। सभी पक्ष सत्ता के पीछे पड़े हैं। लोगों को तो सिर्फ भेड़-बकरी की तरह ही रहना है। उन्हें स्वतंत्रता केवल इस बात की है कि वे एक निश्चित समय के अन्तर से अपने गडरियों को पसन्द कर सकते हैं।"

एक बार जनरल दिगॉल ने कहा था : "अब यह एक ऐसा अकाट्य तथ्य है कि ये राजनीतिक पक्ष आज के हमारे विराट् प्रश्नों को न तो हल कर सके हैं, न हल कर सकते हैं, और न हल कर सकेंगे।" इस बुनियादी बात के बारे में आज सेना के सेनापति और गांधीमार्गी, दोनों अब एकमत हैं।

यही कारण है कि आज जयप्रकाश भारत के लिए ऐसे ग्रामसमाजों की हिमायत करते हैं, जिन्हें गांधी ने ग्रामीण गणतंत्र कहा था। ये ग्राम-समाज आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से यथासम्भव अधिक स्वावलम्बी होंगे। अगर जयप्रकाश

→विवरण से नहीं लिया जा सकता।

विनोबा ने अनेक गांवों में भूमि के स्वामित्व का स्वरूप बदल दिया है। भूमि के स्वामियों ने उन्हें भूमि दी है। ऐसा कब, किस भूमिपति ने किया है ? स्टालिन-जैसा लौह-पुरुष भी रूस के किसानों से यह नहीं करा सका !

भूदान-ग्रामदान की आलोचनाएँ हुई हैं, और ऐसा नहीं है कि उनमें सार नहीं है। लेकिन विनोबा को एक सफलता मिल गयी है। भारत की नैतिक कल्पना में उन्होंने एक व्यावहारिक लक्ष्य का प्रवेश करा दिया है, जो देश को एक कठिन-से-कठिन समस्या के समाधान का रास्ता दिखा सकता है। वह समस्या है भारत के ग्रामीण जीवन की निष्क्रियता को समाप्त करना। जो भूमि दान में मिली है वह अच्छी है, बुरी है, या दाताओं ने जिस नीयत से दी है वह अच्छी है या बुरी है, या अभी तक बहुत परिवर्तन नहीं दिखायी देता, आदि प्रश्न बहुत महत्त्व के नहीं हैं। विनोबा ने पैदल चलकर देश की यात्रा की है। वह जानते हैं कि बड़ी-से-बड़ी यात्रा में एक पैर के बाद दूसरा पैर उठाने से ही यात्रा शुरू होती है। और अगर यात्रा में किसी जगह रुककर सोचिए कि कितनी यात्रा पूरी हुई और एक बिन्दु से आगे-पीछे कुछ ही कदम गिनिए तो क्या लगेगा ? लगेगा कि इतना ही चले ! इस तरह प्रगति थोड़ी लगेगी, लेकिन सही दिशा में कदम उठा गया, यह बड़ी बात है।

मुलाकात के अंत में उन्होंने कहा : 'हम लोग सहमत हैं।'

मैंने कहा : 'आश्चर्य है कि जीवन-भर का पापी और जीवन-भर का संत, दोनों पूर्ण सहमत हैं।'

विनोबा ने उत्तर दिया : 'ईश्वर ही बता सकता है कि कौन संत है, कौन पापी। यह कहकर वह रुक गये, फिर बोले : 'किंतु पापी के सामने भविष्य है, जब कि संत के लिए भूत ही भूत है।'

(मूल अंग्रेजी से)

कभी भी भारत के प्रधानमंत्री बनेंगे, तो वे ऐसे भारत के प्रधानमंत्री होंगे, जिसने आज की दल-प्रणाली को तिलांजलि देकर ऐसे ग्राम-समाजों की रचना को अपनाया होगा।

लोकसभाएं (पार्लियामेण्ट) निरर्थक सिद्ध हो रही हैं और एशिया-अफ्रीका में हिंसा भड़कती जा रही है, ऐसे समय में आधुनिक जीवन के संदर्भ में गांधी का औचित्य बढ़ता जा रहा है। उनके खादी और ग्रामोद्योग आदि की बातें ठीक तरह से समझी नहीं गयी और व्यर्थ ही उनका उपहास किया गया। गांधी ने कभी यंत्र का विरोध नहीं किया। उन्होंने कहा "यंत्र का अपना स्थान है ही। लेकिन यंत्र को मनुष्य के माथे पर चढ़कर बैठना नहीं चाहिए।" इण्डोनेशिया को, एशिया को और दूसरे सब देशों को भी यह याद रखना है। अवश्य ही हमें विकास की दिशा में आगे बढ़ना है, लेकिन पहली नजर गांवों की तरफ रखनी है। सन् १९५९ में नासर ने बड़े उत्साह के साथ घोषणा की थी कि मिस्र हजारों और लाखों मशीनमय बना रहा है। लेकिन इसे सुनकर जमीन के भूखे, कम पोषण पानेवाले और बीमारियों से परेशान बेचारे मिस्री किसान का दिल नाचे तो कैसे नाचे?

गांधी, विनोबा और जयप्रकाश की योजना के अनुसार ग्रामीण जनतंत्र पर आधारित औद्योगीकरण ही समग्र विकास सिद्ध कर सकेगा। आज के अंधे औद्योगीकरण से और आर्थिक पूंजीवाद से तो सत्ताधारी लोग ही अधिक-से-अधिक शक्तिमान बनते जायेंगे और एक या दूसरे प्रकार की तानाशाही के बीज बोये जाते रहेंगे। क्या एशिया और अफ्रीका के हाल ही स्वतंत्र हुए राष्ट्र विदेशी तानाशाही के स्थान पर स्वदेशी तानाशाही स्थापित करके सन्तोष मानेंगे? जयप्रकाश चेतावनी दे रहे हैं कि "अगर विकेन्द्रित लोकतंत्र की रचना को नहीं अपनाया गया, तो इन देशों के नसीब में तानाशाही ही बदी रहेगी।"

गांधी का ध्येय केवल इतना ही नहीं था कि विदेशी सत्ताधारियों को निकालकर उनकी जगह देशी सत्ताधीशों को बैठा दिया जाय। वे हिन्दुस्तान को जितना स्वतंत्र देखना चाहते थे, उतना ही स्वतंत्र वे एक हिन्दुस्तानी को भी देखना चाहते थे। विनोबा भावे भी व्यक्तिगत स्वतंत्रता को ही राष्ट्रीय स्वतंत्रता की कसौटी मानते हैं, और इण्डोनेशिया तथा एशिया-अफ्रीका के दूसरे देशों की तरह चूंकि भारत भी एक कृषि-प्रधान देश है, इसलिए वे अपने देश के गांव की स्वतंत्रता चाहते हैं। वे कहते हैं "आज हमारा देश स्वतंत्र हो चुका है। पर अब यह स्वतंत्रता गांव तक पहुंचनी चाहिए।" उनका ध्येय यह है कि गांव को स्वतंत्र भारत की सरकार के प्रभुत्व से मुक्त बनाया जाय। मुझे विनोबा का यह विचार पूर्व से आनेवाला सबसे अधिक सृजनात्मक विचार प्रतीत हुआ है। गांव की स्वतंत्रता एक सृजनात्मक वस्तु है, क्योंकि उसमें यह मान लिया गया है कि—

(१) राष्ट्रवाद केवल एक साधन है, अंतिम साध्य नहीं,

(२) राज्य की तुलना में व्यक्ति का महत्त्व अधिक है, और

(३) विराट्काय औद्योगीकरण की मोहिनीवाले इस युग में गांवों का पुनरुत्थान सबसे अच्छी अर्थनीति है, और गांवों का लोकतंत्र सबसे अच्छी राजनीति है। बाकी सब तो पश्चिम की यूरोअमेरिकी नकल-भर है।

सुकर्णो ने कहा है कि "एशिया की सब समस्याएं पश्चिम की पद्धति द्वारा सुलझायी नहीं जा सकेंगी।" लेकिन एशिया के लोग आज इस तथ्य के प्रति उदासीन हैं।

भारत अब भी गांधी और उनके अनुयायियों की बातों को सुन सकता है। भारत और इण्डोनेशिया आदि देशों को अपने सामने अधिक-से-अधिक आर्थिक विकास और कम-से-कम नौकरशाही के प्रभुत्व का ध्येय रखना चाहिए। यह चीज छोटी-छोटी विकेन्द्रित योजनाओं द्वारा सिद्ध की जा सकती है। गांवों का अपना अंकुश और उनका अपना स्वामित्व ही व्यक्तिगत पूंजीवाद और राज्यगत पूंजीवाद के दोषों से देश को बचा सकेगा। श्रेष्ठ औद्योगिक मैनेजर वह है, जो खुद कम-से-कम जिम्मेदारी ढोता है और दूसरों को अधिक-से अधिक जिम्मेदारी के साथ काम करने देता है। राष्ट्रीय नेतृत्व के लिए भी यही चीज सबसे अधिक आवश्यक है। छोटी-बड़ी हर चीज पर सरकारी अंकुश नहीं होना चाहिए। साथ ही, लोगों को भविष्य के वचन देकर ललचाना-फुसलाना भी नहीं चाहिए। व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए, जिससे वे तत्काल अपने जीवन का सारा प्रबंध स्वयं कर सकें।

एशिया और अफ्रीका के देशों के ध्यान में यह बात तुरन्त ही आयेगी कि राष्ट्रवाद पर्याप्त नहीं है और दूसरा भी कोई वाद सन्तोषजनक समाधान प्रस्तुत कर सकने की स्थिति में नहीं है। राजनीति का यथार्थ हेतु है, मनुष्य।

('हिस्टरी आफ इण्डोनेशिया' से)

आचार-विचार भेद

विचार और आचार में अन्तर तो हमेशा रहेगा ही। लेकिन विरोध नहीं होना चाहिए। जिस दिशा में विचार है, उसी दिशा में आचरण हो। दोनों में अन्तर जरूर रहेगा। लेकिन यह नहीं होना चाहिए कि जिस दिशा में विचार जा रहा है, उससे विरुद्ध दिशा में आचरण जाय। दोनों में अन्तर रहेगा, क्योंकि विचार चित्त में होता है, आचरण देह में। चित्त की जितनी दौड़ होगी, उतनी देह से नहीं हो सकेगी। लेकिन चित्त कहे कि दक्षिण में जायेंगे और देह कहे कि उत्तर में, यह भी नहीं होना चाहिए। चित्त दक्षिण की ओर जाता हो, तो आचरण भी दक्षिण की ओर ही होना चाहिए।

—विनोबा

धीरेन् भाई से विशेष प्रश्नोत्तर :

एकाकी इंसान : सम्बन्धों की समस्याएँ

[१० सितम्बर '७० को श्री धीरेन् भाई अपने प्रायोगिक जीवन के ७० वर्ष पूरे करेंगे। यों तो अपने अनुभवों को वे बराबर व्यक्त करते रहे हैं। *'समग्र ग्रामसेवा की ओर'* में उनकी जीवन-यात्रा और सामाजिक महत्व के प्रयोगों का दस्तावेज मौजूद है, लेकिन फिर भी ये सवाल उनके सामने प्रस्तुत करते समय प्रश्नकर्ता के मन में यह जिज्ञासा थी कि धीरेन् भाई आज अपनी जीवन-यात्रा को स्वयं किस रूप में देखते हैं, यह जाना जाय। बराबर स्थूल प्रवृत्तियों और प्रयोगों में लगे दिखाई देनेवाले धीरेन् भाई की जीवन-प्रेरणा मूलरूप में क्या रही है इसकी झलक, उनकी वर्षगाँठ पर शुभकामना अर्पित करते हुए, हम उनके ही शब्दों में प्रस्तुत कर रहे हैं।]

प्रश्न : अपने जीवन के सत्तर वर्ष पूरे करने के बाद अब आप उस बिन्दु पर पहुँच गये हैं, जहाँ से पीछे की जीवन-यात्रा के अनुभवों के आधार पर आगे आनेवाले भविष्य की कुछ झलक देख सकते हैं। निःसन्देह वह झलक आपके निजी जीवन के अनुभवों और उनके आधार पर निर्मित धारणाओं से प्रभावित ही होगी, लेकिन चूँकि आपका जीवन निजी से अधिक सार्वजनिक रहा है, इसलिए उसका सामाजिक संदर्भ होगा, महत्त्व होगा। इसलिए उस सम्बन्ध में आपके विचार हम जानना चाहेंगे।

धीरेन् भाई : वैसे आज का विज्ञान जमाने को इतनी तेजी से बदल रहा है, और सो भी बिना किसी दिशा-निर्देश के एक अराजक ढंग से बदल रहा है, कि भविष्य के विषय में किसी किस्म की कल्पना करना कठिन है। दिशाहीनता का कारण यह है कि विज्ञान के विकास की जो प्रेरणा रही है, वह इंसान के अपने ही विरुद्ध रही है। मनुष्य ने विज्ञान का इस्तेमाल शुरू से ही साधन के विकास में किया, और इस प्रयास में भौतिक विज्ञान को ही विज्ञान के रूप में मान्य किया। वह भूल गया कि मानव-विज्ञान भी एक विज्ञान है, और मनुष्य के लिए सबसे महत्त्व का विज्ञान है। यही कारण है कि विज्ञान की प्रगति में मनुष्य के लिए साधन और समृद्धि का तो विकास हुआ, लेकिन इसके साथ-साथ सम्बन्धों का ह्रास होता चला गया। आज जब साधन और समृद्धि पराकाष्ठा पर पहुँच गयी है तो यह स्वाभाविक है कि सम्बन्ध शून्य हो गये हैं। आज इंसान न पारिवारिक है, न सामाजिक है, न वह राष्ट्रीय ही रह गया है। वह एक व्यक्ति है, और पूर्णतः अकेला व्यक्ति।

यह जो परिस्थिति है, वह सारे विश्व को पागल बना रही है, और इसके खिलाफ आज की तरुण पीढ़ी दुनिया-भर में बगावत कर रही है। क्योंकि वे जानते नहीं हैं कि वे हैं कौन, और किसके लिए हैं? अब तो मनुष्य पशु-पक्षियों के परस्पर-सम्बन्धों को भी ईर्ष्या की नजर से देखने लगा है। ऐसी स्थिति में समाज में व्यापक मस्तिष्क-विकृति अत्यंत स्वाभाविक है, ऐसी स्थिति में क्या होगा, इसे कौन कह सकता है?

सौभाग्य से मैं बचपन से ही स्वतंत्र चिंतक रहा हूँ। और मैंने पुस्तकों आदि का विशेष रूप से कोई अध्ययन नहीं किया है, यह स्थिति मेरे चिन्तन में सहायक रही है। उस कारण मेरे लिए सुविधा यह रही है कि मैं परिस्थितियों का प्रत्यक्ष द्रष्टा रहा हूँ। और उपरोक्त परिस्थिति का निर्माण हो रहा है, यह पिछले चालीस साल से देख रहा हूँ, जिसका कुछ जिक्र मैंने 'समग्र ग्रामसेवा की ओर' पुस्तक में किया है।

३५ साल पहले सन् १९३५ में जब मैं सेवा के लिए रणीवाँ चला गया था, तब से आज तक मैंने अपने जीवन में इसी दिशा में प्रयास किया है। मैं जहाँ कहीं रहा हूँ, इसीका मार्ग खोजने का प्रयोग करता रहा हूँ। मैंने देखा कि यद्यपि

धीरेन् भाई : एक अनौपचारिक आदमी

गांधी और विनोबा की कोशिश साधन की फिक्र न करके सम्बन्ध-निर्माण की ही रही, और वे लोग अपने विचार उसी दिशा में प्रकट करते रहे, फिर भी उनके साथी दुनिया के प्रवाह के अनुसार साधन की ही बात सोचते रहे। यही कारण है कि गांधी के आन्दोलन के बाद देश के राष्ट्रीय नेताओं ने उनकी सलाह के अनुसार शिक्षण और समाज-परिवर्तन की बात न सोचकर पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से साधनों के विकास की कोशिश में लगे। और विनोबा के भूदान और ग्रामदान-आन्दोलन में भी उनके साथी सम्बन्ध-निर्माण के मार्ग खोजने में न लगकर ग्रामनिर्माण के नाम से साधन और समृद्धि-निर्माण के ही प्रयास करते रहे हैं। यही कारण है कि भूदान के तूफानी आन्दोलन के दरम्यान भूमिदान और भूमिहीन के बीच के सम्बन्ध-निर्माण का अवसर उन्होंने खो दिया।

ये सब बातें मैं देख रहा था। इसीलिए सब जिम्मेदारियों से निवृत्त होकर लोक-शिक्षण तथा समाज-परिवर्तन का मार्ग खोजने में लगा, और पिछले दस साल से उसी खोज में लगा हुआ हूँ। इन दस सालों के दरम्यान मैंने देखा कि दुनिया

है। धीरे-धीरे मानवीय सम्बन्धों की भूखी बनती जा रही है, क्योंकि एकाकीपन के कारण मानव-समाज नित्य संघर्ष का अखाड़ा बनता चला जा रहा है, जिससे मनुष्य भयभीत है। मैं निश्चित रूप से देख रहा हूँ कि दुनिया का भविष्य उज्ज्वल है, क्योंकि विश्व-भर के चिंतक अब इसी प्रश्न पर दिमाग लगा रहे हैं।

लेकिन आप लोगों को यह नहीं समझना चाहिए कि इस चिंतन की तुरंत कोई निष्पत्ति होनेवाली है। क्योंकि पूर्ण एकाकी मनुष्य एक बार भरपूर संघर्ष कर लेगा, तभी ऐसे चिंतकों के विचारों की तरफ झुकेगा। अतएव संसार में आज जितने लोग मानव को बचाना चाहते हैं, उन्हें सातत्य के साथ अकेला ही सही, इस दिशा में मार्ग खोजने में लगना होगा, इस विश्वास के साथ कि मंजिल बहुत दूर नहीं है।

प्रश्न : प्रायः जीवन की सफलता का आधार समाज की मान्यता के अनुसार पद, पैसा और प्रतिष्ठा का अर्जन है। जबकि आपने उस ओर या तो ध्यान नहीं दिया, या उक्त तत्त्व यदि आपसे जुड़ने लगे तो उनसे आपने अपने आपको अलग कर लिया। अब इस समय आप अपने विगत जीवन को सफलता, विफलता, सार्थकता आदि के संदर्भ में किस रूप में देखते हैं?

धीरेन्द्र भाई : अभी मैंने कहा है कि मैंने शुरू से ही समाज के विकास में साधन और समृद्धि के कार्य को महत्त्व नहीं दिया, जबकि दुनिया ने उन्हीं को सब कुछ माना है। पद, प्रतिष्ठा, पैसा आदि को ही जीवन की सफलता के आधार के रूप में माना जाता है, वह इसी मान्यता की अभिव्यक्ति मात्र है।

यह सही नहीं है कि अपने साथ जुड़े हुए पदों से मैं अलग रहा, उन जिम्मेदारियों को मैंने भरपूर निभाया, लेकिन चूँकि मैंने कभी इन बातों को महत्त्व नहीं दिया था, इसलिए पदों पर रहते हुए भी मैं उनसे निर्लिप्त रह सका था, और कभी भी उन्हें प्रतिष्ठा का आधार नहीं माना। फिर भी बहुत छोटे स्तर पर ही सही, मैंने देश के नौजवानों को प्रेरणा जरूर दी है। और उसीको मैं अपने जीवन की सफलता मानता हूँ। दूसरी सफलता यह मानता हूँ कि मतभेद और अन्य कारणों से भी मेरे जो साथी छोड़कर गये हैं, उन्होंने मेरे स्वभाव की निर्लिप्तता के बावजूद मेरे साथ सम्बन्ध बनाये रखने का ही प्रयास किया है। सम्बन्ध-निर्माण की खोज में इसे भी आप एक सफलता कह सकते हैं। तीसरी सफलता यह मानता हूँ कि मुझको अपने प्रयोग में हमेशा कुछ-न-कुछ नौजवान मिलते रहे हैं, चाहे थोड़े दिन के लिए ही सही, जो तकलीफ उठाकर भी मेरे साथ प्रयोग में शामिल रहे हैं। चौथी सफलता यह मानता हूँ कि बावजूद मित्रों के उत्साह के मुझको अपने विचार पर कभी शंका नहीं हुई। जैसे-जैसे मैं आगे बढ़ता रहा, और दुनिया की परिस्थिति को देखता रहा, तो यह स्पष्ट होता रहा कि दुनिया अपने उद्धार के लिए दिन-ब-दिन जिस विचार की ओर बढ़ रही है, उसके साथ मेरे विचार का पूर्णतः मेल है। इसलिए शंका की कोई गुंजाइश नहीं रही।

प्रश्न : आपका जीवन रक्त-सम्बन्धों वाली पारिवारिकता के दायरे में नहीं रहा है, लेकिन आपके जीवन में पारिवारिकता का तत्त्व हर कदम पर झलकता रहा है। आप पिछले अनुभवों के आधार पर आज कैसा महसूस करते हैं, और वर्तमान तथा नयी आनेवाली पीढ़ी को व्यक्तिगत सम्बन्धों के संदर्भ में क्या सलाह देंगे?

धीरेन्द्र भाई : यह तत्त्व शायद मेरे स्वभाव का अंग है, और हो सकता है इसी स्वभाव के कारण सम्बन्ध और साधन के प्रश्न पर मेरे उपरोक्त विचार बने हों। फिर जब मैं विचारपूर्वक अपने जीवन में मानवीय सम्बन्धों की खोज को अधिक महत्त्व देने लगा, और अपने जीवन में सम्बन्ध-निर्माण का प्रयास करने लगा, तो मेरे अन्दर की पारिवारिकता के स्वभाव का भी विकास हुआ, और चूँकि स्वभाव और विचार की एकरूपता रही, इसलिए प्रयास द्वारा विकसित सम्बन्ध भी आप लोगों को स्वाभाविक लगते हैं।

वर्तमान और आगे आनेवाली पीढ़ी को निश्चित रूप से सम्बन्ध-निर्माण पर जोर देने की बात कहूँगा। मैं मानता हूँ कि रक्त-सम्बन्ध के आधार पर निर्मित पुराने सम्बन्ध अब काम नहीं देंगे, क्योंकि निःसन्देह वे एकांगी और संकुचित होंगे, और उनके अन्तर्निहित मूल्य मनुष्य को सामाजिकता और मानवीयता के प्रति उदासीन बनायेगा। इसलिए मैं सलाह दूँगा, कि वे अपनी पारिवारिकता का सम्बन्ध अपने पड़ोसी से शुरू करके विश्व तक निरन्तर व्यापक बनाते रहने का प्रयास करें।

प्रस्तुतकर्ता : रामचन्द्र राही

राजनैतिक दल हमारे यहाँ चुनाव-प्रचार न करें

–बीकानेर के ३०० ग्रामदानी प्रतिनिधियों की गोष्ठी का प्रस्ताव–

आज दिनांक २५-८-७० को छतरगढ़ में होनेवाले जिला-स्तरीय ग्रामदान-पुष्टि शिविर के ३०० ग्रामदानी प्रतिनिधि व कार्यकर्ताओं की यह सभा सर्वसम्मति से निम्न प्रस्ताव पारित कर राज्य-सरकार से निवेदन करती है कि हमने इस शिविर के निर्णयानुसार अक्तूबर मास तक जिले के गांवों में ग्रामसभाएँ गठित कर कार्यकारिणी का चुनाव कर लेने का निश्चय किया है और २१ अगस्त से ग्रामसभाओं के गठन का कार्य शुरू कर रहे हैं। हमने सोच-समझकर ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य का विचार स्वीकार कर इस दिशा में कदम बढ़ाया है। हम पंचायती राज्य के चुनावों में भाग नहीं लेंगे। अतः राज्य-सरकार से निवेदन है कि वह बीकानेर जिले के समस्त गांवों में पंचायत राज्य के चुनाव न करवाये। राजनैतिक दलों से अनुरोध है कि वे हमारे यहाँ चुनाव-प्रचार न करें, ताकि हमारे गांवों की एकता कायम रह सके और हमारी ग्रामसभाओं द्वारा बापू के ग्रामस्वराज्य का सपना पूरा हो सके। ●

विनोबा : भारत की सभी भाषाओं के ज्ञाता

❀ काका कालेलकर ❀

हम दोनों (विनोबाजी और मैं) करीब एक ही समय गांधीजी के आश्रम गये। मैं मानता हूँ कि गांधीजी के आश्रमवासियों में सबसे पुराने हम दो ही हैं। गांधीजी की भाषा-नीति हम दोनों को एक-सी जँच गयी।

आश्रम के प्रारम्भ में सवाल उठा था कि आश्रम की भाषा कौनसी ? स्वयं गांधीजी हिन्दी बहुत कम जानते थे, तो भी वे हिन्दी के पक्ष में थे। मैंने कहा, (उन दिनों विनोबा संस्कृत सीखने के लिए 'प्राज्ञ पाठशाला', वाई चले गये थे) "नहीं, आश्रम गुजरातीप्रधान शहर में स्थापित है। आश्रम में अधिकांश व्यक्ति गुजराती हैं। आसपास का सारा समाज गुजराती है, इसलिए आश्रम की भाषा गुजराती ही होनी चाहिए।" मेरी बात का स्वीकार हुआ और आश्रम में सब लोग गुजराती ही चलाने लगे।

यह इसलिए कहता हूँ कि हम सब लोग गांधी के साथ पूरे सहमत थे कि भारत की एकता के लिए राष्ट्रभाषा का प्रचार सार्वत्रिक होना चाहिए। हम सब एकमत थे कि राष्ट्रभाषा हिन्दी ही हो सकती है। भरुच में जो शिक्षा परिषद् हुई थी, उसमें गांधीजी अध्यक्ष थे और गांधीजी ने मुझे राष्ट्रभाषा पर एक लेख लिखने के लिए प्रेरित किया था। मेरी प्रथम दलील थी कि राष्ट्रभाषा का स्थान कोई एक स्वदेशी भाषा ही ले सकती है। मेरी दूसरी दलील थी कि इस सवाल का हल भारत के संतों ने और यात्रियों ने कब का किया है कि हिन्दी ही हमारी राष्ट्रभाषा हो सकती है। इस निर्णय पर दृढ़ होते हुए भी जब मैंने आश्रम की और 'गुजरात विद्यापीठ' की बोधभाषा गुजराती ही हो ऐसा आग्रह चलाया तब मुझे अपनी सब बातें स्पष्ट करनी पड़ीं। उन्हीं सब बातों को आज भारत के लोगों के सामने रखना जरूरी हो गया है। खुशी की बात है कि इस सम्बन्ध में श्री विनोबाजी और मैं सौ प्रतिशत सहमत हैं।

हमारा कहना है कि भारत की प्रादेशिक-भाषाएँ छोटी हों या बड़ी, पूर्ण विकसित हों या अर्धविकसित—जनता की भाषाएँ हैं। उनकी जड़ें लोकजीवन में पहुँचकर मजबूत हुई हैं। इनका अधिकार सबसे अधिक है। और अगर भारत में प्रजाराज चलाना है तो जनता की भाषाओं के द्वारा ही जनता में हम जागृति और एकता तथा स्वराज-निष्ठा उत्पन्न कर सकते हैं।

इसलिए जनता की प्रादेशिक भाषाओं द्वारा लोक-जागृति का काम करते हुए, हमें राष्ट्रीय और सांस्कृतिक एकता के लिए हिन्दी भाषा का सहारा लेना चाहिए। मैंने यहाँ तक कहा कि हिन्दी तो इस देश में प्रादेशिक भाषाओं की सेवा करके, उनका आशीर्वाद प्राप्त करके ही पनप सकती है।

यही बात विनोबाजी ने केवल शब्दों से नहीं, लेकिन अपने असाधारण पुरुषार्थ से देश के सामने रखी है। विनोबाजी ने सब प्रादेशिक भाषाएँ सीखने का पुरुषार्थ किया है और मुझे संतोष है कि प्रारंभकाल में मैं उनकी कुछ सेवा कर सका। उस समय के एक-दो मजेदार प्रसंग सुना दूँ।

हम दोनों उपन्यास आदि कल्पना-प्रधान साहित्य पढ़ने के आदी नहीं। एक दफे जेल में साथ बैठकर चर्चा करते विनोबा ने कहा, "मैं समझ नहीं सकता कि इतिहास का प्रचुर साहित्य छोड़कर लोग उपन्यास के पीछे क्यों पड़ते हैं ? हमें जो जीवन-परिचय चाहिए, वह इतिहास में मिल सकता है।" चर्चा में विनोबा का प्रतिवाद करते हुए मैंने कहा कि, "इतिहास का महत्व मैं भी मानता हूँ, लेकिन इतिहास जीवन के अस्थि-पंजर को पेश करता है और उसमें भी राजा लोगों की करतूतें प्रस्तुत करता है। इतिहास ने जन-जीवन की उपेक्षा ही की है। उपन्यासों में प्रधानतः, भले ही स्त्री-पुरुष सम्बन्ध और शृंगार की चर्चा हो, राष्ट्रजीवन का मांस तो उपन्यासों में ही पाया जाता है। इतिहास से हड्डियाँ और उपन्यासों से मांस को मिलाकर हम पूरे शरीर को पाते हैं।"

हमारी चर्चा तो यहीं पूरी हो गयी, लेकिन मुझे इससे आगे जाना था। मैंने विनोबाजी से पूछा कि आपने रविबाबू का उपन्यास 'गोरा' पढ़ा है ? मैं जानता था कि विनोबा को बंगला भाषा नहीं आती और उपन्यास का अनुवाद वे कहाँ से पढ़ें ? मैंने कहा, "विनोबा, 'गोरा' आपको पढ़ना ही चाहिए और वह भी मूल बंगला में। इस जेल में मेरे पास शिवबालक बिसेन हैं, वे बंगला अच्छी तरह जानते हैं, इतना ही नहीं, पूर्व बंगाल में रहकर सेवा करने के कारण वहाँ की प्रादेशिक बंगला भी जानते हैं। उनके साथ 'गोरा' पढ़िए। आपको भाषा भी आ जायगी और एक सर्वोत्कृष्ट कवि की उत्कृष्ट कृति के साथ आपका परिचय भी होगा।"

बात तय हो गयी। विनोबा ने बंगला सीख ली। 'गोरा' उपन्यास वे सुन चुके। फिर (हमारी पुरानी चर्चा शायद वे भूल गये थे) कहने लगे, "ऐसा उपन्यास मिलने पर इतिहास पढ़ने की जरूरत ही क्या ?" पाठक मेरी प्रसन्नता की कल्पना कर सकते हैं।

अब एक दूसरा प्रसंग सुना दूँ। वह भी जेल का ही है। हम दोनों पुराने आश्रमवासी थे सही, लेकिन जेल में हम एक-दूसरे के साथ बहुत अधिक नजदीक आ गये, क्योंकि, हम दोनों को एक ही कमरे में रहने को मिला था और सारा समय पूरा हमारा ही था। एक दिन किसी निर्णय पर आये होंगे ऐसी आवाज में मुझसे पूछने लगे : (क्योंकि मैं तो सर्वज्ञ हूँ !) "काका, भारत में कुल भाषाएँ हैं कितनी और उनकी लिपियाँ हैं कितनी ? सरकार ने हमें इस जेल में रोक रखा है। पता नहीं, कब मुक्त होंगे, तो भारत की सब भाषाएँ क्यों न सीख लूँ ?" मैंने कहा, "'उदार' कल्पः (उत्तम संकल्प)। इसमें मैं आपकी पूरी सहायता दे सकूँगा। किंतु

किसी भाषा की आपको प्रारंभिक किताबें चाहिए, मैं मँगवा दूँगा। कहिए, किस भाषा से प्रारंभ करेंगे ?"

विनोबा कहने लगे, "राजाजी हमें उलाहना देते हैं कि 'हमें हिन्दी सीखने को कहते हो, परन्तु हमारी भाषा क्यों नहीं सीखते ?' राजाजी के कहने में सार है। तो मैं तमिल से ही क्यों न प्रारंभ करूँ ?" मैंने कहा, "बहुत अच्छा है। आप तमिल भाषा सीख गये, तो आपको मलयालम आ ही गयी समझिए और तेलुगु और कन्नड़ भी आसान होगी।" मैंने उनको समझाया कि दक्षिण की चार द्रविड भाषाओं में संस्कृत शब्दों का परिमाण अच्छा है। केरल की मलयालम में अस्सी फीसदी शब्द संस्कृत के हैं। कन्नड़ और तेलुगु में भी साठ फीसदी संस्कृत के शब्द हैं। एक तमिल ऐसी है, जिसमें संस्कृत के शब्द शायद चालीस फीसदी से अधिक नहीं हैं। तमिल के अधिक-से-अधिक शब्द लिये हैं मलयालम ने। अव्यय भी द्रविड़ी भाषाओं में एक-दूसरी के साथ मिलते होंगे। तमिल सीख ली हो तो द्रविड़ भाषाओं का सवाल मानो हल ही हो गया। तमिल भाषा में अधिक कठिनाई है लिपि की। इसमें ध्वनियाँ तो पूरी-पूरी हैं। लेकिन चार-चार ध्वनियों के लिए एक-एक ही अक्षर काम देते हैं। शब्द में अक्षर का स्थान देखकर उच्चारण तय होता है। कांति और गांधी, दोनों का स्पेलिंग (हिज्जे) एक ही होता है। इसके लिए आपको वेलोर जेल में तमिल-भाषी काफी हैं, उनकी दोस्ती करनी पड़ेगी।"

मैंने तमिल की किताबें ला दीं और विनोबा ने तमिल में बारह खड़ी-जोर से बोलना शुरू किया। राजनैतिक बंदी आकर मुझसे पूछने लगे—"आपके विनोबा को क्या हुआ है ? तमिल में रट रहे हैं हाथी के सूँड होती है.. हाथी के सूँड होती है !" मैंने हँसते हुए विनोबा का 'उत्तम संकल्प' लोगों को समझाया कि वेलोर की जेल में वे दक्षिण की चारों भाषाएँ सीखनेवाले हैं। फिर तो राजनैतिक लोग विनोबा की मदद करने लगे।

वेलोर जेल में विनोबा ने दक्षिण की चार भाषाएँ हस्तगत और मुखोद्गत कर डालीं। फिर उनके लिए मैंने अच्छी-अच्छी किताबें मँगवायीं, लेकिन वेलोर जेलवाले द्रविड़ी भाषा जानते थे। उन्होंने कहा कि जेल के नियमों के अनुसार राजनीतिक किताबें हम आपको नहीं दे सकते। जेलवालों के हाथ में ये सब रह गयीं। लेकिन भाग्य हमारी मदद में था। भारत की ब्रिटिश सरकार ने हमें वेलोर जेल से नागपुर या सिवनी जेल में भेज दिया। वहाँ के जेलवाले एक भी द्रविड़ी भाषा जाननेवाले नहीं थे। मुझे बुलाकर कहने लगे, "यह क्या बला आप ले आये हैं ? ऊपर लिखा है—बंदी को न देने की किताबें।" मैंने हँसकर कहा, "विनोबाजी द्रविड़ भाषा सीखना चाहते हैं। उनको सीखने के लिए मैंने मँगायी थीं।" उन्होंने कहा, "ले जाइए।" विनोबा को बड़ी दावत मिल गयी। वेलोर जेल में जो वाचन-सुविधा नहीं थी, वह सिवनी जेल में हो गयी।

जब विनोबा ने अपनी पदयात्रा के सिलसिले में दक्षिण पादाक्रांत किया तब वेलोर जेल की और सिवनी जेल की पुरानी तपश्चर्या पूरी काम आयी। किसी भी प्रदेश में जावें, वहाँ की भाषा में विनोबा जनता से कह जाते थे कि 'आप अपनी भाषा में बोलिए, मैं समझ सकूँगा।' सचमुच भाषा तो लोक-हृदय को पूरा-पूरा खोलने की दैवी कुंजी है। किसी आदमी के साथ उसकी भाषा बोलिए और उसकी आँखों की चमक देखिए। प्रसन्न होकर वह दिल खोल ही देता है। ●

दूसरों के गुणों का आदर करें

जो गुण अपने नहीं है, वह गुण अपने में लाने की कोशिश नहीं करनी है। अपने में नहीं, वह गुण जिनमें होगा, उनका आदर करना चाहिए और उसका योग (एडीशन) करना चाहिए। उसके द्वारा परमेश्वर तक पहुँचना है। दूसरों के गुणों के लिए आदर बढ़ाना होगा, और अपने गुणों का विकास करना होगा। दूसरे के गुण अपने में लाने की कोशिश करेंगे, तो परमेश्वर के बदले उस मनुष्य के पास ही पहुँचेंगे। दूसरों के गुणों का हमेशा आदर करना चाहिए, नहीं तो अक्सर मत्सर पैदा होता है। यह सूक्ष्म दोष है। वह न हो, इसकी सावधानी होनी चाहिए।

—विनोबा

उड़ीसा में सरकार की प्रतिकूलता

१४ अगस्त को उत्कल सर्वोदय मंडल की बैठक में यह महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुआ कि उड़ीसा सरकार ने भूदान-यज्ञ समिति का सन् १९७०-७१ का अनुदान बंद करके सर्वोदय-आंदोलन के प्रति जो रुख अख्तियार किया है, उसके विरोध में उड़ीसा भूदान-यज्ञ समिति के सदस्य के रूप में तथा जिला-निवेदक के रूप में काम करनेवाले सर्वोदय कार्यकर्ता तत्काल भूदान-यज्ञ समिति से इस्तीफा दे दें। लोक-शक्ति के जरिये भूमि-वितरण के कार्य को तीव्रता से किया जाय और इसके लिए हरेक प्रखंड में कोष इकट्ठा किया जाय।

खादी-ग्रामोद्योग प्रशिक्षण

खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय, शिवदास-पुरा का नया सत्र १५ अक्तूबर '७० से प्रारंभ हो रहा है, जिसमें कताई-बुनाई एवं ग्रामोद्योगों के उन्नत साधनों का प्रशिक्षण और सैद्धान्तिक शिक्षण भी होगा। प्रशिक्षण-अवधि ११ माह की होगी। साठ रुपये मासिक छात्रवृत्ति दी जायेगी। प्रवेश के लिए शैक्षणिक योग्यता हाईस्कूल या उसके समकक्ष होनी चाहिए। प्रवेश नियमावली और प्रवेश-पत्र एक रुपया भेजकर आचार्य, राजस्थान खादी ग्रामोद्योग विद्यालय, शिवदासपुरा, जयपुर (राजस्थान) से प्राप्त किया जा सकता है।

अंतरिक्षयुगीन मानव की आकांक्षा के प्रतीक : विनोबा

❀ कामेश्वरप्रसाद बहुगुणा ❀

"विनोबा का प्रभाव आज नहीं, वर्षों के बाद लोग जानेंगे।" स्व० महादेव भाई के विनोबा के बारे में सन् १९४० में कहे गये ये शब्द आज भी उतने ही सही हैं। आज जब विनोबा का विराट दर्शन हो रहा है, तब भी क्या हम उन्हें पहचान पाये हैं? इस रूप को पहचानने के लिए तो दिव्य-चक्षु चाहिए न! अणुयुग ने वह दिव्यदृष्टि मनुष्य के लिए सुलभ कर दी है, किन्तु अभी उसकी बुद्धि पर मोह का (अपने भौतिक और आत्मिक के अतीत के मोह का) सोने का पर्दा पड़ा है, जिसे हटाकर सत्य-दर्शन करने में मनुष्य असमर्थ है। हमारी आज की आकांक्षाएँ तो वही पुरानी हैं—संग्रह की, सत्ता की और युद्ध की। जब कि विज्ञान ने साफ कर दिया है कि अब हमें नयी आकांक्षाओं का सहारा लेना होगा, अपने को बदलना होगा। पर हम तथाकथित विज्ञान के वंध-विश्वास में पड़कर 'विज्ञान' की इस सही आवाज को नहीं सुन पा रहे हैं। विनोबा हमें यही सुनाने का प्रयास कर रहे हैं। गांधीजी भारत की स्वतन्त्रता के निमित्त से जिस स्वराज्य के लिए जूझ रहे थे, आज विनोबा उस संग्राम के जीवित प्रतीक बन गये हैं। यह अलग बात है, जैसा कि कभी-कभी लोग कह देते हैं कि 'यदि गांधीजी जीवित होते तो वे इस संग्राम को किस तरह चलाते और तब विनोबा का उसमें क्या योगदान होता, यह कह सकना अब संभव नहीं है।' किन्तु गांधीजी के विचारों और कार्यों तथा गांधीजी पर विनोबा के प्रभाव को और खुद विनोबा के व्यक्तित्व पर, जो कि गांधीजी से प्रभावित तो रहा है किन्तु मूलतः स्वतंत्र रहा है, यदि विचार किया जाय तो आसानी से यह कहा जा सकता है कि वैसी हालत में भी विनोबा वही होते, जो वे आज हैं। यह एक संयोग ही लगता है कि विनोबा गांधी के बाद मंच पर आये और इसी संयोग के कारण वे विश्व में उत्तर-गांधीयुगीन विश्व की आकांक्षा के प्रतीक बन गये हैं।

व्यक्तित्व की महत्ता का आधार

यह सही है कि भूदान-ग्रामदान के रूप में विनोबा ने देश और दुनिया के सामने मनुष्य की कुछ मौलिक समस्याओं को हल करने की एक कारगर और सफल योजना रखी है, और बिना किसी परम्परागत माध्यम (सत्ता या दंड) की मदद के लगभग १२ लाख एकड़ भूमि का भूमिहीनों में वितरण करा देना, हजारों-लाखों गाँवों को सामूहिक रूप से संपत्ति के परम्परागत मूल्यों को बदलने के लिए राजी कर लेना आज के संसार में एक चमत्कारिक घटना ही कही जायेगी। यह काम भारत के सारे राजनैतिक दल, जिनके पास मनुष्य-बल और धन-बल की कोई कमी नहीं है, तथा देश की केन्द्र सरकार सहित लगभग २० राज्य-सरकारें भी, जिनके पास धन और शस्त्र दोनों बल हैं, इतना काम नहीं कर सकी हैं। यह अलग बात है कि आज अखबार आदि प्रकाशन के माध्यमों में यह बात बहुत प्रकट न होती हो, क्योंकि आज की पत्रकारिता भी तो उसी रतौंधी से ग्रस्त है। किन्तु विनोबा का महत्त्व भूदान-ग्रामदान के द्वारा प्राप्त सफलता या असफलता से नहीं जाना जा सकता है। विनोबा का महत्त्व उनके इतिहास-दर्शन के कारण है। गांधीजी ने स्वयं विनोबा के इस इतिहास-दर्शन को सराहा और स्वीकार किया था। आज यह निश्चय के साथ कहा जा सकता है कि गांधीजी होते तो वे इसी दर्शन को आगे करके चलते। यह बात इससे भी स्पष्ट होती है कि आज गांधी अपने जीवन-काल से भी अधिक गहराई और तीव्रता के साथ याद किये जा रहे हैं, और ऐसा बहुत कम महापुरुषों के साथ होता है। आमतौर पर आदमी मृत्यु के बाद भुला दिये जाते हैं। किन्तु गांधी के साथ ऐसा नहीं हुआ। इसका कारण भी विनोबा ही हैं। गांधीजी के बाद देश की बागडोर (यानी राजनीतिक सत्ता) जिन लोगों के हाथ में आयी वे सब गांधीजी के द्वारा ही पाले-पोसे गये थे, और उनसे यह आशा की गयी थी कि वे गांधीजी के संदेश को क्रियान्वित करेंगे। किन्तु पिछले तेईस सालों में इस देश में सत्ताधारियों (दलों और व्यक्तियों) ने जिस ढंग से काम किया, उससे विश्व में और देश में गांधीजी की तस्वीर न केवल धुँधली ही हुई है, वरन् विकृत भी हुई है। किन्तु उनके इन प्रयत्नों से गांधी का कोई नुकसान नहीं हुआ है। हाँ, देश का बहुत नुकसान हुआ है। किन्तु इस मीठे षड्यंत्र (गांधी को धीमे, चुपचाप किन्तु सुनियोजित ढंग से समाप्त करने का सत्ताधारियों का प्रयत्न) से गांधी को बचा ले जाने का सारा श्रेय आज विनोबा को दिया जा सकता है। यह विनोबा का भारत और विश्व पर बहुत बड़ा उपकार है।

आध्यात्मिक वीरता का दर्शन

विनोबा की दूसरी बात जो विश्व को आगे अनेक युगों तक चिन्तन में डाले रखेगी वह उनका 'धर्म का वैज्ञानिकीकरण' या 'विज्ञान का आध्यात्मीकरण' का सिद्धान्त है। पश्चिम के एक बहुत बड़े जीव-वैज्ञानिक ली काम्प्टे डी नोयी ने बहुत पहले अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ह्यूमन डेस्टिनी' (मनुष्य का भाग्य) में यही बात वैज्ञानिक तर्क के साथ पेश की थी कि मानव के आरोहण का मकसद मानव-मुक्ति है। मानव-मुक्ति से उसका मतलब मनुष्य के अपने पशुत्व से ऊपर उठकर मानवत्व के स्तर तक जाने में सफल होने से था। आज का विज्ञान इस बात को अनेक तरीके से कह रहा है और विनोबा ने यही बात जिस ढंग से कही है वह इस बारे में अभी तक कही गयी सभी बातों से नितान्त मौलिक और आकर्षक है। विज्ञान और आत्मज्ञान का समन्वय—यह विचार विनोबा की सर्वोत्कृष्ट देन कही जायेगी। जवाहरलालजी पर उनकी इस

बात का बहुत असर हुआ था और कौन जानता है कि वे जीवित होते तो इस ओर देश को न ले जाते ? धर्म अब गत वस्तु हो गयी है। उसमें अब कोई दम नहीं रहा। असल में तो उसमें कभी भी दम नहीं था, पर अब तो उसकी बहकाने की शक्ति भी चुक गयी है। धर्म एक प्रकार का सिवार था, जिसने उसी स्वच्छ जल को आवृत्त कर लिया था, जिसमें वह पैदा हुआ। वह स्वच्छ जल आध्यात्म था। अब विनोबा ने आधुनिक भारत में पहली बार हिम्मत करके इस व्यर्थ सिवार को हटाकर जल की स्वच्छता की ओर हमारा ध्यान खींचा है। शायद यह कहा जा सकता है कि शंकराचार्य के बाद भारत में ऐसी आध्यात्मिक वीरता का दर्शन केवल विनोबा में ही हो सका है।

वर्तमान युग के व्यास

विनोबा शायद इस मानी में भी पहले भारतीय मनीषी हैं, जिन्होंने हिन्दू धर्म के अलावा देश के दूसरे धर्मों के मूल ग्रन्थों और उनकी मूल भावनाओं में गहरी पैठ लगायी है और उनके मौलिक विचारों को लेकर उन्हें नये ढंग से लिखने की हिम्मत की है। विनोबा का 'कुरान-सार' आनेवाले अनेक युगों तक इस्लाम के ही अनुयायियों के लिए नहीं, प्रत्युत दूसरे लोगों के लिए भी प्रेरणा और शोध तथा मनन और श्रद्धा का कारण बना रहेगा। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के अनेक मौलवियों और विद्वानों ने इसे 'इस्लाम में विनोबा की उत्कृष्ट देन' के रूप में स्वीकार किया है। उसी तरह से उनका 'खिस्तधर्म सार' है। ईसाई धर्म का मर्म और निचोड़ इसमें आ गया है। उन असंख्य गैर-ईसाइयों के लिए, जिन्होंने कभी नये या पुराने टेस्टामेन्ट का नाम तक तक नहीं सुना, जो जरा भी अंग्रेजी नहीं जानते, यह पुस्तक ईसाई धर्म को समझने के लिए कुंजी का काम देगा। कहा नहीं जा सकता कि किसी अन्य गैरईसाई ने कभी ईसाई धर्म की इतनी मूल्यवान सेवा की हो। 'जपुजी' तो भारत का अपना ही ग्रन्थ है, किन्तु अब तक वह भी धर्म की कैद में बन्द था। विनोबा ने उसे भी वहाँ से मुक्त किया और आज वह सर्वसाधारण के लिए सरल नागरिक भाषा में सुलभ है। इनके अलावा भारत की विभिन्न भाषाओं में उत्तम ग्रन्थों को खोज-खोजकर उन्हें नवीन आयाम प्रदान कर फिर से ताजा और प्रेरणादायी बना दिया है। आनेवाले समय में भारत के मानस पर विनोबा के इस ज्ञानयज्ञ का असर हुए बिना क्या रह सकेगा ?

जब हम भारत के प्राचीन ऋषियों और सन्तों का स्मरण करते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत के इतिहास में एकमात्र अमिट कार्य यदि कोई हुआ है तो वह इन ऋषियों और संतों के द्वारा किया गया ज्ञानयज्ञ ही रहा है। उसने ही भारत को आज तक न केवल जिन्दा रखा है, वरन् सक्रिय भी रखा है। अब तो विज्ञान सर्वसुलभ हो गया है, ऐसी हालत में विनोबा का यह ज्ञानयज्ञ भारत के लिए ही नहीं, संसार के लिए भी मुक्तिदाता सिद्ध होगा। मालूम नहीं, भारत के इतिहास में इतनी अधिक प्रतिभा और जिज्ञासा तथा श्रद्धा व श्रम का पुंज कोई विनोबा-जैसा पुरुष दूसरा हुआ या नहीं, किन्तु यह बात अवश्य कही जा सकती है कि विनोबा की प्रतिभा महाभारत रचयिता व्यास का स्मरण कराती है। जिन लोगों ने विनोबा को पढ़ने से भी अधिक उन्हें सुना है, वे मेरी बात का समर्थन करेंगे। समन्वय के जिस यज्ञ का किसी सुदूर अतीत में महर्षि अगस्त्य ने आरम्भ किया था, विनोबा उसकी अब तक की फलश्रुति हैं।

संगठन और क्रान्ति

गांधीजी शायद हमारे इतिहास के पहले पुरुष थे, जिन्होंने अनेक संगठनों और संस्थाओं तथा आन्दोलनों को जन्म दिया और उनका संचालन किया, किन्तु स्वयं कभी उनमें लिप्त नहीं हुए। इसका कारण उनका अहिंसा का वह सिद्धान्त था, जिसे केवल उन्होंने ही पनपाया था, यद्यपि विचार-रूप में वह पुराना विचार था। लोग कभी-कभी कह देते हैं कि गांधीजी एक संगठनवादी आदमी थे। उन्होंने जो भी काम उठाया, चटपट उसके लिए एक संगठन खड़ा कर दिया। किन्तु संगठनवादी की यह पहचान नहीं होती। आधुनिक समाजशास्त्र में संगठन सम्बन्धी यह प्रसिद्ध सिद्धान्त प्रचलित है कि संगठन उसके सदस्यों के हितों के अनुरूप हो, तभी तक वह रह सकता है। किन्तु गांधीजी मानते थे कि संगठन या संस्था का हित-जैसी कोई चीज नहीं होती है। जो होता है वह व्यक्ति (individual) और व्यक्ति-हित ही होता है। और व्यक्ति तथा व्यक्ति-हित संगठन या संस्था से कहीं अधिक व्यापक होता है। अतः संगठन का स्वरूप उसके और सदस्यों के हितों में अनुरूपता के बजाय व्यापक सामाजिक हित पर आधारित होना चाहिए। इसीलिए उन्होंने संगठन को अहिंसा की कसौटी कहा था। विनोबा ने इस विचार को और परिपुष्ट किया है, और इसी सन्दर्भ में कहा है कि संगठन 'किये' नहीं जाते बल्कि 'होते' हैं।

सन् १९५७ में जब विनोबा ने तंत्र या संस्था-मुक्ति का नारा दिया तो अनेक लोग अब भी कहते हैं कि इससे आन्दोलन का बहुत नुकसान हुआ, और जब हाल ही में विनोबा की ७५वीं वर्ष-गांठ पर उन्हें ग्रामस्वराज्य-कोष को १ करोड़ की निधि भेंट करने की विनोबा ने स्वीकृति दी तो भी लोगों को लगा कि उस '५७ वाले विनोबा का विरोधाभास है। किन्तु असल में दोनों ही बातें सही नहीं हैं। स्वयं विनोबा ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा है कि इस निधि का उपयोग एक निश्चित अवधि के भीतर हो जाना चाहिए और हो सके तो साल भर में ही जाना चाहिए। वे इस बात को मानते हैं कि संगठन व्यापक सामाजिक हितों की दृष्टि से बनाये जाते हैं और इसीलिए उन्हें उसी व्यापक हित में विघटित भी कर देना चाहिए। व्यापक हित यानी सामु-

दायिक हित। और संगठन या संस्था के हित का अर्थ है समूहों अथवा व्यक्तियों के हित। समूहों या व्यक्तियों में अनेक बार हित-विरोध होता है, किन्तु समुदाय में हित-विरोध का सवाल ही नहीं होता। समूह में द्वैत प्रधान होता है और समुदाय में अद्वैत प्रधान होता है। तभी तो वह समुदाय कहलाता है। इसी आधार पर विनोबा ने संगठनों को दो भागों में बांटा है। एक तो शक्ति या दबाव पर आधारित संगठन, जैसे-सैनिक या राजनैतिक संगठन, और दूसरे, प्रेम पर आधारित संगठन, जैसे-परिवार। अब यह बात आधुनिक समाजशास्त्रीय चिंतन में नितान्त नवीन है कि संगठनों का उपयोग सदस्यों के हितों के लिए नहीं होना चाहिए, वरन् उन्हें व्यापक सामाजिक हित को सामने रखकर चलना चाहिए। असल में यह विचार भयानक और दोषपूर्ण है कि संगठन को सदस्यों का हित सम्पादन करना चाहिए। इसीसे भ्रष्टाचार, शोषण, गुटबन्दी और नौकरशाही तथा राज्यवाद पनपता है। यह सही है कि गांधीजी ने अनेक संगठन खड़े किये थे, पर वे क्रान्ति के वाहक थे और इसीलिए वे गौण बने रहे। मुख्य तो क्रान्ति थी। अब यह बात बदल गयी है और आज तो लोगों के लिए संगठन प्रधान हो गये हैं और यह माना जाता है कि वे 'क्रान्ति के लिए' काम करेंगे, क्योंकि उससे उन्हें लाभ होगा। आज 'संगठन के हित के लिए' लोग क्रान्ति चाहते हैं, पर गांधी-विनोबा समाज-हित के लिए, क्रान्ति जिसका एक कदम है, संगठन बनाने को कहते हैं।

सर्वोदय के अनेक संगठनों और संस्थाओं को यदि यह बात समझ में आ जाती तो वे विनोबा से इतने पीछे नहीं रह जाती। हमारी इस नयी पीढ़ी के लिए, जिसे गांधीजी को देखने और उनकी कार्य-पद्धति सीखने-समझने का कोई अवसर नहीं मिला, विनोबा की यह देन अत्यन्त मूल्यवान है। विनोबा का ही असर है कि आज अनेक लोगों में संगठनों के प्रति कोई रुचि नहीं है। यद्यपि अभी तो परम्परागत संगठन-प्रणाली का ही बोलबाला है। पर यह निश्चित है कि संगठनों और संस्थाओं को चन्द सदस्यों के हित-साधन या आत्म-प्रचार का माध्यम बनाने के दुश्चक्र से निकल बाहर आना होगा, नहीं तो आनेवाली क्रान्ति में वे मिट जायेंगी। गांधी की ही तरह विनोबा में भी अनेक संगठन बनाने पर भी उनसे अलिप्त रहने की कला सधी है, और सर्वोदय को माननेवालों के लिए यह एक सीख है।

स्थायी और स्वाभाविक परिवर्तन का माध्यम

विनोबा अराजवादी दार्शनिक हैं। वे मानते हैं कि राज्य मनुष्य की असभ्यता और आदिम अवस्था का प्रतीक है। सभ्य बनने के लिए 'राज्य का स्थानापन्न' खोजना आवश्यक है और विनोबा ने समुदाय को वह स्थान दिया है। यहीं पर साम्यवादियों से उनका बुनियादी मतभेद है। असल में साम्यवादी राजनैतिक दर्शन के क्षेत्र में सबसे कमजोर प्रतिभावाले और लाचार लोग हैं। वे आज भी राज्य को समाज का पर्याय मानते हैं और मजा यह है कि उनकी यह बचकाना मान्यता को अन्य सभी तथाकथित समाजवादी लोगों ने भी स्वीकार किया है। इसी कारण से ये सब लोग सामाजिक परिवर्तन के लिए राज्य को माध्यम मानते हैं जब कि सत्य यह है कि राज्य हमेशा ही अपरिवर्तनवादी होता है। और यही कारण है कि राज्य के जन्म-काल से आज तक नागरिक और राज्य में संघर्ष (चाहे वह राजतन्त्रवादी या साम्यवादी ही क्यों न हो) चला आ रहा है। किन्तु गांधीजी मानते थे कि परिवर्तन तो सामाजिक अभिक्रम से होता है। यह सामाजिक अभिक्रम मनुष्य की सहज और बुनियादी सामाजिक इकाइयों के माध्यम से जागृत होता है। हम जानते हैं कि सामाजिक इतिहास में परिवार, विवाह, गोत्र आदि सामाजिक इकाइयों ने कितने बुनियादी परिवर्तन किये, किन्तु राज्य आज तक कोई भी मौलिक परिवर्तन नहीं कर सका।

परिवर्तन के लिए राज्य की ओर देखनेवाले राज्यवादी (यानी लोकविरोधी) होते हैं। और इसलिए दल या समूह बनाकर अभिजात या नेता के नाम पर परिवर्तन की वकालत करते हैं। किन्तु यह समझने की बात है कि दल या ऐसे ही तथाकथित संगठन कृत्रिम और अस्थायी होते हैं, किन्तु समुदाय एक स्थायी तथा स्वाभाविक प्रत्यय होता है। किसी भी अस्थायी और कृत्रिम माध्यम से कोई स्थायी और स्वाभाविक परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। यही कारण है कि गांधी ने ग्राम-समुदायों पर इतना जोर दिया था और आज विनोबा ग्रामदान के माध्यम से उन्हीं ग्राम-समुदायों को पुन: जीवन देने का प्रयत्न कर रहे हैं। यदि एक बार गांव के लोग यह समझ जाते हैं कि बिना सरकार के भी वे गांव का काम चला सकते हैं, तो फिर राज्य की मौत का बिगुल बज गया मानिए। यह आधुनिक विश्व में नितांत नयी बात है कि राज्य को समाप्त करने का काम समुदाय ने हाथ में लिया हो। आज तक चन्द लोगों और संगठनों ने ऐसी आवाज अवश्य उठायी थी, किन्तु वे सब कल्पनावादी बनकर रह गये। उन सबका अंत राज्यवाद में परिणति से ही हुआ है। साम्यवादी दुर्घटना इसकी ताजी मिसाल है। विनोबा की इस पद्धति में देर लग सकती है किन्तु कीमिया लोगों के हाथ आ गया है। यह न्यूटन के आविष्कार से कम महत्व की घटना नहीं है।

आज विनोबा ७५ साल के हो रहे हैं। उनकी सरस्वती आराधना सतत जारी है। विनोबा ने तप, विद्या, दान ब्रह्मचर्य आदि व्यक्तिगत नैतिक मूल्यों का चमत्कारिक समाजीकरण किया है, क्योंकि उनके समान समाज में डूबा इस स्तर का व्यक्ति मिलना कठिन है। वे भारत की शताब्दियों से चली आ रही अखण्ड परम्परा, प्रतिभा और तपस्या का मूर्तिमान रूप हैं। ऐसे ऋषि को शत-शत प्रणाम्! ●

बीकानेर : जिलादान के बाद

२४, २५ अगस्त को जब बीकानेर शहर से ५० मील दूर छतरगढ़ में खादी के कार्यकर्ता तथा जिले के चार ब्लाकों से जिलादान के नागरिक सहयोगी और कार्यकर्ता इकट्ठा हुए तो वे मन में प्राय तैयार होकर आये थे कि शिविर के तुरत बाद उन्हें पुष्टि के काम में लग जाना है। दूसरे दिन २५ को उन्होंने यही निर्णय किया भी। सबसे पहले बीकानेर ब्लाक लेने का निर्णय हुआ। २६ को लगभग १०० कार्यकर्ताओं—कुछ स्थायी और कुछ अस्थायी की टोलियाँ गाँवों में गयी।

ग्रामसभाओं का संगठन

सबसे पहला काम है ग्रामसभाओं का गठन। कार्यकर्ता गाँव-गाँव में जायेंगे, ग्रामसभा के सदस्यों की सूची बनायेंगे, गाँव के सम्बन्ध में कई तरह की जानकारी लेंगे, लोगों की बैठक करेंगे, ग्रामसभा का गठन करेंगे, तथा सर्वसम्मति से ग्रामसभा के पदाधिकारियों का चुनाव करायेंगे। यह काम गाँव-गाँव में होकर सितम्बर के मध्य में ब्लाक-भर की ग्रामसभाओं के नये पदाधिकारियों, सहयोगियों, कार्यकर्ताओं का शिविर होगा जिसमें आगे के काम पर चर्चा होगी।

यही क्रम बीकानेर के बाद दूसरे, तीसरे, चौथे ब्लाकों में चलेगा। अक्तूबर तक चारों ब्लाकों में ग्रामसभाओं का गठन पूरा करना है।

पंचायतों के चुनाव

जिले में अक्तूबर में पंचायती राज के चुनाव होनेवाले हैं। छतरगढ़ के शिविर में सबके मन में यह चिंता थी कि पंचायती राज के इन चुनावों के कारण गाँव-गाँव में दलबंदी का बोलबाला हो जायगा और ग्रामदान से जो सद्‌भावना बनी है वह, अभी कमजोर होने के कारण, नष्ट हो जायगी, और आगे काम बहुत कठिन हो जायगा। इस प्रश्न पर ग्रामीण मित्रों ने शिविर में डटकर चर्चा की। एक राय यह थी कि ग्रामदान की भावना के अनुसार सर्वसम्मत उम्मीदवार खड़े किये जायँ, दूसरी राय यह थी कि नहीं, अभी ग्रामसभाओं का ठोस संगठन नहीं हुआ है, इसलिए सरकार से माँग की जाय कि वह ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के हित में पंचायती राज के चुनाव न कराये और ग्रामसभाओं को विकसित होने का पूरा मौका दे। अगर सरकार इस माँग को स्वीकार नहीं करती है तो ग्रामसभाएँ अपने सदस्यों से, जो पंचायती राज के भी वोटर हैं, कहें कि वे चुनाव में भाग न लें। यह एक बड़ा प्रश्न था जिस पर अंत में शिविर ने एकमत होकर अपनी राय कायम की। तय हुआ कि मध्य सितम्बर में जब बीकानेर ब्लाक की ग्रामसभाओं के पदाधिकारी इकट्ठा हों तो वे शिविर के इस निर्णय पर विचार करें और पक्का निर्णय करें।

अक्तूबर में पंचायती राज के चुनावों के पहले तक जिले के सभी ब्लाकों में ग्रामसभाओं का गठन हो जायगा और वे इस प्रश्न पर अपनी सामूहिक राय कायम कर सकेंगी। इस प्रश्न पर परीक्षा होगी ग्रामसभाओं की शक्ति की। अगर उन्हें आंशिक सफलता भी मिल गयी तो बहुत बड़ी बात होगी। बहुत कुछ निर्भर करता है कार्यकर्ताओं की अपनी तत्परता और निष्पक्षता पर। उनके सामने लोक-शिक्षण और लोक-संगठन का एक बुनियादी काम है। आशा है कि ग्रामस्वराज्य के संदर्भ में इस प्रश्न के महत्त्व को समझते हुए वे अपनी ओर से कोई बात उठा नहीं रखेंगे। जातिगत द्वेष, दलगत प्रतिद्वंद्विता तथा संस्कारगत प्रमाद के कारण जनता की विद्रोह-शक्ति कुंठित सी हो गयी है, फिर भी राजस्थान के जीवन में प्राकृतिक परिस्थितियों के कारण सामूहिकता और पारस्परिकता का एक तत्त्व मौजूद है जिसे प्रेरित किया जा सकता है। यहाँ के मुख्य कार्यकर्ता साथियों को पंचायती राज के चुनावों के प्रश्न पर अपनी पूरी शक्ति—जरूरत हो तो राज्य भर की शक्ति—बीकानेर में केन्द्रित करनी चाहिए।

खादी-संस्थाएँ

बीकानेर में चार मुख्य खादी-संस्थाएँ हैं। सबके पास कार्यकर्ता हैं, साधन हैं। ऊन के उद्योग के कारण वे उस तरह की आर्थिक चिंताओं से मुक्त हैं जिनकी शिकार सूती खादी का काम करनेवाली—कम दक्षता के साथ काम करनेवाली—कई राज्यों की खादी संस्थाएँ हो चुकी हैं। अगर बीकानेर की सब संस्थाएँ मिलकर जिले में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का काम उठा लें तो थोड़े दिनों में जिले की हवा बदल जायगी। बीकानेर मात्र ४ ब्लाकों में फैले हुए ५२९ गाँवों तथा लगभग ३ लाख जनसंख्या का जिला है। जिस तत्परता के साथ खादी-मंदिर के साथी इस काम में लगे हुए हैं तथा खादी-ग्रामोद्योग संस्थान के साथी सहयोग कर रहे हैं वह तत्परता अगर अन्य संस्थाओं में भी आ जाय तो बहुत बड़ा काम हो जाय। दुख है कि जिले की सभी संस्थाओं की शक्ति अभी ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के काम में नहीं लग पायी है। सोचने की बात है कि रचनात्मक कार्यों का क्या अर्थ रह जायगा अगर उनसे एक नये समाज की नयी रचना न हो सकी? खादी के सब मित्र जरा इस पहलू पर सोचें तो सही।

ऐग्रो-इंडस्ट्रियल व्यवस्था

बीकानेर एक बड़े परिवर्तन के कगार पर है। राजस्थान-नहर के कारण बीकानेर की रेगिस्तानी भूमि खेति-पशु-पालन-(ऊन) उद्योग का सघन आदर्श क्षेत्र बनने को तैयार बैठी है। जिले में १ लाख ३६ हजार एकड़ भूदान की भूमि है। इसमें से हजारों एकड़ भूमि नयी नहरों की 'कमांड एरिया' में है। यहाँ बताया गया कि भूदान बोर्ड की ओर से जमीनों के स्थायी पट्टे दिये जा रहे हैं, तथा भूमिहीनों की नयी बस्तियाँ बसाने की 'मास्टर-प्लैन' बनायी जा रही है। श्रद्धेय गोकुल भाई और पूनमचंदजी के रहते यह काम तो होना ही चाहिए। भूदान की भूमि का सही वितरण बहुत

बड़ा काम है। लेकिन सर्वोदय के साथियों, सहयोगियों को सबसे अधिक चिन्ता इस बात की होनी चाहिए कि पानी के आ जाने के कारण जो विकास होगा, जो समृद्धि आयेगी, उसके साथ समता और भाईचारे के नये मूल्य भी आने चाहिए। एक नयी लोकशक्ति और लोक-संगठन पैदा होना चाहिए जो समाज के जीवन में गुणात्मक परिवर्तन लावे। मैं अपने मन में यह धारणा लेकर लौटा हूँ कि बीकानेर तथा उसके पड़ोसी जिले स्वायत्त ग्राम-संगठन तथा एग्रो-इण्डस्ट्रियल अर्थनीति के आदर्श क्षेत्र बन सकते हैं। संभावनाएँ भरी पड़ी हैं, लेकिन उसे प्रकट करने की बुद्धि चाहिए, शक्ति चाहिए। राजस्थान में उसकी कमी भी नहीं है।

गरीबों की रक्षा

भूदान की भूमि का सही, पक्का वितरण अत्यन्त महत्त्व का काम है। इस पर जितनी शक्ति लगायी जाय, थोड़ी होगी। साथ ही एक स्थिति यह भी है कि नहरी पानी के लोभ से पड़ोस तथा बाहर के सम्पन्न लोग स्थानीय गरीब जनता की जमीनें अधिक मूल्य देकर खरीदने की कोशिश कर रहे हैं। अगर गरीब लोग इस तात्कालिक लोभ के पीछे छिपे खतरे को न समझ सके और हमारी ओर से संगठित रूप से उनकी रक्षा का प्रयत्न न हुआ, तो वे जीविका का अपना स्थायी साधन खो बैठेंगे और उनके गाँवों में ऐसे तत्त्व घुस जायेंगे जिनकी गाँव के प्रति वफादारी नहीं होगी और जो लोकशक्ति के विकास में बहुत बड़े रोड़े सिद्ध होंगे। कोई आदमी किसी धर्म का हो, किसी जाति का हो, देश के किसी क्षेत्र का हो, अगर वह किसी गाँव में खेती करना चाहता है और उसकी ग्रामसभा का सदस्य होकर रहना चाहता है, तो उसके प्रति दुराव बरतने का कोई कारण नहीं हो सकता, लेकिन इस बात का ध्यान जरूर रखा जाना चाहिए कि बाप दादों की धरती पर बसे हुए ग्रामीण एक नये पेशेवर उपनिवेशवाद के शिकार न हो जायँ। यह एक ऐसा प्रश्न है जो किसी हालत में आँखों से ओझल नहीं किया जा सकता। नहर के कारण यह खतरा पैदा हो गया है।

संगठन और शिक्षण : ग्रामसभा से जिलासभा

दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह मील के फासले पर बसे हुए गाँवों के प्रदेश में संगठन, शिक्षण और विकास की जितनी समस्याएँ हैं उनका मुकाबला गाँव-गाँव में बनी ग्रामसभाएँ ही कर सकती हैं, सरकार नहीं कर सकती। इसलिए ग्रामसभाओं का सुदृढ़ संगठन, उनके मुख्य व्यक्तियों का सुनियोजित शिक्षण-प्रशिक्षण, उनकी सहकार तथा प्रतिकार दोनों शक्तियों का समुचित विकास आदि तात्कालिक काम हैं।

संगठन का क्रम

ग्रामसभाओं के बाद ब्लाक-सभा, तथा उनके आधार पर जिला-सभा का गठन २० जनवरी '७१ तक का काम माना जा सकता है। जिस भावना से काम शुरू हुआ है उसे देखते हुए इतना समय कम नहीं है।

शान्तिसेना : क्रान्तिसेना

इतना बड़ा काम मात्र संस्था-शक्ति से नहीं हो सकता। संस्था के कार्यकर्ता चाहे जितने हों, चाहे जैसे हों, इसके साधन वे अधिक नहीं हो सकते। ग्रामसभाओं को शान्तिसेना की शक्ति चाहिए। जिले में लगभग १२५ पंचायतें हैं। एक पंचायत में १० ग्राम-शान्तिसैनिकों का एक दस्ता माना जाय तो जिले में कम-से-कम १ हजार की सेना ग्राम-सभाओं के संगठन के साथ-साथ बननी चाहिए। शान्तिसेना (क्रान्तिसेना) वह इंजन है जो ग्रामसभाओं के डिब्बे को खींचेगी।

ग्रामस्वराज्य का व्यापक क्षेत्र

जो काम बीकानेर में शुरू हुआ है वह पड़ोस के हर जिले में हो सकता है, और उन सब जिलों को मिलाकर ग्रामस्वराज्य का व्यापक क्षेत्र बन सकता है। पूरा जोधपुर डिवीजन एकसाथ प्राप्ति और पुष्टि के लिए क्यों न लिया जाय ?

बीकानेर की सीमा भारत की सीमा है। मुझे सीमा के एक 'पिलर' तक जाने का अवसर मिला। मैंने देखा, पत्थर पर लिखा हुआ है : '४०२, पाकिस्तान, इण्डिया।'

एक ओर पाकिस्तान है, दूसरी ओर भारत है। धरती आज भी एक है, गायें एक हैं, हवा-पानी एक है, रेगिस्तान की मृग-मरीचिका एक है, लेकिन देश दो हैं। और दिल भी दो हो गये हैं। हम फिर पड़ोसी की तरह भाईचारे की जिन्दगी बितायेंगे, यह भविष्य की बात है, लेकिन इतना निश्चित है कि अगर बीकानेर तथा सीमा के अन्य जिलों में अहिंसक लोकशक्ति के दर्शन होते हैं, और जनता का जीवन बदलता है तो क्या भारत, क्या पाकिस्तान, दोनों जगह 'स्टेट्सको' टूटेगा और दोनों देशों की जनता में परिवर्तन की प्यास जगेगी। वह प्यास सर्वोदय के ही पानी से बुझेगी। सीमा पर कई गाँवों के खण्डहर आज भी मौजूद हैं। नहरों के कारण जो पानी आयेगा उससे ये खण्डहर फिर आबाद होंगे। अगर हम आशा और विश्वास के साथ बढ़ते रहे तो कौन जाने पड़ोसी देशों की जनता के करीब आने का नया रास्ता भी निकल आये ? जमाना आ रहा है जब सरकारों को लड़ने के लिए छोड़कर जनता मिलने के लिए आगे बढ़ जायगी।

—राममूर्ति

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्वोदय

इस अंक में

वर्ष : १५ अंक : ५०
सोमवार १४ सितम्बर, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ
राजघाट वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

'मैं बापू का ही काम कर रहा हूँ'

बापू हमारे लिए पिता भी थे और ऋषि भी थे। उन्हें हम राष्ट्र-पिता कहते हैं और उन्होंने हमें सत्याग्रह-दर्शन और सर्वोदय-धर्म सिखाया, इसलिए वे गुरु और ऋषि के स्थान पर भी थे। लड़कों क पिता के काम को आगे बढ़ाना होता है। गुरु के शिक्षण को भी आगे ले जाना होता है।

मेरी अन्तरात्मा गवाही देती है कि बापू ने अहिंसा और प्रेम का जो मार्ग सिखाया है, उस पर चलने की पूरी-पूरी कोशिश मैंने की है। मैं प्रयत्नों की पराकाष्ठा कर चुका हूँ। एक क्षण की भी ऐसी याद नहीं आती कि जब मैं असावधान रहा होऊँ। मुझे इसमें रत्ती भर भी शका नहीं कि बापू के जाने के बाद मैं बापू का ही काम कर रहा हूँ। इस काम से मेरे हृदय में अपार आनन्द होता है और इसमें मैं बापू को निरन्तर अपने साथ ही पाता हूँ। मैं मानता हूँ कि मेरे चिन्तन में बापू का सार-रूप अंश है। बापू के जीवन-काल में मैं जितना उनके सान्निध्य में था, उससे कहीं अधिक आज हूँ। उन्होंने जो कुछ कहा है, उस पर चिन्तन करने में आज मुझे उनकी तरफ से जितनी मदद मिलती है, उतनी और किसीसे नहीं मिलती।

बापू हम सबके हृदयों में विराजमान हैं। अब वे हमारे हृदयों में भगवान का स्थान ले चुके हैं। भक्त और भगवान एक हो गये हैं। जब वे जीवित थे, तब भगवान से अलग रहकर सेवा-कार्य करते थे। अब निर्वाण के बाद वे भगवान में लीन हो गये हैं और हमारे काम को आशीर्वाद दे रहे हैं।

वैसे तो एक परमेश्वर का ही अस्तित्व है, और दूसरे किसीका कोई अस्तित्व नहीं। जब हम परमेश्वर का नाम लेते हैं तो फिर उसके साथ दूसरा कोई नाम लेने की जरूरत नहीं रहती। परन्तु परमेश्वर ने इतना व्यापक स्वरूप धारण किया है कि उसके अन्दर असंख्य सत्पुरुष उसी तरह समाये हुए हैं, जिस तरह दाड़िम के फल के अन्दर असंख्य दाने समाये रहते हैं और हमारे भक्तिपूर्ण हृदयों को भास होता है कि संतों का भी अपना विशिष्ट स्थान रहता है।

'मारग में तारन मिले, सन्त राम दोई।
सन्त सदा शीश ऊपर, राम हृदय होई॥"

हमारा यह बड़ा सौभाग्य रहा कि ऐसे एक सन्त पुरुष को हमने देखा और उसके साथ काम करने का अवसर हमें मिला। हमसे जितना हो सके उतना उसका अनुसरण करने की कोशिश हम करें तथा आत्म-निरीक्षण और परीक्षण करते हुए चित्त-शुद्धिपूर्वक भगवान् की शरण में पहुँचें।

मीठी याददाश्त

जमाना गुजर गया है, मगर याद कायम है। भला ऐसी याददाश्त कभी भूली भी जायेगी? झेलम का दरिया ऐसी कितनी ही दास्तां सुनता था।

वह खूबसूरत सूबा है। हमारे वतन का सिर। हमारे पुरखाओं ने दुनिया के मरकज की बात की। हमारे बाबा ने मरकज ढूँढ़ा, कह दिया, 'यह काशमेव यानी प्रकाश-मेव, उजाला देनेवाला।' चारों ओर प्रकाश भेजता है, उजाला भेजता है। देवता कहाँ रहते हैं? पुराण ने जवाब दिया, 'मेरु के स्थान में, यानी आजकल के कश्मीर में!' उसी खूबसूरत सूबे में जब बाबा सैलाब बनकर घूम रहे थे, कितनी बार पहाड़ का टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता, दरिया के पास से गुजरना, एक ओर जय भाई पकड़ते थे, दूसरी ओर मैं। जरा ऊपर चढ़ना होता था, बड़े-बड़े पत्थरों पर से, तब बाबा कहते, "हाँ, धीमे!" कभी उतार आया तो दौड़ लगाते, हम थक जाते। बाबा हँसते थे, "अरे गिरोगे तो साथ गिरेंगे!" कभी कहते, "हमारी लड़की मजबूत है। लेकिन कभी-कभी मैं ही इसे बचा लेता हूँ, खींच लेता हूँ।" वाकई ऐसा कई बार होता था। जब बाबा पत्थर के ढेले पार करते या मुश्किल राह से गुजरते तब ऐसा मौका खोया नहीं जाता था। कश्मीर-सरकार के पब्लिसिटी डिपार्टमेंट के भाई कैमरा का ठीक इस्तेमाल करते। एक दिन बहुत ही कठिन राह थी। मेरा दिल घबड़ाता था। बाबा को लेकर सही सलामत पार करना! खुदा का नाम लेकर जैसे-तैसे बड़े-बड़े पत्थर के ढेले पर से रास्ता पार किया। कैमरावाले की तरफ देखकर बाबा ने मुस्कराते हुए पूछा, "फोटो के लिए इस रास्ते से लाया क्या रे?" बात वैसी नहीं थी।

चंद दिनों बाद हम बटोत जा रहे थे। सात हजार फीट ऊँचाई का यह हिल-स्टेशन है। टूरिस्ट की भीड़ रहती है। दस मील का फासला तय करके पाईन और देवदार के दरख्तों के बीच एक बेहतरीन डाकबंगले में हिंदोस्तां के रहनुमां का इस्तेकबाल (स्वागत) किया गया।

उस भीड़ में से वहाँ के ट्राफिक-इंसपेक्टर अपनी बीबी के साथ हमारे पास आये। बुरका थोड़ा हटाकर वह बहन हमसे मिली। मेरा हाथ अपने हाथ में थामकर कहने लगी, "मुहब्बत का पैगाम लानेवाले बाबा के दीदार (दर्शन) के लिए आयी हूँ।" बाबा के पास उसे ले गयी। वहाँ उसने धीरे से अपनी जमीन का दान-पत्र बाबा के हाथ में दिया। बाबा दान-पत्र लेकर रसोड़े की तरफ मुड़े। (उन दिनों वे सामूहिक रसोड़े में बीच-बीच में जाते थे।) वह बहन भी बाबा के पीछे-पीछे गयीं, और उसने बाबा से कहा, "आप अपने हाथों से मुझे एक रोटी दीजिएगा। वह हम शुभ-शकुन मानते हैं।" मुसकराकर बाबा ने उसे रोटी दी। वह उसने अपने दुपट्टे में ली और बाबा को हिंदू रिवाज के मुताबिक झुककर, पाँव छूकर प्रणाम किया। कश्मीरी छोड़कर दूसरी भाषा वह नहीं जानती थी। उसके खाविंद ने बताया, 'इसकी माँ ने इसे शादी में जमीन दी थी, दो दिन पहले इसने (मेरी बीबी ने) अखबार में बाबा की फोटो देखी, जिसमें बाबा किसी कठिन पहाड़ी का रास्ता तय कर रहे थे। फोटो देखकर उसने मुझसे पूछा, 'यह शख्स कौन है?' मैंने जब बाबा के बारे में बताया, तब कहने लगी, 'यहाँ की गुर्बत (गरीबी) देखकर बुढ़ापे में यह फकीर तकलीफ उठा रहा है, तो मैं भी अपनी जमीन का हिस्सा उनको दूँगी।' अखबार में की बाबा की फोटो उसने मेरी फोटो की जगह लगा दी और अपने टेबुल पर रखी है।"

विदा लेकर पति-पत्नी चले गये। बाबा ने कहा, "वह बहन पढ़ी-लिखी होती तो ऐसा दान नहीं देती। फोटो देखकर दान देने की प्रेरणा अनपढ़ दिल को ही हो सकती है। अनपढ़ लोग तंग-दिल नहीं होते।" कश्मीर में खूबसूरत कुदरत के साथ-साथ ऐसे कितने ही खूब-सूरत दिल देखे।

—कुसुम देशपांडे

११ वाँ अखिल भारत तरुण-शांतिसेना शिविर

शिविर की जानकारी

स्थान : इंदौर

अवधि : १८ अक्तूबर से २१ अक्तूबर '७० तक

उद्देश्य : भारतीय तरुणों को शांतिमय क्रांति का मोड़ देना।

पाठ्यक्रम : (१) वर्ग, (२) समूह-जीवन, (३) जन-सम्पर्क

(१) वर्ग : (अ) प्रमुख विचारधाराएँ :
(१) समाजवाद, (२) साम्यवाद,
(३) तानाशाही, (४) सर्वोदय
(आ) भारत की विदेश-नीति
(इ) भारत की अर्थ-नीति

उपरोक्त विषयों पर ही व्याख्यान तथा चर्चा-गोष्ठियों का आयोजन होगा।

शिविर-शुल्क—शिविर में प्रवेश की अनुमति पाने के लिए हर शिविरार्थी को शिविर-शुल्क पाँच रुपया देना होगा, जो शिविर-स्थल पर लिया जायगा।

प्रवास-खर्च—शिविर के लिए रेलवे-कन्सेशन प्राप्त करने की कोशिश चल रही है। शिविरार्थियों को शिविर में आने के लिए प्रवास-खर्च स्वयं वहन करना होगा।

भोजन-खर्च—भोजन शिविर की ओर से निःशुल्क दिया जायगा। किन्तु कोई शिविरार्थी यदि भोजन-खर्च स्वेच्छा से देना चाहेगा तो उसे धन्यवाद स्वीकार किया जायेगा।

आवेदन-पत्र भेजने की अन्तिम तिथि २ अक्तूबर, १९७० है। आवेदन-पत्र १ रु० शुल्क (ड्राफ्ट-टिकट या मनीआर्डर) के साथ निम्न पते पर भेजें।

संचालक,
११वाँ अ० भा० तरुण शांतिसेना शिविर
अ० भा० शांतिसेना मण्डल, राजघाट,
वाराणसी-१ (उ० प्र०)

पुराने विशेषाधिकार, नये विशेषाधिकार

राजाओं के प्रिवीपर्स को कायम रखना चाहिए था, इस पक्ष में ऐसे लोग भी हैं जो विशेषाधिकारों के हिमायती नहीं हैं। प्रिवीपर्स के समर्थक सबके सब प्रतिक्रियावादी हैं, यह कहना गलत है। समर्थन में समर्थकों की ओर से जो बातें कही जाती हैं उनमें से एक यह है कि भारत के विभाजन के समय देशी नरेशों को छूट थी कि वे चाहते तो भारतीय संघ में न शरीक होते। भारत उन पर कोई दबाव नहीं डाल सकता था। ऐसे संकट के समय सरदार पटेल ने कुशलता के साथ उन्हें राजी किया। उन्होंने भारतीय संघ में रहना स्वीकार किया। इस पर उस वक्त की सरकार ने सरदार पटेल के नेतृत्व में उदारता बरती और नरेशों को प्रिवीपर्स देना स्वीकार किया। उन्हें जमींदारों की तरह कोई मुआवजा नहीं दिया गया। दी गयी गुजारे के लिए कुछ रकमें। इस तरह इस समझौते का आधार राजनैतिक के साथ-साथ नैतिक भी था। नैतिक दृष्टि रखनेवाले पूछते हैं कि ऐसे समझौते को इस वक्त क्यों तोड़ा जा रहा है?

दूसरी ओर प्रिवीपर्स के आलोचक जो तर्क देते हैं वे कम नैतिक या सामाजिक नहीं हैं। उनका स्पष्ट मत है कि स्वतंत्र भारत में विशेषाधिकारों के लिए स्थान नहीं है। विशेष स्थिति में कुछ समय के लिए किन्हीं लोगों को राहत के तौर पर कुछ देना तय कर लिया जाय, यह दूसरी बात है। समता और लोकतंत्र की दृष्टि से पुराने, सामन्तवादी विशेषाधिकारों को खत्म करने का तर्क अपने में इतना मजबूत है कि दूसरे किसी तर्क की जरूरत नहीं है। संसद और सरकार का पहला कर्तव्य है कि वह लोकतंत्र को मजबूत करे और देश को समता की दिशा में ले जाय। इसी दृष्टि से प्रगतिशील विचार के लोग प्रिवीपर्स को समाप्त करने के निर्णय का स्वागत कर रहे हैं।

लेकिन मन में एक दूसरा प्रश्न भी उठता है। राजाशाही के खत्म होने की चिंता नहीं, जमींदारशाही के खत्म होने की चिंता नहीं, क्योंकि लोक-विरोधी हितों के शीघ्र समाप्त होने में ही देश का कल्याण है, लेकिन चिंता तो तब होती है जब पुराने विशेषाधिकारों का स्थान लेनेवाले नये-नये विशेषाधिकार बराबर बनते दिखाई देते हैं। इस नौकरशाही को देखिए। स्वयं नेताशाही को देखिए। राजा और जमींदार तो अपने समय की व्यवस्था में अपने राज या जमीन के मालिक थे, लेकिन ये अफसर और नेता तो सेवक हैं जो स्वामी बन बैठे हैं। समता की बात तो दूर, इनकी करनी लोकतंत्र की जड़ें खोद रही है। निकम्मी नौकरशाही और स्वार्थी नेताशाही इस वक्त देश के दो सबसे बड़े अभिशाप हैं। देश के प्रशासन में इनके विशेषाधिकार हैं जो घटने की कौन कहे, दिनोंदिन बढ़ते ही जाते हैं। एक जगह समता की दुहाई दी जाती है, दूसरी जगह दक्षता की। समता के नाम में एक जगह विशेषाधिकार घटाये जाते हैं, और दक्षता के नाम में दूसरी जगह बढ़ाये जाते हैं। लोकतंत्र को समता भी चाहिए और दक्षता भी चाहिए, इसलिए पुराने स्वार्थों का जाना भी जरूरी है, और नये स्वार्थों का बनना भी! पुराने स्वार्थ गये कम, नये स्वार्थ आये अधिक—बहुत अधिक।

नौकरों और नेताओं का यह नया वर्ग समाज के सही विकास में कितना घातक होता है, यह साम्यवाद के इतिहास से सिद्ध हो गया है। साम्यवाद का यह नया वर्ग ('न्यू क्लास') साम्यवाद के साथ साम्य को खा गया। साम्य खोकर कोरे वाद में सिवाय विवाद के दूसरा क्या रह गया? दुनिया ने देख लिया कि नयी पद्धतियों के नेता और प्रशासक भी अपने अधिकार में पागल होकर पुराने 'जालिमों' से कम जालिम नहीं होते। इसलिए व्यवस्थाओं के बदलने पर भी जनता के हाथ मुक्ति नहीं लगती, आता है जुल्म के स्थान जुल्म।

स्वतंत्रता के बाद देश में हर स्तर पर विशेषाधिकारों से भरे हुए जिस विशाल ढाँचे (इस्टैब्लिशमेन्ट) की सृष्टि हुई है उससे देश के विकास के लिए एक जबरदस्त खतरा पैदा हो गया है। गाँव के मुखिया से लेकर प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति तक, पंचायत से लेकर पार्लियामेन्ट तक, हर पद और पदाधिकारी के अपने विशेष अधिकार, और विशेष सुविधाएँ हैं। यह एक बड़ा कारण है जिससे हमारे देश में पद के लिए इतना चाव और प्रतिद्वंद्विता है। जो सामान्य है वह जैसे कुछ है ही नहीं। आप क्या हैं, इसकी पूछ अधिक है बनिस्बत इसके कि आपमें क्या है। समता जैसे हमारे खून में ही नहीं है। हमारे नारे चाहे जितने समाजवादी हों, हमारी आकांक्षाएँ सचमुच पूँजीवादी हैं, और हमारे संस्कार सामंतवादी हैं। हमारे नेताओं ने अपने उदाहरण से इस कमजोरी को घटाने की जगह कई गुना ज्यादा बढ़ा दिया है। राष्ट्र का नैतिक जीवन जड़ से उखड़ गया है। नैतिक शक्ति गँवाकर लोकतंत्र कैसे टिकेगा, और समता कैसे आयेगी?

जिस संसद ने बार-बार अपने अधिकारों और सुविधाओं को बढ़ाया हो, जिसमें सामान्य जनता के सुख-दुख में शरीक होने की कभी ठोस चर्चा तक न होती हो, उसीमें जब किसी विशेष अवसर पर समता और समाजवाद की लम्बी-चौड़ी बातें कही जाती हैं, तो संतोष होने की जगह शंका होने लगती है कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि यह भी एक प्रकार की राजनीति है; जनता की नजर में अपनी 'इमेज' बनाने की कोशिश है ताकि जनता कुछ दिन और भ्रम में रहे और चुनाव में वोट की कमी न पड़े।

अगर सरकार या दूसरे राजनैतिक दल चाहते हैं कि उनकी नेकनीयती पर भरोसा किया जाय तो उन्हें भी त्याग की मिसाल पेश करनी होगी। जनता ने सुन लिया काफी, अब वह कुछ ठोस देखना चाहती है।

विनोबा की जीवन-प्रक्रिया : सूक्ष्म से सूक्ष्मतर

❀ दत्तोबा दास्ताने ❀

११ सितम्बर १९७० को विनोबाजी ने अपने जीवन के ७५ वर्ष पूरे किये, इसका हर्ष के साथ आश्चर्य भी होता है। आश्चर्य इसलिए कि शायद विनोबाजी को भी यह भरोसा नहीं था कि वे ७५ वर्ष तक भी जी सकेंगे। बचपन से शरीर कृश और कमजोर था। वैराग्य की मस्ती में आरोग्य के किसी नियम का शायद ही उन्होंने पालन किया। १०-१२ मील हर रोज घूमने की धुन न होती तो यह दीर्घायुष्य उन्हें कभी नसीब नहीं होता। कड़ी धूप में नंगे पाँव घूमने के कारण आँख बिगड़ गयी। ७ नंबर का चश्मा लगा। इसी कारण बचपन में उन्हें अक्सर सिरदर्द हुआ करता था। मलेरिया भी पीछे लगा। बचपन में दाँतों की हिफाजत नहीं की तो दाँत खराब हो गये।

मुँहजोर और पाँवजोर

शरीर भगवान का दिया हुआ एक यंत्र है और साधना के दृष्टि से उसका उपयोग किया तो वह बाधक नहीं, बल्कि साधक हो सकता है, इसका भान जब से हुआ तब से वे उस "बेचारे" शरीर की हिफाजत करने लगे। पाँवों में चप्पल आयी, आँखों पर चश्मा लगा, और खराब दाँतों को निकलवाकर 'आर्टीफिशियल' दाँतों का सेट लगवाया, भोजन संतुलित और कॅलरी-विटामीन का गणित करके लेने लगे। स्कूल और कॉलेज के दिनों में मित्र उन्हें चिढ़ाते थे, "विनोबा, तुम्हारे पास दूसरी कोई ताकत नहीं है, तुम सिर्फ मुँहजोर और पाँवजोर हो।" क्योंकि घंटों चर्चा करते उनका मुँह नहीं थकता था, और मीलों चलते उनके पाँव नहीं थकते थे।

मेरे पिताजी ने मुझे सन् १९२६ में वर्धा भेजा। सन् १९२७ के मई महीने में मैं आश्रम में दाखिल हो गया। तब से लेकर सन् १९३८ तक उनका वजन ८० पौंड से ऊपर गया हुआ हमने कभी नहीं देखा। सन् १९३८ के आखिर में उनको बहुत जोर की खाँसी हो गयी और बुखार भी रहने लगा। उनकी यह हालत देखकर गांधीजी ने उनको इलाज के लिए अल्मोड़ा भेजने का तय किया। लेकिन विनोबाजी ने सोचा, "हम दरिद्रनारायण की सेवा की बात करते हैं, तो क्या कोई गरीब बीमार पड़ने पर अल्मोड़ा जा सकता है? वर्धा के इर्द-गिर्द भी तो कोई "अल्मोड़ा" होगा।" उन्होंने गांधीजी से छः माह का समय माँग लिया। पवनार में धाम नदी के किनारे ऊँचे टीले पर एकांत में सेठ जमनालालजी का खाली बंगला खाली था, उस पर विनोबाजी की नजर गयी। जमनालालजी को बहुत खुशी हुई। उन्होंने बंगला उनके हवाले कर दिया। विनोबाजी आश्रम से पैदल पवनार के लिए निकल पड़े। धाम नदी के पुल पर से जाते समय "संन्यस्तं मया, संन्यस्तं मया" (सारी चिंताओं की उपाधियों का मैंने संन्यास किया) का जप करते गये। पवनार में अपने साथ केवल एक सेवक को ले गये। कुदाली से जमीन खोदना, पपीता और खिचड़ी खाना, तथा खराब दाँत उखड़वाना, यह कार्यक्रम रखा। दिमाग बिलकुल शून्य रखा। न चिंता, न चिंतन। छः माह के बाद सचमुच उनका कायापलट ही हो गया। वजन १३५ पौंड तक पहुँच गया। छः माह पूरे होने पर वे गांधीजी से मिलने गये। विनोबाजी को देखकर गांधीजी ने कहा, "अरे, तुम तो पहलवान बन गये!" बाद में फिर का काम शुरू हुआ। उसके बाद वह वजन कायम नहीं रहा। फिर भी इस प्रयोग के कारण उनका नॉर्मल वजन ११५ से १२० के बीच रहने लगा।

कसौटी के प्रसंग

साठ वर्ष पूरे कर लेने के बाद उन्होंने कहना शुरू किया, "अब मुझे ऊपर जाने का 'पासपोर्ट' मिल गया है, 'वीसा' मिलने तक जितने साल जीना पड़ेगा वह परिशिष्ट रूप होगा?" लेकिन अधिकांश भूदान-पदयात्रा इस परिशिष्ट-काल में ही चली और भगवान अभी और सेवा विनोबाजी से लेना चाहता है, इसीलिए उनको ऊपर जाने का 'वीसा' अभी तक नहीं मिल रहा है।

बिहार की पदयात्रा में चांडिल में विनोबाजी को मॅलिग्नंट मलेरिया हो गया था। विनोबाजी एलोपैथी की या कोई भी दवा लेने से इन्कार कर रहे थे। डाक्टरों ने आगाह कर दिया कि "इस समय विनोबाजी की हालत इतनी खतरनाक बनती जा रही है कि वे यदि तुरत क्विनोक्वीन दवा नहीं लेंगे तो उनके बचने की उम्मीद नहीं दीखती है।" उधर विनोबाजी ने कहना शुरू कर दिया, "अब नाटक का अंतिम अंक शुरू हो गया है।" बिहार के उस समय के वयोवृद्ध मुख्य मंत्री श्री बाबू (श्रीकृष्ण सिंह) विनोबाजी के पास पहुँचे। आँखों में आँसू थे, होंठ थरथरा रहे थे, हाथ जोड़कर उन्होंने कहा, "बाबा, दवा न लेने के हठ के कारण आपकी प्राणज्योति यदि बिहार की भूमि पर बुझ गयी तो हम कहीं के नहीं रहेंगे। कम-से-कम हम लोगों पर दया कीजिए और औषधि सेवन करने की कृपा कीजिए।" उनसे अधिक बोला नहीं गया। गला रुँधा हुआ था। विनोबाजी ने उनकी यह हालत देखी और एक मिनट के लिए आँखें बन्द कर लीं। उन्होंने सोचा, "दवा न लेने का व्रत निभाने में इतने सारे लोगों के दिलों को सदमा पहुँचाने की बड़ी हिंसा मुझसे हो रही है।" उनके दिल में करुणा जागी। आँख खोलकर इतना ही कहा, "ठीक है।" एक क्षण में सारा वातावरण बदल गया। दुःख के आँसू आनंदाश्रु में

बदल गये। डॉक्टरों ने नॉर्मल की अपेक्षा आधी ही खुराक दी, और भगवान की कृपा से वे इस कठिन बीमारी में से सही सलामत निकल आये।

गांधीजी से सम्पर्क

वैसे तो विनोबाजी का सहज स्वभाव हमने निवृत्तिपरायण ही देखा है। वे सन् १९१६ में घर छोड़कर काशी आये तो हिमालय की तरफ जाने के इरादे से, लेकिन नियति ने कुछ और ही सोचा था। गांधीजी का हिंदू विश्वविद्यालय का वह इतिहासप्रसिद्ध भाषण विनोबाजी ने पढ़ा और उनको गांधीजी में एक ऐसी झलक मिली, जो उनको साबरमती के आश्रम में खींच लायी। बाहर से प्रवृत्तिपरायण दीखनेवाला यह व्यक्ति हर प्रवृत्ति को आध्यात्मिकता का रंग देकर सत्य-अहिंसा की कसौटी पर कसता है, और जनता में जनार्दन का दर्शन करना चाहता है, यह देखकर विनोबाजी को भी सेवा-कार्य में अपना 'हिमालय' दीखने लगा।

लेकिन विनोबाजी की आध्यात्मिक साधना को गांधीजी भली-भांति परख चुके थे। साबरमती के आश्रम में कुछ दिन रहने के बाद विनोबाजी अध्ययन के लिए तथा महाराष्ट्र-भ्रमण के लिए एक साल की छुट्टी लेकर गये। उस एक साल की डायरी विनोबाजी ने गांधीजी को पत्र द्वारा भेजी और अंत में विनती की कि, "आप मुझे अपना पुत्र बनाने की कृपा करें।" विनोबाजी का वह पूरा पत्र और गांधीजी द्वारा दिया गया उसका उत्तर, दोनों चिरस्मरणीय हैं। महादेव भाई देसाई की कृपा से वह पत्र-व्यवहार प्रकाश में आया और इस एकमेवाद्वितीय पिता-पुत्र के अद्भुत रिश्ते का गौप्यस्फोट हुआ। गांधीजी ने विनोबाजी के विषय में कहा, "लोग आश्रम से आध्यात्मिक प्रेरणा पाने के लिए आते हैं, लेकिन विनोबा तो आश्रम को देने के लिए आया।"

जीवन का मिशन

विनोबाजी ने कताई, धुनाई, बुनाई, आदि के विविध प्रयोग करके खादी-शास्त्र पुष्ट और विकसित किया, कांचनमुक्ति और ऋषिखेती का प्रयोग करके ग्रामस्वावलंबन का पाठ स्नातक नवयुवकों को पढ़ाया, भूदान-आंदोलन द्वारा जमीन के मसले का अहिंसक हल दुनिया के सामने पेश किया, हवा, पानी और सूरज की रोशनी की तरह जमीन भी भगवान की देन है, इसलिए उस पर किसी व्यक्ति की मालकियत हो नहीं सकती यह उद्घोष बुलंद किया, "स्वराज्य शास्त्र" पुस्तक लिखकर दुनिया की कुल शासनप्रणालियों का शास्त्रीय परिभाषा में विश्लेषण करके लोकनीति का श्रेष्ठत्व बताया। "शिक्षण-विचार" पुस्तक में नित्य नयी तालीम का रहस्य समझाकर प्रचलित शिक्षा-प्रणाली के विषय में मौलिक विचार पेश किये, लेकिन विनोबाजी के जीवन का मिशन क्या है यह अगर पूछा जाय तो "आत्मदर्शन के लिए ब्रह्मविद्या की उपासना" यही जवाब मिलेगा।

प्यार की गुप्त गंगा

विनोबाजी कहते हैं, "मैं वेदान्ती हूं।" वेदान्ती आत्मा की अमरता को पहचानकर भौतिक सुख-दुखों और विपत्तियों से अस्पृष्ट रहकर विचरता है। "मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे दह्यति कश्चन" की वृत्ति वेदान्ती की होती है। देह और आत्मा भिन्न हैं, इसका अभ्यास विनोबाजी ने खुद किया और हमसे करवाया। इस नाशवंत देह की नहीं, बल्कि इसके अंदर बसी आत्मा की उन्नति का विचार उनके लिए सर्वोपरि है। विनोबाजी की इस वृत्ति से जो परिचित नहीं थे, वे उनके बाह्यतः रूखे व्यवहार से गलतफहमी कर बैठे, और कहने लगे कि "बापू गृहस्थाश्रमी थे इसलिए वत्सल पिता की तरह प्यार करते थे, विनोबा ब्रह्मचारी होने के कारण रूखा है।" लेकिन उन्हें क्या पता कि बाहर से नारियल की तरह दीखनेवाले विनोबा के हृदय में कितनी मधुरता छिपी है! उस प्रसादी की झलक उनकी आंखों से और मीठी मुस्कान से टपकती हुई जिन्होंने देखी है, वे उनके प्यार के साक्षी हैं।

अध्यात्म की साधना

विनोबाजी ने विभिन्न शास्त्रों, धर्मों और भाषाओं का अभ्यास किया है, लेकिन उसके पीछे विद्वत्ता नहीं, बल्कि अध्यात्म की उनकी दृष्टि रही है। हम विद्यार्थियों को मराठी, संस्कृत या अंग्रेजी पढ़ाते थे तो आध्यात्मिक ग्रंथों के द्वारा पढ़ाते थे, जिससे भाषा के साथ-साथ आत्मज्ञान की खुराक भी हमें मिलती रही। मराठी में ज्ञानदेव-तुकाराम के ग्रंथ, हिंदी में तुलसी-रामायण और विनयपत्रिका, असमी में नामघोषा, बंगाली में गुरुदेव और चैतन्य महाप्रभु की वाणी, गुजराती में गांधीजी की वाणी, पंजाबी में जपुजी, अंग्रेजी में बाइबिल, संस्कृत में गीता और उपनिषद, अरबी में कुरान, तमिल में तिरुक्कुरल ऐसे उनके अध्ययन के ग्रंथ रहे। अनेक भाषाओं का भी अभ्यास किया तो सिर्फ भाषाज्ञान के ख्याल से नहीं, बल्कि उस भाषा के संतवाङ्मय का अवगाहन करने के ख्याल से। और इन ग्रंथों में से सार-भूत अंश चुनकर जिज्ञासुओं के लिए उन्होंने सबसन ही निकाल दिया है। उनकी भूदान यात्रा जिस प्रदेश में से गुजरती थी उस प्रदेश के संतों के जो ग्रन्थ उस प्रदेश की आम जनता में प्रचलित थे, उन्हीं ग्रन्थों में से चुनिंदे उद्धरण वे अपनी आम सभाओं में लोगों को सुनाकर समझाते थे कि सब धर्मों के संतों ने जो संदेश दिया है वह भी भूदान के विचार को पुष्ट करता है। विनोबाजी के मुंह से उन ग्रन्थों के उद्धरण अपनी भाषा में सुनकर लोगों को उनके प्रति सहज आत्मीयता हो जाती थी। हमारे जैसे उनके साथ बचपन से रहनेवालों को भी विनोबाजी के इस चतुरस्र अध्ययन की गहराई का परिचय भूदान-पदयात्रा के उनके भाषणों से ही हुआ।

भक्ति-ज्ञान-कर्म में अभेद

नये-नये शब्दों को प्रचलित करने में विनोबाजी माहिर हैं। भूदान-ग्रामदान आंदोलन में उनके बनाये हुए कई नये शब्द सर्वोदय-परिवार में परिचित हो गये हैं :

स्वामित्व-विसर्जन, शासन-मुक्ति, तन्त्र-मुक्ति, लोकनीति, जन-शक्ति, गणसेवकत्व इत्यादि। पुराने शब्दों पर आधुनिक विचार की परिभाषा की कलम करने की खूबी उनमें है। सूक्ष्म-ग्राही बुद्धि और अकाट्य तर्क के कारण बुद्धिजीवी लोगों को उनसे अच्छी खुराक मिलती है।

लेकिन इस तरह ज्ञानप्रधान होते हुए भी उनका हृदय भक्तिरस से परिपूर्ण है, इसका परिचय उनके प्रवचन सुननेवालों को अक्सर होता है। भक्तों के जीवन-प्रसंगों का जिक्र आते ही उनका कंठ अवरुद्ध हो जाता है, आँखों से अश्रुधारा बहती है, प्रवचन रुक जाता है। बड़े प्रयास से वे इस भावविभोर अवस्था को रोककर प्रवचन का क्रम आगे चला पाते हैं। गांधीजी के पास पहुँचने के बाद कर्मयोग की महत्ता को उन्होंने आत्मसात किया।

इस तरह भक्ति, ज्ञान, कर्म, तीनों का प्रत्यक्ष अनुभव जीवन में उन्होंने लिया, इसी कारण इन तीनों के अभेद का सुन्दर विवेचन गीता-प्रवचनों में वे कर सके। कर्म, अकर्म, और विकर्म का इतना सुस्पष्ट विवेचन गीता-प्रवचनों के अलावा अन्यत्र शायद ही कहीं मिलेगा। गीता-प्रवचनों में विनोबाजी ने अपने जीवनभर के चिन्तन का और आध्यात्मिक साधना का निचोड़ रख दिया है, इसीलिए पाठक के हृदय को वे छू जाते हैं।

अमर साहित्य की व्याख्या करते हुए वे कहते हैं, 'जो साहित्यिक कृति पाँच सौ साल के बाद भी पढ़ी जाती है और लोगों को प्रेरणा देती है, वह अमर कृति है।" अपने ग्रंथों को यह कसौटी लगाकर वे कहते हैं, "शायद 'गीताई' और 'गीता-प्रवचन' इतना ही मेरा साहित्य कायम रहेगा, बाकी सारा काल के उदर में समाप्त हो जायेगा।"

अव्यक्त की महिमा

व्यक्त की अपेक्षा अव्यक्त अधिक कारगर और शक्तिशाली होता है, ऐसी विनोबाजी की श्रद्धा है। जिन महापुरुषों के विषय में हम कुछ भी नहीं जानते, वे ज्ञात महापुरुषों की अपेक्षा कई गुना अधिक प्रभाव अव्यक्त रूप से दुनिया पर कर गये हैं और आज भी कर रहे हैं, ऐसी उनकी श्रद्धा है। इसी श्रद्धा के कारण वे सौम्य, सौम्यतर, सौम्यतम प्रक्रिया की महिमा हमें समझाते हैं। शब्द-शक्ति की अपेक्षा अशब्द-शक्ति श्रेष्ठ होती है, इस शास्त्र-वचन का प्रयोग वे अपने "सूक्ष्म-प्रवेश" के द्वारा कर रहे हैं। वे कहते हैं, "व्यक्ति चाहे जितना महान हो, लेकिन शरीरतः वह सीमित क्षेत्र में ही काम कर सकेगा। लेकिन विचारतः वह सारी दुनिया पर असर कर सकता है।" दुनिया में जो महान विभूतियाँ हो गयीं, उनके प्रभाव को देखते हुए इस कथन की सत्यता प्रतीत होती है।

मिशन अभी बाकी है

हर विभूति का एक मिशन होता है। विनोबाजी के लिए भी भगवान ने ऐसा ही एक मिशन तय कर रखा था। सारे भारत में भूदान का एक अनोखा और अभूतपूर्व आंदोलन उनके माध्यम से चल पड़ा। सतत १९ वर्ष तक और इतनी एकाग्रता से व्यापक आंदोलन इतिहास में शायद ही कोई दूसरा चलाया गया होगा। हो सकता है कि उस मिशन की पूर्ति भगवान विनोबाजी के ही माध्यम से करना चाहता हो। इसलिए इस विभूति के ७५ वर्ष पूरे होने पर सारा भारत जो उनका अमृत-महोत्सव मना रहा है, उसमें यह स्मरणांजलि समर्पित है। ●

ग्रामस्वराज्य-कोष में दान देकर नागरिक-कर्तव्य पूरा करें

—अ० भा० शान्तिसेना मण्डल के मंत्री की अपील—

आगामी २ अक्तूबर '७० को आचार्य विनोबा को समर्पित किये जानेवाले ग्राम-स्वराज्य-कोष में दान देने की अपील करते हुए अ० भा० शान्तिसेना मण्डल के मंत्री श्री नारायण देसाई ने देश के नागरिकों के नाम एक पत्र में लिखा है

"आज जब देश में नक्सलवादी लोग भूमि-समस्या को हिंसक तरीके से हल करने की चेष्टा कर रहे हैं, और अनेक राजनैतिक पक्ष 'भूमि हथियाओ' आन्दोलन चला रहे हैं, तब हमें यह बात भूलनी नहीं चाहिए कि देश की इस प्रधान समस्या पर आज से १९ साल पहले ही विनोबा ने लोगों का ध्यान आकर्षित किया था। इतना ही नहीं, इस समस्या को शांति और प्रेम से हल करने का एक रचनात्मक एवं सक्षम मार्ग भी उन्होंने बताया है। देश में उन्होंने एक व्यापक शांतिसेना का भी संगठन किया। स्वराज्य के बाद कुछ लोगों की शक्ति शासन को संभालने में लगी। बाकी कुछ लोगों की शक्ति शासन की बागडोर को उनके हाथ से लेकर अपने हाथ में लेने के प्रयास में लगी। जनता का बड़ा भाग निष्क्रिय बना था तो हर सुधार के बारे में सरकार का मुँह ताकने लगा। इसके कारण जनता का तेज स्वराज्य के बाद बढ़ा नहीं, घटा ही।

"संत विनोबा के द्वारा चलाये हुए क्रान्तिकारी आन्दोलन ने इस सिलसिले में भी नयी दिशा बतायी। वे स्वयं सत्ता के चक्कर में नहीं पड़े और उन्होंने लोगों से भी अपने प्रश्न आप हल करने का संदेश दिया। इसी आन्दोलन को ग्राम-स्वराज्य आन्दोलन कहा जाता है।

"इसी बात को ध्यान में रखते हुए विनोबाजी की ७५वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में १ करोड़ रुपये का ग्रामस्वराज्य-कोष इकट्ठा करके देशभर में इस आन्दोलन को सहायता करने का संकल्प किया गया है। उसके लिए जो अपील निकली है उसमें राष्ट्र के सभी प्रमुख पक्षों तथा वर्गों के प्रतिनिधियों ने हस्ताक्षर किये हैं। ग्राम-स्वराज्य-कोष में अपनी शक्ति के अनुसार दान देकर विनोबा के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करना तथा ग्रामदान, शांति-सेना एवं अन्य रचनात्मक कार्यों को पुष्ट करने में मदद करना हर समझदार नागरिक का कर्तव्य है।"

मुजफ्फरपुर की डाक

तीसरा पड़ाव : मणिका

इस समय जे० पी० का तीसरा पड़ाव मणिका पंचायत-भवन में है, जहाँ से मणिका पंचायत के सभी गाँवों-बिशुनपुर मनोहर, हरकेश, मनशाही, गाजी, मुसहरी, नवादा, बिशुनपुर चाँद तथा वेदौलिया गाँवों में कार्य चल रहा है।

इसी पड़ाव से पाँचवीं पंचायत रजवाड़ा के सभी गाँवों—धोबही, रजवाड़ा, भगवान, रजवाड़ाडीह, मुकुन्दपुर, मानिकपुर तथा मुर्शिदाबाद में भी कार्य चल रहा है।

मणिका पंचायत के मनोहर, हरकेश, मुसहरी तथा वेदौलिया गाँवों में जनसंख्या का आवश्यक प्रतिशत पूरा हो चुका है तथा अन्य गाँवों में काम पूरा करने का प्रयास किया जा रहा है।

रजवाड़ा पंचायत के धोबही तथा मुकुन्दपुर गाँवों में जनसंख्या तथा भूमि, दोनों का, तथा मानिकपुर और रजवाड़ा-डीह गाँवों की जनसंख्या का आवश्यक प्रतिशत पूरा हो गया है। पुष्टि के लिए इन गाँवों में भूमि का प्रतिशत पूरा होना शेष है। रजवाड़ा, भगवान तथा मुर्शिदाबाद गाँवों में भी काम चल रहा है और बहुत शीघ्र ही जनसंख्या तथा भूमि का आवश्यक प्रतिशत पूरा हो जाने की सम्भावना है। धोबही में ग्रामसभा का गठन हो गया है।

कार्यकर्त्ता-संयोजन

जिस समय जे० पी० ने सलहा पंचायत से ग्रामस्वराज्य का कार्य प्रारम्भ किया उस समय १७ कार्यकर्त्ता इस काम में लगे। सर्वोदय-आन्दोलन के तमाम नेताओं तथा कार्यकर्त्ताओं ने जे० पी० के साथ आकर काम करने की इच्छा प्रकट की। जे० पी० ने उन सभी लोगों को सलाह दी कि वे अपने क्षेत्रों में बैठकर सघन रूप से ग्रामस्वराज्य के काम को पूरा करायें। सलहा पड़ाव पर बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के स्थानीय कार्यकर्त्ता एवं नरसिंहपुर खादी-सदन के भी कार्यकर्त्ता काम कर रहे थे। किन्तु कार्यकर्त्ताओं की रुचि, क्षमता तथा उनके क्षेत्रीय काम को देखते हुए १३ कार्यकर्त्ताओं को छोड़ दिया गया।

इस समय कुल २५ कार्यकर्त्ता इन पाँचों पंचायतों में कार्य कर रहे हैं, जिनमें १८ बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के हैं तथा शेष भूदान कमिटी एवं जिला सर्वोदय मंडल के हैं। जिन पंचायतों से जे० पी० पहले दौर से चले आये हैं, वहाँ पर शेष कार्य को पूरा करवाने के लिए सलहा, मरौली तथा डुमरी में एक-एक उप-शिविर कायम कर दो दो कार्यकर्त्ता रख छोड़े गये हैं, जो अपूर्ण काम को पूरा करने में प्रयत्नशील हैं।

भूदान की जमीन

बिहार के अन्य जिलों की तुलना में मुजफ्फरपुर में कम जमीन भूदान में प्राप्त हुई थी। इन पाँचों पंचायतों में अधिकांश किसान भूदान में मिली जमीन पर काबिज हैं, बहुत थोड़े ऐसे हैं जिन्हें बेदखल पाया गया है, किन्तु उन्हें फिर से भूदान की जमीन पर कब्जा दिलाने के सम्बन्ध में आवश्यक कार्यवाही की जा रही है।

ग्राम-कोष

ग्रामदान-पुष्टि का काम जहाँ-जहाँ पूरा होता जा रहा है वहाँ ग्राम-कोष की स्थापना की दिशा में भी आवश्यक कदम उठाये जा रहे हैं, किन्तु फसल खड़ी होने से तत्काल यह कार्य सम्भव नहीं है, इसलिए फसल कटने के साथ-ही-साथ नवगठित ग्राम-सभाएँ इस काम को अपने हाथ में ले लेंगी।

खेतिहर मजदूरों को उचित मजदूरी

इस क्षेत्र में यह देखा गया है कि खेतिहर-मजदूरों को सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी बहुत कम भूमिवानों द्वारा दी जा रही है। जयप्रकाशजी ने ग्रामसभाओं के माध्यम से तथा निजी मुलाकातों में भूमिवानों से मजदूरों को उचित मजदूरी देने का आग्रह किया है। उनके इस आग्रह पर कुछ भूमिवानों ने वर्तमान समय में मजदूरों को दी जानेवाली मजदूरी की दर में वृद्धि कर दी है, साथ-ही-साथ मजदूरों में अच्छे अनाज भी देने का वादा किया है।

इस संदर्भ में निकट भविष्य में इस क्षेत्र के किसानों तथा मजदूरों के प्रतिनिधियों की एक बैठक बुलाकर इस महत्त्वपूर्ण समस्या के सर्वसम्मत हल निकालने का सोचा जा रहा है।

ग्राम-विकास और जे० पी०

ग्रामस्वराज्य के मुख्य कार्यक्रम ग्राम-विकास की दिशा में भी जे० पी० काफी चिन्तनशील हैं, इनकी दृष्टि ग्रामदान के बाद ग्राम-विकास-कार्यों की ओर भी है। किसानों की मुख्य समस्या सिंचाई की तथा छोटे किसानों के ऋण की है। इस सम्बन्ध में आवश्यक कदम उठाया जा रहा है।

मरौली के ११ किसानों ने जे० पी० की सलाह पर मुस्तैदी से अपने खेतों में ट्यूब वेल लगाया और बिजली विभाग द्वारा बहुत ही तत्परता-पूर्वक उनको बिजली का कनेक्शन प्रदान किया गया, जिसका उद्घाटन जे० पी० ने २५ अगस्त को किया। डुमरी तथा माधोपुर के किसानों को भी सिंचाई के लिए बिजली की सुविधा दिये जाने की योजना बिजली विभाग के अधिकारियों ने स्वीकार कर ली है।

जे० पी० के कार्यों का शासन-तंत्र पर प्रभाव

जे० पी० द्वारा संचालित ग्रामस्वराज्य के कार्यों से प्रभावित होकर जिलाधिकारियों ने तुर्की में एक भूमि-वितरण समारोह का आयोजन ८ अगस्त को किया, जिसमें ६५ बीघा सरकारी गैरमजरुआ जमीन का वितरण ९९ भूमिहीनों में किया गया। इस भूमि-वितरण समारोह में जे० पी० ने भूमिहीनों को प्रमाण-पत्र वितरित किया। →

सहरसा जिला-कारागार में अभूतपूर्व संवाद और संकल्प

सहरसा जिला ग्रामस्वराज्य-कोष समिति की कार्यसमिति ने सघन रूप से तीनों अनुमंडलीय शहरों में सघन कार्य करने का निर्णय लिया। तदनुसार समिति के कार्यकारी अध्यक्ष श्री विश्वनाथ राय, जिला विकास-पदाधिकारी, मंत्री महेन्द्र नारायण, निवेदक, जिला ग्रामस्वराज्य-समिति एवं कालेज के एक छात्र श्री फुलेश्वरजा, तीनों दिनांक १३-८-'७० को ५ बजे संध्या समय कोष-संग्रह के निमित्त जिला-कारागार के कारावास-अधीक्षक के पास भी पहुँचे। तुरन्त ही कैदियों एवं स्टाफ की सभा बुलायी गयी। सभा में लगभग छः सौ की उपस्थिति थी।

वामपंथी दलों के नेता एवं कार्यकर्ता भी (कुल मिलाकर उनकी संख्या १०३ थी) भूमिहड़प-आन्दोलन के सिलसिले में पकड़कर लाये गये थे। ये लोग भी सभा में उपस्थित थे। एक तरफ श्री गुणानन्द ठाकुर (संसोपा) एम० पी०, अपने साथियों के साथ बैठे थे, और दूसरी तरफ श्री नक्षत्र मालाकार, जनार्दन पाण्डेय, दक्षिणपंथी कम्यूनिस्ट भाई बैठे थे, तीसरी तरफ नक्सलवादी नेता श्री रमेश शर्मा उर्फ पी० के भारद्वाज एवं कार्यकर्त्ता बैठे थे। ऐसा लगता था कि कोई सर्वदलीय सभा हो रही है।

सर्वप्रथम श्री महेन्द्र नारायण, मंत्री जिला ग्रामस्वराज्य-कोष समिति ने सभा में, उपस्थित लोगों को ध्यान में रखते हुए, सर्वोदय-दर्शन की भूमिका, ग्रामस्वराज्य की कल्पना, अब तक किये गये कार्यों एवं निष्पत्तियों की जानकारी तथा आगे के कार्यक्रमों की योजना संक्षेप में प्रस्तुत की। महेन्द्र भाई के भाषण के बाद कोष-समिति के कार्यकारी अध्यक्ष श्री विश्वनाथ राय, जिला विकास-पदाधिकारी ने अपने ओजस्वी भाषण में ग्रामस्वराज्य के बारे में जानकारी देते हुए कोष में दान देने की मार्मिक अपील की।

तदुपरान्त राजनैतिक पक्षों के नेताओं एवं कार्यकर्त्ताओं ने बोलने की, भाषण देने की इच्छा जाहिर की। अधीक्षक महोदय ने एक-एक करके बोलने की इजाजत दी। सर्वप्रथम संसोपा-कार्यकर्त्ता श्री गदाधर देव पाँच-छः मिनट में कोष के खिलाफ, इस आन्दोलन के खिलाफ जोश-खरोश में भाषण देकर बैठ गये। तत्पश्चात् श्री रमेश शर्मा नक्सलवादी, नेता ने करीब १५-२० मिनट के भाषण में मुख्य रूप से यह कहा, "गांधी देश का गद्दार था, पूँजीपतियों का दलाल था। भारत ने ही चीन पर चढ़ाई की थी। यह कोष उभरते हुए जन-आन्दोलन को कुचलने के लिए पूँजीपतियों की साजिश है, षड्यन्त्र है।" इसके बाद श्री नक्षत्र मालाकारजी ने थोड़ी देर के अपने भाषण में जेल और जमीन की कुछ समस्याओं का जिक्र करते हुए हिंसक क्रान्ति की अनिवार्यता पर जोर दिया। उन्होंने यह भी कहा कि कारा-अधीक्षक ईमानदार हैं, लेकिन अन्य जिलों के अधीक्षक एवं अन्य अधिकारीगण भ्रष्ट हैं। श्री जनार्दन पाण्डे, दक्षिणपंथी कम्यूनिस्ट नेता, तथा अन्य संसोपा-कार्यकर्त्ताओं ने भी अपने भाषणों में ग्रामदान-आन्दोलन को असफल घोषित किया।

अन्त में श्री गुणानन्द ठाकुर ने अत्यन्त नाटकीय ढंग से भाषण देते हुए भूदान-ग्रामदान की असफलता सिद्ध करने की कोशिश की, एवं जयप्रकाश को कोसते हुए नेता और विनोबा को सरकारी संत की संज्ञा दी। साथ ही ग्रामस्वराज्य-कोष की कटु आलोचना करते हुए महेन्द्र भाई के मार्फत विनोबा एवं जयप्रकाश को 'भूमि छोड़ो आन्दोलन' में भाग लेने और जेल में आने के लिए आमंत्रित किया। यह भी कहा कि इस देश में एक ही डा० लोहिया थे, जो विनोबा के निवेदन पर उनसे मिलने नहीं गये, बल्कि उन्हें (विनोबा को) खुद मिलने के लिए आने को कहा। आपने यह भी धमकी दी कि आगे अब ग्रामदान-आन्दोलन में सक्रिय सहयोग नहीं दें, इसके लिए कोशिश की जायगी। भाषण लम्बा था, भाषा-शैली

→ ## ग्रामदान में अब तक प्राप्त जमीन का वितरण

ग्राम का नाम	प्राप्त जमीन बी० क० धू०	दाता-संख्या	आदाता-संख्या
सलहा	४ ० ०	१	१६
मोमिनपुर	१ ० ०	३	४
डुमरी	५ ५ ०	४	१४
माधोपुर	५ ० ०	१२	२४
नरौली	२ ९ १९	७	१७
	१७ १४ १९	२७	७५

वासगीत का पर्चा

पंचायत का नाम	पहले के बंटे पर्चों की संख्या	संशोधन कराये गये पर्चों की संख्या	नये बनवाये गये पर्चों की संख्या
सलहा	११५	४५	१३
नरौली	१४९	—	४
बुधनगरा	१९४	—	११
मणिका	८८	१६	११३

—सुरेन्द्र विक्रम

—कैलाश प्रसाद शर्मा

कटु एवं उत्तेजक थी। अन्त में कोष का जोरदार विरोध करते हुए उन्होंने अपना भाषण समाप्त किया।

सबसे अन्त में कारावास-अधीक्षक श्री बच्चोलाल दास ने थोड़े में कहा :

"मैं नहीं चाहता था कि इस समय ग्रामस्वराज्य-कोष राजनीतिक विषय बने, और यह सभा राजनीतिक-विवाद का अवसर बने। लेकिन जब आप सबने इसको वही रूप दिया तो खुशी ही हुई, इसलिए कि आप सबने एक लोकतांत्रिक समाज का नमूना पेश किया। बस, यही बहुत बड़ी चीज है, जो हमें मिली है। भले हम भूखे-नंगे हों, लेकिन अपने मन की प्रतिक्रिया, अपनी मान्यता को हम अपने तरीके से प्रकट कर सकते हैं, लिख सकते हैं, यह बहुत बड़ी आजादी हमें मिली है। आप राजनीतिक दलों के नेता लोग 'जमीन हड़प आन्दोलन' के सिलसिले में गिरफ्तार होकर यहाँ आये हैं। 'हड़प' शब्द से आपको चिढ़ है ऐसा लगा। आपका शब्द जो भी हो, लेकिन जमीन-सम्बन्धी आन्दोलन में आप यहाँ आये हैं। मैं पूछना चाहता हूँ कि, 'ठाकुरजी! क्या आपने अपनी जमीन बाँटी है ?"

ठाकुरजी "मैंने ग्रामदान किया है।"

अधीक्षक . "अभी तो आपने ग्रामदान की कटु आलोचना की है। हमें आप यह बतायें कि आपने अपनी जमीन बाँटी है या नहीं ?"

ठाकुरजी (लजाते हुए) मुस्कराकर चुप हो गये।

अधीक्षक : "है कोई पार्टी-नेता, जिन्होंने अपनी जमीन बाँटी हो ?"

(अनेक बार पूछने पर भी) जवाब नहीं मिला, न वातावरण हल्का हुआ। बल्कि पूर्ण गम्भीरता एवं निस्तब्धता छायी रही।

अधीक्षक . "ठाकुरजी! यहाँ की (जिले की) आबादी कितनी है ?"

ठाकुरजी . "लगभग २२ लाख।"

अधीक्षक : "आप कुल कितने लोग इस आन्दोलन में पकड़कर लाये गये हैं।"

ठाकुरजी : "लगभग १००।"

अधीक्षक . "यह संख्या साफ बताती है कि आपकी जड़ धरती में नहीं है, जन-जीवन में नहीं है। ठाकुरजी, मुझे नौकरी की चिंता नहीं है। मैं इतनी रकम कुदाल से भी कमा सकता हूँ। इसलिए *बिना भय किये आप ही को नहीं, मिनिस्टरों* को भी उनके मुँह पर वाजिब बात कह देता हूँ। आप सब नेता लोग जनता को बरगलाते हैं, गुमराह करते हैं। मैं ठाकुरजी एवं उपस्थित नेताओं से पूछना चाहता हूँ, कि यदि अन्य जेल-अधिकारी-गण भ्रष्ट हैं, तो जब उनकी पार्टी के हाथ में शासनसूत्र था तो उन्होंने तथाकथित भ्रष्ट पदाधिकारियों को क्यों नहीं हटाया ? यदि नहीं हटाया तो नेतागण को ही क्यों नहीं दोषी ठहराया जाय ? आखिर आपकी सरकार थी तो आपने जेल में सुधार क्यों नहीं करवाया ? आप लोग समाजवादी हैं न ? तो मैं कहता हूँ कि आप अपने सभी साथियों के साथ मिलकर खाना खाया करें, ताकि उनका समाजवादी संस्कार बने। लेकिन आप साथ खाने से इन्कार करते हैं, और अपनी व्यक्तिगत सुविधा के लिए तरह-तरह की माँग करते हैं, और फिर भी आप अपने को समाजवादी कहते हैं।

"महेन्द्र बाबू याचक बनकर आये हैं मैं सहयाचक। मैंने स्वयं ग्रामस्वराज्य-कोष में अपना एक दिन का वेतन दिया है, और अपने साथियों से भी दिलवाया है। अब आपके बीच आया हूँ ऐसे पवित्र काम के लिए दान माँगने। हमें विश्वास है कि हमारी भारतीय संस्कृति कभी भी अपने याचक को खाली हाथ वापस नहीं जाने देती है, और न जाने देगी। आप सबने कहा कि हम कैदियों से क्या अपेक्षा रखते हैं, जब कि हमलोग न भरपेट खाना खाते हैं, और न बढ़िया खाना खाते हैं। मैं नेताओं से पूछता हूँ कि जिस स्तर का *भोजन आप जेल में पाते हैं, क्या उसी स्तर* का भोजन हमारे परिवारों को पाँच सौ रुपये में भी एक महीना तक खिलाया जा सकता है ? अगर इस स्तर के भोजन की व्यवस्था कोई कर सके, तो प्रयोग के लिए पाँच सौ रुपये महीने का वेतन पारिवारिक व्यवस्था के लिए मैं आपमें से किसीको भी देने के लिए तैयार हूँ। (*अनेक बार* पूछने पर भी नेताओं ने कुछ नहीं कहा।)

"आप यहाँ के बन्दियों का वजन एवं ऊँचाई ले लें, तथा उसका औसत निकालें; और इस जिले के किसी गाँव के लोगों का वजन एवं ऊँचाई लें, और औसत निकालें। यदि जेल की औसत बाहर के व्यक्तियों के औसत से कम हो, तभी आप यह कह सकते हैं कि सरकार बन्दियों को कम भोजन देती है। मुझे पूरा विश्वास है कि बन्दियों को जितना भोजन मिलता है, उतना भोजन *बाहर की आमजनता को औसतन नहीं मिलता है। यदि इसमें किसी नेता को* सन्देह हो, तो वे अपने नाम एवं गाँव का पता दें और यह सर्वेक्षण तत्काल किया जाय।"

(कोई भी उत्तर नहीं आया।)

"जिन्होंका वजन नहीं घटे और इस दान में भी योग हो जाय, इसके लिए मैं एक मामूली सुझाव देता हूँ। रोज दी जा रही प्रति व्यक्ति २ छटांक दाल में से ½ छटांक दाल प्रति शाम के भोजन में न खायें, तो ११ सितम्बर तक इस महान और पवित्र काम के लिए ८०० रुपये का दान हम दे सकते हैं। मुझे पूरा भरोसा है *कि हमारे कैदी भाई अपनी राजी-खुशी से* इसे स्वीकार करेंगे। फिर भी, जिन्हें पसन्द नहीं है, देना नहीं चाहते हैं, वे हाथ उठायें।" नहीं के पक्ष दो भाइयों ने हाथ उठाया। तीसरे भाई ने हाथ उठाया ही था कि पूछा, "आप तो समाजवादी हैं!" उन्होंने झट अपना हाथ नीचे कर लिया।

इस प्रकार आठ सौ रुपये के दान की प्राप्ति का आश्वासन लेकर और श्री नवाब मालाकर तथा नक्सली भाइयों से थोड़ी देर बातें करके इस अभूतपूर्व अनुभव के साथ वापस लौटे।

—विष्णुदेव सिंह,
मंत्री
जिला ग्रामस्वराज्य समिति, सहरसा

आचार्य रजनीश : क्रान्तिकारी या भ्रान्तिकारी ?

❀ प्रबोध चोकसी ❀

[यद्यपि सर्वोदय-जगत् में आरोपों के प्रतिवाद प्रस्तुत करने पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है, क्योंकि यह विश्वास किया जाता है कि हमारे द्वारा किये गये कार्य ही सही प्रतिवाद प्रस्तुत कर सकते हैं। हमारा जो विचार है, दर्शन है, हम जो कुछ करना चाहते हैं, सब जनता के सामने खुले रूप में हैं—हमारी कमजोरी भी, हमारी ताकत भी। फिर भी आपद्धर्म के रूप में कभी-कभी प्रतिवाद करना पड़ता है। आचार्य रजनीश आजकल तथाकथित भद्र समाज में ईसा से बुद्ध तक और गांधी से विनोबा तक सबकी मनमानी टीका करके अच्छी शोहरत कमा रहे हैं। यद्यपि स्वस्थ आलोचनाओं का आदर हर लोकतांत्रिक वृत्ति का आन्दोलन या व्यक्ति करेगा, लेकिन बिना जाने समझे या समझ-बूझकर भी तथ्यों को तोड़-मरोड़कर किसी व्यक्तित्व, विचार या आन्दोलन की टीका करना न नैतिक ही माना जा सकता है, न क्रान्तिकारी ही।—सं०]

कहा जाता है कि परीक्षित राजा के सर्पयज्ञ से बचने के लिए तक्षक नाग इन्द्र के पीछे छिप गया था। हवन-कुण्ड में स्वाहा होने की आज्ञा इन्द्र को तो नहीं दी जा सकती थी, इसीलिए इन्द्र के साथ तक्षक भी बच जाय, यह योजना थी। इस योजना को सफल बनाने के लिए 'इन्द्राय स्वाहा, तक्षकाय स्वाहा' ऐसा मंत्र बनाना पड़ा था। इसी प्रकार असत्य जितना छिप सके उतना छिप जाने के लिए तैयार रहता है। वह सत्य के पीछे ऐसा छिप जाता है कि सामान्य मनुष्य को सत्य के साथ असत्य भी ग्राह्य हो जाता है। हाँ, ठीक अनुभव के बाद तो सत्य ही टिकता है, असत्य का पर्दाफाश हो जाता है।

अपने देश में आजकल रजनीश छिछले अर्धसत्यों का मनोरंजक मिश्रण तैयार कर उसमें थोड़ी-सी गहरी बातों का भ्रम पैदा करके लोगों को अपनी धार खाने में अपनी विशिष्ट प्रतिभा का प्रयोग कर रहे हैं। भीड़ के मनोविज्ञान का एक बहुत सुन्दर उदाहरण वे पेश कर रहे हैं।

कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा,

भानुमती ने कुनबा जोड़ा

समाजवाद, गांधीजी, पूंजीवाद, विनोबाजी, इन सभी के बारे में उन्होंने अति-भ्रामक बाल-भाव बातें कही हैं। उनका साहित्य पढ़ने लगते हैं कि किसी वाद या विचार के पास जो कुछ भी मन-पसन्द लगे उसे चुन लेना, और फिर बिलकुल झूठे या अर्धझूठे दोषारोपण उस वाद या विचार पर करके उसको अपने मुग्ध श्रोताओं के सामने हास्यास्पद बनाकर, उस वाद या विचार के प्रति ऋण स्वीकार करने से अपने को बचा लेना। साधारण श्रोतावर्ग के बारे में वे निर्भय हैं। बहुत ही कम लोग समाजवादी विचारधाराओं का गहराई से अध्ययन किये होते हैं। जिन्होंने अध्ययन किया है वे लोग रजनीश को सुनने के लिए पागल नहीं बनते हैं। लोक-मानस का तो ज्ञान बहुत कम और आवेश ज्यादा होता है। इसका लाभ उठाकर अपनी ख्याति बढ़ाने में रजनीश ने बहुत अंशों में सफलता प्राप्त की है।

विरोधाभासी या अटपट बातें करने में रजनीश को बिलकुल हिचक नहीं लगती। कुछ समय पहले तक तो वे मार्क्स-पंथी साम्यवादियों को भी पीछे कर दें, ऐसे अन्तिम स्तर के उद्गार प्रकट करते थे। अब पूंजीवाद की श्रेष्ठता के गुणगान कर रहे हैं। मार्क्स, गांधी, विनोबा की निंदा करना उनको विशेष रूप से पसन्द है। रजनीश को अपनी पद की कीर्ति बढ़ाने में शायद उनकी लोकप्रियता बाधक लग रही होगी। या तो पुरानों की हंसी उड़ाने का आधुनिक फैशन उनको अपने अनुकूल लगता होगा। लेकिन वास्तविकता तो यह है कि विचारों की पूंजी उन्होंने उन्हीं पुराने विचारकों से चुरायी है।

मार्क्स, लेनिन, ट्रॉट्स्की को जिन्होंने पढ़ा है वे सब अच्छी तरह जानते हैं कि वैज्ञानिक समाजवाद और द्वंद्वात्मक ऐतिहासिक नियतिवाद में स्पष्ट रूप से सामंतवाद में से ही पूंजीवाद का, पूंजीवाद में से ही समाजवाद का विकास निरूपित हुआ है। मार्क्स-एंजल्स मानते थे कि सामंतवाद में से पूंजीवाद पैदा हुआ है, और वह सामंतवाद को खत्म कर रहा है; वैसे ही समाजवाद पूंजीवाद की गोद में पैदा होकर पूंजीवाद को ही कब्र में दफनायेगा। लेनिन और ट्रॉट्स्की के बीच रूसी क्रान्ति के पहले इस विषय पर काफी विवाद चला था। इजाक डाउशर के 'दी प्रॉफेट अन-आर्म्ड' में जिज्ञासु पाठक को यह विवाद मिल जायेगा। वे दोनों मार्क्सवादी थे, इसीलिए वे मानते थे कि रूस अभी सामंतवाद में से पूंजीवादी क्रान्ति की ओर कदम बढ़ा रहा है, इसीलिए रूस में समाजवादी क्रान्ति तुरन्त नहीं होगी। 'हाथी चलता है अपनी गति में', वैसे ही इतिहास अपनी निश्चित गति से चलता है। उसको धक्के लगाकर जबरदस्ती तीव्र गतिमान नहीं बनाया जा सकता। परन्तु आखिर सामंतवाद में पूंजीवादी क्रान्ति करके औद्योगिक बन गये जर्मनी में क्रान्ति नहीं ही हुई; और न इंग्लैण्ड, हालैण्ड में ही हुई, हुई सामंतवादी रूस में ही। तत्पश्चात् उससे भी पिछड़े हुए चीन में किसानों ने क्रान्ति की।

इसके बावजूद भी मार्क्सवादियों की यह मूल-भ्रांति बिलकुल दूर नहीं हुई।

आचार्य रजनीश ने इस भ्रांति को अपने ढंग से प्रचारित किया है। वे मार्क्स, लेनिन या ट्रॉट्स्की के प्रति कृतज्ञता प्रकट नहीं करते हैं, बल्कि उनके बदले में पहले पूंजीवाद फैल जाय, उसके बाद ही समाजवाद आयेगा, ऐसी कोई बात मौलिक-दर्शन प्रस्तुत कर रहे हों, इस अदा से वह करके वह तालियां बटोर रहे हैं। समाजवाद पर मार्क्स का कोई एकाधिकार नहीं था। उसके पूर्व और पश्चात् भी समाजवादी विचारक हुए हैं। जिनका

पढ़ना हो उसके लिए सेइइलर, कार आदि के इतिहास आज भी मौजूद हैं। परन्तु रजनीश तो समाजवाद यानी मार्क्सवाद, ऐसा समीकरण बनाकर मार्क्सवाद पर अन्तिम कई वर्षों से हुए प्रहारों में से अपने अनुकूल के प्रहारक तथ्यों को लेकर अपने नाम से झाड़ रहे हैं। ऐसा करने से वे तथ्य को बहुत ही तोड़ते-मरोड़ते हैं, विकृत और गलत रूप देकर भी पेश करते हैं।

मूलतः राज्य-पूँजीवाद मार्क्स को अभिप्रेत नहीं था, ऐसा एरिक फ्रोम आदि चिंतकों का मतव्य भी जग-जाहिर है। परन्तु बिस्मार्क के नमूने पर लेनिन ने रूस में वह (राज्य-पूँजीवाद) चलाया था। ब्रिटेन में उससे लोकशाही आवृत्ति जैसा 'राष्ट्रीकरण' का प्रयोग एटली की मजदूर-सरकार ने किया। परन्तु राज्य-पूँजीवाद में पूँजीवाद के अनिष्ट तत्त्व बढ़ते हैं, ऐसी लोकतंत्रवादियों की आलोचनाएँ तथ्यपूर्ण हैं, यह बात अनुभवों से स्पष्ट होती गयी। इसी जग-जाहिर बात को रजनीश अपनी आलोचना के रूप में पेश कर रहे हैं, परन्तु मूल रूप में पूरी बात भी नहीं कहते। लोकतांत्रिक समाजवाद की व्यूह-रचना में ब्रिटेन के गेईट्स्केल और विल्सन ने, तथा भारत के जवाहरलाल ने कुछ परिवर्तन किया : 'कमांडिंग हाईट्स' को समाज के कब्जे में लेने, 'मिश्र अर्थतंत्र,' 'आधुनिकी-करण' आदि की बातें चली। युगोस्लाविया के टीटो ने विकेन्द्रित समाजवादी स्वामित्व सफलतापूर्वक चलाकर ८ प्रतिशत तक वार्षिक विकास-दर का उदाहरण प्रस्तुत किया। रूस ने भी 'लायबरटेरियनिज्म' का प्रयोग करके विकेन्द्रीकरण को अमुक हद तक आजमाकर देखा।

इन एक-एक प्रयोगों की बातें कई-कई पुस्तकों जितनी लम्बी हैं, रजनीश उनसे अज्ञात नहीं होंगे। परन्तु वे समाजवाद पर आक्रमण करते समय श्रोताओं को इन सब बातों के बारे में कोई जानकारी दिये बिना सस्ती, आक्रामक शैली में छिछला वाग्-विलास करते हैं।

समाजवाद नहीं : रजनीशवाद

समाजवाद आत्मघात है, यंत्रवाद है, मात्र भौतिकवादी है; पिता-पुत्र और पति-पत्नी के सबंधों का भी सामाजीकरण किया जायेगा, आदि बातें स्मरण-पट पर चिपक जानेवाली हैं, परन्तु सही नहीं हैं। मार्क्स के अलावा भी समाजवादी हुए हैं, और उनमें से कई धार्मिक और अध्यात्मवादी थे। असल में तो साम्यवाद के विचार का बीज धर्म और अध्यात्म में से ही उपलब्ध हुआ है। मार्क्स ने उसको यंत्र जैसी या सृष्टिचक्र जैसी भौतिक नियति का वाहन प्रदान किया, परन्तु मार्क्स को भी अभौतिक के प्रति नफरत नहीं थी। मार्क्स और लेनिन मुक्त प्रेम या सामूहिक सेक्स के हिमायती नहीं थे।

समाजवादी गरीबी कायम रखना चाहते हैं, यह भी उनका बिलकुल झूठा आक्षेप है। हकीकत यह है कि समाजवादी तो मानते हैं कि यंत्र-विज्ञान की प्रगति पूँजीवाद में कुंठित होगी, समाजवाद ही उसका पूर्ण विकास कर सकेगा। छोटे यंत्र-वाले उद्योग भी एक मालिक की मालिकी में चल सकते हैं। यंत्र बड़े-बड़े हों, पूँजी भी अधिक खर्च होती हो, तभी अधिक मालिकोंवाली कंपनी की मालिकी जरूरी बन जाती है, इतना तो पूँजीवाद ने भी माना है, अपनाया भी है। अब, यंत्र का आकार सारे समाज को आवरित कर ले, इतना बड़ा होने लगा है। टाटा-बिड़ला जैसी कम्पनियाँ भी उसके लिए जरूरी पूँजी अपने आप पैदा नहीं कर सकती हैं। सरकारी संस्थाओं के ऊपर उनका अवलंबन बढ़ता जा रहा है। साथ ही उनके उत्पादन-वितरण का गहरा असर सारे समाज-जीवन पर पड़ता है। इस तरह यंत्र की प्रगति ही व्यक्तिगत मालिकी या सामूहिक पूँजीवाद को शीघ्रता से असामयिक और कालग्रस्त बना देती है।

गांधी-विनोबा तो हाथ से चलनेवाली चक्की को मान्य करते हैं। परन्तु जब गाँव में आटा पीसने के लिए यंत्रवाली चक्की आयी, तब विनोबाजी ने कहा कि यंत्र-चक्की के बिना काम नहीं चल रहा है, तो उसका इस्तेमाल कीजिए, परन्तु उसकी मालिकी सारे गाँव की हो, व्यक्ति की नहीं।

विनोबा ने तो जमीन की मालिकी भी सारे गाँव की हो जाय, इसके लिए आन्दोलन चलाया। वे तो देहभाव के बारे में भी कहते हैं 'न मम' (मेरा नहीं है)। उनके साम्य-सूत्र में स्पष्ट सूत्र है : स्वाम्यादी परिहरेत्। शास्त्रीय संयमेन। वैसे हो साम्येन मंगलम्।

गांधीजी ने व्यक्ति को केन्द्र माना, परन्तु उन्होंने कहा कि व्यक्ति की सार्थकता तो समाज को समर्पित करने में है। ट्रस्टी-शिप की व्याख्या करते हुए उन्होंने व्यक्ति की मालिकी का स्वेच्छा से संपूर्ण समर्पण समाज में हो, ऐसी बात असंदिग्ध भाषा में लिखी। गांधी-विनोबा, दोनों व्यक्तिगत मालिकी या राज्य की मालिकी को नहीं, बल्कि ग्राम-समाज की मालिकी को मानते हैं। राष्ट्रीकरण नहीं, बल्कि ग्रामीकरण और ट्रस्टीकरण उनकी दिशाएँ हैं।

बिना बोये ही फसल काटने की रजनीशजी की महत्वाकांक्षा

फिर भी रजनीशजी क्या कहते हैं? वे बेधड़क गांधी-विनोबा के बारे में भ्रामक बातें फैलाये जा रहे हैं। 'इण्डियन एक्स-प्रेस' में ८ अगस्त को छपी हुई उनकी मुलाकात को हम नीचे पढ़ें। (मुलाकात की शुरुआत पत्रकार के शब्दों से होती है) :

"आचार्य रजनीश को व्यक्तिगत मालिकी और मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को खत्म करने के उपदेश देते हुए सुनते हैं तो मन में उलझन पैदा होती है। क्या वे आशा रखते हैं कि मालिकी रखने-वाले वर्ग के लोग किसी प्रकार के दबाव के बिना या हिंसा की धमकी दिये बिना ही अपनी मिल्कियत दे देंगे?"

इसके जवाब में रजनीश ने जोर देकर कहा "अवश्य, अगर हम लोकमत जागृत करके और अहिंसक पद्धति से समझाने की शक्ति का उपयोग करें, तो वे जरूर अपनी मिल्कियत दे देंगे ····"

"भूख-हड़ताल आदि का सहारा लेकर ?"

"नहीं, नहीं, भूख-हड़ताल नहीं। वह तो दूसरे रूप में हिंसा ही हुई। हमें तो उनके साथ संवाद शुरू करना पड़ेगा। उनको दलीलों के द्वारा समझाना होगा।"

"ऐसा ही प्रयत्न तो गांधी ने भी किया था और विनोबा भावे भी तो वही करने का प्रयत्न कर रहे हैं, और आप तो उन दोनों की सख्त टीका करते हैं ?"

रजनीश ने प्रत्युत्तर में तीर फेंका, "गांधी व्यक्तिगत मालिकी को मानते थे, और विनोबा भी व्यक्तिगत मालिकी की समाप्ति नहीं चाहते।"

क्या रजनीश ने पत्रकार का मुँह बन्द करने के लिए ही ऐसा असत्य उच्चारण किया होगा ? या वे सचमुच ही गांधी-विनोबा के विचारों और मूल्यों से अनजान हैं ?

समझाकर व्यक्तिगत मालिकी का अन्त लाना, यह गांधी-विनोबा की आर्थिक क्रांति का अर्थ है। इसीलिए तो विनोबा ने उसको "साम्यवाद" से भिन्न "साम्ययोग" नाम दिया है। गांधी-विनोबा ने अहिंसक ढंग से आर्थिक समानता लाने के लिए केवल व्याख्यान ही नहीं दिये, बल्कि आजीवन पुरुषार्थ किया है। रजनीश केवल व्याख्यान करते हैं। करने से पूर्व के चिंतकों की बेबुनियादी निंदा करते हैं। खुद आगे क्या करना चाहते हैं, उसके बारे में कुछ कहते नहीं, कहकर अपने को बंधन में डालना नहीं चाहते। अपने श्रोता व भक्त लोगों को भी ध्यान और योग के हास्यास्पद बन जानेवाले प्रदर्शन के अलावा और कुछ भी सामूहिक पुरुषार्थ करने की बात नहीं कहते।

रजनीश को 'इन्कार' में बहुत श्रद्धा है। "परम्परागत जो कुछ भी हो, उसे तोड़ डालो। उसे सिर के बल उल्टा खड़ा कर दो।" (यह भी तो मार्क्स द्वारा प्रयुक्त रूपक है।) "अराजकता हो तो कोई हर्ज नहीं। अराजकता होने दो। हम उसीको तो चाहते हैं। अराजकता में से ही व्यवस्था आती है। इस देश में बहुत लम्बे अरसे से अराजकता नहीं हुई है।" ('इण्डियन एक्सप्रेस' के पत्रकार के समक्ष ८ अगस्त, '७० को।)

पत्रकार ने कहा कि मुझे यह सुनकर उग्रवादी साम्यवादी याद आ रहे हैं। तब रजनीश ने उनके और अपने बीच का फर्क बताया, "मैं हिंसा की हिमायत नहीं करता। हिंसा तो कमजोर का शस्त्र है, अजागृत, अप्रकाशित चित्त का भी। हिंसा प्रतिक्रिया के लिए सबसे पुराना शस्त्र है। क्रांति प्रतिक्रियावादी शस्त्र से कैसे आयेगी ?"

परन्तु रजनीश क्यों समझते नहीं हैं या तो समझकर भी अज्ञान बन रहे हैं, कि अराजकता दो प्रकार की होती है। जन्म से पहले भी अराजकता पैदा होती है और मृत्यु से पहले भी। एक अराजकता स्वीकारात्मक है, दूसरी निषेधात्मक। अगर कुछ बोया हो, तब तो उसके अंकुरित होने की आशा रखी जा सकती है ? लेकिन क्या बिना बीज बोये जमीन को हल से नीचे-ऊपर कर देने मात्र से, घास की निराई कर देने से ही सब कुछ फूट निकलेगा ?

रजनीश आज क्या बो रहे हैं ? लोगों को क्या सिखा रहे हैं ? परम्परा के प्रति विद्रोह के नाम पर वे सभी पूर्वाचार्यों का अंधा और मिथ्या निषेध कर रहे हैं। वे निहिलिस्ट या नकारवादी हैं। वेदान्त के नेतिवादी तो किसी अगम्य की ओर संकेत करने के लिए 'यह नहीं' कहते थे। जबकि रजनीश कहते हैं कि मार्क्स नहीं, गांधीजी नहीं, विनोबाजी नहीं, जवाहरलालजी, इन्दिराजी, मोरारजी कोई 'जी' नहीं, तब बाकी एक ही बच जायें 'रजनीशजी !'

यह फासिस्टों की रीति है। समाजवाद के प्रति भय-उद्वेग लोगों में फैलाने की कोशिश करके; और पूँजीवाद के गुणों को औद्योगिक प्रगति के एकमात्र सही वाहक के रूप में अतिशयोक्तिपूर्ण ढंग से पेश करके अब रजनीश अपना असली रंग दिखा रहे हैं, ऐसा लगता है। व्यक्तिगत मालिकी को नहीं मानते हैं, इस दावे के साथ बिलकुल विसंगत पूँजीवाद का समर्थन करना शुरू किया है। पूँजीवाद के महंत के रूप में तो अब उनकी महिमा और बढ़ेगी।

परन्तु रजनीश में हिटलर या मुसोलिनी बनने का एक भी लक्षण नहीं है। उनका नकारवाद उनको ही सबसे पहले खा जायेगा, इसकी संभावना कम नहीं है। परम्परा के इन्कार के ही आधार पर खड़े रहनेवाले किसी सम्प्रदाय या व्यक्तित्व का इन्कार होने में कितनी देर लगेगी ? मुक्त चिंतन के नाम पर और मूल्य-क्रांति के बहाने वे अपने देश में इस समय बढ़ी हुई सामूहिक अश्रद्धा (मास सिनिसिज्म) का लाभ लेकर अपना एक साम्प्रदायिक साम्राज्य फैलाने जा रहे हैं। बिना बोये फसल काटने की यह रीति मनोरंजक तो है, परन्तु खतरनाक भी कम नहीं है।

फिर भी हम उसका स्वागत करते हैं। क्योंकि द्वंद्वात्मक त्रिगुणात्मक इस सृष्टि में ठोकर खाने के बाद ही जागनेवाले मनुष्य भी हैं ही। रजनीश ने पिछले तर्क-विलास से हमारे बुद्धिशाली वर्ग के लिए ठोकर खाने का अवसर निर्माण किया है, यह उनका गुण मान लें। बाकी, उनको तो कुछ भी कहने का कोई अर्थ ही नहीं। व्यासपीठ का संरक्षण छोड़कर समानता की भूमिका पर आदान-प्रदान करने की उनकी कोई वृत्ति नहीं है। वे परम्परागत ज्ञान में कुछ डुबकी मार चुके आदमी हैं। फिर भी परम्परा को तोड़कर खुद को प्रतिष्ठित करने का करिश्मा सिद्ध करने के लिए परम्परा के बारे में जनता के अज्ञान का लाभ लेने में पीछे नहीं रहते। सोये हुए को जगाया जा सकता है, जागे हुए को जगाने का क्या अर्थ ? रजनीश को उनके ही शिष्य जागकर उनकी खबर लें, उनका इन्कार करें। योगी, भगवान, आचार्य सभी को सुननेवाला अनुभव करनेवाला व उनको परखनेवाला भारत, जैसा रजनीश ने मान लिया है, वैसा 'नीर-क्षीर-विवेक-बुद्धि-हीन देश' नहीं है। (मूल गुजराती से)
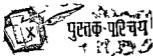
एक क्रान्तिकारी की आत्मकथा

लेखक : क्रोपाटकिन
अनुवादक : बनारसीदास चतुर्वेदी
प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली
पृष्ठ : ३०८
मूल्य : ८ रु०

'मैमोयर्स आफ ए रिवोल्यूशनिस्ट' का श्री बनारसीदास चतुर्वेदीजी द्वारा किया गया हिन्दी अनुवाद—'एक क्रान्तिकारी की आत्मकथा'—पढ़कर लगा कि न केवल वह एक महान आदमी की जीवन-कथा मात्र है, परन्तु उस समय के समाज की झलक भी उसको पढनेपर मिलती है। १९वीं शताब्दी की प्रकाशित आत्म-चरित्रात्मक किताबों में यह विशेष श्रेष्ठ मानी गयी है और इसे गाधी की आत्मकथा की कोटि में रखा जाता है। गाधी और क्रोपाटकिन देश, काल और राजनैतिक परिस्थिति की सीमा से बहुत नजदीक नहीं हैं, परन्तु 'मानव मानव ही है और हर मनुष्य स्वतत्रता का अधिकारी है', ऐसी मानव-मुक्ति की लगन दोनों में समान रूप से पायी जाती है। गरीबों, दीन-हीनों के प्रति दोनों में एक-सी हार्दिकता पायी जाती है।

क्रोपाटकिन स्वय अपनी आत्मकथा में लिखते हैं, "सफल क्रान्ति के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि प्रारभ से ही पददलितों और कष्टपीड़ितों के प्रति उचित न्याय किया जाय। उसे भविष्य के लिए न टाला जाय, अन्यथा क्रान्ति असफल हो जायेगी। दुर्भाग्यवश अक्सर ऐसा होता है कि क्रान्ति के नेता राजनैतिक बातों में इतने व्यस्त रहते हैं कि वे मौलिक समस्या को ही भूल जाते हैं। यदि क्रान्तिकारी जन-साधारण की दृष्टि में यह सिद्ध नहीं कर पाते कि क्रान्ति से उनके लिए वास्तव में एक नये युग का प्रादुर्भाव हो गया है, तो क्रान्ति का विफल होना निश्चित है।"

क्रोपाटकिन के उपरोक्त विचारों को पढ़ने से स्पष्ट लगता है कि गाधीजी के स्वराज्य-आन्दोलन सम्बन्धी विचारों के साथ उनका कितना साम्य है। हमारी स्वराज्य के बाद की निष्फलता का कारण क्या वही नहीं है, जिसका क्रोपाटकिन ने उल्लेख किया है? क्रोपाटकिन, जो रूस के आतकवादी जारशाही शासन के अन्तर्गत रहनेवाले नागरिक थे, चाहते तो आजीवन 'राजकुमार' के पद पर रहकर मौज की जिन्दगी बिता सकते थे, लेकिन अपने देश के दलित, पीड़ित गुलामों की पशुवत जिन्दगी की उपेक्षा करते हुए जीना उनके लिए असह्य था। उनकी बहुमुखी प्रतिभा उनको जीवन का सर्व सुख दे सकती थी, वे एक महान गणितज्ञ, भूगर्भ विद्या के विशेषज्ञ थे। उन्होंने केवल विज्ञान के क्षेत्र में ही कुशलता नहीं प्राप्त की थी, बल्कि वे कलाकार, पत्रकार, सगीतज्ञ और दार्शनिक भी थे। इस तरह कला और विज्ञान, साहित्य तथा दर्शनशास्त्र के वे ज्ञाता थे, २० भाषाओं के जानकार थे। ऐसे विरल व्यक्तित्ववाले व्यक्ति के लिए क्या दुर्लभ था? लेकिन उनके सामने तो थे वे गुलाम, शोषित किसान, जिनके बारे में वे लिखते हैं "ये बेचारे मेहनत करते-करते मर जाते हैं और फिर भी पेटभर भोजन समय पर मयस्सर नहीं होता। उस कड़ी जमीन में यदि वे कुछ पैदा करते हैं तो करों और टैक्सों में चला जाता है, उसके पास खाने के लिए भी नहीं बचता, शरीर ढकने के लिए वस्त्र भी उसके पास नहीं रहता। मैं अमरीकी मशीनों की चर्चा उनसे किस मुँह से करूँ? इन किसानों को मेरी वैज्ञानिक सलाह की जरूरत नहीं, उन्हें जरूरत है स्वय मेरी।" और, उन्होंने अपना सब बादशाही वैभव छोड़ दिया; इतना ही नहीं, विज्ञान के नये-नये उच्च सोपानों तक पहुँचने की अपनी आकांक्षा भी छोड़ दी कि इससे आम-जनता को क्या लाभ होगा? कितनी महानता का परिचय मिलता है!

ऐसे महान व्यक्ति की आत्मकथा सचमुच एक महान कथा है, जो रूस के आतकवादी शासन में साँस लेनेवाले लाखो गुलाम, शोषित, पीड़ित आत्माओं की व्यथा-कथा बन गयी है। उन्होंने अपनी निजी कथा को उतना विस्तार नहीं दिया है, परन्तु उन मूक आत्माओं की मुक्ति की आवाज को बुलन्द किया है। उनकी कथा से यह मानव-मूल्य ध्वनित होता है कि चाहे कितनी भी सुख-सुविधाएँ मनुष्य को दी जायें, लालचें दी जायें, या भय और हिंसा का वातावरण फैलाया जाय, लेकिन इन सबके बावजूद भी मनुष्य की मुक्ति की प्यास खत्म नहीं हो सकती, और न जुल्म के द्वारा, हिंसा के द्वारा लायी गयी क्रांति से, चाहे वह लोकहित के लिए क्यों न हो, लोगो का हित नहीं सध सकता। घोर आतक और गुलामी के काल में अपने ऐसे क्रान्ति-कारी दृष्टिकोण को व्यक्त करना कोई साधारण मनुष्य का काम नहीं है। क्रोपाट-किन अपने विचारों में अडिग रहे और उसके लिए जो कुछ भी यातनाएँ राज्य की ओर से सहनी पड़ीं, सब कुछ वीरता के साथ सही।

एक मनुष्य कितनी ऊँचाई तक पहुँच सकता है इसका उदाहरण क्रोपाटकिन की आत्मकथा में मिलेगा। हिंसामय वातावरण में पननेवाले उस व्यक्ति को अहिंसा प्रिय लगी और दमन तथा शोषण के उस युग में उनको मानव की मुक्ति की प्यास तड़पाने लगी। वे अहिंसा की राह पर चलनेवाले वीर सैनिक थे और उनकी आत्मकथा मानव-मुक्ति के इतिहास का एक अमर प्रकरण बन गयी है।

अनुवादक ने लेखक की मूल भावनाओं को सफलतापूर्वक व्यक्त किया है। पुस्तक हर क्रान्तिकारी के लिए पठनीय है, चाहे वह हिंसा में विश्वास रखता हो या अहिंसा में। हिंसावादी को शायद पुस्तक पढ़ते-पढ़ते अहिंसक शौर्य की अनुभूति हो जाय, और अहिंसानिष्ठ शायद अपने अन्दर में ध्येय के प्रति समर्पण का भाव और पुष्ट होता महसूस करे। —इरा

स्व० छगनलाल गांधी

[गांधीजी के भतीजे तथा दक्षिण अफ्रीका से लेकर आजीवन गांधी-कार्य में रत श्री छगनलाल गांधी का ३० अगस्त को देहावसान हुआ। उनको श्रद्धांजलि अर्पित करने हेतु दि० २-९-७० को राजघाट पर एक शोक-सभा का आयोजन किया गया था। इस सभा में श्री काकासाहब कालेलकर तथा श्री प्यारेलालजी द्वारा व्यक्त भावों के साथ शामिल होकर हम अपनी भी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। —सं०]

स्व० श्री छगनलाल गांधी के निधन का समाचार पाकर दिल्ली की विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधि और गांधी-परिवार के अन्य सज्जन गांधी-समाधि पर २ सितम्बर को ९ बजे एकत्रित हुए थे। उस अवसर पर काकासाहब कालेलकर ने कहा :

"गांधीजी जब दक्षिण अफ्रीका में थे, उस समय कई लोग अपने अच्छे-अच्छे धन्धे, व्यापार और नौकरियाँ छोड़कर गांधीजी के साथ आये। ये लोग विदेश के भी थे और अपने देश के भी। इनमें से विशेष रूप से गांधीजी के भाई श्री खुशालदास गांधी का नाम याद रखा जायगा। उनके सभी लड़के गांधीजी के साथ हो गये। ये सब लोग व्यवहार-कुशल थे—नारायणदास, मगनलाल, छगनलाल, जमनादास आदि नाम बड़े महत्व के हैं। ये सभी गांधीजी के पास आये और अपने आपको उनको समर्पित किया।

"गांधीजी जब भारत में आये थे और अभी उन्होंने आश्रम की स्थापना नहीं की थी, उसके पहले शांतिनिकेतन में आये तभी मेरा परिचय मगनलाल और छगनलाल से हुआ। जब मैं बड़ौदा रहता था, तो छगनलालभाई का परिचय मुझे गहराई से मिला। गांधी-विचार के सम्बन्ध में इनसे बार-बार मिलना-जुलना होता था। साबरमती का आश्रम तो उसके बाद बना और वे उसमें शामिल हो गये।

"छगनलालभाई अपनी मर्यादा जानते और उसके अन्दर रहकर उत्तमोत्तम सेवा करते थे। उनका चिन्तन सतत गांधी-विचार का ही चलता रहता था, और उस दृष्टि से उन्होंने बड़ी गहराई प्राप्त की।

"किसी प्रकार के काम करने में उन्हें कोई हिचक नहीं थी। आश्रम में आने के बाद वे कभी सेक्रेटरी के रूप में रहे, तो कभी हिसाब का काम देखते रहे। प्रेस, साहित्य, हरिजन-सेवा आदि सभी प्रकार के काम उन्होंने किये। उनके सभी लड़के इसी काम में रहे। इस प्रकार गांधी-कार्य की निष्ठा की दृष्टि से छगनलालभाई का स्थान बहुत ऊँचा है।

"स्वराज मिलने के बाद देश अपने रास्ते जा रहा है। गांधीजी का कार्य करनेवाले आज बैक नम्बर (पिछड़े हुए) हो गये हैं तो ऐसे में एक-एक करके पुराने साथी बिछुड़ रहे हैं! इसमें शोक भी क्या? श्री छगनलालभाई के प्रति गहरी श्रद्धा मेरे अन्तर में है, वही व्यक्त करता हूँ।"

इसके बाद श्री प्यारेलालजी ने कहा "श्री छगनलालभाई की मृत्यु अचानक हुई, यद्यपि वे ८९ साल पूरा कर चुके थे। मेरे साथ उनका पत्र-व्यवहार बराबर चलता रहता था और मैं उनके पास जाने व कुछ समय रहने का विचार कर रहा था।

"सन् १९०१ से गांधी-जीवन के वे साथी थे, इसलिए उनके जीवन के सम्बन्ध में बहुत-सी जानकारियाँ ऐसी थीं, जो मैं उनसे प्राप्त करता रहता था। उन्होंने अन्त तक अपने जीवन का रस नहीं छोड़ा था, और वे गांधी-जीवन और सेवा में बराबर शोध करते रहते थे। दक्षिण अफ्रीका के जीवन के सम्बन्ध में 'इंडियन ओपिनियन' तथा अन्य ग्रन्थ वे मंगाते और अभी भी पढ़ते रहते थे। कुछ समय पूर्व ६ माह के लिए वे मेरे परिवार में रहे थे। मैंने देखा, उनकी अवस्था इतनी होने के कारण पुरुषार्थ-वृत्ति में कोई कमी नहीं आयी थी। आलस उनमें था नहीं। वे रोज घूमने जाते थे। आश्रम में भी वे अपना काम किसी दूसरे को नहीं करने देते थे। वे उन लोगों में से थे, जिन पर गांधीजी का बहुत भरोसा था।

"द० अफ्रीका में जब सत्याग्रह मंद पड़ गया था और गोखलेजी ने बापूजी से पूछा था 'अब कितने लोग सत्याग्रह के लिए तैयार हैं?' तो १६ लोगों की बापू ने गिनती की, उनमें छगनलालभाई भी थे। बापू के साथ रहना आसान काम नहीं था। वे व्यक्ति के अटूट धीरज की भी परीक्षा लेते थे और अन्याय से लड़ने की हिम्मत की भी। वे चाहते थे कि व्यक्ति को सुई में धागा पिरोना भी आये तथा वह एक सिद्ध महारथी भी बने। ऐसी अवस्था छगनलालभाई की थी। कम्पोजिंग का काम भी किया, सत्याग्रह में बीमारों की देखभाल भी की, कानून का अध्ययन भी बापू ने उनसे कराया, हिसाब का काम उनका अपना था। इस प्रकार वे गांधीजी के एक मंजे हुए कार्यकर्ता थे।

"बापू के चले जाने के बाद छगनलालभाई बापू की स्मृति के आधार पर जीवन बिता रहे थे। वे सतत गांधी-जीवन, चिन्तन में रत रहते थे। दक्षिण अफ्रीका से आये साथियों में से प्रागजीभाई और रावजीभाई के जाने के बाद छगनलालभाई आखिरी स्तम्भ थे। आज उनकी दी हुई परम्परा को हम आगे बढ़ायें यही प्रार्थना है। —सत्येन्द्रकुमार गुप्त

सर्वोदय-मित्र बनाने का अभियान

गुजरात के श्री बाबूभाई ने २,००० सर्वोदय-मित्र बनाने के सङ्कल्प में से ७०० मित्र बना लिये हैं। सर्वोदय-मित्र सर्वोदय-कार्यक्रम के प्रति सहानुभूति बताने के साथ साथ रु० ३.६५ या प्रतिदिन एक पैसा के हिसाब से वर्ष भर चन्दा देते हैं।

भूल-सुधार

पिछले ७ सितम्बर के अंक में प्रथम पृष्ठ पर काका साहब के नाम के बाद कोष्ठक में आवश्यक होना चाहिए था, वह भूल से छोड़ दिया गया है। पाठक क्षमा करें। —सं०

सर्वोदय-पर्व में साहित्य-प्रचार तूफान

विनोबा-जयन्ती (११ सितम्बर) से गांधी-जयन्ती (२ अक्तूबर) तक की अवधि प्रतिवर्ष सर्वोदय-पर्व के रूप में मनायी जाती है। इसके अन्तर्गत साहित्य-प्रचार का कार्यक्रम चलाया जाता है। इस वर्ष हमको अधिक गहरी व तीव्र चेष्टा इस काम के लिए करनी चाहिए। पिछले वर्ष २ अक्तूबर, १९६९ से साहित्य-प्रचार के रूप में हम एक अभिनव, अनूठा व क्रान्तिकारी कदम उठा चुके हैं, वह है : एक ही समय पर, एक ही साथ, कुछ चुनी हुई किताबों का 'लाखों' की संख्या में प्रकाशन और 'सेट' के रूप में बड़े पैमाने पर उसका व्यापक प्रचार।

सन् १९७० के सर्वोदय-पर्व से हमें इन गांधी-जन्म-शताब्दी सर्वोदय-साहित्य सेटों के प्रसार-प्रचार में गहराई, व्यापकता और तीव्रता लानी है। गहराई से मतलब है—थोक बिक्री के स्थान पर 'गुणात्मक' प्रचार, अर्थात् ऐसे अभियान का आयोजन कि प्रत्येक सेट सीधे पाठकों के हाथों में ही पहुँचाये जायँ। व्यापकता का अर्थ है—देशभर में सर्वत्र ऐसा अभियान वर्षभर सातत्यपूर्वक चलता रहे। तीव्रता का अर्थ है—गहराई व व्यापकता के साथ-साथ, सन् १९७० के सर्वोदय-पर्व से गांधी-जन्म-शताब्दी सर्वोदय-साहित्य के सेटों के प्रसार-प्रचार के माध्यम द्वारा अभूतपूर्व साहित्य-प्रचार तूफान !

इसके लिए एक व्यवहार्य मार्ग यह है कि थोक सेट खरीदनेवाले मित्रों से प्रार्थना की जाय कि बचे सेट का प्रचार स्कूल-कालेजों के विद्यार्थियों के बीच करने के लिए वे प्रत्येक सेट पर प्राय ५० प्रतिशत या कम-बेसी अनुदान दें और आवश्यकतानुसार अधिक सेट के प्रचार के लिए भी वैसा अनुदान देने का सोचें।

विनोबा के शब्दों में

"साहित्य के लिए 'मार्केट' तैयार करना होगा। यानी साहित्य को बाजार-भाव से न गिनते हुए, उसके लिए 'भावना का मार्केट' तैयार करना है।"

उत्तम साहित्य-अध्ययन से लाभ

- कार्यदक्षता व कार्यकुशलता बढ़ती है।
- आत्मशुद्धि, चित्तशुद्धि एवम् आत्मोद्धार के लिए भगवद्-कार्य की प्रेरणा मिलती है।
- भक्तिमयी और ज्ञानमयी श्रद्धा निर्माण होती है। जीवन में सत्य-भक्ति का प्रादुर्भाव होता है।
- दैनंदिन जीवन में केवल गुणदर्शन करते रहने की अमूल्य सीख मिलती है और अंत में समाधान की महान् सम्पत्ति उपलब्ध होती है।
- भावना व निष्ठा पक्की बनती है, जिसके परिणामस्वरूप निष्पक्षता, निर्वैरता, नम्रता, निर्भयता, सेवा-सातत्य आदि की दीक्षा मिलती है।
- वृत्ति, बुद्धि व कृति—तीनों समन्वयात्मक बनते हैं। समन्वय के महत्त्वपूर्ण गुण की आवश्यकता व अनिवार्यता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। वस्तुतः, वर्तमान व आनेवाले युग में समन्वय का गुण अनिवार्य-सा हो है।
- इसके अतिरिक्त, ऐसे साहित्य का गहराई से, विश्लेषणात्मक मन-बुद्धि से और नीर-क्षीर की सारग्राही दृष्टि से तुलनात्मक तथा तटस्थ-भाव से सातत्यपूर्वक अध्ययन करने से जीवन में शब्द-शक्ति को सर्वोच्च स्थान प्रदान करने का शुद्ध ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।
- सामूहिक संकल्प, सामूहिक पुरुषार्थ और सामूहिक साधना का मार्ग स्पष्ट रूप से दीख पड़ता है। उसकी अनिवार्यता भी समझ में आती है।

आशा है, इस वर्ष हम सबकी शक्ति इस पुनीत कार्य में लगेगी।

'तूफान' के लिए सामूहिक संकल्प तथा सामूहिक पुरुषार्थ अनिवार्य है। 'तूफान' में प्राण लाना एवम् अहिंसक क्रान्ति को मूर्तिमन्त करने की क्षमता रखनेवाले सर्वोदय-लोकनीति-ग्रामस्वराज्य-शांति-सेना के कार्यक्रमों का प्रभाव समाज में पैदा करना चाहते हैं, तो सामूहिक साधना के लिए हमें कटिबद्ध होना ही पड़ेगा।

—विट्ठलदास मोदाणी

ग्रामस्वराज्य-कोष

मैसूर के मंत्री की अपील

मैसूर के विकास, पंचायती राज व सहकारिता के मंत्री श्री पी. एम. नाडगौडा ने अपील प्रसारित कर तालुका विकास-मंडलों व सहकारी संस्थाओं से कोष में उदारतापूर्वक दान देने का अनुरोध किया है। तालुका विकास मंडल ३०० रु० तक दान दे सकेंगे।

बैंकों का सहयोग

पंजाब नेशनल बैंक व सेन्ट्रल बैंक ऑव इंडिया ने अपनी शाखाओं को परिपत्र भेजा है कि वे कोष के लिए चन्दा स्वीकार कर निःशुल्क दिल्ली भेज दें, तथा कोष के सम्बन्ध के पोस्टर्स अपने कार्यालयों में प्रदर्शित करें।

स्मरणीय है कि ग्रामस्वराज्य-कोष ने निम्नलिखित बैंकों में खाता खोल रखा है।—सेन्ट्रल बैंक, यूनाइटेड कमर्शियल बैंक, पंजाब नेशनल बैंक, बैंक ऑव इंडिया, बैंक ऑव बड़ोदा।

कोष-संग्रह के विशेष प्रयास

आन्ध्र प्रदेश ने विश्वविद्यालय व शिक्षा-संस्थाओं में संग्रह के लिए ७५ पैसे के सत विनोबा की ७५ वीं जन्म-जयन्ती के अनुरूप ही, विशेष कूपन छपवाये हैं। उस्मानिया विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० आर० सत्यनारायण ने सभी महाविद्यालयों के आचार्यों को परिपत्र भेजकर अध्यापकों व विद्यार्थियों से संग्रह का निवेदन किया है।

प्रदेशों में प्रगति

मैसूर : मैसूर राज्य के ग्रामस्वराज्य-कोष के बारे में जानकारी देते हुए श्री नारायण भाई पवार लिखते हैं कि अभी तक चार जिलों में कुल २२,२४० का कोष एकत्रित है।

सुश्री निर्मला देशपांडे को नक्सली धमकी

इन दिनों बिहार में ग्रामदान पुष्टि कार्य में सक्रिय सुश्री निर्मला देशपांडे के लिए नक्सलपंथियों द्वारा धमकीभरा एक पत्र प्राप्त हुआ है, जो नीचे ज्यों-का-त्यों दिया जा रहा है। पत्र निर्मला बहन के सघन कार्य-क्षेत्र दरभंगा जिले के लदनिया प्रखण्ड के प्रमुख कार्यकर्ता श्री पलटन आजाद के नाम है।

मूल पत्र इस प्रकार है :

गरीबों की ओर माओ के देश की
नगरी से हवा से
२१-७-७०

मि० आजाद को माओ का लाल सलाम।

सर्वहारा के दुश्मन, बुर्जुआ का लीडर होशियार हो जायें। आपको एक पत्र लिखा था, भीख मांगने से जमीन नहीं मिलेगा। बन्दूक उठाओ। आपका बहुत नाम सुना था। भविष्य खराब नहीं करें। छ महीना का समय देता हूँ। आपको मौत की सजा को रद्द करता हूँ। निर्मला देशपांडे अध्यक्ष माओ के खिलाफ बोलती हैं, उसे मौत है। जो जमीन गुजारा रखा है वह बिना मारे हुए नहीं देगा। हमारे तीन कामरेड सीमा-क्षेत्र में काम कर रहे हैं। निर्मलाजी को आप कह दें कि वह इधर नहीं आवें। माओ का विचार फैलावें। आप कायर हैं। बन्दूक की नली से क्रांति होगी। आप हमारे रास्ता का बाधक हैं। गरीब के क्रांति को दबाते हैं। पुलिस और सरकार हमको कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता है।

बोलो, अध्यक्ष माओ जिन्दाबाद।
पूर्ण क्रांति जिन्दाबाद। आपका ही
कामरेड नक्सलवादी

श्री पलटन आजाद लिखते हैं "मुझे जरा भी घबराहट नहीं है। अहिंसा की शक्ति को प्रकट करने का समय आया है। एक अहिंसक सैनिक को बहुत मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा। समय और परिस्थिति ने हिंसा और अहिंसा को आमने-सामने खड़ा कर दिया है। अहिंसा में विश्वास करनेवालों को कठिन परीक्षा की घड़ी से गुजरना पड़ेगा, यह बाबा (विनोबाजी) ने कहा है। हमें आत्मिक बल का भान हुआ है।" मैं हिंसा का मुकाबला मुस्तैदी के साथ करूँगा।..."

सुश्री निर्मला बहन ५ सितम्बर को अपने कार्य-क्षेत्र में पहुँच चुकी हैं, और मुस्तैदी से अपना कार्य कर रही हैं। ●

—अगस्त से २ अक्तूबर तक २० कार्यकर्ता कोष के लिए अभियान चला रहे हैं।

अमृतसर (पंजाब) : अमृतसर में श्रीमती सत्यवती मुंजाल के विशेष प्रयत्नों के कारण कई बहनें कोष संग्रह के कार्य में लगी हुई हैं। श्रीमती मुंजाल ने ५०० रुपये अपनी ओर से देकर कोष का शुभारम्भ किया तथा १६०० रुपये शहर से एकत्रित किये।

गुजरात : सौराष्ट्र में सौराष्ट्र रचनात्मक समिति द्वारा कोष एकत्रित करने का सोचा गया और उस सम्बन्ध में दिनांक १८-८-७० को श्री मनुभाई शाह की अध्यक्षता में राजकोट के प्रमुख प्रमुख नागरिकों की एक सभा हुई।

सौराष्ट्र रचनात्मक समिति ने सौराष्ट्र के सभी छोटे-बड़े कुल ५० कार्यकर्ताओं द्वारा ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह का काम शुरू कर दिया है। राजकोट जिले के धोराजी-उपलेटा क्षेत्र में शुरू में ही १५,००० रु० इकट्ठे हो गये हैं।

सौराष्ट्र युनिवर्सिटी के वाइसचांसलर ने भी कालेज के विद्यार्थियों एवं अध्यापकों को एक परिपत्र द्वारा प्रति व्यक्ति कम-से-कम १ रुपया देने का निवेदन किया है।

सार्वजनिक संस्थाओं में भी छात्र-छात्राओं ने विनोबाजी की ७५वीं जन्म-जयन्ती के हिसाब से प्रति व्यक्ति ७५ पैसे देने का तय किया है।

उत्तरप्रदेश : गोरखपुर कमिश्नरी में कोष-संग्रह का श्रीगणेश करने के लिए गोरखपुर, बस्ती, देवरिया और आजमगढ़ में जिला-स्तरीय बैठकें हुई हैं, जिनमें शिक्षण-संस्थाओं के आचार्य, वकील तथा प्रबुद्ध सेवाभावी नागरिकों ने भाग लेकर सहयोग देना आरम्भ कर दिया है। ग्राम-स्वराज्य के कार्यकर्ताओं ने सभी तबकों से सम्पर्क शुरू किया है।

आगरा और मेरठ क्षेत्र में ग्राम-स्वराज्य-कोष संग्रह का अभियान तेजी से चलाया जा रहा है। श्री गांधी आश्रम के सभी व्यवस्थापक एवं ग्रामराज्य-अभियान के स्थायी कार्यकर्ताओं ने प्रत्येक जिले की योजना बना ली है। घर-घर से सम्पर्क करके ग्रामस्वराज्य की बात कह रहे हैं। बिजनौर, सहारनपुर और देहरादून तथा मेरठ में कोष-संग्रह व्यापक रूप से शुरू हो गया है। बागपत में इंजीनियर्स की मीटिंग हुई है और वहाँ भी कोष में योग-दान देने की इच्छा प्रकट की गयी है।

लखनऊ में अवकाशप्राप्त जज श्री कामताप्रसाद गुप्त के प्रयास से महामहिम राज्यपाल, मुख्यमंत्री, अध्यक्ष विधानसभा तथा कई मंत्रियों एवं सेवाभावी नागरिकों, कार्यकर्ताओं और राजनीतिक दलों के नेताओं के हस्ताक्षर से एक अपील प्रकाशित हुई है, जिसको लेकर गाँधी आश्रम तथा अन्य प्रादेशिक कार्यालयों से सम्पर्क हो रहा है। श्री हरीश रामदास, श्री कामताप्रसाद गुप्त, श्री बाबूराम वैद्य के साथ कार्यकर्ताओं की एक टोली लखनऊ शहर में ग्रामस्वराज्य-कोष संग्रह का अभियान चला रहा है।

अलीगढ़ (उ० प्र०) : श्री नरनारायण भाई, श्री अनन्त शर्मा तथा श्री ध्यानचंद भाई और शान्ति भाई के अनुरोध में कोष करने से १०,००० रु० का आश्वासन प्राप्त हो चुका है, जिसके और बढ़ने की संभावना है। ११०० रु० एकत्रित हो चुके हैं।

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सजिल्द कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ५१

सोमवार २१ सितम्बर, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ
राजघाट वाराणसी-१
फोन : ६४१९१

दहन-दान और चित्त-शुद्धि

हिन्दुओं की आकांक्षा होती है कि जीवन के अन्त के बाद उनका दहन होना चाहिए। अगर कहा जाय कि मृत्यु के बाद दहन का इन्तजाम नहीं होगा, तो किसीको वह सहन नहीं होगा। वह एक बड़ी पवित्र क्रिया है। देह का सारा पाप उसके साथ क्षीण होता है, और केवल पुण्यमात्र शेष रह जाता है। दहन के पीछे यह कल्पना है। और, लोग समझते हैं कि जिसकी दहन-क्रिया हो गयी, उसके गुणों का ही स्मरण करना चाहिए। दोष देह से जुड़े हुए रहते हैं। शरीर-दहन हो गया, तो उसके साथ जुड़े हुए दोषों का भी दहन हो गया। उसमें जो दहन-दान की आकांक्षा है, वह सारे हिन्दू-समाज की आकांक्षा है।

जिस प्रकार दहन के बिना शारीरिक दोष जायेंगे नहीं, उसी प्रकार चित्त के दोष तब तक नहीं जायेंगे, जब तक उनका दहन नहीं होगा। उसके लिए तप करना पड़ेगा। तकलीफ सहन करनी पड़ेगी। मार खानी पड़ेगी। यह सब सहन करना पड़ेगा। यह सारा रोते मुँह से सहन नहीं करना चाहिए, बल्कि उसका प्रेमपूर्वक स्वागत करना चाहिए। हमें समझना चाहिए कि वे तकलीफें सत्कार्य के लिए उठानी पड़ रही हैं। कोई निंदा कर रहा है, कोई ताड़न कर रहा है, तरह-तरह की तकलीफें लोग दे रहे हैं। कभी बहिष्कार भी डाला जाता है, कभी कत्ल भी हो सकती है। लेकिन हम दुःख नहीं करेंगे। सहन तो करेंगे ही, लेकिन इस ख्याल से नहीं कि सहन करना पड़ रहा है, बल्कि इस ख्याल से कि हमको यह दान मिला है। सामान्य नहीं, बड़ा भारी दान मिला है, यों समझकर जो तकलीफ पहुँचानेवाला है, उसके लिए आदर करेंगे, जो दाता के लिए महीता को होता है। दाता दान देता है, तो लेनेवाला उसका उपकार मानता है। कत्ल की गयी तो मरण-दान मिला, ऐसा मानना चाहिए। उससे हमारे सब दोषों का क्षय होगा, इसलिए उसका हम पर उपकार ही होगा।

भगवान कृष्ण एक पेड़ के नीचे बैठे थे। एक घुटने पर दूसरा पाँव रखा था। उनका तलवा आरक्त था। दूर से एक शिकारी ने देखा और उसे हिरण का मुख समझकर बाण मारा। जब भगवान कृष्ण को देखा, तब वह बहुत दुखी हुआ। भगवान बोले—"मा भैः अरे! तुमने हमारी वासनापूर्ति की है। हमें शरीर छोड़ना था, तुमने उसको मदद पहुँचायी। तुमको पुण्य गति प्राप्त होगी।"

तुम्हारी जय हो !

जैसे बिजली घूमती है घन में
ऐसे आजकल घूमता है मन में
तुम्हारा नाम !
अंधेरा रह-रहकर भर जाता है
लेकिन क्या इससे
उसका कुछ घट जाता है ?
तुम बीस बरस तक सूरज रहे
और बादल जो उठे हैं
वे तुमने उठाये हैं
और बरसेंगे जब वे
अंधेरे के बावजूद
तो हरी हो जायेगी देश की धरती।
तुम्हारी जय हो !
मेरे मन का अंधेरा झूठा है
सब देखेंगे
आज नहीं, कल तुम्हारा तेज
हौले हलके अनजाने
बंजर विस्तारों पर
आषाढ़-सावन बनकर टूटा है।

"तुम्हारी जय हो" कहना
कोई कोरी कामना नहीं है, क्योंकि
कामना नहीं है, जिन्हें गिरते हुए स्तम्भ
देश के, जगत् के, मानवता के
देखते रहना है केवल गुमसुम
उनमें नहीं हो तुम !
तिस पर बल नहीं है तुम्हारे पास
कोई राम के सिवा
इसलिए तुम कुछ करते नहीं हो
राम के काम के सिवा।
और विनम्र हो
सफलता के क्षण में
आम्र के वृक्षों से भी ज्यादा।
बाधा जो दीखती लोगों को
वह इसीलिए छोटी है
सारी दुनिया तुम्हारे कदमों के आगे
छोटी है।
तुम्हारी जय हो !
निर्भय हो किसान धरती पर
लहराये सर्वोदय
बंजर में, पहाड़ पर, धरती पर !

—भवानीप्रसाद मिश्र

बाबा का स्वास्थ्य

२३ अगस्त की दोपहर में बाबा को हल्का बुखार था। फिर भी अहाते की सफाई का काम रोज की तरह ही करते रहे। उसी दिन रात को भरत-राम-मंदिर में कृष्ण-जन्माष्टमी का कार्यक्रम था। उसमें शामिल हुए। रात को नौ से बारह बजे तक वहाँ बैठे। २४ तारीख की सुबह नियमानुसार वैष्णववाड़ी की सफाई की। १०१ डीग्री बुखार था। शाम को भी अहाते में थोड़ा घूमे। तीसरे दिन से यानी तारीख २५ से घूमना बन्द हो गया, बिस्तर में ही लेटे रहे। बुखार ९९.४ से १०२.९ डिग्री तक रहता था।

तारीख २९ को वर्धा के तथा सेवाग्राम मेडिकल कालेज के डाक्टरों ने पैराटायफाईड का निदान किया। लोगों को चिंता न हो, इस दृष्टि से ३० तारीख को सुबह बाबा ने दवा ली। ३१ तारीख को बुखार नार्मल हुआ। ५ तारीख से दवा लेना बंद हुआ। कमजोरी बहुत थी। बाकी सेहत अच्छी थी। तारीख ४ की सुबह अहाते की प्रदक्षिणा की, और अपनी कुटिया के सामने थोड़ी सफाई की।

७ सितम्बर को बाबा को फिर से बुखार आया था। १०२ डिग्री तक चढ़ा था। ८ तारीख को डाक्टर की सलाह से दुबारा दवा शुरू की। उसी दिन रात ग्यारह बजे बुखार नार्मल हुआ। तब से बुखार नार्मल है। दवा चल रही है। डाक्टर ने पूर्ण आराम लेने के लिए कहा है। हलचल भी कम-से-कम हो, ऐसा कहा है। दूसरी कोई भी शिकायत नहीं है।

९ सितम्बर '७० —ब० वि० म० से

'हम नहीं झुकेंगे'

अगर किसी और ने यह बात कही होती तो बात दूसरी होती, लेकिन जब तटस्थ देशों के सम्मेलन के अवसर पर स्वयं भारत की प्रधान मंत्री ने ये शब्द कहे तो इनका साधारण से अधिक अर्थ हो जाता है। प्रधान मंत्री के इन शब्दों में भारत के स्वाभिमान की घोषणा है।

तटस्थ देशों के लुसाका-सम्मेलन में भारत के प्रधान मंत्री की तरह दूसरे देशों के प्रतिनिधि भी राष्ट्रीय स्वाभिमान की यही भावना लेकर गये होंगे। लगभग सबके भाषण में स्वाभिमान की यह ध्वनि थी। आखिर, स्वाभिमान की घोषणा को बार-बार दोहराने की जरूरत क्यों पड़ती है? क्या इसीलिए कि आज दुनिया में जो देश कमजोर हैं वे दबाये जा रहे हैं, और भारत की तरह दूसरे तटस्थ देश यह महसूस कर रहे हैं कि कमजोर होने के कारण उन्हें दमन का शिकार होना पड़ रहा है? यह सही है कि जिसे 'तीसरी दुनिया' कहते है उसे पहली और दूसरी दुनिया के देश दबा रहे हैं। इसीलिए स्वाभिमान के ये शब्द दमन की प्रतिक्रिया में निकल रहे हैं। लेकिन दमन होता रहे, और प्रतिक्रिया में हम स्वाभिमान की बातें कहते रहें, तो क्या इतने से राष्ट्रीयता की माँग पूरी हो जायगी? क्या दमन की स्थिति का अंत करने की बात नहीं सोची जानी चाहिए?

अफ्रीका, मध्य-पूर्व, दक्षिणी और दक्षिण-पूर्वी एशिया के देश कुछ वर्ष पहले तक पश्चिमी साम्राज्यवाद के शिकार रहे हैं। आज वे 'स्वतंत्र' हैं। स्वतंत्र होते हुए भी उनका दमन क्यों हो रहा है? कौन दमन कर रहा है? कैसे दमन कर रहा है? दमन का स्वरूप...?

इन देशों की राजनैतिक दासता तो समाप्त हो चुकी है, लेकिन आर्थिक निर्भरता इतनी अधिक है कि राजनैतिक स्वतंत्रता अधूरी होकर रह जाती है। राजनैतिक स्वतंत्रता से आर्थिक शोषण समाप्त नहीं होता, यह तीसरी दुनिया के देशों ने अच्छी तरह देख लिया, और साम्राज्यवाद कितना बहुरूपिया है, यह आज की 'उन्नत' दुनिया ने अच्छी तरह दिखा दिया। क्या पश्चिम और क्या पूरब, दोनों के समर्थ देशों के स्वार्थ उनकी राष्ट्रीय सीमाओं के बाहर दूर तक फैले हुए हैं। आज की दुनिया में हर बड़े देश का स्वार्थ हर जगह है। लेकिन जो तीसरी दुनिया कही जाती है वह आज भी बिखरी हुई है। एक ओर बड़े देश प्रतिद्वन्द्वी स्वार्थों के बीच 'सहकारी स्वार्थ' विकसित करते जा रहे हैं, दूसरी ओर छोटे देश अपने उचित हितों की रक्षा में आपस में मिलकर जितना सहकार कर सकते हैं उतना भी वे नहीं करते।

असमर्थ देशों की समर्थ देशों के मुकाबिले इतनी हीन स्थिति क्यों है? इसलिए कि वे उनके मुहताज हैं। वे उनसे शस्त्र चाहते हैं, विकास के लिए पूँजी चाहते हैं, उद्योगों के लिए कच्चा माल और हुनर चाहते हैं, उनके हाथ अपना माल बेचना चाहते हैं, यहाँ तक कि खाने के लिए अन्न भी चाहते हैं। इतना ही नहीं, ये देश असमर्थ होते हुए भी समर्थ देशों के जैसे दिमाग से काम करना चाहते हैं, और उन्हींके तौर-तरीकों से जीना भी चाहते हैं। जहाँ इतनी निर्भरता हो—निर्भरता ही नहीं मानसिक दासता हो—वहाँ दमन और शोषण न हो, यही आश्चर्य की बात होगी।

अस्त्र किससे लड़ने को चाहिए? रूस और अमेरिका से तो लड़ने का सवाल ही नहीं उठता। अगर सवाल है तो आतरिक अशान्ति का, और पड़ोसियों से लड़ाई का। अफ्रीका और एशिया की यही समस्या है। बड़े देशों की नीति, और उनके अस्त्र-शस्त्र-व्यवसाय के स्वार्थ इसीमें होते है कि अशान्ति बनी रहे, लड़ाइयाँ होती रहें, और उनका उल्लू सीधा होता रहे। भारत और पाकिस्तान दोनों को रूस भी हथियार देता है, और अमेरिका भी। शस्त्र देकर लड़ाना और शान्ति-सद्भावना के लिए बैठकें करना, दोनों काम साथ-साथ होते हैं। क्या छोटे देश इन बातों को समझते नहीं? समझते क्यों नहीं, लेकिन उनके शासकों में इतनी दृष्टि और साहस नहीं है कि अपने संकुचित स्वार्थों से ऊपर उठकर कोई नया कदम बढ़ा सकें।

स्वयं उनका विश्वास शस्त्र-शक्ति में है, यह जानते हुए भी कि कमजोर देश की शस्त्र-शक्ति का अर्थ क्या है! यही हाल आर्थिक विकास का है। एशिया और अफ्रीका के देश श्रम-शक्ति में धनी हैं, पूँजी में गरीब हैं, फिर भी उनके विशेषज्ञ और नेता उसी उद्योगीकरण के पीछे दौड़ रहे हैं जिसमें श्रम-शक्ति की जरूरत कम हो, पूँजी की अधिक। पूँजी के आधार पर योजनाएँ बनती हैं, नयी-से-नयी मशीनों से सुसज्जित बड़े-बड़े कारखाने खुलते हैं, और उनके उत्पादन के बड़े-बड़े आकड़े पेश होते हैं। उद्योग ही नहीं, खेती भी उसी दिशा में ले जाया जा रही है। व्यापार का यह हाल है कि देश के भीतर करोड़ों को कपड़ा नहीं मयस्सर होता लेकिन कपड़े का निर्यात होता है क्यों? विदेशी मुद्रा के लिए। अगर घर की श्रम शक्ति का उपयोग नहीं होता तो लोगों को काम नहीं मिलता, और काम नहीं मिलता तो दाम नहीं मिलता, और दाम नहीं होता तो सामान कैसे खरीदें? देश के भीतर के बाजार की माग पहले पूरी न करके बाहर के बाजार की तलाश करने की अर्थनीति पूँजी में गरीब देशों को धनी देशों के सामने मुहताज बनाती है। इसमें कसूर किसका है? बात यह है कि हमने या हमारी तरह के दूसरे किसी देश ने अपनी परिस्थिति सामने रखकर औद्योगिक विकास का नया रास्ता ढूँढने की कोशिश नहीं की। कोशिश की नकल करने की उन देशों की, जिनकी समृद्धि शोषण से हुई है, जिनकी पद्धति शोषण से बनी है, और जो शोषण को कायम रखने के लिए दमन को कायम रखते है।

हम दुनियाँ के सामने पुकार तो लगाते हैं कि धनी देश हमारा शोषण कर रहे हैं, लेकिन अपने देश में हम खुद अपनी जनता के→

संघ-अधिवेशन में विचारार्थ

आन्दोलन की उपलब्धियाँ : भविष्य की चेतावनी

यद्यपि मैं मानता हूँ कि देश में हिंसक विद्रोह की जो स्थिति पैदा हो गयी है, उसके लिए जिम्मेदार वे तमाम संगठन हैं, जिन्होंने अहिंसात्मक एवं शांतिपूर्वक परिवर्तन की बात तो की, किन्तु इस दिशा में अब तक कोई असरदार कदम उठा नहीं सके। इसकी जिम्मेदारी अब तक की सरकार एवं समाजवाद के साथ-साथ गणतंत्र का नारा देनेवाले तमाम राजनैतिक दलों पर भी है, तो भी सर्वोदय-आन्दोलन की जिम्मेदारी इससे कम नहीं होती। इस समय यह आन्दोलन उस बिन्दु पर पहुँचा है, जहाँ आत्म-विश्लेषण अनिवार्य हो गया है।

भूदान के समय की भयंकर भूल

भूदान का आन्दोलन आया तो लगा कि भूमि-समस्या के हल का कोई अहिंसक प्रक्रिया हमारे हाथ लगी। न जाने हमारे जैसे कितने नौजवान यथास्थितिवाद के सारे मुनहले सपनों से मुख मोड़कर इस आन्दोलन में कूद पड़े। भूदान-आन्दोलन की निष्पत्ति भी हुई, किन्तु उस निष्पत्ति के गर्व में हम इतने अन्धे हो गये कि आगे का कोई कदम सोच-समझकर रखा ही नहीं। भूदान-आन्दोलन के समय भी अधिकांश कागजी निष्पत्ति को भी जानबूझकर अपने सुन्दर शब्दों में असली निष्पत्ति मानने की जबर्दस्त भूल की गयी; या कम-से-कम बोगस दानपत्रों की निन्दा नहीं की गयी, उसको प्रोत्साहन ही मिला। बिहार में २१ लाख एकड़ जमीन का दान प्राप्त हुआ, उसमें से सिर्फ ४ लाख एकड़ हम बाँट पाये हैं। भूदान-प्राप्ति के समय ही जानकारी मिलती थी कि इतने सारे दानपत्रों में बोगस भी आ रहे हैं। लेकिन तब कहा जाता था कि गंगा में बाढ़ के समय कुछ गन्दगी तो बहेगी ही; किन्तु जब पानी ही गन्दगी में छिप जाय तो फिर गंगा की पवित्रता कायम रहेगी क्या? १८ साल बीत गये। हमने भूदान की व्यवस्था भी ऐसी की कि अभी भी भू-वितरण का काम बाकी है। न तो दाता और न आदाता को ही हम अपने आन्दोलन का वाहक बना सके। गांधीजी के समक्ष भी ऐसे अवसर आये थे, जब उन्होंने देखा कि आन्दोलन में कहीं साधनमूलक दोष आ रहा है, तो सारा आन्दोलन ही उन्होंने स्थगित कर दिया था।

सारे भूदान-बोर्ड न तो सक्षम सरकारी तंत्र बन सके, न आन्दोलन के वाहक संगठन ही। काफी अर्से तक सर्वोदय-आन्दोलन के सामने करोड़ों जनता के जीवन से संबंधित कोई कार्यक्रम भी नहीं रहा। एक ऐसी रिक्तता आयी, जिसमें हमने भूदान-आन्दोलन के समय के बहुत-से महत्त्वपूर्ण साथियों को निःसंकोच छोड़ दिया। किसानों को खादी या अन्य रचनात्मक संस्थाओं के घेरे में गिरफ्त होने दिया, जहाँ पहुँचकर वे फिर संस्था के निहित हित में अपना हाथ-पाँव मार रहे हैं। अधिकांश तो संस्थाओं में भी न रह सके, इधर-उधर भटक गये।

तूफान के बाद का सन्नाटा

उसके बाद ग्रामदान-आन्दोलन आया एक नया उत्साह लेकर, और बिहार में तो तूफान ही आया। तूफान में फिर हम संगठनात्मक भूल कर बैठे। हमने अपना कोई 'न्यूक्लीअस' नहीं बनाया। हमने तमाम राजनैतिक पक्षों के कार्यकर्त्ताओं, खादी एवं अन्य रचनात्मक संगठनों से सम्बन्धित कार्यकर्त्ताओं तथा अन्त में सरकारी कर्मचारियों के कन्धों पर तूफान का सारा भार डाल दिया। मैं यह नहीं कहता कि इन पर भरोसा करने एवं

→साथ क्या कर रहे हैं? इन नये देशों में जो नौकरशाही और नेताशाही है, वह स्वयं अपनी जनता का दमन और शोषण कर रही है। नतीजा यह है कि देश भले ही स्वतंत्र हो लेकिन देश में रहनेवाली जनता नहीं महसूस करती कि वह स्वतंत्र है। स्वतंत्र देश और परतंत्र जनता का मेल कैसे बैठेगा? गांधी ने भारत को विकास और प्रतिरक्षा का पश्चिम के रास्ते से भिन्न, एक नया रास्ता बताया था। राजनैतिक संगठन, उद्योग और शिक्षण में बिलकुल नयी पद्धति सुझायी थी, और उसका व्यावहारिक स्वरूप अपने प्रयोगों से सिद्ध करके दिखाया था, लेकिन किस नेता ने माना? नेहरू ने नहीं माना, दूसरे नेताओं ने नहीं माना। परिणाम वही हुआ जो आज हम अपनी आँखों के सामने देख रहे हैं। जनता स्वतंत्र नहीं, देश में स्वाभिमान नहीं।

बाहरी दमन और शोषण से मुक्त होने का एक के सिवाय दूसरा क्या उपाय रह गया है? वह है बाहर का मुँह ताकना छोड़कर देश की जनता की शक्ति का जगाना, उसकी श्रमशक्ति को जगाना, उसकी चिन्तन-शक्ति को जगाना। यह काम आसान नहीं है, लेकिन इसके बिना चारा भी नहीं है। राजनैतिक स्वतंत्रता के बाद यह दूसरी क्रान्ति है जिसके बिना पहली क्रान्ति का कोई अर्थ नहीं रह जायगा।

एशिया और अफ्रीका के नेता अपने-अपने देश में परिवर्तन की इस दूसरी क्रान्ति को बढ़ावा नहीं दे रहे हैं। उन्हें यह जानना चाहिए कि राष्ट्रीयता के पुराने नारे अब काफी नहीं रह गये हैं। राष्ट्रीय स्वाभिमान की रक्षा तभी होगी जब राष्ट्र की स्वतंत्रता के साथ राष्ट्र में रहनेवाली जनता भी स्वतंत्र और स्वाभिमानी होगी। अगर जनता स्वतंत्र और स्वाभिमानी न हुई तो 'हम नहीं झुकेंगे' कहने का क्या अर्थ होगा? यह 'हम' कौन है? केवल प्रधान मंत्री या पूरा देश? जिस जनता को देशी शासकों और शासकों के सामने झुकने का अभ्यास होगा, वे विदेशी शक्तियों के सामने भी झुकेंगे। झुकने के सिवाय वे दूसरा सीख क्या रहे हैं? ●

इसको आन्दोलन में शामिल करने में हमने गलती की। इसमें से बहुत सारे हमारे अच्छे कार्यकर्ता बनने की स्थिति में आये, कुछ बने भी, किन्तु सबको लेकर फिर हमने आन्दोलन का कोई स्थायी 'केडर' नहीं खड़ा किया। तूफान गया, और हमारे हाथ क्या लगा? सिर्फ लाखों की संख्या में बेजानदार कागज के टुकड़े। उन टुकड़ों में आज भी जान फूंका जा सकता है; किन्तु प्रश्न है कि फूंके कौन? हमने माना कि हस्ताक्षर हो जायगा तो हवा बनेगी; फिर दूसरे दौर में हमको पहुंचने-भर की देर होगी, लोग उठ खड़े होंगे। यहीं फिर हमने भारत के लोक-चरित्र को समझने में भूल की। जब हम सार्वत्रिक ग्रामदान की बात करते हैं तो आदर्श की कल्पना में आज की वर्तमान स्थिति भी भूल जाते हैं। बिहार में दरभंगा का जिलादान हुआ। कुछ मित्रों ने उसकी शतप्रतिशत शुद्धता पर शंका प्रकट की। सोचा गया कि पुष्टि-कार्य में लग जाया जाय। जो अधूरा काम हुआ होगा, वह पूरा हो जायगा। सोहपुर में हमने निर्णय किया। धीरेन्द्र भाई ने बाबा से चर्चा की।

देश के सर्वोत्तम प्रतिभावाले कार्यकर्ताओं को बुलाया गया, आये भी। धीरेन्द्र भाई स्वयं बैठे। किन्तु तब तक दूसरा मन का उफान उठा "बिहारदान पूरा किया जाय।" दरभंगा जिलादान की पुष्टि में लगे होते तो हमें अपने काम की खामियों और खूबियों का बहुत पहले ही भलीभांति पता चल जाता। और उस अनुभव के आधार पर पूरे आन्दोलन को लाभ मिलता। किन्तु हम तो तूफान में उड़ गये। बाबा अति-तूफान का नारा देकर चले गये। और यहां तूफान के बाद जो शांति आयी कि अति-तूफान तो गोल रहे, दूसरी हवा भी सरसराहट भी बन्द हो गयी। धन्यवार है स्वसासाथियों को, जिनकी दया से हम फिर गुनगुनाये हैं, किन्तु पिछला चरित्र ही हमारे आन्दोलन का बना रहा, तो फिर भविष्य अन्धकारमय ही है। अब हम 'करो या मरो' की लड़ाई लड़ रहे हैं। हमें व्यक्तिगत रूप से भरोसा है अहिंसा की शक्ति पर। यदि हमने सही कदम उठाया, और संगठनात्मक पहलू की भी उपेक्षा नहीं की तो हमारा भविष्य उज्ज्वल है, नहीं तो अब फिर भविष्य हमें मौका नहीं देनेवाला है।

ठीक है कि हमारा कोई दल नहीं, कोई झंडा नहीं, गांव ही हमारा दल है और गांव का झंडा ही हमारा झंडा है। किन्तु अब जगह-जगह ऐसे गांव तो तैयार करने ही होंगे, जो हमारी कल्पना के समाज-परिवर्तन की लड़ाई का मोर्चा बन सके। ग्रामदान-प्राप्ति में हमने मालिकों से बातें की, बहस भी की, पर मजदूरों के बीच ऊंचे तबके के कार्यकर्ता तो गये ही नहीं। साधारण कार्यकर्ता गये, तो उन्होंने कहा कि 'आपको देना ही क्या है। आपको मिलने ही वाला है। हस्ताक्षर कर दें।' हस्ताक्षर हो गया। लेकिन उन्हें कुछ मिला नहीं, विचार भी नहीं। अब वे हम पर भरोसा क्यों करें? हमारे साथ क्यों आयें? राजनैतिक पक्षवाले इतना तो करते हैं कि मालिकों को गाली देकर मजदूरों के अन्दर पनप रही घृणा का पोषण करते हैं, जिससे उनके आक्रोश को खुराक मिलती रहती है। युवकों के पास हम बिलकुल नहीं गये। हस्ताक्षर कराने के चक्कर में हमने उनको बिलकुल छोड़ ही दिया, क्योंकि न तो वे मजदूर थे, न मालिक। महिलाएँ तो हमारे आन्दोलन के दायरे में आयी ही नहीं।

कुछ सुझाव

लेकिन अब तक तो जो हुआ सो हुआ, अब आगे सावधानी बरतने की जरूरत है। क्या सावधानी बरती जाय, आन्दोलन को नये संदर्भ में किस तरह संयोजित किया जाय; यह सब तो सामूहिक चर्चा और निर्णय का विषय है, लेकिन सुझाव के तौर पर कुछ मुद्दे लिख रहा हूँ।

(१) पुष्टि को प्राप्ति का एक अंग माना जाय। प्राप्ति तथा पुष्टि के बीच समय का बड़ा फासला न हो।

(२) बोगस ग्रामदान, प्रखंडदान, जिलादान की घोषणा न हो, इसका भरपूर ख्याल रखा जाय। छानबीन कर लेने के बाद जब पता चल जाये कि सारी शर्तें पूरी हो गयी हैं, तो घोषणा की जाय और तब ही उसे अपने आंकड़ों में जोड़ा जाय, नहीं तो इन आंकड़ों से हमारा काम जितना बनेगा नहीं, उससे अधिक बिगाड़ेगा ही।

(३) हर गांव में किसानों, मजदूरों एवं युवकों में से दो-दो, चार-चार चेतन साथी ढूंढ़े जायें, और उस गांव में उनकी एक इकाई बनायी जाय। उनका बीच-बीच में बौद्धिक वर्ग चलाया जाय।

(४) गांव से लेकर राज्य-स्तर तक आन्दोलन के विचार पर आधारित शांतिसैनिकों का 'केडर' खड़ा किया जाय।

(५) ग्रामदानी गांव को किसी भी शोषण के खिलाफ असहयोग करने की तालीम दी जाय और किसी भी अन्याय तथा शोषण के विरुद्ध सत्याग्रह या असहयोग का कार्यक्रम चलाया जाय।

(६) स्थानीय तथा तात्कालिक समस्याओं से मुँह नहीं मोड़ा जाय। उसके प्रति हम सजग रहें, ग्रामदानी गांवों को उसके सम्बन्ध में आगाह करते रहें, और आन्दोलन की राय कायम कर उसका प्रचार करते रहें।

(७) भूमि-सम्बन्धी जो भी कानून हैं, या आन्दोलन चल रहे हैं, उस सम्बन्ध में आन्दोलन की स्पष्ट राय जाहिर की जाय।

(८) सभी स्तर पर 'केडर' के मित्रों का मुक्त मिलन बीच-बीच में हुआ करें।

—कंसाराप्रसाद शर्मा, मंत्री
बिहार ग्रामस्वराज्य समिति, पटना

लोगों में जागृति होने और गणराज का अनुभव करने की क्षमता होनी चाहिए कि वे पहले जैसे भूखे हैं, या उससे अधिक भूखे हैं, वैसे ही गरीब हैं, या अधिक गरीब बना दिये गये हैं, वैसे ही मरीज हैं, या अधिक मरीज बना दिये गये हैं, और अच्छे जीवन उपायों से वंचित कर दिये गये हैं।

—लार्ड रिची-काल्डर

इंसानी बिरादरी का गठन

पिछले १७-१८ अगस्त '७० को नयी दिल्ली में आयोजित राष्ट्रीय परिषद में इंसानी बिरादरी का औपचारिक संगठन इसके संविधान की स्वीकृति के साथ हो गया।

गत वर्ष बादशाह खान की भारत-यात्रा के दौरान खुदाई खिदमतगार स्वयं-सेवकों का 'इंसानी बिरादरी' के नाम से संगठन बनाने का विचार आया था। गांधी-शताब्दी वर्ष १९६९ के अंत और १९७० के प्रारम्भ में अपने भारतव्यापी दौरे के बाद बादशाह खान यह देखकर बहुत दुखी हुए थे कि देश आन्तरिक कलह, आपसी अविश्वास, नफरत, हिंसा, भय, स्वार्थ, साम्प्रदायिकता, धर्मान्धता, भाषा-वाद, जातिवाद तथा ऐसे ही घातक व्याधियों से पीड़ित है। उन्होंने जो कुछ देखा और सुना, उस पर से उन्होंने ऐसे लोगों की एक राष्ट्रीय परिषद बुलाने का फैसला किया, जो लोग राष्ट्रीय एकता, साम्प्रदायिक सौहार्द, आपसी स्नेह और विश्वास चाहते हैं, तथा अहिंसा और न्याय के रास्ते शान्ति, समृद्धि और खुशहाली की स्थापना के लिए व्यग्रता महसूस करते हैं।

इस प्रकार की एक राष्ट्रीय परिषद, जिसे इंसानी बिरादरी कहा गया, नयी दिल्ली में गत १-२ फरवरी, '७० को बादशाह खान की उपस्थिति में बुलायी गयी। इसमें भारत के विभिन्न प्रदेशों के कुछ लोगों ने भाग लिया। परिषद में यह तय किया गया कि पश्चिमोत्तर सीमांत प्रदेश के खुदाई-खिदमतगार आंदोलन की तरह का एक संगठन खड़ा करने के लिए विस्तृत प्रारूप तैयार करने हेतु २१ सदस्यों की एक तदर्थ समिति बनायी जाय। यह संगठन साम्प्रदायिक सद्भाव और गांधी-विचार के लिए पुनर्जागरण का काम करेगा। समिति के सदस्यों के चुनाव की जिम्मेदारी श्री जयप्रकाश नारायण, शेख मुहम्मद अब्दुल्ला, पं० सुन्दरलाल और शाहनवाज खाँ पर सौंपी गयी। इस प्रकार तदर्थ समिति का गठन हुआ और उसकी बैठक मार्च '७० की १२, १३, १४ तारीख को नयी दिल्ली में हुई। इस बैठक में तय किया गया कि इंसानी बिरादरी के संगठन तथा इसके संविधान की स्वीकृति के लिए पुनः एक राष्ट्रीय परिषद बुलायी जाय। इस इंसानी बिरादरी के स्वयं-सेवकों को खुदाई खिदमतगार कहा जाय।

उद्देश्य

संविधान में उल्लिखित इस संगठन के निम्न उद्देश्य होंगे :

(१) भारत के सभी लोगों में एक-दूसरे के धर्म, संस्कृति और जीवन-पद्धति के बारे में सहृदयता की भावना का विकास करना,

(२) हर सम्भव माध्यमों द्वारा इन बातों का सही ज्ञान प्रसारित करना, ताकि भारत की जनता में एक-दूसरे के प्रति बेहतर समझदारी विकसित हो, और इस प्रकार भारत के धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक उत्कर्ष के संदर्भ में समग्र राष्ट्रीय परम्परा के प्रति समादर की भावना को प्रोत्साहन मिले और लोकतंत्र की सच्ची भावना के अनुरूप असाम्प्रदायिक भाव विकसित हो;

(३) सभी भारतीयों में मानव-बन्धुता की भावना और आदर्श का विकास करना, न केवल अपने देशवासियों के लिए बल्कि पूरे विश्व के लिए;

(४) हिंसा का परिहार करना और सक्रियता के साथ किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हिंसा के प्रयोग को रोकना;

(५) समुदायों या व्यक्तियों के आपसी सम्बन्धों को घृणा और अनादर के गर्त में गिरने से बचाना और उसके समाधान के लिए सहयोग करना;

(६) निःस्वार्थ भाव से जन-सेवा करना तथा कमजोर और दबे हुओं को न्याय और आत्मनिर्भरता के अवसर प्राप्त कराने में मदद करना।

मुस्लिम लीग का पुनर्जन्म

१७ अगस्त को राष्ट्रीय परिषद का उद्घाटन करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने उत्तर भारत में मुस्लिम लीग को साम्प्रदायिक राजनीतिक शक्ति के रूप में, जैसा कि वह पहले थी, पुनर्जन्म लेने पर देश को चेतावनी दी। उन्होंने कहा कि कुछ मुस्लिम लीगी नेताओं ने साम्प्रदायिकता के अस्तित्व को मानने से इन्कार किया है, और चुनौती दी है कि कोई भी इसे सिद्ध कर दे। कुछ लोगों ने ऐसा मन्तव्य भी जाहिर किया है कि साम्प्रदायिकता से अल्पसंख्यक अनभिज्ञ थे, और यह बहु-संख्यकों का यह जन्मजात लक्षण है। ये असामान्य और असंगत विचार हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों और राष्ट्रीय एकता के लिए अशुभकारक हैं।

उन्होंने इस बात पर दुःख प्रकट किया कि राष्ट्रीय एकता-परिषद की उप-समिति द्वारा सुझाया गया सम्प्रदायवाद-विरोधी जन-अभियान कहीं दिखाई नहीं देता। उन्होंने इन्दिरा गांधी के साम्प्रदायिकता पर दिये गये तीव्र और सशक्त वक्तव्य का स्वागत किया।

उत्तरदायित्व

परिषद में भाग लेनेवाले प्रति-निधियों से इन कठिन सवालों को हल करने में अपने विवेक और अनुभव लगाने की जयप्रकाश नारायण ने अपील की। उन्होंने कहा कि ऐसा लगता है कि असाम्प्रदायिकता, राष्ट्रीय एकता और लोकतंत्र में मात्र विश्वास से कहीं अधिक गहराई मानव-बन्धुता के विकास के लिए आवश्यक है। सही धार्मिकता-आध्यात्मिकता सर्वाधिक आवश्यक मालूम होती है।

तदर्थ समिति द्वारा प्रस्तावित इंसानी बिरादरी के संविधान को प्रस्तुत करते हुए शेख अब्दुल्ला ने कहा कि समिति

ने दो मुख्य विचारों का समन्वय करने की कोशिश की है। बादशाह खान का विचार था कि केवल खुदाई खिदमतगार ही होने चाहिए। दूसरा विचार था कि खुदाई खिदमतगारों का, मानव-बन्धुता के लिए, उदात्त और व्यापक आन्दोलन से अनुबन्ध होना चाहिए। खुदाई खिदमतगार मात्र मुस्लिम-संगठन बनकर न रह जाय, इसके लिए यह जरूरी था।

कार्यक्रम

परिषद ने शान्ति और असाम्प्रदायिकता के लिए जनमत तैयार करने हेतु प्रदेशों में सम्मेलन आयोजित करने का निश्चय किया।

खुदाई खिदमतगारों के संगठन के अलावा इन्सानी बिरादरी का दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य यह होगा कि देश में सम्भावित दंगों की जगहों का पूर्वानुमान करे और साम्प्रदायिक तथा दूसरे प्रकार के उपद्रवों को रोकने की कार्रवाई में पहल करे।

उक्त काम के लिए क्षेत्रीय समितियाँ बनायी जायेंगी, जो राष्ट्रीय कार्यकारिणी परिषद के निर्देशन में काम करेंगी। राष्ट्रीय कार्यकारिणी परिषद के अध्यक्ष-जयप्रकाश नारायण और महामंत्री-शाहनवाज खाँ चुने गये। अन्य पदा-धिकारियों का चुनाव १८ अगस्त को हुआ: शेख मोहम्मद अब्दुल्ला—वरिष्ठ उपाध्यक्ष, बदरुद्दीन तैयबजी (भूतपूर्व उपकुलपति, अलीगढ़ मुस्लिम विश्व-विद्यालय), सलील अहमद (उड़ीसा उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश), कुँवर महिन्दर सिंह बेदी (सुख्यात कवि)—उपाध्यक्ष; मृदुला साराभाई, राधाकृष्ण (सचिव गांधी-शांति-प्रतिष्ठान)—मंत्री, और रघु शरण—कोषाध्यक्ष।

साम्प्रदायिक लोगों की उपस्थिति

चुनाव १८ अगस्त को सुबह की बैठक में हुए, जो निर्विवाद नहीं थे। परिषद में भाग लेनेवाले ३०० प्रति-निधियों में से एक ने कहा, 'चुनाव पूर्वनियोजित था।' परिषद की अध्यक्षता कर रहे श्री जयप्रकाश नारायण ने इसका प्रतिवाद करते हुए कहा कि, 'अगर इस तरह की भावना प्रतिनिधियों द्वारा व्यक्त होती है, तो मैं छोड़ने को तैयार हूँ।' लेकिन भारी बहुमत उनके पक्ष में था।

उत्तरप्रदेश से चुने गये एक संसद-सदस्य हयातुल्ला खाँ ने परिषद में कुछ साम्प्रदायिक तत्त्वों की उपस्थिति पर आपत्ति प्रकट की और चेतावनी दी कि इससे संगठन जन्मते ही मर सकता है, तथा साम्प्रदायिक लोगों द्वारा और अधिक साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों का माध्यम बनाया जा सकता है।

३१ मुसलमानों सहित ३७ प्रति-निधियों ने अपनी असहमति जाहिर करते हुए एक वक्तव्य में कहा, "अगर बिरादरी कुछ दलों को साम्प्रदायिक घोषित करने और उनके सदस्यों को इसकी सदस्यता से वंचित रखने में असफल होती है, तो यह नया संगठन साम्प्रदायिक लोगों द्वारा असाम्प्रदायिक लोगों को दबाने का माध्यम होगा और इस प्रकार इस सवाल को उलझायेगा। एक तरफ तो वे अपने मंच से साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देंगे और दूसरी तरफ बिरादरी के मंच से असाम्प्र-दायिकता का दिखावा करेंगे।" इसलिए हमें दुख है कि हम इस संगठन के साथ अपने को सम्बद्ध नहीं कर सकेंगे।"

डा० ए० जे० फरीदी (मजलिस-ए-मुशावरात) ने कहा कि, 'उनकी पार्टी को साम्प्रदायिक कहना गलत है। वह एक राजनीतिक पार्टी है और उसने साम्प्रदायिक सौहार्द को क्षति पहुँचाने-वाला कभी कोई काम नहीं किया है। उसने हमेशा संविधान की सीमा में ही काम किया है।'

बिहार के भूतपूर्व मुख्य मंत्री महा-माया प्रसाद सिन्हा ने भी यह राय जाहिर की, कि 'साम्प्रदायिक संगठनों के नामों की घोषणा करनी चाहिए, ताकि बिरादरी उनका विरोध कर सके।' उन्होंने कहा कि 'इस काम के लिए वे देश के किसी भी हिस्से में जा सकते हैं।'

आकांक्षा और आशंका

स्वतंत्रता-प्राप्ति और विभाजन के बाद शायद पहली बार देश के मुसलमानों ने अपने बीच बादशाह खान-सीमांत गांधी-के रूप में एक मुस्लिम नेता को पाया, जिनसे उनको अपेक्षा थी कि उनके नैतिक बल का संवर्द्धन होगा, और निरन्तर ह्रासोन्मुख हिन्दू-मुस्लिम-सम्बन्धों में चमत्कारिक परिवर्तन आयेगा। काल्पनिक या वास्तविक, जो भी कारण हो, मुसलमान राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा से अपने को अलग करते जा रहे हैं। बादशाह खान के आने से हिन्दू-मुस्लिम लोगों के दिमाग में यह आशा थी कि उनके द्वारा व्यक्त विचारों से ही भारत के मुसलमान प्रगति-विरोधी और अलगाव की प्रवृत्ति से मुक्त हो सकते हैं।

खुदाई खिदमतगारों की इन्सानी बिरादरी इस आशा की पूर्ति की दिशा में पहला कदम है। परिषद में भाग लेने-वालों को देखकर कुछ कानाफूसी, टीका-टिप्पणी हुई कि नयी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व इसमें नहीं के बराबर है। एक अखबार-नवीस ने यह अभिप्राय व्यक्त किया, "यह मुख्य रूप से निवृत्त राजनीतिज्ञों, सेनाधि-कारियों और शिक्षाविदों का जमाव था। और कोई भी दिव्य ज्योति से प्रेरित नहीं लगता था, न ही किसीके जीवन का पूर्व इतिहास ऐसा था जिसके आधार पर उसे खुदाई खिदमतगार कहा जा सके। कुछ सम्पन्न लोगों द्वारा मानव समस्याओं पर आराम के साथ की गयी चर्चाओं और उनके द्वारा पारित नेकनीयत प्रस्तावों से समस्या का हल सम्भव नहीं।"

इसलिए इन्सानी बिरादरी के नेताओं को शुरू से ही अपनी कर्मठता और उदा-त्तता सिद्ध करने के लिए सक्रियता से काम करना होगा। उद्देश्य सर्वोत्तम है, "लेकिन इसे साकार कैसे किया जाय, इसके बारे में बहुत अनुभव नहीं है। इसकी सफलता इसके संगठन पर निर्भर करती है। अगर वे अपनी जिम्मेदारी से चूकते हैं तो कर्मठ→

पूर्णिया के पत्र से

ग्रामस्वराज्य की हलचल

प्रखण्ड सभा : इस जिले में ३८ प्रखण्ड हैं। मार्च १९७० तक १५ प्रखण्डों में प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति बनी हुई थी। इसके बाद बायसी में श्री नरसिंह नारायण सिंह तथा रुपौली में श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के मार्गदर्शन में क्रमशः बायसी एवं कटिहार प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन हुआ। धमदाहा और कोढ़ा प्रखण्डों में भी प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति के गठन का प्रयत्न किया गया। शेष २१ प्रखण्डों में अंचल समन्वय समिति जिला सर्वोदय मण्डल के तत्त्वावधान में काम कर रही है।

ग्रामसभा : जिला ग्रामस्वराज्य समिति द्वारा प्रसारित ग्रामसभा-गठन के विहित प्रपत्र के आधार पर बालिगों की सूची तैयार कर बाजाब्ता ग्रामसभा बनायी जाती है। सदस्यों को लिखित अथवा गाँव में ढोल पिटवाकर बैठक की सूचना देकर ग्रामसभा गठित की जाती है। इस पद्धति से भरगामा प्रखण्ड में २०, रानीगंज प्रखण्ड में ११, भवानीपुर में ९, ठाकुरगंज में ८, मनिहारी में १९, आमबाबाद में ९, कृत्यानन्द नगर में १७, बायसी में १, रुपौली में ८, और बहहारा में १०, अर्थात् ११२ ग्रामसभाएँ उक्त विभिन्न प्रखण्डों में बनी हैं। इन ग्रामसभाओं के माध्यम से ग्रामदान-पुष्टि तथा अन्य विकास-कार्यों को करने में सहायता मिलेगी। जहाँ ग्रामदान-पुष्टि के बाद ग्रामसभाएँ बनी हैं, वहाँ की ग्रामसभाएँ काफी सक्रिय होकर जिम्मेदारी से कार्य कर रही हैं। इस दृष्टि से रसाढ़, गढ़ुवा, प्रेमराज, गुनागाछी, मेरनीपुर, आशोकोना आदि ग्रामसभाओं के नाम उल्लेखनीय हैं।

भूदान की भूमि का वितरण

सन् १९६९-७० तक इस जिले में ८८,०१४.५१ एकड़ जमीन प्राप्त हुई थी, जिसमें से २८,७०५·०४ एकड़ जमीन का वितरण हो चुका था। इस बीच राज दरभंगा द्वारा प्रदत्त मनिहारी प्रखण्ड के अन्तर्गत १३३ एकड़ भूदान की जमीन ८४ आदाताओं को बाँटी गयी। भूदान-किसानों के नाम लगान-निर्धारण के लिए सरकारी कार्यालयों में दाखिल की गयी सूची में से २,५५४ भूदान-किसानों का लगान निर्धारण हो चुका है।

रुपौली क्षेत्र में

रुपौली का क्षेत्र पूर्णिया जिले में एक ही साथ कई महत्त्वपूर्ण विशेषताओंवाला क्षेत्र है। प्रथम तो यह क्षेत्र जिले का सबसे सजग और प्रगतिशील क्षेत्र है। इसके अतिरिक्त रुपौली क्षेत्र की एक खास विशेषता यह है कि यह क्षेत्र त्रि-सीमा पर है। एक ओर यह पूर्णिया जिले के पश्चिमान्त में है, दूसरी ओर सहरसा और तीसरी ओर भागलपुर और मुंगेर जिलों की सीमाएँ हैं। यहाँ जो कुछ होगा उसका प्रभाव पड़ोस के सभी जिलों पर पड़ेगा। इसी विशेषता को ध्यान में रखकर श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने यहाँ ग्रामस्वराज्य और ग्राम-निर्माण की योजना को कार्यान्वित करने के लिए सघन रूप से कार्यारम्भ किया है। वे लगभग पच्चीस प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के साथ ग्रामस्वराज्य के कार्य में लगे हुए हैं। अभी तक जो भी परिणाम सामने आये हैं, वे बहुत संतोषप्रद हैं।

इसके साथ ही कुछ और भी विशेष परिस्थितियाँ बनी हैं। ससोपा के वरिष्ठ नेता श्री एस० एम० जोशी ने भूमि-हड़प के सिलसिले में अपने कई साथियों के साथ इसी क्षेत्र में गिरफ्तार होकर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है। उधर साम्यवादी दल की ओर से जन-मानस को उत्तेजित कर लूट-मार करने और जोर जबर्दस्ती भूमि पर दखल करने की कोशिश चल रही है। इससे क्षेत्र का वातावरण हिंसक बनता जा रहा है।

सर्वोदय-आन्दोलन द्वारा ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए लोगों के मानवीय सद्गुणों को जागृत कर त्याग और सम्वेदना से समाज में, जनमानस में, अहिंसा और प्रेम की शक्ति को प्रोत्साहित किया जा रहा है। हिंसा और अहिंसा का इस क्षेत्र में सीधा मुकाबला हो रहा है।

रुपौली प्रखण्ड में २१ पंचायतें हैं। इनमें फिलहाल रुपौली, रामपुर, पछिट,→

→स्वयंसेवक भी हतोत्साहित होंगे।"

शान्तिसेना के ही उद्देश्यों को लेकर क्या एक अलग इंसानी बिरादरी के संगठन का कोई औचित्य है? यह प्रश्न परिषद् में नहीं उठाया गया, यद्यपि बिरादरी के अध्यक्ष जयप्रकाश नारायण, अ० भा० शान्तिसेना मण्डल के अध्यक्ष और विश्व-शान्तिसेना के भी एक सह-अध्यक्ष हैं। यह सही है कि शान्तिसेना अपेक्षानुकूल सक्रिय और प्रभावशाली नहीं हुई है; लेकिन क्या बिरादरी इससे अधिक सक्रिय और प्रभावशाली होनेवाली है? मैंने कुछ प्रतिनिधियों से चर्चा की। उन्होंने यह भाव व्यक्त किया कि शान्तिसेना मुसलमानों को आकर्षित नहीं कर सकी है, और बादशाह खान का जोर था कि मुसलमानों के लिए खुदाई खिदमतगार जैसा एक संगठन बनाना ही चाहिए; इसीलिए यह एक अलग संगठन बनाना पड़ा।

गांधीजी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में हिन्दू-मुस्लिम एकता को प्रमुखता दी थी, और साम्प्रदायिकता के विरुद्ध एक धर्मयुद्ध शुरू किया था। विनोबा के नेतृत्व में सर्वोदय-आन्दोलन ने सत्य और अहिंसा के आधार पर समाज-परिवर्तन के लिए ग्रामदान, खादी और शान्तिसेना का त्रिविध कार्यक्रम शुरू किया है। बादशाह खान ने स्वयं गांधीजी के आदर्शों को पुनः अपनाने पर जोर दिया था। तो, क्या हम आशा करें कि इंसानी बिरादरी मुसलमानों को शान्तिसेना में शामिल होने की प्रेरणा देगी, और इस प्रकार सर्वोदय-आन्दोलन की शक्ति का संवर्द्धन करेगी? (मूल अंग्रेजी से)

—शशिकांत मिश्र

आगरा में आत्म-दर्शन

२८, २९, ३० अगस्त को देश के विभिन्न भागों से आये हुए क्रान्ति-धर्मी कार्यकर्त्ताओं की एक गोष्ठी हुई। इस गोष्ठी का संयोजन श्री सतीश कुमार और श्री कृष्णचन्द्र सहाय ने संयुक्त रूप से किया था। नक्सलपंथ और भूमि हड़पो आन्दोलनों के संदर्भ में आगरा-गोष्ठी ने इस प्रश्न पर विचार किया कि आखिर १८-२० सालों के सतत आन्दोलन के बावजूद देश की परिस्थितियों पर हमारा पर्याप्त प्रभाव क्यों नहीं पड़ रहा है। *विनोबा और जे० पी० जैसे व्यक्तियों का* नेतृत्व हजारों कार्यकर्त्ताओं की साधना और अत्यंत आधुनिक एवं परिपूर्ण विचार-दर्शन के बावजूद अगर हम लोक-शक्ति खड़ी नहीं कर पाये हैं तो आखिर 'गड़बड़ कहाँ है ?'

इस 'गड़बड़' की खोज निरंतर तीन दिन तक चलती रही। कुल मिलाकर १८ घंटे तक खुलकर बहस चली। शायद पहली बार इतने मुक्त मन से आत्मालोचन का अवसर उपस्थित था। गोष्ठी में दो बातें बहुत उभर कर सामने आयीं।

१—हमारा विचार तो क्रान्ति-दर्शी और तेजस्वी है, पर 'एक्शन' के स्तर पर हम कमजोर पड़ते हैं। समझाने-बुझाने की प्रक्रिया विचार के स्तर पर चलती है, पर जीवन के स्तर पर हम दुर्बलता के शिकार हैं। भूमि का भूखा किसान मजदूर और समानता का आकांक्षी सामान्यजन रोटी और आजादी पाने के लिए कब तक धीरज धरे बैठा रह सकता है ? अतः 'समझाने-बुझाने' की प्रक्रिया को 'सत्याग्रह' में परिणत करने का समय अब आ गया है। यदि हम तेजस्वी एवं सक्रिय अहिंसा को शक्तिशाली सत्याग्रह से सन्नद्ध नहीं करते हैं, तो नक्सलपंथ और भूमि हड़पो जैसी हिंसा वर्तमान शोषणप्रधान समाज-रचना का स्वाभाविक परिणाम मात्र है और उसकी जिम्मेदारी हम पर भी है। अतः जहाँ-जहाँ ग्रामदान हो चुके हैं वहाँ-वहाँ भूमि का व्यक्तिगत स्वामित्व विसर्जित करके बीघा-कट्ठा का तुरंत वितरण होना चाहिए। यदि इस प्रक्रिया में निहित स्वार्थ की ओर से बाधा या आनाकानी पैदा की जाती है तो ग्रामदान में शामिल ग्रामीण भाइयों के नेतृत्व में तथा सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं के सहयोग से संगठित सत्याग्रह द्वारा भूमि-वितरण का कार्य पूरा किया जाना चाहिए। आन्दोलन के कुल वातावरण में उससे एक नयी तेजस्विता आयेगी।

२—हम कार्यकर्त्ताओं की तथा हमारी संस्थाओं की जो 'इमेज' या तस्वीर सामान्य लोगों के दिमाग में बनी है, वह क्रांतिकारिता की तस्वीर नहीं, बल्कि प्रति-क्रांतिकारिता की है। हम जिन संस्थाओं के माध्यम से काम करते हैं, उनमें एक 'स्टेगनेशन' या रुकाव-सा आ गया है। हम 'इस्टेब्लिशमेंट' के अंग बन गये हैं। जब तक हमारी संस्थाओं में क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं आता, तब तक सामान्यजन की नजरों में हम सुविधासम्पन्न वर्ग के पक्षधर बने रहेंगे। इसलिए आगरा-गोष्ठी ने कुछ विधायक एवं रचनात्मक सुधार लाने के सुझाव दिये।

इन सुझावों के मुख्य मुद्दे इस प्रकार हैं

(१) जिन संस्थाओं के पास लाखों-करोड़ों रुपये की संपत्ति है, वे अपना धन तुरंत अन्त्योदय के लिए खर्च करें। राष्ट्रीय स्तर पर काम करनेवाली संस्थाएँ ३ लाख और प्रान्तीय स्तर पर काम करने वाली संस्थाएँ १ लाख से अधिक की संपत्ति न रखें (२) संस्थाओं के पास जो भूमि है, वह तुरंत भूमिहीनों में बाँटी जाय। यदि मुख्य प्रवृत्ति कृषि हो तो कृषि मजदूरों से न करायी जाय और ३ एकड़ सिंचित एवं ६ एकड़ असिंचित भूमि प्रति कार्यकर्त्ता-परिवार से अधिक न रखी जाय। (३) जो मकान पिछले तीन माह से खाली पड़े हैं, वे गृह-विहीनों में बाँट दिये जायँ। (४) ऐसे खर्चीले और भव्य भवन जो सामान्य लोगों को उपलब्ध नहीं है, हम न बनायें और ऐसे भवनों में न रहें। (५) संस्थाओं के पदाधिकारियों ने अपना सुविधासम्पन्न वर्ग बना लिया है। विमान या प्रथम श्रेणी में यात्रा करने की सुविधा समाप्त की जाये। (६) दिल्ली व बड़े शहरों से दफ्तर हटाकर, हमारे दफ्तर गाँवों में लाये जायँ। (७) दफ्तरों में कागजी काम के साथ-साथ उत्पादक श्रम भी जोड़ा जाय। (८) सक्षम कार्यकर्त्ता क्षेत्र में बैठें और केन्द्रीय दफ्तरों का महत्त्व समाप्त हो। (९) वेतन पद के अनुसार नहीं, बल्कि आवश्यकता के अनुसार तय करके संस्थाओं में व्याप्त विषमता समाप्त की जाय। (१०) संस्थाओं के पदाधिकारी ३ साल से अधिक एक पद पर न बने रहें। (११) शासकीय मंत्रियों और अफसरों के शिष्टाग्रणी न बनकर हम अपना तादात्म्य क्रांतिकारी शक्तियों तथा सामान्य जनों के साथ जोड़ें। (१२) एक व्यक्ति एक संस्था से ज्यादा का पदाधिकारी न बने। (१३) संस्थाएँ तन-मन-धन से ग्रामस्वराज्य के काम में लगें। (१४) कार्यकर्त्ता-शक्ति एवं धन-शक्ति के उपयोग का निर्णय जनतांत्रिक ढंग से स्थानीय लोगों द्वारा लिये जायँ।

यदि संस्थाएँ मार्च १९७१ तक इस प्रकार का क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं लाती हैं तो संस्थाओं के सामने सत्याग्रह किया जाय। (हमारे विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

—सहरसा, बेतिया, नागपुर, टोंक, तेनकोटा, पूसा, ऊटी, धोमता, आकोला, पसहरी एवं कितने पंचायतों में ग्रामदान-पुष्टि का अभियान जोरों से चालू है। इन पंचायतों में क्षेत्रीय संगठक एवं अन्य कार्यकर्त्ता पुष्टि के कार्य में जबरदस्त लगे हुए हैं। ●

एक विदेशी बहन की चुनौती

मुशहरी प्रखण्ड में, सर्वोदय की कल्पना को मूर्त रूप देने का जो अभियान श्री जयप्रकाश नारायण ने चलाया है उसकी विदेशी अखबारों में पर्याप्त चर्चा है। करोड़ों उत्सुक आँखें उस क्षेत्र की ओर निहार रही हैं।

पिछले दिनों इंग्लैण्ड के कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की गणित की छात्रा कुमारी कैरोलाइन को इसी उत्सुकता और आकर्षण ने भारत पहुँचा दिया। इंगलैण्ड की 'पीस फेडरेशन' नामक संस्था की सदस्या कुमारी कैरोलाइन ने, इंग्लैण्ड के अखबारों में जयप्रकाश नारायण के इस अभियान की चर्चा पढ़ी—"ए लाइट इज बर्निंग इन इंडिया"। इससे पहले भी कैरोलाइन ने गांधी, विनोबा के विचारों का सामान्य अध्ययन किया था।

बम्बई महानगरी के अतिरिक्त कैरोलाइन ने मुख्यतः भारत के गाँव ही देखे। बम्बई से वह वर्धा आयी और वहाँ से मुजफ्फरपुर। यहाँ गांधी-शांति-प्रतिष्ठान केन्द्र में तरुण-शांतिसेना के सदस्यों ने उनका स्वागत किया। जयप्रकाशजी से मिलने वे मणिका गाँव गयीं और सामान्य चर्चाएँ भी हुईं। जयप्रकाशजी ने तरुण शांतिसेना को उनकी आवास आदि व्यवस्था का भार सौंप दिया।

पिछले कोई दो माह से मुजफ्फरपुर में तरुण शांतिसैनिकों का काम चल रहा है—धन-संग्रह से लेकर विचार-प्रचार तक का। इन मुट्ठी-भर सैनिकों के साथ उनके कार्यक्रमों में हिस्सा लेकर कैरोलाइन को अपार आश्चर्य हुआ, और जनता के साथ इस तरह के सम्पर्क को नयी कल्पना कह सूझी।

चर्चा में कैरोलाइन ने बताया कि ब्रितानी नागरिक वहीं समस्याओं से ज्यादा मतलब रखते हैं। नवादिया की समस्या से लेकर वियतनाम की बमबारी तक उनके सिर-दर्द का कारण बन जाती है, पर आयरलैण्ड में दंगे क्यों हुए, ब्रितानी नौजवानों में असंतोष क्यों है, आदि समस्याएँ उनकी चिंता का विषय नहीं बनतीं। भारतीय लोग अपनी समस्याओं के प्रति अधिक जागरूक हैं, और उसके लिए चिंतित हैं। समस्याओं को दूर करने के लिए उनमें जल्दी संगठन हो जाता है।

"आप भारत क्यों आयीं?" इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कैरोलाइन ने बताया कि "पहले तो जयप्रकाशजी से मिलने और भारत घूमने का उद्देश्य प्रमुख था। पर अब मैं यह देखना-सीखना चाहती हूँ कि रोजमर्रे की समस्याओं के समाधानार्थ अहिंसक रास्ता कैसे कारगर हो सकता है। मैं यह जानना चाहती हूँ कि आम लोगों को इंग्लैण्ड में मैं कैसे बताऊँगी कि अहिंसा के पास आपसी वैमनस्य और असंतोष की दवा भी है?"

साड़ी पहनने से लेकर चोटी बनाने तक के तमाम काम कैरोलाइन ने सीख लिये। भारतीय लड़कियों से कुमारी कैरोलाइन कुछ असंतुष्ट-सी दीखीं। मुजफ्फरपुर के महिला शिल्पशाला-भवन में छात्राओं के समक्ष बोलते हुए उन्होंने जोर देकर पूछा कि, "आपके भाई जब शहर में एक कार्यक्रम लेकर इतनी लगन से जुटे हैं, तो फिर आप दूर क्यों खड़ी हैं? मैंने एक भी लड़की नहीं देखी जो इस काम में लड़कों की मदद कर रही हो। इंग्लैण्ड में ऐसे कामों में लड़कियाँ पीछे नहीं रहतीं।"

आपसी बातचीत के दौरान कुमारी कैरोलाइन ने बताया कि "सामाजिक व्यवस्था ने भारत में लड़के-लड़कियों के बीच की दूरी को इतना बढ़ा दिया है कि इनमें आपसी सहकार संभव नहीं होता है और यही मेरी नजर में भारत की खराबी है।"

भारत में कैरोलाइन छः सप्ताह रहीं और २८ अगस्त को मुजफ्फरपुर से आगरा के लिए चल दीं। यह वापसी की यात्रा है। आगरे में ताजमहल देखकर वे इंग्लैण्ड लौटेंगी, और फिर अपनी पढ़ाई में लग जायेंगी।

"क्या आपको अपने सभी प्रश्नों का हल मिल गया?" इस प्रश्न के उत्तर में विदा लेती कैरोलाइन ने बताया कि, "इतने छोटे प्रवास में किसी हल तक पहुँचने की आशा नहीं की जा सकती है, पर समस्याओं पर एक विचार के लोगों को इकट्ठा करने और जनता के बीच से ही उनका हल खोजने की नयी दृष्टि मुझे मिली है। मैं फिर भारत लौटूँगी और आशा करती हूँ कि तब आप तरुणों की संख्या मेरी उँगली पर नहीं गिनी जा सकेगी।"

हम मुजफ्फरपुर तरुण शांतिसेना के सदस्य देश के सभी नवयुवकों से सहकार की आशा करते हैं। आइए, एक विदेशी बहन की चुनौती को स्वीकार करें।

— कुमार प्रशांत,
संयोजक,
तरुण शांतिसेना
नयाटोला, मुजफ्फरपुर

उत्साहप्रद अनुभव और महत्त्वपूर्ण निर्णय

केन्द्रीय समिति की दूसरी बैठक की निष्पत्ति

केन्द्रीय आचार्यकुल समिति की दूसरी बैठक गत २२ अगस्त '७० को प्रातः १० बजे आगरा विश्वविद्यालय में हुई। बैठक में १५ व्यक्तियों ने भाग लिया। इनमें से ९ केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के सदस्य और ६ आमंत्रित व्यक्ति थे। श्री राधाकृष्णजी, उपकुलपति, कानपुर विश्वविद्यालय ने बैठक की अध्यक्षता की।

आगरा विश्वविद्यालय के उपकुलपति और उत्तरप्रदेश आचार्यकुल के संयोजक श्री शीतला प्रसादजी गोष्ठी के आतिथेय थे।

अब तक के अनुभव

श्री वंशीधर, संयोजक, केन्द्रीय आचार्यकुल समिति, ने पिछली बैठक की रिपोर्ट, जो श्रीमती महादेवी वर्मा की अध्यक्षता में २६ दिसम्बर '६९ को इलाहाबाद में सम्पन्न हुई थी, पढ़कर सुनायी।

श्री शीतल प्रसादजी, उपकुलपति आगरा विश्वविद्यालय एवं संयोजक उत्तरप्रदेशीय आचार्यकुल ने प्रदेश का कार्य-विवरण प्रस्तुत करते हुए बताया कि इस प्रदेश के ३० जिलों, ५ विश्वविद्यालयों और ८ डिग्री कालेजों में आचार्यकुल का कुछ-न-कुछ काम हो रहा है। आगरा विश्वविद्यालय से संलग्न सभी डिग्री कालेजों में आचार्यकुल की स्थापना का प्रस्ताव डिग्री कालेज के प्राचार्यों की बैठक में स्वीकृत हो चुका है, और कार्य के संयोजन के लिए डा० हरिहरनाथ टण्डन को कार्यभार सौंपा गया है। आगरा विश्वविद्यालय के साथ ७० डिग्री कालेज संलग्न हैं। वैसे तो माध्यमिक स्तर के सदस्यों की संख्या लगभग ५०० और डिग्री कालेज के सदस्यों की संख्या लगभग १५० है। परन्तु इनमें से नियमित सदस्यता-शुल्क कितनों ने दिया है, यह आँकड़ा विनोबा-जयंती के बाद ही प्राप्त हो सकेगा।

डा० हरिहरनाथ टण्डन ने आचार्यकुल समिति की पिछली बैठक, जो आगरा में सम्पन्न हुई, का विवरण पढ़कर सुनाया और बताया कि दिसम्बर १९७० तक विश्वविद्यालय के सभी डिग्री कालेजों में आचार्यकुल स्थापित करने की चेष्टा की जायगी।

श्री रामवचन सिंह ने आचार्यकुल की देवरिया शाखा (उ० प्र०) का कार्य-विवरण प्रस्तुत करते हुए बताया कि ११ सितम्बर तक सघन रूप से काम कर इस जिले के चारों डिग्री कालेजों और लगभग ५० हायर सेकेण्डरी स्कूलों में आचार्यकुल स्थापित करने का प्रयास किया जायगा।

श्री कपिलजी, संयोजक, आचार्यकुल बिहार शाखा की अनुपस्थिति में डा० रामजी सिंह ने बिहार में हुई आचार्यकुल की प्रगति का विवरण प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि बिहार में प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षक संघ बहुत शक्तिशाली है। उन्होंने भी आचार्यकुल का विचार मान्य किया है। ग्रामदान-आन्दोलन में भी आचार्यकुल के सदस्यों ने सक्रिय भाग लिया है। भागलपुर और दरभंगा में गोष्ठियों का आयोजन हुआ है। बिहार में लगभग २३०० सदस्य हैं, जो उस समय सदस्य बने थे, जब सदस्यता-शुल्क देने की शर्त नहीं थी। परन्तु ये बहुत सक्रिय नहीं हैं।

श्री वंशीधरजी ने मध्यप्रदेश में हुई आचार्यकुलकी कार्य-प्रगतिका प्राप्त विवरण पढ़कर सुनाया। मध्यप्रदेश में प्रादेशिक स्तर पर विधिवत् आचार्यकुल की स्थापना नहीं हुई है। एक तदर्थ समिति काम कर रही है, जिसके संगठक श्री रामचन्द्र बिल्लोरे हैं और संयोजक प्रिंसिपल नागर हैं।

महाराष्ट्र के संयोजक मामा क्षीरसागर उपस्थित नहीं हो सके थे। परन्तु उन्होंने कार्य-विवरण भेज दिया था। महाराष्ट्र के २६ जिलों में से २० जिलों में आचार्यकुल के प्रचार का कार्य किया गया है। आचार्यकुल के १२ प्राचार्य, २८ प्राध्यापक, १४९ माध्यमिक स्तर के और २६ प्राथमिक स्तर के अध्यापक सदस्य हैं। आचार्यकुल की चार गोष्ठियाँ हुई हैं, जिनमें १५० व्यक्ति सम्मिलित हुए हैं। शिक्षक और विद्यार्थियों के दो संयुक्त शिविरों का भी आयोजन किया गया है, जिनमें १०५ शिविरार्थी उपस्थित रहे हैं। पू० विनोबाजी के साथ भी आचार्यकुल के २५ सदस्यों की चर्चा हुई है।

आचार्यकुल का प्रभाव

इसके बाद आचार्यकुल की प्रगति पर चर्चा हुई। चर्चा में भाग लेते हुए श्री शीतल प्रसादजी ने कहा कि "जहाँ आचार्यकुल बनता है, वहाँ का नैतिक वातावरण सुधरता है। बरेली कालेज में दो वर्षों से नकल की शिकायत बढ़ती जा रही थी। शहर के लोग कालेज में घुस जाते थे। परिस्थिति खराब थी। मैंने अध्यापकों से सम्पर्क किया, जैनेन्द्रजी को बुलाया। आचार्यकुल की स्थापना हुई और स्थिति सुधरी। परन्तु आचार्यकुल वहीं बनाये जायँ, जहाँ आचार्यों की मानसिक तैयारी हो।"

श्री राधाकृष्णजी ने कहा, "आचार्यकुल तभी सफल होगा, जब सदस्यों में नैतिक विकास हो। अतः आचार्यकुल बनाते समय इस बात का अवश्य ध्यान रखा जाय।"

आचार्य राममूर्तिजी ने कहा, "मेरा कार्य-क्षेत्र बिहार है। मुजफ्फरपुर के पास के प्रखण्ड में, जहाँ आजकल जे०पी० बैठे हैं, शिक्षकों ने आचार्यकुल और छात्रों ने तरुण शांतिसेना के फार्म भरे हैं। उनकी सहानुभूति है, परन्तु वे सक्रिय नहीं हैं। मेरे बुलाने पर भी वे आये नहीं। एक दिन तीन प्रोफेसर हमारे पास आये और बोले, 'आप यदि आचार्यकुल को जनप्रिय बनाना चाहते हैं और उसके सदस्यों को सक्रिय देखना चाहते हैं

हमारे पास व्यक्तिगत रूप से आइए, हमारे घर आइए। अफसरों के माध्यम से यदि आचार्यकुल बनायेंगे, जैसा यहाँ हुआ है, तो सहानुभूति भले ही मिल जाय, सक्रियता नहीं मिलेगी। मेरा एक विचार और है कि विश्वविद्यालयों और डिग्री कालेजों के अतिरिक्त छोटे अध्यापकों पर भी ध्यान दिया जाय।"

श्री वंशीधर ने कहा कि उत्तरप्रदेश में स्थापना का काम तो अधिकारियों की सहायता से ही हुआ है। और यद्यपि वहाँ प्रत्येक स्तर की शिक्षा-संस्थाओं में काम किया गया है, परन्तु काम फैला नहीं है और सक्रियता भी कम है। यह बात ठीक है कि व्यक्तिगत स्तर पर प्रयास करने से परिणाम अच्छा आयेगा।

यह निश्चय किया गया कि जहाँ भी संभव हो, इस तरह से प्रयास किया जाय।

सर्व सेवा संघ से सम्बन्ध

इस चर्चा के बाद आचार्यकुल और सर्व सेवा संघ के सम्बन्ध और विधान पर चर्चा हुई। इस सम्बन्ध में श्री वंशीधर ने पू० विनोबाजी से भी उनकी राय पूछी थी। श्री कृष्णराज मेहता, सदस्य आचार्यकुल समिति, पूज्य बाबा का उत्तर लाये थे। विनोबाजी की राय है कि "सर्व सेवा संघ के साथ आचार्यकुल जैसा चाहे वैसा सम्बन्ध रखे। सर्व सेवा संघ साल भर में पैसा दे और काम में दखल न दे, ऐसा चाहता हो तो वैसा करे या आचार्यकुल चाहे तो सर्व सेवा संघ को थोड़ी मदद करेगा।"

जैनेन्द्रजी ने इस सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि आचार्यकुल को एक स्वायत्त संस्था होना चाहिए। आचार्यकुल से सर्व सेवा संघ का वैचारिक और सैद्धान्तिक सम्बन्ध हो, जिसमें उत्तरोत्तर वृद्धि हो, परन्तु किसी प्रकार के बंधन का आभास न हो। डाक्टर रामजी सिंह ने जैनेन्द्रजी के विचार से अपनी सहमति प्रकट की।

आचार्य राममूर्तिजी ने कहा कि यह ठीक है कि आचार्यकुल की स्वायत्तता में कहीं से किसी प्रकार का दखल न हो। परन्तु सर्व सेवा संघ एक समग्र क्रांति को अभिव्यक्त करता है। आचार्यकुल को यह तय करना है कि विनोबाजी ने जो समग्र सम्पूर्ण क्रांति की कल्पना की है, आचार्यकुल सर्व सेवा संघ के साथ उसे 'शेयर' करना है या नहीं। वह इस बुनियादी क्रांति का शिक्षण करना चाहता है या केवल एक 'पायस ब्रदरहुड' (एक पवित्र बिरादरी) बनना चाहता है। अपनी स्वायत्तता को कायम रखते हुए यदि उसे इस समग्र क्रांति की अभिव्यक्ति बनना है तो सर्वोदय-आन्दोलन से उसका एक निश्चित सम्बन्ध रहना चाहिए।

श्री वंशीधर ने कहा कि दखल देने का सवाल तो नहीं उठता, परन्तु आचार्यकुल जिन लक्ष्यों को सामने रखकर स्थापित हुआ है, उन्हें अगर क्षीण होने से बचाना है तो वैचारिक स्तर पर ही नहीं, संगठनात्मक स्तर पर भी दोनों का सम्बन्ध रहना चाहिए।

श्री कृष्णराजजी ने कहा कि आचार्यकुल जिन लक्ष्यों को सामने रखकर स्थापित किया गया है उन्हें यदि सामने रखा जाय तो सर्व सेवा संघ से सम्बन्ध रहना सभी दृष्टियों से लाभप्रद होगा।

संगठन और विधान

इसके बाद दूसरे प्रादेशिक आचार्यकुलों से केन्द्रीय आचार्यकुल का क्या सम्बन्ध हो, इस पर भी चर्चा हुई। चर्चा के बाद आचार्यकुल का विधान बनाने के लिए एक उपसमिति बनायी गयी।

यह तय हुआ कि संयोजक इस उपसमिति की सहायता के लिए विधान की एक नमूने की संक्षिप्त रूपरेखा तैयार करके उपसमिति के सदस्यों के पास भेज दें। इस सम्बन्ध में कमेटी ने यह भी निर्णय किया कि दिनांक १९-२० व २१ सितम्बर को विधान उपसमिति की बैठक की जाय।

समिति ने उत्तरप्रदेश सरकार के छात्र-संघ सम्बन्धी अध्यादेश पर विस्तृत रूप से विचार करने का निश्चय किया। यह तय हुआ कि इसके लिए एक बैठक बुलायी जाय, जिसमें विद्यार्थियों, अध्यापकों, प्रधानाध्यापकों, अभिभावकों, कालेज-प्रबंधकों, जनता एवं सरकार के प्रतिनिधि सम्मिलित हों।

यह भी निश्चय हुआ कि समय-समय पर आचार्यकुल सहजीवन-शिविरों का आयोजन करे, जिससे आचार्यकुल के विचारों में निष्ठा रखनेवाले तीन-चार दिन तक साथ रह सकें। इस सहजीवन शिविर में अधिक-से-अधिक आचार्य सम्मिलित हों। समान विचार रखनेवाले छात्रों को भी इस शिविर में शामिल किया जाय।

बैठक ने निर्णय किया कि श्री वंशीधरजी केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के संयोजक के रूप में कार्य करते रहें।

आचार्यकुल : लोकनीति की निर्देशक शक्ति

गत २२ अगस्त को आगरा में केन्द्रीय आचार्यकुल समिति की दूसरी बैठक के अवसर पर एक पत्र-प्रतिनिधि सम्मेलन और एक आम सभा का भी आयोजन किया गया था।

पत्र-प्रतिनिधियों के सम्मेलन में श्री शीतला प्रसादजी ने पत्र-प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए आचार्यकुल के लक्ष्यों पर प्रकाश डाला और कहा कि अगर आचार्यकुल स्थापित हुए तो शिक्षा की अनेक समस्याओं के शांतिपूर्ण समाधान निकल आने की गुंजाइश है। इससे आचार्य अपनी खोयी हुई प्रतिष्ठा पुनः प्राप्त करेंगे।

सम्मेलन में प्रतिनिधियों ने आचार्यकुल के विचार का स्वागत करते हुए यह भाव व्यक्त किया कि अगर आचार्य दलगत राजनीति और सत्ता की राजनीति से अलग रहकर राष्ट्र-कल्याण की भावना से लोकनीति के निर्माण का काम हाथ में लेते हैं, और स्वयं अपना नैतिक स्तर ऊँचा

गांधी-चिन्तन

(वर्तमान समस्याओं पर प्रेरक लेखों, व्याख्यानों का संग्रह)

लेखक : मो० क० गांधी
अनुवादक : यशपाल जैन
प्रकाशक : गांधी शांति प्रतिष्ठान,
सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली
पृष्ठ-संख्या : २३२, मूल्य : ६ रुपये

देश व दुनिया के लोग गांधी को जानते हैं, लेकिन अफसोस इस बात का है कि जो लोग गांधी के बारे में कुछ-कुछ जानते हैं वे बहुत अपूर्ण ज्ञान रखते हैं; और अधिकतर लोग तो गांधी को अपनी-अपनी दृष्टि से अपने अनुकूल समझने की ही कोशिश में लगे होते हैं। दिखाई यह दे रहा है कि गांधी को समझने की अपेक्षा उनके नाम का इस्तेमाल करने की प्रवृत्ति देश में जोर-शोर से चल रही है।

'गांधी-चिन्तन' गांधी के चुने हुए लेखों व व्याख्यानों का संग्रह है। उनके बारे में कुछ भी कहने का अधिकार तो हम उनके जाने के बाद के वर्षों में किये गये अपने कारनामों के कारण खो बैठे हैं। सुन्दर भाषा-शैली और शब्दों में गांधी की प्रशंसा करके उनके प्रति हम अपना कर्तव्य पूरा नहीं कर सकते। आजादी के बाद की नयी पीढ़ी के लिए तो गांधी की कही और लिखी बातें ही उन्हें समझने का एकमात्र आधार हैं। अगर उनके कार्यों का सिलसिला भी इस देश में कायम रहा होता तब तो युवा पीढ़ी उसके द्वारा भी गांधी को समझ सकती थी, लेकिन आज तो गांधी की जय बोलकर अपना स्वार्थ सिद्ध करनेवालों ने गांधी के प्रति नयी पीढ़ी में दुराव ही पैदा करने के कारण प्रस्तुत किये हैं। अब हमारे देश की परिस्थिति और युग का यह तकाजा है कि हम गांधी को, गांधी के विचारों और कार्यक्रमों को सही रूप में समझें। देश की परिस्थिति के सदर्भ में हम उन्हें सही रूप में समझने की कोशिश करेंगे, तो हमारी बहुत-सी समस्याओं का हल उनके विचारों और सुझाये कार्यक्रमों से मिल सकता है।

'गांधी-चिन्तन' पुस्तक इस दिशा में सोचने-करने में बहुत सहायक होगी। पुस्तक में गांधीजी के आध्यात्मिक, राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक विचारों के साथ देश की परिस्थिति को बदल देने की उनकी योजना भी संकलित है। पुस्तक पढ़कर पाठक को सक्रिय होने की प्रेरणा मिले, इस दृष्टि से उक्त संकलन महत्वपूर्ण है।

गुणनिधि बापू

लेखक : बालकोबा भावे
पृष्ठ-संख्या : ७४, मूल्य : ७५ पैसे
प्रकाशक : ग्रामभावना प्रकाशन,
आश्रम, पट्टीकल्याणा,
जिला—करनाल (हरियाणा)

सच्चे शिक्षक वही होते हैं जो सिखाते भी हैं और सीखते भी हैं। गांधीजी इन मानों में सर्वश्रेष्ठ शिक्षक थे। इसीलिए वे गुणनिधि बन सके थे। लेकिन बहुसंख्यक विद्यार्थियों को सिखानेवाले एक सर्वश्रेष्ठ शिक्षक की शिक्षा की फलश्रुति जब उनके शिष्यों के द्वारा प्रकट होती है, तो उसमें हर व्यक्ति के बीच परिणाम में फर्क मालूम होता है। कोई तो प्रथम दर्जा प्राप्त कर लेता है, और कोई पास होने लायक प्रगति भी नहीं कर पाता। इसका आधार व्यक्ति की स्वयं की गुणग्राहिता और उद्यमशीलता ही है। गांधीजी जैसे सर्वश्रेष्ठ शिक्षक के पास रहनेवाले व्यक्ति भी 'जैसे थे' रहे हैं, और कइयों ने इतिहास में अपना नाम भी रोशन कर लिया है। बालकोबाजी उन व्यक्तियों में से हैं जिनको देखकर गांधीजी की कुछ झलक मिलती है, गांधीजी की परम्परा का सिलसिला चलता हुआ महसूस होता है।

ऐसे एक गांधी के सच्चे भक्त-शिष्य के द्वारा लिखी गयी यह छोटी-सी किताब है, जिसमें गांधी के गुणों का वर्णन मिलता है, परन्तु हीरे को परखनेवाला तो जौहरी ही हो सकता है। उस रूप में बालकोबाजी की गुणग्राहिता का परिचय भी हमको मिलता है। लम्बे अरसे तक गांधी के सान्निध्य में रहने का सौभाग्य उनको प्राप्त हुआ है, इसीलिए उनके जीवन के पावन प्रसंगों के वे सहभागी रहे हैं। इससे उनकी किताब में प्रभावशाली सजीवता आयी है। गांधी के गुणों का वर्णन उन्होंने बड़े-बड़े सुन्दर शब्दों व शैली में नहीं किया है, परन्तु उनके सहजीवन में घटित चिर-स्मरणीय घटनाओं का वर्णन सहजता से करके गांधीजी के गुणनिधि को खोलकर मूल्यवान रत्नों को प्रस्तुत किया है।

उनकी भाषा-शैली भी गांधीजी की तरह सरल, सुबोध, निराडम्बर और सुनियन्त्रित है। यह किताब पूरे ७५ पन्ने की भी नहीं है, लेकिन इतने में भी सचमुच उन्होंने एक बड़ी निधि को समेट लिया है। इस किताब से यह तो सिद्ध होता ही है कि उस महान शिक्षक ने इस देश को कितने महान व्यक्ति दिये हैं, और वह स्वयं महान होते हुए भी कितना सामान्य रहा। शायद यही तो उनकी महानता थी!

इस पुस्तक को पढ़कर पाठक उनके जैसी महानता प्राप्त करने की प्रेरणा प्राप्त करेंगे और अपने को महान समझनेवाले समानता की धरती पर उतर आने की प्रेरणा पायेंगे, अगर वे सक्रिय और सजग पाठक होंगे तो! —इरा

साम्प्रदायिक समस्या पर संगोष्ठी

आगामी २४ से ३० सितम्बर, १९७० तक वाराणसी में गांधी-शांति-प्रतिष्ठान, नई दिल्ली की ओर से साम्प्रदायिक समस्या पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। जिसमें देश भर में फैले हुए गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्रों के चुने हुए कार्यकर्ता और विद्वान-गण भाग लेंगे। संगोष्ठी का आयोजन अखिल भारत शांति सेना मण्डल के प्रधान केन्द्र राजघाट, वाराणसी में होगा।

मुजफ्फरपुर की डाक

भूमि-वितरण-समारोह

बुधनगरा पंचायत के डुमरी गाँव में ७ भूमिदानी द्वारा २१ भूमिहीनों के बीच ४ बी० १८ क० १८ धूर जमीन का वितरण किया गया। ३ सितम्बर को ग्रामीणों की ओर से भूवितरण-समारोह का आयोजन किया गया था, जिसमें श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने डेढ़ घण्टे के भाषण में आज की परिस्थिति एवं ग्रामस्वराज्य का अच्छा विश्लेषण किया। ज्ञातव्य है कि इस गांव में पिछले महीने में भी ५ बी० ५ क० जमीन का वितरण किया जा चुका है। डुमरी गाँव में ग्रामदान की आवश्यक शर्तें भी अब शीघ्र पूरी होनेवाली हैं। इस पंचायत के मोमिनपुर गाँव में ग्रामसभा का गठन हो चुका है तथा बुधनगरा राघो गाँव में ग्रामदान की आवश्यक शर्तें पूरी हो गयी हैं। अब शीघ्र ही ग्रामसभा का गठन करने का सोचा जा रहा है। बुधनगरा जगरनाथ में बचे हुए भूमिवानों को शामिल करने का प्रयास जारी है।

ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक

मुसहरी प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक समिति के अध्यक्ष श्री काली प्रसाद सिंह की अध्यक्षता में तथा जयप्रकाशजी की उपस्थिति में मणिका-शिविर पर हुई। बैठक में उन पंचायतों के प्रतिनिधि अधिक संख्या में उपस्थित हुए, जिन पंचायतों में अभी ग्रामस्वराज का काम चल रहा है। बैठक में अब तक की प्रगति का लेखा-जोखा किया गया, एवं प्रगति को गति तेज करने के लिए विचार-विमर्श हुआ। इस काम के लिए स्थानीय मित्रों के सहयोग का आश्वासन प्राप्त हुआ। बैठक में निर्णय किया गया कि अब रोहुआ पंचायत में भी कार्य प्रारम्भ कर दिया जाय। शिक्षकों तथा स्थानीय मित्रों के सहयोग से ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए तीन हजार रुपये संग्रह करने का निर्णय लिया गया।

यह महसूस किया गया कि जिन गाँवों में ग्रामसभाओं का गठन हो चुका है, वहाँ आगे का कार्यक्रम अब चालू हो। इसलिए तय हुआ कि आगामी २० सितम्बर को सभी ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी समिति के सदस्यों का एक दिवसीय शिविर का आयोजन सनहा स्कूल में किया जाय।

इंजीनियरिंग कालेज, सिन्दरी के छात्र मुसहरी के गाँवों में

मुसहरी प्रखण्ड में चल रहे ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रम का अध्ययन करने हेतु बी० आई० टी० सिन्दरी की छः छात्र दस दिनों के लिए ३ सितम्बर को शिविर पर पहुँचे। उन्होंने मुसहरी प्रखण्ड के गाँवों में ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रम का अनुभव प्राप्त किया। इन छात्रों की विशेष रुचि तरुण-शान्तिसेना के कार्यक्रम में है। मुसहरी प्रखण्ड में जयप्रकाश नारायण ग्रामस्वराज्य के काम में लगे हैं, इसकी जानकारी समाचार-पत्रों में पढ़कर प्रत्यक्ष रूप से उनके द्वारा हो रहे कामों का अनुभव लेने की प्रेरणा इन छात्रों को हुई।

तरुण-शान्तिसेना का मोर्चा

मोमिनपुर गाँव के तरुण शान्ति-सैनिकों ने बच्चों का एक विद्यालय चलाना प्रारम्भ कर दिया है, तथा बेंकटपुर गाँव में रात्रि-पाठशाला का भी प्रबन्ध किया गया है। मुजफ्फरपुर नगर में तरुण शान्ति-सैनिकों ने ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए १३ सितम्बर को एक 'चैरिटी शो' का आयोजन किया। विनोबा-जयन्ती के अवसर पर ११ सितम्बर को मुजफ्फरपुर नगर में तरुण शान्तिसैनिकों का एक मौन जुलूस भी निकाला गया। —सुरेन्द्र विक्रम

—कैलाश प्रसाद शर्मा

ग्रामस्वराज्य-कोष

दिल्ली में

भरतराम का प्रमुख दान प्रमुख उद्योगपति व दानदाता श्री भरतराम ने ग्रामस्वराज्य-कोष में २५,००० रु० का दान दिया है। दिल्ली के ५ लाख के लक्षांक में यह अभी तक का सबसे बड़ा दान है।

दिल्ली नगर-यात्रा दिल्ली के विभिन्न क्षेत्रों में चल रही सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की चार हफ्ते की नगर-यात्रा में अभी तक ४,५०० रु० का दान मिला है।

दिल्ली विश्वविद्यालय ग्रामस्वराज्य-कोष में अभी तक ३१५ का संग्रह हुआ है। कु० मालती निम्भाराजू, मिरांडा हाउस, श्री रमेशचन्द्र शर्मा, आत्माराम कालेज, श्री रामेश्वरदयाल शर्मा, सनातन धर्म कालेज, श्री नन्द प्लाहा, करोड़ीमल कालेज, श्री आर्यभूषण भारद्वाज के नेतृत्व में विद्यार्थियों में कोष-संग्रह-कार्य में संलग्न हैं।

अन्य प्रदेशों में

गुजरात ने अभी तक १,७०,००० का संग्रह किया है। कलकत्ता में १,६२,००० का संग्रह हुआ है। बम्बई में ३,५०,०००; बिहार में १,५०,०००; उत्तर प्रदेश में में १ लाख तथा कडोली (मैसूर क्षेत्र) में ३३,००० रुपयों का संग्रह हुआ है।

मध्यप्रदेश में डेढ़ लाख रुपये एकत्रित

गत १ सितम्बर तक प्राप्त जानकारी के अनुसार राज्य में ग्रामस्वराज्य-कोष के अन्तर्गत लगभग डेढ़ लाख रुपये की धनराशि जमा हो चुकी हैं।

विभिन्न जिलों की १३ नगरपालिकाओं की ओर से ८,२६१ रुपये की राशि कोष-हेतु सीधे प्रान्तीय कार्यालय में पहुँची है। इसके अलावा भोपाल और उज्जैन नगर-निगमों ने क्रमशः ४,००० और ३,००० की राशि कोष में दी है, जो सम्बन्धित जिला समितियों में जमा होकर उक्त संग्रह में शामिल है। मण्डी कमेटी के नाते सर्व-प्रथम धामनोद (धार) से २०० रु० प्रान्तीय कोष-कार्यालय में जमा किये हैं। ●

भूदान-यज्ञ २१-९-'७० लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल, ३५

देशभर में विनोबा-जयन्ती समारोह के आयोजन

ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह का सिलसिला जारी

उत्तरप्रदेश : विभिन्न शहरों में विनोबा-जयन्ती पर भिन्न-भिन्न संस्थाओं द्वारा विविध कार्यक्रम आयोजित किये गये। गांधी-आश्रम, मेरठ के कार्यकर्ताओं ने प्रभात-फेरी, साहित्य-बिक्री तथा ग्राम-स्वराज्य-कोष-संग्रह और सार्वजनिक सभा का आयोजन किया। कानपुर की विभिन्न संस्थाओं के कार्यकर्ता २६ सितम्बर तक नगर में ग्राम-स्वराज्य कोष का अभियान चला रहे हैं। लखनऊ की अनेक संस्थाओं, और स्कूलों, कालेजों ने प्रभात-फेरी, कोष-संग्रह, विनोबा विचार-प्रचार व प्रार्थना-सभाओं के कार्यक्रम आयोजित करके विनोबा को श्रद्धांजलि अर्पित की। अमीनाबाद (लखनऊ) स्थित महिला विद्यालय में आयोजित सभा में विनोबा के ग्रामदान-आन्दोलन का समर्थन करते हुए उनके दीर्घायु होने की शुभकामना व्यक्त की गयी। शांति केन्द्र, जनेऊपुर, जिला-बलिया ने विनोबा-जयन्ती पर कुछ विशेष कार्यक्रम आयोजित किये; जिनमें शिवमन्दिर में हरिजनों की प्रार्थना-सभा, विचार-गोष्ठी, भूमिवानों से भूमि मुक्त करने की अपील करने के लिए शांतिमय प्रदर्शन तथा गरीबों को घर आदि के लिए जमीन का बँटवारा, मुख्य थे। मथुरा नगर और अतुर्रा तथा सादाबाद में भी इस अवसर पर सभाएँ हुईं और विनोबा के शतायु होने की शुभ-कामना व्यक्त की गयी।

मध्यप्रदेश : सर्वोदय-कार्यकर्ता, स्कूलों व कालेजों के अध्यापक, छात्र तथा सभी स्तर के सरकारी और गैरसरकारी लोगों ने मिलकर सतना शहर में प्रभात फेरी एवं प्रार्थना-सभा के कार्यक्रम आयोजित किये। सभा में देश व दुनिया की वर्तमान परिस्थिति के सन्दर्भ में विनोबा के विचार का समर्थन और आन्दोलन के प्रसार में अपनी शक्ति लगाने पर जोर दिया गया।

हरियाणा : सार्वजनिक प्रार्थना-सभा, प्रभात-फेरी व कोष-संग्रह के कार्यक्रम हिसार शहर में सम्पन्न हुए, तथा विनोबाजी के व्यक्तित्व और कर्तृत्व के विभिन्न पहलुओं पर अभिप्राय व्यक्त करते हुए उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की गयी।

राजस्थान खादी-ग्रामोद्योग समिति, भरतपुर द्वारा आयोजित सभा में कताई करनेवाले सेवकों ने अपनी पूरे दिन की कताई तथा पिंजारों ने आधे दिन की मजदूरी और कार्यकर्ताओं ने एक दिन का वेतन ग्रामस्वराज्य-कोष में देने का निश्चय करके विनोबा को श्रद्धांजलि अर्पित की।

बिहार : गीनहा (जिला-चम्पारन) गांव में प्रार्थना-सभा आयोजित करके विनोबा के शतायु होने की शुभकामना व्यक्त की गयी, तथा उनके मालिक-मजदूर के बीच प्रेमपूर्ण समझौता करानेवाले आन्दोलन की सराहना करते हुए उसकी अनिवार्यता बतायी गयी।

मुंगेर के जमुई अनुमंडल में खादीग्राम के पास भूदानपुरी में आदिवासियों और क्षेत्र के पिछड़े लोगों ने विनोबा-जयन्ती को एक त्यौहार के रूप में मनाया और लोक-भाषा-शैली में विनोबा एवं भूदान के गीत-नृत्य सहित सभा का आयोजन किया। चकाई क्षेत्र के ग्रामदानी प्रतिनिधियों का ग्रामस्वराज्य-सम्मेलन ग्रामदानी गांव घोरमो में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर दो ग्रामदानी गांव की ग्रामसभाओं ने बीघा-कट्ठा वितरित किया। ग्रामसभा केलुआडीह द्वारा २·४४ एकड़ तथा ग्रामसभा घोरमो द्वारा ३·०५ एकड़ भूमि का प्रमाण-पत्र भूमिहीनों को प्रदान किया गया। ग्रामसभा के प्रतिनिधियों ने अपने-अपने गांवों में हुए काम की जानकारी अपनी टूटी-फूटी भाषा में सभा के सामने प्रस्तुत की। आमतौर पर यह अनुभव व्यक्त किया गया कि ग्रामदान के बाद गांव में मुकदमेबाजी कम हुई है। सभा के इस प्रेरक दृश्य से कोई भी व्यक्ति अप्रभावित नहीं रह गया। संथाल के एक तरुण और कर्मठ कार्यकर्ता ने तो इस अवसर पर अपनी पूरी ताकत से ग्रामस्वराज्य की स्थापना के काम में लग जाने का संकल्प घोषित किया। उक्त तरुण ने कहा कि पहले मैं विनोबा और उनके आन्दोलन को कल्पना की ही चीज मानता था, लेकिन आज उस लोकक्रान्ति का प्रत्यक्ष दर्शन करने के बाद लगता है कि स्थिति इसके विपरीत है। क्रांति की व्यावहारिक बात करनेवाले ही कहीं धरती पर नहीं दीख पड़ते।

फतहपुर (गया) में भूदान-किसानों शिक्षकों, विद्यार्थियों, नागरिकों की विशाल सभा में रात को श्रद्धांजलि अर्पित की गयी। इस अवसर पर विनोबा से सम्बन्धित एक निबंध-प्रतियोगिता में भाग लेनेवाले छात्रों को सर्वोदय-साहित्य भेंट किया गया। ■

खादीग्राम में श्रमजयंती

१० सितम्बर '७० को श्री धीरेन्द्र भाई ने अपने जीवन के ७० वर्ष पूरे किये। इस अवसर पर हर वर्ष की भांति खादी-ग्राम के आसपास के गांवों में 'श्रम-प्रतियोगिताएँ' हुईं, जिसका अंतिम कार्यक्रम खादीग्राम में हुआ। वर्षों से इस क्षेत्र में धीरेन्द्र भाई के जन्मदिन को श्रम-जयंती के रूप में मनाया जाता है। श्रम-प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त करनेवालों को श्रम के औजार भेंट में दिये गये। इस अवसर पर ७० पेड़ों का एक आम्रकुंज भी लगाया गया, जिसमें धीरेन्द्रभाई के साथियों, शिष्यों और गांव के प्रशंसकों ने अपनी-अपनी ओर से एक-एक पेड़ लगाया। ●

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १६ अंक : ५२

सोमवार २८ सितम्बर, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ
राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

"...मैं अत्याचारी तलवार की धार को पूरी तरह कुंठित करना चाहता हूं, उसके विरोध में एक अधिक तेज शस्त्र को रखकर नहीं, किन्तु उसकी इस आशा को, कि मैं उसका शारीरिक प्रतिरोध करूँगा, निराशा में बदलकर।[1]

"...क्षमाशीलता भीरू का नहीं, योद्धा का आभूषण है" यदि भीरुता और हिंसा में एक का चुनाव करना हो तो मैं हिंसा को स्वीकार करूँगा।[2]

"...और मैं एक जाति की नपुंसकता की अपेक्षा हजारों बार हिंसा का खतरा उठाने को तैयार हूँ।[3]

"...मैं मारने की अपेक्षा मरने का साहस रखना चाहता हूं, लेकिन जिस आदमी का ऐसा साहस नहीं है, मैं उसके लिए यही चाहूँगा कि आपत्ति से लज्जापूर्वक पीछे हटने के बदले वह मारने और मारे जाने की कला अपनाये।[4] —मो० क० गांधी

१—"यंग इंडिया" ४ अक्तूबर, १९२८, "हिन्द-स्वराज", । २—११ अगस्त
३—४ अगस्त, ४—२ अक्तूबर, १९२०।

सम्पादकीय

केरल में हार-जीत

केरल में चुनाव हो चुका। फल घोषित हो चुके। अब सरकार बनाने की दौड़-धूप हो रही है। सरकार बन भी जायगी। इतना होने पर भी लोगों के मन में यह सवाल बना ही रह जायगा कि वहाँ सचमुच जीता कौन, और हारा कौन ? और, यह जो सरकार बनेगी क्या वह चलेगी ? यदि चल भी गयी तो क्या टिकेगी ?

चुनाव में इन्दिराजी की कांग्रेस जीती। कांग्रेस से अधिक इन्दिराजी की जीत हुई। यह सिद्ध हो गया कि पुरानी कांग्रेस में विरोधी महारथियों को परास्त करनेवाली, बैंकों को एक कलम से अपने हाथ में ले लेनेवाली, तथा राजाओं-महाराजाओं का नाम और निशान मिटानेवाली, इन्दिराजी का जादू सामान्य लोगों पर चलता है। उन्होंने करिश्मा करने की अपनी शक्ति का भरपूर परिचय दिया है, और हमारी जनता—केरल की शिक्षित जनता भी—उसकी कायल हुई है। जिस केरल में सन् १९५२ में सबसे पहले कांग्रेस की हार हुई, आज वहाँ इन्दिराजी की बदौलत फिर उसका नाम लिया जा रहा है। फिर भी इस जीत को कांग्रेस की जीत मानना कठिन है, और यह कहना भी कठिन है कि इस जीत से कांग्रेस कब तक जियेगी।

इन्दिरा-कांग्रेस तो जीती ही, अच्युत मेनन का कम्युनिस्ट-मिनी फ्रन्ट भी जीता है। अच्युत मेनन ने जानबूझकर यह चुनाव कराया था। उन्हें जनता का उतना विश्वास तो नहीं मिला जितना वह चाहते थे, फिर भी अपने साथियों और सहयोगियों के साथ गद्दी के हकदार तो वह हो ही गये। कहा जा रहा कि जनता अशांति और उपद्रव से ऊब चुकी है और अब केरल की गरीब और बेरोजगार जनता रोटी चाहती है; शांति और सुव्यवस्था चाहती है। इन्दिराजी की कांग्रेस तथा अच्युतजी की कम्युनिस्ट पार्टी से उसे रोटी की आशा है। लेकिन इतने कम बहुमत पर बननेवाली सरकार इस आशा को कहाँ तक पूरी कर सकेगी ? भ्रमों में भटकनेवाला भारतीय मन अभी भी भटकने से ऊबा नहीं है।

मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी को जितनी जीत मिली है, उससे कहीं ज्यादा जीत की उम्मीद थी। इस चुनाव में उन्हें सीटें भले ही कम मिली हों लेकिन वह सीटों की संख्या में अपनी हार नहीं देख रहे हैं। वह कहते हैं कि सीटें भले ही कम मिलीं, लेकिन उन्हें वोट प्रति उम्मीदवार ज्यादा मिले हैं। अगर चुनाव-पद्धति ऐसी होती कि वोटों के अनुसार सीटें मिलतीं, तो नम्बूदिरीपादजी का दल आगे निकल जाता। उन्हें भरोसा है कि सरकार से अलग रहने पर भी समाज में उनके दल का स्थान सुरक्षित है। वह अपने दल का भविष्य उज्ज्वल देखते हैं। इसीलिए वह चुनाव की ऐसी पद्धति की माँग कर रहे हैं जिसमें प्राप्त वोटों के अनुपात में सीटें मिलें।

लोग कहते हैं कि केरल छोटा भारत है। वह कुटिल राजनीति का क्रीडा-स्थल है। साक्षरता में देश भर में सबसे आगे, राजनैतिक दृष्टि से सबसे अधिक जागरूक, केरल वह आईना है जिसमें देश अपनी तस्वीर देख सकता है। सन् १९५२ से लेकर आज तक राजनीति की जितनी तोड़-जोड़ केरल देख चुका है उतनी और किसी राज्य ने नहीं देखी है। पिछले बाईस वर्षों में वहाँ ७ चुनाव हो चुके हैं, ११ सरकारें बदल-बदल चुकी हैं, और ४ बार राष्ट्रपति शासन लागू हो चुका है। इसका एक परिणाम यह हुआ है कि केरल में जाति, धर्म, और आर्थिक स्थिति के आधार पर बने हुए जो समुदाय हैं उनकी राजनैतिक निष्ठाएँ लगभग स्थिर हो चुकी हैं, और वे पहले से जानते हैं कि उन्हें किस दल को वोट देना है। इसलिए चुनाव में हार-जीत प्रायः उन लोगों के वोट से होती है जो न इधर होते हैं, न उधर, और जो प्रचार से प्रभावित होकर मतदान करते हैं।

प्रकृति से भर-पूरा केरल गरीब है। जमीन कम, लोग बहुत अधिक हैं। रोजगार बेहद कम है। फिर भी हर बच्चा स्कूल जाता है। भूखा, चंचल, शिक्षित केरल भात चाहता है। सामान्य व्यक्ति के मन में यह प्रश्न उठने लगा है, कि क्या नारों और चुनावों से भात मिल सकेगा ? उसे अब आश्चर्य होने लगा है जब वह देखता है कि जो झंडे कल तक अलग-अलग उड़ते थे वे अचानक आज एकसाथ उड़ने लगे हैं, और जो हमेशा साथ थे वे अलग हो गये हैं। कांग्रेस का तिरंगा, कम्युनिस्ट का हंसिया-हथौड़ा और और मुस्लिम लीग का चाँद, ये तीनों इस चुनाव में साथ उड़े! दूसरी ओर मार्क्सवादियों ने पुरानी कांग्रेस के साथ मिलकर उन लोगों से लड़ाई लड़ी, जो कभी उनके साथ थे। केरल का वोटर मन में समझ रहा है, कि चुनाव सचमुच उसकी लड़ाई नहीं, झंडों की लड़ाई है। झंडा दूसरे का है, वह सिर्फ डंडा लेकर दौड़ रहा है।

केरल के चुनाव में पूरे देश की रुचि थी। जो आज केरल में हुआ वह कल कलकत्ता और दिल्ली में भी हो सकता है। शीघ्र पश्चिमी बंगाल में मार्क्सवादियों के विरुद्ध कोई नया शक्तिशाली मोर्चा बन सकता है। कुछ-न-कुछ असर तो पड़ेगा ही। जोड़-तोड़ और सरकार बनाने-बिगाड़ने के नये ढंग जरूर दिखाई देंगे।

दलों की राजनीति झंडों की राजनीति है। जनता अभी तक झंडों की राजनीति को अपनी राजनीति मानती रही है, क्योंकि झंडे का डंडा उसके हाथ में रहा है। अब वह झंडों को छोड़कर केवल डंडे की ओर झुक रही है। अगर झंडों को भी डंडों की ही शक्ति से उड़ना है तो डंडों की ही चिन्ता क्यों न की जाय ? इस तरह हमारी विरोधवाद की राजनीति संघर्ष की राजनीति बनी, और अब संघर्ष की राजनीति संहार की राजनीति बन रही है। नक्सलवादियों के पास केवल डंडा है। लेकिन जनता अभी तक यह नहीं जानती कि वास्तव में उसकी राजनीति में न झंडे की आवश्यकता है, न डंडे की। जनता अपने में ही शक्तिशाली है। जनता की शक्ति उन हाथों में है जो न झंडे के मुहताज हैं, न डंडे के। इन दोनों से अलग उसकी तीसरी शक्ति है। क्या हम उसे इस तीसरी शक्ति का भान करायेंगे ? ●

आती है, जब मनुष्य अपने में विश्वास खोने लगता है।

गांधी-जयंती पर विशेष लेख

भय से आक्रांत विज्ञान और अहिंसा की शक्ति

❀ रेने हबाचि ❀

[श्री रेने हबाचि लेबनान के रहनेवाले और यूनेस्को के दर्शनशास्त्र प्रभाग के सदस्य हैं। इससे पहले वे बेरूत में लेबनानी, फ्रेंच और अमरीकी विश्वविद्यालयों के प्रोफेसर थे। उन्होंने दर्शनशास्त्र पर अनेक ग्रंथ लिखे हैं, जिनमें मध्यपूर्व पर ओरिएंट—पवेल एस्ट टोन ओक्सीडेन्ट ? (पूर्व, तुम्हारा पश्चिम क्या है ?) १९६६, ला फ्लोन निसी डि वालबेक (बालबेक का टूटा स्तंभ) १९६८; उने फिलासफी पोर नोट्रे टैंप्स (हमारे समय का दर्शनशास्त्र) १९६२, पोर उने पेंसी मेडीटैरेनीने (भूमध्य-सागरीय विचार का पुनरुद्धार) चार खंड १९५६-६०, आदि सम्मिलित हैं।]

गांधीजी की मृत्यु के बाद इतने अधिक भिन्न रूपों में हिंसा संसार में फैल गयी कि हम उन्हें पहचानने में असमर्थ हो गये। मानसिक हिंसा, आर्थिक हिंसा, प्रसारण प्रेस, और विज्ञापन के शस्त्रों और हथियारों की प्रत्यक्ष हिंसा के प्रसार के साथ प्रसारण, प्रेस और विज्ञापनों की बाढ़ से उत्पन्न सूक्ष्म दबाव, अमीर देशों की उपभोक्ता समितियों के आन्दोलन या गरीब राष्ट्रों की दुर्दशा—ये सब हमारे वर्तमान संसार के अनेक पहलू हैं जिनके कारण आमोल के अहिंसा के हिमायती डॉन हैल्डर कैमारा को यह कहना पड़ा "व्यवस्था और शांति का आभास सब जगह है, जो घोर अन्याय और क्रांति के प्रति धमकियों को छिपाये हुए हैं।"

और तब, अचानक एक संदेह हमको कँपा देता है—क्या हम सब हिंसात्मक स्थिति में नहीं जी रहे हैं ? क्या हम उसको दूसरों पर नहीं डालते ? क्या हम सब एक गहरी हिंसा के सहापराधी नहीं हैं, जो चुपके से जीवन के तंतुओं पर आक्रमण करती है, और जो तब तक छिपी रहती है जब तक वह मृत्यु और नाश फैलाने के लिए एकदम नहीं फूट पड़ती ?

मानवता में विश्वास

इस सर्वव्यापी हिंसा के आविर्भाव का विरोध गांधीजी ने विपरीत रूप में अहिंसा से किया है। किन्तु कमजोर स्वीकृति या सब करनेवाले क्रांतिवाद से नहीं। अहिंसा हिंसा के बिलकुल दूसरे छोर पर है, वह एक तरह से उलटी हिंसा का रूप है। उसकी शक्ति हिंसा के समान ही है, लेकिन उसमें विशेषता यह है कि वह अहिंसा को एक नैतिक शक्ति के रूप में बदल देती है, ताकि हिंसा का मुकाबला किया जा सके।

"मैं अत्याचारी तलवार की धार को पूरी तरह कुंठित करना चाहता हूँ, इसके विरोध में एक अधिक तेज शस्त्र को रख कर नहीं, किन्तु उसकी इस आशा को कि मैं उसका शारीरिक प्रतिरोध करूँगा, निराशा में बदलकर।" ('यंग इंडिया', ८ अक्तूबर, १९२५)

इस तरह अहिंसा स्वातंत्र्य की आत्मा और अंतिम उपाय है, जिसके बाद सबसे निष्ठुर व्यक्ति की अंतिम विजय का साधन पाशविक शक्ति ही रह जाता है। गांधीजी उस संसार की बात करते हैं जो अब भी मानवीय है, जिसमें अब भी आत्मा का निवास है, क्योंकि उनका अंतिम संदेश "मानवता में विश्वास है।"

मानवता में अपने विश्वास के लिए उन्होंने अपना जीवन ही दे दिया। फिर भी क्या मृत्यु के सामने यह अहिंसा, स्वतंत्र निर्णय की यह जीत, जो अहिंसा से अभिन्न है, इस बात का प्रमाण नहीं है कि मानवता में विश्वास न्याययुक्त है ? जब वे लोग, जिनकी जिंदगी आध्यात्मिक उदाहरण है, अंध हिंसा से मारे जाते हैं तो उनसे एक ज्योति निकलती है जो उन अंधकारपूर्ण घड़ियों में तेज का पुंज बन

अहिंसा : निःशस्त्र बल की प्रशांत शक्ति

पीछे हटने की युद्ध-नीति के साथ अहिंसा का बहुत ही कम सम्बन्ध है, उसका पहला काम विरोधी की शक्ति की परीक्षा करना है। गांधीजी पूछते हैं, "निस्सहाय की अहिंसा का क्या उपयोग है ?" उन्होंने सन् १९२० में लिखा था, "क्षमाशीलता भीरु का नहीं, योद्धा का आभूषण है··· यदि भीरुता और हिंसा में एक का चुनाव करना हो तो मैं हिंसा को स्वीकार करूँगा।" ('हिंद स्वराज', ११ अगस्त, १९२०) "और मैं एक जाति की नपुंसकता की अपेक्षा हजारों बार हिंसा का खतरा उठाने को तैयार हूँ" ('हिंद स्वराज' ४ अगस्त, १९२०) और फिर

"मैं मारने की अपेक्षा मरने का साहस रखना चाहता हूँ, लेकिन जिस आदमी का ऐसा साहस नहीं है, मैं उसके लिए यही चाहूँगा कि आपत्ति से लज्जापूर्वक पीछे हटने के बदले वह मारने और मारे जाने की कला अपनाये।" ('हिंद स्वराज', २ अक्तूबर, १९२०)

इसलिए जो अहिंसा का अभ्यास करेगा उसको पहले हिंसा की शक्ति को मापना चाहिए और सब कुछ होते हुए भी अहिंसा की पूरी चुनौती देने के लिए तैयार रहना चाहिए, चाहे उससे उसकी मृत्यु ही क्यों न हो जाये। क्या निःशस्त्र बल की प्रशांत शक्ति साहस की पराकाष्ठा नहीं है ?

जब अहिंसा की जीत होती है तब उसकी शक्ति का रहस्य क्या है ? वह यह है - अहिंसा, विरोधी की और उसकी शक्ति को या उसके किये हुए अन्यायों को एक समान नहीं मानती। विरोधी की हिंसायुक्त सुमझदारी और स्वतंत्रता के छोटे-से स्फुरण का भी वह आदर करती है। इस तरह अहिंसा अपने विरोधी का ध्यान उसकी उज्ज्वल आत्मा की ओर, उसके उत्तरदायित्वों की ओर उन मूल्यों

की ओर बदल देती है, जो अप्राप्य रूप से नहीं खोये हैं।

सत्य के लिए सविनय आन्दोलन

दूसरे शब्दों में, अहिंसा वह मार्ग है, जो उस खोये हुए सत्य की ओर जाता है जिसको पहले के हिंसात्मक कर्मों ने निर्विवाद कार्यों या शांति के ढोंग के पर्दे में बंद या आच्छादित कर रखा है।

गांधीजी का जीवन सत्य का अन्वेषण है जो और सब बातों की अपेक्षा उन्हें अधिक प्यारा था। सत्य उनका धर्म था। वे लिखते हैं, "सत्य ईश्वर है।" ('यंग इण्डिया', ३१ दिसम्बर, १९३१) उनके लिए, केवल अहिंसा जो उस एकाग्रचित्त योद्धा का प्रतिरूप है जिसने अपने अंदर के हिंसात्मक तत्व को मार दिया है, दृष्टिपथ से ओझल सत्य को प्राप्त करने या छिपे हुए सत्य को प्रकट करने में समर्थ है।

अहिंसा ही 'सत्याग्रह', जिसका शाब्दिक अर्थ है सत्य को पकड़, की प्रेरक महत्त्वाकांक्षा है। फ्रांसीसी प्राच्यवेत्ता लुई मासिग्नन ने, जो व्यक्तिगत रूप से गांधीजी से परिचित थे और उनके समर्थकों में से एक थे, इसका अनुवाद ठोस शब्दों में 'सत्य के लिए सविनय आंदोलन', किया है। इसका एकमात्र हथियार अहिंसा, दूसरों को पीड़ा न पहुँचाना, दूसरों का सम्मान करना है।

इस तरह सत्याग्रही का ध्येय सत्य है, उसका साधन है किसीको पीड़ा न पहुँचाना, जिसका स्वीकारात्मक पक्ष प्रेम और दया है। साध्य और साधन इतनी निकटता से अन्तर्ग्रथित हैं कि दूसरे उद्देश्यों के लिए युद्धनीति के उपाय या सामरिक दाँव के रूप में चालाकी से उसका प्रयोग नहीं किया जा सकता।

सत्याग्रही को बिलकुल सच्चा होना चाहिए और अहिंसा और दया उसके लिए प्राणरूप होती हैं। इसलिए उसको कठोर अनुशासन का पालन करना चाहिए और लंबी शिक्षा लेनी चाहिए। यह है 'ब्रह्मचर्य'—सभी इंद्रियों का अनुशासन, तपस्या।

उपवास, पवित्रता और मौन (गांधीजी प्रत्येक सोमवार को बिलकुल मौन रहते थे) के द्वारा हिंसा की ओर के झुकाव का नाश करना चाहिए। सबसे साधारण कपड़ा पहनने से, (इसलिए उन्होंने लुंगी पहनने और इसके लिए चरखे पर सूत कातने का आन्दोलन शुरू किया), आश्रम, प्रार्थना के स्थल जिन्हें गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका और भारत में खोला, में ध्यान लगाने से भी हिंसा का नाश होता है।

मैले हाथ प्रकाश को प्रज्वलित नहीं कर सकते

इस तरह अहिंसा के बाहरी आन्दोलन में लगने से पहले एक योद्धा को सारे प्रयत्न अपने अंदर की ओर लगाने चाहिए। स्वयं सत्य का प्रयोग किये बिना दूसरों से उसके प्रयोग की आशा कैसे की जा सकती है? मैले हाथ प्रकाश के मूल स्रोतों को प्रज्वलित नहीं कर सकते। इस तरह की कड़ी और अप्रत्याशित माँगों के द्वारा महात्माजी ने संपूर्ण राष्ट्र को आध्यात्मिक पथ की ओर, और साथ ही राजनीतिक स्वातंत्र्य की ओर जागृत किया।

हर प्रकार की हिंसा से ग्रस्त हमारे वर्तमान संसार में क्या गांधीजी के संदेश की अनुकूल प्रतिक्रिया की आशा हो सकती है?

कुछ लोगों ने गांधीजी के संदेश को किसी प्रकार की प्रचलित मान्यता इन कारणों से नहीं दी है कि कल की ऐतिहासिक परिस्थितियों में जो संभव था वह आज की परिस्थितियों में संभव नहीं है। रहस्यवादी होने की उनकी प्रसिद्धि और ब्रिटिश लोगों की उदारता और 'न्यायशीलता' के कारण गांधीजी राजनीति में प्रवेश करने में समर्थ हुए। परम्परा से प्रोटेस्टेंट एक राष्ट्र की नैतिकता, गांधीजी को अपने ही लोगों की सहायता तथा साम्राज्य के अधिकारियों से की गयी अपील की ओर से कान बंद नहीं कर सकती थी। इसलिए इस महात्मा ने अंग्रेजी विश्वविद्यालय की उपाधियों से सज्जित होकर और साधारण-से-साधारण कपड़े पहनकर शीघ्र ही अपने आप को बकिंघम महल में परिचित होते हुए पाया, लेकिन यह परिस्थिति अब कभी लौटनेवाली नहीं है।

यह भी दिखाया गया है कि जब भारत अखंड ब्रिटिश साम्राज्य का एक अंग था तब राजनीतिक और आर्थिक असहयोग के द्वारा सत्याग्रह का प्रभाव अत्यधिक प्रबल हो सकता था, किन्तु तुलना में आज के सापेक्ष रूप से पूर्ण विश्व-व्यापारिक ढाँचे में इस प्रकार का शांत प्रतिरोध ज्यादा दिन नहीं टहर सकता। एक स्थान के आर्थिक व्यापार का घाटा दूसरी जगह पूरा किया जा सकता था, जब कि आधुनिक राज्य के संपूर्ण प्रभुत्व का सिद्धांत आभ्यंतरिक मामलों में विदेशी दखल को रोक देता है। जैसा अक्सर होता है, हिंसा के द्वारा विरोध कुचला जा सकता है। इसलिए हिंसा के समर्थक कहते हैं कि अहिंसा को कभी मौका नहीं मिलेगा।

लेकिन यह तर्क केवल आधी कहानी बताता है। वह इस बात पर ध्यान नहीं देता कि अहिंसा के लिए अखंड साम्राज्य-प्रथा के तिरोभाव से नुकसान के बदले फायदा हो सकता है। आज, जब एक देश की अशांति का समाचार प्रसारित किया जाता है, दूसरे देशों में प्रायः सहानुभूति और एकात्मता का जन-आन्दोलन जन्म ले लेता है और राष्ट्रीय सार्वजनिक मत जल्दी ही अन्तर्राष्ट्रीय और सार्वलौकिक मत बन जाता है, और अन्याय करनेवालों पर प्रतिरोधी शक्ति का प्रभाव डालता है। (दुर्भाग्य से हमेशा नहीं, परिणाम विपरीत रूप ले सकता है जो पहले की अपेक्षा अधिक कठोर हो सकता है।) फिर भी, हम अनेक मिसालें दे सकते हैं, जो सिद्ध करती हैं कि एक क्षेत्र के शांत प्रतिरोध से बाहर के देशों से सामूहिक सहयोग मिलने के अच्छे अवसर मिल सकते हैं। इस तरह सीधे या परोक्ष रूप से शक्ति के दुरुपयोग को कम किया जा सकता है।

विश्वव्यापी संदर्भ

चूँकि आज किसी भी राष्ट्रीय घटना का विश्वव्यापी प्रतिघात हो सकता है—अहिंसा का भी, विशेषकर राष्ट्रसंघ के ढाँचे में अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व हो गया है। हिंसा का परमाणु बम केवल शांति के अंतिम शस्त्र द्वारा ही प्रभावहीन किया जा सकता है। मानवीय अंतःकरण के उच्चतम स्तरों पर ही आक्रमण का जोश समझौते की दिशा में बदला जा सकता है।

किसी भी मूल्य का शांतिवाद और किसी भी मूल्य का नीतिवाद आदर्शमात्र या खतरनाक है, गांधी—"व्यावहारिक आदर्शवादी" जैसा वे कहलाते थे—पास्कल के भव्य शब्दों में वर्णित संतुलन के सिद्धान्त को अस्वीकार नहीं करते

"शक्ति के बिना न्याय निस्सहाय है, न्याय के बिना शक्ति निरंकुश है। इसलिए हमें न्याय और शक्ति को मिलाना चाहिए और इस उद्देश्य के लिए न्याय को सशक्त बनाइए और सशक्त को न्याय बनाइए।"

इसका मतलब यह है कि अपने योग्य न्याय की रक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की अंतर्राष्ट्रीय सेना होनी चाहिए। किन्तु अंतर्राष्ट्रीय सत्याग्रह का यह पहला कदम है और हिंसा को दूर करने के बदले केवल मात्र में रखता है। इसलिए हमें और आगे बढ़ना चाहिए।

आम निःशस्त्रीकरण अहिंसा का व्यावहारिक प्रदर्शन होगा। आक्रमणशील चेष्टा की संभावना का परित्याग कर वह सशस्त्र हस्तक्षेप के छिपे विचारों पर दबाव डालेगा और अपनी भिन्नताओं पर विचार-विनिमय करने के लिए राष्ट्रों को विवश करेगा। यहाँ, नाभिकीय निःशस्त्रीकरण की तीव्र गति, निस्संदेह, सही दिशा में पहला कदम होगी। किन्तु क्या हिंसा के साधनों के दूरीकरण से हिंसा के आधारभूत कारणों का नाश हो जायेगा? इसलिए हमें और आगे बढ़ना चाहिए।

पोप पॉल षष्ठ की उद्घोषित "शांति का नया नाम विकास है" को स्वीकार करते हुए क्या विज्ञान और शिल्प-विज्ञान का प्रयोग, आपस के बीच की खाई को फैलाने और आधी दुनिया को निस्सहाय अवस्था में छोड़ देने के बदले वर्तमान असमानताओं को कम करने में नहीं हो सकता? एक तरफ शक्ति और दूसरी तरफ दुर्गति, ऐसी अवस्था में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मामलों में किस तरह का जनतंत्र हो सकता है? शक्ति हिंसा का प्रलोभन है, और दुर्दशा निराशापूर्ण कामना का प्रलोभन है।

"शांति के नये नाम" में आक्रमणकारी को नेतृत्व लेना चाहिए और विपत्ति से ग्रस्त मानव जाति की समस्याओं का स्पष्ट रूप से और निस्संकोच सामना करना चाहिए। उन्नत राष्ट्रों को सर्वोत्तम मस्तिष्क शक्ति को भावी विकास दशक के लिए समुचित योजना-निर्माण में प्रयुक्त करना चाहिए। काम शुरू करने से पहले हमें अपने ऊपर मँडरानेवाली विश्व-आपदा की छाया का इंतजार नहीं करना चाहिए। इस तरह हमें अहिंसा का सिद्धान्त अपनाना पड़ेगा, जिससे बढ़ती दुर्दशा और गरीबी के फलस्वरूप 'तीसरे विश्व' में होनेवाले विस्फोटन का नाश हो सकेगा। चूँकि दूसरों की सहायता करने के हमेशा अपने पक्ष होते हैं, इसलिए अधिक उपभोग करनेवाले समुदायों को उस भार से मुक्ति मिलेगी जो उनको उनकी संपत्ति से बाँधे रखता है। अतिभोग अल्पपोषण के समान ही शोषक और अमानवीय है।

राष्ट्रसंघ में पहले से आरम्भ हुआ यह प्रयत्न (जो आंतरिक विसंगतियों के कारण भीरु और प्रायः हतोत्साहित-सा है) अहिंसा के नाम पर किया जाय तो उसको एक नया उत्साह मिलेगा। यहाँ हम केवल मानव-अधिकारों की घोषणा पर या इन अधिकारों की रक्षा पर, जो देशों की ईर्ष्यालु प्रभुसत्ता से बुरी तरह बाधित हुई है, विचार नहीं कर रहे हैं। गांधीजी के सिद्धांत में वह 'सत्य का अंतर्राष्ट्रीय परीक्षण', मित्रता का विश्व-आन्दोलन अर्थात् 'अहिंसा' होगा।

अहिंसा की परंपरा

क्या हम आशा कर सकते हैं कि राष्ट्र-संघ के सदस्य देश अहिंसा के इस तत्त्व से एकदम अनुप्राणित हो सकेंगे? क्या हमारे चारों ओर के संसार में गांधीजी की आवाज सुनाई देगी, जिसमें और आवाजें न मिली हों? इसलिए यह बड़ा आवश्यक है कि हमारे पास अहिंसा के ऐसे शिष्य हों जो नागरिक कर्त्तव्यों का पालन करते हुए हिंसा को रोकते हों, अन्याय का विरोध करते हों और सभी लोगों से अपने आंतरिक निःशस्त्रीकरण को एक अदम्य कवच के रूप में बदलने के लिए निवेदन करें।

एक मार्टिन लूथर किंग हैं जिनका जीवन गांधीजी की दुःखद याद दिलाता है। उन्होंने अपने अनुयायियों से अहिंसा और ब्रह्मचर्य के सिद्धान्तों को प्रतिध्वनित करनेवाले दस आदेशों से युक्त 'कमिटमेंट ब्लैक' (पूर्ण प्रतिज्ञा) योगदान देने को कहा। जैसे

"२—हमेशा याद रखिए कि अहिंसात्मक आन्दोलन** न्याय और समझौता चाहता है, न कि विजय।

५—सब लोगों के स्वातन्त्र्य के लिए व्यक्तिगत इच्छाओं का त्याग कीजिए।

६—मित्र और शत्रु, दोनों के साथ शिष्टाचार के साधारण नियमों का पालन कीजिए।

९—अच्छा आध्यात्मिक और शारीरिक स्वास्थ्य रखने की कोशिश कीजिए।

१०—प्रदर्शन के समय आन्दोलन के, और नेता के आदेशों का पालन कीजिए।"

फिर "धर्म, न्याय और शांति" आन्दोलन के नेता और ब्राजील के पादरी डॉम हेल्डर कैमारा हैं, जो मार्टिन लूथर किंग की तरह, रचनात्मक प्रतिरोध के सिद्धान्त द्वारा न्याय के लिए धार्मिक सिद्धान्तों (गॉस्पल) का आह्वान करते हैं:

"धर्म, न्याय और शांति का आविष्कार दलितों के विद्रोह के निःशस्त्रीकरण के लिए नहीं हुआ, किन्तु हम सबके विद्रोह को, हम सबके विरोध को एक साहसपूर्ण,

गांधी की अहिंसा : समभाव की साधना

❀ अण्णा सहस्रबुद्धे ❀

सन् १९२७ में गांधीजी पूरे समय आश्रम में रहे। उन दिनों मैं १५ मार्च से २८ जून तक आश्रम में ही रहा और गांधीजी को निकट से जानने-समझने का मौका मिला। उन दिनों सुबह-शाम प्रार्थना में गांधीजी के प्रवचन होते थे। सत्य और अहिंसा किस तरह एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, उनका अविभाज्य सम्बन्ध है; यह वे बताया करते थे। एकादश व्रतों के बारे में उनका कहना था "जो चीज आत्मा का धर्म है लेकिन अज्ञान या दूसरे कारणों से आत्मा को जिसका भान नहीं रहा, उसके पालने के लिए व्रत लेने की जरूरत होती है।" ईश्वर को 'नम्रता का सम्राट' कहते हुए उसकी पूजा में उन्होंने ये व्रत अपनाये।

उन दिनों हमारी धारणा थी कि आध्यात्मिक जीवन का जितना आविष्कार और दर्शन एक-एक व्यक्ति में होगा उतना ही वह ऊँचे विचारों की मला, अहिंसा के तत्त्वों को आचार में ला सकेगा। समाज तो सत्, रज, तम, तीनों से भरा हुआ रहता है। जिसको रोटी की ही समस्या है वह विनाशों से भरा रहता है। उसका निश्चित अर्थ, एक महान् और रचनात्मक अर्थ देने में सहायता देने के लिए हुआ था।

"धर्म, न्याय और शांति का जन्म अनुकूलनशील और अनुकूल रहनेवाला एक उदासीन आन्दोलन बनने के लिए नहीं हुआ, क्योंकि हम जानते हैं कि ईश्वर अकर्मण्यता से नफरत करते हैं। शांति-वादी की हिंसा उसका ध्येय है और ईश्वर की कृपा से वही उसका ध्येय रहेगा।"

और यहाँ गांधीजी के निकट के शिष्य हैं आचार्य विनोबा भावे, जिनकी रचनाएँ और लेख 'अहिंसा की क्रांति' में अभिलेखबद्ध हैं, जो अपने 'भूदान-यज्ञ' द्वारा अमीरों पर विजय पाने के लिए भारत में गाँव-गाँव में घूमते हैं, जिस यज्ञ द्वारा ग्रामीण परिवारों की भलाई के लिए भूमि का पुनर्वितरण किया जाता है। प्रत्येक गाँव में वे सामाजिक सहयोग की प्राप्ति के लिए लोगों को जगाने के लिए 'शांतिसेना' की स्थापना कर रहे हैं।

"हवा और पानी की तरह सारी भूमि परमात्मा की है। यदि भूमि का वितरण उचित ढंग से होता है, तो वर्तमान असन्तुलित-पूर्ण स्थिति सद्भाव, भ्रातृत्व और सहयोग के युग में बदल सकती है।"

कोई सीमा नहीं

कारटर या गांधी (जो स्वयं 'सरमन आन द माउंट' से बहुत प्रभावित हुए थे और उसके शब्दों को गंगा के किनारे प्रतिध्वनित करते थे) से प्रेरित होकर अहिंसा के पुजारी देशों और लोगों की आपसी निर्भरता पर जोर देते हैं और अपने राष्ट्रीय आन्दोलन को विश्व-एकता के आन्दोलन का एक भाग मानते हैं। सन् १९२५ में कलकत्ता के एक भाषण में गांधीजी ने घोषणा की थी :

"अपनी तरफ से मैं भारत की आजादी नहीं चाहता, यदि उसका मतलब इंग्लैण्ड का नाश या अंग्रेजों का तिरोधान है। मैं अपने देश की आजादी इसलिए चाहता हूँ कि मेरे स्वतंत्र देश से दूसरे देश कुछ सीख लें, ताकि मेरे देश की सम्पत्तियों का मानवता की भलाई के लिए उपयोग हो सके।"

यह सार्वलौकिक दृष्टिकोण केवल आदर्श नहीं है; यह एक सजीव अनुभव है, मनुष्य की बुद्धि, अनुभूति और प्रेम का परिणाम :

"मेरे धर्म की कोई भौगोलिक सीमाएँ नहीं हैं। यदि उसमें मेरा सजीव विश्वास है तो वह भारत के प्रति मेरे प्यार से भी श्रेष्ठ होगा। पृथक् स्वातंत्र्य संसार के देशों का ध्येय नहीं है। यह स्वैच्छिक अन्योन्याश्रय है। देशों के संकीर्ण सीमा-प्रांतों को पार कर अपने पड़ोसियों तक हमारी सेवाओं को आगे बढ़ाने की कोई सीमा नहीं है। ईश्वर ने उन सीमा-प्रांतों को कभी नहीं बनाया।"

यदि हम वन के एक सहवासी मानव विकास तम से रज की तरफ जाने में हो सकता है। भले ही गांधीजी तथा इस तरह के साधु पुरुष आम समाज में प्रेरणा दें, पर अमल में लाने की शक्ति समाज में पैदा नहीं होगी; क्योंकि उस समय आम लोगों का जोर स्वराज्य-प्राप्ति पर ही था। राजनैतिक परिवर्तन का ही मुख्य सवाल था। आध्यात्मिक उत्थान की ओर उतना ध्यान नहीं दिया था। हम लोगों ने भी, जो उनके साथ थे, अपने व्यक्तिगत जीवन में कोई आध्यात्मिक उत्थान की ओर उतना ध्यान नहीं दिया था। हमें भी स्वतंत्रता-प्राप्ति की ही मुख्य आकांक्षा थी, पर गांधीजी की सारी प्रेरणा आध्यात्मिक थी। वे कहते थे कि अंग्रेजों से कोई द्वेष नहीं, हम तो इस ढाँचे को तोड़ने की कोशिश में हैं। लेकिन हम लोगों के मन में तो अंग्रेजों के प्रति द्वेष था ही, बस आश्रम में रहने और गांधीजी के साथ-साथ के अनुशासन के नाते हम शांत थे। गांधीजी के लिए तो साधन-शुद्धि की बात उनके सारे आन्दोलन की मध्य-बिन्दु थी। वे केवल साधन-शुद्धि ही नहीं, बल्कि शुद्ध साधन से ही साध्य पैदा होगा, ऐसा मानते थे। अहिंसा की नींव पर विचार करते हैं तब हम यह याद करना नहीं भूल सकते कि गांधीजी की अहिंसा का उद्देश्य सिर्फ आदमी को अशक्त बनानेवाली बेड़ियों को तोड़ना ही नहीं, बल्कि उसकी प्रगति के लिए नये-नये मार्ग खोजना था :

"हमारी सेवाओं को देशों के बनाये हुए सीमा-प्रांतों के पार अपने पड़ोसियों तक पहुँचाने की कोई सीमा नहीं है। परमात्मा ने उन सीमा-प्रांतों को कभी नहीं बनाया।"

भय से आक्रांत विज्ञान एक नाशकारी शक्ति है। अहिंसा का बल पाकर विज्ञान रचनात्मक हो सकता है। (विश्व दर्शन की पत्रिका 'यूनेस्को कूरियर' के 'गांधी'… विशेषांक से साभार पुनर्मुद्रित) ●

पर समग्र जीवन का निर्माण करना उनका ध्येय था।

गांधीजी प्रार्थना को बहुत अधिक महत्त्व देते थे। हम लोग भी आंख बन्द कर उसमें बैठते थे। हम लोगों की तो एकाग्रता नहीं सधती थी और दूसरे लोग जो कहते थे कि उन्हें एकाग्रता सधती है वे, हमें लगता था कि, ढोंग करते हैं। पर आज हमको ऐसा लगता है कि सतत अभ्यास करते रहने से एकाग्रता सध सकती है। जीवन में कुछ नियम और व्रत रखते हैं, तो उसका जरूर लाभ मिलता है इसका आज मैं अपने जीवन में स्पष्ट अनुभव करता हूं।

स्वराज्य के इतने सालों बाद अनुभव पर से देखा जाय तो जरूर लगता है कि साधन और साध्य में पूरी शुद्धता रहती, तो आज का हमारा सार्वजनिक जीवन भी ज्यादा शुद्ध और ध्येयवादी रहता। गांधीजी स्वयं सत्ता में आने के आकांक्षी थे नहीं, और रचनात्मक काम में लगे लोगों को भी सेवा के द्वारा जनशक्ति के काम में ही लगाये रखना चाहते थे। एक बार अहमदाबाद में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की बैठक थी। हम लोग भी देखने जाना चाहते थे। उन्होंने हंसकर कहा, "मैं आप सबकी तरफ से तमाशा देखने जा रहा हूं। आप लोगों को उसमें जाने की जरूरत नहीं।"

विचारपूर्वक कितना भी कर्म किया जाय है, चाहे भले ही उसका हेतु शुभ हो, पर उसका समाज के ऊपर अच्छा असर नहीं होता। विचार ही प्रधान रूप से आंख के सामने रहते हैं। त्याग का अहंकार अन्य अहंकारों से कहीं अधिक बुरा है। गीता में इसीलिए कहा गया है कि कर्म के साथ विकर्म जोड़ना चाहिए। गांधीजी को इसकी अनुभूति थी। वे प्रायः कहा करते थे कि स्वधर्माचरण तथा त्यागमूलक काम करते समय मन और बुद्धि का, चित्त-शुद्धि के द्वारा, बाह्य कर्मों के लिए सहकार मिलते रहना चाहिए। जब यह नहीं होता है तो व्यक्ति और समाज में तनाव बढ़ते हैं, जिसका प्रत्यक्ष अनुभव आज के सामाजिक जीवन में साफ दिखाई पड़ता है।

आजादी की लड़ाई के दिनों में बस एक धुन थी कि देश का काम कर रहे हैं। लेकिन मन को भी साथ-ही-साथ ऊंचा उठाने का प्रयास शुद्ध, शुद्धतर, शुद्धतम की भूमिका से होता रहे, चित्त की एकाग्रता रहे, इस ओर ध्यान ही नहीं था। इस ओर ध्यान अगर किसीका था तो गांधीजी का, और उनके कुछ इने-गिने साथियों का। आज हम पाते हैं कि समचित्त तथा पूरे जीवन में एक प्रकार के संतुलन के अभाव में नाना प्रकार की कुंठाएं पैदा होने के सिवाय और कुछ नहीं होता। अब मेरा निश्चित मानना है कि सार्वजनिक कार्यकर्ता के रूप में जिस व्यक्ति को काम करना है उसको एकादश व्रत-पालन की तरफ, और संयमपूर्वक जीवन बिताने की ओर विशेष रूप से प्रयास करना चाहिए। कुल मिलाकर अगर एक वाक्य में कहना हो तो कहा जा सकता है कि सार्वजनिक काम आत्म-विकास का साधन बनाना चाहिए। यह तभी बनेगा जब बाह्य काम और अंतःशुद्धि का सतत प्रयास और उसका सहकार एवं संतुलन होगा। सामाजिक कार्यकर्ता के आत्म-विकास की सुगंध उसके समीपवर्ती वातावरण में अनकहे ही स्वाभाविक रूप से फैलेगी ही।

गांधीजी ने जो लोक-सेवक की कल्पना रखी थी, वह एक ध्येय के लिए समर्पित जीवन बितानेवालों की सेना के रूप में थी। आजादी के बाद कांग्रेस का यही स्वरूप रहे, यह उनकी हार्दिक इच्छा थी। अच्छे कामों में अपनी सरकार की मदद करने का, शासन को ठीक रास्ते पर लाने का काम कांग्रेस करे, यह उनकी मान्यता थी।

जीवन के अन्तिम दिनों में गांधीजी अहिंसा पर अधिक-से-अधिक शोध करना चाहते थे। उनकी अहिंसा को समझने के लिए उनके विचारों तथा उनके जीवन की घटनाओं और क्रियाकलापों को समग्र रूप में देखने की आवश्यकता है। जो समस्याएं उनके सामने आयीं, उनमें सत्य और अहिंसा के व्यावहारिक प्रयोग को ही उनकी साधना और पूजा का नाम दिया जा सकता है। उनकी अहिंसा का पर्यायवाची शब्द प्रेम है। 'हिंसा नहीं' और 'अहिंसा' में बहुत अन्तर है। आश्रम-नियमावली में उन्होंने अहिंसा के बारे में लिख रखा था, "प्राणियों को जान से न मारना, इतना ही इस व्रत के लिए बस नहीं है। अहिंसा का मतलब है बहुत छोटे जीव-जन्तुओं से लेकर मनुष्य तक सब जीवों के लिए सम-भाव, बराबरी का, अपनेपन का भाव रखना। यह समभाव की साधना, जिसे गांधीजी अहिंसा का नाम देते थे वह उनके जीवन में नित्यनूतन उत्तरोत्तर विकसित होती गयी थी।

प्रस्तुतकर्ता : पुष्पारम्भ

तरुण शान्तिसेना शिविर

जिला तरुण शान्तिसेना की ओर से गत १२ से १७ अगस्त तक एक त्रिदिव-सीय शिविर नवगछिया उच्च विद्यालय में आयोजित हुआ था, जिसमें कुल ७६ विद्यार्थियों एवं शिक्षकों ने भाग लिया।

शिविर में 'ग्राम्य जीवन में हिंसा एवं शान्तिसेना', 'शिक्षा में विस्फोट', 'आचार्यकुल की भूमिका' तथा 'युवक एवं इन्कलाब' विषयों पर चर्चाएं हुईं।

श्रमदान में शिविरार्थियों ने उत्साह के साथ २ घंटे प्रतिदिन गंदे मुहल्लों में नालियां बनाने का कार्य किया। समाज-सम्पर्क अपेक्षाकृत कम हुआ। फिर भी तीन मील दूर के एक गांव में संगीत, कवि-गान, व्याख्यान तथा बापू-जीवनी की फिल्म दिखाने के कार्यक्रम सम्पन्न हुए। नवगछिया में सांस्कृतिक कार्यक्रम हुआ तथा शान्ति-सैनिकों का जुलूस निकाला गया।

दहेज न लेने, स्वावलम्बी बनने, शांति के विचार का प्रचार करने, व्यसन मुक्त होने, स्वाध्याय करने और नियमित होने के संकल्प लिये गये। ●

गांधी, नेहरू और आज का भारत : पर्दे की आड़ में पड़े तथ्य

❀ कामेश्वरप्रसाद बहुगुणा ❀

भारतीय स्वतन्त्रता गांधीजी के प्रयासों के फलस्वरूप ही प्राप्त हुई है या वह क्रान्तिकारियों तथा अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के कारण आयी है, यह बहस आज भी जारी है। जहाँ तक गांधीजी का सवाल है, उन्होंने कभी भी यह दावा नहीं किया कि उनके ही प्रयासों से स्वतन्त्रता आयी है। असल बात तो बल्कि इसके एकदम विपरीत है। गांधीजी तो मानते ही नहीं थे कि भारत स्वतंत्र हो गया है। उन्होंने तो १५ अगस्त सन् १९४७ को स्वाधीन भारत की सरकार द्वारा मनाये गये प्रथम स्वतन्त्रता-समारोह का भी बहिष्कार किया था। यह बात आज की पीढ़ी को लगभग नहीं मालूम है, क्योंकि यह बात उससे यत्नपूर्वक छिपायी गयी है। आजादी के आते ही भारत में जिस ढंग से काम आरम्भ हुआ उसने उसी समय से लोगों को परेशान करना शुरू कर दिया था और जब एक पत्रकार ने एक शिकायत की कि बड़ा गांधीजी को, जिनकी तपस्या के बल पर हमें आजादी मिली है, उनके जीते जी दफनाया जा रहा है, तो गांधीजी ने उसे १७ अगस्त १९४७ को, यानी स्वतंत्रता के दो दिन बाद के, "हरिजन" में जवाब देते हुए कहा कि, "मैं इस आशा पर अभी कायम हूँ कि मैं अभी जीवित नहीं दफनाया गया हूँ। यह आशा करने का आधार यह है कि अभी जनता ने मेरे विचारों में आस्था नहीं खोयी है। जब यह सिद्ध हो जायगा कि जनता ने मेरे विचारों में आस्था खो दी है तो माना जा सकता है कि मैं जीवित ही दफना दिया गया हूँ। किन्तु जब तक मेरा विश्वास जिन्दा है, और मुझे विश्वास है कि वह, मैं यदि अकेला भी रहूँ तो भी, जिन्दा रहेगा, मैं कब्र में भी जिन्दा रहूँगा और उसमें से ही बोलूँगा।" गांधी आज बोल रहा है, यदि हमें उसे सुनने की फुर्सत हो।

गांधी का भारत नहीं

गांधीजी की राय में आजादी के नाम पर केवल इतना ही हो सका था कि अंग्रेज जिस कुर्सी पर बैठकर जिस शासन-तन्त्र के माध्यम से भारत पर राज करते थे, उसी कुर्सी पर और उसी शासन-तन्त्र के माध्यम से अब भारतीय लोग राज करने लगे थे। केवल व्यक्ति ही बदले थे, शासन-तन्त्र और शासन-प्रणाली कुछ भी नहीं बदली थी। विदेशी सत्ता के स्थान पर 'स्वदेशी सत्ता' मात्र आयी था, किन्तु स्वदेशी सत्ता तो राजाजी का भी थी।

इसीलिए अंग्रेजों का भारत से हट जाना मात्र गांधीजी की निगाह में स्वराज्य नहीं था। सही स्वराज्य के लिए अंग्रेजों के चले जाने के बाद ही असल प्रयत्न शुरू होना था और यह बात गांधी-जी ने सन् १९३० में ही कहा थी कि, "मैं जानता हूँ कि यदि मैं स्वतन्त्रता के संघर्ष के बाद भी जीवित रहा, तो सम्भव है कि मुझे अपने देशवासियों के विरुद्ध अहिंसक लड़ाइयाँ लड़नी पड़ें। और वे उतनी ही कठोर होंगी जितनी यह लड़ाई जिसे मैं आज लड़ रहा हूँ।" यह बात निश्चित है कि यदि आज गांधीजी होते तो वे इस देश में पूर्ण स्वराज्य के लिए संघर्ष कर रहे होते और यदि आवश्यक मानते तो आज की सरकारों को भी वे वैसे ही उखाड़ फेंकते जैसे उन्होंने अंग्रेजी सरकार को उखाड़ फेंका था। किन्तु इतिहास ने गांधी को यह मौका ही नहीं दिया और वे पूर्ण स्वराज्य होने से पहले ही हमारे बीच में से उठा लिये गये। इसलिए कम-से-कम अब, जब उनको गये २३ साल हो रहे हैं, भारत के लोगों के सामने यह बात साफ कर देनी है कि आज का भारत, (प्रशासकीय राजनैतिक तथा आर्थिक भारत) बुरा या भला, जैसा भी है, वह गांधी-जी का भारत नहीं है और न यही कहा जा सकता है कि यह गांधीवादी प्रयत्नों का फल है। यह बात इसलिए बहुत आवश्यक हो गयी है कि देश तथा विदेश में पिछले २२-२३ सालों में भारत की सभी सरकारें तथा श्री नेहरू समेत सभी नेता यह भ्रम फैलाने में लगे रहे हैं और उन्हें इसमें बहुत कुछ सफलता भी मिली है कि भारत सरकार या भारत के नेता जो कुछ भी कर रहे हैं वह गांधीजी के विचारों के अनुकूल है। और यह महत्व की बात है कि खासकर सभी साम्यवादियों ने भारत सरकार के इस दावे को पूर्णत माना है, क्योंकि इसी आधार पर वे गांधी को दुर्दशा सिद्ध कर सकते थे। किन्तु अब गांधी को इस षड्यन्त्र से मुक्त करना हमारा दायित्व है, और विनोबा ने अपनी शक्ति भर यह काम करके दिखाया भी है। यह भी एक कारण है कि भारत की सरकारें तथा नेता एक तरफ तो विनोबा की प्रशंसा करते हैं, किन्तु दूसरी तरफ समर्थन नहीं करते।

गांधी-नेहरू के बुनियादी मतभेद

यह बात अब इतिहास का तथ्य बन गयी है कि आजादी के बाद भारत की क्या तस्वीर बने, इस बारे में गांधीजी के विचार केवल उनके ही थे, और श्री नेहरू या कांग्रेस ने कभी उन विचारों को स्वीकार नहीं किया। चूँकि गांधीजी ने श्री नेहरू को अपना उत्तराधिकारी चुना था और मेरे विचार में यह गांधीजी की भारी राजनैतिक और ऐतिहासिक भूल थी, किन्तु सम्भव है उनके सामने कोई उतनी ही भारी कठिनाई रही हो, जिसके कारण उन्हें यह निर्णय करना पड़ा हो; इसलिए वे भारत के भविष्य के बारे में अपने और श्री नेहरू के बीच की दूरी से चिंतित थे। उन्होंने अक्तूबर सन् १९४५ में ही इस बारे में श्री नेहरू से बातें करना आरम्भ कर दिया था और उन्होंने श्री नेहरू को लिखा था कि, "मैं हमारे बीच के दृष्टिकोणों के अंतर के बारे में लिखना चाहता हूँ। यदि ये मतभेद बुनियादी हैं तो... फिर जनता को इसके बारे में जानकारी दे देनी चाहिए। जनता को इस बारे में

अंधेरे में रखना हमारे स्वराज्य के लिए घातक होगा।" उन्होंने यह भी लिखा कि, "हम दोनों भारत की स्वतंत्रता के लिए जी रहे हैं, और निस्सन्देह इसीके लिए खुशी से जीवन भी दे सकेंगे। हमें प्रशंसा या बदनामी भले मिलती है, यह हमारे लिए नगण्य है। "मैं अब बूढ़ा हो गया हूं, मैंने इसलिए तुम्हें अपना उत्तराधिकारी चुना है। अब मुझे अपने उत्तराधिकारी को और मेरे उत्तराधिकारी को मुझे समझ लेना चाहिए। मुझे केवल तभी संतोष होगा।" (देखें प्यारेलाल लिखित 'दी न्यू होराइजेन्स,' पृ० ३-५)

गांधीजी कृषि-संस्कृति की सारी अच्छाइयों को सुरक्षित करने की दृष्टि से ग्रामीण भारत के विकास, संगठन और निर्माण पर जोर दे रहे थे, जब कि श्री नेहरू की दृष्टि में, "भारत के गांव सामान्यतः सांस्कृतिक और बौद्धिक दृष्टि से पिछड़े हैं और इस पिछड़ेपन के वातावरण में कोई प्रगति संभव नहीं है। संकीर्ण दिमाग के लोग अक्सर अधिक झूठे और हिंसक होते हैं।" ऐसा श्री नेहरू ने गांधीजी को जवाब में लिखा था। संयोग देखिए कि भारत के गांवों के बारे में ठीक यही विचार संविधान सभा में डा० अम्बेडकर ने भी प्रकट किये थे। किन्तु श्री नेहरू ने अपने उसी पत्र में गांधीजी को यह भी लिखा था कि "आपका यह कहना सत्य है कि संसार या उसका एक बड़ा भाग आत्महत्या करने पर तुला लगता है। यह जो सभ्यता आज पनप गयी है उसकी अनिवार्य बुराई का यह बीज हो सकता है। मैं सोचता हूं कि ऐसा ही है। हमारी समस्या यह है कि हम वर्तमान तथा भूत की अच्छाइयों को इस बुराई से कैसे बचावें। निस्सन्देह वर्तमान में भी बहुत सारी अच्छाइयां हैं।" (देखें, उपरोक्त पुस्तक)

यह पत्र-व्यवहार जारी हो रहा और फिर गांधीजी की हत्या हो गयी। उन्होंने सभ्यताओं का बहुत बारीकी से अध्ययन किया था और वे इस नतीजे पर आये थे कि, "एक आदर्श समाज राज्य-रहित जनतंत्र ही हो सकता है। इस समाज में हर मनुष्य अपना शासक स्वयं होता है।... आदर्श समाज में कोई राजनैतिक सत्ता नहीं होती, क्योंकि उसमें कोई राज्य नहीं होता।" वे स्पष्टतया मानते थे कि, "ऐसा समाज केवल अहिंसा के बल पर ही कायम किया जा सकता है और अहिंसा पर आधारित समाज ग्रामों में बसे हुए ऐसे समुदायों का ही हो सकता है, जिनमें स्वेच्छापूर्ण सहयोग सम्मानपूर्ण और शांतिमय जीवन की शर्त है।" इसलिए गांधीजी ग्रामीण समुदायों को पुनः संगठित करना चाहते थे। उनकी राय में एक व्यावहारिक आदर्श ग्राम-समुदाय करीब १००० की आबादी का होगा। समाजविज्ञान के अध्येता जानते हैं कि आज के आधुनिक समाजविज्ञान में ऐसे ही लघु-समुदायों की खोज की जा रही है। गांधीजी की इस नये समाज की कल्पना को समाजशास्त्र में 'वर्तुलाकार समाज' के विचार से जाना जाता है।

संसद और नागरिक

यहां पर यह बात स्मरणीय है कि यद्यपि शुरू-शुरू में गांधीजी ने ब्रिटिश ढंग की संसदीय पद्धति ही भारत के लिए सोची थी, किन्तु बाद को इस बारे में उनकी राय बदल गयी थी। हमारे देश में आज हर वक्त संसद की सार्वभौम प्रभुसत्ता का जिक्र किया जाता है, किन्तु जैसा कि पहले कहा गया है, गांधीजी केवल व्यक्ति को ही सार्वभौम मानते थे, संसद को नहीं। हम आज ब्रिटिश संसद की, जिसे संसदों की मां कहा जाता है, बड़ी तारीफ करते हैं। किन्तु गांधीजी ने तो उसे 'बांझ' और 'वेश्या' कहा था। बांझ इसलिए कि वह अपने आप कभी कोई काम नहीं कर सकती, और वेश्या इसलिए कि वह समय-समय पर अलग-अलग लोगों की सत्ता के दबाव में रहकर काम करती है। हमारी संसद क्या बिना किसी दबाव के काम करती है? उसे आज अपनी सार्वभौमिकता का भी घमण्ड है, और वह अपने को नागरिक सत्ता से अलग और ऊपर भी समझने लगी है, और यहां तक कि नागरिकों के नैसर्गिक अधिकारों तक का हनन करने का प्रयत्न करती है। किन्तु हमें समझना चाहिए कि आज कहीं भी संसद सम्मानित और सुरक्षित नहीं है, क्योंकि उसके पीछे जनता का बल नहीं है। यही कारण है कि वह अनेक बार फौजी बूटों के तले कुचल दी जाती है। संसद की मर्यादा तथा सत्ता 'सीमित' और 'प्रदत्त' होती है, वह असीम और नैसर्गिक कभी नहीं हो सकती। इसलिए संसद की उपयोगिता भी सीमित होती है।

गांधीजी के इन विचारों का एक और भी आधार था। वे बहुमत के आधार पर निर्णय करने की पद्धति के भी विरोधी थे और उन्होंने व्यक्ति के इस अधिकार को माना था कि वह अपनी स्वतंत्र इच्छा के विरुद्ध किसी भी बहुमत को मानने के लिए बाध्य नहीं है। असल में तो बहुमत के निर्णय का अर्थ होता है—'जिसकी लाठी उसकी भैंस।' और यह निरंकुश सामंतवाद का नया नाम है। बहुमत का फैसला अनिवार्यतः नैतिक नहीं होता। और फिर आज की 'बोरम-व्यवस्था' पर टिका बहुमत तो निरा छलतंत्र है। इस दृष्टि से गांधीजी के अनुसार आज के जनतंत्र को, जो सिर के बल खड़ा है, पैरों के बल खड़ा करना होगा। जनता को इसके लिए तैयार करना आज की बड़ी आवश्यकता है और इसके लिए ही वे आगे काम करना चाहते थे। ग्रामीण जनता में इसके लिए नैतिक, आर्थिक और सामाजिक शक्ति बने इसलिए वे ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में आमूल परिवर्तन करना चाहते थे।

वे देश में जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं के उत्पादन को सीधे 'जनता के अधिकार' और प्रबन्ध में देना चाहते थे। जमीन पर वे सरकार या साहूकार के बजाय समाज यानी गांव का अधिकार कायम करना चाहते थे, क्योंकि जैसे साहूकार एक तरह का 'बिचौलिया' है वैसे ही सरकार भी 'बिचौलिया' ही है। बिचौलिया तो हटना ही चाहिए, वह किसी भी

बुनियादी सुधार का मूल है। अत गाधीजी गाँवों में छोटे-छोटे धधो का जाल बिछाकर हर नागरिक को जीविका के लिए स्वावलंबी और फिर स्वतत्र रखना चाहते थे। यंत्र या मशीन के बारे में उनके विचार यह थे कि इनका उपयोग केवल मनुष्य की सहायता के लिए किया जाय और श्रम बचाने के चक्कर में पडकर मनुष्य को बेकार बनानेवाले यत्रो को वे गांव से अलग रखना चाहते थे। बडे-बड़े उद्योगो के पक्ष में वे उसी हद तक थे जहां तक वे एकदम ही अपरिहार्य हो, जैसे रेल या जहाज आदि। उनमें भी वे सामाजिक स्वामित्व के पक्ष में थे और उन्होंने तो यहाँ तक कहा था कि यदि पूंजीपति अपने को ट्रस्टी स्वीकार नही करेंगे तो सरकारी कानून के जरिये उन पर कब्जा कर लिया जायेगा।

आजका भारत : नेहरू का भारत

आज का भारत गाधी के सपनो का भारत नही है। यह श्री नेहरू का भारत है। गांधीजी और श्री नेहरू में केवल एक ही समानता थी कि वे दोनो ही भारत के महान् सपूत थे, किन्तु श्री नेहरू के अपने काल के हर कार्य के लिए गाधी का बारम्बार नाम लेने के बावजूद यह नही समझना चाहिए कि उन्होंने जो कुछ किया वह गाधीजी के ही अनुसार किया। वे गाधीजी की इज्जत करते थे किन्तु श्री लुई फिशर के सन् '४० में कहे गये शब्दो के अनुसार "वे उसी हद तक गाधीवादी थे जहां तक वे भारत के नेता बने रहे।" यह एक ऐतिहासिक सत्य है। हम आज जहाँ पहुँचे है वहां श्री नेहरू के कारण पहुँचे हैं। गाधीजी की बात को हम अपने लिए उचित माने या न माने, किन्तु कम-से-कम आज के भारत की हालत के लिए गाधी को जिम्मेदार ठहराना इतिहास तथा अपनी नैतिकता के साथ अन्याय है।

अब आज की पीढ़ी को केवल दो काम करने हैं। एक तो यह कि आज की सरकारें तथा नेता अपनी कारगुजारियों के लिए जो बार-बार गाधीजी का नाम लेकर गाधी को एकदम रहस्यमय बनाने का दुष्चक्र रच रहे हैं, उसे नष्ट कर दें। यह तभी सभव है, जब हम गाधीजी का अध्ययन करें। हमें उनके विचार हानिकर भी लगें तो भी उनका अध्ययन आवश्यक है, ताकि हम उससे होनेवाली हानि से बच सकें। दूसरा काम यह करना है कि यदि उसे गाधीजी के विचार लाभकारी लगें तो फिर वर्तमान राजनीतिक ढांचा और शासन-प्रणाली को तुरन्त ही उखाड़ दिया जाय। आज की सारी राजनीति अमरीकी, ब्रिटिश और रूसी नकल की खिचड़ी है। इसमें कोई प्रतिभा नही, कोई नैतिकता नहीं, कोई साहस नही; और इसका कोई भविष्य भी नहीं है। जो लोग अपने को क्रान्तिकारी कहते हैं वे, और खासकर नौजवान लोग, तो इस पहलू पर फौरन ध्यान दें और इस में सही क्रान्ति के लिए तैयारी करें। यह तो स्वयंसिद्ध ही है कि गाधी के ढग का समाज बनाने के लिए क्रान्ति का भी ढग गाधी का ही होगा। यह क्रांति किसी दल या नेता या सरकार के माध्यम से नहीं होगी, क्योंकि अब तक का अनुभव बताता है कि बाद को यही लोग क्रान्ति के 'फल के ठीकेदार' भी बन जाते हैं। ●

मनुष्य का वास्तविक लक्ष्य क्या है? क्या यह अधिकतम सख्या में मनुष्यों को पृथ्वी पर बसाना है, जो साथ-साथ, ससार की अधिकतम भोजन की पूर्ति द्वारा जीवित रखे जा सकें? या यह मनुष्यों को सबसे उत्तम प्रकार का जीवन व्यतीत करने में समर्थ बनाना है, जिसके लिए मानवीय प्रकृति की आध्यात्मिक सीमाएँ अनुमति देती हों?

—आर्नोल्ड टाएनबी

सर्वोदय-परिवार के नाम एक पत्र

[श्री देवी भाई सर्वोदय-परिवार के ही एक सदस्य हैं, जो पिछले आठ वर्षों से युद्ध-विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय सगठन के मत्री का कार्य-भार सगठन के प्रधान कार्यालय लन्दन में रहकर संभाल रहे हैं। इतने दिनो बाद वे भारत ३ महीने के लिए आनेवाले हैं। सर्वोदय-परिवार के साथियो के नाम जो पत्र उन्होने लिखा है, उसे हम यहां प्रकाशित कर रहे हैं। — स०]

प्रिय मित्रो,

पिछले साढे आठ वर्षों में मैं केवल एक बार ही भारत आ सका हूँ। वह भी एक हफ्ते के एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के सिलसिले में दिल्ली। अब ऐसा लगता है कि तीन माह के लिए भारत आने की मेरी योजना सफल होगी। मैं चि० सुनयना, जो अब १० साल की हुई है, उसके साथ नवम्बर के शुरू में आप लोगों के बीच कुछ समय बिताने के लिए आना चाहता हूँ। कार्यक्रम क्या होगा, यह अभी तय नही है। मेरी ओर से तो कोई विशेष आग्रह नही है। हां, आप साथियो के साथ मिल सकूँ, यही एकमात्र इच्छा है। फरवरी सन् १९७१ में लन्दन वापस आने के पहले १५ दिनो के लिए वियतनाम जाने की योजना है, उसकी तारीखें भी भारत जाने के बाद ही तय होगी।

अभी तो इतना ही,

चि० सुनयना, सुनन्द, उदयन और मेरे आप सबको प्रेमपूर्ण जय-जगत्!

—देवीप्रसाद

Date : 16-9-70

WAR RESISTER'S
INTER-NATIONAL
3, Caledonian Road,
LONDON No. 1 (England)

नक्सली धमकी के जवाब में

हिंसा का वार और अहिंसा का जय-सामर्थ्य

❀ जैनेन्द्र कुमार ❀

कुमारी निर्मला देशपांडे पर मौत की सजा बोल दी गयी है। माओ के लाल सलाम के साथ यह सूचना एक पत्र से मिली है। अपराध यह कि निर्मला देशपांडे ने चेयरमैन माओ के प्रभाव को कम करने का साहस किया है।

माओवादी का अधिकार से भी अधिक कर्त्तव्य है कि वह गांधी और दूसरे राष्ट्र-नेताओं के चित्रों, मूर्तियों को तोड़ दे। पर यह किसीका अधिकार नहीं होने दिया जायेगा कि चेयरमैन माओ की समीक्षा भी कर सके। इस कट्टरता और संकीर्णता से माओ महोदय की गरिमा महिमा बढ़ती नहीं है। अपने ऐसे पंथियों पर निश्चय ही उन्हें गर्व न होगा।

पर जो बात खुशी की है, वह यह कि कुमारी निर्मला सर्वोदय-कार्यकर्त्री हैं। वह महाराष्ट्र की एक विदुषी, साहित्यिक महिला हैं और कालेज की प्राध्यापकी छोड़ आरंभ से ही भूदान-ग्रामदान के काम में लग गयी हैं। अहिंसा उनका व्रत है और भाषा उनकी सुस्पष्ट से आगे कठोर नहीं हो सकती। 'चिगलिंग' नामक उनका उपन्यास है, जो हिन्दी-मराठी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं में भी छपा है। चिगलिंग एक चीनी महिला है, और उनके चरित्र की उज्ज्वलता और मृदुलता मानो पाठक के समक्ष सारे चीन को उज्ज्वल और मृदुल बना देती है। मेरा दावा है कि उन्हें मौत की सजा देनेवाले नक्सालपंथी मुश्किल से कहीं अधिक निर्मला के मन में चीनी-वासियों के लिए ममता और श्रद्धा है। वह अपने जन्म-स्थान नागपुर से दूरदराज बिहार के मुजफ्फरपुर की सीमा में दत्त-चित्त हो काम कर रही हैं। विनोबा के साथ पूरा भारत देश उन्होंने गांव-गांव घूम डाला है। 'चिगलिंग' पुस्तक पर दो शब्द लिखते समय हमें अनुभव हुआ था कि पुस्तक मीठी अधिक है। उन्हीं को मौत का दंड सुनाया गया है, यह अहिंसा के लिए बधाई की बात है। सर्वोदय और ग्रामदान आगे से मैदान में है। लेकिन इस घटना को उस आंदोलन की मैं पहली विजय कह सकता हूं।

अहिंसा कोई भारत भूमि का ही आविष्कार नहीं है, सब धर्मों में उसके लिए स्थान है। तितीक्षा और तपस्या में जीवन बितानेवाले ऋषि सब काल और सब देशों में होते रहे हैं। पर भारत ने उस अहिंसा को पराकाष्ठा तक पहुंचाया है। अब भी जैन हैं, जो उस व्रत के कारण कन्द-मूल नहीं खाते हैं और हरी साग-भाजी का भी अमुक तिथियों में त्याग रखते हैं। अनेक भारतवासियों के लिए वह व्यवहार व्यंग्य का विषय भी रहा है। आक्षेप हुआ है कि अहिंसा ने देश को और मनुष्य को दुर्बल बनाया है।

इधर गांधी प्रकट हुए। अहिंसा उनके लिए जीवन का मंत्र बनी। यहां तक कि अपनी सरकार को भी अपनी जान की रखवाली का उन्होंने अवसर नहीं दिया और मानो इच्छापूर्वक अपनी छाती पर तीर गोली खाकर हत्यारे के साथ मरना स्वीकार किया। यह शहादत उन्हें मौत से ही नहीं मिली, जो हर किसीको मिल सकती है। उनका जीवन ही पूरा शहादत का रहा—बलिदान की ज्वाला की तरह जला और उजला। और लोगों ने देखा कि सत्याग्रही अहिंसा से ऊंचा दूसरा पराक्रम हो नहीं सकता है। इसमें शत्रु से डरा नहीं जाता है, उसके आगे झुका नहीं जाता है, उसको प्यार किया जाता है, शत्रुता में से आनेवाली हर क्रूरता को हंसते-हंसते सहकर मौका दिया जाता है कि शत्रु अपनी शत्रुता के नशे से उबरे और वह आदमी हो जाये, जो कि वह है।

पर गांधी के बाद लगा कि अहिंसा कहीं वह अपनी पहली जगह तो नहीं सिमट आयी है? उसका पराक्रम सौम्य होते-होते सर्वथा शान्त तो नहीं हो गया है?

इसलिए मानना होगा कि निर्मला को मिली मौत की धमकी प्रमाण है कि नहीं, सर्वथा ऐसा नहीं है। कहीं चिनगारी अब भी शेष है, जिसकी चमक हिंसापंथी को भी थोड़ी झुलसा गयी है।

याद आता है कि मास्को में एक बड़े साहित्यकार ने अहिंसा की बात पर चेतावनी देते हुए कहा था कि शक्ति का स्रोत घृणा है, इसलिए अहिंसा अशक्त है। उत्तर तो तभी मैंने कुछ न-कुछ दे दिया था, लेकिन वह भेंट भूलती नहीं है।

अभी कल एक बंधु आये जिनका जीवन सर्वोदय आदि के काम में ही गलता रहा है। बोले, 'पाजिटिव' (विधायक) के साथ 'निगेटिव' (निषेधात्मक) भी अनिवार्य है। वह 'निगेटिव' शायद हमारे यहां रहा नहीं है। अब चारों तरफ खुली हिंसा का वाद लपटें लेकर जो फैल रहा है तो उसके प्रकाश में अपने को पुनर्विचार करना होगा। कुछ होगा, जिसे इन्कार करना होगा, तोड़ना-ढाहना, गिराना होगा, जिससे किसी भी हालत में समझौता नहीं ही करना होगा। अगर वह नहीं है तो पुरुषार्थ सो जायेगा, कापुरुषता हम सबको ढंक लेगी, तब अन्याय से टक्कर लेनेवाले पराक्रम के लिए हिंसा का आश्रय ही शेष रह जायगा।

यह महाशय और वह रूसी लेखक महोदय मुझसे टल नहीं पाते हैं। सोचना पड़ता है कि मनुष्य में बहुत कुछ नकारात्मक है। क्या वह नकार वृथा ही है? क्या उसका कहीं उपयोग नहीं है? तो फिर वह है ही क्यों? और मैं गांधी को याद करता हूं कि जिसने प्रेम के दावे के साथ भारत पर ब्रिटिश राज को शैतानी कहा और इस कहने के साथ सारा देश हुंकार भर उठा। कार्यक्रम रचनात्मक रहा और उसको चलाने के लिए प्राणों की पूंजी उस जगे हुए इन्कार और हुंकार में से आती रही।

उस खुली इन्कार-प्रतिकार की ध्वनि अहिंसा के क्षेत्र में से उठ सकेगी तो चोरी→

निरर्थक हिंसा के गुलाम न बनें

नक्सलवादी कामरेड के नाम !

श्री पलटन आजाद के नाम का पत्र 'भूदान यज्ञ' के १४ सितम्बर, '७० के अंक में पढ़ा। आपने एक डरपोक की तरह यह पत्र गुमनाम क्यों लिखा, यह समझ में नहीं आया। अगर आपने प्रकट नाम से पत्र लिखा होता तो प्रत्यक्ष मिलकर चर्चा हो सकती, और तब इस तरह जाहिरा तौर पर लिखने की जरूरत नहीं रहती। फिर भी हिंसा की पद्धति पर खुली चर्चा होनी ही चाहिए।

मानव-समाज का इतिहास उत्क्रान्ति से भरा है। बंदर की अवस्था से लेकर चन्द्रमा पर पहुँचने तक की उसकी वैज्ञानिक प्रगति उत्क्रान्ति के क्रम में ही हुई। हर पीढ़ी के सामने कुछ समस्याएँ रही हैं, वे मार्क्स और माओ के पूर्व की पीढ़ियों के सामने भी थीं, और भविष्य में जब मार्क्स, लेनिन, माओ, बुद्ध, ईसा, गांधी, इन सबके नाम काल के उदर में समा जायेंगे, तब भी समस्याएँ तो रहने ही वाली हैं। इन समस्याओं का स्वरूप अंतर्बाह्य है। मानव प्रकृति पर कैसे विजय पाये और मानवों के आपस के सम्बन्ध सच्चे बंधुत्व पर, समता पर कैसे आधारित हों, इन दोनों प्रश्नों के उत्तर विभिन्न विचारकों ने विभिन्न प्रकारों से दिये हैं। इस दृष्टि से सोचने पर, मार्क्स-माओ को मिली सफलताओं के बावजूद, क्या जगत् से समस्याएँ हल हो जानेवाली हैं ?

आपने क्रान्ति के लिए कत्ल का मार्ग अपनाया है। कत्ल से क्रान्ति नहीं होती, यह तो अब तक का इतिहास ही बताता है। कत्ल से शत्रुता की ग्रंथियाँ ही अधिक दृढ होती हैं। शायद आप मानते होंगे कि अकेली निर्मला बहन को या केवल आजाद को मारने से उनके द्वारा प्रचारित होनेवाले ग्रामस्वराज्य के विचार का प्रचार-कार्य खंडित होगा; लेकिन इसमें आप अपनी आत्मवंचना कर रहे हैं। हम सब अपने-अपने विचार के प्रचारक, सैनिक हैं। किसी एक सैनिक को मारकर अन्तिम लड़ाई जीत सकेंगे, यह संभव नहीं, बल्कि इससे भावी समाज-वादी विचार के इतिहासज्ञों की निगाह में आप मूर्ख, प्रतिगामी समाजहित विरोधी के रूप में ही दिखाई देंगे।

आज हम सभी को समानता की आवश्यकता है, मुख्यतः आर्थिक और सामाजिक समानता की। वह कैसे लायी जाय, समाज उसे किस प्रकार अपनाये, इसके बारे में आपके-हमारे बीच तीव्र मत-भेद हैं। आप जिनको आजकल एकमात्र हीरो मानते हैं, उस माओ का विचार है कि 'बन्दूक की नली में से सत्ता प्राप्त होती है, और सत्ताधीश सब कुछ कर सकता है, जैसी चाहे वैसी समाज-रचना कर सकता है।' लेकिन इतिहास यह नहीं बताता। डंडा हाथ में लेकर लोगों को कुछ करने के लिए मजबूर करने से उस डंडे के पीछे की शक्ति या उसकी पकड़ थोड़ी ढीली पड़ते ही लोग फिर से पुराने मार्ग पर जाते हैं, और एक प्रतिक्रान्ति का जन्म होता है। इसलिए आर्थिक, सामाजिक समानता अगर पूर्णतः लानी है तो लोगों के मानस पर उस विचार को हमें अंकित करना होगा। लोकमानस और हृदय द्वारा स्वीकृत रचना ही लोभ बनकर टिकेगी। इसी दृष्टि से सब भूमि और उत्पादन के साधन पूरे गाँव के हों, सब लोगों में ग्रामसभा द्वारा उत्पादन और साधनों का बँटवारा हो, गाँव के सबके का निर्णय गाँव में ही हो; गाँव के सबको शिक्षा, आरोग्य, काम, समान आराम मिले, इसके लिए जो विषमता आज गाँव में है, उसको दूर किया जाय, यही प्रयत्न हमारा चल रहा है। बिहारदान हुआ, यानी बिहार के ८० प्रतिशत से अधिक गाँवों ने यह विचार मान्य किया। यह तो हम भी मानते हैं कि यह काम पूरे भारत में अधिक गति से होना चाहिए।

यह सब करने में सबसे बड़ी बाधा है पीढ़ी दर-पीढ़ी चलनेवाले पुराने रूढ़ि-वादी विचारों की जकड़। यह विचार-परिवर्तन का काम जहाँ तक हम कर सके हैं, वहाँ तक उसके सुपरिणाम सामने आये हैं। फिर भी इस काम को क्रान्ति के तूफान का वेग नहीं प्राप्त हुआ, ऐसा अगर मानते हैं तो आप इस विचार-चक्र-परिवर्तन के काम में हमारी मदद करें।

जिसे हम शत्रु मानते हैं, उसके बारे में अज्ञान नहीं होना चाहिए। आप हमारा कार्य ही नहीं जानना चाहते, यह तो आपकी अज्ञानता का लक्षण है। किसी व्यक्ति की हत्या करके या उसे फाँसी पर चढ़ाकर उसके विचार को नहीं रोक सकते, इतना भी आपको ज्ञात नहीं, इसके लिए आप पर तरस आता है!

हमारे जैसे जो हजारों कार्यकर्ता गाँव-गाँव में यह काम कर रहे हैं, उनको हत्या की धमकियों से या उस पर अमल करके इस कार्य से विमुख नहीं किया जा सकता। इस प्रयास में आपकी शक्ति का अपव्यय ही होगा। लेकिन आपकी आँखें नहीं खुलतीं तो आजाद और निर्मला के रूप में हम सब कार्यकर्ता अपनी छाती खोलकर कहेंगे कि चलाओ गोली! लेकिन यह सब व्यर्थ है। लेनिन के भाई को मारने पर भी रूस की क्रान्ति नहीं रुकी, उलटे लेनिन के रूप में वह साकार हुई। इसलिए इस पर जरा स्थिर चित्त से विचार करें और निरर्थक हिंसा के अधीन न रहकर जन-कल्याण के लिए अपने जीवन को समर्पित करें। उसके लिए आवश्यक निर्भय वृत्ति आप में पैदा हो, ऐसी हमारी सदिच्छा है।

आपका

माधन सेवा मंडल, श्रीराम चिपळूणकर
पतवनी, जि० पुणे

छिपके, हत्या-हमले के रूप का गुरिल्ला पराक्रम अधूरा और ओछा दीख पड़ेगा और मालूम होगा कि प्रबलतम पराक्रम-वाली जनक्रान्ति तो उस अहिंसा के मार्ग से सिद्ध हो सकती है, जो किसी भी हिंसा से डरने की नहीं, बल्कि उसके वार को छाती पर झेलने को तैयार है। ●

विनोबा-निवास से

संसार अत्यन्त सुन्दर है, अगर....

"बालूभाई! आपको डर है कि आपका वज़ीर मारा जायेगा। देखिए! जो मृत्यु से डरता है, वह जीना जानता ही नहीं!"—बाबा

"आपका वज़ीर मैदान में उतरता है, तो हमको बहुत डर लगता है। वह बहुत गड़बड़ी करता है!"—बालूभाई।

"हम आप पर दया करेंगे, जाइए पीछे!" बालूभाई अपना घोड़ा पीछे ले जाते हैं। शतरंज के खेल में रोज मनोरंजक संवाद।

कोई समस्या नहीं

इतने में नागपुर के श्री मोहनी, आस्ट्रेलियन दम्पति के साथ आते हैं। मोहनीजी बाबा के पुराने परिचित, बाबा को आलिंगन देकर, आस्ट्रेलियन मेहमानों से बड़े नाज़ के साथ कहते हैं "हमारी पुरानी मैत्री है।" इस मैत्री के लिहाज़ से ही बाबा आस्ट्रेलियन दम्पति से बातें करते हैं। वरना खेल के बीच, बिना पूर्व-सूचना के आये हुए लोगों को बातों का मौका कैसे मिलता। आस्ट्रेलियन भाई बाबा की आवाज़ रेकार्ड करना चाहते हैं। बाबा इशारे से कुछ बताते हैं—दोनों हाथ पहले आँखों पर, फिर कानों पर, फिर मुँह पर, रखते हैं। मेहमान असमंजस में पड़ जाते हैं। मुसकराते बाबा कहते हैं—"तीन बंदर!"

— इन दिनों ऐसे ही बाबा कम बोलते हैं, रेकार्ड के लिए तो क्या बोलेंगे। लेकिन मेहमान हार नहीं मानते। पास बैठकर पूछते हैं—"क्या मैं जान सकता हूँ, भारत में आप क्या कर रहे हैं...." उनका वाक्य पूरा होने से पहले ही बाबा जवाब देते हैं—"भारत देख रहा हूँ!" सभी हँस पड़ते हैं।

"भारत के सामने कौनसी समस्या है?" दूसरा प्रश्न।

"नो प्राब्लेम! हम समस्याओं से मुक्त हैं।"

"मुक्तता महसूस करने का कारण?"

"ईश्वर इच्छा!"

"लेकिन, कुछ समस्याएँ तो ज़रूर हैं।"

"हो भी सकती हैं, जैसी दुनिया में अनेक हैं।"

"जी! दुनिया में तो समस्याएँ हैं ही।"

"दुनिया की समस्याएँ हैं, दुनिया हल करेगी!"

"आपको उसमें कोई खतरा नहीं दीखता?"

"मैं ७५ साल का बूढ़ा हूँ, बालूभाई ८१ साल के हैं, मोहनीजी ८१ के। हम लोग अब दुनिया के उस पार खड़े हैं। हम मृत्यु के नज़दीक हैं, मृत्यु के सामने खड़े हैं। हमारे जैसे वृद्धों के लिए कोई समस्या नहीं है।"

× × ×

बाबा और बच्चे

दर्शनार्थी आते हैं, मेहमान आते हैं, पूछते हैं "बाबा कहाँ हैं?" [illegible] कभी ध्यान-पथ पर, [illegible] लिये बाबा पास खड़े रहते हैं। वहीं जाकर लोग दर्शन करते हैं। 'गीता प्रवचन' पर हस्ताक्षर भी हासिल करते हुए होते हैं।

ब्राह्म-मुहूर्त में उठना। शास्त्र कहता है, ब्राह्ममुहूर्त पर उठना चाहिए और अनुचिन्तन करना चाहिए। कश्मीर की पदयात्रा में भारत सरकार की ओर से फिल्म लेने के लिए लोग आये थे। बाबा के सुबह से रात तक के कार्यक्रम की फिल्म लेनी थी। वे कहते थे—"दिन भर के कार्यक्रम का फिल्म लेना तो आसान है, लेकिन ब्राह्ममुहूर्त के [illegible] जायेगा? आप भी वही पकड़ या रात [illegible]" "नहीं—तो ये बाबा [illegible] की बातें करने लगता है। और बाबा को जगाते ही नहीं, क्योंकि रात के ९.४५ बजे ही बाबा सो जाते हैं। कश्मीर-घाटी की पदयात्रा में तो एक दिन बाबा सोने के लिए गये, तब शाम के सूरज की किरणें [illegible] पर जा रही थीं। ताईजी को बहुत हँसी आयी थी। हँसते-हँसते लोट-पोट होते-होते कहने लगी थीं—'दुनिया भर में शोर होगा, जो इस वक्त सोता होगा? आपका यह आदर्श कौन चलायेगा?' [illegible] ही बाबा ने जवाब दिया था—इस वक्त तो दो ही लोग सोते होंगे—बाबा और बच्चे।

× × ×

मूर्ख बाबा

एक दिन एक बड़े सरकारी अधिकारी बाबा के दर्शन के लिए आये। बाबा [illegible] लोटे के पास सफाई कर रहे थे। यह देखकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ। दुःखी स्वर में कहने लगे—'बाबा! जबकि देश और दुनिया में इतनी गम्भीर परिस्थिति है, बाहर आपकी सख्त ज़रूरत है, ऐसे समय आप यह काम क्या कर रहे हैं?"

[illegible] जवाब दिया गया—बाबा का कचरा उठा रहा है, उसमें से थोड़ा-सा आप ले जाइए, एक बोतल में भरकर रखिए और उस पर लिख रखिए 'मूर्ख बाबा।'

इन दिनों मुलाकात के लिए रात का कोई जाना नहीं। इसलिए वह समय तो स्वच्छता-कार्य में ही जाता है। आराम का समय भी उसीमें। सुबह ८.४५ के खाने के बाद गुरु। बाहर निकल आते हैं। दोपहर में एक बजे से ही काम आरम्भ कर देते हैं। शाम की प्रार्थना के पहले कभी पन्द्रह मिनट, कभी आधा घंटा आश्रम का प्रदक्षिणा होती है। उसमें कुछ बहनें भी शामिल होती हैं। प्रदक्षिणा तो सफाई के 'इन्सपेक्टर' के लिए होती है। स्वाभाविक ही उसमें सफाई भी होती है। कुल [illegible] घण्टे श्रम होता है। आहार में दूध १२० [illegible], शहद ६ तोला, दही १० तोला, ऐसी चीजें ली जाती हैं। कुल कैलोरी १३०० होती है।

भूदान-यज्ञ। सोमवार, २८ दिसम्बर, '७०

यथास्थिति को धक्का दिये बिना क्रान्ति नहीं

काकाजी (श्री बालूभाई) के निवास-स्थान तथा परिवार को बाबा ने नाम दिया है, 'वैष्णव वाड़ी'। वैष्णव वाड़ी में तुलसी के बहुत पौधे थे। बाबा ने उसे उखाड़ने का कार्यक्रम शुरू किया। तुलसी के पौधे उखाड़ना काकाजी के लिए थोड़ा दुःख की बात है। बाबा ही जब पौधे उखाड़ने लगे, तब वे क्या बोलेंगे। पर बाबा उनके मन की बात समझ गये। कहा—"देखिए बालूभाई। 'स्टेटसको' (यथास्थिति) को धक्का दिये बगैर क्रांति नहीं होती।" दूसरे दिन कहा—"आपके आंगन में फूल, पत्ती और तिनके पड़े हैं। उन्हें हम उठाकर फेंक देते हैं। फूल है सत्वगुण, पत्ती है रजोगुण। पत्तियाँ जमीन को चिपक जाती हैं। रजोगुण ऐसा ही चिपकता है। ये तिनके हैं तमोगुण। ये सारे निकालते हैं—त्रिगुणातीत बनना है।" फिर भी एक दिन काकाजी से कहने लगे—"यहाँ के फूल हटाने हैं, पत्थर रखने हैं। आज तक ऐसा माना जाता था कि वैष्णव यानी फूल के समान 'बावलट' (मृदु) लेकिन वैष्णव फूल जैसा 'बावलट' नहीं चाहिए, पत्थर के समान कड़ा चाहिए। उपनिषद में आया है, आत्मा कैसा है? पत्थर जैसा—न एव. अश्मा अक्षय:—उसे तोड़ नहीं सकते। ऐसे मजबूत बनना चाहिए।"

एक दिन काकाजी से कहते सुना—"यह देखिए बालूभाई। यह 'दी बुक' (ऋग्वेद सार तथा अष्टादशी इकट्ठे बांधी हुई किताब) है। चिंतन के लिए वेदोपनिषद—'दी बुक'। संदर्भ के लिए आक्सफर्ड डिक्शनरी। एक माडर्नेस्ट (अद्यतन), दूसरा ओल्डेस्ट (प्राचीनतम) और लिखने के लिए 'खरडवहीं'। कुछ भी घसीटना हो, तो इसमें लिखता। देखिए, इसमें लिखा है. हजामत की—१९-७'७०। इसके सिवा कुछ भी पास रखा नहीं—मुक्तात्मा।"

यह सुन्दर संसार

२१ तारीख की रात को ढेड़ बजे मूसलाधार वर्षा हुई। सुबह देखा कि धाम-नदी का पानी ऊपर चढ़ रहा था। चढ़ते-चढ़ते इतना ऊपर आ गया कि बीच का गांधी स्तम्भ अदृश्य हो गया। पुल पर और सामने की सड़क पर भी पानी भर गया। बाढ़ देखने के लिए बाबा पुल तक गये। एक बार ज्ञान-मंदिर की ऊपर की छत पर भी गये। नदी की लहरें समुद्र की लहरों की तरह नाच रही थीं। आवाज तो गर्जना-सम। दिन में तीन-चार बार बाढ़ के दर्शन के लिए बाहर गये। कहते हैं, "ग्यारह साल के बाद नदी में ऐसी बाढ़ आयी।"

इससे दो दिन पूर्व भी, रात को नदी का पानी ऐसा ही बढ़ा था। बहनें और भाई उसे देखने नीचे गये थे। दूसरे दिन बाबा को यह मालूम हुआ। शाम को भरतराम-मंदिर में सब इकट्ठे हुए तब बाबा ने कहा—"कल रात सब बाढ़ देखने गये। सबको बड़ा सुंदर दृश्य मालूम हुआ। बहुत आनंद आया। मान लीजिए, कल अगर उस पानी में मैं बह जाता, तो आनंद के बदले शोक होता, घबराहट होती। इसका मतलब यह है कि संसार अत्यन्त सुंदर है, अगर द्रष्टा होकर देखें तो, साक्षीरूपेण देखें तो। जो उसके अंदर दाखिल होगा, उसके लिए तो वह सुंदर नहीं है। साक्षीरूपेण तटस्थ दर्शन का महत्त्व है। समुद्र बहुत सुंदर है। किसके लिए? जो किनारे पर है उसके लिए। या जो नौका में बैठा है, उसके लिए। जो तटस्थ है उसके लिए।"

श्री कृष्णराजभाई तीन दिन रहकर वापस बिहार गये। इन दिनों वे बिहार के मोर्चे पर हैं। उन्होंने बिहार के काम की रिपोर्ट बाबा को दी। सत्याग्रह पर भी थोड़ी चर्चा की। आखिर में बाबा ने कहा—"मेरी बिहार की जनता पर श्रद्धा है। वे लोग जमीन देंगे। मनुस्मृति में आया है:

यद् दुस्तरं यद् दुरापं यद् दुर्गं यच्च दुष्करम्
सर्वं तु तपसा साध्यं तपो हि दुरतिक्रमम्

—जो दुस्तर है, प्राप्त करने के लिए कठिन है, जहाँ जाना कठिन है, वह सब तप से साध्य होता है। तपश्चर्या पर किसीका हमला नहीं हो सकता।"

श्रीकृष्ण उदयमहोत्सव का प्रसाद

भोजनगृह में रखे हुए बोर्ड पर निवेदन था—

"भगवान श्रीकृष्णजी का उदयमहोत्सव
स्थल—श्री भरतराम-मंदिर
कार्यक्रम—विविध। रात को ८ से १२ बजे तक।

भक्त-मंडली कृपया उपस्थित होकर कार्यक्रम में सहयोग दें। प्रभु का अनुग्रह-प्रसाद ग्रहण करें।"

शाम को बाबा कह रहे थे—"हमने बोर्ड पर निवेदन पढ़ा। हमने सोचा, भगवान कृष्ण दयालु होंगे। वे चाहते होंगे कि ८ से ११ तक लोग सोयें और ११ या ११.१५ से १२ बजे तक कीर्तन-भजन करें। क्योंकि दूसरे दिन काम करना है। जो लोग रात में में जागते हैं, वे दूसरे दिन छुट्टी लेते हैं। यहाँ तो छुट्टी है नहीं। इसलिए कार्यक्रम एक घंटे का रखा होता, तो वे खुश होते। उन्होंने ही लिखा है—निजणें जागणें खाणें फिरणें आणि कार्य हि। मोजूनि करितो ध्यास योग हा दुःखनाशन॥ (युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु। युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।)"

लक्ष्मीबहन ने कहा—"दूसरे दिन काम करने में हमें कोई तकलीफ नहीं होगी। चार घंटे का समय कैसे चला जाता है, पता भी नहीं चलता।"

रात में, ठीक ९-३० बजे बाबा बिस्तर से बाहर आये और मन्दिर में जाकर बैठ गये। १२ बजे तक बैठे रहे। भाई बहनें भजन गाने में मस्त था। भारत की सब भाषाओं के भजन सुनने को मिले। श्रद्धाबहन ने जर्मन और लैटिन भजन गाये। १२ बजे आरती हुई। प्रसाद-वितरण हुआ। प्रसाद हाथ में लेते हुए बाबा ने कहा—"प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।"

दूसरे दिन सुबह बाबा कह रहे थे—"सोचा, कृष्णाष्टमी साल में एक बार आती है। अगले साल इस दिन हम यहाँ रहेंगे या नहीं, इस दुनिया में ही रहेंगे या नहीं, क्या भरोसा? इसलिए कल कार्यक्रम में शामिल हो गया। ('मैत्री' से) —कुसुम

ग्रामस्वराज्य-कोष सम्बन्धी एक पत्रोत्तर —

[वर्धमान कालेज, बिजनौर (उ० प्र०) के एक प्राध्यापक श्री जगदीशचंद्र गोयल ने उत्तरप्रदेश ग्रामस्वराज्य-कोष समिति के अध्यक्ष श्री विचित्र भाई को एक पत्र लिखा था, जिसमें उन्होंने कुछ शंकाएँ और वैचारिक प्रश्न प्रस्तुत किये थे, जिसके जवाब में लिखा हुआ श्री विचित्र भाई का प्रस्तुत पत्र हम इस आशा से प्रकाशित कर रहे हैं कि इस प्रकार की शंकाएँ और प्रश्न जिस किसीके मन में होंगे, उनका शायद समाधान इससे हो सके। उत्तर पढ़ने पर प्रश्न भी स्वत: ही स्पष्ट हो जाते हैं। —स०]

प्रिय प्रोफेसर साहब,

आपका विचारपूर्ण इन्गायन ग्राम-स्वराज्य-कोष के सम्बन्ध का मिला। आपने जो बहुत-से विचार व्यक्त किये हैं, उनसे मेरा भी बहुत अधिक मतभेद नहीं है। एक दर्जे तक उन्हें ठीक भी कह सकता हूँ। इतने पर भी जिस परिणाम पर आप पहुँचते हैं, उन पर मैं नहीं पहुँच पाता हूँ। इसीसे हमने कोष के संग्रह-कार्य को अपना योगदान देना स्वीकार किया।

गीता में कहा है कि कोई भी कार्य पूर्ण निर्दोष नहीं होता है। जब तक कर्त्ता में स्वयं दोष है, तब तक उसका कर्म भी पूर्ण निर्दोष कैसे होगा? कर्म है ही साधक को पूर्ण बनाने के लिए। सिर्फ शुद्ध, निर्दोष विचार करने मात्र से भी तो उसका काम नहीं चलता। कर्म उसे करना ही पड़ता है। कर्म से उसका छुटकारा भी कहाँ? छुटकारा होता है जब कर्म में भी वह अकर्म साध सके। तब सब वह कुछ करते हुए भी कुछ नहीं करता।

इस निधि-संग्रह में दोष तो देखे ही जा सकते हैं। उसमें दोष हैं भी। उसके विरुद्ध जो विचार आपने व्यक्त किये उनसे लोग वाकिफ ही नहीं, सहमत भी हैं। फिर भी काम करना ही होता है। आपने लिखा है कि 'महात्मा के चित्र पूर्क जा रहे हैं। उनको प्रतिक्रियावादी बनाया जा रहा है।' इसे रोकने के लिए, आपके व्यक्त विचार के अनुसार काम कौन करे? सिर्फ विचार से काम चलता, तो अब तक इसे रुक जाना चाहिए था।

वास्तव में 'यह स्थिति' तो स्थायी रह नहीं सकती। इसे बदलना ही है। तब यही करना है कि वह किस तरह से बदले? माओ के तरीके से या गांधीजी के तरीके से? ईमानदारी की बात यह है कि हममें से अनेकों से माओ गांधीजी के बहुत निकट हैं। सच्चाई, तत्परता, गरीबों के जीवन के साथ एकात्म-भाव, यह सब गांधीजी और माओ में समान है। इतना ही नहीं, उदासीन अहिंसा गांधीजी की दृष्टि में हिंसा से भी बुरी थी। हम देखते रहें और शोषण होता रहे; यह अहिंसा नहीं, हिंसा में योगदान है।

हम लोग सोचते हैं कि अगर अहिंसा की शक्ति देश में पैदा हो जाय, तो थोड़े समय में ही अधिक उपलब्धि संभव है। खादी-ग्रामदान आदि के प्रति स्वाभाविक आकर्षण इसीलिए हो जाता है कि इससे अहिंसा की ताकत खड़ी करने में मदद मिलती है। इस निधि से भी इसमें मदद ही मिलेगी, इस आशा से हम इसमें लगे हैं।

अगर हम यह सोचते कि जिन लोगों का सहयोग हम ले रहे हैं, जिनसे हम दान माँगेंगे, वे हमारी वजह से कुछ अधिक भला काम करने से विरत होंगे, या उनमें निधि के प्रति अधिक आसक्ति बढ़ेगी, तो भी शायद हम इसमें न पड़ते। हम बिलकुल दूसरी दृष्टि से देखते हैं। जिनसे हम पैसा लेंगे, उन्हें बताना होगा कि देश जिस रास्ते पर चल रहा है, उस रास्ते से चलकर हमारी राजनीति बहुत निम्न स्तर पर आ गयी है। हमारी आर्थिक समस्याएँ और जटिल होती जा रही हैं। लाखों आदमी, स्त्री-पुरुष, बच्चे, बीमार, फुटपाथों पर जीवन बिता रहे हैं, उसे जीवन कहना भी इस शब्द के साथ अत्याचार है। उनका थोड़ा-सा प्रदर्शन मात्र सभ्य संसार में विस्फोटक हो गया। हमारे यहाँ वह वर्षों से चलता रहा है, पर यहाँ भी यह चलता ही रहेगा, यह असम्भव है। नक्सल-वादियों की ताकत इसी अभाव, उत्पीड़न और हाहाकार में से उत्पन्न होती है।

क्या आज हम अपने कुछ प्रबुद्ध भाई-बहनों को इस परिस्थिति का मुकाबिला करने के लिए जागृत कर सकते हैं? पैसा ही एकत्रित नहीं करना है। पैसा एकत्रित करने के साथ-साथ गांधी-परिवार को हम बढ़ा सकते हैं। इतना सम्पर्क कायम कर सकते हैं कि आगे जो करना है उसमें इन साथियों का योगदान मिल सके।

सम्भव है, हम इसमें भी असफल हों। लेकिन जिसे हम सफलता कहते हैं कि हमने आजादी प्राप्त की, वह भी क्या सफल हुई? और आजादी भी क्या एक दिन में प्राप्त हुई? असल में सफलता-असफलता की कसौटी कुछ और है। सन् १९२० में जब मुकम्मल हड़ताल भी हो जाती थी, तो गर्व से हमारी छाती फूल जाती थी। एक भी व्यक्ति गोली और गोली का मुकाबिला हिम्मत से करता था, तो हम सफलता की भावना से कृतकृत्य हो जाते थे। पर उस समय की वह सफलता आज की सफलता का पैमाना नहीं हो सकती है।

इसलिए इस दृष्टि से देखिए। आज हजारों लोग इस कार्य में योगदान दे रहे हैं, वह क्या करते अगर हम उनसे यह कार्य न लेते? मुझे कोई भी शक नहीं कि एक भी व्यक्ति को हम कुछ अधिक भला काम करने से रोककर इस काम में नहीं लगाते हैं, बल्कि जो लोग उदासीन और निश्चेष्ट रहते हैं, उन्हें और अधिक सक्रिय एवं सचेष्ट करते हैं, अधिक भावनाशील करते हैं, उनकी त्याग-वृत्ति को जाग्रत करते हैं।

और आप जैसे विचारकों के लिए अधिक अनुकूल भूमिका तैयार करते हैं कि आप और आगे की बात उन्हें बताकर, उन्हें →

भूदान-यज्ञ २८-९-'७० लाइसेंस नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३९

ग्रामस्वराज्य-कोष

विभिन्न राज्यों में २५ लाख से अधिक राशि एकत्रित

ग्रामस्वराज्य-कोष के नयी दिल्ली स्थित केन्द्रीय कार्यालय से प्राप्त एक जानकारी के अनुसार देश के विभिन्न राज्यों में गत १५ सितम्बर तक २५ लाख रुपयों से अधिक की राशि एकत्र की जा चुकी है।

विभिन्न प्रान्तों से प्राप्त कोष-कार्य की प्रगति के अनुसार महाराष्ट्र में ११ लाख, मध्यप्रदेश में ४ लाख २५ हजार, बंगाल में २ लाख, बिहार में १ लाख ५० हजार, गुजरात में पौने दो लाख, उत्तरप्रदेश में १ लाख, आन्ध्र में ८५ हजार, कर्नाटक (मैसूर) क्षेत्र में ३३ हजार तथा हरियाणा का संग्रह २० हजार है।

दिल्ली में ५ लाख के लक्ष्यांक को पूर्ण करने की दिशा में तेजी से कार्य किया जा रहा है। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की ११ सितम्बर को सम्पन्न हुई चार सप्ताह की नगर-यात्रा के दौरान ४५०० रु० की राशि एकत्र होने की जानकारी मिली है। दिल्ली-विश्वविद्यालय में भी कोष-संग्रह का कार्य चल रहा है।

लौहनगरी टाटा में १० सितम्बर को श्री जयप्रकाश नारायण ग्रामस्वराज्य-कोष के निमित्त मालिकों, मजदूरों, उद्योगपतियों आदि की बैठकों में उपस्थित रहे और उनको 'इंडियन टीन प्लेट कम्पनी' की ओर से पाँच हजार रुपये दिये गये।

टाटा नगर के विभिन्न औद्योगिक संस्थानों में संग्रह-कार्य तेजी से चल रहा है।

सीधी जिले में देवसर "तहसीलदान" घोषित

मध्यप्रदेश के सीधी जिले में ग्राम-दान-आन्दोलन के अन्तर्गत देवसर "तहसीलदान" घोषित हुई है। तहसील के ५३२ राजस्व गाँवों में से ४०२ गाँव ग्रामदानी बने हैं। यह उल्लेखनीय है कि उक्त तहसीलदान की जानकारी आचार्य विनोबा भावे को उनके ७५वें जन्म दिवस पर तार द्वारा दी गयी थी।

सीधी जिले में अब तक कुल ८४० गाँव ग्रामदान में आ चुके हैं।

विनोबा-जयन्ती समारोह

देश भर में 'विनोबा अमृत महोत्सव' मनाये जाने के समाचार अब भी बराबर आ रहे हैं।

बिहार के दरभंगा जिले के बेतारोह, लहेरियासराय में प्रभात-फेरी और सभा के कार्यक्रम आयोजित हुए। ग्रामस्वराज्य-कोष में दान देने का अपील के साथ विनोबाजी को श्रद्धांजलि अर्पित की गयी।

रानीपतरा के भूदान-किसानों, दाताओं तथा अन्य ग्रामीणों ने सार्वजनिक सभा में—"विनोबाजी अमर हों"—की शुभकामना व्यक्त की तथा इस अवसर पर भूदान की जमीन के प्रमाण-पत्र विभिन्न गाँवों से आये हुए किसानों में वितरित किये गये। लगभग दो हजार भूदान किसानों ने मिलकर दाखिल-खारिज की समस्याओं पर भी विचार-विमर्श किया, और ग्रामस्वराज्य-कोष एकत्रित करने की योजना बनायी।

सारण में शान्तिसैनिकों का एक जुलूस निकाला गया, और बाद में एक घंटा सभा में सर्वधर्म-प्रार्थना की गयी।

मध्यप्रदेश के अम्बिकापुर में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान के शिक्षार्थियों द्वारा 'कुलदीप' नाटक प्रस्तुत किया गया, जिसकी रचना भिण्ड-मुरैना में हुए बागियों के आत्मसमर्पण के प्रसंग और व्यक्तिगत स्वामित्व-विसर्जन के विचार के आधार पर हुई है।

उज्जैन शहर में विनोबा-जयन्ती के उपलक्ष में विशेष कार्यक्रम आयोजित किये गये। सुबह-शाम प्रार्थना, 'गीता-प्रवचन' का पाठ, ग्राम-सफाई, १२ घंटे का अखंड सूत-यज्ञ, आदि कार्यक्रम ११ सितम्बर से, २ अक्तूबर तक शहर के भिन्न-भिन्न मुहल्लों में चलाये जा रहे हैं। माध्यमिक शाला के बालकों ने छोटे छोटे सीलबन्द डिब्बों में माँग-माँगकर रु० ११२·७० ग्राम-स्वराज्य-कोष के लिए एकत्रित किये।

पंजाब के आदमपुर में प्रभात-फेरी, सफाई, सूतयज्ञ और सार्वजनिक सभा के कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

राजस्थान में सीकर की प्रमुख रचनात्मक संस्थाओं द्वारा सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया। सभा में ग्रामस्वराज्य-कोष में योगदान देने का अनुरोध और विनोबाजी के शतायु होने की शुभकामना की गयी।

पश्चिम बंगाल में पुरुलिया जिले के छोटे से गाँव पीरगाछी में विनोबा-जयन्ती पर प्रार्थना, मौन सूत-यज्ञ, भाषा राष्ट्र तथा रात्रि-पाठशाला की शुरुआत करके विनोबाजी को भावपूर्ण श्रद्धांजलि दी गयी। ●

—तथा रण की ओर आगे ले जा सकते हैं। हमारा यह [illegible] साधना न होकर साधक ही होगा, यह विश्वास आप रखें।

एक बात अन्त में और कह देना चाहूँगा। इस सारे आयोजन में निधि के प्रति आसक्ति नहीं है। यह निधि एकत्रित करके रखनी नहीं है। विनोबा को तो इसमें से एक पैसा भी नहीं मिलेगा। ८० प्रतिशत तो जिले-जिले में ही खर्च होगा और वह भी शीघ्र-से-शीघ्र, २-३ सालों में।

दिनांक : ७-९-७० —विचित्रभाई

श्री गांधी आश्रम, लखनऊ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित